संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार   ५ अक्टूबर '६२   वर्ष ९ : अंक १

मैत्री

• विनोबा

आज गाँव में कुछ लोग दुःखी हैं, तो कुछ सुखी, कोई हिंदू है, तो कोई मुसलमान, कोई उच्च है, तो कोई नीच, कोई क्रान्तिकारी है, तो कोई अक्रान्तिकारी और कोई एक मार्गवाले हैं, तो कोई अनेक मार्गवाले। हम चाहते हैं कि इन सबकी मैत्री हो। सारा गाँव एकत्र बने, सबका दिल एक हो। हरएक का दिमाग तो अलग-अलग होना चाहिए, अनेक बुद्धियों का लाभ मिलना चाहिए, लेकिन हृदय एक हो। भूदान का उद्देश्य यही है, जिसे एक शब्द में 'मैत्री' कह सकता हूँ। पहले भी हमने यहाँ आश्रम में मैत्री का ही काम किया।

मैंने सोचा, जिस मैत्री का काम किया, उसका शिक्षण दिया जाय, इसलिए यहाँ एक आश्रम बनाया है। मैं ऐसी संस्था नहीं बनाना चाहता, जो नियमों से बँधी हो। साथ रहते हैं, तो कुछ नियम होते ही हैं, यह हम अपने जीवन में देखते हैं। फिर भी वे ज्यादा नहीं रखने चाहिए, उससे बंधन होता है। 'रोज सुबह खुली हवा में घूमना चाहिए, कम-से-कम आधा घंटा घूमना चाहिए। जो यह नहीं करेगा, वह नियम का भंग करता है', यह विचार तो अच्छा है। लेकिन जब नियम बन जाता है तो बंधन आता है।

इसके बजाय यहाँ एक ही नियम रखा है। जिसे घूमने जाना हो जाय, जिसे न जाना हो न जाय, जो करना हो करे, गाना हो तो गाये, पेट भर खाये। हम विरोध में सुबह से शाम तक नियम रखें और बाँध देते हैं, तो परिणाम उलटा होता है।

एक उदाहरण देखें। छात्रालय में ६-७ साल रहा हुआ लड़का जिस दिन घर आता है, दिन भर सोता रहता है, क्योंकि उस पर नियमों का बोझ हुआ था। वहाँ रात को ठीक समय पर सोता था और सुबह ठीक समय पर उठता था। वहाँ उससे जितने नियमों का पालन कराया गया, घर आकर उसने मानो कुल बोझ नीचे पटक दिया। गधे पर हम बोझ रखें और कहें कि यह तो शक्कर का बोरा है, मीठा बोझ है, तो वह कहेगा : "शक्कर हो या पत्थर, है तो बोझ ही।" इसी तरह यह लड़का भी मानता है और घर आने पर सारा बोझ पटक देता है। आश्चर्य होता है कि इतने सारे नियम उसे सिखाये गये, पर उसे उनका स्पर्श तक नहीं हुआ। आप दीवाल पर ऊपर लगाते हैं, तो दीवाल उसे फेंक देती है। गोबर लगा दिया, तो वह चिपक जाता है। उसी तरह, संगत सहज चिपक जाय, तो ठीक है। अनुराग से यह ग्रहण हो। इसलिए नाम है 'नियम मुक्ति'। जब हम 'मैत्री' और उसके शिक्षण की कल्पना करते हैं, तो विद्यार्थियों को सब प्रकार के नियमों से मुक्त रखने की इच्छा रखते हैं।

सबको मारे, तो लड़का कैसे?

हमारे आश्रम में एक दिन अपना एक बच्चे को ले आये। पूछा : "आप इसे रखेंगे?" मैंने पूछा : "लड़के में दुर्गुण क्या है?" बोले : "लड़का बदमाश है। किसी की बात नहीं मानता।" मैंने कहा : "अच्छा गुण है, जो किसीकी नहीं मानता, वही लड़का है। नहीं तो उसे प्रौढ़ कहना चाहिए।" यह सुन कर लड़के को आश्चर्य हुआ। मैंने उसे रख लिया और किसी नियम का बंधन नहीं रखा। लेकिन उसने सब नियमों का ठीक-ठीक पालन किया और आजाद होकर रहा। इसलिए मैंने मैत्री-आश्रम के बारे में सोचा तो यही कहा कि इस आश्रम का ध्येय मैत्री रहेगा, नियम मैत्री रहेगा और प्राप्ति का साधन भी मैत्री रहेगा।

वेद का आदेश

मैं आपको एक विचार समझा रहा हूँ। इन दिनों लोग अपने-अपने विचारों का आग्रह रखते और उसी पर जोर देते हैं। मैं पूछता हूँ : भाई! विचार मनुष्य के लिए है या मनुष्य विचार के लिए? विचार के कारण आपस में अनबन न होने दें। इसलिए सबसे बड़ी बात है स्नेह, अनुराग और प्रेम कायम रखना। यही सब सिद्धान्तों का सार है। वेद में मंत्र आया है :

"मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि
भूतानि समीक्षन्ताम्।

मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि
भूतानि समीक्षे।"

सब प्राणिमात्र मेरी तरफ मित्र की दृष्टि से देखें, यह मैं चाहता हूँ, तो मुझे भी सारी दुनिया की तरफ मित्र की दृष्टि से देखना चाहिए। इससे सारी दुनिया और मैं मित्र बनेंगे। वेद ने इस मन्त्र में मैत्री की बात की है, विचार की नहीं। प्रेम रहा तो बाकी बातें तो हो जायेंगी।

प्रेम और विश्वास

प्रेम और विश्वास न रहा, तो जो राजनीति में चलता है, वही यहाँ भी चलेगा। वहाँ बातचीत के लिए आमने-सामने टेबल पर बैठते हैं, पर चित्त में अविश्वास रखते हैं। 'यूनो' में यही नाटक चलता है। पहले एकसाथ आमने-सामने नहीं बैठते थे, आज बैठते हैं, यह तो अच्छा है। पर गोल बैठते हैं, शून्याकार बैठते हैं, और चर्चा करते हैं, तो परिणाम भी गोल, शून्याकार आता है। सबका समान दर्जा सिद्ध करने के लिए गोल बैठते हैं, लेकिन परिणाम शून्य आता है। मन में अविश्वास लिये बैठते हैं, इसलिए ऐसा परिणाम आता है। हम दुनिया से प्रेम पाने के लिए लालायित हैं, लेकिन प्रेम नहीं देते, प्रेम नहीं करते। देना नहीं जानते, भोगना जानते हैं। फिर प्रेम कैसे मिले?

यह विशुद्ध प्रेम नहीं, भोग

आज सुबह हम बात करते थे। कोई अच्छा बच्चा देखा तो झट उसे उठाते हैं, उसका चुम्बन लेते हैं। गाय का अच्छा बछड़ा देखा, तो उसे उठाते हैं, माने भोग करना चाहते हैं। बच्चे का चुम्बन करते हैं माने क्या है? यह खाने का नाटक है। तुम इतने प्यारे हो कि मैं चाहता हूँ कि तुम्हें खा जाऊँ। इसमें प्रीति प्रकट होती है, ऐसा माना जाता है। लेकिन इसमें प्रीति नहीं, भोग प्रकट होता है। लड़के की जगह अच्छा पका आम होता, तो खा ही डालते! मान लें कि हमारे सामने रखी थाली में आम है। हम उसे खाने के लिए उठाने लगे हैं, तो वह दौड़ कर भागने लगता है, तो हम उसके पीछे भागने लगेंगे, टूट पड़ेंगे, जैसे शेर हिरन पर झपट पड़ता है। पर बिचारा आम थाली में चुपचाप पड़ा रहता है, भागता नहीं। यह प्रेम नहीं, यह भोग है। उसे भोग्य वस्तु मान कर हमारी वासना के लिए हम उसका भोग करना चाहते हैं, बच्चे पर, पत्नी पर, पति पर जो प्यार होता है, उसमें प्रेम कितना और भोग वासना कितनी यह देखें, तो पता चलेगा कि हम प्रेम नहीं, भोग करते हैं। दूसरे के लिए हमें त्याग की नहीं, भोग की है। पत्नी पति की हर आज्ञा मानती है। लेकिन साल भर में दो प्रसंगों में उसने उनकी बात न मानी, तो पतिदेव वही याद रखते और नाराज होते हैं। यह कोई पत्नी देव प्रेम नहीं, अपने पर प्रेम है। उसके लिए हम पत्नी का उपयोग करना चाहते हैं। इस तरह विश्लेषण करने पर पता चलता है कि शुद्ध प्रेम नहीं। शुद्ध प्रेम प्रकट होगा, तो आनन्द के सिवा दूसरी वस्तु नहीं मिलेगा।

'प्रेम-दान से बढ़कर दान नहीं'

हमने कहा कि करुणा होनी चाहिए और हरएक को देना चाहिए। जो पास हो, वह देना चाहिए। किसीने पूछा : "जिसके पास नहीं है, वह क्या देगा?" हमने कहा : "जमीन न हो तो सम्पत्ति दे, वह न हो तो बुद्धि दे; वह भी न हो, तो श्रम दे। 'कुछ नहीं' वाला आदमी दुनिया में नहीं है।" वे भाई कहने लगे : "इनमें से एक भी चीज जो नहीं दे सकता, जो अस्पताल में बीमार पड़ा है; सबकी सेवा ले रहा है, वह क्या देगा?" मैंने कहा : "बहुत कुछ दे सकता है। देखिये, उस अस्पताल में उसके अलावा और भी बीमार हैं, उनसे मिलने के लिए अनेक लोग आते हैं। उन्हें यह देखता है, लेकिन कोई आनन्द महसूस नहीं करता। आठ दिन बाद उसका बेटा जो दूर था, आता है। उसे देखते ही आँसू की धारा बहने लगती है। कहता है—'बेटा, तुम्हारे दर्शन से बड़ा आनन्द हुआ।' दोनों को आनन्द होता है। उसी तरह वह बीमार प्रेम बरसाता है। दूसरे सैकड़ों आये और गये। मान लीजिये, उनमें से हरएक को वह यही प्रेम देता, हरएक को देख उसका अन्तःकरण गद्गद् होता, तो कितना दान दे सकता! उसके सामने भूदान और सम्पत्तिदान की क्या कीमत! लेकिन उसने प्रेम बाँध रखा। देने की चीज आपके पास थी, देते तो भर भर पाते। लेकिन देने की वृत्ति नहीं हुई। बच्चा आया तब दिया, उसने भी आपको आनन्द दिया। ऐसा क्यों? प्रेम तो सबको देना चाहिए। प्रेमदान से बढ़कर दान नहीं।"

मानव के जीवन में पचासों चीजें आयी हैं। विद्या, धन, बड़े-बड़े शस्त्रास्त्र, यह लाउडस्पीकर, जिससे सबकी सेवा हो सकती है। यह चश्मा, जिसके बिना मैं आपको देख नहीं सकता। ऐसे साधन मिले हैं, तो जीवन आनन्दमय बनना चाहिए था। लेकिन नहीं बना, कारण प्रेम को मनुष्य ने कैद बनाया। जहाँ मैंने एक बच्चा अपना माना, वहाँ करोड़ों बच्चों को दूर किया। एक घर माना तो करोड़ों घर दूर गये। हम भिखारी बने। सबके घर अपने बनाता, तो मैं कितना पाता! आज मैं अपनी सेवा करता हूँ, तो दो हाथों से करता हूँ। लेकिन जब दूसरों की करूँगा, तो हजारों हाथों से पाऊँगा। आज मेरी सेवा आप सब करते हैं। मेरे कमजोर हाथ बोझ, वजन नहीं उठा सकते, तो दूसरे लोग उठाते हैं। थोड़ा देना है, ज्यादा पाना है। कटहल का एक बीज बोने से कितने बीज मिलेंगे, हिसाब कीजिये। दस साल में हजारों, लाखों बीज मिलेंगे। हम कंजूस बनते हैं, तो दुनिया कंजूस बनती है।

प्रेमामृत की नदी बहायें

यह ग्रामदान तो छोटी चीज है। जिनके जमीन नहीं या कम है, उनको थोड़ा देना चाहिए। उतने से ही उनका प्रेम हासिल होगा। सब मिल कर गाँव का उत्पादन बढ़ायेंगे। प्रेम तो है, लेकिन हमने परिवार में बाँध लिया है। पानी तो है, उसे लेकिन वह गड्ढे में सड़ रहा है। बहता तो स्वच्छ, निर्मल बनता, पर वह संचित हुआ। प्रेम बहता, तो भाई-बहनों पर, दूसरे घरों पर, दूसरी जातियों पर, दूसरे देशों पर, पशु पर, पक्षी पर, वृक्षों पर प्रेम कर पाते। स्वच्छ, निर्मल भक्ति का स्रोत बनता। लेकिन प्रेम को घरों में बंद कर दिया, तो उसका रूपांतर काम-वासना में होगा और होता भी है। तीस-तीस साल के सतत सहयोग के बावजूद प्रेम नहीं बनता। स्कूल में विद्यार्थी बीमार है, शिक्षक सिर्फ लिख देगा कि 'लड़का हाजिर नहीं है।' वास्तव में उसके घर जाना चाहिए, पूछताछ करनी चाहिए। लेकिन प्रेम नहीं बना, इसलिए यह सब नहीं होता।

एक वर्ष की कमाई मैत्री

साल भर हम यहाँ रहे। कुछ प्रेम, मैत्री बनाने का काम किया। इसका शिक्षण देने लिए 'मैत्री-आश्रम' उत्तर लखीमपुर में बनाया है। आप उसे मदद कर सकते हैं, उसका लाभ उठा सकते हैं। वह मैत्रीभाव फैलायेगा तो बहुत अच्छा होगा, हमारी असम की यात्रा सफल होगी।

[ढेकियाजुली, जिला दरंग, २३ मार्च '६२]

अ. भा. सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन की 'मैत्री-आश्रम' पुस्तिका से। लेखक : विनोबा, पृष्ठ-संख्या ५६, मूल्य ५० नये पैसे।

समस्याओं को हल करने के लिए गांधी-दर्शन का अध्ययन जरूरी —जयप्रकाश

दिल्ली विश्वविद्यालय में देश के प्रथम गांधी-भवन का उद्घाटन

नयी दिल्ली में २६ सितम्बर को श्री जयप्रकाश नारायण ने दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रांगण में भारत के प्रथम 'गांधी भवन' का उद्घाटन करते हुए इस बात पर बल दिया कि आज की राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं का हल करने में गांधी, गांधी-दर्शन का अध्ययन, चिंतन, मनन और अनुगमन बहुत मददगार हो सकते हैं।

हिन्दी में प्रभावशाली भाषण करते हुए श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा कि गांधीजी के विचारों, कार्यों, सोचने व करने से गहरा संबंध है। अतः उनका अध्ययन वैज्ञानिक ढंग से होना चाहिए और इसके लिए विश्वविद्यालय ही उपयुक्त स्थान है, जहाँ गांधीजी की विचार-धारा पर चिंतन, शोध और अध्ययन कर के संसार को प्रकाश प्रदान किया जाय।

गांधीवाद को प्रेम और अहिंसा का मार्ग बताते हुए उन्होंने कहा कि आज के विज्ञान की प्रगति पर यदि अध्यात्म के मूल्यों का अंकुश नहीं होगा, तो यह बड़ा वरदान भी सर्वनाश बन सकता है। इसीलिए केवल विज्ञान पर ही नहीं, बल्कि जीवन और समाज के हर पहलू में अध्यात्म का अंकुश रहना चाहिए।

गांधीवाद पर निरन्तर मनन और शोध की आवश्यकता बताते हुए श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि गांधीजी का दर्शन एक धारा की तरह है। यदि इसका बहना रुक जाय, तो अन्य वादों की तरह यह भी एक वाद ही बन कर रह जायेगा। अतः बदलती परिस्थितियों के अनुसार ही इस दर्शन को ढालना आवश्यक है।

गांधीवाद कोई सम्प्रदाय या "डोग्मा" नहीं है, यह तो प्रेम व अहिंसा का रास्ता है।

श्री उ० न० ढेबर ने इस अवसर पर भी अंग्रेजी में भाषण करते हुए बताया कि अमरीका के एक विश्वविद्यालय में तो गांधी-अध्ययन के लिए एक पीठिका आरम्भ भी हो गयी है और भारत ने अभी तक इस बारे में सोचा नहीं है।

उपकुलपति डा० चितामणि ने अध्यक्ष-पद से भाषण करते हुए कहा कि गांधी स्मारक निधि और विश्वविद्यालय अनुदान के आधे-आधे अनुदान से बन रहे इस गांधी-भवन के लिए यद्यपि एक लाख की लागत का अनुमान था, किन्तु मूल्यों की वृद्धि के कारण लागत काफी अधिक आयी है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग से इसके लिए ५०० रु० प्रति मास का खर्चा भी मिलेगा।

उन्होंने यह भी बताया कि लगभग इसी डिजाइन के दस और गांधी भवन अन्य विश्वविद्यालयों में भी बनेंगे। इस भवन का शिलान्यास १९५७ में नेहरूजी ने किया था, किन्तु अभी तक यह पूरा तैयार नहीं हुआ है।

समारोह के दौरान में विश्वविद्यालय के छात्रों ने भिन्न-भिन्न धर्मों की उपासनाओं—गीता, कुरान, बाइबिल व भजन आदि—का पाठ व गायन किया, जो आगे भी भवन में हुआ करेगा।

श्रीमती देवदास गांधी, श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख और उपशिक्षामंत्री श्रीमती सौंदरम् रामचन्द्रन् भी इस अवसर पर उपस्थित थीं।

सर्वोदय साहित्य भंडार, इन्दौर

एक वर्ष का लेखा-जोखा

इंदौर नगर में सत्य, प्रेम, करुणा का विचार प्रेरित करने वाली पुस्तकें घर-घर पहुँचें, इसके लिए श्री जसवंत राय भाईजी ने साहित्य-प्रचार का काम साल भर पहले अपने ऊपर लिया था। अगस्त '६१ से जुलाई '६२ तक सर्वोदय-साहित्य भंडार, विसर्जन आश्रम द्वारा सवा बीस हजार रुपये का साहित्य बेचा गया।

साहित्य विक्रय में विसर्जन आश्रम के साथियों से लगा कर इंदौर नगर एवं अपने प्रांत के अनेक कार्यकर्ताओं, सर्वोदय मित्रों एवं प्रेमियों से विशेष सहयोग मिला है। विशेष रूप से सुश्री निर्मला देशपांडे के नेतृत्व में शांति-सेना विद्यालय की बहनों ने गत सर्वोदय-पखवाड़े (पर्व) के अवसर पर लगभग २००० रु० का साहित्य घर-घर जाकर पहुँचाया। इसी प्रकार श्री मुकुन्दलालजी बघेरवाल मन्दसौर जिले के लिए अब तक करीब १५०० रु० का साहित्य ले जा चुके हैं। करीब ३००० रु० का सर्वोदय-साहित्य म. प्र. पंचायत एवं समाज-सेवा विभाग द्वारा चयन किया गया। अ. भा. नयी तालीम सम्मेलन पचमढ़ी तथा इंदौर नगर में सजायी गयी प्रदर्शनियों में लगभग २००० रु० का साहित्य बिका। लगभग इतना ही २००० रु० का साहित्य प्रान्तीय गांधी स्मारक निधि द्वारा अपने केन्द्रों के लिए इस बीच खरीदा गया। इसके अतिरिक्त प्रान्त भर से भी गत एक वर्ष में लगभग २५०० रु० के साहित्य के आर्डर प्राप्त हुए। इंदौर की शिक्षण-संस्थाओं तथा पुस्तकालयों में भी काफी साहित्य खरीदा गया।

भाषावार खपत

भाषा के हिसाब से देखें तो स्वाभाविक ही तीन-चौथाई से थोड़ी कम किताबें हिंदी की बिकीं। भाषावार बँटवारे का प्रतिशत इस प्रकार रहा :—हिंदी ७०, अंग्रेजी २०, मराठी ७, उर्दू, सिंधी, गुजराती ३।

विषयवार बिक्री

प्रयत्न यह किया गया कि सभी के रुचि का सत्साहित्य रखा जाय और जिसको जैसे सत्साहित्य में रस हो, उसको वैसी पुस्तकें मिल सकें। नीचे की तालिका से स्पष्ट होगा कि किताबों की खपत किस प्रकार हुई :—

विषय	प्रतिशत
आध्यात्मिक साहित्य	१७
कथा, उपन्यास	१७
बाल साहित्य	१५
स्वास्थ्य चिकित्सा	१२
शिक्षण नयी तालीम	१०
खादी-ग्रामोद्योग	५
कृषि-गोसेवा	५
अन्य साहित्य	८

अगले वर्ष में साहित्य-प्रचार के काम में पूर्व वर्ष के अनुभवों से अधिक प्रगति हो सकेगी।

प्रकाशकवार बिक्री

जिन प्रकाशनों का साहित्य बिका, उनका प्रतिशत यहाँ दिया जा रहा है।

प्रकाशक	प्रतिशत
सर्व-सेवा-संघ	२८,
नवजीवन	१५
सस्ता साहित्य मंडल	२०
गीता प्रेस	७
रामकृष्ण आश्रम तथा अद्वैताश्रम	५
श्री अरविंद आश्रम	५
ग्राम-सेवा-मंडल तथा सर्वोदय प्रचुरालयम्	१
राजपाल एण्ड सन्स	५
पूर्वोदय प्रकाशन तथा हिन्दी सा. मंदिर	५
अन्य प्रकाशन	१०

सभी प्रकाशनों से छाँट कर ऐसी पुस्तकें मँगायी गयीं, जो विचारप्रेरक हों। इस प्रकार कई संस्थाओं का सहयोग मिला। और भी प्रकाशन-गृहों से सम्पर्क स्थापित किया जा रहा है।

अब तीन माह से साहित्य भंडार आश्रम से नगर में लाया गया है और यद्यपि मुख्य सड़क पर स्थान नहीं मिल पाया है, पर साहित्यप्रेमी मित्र वहाँ आसानी से पहुँच सकेंगे ऐसी आशा है।

पिछले वर्ष यह पहिला प्रयास था। तीन कार्यकर्ताओं की शक्ति इसमें लगी तथा ऊपर का प्रबंध-काम भी बढ़ा, अतएव साल के हिसाब में सब खर्च निकालने पर एक हजार के करीब घाटा आता है। पर आगामी वर्ष में आर्थिक रूप से स्थिति सुधरेगी और कार्य की दृष्टि से भी पुस्तकें अधिक घरों में पहुँचेंगी यह आशा है।

प्रान्त के सभी जगह सर्वोदय साहित्य अधिकाधिक जाये, इस प्रयास में यह भंडार सब प्रकार से सहायक हो, यह कोशिश है।

साहित्य-भंडार के सामान्य एवं विशेष सदस्य भी बनाये जा रहे हैं, जिससे साहित्य-प्रेमियों को कुछ आर्थिक लाभ एवं अन्य सुविधाएँ मिल सकें।

इंदौर नगर में विशेष रूप से तथा जिले में साहित्य प्रचार में रुचि रखने वाले सब साथियों को भंडार के व्यवस्थापक से सम्पर्क करना चाहिये। पता है :—

व्यवस्थापक, सर्वोदय साहित्य भंडार
५७, हैमिल्टन रोड, इन्दौर नगर

[illegible] जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

गांधीजी के त्रीवीध आदेश

गांधीजी अेक वीचार हैं, व्यक्ती नहीं। अनके वीचारों को अगर अनके शब्दों से और अनकी कृतीयों से हम सीमीत कर देंगे, तो हम अनके प्रती अन्याय करेंगे। अन्होंने स्पष्ट कह रखा है—

—मेरे पुराने शब्दों से मेरे आगे का शब्द प्रमाण समझो। पुराने और नये, दोनों में अगर कहीं वीरोध आता हो, तो पुराने शब्द छोड़ दो।

—मेरे शब्दों के साथ मेरी कृती का वीरोध आये, तो मेरी कृती को गौण समझो और शब्दों को प्रमाण समझो।

—अपने भाव मैं अपने शब्दों में पूर्ण रूप से व्यक्त नहीं कर सका हूं, अीसलीओ मेरे भाव समझ लो और शब्दों को गौण मानो।

अीस तरह अन्होंने त्रीवीध आदेश दे दीया। हमें गांधीजी के वीचारों को अनके शब्दों और अनकी कृतीयों से सीमीत नहीं करना चाहीओ। अनका भाव लेकर आगे बढ़ें। सर्वोदय का यह नया वीचार गांधी-वीचार की प्रेरणा में से नीकला हुआ है। लेकीन अुसकी कृतीयों और शब्दों से परे है। हम अीस वीचार से प्रेरीत हैं और अीसके लीओ जो भी कुछ कर सकते हैं, कर रहे हैं। सबकी सहानुभूती हासील करना हमारा साध्य है और अीसीलीओ हम नीकल पड़े हैं।

आरसीकेरे,
८-११-'५७ —वीनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

विश्व शांति-यात्री की डायरी

निःशस्त्रीकरण आवश्यक, पर ....

ऊँचा कद, गठा बदन, गंभीर आँखें, विनम्र और मिलनसार स्वभाव तथा विश्व शांति के प्रश्नों में निरंतर अभिरुचि रखने वाले श्री काकार का व्यक्तित्व जितना [illegible] है, उतना ही आकर्षक भी है। काबुल विश्वविद्यालय के विज्ञान विभाग के संचालक और अफगानिस्तान-अणुशक्ति आयोग के अध्यक्ष होने के कारण मानव जाति की वैज्ञानिक प्रगति में उनका योगदान सहज प्राप्त हो रहा है, पर यह योगदान विज्ञान की शक्तियों पर राजनीतिज्ञों का प्रभुत्व होने के कारण गलत दिशा में न चला जाय, इसका खतरा उन्हें भी है। वे अणुशक्ति आयोग के अध्यक्ष के नाते इस दिशा में पुरजोर प्रयत्न कर रहे हैं कि आणविक शक्ति का इस्तेमाल मानव जाति के विनाश के लिए नहीं, बल्कि उसकी शांतिपूर्ण प्रगति के लिए करें।

वे अभी-अभी मास्को शांति-सम्मेलन में अफगानिस्तान की इस नीति को ताकत के साथ प्रस्तुत करके आये थे कि "रूस और अमेरिका मिल कर आज इस रोटी-कपड़े के लिए तड़पती दुनिया का करोड़ों अरबों रुपया सामरिक तैयारियों पर एवं अणु-शस्त्रों की प्रतियोगिता पर खर्च कर रहे हैं, यह मानवता के साथ द्रोह है।"

"शांति-यात्रियो, इस देश में आपका स्वागत है!" ऐसा कह कर श्री काकार ने हमारे साथ बातचीत प्रारम्भ की। उन्हें हमारी इस पदयात्रा के प्रति बड़ी उत्सुकता और दिलचस्पी थी। चूँकि भारत में पदयात्रा की बात अब नयी नहीं रह गयी है, लेकिन बाहर के देशों में किसी खास 'मिशन' या विचार के लिए इस तरह पद यात्रा करना सर्वथा नवीन उपक्रम है। इसलिए "कैसे चलते हैं? कहाँ ठहरते हैं? लोगों का व्यवहार कैसा है? आपको दिक्कत तो नहीं? लोगों को आप क्या समझाते हैं? गाँवों में आपको भोजन मिलता है या नहीं?" आदि प्रश्न श्री काकार ने लगातार हमसे पूछे।

हमने विस्तार से उन्हें जानकारी दी और बताया कि "गाँवों के लोग यह जान कर बड़े प्रसन्न होते हैं कि भारत जैसे एक दूर देश के दो यात्री पैदल चल कर हमारे यहाँ आये हैं। इसलिए हमें सभी जगह खूब आतिथ्य मिलता है। हम जब लोगों को अपनी यात्रा के उद्देश्यों के बारे में बताते हैं, तो प्रायः सर्वत्र हमें एक ही उत्तर मिलता है कि आप अपने उद्देश्य में कामयाब हों। जंग की तैयारी बन्द हो। हमें बम नहीं चाहिए। हमें तो [illegible] के साधन चाहिए। आप इस यात्रा के द्वारा मुल्क की बड़ी खिदमत कर रहे हैं। इस तरह जनता हमें अपना पूरा समर्थन और हार्दिक सहयोग देती है।"

यह सुन कर श्री काकार ने कहा कि "यह बिल्कुल सच है। दुनिया के लोग वस्तुतः शांति चाहते हैं। वास्तविकता तो यह है कि न केवल रूस अमेरिका की जनता, बल्कि वहाँ के राज्याधिकारी भी हृदय से शांति चाहते हैं। परन्तु मुसीबत यह है कि वे एक दूसरे पर से विश्वास खो बैठे हैं। अब सवाल यह बन गया है कि पहले कदम कौन आगे बढ़ाये? एक बात यह भी है कि अब यह निःशस्त्रीकरण का प्रश्न नहीं रह गया है, बल्कि दोनों देशों की प्रतिष्ठा का प्रश्न बन गया है। किस देश का प्रस्ताव मान्य किया जाय, किसका तरीका अपनाया जाय, इसका झगड़ा चल रहा है। मास्को के शांति-सम्मेलन में भी मैंने यही महसूस किया।"

श्री काकार ने पूछा—"आपको यह पैदल चलने की प्रेरणा कैसे हुई?" तब हमने बताया कि "भारत में आजादी से पहले गांधीजी ने और अब उन्हीं के पद-चिह्नों पर विनोबाजी तथा उनके साथियों ने अहिंसक क्रांति का मार्ग हृदय-परिवर्तन के सिद्धान्त को माना है। विनोबाजी पिछले ११ साल से लगातार भारत में पद यात्रा कर रहे हैं और जनता का हृदय परिवर्तन करने की कोशिश में लगे हैं।"

"वे इस यात्रा में क्या करते हैं?"—बीच में ही श्री काकार ने पूछा।

"वे आर्थिक और सामाजिक क्रांति का एक आंदोलन चला रहे हैं।"—हमने कहा।

"किस तरह का आंदोलन?"

"उन्होंने जमीन और संपत्ति पर से व्यक्तिगत स्वामित्व को समाप्त करने तथा दान के माध्यम से जमीन और संपत्ति का समवितरण करने का विचार-सूत्र दिया है।"—हमने फिर भूदान-आंदोलन एवं शांति सेना का विस्तार से परिचय देते हुए बताया कि पिछले आठ वर्षों से हम इसी आंदोलन में काम कर रहे हैं। हमारे जैसे हजारों युवक आज इस काम में जुटे हैं। विनोबाजी सशस्त्र सेना को पूर्णतः समाप्त कर देना चाहते हैं और उसके स्थान पर शांति-सेना का निर्माण करना चाहते हैं। श्री काकार को भारत में चल रहे इस व्यापक आंदोलन के बारे में सुन कर बड़ा आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा कि "आप लोग अपने देश में शांति और अहिंसा का इतना बड़ा वातावरण बनाने का काम कर रहे हैं। लेकिन उसकी जानकारी हमारे जैसे पड़ोसी देश के लोगों को भी नहीं है। क्या आप लोग बाहर के देशों में भी कुछ कर रहे हैं?" हमने बताया कि "भूदान आंदोलन का काम तो अभी तक मुख्य रूप से भारत में ही हो रहा है और विनोबाजी की यात्रा भी वहीं चल रही है। परन्तु शांति सेना के काम का विस्तार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किया गया है। कुछ महीनों पहले बेरूत में एक विश्व सम्मेलन में इस संबंध में गंभीरता से सोचा गया और वहाँ विश्व शांति-सेना (वर्ल्ड पीस ब्रिगेड) की स्थापना भी हुई। उसका एशिया क्षेत्र का कार्यालय वाराणसी में है और अब यह प्रयत्न है कि अधिक-से अधिक देशों के साथ संपर्क स्थापित किया जाय।" एक लंबी सांस लेकर श्री काकार बोले—"मेरा दुर्भाग्य है कि इस बार मास्को से मैं [illegible] न रह सका।"

"हम प्रयत्न करेंगे कि अब इस काम की जानकारी बराबर आपको मिलती रहे।" जब हमने यह कहा, तो तुरंत बोले—"मैं आपका बड़ा एहसान मानूंगा, क्योंकि आज निःशस्त्रीकरण या शांति का सवाल केवल रूस और अमेरिका के हल करने का सवाल नहीं है। यह तो संपूर्ण मानव जाति का सवाल है। अतः हम अपने देश में इस दिशा में पूरे प्रयत्नशील हैं और हमारी यह आन्तरिक इच्छा है कि भारत में आप लोग इस क्षेत्र में जो महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं, उसके साथ हमारा संपर्क रहे।"

बीच-बीच में भारत अफगान-संबंधों की मधुरता, दोनों देशों की विदेश-नीति की एकता, फौजी संगठनों में न पड़ने की आवश्यकता आदि प्रश्नों पर भी चर्चा हुई। अंत में उन्होंने फिर पूछा कि "आपको अफगानिस्तान की यात्रा में कोई कष्ट तो नहीं है? हम आपकी किस तरह और क्या मदद कर सकते हैं?" हमने कहा कि "हम तो पूरी तरह आप लोगों पर अर्थात् आम जनता की सहायता व सहानुभूति पर ही निर्भर हैं। हम अपने साथ पैसा भी बिल्कुल नहीं रखते। पूरी तरह लोकाधारित हमारी यात्रा है। पर हमें अफगान सरकार एवं अफगान जनता की हर संभव सहायता उपलब्ध हुई है। काबुल में भी सभी वर्ग के लोगों ने, विशेष रूप से विद्यार्थियों और युवकों ने हमारे इस उपक्रम के प्रति रुचि दिखाई है। जब हम काबुल विश्वविद्यालय के रेक्टर से मिले तो उन्होंने भी यही कहा कि 'जब से आपके दिल्ली से विदा होने का और अफगानिस्तान आने का समाचार पढ़ा एवं यहाँ के दैनिक पत्रों में आपके फोटो देखे तभी से हमारे विद्यार्थी आपके यहाँ आने की प्रतीक्षा कर रहे हैं और आपके मिशन के बारे में सुनने की तथा आपसे मिलने की उत्सुकता में हैं।' इसी तरह सभी क्षेत्रों से हमें सब प्रकार की मदद मिल रही है।" इस पर श्री काकार ने भी अपना पूरा समर्थन एवं आशीर्वाद देते हुए कहा कि "भारत में बुद्ध ने अहिंसा के संस्कार डाले, गांधी ने अहिंसा को नयी प्रेरणा दी तथा अब विनोबाजी जैसे लोग उस संस्था की धारा को आगे बढ़ा रहे हैं। इसलिए आप जैसे युवक ऐसा उद्योग करें, यह स्वाभाविक ही है। निश्चय ही इस यात्रा के बारे में तथा उसकी कठिनाइयों के बारे में सोचते ही मैं रोमांचित होता हूँ। मेरी सभी शुभ कामनाएँ आपके साथ हैं। मुझे पूरी उम्मीद है कि आप अपने उद्देश्य में सफल होंगे।"

अंत में श्री काकार के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते हुए हमने विदा ली।

—सतीशकुमार

झगड़ों के आपसी हल की दिशा में

नया प्रयोग : समाधान-समिति

अमरनाथ सहगल

हम देखते हैं कि लोगों के आपस में तरह-तरह के झगड़े हो जाते हैं। इन झगड़ों के कारण अक्सर बहुत गंभीर नहीं होते, यों ही किसी छोटी-सी बात पर लोग झगड़ पड़ते हैं, जिसका परिणाम कभी-कभी बहुत गंभीर हो जाता है। झगड़ा करने वाले भी हमेशा बुरे आदमी नहीं होते। साधारण आदमी भी, जो अक्सर प्रेम से रहते हैं और तबीयत से झगड़ालू नहीं हैं, कोई तीखी या या अपमानजनक बात सुन कर मिजाज खो बैठते हैं और बात की बात में झगड़ा खड़ा हो जाता है! परन्तु कुछ लोग तो आदत से ही झगड़ालू होते हैं। उनकी बात अलग है। वे कभी सुख-शांति से नहीं रह सकते। परन्तु समझदार आदमियों की कोशिश तो यही होती है, होनी भी चाहिए कि झगड़ा नहीं हो।

फिर भी वे कभी-कभी झगड़ों में फंस जाते हैं और आसपास के लोग जान-अनजान में इस आग में तेल डालने या हवा देने का काम कर जाते हैं। नतीजा यह होता है कि एक झगड़ा दूसरे झगड़े का बीज बन जाता है। जो गलतफहमी या, मनमुटाव शुरू में केवल दो आदमियों के बीच था वह फैल कर दो परिवारों में और धीरे धीरे यदि ध्यान नहीं रखा गया तो पड़ोसियों और मित्रों के बीच भी फैल जाता है। दोनों तरफ दल खड़े हो जाते हैं। छोटी-सी गलती इनमें आपसी दुश्मनी का रूप धारण कर लेती है।

इस प्रकार के झगड़ों को निपटाने के लिए राज्य की तरफ से न्यायालय होते हैं। यह प्रथा प्राचीन काल से चली आयी है। परन्तु पहले वाले न्यायालयों और आज के न्यायालयों में काफी अंतर है। पहले शायद "कोर्ट फीस" नहीं ली जाती थी, परन्तु अब तो ली जाती है। पहले बहुत कानून नहीं थे और विधि की भी इतनी पेचीदगियाँ नहीं थी। अब तो कानूनों के कारखाने राज्यों में और केन्द्र में खुले हुए हैं, जहाँ दरों से "माल" तैयार होता रहता है! इतने कानून बनते हैं कि दूसरों की बात छोड़िये, बनाने वालों को भी उनका ध्यान शायद नहीं रह पाता होगा! नतीजा यह हुआ कि न्याय देना, दिलाना और पाना एक बहुत बड़ा काम बन गया है। न्यायालयों की संस्था के आसपास एक मेला जैसा लग जाता है, दूकानें लग जाती हैं, इसके पीछे कई नये पेशे खड़े हो जाते हैं और कुल मिल कर एक साधारण आदमी के लिए न्याय पाना इतना महँगा और मुश्किल हो जाता है कि वह बरबाद हो जाता है! फिर यहाँ जो न्याय मिलता है, उससे दोनों पक्षों को संतोष नहीं होता। जो हारता है, उसे लगता है या सलाह मिल जाती है कि अपील करनी चाहिए। और यदि अपील पर अपील की जगह है, तो वहाँ भी लोग जाते हैं। परन्तु कहीं भी जायें, एक की हार और दूसरे की जीत तो होती ही है। इतनी सारी परेशानी और बरबादी उठाने के बाद भी किसी को हार तो माननी ही पड़ती है। ऐसी अगर पहले से ही हार मान ली होती, तो इतनी परेशानी और बरबादी तो नहीं होती। परन्तु वहाँ सारा वातावरण दूसरे प्रकार का होता है। कोई संतोष मना कर बैठने ही नहीं देता।

आदमियों के बीच वैमनस्य या झगड़ा होना कोई अनहोनी बात नहीं है। परन्तु उसका इलाज ऐसा होना चाहिए, जिससे यह बीमारी अच्छी हो जाये और जहर निकल जाये। ऐसा न हो कि जितना इलाज हो, बीमारी बढ़ती ही जावे। बहुत बड़े और पेचीदा मामले यदि खानगी तौर पर नहीं सुलझते हों तो वे भले ही कोर्ट में जायें। परन्तु बहुत से दीवानी और फौजदारी मामले भी खानगी तौर पर आपस में निपटाये जा सकने चाहिये। घरेलू मामले-मसलन सास-बेटे, पति-पत्नी, भाई-भाई आदि के मनमुटाव के झगड़े ऐसे ही होते हैं। इनका निपटारा आपस में हो सकता है और आपस में हो जाये, ऐसी कोशिश इन पक्षों को और इनके हितैषियों को जरूर करनी चाहिए। ऐसा जहर समाज में जितना कम हो, भला ही है।

विनोबाजी जब सन् '६० की बरसात में इंदौर पधारे थे, तब उन्होंने इंदौर को सर्वोदयनगर बनाने का विचार प्रकट किया था और दूसरी बातों के साथ-साथ उन्होंने यहाँ ऐसे लोगों का, जो दुनिया के धंधों से फारिग हो गये हैं और समाज सेवा की भावना रखते हैं, वानप्रस्थ-मंडल बनाने की प्रेरणा दी थी। खुशी की बात है कि ऐसा वानप्रस्थ-मंडल यहाँ बन भी गया है। इन वानप्रस्थों में कुछ लोग ऐसे भी हैं, जिन्हें न्यायदान का अनुभव है। वे जानते हैं कि न्याय प्राप्त करने में लोगों को कितनी परेशानियाँ होती हैं। कई लोग दिवालिये होकर बैठ जाते हैं और अगर खून गरम हो गया, तो जरा जरा-सी बात पर मामूली-सा झगड़ा खून-खराबी का रूप धारण कर लेता है! माता-पिता की लड़ाई में बच्चे आवारा हो जाते हैं और उनका जीवन नष्ट हो जाता है। यह सब हमने देखा है। विनोबाजी की इच्छा थी कि ऐसे झगड़े सुलझाने में यदि उन अवकाशप्राप्त अनुभवी न्यायाधीशों का कुछ उपयोग हो सके तो वे यह काम अवश्य करें। अतः इस वानप्रस्थ-मंडल ने अपने बीच से ऐसे अनुभवी पुरुषों की एक समाधान-समिति बना दी है।

इंदौर शहर के या बाहर के भी जो भाई इससे लाभ उठाना चाहें, वानप्रस्थ-मंडल की इस समिति को उनकी सेवा करने में खुशी होगी। पक्षकारों को इसके लिए कुछ देना नहीं होगा। परन्तु यदि समिति को यह लगा कि पक्षकार सच्चे दिल से झगड़ा निपटाना नहीं चाहते, केवल सामने वाले की कमजोरी या ताकत का अनुमान करना चाहते हैं तो यह समिति ऐसे व्यक्तियों की सहायता नहीं कर सकेगी। समिति इस बात का पूरा ध्यान रखेगी कि इस संस्था का कोई दुरुपयोग नहीं करे। यहाँ जितनी कार्यवाही होगी शुद्ध मन से और निष्पक्ष भाव से होगी। यहाँ का कोई सबूत सरकारी न्यायालय में नहीं जा सकेगा, इस बात का प्रबंध रखा गया है। जो यहाँ अपने झगड़ों के निपटाने के लिए आयें, वे केवल झगड़ा निपटाने की इच्छा से ही आयें। उनसे आशा की जायेगी कि वे सचाई और नेकनियती से ही काम लेंगे, झूठी बात नहीं कहेंगे। जहाँ तक संभव होगा, गवाह नहीं लिये जायेंगे; अगर यह पाया गया कि कोई पक्ष अनुचित भावना से आया है तो समिति के लिए उसकी सहायता करना संभव नहीं होगा। समिति उनसे क्षमा मांग कर विदा कर देगी। जाहिर है कि समिति के पास कोई सत्ता नहीं है। इसलिए उसके निर्णयों का पालन पक्षकारों की सद्भावना पर ही निर्भर होगा।

(सर्वोदय प्रेस सर्विस, इंदौर)

विनोबा-यात्रा : एक संस्मरण

आखिर उनके चरणों में मैं कैसी पहुँची?

उस दिन सुबह शरणिया आश्रम में बैठी-बैठी मैं सोच रही थी कि बंगाल-असम सीमा पर मंगल समारोह हो रहा होगा। ५ मार्च, '६१ की सुबह थी। शरीर से तो मैं गौहाटी में थी, कर्तव्यवश जा नहीं सकती थी; किन्तु मेरे पास सबसे वेगवान् साधन था मेरा मन। वह मुझे ले गया उस सीमा पर...! कितनी भीड़ होगी, विरह-मिलन के भाव लेकर कार्यकर्तागण इकट्ठे हुए होंगे!

मैं सोच रही थी, इतने में रेडियो उसी समारोह का वर्णन करने लगा। बंगाल के विदाई-गीत के करुण स्वर हृदय को स्पर्श किये बिना नहीं रहे और असम के स्वागत-गीत के स्वरों के साथ मैं भी स्वर मिला कर गुनगुनाने लगी—"मालो भाई चल भाइ र जाऊं वृन्दावने।" (चलो भाई, चलें वृन्दावन!) स्वागत करती हुई अमलप्रभा दासदेव के वे शब्द सुनाई दिये—"बहुत दिन के बाद हमारे पिताजी घर लौटे हैं!"

दिन बीत रहे थे। पुरी और अजमेर के सम्मेलनों में देखी मूर्ति आँखों के सामने आ रही थी! दिन में कितनी बार उस मूर्ति के पास मैं रहती थी! जैसे-जैसे यात्रा गौहाटी के नजदीक आ रही थी, मेरी उत्सुकता बढ़ती आ रही थी। कब मैं प्रत्यक्ष उनसे मिल सकूँगी, यही एक विचार मन में आता था। मन ही मन कहती रही—"बाबा के साथ रहने वाले भाग्यवान् हैं!"

आखिर शरणिया आश्रम में बाबा पहुँचे। कितने ही दिनों से मैं मन ही मन में हिन्दी में वाक्य रचती रही। बाबा के साथ कैसे बोलूँगी, क्या बोलूँगी? अमलप्रभा दासदेव के शब्द आते थे। लगा कि पिताजी का स्नेह पाकर रहूँगी। परंतु दो दिन कितनी व्यस्तता में उड़ गये! तीसरे दिन "जय जगत्" मंत्र के साथ बाबा को हमने आश्रम से विदाई दी। आँखों से आँसू बहने लगे! दो दिन मानों दो क्षणों के जैसे उड़ गये!

मई का महीना था। 'प्रूफ' देखने का काम करके शाम को प्रेस से आश्रम लौटी थी। पता चला कि मुझे चार लड़कियों के साथ बाबा की यात्रा में जाना है। सुन कर जो भाव उठे, उसका वर्णन करने के लिए शब्द कहाँ से लाऊँ! १२ मई को संध्या समय दलपुर (उत्तर लखीमपुर) पहुँची। फौरन बाबा को देखने गयी, लेकिन कितनी भीड़ थी! खिड़की से झाँक कर देखा। बहुत दिन के बाद पिताजी घर लौटते हैं, तो छोटा बालक उनके पास जाने के लिए संकोच करता है, ऐसा ही कुछ हुआ।

लेकिन ऐसे कितने दिन रह सकती थी! आखिर उनके पास पहुँची, बातें करने लगी। उनके पास मेरा "मराठी" भाषा का वर्ग शुरू हुआ। भारत का ही नहीं, बल्कि विश्व का महान् ग्रंथ गीता, मराठी "गीताई" उन्होंने सिखाना शुरू किया। बारहवाँ अध्याय, बाबा की स्नेहमयी वाणी! परंतु मैं कितनी अज्ञानी थी! गीता में जो मधुर रस भरा है, उसको मैंने चखा नहीं था। बाबा ने उस रस का चसका लगा दिया। टूटे-फूटे, अस्पष्ट उच्चारण के साथ मैंने गाना आरंभ किया—"जसे सिखळले कोणी तुज भक्त उपासितीं।"

—लक्ष्मी फुकन

सेवाग्राम का नयी तालीम-परिसंवाद

"बुनियादी शिक्षा जिन मूलभूत सिद्धान्तों पर आधारित है, वे मूल में सही हैं। सही ढंग से अमल में न लाये जाने के कारण शासन को जो असफलता मिली है, वह उसके मूलभूत सिद्धान्तों की है, ऐसा नहीं कहा जा सकता।"

सेवाग्राम, वर्धा में अखिल भारत सर्व सेवा संघ द्वारा आयोजित गत ता० २८ से ३० अगस्त तक एक त्रिदिवसीय परिसंवाद में देश भर के नयी तालीम के कार्यकर्ताओं ने एकमत से महसूस किया कि इस शिक्षा-पद्धति को अमल में लाने के लिए जो आवश्यक व्यवस्था तथा अनुकूलताएँ होनी चाहिए उनका अभाव रहा। राष्ट्रीय नीति के तौर पर मान्य किये जाने के बावजूद जो प्रतिष्ठा मिलनी चाहिए थी वह नहीं दी गयी। पुरानी तालीम की प्रतिष्ठाओं को ज्यों का त्यों बनाये रखा गया। बुनियादी शिक्षा से निकले विद्यार्थियों के लिए उच्च शिक्षा का मार्ग करीब-करीब सभी राज्यों में बन्द रखा गया। विद्यार्थियों की योग्यता जाँचने की उसकी जो विशिष्ट प्रणालियाँ थीं, उनकी उपेक्षा करके परीक्षाओं की प्रचलित प्रणाली में ही उसको बैठने का प्रयत्न शासन द्वारा होता रहा है।

सेवाग्राम-परिवार की ओर से परिसंवाद में आये प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए श्रीमती कुसुम बहन ने कहा, "नयी तालीम मेरी सबसे बड़ी देन है"—बापू के इस कथन की उपेक्षा बापू के भक्तों द्वारा ही हो रही है! आज तो द्रौपदी के चीरहरण जैसी बुनियादी शिक्षा की स्थिति हो गयी है। नयी तालीम चिल्ला-चिल्ला कर अपना दुखड़ा रो रही है, पर उसकी व्यथा की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा है। यदि बापू के इस कथन में जरा भी सत्य है कि एक न एक दिन दुनिया को उनके प्रेम और करुणा के रास्ते पर आना ही है, तो वह दिन हमको नजदीक लाना है।

सिंहावलोकन

सर्व सेवा संघ में हिन्दुस्तानी तालीमी संघ के मर्जर के बाद के पाँच वर्षों के काम का सिंहावलोकन करते हुए संघ के सहमंत्री श्री राधाकृष्ण ने कहा कि कार्यकर्ता-सम्पर्क, शासन से सम्बन्ध तथा समग्र नयी तालीम की दिशा में काम सतत चलता रहा है। गैरसरकारी तौर पर चलने वाली कई संस्थाओं में तथा कुछ सरकारी संस्थाओं में भी नयी तालीम के जो प्रयोग हुए हैं, उनमें सफलता की आशाप्रद झाँकियाँ देखने को मिलती हैं। परन्तु आज कई सार्वत्रिक समस्याएँ हैं—जैसे अंग्रेजी शुरू करना तो कब से शुरू करना, पैसे की तालीम, परीक्षाओं के दुष्परिणाम, शासन के दैनिक जीवन में छोटे-छोटे अप्रामाणिक व्यवहार—ऐसी अनेक बातों में जगह जगह मर्यादाएँ बनें और उस आधार पर लोक शिक्षण का कार्यक्रम आयोजित हो कि सही शिक्षा क्या है! आम तौर पर आज सरकार के जरिये जो काम चलता है, उसमें यह स्पष्ट होता है कि उनका सारा जोर अनिवार्य और व्यापक शिक्षा के संयोजन में ही लगा है। शिक्षा के गुण-विकास की दृष्टि से बहुत कम कोशिश की जा रही है।

नयी तालीम विश्वविद्यालय स्थापित हो

परिसंवाद के अध्यक्ष श्री मूलशंकर भाई बधे ने कहा कि निराशा और असफलता का प्रश्न ही नहीं उठता। बुनियादी शिक्षा के सिवाय कोई दूसरा विकल्प ही नहीं है। जरूरत तो इस बात की है कि पूर्व-बुनियादी से लेकर अन्तिम स्तर तक के लिये नयी तालीम के सम्पूर्ण दर्शन का योतक एक नयी तालीम विश्वविद्यालय स्थापित हो। नयी तालीम के मूल्यों से जन जन को भक्ति और श्रद्धा भर अवगत कराने का भूदान-ग्रामदान की तरह आन्दोलन चले। कार्यकर्ताओं द्वारा नयी तालीम का एक भव्य दर्शन लोगों को मिलता है, उसका अधिक से अधिक प्रचार प्रसार हो।

बच्चे से पहले माँ-बाप को बदलें

श्री रामचरण दास ने कहा, आज धूँधला क्यों है? केन्द्रीय अवधारणा किधर है? बढ़कर अपेक्षाएँ हम करते हैं और वे दूसरे से पूरी नहीं होतीं तो हम नाराज होते हैं। गांधीजी के कार्यक्रमों को देश और सरकार ने मान लिया यह एक बड़ा भ्रम है। शिक्षा तो समाज परिवर्तन की अखण्ड प्रक्रिया है। बुनियादी स्कूलों में बच्चे नहीं आते, इसका कारण यह है कि हमने उनके माँ-बाप को नहीं समझाया है। हमने धंधों को 'कनटूर्ट' नहीं किया है। नयी तालीम या रंग भरत है। सफेद में सब रंग निहित हैं, प्रकट नहीं रहते। आज उनको प्रकट करने से नयी तालीम राष्ट्रव्यापी होगी और समाज के नवनिर्माण का माध्यम सिद्ध होगी।

आकांक्षाओं के साथ शिक्षण का मेल नहीं बैठा

श्री दादा धर्माधिकारी ने कहा कि गांधीजी के आंदोलन में जो हम सब लोगों की शादियाँ खादी के पास आने से रुके हो गयी थीं। घर की स्त्रियों का कहना रहा कि तुम पर बस नहीं चला तो नहीं चला, पर बेटे-बेटियों को तो दुनियादार बना रहने दो! इसका मतलब यह है कि आज उन्नत जीवन की आकांक्षाओं के साथ बुनियादी शिक्षण का मेल नहीं बैठ पाया। वे आकांक्षाएँ अच्छी हैं, ऐसा मैं नहीं कहता, पर वस्तुस्थिति यह है।

सरकार प्रयोगात्मक मान्यता प्रदान करे

गुजरात के श्री मूलशंकर भट्ट ने गुजरात में नयी तालीम के काम की प्रगति के बारे में बताते हुए "मेरा गाँव की ओर भक्ति देश की" बता कर नयी तालीम के लिए आज की चुनौती को स्वीकार उठाने की बात कही।

श्री ठाकुरदास बंग ने भूदान-ग्रामदान की तरह नयी तालीम के मूल्यों के प्रचार-प्रसार पर जोर दिया, विश्वविद्यालय की स्थापना को आवश्यक बताया और कहा कि शिक्षा-विभाग स्वतन्त्र नयी तालीम न चला कर, बल्कि बाल-शिक्षण और प्रौढ़ शिक्षण, दोनों को परस्परपूरक मान कर चलना चाहिए। काम को गति और विस्तार देने के लिए सरकार और विश्वविद्यालयों को नयी तालीम की कुछ संस्थाओं को प्रयोगात्मक रूप से मान्यता प्रदान करनी चाहिये।

कारीगरी का वर्ग धीरे धीरे समाप्त हो रहा है

श्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम् ने नयी तालीम के पिछले पच्चीस वर्षों का इतिहास बताते हुए कहा कि आज दुःख की बात है कि बुनियादी शिक्षा के नाम पर चूँकि केन्द्रीय सरकार पैसा देती है, इसलिए प्रान्तीय सरकारें प्रचलित विद्यालयों के आगे 'बुनियादी' शब्द लगा देती हैं।

देश में कला और कारीगरी का जो सदियों से काम चला आ रहा है, वह आज की इस शिक्षा के फलस्वरूप शनैः शनैः समाप्त हो रहा है। कारीगरों के लड़के स्कूल में जाकर बाबू बन रहे हैं, यह एक बड़ी दुःखद स्थिति है।

बुनियादी शिक्षा नित नूतन विकासशील हो

श्री मनमोहन चौधरी ने इस बात पर बहुत जोर दिया कि वैज्ञानिक तथा 'टेकनालाजिकल' क्रांति के कारण आम जनता के मन में जो उन्नत जीवनमान की इच्छा पैदा हुई है, उसकी पूर्ति के लिए विकेन्द्रित उद्योगों तथा खेती की 'टेकनालाजी' की तरक्की में आधुनिक वैज्ञानिक साधनों का पूरा उपयोग किया जाना चाहिये। पाठ्य-शिक्षक संघ की स्थापना तथा शिक्षा के काम में दिलचस्पी लेने वाले अन्य शिक्षक, विद्यार्थी, अधिकारी, पंचायतों के पदाधिकारियों आदि से सम्पर्क स्थापित हो।

वैज्ञानिक एवं लोकप्रिय साहित्य का निर्माण हो

श्री के० अरुणाचलम् ने शिक्षा को ही एकमात्र समाज-परिवर्तन का माध्यम बताते हुए कहा कि नयी तालीम में अनुसंधान तथा प्रयोगों की दिशा में काम सतत चलता रहना चाहिये। प्रयोग वैज्ञानिक ढंग से चलें, तो उनमें से पर्याप्त परिमाण में शास्त्रीय साहित्य का निर्माण होना स्वाभाविक है। उसके निर्माण के साथ-साथ भूदान-ग्रामदान साहित्य की तरह नयी तालीम का लोकप्रिय साहित्य अधिक-से-अधिक मात्रा में प्रकाशित हो। समग्र नयी तालीम के प्रयोगों को बढ़ावा दिया जाय।

राष्ट्रव्यापी से पहले जीवनव्यापी हो

श्री बल्लभस्वामी ने कहा कि बुनियादी शिक्षा प्राप्त छात्रों के लिए समाज-सेवा या शासकीय सेवा तथा आगे की शिक्षा के लिए विश्वविद्यालयों आदि में जाने पर कोई किसी किस्म का प्रतिबन्ध या नैतिक रोक नहीं होनी चाहिये। सरकार की ओर से तथा हमारी ओर से, दोनों तरफ से उनके लिए रास्ता खुला रहना चाहिये, तभी वह जीवनव्यापी बन सकेगी। जब जीवनव्यापी होगी तब वह पूरे राष्ट्र भर में स्वतः ही व्याप्त होगी।

सर्वश्री मनुभाई, सत्यनारायण दास और वासुदेव ठाकुर ने अपने अपने विचार इस दिशा में व्यक्त किये कि बुनियादी शिक्षा राष्ट्रव्यापी बननी चाहिये और उसके रास्ते की हर अड़चन को हटाना हम सबका काम है।

आर्थिक संयोजन के साथ शिक्षण चलना चाहिये

परिसंवाद के दूसरे दिन दोपहर बाद की चर्चा सर्वोदय-काम की सब प्रवृत्तियों में नयी तालीम का रंग हो तथा समग्र नयी तालीम विषय पर केन्द्रित रही, जिसका आरम्भ करते हुए श्री अण्णा साहब सहस्रबुद्धे ने कहा कि आर्थिक संयोजन के साथ शिक्षा चलनी चाहिये। अंत्योदय की दृष्टि से जनता को चालित (मोबिलाइज) करने और उनके नेतृत्व के लिए कार्यकर्ता तैयार करने व समस्याओं का समाधान ढूँढ़ने का प्रयत्न होना चाहिये।

नयी तालीम 'सोशल डायनेमिक्स' बने

आचार्य राममूर्ति ने समग्र नयी तालीम, उसका स्वरूप तथा उसकी ओर बढ़ने के प्रयत्नों का जिक्र करते हुए कहा कि गाँव की बुद्धि, शक्ति और साधन से गाँव के समग्र विकास को गाँव की नयी तालीम का माध्यम बनाया जाय। गाँव ही शाला का रूप ले। साथ रहने की कला में शिक्षण का सम्यक् विकास हो। हम आज के बढ़ते विज्ञान और लोकतन्त्र के 'चैलेंज' को समता और समग्रता के रूप में स्वीकार करें। उसके बिना शिक्षा का राजनीति और व्यवसाय के मुकाबिले में नेतृत्व स्थापित न हो सकेगा। लोक-शिक्षण हो या बाल शिक्षण, उसके बिना नयी तालीम 'सोशल डायनेमिक्स' न बन सकेगी।

सुश्री शान्ता नारुलकर, श्री बलवन्त सिंह, श्री गोविन्द भाई ने समग्र नयी तालीम विषयक अपने विचार व्यक्त किये। चर्चा का समारोप करते हुए श्री राधाकृष्ण ने कहा कि सभी रचनात्मक प्रवृत्तियों पर नयी तालीम का रंग तभी चढ़ सकता है, जब कि ग्राम-निर्माण क्षेत्र में निर्माण का काम शिक्षण की प्रक्रिया हो। कार्यकर्ता-प्रशिक्षण को क्षेत्र के काम से जोड़ा जाय और उसमें भी शैक्षणिक प्रक्रियाएँ अपनायी जायँ। सहचिन्तन की पद्धति विकसित की जाय।

हमारी गैरसरकारी संस्थाओं में नयी तालीम का स्वरूप

परिसंवाद के तीसरे और अन्तिम दिन हमारी गैरसरकारी संस्थाओं में नयी तालीम के स्वरूप की चर्चा आरम्भ करते हुए श्री ग० उ० पाटणकर ने कहा कि आज स्वतंत्र जीवन-शिक्षण की समस्या बड़ी जटिल है। एक ओर हम अंग्रेजी हटाना चाहते हैं, पर दूसरी ओर उसका निचली कक्षाओं में भी प्रवेश हो रहा है! पूर्वबुनियादी शिक्षण माँटेसरी पद्धति सरीखा चल रहा है और वह भी शहरों तक सीमित है। उत्तर बुनियादी के बारे में सरकार का कहना है कि उनके मुताबिक बहुउद्देशीय उच्च माध्यमिक विद्यालय जैसा 'सिलेबस' बने। इस समय मुख्य रूप से अपने सिद्धान्तों का सवाल है।

श्री मनुभाई(?) भट्ट ने चर्चा को आगे बढ़ाते हुए कहा कि गुजरात में शासन के साथ अच्छा सम्बन्ध बना है। लोकभारती में उत्तर बुनियादी तक का स्वरूप विकसित हुआ है, जिसे शासन और विश्वविद्यालयों दोनों ने मान्यता दी है। आज आवश्यकता है सर्व सेवा संघ नयी तालीम समिति बना कर उसके द्वारा गैरसरकारी संस्थाओं को मान्यता देने का काम हाथ में ले। समय पर सतत मार्गदर्शन करे और जितनी संस्थाएँ काम कर रही हैं, उनको एक सूत्र में बाँधने का प्रयत्न करे, जिससे हमारा एक बड़ा भ्रातृत्व मंडल बने।

मूल्यांकन और समीक्षा की पद्धति का पर्याप्त विकास हो

श्री वासुदेव छाबड़ा ने राजपुरा पंजाब में चल रहे नयी तालीम के काम का जिक्र करते हुए कहा कि प्रचलित परीक्षा के स्थान पर समीक्षा और मूल्यांकन की पद्धति का पूरा-पूरा विकास होना आवश्यक है। इसी तरह भावात्मक एकीकरण का भी अहम् सवाल है, जिसका रास्ता नयी तालीम सुझा सकती है।

गांधी-विचार की ज्योति बुझने न पाये

श्री मुक्तेश्वर भाई और श्री प्रेम भाई के बाद श्री वैद्यनाथ चौधरी ने कहा कि आज देश में भोग-लालसा और लालच का प्रवाह चल रहा है और दूसरी ओर नयी तालीम है। गांधीजी युग-प्रवाह के साथ बहने वाले व्यक्ति नहीं थे, वरन् वह युगद्रष्टा थे। हम नयी तालीम के विद्यालयों को शासकीय मान्यता दिलाने के प्रयत्न के बजाय इसकी माँग करें कि सरकार शासकीय सेवा के लिए डिग्री और सर्टीफिकेट का बंधन हटा कर जिस नौकरी के लिए जिस योग्यता के व्यक्ति की आवश्यकता हो, केवल उस योग्यता की परीक्षा ले।

विज्ञान और टेक्नालोजी, ज्ञान के लिए या भोग के लिए?

श्री शंकरराव देव ने परिसंवाद के समाप्त होते-होते फिर एक ज्वलंत प्रश्न उपस्थित किया कि विज्ञान और टेक्नोलोजी की आज माँग बढ़ी है, तो सोचना चाहिये कि वह ज्ञान के लिए है या भोग के लिए! याज्ञवल्क्य और प्लेटो से लेकर गांधी तक यह द्वन्द्व और द्वैत समाज में चलता रहा है। भोग निर्माण के नित नये साधन जुटाते रहने पर हम उसके असर से अछूत रह सकेंगे क्या? यह सामाजिक दर्शन की एक चुनौती है।

अध्यक्ष श्री जुगतराम दवे ने अन्त में उपसंहार करते हुए कहा कि विज्ञान के हाथ में हम नहीं, वरन् हमारे हाथ में विज्ञान रहे। वह हम पर हावी न हो जाये, उसके लिए हमारे अन्दर कोई अहं भावना जैसी चीज पैदा न हो। हम विज्ञान को समझबूझ कर नयी तालीम में दाखिल करें, उसे कोई मजबूरी की दृष्टि से न लें।

—गुरुशरण

पौड़ी गढ़वाल में शराबबन्दी 'पिकेटिंग'

गत ७ मार्च, '६२ से समस्त उत्तराखण्ड में पूर्ण मद्यनिषेध के प्रतीक स्वरूप पौड़ी गढ़वाल की देसी व अंग्रेजी शराब व टिंचरी की दुकानों पर गढ़वाल के वयोवृद्ध क्रान्तिकारी नेता श्री सच्चिदानन्दजी डोभाल शास्त्री, अध्यक्ष, अन्तरिम जिला-परिषद के संचालन में शान्तिमय 'पिकेटिंग' चल रहा है। प्रातः प्रभातफेरी, जन-सम्पर्क के उपरान्त ग्यारह बजे दोपहर से उक्त दुकानों पर धरनाधारी स्वयंसेवक पहुँच कर पिकेटिंग शुरू करते हैं।

हमारा कार्यक्रम निम्न है—

(१) शराब खरीदने व पीने वालों से न खरीदने व न पीने की प्रार्थना करना तथा उन्हें रोकना। (२) विक्रेताओं से इस नाजायज व्यापार को छोड़ कर अच्छे व्यवसाय करने की प्रार्थना करना। (३) सरकार से प्रार्थना है कि—(अ) अंग्रेजी शराब किन्हीं आवश्यक कारणों से बन्द न हो सके, तो 'परमिट' प्रणाली चालू करना। (आ) चमोली व पौड़ी गढ़वाल की सभी देसी शराब की दुकानों को अप्रैल पूर्णरूपेण बन्द कर इस क्षेत्र में कठोरता से मद्यनिषेध लागू किया जाय।

(इ) पर्वतीय क्षेत्र में टिंचरी के लाइसेन्स किसी को भी न दिये जायँ।

हमारी प्रार्थना पर स्थानीय जनता का पूर्ण सहयोग मिल रहा है। नगर की माता-बहनें, बुजुर्ग, विद्यार्थी, बच्चे प्रभातफेरी से लेकर पिकेटिंग तक हमारा साथ देते हैं। पिछले सालों के आन्दोलन के फलस्वरूप बद्री-केदारनाथ-यात्रा मार्ग पर हुई मोटर-दुर्घटना जाँच समिति की रिपोर्ट, चमोली व गढ़वाल में लोकसभा व विधान-सभाओं के चुनाव शान्तिपूर्वक सम्पन्न करवाने की दृष्टि से सरकार ने यात्रा-मार्ग के चार दुकानें-सतपुली, पौड़ी, श्रीनगर और चमोली—३१ मार्च '६२ से बन्द करवा दी हैं। टिंचरी के विक्रेता की दुकान किन्हीं दूसरे कारणों से २ अप्रैल '६२ से बन्द हो गयी है, तब से हमारा पिकेटिंग पौड़ी में अंग्रेजी शराब तथा कोटी केदारनाथ मार्ग पर देसी शराब की दुकान पर वहाँ के भाई श्री रणबहादुरसिंह शिकवाण द्वारा चल रहा है। वहाँ शराब की बिक्री नहीं के बराबर है तथा जनता का पूर्ण सहयोग मिल रहा है और सरकार भी हर समय पिकेटिंग के विषय में पूछती रहती है।

इस पिकेटिंग के समय हमने उन भाइयों के भी दर्शन किये, जो कुछ समय पहले नामी रईस थे और इस टिंचरी राक्षसी के भयंकर जबड़े में जिनकी सारी धन-दौलत, मकान, जेवर आदि समा चुके हैं। हमने उन माताओं व बहनों के दर्शन किये, जिनके लड़के व पोते चार-चार, पाँच-पाँच सौ मासिक कमाते हैं, पर फिर भी उनके तन पर फटे-पुराने चिथड़ों के सिवाय कुछ भी नहीं है। हमने उन लाड़ले बच्चों को देखा, जिनके पिताओं को यह भयंकर राक्षसी समय से पूर्व ही मौत के मुँह में पहुँचा चुकी है और अब वे अनाथ होकर दर-दर की ठोकरें खाते भटक रहे हैं! हमने यह भी देखा कि बहनें दिन भर मेहनत करते हुए गाय-भैंस की टहल कर दूध का एक बूँद भी अपने बच्चों को न देकर, राशन और कपड़े के लोभ से बाजार में भेजती हैं और वहाँ से आते हैं उनके पति और लड़के नशे की मस्ती में गालियों की बौछारें छोड़ते, फटे-हाल कीचड़युक्त विकृत सूरत लिये! और भी कई अनैतिक बातें देखने को मिलती हैं।

विक्रेता भाइयों की सद्भावना हमारे साथ रही है, पर टिंचरी-विक्रेता भाई समझते हुए भी स्वयंसेवकों को हर समय उत्तेजित करते रहते थे, नाना प्रकार की धमकी देते और नाना प्रकार की अश्लील बातें बहनों के सामने कहते थे। कई प्रकार का प्रलोभन हमारे घरों तक देने की कोशिश की! धक्के-मुक्के, जूता आदि तक उठाने में उन्होंने कसर नहीं रखी।

कई बार झूठे मुकदमे भी हमारे खिलाफ चलाये, पर स्वयंसेवकों ने हमेशा अपनी मर्यादाओं का पालन कर सब कुछ सहन किया। मुझे तो कई बार मारने का प्रयत्न किया गया तथा कई बार झूठे मामलों में फँसाया गया, पर भगवान् ने हम सबकी पूरी रक्षा की। मुख्यतः एक बार ३४२ दफा और दूसरी बार १०७।११७ दफा हम पर टिंचर-विक्रेता ने चलायी, पर वे भी यों ही खत्म हो गयीं।

शराब खरीदने वालों में मुख्यतः तीन वर्ग पाये गये। टिंचरी की दुकान पर मजदूर-वर्ग, देसी शराब की दुकान पर क्लर्क, चपरासी और गाँव के लोग तथा अंग्रेजी शराब की दुकान पर बड़े अफसरों के नौकर, चपरासी। उनसे पूछने पर पहले तो वे कहते हैं कि हमारे बच्चों की तबीयत खराब है, दवा के लिए ले जा रहे हैं। गहराई से पूछने पर बताते हैं कि फलाँ साहब ने मंगाई और उक्त बातें कहलवाई हैं। यह कहने पर कि तुम क्यों ले जाते हो, तो कहते हैं, क्या करें नौकरी तो करनी ही है! पीने वाले कई भाई खरी-खोटी सुना कर जबरदस्ती घुस कर खरीद लेते हैं! कई धक्के-मुक्के लगा कर तथा हतोत्साह वाली बातें कह कर चिढ़ाते हैं और कई भले आदमी साहसपूर्वक आते हैं और मना करते ही वापिस लौट जाते हैं।

जब हम गाँवों में सम्पर्क के लिए जाते हैं तो बुजुर्ग माता-बहनें, विद्यार्थी, बच्चे बड़े स्नेह-भाव से हमें आशीर्वाद देते हैं—भगवान् तुम्हें इसमें मदद दे, तुम हमारा दुःख दूर कर रहे हो। जब हम उनसे कहते हैं कि यह शराब तुम्हें ही बंद करनी है, तो वे हर कीमत पर अपना योग देने के लिए तैयार होते हैं! शराबी भी शराबबन्दी के लिए तैयार रहता है। कई प्रस्ताव व प्रतिज्ञाएँ हमेशा जनता से आती रहती हैं।

इस तरह शान्तिमय पिकेटिंग और जन सम्पर्क का कार्य हम कर रहे हैं, दिन प्रतिदिन हमारी हृदय-वेदना बढ़ती जा रही है कि कब उत्तराखण्ड व पूर्ण देश में शराबबन्दी होगी और लोग चैन की साँस लेंगे!

—बलवन्तसिंह भारती

राष्ट्रीय एकता का प्रश्न

• ओमप्रकाश गुप्त

'एक पुरानी कहावत है—"पढ़ी पारस बेची तेल।" पारस पत्थर पास हुआ है, उससे सोना न बना कर तेल बेचने के लिए बटखरा बना रखा है। एकता का पारस मणि हाथ लगा, किन्तु हमने आत्म-संरक्षण ही उससे तौला। आत्म-संरक्षण एक भौतिक मूल्य है, जब कि एकता आध्यात्मिक मूल्य है। एक में "मैं" और "मेरा" की रक्षा के लिए योजना होती है, दूसरे में इन्हीं "मैं" और "मेरा" को मिटाने की।

परिवार बने तो व्यक्ति को कुछ सहारा तो मिला, किन्तु उसकी समस्या हल नहीं हुई। वह शान्त और निर्भय नहीं रह सका। व्यक्ति के बजाए पूरा परिवार अब एक इकाई बन गया। व्यक्ति की आकांक्षाएँ परिवार की आकांक्षाएँ बन गयीं। पहले आहार प्राप्ति और आत्म-रक्षा व्यक्ति की समस्या थी, अब वह पूरे परिवार की समस्या बन गयी।

मिल्कियत और मालिकी के फंद में जकड़े हुए व्यक्ति ने अपनी शान्ति और सुरक्षा की खोज में समस्या को और भी अधिक उलझा दिया। उसने अपने घर की दीवारें ऊँची करायीं, तिजोरियाँ खरीदीं और सन्तरी रखे। उसने अपने "मैं" को और ऊँचा और आतंककारी बनाने के लिए भय और लोभ के सहारे साधारण लोगों को अपने में मिलाने के चक्र चलाये, अपने नाम की जय बुलवाई, सड़कों, मकानों, कुओं और शहरों में अपने नाम के पत्थर लगवाये, पुतले खड़े करवाये! मनुष्य की इस मनोवृत्ति ने सारे समाज को निगल डाला।

आध्यात्मिक वृत्ति के जो लोग उस समय थे, वे घबरा गये। वे ज्ञानी थे, सन्त थे, भक्त थे। उन्हें दुनिया की असारता का भान था। उनकी बात कौन सुनता! भूखे को पहले पेट भर खाना दीजिये, फिर आध्यात्मिक ज्ञान सुनाइये तो वह सुनेगा। उनके पास आध्यात्मिक ज्ञान तो था, किन्तु भूख की भूख मिटा सकने वाला विज्ञान नहीं। इन्होंने कहा, "तू तो राम सुमरि जग लड़वा दे।" समस्या से जूझने के बजाए ये लोग समाज से दूर कन्दराओं और पहाड़ की गुफाओं में चले गये।

राजनीति वालों ने अपने हाथ में काम लिया। उन्होंने सारे समाज का सर्वेक्षण करके निश्चय किया कि समाज में कुछ सरमायेदार हैं और कुछ गरीब। सरमायेदारों से गरीबों की रक्षा होनी चाहिए, फिर देखा कि कुछ ऊँची जाति वाले हैं, कुछ नीची जाति वाले। नीची जाति वालों के अधिकारों की रक्षा होनी चाहिए। धर्म, जाति, रंग, भाषा आदि के आधार पर इन्होंने समाज के बहुसंख्यक और अल्पसंख्यक, दो हिस्से किये और अल्पसंख्यकों के हित-संरक्षण पर जोर दिया। एक समस्या को सुलझाने में इन्होंने कितनी दूसरी नयी समस्याएं खड़ी कर दीं!

इस सारे वर्गीकरण के बाद जब इन्होंने देखा कि एक वर्ग के अन्दर भी विषमता है और शान्ति नहीं है, तो इन्होंने निर्णय किया कि जब तक देश की दौलत नहीं बढ़ती है, विषमता नहीं मिटेगी। शान्ति नहीं आयेगी, उन्होंने विज्ञान का सहारा लिया और जहाँ पहले एक दाना पकता था, अब सौ दाने पकाये। आयात-निर्यात के साधन भी खूब बढ़ाये। दुनिया में दौलत बढ़ी, किन्तु फिर भी शान्ति नहीं आयी। इन्होंने देखा, उत्पादन तो खूब बढ़ा, किन्तु वितरण ठीक नहीं हुआ।

विज्ञान में उत्पादन बढ़ाने की कला और शक्ति तो भरपूर थी, किन्तु उत्पन्न धान्य को भूखों में वितरण करने की इच्छा-शक्ति लोगों में विज्ञान नहीं पैदा कर सकता था। वितरण के लिए अतएव राजनीति वालों ने कानून का यानी दबाव या बन्दूक का सहारा लिया। बन्दूक याने हिंसा। विज्ञान और हिंसा का गठबन्धन हुआ। विज्ञान ने बन्दूक को भी खूब आगे बढ़ाया। जिस तरह एक दाने की जगह सौ दाने खेत में उगाये उसी तरह एक की जगह सौ का, हजार और लाख का और अन्त में सबका एकसाथ ही सर्वनाश करने की शक्ति विज्ञान ने बन्दूक को दे दी।

आज की स्थिति यह है और यह स्थिति हिन्दुस्तान में ही नहीं, सारी दुनिया में है कि मानव-समाज मनुष्यों का एक जंगल बन गया है। जंगल के पेड़ एकसाथ रहते हैं, बहुत पास-पास भी रहते हैं, एक-दूसरे के सहारे रहते हैं, एक बड़े पेड़ के साए में भी रहते हैं, किन्तु सब इकल्खुरे बन कर रहते हैं। हरएक पेड़ को वह बड़ा हो या छोटा, अपनी ही सुरक्षा की फिक्र रहती है। एक-दूसरे के सहारे रहने वाले भी अपनी ही अपनी सोचते हैं। हर बड़ा पेड़ अपने साए में रहने वाले पेड़ों को पनपने और बढ़ने नहीं देना चाहता। जंगलों के भी नाम होते हैं, कोई नन्दनवन कहलाता है, तो कोई सुन्दरवन, कोई शालवन होता है, कोई देवदार वन, किसीको आम का बगीचा कहते हैं, तो कोई सेब, नाशपाती या खूबानी का बगीचा होता है। सारा मानव समाज आज राष्ट्रों में बँटा है, जातियों और धर्मों में बँटा है, राजनीतिक गुटों में बँटा है और न मालूम कितने वर्गों में बँटा है! ये विभिन्न वर्ग भी क्या हैं, आम और अमरूद के बगीचे हैं। एक-दूसरे के लिए जीने की बात यहाँ भी नहीं है।

आज जब कि राष्ट्रीय एकता के प्रश्न पर विचार हो रहा है, एक बात हमें अच्छी तरह से समझ लेनी चाहिए। राजनीति वालों ने धन, धर्म और जाति इत्यादि के आधार पर समाज का कृत्रिम वर्गीकरण करके वर्ग-संघर्ष का जो हव्वा पैदा कर दिया है, वह नितान्त अवैज्ञानिक और अप्राकृतिक है। मानव समाज में शारीरिक और बौद्धिक शक्तियों के आधार-पर समर्थ और अल्प सामर्थ्य वाले या असमर्थ ऐसे वर्ग तो किये जा सकते हैं, क्योंकि ये जन्मजात और स्वयंसिद्ध होते हैं। गरीब और अमीर, सवर्ण और हरिजन ये सब कृत्रिम विभाजन हैं। खुशी की बात है कि वर्गभेद' और वर्ग-संघर्ष के पक्के पुजारी राजनेता भी अब सहअस्तित्व और 'जिओ और जीने दो' की बात करने लगे हैं।

'जियो और जीने दो' तथा सह-अस्तित्व के विचार वास्तव में वर्गसंघर्ष के विरोध में से निकले हैं। उनकी विधायक व्याख्या हमें खोजनी है। एक माँ अपने नन्हे-मुन्ने के रोने पर 'जिओ और जीने दो' का सहारा लेकर उसे यह नहीं कहती कि बेटा, तुम जहाँ हो वहाँ जिओ और मुझे जहाँ मैं हूँ वहाँ जीने दो। यदि ऐसा होता तो बच्चा जीवित नहीं रह सकता था, सहजीवन सिद्ध नहीं हो सकता था। माँ और बच्चे का सहजीवन कैसे सिद्ध होता है! माँ कहती है, बेटा मैं तो तुम्हारे लिए ही जीती हूँ। मेरा जीवन का लक्ष्य बिन्दु ही तुम हो। सिद्धान्त रूप में कहें तो सहअस्तित्व की शर्त है, असमर्थ को जीने के लिए समर्थ बनाना—'द्र पीट दी अनफीट टु सरवाइव'—दूसरों को जिलाना है, इसलिए जीना।

मनुष्य में दूसरों को जिलाने के लिए जीने की वृत्ति है। एक माँ जब कुछ खाती है तो यह विचार करती है कि उसके बच्चे पर उसके आहार का क्या प्रभाव पड़ेगा? अस्पताल, अनाथालय और स्कूल खोले गये, जगह-जगह प्याऊ और सदाव्रत लगाये। इस सबके पीछे मनुष्य की सबको खिला कर खाने की वृत्ति ही काम करती है। "सर्वभूतहिते रत" की बात मनुष्य में उसकी योग्यता के आधार पर ही की गयी है। वास्तव में मनुष्य पशु से बड़ा माना ही इसलिए गया है कि पशु खाने के लिए ही जीता है, जब कि मनुष्य जीने के लिए खाता है और सेवा-कर्म के लिए जीता है। मनुष्य त्याग के लिए भोग करता है, जब कि पशु जीता ही भोग के लिए है, त्याग की बात वह जानता ही नहीं।

एकता का प्रश्न इसलिए उन गन्दगी को दूर करने का प्रश्न है, जिसके कारण मानव समाज में राष्ट्र, प्रान्त, जाति, धर्म, भाषा, दल और गुट आदि अनेक रूपों में साम्प्रदायिकता की भयंकर महामारी फैली हुई है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज के बिना वह रह ही नहीं सकता। आज जो सारी खराबी उसमें दिखाई दे रही है, वह इसलिए है कि उसे अपने असली स्वरूप को देखने का मौका नहीं मिलता। उसे अपने जीवन के असली उद्देश्य को समझने की सुविधा नहीं मिली है। इन्सान में युग ने अपनी सूझ फूँकी है, उसे अपने ही स्वरूप में रचाया है। उसका भौतिक स्वरूप जरूर अन्य पशु और पेड़ों जैसा है। उसे भी खाने-पीने की जरूरत होती है, उसे भी अपनी सुरक्षा की फिक्र रहती है। मगर फिर भी अपने पहले की समस्त योनियों में श्रेष्ठ योनि का वह है। उसके मस्तिष्क का जितना और जैसा विकास होना चाहिए था वह नहीं हुआ। उसकी कर्मेन्द्रियों ने उस पर कब्जा कर लिया और अन्य पशुओं की तरह खाना-पीना, मौज उड़ाना और मर जाना यही उसने समझ लिया उसके जीवन का उद्देश्य है। उसके जीवन का सत्य क्या है, वह भगवान् का स्वरूप है, यह उसने समझा नहीं उसे अपने स्थूल चक्षुओं से जैसा दिखाई पड़ा यानी अपने पशु जीवन को ही उसने जीवन या सत्य मान लिया और उसीके आधार पर फिर उसने सारे अर्थशास्त्र, धर्म और समाज-शास्त्र, राजनीतिशास्त्र, सारे दर्शन, सिद्धान्त, आदर्श, मूल्य, उद्देश्य और कार्यक्रम बना डाले।

अब तक यह काम नहीं हुआ। इस-लिए नहीं कि इस रहस्य को समझने वाले लोग नहीं थे, ज्ञानी लोग तो थे किन्तु उनके हाथ में अध्यात्म विद्या ही थी, विज्ञान नहीं। एक दाना खाकर सन्तुष्ट और सुखी रहने की अनुभूति उनके पास थी। उपनि-षद वह जानते थे, किन्तु एक-एक दाने की जगह सौ दाने उगाने की कला और विज्ञान उनके पास नहीं था। विज्ञानशून्य अध्यात्म आगे कैसे बढ़ता? फिर भौतिक मूल्यों के आधार पर टिके हुए उनके जीवन में अब तक ऐसा अति व्यापक संकट कभी नहीं आया था, जिसमें सबके एकसाथ सर्वनाश की चुनौती होती और सब मिल कर उसका मुकाबला करते। इस परमाणु युग ने सौभाग्य से आज पूरे मानव समाज के सर्वनाश के खतरे की घंटी बजा कर इन्सान को चौकन्ना कर दिया है, उसे दर्शन करा दिया है कि हिंसा का रास्ता सर्वनाश का रास्ता है, उसी बनाये हुए हिंसा के ये आयुध भस्मासुर बन कर उसीको जला डालने के लिए दौड़े चले आ रहे हैं। आज एक ओर सारी मानव जाति है और दूसरी ओर हिंसा के साधन ये परमाणु बम। इन पर विजय पाने के लिए इनकी कमजोरी को जान लेना है। इनकी कमजोरी यह है कि ये मनुष्य के सहयोग के बिना कुछ नहीं कर सकते। इनसे बचना है तो फिर मानवसमाज को इन के विरुद्ध जिहाद बोलना होगा। चाणक्य बन कर इनकी एक-एक जड़ उखाड़ कर उनमें मट्ठा देकर इन्हें सर्वदा के लिए निर्बीज और निर्मूल करना होगा।

हिंसा के इन भयंकर आयुधों की जड़ें कहाँ हैं और बीज क्या है? गहराई में जाकर देखें तो स्पष्ट दिखाई देगा कि दंडनीति पर टिकी हुई राज्य-व्यवस्था और राजनीति में इसकी जड़ें हैं और व्यक्ति

के हृदय में बैठे हुए लोभ और भय इसके बीज हैं। विनोबा जी इसीलिए कहते हैं कि अब राजशक्ति और राजनीति, दोनों निकम्मे हो गये हैं, इन दोनों से काम नहीं चलेगा। लोकशक्ति और लोकनीति की जरूरत है इसकी जड़ें उखाड़ने के लिए और सत्य, प्रेम और करुणा का स्निग्ध गोरस चाहिए भय और लोभ रूप इसके बीज नष्ट करने के लिए।

मनुष्य और समाज की यह समस्या मूलतया एक नैतिक समस्या है। राज्य-शक्ति के द्वारा यह काम नहीं हो सकता। गांधीजी ने इस प्रकार के अहिंसक समाज की एक कल्पना हमारे सामने रखी है :

"असंख्य देहातों से संयुक्त इस ढाँचे में निरन्तर फैलाव वाले वर्तुल होंगे, चढ़ाव वाले कभी नहीं। जीवन एक सुंडाकार स्तम्भ की तरह नहीं होगा, जिसमें चोटी का भार तली पर रहता है। यह एक समुद्रीय वर्तुल जैसा होगा, जिसका केन्द्र बिन्दु होगा व्यक्ति। जिस प्रकार तालाब में ढेला मारने पर पहले एक गड्ढा बनता है, फिर क्रमशः एक के बाद दूसरी वर्तुलाकार तरंगें उठती हैं और अन्त में सारा तालाब तरंगित हो जाता है, उसी प्रकार यह व्यक्ति सदैव ग्राम में विलीन होने को तैयार रहेगा, ग्राम दूसरे ग्राम मंडल में, जब तक कि अन्त में सम्पूर्ण सृष्टि व्यक्तियों से निर्मित एक जीवन नहीं बन जाता। ये व्यक्ति अपनी उद्दंडता से कभी आक्रमणकारी नहीं होंगे, बल्कि समुद्रीय वर्तुल की तरह जो असंख्य गाँव फैले हुए हैं, जिनकी वे स्वतः अविभाज्य इकाइयाँ हैं, उनकी समृद्धि और गौरव का बड़ी नम्रता के साथ हिल-मिल कर उपयोग करेंगे।"

गांधीजी की दृष्टि विश्व-दृष्टि है, सर्वोदय-दृष्टि है। उनके समुद्रीय वर्तुल के केन्द्र में खड़ा हुआ व्यक्ति विश्व-नागरिक है। व्यक्ति बदलेगा तो समाज बदलेगा। व्यक्ति कानून से नहीं बदल सकता। कानून व्यक्ति को उसके अधिकारों से वंचित कर सकता है। वह उनके प्रति मनुष्य में अनासक्ति पैदा नहीं कर सकता। वह मनुष्य के संग्रह को छीन सकता है, किन्तु उसमें असंग्रह वृत्ति पैदा नहीं करा सकता। वह मनुष्य को हिंसा करने से रोक सकता है, किन्तु उसे अहिंसक नहीं बना सकता। मनुष्य को बदलने की प्रक्रिया उसके हृदय को बदलने से होगी। एकता की प्रक्रिया इसलिए, जैसा विनोबाजी कहते हैं, हृदय-परिवर्तन के द्वारा जीवन-परिवर्तन और जीवन-परिवर्तन के द्वारा फिर समाज-परिवर्तन की प्रक्रिया है।

अंग्रेजी की एक कहावत है—"समय और ज्वार किसीका भरोसा नहीं करते।" अति हिंसा के इस ज्वार से हमें बचना है तो राष्ट्रीय एकता के इस प्रश्न पर हमें विश्वशान्ति और विश्वबन्धुत्व की एक कड़ी के रूप में ही विचार करना चाहिए और उसी दृष्टि से इस पर अमल करने की योजनाएँ बनानी चाहिए। भगवान् हमें अज्ञान और अन्धकार से ज्ञान और प्रकाश की ओर आने में मदद करें।

(शताक से समाप्त)

—

राष्ट्रीय एकता प्रतिज्ञा

शान्ति-प्रतिज्ञा अथवा राष्ट्रीय एकता प्रतिज्ञा के कार्यक्रम के बारे में सूचना प्रसारित करते हुए सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन लिखते हैं :

सर्व-सेवा-संघ की प्रबंध-समिति ने अपनी एक बैठक में 'शांति प्रतिज्ञा' का एक मसविदा स्वीकार किया था। यह सोचा गया था कि देश भर में एक आंदोलन चलाया जाय, जिसमें हर वयस्क नागरिक सभ्य-समाज के इस सार्वभौम सिद्धान्त में अपनी निष्ठा जाहिर करें कि नागरिकों, उनके समूह आदि के बीच उत्पन्न विवाद शान्तिमय उपायों से ही निपटाये जाने चाहिए और यह संकल्प करें कि वह किसी झगड़े के सिलसिले में स्वयं हिंसा का सहारा नहीं लेगा। बाद में भारत के प्रधान मंत्री के निमंत्रण पर जो राष्ट्रीय एकता-सम्मेलन हुआ, उस सम्मेलन द्वारा सर्व-सेवा-संघ के उपर्युक्त विचार का स्वागत किया गया।

इस संदर्भ में प्रबंध समिति ने यह उचित माना कि उपर्युक्त आंदोलन राष्ट्रीय एकता परिषद द्वारा आयोजित किया जाय और सर्व-सेवा-संघ उसमें पूरा योग दे।

राष्ट्रीय एकता परिषद ने गांधी जयन्ती, दिनांक २ अक्तूबर, १९६२ से इस आंदोलन के आरम्भ का निश्चय किया है। तदनुसार २ अक्तूबर से ९ अक्तूबर के सप्ताह भर में हस्ताक्षर कराने का विशेष कार्यक्रम चलेगा।

राष्ट्रीय एकता परिषद की ओर से प्रादेशिक व जिला सर्वोदय-मंडलों को प्रतिज्ञा-पत्र और उस सम्बन्धी भूमिका व कार्यक्रम वगैरह की प्रतियाँ भेजी गयी हैं। लोक-सेवकों, शांति-सैनिकों, संघ की विभिन्न संगठन-इकाइयों और समितियों, उप-समितियों से अपेक्षा है कि सब अपने-अपने क्षेत्र में इस आंदोलन को उत्साहपूर्वक और व्यापक तरीके से आयोजित करेंगे। प्रतिज्ञा पत्र की प्रतियाँ कम पड़ती हों, तो वे राष्ट्रीय एकता परिषद के कार्यालय, गृह-मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली से मंगायी जा सकती हैं। विशेष परिस्थिति में प्रतिज्ञा-पत्र की नकलें करके भी उपयोग किया जा सकता है।

कार्यक्रम के सम्बन्ध में कुछ सुझाव यहाँ दे रहे हैं। राष्ट्रीय एकता परिषद की ओर से भी आवश्यक सूचनाएँ मिलेंगी। विशेष कुछ जानकारी इस सम्बन्ध में प्राप्त करनी हो तो श्री रणछोड़प्रसाद, संयुक्त सचिव, गृह-मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली से पत्र-व्यवहार करना चाहिए।

विभिन्न क्षेत्र में जैसे जैसे कार्यक्रम चले, उसकी प्रगति के समाचार यहाँ जानकारी के लिए तथा भूदान पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशनार्थ कृपया भिजवायें।

इस वर्ष यह कार्यक्रम आरंभ करने में कुछ देर हुई है। फिर भी आशा है कि जो समय अभी उपलब्ध है, उसका उपयोग करके इस आंदोलन का पूरे वेग से श्रीगणेश किया जायगा।

कुछ सुझाव

(१) महात्मा गांधी शांति के अग्रदूत और प्रतीक थे। इसलिए उनके जन्म-दिन, २ अक्तूबर से ९ अक्तूबर तक के सप्ताह से इस आंदोलन का आरंभ किया जा रहा है। लेकिन प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर कराने का कार्यक्रम सतत चलता रह सकता है। हर साल २ अक्तूबर से ९ अक्तूबर के सप्ताह भर विशेष कार्यक्रम रहे।

(२) हस्ताक्षर प्रत्येक वयस्क नागरिक से उस प्रतिज्ञा के महत्व और उसके उत्तर-दायित्व को समझाने के बाद कराने चाहिये।

(३) प्रतिज्ञा की पृष्ठभूमि और उसके मूलभूत विचार को सभाओं, विचार-गोष्ठियों वगैरह के द्वारा समझाया जाय, लेकिन हस्ताक्षर व्यक्ति-व्यक्ति से सम्पर्क करके ही कराये जायँ।

(४) यह कार्यक्रम ऐसा है, जिसको राष्ट्रीय एकता सम्मेलन के जरिये सब विचारधाराओं, पक्षों, वर्गों आदि का समर्थन मिला है। इसलिए इसमें सबका सहयोग प्राप्त किया जाना चाहिये।

(५) २ अक्तूबर को जगह-जगह आम सभाएँ हों। उनमें यह विचार समझाया जाय और विशिष्ट व्यक्ति स्वयं हस्ताक्षर करके तथा प्रतीक रूप ११ अथवा अधिक व्यक्तियों से हस्ताक्षर करा के इस आंदोलन का आरंभ करें। सप्ताह भर इसी प्रकार सभा वगैरह का कार्यक्रम रहे और घर-घर नागरिकों के पास जाकर हस्ताक्षर कराये जायें।

(६) ९ अक्तूबर को मुख्यतः हस्ताक्षर करने वालों की सभा आयोजित की जाय और उसमें प्रतिज्ञा के अनुसार किस प्रकार का आचरण समाज में होना चाहिये और प्रतिज्ञा करने से क्या उत्तर-दायित्व नागरिक पर आता है, उस पर प्रकाश डाला जाय।

(७) विचार को समझाने की दृष्टि से सप्ताह भर में समाचार पत्रों, विज्ञप्तियों आदि के जरिये विशेष लेख व [illegible] इस विषय पर प्रकाशित किये जायें।

(८) प्रतिज्ञा पत्र कम पड़ते हों [illegible] उसकी प्रतियाँ मंगा ली जायें [illegible] छपवा ली जायें या नकल करके काम निकाला जाय।

(९) हस्ताक्षर किये हुए प्रतिज्ञा-[illegible] जिला या प्रदेश कार्यालय में [illegible] किये जायें और हस्ताक्षर हुए [illegible] संख्या राष्ट्रीय एकता परिषद और सर्व [illegible] प्रधान केन्द्र को भेजी जायें।

पते :—(१) राष्ट्रीय एकता परिषद, गृह-मंत्रालय, भारत सरकार, नयी दिल्ली।

(२) अखिल भारत सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी (उ०प्र०)

—

राष्ट्रीय एकता की प्रतिज्ञा

भारत के नागरिक के नाते मैं, सभ्य समाज के इस सार्वभौम सिद्धांत के प्रति अपनी निष्ठा प्रकट करता हूँ कि सभी मत-भेद शांतिपूर्ण तरीकों से ही दूर किये जाने चाहिए। देश में भावनात्मक एकता की जरूरत को समझते हुए मैं यह प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं धर्म, भाषा, प्रदेश या अन्य किन्हीं भी सार्वजनिक मामलों के कारण उत्पन्न किसी झगड़े में कभी हिंसा से काम नहीं लूंगा।

कुछ बहके हुओं के [illegible] :

"हमारे पास इतने अणुबम हैं जिनसे हम सारी मानव जाति का [illegible] कर सकते हैं।"

—एक रूसी सेनापति
एक अमरीकी सेनापति अपनी-अपनी सेनाओं को।

"...उसके पश्चात् हम इतने ही और बना सकेंगे।"

—रूस के उद्योग संचालक
अमेरिका के उद्योगपति।

"...विध्वंस के पश्चात् [illegible] के लिए बहुत आदमियों की जरूरत होगी, वेतन-मजदूरी के दर भी आकर्षक होंगे।"

—पुनर्वास मंत्रालय की विज्ञप्ति।

"...पृथ्वी पर अणुयुद्ध के बाद रेडियो-धर्मिता इतनी बढ़ जायगी कि मानव चन्द्र-मंगल ग्रहों पर जाकर बसना होगा।"

—एक [illegible]

"...मैं अणुयुद्ध के विरोध में [illegible] खाकर मर रहा हूँ।"

—एक जापानी शान्तिवादी।

—

आगरा में शराबबंदी सत्याग्रहियों को चार-चार माह की जेल तथा ढाई-ढाई सौ रुपये जुर्माना

आगरा में गत २१ सितम्बर को जिला जेल में एस० डी० एम० श्री ए० पी० श्रीवास्तव की अदालत में उन ग्यारह शराबबंदी सत्याग्रहियों के मामले की सुनवाई हुई, जिन्हें २० सितम्बर को वेयर हाउस पर सत्याग्रह करते हुए गिरफ्तार किया गया था। सत्याग्रहियों ने अभियोग स्वीकार कर लिये तथा मजिस्ट्रेट ने उन सभी को चार-चार माह की सादी कैद की तथा ढाई-ढाई सौ रुपये जुर्माने से दण्डित किया।

सभी ग्यारह सत्याग्रहियों को उनका जुर्म मजिस्ट्रेट द्वारा पढ़ कर सुनाया गया तो इन्होंने सामूहिक रूप से जुर्म स्वीकार करते हुए निम्न वक्तव्य दिया—
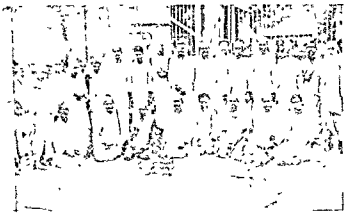
आगरा में शराबबंदी सत्याग्रह में भाग लेने वाली टोली

"हम लोगों ने आगरा में वेयर हाउस पर ११ सितम्बर से सत्याग्रह किया। यह दिन पूज्य विनोबाजी का जन्म दिन था, इसलिए एक अच्छा काम शुरू किया गया। जब महात्मा गांधी जिन्दा थे और उन्होंने आजादी का आन्दोलन चलाया था, उसी समय उन्होंने कहा था कि देश में शराब नहीं बिकनी चाहिए, क्योंकि इससे गरीबों का नैतिक पतन होता है। अब जब देश आजाद हो गया, तब हमारा पहला फर्ज है कि हम शराब की बिक्री को रोकें।

हमने इसी उद्देश्य से सत्याग्रह किया और इसकी सूचना प्रान्त व आगरा जिले के अधिकारियों को दे दी। हमने यह कदम उठाने से पहले पूज्य विनोबा का आशीर्वाद मांगा था। उन्होंने अपने पत्र में कहा कि सरकार को खुद ही शराबबन्दी करनी चाहिए और जो सरकार शराब से आमदनी करती है वह निकम्मी है। हम इस शराबबंदी आन्दोलन से जनजाग्रति करना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि जनता जाग्रत हो और शराब का पीना छोड़े और साथ में हम यह भी चाहते हैं कि जैसा कि हमारे विधान में कहा गया है कि सरकार शराब की बिक्री को बन्द करे, हम इस आन्दोलन से सरकार की भी आँखें खोलना चाहते हैं।

हम सरकार की आँखें खोलना चाहते हैं कि वह शराब की बिक्री को अपनी आमदनी का जरिया न बनाये। गांधीजी ने साध्य और साधन की शुद्धता पर जोर दिया था। शराब की बिक्री से आमदनी होगी, पर वह शुद्ध साधन न होगा।

जनता में जाग्रति नहीं है। वह विरोध करने से डरती है। लेकिन हमने यही सोचा कि हम प्रतीक मात्र बन कर विरोध करें। इसीलिए हमने यह सत्याग्रह किया और हम अपने साथियों तथा दूसरे रचनात्मक कार्यकर्ताओं से अपील करते हैं कि वे शराब की बिक्री का विरोध करें और अपने देश के भाइयों से प्रार्थना है कि वे शराब पीना छोड़ें और दूसरों से भी कहें कि शराब न पीयें। तब अपने आप यह ठेके समाप्त हो जायेंगे और यह काम बन्द हो जायगा।"

उक्त बयान के बाद महोदय ने अपना फैसला सुनाते हुए सभी ग्यारह सत्याग्रहियों सर्व चिम्मनलाल, गणेशभाई, ... प्रसाद, महावीर भाई, बाबा ... बाबा ईश्वरदास, मुन्ना बाबू, कैलाश ... छोटनसिंह, तेजसिंह तथा निर्भय को धारा ७ क्रिमीनल लॉ अमैन्ड एक्ट के अन्तर्गत आम सरकारी काम में रुकावट डालने के में चार-चार माह की सादी कैद व ढाई सौ रुपए जुर्माने का दण्ड ... गया। इस अवसर ... से श्री बालमुकुन्द बल्ला व ... नारायण शिरोमणि ने पैरवी की थी।

शराबबंदी सत्याग्रहियों की गिरफ्तारी नैतिकता और संविधान के खिलाफ सत्याग्रहियों को तुरन्त रिहा किया जाय

अ. भा. नशाबंदी परिषद के मंत्री का राष्ट्रपति को पत्र

[*अखिल भारतीय नशाबंदी परिषद के महामंत्री श्री रूपनारायण ने राष्ट्रपति को आगरा के शराबबंदी सत्याग्रहियो की रिहाई के सम्बन्ध में लिखा है, उसका सबंधित मुख्य अंश यहाँ दिया जा रहा है।* —सं०]

११ सितम्बर को सत्याग्रहियो पर पुलिस द्वारा बल-प्रयोग का एक दृश्य

...इस अवसर पर हम आपकी ... में, आगरा में 'विनोबा-जयंती' के ... सरकारी शराब के गोदाम पर ... धरना देते हुए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं गिरफ्तारी और कैद पर आश्चर्य एवं खेद प्रकट करना चाहते हैं! यह उपहासास्पद है कि जब 'गांधी ... में भारतीय नागरिकों को शराब की ... पर धरना देने के अधिकार को ... किया और अब, जब कि एक ... भारतीय सरकार भारत पर राज ... है, तब उस अ... से ... किया जाता है। राष्ट्रपिता ... के शराबबंदी के प्रिय कार्य पर ... की सरकार जो उपेक्षा दिखा रही है, हमारी समझ के बाहर है। शांति से ... देने वालों को गिरफ्तार कर उत्तर ... सरकार ने संविधान की भी अवहेलना ... है, जिसमें शराब सहित सब मादक ... पर प्रतिबंध लगाने की ... सिद्धान्तों' में मान्य की है।

श्रीमान्, चूंकि आप देश के ... धान के संरक्षक हैं, हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि आप उत्तर प्रदेश की सरकार का ध्यान खींचें कि ... पूर्वक धरना देने वाले स्वयंसेवकों *गिरफ्तार कर ऐसी परिस्थिति में डाल* ... है, जिसका बचाव न तो नैतिक और संवैधानिक ढंग से किया जा सकता ... आप उत्तर प्रदेश की सरकार को ... दीजिये, जिससे वह तुरन्त सत्याग्रहियों रिहा करे।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं०
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८६७५ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८५७५ एक अंक १३

ह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि •

अध्ययन कैसा हो ?

आजकल के अध्ययन में राग का भान नहीं रहता। बड़े-बड़े लोग भी पढ़ना नहीं जानते। हजार 'अेम० अे०' में अेक भी अच्छा पढ़ने वाला हो, तो हम युनीवरसीटी को 'पास' करेंगे। पढ़ने वाला परदे के पीछे पढ़ता हो, तो मालूम पड़े की मानो वह बोल रहा है। जैसे भूप राग होता है, भैरवी होती है, वैसे पढ़ने का भी राग होता है। ढेर भर ग्रन्थों का अध्ययन नहीं करना चाहीअे। अेक ग्रन्थ का पूरी तरह, अच्छी तरह अध्ययन करना चाहीअे। अैसा अेक भी ग्रन्थ आपको हाथ आ जाय तो काफी है। नहीं तो वह भी पढ़ो, यह भी पढ़ो, तो सब गोल हो जायेगा। यह भी मालूम है, वह भी मालूम है, तो क्या नहीं मालूम ? अीस अज्ञान के अज्ञान से बढ़कर दूसरा अज्ञान नहीं हो सकता।

रात में अध्ययन करने का रीवाज तो बीलकुल ही गलत है। अीन दीनों यह रीवाज वीद्यार्थीयों में पाया जाता है। रात में नींद में अंग्रेजी पढ़ते हैं। आंखें बंद होने की तैयारी में रहती हैं और वे पढ़ना शुरू करते हैं, तो ज्ञान भी धुंधला होता है। अुस पर नींद आ जाय, तब तो कुछ भी याद नहीं रहता। नींद से वीचार का वीकास होने के बदले वह जल जाता है। अीसलीअे रात में अध्ययन नहीं करना चाहीअे।

मैत्री आश्रम, ९ मार्च '६२ —वीनोबा

---

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ॏ, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

विज्ञान-युग का आह्वान

• हरीश व्यास

आज का युग भ्रम का युग (एज आफ कन्फ्युजन) है। विचार की अनेकविध समस्याओं में आज मनुष्य फँस गया है। अनेक विचारधाराओं ने मनुष्य के दिमाग को मुग्ध कर दिया है। समाजवाद और साम्यवाद, नाजीवाद और फासीवाद (फासीज्म), पूँजीवाद और मार्क्सवाद—इन वादों के वर्तुल में मनुष्य बद्ध हो गया है। इस परिस्थिति में से आगे कैसा किया जाय, इसके बारे में आज मनुष्य चिन्तित है।

इस मसले के निराकरण के लिए क्रान्तिकारियों में खोज चल रही है। इसमें ये तीन बातें बहुत महत्व की हैं : (१) अक्षोभ चिन्तन, (२) विवेक-शक्ति का विकास और (३) संकल्प शक्ति। किसी भी विचार या घटना को निरपेक्ष भूमिका से देखना अद्यतन विज्ञान के युग में अनिवार्य-सा बन गया है।

विनोबाजी कहते हैं : हमारा मन या दिमाग नित्य नूतन और स्फूर्तिमान् हो। विज्ञान के इस युग में हमें अविद्या सीखनी पड़ेगी, जो चीज जानने लायक नहीं है, उसको छोड़ना पड़ेगा। अगर हम ऐसा नहीं करेंगे तो चित्त में चंचलता पैदा होगी। फिर जहाँ चित्त में चंचलता आती है, वहाँ चित्त की स्वस्थता और समतोलता खो जाती है। इसमें से पैदा हुई व्यग्रता हमको कहीं न-कहीं फेंक देती है। इसलिए हम परिस्थिति से वाकिफ होंगे समरस होंगे, मगर परिस्थिति से हम व्याकुल नहीं बनेंगे। जहाँ क्षोभ नहीं होता है, वहाँ सक्रिय चिन्तन चल सकता है।

विवेक शक्ति मनुष्य के जीवन में बहुत महत्त्व रखती है। मनोवैज्ञानिक उसको 'सेन्सर' कहते हैं। अच्छा-बुरा परखने की शक्ति है—विवेक। विज्ञान ने हमारे सामने अपना पिटारा खोल दिया है। और इस 'पिटारे में क्या नहीं है ? विष भी है और अमृत भी है ! मोहिनी के ढंग से विज्ञान अपने हाथ में विषकुंभ और अमृतकुंभ लेकर आया है। इनमें से हम क्या चाहते हैं, वह हमें तय करना है। विज्ञान के जमाने में सद् और असद् को परखने की यह ताकत अगर हममें नहीं होगी, तो हम भेड़ियों की तरह जिधर खींचें उधर खींचे जायेंगे। हमारा स्वत्व और विशेषत्व इस खींचातानी में गुम हो जायगा और हमारी हैसियत पशु-सी हो जायेगी। इस स्थिति में हमारी मानवता के विकास के लिए अवसर नहीं रहेगा। विज्ञान के युग में विचारपूर्वक और विवेक युक्त जीवन की आकांक्षा है। इसलिए महात्मा गांधी कहते थे—"मैं महात्मा हूँ, इसलिए मेरी बात मत मानना। मैं आदरणीय पुरुष हूँ, इसलिए भी मेरी बात मत मानना। जो चीज आपको जँचती हो, उसका स्वीकार करना। सत्ताबल, प्रतिष्ठा और पूज्यता का छेद विचारशासन के लिए गांधी ने उड़ा दिया। इस बात में उनकी बड़ी महत्ता है। भगवान् बुद्ध ने कहा—'अथ विचारशासनम्।' अब दुनिया में विचार का शासन चलेगा। मगर किस विचार का शासन चलेगा ? जो शुद्ध विचार है उसका।

फिर सवाल यह उपस्थित हुआ कि शुद्ध विचार किसको कहा जाय ? यह 'मेरा' विचार और यह 'तेरा' विचार, और इनमें तेरा विचार गलत और मेरा विचार सच्चा। जहाँ विचार के साथ मेरा-तेरा जुड़ गया, वहाँ वाद बन जायगा। और इसमें—"मेरा ही विचार सच्चा", ऐसा आग्रह प्रवेश करेगा, वहाँ वाद में से सम्प्रदाय बन जायगा। जहाँ आग्रह और अहंकार नहीं होगा, वहीं शुद्ध विचार टिक सकेगा। इसलिए विचार के साथ अहंकार भी न हो और आग्रह भी न हो। हम दूसरों की बात समझने की कोशिश करेंगे और साथ-साथ हमारी बात समझाते रहेंगे। सामने वाले के विचार में भी तथ्य हो सकता है, यह हमें देखना पड़ेगा। मगर यह ताकत कहाँ से आयेगी ? जहाँ दूसरे के जीवन के लिए और विचार के लिए आदर होगा, वहाँ इसमें रहा हुआ गर्भित सत्य, तथ्य हम देख सकेंगे। हमारे विचार में मतभेद हो सकता है। मगर दूसरे के जीवन के प्रति सद्भाव और सौजन्य कायम रहना चाहिये। गांधीजी के सत्याग्रह की यही भूमिका है।

इसलिए गांधीजी ने अपनी आत्म कथा की प्रस्तावना में बहुत मार्के की बात लिखी : "सत्य की सदा जय हो। मेरे जैसे अल्पात्मा को मापने के लिए सत्य का मापदंड छोटा न हो।" सत्य महत् है, मनुष्य अल्प है। इस महत् को अपनी अल्पता से मापने का प्रयत्न हम नहीं करेंगे। सत्याग्रह में मनुष्य का पुरुषार्थ अपनी अल्पता को विसर्जित करने का और दूसरे में गर्भित महत् को प्राप्त करने का होगा। विनोबाजी भी कहते हैं—"सत्य को ही आग्रह करने दो, तुम्हारा आग्रह छोड़ दो।" जो सत्य है उसको निरपेक्ष भाव से अभिव्यक्त कर देना हमारा कर्तव्य है। इसके पीछे हमारा कोई भी आग्रह नहीं रहना चाहिये। अगर आग्रह आयेगा तो सत्य खो जायेगा। फिर हमारा आग्रह रहेगा, सत्य गुमनाम हो जायेगा। सत्याग्रह समाज-क्रान्ति की प्रक्रिया में हृदय-परिवर्तन का साधन है, शस्त्र नहीं है। शस्त्र हनन के लिए होता है, साधन निर्माण के लिए होता है। हम किसीको मारना, दबाना या कुचलना नहीं चाहते। मगर हम तो सृजन या निर्माण करना चाहते हैं।

किन्तु सवाल यह आया कि यह निर्माण कौन करेगा ? हमारे श्री दादा धर्माधिकारी इसका जवाब देते हैं—क्रान्ति का आरंभ प्रथम पुरुष एक वचन 'मैं' से होता है, अगर मैं क्रान्ति का आरंभ नहीं करता, तो क्रान्ति कभी नहीं होगी। हमारे जीवन से क्रान्ति का आरम्भ होगा और उसकी समाप्ति समाज से होगी। इसलिए क्रान्ति के मूल्य हमारे जीवन में प्रथम प्रकट होने चाहिये। विनोबाजी कहते हैं—"सत्याग्रही को सत्यग्राही होना चाहिये।" सत्य का ग्रहण मैंने अगर किया होगा, तो समाज-क्रान्ति की ताकत अवश्य बनेगी। मैं सत्याग्रह करने निकला, मगर मुझ में सत्य का अभाव होगा, फिर तो क्या ? इसका समाजव्यापी असर नहीं होगा। मैं सद् और असद् को परख सकूँ, इतना काफी नहीं है। परन्तु जो सद् है उसको मैं ग्रहण करूँ, यह भी अत्यन्त आवश्यक है। तो हम इस मुकाम पर पहुँचे कि विवेक शक्ति के साथ संकल्प-शक्ति भी चाहिये। अच्छे का स्वीकार करेंगे और बुरे को हम तुरन्त छोड़ देंगे। इसको श्री अरविन्द ने 'विल पावर'—संकल्प शक्ति कहा।

विनोबाजी विचार-क्रान्ति की प्रक्रिया में पहला विचार-परिवर्तन, दूसरा जीवन-परिवर्तन और बाद में समाज-परिवर्तन, यह क्रम बताते हैं। विचार-परिवर्तन के लिए अक्षोभ चिन्तन, विवेक-शक्ति और संकल्प-बल आवश्यक है। जीवन-परिवर्तन के लिए खुला दिल और खुला दिमाग चाहिये। समाज परिवर्तन के लिए व्यग्रता नहीं, मगर उत्कटता; उद्दंडता नहीं, मगर नम्रता चाहिये। समाज-परिवर्तन के लिए सत्याग्रह साधन है, दूसरे को परास्त करने का शस्त्र नहीं है। सत्याग्रह का आरम्भ सत्यग्राही बन कर हो सकेगा। क्रान्ति के मूल्य सत्याग्रही को अपने जीवन में सम्मिलित करने पड़ेंगे। इसमें से समाज क्रान्ति की प्रक्रिया गतिशील बनेगी। दूसरे में भी सत्य खोजने की उदारता और अपनी बात व्यक्त करने की नम्रता अगर होगी, तो समाज-परिवर्तन त्वरित होगा।

विज्ञान के परिबल इसके लिए आज अनुकूल हैं। युग की आकांक्षा भी तीव्र भाव से प्रकट हो रही है। मात्र एक ही चीज का अभाव खटकता मालूम होता है, और वही है सामूहिक मानवीय सज्ञान पुरुषार्थ, नदी के उद्दंड प्रवाह को अनुकूल दिशा में ले जाने के लिए दिल में उत्कटता, दिमाग में स्वस्थता और शरीर से सातत्य योग चाहिये। इस बात के लिये विज्ञान और परिस्थिति के बल हमें आह्वान दे रहे हैं। क्या हम इसको उठा लेंगे ?

(सर्वोदय व्याख्यानमाला, सूरत में गत ११ सितम्बर को दिये भाषण से।)

स्त्री-देह की पवित्रता

• दादा धर्माधिकारी

हम जब बाजार में कोई चीज खरीदने जाते हैं, तो अक्सर सबसे आखिरी तर्ज की चीज माँगते हैं। अगर मोटर खरीदते हैं तो आज का या सबसे बाद का 'मॉडल' माँगते हैं। चीज वही बढ़िया है, जो 'अपटुडेट' हो, अद्यतन हो, 'लेटेस्ट मॉडल' का 'बेस्ट मॉडल' समझा जाता है। एक स्त्री ने अपने पति से कहा, स्त्री भगवान् की सृष्टि का 'लेटेस्ट मॉडल' है। इसलिए वह हर बात में पुरुष से बढ़िया है। भगवान् ने पहले मनु को आदम बनाया और बाद में स्त्री को बनाया। उसकी सबसे उत्कृष्ट कृति स्त्री है। मानवता का वह नवीनतम संस्करण है।

पति ने जवाब दिया—असल में ऐसी बात नहीं। ईश्वर को जितनी कलापूर्ण चीजें बनानी थीं, उसने पहले बना लीं। उसे यह डर था कि अगर स्त्री पहले बना दूँगा तो हर बात में वह सलाह देने लगेगी। उसकी दस्तंदाजी से कोई चीज बन ही नहीं पायेगी। *स्त्री में सलाह देने की बड़ी लत है, इसलिए उसको सबसे आखिर में बनाया।*

अधीनता में सहजीवन असंभव

स्त्री अपने को पुरुष से श्रेष्ठ माने और पुरुष अपने को स्त्री से श्रेष्ठ माने, तो दोनों अपनी-अपनी शक्ति के सहारे एक-दूसरे पर अपना काबू जमाने की कोशिश करेंगे। जहाँ एक-दूसरे को काबू में रखने की कोशिश होती है, वहाँ सहजीवन असंभव है। वहाँ तो कोशिश यह होती है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर अपना प्रभुत्व कायम कर सके और उसे अपनी संपत्ति बना ले। जहाँ एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की संपत्ति बन जाता है, वहाँ एक का व्यक्तित्व ही खतम हो जाता है। फिर सहजीवन कैसा? जीवन उसका होता है, जो दूसरे को अपने काबू में रखता है। जो दूसरे के काबू में रहना कबूल करता है, उसका अपना जीवन नहीं रहता। स्त्री और पुरुष ने अपनी भिन्न-भिन्न शक्तियों के आधार पर एक-दूसरे को काबू में रखने की कोशिश की। इस कारण वे साथ तो रहे, लेकिन इस सहअवस्थान या साथ रहने को साथ जीना नहीं कहा जा सकता। इसीलिए स्त्री-पुरुष के सहअवस्थान से अब तक उनका सहजीवन निष्पन्न नहीं हुआ।

सहजीवन के लिए बराबरी की जरूरत होती है। बराबरी से मतलब है—समान भूमिका, बराबरी की हैसियत। बराबरी से मतलब एकरूपता से नहीं, स्त्री पुरुषरूप बन जाये और पुरुष प्रायः स्त्री बन जाये, याने पुरुष करीब-करीब स्त्री बन जाये और स्त्री करीब-करीब पुरुष बन जाये, तो दोनों में एकरूपता आ सकती है। लेकिन उसमें दोनों की विशेषताएं, दोनों की खासियतें और खुसूसियतें खतम हो जाती हैं। बराबरी से मतलब यह नहीं है कि स्त्री स्त्री न रहेगी और पुरुष पुरुष नहीं रहेगा। *मतलब इतना ही है कि दोनों की हैसियत* बराबरी की होगी। घर में हमारा भाई भी है और बहन भी। भाई भाई रहेगा, बहन बहन ही रहेगी। लेकिन जिम्मेदारी में दोनों की हैसियत बराबरी की होगी। जब तक स्त्री और पुरुष की भूमिका समान न होगी, उनका दरजा बराबरी का न होगा, तब तक सहजीवन असंभव है। ब्राह्मण और भंगी या अमीर और गरीब की बराबरी की बात जब हम करते हैं, तब हमारा मतलब दूसरा होता है। हम यह कहना चाहते हैं कि अमीर अमीर नहीं रहेगा, गरीब गरीब नहीं रहेगा, ब्राह्मण ब्राह्मण नहीं रहेगा, भंगी भंगी नहीं रहेगा। वहाँ हम उस भेद को ही मिटाना चाहते हैं। यहाँ स्त्री और पुरुष के भेद को मिटाना हमारा इष्ट नहीं है। स्त्री और पुरुष की समानता से मतलब है, उन दोनों की तुल्यता। दोनों को अगर तराजू के दो पलड़ों पर रखा जाय तो उनका तौल या वजन समान होगा। समाज में दोनों का रुतबा, कद्र और कीमत समान हो। सहजीवन की यह अनिवार्य शर्त है।

समानता भीतर की चीज

सहजीवन की बात सुनते ही हमें 'सहशिक्षण' शब्द याद आता है। लड़के और लड़कियों को एकसाथ पढ़ाना शुरू हो गया है। आज उसके बारे में अनेक विचारकों के मन में नाना तरह की शंकाएँ पैदा होने लगी हैं। उनके मन में यह प्रश्न उठता है कि लड़के-लड़कियों को साथ-साथ पढ़ाना कहाँ तक मुनासिब है? इससे भी कुछ आगे बढ़कर हमें एक गहरा, जड़मूल का सवाल अपने आपसे पूछना चाहिए। क्या स्त्री और पुरुष का साथ रहना मुनासिब है? इस विषय में अभी हमारे मन का पूरा निश्चय नहीं हुआ है। इस प्रश्न का समाधान अब तक किसी देश में नहीं हुआ है। यह जो खयाल है कि दूसरे देशों में यह सवाल हल हो चुका है, यह गलत है। कुछ बाह्य व्यवहारों में स्त्री-पुरुष का सहयोग स्थापित हुआ है। आर्थिक क्षेत्र में और कुछ हद तक सामाजिक जीवन में दोनों एक-दूसरे से सहयोग करते हैं, लेकिन इसका इतना ही मतलब है कि आज तक जो काम केवल पुरुषों के समझे जाते थे और जो कार्यक्षेत्र केवल पुरुषों के लिए खुले थे, उनमें स्त्रियों को भी प्रवेश मिला है। यह समानता बाह्य व्यवहार की है। तुल्यता भीतर की चीज है। स्त्रियाँ पुरुषों की नकल करने लगीं तो वे नकली पुरुष बन जायेंगी। परंतु उससे उनका मान नहीं बढ़ेगा। सत्त्व-संपन्न पुरुष और सत्त्व-संपन्न स्त्री के सहयोग से सहजीवन निष्पन्न होगा।

सहशिक्षण का परिणत स्वरूप

स्त्री और पुरुष का एक-दूसरे के साथ रहना अनिवार्य तो है ही, लेकिन पर्याप्त नहीं है। शुरू-शुरू में सहशिक्षण पर जोर देना जरूरी था, क्योंकि लड़के और लड़कियों को बिल्कुल अलग-अलग हवाबंद दरबों में रखा जाता था। परंतु सहशिक्षण काफी नहीं है। कोई पन्द्रह-सोलह साल पहले रूस में सहशिक्षण रद्द कर दिया गया। उसका मतलब यह नहीं था कि लड़के और लड़कियाँ अलग-अलग पढ़ें। परंतु शुरू-शुरू में दोनों को एक-दूसरे के नजदीक जाने की जो जरूरत मालूम होती थी वह बाद में न रही। इसलिए सहशिक्षण को रद्द करने में शिक्षण *का कदम पीछे तो नहीं लौट रहा था,* बल्कि आगे बढ़ रहा था। लड़के और लड़कियों का साथ-साथ पढ़ना अब एक मामूली चीज हो गयी तो सहशिक्षण के नियम की आवश्यकता नहीं रही। स्त्री और पुरुष जब तक निरापद भाव से बेखटके एक-दूसरे के साथ नहीं रह सकते, जब तक बगैर निगरानी के और निगहबानी लड़के और लड़कियाँ एक-दूसरे के साथ नहीं रह सकते, तब तक दोनों को साथ जीने के मौके और तरीके समाज में पैदा करने होते हैं। इसलिए आरंभ में सहशिक्षण का आग्रह था, परंतु जब स्त्री और पुरुष का एक-दूसरे के साथ रहना समाज का साधारण प्रचलित व्यवहार हो जाता है, तब दोनों की अपनी-अपनी विशेषताओं का विकास करने के लिए पृथक् शिक्षण का कदम उठाया जाता है। मानवता का सामान्य शिक्षण दोनों का साथ-साथ होगा। स्त्री और पुरुष का विशिष्ट शिक्षण अलग-अलग होगा यह सहशिक्षण का परिणत स्वरूप है।

पुरुष और स्त्री के विशेष गुणों के अनुरूप उनके कार्यक्षेत्र विशिष्ट होंगे; परंतु अन्योन्य व्यावर्तक नहीं होंगे। स्त्री के कुछ खास गुण हैं और उसमें खास शक्तियाँ हैं। उनके मुताबिक उसके काम का एक खास दायरा होगा, उसी तरह पुरुषों के काम के भी कुछ दायरे हो सकते हैं। लेकिन दोनों मनुष्य हैं, उनकी मानवता सामान्य है। इसलिए उनका अधिकतर जीवन संयुक्त और सम्मिलित होगा, उनका अधिकतर शिक्षण भी संयुक्त और सम्मिलित होगा, दोनों की जिंदगी अगर मिलीजुली नहीं होगी, तो परिवार और समाज में दोनों का सहयोग कैसे हो सकता है? इस मिलीजुली जिंदगी के लिए दोनों की हैसियत बराबरी की होनी चाहिए। एक-दूसरे के साथ रहने में दोनों में से किसी को भी सावधान या सतर्क रहने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। मैं अपनी तरह से चौकन्ना रहूँ, आप अपनी तरह से चौकन्ने रहें, तो दोनों एक-दूसरे का भरोसा कैसे कर सकते हैं? और जहाँ भरोसा नहीं, वहाँ सहजीवन कैसे संभव है?

स्त्री और पुरुष में नैसर्गिक भेद

परंपरा से धर्म ने स्त्री को पुरुष से ऊपर की जगह दी है या नीचे ही या तो वह देवी है या फिर संपत्ति। तरफ धर्म कहता है—"यत्र न[illegible] रमन्ते तत्र देवताः। [illegible] सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।" जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है वहाँ देवता रमते हैं [illegible] प्रसन्न होते हैं। जहाँ उनकी पूजा न होती वहाँ सारी क्रियाएँ निष्फल होती हैं यह मनु-वचन है। उसी मनुस्मृति यह भी कहा है कि "पिता रक्षति भर्ता रक्षति यौवने, पुत्रो [illegible] न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति" [illegible] है तब तक उसे पिता संभालेगा, [illegible] पर पति संभालेगा। शास्त्र-मर्यादा के [illegible] सार तरुण स्त्री का अविवाहित [illegible] निषिद्ध है। हिन्दू परंपरा में स्त्री के [illegible] ब्रह्मचर्य विहित नहीं है, इसलिए [illegible] में पति उसका रक्षक होगा और [illegible] में पुत्र। इस प्रकार पुरुष के लिए [illegible] या तो पूजा का विषय है या संभालने [illegible] चीज। पुराण मतावलम्बियों की [illegible] स्त्री स्वतंत्रता के लिए पात्र नहीं। [illegible] लोगों का कहना यह है कि यह [illegible] का विधान नहीं है याने [illegible] या आज्ञा नहीं है, यह तो [illegible] है। हम उसको स्वतंत्रता देना चाहें भी वह उसका उपयोग नहीं कर सकती जब वह आजादी के लिए बनी ही [illegible] है, तो भला उसमें शास्त्र का क्या दोष! एक गाय है, पूजार्ह है, पूजा के योग्य है, उसकी पूजा कीजिये, उसे पवित्र मानिये! लेकिन जहाँ शेर-भेड़िये हैं ऐसे जंगल में उसे थोड़े ही छोड़ सकते हैं? वैसे ही स्त्रियाँ हैं। "प्रजननार्थं महाभागाः, पूजार्हा गृहदीप्तयः"—ये हमारे घर की ज्योतियाँ हैं, ये वंशवृद्धि के लिए हैं, ये महाभाग हैं, इसलिए 'रक्षणीया अति यत्नतः'—बड़े जतन से इन्हें संभालना चाहिए, इनका संरक्षण करना चाहिए। यह सिर्फ जीर्ण मतवादी, दकियानूस पंडितों का कहना नहीं है, आज के कई मानव विज्ञानवेत्ता भी यही कह रहे हैं। उनका कथन है—स्त्री और पुरुष में नैसर्गिक भेद है। दोनों के शरीर भिन्न भिन्न प्रयोजनों के लिए बने हैं, उसी प्रयोजन के अनुरूप उनका स्वभाव भी है। आप प्रकृति पर कैसे आघात [illegible] सकते हैं? प्राकृतिक भेद के कारण [illegible] शक्तियों और गुणों में भी भेद हैं। [illegible] का शरीर भी ऐसा बना है कि वह [illegible] स्वतंत्र रह ही नहीं सकती। वे [illegible] ने यही कहा है, 'न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति'। यह विधान नहीं है, वस्तुकथन है। [illegible] मंत्रद्रष्टाओं ने और धर्म-प्रवर्तकों ने [illegible] की स्वतंत्रता और समानता का दम [illegible] भरा और उस दिशा में प्रयोग [illegible] उनको मुँह की खानी पड़ी। निसर्ग-भेद [illegible] दूर नहीं हो सकता। क्या स्त्री [illegible] पुरुष का समान भूमिका पर या [illegible] भूमिका पर सहजीवन संभव है? [illegible] जीवन का यह बुनियादी सवाल है।

राज-भाषा का प्रश्न

● लक्ष्मीनारायण भारतीय

[प्रस्तुत लेख अ० भा० सर्व-सेवा-संघ का मदुराई में भाषा सम्बन्धी प्रस्ताव (देखें 'भूदान-यज्ञ' अंक २१ सितम्बर '६२) पास होने के पहले लिखा गया है। —सं०]

राजभाषा के प्रश्न पर हम कुछ मुगालते में हैं, ऐसा लगता है। यह बात हमें अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि अंग्रेजी कभी इस देश की 'जन भाषा' नहीं हो सकती और न किसी राज्य की 'प्रदेश भाषा'। दो सौ सालों की अंग्रेजी सत्ता ने जिस भाषा को इतना व्यापक नहीं बनाया, वह भाषा अब शीघ्र ही यहाँ 'सार्वभौम' बन सकेगी, यह बहुत बड़ा भ्रम है। दूसरी चीज यह सोचनी है कि क्या हम जनतंत्र को जनता से अलग रख सकेंगे ? जन भाषा को यदि जनतंत्र में, जहाँ सत्ता ही सर्वेसर्वा बनते जा रही है, स्थान न मिला, तो जनता को क्या स्थान रहेगा ? और जनता को स्थान न रहा, तो वह जनतंत्र-रूपी राजतंत्र कितनी हद तक प्रातिनिधिक बनेगा ?

आज ही हम अंग्रेजी एवं गैरअंग्रेजी वालों के बीच जो खाई देख रहे हैं, वह पाटना मुश्किल हो रहा है। जब हमेशा के लिए राज्यभाषा पद पर अंग्रेजी बनी रहेगी, तो यह खाई बेहद बढ़ती जायेगी, क्योंकि यह प्रश्न राज भाषा तक ही सीमित नहीं है। आज जो लोग राजभाषा के रूप में अंग्रेजी का व्यवहार कर रहे हैं, उन सबकी शिक्षा बहुतांश में अंग्रेजी माध्यम से हुई है। इस कारण भी वे अंग्रेजी के प्रबल पक्षपाती हैं, क्योंकि अंग्रेजी में ही वे कारोबार चला सकते हैं। इसी तरह आगे भी अंग्रेजी ही उच्च शिक्षा का माध्यम बना रहे, इसका आग्रह बना रहेगा और यह माध्यम उच्च शिक्षा तक ही सीमित न रह कर नीचे की शिक्षा तक भी पहुँच जायेगा ?

आज तो अंग्रेजी का यह बोलबाला देख कर सैंकड़ों नहीं, हजारों माता पिता अपने बच्चों को बाल्य काल से ही अंग्रेजी माध्यम से पढ़ा रहे हैं, क्योंकि वे समझते हैं कि वही भाषा अब बनी रहेगी—शिक्षा में, सत्ता में, नेताओं में एवं उच्च स्तरों में। इसका भी परिणाम केवल शिक्षा या सत्ता तक नहीं रहेगा, संस्कार, वातावरण, व्यवहार आदि सबको छूएगा। यहाँ तो क्या बुनियादी शिक्षा और क्या गैर-अंग्रेजी माध्यम वाली शिक्षा, दोनों ही फेल होने वाली हैं, क्योंकि मांग पूर्ति जनता को करनी है और आज मांग, पूछ, महत्त्व, कीमत, प्रतिष्ठा अंग्रेजी की है, जिससे रचनात्मक कार्यकर्ता भी नहीं बचे हैं—वे रचनात्मक कार्यकर्ता, जो नित ही गांधीजी नाम पर काम लेते और कहते हैं, जब कि स्वयं गांधीजी ने हिंदी एवं प्रदेश-भाषाओं को उच्च स्थान पर पहुँचाया था ! पर उन्होंने तो कई जगह दोगली नीति तक अपनाई है ! तो यदि लोकतंत्र को जनता से अलग नहीं करना है, जनता एवं अंग्रेजीदाँ लोगों के बीच यदि खाई नहीं बढ़ानी है, यदि शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी रखने के लिए मजबूर नहीं करना है और सारा वातावरण, शिक्षा, दीक्षा उसी ढाँचे में नहीं ढालनी है, तो हमें यह तय करना ही पड़ेगा कि कब हम अंग्रेजी को राजभाषा के पद पर से हटाते हैं। जितने दिन उसे वहाँ रखा जायेगा, उतने दिन समस्या उलझती जायगी, क्योंकि उसे वहाँ सदा के लिए बनाये रखने के प्रयत्न गहराई से चल रहे हैं। इसीलिए अंग्रेजी माध्यम शिक्षा में बनाये रखने के प्रयत्न भी जोर से चल रहे हैं।

अंग्रेजी से हमें कोई वैर नहीं। वह एक 'विषय' के नाते अवश्य बनी रहे। चाहे तीसरी क्लास से वह भले ढंग से पढ़ाई जाये और चाहे उसका 'स्टैंडर्ड' कितना ही ऊँचा रखा जाय, पर वह एक 'विषय' ही बनी रहे, माध्यम नहीं। हम जगत् से, विज्ञान से, अंग्रेजी पढ़े लोगों से, अब तक की परंपरा से विच्छेद नहीं चाहते, इसीलिए अंग्रेजी चाहते हैं, आग्रह-पूर्वक चाहते हैं, पर केवल 'विषय' के तौर पर और वह भी शिक्षा में। राज भाषा के रूप में न तो केंद्र में, न ही प्रांतों में। अंग्रेजी इस देश में भाषा ही नहीं है, ऐसा भी हमारा भावनात्मक आग्रह नहीं है, अपितु हम इतना ही मानते हैं कि राज भाषा का स्थान अंग्रेजी को देने से उसका पेट इतना बढ़ जायगा कि उसमें शिक्षण, संस्कार प्रतिष्ठा, पैसा, सबका समावेश हो जायगा, आज राजकाज सीमित नहीं है। जनता के हर अंग को वह छूता है। प्रांतों में निम्न स्तर पर प्रदेश भाषाएँ रहें और ऊँचे स्तर पर अंग्रेजी रहे, यह भी चलने वाला नहीं है, क्योंकि अंग्रेजी जहाँ केंद्र में रही, वहाँ प्रांतों में भी रहेगी और प्रांतों के साथ वर्गविशेष में भी जायगी और फिर जनता के दो टुकड़े हो जायेंगे। शिक्षा के संपूर्ण माध्यम में से अंग्रेजी यदि आज हट जाय, तो हमें अंग्रेजी का कोई भय नहीं, वह और दस साल राजभाषा बने रहे। क्योंकि नयी पीढ़ी को तो अंग्रेजी से मुक्ति मिलेगी ही ! पर माध्यम अंग्रेजी बना रहा, तो आज की पीढ़ी हटने, न हटने नयी पीढ़ी भी अंग्रेजी ही चाहने लगेगी, क्योंकि उसकी शिक्षा-दीक्षा भी उसीमें जो हुई होगी। तब प्रश्न आता है, कौनसी भाषा अंग्रेजी की जगह ले ? हम संपूर्णतः वह स्थान बंगला को देने को तैयार हैं, क्योंकि लिपि की बात हटा दें, तो वह सब प्रदेश भाषाओं में सरल है, मधुर है, साहित्य-संपत्ति से ओतप्रोत है एवं एक बड़े भूभाग की जन-भाषा है ! स्वभावतः वह सारे 'जन' की भी भाषा हो सकती है, कम से कम अंग्रेजी के मुकाबले तो बहुत ही सहजता से एवं शीघ्रता से वह हो सकती है ! अतः वह यहाँ की जनभाषा बन कर जनतंत्र से संपर्क भी जोड़े रखेगी एवं वातावरण, शिक्षा दीक्षा आदि में भी विपरीतता नहीं आने देगी।

परंतु हम जानते हैं कि इस सुझाव को मजाक की टोकनी में फेंक दिया जायेगा। तब केवल हिंदी ही रहती है, भले उसका रूप कुछ भी रहे। हिंदी के बजाय यदि दूसरी कोई भी प्रदेश-भाषा केंद्र में राजभाषा बनती हो, तो हर्ज नहीं, अन्यथा हिंदी को उसका 'ड्यू'—उचित स्थान मिलना चाहिए। यह स्पष्ट है कि उसकी साहित्यिक महत्ता आदि के कारण नहीं, उसकी भारतीयता एवं व्यापकता तथा जन-भाषिकता के कारण ही उसे यह स्थान मिल रहा है। अतः उसका स्थान उसे न मिले, तो अंग्रेजी बनी रहेगी एवं वे सब दुष्परिणाम सामने आयेंगे। हिंदी वाले भी यह न समझें कि उसका केस अकेले उसमें लग जायेगा। वह प्रदेश भाषाओं के साथ ही लग जायगा, क्योंकि प्रदेश-भाषा के हित से उसका हित केंद्र एवं प्रांतों में जुड़ा है। इसीलिए उसे कभी यह आग्रह नहीं रखना चाहिए कि प्रांतों में वह माध्यम रहे। प्रांतों में प्रांतभाषा ही माध्यम रहे, हिंदी अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ी जाये। इतनी अनिवार्यता उसको हजम करने में काफी है। उससे ही अखिल भारतीय कामों एवं सेवाओं के व्यापक लोग बन जायेंगे। किसी खास मामले में भी वह यूनिवर्सिटियों की माध्यम बन सकती है।

अब प्रश्न उपस्थित होता है, राष्ट्रीय एकता का ! वस्तुतः यह सवाल जनता तक पहुँचता ही नहीं, नेतागण ही आपस में उसका निपटारा कर देते हैं ! अंग्रेजी के राजभाषा-स्थान से हटने से किसी की नौकरी नहीं जायेगी, सरकारी परीक्षाओं में प्रवेश के समय अंग्रेजी अनिवार्य रहेगी, पर हिंदी नहीं, गैरहिंदी भाषियों को हिंदी न आने से ही नौकरी के दरवाजे बंद नहीं होंगे, उनके लिए नौकरियों में प्रतिशत भी सुरक्षित रखा जायेगा, इत्यादि प्रतिबंध एवं सहूलियतें कर दी जायें, तो दक्षिण का कोई भी जन इसका विरोध नहीं करेगा कि हिंदी न आय ! आज की अंग्रेजीदाँ पीढ़ी का वर्चस्व खत्म न हो, नये अंग्रेजी वालों का स्थान बना रहे; यही भूमिका अंग्रेजी राजभाषा चाहने वालों की है। उनको इतनी सहूलियतें देने में रत्ती भर भी एतराज नहीं करना चाहिए। इसके लिए सन् १९६५ की मियाद भी आगे बढ़ाई जा सकती है, परंतु वह बेमियाद समय के लिए नहीं ! और न यूनिवर्सिटियों में अंग्रेजी को कायम रखने की शर्त पर।

पंडितजी कहते हैं, अहिंदी भाषी जब तक न कहें, हिंदी न आयेगी। हम इस बात को उचित मानते हैं। पर इसका निर्णय करे कौन ? क्या चंद अखबार वाले एवं राजनीतिज्ञ ? जनता तो इसकी विरोधी नहीं है। हिंदी सीखने वाले अहिंदी छात्र लाखों की संख्या में दक्षिण में हैं। जन सेवक दक्षिण में हैं, साहित्य-संस्थाएँ दक्षिण में हैं। इन सबको पूछें और पूछें सभी अहिंदी भाषियों को, न कि किसी एक विशिष्ट वर्ग को। हमारा निश्चित मानना है कि पंडितजी की शर्त पूरी हो जायेगी।

वस्तुतः राष्ट्रीय एकता को हिंदी से कोई बाधा नहीं पहुँच सकती, यदि पूर्ण संरक्षण अहिंदी भाषियों को दे दिये जायें। अगर राष्ट्रीय एकता में बाधा पहुँचाने वाली हिंदी होती, तो कभी गांधीजी उसको ऐसा स्थान नहीं देते, न अन्य राष्ट्रीय नेता उसे राष्ट्रभाषा का स्थान देते। राष्ट्रीय एकता उससे कैसे, कहाँ भंग होगी, इसका कोई प्रत्यक्ष तथ्य उपस्थित न करके चंद राजनीतिज्ञों की आवाज को ही सर्वेसर्वा मानना खतरनाक है। राष्ट्रीय एकता में तो वह सहायक ही होगी।

एक बात और हम सोच लें कि संविधान की भावना को बदल कर क्या हम नये संघर्ष को मोल लेना पसंद करेंगे ? संविधान ने बहुत सोच कर ही, चर्चा के बाद ही यह निर्णय किया है। विशेष संकट की बात के बिना उसे बदलना बुद्धिमानी की बात नहीं होगी।

शास्त्रकार कहते हैं कि इसका उत्तर प्रकृति ने ही दिया है। स्त्री की मानवता की यह मूलभूत समस्या है।

इस तर्क के अनुसार स्त्री की मानवता गौण या 'सेकंडरी' हो जाती है। वह मानव तो है, लेकिन दूसरे दर्जे की मानव है। मुख्य मानव पुरुष है, स्त्री गौण मानव है। क्या हमारे पास इस आक्षेप का कोई उत्तर है ? हमारे पास से मेरा मतलब है, स्त्रियों के पास। मेरा निवेदन है कि यदि स्त्रियाँ अपनी बुद्धि और जीवन से इस समस्या का समाधान न कर सकीं तो स्त्री को गौण भूमिका का स्वीकार करना होगा, और कोई गत्यन्तर नहीं, दूसरा कोई चारा नहीं। (क्रमशः)

अफ्रीका के अंचल से

अफ्रीका में विश्व-शान्ति-सेना

• सुरेश राम

मई के महीने में रेवरेण्ड माईकेल स्काट के बुलावे पर, विश्व शांति-सेना की एशियाई शाखा के अध्यक्ष, श्री जयप्रकाश नारायण दारेस्सलाम आये। उसी समय श्री कैनेथ भी न्यूयार्क से लौटते हुए दारेस्सलाम में ठहरे। वहाँ अफ्रीका फ्रीडम ऐक्शन समिति की बैठक हुई, जिसमें श्री कैनेथ काउण्डा, डा० जूलियस और रशीदी कावावा (प्रधान मन्त्री, टांगानिका) ने भी भाग लिया। श्री कैनेथ ने संयुक्त राष्ट्र के कार्यक्रम और वहाँ जो लोगों ने दिलचस्पी दिखलाई, उस पर बहुत सन्तोष जाहिर किया। लन्दन में भी वे ब्रिटिश कैबिनेट के महत्त्वपूर्ण सदस्य और मध्य अफ्रीका प्रश्नों के इन्चार्ज मंत्री, श्री बटलर से मिले थे। श्री बटलर की बातचीत से भी श्री काउण्डा को काफी समाधान था और अब उनका झुकाव इसी तरफ था कि अक्टूबर में जो चुनाव उत्तर रोडेशिया में होने वाले हैं, उनमें हमें जीतना बहुत जरूरी है। श्री कैनेथ ने इसी के लिए मदद की अपेक्षा प्रकट की।

दारेस्सलाम नगर में एक बड़ी आम सभा दस मई को श्री जूलियस के० न्यरेरे की अध्यक्षता में हुई। इसमें तीन व्याख्यान हुए—श्री काउण्डा का, श्री जयप्रकाश नारायण का और रेवरेण्ड माईकेल स्काट का। सभा में एशियन भाई ज्यादा तादाद में थे। इसमें श्री जूलियस ने कहा कि हमें अफ्रीकन संघर्ष की कल्पना को ज्यादा व्यापक बनाना होगा और सारी मानव जाति का जो इन्साफ के लिए संघर्ष है, उसके साथ मेल बैठाना होगा और ऐसे साधन अपनाने होंगे, जो साध्य के अनुकूल हों। श्री काउण्डा ने उत्तर रोडेशिया का पूरा नक्शा पेश किया और चुनाव की सफलता के लिए मदद की दरकार की।

रेवरेण्ड माईकेल स्काट ने बताया कि किस तरह प्रतिक्रियाशील शक्तियाँ जोर पकड़ रही हैं और हमें अहिंसक एवं शान्तिमय उपायों से उनका निराकरण करना है। श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि उत्तर रोडेशिया की आजादी से सारे मध्य और दक्षिण अफ्रीका की आजादी की चाभी हाथ आ जायेगी और हर किसी का फर्ज है कि श्री काउण्डा की ज्यादा-से-ज्यादा मदद करे।

दो दिन बाद, १२ मई से १४ मई तक टांगानिका-उत्तर रोडेशिया सीमा से अस्सी मील की दूरी पर, टांगानिका के पश्चिमी पहाड़ी प्रदेश में, म्बेया नाम की नगरी में 'पाफमेका' का एक विशेष सम्मेलन हुआ। इसके खुले इजलास में तो लगभग बारह चौदह हजार की भीड़ थी। घनघोर वर्षा के बावजूद जनता का उत्साह कायम रहा। इस अवसर पर श्री जूलियस न्यरेरे ने कहा कि जब तक अफ्रीका के सभी देश स्वतंत्र नहीं हो जाते, हमारा यह आन्दोलन जारी रहेगा और हम सब मिल कर, इस आन्दोलन को चलाना चाहते हैं।

टांगानिका के प्रधान मंत्री, श्री रशीदी कावावा ने कहा कि अब बोलने का समय नहीं रहा है। अब तो करने का समय है। वेलेन्स्की बोल नहीं रहा है, चुपचाप कर रहा है"'हम भी ज्यादा बात नहीं करना चाहते। लेकिन यह स्पष्ट बता देना चाहते हैं कि उत्तर रोडेशिया में जो दमन की नीति चल रही है, वह टांगानिका की सरकार को पसन्द नहीं है। हम यह नहीं बर्दाश्त कर सकते कि इस तरह की सरकार हमारी सीमा पर रहे। श्री कावावा ने आगे चल कर कहा कि उत्तर रोडेशिया के निवासियों को मिल कर और मजबूती के साथ आगे बढ़ना चाहिये। चाहे मौत का सामना करना पड़े, कोई परवाह नहीं। वे इत्मिनान रखें कि टांगानिका के हम निवासी और सरकार, उनके साथ अपनी जान दे देंगे।

म्बेया में एक शानदार रैली हुई, जिसमें श्री जयप्रकाश बाबू, रेवरेण्ड स्काट तथा अन्य नेताओं के व्याख्यान हुए। उसमें यह संकल्प किया गया कि उत्तर रोडेशिया तथा दूसरे सभी गुलाम देशों को जब तक आजादी नहीं मिल जाती, हम चैन नहीं लेंगे।

इसके एक सप्ताह के अन्दर, न्यूयार्क से रेवरेण्ड ए० जे० मस्टे भी आ गये। इस प्रकार विश्व-शान्ति-सेना की तीनों शाखाओं के अध्यक्ष एकत्र हो गये। वे तीनों श्री जूलियस से मिले। उन्होंने कहा कि विश्वशान्ति-सेना को यहाँ अपना काम जारी रखना चाहिये और एक केन्द्र की स्थापना करनी चाहिये। उन्होंने यह भी कहा कि केन्द्र को तो अहिंसा के दर्शन और नीति पर ही दृढ़ रहना चाहिये, चाहे कोई कुछ ही क्यों न कहे।

उत्तर रोडेशिया का कार्यक्रम

२१ मई को तीनों अध्यक्षों ने दारेस्सलाम में एक प्रेस-कान्फ्रेंस की। उस समय अफ्रीका फ्रीडम ऐक्शन समिति के भी सभी सदस्य मौजूद थे। उसमें कहा गया कि अपने-अपने देशों को लौट कर हम 'स्वाधीनता कूच" की तैयारी करेंगे—क्योंकि श्री कैनेथ काउण्डा का यह विचार सही है कि देश के अन्दर और बाहर, हर तरह से सीधी कार्रवाई की तैयारी रखनी चाहिये, जब तक स्थिति यह न आ जाये कि उत्तर रोडेशिया के शासन में अफ्रीकन बहुमत हो गया और वैधानिक उपायों से यह देश स्वराज्य प्राप्त कर लेगा। कूच के अतिरिक्त अहिंसात्मक केन्द्र की स्थापना के लिए हम भरसक मदद देंगे।

मई के अन्तिम सप्ताह में श्री कैनेथ काउण्डा का एक केबिल श्री जयप्रकाश नारायण के नाम दारेस्सलाम आया। उसमें उन्होंने कहा :

"हमारी मदद के लिए आपके आगमन पर हम आपके आभारी हैं। विश्व शान्ति-सेना के साथ आपकी मौजूदगी के परिणाम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। आपकी मदद से हम दोनों देश एक दूसरे के निकट आ जाते हैं। स्वाधीनता-कूच की जरूरत अब भी पड़ सकती है। इसलिए भारतीय स्वयंसेवकों को तैयार रहना चाहिये।"

विश्व शान्ति-सेना के अध्यक्षों के नाम इसी सम्बन्ध में एक उल्लेखनीय पत्र श्री म्यू कोयनान्गो का है। आप 'पाफमेका' के मंत्री-प्रधान हैं और अफ्रीका के तपे हुए, अनुभवी और सुप्रसिद्ध सेवकों में अग्रणी हैं। उन्होंने कहा :—

"म्बेया के अधिवेशन के समय की 'पाफमेका' की कोआर्डिनेटिंग फ्रीडम कौन्सिल ने मुझे आदेश दिया था कि विश्व-शान्ति सेना के प्रति आभार प्रकट करूँ। जेम्बिया (उत्तर रोडेशिया) की आजादी के लिए, 'यूनिप' की जो आप मदद कर रहे हैं, ताकि वह देश साम्राज्य-शाही, उपनिवेशशाही, नयी-उपनिवेशशाही और योरोपीय शिकंजे से मुक्त हो जाये, वह बहुत सराहनीय है। और अफ्रीका फ्रीडम ऐक्शन की स्थापना कर आपने मध्य अफ्रीका की आजादी के पक्ष पर सारी दुनिया का ध्यान केन्द्रित कर दिया। कौन्सिल को आशा है कि अगर श्री कैनेथ काउण्डा और 'यूनिप' आवाहन करेंगे, तो आप दूने उत्साह के साथ उनकी मदद करेंगे और मध्य अफ्रीका में शान्ति और स्वतन्त्रता की स्थापना में सहायक होंगे।"

अब स्थिति यह है कि आगामी ३० अक्टूबर को उत्तर रोडेशिया में चुनाव होने जा रहे हैं। वहाँ तीन तरह की सीटें हैं—नीची (अफ्रीकी), ऊँची (योरोपीय व विशिष्ट) और मिलीजुली। तीनों की तादाद कुल मिला कर ४५ हैं। श्री कैनेथ पैंतालीसों सीटों पर 'यूनिप' के उम्मीदवार खड़े कर रहे हैं और विश्वासपूर्वक चुनाव की तैयारी में हैं। आनन्द का विषय है कि कुछ योरोपियन भी 'यूनिप' के सदस्य बन रहे हैं। 'यूनिप' ने अपना चुनाव घोषणा-पत्र भी प्रकाशित कर दिया है। आशा की जाती है कि चुनाव शान्तिपूर्वक सम्पन्न होंगे।

लेकिन भविष्य की गति विधाता के सिवा कौन जानता है! गत ... में जब श्री कैनेथ काउण्डा ... आये थे, तो कहते थे कि चुनाव में ... अड़चन पड़ सकती है। वह यह कि ... वेलेन्स्की महोदय यह देखें कि 'यूनिप' की जीत निश्चित है, तो वह कुछ ... या विघ्न-बाधा करवा दें, ताकि चुनाव ही स्थगित हो जायें। या एक पार्टी अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस को, ... वेलेन्स्की का पूरा समर्थन है, खिलाफ भड़का दे और ... उन के बीच लड़ाई हो जाये और उन्हें चुनाव रोकने का बहाना मिल जाये। जो हो, श्री कैनेथ अपने रास्ते पर अटल हैं और उनकी हर तरह से यह कोशिश है कि देश में शान्ति कायम हो और चुनाव सुगमता के साथ पूरे हों।

अहिंसात्मक केन्द्र

अब हम आते हैं विश्व शान्ति सेना के दूसरे कार्यक्रम, अहिंसात्मक केन्द्र पर। ऊपर कहा जा चुका है कि श्री कैनेथ काउण्डा और डॉ० जूलियस के० न्यरेरे, दोनों ने ही इस विचार का स्वागत किया है। यह केन्द्र सारे पूर्वी अफ्रीका, मध्य अफ्रीका व दक्षिण अफ्रीका, अंगोला, मोजाम्बिक आदि को दृष्टि में रख कर कार्य करे, तो इसका काम होगा कि इस सारे क्षेत्र में अहिंसा के दर्शन और अमल को व्यापक बनाये और यहाँ अहिंसक आन्दोलनों के प्रतिपादन में योग दे।

केन्द्र के तीन काम मुख्य होंगे पहला, कार्यकर्ताओं या स्वयंसेवकों का प्रशिक्षण। दूसरा, स्वराज्य-प्राप्ति के लिए और अन्याय, साम्राज्यवादी एवं ... से लड़ने के लिए अहिंसात्मक उपाय योजना और एक रचनात्मक कार्यक्रम अमल में लाना, ताकि एक नये प्रकार का अहिंसात्मक मानवीय समुदाय पनप सके। तीसरा, जो देश स्वाधीनता प्राप्त कर चुके हैं उन्हें नया, शोषणरहित और दमन-मुक्त समाज बनाने में मदद देना, ताकि वहाँ फिर से अन्याय, भेदभाव, असमानता और फूट न पैदा हो सकें। स्पष्ट है कि ये तीनों काम अफ्रीकन संदर्भ में किये जाते हैं। केन्द्र में एक अच्छा पुस्तकालय तथा वाचनालय भी होगा, ताकि मनोयोगपूर्वक अध्ययन किया जा सके और अफ्रीका की बदलती हुई परिस्थिति की पूरी जानकारी बनी रहे।

इस केन्द्र के लिए टांगानिका सरकार ने जमीन देने का वादा किया है। लेकिन जमीन खोजनी होगी विश्व शान्ति-सेना के कार्यकर्ताओं को। कई स्थान देखे गये हैं, लेकिन अभी कोई ठीक-सा स्थान नहीं मिला है। फिलहाल हम लोग एक सरकारी बंगले में रहते हैं, जहाँ अध्ययन-मनन चला करता है। हमें विश्वास है कि नवम्बर से केन्द्र में कार्यकर्ता भी शिक्षण के लिए आ सकेंगे। क्या टांगानिका और क्या रोडेशिया—दोनों में चुनाव होने के कारण

(टांगानिका में प्रजातंत्र के प्रथम राष्ट्रपति का चुनाव बालिग मताधिकार के आधार पर पहली नवम्बर को है और उत्तर रोडेशिया में आम चुनाव ३० अक्टूबर को हैं), अभी कार्यकर्ता चुनाव-तैयारी में लगे हैं और वहाँ की प्रमुख पार्टियों का ध्यान व शक्ति उसी तरफ जा रही है। इस बीच कोई उचित स्थान भी मिल जाने की संभावना है।

दक्षिण पश्चिमी अफ्रीका का प्रश्न

थोड़े दिन पहले, जुलाई के अंत और अगस्त के शुरू में, विश्वशान्ति-सेना की कौन्सिल की बैठक लन्दन में थी। वहाँ यह विचार किया गया कि दक्षिण-पश्चिमी अफ्रीका की स्थिति भी गंभीर होती जा रही है। सौभाग्य से वहाँ का प्रश्न संयुक्त राष्ट्र के सामने है। तो यह निर्णय हुआ कि रेवेरण्ड माईकेल स्काट वहाँ की सारी परिस्थिति को देखने-समझने के बाद, अगर यह महसूस करते हैं कि एक "स्वाधीनता-कूच" दक्षिण पश्चिमी अफ्रीका में की जावे, तो उस कार्यक्रम को जरूर उठाया जाये।

रेवरेण्ड माईकेल स्काट इन दिनों न्यूयार्क ही हैं। संयुक्त राष्ट्र की एक विशेष समिति के सामने दक्षिण-पश्चिमी अफ्रीका पर एक निवेदन भी उन्होंने पेश किया। हाँ, यह समिति जून के पहले हफ्ते में दारेस्सलाम भी आयी थी। उस समय विश्व शान्ति-सेना की तरफ से रेवरेण्ड स्काट ने एक मसविदा पेश किया था। उसमें दिखाया था कि किस तरह बड़ी भारी पूंजीवादी शक्तियों का जाल कटांगा (कांगो के अन्दर का वह भाग जिस पर करीब दो साल से झगड़ा चल रहा है) से केप तक फैला हुआ है और जिसको ब्रिटिश, अमरीकी तथा बेल्जियन सरकारों का सहयोग भी प्राप्त है। मसविदे में कहा गया कि इस जाल को तोड़ना जरूरी है और पूर्व, मध्य तथा दक्षिणी अफ्रीका के सभी देशों को स्वतंत्रता मिलनी चाहिए, वरना विश्वशान्ति को बड़ा भयानक खतरा निकट भविष्य में ही उठाना पड़ेगा।

यहाँ दारेस्सलाम में दक्षिण अफ्रीका, मध्य अफ्रीका के सभी राजनीतिक पक्षों के प्रतिनिधि मौजूद हैं और उनके कार्यालय हैं। दक्षिण-पश्चिमी अफ्रीका के मित्रों से हम मिले और उन्होंने इस नये कार्यक्रम का बहुत स्वागत किया। लेकिन अभी विचार-विनिमय चल रहा है कि कैसे, कब और क्या कदम उठाना ज्यादा कारगर होगा। अन्तिम फैसला रेवरेण्ड माईकेल स्काट का रहेगा और जो कुछ किया जायेगा, उन्हीं के नेतृत्व में किया जायेगा।

भविष्य

अफ्रीका में विश्व शान्ति-सेना का आगमन एक अभूतपूर्व घटना है। इस महाद्वीप के सभी देशों की, विशेषकर पूर्वी, मध्य और दक्षिणी भागों की राजनीतिक पार्टियों का ध्यान विश्व शान्ति-सेना पर गया है और जा रहा है। इन पार्टियों और उनके कार्यकर्ताओं में कुछ का तो अहिंसा पर विश्वास है, मगर कुछ उसकी व्यावहारिकता में शक करते और अल्जीरिया के नमूने पर, गुरीला-युद्ध में ज्यादा विश्वास करते हैं। साथ ही, दक्षिण और मध्य अफ्रीका में आर्थिक स्वार्थ भी बहुत जबरदस्त है। दुनिया का अधिकांश सोना और हीरा यहीं तो होता है, जिस पर विदेशी कम्पनियों का पूरा काबू है। इंग्लैंड तथा योरप के अन्य देशों के अनेक लोग इस हिस्से में बस गये हैं और ऐसे जम गये हैं, मानो उनका अपना घर ही हो—और फिर यहाँ के मूल निवासियों से वह हर तरह का परहेज बरतते हैं। उन्हें 'इन्सान' से नीचे दर्जे का समझते हैं। ये गोरे लोग भी जान की बाजी लगा कर अपने हितों की रक्षा करने पर उतारू हैं।

यह है जटिल परिस्थिति, जिसका सामना विश्व-शान्ति सेना को करना है। इसके पास ज्यादा बल और साधन भी नहीं हैं। मगर युग का प्रवाह जरूर अनुकूल है। लेकिन उस प्रवाह का सदुपयोग करने की क्षमता भी तो होनी चाहिए। जो हम चन्द भाई यहाँ इस समय काम कर रहे हैं, वे अदना लोग हैं। कोई विशेष अनुभव भी अपने पास नहीं है। अपने पास न शक्ति है, न युक्ति आती है। अपना आधार केवल एक है—भक्ति, अहिंसा के प्रति अपनी श्रद्धा और उसको कार्यान्वित करने की विनम्र तैयारी। क्या कर पायेंगे, क्या नहीं, यह तो भविष्य ही जानता है। लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि एक पूरी कसौटी है। और अगर विश्व-शान्ति सेना इसमें खरी उतरती है, तो दुनिया में अहिंसा का झंडा बुलन्द होगा, करुणा का राज्य आयेगा और शासन-मुक्त समाज की स्थापना हो जायेगी।

—

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

सूरज की रोशनी फैल रही थी और हमारे बदन पर के गीले कपड़े सूख रहे थे। दरता बहन मेरे कान में फुसफुसा रही थी–'दीदी, अब सिर्फ बीस मिनट रहे।' भारत की सीमा दृष्टिपथ में आ गयी थी। चारुदा (श्री चारुचन्द्र चौधरी) मुझे कहने लगे, "वह रहा तुम्हारा भारत! वहाँ तुम्हें भारत का चावदा मिलेगा।"

मैं उन पर बहुत नाराज हो गयी–"आपका कहना ठीक नहीं, चारुदा। हम भारत और पाकिस्तान, ऐसा फरक नहीं करते। बाबा ने क्या कहा—सब पृथ्वी हमारी है और हम पृथ्वी के सेवक हैं! अब आपकी सेवा भूमि पाकिस्तान और हमारी भारत है, यह बात अलग है।"

चारुदा हँस कर कहने लगे, "गुस्सा मत करो। वे सामने के झंडे देखो, कैसे हँस रहे हैं!"

सीमा पर दो भव्य कमानें दिख रही थीं। एक पर लहरा रहा था आँखों को ठंडक देने वाला सब्ज झंडा और दूसरी पर लाल सुर्ख अपनी विशेषता से चमक रहा था। दोनों हँस रहे थे। एक शान्त था, गंभीर था, क्योंकि अहिंसा के ऋषि की गंभीर वाणी वह अभी-अभी सुन चुका था और उसको विदाई दे रहा था। दूसरा हँसमुख था, उत्साही था, क्योंकि अहिंसा के ऋषि का वह स्वागत कर रहा था। इन दो झंडों की छाया के बीच था एक छोटा-सा मंच। बाबा उस मंच पर चढ़े और दोनों राष्ट्रों की जनता एक-दूसरे में मिल गयी।

भाषण समाप्त कर के बाबा मंच के नीचे उतरने लगे, तो बाळ भाई बोले, "बाबा जरा रुकिये। देखिए, सब एक-दूसरों को कैसे मिल रहे हैं!" मंच पर खड़े-खड़े हम देख रहे थे। वह एक अद्भुत दृश्य था—सिनेमा का नहीं, नाटक का नहीं, तो सत्य। दायीं ओर खड़े थे उत्तर बंगाल के चारुदा और दाहिनी ओर थे पश्चिम बंगाल के धीरेन्दा। एक समय के बापू के अनुयायी आज चौदह साल के बाद प्रथम मिल रहे थे। दोनों ने एक दूसरे को पुकारा–'चारुदा', 'धीरेन्दा'! और दोनों प्रेमालिंगन में बद्ध हो गये। पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री, पूर्व बंगाल के प्रमुख कार्यकर्ता पूर्णेन्दुदा से ऐसे ही मिले। वे भी चौदह साल के बाद आज प्रथम मिल रहे थे। पश्चिम बंगाल के सर्वोदय-कार्यकर्ता चपल्दा के पिताजी पूर्व बंगाल में चारुदा के साथ काम कर रहे हैं। इन पिता पुत्र की मुलाकात भी इस अद्भुत स्थान पर हुई। एक प्रांत की यह परिस्थिति तो उस बर्लिन शहर के क्या हाल हुए होंगे? जब ५ सितम्बर को सीमा पर जो थाँस थे, वे २१ सितम्बर को अदृश्य हो गये थे।

पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री श्री प्रफुल्लचंद्र सेन ने कलकत्ता की समस्याएँ हल करने के लिए बाबा को कलकत्ता आने का न्यौता दिया। बाबा ने अपने भाषण में पाकिस्तान की सरकार, सेवक, साथी और जनता का शुक्रिया अदा किया और फिर पाकिस्तानी जनता के भाव भरे चेहरों की ओर मुड़ कर प्रणाम किया और मंद मंद पद से बाबा राधिकापुर की ओर चलने लगे।

पड़ाव पर अखबारों के संवाददाता, फोटोग्राफर और जनता की भीड़ थी। अपने पहले ही भाषण में बाबा ने पश्चिम बंगाल को संदेश दिया:

> इस बार हम यहाँ अध्यात्म के शांति से काम से संतुष्ट नहीं होंगे। इतनी शक्ति बंगाल में है, ऐसा हमारा विश्वास है। उसके लिए, जितना समय देना उचित होगा, हम देंगे। हम आपकी सेवा में उपस्थित हैं। बच्चे का हृदय लेकर हम यहाँ आये हैं।"।

सब चिरपरिचित मिल गये थे। बातें आ गये थे। उत्साह था, प्रसन्नता थी। कमरे में आयी, माँ आशादी मुझे कहने लगीं, "अरे, पाकिस्तान के लोगों के चेहरे याद आ रहे हैं।" मन में मैंने कहा, मेरी भी यही स्थिति है। ●

मोहब्बत का पैगाम

लेखक—विनोबा, अखिल भारत सर्व-सेवा संघ, राजघाट, काशी, मूल्य क्रमश: दो रुपया और ढाई रुपया।

पुस्तक के दोनों भागों में संत विनोबा के कश्मीर में दिये गये प्रवचन संग्रहीत हैं। दोनों पुस्तकें दो भाग नहीं, दो संस्करण हैं। दूसरे संस्करण में प्रथम संस्करण के लगभग दुगुने प्रवचन हैं, किन्तु मूल्य ढाई रुपया ही रखा गया है। कश्मीर में विनोबाजी ने चार मास पदयात्रा की और स्थान-स्थान पर भाव विभोर होकर प्रवचन किये। यों भी कश्मीर धरती का एक अनुपम प्राकृतिक भूखंड है और इस समय एक विशेष आकर्षण-केन्द्र भी बन गया है। ऐसे क्षेत्र में विनोबाजी की पैदल यात्रा का एक विशेष महत्त्व है। इस यात्रा में विनोबा प्रायः भावमय होकर मिल्जुल कर रहने की मानव की एक बड़ी समस्या का ठीक समाधान खोजते हुए दिखते हैं। मनुष्य किसी धर्म या जाति का हो, मनुष्य है। प्रकृति और विवेकशील जीवन की जो न्यामत उसे प्राप्त है, उसको उसका सदुपयोग कर फूलना फलना, आगे बढ़ना है। उसके धर्म, उसकी जातीयता की इसी में सार्थकता है। यह तभी संभव है जब मनुष्य मिलजुल कर रहना और बाँट कर खाना सीखे। विनोबा निष्पक्ष भाव से यह भावना जनता के हृदय में जगाना चाहते हैं। उनके जैसे संत के लिए भारत और पाकिस्तान की जनता में कोई भेद नहीं है। वह दोनों की समान रूप से खुशहाली चाहते हैं। मुहब्बत उन्हें हिन्दू मुसलमान दोनों के साथ एक जैसी है। इसीलिए उनको कहीं बनावट नहीं होती है। 'धर्म-परिवर्तन व्यर्थ की चीज' रसूलों में फर्क नहीं, 'खुद और खुदा,' 'खूबसूरत कुदरत बदसूरत इन्सान,' 'मजहब के पाँच आमाल,' 'अध्यात्म दर्शन' इस प्रकार के शीर्षकों में विनोबाजी के अनुपम प्रवचन संग्रहीत हैं।

प्रवचनों में किसी समस्या का बौद्धिक समाधान मात्र नहीं है। उनमें हार्दिक रसमग्नता है। पढ़नेवाले को जगह-जगह सूझबूझ, अध्ययन और साहित्य के मोती मिलते हैं, चित्त प्रसन्न हो जाता है। ●

विचार-पुरुष विनोबा

• रामनारायण उपाध्याय

आचार्य विनोबा का संपूर्ण जीवन, ज्ञान और कर्म के समन्वय की एक अखण्ड साधना है। उन्हें यदि विचार-पुरुष कहें तो भी अत्युक्ति नहीं। जब मैं विनोबाजी की याद करता हूँ, तो मुझे शंकराचार्य की याद हो आती है।

शंकराचार्य की यह प्रतिज्ञा थी कि "मैं विचार ही दूँगा।" उनसे पूछिये कि अगर मेरी समझ में न आये तो? वे यही जवाब देंगे कि "मैं फिर समझाऊँगा।" "और फिर भी समझ में न आया तो?"—"फिर समझाऊँगा, समझाता ही जाऊँगा—तब तक, जब तक कि समझ में न आये। अन्त तक विचार से ही समझाऊँगा।"

लगता है कि आज के युग में विनोबा की भी यही प्रतिज्ञा है। उनके जैसा स्वतन्त्र चिंतक और मौलिक विचारक आज दूसरा नहीं। विचार में उनकी कुछ ऐसी दृढ़ निष्ठा रही है कि इस संबंध में उन्होंने स्वयं लिखा है—"मैं फकीर हूँ। पैसे को कोई कीमत नहीं देता। इतना ही नहीं, जिसे संगठन कहते हैं, उसको भी कोई कीमत नहीं देता। जो मनुष्य पैसा और संगठन, दोनों को कोई कीमत नहीं देता वह आखिर किस चीज को कीमत देता होगा? वह विचार को कीमत देता है। इसलिए विचार की हद तक, आप जो मदद चाहेंगे, जरूर पा सकेंगे।'

आगे चल कर वे लिखते हैं कि "जैसे बीज बिना फल नहीं, वैसे विचार-निष्ठा के बिना आचार निष्ठा समर्थ नहीं।"

"आचार का मूल, उसकी प्रेरणा, उसका समर्थन, उसके विकास का दिशा-सूचन, विचार में ही होता है।"

अतएव वे कहते हैं—"कृति के पहले भी विचार, बाद में भी विचार से काम लीजिये। आगे-पीछे सर्वत्र विचार-रूपी परमेश्वर खड़ा रहना चाहिये।"

उन्होंने जब सर्वोदय का संदेश प्रसारित किया, तो उनसे पूछा गया—"सर्वोदय समाज की संघटना किस प्रकार की है?" इस पर उन्होंने कहा था—"वह कोई संघटना नहीं है। एक क्रान्तिकारी शब्द है। उस पर हम सोचें और अमल करें, तो मार्ग मिल जायेगा।"

आगे चल कर उन्होंने लिखा है—"सर्वोदय समाज यानी मानव-समाज। इसका एक ही उद्देश्य है। सबकी उन्नति करना और उसके लिए जो भी साधन इस्तेमाल किये जायँ, वे सत्य अहिंसा-युक्त हों।

"यह तंत्र है ही नहीं। यह अनियंत्रित विचार है, जिसे हम विश्व में फैलाना चाहते हैं। और जिसे सारे विश्व में फैलना है वह सदेह नहीं हो सकता, विदेह ही हो सकता है।"

ठीक यही बात उन्होंने भूमिदान-आन्दोलन के समय कही। उन्होंने कहा—"मेरा उद्देश्य येन-केन प्रकारेण जमीन प्राप्त करना नहीं, वरन् समझ बूझ कर भूमिहीनों के लिए भूमि का दान लेना है। मैं इस विचार को फैलाना चाहता हूँ कि 'सबै भूमि गोपाल की' है और जो उसे स्वयं काश्त करेगा उसी के पास वह रहने वाली है। पर एकड़ वाले में एक गुंठा देने की वृत्ति होना, इसे ही मैं विचार-क्रांति कहता हूँ। जहाँ विचार क्रांति होती है, वहाँ जीवन प्रगति की ओर बढ़ता है।"

एक जमाने में विवेकानन्द की सोची हुई यह कल्पना कि—'मनुष्य को शंकराचार्य जैसी बुद्धि और भगवान् बुद्ध के जैसा हृदय मिलना चाहिये' विनोबा में सही होकर उतरी है।'

अपनी अन्तरात्मा के जरिये वे अपने प्रभु से कुछ इस कदर तदाकार रहे हैं कि वे प्राणीमात्र में परमेश्वर का दर्शन करने लगे हैं। सबकी सेवा में अपने आपको शून्य कर देने की साधना ने उन्हें, दुनिया में रह कर भी, दुनिया से दूर तक विशेष प्रकार के आत्मानन्द में लीन कर दिया है। यही वजह है कि जिससे कभी वे चिंतन करते हुए समाधिस्थ हो जाते हैं और कभी भाषण देते हुए किसी खास प्रसंग पर उनकी आँखों से आँसुओं की अविरल धारा बहने लगती है, और अपने समक्ष बैठी हुई जनता से वे कह उठते हैं—"आप लोगों को मैं ऐसे देख रहा हूँ जैसे भक्त भगवान् को देख रहा है। आप सब लोग मेरे लिए *अन्तर्यामी भगवान् के स्वरूप हैं।"*

कैसी अद्भुत स्थिति है! किसी गाँव के आम्र-कुंज में आयोजित सान्ध्य-प्रार्थना-सभाओं में जब उनके प्रवचन चलते हैं तो ऐसा लगता है, मानों प्राचीन काल के ऋषि इस युग में अपनी दिव्य वाणी प्रसारित कर रहे हों।

एक बार अपने प्रवचनों के संबंध में आपने कहा था—"वेद सहज स्वभाव से बोलते हैं, गुरू उपदेश देने के लिए बोलते हैं, मैं जप के लिए बोलता हूँ।" अपने *संबंध में उन्होंने लिखा है*—"मुझ पर मुख्यतया भक्ति और वेदान्त-विचार का संस्कार है।" अपनी रुचि के संबंध में एक बार उन्होंने कहा था—"मुझसे एक भाई ने पूछा कि *तुम्हारी रुचि की तीन* सर्वोत्तम पुस्तकें कौनसी हैं? मैंने कहा—भगवद्गीता, ईसप की कहानियाँ और युक्लिड की भूमिति।

"सुनने वाले के लिए यह उत्तर बिलकुल अनपेक्षित था, लेकिन मैं इन तीनों को विदग्ध वाङ्मय का उत्तम उदाहरण समझता हूँ।"

वे परम आशावादी हैं। मनुष्य के उज्ज्वल भविष्य में उनकी अडिग आस्था है। उनका कहना है, "मैं निराशावादी नहीं हूँ, क्योंकि मैं जानता हूँ कि मानवात्मा परम शान्त और अभेदमय है और यह जो अशांति और भेद का आभास हो रहा है उसकी मानव आत्मा की परम शांति के सामने कोई गिनती नहीं है।"

कैसा भी प्रसंग क्यों न हो, वे स्पष्ट बात कहने से नहीं चूके हैं। उनका कहना है कि हमारे कार्यों में विचार दर्शन होना चाहिए।

एक बार आन्ध्र प्रान्त का दौरा करते समय, आन्ध्र केसरी श्रीप्रकाशम् के साथ, जब वीरवरम् ग्राम में आपका ८१ जोड़ी बैलों के रथ पर बैठा कर स्वागत किया गया, तो आपने कहा था, "हमारा उत्साह ज्ञानयुक्त नहीं होता, यह दिखाने के लिए शायद आपने यह इक्यासी बैलों का आयोजन किया है। ये बेचारे (बैल भी) समझ नहीं सके होंगे कि इतने छोटे-से काम के लिए उनके *मालिकों ने इतनी बड़ी सेना क्यों इकट्ठी की!"*

उनके पास शब्दों का असीम भण्डार है। एक दिन 'ऋषि' और 'ऋषभ' का अन्तर बतलाते हुए बोले—"दोनों के बीच सिर्फ एक हल होता है। हल के सामने जो चलता है वह 'ऋषभ' और हल के पीछे-पीछे जो चलता है वह 'ऋषि'।"

हर बात में फायदा ढूँढ़ने की हमारी जो लत है, इस पर कस कर व्यंग करते हुए उन्होंने लिखा है—"एक लड़के ने अपने पिता से पूछा—'बापूजी! गाय-भैंस का फायदा तो समझ में आता है कि हमें उनसे रोज दूध पीने को मिलता है। लेकिन कहिये तो इन बाघ-बघेरों और साँपों के होने से क्या फायदा है?' पिता ने कहा—समूची सृष्टि मनुष्य के फायदे के लिए ही है, इस बेकार की गलतफहमी में हम न रह जायँ, यही इनका फायदा है।"

हर बात में जो लोग महज एकतरफा सोचते हैं उन्हें नयी दृष्टि प्रदान करते हुए एक जगह आपने लिखा है, "लोग कहते हैं कि हिन्दुस्थान दुनिया से अलग नहीं रह सकता है, उस पर दुनिया का असर पड़ता है, मैं कहता हूँ, केवल हिन्दुस्थान [illegible] दुनिया का असर नहीं पड़ता, [illegible] का भी दुनिया पर असर पड़ता है [illegible] उससे हमें दुनिया को प्रभावित करना है।

एक बार एक ज्योतिषी भाई उ[illegible] पास पहुँचे और पूछने लगे, चन्द्र[illegible] मनुष्य पर कुछ असर होता है, यह मानते हैं या नहीं? उन्होंने कहा, '[illegible] हमने बहुत सोचा और पता नहीं [illegible] पाया और क्या नहीं पाया! परन्तु [illegible] आप यह सोचना शुरू कर दीजिये [illegible] चन्द्र पर हमारा क्या असर होता है, [illegible] हो सकता है। आखिर हम चेतन हैं औ[र] दुनिया जड़ है। जड़ दुनिया पर चेतन का असर होता है।"

वे बड़े मधुर विनोदी भी रहे हैं। [illegible] दिन उनके मँझले भाई बाळकोबाजी [illegible] कहा—"मैं रात भर कोशिश करता [illegible] लेकिन नींद नहीं आयी।"

वे बोले—"इसमें कौनसी अचरज [की] बात है? रात भर जब तुम कोशिश कर रहे तो नींद को आने के लिए [illegible] कब मिला? या तो कोशिश ही हो[ती] या नींद ही आती।"

अन्त में, आज के सबसे बड़े क्रांति[कारी] कारी कार्य, भूमि-दान आन्दोलन के [illegible] में उनका कहना है—

"मेरा उद्देश्य क्रान्ति को टालना न[हीं] है। मैं हिंसक क्रांति से देश को [illegible] चाहता हूँ और अहिंसक क्रान्ति [illegible] चाहता हूँ। हमारे देश की भावी [illegible] शांति भूमि की समस्या के शांतिमय हल [पर] निर्भर है। भूमि सबकी माता है और [illegible] के सब पुत्र हैं—यह है हमारी साधना [का] आदि-वचन, जिसे वेद ने प्रकट किया है। भूमिहीनों का हक समझ करके, [illegible] कुटुम्ब के जन के रूप में पहचान [कर] अपनी भूमि का अच्छा हिस्सा उन्हें [देना] काश्तकारों का धर्म है और उसी में [illegible] बड़प्पन है। अश्वमेध यज्ञ के [illegible] की [illegible] मैं भी भूमि दान यज्ञ के अन्दर की [illegible] घूम रहा हूँ। महाभारत में [illegible] का वर्णन है। मेरा यज्ञ प्रजा-सू यज्ञ है। इसमें प्रजा का अभिषेक होगा, [illegible] सब अपना-अपना हिस्सा दें।"

आगे का कदम

(खादी ग्रामोद्योग के नये मोड़ के संदर्भ में) पृष्ठ-संख्या-२००, मूल्य-७५ नये पैसे

प्रस्तुत पुस्तक में खादी कार्य के नये मोड़ को लेकर विभिन्न विद्वानों-विशेषज्ञों के खादी सम्बन्धी विचारों को संग्रहीत किया गया है।

खादी और चरखा केवल खादी और चरखा ही नहीं हैं, वह एक विचार दर्शन है। राष्ट्रपिता गांधी ने इसकी विशद विवेचना अपने भाषणों और लेखों में की थी। खादी के सम्बन्ध में समय-समय पर प्रगतिशील विचार व्यक्त किये जाते रहे, दूसरे शब्दों में कहा जाय तो खादी की [illegible] बदलती रही; बल्कि यों कहा जाय [illegible] विकसित होती रही।

इस संग्रह में खादी के सम्बन्ध में [illegible] लोगों के विचार संग्रहीत किये गये [illegible] जिन्होंने इस विषय का अध्ययन ही [illegible] किया, वरन् जिन्होंने खादी-कार्य *अपना जीवन बिताया है। अतः* [illegible] विचार सारगर्भित हैं। खादी-दर्शन समझने के लिए यह पुस्तक विशेष रूप सहायक सिद्ध होगी।

['राष्ट्रभारती' से] —रामेश्वरदयाल

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१.

कुम्भ मेला, हरिद्वार में सर्वोदय-शिविर

रुड़की में उत्तर प्रदेश सर्वोदय-कार्यकर्ता सम्मेलन में ऐसा विचार आया था कि अब की बार हरिद्वार में जो कुम्भ मेला हो रहा है, उसमें सर्वोदय-विचार और आन्दोलन के प्रचार का भी कुछ कार्य हो। इसी विचार के सन्दर्भ में हमने सहारनपुर, देहरादून और टिहरी गढ़वाल जिले के कार्यकर्ताओं को हरिद्वार में आमंत्रित किया और चर्चा की। सभी ने इस विचार का स्वागत किया और इस कार्य में सहयोग का भी आश्वासन दिया।

इस प्रकार कुम्भ मेले में सर्वोदय-विचार-प्रचार की योजना बनी। योजना के अनुसार वहाँ एक सर्वोदय-सनाज कैम्प, तीन साहित्य-बिक्री 'स्टाल', एक कर्मा-मुक्ति तथा सफाई प्रदर्शन 'स्टाल' और एक 'सर्वोदय-मण्डप' की व्यवस्था की गयी। कैम्प में कार्यकर्ताओं और सर्वोदयप्रेमी भाई-बहनों के ठहरने व खाने की व्यवस्था थी। एक वाचनालय भी था, जिसमें सर्वोदय-विचार की सभी भाषाओं की पत्रिकाएँ तथा दैनिक पत्रों की व्यवस्था की गयी थी। कुम्भ मेले में सभी प्रान्तों से यात्री आते हैं और अधिकतर अपने भाषाई व प्रान्तीय कैम्पों में ठहरते हैं। इनमें से काफी व्यक्तियों ने इस वाचनालय का लाभ उठाया। कैम्प से सर्वोदय-विचार के बारे में काफी जानकारी यात्रियों को मिली।

सफाई प्रदर्शन 'स्टाल' तथा सर्वोदय-मण्डप, जो खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी में लगाये गये, प्रदर्शनी में सबसे अधिक दर्शनीय केन्द्र बने हुए थे। प्रान्तीय सफाई-मण्डल के मन्त्री श्री अनन्त नारायण सफाई प्रदर्शन 'स्टाल' के व्यवस्थापक और श्री रामकिशोर यादव (उ० प्र० भूदान-समिति) सर्वोदय-मण्डप के व्यवस्थापक थे। इन्होंने अपनी कार्यपटुता और लगनशीलता से ये दोनों मण्डप सब दर्शकों के लक्ष्य-बिन्दु बना रखे थे।

साहित्य-बिक्री का आयोजन तीन 'स्टालों' द्वारा किया गया था—एक प्रदर्शनी में, एक मुख्य बाजार में तथा एक कैम्प में था। कुल मिला कर ११६९ रु० की बिक्री हुई। साहित्य प्रचार के लिए गांधी स्मारक निधि के कार्यकर्ता श्री देवेन्द्र नेथानी व श्री हरिसिंह देवका तथा अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की ओर से श्री किशोरीलाल गुप्ता व टिहरी सर्वोदय-मण्डल के दो कार्यकर्ता श्री सुन्दरलाल बहुगुणा व श्री नरेन्द्र जमलोकी ने पूरा सहयोग किया। अपने जिले के सभी सर्वोदय-कार्यकर्ताओं एवं गांधी आश्रम के कार्यकर्ताओं ने इस कैम्प की सफलता में पूरा हाथ बँटाया।

इस प्रकार विचार-प्रचार की दृष्टि से यह प्रयास काफी सफल रहा।

इस कैम्प के आय और व्यय का विवरण निम्न प्रकार है :—

आय रु०-न०पै०		व्यय रु०-न०पै०	
८३२-८७	नकद चन्दा प्राप्त	४२९-२३	सफर-खर्च
७३-००	अनाज चन्दा प्राप्त	५९०-१२	भाड़ा-दुकान, शामियाना आदि
२८१-९४	साहित्य-बिक्री का प्राप्त कमीशन।	६१-१२	स्टेशनरी
३२७ ७०	खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी से प्राप्त।	११५-५०	कपड़ा-खरीद
३०-००	किराया छोलदारी	४७-५०	सामान-ढुलाई
३०-००	कपड़ा-बिक्री आधे दाम पर	१०३-५६	लकड़ी खरीद
६४३-३७	जिला सर्वोदय-मण्डल, सहारनपुर के द्वारा व्यय हुआ।	५८-७३	फुटकर खर्च
		६३७-६५	भोजन-खर्च
		३-५०	वाचनालय
		१०-००	रोशनी-खर्च
		२१-२९	सहायता
		१०-००	पेंटिंग
		३७-००	मजदूरी
		५१-७२	साहित्य भाड़ा
२१७८-८८	कुल	२१७८-८८	कुल

—ओमप्रकाश, मंत्री, जिला सर्वोदय-मंडल, सहारनपुर

दिल्ली में शांति-सेना प्रशिक्षण-शिविर

प्रादेशिक शान्ति-सेना मंडल, दिल्ली द्वारा ८ सितम्बर को शान्ति-सेना प्रशिक्षण-शिविर आयोजित हुआ। शिविर का उद्घाटन पं० सुंदरलालजी ने किया। शिविर में २० भाई-बहनों ने भाग लिया। शिविर में श्री सी० ए० मेनन, श्रीकान्त आप्टे, काकासाहब कालेलकर ने शान्ति-सैनिकों के कर्तव्यों पर प्रकाश डाला। डा० तुलसीदास जैन ने प्राथमिक चिकित्सा संबंधी और श्री सुरेन्द्र कुमार बजाज द्वारा 'स्काउट' के संबंध में आवश्यक जानकारी दी।

शिविर में सब शिविरार्थियों ने टोलियों में बँट कर निम्न पाँच विषयों पर चर्चा की—(१) दिल्ली में शान्ति-सेना का कैसे आगे बढ़े? (२) शान्ति-सैनिक अनुशासन की आवश्यकता। (३) शान्ति-सैनिक और स्वाध्याय। (४) [illegible] एकता का प्रश्न और उसका निवारण (५) अगला शिविर कब और कहाँ हो?

श्री प्रबोध चोकसी ने श्री [illegible] स्तोत्र की अर्चना पर चर्चा की। डा० ओमप्रकाश गुप्त द्वारा इस [illegible] की समाप्ति का समारोह सम्पन्न हुआ।

गांधीजी के विचारों का विवेकपूर्वक अध्ययन करने की आवश्यकता

गोरखपुर में गांधी स्वाध्याय संस्थान में-श्री अच्युत पटवर्धन का भाषण

गोरखपुर में ९ सितम्बर को गांधी स्वाध्याय संस्थान के वर्तमान सत्र का शुभारम्भ सेवा-आयोग के सदस्य, डाक्टर रामधर मिश्र ने स्थानीय थियोसोफिकल हाल में गोरखपुर विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर डाक्टर ए० सी० चटर्जी की अध्यक्षता में किया।

डाक्टर रामधर मिश्र ने अपने शुभारम्भ के भाषण में कहा, गांधीजी की सादगी, बाह्य एवं आंतरिक एकरूपता का बड़ा जबरदस्त असर सब पर पड़ता था। विद्यार्थी समुदाय भी उनके उपर्युक्त गुणों से प्रभावित हुए बिना अछूता नहीं था।

विद्यार्थियों के प्रति बापू के दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए डाक्टर मिश्र ने उदाहरण देकर समझाया कि बापू आजादी की लड़ाई में लगे रहने के बावजूद विद्यार्थियों को एकाग्रता और ईमानदारी से स्वाध्याय करने पर बल देते थे। दुख का विषय है कि आज विद्यार्थी समाज से एकाग्रता का लोप होता जा रहा है।

आपने गांधी-विचारों की चर्चा करते हुए बताया कि सत्य, अहिंसा और करुणा, येउन के विचार के तीन मुख्य तत्त्व थे। बापू को जिस किसी सत्य का भान होता था उसे जीवन में उतारने का प्रयास करते थे। आपने कहा कि आज हममें कथनी और करनी में अन्तर हो गया है। हम सत्य, अहिंसा और करुणा के आदर्श से दूर हटे हैं। इस दिशा में सामंजस्य लाने तथा कथनी करनी के अन्तर को दूर करने की दिशा में हमें ठोस कदम उठाना चाहिए।

इस अवसर पर विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित सुप्रसिद्ध समाजवादी एवं समाजसेवी श्री अच्युत पटवर्धन ने अपने भाषण में कहा कि गांधीजी ने जो कुछ किया और दिया उसके तबाह करने के ऐसी गांधी विरोधियों से अधिक गांधी-भक्त ही हैं। किसी महापुरुष के विचारों का जब विवेकपूर्वक, [illegible] समाज के परिवर्तन का साधन रख कर अमल किया जाता है, तो विचार बढ़ता है। गांधीजी सदा इसी पर जोर देते थे।

आपने कहा कि हर देश की अपनी अलग भूमिका होती है। किसी देश की नकल आँख मूँद कर नहीं की जा सकती। भारत की भूमिका हरिजनों के उत्थान की भावना ही हो सकती है। बापू इसी पर जोर देते थे। आज भी यह भूमिका हमारे लिए उसी प्रकार महत्त्वपूर्ण और आवश्यक बनी है। इसको नजरन्दाज करने से हम डूबेंगे।

आपने अन्त में कहा कि गांधीजी के विचारों का सही ढंग से विवेकपूर्वक अध्ययन करने की आवश्यकता है। मौलिक दृष्टि से बढ़ते हुए अध्ययन के महत्त्व पर आपने अफसोस जाहिर किया और आशा की कि 'अध्ययन' के माध्यम से गांधी-विचार का सही अध्ययन हो सकेगा। और समाज उस रास्ते पर अग्रसर हो सकेगा।

सर्वप्रथम गांधी-निधि के प्रान्तीय बोर्ड के सदस्य श्री [illegible] भाई ने प्रांत में गांधी-निधि की विभिन्न प्रवृत्तियों पर संक्षेप में प्रकाश डाला। एवं गांधी स्वाध्याय संस्थान की उपयोगिता और आवश्यकता को बताया। तत्पश्चात् संस्थान के संचालक श्री रामाश्रय शास्त्री ने सत्र का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करते हुए कहा कि बापू के बाद गांधी विचार में जो भ्रान्ति हुई है, उसका सही अध्ययन, विवेचन और विकास ही संस्थान का उद्देश्य है।

आगामी सम्मेलन, प्रबंध समिति व संघ की बैठकों के कार्यक्रम, कार्य-पद्धति वगैरह के बारे में सुझाव

सर्व-सेवा-संघ की प्रबंध समिति की बैठक ता० १७ नवंबर को सुबह साढ़े आठ बजे से होगी। बाद में संघ-अधिवेशन के समय के अलावा आवश्यकतानुसार हो सकती है। प्रबंध-समिति के सदस्यों व आमंत्रितों को ता० १६ नवंबर की शाम तक वेड़छी (जि० सूरत, गुजरात) पहुँचना चाहिए।

संघ-अधिवेशन ता० १७ से २२ नवंबर तक होगा।

(क) ता० १७ नवंबर को दोपहर ढाई बजे से अधिवेशन आरंभ किया जाय।

(ख) प्रति दिन सुबह साढ़े आठ से साढ़े ग्यारह बजे तक और दोपहर बाद ढाई से छः बजे तक, इस प्रकार दो 'सेशन' हों।

इस रीति से कुल ११ 'सेशन' होंगे।

(ग) पहले दिन के 'सेशन' का कार्यक्रम : (१) भजन, (२) सूत्रयज्ञ, (३) पिछली बैठक की कार्यवाही की स्वीकृति, (४) अध्यक्ष का निर्वाचन, (५) मंत्री की रिपोर्ट।

(घ) अन्य 'सेशन' भजन से आरंभ किये जायँ।

(ङ) अध्यक्ष के निर्वाचन की पद्धति।

अध्यक्ष के निर्वाचन की पद्धति प्रबंध समिति की नवंबर में होने वाली बैठक में अंतिम रूप से तय होगी।

सुझाव निम्न प्रकार है :—

(१) सदस्यों से अध्यक्ष पद के लिए नाम आमंत्रित किया जाय। सामान्यतः एक सदस्य एक नाम दे, लेकिन वह चाहे तो एक से अधिक नाम भी क्रमागत 'प्रिफरेन्स' के साथ दे सकता है।

(२) अध्यक्ष-पद के लिए एक से अधिक नाम प्रस्तावित होते हैं, तो उनसे एक को मनवाने के लिए पाँच या तीन व्यक्तियों का मंडल सर्वसम्मति से संघ नियुक्त करे। इस मंडल से यह अपेक्षा होगी कि वह सब का अभिमत समझ कर प्रस्तावित व्यक्तियों में से किसी एक का नाम घोषित करेगा। जिन व्यक्तियों के नाम प्रस्तावित हों, उनकी अथवा अन्य किसी की भी सलाह लेनी हो तो मंडल ले सकता है। लेकिन निर्णय के लिए मंडल अलग ही बैठे।

(च) 'एजेण्डा' या कार्यक्रम के विषय :-

(१) आम तौर पर संघ की विभिन्न समितियों द्वारा चलने वाली प्रवृत्तियों से और आंदोलन से संबंधित विषयों की ही संघ के 'सेशन' में चर्चा हो।

(२) निम्नलिखित प्रवृत्तियों और आंदोलन के विषयों का सुझाव है :—

(अ) समितियों की प्रवृत्तियाँ :—
- (१) कृषि-गोसेवा
- (२) खादी, ग्राम-नवनिर्माण
- (३) नयी तालीम
- (४) विचार प्रचार व साहित्य-प्रकाशन

(आ) आन्दोलन के विषय :—
- (१) आर्थिक क्रान्ति—भूमि
- (२) आर्थिक क्रान्ति—उद्योगधन्धे
- (३) शांति-सेना कार्यक्रम

(इ) पंचायत राज

(ई) संघ-संगठन और आर्थिक संयोजन।

(उ) प्रबन्ध-समिति के निर्णयों के संदर्भ में नशाबंदी और राष्ट्र भाषा संबंधी सरकारी नीति आदि विषय जानकारी व चर्चा के लिए लिये जायँ।

(ऊ) इतर विषय, जैसे संघ सदस्यता की शर्तें, नगर-कार्यक्रम, सत्याग्रह, संपत्तिदान, शांति-पात्र, भंगी-मुक्ति, मुद्राक्षय, खादी ग्रामोद्योग प्रयोग आदि अपने स्थान पर लिये जा सकते हैं।

(छ) चर्चा के लिए समय विभाजन।

शेष १० 'सेशन' का समय विभिन्न विषयों के लिए नीचे लिखे माफिक बाँटा जाय :—

- (१) आर्थिक क्रान्ति — दो सेशन (क—भूमि, ख—उद्योगधंधे)
- (२) शांति-आंदोलन — दो सेशन
- (३) खादी, ग्राम-नवनिर्माण — एक सेशन
- (४) नयी तालीम — एक सेशन
- (५) विचार प्रचार व साहित्य प्रकाशन — एक सेशन
- (६) कृषि-गोसेवा — एक सेशन
- (७) संगठन, आर्थिक संयोजना — एक सेशन
- (८) अन्य विषय — एक सेशन

(ज) विचाराधीन विषयों पर 'वर्किंग पेपर' तैयार किये जायँ और उन पर सब सदस्यों से सुझाव पहले आमंत्रित कर लिये जायँ।

'वर्किंग पेपर' बनाने की जिम्मेवारी नीचे लिखे माफिक बाँटी जाय :—

- (१) आर्थिक क्रांति—भूमि — श्री ठाकुरदास बंग
- (२) आर्थिक क्रांति—उद्योग धंधे — श्री प्रबोध चौकसी
- (३) शान्ति आंदोलन—श्री नारायण देसाई
- (४) खादी, ग्राम-नव-निर्माण— श्री अक्षयकुमार करण
- (५) नयी तालीम—श्री राधाकृष्णन्
- (६) विचार प्रचार व साहित्य प्रकाशन— श्री सिद्धराज ढड्ढा
- (७) कृषि-गोसेवा—श्री राधाकृष्ण बजाज
- (८) संगठन, आर्थिक संयोजना— श्री दत्तोबा दास्ताने
- (९) पंचायती राज—श्री रामकृष्ण पाटिल
- (१०) अन्य विषय—श्री श्यामाचरण शास्त्री

(झ) विभिन्न विषयों संबंधी विचार व चर्चा-पद्धति—

(१) १७ नवंबर को ही करीब तीस-पैंतीस व्यक्तियों की एक विषय-निर्धारक समिति अध्यक्ष द्वारा गठित की जाय। इस समिति के सदस्य ही टोलियों के नायक हों। यह समिति प्रति दिन कम-से-कम एक घंटे के लिए मिले और पूरे दिन की कार्यवाही का सिंहावलोकन करे तथा अगले दिन का कार्यक्रम बनाये। यह समिति एक तरह संघ-अधिवेशन के कार्यक्रम का सारा संचालन करे। संघ के अध्यक्ष और मंत्री भी इसमें रहें।

(२) हर विषय में सबसे पहले कोई एक वक्ता विषय प्रवेश करे। उसके बाद छोटी-छोटी टुकड़ियों में—जिसमें १५ से २० तक सदस्य रहें—चर्चा चले। चर्चा के आधार के लिए हर सदस्य के पास लिखित जानकारी रहे कि चर्चा किन मुद्दों को लेकर की जाय और निर्णय किन बातों का होना चाहिए। हर टोली की चर्चा का निचोड़ कौन रखेंगे वह पहले ही विषय निर्धारक समिति में तय कर लिया जाय। थोड़ा समय मुक्त चर्चा के लिए भी दिया जाय। दूसरे अधिवेशन में इन चर्चाओं का सारांश रखा जाय और उस पर समारोप करने वाले एक-दो व्यक्ति बोलें। कोशिश यह की जाय कि दोनों अधिवेशन अलग-अलग दिन हों, ताकि "विषय-निर्धारक समिति" की बैठक दो अधिवेशन के दौरान हो सके।

(३) टोलियाँ उपस्थित लोगों को देख कर उसी समय बनायी जायँ। यह टोली-पद्धति कुल तीन विषयों के लिए हो : शांति-आंदोलन, आर्थिक क्रांति कार्यक्रम और संगठन तथा संयोजन।

(४) शेष समितियों की प्रवृत्तियों से संबंधित व अन्य विषयों के लिए दूसरा तरीका अपनाया जाय। एक व्यक्ति विषय-प्रवेश करे और विषय चर्चा के लिए रखा जाय। बोलने वालों के संबंध में पहले ही नाम आमंत्रित कर और विचार होकर तय कर लिया जाय और उनको पूर्वसूचना रहे। समितियों से संबंधित विषयों की चर्चाओं में कोई निर्णय लेने के बजाय समिति का क्या कार्यक्रम चलता है—नीति का स्पष्टीकरण और कार्यक्रम की जानकारी तथा आगे की दिशा समझने की कोशिश की जाय।

सम्मेलन-कार्यक्रम

(क) सम्मेलन के नीचे लिखे माफिक पाँच 'सेशन' होने की अपेक्षा है :—

ता० २३ नवंबर, ६२ को दोपहर २ बजे से ६ बजे तक।

ता० २४ और २५ नवम्बर को प्रति दिन प्रातः ८॥ से ११ बजे तक और दोपहर २॥ से ६ बजे तक।

(ख) ता० २३ नवम्बर का कार्यक्रम—

(१) भजन

(२) सूत्र-यज्ञ — एक घंटा

स्वागत-समिति का आयोजन है कि सूत्रयज्ञ में सब लोग शामिल हों और आस-पास के लोग भी उसमें सम्मिलित हों। लगभग पाँच हजार लोग एक घंटा सामूहिक कताई करें। इस अवधि में कुछ समय एक-दो व्यक्ति भजन बोलें और कुछ समय मौन रहें।

चरखा समेटने वगैरह के लिए अतिरिक्त समय दिया जाय। कताई पूरा घंटा भर हो।

(३) अध्यक्ष का निर्वाचन।

(४) स्वागत।

(५) संघ के मंत्री की ओर से पिछले सम्मेलन से बाद के कार्य की रिपोर्ट।

रिपोर्ट में आंदोलन व विभिन्न कार्यक्रम का सिंहावलोकन संक्षेप में इस प्रकार हो कि परिस्थितियों की जानकारी हो सके, अनुभव की गयी कठिनाइयों व समस्याओं, उनके हल तथा आगे के महत्त्व के कार्यक्रम पर मुख्यतः रोशनी पड़ सके। संघ का तथा उसकी विभिन्न समितियों का कार्य विवरण अलग से छपा हुआ उपलब्ध हो।

(६) अध्यक्ष का भाषण।

(ग) ता० २४ और २५ नवम्बर, '६२

(१) प्रथम तीन 'सेशन' सर्व-सेवा-संघ के निर्णयों के संदर्भ में चर्चा।

(२) ता० २५ के आखिरी अधिवेशन में चर्चाओं की परिसमाप्ति के अलावा सम्मेलन के निवेदन पर प्रकाश, अध्यक्षीय समारोप का भाषण और धन्यवाद।

अधिवेशन भजन के साथ समाप्त हो।

—पूर्णचन्द्र जैन,
मंत्री सर्व-सेवा-संघ

गुजरात में सर्वोदय-पदयात्रा

गुजरात में श्री बबलभाई मेहता की पदयात्रा १ अगस्त से चल रही है। बड़ोदा जिले की पदयात्रा पूरी करके वे ५ अक्टूबर को भरोच जिले में प्रवेश करेंगे। २१ सितम्बर तक उनकी पदयात्रा के ६७ पड़ाव हुए, १८५ सभाओं में भाषण हुए, गुजराती दशवारिक "भूमिपुत्र" के २७३५ ग्राहक बने, २७३० रु० का साहित्य बेचा गया और आगामी सर्वोदय-समाज सम्मेलन के लिए ३८११ रु० का सम्पत्ति-दान मिला।

पश्चिम बंगाल में भी 'भूदान-यज्ञ बोर्ड' बना

यह हर्ष का विषय है कि विनोबाजी की पूर्वी पाकिस्तान की यात्रा के बाद पश्चिम बंगाल में प्रवेश करने के उपलक्ष में वहाँ की सरकार द्वारा १८ सितम्बर '६२ को "भूदान-यज्ञ बोर्ड" निर्मित किया गया है। इससे पश्चिम बंगाल में भी भूदान में प्राप्त भूमि के वितरण की सुविधा हो गयी है। बोर्ड के सदस्यों की नामावली बाद में प्रस्तुत की जायगी।

पाकिस्तान में विनोबाजी के 'गीता-प्रवचन' की ८०० प्रतियाँ बिकीं

चौधरी मुहम्मद शफी का वाराणसी में भाषण

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ, राजघाट, वाराणसी के केन्द्रीय हाल में विनोबाजी की पदयात्रा के संस्मरण सुनाते हुए कश्मीर के भूतपूर्व संसद्-सदस्य चौधरी मुहम्मद शफी ने बतलाया कि विनोबाजी के पूर्वी-पाकिस्तान में प्रवेश के दिन वे सोनारहाट (आसाम) में और उनके वापस लौटने के दिन, अर्थात् २१ सितंबर को राधिकापुर (प० बंगाल) में थे। उन्होंने कहा कि विनोबाजी द्वारा संकलित 'रूहुल कुरान' या 'कुरान-सार' के बारे में पाकिस्तान में हर रोज पाँच-सात सौ आदमी पूछताछ किया करते थे। *विनोबाजी की पाकिस्तान-यात्रा पर एक 'डाक्यूमेंटरी फिल्म' भी बनायी गयी है।*

श्री शफी साहब ने बतलाया कि विनोबाजी को आसाम में ९२४ ग्रामदान तो मिले ही, उनकी पदयात्रा से बंगाली-असमी का मसला भी हल हुआ है।

उन्हें पाकिस्तान में प्रथम भूदान एक मुसलमान भाई से ही मिला और उसकी भूमि एक हिन्दू भाई को दी गयी। इसी प्रकार हिन्दुओं ने मुसलमानों को जमीन दी। वहाँ विनोबाजी को १७५॥ बीघा जमीन मिली और अगर एक बीघा का दाम ६०० रु० भी लगायें, तो भूमि का मूल्य एक लाख से ऊपर होता है। तिस पर विशेषता यह है कि दूर-दूर से लोग उन्हें भूदान देने पहुँचे। ढाका से एक फिल्म-ऐक्टर बाबा के पास पहुँचा और उसने अपनी कुल आठ बीघा जमीन से तीन बीघा दान कर दी। पूर्वी पाकिस्तान में विनोबाजी का आशातीत स्वागत हुआ।

चौधरी मुहम्मद शफी ने कहा कि वे २० सितम्बर को राधिकापुर पहुँच गये थे। पश्चिमी बंगाल के मुख्य मंत्री श्री प्रफुल्लचन्द्र सेन भी वहीं थे। इस बार हिन्द-पाक सीमा पर मंच बनाया गया था। यात्रा के अंतिम दिन बहुत वर्षा हुई और मार्ग में एक नाला बह निकला। नाववाला समय पर आ नहीं सका। बस, विनोबाजी कमर तक के पानी से नदी पार करके आ गये। चीफ सेक्रेटरी और दूसरे सभी लोग भी पैदल आये। पाकिस्तान के सरकारी अधिकारियों को हमने यही कहते सुना—'जिन्दगी के ये १६ दिन ही असली बेहतरीन दिन थे।'''हिन्दुस्तान के एक दरवेश के साथ रहने का हमें मौका मिला।''

इस यात्रा के मध्य बाबा ऐसे ढ़ेर व्यक्तियों से मिले और वे स्वयं बताते हैं 'खिदमतगार' हैं जो शांति के लिए, प्रेम और मुहब्बत के लिए काम कर रहे हैं। कुरान की एक सुन्नत है : 'खुदा यह कहता है कि जमाना घाटे की तरफ जा रहा है, इसे वही पूरा कर सकता है जो सच्चाई के रास्ते पर है।' और विनोबाजी मनमुताबिक उस राह के राही हैं। पूर्वी पाकिस्तान में प्रवेश के समय न तो उनका 'पासपोर्ट' पूछा गया और न अन्य कुछ, सुर [illegible] सरकार ने उनका स्वागत [illegible]।

[illegible] की पूर्वी पाकिस्तान यात्रा के संस्मरण सुनाते हुए शफी साहब ने कहा कि 'डान' दैनिक पत्र ने बाबा के खिलाफ शोर मचाने में बड़ी मेहनत की, मगर विनोबाजी से किसी ने यह न पूछा कि 'डान' यह कहता है! हमने 'डान' के संवाददाता को 'गीता प्रवचन' पर दस्तखत कराते और अपने अखबार के रवैये के प्रति खेद प्रकट करते देखा।

जहाँ जहाँ विनोबाजी गये, हजारों की संख्या में जनता उनके दर्शनों के लिए उमड़ पड़ती थी और लोग सैकड़ों मील की यात्रा करके उनकी सभा में हाजिर होते थे। पूरा पाकिस्तान के एकाध अखबार के अलावा किसी ने भी उनकी खिलाफत नहीं की। खुदा के फज्ल से उनकी पाकिस्तान-यात्रा सफल रही और भूदान अब अन्तरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर रहा है। किसी दिन विनोबाजी पश्चिम पाकिस्तान होकर अफगानिस्तान, ईरान और रूस भी जा सकते हैं, क्योंकि आज शांति के सन्देश की निहायत जरूरत है और वे हमारे रहनुमा हैं।

[सर्वोदय प्रेस सर्विस, काशी]

गाजीपुर में ७३० व्यक्तियों ने व्रत रखा

जिला सर्वोदय कार्यालय, गाजीपुर से श्री गजानन्दजी ने सूचित किया है अखिल भारत शान्ति-सेना मंडल की अपील पर ७३० व्यक्तियों ने अणु-परीक्षण के विरोध में एक वक्त उपवास करके २३३ रु० ६३ न० पै० एकत्र किये हैं।

उत्तर प्रदेश में हरिजनों को ७०,९२१ एकड़ भूमि बाँटी

उत्तर प्रदेश भूदान-यज्ञ समिति मार्च, १९६२ तक ४,३३,९ [illegible] भूमि प्राप्त हुई और इसमें से १,७६, [illegible] एकड़ भूमि वितरित की गयी। २ [illegible] हरिजन परिवारों को इसमें ७०,[illegible] भूमि बाँटी गयी है।

गोरखपुर में 'सर्वोदय-पर्व'

गोरखपुर शहर में ११ सितंबर 'विनोबा-जयंती' के दिन से 'सर्वोदय-पर्व' का [प्रा]रंभ 'कल्याण' मासिक के संपादक श्री हनुमानप्रसाद पोद्दारजी ने किया। अपने भाषण में राष्ट्रीय एकता, शांति-सेना, अणुविरोध, साहित्य प्रचार [illegible] विशद रूप से प्रकाश डाला। श्री कपिलभाई ने अध्यक्षता की और कार्य को [illegible]।

साहित्य-प्रदर्शिनी का शुभारंभ १५ सितम्बर को श्री हनुमानप्रसादजी पोद्दार ने गांधी आश्रम में किया। उन्होंने सर्वोदय-साहित्य पर गहराई से प्रकाश डाला। प्रदर्शिनी में गांधी-निधि गोरखपुर के पुस्तकालय से गांधी, विनोबा, काकासाहब, कुमारप्पाजी, धीरेन्द्रभाई, कृपलानीजी, दादा धर्माधिकारी, जयप्रकाशजी आदि का पूरा साहित्य प्रदर्शन के लिए रखा गया था। सस्ता साहित्य-मंडल, नवजीवन, सर्व-सेवा-संघ आदि प्रकाशकों का गांधी, विनोबा का साहित्य भी बिक्री के लिए रखा गया था। यह प्रदर्शिनी २ अक्टूबर तक चली। सैकड़ों लोगों ने इसे देखा और साहित्य खरीदा।

पदयात्रा : इस बीच शहर तथा पड़ोसी क्षेत्रों में पदयात्राएँ भी की गयीं। गांधी आश्रम की तरफ से ४ टोलियाँ और सर्वोदय-मंडल की तरफ से २ टोलियाँ प्रचारार्थ निकलीं।

गांधी व्याख्यान माला : ३० सितंबर से २ अक्टूबर तक प्रतिदिन प्रो० रामनूर्ति का सायं व्याख्यान का कार्यक्रम रहा। उन्होंने सर्वोदय के मूलभूत तत्त्व, बापू की कल्पना का ग्राम-स्वराज्य तथा बापू की कल्पना का ग्राम स्वराज्य कैसे पूरा हो, इन तीन विषयों पर तीन भाषण दिये।

गांधी-जयंती : इसका कार्यक्रम श्री कपिलभाई की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। राष्ट्रीय एकता और अणु[विरोधी] प्रस्ताव स्वीकृत होकर [illegible] और कराये जा रहे हैं।

साहित्य बिक्री : साहित्य-बिक्री का कार्यक्रम शहर और देहात में व्यापक रूप से चलाया गया। करीब १९१८ रु० का साहित्य बिका। अभी और [illegible] की अच्छी उम्मीद है। "नयी [illegible]" मासिक पत्र के ४ ग्राहक भी बनाये गये।

दरभंगा में पदयात्रा-टोली

सर्वोदय केन्द्र पैदरी, जिला दरभंगा के कार्यकर्ताओं की एक टोली ने विनोबा जयन्ती के दिन ग्राम-सफाई, साहित्य-प्रचार और सर्वोदय-पात्र की स्थापना के उद्देश्य से श्री कमलाकान्त झा के नेतृत्व में निकल कर क्षेत्रीय स्तर पर २ अक्टूबर तक पदयात्रा की।

भूल-सुधार

स्वामी विवेकानन्द के सम्बन्ध में 'भूदान यज्ञ' के ७ सितम्बर '६२ के अंक में प्रकाशित लेख 'स्वामी विवेकानंद' में जो जन्म तिथि १४ अगस्त छपी है, उसके सम्बन्ध में प्रामाणिक जानकारी इस प्रकार है—

श्री विवेकानन्दजी की जन्मतिथि—१२ जनवरी, १८६३

पुण्यतिथि—४ जुलाई, १९०२

श्री विवेकानन्द के गुरुदेव श्री रामकृष्ण परमहंस की पुण्यतिथि—अगस्त १५-१६, सोमवार १८८६ की रात को लगभग १ बजे।

इस अंक में

पाठकों की सेवा में

आवश्यक सूचना

प्रेस सम्बन्धी कुछ गड़बड़ी के कारण संभव है, अगले एक दो अंक समय पर न निकल सकें। —व्यवस्थापक

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१

वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५०५ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८६२५ एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १९ अक्टूबर '६२ | वर्ष ९ : अंक ३

भाषा का प्रश्न

स्पष्ट और वैज्ञानिक चिन्तन के लिए एक अनुरोध

- राज्य-भाषा
- शिक्षण का माध्यम
- भाषा का अध्ययन

सिद्धराज ढड्ढा

हिंदुस्तान की राज्य भाषा का सवाल फिर से चर्चा का विषय बन गया है। जब देश का संविधान बन रहा था तब इस प्रश्न पर काफी वाद विवाद चला था और अंत में यह फैसला हुआ कि राज्य भाषा हिंदी हो, पर अंग्रेजी से हिंदी की बदल होने की तैयारी के लिए, हिंदी को और अधिक समृद्ध बनाने के लिए तथा अहिंदी भाषी लोगों को हिंदी सीख लेने का मौका देने के लिए संविधान के लागू होने की तिथि से १५ वर्ष का समय दिया जाय और तब तक अंग्रेजी भी राज्य भाषा के रूप में जारी रहे। इस आधार पर अंग्रेजी के लिए सन् १९६५ तक की अवधि तय की गयी थी, जिसके बाद केंद्रीय सरकार के कामकाज तथा अन्तर्प्रांतीय व्यवहार के लिए सिर्फ हिंदी ही जारी रहेगी, ऐसा माना गया था।

दुर्भाग्य से, कुछ तो चंद हिंदी-भाषी लोगों की अदूरदर्शिता के कारण, कुछ चंद अहिंदी भाषी लोगों के दुराग्रह के कारण और कुछ फैसले को क्रियान्वित करने के बारे में जिम्मेदार लोगों की तथा केंद्रीय व प्रांतीय सरकारों की ढिलाई के कारण हिंदी को राज्य भाषा बनाने का सवाल इन पिछले वर्षों में काफी विवाद का विषय रहा है और उसका विरोध बढ़ता गया है। एक प्रकार से यह सारा विषय बुद्धि या दलीलों के क्षेत्र से निकल कर भावना के क्षेत्र में चला गया है और अहिंदी-भाषी प्रांतों के कुछ लोगों के मन में इस विषय में एक भय-सा पैदा हो गया है। इस माने में यह प्रश्न एक राजनैतिक प्रश्न बन गया है।

जब कोई प्रश्न इस प्रकार राजनैतिक बन जाता है और भावना के क्षेत्र में चला जाता है तब उसे लोग अक्सर आन-बान का सवाल बना लेते हैं और विषय या वस्तु के गुण-दोष के आधार पर उसका निर्णय मुश्किल हो जाता है। इस परिस्थिति के कारण भारत-सरकार ने यह फैसला किया है कि अंग्रेजी को राज्य-भाषा की स्थिति से हटाने के लिए १९६५ की जो अवधि निश्चित की गयी थी, वह हटा दी जाय और हिंदी तथा अंग्रेजी, दोनों राज्य भाषा के रूप में व बिना किसी काल-मर्यादा के चलती रहें, अंग्रेजी कब हटे और केवल हिंदी ही राज्य भाषा के रूप में रह जाय, इसका निर्णय आगे बनने वाले वातावरण और परिस्थिति पर तथा खास करके अहिंदी-भाषी प्रांतों के लोगों की इच्छा पर छोड़ा जाय।

यह निर्णय एक राजनैतिक प्रश्न का राजनैतिक समाधान है। राजनैतिक प्रश्नों के बारे में अक्सर हमें ऐसे निर्णय करने और मानने पड़ते हैं जो गुण-दोष या दलील की दृष्टि से शायद सही न हों, पर जिनके लिए परिस्थिति हमें मजबूर करती है। इतना ही नहीं, मानवीय संबंधों की बात को ध्यान में रखें तो ऐसे प्रश्नों के निराकरण के लिए जिनके बारे में लोगों में भय या आशंका पैदा हो गयी हो, उचित मार्ग यही है कि ऐसे प्रश्नों का निर्णय उन्हीं लोगों के हाथों में छोड़ा जाय, जो भय या शंका महसूस करते हों। इसी दृष्टि से सर्व-सेवा-संघ की प्रबंध समिति ने अभी हाल ही में मदुराई में हुई अपनी बैठक में अंग्रेजी के राज्य भाषा के तौर पर बने रहने की काल-मर्यादा को हटाने के निर्णय का समर्थन किया है। विनोबा ने भी अपनी यह राय जाहिर की है कि परिस्थिति को देखते हुए मौजूदा काल-मर्यादा हटा देना ही श्रेयस्कर है।

पर दुर्भाग्य से राज्य भाषा के इस प्रश्न की जो चर्चा देश में चल पड़ी है उसमें केवल राज्य भाषा का ही नहीं, बल्कि दूसरे भी एक दो महत्त्व के प्रश्न साथ जुड़ गये हैं, जिसके कारण यह सारा विवाद और भी जटिल बन गया है। इस सारे प्रश्न पर गहराई और गम्भीरतापूर्वक विचार करने और राय कायम करने के लिए यह आवश्यक है कि हम इस विवाद के मुद्दों को स्पष्ट रूप से समझ लें।

मौजूदा विवाद में तीन मुख्य बातें हैं। पहला विषय, जिसकी चर्चा ऊपर की गयी है, राज्य-भाषा से संबंधित है। इसमें मुख्य मुद्दा यह है कि अभी संविधान में अंग्रेजी के राज्य-भाषा के तौर पर चलते रहने के लिए १९६५ की जो मर्यादा मानी गयी है वह हटायी जाय या नहीं और हटायी जाय तो आगे उसकी समाप्ति के लिए कोई काल-मर्यादा निश्चित की जाय या यह निर्णय भविष्य के लिए छोड़ दिया जाय। हिंदी राज्य भाषा होनी चाहिए इस बारे में कम-से-कम इस समय सिद्धांत के तौर पर विशेष विरोध नहीं है। संविधान में तो यह मान्य है ही। किन्हीं के मनों में विरोध हो तब भी संविधान के इस फैसले को बदलने की बात कोई गंभीरतापूर्वक नहीं उठा रहा है। दूसरा सवाल, शिक्षण के माध्यम का है। माध्यमिक और उच्च विद्यालयों में शिक्षण का माध्यम प्रांतीय भाषा रहे, हिंदी रहे या अंग्रेजी, यह विवाद का विषय बना हुआ है। तीसरा प्रश्न है, एक भाषा के रूप में अंग्रेजी के अध्ययन का। बच्चों को अंग्रेजी सिखानी हो तो वह किस कक्षा या श्रेणी से शुरू होनी चाहिए, यह इस विषय में मतभेद का मुद्दा है।

पाठक देखेंगे कि ये तीनों विषय अलग-अलग हैं। पहला विषय, जैसा ऊपर कहा गया है, एक राजनैतिक प्रश्न और भावना का विषय बन गया है, दूसरे दोनों विषय इसी देश से या यहाँ की परिस्थिति से ही संबंधित नहीं हैं, बल्कि वे किसी भी देश में उठ सकते हैं और शिक्षा-शास्त्र के विषय हैं। राजनैतिक प्रश्नों का फैसला हमेशा गुण-दोष के आधार पर या पक्ष विपक्ष की दलीलों के आधार पर नहीं हो सकता, यह सही है। पर शिक्षण के माध्यम का या भाषा के अध्ययन के प्रश्न राजनैतिक प्रश्न नहीं हैं। लेकिन दुर्भाग्य से पहले वाले राजनैतिक प्रश्न की चर्चा के साथ पक्ष-विपक्ष दोनों ओर के लोग इन दो प्रश्नों को भी जोड़ लेते हैं और इन पर इधर या उधर की दलीलों को अपने पक्ष के समर्थन का और दूसरे के पक्ष की काट का साधन बना लेते हैं, जो सर्वथा अनुचित है। और लोगों की बात तो दूर है, पर जैसा अभी एक बयान में श्री जयप्रकाश नारायण ने कहा था, स्वयं प्रधानमंत्री ने भी अपने भाषणों में इन सब विषयों को मिला दिया है। अंग्रेजी १९६५ के बाद भी राज्य भाषा के तौर पर चलती रहे, इस पक्ष का समर्थन करते हुए उन्होंने खामख्वाह इस दलील की शरण ली है कि 'आज दुनिया से सम्पर्क रखने और दुनिया के प्रवाह के साथ चलने के लिए अंग्रेजी भाषा का अध्ययन अत्यावश्यक है और जो लोग इसका विरोध करते हैं वे दकियानूस हैं।' मानों, राज्य-भाषा हिंदी हो, अंग्रेजी अनन्त काल तक उस रूप में न चलती रहे, यह कहने वाले अंग्रेजी भाषा या उसके साहित्य का विरोध करने वाले हैं! इस प्रकार से प्रश्नों को मिलाना वैज्ञानिक चिंतन का लक्षण नहीं है। अंग्रेजी भाषा या साहित्य के अध्ययन का विरोध शायद ही कोई समझदार आदमी करेगा। अंग्रेजी ही क्यों, दुनिया की अन्य भाषाओं का भी हमारा ज्ञान और अध्ययन बढ़ना चाहिए इसमें शायद ही दो रायें हों। पर किसी भी भाषा का अध्ययन एक चीज है और शिक्षण का माध्यम क्या हो और देश की राज्य-भाषा क्या हो, यह बिल्कुल भिन्न प्रश्न हैं।

भाषा के अध्ययन के विषय पर जो विवाद का मुद्दा हो सकता है वह इतना ही कि मातृ-भाषा के अलावा बच्चों को किसी दूसरी भाषा का अध्ययन करना हो तो वह किस स्टेज पर, अर्थात् किस कक्षा से शुरू किया जाय। मातृभाषा के अलावा ऐसी दूसरी भाषाओं के संबंध में इस बात का निर्णय भी सब भाषाओं के बारे में एक-सा नहीं होगा। स्वाभाविक ही जो भाषा या भाषाएँ बच्चे की मातृभाषा की सहोदरा हैं या उसके निकट हैं, उनका अध्ययन जल्दी शुरू हो सकता है और इस प्रकार का कोई संबंध मातृभाषा से न रखने वाली दूसरी "विदेशीय" भाषाओं का अध्ययन कुछ देर से। शिक्षा-शास्त्रियों का मत है कि पहली श्रेणी की भाषाओं का अध्ययन चौथे या पाँचवें दर्जे से शुरू हो सकता है और दूसरे वर्ग में आने वाली भाषाओं का आठवीं से। इस दृष्टि से अंग्रेजी का अध्ययन आठवीं कक्षा के पहले शुरू करना उचित नहीं होगा। आज पाँचवीं नहीं, बल्कि तीसरी कक्षा से अंग्रेजी शुरू हो यह जो आवाज उठ रही है, वास्तव में तो उसके पीछे भाषा के प्रेम की बात उतनी नहीं है जितने शायद अन्य कोई स्वार्थ या हित!

शिक्षा के माध्यम का प्रश्न भी शिक्षण विज्ञान और समाज-विज्ञान का विषय है, राजनीति का नहीं। यह एकदम सहज और स्वाभाविक है कि बालक के शिक्षण का माध्यम उसकी मातृ भाषा होनी चाहिए। उच्च शिक्षण को भी, अर्थात् कालेज के शिक्षण को भी, सामान्यतः

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

अहींसात्मक क्रान्ती आध्यात्मीक वीप्लव

यहां बंगाल में सरस्वती के अनेक रस अेक हुअे दीखते हैं। असका कारण है—गंगा सागर। अनेक संत, ऋषी यहां गये और अनुभवों का संयोग यहां हुआ। असी भूमी यह नहीं समझेगी की आज की तारीणी शक्ती हींसा है। यहां शान्तीनीकेतन है, असका अर्थ आज शान्ती ही शक्ती है। कुछ लोग शान्ती का तरह-तरह से वर्णन करते हैं। कुछ कहते हैं, शान्ती के लीअे बन्दूक चाहीअे; अेटमबम चाहीअे। तब तो सरहद वाली शान्ती होगी। यह है शान्ती की अशान्त व्याख्या। वैदीक ऋषीयों ने शान्ती की जो व्याख्या की है। वह है—'शानतीरेव शान्ती,' मतलब शान्ती याने शान्ती। अरस्तुचेव वर्कनेडी शान्ती की जो व्याख्या जानते हैं, वह अीतनी दुष्ट व्याख्या है की वह सब दुनीया को खतम करने जा रही है। अब बड़े-बड़े लोग कह रहे हैं की आणवीक शस्त्र खतम होने चाहीअे। क्यों असा कह रहे? अीसलीअे की हमारे सादे शस्त्रों का राज्य होना चाहीअे, हमारी भी तो चलनी चाहीअे। मैं कह रहा हूं, अणुशस्त्र अहींसा के अत्यंत नजदीक हैं। अेक वर्तुल के दो सीरे। अीसलीअे मैं अब बंगाल से छोटी चीज नहीं चाहूंगा। यहां तो अहींसात्मक क्रान्ती और आध्यात्मीक वीप्लव होना चाहीअे।

[रायगंज, प० बंगाल, २५-९-'६२] —वीनोबा

---

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ष, संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

टिप्पणी

मनुष्य का रक्षण या मनुष्यता की हत्या !

उन्नत और गर्वीले राष्ट्र जर्मनी की पुरानी राजधानी बर्लिन शहर पिछली लड़ाई के बाद एक ओर रूस और दूसरी ओर पश्चिमी गुट के राष्ट्रों—अमेरिका, इंग्लैण्ड और फ्रांस—के बीच सारे देश की तरह इसका भी बटवारा हुआ। शहर के बीच में कँटीले तार और ऊँची पक्की दीवार अब इसे दो हिस्सों में बाँटती है। पूर्वी हिस्सा कम्यूनिस्टों के कब्जे में और पश्चिमी दूसरे गुट के संरक्षण में। न इधर का आदमी उधर जा सकता है, न उधर का इधर। दीवार के दोनों ओर सशस्त्र फौजें चौबीसों घण्टे तैनात रहती है।

कुछ हफ्ते पहले कम्यूनिस्ट इलाके याने पूरब की ओर से अठारह बरस के एक हट्टे-कट्टे नौजवान, पीटर फेक्टर ने उधर से भाग कर इधर आने की कोशिश की। ज्यों ही दीवार पर चढ़ा कि उसी के राष्ट्र के पहरे वालों ने उस पर गोली दाग दी। पीटर बुरी तरह घायल होकर दीवार के पश्चिम की तरफ गिर पड़ा। इधर अमेरिकन फौज के सिपाही खड़े थे, पर इस डर से कि वे कुछ करेंगे तो लड़ाई छिड़ जायगी वे चुपचाप खड़े रहे। उनके पीछे की तरफ पश्चिमी बर्लिन के नागरिकों की भीड़ लग गयी। दीवार के इधर भी जीते-जागते मनुष्य खड़े, उधर भी। उन सबके अपने-अपने बाल बच्चे भी होंगे ही। सबके दिल में धड़कन थी, रगों में खून था, मन में भावनाएँ थी, पर एक-दूसरे के डर से ये सब कुंठित हो गयी। अठारह बरस का नौजवान घायल पीटर बीच में पीड़ा से कराहता हुआ पड़ा था। जख्मों से खून बह रहा था, दर्द के मारे वह छटपटा रहा था और दोनों तरफ बेबस लोगों की भीड़ लगी थी। कोई भी उसे मदद पहुँचाने की या उसकी मरहम-पट्टी करने की हिम्मत नहीं कर सका। सशस्त्र सैनिकों और सैकड़ों लोगों की आँखों के सामने आध-पौन घण्टे में पीटर ने सिसक सिसक कर प्राण दे दिये।

हम पुराने जमाने की बर्बरता की बात करते हैं और अपने जमाने की सभ्यता की डींग मारते हैं। क्या दोनों में कोई अन्तर है? हमें बतलाया जाता है कि ये सरकारें और ये पुलिस फौज लोगों के रक्षण के लिए हैं। क्या यह सच है? मनुष्य का रक्षण इनके द्वारा होता है या नहीं यह सोचने की बात है, पर मनुष्यता की हत्या होती है यह तो स्पष्ट ही है। —सिद्धराज ढड्ढा

सर्वोदय किसी की बपौती नहीं !

दादा धर्माधिकारी

[एक भाई ने श्री दादा धर्माधिकारी को पत्र लिखा कि उनके जिले में सर्वोदय-मंडल का तीसरा चुनाव हुआ, किंतु सर्वसम्मत चुनाव के नाम पर उन्हें नहीं चुना जा सका। वे लिखते हैं : "बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त करके मैंने सर्वोदय क्षेत्र को चुना। राजनीति-शास्त्र में बहुमत सिद्धान्त अंतिम सिद्धान्त रहा है और आधुनिक युग में सर्वोदय के द्वारा सर्वसम्मति चुनाव व्यवस्था लागू की जा रही है। मुझे इस निकृष्ट तिकड़म और गुटबन्दी को देख कर यही इच्छा होती है कि यह क्षेत्र छोड़ कर चला जाऊँ।"

श्री दादा धर्माधिकारी ने इस संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए उस भाई को जो लिखा है, वह हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

"सर्वसम्मति के सिद्धान्त में जिस प्रकार सांस्कृतिक प्रगति की संभावना है, उसी प्रकार गुट और गिरोह के एकाधिपत्य का भी खतरा है। आशा यह थी कि सत्ता, संपत्ति और शस्त्र के मोह से मुक्त सर्वोदय-कार्यकर्ता सर्वसम्मति की प्रक्रिया को लोकतंत्र का अगला कदम सिद्ध करेंगे। सर्वसम्मति में समझाना-बुझाना, मनाना गृहीत है; लेकिन धमकाना, दबाव डालना, लालच दिखाना, फुसलाना, चकमा देना वर्जित है। ये सब निकृष्ट हिंसा के प्रकार हैं। इस तरह की सर्वसम्मति बहुमत की अपेक्षा कहीं अधिक अश्रेयस्कर है। जहाँ इस प्रकार की सर्वसम्मति से चुनाव होते हों, वहाँ उन चुनावों को सर्व-सेवा-संघ के संविधान के अनुसार सर्वथा अवैध करार देना चाहिये। चुनावों में किसी ज्येष्ठ या मान्य व्यक्ति की सहायता ली जाय तो वह वांछनीय है। लेकिन यदि किसी वरिष्ठ अधिकारी व्यक्ति की देखभाल में चुनाव करना आवश्यक पड़े, तो यह मान लेना चाहिये कि वहाँ सर्वोदय की हत्या की तैयारी हो रही है।

बहुमत से निर्णय असल में लोकतंत्र नहीं है। वह एक व्यावहारिक तरीका सार्वजनिक निर्णय के लिए खोज लिया गया। उसमें भी कुछ प्रश्नों के विषय में दो तिहाई, तीन-चौथाई और चार बटे पाँच तक बहुमत की आवश्यकता होती है। इसलिए यह मानना गलत होगा कि बहुमत तंत्र को स्वीकार कर लेने से लोकतंत्र चरितार्थ हो जायगा।

यदि आपके जिले में चुनाव में चख-चख और हाथापाई की नौबत आती है, तो आप पर यह तनिक भी जिम्मेवारी नहीं है कि आप उस चुनाव को लोकतांत्रिक या वैधानिक चुनाव मानें। वह सर्वोदयी चुनाव तो हो ही नहीं सकता। जिन चुनावों में प्रमुख सर्वोदयवादी नेता दलबंदी, गिरोहबंदी और गुटबंदी की प्रक्रिया को अपनाते हों, वे चुनाव किसी भी व्याख्या के अनुसार लोकतांत्रिक नहीं हो सकते। तब भला वे सर्वोदयी कैसे हो सकते हैं? ऐसे चुनावों से बनी हुई समितियाँ आपकी मान्यता की पात्र नहीं हैं।

आप सर्वोदय के नाम पर चलने वाले तत्र-भ्रष्ट तंत्र को भले ही छोड़ दें, यह आपके अपने आत्मप्रत्यय का प्रश्न है, परंतु सर्वोदय छोड़ने का सवाल पैदा नहीं होता। सर्वोदय किसी की बपौती नहीं है, सर्व-सेवा-संघ की भी नहीं है। वह तो एक जीवन-योग है। आप लोक-निर्वाचित नहीं, किंतु लोकप्रतिष्ठित और लोक-स्वीकृत साथी और सेवक तो रह ही सकते हैं। अपने भरोसे और अपने दम पर सर्वोदय के सिद्धान्तों का अनुसरण करते रहने से आपको कौन रोक सकता है? उसके लिए न किसी संस्था की छाप चाहिये और न किसी संगठन की मुहर। शर्त इतनी ही है कि आप अपने प्रति ईमानदार रहें और लोगों की तरफ से वफादार।" (स. मे. स., काशी)

हमारा साहित्य

विश्व-शान्ति क्या संभव है?

ले० कैथलिन लांसडेल

प्रस्तुत पुस्तक हमको विश्व शांति की दिशा में बढ़ने के लिए सहायता प्रदान करेगी। लेखिका ने हमको बताया है कि विज्ञान का उपयोग मानव जाति के कल्याण के लिए ही करें। मूल्य १ रु० २५ न० पै०।

महादेवभाई की डायरी

यह दूसरा खंड सन् १९२० का है। गांधीजी का प्रवास, पत्र-व्यवहार, असहयोग की भूमिका, स्कूल-कालेजों का बहिष्कार, भाषणों के सार, अलि बंधुओं का सहयोग, मालवीयजी के दृष्टिकोण का विश्लेषण आदि सैकड़ों विषयों से परिपूर्ण यह खंड गांधीजी की तड़प और निष्ठा का परिचय देता है। मूल्य ५ रु०।

दान-धारा —ले० विनोबा

असम की ओर जाते हुए बाबा ने 'बीघा-कट्ठा अभियान की बहुमुखी विशेषताओं का विश्लेषण करते हुए पूर्णियाँ जिले की पदयात्रा में जो प्रवचन किये, उनका परिचय एक ही शब्द में दिया जा सकता है और वह है—'दान-धारा'। मूल्य—१ रुपया।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी

स्त्री-देह की पवित्रता

• दादा धर्माधिकारी

भगवान् की कृपा से यह समस्या ऐसी नहीं है कि जिसका कोई हल न हो, परंतु उसके लिए स्त्री को शारीरिकता और रूप-निष्ठा से ऊपर उठना होगा। मुख्य कठिनाई यह है कि अस्पृश्यता भी पुरुष की अपेक्षा स्त्री में अधिक है, स्त्री अपने को छुईमुई समझती है। छुईमुई एक पौधा होता है, अंग्रेजी में जिसे 'टच मी नॉट' कहते हैं, उसे छूने पर वह सिकुड़ जाता है। उस पौधे का नाम छुईमुई या लज्जावंती है। स्त्री अपने को लज्जावंती का पौधा समझती है। 'टच मी नॉटिज्म', परहेजगीरी को वह अपना शील और बाना मानती है। अक्सर पुराणप्रिय ब्राह्मण गंगाजी में नहा कर 'शुचिर्भूत' होने के बाद रेशमी पीताम्बर धारण कर जब रास्ते से चलता है तो सारी दुनिया से बच-बच कर, सिमट सिमट कर चलता है। सारे रास्ते भर पानी छिड़कता जाता है, यह अस्पृश्यता पवित्रता की संतान है। मैं अपने शरीर को इतना पवित्र समझता हूँ कि दूसरे के स्पर्श से उसे बचाता हूँ कि अगर छू जाय तो पवित्रता खंडित हो जायगी! यह अस्पृश्यता एक प्रकार की है।

स्त्री की पवित्रता और परहेजगीरी दूसरे प्रकार की है। उसमें दो परस्पर-विरोधी भाव छिपे हुए हैं, पीताम्बर वस्त्रधारी ब्राह्मण की तरह वह अपने शरीर को पवित्र नहीं मानती, उल्टे हर स्त्री यह मानती है कि उसका शरीर पुरुष की अपेक्षा कम पवित्र है, या यों कह लीजिये कि स्त्री अपने शरीर को अपवित्र, अमंगल और नापाक मानती है। पुरुष भी स्त्री के शरीर को अशुचि मानता है—चाहे फिर वह उसकी माँ ही क्यों न हो! वह शालिग्राम का स्पर्श नहीं कर सकती। स्त्री केवल असमर्थ ही नहीं-है, वरन् अस्वच्छ भी है।

इसलिए स्त्री एक दृष्टि से रक्षणीय और दूसरी दृष्टि से गोपनीय है। जो संभालने की चीज होती है, उसे सहेज-सहेज कर रखना होता है। इसका यह मतलब नहीं है कि पुरुष के छूने से स्त्री का शरीर अपवित्र हो जायगा, बल्कि मतलब यह है कि उसका शील भ्रष्ट हो जायगा। हम काँच को छूएँ तो उसके अपवित्र होने का डर नहीं होता है, लेकिन टूटने का डर होता है। ये दो अलग-अलग भावनाएँ हैं। पापड़, बतासे हम बचा-बचा कर रखते हैं, क्योंकि छूने से उसके टूटने का डर होता है। उसी प्रकार स्त्री के शरीर को बचा-बचा कर रखना पड़ता है। उस पवित्र ब्राह्मण के शरीर को हर अवस्था में बचा-बचा कर नहीं रखना पड़ता। लेकिन स्त्री के लिए तो पुरुष का संपर्क ही संसर्ग है, छूत।

संपर्क में पवित्रता

सच तो यह है कि संपर्क से पवित्रता और सामर्थ्य बढ़ती है। इसलिए साधु या सज्जनों का हम संपर्क खोजते हैं, "कुर्लिनैः सह संपर्कं सज्जनैः सह मित्रता,"—साधुओं के संपर्क से हम शुद्ध और पावन होते हैं। महात्माओं के चरण छूते हैं, ईसा के चोगे का दामन चूमते हैं। जहाँ स्नेह या पवित्रता की भावना होती है वहाँ संपर्क से सामर्थ्य प्राप्त होती है। हम कहते हैं कि लोक संपर्क करो। *लोगों का स्पर्श नहीं* होगा तो आंदोलन में जोर नहीं आयेगा, वास्तविकता नहीं आयेगी। संपर्क वांछनीय होता है, अभीष्ट होता है। जिसे हम टालना चाहते हैं। *उसका नाम संसर्ग* है, छूत है। जो डाक्टर कुष्ठ रोगियों की सेवा करता है वह जहाँ तक हो सके उनका स्पर्श टालता है, और *अगर* उन्हें छूता भी तो पहले अपने शरीर को कृमिनाशक दवाओं से सुरक्षित कर लेता है! वस्तुस्थिति यह है कि स्त्री और पुरुष, विशेषकर स्त्री, संपर्क मात्र को संसर्ग मानती है, जैसे वह 'शुचिर्भूत ब्राह्मण' मानता है।

स्त्री छूत की प्रतिमा

अस्पृश्यता-निवारण के आंदोलन में जब हम यह कहते कि अस्पृश्यता महान् पातक है, इसमें मानव-द्रोह है, तो कई पुरानमतवादी शास्त्री, पंडित *कहते हैं कि आपकी यह बात गलत है,* अस्पृश्यता में न तो तिरस्कार है और न घृणा। जब हम नहा-धोकर रेशमी वस्त्र पहन कर पूजा के लिए बैठते हैं, तो अपने दुलारे पुत्र को या लाडले पोते को भी नहीं छूने देते। इसमें कहाँ तिरस्कार है? इससे भी कहीं भयानक एक और तर्क वे देते। कहते थे कि हम उनको अस्पृश्य मानते हैं तो वे भी हमको अस्पृश्य मानें, हमें कोई शिकायत नहीं होगी। कैसी दानवीय दलील है! उनका तो मतलब इतना ही है कि किसी-न-किसी तरह यह अछूत हमको न छूए। जब आप पूजा में होते हैं या शौचादि से आते हैं तो किसी को नहीं छूते और किसी को नहीं छूने देते। यह अस्पृश्यता नहीं है, इसमें प्रेम की हानि नहीं है, इसमें दूसरे शरीर का अनादर या तिरस्कार नहीं है। अपने शरीर का भी अपमान नहीं है। अस्पृश्यता वह भावना है, जिसके कारण मैं दूसरे के संपर्क को संसर्ग मानने लगता हूँ। यह विचार सारे समाज को समझाना चाहिए। जिस भाषा में यहाँ रखा जा रहा है उस भाषा में नहीं, मामूली अपढ़ मनुष्य भी समझ सके ऐसी आमफहम भाषा में समझाना चाहिए।

यह सवाल हमको कुछ गहराई में ले जाता है। यह सीधा-सादा मसला नहीं है। पूजा के समय या पाखाना साफ करते वक्त मैं किसी को न छूता या मुझे कोई नहीं छूता, यह स्थिति बिल्कुल अलग है। यह अस्पृश्यता नहीं है, यह तो व्यवहार की मर्यादा है। लेकिन जब हम किसी मनुष्य को उसके जन्म के कारण सदा सर्वदा सभी अवस्थाओं में अस्पृश्य मानते हैं तो उसके सारे नैतिक गुण और आध्यात्मिक श्रेष्ठता भी हमारे लिए उसे स्पृश्य नहीं बना सकती। उसका स्पर्श ही हमारे लिए संसर्ग का रूप ले लेता है। हमारे लिए तो वह छूत की प्रतिमा है।

नेत्र-स्पर्श

पुरुष की अपेक्षा स्त्री में अस्पृश्यता की यह भावना अधिक है। उसका स्वरूप भी कुछ भिन्न है। स्त्री अगर किसी स्पर्श से ज्यादा-से-ज्यादा घबराती है और बचती रहती है तो पुरुष के स्पर्श से। उसके लिए तो दर्शन-स्पर्शन भी वर्जित है। केवल शरीर-स्पर्श तक यह मर्यादा सीमित नहीं है। लड़कियाँ अगर अच्छे-अच्छे कपड़े पहन कर रास्ते से जा रही हों तो लड़के उनकी तरफ घूरते हैं, यह नेत्र या दृष्टि का स्पर्श है। फलस्वरूप रास्ते से कोई स्त्री स्वाभाविक रीति से कभी नहीं चलती। कविताओं में भी उसकी चाल का बहुत वर्णन है। गजगामिनी, पिकबैनी मृगशावकनयनी, ऐसा तुलसीदासजी ने भी लिखा है। लेकिन रास्ते से जब वह चलती है तो उसको अपनी स्त्रीत्व का अत्यधिक बोध रहता है। हिचकती हुई, डरती हुई-सी चलती है। आँख सीधी नहीं रख सकती, उसे कुछ ऐसा मालूम होता है कि सारी दुनिया की नजरें तीर की तरह उसीको छेद रही हैं। मनोविज्ञान में जिसे 'सेल्फ-कॉन्शस' कहते हैं, वैसी उसकी स्थिति होती है। इसमें किसीको सुंदरता दिखाई देती होगी, कला का आभास होता हो, लेकिन यह स्थिति स्वाधीनता या आत्ममर्यादा की नहीं है। समाज में भी वह इसी तरह सकुचाती-सिकुड़ती हुई जीती है। उसके लिए स्वतंत्र और स्वाभाविक जीवन कहीं है ही नहीं। कारण यह है कि पुरुष ने स्त्री के शरीर को और स्त्री ने भी अपने शरीर को विषय माना है। परिणामस्वरूप स्त्री मानवीय व्यक्ति न रह कर उपभोग्य वस्तु या विषय बन गयी है। अतः यह प्रश्न मूल में एक आध्यात्मिक समस्या है।

यह वह स्थान है कि जहाँ तक अभी अमेरिका और रूस भी नहीं पहुँचे हैं। रूस यहाँ तक पहुँच गया है कि स्त्री के शरीर का व्यापार नहीं होगा और स्त्री का शरीर प्रदर्शन की वस्तु नहीं मानी जायेगी, मनोरंजन और व्यापार के लिए स्त्री के शरीर का उपयोग या प्रदर्शन वहाँ निषिद्ध है। किसी भी प्रकार का समाजवाद इसे विहित या जायज नहीं मानता। हमारे यहाँ जिस प्रकार पोस्टरों के खिलाफ आंदोलन करना पड़ता है उस प्रकार के पोस्टर किसी समाजवादी देश में नहीं होंगे। पान-बीड़ी या सिगरेट की दूकानों पर स्त्री को बैठाया जाय, साहित्य या उपयोग की वस्तुओं की बिक्री के लिए स्त्री का या स्त्री के चित्रों का उपयोग किया जाय यह समाजवाद में निषिद्ध है। अमेरिका अब तक इस मंजिल पर ही नहीं पहुँचा है।

पुरुष ने स्त्री के शरीर को,भोग का विषय मान लिया है, स्त्री ने भी अपने शरीर और रूप को विषय माना है।

जहाँ हम किसी वस्तु को विषय मान लेते हैं वहाँ दो ही रास्ते रह जाते हैं, या तो पाबंदी या फिर छूट, तीसरी कोई चीज नहीं रह जाती। घर में एक छोटी-सी बालिका है। उसे दमा हो गया, वैद्य कहता है—रोज एक खुराक दवा लेनी होगी। लेकिन शर्त यह है कि दस बजे दिन तक की दवा की एक खुराक के अलावा बालिका और कोई चीज खाने न पाये। माँ-बाप कहते हैं, बड़ी मुसीबत है! हमारे घर में जगह-जगह खाने की चीजें पड़ी रहती हैं, बेटी को *संभालना असंभव* है। ऐसी दवा दीजिये कि वह सब कुछ खा सके। स्त्री का शरीर पुरुष के लिए विषय है। इसलिए या तो दोनों को एक-दूसरे से अलग-अलग रखियेगा या फिर पूरी-पूरी आजादी दे दीजिये। *कुछ सभ्य कहे* जाने वाले देशों ने आजादी के तरीके को अपना लिया है। स्त्री का शरीर अगर उपभोग्य है तो क्या हर्ज है! उसमें पाबंदी की क्या जरूरत है! शर्त इतनी ही है कि उसकी सम्मति हो, जबरदस्ती, बलात्कार न हो। *सम्मति में स्वतंत्रता है।*

—

यही सिद्धांत लागू होगा। पर विशेष प्रकार के शिक्षण के लिए या विशेष परिस्थितियों में निश्चय ही इस नियम का अपवाद किया जा सकता है। कुछ विश्वविद्यालय शिक्षण के माध्यम के तौर पर देश की राज्य-भाषा हिंदी को अपनायें, कुछ विश्वविद्यालय अंग्रेजी को, तो इसमें कोई विरोध की बात नहीं होनी चाहिए। कम-से-कम इस प्रकार के सुझाव पर निष्पक्ष विचार की गुंजाइश हमेशा रहनी चाहिए।

उपरोक्त तीनों विषयों को मिलाया न जाय, हरएक के गुण-दोष पर अलग-अलग विचार किया जाय, जहाँ तक हो सके भावनाओं को बीच में न लाया जाय, यह अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि ये सारे सवाल आज की मौजूदा पीढ़ी तक ही सीमित नहीं हैं। जिस प्रकार १९वीं शताब्दी के शुरू में मैकाले द्वारा चलायी गयी शिक्षण-योजना के बुरे परिणामों को हम आज तक भुगत रहे हैं उसी प्रकार शिक्षण के माध्यम और भाषा के अध्ययन का प्रश्न शिक्षण से संबंधित होने के कारण आगे आने वाली कई पीढ़ियों पर असर डालनेवाला है। राज्य-भाषा अपेक्षाकृत जल्दी-जल्दी बदली भी जा सकती है, पर शिक्षण की नीति में इस प्रकार जल्दी-जल्दी परिवर्तन करना आगे आने वाली पीढ़ियों के साथ खिलवाड़ होगा। अतः कम-से-कम इन दो प्रश्नों को हम राजनैतिक वाद विवाद से या अपने निजी स्वार्थों से अलग रख कर सोचें यह अत्यंत आवश्यक है। •

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

अहींसात्मक क्रान्ती आध्यात्मीक वीप्लव

यहां बंगाल मे संस्कृती के अनेक रस अेक हुअे दीखते है। अुसका कारण है—गंगा सागर। अनेक संत, ऋषी वहां गये और अनुभवों का संयोग वहां हुआ। अैसी भूमी यह नहीं समझेगी की आज की तारीणी शक्ती हींसा है। यहां शान्ती-नीकेतन है, जीसका अर्थ आज शान्ती ही शक्ती है। कुछ लोग शान्ती का तरह-तरह से वर्णन करते है। कुछ कहते है, शान्ती के लीअे बन्दूक चाहीअे; अेटम बम चाहीअे। तब तो तराजू चलेगी, शान्ती होगी। यह है शान्ती की अशान्त व्याख्या। वेदीक ऋषीयों ने शान्ती की जो व्याख्या की है। वह है—'शान्तीरेव शान्ती,' मतलब शान्ती याने शान्ती। ऋग्वेद वकनेवाले शान्ती की जो व्याख्या जानते हैं, वह अीतनी दुष्ट व्याख्या है की वह सब दुनीया को खतम करने जा रही है। अब बड़े-बड़े लोग कह रहे हैं की आणवीक शस्त्र खतम होने चाहीअे। क्यों अैसा कह रहे? अीसलीअे की हमारे सादे शस्त्रों का राज्य होना चाहीअे, हमारी भी तो चलनी चाहीअे। मैं कह रहा हूं, अणुशस्त्र अहींसा के अत्यंत नजदीक है। अेक वर्तुल के दो सीरे। अीसलीअे मैं अब बंगाल से छोटी चीज नहीं चाहूंगा। यहां तो अहींसात्मक क्रान्ती और आध्यात्मीक वीप्लव होना चाहीअे।

[रायगंज, प० बंगाल, २५-९-'६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = ख, संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

टिप्पणी

मनुष्य का रक्षण या मनुष्यता की हत्या !

उन्नत और गर्वीले राष्ट्र जर्मनी की पुरानी राजधानी बर्लिन शहर पिछली लड़ाई के बाद एक ओर रूस और दूसरी ओर पश्चिमी गुट के राष्ट्रों—अमेरिका, इंग्लैण्ड और फ्रांस—के बीच सारे देश की तरह इसका भी बटवारा हुआ। शहर के बीच में कँटीले तार और ऊँची पक्की दीवार अब इसे दो हिस्सों में बाँटती है। पूर्वी हिस्सा कम्यूनिस्टों के कब्जे में और पश्चिमी दूसरे गुट के संरक्षण में। न इधर का आदमी उधर जा सकता है, न उधर का इधर। दीवार के दोनों ओर सशस्त्र फौजें चौबीसों घण्टे तैनात रहती हैं।

कुछ हफ्ते पहले कम्यूनिस्ट इलाके याने पूरब की ओर से अठारह बरस के एक हट्टे-कट्टे नौजवान, पीटर फेक्टर ने उधर से भाग कर इधर आने की कोशिश की। ज्यों ही दीवार पर चढ़ा कि उसी के राष्ट्र के पहरे वाले ने उस पर गोली दाग दी। पीटर बुरी तरह घायल होकर दीवार के पश्चिम की तरफ गिर पड़ा। इधर अमेरिकन फौज के सिपाही खड़े थे, पर इस डर से कि वे कुछ करेंगे तो लड़ाई छिड़ जायगी वे चुपचाप खड़े रहे। उनके पीछे की तरफ पश्चिमी बर्लिन के नागरिकों की भीड़ लग गयी। दीवार के इधर भी जीते-जागते मनुष्य खड़े, उधर भी। उन सबके अपने-अपने बाल-बच्चे भी होंगे ही। सबके दिल में धड़कन थी, रगों में खून था, मन में भावनाएं थीं, पर एक-दूसरे के डर से ये सब कुंठित हो गयी। अठारह बरस का नौजवान घायल पीटर बीच में पीड़ा से कराहता हुआ पड़ा था। जख्मों से खून बह रहा था, दर्द के मारे वह छटपटा रहा था और दोनों तरफ बेबस लोगों की भीड़ लगी थी। कोई भी उसे मदद पहुँचाने की या उसकी मरहम-पट्टी करने की हिम्मत नहीं कर सका। सशस्त्र सैनिकों और सैंकड़ों लोगों की आँखों के सामने आध-पौन घण्टे में पीटर ने सिसक सिसक कर प्राण दे दिये!

हम पुराने जमाने की बर्बरता की बात करते हैं और अपने जमाने की सभ्यता की डींग मारते हैं। क्या दोनों में कोई अन्तर है? हमें बतलाया जाता है कि ये सरकारें और ये पुलिस फौज लोगों के रक्षण के लिए हैं। क्या यह सच है? मनुष्य का रक्षण इनके द्वारा होता है या नहीं यह सोचने की बात है, पर मनुष्यता की हत्या होती है यह तो स्पष्ट ही है। —सिद्धराज ढड्ढा

सर्वोदय किसी की बपौती नहीं !

दादा धर्माधिकारी

[एक भाई ने श्री दादा धर्माधिकारी को पत्र लिखा कि उनके जिले में सर्वोदय-मंडल का तीसरा चुनाव हुआ, किंतु सर्वसम्मत चुनाव के नाम पर उन्हें नहीं चुना जा सका। वे लिखते हैं : "बी० ए० तक शिक्षा प्राप्त करके मैंने सर्वोदय क्षेत्र को चुना। राजनीति शास्त्र में बहुमत सिद्धान्त अंतिम सिद्धान्त रहा है और आधुनिक युग में सर्वोदय के द्वारा सर्वसम्मति चुनाव व्यवस्था लागू की जा रही है। मुझे इस निकृष्ट तिकड़म और गुटबन्दी को देख कर यही इच्छा होती है कि यह क्षेत्र छोड़ कर चला जाऊँ!"

श्री दादा धर्माधिकारी ने इस संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए उस भाई को जो लिखा है, वह हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

"सर्वसम्मति के सिद्धान्त में जिस प्रकार सांस्कृतिक प्रगति की संभावना है, उसी प्रकार गुट और गिरोह के एकाधिपत्य का भी खतरा है। आशा यह थी कि सत्ता, सपत्ति और शस्त्र के मोह से मुक्त सर्वोदय-कार्यकर्ता सर्वसम्मति की प्रक्रिया को लोकतंत्र का अगला कदम सिद्ध करेंगे। सर्वसम्मति में समझाना-बुझाना, मनाना गृहीत है; लेकिन धमकाना, दबाव डालना, लालच दिखाना, फुसलाना, चकमा देना वर्जित है। ये सब निकृष्ट हिंसा के प्रकार हैं। इस तरह की सर्वसम्मति बहुमत की अपेक्षा कहीं अधिक अश्रेयस्कर है। जहाँ इस प्रकार की सर्वसम्मति से चुनाव होते हों, वहाँ उन चुनावों को सर्व-सेवा-संघ के संविधान के अनुसार सर्वथा अवैध करार देना चाहिये। चुनावों में किसी श्रेष्ठ या मान्य व्यक्ति की सहायता ली जाय तो वह वांछनीय है। लेकिन यदि किसी वरिष्ठ अधिकारी व्यक्ति की देखभाल में चुनाव करना आवश्यक पड़े, तो यह मान लेना चाहिये कि वहाँ सर्वोदय की हत्या की तैयारी हो रही है।

बहुमत से निर्णय असल में लोकतंत्र नहीं है। वह एक व्यावहारिक तरीका सार्वजनिक निर्णय के लिए खोज लिया गया। उसमें भी कुछ प्रश्नों के विषय में दो तिहाई, तीन-चौथाई और चार बटे पाँच तक बहुमत की आवश्यकता होती है। इसलिए यह मानना गलत होगा कि बहुमत तंत्र को स्वीकार कर लेने से लोकतंत्र चरितार्थ हो जायगा।

यदि आपके जिले में चुनाव में चल-चपर और हाथापाई की नौबत आती है, तो आप पर यह तनिक भी जिम्मेवारी नहीं है कि आप उस चुनाव को लोकतांत्रिक या वैधानिक चुनाव मानें! वह सर्वोदयी चुनाव तो हो ही नहीं सकता। जिन चुनावों में प्रमुख सर्वोदयवादी नेता दलबंदी, गिरोहबंदी और गुटबंदी की प्रक्रिया को अपनाते हों, वे चुनाव किसी भी व्याख्या के अनुसार लोकतांत्रिक नहीं हो सकते। तब भला वे सर्वोदयी कैसे हो सकते हैं! ऐसे चुनावों से बनी हुई समितियाँ आपकी मान्यता की पात्र नहीं हैं।

आप सर्वोदय के नाम पर चलने वाले तंत्र-भ्रष्ट तंत्र को भले ही छोड़ दें, वह आपके अपने आत्मप्रत्यय का प्रश्न है, परंतु सर्वोदय छोड़ने का सवाल पैदा नहीं होता। सर्वोदय किसी की बपौती नहीं है, सर्व-सेवा-संघ की भी नहीं है। वह तो एक जीवन-योग है। आप लोक निर्वाचित नहीं, किंतु लोकप्रतिष्ठित और लोक-स्वीकृत साथी और सेवक तो रह ही सकते हैं। अपने भरोसे और अपने दम पर सर्वोदय के सिद्धान्तों का अनुसरण करते रहने से आपको कौन रोक सकता है! उसके लिए न किसी संस्था की छाप चाहिये और न किसी संगठन की मुहर। शर्त इतनी ही है कि आप अपने प्रति ईमानदार रहें और लोगों की तरफ से वफादार।" (स. प्रे. स., काशी)

खादी-उद्योग की अवस्था

• वैकुंठ ल० मेहता

अपने को दूसरों की नजरों से देखना हमेशा ही अच्छा है। अतः राजकुमारी अमृतकौर ने 'दि इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया' के १२ अगस्त १९६२ के स्वाधीनता अंक में अपने लेख में अन्य बातों के अलावा खादी पर जो विचार* प्रकट किये हैं, वे आज खादी-आन्दोलन से सम्बन्धित लोगों को अपना अन्तर टटोलने हेतु प्रेरित करने के लिए काफी हैं, भले ही उन विचारों को ऐसे व्यक्ति ने व्यक्त किया हो, जिसका आन्दोलन के प्रणेता से निकट सम्बन्ध नहीं भी रहा हो। इस तरह का आत्म निरीक्षण हमेशा ही लाभदायक होता है। इसी आधार पर तो हम खादी-मूल्यांकन समिति के डा० ज्ञानचन्द और उनके सहयोगियों के प्रस्तावानुसार आन्दोलन को नया मोड़ का रूप दे सके हैं।

लेकिन हमें अपने प्रति तथा खादी-कार्य में संलग्न उन सैकड़ों नये कार्यकर्ताओं के प्रति न्याय करना चाहिए, जिन्हें प्रत्यक्ष गांधीजी से प्रेरणा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हो सका। अतः राजकुमारीजी के शब्दों में हम इस बात का परीक्षण करें कि "हम कहाँ और किस हद तक बापू के पथ से विलग हुए हैं।" पहला दोषारोपण यह किया गया है कि "खादी एक सरकारी चीज बन गयी है।" बेशक खादी का विकास सरकारी काम बन गया है, लेकिन यह परिवर्तन ऐसा नहीं है, जिस पर आपत्ति की जाय।

नीति-रूप में गांधीजी हमेशा यही चाहते थे कि आजादी मिल जाने के बाद सरकार खादी-उद्योग के सघन और विस्तृत विकास पर पूरा ध्यान दे। आजादी मिलने के पहले सन् १९३५ के भारत-सरकार अधिनियम के अन्तर्गत कांग्रेस मंत्रिमण्डल बनने पर गांधीजी ने उनसे अनुरोध किया था कि ग्रामीण पुनर्निर्माण-कार्यक्रम के एक अंग के रूप में वे खादी और अन्य ग्रामोद्योगों का विकास करें।

आयोजित कार्यक्रम का भाग

उसके भी पूर्व जब मैसूर जैसे राज्यों ने खादी के उत्पादन और बिक्री के कार्य में दिलचस्पी ली, तो गांधीजी ने बड़ा संतोष प्रकट किया था। सन् १९५२ में प्रथम पंचवर्षीय योजना में खादी और ग्रामोद्योग विकास-कार्यक्रम को शामिल करने के पूर्व योजना अधिकारियों और अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ के बीच भी विचारविमर्श हुआ था, जिसमें आचार्य विनोबा भावे ने भी भाग लिया। उसी नीति के अनुसार सरकार ने आयोजित कार्यक्रम के एक अंग के रूप में इस आन्दोलन को दृढ़ बनाने तथा सहायता पहुँचाने हेतु आर्थिक जिम्मेदारी ली और उत्पादन एवं बिक्री का काम अखिल भारत चरखा-संघ के अन्तर्गत संस्थापित तथा इस कार्य में लगी हुई विभिन्न संस्थाओं के लिए छोड़ा गया।

यदि राजकुमारीजी के इन शब्दों का कि "गांधीजी की संस्थाएं पहले जैसा काम नहीं कर रही हैं," अर्थ यह है कि अब वे स्वतंत्र संस्थाएँ नहीं रहीं या सरकारी संस्था का एक अंग बन गयी हैं, तो यह आलोचना गलत है। इनमें से किसी भी संस्था या उसकी शाखा की स्वतंत्रता नष्ट नहीं हुई है। वे तो अपनी योजना के अनुसार कार्य का विकास करने हेतु सरकारी मदद का स्वागत करती हैं। सरकार की तरफ उनकी जिम्मेदारी अनुदान और ऋण के रूप में प्राप्त निधि का हिसाब देना भर है। इस कार्य में भी उन्हें राज्य या केन्द्रीय सरकार से सम्बन्ध नहीं रखना पड़ता। उन्हें तो राज्य खादी और ग्रामोद्योग-मंडल अथवा खादी और ग्रामोद्योग-कमीशन से सम्बन्ध रखना होता है, जो कि सरकार से अलग संस्थाएं हैं और जिनके अन्तर्गत सुगठित विभाग हैं। सच तो यह है कि राष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था के किसी भी अन्य भाग में गैर-सरकारी कार्यकर्ताओं पर योजित विकास की उतनी व्यापक जिम्मेदारी नहीं है, जितनी कि खादी और ग्रामोद्योग-कार्यकर्ताओं पर है। अतः सफलता का पूर्ण श्रेय या असफलता की पूरी जिम्मेदारी भी उन्हीं की है। यह बात समझ में नहीं आती कि राजकुमारी जी किस बुनियाद पर यह कहती हैं कि हमारे गाँवों में "लोग हाथकते सूत का उतना कपड़ा नहीं पहनते, जितना उन्हें पहनना चाहिए था।" जब स्वतंत्रता-संग्राम जोर-शोर पर था, उन दिनों में भी गाँवों में खादी की अधिक खपत नहीं थी और राजनीतिक आन्दोलन के अगुआओं में ही इसकी अधिक खपत होती थी। खादी की खपत मुख्यतः शहरी इलाकों में थी। खादी-कार्य में लगे लोग यह जानते हैं कि उस समय भी सारे भारत के खादी-उत्पादन का एक बड़ा भाग बम्बई के कालबादेवी स्थित खादी-भंडार के जरिये ही बिकता था। उस समय सौराष्ट्र के कुछ भागों में लोग हाथकते सूत का ही वस्त्र पहनते थे और वे आज भी उसी का उपयोग करते हैं, यद्यपि पिछले बीस वर्षों में बढ़ी हुई आबादी के कारण खादी पहनने वालों का अनुपात भले ही कम हो गया हो।

जहाँ सौराष्ट्र तथा अन्य जगहों में खादी पहनने वालों की संख्या में कमी हुई है, वहाँ तमिलनाड और उत्तर बिहार के गाँवों में सूतकारों तथा अन्य लोगों द्वारा अब पहले से कहीं ज्यादा खादी का उपयोग किया जाता है। बिहार के पूसा क्षेत्र, उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भाग और मद्रास के कुछ जिलों में ग्राम-संकल्प की भावना का बहुत प्रसार हुआ है। यह इस बात का सूचक है कि कुछ गाँवों में लोगों ने मिल-वस्त्र या हाथकरघा-वस्त्र के बदले गाँव में या गाँव के बाहर बनी खादी पहनने का संकल्प किया है। ग्राम-इकाई निर्माण-कार्यक्रम में यह संकल्प निहित है। इस आन्दोलन के कार्यकर्ताओं की इच्छा है कि अब ग्राम-इकाई के आधार पर ही काम का विस्तार किया जाय। खादी और ग्रामोद्योग-कमीशन ने न सिर्फ इस विचार को स्वीकार किया है, बल्कि योजना-आयोग से स्वीकृति मिल जाने के बाद इसे खादी और अन्य ग्रामोद्योगों की तीसरी पंचवर्षीय योजना में भी शामिल कर लिया है।

खादी की बिक्री के लिए खोले गये भवन और भंडार, खासकर बड़े बड़े शहरों में, अब पहले से अधिक सुसज्जित हैं और ग्राहकों का ध्यान आकर्षित करने के लिए उनमें प्रदर्शन की आधुनिक तकनीक अपनायी गयी है, जो कि सम्भवतः राजकुमारीजी को नापसन्द है। इन भंडारों में सुरुचिपूर्ण प्रदर्शन का ढंग अन्य दूकानों से प्रतियोगिता की दृष्टि से नहीं अपनाया गया है, क्योंकि वे अच्छी तरह जानते हैं कि खादी की जो कीमत है उस कारण गांधीजी के दिनों की तरह ही अब भी प्रतियोगिता का सवाल नहीं उठता। आजादी के पहले तक सरकार से प्रोत्साहन न मिलने के कारण खादी का उत्पादन सीमित था, बाजार भी सीमित था। आदतन खादी पहनने वाले ही खादी खरीदते थे और वे रही से रही दूकान में भी बिना खादी के स्तर का ध्यान रख कर अपनी खरीदारी जारी रखेंगे।

अब सरकारी सहायता और समर्थन प्राप्त होने से प्रति वर्ष खादी का उत्पादन बढ़ता ही जा रहा है और आजादी के पहले जितनी खादी का उत्पादन होता था, उससे अभी करीब छः गुना अधिक उत्पादन होता है। बड़ी मात्रा में खादी का उत्पादन होता है तो उसकी बिक्री का भी रास्ता खोजना ही होगा। जिन्होंने भारतीय अर्थशास्त्र का अध्ययन किया है वे यह जानते हैं कि क्रय शक्ति आमदनी पर निर्भर करती है और चूँकि शहरवालों की आमदनी ज्यादा है, अतः उनकी क्रय-शक्ति भी गाँववालों से बड़ी है। इसी कारण खादी-उत्पादन के अधिकांश भाग की बिक्री शहरों में करनी होती है, यद्यपि इसके कुछ भाग की खपत गाँवों में भी हो सकती है। शहरी लोगों की रुचि अगर बहुत ही ऊँची नहीं हुई है, तो भी कुछ कृत्रिम व चमक-दमक पसंद करने वाली तो हो ही गयी है और उन्हीं में से हमें नये ग्राहक बनाना है। वे जिन दूकानों में जाते हैं, उनमें बढ़िया किस्म तथा फिनिश यानी परिसमापनवाले माल के अलावा निश्चित स्तर के साज-सामान आदि भी देखना चाहते हैं, जब कि पहले ग्राहकों की सीमित संख्या रहने पर वैसी कोई बात नहीं थी। शहरों के नये ग्राहकों की माग पूरी करने हेतु ही बिक्री-कला का नया स्तर कायम किया जा रहा है। अतः भवन या भंडारों की संचालक-संस्थाएँ आन्दोलन में योगदान दे रही हैं, वे सूतकार और बुनकरों का अहित नहीं कर रही हैं।

राजकुमारीजी की इस बात में कि खादी घर-घर की या हर व्यक्ति की पोशाक नहीं बन रही है, कोई तथ्य नहीं है। हो सकता है कि कुल आबादी के अनुपात में आदतन खादी पहनने वालों की संख्या में कमी हुई हो। जब कि कुछ असन्तुष्ट व्यक्तियों ने खादी पहनना छोड़ दिया है, आन्दोलन का क्षेत्र बढ़ते जाने के साथ ही साथ आदतन खादी पहनने वालों की संख्या में वृद्धि होती जा रही है। जनता की मनपसन्द खादी के उत्पादन में वृद्धि होते जाने के साथ-साथ ही खादी पहनने वालों की संख्या भी बढ़ती जायेगी और बहुत कुछ तो मनपसन्द की खादी तैयार भी होने लगी है। बहरहाल व्यक्तिगत या घरेलू इस्तेमाल के लिए खादी की माँग बढ़ती जा रही है, जोकि आन्दोलन के शुभ का सूचक है। परदे, मेजपोश, सजावटी वस्त्र और तैयार कपड़ों के लिए खादी का इस्तेमाल शहरों के अधिकांश भागों में बहुत बढ़ गया है, जहाँ कि पहले उसे देख कर लोग नाक-भौं सिकोड़ते थे, अथवा इससे अनजान थे। इसे भी एक शुभ ही समझना चाहिए, न कि इसका तिरस्कार करना चाहिए।

खादी के कुल उत्पादन में जितनी वृद्धि हुई है, महीन खादी के उत्पादन में उस गति से वृद्धि नहीं हुई है। फिर भी न सिर्फ इस किस्म के वस्त्र के उत्पादन में कमी नहीं हुई है, बल्कि कार्यक्रम के एक अंग के ही रूप में आन्ध्र और बिहार के कुछ हिस्सों में इस तरह की खादी के उत्पादन को प्रोत्साहन देने के लिए विशेष प्रयत्न किये गये हैं। जरी, रेशमी पटोला,

---

* इसमें कोई संदेह नहीं कि हम जिसे राष्ट्रपिता कहते हैं, उसके प्रति अवसर पर आवश्यकता के अनुसार समय समय पर श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं और केवल मुख से निष्ठा व भक्ति प्रदर्शित करते हैं, परन्तु हम उनके बताये हुए मार्ग से दूर चले गये हैं। उनके द्वारा निर्मित संस्थाएँ पहले जैसे काम करती थीं, वैसे अब नहीं करतीं। दस्तकारियों के ही समान खादी का काम सरकार ने अपने हाथों में ले लिया है। मेरा ख्याल है कि हमारे ग्रामवासी हाथकता वस्त्र (खादी) नहीं पहनते, जैसी कि उनसे आशा की गयी थी। हमारी राजधानियों में खादी भवन स्थापित हैं, जो 'विंडो ड्रेसिंग' यानी बाहरी सजावट में दूसरी दूकानों से प्रतिस्पर्धा करते हैं। औसत आयवाला व्यक्ति भी महीन खादी खरीद ही नहीं सकता और उस पर भी सूतकारों की मजदूरी में वृद्धि नहीं हुई है, जब कि खादी के दाम बढ़े हैं। फिर, खादी घर-घर की या हर व्यक्ति की पोशाक भी नहीं बन रही है। एक बार जिस खादी को प्रधान मंत्री ने "आजादी का बाना" कहा था, अब उसमें कोई आकर्षण नहीं रह गया है।

—राजकुमारी अमृतकौर

इतिहास की नयी व्याख्या आवश्यक

जवाहिरलाल जैन

धरती के विभिन्न भाग पर लंबे समय से बसने वाले मानव-समूह के जीवन में अनेक प्रकार की उल्लेखनीय घटनाओं तथा उसमें अनेक विशिष्ट शक्ति और योग्यता वाले महान् व्यक्तियों का समय-समय पर होना भी स्वाभाविक है, पर उल्लेखनीय घटनाओं और विशिष्ट व्यक्तियों से ही उस मानव-समूह या देश का इतिहास नहीं बनता। इतिहास बनने के लिए जीवन का एक दृष्टिकोण आवश्यक है, जो उन घटनाओं और व्यक्तियों में पारस्परिक सम्बन्ध और क्रम स्थापित करता है, उनमें नैतिक तारतम्य की प्रतिष्ठा करता है और उनको एक बड़े कथानक का रूप देता है। जैसे-जैसे जीवन का यह दृष्टिकोण परिवर्तित होता जाता है, वैसे-वैसे ही इतिहास की पुरानी व्याख्या भी बदलती जाती है और नयी व्याख्या उसकी जगह ले लेती है।

हमारे देश में पुराने जमाने में जीवन का एक दृष्टिकोण बना। उसने तय किया कि व्यक्ति और समाज का क्रम ह्रासोन्मुखी है, सतयुग से कलियुग की ओर हम बढ़ रहे हैं, जिसका अंत प्रलय में होने वाला है। इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप हमारे देश में इतिहास पुराणों का ढाँचा विकास से ह्रास के क्रम का बना और उसमें सारी उल्लेखनीय घटनाओं और विशिष्ट व्यक्तियों की व्याख्या इसी क्रम से की गयी और वे सब इसी क्रम के महान् कथानक के एक एक अंश बने। सम्भवतः इसी ह्रासवादी दृष्टिकोण में से परलोक के प्रति आशा और इस लोक के प्रति उदासीनता की निराशावादी निष्पत्ति, जीवन का एक नकारात्मक रूप बना जिसके परिणामस्वरूप ही इस देश में शायद गुलामी, अनाचार, फूट और विषमता पनपती और फलती-फूलती रही।

मध्यकाल में विदेशी लोगों के आक्रमण इस देश में हुए। इनमें मुसलमानों के पहले के आक्रमणकारी इस देश की संस्कृति में ऐसे घुलमिल गये कि उनके जीवन के दृष्टिकोण और इतिहास की व्याख्या का अलग से ठीक ठीक पता लगाना कठिन है, पर मुसलमान इतिहासकारों के दृष्टिकोण में प्रायः विजेताओं की श्रेष्ठता का गर्व, विजेताओं के हरएक तौर तरीके की श्रेष्ठता और विजितों की हीनता, उनके जीवन के तौर तरीकों के प्रति घृणा या व्यंग देखने को मिलता है। इसमें शक नहीं कि कुछ इतिहासकारों में भलाई-बुराई का मूल्यांकन, अपने से भिन्न दृष्टिकोण के प्रति सहानुभूति और संतुलन तथा समन्वय का प्रयत्न, यह भी कभी-कभी देखने को मिलता है। बदायूनी और अबुलफजल मध्यकालीन इतिहास के इन दोनों दृष्टिकोणों के प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं।

योरोपियनों और खासकर अंग्रेजों के द्वारा इस देश को जीतने के साथ इस देश के इतिहास की व्याख्या में भी अन्तर आया। अंग्रेज इतिहासकारों और जीवन-दृष्टि के समर्थक भारतीय इतिहासकारों में अंग्रेजों की श्रेष्ठता, अंग्रेजी सभ्यता और संस्कृति की उच्चता और साथ ही हिन्दू-मुसलमानों की हीनता और हिन्दू तथा इस्लामी संस्कृतियों की कमियों का विचार बहुत तीव्र और स्पष्ट था। वे समझते थे कि अंग्रेजों का राज्य इस देश की जनता के लिए वरदानस्वरूप है। इसी दृष्टिकोण से उन्होंने इस देश के सारे इतिहास को देखने और उसकी व्याख्या करने की कोशिश की। इसी आधार पर १९वीं और २०वीं शताब्दी के आरंभ में अंग्रेज तथा उसी दृष्टिकोण से प्रभावित भारतीय इतिहासकारों द्वारा इतिहास-ग्रंथों की रचना हुई।

धीरे धीरे इस देश में राष्ट्रीय स्वतंत्रता की भावना जाग्रत हुई। इंग्लैण्ड की आजादी, इंग्लैण्ड का लोकतंत्र, इंग्लैण्ड का उद्योग, साहित्य और संस्कृति इस देश के लोगों के लिए आदर्श बनी। इस देश के लोगों ने गांधीजी की प्रेरणा और प्रभाव के अन्तर्गत राजनैतिक आजादी के लिए प्रयत्न किया और अंत में आजादी प्राप्त की। देश ने आजादी की प्राप्ति के लिए गांधीजी की मदद ली, लेकिन गांधीजी की जीवन-दृष्टि को नहीं अपनाया। इन दिनों इंग्लैण्ड के ढंग का पार्लियामेण्टरी लोकतंत्र, राष्ट्रीय स्वाधीनता, सैनिक व्यवस्था, भौतिक समृद्धि और सम्पन्नता, बड़े-बड़े कल-कारखाने और गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ—इस देश के आदर्श बने हैं और हमारे देश के इतिहास की रचना इस जीवन-दर्शन के आधार पर की जा रही है।

लेकिन गांधीजी ने हमें एक नया और समय तथा स्थान-निरपेक्ष पैमाना दिया है। वे मानते हैं कि सत्य और अहिंसा मानव तथा समाज के जीवन के लिए आदर्श भी हैं और उन आदर्शों की तरफ बढ़ने के लिए साधन स्वरूप भी। उस आदर्श की पूरी ऊंचाई तक मानव-समाज शायद कभी नहीं पहुँच पायेगा, लेकिन उस दिशा में बढ़ने का अवसर और आवश्यकता हरेक युग के मनुष्य और मनुष्य-समाज के लिए है। मनुष्य और मानव-समाज जिस हद तक सत्य और अहिंसा की ओर बढ़ता है, उस हद तक तरक्की करता है, जिस हद तक वह इनकी ओर से दूर हटता है, उस हद अवनति करता है या के गिरता है, उसका ह्रास होता है। इसका अर्थ यह है कि जीवन का एक दृष्टिकोण, व्यक्ति और समाज के विकास का एक क्रम गांधीजी ने हमारे सामने रखा। उन्होंने प्रसिद्ध वैदिक प्रार्थना को दुहराया, 'असतो मा सद् गमय: तमसो मा ज्योतिर्गमय', मृत्योर्मा-अमृतम् गमय:' और इसे मानव तथा समाज के विकास का एक क्रम बतलाया। इसी को अमरीका के गांधी, एल्बर्ट श्वाइटजर ने जीवन के लिए सम्मान (रिवेरेंस फार लाइफ) के रूप में प्रतिपादित करने का प्रयत्न किया है। बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में अणुशक्ति की खोज और अणुअस्त्रों के व्यापक निर्माण के कारण, जब सारी मानव जाति के समग्र विनाश की शक्तियाँ अनेक राष्ट्रों के पास सुरक्षित मौजूद हो गयी हैं तथा वे प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं, तब अहिंसा अथवा जीवन के लिए सम्मान ही मानव जाति की एकमात्र आशा है।

अतः आज बीसवीं शताब्दी में इस बात की अनिवार्य आवश्यकता है कि संसार के इतिहास को इस नये दृष्टिकोण से देखा जाय और आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और नैतिक घटनाओं एवं विशेष व्यक्तियों का अध्ययन और इसी दृष्टि से विकास और ह्रास के युगों का पता लगाया जाय और हिंसा से अहिंसा की ओर प्रगति के संदर्भ में इसकी व्याख्या की जाय। कहना न होगा कि अणुयुग में मार्क्स लेनिन की इतिहास की भौतिक व्याख्या निश्चित रूप से पुरानी और अधूरी पड़ गयी है। इसकी जगह नयी व्याख्या करनी होगी, जिसे इतिहास की आध्यात्मिक और नैतिक व्याख्या कहना शायद उचित होगा।

अब समय आ गया है कि भारत में जहाँ उपनिषद तथा बुद्ध महावीर के युग से हिंसा से अहिंसा की ओर बढ़ने के प्रयत्न चले हैं, जहाँ नरमेध से पूर्ण मांसाहार-निषेध तक मानव गया है, जहाँ अशोक जैसे राजा ने अहिंसा को राज्य-नीति बनाया है, अकबर ने सर्वधर्म-समन्वय और भूतदया को धर्म समझा है, जहाँ राजनैतिक स्वतंत्रता अहिंसात्मक प्रयत्नों से प्राप्त की गयी है और जहाँ अंतर्राष्ट्रीय शांति को भी अहिंसक उपायों से प्रतिष्ठित करने के प्रयत्न भी सोचे और किये जा रहे हैं, उस देश में यहाँ के इतिहास की नयी व्याख्या जीवन के प्रति इस नये दृष्टिकोण से करने की सबसे पहले आवश्यकता है। निश्चय ही यह कार्य कठिन है। यह जितना समय-साध्य और शक्ति-साध्य है, उतना ही अध्ययन और चिंतन-साध्य भी है। इसमें समाज के केवल राजनैतिक इतिहास को ही नहीं, बल्कि सारे सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक इतिहास को इस नयी दृष्टि से देखना होगा और हिंसा से अहिंसा की ओर की जाने वाली महान् यात्रा में देश की उल्लेखनीय घटनाओं, आंदोलनों और व्यक्तियों को उनके सही स्थान पर प्रतिष्ठित करना होगा। इस नये इतिहास से आने वाले समाज को नयी दृष्टि प्राप्त हो सकेगी और नये समाज के निर्माण में यहाँ का मानव तथा समाज आगे बढ़ सकेगा। गांधी विचारकों और गांधी-संस्थाओं को इस पर गंभीरतापूर्वक सोचना चाहिये। ●

चन्देरी, मदुराई रेशम और उत्तम किस्म के ऊनी वस्त्रों के उत्पादन पर भी विशेष ध्यान दिया गया है, जैसा कि अखिल भारतीय वार्षिक प्रदर्शनियों में देखा जा सकता है। हो सकता है कि बढ़िया खादी औसत आदमी की पहुँच के बाहर की बात हो, क्योंकि ये बड़ी महंगी होती है, पर कुछ केन्द्रों में ऐसी खादी का उत्पादन इसलिए कम हो गया है कि आवश्यक किस्म की रुई पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं होती है और इस कारण भी कि मारकों की संख्या बढ़ गयी है। बढ़ी हुई मात्रा में उत्पादित इस किस्म की खादी को पहले से कहीं अधिक केन्द्रों की माँग को पूरा करने के लिए भेजना होता है और सब केन्द्रों का समान ध्यान रखना पड़ता है।

इन बढ़िया वस्त्रों की ऊँची कीमत का मेल मजदूरी स्तर से बैठाने के बारे में राजकुमारीजी का कहना उचित नहीं है। यह कहना सही नहीं है कि खादी की कीमतें बढ़ा दी गयी हैं। रुई की कीमत तथा पिछले पन्द्रह वर्षों में व्यवस्था-खर्च में हुई वृद्धि के बावजूद, खादी उत्पादन संस्थाओं ने खादी की बिक्री-कीमत में कोई वृद्धि नहीं की है। मुनाफे में जो कमी हुई है उसे स्वयं संस्थाओं ने ही सह लिया, जिसकी कुछ पूर्ति सरकारी सहायता से हो गयी है।

यह सही है कि हाथकताई की मजदूरी जो दस साल पहले थी, वही अब भी है। मजदूरी बढ़ाने के प्रयत्न को छोड़ देना पड़ा, क्योंकि २५ वर्ष पहले गांधीजी के सामने इस सम्बन्ध में जो कठिनाई आई थी कि इससे बिक्री की जाने वाली खादी का सम्पूर्ण आर्थिक आधार ही गड़बड़ हो जाता है, वही अब भी है। पिछले दस वर्षों में यह बात जरूर हुई है कि अब बुनकरों आदि को अधिक नियमित काम मिलने की सम्भावना हो गयी है, क्योंकि वित्तीय साधन-स्रोत तथा बिक्री के बढ़ जाने से संस्थाएं अधिक खादी ले सकती हैं। फिर, अम्बर चरखे से भी सम्भावनाएं बढ़ गयी हैं, जिस तथ्य पर राजकुमारीजी ने ध्यान ही नहीं दिया है। यह समझते हुए कि अधिक उत्पादन करने पर ही हाथकताई से अच्छी आमदनी हो सकती है, गांधीजी ने सुधरे चरखे के लिए बहुत बड़े इनाम की घोषणा की थी। उसीके फलस्वरूप अम्बर चरखा निकला। अम्बर चरखा तथा नियमित काम प्रदान करने के आश्वासन से ही फलस्वरूप आमदनी में वृद्धि होगी और राजकुमारीजी की इस बात से सभी खादी-कार्यकर्ता सहमत होंगे कि सूतकारों की आय में वृद्धि सुनिश्चित होनी चाहिए।

—

निरस्त्रीकरण क्यों अत्यन्त आवश्यक है ?

रामेश्वरी नेहरू

[कुछ दिन पूर्व बम्बई में श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने महाराष्ट्र राज्य निरस्त्रीकरण-सम्मेलन में जो महत्त्वपूर्ण भाषण किया था उसे हरिजन सेवक संघ की द्विमासिक मुखपत्रिका 'हरिजन सेवा' से हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

निरस्त्रीकरण पर आज जहाँ-तहाँ बहुत सारी चर्चा हो रही है, जिससे जाहिर होता है कि यह विषय कितना ज्यादा आवश्यक हो गया है। इतिहास में आज की जैसी स्थिति कभी पैदा नहीं हुई थी। आणविक शक्ति के अनुसंधान और युद्ध के लिए उसके मनमाने दुरुपयोग की संभावना ने इस स्थिति को अत्यन्त भयावह बना दिया है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि दुनिया के सारे लोग इससे भयभीत हो जायँ। इस कदर और इतने व्यापक रूप में लोगों ने आज की तरह अपने आपको कभी असहाय महसूस नहीं किया था।

सर्वसाधारण को इस बात का पता नहीं है कि कल क्या होने वाला है और उनके बाल-बच्चों के भाग्य में क्या लिखा है। दिन-पर-दिन दौलत और समृद्धि तो बढ़ती जा रही है, पर उसके साथ ही, न तो सुख चैन देखने में आता है और न मानसिक शान्ति ही। दुनिया में उत्पादन और दौलत जितनी बढ़ रही है उतनी ही मनुष्य की सुरक्षा और खुशी लुप्त होती जा रही है।

इसलिए दुनिया के विचारशील लोगों को यह महसूस हो रहा है कि कोई-न-कोई अवश्य ऐसी गम्भीर खराबी आ गयी है, जिसे दुरुस्त करना ही होगा। आम तौर पर यह विश्वास किया जाता है कि इसका मुख्य कारण युद्ध के लिए आणविक शक्ति के दुरुपयोग होने का अन्देशा है। युद्ध के लिए आणविक शस्त्रों पर रोक लगा देने से ही निरस्त्रीकरण हो सकता है। अतः एक बड़े पैमाने पर यह जोरदार प्रयत्न किया जा रहा है कि आणविक शस्त्रों के बनाने, उनका ढेर लगाने और उनके प्रयोग और परीक्षणों पर रोक लगा दी जाये, जिससे पूरा निरस्त्रीकरण संभव हो सके। यही वजह है कि दुनिया के सभी मुल्कों में जहाँ-तहाँ सम्मेलन हो रहे हैं, इस विषय पर चर्चाएँ होती हैं और गोष्ठियों का आयोजन हो रहा है। इन सम्मेलनों में राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक तथा वैज्ञानिक पहलुओं पर अच्छी तरह विचार विमर्श हुआ है। विशेषज्ञों ने निरस्त्रीकरण के बारे में खासी अच्छी खोज की है और इस विषय पर साहित्य भी काफी लिखा गया है। सिवाय शायद बहुत थोड़े-से व्यक्तियों के, जो आज भी प्रतिक्रियावादी होने के कारण युद्ध की आवश्यकता में विश्वास रखते हैं, दुनिया के सभी विचारों के लोगों की इस बात में दो रायें नहीं हैं कि युद्ध का उन्मूलन किया जा सकता है और उसके फलस्वरूप विश्व शान्ति स्थापित हो सकती है।

मगर दुर्भाग्य से शान्ति-स्थापना के बढ़ते हुए विचारों के बावजूद युद्ध की तैयारियाँ हो रही हैं और अस्त्र-शस्त्रों की होड़ भी दिन-पर-दिन बढ़ती जा रही है। अणुबमों के ये परीक्षण वातावरण को विषाक्त बनाते जा रहे हैं। आणविक युद्ध की नंगी तलवार हमारे सिरों पर लटक रही है, जिससे डर है कि किसी भी क्षण पलक मारते मानवता और उसकी सारी सभ्यता खत्म हो जा सकती है! हम अपने दिलों की गहराई में उतर कर देखें कि क्या वजह है जो हमारे सारे बड़े-बड़े प्रयत्न असफल हो रहे हैं। यह सोचते हुए कितनी वेदना होती है कि यह खूबसूरत दुनिया किसी भी दिन मरे-के-मरे युद्ध में नष्ट हो सकती है और एक मिनट की नोटिस पर अग्नि की लपलपाती जिह्वाएँ मानवता के सुहावने हरे-भरे बाग को भस्म कर सकती हैं!

क्या कारण है, जो युद्ध की अस्त्र-सामग्री के खुदगर्ज ठेकेदार आज भी फूल-फल रहे हैं? क्या वजह है कि वैज्ञानिकों का एक वर्ग, जो सत्यशोधक माना जाता है, अधिक-से-अधिक विनाशकारी अस्त्रों के अनुसंधान में अपने दिमाग को खर्च कर रहा है? जिन विश्वविद्यालयों को सत्यशोधन के पवित्र केन्द्र होना चाहिए, उनका क्यों दुरुपयोग किया जा रहा है? विनाशकारी आणविक शस्त्रों के अनुसंधान और निर्माण के लिए वह निर्दोष सामान्य मनुष्य, जो युद्ध शस्त्रीकरण से पदाक्रान्त हो सकता है, आखिर क्यों अपनी सेवाएँ दे रहा है? जहाजों पर इन विनाशकारी शस्त्रों को लादने वाले कौन हैं? जिन हवाई-जहाजों द्वारा इन घातक हथियारों को विभिन्न स्थानों में पहुँचाया जाता है, उनके चालकों को क्या उस संभाव्य भीषण ताण्डव का ध्यान नहीं है? ऐसे भयंकर अपराधों में वे क्यों अपना योग देते हैं? हाँ, वे ही हजारों पुत्रवती माताएँ जो युद्ध के खिलाफ विरोध प्रदर्शन करने के लिए शान्ति की खातिर जुलूसों में जाती हैं, जो इस बात के लिए व्याकुल हो रही हैं कि इन विध्वंसक आणविक अस्त्रों के परीक्षण और उपयोग का उन्मूलन कर दिया जाये। आणविक युद्धों की तैयारी में सरकारों को मदद देना क्या अपने आप मृत्यु को निमंत्रण देना नहीं है? न तो अपना और न दूसरों का मुल्क सर्वनाश से उस क्षण में बच सकेगा, जब इन शस्त्रों के प्रयोग का दुर्भाग्यपूर्ण संकेत कर दिया जायेगा। वे लोग किस भ्रम में पड़े हुए हैं, जो दुनिया को नरक की आग में झोंक देने के लिए, आणविक युद्धों की तैयारी में लगा देने के लिए उनको मजबूर कर रहे हैं!

अगर गहराई से सोचा जाये, तो इसमें दो बुनियादी कारण मालूम देते हैं। पहला तो यह कि उनकी शिक्षा-प्रणाली दोषपूर्ण है। उस इतिहास के, गये-गुजरे जमाने की परम्पराओं और कहानियों के तथा पुराने बेकार विचारों के वे शिकार हो गये हैं, जिनका आज की दुनिया के साथ मेल नहीं बैठता। इस बात का न तो उनको और न उनके शिक्षकों को कोई ख्याल है कि दुनिया आज बदल गयी है और इजारों के वे दिन लद गये हैं। छोटी-छोटी इकाइयों में दुनिया आज तब की तरह विभाजित नहीं है। तब तो हर इकाई दूसरों से अलग रहती थी और जीवन अपने आपमें केन्द्रित था, क्योंकि आवागमन के साधनों की उन दिनों भारी कठिनाइयाँ थीं। तब अपने देश तक ही अपना प्रेम सीमित था और यह आवश्यक भी था। लोगों को शिक्षा दी जाती थी कि वे अपने देश और अपनी जाति के लिए सब कुछ कुर्बान कर दें। यह विचार नौजवानों के मन में आज घर कर चुका है, क्योंकि उनको सिखाया जाता है कि वे अपने देश और अपनी जाति के लिए सब कुछ बलिदान करने को तैयार रहें। इसीलिए बहुत सारे देशों में अनिवार्य सैनिक-शिक्षा कानून दी जाती है, और उन तक को नहीं बख्शा जाता, जो अन्तःकरणपूर्वक ऐसी शिक्षा के विरुद्ध आपत्ति उठाते हैं। सेना की नौकरी ऊँची-से-ऊँची देश-सेवा समझी जाती है। पुराने जमाने में तो शायद यह ठीक हो सकता था, जब साहस, वीरता और अनुशासन, ये गुण युद्ध के लिए आवश्यक थे। पर आज तो युद्ध का सारा तरीका ही ऐसा बदल गया है कि अब इन गुणों की कोई आवश्यकता नहीं रह गयी है। सारे युद्ध विज्ञान का यंत्रीकरण हो गया है। अब तो अणुबम और दूसरे आणविक अस्त्र स्वयंचालित होकर हमारे लिए लड़ेंगे! इस प्रकार युद्ध-मात्र पाशविक हो गया है और पहले के उन सारे गुणों का आज कोई अस्तित्व नहीं रहा। संकीर्ण राष्ट्रभक्ति का भी कोई खास अर्थ आज नहीं है। विज्ञान के अनुसंधानों ने मानव-विकास में वह युग ला दिया है, जिसने मानवमात्र को एक कुटुम्ब मानने के लिए बाध्य कर दिया है। क्या आर्थिक, क्या सामाजिक और क्या राजनैतिक प्रणालियाँ आज एक-दूसरे के साथ इस प्रकार ओतप्रोत हो गयी हैं कि हमारे अस्तित्व के लिए सभी देशों की आन्तरअवलंबिता एक आवश्यकता बन गयी है। विनोबाजी ने एकाधिक बार इस ओर हमारा ध्यान खींचा है। उनका कहना है कि अलग-अलग राष्ट्रों और अलग-अलग धर्मों का हमारे भावी जीवन में कोई स्थान रहने वाला नहीं। आध्यात्मिकता बेशक रहेगी, जो सब धर्मों को एक सूत्र में बाँधेगी और विज्ञान सारे संसार को एक कर देगा। इसीलिए विनोबाजी ने 'जय हिन्द' के स्थान पर 'जय जगत्' का नारा प्रचारित किया है। संसार के दूसरे द्रष्टा और बुद्धिमान लोग भी ऐसा ही सोच रहे हैं। विभिन्न सभा-सम्मेलनों में ऊँचे, विचारशील दार्शनिक विचार-विमर्श कर रहे हैं कि संसार के सभी राज्य एक ही संविधान में अपने आपको बाँध लें।

अतः हमें अपनी विचारसरणी और अपनी शिक्षा-प्रणाली को एक नयी दृष्टि देनी होगी। यदि ऐसा न किया, तो हम अपने प्रयत्नों में असफल ही रहेंगे। हमारे असफल होने का दूसरा कारण यह है कि हम शान्तिवादियों ने अभी तक उतना बलिदान नहीं किया, जितना शान्तिदेवी चाहती है। अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और युद्ध का निवारण यह एक क्रान्तिकारी विचार है। एक नया संसार, एक नयी समाज-व्यवस्था और नये विचारों और तदनुरूप आचरण करने वाले नये आदर्शों के नर-नारियों का निर्माण यह क्रान्तिकारी विचार करना चाहता है। अपने-अपने व्यक्तित्व को एक अखण्ड मानवता में विलीन कर देना होगा। दूसरों को सताने का अर्थ होगा अपने आपको सताना। नवनिर्मित मनुष्य में द्वेष भावना नहीं होगी। समूची मानवता वह एक अविच्छिन्न अंग होगा। मैं यह जानती हूँ कि ऐसा होना बड़ा कठिन है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यदि हम इसे अपने अंतिम लक्ष्य के रूप में स्वीकार कर लें, तो वह हमारा सही मार्ग होगा। इस मार्ग पर यदि सच्चाई के साथ चलने का हम प्रयत्न करें, तो अपने लक्ष्य तक हम निस्सन्देह पहुँच सकते हैं, भले ही उसमें सौ वर्ष लग जायें। आज तो हम शान्ति-सेवक केवल ऊपरी सतह पर काम कर रहे हैं। पत्तियाँ और डालियाँ छाँटने में ही हम आज लगे हुए हैं, तने को और जड़ों को हमने अभी छुआ तक नहीं। इसमें संदेह नहीं कि हम परिश्रम के साथ प्रयत्न कर रहे हैं, और काफी शोर मचा रहे हैं और एक हद तक लोगों का ध्यान इधर खींचने और उनको जगाने में हमने कुछ सफलता भी पायी है। पर इस महाकठिन काम को असली तौर पर हल करने में अभी तक हमें कोई कामयाबी हासिल नहीं हुई है। अभी हाल में गांधी-शान्ति प्रतिष्ठान के तत्वावधान में दिल्ली में अणुअस्त्रविरोधी-सम्मेलन हुआ था। उसमें दो खासे विचारोत्तेजक सुझाव रखे गये थे और उनको रखने वाले थे महात्मा गांधी के सुप्रसिद्ध दो अनुयायी, एक तो डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद, भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति, और दूसरे थे

आदरणीय श्री राजगोपालाचारी, स्वतन्त्र भारत के प्रथम गवर्नर-जनरल। राजाजी राष्ट्रचिंतन के लिए सभी देशवासियों के आदरपात्र हैं। हमारे स्वातन्त्र्य युद्ध में उनका बहुत बड़ा योग रहा है। इन दो बहुत बड़े आदमियों ने अपने महत्त्वपूर्ण सुझाव रखे थे।

डॉ० राजेन्द्रप्रसाद का सुझाव यह था कि अन्तर्राष्ट्रीय निरस्त्रीकरण में भारत को पहल लेनी चाहिए और श्री राजगोपालाचारी ने यह विचार रखा था कि संयुक्त राष्ट्रसंघ में भारत अणुबमों के परीक्षणों पर रोक लगाने का आग्रह करे, और यह रोक हरएक देश के लिए अनिवार्य हो। यदि कोई इसका भंग करे, तो राष्ट्रसंघ से उस देश को निकाल बाहर कर दिया जाय, क्योंकि संघ का निर्माण ही इसलिए किया गया है कि वह दुनिया में शान्ति को कायम रखे और सभी राष्ट्रों की स्वतन्त्रता और सार्वभौमत्व को सुरक्षित भी।

यह जाहिर था कि दिल्ली के इस सम्मेलन में जो ये तजवीजें रखी गयी वे मंजूर नहीं की जा सकती थीं। परन्तु तुरन्त उनको मंजूर न भी किया जाये तो भी सच्चाई के साथ जो शब्द कहे गये वे व्यर्थ नहीं जा सकते। इस तजवीज पर वहाँ काफी चर्चा हुई। यहाँ तक कहा गया कि इस तजवीज को मान लेने का अर्थ होगा संयुक्त राष्ट्रसंघ का खात्मा, क्योंकि जो बड़े-बड़े राष्ट्र इस संघ को चला रहे हैं, वे अणुशक्तिवाले राष्ट्र हैं और वे ही इन परीक्षणों में लगे हुए हैं। यदि इस तजवीज को राष्ट्र-संघ मान ले, तो उसका परिणाम क्या होगा यह पहले से कहना कठिन है। परन्तु इस विश्व-संघ की इससे मृत्यु हो जायेगी, इस बात से क्यों डरा जाये? जो सत्य है और जो सही है वह कभी मर नहीं सकता और यदि कोई संस्था अपने उद्देश्यों और अपने आदर्शों का पालन नहीं कर सकती, तो जिन्दा रहने से तो उसकी मौत ही अच्छी। मेरा विश्वास है कि इन महापुरुषों के ये वीरतापूर्ण शब्द सारे संसार में गूँजते रहेंगे और लोगों को इस ओर विचार करने की प्रेरणा देंगे।

कुछ वर्ष पहले इसी प्रकार का सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण का एक प्रस्ताव सोवियत रूस के प्रधान मंत्री श्री ख्रुश्चेव ने संयुक्त राष्ट्र-संघ की सभा में रखा था। पर वह वहाँ पर पारित नहीं हो सका। उसका यह प्रयोजन भी नहीं था। परन्तु हम सब लोग यह जानते हैं कि शासन एवं प्रजा के स्तर पर इस प्रकार का विचार गतिशील अवश्य हो रहा है। जेनेवा के सम्मेलन में १७ राष्ट्रों के प्रतिनिधि कठिन समस्याओं पर चर्चा करके किसी सर्वसम्मत हल को ढूँढ़ निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं। अभी तक उनको इसमें सफलता नहीं मिली, किन्तु आज या कल निरस्त्रीकरण तो होकर ही रहेगा, क्योंकि सारे संसार के लोग शांति-स्थापना के इच्छुक हैं और अस्त्रीकरण के साथ शान्ति का कुछ भी मेल नहीं बैठता।

किन्तु ऐसा कब होगा? अत्यन्त अधीर और चिन्तित लोग यह प्रश्न बार-बार पूछते हैं। वह शुभ दिन, मेरा विश्वास है, शान्ति के लिए हमारा जितना अधिक बलिदान होगा, उतना ही समीप आयेगा। ऐसे व्यक्तियों का बलिदान उस शुभ दिन को जल्दी ही समीप लायेगा, जो साहस के साथ, बिना इस बात की परवाह किये कि क्या परिणाम होगा, जब निर्भयतापूर्वक सिद्धान्त-रक्षा के लिए डट कर खड़े हो जायेंगे।

अन्त में फिर दो बातों को दोहरा देती हूँ, जो शान्ति के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए परमावश्यक हैं :—

(१) हमारे सोचने का, हमारे चिंतन का सम्पूर्ण नवीनीकरण, और

(२) राष्ट्रीयता के स्थान पर सम्पूर्ण विश्व को एक इकाई मान कर उसके प्रति हमारी पूरी वफादारी। मेरा देश, सही हो या गलत, इस प्रयोजन को पूरा नहीं कर सकता। परन्तु जो सही है, जो सत्य है उसके प्रति हमारी वफादारी अनन्य रूप से रहनी चाहिए। ऐसा करते हुए हमको गलत समझा जा सकता है और यह खतरा हमको उठाना चाहिए। कोई परवाह नहीं, अगर उसकी सजा भोगनी पड़े। सभी क्रान्तियों में ऐसा ही हुआ है। कुर्बानी के रक्त से ही सभी सच्चे और बड़े विचारों को सींचा गया है, उसीसे वे पनपे, फूले और फले हैं। इसलिए जब आवश्यक हो, हमें हर प्रकार की कुर्बानी करने के लिए तैयार रहना चाहिए। ब्रिटेन के दार्शनिक महापुरुष श्री बर्ट्रेण्ड रसेल की मैं वन्दना करती हूँ, जो ९२ वर्ष की वृद्धावस्था में, जबकि सारे जीवन के कठिन परिश्रम के बाद शान्तिपूर्ण विश्राम आवश्यक है, श्री रसेल ने शांति के प्रीत्यर्थ कठिन-से-कठिन यातनाएँ उठाने में हिचकिचाहट नहीं की। श्री मुस्ते की भी हम सराहना करते हैं, जो अपने बहादुर साथियों को लेकर प्रशान्त महासागर के उस भाग में सत्याग्रह करने के लिए पहुँचे, जहाँ अमरीकी सरकार अणुबमों का परीक्षण कर रही थी। उनको कैद की सजा भोगनी पड़ी। फिर भी वे अपने निश्चय से पीछे नहीं हटे और होनोलूलू से खतरे के उस क्षेत्र में जाने के लिए तैयार हैं, जो रेडियो एक्टीविटी से प्रभावित है। ऐसे विचारों का अनुसरण करना ही चाहिए।

शांति और निरस्त्रीकरण का कार्य महान् है और उसके प्रति हम सभी की मंगल-कामनाएँ हैं। हमारी यह हार्दिक प्रार्थना है कि वह सफल हो।

संघ के कार्य की स्थिति और शक्ति का सर्वेक्षण तथा उसके संदर्भ में

भावी कार्य-शक्ति और कार्य का निर्धारण

चौदहवें अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन भी वेड़छी में हो रहा है। नव-निर्वाचित संघ का यह पहला अधिवेशन होगा। सम्मेलन के समय होने वाले संघ-अधिवेशन में संघ की सालाना रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है। सम्मेलन में सर्वोदयप्रेमी भाई-बहन देश भर से इकट्ठे होते हैं। उनके समक्ष भी संघ के कार्य का विवरण पेश किया जाता है।

इस बार संघ का यह कार्य-विवरण साल भर नहीं, बल्कि लगभग डेढ़ साल की अवधि से सम्बन्धित है। पिछला सम्मेलन अप्रैल, १९६१ में हुआ था। इस बार यह सम्मेलन नवम्बर, १९६२ में हो रहा है।

यह आवश्यकता है कि प्राथमिक, जिला व प्रदेश आदि सर्वोदय-मंडलों से और संघ की विभिन्न समितियों से, कार्य की स्थिति आदि सम्बन्ध में जानकारी मिले, ताकि उस सबके आधार पर देश भर के कार्य का संक्षिप्त सिंहावलोकन प्रस्तुत किया जा सके।

इसके लिए नीचे संकेत दिये जाते हैं। ये सुझाव रूप में हैं। इनको ध्यान में रखते हुए तथा अन्य भी कुछ बातें उल्लेखनीय हों तो उनको लेते हुए अपने क्षेत्र व प्रवृत्ति का विवरण व उनसे संबंधित आवश्यक प्रामाणिक आँकड़े वगैरह यथाशीघ्र भिजवाने की कृपा करें। आँकड़े सितम्बर अंत तक के हों तो ठीक होगा। वे उपलब्ध न हों, तो जिस माह तक के अंक उपलब्ध हों उनका उल्लेख कर दें। सितम्बर अंत तक के आँकड़े की प्राप्ति के लिए मौजूदा विवरण व आँकड़े तैयार करके भेजने में देर न करें।

१–विचाराधीन अवधि (मई, १९६१ से सितम्बर, '६२) के प्रारम्भ में ऐसे पूरा समय देनेवाले (अ) कार्यकर्ता और (आ) शांति-सैनिक कितने थे और अब कितने रहे, जिनके जीवन-निर्वाह की समुचित व्यवस्था भी और है।

(क) योगक्षेम की व्यवस्था क्या है? यह संतोषजनक है या नहीं? यदि कोई व्यवस्था नहीं है अथवा पूरी संतोषजनक नहीं है तो उस स्थिति के निवारण के लिए क्या योजना है?

(ख) कार्यकर्ताओं की समय-शक्ति का पूरा उपयोग होता रहा या नहीं?

(ग) उनको स्वयं को अपने काम, अपनी आर्थिक व्यवस्था, परस्पर सम्पर्क, वरिष्ठ सेवकों का स्नेह व मार्गदर्शन प्राप्त करने, योग्यता बढ़ाने के अवसर पाने आदि के बारे में कितना क्या समाधान है? यदि नहीं है तो उसके लिए क्या सुझाव व उपाय वे बताते हैं?

कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के बारे में क्या किया जा रहा है? वैसी व्यवस्था नहीं है तो आइन्दा यह कब की जा रही है?

२–(क) भूदान में प्राप्त भूमि में से आरंभ में कितनी अवितरित थी, कितनी चालू अवधि में वितरित हुई, पर्याप्त या पूरी न वितरण होने के कारण क्या रहे, अब शेष को जल्दी-से जल्दी कब तक वितरित कर देने का विचार है और उसकी क्या योजना है?

(ख) चालू अवधि में कितनी भूमि भूदान में मिली, कितनी वितरित हुई, शेष के कब तक वितरित कर देने की क्या योजना है?

३–वितरण अयोग्य भूमि कितनी है और उस बारे में क्या नीति तथा कार्रवाई है?

४–ग्रामदान की स्थिति—

(१) आरम्भ में ग्रामदान-संख्या।

(२) चालू अवधि में प्राप्त नये ग्रामदानों की संख्या।

(३) ग्रामदान ऐक्ट व उसके अंतर्गत नियमोपनियम बने या नहीं?

(४) बन गये हैं तो उनके अंतर्गत पहले के बनाये ग्रामदानों में से कितनों के बारे में आब्ते की कार्रवाई होकर वे "पुख्ता" घोषित हुए?

(५) ऐक्ट व नियमोपनियम नहीं बने हैं, तो क्या कार्रवाई उसके लिए चल रही है? कब तक बनने की सम्भावना है?

(६) ग्रामदानी क्षेत्र में—

(क) भूमि का पुनर्वितरण कितने गाँवों में हो चुका?

(ख) ग्राम-सभा व सहकारी समिति के गठन, निर्माण-योजना के अंतर्गत अन्य कार्य आदि क्या-क्या हुए?

(ग) आगे के लिए ग्राम-स्वराज्य की ओर ग्रामदानी क्षेत्रों को ले जाने का क्या कार्यक्रम है?

(घ) सर्वसामान्य स्थिति क्या है?

(७) नये ग्रामदानों की क्या संभावना है और उन्हें प्राप्त करने का क्या प्रयास है? अर्थात् उस सम्बन्धी लोक शिक्षण कार्यक्रम क्षेत्र विशेष में चलता है या नहीं? चल रहा है तो क्या और नहीं चलता है तो आगे के लिए सुझाव क्या है?

(८) ग्रामदानी क्षेत्रों के कार्य के लिए सरकारी, अर्ध-सरकारी सहायता, सहयोग वगैरह का स्तर?

५—सम्पत्तिदान, सूत्रदान व विविध दान

(१) अवधि, आरंभ और आज के तुलनात्मक आँकड़े।

(२) चालू की स्थिति।

(३) प्रदेश व केन्द्र को दान का कितना अंश वर्ष भर में कब-कब भेजा गया?

(४) विशेष सुझाव आदि हों तो दें।

६–सूत्रांजलि-

(१) फरवरी १९६१ और फरवरी, '६२ के तुलनात्मक आँकड़े।

(२) प्रदेश व केन्द्र को दिया हुआ भाग।

(३) इस कार्यक्रम को अधिक व्यापक और सक्रिय बनाने के बारे में सुझाव।

७-निम्नलिखित कार्यक्रमों में से जो कार्यक्रम हाथ में लिये गये हों, उनकी वर्तमान स्थिति, अभी की कठिनाई, उनके निराकरण के उपाय, उनके स्वरूप, साधनों की सुविधा आदि जानकारी भेजें।

(१) नशाबंदी

(२) अशोभनीय पोस्टर

(३) नयी तालीम

(४) राजनैतिक पक्षों की आचार-मर्यादा

(५) पंचायती राज

(६) विशेष आश्रम या प्रवृत्तियाँ जिले में चलती हों, तो उनकी जानकारी।

८-शांति-सेना कार्य-

(१) साल भर चले प्रशिक्षण, शिविर, सम्पर्क आदि की जानकारी।

(२) विशेष घटनादि के अवसर पर की गयी सेवाओं की जानकारी।

(३) आगे के कार्य की योजना।

(४) प्रशिक्षण कार्यक्रम संबंधी सुझाव।

९-लोकसेवक निष्ठाओं का पालन करते हैं या नहीं, उसकी जानकारी और तुलनात्मक आँकड़े।

१०-प्राथमिक जिला व प्रदेश सर्वोदय-मण्डलों की आरंभ से अन्त तक चुनाव आदि की स्थिति।

११-रचनात्मक संस्थाओं से सहयोग।

१२-साहित्य व भूदान पत्र-पत्रिकाओं का प्रचार।

(१) वर्ष के आरंभ व अन्त के—

(क) नये साहित्य के प्रकाशन के आँकड़े।

(ख) साहित्य बिक्री के आकड़े।

(ग) भूदान-पत्र-पत्रिकाओं की ग्राहक संख्या।

(२) भूदान साहित्य व पत्र-पत्रिकाओं की बिक्री व प्रचार बढ़ाने के बारे में सुझाव।

१३-सरकार से सहयोग

(१) सामुदायिक विकास मंडल

(२) खादी-ग्रामोद्योग कमीशन

(३) अन्य सरकारी या अर्ध-सरकारी संस्था।

१४-लोगों की आम शिकायतों के बारे में कितनी क्या कार्रवाई होती है? होती है तो क्या-क्या? नहीं होने या करने की नीति हो, उस विषय पर प्रकाश।

१५-कृषि-गोसेवा कार्य

(१) प्रयोग-कार्य

(२) नस्ल सुधार

(३) दुग्ध-योजनाएँ

(४) अन्य

१६-खादी ग्रामोद्योग ग्राम स्वराज्य समिति कार्य

(१) खादी-ग्रामोद्योग कार्य को नया मोड़

(२) कार्यकर्ता प्रशिक्षण

(३) विक्रेय संबंधी नीति व अन्य प्रश्न

१७-प्रयोग समिति कार्य

—पूर्णचन्द्र जैन,
मंत्री, अ० भा० सर्व सेवा-संघ

पूना में सर्वोदय-पात्र

पूना के सुप्रतिष्ठित सिविल सर्जन डा० दातार की सर्वोदय के प्रति निष्ठा प्रशंसनीय है। वे हर माह सैकड़ों रुपये का सर्वोदय-साहित्य बेचते हैं। हाल में ही उन्होंने अपने "सर्वोदय-पात्र" से संकलित ८९ रु० १ न० पै० की राशि अ० भा० सर्व सेवा संघ को भेजी है।

सहारनपुर जिले में भूमि-वितरण

सहारनपुर जिला भूदान कार्यालय से प्राप्त समाचार में बताया गया है कि जिले के केवल दो ही ग्रामों में २४१२ बीघा जमीन का वितरण बाकी था। १५ सितम्बर से २१ सितम्बर तक कार्यक्रम बना कर सरकारी कर्मचारी और कार्यकर्ताओं ने ३२७ परिवारों में लगभग २०८१ बीघा जमीन का वितरण किया। लगभग १५९ बीघा जमीन नाकाबिल काश्त होने के कारण छाँट दी गयी।

"विनोबा बाल-निकेतन"

प्राथमिक सर्वोदय मण्डल, गांधीनगर, साठा मुहल्ला, बुलन्दशहर के तत्वावधान में गत ६ सितम्बर से "विनोबा बाल-निकेतन" प्रारम्भ किये जाने की सूचना मिली है। यहाँ की सर्वोदय-पाठशाला में कई घरेलू उद्योग शुरू किये गये हैं, जैसे निवाड़ बुनना, लालटेन की बत्ती बनाना, चरखा कातना, रंगाई का काम और कपड़ों की सिलाई आदि।

साहित्य-परिचय

बाबा विनोबा : (६ भाग में)

लेखक : श्री श्रीकृष्णदत्त भट्ट, मूल्य : प्रत्येक का तीन नये पैसे।

प्रकाशक—अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

जब छोटे थे, जब आश्रम में थे, जब घूमने लगे, करते क्या हैं, पढ़ते क्या हैं, चाहते क्या हैं—इस प्रकार के छह खंडों में लेखक ने अत्यंत सरल और सुबोध ढंग से बाबा विनोबा की पूरी जीवनी लिख दी है, जिसे बच्चे-बूढ़े, अर्थात् सभी पढ़ कर आनन्द ले सकते हैं। पाठक पर पुस्तक का कोई बोझ नहीं पड़ता। इस छोटी, सस्ती पुस्तक के घर में एक बार आ जाने पर इससे लड़के, लड़कियाँ, माताएँ, बहिनें, बूढ़े सब समान रूप से लाभान्वित हो सकते हैं। संत के जीवन का रस कहीं कम नहीं है। बच्चों के लिए भी आनन्दप्रद है और बूढ़ों के लिए भी। पैदल चलने से आदमी की उम्र बढ़ती है, उसमें फुर्ती आती है, पद-यात्रा में कौड़ी का खर्च नहीं, जगह-जगह के लोगों से परिचय होता है। सच पूछो तो बाबा का, सैर का सच्चा आनन्द पैदल चलने में ही है। इस प्रकार के बालबोध वाक्यों के साथ ही ऐसे कथन भी हैं—'साहित्यिक तो ईश्वर से भी ऊँचा है, ब्राह्मण में जो है सो तो साहित्यिकों की वाणी में आता ही है, जो नहीं है वह भी साहित्यिक की वाणी में आता है।... विनोबा कहते हैं कि 'साहित्यिक में सबसे अधिक खूबी होनी चाहिए सचाई की... कबीर बुनकर न होता, तो फकीर न बनता ... फकीर भी साहित्यिक हो सकता है, जो जनता के भरोसे पर रहे। ऐसे फकीरों को खाना मिले तो भी उनका जी उछलता है, नहीं मिलता तो भी। ... इसलिए साहित्यिक या तो सच्चा फकीर होगा या ईश्वर की सृष्टि की पूजा करने वाला भक्त।' थोड़े में सरल और सरस ढग से सब कुछ दे देने का यह एक प्रशंसनीय प्रयोग है। पुस्तक प्रत्येक घर में रखनी चाहिए। पौने दो रुपये में ही ६ भागों की ये किताब मिल जाती है।

('सम्मेलन पत्रिका' से)

इस अंक में

पाठकों की सेवा में

आवश्यक सूचना

जैसा कि पिछले अंक में हमने सूचित किया था कि प्रेस-सम्बन्धी कुछ गड़बड़ी के कारण अगले एक-दो अंक समय पर नहीं निकल सकेंगे, अब भी परिस्थिति वैसी ही है। फिर भी कोशिश करके यह आठ पेज का अंक समय पर निकाल सके हैं।

आगामी एक-दो अंक समय पर प्रकाशित हो सकेंगे या नहीं, यह प्रेस की परिस्थिति पर निर्भर है।

—संपादक

गांधी-दर्शन की जानकारी उपराष्ट्रपति से भी

दिल्ली विश्वविद्यालय के छात्र अब गांधीजी के जीवन-दर्शन संबंधी प्रश्नों के उत्तर उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसेन से भी पा सकेंगे। डा० जाकिर हुसेन ने उन्हें सुविधा दे दी है कि वे महीने में एक-दो बार इकट्ठे होकर उपराष्ट्रपति से मिल सकते हैं और उनसे गांधीजी के बारे में प्रश्न पूछ सकते हैं।

इस सुविधा की सूचना डा० जाकिर हुसेन ने उपकुलपति डा० चिंतामणि देशमुख को भेजे गये एक पत्र में दी है।

ग्रामदानी गांव में निर्माण-कार्य

बिहार के ग्रामदानी गाँवों के सामूहिक बन्दोबस्ती का काम शुरू किया गया। इसके अनुसार जमीन की मालगुजारी ग्रामसभा लेगी और जमीन का प्रबन्ध करेगी। अब तक ६२ गाँवों से सम्बन्धित कागज-पत्र इकट्ठे किये गये। इस माह में ग्रामदानी गाँवों की परिस्थिति का भी विवरण तैयार किया गया। आठ गाँवों में सामूहिक दूकान खोलने का ग्रामीणों ने तय किया। एक गाँव की ग्रामसभा ने जमीन की पुनर्व्यवस्था की।

समाचार

● जिला सर्वोदय मंडल, मथुरा द्वारा शहर तथा जिले में 'सर्वोदय पर्व' मनाया गया, जिसमें अणुअस्त्र-विरोधी प्रचार और साहित्य प्रचार एवं जिले में पदयात्रा हुई।

● गांधी स्मारक तत्व प्रचार केन्द्र, सदर बाजार, दिल्ली में ९ से १२ अगस्त तक विचार-गोष्ठी हुई। इसमें श्री उ. न. ढेबर, मुनि सुशील कुमार, डा. वी. के. आर. वी. राव, श्री रा. रा. दिवाकर, डा० रघुवीर, डा. सौंदरम् रामचंद्रन् आदि ने भाग लिया।

● सघन क्षेत्र योजना, राजसमंद के कार्यकर्ताओं का एक त्रिदिवसीय शिविर राजसमंद से डेढ़ मील दूर रामेश्वरिया महादेव नामक स्थान पर हुआ।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता: राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८६२५ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८४२५ एक अंक १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ

साप्ताहिक

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २६ अक्टूबर '६२ | वर्ष ९ : अंक ४

अहिंसा की अनिवार्यता

• विनोबा

उन्नीसवीं-बीसवीं सदी में बंगाल ने ऐसे महापुरुष पैदा किये कि जिनके जोड वाले पुरुष दुनिया में उतने समय में कम ही निकले। आज हम जहाँ ठहरे हैं उस हॉल में बंगाल के महापुरुषों की जो तस्वीरें हमने देखी, उन्हें देख कर हमारे सामने विशाल विचार आया। जब कोई देश पराधीन होता है, किसी दूसरी सत्ता के हाथ में चला जाता है, तब या तो देश बिल्कुल दब जाता है या झगड़े के लिए उठ खड़ा होता है। भारत ने दो में से कोई भी बात नहीं की। उस जमाने का भारत बंगाल ही था, क्योंकि अंग्रेजों के कब्जे में प्रथम बंगाल गया और बाद में भारत के सब हिस्से गये। अंग्रेजी सभ्यता का मुकाबला पहले बंगाल में हुआ। यहाँ जो पुरुष पैदा हुए, उन्होंने न दब जाना पसंद किया, न शस्त्र लेकर लड़ना ही, बल्कि तीसरी चीज, आत्मशोधन को पसंद किया।

यह बहुत बड़ी बात थी। दुनिया में शायद ही इस तरह की कोई मिसाल मिलेगी। हमारे यहाँ के नेताओं ने सोचा कि जब इतनी विशाल भारत-संस्कृति पराधीन होती है, तो वह हमारे लिए सोचने का एक विषय होगा, कुछ दोष, कुछ न्यूनता होगी, उसका हमको संशोधन करना होगा। उन्होंने आध्यात्मिक संशोधन का विचार किया। इसका बहुत बड़ा असर होता है। मथन के परिणामस्वरूप सब संस्कृति के समन्वय का विचार यहाँ हाथ में आया।

भारत की समन्वय-दृष्टि

भारत के लिए यह नया विचार नहीं था। बादरायण ने अपने सूत्र में 'तत्तु समन्वयात्'—परमात्मा का दर्शन समन्वय में होता है, ऐसा लिख रखा है। वह समन्वय की साधना थी। यह अपने देश की विशेषता है। भारत में विविधता है, 'महान् मानवेर सागर' है। इसलिए भारत की पचन क्रिया बहुत तेज है। भिन्न भिन्न सभ्यताएँ, संस्कृतियाँ जब परस्पर निकट आती हैं, तब उनका सारभूत अंश खींच करके आत्मसात् कर लेने से मधुर निष्पत्ति होती है। इस तरह जो भी लोग बाहर से आये, वे यहाँ की समन्वय-प्रक्रिया से घुलमिल गये। ऐसी भारत की दृष्टि थी। लेकिन भिन्न-भिन्न धर्म के साथ समन्वय, यह नयी बात थी। विचार पुराना था। लेकिन तब दुनिया भर के धर्मों से हमारा संबंध आता नहीं था। इसलिए यहाँ जितना धर्म विचार था, उसका सार हमने लिया था। लेकिन पाश्चात्य संस्कृति जहाँ आयी, वहाँ हिंदुओं के लिए एक दरवाजा खुल गया, चिंतन का दालान खुल गया। उसके कारण नवीन विचार प्रसार शुरू हुआ और भिन्न भिन्न धर्म, उनकी उपासनाएँ, इनका समन्वय करना, यह विचार यहाँ सूझा।

गांधीजी के लिए पूर्वतैयारी

शंकराचार्य ने अपने जमाने में पंचायतन पूजा चलायी। भारतवर्ष के अंदर जो पंथ थे, उन सबको समन्वय से एक कर लिया। लेकिन उसके बाद इस्लाम धर्म आया, ईसाई धर्म आया, विज्ञान आया। इसके साथ भी समन्वय की नयी जरूरत पैदा हुई। वह समन्वय यहाँ बंग भूमि में हुआ। उसके परिणामस्वरूप जागृति आयी। बाद में काँग्रेस आयी, राजनीति का विचार आया। लेकिन उस राजनीति को तत्त्व विचार का आधार मिला। राममोहन राय से लेकर महात्मा गांधी तक जितने राजनैतिक पुरुष हो गये उन सबका आधार अध्यात्म था। चाहे वे श्रीअरविन्द हों, चाहे महात्मा गांधी हों, चाहे लोकमान्य तिलक हों, सबका आधार यहाँ के अध्यात्म विचार पर था। इसलिए यहाँ की राजनीति गहरी नहीं। योग का असर यहाँ हुआ। बाहर से राजनीति आयी, लेकिन वह यहाँ के जनसमुदाय पर असर नहीं डाल सकी। महात्मा गांधी को इस सारी पृष्ठभूमि का लाभ मिला और भारत की संस्कृति के अनुकूल अहिंसा का शस्त्र उन्होंने दिया। यह जो अध्यात्म-संशोधन हुआ था, विशेषतः बंगाल में हुआ था, वह अगर नहीं हुआ होता, तो समाज महात्मा गांधी के अहिंसा के शस्त्र सुनने को राजी नहीं होता। इतिहास में तो ऐसी कोई अन्य मिसाल नहीं है, जहाँ अहिंसा के जरिये एक सल्तनत को हटाया जाता है। लेकिन यह सारी पृष्ठभूमि थी, इसलिए लोगों ने उस विचार को स्वीकार कर लिया।

अहिंसा अनिवार्य

अब तो हमारे सामने बहुत बड़ा विश्वरूप-दर्शन है। भारत की आजादी का सवाल आसान था। अंग्रेज आये, उन्होंने ऐसा काम किया, जो किसी सल्तनत ने पहले नहीं किया था। उन्होंने प्रजा को निःशस्त्र बनाया। प्रजा को निःशस्त्र बनाने में बहुत खतरा है। प्रजा डर तो जाती है। राज चलाना आसान होता है। लेकिन बाहर के हमले के समय प्रयोग खतरनाक साबित होता है। लेकिन अंग्रेजों को विश्वास ही नहीं था। इसलिए निःशस्त्र प्रजा के सामने इस बात के अलावा कोई चारा नहीं था कि वह सदा के लिए गुलाम बन जाय, या ऐसा शस्त्र ढूंढ निकाले, जिसका कोई मुकाबला न हो। यह एक ऐतिहासिक आवश्यकता—हिस्टॉरिकल नेसेसिटी—थी। हिंसा शक्ति नहीं रही और इसलिए अहिंसा-शक्ति का आश्रय लेना पड़ा। अगर गांधीजी नहीं आते और दूसरा कोई व्यक्ति आता और लोगों के सामने ये विचार रखता तो लोग मान लेते। वह निःशस्त्रीकरण अनिवार्य था। हम सहयोग हटा लें तो उनका राज्य गिर जायेगा, यह हमको, गांधीजी ने सिखाया। वैसा उनको अनुभव आया। आज दुनिया में जो परिस्थिति है, वह बहुत कठिन है। दुनिया आज बहुत अधिक सशस्त्र हो गयी है। जिधर देखो उधर शस्त्र हैं। वे शस्त्र मानव के हाथ में नहीं, मानव उनके हाथ में चला गया है। ऐसी आज दुनिया की परिस्थिति है। इसलिए आज की परिस्थिति में अहिंसा के सिवा इलाज नहीं। भारत की उस परिस्थिति में इलाज हो सकता था। जहाँ द्वंद्व छिड़ जाते हैं वहाँ किसी देश को लाभ पहुँच सकता है। जैसे ब्रह्मदेश या सिलोन को लाभ मिला। इस तरह से भारत को भी लाभ मिल सकता था, लेकिन आज दुनिया की जो हालत है उसमें अहिंसा अत्यंत अनिवार्य है। अब इस बात की अभिज्ञता बंगाल को जल्दी-से-जल्दी होनी चाहिये। जिस प्रदेश में इतना बहुत अध्यात्म संशोधन हुआ, वहाँ यह संशोधन भी होना चाहिये। यह ध्यान में आना चाहिये कि अब अहिंसा अनिवार्य है। इससे आगे अहिंसा-शक्ति तारिणी-शक्ति बनेगी। वह घटी शक्ति नहीं चलेगी! 'भारती' नाम दे दें हम अहिंसा को, जिसने और देशों को आह्वान दे दिया और सब जातियों का समाहार किया। आज अक्षोभयुक्त शांति से काम करना होगा। अक्षोभयुक्त शांति आज के जमाने का बहुत बड़ा शस्त्र है।

आध्यात्मिक विप्लव

विचारों का उद्गम-स्थान और अंतिम स्थान कहाँ होता है? यहाँ बंगाल में संस्कृति के अनेक रस एक हुए दिखते हैं, उसका कारण गंगा-सागर है। अनेक संत ऋषि यहाँ गये और अनुभवों का संयोग यहाँ हुआ। ऐसी भूमि यह नहीं समझेगी कि आज की तारिणी शक्ति हिंसा है। यहाँ शांतिनिकेतन है। इसका अर्थ आज शांति ही शक्ति है। कुछ लोग शांति का तरह तरह से वर्णन करते हैं। वे कहते हैं कि शांति के लिए बंदूक चाहिये, एटम बम चाहिये। तब तो तराजुवाली शांति होगी। इतनी सेना इस पलड़े में है, तो उतनी सेना दूसरे पलड़े में! तब तो तराजु इधर या उधर नहीं हिलेगा। तो शांति हो गयी! यह तो शांति की अज्ञान व्याख्या हो गयी। वैदिक ऋषियों ने शांति की व्याख्या की है 'शांतिरेव शांति', अर्थात् 'शांति याने शांति।' ख्रुश्चेव और कैनेडी शांति की जो व्याख्या जानते हैं, वह इतनी दुष्ट व्याख्या है कि वह सब दुनिया को खतम करने जा रही है! अब बड़े-बड़े लोग कह रहे हैं कि आणविक शस्त्र खतम हो जाने चाहिये। क्यों ऐसा कह रहे हैं? इसलिए कि हमारे सादे शस्त्रों का राज्य होना चाहिये। 'हमारी भी तो चलनी चाहिये।' मैं कहता हूँ, अणुशस्त्र अहिंसा के अत्यंत नजदीक है। एक वर्तुल के दो सिरे! इसलिए मैं अब बंगाल से छोटी चीज नहीं चाहूँगा। यहाँ अहिंसात्मक क्रांति, आध्यात्मिक विप्लव होना चाहिये।

[पड़ाव : रायगंज, जि० प० दिनाजपुर, पश्चिम बंगाल, २१ सितम्बर, '६२]

भाषा सम्बन्धी विवाद पर जयप्रकाशजी का वक्तव्य

विदेश-यात्रा से लौटने के बाद भाषा संबंधी विवाद में प्रधान मंत्री जिस ढंग से भाग ले रहे हैं, उसके विरुद्ध, मैं समझता हूँ, मुझे अपनी आवाज, चाहे वह कितनी ही कमजोर हो, अवश्य उठानी चाहिए। यह बड़े दुःख की बात है कि प्रधान मंत्री का हस्तक्षेप करने का ढंग अक्सर अनावश्यक रूप से एक तीव्र विवाद का कारण बन जाता है। राज्य-पुनर्संगठन के प्रश्न पर भी ऐसा ही हुआ। विवाद और बहस लोकतंत्र की खुराक हैं। परन्तु उनकी भी सीमाएं होती हैं, जिनका अतिक्रमण लोकतांत्रिक जीवन के स्वस्थ विकास के लिए अनुचित है।

कोई व्यक्ति, चाहे उसके कुछ भी विचार हों, मूर्ख कहा जाना पसन्द नहीं करेगा। और जब स्वयं प्रधान मंत्री सार्वजनिक वाद विवाद में ऐसी भाषा का प्रयोग करना उचित समझते हैं, तो फिर *विधान सभाओं का कार्य सुचारु रूप से चलाने के लिए अगर 'मार्शल' बुलाये जाते हैं, तो इसमें क्या आश्चर्य है? ये दोनों बातें एक-दूसरे से असम्बन्धित नहीं हैं, जैसा कि पहली दृष्टि में ये मालूम होती हैं।*

इस महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय विवाद में प्रधान मंत्री के वर्तमान आचरण का यह अपेक्षाकृत कम गंभीर पहलू है, यद्यपि यह पहलू भी काफी गंभीर है। इससे भी गंभीरतर पहलू यह है कि मूल प्रश्न को जानबूझ कर उलझा दिया गया है और उसे अस्पष्ट बना दिया गया है। मालूम होता है, प्रधान मंत्री छाया पर प्रहार कर रहे हैं, क्योंकि कुछ उम्मवादियों को छोड़ कर कोई यह नहीं कह रहा है कि अंग्रेजी तथा अन्य विदेशी भाषाओं को विद्यालयों से निर्वासित कर दिया जाय। इस देश के बहुसंख्यक लोग जिनमें हिन्दी भाषा-भाषी भी सम्मिलित हैं, बिना हिचक प्रधान मंत्री की उन सारी बातों से सहमत होंगे, जो उन्होंने विदेशी भाषाएं सीखने के महत्त्व के विषय में कही हैं। विज्ञान एवं आधुनिक ज्ञानराशि से संपन्न रहने के लिए विदेशी भाषाएं सीखना आवश्यक है, यह वे सभी स्वीकार करेंगे। अंग्रेजी का अनिवार्य शिक्षण, समुचित स्तरों पर होना चाहिए, इस पर भी उन्हें आपत्ति नहीं होगी।

लेकिन विदेशी भाषाएं सीखने का चाहे जितना महत्त्व हो, कोई विदेशी भाषा शिक्षा का प्रभावशाली एवं विधायक माध्यम नहीं बन सकती। सामान्यतः यह सभी स्वीकार करेंगे कि शिक्षा का माध्यम अवश्य ही उस वातावरण की भाषा होनी चाहिए जिसमें बच्चा पला हो। अंग्रेजी, जर्मन या रूसी भाषा सीखना चाहे जितना वांछनीय हो, इस देश में शिक्षण *का माध्यम कोई क्षेत्रीय भाषा ही होनी* चाहिए। विदेशी भाषा के माध्यम से जो शिक्षण होगा, उससे विद्यार्थी में उदासीनता का भाव पैदा होगा और उसकी मौलिकता एवं सृजन-शक्ति कुंठित होगी।

लेकिन वास्तविक प्रश्न यह नहीं है। वर्तमान विवाद के अंतर्गत केन्द्रीय प्रश्न *यह है कि सहचरी भाषा या आन्तर-प्रादेशिक भाषा के पद पर से अंग्रेजी को हटाने और हिन्दी को उसके स्थान पर प्रतिष्ठित करने के लिए कोई अवधि निश्चित की जावे या नहीं?* भारत सरकार कोई अवधि निश्चित नहीं करना चाहती। उसकी इस नीति ने केवल हिन्दी भाषी जनता के मन में नहीं, हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठित देखने की इच्छा रखने वाले अन्य भाषा भाषी लोगों के मन में भी गहरी शंकाएँ पैदा की है और यह व्यापक क्षेत्र में हुआ है। शंका यह पैदा हुई है कि निश्चित अवधि के अभाव में केन्द्रीय सरकार हिन्दी को राष्ट्रभाषा के योग्य *बनाने के लिए आवश्यक और ठोस कदम* उठाने की जिम्मेवारी से मुक्त हो जायेगी। अभी ही लोग ऐसा अनुभव करने लगे हैं *कि अगर हिन्दी राष्ट्रभाषा की योग्यता* अब तक प्राप्त नहीं कर सकी है, तो इसका कारण दक्षिणवालों का विरोध उतना नहीं है, जितना केन्द्रीय सरकार की असमर्थता। इस मामले में सरकार का जो उत्तरदायित्व था, उसे उसने पूरा नहीं किया।

उदाहरण के लिए, जिन राज्यों ने *हिन्दी को विश्वविद्यालय के स्तर पर शिक्षण* का माध्यम बनाने के लिए कदम उठाये थे, उन्हें अपने कदम वापस लेने पड़े, क्योंकि केन्द्रीय सेवाओं के अंतर्गत होने *वाली परीक्षाएँ अंग्रेजी में होती रहीं।* इस बात की अपेक्षा तो नहीं थी कि ये परीक्षाएँ केवल हिन्दी में ही होंगी, लेकिन *अगर हिन्दी को राष्ट्रभाषा के योग्य बनाना* है तो केन्द्रीय परीक्षाएँ हिन्दी और अंग्रेजी में हों, इसके लिए कदम उठाये जाने चाहिए थे। केन्द्रीय सरकार की त्रुटियों का यह केवल एक उदाहरण है। वर्तमान विवाद के संदर्भ में सरकार के ऐसे अनेक दोषों की ओर संकेत किया गया है।

इन कारणों के फलस्वरूप, अवधि निश्चित करने के पक्ष में शक्तिशाली, और मेरी दृष्टि से पूर्णतः उचित तर्क उपस्थित किये गये हैं। अवधि कितनी लम्बी हो, इस सम्बन्ध में बहुत आग्रही होने की आवश्यकता नहीं है। विनोबाजी ने इस सम्बन्ध में जो सुझाव दिया है, वह सबसे अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण मालूम होता है। उन्होंने कहा है कि अवधि निर्धारण का प्रश्न अहिन्दी-भाषी राज्यों पर छोड़ देना चाहिए।

विदेशी भाषाएँ सीखने के औचित्य के सम्बन्ध में प्रकट की गयी राय के *बजाय अगर इस मुख्य प्रश्न पर ठंडे दिल* से विचार किया जाय, तो वर्तमान राष्ट्रीय विवाद को तय करने में इससे अधिक सहायता मिलेगी।

७-१०-'६२ —**जयप्रकाश नारायण**
पटना

आर्थिक तथा सामाजिक असमानता के निवारण में खादी-ग्रामोद्योग का महत्त्व

'लोकभारती' के समारोह में डा० संपूर्णानंद का भाषण

राजस्थान के राज्यपाल डा० संपूर्णानंद ने शिवदासपुरा में कहा कि हमारी अर्थ-व्यवस्था में खादी और अन्य ग्रामोद्योगों का बहुत अधिक महत्त्व है। खादी हमारी राष्ट्रीय मुक्ति का प्रतीक है। खादी में गांधी का जीवन-दर्शन समाया हुआ है। आपने बताया कि आजादी की लड़ाई में खादी स्वतंत्रता के सिपाहियों की वर्दी रही है। आज उसे देश में आर्थिक विषमता और सामाजिक असमानता के निवारण में मददगार होना है।

राजस्थान खादी संघ द्वारा शिवदासपुरा (जयपुर) में संचालित लोकभारती के आठवें वार्षिक समारोह में डा० संपूर्णानंद अध्यक्ष-पद से भाषण कर रहे थे।

आपने बताया कि गाँवों में बेरोजगारी दूर करने में खादी ग्रामोद्योग कारगर साधन हैं। केन्द्रित उद्योगों के जरिये करोड़ों लोगों को रोजगार देना संभव नहीं है। आपने खादी ग्रामोद्योगों को प्रोत्साहन दिये जाने की आवश्यकता पर जोर दिया।

आपने बताया कि आजादी के बाद के इन वर्षों में हम गांधीजी को भूलते जा रहे हैं। समाज निर्माण का जो रास्ता *गांधीजी ने बताया था, ऐसा लगता है कि* हम उससे भटकते जा रहे हैं। आपने कहा कि राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के हल में गांधी-मार्ग मददगार हो सकता है।

अंत में राज्यपाल महोदय ने लोकभारती के कार्यकर्ताओं से अपेक्षा की कि वे अपने जीवन में गांधीजी की सेवा, निष्ठा, सत्य, प्रेम और सादगी को उतारेंगे। *संस्था की प्रगति के प्रति आपने संतोष* व्यक्त किया।

लोक-भारती

आरंभ में लोक-भारती के संचालक श्री त्रिलोकचंद ने डा० संपूर्णानंद का अभिनंदन किया। संस्था के परिचय में आपने बताया कि लोकभारती के अंतर्गत खादी-ग्रामोद्योगों का प्रशिक्षण तथा नयी तालीम विद्यालय का संचालन होता है। चाकसू तहसील क्षेत्र में भूदान ग्रामदान तथा ग्राम निर्माण का प्रयत्न चल रहा है। आपने कहा कि तपोधन स्व० श्रीकृष्णदासजी जाजू ने आठ वर्ष पूर्व इस केन्द्र की स्थापना की थी तथा पिछले वर्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने *इस केन्द्र का 'लोकभारती' नामकरण* किया था।

इस अवसर पर राज्यपाल महोदय ने यहाँ आयोजित खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का निरीक्षण किया तथा खादी की हुण्डियाँ खरीद कर राजस्थान खादी संघ के खादी बिक्री-अभियान का उद्घाटन किया।

अहिंसक प्रतिकार

आणविक विरोध में 'एवरीमैन थ्री' की यात्रा

आणविक विस्फोट के खिलाफ विरोध जाहिर करने के लिए ता० २६ सितम्बर को विश्व-शांति-सेना की ओर से "एवरीमैन थ्री" नाम की जो नौका लंदन से लेनिनग्राड के लिए रवाना हुई थी वह ३० सितम्बर की शाम को हालैण्ड के एम्सटरडम् बन्दरगाह में पहुँची, जहाँ एक आम सभा में नौका के कप्तान डा० रेनल्ड्स तथा *बार्नेबाई मार्टिन आदि ने आणविक अस्त्रों के विरोध में भाषण दिये।*

बार्नेबाई मार्टिन बोलने के लिए खड़े हुए, उससे पहले पुलिस ने उन्हें चेतावनी दी कि हालैण्ड में "विदेशी लोगों द्वारा राजनैतिक विषयों पर भाषण करना मना है।" बार्नेबाई ने जवाब दिया कि "मैं जिस विषय पर बोलना चाहता हूँ वह राजनैतिक नहीं, मानवता से संबंधित है। फिर भी यह तय करना आपका काम है कि जो कुछ मैं कहूँगा वह आपकी राजनीति की परिभाषा में *आता है या नहीं।" बार्नेबाई का भाषण* लोगों ने शांति के साथ सुना। पुलिस ने बीच में किसी प्रकार का दखल नहीं दिया। दूसरे दिन सबेरे नौका वालों को *सूचना दी गयी कि डच बन्दरगाह में झण्डा फहराना मना है।* 'एवरीमैन थ्री' के झण्डे पर लिखा हुआ है, "पूरब या पश्चिम-किन्हीं भी राष्ट्रों की ओर से *आणविक अस्त्रों के प्रयोगों के प्रति* हमारा विरोध है।"

अभी-अभी समाचार मिला है कि २१ अक्टूबर को 'एवरीमैन थ्री' नौका लेनिनग्राड पहुँच गयी है।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

सत्याग्रह की तालीम आवश्यक

सत्याग्रह की शक्ती हमेशा काम देने वाली है। अक्सर हम 'सत्याग्रह' का अर्थ ठीक नहीं समझते। सत्य पर कायम रहना ही सत्याग्रह है। अपना सारा जीवन सत्याग्रह-नीष्ठा पर खड़ा करना, कीतनी भी मुसीबतें आयें, तो भी जीसे हम सत्य समझें, अुस पर डटे रहना सत्याग्रह है; बल्की अीसके लीअे हम कष्ट सहन करते हैं, अैसा भान भी हमें नहीं होना चाहीअे। जो सत्य पर अमल करता है, अुसे अुसी की कोशीश में आनंद महसूस होता है। अुससे भीन्न कोअी अनुभव अुसे होता नहीं और न बीच की तकलीफों का ही भान होता है। बावजूद आपत्तीयों के सत्य पर कायम रहने की शक्ती जनता में होनी चाहीअे। यही अेक शक्ती है, जीससे दुनीया हींसा से बच सकती है। समाज में जो समस्याअें होती हैं, अुनको हल करने के लीअे अीस शक्ती का अुपयोग होता है। वीद्यार्थीयों में भी सत्याग्रह की वृत्ती नीर्माण होनी चाहीअे। बचपन में हमें जो श्लोक सीखाये गये थे, अुनमें से अेक श्लोक हमें नीरंतर याद रहता है। अुसमें कहा गया है की प्रह्लाद को कीतनी ही तकलीफें दी गयीं, फीर भी अुसने राम का नाम नहीं छोड़ा। अीस तरह सामाजीक और स्कूली शीक्षण में भी सत्याग्रह की तालीम दी जानी चाहीअे।

[वायनाड, ४-५-'५७] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = ष संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

पंजाब सरकार और शराबबन्दी

पंजाब सरकार ने एक से अधिक बार अपनी इस नीति की घोषणा की है कि सन् १९६६ के अर्थात् तीसरी पंचवर्षीय योजना के अंत तक वे उस प्रांत में सम्पूर्ण शराबबंदी कर देंगे। अभी हाल ही में प्रदेश के मुख्यमंत्री तथा एक अन्य मंत्री महोदय ने इस बात को फिर से दोहराया है। इस प्रकार के लोक कल्याण के काम में मदद पहुँचाना और उसे सफल बनाने में सहायक होना हरएक का कर्तव्य है।

इस दृष्टि से यह एक मान्य सिद्धांत है कि जिस प्रदेश में शराबबंदी की जाय उसके पड़ोसी प्रदेश की सरकारों को भी—अगर उन प्रदेशों में पूर्ण शराबबंदी न हो—सीमावर्ती क्षेत्र में शराबबंदी लागू करनी चाहिए, ताकि शराबबंदी वाले प्रदेश में शराब के गैर-कानूनी चलन के लिए अनुकूलता न रहे। पर अखबारों में जो यह समाचार प्रकाशित हुआ है कि पंजाब सरकार ने केंद्रीय सरकार को यह निवेदन किया है कि "अगर उत्तर प्रदेश, राजस्थान, जम्मू कश्मीर, दिल्ली और हिमाचल प्रदेश में सम्पूर्ण शराबबंदी नहीं होती है", तो शराबबंदी के संबंध में पंजाब सरकार का निर्णय कार्यान्वित नहीं हो सकेगा, वह अगर सही है तो यह एक ऐसी शर्त है, जिसका कोई अर्थ नहीं है। हम इस पक्ष के समर्थन में हैं कि सम्पूर्ण भारत में जल्दी-से-जल्दी पूर्ण शराबबंदी होनी चाहिए। पर यह स्पष्ट है कि कोई भी प्रदेश अगर ऊपर लिखे अनुसार शर्त लगाता है तो शराबबंदी के उसके अपने निर्णय का कोई मूल्य नहीं रह जाता। पंजाब सरकार की शर्त अगर मानी जाय तो उसका तर्कशुद्ध अर्थ इतना ही निकलेगा कि शराबबंदी हो तो सारे देश में एकसाथ हो, वरना कहीं न हो, क्योंकि जो दलील पंजाब के लिए लागू होगी वही दलील पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश आदि को मिला करके शराबबंदी का जो बड़ा क्षेत्र होगा उसके लिए भी उतनी ही लागू होगी। अर्थात् फिर उत्तर प्रदेश से लगे हुए बिहार, मध्यप्रदेश आदि और उनसे लगे हुए बंगाल, उत्कल आदि तक में जब तक पूर्ण शराबबंदी नहीं होगी तब तक उस क्षेत्र में भी शराबबंदी नहीं हो सकती, ऐसा उसका अर्थ होगा। पड़ोसी प्रांतों में पूरी शराबबंदी हो तभी किसी प्रांत में शराबबंदी सफल हो सकती है, यह दलील किसी माने में ठीक होते हुए भी अगर शराबबंदी का कदम उठाने के लिए वह शर्त के तौर पर मानी जाय तो उसका मतलब यही निकलेगा कि इस प्रकार की शर्त पर जो प्रदेश शराबबंदी करना चाहते हैं, वे वास्तव में सच्चे दिल से उसके लिए तैयार नहीं हैं। हम आशा करते हैं कि पंजाब के लिए यह बात लागू नहीं होगी। वहाँ के मुख्य मंत्री और अन्य मंत्रियों ने एक से अनेक बार शराबबंदी की अपनी नीति को दोहराया है। हम आशा करते हैं कि पड़ोसी प्रांतों के सहयोग और उनकी मदद की मांग इसी हद तक सीमित होगी कि सीमावर्ती इलाकों में कम-से-कम दस-बीस मील तक का क्षेत्र मद्यविहीन क्षेत्र घोषित कर दिया जाय और उन पड़ोसी राज्यों के उन क्षेत्रों में भी शराबबंदी लागू रहे।

जनमत-संग्रह का सवाल

पंजाब सरकार ने शराबबंदी के सिलसिले में एक और बात जाहिर की है। वह यह कि अगले दिसम्बर में वे पूरे प्रदेश भर में शराबबंदी के प्रश्न पर जनमत लेना चाहते हैं। महत्त्व के प्रश्नों पर इस प्रकार हर मामले में जनता की राय ली जा सके और उसके अनुसार व्यवस्था हो तो वह स्वागत योग्य ही है। पर शराबबंदी का ही मसला इस चीज के लिए क्यों चुना गया, यह शंका सहज ही उठ सकती है। जनता के प्रतिनिधियों ने ही मिल कर इस देश का संविधान बनाया है और इस माने में उस संविधान को जनता का समर्थन पहले से ही प्राप्त है, यह मानना होगा। संविधान में शराबबंदी के ध्येय को समझबूझ कर दाखिल किया गया है। ऐसी परिस्थिति में फिर से जनमत लेने की आवश्यकता समझ में नहीं आती। इस बात का निर्णय कि शराबबंदी सारे प्रदेश में तुरत और एकसाथ हो या एक-एक कदम करके हो, नीति का उतना नहीं जितना शासन के व्यवहार का प्रश्न है और इसलिए ऐसे सवाल पर तो जनमत संग्रह करने का और भी कम औचित्य नजर आता है। जनमत संग्रह का तरीका क्या होगा यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। अगर सचमुच जनमत-संग्रह-रेफरेण्डम की बात है तो, हिन्दुस्तान में शायद यह पहला ही मौका होगा जब किसी निश्चित प्रश्न पर इतने बड़े पैमाने पर जनता की राय जानने की योजना की जाने वाली हो। आशा है, पंजाब सरकार शराबबंदी के प्रश्न पर या उसके किसी विशेष पहलू पर जनमत-संग्रह के औचित्य और मतसंग्रह के तरीके पर जल्दी-से-जल्दी पर्याप्त प्रकाश डालेगी।

टिप्पणियाँ

नगरपालिकाओं का दायित्व

म्यूनिसिपैलिटी या किसी भी सार्वजनिक संस्था की ओर से किसी विशिष्ट व्यक्ति का सम्मान और मानपत्र-समर्पण आदि एक तरह से औपचारिक कार्यक्रम ही होते हैं। ऐसे मौकों पर सामान्य तौर पर सिवा परस्पर स्तुति के और एक-दूसरे की औपचारिक प्रशंसा के और कुछ नहीं होता। पर अभी हाल ही में दिल्ली म्युनिसिपल कारपोरेशन की ओर से राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् तथा उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसेन का जो नागरिक अभिनंदन किया गया उस मौके पर हमारे दोनों वरिष्ठ नेताओं ने कारपोरेशन की कार्यप्रणाली और कारपोरेशन के सदस्यों के व्यवहार इत्यादि के बारे में जो कुछ कहा वह परम्परा से एक अच्छा अतिक्रम था।

डा० राधाकृष्णन् ने अभिनंदन के जवाब में जो कुछ कहा वह दिल्ली कारपोरेशन के ही नहीं, हमारी अधिकांश नगरपालिकाओं के सदस्यों के लिए गम्भीरता से सोचने की बात है। किसी भी कारपोरेशन या नगरपालिका की प्रमुख जिम्मेदारी पानी, रोशनी, सफाई इत्यादि की है और अगर आये दिन इन व्यवस्थाओं में ही विघ्न होता रहे तो यह इस बात का सीधा प्रमाण है कि उक्त संस्था की व्यवस्था में कहीं न कहीं बड़ा दोष है। बड़े शहरों में पानी, बिजली इत्यादि की व्यवस्था में बार-बार भंग हो जाना आजकल एक साधारण-सी बात हो गयी है और लोग भी यह समझने लगे हैं कि शायद इस तरह की कमियों को टाला नहीं जा सकता। पर राष्ट्रपति महोदय ने ठीक ही कहा कि "पानी, बिजली इत्यादि की व्यवस्था में भंग होना ऐसी चीज है, जो किसी भी सभ्य समाज में बर्दाश्त नहीं की जा सकती। सदस्यों के आपस में राजनैतिक मतभेद जो कुछ भी हों, शहर नागरिकों के रहने के लिए उपयुक्त प्रकार से स्वच्छ, स्वास्थ्यकर और सुन्दर होना चाहिए।" आखिरकार ये चीजें भौतिक व्यवस्था से संबंध रखती हैं और बार-बार उस व्यवस्था का भंग होना वास्तव में उस व्यवस्था के लिए जिम्मेदार व्यक्तियों के लिए लज्जा की बात है। आज का युग कहलाने को तो जनतंत्र का युग है, पर देश, प्रदेश या शहर हर स्तर पर 'जनता के प्रतिनिधि' द्वारा व्यवहार इस प्रकार चलते हैं जैसे वे किसी के प्रति उत्तरदायी हैं ही नहीं और उनको जो काम सौंपा गया है उसमें आने वाली कमी के लिए वे जिम्मेदार नहीं हैं। हमारे राष्ट्रपति जैसे जिम्मेदार और विद्वान मनुष्य के कथन पर से कम-से-कम इतना हमारी समझ में आ जाना चाहिए कि सत्ता प्राप्त करने के लिए हम आपस में जो कुछ भी उठा-पटक करते रहें, उसका असर अगर हमारे काम पर पड़ता है तो वह क्षम्य नहीं है। राष्ट्रपति ने इस सिलसिले में कारपोरेशन के सदस्यों के आपसी व्यवहार का जिक्र करते हुए वाद-विवाद तथा व्यवहार में जो ओछापन आजकल नजर आता है उसकी भी स्पष्ट शब्दों में निन्दा की। राष्ट्रपति हमारे

देश के प्रथम नागरिक हैं और उनकी स्पष्टोक्ति—वह भी नागरिक-अभिनंदन किये जाने के औपचारिक अवसर पर—इस बात का स्पष्ट संकेत है कि हर नागरिक को व्यवस्था की कमी के खिलाफ सौम्य, पर निश्चित मत प्रगट करने में संकोच नहीं करना चाहिए, बल्कि वैसा न करना कर्तव्य-विमुखता होगी। लोकशाही की सफलता के लिए जाग्रत जनमत पहली शर्त है।

विद्यार्थी और राजनीति

उत्तर प्रदेश सरकार ने अपने कुछ विभागीय कार्यालय इलाहाबाद से हटा कर लखनऊ ले जाने का अभी हाल ही में तय किया है। आज की केंद्रीय व्यवस्था के कारण शासन का हर महत्त्वपूर्ण विभाग या अंग राजधानी में रहे यह एक स्वाभाविक वृत्ति है। अक्सर लोग भी अपने निजी हितों की दृष्टि से सत्ता के केन्द्र के आसपास रहना पसन्द करते हैं। पर कारण जो कुछ भी हो, इस प्रकार जब किसी विभाग या कार्यालय का स्थानान्तरण होता है तो दूसरी ओर कुछ स्थानीय लोगों के हितों को धक्का भी पहुँचता है। स्थानीय रोजगार आदि पर भी थोड़ा असर पड़ता है और इसलिए सहज ही ऐसी चीजों का विरोध लोगों की ओर से खड़ा हो जाता है। पर हमें यह देख कर आश्चर्य हुआ कि इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्रसंघ के अध्यक्ष और मंत्री ने एक वक्तव्य निकाल कर "सरकार की इस कार्रवाई की वजह से इस महत्त्वपूर्ण शहर के दर्जे को और नीचे गिरने से बचाने के लिए" आवश्यक कदम उठाने का आवाहन किया है। कोई भी राजनैतिक पार्टी या सार्वजनिक संस्था इस प्रकार के प्रश्न को उठाये और उसके पक्ष-विपक्ष में जनमत इत्यादि को बनाने का काम करे यह समझा जा सकता है। पर विद्यार्थी-संघ जैसी संस्था का इस तरह के प्रश्न में पड़ना निश्चय ही उनके दायरे से बाहर की चीज है। अक्सर इस प्रश्न की चर्चा चलती है कि विद्यार्थियों को राजनीति में भाग लेना चाहिए या नहीं। किस प्रकार की राजनीति में विद्यार्थियों को नहीं पड़ना चाहिए उस बात का एक बहुत स्पष्ट संकेत इलाहाबाद विश्वविद्यालय के छात्र-संघ के अध्यक्ष और मंत्री के उपरोक्त बयान से मिलता है।

अफ्रीका और अहिंसा

कुछ दिन पहले श्री सुरेशराम भाई ने, जो इस समय दार-एस-सलाम, पूर्वी अफ्रीका में शांति विद्यालय के कार्यकर्ता के हैसियत से काम कर रहे हैं, उत्तरी रोडेशिया की यूनाइटेड नेशनल इण्डिपेंडेन्स पार्टी के कोषाध्यक्ष और श्री केनेथ काउण्डा के दाहिने हाथ श्री सायमन कापवपे से बातचीत के दौरान में पूछा कि अफ्रीका के कुछ नौजवान अधीर होकर आजादी के लिए अहिंसा की बजाय हिंसा का रास्ता अपनाने की सोचते हैं, उसके बारे में आपकी क्या राय है? जवाब में श्री सायमन हँस दिये और कहा, "उन्हें कह दीजिए कि हमारे लिए अहिंसा की नीति और निष्ठा केवल आज के लिए ही नहीं, कल के लिए भी है और परसों के लिए भी।"

विनोबाजी को जब इस बात की जानकारी करायी गयी तो उन्होंने लिखा—"मुझे यह जान कर खुशी हुई कि केनेथ काउण्डा और उनके साथी अहिंसा को एक तात्कालिक उपाय के तौर पर ही नहीं, लेकिन निष्ठा के रूप में हमेशा के लिए मानते हैं। विज्ञान के इस युग में हिंसा में सिवा नुकसान पहुँचाने के और कोई ताकत बाकी रही ही नहीं है। फिर भी लोग फैसला नहीं कर पा रहे हैं। पुराना इतिहास और पुराने खयालात उनकी बुद्धि को जकड़े हुए हैं। ऐसी परिस्थिति में यह जान कर बहुत संतोष होता है कि उत्तरी रोडेशिया के नेता अहिंसा में पूरा विश्वास रखते हैं।"

चक्रव्यूह

हममें से बहुत-सों ने उस आदमी की कहानी सुनी होगी जिसे धन कमाने का इतना लालच था कि वह उसके पीछे अपने स्वास्थ्य को भी भूल बैठा। चन्द दिनों में धन तो उसने काफी कमा लिया, लेकिन स्वास्थ्य खो दिया, और फिर स्वास्थ्य वापस पाने की फिराक में वह सारा धन खर्च करना पड़ा। जब उससे किसी ने पूछा कि तुमने स्वास्थ्य कैसे खोया, तो कहा कि धन कमाने के लिए। धन कमाना क्यों जरूरी था, यह पूछने पर उसने जवाब दिया कि स्वास्थ्य पाने के लिए!

११ अमेरिकन 'ट्रैवल एजेंट्स'—यात्रा-दलालों का एक दल आजकल भारत-सरकार के निमंत्रण पर इसलिए हिन्दुस्तान आया हुआ है कि वह उन्हें इस बारे में सलाह दे कि दुनिया के सैलानी लोगों को अधिकाधिक संख्या में किस तरह आकर्षित किया जा सकता है, ताकि हिन्दुस्तान को विदेशी मुद्रा ज्यादा तादाद में मिल सके। इन अमेरिकन विशेषज्ञों ने प्रेस-प्रतिनिधियों के साथ एक बातचीत के दौरान में कहा कि अगर हिन्दुस्तान अधिकाधिक संख्या में विदेशी यात्रियों को आकर्षित करके विदेशी मुद्रा कमाना चाहता है तो उसके लिए उसे अधिक खर्च करना चाहिए। सलाह वाकई में नेक है। अगर अधिक विदेशी मुद्रा चाहिए तो अधिक खर्च करो और कोई टेढ़ा दिमाग वाला पूछ बैठे कि अधिक विदेशी मुद्रा किसलिए चाहिए, तो उसका जवाब सीधा है कि अधिक खर्च करने के लिए!

—सिद्धराज ढड्ढा

भूदान-आंदोलन : एक समीक्षा

• धनंजयराव गाडगिल

[महाराष्ट्र के कार्यकर्ता श्री बाबूलाल गांधी ने महाराष्ट्र में प्राप्त भूमि का वितरण करने के बाद अपने अनुभवों के आधार पर "भारत के भूमिहीन और भूदान" नामक पुस्तक मराठी में लिखी है। उसकी प्रस्तावना भारत के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री और पूना के गोखले इन्स्टीट्यूट आफ इकॉनामिक्स एण्ड पालिटिक्स के निर्देशक श्री धनंजयराव गाडगिल ने लिखी है। प्रस्तावना में, पुस्तक में प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर उन्होंने सहज ही भूदान-आंदोलन की समीक्षा भी की है, जो आंदोलन में लगे सब कार्यकर्ताओं और दिलचस्पी रखने वाले पाठकों के लिए उद्‌बोधक होगी। —सं०]

"भारत के भूमिहीन और भूदान" नामक पुस्तक में दो खण्ड हैं। पहले खण्ड में भारत की भूमि-समस्या के स्वरूप-विवेचन के साथ भूदान-आंदोलन का संक्षिप्त विवरण है। दूसरे खण्ड में महाराष्ट्र में भूदान में प्राप्त भूमि का वितरण किस प्रकार हुआ, उसके क्या अनुभव आये और उसकी कुल मिला कर क्या निष्पत्ति रही आदि बातों का विस्तृत विवेचन है। पुस्तक के लेखक श्री बाबूलाल गांधी महाराष्ट्र भूदान-समिति की ओर से दान में प्राप्त भूमि का वितरण करने के लिए विशेषतः नियुक्त हुए थे, जिन्हें वितरण का सारा अधिकार दिया गया था। उन्होंने लगभग लगातार पंद्रह महीनों में अपना काम पूरा किया। अतः यह कहा जा सकता है कि यह पूरी पुस्तक लेखक के प्रत्यक्ष अनुभव और जानकारी के आधार पर लिखी गयी है।

पहले खण्ड के पहले के तीन प्रकरणों में भूमिहीनों की समस्याओं के सर्वसामान्य स्वरूप का परिचय दिया है। पहले प्रकरण में भारत की परिस्थिति की संक्षिप्त जानकारी आँकड़ों के साथ दी है। अन्य दो प्रकरणों में साम्यवादी देशों के प्रयोगों का इतिहास और एशिया के दूसरे देशों और अफ्रीका की स्थिति का वर्णन है। अगले तीन प्रकरणों में भूमिहीनों की समस्या के संबंध में भारत के योजना-आयोग की घोषित नीति का परिचय देने के साथ राज्य-सरकारों ने गत पंद्रह वर्षों में जो कुछ 'काश्तकारी कानून' और सीमा-निर्धारण के कानून बनाये हैं, उनका भी सारांश दिया है।

प्रत्यक्ष भूदान संबंधी विवेचन की दृष्टि से यहाँ तक का भाग एक प्रकार से प्रास्ताविक ही मानना चाहिये। लेकिन कहीं भी विस्तार करने की सुविधा न होते हुए भी यह प्रास्ताविक भाग उपयोगी जानकारी देने वाला है। पहले खण्ड के इससे आगे के भाग में लेखक ने भूदान का विषय हाथ में लिया है। विचार-परिवर्तन की प्रक्रिया का थोड़ा तात्त्विक विचार, भूदान-आंदोलन का उद्‌गम और समूचे देश का, खासकर महाराष्ट्र का भूदान प्राप्ति के प्रयोगों का अनुभव, इन विषयों का विवेचन पहले खण्ड के अंतिम प्रकरणों में किया गया है।

पुस्तक का सही महत्त्व का भाग दूसरा खण्ड ही मानना चाहिये। इसका प्रमुख विषय है महाराष्ट्र में भूदान में प्राप्त भूमि का वितरण। मेरे खयाल से इस खण्ड में महत्त्व के विषय तीन हैं : पहला, भूदान-समिति के सर्वसामान्य आदेश के अनुसार लेखक की बनायी हुई वितरण पद्धति और प्रत्यक्ष कार्य में उसका स्वरूप; दूसरा, भूदान में प्राप्त भूमि, उसके दाता, उस भूमि का वितरण और उस वितरण के फलस्वरूप बने भूमि के नये काश्तकारों के संबंध में बहुमुखी और वर्गीकृत विस्तृत जानकारी; तीसरा, वितरण में प्राप्त, अनुभव और मानस-दर्शन।

पहले खण्ड में लेखक ने भूमि-समस्या का जो विवेचन किया है वह संक्षिप्त होते हुए भी यथासंभव जानकारी से भरा है। उससे भूदान-आंदोलन का उद्‌गम और हेतु समझने में मदद मिलती है। किसी प्रकार भूदान की माँग की वैचारिक पृष्ठभूमि तथा भूदान-यात्रा में प्राप्त अनुभवों के पर्याप्त वर्णन के कारण समूची घटना का यथार्थ दर्शन होता है। इस प्रकार के सर्वांगीण विवेचन को एकत्रित करना इस पुस्तक का एक विशिष्ट गुण मानना चाहिये। जैसे ऊपर कहा गया है, इस पुस्तक में वस्तुतः नया और महत्त्व का भाग वह विवेचन है, जिसमें महाराष्ट्र में भूमि वितरण कैसे किया गया इसकी सांगोपांग और आँकड़ेवार जानकारी है। अतः प्रस्तावना में प्रधानतया इसी संबंध में लिखना योग्य होगा।

पुस्तक में भूमि वितरण का जो काम दिया है वह महाराष्ट्र के पश्चिमी बारह जिलों का है। महाराष्ट्र में विनोबाजी की पदयात्रा १९५८ में हुई और महाराष्ट्र भूदान-यज्ञ समिति ने अपनी ओर से भूमि-वितरण का काम श्री बाबूलाल गांधी को अप्रैल १९५९ में सौंपा। उन्होंने अपना यह काम अप्रैल १९५९ से जून १९६० तक लगातार पंद्रह महीने में गाँव-गाँव घूम कर पूरा किया। श्री बाबूलालजी लिखते हैं—"यह काम करते समय मेरी भूमिका एक अध्ययनशील विद्यार्थी की रही है।" श्री बाबूलालजी ने पुस्तक में जो जानकारी दी है और विषयों को किस प्रकार प्रस्तुत किया है, यह देखने से उनकी उस भूमिका की यथार्थता सिद्ध

होती है। चूंकि उनकी खुद की भूमिका एक अध्ययनशील विद्यार्थी की रही है, इसलिए उनकी यह पुस्तक दूसरे अध्ययनशील विद्यार्थियों के लिए उपयोगी हो, इस ढंग से लिखी गयी है।

पश्चिमी महाराष्ट्र के १२ जिलों में कुल ४१ हजार एकड़ भूमि मिली थी। इसमें प्रत्यक्ष वितरण २६ हजार एकड़ जमीन का हो सका। इनमें से लगभग ५ हजार एकड़ भूमि खराब थी, २ हजार एकड़ दान-दाताओं ने वापस ले ली और दो हजार एकड़ भूमि ऐसे लोगों ने दान में दी, जो उसके मालिक नहीं थे। वितरित भूमि ६००१ भूमिहीन परिवारों को दी गयी। श्री गांधी ने इन सबकी जानकारी जिलवार और तहसीलवार दी है। सारे आँकड़े देते समय दाता के मानस का भी उन्होंने सतर्कतापूर्वक जो वर्णन किया है, उससे स्पष्ट होता है कि श्री गांधी की दृष्टि वास्तव में एक निरीक्षक अध्येता की है। जाति-विचार, धर्म, श्रद्धा, सामाजिक दबाव आदि कई कारणों से दान मिल सकता है। इन सबकी वर्ग और क्षेत्रवार देने लायक जानकारी श्री गांधी ने वितरण का काम करते समय एकत्रित की।

वितरण के अयोग्य क्षेत्र की जो विस्तृत जानकारी दी है उससे अर्थ-व्यवहार और सामाजिक परिस्थिति के सम्बन्ध में कई बारीकियाँ और झलक मिलती है। वितरण-पद्धति और वितरण-कार्य के संयोजन की जानकारी भी पूरी दी है और यह लिखा है कि अन्त में इस वितरण-कार्य में प्रति एकड़ तीन आने का खर्च आया। कइयों को लगेगा कि 'वितरण कार्य में प्राप्त मानस-दर्शन' नामक विस्तृत प्रकरण में जो सत्यकथा दी है वही पुस्तक का महत्त्वपूर्ण भाग है। यह मानस-दर्शन दृश्य तो है ही, साथ ही उससे समूची पुस्तक से ही सामाजिक क्रांति करने की इच्छा रखने वालों को काफी उद्बोधक सामग्री मिलेगी।

अपने भूमि वितरण कार्य की फलश्रुति कहते हुए श्री बाबूलालजी एक जगह लिखते हैं, "यह नया वितरण सर्वांगीण जागृति के प्रयत्न का ही एक कार्यक्रम सिद्ध हुआ।" परन्तु साथ ही उनको यह भी दीखता है कि वितरण-कार्य में जो ढिलाई अथवा उपेक्षा हुई है उसके कारण आंदोलन को आगे बढ़ने में सहायता नहीं मिली। इन दोनों दृष्टियों से वर्तमान परिस्थिति का विचार होना आवश्यक है। विनोबाजी ने भूदान की नयी कल्पना प्रस्तुत की और उस आह्वान का, जनता की ओर से अप्रत्याशित प्रतिसाद (रिस्पान्स) मिला। उससे लगने लगा कि कुछ अघटित प्रसंग प्रत्यक्ष हो रहे हैं और कइयों को लगा कि वे शांतिपूर्ण क्रांति के मार्ग में हैं। भूदान-यात्रा में कई अनुभव आये। व्यावहारिक अड़चनें दूर करने का प्रयत्न होने लगा। अन्त में भूदान की ग्रामदान में परिणति हुई और १९५७ में येलवाल (मैसूर) के एक सम्मेलन में भारत भर के सभी पक्षों के नेताओं ने एक स्वर से ग्रामदान आंदोलन के मूलभूत उद्देश्यों और कार्य पद्धति की प्रशंसा की। आज तक के आंदोलन में यही उच्च बिंदु समझना चाहिए। वहाँ से उसका ह्रास प्रारम्भ हुआ और अब यह मार्ग केवल आसान नहीं, यही नहीं बल्कि यह कार्यक्रम अब कुंठित हुआ है, ऐसी सार्वत्रिक भावना दीखती है। श्री गांधी की इस पुस्तक से यह निराशा कुछ हद तक दूर होने में सहायता मिलेगी। पुस्तक पढ़ने पर यदि यह समझ सकें कि गलती क्या हुई और क्या सुधार हो सकता है तो बहुत अच्छा हो।

किसी भी नये क्रांतिकारी उपक्रम की तीन अवस्थाएं माननी चाहिये। पहली, विचार मंथन की अवस्था; दूसरी, विचार-प्रचार और नयी कल्पना की स्थापना की अवस्था और तीसरी, विचार और कल्पना को प्रत्यक्ष व्यवहार में लाने की। जहाँ दूसरी और तीसरी अवस्थाएँ बहुत हद तक एकसाथ चलेंगी और परस्परपूरक के रूप में चलेंगी वहीं क्रांति निश्चित ही सफल हो सकती है। भूदान-ग्रामदान आंदोलन में आज तक जो दोष या कमी रही है वह यह कि हमें व्यवहार में क्या करना है, इस सम्बन्ध में कार्यकर्ताओं की कल्पना अस्पष्ट रही है और प्रत्यक्ष व्यावहारिक काम करने के बारे में विलक्षण ढिलाई और उपेक्षा रही है। विनोबा को कुंजी हाथ लगी ऐसा मान लें तो भी वह कुंजी कोई अलादीन का चराग नहीं थी कि जिससे चीज बनी-बनायी सामने आ जाती। प्रत्येक मनुष्य में सुप्त सत्प्रवृत्तियाँ हैं, उन्हें सही ढंग से जाग्रत करें तो कई समस्याओं का समाधान-रामबाण उपचार हो ही सकता है और शांति, समाधान का वातावरण निर्माण हो सकता है, यह विचार आधुनिक युग के लिए अपरिचित है और इस मार्ग को लोग व्यावहारिक नहीं मानते। फिर अभी इसका उच्चारण, प्रचार और समर्थन करने में विनोबाजी की सूझ और धीरज अद्वितीय रहे हैं यह निश्चित है। लेकिन केवल प्रचार और समर्थन से ही सामाजिक क्रांति नहीं हो जाती, यह भी उतना ही सत्य है।

नयी कल्पना से, सन्तों के वचनों से मनुष्य क्षण मात्र के लिए गद्गद हो जाता है, लेकिन इससे पुराने संस्कारों और परिस्थिति का दबाव जड़ से खतम नहीं हो जाता। केवल सत्प्रवृत्ति से समस्या का हल नहीं होता है। उसके लिए सत्प्रवृत्ति को सतत जागृत रखते हुए विचारपूर्वक लम्बे समय तक व्यावहारिक प्रयत्न करना होता है। यह अंतिम विचार भूदान-ग्रामदान में आज तक विस्मृत-सा दीखता है और आरम्भ में जिस सपाटे से काम बढ़ा, उसकी तुलना में प्रत्यक्ष परिणाम अत्यल्प दीखता है।

लेकिन इतने में यह समाप्त हो गया ऐसा मानने की जरूरत नहीं है। श्री बाबूलालजी के अनुभवों के आधार पर यह निश्चित कहा जा सकता है कि भूदान ग्रामदान ने जो रास्ता सुझाया है वह हमारी परंपरा के अनुकूल है, यह कल्पना प्रभावशाली हो सकती है और सबको जच सकती है। सच्चा अभाव ऐसे कार्यकर्ताओं का है जो इस सारतत्त्व को सर्वत्र पहुँचा कर श्रद्धापूर्वक, बल्कि खुली आँखों रचनात्मक काम में लग सकें। इस पुस्तक में आदाताओं के भावी विधान के सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है उस पर से यह स्पष्ट होता है कि श्री बाबूलालजी यह नहीं मानते कि वितरण के साथ उनका काम समाप्त हो गया है।

आज की परिस्थिति में यह आवश्यक है कि विश्लेषणात्मक बुद्धि से काम करके परिणामों को आजमाया जाय, अनुभवों के आधार पर व्यवहार को सुधारते जायें और काम में सातत्य बनाये रखें। श्री गांधी की काम और पुस्तक को केवल अपवाद न मान कर कार्यकर्ताओं की नयी पीढ़ी की ये द्योतक हैं, ऐसा मान सकते हैं और यह मानने में भी कोई हर्ज नहीं है कि इस आंदोलन में अब एक नया और अधिक फलदायी कालखण्ड आरम्भ हो रहा है।

"छोटी-छोटी" बातें

छोटी बातें भी कभी 'बड़ी' हो जाती हैं। कई सप्ताह इस स्तम्भ के अन्तर्गत लिखने के बाद जब यह सिलसिला बंद हुआ तो कितने ही पाठकों की ओर से शिकायत के पत्र आये। मैंने सोचा कुछ दिन बाद पाठक इसे भूल जायेंगे और शिकायतें बंद हो जायेंगी। पर वैसा नहीं हुआ। अभी इस सप्ताह भी एक मित्र ने 'छोटी-छोटी बातों' की याद दिलाई और उलाहना दिया।

बड़ी-बड़ी समस्याओं पर बड़े-बड़े प्रश्नों पर लिखना कितना आसान है! छोटी बातों पर रोज क्या लिखा जाय! आखिर वे 'छोटी बातें' ही जो ठहरीं। पर छोटी बातें ही अक्सर ओझल रहती हैं और इसलिए उनकी याद कोई दिलाता है तो मानों वे दिल की तह को छू लेती हैं। बड़ी बातों पर जैसे लिखना आसान है वैसे ही उन्हें पढ़ कर पढ़ी-अनपढ़ी कर देना भी उतना ही आसान है। "वे बातें बड़ी हैं, इसलिए हम साधारण लोगों से आखिर उनका क्या वास्ता? बड़े लोग हैं ही जो उनके बारे में सोचेंगे, उनका हल निकालेंगे।" इसलिए बड़ी बातों को दरगुजर करने की मानसिक भूमिका बनी हुई ही रहती है। पर छोटी बातें तो अपने खुद के जीवन से नजदीक की होती हैं। वे परिचित होती हैं। तुरत अन्दर प्रवेश करती हैं और शायद सोचने को मजबूर करती हैं।

वास्तव में छोटी और बड़ी बातों का भेद भी अस्वाभाविक ही है। जीवन की अखण्ड धारा में बूंद भी है और प्रवाह भी। और प्रवाह भी तो आखिर बूंद बूंद मिल कर ही बनता है! बिना बूंद के प्रवाह कहाँ से आयेगा? बुनियाद के पत्थर में और शिखर के कंगूरे में कौन बड़ा, कौन छोटा? बात में हम शिखर को महत्त्व देते हैं, बुनियाद के पत्थर को तुच्छ समझते हैं, पर इस दूसरे के बिना वह पहला टिकेगा भी कैसे? अगर हम दमड़ियों के बारे में सावधान रहें, तो फिर मोहर कहाँ जायगी?

और आज तो जीवन इतना कंगाल हो चला है कि इन दमड़ियों को ही सम्भालने की जरूरत है। बुनियादें हिल गयी हैं, हिल रही हैं, इसलिए बुनियाद के उन पत्थरों को जरा ठीक करने की आवश्यकता है, वरना यह सारी आलीशान इमारत—सदियों की मेहनत से बनायी हुआ यह भव्य भवन—ढह जाने को है। इसीलिए शायद 'छोटी-छोटी बातों' का अपना स्थान है, उनकी माग है।

पर आप सबकी मदद से ही यह प्रवाह जारी रह सकता है। इसलिए मदद की याचना है। जीवन में आये दिन हममें से सबको कुछ-न-कुछ ऐसे अनुभव होते रहते हैं जो एक क्षण के लिए दिमाग में चमक उठते हैं, पर फिर ओझल हो जाते हैं। हम समझते हैं, बात आयी और गयी, ऐसी छोटी बातों का क्या और किससे जिक्र करें? लेकिन "छोटी छोटी बातें" तो आपको प्रिय हैं न? तो फिर कंजूसी न करें। इस प्रवाह को जारी रखने में आपकी इन बूंदों का बड़ा उपयोग होगा। इसलिए जो भी छोटी-बड़ी अनुभूति हो, प्रतिक्रिया हो, लिखने की इच्छा हो—बिना संकोच लिख भेजें।

—सिद्धराज ढड्ढा

शान्ति की शक्ति कैसे प्रकट हो ?

नारायण देसाई

कानपुर में हम आज उत्तर प्रदेश के पहले 'शान्ति-केन्द्र' का आरम्भ कर रहे हैं। विनय भाई ने बिलकुल सही बताया कि १३० गणेश शंकर विद्यार्थी की स्मृति से जो शहर भरा है, वह शहर इस कार्य में अग्रणी होता है तो वह सहज है, आश्चर्य नहीं।

हमारे आन्दोलन की जो आकांक्षाएँ हैं, उनको कार्यक्रम में व्यक्त होना चाहिए। १९५१-'५२ से १९५७ तक भूदान आन्दोलन में पड़े लोगों में अदम्य उत्साह था, विचार अलग अलग, काम अलग अलग, लेकिन सबकी शक्ति एकसाथ जुट गयी थी। १९५७ के बाद ऐसा लगा कि वह शक्ति बिखर गयी। एक कार्यक्रम ऐसा होता है, जिसमें भिन्न-भिन्न शक्ति एकत्रित होकर काम करती है। शान्ति-सेना का कार्यक्रम सर्वोदय-आन्दोलन में नये प्राण डालने वाला कार्यक्रम लगता है।

राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति

शान्ति के दो पहलू हैं : एक तात्कालिक और दूसरा दीर्घकालिक। अशान्ति को मिटाने का तात्कालिक पहलू और अशान्ति के मूल तत्त्वों को मिटाना दीर्घकालिक पहलू है। सर्वोदय का समग्र आन्दोलन ही अशान्ति के दीर्घकालिक पहलू का है। उसमें सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक, दीर्घकालिक कार्यक्रम हैं। शान्ति-सेना को अशान्ति की समाप्ति के तात्कालिक पहलू के दो स्वरूपों को देखना है : (१) तात्कालिक अशान्ति—राष्ट्र के लिए दूर करनी है, और (२) तात्कालिक अशान्ति—जगत् के लिए, अर्थात् तीसरे महायुद्ध की विभीषिका को दूर करनी है। भारतीय शान्ति-सेना राष्ट्रीय अशान्ति को समाप्त करना चाहती है। लेकिन वह दीर्घकालिक रूप में अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति को भी दूर करेगी।

हिंसा का भी तत्त्वज्ञान !

हम बहुत अशान्त हैं। राष्ट्रीय एकता (नेशनल इंटीग्रेशन) की चर्चा बहुत सुनते हैं। राष्ट्रीय एकता पर बाधा डालने वाले तत्त्व बहुत हैं। शान्ति-सेना को उनके प्रति जागरूक रहना होगा। कहीं जातिवाद और सम्प्रदायवाद को पोषण तो नहीं मिलता ! भारत का सम्प्रदायवाद जातिवाद से पैदा हुआ है। गांधी के बलिदान के साथ हम समझते थे कि वह चला गया। लोगों को इससे सावधान होना चाहिए। सम्प्रदायवाद का किला उत्तर प्रदेश है। यह उत्तर प्रदेश का ही नुकसान नहीं करेगा, वह पूरे राष्ट्र का नुकसान करेगा। नन्हें नन्हें बच्चों से १२ १३ साल तक के बच्चों को यह विष यहाँ घोल कर पिलाया जाता है।

अलीगढ़ का उदाहरण लें। एम० काम० के एक विद्यार्थी ने ९-१० साल की लड़की पर जुर्म किया। शान्ति-सेना की संयोजिका आशादेवी आर्यनायकम् ने वहाँ जाकर स्थिति का जब निरीक्षण किया और उस विद्यार्थी से प्रश्न किया—'तुमने यह कार्य किया, क्या उसका तुम्हें पश्चात्ताप हुआ ?'

विद्यार्थी—'हरगिज नहीं !'

'क्या अब भी नहीं ?'

विद्यार्थी—'नहीं !'

भारतीय नागरिक तैयार करें !

जरा सोचिये, क्या वह बुरा लड़का था ? क्या वह सुधर नहीं सकता ? मनुष्य अपने हिंसक कृत्यों का गौरव तभी समझता है, जब उसका कोई तत्त्वज्ञान भी हो। गांधी के खून का तत्त्वज्ञान हो सकता है ! अशान्ति का भी तत्त्वज्ञान हो सकता है। मैं कांचीपुरम् सर्वोदय सम्मेलन में गया था। स्वयंसेवक खादी पहने, अपने विचारों में पगे हुए, राष्ट्रभाषा सीखे हुए, काम के बारे में बात करते थे। प्रश्न हिन्दी में सुन लेते थे, उत्तर तमिल में देते थे। हँसी आती है, यह कहते हुए कि कोई राष्ट्रभाषा सीखता क्यों नहीं ? क्या हम उत्तर प्रदेशवासियों ने दूसरी भाषा सीखी ? इसलिए दूसरे प्रदेश वाले हिन्दी को जानते हुए उसे दूसरी प्रान्तीय भाषा का अपने ऊपर आक्रमण समझते हैं। आज हमें मराठी गुजराती, ब्राह्मण-ब्राह्मणेतर, हिन्दू-मुसलमान मिलते हैं, भारतीय नागरिक कोई नहीं मिलता। भारतीय नागरिक पैदा करना दुर्लभ है। शान्ति सेना का कार्य, एकता का कार्य—भारतीय नागरिक पैदा करना—है और उसका अनुबंध जोड़ना है, विश्वशान्ति-सेना के साथ।

आणविक युद्ध पचासों प्रकार के हो सकते हैं। कई बार ऐसा हुआ कि जहाज जरा-सी गलतफहमी से बम तथा युद्ध-सामग्री लेकर आक्रमण के लिए तैयार हो गये, यहाँ तक कि उड़े भी, लेकिन कुछ कारणों से ही रुके। मानव-मस्तिष्क की खोज करते हुए किसी अमेरिकी वैज्ञानिक ने बताया कि ९० प्रतिशत लोगों में दिमाग की कमी होती है। उद्योगों में दुर्घटनाएँ ८० प्रतिशत घबराहट से, दिमागी कमी से होती हैं। द्वितीय विश्व युद्ध में सम्मिलित सिपाहियों में ४१ प्रतिशत ऐसे ही कम दिमाग के थे। तो यह युद्ध एक भी आदमी की गलती से सम्भव है और यह कोई जरूरी नहीं कि न हो।

आन्तरिक शान्ति : रक्षा का दायित्व

इस सन्दर्भ में हमें सोचना है। तीव्र तात्कालिकता इस समय शान्ति-सेना की है। राष्ट्र की शान्ति रक्षा की जिम्मेदारी आज ही ले लेंगे, ऐसा नहीं। एक शान्ति सैनिक पाँच हजार लोगों में परिचय बढ़ाये, निष्ठा जाग्रत करे, जिसकी दृष्टि मात्र से अशान्ति बंद हो, ऐसा नैतिक प्रभाव होना चाहिए। आदर्श ऐसा हो, जो 'पहुँच' में तो हो, लेकिन, 'पकड़' में न हो। अगर आदर्श पकड़ में हो तो उसमें पुरुषार्थ नहीं रहेगा और पहुँच में न हो तो वह व्यावहारिक नहीं रहेगा। इसलिए समग्र हिन्दुस्तान से परिचय प्राप्त करना है, तो वह मुश्किल पड़ता है। विनोबा ने कहा, पहले १० लाख से परिचय प्राप्त करो और देश में जहाँ-जहाँ अशान्ति हो, वहाँ प्रवृत्ति कायम करो। यह दस लाख नमूने के लिए। कानपुर को सर्वोदय नगरी बनाने के लिए पूरे समय के ७० कार्यकर्ता चाहिए, ऐसा विनोबा का सन्देश है।

शान्ति-सेना की संगठना

शान्ति सेना मंडल का विचार है कि शान्ति की जिम्मेदारी प्रत्येक नागरिक की होनी चाहिए। शान्ति प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। सत्ता, धन हरएक की शक्ति नहीं हो सकती, लेकिन अहिंसा प्रत्येक की शक्ति बन सकती है।

शान्ति-सैनिक को :—

(१) श्रम निष्ठ,

(२) स्वाध्याय-निष्ठ और

(३) सेवानिष्ठ बनना होगा।

'शान्ति केन्द्र' वहीं होगा, जहाँ एक से अधिक शान्ति-सैनिक हैं। परस्पर मिलते हैं तो 'सेना' बनती है। मिल कर कार्यक्रम बनाते हैं और अमल में लाते हैं। २१ शान्ति-सैनिकों से ज्यादा एक 'शान्ति-केन्द्र' में न होंगे। शान्ति केन्द्र में शान्ति-सैनिक :—

(१) परस्पर सात दिन में मिलेंगे एवं आगे का कार्यक्रम बनायेंगे।

(२) पड़ोस की अशान्ति की चर्चा करेंगे।

(३) महीने में कार्य विवरण देंगे।

(४) साथ ही सेवा प्रवृत्ति खोज कर उसमें लगेंगे और जो शान्ति-सैनिक न हों, उन्हें भी परस्पर लाकर चर्चा में शामिल करेंगे।

शान्ति-शक्ति के आविष्कार का प्रयोग

यह तो व्यावहारिक बात हुई। अन्दरूनी बातों में मुझे लगता है कि द्वेष को, क्रोध को जीतने वाली अहिंसक शक्ति की खोज पुरुषार्थ है। ऐसी अहिंसा जो हिंसा को जीते, द्वेष को जीतने की विधायक शक्ति के रूप में अहिंसा को प्रकट करने का हम अपने जीवन में आविष्कार करें, तभी हमारी अहिंसा विधायक परिणाम देगी।

विनोबा को नेहरू ने कहा, आसाम-जाओ। विनोबा वहाँ क्या करेगा ? किस पक्ष में बोलेगा ? क्या कहेगा ? क्या न्याय देगा ? लेकिन आज सोलह महीने हुए विनोबा ने एक भी वाक्य आसाम-बंगाल के बारे में नहीं कहा। वहाँ कुछ विधायक शक्ति प्रकट हुई। उन्हें यह नहीं लगा कि ये दूसरे प्रान्त वाले यहाँ क्यों ग्रामदान मांगने आ रहे हैं ? वहाँ प्रेम और अहिंसा का सन्देश लेकर हर प्रान्तवासी पहुँचा और ग्रामदान मिला।

अभावात्मक (निगेटिव) वातावरण भावात्मक (पॉजिटिव) हो गया। द्वेष को समाप्त करने की अहिंसक शक्ति सामूहिक तथा व्यक्तिगत पुरुषार्थ से हो, जैसे वैज्ञानिक एटम तक पहुँचा, वैसे ही यहाँ 'शान्ति शक्ति' के आविष्कार का प्रयोग होना चाहिए। ये जब प्रयोग होंगे तब शान्ति की भी शक्ति प्रकट होगी।

(गांधी-विचार-केन्द्र, कानपुर में २० अगस्त '६२ को उत्तर प्रदेश के प्रथम 'शान्ति-केन्द्र' के शुभारम्भ के अवसर पर दिये गये उद्घाटन भाषण से।)

विलासिता तथा वैषयिकता को ही रसिकता माना है।

स्त्री और पुरुष का शरीर उतना ही सुडौल और सुंदर हो, जितना कि भगवान् श्रीकृष्ण का या भगवती लक्ष्मी का। परन्तु वह सौंदर्य जीवन की विभूति होगी, उपभोग का विषय नहीं। सुन्दरता निषिद्ध नहीं है, सुन्दरता संस्कृति का अविभाज्य अंग है। स्त्री का शरीर अगर सुंदर है तो पवित्र भी है। उसका स्पर्श भी उतना ही पवित्र है जितना कि भगवती शारदा माता का, माँ आनन्दमयी का या पाँडिचेरी की 'मदर' का। संत पुरुषों का और साध्वी स्त्रियों का स्पर्श अगर पवित्र है तो पुरुष मात्र का और स्त्री मात्र का स्पर्श पवित्र है।

संसार प्रेममूलक है

विकार और कामवासना के बिना सौंदर्य की अनुभूति और सुन्दरता का प्रत्यय कुछ मनोवैज्ञानिक असम्भव मानते हैं। उनके मनोविज्ञान का नाम 'साइको-एनालेसिस' है। इस सिद्धांत ने महान् अनर्थ किया है। सारे लोक-व्यवहार को, साहित्य और काव्य को, धर्म और सदाचार को काममूलक माना है। 'किमन्यत् कामहैतुकम् ।' इनमें से कुछ महानुभावों ने महात्मा गांधी तक का 'साइकोएनालेसिस' कर डाला है। श्रीकृष्ण भगवान्, हजरत ईसा और श्री रामकृष्ण परमहंस का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अभी बाकी है। एक कहता है, संसार अर्थमूलक है। दूसरा कहता है, काममूलक है। आप कहिये, प्रेममूलक है।

(समाप्त)

विश्वशांति-पदयात्रियों की डायरी

अफगानिस्तान में पचपन दिन

सतीशकुमार : ई० पी० मेनन

[दिल्ली से मास्को तथा वाशिंगटन की विश्वशांति-पदयात्रा पर निकले दो नवयुवक श्री सतीशकुमार और श्री ई० पी० मेनन १ जून '६२ को राजघाट, नयी दिल्ली स्थित गांधी-समाधि से विदा हुए थे। ३ जुलाई को उन्होंने पश्चिम पाकिस्तान में प्रवेश किया और भारत एवं पाकिस्तान में उन्होंने ६४७ मील की पदयात्रा करके, २८ जुलाई को अफगानिस्तान में प्रवेश किया और ५५ दिनों में वहां ७७८ मील की यात्रा करके २१ सितम्बर को वे ईरान में प्रविष्ट हुए। १ अक्टूबर को ईरान के मशहद शहर पर पहुंचे। दिल्ली से यहां तक इनकी कुल १४८९ मील की पदयात्रा हुई। अब यहां से तेहरान पहुंचने में करीब एक माह लगेगा। फिर वहां से रूस का 'विसा' मिलने पर मास्को की ओर रवाना होंगे। उनका पता है—मार्फत, ईरान-एम्बेसी आफ इंडिया, तेहरान (ईरान)। अफगानिस्तान में इन दोनों नवयुवक साहसी विश्वयात्रियों ने जो मनोहारी ५५ दिन बिताये, उस संबंध में उनका एक लेख नीचे यहां दिया जा रहा है। —सं०]

भारत और पाकिस्तान में ५८ दिन की शांति-पदयात्रा के अनुभव के बाद जब हम अफगानिस्तान में प्रवेश करने के दिन खैबरपास की घाटियों से गुजर रहे थे, तो मन में कई तरह के विचार आ रहे थे। भारत-पाकिस्तान की परिस्थिति से अफगानिस्तान की परिस्थिति सर्वथा भिन्न है, यह खैबरपास के वातावरण से हमें ज्ञात हो रहा था। खैबर-पास, भारत पर विदेशी आक्रमण का द्वार माना जाता रहा है। यहाँ से ही भाषा, भूषा, भोजन इत्यादि की भिन्नता प्रारंभ हो गयी। मन में लग रहा था कि वास्तविक यात्रा का प्रारंभ अफगानिस्तान से ही होगा।

खैबरपास की चोटियों में से एक ही दिन में २१ मील का प्रवास पूरा करके जब हमने अफगान-सीमा को अभिवादन किया तो सूरज डूब चुका था, हलका-सा अँधेरा छा रहा था और काबुल रेडियो फारसी गीतों की मधुर धुन बजा रहा था। पीठ पर सामान, गति में शिथिलता और चेहरे पर थकान लिये जब हम अफगान-अधिकारी के पास पहुँचे तो उसने कहा—"इस समय! अभी तो आगे जाने के लिए कोई सवारी अथवा वाहन भी उपलब्ध नहीं होगा!" अधिकारी हिन्दी में बात कर रहा था। हमने बताया कि "हम वाहन का उपयोग नहीं करते। ५८ दिनों में ६४७ मील की पैदल यात्रा करके हम दिल्ली से आ रहे हैं। आगे भी पैदल ही जाना है।" अधिकारी को आश्चर्य हुआ! उसने कहा—"अब तक आप पैदल आये, यह ठीक है। पर यहाँ से आगे का रास्ता बहुत खराब है, रेगिस्तान है। पानी का अभाव है, अतः आप बस से ही जाइये।" हमने कहा कि "हमें तो ये सारी कठिनाइयाँ आयेंगी ही। अमेरिका तक न जाने कितने बीहड़ मार्ग तय करने हैं!" काफी देर की बातचीत के बाद अधिकारी को जब हमारे शांति तथा निरस्त्रीकरण के 'मिशन' की और अर्थ-मुक्त पदयात्रा की पूरी कहानी मालूम हुई तो अत्यंत सहानुभूति के साथ उसने हमारे उद्देश्यों का समर्थन किया और हमें अपना अतिथि बनाया।

२९ जुलाई को प्रातःकाल अफगानिस्तान की धरती पर हमने पहली बार सूरज देखा और शुष्क मरुभूमि के रास्ते से आगे बढ़े। चार दिन की पदयात्रा के बाद ४९ मील चल कर हम अफगानिस्तान के एक प्रमुख शहर, जलालाबाद आये। शुष्क भूमि में रहने वाले इस क्षेत्र के निवासियों का हृदय पर्याप्त रूप से आर्द्र था। हम मांसाहार से परहेज करते हैं, यह जान कर ये लोग बड़े परेशान होते थे। अपने घर पर आये दूर देश के अतिथि को केवल रोटी और बिना दूध की चाय देकर वे संतुष्ट नहीं होते थे। पर और कुछ उनके पास उपलब्ध न होने से मजबूरी भी थी।

जलालाबाद में स्वतंत्र पख्तूनिस्तान-आंदोलन के नेता श्री स्याल साहब के घर पर हम अतिथि बने। उन्होंने गांधीजी के बारे में, विनोबाजी के बारे में और सर्वोदय-आन्दोलन के बारे में काफी सुन रखा था। उनके मन में इस सारे काम के प्रति एवं इस आन्दोलन के प्रति बहुत आदर और अभिरुचि है। उन्होंने कहा कि "हम अपनी आजादी के लिए संघर्ष कर रहे हैं। हमारे नेता खान अब्दुल गफ्फार खाँ हमें शांतिपूर्ण तरीकों से अपनी गतिविधि चलाने की बात कहते हैं। विनोबाजी का भी वही उद्देश्य है। हम हृदय से यह चाहते हैं कि विनोबाजी अफगानिस्तान में भी आयें। अपना संदेश यहाँ की जनता को दें। वे केवल *भारत की सीमा में ही सीमित न रहें।*" श्री स्याल साहब ने हमारे मिशन के बारे में पूरी सहानुभूति बताई और जलालाबाद में हमारे समर्थन में अच्छा वातावरण बन गया। यहाँ के दैनिक अखबार ने भी हमारी पदयात्रा का स्वागत किया।

अफगानिस्तान में हमारे लिए सबसे पहली परेशानी भाषा की थी। भाषा का क्या महत्त्व है और उसके अभाव में आदमी कितना असहाय हो जाता है, यह हमें कदम-कदम पर अनुभव हो रहा था। हमने संकेतों और इशारों का सहारा लिया। एक बार यह समझाने के लिए कि हम मांस में मुर्गा और मछली भी नहीं खाते, हमें चित्र बना कर समझाना पड़ा। पर भाषा के माध्यम से भी बड़ी माध्यम आँखों का स्नेह *तथा सौजन्य* है और यह माध्यम सहायक बन कर हमारे काम आया। हमने धीरे-धीरे फारसी का अध्ययन प्रारंभ किया और अब जब हम पचपन दिन की अपनी यात्रा पूरी कर रहे हैं, टूटी-फूटी फारसी में बोल कर अपना काम चला सकते हैं।

दो अगस्त को हम जलालाबाद से चल कर ६ दिन में अफगानिस्तान की राजधानी काबुल आ गये। ९२ मील का यह रास्ता नदी के किनारे ऊँची पहाड़ियों की तराई में से करीब ६ हजार फीट की ऊँचाई पर बसे हुए मध्य एशिया के एक सुन्दर नगर काबुल पहुँचता है। काबुल की सुन्दरता का अनुमान न केवल इस सुन्दर मार्ग को देख कर, बल्कि अनेक मनोहारी जलस्रोतों को अपने में समेटते हुए कलकल करती अविरल बहने वाली इस जलधारा को देख कर भी लगाया जा सकता है।

उस पुराने युग में जब भारत की राजधानी तक्षशिला थी और काबुल-कंधार तक भारत की सीमाएं फैली थीं तथा आज के युग में बहुत अंतर है। लेकिन आज भी भारत-अफगान की मित्रता का सूत्र इतना दृढ़ है कि वह इतिहास, जिसमें काबुल नदी की गरिमा का गान करते हुए ऋग्वेद के सूक्त लिखे गये हैं और काबुल के निकट बामियान की बौद्ध मूर्तियाँ जिसकी साक्षी हैं; दोनों देशों को सांस्कृतिक एकता में बाँध देता है। हमारे जैसे बिना पैसे के फकीर यात्री जब चलते हैं, तो कोई पता नहीं रहता कि कहाँ ठहरेंगे, कहाँ भोजन करेंगे! भोजन मिलेगा भी या नहीं! पर जहाँ भी जाते हैं, वहाँ लोग यह कहकर अपनी आँखों पर बिठा लेते हैं कि "ओह, आप हिन्द से आये हैं। आप बुद्ध और गांधी के देश से आये हैं। आप शांति के प्रचारक हैं। आप मानव-जाति के सेवक हैं। आप हमारे अतिथि हैं।"

काबुल अंगूरों का शहर है। सेब और नाशपाती के ढेर तो गली-गली में लगे हैं। कंधार के अनार और हैरात के पिस्ता, बादाम व किशमिश से यहाँ के बाजार भरे रहते हैं। हमने काबुल में १० दिन बिताये। रोटी और चावल का क्या खाना! हमारा पेट तो फलों से ही भरा रहता था। यहाँ के लोगों का स्वभाव एवं हृदय भी अंगूर की तरह ही कोमल और मधुर है। आप किसीसे भी मिलिये, दो-तीन बार तो वह आपका अभिवादन करेगा, आपका कुशल-मंगल पूछेगा। फिर कहीं आपसे दूसरी बात करेगा।

काबुल विश्वविद्यालय के रेक्टर के साथ हुई बातचीत को भूल पाना हमारे लिए असंभव है। वैसे वे हमारी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। उन्होंने कहा भी कि "जब आप दिल्ली से चले तब अखबारों में हमने आपके फोटो देखे और यह पढ़ा कि आणविक शस्त्रास्त्रों की प्रतियोगिता के विरोध में आप पैदल यात्रा करते हुए अफगानिस्तान आ रहे हैं, उसी समय से आप जैसे साहसी शांतिवादी युवकों से मिलने के लिए एवं आपके स्वर में अपना स्वर मिलाने के लिए हम और हमारे विश्वविद्यालय के विद्यार्थी उत्सुक हैं।" उन्होंने अपना हार्दिक आशीर्वाद देते हुए कहा कि "मानव-जाति के विनाश के लिए चल रहे इस संघर्ष का तीव्रता के साथ विरोध करना हमारी सबकी जिम्मेदारी है। काश, मैं भी आप जैसा युवक होता और आपके साथ इस पैदल-यात्रा में निकल पड़ता!" उनकी भावपूर्ण अभिव्यंजना तथा सामरिक तैयारियों के प्रति तीव्र वेदना को देख कर हम नतमस्तक हो गये।

इसी तरह की एक और स्मरणीय मुलाकात अफगान-अणुशक्ति आयोग के अध्यक्ष के साथ हुई। वे यह जान कर चकित थे कि दो युवक दिल्ली से काबुल तक पैदल चल कर आये हैं और वह भी बिना पैसे! उन्होंने कहा कि "संपूर्ण मानव-जाति के विनाश का जो उपक्रम शांति और सुरक्षा के नाम पर हो रहा है, उसके विरोध में आप जैसे हजारों युवकों को कमर बाँध कर खड़े हो जाने की आवश्यकता है।" विनोबाजी, शांति-सेना और सर्वोदय-आन्दोलन के बारे में उन्हें पहली बार जानकारी मिली और तब उन्होंने कहा कि "जब विनोबा जैसे तथा बर्ट्रेण्ड रसेल जैसे नेता इस संसार को सही मार्गदर्शन देने के लिए मौजूद हैं तो मुझे पूरी आशा है कि चंद राजनीति के दाँव लगाने वाले मिल कर इस विश्व को नष्ट नहीं कर सकेंगे।"

काबुल के युवकों, विद्यार्थियों और पत्रकारों ने हमारा शत-प्रतिशत समर्थन किया। सबकी सहानुभूति और शुभकामना का अमूल्य धन पाकर हम दुगुने उत्साह से भर गये। भारतीय राजदूत श्री जगन्नाथ धामीजा ने हमारे काम में और उद्देश्यों में दिलचस्पी लेकर अनुकूल भूमिका तैयार की। वैसे पूरे अफगानिस्तान में और विशेष रूप से काबुल में भारतीय लोग बड़ी संख्या में हैं। अनेक भारतीयों से भी संपर्क हुआ और सभी क्षेत्रों से हर समय सहायता प्राप्त हुई। भारतीय मित्रों का सभी जगह यह आग्रह रहा कि "आगे पहाड़ी मार्ग है, पूरा अपरिचित क्षेत्र है। यहाँ से आप कुछ अफगान रुपये अवश्य साथ रख लीजिये।" एक मित्र ने तो कुछ सौ-सौ के नोट हमारे सामने रख ही दिये। पर हमने अत्यंत नम्रता के साथ सभी से यह निवेदन किया कि पहली जून को बापू की समाधि पर हमने यह निर्णय किया है कि हम सामरिक तैयारी के विरोध में कांचन-मुक्त पदयात्रा द्वारा शांति के विचारों का प्रचार करेंगे। अतः आप सब लोग हमें अपने इस निर्णय पर दृढ़ रहने में मदद करें। जो भी कष्ट आयेंगे, उन्हें सहन करने की हमारी तैयारी है। कष्ट-सहन ही हमारा शांतिपूर्ण सत्याग्रह है।"

(क्रमशः)

विनोबा की पाकिस्तान-पदयात्रा की डायरी : १

"वही हवा, वही जमीन...."

• कालिन्दी

[पिछले दिनों विनोबा एकता व प्रेम का संदेश लेकर पूर्वी पाकिस्तान गये और उनकी वहां ५ सितम्बर से २१ सितम्बर तक वहां पदयात्रा हुई। प्रत्यक्ष दर्शियों और अखबारों ने कहा और लिखा कि विनोबा की यात्रा सफल हुई। लेकिन 'भूदान-यज्ञ' के पाठकों को इससे अधिक की अपेक्षा होना स्वाभाविक है, क्योंकि हम 'भूदान-यज्ञ' में हमेशा 'विनोबा पदयात्री-दल' के स्तम्भ के अंतर्गत विनोबा की पदयात्रा की डायरी देते रहे हैं। इसलिए पाकिस्तान की यात्रा की डायरी का अभाव और भी महसूस होने जैसा था। पाकिस्तान से विनोबाजी और उनके सहयात्रियों के कुशल क्षेम के मामूली पत्र व तार आदि भी काफी देर से मिले। कुछ समाचार हमने हिंदुस्तान और पाकिस्तान के अखबारों से देने की कोशिश की है और खुशी की बात है कि पाकिस्तान में विनोबा के साथ पदयात्रा करने वाली बहन श्री कालिन्दी सरवटे ने विनोबा की पाकिस्तान-यात्रा की डायरी अब विनोबा की अनुमति से भेजना प्रारम्भ किया है। यह डायरी क्रमशः आगामी कुछ अंकों में प्रकाशित होती रहेगी। —सं०]

"हमें अभी एक भाई ने पूछा कि यहाँ कैसे लगता है? हमें यहां आकर अभी पांच मिनट भी नहीं हुए। हमने उनको कहा, हम कुछ भी फरक महसूस नहीं करते। वही हवा है, वही जमीन है, वही आदमी है और वही हृदय है। कुछ भी फरक नहीं! हम मानते हैं कि सब दुनिया हमारी है और हम दुनिया के सेवक हैं। हम जहाँ जाते हैं वहां 'जय जगत्' कहते हैं। दुनिया एक है।"

पाकिस्तान में बाबा का पहला व्याख्यान कितना यथार्थ! कितना सही! सीमा से एक फर्लांग दूर हम हैं, लेकिन क्या फरक है? वैसा ही छोटा-सा स्कूल, वैसा ही स्कूल का खुला मैदान! वैसे ही आदमी और वही बाबा! और फरक होगा भी कैसे? भारतवासियों का जिस्म माँ के दूध से पला और इन लोगों का भी माँ के दूध से ही पला। भारतवासियों का दिलोदिमाग रामकृष्ण और अल्लामियाँ के नाम लेते लेते बना हुआ, इन लोगों का दिलोदिमाग भी रामकृष्ण और अल्लामियाँ को याद करते करते बड़ा हुआ। कैसे फरक पायेंगे मानव मानव में? न मानव में फरक, न सृष्टि में फरक! असम में जैसी असंख्य नदियाँ पार की थीं, वैसी ही एक छोटी नदी आज यहाँ पार की और वैसे ही फिसलते, चिकने रास्ते पर से हम पड़ाव तक पहुँचे। वैसे ही ऊपर से बूँद बूँद बारिश बरस रही थी। सीमोल्लंघन पर हुआ स्वागत, भगवत् कृपा के ठंडे तुषार! वैसे ही चारुदा और दूसरे साथी हमारा स्वागत कर रहे थे! वैसा ही निवास-स्थान, वैसा ही मधुर नाश्ता—दही, चिउड़ा और केला। यह बंगाल का उपसागर और यह हिंदी महासमुद्र, समुद्र के किये हुए दो भाग भी काल्पनिक और अलग-अलग देशों की सीमा तय करके मानव के किये हुए भाग भी काल्पनिक!

फरक था सिर्फ आसपास घूमनेवाले सुरक्षा-दल के लोगों का! हमको कहा गया कि हम 'स्टेट गेस्ट'—राज्य अतिथि—हैं। लेकिन वैसा महसूस नहीं हो रहा था। जनता वैसे ही प्रेम से स्वागत की तैयारियों में लगी थी। पड़ाव पर 'प्रणाम' और 'सलाम' करने वालों की भीड़ देख कर तो मुझे लगा कि वही भक्ति, वही श्रद्धा है।

शाम की सभा में भी यही अनुभव आया। करीब तीन-चार हजार का समाज था। बिना किसी प्रचार के इतने लोग इकट्ठे हुए, वह भी पहले ही दिन! किसने बताया लोगों को कि बाबा आ रहे हैं? हवा ने! कस्तूरी की खुशबू दूर से आती है। कहना नहीं पड़ता कि कस्तूरी-मृग आ रहा है। उसी तरह बाबा के आने की खबर वायु ने लोगों के कर्णद्वारों पर पहुँचायी होगी—'भारत से एक फकीर आया है। वह विश्वमानव है, उसका स्वागत करो।'

मौन में ही मैंने उनसे पूछा, "किसने दी तुम्हें बाबा आने की खबर?" मौन में ही उन्होंने मुझे जवाब दिया—

"वर्षा ऋतु की हवा आयी",
हमारे कानों में कहने लगी,
आया है फकीर दुनिया का
लेकर पैगाम मुहब्बत का,
सुनाता है तुम्हें तुम्हारा कर्म
आकर करो उसे अदा धर्म।"

सभा में 'माइक' था नहीं, फिर भी सभा शांत, तटस्थ थी। १४ साल पहले नोआखाली में एक 'बा-' (बापू) आया था, जिसकी याद अभी तक दिलों में थी। उसके बाद यही 'बा-' (बाबा) पैदल-पैदल प्रथम यहाँ आ रहा था। जनता के अतृप्त कान श्रवण के लिए आतुर थे। कहीं तो भी माँ की आवाज सुनाई देती है और दिन भर माँ से बिछुड़ा हुआ बच्चा सारी शक्ति कानों में लाकर उसके पदरव सुनता रहता है। ठीक वही स्थिति जनता के कानों की थी। बाबा ने कहा :

'विज्ञान के जमाने में हम पैदल यात्रा कर रहे हैं, ताकि हम सब लोगों को मिल सकें। हम भीड़ को चाहते हैं। हम आपके दर्शन को भगवान् का दर्शन मानते हैं। हम दुखियों का दुःख लोगों के सामने रखते हैं और कहते हैं कि इनका दुःख दूर करो। भूखों को खिलाने में आनंद है, लेकिन एक बार, दो बार खिलाने से समाधान नहीं होगा। उनको उत्पादन के साधन चाहिए। वे उनको दो। कुरान में कहा है, 'मिम्मा रजक्नाहुम् युन्फिकून', याने अपनी रोजी में से थोड़ा दूसरे को दो। वेद में भी कहा है—दान करो, दान समविभाग। अपने सुख का थोड़ा हिस्सा दुखियों को दें तो प्रेम बढ़ेगा।"

अब मौन प्रार्थना का आदेश मिला।

"—भगवान् ही एक ऐसा है, जिसके नाम से हम अलग हो जाते हैं। आज हम सब मिल कर भगवान् का नाम लेंगे। किस भाषा में? दिल की भाषा में। मौन में हम भगवान् से कहेंगे—सत्य दे, प्रेम दे, करुणा दे।"

और कितने आश्चर्य की बात कि वहाँ पूर्ण शांति हो गयी!

माना गया है कि शाम को, गोधूलि के समय लक्ष्मी घर आती है। आज शाम को ऐसे ही संध्या समय वह दाता बाबा के पास आया। शाम को गाँव के लोग बाबा के पास इकट्ठे हुए थे। 'कुरान' सुनने के बाद बाबा ने उनको अपनी बात सुनायी, "आप लोगों ने मुझे खिलाया-पिलाया; वैसे ही गाँव के गरीब लोगों को खिलाइये। जो भूमिहीन हैं, उनको अपनी जमीन का थोड़ा हिस्सा दान दीजिये। भारत में हमको चालीस लाख एकड़ जमीन का दान मिला।"

१८ अप्रैल १९५१ को तेलंगाना में बाबा ने इसी तरह भूमि की माँग की थी और उस दिन भारत में उनको पहला भूदान मिला था। आज भारत की सीमा की बाहर, पाकिस्तान में भूमि की माँग हुई और किसी की अंतरात्मा जाग उठी। चार एकड़ जमीन का एक मालिक, एक मुसलमान भाई एक एकड़ जमीन का दानपत्र लेकर बाबा के पास आया। दानपत्र के साथ-साथ आदाता का नाम भी था और रजिस्ट्रेशन खर्च देने का वचन भी था। बाबा ने उसके दोनों कंधों पर हाथ रखते हुए कहा, "मैं अल्ला से प्रार्थना करूँगा कि वह तुम्हें खैर दे!" उसकी आँखों में आँसू आये। पवित्र दान पर पवित्र उदक का समर्पण हुआ। तेलंगाना से लेकर पूर्व बंगाल तक एक ही संस्कृति का स्रोत बह रहा है, एक ही भावना की हवा बह रही है। रात को बाबा ने कहा, "आज 'इफ्तिताह' हो गया, याने उद्घाटन हुआ। आगे का मार्ग खुल गया।"

[पड़ाव : भूंगामरी, ५ सितम्बर, '६२]

* * *

चारुदा (श्री चारुचंद्र चौधरी) का कहना था कि सुबह साढ़े तीन के बजाय चार बजे निकलें। मैं सोच रही थी कि चारुदा की अर्जी मंजूर हो जायेगी। लेकिन बाबा ने अर्जी तुरत नामंजूर—कर दी। साढ़े सात मील चलना था।

छह-छह, सात-सात मील दूरी से लोग आते हैं और दिन भर पड़ाव पर ही बैठे रहते हैं। आज एक बाप अपने चार साल के लड़के को लेकर आया था। कह रहा था—मुझे बाबा को देखना है। लड़का तीन मील चल कर आया। उसने बाबा को देखा। उसके बाप ने भी बाबा को देखा और छह बीघा जमीन का एक दान-पत्र देकर वह निकल गया। वह 'विलेज युनियन कौंसिल' का अध्यक्ष था।

स्नान के बाद बाबा मैदान में पेड़ों की छाया में ही बैठे रहे। लोगों ने घेर लिया था। हम अपनी टोली में छह लोग हैं। बाकी दस लोग हैं यहाँ के कार्यकर्ता। लेकिन हमारी कुल पार्टी बहुत बड़ी है। हम लोगों से भी ज्यादा संख्या है सुरक्षा-दल के लोगों की और एक छोटा-सा ग्रुप है अखबारों के संवाददाताओं का। सारे नौजवान हैं। वे आज बाबा से मिले।

"आपकी यात्रा का उद्देश्य क्या?" —एक ने पूछा।

"प्रेम की बातें करना।"—जवाब मिला।

"किसके साथ प्रेम करना?"—दूसरा सवाल।

"सबके साथ। हम तो इन पेड़ों के साथ भी प्रेम करते हैं।"—हँसी के साथ जवाब मिला।

मेरी सारी उत्सुकता थी, शाम की सभा के बारे में। कल भूदान की बातें हुईं और एक दान भी मिला। अब आज जिंदगी का कौनसा बुनियादी उसूल सुनने को मिलता है? आखिर शाम के चार बजे, और हम सभा-स्थान की ओर निकल पड़े। देखा तो आज भी 'माइक' की व्यवस्था नहीं थी। चार-पाँच हजार लोगों का जमाव। जिन शब्दों के सुनने के लिए लोग मीलों दूरी से आते हुए थे, दिन भर धूप में पड़े रहे थे, वे शब्द उनके कानों तक कैसे पहुँचेंगे? स्वाभाविक शोरगुल शुरू हुआ। मैं घबरा गयी कि अब क्या होगा? लेकिन खिलाड़ी सूर निकल रहे हैं, ऐसी सभा जीत लेने में भी बाबा माहिर हैं। खुदा की मर्जी थी कि बाबा के लफ्ज लोगों के कानों तक पहुँचे। बाबा सभा के मध्य जा खड़े हुए। अपार समुदाय के बीच खड़ी थी वह एक, कृश मूर्ति—हरी टोपी और सफेद धोती। एक

हाथ ऊपर उठा हुआ था और मुख से गंगा की धारा के समान निकल रहे थे कुरान के स्वर—अल् फ़ातिहा।

'बिस्मिल्लाहिर् रहमानिर् रहीम—"

सभा एकदम शांत हो गयी। बच्चा-बच्चा स्थिर बैठ गया। लोग 'कुरान-शरीफ' में मशगूल हो गये थे। बाबा ने कल के दान की कहानी लोगों को कही और अपील की, "अब उद्घाटन हो गया है। अब नदी आगे बढ़नी चाहिये। नदी का आरंभ तो छोटा होता है, लेकिन वही आगे गंगा ब्रह्मपुत्र बनती है।" नदी का स्रोत आगे बहने लगा है। आज छह भूदान मिले। दाताओं में हिंदु-मुसलमान, दोनों थे।

रात को आँखें मुंद रही हैं, तो शाम की सभा का ही दृश्य सामने आ रहा है! मैं देख रही हूँ, कुरान गानेवाली वह व्यक्ति, जनता की नजरों में बच्ची की वह मूर्ति आशादी [श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम्] की आँखों में भी मूर्तिमंत भक्ति! आशादी रात को बाबा को कह रही थी, "बाबा, आप दुनिया के हो गये!"

[पड़ाव : रानगंज, ६ सितम्बर, '६२]

* * *

हमारे कदम राह पर आगे-आगे बढ़ रहे हैं। रोज नयी शक्ति लेकर सूर्य निकलता है। हम रोज नये गाँव की ओर जाते हैं नये कदम रख कर, नये दिल लेकर। रास्ते में सैकड़ों की तादाद में लोग इकट्ठे होते हैं और कहते हैं, "जय जगत्", "पाकिस्तान जिंदाबाद!" पहले ही दिन बाबा रुक गये थे और लोगों से कहा था, "देखो, हम जय-जगत् की बातें समझाते हैं। वे कहने की बातें हैं, चिल्लाने की नहीं। हम रास्ते में शांति चाहते हैं।"

दो रोज भूदान मिले। जनता ने भूदान-विचार का स्वीकार कर लिया है। लेकिन भूदान तो इब्तिदा, प्रारंभ है। इसके सहारे तो इमारत खड़ी करनी है। बाबा ने आज सुबह लोगों को यही कहा, "गाँव मजबूत रहें तो उसके आधार पर देश मजबूत बनेगा। यह चार मंजिलवाला मकान है। ऊपर की मंजिल है देश, उसके नीचे प्रांत, उसके नीचे जिला और सबसे नीचे की मंजिल है गाँव। अगर नीचे की मंजिल कमजोर रही तो सारा मकान कमजोर बनेगा। लेकिन आज गाँव है कहाँ? चाहे भारत हो, चाहे पाकिस्तान हो, गाँव का तो सिर्फ नाम है। गाँव तब बनेगा जब अनेक घर मिलकर एक होते हैं और गाँव के लिए पूँजी देते हैं। लेकिन आज गाँव में पूँजी है नहीं, इसलिए गाँव है नहीं। इसीलिए गाँव का एक परिवार बनना चाहिये। हर घर से साल में एक बार फसल का एक हिस्सा गाँव के लिए दान देना चाहिये। तब गाँव की पूंजी बनेगी और गाँव मजबूत बनेगा।"

हर देश कहता है कि हमारा देश जिंदाबाद! लेकिन देश को जिंदाबाद कहने वालों को इस बात का जरूर खयाल करना चाहिये कि गाँव को छोड़ कर देश मजबूत करने की ख्वाहिश हम नहीं रख सकते।

शाम की सभा के बाद बाबा जय-विजय के साथ घूमने गये। मुझे लिखने की धुन थी। इसलिए मैं कमरे में ही बैठी रही। अचानक बाहर से आवाज आयी—"हमारी यात्रा साढ़े ग्यारह साल से चल रही है...।" अरे यह क्या! फिर से सभा! खिड़की में से देखा तो सचमुच बाबा मंच पर खड़े थे। सभा के बाद आया हुआ नया भीड़-वृंद था। उनका खास आग्रह रहा, "हम आपकी आवाज सुनना चाहते हैं।" दो ढाई घंटे के अंदर उसी स्थान पर उसी व्यक्ति की दो सभाएँ—बिना किसी आयोजन, बिना किसी कारण, केवल आग्रह के खातिर। प्रेम, परमात्मा और अध्यात्म की बातें किसी भी समाज को ऐसी ही प्यारी होती हैं। प्रेमाग्रह करने वाली पाकिस्तान की यह जनता और वह प्रेमाग्रह पूरा करने वाला भारत से आया हुआ यह फकीर! कुछ अंतर नहीं है—भले ही अभी तक एक-दूसरे का दर्शन न हुआ हो। लेकिन प्यार की अव्यक्त रश्मियाँ इसी तरह दूर-दूर फैली हुई होती हैं। एक दिन पहले ही बाबा ने कहा था, "कुरान में कहा है—'अल्लाहु नूरुस् समवाति वल् अर्ज़' अल्ला आसमान और जमीन का प्रकाश है। जैसे एक कोने में दीया होता है तब भी सारे कमरे में प्रकाश फैल जाता है, वैसे भगवान् भी हृदय में है। वहाँ से उसका प्रकाश दूर-दूर फैलेगा। ऐसी श्रद्धा रख कर हम यहाँ आये हैं...।"

इस प्रेम का साक्षात्कार यहाँ रोजाना हो रहा है।

[पड़ाव : नागेसरी, ७ सितम्बर, '६२]

आगरा में मद्य-निषेध सत्याग्रह चालू रहेगा

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल का सर्वसम्मत निश्चय

विनोबाजी के सुझाव पर ७ व्यक्तियों की 'शराबबंदी संचालन समिति' नियुक्त

नवसंगठित उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल ने सर्वसम्मति से निर्णय लिया है कि आगरा में चल रहे मद्य-निषेध सत्याग्रह को चालू रखा जायगा। आगामी १ नवम्बर से उत्तर प्रदेश के अन्य ४८ जिलों से सर्वोदयी सत्याग्रहियों के जत्थे पदयात्रा करते हुए आगरा पहुँचेंगे और वहाँ सदरभट्टी स्थित सरकारी शराबगोदाम पर धरना देंगे।

आगरा में शराबबन्दी के लिए शुरू किये गये इस प्रतीकात्मक सत्याग्रह में अब तक २१ व्यक्ति गिरफ्तार हो चुके हैं। उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल द्वारा गठित "शराबबन्दी संचालन समिति" के सदस्य ये हैं : सर्वश्री रघुकुल तिलक, बद्रीलाल मित्तल, सोहनलाल मूंभिया, सुन्दरलाल बहुगुणा, कृष्णराज मेहता और ओमप्रकाश गौड़। सातवें सदस्य आगरा के रहेंगे। उ० प्र० सर्वोदय मण्डल के मंत्री और अध्यक्ष श्री ब्रह्मदेव बाजपेयी उक्त समिति के पदेन सदस्य रहेंगे।

"शराबबन्दी संचालन समिति" के सदस्य १३ अक्टूबर को शाम जिला जेल में २१ सत्याग्रहियों से मिले और उन्होंने शराब के मसले पर सरकार से असहयोग, जनता के लोकशिक्षण और जनजागृति के लिए बृहद् योजना तैयार की है। ३१ अक्टूबर को "शराबबन्दी संचालन समिति" की बैठक आगरा में ही होगी। 'सर्वोदय प्रेस सर्विस' वाराणसी को ज्ञात हुआ है कि मेरठ, मुरादाबाद, बुलन्दशहर आदि के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने आगरा के शराबबन्दी सत्याग्रह में भाग लेने के लिए अपने नाम उक्त समिति को दिये हैं। विनोबाजी ने सुझाव दिया है कि आगरा के शराबबन्दी सत्याग्रह का निर्देशन उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल ही करे। आगरा में भी श्रीकृष्णदत्त पालीवाल तथा अन्य लोग भी सत्याग्रह के लिए तैयार हैं।

शराबबन्दी सत्याग्रही के नियम और इस कार्यक्रम में सहयोग के लिए अपील

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल द्वारा गठित "शराबबन्दी सत्याग्रह समिति" ने हस्ताक्षर-आन्दोलन शुरू कर दिया है और जनता के सक्रिय सहयोग की अपील की गयी है। हस्ताक्षर के लिए "आवेदन-पत्र" में नीचे दी हुई ६ बातों का उल्लेख है। शराबबन्दी सत्याग्रही के लिए भी उक्त समिति ने नीचे दिये गये ६ नियम बनाये हैं :

शराबबन्दी कार्यक्रम के लिए मैं तैयार हूँ और मैं अपना योग देना चाहता हूँ—

(१) मैं १८ वर्ष का या उससे अधिक आयु का हूँ।

(२) मैं मानता हूँ कि शराब नैतिक, सामाजिक, आर्थिक—हर दृष्टि से समाज और मानव मात्र के लिए हानिकर है।

(३) इसलिए संविधान में जो शराबबन्दी (मद्य-निषेध) का निर्देशन किया गया है, उसका मैं समर्थन और अभिनन्दन करता हूँ।

(४) संविधान के निर्देशन के बावजूद देश में शराबबन्दी न होना खेदजनक है।

(५) इस स्थिति में शराबबन्दी का जो कार्यक्रम उठाया गया है, उसका मैं स्वागत करता हूँ।

(६) मैं इस कार्यक्रम में समिति का अनुशासन मानते हुए निम्न प्रकार योग देना चाहता हूँ :—

(अ) मैं स्वयं शराब का व्यवहार नहीं करूँगा।

(आ) मैं स्वयं शराब की बिक्री, उसके प्रचार अथवा उसे प्रोत्साहित करने वाले किसी कार्यक्रम में भाग नहीं लूँगा।

(इ) शराबबन्दी कार्यक्रम संबंधी प्रचार, लोक शिक्षण, आर्थिक संयोजना आदि के लिए नियमित समय, शक्ति दूँगा।

स्थान .... हस्ताक्षर ....

तारीख .... नाम व पूरा पता ......

शराब-बन्दी सत्याग्रही के नियम

(१) शराब-बन्दी सत्याग्रह में कोई वयस्क व्यक्ति—१८ वर्ष या इससे अधिक आयु का—इस संबंधी संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर करके समिति की योजनानुसार भाग ले सकता है। संकल्प-पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद वह व्यक्ति "शराब-बन्दी सत्याग्रही" (या संक्षेप में "सत्याग्रही") कहलायेगा।

(२) सत्याग्रही, समिति निश्चित करे उस दिन, समय व स्थान पर सत्याग्रह में भाग लेगा।

(३) सत्याग्रह के कारण सरकार द्वारा गिरफ्तारी, सजा वगैरह की जो कुछ कार्यवाही सत्याग्रही के विरुद्ध होगी उसे वह सहर्ष स्वीकार करेगा।

(४) सत्याग्रही को एक से अधिक बार भी सत्याग्रह में भेजा जा सकता है।

(५) सत्याग्रही से यह अपेक्षा है और उसका यह परम कर्तव्य होगा कि वह सत्याग्रह के समय तथा अदालत, जेल आदि में किसी भी परिस्थिति में उत्तेजित न हो, शान्तिपूर्वक, दृढ़ता से सब कुछ सहन करे तथा अपना व्यवहार शिष्ट और नम्र रखे।

(६) सत्याग्रही अपनी व्यक्तिगत निष्ठा और जिम्मेवारी से ही सत्याग्रह में भाग लेगा। उस कारण समिति पर उसके परिवार की या अन्य कोई जिम्मेवारी नहीं आयेगी।"

(स०प्रे०स०, वाराणसी)

श्री जयप्रकाश नारायण के जन्म-दिन पर नेताओं के उद्गार

श्री जयप्रकाश नारायण की साठवीं वर्षगांठ के अवसर पर पटना और दिल्ली की सार्वजनिक सभाओं में विभिन्न नेताओं ने उनके प्रति श्रद्धांजलियाँ अर्पित कीं। उनमें से कुछ मुख्य व्यक्तियों के उद्गार हम यहाँ दे रहे हैं :—

देशोद्धार के लिए स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय की अपेक्षा आज निःस्वार्थ देशसेवकों की अधिक आवश्यकता है। जयप्रकाश बाबू ऐसे व्यक्ति हैं, जिनकी सेवाओं की अपेक्षा देश को आने वाले अनेक वर्षों तक रहेगी। जयप्रकाशजी यदि चाहते तो किसी भी उच्च पद को सुशोभित कर सकते थे, लेकिन उन्होंने अपना सारा जीवन बिना अधिकार या पद प्राप्त किये सेवा में अर्पित करना अधिक पसन्द किया। मेरी हार्दिक कामना है कि जयप्रकाशजी दीर्घ आयु हों!

—राजेन्द्रप्रसाद

जयप्रकाश बाबू प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले एक क्रांतिकारी कार्यकर्ता हैं, जिन्होंने गांधी दर्शन और आधुनिक समाजवादी विचारधारा में सुन्दर समन्वय किया है। वह नवीन विचार-दृष्टिवाले एक निर्भीक व्यक्ति हैं। उन्होंने हमेशा हर तरह के अन्याय का मुकाबला किया है तथा वे स्वयं एक संस्था बन गये हैं।

—विनोदानन्द झा, मुख्यमंत्री, बिहार

जयप्रकाश बाबू जैसे निर्भीक और स्पष्टवादी अनेक लोगों की आज देश को जरूरत है। प्रजातन्त्र को सुदृढ़ बनाने के लिए स्पष्ट और कड़ी बात कह कर जनमत को प्रभावित करने वाला नेतृत्व जरूरी होता है। शासन पर भी उसका अच्छा असर होता है। प्रगल्भ एवं स्पष्ट विचार के होने के कारण श्री जयप्रकाश इस प्रकार का प्रभावशाली नेतृत्व देने की क्षमता रखते हैं। यद्यपि प्रारंभ में उनका महात्मा गांधी के सब विचारों से मेल नहीं खाता था, पर अपने गुणों के कारण वह सबके प्रिय रहे हैं। जो बात उनको ठीक लगी, उसे वह सदा कहते हैं। उसीका परिणाम है कि प्रारंभ में वह मार्क्सवाद की ओर झुके हुए थे, पर आज प्रथम "जीवन-दानी" के रूप में सर्वोदय के विचार का प्रचार करने के लिए गाँव गाँव का भ्रमण कर रहे हैं।

—लालबहादुर शास्त्री, गृहमंत्री

श्री जयप्रकाश ने अपने विचारों के मामले में किसी बड़े-से-बड़े व्यक्ति से भी समझौता नहीं किया, भले ही उनको अनेक मुसीबतें सहनी पड़ी हों। उनकी यह बौद्धिक ईमानदारी प्रशंसनीय और अनुकरणीय है।

—उ० न० ढेबर

कल के भारत में उनके नेतृत्व की अत्यधिक आवश्यकता है।

—सुरेन्द्र दिवेदी, उपाध्यक्ष, प्र० स० दल

शुरू से आखिर तक भारतीय हैं, किन्तु समस्त मानवता की सेवा कर रहे हैं।

—डा० जे० जे० सिंह

भारत में 'अणुअस्त्र-विरोधी दिवस' संपन्न

अ० भा० शांति-सेना मंडल के आवाहन पर समस्त भारत में 'अणुअस्त्र विरोधी दिवस' अधिकतर स्थानों पर ९ सितम्बर को मनाया गया, यद्यपि बाद की एक सूचना के अनुसार ९ सितम्बर के बजाय यह दिवस ११ सितम्बर को मनाया जाय, ऐसा निर्णय किया गया था। किन्तु समयाभाव की वजह से यह सूचना सब जगह नहीं पहुँच सकी, इसलिए अधिकतर स्थानों में ९ सितम्बर को तथा कुछ स्थानों में ११ सितम्बर को यह दिवस मनाया गया।

इस दिन विशेषतया अणुअस्त्रों के प्रयोग व परीक्षणों के खिलाफ सभा सम्मेलन व प्रदर्शन किया गया। लोगों ने इस कार्यक्रम की सहानुभूति में उस दिन एक समय का उपवास भी रखा और उपवास से प्राप्त रकम शांति कार्य के उपयोग के लिए शांति सेना मंडल के कार्यालय में भेज दी। कुछ स्थानों पर अणुअस्त्र विरोध के लिए हस्ताक्षर-संग्रह करने का कार्य भी चल रहा है।

इस दिवस का आयोजन बिना विशेष पूर्वतैयारी के किया गया था, फिर भी जो समाचार प्राप्त हुए हैं, उनसे लगता है कि लोगों में इस कार्यक्रम के प्रति विशेष दिलचस्पी है। यहाँ पर हम अब तक यहाँ प्राप्त विवरणों की संक्षिप्त जानकारी दे रहे हैं।

मध्यप्रदेश : उज्जैन, सिवनी, ग्वालियर, रतलाम, सागर, छतरपुर से दिवस मनाने के समाचार प्राप्त हुए।

रायपुर में ११०१, इन्दौर में ९००० और जबलपुर में ५००० व्यक्तियों के हस्ताक्षर संग्रहीत किये गये। खंडवा में २०८ और दुर्ग में २०० व्यक्तियों ने उपवास किया।

राजस्थान : भीलवाड़ा, जोधपुर, नवलगढ़, जयपुर, सीकर, उदयपुर, अजमेर से दिवस मनाने के समाचार प्राप्त हुए। रूपनगढ़ में १५ और सुरोण में ५१ व्यक्तियों ने उपवास किया।

बिहार : ग्रामसेवा केन्द्र, मोहिउद्दीनपुर (पटना) में ५५२ व्यक्तियों के अणुविरोध में हस्ताक्षर संग्रहीत किये गये। बिहारी खादी ग्रामोद्योग संघ, समस्तीपुर में कई व्यक्तियों ने उपवास करके १०६ रु. भेज दिये।

तमिलनाड : तंजोर और चिंगलपुट जिलों में विशेष कार्यक्रम हुए। सर्वोदय प्रचुरालयम्, तंजोर के २४ और चिंगलपुट जिले के कलियमपुण्डी गाँव के १० व्यक्तियों ने उपवास किया।

आंध्र : आंध्र प्रदेश में प्राप्त जानकारी के अनुसार दो लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर प्राप्त हुए हैं। पाँच लाख हस्ताक्षर प्राप्त करने की योजना है। हैदराबाद में अणुअस्त्र विरोध दिवस विशेष आयोजन के साथ मनाया गया।

गुजरात : शिशु विहार, भावनगर और अहमदाबाद में अणुअस्त्र विरोधी दिवस मनाया।

अणुअस्त्र विरोधी उपवास से बची जो रकम शान्ति-कार्य के लिए शान्ति-सेना कार्यालय, वाराणसी में १७ अक्टूबर तक प्राप्त हुई उसका ब्यौरा यहाँ नीचे दे रहे हैं—

नाम के आगे कोष्ठक में उपवास करने वाले व्यक्तियों की संख्या दी गयी है।

	रु०-न०पै०
श्री भगवत सिंह, सदस्य, चंबल घाटी, शान्ति समिति, इटावा (३१)	३२-३०
,, श्यामसुन्दर साहू सम्बलपुर (२०४)	२६-२५
,, सुधाकर पोतदार, हाईस्कूल, आजरा (जिला कोल्हापुर) (४५)	२२-००
,, हकीम श्यामदास, आलम बाग, लखनऊ (१००)	९०-००
,, विश्मतराय, दुद्धी, मिर्जापुर (१०)	२०-००
,, कान्ताप्रसाद तिवारी, टीकमगढ़ (७०)	३२ ००
,, प्रिंसिपल, नरेन्द्र महिला विद्यालय, दानापुर, पटना (४०)	२०-००
,, संचालक, लोकभारती, शिवदासपुरा (७२)	३६-६५
,, शिवनारायण शास्त्री, सर्वोदय कार्यालय, मथुरा (१५०)	७०-८२
,, सुरेन्द्र झा, बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ, सिस्तुपुर, पटना	१०६-००
,, बलवन्तसिंह, भूदान यज्ञ समिति, गढ़ीखेरवा, सीतापुर (७२)	३६ ००
,, प्रिंसिपल, टीचर्स ट्रेनिंग स्कूल, पलामू (४२)	३१-४०
,, ग्रामनिर्माण समिति, सोसोदेवरा (४५)	१९-९५
,, संचालक, सर्वोदय मंडल, राँची (१५)	३० ००
,, जिला सर्वोदय मंडल, रानीपतरा	६९ ४२
,, जादवजी शाह, लोकसेवक, रामगंज, खंडवा	१०१ ००
,, आत्माराम, शिशु विहार, भावनगर	२६ ७५
,, ग्रामोदय आश्रम, नगला अकलू, मेरठ	२०-००
,, फुटकर, विभिन्न स्थानों से	५४५-६२
कुल रकम	१२४४ १७

उ० प्र० सर्वोदय-मंडल की कार्यकारिणी

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के नवनिर्वाचित अध्यक्ष श्री ब्रह्मदेव बाजपेयी ने समस्त जिला सर्वोदय मण्डलों के पदाधिकारियों के तथा सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधियों के नाम एक परिपत्र भेज कर सर्वोदय मण्डल के काम को आगे बढ़ाने में सब लोगों की मदद और सक्रिय सहयोग की अपेक्षा व्यक्त की है। प्रदेश सर्वोदय-मण्डल की नयी कार्यकारिणी तथा कार्यालय इत्यादि के संबंध में नीचे लिखी सूचनाएं उन्होंने प्रसारित की हैं :

(१) प्रदेशीय सर्वोदय-मण्डल का कार्यालय कानपुर में १५/२८२ सिविल लाइन्स पर रहेगा।

(२) महामंत्री : श्री मुनारी राय

(३) मंत्री : श्री आनंद प्रकाश शर्मा (देहरादून)

(४) कार्यालय के स्थायी मंत्री : श्री इकबाल सिन्हा, कानपुर

(५) इसके अतिरिक्त पिछली कार्यकारिणी के सब सदस्य इसमें भी रहेंगे और निम्नांकित व्यक्ति भी कार्यकारिणी के सदस्य रहेंगे।

(१) श्री रघुकुल तिलक, मेरठ

(२) श्री महावीर सिंह भदौरिया, इटावा

(३) श्री सोहनलाल भूभिक्षु, गढ़वाल

(४) श्री चौधरी अमर सिंह, बुलंदशहर

(५) श्री मेवालाल, आजमगढ़

(६) श्री हल्लूसिंह दद्दा, आगरा, चम्बल घाटी

(७) श्री चिम्मनलाल जैन, आगरा

(८) श्री वागेश्वर राय, जौनपुर

अहिंसक समाज-रचना के लिए आवश्यक क्रांति का संदर्भ तैयार करने में लोकसेवक सबसे छोटा अंग होते हुए भी महत्त्वपूर्ण है, इसकी ओर ध्यान आकर्षित करते हुए श्री वाजपेयीजी ने सब लोगों के सम्मिलित प्रयास पर जोर दिया है। प्रदेश में आन्दोलन के संचालन की दिशा और उसके कार्यक्रम के संबंध में 'तुरंत के कार्यक्रम की ओर' उन्होंने सबका ध्यान आकर्षित करते हुए लिखा है :

"आगरा में शराबबंदी के प्रश्न को लेकर जो सत्याग्रह प्रारंभ हुआ है और जिसके फलस्वरूप वहाँ के कई कार्यकर्ता इस समय जेल में हैं, उसका संचालन अब

पश्चिम बंगाल में ग्रामदान मिलना प्रारम्भ

सर्वोदय प्रेस सर्विस, कलकत्ता के १७ अक्टूबर के एक समाचार में यह बतलाया गया है कि विनोबाजी को रहतारा से मालदह आने पर आठ ग्रामदान मिले हैं। ये ग्रामदान पश्चिम बंगाल में अपने ढंग के पहले हैं और ये सब आदिवासी ग्राम हैं।

विनोबाजी ने कहा कि ग्रामदानों से बंगाल में आध्यात्मिक क्रांति होगी। उन्होंने आगे कहा कि बंगाल ज्ञान भूमि रहा है और अब दान-भूमि हो रहा है। समाज दो प्रकार का होता है: एक हृदयग्राही और दूसरा बुद्धिवादी। बंगाल हृदयवादी है। एक बार यदि वह हृदय से ग्रहण कर लेता है तो उसे वह यथाशक्ति स्वीकृत करता है।

'जयप्रकाश-जयन्ती' तक नागपुर तथा वर्धा जिले में ३०६ एकड़ भूदान प्राप्त

महाराष्ट्र के नागपुर तथा वर्धा जिले में विगत दो माह में क्रमशः १४४ तथा १६२ एकड़ भूदान-प्राप्ति हुई है। श्री जयप्रकाश नारायण के ६१ वें जन्म-दिवस (विजयादशमी) के निमित्त ६१ भूमिहीन परिवारों को ५ एकड़ प्रति परिवार भूमि वितरण का शुभ संकल्प महाराष्ट्र के छः जिलों ने मिल कर लिया था। उपर्युक्त दोनों जिलों से ही कुल मिला कर ३०६ एकड़ भूदान से इस की प्राप्ति हो गयी। वर्धा जिले में पुनः सामूहिक भूदान-पदयात्राएँ प्रारम्भ हुई हैं। १५ टोलियाँ १५० गाँवों में भूदान का संदेश लेकर घूम रही हैं।

विनोबाजी का पदयात्रा-कार्यक्रम

विनोबाजी २४ अक्टूबर को राजमहल (जिला संथाल परगना) पहुँचेंगे और २५ ता० को भी वहीं रहेंगे। उनके अगले पड़ाव इस प्रकार रहेंगे:— २६ ता० बाजीगाँव (४ मील), २७ ता० तालझारी (५ मील), २८ ता० सरकंडा (५ मील), २९ ता० महाराजपुर (५ मील), ३० ता० सकरी (४ मील), ३१ अक्टूबर साहबगंज (६ मील)।

शान्ति-सैनिक शिविर

१ नवंबर को विनोबाजी पूर्णियाँ जिले में (मनिहारी घाट पर, गंगा पार करके) प्रवेश करेंगे। मनिहारी घाट पर बिहार के लगभग १००० शांति-सैनिक, अपनी पोशाक में विनोबा का स्वागत करेंगे। शांति-सैनिकों का एक "जंगम शिविर" १ नवम्बर से ३ नवम्बर तक विनोबाजी के नवाबगंज, मरंगी और कटिहार पड़ावों पर उन्हीं की उपस्थिति में होगा। ८ नवम्बर को पुनः पश्चिम बंगाल में प्रवेश करेंगे। बिहार की इस पदयात्रा में, बिहार सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह विनोबा-पदयात्री दल के साथ रहेंगे।

पूर्णियाँ जिले का कार्यक्रम

पूर्णियाँ जिले में विनोबाजी की पदयात्रा का कार्यक्रम इस प्रकार रहेगा:— १ नवम्बर नवाबगंज (मनिहारी घाट से ३ मील दूर), २ ता० मरंगी (८ मील), ३ ता० कटिहार (६ मील), ४ ता० दलील (८ मील), ५ ता० मोगाँव (७ मील), ६ ता० आजमनगर (७ मील), ७ ता० शीतलमणि (७ मील), ८ ता० आबादपुर (८ मील)।

९ नवम्बर को विनोबाजी का पड़ाव पश्चिम बंगाल के मालदह जिले में विष्णुपुर में होगा, जो आबादपुर से ७ मील पर है। विष्णुपुर से वे ८ मील दूर पीपला में, वे १० नवंबर को पहुँचेंगे।

उत्तर प्रदेशीय सर्वोदय-मण्डल ने अपने हाथ में लेने का सर्वसम्मति से निर्णय किया है। सत्याग्रह-संचालन के लिए एक समिति का भी निर्माण हुआ है, जिसके संयोजक श्री ओमप्रकाश गौड़ हैं। शराबबंदी सत्याग्रह समिति की ओर से श्री ओमप्रकाश गौड़ सीधे पत्र-व्यवहार करेंगे। "सत्याग्रह समिति आपसे अपेक्षा रखती है कि अधिक से अधिक सत्याग्रही आप अपने जिले से आगरे भेजें, किन्तु उनके लिए संख्या पर बल न हो जितना सत्याग्रही की सच्चाई, चरित्र या शुचिता पर। कम-से-कम एक सत्याग्रही प्रत्येक जिले से ३१ अक्टूबर को आगरा पहुँच जाय।

१ नवम्बर, १९६२ से उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल के संचालन में सत्याग्रह प्रारम्भ होगा। ये सत्याग्रही जब अपने स्थान से प्रस्थान करें, तब उसका समुचित प्रचार, प्रकाशन, सार्वजनिक विदाई आदि होनी चाहिए।"

इस संबंध में श्री ओमप्रकाश गौड़, संयोजक, उत्तर प्रदेश शराबबंदी समिति, उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल, धटियामामू भाजा, आगरा से संबंध स्थापित करें।

विनोबाजी को रूस आने का निमंत्रण

शांति प्रतिष्ठान की ओर से मास्को गये प्रतिनिधियों ने वापस लौट कर गांधी-निधि के कार्यकर्ताओं की पारिवारिक सभा में अपने अनुभव बताये। श्री देवराभाई ने यह भी कहा कि रूस की शांति-समिति ने इच्छा प्रकट की है कि श्री विनोबाजी मास्को पहुँचे और उन्होंने विनोबाजी को रूस आने का निमंत्रण भी दिया।

उ० प्र० शान्ति-सेना शिविर

कानपुर में १० व ११ अक्टूबर '६२ को उ० प्र० शान्ति-सेना का शिविर आयोजित हुआ। प्रान्त के विभिन्न जिलों से लगभग १०० शान्ति-सैनिकों ने भाग लिया। शिविर का उद्घाटन श्री दादा धर्माधिकारी द्वारा हुआ। अ० भा० शान्ति-सेना मंडल की ओर से श्री बद्रीप्रसाद स्वामी तथा आचार्य राममूर्ति विशेष अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

उत्तर प्रदेश में शान्ति-सेना के कार्य को अधिक व्यापक बनाने, उस संबंध में भावी कार्यक्रम निश्चित करने आदि के बारे में विचार हुआ।

१२ अक्टूबर को प्रान्त के और लोक-सेवक भी आ गये और शिविर प्रान्तीय सर्वोदय-सम्मेलन के रूप में परिणत हो गया। श्री दादा धर्माधिकारी का सान्निध्य सबको अन्तिम दिन तक रहा। १२ की सायंकाल को उन्हीं के दीक्षान्त भाषण के साथ सम्मेलन की कार्यवाही समाप्त हुई।

प्रबन्ध समिति की बैठक

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति की अगली बैठक श्री विनोबाजी के सान्निध्य में १०-११ और १२ नवंबर ६२ को पीपला (जिला मालदह, प० बंगाल) के पड़ाव पर होगी। पीपला ग्राम कटिहार से ३८ किलोमीटर दूर, हरिश्चन्द्र पुर रेलवे स्टेशन से १ मील दूर है।

इंदौर में सर्वोदय-पात्रों से सितम्बर में ७६२ रु० संग्रहीत

इंदौर में सर्वोदय-विचार की सम्मति स्वरूप स्थापित "सर्वोदय-पात्रों" की संख्या में निरंतर वृद्धि होती जा रही है। जुलाई माह में २००७ तथा अगस्त में २१०० पात्र थे, जब कि सितम्बर माह में २४०१ सर्वोदय-पात्र हो गये, जिनसे माह के अंत में अनाज तथा नकद धनराशि के रूप में करीब ७६२ रुपये संग्रहीत हुए। यह धनराशि सर्वोदय-सेवकों के जीवन-यापन एवं शांति कार्यों के निमित्त व्यय की जाती है।

बिहार में नशाबंदी

बिहार में नशाबन्दी के लिए जगह-जगह प्रयत्न हो रहे हैं। गया में सर्वोदय-मंडल की ओर से सात हजार से अधिक हस्ताक्षर नशाबंदी के लिए हो चुके हैं। जमालपुर में एक बहन इसके लिए हस्ताक्षर-संग्रह कर रही हैं। मुंगेर और जमालपुर की नगरपालिकाओं ने भी सर्वसम्मति से नशाबंदी के लिए प्रस्ताव पास किये। बिहार सरकार ने २ अक्टूबर से देवघर शहर के आसपास की दस मील की परिधि में देशी शराबबंदी की सभी दूकानें बंद कर दी हैं। किन्तु विदेशी शराब की दूकानें देवघर शहर के मंदिर के पास ही चल रही हैं। अगर शराबबंदी करनी ही है, तो इनको बंद करना चाहिए।

श्री वासुदेव सिंह का निधन

मुजफ्फरपुर जिले के कर्मठ सर्वोदय कार्यकर्ता श्री वासुदेव सिंह का देहान्त लम्बी अवधि की बीमारी के बाद दो सप्ताह पहले लालगंज थाने के घटारो ग्राम में हुआ। श्री वासुदेव सिंह, जो वासुदेव खलीफा के नाम से राजनीतिक एवं रचनात्मक क्षेत्र में प्रसिद्ध थे, स्वतंत्रता-संग्राम में शामिल होने के कारण कई बार जेल जा चुके थे। उनकी मृत्यु से जिला सर्वोदय-मंडल मुजफ्फरपुर को काफी नुकसान हुआ।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता: राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८४२५: इस अंक की छपी प्रतियाँ ८४५० एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २ नवम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक ५

रक्षा की हमारी योजना

विनोबा

देश की रक्षा फौजों से नहीं, गाँव-गाँव में लोगों की एकता और परस्पर सहानुभूति से होगी

संकट के समय पंचवर्षीय योजनाएँ नहीं, ग्रामदान टिकेगा

इस समय हमारा देश गंभीर परिस्थिति में है। चीन का आक्रमण भारत पर हो रहा है, और भारत कहता है कि बचाव के लिए लड़ना लाजमी है। दोनों देशों में एक तरह से लड़ाई ही चल रही है। चीन कहता है, हमारे प्रदेश पर ही भारत का आक्रमण हुआ है। इस तरह आरोप-प्रत्यारोप किये जा रहे हैं। किसके किस आरोप में क्या तथ्य है, क्या नहीं, इसका निर्णय सामान्य नागरिक नहीं कर सकते। लेकिन मेरी समझ में एक बात नहीं आती। भारत की ओर से पंडितजी ने एक सुझाव दिया था कि दोनों देशों के दावे जिस प्रदेश पर हैं उतने प्रदेश से दूसरे का ताबा हट जायँ, उसके बाद बातचीत चले, आवश्यक हो तो मध्यस्थ का भी उपयोग किया जाय और फैसला हो। जब ऐसा सुझाव भी नहीं माना जाता तो मेरे जैसे तटस्थ मनुष्य के चित्त पर भी असर पड़ता है और लगता है कि भारत पर यह लड़ाई लादी जा रही है। इस तरह से आक्रमण होता रहेगा तो कोई देश सहन नहीं कर सकता, बल्कि सहन करने से देश आगे नहीं जा सकता।

युद्ध का जमाना अब नहीं रहा है, यह सब समझते हैं। फिर भी लोग अपने छोटे-छोटे नजरिये रखते हैं। उनको छोड़ने के लिए वे तैयार नहीं होते और लड़ाइयाँ छेड़ देते हैं। इसके बहुत भयानक परिणाम हो सकते हैं। इसलिए मैं परमेश्वर की प्रार्थना करूँगा कि यह जो सुझाव पेश किया गया है, वह मान्य करने की सद्बुद्धि भगवान् उनको दे। और कोई उपाय सुझाना हो तो वह सुझाया जाय और उस पर विचार हो। लेकिन लड़ाई तो बंद होनी चाहिये।

खैर, दोनों सरकारों को परमेश्वर जो बुद्धि देगा वह होगा। लेकिन हमको सोचना चाहिये कि इस वक्त हमारा कर्तव्य क्या है?

ऐसी हालत में क्या हम घबड़ा जायेंगे? क्या सेना में भरती हो जाने से काम हो जायगा? मरने के लिए आपके पास जितने लोग हैं, उससे चीन के पास कम नहीं हैं! पर एक बात निश्चित है कि इन दोनों देशों की लड़ाई से दोनों राष्ट्रों के गरीब मर जायेंगे। चीन क्या सोचता होगा मालूम नहीं। उसके क्या-क्या 'रिसोर्सेस' (स्रोत) हैं, कहाँ-कहाँ से उसको क्या मदद मिलेगी, हम नहीं जानते। पर भारत का संबंध बाहरी दुनिया से है। उसके लिए आवश्यक चीजें, अन्न भी बाहर से आता है। लड़ाई छिड़ेगी तो भारत के लिए बाहर से अनाज आना मुश्किल होगा। यह हमको सोचना है।

ग्रामदान स्थायी योजना

मैंने कई दफा कहा है कि हमारी पंचवर्षीय योजना में हम यह मान कर चले हैं कि दुनिया में शान्ति रहेगी। दुनिया में शान्ति की आशा रखते हुए उसके आधार पर ही हमारी योजनाएँ बनायी गयीं। लेकिन यदि दुनिया में अशान्ति हुई और भारत के ही नजदीक अशान्ति हुई, तो क्या होगा? हमारे आयात-निर्यातों में बाधा पहुँचेगी। हमारे व्यवसाय-वाणिज्य को धक्का लगेगा। तब योजना का क्या होगा? उसकी जरूरतें पूरी नहीं होंगी और योजना गिरेंगी। आज की योजनाएँ अशान्ति के समय कुछ काम नहीं आ सकती हैं। लेकिन हमारा ग्रामदान का जो विचार है, वह शान्ति के समय में तो चलेगा ही, अशान्ति हो तब भी चलेगा। इतना ही नहीं, अशान्ति के समय उसके सिवाय और कोई उपाय नहीं है। जब आयात निर्यात बन्द होगा, बाहर से चीजें नहीं आयेंगी और योजनाएँ स्थगित हो जायेंगी तो गाँवों की क्या हालत होगी? उनको कैसे बचाया जाय? इसमें गाँवों को सैनिक आक्रमण (मिलिटरी अटैक) से नहीं आर्थिक आक्रमण से बचाने की बात है।

आज चीजों के भाव काफी चढ़ गये हैं। कहते हैं कि जनतान्त्रिक ढंग से आर्थिक उन्नति करते समय भाव चढ़ेंगे। पर रोजमर्रा की आवश्यक चीजों के और गरीबों के लिए भी आवश्यक चीजों के भाव चढ़ रहे हैं। लोगों को वे चीजें खरीदना कठिन हो रहा है। इससे देश की बुनियाद ही ढह जाती है। अगर आवश्यक चीजों के दाम सामान्य लोगों की पहुँच में न रहे तो देश की आर्थिक व्यवस्था ही टूटेगी। उस समय गाँव की स्थिति क्या होगी? इसलिए गाँव के लिए जो आवश्यक चीजें हैं उन्हें गाँव में ही पैदा कर लेना पड़ेगा, गाँव में ही रख लेना पड़ेगा। जिन्दा रहने के लिए रोटी, शील रखने के लिए कपड़ा, बच्चों को दूध, बीमारी को दवा, इनके लिए दूसरों पर निर्भर नहीं रह सकते। इन मुख्य चीजों में तो गाँव-गाँव स्वावलम्बी होने चाहिए।

रक्षा फौज से नहीं, आन्तरिक शक्ति से होगी

देश की रक्षा मिलिटरी से, फौज से नहीं हो सकती। गाँव-गाँव में ही ग्राम की रक्षा होनी चाहिए। इसका मतलब यह नहीं कि गाँव-गाँव में सेना बनाओ और सैनिक रक्षा करो, बल्कि उपरोक्त आर्थिक आक्रमण से उनको बचाना है।

शहर तो आर्थिक आक्रमण से बच जायेंगे, क्योंकि गाँव की चीजें शहरों में पहुँच जाती हैं, और उन्हें खरीदने के लिए पैसा भी वहाँ रहता है। उनको खतरा मिलिटरी-आक्रमण से है। जहाँ लड़ाई होगी, वहाँ के गाँवों को छोड़ कर साधारणतया बाकी सब गाँव मिलिटरी-आक्रमण से बचे रहेंगे। लेकिन उनको आर्थिक आक्रमण से सुरक्षा चाहिए।

एलवाल का प्रस्ताव

आज आपके सामने मैं जो विचार रख रहा हूँ, यही पाँच साल पहले मैंने देश के नेताओं के सामने रखा था। एलवाल में उस समय सब पार्टियों के लोग आये थे। शुरू में ही मैंने ग्रामदान को 'डिफेन्स-मेजर' के रूप में उनके सामने रखा था। इस पर उन सबने चर्चा की और फिर सबने मिल कर प्रस्ताव किया कि ग्रामदान को प्रोत्साहन देना है। किसीने उसका प्रतिवाद नहीं किया। नेताओं ने यह कह तो दिया, लेकिन इस ओर ध्यान किसी ने नहीं दिया। अगर इस ओर ध्यान दिया होता तो अब तक उससे बहुत काम निकला होता।

अब गाँव-गाँव की रक्षा के लिए आपको ही तैयार होना है। आप नहीं होंगे तो और कौन होगा? आप याने कौन? जिनके पास शिक्षा नहीं, पैसा नहीं, जमीन नहीं, उत्साह नहीं, वे लोग जनतन्त्र के बारे में और इन सब चीजों के बारे में सोचेंगे। अभी भारत में इतनी जनतान्त्रिक जागृति नहीं है। इसलिए गाँव गाँव के जो मुख्य लोग हैं याने जमीन के मालिक, सम्पत्ति के मालिक, व्यापारी, शिक्षक, सरकारी अफसर, इत्यादि पर गाँव के सम्भालने की जिम्मेदारी है।

गाँव की रक्षा करने के लिए गाँव में सबके प्रति सहानुभूति चाहिए। सबमें एकता आनी चाहिए। उनकी शुरुआत २०वाँ हिस्सा गरीबों के लिए दान देने से करो तो अच्छा है। प्रत्येक व्यक्ति २०वाँ हिस्सा दे, ऐसा भी नहीं। प्रत्येक दे, इतना काफी है। नहीं तो भी गाँव के मुख्य-मुख्य लोग बैठ कर तय करें और कुछ जमीन या २०वाँ या आवश्यक हिस्सा भूमिहीनों को देंगे। इससे गाँव के भूमिहीन और बड़े लोग एक हो जायेंगे। अगर आप अच्छी जमीन, जोत की जमीन देते हैं तो ठीक है। परती-जमीन देंगे तो उसे अपने बैलों से जुतवा कर दीजिये। जुती हुई जमीन जब भूमिहीनों को देंगे

[शेष पृष्ठ २ पर]

कसौटी का समय

सिद्धराज ढड्ढा

हिन्दुस्तान की पूर्वोत्तर सीमा पर चीन के साथ जो संघर्ष शुरू हुआ है, उसने अहिंसा को व्यक्तिगत जीवन के लिए ही नहीं, बल्कि सामाजिक जीवन के लिए भी एक निष्ठा के रूप में मानने वाले व्यक्तियों के सामने कसौटी का एक मौका उपस्थित किया है। यों तो सामान्य तौर पर हर व्यक्ति शान्तिप्रिय होता है, पर व्यक्तिगत या सामाजिक हितों की या प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए मौका आने पर हिंसा में भाग लेना या शस्त्र उठाना वह बुरा नहीं मानता। पर जिसको यह विश्वास हुआ हो कि हिंसा से मसले हल नहीं होते, बल्कि और बढ़ते ही हैं, और खासकर अणुयुग में तो युद्ध का मतलब सर्वनाश ही है, उसके लिए ऐसे प्रसंग आसान नहीं होते। जिस देश में वह रहता है उसमें जब चारों ओर देश की रक्षा की, उसकी इज्जत बचाने की, उसके लिए मर-मिटने की, सब कुछ भूल कर तन-मन-धन त्याग करने की भावनाएँ एक प्रबल लहर की तरह लोगों को आन्दोलित कर रही हों, तब उस वातावरण से बचे रहना और शांति के साथ अपने कर्तव्य पर विचार करना भी उसके लिए मुश्किल हो जाता है।

ऐसे प्रसंग पर भी दो बातों का उत्तर तो अपेक्षाकृत आसान मालूम होता है। यह बात निर्विवाद है कि राष्ट्र के अधिकांश लोगों के सामने देश की रक्षा की दृष्टि से हिंसा-अहिंसा का सवाल नहीं है। राष्ट्र ने समझबूझ कर रक्षा के लिए सेना रखी है, हर साल उस पर योजना और विचारपूर्वक तथा खुले तौर पर अरबों रुपया और शक्ति खर्च की है—यह सब इसीलिए कि जब मौका आये तो उसका उपयोग अपने बचाव के लिए हो सके।

इस विषय पर सत्ताधारी और विरोधी पक्षों में भी कोई मतभेद नहीं है। बल्कि, विरोधी पक्षवालों के पास अगर कुछ कहने को है तो यही कि सेना पर और रक्षा के साज-सामान पर जितना चाहिए उतना खर्च सरकार नहीं कर रही है। अर्थात् सेना से और शस्त्रों से देश की रक्षा की जानी चाहिए। इससे देश के अधिकांश लोग सहमत हैं। इतना ही नहीं, अगर सरकार अपने इस कर्तव्य में ढिलाई करते तो वैसी सरकार को बर्दाश्त करने को वे तैयार नहीं हैं। अतः हिंसक उपायों पर से जिनका विश्वास उठ गया है ऐसे जो हम कुछ लोग देश में हैं वे अपने निज के लिए जो भी रास्ता अख्तियार करें, राष्ट्र का बहुजन समाज अपनी रक्षा के लिए जो उपाय उचित मानता है उसमें बाधा डालना लोकशाही के तत्त्व को ध्यान में रखते हुए भी उचित नहीं होगा। इसका मतलब यह नहीं है कि हम युद्ध के दुष्परिणामों के बारे में मुल्क को आगाह नहीं करेंगे या रक्षा के लिए अहिंसक तैयारी का काम छोड़ देंगे।

अहिंसानिष्ठ लोगों का कर्तव्य

जहाँ तक अहिंसा में विश्वास रखने वालों का निज का प्रश्न है, वह भी ज्यादा सोच-विचार का सवाल नहीं मालूम होता। हर निष्ठा की या मान्यता की कसौटी प्रतिकूल परिस्थिति में ही होती है। जैसे आज के जनतंत्र की हम यह बड़ी भारी कमी मानते हैं कि जब संकट का समय आता है तो जनतंत्र का सबसे पहला भरोसा अपने आप पर से उठता है, अर्थात् सामान्य परिस्थिति में तो जनतंत्र की प्रक्रियाएँ और व्यक्तिस्वातंत्र्य आदि की बात मानी जाती है, पर असामान्य परिस्थिति पैदा होते ही पहला प्रहार इन प्रक्रियाओं और मान्यताओं पर ही होता है, उसी तरह

> **अगर संकट की परिस्थिति आवे तो रक्षा के लिए हम अहिंसा की बात छोड़ कर हिंसक उपायों का समर्थन करते हैं तो वह अहिंसा किसी काम की नहीं है,**

यह स्पष्ट है। गत सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर मार्च १९६० में सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन में हिन्द-चीन सीमा के प्रश्न पर जो प्रस्ताव हमने स्वीकार किया था, उसे याद दिलाने की आवश्यकता नहीं है। उसमें हमने स्पष्ट यह प्रतिज्ञा की थी कि

> "कोई आक्रमक बन कर आवे भी तो अहिंसक प्रतिकार करते हुए हम भले ही मर जायेंगे, लेकिन न गुलाम बनेंगे, न शस्त्र उठायेंगे।"

लेकिन सवाल इतने से हल नहीं होता। हम अहिंसा के सिद्धान्त को ध्यान में रख कर खुद युद्ध में हिस्सा न लें, उसका समर्थन न करें, या अपने वहाँ शस्त्र का सहारा न लें, यह पर्याप्त नहीं है। आसान तो यह भी नहीं है, क्योंकि जब सारे देश में लड़ाई के लिए जोश का और बलिदान का वातावरण बना हुआ हो तब अन्य प्रकार से अपनी ओर से पूरे सक्रिय रहते हुए भी प्रत्यक्ष रूप से उस सारे प्रवाह से अलग नजर आना हिम्मत का काम है। इसमें लोगों से लांछित और अपमानित होने का खतरा भी है। पर यह सब खतरे तो प्रचलित मूल्यों में न मानने वाले लोगों को हमेशा उठाने ही पड़ते हैं। मुख्य बात यह है कि अहिंसा की शक्ति और उसका तेज प्रकट करने के लिए सिर्फ व्यक्तिगत रूप से युद्ध में हिस्सा न लेना या, हथियार न उठाना पर्याप्त है क्या, या उसके लिए हमें कुछ और भी करना है? उपरोक्त प्रस्ताव की भी जो घोषणा है वह सिर्फ हमारे अपने लिए नहीं है। देश में हम ऐसी हवा बनायें कि सारा देश ऐसी भावना और शक्ति से ओतप्रोत हो जाय, यह हमारा ध्येय हमने उस प्रस्ताव में जाहिर किया है। अतः राष्ट्र के संकट के समय हमें अधिक तीव्रता से और योजनापूर्वक सातत्य से तथा प्राथमिक कर्तव्य के रूप में अहिंसक शक्ति के निर्माण का काम करना होगा। इस विषय का अधिक विस्तार करने की यहाँ आवश्यकता नहीं है, क्योंकि इस अंक में प्रकाशित स्वयं विनोबा के प्रवचन में इस बात का काफी विश्लेषण है। मौजूदा परिस्थिति में अहिंसक प्रतिकार का और कोई सीधा कदम उठाने की बात सोचना तथ्य से और वस्तुस्थिति से इन्कार करने जैसा होगा।

इस संदर्भ में अक्सर शांति-सैनिकों के सीमा पर जाने की बात आती है। पर हमें इतना समझ लेना चाहिये कि हिंसक रक्षण और अहिंसक रक्षण की कल्पना और प्रणाली में अन्तर है। सैनिक रक्षण की तरह अहिंसक रक्षण में सीमा-रेखा का उतना महत्त्व नहीं है, जितना स्वयं लोगों द्वारा कदम-कदम पर आक्रमण के मुकाबले का। सशस्त्र प्रतिकार की तरह निःशस्त्र प्रतिकार में जय-पराजय का का सवाल नहीं होता। अहिंसक शक्ति शस्त्र-शक्ति की तरह मर्यादित नहीं है। अहिंसक प्रतिकार में अन्त तक असहयोग, बहिष्कार और नाना प्रकार के प्रतिकार का मार्ग खुला रहता है और यह कार्रवाई राष्ट्र का एक व्यक्ति जीवित रहने तक भी चलने की कल्पना और संभावना है। दूसरी बात यह है कि जब

[शेष पृष्ठ ११ पर]

[पृष्ठ १ का शेष]

तो वे उस पर फसल उगायेंगे। बीज भी दीजिये। इस तरह अच्छी फसल होगी। किसी को दबाने से कोई काम नहीं होगा। अच्छे कार्यों से ही शक्ति बनेगी और बढ़ेगी। इस तरह गाँव-गाँव में भूमिहीनों का मसला हल करें। बची जमीन अभी आप अपने पास रखें तो भी हर्ज नहीं।

फिर गाँव के जितने बालिग हैं, उन सबकी मिल कर ग्राम-सभा बने। ग्रामसभा का काम चलाने के लिए हर साल अपनी फसल में से एक हिस्सा दें। शुरू में एक-दो हजार रुपये दान के रूप में ग्राम-सभा को दें। यही उसकी पूंजी होगी, उसके आधार पर गाँव के लिए उद्योग धन्धे खड़े किये जा सकते हैं। इस तरह एक 'पैटर्न' बनेगा। धीरे-धीरे सब बदलेंगे। पर इसके लिए पहले बड़े लोगों को त्याग करना होगा। देश के लिए आप थोड़ा भी त्याग न करें तो फिर देश कैसे बचेगा? देश ही न बचे तो फिर क्या आप बचे रहेंगे? अपने स्वार्थ को जरा दूर करके देखो तब काम बनेगा।

[पड़ाव : शोभानगर, जिला-मालदह (बंगाल) के ता० २२ अक्तूबर, '६२ के दो प्रवचनों से।]

हम क्या करें?[+]

एक तो यह कि सब प्रकार के भेद मिट जाने चाहिए। सारा राष्ट्र एक-दिल हो, ऐसा होना चाहिए।

दूसरे, धीरज नहीं छोड़ना चाहिए। हिम्मत रखनी चाहिए।

तीसरी बात यह कि भारत में कहीं अशांति नहीं होनी चाहिए। यह तब होगा, जब अशांति के कारण मिटेंगे। इसके लिए एक-एक गाँव एक-एक परिवार के समान बनना चाहिए। सबको तय करना चाहिए कि हमारे गाँव में कोई भूखा नहीं रहेगा, बेकार नहीं रहेगा, दुःखी नहीं रहेगा। कोई दुःखी होगा तो उसके दुःख का हिस्सा सब लेंगे।

* * * *

ऊपर जो कहा है उसमें सैनिक कार्रवाई का समर्थन नहीं है। आज भी हमारा यह मानना है कि हिंसा से मसले हल नहीं होते, बढ़ते ही हैं। पर लोगों की वास्तविक तैयारी, लोकशाही की दृष्टि (याने लोगों ने सरकार को सेना रखने की अनुमति दी है इस दृष्टि से), भारत सरकार की नैतिक स्थिति, अहिंसा के वर्किंग की प्रक्रिया और हमारी अपनी स्थिति—इतनी बातों को ध्यान में रखते हुए हम उसका विरोध नहीं करते इतना ही है। हम हमारा काम करते हैं।

* * * *

चूंकि हमें हर परिस्थिति का लाभ उठाकर देश को अहिंसा की ओर ले जाना है, इसलिए देश को समझाते हैं कि हमारे कार्यक्रम (ग्रामस्वराज्य) से आप जो कर रहे हैं उसमें भी मदद मिलेगी। ग्रामदान एक 'डिफेन्स मेजर' है यह हमने पहले ही कहा है।

* * * *

कार्यकर्ताओं से हम कहते हैं कि यह एक मौका फिर आया है, जब जनता को आप अपनी बात समझा सकते हैं और वह हमारे साथ आ सकती है। इस मौके को आप खोना चाहें तो बात दूसरी है!

[+] विनोबा से हुई चर्चा के आधार पर।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

सामाजीक क्रान्ती समाज ही करेगा

सर्वोदय में आनेवालों में दो गुण हो सकते हैं—अेक, जीनमें वैराग्य है और दूसरा, जीनमें क्रान्ती की भावना है। ये दो गुण जीसमें अीकट्ठे हैं, वह सर्वोदय के लीअे, सर्वोदय की क्रान्ती के लीअे आयेगा। सर्वोदय में दो प्रकार हैं—अेक, सर्वोदय की सेवा और दूसरा सर्वोदय की क्रान्ती। सर्वोदय की सेवा सरकार के नौकर कर सकते हैं। लेकीन सर्वोदय-क्रान्ती की बात वैराग्य और क्रान्ती भावना से गुणयुक्त होंगे, वे करेंगे। केवल क्रान्ती-भावना हो और वैराग्य, नीष्ठा, आध्यात्मीक वृत्ती न हो तो वे अहींसक क्रान्ती के काम में नहीं आयेंगे, हींसक क्रान्ती में आयेंगे। स्वाभावीक अैसे लोग थोड़े होंगे। अुस हालत में अैसे जो आध्यात्मीक क्रान्तीकारी सेवक होंगे, अुनको नम्र होना चाहीअे और असंख्य दूसरे सेवकों का सहयोग प्राप्त करना चाहीअे। सरकारी नौकर हमारे साथ हैं, खादी बोर्ड के लोग हमारे साथ हैं, और जो अपने घर में बैठे हैं, वे लोग भी हमारे साथ हैं। जो जीस काम में जीतना समय दे सकता है, अुसका अुस काम में अुतना सहयोग प्रेमपूर्वक लेना चाहीअे। तभी क्रान्ती होगी। सामाजीक क्रान्ती समाज ही करेगा।

[दौलतपुर, प० बंगाल, ११-१०-'६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

ट्रस्टीशिप का एक महत्त्वपूर्ण पहलू

• शांतिप्रिय

हमें ईश्वर ने 'ट्रस्टी'-विश्वस्त-बना कर ही दुनिया में भेजा है, यह गांधीजी के जीवनयापन का सिद्धांत था। जब से ईश्वर ने उन्हें सामाजिक दृष्टि प्रदान की तब से अन्त तक इसी तरह का जीवन वे जिये। देश के लिए जो त्यागी जीवन उन्होंने अपनाया था, उस त्याग की भावना को उन्होंने संस्कार से परिपुष्ट तो किया था, पर वह अधिकतर उनका जन्म-गुण था। वही गुण दिन प्रतिदिन अधिक-से-अधिक निखर उठा। लेकिन उसके बीज बहुत पूर्व ही उनमें मौजूद थे। दुनिया की ओर विश्वस्त निधि—ट्रस्ट—के नाते देखने के उनके कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

गुजरात के महान् सेवक, श्री मणीलाल कोठारी देश के कार्य के लिए चंदा इकट्ठा करने में बहुत कुशल थे। उन्होंने अपना एक संस्मरण एक बार सुनाया। कहा—कलकत्ते में एक बार बापू का मुकाम था। एक धनी आदमी के घर वे ठहरे हुए थे। भोजन में दूध-रोटी और थोड़े-से खजूर वे लेते थे। बापूजी के खाने-पीने आदि की व्यवस्था करने की जिम्मेवारी मणीलालजी ने अपने ऊपर ले ली थी।

उस दिन बापूजी के भोजन के लिए कुछ आम खरीद कर लाये गये थे। आम काट कर दूध के साथ बापू के सामने रखे गये। मणीभाई ने बतलाया कि उस दिन बापू के भोजन के समय मुझे बुलवाया गया। बापू ने मुझे पूछा, "मणीभाई आम क्या भाव लाये हैं?" मणीभाई कहते हैं, मैं समझ गया कि बापू नाराज हैं! वह आम का मौसम नहीं था, बहुत प्रयत्नों से वे आम जुटाये गये थे। अर्थात् वे बहुत महँगे दामों खरीदे गये थे। मेजबान का उस प्रकार का आग्रह था और उन्हें मना करने की मेरी हिम्मत न हुई थी। मैंने बापू से अपनी कठिनाई कही। फिर तो बापू ने मुझे हिन्दुस्तान का अर्थशास्त्र ही समझाना प्रारम्भ कर दिया। हिन्दुस्तान की प्रति मनुष्य की आय की ओर ध्यान दिलाया और गैरमौसमी फलों की कीमत अदा करके गांधी को भोजन दिया जाय तो वह हिंदुस्थान के गरीबों का सेवक नहीं कहलाया जा सकता, यह भी समझाया और कहा, 'मैं तो चाहता हूँ कि मेरा कम-से-कम भार जनता पर पड़े, लेकिन फिर भी मैं जानता हूँ कि मेरे लिए कुछ अधिक खर्च होता ही है। लेकिन तुम्हारे जैसे मित्रगण भी यदि इस प्रकार करना करने लग जायें, तो फिर मैं क्या समझूँ!' मणीलालजी ने बताया, मैंने आँखों में आँसू भर कर कहा कि ऐसी गलती मुझसे फिर कभी नहीं होगी और मैं आपके इस मत का हमेशा ख्याल रखूँगा। पत्र-व्यवहार में कागज एवं शब्दों का जिस किफायत से बापू ने उपयोग किया उसे वह हर शख्स जानता है, जिससे उनका पत्र-व्यवहार था।

दरी बन गयी

धूल से धान बनाने की कुशलता जो उनमें आयी थी वह भी इसी, विश्वस्त वृत्ति के कारण ही। श्री काका साहब कालेलकर ने अपनी एक आपबीती एक बार सुनाई थी।

यरवडा जेल की यह बात है। ठंड के दिन थे। जेल में फर्श पर बैठना पड़ता था। सोते भी थे। जाहिर है कि ठंड के दिनों में फर्श पर एक दरी ही डाल कर बैठना या सोना हानि पहुँचा सकता है। काका ने जेल के अधिकारी से कहा कि गांधीजी के लिए और एक दरी मंगा दें, तो उचित होगा। गांधीजी से उन्होंने कहा कि उन्होंने जेलर से एक दरी मांगी है। बापू ने कहा कि दरी न मंगवाइये, हम कुछ प्रबंध यहाँ कर लेंगे। अब जेल में क्या प्रबंध हो सकता था? काका ने आज्ञा का पालन तो किया, पर प्रबंध की कोई आशा नहीं रखी। गांधीजी ने जो प्रबंध किया वह उन्हीं की सूझ थी। जेल में इन लोगों को कातने धूनने की आज्ञा थी और धूनने के काम में उपयोग में लाने के लिए या पूनियाँ बांधने के लिए कुछ कागजात भी उन्हें दिये जाते थे। उन कागजों से मैं दो कागज दरी की लम्बाई के गांधीजी ने बिछाये। कातते समय जो सूत टूटता है और जिसे बहुधा फेंक दिया जाता है, उसे गांधीजी ने और अन्य साथियों ने नियम के अनुसार जमा कर रखा था और वह पर्याप्त संग्रहीत हो गया था। सूत के उन टुकड़ों को गांधीजी ने उन कागजों पर बिछाया। काफी मोटाई तक सूत जमाने के बाद उस पर दूसरा कागज रखा और फिर उस पर दरी बिछाई। अब वह खासी गद्दी-सी हो गयी। जेलर से दरी माँगने से काका पराभूत हुए और एक अतीव मनोवेधक पाठ काकासाहब ने अपने पल्लों में बाँधा दुनिया की चीजों को जतन से उपयोग करने का यह स्वभाव गांधीजी के चरित्र में कितना गहरा पैठा था, यह जानने के लिए एक और प्रसंग की ओर हम ध्यान दें।

श्री अप्पासाहब पटवर्धन गांधीजी के एक प्रवास में उनके साथ थे। वे गांधीजी के पीने के लिए पानी ले आये। पानी बापू के आगे धरा था। पर बापू उसको पीयें, उसके पूर्व ही एक छोटे-से बालक ने उसमें पैसा डाल दिया। अप्पा साहब वह पानी उंडेलने लगे, जिससे कि ग्लास धोकर बापू के लिए दूसरा पानी ला सकें। तत्काल बापू ने कहा, अप्पा पानी फेंको नहीं। मेरा रूमाल भिगाओ। उसे गीला करना ही था। पानी का उचित उपयोग होगा।' अप्पा दंग रह गये। किन्तु वे जानते ही थे कि गांधीजी ट्रस्टी बन कर जो दुनिया में आये हैं। यह पाठ अप्पा साहब ने जीवन भर याद रखा है।

स्वास्थ्य संभालो

जब विनोबाजी पहली बार गांधीजी से मिलने गये, तो उनको भी गांधीजी से पाठ मिला। यदि हम स्वास्थ्य—आरोग्य—अच्छा नहीं रख सकेंगे, तो मानना होगा हमारा अध्यात्म कच्चा है, दुर्बल है। इसी पाठ को लेकर विनोबाजी अपनी शक्ति भर अपना ही नहीं, अपितु देश का भी स्वास्थ्य—आत्मिक, मानसिक एवं शारीरिक—संभालने का यत्न कर रहे हैं।

यही गांधीजी की ट्रस्टी होने की दृष्टि थी। यही भावना यह थी कि गांधीजी के हाथ में जो भी आया, उसको उन्होंने ऐसे सुचारु ढंग से उपयोग किया कि दुनिया से चल बसने पर वे उस परमोदात्त, दातार, प्रभु से कह सके कि हे प्रभो! मैं दुनिया में जतन से बरता और तेरे पास चला आया।

> "दास कबीर जतन से ओढ़ी।
> ज्यों की त्यों धर दीन्ही चदरिया।"

तो फिर पैसा क्यों बढ़ना चाहिए?

हर चीज दुनिया में घटती है और कम होते-होते क्षीण होती है। इससे नयी चीज पैदा होती है। ऐसा सृष्टि में सतत होता रहता है, यह मकान धीरे-धीरे क्षीण होगा, फिर पन्द्रह साल बाद नया बनेगा। शरीर का भी ऐसा ही हाल है, तो फिर पैसा क्यों बढ़ना चाहिए? वह तो घटना चाहिए। अगर पैसा घटता है, तो नया पैदा होगा।

कुछ लोग कहते हैं कि पैसा बहुत महंगा है, लेकिन पैसा बहुत सस्ता है। पैसा कहीं गाड़ कर डाल दो तो कितनी फसल आयेगी? मिट्टी में जीवन है, मिट्टी में फसल होती है। पैसों में जीवन नहीं है, इसलिए मिट्टी का दान बहुत बड़ा दान है। पैसों का दान अल्पदान है।

[कुमारीकटा, कामरूप, ८ मई, '६२] —विनोबा

दक्षिण का अन्वेषण

• कुट्टी

कावेरी नदी मैसूर से निकलती है, पर वह ऊँचे पहाड़ों से उतर कर तमिलनाडु के हजारों-लाखों भाई-बहनों को पानी देने के लिए बहती है। हम अंदाज नहीं कर सकते कि कितना और कब से यह पानी दे रहा है। कावेरी नदी तमिलनाडु की सेवा करते हुए कभी थकती नहीं, कभी अलसाती भी नहीं। अपनी इस निःस्वार्थ सेवा और प्रेम के कारण उसने यहाँ के लोगों के दिल में अपना एक स्थान बना लिया है।

मैंने कावेरी माता के पदचिह्नों का अनुसरण किया। कावेरी की जन्मभूमि, मैसूर से आते हुए मैंने उसी का अनुसरण करने का निश्चय किया, जो जमाने से मुझसे भी पहले यहाँ आयी है। मैंने भी चाहा कि तमिलनाडु की जनता की सेवा करूँ और उनसे प्रेम करूँ। यह मेरे लिए साहस का काम रहा कि मैं ऐसे प्रदेश में आऊँ, जहाँ मैं बिलकुल अपरिचित और जहाँ की भाषा से मैं अनभिज्ञ हूँ। हर चीज मेरे लिए नयी रही।

शुरू में तो मेरा दिल ही बैठ गया और इस काम को सम्भालने का साहस ही नहीं रहा, लेकिन धीरे-धीरे साहस बंधा। कावेरी माता का ज्वलंत उदाहरण मेरे सामने था। सोचा कि अगर कावेरी तमिलनाडु की सेवा कर सकती है, तो मैं क्यों नहीं कर सकूँगा!

महान् माता की एक अकिंचन सन्तान ने श्रद्धा और भक्ति के साथ यहाँ की यात्रा का निश्चय कर इस प्रदेश में कदम रखा। दक्षिण में सबसे ज्यादा ऊँचे, नीलगिरि के पहाड़ को मुझे पार करना था।

इस तरह अभी डेढ़ साल से मैं तमिलनाडु के एक कोने से दूसरे कोने तक उसके गाँवों में पैदल यात्रा करते हुए सर्वोदय का संदेश पहुँचाता रहा हूँ। पहले मैं तीन-चार महीने तक ही यहाँ रहना चाहता था, पर मेरी यात्रा का समय बार-बार बढ़ता ही गया। महीनों पर महीने गुजरते गये।

मेघाच्छादित नीलगिरि से सुदूर दक्षिण के सिरे पर, कन्याकुमारी पैदल ही पहुँचा। फिर रामेश्वर का दर्शन कर मद्रास शहर की तरफ बढ़ा। इस तरह तीन हजार मील से ज्यादा पैदल चल कर तमिलनाडु के सभी जिलों की पदयात्रा पूरी हुई।

अब तमिलनाडु मेरे लिए छोटा दीखता है, भूगोल के मानचित्र से भी छोटा। यह सारा प्रदेश, मानों मेरी मुट्ठी में आ गया हो। बचपन में पाठशाला में पढ़ते समय हमें अक्सर "भूगोल" का नमूना, "ग्लोब" दिखाया जाता था। भू-माता इतनी छोटी है, इस पर उस वक्त यह विश्वास ही नहीं होता था। यद्यपि अध्यापकों की बातों में संदेह नहीं किया जा सकता था; मगर इस वक्त मैं विश्वास करने को तैयार हूँ कि पृथ्वी उतनी बड़ी नहीं है। इस प्रदेश में लगातार पदयात्रा करने के फलस्वरूप अब मेरी कल्पना में तमिलनाडु एक छोटी बिन्दु की तरह सिमट गया है। अगर तमिलनाडु इतना छोटा है, तो दुनिया उतनी बड़ी नहीं हो सकती है, जैसे कि मैंने बचपन में कल्पना की थी।

इस समय कोई मुझसे पूछे कि किस प्रदेश का रहने वाला हूँ, तो मैं तमिलनाडु को भी जोड़े बिना नहीं रह सकता। मैसूर और तमिलनाडु, दोनों का हो हूँ। एक जगह पर मैं पैदा हुआ, दूसरी जगह को प्रेम से मैंने अपनाया। इस तरह अन्य सब प्रदेशों के लोगों के दिल भी मैं जीत सकूँ तो मेरी बड़ी कामयाबी होगी। *आखिर मुझे मनुष्य मात्र से मिलना है* और सबमें भाईचारा बरतना है।

"जय जगत्" हमारा आदर्श है, उसके अनुकूल हमें जीना है। हमें दुनिया के अन्य भागों में रहने वाले लोगों की *समस्याओं को समझने की कोशिश करना* है तथा उनकी भावनाओं और दुःखों पर सहानुभूति दिखानी है। सबके प्रति प्रेम और करुणा हमारे दिल में होनी चाहिये। मनुष्य-मनुष्य के बीच की दीवारें तोड़नी चाहिये। इस तरह *मनुष्य वंश की एकता* को समझने के लिए यह पदयात्रा उपयोगी सिद्ध होती है। पदयात्रा ने मुझ पर इस सत्य की एक गहरी छाप लगा दी है। तमिलनाडु और मैसूर अड़ोस-पड़ोस के राज्य हैं। करीब पाँच करोड़ लोग आजू-बाजू में रहते हैं। मुझे आश्चर्य और दुःख इस बात का हुआ कि इन राज्यों के लोग एक-दूसरे से अलग ही रहे और रह रहे हैं।

पड़ोसी प्रांतवाले जब राजकीय सीमा-रेखाओं की सींखचों में बन्द रहने लगते हैं तो आपस में प्रेम, सहानुभूति और सहयोग का सवाल कैसा? संस्कृति या ज्ञान का वास्तविक आदान प्रदान नहीं होता। एक राज्य के साधु-संत दूसरे राज्य के लिए अनभिज्ञ, एक प्रदेश का उच्चतम साहित्य दूसरे राज्य के लिए बेकार! कर्नाटक के लोग तिरुक्कुरल या माणिक्कवाचकर के बारे में कुछ नहीं जानते। बसवण्णा की कृतियाँ तमिलनाडु में पहुँची नहीं। राजनीति में, तथा ओहदे चाहने वालों की चालाकियाँ और झगड़े मात्र दोनों तरफ के लोग जानते हैं। जनता की महानता या महत्त्व वे जानते न थे, क्योंकि अखबार के समाचार को पढ़ नहीं पाते थे।

भाषा एक-दूसरे से संबंध जोड़ने तथा सहकार पैदा करने का साधन है तो यह लोगों को अलग करने वाली दीवार भी है। तमिलनाडु में ऐसा कोई भूदान-कार्यकर्ता नहीं, जो कन्नड़ भाषा इसलिए सीख चुका हो कि पड़ोसी मैसूर प्रांत के लोगों से प्रेम करें। तमिलनाडु में प्रवेश करने के पहले मैं तमिलनाडु के बारे में कुछ नहीं जानता था। इन दोनों प्रदेशों में हिन्दी जानने वालों की संख्या भी कम है। इसलिए इस आन्दोलन की अद्यतन कार्यकलापों से अभिज्ञ न हो सकने के कारण इस क्रान्ति की मध्य धारा से उत्साह ग्रहण नहीं किया जाता।

भूतकाल का ज्ञान मुझे नहीं है, वर्तमान को देखा, तो इन दोनों राज्यों में स्नेह का बंधन नहीं। यद्यपि एक-दूसरे के नजदीक रहते हैं, फिर भी एक-*दूसरे के सुख-दुःख या चिंतन-विचार में* भागीदार नहीं बनते। लोग आपस में मिलते नहीं। हाँ, बड़े-बड़े राज-कर्मचारी या मंत्रीगण अक्सर इसलिए मिलते रहते हैं कि कावेरी के पानी के बँटवारे का मसला हल हो! व्यापारी लोग भी अपना माल देने-लेने आते-जाते रहते हैं, पर साधारण जनता के स्तर पर यह मेलजोल नहीं होता।

यह मेरा कटु अनुभव था। इसने मेरी आँखें खोल दीं। सचमुच हमारा *देश एक नहीं हुआ है।* भारत का प्रांतवार विभाजन वास्तव में हमारी कमजोरी है। तमिलनाडु में जितना ज्यादा मेरा भ्रमण हुआ है, उतना ज्यादा मेरा आश्चर्य भी बढ़ा! पाँच करोड़ से ज्यादा लोग पड़ोस में रहने पर भी काल्पनिक राजनैतिक सीमा में अलग-अलग कैसे विभक्त हो बैठे हैं!

आधुनिक संचार-साधन लोगों को नजदीक लाने के बदले उन्हें अलग-अलग पिंजड़ों में बंद रखने के माध्यम बन गये हैं! यह सच है कि दोनों राज्यों से लाखों यात्री तीर्थस्थान या खास जगह देखने आया जाया करते हैं, पर उनकी यात्रा की गति इतनी तेज रहती है और ठहरने का समय इतना कम रहता है कि आपस में स्नेह-बंधन का जरिया निकल जाता है। दुनिया नजदीक आ गयी है, वह सिकुड़ गयी है, पर मनुष्य एक-दूसरे से दूर होते जा रहे हैं।

आम जनता की हालत दुःखपूर्ण और अवर्णनीय है। गरीबों की भलाई के बारे में हर शख्स बोलता है। गरीबों के लिए इतना किया जा रहा है, यह भी बताया जा रहा है। फिर भी सर्वत्र गरीब लोग चुपचाप कष्ट भोग रहे हैं। वे एक तरह से गूँगे बन गये हैं, अपने को निराधार पाते हैं। दुःख और बीमारी को वे चुपचाप कैसे सहन करते हैं, यह आश्चर्य की बात है। वे जानवरों से भी बदतर जीवन जीते हैं।

समाज के उच्च स्तर में रहने वाले लोगों के दिल में काफी करुणा नहीं है। मनुष्य की सभी कार्रवाइयों में शोषण सर्वत्र बेधड़क हो रहा है। गरीब ज्यादा गरीब बनता है और अमीर ज्यादा अमीर। निकट भविष्य में इस हालत के सुधरने की *कोई उम्मीद नहीं। गरीबों को भी चिन्ता* करने वाले और उनकी सहायता करने वाले तो बहुत ही कम हैं। महात्मा गांधी ने "दरिद्रनारायण" के नाम से हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई लड़ी। पर अब हम उन्हें भूल चुके हैं। गरीबों के लिए आजादी का कोई मतलब नहीं, जब तक औरों की तरह सम्मान के साथ जीने के हक से वे वंचित रखे जाते हैं। यह दूसरी बात मैंने देखी।

यहाँ भूदान-कार्यकर्ताओं से मिलने के लिए ही मैं तमिलनाडु आया। यहाँ के गाँवों से होकर चलते हुए मेरा प्रयत्न रहा कि मैं इन कार्यकर्ताओं की सहायता करूँ और गाँव वालों की सेवा करूँ। बे-जमीनों को जमीन बाँटने का तथा कार्यकर्ताओं के लिए संपत्तिदान प्राप्त करने का मेरा प्रयास था। करीब पाँच सौ एकड़ जमीन बाँटी गयी और पचीस हजार रुपये संपत्ति-दान में प्राप्त हुए। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को मेरी यात्रा से थोड़ा भी *फायदा हुआ तो मुझे बड़ा संतोष होगा।*

तमिलनाडु के लोगों ने दिल खोल कर मेरा स्वागत किया। मैं एक दूसरे प्रांत से यहाँ आया हूँ, ऐसा खयाल ही नहीं रखते थे। उनका प्रेम किसी तरह कम नहीं हुआ। उस अप्रतिबंध और स्वाभाविक स्वागत का बड़ा असर मेरे दिल पर पड़ा। इस व्यवहार ने मुझे पूरा-पूरा पहचानने दिया कि मेरी जिम्मेदारी, न केवल अपने प्रान्त के लोगों के प्रति है, बल्कि सारी दुनिया के लोगों के प्रति भी है। इस प्रेम ने मेरे दिल को मुलायम और मेरी दृष्टि को व्यापक बनाया। मानव-परिवार की एकता का भान मुझे हुआ।

तमिलनाडु की तुम्हारी यात्रा सफल हुई, इसमें कोई शक नहीं। इसका जिक्र मैंने कई लोगों से किया है। पाँच साल सतत यात्रा चलायी। भगवत् प्रेरणा और भगवत् कृपा के बिना यह शक्ति तुममें नहीं आयी। तुम्हारे दुर्बल हाथ को भगवान् ने अपना बनाया, ऐसा ही इसका अर्थ है। अब बंगलूर में वापिस आ रहे तो वल्लभस्वामी से बात करके आगे की योजना की जा सकती है।

उत्तरोत्तर हमारे काम के लिए सबकी सहानुभूति बढ़ रही है। हम सक्रिय रहेंगे तो यह सहानुभूति मूर्तिमान होगी। हम निष्क्रिय रहें, तो वह अमूर्त में लीन हो जायेगी।

[असम-यात्रा, २५-८-'६२]

—विनोबा का जय जगत्

गरीबों के प्रति मेरी सहानुभूति को बढ़ाया। मैसूर की मेरी पदयात्रा में यह काफी मददगार होगा। इस तरह प्रेम में फूलने के कारण मैं शारीरिक और मानसिक शक्ति का अनुभव करता हूँ।

मैंने थोड़ी-सी तमिल सीखी। तमिल के इस कम ज्ञान ने तमिलवालों के दिल को जीत लिया है। इसने मेरे लिए ज्यादा सम्पत्ति-दान और भूमिदान प्राप्त कराया है। तमिलनाडु के इन दो वर्षों की पदयात्रा में मैंने जो देखा, सीखा और अनुभव किया, वह मैं अपने १५ वर्षों के लम्बे स्कूली जीवन में भी प्राप्त नहीं कर सका।

तमिलनाडु में पदयात्रा कर मैंने क्या पाया? यहाँ के लोगों का प्रेम और भूदान कार्यकर्ताओं का स्नेह, ये दोनों हमेशा मेरे दिल में रहेंगे।

तमिलनाडु में कई जगह उत्साही कार्यकर्ताओं के साथ काम करने में अपूर्व आनंद हो रहा है। तंजौर जिले के उत्साही युवक कार्यकर्ता श्री श्रीनिवास राघवन् का स्नेह स्मरणीय है। इसके पीछे एक सुन्दर कहानी है। जब तमिलनाडु में विनोबा यात्रा करते थे, तब श्री श्रीनिवास राघवन् एक हाईस्कूल में हिन्दी पंडित थे। उनके पिता श्री वेदान्तम् एक बड़े जमींदार थे। उन्होंने ६० एकड़ वाली तरी जमीन का पूरा ग्राम दान में दे दिया। विनोबा सिर्फ जमीन से तृप्त नहीं हो सके। पूछा—"आपके कितने बेटे हैं?" "चार बेटे और दो बेटियाँ"—यह जवाब था। तब विनोबाजी ने श्री वेदान्तम्‌जी से कहा—"ग्राम का दान देने से मैं वहाँ क्या कर सकता हूँ? उस गाँव में रह कर ग्राम-सेवा करने के लिए एक कार्यकर्ता मुझे चाहिये। इसलिए आप अपने बड़े बेटे का दान दीजिये।"

श्री वेदान्तम्‌जी का बड़ा बेटा श्री श्रीनिवास राघवन् निकला। उन्होंने तुरन्त स्कूल से इस्तीफा दे दिया और विनोबाजी के बताये कार्य के लिए गाँव में पहुँच गये। उनके पिताजी ने ६० एकड़ जमीन दान में दी और उसके प्रसाद के रूप में बेटे को तीन एकड़ जमीन वापस मिली। एक दफा जो जमींदार का लड़का था, वह आज अन्य तेरह परिवारों के साथ खेत में खुद काम कर रहा है और प्रेम से गाँववालों की सेवा कर रहा है। तंजौर जिले के उस गाँव का नाम 'विनोबाग्राम' है।

भूदान-कार्यकर्ताओं के लिए श्री श्रीनिवास राघवन् आदर्श सेवक हैं। निस्स्वार्थ तथा सतत सेवा से सबका प्रेम और सम्मान किस तरह प्राप्त किया जा सकता है, यह आपने दिखलाया है। अपने चारों तरफ आपने एक प्रेम-क्षेत्र खड़ा किया है। उनका कार्यक्षेत्र देख कर मैं बहुत ही खुश हुआ।

मैसूर का कुट्टी और तमिलनाडु का श्रीनिवास राघवन् मित्र हुए। भूदान-आन्दोलन के कारण यह संभव हुआ। तंजौर जिले ने मेरी पदयात्रा के उपयोग के लिए एक साइकिल सेट, एक पैरम्बुलेटर और एक बैलगाड़ी प्रदान की है। मुझ जैसा एक अकिंचन सेवक तमिलनाडु के लोगों की सेवा कर सका, इसलिए यह कहना उचित होगा कि भूदान-आंदोलन एक प्रभावशाली शक्ति है, जो जनता को एक सूत्र में बाँध सकता है। इसका मैं स्वयं उदाहरण हूँ।

मैं अपनी यात्रा की सफलता कावेरी माँ के चरणों पर समर्पित करता हूँ। मेरे बहुत पहले यह तमिलनाडु में आयी है। अपनी निरंतर सेवा के कारण तमिलनाडु के लोगों के दिलों में मैसूर और मैसूर के लोगों के लिए एक सुरक्षित स्थान कावेरी माता ने पैदा कर दिया है। मेरी पदयात्रा के लिए कावेरी ने अद्भुत बुनियादी काम कर रखा था। इसलिए "कावेरी प्रांत" से आने वाले मुझ जैसे एक अकिंचन सेवक का स्वागत हुआ तो कोई आश्चर्य नहीं! दक्षिण में कावेरी नदी अद्भुत संयोजन शक्ति बनी हुई है। मैसूर और तमिलनाडु की सीमा लाँघ कर आने वाला मैं प्रथम यात्री रहा। इस बात का मुझे बड़ा गौरव है। दक्षिण हिन्दुस्तान और उसकी जनता के अन्वेषण में मेरी पदयात्रा सहायक बनी।

विश्वशांति-पदयात्रियों की डायरी

अफगानिस्तान में पचपन दिन

• सतीशकुमार : ई० पी० मेनन

१७ अगस्त को प्रातःकाल जब हम अणुशस्त्र विरोधी पर्चे बाँटते हुए काबुल से विदा हुए तो सड़कों पर छुटके छुट लोग यह पर्चा लेने और पढ़ने के लिए उत्सुकता दिखाते थे। "हम हथियारों पर पाबंदी चाहते हैं", यह साइन बोर्ड, जो कि हमारे गले में लटक रहा था, पढ़ने के लिए सैकड़ों आँखें हम तक पहुँच रही थीं। ठीक तीस दिन में ५६२ मील की काबुल से हैरात तक की हमारी पर्वतीय पदयात्रा इस दुनिया से करीब-करीब अलग-अलग ही थी। इस पूरे रास्ते पर बर्फानी चोटियों के अतिरिक्त और है भी क्या! न कोई शहर, न यातायात के साधन, न अखबार, न बिजली, अशिक्षित जन समुदाय, गरीब किसानों के छोटे-छोटे गाँव और साल में छह महीने चारों तरफ बर्फ ही बर्फ!

हम करीब बीस दिन तो आठ हजार फीट से ऊपर ही रहे। कई बार साढ़े दस हजार फीट से भी अधिक ऊँचाई तक गये। बस एक शिखर से उतरना और दूसरे शिखर पर चढ़ना! कई बार तो बीस-पच्चीस मील तक कोई गाँव नहीं! ऊँटों के लम्बे-लम्बे काफिले। हजारों भेड़ों के काफिले और इन सबके बीच सीधे, सरल, निश्छल ग्रामवासी! यह मार्ग आम तौर से चालू नहीं है। काबुल से हैरात आने के लिए गजनी, कंधार और फरा होकर ही लोग आते-जाते हैं। पर वह रास्ता इस रास्ते से करीब दो सौ मील अधिक लंबा है, अतः हमने यह सीधा रास्ता लिया।

यह पूरा क्षेत्र घोर मांसाहारी है। लेकिन रोटी, दूध, दही, घी पर्याप्त मात्रा में शुद्ध और ताजा उपलब्ध होता है। हमने इस पूरे महीने में सब्जी के दर्शन तो केवल तीन बार ही किये! पर इन ग्रामवासी निष्कपट लोगों के लिए यह बड़ी अद्भुत बात थी कि बिना भाषा जाने ये दो परदेशी युवक इधर आखिर किस मतलब से आये हैं! हम जब ऊँचे पर्वत-शिखरों पर चढ़ते हुए शिथिल से दीख पड़ते थे तो ये ग्रामवासी, जो अपने ऊँट या घोड़े के साथ कहीं जा रहे होते थे, हमें भी अपने वाहन पर बैठाने की कोशिश करते थे। "हम तो पैदल ही चलेंगे", ऐसा समझाने पर अक्सर वे लोग हमारी पीठ पर लदे सामान को अपने ऊँट पर या घोड़े पर रख लेते थे। इस एक महीने में ऐसे लोग तो कम ही मिले, जो युद्ध, अणुशस्त्र और शांति के प्रश्नों को ठीक तरह से समझ सकें। पर बीच-बीच में सरकारी हाकिमों के साथ हम लोग ठहरते थे और वे लोग हमारी यात्रा के उद्देश्यों को समझ कर हमारे विचारों को सुनते थे।

हमारे इस मार्ग पर जो प्रमुख स्थान आये, उनमें पगमान, लाल, काशी, ख्वाजाचेस्त और ओबेह के नाम उल्लेखनीय हैं। इन स्थानों पर सरकारी दफ्तर भी हैं। अंगूर, रोटी और बिना दूध चीनी की चाय के साथ भोजन से परितृप्त होते हुए जब हम दिल्ली से १३५० मील की दूरी तय करके अफगानिस्तान के एक बड़े नगर हैरात पहुँचे, तो मन को बड़ा संतोष एवं उत्साह मिला कि हमने अपनी मंजिल का एक लम्बा फासला पूरा कर लिया है। और ७१ मील का सफर करने के उपरांत जब २१ सितम्बर को ईरान में पहला कदम रखा, तब तो हृदय में यह अहसास हुआ कि एक दिन इसी तरह हमारे कदम मास्को की भूमि पर भी पड़ेंगे और हम वहाँ की जनता को दूसरे देशों की जनता का यह संदेश देंगे कि "हम शांति चाहते हैं। हम युद्ध की संभावनाओं की समाप्ति चाहते हैं।" जब मास्को की जनता शांति के दो दूतों की बात में अपना हार्दिक समर्थन मिला कर वहाँ की सरकार से कहेगी कि "अब यह देखने का समय नहीं रहा कि अमेरिका वाले क्या कर रहे हैं! अब अमेरिका की तरफ से पहल का इन्तजार करने का वक्त भी नहीं रहा। अब तो हमें बिना किसी का मुँह देखे इन शस्त्रों का त्याग कर देना चाहिए।" ठीक इसी तरह वाशिंगटन की जनता भी एक दिन हमारे साथ मिलकर यह कहेगी कि "प्रतियोगिता और प्रतिस्पर्धा का क्षेत्र मानवता के विनाश का नहीं। हम मानव पर विश्वास रखते हैं। रूस के लोग भी मानव हैं, अतः हमें हर हालत में इन शस्त्रों का विसर्जन करना ही है।" बस यही हमारी मंजिल है।

अफगानिस्तान की इस पचपन दिन की यात्रा के बाद हम एक नया उत्साह और नयी ताजगी का अनुभव कर रहे हैं। यहाँ की जनता ने और यहाँ की सरकार ने हर तरह से हमारा स्वागत करके और हमारी मदद कर शांति के पक्ष में तथा युद्ध के विरोध में अपना समर्थन हमें प्रदान किया है। जनता के समर्थन का यह धन ही हमारा सबसे बड़ा धन है। इस धन को बटोरते हुए हम आगे बढ़ रहे हैं। यद्यपि यह देश बहुत गरीब है। औद्योगिक क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है, शिक्षा के क्षेत्र में अविकसित है। पर यहाँ के लोगों ने सदा ही धन, सुख और वैभव विलास से अधिक आजादी को पसंद किया है। अफगानी पठान जितने सरल और प्रेमल हृदय वाले हैं उतने ही बहादुर भी हैं। इसीलिए उन्होंने आजादी के साथ सौदा नहीं किया। गरीब रहे, पर गुलाम नहीं बने। केवल १७० लाख की आबादीवाला यह छोटा-सा देश पाकिस्तान के साथ अच्छे संबंध न होने के बावजूद भी रशियन या अमेरिकन फौजी संगठन में शामिल नहीं हुआ! किसी दूसरे मुल्क की सैनिक सहायता के बल पर अपनी आजादी की रक्षा करने का सपना उसने कभी नहीं देखा। सदा उसने तटस्थ विदेश-नीति के आधार पर बाहरी देशों के साथ अपने संबंध बनाये। ऐसे देश से हमारे जैसे शांति प्रचारकों को अगर प्रेरणा, समर्थन तथा उत्साह प्राप्त होना नितान्त स्वाभाविक है।

तोरखाम सरहद से हमने अफगानिस्तान की सरहद में २८ जुलाई को सायंकाल जब प्रवेश किया तो मन में एक आशंका-सी थी, अनजानापन-सा था। पर अब २१ सितम्बर को पचपन दिन में ७७ मील की यात्रा पूरी करके अब हम विदा होते समय पीछे मुड़ कर कृतज्ञ भाव से अफगानिस्तान को "खुदा-हाफिज" कह रहे हैं, तब एक-एक दिन चल-चित्र की भाँति हमारी आँखों के सामने आ रहे हैं। वह हार्दिक स्वागत, उदार आतिथ्य, प्रेमल आशीर्वाद और हमारे मिशन का पुरजोर समर्थन, सब कुछ हमें याद आ रहे हैं। अगर हम हवाई विमान से यहाँ आते तो काबुल आते या एक दो और भी बड़े नगरों में आते! क्या उस समय अफगान-जीवन का यह सच्चा दर्शन हमें मिलता? नहीं, कभी नहीं। पर इस गाँव-गाँव की पदयात्रा के द्वारा अफगान-जीवन का वास्तविक दर्शन करने के बाद हमें इस बात का गौरव महसूस होता है कि हम अफगानिस्तान में आये। अलविदा अफगानिस्तान!! [गतांक से समाप्त]

(सर्वोदय प्रेस सर्विस, इंदौर)

अफ्रीका के अंचल से

पूर्वी अफ्रीका में भारतीयों की समस्या

• सुरेश राम

यों तो पूर्वी अफ्रीका लाल सागर के नीचे से शुरू हो जाता है और सोमाली, ईथोपिया, कीनिया, यूगाण्डा, टांगानिका जंजीबार और मोजाम्बिक इसमें माने जाने चाहिये, लेकिन अंग्रेजों ने अपने अधीनस्थ इलाके का नाम ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका डाल दिया, पुर्तगीज अपने अधीनस्थ मोजाम्बिक देश को पुर्तगीज ईस्ट अफ्रीका कहने लगे और सोमाली व ईथोपिया अपने स्वतंत्र नाम से पुकारे जाते थे। मगर ब्रिटिश ईस्ट अफ्रीका में चार देश थे और अंग्रेजों ने वहाँ एक ही तरह का सिक्का, एक ही तरह के डाक-टिकट, एक ही तरह का व्यापार-उद्योग, एक ही तरह की रेलवे व जहाज व्यवस्था आदि कायम कर दी, इसलिए पूर्वी अफ्रीका नाम चल पड़ा और इसमें चार देश शामिल हैं—कीनिया, टांगानिका, यूगण्डा और जंजीबार।

इनमें से टांगानिका ने ९ दिसम्बर १९६१ को स्वराज्य प्राप्त किया और आगामी ९ दिसम्बर को वहाँ प्रजातंत्र की स्थापना होगी। यूगण्डा ने इसी ८ अक्टूबर १९६२ को स्वतंत्रता प्राप्त की, मगर अभी इंग्लैण्ड की रानी को अपनी रानी मानता है। कीनिया और जंजीबार में मिली-जुली (अफ्रीकन व अंग्रेज) लोकप्रिय सरकार है, मगर अभी यूनियन जैक बरकरार है और अन्तिम सत्ता अंग्रेज की ही है।

इन चारों देशों में भारतीय काफी तादाद में हैं। कुछ तो पिछले पचीस-तीस साल से आजाद हैं, लेकिन कुछ परिवार ज्यादा पुराने हैं और कई पीढ़ी यहाँ पर गुजार चुके। इनको यहाँ एशियन कहा जाता है, क्योंकि कुछ भारत के हैं, कुछ पाकिस्तान और एशिया के अन्य देशों के भी।

ये एशियन भाई बड़ी तादाद में ब्रिटेन और उपनिवेश के नागरिक हैं। अंग्रेजी राज होने के कारण ब्रिटेन की नागरिकता में काफी हिफाजत और सहूलियत थी। मगर हिन्दुस्तान की आजादी के बाद से, अफ्रीका में भी आजादी के आन्दोलन ने जोर पकड़ा। एशियन बन्धुओं ने इसमें काफी सहयोग भी दिया।

एशियन की आबादी इस प्रकार है :

देश	कुल आबादी	एशियन	प्रतिशत
(१) कीनिया	६५, ४२, ७००	१, ७४, ३००	२. ६५
(२) टांगानिका	१,०१, २९, ६००	८७, ३००	०. ८६
(३) यूगण्डा	६६, ८२, ४००	७६, २००	१. १३
(४) जंजीबार	३, १४, ७४०	२०, १००	६. ३६

प्रतिशत की दृष्टि से तो एशियनों की संख्या कम ही है। लेकिन व्यापार और उद्योग के विचार से, उनका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण और ऊँचा है। बिना किसी अतिशयोक्ति के यह कहा जा सकता है कि पूर्वी अफ्रीका के व्यापार की रीढ़ की हड्डी वे ही हैं। यहाँ के विकास और उन्नति में उनका बड़ा हाथ रहा है। तरह-तरह की तकलीफें उठा कर वे इस घने जंगलों में गये, काम-काज फैलाया और दुनिया से उसका सम्बन्ध स्थापित किया। थोड़ी के चंद योरोपियन उद्योगपतियों को छोड़ दें, तो ज्यादातर व्यापार एशियन हाथों में ही है। मगर अब स्थानीय अफ्रीकन बन्धु भी रुचि ले रहे हैं और चीजें संभालते जा रहे हैं।

राजनीतिक स्थान

पूर्वी अफ्रीका के अधिकांश एशियन गुजराती भाषा भाषी हैं। इनमें हिन्दू हैं, मुसलमान हैं, इस्माईली (आगा खाँ को मानने वाले) हैं, बोहरा हैं। ज्यादातर तो कच्छ, सौराष्ट्र और काठियावाड़ से आये हुए हैं, लेकिन बहुतेरे गुजरात के दक्षिणी भाग के और सिन्ध (पाकिस्तान) के भी हैं। कुछ तादाद पंजाब, महाराष्ट्र, केरल और भारत के अन्य प्रदेशों से आने वालों की भी है। पूर्वी अफ्रीका के जो चार बड़े नगर हैं—दारेस्सलाम (टांगानिका), कम्पाला (यूगण्डा), नैरोबी (कीनिया) और जंजीबार, इन पर काफी हद तक कमाई की छाप है।

मगर अफ्रीकन राजनीतिक पक्षों ने अपनी सदस्यता मूल अफ्रीकनों तक ही सीमित रखी। इसे कुछ एशियनों ने तो स्वाभाविक समझा, लेकिन कुछ को इससे ठेस लगी और वे राजनीतिक आन्दोलन में खुल कर हिस्सा नहीं ले सके। दूसरे, यह भी है कि व्यापार के हित को दृष्टि में रख कर कुछ एशियन अंग्रेजी राज के विरुद्ध ज्यादा दूर तक नहीं जा पाते थे और अफ्रीकन राष्ट्रीयता का पूरा-पूरा साथ भी न दे सके। लाजमी बात है कि वे यहाँ के लोगों की निगाह में खटकने लगे और उनके कारण स्वभावतः सारे एशियन ही एक तरह की शंका की दृष्टि से देखे जाते थे। मगर तिसपर भी उन्होंने स्वतंत्रता-संग्राम में सहायता तो की, विशेषकर आर्थिक रूप से।

इस संग्राम में वेग आया और टांगानिका ने सबसे पहले गुलामी की जंजीरें तोड़ फेंकीं। सौभाग्य से उसे डॉ० जूलियस के० न्यरेरे नाम का ऐसा लोकप्रिय नेता मिला है जो अत्यन्त सुशील, उदार और सरल हृदय के हैं, साथ ही बहुत गम्भीर, विवेकी और दूरदृष्टि वाले भी। जब वे प्रधान मंत्री हुए, तो उन्होंने ऐलान किया कि हम टांगानिका में गैर-नस्ली (नान रेसियल) समाज की स्थापना करना चाहते हैं, जिसमें नस्ल, रंग, जाति, धर्म आदि के भेदभाव नहीं होंगे। इससे सबको ही सन्तोष हुआ। मगर जब भारत जैसे संस्कारवान देश के अन्दर 'गुजरात गुजरातियों के लिए,' 'महाराष्ट्र महाराष्ट्रियों के लिए' और 'असम असमियों के लिए' आदि नारे लग सकते और आन्दोलन चल सकते हैं, तब शोषित, पीड़ित पादाक्रान्त अफ्रीका में "अफ्रीका अफ्रीकनों के लिए" का नारा बुलंद होना कौन ताज्जुब है? नहीं, नहीं, एकदम प्राकृतिक है। लेकिन कुछ एशियन भाई इसके कारण मन ही मन परेशानी महसूस करने लगे और सशंकित हो गये।

आर्थिक संकट

समय जैसे बीतता जाता है, यहाँ के मूल निवासी तरह-तरह के काम सीखते जाते हैं और शिक्षा भी ग्रहण कर रहे हैं। अब वे बहुत से क्षेत्रों में एशियन का मुकाबला भलीभाँति कर सकते हैं। उनकी भाषा स्वाहिली की मान्यता बढ़ी है और सरकारी कामकाज भी धीरे-धीरे उसी में होने लगेगा, यद्यपि आज तो अंग्रेजी ही चलती है। सरकारी नौकरियाँ जो पहले अंग्रेजों या एशियनों की बपौती थी, अब उनमें अफ्रीकन को भी तेजी से प्रवेश मिल रहा है। एशियनों को बेकारी का सामना करना पड़ रहा है।

लेकिन यह बेकारी केवल एशियनों में ही नहीं बढ़ रही है। क्या टांगानिका और क्या अन्य देश, सभी में बेकारी भयानक रूप से मौजूद है। टांगानिका की राजधानी दारेस्सलाम में सैकड़ों नौजवान घर-घर जाकर "काजी" (काम) मांगते हैं, ताकि अपनी गुजर-बसर कर सकें। बेकारी पूर्वी अफ्रीका का राजरोग है। ग्राम-उद्योग बहुत थोड़े हैं और उनमें लोगों की रुचि नहीं। एशियनों के साथ एक दिक्कत यह भी है कि वे नगरों में ही रहते हैं और खेती-बाड़ी या देहाती उद्योग धन्धों से उनका कोई सरोकार कभी रहा नहीं।

बेकारी दूर करने के लिए पूर्व अफ्रीका में जो पद्धति अपनायी जा रही है वह वही है, पश्चिमी नमूने वाली—बड़ी पूंजी, देश के अन्दर की या बाहर से माग कर, लगा कर बड़े-बड़े कारखाने खोलना। दुर्भाग्य की बात है कि सारे आलम में विकास के नाम पर इस ढाँचे की नकल की जा रही है। और जब अपना हिन्दुस्तान ही इसका शिकार हो गया, तो दूसरे किसी को दोष देना ज्यादती है। इसलिए जिस तरह औद्योगीकरण के बावजूद हिन्दुस्तान में बेकारी बढ़ती आ रही है, उसी तरह टांगानिका, कीनिया, यूगाण्डा में भी। दुखिया का दुःख दूर होता नहीं दीखता। काश! पूर्वी अफ्रीका के लोग ग्रामोद्योग या गृह-उद्योग को अपनाते और अपने पैरों पर खड़े होते! मगर आफत तो यह है कि अपने प्रवासी एशियन भाई भी ग्रामोद्योग को दिल्लगी समझते और नीची निगाह से देखते हैं।

व्यवहार का प्रश्न

व्यापार लगातार गिरते जाने के कारण, एशियनों के सामने बड़ी समस्या खड़ी हो गयी है। उनका व्यवहार भी ऐसा है जिससे स्थानीय लोगों को सन्तोष नहीं है। ज्यादा दाम लेकर ज्यादा मुनाफा कमाना उनकी कुछ आदत-सी हो गयी है और दाम भी मुँह-देखा माँगते हैं।

एक आपबीती घटना है। मेरे पेट में एक दिन दर्द उठा। सोचा कि गरम पानी का सेंक करने से ठीक हो जायेगा। तो गरम पानी वाली रबड़ की बोतल लेने गया। एक योरोपियन दूकान पर पहुँचा, पूछा कि यह मिलेगी? तो उन्होंने पहले चीज दिखलाई और फिर नम्रता से दाम बतलाये—नौ शिलिंग। वहाँ से दूसरी दूकान पर, एक एशियन वयोवृद्ध उसके मालिक थे, गया। दर्याफ्त किया कि वह रबड़ वाली बोतल है? झट से कहा, दस शिलिंग में मिलेगी! मैं धन्यवाद देकर बाहर आ गया।

एशियनों का यह व्यवहार बहुत खटक जाता है। 'एक दाम' मानों वे जानते ही नहीं। जैसा ग्राहक वैसे दाम! शायद इसी चीज से दुःखी होकर डॉ० ज्यूलियस न्यरेरे ने गत २० सितम्बर को एक बात कही। दारेस्सलाम में कोआपरेटिव सप्लाई एसोसियेशन आफ टांगानिका की पहली दूकान का वे उद्घाटन कर रहे थे। उन्होंने जनता से अपील की कि इस दूकान के शेयर खूब खरीदें, ताकि चीजें कम और वाजिब दाम पर मिल सकें। अपने व्याख्यान में उन्होंने यह भी कहा कि देहात में तो किसान की पैदावार की भुगतान की खातिर हम कुछ कर सके हैं, लेकिन शहर के अन्दर जो नागरिक रहता है, उसके खर्चे या मान घटाने और आयात, थोक व फुटकर व्यापार के नफे में उसे सही हिस्सा दिलाने की स्थिति में कुछ नहीं किया जा सका है और यह व्यापार ज्यादातर गैर-अफ्रीकन हाथों में है। डॉ० न्यरेरे का कथन सोलह आने सही है।

उधर, एशियन की शिकायत यह है कि हिन्दुस्तान से जो माल उसके पास आता है, वह माँग के अनुसार पूरा और सच्चा नहीं उतरता। उसमें मिलावट रहती है। बीजक में होगा कि कपड़ा छत्तीस इंच अरज का है, लेकिन थान निकलता है बत्तीस इंच का! फिर कपड़ा भी उसी जात का अक्सर नहीं रहता जैसा लिखा रहता है! इस मिलावट से यहाँ का व्यापारी बहुत दुःखी है। फिर, जापान आदि के बने माल की कड़ी होड़ का भी सामना करना पड़ता है। इस तरह एशियन व्यापारी आत्मविश्वास और सद्भावना दोनों खो रहा है।

[क्रमशः]

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

आजकल हम पश्चिम बंगाल के मालदा जिले में यात्रा कर रहे हैं। मालदा का नाम सुनते ही चित्त पर कुछ खट्टी मीठी प्रतिक्रिया होती है। मालदा के प्रसिद्ध मीठे आम अपनी मधुरता की याद दिलाते हैं, किन्तु पिछले दिनों मालदा में एक छोटी-सी घटना के कारण जो साम्प्रदायिक उपद्रव हुए, उनसे मन खट्टा हो जाता है।

यहाँ बाबा का अच्छी तरह से स्वागत हो रहा है। मालदा जिले की जनता—हिंदू और मुसलमान—बाबा का प्रेम और शांति का संदेश रोज सुन रही है। दिनाजपुर और मालदा, दोनों सीमा के जिले हैं। दिनाजपुर में बाबा ने कहा, "गांधीजी के जाने के बाद आज तक हमने शांति-सैनिक के नाते काम किया। हिंदुस्तान-पाकिस्तान होने के बाद यहाँ के मुसलमानों में कुछ भय था। इसलिए हम सात दिन अजमेर में रहे। वहाँ के दरगाह में गये, मुसलमानों के साथ कुरान पढ़ी। सब मुसलमान वहाँ इकट्ठे हुए थे और हर मुसलमान ने हमारे हाथ का चुम्बन लिया।

"तेलंगाना में गड़बड़ हुई तो वहाँ हम शांति-सैनिक के नाते गये थे। वहाँ हमें भूदान मिला। पाकिस्तान में गये, सोलह दिन वहाँ घूमे। यह बहुत बड़ी चीज बनी। हिंदू दाता था और जमीन मुसलमान को दी। मुसलमान दाता था और जमीन हिंदू को दी। यह जानबूझ कर नहीं किया, लेकिन सहज भाव से हुआ। प्रजा में काफी प्रेम बना। कश्मीर गये थे, तब भी शांति सैनिक के नाते गये थे। चम्बल घाटी में, जहाँ पचास सालों से डाकुओं का उपद्रव है, शांति-सैनिक के नाते गये थे। वहाँ डाकुओं ने अपने शस्त्र हमको अर्पित कर दिये। सब जगह जनता ने हमारा शांति का संदेश सुन लिया और जनता में काफी प्रेम बना। सीमा के अंदर हमेशा कुछ घटनाएं होती हैं। लेकिन उसमें साम्प्रदायिकता नहीं होती। कोई गलत काम कर लेता है और अखबार उसको बढ़ा चढ़ा कर छाप देता है। लेकिन हम आपके बीच जाहिर करना चाहते हैं कि हिंदू, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, जैन और दूसरे सम्प्रदायों के लोग, सबका हिंदुस्तान पर पूरा हक है।"

मालदा के दूसरे पड़ाव पर ही बाबा ने कहा, "स्वराज्य प्राप्ति के १४ साल बाद और हिंदुस्तान पाकिस्तान का बंटवारा होने के बाद भी शांति के बदले अशांति कायम रखेंगे, तो मालूम नहीं, भारत के कितने टुकड़े करेंगे ? क्या इससे भारत बचेगा ? पाकिस्तान का क्या होगा ? किसी स्थान पर छोटी सी आग लगी, लेकिन उसकी खबरें फैल कर देश को आग लग जायेगी ! ऐसी घटना नहीं होनी चाहिये।"

इस शांति और प्रेम के संदेश को प्रत्युत्तर भी मिल रहा है। छब्बीस दिन में यहाँ ६,३१२ कट्ठा एकड़ जमीन दान में मिली। २८९९ रु० सम्पत्ति-दान मिला और ३३२४ रु. की साहित्य-बिक्री हुई। क्षितिश बाबू के क्षेत्र में, याने मालदा जिले में तो ८ ग्रामदान भी मिले। परस्पर प्रेम, विश्वास बनाने का कार्यक्रम आकार ले रहा है। गाँव की जनता इसका अर्थ ही नहीं समझती कि परस्पर विश्वास बनाना माने क्या करना ? लेकिन उस दिन बाबा ने इतनी अच्छी तरह से समझाया कि लोगों के चेहरे ही बोल रहे थे कि हम समझ गये हैं।

"अपरिचित मनुष्य के पास गाय एकदम नहीं आती। गाय के सामने घास रखेंगे, तो धीरे धीरे गाय आयेगी। धीरे धीरे आयेगी, क्यों ? अपरिचित मनुष्य होगा, इसलिए एकदम विश्वास नहीं होगा। दुबारा आयेगी तो आपके हाथ में घास नहीं होगा, तो भी आयेगी। तीसरी बार आयेगी तो आपके हाथ में डंडा होगा, तब भी उसको भय नहीं लगेगा। उसको पूरा विश्वास हो गया होगा। तो यह जरूरी है कि पहले विश्वास उत्पन्न करना चाहिये। इसलिए हम मालिकों को कहते हैं कि विश्वास उत्पन्न करने के लिए पहले थोड़ी जमीन दान दो। रास्ते में नाश्ता खाने के लिए हम रुके थे, तो एक कुत्ता हमारे पास आया। महाराष्ट्र का बाबा और असम का कुत्ता, लेकिन दो चम्मच दही हमने उसको दिया, तो उसको विश्वास उत्पन्न हो गया। ये छोटी मिसालें हैं, लेकिन सारे जीवन का रहस्य उसमें आता है।"

बंगाल में रास्ते में खूब सुनने को मिलता है—चैतन्य प्रभु का दिया हुआ नाम-कीर्तन 'हरेकृष्ण हरेराम' और सभा के आरंभ में गुरुदेव का संगीत। बाबा कहते हैं, "सामाजिक कार्य के आरंभ में भजन करते हैं। कारण यह है कि चित्त में अनेक प्रकार के विकार होते हैं, वे जायें। चित्त का विचार और व्यापार शांत होकर शुभ कार्य में एकाग्र होना, यह बहुत अच्छा रिवाज है। हम चाहते हैं कि इसके साथ भूदान-आंदोलन भी चले। वह बहुत ही मंगल काम होगा। भजन हृदय के तारों को छुयेगा और दान की धारा बहेगी।

"अहिंसा की शक्ति संगीत ने बढ़ाई। बंगाल में अपनी एक विशेषता है। बंगाल में सबको गाना आता है। यात्रा में हमको बंगाल का आदमी मिला और हमने कहा कि गाना गायेंगे, तो कभी ना नहीं कहा। बंगाल गान भूमि है, वैसे दान भूमि भी होना चाहिये। गीता में कहा है,'माम् अनुस्मर युद्धयत'—मेरा स्मरण करके युद्ध को प्रवृत्त हो। यहां दान और गान, दोनों चले तो भगवान् गीता का पूरा रूप यहाँ दिखेगा।"

पहले दो बार बाबा बंगाल में आये थे, तो वह केवल बंगाल रास्ते में पड़ता था, इसलिए। लेकिन इस मर्तबा खास बंगाल के लिए ही आये हैं। बाबा का स्वागत पश्चिम बंगाल के मुख्य मंत्री ने किया। मंत्रीगण के अन्य सदस्य भी यात्रा में आते रहते हैं। बाबा को मंत्रीगण पसन्द हैं, लेकिन उनकी लंबी-लंबी उपाधियाँ पसंद नहीं। बाबा कहते हैं कि हम मनुष्य को व्यक्ति की हैसियत से पहचानते हैं। उसके 'लेबल' से नहीं और इसलिए हम उनको अपनाते हैं तो उनका पूरा अपना रूप दे देते हैं। उनको अपना रूप देने के लिए बाबा उनको नाम भी बदल देते हैं। 'राजस्व-मंत्री' को बाबा ने बनाया है 'प्रभदान-मंत्री'। ठीक ही तो है। ग्रामदान सरकार मान्य होने के बाद, उसका सूत्र आपके हाथ में ही जानेवाला है। बंगाल सरकार ने बाबा के स्वागत में भूदान आरडिनन्स पास किया है उसके सूत्र भी आपके हाथ में है। कुछ रोज व्यापार और उद्योग मंत्री हमारे साथ थे। आपका परिवार चैतन्य महाप्रभु के सम्प्रदाय का है। आपके हृदय में खूब भक्ति भरी है। इसलिए बाबा ने इनका नामकरण किया 'करुणा मंत्री'। फिलहाल ग्रामपंचायत के मंत्री हमारे साथ हैं। उनको नाम मिला है 'प्रभ स्वराज्य मंत्री'। बंगाल सरकार खूब चाहती है कि बाबा बंगाल को पूरा समय दें और बंगाल में सामाजिक तथा आध्यात्मिक क्रांति को अवसर मिले।

मंत्री भी हमारे साथ हैं। परसों उनकी बाबा के साथ चर्चा हुई। चर्चा का मुख्य विषय था—स्कूलों में पढ़ाये जाने वाले विषय। बाबा ने कहा, "स्कूलों में विषय रखते हैं अरबी या संस्कृत। इससे क्या होता है, जो हिंदू होते हैं वे संस्कृत लेते हैं और जो मुसलमान होते हैं वे अरबी लेते हैं। इस 'सिलेक्शन' से 'स्टेट' में दो भाग पड़ जायेंगे। और दूसरी बात, जो अरबी लेंगे वे बंगला में कच्चे रह जायेंगे। और आपकी सब परिभाषा, खास करके 'सांस्कृतिक विषयों' की, संस्कृत पर आधारित है। इसलिए हम समझते हैं कि संस्कृत सबको आनी चाहिये वाक्य-रचना के लिए नहीं, तो केवल शब्द-साधन के लिए। वह 'संस्कृत' नाम से अलग विषय नहीं होगा। लेकिन इसका अंतर्भाव बंगाली भाषा में ही होगा।

"इस पर से परिभाषा के बारे में चर्चा छेड़ी गयी। इस चर्चा के दरमियान बाबा ने सहज ही बताया" "मैं गुजरात विद्यापीठ में गणित और तर्कशास्त्र सिखाता था। भूमिति सिखाने के समय मैंने अपने कुछ शब्द बनाये थे। 'आल्टरनेट ऐंगल' को 'अभिकोण' नाम दिया था, 'एडजसेंट ऐंगल' को 'उपकोण' और 'अपोजिट ऐंगल' को 'प्रतिकोण'। ये शब्द हमको ज्यादा सरल और सहज मालूम पड़ते हैं।"

बाबा तो जाहिर ही अच्छे शिक्षक हैं। बड़े बड़े शास्त्र भी वे सरलता से सिखाते हैं। लेकिन वे कहते हैं, हमको 'एलिमेंटरी क्लास' लेना ज्यादा अच्छा लगता है। 'सीताराम' सिखाना बहुत अच्छा लगता है। सिवनी जिले में एक चोर को हमने लिखना सिखाया। हमने देखा कि उसको इतनी प्रसन्नता हुई कि 'बाबा ने हमको रामजी का नाम सिखाया अब मेरी जेल आनंद में कटेगी।' अपने आराम का समय वह अक्षर, लिखने का अभ्यास करने में बिताता। हमने प्रथम उसको 'राम' सिखाया। फिर सिखाया 'सीता।' उसमें सिर्फ 'त' सिखाना पड़ा 'र' का 'स' तो सहज ही बन जाता है। फिर आया 'भरत'। उसमें 'भ' सिखा दिया, तो हो गया। उसके बाद उसको पूछा 'भरत' का भाई कौन ? तो उसने बताया भरत। वह उत्तर प्रदेश का था। उधर शायद शत्रुघ्न को भरत कहते हैं। तो हमने वह भी सिखा दिया और फिर एकदम रामायण ले लिया—

मुदमंगलमय संत समाजू
जो जग जंगम तीरथ राजू।
राम भक्ति जहँ सुरसरि धारा
सरसइ ब्रह्म विचार-प्रचारा।

——

निःशुल्क प्राकृतिक चिकित्सालय

इधर एक वर्ष से चिकित्सालय निःशुल्क करने का विचार निरंतर चल रहा था, पर मैं किसी अंतिम निर्णय पर नहीं पहुँच पाता था। मेरे मित्रों के मन में इस प्रकार का विचार आना ईश्वर की महान् कृपा है और अन्त में आज इस बात की विजय हुई कि चिकित्सालय निःशुल्क रखा जाय और साथ ही अन्तर्मन से इस प्रेरणा को शक्ति मिली—"तुमने जो कुछ धन, ज्ञान, यश एवं अनुभव प्राकृतिक चिकित्सा के द्वारा पिछले २० वर्षों में प्राप्त किया है, उसे इसी कार्य के प्रचार में लगा, अन्यथा तुम्हारे इस पूंजी से समाज का क्या कल्याण होगा ?'

मैं यह निर्णय करने में झिझक रहा था कि आखिर यह सब कैसे हो सकता है ? परन्तु पुनः अन्दर से एक आवाज आयी कि तुम साहस करो, सब कुछ हो जायेगा और ईश्वर तुम्हारी मदद करेगा। अन्त में मैंने २ अक्टूबर, १९६२ गान्धी जयन्ती से प्राकृतिक चिकित्सालय निःशुल्क करने का निश्चय किया है। जो सज्जन इस चिकित्सालय में भर्ती होकर लाभ उठाना चाहें उन्हें पहले से अपनी जगह सुरक्षित करानी चाहिये।

ईश्वर से मेरी यही प्रार्थना है कि वह मेरे इस निर्णय में सहायता करे। जो भाई बहन धन नहीं, केवल श्रम एवं बुद्धि द्वारा इस कार्य में हाथ बंटाना चाहें, उनका मैं स्वागत करूँगा।

प्राकृतिक चिकित्सालय, —हीरालाल,
भगवन्तनगर, उन्नाव (उ०प्र०) संयोजक

इन्दौर में साहित्य-प्रचार के नये अनुभव

जसवंतराय भाईजी

इन्दौर में विनोबाजी के आगमन के समय साहित्य-बिक्री का काम काफी हुआ। परंतु उसके एक वर्ष बाद तक तो वह करीब-करीब बन्द-सा ही हो गया। हमारे आन्दोलन का मुख्य आधार विचार है, अतः विचार-प्रचार के इस प्रबल साधन की उपेक्षा अधिक समय तक हो नहीं सकती थी। इस दृष्टि से गत ३० जुलाई '६१ को विसर्जन आश्रम में तथा २९ मई '६२ को नगर में सर्वोदय साहित्य भंडार की स्थापना हुई।

विचारों की गहराई के साथ-साथ हमारे साहित्य में रोचकता एवं विषयों की विविधता हो तभी सामान्य जनता भी इस ओर आकृष्ट हो सकती है। इस विचार से सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन के अतिरिक्त अन्य प्रकाशनों के उत्तम साहित्य का भी समावेश उसमें किया गया। इस प्रकार नगर एवं प्रांत में, शासकीय एवं अशासकीय संस्थाओं में तथा घर-घर व्यक्तिगत सम्पर्क के द्वारा इस भंडार के माध्यम से गत १२ माह में लगभग २१००० रु० की साहित्य बिक्री हो चुकी है।

फिर भी इस बीच हुए अनुभव के आधार पर यह स्वीकार करना पड़ेगा कि आज सामान्य जनता में सत्साहित्य के प्रति भी कुछ विचित्र सी उदासीनता एवं अरुचि घर कर गयी है और खेद तो यह है कि वह दिनों दिन बढ़ती हुई ही दृष्टिगोचर होती है। उदाहरण के लिए शांति-सेना विद्यालय की बहनों ने गत 'सर्वोदय-पर्व' के अवसर पर घर-घर संपर्क कर लगभग २००० रु० के साहित्य की बिक्री की, जब कि इस बार उतनी ही बहनों के द्वारा पूरा परिश्रम करने पर भी उससे चौथाई बिक्री करना मुश्किल हो गया।

इतना ही नहीं, अपने ही कार्यकर्ताओं में जो उत्साह और जो लगन साहित्य-प्रचार के लिए कुछ समय पूर्व थी, वह इन दिनों नजर नहीं आ रही।

अतः स्वाभाविक ही इस दिशा में नये मार्ग खोजने की तथा नये प्रयोग करने की आवश्यकता महसूस हो रही है। इस दृष्टि से चालू 'सर्वोदय-पर्व' में इन्दौर नगर में जो दो विशेष उत्साहजनक प्रयोग हुए, उनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

सर्वोदय-साहित्य प्रदर्शनियाँ लगाने का संकेत इस बार सर्व-सेवा-संघ ने अपने परिपत्रों एवं छपे पर्चों में किया ही है। तदनुसार एक सफल आयोजन यहाँ के पागनीस पागा स्थित बाल निकेतन संघ के बालमंदिर में हुआ, जिसे वहाँ के कर्मचारियों एवं बच्चों के आग्रह के कारण एक की बजाय लगातार तीन दिन तक चलाना पड़ा। छोटे छोटे बच्चों ने पूरी प्रदर्शनी का अवलोकन करने के साथ साथ अपनी शक्ति के अनुसार दो आने, चार आने अथवा इससे कम ज्यादा कीमत की लगभग सौ रुपये की शिक्षणात्मक पुस्तकें खरीदीं। साहित्य के साथ-साथ विनोबा-पदयात्रा से संबंधित बड़े चित्र तथा चार्ट आदि भी रखे गये थे तथा कुमारी निर्मला बहन एवं श्री दादाभाई नाईक के सरल भाषा में बालोपयोगी भाषण भी हुए। इस सबका काफी अच्छा प्रभाव वातावरण पर पड़ा। फिर भी बच्चों को इस ओर आकृष्ट करने तथा पूरा वातावरण आनन्दमय एवं शिक्षाप्रद बनाने का मुख्य श्रेय वहाँ के कर्मचारीगण को ही है। इस प्रकार खेल खेल में काफी उपयोगी बाल-साहित्य की बिक्री तो हो ही सकती है, उसके अलावा बच्चों के मानस पर एक अमिट एवं प्रभावशाली छाप भी अपने विचार की पड़ सकती है, यह हम सबको स्पष्ट हुआ।

इस दिशा में दूसरा विशेष प्रयोग गत २४ से २७ सितम्बर तक स्थानीय मालवा मिल के कर्मचारियों एवं मजदूरों के बीच हुआ, जो इन्दौर नगर के इतिहास में अपने ढंग का प्रथम एवं नवीन प्रयोग तो है ही, परंतु इससे भी बढ़कर क्या मिल के अधिकारी अथवा कर्मचारी वर्ग और क्या आश्रम के कार्यकर्तागण, किसी को भी शायद उससे उत्पन्न उत्साह, स्वयंस्फूर्ति तथा इतने परस्पर के सौहार्द, आत्मीयता एवं प्रेमपूर्ण वातावरण की कल्पना न थी। निस्संदेह इस आयोजन की मूल प्रेरणा गत दिनों बम्बई की मिलों में हुए तत्संबंधी प्रयोगों से मिली तथा परिणाम-स्वरूप स्थानीय सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के निवेदन पर मिल के 'मेनेजमेन्ट' ने अपने अधिकारियों, कर्मचारियों तथा श्रमिक बन्धुओं को उक्त साहित्य पचास प्रतिशत छूट पर देने का सराहनीय निश्चय किया। इतना ही नहीं प्रदर्शनी लगाने के लिए उपयुक्त स्थान की खोज, उसमें पुस्तकें एवं चित्र आदि लगाने की पूरी एवं सुन्दर व्यवस्था कर दी गयी तथा अपने लगनशील कार्यकर्ताओं के द्वारा अन्य सभी आवश्यकताओं एवं सुविधाओं की भी यथासंभव पूर्ति करने में कोई कसर उठा नहीं रखी गयी। परिणामस्वरूप उक्त चार दिनों में मालवा-मिल के लगभग ५००० व्यक्तियों में से करीब ३५०० व्यक्तियों ने उस साहित्य तथा चित्र प्रदर्शनी का बारीकी से अवलोकन किया तथा उनमें से लगभग १००० व्यक्तियों ने कुल ३४५८ रु० २६ न० पै० का साहित्य खरीदा। ५५० व्यक्तियों ने अश्लीलता के विरोध में हस्ताक्षर भी किये।

कई लोगों ने प्रायः हर दिन पुस्तकें खरीदीं। कुछ लोग स्वयं पढ़ नहीं सकते थे, अतः उन्होंने अपने बच्चों के लिए उपयुक्त पुस्तकों की खोज करने हेतु विक्रेता भाई-बहनों की मदद से चुनाव किया। कई बार माताएँ भी इस हेतु अपने बच्चों को वहाँ ले आयीं, तो कईयों ने अपने पूरे परिवार सहित वहाँ आकर प्रदर्शनी के अवलोकन तथा साहित्य खरीदी का आनन्द उठाया।

स्टाल पर सर्वोदय-साहित्य भंडार के कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त शांति-सेना विद्यालय, कस्तूरबाग्राम, इन्दौर नगर सघन क्षेत्रीय योजना, गांधी तत्त्व प्रचार केन्द्र तथा विसर्जन आश्रम के कुल १४ भाई-बहनों ने पूरे समय तक और लगभग १० कार्यकर्ताओं ने आंशिक रूप से काम किया। मिल की ओर से भी ६-७ कार्यकर्ताओं ने समय-समय पर इस कार्य में आवश्यक मदद पहुँचायी।

प्रदर्शनी औसत १८ घंटे प्रतिदिन, यानी ४ दिन में कुल ७२ घंटे तक खुली रही। एक दिन (२५ सितम्बर को खर्चा बटने के दिन) वह प्रायः पूरी रात को खुली रखनी पड़ी। तीनों पालियों के शुरू व अंत में तथा भोजन एवं विश्राम के समय हमेशा विशेष भीड़ रही।

अन्य सत्साहित्य रहने पर भी सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन की कई पुस्तकों की काफी माँग होती रही। सबसे अधिक खपत भी इन्हीं पुस्तकों की हुई। 'गीता प्रवचन' की बिक्री (३०० प्रतियों की) सर्वाधिक हुई। अधिक बिकने वाली पुस्तकों की क्रमवार तथा तुलनात्मक सूची अलग से दी है।

साहित्य प्रदर्शनी के चारों तरफ लगे बड़े आइल पेंटिंग्-चित्रों को भी लोगों ने काफी उत्सुकता से देखा तथा समझ न आने पर अपने मित्रों से या फिर स्टाल के कार्यकर्ताओं से उनका आशय समझने की कोशिश की।

"ऐसी प्रदर्शनी लगा कर आपने बहुत अच्छा किया।" "हमारे मिल संचालकों ने यह कितना अच्छा निर्णय लिया है।" "हर वर्ष कम-से-कम एक बार वे ऐसा मौका दें तो बहुत अच्छा हो।" "अब आप ऐसी प्रदर्शनी और कहाँ लगायेंगे ?" इत्यादि सहज उद्गार एवं प्रश्न दिन में कई बार आगंतुक उत्सुक व्यक्तियों से सुनने को मिलते रहे। इतना विशाल, विविध और उनके काम का सर्वोदय-साहित्य भी हो सकता है, इसकी भी प्रायः पूर्वकल्पना न होने से, अनेकों ने अपना समाधान प्रकट किया।

सारांश, चार दिन तक जो चहल-पहल इस निमित्त रही, जो उत्साह मालवा मिल के ऊपर के अधिकारियों से लगा कर नीचे तक के साधारण व्यक्तियों में ही नहीं, अपने कार्यकर्ताओं में भी देखने को मिला तथा साहित्य का एवं अन्य जितना प्रत्यक्ष कार्य हुआ उसकी कल्पना अथवा अपेक्षा हममें से किसी को नहीं थी। इस दिशा में आगे भी प्रयास हो तो साहित्य का तथा उसके द्वारा विचार प्रचार का बहुत बड़ा काम नगर में हो सकता है। इसकी संभावनाएँ अब सबके सम्मुख स्पष्ट हो रही हैं। आशा है, इस संबंध में यथाशीघ्र योग्य प्रयत्न होंगे।

मालवा मिल सर्वोदय साहित्य-प्रदर्शनी

सबसे अधिक बिकने वाली क्रमवार प्रथम तेरह पुस्तकें—

(१) गीता प्रवचन
(२) आश्रम भजनावलि
(३) देर है अन्धेर नहीं
(४) प्राकृतिक चिकित्सा-विधि
(५) नेहरू चित्रावलि
(६) गांधी-चित्रावलि
(७) आत्मकथा-गांधीजी
(८) नीति-निर्झर

तुलनात्मक आँकड़े विषयवार

गांधी विनोबा-सर्वोदय साहित्य	३१ प्रतिशत
बाल साहित्य	२१ „
स्वामी विवेकानंद, रामतीर्थ श्रीअरविन्द तथा अन्य आध्यात्मिक	११
स्वास्थ्य चिकित्सा	१० प्रतिशत
बौद्ध साहित्य	५ „
अन्य (विविध)	१० „

भाषावार

हिन्दी	८५ प्रतिशत
अंग्रेजी	११ „
मराठी	३ „
उर्दू, सिंधी, गुजराती	१ „

अन्य संक्षिप्त जानकारी

२४ से २७ सितम्बर तक कुल दिन—४
कुल साहित्य-बिक्री : ३४१९ रु० २६ न० पै०
कुल खरीददार संख्या—११२०
कुल दर्शक संख्या—लगभग ३५००
अश्लीलता-विरोधी हस्ताक्षर—५५०
कुल कार्यकर्ता—बहनें ५, भाई ९
कुल कार्यकर्ता—आंशिक १०
प्रदर्शनी खुलने का पूरा समय—७२ घंटे
सर्वाधिक बिक्री : "गीता प्रवचन," ३००

(स० प्रे० के०, इन्दौर)

विनोबा की पाकिस्तान-पदयात्रा की डायरी : ?

"यहाँ भाव है, भक्ति है...."

• कालिंदी

रास्ते में अंधेरे में कोई खड़ा था। बाबा को देख कर आगे आया। पानी से भरी हुई एक बोतल हाथ में थी। बाबा को रोक कर कहने लगा, "मेरा लड़का बीमार है। कई दवाइयाँ हुईं, गुण नहीं आता। आप मन से इस पानी को पावन करिये, तो मेरा लड़का अच्छा होगा।" बाबा ने उसका हाथ पकड़ लिया, बोतल हाथ में ली और कहा, "अल्ला पर श्रद्धा है न? तो तुम्हारा लड़का जरूर ठीक होगा।" व्यक्ति सलाम कर के निकल गया।

मुझे याद आयी ईसा मसीह की कहानियाँ। रास्ते में उसे मरीज मिलते थे और उसके स्पर्श से ठीक हो जाते थे। खुदा जाने, यह आदमी बाबा की इंतजार में कितनी देरी से खड़ा होगा। उसने सुना होगा कि एक फकीर आया है और दौड़ा होगा बाबा की राह की ओर। चाहे हिंदु हों, चाहे मुसलमान हों, चाहे ईसाई हों, संत-फकीर पर सभी की श्रद्धा है। इन विचारों में रास्ता कब खतम होता, पता ही नहीं चलता।

लेकिन आज अखबार के नौजवान संवाददाताओं का समूह हमारे साथ था। वे लोग कह रहे थे, "हम तो रोज मटरगश्ती करते हैं, मोटर में जाते हैं।" लेकिन आज पैदल चलने की प्रेरणा मिल गयी थी। कल इन लोगों की और सुरक्षा दल के लोगों की बाबा से मुलाकात हुई थी। सबका व्यक्तिगत परिचय करवाया गया था। काफी दोस्ती भी हुई थी। उसी की यह प्रेरणा होगी। अखबार के लोग, फिर सवालों की क्या कमी?

'स्टेट्समन' के संवाददाता ने पूछा, "ब्रह्मपुत्र में बाढ़ आती है, तो भारत और पाकिस्तान, दोनों देशों में नुकसान होता है। अगर दोनों देश मिल कर इसके प्रतिबंध की योजना करें, तो लाभ होगा। आपका क्या खयाल है?"

बाबा ने कहा, "यह बहुत ही आवश्यक बात है। मैं मानता हूँ कि भारत सरकार को इस कार्य में सहयोग करना चाहिए। भारत सरकार को मैं अपील करूँगा कि वह अवश्य इस काम को हाथ में ले।"

दो चार रोज में आज बहुत अच्छी धूप निकली थी, तो सोचा कि आज ज्यादा कपड़े धो लिये जाय। मैं बाल्टी में कपड़ों का सारे गट्ठर लेकर निकली, तो सुरक्षा दल के दो अधिकारी दौड़ते हुए आये—"हमारे लोग धो देंगे आपका कपड़ा।" "शुक्रिया! लेकिन मुझे तो रोज की आदत है।"—"तो लाइये, हम बाल्टी तो ले चलें पोखरी तक।"—"पोखरी! मैं तो उस कुएँ की ओर जा रही हूँ।"—"माफ करियेगा, लेकिन कुएँ पर आप कपड़ा मत धोइये। यहाँ जमींदार का घर है। अंदर पोखरी पर 'जनाना घाट' बना है। वहाँ आप जाइयेगा।"

परदा! परदे का असर! वे नहीं चाहते थे कि एक बहन कुएँ पर खुले में कपड़ा धोये। ये सारे भाई मदद के लिए हमेशा से ही उत्सुक रहते हैं। कल रात अचानक नींद टूटी। कुत्ते बहुत चिल्ला रहे थे। पाँच मिनट में उनका चिल्लाना एकदम बंद हो गया। देखा, तो दो व्यक्ति डंडा लेकर कुत्तों का पीछा कर रहे हैं। बाबा की नींद न टूटे, इस लिए कितनी खबरदारी! जमींदार के घर की नौकरानी को बुलाया गया और मैं उसके साथ पोखरी पर गयी। शरत् बाबू के उपन्यास पढ़ कर बंगाली जमींदार के घर से मेरा काफी परिचय था। आज प्रत्यक्ष उसका रूप देख रही थी। वह भव्य मकान, वह पोखरी, वह परदा और परदों में रहने वाली वे स्त्रियाँ! बाबा की सभाओं को स्त्रियाँ प्रायः आती ही नहीं हैं। जो थोड़ी आती हैं, वे हिंदू। रायगंज में बाबा ने कहा था कि "हमारी सभाओं में तो प्रेम, त्याग और शांति की बातें होती हैं। ऐसी सभाओं में स्त्रियों को जरूर आना चाहिये। परदा प्रथा छोड़ देनी चाहिए।"

आज पहली बार गाँव के प्रमुख लोगों की सभा हुई। बाबा ने उनको समझाया कि "मजदूरों को जमीन मिली तो वे मालिक के खेत पर प्रेम से काम करेंगे, काम टालेंगे नहीं। निगरानी नहीं रखनी पड़ेगी।"

उसके बाद आये शिक्षक, उनकी खास फरमाइश रही कि वे बाबा के मुँह से कुरान शरीफ सुनना चाहते हैं। उनकी फरमाइश पूरी हुई।

"हमारे धर्म की वाणी हम नहीं कह सकते। वह आपके मुँह से सुन कर बहुत आनंद हुआ।

"हमने सुना है, 'बहुत सरल भारतवासी अनाडम्बरी जीवन बिताते हैं। क्या यह ठीक है?"

"देहातवालों का जीवन सरल है। शहरवालों का इतना सरल नहीं। यहाँ भी ऐसी स्थिति होगी। कराची का जीवन विलासी होगा।"

"आपका घर कहाँ है?"

"ब्रह्मपुत्र कहाँ की है? तिब्बत की? असम की? पूर्व पाकिस्तान की? वैसे ही हम हैं।"

"आप सर्वत्रवादक हैं।"

भूदान का विचार लोग समझ गये हैं और रोजाना दान मिलने लगे हैं। आज सात बीघा जमीन का दान मिला। दाताओं में हिंदू-मुसलमान, दोनों थे। ग्राम-परिवार का विचार भी लोगों ने सुन लिया। अब आज यहाँ के लोगों की क्या किस्मत है! जितनी उत्सुकता सामने के लोगों की थी, उतनी ही मेरे अपने मन की। बाबा कह रहे थे—

"यहाँ जमीन कम है, ऐसा कहते हैं। जमीन तो सारे एशिया में कम है। चीन, जापान, पश्चिम बंगाल, केरल, जावा सुमात्रा; सब जगह जमीन कम है। इसलिए हमारे गाँव के काम में जमीन का बँटवारा यह काम का एक हिस्सा होगा और इसलिए उसके साथ उद्योगों को जोड़ना होगा। यह जो भूदान आंदोलन हमने चलाया उसके साथ हम ग्रामोद्योग भी जोड़ते हैं। दोनों मिल कर काम पूरा होगा।

हमने पूर्व पाकिस्तान की रिपोर्ट देखी। यहाँ कागज मिल, जूट मिल और दूसरे धन्धे मिल कर दो लाख साठ हजार मजदूरों को काम मिलता है। यहाँ पाँच करोड़ लोग रहते हैं। उनमें एक करोड़ मजदूर हैं। उनमें से दो लाख साठ हजार को काम मिलता है, याने ज्यादा लोगों को काम देने की शक्ति बड़े धन्धों में नहीं। छोटे-छोटे धंधे से हर घर में मजदूरी मिलेगी। यहाँ 'विलेज कौंसिल' है, तो उसके द्वारा जगह-जगह जागृति आ सकती है।"

बाबा के 'राम-लछमन जानकी' में की 'जानकी' आज प्रकट हुई। बाबा के 'राम' है भूदान, 'लछमन' है शांति-सेना, जानकी है ग्रामोद्योग और हनुमानजी है नयी तालीम। 'राम लछमन-जानकी, जय बोलो हनुमान की।'

[पड़ाव : भीतरबंद, ८ सितम्बर, '६२]

* * *

एक छोटी किश्ती सजधज कर खड़ी थी। नाविकों ने बाबा के चरण धोकर स्वागत किया। सारे नाविक बिहार के भाई थे। नदी पार करने के समय हमेशा बिहारी भाइयों से मुलाकात होती है। भारत में, असम में भी यही देखा और अब यहाँ भी यही देख रहे थे। असम में पानी में चलने की काफी आदत हो चुकी है। मेरे पैर आज सूखे ही थे। बड़े प्यार से मैंने उन पर हाथ फेरा। 'पानी है, लेकिन तुम्हें आराम है।' लेकिन बेचारे पैर! उनके किस्मत में आराम नहीं था। घुटने तक पानी था और हमारी किश्तियाँ बहुत धीरे से जा रही थी। इतनी धीरे की बाबा के पैर रुक न सके, बाबा उतर पड़े। और उनके पीछे एक एक करके सभी ने किश्तियों का त्याग किया। पासवाली किश्ती में से एक संवाददाता ने पानी में छलांग मारी। बदकिस्मती कि अंदाज गलत निकला और मयसभा में दुर्योधन की जो हालत हुई होगी, वही इन महाशय की यहाँ हुई। पानी के नीचे गहरा कीचड़ था। संवाददाता बाबा का पीछा करना चाहते थे, लेकिन कीचड़ में फँस गये। काश, संवाददाता के साथ फोटोग्राफर भी होता!

आज नौ तारीख। कुड़ीग्राम के लोगों को विश्वशांति के विचारों की बहुत अच्छी खुराक मिली। सात आठ हजार लोगों का जमाव शांति से सुन रहा था, "... आज दुनिया की हालत बहुत विचित्र है। विज्ञान जोरों से आ रहा है और उसके साथ साथ भोग-वासना भी बढ़ रही है। जनसंख्या और भूख की समस्या बढ़ रही है। उसको मिटाने के लिए बाँट कर खाना होगा। जब तक बाँट कर खायेंगे नहीं, तब तक दुनिया में शांति रहेगी नहीं।

"दुनिया की दूसरी समस्या है भय की। आणविक शस्त्र बढ़ रहे हैं। भयानक बम के ढेर लग गये हैं। राष्ट्र आपस में एक दूसरे का भय करते हैं और लड़ते हैं। लेकिन भगवान् ने सबको प्रेम करना सिखाया। उसकी योजना ऐसी है कि मनुष्य को बचपन से ही प्रेम की तालीम, धर्म की तालीम, मातृभाषा की तालीम मिलती है। माता-पिता बच्चों को सिखाते हैं सत्य बोलो, प्रेम करो, शांति रखो। कुरान में कहा है, 'इन्न कुन्न तुम इलैना राजिऊन' तुम सब लोग मेरे ही ओर आने वाले हो और यह भी कहा है कि सब लोग घाटे में रह जायेंगे। वह घाटे में नहीं रहेगा, जो भगवान् पर ईमान रखेगा, नेक काम करेगा, सत्य सिखायेगा। "इन्नल इन्सान लफिखुसरिन्। इल्लल्लजीन आमनूव अमिलुस्सालिहाति वतवासौ बिल्हक्कि वतवासौ बिस्सब्रि"—मनुष्य छोटे प्राणी का दुःख भी नहीं देख सकता, ऐसा हृदय भगवान् ने मनुष्य को दिया है लेकिन सब एक दूसरों से डर रहे हैं। उससे हमें मुक्त होना चाहिये। आपस के भेद मिटाना चाहिये और प्रेम से रहना चाहिये।"

मौन प्रार्थना में इतनी पूर्ण शांति रही कि लगा कि जिन लोगों की इस मौन प्रार्थना पर श्रद्धा है और जो लोग यह प्रार्थना पूरी शांति से करते हैं, वे लोग क्या शांति नहीं चाहते होंगे? दुनिया समझ रही है, उसको समझाने वाला चाहिये।

शाम को एक सज्जन बाबा से मिलने के लिए आये। अपनी स्थूल देह सम्हालते सम्हालते आये और पूरी देह बाबा के चरणों पर लिटा दी। उनका मूल परिवार उत्तर प्रदेश का है, लेकिन आज दो सौ साल से वे यहाँ रह रहे हैं। बाबा से कहने लगे, "आपको हमारे देश में और कुछ दिन रहना चाहिये। यहाँ भाव है। लेकिन यहाँ के लोगों को अच्छी बातें सुनने को नहीं मिलती। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि आप और कुछ समय यहाँ दें।"

उन्होंने बिल्कुल ठीक कहा, जनता न सिर्फ विचार चाहती है, लेकिन विचारों को समझती है। आज भूदान के साथ एक सम्पत्तिदान भी मिला। चीनागदाम बेचने वाले एक भाई ने बाबा का प्रवचन सुना, आकर विश्वास से बात की और अपना सम्पत्तिदान दिया।

जिन किश्तियों में हमने नदी पार की थी, उन किश्तियों के मालिक, एक बिहारी भाई ने शाम को आकर साढ़े आठ रुपये का दान दिया। आज कुल ६१ बीघा जमीन का दान मिला। उसमें से ५० बीघा जमीन का दाता एक हिंदू था। उसने हिंदू और मुसलमान, दोनों को जमीन दी।
[पड़ाव : कुर्डीग्राम, ९ सितम्बर, '६२]

* * *

कुर्डीग्राम से यहाँ कम लोग नहीं थे। स्वागत में ही करीब एक हजार लोग होंगे। रोज दर्शनोत्सुकों की संख्या बढ़ती जा रही है। पड़ाव को मेले का स्वरूप आ जाता है। वह यात्रा का स्थान बन जाता है, प्रेमयात्रा का।

प्रेम की बातें करते-करते ही बाबा आगे बढ़ रहे हैं। विचारों का प्रवाह —लेकिन रफ्तारवाही से नहीं आगे बढ़ रहा है। रोज एक नया पहलू, नयी बात!

आज बाबा ने यहाँ के 'बेसिक डेमोक्रसी' को प्यार की लपेट में ले लिया,

पाकिस्तान में गाँवों के स्तर पर सरकार का जो 'युनिट' है, उसको 'विलेज युनियन' कहते हैं। गाँव में हर एक हजार लोकसंख्या पर एक सदस्य चुना जाता है और ऐसे दस सदस्यों का एक 'युनियन' होता है। यही यहाँ की 'बेसिक डिमोक्रसी' है।

"यहाँ जो 'बेसिक डिमोक्रसी' बनी है, उसमें ८० हजार सदस्य हैं। वे सदस्य अपना-अपना दान दें तो ८० हजार दान मिल जायेंगे। वे खुद दान देंगे और दूसरे लोगों से दान हासिल करेंगे। अखबार के एक संवाददाता ने हमसे पूछा, अभी आप दान प्राप्त करेंगे और आप यहाँ से निकल जायेंगे, तो आगे काम करने के लिए क्या कुछ संगठन बनायेंगे? हमने कहा, संगठन पर हमारा विश्वास नहीं। हमारा व्यक्ति के हृदय पर विश्वास है। जिसके दिल में प्रेम और करुणा भरी होगी, वह उठेगा और काम करेगा। बाद में हम सोचने लगे, यहाँ कुछ संगठन बन सकता है। यहाँ जो यह 'बेसिक डिमोक्रसी' बनी है वह योजना—जहाँ तक भूदान का ताल्लुक है और ग्राम स्वराज्य की स्थापना का ताल्लुक है—बहुत काम में आयेगी।"

- नया विचार! अखबार के संवाददाताओं की कलमें कितनी तेजी से दौड़ रही थीं, यह नहीं सकते। इसका पूरक विचार पाया गाँव के लोगों ने, जब वे बाबा से मिलने के लिए आये थे। "छोटी 'डिमोक्रसी' बनेगी तो ऊपर से सत्ता एवं समता का अंश मिलेगा।

तो सत्ता एवं समता के साथ-साथ ईर्ष्या भी दाखिल होगी। बड़े क्षेत्र में ईर्ष्या बढ़ती नहीं, क्योंकि वहाँ दृष्टिकोण भी बड़ा होता है। छोटे में छोटी दृष्टि रहती है, इसलिए ईर्ष्या, द्वेष बढ़ने का समय रहता है। ग्रामस्वराज्य याने सत्ता का विकेंद्रीकरण, इतना ही नहीं होना चाहिए। एक बड़े पत्थर के कितने भी छोटे टुकड़े बनायेंगे, तो भी उसका मक्खन नहीं बनेगा, वैसे ही सत्ता के टुकड़े करने से काम नहीं बनता। ग्रामस्वराज्य की बुनियाद प्रेम और करुणा है। दान पर उसका आधार होना चाहिये। फिर गाँव में मालिकों की एक ग्रामसभा बनायेंगे। हर मनुष्य अपनी फसल का एक हिस्सा साल में एक बार गाँव के लिए ग्रामसभा को दान देगा। उसके आधार पर गाँव का भला करेंगे। ऊपर से मदद मिलेगी तो अच्छा ही है, नहीं तो चिंता नहीं। इस तरह से समता आयेगी तो वह कल्याणकारिणी होगी। जो भूमिहीन हैं, उनको जमीन दे देंगे। फिर आगे जाकर ग्रामदान भी दे सकते हैं। ग्रामदान याने व्यक्तिगत मिल्कियत का समर्पण।"

आज यहाँ आकर छह दिन पूरे हुए। आज सात बीघा जमीन का दान मिला। छहों दिन सार्थक हुए हैं। बाबा कहते हैं, "एक एकड़ जमीन में एक आदमी की जिन्दगी का हल होता है। तो एक एकड़ जमीन मिलती है, तो भी हम समझते हैं कि आज का दिन सार्थक हुआ।" हर रात को हमें दूसरे दिन की पूरी आशा रहती है, क्योंकि लगातार छह दिन हम देख रहे हैं कि यहाँ भाव है।
[पड़ाव : पांगा, १० सितम्बर '६२]

शान्ति-केन्द्र • जुलाई व अगस्त '६२ का कार्य विवरण •

बंबई : श्री राम देशपांडे : शांति-सैनिकों की एक बैठक में निर्णय हुआ कि १३ शांति संवाददाता स्थानों से 'मणिभवन' बम्बई में सूचना भेजें। श्री राम देशपांडे अथवा अतुभाई सेनी शांति-सैनिकों की व्यवस्था करें, आवश्यकता होने पर वार्डों में संपर्क करें। नगर के अन्य स्थानों पर भी शांति-संवाददाता रखे जावें। शांति-सैनिकों की बैठक प्रति मास माह के अंतिम शनिवार को हो। कार्यकर्ताओं की तीन सभाएँ हुईं। विषय था—"व्यापक शांति सेना और विश्व शांति।"

काल्बादेवी, मालाड और घाटकोपर में अलग अलग संस्थाओं के लगभग १० कार्यकर्ता उपस्थित हुए। जापान के चार शांति-यात्रियों के आगमन के संबंध में कई कार्यक्रम रखे गये। ३० जुलाई को उनका स्वागत बम्बई के मेयर श्री नगीनदास शाह द्वारा हुआ। अन्य प्रमुख व्यक्ति भी उपस्थित थे।

उसी समय बोरीबन्दर से 'मणिभवन' तक जुलूस निकाला गया। सायं ४ बजे कान्फ्रेन्स तथा ६॥ बजे 'मणिभवन' में श्री दिवाकरजी की अध्यक्षता में सभा हुई। रात को काल्बादेवी में भी सभा हुई। लगभग १४ विभिन्न संस्थाओं, संगठनों तथा शिक्षा-केन्द्रों द्वारा जापानी भाइयों के स्वागत में समारोह तथा सभाएं आयोजित हुईं। ९ अगस्त को 'अणुअस्त्र-विरोधी दिवस' मनाया गया, जिसमें श्री रा० कृ० पाटिल तथा पोद्देकरजी के प्रवचन हुए।

रंगपुर, बड़ौदा : श्री शंकरभाई पटेल

केन्द्र के सदस्य : (१) हरिवल्लभ परीख, (२) प्रभा बहन परीख, (३) शंकरभाई पटेल (४) केशाभाई कोली, (५) मथुरभाई भील, (६) दलाभाई भील।

पहले तीन भाई एकसाथ रह कर व मिल कर सेवा-कार्य करते हैं। शेष महीने में दो बार मिलते हैं। दो माह में ८ आपसी झगड़ों को शांतिपूर्ण समझौता द्वारा निपटाया।

भंडरिया : श्री सरस्वती गोंडा

निरक्षरता, अंधविश्वास और परदा-रिवाज को बहनों में से दूर करने के लिए गाँवों में उनसे संपर्क स्थापित किया। "समाज के लिए त्याग" के आधार पर अनाधारित वृत्ति से गाँव में बालवाड़ी चलाने का कार्य शुरू किया। ७० व्यक्तियों ने अपनी-अपनी सुविधा के अनुसार मासिक चंदा देने का वादा किया। बाल शिक्षण के लिए, एक भवन बनाने के लिए गाँव ने १००० रु० सहायता के रूप में दिये। आपसी समझौते द्वारा गाँव में ४ झगड़ों को निपटाया, जिससे गाँव में शांत वातावरण बनाये रखने में सहायता मिली। ग्रामीण छात्रों को नयी तालीम के आधार पर शिक्षण मिले और उनमें नये संस्कार पड़ें, इस भावना से १३ विद्यार्थियों का एक छात्रावास चलाया गया। उनके एक प्रवास का आयोजन किया। "भूमिपुत्र" के ग्राहक बनाने तथा भूदान-पीड़ितों की स्थिति जानने के संबंध में गाँवों का दौरा किया। स्थानिक ग्राम-पंचायत और सहकारी मंडली आदि को मार्गदर्शन देने का प्रयास किया। गाँवों के रोगियों के प्राथमिक उपचार का प्रबंध किया।

जबलपुर : श्री गणेशप्रसाद नायक

शांति-सैनिकों की संख्या बढ़ाने का प्रयत्न किया जा रहा है। नगर कारपोरेशन के सफाई के कर्मचारियों की हड़ताल के फलस्वरूप तनाव की स्थिति पैदा हुई थी। शांति-केन्द्र की ओर से दोनों पक्षों से संपर्क स्थापित करके हड़ताल समाप्त कराने और हड़ताली नेताओं को कारागृह से मुक्त कराने का प्रयास किया गया तथा साथ-साथ दूसरी ओर सामूहिक सफाई अभियान के लिए कार्यकर्ताओं का आवाहन किया, जिसका उत्साहवर्धक असर हुआ और कांग्रेस, प्रजा-समाजवादी, सर्वोदय कार्यकर्ता तथा शांति-सैनिकों ने सम्मिलित रूप से भाग लिया। सेठ गोविन्ददासजी एम० पी० ने भी इस सफाई-अभियान में भाग लिया। प्रत्येक वार्ड के सदस्य तथा नगरनिगम के कर्मचारियों के सहयोग से वार्डों में सफाई-टोलियों का निर्माण भी शांति-केन्द्र की योजना के अनुसार प्रारंभ हुआ है। इस प्रकार फिर से शांतिपूर्ण वातावरण स्थापित हुआ।

हड़ताल २३ जुलाई को प्रारंभ हुई थी और २७ जुलाई को समाप्त हुई तथा २५ जुलाई को 'नगर-सफाई अभियान' प्रारंभ हुआ। केन्द्र पर पाँच शांति-सैनिक कार्य कर रहे हैं।

विसर्जन आश्रम, इंदौर
श्री दीपचन्द जैन

उज्जैन के नागरिकों एवं विद्यार्थियों से शिक्षा संबंधी अपनी माँगों को शांतिपूर्ण ढंग से निपटाने तथा दुराग्रह न करने की अपील श्री दीपचंद जैन द्वारा की गयी, जिससे नगर में अशांति का वातावरण न पैदा होने पाये।

विसर्जन आश्रम में ९ अगस्त को दिन के ११ बजे आश्रम-परिवार की ओर से जापानी शांति-यात्रियों का हार्दिक स्वागत किया गया। शाम को यात्रियों ने भाषण में अणु-अस्त्रों की भयंकरता के बारे में चर्चा की। दूसरे दिन शांति-यात्रियों ने नगर-परिभ्रमण किया व अनेक स्थानों पर उनका भव्य स्वागत किया गया। अनेक सभाएँ आयोजित हुईं। उसी दिन भिक्षु साबो द्वारा मध्यप्रदेश शांति-सेना कार्यालय का उद्घाटन हुआ।

सिवनी : श्री सत्यनारायण शर्मा

२८ अगस्त को शांति-सैनिक तथा लोकसेवकों की संयुक्त बैठक में ९ सितंबर और सर्वोदय-पक्ष के कार्यक्रम को सफल बनाने के बारे में निश्चय किया गया और इस संबंध में उपयुक्त कार्यक्रम बनाया गया।

भिंड : श्री राजनारायण त्रिपाठी

उमरी के थानेदार के विरुद्ध जनता का कुछ आक्रोश था। उस संबंध में एक संबंधित व्यक्ति तथा एक प्रजा-सोशलिस्ट कार्यकर्ता ने अनशन प्रारंभ किया था। कुछ भाई थानेदार के पक्ष में भी थे। दोनों पक्षों की ओर से प्रदर्शन भी हुआ। जुलूस निकले व कुछ हिंसात्मक कार्यवाहियाँ भी हुईं, जिस पर कुछ गिरफ्तारियाँ हुईं। जिलाधीश, पुलिस-अधिकारी, विभिन्न पक्षों के नेता आदि से संपर्क करके तथा आपसी भ्रम दूर करके शांति-स्थापना करने का प्रयत्न अन्य कार्यकर्ताओं के सहयोग से प्रारंभ किया गया। अन्त में अधिकारियों और जनता में समझौता हो गया। नगर में पूर्ण शांति स्थापित हो गयी और बाजार साधारण रूप से खुल गया।

—मनोहरचन्द दुबे, कार्यकारी मंत्री
शांति-सेना मंडल, वाराणसी

[पृष्ठ २ का शेष]

देशवासियों की सम्मति से फौजें सीमा पर शस्त्रों से मुकाबला कर रही हों तब अहिंसक शांति-सैनिकों का प्रतिकार के लिए वहाँ जाना न व्यावहारिक है, न उचित। प्रतिकार की बात सोचने में यह तो गृहीत ही है कि सामने वाले की ओर से आक्रमण या अन्याय हुआ है। भारत-चीन वाले मामले में, दुनिया के राष्ट्रों की ओर से तथा भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी की ओर से भी यही मत प्रकट हुआ है कि इसमें चीन की ओर से ज्यादती हुई है और उसने जोर-जबरदस्ती से मसला हल करने का उपक्रम किया है।

मोर्चे पर शांति-सैनिकों का जत्था

एक सवाल और रह जाता है। प्रतिकार के लिए न सही, पर युद्ध मात्र को गलत मानने वालों की हैसियत से, शांति-सैनिकों द्वारा युद्ध को आगे न बढ़ने देने तथा उसे रोकने के लिए दोनों सेनाओं के बीच में जाकर खड़े होने जैसी कोई कार्रवाई भी नहीं की जानी चाहिए क्या? दोनों ओर की सरकारों को सूचना देकर, दोनों से इस काम में मदद की माँग करके, मदद न मिले तो भी और इस मामले में युद्ध स्थल पर पहुँचने की भौतिक कठिनाइयों को ध्यान में रखते हुए भी क्या युद्ध रोकने के लिए वहाँ जाने की कोशिश नहीं करनी चाहिये? यह प्रश्न अवश्य विचारणीय है, ऐसा लगता है। संयोग से सर्व-सेवा-संघ की सभा बहुत जल्दी बेड़छी में होने जा रही है। उसके पहले प्रबंध समिति भी ता० १० नवम्बर को विनोबाजी के पास मिल रही है। आशा है, इन सभाओं में चर्चा होकर उपरोक्त विषयों में कुछ निश्चित राय हमारे सामने आ सकेगी। युद्ध को जो त्याज्य मानते हैं वे अपनी ओर से दोनों सरकारों से सम्पर्क करके तथा अन्य सम्भव उपायों से बातचीत या पंच-फैसले का वातावरण बनाने का तथा उसकी परिस्थिति लाने का प्रयत्न करें, यह तो हर हालत में जरूरी है ही।

इस बीच इतना तो स्पष्ट है कि अहिंसा में जिनकी निष्ठा है वे सब अपनी पूरी शक्ति देश में अहिंसक शक्ति के निर्माण में लगायें। विनोबा और जवाहरलाल से लगा कर देश के सभी नेता राष्ट्र से इस समय धीरज, एकता, आन्तरिक शांति, निर्भयता और अक्षोभ की माँग कर रहे हैं। अहिंसक लोकशक्ति के निर्माण के लिए तो ये सब बातें आवश्यक हैं ही, पर सैनिक-शक्ति का भी अधिष्ठान आखिरकार नागरिक शक्ति ही है। इसलिए हर हालत में यह कार्यक्रम देश के लिए अनिवार्य है।

ग्रामस्वराज्य की नींव डालने का, लोगों को इस ओर आकर्षित करने का यह एक और मौका हमारे सामने आया है। आशा है, हम इस अवसर के अनुरूप साबित होंगे और यह मौका अपने हाथ से जाने नहीं देंगे। ● ●

हम अपना संकल्प पूरा करें

बिहार के मुख्य मंत्री की जनता से अपील

बिहार के मुख्य मंत्री, श्री विनोदानन्द झा ने विनोबा की बिहार-यात्रा पर जनता को अपील करते हुए कहा है कि बिहार को अपना संकल्प पूरा करना चाहिए। स्मरण रहे कि विनोबा तीसरी बार बिहार की यात्रा कर रहे हैं। श्री विनोदानन्द झा ने अपील में कहा है—

"बिहार पर विनोबाजी का विशेष अनुग्रह रहा है। इस प्रांत को वे अपनी कर्मभूमि मानते हैं। विनोबाजी की यह तीसरी यात्रा बिहार में होगी। पहली बार वे १९५२ में यहाँ आये थे और २७ महीने रह कर भूदान यज्ञ के पावन संदेश का प्रचार बिहार के गाँव-गाँव में किया था। उनके आह्वान पर बिहार की जनता ने भी भूमिहीनों को देने के लिए लाखों एकड़ भूमि का दान दिया। १९६० के दिसम्बर में आसाम जाते हुए विनोबाजी पुनः हमारे बीच पधारे।

विनोबाजी के समक्ष हमने भूमिहीनों के लिए ३२ लाख एकड़ भूमि का दान देने का संकल्प किया था। यह संकल्प अभी अधूरा ही है, क्योंकि हमने अब तक केवल २२ लाख एकड़ भूमि दान में दी है, इसलिए विनोबाजी पिछली बार जब बिहार में आये, तो उन्होंने हमें उस संकल्प की याद दिलायी और 'बीघे में कट्ठा' का नारा देकर अपना संकल्प पूरा करने के लिए कहा। उनके जाने के बाद बिहार में 'बीघा-कट्ठा आन्दोलन' चलाया गया। लेकिन अब तक इस आन्दोलन के मार्फत केवल लगभग दस हजार एकड़ भूमि प्राप्त हो सकी है, जब कि हमें अपना संकल्प पूरा करने के लिए दस लाख एकड़ भूमि का दान चाहिए।

विनोबाजी पुनः हमारे बीच आ रहे हैं और बिहार का संकल्प अब भी अधूरा है। यह हमारे लिए कोई गौरव की बात नहीं है। अतः इस अवसर पर बिहार के सभी छोटे-बड़े भूमिवानों से मैं अपील करता हूँ कि वे विनोबाजी की इस यात्रा में दिल खोल कर अपनी जमीन का दान देकर बिहार का संकल्प पूरा करें और इस प्रकार बिहार के गौरव की रक्षा करें।

'सिलिंग' और 'लेवी' कानून पास हो गया है। उसमें यह व्यवस्था की गयी है कि जो लोग स्वेच्छा से विनोबाजी को जितनी जमीन दान में देंगे, उस जमीन को सरकारी दावे में कम कर दिया जायगा। अतः सबसे मेरी प्रार्थना है कि—

सरकारी कानून के दबाव की प्रतीक्षा न कर स्वेच्छा से विनोबाजी के इस आन्दोलन को सफल बनावें। मैं सबसे अपील करता हूँ कि वे प्रेम और करुणा के मार्ग से ही अपने भूमिहीन भाइयों के लिए जमीन का दान दें।

विनोबाजी पुनः हमारे कर्तव्य की याद दिलाने के लिए हमारे बीच आये हैं। हम आशा और विश्वास करते हैं कि हमारे सभी भूमिहीन भाई इस अवसर पर स्वेच्छा से कम-से कम 'बीघे में कट्ठा' देकर अपना कर्तव्य पूरा करेंगे और यश के भागी बनेंगे।"

जान हथेली पर रख कर

सिवनी में ११ शान्ति-सैनिकों ने आग बुझाई

म० प्र० के सिवनी शहर में गत ९ अक्टूबर को दिन के १२ बजे की बात है कि बारूद के बहुत बड़े व्यापारी तथा बन्दूकों के विक्रेता श्री गुलजार हुसेन, आर्मस् डीलर के यहाँ अचानक भयंकर आग लगी। यह स्थान शहर के बीच बाजार में स्थित है। आस-पास कपड़ों का बहुत बड़ा 'मार्केट' है। सिवनी के शान्ति-सैनिकों में से कुछ सदस्यों को इस घटना की जानकारी मिलते ही तत्काल यह खबर अन्य ११ शान्ति-सैनिकों को दी गयी। फलस्वरूप सारे सैनिक घटना स्थल पर पहुँच गये। तब तक आग भयंकर लपटों के साथ मकान में फैल चुकी थी। हजारों व्यक्तियों का जमघट इकट्ठा हुआ था, पर उस भयंकर आग में किसीकी साहस नहीं हुआ!

पर शान्ति-सैनिकों ने अपनी जान पर खेल कर आग बुझाना शुरू किया। प्रथम श्री सत्यनारायण शर्मा ने मकान की तीसरी मंजिल पर बाहरी सहारे से चढ़ कर दरवाजों को तोड़ा। कुछ साथियों ने पानी लाना शुरू कर मकान के अन्दर डालना शुरू कर दिया। लोगों ने भी हिम्मत कर हजारों की तादाद में सहायता करना शुरू कर दिया और लगभग दो घण्टे बाद आग पर काबू किया।

सुना जाता है कि यदि यह आग काबू में नहीं हो पाती, तो लाखों की सम्पत्ति की बरबादी और काफी जन-हानि होती। मकान की चार मंजिलें थीं। नीचे की मंजिल में कई पेटियों में बन्दूक की गोलियाँ और पत्थर फोड़ने की बारूद थी। यदि वहाँ आग की लपटें पहुँच जातीं, तो मकान तो उड़ ही जाता, पर आसपास का क्षेत्र भी नष्ट हो जाता। पर गनीमत है कि आग बुझाने पर काबू लोगों ने पा लिया। इस घटना में एक व्यक्ति की मृत्यु हुई और तीन-चार व्यक्ति घायल हुए, जिसमें एक शांति-सैनिक भाई भी थे।

श्री सत्यनारायण शर्मा के नाम सिवनी के कलेक्टर ने नीचे दिया पत्र लिखा—

ता० ९ अक्टूबर को श्री गुलजार हुसेन आर्मस् डीलर के निवासस्थान पर जो भयंकर आग लगी, उसको बुझाने में आपने व आपके निम्नलिखित साथियों ने जान हथेली पर रख कर जिस तत्परता, लगन और जोखिम के साथ प्रशंसनीय कार्य किया, उसके लिए मैं आप सबका हृदय से आभारी हूँ।

(१) श्री सत्यनारायण शर्मा
(२) श्री विन्ध्येश्वर प्रसाद श्रीवास्तव
(३) श्री वल्लभदास सेन केशरिया
(४) श्री अवधनाथ सिंह
(५) श्री भरतलाल, लोकसेवक
(६) श्री परमानन्द अग्रवाल
(७) श्री नारायण प्रसाद सोनी
(८) श्री श्यामसुन्दर सोनी
(९) श्री शिवनरेश सिंह
(१०) श्री रामचन्द्र शर्मा
(११) श्री शालिग्राम कोल्हे

वेड़छी में साहित्य-प्रचार शिविर

साहित्य प्रचार के काम में रुचि रखने वाले भाई-बहनों के परस्पर सम्पर्क तथा अनुभवों के आदान प्रदान की दृष्टि से आगामी संघ-अधिवेशन तथा सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर वेड़छी में एक "साहित्य प्रचार शिविर" का आयोजन किया जा रहा है। शिविरार्थियों की संख्या सीमित रहेगी।

शिविर ता० १९ को प्रातःकाल श्री दादा धर्माधिकारी द्वारा "ज्ञान-दीप प्रज्वलन" के साथ प्रारम्भ होगा और ता० २१ तक चलेगा। प्रतिदिन सवेरे ५॥ से ६॥ बजे तक चर्चा सभा होगी तथा शिविर के दौरान में प्रत्येक शिविरार्थी प्रतिदिन किसी भी भाषा की भूदान-पत्रिका का एक ग्राहक बनायें तथा साहित्य-बिक्री करें, यह प्रत्यक्ष काम का लक्ष्य रहेगा। चर्चा के विषय इस तरह होंगे :—

ता० १९—ज्ञान-दीप प्रज्वलन, ता० २०—नगरों में प्रचार-कार्य, २१—साहित्य भंडारों का आयोजन, २२—खादी भंडारों पर साहित्य बिक्री, २३—व्यक्तिगत प्रचार-कार्य, २४—सर्वोदय-पर्व का आयोजन, ता० २१ को समारोह होगा।

शिविरार्थियों के लिए निवास की तथा ता० १९ से ता० २१ तक भोजन की निःशुल्क व्यवस्था सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन विभाग की ओर से रहेगी। शिविर में पूरे समय भाग लेने की इच्छा रखने वाले भाई-बहन कृपया तुरन्त सूचित करें।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट, मंत्री
अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी

भूदानयज्ञ रजिस्टर्ड नंबर ए, २५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की अनुमति प्राप्त, लायसेन्स नं० ए ३४] २ नवम्बर, '६२

देश के संकट के बारे में धीरेन्द्र भाई से दो प्रश्न

प्रश्न : देश पर आक्रमण हुआ है, इस संबंध में सर्वोदय का क्या रुख है?

उत्तर : सर्वोदय का यानी अहिंसक विचार का रुख क्या हो, यह परिस्थिति पर निर्भर है। गांधीजी और विनोबाजी की कोशिश से अगर देश में अहिंसा की मान्यता बनी होती और उसके अनुसार ऐसा संगठन होता जो अंतर्राष्ट्रीय प्रतिकार के लिए शक्तिशाली समझा जाता तो सर्वोदय का रुख देश में अहिंसक प्रतिकार के संगठन का होता।

तटस्थता की भूमिका

आज वह परिस्थिति नहीं है, इसलिए सर्वोदय का रुख अहिंसक प्रतिकार का नहीं हो सकता। अब प्रश्न यह उठता है कि हम अहिंसा के पुजारी सरकार की सैनिक कार्रवाई से सहकार करें या उसका विरोध करें? स्पष्ट है कि अहिंसा के विचार में मानने वाले सैनिक कार्रवाई से सहकार नहीं कर सकते। लेकिन चूंकि सरकार ने अन्याय के प्रतिकार में पूरे देश की मान्यता के अनुसार कदम उठाया है, इसलिए हम उसका विरोध भी नहीं कर सकते। हमारा रुख तटस्थता का ही हो सकता है। इस पर से लोग यह कह सकते हैं कि हमको पक्ष या विपक्ष का रुख अख्तियार करना ही चाहिए, नहीं तो हमारी कोई हस्ती नहीं रह जायगी। मैं मानता हूँ कि ऐसा सोचना ठीक नहीं है। यह समझना कि हर प्रश्न पर हमारा रुख स्वीकारात्मक या अस्वीकारात्मक ही हो, गलत है। तटस्थता की भी एक भूमिका होती है। मौजूदा परिस्थिति उसी तरह का एक प्रश्न है।

प्रश्न : इस रुख के होते हुए अहिंसा में विश्वास करने वाले सक्रिय कार्यक्रम क्या उठा सकते हैं?

उत्तर : हमारे तटस्थ रुख का मतलब यह नहीं है कि हम चुप बैठे रहें। इस समय अहिंसा में विश्वास करने वालों की विशेष जिम्मेदारी है। ऐसे अवसर पर देश के अन्दर विघटनकारी शक्तियाँ जागरूक हो जाती हैं। ऐसी परिस्थिति में हमारा काम यह होगा कि हम सैनिक-शक्ति से भिन्न लोक-शक्ति का संगठन कर देश भर में शांति की रखवाली करें। इसके लिए शांति-सेना का व्यापक संगठन अत्यन्त आवश्यक है।

शांति-सेना आवश्यक

हम दण्ड-निरपेक्ष समाज की बात करते हैं। तो यह समय है जब शांति-रक्षा के लिए शांति-सेना का संगठन करके समाज की रक्षा की मान्यता को हम बदल सकते हैं। अहिंसा की स्थापना के लिए तथा इस संकट-कालीन परिस्थिति में जनता के 'मोरेल'—मनोबल—को कायम रखने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है। आम तौर से शांति-सेना के विचार को वांछनीय मानते हुए भी लोग उसे अव्यावहारिक कहते हैं, क्योंकि साधारणतया लोग आदर्श और व्यवहार को दो चीजें मानते हैं, लेकिन सचमुच वे दोनों एक ही हैं। एक ही चीज जब केवल वांछनीय रहती है तब उसे आदर्श कहा जाता है, किंतु जब वही चीज आवश्यक हो जाती है तो वह व्यावहारिक हो जाती है। जिस समय सरकार का ध्यान समस्त सैनिक-शक्ति के साथ युद्ध में केंद्रित हो जाता है, उस समय जनता के 'मोरेल' को कायम रखने के लिए दूसरी शक्ति की आवश्यकता पड़ जाती है और वह आज आवश्यक हो गयी है। अतः आज की परिस्थिति में शांति-सेना का विचार अत्यंत व्यावहारिक बन गया है। सौभाग्य से चाहे कितना लघु स्वरूप में हो, शांति-सेना के संगठन का प्रारंभ बिंदु आज हमारे पास है। उसी को तेजी से राष्ट्रव्यापी बनाना है। चूंकि यह वैकल्पिक शक्ति आज केवल वांछनीय ही नहीं है, बल्कि आवश्यक है, इसलिए पूरा देश इस प्रयास का साथ देगा और उसे देना चाहिये।

स्वतंत्र जनशक्ति की आवश्यकता

शांति-सेना के अलावा हमको एक दूसरा काम भी उठाना चाहिये। वह यह कि देश के विकास के काम में 'उस' आवश्यकता की पूर्ति में जो आज पूर्ण रूप से सरकारी ताकत लगी हुई है, उसके बदले वह जनता की स्वतंत्र ताकत से हो, इसकी पूरी कोशिश करनी चाहिए। सरकार का ध्यान पूर्ण रूप से युद्ध में लग जाने के बावजूद यह सब काम सरकार-निरपेक्ष ताकत से चलता रहे, यह भी जनता के नैतिक बल को कायम रखने के लिए आवश्यक है। सरकार दूसरी तरफ फँस जाय और साथ-साथ जनता अपने को असहाय महसूस करे, ऐसे समय में प्रतिक्रियावादी शक्तियों को अवसर मिलता है कि वे जनता की भावना का नाजायज लाभ उठा कर उसे अपने कब्जे में कर लें। फलस्वरूप, अक्सर ऐसी परिस्थिति में तानाशाही का खतरा पैदा हो जाता है।

लोकतंत्र की रक्षा अनिवार्य

अहिंसा के लक्ष्य की ओर जाने के लिए लोकतंत्र की रक्षा आवश्यक है, क्योंकि लोकतंत्र अहिंसा की मंजिल का एक आगे का कदम है। अतएव उपर्युक्त परिस्थिति निर्माण न होने पाये इसका प्रयास करना अहिंसा के पुजारी के लिए आवश्यक है। इस प्रयास का साकार जरिया ग्राम-पंचायत है। इस समय अगर पंचायतों को शक्तिशाली बना कर उसके मार्फत जनशक्ति के आधार पर जनता के रक्षण और पोषण की पूर्ण व्यवस्था हो सके तो पंचायतों में दंड-निरपेक्ष शक्ति का विकास होगा और जनता उस शक्ति का भरोसा कर सकेगी। ऐसी हालत में कोई भी प्रतिक्रियावादी शक्ति लोकतंत्र के लिए खतरा नहीं हो सकेगी।

—धीरेन्द्र मजूमदार

नयी परिस्थिति में सत्याग्रह का कदम वापस : पर शराबबंदी के कार्यक्रम में ढिलाई नहीं

पिछले कुछ अरसे से शराबबंदी के लिए कई स्थानों पर, और कई ओर से, विशेष प्रयत्न हो रहे हैं, यह खुशी की बात है। जनता में शराब के विरुद्ध प्रचार, कानूनन शराबबंदी तथा उसके लिए आवश्यक वातावरण का निर्माण, मदिरालयों का 'पिकेटिंग' आदि काम देश में कई जगह चल रहे हैं। आगरा में शराब के सरकारी गोदामों पर सत्याग्रह का कार्यक्रम भी हाथ में लिया गया है, जिसमें कई सत्याग्रही अब तक गिरफ्तार भी हो चुके हैं। उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल ने इसे एक नैतिक कर्तव्य के रूप में स्वीकार करके सत्याग्रह को आगे चलाते रहने का अभी दो सप्ताह पहले ही तय किया था और इसके लिए प्रदेश के दूसरे जिलों से भी सत्याग्रहियों को आने के लिए आह्वान दिया था। राजस्थान के भीलवाड़ा जिले में तथा बिहार में भी शराबबंदी-कार्यक्रम के लिए विशेष प्रयत्न किये जा रहे हैं।

इस बीच भारत-चीन सीमा-संघर्ष को लेकर एक नयी परिस्थिति देश में निर्माण हुई है। इस परिस्थिति में लोगों का नैतिक बल कायम रखने के लिए और उसे बढ़ाने के लिए शराबबंदी और भी आवश्यक है। पर संकट के समय सरकार को परेशानी में डालना उचित नहीं है, इसलिए फिलहाल सरकारी गोदामों पर सत्याग्रह जैसी "सीधी कार्रवाई" स्थगित रहनी चाहिए, ऐसा आदेश श्री विनोबाजी ने दिया है। यह खुशी की बात है कि उ० प्र० सर्वोदय-मंडल ने भी सत्याग्रह स्थगित किया है।

पर इसका यह अर्थ नहीं है कि शराबबंदी के कार्यक्रम में ढिलाई आवे। सत्याग्रह का कदम वापस लेने पर भी जहाँ कार्यकर्ताओं के कर्तव्य में कोई अन्तर नहीं आता, वहाँ सरकार की जिम्मेदारी तो और भी बढ़ जाती है, क्योंकि शराबखोरी और शराब का प्रचार वैयक्तिक और सामाजिक, आर्थिक और नैतिक, हर दृष्टि से हानिकारक है। शराबबंदी का कार्यक्रम देश के नैतिक उत्थान और भौतिक विकास का आवश्यक कार्यक्रम है। गांधीजी ने इसी दृष्टि से 'इरविन-समझौते' के समय शराब की दूकानों पर पिकेटिंग को नैतिक अधिकार के रूप में मंजूर करवाया था। अतः शराबबंदी-योजना सरकार, कार्यकर्ता और जनता, सबके सहयोग से और भी अधिक तत्परता और क्षमता से कार्यान्वित की जानी चाहिए।

—सिद्धराज ढड्ढा

इस अंक में

पं० बंगाल में कुल १२ ग्रामदान मिले

२१ सितंबर से २३ अक्टूबर तक पश्चिम बंगाल की पदयात्रा में विनोबाजी को कुल १२ गाँव ग्रामदान में मिले। अपनी तीसरी बिहार-यात्रा पूर्ण करके विनोबाजी पुनः पश्चिम बंगाल में ९ नवंबर को प्रवेश करेंगे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५१० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८०८५ एक अंक १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ
साप्ताहिक
भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ९ नवम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक ६

मौजूदा संकट में शांति-सैनिकों का कर्तव्य

शांति-सेना शिविर में विनोबा का वक्तव्य

[गत २ नवम्बर को बिहार प्रदेश के शांति-सेना शिविर में भाषण करते हुए विनोबाजी ने चीनी आक्रमण के वक्त शांति-सैनिकों के कर्तव्य पर प्रकाश डाला। भाषण के पूर्व शांति-सैनिकों ने कुछ प्रश्न पूछे थे। विनोबा ने प्रश्नों के उत्तर देने के पहले जो कहा था, उन्होंने उसे बाद में 'स्वतन्त्र कथन या वक्तव्य' के रूप में जाहिर किया है। उनके वक्तव्य वाला अंश हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

शांति-सैनिक के नाते हमारा जो बुनियादी विचार है, वह कायम है। शस्त्रों से दुनिया में किसी का भला नहीं हो सकता। शस्त्र-युद्ध के खिलाफ हमारा मानसिक विरोध हम छोड़ नहीं सकते। लेकिन साथ-साथ हम यह भी महसूस करते हैं कि भारत लड़ाई करने का नहीं सोचता था, हमेशा बातचीत के लिए तैयार था, ऐसी हालत में चीन की तरफ से जो यह आक्रमण हुआ है, वह बिलकुल बेजा है। कम्युनिज्म के ख्याल से भी वह शोभादायक नहीं है। इसको हम राज्य-विस्तार-तृष्णा ही कहते हैं। 'एक्स्पान्शनिज्म' (प्रसारवाद) कहते हैं, कम्युनिज्म नहीं।

यह अलग बात है कि इस राज्य-विस्तार-तृष्णा के साथ-साथ वह कम्युनिज्म की बात बोले, ताकि उसके पक्ष में दुनिया के कुछ राष्ट्रों की सहानुभूति हासिल करने की आशा वह रखता हो। लेकिन विचार के ख्याल से यह राज्य-विस्तार-तृष्णा है। आज के जमाने में इस प्रकार की तृष्णा घातक है। भारत के लिए यह बात गौरव की है कि उसने राज्य-विस्तार-तृष्णा नहीं रखी। वह भारत के इतिहास में भी नहीं है। बारह साल से हम जनता में घूम रहे हैं, लेकिन इस प्रकार की कोई तृष्णा हमने भारत में कहीं नहीं देखी। इसलिए हमारी सहानुभूति भारत के साथ जाती है। केवल भारतीय के नाते हमने नहीं सोचा है, बल्कि "जय जगत्" के संदर्भ में ही सोचा है।

हम चीन से अपील करते हैं कि वह अपने गलत कदम को पीछे हटा ले, तो उससे विश्व का भला होगा और उसको दर्शन होगा कि भारत उससे दोस्ती ही चाहता है।

हम हमारे देशवासियों से एकता की अपील करते हैं। यह अपील केवल इस आक्रमण के सिलसिले में ही नहीं है, बल्कि 'जय-जगत्' के सिलसिले में और शांति-सैनिक के नाते हमारा यह नित्य विचार रहा है। हमने भारतवासियों से बार-बार कहा है कि एकता के लिए बाहर के आक्रमण की क्यों जरूरत मानते हो? ऐसे ही एक क्यों नहीं हो जाते हो? सब लोग मिल कर सर्वमान्य कार्यक्रम बना कर क्यों नहीं उसमें सबकी ताकत लगाते हो? हमारे भाषणों का यह ध्रुवपद रहा है। लेकिन आज जो संकट उपस्थित है, उस दृष्टि से भी हमारी अपील है कि भारत को अपनी एकता दृढ़ बनानी चाहिये। देश के अन्तर्गत शांति-रक्षा में हम शांति-सैनिकों की खास जिम्मेदारी महसूस करते हैं। हमने इसलिए चाहा था कि दस हजार के पीछे एक के हिसाब से सारे भारत में यत्र तत्र शांति-सैनिक हों और शान्ति-सैनिकों को कुल भारत के हर घर का परिचय तथा स्नेह हासिल हो। अभी तक वह नहीं हो सका है। भारत में कई दंगे वगैरह हुए हैं। उस वक्त कुछ भाग-दौड़ हमने जरूर की है और कहीं कुछ सेवा भी हमसे बनी। लेकिन कुल मिला कर जो काम शान्ति-सेना द्वारा हुआ, उसके लिए हमारे मन में बहुत असन्तोष है। हम आशा करते हैं कि जो भी शान्ति-सैनिक हैं, वे इस वक्त अपने स्वधर्म को पहचाने और अन्तर्गत शान्ति बनाने में अपना पूर्ण जिम्मा उठायें। यह हमारा एक विशेष धर्म होगा।

इसके अलावा दूसरा एक काम हमारा है, वह है ग्रामदान-भूदान का काम। उसका अपना आध्यात्मिक महत्त्व है और अहिंसा की दृष्टि से भी महत्त्व है। भारत की गरीबी मिटाने की दृष्टि से इसका महत्त्व है। साथ-साथ एलवाल कान्फ्रेंस में नेताओं के सामने हमने यह दावा पेश किया था कि ग्रामदान 'डिफेन्स मेजर' है। उस वक्त चीन के आक्रमण का कुछ स्वप्न हमको नहीं था, ग्रामदान के काम को इस वक्त हम जितना बढ़ावा दे सकें उतना विश्वशान्ति में और भारत की एकता में हमारा योगदान होगा। हम समझते हैं कि ग्रामदान के कार्य से चीन की आक्रमण-वृत्ति भी कुंठित हो सकती है, लेकिन राज्य-विस्तार-तृष्णा की अधता के कारण वह आक्रमण-वृत्ति कुंठित न हुई तो भी उससे आक्रमण की शक्ति तो कुंठित हो ही जायेगी। यद्यपि भारत पर यह लड़ाई लादी गयी है और इसलिए भारत सरकार लड़ रही है, तब भी हम आशा करते हैं कि जो निर्वैर वृत्ति उसने आजादी के बाद आज तक बताई उस निर्वैर वृत्ति में न्यूनता नहीं होने देगी। लड़ने की जरूरत पड़ी है तो भले परिस्थिति-वश लड़ते हैं, लेकिन निर्वैरता से लड़ें। लड़ाई से कभी लड़ाई कुंठित हो भी सकती है, पर वैर से वैर कभी कुंठित नहीं होता, बल्कि बढ़ता ही है।

शांति-सैनिकों के लिए ४ निषेध

कटिहार के समीपवर्ती गाँव नवाबगंज में चीनी आक्रमण से उत्पन्न स्थिति को दृष्टिगत रख कर विनोबाजी ने एक सार्वजनिक सभा में शांति-सैनिकों के लिए ४ निषेध सुझाये।

१—यह अनुभव करना न भूलें कि निर्धारित समय से एक क्षण भी पूर्व मृत्यु न होगी।

२—दूसरों के प्रति मन में दुर्भावना तथा घृणा न रखें।

३—गड़बड़ी पैदा कर आपस में न लड़ें।

४—लड़ाकू दलों और व्यक्तियों की लड़ाई के बीच कूदने और उनके प्रहार अपने सिर पर लेने में मत चूकें।

चीनी आक्रमण के प्रति देश का कर्तव्य

देश की सुरक्षा की दृष्टि से सामाजिक-आर्थिक न्याय आवश्यक

तब तक सरकार में प्रवेश नहीं
जब तक वह अहिंसा-निष्ठ न हो

श्री जयप्रकाश नारायण का प्रेस-वक्तव्य

दिल्ली में ३ नवम्बर को पत्रकार-सम्मेलन में पत्र-प्रतिनिधियों से चर्चा करते हुए एक प्रश्न के जवाब में श्री जयप्रकाश नारायण ने स्पष्ट किया कि वे किसी भी सरकार में तब तक अधिकार नहीं ग्रहण कर सकते हैं, जब तक सरकार अहिंसा के सिद्धान्तों के प्रति अपनी पूरी निष्ठा नहीं जाहिर करती। श्री जयप्रकाश नारायण का पूरा वक्तव्य नीचे दिया जा रहा है।

चीनी आक्रमण की शुरुआत से मैं एक आध्यात्मिक दबाव की स्थिति में हूँ। अगर यह दबाव व्यक्तिगत होता तो जनता से इसका कोई सम्बन्ध नहीं होता। किन्तु इस देश में काफी संख्या में ऐसे लोग हैं, जिनके लिए मेरी द्विविधा समान रूप से वास्तविक और स्पष्ट है। वस्तुतः हमारे समक्ष जो प्रश्न उपस्थित हुआ है—मानव समाज के संघर्षों का, जिनमें अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष भी सम्मिलित हैं, समाधान हिंसा या अहिंसा के द्वारा हो—वह एक अब पथ-विशेष का प्रश्न नहीं रह गया है, बल्कि आधुनिक युद्ध के शस्त्र-अस्त्रों के कारण मानव जाति के जीवन-मरण का प्रश्न बन गया है।

दुर्भाग्य की बात है कि अहिंसा की शक्तियाँ आत्म-रक्षण के लिए आज पूरी तरह प्रभावशाली नहीं बन पायी हैं। चीन ने जिस तरह आक्रमण किया है, वह केवल सीमावर्ती क्षेत्रों तक सीमित नहीं है, किन्तु वह देश की स्वतंत्रता के खतरे के रूप में भी परिवर्तित हो गया है। भारत को अपनी रक्षा करनी ही चाहिए। अगर वह अहिंसक तरीके से रक्षण नहीं कर सकता, तो वह आक्रमक को पीठ भी नहीं दिखा सकता। सभी उपलब्ध साधनों से भारत को अपनी पूरी शक्ति से स्वतंत्रता के लिए लड़ना चाहिए।

पूर्वोत्तर सीमा की दुःखान्त घटनाओं की जानकारी से मुझे प्रत्येक भारतीय की तरह अत्यंत वेदना हुई। अगर जानबूझ कर भी यथासंभव सुरक्षा को कमजोर रखने का प्रयत्न किया जाता तो भी, इससे अधिक खराब परिणाम नहीं आ सकता था। हजारों जवानों के खून का जिम्मेदार चीन नहीं, बल्कि हम ही हैं। इस प्रकार की अकल्पनीय उपेक्षा को दूर करने के लिए जो देरी से प्रयत्न किये गये हैं, उनसे जनता आश्वस्त नहीं हो सकती है, इसलिए नहीं कि वह बदला लेना चाहती है; किन्तु वह निश्चित रूप से इसलिए आश्वस्त होना चाहती है कि कहीं भूतकाल की अशुभ छाया आज के सब प्रयत्नों को पुनः ग्रसित न कर लें।

तटस्थ नीति में दृढ़ता

न केवल अधिकारियों के क्षेत्र में, किन्तु उससे अधिक नीति के क्षेत्र में भी जनता संशोधन की अपेक्षा रखती है। जो गलतियाँ की गयी हैं, वे अक्षमता के कारण नहीं हुईं, बल्कि राजनैतिक अदूरदर्शिता से उत्पन्न वैचारिक पूर्वग्रहों के कारण हुई हैं। इसी के कारण संबंधित व्यक्तियों ने तथ्यों के प्रति आँखें मूँद लीं और अपने आग्रहमय अन्तर्राष्ट्रीयता की दुनिया तैयार कर ली, जिसका कोई औचित्य सिद्ध नहीं हो सकता। मैं यह नहीं मानता कि तटस्थता की नीति ही दोषी है, और मैं यह भी नहीं मानता कि इस बुनियादी नीति में कोई परिवर्तन भी किया जाय, और न दुनिया के हमारे मित्रों ने भी इस नीति पर कोई सवाल ही उठाया है; वास्तविक दोषी तो भावात्मक और मानसिक गुटपरस्ती है, जो तटस्थता का जामा पहने हुए है। इसीने अधा दृष्टि और दुहरे पैमाने पैदा किये, इसीके कारण हंगरी के मामले में हम समय पर सही मूल्यांकन नहीं कर सके और तिब्बत में की गयी बर्बरता पर चुप रहे। यह बात इतनी अधिक बढ़ गयी कि दो बार संयुक्त राष्ट्रसंघ की साधारण सभा में तिब्बत में साम्यवादी चीन द्वारा मानवीय अधिकारों की अवहेलना और सांस्कृतिक हत्या पर भी हम कोई ठीक कदम नहीं ले सके। यद्यपि बुनियादी नीति में किसी प्रकार के परिवर्तन की माँग नहीं की गयी है, इसलिए उन रंगीन चश्मों को एकदम फेंक देना चाहिए, जिससे एक तरफ की चीजें हमेशा अच्छी दीखती रहीं और दूसरी तरफ की चीजें अंधेरी और निराशाजनक लगती रहीं।

पड़ोसियों से संबंध

वर्तमान परिस्थिति के कारण दूसरी राजनैतिक भूल, जिसे हमें सुधारना है, वह यह है कि हम अपने पड़ोसियों—बरमा, सिलोन, मलाया और अन्य देशों—को अपनी ओर खींचने की शक्ति नहीं अपनायें। नेपाल के मतभेद समाप्त कर दिये जायें। सबसे अधिक आवश्यकता इस बात की है कि पाकिस्तान के साथ समझौता किया जाय। यह कोई सरल काम नहीं है। किन्तु मित्र-शक्तियाँ इस मामले में सहायक हो सकती हैं, बशर्ते कि राजनीतिक पूर्वग्रह इस प्रकार की मदद लेने में रोड़े न अटकायें। पाकिस्तान की राजनीतिक प्रणाली हमसे भिन्न है, किन्तु हमारा इस प्रकार के कई देशों से घनिष्ट सम्बंध है, जिनकी राजनीतिक प्रणाली हमसे भिन्न है। पाकिस्तान तटस्थ राष्ट्र नहीं, किन्तु चीन भी तटस्थ राष्ट्र नहीं है और इससे 'पंचशील' अपनाने में कोई रुकावट नहीं हुई। पाकिस्तान के अदूरदर्शी तत्त्व हमारी कठिन परिस्थिति से लाभ उठाना चाहते हैं, इस बात से भी हमें डरना नहीं चाहिए। पाकिस्तान को यह अब स्पष्ट हो जाना चाहिए कि उसकी राष्ट्रीय सुरक्षा भारत से अलग नहीं की जा सकती।

निर्भीकतापूर्वक जाँच हो

इन सब प्रश्नों की पूरी तरह से संसद में चर्चा होनी चाहिये। काँग्रेस और विरोधी दलों के नेताओं का देश के प्रति कर्तव्य है कि वे पुराने कार्यों और नीति की निर्भीकतापूर्वक जाँच करें, जिससे कमजोरी और गलतियों को खोजा जा सके एवं जिससे देश वर्तमान संकट का मुकाबला अच्छी तरह से कर सके।

इस समस्त अंधकार में संकट का सामना करने के लिए जनता ने जो शानदार प्रत्युत्तर (रेस्पॉन्स) दिया वह एकमात्र प्रकाश है, जो वस्तुतः बहुत तेज प्रकाश है। अगर चरित्र और अनुशासन की कमी, मिथ्या सनीन, नौकरशाही, तुच्छता, पक्षपात, स्वार्थपरता, मुनाफाखोरी और राष्ट्रीय जीवन के अन्य रोगों को चलते रहने से नहीं रोका गया तो राष्ट्रीय उत्साह की यह बाढ़ केवल कमाई की उथली शक्ति होगी।

समाज-क्रांति की चुनौती

चीन की चुनौती केवल सैनिक चुनौती नहीं है। यह समाज-क्रांति की भी चुनौती है। हम ठीक ही अधिनायक-प्रणाली और अमानवीय तरीकों को अस्वीकृत करते हैं। फिर भी चुनौती कायम है। पन्द्रह साल की स्वतंत्रता और समाजवाद को स्वीकृत करते हुए भी हमारे समाज में आज भी असह्य विषमता और अन्याय है। आकाशवाणी के प्रत्येक प्रसारण में हम यह सुनते हैं कि गरीब लोग अपनी जिंदगी की पूरी कमाई राष्ट्र के लिए समर्पित कर रहे हैं। इस संकट के क्षणों में त्याग में भी असमानता है। मैं यह नहीं सोचता कि इस वक्त क्रांति लाने के लिए राज्य कोई साहस भरा कदम उठाये। मैं समाज के ऊँचे तबके की मनोवृत्ति पर विचार कर रहा हूँ। जब तक समाज के ऊँचे वर्ग के लोगों की मनोवृत्ति नहीं बदलती, तब तक चीन की चुनौती का कारगर उत्तर नहीं दिया जा सकेगा। उच्च और धनवान तथा शक्तिशाली व्यक्तियों को चाहिये कि वे जनता के साथ तादात्म्य स्थापित करें। उनकी जिंदगी का ढर्रा एकदम बदल जाना चाहिये। धर्म व्यवहार के तरीके और विशेषतः आजादी के बाद जो 'नया-वर्गवाद' बढ़ा है, उसको निकाल फेंकना चाहिये। सामाजिक और आर्थिक समानता का अभियान, राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रयत्नों का मुख्य हिस्सा बनना चाहिये। तभी जनता के वर्तमान उत्साह को स्थिर रखा जा सकता है।

पंचायतों का कर्तव्य

देश की जिंदगी की मजबूती उसकी जड़ों से होनी चाहिए। मैं अखिल भारत पंचायत परिषद के अध्यक्ष की हैसियत से देश की प्रत्येक ग्राम-पंचायत से निवेदन करना चाहूँगा कि वह अपने सुरक्षा-कर्तव्य के रूप में गाँव में इस बात का प्रबन्ध करे कि गाँव में कोई भूखा और आश्रयहीन न रहे, कोई रोजगार के साधन से हीन न रहे, गाँव के प्रत्येक औजार और उत्पादन के साधनों का पूरा उपयोग किया जाय। वहाँ किसी प्रकार का सामाजिक-आर्थिक शोषण न हो, आपसी झगड़े मध्यस्थता से अथवा पारस्परिक सम्मत तरीकों से निबटाये जायें, धार्मिक एवं दूसरे अल्पसंख्यकों को विश्वास में लिया जाय, गाँव की सुरक्षा और व्यवस्था की जिम्मेदारी गाँव के स्वयंसेवक-दल द्वारा हो, किसी प्रकार का भय न रहे। जो गाँव इन सब चीजों को करेंगे, वे स्वतंत्रता के दृढ़ गढ़ बन जायेंगे। पंचायतों को आश्वासन दिलाना चाहता हूँ कि इस काम को करने के लिए मेरी सेवाएँ उनके लिए सदा सुरक्षित हैं।

अधिक उत्पादन का आह्वान किया

[शेष पृष्ठ ११ पर]

भद्र सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि •

गांव स्वावलंबी बनें

बंगाल मे' सन् १९४३ मे' अकाल पड़ा था। अ़ुस समय देहात-देहात से लोग चल कर कलकत्ता गये। गांव मे' अ़ुनको अन्न नहीं मीला था। अ़ुन्होंने सोचा, महानगरी आश्रय देगी। फीर भी अ़ुनको खाना नहीं मीला। भूखों मरना पड़ा। अ़ुस समय कम-से-कम पचास लाख लोग मरे होंगे। अीतने लोग क्यों मरे?

अ़ुस समय खरीदने की शक्ती नहीं थी और खरीदने को अनाज भी नहीं मीलता था। क्या सारा अनाज देश मे' बाहर चला गया था? नहीं। गांव के बाहर चला गया था। अीसलीअे गांव-गांव से लोग शहरों की तरफ बढ़े। लेकीन अ़ुनके पास खरीदने की शक्ती नहीं थी। शहर मे' जाने पर भी वे खरीद नहीं सके। अीसलीअे गांव को स्वावलंबी बनना है। खाना, कपड़ा और दवा-दारू मे' गांव-गांव को स्वावलंबी बनना है। तब कीसी भी तरह की, अशान्ती की स्थीती मे' भी गांव सुरक्षीत रहेंगे। आयात-नीर्यात बंद होने पर भी, दूसरे देशों से वाणीज्य व्यापार स्थगीत होने पर भी गांव बच जायेंगे। अीसलीअे हमने कहा की ग्रामदान, भूदान "डीफेन्स मेज़र" है। वह शान्ती के समय भी चलेगा और अशान्ती के समय भी चलेगा। बाकी सारी वीकास-योजनाअें अ़ुसकी पेट मे' आ जाती हैं।

[शोमानगर, जी० मालदह —वीनोबा
२२-१०-'६२]

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

टिप्पणियाँ

ग्रामदान : एक 'डिफेन्स मेजर'

जब भारत-चीन संघर्ष जैसा कोई खतरा मुल्क के सामने नहीं था उसी समय, आज से पाँच वर्ष पहले, विनोबा ने कहा था कि ग्रामदान एक 'डिफेन्स मेजर', अर्थात् रक्षण की योजना है। जब युद्ध छिड़ता है तो स्वाभाविक ही राष्ट्र और सरकार का पूरा ध्यान और शक्ति युद्ध के कामों में लग जाती है।

ऐसी परिस्थिति में गाँव-गाँव में दो बातें आवश्यक हो जाती हैं। पहली बात तो यह कि अपनी प्राथमिक आवश्यकताओं के लिए प्रजा यथासम्भव स्वावलम्बी हो, ताकि इस माने में राष्ट्र की जिम्मेदारी हल्की हो और राज्यकर्ताओं को इस बात की चिन्ता न रहे कि प्रजा भूखों मरेगी। दूसरी आवश्यक बात एकता और शांति की है। अर्थात् देश में आन्तरिक शांति रहे, झगड़े फसाद या संघर्ष न हों।

पहली बात के लिए गाँव-गाँव की योजना बनाना और उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है। इन दोनों बातों के लिए गाँव वालों को एक दिल होकर और मिल कर सोचना आवश्यक है। एकता के लिए भी आपस में भाईचारा कायम करना और झगड़े के कारणों को दूर करना आवश्यक है।

गाँवों में अगर आर्थिक विषमता, ऊँच-नीच की भावना आदि कायम रही तो आन्तरिक एकता नहीं हो सकेगी, न मिल-जुल कर गाँवों का उत्पादन बढ़ाने की कोई योजना सफल हो सकेगी। आज तो युद्ध की परिस्थिति के कारण ये सब चीजें आवश्यक हैं ही, लेकिन शोषण रहित, सुखी, समृद्ध और शांतिमय जीवन के लिए तो ये चीजें हमेशा आवश्यक हैं। इन बुनियादों पर अगर समाज की रचना होती है तो झगड़े और युद्ध भी खतम हो सकते हैं। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रख कर विनोबा ने कहा था कि ग्रामदान 'डिफेन्स मेजर' है।

पर आज परिस्थिति असाधारण है। ग्रामदान न हो तब तक क्या करें? विनोबा ने इस असाधारण परिस्थिति को ध्यान में रख कर ही गाँव-गाँव के लिए एक सुगम कार्यक्रम दिया है। वे कहते हैं कि कम-से-कम नीचे लिखी चार बातें हर गाँव में तुरत होनी चाहिए :

"(१) गाँवों में सब बालिग लोगों को मिल कर ग्रामसभा बने और वह गाँव की व्यवस्था की जिम्मेदारी उठाये।

(२) ग्रामसभा गाँव के भूमिहीनों की समस्या हल करे। पद्धति का आग्रह नहीं है, अर्थात् भूदान-ग्रामदान ही किया जाय यह जरूरी नहीं है, उद्योग आदि किसी भी जरिए से भूख और बेकारी की समस्या हल होनी चाहिए। गाँव में कोई भूखा और बेकार न रहे, यह जिम्मेदारी ग्रामसभा की है। भूख और बेकारी रहेगी तो उत्पादन भी नहीं बढ़ेगा और देश में एकता और मजबूती भी नहीं आयेगी।

(३) हर व्यक्ति अपनी आय या उपज में से एक निर्धारित अंश—उदाहरण के लिए, बीसवाँ हिस्सा—गाँव की पूँजी बनाने के लिए ग्रामसभा को दे। यह पूँजी गाँव के उद्योग आदि खड़े करने में काम आये।

(४) गाँवों में झगड़े न हों, आन्तरिक शांति रहे। ऊपर लिखी अन्य बातें होती हैं तो अशांति के कारण अपने आप बहुत कम हो जायेंगे। फिर भी गाँव में झगड़ा हो तो उसका निपटारा वहीं हो जाय।"

देश एक संकट में से गुजर रहा है, ऐसे अवसर पर सब लोगों को मिल-जुल कर तुरत गाँव-गाँव में उपरोक्त योजना अमल में लानी चाहिए। राष्ट्र के रक्षण में यह एक महत्त्व का योग होगा और साथ ही इससे आगे के लिए ग्रामस्वराज्य की नींव भी पड़ेगी।

संतुलन न खोयें

परिस्थिति चाहे साधारण हो, चाहे असाधारण, शांति हो या संकट, हर हालत में मन पर और भावनाओं पर काबू बनाये रखना और संतुलन न खोना आवश्यक है, बल्कि संकट या खतरे के समय तो और भी ज्यादा जरूरी है कि हम अपना संतुलन कायम रखें। ऐसे मौके पर अगर संतुलन खो दिया तो उल्टा नुकसान होने की सम्भावना है।

ता० ३१ अक्टूबर की रात को दिल्ली में कम्यूनिस्ट पार्टी के सदर दफ्तर पर जो घटना हुई वह इस दृष्टि से विचारणीय है। समाचार-पत्रों की खबरों से मालूम होता है, करीब दो हजार आदमियों का एक झुण्ड कम्यूनिस्ट पार्टी के दफ्तर पर पहुँचा और वहाँ उसने काफी हंगामा मचाया। झुण्ड में जो लोग शामिल थे, उन्होंने अपनी जान में अपनी देशभक्ति का ही प्रदर्शन किया और कम्यूनिस्टों की 'देशद्रोही' नीति के खिलाफ अपनी भावना जाहिर की। कम्यूनिस्ट पार्टी की नीति से हमको असंतोष हो, तब भी इस प्रकार का बर्ताव किसी हालत में वांछनीय नहीं है। हर कोई जानता है कि मुल्क के सामने इस वक्त खतरा है। जनतंत्र की या सामान्य मनुष्यता आदि की बात छोड़ दें तब भी ठंडे दिल से विचार करने पर हरएक को यह महसूस होगा कि इस तरह संकट के समय में मुल्क में कहीं भी अराजकता या अशांति न फैले यह आवश्यक है। कम्यूनिस्ट पार्टी के रवैये के प्रति विरोध जाहिर करने के लिए अगर हम कानून को अपने हाथ में लेते हैं तो उसका नतीजा यह भी हो सकता है कि उनकी ओर से भी उसी प्रकार इसका प्रतिकार किया जाय और अराजकता बढ़े। ऐसी सूरत में हम देश-रक्षा के काम में मदद नहीं पहुँचायेंगे, बल्कि उल्टे उसके लिए बाधक साबित होंगे। दूसरे प्राणियों में और मनुष्य में अगर कोई अन्तर है तो वह यही कि उसे सोचने विचारने की और विवेक की शक्ति मिली है। इस विवेक को हमें किसी भी हालत में नहीं खोना चाहिए और आवेश में आकर ऐसे कोई काम नहीं करने चाहिए, जिनसे मुल्क में अशांति या अराजकता बढ़े। आवेश में आने से कभी भी कोई काम ठीक या सफल नहीं हो सकता।

घुड़दौड़, दंगल और प्रतिरक्षा कोष !

मौजूदा संकट को लेकर देश में जो भावना जाग्रत हुई है वह प्रेरणादायी है। यह हम एक भारतीय नागरिक की दृष्टि से नहीं, लेकिन मानवता में विश्वास करने वाले व्यक्ति के नाते महसूस करते हैं। अन्याय के प्रतिकार के लिए उठ खड़ा होना मानवीय गुण है। इसके खिलाफ, अन्याय या अत्याचार के प्रति समर्पण मानवता को नष्ट कर देने वाला है। तटस्थ वृत्ति के सभी लोगों ने माना है कि मौजूदा विवाद में चीन की ओर से अन्याय और आक्रमण हुआ है। ऐसी परिस्थिति में हिन्दुस्तान भर में इस अन्याय का मुकाबला करने के लिए जो उमंग लोगों में दीख पड रही है वह आज की परिस्थिति में एक प्रकाश की किरण है।

ऐसे उमड़ते हुए प्रवाह में अक्सर बहुत सी पुरानी गन्दगी और बुराइयाँ धुल जाती हैं, बशर्ते कि हम सावधान रहें। संकुचित स्वार्थवृत्ति, भ्रष्टाचार, कामचोरी, कुशलता का ह्रास आदि दुर्गुण आजादी के बाद पिछले वर्षों में काफी मात्रा में बढ़े हैं, इसमें शायद ही दो राये हों। पर पिछले दस-बारह दिनों में राष्ट्र में भिन्न-भिन्न संकुचित स्वार्थ की आवाजें शांत हुई हैं। अपनी अपनी जगह शक्ति भर देश के काम में मदद पहुँचाने की उमंग लोगों में जाग्रत हुई है। इस सारी परिस्थिति का फायदा उठाना और इन भावनाओं को ठोस आधार देना देश के नेताओं का

इस समय कर्तव्य है। जन-जागृति के ऐसे मौके बार-बार नहीं आते।

नयी दिल्ली से प्राप्त एक समाचार में कहा गया है कि "वहाँ हो रही घुड़दौड़ में जो धन-संग्रह होगा वह राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कोष में दिया जायगा।" उसी दिन नयी दिल्ली के दूसरे एक समाचार में कहा गया है कि "दिल्ली पहलवान संघ ने हर रविवार और शुक्रवार को भारत के प्रसिद्ध पहलवानों की कुश्तियाँ आयोजित करने का और इन कुश्तियों से होने वाली आमदनी राष्ट्रीय प्रतिरक्षा कोष में देने का तय किया है।" कोई भी आमदनी प्रतिरक्षा कोष में दी जाती है तो वह ठीक ही है, पर जब एक ओर राष्ट्र के नेता जनता से सादगी की, समारोहों को बंद करने की और बिना किसी बदले की अपेक्षा के कर्तव्य के तौर पर प्रतिरक्षा कोष में यथाशक्ति मदद करने की माँग कर रहे हों तब दूसरी ओर धन-संग्रह के नाम पर घुड़दौड़ और दंगल जैसे आयोजनों को चलने देना और उनमें शक्ति का अपव्यय करना कहाँ तक उचित है, यह सोचने की बात है। श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने वक्तव्य में समाज के ऊँचे तबके के लोगों की मनोवृत्ति की जो टीका की है उसकी सहज ही पुष्टि इन समाचारों से होती है। शांति का जमाना हो या संकट का, इन लोगों के रवैये में कोई तब्दीली नजर नहीं आती, यह दुःख की बात है। प्रतिरक्षा के लिए धन-संग्रह के नाम पर ही सही, संकट के समय में भी घुड़दौड़ और दंगल चलते रहें, यह मनोवृत्ति जनता की प्रतिरोधी शक्ति को बढ़ाने वाली नहीं है। इन आयोजनों में जो समय, शक्ति और धन आदि खर्च होता है उसका क्या दूसरा बेहतर उपयोग नहीं हो सकता? अगर ऐसा न हो सकता हो तो जनता से सादगी की और कमर कस कर मेहनत करने की बातें कहना कहाँ तक सगत होगा? जयप्रकाशजी ने ठीक ही कहा है कि "जब तक समाज के ऊँचे वर्ग के लोगों की मनोवृत्ति नहीं बदलती, तब तक चीन की चुनौती का कारगर उत्तर नहीं दिया जा सकेगा।" —सिद्धराज

शांति-सैनिकों का साहसिक कार्य

मध्य प्रदेश के सिवनी शहर में गत ९ अक्टूबर को वहाँ के मुख्य बाजार के बीच बारूद की एक बड़ी दूकान में लगी भयंकर आग बुझाने का वहाँ के शांति-सैनिकों ने एक सफल प्रयास किया। कहा जाता है कि अगर इस आग को समय पर नियंत्रित नहीं किया जाता, तो लाखों की सम्पत्ति की बरबादी और काफी जनहानि होती। शांति-सैनिकों के घटना-स्थल पर पहुँचने के पहले हजारों व्यक्ति वहाँ इकट्ठे हो गये थे, किन्तु आग में जाकर, उसको बुझाने के लिए प्रयत्न करने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ी। शांति-सैनिकों ने पहुँचते ही अपना काम शुरू कर दिया। जनता भी शांति-सैनिकों के जान हथेली पर रख कर आग बुझाने के काम को देखते ही अपनी निष्क्रियता छोड़ कर आग बुझाने के काम में मदद के लिए दौड़ पड़ी।

सिवनी के शांति-सैनिकों ने जो कुछ किया वह उनका कर्तव्य ही था। किन्तु ऐसे मौकों पर शांति-सैनिक प्रयत्न करने से नहीं चूकते हैं, तो वे मानव-मानव के बीच अशांति-शमन के लिए और भी अधिक कारगर सिद्ध हो जाते हैं, क्योंकि ऐसी घटनाओं से शांति-सैनिकों में जनता की श्रद्धा जमने लगती है।

सिवनी में शांति सैनिकों ने अच्छे संगठन का परिचय दिया। सूचना पाते ही सबसे पहले, ११ शांति सैनिक घटना-स्थल पर पहुँच गये। अक्सर यह होता है कि व्यवस्थित संगठन के अभाव में शांति-सैनिक चाहते हुए भी समय पर कुछ विशेष नहीं कर पाते हैं और घटना घटने के बाद ही उनका प्रयत्न शुरू हो पाता है। देरी से काम करने का मनोनुकूल असर भी नहीं पड़ता है। आज जब कि देश में संकट है और शांति-सेना आवश्यक हो गयी है, शांति-सैनिकों के व्यवस्थित संगठन और उनके प्रशिक्षण की विशेष आवश्यकता है।

सिवनी के शांति-सैनिकों ने समय रहते जो काम किया है, उसका काफी असर वहाँ की जनता पर है। सिवनी के कलेक्टर ने शांति-सैनिकों के नाम पत्र में लिखा है, "जान हथेली पर रख कर जिस तत्परता, लगन और जोखिम के साथ प्रशंसनीय कार्य किया, उसके लिए मैं आप सबका हृदय से आभारी हूँ।"

—मणीन्द्रकुमार

अहिंसक प्रतिकार

'एवीमेन तृतीय' को लेनिनग्राड में ठहरने की अनुमति नहीं

'एवीमेन तृतीय' शनिवार, २० अक्टूबर की दोपहर को अपने १२ शांतियात्रियों के साथ, आणविक परीक्षण और युद्ध की तैयारी के निषेध के लिए लेनिनग्राड पहुँचा। अब तक के प्राप्त समाचारों में यह बताया गया कि शांतियात्रियों ने पहले 'लेनिनग्राड पीस कमिटी' (शांति-समिति) से बातचीत की और उन्हें यह बताया गया कि सोवियत शांति-समिति का प्रतिनिधि मंडल शांति-यात्रियों से मिलने के लिए रास्ते में है।

बाद के समाचारों से मालूम हुआ कि 'एवीमेन तृतीय' को लेनिनग्राड में ठहरने की आज्ञा नहीं दी गयी और उसको एक रूसी जहाज द्वारा रूस-सीमा से बाहर ले जाया गया है। जब 'एवीमेन तृतीय' को रूसी सीमा से बाहर ले जाया जा रहा था, उस वक्त तीन यात्री समुद्र में कूद पड़े और तैर कर लेनिनग्राड जाने का प्रयत्न करने लगे। उनको 'पुलिस लॉच' में पकड़ कर पुनः 'एवीमेन तृतीय' पर पहुँचा दिया।

'एवीमेन' के नायक श्री अर्ल रेनाल्ड्स ने एक से अधिक बार कहा है, "अगर हमको प्रवेश से रोका जाता है, तो हम तब तक भूमि पर पहुँचने के लिए जोरदार प्रयत्न करते रहेंगे जब तक हमें शारीरिक दृष्टि से रोक नहीं दिया जायेगा।"

'एवीमेन तृतीय' की परियोजना-समिति और विश्वशांति-सेना की यूरोपियन शाखा 'एवीमेन तृतीय' के बारे में और अधिक समाचार जानने के लिए प्रयत्नशील है। परियोजना-समिति के प्रतिनिधि-मंडल ने २४ अक्टूबर को लंदन के सोवियत राजदूतावास के अधिकारियों से भेंट कर पूछा कि 'एवीमेन तृतीय' को लेनिनग्राड में प्रवेश के लिए अनुमति क्यों नहीं मिली और अब उसके बारे समाचार क्या हैं? दूतावास के 'चार्ज डीएफेयर्स' ने बताया कि मुझे 'एवीमेन तृतीय' के बारे में कोई जानकारी नहीं है और जब तक उसके यात्रियों को 'वीसा' नहीं मिल जाता, मैं कोई मदद नहीं कर सकता।

अभी-अभी समाचार मिला है कि लेनिनग्राड शांति-समिति ने इस अफवाह का खंडन किया है कि लेनिनग्राड बन्दरगाह से 'एवीमेन तृतीय' को जब हटाया जा रहा था, उसके नाविकों ने उसमें छेद करके उसको डूबो दिया। शांति-समिति का यह दावा है कि 'एवीमेन तृतीय' अभी तक लेनिनग्राड में ही अच्छे मौसम की प्रतीक्षा कर रहा है। पर इस विषय में निश्चित तौर से कोई जानकारी नहीं मिल पा रही है। विश्वशांति-सेना के लंदन-कार्यालय में एक तार प्राप्त हुआ है, जिसमें लिखा है "शांति-कार्य को यथावत् रखो, शीघ्र रवाना हो रहे हैं।" 'एवीमेन तृतीय' के इस तार का यह आशय लगाया जा रहा है कि विशेष परिस्थिति में नौका के कप्तान अर्ल रेनाल्ड्स और उनके साथियों ने विशेष परिस्थिति में यह उचित समझा हो कि नौका डूबो दी जाय। रवाना होने के पहले नाविक तथा परियोजना समिति इस बात पर सहमत थी कि परियोजना के लक्ष्यों के विरुद्ध कोई खतरा उत्पन्न होने पर उसका सामना किस तरह करना, यह कप्तान की जिम्मेदारी है। नाविकों ने यह घोषित किया था कि अगर लेनिनग्राड में हमें उतरने नहीं दिया तो हम लोग भरसक सभी अहिंसक उपायों का आश्रय लेंगे।

शांति के लिए उपवास

लंदन के उत्तरीय उपनगर बुशग्रीन में पाँच शांतिवादी नौजवानों ने शांति के लिए ६ अक्टूबर से ११ अक्टूबर तक सार्वजनिक उपवास किया। उन्हें उम्मीद है कि उपवास के द्वारा वे युद्ध और अकाल के अहिंसक विकल्प के लिए जनता का ध्यान खींच सकेंगे।

उपवास करते हुए उन्होंने आक्सफोर्ड अकाल-राहत समिति (आक्सफोर्ड कमिटी फार फेमिन रिलीफ) के लिए धन और वस्त्र के रूप में चन्दा एकत्रित किया। इस प्रकार के उपवास पहले भी फ्रांस, स्विट्जरलैंड, अमेरिका और पश्चिम-जर्मनी में हो चुके हैं। लंदन में गत दो महीनों में यह दूसरा उपवास है।

रोम की यात्रा

दो ब्रिटिश कैथोलिक लंदन से रोम के लिए ८ अक्टूबर को रवाना हुए। यात्रियों में से एक हैं श्री लारेन्स हिसलाप। आप पेशे से कुम्हार हैं और नैतिक युद्धविरोधी के नाते कई बार जेल भुगत चुके हैं। आप 'शत समिति' (कमेटी आफ हंड्रेड) के सदस्य भी हैं। दूसरे हैं श्री नेल स्टेडफर्ड, एक सामाजिक कार्यकर्ता। आप रोम में चल रही 'वेटिकन कौंसिल'—कैथोलिक ईसाइयों की धर्मसभा—के अंतिम सप्ताह तक रोम पहुँचेंगे और पोप से एक निजी मुलाकात में, 'ईसाइयों द्वारा अणुयुद्ध की तैयारी के शर्मनाक रवैये' पर चर्चा करेंगे। उनको उम्मीद है कि पोप इस मामले में ईसाइयों का मार्गदर्शन कर सकेंगे।

स्वतंत्र विचारों की आवश्यकता

• विनोबा

बापू के जन्म दिन के निमित्त कुछ बोलना होता है, तो हमको बहुत मुश्किल होता है। १९१६ में मैं उनके पास पहुँचा था, तब मैं २१ साल का लड़का था और वे एक बहुत निश्चित विचार लेकर आश्रम में बैठे थे। ऐसे तो वे भारत में घूमते रहते थे और बीच-बीच में आश्रम में रहते थे। लेकिन उनके जीवन विषयक विचार स्थिर हो गये थे, तब से आखिर तक उनके कुछ-न-कुछ विचार बदलते गये, याने स्थूल विचारों का विकास होता गया। लेकिन मूलभूत विचार जो गौतम बुद्ध से चला आ रहा था—प्रेम से वैर को जीतो, अक्रोध से क्रोध को जीतो, सत्य से असत्य को जीतो—पक्का रहा। वे उस पर बीस साल प्रयोग कर चुके थे। बिल्कुल जवानी में, तीस साल की उम्र में सत्याग्रह की कल्पना उन्होंने की और तब से आखिर तक, चौंतीस साल सत्याग्रही का जीवन बिताया। तब से मैं उनके पास रहा था। एक जिज्ञासु बालक की वृत्ति लेकर उनके पास गया था।

लेकिन तब मैं भी अपने जीवन का कुछ निश्चय कर चुका था। घर छोड़ चुका था। उसके बाद उनके पास पहुँचा था। तब से आखिर तक उनके पास रहा। उनके पास, याने शारीरिक दृष्टि से नहीं, लेकिन उनके विचारों की आज्ञा में रहा। उसके बाद पन्द्रह साल और हो गये। उनकी आज्ञा में, उनके मार्गदर्शन में ही भारत विचरण कर रहा हूँ, ऐसा मैं मानता हूँ। १९१६ से आज तक, ४६ साल सतत उनके पास रहा, ऐसा मैं कह सकता हूँ।

यह शरीर भी पुराना है। विज्ञान कहता है, सात साल के बाद वही स्थूल शरीर में नहीं रहता, नया बनता है। हमारे लोग मानते थे कि बारह साल में शरीर बदलता है। इसलिए बारह साल की तपश्चर्या रखी होगी। अब ये तो ४६ साल हुए। तो इतने साल जो विचार उन्होंने सिखाये, उनके निरन्तर चिन्तन, मनन, प्रयोग, आचरण को इतना समय लगा। उस हालत में उस विषय में व्यक्तिगत तौर पर मैं अपने लिए अभिप्राय नहीं दे सकता। जैसे अपने लिए नहीं, वैसे दूसरों के लिए भी नहीं दे सकता। फिर भी इन पन्द्रह सालों में दुनिया में फरक हुआ है। विज्ञान बढ़ा, भारत में आजादी आयी और लोकसत्ता के राज्य की स्थापना हुई। स्वतंत्रता, लोकसत्ता और विज्ञान की प्रगति, ये तीन चीजें भारत में पन्द्रह वर्षों में आयी। उस प्रवाह में विचारों का स्थूल आकार बदलता चल रहा है। वह यहाँ तक गहरा जाता है कि कुछ विचार भी बदलते हैं। आज हम ऐसी हालत में हैं कि उन्होंने जो दिया और कहा उसके बिल्कुल अक्षर के साथ अगर हम चिपके रहेंगे तो हमारी प्रगति नहीं होगी। उनके अपने जीवन में वे हमेशा बदलते गये। उनका बाहर का रूप बदलता गया। वो वे परिस्थिति ध्यान में लेकर तदनुरूप उनको बदल लेते और फिर भी अपने मूलभूत विचार को नहीं छोड़ते। हमको भी यही करना चाहिये। महापुरुषों के साथ रहे हुए मनुष्य को यह हमेशा मुश्किल जाता है, क्योंकि वे अक्षरार्थ को छोड़ना नहीं चाहते। बापू होते तो क्या कहते, बापू क्या करते, ऐसा ये लोग सोचते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि प्रगति कुंठित होती है। ये मानते हैं कि मार्गदर्शक की राह पर चलना चाहिये। बहुत सारे अनुयायियों की इसी प्रकार हालत होती है। लेकिन बापू ने कभी किसी को अपना अनुयायी नहीं बनाया। मुझे भी स्वतंत्र विचारों की आदत थी। बावजूद इसके कि उनके विचारों का पूर्ण प्रभाव मुझ पर रहा—यहाँ तक कि वे उनके नहीं, मेरे विचार हो गये। फिर भी दुनिया में जो अनेक विचार प्रवाह वेद के समय से लेकर आज तक चले उनका परिचय और असर मुझ पर है। विज्ञान के बारे में मेरा अपना चिन्तन है, क्योंकि मैं तटस्थ होकर सोचता हूँ और समझता हूँ कि उन्होंने जिस प्रकार के आश्रम बनाये थे, अब नहीं चलेंगे। स्वतंत्रता के पहले आश्रमों के साथ ग्रामोद्योग, खादी, चमड़ा, गोरक्षा इत्यादि-इत्यादि के प्रयोग वहाँ चलते थे। इस प्रकार अनेक कार्य का संयोग आश्रमों में होता था। उसमें तालीम, राजनीति भी आती थी, अध्यात्म भी आता था। सब चीजें एकत्र आती थीं। कार्यकर्ता भी इकट्ठे आते थे। अब तो परिस्थिति में फरक हुआ है। उसके कारण हमको समझना चाहिये कि अब हमारे लिए स्थिर बैठने का समय नहीं है, बल्कि हमको एक विचार को लेकर घर-घर, गाँव-गाँव पहुँचना चाहिये और उन विचारों को जीवन की कसौटी पर कसना चाहिये, लोकजीवन के कसौटी पर कसना चाहिये। यह हमको करना चाहिये। हमारी साधना जितनी हो सकती है, उत्तम होनी चाहिये। हमने आश्रम बनाये, वे इसलिए कि वे आश्रम, जो लोग गाँव-गाँव में काम करते हैं, उनको एक विद्युत् शक्ति प्रदान करें। जिन विचारों पर कार्य चलता है, उन विचारों का वहाँ अध्ययन हो। कई कार्यकर्ता यहाँ आश्रम में आते रहेंगे तो विचारों का अध्ययन करके फिर कार्य के लिए जायेंगे। इस तरह से ये आश्रम विद्युत् शक्ति प्रदान करते रहेंगे और नये विचारों की प्रयोगशाला बनेंगे।

इस सिलसिले में फौरन वही चीज ध्यान में आती है, जो बापू ने की। उन्होंने पचास उद्योग खड़े किये, लेकिन उन्हें अहिंसा, सत्य आदि व्रतों के आधार पर खड़ा किया। ये व्रत नये नहीं, पुराने ही थे—बुद्ध, महावीर, पातंजलि, ईसा, लगभग हर धर्मगुरु ने ये कहे थे। लेकिन वह चित्तशुद्धि के लिए कहे थे। चित्तशुद्धि, एकान्त, ध्यान और यम-नियमादि क्रियाओं को हमारे पूर्वजों ने जितनी मान्यता दी थी उसको बापू मानते थे। लेकिन इसके अलावा समाज-सेवा, लोकक्रान्ति के लिए, इन सिद्धान्तों की जरूरत थी और उन सिद्धान्तों पर निष्ठा के द्वारा ही लोकक्रान्ति और सेवा का काम होगा, ऐसे बापू ने सिखाया।

इसके पहले जो समाज में क्रान्ति का काम करते थे, वे इस चीज को नहीं मानते थे। वे परिस्थिति के अनुसार व्यवहार करते थे और सिद्धान्तों में जकड़ जाना ठीक नहीं, यहाँ तक वे मानते थे। गांधी ने यह सिखाया कि व्रत साधना, चित्तशुद्धि के लिए इसकी जितनी जरूरत है, उतनी ही जरूरत सामाजिक क्रान्ति के लिए है, बल्कि उसकी कसौटी इसी पर है। हम मानते हैं निर्वैर होना। इसकी कसौटी घर में नहीं होती। जब समाज का काम लेकर समाज में जाते हैं, तब इसकी कसौटी होती है। इसलिए चित्तशुद्धि और साधना की कसौटी के तौर पर यह चीज जरूर उठा लेनी चाहिए।

उसके बाद जो आश्रम बने, उनमें यह चीज एक कोने में रह गयी। व्रतों का उच्चारण तो होता है, लेकिन यांत्रिक होता है। लोग व्रत बोलते जाते हैं, लेकिन उसके तरफ खास ध्यान नहीं होता। तो ग्रामोद्योग चलाते हैं, जो आज वास्तव में सरकारी क्षेत्र में आते हैं। उस जमाने में सरकार अपनी नहीं थी तो इस काम को करना पड़ता था। उन उद्योगों का विकास करना था। शरीरश्रम और स्वावलम्बन के तौर पर उद्योग लेना ठीक है। लेकिन अपनी सरकार है तो ग्रामोद्योग का क्षेत्र उनका हो गया है। फिर भी आज आश्रमों में वही करते हैं और बुनियादी आध्यात्मिक आश्रम प्रतिष्ठाएँ कोने में रख लेते हैं। उसके बारे में उदासीन रहते हैं, सावधान नहीं रहते और नव-विचारों का चिन्तन-मनन नहीं करते। तो मुख्य वस्तु, जिससे क्रान्ति होती है, वह वहाँ नहीं रहती। वे खामियाँ आज के आश्रमों में रह गयी हैं। ये चीजें, ये विचार आश्रमों में रहें, इसलिए अध्ययन की जरूरत है, यह भूलना नहीं चाहिए।

हमने बहुत दफा कहा है कि आश्रमों में स्फूर्ति कम हो गयी है। स्फूर्ति कम हो गयी है, इसका कारण यहाँ आपका जीवन सुव्यवस्थित है उसका भी कारण क्या? कारण यह कि जो सरकारी पैसा आपके पास आता है उसका यहाँ स्वागत होता है। सुव्यवस्थित जीवन अच्छा माना जाता है। इसलिए उन विचारों का चिन्तन नहीं होता। विचारों का चिन्तन होता तो हम दारिद्र्य का स्वेच्छा से, विचारपूर्वक मानते। कुछ सहूलियतें, मारक हैं, ऐसा मानते। सहूलियत कर लेते हैं तो उससे विचार कुंठित होता है, ऐसा लगना चाहिए, वह नहीं लगता। मैं मद्रास गया था, तो वहाँ कामकोटि शंकराचार्य से मिलने गया। जो शंकराचार्य होते हैं, वे संसार छोड़ कर गद्दी पर बैठते हैं। लेकिन इन्होंने गद्दी का भी संन्यास लिया था और वे एक छोटे-से झोपड़े में बैठे थे। वहाँ दो चटाइयाँ बिछायी थीं, एक मेरे लिए और एक उनके लिए। वे पूर्ण अपरिग्रह में रहते थे। आज १३०० साल के बाद भी उनको वैभव मिल सकता है, लेकिन वे अपरिग्रह से रहते थे। उनमें ज्ञान तथा अभ्यास भी देखा। उनके सम्प्रदाय में आज भी दो गुण दीखते हैं—अपरिग्रह का महत्त्व, संयम-सादगी का महत्त्व और ज्ञानाभ्यास। हमारे यहाँ इन्हीं दो चीजों की कमी है। उद्योग करते, तो मानव के साथ ताल्लुक रहता है। इसमें हमारी विशेषता है। वह रहना चाहिए। केवल निवृत्तिपरायण रहें, तो मूल विचार भूल जायेंगे। इसलिए प्रवृत्ति चाहिए। लेकिन प्रवृत्ति निवृत्ति के अंकुश में रहनी चाहिए। उसके लिए त्याग, संयम, अध्ययन की जरूरत होती है। यह चीज ध्यान में आनी चाहिए। मैं मानता हूँ कि गांधी ने जो विचार दिया है, उसमें पन्द्रह साल के बाद जो फरक करना चाहिए, करके विज्ञान के साथ मेल-जोल करना चाहिए। उसको अध्यात्म का उचित मार्गदर्शन मिलना चाहिए। अध्यात्म की बहुत आवश्यकता है। विज्ञान आज आ गया है तो अध्यात्म को जाग्रत होना है, सावधान होना है। लेकिन हमको विज्ञान को सुव्यवस्थित ढंग से आध्यात्मिक दृष्टि रख कर जीवन में स्थान देना पड़ेगा, तभी दुनिया में गरीबी मिटेगी।

[पड़ाव : गंगापुर, प० बंगाल, २-१०-'६२]

अफ्रीका के अंचल से

पूर्वी अफ्रीका में भारतीयों की समस्या

• सुरेश राम

एशियनों के सामने समस्या नागरिकता की भी है और यही असली मुसीबत है। अब तक तो ब्रिटिश नागरिकता से काम चल गया। मगर टांगानिका आजाद है, यूगाण्डा आजाद है—अब ब्रिटेन की नागरिकता नहीं चलेगी। उसे या तो भारत या पाकिस्तान का नागरिक बनना होगा या टांगानिका आदि का। कीनिया में जब तक आजादी नहीं आती, तब तक ब्रिटिश नागरिकता चलेगी, लेकिन स्वतंत्र देशों में नहीं। अगर वे भारत या पाकिस्तान के नागरिक बनते हैं तो इस देश में परदेशी की तरह रहेंगे। ब्रिटेन की नागरिकता का अब कोई अर्थ ही नहीं रह गया। लेकिन अगर टांगानिका के नागरिक बनते हैं, उनमें से कुछ का ख्याल है कि हमको बराबरी का स्थान नहीं मिलेगा। यह धारणा गलत है। अपने अन्दर अगर चोर रखेंगे तो उसके वैसे ही परिणाम आयेंगे। लेकिन आनन्द का विषय है कि टांगानिका में लगभग दो हजार एशियन ने यहाँ की नागरिकता ले ली है और हमें विश्वास है कि आगे और बड़ी तादाद में लेंगे।

मगर हाल ही में कीनिया के एक मिनिस्टर ने जले पर नमक छिड़कने का काम किया। उन्होंने एक सभा में एशियनों को आवाहन किया कि अपने तंग दड़बों में से बाहर आयें और इस देश के साथ घुल-मिल जायें। इतने कथन में तो कोई दोष नहीं है। लेकिन इसके माने कुछ-से-कुछ लगाये गये और यह कहा जाने लगा कि अफ्रीकन चाहता है कि हमारे साथ रोटी-बेटी एक कर दो और हमारे हुक्म के मुताबिक अमल करो। इसके जवाब में किसी ने कहा—"यह नहीं हो सकता। जब एशियनों के बीच में ही, शाह लोग अपनी बेटी पटेल के बेटे को नहीं देंगे, तो अफ्रीकन की तो बात ही क्या! हम अपनी जीवन-पद्धति नहीं छोड़ सकते।"

'जीवन-पद्धति' बहुत विचित्र शब्द है। जाहिर है कि जिस तरह यह चल रही है, उस तरह न तो चल सकती है और न चलनी ही चाहिये। कौन नहीं जानता कि जाति और उपजाति के भेदभाव ने हिन्दू धर्म की जड़ों तक को चोट पहुँचायी है? और अफ्रीका के हिन्दुओं में भी यह जहर कम नहीं है। कैसे दुःख की बात है कि दारेस्सलाम जैसी आधुनिक राजधानी में हिन्दुओं के बीच एक-दो नहीं, पचास जातिगत संस्थाएँ हैं। मानो इन्सान के नाते आपस में मिलने की फुरसत ही नहीं है। जाति और बिरादरी के शिकंजे में जकड़े हुए हैं। लेकिन हमने यह भी देखा कि यह शिकंजे ढीले पड़ रहे हैं और यह स्थिति अब ज्यादा अरसे तक नहीं रहेगी। हम ऐसे नौजवानों को जानते हैं, जो इन बातों में अपने पिता से सहमत नहीं हैं और इन झूठी दीवारों को तोड़ देना चाहते हैं। मगर एक दुश्वारी बहुत जबरदस्त है। वह है—तीन 'डी' की।

तीन 'डी' का संकट

पश्चिमी जीवन-प्रणाली का अपना एक असर है। उसमें कशिश है। वह आदमी को चकाचौंध कर देती है। अफ्रीकन समाज में भी, सम्पन्न लोग उसी तरफ खिंचते जा रहे हैं। जिनकी ज्यादा आमदनी या तनख्वाह है, वे इसी तरफ झुकते जा रहे हैं और इसकी तीनों विशेषताओं को अपना रहे हैं—तीन 'डी'—ड्रिन्क, डाइन और डान्स (नशा पीना, मांसादि खाना और नाचना)। जिसे पश्चिमी जीवन-पद्धति कहा जाता है उसका यह विशिष्ट स्वरूप है और ये तीनों ही चीजें—नशा-पान, खाना और नाच—उसमें स्वाभाविक समझी जाती हैं। इन तीनों के प्रति अफ्रीकन और एशियन का आकर्षण बढ़ रहा है। यहाँ की राजधानियों में—दारेस्सलाम हो या नैरोबी या काहिरा, टोकियो हो या तेहरान या दिल्ली व बम्बई—सभी जगह के अपटुडेट नवयुवक और युवतियों में इन तीन की कामना जागृत हुई है और जब योरप व अमरीका में वे शिक्षा के लिए जाते हैं तो ये चीजें आप से आप अपना लेते हैं और चाहते हैं कि उनके अपने-अपने देश में भी वे उनका आनन्द ले सकें।

लेकिन कठिनाई यह आती है कि एशियाई और विशेषकर गुजराती शाकाहारी हैं और मांस व शराब दोनों से, ठीक ही, परहेज करते हैं। हम देखते हैं कि युवकों में तो शराब व मांस की उपेक्षा कुछ-कुछ कम हो रही है, मगर सन्तोष का विषय है कि युवतियों और बहनों में वह उपेक्षा कायम है। तो समस्या यही आ जाती है कि एक तरफ की संस्कृति और जीवन-पद्धति नशा और मांस की शौकीन है, दूसरी तरफ की इनसे एकदम बचती है। और जिस हद तक अफ्रीकन युवक-युवती तीन 'डी' की तरफ जाते हैं, उस हद तक एशियन उनसे दूर हो जाते हैं, क्योंकि अगर मांस और नशे के बिना कोई सभ्यता की दर्जे में नहीं आ सकता, तो ऐसी सभ्यता को नमस्कार है। और कुछ लोग असभ्य ही रहना ज्यादा पसन्द करेंगे।

मगर कोई उतावलेपन या घबराने की जरूरत नहीं है। हमारा विश्वास है कि नशा और मांस सभ्यता के मूल आधार नहीं हैं और पश्चिम की दुनिया आज नहीं तो कल उस तथ्य को स्वीकार करेगी और उसकी रोशनी में अपनी जीवन-पद्धति में फरक भी करेगी। मगर उसमें समय लगेगा। और संस्कृति या सभ्यता में फरक एक दिन में नहीं हो जाते, वे होते जरूर हैं, लेकिन अपना समय लेते हैं। हम यह भी मानते हैं कि टांगानिका या अफ्रीका के अन्य देशों में भी अफ्रीकनों के जीवन में फरक आयेगा। खुशी की बात है कि अफ्रीकन और एशियन का पारस्परिक सम्बन्ध बढ़ता जा रहा है। स्कूल व कालिज में, खेल के मैदान में, अस्पताल व बाजार में, कचहरी व दफ्तरों में वे एक दूसरे के ज्यादा नजदीक आ रहे हैं और एक पर दूसरे का असर पड़े बिना नहीं रहेगा। जरूरत इस बात की है कि उदार हृदय और खुले दिमाग से स्थिति का सामना किया जाये। आनन्द होता है यह देख कर कि परिस्थिति की गंभीरता को समझ कर, टांगानिका और अन्य देशों में एशियाई भाई विवेकपूर्ण दृष्टि से आगे के लिए सोच रहे हैं। जो शंकाशील हैं उनकी बात जाने दीजिये। लेकिन हमारा सम्पर्क ऐसे अनेक परिवारों से आया है, जो नये संदर्भ में विचार करने लग गये हैं।

हाल ही में कीनिया इण्डियन काँग्रेस का वार्षिक अधिवेशन नैरोबी में हुआ। उसकी अध्यक्षता करते हुए, पूर्वी अफ्रीका के वयोवृद्ध एशियन जननायक श्री शिवाभाई अमीन ने अपने भाषण में कहा कि एशियन भाइयों को धीरज नहीं खोना है और सौजन्य के साथ काम करना है। उनका कहना है:

> "जो एशियन भाई इस देश के भविष्य के बारे में शक शुबहे रखते हैं, उनसे मैं कहना चाहता हूँ कि जो राजनीतिक परिवर्तन इस देश में हो चुके हैं या होने वाले हैं, उनकी मांग यह है कि हम अपने दृष्टिकोण में, अपनी मान्यताओं में, जिम्मेवारी की अपनी कल्पनाओं और यहाँ तक कि अपनी जीवन-पद्धति में कुछ बुनियादी बदल व समाल करें।...हमें अपने अफ्रीकन भाइयों के साथ कंधे से कंधा मिला कर काम करना चाहिये और अपनी शक्ति व उत्साह को बटोर कर, दोनों को मिल कर अपने स्वप्नों का देश बनाना चाहिये।"

इन उद्‌गारों के पीछे अतीत का अनुभव है, वर्तमान की पकड़ है और भविष्य की झाँकी है।

भारत सरकार का उत्तरदायित्व

टांगानिका या अफ्रीका के अन्य देशों में भारतीयों में तथा अफ्रीकनों के बीच पारस्परिक सम्बन्ध मधुर बनाने में भारत सरकार भी बहुत कुछ कर सकती है। लेकिन दुःख है कि आज वह उतनी ज्यादा प्रयत्नशील नहीं है। सबसे पहली बात तो यह है कि यहाँ पर, वह जो अपने प्रतिनिधि, राजदूत, हाईकमिश्नर या कमिश्नर भेजती है, उन पर बहुत कुछ निर्भर है। दुर्भाग्य से पूर्वी अफ्रीका में उस दूरदृष्टि या कोटि के आदमी नहीं भेजे जो यहाँ के वातावरण में उपयोगी हो सकते। अक्सर तो उनका तबादला बहुत जल्दी-जल्दी हो गया। कुछ ऐसे भी आये जो अपने को अफ्रीकनों की अपेक्षा ज्यादा ऊँचा समझते, उन्हें सत्य-अहिंसा का पाठ पढ़ाते और उनकी आपस की दलबन्दी में भी रस लेते। लेकिन उनके अपने रहन सहन से इतने को भी यह नहीं पता चलता कि वे भारतीय हैं। यह 'पर-उपदेश-कुशल' छाप लोग बहुत खतरनाक साबित होते हैं और भारत को बदनाम ही ज्यादा जाहिर करते हैं। हमारे दूतावासों के अन्य कर्मचारी भी इस मर्ज के शिकार पाये जाते हैं। साधारण काम करने में घंटों की जगह दिन लगाते हैं, दिन की जगह हफ्ते और हफ्तों की जगह महीनों। इसकी शिकायत यहाँ की एशियन जनता तक को है।

साथ ही, हमारे दूतावासों में भारत सम्बंधी जानकारी भी ज्यादा नहीं मिल पाती। विशेषकर दारेस्सलाम में जो हाईकमिश्नर का कार्यालय है, उसकी दशा बहुत चिन्ताजनक है। अखबार देखिये तो बहुत थोड़े और वे भी दो-दो, तीन-तीन महीने पुराने हैं। पढ़ने-समझने-परिचय पाने की कोई सहूलियत ही नहीं नजर आती।

इन दोनों चीजों में तो भारत सरकार बहुत कुछ सुधार कर सकती है। लेकिन इससे भी ज्यादा जरूरी काम यह है कि वह इन देशों की सरकारों को यहाँ के ग्रामीण क्षेत्र के सर्वे आदि के लिए राजी करे और ग्रामोद्योग या अन्य जन-सुलभ उपायों से यहाँ के आर्थिक प्रश्नों के हल करने में मदद करे। इतना तो वह करती है कि अफ्रीका के युवकों को डाक्टरी, इन्जीनियरिंग आदि की शिक्षा देती है; लेकिन यह शिक्षा तो योरप और व अमरीका वाले कितनी बेहतरीन दे सकते हैं, भारत में उसका चार आने भर भी मुश्किल से हो पायेगी। लेकिन खैर, देती है तो दे। मगर जिस क्षेत्र में भारत की अपनी विशेषता है उसमें अभी कुछ नहीं हो रहा है। अच्छा हो, अगर खादी-ग्रामोद्योग कमीशन कदम बढ़ाये। मगर यह तभी बढ़ा सकेगा जब भारत सरकार उस दिशा में सोचेगी। आज तो यह हमारी बहनों को, अपनी नजूने के अनुसार, सजा-धजा कर भेजती है, ताकि भारतीय कपड़े के लिए बाजार मिल सके। उस पर यहाँ के लोगों को हँसी आती है कि न तो भारतीय माल जापानी माल का मुकाबला कर सकेगा और न बैंकन-

प्रचार में ही भारत की दुवतियाँ आगान वालों को हरा सकेंगी !! भारत सरकार को अपनी दृष्टि में ही ही फर्क करना पड़ेगा। तभी वह अफ्रीकन देशों की सच्ची सहानुभूति पा सकेगी और यहाँ के देशों में भारत की इज्जत ऊँची उठ सकेगी।

अद्भुत संगम

सार यह है कि पूर्वी अफ्रीका में भारतीय आज कुछ संकट की स्थिति में है। यह थोड़ा आर्थिक है, लेकिन कहीं ज्यादा मानसिक और वैज्ञानिक है, मगर क्या टांगानिका, क्या दूसरे देश, सभी जगह ऐसे मित्र मौजूद हैं, जो सारी परिस्थिति को भली भाँति समझते हैं और जिन्हें भविष्य का भी दर्शन है। इस वास्ते ज्यादा चिन्ता की बात नहीं है। साथ ही, अफ्रीकन मानस को और यहाँ के नेताओं को जहाँ तक हमने देखा और समझा है, वे भी नस्लवाद को न तो मानते हैं और न उसके नाम पर कुछ अनर्थ होने देंगे। मगर सरकारी पदों पर मूल अफ्रीकन भाई-बहनों का होना हम हर तरह से जरूरी और बेहतर समझते हैं। अपने भारतीयों के मन में जो डर है उसमें भी ज्यादा तत्त्व नहीं है। डर से डर ही पैदा होता है, जिससे किसी को भी लाभ नहीं होता। जरूरत विश्वास की है और पारस्परिक विश्वास ही सबसे बड़ी ढाल है।

अफ्रीका में कई जगह संगम दिखाई पड़ता है। उत्तरी भाग में अफ्रीका और योरप व एशियाई अरब का संगम है। इधर पूर्वी भाग में अफ्रीका और एशियाई भारत का संगम है। एक को अपनी प्राचीन परम्परा का तो दूसरे को अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति व साहित्य का अभिमान है। एक के पास पौरुष और हृदय की निर्मलता है, दूसरे के पास विवेक और बुद्धि की गम्भीरता है। दोनों का संगम हो रहा है, टक्कर नहीं, मिलन है, संघर्ष नहीं, दोनों एक दूसरे निकट आ रहे हैं। दोनों थोड़ा थोड़ा बदलेंगे और अपने अतीत से सीखने के साथ-साथ भविष्य की माग को भी ध्यान में रखेंगे और इस तरह आप से आप एक दूसरे से समरस हो जायेंगे। तीन-चार पीढ़ी बाद शायद उनमें तमीज भी करना मुश्किल हो जायेगा कि कौन ठेठ भारतीय है, कौन ठेठ अफ्रीकन। स्नेह और विश्वास इनको जोड़ने का काम करेगा। और तब इस अद्भुत संगम के परिणामस्वरूप नये अफ्रीका का उदय होगा।

(गतांक से समाप्त)

विनोबा की पाकिस्तान-पदयात्रा की डायरी : ३

"हम पृथ्वी के सेवक हैं...."

● कालिन्दी

चौधरी के साथ एक व्यक्ति अंदर आया। लंबा कद, शुभ्र दाढ़ी, शांत चेहरा। परिचय करवा दिया गया—'आप यहाँ के डाक्टर साहब हैं।' वृद्ध डाक्टर की एक ही उत्सुकता थी और वह सारी उत्सुकता एक ही प्रश्न में प्रकट हुई—"कुरान सार किताब मैं कब देख सकूँगा ?" बाबा ने कहा, "वह किताब तो अभी छप रही है।"

"जिंदगी का यह आखिरी समय है। अगर अभी किताब देखने को मिल जाय, तो बहुत अच्छा होगा। वह जिंदगी की एक सआदत है।"

"छपने के बाद आप वह देख सकते हैं। थोड़े ही दिनों में वह प्रकाशित होगी।"

"जी हाँ, मैं मेरा पता आपको दे जाता हूँ। मुझे एक प्रति भिजवाइये। आपने कुरान शरीफ का तर्जुमा ही तो किया है न ?"

"तर्जुमा नहीं। कुरान-शरीफ के अलग-अलग विषयों पर के वचन इकट्ठे किये हैं। जैसे अल्लाह के बारे में जो दिया है, वह अलग किया है; पैगंबर के बारे में जो दिया है, वह अलग किया है।"

"किताब पढ़ने की मुझे बहुत तमन्ना है। और एक अर्ज है। मेरे खानदान के लिए दुआएँ दीजिये।"

अब तो 'कुरान-सार' के प्रति उत्सुकता भी दिखाई देने लगी है। वैसे तो पहले दिन ही एक प्रेस-संवाददाता ने उसके बारे में पूछा था। बाबा ने कहा था, "हमारी किताब का बहुत अच्छा प्रचार हो गया है। मैं किताब छपा नहीं। वह अभी छप रही है। लेकिन उसके पहले ही अखबार में टीका आयी। असल में तो 'दी प्रूफ आफ दी पुडिंग इज इन दी ईटिंग'—हलुवे का मजा तो खाने में ही है।"

अब तो छोटी अनौपचारिक बैठकों में भी यह सवाल पूछा जाता है—

"क्या कुरान शरीफ का आपने अनुवाद किया है ?"

"अनुवाद नहीं, 'सिलेक्शन'—संकलन किया है।"

"क्या यह किताब पाकिस्तान सरकार ने रोकी है ?"

"अगर यह किताब इस्लाम के खिलाफ होगी, तो भारत सरकार भी उसको रोकेगी, क्योंकि वहाँ पाँच करोड़ मुसलमान हैं और अगर वह इस्लाम के खिलाफ नहीं होगी, तो दुनिया में चलेगी।"

'कुरान सार' का प्रचार बहुत हो गया है।

आज ग्यारह सितम्बर, बाबा का जन्म-दिन ! गत साल का जन्म दिन भारत के छोटे देहात में मनाया गया था। एक छोटे तालाब के पास बाबा की छोटी-सी पर्णकुटी थी। धुन के साथ उस शुभ दिन का आरंभ हुआ था और सुबह साढ़े दस बजे भजन-संगीत का खास कार्यक्रम हुआ था। आज यह दिन पाकिस्तान की पावन भूमि में मनाया जा रहा है। रोज सुबह चौधरी सबसे पहले उठते हैं और रवि-बाबू का भजन गाते हैं—'भुवनेश्वर हे......।' हमने सोचा, क्यों न आज के दिन का भी इसी भजन से आरंभ हो !

सुबह साढ़े तीन बजे बाबा बरामदे में बैठे थे। बाइबिल पढ़ी जा रही थी। लालटेन के मंद प्रकाश में उस प्रसन्न चेहरे की ओर देख कर हम गा रहे थे—

> "प्रभु तव प्रसन्न मुख
> सब दैन्य करो हो सुख
> निख व्यथित, चंचल चित
> तुलिया धर हे...'

ग्यारह बजे कार्यक्रम था। बाहर आशादी बैठक का इन्तजाम कर रही थीं। इतने में चौधरी 'टेलिग्राम' लेकर आये। पूर्व पाकिस्तान-सरकार ने जन्मदिन पर शुभेच्छा भेजी थी। बाहर प्रेस-संवाददाता, गाँव के लोग, कार्यकर्ता, सब सभा के लिए इकट्ठे हुए थे। कुरान शरीफ से कार्यक्रम आरंभ हुआ। आशादी के साथ हम सबने भजन गाये और फिर पाँच मिनट स्तब्धता छायी। बाबा के वृद्ध कंठ से कुरान के वचन निकल रहे थे। और बाद में अश्रुधारा के साथ गाया गया 'नाम-घोषा'—

> "निजदास हुया सेवाक तजिलो।
> एही दोष घोर आपदे भजिलो।
> तुमिसि हे सुहृद आत्मा प्रियतम।
> तथापि तोमाक न भजो कि मइ अधम।।"

"हमें बहुत खुशी है कि हम पाकिस्तान में बैठे हैं। यह हमारा देश है। हम मानते हैं कि सब पृथ्वी हमारी है और हम सब पृथ्वी के सेवक हैं। यह एक आकस्मिक घटना है कि हम किसी एक देश में जन्में या मरें। हम यहाँ महसूस करते हैं कि हम यहाँ के हैं। सब मानव समाज हमारे अंतर्गत है। ऐसी हालत में जितने भेद हम पैदा करेंगे, उतने हम मानव-आत्मा के टुकड़े करेंगे।"

सभा तो होती है शाम को पाँच बजे, लेकिन सुबह से लोग डेरा लगा कर बैठते हैं। आज तो आसपास के गाँवों से तीन साढ़े तीन हजार लोग आये थे।

दूर से अगर कोई देखता, तो लगता कि यह एक यात्रा ही है। हजारों आदमी इकट्ठे हुए थे। शहर लोगों में आपस में चर्चा चली थी—'कितने लोग होंगे ?... दस हजार ? ...अरे दस हजार में क्या है ! पंद्रह हजार से कम नहीं !' दर्शनोत्सुक लोगों की तरफ देख कर आशादी तल्लीन हो जाती हैं और कहती हैं, "कितना आश्चर्य !"

उस पंद्रह हजार के समुदाय को बाबा ने समझाया :

"...डिमोक्रसी तब अच्छी होती है, जब अच्छे लोग चुन कर आते हैं। अच्छे लोगों की व्याख्या क्या है ? जो पढ़े लिखे हैं, या जिनके पास इस्टेट है, क्या वे अच्छे माने जायँ ? हम दो साल पहले भारत में चम्बल घाटी में घूम रहे थे। वहाँ पचास साल से डाका बन्द नहीं होता। हम वहाँ गये तो देखा कि लोगों ने डाकुओं की मदद से हजारों रुपये संचित किये हैं। ये लोग डाकुओं की सहानुभूति में काम करते हैं। राजनैतिक पक्षवाले भी उनको मदद देते हैं और पैसा लेते हैं। पुलिस भी पैसा लेती है। तो जिसने पैसा संग्रह किया, क्या वह 'डिमोक्रसी' के लायक होगा ? तो, यह नहीं हो सकता कि पैसा इकट्ठा किया और हो गये सदस्य बनने लायक। जो पढ़े लिखे होते हैं, वे भी स्वार्थ के सिवा कुछ नहीं देखते। पढ़े-लिखे की आँखों पर किताबों का परदा आ जाता है और उनके दिल छिप जाते हैं। इसलिए जो दयालु हैं, जो दानशील हैं, ऐसे लोगों को चुनना चाहिये। तभी 'डिमोक्रसी' अच्छी बनेगी।"

आज सत्रह बीघा जमीन का दान मिला। आज का दिन भी सार्थक हुआ।

[पड़ाव : तीस्ता, ११ सितम्बर, '६२]

* * *

घना अंधकार ! अंधकार में फैली हुई यात्रियों की बड़ी-बड़ी परछाइयाँ और सामने तीस्ता नदी का विशाल पात्र ! आँखों को नदी का स्वरूप तो दिखाई नहीं दे रहा था, कानों लहरों की ध्वनि सुनाई दे रही थी। अभ्यस्त नाविक अंधेरे में ही नौका उस पार ले गये। नदी के उस किनारे कीर्तन-मंडल खड़ा था। हाथ में मृदंग, हार्मोनियम था। मुँह रामनाम के लिए आतुर था। बाबा को पूछा गया, 'कीर्तन करें ? बाबा ने इजाजत दी और कीर्तन आरंभ हुआ। थोड़ी देर बाद बाबा ने कहा, अब हम शांति चाहते हैं। कीर्तन के शब्द क्या थे ? 'हरे-राम, हरे कृष्ण।'

"...यह चैतन्य महाप्रभु की देन है। 'रामकृष्ण हरि' नाम उन्होंने सबको दे दिया और इस नाम की दीक्षा सब जाति धर्म को दे दी। उसके लिए धर्म बदलना नहीं पड़ता। भगवान् एक है, लेकिन नाम अनेक हैं। अपनी-अपनी रुचि के अनुसार मनुष्य भगवान् का नाम अलग-अलग ले सकता है। लेकिन सब मिल कर भगवान् का नाम गायें तो दिल

से दिल जुड़ जाता है। इसको शांति कहते हैं। हिन्दुओं के हर काम के पहले 'शांतिः' कहते हैं। इस्लाम में 'अस्सलामु अलैकुम' याने शांति रहे, कहते हैं। ईसाई लोगों में 'प्रेम ऑफ पीस' कहते हैं। तो शान्ति की घोषणा सब धर्मों में है। अभी दुनिया में विश्वशांति की समस्या है—क्षुधा-शांति और चित्त-शांति। ये समस्याएँ हल होंगी तो नास्तिकता मिटेगी। नहीं तो आस्तिकता टिकेगी नहीं।"

आज रास्ते में विश्वदा साथ में थे। विश्वदा, अजितदा इनके जिम्मे 'एडवान्स पार्टी' का काम है। इसलिए वे लोग सुबह यात्रा में कभी हमारे साथ रह नहीं सकते। लेकिन न जाने कैसे, आज विश्वदा ने उस काम से छुट्टी पायी थी और हमारे साथ हो गये थे। उनकी बाबा के साथ काफी बातें होती रहती हैं। आज उन्होंने बाबा से पूछा, "बाबा मुक्ति तो सामूहिक होनी चाहिए। क्या एक व्यक्ति अकेला मुक्ति पा सकता है?"

"यह समझना चाहिए कि मुक्ति प्राप्त करने की नहीं होती। मुक्ति तो है ही, वह पहचानने की बात है। अगर मुक्ति प्राप्त करने की बात है, तो मुक्ति आ ही नहीं सकती। मुक्ति याने क्या? अहंकार से मुक्ति, विकारों से मुक्ति। जहाँ हमें मुक्ति प्राप्त करने की भावना है, वहाँ अहंकार है। वहाँ मुक्ति है ही नहीं और वहाँ अहंकार से विकारों से मुक्ति है, वहाँ मुक्त है ही। वह सिर्फ पहचानने की बात है। अब आप अगर कहेंगे कि मुक्ति सामूहिक होनी चाहिए, तो वह कैसे होगी? जो उसको पहचान सकेगा, वह पहचानेगा। जो नहीं पहचानेगा वह नहीं। सबको नींद आयेगी तभी मुझे नींद आयेगी, ऐसा कोई कहेगा नहीं। जिसको नींद आयेगी, उसीको आयेगी। वैसा ही मुक्ति का है।"

आज पड़ाव का स्थान बहुत छोटा था। छत और दीवारें टिन की थीं। दिन भर गरम लू चली थी और मकान तप गया था। हम कहने लगे, आज तो अग्निकुण्ड है। शाम को थोड़ी ठंडक महसूस होने लगी। बाबा बाहर बैठे थे और चारों ओर से लोगों ने घेर लिया था। उनकी तरफ देख कर अपनी भाव भरी आवाज में आशादी कहने लगी, "बाबा, भूमि तप गयी थी। बहुत दिनों से बारिश की आवश्यकता थी। बारिश अब हो गयी है।"

[पड़ाव : मिरबाग, १२ सितम्बर, '६२]

• • •

ता० ५, ६, ७…और आज ता० १३। आज यहाँ आकर नौ दिन पूरे हुए। आज की रात बीतेगी, तो पूरी 'नवरात्रि' होगी। नौ दिन में क्या हुआ? कुछ चमत्कार तो नहीं हुआ, न कुछ अनहोनी हुई। लेकिन…लेकिन क्या? लेकिन यहाँ के लोगों के विचारों को गति तो जरूर मिली है। प्रेम की बातें करने बाबा यात्री आता है और प्रेम के साथ ज्ञान भी देकर जाता है। लोगों के दिल के साथ दिमाग भी खुल जाते हैं।

आज का पड़ाव तो बड़ा शहर है, रंगपुर। रंगपुर की जनसंख्या चालीस-पैंतालीस हजार होगी। स्वागत के लिए चार-पाँच हजार लोग इकट्ठे हुए थे। एक बड़े आलीशान मकान में हमारा निवास था। यहाँ के एम० एल० ए० अब्दुल मसीउर रहमान, इनका नया मकान है। वे चाहते थे कि अपने नये मकान का उद्घाटन बाबा के निवास से ही हो। वे खुद स्वागत के लिए हाजिर थे। बाबा का हाथ पकड़ कर दूसरी मंजिल पर ले गये। एक बहुत सुन्दर 'दिवान-इ-आम' था। उस दमदार हॉल में चर्चाएँ भी बड़ी दमदार हुईं : सुबह बालभाई बाबा को दिन भर का आयोजित कार्यक्रम सुना रहे थे—'एक बजे वकीलों के साथ'…'तीन बजे साहित्यिकों के साथ'!…'वाह, आज तो सारा 'इंटलिजेंशिआ' (बुद्धिजीवी वर्ग) है!

दोपहर में खाना खाने बैठी थी, तो पता चला कि वकील लोग आ गये हैं। भोजन जल्दी-जल्दी समाप्त कर ऊपर दौड़ी, तो सवाल-जवाब शुरू हो गये थे।

"पूर्व पाकिस्तान में जमीन कम है, तो क्या आप भारत सरकार को कह सकते हैं कि भारत की कुछ जमीन वे पाकिस्तान के लोगों को दें?"

"बहुत अच्छा सवाल पूछा। यह सवाल भारत में भी है। यह सवाल प्रेम से हल हो सकता है, बिना प्रेम से नहीं। इसलिए जिन देशों का सवाल है, उनको अन्योन्य प्रेम पूरा करना चाहिये। यह तो एशिया का सवाल है।"

"तो क्या आप भारत सरकार को कह सकते हैं?"

"यह 'वन-साइडेड'—एकतरफा—नहीं होता। पश्चिम पाकिस्तान में बहुत जमीन पड़ी है। यहाँ से सात गुना जमीन वहाँ ज्यादा है। वहाँ भी यह सवाल आयेगा। इसलिए यह तब होगा, जब दोनों देशों का 'कॉन्फेडरेशन'—महासंघ—बनेगा। दान एक बात है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को दान देता है, उससे दो व्यक्ति के दिल जुड़ जाते हैं। सरकार का काम दूसरी बात है। कुल राष्ट्र का सवाल आता है, तब जनसंख्या का सवाल आता है, यह भाग विश्वसंघ में भी हो सकता है। इसलिए हम 'जय-जगत्' बोलते हैं। उसके परिणामस्वरूप विश्वसंघ होगा।"

"क्या 'कम्युनल' (साम्प्रदायिक) समस्याएँ हमारे और आपके देश में ही हैं?"

"ऐसा मुझे कुछ अनुभव नहीं आता। लोगों में कुछ तनाव है, ऐसा नहीं लगता। न यहाँ देखा, न भारत में देखा, बल्कि यह देखा कि कुछ राजकीय प्रश्न उपस्थित होते हैं तो 'कम्युनल' समस्याओं का उपयोग किया जाता है।"

"आप प्रेम का प्रचार करते हैं। तो क्या जबलपुर, अलीगढ़, मालदह, आसाम में दंगे हुए थे, वे इसके खिलाफ नहीं थे?"

"मेरे जीवन-दर्शन के विरुद्ध थे। यह दुनिया में बहुत चल रहा है। इसलिए प्रचार की बहुत जरूरत है। इसलिए हम पैदल घूमते हैं। आज दुनिया में क्या चल रहा है, इसका सवाल नहीं। दुनिया किससे बचेगी, यह सवाल है।"

"जहाँ दंगे होते हैं, क्या वहाँ आप जाते हैं?"

"भारत में 'शांति-सेना' का संगठन हुआ है। आप (आशादेवी) अलीगढ़ गयी थीं, हमारी ओर से ही गयी थीं। जहाँ अशांति होती है, वहाँ वे लोग जाते हैं।"

लोगों को चिंतन के लिए दिशा मिल गयी। मन में आया, बड़े गाँव के हिसाब से भले बहुत अच्छा स्वागत न हुआ हो, भले ज्यादा दान न मिला हो, लेकिन आज यहाँ के नौजवान विचारों की खुराक ले गये। थोड़ी देर के बाद साहित्यिकों को भी बहुत अच्छी खुराक मिली।

स्थल, काल से मुक्त जिसका मन होता है, वही अमर साहित्यिक होता है। अपने स्थल और काल का उसको दर्शन होगा। लेकिन उसका अपना अंतर्दर्शन स्थल-कालातीत होगा। रवीन्द्रनाथ ऐसे साहित्यिक थे। साहित्यिक स्वयं विकारमुक्त होना चाहिये। संसार के, विश्व के अभिमुख हो, फिर भी अलिप्त हो।

"बंगाली दुनिया की अच्छी भाषाओं में से एक भाषा है। उसमें विश्वमानव प्रकट हुआ। विश्वशांति प्रस्थापित भाषा का दुनिया में ज्यादा अध्ययन होगा। वह भाषा दुनिया से प्रेम पायेगी।

विज्ञान-शक्ति का उपयोग करने के लिए साहित्यिकों का मार्गदर्शन चाहिये। साहित्यिक चाहे किसी भाषा, धर्म, देश का हो, उनकी बिरादरी एक होती है। अशांति के समय जो अक्षोभ चिंतन करेगा, वह अशांति को रोकेगा। यह भाग्य आपको हासिल होगा, अगर आप अक्षोभ चिंतन करते हैं।"

आशादी रात को यहाँ के साहित्यिकों की सभा में गयी थीं। वे कह रही थीं कि करीब डेढ़-दो घंटा चर्चा होती रही। अनेक प्रश्न पूछे गये। अनेक शंकाओं का समाधान हुआ। बाबा के प्रवचनों ने विचारों का हिंडोला हिला दिया है।

परसों दीरला में पन्द्रह हजार लोगों की सभा हुई। गाँव गाँव में सात-सात हजार लोग तो रोज ही इकट्ठे होते हैं। आज तो बड़ा शहर है। मैं समझ रही थी कि बहुत बड़ी सभा होगी, लेकिन चार बजे मालूम हुआ कि बगीचे के मैदान में ही सभा होने वाली है। सुनते ही मन में आया, यहाँ के लोगों की बदकिस्मती! सभा का दृश्य मेरी नजरों के सामने खड़ा हुआ। मैदान में लोग जमा नहीं रहे हैं। हो-हल्ला मचा है और बाबा के प्रवचनों में रंग भरा नहीं है। ठीक यही दृश्य मैंने सभा में देखा। ५-६ हजार का समाज था, लेकिन जगह छोटी होने के कारण सभा में अनुशासन नहीं था। बाबा का प्रवचन के लिए दिल खुला नहीं। थोड़े में ही प्रवचन समाप्त हुआ। बाबा ने कहा, 'ऐसी जगह प्रवचन हो नहीं सकता।' और मौन प्रार्थना के लिए आदेश मिला। इस प्रार्थना पर कल अखबार में टीका आयी थी कि बाबा सामूहिक प्रार्थना के बहाने अपनी प्रार्थना लाद रहे हैं। आज प्रार्थना-सभा में उसको उत्तर मिला—"हम सामूहिक प्रार्थना पसंद करते हैं और करवाते हैं। इसका मतलब यह नहीं कि घर में अपनी-अपनी प्रार्थना न हो। वह तो कर सकते ही हैं। लेकिन उसके अलावा सामूहिक प्रार्थना होनी चाहिए। आप लोग जानते हैं कि सामूहिक भोजन का महत्त्व है और सामूहिक भोजन हम करवाते हैं। लेकिन उससे हमारे घर में खाने को विरोध नहीं आता। वैसे ही सामूहिक प्रार्थना का है।" प्रार्थना के समय पूरी शांति थी।

आज के दिन की समाप्ति बहुत अच्छी हुई। सभा के बाद कमरे में दर्शन के लिए लोगों की भीड़ लग गयी थी। बीस-बीस साल के दो जवान बाबा का आशीर्वाद माँग रहे थे। बाबा ने पूछा, किस बात के लिए आशीर्वाद चाहिये? पास ही मसीउर रहमान साहब बैठे हुए थे। कहने लगे, "परीक्षा में पास होने के लिए वे आशीर्वाद माँग रहे हैं!" दोनों लड़के शरमा गये। बाबा ने उनकी पीठ पर जोर से थप्पड़ जमायी!

प्रार्थना के लिए थोड़ी देरी थी। आशादी ने भीड़ को बैठने के लिए कहा। मध्यबिंदु में बैठा वाद्यवृंद लेकर गाने वालों का समूह और फिर रवीन्द्रसंगीत के सुर वातावरण में भर गये।

[पड़ाव : रंगपुर, १३ सितम्बर '६२]

कसौटी का समय : २

सिद्धराज ढड्ढा

आज की परिस्थिति में अहिंसानिष्ठ लोगों के कर्तव्य के बारे में हम एक दूसरे पहलू से सोचें।

किसी भी परिस्थिति में जब मनुष्य अपने कर्तव्य के बारे में सोचता है तो उसके निर्णय के लिए उसे कोई-न-कोई एक कसौटी कायम करनी पड़ती है। कसौटी क्या हो यह हरएक व्यक्ति अपने लिए तय कर सकता है, पर निर्णय के लिए कसौटियाँ दो नहीं हो सकतीं—हमेशा एक ही होगी, अन्यथा निर्णय पर पहुँचना मुश्किल होगा। क्योंकि, अगर कसौटियाँ दो हों तो किसी-न-किसी परिस्थिति में ऐसा मौका आयेगा कि एक कसौटी के आधार पर अगर हम निर्णय करने जायें तो वह एक प्रकार का होगा और दूसरी कसौटी के आधार पर उससे बिलकुल भिन्न या उलटा।

गांधीजी ने करीब करीब अपना सारा जीवन मुल्क की आजादी के लिए लगाया। जीवन भर उसी के लिए प्रयत्न करते रहे। लेकिन एक बार जब उनसे पूछा गया कि "अगर आपको असत्य और हिंसा के जरिए ही आजादी मिलती हो तो क्या आप असत्य और हिंसा का सहारा लेने के लिए तैयार होंगे", तो गांधी का उत्तर स्पष्ट था। उन्होंने कहा था—"अगर हिंसा से ही आजादी मिलने वाली हो तो वैसी आजादी मुझे नहीं चाहिए।"

गांधीजी ने अहिंसा को अपने लिए अनिवार्य नैतिक नियम और कसौटी के रूप में मान लिया था, इसलिए उन्होंने वैसा उत्तर दिया। जिस व्यक्ति ने अहिंसा को वैसी कसौटी न माना हो, उसका उत्तर भिन्न होगा। सारांश यह है कि हर आदमी को अपने आचरण के लिए कसौटी खुद चुन लेने का अधिकार है, लेकिन वैसी कोई एक सर्वोपरि कसौटी के अभाव में अक्सर असाधारण प्रसंगों पर किसी निर्णय पर पहुँचना मुश्किल हो जाता है।

अहिंसक समाज रचना के या सर्वोदय के काम में लगा हुआ कोई व्यक्ति आज भी यह महसूस करे कि अहिंसा मेरे लिए अन्तिम कसौटी नहीं है, बल्कि अन्तिम कसौटी मुल्क का स्वाभिमान है तो उसका कर्तव्य एक प्रकार का होगा और अगर वह यह मानता है कि अहिंसा उसके लिए आखिरी कसौटी है तो उसका कर्तव्य दूसरे प्रकार का होगा। कौन सही है, कौन गलत है, यह सवाल नहीं है। पर यह हमें स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि एकसाथ दोनों कसौटियाँ हमारे लिए नहीं हो सकतीं। कसौटी हमको एक ही माननी होगी और जो भी कसौटी हम मानें उसके अनुसार हमारे कर्तव्य का निर्णय होगा। जो आवश्यक है वह यह कि दोनों प्रकार के निर्णयों में बहादुरी, बलिदान और अन्याय के प्रतिकार की भावना होनी चाहिए।

यहाँ हम किसी धार्मिक अर्थ में या पाप-पुण्य के अर्थ में अहिंसा की बात नहीं कह रहे हैं, बल्कि उसे एक सामाजिक मूल्य मान कर बात कर रहे हैं। जिसने मानव-मात्र की एकता को और अतः अहिंसा को जीवन की निष्ठा माना है उनके लिए युद्ध एक अपराध है, अतः वह स्वयं किसी हालत में उस अपराध में शामिल नहीं होगा। पर इसका अर्थ यह नहीं है कि वह चुप बैठेगा। युद्ध अपने आप में कोई साध्य नहीं है। वह किसी-न-किसी ध्येय का साधन होता है। यह ध्येय न्यायोचित भी हो सकता है या अन्याय-पूर्ण। दोनों ही परिस्थितियों में अहिंसा-निष्ठ व्यक्ति चुप नहीं बैठ सकता। किसी अन्यायपूर्ण ध्येय के लिए उसके स्वयं के देश ने अगर युद्ध का रास्ता अख्तियार किया हो तो वह देशद्रोही कहलाने का और मृत्यु का खतरा उठा कर भी उस युद्ध का विरोध करेगा। जिस देश में वह रहता है उस देश पर अगर युद्ध जबरदस्ती लादा गया है, अर्थात् अन्याय और आक्रमण दूसरी ओर से हुआ है, तो अहिंसानिष्ठ व्यक्ति का कर्तव्य होगा कि वह उस अन्याय का प्रतिकार करने में अपनी पूरी शक्ति लगा दे।

जहाँ तक मुल्क का सवाल है, अगर अहिंसक प्रतिकार की कोई पूर्वतैयारी नहीं हुई है और मुल्क ने रक्षा के लिए सेना रखी है तो आक्रमण के प्रतिकार के लिए वह अवश्य ही सेना का उपयोग करेगा और वैसा उसे करना चाहिए। उपरोक्त परिस्थिति में वैसा नहीं करना—अर्थात् सैनिक प्रतिकार भी नहीं और अहिंसक प्रतिकार भी नहीं—कायरता होगी और प्रजा को दीन बनाने वाली होगी। दीनता या हीनता की भावना अहिंसक शक्ति के विकास के लिए भी बाधक है। गांधीजी ने बार-बार कहा था कि अगर किसी मनुष्य के सामने दो ही विकल्प हों—हिंसक प्रतिकार या कायरता-पूर्ण समर्पण—तो अवश्य ही उसे पहला विकल्प स्वीकार करना चाहिए। पर साथ ही उन्होंने हर बार यह भी कहा था कि अहिंसक प्रतिकार हिंसक प्रतिकार से हर हालत में श्रेष्ठ है।

इसलिए, पूर्वतैयारी के अभाव में या निष्ठा के अभाव में अगर देश अहिंसक प्रतिकार के लिए तैयार न हो तब भी अहिंसानिष्ठ व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह ऐसे अवसर को अहिंसा की कसौटी का समय मान कर अहिंसा की शक्ति को बढ़ाने में और भी अधिक तीव्रता के साथ जुटे। अहिंसा की शक्ति के विकास के लिए प्रजा में जिन गुणों के निर्माण की आवश्यकता है, जैसे स्वावलम्बन, आन्तरिक एकता आदि, वे ही गुण सैनिक प्रतिकार की सफलता के लिए भी आवश्यक हैं। इस दृष्टि से जनता में इन गुणों की प्रतिष्ठा के लिए अहिंसानिष्ठ व्यक्ति जो भी करेगा वह अन्याय के प्रतिकार का ही एक पहलू है। पर साथ ही उसे युद्ध टालने या बंद कराने में तथा सम्भव और शक्य तरीकों से प्रत्यक्ष अहिंसक प्रतिकार में लगना चाहिए।

उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए अहिंसानिष्ठ व्यक्ति को आज की परिस्थिति में नीचे लिखे अनुसार कदम उठाने चाहिए। इसमें हम यह मान कर चले हैं कि प्रतिपक्षी के दृष्टिकोण को समझने की तैयारी रखते हुए और यह मानते हुए कि हमें जो कुछ जानकारी उपलब्ध है वह सारी पक्षपात से रहित नहीं भी हो सकती है, मौजूदा परिस्थिति में युद्ध भारत पर लादा गया है :—

(१) वह स्वयं सैनिक प्रतिकार में प्रत्यक्ष भाग नहीं लेगा। मदद पहुँचाना भाग लेने में शामिल ही है, फिर भी भिन्न-भिन्न परिस्थिति और प्रसंग के अनुसार वह इसमें अपने विवेक का उपयोग करेगा।

(२) दोनों मुल्कों के बीच का विवाद शांतिपूर्ण ढंग से सुलझ सके इसके लिए भरसक प्रयत्न करेगा।

(३) प्रत्यक्ष अहिंसक प्रतिकार का मार्ग ढूँढ़ने का भरसक प्रयत्न करेगा। इस सिलसिले में तत्काल जो किया जा सकता है वह यह है कि सीमावर्ती क्षेत्र में जगह-जगह शांति-सैनिक अपनी छावनी लगायें, वहाँ की प्रजा में अहिंसक प्रतिकार के लिए आवश्यक परिस्थिति और गुणों का निर्माण करें तथा मौका आने पर प्रजा के साथ स्वयं भी प्राणान्त तक उस प्रतिकार में शरीक रहें।

(४) प्रजा में अहिंसक शक्ति के निर्माण के अपने काम को और भी तीव्रता के साथ जारी रखेगा। एकता, निर्भयता, निर्वैरता, स्वाव-लम्बन आदि गुण और परिस्थिति निर्माण करने का काम योजनापूर्वक उठा लेगा।

(५) आक्रमण या अन्याय का प्रतिकार आवश्यक है यह मानते हुए और यह जानते हुए कि अहिं-सात्मक ढंग से यह प्रतिकार करने की आज मुल्क की तैयारी नहीं है, वह सैनिक प्रतिकार के मार्ग में रुकावट नहीं डालेगा।

राजस्थान प्रदेश शांति-सेना शिविर

राजस्थान प्रदेश शान्ति सेना शिविर सम्मेलन १ अक्टूबर को समग्र सेवा संघ के दुर्गापुरा स्थित कार्यालय में श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में प्रारम्भ हुआ। इसमें अखिल भारत शान्ति-सेना मंडल की ओर से श्री हरविलास बहन शाह उपस्थित थीं। राजस्थान में शिविर से पूर्व कुल १७७ शान्ति-सैनिक थे। शिविर में ५६ शांति-सैनिकों ने भाग लिया तथा ३० शांति-सैनिकों ने लिखित सूचना द्वारा असमर्थता जाहिर की।

शिविर के प्रथम दिन की दोनों बैठकों में सैनिकों का परिचय शांति-सेना के उद्देश्य, नये प्रतिज्ञा-पत्र तथा मंडल के कार्यक्रम के सुझावों की जानकारी दी गयी और उन पर विचार किया गया। मुख्यतया निम्न सुझाव प्रस्तुत हुए। शान्ति सेना प्रतिज्ञा पत्र अधिक सरल और अधिक स्पष्ट हो, ऐसा सबने महसूस किया।

जहाँ तक तरुण शान्ति-सेना का प्रश्न है, उनकी अलग से शांति-सेना न हो ऐसी सबकी मान्यता रही है। तरुणों में सबने काम करने का समर्थन किया। 'शान्ति-केन्द्र' और सद्भावशाला का विचार करीब-करीब सभी को पसन्द आया। जिन सैनिकों ने शिविर में सम्मिलित न होने की सूचना नहीं दी, उनसे एक बार पुनः उस जिले के सर्वोदय-मंडल के मार्फत जाँच करके नाम रखने या हटाने का निश्चय किया गया। सैनिकों ने शिविर से पूर्व प्रान्तीय शांति सेना समिति की बैठक में भी मंडल के सुझावों पर विचार किया।

२ अक्टूबर को सभी शान्ति-सैनिकों ने प्रातः ६ बजे जयपुर नगर में शांति-यात्रा की तथा ७॥ से ८॥ बजे तक सामूहिक कताई की और नगर में प्रार्थना का जो आयोजन था, उसमें सम्मिलित हुए। वहाँ राज्यपाल श्री सम्पूर्णानन्दजी को सैनिकों की जानकारी दी तथा उन्होंने अपने हस्ताक्षर से शांति प्रतिज्ञा और अणु-विरोधी अभियान का प्रारम्भ किया। इसके बाद दिन में सभी शान्ति-सैनिकों ने टोलियों में विभक्त होकर नगर के मोहल्ले-मोहल्ले में अभियान चालू रखा। कुल मिला कर २०५० हस्ताक्षर कराये गये। शाम को सार्वजनिक शांति-सभा भी आयोजित की गयी, जिसमें रचनात्मक कार्यकर्ता, भिन्न भिन्न राजनैतिक दलों के सदस्य तथा प्रान्त के मुख्य मंत्री तथा गृहमंत्री भी शामिल हुए। 'गांधी-जयन्ती' के शुभ दिवस पर १७ कार्यकर्ताओं ने नये शांति-सैनिक बनने के संकल्प की घोषणा की।

—बद्रीप्रसाद स्वामी, संयोजक

असम में चार नये ग्रामदान

असमिया भाषा में निकलने वाली "भूदान-यज्ञ" पत्रिका के संपादक श्री रविकान्त सान्दिकै के नाम अपनी बिहार-यात्रा से विनोबाजी ने ३१ अक्टूबर '६२ को नीचे दिया पत्र भेजा है :—

१६ अक्टूबर का 'भूदान-यज्ञ' देखा। हमारे असम छोड़ने के बाद प्रादेशिक पदयात्री-दल गोलपाड़ा जिले में निष्ठापूर्वक पदयात्रा चला रहा है, और ११ सितंबर से ३० सितंबर तक २६ सभाओं में विचार प्रचार किया और असुविधाजनक परिस्थिति में भी तीन ग्रामदान हासिल हुए, यह खुशी की बात है। उधर शिवसागर में भी एक अच्छा ग्रामदान मिला है, ऐसी खबर माणिक शईकिया ने मुझे दी है।

पाँच साल पहले एलवाल में ग्रामदान की चर्चा करने के लिए नेहरू से लेकर नंबुद्रीपाद तक भिन्न-भिन्न राजनैतिक पार्टियों के अनेक नेता एकत्रित हुए थे। उन्होंने ग्रामदान के विचार को सर्व-संमति से स्वीकृत किया। उनके सामने बोलते हुए ग्रामदान के अनेक लाभों में एक लाभ मैंने यह बताया था कि वह एक 'डिफेन्स मेजर' है। उस वक्त चीन और भारत के संघर्ष की बात सामने नहीं थी। आज वह सामने आयी है। ऐसी हालत में सच्चे ग्रामदान जितनी अधिक संख्या में होंगे उतनी देश की 'डिफेन्स' की शक्ति बढ़ेगी। मेरे असम के भाई-बहनों से मेरी प्रार्थना है कि ग्रामदान के इस पहलू पर भी वे सोचें।

प्रादेशिक पदयात्रा सतत जारी रहेगी, ऐसी मैं आशा करता हूँ। सबको प्रणाम।

—विनोबा का जय जगत्

देश में 'सर्वोदय-पर्व' सम्पन्न

इस बार विनोबा जयन्ती, ११ सितम्बर से गांधी-जयन्ती, २ अक्टूबर तक "सर्वोदय-पर्व" देश के विभिन्न स्थानों में विभिन्न तरीकों से मनाया गया। इस अवधि में विशेषतः साहित्य-प्रचार पर सर्वत्र जोर दिया गया और कहीं-कहीं अणुअस्त्र-विरोधी दिवस, शराबबंदी दिवस भी मनाये गये। यहाँ पर हम उन स्थानों के नाम दे रहे हैं, जहाँ से हमें "सर्वोदय-पर्व" मनाने के समाचार मिले हैं।

उत्तर प्रदेश : बरेली में 'गीता-प्रवचन' पर गोष्ठी; ग्रामसेवा-केंद्र, भौंटी पकड़ना (गोरखपुर) के आस-पास के गाँवों में प्रचार; सीधौली, सीतापुर में भूमि-वितरण; हरदाबाद, हमीरपुर; मिर्जापुर में शराबबंदी के लिए प्रयत्न; मथुरा जिला सर्वोदय मंडल, बाराबंकी ने एक हजार रु० से अधिक साहित्य बिक्री की और 'भूदान-यज्ञ' के १०१ ग्राहक बनाये। पीलीभीत; विनोबापुरी, देवरिया; पसना (इलाहाबाद) में सामूहिक श्रमदान, कर्णनाथ में १०६ रु० की साहित्य-बिक्री और क्षेत्र में ११० मील की पदयात्रा।

पंजाब : फिरोजपुर में भारत सेवक समाज द्वारा १००० रु० की खादी बिक्री, ५०० नशाबंदी प्रतिज्ञा-पत्रों और १५०० राष्ट्रीय एकता प्रतिज्ञा-पत्रों पर हस्ताक्षर संग्रहीत किये गये।

आंध्र : करीमनगर, विशाखापट्टनम, नालगोंडा, नेल्लूर, तेनाली, गुंटूर, राजमहेंद्रि, पार्वतीपुरम, विजयवाड़ा, महबूबाबाद, खम्माम, चित्तूर, हैदराबाद, ..., काकीनाडा, कोत्तागूडेम।

मध्यप्रदेश : रतलाम, सागर, चित्रकूट, दुर्ग, उज्जैन, जबलपुर, शिवनी, ग्वालियर। रायपुर में ११०० रु० की साहित्य बिक्री हुई और २००० सूत-गुंडियाँ मिलीं। रीवाँ में ५०० रु० की साहित्य-बिक्री हुई, 'भूदान-यज्ञ' के ९ ग्राहक बने। ग्रामसेवा केन्द्र, कुराँ (रायपुर) में पदयात्रा। महाविद्यालय, कुंडेश्वर (टीकमगढ़) में विनोबा-संस्थान का उद्घाटन। छात्रों द्वारा १५ गाँवों में पदयात्रा।

राजस्थान : इन्दौर, जोधपुर, नवलगढ़, जयपुर, सीकर, रामगढ़, उदयपुर, मदनगंज (किशनगढ़), मनवाड़, ग्राम-विद्यालय मुरारा, सेवामंदिर, भिलवाड़ा, चित्तौड़गढ़ जिले में पदयात्रा; शिवदासपुरा में गांधी विनोबा चित्र-प्रदर्शन।

बिहार : चतुर्भुजी महावीर समिति, चौरहा (संथाल परगना); सर्वोदय केन्द्र सीवान (सारन); ग्रामसेवा केन्द्र मोतिहारी, उदनीपुर (पटना); ग्रामसेवा केन्द्र, मुंगेर (चम्पारन); आदिवासी सेवा-केन्द्र, विष्णुपुर; सर्वोदय आश्रम, अरवल (पटना)—जिले में २८ गाँवों में पदयात्रा; सर्वोदय आश्रम, रेवाड़ी (दरभंगा)—पदयात्रा और स्कूलों में गोष्ठियाँ; खादी केन्द्रित रचनात्मक सहयोग समिति, नरसिंहपुर, ढोली (मुजफ्फरपुर)।

अखिल भारत शान्ति-सेना मण्डल की ओर से

शांति-सैनिकों को सूचना

[चीनी-आक्रमण के संकट को लेकर अनेक शान्ति-सैनिकों ने पत्र और तार द्वारा शांति-सेना मंडल से पूछा है कि ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिये ? उन्हें जो सूचना भेजी गयी है, वह यहाँ दी जा रही है। —सं०]

चीन के आक्रमण के कारण राष्ट्र में आज जो परिस्थिति पैदा हुई है, इस स्थिति में भारत के शांति-सैनिकों का क्या कर्तव्य हो, यह प्रश्न हरएक शांति-सैनिक के मन में उठेगा। इस संबंध में विचार करने के लिए अखिल भारत शांति-सेना-मंडल की एक विशेष बैठक ९ नवंबर को विनोबाजी की उपस्थिति में हो रही है।

इस संबंध में और जो कोई सूचनाएँ होंगी, वे सब इस बैठक के बाद भेजी जायेंगी। तब तक शान्ति-सैनिक निम्नलिखित चीजें करें :—

(१) किसी भी समय युद्ध विरोध या अहिंसक प्रतिकार के लिए आपको बुलाया जाय तो उसके लिए तैयार रहें।

(२) युद्ध के वातावरण से लाभ उठा कर आपके इर्दगिर्द मुनाफाखोरी, भ्रष्टाचार आदि न बढ़े, इसका प्रचार करें।

(३) चीन के प्रति वैर भाव न बढ़े, इसका प्रयत्न करें।

(४) अहिंसक प्रतिकार की बुनियाद अहिंसक असहयोग में है, और असहयोग तभी सफल हो सकता है, जब कि हम स्वावलंबी हों। इस चीज का ध्यान रखते हुए ग्राम-स्वावलम्बन का विशेष प्रयत्न करें।

—नारायण देसाई, मंत्री

जिला-प्रतिनिधियों के चुनाव की सूचना भेजिये

नीचे दिये हुए जिला सर्वोदय-मण्डलों से जिला-प्रतिनिधियों के चुनाव की सूचना अभी तक नहीं मिली है। कृपया शीघ्र चुनाव कराके इसकी सूचना भेज दें, क्योंकि वेड़छी-अधिवेशन में वे ही लोग आमंत्रित किये जायेंगे, जिनकी सूचना चुनाव होकर यहाँ आ जायेगी।

राजस्थान

(१) सवाई माधोपुर (६) सीकर
(२) चित्तौड़गढ़ (७) अलवर
(३) कोटा (८) भीलवाड़ा
(४) बीकानेर (९) जोधपुर
(५) उदयपुर

उत्तर प्रदेश

(१) बदायूँ (७) फैजाबाद
(२) बाराबंकी (८) टेहरी गढ़वाल एवं उत्तर काशी
(३) पीलीभीत (९) देहरादून
(४) उन्नाव (१०) गढ़वाल एवं चमोली
(५) मिर्जापुर
(६) प्रतापगढ़

गुजरात

(१) बनासकांठा (२) भरौच (३) साबरकांठा

केरल

(१) कर्वाईलोन (२) कोट्टायम

महाराष्ट्र

(१) अहमदनगर (४) उत्तर सातारा
(२) धूलिया (५) कोल्हापुर
(३) बीड़ (६) अकोला

बिहार : (१) सिंहभूमि

पश्चिम बंगाल

(१) बर्दवान (३) दार्जिलिंग
(२) मुर्शिदाबाद (४) कूचबिहार

उड़ीसा

(१) बालासोर (२) मयूरभंज

असम : (१) ग्वालपाड़ा

मध्यप्रदेश

(१) नरसिंहपुर (४) रायगढ़
(२) मुरैना (५) मंडला
(३) पन्ना (६) रतलाम

आंध्र

(१) महबूबनगर (४) नालगोंडा
(२) नेल्लोर (५) मेदक
(३) विशाखापट्टनम् (६) श्रीकाकुलम्

पंजाब

(१) होशियारपुर (३) कपूरथला
(२) अम्बाला (४) महेन्द्रगढ़

मैसूर

(१) कारवार (४) मैसूर
(२) बंगलोर (५) साउथ कनारा
(३) बिदर (६) गुलबर्गा

—कार्यालय मंत्री,
अ. भा. सर्व-सेवा-संघ,
राजघाट, वाराणसी-१

तमिल में "लोकसेवक" का प्रकाशन

मद्रास से तमिल भाषा में सर्वोदय-विचारधारा का नया मासिक "लोक सेवक" निकल रहा है, जो श्री ... के संपादन में प्रारम्भ किया गया है। "लोकसेवक" मासिक, ... , ... , मद्रास—२१ से प्राप्त हो सकता है।

श्री जयप्रकाशजी का वक्तव्य

[पृष्ठ २ से आगे]

जा रहा है और शहरों और गाँवों के उत्पादकों ने इसका अच्छा प्रत्युत्तर दिया है। किन्तु यह आह्वान तभी असरकारक होगा, जब कि लाखों बेकार हाथों को औजार दिये जायँगे। ऐसे औजार निस्संदेह छोटे और सादे होने चाहिए। वैसी हालत में यह आवश्यक हो जायेगा कि उद्योग को सर्वत्र फैलाने की प्रक्रिया पर जोर देना होगा, जिससे प्रत्येक घर न सही, प्रत्येक गाँव और शहर तो औद्योगिक इकाई बन जाये।

देश के नेताओं ने दूसरे काम और कर्तव्यों पर जोर दिया है। मेरे लिए आवश्यक नहीं कि मैं उनको दुहराऊँ। एक चेतावनी, जिस पर मैं पुनः जोर देना चाहूँगा वह यह है कि जो लोग गुंडागर्दी और राजनीतिक असहिष्णुता में लिप्त हैं, जो घृणा और दुर्भाव की निम्न भावनाओं को उभाड़ते हैं, जो अपनी मानवता और आत्मसम्मान को भूल जाते हैं, वे देश को नुकसान पहुँचाते हैं, सुरक्षा के प्रयत्नों को कमजोर करते हैं और शांति के काम में बाधा डालते हैं।

इस सम्बंध में शांति-सेना की मुख्य भूमिका है। वह लोगों में शांति और प्रतिष्ठा बनाये रखने में मदद कर सकती है, लोगों के मनोबल को कायम रख सकती है और उनके दिमागों से डर को हटा सकती है। इसका एक विशेष मुख्य कार्य यह है कि मोर्चे के निकटवर्ती क्षेत्रों में लोगों में भय और आतंक की भावना को दूर करे और लोगों को इस बात के लिए तैयार करें कि आक्रामक का मुकाबला सम्पूर्ण अहिंसक प्रकार से किया जाय।

शांतिपूर्ण समझौते के लिए तैयार रहें

अंत में, पूरी जिम्मेदारी के साथ मैं अपने देशवासियों को याद दिलाना चाहता हूँ कि युद्ध मानव समाज की कोई स्थायी दशा नहीं है और न स्थायी शांति ही अस्त्रों द्वारा लादी जा सकती है। इसलिए अपने बचाव के लिए कोई प्रयत्न बाकी न छोड़ते हुए और छीने गये प्रदेश को पुनः प्राप्त करते हुए भी, हम हमेशा शांतिपूर्ण समझौते के लिए तैयार रहें। यह कमजोरी का नहीं, किन्तु ताकत का लक्षण है। शांतिपूर्ण समझौते की तुलना सौदेबाजी से नहीं की जानी चाहिए। इसलिए जनता को प्रधान मंत्री के इस वक्तव्य का स्वागत और समर्थन करना चाहिये कि वे चीन से वार्ता करने को तैयार हैं, बशर्ते कि चीनी उन स्थानों को लौट जायें, जहाँ वे ८ सितम्बर के पहले थे। मित्र देशों के शांतिपूर्ण समझौते की कोशिश का भी हमें स्वागत करना चाहिये। हमारी मुख्य कोशिश केवल यह होनी चाहिए कि शांतिपूर्ण समझौते के नाम पर हम कहीं अन्यायपूर्ण या असम्मानजनक शर्तों को न मंजूर कर लें। देश की वर्तमान जागृति को देखते हुए ऐसा होना सम्भव भी नहीं दीखता है। [मूल अंग्रेजी से]

"छोटी छोटी बातें"

जूतों का पालिश

एक दिन किसी शिविर या सम्मेलन में मैं अपने जूतों पर पालिश कर रहा था। कस्बे के कुछ नागरिक कुतूहलवश "सर्वोदयवालों" का शिविर देखने के लिए आये हुए थे। उनमें से एक ने धीरे से अपने साथियों से कहा :

"देखा, ये सर्वोदयवाले हैं। जूते पर पालिश भी रोज होनी चाहिए!"

* * *

लोग समझते हैं, जूते जैसी चीज को साफ करने की क्या आवश्यकता है। जूते को साफ रखना अक्सर 'नखरा' माना जाता है। पर इस बात पर हम कभी ध्यान नहीं देते कि और सब चीजों की तरह अगर जूता भी साफ न रहा, उस पर मिट्टी, पानी जमा हुआ, तो न सिर्फ वह खराब दीखेगा, बल्कि उसकी उम्र भी कम होगी। उपभोग्य वस्तुओं, सामान, असबाब इत्यादि के संबंध में सर्वोदय की दृष्टि का मतलब अपरिग्रह का अवश्य है, पर अस्वच्छता, गन्दगी, भोंडेपन या उन्हें अस्त-व्यस्त रखने का हर्गिज नहीं। अनावश्यक सामान का या वस्तुओं का संग्रह न करना यह सर्वोदय है। लेकिन जो भी चीजें अपने रोजमर्रा के जीवन के लिए आवश्यक हैं—और इस आवश्यकता का पैमाना भी हर व्यक्ति अपने लिए खुद तय करे—वे सब चीजें व्यवस्थित, स्वच्छ और स्वाभाविक स्थिति में रहनी चाहिए। जूता न पहनना अलग चीज है। लेकिन अगर जूता पहनना है तो उसे साफ रखना आवश्यक है।

—सिद्धराज ढड्ढा

गुजरात सर्वोदय-सम्मेलन की तैयारी

अखिल भारत सर्वोदय-समाज का आगामी सम्मेलन २३ और २४ नवम्बर को गुजरात में सूरत जिले के वेड़छी स्थान में होगा। वहीं १९ से २२ नवम्बर तक संघ का अधिवेशन होगा।

गुजरात में सम्मेलन के निमित्त सर्वोदय-कार्यकर्ता स्थान-स्थान से पदयात्रा पर निकले हैं और वेड़छी पहुँचेंगे। सम्मेलन-स्थल पर पानी, सफाई, प्रकाश आदि की समुचित व्यवस्था की जा रही है।

७ अक्टूबर को स्वागत समिति द्वारा निर्मित सम्मेलन की अर्थ-समिति की बैठक सूरत में हुई और विदित हुआ है कि १,४०,५५२ रुपये एकत्र हुए हैं तथा ७२ हजार रुपये और भी इकट्ठे किये जायँगे।

बिहार अखंड सर्वोदय पदयात्रा-टोली

छपरा जिले में सितम्बर महीने में श्री ब्रजमोहन शर्मा के नेतृत्व में बिहार प्रान्तीय पदयात्रा-टोली की ३० पड़ावों द्वारा १५० मील की पदयात्रा हुई। प्रत्येक पड़ाव पर प्रार्थना-सभा हुई तथा रात्रि में मैजिक लालटेन द्वारा सर्वोदय-विचार का प्रचार हुआ। ६० गाँवों से सम्पर्क तथा पाँच हजार लोगों को सर्वोदय-सन्देश सुनाया गया।

इसी बीच 'सर्वोदय-पर्व' प्रारम्भ हुआ, इसलिए गुठनी, मैरवा, दोन, दरौली तथा आन्दर उच्च माध्यमिक विद्यालय में शिक्षकों एवं छात्रों की भी सभा हुई। विज्ञान के इस जमाने में सर्वोदय की आवश्यकता क्यों है, यह विचार समझाया गया तथा राष्ट्रीय एकता और 'अणु-परीक्षण बन्द हो' हस्ताक्षर संग्रहीत करने का अभियान प्रारम्भ हुआ। इस अवधि में 'भूदान यज्ञ' के ३५ ग्राहक बने तथा २१० रुपये का साहित्य बिका।

सारण जिले के विभिन्न गाँवों की यात्रा की अवधि में आम सभा, व्यक्तिगत सम्पर्क, बातचीत आदि द्वारा दो सप्ताह में लगभग छह हजार व्यक्तियों को सर्वोदय के उद्देश्य एवं कार्यक्रम से अवगत कराया है। जिला सर्वोदय मंडल, सारण के अध्यक्ष श्री विद्यानंद गिरी एवं भूतपूर्व मंत्री श्री विश्वनाथ शर्मा का सक्रिय सहयोग टोली को प्राप्त है। टोली के प्रयास से इस अवधि में लगभग तीन सौ रुपये के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। उच्च विद्यालय, कालेज एवं अन्य शिक्षण संस्थाओं में भी टोली के सदस्यों ने सभा द्वारा सर्वोदय-विचार का प्रचार किया है।

स्व० लक्ष्मी बाबू की स्मृति में १५ अगस्त '५८ से निरंतर भयंकर वर्षा-तूफान में भी टोली अखण्ड रूप से चल रही है। यह पदयात्रा दो बार सम्पूर्ण बिहार की परिक्रमा समाप्त कर तीसरी बार छपरा जिले में आयी है।

अब तक लगभग दस हजार मील की पदयात्रा हुई। टोली में सात भाई हैं।

'सर्वोदय-पर्व' के समाचार

सिवनी जिले में

सिवनी, केवलारी, लखनादौन, बरघाट, धन्सौर, कहानी, आदि आठ जगह सामूहिक सभाएँ हुईं। २००० व्यक्तियों से अणशस्त्र विरोधी पत्रक पर हस्ताक्षर किये तथा ८० व्यक्तियों ने उपवास किया। २००० रुपयों का साहित्य प्रचार किया गया। भूदान-पत्रिकाओं के १० ग्राहक बनाये। २०० एकड़ भूमि वितरित की तथा २० एकड़ प्राप्त की। अस्पृश्यता-निवारण कार्य आठ ग्रामों में किया। आठ लोकसेवकों ने अपना पूरा समय देकर इस कार्यक्रम को सफल बनाया।

जमालपुर में

मुंगेर जिले के जमालपुर में सर्वोदय-मित्र मंडल, मजदूर सेवा केन्द्र और स्थानीय खादी-भंडार के सम्मिलित प्रयास से 'सर्वोदय पर्व' के अवसर पर सर्वोदय विचार का व्यापक प्रचार किया गया। आणविक परीक्षण के विरोध में हजारों हस्ताक्षर प्राप्त किये। करीब ५० रु० का साहित्य बिका। ११ गाँवों से संपर्क स्थापित किया।

१६ सितम्बर को जमालपुर के रेलवे कारखाने में सब से मुख्य त्यौहार विश्वकर्मा जयंती के दिन सर्वोदय-साहित्य की एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। हजारों लोगों ने उस प्रदर्शनी को देखा। इस प्रदर्शनी में २०० रु० का ग्रामोद्योगी सामान, १८४ रु० की खादी और १०० रु० का सर्वोदय-साहित्य बिका। प्रदर्शनी का उद्घाटन कारखाने के उच्च अधिकारी श्री सतीशचंद्र मिश्र ने किया। इस अवसर पर बिहार सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह और आचार्य राममूर्ति उपस्थित थे।

२४ सितम्बर को एक नशाबंदी परिषद् गठित की गयी, जो नशाबंदी के लिए हस्ताक्षर संग्रह कर रही है। २ अक्टूबर को विशेष कार्यक्रमों के साथ गांधी-जयंती मनायी गयी।

बनमनखी में सर्वोदय-साहित्य गोष्ठी

रानीपतरा के बनमनखी उच्च विद्यालय में २४-२५ सितम्बर को सर्वोदय साहित्य प्रदर्शनी और सर्वोदय-साहित्य गोष्ठी हुई। इसमें उच्च विद्यालय के आचार्य, उपाचार्य, अध्यापक एवं सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। गोष्ठी का समावर्तन श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी द्वारा हुआ। इस अवसर पर आयोजित भाषण प्रतियोगिता में इस अंचल के नौ माध्यमिक स्कूलों के छात्रों ने भी भाग लिया। ४० रु० की साहित्य बिक्री हुई। ५०० व्यक्तियों ने अणुअस्त्र विरोधी पत्रक पर हस्ताक्षर किये।

हिसार जिला सर्वोदय-मण्डल

सितम्बर माह में हिसार (पंजाब) के जिला सर्वोदय-मण्डल द्वारा २६ ग्रामों और १५ स्कूलों में विचार प्रचार किया गया। १८९४ रु० का साहित्य बिका। सर्वोदय-पात्रों से ६२ रु० १२ न० पै० प्राप्त हुए और २४ दाताओं से सम्पत्तिदान में २४१ रु० मिले। ११ सितम्बर को श्री दादा गणेशीलाल ने हिसार के "सर्वोदय भवन" का शिलान्यास किया।

भूदान-ग्रामदान पदयात्राएँ

राजस्थान से वेड़छी तक पदयात्रा का प्रारंभ

१५ अक्टूबर को राजस्थान के भूदान-पदयात्री श्री देवदत्त 'निडर' ने रामगढ़ सेठान से सर्वोदय-सम्मेलन-स्थान वेड़छी (गुजरात) तक की पदयात्रा प्रारम्भ कर दी है। आप अजमेर, आबू रोड, अहमदाबाद होकर वेड़छी पहुँचेंगे। पदयात्रा में अणुअस्त्र-विरोधी और राष्ट्रीय एकता प्रतिज्ञा-पत्रकों पर हस्ताक्षर संग्रह करना, भूदान-पत्रों के ग्राहक बनाना तथा शराब-बन्दी का प्रचार करना आदि कार्य आप करेंगे।

बाँसवाड़ा जिले में पदयात्रा

श्री गोपाल हरि शर्मा ने १९ अगस्त से २१ सितम्बर तक ३६४ मील की पदयात्रा के मध्य २५५९ बीघा भूमि वितरित की और ७ ग्रामदानी गाँवों में सभाएँ करके शासनमुक्त समाज, स्वावलम्बन और शराबबन्दी के बारे में प्रचार किया।

आसाम में श्री महेन्द्र मोहन चौधरी की पदयात्रा

अपनी तीन दिन की पदयात्रा में आसाम विधान-सभा के स्पीकर श्री महेन्द्र मोहन चौधरी ने १७ अक्टूबर से उत्तर कामरूप जिले के ग्रामदानी गाँवों-डुपोलिगा, बेतुलामारी, बागनपारा, झरताकुक, थालकूची और गेरुआ-की स्थिति का अध्ययन किया और उनमें "आसाम ग्रामदान ऐक्ट" के अनुसार ग्रामराज तथा ग्रामनिर्माण की भावना जाग्रत करने के लिए प्रचार किया।

बुलन्दशहर जिले में पदयात्रा

बुलन्दशहर जिला सर्वोदय-मंडल की ओर से १५ अगस्त को पदयात्रा शुरू हुई। पदयात्रा में ७ व्यक्तियों ने भाग लिया। पदयात्रा-टोली ने जिले के सभी, १९ विकास-क्षेत्र की ३२५ मील की पदयात्रा ५७ दिन में पूरी की। इस अवधि में ११५१ रु० की साहित्य-बिक्री हुई। 'भूदान-पत्रों के २४ ग्राहक बने। २९ लोगोंने लोकसेवकों के निश्चय भरे।

गुजरात में सर्वोदय-यात्रा

श्री बबलभाई मेहता, अहमदाबाद, खेड़ा, पंचमहाल, बड़ौदा और भड़ौच जिले की पदयात्रा पूरी करके अब सूरत जिले में हैं। ११ अक्टूबर तक उन्होंने ४७१ मील की पदयात्रा में २१० सभाओं में भाषण दिये, "भूमिपुत्र" के ३६७७ ग्राहक बनाये, ३५७२ रु० का साहित्य बेचा। सम्मेलन के लिए उन्हें ५१६३ रु० संपत्तिदान में मिले।

श्री हरीश व्यास की पदयात्रा सूरत जिले में चल रही है। श्री रतनबहन द्वारकादास जोशी की महेसाणा जिले की पदयात्रा में १,२५२ रु० का सम्पत्तिदान मिला।

कच्छ के वयोवृद्ध कार्यकर्ता श्री बालजी भगजी ने "सर्वोदय-पर्व" में ८४ मील की पदयात्रा की। बालजी बापा अब लोकसंपर्क के लिए भुज तालुका में पदयात्रा का विचार कर रहे हैं। श्री बालजी भगजी कच्छ जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक और श्री मणिलाल संघवी जिला-प्रतिनिधि चुने गए हैं।

मंदसौर जिले में पंचायत-राज लोकशिक्षण पदयात्रा

मंदसौर जिले में २५० मील की ६९ गाँवों में पंचायत राज लोकशिक्षण पदयात्रा हुई। इस बीच ५५ सभाएँ हुई, २९ विद्यालयों से संपर्क स्थापित किया गया और ५ चर्चा-गोष्ठियाँ हुईं। ११९ रु० का सर्वोदय-साहित्य बिका। "भूमि-क्रांति" के ४० और "भूदान-यज्ञ" के २४ ग्राहक बने। ४१ व्यक्तियों ने शांति-सैनिक बनने के लिए नाम दिये। ४० विभिन्न स्थानों के कार्यकर्ताओं ने बीच-बीच में पदयात्रा में भाग लिया। पदयात्रा की समाप्ति के दिन, २ अक्टूबर को मंदसौर शहर में एक विशाल आम सभा हुई।

सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन और सर्वोदय-सम्मेलन के दिनों में कटौती

देश की संकटकालीन स्थिति को देखते हुए सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन की तिथियों में और सम्मेलन के दिनों में निम्न प्रकार कटौती करने का निर्णय किया गया है। अधिवेशन और सम्मेलन में संकटकालीन स्थिति पर विचार के लिए विशेष समय दिया जाने का भी सोचा है।

संघ-अधिवेशन १९ से २२ नवंबर

सर्वोदय-सम्मेलन २३ और २४

—श्यामाचरण शास्त्री, कार्यालय मंत्री

कस्तूरबा ग्रामसेविका विद्यालय, रमरेपुर, वाराणसी में प्रौढ़ महिलाओं का शिक्षण

कस्तूरबा ग्रामसेविका विद्यालय, रमरेपुर, पो० वाराणसी कैंट, जिला वाराणसी द्वारा १ दिसम्बर '६२ से प्रौढ़ महिलाओं का द्वैवार्षिक शिक्षण (कन्डेन्स कोर्स) चालू किया जायेगा। उम्र, पूरा पता व प्रमाणित शैक्षणिक योग्यता सहित आवेदन-पत्र व्यवस्थापक या प्रतिनिधि, कस्तूरबा गांधी राष्ट्रीय स्मारक ट्रस्ट, रमरेपुर, पो० वाराणसी कैंट, के पास भेजने की अन्तिम तिथि १० नवम्बर तक है।

शिक्षण-काल दो वर्ष का होगा, जिसमें प्रशिक्षार्थिनी को 'विद्याविनोदिनी' की परीक्षा दिलायी जायगी। शिक्षण-काल में भोजन, साबुन, तेल, निवास और शिक्षण की व्यवस्था मुफ्त रहेगी। प्रवेश पाने के लिए शैक्षणिक योग्यता कम-से-कम कक्षा ५ तक और उम्र १८ से ३० वर्ष के बीच होनी चाहिए।

बम्बई के मिल-मजदूरों में सर्वोदय-साहित्य प्रचार के लिए

लोकसेवकों को आमंत्रण

बम्बई के १२ कपड़ा-मिलों और कारखानों के मजदूरों में अप्रैल से अक्टूबर तक २७४७६ रु० ६९ नये पैसे का सर्वोदय-साहित्य बेचा गया।

श्री कान्तिलाल बोरा, संयोजक, बम्बई सर्वोदय मण्डल (मणिभवन, १९, लेबरनम रोड, गामदेवी, बम्बई-७) ने लोकसेवकों से अपील की है कि वे १४वें सर्वोदय सम्मेलन में १९ नवम्बर से २४ नवम्बर १९६२ तक गुजरात के वेड़छी स्थान में तो पहुँचेंगे ही, यदि उससे पूर्व बम्बई के इस साहित्य-प्रचार अभियान में सहयोग दे सकें तो वे लोग श्री बोरा से सम्पर्क स्थापित कर लें।

सर्वोदय समाज-सम्मेलन में सूत्रयज्ञ

श्री रामकृष्णन्, मंत्री, चौदहवाँ सर्वोदय-समाज-सम्मेलन (राजघाट, काशी) ने सभी लोकसेवकों से अपील की है कि वे सम्मेलन में आते वक्त अपना चरखा या कताई का अन्य सामान अवश्य ही साथ लेते आयें। सम्मेलन में दैनिक सूत्रयज्ञ का आयोजन किया गया है। १९ से २२ नवम्बर तक वेड़छी (गुजरात) में सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधियों का अधिवेशन होगा। वहीं २३ और २४ नवम्बर को सर्वोदय-सम्मेलन भी हो रहा है।

वर्धा और जलगाँव जिले में ४०० एकड़ नया भूमिदान मिला

वर्धा जिले में ९ से १६ अक्टूबर तक १०० गाँवों में एवं ४ शहरों में ६० व्यक्तियों ने भूदान-पदयात्राएँ कीं। फलस्वरूप ५० दाताओं ने ३०० एकड़ भूमि भूदान में दी। ४०० रु० का साहित्य बिका।

नागपुर जिले में १०४० और वर्धा जिले में लगभग १००० व्यक्तियों ने अणुअस्त्र विरोधी-पत्र पर हस्ताक्षर किये।

जलगाँव जिले के ३६ गाँवों में ता० १८ से २४ अक्टूबर तक ५ टोलियों ने ८१ मील की प्रचार-यात्रा की। फलस्वरूप १३ दाताओं से १०० एकड़ भूदान मिला। "साम्ययोग" मराठी साप्ताहिक पत्र के १६ ग्राहक बने। १२० रु० की साहित्य बिक्री हुई।

महात्मा भगवान-दीन का निधन

स्वतन्त्र विचारक और सुप्रसिद्ध राष्ट्र-भक्त महात्मा भगवानदीन का ८० वर्ष की अवस्था में नागपुर में ४ नवम्बर को देहावसान हो गया है। हम दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते हैं।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८२८५ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८२५५ एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १६ नवम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक ७

आज के संकट के संदर्भ में गीता का संदेश

समत्व बुद्धि और अक्षोभ वृत्ति की आवश्यकता

विनोबा

अभी भारत-चीन सीमा पर जो घटना हुई है, वह अगर पुराने जमाने में हुई होती तो किसी को पता भी न चलता, जानकारी ही न मिलती। भारत में सबसे बड़ी लड़ाई पानीपत की हुई। उसको २०० साल हो गये। उसकी जानकारी जापान को लड़ाई हो जाने के ५० साल बाद मिली! लेकिन आज की स्थिति अलग है। विज्ञान ने विश्व को छोटा बना दिया। उसने तरह-तरह के साधन दे दिये। आज दुनिया में किसी कोने में छोटी भी घटना होती है तो दुनिया भर के तमाम अखबारों में मुखपृष्ठ पर बड़े-बड़े अक्षरों में आ जाती है। सबके चित्तों पर उसका प्रभाव होता है। उससे क्षोभ पैदा होता है।

अभी अमेरिका से राजाजी आये। उनके वापस आते ही हवाई अड्डे पर चीन के बारे में राय पूछी गयी। आज के जमाने के संदर्भ में हर घटना बड़ी बन जाती है; विशाल रूप धारण करके चित्त में उथल-पुथल मचा देती है। हर चीज पर मत प्रकाशन जरूरी हो जाता है।

ऐसी स्थिति में समाज में प्रज्ञा की, समत्व बुद्धि की और स्थित-प्रज्ञावस्था की बड़ी आवश्यकता है। जो भी खोना चाहते हो तुम खो सकते हो, लेकिन बुद्धि की स्थिरता को मत खोओ! अपना सब कुछ जाय, पर बुद्धि रहे तो काफी है, ऐसा चाणक्य ने लिखा था। खास करके आज के मन्त्री और कूटनीतिज्ञों को चाहिए कि वे अपने चित्त को प्रक्षोभित न होने दें और हर चीज के बारे में समत्व बुद्धि से सोचें। वे सर्वसंग्राहक और व्यापक निर्णायक होते हैं और सबमें अविरोध स्थापित करना इनका काम है। यह तो बिना समत्व के हो नहीं सकता।

आज के जमाने में तालीम में निर्णायक बुद्धि, समत्व बुद्धि और स्थितप्रज्ञता सिखाने की बहुत जरूरत है। अब पढ़ाते हैं, दस्तकारियाँ सिखाते हैं—यह सब करें। देश को इन सबकी जरूरत है। लेकिन आज इनसे भी ज्यादा गुणों की जरूरत है। यदि आपने स्थिर बुद्धि रखी, क्षोभ पैदा न होने दिया, तो समझा जायगा कि आपने सब कुछ हासिल किया।

पुराने जमाने में यहाँ जो लड़ाई होती थी, उसमें आवेश पैदा करने के लिए शराब पीते थे, आमने-सामने खड़े होकर तलवार से लड़ते थे। उसमें कोई स्थिर बुद्धि की आवश्यकता नहीं थी। लेकिन आज युद्ध एकदम अक्षोभ बुद्धि से लड़े जाते हैं। गणित से काम लिया जाता है। कितने कदम आगे जाना, कितने कदम पीछे हटना, यह सब गणित है। गणित के आधार पर आज्ञाएँ दी जाती हैं। इसमें भय और आवेश छोड़ना पड़ता है, दिशा ठीक देखनी पड़ती है, लक्ष्य पक्का करना होता है।

अगर चित्त में जरा भी क्षोभ होगा तो यह सब नहीं हो सकेगा। जिस जमाने की लड़ाई क्षोभ से नहीं बनेगी उस जमाने में शांति कैसे क्षोभ से बनेगी? क्षोभ 'आउट आफ डेट' (पुराना) हो गया है। अब गणित आ गया है। इसलिए सब कुछ सोच-समझ कर करना है। ऐसी स्थिति में समत्व का महत्त्व बढ़ा है। इसलिए आज गीता हमको साम्ययोग की शिक्षा देती है। वास्तव में गीता में क्या है, यह भगवान् जाने। हमारे लिए क्या चाहिए, यह हम जानें। इस समय हमारे लिए जिस चीज की जरूरत है, वह हमें गीता दे रही है।

इस तरह गीता इस देश के लिए एक ग्रंथ नहीं, वह एक परिशुद्ध विचार है। वह इस देश के लिए किसी भी जमाने में मार्गदर्शन करने लायक है। इसके शब्दों की खूबी है कि वे लचीले हैं, व्यापक अर्थभरे हैं और वे अर्थ सबके लिए लायक हैं।

इन १२ सालों की हमारी यात्रा में गीता का जो प्रचार हुआ है, वह गौण होने पर भी मेरी दृष्टि में मुख्य है। जो मूल्य गीता सिखाती है, उनका अगर हम प्रचार न करें तो दान मांगने के लिए गुंजाइश ही नहीं रहती। यज्ञ, दान, तप, इन गुणों को गीता सिखाती है। अगर हमारे समाज में गीता के मूल्य न होते तो दान की प्रेरणा भारत को होती ही नहीं। वैसे मंदिर के लिए, मसजिद के लिए, किसी आश्रम के लिए, पाठशाला के लिए दान मांगा गया और मिला भी। पर गरीबों को उनका हिस्सा मान कर अपने हृदय से प्यारी, प्राणों से प्यारी जमीन का टुकड़ा निकाल कर जो दे रहे हैं, यह तो गीता की कृपा है। हमारा सारा काम गीता के मूल्यों के अनुसार चल रहा है।

[स्थान : राजमहल, जिला संथाल परगना, २१-१०-'६२ को गंगा के किनारे गंगा पर विनोबा ने जो प्रवचन दिया, उसका उत्तरार्ध।]

हमारे दो मुख्य काम
शांति-सेना और ग्रामदान

इस वक्त हमारा ध्यान मुख्य दो बातों की तरफ केन्द्रित हो।

एक है, शांति-सेना, जिसमें देश की एकता और शांति निहित है।

दूसरी है, ग्रामदान, जिसमें देश का उत्पादन भी निहित है, जिसके आधार पर गाँव-गाँव में उत्पादन बढ़ सकता है और गाँव की सुरक्षा का प्रबंध किया जा सकता है।

दोनों विचार एक-दूसरे के पूरक हैं। हमें चाहिए कि हम इन कामों में पूरी ताकत से जुट जायें। [२ नवम्बर, '६२]

महात्मा भगवानदीन : जैसा मैंने पाया

जमनालाल जैन

महात्मा भगवानदीनजी उन लोगों में से थे जो संकटों को सहर्ष निमंत्रण देते हैं, आपत्तियों में कूद पड़ते हैं और कष्टों की परवाह नहीं करते। उनकी अस्सी वर्ष की जिंदगी में जो भी लोग उनके संपर्क में आये, वे अच्छी तरह जानते हैं कि महात्माजी का निर्माण किसी ऐसी धातु से हुआ था, जो एकसाथ ही मुलायम और कड़ी, हलकी और वजनदार, रूखी और चिकनी थी! २६ वर्ष की भरी जवानी में घरबार यानी पत्नी और बालक को छोड़ कर समाज और देश-सेवा के मैदान में कूद पड़े सो कूद ही पड़े। बाद में, लगभग ५५ बरस के लंबे अरसे में कभी पैसे की बात ही नहीं सोची। उन्होंने अपने जीवन का सर्वस्व और सर्वोच्च देश को अर्पित कर दिया और देश के लिए ही जीये!

शरीर से जर्जर हो जाने के बाद भी वे मौत के अंतिम क्षण तक जवान ही बने रहे! आदमी का अपने तईं जवान बने रहना ही वे पर्याप्त नहीं समझते थे, बल्कि वे यह मानते थे कि सामनेवाले में भी वैसा ही जोश और वैसी ही तरुणाई का संचार होना चाहिए! महात्माजी के पास पहुँच कर कुछ ऐसी अद्भुत प्रेरणा मिलती थी कि मुर्दा नसों में भी गरम खून दौड़ने लगता था!

महात्मा भगवानदीन, जिनका नागपुर में गत ४ नवम्बर को देहावसान हुआ।

महात्माजी ने अपनी जिंदगी में जो कुछ कार्य किये हैं, उनके पीछे उनकी दृष्टि रही है। उन्होंने कभी कोई काम इसलिए नहीं किया कि वह करना पड़ रहा है या मजबूरी है। अपने कार्यों के साथ वे कभी मोहासक्त नहीं हुए। स्वार्थ-लालसा या पद-प्रतिष्ठा ने कभी उन्हें नहीं भरमाया। काम चला, चला और बंद हो गया, तो बंद हो गया! गुरुकुल स्थापित किया, उसका योग्य संचालन किया। वे चाहते थे कि बालक स्वतंत्र, तेजस्वी और आत्मनिर्भर बनें! उन्होंने बालकों को वैसा मौका भी दिया! छोटे-से-छोटे बालक की बात भी वे मजाक या तुच्छ समझ कर नहीं टालते थे। अध्यापक तक बालकों की सचाई और प्रकृति से अपने रहन-सहन अथवा बर्ताव के प्रति सावधान रहते थे। बालकों को पढ़ाने-सिखाने के भी उन्होंने अजीब-अजीब और अनोखे प्रयोग किये। जिन बालकों को लेकर अध्यापकगण परेशान हो जाते थे, वे महात्माजी के पास दिन-दो दिन में ही सीधी राह पर आ जाते थे। महात्माजी ने कभी घटना की स्थूलता को महत्त्व नहीं दिया। मानव के मन की गुत्थी को समझ कर उसका उपाय ढूंढने में महात्माजी की प्रतिभा और कुशलता अद्भुत थी। उनकी कोशिश यह रहती थी कि आदमी को अपने ही ढंग पर, अपने ही स्वभाव के अनुसार विकास करने का मौका देना चाहिए, न कि हम अपनी रुचि और आकांक्षा उस पर लादें। निर्भयता, सचाई और चपलता को वे बालक की पूंजी समझते रहे हैं। एक बार की बात है कि हमारे साथी श्री सुरेश रामभाई का पुत्र एक भिखारी को देख कर डर गया। उस समय वह तीनेक बरस का था। महात्माजी यह देख कर चुप नहीं रह सके। उसे साथ लिया और भिखारी के पीछे-पीछे चल पड़े। घंटा-डेढ़ घंटा चलने पर जब बालक का डर निकल गया, तब ही लौटे। ऐसे ही एक बालक को जंगल में ले गये और अकेला छोड़ दिया। यों वे उसके पीछे-पीछे छिपे रूप में रहे, लेकिन वे उस बालक में साहस और निर्भयता पैदा करना चाहते थे। थोड़ी देर तो बालक घबराया पर कोई सहारा न देख कर रास्ते पर चल पड़ा और जंगल के बीहड़ मार्ग को पार करके गुरुकुल पहुँच गया! ऐसे तो सैकड़ों प्रयोग महात्माजी ने किये हैं! घटनाओं के तो वे भंडार थे और याददाश्त भी गजब की थी।

धर्म शास्त्रों का उनका अध्ययन अपने ढंग का था। वे धर्म-ग्रंथों के शास्त्री या पंडित नहीं थे। उन्होंने जो कुछ पढ़ा, उसे पचाने की कोशिश की और मानव-जीवन के साथ उसका मेल बैठाने के प्रयोग किये। दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक परिभाषाओं को उन्होंने नये अर्थ और नये शब्द प्रदान किये। धार्मिक और दार्शनिक परिभाषाओं और शब्दों में जो भयानकता या अलौकिकता प्रवेश कर गयी है, उसे वे बौद्धिक गुलामी मानते थे। वे कहते थे कि इन शब्दों को सहज और सरल अर्थ में ही लेना चाहिए और यह तभी हो सकता है, जब हम संस्कृत के मोह को छोड़ कर बोलचाल की भाषा में इनका व्यवहार करें। परंपरा, भक्ति या चमत्कार उन पर कभी प्रभाव नहीं जमा सके। एक बार मैं उन्हें विनोबाजी की पुस्तक 'उपनिषदों का अध्ययन' से 'ॐ' के महावाक्य अंश सुना रहा था। सुन कर उन्होंने 'ॐ' पर एक लेख लिखाया, जिसका भावार्थ यह था कि 'ॐ' एक ध्वनि है और ऐसी ध्वनि है जो स्वस्थ आदमी की डकार के रूप में निकलती है—इसके अतिरिक्त इसमें कोई मांत्रिकता, शक्ति या चमत्कार नहीं है। उन्होंने यह भी बताया कि स्वस्थ मनुष्य की डकार 'ॐ' के रूप में कब-कब और किस प्रकार निकल सकती है। इसी तरह धर्म और दर्शन के सैकड़ों शब्दों को उन्होंने अपने प्रयोग-टेस्ट पर जाँचा-परखा है।

महात्माजी ने सदा इस बात पर जोर दिया है कि आदमी जो कुछ बोले अपने अनुभव से, अपनी बात बोले! किसी का हवाला देकर बोलने को वे बेईमानियत समझते थे। बहुत अधिक पढ़ने को भी वे महत्त्व नहीं देते थे।

महात्माजी से आत्म-वंचना कोसों दूर थी। जाने-अनजाने आज बड़े-से-बड़े व्यक्तियों का जीवन आत्मवंचनामय होता जा रहा है। लोक भय, आत्म-रक्षा, प्रतिष्ठा की आकांक्षा, लोभ या अहंकार के वशीभूत होकर लोग निरंतर अनेक रूपों में आत्मवंचना किया करते हैं, अपने आपको धोखा दिया करते हैं, अपने आपको फुसलाते रहते हैं और समाधान भी मान लेते हैं। महात्माजी अपने जीवन में भले ही अप्रसिद्ध रहे हों, उनके विचारों के साथ मतभेद भी बहुतों का है और हो सकता है, किंतु उन्होंने कभी आत्मवंचना नहीं की! किस आदमी के सामने कौनसी बात कहनी चाहिए या नहीं कहनी चाहिए, इसकी परवाह किये बिना जो उनको ठीक लगा, वही कहते रहे और करते रहे हैं! यह काम वही आदमी कर सकता है, जो हर दृष्टि से बेदाग हो, सत्य का उपासक हो और दूसरे व्यक्ति के आत्माभिमान का रक्षक हो! गलत से गलत आदमी के प्रति भी जिसके मन में प्रेम का स्रोत बह सकता है, वही ऐसी हिम्मत कर सकता है! उनके गुरुकुल में भारत के तत्कालीन सहायक मंत्री सर मांटेग्यू आये और एक बालक उनकी कलाई की घड़ी से बार-बार खेलने लगा, तब मांटेग्यू साहब यह पूछ कर ही रह गये कि क्या तुम यह घड़ी चाहते हो! बालक के हाँ कहने पर भी वे उसे घड़ी न दे सके! इसका महात्माजी को बड़ा दुःख हुआ! अगर घड़ी देनी ही नहीं थी तो पूछा ही क्यों! मिट्टी आदमी अपना और अपने को आदमी बनाये रखना वे जीवन की सबसे बड़ी साधना मानते थे। वेश-भूषा, चिह्न, स्थान, दाढ़ी-चोटी आदि तो आदमी को भरमाते ही हैं। क्या उसे अपने बालक, जवान, बूढ़ा होने का पता चलता है! वैसे ही उसे यह ध्यान रखने की जरूरत न होनी चाहिए कि वह 'अमुक' है।

बालकों के तो वे आचार्य ही थे। नवजात एक दिन के बालक तक की सैकड़ों क्रियाओं का बारीकी से उन्होंने अध्ययन किया है। छोटी-से-छोटी बात भी उनकी दृष्टि से बच नहीं सकती थी। इधर तो उनकी आँखें जवाब दे गयी थीं, किंतु बालकों को पढ़ने का उनका उत्साह कभी मंद नहीं हुआ। पिछले वर्ष ही उन्होंने 'बालक बनाम जिन्न' नामक एक पुस्तक पाठकों को भेंट की है, जिसमें पाठक बालकों के मनोविज्ञान को देख सकते हैं।

वे अपने हर क्षण का बराबर उपयोग करते थे। यह उपयोग कितना महान् या कितना तुच्छ या कितना आवश्यक या अनावश्यक होता था, यह प्रश्न बेकार है। इतना जरूर है कि वे अगर हमारे घर में दो दिन भी रह जाते तो हमारे सामने घर की बातों के बारे में इतने प्रश्न कर डालते थे कि हम स्वयं अचरज में पड़ जाते! सीढ़ी पर चढ़ रहे हैं तो गिनती कर लेंगे। रेडियो की तरफ देखते हुए बालक के प्रति अपनी भूमिका बाँध लेंगे। बैठे-बैठे बिना किसी सामग्री या खिलौनों के ही घंटों खेल लेंगे। खाने पर बैठते ही पाँच बरस के बच्चे को बर्तन, रसोई, कपड़ों, मिठाई संबंधी पचासों शब्द सिखा देंगे। दो बरस के बालक से लेकर अस्सी बरस के अनुभवी तक से वे अपनी समान भूमिका से बात कर सकते थे और सब उनसे प्रसन्न होकर लौटते थे। एक बार मेरे पाँच बरस के बच्चे ने तराजू का एक चित्र बनाया और मुझसे बोला कि यह तौलनी है। जिससे तौला जाय वह तौलनी! मैंने यह शब्द महात्माजी को बताया। वे इतने खुश हुए कि वे यह लिखे बिना नहीं रह सके कि यह शब्द मैंने अपना लिया है। उनका मानस इतना निर्विकार था कि वे छोटे बच्चे की बात भी अपनाने के लिए तैयार रहते थे।

वे शरीर से अत्यन्त क्षीण हो गये थे और कई वर्षों से उनका शरीर तिल-तिल जीर्ण हो रहा था। लेकिन कभी उन्होंने इसकी शिकायत नहीं की। बहुत ही कष्ट होता तो 'उफ' करके चुप हो जाते, तकिये से माथा लगा कर उलटे लेटे रहते! प्राकृतिक चिकित्सा पर उनका बेहद विश्वास था। संयोग की बात है कि प्राकृतिक चिकित्सालय में ही पिछले ४ नवम्बर को उन्होंने शरीर छोड़ा।

आजादी की लड़ाई में उनके नागपुर के असहयोग आश्रम का अपना विशिष्ट

[शेष पृष्ठ ११ पर]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

"दानं संवीभागः"

आज समाज में परीवर्तन करने के लीअे सहभाग करना जरूरी है। अीसी को हमारी संस्कृत भाषा में दान कहते हैं। लोग संस्कृत नहीं जानते और दूसरी भाषाओं से शब्द अनुवाद करते हैं। अब अीतना भी नहीं सोचते की तरजुमे से शब्द लायेंगे और यहां कुरानूनी करेंगे। हमारे शास्त्रकारों ने कहा– 'दानं संवीभागः'–अर्थात दानं याने सम्यक् वीभाजन।

संस्कृत में 'दा' धातु का अर्थ तोड़ना होता है। अेक अर्थ होता है देना। देने के जरीये टुकड़े होते हैं, अपने खुद के। अेक टुकड़ा दूसरे को दीया जाता है। 'दा' धातु के ये दो अर्थ अीकट्ठे करके भाष्यकार शंकराचार्य ने ही यह अर्थ नहीं दीया, बल्की गौतम बुद्ध ने भी दीया। अेक वचन आया है गौतम बुद्ध का वर्णन करने वाला।

"ये संवीभागं भगवन् अवण्णयी।"

"भगवान बुद्ध जीसको 'संवीभाग' कहते थे, जो 'दान' शब्द का अर्थ है, वह दान तुम कीया करो।"–अैसा अेक वचन पाली ग्रंथ में आया है। अीससे ध्यान में आयेगा की 'दा' धातु के दो अर्थ ध्यान में रख कर यह 'संवीभाग' अर्थ अुसमें से नीकला।

[पुराना मालदा, प० बंगाल
२०-१०-'६२] –वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ि, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

कसौटी का समय : ३

सिद्धराज ढड्ढा

भारत-चीन संघर्ष का एक और गंभीर पहलू है कि जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है। आज के जमाने की और पुराने जमाने की लड़ाई में कुछ अन्तर बहुत बुनियादी और महत्त्व के हैं, जिन्हें समझ लेना चाहिए। पहली बात यह कि लड़ाई करना आजकल बहुत ज्यादा खर्चीला धन्धा हो गया है। पिछले वर्षों में भारत सरकार के कुल सालाना खर्च का यानी करीब ८०० से ९०० करोड रुपये का आधा, यानी ३७२ करोड के लगभग शांति के जमाने में भी सीधा सेना पर खर्च होता रहा है।

सीधे सेना पर होने वाले इस खर्च के अलावा "नागरिक प्रशासन" के खर्च का भी बहुत-सा हिस्सा अप्रत्यक्ष रूप से प्रतिरक्षा से संबंधित रहता है। और यह इतना बड़ा खर्च तो सिर्फ खड़ी सेना को खिलाने और निभाने में तथा लड़ाई का सामान जुटाने में होता रहा है। वह सामान भी ऐन मौके पर ऐसा नाकाफी साबित हो सकता है और हुआ है, यह पिछले दिनों के प्रत्यक्ष अनुभव से सिद्ध हो चुका है। यह सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि जब सिर्फ मामूली सामान जुटाने में और खड़ी सेना को खिलाने में सरकार की कुल आय का आधा रुपया खर्च होता रहा है तब वास्तविक लड़ाई के दिनों में कितना खर्च होता होगा। लड़ाई के दिनों में न सिर्फ सेना और सामान को इधर से उधर भेजने में और गोला-बारूद के इस्तेमाल में अनगिनत खर्च होता है, पर अक्सर जब सेनाओं को पीछे हटना पड़ता है तब लाखों-करोड़ों का सामान या तो नष्ट करना पड़ता है या छोड़ कर भागना पड़ता है। वास्तव में लड़ाई में "कीमत" का कोई सवाल नहीं उठता है, किसी भी कीमत पर लड़ाई करनी होती है।

युद्ध और योजना

आज के जमाने में और पहले के जमाने में दूसरा बड़ा अन्तर यह हुआ है कि आज सामान्य प्रजा का रोजमर्रा का जीवन भी केंद्रित व्यवस्था पर निर्भर है। लड़ाई के दिनों में केंद्रीय सत्ता का सारा ध्यान और शक्ति स्वाभाविक ही लड़ाई के संचालन में लग जाती है, ऐसी हालत में सामान्य प्रजा की परेशानी और कठिनाइयाँ पहले वाले जमाने की अपेक्षा कई गुना बढ़ जाती हैं। पिछले महायुद्ध के समय जब कि हिंदुस्तान की जमीन पर लड़ाई नहीं हो रही थी, और जब कि यह देश सिर्फ तत्कालीन शासकों के कारण युद्ध में घसीटा गया था, तब भी करीब तीस लाख आदमी, औरत बच्चे बंगाल में और कलकत्ता जैसे शहर की सड़कों पर भूखों मर गये थे। पहले से ही जो देश गरीब है और जिसकी गरीबी और अभाव को दूर करने की योजनाएं सब केंद्रित व्यवस्था पर निर्भर हैं, जहाँ गावों के पुराने उद्योग धन्धे सब नष्ट हो चुके हैं और खाने-पहनने तक के लिए भी करोड़ों लोग जहाँ बाहरी व्यवस्था पर आधार रखते हैं, वहाँ लंबे समय तक चलने वाली लड़ाई की भयंकरता का अंदाज लगाना भी मुश्किल है। आज हमारे देश के आर्थिक जीवन का सारा तानाबाना पंचवर्षीय योजनाओं के साथ गुँथा हुआ है। गरीबी और अभाव को दूर करने या कम करने की 'आस' इन योजनाओं पर लगी हुई है। लेकिन यह स्पष्ट और स्वाभाविक है कि लड़ाई के कारण इन योजनाओं का स्वरूप बदलेगा।

भार किस पर पड़े ?

जिस प्रकार, लड़ाई का खर्चीलापन, देश की गरीबी तथा उस गरीबी को दूर करने की चालू कोशिशों में आने वाले विघ्न—इन सब बातों को ध्यान में लें तो भारत-चीन संघर्ष से उत्पन्न परिस्थिति की गंभीरता का अनुमान हम लगा सकते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि देश की आजादी और सम्मान की रक्षा के लिए जो भी कीमत चुकानी पड़े वह चुकानी चाहिए, और चूंकि चीन की ओर से सरासर अन्याय हुआ है, इसलिए उसका मुकाबला भी सब संभव उपायों से करना चाहिये, पर साथ ही बुद्धिमानी का यह तकाजा है कि परिस्थिति की वास्तविकता का भान हमें रहे और यह कोशिश हो कि उस कीमत का बोझ देश के सब वर्गों पर उनकी क्षमता के अनुसार ही पड़े। श्री जयप्रकाशजी के इस कथन से हम सर्वथा सहमत हैं कि आज के संकटकाल में भी 'ऊँचे' वर्गों के लोगों के रुख में पर्याप्त परिवर्तन नहीं हुआ है। देश की अधिकांश प्रजा अत्यधिक गरीब है और उसे युद्ध के बोझ से उसकी कमर न टूटे, यह ध्यान रखना हर दृष्टि से आवश्यक है। इसके लिए न सिर्फ यह जरूरी है कि युद्ध के लिए आवश्यक त्याग और बलिदान का भार अधिकतर उन पर पड़े जो उसे सहन कर सकते हैं, अर्थात् जो अपेक्षाकृत सक्षम हैं, बल्कि साथ-साथ ऐसी कोशिश जारी रहे कि आम लोगों की आर्थिक स्थिति उत्तरोत्तर मजबूत बने और प्रतिरोध की उनकी क्षमता बढ़ती जाय।

अहिंसक प्रतिकार की तैयारी

इस दृष्टि से, गाँव-गाँव को परिवार बनाना, याने परस्पर सुख-दुःख में हिस्सा लेने की भावना वहाँ पैदा करना, हरेक को काम मिले इसके लिए आवश्यक जमीन या उद्योग देने की योजना करना, गाँव-गाँव का आर्थिक आधार मजबूत हो इसके लिए वहाँ पूँजी का निर्माण करना, आंतरिक शांति कायम रखना इत्यादि बातें देश की रक्षा से सीधी संबंधित हैं और रक्षण योजना का आवश्यक अंग है, यह हमारे ध्यान में आना चाहिये। विनोबा बराबर कहते रहे हैं कि ग्रामदान, अर्थात् ऊपर की सब बातें गाँव-गाँव में संभव हो सकें इसके लिए आवश्यक परिस्थिति का निर्माण, एक "डिफेन्स मेजर" है, याने प्रतिरक्षा की ही योजना है। आज की परिस्थिति ने इसे स्पष्ट कर दिया है। गाँव-गाँव को मजबूत बनाना यह देश के रक्षण के लिए दीर्घकालीन नहीं, बल्कि तात्कालिक योजना है। इस कार्यक्रम की पूर्ति से एक शांतिमय और शोषणरहित समाज की नींव पड़ेगी यह इसका अतिरिक्त लाभ है। इस दृष्टि से जहाँ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं समेत सबके लिए यह कार्यक्रम देश की आज की माँग के अनुसार नैमित्तिक और तात्कालिक महत्त्व का कार्यक्रम है, वहाँ सर्वोदय के ध्येय में विश्वास रखने वालों के लिए यह दीर्घकालीन महत्त्व का नित्य-कार्य भी है।

जब इस प्रकार की समाज-व्यवस्था व्यापक और मजबूत हो जायगी तब अन्याय और आक्रमण का अहिंसक तरीके से मुकाबला करने के लिए आज की तरह हम अपने आपको और मुल्क को असहाय नहीं पायेंगे। इसलिए, हर बार जब देश के सामने अन्याय का मुकाबला करने के लिए सेना का उपयोग करने का प्रसंग आये, तब निराश होकर अपने आपको कोसने और विचलित होने देने के बजाय अगर हम तात्पर्यपूर्वक गाँव-गाँव को स्वाश्रयी बनाने, और वहाँ लोगों की शक्ति को जागृत करने के ग्रामस्वराज्य के हमारे काम में लगे रहें तो अहिंसक प्रतिकार की परिस्थिति भी हम ज्यादा जल्दी ला पायेंगे।

अहिंसक प्रतिकार के लिए इस प्रकार की समाज-व्यवस्था की और लोकशक्ति के विकास की जो अनिवार्य पूर्वतैयारी है वह जब तक हम पूरी नहीं कर पाते तब तक हर ऐसे मौके पर अपने को असहाय महसूस करना और उस पूर्वतैयारी के कामों को "दीर्घकालीन उपाय" मान कर छोड़ते जाना अपने आपको दुश्चक्र में फँसाना है। सैनिक प्रतिकार के लिए जिस तरह तैयारी आवश्यक है, उसी

[शेष पृष्ठ ११ पर]

बिहार में 'बीघा-कट्ठा अभियान'

वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी

ग्रामदान-यात्रा के क्रम में विनोबाजी का बिहार में दूसरी बार पदार्पण २५ दिसम्बर, १९६० को हुआ। विनोबाजी जब पहली बार बिहार आये थे, तो बिहार के विभिन्न राजनैतिक दलों, रचनात्मक संस्थाओं तथा नागरिकों ने ३२ लाख एकड़ जमीन भूदान द्वारा प्राप्त करने का संकल्प किया था, जिसमें से २२ लाख एकड़ ही प्राप्त हो सका था।

विनोबाजी ने २५ दिसम्बर को बिहार के पहले पड़ाव, दुर्गावती में ही पुराने संकल्प की याद दिलायी और उसकी पूर्ति के लिए १० लाख एकड़ जोत की जमीन प्राप्त करने को कहा। इसके लिए उन्होंने 'बीघे में कट्ठा' का मंत्र भी वहीं दुर्गावती में ही दिया।

विनोबाजी की यात्रा से बिहार में भूदान-आन्दोलन के लिए जो वातावरण बना, उससे लाभ उठा कर 'बीघे में कट्ठा' के आधार पर आन्दोलन चलाने के निमित्त १३ मार्च १९६१ को बिहार सर्वोदय-मंडल के तत्वावधान में एक सर्वदलीय सभा पटना नगर में बुलायी गयी। सभा में कॉंग्रेस, प्रजा-समाजवादी, साम्यवादी, झारखंड, जनसंघ आदि पक्षों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सभा की अध्यक्षता बिहार के मुख्यमंत्री पंडित विनोदानन्द झा ने की। सभा में श्री जयप्रकाश बाबू भी उपस्थित थे। सभी रचनात्मक संस्थाओं के लोग तो थे ही।

इस बैठक में प्रादेशिक स्तर पर ३० सदस्यों की एक सर्वपक्षीय भूप्राप्ति-समिति गठित की गयी। समिति को और भी सदस्य निर्वाचित करने का अधिकार दिया गया। बिहार सर्वोदय-मंडल के तत्कालीन संयोजक श्री श्यामसुन्दर प्रसाद समिति के संयोजक हुए। इस समिति की पहली बैठक ३० मार्च को बिहार सर्वोदय-मंडल के कार्यालय में हुई। बैठक में आगामी १ मई से 'बीघे में कट्ठा' के आधार पर एक प्रांतव्यापी अभियान चलाने का निर्णय हुआ। तदनुसार विभिन्न जिलों में श्री शंकरराव देव और श्री जयप्रकाश नारायण के दौरे हुए।

बिहार सर्वोदय मंडल की कार्यसमिति ने 'बीघा-कट्ठा' आन्दोलन को अपना मुख्य कार्यक्रम मान कर अपने सभी कार्यकर्ताओं को इस कार्य में लगाने का निर्देश दिया और प्रायः सब जिलों में अभियान शुरू हुआ। सभी जिलों में जिला-स्तर पर भूदान-प्राप्ति समितियों का गठन भी किया गया था। लेकिन सब जिलों में सर्वोदय-मंडल का गठन समान रूप से मजबूत नहीं होने के कारण कुछ ही दिनों के अनुभव के बाद यह सोचा गया कि कुछ चुने हुए जिलों में ही अधिकाधिक शक्ति लगायी जाय। तदनुसार संथाल परगना, पूर्णियाँ, सहर्सा, मुंगेर, गया, दरभंगा तथा मुजफ्फरपुर में विशेष शक्ति लगायी गयी। अन्य जिलों में भी स्थानीय शक्ति से जो कुछ सम्भव हो सकता था, किया गया।

विनोबाजी ने ३ दिसम्बर १९६१ तक १० लाख एकड़ भूमि इकट्ठा करने का लक्ष्यांक बिहार के सामने रखा था। ३ दिसम्बर श्री राजेन्द्र बाबू का जन्म-दिन है, इसीका ख्याल कर उन्होंने ऐसा कहा था। इस लक्ष्यांक की पूर्ति के लिए केवल बिहार के कार्यकर्ताओं की शक्ति पर्याप्त नहीं थी। इसलिए यह सोचा गया कि देश के अन्य प्रांतों के कार्यकर्ताओं की शक्ति भी 'बीघा-कट्ठा अभियान' में लगे। अतः अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ ने सभी प्रांतीय सर्वोदय-मंडलों से बिहार में 'बीघा-कट्ठा अभियान' के हेतु कार्यकर्ता भेजने के लिए निवेदन किया। संघ के निवेदन पर विभिन्न प्रांतों से लगभग ५० कार्यकर्ता सितम्बर '६१ के उत्तरार्ध में बिहार आये।

विभिन्न प्रांतों से कार्यकर्ताओं के आने का क्रम अभी चल ही रहा था कि अक्टूबर '६१ के प्रथम सप्ताह में बिहार के मुंगेर, भागलपुर, गया, पटना और पूर्णियाँ जिले में सर्वनाशी बाढ़ आयी। १९३४ के भूकम्प के बाद इतनी बड़ी दुर्घटना बिहार में दूसरी नहीं हुई थी। ऐसी स्थिति में 'बीघा-कट्ठा अभियान' को स्थगित करके बाढ़-पीड़ितों की सेवा में लगने का निर्णय बिहार सर्वोदय-मंडल की कार्यसमिति ने १० अक्टूबर '६१ की बैठक में किया। इस निर्णय के अनुसार अभियान में लगे हुए सभी कार्यकर्ताओं को बाढ़पीड़ित क्षेत्रों में सेवा-कार्य करने का निर्देश दिया गया और निर्देशानुसार बिहार के सभी सर्वोदय-कार्यकर्ता तथा विभिन्न प्रांतों से 'बीघा-कट्ठा अभियान' के निमित्त आये हुए कार्यकर्ता भी बाढ़-पीड़ितों की सेवा में आ लगे।

२५ अक्टूबर '६१ के बाद, जो जिले बाढ़ से क्षतिग्रस्त नहीं हुए थे, वहाँ 'बीघा-कट्ठा' प्राप्ति के प्रयास पुनः शुरू किये गये। यह कार्य १० नवम्बर '६१ तक जारी रहा। इस तिथि तक ७४१२ दाताओं द्वारा १,५०,०७० कट्ठा जमीन प्राप्त हुई। इसका विस्तृत ब्यौरा इस प्रकार है:—

क्रम	जिला	दाता	प्राप्त भूमि कट्ठे में
(१)	पटना	४६	६९८
(२)	गया	२००	६,३१०
(३)	शाहाबाद	४	४०२
(४)	सारण	३०९	५,४९४
(५)	चंपारण	६०	४३७
(६)	मुजफ्फरपुर	२४६	३,०६३
(७)	दरभंगा	९१०	६,५४९
(८)	मुंगेर	१६७	५,४१७
(९)	सहर्सा	८०३	१०,१८०
(१०)	पूर्णियाँ	२,१९०	५०,७४१
(११)	संथाल परगना	२,४१०	४३,९५७
(१२)	हजारीबाग	३६	१,२७६
(१३)	धनबाद	३१	८,६३९
(१४)	भागलपुर	—	७,१०७
	कुल	७४१२	१,५०,०७०

विनोबाजी के निर्देशानुसार बिहार सर्वोदय-मंडल की समिति ने 'बीघा-कट्ठा आंदोलन' की यह निष्पत्ति भारत के तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद की ७८ वीं वर्षगाँठ के अवसर पर ३ दिसम्बर '६१ को उन्हें समर्पित करने का निश्चय किया। इस तरह २ दिसम्बर को पटना से १०० शांति-सैनिकों का जत्था दिल्ली रवाना हुआ, जो ३ दिसम्बर को वहाँ पहुंचा। मार्ग में उत्तर प्रदेश के कुछ शांति-सैनिक आये तथा दूसरे प्रांतों के कुछ शांति-सैनिक जो यहाँ 'बीघा-कट्ठा अभियान' में लगे थे, शामिल हुए। इस तरह ३ दिसम्बर को दिल्ली में 'बीघा-कट्ठा' की यह निष्पत्ति देशरत्न डा० राजेन्द्र प्रसाद को समर्पित की गयी।

लेकिन भू-प्राप्ति का जो लक्ष्यांक था, वह पूरा नहीं हो सका। १० लाख एकड़ जमीन की प्राप्ति का लक्ष्य बिहार सर्वोदय-मंडल के सामने था। अतः इस पर विचार करने के लिए बिहार सर्वोदय-मंडल की कार्यसमिति की बैठक १६ फरवरी '६२ को पटना में हुई। इस बैठक में यह निर्णय हुआ कि १५ अप्रैल '६२ से १५ जून '६२ तक पुनः 'बीघा-कट्ठा अभियान' चलाया जाय। चुनाव के बाद अभियान की तैयारी शुरू कर दी गयी। विभिन्न जिलों में अभियान का संगठन करने के लिए जिला-संगठक और प्रत्येक जिला-संगठक की सहायता के लिए एक सहायक संगठक नियुक्त किये गये। विनोबाजी के सुझाव पर सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति ने तय किया था कि बिहार के 'बीघा-कट्ठा अभियान' में सारे देश के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का सहयोग प्राप्त किया जाय। इसके लिए सर्व-सेवा-संघ का वार्षिक अधिवेशन बिहार में ही करने का निश्चय किया गया था। उसके मुताबिक ९, १० और ११ अप्रैल १९६२ को सदाकत आश्रम, पटना में संघ का अधिवेशन हुआ। अधिवेशन में भाग लेने के लिए आये हुए कार्यकर्ताओं में से लगभग २०० कार्यकर्ता यहाँ 'बीघा-कट्ठा अभियान' में सहयोग देने के लिए रुक गये। १५ अप्रैल को अभियान शुरू कर दिया गया। सिंहभूमि जिले को छोड़ कर सब जिलों में अभियान अन्त तक चला। सिंहभूमि जिले में सर्वोदय-मंडल का कोई संगठन नहीं होने के कारण १ मई से वहाँ अभियान बन्द कर दिया गया।

एक महीने के अभियान के बाद सभी जिला संगठकों तथा अन्य प्रदेशों के कार्यकर्ताओं में से नियुक्त किये गये सहायक संगठकों की बैठक पिछले एक माह के अनुभवों के आदान प्रदान के लिए पटना में हुई। बैठक में यह तय किया गया कि अन्य प्रदेशों से आये हुए कार्यकर्ताओं की शक्ति कुछ ही जिलों में, जहाँ अधिक अनुकूलता है, केन्द्रित की जाय। तदनुसार पूर्णियाँ, सहर्सा और गया जिलों को छोड़ कर अन्य सभी जिलों से बाहर के कार्यकर्ताओं को हटा कर उन सबको संथाल परगना जिले में भेज दिया गया। पूर्णियाँ, गया और सहर्सा जिले में बाहर के कार्यकर्ता पूर्ववत् काम करते रहे।

अभियान १५ जून तक पूर्वनिश्चित योजना के अनुसार चलता रहा। २१ जून को संध्या में सदाकत आश्रम के प्रांगण में सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी के सभापतित्व में तथा संघ की प्रबन्ध समिति के सदस्यों की उपस्थिति में दो महीने के अभियान की निष्पत्ति डा० राजेन्द्र प्रसाद को समारोहपूर्वक समर्पित की गयी।

इस अभियान में कुल मिला कर लगभग ६०० कार्यकर्ताओं की शक्ति लगी। इनमें से लगभग २०० अन्य प्रदेशों के थे, २०० सर्वोदय-मंडलों के और शेष २०० अन्य रचनात्मक संस्थाओं के थे। अन्य रचनात्मक संस्थाओं में से बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, गांधी-स्मारक-निधि, बिहार राज्य पंचायत परिषद्, बिहार हरिजन सेवक संघ, जिला खादी-ग्रामोद्योग संघ, मुंगेर; संथाल परगना ग्रामोद्योग समिति, दुमका; खादी-ग्रामोद्योग विभाग, सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा; खादी-ग्रामोद्योग समिति, गया, श्रमभारती खादीग्राम, सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा; सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा तथा कुछ अन्य संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने प्रमुख रूप से अभियान में भाग लिया। सर्व-सेवा संघ के अधिवेशन तथा 'बीघा-कट्ठा अभियान' शिविर के लिए आवश्यक व्यवस्था कार्य में बिहार विद्यापीठ के व्यवस्थापक श्री मथुनी सिंह तथा विद्यापीठ के कार्यकर्ताओं का भरपूर सहयोग मिला।

राजनीतिक दलों के नेताओं में बिहार के मुख्य मंत्री पं० विनोदानन्द झा, बिहार सरकार के उपमंत्री श्री कमलदेव नारायण सिंह, श्री लहटन सिंह त्यागी, लोकनिर्माण मंत्री श्री भोला पासवान शास्त्री तथा प्रजा-समाजवादी दल, बिहार के मंत्री श्री कर्पूरी ठाकुर का सहयोग मिला।

१५ अप्रैल से १५ जून '६० तक बीघा-कट्ठा अभियान की फलश्रुति

क्रमांक	जिला	प्राप्त भूमि (कट्ठे में)	दाता-संख्या	वितरित भूमि (कट्ठे में)	आदाता संख्या
(१)	पटना	४४२	४१	४४२	४०
(२)	गया	५,५८८	५४८	३,६४४	३३५
(३)	शाहाबाद	५,१७७	६१	४,६३९	१४६
(४)	मुजफ्फरपुर	३,६११	३८६	२,२१३	३१८
(५)	दरभंगा	३,१६७	४५२	२,५०१	४१७
(६)	सारण	१,४०१	१००	९४२	८८
(७)	चंपारण	१,९९७	२८०	१,४६६	३१३
(८)	भागलपुर	१,५६९	१२९	१,२९१	९५
(९)	मुंगेर	१०,००४	२१०	७,१४६	२६४
(१०)	पूर्णियाँ	१७,७५०	१,३४८	२७,०४६	१,१६०
(११)	संथालपरगना	५५,८०८	३,६७१	४३,३१२	३,३६०
(१२)	सहर्षा	६,५९५	३६०	४,३९५	३०८
(१३)	राँची	३,८७२	१२	५७६	२०
(१४)	हजारीबाग	१,४२४	८६	१,४१४	८७
(१५)	पलामू	२,८३०	१६५	२,८३०	२०१
(१६)	धनबाद	१,६२२	६१	१,०१५	४३
	कुल	१,३२,४५७	८,००७	१,०५,३१२	७,३५५

सिंहभूमि जिले में १ मई से अभियान बंद कर दिया गया। कोई निष्पत्ति नहीं है।

संथाल परगना जिला जिला पंचायत परिषद् के पदाधिकारियों तथा कार्यकर्ताओं का भरपूर सहयोग अभियान में प्राप्त हुआ। इस जिले के उच्च सरकारी अधिकारियों का भी पर्याप्त सहयोग प्राप्त हुआ। जिले के डिप्टी कमिश्नर, एडिशनल कलेक्टर, जिला विकास-अधिकारी, विभिन्न प्रखण्ड विकास पदाधिकारियों और पंचायत अधिकारियों का पूर्ण सहयोग अभियान के काम में मिला। ग्रामपंचायतों के मुखियों, सरपंचों, ग्रामसेवकों तथा कर्मचारियों का हर जगह भूदान प्राप्ति और वितरण के काम में सहयोग प्राप्त हुआ।

इस अभियान में सर्वोदय-आंदोलन के कुछ वरिष्ठ लोगों ने भाग लेकर कार्यकर्ताओं का यथोचित मार्गदर्शन किया। महाराष्ट्र के वयोवृद्ध नेता श्री अप्पा साहब पटवर्धन, श्री सद्रे गुरुजी, श्री वल्लभस्वामी, श्री पूर्णचन्द्र जैन, श्री कृष्णराज मेहता, श्री दामोदरदास मूंदड़ा, डा० द्वारिकादास जोशी, श्री मनमोहन चौधरी, श्री शेंदुर्णीकर वकील, प्रो० ठाकुरदास बंग, श्री जवाहिरलाल जैन, श्री सुशीला अग्रवाल और श्री निर्मला देशपांडे ने अभियान का संयोजन करने, कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन करने तथा प्रत्यक्ष भूदान मांगने के काम में अपना अमूल्य समय दिया। अन्य लोगों का भी सहयोग प्राप्त हुआ।

श्री जयप्रकाश नारायण ने पूरे दो माह का समय अभियान को देने का विचार किया था। लेकिन अचानक उत्तर रोडेशिया के स्वातन्त्र्य आंदोलन में विश्वशांति-सेना की ओर से सहायता पहुँचाने के निमित्त उन्हें अफ्रीका चला जाना पड़ा। केवल शाहाबाद जिले के मनुआ क्षेत्र में उनका एक दिन का समय अभियान के काम के सिलसिले में मिल सका।

अभियान में सहयोग देने के लिए मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली, पंजाब, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मैसूर, मद्रास, उत्कल और बंगाल के कुल २१२ कार्यकर्ता आये थे। उनमें शांति-सेना विद्यालय, इन्दौर की ३५ बहनें थीं। इनके अलावा गुजरात के वेडछी ग्रामराज्य विद्यालय के करीब ४० छात्र और शिक्षक भी अभियान के निमित्त आये। लेकिन कुछ ही दिन पूर्णियाँ जिले काम करके लौट गये। अन्य प्रदेशों के कार्यकर्ताओं में से लगभग ६० कार्यकर्ता १५ मई के बाद से ही अपने प्रदेशों को लौट गये थे। शेष कार्यकर्ताओं में से भी लगभग ४० कार्यकर्ता अभियान समाप्त होने के पूर्व चले गये। बाकी लगभग १०० कार्यकर्ता १५ जून तक क्षेत्र में डटे रहे।

इस अभियान में जहाँ-जहाँ सघन काम हुए, वहाँ अधिक निष्पत्ति आयी। १५ मई के बाद विनोबाजी के सुझाव के अनुसार कुछ जिलों में अधिक शक्ति लगायी गयी। खासकर संथाल परगना जिले में शक्ति केन्द्रित की गयी, जिसका परिणाम अच्छा आया। पूर्णियाँ जिले में भी काम व्यवस्थित ढंग से हुआ। फलस्वरूप अच्छी निष्पत्ति आयी। भूदान-प्राप्ति की दृष्टि से संथाल परगना और वितरण की दृष्टि पूर्णियाँ सब जिलों से आगे रहा। पूर्णियाँ जिले में प्राप्त भूमि में ९८ प्रतिशत का वितरण तत्काल हो गया।

इस अभियान का एक महत्त्वपूर्ण पहलू यह है कि भूदान प्राप्ति के साथ-साथ वितरण का काम भी होता गया। जितनी भूमि प्राप्त हुई उसमें से लगभग ८० प्रतिशत भूमि तत्काल वितरित हो गयी।

इन दो महीनों के अभियान की निष्पत्ति आँकड़ों में बहुत कम है। वस्तुतः अभियान में राजनीतिक पार्टियों से जो अपेक्षा थी, वह पूरी नहीं हुई। उनका बहुत थोड़ा सहयोग मिल पाया। रचनात्मक संस्थाओं का भी अपेक्षित सहयोग नहीं मिला, फिर भी इस अभियान से आगे के काम के लिए एक अच्छी भूमिका तैयार हुई।

शांति-सेना का घोषणा-पत्र

शांति-सेना को व्यापक बनाने के लिए उसके निष्ठापत्र को सरल बनाने की कोशिश चल रही है। सर्व-सेवा-संघ के पटना-अधिवेशन में इस संबंध में चर्चा की गयी और तदनुसार कुछ परिवर्तन किया गया था। आगामी संघ-अधिवेशन में विचारार्थ शांति-सेना का प्रस्तावित निष्ठापत्र, पटना में स्वीकृत निष्ठापत्र के साथ नीचे दिया जा रहा है।

पटना-अधिवेशन में स्वीकृत

(१) सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, संयम और शरीर-श्रम में मेरी दृढ़ निष्ठा है। तदनुसार जीवन बिताने की मैं कोशिश करूँगा।

(२) लोक-नीति की स्थापना से ही दुनिया में सच्ची स्वतन्त्रता हो सकेगी, ऐसा मेरा विश्वास है। इसलिए मैं किसी प्रकार की दलीय राजनीति (पार्टी-पालीटिक्स) में या सत्ता की राजनीति (पावर-पालीटिक्स) में भाग नहीं लूँगा। भिन्न भिन्न राजनैतिक पक्षों के व्यक्तियों का सहयोग लेने की मेरी वृत्ति और प्रयत्न रहेगा।

(३) जाति, वर्ग या पंथ के किसी प्रकार के अनुचित भेदों को स्थान नहीं दूँगा।

(४) मैं अपने कार्य-क्षेत्र की शांति-रक्षा की जिम्मेदारी उठाऊँगा तथा शांति-स्थापना के कार्य में अपने प्राण समर्पण करने को भी तैयार रहूँगा।

प्रस्तावित शांति-सेना का घोषणा तथा प्रतिज्ञा-पत्र

भारत का १८ साल से बड़ी उम्र का कोई भी नागरिक जो नीचे लिखी घोषणा व प्रतिज्ञा करे, वह शांति-सैनिक बन सकेगा :—

मैं घोषित करता हूँ और विश्वास रखता हूँ कि—

(१) सत्य और अहिंसा पर आधारित नया समाज बनना चाहिए।

(२) समाज में होने वाले सारे संघर्ष, खासकर इस अणु-युग में अहिंसक साधनों से हल हो सकते हैं और होने चाहिए।

(३) मानव-मात्र में मूलभूत एकता है।

(४) युद्ध मानवता के खिलाफ अपराध है और वह अहिंसक जीवन-पद्धति का विपर्यय है, इसलिए मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि—

(१) किसी भी प्रकार की हिंसा नहीं करूँगा।

(२) शांति के लिए काम करूँगा और आवश्यकता पड़ने पर शांति के लिए अपने प्राण समर्पण करने को तैयार रहूँगा।

(३) जाति, सम्प्रदाय, रंग और पक्ष के भेदों से ऊपर उठने की पूरी-पूरी कोशिश करूँगा, क्योंकि ये भेद मनुष्य की एकता को मानने से इन्कार करते हैं।

(४) युद्ध में शरीक नहीं होऊँगा और उसका अपनी सारी शक्ति से विरोध करूँगा।

(५) सुरक्षा के अहिंसक साधनों तथा वातावरण को बनाने के लिए सहायता करूँगा।

(६) नियमित रूप से अपना कुछ समय अपने मानव-बंधुओं की सेवा में लगाऊँगा।

(७) शांति-सेना के अनुशासन को मानूँगा।

—हस्ताक्षर

—नाम-पता

अणुयुद्ध के विरोध में

"अवर जनरेशन अगेन्स्ट न्यूक्लियर वार"

त्रैमासिक अंग्रेजी पत्रिका — वार्षिक चन्दा ६ रुपये

प्राप्ति-स्थान : ९११ एस० टी० जेम्स स्ट्रीट, मॉन्ट्रियल, कनाडा

भारतीय वितरक : डा० ओमप्रकाश, मार्फत—गांधी शांति प्रतिष्ठान, राजघाट, नयी दिल्ली

उपर्युक्त पत्रिका अणुयुद्ध विरोधी परिवार के लिए अपेक्षाकृत नयी है और अणुयुद्ध विरोधी अभियान का 'सम्मिलित विश्वविद्यालयीन' प्रकाशन है। विश्वशांति के सिद्धांत, खोज और उसकी समस्याओं का विश्लेषण तथा युद्ध और अन्य मानवीय संघर्षों का अन्त करने के लिए वैकल्पिक सुझाव पेश करना इस पत्रिका का उद्देश्य है। कुछ उत्साही नौजवानों ने अपने-अपने सीमित साधनों को एकत्रित कर, बढ़ते हुए 'अणुयुद्ध के व्यापार' के वैज्ञानिक तथ्य और विश्वशान्ति के समग्र प्रश्न को दुनिया के सामने रखने का प्रयत्न किया है।

अब तक पत्रिका के चार अंक प्रकाशित हो चुके हैं और पत्रिका ने अच्छी ख्याति अर्जित की है। अभी प्रकाशित चौथे अंक में प्रसिद्ध लेखक और वैज्ञानिक सी० राइट मिल्स का युद्ध और शांति के बारे में अच्छा लेख है, आक्रा असेम्बली और कनाडा में आयोजित 'वोयस आफ वीमेन' (स्त्रियों की आवाज) के सम्मेलन की अधिकृत जानकारी है। अक्सर इन सम्मेलनों के बारे में जानने की इच्छा होती है, किंतु जानकारी नहीं मिल पाती। वस्तुतः यह पत्रिका साधारण नागरिक और विश्वशांति के बारे में शोध करने वाले गम्भीर विद्यार्थी, दोनों के लिए है। समान रूप से उपयोगी साबित होगी। खास तौर से विद्यार्थी और नौजवानों को यह पत्रिका अवश्य पढ़नी चाहिये।

—देवी प्रसाद

युद्ध और अहिंसा का विकल्प खोजने की आवश्यकता

सर्व सेवा संघ के मंत्री, श्री पूर्णचन्द्र जैन का निवेदन

गत चार-छः महीने के समय में, अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय रंगमंच पर घटना-चक्र अबाध गति से चलता रहा है। घटना-चक्र चलता ही रहता है। मेरा अभिप्राय यह है कि आज के आधुनिक युग में इस घटना-चक्र में गति की तीव्रता और दुनिया के कोने-कोने को छूने, प्रभावित करने की क्षमता बढ़ गयी है। भारत जैसा लंबी सरहदवाला देश तो उससे अछूता, रह ही नहीं सकता।

गये अक्टूबर का एक पखवारा बीतते, न बीतते, चीन और हमारे देश के बीच जो अघोषित युद्ध शुरू हो गया उसने प्रत्यक्षतः भारत को और अप्रत्यक्ष रूप से दुनिया के छोटे-बड़े देशों को विशेष परिस्थिति तथा विचार-मंथन की विशेष भूमिका में डाल दिया है।

चीन-भारत संघर्ष : एक ज्वलंत चुनौती

अहिंसा की शक्ति में अटूट विश्वास करने वाले और अहिंसक समाज की स्थापना के प्रयत्न में जीवन होम देने वाले गांधी तथा जीवन का प्रत्येक क्षण लगाये हुए विनोबा के देश को एक दिन गोवा के सिलसिले में सशस्त्र पुलिस-कार्रवाई करनी पड़ी और आज चीन-भारत सीमा-विवाद के कारण युद्ध में उलझना पड़ा, यह गांधी-अनुयायी राष्ट्रीय सरकार के लिए मजबूरी की, किन्तु स्वाभाविकसी परंपरागत बात हो सकती है, लेकिन सर्वोदय समाज-रचना के लिए समर्पित सिपाहियों और युद्ध व हिंसा का मानव समाज में कोई स्थान न मानने वाले शांति-सैनिकों के लिए तो एक ज्वलंत चुनौती ही है।

मंजूर करना होगा कि गोवा की घटना की भाँति आज भी हम सोये या सोच में लगे हुए ही पाये गये। हिंसा या युद्ध का विकल्प हम देश को नहीं दे सके। उसमें देश न उलझे इसके लिए अभी तक हम न अपना कोई विशेष कार्यक्रम प्रस्तुत कर सके और न कोई बहादुरी से नगण्य-सा भी अहिंसक बलिदान का मार्ग सामने ला सके हैं। सोचने की बात है कि आक्रमण या अन्याय जिसे हमने माना उसके लिए हजारों हथियारबंद सिपाही मरने जायँ, उनकी एवज बिना हथियार, लेकिन वैसे ही बहादुर शांति-सैनिक अपने को होम देने के लिए जायँ और हथियार कोई नहीं उठायेगा इस आवाज को बुलंद करते हुए उपवास, अनशन करते मर जायँ तो दुनिया में हमारा बल बढ़ेगा व नैतिक समर्थन अधिक मिलेगा या नहीं। प्रश्न है कि यह कौन करे, कौन इसका नेतृत्व दे!

यह कहा जा सकता है कि युद्ध और हिंसा का विकल्प किसी 'फार्मूले' के तौर पर नहीं, बल्कि समाज के विकास में से अपने आप निकलेगा। गाँव समाज सामाजिक संबंधों और मूल्यों के बारे में जड़-मूल का परिवर्तन जब करेगा, कोई भी भूखा-बेरोजगार-बीमार समाज में न रहे, यह कब्जा जब कर समाज का वैसा संकल्प बनेगा, दण्ड और शासननिरपेक्ष होकर स्व-शासन या अनुशासन पर यह समाज जब चलेगा, तो उसकी जैसी स्वाश्रयी, स्वयं-तुष्ट, विकेंद्रित सत्ता-संपन्न सक्षम इकाई बनेगी, जो अपने आंतरिक और राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के पारस्परिक विवादों को बिना युद्ध और हिंसा का आश्रय लिये हल करने में सफल होगी।

यह विचारसरणी और धारणा सुन्दर है। दो महायुद्ध, सर्वसंहारक प्रक्षेपास्त्र और विज्ञान के प्रयोग, आये दिन के राष्ट्र-राष्ट्र, समाज-समाज, वर्ग-वर्ग, धर्म-धर्म के बीच होने वाले छीन झपट व संघर्ष वगैरह से त्रस्त मानव के लिए यह बहुत आकर्षक और आश्वस्त करने वाली भी है। इसमें मानवीय मूल्यों का उत्तरोत्तर विकास, प्रकाश और अंतिम विजय-ध्वज भी दिखाई देता है। लेकिन कई बार मंजिल कुछ ऐसी दुरूह हो जाती है, और प्रत्यक्ष अनुभव व परिणाम ऐसे सामने आते हैं कि कृति कुंठित हो जाती है, श्रद्धा डिगसी जाती है और विचार को फिर मंथन आ घेरता है।

दवा आने तक रोगी मर न जाय

भूदान-मूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रांति का लक्ष्य व कार्यक्रम उस विचारसरणी या धारणा का ही एक रूप है। वह अहिंसा-शक्ति पर आधारित है तो उसका आधेय भी है। अहिंसा-शक्ति का विकास, और समाज में भौतिक के साथ आध्यात्मिक मूल्यों की उत्तरोत्तर स्थापना के साथ उसका अर्थात् अहिंसा-शक्ति का नवनिर्माण, ये दोनों अन्योन्याश्रित हैं। लेकिन समाज और व्यक्तिगत जीवन में अचानक असाधारण संकट ऐसे आते हैं कि जिनमें अहिंसा-शक्ति सर्वथा कुंठित दिखाई दे और हम उस समय मूक दर्शक मात्र अपने को पायें यह अजीब विडम्बना-सी दिखती है। ठीक है कि ऐसे संकट में भी व्यग्र न होने और ध्येय में निष्ठा रख एकाग्र कार्यरत रहने की धीरता से ही नयी परिस्थितियाँ बनती और सुनिश्चित स्थायी परिणाम सामने आते हैं। लेकिन संकट के विकराल, नाशकारी और सर्व-संहारक रूप के बारे में हमें असावधान नहीं होना चाहिए। उस संबंधी अज्ञान तो खतरनाक ही होगा। ऐसा न हो कि हम जिस रोगी के लिए दवा की खोज में हैं उस रोगी की तात्कालिक स्थितियों के बारे में चैतन्य न होने के कारण उसे समाप्त होने देने के निमित्त हम बनें तथा रोग की अचूक दवा जब तक मिले वह रोगी समाप्त हो जाय और वह कारगर दवा एक बार तो बिलकुल बेकार सिद्ध हो जाय!

आज का ज्वलंत प्रश्न

इसलिए आज का तुरंत का ज्वलंत विचारणीय प्रश्न यह है कि हमारे कार्यक्रम को आज की विशेष परिस्थिति में हम क्या नया मोड़ दें कि अन्याय के प्रभावपूर्ण प्रतिरोध का, जय-जगत् के संदर्भ में भी राष्ट्र-समाज की सुरक्षा का, और मानव का मानव के प्रति विद्वेष, हिंसा, तथा संहार का जो व्यवहार अकस्मात् हो जाता है या आज हो गया है, उससे विमुख करने का, कारगर निमित्त वह कार्यक्रम बने।

मैं समझता हूँ कि विशेष परिस्थिति के कारण इस बार के संघ-अधिवेशन और सम्मेलन का मुख्य चिंतन और कार्य जो संकट देश पर आया है उसके कारगर मुकाबले के लिए देश को निर्भय और निर्वैर भाव से सक्षम, समुद्यत और सक्रिय बनाने का है।

इस संबंधी कार्यक्रम दो पैमानों पर स्वाभाविक चलाना होगा। जहाँ संघर्ष प्रत्यक्ष निकटतम है उस अर्थात् सीमावर्ती या सीमा के निकट के क्षेत्रों की दृष्टि से तथा दूसरे सारे देश की दृष्टि से, यह कार्य आत्मविश्वास बढ़ाने, लोकमानस को दृढ़ करने और लोक-शक्ति को जाग्रत, संगठित और सक्रिय करने का है।

युद्ध-स्तर पर काम हो

हमारा कार्यक्रम राष्ट्रीय सुरक्षा का ही कार्यक्रम है, यह प्रत्यक्ष सिद्ध करने की दृष्टि से आज भी हम युद्ध-स्तर की तरह काम में जुट नहीं पड़ेंगे तो अपने आपको अयोग्य और अकर्मण्य तथा थोथे आदर्शवादी सिद्ध करेंगे।

गाँव-गाँव में आत्मविश्वास जगाना कि अन्याय के सामने झुकेंगे नहीं और अन्यायी सिर पर आ मंडरायेगा तब भी घुटने नहीं टेकेंगे या भागेंगे नहीं, बल्कि उसे भगाने में जान तक दे देंगे, अपवाद और आतंक और भय को कहीं फैलने नहीं देंगे, गाँव समाज को परिवार की तरह परस्पर स्नेहशील, सहकारी सहायक और स्वाश्रयी बनायेंगे, ताकि कोई बेकार न रहे और रोजमर्रा की चीजों के लिए बाहर या दूर पर निर्भरता अधिक न रहे, स्वच्छता रहेगी और बीमारियों की रोकथाम होगी, ताकि शारीरिक निर्बलता न आ जाये, यह आत्मविश्वास व बलिदान, निर्भयता, स्वावलंबन और शक्ति-संचय व संवर्द्धन का चतुर्विध कार्यक्रम मुख्यतः आज रहना चाहिए। इस विषय में विचार-विमर्श होकर संघ-अधिवेशन को देश के सम्मुख ठोस कार्यक्रम रखना है।

राष्ट्र में एकता

राष्ट्रीय एकता आज की मुख्य आवश्यकता है। भावात्मक एकता का अभियान पिछले समय में चला। सर्व-सेवा-संघ का उसमें पूरा योग रहा। लेकिन कुछ जल्दी में यह काम उठाया गया, इसलिए बहुत सुनियोजित रूप से नहीं हो सका। देश भर में कार्य के महत्त्व की दृष्टि से जितनी शक्ति लगनी चाहिए वह लगी नहीं दिखी। यह कार्य वस्तुतः कुछ अवधि-विशेष का या प्रदर्शन-रूप से किये जाने का नहीं है। यह सतत चलना चाहिए और किसी राष्ट्रीय त्योहार या विशेष अवसर पर सघन रूप से यह क्रिया जाना चाहिए। इस समय एकता की बहुत ही आवश्यकता है। आज सावधानी की यही जरूरत है कि केवल संकुचित राष्ट्रीयता के नाम पर एकता कायम करने से हम संतोष न मानें। संकट की परिस्थिति टलने के बाद भी राष्ट्र में एकता रहे इसके लिए भाषा, जाति, धर्म और वर्ग के भेदों से ऊपर उठने का बराबर प्रयास होना चाहिए। आये हुए संकट से सबक लेकर जड़ की ही ज्योत्स्ना करने वाले इस रोग से हम मुक्ति पायेंगे तो बुरे वक्त से भी बड़ा काम कर लेने की बात होगी।

साधनों की शुद्धि बनाम शराबबंदी

समाज के रोगों में भेदभाव व फूट के अलावा एक रोग हम अपनी उन्नति, अपना विकास किन साधनों से करते हैं, उनकी शुद्धि-अशुद्धि का है। वस्तुतः हम जब मानते हैं कि गलत साधन से अच्छा लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकता और अकस्मात् प्राप्त हो जाय तो टिक नहीं सकता, तब हमें हमारी 'समृद्धि, हमारे विकास,' वगैरह के लिए आमदनी के वे स्रोत तो जल्दी से जल्दी छोड़ने ही चाहिए जो हम अनैतिक और अनुचित मानते हैं। राज्य की शराब की आमदनी ऐसी ही है। शराबबंदी हमने अपना लक्ष्य व पवित्र कार्य स्वीकार किया है। संविधान में गर्व

से उसे दोहराया है। सब देशवासी, यहाँ तक कि शराब पीनेवाला भी, शराब को बुरा बताता है और समाज से उसे हटाना चाहता है। शराबबन्दी को लेकर आज अखिल भारतीय स्तर पर और देश में जगह-जगह आवाज उठायी जा रही है, आंदोलन किये जा रहे हैं। उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, मध्यप्रदेश में सर्वोदय-संगठनों और सर्वोदय प्रेमियों ने सत्याग्रह के, लोक-शिक्षण के व अन्य कार्यक्रम इस संबंध में बनाये तथा साधन, शक्ति, परिस्थिति के अनुसार उस सबको कार्यान्वित करने के लिए वे कृत-संकल्प हैं। देश पर आयी असाधारण स्थिति को देख कर उस कार्यक्रम का सीधी कार्रवाई से संबंधित अंग आज जानबूझ कर स्थगित किया गया है। लेकिन इस असाधारण संकट में शायद ज्यादा जरूरी है कि नागरिक की ताकत बढ़ाने वाली, उसे बेकार करने वाली व उसे अनैतिक आचरण की ओर ढकेलने वाली शराब जैसी चीज का उत्पादन तुरन्त रोका जाय और दवा या अन्य रूप से उसके अनिवार्य व्यवहार को सख्ती से नियंत्रित किया जाय। राष्ट्र की सरकार को इस दृष्टि से सोचना और शराब को समाज से बाहर निकाल फेंकने की योजना आज ही करनी चाहिए।

दो अन्य महत्त्व के मुद्दे

फिर भी, दो एक बातों का उल्लेख मैं यहाँ करना चाहता हूँ। इनके बारे में काफी समय से हम लोग विचार व चर्चा करते रहे हैं। काफी तीव्रता हमने इनके संबंध में अनुभव की और इनके प्रसंगों पर काफी गरमी हममें आयी है। लेकिन तीव्रता अनुभव करने और गरमी लाने का परिणाम कुछ झटके के साथ नये निर्णयों पर पहुँचने और अधिक स्पष्टता व गंभीरता से काम करने की वृत्ति जागने का होना चाहिए, वह नहीं हुआ है। इसलिए मैं यहाँ उन एक-दो बातों को छूना चाहता हूँ, क्योंकि वैसे विषयों में स्पष्ट होना विशेष परिस्थिति के बावजूद मैं जरूरी मानता हूँ। बल्कि वह स्पष्टता नहीं होगी, तो मनों की निकटता शायद नहीं बढ़ेगी और उसके बगैर जिसे हम संकटकालीन स्थिति में असाधारण तत्परता, संलग्नता व एकसूत्रता से काम करने की बात कहते हैं वह बात भी न पैदा होगी, न बनेगी और न चलेगी।

ये दो बातें हैं—(१) खादी, हरिजन-सेवा, नयी तालीम आदि जो रचनात्मक या निर्माण आदि की प्रवृत्तियाँ हैं, उनके बारे में हमारी दृष्टि स्पष्ट हो और

(२) हमारे संगठन के स्वरूप, उसकी एकसूत्रता, लोकशक्ति के आधार पर उसका बल-वर्द्धन तथा सच्ची लोकशाही लाने वाली उसकी सक्रियता के संबंध में हमारे विचार और कार्यक्रम के स्पष्ट होने की आवश्यकता।

खादी आदि प्रवृत्तियों का आर्थिक आधार

आज युद्धकालीन या संकटकालीन स्थिति के नाम पर ही रचनात्मक या निर्माणकारी कही जानेवाली प्रवृत्तियों को फैलाने और बढ़ाने व उस तरह ग्राम-समाज को स्वाश्रयी बनाने की आवश्यकता सरकार वगैरह द्वारा एक ढंग से और हम लोगों के द्वारा दूसरे ढंग से मानी जा सकती है। साधारण समय में हम विचार करते रहे हैं और आज भी उस पर विचार करके स्पष्ट होने की आवश्यकता को हमें जरूर अनुभव करना चाहिए कि ये प्रवृत्तियाँ अमुक राजकीय या ऐसी अन्य सहायता, सहयोग से कितनी हमारे लक्ष्य को आगे बढ़ाने में मददगार होती हैं और कितनी हमारी शक्ति को अवरुद्ध करती या तो हमें लक्ष्य से पीछे ढकेलती हैं। चर्चा होकर हमारा इस संबंधी बुद्धिभेद व विचारभेद दूर होना चाहिए। कार्यक्रम की तफसील में मतभेद रहे, लेकिन बुनियादी बातों में ऐसे भेद का अधिक बना रहना अवांछनीय, अश्रेयस्कर और अहित कर ही है कि जिस के बल पर हम आपस में एक-दूसरे को क्रांति व प्रतिक्रांति के खेमों के सिपाही बताने को उतारू हो जायँ। कभी-कभी इन प्रवृत्तियों और कार्यक्रमों के बारे में हममें से कुछ ऐसा अनुभव करने लगते हैं कि हम सर्वथा भिन्न या तो विरोधी विचारधारा को प्रश्रय दे रहे हैं। अवश्य ही आज संकटकालीन स्थिति भी इस प्रकार के तीव्र विचारभेद को जल्दी-से-जल्दी दूर करने की अनिवार्यता व आवश्यकता को कम नहीं करती। बल्कि यह कहना भी अनुचित नहीं होगा कि यह विचारभेद खत्म करने की आज और अधिक आवश्यकता है ताकि आज की स्थिति में जिस कार्य को "युद्ध स्तर" पर हम करना चाहते हैं उसे वास्तव में उस प्रकार से एक-जुट सम्मिलित शक्ति बन कर हम कर सकें।

संगठन का स्वरूप

दूसरी वैसी ही महत्त्व की और आवश्यक बात संगठन संबंधी हमारी दृष्टि की स्पष्टता और उसके अनुसार उसे नया स्वरूप, नयी प्रेरणा और नये प्राण देने की है। संगठन का अहिंसक रीति से सफल संयोजन-संचालन अपने आप में एक कसौटी है। व्यक्ति की स्वयंप्रेरणा और उसका अभिक्रम सजीव रहे, वह अपनी जिम्मेवारी स्वतः निभाये, बिना किसी नियम व बहुसंख्या के बल या दण्ड आदि के सबका सहकार चले और सब एकसूत्र में अपने को बधा मान गौरव समझें, यह सर्व-सेवा-संघ की प्राथमिक संगठन इकाई से जिला, प्रदेश व अखिल भारतीय संगठन इकाई तक में चरितार्थ होना चाहिए। पूरा समय देने वाले और अल्प समय देने वाले, वेतन लेने वाले या वेतन न लेने वाले, लोकसेवक व शांतिसैनिक किसी बड़ी या छोटी समिति के सदस्य या जो ऐसे कहीं सदस्य नहीं, उन सबके बीच छोटे-बड़े, ऊँचे-नीचे की भावना न बढ़े और प्रेम व सहकार रहे यह सफल प्रयोग संघ जैसी अहिंसक समाज स्थापना के स्वप्न को साकार करने में लगी संस्था का सीधे प्रयोग का विषय है। अहिंसक समाज की स्थापना का कार्य और कुछ नियम व संख्या-बल पर बना संगठन, यह परस्पर विरोधी विचार-शृङ्खला है ऐसा हम मानते हों तो संगठन का सम्मानपूर्ण विसर्जन हमें साहसपूर्वक करना चाहिए। व्यक्तियों संबंधी या व्यावहारिक कठिनाइयों के कारण यह स्थिति मानी जाय तो उनके निराकरण में खुले दिल से हम लगें, संगठन के स्वरूप में परिवर्तन आवश्यक हो तो वह करें। लेकिन मन में असमाधान रहे और स्थिति बिगड़ते जाने के साक्षी होते हुए भी उस सबके बारे में कुछ न किया जाय यह सारे हमारे काम के लिए हानिकर, परस्पर के संबंधों के लिए अश्रेयस्कर और एक तरह वस्तुस्थिति व सच्चाई से दूर रहने का धब्बा हम पर लाने वाला है। इसलिए लक्ष्य के अनुसार नीति व कार्यक्रम का निर्धारण तथा उसी लक्ष्य व नीति के अनुसार संगठन के अधिकतम विकेंद्रित, परस्पर सहकारी या अन्य स्वरूप को खड़ा करने के बारे में हमें गंभीरता से सोचना और निर्णय पर पहुँचना चाहिए।

आर्थिक संयोजना

संगठन के स्वरूप से जुड़ा हुआ और उतना ही महत्त्व का विषय संगठन की तथा कार्यकर्ता साथियों के योग-क्षेम की आर्थिक-संयोजना का भी है। आधारभूत होते हुए भी इस विषय की ओर संभवतः सबसे कम ध्यान दिया जाता है। यह भी एक बुनियादी सवाल है और इसका हल होना, न होना, संस्था, कार्यकर्ता व आंदोलन के जीवन मरण से संबंधित है, यह जिम्मेवारी से अनुभव किये जाने की जरूरत है। कार्यक्रम निर्धारण और उसकी संयोजना में प्राथमिक इकाई का सक्रिय होना जैसे अभीष्ट है वैसे ही आर्थिक आधार भी प्राथमिक इकाई को ही बनना चाहिए। प्राथमिक व जिला सर्वोदय-मंडल के स्तर पर अर्थ-संग्रह का कार्यक्रम भी ऐसा होना चाहिए कि उनके अलावा प्रदेश व देश के स्तर का काम उसी संग्रह के हिस्सेदारी से चले। यह तभी हो सकता है जब कि क्षेत्रीय व अखिल भारतीय स्तर के सभी कार्यकर्ताओं का चिंतन इस दृष्टिकोण से चले और अर्थ-संग्रह का, चाहे वह सर्वोदय-पात्र, सूतांजलि का हो या सूत्रदान व विशिष्ट दान का अथवा अन्य सहायता-संग्रह का, उस आधार पर कार्यक्रम बने।

देश से बाहर के संबंध और काम

विश्व-स्तर पर हम क्या कुछ कर पा रहे हैं, उसे कितना प्रभावित हम कर सकते हैं या कर सकेंगे, इस बारे में कहना आज की विशेष परिस्थिति की चुनौती में अपने आपको कुछ ऊँचे सिर से खड़े रहने की स्थिति में न पाकर, हमारे लिए थोड़ा संकोच का विषय हो सकता है, विवशता या तो वह है ही। देश में सेना का होना, आये दिन अशांति के विस्फोट और उसमें नागरिकों व पुलिस द्वारा हिंसा के साधनों के छिपे या खुले उपयोग किये जाने तक, हम न बड़ा दावा कर सकते हैं, न कुछ बढ़कर कह सकते हैं। फिर भी विश्व शांति सेना दल (वर्ल्ड पीस ब्रिगेड) के कार्य, अफ्रीकावासियों के उपनिवेशवाद व गोरे प्रभुत्व के विरुद्ध चल रहे अहिंसक प्रयोग, अणु अस्त्रों के उत्पादन व प्रायोगिक विस्फोट के विरुद्ध होनेवाले प्रोग्राम, वगैरह में हमारा विनम्र योग हम दे रहे हैं। हम अपने घर में कुछ सफल प्रयोग करके या नया चित्र प्रस्तुत करके, बाहर कहें-करें यह सर्वोत्तम है। लेकिन घर में कुछ विशेष न कर पाने पर बाहर हम अपने विचार को जाहिर न करें या वहाँ के कार्यक्रम में योग न दें या कुछ कार्य का जिम्मा न लें यह आवश्यक नहीं है, क्योंकि समान विचारवाले व्यक्तियों की और संगठनों की परस्पर कुछ जिम्मेवारियाँ होती हैं, जिनका राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर भी निभाना जरूरी होता है।

शक्ति की सीमितता का ध्यान रहे

हमारे ऐसे बाहर के संपर्क हमारे दृष्टिकोण को व्यापक बनाने में भी सहायक होते हैं। विभिन्न परिस्थितियों में जो प्रयोग होते हैं उनसे हमारे अनुभव भी बढ़ते हैं। चीन-भारत संघर्ष या ऐसे भारत से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय मसले में अखिल भारतीय स्तर पर हमारी शांति सेना कुछ करे और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे संगठन कुछ करें यह वांछनीय और सामयिक हो सकता है। यह विचारणीय है कि जहाँ तक चीन-भारत के बीच छिड़ गये (अघोषित ही सही) युद्ध की बात है उसे रोकने का, उसका अंत कराने में, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रयत्न हो तथा विश्वशांति-सेना संगठन व वैसे शांतिवादी विशिष्ट व्यक्ति अपने नैतिक व व्यापक प्रभाव का उस स्तर पर उपयोग करें। इस प्रकार बाहरी संबंधों का व्यावहारिक उपयोग भी है ही।

स्पष्ट ही इस क्रम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के संबंध व कार्य का असर हमारी यहाँ की शक्ति के लिए अवरोधक नहीं, बल्कि एक सीमा तक पोषक ही होता है। हमारे साधन, हमारी शक्ति बहुत सीमित हो और बाहर योग देने में हमारा कार्य अवरुद्ध हो जाय, इस प्रकार की स्थिति से बचने की सावधानी तो हमें रखनी ही चाहिए।

संकट में तात्कालिक योग

आज हमारा कार्य युद्ध या संकटकालीन स्तर पर हो ऐसा स्वाभाविक ही परिस्थितियों का संकेत है। पर इसमें भय या घबराहट का लेश भी नहीं होना

चाहिए। एक असाधारण तीव्रता, वेग और लगन हमारे काम में हो यही आज अभीष्ट है। इसका अर्थ यह कि हर सर्वोदय प्रेमी अपने आप को शांति-सैनिक समझे। रोजमर्रा के परंपरागत कार्य में जो शक्ति लगी है उसमें से कुछ शक्ति इस अभी के आवश्यक काम के लिए दें और कम हुई शक्ति को समय अधिक देकर रोजमर्रा के काम को भी आँच न आने दें। उदाहरणतः प्रखंडदान या प्रधान केन्द्र के कार्यालय या किसी आश्रम में पाँच-पचीस साथियों की शक्ति लगी है तो उसमें दस-बीस प्रतिशत व्यक्तियों को हम नये कार्य के लिए मुक्त करें और शेष नब्बे-अस्सी प्रतिशत शक्ति से कुछ अधिक समय देकर काम पूर्ववत् व्यवस्थित रूप से किया जाय।

संगठन या तात्कालिक संचालन

अभी की परिस्थिति के लिए विशेष रूप से और उचित व उपयोगी दिखता हो तो आगे के लिए भी, संगठन के स्वरूप में परिवर्तन किया जाय। एक परिवर्तन यह हो सकता है कि संगठन में पदों के स्थान कम कर दिये जायँ। इससे चुनाव का तत्त्व कम होगा और पद से व्यक्ति की प्रतिष्ठा बढ़ने की जो स्थिति न चाहते हुए भी बन जाती है वह टलेगी या सीमित होगी। उदाहरणतः यह परिवर्तन संगठन में किया जा सकता है कि अध्यक्ष, मंत्री, सहमंत्री आदि की जगह सारे संगठन का एक संयोजक, संचालक, मंत्री या अध्यक्ष ही रहे तथा अन्य सब पद विधान या नियमावली के अन्तर्गत या कम-से-कम विशेष संकट की स्थिति में समाप्त कर दिये जायँ। काम के बँटवारे व व्यवस्थित संयोजन की दृष्टि से समय-समय पर योग्य व्यक्तियों को जिम्मा दिया जा सकता है। इसी प्रकार विभिन्न क्षेत्रीय स्तर की इकाइयों के संगठन भी इस प्रकार बन सकते हैं कि उनमें चुनाव, पद-प्रतिष्ठा आदि का तत्त्व कम-से-कम या गौण रह जाय।

केन्द्रित विचारविमर्श

विशेष परिस्थिति में निम्न कुछ विषयों पर हमारा चिंतन व विचार-विमर्श केंद्रित हो ऐसा सुझाव है :—

(१) चीन-भारत संघर्ष की विशेष परिस्थिति—
- (क) एकता का कार्यक्रम।
- (ख) क्षेत्र-क्षेत्र सक्षम स्वाश्रयी इकाई बन सके, उसका कार्यक्रम।
- (ग) अहिंसक प्रतिरोध का कार्यक्रम।
- (घ) युद्ध-बंदी का कार्यक्रम।

(२) पूर्वनिश्चित विषयों में से—
- (क) शांति-आंदोलन और आर्थिक क्रांति [उपर्युक्त १ (क) और १ (ग) के संदर्भ में]
- (ख) शांति-सेना प्रतिज्ञा-पत्र।
- (ग) खादी, ग्राम-नवनिर्माण (नीति व कार्यक्रम की स्पष्टता)।
- (घ) विचार-प्रचार व साहित्य प्रकाशन (विशेष परिस्थिति के संदर्भ में)।
- (ङ) पंचायती राज [उपर्युक्त १ (ख) संदर्भ में]।
- (च) संगठन व आर्थिक संयोजना

(३) औपचारिक
- (क) अध्यक्ष निर्वाचन।
- (ख) मेमोरेंडम ऑफ एसोसियेशन और नियमावली में संशोधन।

आशा करनी चाहिए कि आज की विकट चुनौती वाली घड़ी में हमारा यह संघ-अधिवेशन और चौदहवाँ सर्वोदय-सम्मेलन भी देश के समक्ष अहिंसा की शक्ति को बढ़ाने वाला और उसको चरितार्थ करने वाला सामयिक कार्यक्रम प्रस्तुत करने में सफल होगा।

विनोबा की पाकिस्तान-पदयात्रा की डायरी : ४

"अहिंसक, क्रान्तिकारी विचार चाहिए"

• कालिन्दी

"आप यहाँ की 'बेसिक डिमोक्रेसी'—ग्राम्य-जनतंत्र—की तारीफ करते हैं, तो क्या आप भारत के लिए इसकी सिफारिश करेंगे?"

"यह तो सही आरंभ है। इससे असली 'डिमोक्रेसी' को मदद होगी। सही डिमोक्रेसी तो अभी आनी ही है। संकट-काल में आरंभ का अमल भारत में विश्वास नहीं रह जाता है।"

"जनतंत्र में क्या मनुष्य का विकास होगा?"

"जब तक हिंसा पर विश्वास है, तब तक नहीं होगा।"

"साम्यवाद को आप क्या कहेंगे?"

"साम्यवादी करुणा से देखते हैं। उनमें करुणा की जो तीव्रता होती है, वह हमारे में आनी चाहिए। लेकिन वे दुखियों का दुःख मिटाने के लिए हिंसा का उपयोग करते हैं। जो हिंसा को मानते हैं वे ज्यादातर क्रान्तिकारी होते हैं। हिंसा को जो नहीं मानते, वे ज्यादातर 'स्टेटस-को' (जैसे थे) वाले होते हैं। हमको क्रान्तिकारी अधिक अहिंसक ऐसा विचार चाहिए। अब कम्युनिस्टों की परिभाषा में ही कहना है तो वह ऐसा होगा। अहिंसक 'स्टेटस-को' यह 'थिसिस' है, 'रेवोल्यूशनरी' हिंसा यह 'एंटीथिसिस' है और 'रेवोल्यूशन' अधिक अहिंसा यह 'सिंथेसिस' है।"

"करुणा और प्रेम से समाज-परिवर्तन के कार्यक्रम का क्या स्वरूप होगा?"

"(१) सत्ता का विकेंद्रीकरण। नीचे ज्यादा-से-ज्यादा सत्ता, ऊपर कम-से-कम सत्ता। बिलकुल ऊपर नैतिक सत्ता।"

(२) सहकारिता।

(३) व्यक्ति के विकास के लिए पूरा मौका।

(४) समाज के लिए समर्पण-बुद्धि।

(५) शिक्षा में ज्ञान और काम को जोड़ना।

अभी जो काम करते हैं, उनको ज्ञान नहीं है और जिनके पास ज्ञान है, वे काम नहीं करते। इससे समाज के दो वर्ग बन गये हैं—बुद्धिजीवी और श्रमजीवी।"

आठ-दस नौजवानों का एक समूह बाबा के सामने बैठा था और सवालों की बौछार हो रही थी। उनमें प्राध्यापक थे, साहित्यिक थे। रंगपुर शहर का 'इंटेलिजेंसिया' था। दो-तीन रोज बाबा के प्रवचन सुना थे, उन पर चिंतन किया था और फिर समय की माँग हुई थी। आशादी इन नौजवानों पर बहुत खुश थीं।

सुबह साढ़े नौ का समय था। नहा कर बाबा बाइबिल पढ़ रहे थे। आजकल बाइबिल का अध्ययन रोज चलता रहता है। पाकिस्तान आने के पहले हम सबको सिर्फ एक एक ही किताब साथ में रखने का आदेश दिया था। सबने अपनी-अपनी किताब चुनी थी। बबनभाई, कान्तिभाई और मैंने भगवद्गीता संबंधी किताबें चुनीं, तो साईं ने अपनी सुंदर काले कवर की 'न्यू टेस्टामेंट' (बाइबिल) साथ में ली और बाबा भी 'बाइबिल' के पक्ष में हो पड़े। अपनी छोटी 'पाकेट संस्करण' वाली 'न्यू टेस्टामेंट' उन्होंने साथ में रखने के लिए कहा। और अब रोज उसीका अध्ययन चलता है।

आज भी ऐसा ही अध्ययन चल रहा था कि साईं बारह साल के एक छोटे लड़के को लेकर आयी। यहाँ के 'एस० डी० ओ०' का बारह साल का लड़का बाबा से मिलने के लिए आया था। उसकी सारी जिंदगी कराची में बीती। उसने अपने अब्बाजान से पूछा, "अब्बा, साधु कैसे होते हैं?" अब्बाजान ने कहा, "चलो, मैं तुम्हें दिखाता हूँ।" साधु का आदर्श दिखाने के लिए अब्बाजान अपने बेटे को साथ ले आये थे। उस लड़के को लेकर बाबा गाँव में घूमने के लिए गये। किसी ने आकर कहा कि बाबा गाँव में भूमि माँग रहे हैं। पन्द्रह-बीस मिनिट में बाबा वापस आये। आशादी ने उनसे पूछा, "अभी की आपकी यात्रा निष्काम यात्रा थी?" बाबा हँसने लगे। बोले, "मैं देख रहा था कि इस गाँव में कोई पागल मिलता है या नहीं। लेकिन नहीं मिला, सब अक्लवाले निकले।" शाम की सभा में इस प्रकार के एक दो पागलों का दर्शन हुआ।

शाम का समय था। बाबा हमसे बातें कर रहे थे। कस्तनादी से बाहर कोई पूछ रहा था, "मैं फिल्म-डिरेक्टर हूँ, क्या मुझसे बाबा मिल सकते हैं?" कस्तनादी ने कहा, "मिल सकते हैं, लेकिन बाबा सबसे भूदान माँगते हैं।" फिल्म-डिरेक्टर और बाबा से मिलने आया। एक बार मैंने सुना था—तब बाबा भिंड-मुरैना क्षेत्र में घूम रहे थे—कि फिल्मी दुनिया के कुछ लोग बाबा के साथ कुछ रोज रहे थे। बागियों के जीवन पर कुछ फिल्म बनाना चाहते थे। ऐसे ही इरादे से शायद यह युवक आया होगा। थोड़ी देर में यह जवान बाबा के पास पहुँचा—"आपको अभी तक कई लोग मिले होंगे, लेकिन मेरे ढंग का व्यक्ति शायद पहली बार ही मिला होगा। मैं ढाका से आ रहा हूँ। खासकर के आपके विश्वशांति के 'मिशन' के लिए आपको बधाई देना चाहता हूँ। आपका 'मिशन' सफल हो!"

उसके हाथ बाबा के हाथ में थे। आगे उसने कहा :

"आप ढाका तो नहीं जा रहे हैं। यहाँ से थोड़ी दूर मेरा घर है। वहाँ भी आप नहीं जायेंगे। वहाँ हमारी कुछ जमीन है। मैं वादा करता हूँ कि तीन एकड़ जमीन मैं दान दूँगा।"

दान-पत्र देकर जवान निकल गया। यह तो एक अनहोनी हुई। ढाका से एक फिल्म डिरेक्टर बाबा से मिलने आता है और तीन एकड़ जमीन का दानपत्र देकर चला जाता है। दान से भी ज्यादा मूल्यवान थीं, उसकी सद्भावनाएँ। परमात्मा की इस विशाल पृथ्वी पर सद्भावनाओं की क्या कमी है!

[पड़ाव : पलाशबीर, १५ सितम्बर '६२]

• • •

आज सैयदपुर, पूर्व पाकिस्तान का बहुत बड़ा व्यापार-क्षेत्र। गाँव की जनसंख्या साठ-पैंसठ हजार होगी। स्वागत के लिए गाँव के करीब सभी लोग आये थे। सीमा पर स्वागत के लिए 'एस० डी० ओ०' भी आये थे। खूब शानदार स्वागत रहा। गाँव के इन्स्पेक्शन बंगले में निवास था।

सुबह ग्यारह बजे गाँव के लोग मिलने के लिए आये। ज्यादातर मुसलमान ही थे। दिल खोल कर चर्चा हुई :—

"आपने सभी धर्मों का अध्ययन किया है। क्या आप कह सकते हैं कि कौनसा धर्म अच्छा है?"

"हम सब धर्मों का सार लेते हैं। जो चीज अच्छी होगी, वह हम उठा लेते हैं। जैसे मधुमक्खी फूलों में से शहद ले लेती है, वैसे हम सब धर्मों से अच्छी-अच्छी चीजें लेते हैं।"

"आप सब धर्मों से शहद लेते हैं, तो क्या आपका अलग मजहब बनाने का इरादा है?"

"जी नहीं, आजकल यह वृत्ति हो गयी है कि हम ही सबसे अच्छे, हमसे बेहतर कोई नहीं! हम इस वृत्ति को ठीक नहीं मानते। न हम किसी एक धर्म को ऊँचा या नीचा मानते हैं। सब धर्मों में जो हमारे लिए आवश्यक चीज है, सबसे अच्छी चीज है, वह उठा

"भारत पर निष्कारण लड़ाई लाद दी गयी"

शरदकुमार 'साधक'

"मोर्चे पर सेना की हार इस देश की हार है। इसलिए हर आदमी को तन-मन-धन से इस देश की आजादी की रक्षा में लग जाना चाहिए।"—अहिंसक क्रान्ति के सेनानी विनोबा के ये शब्द सारे देश में गूँज उठे। बिहार-यात्रा के दौरान में सकरी पड़ाव पर उन्होंने कहा—"विदेशी आक्रमण को चुपचाप सहने की आदत, जो इस देश में पिछले दो हजार सालों से देखी जा रही है वह अब नहीं दिखेगी। जिन क्षेत्रों को चीनी सरकार ने अपने कब्जे में कर लिया है, वहाँ के निवासी भारतीयों को भी चाहिए कि वे उसके साथ जरा भी सहयोग न करें।"

काशी से कटिहार जाते समय सवेरे-सवेरे पटना स्टेशन पर पहुँचते ही एक दैनिक पत्र में प्रकाशित विनोबा का पूरा प्रवचन पढ़ने को मिला। डिब्बे में बैठे सभी यात्री उसमें रस लेने लगे। इस समय हर जबान पर भारत पर चीन के हमले की चर्चा है। आजादी की रक्षा के लिए देश में जो एकता की लहर दौड़ी है और मिलजुल कर काम करने की भावना पैदा हुई है, उसने भारत की टीका करने वालों को भी चकित कर दिया है। अहिंसा की दृष्टि से चिंतन करने वालों के सामने वर्तमान स्थिति अनेक दृष्टियों से विचारणीय बन गयी है।

पिछले १२ वर्षों से भूदान-ग्रामदान आन्दोलन के सिलसिले में विनोबाजी ने अहिंसक समाज की रचना की जो सर्वोदय-दृष्टि प्रस्तुत की, वह विश्वबन्धुता की क्रियात्मक सृष्टि है। उन्होंने 'जय जगत्' का मंत्र दिया है। पाकिस्तान-पदयात्रा में उन्होंने साफ जाहिर किया था कि

"हम हिन्दुस्तान-पाकिस्तान, इन देशों में कुछ भी फरक महसूस नहीं करते। वही हवा है, वही जमीन है, वही आदमी है और वही हृदय है। कुछ भी फरक नहीं! हम मानते हैं कि सारी दुनिया हमारी है और हम सारी दुनिया के सेवक हैं। हम जहाँ जाते हैं, वहीं 'जय जगत्' कहते हैं।"

'जय जगत्' के हिमायती विनोबा के मुँह से चीनी आक्रमण का मुकाबला करने की बात सुन कर सहसा लोग चौंके। जगह-जगह अनुकूल-प्रतिकूल चर्चा होने लगी। मैं यह सब सुनते-समझते विनोबाजी के पास पहुँचा। उस समय वे कटिहार में शान्ति-सैनिकों के शिविर में मेरे ही जैसे शंकाकुल लोगों के दिलों को आश्वस्त करते हुए बोल रहे थे:

"वीरों की हिंसा अहिंसा से भिन्न जरूर है, परन्तु विरोधी नहीं है, अविरोधी है। अनिवार्य रूप से जो हिंसा आती है, वह छोटी चीज है; अहिंसा बड़ी चीज है। अहिंसा की कोशिश हमें सधी नहीं, इसलिए वीर हिंसा के लिए देश तैयार हो गया है।"

विनोबाजी ने हमें प्रश्न न करने का अवसर देते हुए कहा—

"भारत हिंसा नहीं चाहता, युद्ध नहीं चाहता। इसने हमेशा अहिंसा, प्रेम, सहयोग, तटस्थता और पंचशील में विश्वास रखा है। पड़ोसियों के साथ मित्रता निभाने के लिए इसने हर समय प्रयत्न किया है। युद्ध के समय संयुक्त राष्ट्रसंघ में चीन का समर्थन करना इसका सबल प्रमाण है। इस पर भी भारत पर निष्कारण लड़ाई लाद दी गयी है।"

वे अविराम बोले जा रहे थे—

"भारत सारी समस्याओं का हल बातचीत से करना चाहता था। ऐसी हालत में बातचीत के लिए राजी न होकर चीन ने हमला किया, यह अन्याय है। इस अन्याय का प्रतिकार करने की दृष्टि से भारत जो भी कदम उठाता है, वैर-भाव न रखते हुए मात्र बचाव की भावना से जो करता है, उन सभी कामों में हमारी सहानुभूति है। मानसिक विरोध हिंसा के लिए होते हुए भी भारत के लिए हमारी सहानुभूति है।

श्री बाबू श्यामसुन्दर प्रसाद से नहीं रहा गया। वे पूछ ही तो बैठे—"क्या आप भारत सरकार के प्रयत्नों को नैतिक समर्थन दे रहे हैं?"

विनोबा मुस्कराये और बोले—

"मैं नैतिक समर्थन देने वाला कौन हूँ? मैं नीति का निर्माता नहीं हूँ। यह काम तो वही कर सकता है, जो इसका अधिकारी हो।"

किसी ने फिर टोका—"अधिकारी?"

"हाँ", विनोबा का प्रवाह चला—

"साइप्रस के महान् धर्माध्यक्ष आर्च-बिशप मेकारियोस, जो कि उस देश के राष्ट्रपति भी हैं, अपना नैतिक समर्थन इस काम के लिए दे सकते हैं और आज वे दे ही रहे हैं। इसी तरह हमारे देश में भी शंकराचार्य आदि धर्मगुरु भी नैतिक समर्थन देने के अधिकारी हैं। मैं वैसा अधिकारी नहीं हूँ। मैं तो सामान्य मनुष्य हूँ, शांति-सैनिक हूँ। इस वास्ते मेरे काम से भारत सरकार के प्रयत्नों को मदद मिल सकती है तो मिले।"

अहिंसा के संबंध में हमारे देश में हजारों ऋषि महर्षियों ने गंभीर विचार व्यक्त किये हैं। उन विचारों पर अपने-अपने ढंग से व्यवहार भी हुआ है। हर युग में अहिंसा ने नयी भूमिका अपनायी है। उसका हर नया रूप निकला और नया क्षेत्र बढ़ा है। आज यही अहिंसा हमारे सामने एक चुनौती बन कर आयी है। व्यक्तिगत जीवन में अहिंसा के चमत्कार हमने देखे, सामाजिक जीवन में अहिंसा की सफलता के दर्शन किये, राजनैतिक जीवन में अहिंसा की सिद्धि भी मिली और अब एक नये ही अध्याय का श्रीगणेश हो रहा है। एक देश की सेना दूसरे देश पर आक्रमण कर रही है। ऐसी हालत में हमारा क्या कर्तव्य है? हमले का मुकाबला हमले से किया जाय या विदेशी हमलावरों से असहयोग किया जाय? जो हो, शुद्ध मानवता की दृष्टि से यह सर्वमान्य तथ्य है कि आदमी के द्वारा आदमी की हत्या करना जघन्य अपराध है। युद्ध जैसी बात सोची भी नहीं जा सकती। इसलिए विनोबाजी ने दुबारा स्पष्ट किया—

"हमारा यह बुनियादी विचार है कि शस्त्रों से किसी का भला नहीं हो सकता। शस्त्र-युद्ध के खिलाफ हमारा मानसिक विरोध हम छोड़ नहीं सकते। लेकिन साथ-साथ हम यह भी महसूस करते हैं कि भारत युद्ध करना नहीं चाहता। यह हमेशा बातचीत के लिए तैयार रहा। ऐसी हालत में भी उस पर आक्रमण हुआ और वह उस आक्रमण का मुकाबला कर रहा है। इसलिए केवल भारतीय के नाते ही नहीं, बल्कि 'जय-जगत्' के संदर्भ में सोच कर हमने अपनी सहानुभूति व्यक्त की है।

"जो मैत्री-भावना रख कर काम करता है, उसे हमारी ही नहीं, अपितु सारे संसार की सहानुभूति हासिल होती है, विजय हासिल होती है। विजय कुल दुनिया की सहानुभूति पर निर्भर करती है।"

"आपके काम से इसमें कितना योग मिल रहा है?"

इस प्रश्न के जवाब में वे बोले—

"भूदान ग्रामदान के काम से सफलता के साथ लड़ाई लड़ने में भी मदद मिलेगी और लड़ाई को खतम करने में भी। मेरे सभी शांति प्रयत्नों से शांतिप्रिय देश को मदद पहुँचती है और अहिंसा को भी। बापू अहिंसा की सफलता के लिए प्रयत्नशील रहे और स्वराज्य प्राप्ति के लिए भी। इन दुहरे प्रयत्नों से आप जिस प्रकार की मदद लेना चाहें, ले सकते हैं।"

विनोबाजी अपने मूलभूत और बुनियादी विचारों में पक्के हैं। वे अहिंसक हैं। उनकी भूमिका विश्वमानव की है। वे किसी भी मनुष्य में मानवता के नाते भेद नहीं करते। फिर भी उनका स्पष्ट मत है कि आक्रामक के सामने कमजोरी के कारण अहिंसा का बहाना करना वीरता नहीं है, कायरता है। कायरता न दिखाने की दृष्टि से नेहरूजी ने जो कदम उठाया है, उस विषय में बोलते हुए बाबा ने कहा—

"नेहरू आसुरी संपत्ति का चिह्न नहीं है, दैवी संपत्ति का चिह्न है। उसके मन में अहिंसा ही है, इसमें मुझे तनिक भी संदेह नहीं है। उसके तात्कालिक कदम से अहिंसा में बाधा नहीं आयेगी।"

एक व्यक्ति ने फिर से पूछा—"अगर आप इस समय चीन में होते तो क्या करते?"

दृढ़ निष्ठा को साकार बनाती-सी विनोबा की वाणी गूँज उठी—

"चीन वालों को मैं समझाता कि किसी देश पर आक्रमण करने के लिए आप लोग जो इस प्रकार सेना का प्रयोग करते हैं, वह गलत है। इस गलती का निराकरण करने के हेतु मैं शांति-सेना संगठित करता, भले ही वहाँ शांति-सेना का गठन करना प्रतिकूल पड़ता।"

शांति-सैनिकों को कर्तव्य बोध देते हुए विनोबाजी ने उस दिन अपने सातवें प्रवचन में कहा—

"इस समय हमारे सामने विश्वशांति और देश की आंतरिक शांति बनाये रखना, इस तरह दोहरा कार्य है। हमें इसमें सफलता प्राप्त करना है। हम अपने सिद्धान्तों के साथ निष्ठावान रहते हुए इस दिशा में सक्रिय बनें, यही वर्तमान की माँग है।"

मेरा मन कहने लगा, 'इस माँग की पूर्ति के लिए आज समय पुकार-पुकार कर कह रहा है—"योग दो, युग का नया इतिहास बनने जा रहा है।"

लेते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि बाकी सब चीजें निकम्मी हैं लेकिन वे आवश्यक नहीं।"

धर्म, राजकारण सभी पर चर्चा हुई। सभा की समाप्ति हँसी में हुई। एक नौजवान मुसलमान बाबा के बिल्कुल नजदीक बैठा था। हर सवाल का जवाब देते हुए बाबा उसकी पीठ थपथपा रहे थे। वह तो बाबा का दोस्त ही बन गया। शाम को उसने एक दानपत्र भी ला दिया।

बड़े शहर की सभी बातें बड़ी भी हैं ऐसा नहीं। दिन भर बहुत चहलपहल रही। लेकिन शानदार भोजन के अलावा खास बात नहीं हुई।

शाम को एक मेहतरानी बाबा से मिलने के लिए आयी। बाबा ने उससे पूछा, "राम का नाम लेती हो या नहीं?"

"राम के साथ रहीम का भी नाम लेती हूँ।"

[पड़ाव: हैदरपुर, १६ सितम्बर '६२]

महात्मा भगवानदीन...

[शेष पृष्ठ २ से आगे]

स्थान रहेगा। उनकी लिखी गुरुकुल की कहानी भी शिक्षा क्षेत्र में क्रांतिकारी मानी जायगी।

अभी-अभी एक महीने पहले की बात है कि उनका एक पत्र मुझे मिला कि सर्व-सेवा-संघ से जैनेंद्रजी की एक किताब 'समय और हम' छप रही है, उसके अंतिम प्रूफ भेज दूँ। वे इस पुस्तक के प्रश्नों के अपने उत्तर देना चाहते थे। उनके बोलने और लिखाने की क्षमता अद्भुत थी। बिना किसी आधार या सन्दर्भ के वे घंटों लिखाते जाते थे। लिखनेवाला थक जाता था, किंतु वे थके हुए नहीं दिखाई पड़े। मुझे स्वयं उनके पास बैठ कर लिखने का सद्भाग्य मिला है और लगभग दो हजार पृष्ठ लिखाये होंगे। कभी-कभी ऐसा भी हुआ कि बच्चे शोर मचा रहे हैं और मैं परेशान हूँ, पर उन पर कोई असर नहीं हो रहा है और कभी ऐसा भी हुआ कि वाक्य अधूरा ही रह गया है और मैं उठ कर चल देना चाहता हूँ। पर उन्होंने क्षण भर को भी यह भाव चेहरे पर नहीं आने दिया कि वाक्य तो पूरा कर लो! भाषा पर उनका प्रभुत्व गजब का था! शब्दों की तो वे टकसाल थे। उनकी भाषा की विशेषता यह रही है कि वह सीधी बोलचाल की रही है और हिंदुस्तानी वे उस भाषा को मानते थे जिसे देश की आम जनता समझ ले।

पिछले पाँच वर्षों में सर्व-सेवा संघ से भी उनकी सोलह पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पूर्वोदय प्रकाशन से प्रकाशित उनकी 'जवानो!' पुस्तक की तो पचासों हजार प्रतियाँ बिक चुकी हैं। यह ऐसी रचना है जो मुर्दों में भी जान फूंक देती है।

महात्माजी शरीर से चले गये, पर उनकी त्याग-तपस्या, उनका उत्साह, उनका कुशाग्र तर्क और दर्शन, उनकी सरलता, उनका आत्मविश्वास सदा ही अमर रहेंगे और भावी पीढ़ी में जीवन-निर्माण में प्रकाश दिखाते रहेंगे।

मुझे पिछले बारह वर्षों में उनके चरणों के निकट बैठने का, उनका अजस्र स्नेह पाने का, कौटुम्बिक साहचर्य का जो लाभ मिला और जिनके वैचारिक व्यक्तित्व का कुछ अंश अपने पारिवारिक जीवन में लाने का मौका मिला—इसके लिए मैं अपने को धन्य समझता हूँ।

महात्मा भगवानदीन की अब तक प्रकाशित रचनाएँ

पूर्वोदय प्रकाशन, दिल्ली

(१) जवानो!
(२) जवानो, राह यह है!
(३) जीवन-झाँकी

भारत जैन महामंडल, वर्धा

(४) मेरे साथी
(५) मारने की हिम्मत

पराग प्रकाशन, पटना

(६) सलोना सच (१-२)
(७) प्यारा प्रेम
(८) गा ले-गुण ले
(९) ये मीठे मीठे गीत

सर्व सेवा संघ, वाराणसी

(१०) आज का धर्म
(११) चिंतन के क्षणों में
(१२) सत्य की खोज
(१३) बालक सीखता कैसे है?
(१४) माता पिताओं से
(१५) बोलती घटनाएँ (५ भाग)
(१६) देर है, अन्धेर नहीं
(१७) बालक बनाम विज्ञान
(१८) मिली की कहानी (२ भाग)
(१९) लोक भाव या आत्मबल
(२०) टूटी पेटेंट

जैन संस्कृति संशोधन मंडल, वाराणसी—(२१) स्वाध्याय

तमिलनाड प्रदेश में 'सर्वोदय-पर्व'

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ के आह्वान पर तमिलनाड में इस वर्ष ११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक "सर्वोदय-पर्व" मनाया गया, जिसका मुख्य अंग सर्वोदय-साहित्य और विचार के प्रचार का था। पिछले चार वर्षों से हर साल इसी अवधि में तमिलनाड में सर्वोदय-साहित्य प्रचार का अभियान सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन की तमिल शाखा—सर्वोदय प्रचुरालय के संचालक, श्री एन० रामस्वामी करते रहे हैं।

इस काम में उन्हें मद्रास सरकार के विकास-विभाग के सचिव श्री वेंकटाचलपति का तथा तमिलनाड सर्वोदय-मंडल, सर्वोदय-संघ का सहयोग बराबर मिलता रहा है। हालाँकि स्कूल और कालेज इस अवधि में प्रायः बंद थे, फिर भी ७४ बेसिक ट्रेनिंग स्कूलों और ६८ हाईस्कूलों में इस साल सर्वोदय-साहित्य भेजा गया।

इस राज्य में कुल ३७१ पंचायत संघ और सामुदायिक विकास-केन्द्र हैं, जिनमें से ३१० को सर्वोदय-साहित्य भेजा गया।

इस पर्व के दौरान में १९१ हाईस्कूल और ४६ महाविद्यालयों ने सर्वोदय-साहित्य के प्रचार के लिए सामग्री मँगायी, जो उन्हें मुफ्त वितरण के लिए भेजी गयी।

तमिलनाड सर्वोदय-संघ के तत्त्वावधान में चलने वाले प्रमुख खादी वस्त्रालयों में, जिनकी संख्या इस समय १०० से ऊपर है, 'सर्वोदय-पर्व' प्रारम्भ होने के समय लगभग १०,००० रु० का साहित्य था; पर उनकी माँग पर लगभग ७,००० रु० का और साहित्य भेजा गया। सरकार के अन्तर्गत चलने वाले खादी भण्डारों ने भी "सर्वोदय-पर्व" प्रारम्भ होने के पूर्व लगभग ५,००० रु० का साहित्य मँगाया था।

इस प्रकार 'सर्वोदय-पर्व' के दौरान में नीचे दिये अनुसार साहित्य सर्वोदय-प्रचुरालय ने बिक्री के लिए वितरित किया।

संस्था	केन्द्र संख्या	पुस्तकों का मूल्य रु०
पंचायत यूनियन और सामूहिक विकास केन्द्र	३११	२०,०००
बेसिक ट्रेनिंग स्कूल (सरकारी और गैर सरकारी)	७४	६,०००
हाईस्कूल	६८	५,३००
खादी-वस्त्रालय	१०२	७,३००
अन्य संस्थाएँ	२९	३,०००
कुल	५८७	४८,६००

इस प्रकार साधनों के सीमित होते हुए भी सर्वोदय प्रचुरालय ने २० अगस्त से २० सितम्बर तक के एक महीने में चुने हुए साहित्य के लगभग ६०० बण्डल (पुस्तकें) विभिन्न हिस्सों में भेजे। इस अवधि में कार्यालय में १००० पत्र आये और १२०० पत्र वहाँ से भेजे गये। स्टाक की कमी के कारण सितम्बर के अन्तिम सप्ताह में प्रचुरालय पुस्तकें भेज सकने में असमर्थ-सा रहा।

इस वर्ष तमिलनाड सर्वोदय-मंडल और तमिलनाड सर्वोदय-संघ की ओर से जगह-जगह सर्वोदय-साहित्य का प्रदर्शन भी किया गया और प्रमुख सर्वोदयी कार्यकर्ताओं के भाषण कराये गये। पंचायत यूनियन के कमिश्नर और कार्यकर्ताओं ने भी 'सर्वोदय पर्व' में काफी रुचि दिखलाई। कुल मिला कर सर्वोदय आदर्शों के बारे में भावात्मक और बौद्धिक वातावरण का निर्माण तमिलनाड प्रदेश में अच्छा हुआ।

श्री नगीन भाई परीख की स्मृति में

पिछले साल जब यह समाचार मिला कि श्री नगीन भाई परीख अब नहीं रहे, तो यह सहसा विश्वास करना मुश्किल हो गया। श्री नगीन भाई नयी पीढ़ी के उन कार्यकर्ताओं में थे, जिन्होंने त्याग और सतत सेवा से अपना एक विशेष स्थान बना लिया था। गुजरात के सम्पन्न परिवार के नगीन भाई इंग्लैंड तथा युरोप के अन्य देशों से उच्च शिक्षा प्राप्त करके लौटे तो वे विनोबा से मिले। उन्हें भूदान और ग्रामदान का विचार इतना जँचा कि उन्होंने कोरापुट के आदिवासियों के लिए अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया है। उनके देहावसान के समाचार पर विनोबा ने कहा था:

"श्री नगीन भाई परीख कोरापुट में काम करते-करते गये, इसमें उनकी प्रतिष्ठा तो बढ़ी है, पर गुजरात की भी प्रतिष्ठा है।"

२९ नवम्बर को उनको गये एक साल हो जायगा। संयोग से गुजरात में ही इस अवसर पर सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन भी २९ नवम्बर को आरम्भ हो रहा है। हम देश के इस मूक-सेवक को श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। —सं०

कसौटी का समय

[शेष पृष्ठ ३ से आगे]

तरह अहिंसक प्रतिकार के लिए भी है; बल्कि उसके लिए पूरी प्रजा की कुछ ज्यादा ही तैयारी आवश्यक है। अगर ऐसी तैयारी में हम पूरी शक्ति से और सातत्य से लगे रहे हों, पर पर्याप्त तैयारी से पहले ही युद्ध का प्रसंग आ जाय तो उसमें हमारी अपनी कमी मान कर निराश होने की क्या जरूरत है? बल्कि अपने प्रयत्नों को ज्यादा तीव्र करने की ही जरूरत है। अगर वैसी लगन और सातत्य हम अपने काम में नहीं लगा पाये हैं तब भी उस काम को दीर्घकालीन मान कर छोड़ने के बजाय ज्यादा तत्परता से उसमें लगने की जरूरत है।

कसौटी का अवसर

इसका यह मतलब नहीं है कि ऐसे संकट के या असाधारण मौकों पर हमारा कोई विशिष्ट कर्तव्य नहीं है या नहीं हो सकता। वह भी अवश्य होना चाहिए। परन्तु अगर हम वास्तव में अहिंसक प्रतिकार के लिए कभी भी राष्ट्र के तैयार होने का स्वप्न देखते हैं तो हमारी दृष्टि से तात्कालिक, ऐसे अन्य किसी कर्तव्य के लिए, हमारे सदा के कार्यक्रम को छोड़ने की जरूरत नहीं है। आज भी चीन के आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए सीमावर्ती क्षेत्रों में विशेष कार्य करने की आवश्यकता है और हमारे अब तक के दावों और प्रतिज्ञाओं की वह एक कसौटी भी है। पर उसके लिए ग्रामस्वराज्य के या लोकशक्ति को बढ़ाने के काम को गौण या दीर्घकालीन मान कर छोड़ना उचित नहीं होगा। जैसा हमने ऊपर बतलाया है, एक तरह से यह कार्यक्रम देश की रक्षा के लिए आज की तात्कालिक आवश्यकता भी है। हमारी दृष्टि से दोनों कार्यक्रम—सीमावर्ती क्षेत्र में विशिष्ट कार्य और सर्वत्र गाँवों को मजबूत बनाने का कार्य—अनिवार्य हैं और हमारी सीमित शक्ति का दोनों में विवेकपूर्ण और योजनापूर्वक विनियोग होना चाहिए। यही आज की विशेष परिस्थिति की हमारे लिए चुनौती है और हमारी निष्ठा तथा बुद्धि की कसौटी भी।

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २३ नवम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक ८

वेडछी सर्वोदय-सम्मेलन के अध्यक्ष

श्री इ० डब्ल्यू० आर्यनायकम्

गांधीजी की क्रांति केवल राजनैतिक नहीं थी। वह एक बुनियादी क्रांति थी, जीवनव्यापी क्रांति थी। इस क्रांति के मार्गदर्शन के लिए गांधीजी ने जिन व्यक्तियों को चुना, उन्होंने अपने-अपने क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण काम करके दिखाया। हिंसा और जोर-जबरदस्ती के मूल्यों पर आधारित मानव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उन्हें अहिंसक विकल्प प्रस्तुत करना था।

इस तरह की बुनियादी क्रांति के लिए गांधीजी ने जिन लोगों को चुना, उनमें से एक हैं श्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम्‌जी। आर्यनायकम्‌जी एक शिक्षा शास्त्री हैं। इसीलिए गांधीजी ने पुराने शिक्षण के विकल्प के रूप में 'नयी तालीम' समाज के सामने रखने का काम आर्यनायकम्‌जी को सौंपा। गांधीजी हमेशा अपने साथियों को चुनने में और जिम्मेवारी देने में यह देखते थे कि उन्हें अपने-अपने विषय की पूरी जानकारी हो और अहिंसक समाज का चित्र भी उनके सामने हो। तब गांधीजी ने अपने शिक्षण संबंधी प्रयोगों के लिए आर्यनायकम्‌जी को चुना तो कोई आश्चर्य नहीं। इससे गांधीजी को आर्यनायकम्‌जी ही नहीं, आशादेवी भी मिल गयीं।

श्रीलंका के जाफना प्रांत के वड्डु-कोट्टै गाँव में ५ मई, १८९३ को आर्यनायकम्‌जी का जन्म हुआ। उनके पिताजी ईसाई पुरोहित थे और वैद्य का भी काम करते थे। आर्यनायकम्‌जी के तीन भाई और दो बहनें थीं, जिनमें से दो भाई और दो बहनें जीवित हैं। सबके आर्यनायकम्‌जी ज्येष्ठ भ्राता हैं। आर्यनायकम्‌जी के हिंदू धर्मावलंबी पितामह ने ईसाई धर्म स्वीकारा और आर्यनायकम्‌जी के पिताजी ईसाइयों के पुरोहित बने। इस तरह बालक आर्यनायकम् धार्मिक वातावरण में पले। इतना ही नहीं, उनका शिक्षण भी ईसाई धर्म संबंधी ही हुआ। उनके पितामह मद्रास विश्वविद्यालय के प्रथम ग्रेजुएट थे, तो भला आर्यनायकम्‌जी को उनसे प्रेरणा मिले बिना कैसे रह सकती थी। उन्होंने भी उच्चतम शिक्षा प्राप्त की।

अपनी प्रारंभिक शिक्षा श्रीलंका में ही पूरी करने के बाद आर्यनायकम् जी उच्च शिक्षा के लिए बंगाल चले गये। उन दिनों एशिया में बंगाल के सेनिट यूनिवर्सिटी कालेज में ही धर्म-संबंधी दर्शनशास्त्र पढ़ाते थे। श्रीरामपुर कालेज से 'बैचलर आफ डिविनिटी' उपाधि लेने के बाद आप १९१७ में मद्रास गये और वहाँ २ साल तक 'इंटररिलिजियस फेलोशिप' के छात्रों के मंत्री रहे। इस समय अपने कार्य से उन्होंने जो प्रतिष्ठा प्राप्त की, उसके कारण 'ब्रिटिश ईसाई विद्यार्थी संघ' के प्रवासी-मंत्री नियुक्त हुए और लंदन को केंद्र बना कर १९१९ से काम करने लगे। उस पद पर वे ५ साल रहे। उस जमाने में ब्रिटेन में ३२ विश्वविद्यालय थे। उन सबके विद्यार्थियों से संबंध स्थापित करके भारतीय विद्यार्थी और वहाँ के विद्यार्थियों में सांस्कृतिक मेलजोल बढ़ाने का काम किया। ब्रिटेन में रहते समय 'लंदन स्कूल आफ इकनॉमिक्स' और 'लंदन इंस्टिट्यूट आफ एज्युकेशन' से दोनों विषयों में 'डिप्लोमा' प्राप्त किया। कैंब्रिज में अध्यापक प्रशिक्षण का 'डिप्लोमा' प्राप्त किया। स्कॉटलैंड के एडिनबरो विश्वविद्यालय में भारतीय विद्यार्थियों के छात्रावास के संरक्षक रहे। उसी समय वहाँ आपने शैक्षणिक मनोविज्ञान में 'आनर्स' की उपाधि प्राप्त की। इंग्लैण्ड से अमेरिका जाकर वहाँ कोलंबिया विश्वविद्यालय से ग्रामीण शिक्षण (रूरल-एज्युकेशन) में एम० ए० पास किया। उसके बाद केनडा में आपने सब विश्वविद्यालयों का दौरा किया और वहाँ से श्रीलंका वापस जाते समय जापान, कोरिया, चीन, हांगकांग, मलाया में शिक्षण संबंधी विषयों का अध्ययन किया। मलाया में विशेष रूप से वहाँ के बागानों में काम करने वाले भारतीय मजदूरों की समस्याओं का अध्ययन किया।

श्री इ० डब्ल्यू० आर्यनायकम्

१९२१ में जब सी० एफ० एंड्रूज और रवींद्रनाथ टाकुर को आर्यनायकम्‌जी के बारे में मालूम हुआ तो रवि टाकुर ने आर्यनायकम्‌जी को शांतिनिकेतन बुला कर शिशु विभाग की जिम्मेवारी दी। संसार के कई देशों की शिक्षण संबंधी जानकारी रखने वाले आर्यनायकम्‌जी को इससे सुवर्ण अवसर मिल गया। रवि टाकुर के मार्गदर्शन में आप तालीम संबंधी नये-नये प्रयोग करने लगे, जो बाद में गांधीजी की 'नयी तालीम' की बुनियाद बने। रवींद्र का आर्यनायकम्‌जी पर दिन-ब-दिन विश्वास और वात्सल्य बढ़ने लगा। १९२७ में दक्षिणपूर्वी एशियाई देशों में और १९३० में रूस, यूरोप और अमेरिका में रवींद्र के साथ आर्यनायकम्‌जी भी भ्रमण में रहे।

उन्हीं दिनों काशी विश्वविद्यालय की महिला कालेज के प्रिंसिपाल के पद को त्याग कर आशादेवी रवींद्र के पास शांति-निकेतन गयी थीं। वहाँ शिक्षण के प्रयोगों में आर्यनायकम्‌जी की आशादेवी मदद करती थीं। १९३३ में गांधीजी ने जब हरिजन-आंदोलन शुरू किया तो आर्यनायकम्‌जी और आशादेवी ने हरिजन शिक्षा का काम उठाया। दोनों मिल कर 'सामूहिक राष्ट्रीय शिक्षा' के प्रयोग करने लगे।

१९३४ में शांतिनिकेतन में आर्यनायकम्‌जी और आशादेवी का विवाह हुआ। यह विवाह रवींद्र ने ही कराया। उसी साल बिहार के भूकंप के संदर्भ में गांधीजी जब पटना गये तो वहाँ आर्यनायकम्‌जी पहली बार गांधीजी से मिले। उन्होंने शिक्षण के विषय में बापू से चर्चा की। फिर लखनऊ कांग्रेस में गांधीजी से मिले। तब गांधीजी ने आर्यनायकम्‌जी को वर्धा बुलाया। आर्यनायकम्‌जी १९३६ में वर्धा गये। बाद में १९३७ में तालीमी संघ का जन्म हुआ और वर्धा से सेवाग्राम चले गये। तब से तालीमी संघ के सर्व-सेवा-संघ में विलीन होने तक सेवाग्राम में तालीमी संघ का ही काम करते रहे।

आर्यनायकम्‌जी और आशादेवी, दोनों तालीमी संघ के बच्चों और प्रशिक्षण के लिए आये हुए अध्यापकों और अध्यापिकाओं

कसौटी समय : ४

सिद्धराज ढड्ढा

चीन-भारत संघर्ष को लेकर हमारे बहुत से साथियों में एक मायूसी की-सी भावना पैदा हुई है। उन्हें लगता है कि अहिंसा के पास ऐसे मौकों पर समस्या को हल करने का कोई तरीका नहीं है। अतः, हम जो बड़ी-बड़ी बातें करते आये हैं उनके बारे में पुनर्विचार करने की जरूरत है, ऐसा उन्हें महसूस होता है। पर अहिंसा के तरीके और अहिंसा की प्रक्रिया के बारे में गहराई से समझने का और अपनी कमियाँ दूर करने का एक मौका आया है यह सोच कर हम चिन्तन करें तो इस तरह की निराशा का कोई कारण नहीं है।

किसी भी काम के लिए कुछ पूर्वतैयारी आवश्यक होती है। अगर वैसी तैयारी न हुई हो तो उसमें सफलता नहीं मिलती। सैनिक मुकाबले के लिए भी बड़े पैमाने पर तैयारी करनी पड़ती है। आज तो निरन्तर सभी देश यह तैयारी करते रहते हैं। अनर्गल द्रव्य और शक्ति इस काम के पीछे खर्च होती ही रहती है। हिन्दुस्तान जैसा गरीब देश भी हर साल चार सौ करोड़ रुपया, बुद्धि और शक्ति इस तैयारी में खर्च करता रहा है। और इतना करते रहने पर भी मौके पर हमने पाया कि चीन की ताकत और उसकी तैयारी हमसे कई गुना ज्यादा थी। अर्थात् हमारी तैयारी नाकाफी साबित हुई और मोर्चों पर हमारी हार भी हुई। पर इससे सैनिक मुकाबले को ही गलत मान कर देश ने छोड़ तो नहीं दिया, बल्कि जो कमी रही उसे पूरा करने के कदम उठाये जा रहे हैं। अभी-अभी संसद ने अगले कुछ महीनों के लिए ही एक सौ करोड़ रुपया और सैनिक खर्च के लिए मंजूर किया है तथा आगे जाकर 'हजारों करोड़' खर्च करना होगा और देश की सब तरह की पूरी ताकत इस काम में लगा लगानी पड़ेगी, ऐसा नेहरूजी ने जाहिर किया है।

इतिहास का नया पन्ना

जिस तरह हिंसक लड़ाई में सफलता पाने के लिए इस प्रकार पूर्वतैयारी करनी पड़ती है उसी तरह अहिंसक लड़ाई के लिए भी करनी होती है, यह हमे नहीं भूलना चाहिए। कुछ बरसों पहले तक दुनिया के हजारों बरस के इतिहास में यह कल्पना भी नहीं आयी थी कि दो स्वतन्त्र राष्ट्रों के बीच अन्याय का या आक्रमण का प्रतिकार बिना हथियारों के या लड़ाई के हो भी सकता है क्या! मानव द्वारा मानव की हत्या को या हिंसा को जो बुरा मानते रहे हैं उनके सामने एक ही चारा था कि लड़ाई के समय अपने घर में बैठे रहें और लोगों की लानत मलामत सहते रहें। पर इतिहास में पहली बार गांधी ने दुनिया के सामने सामूहिक अहिंसक प्रतिकार का स्वप्न खड़ा किया। इतना ही नहीं, भारत के स्वातन्त्र्य-संग्राम के सिलसिले में उसकी एक झलक भी दिखाई। हजारों बरसों तक मानव ने जिस बात की कल्पना भी नहीं की थी उस बात के बारे में आज कम-से-कम हम सोचने और उसे संभव भी मानने लगे हैं।

अहिंसक संरक्षण का स्वरूप

हिंसक युद्ध की कला और शास्त्र आज हजारों बरसों से विकसित होता रहा है। उसके पीछे सदियों का अनुभव, मानसिक तैयारी तथा भावनाएँ हैं यह हमें नहीं भूलना चाहिए। अहिंसक प्रतिकार की कल्पना नयी है, उसके शास्त्र और कला को निरन्तर प्रयोगों द्वारा विकसित करना है। इसके भी पहले जन-साधारण की भावना, कल्पना और प्रचलित मूल्यों में परिवर्तन लाना है। फिर हमें यह भी समझना चाहिए कि सैनिक संरक्षण और अहिंसक संरक्षण का स्वरूप भी भिन्न है और होगा। सैनिक रक्षण में सेना ही सब कुछ है, अन्य लोगों को भी अवश्य अपने-अपने ढंग से त्याग करना पड़ता है और शक्ति लगानी होती है, पर अन्ततोगत्वा सेना की जीत सारे देश की जीत होती है और उसकी हार, हार होती है। अहिंसक 'युद्ध' में इस प्रकार की हार-जीत की कल्पना नहीं है। उसमें गाँव-गाँव, घर-घर और जन-जन तक प्रतिकार चलता रहता है। एक बार आक्रमणकारी ने दखल किया तो भी प्रतिकार खत्म नहीं होता। स्पष्ट है कि इस प्रकार के प्रतिकार के लिए बहुत बड़ी और व्यापक, साथ ही हिंसक युद्ध की अपेक्षा बिलकुल ही भिन्न प्रकार की पूर्वतैयारी की आवश्यकता है। अहिंसक प्रतिकार के लिए मुख्य बात लोगों में एकता और स्वावलंबन की है। जिस तरह आज हिंसक युद्ध के लिए सारा आर्थिक और राजनैतिक ढाँचा अमुक प्रकार से खड़ा करना पड़ता है, उसी तरह अहिंसक प्रतिकार के लिए वह सारा ढाँचा दूसरे ढंग पर बदलना पड़ता है। हिंसक प्रतिकार के लिए केन्द्रीय सत्ता को मजबूत बनाना पड़ता है, चाहे लोगों की आन्तरिक शक्ति थोड़ी कम भी रहे। अहिंसक प्रतिकार के लिए गाँव-गाँव को मजबूत बनाना होता है और आम लोगों की शक्ति बढ़ानी होती है। हिंसक प्रतिकार के लिए बड़े पैमाने पर साज-सामान और हथियार बनाने और संग्रह करने पड़ते हैं और उन्हीं में राष्ट्र की सारी संपत्ति खर्च करनी होती है, चाहे लोग थोड़ी देर के लिए भूखे-नंगे भी रहें। इसके लिए आर्थिक ढाँचा केन्द्रित करना पड़ता है। अहिंसक प्रतिकार के लिए गाँव-गाँव में उत्पादन करके जनता को स्वावलंबी बनाना होता है, जिससे वह प्रतिकार में टिक सके।

अहिंसक संरक्षण की तैयारी

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट होगा कि हम लोग ग्राम-स्वराज्य के लिए भूदान, ग्रामदान, शांति सेना आदि के जरिये जो प्रयत्न करते रहे हैं वही अहिंसक प्रतिकार की तैयारी भी है। इसलिए ग्रामदान को विनोबा ने 'डिफेन्स मेजर' कहा है। जितनी शक्ति हमने इस काम में लगायी उतनी हद तक ही अहिंसक प्रतिकार की तैयारी माननी चाहिए। यह काम एक तरह से प्रारंभिक अवस्था में ही है, यह हम सब जानते हैं। हजारों बरसों से चली आ रही परंपरा को बदलना है, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्था में आमूल परिवर्तन करना है, लोगों की भावनाएँ बदलनी हैं, प्रचलित मूल्य बदलने हैं—इतना भगीरथ काम है। जितनी मात्रा में यह सारा काम आगे बढ़ेगा, उतनी मात्रा में ही अहिंसक प्रतिकार की शक्ति पैदा होगी। जाहिर है कि जब तक ऐसी शक्ति पैदा नहीं होती तब तक अहिंसक के प्रतिकार की बात नहीं उठती। आज तो ऐसी ही परिस्थिति है। इसमें कमी रही है वह वह हमारी ही रही है। हम अपने हृदय पर हाथ रख कर अपने से पूछें कि हमने पिछले वर्षों में कितने सातत्य से और कितनी शक्ति इस विशाल काम में लगाई है।

तत्परता एवं सातत्य की आवश्यकता

ऐसी हालत में अगर आज हम अपने को या जनता को अहिंसक प्रतिकार के लिए तैयार नहीं पाते हैं तो इसमें निराशा की आवश्यकता नहीं है। आवश्यकता है अपने अब तक के काम को ज्यादा तत्परता और सातत्य से करने की। संयोग से हिंसक रक्षण के लिए भी यह चीज काम की है। इसीलिए विनोबा कहते हैं कि अब एक मौका फिर आया है जब हम ग्राम-दान-ग्रामस्वराज्य का काम आगे बढ़ा सकते हैं। और हम समझते हैं कि विनोबा

[शेष पृष्ठ ११ पर]

देश की आंतरिक सुरक्षा के लिए

दो महत्त्वपूर्ण सुझाव

हम लोग एक लम्बे अर्से तक चलने वाले युद्ध में संलग्न हैं। शांति के समय की अर्थ-रचना इस प्रकार के संकट-काल में काम नहीं दे सकेगी, और हमको समस्त व्यूह कर उसमें परिवर्तन करने होंगे। ... इस सिलसिले में मैं प्रधानमंत्री का ध्यान एक-दो उन बातों की ओर दिलाना चाहता हूँ, जो विनोबाजी ने कही हैं। मैं जानता हूँ कि मूल में उनका दृष्टिकोण भिन्न है, लेकिन उनके दो सुझाव, मेरी राय में ऐसे हैं, जो हिंसक या अहिंसक प्रतिकार या संघर्ष में समान रूप से लागू होते हैं।

पहला सुझाव तो यह है कि ग्राम-स्तर पर वहाँ के लोगों में जिम्मेदारी की यह भावना पैदा करनी चाहिये कि गाँव के लोगों की आजीविका और रोजगार के बारे में गाँव के नेताओं को ही सोचना है। इसका मतलब यह है कि ग्रामसमाज केवल स्वावलंबी ही न हो, वह एक उत्तर-दायी समाज हो, जिसकी यह जिम्मेदारी होगी कि गाँवों के गरीब और कमजोर वर्गों को रोजगार और आजीविका के साधन मुहैया किये जायँ।

दूसरा सुझाव जो उन्होंने दिया है, वह शांति-सेना के बारे में है। यह गांधीजी की पुरानी कल्पना है। हमें यह नहीं समझना चाहिये कि यह कल्पना आज के संदर्भ में ठीक नहीं बैठती है।

मुझे विश्वास है कि इन दो सुझावों पर विचार किया जायेगा, विनोबाजी से समझ के स्थापित किया जायेगा और इस सम्बन्ध में कुछ योजनाएँ बनायी जायेंगी, ताकि विनोबाजी का जनता पर जो गहरा असर है, उसका उपयोग हम ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था को [illegible] में, और ग्रामीण क्षेत्रों में शांति कायम रखने में उपयोग में ला सकेंगे।

—उ० न० ढेबर

[ता० ८ नवम्बर को लोकसभा में दिये भाषण से।]

के बाप और माँ बने। उन्होंने नयी तालीम के पौधे को अपने सर्वस्व का पानी बना कर सींचा और बड़ा किया। आज देश भर में बुनियादी शिक्षण का विचार जो बढ़ रहा है, उसका अधिकांश श्रेय इन दोनों का है।

१९४२ का आंदोलन 'करो या मरो' का आंदोलन था। इसलिए उस समय तालीमी संघ का भी काम स्थगित कर आर्यनायकम्‌जी और आशादेवी जेल गये।

भूदान-आन्दोलन शुरू होने पर तालीमी संघ का काम आर्यनायकम्‌जी को सौंप कर आशादेवी ने भूदान-आंदोलन में अपना पूरा समय दिया। आशादेवी १९५४ में बोधगया सर्वोदय-सम्मेलन की अध्यक्ष रहीं। १९६० के बाद आर्यनायकम्‌जी भी भूदान-आंदोलन में अपना पूरा समय देने लगे। उससे पहले भी भूदान-आंदोलन में भाग लेते ही थे।

आज की परिस्थितियों में समाज को नयी दिशा और नयी दीक्षा चाहिए। ऐसे अवसर पर गुजरात के वेड़छी में होने वाले चौदहवें सर्वोदय-सम्मेलन की अध्यक्षता के लिए आर्यनायकम्‌जी का चुना जाना सर्वोदय-आंदोलन के लिए सौभाग्य का ही नहीं, गर्व का भी विषय है।

—[illegible]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

जनशक्ती से स्वराज्य

शास्त्रों में लीखा है की 'राज्यान्ते नरकप्राप्ती.' –राज्यसमाप्तीपर नरकप्राप्ती होती है, यानी राज करने वाला राजा मरने पर नरक में जाता है। लोग पूछेंगे की क्या फीर स्वराज्य न चलाना चाहीये? हम कहते हैं की स्वराज्य जरूर चलायें, पर राज्य नहीं। वेद का ॠषी कहता है–"यतेमही स्वराज्ये"–हम स्वराज्य के लीये प्रयत्न करें। शास्त्रों में भी यही लीखा है की "न त्वहं कामये राज्यम्"–मैं राज्य नहीं चाहता, मैं स्वराज्य चाहता हूं। दील्ली से जो चलता है, उसे राज्य कहते हैं–चाहे वह अपने लोगों का ही हो। गांव-गांव में हर मनुष्य अपने पर जो राज्य चलाता है, वह स्वराज्य है। मुझे चाहे भूखा रहना पड़े, लेकीन मैं चोरी नहीं करूंगा, इसका नाम है स्वराज्य। मुझ पर दूसरे कीसी की हुकूमत चलती हो, वह क्या स्वराज्य है? स्वराज्य का अर्थ है–अपने खुद पर अपना राज्य। इस तरह जब सब लोगों में अपने पर काबू रखने की शक्ती पैदा होगी और उन्हें अपना कर्तव्य का भान होगा, तब स्वराज्य होगा। हमें काम स्वराज्य का करना है। उसके लीये जनशक्ती पैदा करनी है। लोगों के हृदय में आत्मशक्ती का भाव पैदा करना है।

[मलयकोटाई, मद्रास —वीनोबा
२९-१०-'५६]

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ि, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति द्वारा स्वीकृत

चीन-भारत संघर्ष सम्बन्धी निवेदन

[विनोबाजी के सान्निध्य में ता० १० नवम्बर से १३ नवम्बर तक पश्चिम दिनाजपुर जिले के पिपला पड़ाव पर सर्व-सेवा संघ की प्रबंध समिति की बैठक हुई। बैठक के अन्त में चीन-भारत संघर्ष के सम्बन्ध में नीचे दिया हुआ निवेदन स्वीकृत किया गया। —सं०]

भारत-चीन संघर्ष ने संसार के सामने एक गम्भीर समस्या पैदा कर दी है। विश्वशांति और जय-जगत् की भावना में विश्वास रखने वाले व्यक्ति के लिए तो यह परिस्थिति कसौटी की ही है। हम मानते हैं कि यह संघर्ष भारत पर चीन द्वारा लादा गया है, क्योंकि भारत हमेशा शांतिमय उपायों से अपने सीमा-विवादों को हल करने के लिए प्रयत्न करता रहा है। जब एक पक्ष शान्तिमय और वैध उपायों से समस्या का हल करने के लिए तैयार हो तब दूसरी ओर से शस्त्र-प्रयोग द्वारा विवाद को हल करने का प्रयत्न करना या उस पर अपना निर्णय लादने की चेष्टा करना आक्रमण ही है। इसलिए युद्ध में शरीक न होने के अपने बुनियादी तत्त्व पर कायम रहते हुए भी हमारी सहानुभूति भारत के साथ है। हम आशा करते हैं कि आज की संकट-कालीन परिस्थिति में भारत अपनी निर्वैर वृत्ति कायम रखेगा, क्योंकि परिस्थितिवश कभी लड़ाई से लड़ाई कुंठित भी हो सकती है, किन्तु वैर से वैर कभी कुंठित नहीं होता।

निर्वैर वृत्ति का लक्षण यह है कि हमारे द्वार बातचीत, पंच-फैसला (आर्बीट्रेशन) आदि के लिए सदा खुले रहें; दोनों देशों की प्रतिष्ठा सुरक्षित रखते हुए निर्णय कराने की हमारी तैयारी रहे, संघर्ष की परिस्थिति होते हुए भी दोनों देशों की जनता के बीच द्वेष न रहे; तथा देश में युद्ध-ज्वर पैदा न हो।

इस प्रसंग की गम्भीरता और अपनी शक्ति की मर्यादा को ध्यान में रखते हुए हम अहिंसा और शांति में अपनी निष्ठा फिर से दुहराना चाहते हैं। शस्त्रों से किसी का भला नहीं हो सकता तथा न ही युद्ध से, खास करके इस आणविक युग में, कोई मसला हल हो सकता है। इसलिए अहिंसा में विश्वास करने वाला व्यक्ति या शान्ति-सैनिक युद्ध में शरीक नहीं होगा। उसका यह परम कर्तव्य होगा कि वह अविरत ऐसा प्रयत्न करता रहे, जिससे युद्ध का शीघ्रातिशीघ्र अन्त हो, युद्ध की अविलम्ब समाप्ति न केवल भारत के हितार्थ, बल्कि चीन के हित के लिए तथा सारी मानवता के हित में भी, नितान्त आवश्यक है। इस दिशा में हमारे प्रयत्न इसी व्यापक भूमिका से होंगे।

इसीलिए हमारा चीन से भी साग्रह अनुरोध है कि वह युद्ध की तुरन्त समाप्ति के लिए सारे सम्भाव्य शान्तिमय उपायों की खोज तथा अवलम्बन करे। हमें विश्वास है कि चीन के सारे शान्तिनिष्ठ व्यक्ति भी युद्ध को अनर्थकारक मान कर इन प्रयत्नों में अग्रसर होंगे।

इस सन्दर्भ में यह स्वीकार करना होगा कि इस समस्या का समाधान करने के लिए देश में आज आवश्यक अहिंसक शक्ति विकसित नहीं हुई है, लेकिन इसमें निराशा का कोई कारण नहीं है। यह सम्भव है कि इस विपत्ति के प्रसंग में से ही भारत की जनता में अहिंसा की अमोघ शक्ति प्रकट हो। हमारी श्रद्धा है कि देश की रक्षा के लिए आज जनता में जो त्याग तथा बलिदान की अपूर्व भावना जाग उठी है, आगे चल कर उसका विकास वीरों की अहिंसा में किया जा सकता है। इसलिए अहिंसा में विश्वास करने वाला कोई भी व्यक्ति ऐसी संकट की वेला में निष्क्रिय नहीं रहेगा, बल्कि देश की अहिंसक सामर्थ्य बढ़ाने में अपनी पूरी शक्ति लगायेगा। अहिंसक प्रतिकार किसी पक्ष विशेष की विजय के लिए नहीं, बल्कि सत्य और बन्धुत्व की स्थापना के लिए ही हो सकता है। इसलिए अहिंसक प्रतिकार हमेशा संघर्ष की भूमिका से ऊपर उठ कर ही होता है।

अहिंसक प्रतिकार का विचार आते ही युद्ध-क्षेत्र पर जाकर आक्रमणकारी का मुकाबला करने की कल्पना आती है। यह हर्ष और अभिनन्दन का विषय है कि देश में आज कितने ही शान्ति-सैनिकों ने इस प्रकार के कार्यक्रम के लिए अपने प्राण तक अर्पण करने की उत्कटता प्रकट की है। आज के संयोगों में यह कार्यक्रम व्यवहार्य नहीं है, इसलिए हम आशा करते हैं कि बलिदान देने की तत्परता रखने वालों की शक्ति देश की अहिंसक सामर्थ्य बढ़ाने में लगेगी।

इस स्थिति में भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों की जनता में अहिंसक प्रतिकार की सामर्थ्य पैदा करना हमारा एक महत्त्व का काम होगा। इन क्षेत्रों में जहाँ अनुकूलता हो, शान्ति-सैनिक गाँव-गाँव के लोगों को ग्राम-स्वावलम्बन तथा आक्रमणकारी से असहयोग के लिए प्रेरित करेगा। आवश्यकता पड़ने पर इस प्रयत्न में शांति-सैनिक अपने प्राण अर्पण करने की तैयारी रखेगा और लोगों को भी वैसा करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

लेकिन इतना ही महत्त्वपूर्ण और इससे कहीं व्यापक कार्यक्रम होगा, सारे देश की शक्ति बढ़ाना। राष्ट्र की एकता और जनता का नीति धैर्य (मोरेल) उसका सबसे बड़ा संरक्षण है। इसके लिए राष्ट्र की आर्थिक और सामाजिक बुनियादों में न्याय और समत्व के नये मूल्यों की स्थापना करके उसे मजबूत बनाना होगा। सद्भाग्य से इस दिशा में अहिंसा कुछ प्रगति कर चुकी है। ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन ने देश के सामने एक ऐसा कार्यक्रम उपस्थित कर दिया है, जिसमें मानवीय मूल्य, वैज्ञानिकता तथा संरक्षण की त्रिविध शक्ति निहित है। आज की परिस्थिति में गाँव-गाँव में पंचायतों द्वारा अपने संरक्षण के कार्यक्रम के तौर पर यह दृढ़ संकल्प होना चाहिये कि हमारे गाँव में कोई बेरोजगार और निराश्रित नहीं रहेगा, भूमिहीनों को यथासम्भव भूदान देकर उनको ग्राम-परिवार में शामिल किया जायगा, उत्पादन के हर साधन का समुचित उपयोग होगा, किसी प्रकार की सामाजिक और आर्थिक जबरदस्ती नहीं होगी, गाँव के झगड़े गाँव में निपटाये जायेंगे, धार्मिक तथा अन्य अल्पमतियों को सुरक्षित रखा जायगा और गाँव का रक्षण गाँव के लोग स्वयं करेंगे। इसी प्रकार नगरों में भी वहाँ की परिस्थिति के अनुसार किया जाना चाहिये।

कहना नहीं होगा कि इस महान् कार्य की पूर्ति के लिए देश की समग्र अहिंसक शक्ति एकत्रित और संयोजित की जानी चाहिये। संकट और परीक्षा के इस अवसर पर विश्व-मैत्री की भावना को अक्षुण्ण रखते हुए राष्ट्रीय एकात्मता के निर्माण तथा अहिंसक प्रतिकार की क्षमता बढ़ाने के विविध कार्य में सहयोग देने के लिए अहिंसा में विश्वास रखने वाली देश की समस्त संस्थाओं, प्रवृत्तियों और व्यक्तियों का आवाहन है।

यह सद्भाग्य का विषय है कि आज संसार में ऐसे अनेक मनीषी, संस्थाएँ और समुदाय हैं, जिन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में भी शांति का प्रतिपादन बड़ी वीरता के साथ अपनी वाणी और कृति से किया है। ऐसे सारे व्यक्ति, संस्था, समुदाय तथा अखिल मानवता की अन्तरात्मा का इस कसौटी की घड़ी में हम आवाहन करते हैं और विश्वास करते हैं कि वे इस संघर्ष को त्वरित समाप्त कराने में अपनी सम्पूर्ण शक्ति अविलम्ब लगायेंगे।

सामने रखा कि समाज जीवन का दाता है, अतः वह उसका स्वामी है, हम जीवन पर से अपना अधिकार का त्याग करके समाज का अधिकार मानें तथा समाज के लिए जीवन बिताने का निश्चय करें, इसे उन्होंने जीवन दान कहा। समाज में अशांति सुलझाने के लिए उन्होंने राज्य की सेना और पुलिस पर सारा जिम्मा नहीं छोड़ा। उन्होंने स्वतंत्र रूप से समाज में शांति की जिम्मेदारी और चेतना उत्पन्न करके शांति सेना का निर्माण किया जो समाज के भीतर अशांति के निवारण और निराकरण के लिए जिम्मेदार होगी, उसका काम अशांति को दबाना नहीं होगा, वरन् शांति के काल में शांति के विचार का प्रचार करना और अशांति के काल में प्रेम और अहिंसा के संदेश व उदाहरण के द्वारा जन-मानस के उज्ज्वल पक्ष को उन्नत करना व उभाड़ना होगा, जिससे वह स्वयं ही अपने हीन और निम्न पक्ष का नियमन कर सके।

राजनीति का स्थान लोकनीति ले

विनोबाजी का अभिमत है कि राज्य का स्थान लोक ले और राजनीति का स्थान लोकनीति ले। राज्य सत्तानिष्ठ होता है और लोक स्नेह सिक्त तथा सेवानिष्ठ। इसी आधार पर कहा जा सकता है कि राजनीति सत्ता लिप्त होती है और लोकनीति सत्ता-मुक्त तथा सेवानिष्ठ होती है। राजनीति का आधार दलीय होता है, इसमें सत्ता प्राप्त करने के लिए गुटबंदी अनिवार्य हो जाती है। लोकतंत्र में तो यह दलबंदी व्यापक स्तर पर होने लगती है तथा समूचा समाज और राष्ट्र दो या अनेक दलों में विभक्त होकर टूटने लगता है, परन्तु लोकनीति दलविहीन होती है, वह समष्टि को इकाई और आधार मान कर चलती है। उसका सूत्र है—सबका हित और सबकी सेवा आत्मप्रयास से। राजनीति समाज को नेताओं और अनुयायियों के दो वर्गों में बाँटती है, जब कि लोकनीति सबको महत्त्व प्रदान करती है और सबमें नेतृत्व का गुण पैदा करने पर बल देती है। आधुनिक राजनीति के आधार प्रसिद्ध विद्वान बेन्थम के इस विचार पर टिके हैं कि राज्य का लक्ष्य अधिकतम व्यक्तियों का अधिकतम हित प्राप्त करना है, परन्तु लोकनीति अधिकतम के उपयोगितावादी दर्शन में विश्वास नहीं करती, एक ओर तो वह व्यक्ति के व्यक्तित्व को खंडित करके नहीं देखती और दूसरी ओर वह सामाजिक हितों में विषमता का दर्शन नहीं करती। इसी कारण से उसका मानना है कि व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास हो, उसके भीतर एक सुगठित [इन्टिग्रेटेड] व्यक्तित्व का निर्माण हो और सारे समाज में हित-साम्य की स्थापना हो, जिसका आधार सर्वानुमति और व्यक्तित्व की गरिमा हो। दार्शनिक काण्ट ने कहा है कि मानवीय-व्यक्तित्व को इस प्रकार मान दो कि वह व्यक्तित्व चाहे आपका अपना हो या किसी दूसरे व्यक्ति का कि वह सदा ही साध्य के रूप में रहे, कभी भी साधन के रूप में प्रयोग न किया जाय। समष्टि के हित के लिए एक भी व्यक्ति के हितों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आत्मबलिदान और आत्मनिषेध होगा, परन्तु अन्त प्रेरणा से। दमन या हानि-लाभ का व्यापारिक हिसाब मानवीय-व्यक्तित्व के साथ नहीं होगा।

गांधी और विनोबा विकसित व्यक्तित्व के दार्शनिक हैं और वे कभी यह नहीं भूलते कि अंततोगत्वा समाज का आधार मनुष्य है, राज्य भी आखिर मनुष्यों के चरित्र पर ही आधारित है, योजनाएं निस्तेज होती हैं। उनमें तेज का संचार व्यक्ति ही करता है। अतः यदि उसका व्यक्तित्व सुगठित और समाजनिष्ठ नहीं होगा तो राज्य कभी भी अपने सार्वजनिक लक्ष्यों को सिद्ध नहीं कर सकेगा। यही कारण है कि वे सत्ता की उपासना को अनैतिक कर्म बता कर उसकी निंदा करते हैं तथा सेवा की ओर जाग्रत-मानस को जीवन का चरम मूल्य मान कर उसकी प्रतिष्ठा करते हैं। राजनीति सत्ता की उपासना का शास्त्र है और लोकनीति आत्म विद्या का दर्शन। लोकजागरण के लिए राजनीति की नहीं, लोकनीति की आवश्यकता है। यही है सर्वोदय का मानवतावाद।

——

शांति-यात्री की डायरी

अफगानिस्तान में सर्वोदय-कार्य के लिए अनुकूलता

सतीश कुमार

अफगानिस्तान दो करोड़ की आबादी का एक छोटा, पर अत्यंत सुंदर देश है। लगभग दो महीने की पदयात्रा के बाद मुझे लगा कि इस मनोरम देश को यदि कोई पिछड़ा हुआ, अविकसित देश कहता है, तो उसके देखने का नजरिया केवल ऊपरी है। यह सही है कि इस देश में बड़े-बड़े उद्योग और कारखानों का अभाव है। यह भी सही है कि इस देश में भारी मशीनें व बिजली का उत्पादन अत्यल्प है। यह भी सही है कि यह देश अभी तक तथाकथित भौतिक, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक प्रगति की दौड़ में योरप के देशों के साथ कदम नहीं मिला पा रहा है।

परन्तु ये सारे लक्षण किसी देश को पिछड़ा हुआ या अविकसित कहने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। आज औद्योगीकरण के कारण जिस तरह शहर खूबसूरत परिधान पहन कर गाँवों के शोषण पर इठला रहे हैं, वह कोई प्रगति का लक्षण नहीं माना जा सकता। रेलें, मोटरें, विमान, सड़कें, मशीनें, कारखाने, इन सबका आधार आज तो गाँवों का शोषण ही है।

व्यक्तिगत स्वामित्व तथा व्यक्तिगत पूँजीवाद के कारण थोड़े-से शहरों की चमक-दमक, प्रगति एवं आधुनिकता के पीछे हजारों छोटे छोटे गाँवों की चित्कार छिपी है। श्रमिक के श्रम का उपहास छिपा है। इसीलिए गांधीजी ने बड़े कारखानों के सामने चरखा खड़ा किया, ग्रामोद्योग खड़े किये और औद्योगीकरण के फलस्वरूप पैदा होने वाले "लिविंग स्टैंडर्ड" के भूत को भगाने का प्रयत्न किया।

अफगानिस्तान में बापू के सपने की विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का शास्त्र बड़ी आसानी से अपनी उपयोगिता सिद्ध कर सकता है। गाँवों में आज भी चरखा जीवित है। हमने पदयात्रा के बीच गाँवों में देखा कि स्त्रियाँ करघे पर कपड़ा तथा कंबल बुन रही हैं। हमारे लिए यह बड़ी खुशी की बात थी। हम उन्हें यह बताते थे कि हमने जो कपड़े पहन रखे हैं, वे हाथ से बनाये हुए हैं, तो वे ग्रामीण बड़े प्रसन्न होते थे और कहते थे कि "क्या आपके देश में मशीन के कपड़े से यह कपड़ा ज्यादा सस्ता है?" यह सवाल बाजार ने पैदा किया। यद्यपि उनके जीवन में बाजार बहुत कम है। पर जो शहर जाता है, वह अमेरिका से आया हुआ सेकंड हैंड कपड़ा बहुत सस्ते में ले आता है। इस सेकंड हैंड कपड़े ने लोगों को न केवल श्रम विमुख बनाना शुरू किया है, बल्कि लोगों की रुचि को भी विकृत करना शुरू किया है। अभी अफगानिस्तान में कपड़े की मिलें ज्यादा नहीं हैं। आम तौर से भेड़ पालन यहाँ के किसानों का प्रधान धंधा है। अफगानिस्तान की भेड़ें बहुत ऊँची, मोटी और घने ऊनवाली होती हैं। एक-एक आदमी हजारों भेड़ें रखता है। इन भेड़ों से मिलने वाली ऊन का महत्त्व इन किसानों के लिए सर्वाधिक है, क्योंकि अफगानिस्तान बहुत ठंडा देश है। यदि अंबर चरखे के बारे में तथा कताई-बुनाई के दूसरे विकसित तरीकों के बारे में यहाँ जानकारी दी जाय, तो बिना किसी खास प्रयत्न और मेहनत के ये लोग उन तरीकों को सीख सकते हैं।

आज किसी भी देश के लिए भारी उद्योगों की स्थापना एक कठिन काम है। विदेशी कर्ज, विदेशी मुद्रा, पूँजी का लगना और इन सबके बाद तकनीकी दिक्कतें पैदा होती हैं। यह सब करने के बाद देश को एक उद्योग की स्थापना के फलस्वरूप हजारों लोगों की बेकारी के प्रश्न का सामना करना पड़ता है। अफगानिस्तान के सामने भी यही प्रश्न है।

गांधीजी ने शोषण के विरुद्ध जो सबसे बड़ा सूत्र दिया, वह ग्रामोद्योग का सूत्र है। यद्यपि भारत की परिस्थिति में यह सूत्र बड़ा कारगर सिद्ध हुआ, पर इस सूत्र का महत्त्व उन सभी देशों के लिए है, जो समाज से आलस्य, बेकारी तथा शोषण को समाप्त करके श्रम को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। जिन्होंने गांधी विचार को समझा है, उनका यह कर्तव्य है कि वे इस विचार की रश्मियाँ वहाँ भी पहुँचायें, जहाँ लोगों को इस विचार की आवश्यकता है। यह सोचना शायद ठीक नहीं होगा कि भारत में जब तक यह विचार पूरी तरह चरितार्थ न हो जाय, तब तक बाहर नजर नहीं डालनी चाहिए।

अफगानिस्तान में गांधी विचार की जानकारी पहुँचाना हमारा कर्तव्य है, उसके बाद वहाँ के लोग यह सोचें कि इस विचार में से कहाँ तक, कौनसी बात उनके लिए अनुकूल है और स्वीकार्य है। पहले तो वहाँ की योजना बनाने वाली समिति के पास हमारा साहित्य पहुँचे, फिर वहाँ से कोई एक अर्थशास्त्री भारत में चलने वाली ग्रामोद्योग एवं विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था की पद्धति को समझने के लिए आये और तब भारत से ग्रामोद्योग का शास्त्र समझने वाला कोई एक व्यक्ति अफगानिस्तान में ग्रामोद्योगों की क्या-क्या संभावनाएँ हैं, इसका अध्ययन करे। इन दोनों व्यक्तियों के अध्ययन के आधार पर जो निष्कर्ष निकले वह अफगान-सरकार एवं जनता के समक्ष रख दिया जाय। उस पर वहाँ की सरकार अथवा जनता विचार करे।

हमें तो अपनी पदयात्रा के बीच अनेक बार यह महसूस हुआ कि अफगानिस्तान का क्षेत्र गांधीवादी अर्थ रचना के लिए अत्यंत अनुकूल है और केवल वहाँ के अर्थ-शास्त्रज्ञों तक इस विचार की जानकारी पहुँचाने की आवश्यकता है।

——

सामने रखा कि समाज जीवन का दाता है, अतः वह उसका स्वामी है, हम जीवन पर से अपना अधिकार का त्याग करके समाज का अधिकार मानें तथा समाज के लिए जीवन बिताने का निश्चय करें, इसे उन्होंने जीवन-दान कहा। समाज में अशांति सुलझाने के लिए उन्होंने राज्य की सेना और पुलिस पर सारा जिम्मा नहीं छोड़ा। उन्होंने स्वतंत्र रूप से समाज में शांति की जिम्मेदारी और चेतना उत्पन्न करके शांति सेना का निर्माण किया जो समाज के भीतर अशांति के निवारण और निराकरण के लिए जिम्मेदार होगी, उसका काम अशांति को दबाना नहीं होगा, वरन् शांति के काल में शांति के विचार का प्रचार करना और अशांति के काल में प्रेम और अहिंसा के संदेश व उदाहरण के द्वारा जन-मानस के उज्ज्वल पक्ष को उन्नत करना व उभाड़ना होगा, जिससे वह स्वयं ही अपने हीन और निम्न पक्ष का निग्रह कर सके।

राजनीति का स्थान लोकनीति ले

विनोबाजी का अभिमत है कि राज्य का स्थान लोक ले और राजनीति का स्थान लोकनीति ले। राज्य सत्तानिष्ठ होता है और लोक स्नेह सिक्त तथा सेवानिष्ठ। इसी आधार पर कहा जा सकता है कि राजनीति सत्ता लिप्त होती है और लोकनीति सत्ता-मुक्त तथा सेवानिष्ठ होती है। राजनीति का आधार दलीय होता है, इसमें सत्ता प्राप्त करने के लिए गुटबंदी अनिवार्य हो जाती है। लोकतंत्र में तो यह दलबंदी व्यापक स्तर पर होने लगती है तथा समूचा समाज और राष्ट्र दो या अनेक दलों में विभक्त होकर टूटने लगता है, परन्तु लोकनीति दलविहीन होती है, वह समष्टि को इकाई और आधार मान कर चलती है। उसका सूत्र है—सबका हित और सबकी सेवा आत्मप्रयास से। राजनीति समाज को नेताओं और अनुयायियों के दो वर्गों में बाँटती है, जब कि लोकनीति सबको महत्त्व प्रदान करती है और सबमें नेतृत्व का गुण पैदा करने पर बल देती है। आधुनिक राजनीति के आधार प्रसिद्ध विद्वान बेन्थम के इस विचार पर टिके हैं कि राज्य का लक्ष्य अधिकतम व्यक्तियों का अधिकतम हित प्राप्त करना है, परन्तु लोकनीति अधिकतम के उपयोगितावादी दर्शन में विश्वास नहीं करती, एक ओर तो वह व्यक्ति के व्यक्तित्व को खंडित करके नहीं देखती और दूसरी ओर वह सामाजिक हितों में विषमता का दर्शन नहीं करती। इसी कारण से उसका मानना है कि व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास हो, उसके भीतर एक सुगठित [इंटिग्रेटेड] व्यक्तित्व का निर्माण हो और सारे समाज में हित-साम्य की स्थापना हो, जिसका आधार सर्वानुमति और व्यक्तित्व की गरिमा हो। दार्शनिक काण्ट ने कहा है कि मानवीय-व्यक्तित्व को इस प्रकार मान दो कि वह व्यक्तित्व चाहे आपका अपना हो या किसी दूसरे व्यक्ति का कि वह सदा ही साध्य के रूप में रहे, कभी भी साधन के रूप में प्रयोग न किया जाय। समष्टि के हित के लिए एक भी व्यक्ति के हितों की उपेक्षा नहीं की जा सकती। आत्मबलिदान और आत्मनिरोध होगा, परन्तु अन्तःप्रेरणा से। दमन या हानि-लाभ का व्यापारिक हिसाब मानवीय-व्यक्तित्व के साथ नहीं होगा।

गांधी और विनोबा विकसित व्यक्तित्व के दार्शनिक हैं और वे कभी यह नहीं भूलते कि अन्ततोगत्वा समाज का आधार मनुष्य है, राज्य भी आखिर मनुष्यों के चरित्र पर ही आधारित है, योजनाएँ निस्तेज होती हैं। उनमें तेज का संचार व्यक्ति ही करता है। अतः यदि उसका व्यक्तित्व सुगठित और समाजनिष्ठ नहीं होगा तो राज्य कभी भी अपने सार्वजनिक लक्ष्यों को सिद्ध नहीं कर सकेगा। यही कारण है कि वे सत्ता की उपासना को अनैतिक कर्म बता कर उसकी निंदा करते हैं तथा सेवा को और जाग्रत मानस को जीवन का चरम मूल्य मान कर उसकी प्रतिष्ठा करते हैं। राजनीति सत्ता की उपासना का शास्त्र है और लोकनीति आत्मनिष्ठा का दर्शन। लोकजागरण के लिए राजनीति की नहीं, लोकनीति की आवश्यकता है। यही है सर्वोदय का मानवतावाद।

—

शांति-यात्री की डायरी

अफगानिस्तान में सर्वोदय-कार्य के लिए अनुकूलता

सतीश कुमार

अफगानिस्तान दो करोड़ की आबादी का एक छोटा, पर अत्यंत सुंदर देश है। लगभग दो महीने की पदयात्रा के बाद मुझे लगा कि इस मनोरम देश को यदि कोई पिछड़ा हुआ, अविकसित देश कहता है, तो उसके देखने का नजरिया केवल ऊपरी है। यह सही है कि इस देश में बड़े-बड़े उद्योग और कारखानों का अभाव है। यह भी सही है कि इस देश में भारी मशीनें व बिजली का उत्पादन अत्यल्प है। यह भी सही है कि यह देश अभी तक तथाकथित भौतिक, वैज्ञानिक एवं औद्योगिक प्रगति की दौड़ में योरप के देशों के साथ कदम नहीं मिला पा रहा है।

परन्तु ये सारे लक्षण किसी देश को पिछड़ा हुआ या अविकसित कहने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। आज औद्योगीकरण के कारण जिस तरह शहर खूबसूरत परिधान पहन कर गाँवों के शोषण पर इठला रहे हैं, वह कोई प्रगति का लक्षण नहीं माना जा सकता। रेलें, मोटरें, विमान, सड़कें, मशीनें, कारखाने, इन सबका आधार आज तो गाँवों का शोषण ही है।

व्यक्तिगत स्वामित्व तथा व्यक्तिगत पूंजीवाद के कारण थोड़े-से शहरों की चमक-दमक, प्रगति एवं आधुनिकता के पीछे हजारों छोटे छोटे गाँवों की चित्कार छिपी है। श्रमिक के श्रम का उपहास छिपा है। इसीलिए गांधीजी ने बड़े कारखानों के सामने चरखा खड़ा किया, ग्रामोद्योग खड़े किये और औद्योगीकरण के फलस्वरूप पैदा होने वाले "लिविंग स्टैंडर्ड" के भूत को भगाने का प्रयत्न किया।

अफगानिस्तान में बापू के सपने की विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था का शास्त्र बड़ी आसानी से अपनी उपयोगिता सिद्ध कर सकता है। गाँवों में आज भी चरखा जीवित है। हमने पदयात्रा के बीच गाँवों में देखा कि स्त्रियाँ चरखे पर कपड़ा तथा कम्बल बुन रही हैं। हमारे लिए यह बड़ी खुशी की बात थी। हम उन्हें यह बताते थे कि हमने जो कपड़े पहन रखे हैं, वे हाथ से बनाये हुए हैं, तो वे ग्रामीण बड़े प्रसन्न होते थे और कहते थे कि "क्या आपके देश में मशीन के कपड़े से यह कपड़ा ज्यादा सस्ता है?" यह सवाल बाजार ने पैदा किया। यद्यपि उनके जीवन में बाजार बहुत कम है। पर जो शहर जाता है, वह अमेरिका से आया हुआ सेकंड हैंड कपड़ा बहुत सस्ते में ले आता है। इस सेकंड हैंड कपड़े ने लोगों को न केवल श्रम-विमुख बनाना शुरू किया है, बल्कि लोगों की रुचि को भी विकृत करना शुरू किया है। अभी अफगानिस्तान में कपड़े की मिलें ज्यादा नहीं हैं। आम तौर से भेड़पालन यहाँ के किसानों का प्रधान धंधा है। अफगानिस्तान की भेड़ें बहुत ऊँची, मोटी और घने ऊनवाली होती हैं। एक एक आदमी हजारों भेड़ें रखता है। इन भेड़ों से मिलने वाली ऊन का महत्त्व इन किसानों के लिए सर्वाधिक है, क्योंकि अफगानिस्तान बहुत ठंडा देश है। यदि अम्बर चरखे के बारे में तथा कताई-बुनाई के दूसरे विकसित तरीकों के बारे में यहाँ जानकारी दी जाय, तो बिना किसी खास प्रयत्न और मेहनत के ये लोग उन तरीकों को सीख सकते हैं।

आज किसी भी देश के लिए भारी उद्योगों की स्थापना एक कठिन काम है। विदेशी कर्ज, विदेशी मुद्रा, पूंजी का रुकना और इन सबके बाद तकनीकी दिक्कतें पैदा होती हैं। यह सब करने के बाद देश को एक उद्योग की स्थापना के फलस्वरूप हजारों लोगों की बेकारी के प्रश्न का सामना करना पड़ता है। अफगानिस्तान के सामने भी यही प्रश्न है।

गांधीजी ने शोषण के विरुद्ध जो सबसे बड़ा सूत्र दिया, वह ग्रामोद्योग का सूत्र है। यद्यपि भारत की परिस्थिति में यह सूत्र बड़ा कारगर सिद्ध हुआ, पर इस सूत्र का महत्त्व उन सभी देशों के लिए है, जो समाज से आलस्य, बेकारी तथा शोषण को समाप्त करके श्रम को प्रतिष्ठित करना चाहते हैं। जिन्होंने गांधी-विचार को समझा है, उनका यह कर्तव्य है कि वे इस विचार की रश्मियाँ वहाँ भी पहुँचायें, जहाँ लोगों को इस विचार की आवश्यकता है। यह सोचना शायद ठीक नहीं होगा कि भारत में जब तक यह विचार पूरी तरह चरितार्थ न हो जाय, तब तक बाहर नजर नहीं डालनी चाहिए।

अफगानिस्तान में गांधी विचार की जानकारी पहुँचाना हमारा कर्तव्य है, उसके बाद वहाँ के लोग यह सोचें कि इस विचार में से कहाँ तक, कौनसी बात उनके लिए अनुकूल है और स्वीकार्य है। पहले तो वहाँ की योजना बनाने वाली समिति के पास हमारा साहित्य पहुँचे, फिर वहाँ से कोई एक अर्थशास्त्री भारत में चलने वाली ग्रामोद्योग एवं विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था की पद्धति को समझने के लिए आये और तब भारत से ग्रामोद्योग का शास्त्र समझने वाला कोई एक व्यक्ति अफगानिस्तान में ग्रामोद्योगों की क्या-क्या संभावनाएँ हैं, इसका अध्ययन करे। इन दोनों व्यक्तियों के अध्ययन के आधार पर जो निष्कर्ष निकले वह अफगान-सरकार एवं जनता के समक्ष रख दिया जाय। उस पर वहाँ की सरकार अथवा जनता विचार करे।

हमें तो अपनी पदयात्रा के बीच अनेक बार यह महसूस हुआ कि अफगानिस्तान का क्षेत्र गांधीवादी अर्थ रचना के लिए अत्यंत अनुकूल है और केवल वहाँ के अर्थ शास्त्रियों तक इस विचार की जानकारी पहुँचाने की आवश्यकता है।

—

'सेवक' नहीं, 'मित्र' बनें

• राममूर्ति

अगर वास्तव में स्थान का मन पर कोई प्रभाव पड़ता हो तो गांधी-विचार में श्रद्धा रखने वाले कार्यकर्ताओं के सम्मेलन के लिए श्रावस्ती जैसा उपयुक्त स्थान दूसरा नहीं हो सकता था। श्रावस्ती महावीर की "अनाक्रमणशील जीवन" की और बुद्ध की 'निरुपाधिक मानव' की साधना भूमि रहा है। क्यों एक-जीव दूसरे पर आक्रमण करे ? क्या अस्तित्व के लिए आक्रमण आवश्यक है ? क्या मनुष्य सत्ता और सम्पत्ति, जाति एवं धर्म विद्या एवं अधिकार से ही प्रतिष्ठित होता है ? उसकी प्रतिष्ठा के लिए उपाधियाँ क्यों आवश्यक है ? क्या मनुष्य अपने आप में प्रतिष्ठा का पात्र नहीं है ?

श्रावस्ती की इस पवित्र भूमि में इन प्रश्नों का उत्तर इन दो महापुरुषों ने दिया है। ये प्रश्न हर युग में नये रूप में उठते हैं और हर युग को उनका उत्तर ढूँढ़ना पड़ता है। मार्क्स ने ढूँढ़ा, गांधी ने ढूँढ़ा, विनोबा ढूंढ़ रहे हैं। हम लोग भी आज इस जगह नयी भूमिका में पुराने उत्तर को दुहराने और नये उत्तर की तलाश करने इकट्ठे हुए हैं।

आज की हिंसा को अंगुलिमाल की तरह केवल उंगलियों की माला पहनने से संतोष नहीं है। वह अब मनुष्य जाति के सम्पूर्ण विनाश पर उतारू है। यह युग है सूक्ष्मतम हिंसा का, इसलिए हिंसा जितनी सूक्ष्म होगी, उसके मुकाबले के लिए अहिंसा को उतना ही अधिक सौम्य होना पड़ेगा। इस दृष्टि में आज के युग की मूल समस्या का समाधान है, इसकी प्रतीति गांधी ने जगायी थी और अब विनोबा उसकी पूरी साधना प्रकट कर रहे हैं।

यहाँ एक प्रश्न उठता है। हम सब गांधी स्मारक निधि के कार्यकर्ता हैं, इसलिए बार-बार गांधी का नाम लेते हैं, उनके नाम से काम करते हैं, उनके नाम से घर बनाते हैं ! लेकिन सोचने की बात है कि क्या किसी महापुरुष के नाम की सीमा में सत्य को बाँध देने से सत्य की खोज पूरी होगी ? गांधी की यह बहुत बड़ी देन थी कि उसने सत्य को ग्रंथ और गुरु, दोनों से मुक्त किया और मुक्त करके सत्य को सामान्य व्यक्ति की अन्तरात्मा का विषय बना दिया। मेरा अनुरोध है कि सत्य को गांधी के नाम से न जोड़ कर हम लोग अपनी खोज, प्रतीति और निष्ठा का विषय बनायें, सत्य व्यक्ति, गुरु, ग्रंथ या स्थान की सीमा में नहीं बाँधा जा सकता। अगर बाँधा जायगा तो अनर्थ का कारण बनेगा।

अपनी-अपनी परिस्थिति में हर महापुरुष अपने-अपने ढंग से मूल प्रश्नों का जो उत्तर देता है, उसे लेकर हम छोटे-छोटे कार्यकर्ता घबड़ा जाते हैं। विनोबा के इस कथन ने कि गांधी की अहिंसा 'आउट आफ डेट' हो गयी, कितने मित्रों को चौंका दिया था। किसी दिन स्वयं विनोबा की सौम्य अहिंसा 'आउट-आफ डेट' हो जायगी। इतिहास के विकास में कोई 'सत्य' अपना एक स्वरूप हमेशा कायम नहीं रख सकता, नहीं तो वह सत्य नहीं रह जायगा। जिन अनाक्रमणशील जीवन और निरुपाधिक मानव की साधना की धारा महावीर और बुद्ध ने बहायी वह आज तक बहती आ रही है और न जाने कब तक बहती रहेगी और उस साधना के नित्य नये रूप प्रकट करने के लिए न जाने कितने गांधी और विनोबा प्रकट होते रहेंगे। हमारा कितना बड़ा भाग्य है कि हम छोटे लोगों ने अपने छोटे-छोटे कामों के द्वारा, लेकिन चेतन बुद्धि से, अपने को इतिहास की इस अखण्ड धारा के साथ जोड़ रखा है। इसलिए बात घबड़ाने की नहीं है, बल्कि हम जहाँ हैं, जिस काम में हैं, वहीं ही सत्य को परखने की और उस पर अमल करने की है।

इतिहास के साथ चलने में हम अकेले नहीं हैं। सत्य की खोज और सर्वोदय की आकांक्षा कुछ लोगों तक सीमित न रह कर विश्वव्यापी हो गयी है। सह अस्तित्व, हरएक को एक वोट, जीविका का अधिकार आदि जितनी भी बातें शांति, समाजवाद और लोकतंत्र के नाम से प्रतिष्ठित हो रही हैं वे सब मनुष्य को आक्रमण और उपाधि से मुक्त करने की दिशा में ले जाने वाली हैं। अब कोई देश या समुदाय ऐसा नहीं है, जो विज्ञान की सार्वत्रिक सुविधा और लोकतंत्र के समान अवसर से वंचित रहने के लिए तैयार हो और 'निरुपाधिक मानव' की इस मांग को जमाना तेजी से स्वीकार भी करता जा रहा है। इसलिए मैं कहता हूँ कि सर्वोदय केवल भारतीय नहीं, जागतिक आन्दोलन है और इतिहास का अगला कदम है। यह और भी कारण है कि हम अपने सर्वोदय को अपने गाँव, राज्य या देश की सीमाओं में बाँध कर न रखें। इस भूमिका से सोचने पर हमें चारों तरफ दिखाई देने वाली सर्वनाश की परिस्थिति निराश नहीं करेगी। सर्वनाश की परिस्थिति और सर्वोदय की आकांक्षा, इस उलझन में से ही हमें अपना रास्ता बनाना है। हमारे काम की यही मुख्य कठिनाई है।

यह ठीक है कि हम अपनी नंगी आँखों से चारों ओर हिंसा और असत्य का नंगा नाच देख रहे हैं। उसका कारण है। कारण यह है कि आज का समाज सत्ता, सम्पत्ति और संतति के परंपरागत 'मूल्यों' पर चल रहा है। पार्टी, पूंजी और परिवार के शिकंजों में जकड़ा हुआ समाज छटपटा तो रहा है, लेकिन निकल नहीं पा रहा है। गांधी ने कहा कि 'जब तक हम सत्ता की जगह सेवा, पूँजी की जगह श्रम और परिवार की जगह समाज' को प्रतिष्ठित नहीं करेंगे तब तक हिंसा, अनीति और शोषण को जड़ें नहीं कटेंगी और नया समाज नहीं बनेगा। स्वामित्व-विसर्जन के आधार पर लोकशक्ति से बने ग्राम-स्वराज्य द्वारा विनोबा ऐसे ही नये समाज की रूपरेखा प्रस्तुत कर रहे हैं। गाँव-गाँव में सत्ता, सम्पत्ति और संतति के अति संकीर्ण, सीमित और स्वार्थपूर्ण मूल्यों का निराकरण कैसे होगा, यही ग्रामसेवा का लक्ष्य और कार्यक्रम का जनाधारित आधार है। इसके सिवाय दूसरी कोई दिशा हमें इतिहास से दूर ले जायगी और हमारी तपस्या को निष्फल बनायेगी।

प्रश्न यह है कि आज के समाज का परिवर्तन सब चाहते हैं, लेकिन कौन करें, कैसे करें, यह साफ नहीं हो रहा है। मार्क्स ने समाज-परिवर्तन की जिम्मेदारी मजदूरों पर सौंपी। हम किस पर सौंपें ? हमें किसी पेशे या धन्धे के सीमित समुदाय की 'क्रान्ति' से संतोष नहीं है। अगर हमें सबका समाज बनाना है, तो सबकी कोशिश से बनना चाहिए। जब हम सबकी बात सोचेंगे तो हमें फौरन यह बात सूझेगी कि यह काम संघर्ष से नहीं होने वाला है। इसके लिए हमें हृदय-परिवर्तन यानी 'विचार-क्रान्ति' की प्रक्रिया सोचनी होगी। 'विज्ञान और लोकतंत्र' की भूमिका में संघर्ष की बात सोचना समाज का अहित सोचना है। इतना ही नहीं, संघर्ष और संहार में सिर्फ एक कदम का फासला है। इसीलिए विनोबा सबसे अधिक विचार-क्रान्ति पर जोर देते हैं। क्रान्तियाँ पहले विचार में ही होती हैं। पहले के जमाने में क्रांतिकारी के विचार को सत्ता से टक्कर लेनी पड़ती थी, लेकिन लोकतंत्र में विचार अपनी व्यापकता के बल से सत्ता को झुका लेता है। गांधी ने सत्याग्रह का अमोघ अस्त्र नागरिक के हाथ में दे दिया है, जिसके सामने कोई भी सत्ता निरुपाय हो जाती है।

हम इतने साथी गाँवों में बैठ कर तरह-तरह के रचनात्मक कार्य करते हैं। बापू कहते थे कि 'सब रचनात्मक कार्य नयी तालीम में विलीन होते हैं और सबकी परिणति संगठन में होती है।' नयी तालीम का पहला अर्थ है विचार क्रान्ति ! क्या हम देखते हैं कि हमारे रचनात्मक कार्यों का यह अर्थ प्रकट हो ! अभी हमारा ढंग शैक्षणिक है तो निश्चित रूप से लोगों में नयी प्रतीति जगेगी और विचार-परिवर्तन होगा, लेकिन देखा जाता है कि हम या तो निष्प्राण भूतदया के कामों में फंस कर रह जाते हैं या अपने तरीके से संघर्ष या दबाव की भूमिका बना लेते हैं। यह ढंग लोकक्रान्ति का नहीं है। नतीजा यह होता है कि काम 'सर्वोदय' का होता है और फल 'सर्वनाश' का निकलता है।

जब हम ग्राम स्वराज्य की बात करते हैं तो हमें अपने कार्यक्रम और सरकार के विकास-कार्यक्रम में जो बुनियादी भेद है, उसे साफ-साफ समझ लेना चाहिए। आप जानते हैं, १ अप्रैल सन् १९५१ से प्रथम पंचवर्षीय योजना का सूत्रपात हुआ और केवल १७ दिन बाद, १८ अप्रैल से भूदान की गंगा फूटी। गांधी के एक उत्तराधिकारी ने विकास की योजना शुरू की—इतिहास में इस बात का महत्त्व कम नहीं, कुछ दिन बाद प्रकट होगा—दूसरे ने भूदान द्वारा समाज-क्रान्ति का अभियान प्रारम्भ किया। दोनों में अन्तर क्या है ? सरकार विकास के कार्य तो करती है, लेकिन समाज के प्रचलित ढाँचे को स्वीकार करती है। हमारे देश की विकास-योजना में पंचायत, सहकारी समिति और स्कूल मुख्य तत्त्व हैं। विनोबा के "ग्राम-स्वराज" में पहला कदम है ग्राम-स्वामित्व, ताकि जो भी काम हो वह नये सम्बन्धों की भूमिका में हो। हमें तय कर लेना चाहिए कि हमारी क्या भूमिका होगी—विकास की या क्रान्ति की ! क्रान्ति में विकास ही विकास है, लेकिन केवल विकास में क्रान्ति नहीं है। 'विनोबा की क्रान्ति' की पहली कोशिश यह है कि मनुष्य मनुष्य को पहचाने और अपनी भक्ति को परिवार और जाति से ऊपर उठा कर गाँव तक ले जाय। यह क्रान्ति आरोहण की प्रक्रिया है, बुनियादी शिक्षण का काम है। क्या हमारे द्वारा अपने क्षेत्र में यह शिक्षण हो रहा है ? क्या हम लोगों में यह आशा और विश्वास भर रहे हैं कि नये समाज में ही अभाव, अन्याय और अज्ञान से मुक्ति सम्भव है, क्योंकि इनका स्रोत सत्ता, सम्पत्ति और संतति की समाज-रचना में है।

इस दिशा में प्रारम्भिक कदम के रूप में तीन बातें सोची जा सकती हैं।

(१) शांति-रक्षा का कार्य (२) उत्पादन-वृद्धि (३) संस्कार शिक्षण।

इनको सामने रख कर हम चाहें जो कार्यक्रम बनायें, लेकिन इतना ध्यान रखना होगा कि हम गाँव वालों पर कोई बना-बनाया कार्यक्रम लाद नहीं सकते, केवल उन्हें उद्बुद्ध कर सकते हैं। जैसे-जैसे वे उद्बुद्ध होते जायेंगे वे बावजूद आसपास के विरोधों के, कुछ ऐसे क्षेत्र निकाल लेंगे, जिनमें सामान्यतः गाँव की रुचि हो और उसकी संगठित शक्ति लगे। लेकिन उद्बुद्ध करने के तरीके में गाँव के एक-एक परिवार का मित्र बनने की कोशिश करनी होगी। जो परिवारों का मित्र है वह सही गाँव का सेवक या सहायक होगा। और मित्र वही है, जो अपने मित्र की समस्या को अपनी समस्या माने। अब जनता शासक के आदेश, संन्यासी के उपदेश और सेवकों की सेवा, सबसे ऊब गयी है। इनमें से सभी उसके हृदय को छूने में असमर्थ हैं, वह प्रतीक्षा कर रही है 'मित्र' की। अब समय है कि हम सब 'मित्र' की हैसियत लेकर गाँव में जायें और बाकी सब उपाधियाँ भूल जायें।

[उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि के श्रावस्ती सम्मेलन में दिये गये प्रवचन के आधार पर।] ••

अब तक के सर्वोदय-सम्मेलन और उनके अध्यक्ष

श्री राजेन्द्र बाबू
१९४९
राऊ (मध्यप्रदेश)

श्री काका कालेलकर
१९५०
अनगुल (उड़ीसा)
१९५१
शिवरामपल्ली (हैदराबाद)

श्री श्रीकृष्णदास जाजू
१९५२
सेवापुरी (उत्तर प्रदेश)

श्री धीरेन्द्र मजूमदार
१९५३
चांडिल (बिहार)

श्री आशादेवी आर्यनायकम्
१९५४
बोधगया (बिहार)

श्री रविशंकर महाराज
१९५५
जगन्नाथपुरी (उड़ीसा)

श्री अप्पासाहब पटवर्धन
१९५६
कांचीपुरम (तमिलनाड)

श्री दादा धर्माधिकारी
१९५७
कालडी (केरल)

श्रीमती रमादेवी चौधरी
१९५८
पंढरपुर (महाराष्ट्र)

श्री के० केलप्पन
१९५९
अजमेर (राजस्थान)

आचार्य हरिहर दास
१९६०
सेवाग्राम (महाराष्ट्र)

श्री जयप्रकाश नारायण
१९६१
रंगापुर (आंध्र)

श्री ई० डब्लू० आर्यनायकम्
१९६२
वेडछी
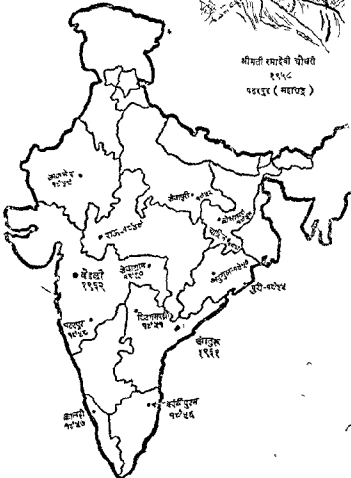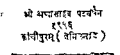
विनोबा की पाकिस्तान-पदयात्रा की डायरी : ५

"कहाँ हैं वे सीमाएँ और कहाँ हैं वे बंधन ?"

कालिन्दी

सैयदपुर छोड़ कर यात्रा आगे निकली, रफ्तार काफी तेज थी। अंधेरे में एक बुढ़िया लालटेन लेकर इधर-उधर देख रही थी—'कहाँ है रे बाबा !' बाबा रुक गये। बुढ़िया के कंधे पर हाथ रखा। लालटेन के प्रकाश में बाबा का चेहरा परखते हुए बुढ़िया बोली, "बाबा, यहाँ शिव-मंदिर है, दर्शन के लिए चलिये।" मुझे मालूम था, बाबा नहीं जायेंगे। ऐसे प्रसंग मैंने देखे थे। लेकिन आज—"कितनी दूर है मंदिर !" बुढ़िया ने इशारे से दिखाया और बाबा उस दिशा से निकल पड़े। मैं दंग रह गयी ! बुढ़िया की प्रतिष्ठा का संरक्षण हुआ।

आज दिनाजपुर जिले में प्रवेश किया। यहाँ 'एस० डी० ओ०' यात्रा में बहुत रस ले रहे हैं। एक सुन्दर स्थान पर, छोटे-से कमरे में बाबा का निवास था। नहा कर मैं बाबा के कमरे में गयी। वह बाबा का आराम का समय होता है, इसलिए धीरे से अंदर प्रवेश किया। सोचा, बाबा सोये होंगे। लेकिन बाबा एक मुसलमान सज्जन के साथ बातें कर रहे थे। बाबा की खटिया पर ही वे बैठे थे और बड़े मजे से बातें हो रही थीं। मुझे हँसी आयी ! कैसी बातें हो रही हैं, जैसे दो साथी बहुत दिन से मिले हैं !

बाबा मुस्करा रहे थे और हम लोगों को कह रहे थे, "आप हमारे साथ नागपुर-जेल में थे। छह महीने हम साथ रहे। दिगम्बाद, वर्धा में आप रहते थे। बाद में आप अपने काम के लिए कलकत्ता गये और वहाँ से फिर पाकिस्तान गये। बहुत अच्छा हुआ, आप हमसे मिले।" ओह, अब समझी ! मैंने मजाक में कल्पना की और वह ठीक निकली।

वे सज्जन बोले, "जी हाँ, मुझे तो सब कह रहे थे कि आपको ये कैसे पहचानेंगे ? लेकिन मुझे विश्वास था। घर में कुछ अड़चनें थीं, इसलिए जल्दी नहीं आ सका।

"आपसे मैं दरख्वास्त करूँगा कि यहाँ जनता को आप प्रेमदान और सेवादान का संदेश दीजिये। सब भाषा-धर्म-जाति के नाम पर बँट गये हैं। बापू के बाद आप ही में यह शक्ति है, जो इसको रोक सकती है।

"आपके कुरान के बारे में यहाँ बहुत टीका सुनी। मैंने कहा, विनोबाजी के मुँह से ऐसा लफ्ज ही नहीं निकल सकता, जो इस्लाम के खिलाफ हो।"

"इस्लाम की सेवा उसमें भरी है। आप उसका प्रचार कीजिये।"—अब बाबा मेरी तरफ देख कर कहने लगे, "तुम इनके साथ मराठी में बातें करो।" जनाब साहब ने मेरे साथ मराठी में बातें की और हम खूब हँसे ! मैंने कभी कल्पना नहीं की थी कि पाकिस्तान में, पूर्व बंगाल के एक देहात में एक मुसलमान सज्जन मराठी में मुझसे बातें करेंगे।

अब तो यात्रा की समाप्ति का समय आने लगा है। ऐसे समय जनता बाबा से क्या सुनेगी ? अनेक विचार मन में आ गये। आज कौनसा आता है ? क्षितिज का बर्तुल बढ़ता ही है। करीब पंद्रह हजार लोग थे—शान्त, शांत। मैदान भी भव्य, मंच भी भव्य और सभा भी भव्य ! विचारों में भी भव्यता का ही दर्शन हुआ।

"...आज दुनिया बहुत छोटी बन रही है। पुराने जमाने में दुनिया की जानकारी नहीं रहती थी। इस जमाने में जानकारी के साधन बढ़े हैं। भोग के साधन बढ़े हैं, फिर भी मनुष्य सुखी नहीं; क्योंकि जानकारी बढ़ी, उतना प्रेम नहीं बढ़ा। हम लोगों की सेवा चाहते हैं, लेकिन प्रेम करना नहीं चाहते, याने दिमाग बढ़ गया और दिल छोटा हो गया। पुराने जमाने में दिल और दिमाग, दोनों छोटे थे। इसलिए समस्याएं नहीं थीं। सब समस्याएं दुनिया के इतने लोगों के सामने रखेंगे, दिल भी बड़ा करेंगे और दिमाग भी बड़ा करेंगे तो समस्याओं का हल होगा। इसलिए ज्ञानी लोग सोचते हैं कि जल्द-से-जल्द विश्वराज्य होना चाहिये।

"शक्ति बढ़ी, लेकिन भक्ति नहीं बढ़ी। वासना बढ़ी, लेकिन प्रेम नहीं बढ़ा। यह दुनिया के सामने सवाल है। अब 'कॉमन मार्केट' की बात करते हैं, सब दुनिया का एक 'मार्केट' होना चाहिए। छोटे बनने का जमाना अब गया, या तो बड़ा बनना पड़ेगा या नष्ट होना पड़ेगा। हिंसा शक्ति प्रचंड शक्ति बन गयी है—द्वेष और भय के कारण। उसको मानव ही रोक सकता है—प्रेम और निर्भयता से।"

[पड़ाव : अशोक दिन और नशिपुर, १७-१८ सितम्बर, '६२]

• • • •

आज उन्नीस सितंबर है, कल बीस और परसों इक्कीस। बाबा दो उंगलियाँ दिखाते हैं। मतलब यह कि अब दो दिन रहे। ज्योत्स्ना और कल्पना की आँखें गीली होने लगती हैं। ज्योत्स्ना और कल्पना चारुदा की मानसकन्याएँ हैं। घर छोड़ कर इस काम में लगी हैं। मुक्तागिनीदी तो कई सालों से इसी काम में हैं। वे सिल्हट के आश्रम में रहती हैं। मुक्तागिनीदी सेवा की मूर्तिमंत देवता हैं। अजितदा का काम है कि शाम को अगले पड़ाव पर निकल जाना और वहाँ की व्यवस्था करना। इसलिए हम लोगों के साथ उनका वास्तव्य रोज चार-पाँच घंटे का ही रहता है। लेकिन उनकी प्रसन्न मूर्ति ने सबके साथ अपना नाता जोड़ लिया है। मुक्तागिनीदी और अजितदा नोआखाली-यात्रा में बापू के साथ थे। उस यात्रा के कितने संस्मरण वे कहते रहते हैं ! बापू की वह चिरस्मरणीय यात्रा हुई। थोड़े दिन बाद देश का विभाजन हुआ ! उनके बाद बाबा ही प्रथम यहाँ आ रहे हैं। बाबा के आने की खबर सुन कर ये सारे कार्यकर्ता दौड़ कर इकट्ठे हो गये। पाकिस्तान में इन लोगों के तीन आश्रम हैं। नोआखाली में, जहाँ चारुदा (चौधरी) रहते हैं, एक सिल्हट में और तीसरा है, कोमिला में। इन तीन आश्रमों में ये कार्यकर्ता बैठे हुए हैं और आश्रमों के द्वारा गाँवों की सेवा करते हैं। सिल्हट से निकुंज बाबू गोस्वामी 'जन्मभूमि' नाम की एक पत्रिका भी निकालते हैं। इसके अलावा विश्वदा, रंजनदा, मदनदा सभी इकट्ठे हुए हैं। दो दिन के बाद इस परिवार को छोड़ कर जाना है।

आज रास्ते में चारुदा से खूब बातें हुईं। चारुदा बोल रहे थे, मैं सुन रही थी। "नोआखाली यात्रा का सारा चल-चित्र मैं देख रही थी। चारुदा भी बाबा को भूल गये थे और बापू के ही माहौल में घूम रहे थे। "पहले ही दिन सुबह बापू का निकलने का समय हुआ। बापू निकल पड़े। देखा तो पैरों में चप्पल भी नहीं। हमने सोचा, शायद चप्पल पहनना भूल गये। जल्दी-जल्दी चप्पलें लायी गयीं। लेकिन बापू ने पहनने से इन्कार कर दिया। हममें से किसी को भी पता नहीं था, उन्होंने नंगे पैर घूमने का निश्चय किया था।"...बापू बहुत कठोर हो गये थे। साथ में जो लोग थे, सबको गाँव गाँव में बैठा दिया और नये सेवकों को लेकर घूमने लगे। पत्रकारों की और संवाददाताओं की टोली ही बन गयी थी और वे भी काम में लग गये थे। एक संवाददाता तो बापू के निकट ही रहता था। वह बाद में इतना विश्वासघात हो गया और बापू ने उस पर इतना विश्वास रखा कि आखिर-आखिर में वह उनका पत्रव्यवहार भी देखने लगा था।"

आज दिनाजपुर के सर्किट हाउस में पड़ाव था। मुझे एक स्वतंत्र कमरा दिया गया। कमरा देख कर तबीयत एकदम खुश हो गयी। अपने को ही मैंने कहा, आज खूब सोऊँगी, आज नींद में रुकावट नहीं आने वाली। लेकिन आखिर हम हैं तो मानव ही ! खुद के बारे में भी बिना 'उसकी' मर्जी के हम कैसी योजना बना सकते हैं ? आज कार्यक्रम इतना व्यस्त रहा कि नींद लेना तो दूर, नींद की याद भी नहीं आयी ! बड़ा शहर था, सभी प्रकार के लोग मिलने के लिए आ रहे थे। पहले आया वकीलों का समूह। बाबा ने उनसे पूछा, "कितने वकील हैं गाँव में ?" "पचास-साठ।" बाबा ने कहा, "यह तो जरूरत से ज्यादा हो गये !"

"नहीं साहब, बहुत कम हैं !"

"कम वकीलों में चलता है, याने 'मोरालिटी' (नैतिकता) बढ़ी है न !"

अब कहीं वकील साहबान बाबा के बोलने का मतलब समझे। बाबा ने उनसे कहा, "गाँव में मेरी 'केस प्लीड' करिये और दान लाइये।"

फिर आया साहित्यिकों का जत्था। काफी देर तक उनके साथ चर्चा होती रही। उनकी बैठक समाप्त हो ही रही थी कि एक कारी साहब आये और उन्होंने उच्च स्वर में कुरान सुनायी। अब सभा के सिवाय और कोई कार्यक्रम नहीं था। बाबा आराम कर रहे थे। इतने में एक मुसलमान बहन अपने छोटे बच्चे को लेकर आयी। बिना संकोच, बिना भय सीधी बाबा के पास जाकर बैठी। एक ऑफीसर की पत्नी थी। पति-पत्नी में तय हुआ कि पति शाम को प्रवचन को आयेगा और पत्नी बच्चे को लेकर दोपहर में बाबा के दर्शन के लिए जायेगी। वह बहन बाबा से कहने लगी, "बाबा, दुनिया में इतनी अशांति फैली है, कशमकश हो रही है ! कुछ रास्ता दिखाइये।" बाबा ने उससे कहा, "स्त्रियों को यह काम उठा लेना चाहिए।" बाबा से बातें होने के बाद वह कहने लगी, "मेरे इस बच्चे को मैं आपको समर्पण कर रही हूँ। चाहती हूँ कि वह यही काम करे।"

शाम को बाबा ने कहा, "बंगाली भाषा को मधुर बनाने में अनेक महापुरुषों ने योग दिया। वैदिक, संस्कृत, वैष्णवों की बंगाली, बौद्धों की पाली और इस्लामी भाषा सब मिल कर बंगला बनी। वैदिकों का ध्यान-योग, बौद्धों की अहिंसा, वैष्णवों का प्रेम और इस्लाम की सत्यनिष्ठा, सब चीजें बंगाली भाषा में हैं। जितना अधिक संस्कृति का संगम उतनी भाषा की ताकत बढ़ती है। एक ही संस्कृति का आग्रह रखा, तो शक्ति कम पड़ती है।"

[पड़ाव : दिनाजपुर, १९ सितम्बर '६२]

• • •

सुबह से ज्योत्स्ना मुझे कह रही है, "कालिन्दीदी, अब सिर्फ चौबीस घंटे रहे !" मैं मन में कह रही हूँ—अरे ज्योत्स्ना और इस पाक भूमि का संबंध कभी टूटने वाला है क्या ? यह एक चिरस्मरणीय यात्रा हुई। एक-एक प्रसंग दिमाग में हमेशा

-ताजा रहने वाला है, क्योंकि उन प्रसंगों में से एक ही भावना दिखाई दी है—मुहब्बत की। बाबा कई बार कहते आये, "हमारे कई मित्रों ने हमको सुझाया कि हमारे पहले कुछ लोगों को यहाँ भेजा जाय। हमने यह बात मानी नहीं, क्योंकि हमें विश्वास था कि जनता यहाँ हमारा अच्छी तरह से स्वागत करेगी', और यही अनुभव हमको यहाँ आया।"' मुहब्बत का पैगाम लेकर जो शख्स आता है उसको मुहब्बत के सिवा दूसरा और क्या मिलेगा! हम तो प्रेम का सन्देश लेकर आये हैं। पाकिस्तान सरकार जानती थी कि यह शख्स आग लगाने वाला नहीं, बिगाड़ने वाला नहीं। इसलिए उन्होंने हमको इजाजत दी और इसीलिए हमने इजाजत मांगने की हिम्मत की। पहले दिन ही हमको प्रेम का साक्षात्कार हुआ। भूदान मिला। दिल की यह विशालता देख कर हमारा दिल बड़ा बन गया। हम यहाँ दिल बड़ा बनाने के लिए आये हैं, प्रेम करना सीखने के लिए आये हैं। रोज जनता का दर्शन देख कर लगता है कि कहाँ हैं, वे सीमाएं और कहाँ हैं वे बन्धन! प्रेम की लहरों को सरहद-काल का बन्धन नहीं। हम पाकिस्तान के हो गये और पाकिस्तानी जनता हमारी हो गयी।"

नोआखाली में एक फकीर आता है और भरभर के प्रेम पाता है। रायपुर में दूसरा एक फकीर आता है और वैसा ही प्रेम पाता है, क्योंकि वह भरपूर प्रेम ले आया था। तो कैसे नहीं भारत की जनता पाकिस्तान में प्रेम पायेगी, अगर वह साथ में प्रेम लेकर आये और क्यों नहीं पाकिस्तान की जनता भारत में प्रेम पायेगी, अगर वे साथ में प्रेम लेकर आयें? प्रेम ले आने की बात भी गलत है। प्रेम तो है ही। वह प्रकट करने की ही बात है।

अभी रात के सात बजे हैं। पाक-यात्रा के आखिरी दिन की डायरी लिख रही हूँ। कल सुबह चार बजे निकलने का तय हुआ है। जब पीछे मुड़ कर सोलह दिन का अवलोकन करती हूँ, तब लगता है कि एक शुभ मिश्र अनुभव मिला। अनुभव नया नहीं था, नित्य का था; फिर भी अद्भुत था। यहाँ के लोग बापू की यात्रा को बार-बार याद करते हैं। स्वाभाविक ही है। लेकिन बापू मन्दे नोआखाली में, भारत में ही घूमे थे। विनोबा पाकिस्तान में घूम कर कल वापस भारत आ रहे हैं। उस दृष्टि से यह यात्रा अनोखी ही रही। प्यासे को पानी की जगह मिल जाय तो वह जैसे दौड़ा आयेगा वैसे जनता विनोबा वाणी सुन कर दौड़ कर आयी। यहाँ का नौजवान वर्ग, खास करके साहित्यिकों का वर्ग, मानवता, विश्वराज्य आदि नव विचारों में काफी दिलचस्पी रखने वाला दिखा।

सोलह दिन में १७५ एकड़ जमीन का दान मिला और ६९ भूमिहीन परिवार जमीन का टुकड़ा मिलने से खुशी हुए। एक ने सर्वस्वदान भी दिया। लाखों लोगों ने विनोबा वाणी सुनी। बाबा कहते हैं, "सोलह दिन में भूदान का आन्दोलन चलाने का हमने सोचा नहीं था।" सार में कहूँ तो यह प्रेम यात्रा पूरी यशस्वी रही।

[पड़ाव : सिलट, २० सितम्बर '६२]

राष्ट्रीय एकता

• जयप्रकाश नारायण

राष्ट्रीयता वस्तुतः अभी हाल ही का ताजा सामाजिक दर्शन है। आधुनिक राष्ट्र मुश्किल से दो सदियाँ पुराने होंगे। उनमें से कोई भी एक दिन में राष्ट्र नहीं बन गये। वस्तुतः राष्ट्रीय एकीकरण की प्रवृत्ति में लम्बे समय तक चली गृहयुद्ध की कई अवस्थाओं ने भी बहुत बार योग दिया है। इस आधुनिक परिभाषा के अनुसार भारत कभी एक राष्ट्र नहीं था और न ही वह आज है और न ही कल वह ऐसा एक राष्ट्र यकायक बन जाने वाला है। जैसा कि अन्यत्र हुआ, वैसे ही यहाँ भी, एकीकरण की पद्धति समय लेने वाली है। योग्य नेतृत्व से यह समय घटाया जा सकता है अथवा लापरवाही या मूर्खता से यह विचार समाप्त भी हो सकता है। प्रसन्नता है कि राष्ट्रीय एकीकरण समिति ने इस दिशा में योग्य मार्गदर्शन किया है।

राष्ट्रीयता प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष तत्त्वों से बनती है। उसमें अप्रत्यक्ष तत्त्वों का हाथ सबसे ज्यादा रहता है। राष्ट्रीयता के लिए अत्यन्त आवश्यक प्रत्यक्ष तत्त्व निम्न हैं :—

(१) एक स्पष्ट परिभाषित सीमा क्षेत्र।

(२) निम्न प्रकार से बनी राष्ट्रीय एकता—

(क) विधान द्वारा (लिखित या अलिखित),

(ख) सर्वत्र एक समान नागरिकता,

(ग) कुल राष्ट्रीय सीमा क्षेत्र में सबके ऊपर एक सरकार और उसको दूसरे राष्ट्रों से व्यवहार करने के अधिकार।

(३) बहुभाषी राष्ट्रों में परस्पर के व्यवहार के लिए कोई कामचलाऊ भाषायी माध्यम।

भारतीय राष्ट्र में ऊपर वर्णित तीनों गुण मौजूद हैं, यद्यपि नम्बर तीन में वर्णित योग्यता का विकास यहाँ अभी स्वाभाविक तरीके से होना जारी है।

पर वस्तुतः जो राष्ट्रीयता का निर्माण करते हैं वे अप्रत्यक्ष तत्त्व हैं। ये अप्रत्यक्ष तत्त्व मानसिक स्थिति की तरह से इस प्रकार अभिव्यक्त होते हैं :—

(१) ऐसी मानसिक स्थिति कि जो प्रत्येक नागरिक में राष्ट्र की वफादारी को जाति या दलविशेष की वफादारी के ऊपर एकदम स्वाभाविक व सामान्य बनाती है।

(२) ऐसी मानसिक स्थिति कि जो राष्ट्र से किसी दल या जाति के हितों को राष्ट्रीय हित की तुलना में गौण मानना एकदम स्वाभाविक व सामान्य बात बनाती है।

(३) ऐसी मानसिक स्थिति कि जो राष्ट्र को अपने प्रत्येक नागरिक, प्रत्येक समूह व प्रत्येक अंग के हित में निष्ठावान एक सहज सामान्य बात बनाती है।

राष्ट्रीय एकीकरण का मतलब है कि ऊपर वर्णित मानसिक स्थिति पैदा करने की भूमिका सम्पन्न करे। आजकल ज्यादातर इन तत्त्वों का हमारे राष्ट्र में अभाव है।

राष्ट्रीयता के लिए ये मानसिक आवश्यकताएँ कैसे पैदा हो सकती हैं, इसका कोई एक या सीधा-सा उत्तर नहीं हो सकता। विभिन्न प्रकार के प्रयास विभिन्न दिशाओं में इसके लिए करने होंगे। राष्ट्रीय एकीकरण सम्मेलन के वक्तव्य में से कुछ बातों की ओर जोर दिया गया है, उनके अलावा भी कई और बातें हो सकती हैं, पर यह मेरा विश्वास है, जैसा कि मैंने ऊपर बताया, इसका तरीका लम्बा व काफी कठिन ही होगा।

जैसी कि स्थिति है, इस मानसिक एकीकरण के मार्ग में एक बड़ी गम्भीर बाधा आज है। हमारे जैसे विशाल देश में, जिसमें इतनी विभिन्नताएं हैं, यह स्वाभाविक भी है कि कई प्रकार के झगड़े रहें तथा मतभेद हों। यदि ये न हों तो हम मनुष्य से ऊँचे हो जायेंगे। अच्छे संगठित राष्ट्रों के लोगों के बीच भी अन्दरूनी मामलातों में मतभेद व झगड़े होते हैं—राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, जातिगत, धार्मिक व भाषायी। दो सगे भाइयों में भी गलतफहमी तथा झगड़ा हो ही जाता है। यदि राष्ट्रीय एकता होने की यही पूर्व शर्त मानी जाय कि भारतीय राष्ट्र को चलाने वाले सारे लोगों, दलों व जातियों में पूर्ण मेल व सामञ्जस्य हो तो वह दिन देखने के लिए तो हमें शायद प्रलय के दिन तक इन्तजार करना पड़ेगा!

मेरा यह कहने का मतलब नहीं है कि मतभेदों व झगड़ों के निराकरण की ओर तीव्रता से ध्यान नहीं दिया जाना चाहिये। उनको निपटाने में तो पूरी शक्ति लगनी ही चाहिये। न मैं यह कहता हूँ कि ये बातें राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधाएं नहीं हैं, लेकिन मैं इस पर अवश्य जोर देना चाहूँगा, और यह याद रखने की बात है कि हमारा उनकी तरफ पूर्ण प्रयास करते हुए भी, ये बन्द होने वाली बातें नहीं हैं। जब एक छोटे से परिवार में झगड़े चलते हैं तो चालीस करोड़ की संख्या वाले एक बड़े परिवार में वे न चलें, या उनसे वह एकदम मुक्त हो जाय, यह असम्भव सी बात होगी।

असल में मतभेद या झगड़े होना उतना राष्ट्रीय एकता के लिए खतरनाक नहीं है, जितना कि हम उनको हल करने के लिए किस प्रकार के तरीकों पर अमल करते हैं, यह उस पर निर्भर करता है। हम साधारणतया पशुओं की तरह बर्ताव करते हैं। चाहे गाँव का झगड़ा हो, विद्यार्थी-संगठन का मामला हो, मजदूरों का प्रश्न हो, धार्मिक मसला हो, सीमा विवाद हो या कोई बड़ा राजनैतिक प्रश्न हो, हमें अपने ऊपर काबू रखना चाहिये और उससे उत्तेजित होकर हिंसक या जंगली नहीं बन जाना चाहिये। लेकिन हम मारकाट शुरू कर देते हैं, आग लगाते हैं, लूटपाट मचाते हैं और कई बार तो इससे भी बदतर कुकर्म करते हैं। जब एक ही राष्ट्र का नागरिक दूसरे के साथ ऐसा व्यवहार करता हो, तब भारतीयों की प्रखर एकता प्रत्यक्ष में स्वप्निल बनती है।

यदि भाइयों में किसी कारण झगड़ा हो जाय और वे शान्तिपूर्वक आगे से अलग रहने का निर्णय ले लें, तब भी वे भाई बन कर रह सकते हैं। लेकिन यदि वे झगड़े में उत्तेजित होकर, तलवार निकाल कर, एक-दूसरे को मार डालने को दौड़ पड़ें तो भाईचारा समाप्त ही हो जाने वाला है। इसी तरह से जब एक भारतीय दूसरे भारतीय को मारता हो, लूटता हो, घरों में आग लगाता हो, जैसा कि जबलपुर व अलीगढ़ में हुआ और इससे पहले बड़े पैमाने पर आसाम में हुआ तो इसके परिणामत उत्पन्न घृणा, सन्देह और दुर्भावना के मनोभावों में ऐसा तनाव पैदा करेगी कि जिसमें इस देश के समान नागरिक के नाते एक-दूसरे को अपना समझना अत्यन्त कठिन होगा।

यदि इसके बजाय, चाहे मामला कितना भी गम्भीर क्यों न हो, यदि राष्ट्र का हर नागरिक, हर हालत में अहिंसक बने रहने की प्रतिज्ञा ले लेता है तो ये झगड़े व मतभेद रहें तो भी ये राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बहुत ज्यादा नुकसान नहीं पहुँचा सकेंगे।

अतः इस चिन्तन के आधार पर सर्व-सेवा-संघ की ओर से मैंने राष्ट्रीय एकीकरण समिति के सम्मुख उसके तत्त्वावधान में एक आन्दोलन चलाने का प्रस्ताव रखा। इसको नागरिक शान्ति प्रतिज्ञा अभियान का नाम दिया गया है। इसमें प्रत्येक नागरिक की ओर से अहिंसा की प्रतिज्ञा के रूप में उससे हस्ताक्षर या अँगूठा निशानी लेने की बात कही गयी है। इसी मौके पर एक बात मैं और कहना चाहता हूँ कि

जब कि हमारे देश में सर्वत्र अहिंसा की चर्चा की जाती है, हमें अभी सभ्य समाज की दिशा में भी बहुत जाना बाकी है। सभ्य समाज की रचना से तो अहिंसक समाज-रचना का कार्य अत्यन्त कठिन है। अहिंसक समाज-रचना के लिए तो हर प्रकार की असमानता व शोषण को मिटाना और उसके स्थान पर समानता व प्रेम को सामाजिक

विनोबा-पदयात्री दल से

•कालिन्दी

मोतीबाबू का बाबा को पत्र आया था। क्या लिखा था उस पत्र में? कागज के आरंभ में लिखा था, 'पूज्य बाबा!' और अन्त में था, 'मोतीलाल के प्रणाम'! बीच की सारी जगह कोरी थी! उस अलिखित पत्र में बाबा ने क्या पढ़ा और मोतीबाबू ने क्या लिखा, वे दो ही जानें! थोड़े ही दिन के बाद, २४ अक्टूबर को बाबा ने मोतीबाबू के संथाल परगना जिले में प्रवेश किया। गंगामैया की गोद पर से हम हिलते-डुलते बिहार पहुँचे।

गंगा-किनारे सीमा पर ही बिहार के कार्यकर्ता और मंत्रीगण स्वागत के लिए उपस्थित थे। कड़ी धूप में, बुद्ध भगवान् के बिहार के पावन रजःकणों के समूह के साथ जनसमूह को लेकर चार फर्लांग चल कर राजमहल पडाव पर पहुँचे। गंगातट पर के एक सुन्दर 'विला' में दो दिन ठहरे। रोज सुबह पीछे के प्रशस्त बरामदे में 'विष्णु-सहस्रनाम' का पाठ होता था। मुख से विष्णु के नाम का उच्चारण, कान से विष्णु के गुणों का श्रवण और आँखों से गंगामाता का दर्शन। मन तो भक्ति की अमृत का आकंठसेवन करता रहता था।

नौ बजे मुख्य-मंत्री और अन्य मंत्री बाबा से मिलने के लिए आये। काफी देर तक चर्चा होती रही। बाबा ने कहा, "आप सब लोग यहाँ बैठे हैं। पिछले वक्त श्रीबाबू हमसे मिले थे और उन्होंने कहा था कि यह काम पूरा होकर ही रहेगा। श्रीबाबू की प्रतिज्ञा आप सब लोगों को पूरी करनी है। आरंभ में कांग्रेस ने ३२ लाख एकड़ जमीन प्राप्त करने का प्रस्ताव किया था, वह पूरा करना है। जो भूमि प्राप्त है, उसका बँटवारा करना है, उसको कानूनी स्वरूप देना है। वह प्रस्ताव अभी कायम है। यह काम हो जाता है तो अच्छी-से-अच्छी नैतिक, सामाजिक, आर्थिक क्रांति होगी। लोकशाहीवालों की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि उनका अपने पर विश्वास नहीं। हमको विश्वास होना चाहिए कि हम जल्दी काम पूरा कर सकते हैं। आज हालत यह है कि हमारे ऊँचे-से-ऊँचे आदमी जो आदेश देते हैं, वे देहात में पहुँचते नहीं। देश में बहुत अज्ञान है। इतना अज्ञान है कि चीन नाम का देश है, यहाँतक लोग जानते नहीं! मैं नहीं मानता कि चीन के किसी गाँव में ऐसा अज्ञान रहा होगा। वहाँ गाँव-गाँव के बच्चे-बच्चे को सुनाया गया होगा कि हिंदुस्तान ने चीन की भूमि पर आक्रमण किया है! जब गाँव-गाँव पहुँचेंगे, तब जनता का समर्थन मिलेगा। सरकार को जनता का 'मत' मिलता है, 'समर्थन' नहीं। विकास के लिए समर्थन चाहिए। जनता का समर्थन तब मिलेगा जब गाँव-गाँव अपनी योजना बनायेंगे। आज के संकट काल में ग्रामदान 'सेकंड लाइन ऑफ डिफेन्स'-सुरक्षा की दूसरी पंक्ति है।"

दोनों दिन पूरा कार्यक्रम था। एक के बाद एक बैठक होती रही। दूसरे दिन सुबह पंचायत-सम्मेलन था। पंचायत के मंत्री श्री तिवारीजी हाजिर थे। उनको भी बाबा ने यही समझाया, "...इस ग्रामपंचायत की प्रक्रिया में काफी न्यूनताएं हैं। इससे स्वराज्य का काम न होते हुए शोषण का काम हो सकता है। गाँव का शोषण क्षमतापूर्वक हो सकता है। यह विकेंद्रित क्षमतापूर्वक शोषण का यंत्र बन सकता है। इसके लिए हमने एक दृष्टान्त दिया था, और वह बीसों दफा दोहराया है। चावल बनाने में चावल, पानी और अग्नि का उपयोग होता है। अब अगर हम पहले अग्नि में चावल डाल दें और बाद में उस पर पानी डाल कर उस पर बर्तन रखें, तो क्या चावल बनेगा? चारों चीजें आ गयी, लेकिन क्रम बदला, तो चावल नहीं बना। क्रम से काम होता है तब चावल बनता है। 'क्रमान्यत्व परिणामत्व हेतुः'-क्रम बदलता है तो परिणाम बदलता है। इसलिए ग्राम-स्वराज्य का आधार प्रेम पर हो और फिर ऊपर से क्षमता आये। उसका आधार केवल सरकार का अनुदान न होकर जनता की तरफ से आया हुआ दान हो। गाँव-गाँव अपनी योजना बनायें। गाँव-गाँव मजबूत हों।"

उसके लिए बाबा ने चार बातें बतायी—

(१) गाँव में कोई भूमिहीन न रहे। जमीन का एक हिस्सा भूमिहीनों को दें।

(२) गाँव के हर बालिगों की एक गाँव-सभा बने।

(३) उस गाँव-सभा की यह जिम्मेवारी होगी कि गाँव में कोई बेकार न रहे।

(४) हर आदमी अपनी फसल का एक हिस्सा गाँव-सभा को दान दे। वह गाँव की पूंजी बनेगी। उसमें गाँव का काम होगा।

(५) गाँव में झगड़ा नहीं, शांति रहे।

आज दुबारा गंगा पार करनी थी। असम में करीब दस दफा ब्रह्मपुत्रा पार की। अब बिहार में गंगाजी को पार करना पड़ता है। ब्रह्मपुत्रा का वह विराट्, उच्छृंखल रूप और गंगा का यह संथ, गंभीर रूप! अपनी छलछलाती लहरों से ब्रह्मपुत्रा चिल्लाती है, 'विप्लव चाहिए, क्रांति चाहिए।' तो इधर गंगामाई शांति का संदेश देती रहती है। गंगा पार कर आये और शांति-सेना शिविर का बाबा ने उद्घाटन किया। बिहार में ९६८ शांति-सैनिक हैं। लेकिन शिविर में सब लोग आ नहीं सके। शिविर में २०२ उपस्थिति थी। तीन दिन यह जंगम शिविर चला। अनेक शंकाओं के साथ, अनेक प्रश्नों के साथ शांति-सैनिक शिविर में आये हुए थे। चीन का भारत पर आक्रमण, इस आक्रमण के बाद भारत ने उठाया हुआ कदम, बाबा का इस बारे में चिंतन—सब शांति-सैनिक चिंतित हो उठे थे। अखबारों में बाबा के प्रवचन के विवरण छपे थे-यह लड़ाई भारत पर लादी जा रही है... ऐसी हालत में हम भारत सरकार के नीति का समर्थन करते हैं..."देश-विस्तार-तृष्णा के कारण चीन ने यह आक्रमण किया है।" बाबा के प्रवचन तो किसीने सुने नहीं थे, लेकिन अखबारों के विवरणों ने कार्यकर्ताओं के चिंतन को चालना दे दी थी। तीन दिन के बाद सैनिकों का चित्तभ्रम दूर हो गया था। इन शंकाकुल चित्तों का भ्रम दूर करने के लिए बाबा ने एक बयान ही दे दिया। बाबा ने बयान में कहा :

"'जय-जगत्' के संदर्भ में एक विश्वनागरिक के नाते इस वक्त हमारी सहानुभूति भारत के साथ जाती है और कहना पड़ता है कि चीन ने अपनी राज्य-विस्तार-तृष्णा के कारण ही भारत पर आक्रमण किया है। हम चीन से अपील करते हैं कि वह अपना गलत कदम पीछे ले तो उसे दर्शन होगा कि भारत उससे दोस्ती ही चाहता है। हम आशा रखते हैं कि भारत सरकार, यद्यपि उन पर लड़ाई लादी जा रही है, अपनी निर्वैर वृत्ति कायम रखेगी। हम भारतवासियों से अपील करते हैं कि वे अपनी एकता दृढ़ करें। ग्रामदान यह हमने 'डिफेन्स मेजर' माना है। उसको जितना ज्यादा हम दे सकें उतना विश्व-शांति में और भारत की एकता में हमारा योगदान होगा और उसमें चीन की आक्रमण-शक्ति कुंठित होगी।"

कटिहार में शिविर की समाप्ति हुई और शांति-सैनिक, कार्यकर्ता अपने-अपने क्षेत्र में चले गये।

अभी वैद्यनाथ बाबू के पूर्णियाँ जिले में हम घूम रहे हैं। पूर्णियाँ जिले के कार्यकर्ता काम के बारे में चर्चा करने के लिए बाबा के पास इकट्ठे हुए तब बाबा कहने लगे, "पूर्णमदः पूर्णमिदम्।" पूर्णियाँ जिले में कुल ८८०२५ एकड़ भूमि प्राप्त हुई है और २६००० एकड़ भूमि का वितरण हुआ है। पूर्णियाँ जिले में तीन पंचायत क्षेत्र-बोलिया (मनिहारी थाना), रघेली और सोरिया (कटिहार थाना) में कुल भूमिहीनता मिट गयी है। बोलिया में कुल भूमिहीन ३५१ थे। उनमें ७१०० कठ्ठा जमीन का वितरण हुआ। रघेली क्षेत्र में १४८ भूमिहीन थे। इसके अलावा परसा नाम के एक गाँव में भी भूमिहीनता मिट गयी है।

संथाल परगना और पूर्णियाँ, ये दो जिले मिल कर सोलह दिन की यह यात्रा बहुत ही उत्साहवर्धक रही। कह सकते हैं कि यह यात्रा कार्यकर्ताओं के लिए ही रही। मंत्रिगण मिले, बाबा की बातें सुनकर उनको बहुत समाधान हुआ और इस बारे में अधिक चर्चा करने के लिए, खास करके भूमिवितरण संबंधी कार्यक्रम तय करने के लिए वे ९ ता० को पटने में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं से मिलने वाले हैं। पंचायत के लोग भी मिले और बाबा ने उनको भी समझाया। संथाल परगना में तो पंचायत के अधिकारियों ने बाबा को आश्वासन दिया कि वे ग्रामदान, भूदान के काम को जरूर उठा लेंगे। साहिबगंज में प्रांत के रेवेन्यु अधिकारियों की एक बैठक में बाबा ने भाषण दिया। वे भी काफी संतोष लेकर गये। राजमहल में दो दिन कार्यकर्ता-सम्मेलन रहा, फिर शांति-सेना शिविर हुआ। सरकारी नौकर-इनको तो बाबा सर्वोदय के कार्यकर्ता ही मानते हैं—तथा रचनात्मक कार्यकर्ताओं को बाबा के आगमन का खूब लाभ मिला।

ता० ८ नवंबर से फिर से पश्चिम बंगाल में बाबा का बंगाल का भ्रमण शुरू हुआ।

सम्बन्धों का आधार बनाना होगा। यह सभ्य समाज का मुख्य लक्षण है—यद्यपि और भी दूसरे गुण उसके लिए आवश्यक हैं—कि उसके लोग सामान्यतः इस नियम को स्वीकार करें कि लोगों के निज के या समूहगत झगड़े शांतिमय उपायों से ही हल किये जायेंगे। इस प्रकार यह "शांति-प्रतिज्ञा अभियान" सभ्य समाज की स्थापना के लक्ष्य की दिशा में हमें ले जाने में सहायक होगा।

मुझे प्रसन्नता है कि प्रधान मंत्रीजी और राष्ट्रीय एकीकरण समिति ने सर्व-सेवा-संघ के इस सुझाव को मान्य किया और जो वक्तव्य जारी किया गया, उसमें इसको स्थान दिया और उसके अनुसार अभियान चलाने का तय हुआ। ('ग्रामराज' से)

"छोटी छोटी" बातें

हम देखते हैं कि अक्सर छोटी-छोटी बातों को लेकर लोगों में तनाव पैदा हो जाता है। रास्ते चलते किसी से जरा-सी टक्कर लग गयी, बस कहा-सुनी शुरू हो जाती है और झट "आँखें नहीं हैं ! देख कर नहीं चलते !" तक की नौबत आ जाती है।

स्टेशन पर उतरे, कुली ने सामान उठाया और आपने मुँह माँगा दाम नहीं दिया तो सुनिये फिर दस-बीस बातें, और बहुत कम होंगे, जिन्हें ऐसे वक्त गुस्सा न आता हो ! कहीं बस पर चढ़ कर जाइये, दस पाँच मिनिट में ही कन्डक्टर और किसी-न-किसी यात्री की गरमा-गरमी सुनने को मिलेगी और ये 'छोटी छोटी' बातें कभी-कभी बड़ा रूप धारण कर लेती है और दंगे-फसाद की नौबत आ जाती है। ऐसी घटनाएँ स्वत बड़ा रूप न लें तब भी ये हमारी मनोवृत्ति की तो अपनी निशानी ही रहती है। धीरे धीरे इनके कारण स्वभाव बनता जाता है और इस तरह बड़े-बड़े संघर्षों के बीज अंकुरित होते रहते हैं।

एक दिन विदेश में मैं किसी स्टेशन पर रेल से उतरा। प्लेटफार्म पर भीड़ काफी थी। उतरने वाले भी काफी थे और चढ़ने वाले भी। जल्दी-जल्दी में १५-१६ बरस के एक नौजवान लड़के के पाँव पर मेरा पाँव पड़ गया। झट मैंने पाँव हटाया और "माफ कीजिये" कहते हुए एक अपराधी की तरह उस नौजवान की तरफ देखा। ऐसी परिस्थिति में हम लोग जिस बात के आदी हैं उसे ध्यान में रखते हुए मुझे यह आशंका थी कि अभी यह कुछ सुनायेगा, या कम-से-कम त्योरी तो दिखायेगा ही ! पर मेरी क्षमा-याचना का वाक्य पूरा भी नहीं हो पाया था कि मेरे कान में आवाज पड़ी—"मैं बहुत शरमिन्दा हूँ—कसूर मेरा था !" चार आँखें होते ही मैंने देखा—उसके चेहरे पर कहीं तनाव नहीं था, आँखें भी और होंठ भी मुस्करा रहे थे। हम दोनों अपने-अपने रास्ते की तरफ बढ़ गये।

मैं सोचता रहा कि किस तरह यह हमारे अपने हाथ में है कि ऐसी छोटी बातें या तो एक सुन्दर स्मृति में बदली जा सकती हैं या बदमजगी और झगड़े तक का कारण बन सकती है।

—सिद्धराज

कार्यकर्ताओं—की आवाज

भारत-चीन सीमा-संघर्ष

[भारत-चीन संघर्ष के सिलसिले में पिछले दो-तीन अंकों में कुछ लेख प्रकाशित हुए हैं। प्रबन्ध समिति द्वारा स्वीकृत निवेदन भी इस अंक में अन्यत्र दिया जा रहा है। १९ नवम्बर से सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन चल रहा है और उसके बाद २३ नवम्बर से सर्वोदय-सम्मेलन भी होगा। वहाँ इन विषयों पर विस्तार से चर्चा होगी। इसलिए हम अभी फिलहाल सामान्यतः इस विषय पर अन्य लेख आदि नहीं दे पा रहे हैं। कार्यकर्ताओं की ओर से प्राप्त कुछ सुझाव हम यहाँ दे रहे हैं। कार्यकर्ताओं के सुझाव विचार-विमर्श के लिए आमंत्रित भी करते हैं। —सं०]

२ नवम्बर के 'भूदान-यज्ञ' में भारत चीन-सीमा संघर्ष के बारे में विनोबाजी, धीरेन्द्रभाई और आपके विचार पढ़े। विचार करने के बाद मुझे लगता है कि इसलिए क्या यह अधिक कारगर न होगा कि श्री चाऊ एन लाई से व्यक्तिगत सम्पर्क स्थापित किया जाय, जो अगर प्रसिद्ध नेता, जैसे विनोबाजी, जयप्रकाशजी या दादा, आर रेनर्स, या ये चार-पाँच महानुभाव मिल कर कर सकते हैं ? हिम्मत करके आमने-सामने बातें कर लें। ऐसा करने में उतनी कठिनाइयों का सामना करना नहीं पड़ेगा, जितना बहुसंख्यक शांति सैनिकों को रण क्षेत्र में भेजने में। सरकार को इसमें कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। सम्मान की हानि भी इसमें नहीं है। लड़ाई बन्द तभी होगी, जब दोनों देश कोई समझौते पर राजी हो जायें। मिस्र जैसे दूसरे देशों ने ऐसी कोशिश की है, मगर किसीने वहाँ जाकर सम्पर्क नहीं किया। गांधी-शांति-प्रतिष्ठान ने अपने प्रतिनिधि रूस, अमेरिका, इंग्लैंड भेजे थे। फलस्वरूप कैनेडी ने भी कहा है कि अगले वर्ष के आरम्भ में अणुअस्त्र-परीक्षण बन्द हो जायेंगे। 'यूनो' ने भी ऐसी माँग की है। तो असर तो हुआ। गांधी-प्रतिष्ठान ही अब भी अग्रसर हो और अपने प्रतिनिधि विश्व-नागरिकों के नाते चीन भेजे।

—रौशनप्रसाद तायल, धनबाद

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के व्यक्तियों का प्रतिनिधि मंडल भारत-चीन सीमा-संघर्ष का शांतिपूर्ण हल निकालने के लिए कोई ठोस और सक्रिय कदम उठाये।

हम कार्यकर्ता लोक शिक्षण, लोक-संगठन की दृष्टि से रचनात्मक कार्यक्रम, प्रमुख रूप में सीमावर्ती क्षेत्रों में, अधिक तीव्रता से चलायें और सर्वोदय शांतिदर्शन को लोकमानस में स्पष्टता से प्रविष्ट करायें।

अगर ऊपर के या इस प्रकार के किसी अन्य कार्यक्रमों को चलाने की स्थिति न हो, तो 'रेडक्रास सोसाइटी' में शरीक होकर घायल मानव की सेवा के अहिंसा के निकटतम कार्य में योग दें।

शिवदासपुरा, जयपुर

—रामचन्द्र 'राही'

देश में भूदान-ग्रामदान-प्राप्ति, वितरण, कानून और एजेन्सियाँ

[३० सितम्बर, '६२ तक]

भूदान ग्रामदान प्राप्ति और वितरण		भूदान-ग्रामदान कानून	वितरण एजेन्सियाँ
भूदान-प्राप्ति (एकड़ में)	४१,६२,६२३	भूदान अधिनियम —१२	
भूदाता-संख्या	५,३०,३४४	भूदान बोर्ड अथवा समितियाँ —११	भूदान बोर्ड—११
भूमि वितरण (एकड़ में)	११,२०,४८१	अध्यादेश (आर्डिनेन्स)—१	भूमि वितरण समिति १
आदाता संख्या	३,१३,८६६		
खारिज भूमि	११,३८,१६०	विज्ञप्तियाँ (नोटिफिकेशन)—१	प्रान्तीय सर्वोदय मंडल—९
शेष भूमि वितरण	१८,६४,२१९	कानूनी सुविधाएँ अप्राप्त —५	
ग्रामदान	५०३९	अधिनियम बनने बाकी—८	
ग्रामदान अधिनियम के अंतर्गत विधिवत् घोषित ग्रामदान	३१२		

"सर्वोदय-पर्व" का संक्षिप्त विवरण

गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी ११ सितम्बर, 'विनोबा-जयन्ती' से २ अक्टूबर 'गांधी-जयन्ती' तक "सर्वोदय-पर्व" देश भर में मनाया गया।

प्रचार : "पर्व" की दृष्टि से निम्न प्रकार प्रचार-सामग्री की प्रतियाँ तैयार की गयी और देश भर में निःशुल्क भेजी गयी।

सामग्री	प्रतियाँ	सामग्री	प्रतियाँ
पर्व की रूपरेखा तथा कार्यक्रम (हिन्दी व्यार अंग्रेजी)	७०००	सूचीपत्र, १६ पेजी	७०००
विनोबाजी का सदेश	५०००	साहित्य का मागरस, ८ पेजी	५०००
दीवाल के दोरंगे पोस्टर	६०००	खादी-संस्थाओं से अपील	५०००
साहित्य की विभिन्न सेट-सूचियाँ	२०००	शांति-सैनिकों से अपील	२५००

प्रान्तीय तथा जिला सर्वोदय-मंडल, प्रान्तीय प्रकाशन समितियाँ, विक्रेता, अखिल भारतीय संस्थाएँ, पत्र-पत्रिकाएँ, प्रमुख जननेता, प्रमुख साहित्यिक आदि को भिन्न भिन्न परिपत्र तथा अपील भेजी गयी।

उक्त प्रचार-सामग्री में लगभग दो हजार रु० खर्च हुआ।

प्रदर्शनी इस वर्ष देश भर में जगह जगह साहित्य प्रदर्शनियाँ आयोजित की गयी और इसे काफी सफलता मिली है। अभी सब जगह से कार्य विवरण नहीं आ सके हैं, लेकिन जो कुछ जानकारी मिली है, वह इस प्रकार है :

प्रदेश	प्रदर्शनी केन्द्र	साहित्य बिक्री रु०-न० पै०	प्रदेश	प्रदर्शनी केन्द्र	साहित्य बिक्री रु०-न० पै०
उत्तर प्रदेश	७	१४८९७-७६	मध्य प्रदेश	४	४१९७-८९
दिल्ली	१	३६८८-७०	महाराष्ट्र	७	३९७८-९४
हिमाचल प्रदेश	१	२५०-९६	बिहार	६	१४९०७-३७
पंजाब	२	४४२-३४	बंगाल	—	१५९४-८३
राजस्थान	२	१४७१-३६	आन्ध्र	२	७७१-८९
गुजरात	—	३६-७५	तमिलनाड	५८९	४९१४३-२१
			मैसूर	२	२११-३३
			कुल	६२२	१०२४०१-२५

इन सब प्रान्तों में कुल ६१६ केन्द्रों में "सर्वोदय-पर्व" मनाये गये। तमिलनाड के ५८९ 'सर्वोदय-पर्व' के केन्द्रों में प्रदर्शनियाँ भी आयोजित हुई।

उपर्युक्त साहित्य बिक्री में तमिलनाड की बिक्री और उसके आयोजन का सारा कार्य सर्वोदय प्रसुरालयम्, तंजौर से हुआ, बाकी सर्व-सेवा-संघ काशी से।

हमें अब तक जो विवरण प्राप्त हुए हैं, उस पर से ऊपर का विवरण तैयार किया गया है। अभी जगह-जगह से कार्य विवरण आने शेष हैं। फिर भी यह निश्चित है कि 'सर्वोदय-पर्व' के पीछे जो भावना और दृष्टि है, उससे एक अच्छा वातावरण निर्माण हुआ है।

—व्यवस्थापक, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन

[कसौटी का समय..............शेष पृष्ठ १ से आगे]

समय को नहीं पहचानता, हमसे वही पुराना काम करने को कहता है जो हम करते आये हैं। और हम निराश होते हैं। पर अहिंसा में अगर सचमुच हमारी निष्ठा है और अहिंसा की प्रक्रिया को अगर हम समझें तो निराश होने के बजाय ज्यादा उत्साह से अपने काम में लग जाना आज की परिस्थिति का तकाजा है और अहिंसा की शक्ति बढ़ाने के लिए जरूरी है।

[समाप्त]

चम्बल घाटी शान्ति समिति की डायरी

मुरैना (मध्य प्रदेश) में श्री सियाराम, कन्हई, दुर्जन, तेजसिंह, जगजीत, इन बागी भाइयों के खिलाफ चार मुकदमे धारा ३०२, ३९५, ३९६, ३६५ के चल रहे हैं। दो मुकदमे सेशन कमिट हो गये और दो मजिस्ट्रेट की अदालत में चल रहे हैं। मुकदमों की देखभाल श्री चरण सिंहजी कर रहे हैं। सर्वश्री राधाचरणजी, चरणसिंहजी, करनसिंहजी वकील पैरवी कर रहे हैं। इनके अलावा सभी मुकदमों की मुख्य जिम्मेदारी श्री गोपीनाथजी सिंघल वकील ने उठायी थी, किन्तु दुर्भाग्यवश गत सप्ताह हृदयगति रुक जाने के कारण उनका स्वर्गवास हो गया, जिससे हमारे काम में बड़ा धक्का पहुँचा है। परन्तु जिन दूसरे वकील महानुभावों ने मुकदमे की जिम्मेवारी ली है, वे पूरी जिम्मेदारी के साथ अपना काम निभा रहे हैं।

राजस्थान के धौलपुर में श्री रामसनेही के विरुद्ध एक केस सेशन कोर्ट में चल रहा है, जिसमें घोर शहादत पेश होगी। श्री केदारनाथ गुप्ता वकील पैरवी कर रहे हैं।

आगरा

यहाँ श्री लोकमन के विरुद्ध दो, भगवान सिंह के विरुद्ध एक, कुल तीन मुकदमे चलने वाले हैं, जो ६ माह से अभी तक राजस्थान की कार्यवाही शिनाख्त न होने के कारण अनावश्यक रूप से स्थगित पड़े हैं। इस सम्बन्ध में राजस्थान के अधिकारियों को बराबर लिखा गया तथा कई बार सर्वश्री गोकुलभाई भट्ट व कृष्णदत्त स्वामी ने गृहमंत्री-राजस्थान से इस बारे में भेंट भी की। तमाम लिखा-पढ़ी और दौड़-धूप होने पर गत २३ अक्टूबर को जिला सवाई माधोपुर वाले सिर्फ एक केस में कार्यवाही शिनाख्त करायी गयी। इस केस में लगभग डेढ़ साल पहले भी कार्यवाही शिनाख्त करायी गयी थी। एक ही मुकदमे में उन्हीं गवाहों द्वारा दो-दो बार कार्यवाही शिनाख्त कराना अवैधानिक भी है। इसके अतिरिक्त जो अन्य मुकदमों में कार्यवाही शिनाख्त करानी है, उनमें अभी तक कोई कार्यवाही नहीं हुई, जिससे यहाँ के मुकदमे उसी तरह अब तक स्थगित हैं। श्री गोकुलभाई भट्ट को इस सम्बन्ध में पुनः समिति की ओर से लिखा गया है।

इस समय ५ भाई आगरा जिला जेल व सेंट्रल जेल में हैं। शेष ९ भाई केन्द्रीय कारागार ग्वालियर में बंदी हैं। श्री लोकमन व श्री तेजसिंह के विरुद्ध आजन्म कारावास की सजा जो ग्वालियर हाईकोर्ट ने बहाल रखी थी, उसकी अपील सुप्रीम कोर्ट में की गयी है, जिसकी देखभाल श्री हेमदेवजी शर्मा कर रहे हैं। आगरा में ३ केसों में जो सजाएँ हुईं, उनकी अपील इलाहाबाद हाईकोर्ट में की गयी है। उनकी सुनवाई अभी नहीं हुई है।

बाह (उत्तर प्रदेश) के आत्मसमर्पणकारी भाइयों के परिवारों के पुनर्वास की देखभाल खोहरी आश्रम के कार्यकर्ता श्री भगवत भाई व श्री अम्बाप्रसादजी कर रहे हैं। पुराने विरोधों के कारण हर जगह पुनर्वास सम्बन्धी कठिनाइयाँ हमारे सामने हैं। यथाशक्ति, कार्यकर्ता उन कठिनाइयों को हल करने का प्रयत्न कर रहे हैं।

मध्य प्रदेश क्षेत्र में श्री चरण सिंह पुनर्वास-कार्य देख रहे हैं। सर्वश्री भगवान सिंह, लच्छी व प्रभू के परिवारों के पुनर्वास में विशेष कठिनाई है। पैरवी के काम में अनावश्यक विलम्ब और पुनर्वास सम्बन्धी कठिनाइयों के कारण बंदी भाइयों के मन का समाधान नहीं होता, इसलिए समय-समय पर वे हमारे सामने असंतोष जाहिर करते हैं और विनोबाजी तथा डाक्टर सुशीला नैयर को भी इस सम्बन्ध में पत्र लिखा करते हैं।

आत्मसमर्पण का तीसरा वर्ष चल रहा है। अभी तक मुकदमों का भी काम पूरा नहीं हो सका है, जिससे राज्य व समिति का अनावश्यक समय, शक्ति व धन व्यय हो रहा है। इन कठिनाइयों के सम्बन्ध में समय-समय पर समिति की ओर से केन्द्र एवं राज्य-सरकारों से मिलजुल कर प्रयत्न किया जाता है और विनोबा को भी स्थिति की जानकारी दी जाती है। फिर भी हम इन कठिनाइयों को अभी तक हल नहीं कर पाये हैं। *इसके अलावा इस काम में* लगे हुए कुछ कार्यकर्ताओं के सामने आर्थिक कठिनाइयाँ भी हैं। इसकी जानकारी सर्व-सेवा-संघ व विनोबाजी को दी गयी है।

११ सितम्बर, विनोबाजी की जन्म-तिथि पर आगरा में चल रहे शराबबंदी सत्याग्रह में मेरे गिरफ्तार हो जाने के *कारण श्री लल्लू सिंह, अध्यक्ष,* चम्बल घाटी शान्ति-समिति ने अस्वस्थ होते हुए भी समिति का काम देखना प्रारम्भ कर दिया और वे समिति के सामने पेश रही कठिनाइयों पर विचार विनिमय करने के लिए विनोबाजी से मिलने बिहार गये थे। उनके लौटने पर ३१ अक्टूबर को आगरा कार्यालय में समिति की विशेष बैठक हुई। समिति उसकी रिपोर्ट आगामी सर्वोदय-सम्मेलन के सामने प्रस्तुत करेगी। शराबबंदी सत्याग्रह के सिलसिले में इस समय श्री बाबूलालजी मित्तल भी यहाँ कोरापुट से आये हुए हैं। चीनी आक्रमण के कारण उत्पन्न स्थिति से सत्याग्रह स्थगित किया गया और ता० २६ अक्टूबर की शाम को मैं जेल से मुक्त होकर बाहर आ गया।

अणुपरीक्षण-विरोधी दिवस

श्री जयप्रकाश नारायण की अपील पर ९ सितम्बर को 'अणुपरीक्षण विरोधी दिवस' उत्तर प्रदेश क्षेत्र खोहरी, शान्ति आश्रम (बाह) पर व ग्राम ऊदी (इटावा) में मनाया गया। अणुपरीक्षणों के विरोध में सार्वजनिक सभाओं में प्रस्ताव पास कराये गये और एक समय के उपवास के ३२ रुपये ३० नये पैसे ऊदी से तथा ११ रु० ३९ न० पै० खोहरी आश्रम से और ४३ रु० ४६ न० पै० चम्बल घाटी शान्ति-समिति कार्यालय, आगरा व ब्रज ग्रामसेवा-मंडल के कार्यकर्ताओं से, एकत्रित करके शान्ति-सेना मंडल, काशी को भेजे गये।

मुरैना

श्री किशोरीलालजी की अध्यक्षता में 'अणुपरीक्षण-विरोधी दिवस' मनाया गया और सार्वजनिक सभा में अणु परीक्षण-विरोधी प्रस्ताव भी पारित किया गया। इस सभा में धर्म, राजनैतिक पक्षों के नेताओं व कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। कार्यक्रम का संयोजन श्री चरणसिंहजी ने किया था।

सर्वोदय-पक्ष

११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक चम्बल घाटी शान्ति समिति के कार्यकर्ताओं व उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि के ग्राम सेवकों द्वारा उत्तर प्रदेश क्षेत्र के २२ गाँवों में पदयात्रा की गयी। १४ रुपये ८९ न० पै० का साहित्य बेचा गया। 'भूदान-यज्ञ' साप्ताहिक के ४ ग्राहक बनाये। ३ मुकदमों में आपसी समझौता से निपटारा हुआ। एक शान्ति-सैनिक बनाया गया। २ अक्टूबर को बाह (आगरा) विकास विभाग के कार्यालय में 'गांधी-जयन्ती' *मनायी गयी। शान्ति प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ता*क्षर कराये गये।

भिंड

केन्द्रीय कार्यालय के कार्यकर्ता श्री राज नारायण त्रिपाठी ने नगर में घर-घर जाकर देशी *चरखे का प्रचार किया।* कुछ बहनों ने चरखा चलाना प्रारम्भ किया है। कुछ निरक्षर बहनों ने पढ़ाई नियमित रूप से प्रारम्भ कर दी है। बहनों में शिक्षा एवं स्वावलम्बन का काम लेकर *श्री राजनारायणजी त्रिपाठी ने भिण्ड में* काम प्रारम्भ किया है।

चम्बल घाटी
शान्ति-समिति, —महावीरसिंह, मंत्री
आगरा

इस अंक में

कलकत्ता के मिलों में साहित्य-प्रचार

श्री दाताराम मकड़ से समाचार मिले हैं कि कलकत्ता के मिलों में साहित्य बिक्री का काम उन्होंने शुरू किया है। हायलक मिल्स लिमिटेड में मैनेजर ने २५ प्रतिशत कमिशन मिल की ओर से देने का आश्वासन दिया है।

विनोबाजी का पता—
मार्फत—मालदा डिस्ट्रिक्ट बोर्ड
डाकघर—मालदा, जिला-मालदा
[प० बंगाल]

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६)   पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८४५० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८५००   एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ३० नवम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक ९

संकट के इस अवसर पर
हम अहिंसा में अविचलित निष्ठा रखें

वेड़छी के चौदहवें अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन के अध्यक्ष श्री इ० डब्ल्यू० आर्यनायकम् का भाषण

ईश्वर की कृपा से हम सब सर्वोदय-परिवार के भाई-बहनें चौदहवें अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन के लिए वेडछी में इकट्ठे हुए हैं। भारत के इतिहास में और विशेष करके सर्वोदय के इतिहास में गुजरात का एक विशेष स्थान है। यह बापूजी की जन्मभूमि है। बरसों तक यह प्रदेश बापूजी की तपोभूमि और अहिंसा का प्रयोग-क्षेत्र रहा। सिर्फ बापूजी का ही नहीं, उनके साथी रविशंकर महाराज और जुगतराम भाई जैसे अहिंसा के साधकों का भी यह साधना-क्षेत्र रहा है, और आज भी सर्वोदय का यह महान् कर्म-क्षेत्र है। जिस स्थान में हम सर्वोदय-सम्मेलन के लिए एकत्र हुए हैं, वह भी रचनात्मक कार्यक्रम का, नयी तालीम का और आदिवासी सेवा का एक महान् केन्द्र है।

यह ध्यान में रखने की बात है कि सर्वोदय-आंदोलन में गुजरात का इतना महत्त्व होते हुए भी अब तक यहाँ अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन का अधिवेशन नहीं हुआ। आज देश के इस संकट-काल में बापूजी के गुजरात में सारे देश के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के इकट्ठे होने में मैं ईश्वर के संकेत का ही दर्शन कर रहा हूँ और आशा करता हूँ कि हमारे सहचिन्तन में, सत्य के अन्वेषण में और उसके प्रकाश में हमारे भावी कार्यक्रम को निश्चित करने में बापूजी की आत्मा हमारा मार्गदर्शन करेगी।

हम अपने को गांधी-परिवार के मानते हैं। इस समय देश के प्रति और विश्व के प्रति हमारा एक विशेष कर्तव्य है।

आप साथियों ने मुझे इस सम्मेलन का सभापति चुन कर मेरे प्रति जो विश्वास और सम्मान प्रकट किया है, उससे मेरा दिल भर आया है। मैं आप सबका आभार मानता हूँ और नम्रता तथा कृतज्ञता के साथ इस जिम्मेवारी को स्वीकार करता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि इस गम्भीर परिस्थिति में हमारा क्या कर्तव्य है, यह समझने के लिए हम सब एक साथ मिल कर नम्र प्रयत्न करेंगे और एक निश्चित कार्यक्रम और प्रेरणा लेकर इस सम्मेलन से अपने-अपने कर्मक्षेत्र में जायेंगे।

वेड़छी सर्वोदय-सम्मेलन के लिए विनोबा का संदेश

देश की आज की परिस्थिति में मुझे वेड़छी-सम्मेलन के लिए पदयात्रा में अपवाद करके आना चाहिए, इस आशय का पत्र श्री रविशंकर महाराज ने मुझे लिखा था। सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति में भी करीबन् सबकी यही राय थी, बल्कि आग्रह था। फिर भी मैं अभी समुचित स्थान में हूँ, ऐसा मैंने मान लिया। प्रबंध समिति ने सूक्ष्म चर्चा के बाद एक मार्गदर्शक प्रस्ताव कर लिया है। मैं मानता हूँ कि उससे विचारों की सफाई हो जाती है।

आज देश पर जो प्रसंग है, वह अनपेक्षित नहीं था। उसकी आशंका मुझे बरसों से है। और इसीलिए साढ़े ग्यारह साल लगातार पदयात्रा जारी रही है। हमारे विचारों के लिए जमाना तो अनुकूल था, पर लोक-मानस उतना अनुकूल नहीं था। अब आज के संदर्भ में लोक-मानस भी अनुकूल हुआ है, ऐसा मैं देख रहा हूँ। आज सर्वोदय-विचार सर्वथा अकुंठित है। प्रतिगामी शक्तियाँ सब खतम हो चुकी हैं। "अनिकेतः स्थिरमतिः," यही गीता-संदेश मेरे कान में गूँज रहा है। इस वक्त सैकड़ों पदयात्राएँ भारत में चलेंगी, तो सर्वोदय का रूप प्रत्यक्ष होने में देर नहीं लगेगी।

बंगाल-यात्रा, जिला मालदह, १४-११-'६२ —विनोबा का जय जगत्

उन्नीस महीने पहले, तेरहवें अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन के लिए जब हम आन्ध्र प्रदेश में मिले थे, तब सम्मेलन के सभापति श्री जयप्रकाश नारायण ने विश्व की परिस्थिति का जो चित्र हमारे सामने रखा था, वह काफी चिन्ताजनक था। लेकिन आज वह परिस्थिति उससे कहीं अधिक गंभीर है। पिछले कुछ महीनों में मानव जाति के संहार के साधनों के विकास की प्रतियोगिता और तीव्र हुई है। विश्व के सभी मनीषियों और विवेकियों के प्रतिवाद के बावजूद आणविक अस्त्रों के परीक्षण होते जा रहे हैं और दुनिया का वातावरण विषाक्त होता जा रहा है। भगवान् ने मनुष्य के जीवन के विकास के लिए हवा और पानी दिया था, आज वे ही मानव जाति के विनाश के साधन बन रहे हैं!

क्यूबा का संकट टला

पिछले वर्षों में विज्ञान ने आश्चर्यजनक प्रगति की है। मनुष्य अवकाश में संचार करने लगा और चन्द्रलोक में जाने का सोच रहा है! अन्न-उत्पादन में, आरोग्य में, यातायात के साधनों में महान् शोध किये जा रहे हैं। विज्ञान ने आज इतनी प्रगति की है कि सारे विश्व का जनसमुदाय एक सुखी और स्वस्थ सहयोगी जीवन बिता सकता है और परस्पर के बहुत निकट आ सकता है। लेकिन आज भी दुनिया के अधिकतर देशों में, अर्थात् एशिया-अफ्रीका, मध्य और दक्षिण अमेरिका में दारिद्र्य, भूख, अज्ञान और बीमारियों की समस्या उत्कट है और इसके अलावा दुनिया के ऊपर समूहविनाश का आतंक छाया हुआ है। अक्टूबर के

आखिरी सप्ताह में क्यूबा में सामरिक अड्डों के प्रसंग को लेकर एक ऐसी तनावपूर्ण परिस्थिति का निर्माण हुआ था कि थोड़े दिनों के लिए ऐसा लगता था कि मानव जाति और एक विश्वयुद्ध के किनारे पहुँच गयी है, जिसके अन्त में मानव जाति का और मानव संस्कृति का संपूर्ण विनाश ही होगा।

अहिंसा के कुछ प्रदीप

यद्यपि विश्व की परिस्थिति इस समय अन्धकारमय लगती है, हमें निराशा का कोई कारण नहीं है; क्योंकि इस गंभीर परिस्थिति में भी ऐसे कुछ महान् व्यक्ति, संस्थाएँ और छोटी-छोटी टोलियाँ काम कर रही हैं, जिससे मालूम होता है कि मानव की अन्तरात्मा जाग्रत और अन्याय के, असत्य के और हिंसा के विरुद्ध अपनी आवाज उठा रही है और यथाशक्ति काम भी कर रही है। इन विशाल और विकट विश्व-समस्याओं के सामने विश्व शांति और मानवता के पक्ष में यह प्रयास क्षुद्र और दुर्बल मालूम होता है। लेकिन आध्यात्मिक और नैतिक शक्तियों की कार्य-पद्धति दूसरी होती है। पिछले वर्ष नब्बे साल के वृद्ध मनीषी और दार्शनिक बर्ट्रेंड रसेल का विश्वशांति के लिए जेल जाना इस शक्ति का एक प्रेरणादायक निदर्शन रहा। वैसे ही अफ्रीका की मूक-दलित जनता के प्रतिनिधि माइकेल स्काट, अफ्रीका के सेवक, तत्त्वज्ञानी और अहिंसा के साधक अल्बर्ट श्वीट्ज़र, सीसिली में दरिद्री जनता के सेवक सत्याग्रही डनिलो डोल्ची, फ्रान्स का अनेरिअर, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के निग्रो, पादरी और रेवरेंड मार्टिन लूथर किंग जैसे सत्याग्रही, ऐसे कितने ही भक्तों और साधकों ने अपने साधना क्षेत्र में सत्य और अहिंसा के प्रदीप जला रखे हैं। ये प्रदीप छोटे हैं, लेकिन इनका प्रकाश छोटा नहीं।

विश्व शांति-सेना

इसी प्रकार इस साल नववर्ष के दिन बेरूत, लेबनान में विश्वशांति सेना की स्थापना दुनिया के सब शांतिवादियों के लिए और विशेष करके भारत की शांति-सेना के लिए एक नयी प्रेरणा और आशा की घटना बनी।

विनोबाजी: विश्व के लिए अहिंसक प्रतीक

आज संसार में न्याय, समता और विश्वशांति के लिए जितनी नैतिक ताकतें काम कर रही हैं, उसमें विनोबाजी का एक विशेष स्थान है। इस समय सिर्फ भारत के लिए नहीं, बल्कि सारे विश्व के लिए वे अहिंसक शक्ति के प्रतीक हैं। उनकी शांति-यात्रा के करीब बारह साल पूरे होने आये हैं। मार्च, १९६१ में उन्होंने आसाम में प्रवेश किया और अठारह महीने आसाम के गाँव-गाँव में घूम कर नौ सौ से अधिक ग्रामदान प्राप्त किये। जिस समय विनोबाजी आसाम गये थे, उस समय भाषा-विवाद से आसाम के हृदय में भेद के घाव पड़े थे, अपनी प्रेम-यात्रा के द्वारा उन्होंने दिलों को जोड़ने का काम किया और साथ-साथ आसाम के सर्वमान्य धर्मग्रन्थ "नामघोषा" का एक उत्तम संकलन भारत की जनता के सम्मुख रख दिया।

कुरान-सार: विश्वशांति की दिशा में एक महान् देन

इस साल विनोबाजी की "कुरान-सार" पुस्तक का जो प्रकाशन हुआ, वह विश्व शांति की दिशा में एक महान् देन है। अपनी प्रस्तावना में उन्होंने लिखा है—"···वर्षों से मैं भूदान के लिए निरंतर पदयात्रा कर रहा हूँ। इस भूदान यात्रा का एकमात्र उद्देश्य है दिलों को जोड़ना। यही मेरे जीवन की सारी प्रवृत्तियों का एकमात्र उद्देश्य रहा है। इस किताब को भी मैं इसी भावना से प्रेरित होकर प्रकाशित कर रहा हूँ।"

मौन प्रार्थना: एक देन

इसी विश्वमैत्री की भावना से प्रेरित होकर विनोबाजी ने सितम्बर महीने में पूर्वी पाकिस्तान में १६ दिन की पदयात्रा की। उनकी पदयात्रा के पहले पाकिस्तान की पत्र-पत्रिकाओं में "कुरान-सार" पुस्तक के खिलाफ कुछ विरोधी प्रचार हुआ था। उससे हम सबके मन में उनकी इस यात्रा के बारे में कुछ आशंकाएँ बनी थीं। लेकिन इन सोलह दिनों की प्रेमयात्रा में उन्हें पूर्व पाकिस्तान की जनता से जो अपार प्रेम मिला और पाकिस्तान सरकार से जिस प्रकार का सौजन्य और सम्मान का व्यवहार मिला, उससे हमारी सब आशंकाएँ मिट गयीं और अहिंसा और प्रेम की अमोघ शक्ति का एक नया दर्शन हुआ। आम सभा में मौन प्रार्थना भी विनोबाजी की विश्वमैत्री के लिए एक अपूर्व देन है। यह सुन कर हमें बड़ी खुशी हुई कि पूर्वी पाकिस्तान में भी प्रतिदिन आम सभा के अन्त में हिन्दू और मुसलिम जनता की सम्मिलित प्रार्थनाएँ बड़ी श्रद्धा और शक्ति के वातावरण में हुईं। पाकिस्तान में प्रचार के लिए कोई कार्यकर्ता नहीं थे, तथापि हजारों की तादाद में लोग उनके दर्शन के लिए और उनका संदेश सुनने के लिए आये और श्रद्धा के साथ उनकी बातें उन्होंने सुनीं। मुसलिम और हिन्दू, दोनों समाज से भूमि-दान मिला और तुरन्त उस भूमि का वितरण हुआ।

प्रेम, अध्यात्म एवं जीवनदायी यात्रा

पाकिस्तान की इस ऐतिहासिक यात्रा के हम इतने नजदीक हैं कि इस समय इसका मूल्यांकन हमारे लिए संभव नहीं है। लेकिन इसमें कोई संशय नहीं है कि इस यात्रा से परस्पर विश्वास और प्रेम की एक धारा निकल पड़ी है। प्रेम की शक्ति स्थूल दृष्टि को अगोचर रह कर धीरे-धीरे काम करती है और प्रेम के अलावा और किसी प्रकार के प्रतिदान की अपेक्षा नहीं रखती। इस यात्रा से भारत और पाकिस्तान की जनता को परस्पर-मैत्री के संबंध के बारे में नयी आशा उत्पन्न हुई है।

इस समय विनोबाजी पश्चिम बंगाल में पदयात्रा कर रहे हैं और बार-बार कह रहे हैं कि मेरी यह यात्रा बंगाल की संपूर्ण आध्यात्मिक क्रांति के लिए है। भारत की आजादी के लिए बंगाल को बहुत बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा था। उसके शरीर और हृदय के दो टुकड़े हुए हैं और इस आघात से बंगाल अभी तक स्वस्थ नहीं हो पाया है। इसके अलावा बंगाल के सामने आज अनेक समस्याएँ खड़ी हैं। इस समय विनोबाजी बंगाल में अपनी यात्रा के द्वारा प्रेम और शांति का संदेश फैला रहे हैं और एक आध्यात्मिक नवजागरण के लिए बंगाल की जनता को आवाहन दे रहे हैं। बंगाल में अभी ग्रामदान की धारा शुरू हुई है और यह आशा होती है कि इस आध्यात्मिक आवाहन का उत्तर देने के लिए बंगाल जाग रहा है।

बिहार का "बीघा-कट्ठा अभियान"

पिछले वर्ष में भूदान का और एक विशेष कार्यक्रम रहा है। आसाम के यात्राक्रम में विनोबाजी जब बिहार होकर गये तब उन्होंने यह नया कार्यक्रम बिहार के कार्यकर्ताओं के सामने रखा। अब यह एक अखिल भारतीय कार्यक्रम बन गया है और आशा की जाती है कि इससे भूदान और भूमि-वितरण के काम में एक नव-जीवन का संचार होगा।

भारत पर परम संकट

मैंने बहुत संक्षेप में पिछले वर्ष के काम के बारे में निवेदन करने का प्रयत्न किया है, क्योंकि इस समय हम पुराने कार्य के निवेदन में अधिक समय नहीं दे सकते हैं। हमारे सामने इस समय एक महान् चुनौती खड़ी है और उसका जवाब देने के लिए हमें अपने को जल्दी-से-जल्दी तैयार करना है। जिस समय में हम सम्मेलन के लिए एकत्र हो रहे हैं, वह भारत के लिए एक परम संकट और *परीक्षा का समय है। इस समय सम्मेलन* बुलाना उचित है कि नहीं, यह प्रश्न भी कार्यकर्ताओं के मन में रहा। लेकिन ऐसा सोचा गया कि इस समय एकसाथ मिल कर विचार-विनिमय और हमारा भावी कार्यक्रम निश्चित करना न सिर्फ उचित, बल्कि परम आवश्यक भी है। प्रबंध-समिति ने विनोबाजी से यह प्रार्थना की थी कि वे अपनी पदयात्रा अपवाद करके सर्वोदय-सम्मेलन के लिए वेड़छी आयें। लेकिन उन्होंने ऐसा माना कि वे अभी समुचित स्थान में ही हैं।

मैंने पहले ही कहा है कि यह हम

[शेष पृष्ठ-संख्या ११ पर]

गाँवों को स्वावलंबी और आत्मनिर्भर बनायें

सर्वोदय-सम्मेलन के लिए राजेन्द्र बाबू का संदेश

मुझे खेद है कि मैं इस वर्ष के सम्मेलन में उपस्थित नहीं हो सकूँगा। यह सम्मेलन बड़े महत्त्व के समय में हो रहा है, जब देश पर एक आपत्ति के रूप में चीन ने चढ़ाई कर दी है। इस समय सारे देश के लोगों की शक्ति, यहाँ तक कि विचार भी, इसके प्रतिरोध में लग रही है। निश्चय ही अहिंसात्मक तरीके से भी हम देश की सुरक्षा के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं। पूर्ण स्वराज्य शहरों और गाँवों के अहिंसात्मक संगठन द्वारा और लोगों की तैयारी के कारण ही प्राप्त किया है।

इस समय जब एक वैदेशिक फौज चढ़ाई कर रही है और हमारे पास भी बड़ी फौज तैयार है, तो इसका मुकाबला तो वह करेगी ही और कर रही है, पर हम लोग संगठन दृढ़ बना कर और गाँवों को यथासाध्य स्वावलम्बी और आत्म निर्भर बना कर एक ऐसी शक्ति का निर्माण कर सकते हैं, जो इस संकट के समय बहुत काम दे सकती है। यदि हमने शुरू से अहिंसात्मक तरीके से प्रतिरोध का विचार किया होता और उसके लिए यथासाध्य तैयार की होती तो शायद हम उस तरीके पर चलने का प्रयत्न भी करते। पर वह तैयारी कम रही है और जो कुछ भी तैयारी रही है, वह फौजी संगठन के रूप में ही।

ऐसी हालत में हमें यह देखना है कि दोनों प्रकार की शक्तियाँ एक-दूसरे से न टकरायें और समानान्तर रेखाओं की तरह एक तरीके पर काम करें। मालूम नहीं, यह संग्राम कितना लम्बा होगा, इसमें जितना समय अधिक लगेगा, अहिंसात्मक तैयारी और अहिंसात्मक कार्यक्रम की आवश्यकता और उपादेयता बढ़ती जायगी। इसलिए जो सर्वोदय-सम्मेलन जैसी संस्था के कार्यकर्ता हैं और जो अहिंसा में विश्वास रखते हैं, उनका यह काम है कि इस प्रकार के संगठन में लग जायँ।

मेरा विश्वास है कि वे इस तरीके से बहुत काम कर सकेंगे और देश भर में केवल शान्ति ही कायम नहीं रखेंगे, बल्कि जनता के बीच में प्रेम-भाव बढ़ा कर और आपस के छोटे-मोटे झगड़े मिटा कर अन्न वस्त्र के संबंध में खुद को स्वावलम्बी बना कर और पुलिस-अदालत की जरूरत से भी अपने को मुक्त करके हम बहुत कर सकते हैं। और वह शक्ति पैदा हो सकती है, जो आक्रमणकारियों का खुद भी मुकाबला कर सकती है। मैं चाहता हूँ कि सम्मेलन इस विषय पर विचार करे और अपना निर्णय करके कार्यकर्ताओं को काम में लगा दे।

सदाकत आश्रम, पटना

१६ नवम्बर '६२ —राजेन्द्रप्रसाद

सत्यं सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन में स्वीकृत

चीन-भारत संघर्ष सम्बन्धी निवेदन

[गत अंक में प्रबंध समिति द्वारा स्वीकृत निवेदन प्रकाशित किया जा चुका है। सर्व-सेवा-संघ के वेड़छी-अधिवेशन में उस पर विस्तार से चर्चा हुई और अन्त में जो एक संशोधित सर्वसम्मत निवेदन स्वीकृत किया गया, वह यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

चीन-भारत संघर्ष ने संसार के सामने एक गम्भीर समस्या पैदा कर दी है। विश्वशांति और जय-जगत् की भावना में विश्वास रखने वाले व्यक्ति के लिए तो यह परिस्थिति कसौटी की ही है। हम मानते हैं कि यह संघर्ष भारत पर चीन द्वारा लादा गया है, क्योंकि भारत हमेशा शांतिमय उपायों से अपने सीमा-विवादों को हल करने के लिए प्रयत्न करता रहा है। जब एक पक्ष शान्तिमय और वैध उपायों से समस्या का हल करने के लिए तैयार हो तब दूसरी ओर से शस्त्र-प्रयोग द्वारा विवाद को हल करने का प्रयत्न करना या उस पक्ष पर अपना निर्णय लादने की चेष्टा करना आक्रमण ही है। इसलिए हमारी पूर्ण सहानुभूति भारत के साथ है। हम आशा करते हैं कि आज की संकटकालीन परिस्थिति में भारत अपनी निर्वैर वृत्ति कायम रखेगा, क्योंकि वैर से वैर का कभी शमन नहीं होता।

निर्वैर वृत्ति का लक्षण यह है कि बातचीत, पंच-फैसला (आर्बीट्रेशन) आदि के लिए द्वार सदा खुले रहें। दोनों देशों की प्रतिष्ठा सुरक्षित रखते हुए निर्णय कराने की तैयारी रहे। संघर्ष की परिस्थिति होते हुए भी दोनों देशों की जनता के बीच द्वेष न रहे तथा देश में युद्ध-ज्वर पैदा न हो। भारत में रहने वाले चीनी तथा चीन में रहने वाले भारतीयों के प्रति सहृदयतापूर्ण बर्ताव हो।

इस प्रसंग की गम्भीरता और अपनी शक्ति की मर्यादा को ध्यान में रखते हुए हम अहिंसा और शांति में अपनी निष्ठा फिर से दुहराना चाहते हैं। शस्त्रों से किसी का भला नहीं हो सकता तथा न ही युद्ध से, खास करके इस आणविक युग में, कोई मसला हल हो सकता है। इसलिए अहिंसा में विश्वास करने वाला व्यक्ति या शान्ति-सैनिक युद्ध में शरीक नहीं होगा। उसका यह परम कर्तव्य होगा कि वह अविरत ऐसा प्रयत्न करता रहे, जिससे युद्ध का शीघ्रातिशीघ्र अन्त हो, युद्ध की अविलम्ब समाप्ति न केवल भारत के हितार्थ, बल्कि चीन, यहाँ तक कि सम्पूर्ण मानव जाति के हित के लिए भी नितान्त आवश्यक है। इस दिशा में हमारे प्रयत्न इसी व्यापक भूमिका से होंगे।

इसीलिए हमारा चीन से भी साग्रह अनुरोध है कि वह युद्ध की तुरन्त समाप्ति के लिए सारे सम्भाव्य शान्तिमय उपायों की खोज तथा अवलम्बन करे। हमें विश्वास है कि चीन के सारे शान्तिनिष्ठ व्यक्ति भी युद्ध को अनर्थकारक मान कर इन प्रयत्नों में अग्रसर होंगे।

इस सन्दर्भ में यह स्वीकार करना होगा कि इस समस्या का समाधान करने के लिए देश में आज आवश्यक अहिंसक शक्ति विकसित नहीं हुई है, लेकिन इसमें निराशा का कोई कारण नहीं है। यह सम्भव है कि इस विपत्ति के प्रसंग में से ही भारत की जनता में अहिंसा की अमोघ शक्ति प्रकट हो। देश की रक्षा के लिए आज जनता में जो त्याग तथा बलिदान की अपूर्व भावना जाग उठी है, उसकी हम सराहना करते हैं और हम श्रद्धा है कि आगे चल कर इस भावना का विकास वीरों की अहिंसा में हो सकता है। अहिंसा में विश्वास करने वाला कोई भी व्यक्ति ऐसी संकट की वेला में निष्क्रिय नहीं रहेगा, बल्कि देश की अहिंसक सामर्थ्य और अहिंसक प्रतिकार की क्षमता बढ़ाने में अपनी पूरी शक्ति लगायेगा। अहिंसक प्रतिकार किसी पक्ष विशेष की विजय के लिए नहीं, बल्कि सत्य और बन्धुत्व की स्थापना के लिए ही हो सकता है। इसलिए अहिंसक प्रतिकार हमेशा संघर्ष की भूमिका से ऊपर उठ कर ही होता है।

अहिंसक प्रतिकार का विचार आते ही युद्धक्षेत्र पर जाकर आक्रमण का मुकाबला करने की कल्पना आती है। यह हर्ष और अभिनन्दन का विषय है कि देश में आज कितने ही शान्ति सैनिकों ने इस प्रकार के कार्यक्रम के लिए अपने प्राण तक अर्पण करने की उत्कंठा प्रकट की है। किन्तु आज के संयोगों में इस कार्यक्रम पर गंभीर विचारणा की आवश्यकता है।

भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों की जनता में अहिंसक प्रतिकार की सामर्थ्य पैदा करना हमारा एक महत्त्व का काम होगा। इन क्षेत्रों में जहाँ अनुकूलता हो, शान्ति-सैनिक गाँव-गाँव के लोगों को ग्राम-स्वावलम्बन तथा आक्रमणकारी से असहयोग के लिए प्रेरित करेगा। आवश्यकता पड़ने पर इस प्रयत्न में शांति-सैनिक अपने प्राण अर्पण करने की तैयारी रखेगा और लोगों को भी वैसा करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।

लेकिन इतना ही महत्त्वपूर्ण और इससे कहीं व्यापक कार्यक्रम आर्थिक और सामाजिक क्रांति द्वारा देश की शक्ति को बढ़ाना है। राष्ट्र की एकता और जनता का नीति-धैर्य (मोरेल) उसका सबसे बड़ा संरक्षण है। इसके लिए राष्ट्र के आर्थिक और सामाजिक आधार और व्यवहार में न्याय और समत्व के नये मूल्यों की स्थापना करके उसे मजबूत बनाना होगा। सद्भाग्य से इस दिशा में अहिंसा कुछ प्रगति कर चुकी है। विनोबा के ग्रामदान, ग्राम-स्वराज्य आन्दोलन ने देश के सामने एक ऐसा कार्यक्रम उपस्थित कर दिया है, जिसमें मानवीय मूल्य, वैराग्निकता तथा संरक्षण की त्रिविध शक्ति निहित है। आज की परिस्थिति में गाँव-गाँव में पंचायतों द्वारा अपने संरक्षण के कार्यक्रम के तौर पर यह दृढ़ संकल्प होना चाहिये कि हमारे गाँव में कोई बेरोजगार और निराश्रित नहीं रहेगा, भूमिहीनों को यथासम्भव भूदान देकर उनको ग्राम-परिवार में शामिल किया जायगा, उत्पादन के हर साधन का समुचित उपयोग होगा, किसी प्रकार की सामाजिक और आर्थिक जबरदस्ती नहीं होगी, गाँव के झगड़े गाँव में निपटाये जायेंगे, धार्मिक तथा अन्य लघुमतियों को सुरक्षित रखा जायगा और गाँव का रक्षण गाँव के लोग स्वयं करेंगे। इसी प्रकार नगरों में भी आर्थिक और सामाजिक समता की दृष्टि से वहाँ की परिस्थिति के अनुसार कार्यक्रम उठाये जाने चाहिये।

कहना नहीं होगा कि इस महान् कार्य की पूर्ति के लिए देश की समग्र अहिंसक शक्ति एकत्रित और संयोजित की जानी चाहिये। संकट और परीक्षा के इस अवसर पर विश्व मैत्री की भावना को अक्षुण्ण रखते हुए राष्ट्रीय एकात्मता के निर्माण तथा अहिंसक प्रतिकार की क्षमता बढ़ाने के विविध कार्य में सहयोग देने के लिए अहिंसा में विश्वास रखने वाली देश की समस्त संस्थाओं, प्रवृत्तियों और व्यक्तियों का आवाहन है।

यह सद्भाग्य का विषय है कि आज संसार में ऐसे अनेक मनीषी, संस्थाएँ और समुदाय हैं, जिन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में भी शांति का प्रतिपादन बड़ी वीरता के साथ अपनी वाणी और कृति से किया है। ऐसे सारे व्यक्ति, संस्था, समुदाय तथा अखिल मानव-जाति की अन्तरात्मा का इस कसौटी की घड़ी में हम आवाहन करते हैं और विश्वास करते हैं कि वे इस संघर्ष को त्वरित समाप्त कराने में अपनी सम्पूर्ण शक्ति अविलम्ब लगायेंगे।

लोकनागरी लिपि *

महावीर बनाने की भगवान की योजना

जब चीन का आक्रमण हुआ तब हमने बहुत शान्ती से और तटस्थ भाव से सोचा, तो हमारा नीर्णय हुआ की यह आक्रमण है और बेजा है। और यह अेक मीत्र राष्ट्र पर आक्रमण है, जीसने केवल मैत्री का ही भाव रखा था। अीसलीअे हमारी स्पष्ट सहानुभूती भारत के युद्ध के साथ हो गयी। यद्यपी हम युद्ध में नहीं मानते और सशस्त्र युद्ध से नुकसान होता है, अैसा मानते हैं, तब भी हमको लगता है की भारत के सामने धर्म-युद्ध खड़ा है। अैसे मौके पर सबमें श्रेष्ठ ग्रन्थ हमको लगता है—गीता है। गीता आध्यात्मीक, आन्तरीक युद्ध के साथ बाहर के युद्ध का ख्याल रखती है और कीसीको नीर्वीर्य नहीं बनने देती। क्रूरता, कठोरता और कायरता न हो और वीरता हो। जो वीर होगा, वही महावीर होगा।

अीसका अर्थ है प्रेम के आक्रमण से सामने वाले के दील को वश में कर लेना। जहां प्रेम होगा वहां पूर्ण नीर्भयता होगी। अीसलीअे नीर्वैरता और नीर्भयता दोनों चाहीअे, तब मनुष्य महावीर हो जाता है। हमको लगता है की भारत को प्रथम वीर बना कर बाद में महावीर बनाने की यह भगवान की योजना है।

[वीरामपूर, जीला मालदा
२२-११-'६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

आखिरी सप्ताह में क्यूबा में सामरिक अड्डों के प्रश्न को लेकर एक ऐसी आपत्तिक परिस्थिति का निर्माण हुआ था कि थोड़े दिनों के लिए ऐसा लगता था कि मानव जाति और एक विश्वयुद्ध के किनारे पहुँच गयी है, जिसके अन्त में मानव जाति का और मानव संस्कृति का संपूर्ण विनाश ही होगा।

अहिंसा के कुछ प्रदीप

यद्यपि विश्व की परिस्थिति इस समय अन्धकारमय लगती है, हमें निराशा का कोई कारण नहीं है; क्योंकि इस गंभीर परिस्थिति में भी ऐसे कुछ महान् व्यक्ति, संस्थाएँ और छोटी-छोटी टोलियाँ काम कर रही हैं, जिससे मालूम होता है कि मानव की अन्तरात्मा जाग्रत और अन्याय के, असत्य के और हिंसा के विरुद्ध अपनी आवाज उठा रही हैं और यथाशक्ति काम भी कर रही हैं। इन विशाल और विकट विश्व-समस्याओं के सामने विश्व शांति और मानवता के पक्ष में यह प्रयास क्षुद्र और दुर्बल मालूम होता है। लेकिन आध्यात्मिक और नैतिक शक्तियों की कार्य-पद्धति दूसरी होती है। पिछले वर्ष नब्बे साल के वृद्ध मनीषी और दार्शनिक बर्ट्रेंड रसेल का विश्वशांति के लिए जेल जाना इस शक्ति का एक प्रेरणादायक निदर्शन रहा। वैसे ही अफ्रीका की मूल-पीड़ित जनता के प्रतिनिधि मायकेल स्काट, अफ्रीका के सेवक, तत्त्वज्ञानी और अहिंसा के साधक अल्बर्ट श्वीट्ज़र, सीसिली में दरिद्री जनता के सेवक सत्याग्रही डनियल डोल्ची, फ्रान्स का अनेीअर, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के निग्रो, पादरी और रेवरेंड मार्टिन ल्यूथर किंग जैसे सत्याग्रही, ऐसे कितने ही भक्तों और साधकों ने अपने साधना-क्षेत्र में सत्य और अहिंसा के प्रदीप जला रखे हैं। ये प्रदीप छोटे हैं, लेकिन इनका प्रकाश छोटा नहीं।

विश्व-शांति-सेना

इसी प्रकार इस साल नववर्ष के दिन ब्रुमाना, लेबनान में विश्वशांति सेना की स्थापना दुनिया के सब शांतिवादियों के लिए और विशेष करके भारत की शांति-सेना के लिए एक नयी प्रेरणा और आशा की घटना बनी।

विनोबाजी : विश्व के लिए अहिंसक प्रतीक

आज संसार में न्याय, समता और विश्वशांति के लिए जितनी नैतिक ताकतें काम कर रही हैं, उसमें विनोबाजी का एक विशेष स्थान है। इस समय सिर्फ भारत के लिए नहीं, बल्कि सारे विश्व के लिए वे अहिंसक शक्ति के प्रतीक हैं। उनकी शांति यात्रा के करीब बारह साल पूरे होते आये हैं। मार्च, १९६१ में उन्होंने आसाम में प्रवेश किया और अठारह महीने आसाम के गाँव-गाँव में घूम कर नौ सौ से अधिक ग्रामदान प्राप्त किये। जिस समय विनोबाजी आसाम गये थे, उस समय भाषा-विवाद से आसाम के हृदय में भेद के घाव पड़े थे, अपनी प्रेम-यात्रा के द्वारा उन्होंने दिलों को जोड़ने का काम किया और साथ-साथ आसाम के सर्वमान्य धर्मग्रन्थ "नामघोषा" का एक उत्तम संकलन भारत की जनता के सम्मुख रख दिया।

कुरान-सार : विश्वशांति की दिशा में एक महान् देन

इस साल विनोबाजी की "कुरान-सार" पुस्तक का जो प्रकाशन हुआ, वह विश्वशांति की दिशा में एक महान् देन है। अपनी प्रस्तावना में उन्होंने लिखा है—"⋯⋯वर्षों से मैं भूदान के लिए निरंतर पदयात्रा कर रहा हूँ। इस भूदान-यात्रा का एकमात्र उद्देश्य है दिलों को जोड़ना। यही मेरे जीवन की सारी प्रवृत्तियों का एकमात्र उद्देश्य रहा है। इस किताब को भी मैं इसी भावना से प्रेरित होकर प्रकाशित कर रहा हूँ।"

मौन प्रार्थना : एक देन

इसी विश्वमैत्री की भावना से प्रेरित होकर विनोबाजी ने सितम्बर महीने में पूर्वी पाकिस्तान में १६ दिन की पदयात्रा की। उनकी पदयात्रा के पहले पाकिस्तान की पत्र-पत्रिकाओं में "कुरान-सार" पुस्तक के खिलाफ कुछ विरोधी प्रचार हुआ था। उससे हम सबके मन में उनकी इस यात्रा के बारे में कुछ आशंकाएँ बनी थीं। लेकिन इन सोलह दिनों की प्रेमयात्रा में उन्हें पूर्व पाकिस्तान की जनता से जो अपार प्रेम मिला और पाकिस्तान सरकार से जिस प्रकार का सौजन्य और सम्मान का व्यवहार मिला, उससे हमारी सब आशंकाएँ मिट गयीं और अहिंसा और प्रेम की अमोघ शक्ति का एक नया दर्शन हुआ। आम सभा में मौन प्रार्थना भी विनोबाजी की विश्वमैत्री के लिए एक अपूर्व देन है। यह सुन कर हमें बड़ी खुशी हुई कि पूर्वी पाकिस्तान में भी प्रतिदिन आम सभा के अन्त में हिन्दू और मुसलिम जनता की सम्मिलित प्रार्थनाएँ बड़ी श्रद्धा और शक्ति के वातावरण में हुईं। पाकिस्तान में प्रचार के लिए कोई कार्यकर्ता नहीं थे, तथापि हजारों की तादाद में लोग उनके दर्शन के लिए और उनका संदेश सुनने के लिए आये और श्रद्धा के साथ उनकी बातें उन्होंने सुनीं। मुसलिम और हिन्दू, दोनों समाज से भूमि-दान मिला और तुरन्त उस भूमि का वितरण हुआ।

प्रेम, अध्यात्म एवं जीवनदायी यात्रा

पाकिस्तान की इस ऐतिहासिक यात्रा के हम इतने नजदीक हैं कि इस समय इसका मूल्यांकन हमारे लिए संभव नहीं है। लेकिन इसमें कोई संशय नहीं है कि इस यात्रा से परस्पर विश्वास और प्रेम की एक धारा निकल पड़ी है। प्रेम की शक्ति स्थूल दृष्टि को अगोचर रह कर धीरे-धीरे काम करती है और प्रेम के अलावा और किसी प्रकार के प्रतिदान की अपेक्षा नहीं रखती। इस यात्रा से भारत और पाकिस्तान की जनता की परस्पर-मैत्री के संबंध के बारे में नयी आशा उत्पन्न हुई है।

इस समय विनोबाजी पश्चिम बंगाल में पदयात्रा कर रहे हैं और बार-बार कह रहे हैं कि मेरी यह यात्रा बंगाल की संपूर्ण आध्यात्मिक क्रांति के लिए है। भारत की आजादी के लिए बंगाल को बहुत बड़ा मूल्य चुकाना पड़ा था। उसके शरीर और हृदय के दो टुकड़े हुए हैं और इस आघात से बंगाल अभी तक स्वस्थ नहीं हो पाया है। इसके अलावा बंगाल के सामने आज अनेक समस्याएँ खड़ी हैं। इस समय विनोबाजी बंगाल में अपनी यात्रा के द्वारा प्रेम और शांति का संदेश फैला रहे हैं और एक आध्यात्मिक नवजागरण के लिए बंगाल की जनता को आवाहन दे रहे हैं। बंगाल में अभी ग्रामदान की धारा शुरू हुई है और यह आशा होती है कि इस आध्यात्मिक आवाहन का उत्तर देने के लिए बंगाल जाग रहा है।

बिहार का "बीघा-कट्ठा अभियान" पिछले वर्ष में भूदान का और एक विशेष कार्यक्रम रहा है। आसाम के यात्रारंभ में विनोबाजी जब बिहार होकर गये तब उन्होंने यह नया कार्यक्रम बिहार के कार्यकर्ताओं के सामने रखा। अब यह एक अखिल भारतीय कार्यक्रम बन गया है और आशा की जाती है कि इससे भूदान और भूमि-वितरण के काम में एक नव-जीवन का संचार होगा।

भारत पर परम संकट

मैंने बहुत संक्षेप में पिछले वर्ष के काम के बारे में निवेदन करने का प्रयत्न किया है, क्योंकि इस समय हम पुराने कार्य के निवेदन में अधिक समय नहीं दे सकते हैं। हमारे सामने इस समय एक महान् चुनौती खड़ी है और उसका जवाब देने के लिए हमें अपने को जल्दी-से-जल्दी तैयार करना है। जिस समय में हम सम्मेलन के लिए एकत्र हो रहे हैं, वह भारत के लिए एक परम संकट और परीक्षा का समय है। इस समय सम्मेलन बुलाना उचित है कि नहीं, यह प्रश्न भी कार्यकर्ताओं के मन में रहा। लेकिन ऐसा सोचा गया कि इस समय एकसाथ मिल कर विचार-विनिमय और हमारा भावी कार्यक्रम निश्चित करना न सिर्फ उचित, बल्कि परम आवश्यक भी है। प्रबंध-समिति ने विनोबाजी से यह प्रार्थना की थी कि वे अपनी पदयात्रा अपवाद करके सर्वोदय-सम्मेलन के लिए वेड़छी आयें। लेकिन उन्होंने ऐसा माना कि वे अभी समुचित स्थान में ही हैं।

मैंने पहले ही कहा है कि यह हम

[शेष पृष्ठ-संख्या ११ पर]

गाँवों को स्वावलंबी और आत्मनिर्भर बनायें

सर्वोदय-सम्मेलन के लिए राजेन्द्र बाबू का संदेश

मुझे खेद है कि मैं इस वर्ष के सम्मेलन में उपस्थित नहीं हो सकूँगा। यह सम्मेलन बड़े महत्त्व के समय में हो रहा है, जब देश पर एक आपत्ति के रूप में चीन ने चढ़ाई कर दी है। इस समय सारे देश के लोगों की शक्ति, यहाँ तक कि विचार भी, इसके प्रतिरोध में लग रही है। निश्चय ही अहिंसात्मक तरीके से भी हम देश की सुरक्षा के लिए बहुत कुछ कर सकते हैं। पूर्ण स्वराज्य शहरों और गाँवों के अहिंसात्मक संगठन द्वारा और लोगों की तैयारी के कारण ही प्राप्त किया है।

इस समय जब एक वैदेशिक फौज चढ़ाई कर रही है और हमारे पास भी बड़ी फौज तैयार है, तो इसका मुकाबला तो वह करेगी ही और कर रही है, पर हम लोग संगठन दृढ़ बना कर और गाँवों को यथासाध्य स्वावलम्बी और आत्म निर्भर बना कर एक ऐसी शक्ति का निर्माण कर सकते हैं, जो इस संकट के समय बहुत काम दे सकती है। यदि हमने शुरू से अहिंसात्मक तरीके से प्रतिरोध का विचार किया होता और उसके लिए यथासाध्य तैयार की होती तो शायद हम उस तरीके पर चलने का प्रयत्न भी करते। पर वह तैयारी कम रही है और जो कुछ भी तैयारी रही है, वह फौजी संगठन के रूप में ही।

ऐसी हालत में हमें यह देखना है कि दोनों प्रकार की शक्तियाँ एक-दूसरे से न टकरायें और समानान्तर रेखाओं की तरह एक तरीके पर काम करें। मालूम नहीं, यह संग्राम कितना लम्बा होगा, इसमें जितना समय अधिक लगेगा, अहिंसात्मक तैयारी और अहिंसात्मक कार्यक्रम की आवश्यकता और उपादेयता बढ़ती जायगी। इसलिए जो सर्वोदय-सम्मेलन जैसी संस्था के कार्यकर्ता हैं और जो अहिंसा में विश्वास रखते हैं, उनका यह काम है कि इस प्रकार के संगठन में लग जायँ।

मेरा विश्वास है कि वे इस तरीके से बहुत काम कर सकेंगे और देश भर में केवल शान्ति ही कायम नहीं रखेंगे, बल्कि जनता के बीच में प्रेम-भाव बढ़ा कर और आपस के छोटे-मोटे झगड़े मिटा कर अन्न-वस्त्र के संबंध में खुद को स्वावलम्बी बना कर और पुलिस-अदालत की जरूरत से भी अपने को मुक्त करके हम बहुत कर सकते हैं। और वह शक्ति पैदा हो सकती है, जो आक्रमणकारियों का खुद भी मुकाबला कर सकती है। मैं चाहता हूँ कि सम्मेलन इस विषय पर विचार करे और अपना निर्णय करके कार्यकर्ताओं को काम में लगा दे।

सदाकत आश्रम, पटना

१६ नवम्बर '६२ —राजेन्द्रप्रसाद

विनोबा के साथ

• सिद्धराज ढड्ढा

इस बार चार दिन तक विनोबा के साथ सर्व-सेवा-संघ की प्रबंध-समिति की बैठक बिहार के पूर्णिया और बंगाल के मालदह जिलों की सन्धि पर पीपला ग्राम में हुई। करीब आठ-नौ महीने बाद प्रबंध समिति विनोबा की उपस्थिति में हो रही थी। शायद [illegible] को लेकर पिछले तीन सर्वोदय-सम्मेलन विनोबा [illegible] गिर्द और उसकी छाँह में हमेशा ऐसे सम्मेलन [illegible]। और अपनी बात के समर्थन में वे उन पिछले सम्मेलनों का अनुभव पेश करते हैं जो उनकी अनुपस्थिति में हुए। विनोबा की बात बहुत हद तक सही है, पर आमूल सामाजिक परिवर्तन के जिस प्रकार के समग्र आंदोलन में हम सब लगे हैं और जिसका महत्त्व इस देश तक ही सीमित नहीं है, उसके प्रेरणा-स्रोत व्यक्ति के साथ ज्यादा जल्दी जल्दी विचार विनिमय होते रहना भी आवश्यक है। इस बार की प्रबंध-समिति के अनुभव से इसकी पुष्टि ही हुई।

पीपला में स्वाभाविक ही चर्चा का मुख्य विषय चीन भारत संघर्ष से उत्पन्न परिस्थिति का रहा। खादी-ग्रामोद्योग कमीशन के अध्यक्ष श्री वैकुण्ठभाई भी एक दिन के लिए आये थे। अजमेर-सम्मेलन के बाद, अर्थात् करीब साढ़े तीन वर्ष में इस बार विनोबा की उपस्थिति में प्रबंध-समिति में वे आ सके थे। खादी कार्य के संक्षिप्त सिंहावलोकन के साथ देश की संकटकालीन परिस्थिति के संदर्भ में प्रबंध-समिति ने उनके, खादी ग्रामोद्योग समिति के अध्यक्ष श्री ध्वजाभाई तथा अन्य उपस्थित खादी-कार्यकर्ताओं के पूरे समर्थन से यह निर्णय लिया कि सरकार द्वारा खादी पर प्राप्त होने वाली 'रिबेट' स्वेच्छापूर्वक छोड़ने और खादी-कार्य को ग्राम स्वावलम्बन के आधार पर खड़ा करने की दिशा में काम को मोड़ने की अपील खादी-संस्थाओं से की जाय।

• • •

ता० २० अक्टूबर को चीन का बड़ा आक्रमण शुरू हुआ। ता० २१ २२ को इसके चिन्ताजनक समाचार मालूम हुए। उस समय गांधियन इन्स्टीट्यूट की एक मीटिंग के सिलसिले में जयप्रकाशजी संयोग से काशी में ही थे। स्वाभाविक ही यहाँ जो हम सब लोग इकट्ठे थे वे इस संघर्ष के समाचार से चिंतित हुए। ता० २२ की शाम को हम लोग इस पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए। संयोग से इसी समय रेडियो पर जवाहरलालजी का राष्ट्र के नाम आवाहन प्रचारित हुआ। इस बात में कोई शक नहीं रहा कि हम युद्ध की परिस्थिति में आ गये हैं। सीमा पार से भारत पर इस प्रकार का आक्रमण हजार वर्ष बाद फिर हुआ था। पिछले आक्रमण सब पश्चिम की ओर से हुए थे। पूर्वोत्तर सीमा से होने वाला इतिहास में यह पहला ही आक्रमण था, और जिस सारी परिस्थिति में और जिस संदर्भ में यह सब हुआ उससे प्रसंग की गम्भीरता स्पष्ट थी। ता० २२ की रात को ही तय हुआ कि हम दो तीन लोग तुरंत विनोबा के पास जाकर उनसे विचार विनिमय करें। जयप्रकाशजी का चित्त काफी उद्विग्न था। ऐसे संकट के समय अहिंसा में विश्वास रखने वाला व्यक्ति देश को क्या दिशा-दर्शन करे, यही मंथन उनके मन में मुख्य तौर से चल रहा था, जिसकी झलक बराबर बातचीत में मिलती थी। ता० २२ की रात की इस मीटिंग और ता० ९ नवम्बर को होने वाली प्रबंध-समिति की मीटिंग के बीच एक से अधिक बार जयप्रकाशजी के इस मनोमंथन का दर्शन हुआ। एक तूफान-सा उनके मन में चल रहा था। उस तूफान के कम होने का पहला संकेत तो ता० ३ नवम्बर को दिल्ली में हुई प्रेस-कान्फ्रेंस के समय दिये गये उनके वक्तव्य और प्रश्नों के उत्तर से मिल गया था, जब कि उन्होंने अहिंसा के मार्ग में अपनी निष्ठा को दृढ़ता के साथ और भावनापूर्ण शब्दों में व्यक्त किया। पीपला में प्रबंध-समिति की बैठक समाप्त होते-होते वह तूफान शांत हो चुका था, ऐसा लगा। अक्सर ऐसा लगता है, और वह सही भी है कि विनोबा और जयप्रकाशजी के चिन्तन के तरीके में कुछ अन्तर है। किन्हीं भी दो विचारवान व्यक्तियों के चिन्तन में पूरा साम्य नहीं होता यह आश्चर्य की बात नहीं है। पर मूल में दोनों का चिंतन एक है इसकी पुष्टि इस प्रबंध-समिति की बैठक में हुई। प्रबंध-समिति में चीन-भारत-संघर्ष के विषय पर जो निवेदन स्वीकृत हुआ उसमें वैसे तो सभी उपस्थित लोगों की सम्मति शामिल थी, पर जयप्रकाशजी ने एक-दो बार उससे अपनी पूरी एकात्मता और समाधान व्यक्त किया। एक प्रसंग पर प्रबंध-समिति में जयप्रकाशजी ने विनोबा से कहा :

> "बाबा, वैसे तो मैं कई बातों में आपसे कुछ भिन्न सोचता हूँ, लेकिन जहाँ तक अहिंसा की प्रक्रिया और उसकी समझ का सवाल है, मेरी बुद्धि आपको समर्पित है।"

१३ नवम्बर को जब प्रबंध-समिति समाप्त हुई तो सभी को ऐसा लग रहा था कि चार दिन का यह ज्ञान-सत्र और "सह-शिक्षण" सफल हुआ। ऐसे "सह शिक्षण" के मौके जल्दी-जल्दी आते रहें तो अच्छा है।

• • •

पीपला का ग्रामदान

पीपला १५०० मनुष्यों की बस्ती का बंगाल का एक बड़ा गाँव है। २५६ परिवार गाँव में हैं। उनमें से करीब १०० भूमिहीन हैं। इस गाँव में श्री सुधीर बाबू (सुधीर कुमार मिश्र) वर्षों से सेवा-कार्य कर रहे हैं। गाँव में एक स्थानीय समिति (पीपलापल्ली समिति) के मार्फत यह सारा सेवा-कार्य चलता है। इस प्रकार जमीन तो यहाँ की तैयार ही थी, विनोबा-वाणी के सिंचन से ग्रामदान का अंकुर वहाँ फूट निकला। बंगाल में प्रवेश करने के बाद से विनोबा ने ग्रामदान की एक सौम्यतर भूमिका लोगों के सामने रखनी शुरू की है। उनकी नयी परिभाषा के अनुसार गाँव के भूमिवान मिल कर अपनी भूमि का बीसवाँ हिस्सा गाँव के भूमिहीनों के लिए दें और अपनी समस्त भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा को अर्पित कर दें, इतना ग्रामदान की घोषणा के लिए बस है। सत्याग्रह की प्रक्रिया सौम्य से सौम्यतर और सौम्यतर से सौम्यतम की ओर बढ़नी चाहिए, न कि सौम्य से उग्र की ओर, यह नया तत्त्व सत्याग्रह-विचार में विनोबा ने दाखिल किया है।

भूदान-ग्रामदान के सिलसिले में इसी सौम्य-सौम्यतर वाली प्रक्रिया का वे आचरण कर रहे हैं। छठा हिस्सा भूमि का दान और स्वेच्छापूर्वक मालकियत का विसर्जन यह भूदान-ग्रामदान की सौम्य प्रक्रिया उन्होंने शुरू की थी। जब इस सौम्य प्रक्रिया के प्रवाह में थोड़ी रुकावट आयी तो उन्होंने छठे हिस्से से बीसवाँ हिस्सा दान और सारी भूमि एकसाथ ग्रामसभा को सौंप देने के बजाय मालकियत विसर्जन की घोषणा करके तत्काल केवल बीसवाँ हिस्सा निकाल देने का सौम्यतर मार्ग अपनाया। दान और स्वामित्व विसर्जन के मूल विचारों को कायम रखते हुए उनका तात्कालिक अमल उन्होंने और भी सरल बना दिया। पीपला ग्राम में जिन ५० परिवारों के पास जमीन है उन्होंने सब गाँव के भूमिहीनों के लिए भूमि के दान-पत्र भर दिये, वितरण कर दिया और अपनी सारी जमीन का स्वामित्व ग्रामसभा को समर्पण करने की घोषणा की। इस सौम्यतर प्रक्रिया से जहाँ एक ओर भूमि का लेना, बेचना, बंधक रखना आदि समाप्त हो जाता है, वहाँ दूसरी ओर मिलजुल कर ग्राम-संयोजना का द्वार भी खुल जाता है। इस प्रकार ग्राम-स्वराज की नींव पड़ती है। पीपला ग्राम में सुधीर बाबू और उनके साथियों की सेवाओं के कारण इस प्रकार की भूमिका पहले से तैयार ही थी। गाँवों में करीब ८० सशक्त व्यक्ति ऐसे हैं, जिनके पास रोजगार का कोई जरिया नहीं था। इनमें से ४० व्यक्तियों के लिए तो अभी तक पीपलापल्ली समिति काम की योजना कर चुकी है। ग्रामदान के बाद अब गाँवों में कोई भूखा-बेकार न रहे, इसकी सम्पूर्ण संयोजना जल्दी हो सकेगी, ऐसी आशा है।

> पीपला का ग्रामदान विनोबा की बंगाल-यात्रा की एक विशेष घटना मानना चाहिए। स्वयं विनोबा ने अपने एक प्रवचन में कहा था कि यों तो देश में करीब पाँच हजार ग्रामदान हुए हैं, लेकिन जो बीस-पचीस अच्छे ग्रामदान हैं, उनमें से पीपला एक है।

• • •

विनोबा के पास जाना तो तीन महीने में एक बार हो जाता है, लेकिन पिछले कई महीनों से मैं पदयात्रा में साथ नहीं हुआ था। ता० १३ नवम्बर को प्रातःकाल चार बजे उत्तर-रात्रि की चाँदनी के प्रकाश में हम लोग पीपला से निकले। पिछले चार दिनों से हम लोग विनोबा के साथ थे, प्रबंध समिति में चर्चाएँ भी काफी हुईं, पर मन कुछ खाली-सा था। कोई विशेष प्रश्न व शंकाएँ मन में थीं सो बात नहीं, पर समाधान-सा नहीं लग रहा था। ढाई घंटे पदयात्रा में विनोबा के साथ चला। अधिकतर मैं सुनता ही रहा। अपने कोई विशेष प्रश्न ऐसे थे भी नहीं जो उनसे पूछता। इस दृष्टि से मैं विनोबा के पास खाली ही गया था, अपनी ओर से "भर लेने" का कोई प्रयत्न भी नहीं किया, लेकिन जब इस पदयात्रा के बाद उस पड़ाव से वापस लौटा तो मन भरा हुआ था।

—

को बहादुरी की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी कि एकता की।

महावीर बनो, वीर बनो

क्रूरता और कायरता छोड़ने से ही बहादुरी आती है। जो क्रूर नहीं और कायर भी नहीं, यानी निर्भयता से सामना करता है, वह वीर है। जो किसी प्रकार के शस्त्र के बिना मरने को तैयार होता है और दूसरों को मारने की कल्पना भी नहीं करता, वह महावीर है। हमें भारत में सबको वीर बनाना है और हो सके तो महावीर बनने का आदर्श सामने रखेंगे तो कम से कम वीर तो बनेंगे ही। संतों की राह पर चल कर महावीर बनो और महावीर नहीं बन सकते हो, तो वीरों की परम्परा पर चल कर वीर बनो। यह आदर्श आज भगवान् ने आपके सामने रख दिया है। इसके लिए जरूरी चीज जो करने की है, वह है भूमिहीनों को अपने परिवार में ले लेना और ग्रामदान करना। वह आपने कर लिया। बंगाल में बारह साल में जो काम नहीं बना, वह आज बना। अब ज्योति प्रकट हुई है। इस वास्ते निश्चित ही भारत का उत्थान होने वाला है।

[पड़ाव : पीपला, पश्चिम बंगाल
१० नवम्बर, १९६२]

—

संकट के समय भारत का तेज प्रकट हो रहा है

विनोबा

अभी यहाँ आपका पीपला गाँव, जहाँ पंद्रह सौ की जनसंख्या है, ग्रामदान घोषित हुआ। हम परमेश्वर का उपकार मानते हैं कि आपके गाँववालों को ग्रामदान का विचार सूझा और जँचा। पिछले महीने में इस जिले में अलग-अलग ग्यारह ग्रामदान हुए। वे आदिवासी ग्रामदान थे। इससे उन ग्रामदानों की योग्यता कम नहीं होती। आदिवासियों ने ग्रामदान में अपना सब समर्पण कर दिया, यह उनके लिए बहुत गौरवास्पद है। लेकिन जो समझदार और बुद्धिमान् लोग हैं, वे अगर ग्रामदान करते हैं तो दुनिया का विश्वास हो जाता है कि यह चीज अब समाज पकड़ रहा है।

हमेशा ऐसा ही होता है। बड़े-बड़े महापुरुष हुए। उनके शिष्य कौन थे? ईसा मसीह की कहानी है। उनके एक-दो शिष्य मच्छीमार थे और एक-दो बढ़ई थे। बहुत लोग तो अनपढ़ थे। ऐसे लोगों की मदद से उन्होंने भगवत् कार्य किया। कुल दुनिया उन लोगों का पराक्रम जानती है। ईसा मसीह के मर जाने के बाद उन अपढ़ लोगों में एक प्राणसंचार हुआ और फिर सबने देखा कि उन्होंने जोरदार काम किया। यह हर महापुरुष के जीवन में होता है। जब तक वे शरीर में रहते हैं, तब तक बंधे रहते हैं। वे शरीर से बहुत अच्छा काम लेते हैं और उसे बहुत मजबूत बनाते हैं। लेकिन जब वे मर जाते हैं, तब एक छोटे शरीर से मुक्त हो जाते हैं और सब शरीरों में दाखिल होते हैं। इसलिए उनका व्यापक कार्य उनके मरने के बाद शुरू होता है। गांधीजी के बारे में भी हम यही अनुभव करते हैं। उनकी मृत्यु के बाद जोरदार कार्य चल रहा है, ऐसा हम महसूस करते हैं।

महापुरुषों की प्रेरणा

इस वक्त ये जो ग्रामदान हो रहे हैं, इसकी दूसरी उपपत्ति सिवाय, इसके कि भारत में जो महापुरुष हो गये वे जोरदार काम कर रहे हैं, हमारे पास नहीं है। अब हम लोग एक एक महापुरुष के लिए शतसांवत्सरिक उत्सव करते हैं। गत साल रवीन्द्रनाथ टाकुर का उत्सव हुआ, अभी विवेकानंद का हो रहा है। कोई पाँच साल पहले लोकमान्य तिलक का हुआ और सात साल बाद महात्मा गांधी का होगा। उनके जन्म को सौ साल हुए, वे मर भी गये, लेकिन लोग उनको याद करते हैं; क्योंकि वे लोगों के दिल में काम कर रहे हैं। और इसीलिए आपको, हमको और सबको चेतना मिल रही है।

एक कहानी है। वह बहुत रोचक और बहुत मधुर है। कुंती भगवान् कृष्ण की परम भक्त थी। भगवान् कृष्ण प्रसन्न हुए और कहा, 'वर मांगो। जो मांगोगी, वह मिलेगा।' विश्व की उत्पत्ति करने वाला, *लय करने वाला व स्थिति करने वाला भक्त* को वर देने के लिए तैयार हो गया! ऐसे सर्वसमर्थ वरदाता से कुंती ने क्या वर माँगा? वह बोली, "विपदः सन्तु नः शश्वत्।"-हमको हमेशा आपत्ति दीजिये। अद्भुत वरदान! हमको आपत्ति चाहिए। हमें आश्चर्य होता है कि कुंती ने क्यों आपत्ति मांगी? कुंती ने कहा—सम्पत्ति होगी तो आपका स्मरण नहीं होगा। लेकिन अगर आपत्ति रहेगी तो बार-बार स्मरण होता रहेगा, इसलिए हमको विपत्ति ही चाहिए।

भारत की मित्र-भावना!

इस समय भारत पर एक आपत्ति आयी है। हम इसे वरदान के रूप में लेते हैं। इसका असर यहाँ तक हुआ है कि-कम्युनिस्ट पार्टी ने भी भारत सरकार का समर्थन किया है। हमने उनको 'भी' क्यों कहा? इसका अर्थ यह नहीं कि वे मनुष्य के बाहर के थे और, आपका भला नहीं चाहते थे। उनकी दृष्टि अंतर्राष्ट्रीय है और वे केवल एक देश के ख्याल से सोचने वाले नहीं थे। ऐसी अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि रख कर भी इस वक्त उन्होंने भारत का समर्थन किया है और कहा है कि भारत पर आक्रमण हो रहा है और वह अन्याय है। अब भारत में इतनी एकता एकदम से हुई, वह क्यों हुई? क्योंकि भारत अब तक गाफिल रहा। मैं जानबूझ कर के 'गाफिल' यह खराब शब्द इस्तेमाल कर रहा हूँ। 'भारत के नेताओं ने भारत की रक्षा की योजना ठीक नहीं की, वे गाफिल रहे', ऐसा कहना भारत पर आक्षेप लगाना है। मैं कहना चाहता हूँ कि वे गाफिल रहे, इसलिए भारत की ताकत बनी। अब सवाल आता है कि वे गाफिल क्यों रहे? उनका हिंसा पर भरोसा होता और फिर भी वे हिंसा की ताकत नहीं बनाते तो वे गाफिल रहे, ऐसा कहा जाता और वह दोष होता। लेकिन उन्होंने कहा कि हमारी श्रद्धा मेल-जोल पर थी और मैत्री पर थी, इस लिए हमने मैत्री की दृष्टि से काम किया। अब इसकी प्रतीति दुनिया को हो रही है, और यहाँ तक हो रही है कि कम्युनिस्ट पार्टी का भी समर्थन सरकार को मिला है। यह जो असामान्य एकता आज भारत में प्रकट हुई है, उसका कारण मैत्री की लालसा है। एक दफा मनुष्य जाग जाता है और उसे पता लग जाता है कि मैत्री की भावना का सामने वाले से ठीक-ठीक जवाब नहीं आया तो वह वीरतापूर्वक प्रतिकार करने की बात सोचता है। इसमें उसने कुछ भी नहीं खोया; क्योंकि वह आगे अपना काम और तेजस्वी रीति से करेगा, वह अनेकों की सहानुभूति हासिल करेगा, जिसका दर्शन आज भारत को हो रहा है।

विश्वास के लिए तपस्या की आवश्यकता

कुछ लोग कह रहे हैं कि कम्युनिस्टों ने प्रस्ताव पास किया, लेकिन उन पर कहाँ तक विश्वास करेंगे? यह ठीक है। लोग ऐसा सोचते हैं तो उसमें उनका दोष नहीं है। कम्युनिस्टों का आज तक का रवैया भी संशय के लिए कारण हो जाता है। लेकिन मैं संशय रखना ठीक नहीं समझता, क्योंकि उन्होंने जो जाहिर किया है, उसकी परीक्षा तुरंत होने वाली है। बाबा ने भूदान शुरू किया और उसका असर धीरे-धीरे लोगों पर पड़ने लगा। कई लोगों ने बाबा को साथ दिया। कई लोगों ने संशय किया कि शायद इस तरह वजन हासिल करके, बाबा तो नहीं, लेकिन बाबा के साथी पार्टी बना लेंगे। लोगों में बाबा के लिए एक विश्वास है। इसका एक कारण तो यह कि वह गांधी के साथ था और दूसरा कारण यह कि बाबा पॉलिटिक्स में मूरख है। इस तरह लोगों का बाबा पर विश्वास था, इसलिए बाबा बच गया। लेकिन बाबा के साथियों के लिए लोगों के मन में शंका रही। पिछले पन्द्रह सालों में बाबा के साथियों में से एक भी मनुष्य चुनाव के लिए खड़ा नहीं रहा, तब लोगों को विश्वास हो गया कि इन लोगों को अपनी पार्टी नहीं बनानी है। और इन लोगों का अगर समाज में *वजन बना है तो हरज नहीं। उससे नैतिक* शक्ति बढ़ेगी। उससे किसी को क्षति नहीं पहुँचेगी। फिर भी हमारा एकाध साथी चुनाव के लिए खड़ा हो जाता है, लेकिन उसके लिए लोग सर्वोदय-आंदोलन को दोष नहीं देते। एक-आध ही ऐसा निकला, ऐसा समझते हैं। हमारी मूर्खता के कारण और *गांधीजी की संगति के कारण* हमारी एक प्रतिष्ठा बनी है। आप कम्युनिस्टों के लिए शंका रखते हैं, लेकिन हमारी सहानुभूति उनकी तरफ जाती है। हम उनसे कहते हैं कि जरा सब्र रखो, आपके विषय में संशय रखने का लोगों को हक है। उस हक से इन्कार मत करो और अपना व्यवहार संशय से परे रखो। यह खास करके बंगाल के भाइयों के लिए कह रहा हूँ, क्योंकि बंगाल के पार्टी वाले सिंसियर होते हैं। वे किसी भी पक्ष के हों, जिस पक्ष के होते हैं, सचाई के साथ उसके साथ होते हैं। यहाँ के कम्युनिस्ट सचाई के साथ कम्युनिस्ट विचारधारा को मानने वाले हैं। उनमें दुविधा थी। फिर भी एक प्रस्ताव पास हो गया तो वह सबने मान लिया। कम्युनिस्टों की दुनिया भर में एक ख्याति है और वह यह कि उनकी पार्टी में जो प्रस्ताव पास होता है, उसे वे सब मान लेते हैं। व्यक्तिशः कोई प्रस्ताव के पक्ष में न हो, तब भी पार्टी के अनुशासन के लिए उसे मानते हैं। अब यहाँ के कम्युनिस्टों को कठिन तपस्या करनी होगी। लोग उन्हें संशय की दृष्टि से देखेंगे, तो यह उन्हें सहन करना पड़ेगा और प्रस्ताव पर ईमानदारी से अमल करना पड़ेगा।

कम्युनिस्टों को आवाहन

आज यहाँ ग्रामदान हुआ। दूसरे भी गाँव ग्रामदान हुए हैं। इसी तरह यहाँ ग्रामदान-आंदोलन जोरों से चले, तो देखते-देखते एक एक कम्युनिस्ट धीरे-धीरे सर्वोदयी बन जायेगा और उसकी संशय-निवृत्ति भी जल्दी ही हो जायगी। ऐसा हमारा *विश्वास है।* मुझे संशय रखने का अधिकार नहीं है। मेरा संशय पर विश्वास भी नहीं है। मैं मानता हूँ कि 'संशयात्मा विनश्यति'-जो संशय रखता है वह नष्ट हो होता है। इसलिए मैं किसी पर संशय नहीं रखूंगा, सब पर पूर्ण विश्वास रखूँगा। यहाँ के कम्युनिस्टों को अपनी अंतरात्मा के अलावा यह आधार रहेगा कि बाबा हमारे लिए संशय नहीं रखता। वे बाबा के पास आ सकते हैं और शंकाएँ हों तो उनका निरसन कर सकते हैं। अगर कम्युनिस्ट यह समझते हों कि उनके कुछ विचार ऐसे भी हैं जो बाबा ग्रहण कर लेगा, तो वे आकर हमें समझा सकते हैं। इस ग्रामदान-आंदोलन में कहीं कुछ फरक करना जरूरी हो, तो वह हम कर सकते हैं। बाबा का दरवाजा सबके लिए खुला है। इस तरह हम यहाँ के कम्युनिस्टों को आवाहन दे रहे हैं।

बहनें बहादुर बनें

बहनों ने देश के इस संकट को दूर करने में मदद करने के लिए अपने गहने दान में दिये हैं। वे किस विचार से दिये हैं? गहने छोड़ने का अर्थ यह होना चाहिए कि अपनी संपत्ति सरकार को दे दी, इसके साथ ही साथ अपना डरपोक स्वभाव, *जो कि गहनों के साथ जुड़ा हुआ* है-वह कायम रखा तो गहने देने से कोई लाभ नहीं होगा। गहनों ने बहनों को डरपोक बना दिया। अब बहनों ने गहने छोड़ दिये हैं, यह खुशी की बात है। हम समझते हैं कि इसके साथ-साथ बहनें डर भी छोड़ेंगी। शेर से शेरनी ज्यादा बहादुर होती है। एक शेर के बच्चे को शिकारी ने पकड़ लिया। शेरनी तब तक उसका पीछा करती रही, जब तक कि उसे मारा नहीं। शेर (पिताजी) तो भयभीत होकर पहले ही भाग गया। शेरनी नहीं भागी, क्योंकि वह शेर से ज्यादा बहादुर होती है। तब स्त्रियाँ पुरुषों से ज्यादा डरपोक होती हैं, इसका कारण क्या है? उन्हें ज्यादा बहादुर होना चाहिए। उनके उदर से बच्चे निकले हैं, इसलिए उनकी रक्षा की जिम्मेदारी भी बहनों पर है। बहनें इस बात को समझें, और बहादुर बनें। इस वक्त अपने देश

विनोबा के साथ

• सिद्धराज ढड्ढा

इस बार चार दिन तक विनोबा के साथ सर्व-सेवा संघ की प्रबंध-समिति की बैठक बिहार के पूर्णिया और बंगाल के माल्दह जिलों की सन्धि पर पीपला ग्राम में हुई। करीब आठ-नौ महीने बाद प्रबंध समिति विनोबा की उपस्थिति में हो रही थी। शायद सभी को महसूस हुआ होगा कि ऐसे मौके ज्यादा जल्दी आने चाहिए। रेन्छी को लेकर पिछले तीन सर्वोदय-सम्मेलन विनोबा की अनुपस्थिति में हुए हैं। विनोबा का कहना है कि किसी एक ही व्यक्ति के इर्दगिर्द और उसकी छाँह में हमेशा ऐसे सम्मेलन हों तो उससे स्वस्थ गण-सेवकत्व (कलेक्टिव सर्विस) का विकास कुंठित होता है। और अपनी बात के समर्थन में वे उन पिछले सम्मेलनों का अनुभव पेश करते हैं जो उनकी अनुपस्थिति में हुए। विनोबा की बात बहुत हद तक सही है, पर आमूल सामाजिक परिवर्तन के जिस प्रकार के समग्र आंदोलन में हम सब लगे हैं और जिसका महत्त्व इस देश तक ही सीमित नहीं है, उसके प्रेरणा-स्रोत व्यक्ति के साथ ज्यादा जल्दी-जल्दी विचार विनिमय होते रहना भी आवश्यक है। इस बार की प्रबंध-समिति के अनुभव से इसकी पुष्टि ही हुई।

पीपला में स्वाभाविक ही चर्चा का मुख्य विषय चीन-भारत संघर्ष से उत्पन्न परिस्थिति का रहा। खादी-ग्रामोद्योग कमीशन के अध्यक्ष श्री वैकुण्ठभाई भी एक दिन के लिए आये थे। अजमेर-सम्मेलन के बाद, अर्थात् करीब साढ़े तीन वर्ष में इस बार विनोबा की उपस्थिति में प्रबंध समिति में वे आ सके थे। खादी-कार्य के संक्षिप्त सिंहावलोकन के साथ देश की संकटकालीन परिस्थिति के संबंध में प्रबंध समिति ने उनके, खादी-ग्रामोद्योग समिति के अध्यक्ष श्री ध्वजाभाई तथा अन्य उपस्थित खादी-कार्यकर्ताओं के पूरे समर्थन से यह निर्णय लिया कि सरकार द्वारा खादी पर प्राप्त होने वाली 'रिबेट' स्वेच्छापूर्वक छोड़ने और खादी-कार्य को ग्राम स्वावलम्बन के आधार पर खड़ा करने की दिशा में काम को मोड़ने की अपील खादी-संस्थाओं से की जाय।

* * *

ता० २० अक्टूबर को चीन का बड़ा आक्रमण शुरू हुआ। ता० २१ २२ को इसके चिन्ताजनक समाचार मालूम हुए। उस समय गांधियन इन्स्टीट्यूट की एक मीटिंग के सिलसिले में जयप्रकाशजी संयोग से काशी में ही थे। स्वाभाविक ही वहाँ जो हम सब लोग इकट्ठे थे वे इस संघर्ष के समाचार से चिंतित हुए। ता० २२ की शाम को हम लोग इस पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए। संयोग से इसी समय रेडियो पर जवाहरलालजी का राष्ट्र के नाम आवाहन प्रसारित हुआ। इस बात में कोई शक नहीं रहा कि हम युद्ध की परिस्थिति में आ गये हैं। सीमा पार से भारत पर इस प्रकार का आक्रमण हजार वर्ष बाद फिर हुआ था। पिछले आक्रमण सब पश्चिम की ओर से हुए थे। पूर्वोत्तर सीमा से होने वाला इतिहास में यह पहला ही आक्रमण था, और जिस सारी परिस्थिति में और जिस संदर्भ में यह सब हुआ उससे प्रसंग की गम्भीरता स्पष्ट थी। ता० २२ की रात को ही तय हुआ कि हम दो तीन लोग तुरंत विनोबा के पास जाकर उनसे विचार विनिमय करें। जयप्रकाशजी का चित्त काफी उद्विग्न था। ऐसे संकट के समय अहिंसा में विश्वास रखने वाला व्यक्ति देश को क्या दिशा-दर्शन करे, यही मंथन उनके मन में मुख्य तौर से चल रहा था, जिसकी झलक बराबर बातचीत में मिलती थी। ता० २२ की रात की इस मीटिंग और ता० ९ नवम्बर को होने वाली प्रबंध समिति की मीटिंग के बीच एक से अधिक बार जयप्रकाशजी के इस मनोमंथन का दर्शन हुआ। एक तूफान-सा उनके मन में चल रहा था। उस तूफान के कम होने का पहला संकेत तो ता० ३ नवम्बर को दिल्ली में हुई प्रेस-कान्फ्रेंस के समय दिये गये उनके वक्तव्य और प्रश्नों के उत्तर से मिल गया था, जब कि उन्होंने अहिंसा के मार्ग में अपनी निष्ठा को दृढ़ता के साथ और भावनापूर्ण शब्दों में व्यक्त किया। पीपला में प्रबंध-समिति की बैठक समाप्त होते-होते वह तूफान शांत हो चुका था, ऐसा लगा। अक्सर ऐसा लगता है, और यह सही भी है कि विनोबा और जयप्रकाशजी के चिन्तन के तरीके में कुछ अन्तर है। किन्हीं भी दो विचारवान व्यक्तियों के चिन्तन में पूरा साम्य नहीं होता यह आश्चर्य की बात नहीं है। पर मूल में दोनों का चिन्तन एक है इसकी पुष्टि इस प्रबंध-समिति की बैठक में हुई। प्रबंध-समिति में चीन-भारत-संघर्ष के विषय पर जो निवेदन स्वीकृत हुआ उसमें वैसे तो सभी उपस्थित लोगों की सम्मति शामिल थी, पर जयप्रकाशजी ने एक-दो बार उससे अपनी पूरी एकात्मता और समाधान व्यक्त किया। एक प्रसंग पर प्रबंध-समिति में जयप्रकाशजी ने विनोबा से कहा :

> "बाबा, वैसे तो मैं कई बातों में आपसे कुछ भिन्न सोचता हूँ, लेकिन जहाँ तक अहिंसा की प्रक्रिया और उसकी समझ का सवाल है, मेरी बुद्धि आपको समर्पित है।"

१३ नवम्बर को जब प्रबंध-समिति समाप्त हुई तो सभी को ऐसा लग रहा था कि चार दिन का यह ज्ञान-सत्र और "सह-शिक्षण" सफल हुआ। ऐसे "सह शिक्षण" के मौके जल्दी जल्दी आते रहें तो अच्छा है।

* * *

पीपला का ग्रामदान

पीपला १५०० मनुष्यों की बस्ती का बंगाल का एक बड़ा गाँव है। २५६ परिवार गाँव में हैं। उनमें से करीब १०० भूमिहीन हैं। इस गाँव में श्री सुधीर बाबू (सुधीर कुमार मिश्र) वर्षों से सेवा-कार्य कर रहे हैं। गाँव में एक स्थानीय समिति (पीपलापल्ली समिति) के मार्फत यह सारा सेवा-कार्य चलता है। इस प्रकार जमीन तो यहाँ की तैयार ही थी, विनोबा-वाणी के सिंचन से ग्रामदान का अंकुर वहाँ फूट निकला। बंगाल में प्रवेश करने के बाद से विनोबा ने ग्रामदान की एक सौम्यतर भूमिका लोगों के सामने रखनी शुरू की है। उनकी नयी परिभाषा के अनुसार गाँव के भूमिवान मिल कर अपनी भूमि का बीसवाँ हिस्सा गाँव के भूमिहीनों के लिए दें और अपनी समस्त भूमि का स्वामित्व ग्रामसभा को अर्पित कर दें, इतना ग्रामदान की घोषणा के लिए बस है। सत्याग्रह की प्रक्रिया सौम्य से सौम्यतर और सौम्यतर से सौम्यतम की ओर बढ़नी चाहिए, न कि सौम्य से उग्र की ओर, यह नया तत्त्व सत्याग्रह विचार में विनोबा ने दाखिल किया है।

भूदान-ग्रामदान के सिलसिले में इसी सौम्य-सौम्यतर वाली प्रक्रिया का वे आचरण कर रहे हैं। छठा हिस्सा भूमि का दान और स्वेच्छापूर्वक मालकियत का विसर्जन यह भूदान-ग्रामदान की सौम्य प्रक्रिया उन्होंने शुरू की थी। जब इस सौम्य प्रक्रिया के प्रवाह में थोड़ी रुकावट आयी तो उन्होंने छठे हिस्से से बीसवाँ हिस्सा दान और सारी भूमि एकसाथ ग्रामसभा को सौंप देने के बजाय मालकियत विसर्जन की घोषणा करके तत्काल केवल बीसवाँ हिस्सा निकाल देने का सौम्यतर मार्ग अपनाया। दान और स्वामित्व विसर्जन के मूल विचारों को कायम रखते हुए उनका तात्कालिक अमल उन्होंने और भी सरल बना दिया। पीपला ग्राम में जिन ५० परिवारों के पास जमीन है उन्होंने सब गाँव के भूमिहीनों के लिए भूमि के दान-पत्र भर दिये, वितरण कर दिया और अपनी सारी जमीन का स्वामित्व ग्रामसभा को समर्पण करने की घोषणा की। इस सौम्यतर प्रक्रिया से जहाँ एक ओर भूमि का लेना, बेचना, बंधक रखना आदि समाप्त हो जाता है, वहाँ दूसरी ओर मिलजुल कर ग्राम-संयोजना का द्वार भी खुल जाता है। इस प्रकार ग्राम-स्वराज की नींव पड़ती है। पीपला ग्राम में सुधीर बाबू और उनके साथियों की सेवाओं के कारण इस प्रकार की भूमिका पहले से तैयार ही थी। गाँवों में करीब ८० सशक्त व्यक्ति ऐसे हैं, जिनके पास रोजगार का कोई जरिया नहीं था। इनमें से ४० व्यक्तियों के लिए तो अभी तक पीपलापल्ली समिति काम की योजना कर चुकी है। ग्रामदान के बाद अब गाँवों में कोई भूखा-बेकार न रहे, इसकी सम्पूर्ण संयोजना जल्दी हो सकेगी, ऐसी आशा है।

> पीपला का ग्रामदान विनोबा की बंगाल-यात्रा की एक विशेष घटना माननी चाहिए। स्वयं विनोबा ने अपने एक प्रवचन में कहा था कि यों तो देश में करीब पाँच हजार ग्रामदान हुए हैं, लेकिन जो बीस पचीस अच्छे ग्रामदान हैं, उनमें से पीपला एक है।

* * *

विनोबा के पास जाना तो तीन महीने में एक बार हो जाता है, लेकिन पिछले कई महीनों से मैं पदयात्रा में साथ नहीं हुआ था। ता० १३ नवम्बर को प्रातःकाल चार बजे उत्तररात्रि की चाँदनी के प्रकाश में हम लोग पीपला से निकले। पिछले चार दिनों से हम लोग विनोबा के साथ थे, प्रबंध समिति में चर्चाएँ भी काफी हुईं, पर मन कुछ खाली-सा था। कोई विशेष प्रश्न व शंकाएँ मन में थीं सो बात नहीं, पर समाधान-सा नहीं लग रहा था। ढाई घंटे पदयात्रा में विनोबा के साथ चला। अधिकतर मैं सुनता ही रहा। अपने कोई विशेष प्रश्न ऐसे थे भी नहीं जो उनसे पूछता। इस दृष्टि से मैं विनोबा के पास खाली ही गया था, अपनी ओर से "भर लेने" का कोई प्रयत्न भी नहीं किया, लेकिन जब इस पदयात्रा के बाद उस पड़ाव से वापस लौटा तो मन भरा हुआ था!

को बहादुरी की उतनी ही आवश्यकता है, जितनी कि एकता की।

महावीर बनो, वीर बनो

क्रूरता और कायरता छोड़ने से ही बहादुरी आती है। जो क्रूर नहीं और कायर भी नहीं, यानी निर्भयता से सामना करता है, वह वीर है। जो किसी प्रकार के शस्त्र के बिना मरने को तैयार होता है और दूसरों को मारने की कल्पना भी नहीं करता, वह महावीर है। हमें भारत में सबको वीर बनाना है और हो सके तो महावीर बनने का आदर्श सामने रखेंगे तो कम से-कम वीर तो बनेंगे ही। सर्वों की राह पर चल कर महावीर बनो और महावीर नहीं बन सकते हो, तो वीरों की परम्परा पर चल कर वीर बनो। यह आदर्श आज भगवान् ने आपके सामने रख दिया है। इसके लिए जरूरी चीज जो करने की है, वह है भूमिहीनों को अपने परिवार में ले लेना और ग्रामदान करना। वह आपने कर लिया। बंगाल में बारह साल में जो काम नहीं बना, वह आज बना। अब ज्योति प्रकट हुई है। इस वास्ते निश्चित ही भारत का उत्थान होने वाला है।

[पड़ाव : पीपला, पश्चिम बंगाल
१० नवम्बर, १९६२]

स्त्री-पुरुष में तुल्य सत्त्व

• दादा धर्माधिकारी

विनोबा अक्सर भगवद्गीता के दो वचनों का उल्लेख किया करते हैं। एक वचन है—"बोधयंतः परस्परं। कथयंतश्च मां नित्यम्। तुष्यंति च रमंति च।" एक-दूसरे का उद्बोधन करते हैं, ईश्वर का गुणगान करते हैं, उसी में संतोष पाते हैं और रमते हैं। दूसरा वचन है—"परस्परं भावयन्त श्रेय परमवाप्स्यथ।" भावयन् से मतलब है संरक्षण करना, सँभालना, एक-दूसरे के रक्षण की भावना और योजना करना, जैसे प्रार्थना में—'कम्युनियन' में। यह प्रार्थना का आधुनिक प्रकार है।

हम एक-दूसरे के संरक्षण की, संवर्धन की और विकास की भावना करते हैं, एक-दूसरे के कल्याण की भावना और साधना करते हुए हम परम श्रेय को प्राप्त होंगे। हम एक-दूसरे का अभिभावन और उद्बोधन करेंगे, एक-दूसरे को सँभालेंगे, एक-दूसरे को सिखायेंगे, एक-दूसरे को रोशनी देंगे और सामर्थ्य देंगे; अर्थात् सहजीवन के लिए तुल्य भूमिका, बराबरी की हैसियत चाहिए। दो व्यक्तियों का रुतबा जहाँ बराबर नहीं होगा, वहाँ सहजीवन, मुश्तरका जिंदगी नहीं होगी। स्त्री और पुरुष का सहजीवन हमारा इष्ट है। इसलिए स्त्री का रुतबा और हैसियत पुरुष के बराबर होनी चाहिए। बराबरी से मतलब यह नहीं कि दोनों की भूमिका एक-सी, एकरंगी होगी। यहाँ समानता से मतलब है तुल्यता, एक-सी नहीं, बराबरी की।

फ्रायड का सिद्धांत

इसमें सबसे पहली दिक्कत यह है कि स्त्री-पुरुष, दोनों एक-दूसरे के संपर्क से डरते हैं। उसमें भी पुरुष के संपर्क से स्त्री अधिक डरती है, क्योंकि पुरुष कामवश है और स्त्री कामिनी, कामिनी से मतलब है काम वासना का विषय या प्रतीक। फ्रायड नाम के विख्यात समाजशास्त्री ने स्वप्न मीमांसा के विषय में कुछ आविष्कार किये हैं। स्वप्न कहाँ से आते हैं? इस प्रश्न का उसका उत्तर है कि हमारे भीतर कुछ वासनाएँ छिपी हुई होती हैं, कुछ दबी हुई होती हैं। कुछ वासनाएं, कल्पनाएँ और आकांक्षाएं पूरी नहीं हो पातीं। वे स्वप्न का रूप लेकर हमारे मानसिक जगत् में साकार होती हैं। फ्रायड के मत से इन सारी वासनाओं में प्रमुख और मूलभूत वासना कामवासना है। वह इतनी प्रबल और उग्र है कि उसका रंग सब पर चढ़ जाता है। पश्चिम में और पूर्व में ऐसे समाजशास्त्री पहले भी हो गये हैं और आज भी विद्यमान हैं, जो यह कहते हैं कि मनुष्यों के धार्मिक प्रतीक, कला, साहित्य, स्थापत्य और मनोविनोद के साधनों के पीछे प्रेरक शक्ति कामवासना की ही रही है। इस मतवाद का उल्लेख भगवद्गीता में भी किया है—'किमन्यत् कामहैतुकम्', यह सारी सृष्टि वासना से ही तो पैदा हुई है और है ही क्या? बाइबिल में संसार के आरंभ की जो आख्यायिका है, उसमें भी यही इशारा है। नंदनवन में आदम और हौवा ने साथ में आकर ज्ञानवृक्ष का फल खाया। उन्हें अपने स्त्रीत्व और पुरुषत्व का बोध हुआ। इसीमें से संसार का आरंभ हुआ और पाप का भी प्रादुर्भाव हुआ। यह—'फर्स्ट फॉल'—पहला पतन कहलाता है। आदम और हौवा के मन में कामवासना पैदा हुई और वहीं से मनुष्य जाति के पतन का आरंभ हुआ। संसार के जन्म की कहानी एक तरह से पाप की जन्मकथा है। हम लोगों में यह धारणा भी है कि जनम और मरण ही सारी दुःख-परंपरा के कारण हैं। उपनिषद् की एक आख्यायिका में कहा है कि पहले आत्मा अकेला था। अकेलेपन में उसे सूना-सूना लगता था, इसलिए 'सोऽकामयत, जाया मे स्यादिति'—उसने चाहा कि मेरे स्त्री हो, अर्थात् इस कामना से संसार का निर्माण हुआ। उपनिषद् ने तो यहाँ तक कहा है कि ब्रह्म ने कामना की कि मैं एक से 'बहु' बन जाऊँ—'एकोऽहं बहु स्याम्।' इस प्रकार सृष्टि की सारी उत्पत्ति कामवासना के आधार पर की गयी। फ्रायड ने तो यहाँ तक कह डाला है कि पिता को पुत्री अधिक प्रिय होती है, माँ को पुत्र अधिक प्रिय होता है। यह भी स्त्री और पुरुष में भिन्नलिंगीय व्यक्ति के लिए जो सहज आकर्षण है उसीका परिणाम है, अर्थात् यह भी इस कामवासना का ही फल है। फ्रायड की कुछ ऐसी विचित्र कल्पना है कि माँ का दूध पीने वाले बालक के मन में भी अपने पिता के प्रति ईर्ष्या होती है और पिता के मन में उस बालक के प्रति। इसलिए कामहैतुक सृष्टि का सिद्धांत कोई विशुद्ध या स्वस्थ सिद्धांत नहीं, वह एकांगी है और अवैज्ञानिक भी है।

सृष्टि और प्रजनन, दोनों क्रियाओं को यज्ञ माना गया है। 'यज्ञ' शब्द पवित्रता का द्योतक है। उसमें त्याग और विसर्जन की भावना है। श्रीमद्भगवद् गीता में एक श्लोक है—

> "सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा,
> पुरोवाच प्रजापतिः।
> अनेन प्रसविष्यध्वमेष वो-
> ऽस्त्विष्ट कामधुक् ॥"

प्रजापति ने यज्ञ के साथ प्रजा को उत्पन्न किया और उनसे कहा कि इसी यज्ञ द्वारा तुम्हारा प्रजनन हो, यह यज्ञ तुम्हारी कामधेनु सिद्ध हो। इन दोनों दर्शनों में सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत बड़ा अंतर है।

एक भयानक तत्त्वज्ञान

एक प्रश्न व्यर्थ किया जाता है, उसके आधार पर भले-भले विचारक भी सामाजिक सदाचार की इमारतें खड़ी करते हैं। प्रश्न यह है कि पहले पुरुष हुआ या स्त्री? इस प्रश्न के उत्तर का संकेत हमारी भाषाओं में है। यह परंपरागत संकेत धार्मिक होते हुए भी अवैज्ञानिक, अधार्मिक और अज्ञान है। यह संकेत हमारी जातिवाचक संज्ञा में भी है। हम मनुज या मानव कहलाते हैं। मनु और आदम हमारे आदि पुरुष हैं, उन्हींसे हम सब स्त्री-पुरुष पैदा हुए। इसीलिए हम मानव हैं। हौवा भी आदम से ही पैदा हुई। असल में यह भी आदमजाद ही है, हमारी तरह आदमी ही है। हमारे शास्त्रों में शतरूपा मनु से नहीं पैदा हुई। हमारा आदि पुरुष ब्रह्मदेव है, वह अज है। पहली स्त्री उसीसे पैदा हुई। उसका नाम है सरस्वती। यह सरस्वती भी ब्रह्म की कन्या है। आदम ने अपनी बेटी हौवा से संतान उत्पन्न की और ब्रह्मा ने सरस्वती से। मतलब यह कि यदि पुरुष को प्रथम व्यक्ति माना जाय तो उसे अपनी पुत्री को पत्नी बनाना होगा और यदि स्त्री को प्रथम व्यक्ति माना जाय तो उसे अपने पुत्र को पति बनाना होगा। परंतु वास्तविकता यह है कि एक-दूसरे के बिना दोनों का उद्भव असंभव है। इसलिए यह शुष्क चर्चा है।

मनोविश्लेषण के इस तत्त्वज्ञान के अनुसार स्त्री और पुरुष का परस्पर संबंध नर और मादा के सिवाय दूसरा और कोई नहीं हो सकता। यह अत्यंत अनर्थकारक और भयानक तत्त्वज्ञान है। अर्वाचीन काल में हमारे देश की सभी भाषाओं के साहित्यिकों के एक संप्रदाय ने इसके आधार पर साहित्य-रचना की है। उन्होंने ब्रह्मचर्य को अस्वाभाविक ही नहीं, अश्रेयस्कर माना है। जितने ब्रह्मचारी और ब्रह्मचारिणियाँ हुईं, उन सबकी मनोविश्लेषणात्मक विवेचन करने की भी कोशिश हुई है। ऐसे विद्वान् भी हुए हैं, जिन्होंने राम-लक्ष्मण का भी 'साइकोएनेलेसिस' कर दिखाया! बेचारे राधा-कृष्ण की तो बात ही क्या है! ईसा तक नहीं बचे! अगर स्त्री और पुरुष का, नर और मादा के सिवाय दूसरा कोई संबंध ही नहीं हो सकता, तो उसका सीधा अर्थ यह है कि उनके बीच पति-पत्नी के सिवाय और कोई रिश्तेदारी ही नहीं हो सकती। तब तो दूसरी किसी शर्त पर या दूसरे किसी प्रकार की नातेदारी में उनका सहजीवन असंभव ही है। अगर यही विज्ञान है और तत्त्वज्ञान है तो हमें स्वीकार कर लेना चाहिए कि हर स्त्री या तो किसी की प्रत्यक्ष पत्नी है अथवा संभाव्य पत्नी। सारे पुरुष जो उसके पुत्र नहीं हैं या पिता नहीं हैं, वे सब या तो उसके पति हैं या पति हो सकते हैं। पुरुष की जो माता और पुत्री नहीं है, वह उसकी प्रत्यक्ष या संभाव्य पत्नी है। पिता-पुत्री और माता-पुत्र का नाता भी कुछ समय के बाद नर और मादा के नैसर्गिक संबंध में विलीन हो सकता है। सवाल यह है कि क्या स्त्री-पुरुष में यही नातेदारी होगी, यही उनकी संस्कृति का आधार होगा?

स्त्री-पुरुष : जीवन में दो भावनात्मक गोलार्द्ध

दुर्भाग्य का विषय है कि कुछ परंपरावादी समाजशास्त्रियों ने और नवमतवादी विज्ञानशास्त्रियों ने स्त्री और पुरुष की इस नैसर्गिक भूमिका को ही व्यावहारिक नीति का आधार माना है। पुरातनप्रिय नीतिविशारदों ने स्त्री और पुरुष की पारस्परिक अस्पृश्यता को ही पवित्रता माना है। यह अस्पृश्यता लैंगिक सदाचार का प्रमुख सूत्र है। दोनों का एक-दूसरे के साथ संपर्क और संबंध जितना कम होगा उतना ही दोनों का जीवन शुद्ध और पवित्र माना जायगा, दोनों चारित्र्यवान् माने जायेंगे। जीवन में दोनों के दो भावनात्मक गोलार्द्ध बन गये। इन दो भावनात्मक गोलार्द्धों का प्रतिबिंब हमारे सारे सामाजिक व्यवहार में भी प्रकट हुआ। हमारे घरों में, समाज में और संस्थाओं में पृथ्वी के भौगोलिक गोलार्द्धों की तरह ये दो सामाजिक गोलार्द्ध हैं। एक, फीमेल हेमिस्फीअर और दूसरा, मेल हेमिस्फीअर—रनवास और रजवास, अंतःपुर और बहिःपुर। दोनों के छात्रालय अलग, क्रीड़ांगण अलग, सांस्कृतिक भवन अलग, रहने और विचरने के चौक अलग-अलग! हर चौक के चारों तरफ ऊँची दीवार होगी। इस सदाचार-नीति का मूल स्रोत वही भयानक तत्त्वज्ञान है, जो स्त्री और पुरुष के बीच यौन-सम्बन्ध की अपेक्षा दूसरे संबंधों को गौण और अतएव कम प्रबल मानता है।

हमारी देवधानी काशी नगरी में विनोबा से यह प्रश्न पूछा गया था कि लड़के-लड़कियों को साथ पढ़ाया जाय या नहीं? विनोबा कभी तो सीधे-सरल स्पष्ट शब्दों में उत्तर देते हैं, लेकिन कभी-कभी वेदमंत्रों की तरह सूचक भाषा में बोलते हैं। उन्होंने कहा, आपके प्रश्न का उत्तर तो भगवान् ने ही दे दिया है। वह एक ही घर में लड़के और लड़कियों को पैदा करता है। स्त्री की कोख से पुरुष को पैदा करता है और स्त्री को भी। क्या उसके इस विधान में आपके प्रश्न का उत्तर निहित नहीं है? दोनों को अलग-अलग रखने की उसकी मन्शा होती तो वह स्त्रियों से केवल स्त्रियों को और पुरुषों से केवल पुरुषों को पैदा कर सकता था! इतनी भव्य सृष्टि की रचना करने वाले के लिए यह कोई मुश्किल काम नहीं था।

'ग्रामभारती' की योजना और विकास

धीरेन्द्र मजूमदार

हमारे देश से अंग्रेजी हुकूमत चली गयी, लेकिन स्वराज्य नहीं हुआ। स्वराज्य का मतलब है कि जनता अपनी शक्ति से अपना राज्य चला रही है, इसका उसे भान हो। लेकिन आज ऐसा है नहीं। सरकार एक अलग चीज है, उसकी शक्ति से काम चलना चाहिये, ऐसा वह मानती है। जनता अपने को मालिक भी नहीं मानती है। अंग्रेजी राज्य में जनता की कोई हस्ती नहीं थी, अंग्रेजों की हुकूमत थी और देश की जनता गुलाम थी। चूँकि देश के सारे सरकारी कर्मचारी हुकूमत के प्रतिनिधि थे, इसलिए वे हाकिम थे और जनता उन्हें ऐसा ही मानती थी और कहती भी थी।

अंग्रेज गये, लेकिन जनता को यह नहीं कहा कि वह मालिक हो गयी। अंग्रेज देश के एक दल के हाथ में हुकूमत देकर चले गये। इस दल ने भी जनता मालिक है, ऐसा उसे भान हो इसके लिए कोई सक्रिय प्रयास नहीं किया। कुछ वैधानिक हेरफेर अवश्य हुआ, लेकिन उतने मात्र से जमी हुई मान्यता नहीं बदल सकती। फलस्वरूप आज भी जनता सरकारी कर्मचारी को हाकिम ही मानती है, नौकर नहीं, अर्थात् जनता खुद हाकिम नहीं बन सकी।

गांधीजी ने कहा था कि अंग्रेजी राज्य हटाना स्वराज्य का पहला काम है, अर्थात् अंग्रेजी राज्य हट जाने पर स्वराज्य का काम होगा। विनोबाजी ने भी भूदान-यज्ञ आन्दोलन की शुरुआत में जनता की स्वतंत्र शक्ति खड़ी करने की बात की थी। आज मैं जो काम कर रहा हूँ, वह उसी का छोर खोजने का प्रयास है। विनोबाजी ने सर्वोदय-पात्र की बात कही है। मैं इस काम को स्वराज्य का बुनियादी काम मानता हूँ, क्योंकि जनआधार की प्रक्रिया का वह सक्रिय तथा व्यावहारिक रूप है, लेकिन इस प्रकार के भिक्षा का अन्न पचाने के लिए क्या आज के कार्यकर्ताओं का मेदा मजबूत है? मैंने ऐसा देखा नहीं है। इसलिए कार्यकर्ता जन-आधारित हों, यह बात मुझे जँचती नहीं है। आप कहेंगे कि जन आधार के लिए सर्वोदय पात्र ही हो, इसकी जरूरत क्या है? सरकार जो काम करती है वह भी तो जन-आधारित है, क्योंकि जो टैक्स सरकार की आर्थिक शक्ति है, वह जनता ही देती है। लेकिन टैक्स जनता देती नहीं है, उससे लिया जाता है। वह टैक्स कानून और सजा के डर से ही देती है। अतः उसे जन आधार नहीं कहा जा सकता है। जन आधार का अर्थ जनमानस आधार है। वस्तुतः स्वराज्य का मतलब अपने विकास के लिए जनता स्वयं प्रत्यक्ष रूप से जिम्मेदार है, इसका भान होना और उस जिम्मेदारी को अपने से निभाना है। टैक्स के जरिये जो काम होता है, उससे उपर्युक्त बात की सिद्धि नहीं होती है, क्योंकि वह सैनिक शक्ति द्वारा वसूल किया जाता है, जनता उसे विचारपूर्वक देती नहीं है। अतः इससे सैनिक-राज्य और नौकर राज्य होगा, जन-राज्य नहीं।

शब्द-शक्ति-साधना

दूसरी बात यह है कि आज हमारे में विनोबाजी के कथनानुसार शब्द शक्ति का अभाव है। इसलिए हम जो प्रचार कार्य करते हैं, उसका कोई असर नहीं होता है। उदाहरण के लिए आप क्षेत्र में जो काम करते हैं, उसके बारे में लोग क्या कहते हैं, उस पर गौर कीजिये। देश में भूमिवान किसान भूमिहीन मजदूरों से मजदूरी करा कर जो मुनाफा करते हैं, उसी से अपना गुजारा करते हैं। जब हम उनको कहते हैं, "भूमिहीन मजदूरों को अपनी जमीन में से हिस्सा दीजिये", तो वे पूछते हैं कि "अगर जमीन उनको दे देंगे, तो हमारा हल कौन चलायेगा?" तब हम जवाब देते हैं कि "आप अपने से मेहनत करके खाइये।" आपके जवाब से उनका समाधान नहीं होता है, क्योंकि आखिर आप भी तो उन्हीं के वर्ग के हैं। आप जो सलाह उन्हें देते हैं, वह सम्भव है, यह प्रयोग आपने किया नहीं है। आपने अपनी मेहनत से गुजारा करके दिखाया नहीं है। जब तक आप अपनी सलाह की सम्भावना पर उन्हें कायल नहीं करेंगे, तब तक आपके शब्दों की कोई शक्ति नहीं होगी और न उससे उनका समाधान होगा।

दो भाई मेरे पास आये थे। वे पूछ रहे थे कि "काम कैसे किया जाय? जब हम रात्रि पाठशाला चलाते हैं, तब आम तौर से मजदूर वर्ग के लोग ही पढ़ने आते हैं। फिर गाँव के ब्राह्मण ठाकुर हमारी शिकायत करते हैं कि आप लोग इन्हें पढ़ा देंगे तो हमारा काम कौन करेगा?" मैंने उस भाई से पूछा कि आप उन्हें क्या जवाब देते हैं? तब उन्होंने बताया कि "हम यही जवाब देते हैं कि आप अपने से अपना काम कीजिये। लेकिन वे कहते हैं कि बाप दादा से कभी काम करने की आदत नहीं है, तब हम कैसे करें?" मैंने जब पूछा कि इसका जवाब आप क्या देते हैं? तब उन्होंने जवाब दिया कि "हम कहते हैं कि चलिये, हम बताते हैं और हमारे साथ काम कीजिये।" मैंने कहा, "आपका यह जवाब बहुत अच्छा है। आम तौर से ग्रामसेवक 'चलिये हमारे साथ काम कीजिये' यह नहीं कहता है। लेकिन आपके इतना कहने से भी उनका समाधान नहीं होगा, क्योंकि वे कहेंगे कि "भाईसाहब ठीक है, आप काम करेंगे, लेकिन आपका काम तो शौक का काम होगा। कितना भी काम हो, आपकी जीविका पर उसका असर नहीं पड़ेगा। जब आपकी जीविका के लिए अपने काम पर भरोसा नहीं है, तब आपके साथ ऐसे काम पर मुझे अपनी जीविका के लिए भरोसा कैसे हो जायगा?"

अतएव शोषण-मुक्ति के प्रचार के लिए शब्द-शक्ति साधना की लक्ष्यपूर्ति के लिए भी कार्यकर्ताओं का श्रमआधारित होना आवश्यक है, ऐसा मैं मानता हूँ और ग्रामभारती योजना उसीका प्रयास है।

ग्रामभारती-योजना का आर्थिक संयोजन

ग्रामभारती योजना का आर्थिक संयोजन नीचे दिये अनुसार होगा :

(१) कार्यकर्ता श्रमआधारित हों, इसके लिए जो गाँव ग्रामभारती के लिए आमंत्रित करेगा, उस गाँव के लोग आवश्यक जमीन देंगे। गांधी-निधि आदि रचनात्मक संस्थाएँ जो आर्थिक दृष्टि से अधिष्ठित हैं, उनका काम होगा कि जो सेवक इस तरह बैठेंगे उन्हें आवश्यक साधन दें। शुरू में जब तक जमीन से उत्पादन नहीं होता है, तब तक कार्यकर्ता का गुजारा क्षेत्र की जनता द्वारा अन्न-दान तथा धन-दान से होगा।

(२) जब तक कार्यकर्ता अपने तथा अपने परिवार के लिए अपना आर्थिक संगठन नहीं कर लेंगे, तब तक उनके परिवारों को किसी शिक्षा-संस्था में रख कर उद्योगों का शिक्षण तथा सांस्कृतिक विकास के लिए ट्रेनिंग की व्यवस्था होगी। ऐसे विद्यालय का स्वरूप एक परिवार-विद्यालय का होगा, जिसमें माता और बच्चे, दोनों रहेंगे। ऐसे विद्यालय कस्तूरबा ट्रस्ट तथा भिन्न भिन्न रचनात्मक संस्थाओं के सहयोग से चल सकेंगे।

(३) क्षेत्र में विभिन्न प्रवृत्तियाँ चलाने के लिए आवर्तक व्यय क्षेत्र भर के अन्न दान, धन-दान तथा क्षेत्र के बाहर के मित्रों के धन-दान से चलेगा। प्रवृत्तियों के लिए अनावर्तक व्यय गैर-सरकारी संस्था या सरकारी जरिये से प्राप्त किया जा सकेगा।

कार्यकर्ता क्षेत्र भर के आवश्यकताओं के काम में जब जायेंगे तब उत्पादन के काम में जितना नुकसान होगा उतना अन्नशर्ति क्षेत्र सेवा-कोष में से प्राप्त कर सकेंगे। इसका हिसाब कार्यकर्ता द्वारा उत्पादन के अनुपात में होगा।

(४) देश के रचनात्मक कार्यकर्ताओं का सहयोग इस काम में हम विशेष रूप से चाहेंगे। उनका स्वरूप ग्राम-भारती के क्षेत्र में (जो कि आम तौर से एक विकास-खण्ड का होगा) घूम कर अन्न-दान और धन दान एकत्रित करने का होगा। साथ ही इस प्रसंग के जरिये विचार-प्रचार का काम होगा। जिन कार्यकर्ताओं में उत्साह है, वे हमें साल में पन्द्रह दिन का समय देंगे। वे जिन संस्थाओं में काम करते हैं, वहाँ के अधिकारी उन्हें सवेतनिक छुट्टी देकर इस काम में मदद पहुँचा सकते हैं। कार्यकर्ताओं को छुट्टी मिल जाने पर ग्रामभारती केन्द्र में तीन दिन के विचार गोष्ठी के समय का भोजन-खर्च तथा सफर-खर्च की व्यवस्था कार्यकर्ता खुद और अपने साथी कार्यकर्ताओं से मिल कर करेगा। यही प्रक्रिया रचनात्मक कार्यकर्ताओं के लिए मित्राधार की प्रक्रिया होगी। इस प्रकार साल में चार बार तीन दिन की गोष्ठी और बारह दिन का अन्नदान-संग्रह का कार्यक्रम रहेगा। जिस कार्यकर्ता को जिस समय सुविधा हो, वह उसी समय केन्द्र में आ सकते हैं। सामान्यतया यह समय जनवरी के प्रथम सप्ताह से फरवरी के प्रथम सप्ताह तक और फिर मई-जून में दो बार रखा जायगा।

[११ अक्टूबर '६२ को खादीग्राम के कार्यकर्ताओं से हुई चर्चा का सार।]

सहजीवन में भीति और नीति के साहचर्य का अभाव

मैंने विनोबा के जवाब का मतलब अपनी भाषा में बतलाया है। ईश्वर के विधान में और प्रकृति की व्यवस्था में परिवर्तन करना मनुष्य का अधिकार है और कर्तव्य है। लेकिन जीवन के दो गोलार्द्ध बना कर स्त्री पुरुष के लिए दो अलग शिविरों का निर्माण करने में उसने क्या प्राप्त किया? दोनों एक दूसरे से अलग रहेंगे, एक दूसरे से आकर्षित होते रहेंगे और एक-दूसरे से सतर्क और सावधान भी रहेंगे। एक दूसरे को चाहते रहेंगे और एक दूसरे से बचते रहेंगे। इसमें न तो नैतिकता है और न प्रामाणिकता ही। पुरुष इधर कामिनी की कामना कर रहा है और उधर वह काल की प्रतीक्षा में है। परंतु दोनों एक-दूसरे के स्पर्श से दूर रहने की चेष्टा कर रहे हैं। इसमें से क्या निष्पन्न होगा? जो एक-दूसरे से डरते हैं, उनमें कभी एक-दूसरे के लिए प्यार हो सकता है? जो एक दूसरे के स्पर्श को अपावन मानते हैं, उनमें कोई पवित्रता आ सकती है? शारीरिक आवश्यकता दूसरी चीज है, वह तो वासना-विकार का विषय है। उसमें संस्कृति और नीति कहाँ है? विनोबा का एक महनीय सूत्र है—'भीति और नीति साथ-साथ नहीं चल सकती।' जहाँ भय आता है, वहाँ प्रेम नहीं रह सकता। ऐसी स्थिति में सहजीवन के लिए अवकाश ही कहाँ है? वह तो अब अकल्पनीय है। उसका नाम लेना भी पाप है।

अफ्रीका के लिए दूसरी होड़

मूल लेखक : डॉ० जूलियस के० न्यरेरे   अनुवादक : सुरेश राम

[टांगानिका के राष्ट्रपिता, डॉ० जूलियस के० न्यरेरे से हमारे पाठक परिचित हो चुके हैं। उनकी मौलिक रचना, "ऊजामा", जिसका अनुवाद पिछले अंकों में प्रकाशित कर चुके हैं, आज अफ्रीका में प्रकाश-स्तम्भ मानी जाती है। अब हम उनकी दूसरी रचना "अफ्रीका के लिए दूसरी होड़" पेश करते हैं, जिसमें डॉ० न्यरेरे ने अफ्रीका के सामने बढ़ते हुए खतरों का स्पष्टीकरण किया है। ये खतरे हमारे भारत व एशिया के सामने भी मौजूद हैं। सचमुच डॉ० न्यरेरे का यह निबन्ध सारे अफ्रीका और एशिया के लिए जबरदस्त चेतावनी है। —सं०]

मैं अफ्रीकन एकता का समर्थक हूँ। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जिस तरह टांगानिका या किसी दूसरे देश की आजादी प्राप्त करने के लिए एकता की जरूरत थी, उसी तरह अफ्रीका के गठन के लिए भी एकता जरूरी है और यह एकता उस आजादी के रख-रखाव के लिए भी चाहिए, जो अब हम अपने विभिन्न देशों में प्राप्त कर रहे हैं।

मेरा यह विश्वास है कि अगर हमें अपने पर छोड़ दिया जाय तो अफ्रीकी महाद्वीप पर हम एकता प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन मेरा यह विश्वास नहीं है कि हमें अपने पर छोड़ दिया जायेगा! मेरा यह विश्वास है कि जिस स्थिति से हम सफलता-पूर्वक निकल रहे हैं वह अफ्रीका के लिए पहली होड़ का प्रतीक है। अब हम एक दूसरी स्थिति में प्रवेश कर रहे हैं और जिस तरह अफ्रीका की पहली होड़ में, एक गिरोह को दूसरे के खिलाफ लड़ाया गया, ताकि अफ्रीका का बँटवारा आसानी से किया जा सके, अब अफ्रीका की दूसरी होड़ में तरकीब यह चली जायेगी कि एक राष्ट्र को दूसरे के खिलाफ कोशिश करके लड़ा दिया जाये, ताकि अफ्रीका को कमजोर तथा कलहग्रस्त बना कर उसके ऊपर काबू रखना आसान हो जाये। इस वास्ते जब हम अफ्रीकन एकता का बेखतर होकर उच्चारण करें उसके पहले यह जरूरी है कि हम उन विदेशी विचारों को अच्छी तरह परख लें, जो हमारे ऊपर लादे जाने वाले हैं। वे इसलिए नहीं लादे जायेंगे कि हम एक हो जायें, बल्कि इसलिए कि हममें भेदभाव खड़े हो जायें!

आज दुनिया दो दलों में विभक्त है, जिन्हें "पूँजीवादी दल" और "समाजवादी दल" कहा जा सकता है। आम तौर से उन्हें "पश्चिमी गुट" और "पूर्वी गुट" कहा जाता है। लेकिन मैंने जानबूझ कर "पूँजीवादी दल" और "समाजवादी दल" कहा है, ताकि इस विभाजन के पीछे जो ताकतें हैं, उन्हें आसानी से समझा जा सके।

पूँजीवाद के दोष

पूँजीवाद के अन्दर क्या दोष है? मेरा विचार यह है कि पूँजीवाद में उसी समय से दोष आ गया, जब उसने दौलत या सम्पत्ति को उसके सच्चे उद्देश्य से अलग कर दिया। सम्पत्ति का सच्चा उद्देश्य है बहुत साधारण जरूरतों को पूरा करना—खाने की जरूरत, मकान की जरूरत, तालीम की जरूरत आदि। दूसरे शब्दों में सम्पत्ति का लक्ष्य है गरीबी या दारिद्र्य को मिटाना और सम्पत्ति का दारिद्र्य से वही सम्बन्ध है जो उजाले का अंधेरे से है। हर देश में हर व्यक्ति की इन साधारण जरूरतों की पूर्ति के लिए सम्पत्ति काफी तादाद में है। लेकिन जब किसी भी एक देश में, सम्पत्ति का इस्तेमाल इन जरूरतों को पूरा करने और दारिद्र्य को मिटाने के बजाय, सत्ता और प्रतिष्ठा पाने के लिए होने लगता है, तो उस सम्पत्ति से पूरा नहीं पड़ता। तब दौलत बर्दाश्त कर लेती है गरीबी को; और तब दौलत का गरीबी से, उजाले का अन्धेरे से जैसा रिश्ता नहीं रहता, क्योंकि किसी भी राष्ट्र के पास इतनी सम्पत्ति नहीं है कि हर व्यक्ति की सत्ता और प्रतिष्ठा की आकांक्षा की पूर्ति हो सके। तब क्या होता है? तब व्यक्तियों के बीच निर्मम प्रतियोगिता शुरू हो जाती है, इसलिए नहीं कि अपने खाने, पहनने या रहने के लिए सम्पत्ति मिल जाये, बल्कि इसलिए कि अपने भाई-बन्धों के मुकाबले ज्यादा सत्ता, ज्यादा प्रतिष्ठा पाने के लिए ज्यादा सम्पत्ति उनके हाथ लग जाये। यानी, वह सम्पत्ति जो उनकी असली जरूरतों से कहीं ज्यादा है और जिसके द्वारा वे दूसरे व्यक्तियों पर हुकूमत चला सकेंगे। जब यह स्थिति आ जाती है, तो एक लखपति दूसरे लखपति को महज खत्म करने के लिए लाखों खर्च करने को तैयार हो जाता है।

समाजवाद में रोग

मेरा विश्वास है कि समाजवाद का उद्देश्य पूँजीवाद के इस पाप को दूर करना था और सम्पत्ति को उसके मौलिक उपयोग पर वापिस लाना था, जो था गरीबी को मिटाना। मैं समझता हूँ कि पूँजीवादी या तथाकथित पश्चिमी देशों को इस तथ्य को अस्वीकार करना ढोंग जैसा होगा। उन्हें यह मानना पड़ेगा कि समाजवादी देशों में यह चीज हो रही है—वहाँ व्यक्तिगत सम्पत्ति सत्ता या प्रतिष्ठा की निशानी नहीं है और सम्पत्ति का उपयोग दारिद्र्य दूर करने में किया जाता है।

लेकिन मेरा विश्वास है कि अब समाजवादी देश भी—राष्ट्रों के विशाल समुदाय में जब उनको व्यक्ति की तरह देखते हैं—वही जुर्म कर रहे हैं जो पूँजीवादियों ने पहले किया था। मेरा विश्वास है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर उन्होंने सत्ता और प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए सम्पत्ति का उपयोग शुरू कर दिया है! समाजवादी देशों द्वारा इसका इन्कार करना भी उतना ही बड़ा ढोंग होगा। अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि से, वे सम्पत्ति का उपयोग अब उसी तरह करने में व्यस्त हैं, जिस तरह पूँजीवादी देश कर रहे हैं—सत्ता और प्रतिष्ठा के वास्ते। और समाजवादी देश भी लखपति की तरह व्यवहार करने में, पूँजीवादी देशों से कम नहीं हैं—एक-दूसरे लखपति को तबाह करने के लिए लाखों का खर्च कर देने में। और यह जरूरी नहीं है कि वह पूँजीवादी लखपति हो, उसकी उतनी ही सम्भावना समाजवादी 'लखपति' होने की भी है। दूसरे शब्दों में, समाजवादी सम्पत्ति अब गरीबी को बर्दाश्त कर लेती है—और यह तो कहीं ज्यादा बड़ा जुर्म है, जिसे माफ नहीं किया जा सकता!

मेरा विश्वास है कि किसी भी अविकसित देश को समाजवादी होने के अलावा दूसरी गुंजाइश नहीं है। इसलिए मैं मानता हूँ कि हमको अफ्रीका में समाजवादी ढाँचे के अनुसार अपने को संगठित करना ही होगा। लेकिन हम कम-से-कम इतना तो करें कि समाजवाद को उसके रोग से बचा लें और अपने देशों में जो सम्पत्ति हम पैदा करना शुरू कर रहे हैं उसका राष्ट्रीय सत्ता और प्रतिष्ठा-प्राप्ति में उपयोग होने से रोक लें। हमें इसका इतमिनान कर लेना चाहिए कि इसका उपयोग एक ही काम के लिए होता है—हमारी जनता का जीवन-स्तर ऊँचा उठाना। हमें चाहिए कि जो सम्पत्ति हम पैदा कर रहे हैं उसका दारिद्र्य के साथ मेल न बिठायें और न उस दारिद्र्य को बर्दाश्त ही करें।

अफ्रीका, सावधान!

सवाल यह है कि मैं ये सब बातें क्यों कह रहा हूँ? मैं ये बातें इसलिए कह रहा हूँ कि अफ्रीका को सावधान हो जाना चाहिए और पुराने नारों के लोभ में नहीं फँसना चाहिए। मैं यह कह ही चुका हूँ कि समाजवाद इसलिए उठा कि उन गलतियों को सुधार सके, जो पूँजीवाद ने की थीं। कार्ल मार्क्स समझते थे कि एक समाज के अन्दर उसके अमीरों और गरीबों के बीच संघर्ष अनिवार्य है। मेरा विश्वास है कि उसमें कार्ल मार्क्स सही थे। लेकिन लोगों के जीवन के ऊपर टांगानिका या कीनिया या यूगण्डा के अन्दर ही अन्दर होने वाली चीजों का असर जितना पड़ता है उससे कहीं ज्यादा असर अंतर्राष्ट्रीय रंगमंच का पड़ता है। और जब आप अंतर्राष्ट्रीय रंगमंच को देखते हैं तो आपको मानना पड़ेगा कि दुनिया अभी तक अमीरों (हैव्ज) और गरीबों (हैव-नॉट्स) में बँटी हुई है। यह विभाजन पूँजीवादियों के और समाजवादियों बीच का, या पूँजीवादियों और साम्यवादियों के बीच का विभाजन नहीं है। यह विभाजन दुनिया के मालदार देशों और गरीब देशों के बीच का है। इसलिए मेरा विश्वास है कि दुनिया के गरीब देशों को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि वे दुनिया के अमीर देशों के हाथ का खिलौना या हथियार न बन जायें! हमें सतर्क रहना चाहिए, क्योंकि अमीर देश यह कह कर कि हम आपकी तरफ हैं, हमें मूर्ख बनाने की पूरी कोशिश करेंगे। अमीर देश और आप यह भी न भूलें कि आज की दुनिया के मालदार देश पूँजीवादी और समाजवादी, दोनों ही गुटों के अन्दर मौजूद हैं।

ये धोखा भरे नारे!

अफ्रीकन एकता के बारे में जो मैं कहना चाहता हूँ, उसके लिए यह जरा ज्यादा लम्बी भूमिका मैंने पेश की है। मेरा विश्वास है कि अफ्रीकन एकता के लिए इन्हीं विदेशी शक्तियों और नारों की तरफ से ही खतरा पैदा होने वाला है, जिनका आज की दुनिया की वस्तुस्थिति से कोई ताल्लुक नहीं है। खतरा इस असलियत से है कि आज दुनिया के मालदार मुल्क—पूँजीवादी और समाजवादी, दोनों ही—अपनी दौलत का इस्तेमाल गरीब देशों पर आधिपत्य पाने के लिए कर रहे हैं। और आधिपत्य के उस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वे गरीब देशों को कसने और कमजोर करने के लिए तैयार हैं। इसी वजह से शुरू में ही मैंने कहा था कि मेरा विश्वास है कि अगर हमें, अफ्रीका में, अपने पर ही छोड़ दिया जाये तो अपने महाद्वीप में हम एकता स्थापित कर लेंगे। लेकिन मेरा यह विश्वास नहीं जमता कि हमें अपने पर ही छोड़े रहने दिया जायेगा। और मैंने यह स्पष्ट कर दिया कि मेरा यह विचार क्यों है कि हमें अपने पर ही नहीं छोड़े रहने दिया जायेगा।

लेकिन डरने की कोई बात नहीं है। हमें करना यही है कि अपनी बुद्धि का उपयोग करें। यह जान लें कि हमारे लिए बेहतरी किसमें है। बाहरी दुनिया की बातें हमें जरूर सुननी चाहिये। उनमें हमें जो चीजें ऐसी महसूस हों कि वे अफ्रीका और अफ्रीकन एकता के सर्वश्रेष्ठ हितों में हैं, उन्हें तो स्वीकार कर लें और जिनके बारे में हमें महसूस हो कि वे अफ्रीका या अफ्रीकन एकता के हित में नहीं हैं, उन्हें खारिज कर दें और स्पष्टता के साथ, दो-टूक ढंग से खारिज करें। और इसके अन्दर प्रजातंत्र, समाजवाद आदि के ये सब आकर्षक, मगर धोखा भरे नारे शामिल हैं, जो सत्ताकांक्षी देशों के असली इरादों को ढँके रखने के लिए अक्सर उपयोग में लाये जाते हैं। इन दकियानूसी नारों का अफ्रीका में जो कुछ हो रहा है, उससे कोई सम्बन्ध ही नहीं रहा है और आम तौर से इनका उपयोग अफ्रीका को अलग-अलग देशों में बाँटने के लिए किया जाता है। (क्रमशः) ■

मैं पाकिस्तान नहीं जा सका, पर मेरी आशाएँ सफल हुईं

● अहद फातमी

आसाम की पदयात्रा समाप्त कर विनोबाजी पश्चिमी बंगाल जाने वाले थे। आसाम से पश्चिम बंगाल पहुँचने के सीधे और मुख्य मार्ग में जमीन का टुकड़ा आता था, जो कि दुबरी-परबती रोड के नाम से मशहूर था। सहज ही विनोबाजी की इच्छा उस रास्ते से जाने की हुई। लेकिन वे उस पुरानी सीधी सड़क से नहीं गुजर सकते थे। आदम और हौवा की संतति को भिन्न भिन्न राष्ट्रों में बाँटने वाली, मनुष्यों की खींची हुई रेखा वहाँ मनुष्यता की अवहेलना का अशुभ गान पढ़ रही थी।

इधर हिंदुस्तान की सीमा थी, उधर पाकिस्तान की। राष्ट्रों-राष्ट्रों में भेद न करने वाला, एक विश्वव्यापी भ्रातृत्व का पुरस्कर्ता, जय जगत् का पुजारी बोल पड़ा : "यदि अयूब खाँ निर्भय होकर मुझे अनुज्ञा दें तो मैं उनके देश की धरती से वहाँ का अन्न, वहाँ का जल एवं वायु सेवन करते हुए वहाँ से गुजरना चाहूँगा।"

समाचार-पत्रों में समाचार आया कि पाकिस्तान सरकार ने विनोबाजी को पूर्व पाकिस्तान से जाने की आज्ञा दे दी।

हिंदुस्तान के करीब सभी समाचार-पत्रों ने और सूज्ञ जनों ने इस खबर को एक शुभ शकुन कहा। इस देश के उन सब लोगों ने, जो शांति चाहते हैं और पाकिस्तान के साथ मित्रता, प्रेम एवं भाईचारा स्थापित करने की इच्छा अपने मन में रखते हैं, इस खबर पर प्रसन्नता प्रकट की। कौन जाने जहाँ सत्ताओं की तदबीरें असफल सिद्ध हुईं, वहाँ एक ईश्वरपरायण सैनिक का मानवता का प्रेम-संगीत अपना काम कर गुजरे।

विनोबाजी की इस यात्रा का उद्देश्य न तो पाकिस्तान में भूदान आंदोलन चलाना था, न कोई संस्था या संगठन स्थापित करना। उनका एक ही उद्देश्य था—प्रेम देना और प्रेम लेना। अपने प्रेम पर तथा प्रेम की शक्ति पर इस ईश भक्त का, मर्दे खुदा का इतना दृढ़ विश्वास है कि एक प्रसंग में उन्होंने यह भी कहा—

"यदि पाकिस्तान सरकार यह चाहती हो कि मैं वहाँ कुछ बोलूँ नहीं, तो मैं मौनपूर्वक यह पदयात्रा करने पर राजी हूँ।"

विनोबा के साथ मैं नहीं जा रहा था

"विनोबाजी के साथ क्या तुम पाकिस्तान जा रहे हो?"—दोस्तों ने मुझसे पूछा।

मैंने उत्तर दिया, "नहीं"

विनोबाजी के साथ पाकिस्तान जाने का मेरा कोई इरादा नहीं था। वस्तुतः मैंने इसका कोई खास लाभ नहीं महसूस किया। विनोबा का सहप्रवासी बनने के बजाय मैंने अपना इलाज कराने को अधिक महत्त्वपूर्ण माना। इधर बहुत दिनों से मेरा स्वास्थ्य बिगड़ रहा है, मित्रों को इससे बहुत चिन्ता हुई। उन्होंने कई आरोग्यधाम सुझाये। चिकित्सा के प्रबंध के बारे में सोचा। अखबार की तो जिम्मेदारी अच्युत भाई देशपांडे ने ली थी, गत दो-तीन महीने से वे इसे देख रहे हैं। किन्तु यह सब होते हुए भी काम पर काम ऐसे आते रहे कि मैं न तो अपनी चिकित्सा करा सका और न जम कर कहीं आराम ले सका। काम और सफर के इस ढाँचे को कहीं-न-कहीं समाप्त करना ही था, वरना इलाज नहीं हो सकता था। इसके लिए इसी समय को मैंने शुभ अवसर माना और पटने में ठहर कर इलाज कराने लगा।

पाकिस्तान में 'एसेंस ऑफ कुरान' का विरोध

आकाश में घनघोर घटा छायी हुई थी। रिमझिम-रिमझिम वर्षा हो रही थी। सुबह-सुबह चाय मिली और अखबार आया। बड़े शौक से अखबार हाथ में लिया। किन्तु यह क्या? पश्चिम पाकिस्तान के समाचार-पत्रों ने विनोबाजी के कुरान-चयन के अंग्रेजी अनुवाद 'एसेंस ऑफ कुरान' का विरोध प्रारंभ कर दिया! पुस्तक उस समय लोगों के सम्मुख प्रस्तुत भी हो नहीं सकी थी। पुस्तक देखे बिना ही एक कहानी गढ़ ली गयी थी।

मैं अस्वस्थ हुआ। सोचने लगा, अब मुझे क्या करना चाहिए? भाई श्रीकृष्णदत्त भट्ट संयोग से उन दिनों पटने में ही थे। भागा भागा उनके पास पहुँचा। वे भी इस समाचार से बहुत अस्वस्थ थे। हमने परस्पर विचारविनिमय किया और निश्चय हुआ कि मुझे वाराणसी जाना चाहिए।

प्रवास में एक मित्र ने सहानुभूतिपूर्ण शब्दों में कहा, "बिचारे विनोबाजी पर इसका कितना असर होगा!"

मैंने उत्तर दिया—"विनोबा एक उच्च कोटि के मानव हैं। परमात्मा का वह उपासक अपने तईं केवल परमात्मा के सम्मुख उत्तरदायी मानता है। वह मनुष्यों की प्रशंसा से हर्षित नहीं होता, न उनकी निंदा से दुःखी। किन्तु एक मुसलमान के नाते मैं अवश्य लज्जित हूँ।"

वैसे तो विनोबाजी ने कुरान का अध्ययन अनेक बार किया है। यह चयन-कार्य भी उन्होंने २५ वर्ष पूर्व ही प्रारम्भ किया था। किन्तु इस समय कश्मीर जाने जाने से पूर्व, १९५९ में पंजाब में उन्होंने कुरान शरीफ को जो हाथ में लिया, तो आसाम तक इसका अध्ययन करते रहे। इस अवधि में दर्जनों बार मैं उनसे मिला। दो-चार दिन से लेकर दो-चार हफ्तों तक उनके साथ रहा। इस काल में कुरान ही उनका सबसे प्यारा विषय था। प्रत्येक मिलने वाले से वे उस विषय पर बात करते थे। कुरान में आये हुए विचार और उसकी श्रेष्ठता उन्हें समझाते और उनको अपने चयन के विषय में भी जानकारी देते।

कुरान के विषय में विनोबाजी की लिखा और रसूल, उनके साथी और सच्चरित्र खलीफा के साथ उनका जो प्रेममय लगाव है, वह बहुत ही आकर्षक है। ऐसे मनुष्य के बारे में पाकिस्तान में अखबार में आयी बातें पढ़ कर मन पर घोर आघात हुआ।

दिल्ली को प्रस्थान

वाराणसी पहुँचा तो देखा कि मित्र मेरी प्रतीक्षा ही कर रहे थे। उन्होंने पटना में मेरे लिए फोन किया था, किन्तु उससे पूर्व ही मैं वहाँ से रवाना हो चुका था। मेरे दिल्ली जाने की सारी तैयारी उन्होंने पूरी कर रखी थी। मेरे वाराणसी पहुँचने से पूर्व सर्व-सेवा संघ के सहमन्त्री श्री दत्तोबा दास्ताने ने एक संक्षिप्त वक्तव्य द्वारा यह बात स्पष्ट कर दी थी कि "विनोबाजी ने कुरान में कोई फेरफार नहीं किया है। केवल कुछ शीर्षकों के नीचे कुरान शरीफ की आयतें संगृहीत की हैं। विनोबाजी का यह संकलन कोई अनोखी वस्तु नहीं है। उनसे पूर्व कई मुसलमानों और गैरमुसलमानों ने इस प्रकार के चयन ग्रंथ प्रस्तुत किये हैं।" हमने यह भी निश्चय किया कि जब तक विनोबाजी पाकिस्तान में हैं, हम इस चर्चा में कोई अधिक भाग अब नहीं लेंगे। दो घंटे वाराणसी में रुक कर मैं दिल्ली के लिए रवाना हुआ।

राजनीति अब मनुष्यों को जोड़ती नहीं, तोड़ती है

पश्चिम पाकिस्तान में नित नयी छेड़ शुरू हुई। वहाँ एक होड़ थी, ऋजुता एवं वृत्तिगाम्भीर्य, शिष्टता एवं सौजन्य की नहीं, अपितु इस बात की कि अधिक-से-अधिक प्रतिष्ठा एवं शिष्टता, सभ्यता एवं ऋजुता से गिरे हुए शब्दों का उपयोग करने में कौन अग्रसर होता है।

इस 'साहित्यिक समूह' में भाग लेने वाले थे, पश्चिम पाकिस्तान के पत्रकार, वहाँ के 'विद्वद्', वहाँ के विद्यार्थी, कुछ जमातें, कुछ उलेमा और कुछ लोग।

पश्चिम पाकिस्तान के इस बरताव पर दुःख तो बहुत हुआ, पर अंश मात्र आश्चर्य नहीं हुआ। राजनीति मनुष्यों को जोड़ने की अपनी ऐतिहासिक भूमिका अदा कर चुकी, अब वह सारी दुनिया में मनुष्यों को तोड़ने का काम कर रही है। राजनीति के सबसे बड़े हथियार, अखबार से इससे भिन्न कोई आशा नहीं की जा सकती थी। बौद्धिक दारिद्र्य के शिकार ये विद्यार्जन करने वाले (!) क्षमायोग्य, राजनैतिक उपद्रवियों के हस्तक, ये अबोध विद्यार्थी, इनको तो दया ही आती है। मौलवी हमिद हुसेन बदायूनी के जोशीले वक्तव्यों पर न दुःख हुआ, न आश्चर्य। केवल इतनी जानकारी मिली कि हिंदुस्तान के विभाजन के समय मौलवी साहब को रात-दिन जो व्यग्रता थी, वह अब भी शेष है। ईश्वर ही उनकी रक्षा करे! किन्तु मौलाना एहतशामुलहक के वक्तव्य पर आश्चर्य भी हुआ और अपेक्षाभंग का दुःख भी हुआ। हमने उनसे ऐसे साधारण बरताव से हट कर गम्भीर चिंतन और प्रगल्भ दृष्टि की आशा की थी।

पाकिस्तान के अखबारों के कोलाहल में एक आकर्षक आविष्कार यह हुआ कि इस चर्चा में पूर्व पाकिस्तान के अखबारों ने कुछ भी भाग नहीं लिया और पश्चिम पाकिस्तान में भी इस बखेड़े का प्रारंभ उन अखबारों ने किया, जो विनोबाजी के पाकिस्तान में प्रवेश होने का राजनैतिक कारणों से पहले ही विरोध कर चुके थे। पाकिस्तान के विदेश-मंत्री ने उनको इस विषय में निरुत्साहित किया, तो उन्होंने एक नया स्वाँग रच कर जनता को भड़काना चाहा।

सीमा पर खड़े हम परस्पर हस्तांदोलन कर सकते हैं

मैं उस समय भी सोचता था और अब भी सोचता हूँ कि विनोबा के इस चयनग्रंथ के बारे में पाकिस्तान में जो बातें कही गयीं, वे अज्ञान का परिणाम थीं या उसमें दुष्ट हेतु था? ये दोनों स्थितियाँ दुःखदायी और किसी भी मनुष्य के लिए भयावह हैं। क्या पूरे पाकिस्तान में मौलाना आबिदी के अतिरिक्त किसी में इतनी समझ नहीं थी कि प्रत्येक आंदोलन का एक स्वभाव होता है और किसी भी आंदोलन का नेता ऐसी कोई कृति नहीं करेगा, जो उस आंदोलन के दृष्टिकोण से विरोधी हो?

हिंदुस्तान और पाकिस्तान में दूरी ही कितनी है? हम चाहें तो अपनी-अपनी सीमाओं पर खड़े होकर एक-दूसरे से हस्तांदोलन कर सकते हैं या एक-दूसरे से गले मिल सकते हैं। सारा जगत्, जहाँ लोकशाही है, विनोबा के तत्त्वज्ञान तथा उनकी कार्यप्रणाली को जानता है, तो क्या पाकिस्तान को ही इस बात का ज्ञान नहीं कि विनोबा मानव जाति को एक विश्वव्यापी कुटुम्ब मानते हैं? वे जहाँ कहीं जाते हैं वहाँ किसी भी मनुष्य को कोई कष्ट न पहुँचाया जाय, इस विचार का प्रचार करते हैं, करुणा का गौरव समझाते हैं, प्रेम का संदेश सुनाते हैं, आत्मज्ञान की बात कहते हैं, नीति की शिक्षा देते हैं। चूंकि मनुष्य को मनुष्य से दूर करने में अमीरी और गरीबी का बहुत बड़ा हाथ है, इसलिए व्यक्तिगत स्वामित्व को

हम अहिंसा में अविचलित···

[पृष्ठ २ का शेष]

सबके लिए परीक्षा का समय है।

> इस समय जब कि हमारे देश पर हमारे पड़ोसी द्वारा अन्यायपूर्ण आक्रमण हो रहा है, उस समय अहिंसा में अपनी निष्ठा को अविचलित रख कर अपने कर्तव्य का निर्धारण करना हमारा परम धर्म है।

नैतिक बल एवं राष्ट्रीय एकात्मकता की आवश्यकता

मेरा विश्वास है कि इस सम्मेलन में हम विश्वमैत्री और मानवता के आदर्शों में हमारी निष्ठा को दृढ़ता के साथ दुहरायेंगे। चीन की जनता के भौतिक और आध्यात्मिक कठिनाइयों के लिए हम अपने चित्त में प्रेम और सहानुभूति की भावना को जाग्रत रखेंगे और अहिंसक साधनों से भारत की जनता को इस संकट का सामना करने में और इसके ऊपर उठने में अपने को नियोजित करेंगे।

इस समय भारत की जनता की शक्ति के निर्माण के लिए कार्यक्रम क्या हो, इसके बारे में बापूजी के लेखों से और विनोबाजी के प्रवचनों से हमें मार्गदर्शन मिलता है। इस समय राष्ट्र में सबसे बड़ी आवश्यकता है नैतिक बल और राष्ट्रीय एकात्मकता की। बापूजी के बताये हुए रचनात्मक कार्यक्रम का और विनोबाजी के प्रवर्तित भूमिदान, ग्रामदान और शांति-सेना के कार्यक्रम का भी यही ध्येय है। इसीलिए विनोबाजी बार-बार कह रहे हैं कि यह ग्राम-स्वराज्य का कार्यक्रम राष्ट्र की प्रतिरक्षा का एक शक्तिशाली साधन है। बिहार के शांति-सैनिकों को उद्देश्य करके विनोबाजी ने कहा था कि :

> "ग्रामदान के काम को इस वक्त हम जितना बढ़ावा दे सकें उतना विश्व-शान्ति में और भारत की एकता में हमारा योगदान होगा।"

आशा है कि उनके इस निर्देश को सर्वोदय-कार्यकर्ता गंभीरतापूर्वक स्वीकार करेंगे।

चीनी जनता के प्रति मैत्री-भावना बनी रहे

और एक बात की ओर मैं सर्वोदय-परिवार के भाई बहनों का ध्यान खींचना चाहता हूँ।

> जैसे जैसे देश में युद्ध का वातावरण बनेगा और युद्ध-ज्वर बढ़ेगा, चीन के प्रति एक विद्वेष की भावना बढ़ने की भी संभावना है। हम सबका परम कर्तव्य है कि इस भावना को हम बढ़ने न दें और यही प्रयत्न करें कि लड़ाई के बावजूद चीन की जनता के प्रति हमारी मैत्री की भावना और चीन की संस्कृति के प्रति हमारे आदर की भावना अक्षुण्ण रहे।

अन्त में मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह हमें प्रेरणा एवं सद्बुद्धि दें कि हम इस संकट का सामना करने के लिए आवश्यक नैतिक शक्ति की साधना करें।

विश्व-मैत्री की साधना

> हमारी जनता में एकता बढ़े। स्वावलंबन के लिए और ग्राम-परिवार के निर्माण के लिए सत्य और अहिंसा के आधार पर समाज में न्याय और समता की और मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा के लिए हम सब मिल कर परिश्रम करें। भारत की जनता को द्वेष की भावना से मुक्त रखें और चीन-भारत संघर्ष, चीन-भारत-मैत्री के रूप में परिणत हो। और अंत में यह मैत्री विश्वमैत्री का एक शक्तिशाली साधन बने।

इस मंच पर से आपके सामने विचार रखने का मुझे जो अवसर आपने दिया, उसके लिए फिर आप सबके प्रति मैं कृतज्ञता प्रगट करता हूँ। जय जगत्!

[बेडछी, जिला सूरत में हुए चौदहवें सर्वोदय सम्मेलन में २३ नवम्बर को दिया गया भाषण।]

प्रश्नोत्तर

हम क्या करें ?

• धीरेन्द्र मजूमदार

['भूदान-यज्ञ' के २ नवम्बर '६२ अंक में श्री धीरेन्द्र भाई से जो प्रश्नोत्तर हुए थे। कलकत्ता से एक भाई ने उस पर कुछ शंका व्यक्त की। श्री धीरेन्द्र भाई ने उन्हें जो जवाब भेजा है, वह यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

आपने लिखा है कि आपका पत्र पढ़ कर मुझे दुःख हुआ होगा। चीन के आक्रमण से तरुण हृदय जाग उठा है, यह देख कर किसी भी मानवनिष्ठ व्यक्ति को खुशी होगी, दुःख नहीं होगा, लेकिन जोश के साथ, शांति से विचार करने की आवश्यकता है। हमारे विचार में यह नहीं है कि हम आक्रमण के प्रश्न पर तटस्थ हैं, हमारी तटस्थता सैनिक-कार्यवाही के लिए है। मनुष्य की तीन ही स्थितियाँ होती हैं—वह किसी कार्यवाही में शामिल होगा, विरोध करेगा या तटस्थ रहेगा।

यह स्पष्ट है कि अहिंसानिष्ठ व्यक्ति किसी सैनिक-कार्यवाही में शामिल नहीं हो सकता और चूंकि यह युद्ध भारत पर लादा गया है और भारत अपनी अब तक की मान्यता के अनुसार अपने खिलाफ अन्याय का प्रतिकार मात्र कर रहा है, इसलिए वह युद्ध का विरोध भी नहीं करेगा। अगर भारत चीन पर आक्रमण करता, तो हम भारतीय होते हुए भी युद्ध का विरोध करते। अतः उस युद्ध के प्रति हम तटस्थ ही रह सकते हैं। अहिंसा के संदर्भ में हमारी इतनी ही कोशिश रहेगी कि

> भारत यद्यपि युद्ध के लिए मजबूर हुआ है, फिर भी वह निर्वैरता के साथ लड़ सके, क्योंकि वैर-भावना से रहित आत्मरक्षा के लिए हिंसक लड़ाई, अहिंसा की कोटि पर न होते हुए भी वह मनुष्य को अहिंसा की ओर ले जाने वाली हो सकती है।

इसका मतलब यह नहीं है कि आक्रमण के प्रति हमारा रुख तटस्थता का रहे। इसीलिए हमने कहा है कि 'फ्रण्ट' पर अहिंसक प्रतिकार की कोई टेक्निक हमारे पास होती तो हम उसे अपनाते। आपने कहा है कि अगर हम अहिंसावादी दोनों फौजों के बीच खड़े होकर मर मिटते तो विश्व के इतिहास में अहिंसा का एक स्वर्णिम अध्याय आरंभ हो जाता। इस प्रकार की भावना बहुत-से अहिंसावादियों के लिए स्वाभाविक है। लेकिन केवल मर मिटने से ही समस्या का हल नहीं होता है। किसी क्रिया की प्रतिक्रिया अधिक महत्त्व की होती है। पहली बात यह है कि सीमा पर फौज नहीं लड़ रही है। दोनों तरफ के फौजी लोग अगर लड़ते तो आपकी कुर्बानी उनके दिलों पर असर करती। जिनके हाथ में लड़ाई की बागडोर है, वे 'फील्ड' पर नहीं होते हैं। आजकल मुल्क-मुल्क के बीच लड़ाई होती है। भारत चीन के आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए खड़ा हो, इस विसंगति की कोई अहिंसक प्रतिक्रिया होगी, यह आप कह नहीं सकते हैं। बल्कि जब हम मानते हैं कि भारत आक्रान्त है, इसलिए युद्ध का विरोध नहीं करते हैं, तब इस प्रकार से जहाँ पर भारत के फौज को रसद आदि हर चीज की तकलीफ है, वहाँ पर हम लोग भी पहुँच जायँ तो भारत जो अपने ढंग से प्रतिकार में लगा हुआ है, उस काम में बाधा पहुँचाना होगा।

दूसरी बात यह है कि अहिंसावादी ऐसी ही कार्यवाही करेगा, जिसकी प्रतिक्रिया में अहिंसा का विकास हो। हम कुछ हजार मनुष्य मोर्चे पर निहत्थे खड़े हो जायँ और चीन हमें गोली से मार दे तो देश में जो क्षोभ पैदा होगा, वह अहिंसक भावना का उद्बोधक न होकर हिंसक भावना को ही बढ़ायेगा।

अतएव अहिंसावादी को जो प्रतिकार का काम उठाना होगा वह ऐसे ही क्षेत्र में करना होगा, जहाँ अहिंसा की शक्ति प्रकट हो सकती है और वह क्षेत्र मुल्क के अंदर का क्षेत्र है। उस क्षेत्र में क्या करना है, मैंने सुझाया है। सर्व सेवा संघ के निवेदन में और स्पष्टता के साथ सुझाव दिया गया है।

सर्वोदय-सम्मेलन, बेडछी

२० नवम्बर '६२

शांति-सैनिक का प्रतिज्ञा-पत्र

[सर्व-सेवा-संघ के बेडछी-अधिवेशन में स्वीकृत शांति-सैनिकों का प्रतिज्ञा-पत्र यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

१८ साल से बड़ी उम्र का कोई भी भारतीय नागरिक, जो नीचे लिखी घोषणा व प्रतिज्ञा करे, वह शांति-सैनिक बन सकेगा।

मैं विश्वास रखता हूँ कि :

१. सत्य और अहिंसा पर आधारित नया समाज बनना चाहिए।
२. समाज में होने वाले सारे संघर्ष अहिंसक साधनों से हल हो सकते हैं और होने चाहिए, खासकर इस अणुयुग में।
३. मानव-मात्र में मूलभूत एकता है।
४. युद्ध मानवता के विकास में बाधक है और वह अहिंसक जीवन-पद्धति का विपर्यय है,

इसलिए मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि—

(१) शांति के लिए काम करूँगा और आवश्यकता पड़ने पर अपने प्राण समर्पण करने को तैयार रहूँगा।

(२) जाति, सम्प्रदाय, रंग और पक्ष आदि के भेदों से ऊपर उठने की पूरी-पूरी कोशिश करूँगा, क्योंकि ये भेद मनुष्य की एकता को मानने से इन्कार करते हैं।

(३) किसी युद्ध में शरीक नहीं होऊँगा।

(४) सुरक्षा के अहिंसक साधनों तथा वातावरण को बनाने के लिए सहायता करूँगा।

(५) नियमित रूप से अपना कुछ समय अपने मानव-बन्धुओं की सेवा में लगाऊँगा।

(६) शांति-सेना के अनुशासन को मानूँगा।

नाम ·············· पता ··········

—हस्ताक्षर

भूदान-यज्ञ रजिस्टर्ड नंबर ए, ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की अनुमति प्राप्त, लायसेन्स नं० ए ३४] ३० नवम्बर, '६२

व्यापक पैमाने पर शांति-सेना में भरती हों 'शांति-सेना सुरक्षा-कोष' में दान दें

सर्वोदय-सम्मेलन में श्री जयप्रकाश नारायण की अपील

अखिल भारत शांति-सेना मंडल के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने सर्वोदय-सम्मेलन में अपील की है कि अब समय आ गया है कि शांति-सेना में बड़े पैमाने पर भरती होना चाहिए। उन्होंने कहा कि कम-से-कम एक करोड़ लोग शांति-सैनिक बनें। श्री जयप्रकाशजी की इस अपील का जिक्र करते हुए श्री काकासाहब कालेलकर ने अपना नाम शांति-सैनिक के लिए दिया।

श्री जयप्रकाश नारायण शांति-सेना में भरती करने के लिए जल्दी ही पूरे देश का दौरा करने वाले हैं। शांति-सेना में लोग व्यापक संख्या में भरती हो सकें, इसलिए सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन ने शांति-सैनिक के प्रतिज्ञा-पत्र में संशोधन किया है।

श्री जयप्रकाशजी ने यह भी घोषित किया है कि शांति-सेना के संगठन कर और उसको व्यापक बनाने के लिए "शांति-सेना सुरक्षा-कोष" स्थापित किया जा रहा है और लोगों से अपील की है कि वे इस कोष में अधिक-से-अधिक दान दें।

चीनी आक्रमण से उत्पन्न परिस्थिति में

पूर्णियाँ जिले की कार्य-योजना

बिहार के पूर्णियाँ जिले के कार्यकर्ताओं की बैठक विनोबाजी के पड़ावों पर गत ६-७ और ८ नवम्बर को हुई। बैठक में पूर्णियाँ जिले के भावी कार्यक्रम पर विचार-विमर्श हुआ और देश पर हुए चीनी आक्रमण से उत्पन्न परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित कार्यक्रम निश्चित किये गये।

(१) भूमिहीनता-निवारण : चीनी आक्रमण के संदर्भ में गाँव-गाँव को एक बनाने और उत्पादन बढ़ाने की दृष्टि से भूमिहीनता-निवारण का महत्त्व स्पष्ट है। इसलिए इस कार्यक्रम पर विशेष जोर डालने की आवश्यकता है। हमारा लक्ष्य तो ग्रामदान रहे, लेकिन कम-से-कम भूमिहीनता मिट जाय, ऐसी कोशिश हो। गाँव के भूमिहीनों के लिए जितनी जमीन की आवश्यकता हो, उतनी जमीन भूमिवानों तथा अन्य स्रोतों से प्राप्त की जाय।

(२) ग्रामसभा का निर्माण : भूमिहीनता मिटाने के बाद प्रत्येक गाँव में एक ग्राम-सभा का निर्माण किया जाय। इस ग्रामसभा में गाँव के प्रत्येक परिवार का एक व्यक्ति रहे। ग्राम-सभा गाँव के पोषण, रक्षण आदि की पूरी जिम्मेवारी उठाये और इसके लिए आवश्यक व्यवस्था करे। गाँव में कोई व्यक्ति बेकार न रहे, भूखा-नंगा न रहे, बीमारों के लिए चिकित्सा का प्रबन्ध हो, यह जिम्मेवारी ग्राम-सभा की होगी।

(३) ग्राम-स्वावलम्बन : अन्न, वस्त्र तथा अन्य आवश्यक वस्तुओं के मामले में हर गाँव को स्वावलम्बी बनाने का प्रयास किया जाय। इसके लिए गाँव का उत्पादन बढ़ाने की पूरी कोशिश की जाय।

(४) ग्राम-कोष की स्थापना : हर गाँव में एक ग्राम-कोष की स्थापना की जाय। गाँव का प्रत्येक परिवार अपनी आय का एक अंश जो ग्रामसभा निश्चित करे, ग्रामकोष में जमा करे। इस ग्रामकोष से ग्रामोद्योगों की स्थापना करने, बेकारों को काम देने, बीमारों को सहायता देने तथा अन्य आवश्यक काम किये जायँ।

(५) शान्ति-सुरक्षा : गाँव में शांति कायम रहे, ऐसी कोशिश की जाय। गाँव के झगड़े का फैसला गाँव में हो, सबको न्याय मिले और गाँव के लोगों में प्रेम एवं सद्भावना का विकास हो, ऐसी कोशिश की जाय।

उपर्युक्त कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की दृष्टि से निम्नलिखित निर्णय लिये गये :—

(१) जिले के प्रत्येक अंचल में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं एवं सर्वोदय-मित्रों की एक अंचल-समिति बनायी जाय। जिस गाँव के ५ या ५ से अधिक सर्वोदय मित्र हों, वहाँ एक ग्राम-समिति बनायी जाय। अंचल-समिति अंचल के स्तर पर और ग्राम-समिति गाँव के स्तर पर उपर्युक्त कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने का प्रयास करे।

(२) अंचल-समिति के कार्यों में सहायता देने के लिए तथा उस क्षेत्र में शांति कायम रखने के लिए एक पूरा समय देने वाला शांति-सैनिक रहे, जो अनाधारित हो। प्रत्येक अंचल के लिए कार्यकर्ता उपलब्ध करने का प्रयास किया जाय।

(३) प्रत्येक अंचल के अन्तर्गत दस हजार की आबादी के क्षेत्र में कम-से-कम एक शांति-सैनिक हो, जो उस क्षेत्र में शांति-सुरक्षा की जिम्मेवारी उठावे। वह पूरा समय देने वाला हो, यह आवश्यक नहीं है। ये शांति-सैनिक अपना काम करते हुए अपने क्षेत्र में शांति कायम रखने का जिम्मा लें। पूरे जिले में ऐसे लगभग २५० शांति-सैनिकों की आवश्यकता होगी।

(४) लोकशिक्षण की दृष्टि से एक साप्ताहिक पत्रिका निकाली जाय। अभी पूर्णियाँ जिला सर्वोदय मंडल की ओर से जो 'सर्वोदय-संवाद' पत्र प्रकाशित होता है, उसे साप्ताहिक का रूप दिया जाय। इस पत्रिका में सर्वोदय-आन्दोलन के समाचारों के अलावा देश व दुनिया के अन्य समाचारों का प्रकाशन भी हो और महत्त्व की घटनाओं पर सर्वोदय की दृष्टि से टिप्पणियाँ की जाय। इस पत्रिका की कम-से-कम एक प्रति प्रत्येक गाँव में पहुँचाने का प्रयास हो।

भारत-चीन सीमावर्ती क्षेत्र में

शांति-सेना द्वारा काम करने की योजना

सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन में यह तय किया गया कि भारत-चीन के कुछ सीमावर्ती इलाकों में सघन रूप से कार्य किया जाय। असम में कार्य की तुरन्त योजना बनाने और जानकारी हासिल करने के लिए ४ सदस्यों का प्रतिनिधि-मंडल अधिवेशन से असम के लिए रवाना हो गया। श्री मार्जरी साइक्स, श्री आर० के० पाटील, श्री राधाकृष्ण और श्री नारायण देसाई इसके सदस्य हैं।

इसी प्रकार उत्तराखंड में सीमावर्ती क्षेत्र में काम करने की योजना उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री ब्रह्मदेव वाजपेयी कर रहे हैं।

सर्वोदय-सम्मेलन में श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा सीमावर्ती क्षेत्रों में काम करने के लिए आह्वान करने पर अनेक शांति-सैनिकों ने अपना नाम लिखाया।

चौदहवाँ सर्वोदय-सम्मेलन सम्पन्न

चौदहवाँ सर्वोदय-सम्मेलन सूरत जिले के वेड़छी गाँव में श्री इ० डब्ल्यू० आर्यनायकम् की अध्यक्षता में ता० २३ और २४ नवम्बर को हुआ। सम्मेलन में देश भर के करीब ५ हजार प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन के पहले इसी स्थान में ता० १९ से २२ नवम्बर तक सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन हुआ। अधिवेशन में अधिकांश समय चीन-भारत सीमा-संघर्ष से उत्पन्न संकट पर लम्बी और गहरी चर्चा हुई।

सर्व-सेवा-संघ के नये अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी

वेड़छी-अधिवेशन में सर्वसम्मति श्री मनमोहन चौधरी सर्व-सेवा-संघ के नये अध्यक्ष चुने गये हैं।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४२९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५०० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८१६५
एक अंक १३ नये पैसे
वार्षिक मूल्य ६)

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ७ दिसम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक १०

अहिंसक शक्ति उत्पन्न करने का स्वर्ण अवसर

देश की शांति की जिम्मेदारी शांति-सेना पर

सर्वोदय-सम्मेलन में श्री जयप्रकाश नारायण का भाषण

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि स्वराज्य-प्राप्ति के बाद यह सबसे बड़ा संकट का काल भारत के लिए आया है और सभी के लिए, हर भारतीय के लिए, जैसा राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री आदि ने भी हमें कई बार याद दिलाया है, यह परीक्षण का, कसौटी का समय है। हममें से जो भाई-बहन अहिंसा में मानने वाले हैं, उनको तो और भी लगता होगा कि उनके लिए तो यह और भी विशेष कसौटी का समय है। बहुत खुशी की बात होती, अगर ऐसे समय में हमारे नेता पूज्य विनोबाजी यहाँ उपस्थित होते। आपने उनका संदेश* सुना। वे यहाँ नहीं आ सके। उस पर से आप सबको संतोष तो नहीं हुआ होगा, लेकिन कोई दूसरा चारा भी नहीं है।

जो चीन का आक्रमण अपने देश पर हुआ है, वह किस प्रकार हुआ, क्यों हुआ, इसकी एक लम्बी कहानी है और मैं समझता हूँ कि आप सब भाई-बहन जो यहाँ बैठे हैं, उस कहानी को अच्छी तरह से जानते भी होंगे, यद्यपि आज भी यह एक पहेली ही है।

चीन वालों का रवैया : एक पहेली

जिन लोगों ने इसका अध्ययन भारत में और भारत के बाहर किया है, उन सबमें जाने की आवश्यकता नहीं है। उसे समझने की आवश्यकता तो है ही, जिससे हम उस पर विचार कर सकें, कोई उपाय निकाल सकें, लेकिन इसमें समय जायगा। आज तो हमारे सामने यह परिस्थिति है कि चीन का आक्रमण हुआ है और उस आक्रमण में देश के एक कोने में, उत्तर पूर्व में, चीनी लगभग १०० मील तक आगे बढ़ आये हैं। यह अवश्य है कि २१ तारीख की अर्धरात्रि से उन्होंने गोलाबारी बंद की है। भारत ने भी वही किया है, क्योंकि भारत ने तो गोलाबारी शुरू की ही नहीं थी। चीन वालों ने काफी जोर से आक्रमण कर दिया था, वरना कई वर्षों तक तो सरहद के ऊपर छुटपुट लड़ाइयाँ होती रहती थीं, लेकिन यह भी बिना घोषणा की लड़ाई हो रही है या हो रही थी।

यह भी, आज एक पहेली की बात बनी हुई है कि चीन ने यह कदम क्यों उठाया ? आक्रमण शुरू किया तथा बंद भी किया, ऐसा क्यों हुआ, यह भी लोगों की समझ में नहीं आ रहा है। कल क्या होगा, परसों क्या होगा, पहली दिसम्बर तक वह और कौन-कौनसी चाल चलेगा, क्या-क्या कदम वह उठायेगा, उनकी ओर से कौन-कौनसे, किस किस प्रकार के कदम उठाये जायेंगे, यह जानकारी हमें नहीं है। दिल्ली से जो खबरें रेडियो पर आती हैं, उनसे भी कुछ पता नहीं चलता कि क्या होगा ! शायद काहिरा के उस अखबार, 'अलहरम' ने कहा है, यह बात मुझे ठीक लगती है कि चीन ने लड़ाई बंद करने की जो शर्त अपनी तरफ से रखी थी कि दोनों पक्ष ७ नवम्बर, १९५९ में जहाँ थे, उस जगह वापस चले जायँ, जिसको भारत ने नामंजूर किया था, उस २४ अक्टूबर वाली अपनी शर्त को लड़ाई से जबरदस्ती मनवाना चाहता है भारत से ! मेरी छोटी बुद्धि में तो ऐसा लगता है कि यह बात ठीक है। अक्सर, हमारा जो यह सर्वोदय का, अहिंसा का परिवार है, उसका यह खयाल रहता है कि सामने वाला, विरोधी पक्ष वाला जो कुछ भी कदम उठाता है, उसमें अच्छी भावना देखनी चाहिए, लेकिन उसके साथ-साथ समझ-बूझ भी होनी चाहिए। हर कदम जो उधर से उठता है, नेकनीयती का है, इस नतीजे पर पहुँचने के पहले बात को समझना भी चाहिए। अगर ऐसा न होता तो क्रिप्स प्रपोजल को महात्माजी क्यों कह देते कि 'आउट डेटेड चेक' है। हमारी यह मनोवृत्ति कि जो कुछ उधर से हो रहा है, वह सब ठीक ही मानना है, यह भी ठीक नहीं है।

लड़ाई बंद तो की, पर आगे क्या ?

मैं यह बात मानने को तैयार नहीं हूँ कि उन्होंने एकाएक 'सीज फायर' —युद्ध बन्द— कर दिया है। दुनिया में चारों तरफ से, जो निष्पक्ष देश थे उनमें से अधिकांश की तरफ से भारत के पक्ष का समर्थन हुआ। चीन पर उसका दबाव पड़ा। चीन का जो सबसे बड़ा मित्र-राष्ट्र रूस है, उसने भी चीन की बात को सोलह आना मंजूर नहीं किया। वहाँ साम्यवादी पार्टी की सेंट्रल कमेटी की बैठक हो रही है, उसके सामने भी एक ऐसी वस्तुस्थिति बना कर रखनी है, जिससे चीन का पक्ष लेने वाले लोग यह कह सकें कि चीन ने अपनी तरफ से लड़ाई बंद कर दी है। इन सब चीजों को देखते हुए, मैं यह नहीं कह सकता कि आगे क्या परिस्थिति बनेगी।

शांति की रीति न्यारी है !

आज सारा भारत शांति चाहता है। युद्ध शीघ्र-से-शीघ्र बंद हो, ऐसा सभी चाहते हैं, हर पक्षवाले चाहते हैं। मैं कम-से-कम इस चीज को बिल्कुल नहीं मानने वाला हूँ कि चाहे जिस शर्त पर सही, युद्ध बंद हो। चाहे जिस शर्त से युद्ध बंद हो उसमें से अहिंसा की शक्ति निकलेगी, ऐसा नहीं माना जा सकता। ऐसी भी स्थिति हो सकती है कि युद्ध बंद होने पर हिंसा तुरंत चाहे बंद हो जाय, पर वक्त आने पर वह फूट निकलेगी। किसी देश को अपमानित किया, भय से वह कोई चीज स्वीकार कर ले और इस तरह से युद्ध बंद हो, तो उसका परिणाम आज हरगिज अच्छा नहीं हो सकता। उसकी प्रतिक्रिया हिंसक प्रतिक्रिया होगी। आज जितने भी शांति में, अहिंसा में मानने वाले हैं, वे सब यह मानते हैं कि युद्ध बंद होने से किसी देश का अपमान हो, तो यह ठीक नहीं है। सभी यह चाहते हैं कि सम्मानपूर्वक युद्ध बंद हो, किसी के साथ अन्याय न हो। तभी उसमें से शांति निकलेगी। १९१४ में जर्मनी में लड़ाई हुई, पराजय भी हुई। बाद में उसकी संधि हुई। उसकी प्रतिक्रिया हुई। फिर चर्चिल, हिटलर आदि पैदा हुए।

* देखें—'भूदान-यज्ञ', ता० ३० नवम्बर '६२, प्रथम पृष्ठ।

सामाजिक-आर्थिक समानता भी चीन की चुनौती के मुकाबले के लिए आवश्यक

युद्ध रुका था। संधि भी हुई थी। लेकिन यह संधि इतनी अन्यायपूर्ण थी कि उसने दुनिया में आग लगा दी। यहाँ भी यह सारा कितने दिनों तक, कितने महीनों तक, कितने वर्षों तक रहेगा, हम कह नहीं सकते।

कश्मीर में 'सीज फायर' (युद्धबंदी) है, तो क्या हुआ! झगड़ा बना ही हुआ है। भारत और पाकिस्तान में गोलियाँ नहीं चल रही हैं, यह खुशी की बात है, लेकिन फिर भी समस्या अपनी जगह खड़ी है! कोरिया, वियतनाम, लाओस आदि में 'सीज फायर' हो गया, तो क्या हुआ? फिर भी हम मानते हैं कि एक मौका मिला है। इस मौके को हम समझें।

अविचार से हिंसा बढ़ेगी

कम-से-कम मैं इस बात के लिए तैयार नहीं हूँ कि यहाँ से तार दिया जाय, प्रधान मंत्री को कि जो कुछ चीन की हुकूमत की ओर से शर्तें पेश हुई हैं, उसे आप मंजूर कर लें, इसलिए कि युद्ध बंद हो जाय। रास्ता निकालना पड़ेगा। किसी देश की आजादी को चोट पहुँचा कर दुनिया में अहिंसा कायम होने वाली होती तो हो जाती। अब तो दुनिया पर अन्याय हुआ है। कितने देश गुलाम हैं! सब जगह शांति हो जाती। बहुत ही नाजुक हालत है।

देश के बचाव का मार्ग ढूँढ़ना आवश्यक

मैं आशा करता हूँ कि यहाँ से सर्व-सेवा-संघ के कुछ नेता दिल्ली जायेंगे। वहाँ बैठेंगे, समझेंगे कि क्या हो रहा है। केवल भारत सरकार की ही बात समझें, ऐसा नहीं कहता हूँ; परिस्थिति को समझें और तब कोई रास्ता निकालें। आज तो केवल इतना ही हुआ है कि दोनों तरफ से गोली चलनी बंद हो गयी है। उधर भी बातचीत प्रारंभ करने के लिए शर्तें पेश हुई हैं। भारत ने उसे नामंजूर किया है। चीन ने लड़ाई शुरू कर दी। हजारों भारतीय सैनिक मारे गये। कुछ उनके भी मरे। न जाने भारत की कितने वर्ग-मील भूमि पर चीन ने कब्जा किया! अब चीन ने कहा कि हमारी बात मानो; नहीं मानते, तो फिर गोली शुरू होगी। तो मित्रो, हमें इस बात पर सोचना चाहिए। हमारे पास इसका क्या उपाय है? जैसा कि इस निवेदन* में भी कहा गया है और दुनिया का इतिहास बताता है कि युद्ध से या तो समस्याओं का हल नहीं होता या नयी समस्याएँ पैदा होती हैं। आज भारत-चीन का युद्ध चल रहा है। उसका चाहे जो भी परिणाम हो, पर मैं यह नहीं मान सकता कि यह भारत की समस्याओं का अंतिम हल होगा। हमें केवल कल और परसों के ही तो हल नहीं ढूँढ़ना है। हम पड़ोसी हैं।

* देखें 'भूदान यज्ञ', ३० नवम्बर '६२ पृष्ठ ३।

विज्ञान ने हिमालय को तोड़ दिया है। उससे हमारा बचाव किस तरह से हो, यह हमें सोचना है। यह ठीक है, जैसा बाबा ने कहा है अपने वक्तव्य में कि मैं ११ वर्ष से घूम रहा हूँ, मैंने भारत की प्रजा में कहीं नहीं देखा कि उसमें अपने राज्य-विस्तार की तृष्णा है। भारतीय इतिहास में भी शायद इसका सबूत मिलता हो। मैंने तो इतिहास का इतना गहरा अध्ययन नहीं किया है। वैसे तो हम आपस में बहुत लड़ते रहे।

जनता नेताओं के पीछे

कल क्या होगा, कौनसा राज्य आयेगा, कैसे लोग यहाँ आयेंगे, जनता की तरफ से ऐसी शंकाएँ उपस्थित होती रहती हैं। हमारी तरफ से तो है ही। रविशंकर महाराजजी ने चीन की जनता के बारे में जो कुछ कहा, निःसंदेह वह बात सही है। लेकिन दुनिया की जनता बराबर नेताओं के पीछे जा रही है। 'नाजीइज्म' का आप विचार करें, तो आपको आश्चर्य होगा कि कोई समझदार राष्ट्र इसे कैसे स्वीकार करेगा! वह जर्मनी है, जो शायद बुद्धि में सबसे आगे है। इंग्लैण्ड में वेश का महत्त्व है। अमेरिका में धन का महत्त्व है। जर्मनी में लड़ाई के पहले तक विद्या का महत्त्व रहा। जर्मनी में जो प्रोफेसर होता था, समाज में उसका बड़ा आदर होता था। उस जर्मनी ने जहाँ विद्या की इतनी कद्र थी, नात्सीवाद का विचार ग्रहण किया, उसका अमल किया। ६० लाख यहूदियों को 'गैस चेम्बर्स' में उन्होंने खतम किया। चीन की जनता सरल जनता है, भोली जनता है, परन्तु आज कन्फ्यूशियस उनका नेता नहीं, लाओत्से नहीं, माओत्से तुंग है। क्या इनका दर्शन है? कुछ स्पष्ट मालूम नहीं होता कि ये क्या कहते हैं। यही देख लीजिये, सारी दुनिया में युद्ध के द्वारा, हिंसा के द्वारा, तलवार के द्वारा साम्यवाद कायम होगा, इसमें उनका दृढ़ विश्वास है। चाहे वह साम्यवाद कैसा भी हो, पर वे तो उसको साम्यवाद कहते हैं। जिसको वे 'साम्यवाद' समझते हैं, उसको वे सारी दुनिया में हिंसा से फैलाना चाहते हैं। रूस ने इस बारे में कुछ कहा भी और तब ८० देशों के सारे कम्यूनिस्ट नेता इकट्ठे हुए थे, उन सबने उस पर हस्ताक्षर किये, लेकिन दबाव में आकर। यह सवाल केवल आज का सवाल नहीं है। युद्ध बंद हो जाय और कश्मीर की तरह से मामला वर्षों तक लटका रहे, तो यह तो कोई हल नहीं हुआ न!

हमारी मर्यादाएँ

मैं समझता हूँ कि हर भारतीय आत्मा की यह मान्यता होगी कि इस समस्या का हल एटम बम, तलवार से नहीं होगा, शांति से ही होगा। आज स्थिति ऐसी है कि अहिंसा की शक्ति का जितना विकास भारतीय नेता कर पाये हैं, वह विकास इतना नहीं है कि आज की स्थिति में चीन के आक्रमण के प्रश्न का हल, देश की सुरक्षा के प्रश्न का हल अहिंसा से हो जाय। नम्रतापूर्वक हमें इसको मानना चाहिए। इसका यह मतलब नहीं कि जिस तरह भारतीय सेना हथियारवाली है उस तरह शांतिसेना भी बहुत बड़ी सेना बनेगी। वह तो एक दूसरा अंग ही बन सकती है। हमें भारतीय जनता में ऐसा विश्वास पैदा करना होगा, सामाजिक जीवन, आर्थिक ग्रामीण जीवन में ऐसा परिवर्तन करना होगा, जिससे भारत में अहिंसक समाज बने। अगर उस प्रकार की अहिंसक शक्ति इस देश में पैदा होती तो मेरा विश्वास है कि चीन का आक्रमण ही न हुआ होता। इस प्रश्न का हल शांति से हो सकता था। उनके सामने क्या था? भारत की सेना थी। उनके खुफिया दिल्ली में और भारत में चारों ओर फैले हुए थे, हो सकता है कि हमारे सेना विभाग के अन्दर और हमारे राज्य तंत्र के अंदर भी हों और उनको यह पता है कि भारत की सामरिक शक्ति कितनी है, कितने हथियार उसके पास हैं।

अगर भारतीय जनता में ऐसा विश्वास होता कि हम अपनी रक्षा अहिंसा से कर सकते हैं। हमें कोई भय नहीं है, तलवार का भय नहीं है, हम किसी के गुलाम नहीं बनने वाले हैं, तो चीन को सौ बार सोचना पड़ता। वह सोचता कि भारत पर आक्रमण करके क्या करेंगे! लेकिन आज वह शक्ति नहीं है। केवल यही नहीं कह रहा हूँ कि हजार-लाख शांति-सैनिक वहाँ मरने के लिए तैयार नहीं हैं, बल्कि सारी भारतीय जनता में वह शक्ति आज नहीं है। यह गांधीजी की जन्मभूमि है। १५ वर्ष हुए हैं स्वतन्त्रता को। मैं गुजरात के भाइयों से पूछता हूँ कि आज यहाँ के दूबरा, हाली लोगों की सम्पूर्ण मुक्ति हो गयी है क्या? क्या उनका आज समाज में वही आदर है, जो पाटीदार भाइयों का? नहीं है। आज हमारे समाज की यह दशा है! जब तक यह दशा है, हम मुकाबला नहीं कर सकते।

एलवाल में तीन पार्टियों के बड़े-बड़े नेता (समाजवादी, प्रजा-समाजवादी और कांग्रेस के) तथा राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री आदि सब लोग इकट्ठे हुए थे। सबने मिलजुल कर एक बयान देश के सामने रखा, जिसमें ग्रामदान का पूर्ण समर्थन किया। आज जहाँ विनोबा घूमता है, वहाँ सैकड़ों ग्रामदान मिलते हैं। पर सारे देश में तो ऐसा नहीं होता है। शायद एलवाल-परिषद् को बारह वर्ष हो गये हैं। मैंने अक्सर कहा है इन पार्टियों को कि मिल करके एक आम चुनाव में जितनी शक्ति लगाते हैं करीब दो महीने तक, उतनी शक्ति पण्डितजी से लगा कर सब लोग लगायें। इस तरह से पचास हजार, लाख या कितने हो जाते ग्रामदान, जो अब तक इस देश में नहीं हुए।

देश की स्थिति : सामाजिक व आर्थिक

पण्डित नेहरू ने संसद में प्रस्ताव पेश किया। प्रस्ताव में कहा गया कि भारत में समाजवादी समाज का निर्माण होगा। केवल कांग्रेस पार्टी ने ही समर्थन किया हो, ऐसी बात नहीं है। प्रजासमाजवादी, समाजवादी, कम्यूनिस्ट, सभी पार्टियों के लोगों ने इसका समर्थन किया और बड़े बहुमत से प्रस्ताव पास हो गया। स्वतंत्र पार्टी तो उस वक्त थी नहीं। होती तो शायद समाजवाद का विरोध करती। उनका जो विचार है वह तो है ही। लेकिन उस प्रस्ताव के बाद भी आज तक उस समस्या का हल नहीं हुआ है। ८० प्रतिशत लोग देहात में, गाँव में रहते हैं, जिसमें से ७० प्रतिशत लोग भूमि पर काम करके अपना पेट पालते हैं।

न कानून से समाजवाद कायम होगा, न लोकेच्छिक ढंग से। शिक्षण से, रचनात्मक कार्य से, सेवा से, सर्वोदय-समाज बनेगा। न यह काम उधर से होगा न, इधर से। तो फिर क्या हम चीन की चुनौती का मुकाबला कर सकते हैं!

करोड़ों अस्पृश्य होंगे। हम बिहार, उत्तर-प्रदेश की देहातों में जाते हैं और गाँव वालों से पूछते हैं कि तुम्हारे गाँव में कितने घर हैं, तो बताया है कि पचास या अमुक! हरिजनों को लेकर क्या? तो बताया जाता है कि नहीं, हरिजन-टोला अलग है!

यही चीज पूर्वी अफ्रीका में भी है। हर स्थल तीन भागों में विभक्त है। अब बदल रहा है। एक गोरों का इलाका, एक एशियनों का इलाका, जिसमें भारतीय और पाकिस्तानी ही मुख्य हैं और तीसरा अफ्रीकन लोकेशन के नाम से, उसको वे शहर का भी एक हिस्सा नहीं मानते!

ग्रामदान के लिए जनमत तैयार है

आप लोग जो पैसा वगैरह दे रहे हैं, उसे मैं मना नहीं कर रहा हूँ, पर अपने गरीब भाइयों के लिए क्या कर रहे हो? कोई तीस दिन की कमाई दे रहा है, कोई कुछ दे रहा है। युद्ध तो रात-दिन चल रहा है। अगर इस युद्ध में विजय नहीं होगी, तो उस युद्ध में विजय नहीं होगी। कानून से करना हो तो करो, हम नहीं रोकते हैं। सर्वोदय ने

[शेष पृष्ठ ८ पर]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

टिप्पणियाँ

उत्तर प्रदेश में शराबबन्दी का 'पुनस्संघटन' !

उत्तर प्रदेश के बदायूँ, एटा, फर्रुखाबाद, फतेहपुर, जौनपुर, कानपुर, मैनपुरी, प्रतापगढ़, रायबरेली, सुल्तानपुर और उन्नाव—इन ग्यारह जिलों में तथा वृन्दावन, हरिद्वार और ऋषिकेश—इन तीन तीर्थस्थानों में सन् १९४७-४९ से अभी तक मादक पदार्थों का पूर्ण निषेध था। १ दिसम्बर १९६२ से उत्तर प्रदेश सरकार ने शराबबन्दी की यह आशा उठा ली। अब उत्तर प्रदेश में किसी को भी कहीं पर भी शराब पीने की खुली छूट है!

उत्तर प्रदेश के आबकारी मंत्री डाक्टर सीताराम ने गत २७ नवम्बर को शराबबन्दी की इस समाप्ति की घोषणा करते हुए कहा कि १ दिसम्बर से प्रत्येक मंगलवार को सारे उत्तर प्रदेश में शराब की दुकानें बन्द रहेंगी। अर्थमंत्री श्री कमलापति त्रिपाठी ने पत्र संवाददाता से बात करते हुए २८ नवम्बर को घोषणा की कि हम शराबबन्दी को समाप्त थोड़े ही कर रहे हैं, अपनी आवश्यकता के अनुरूप उसका 'पुनस्संगठन' मात्र कर रहे हैं। साल में ५७ दिवस (५२ मंगलवार और ५ विशिष्ट दिवस—२६ जनवरी, १५ अगस्त, २ अक्टूबर और दीवाली तथा होली) 'शुष्क दिवस' माने जायेंगे, इन दिनों राज्य भर में शराब की सभी दुकानें पूर्णतः बन्द रहेंगी। आबकारी सम्बन्धी इस नयी नीति के फलस्वरूप राज्य सरकार की आमदनी में पौने दो करोड़ रुपये की वृद्धि हो जायगी। नये आदेश जारी किये जा चुके हैं और शराबबन्दीवाले जिलों में अधिकारियों को शराब के ठेके नीलाम करने के आदेश दे दिये गये हैं।

उत्तर प्रदेश में आंशिक शराबबन्दी १४ वर्षों से चालू थी। ११ जिलों में और ३ तीर्थस्थानों में मद्यपान का निषेध था। अभी पिछले दिनों तक उत्तर प्रदेशीय सरकार का मद्यनिषेध एवं समाजोत्थान विभाग नाना प्रकार से शराबबन्दी के पक्ष में प्रचार करता रहा है। "मद्यनिषेध और हमारा कर्तव्य" शीर्षक पर्चे में सरकार कहती है—

"मद्यपान सामाजिक अभिशाप है,

(१) क्योंकि यह आपका स्वास्थ्य नष्ट कर देता है।
(२) क्योंकि यह आपको कार्य करने के अयोग्य बना देता है।
(३) क्योंकि यह आपसे आपके गाढ़े पसीने की कमाई लूट लेता है।
(४) क्योंकि यह आप ो ऋणभार तथा निर्धनता में दबा देता है।
(५) क्योंकि यह आपको पत्नी व बच्चों को आमोद-प्रमोद से वंचित कर देता है।
(६) क्योंकि आप एक निंदित व घृणास्पद व्यक्ति हो जाते हैं।
(७) क्योंकि यदि मदिरा सेवन करते हैं, तो आप इसके द्वारा अपने पड़ोसियों के लिए बुरा उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।
(८) क्योंकि यह समाज के विरुद्ध पाप है।
(९) क्योंकि यह सम्भवतः अन्य अपराधों में प्रवृत्त कर दे। अतः

व्यक्ति, कुटुम्ब, समाज व राष्ट्र सभी के हित के लिए मद्यनिषेध आवश्यक है और उत्तर प्रदेश सरकार मद्यनिषेध योजना लागू करनेके लिए प्रयत्नशील है।"

हम यह समझ पाने में अपने को असमर्थ पा रहे हैं कि अभी चार दिन पहले तक उत्तर प्रदेश सरकार मद्यपान को सामाजिक अभिशाप करार देकर जनता को उससे बचाने के लिए कृतसंकल्प थी और आज वह 'पुनस्संघटन' का बहाना लेकर बिल्कुल उल्टा कदम उठा रही है! अन्य जिलों में उसका विस्तार करना तो दूर, जिन ११ जिलों और ३ तीर्थस्थानों में मद्यनिषेध लागू किये हुए थी, उनमें से भी वह शराबबन्दी उठा दे रही है!

उत्तर प्रदेश में काशी में, आगरा में शराबबन्दी के लिए हाल में जो आन्दोलन चले और सत्याग्रह हुए उनकी जानकारी सभी को है। भारत-चीन सीमा-संघर्ष को लेकर देश में जो नयी परिस्थिति उत्पन्न हुई, उसे देख कर विनोबाजी ने कहा कि संकट के समय सरकार को परेशानी में डालना उचित नहीं, अतः फिलहाल शराब के सरकारी गोदामों पर सत्याग्रह जैसी 'सीधी कारवाई' स्थगित रखनी चाहिए। उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल ने विनोबाजी का आदेश मान कर उक्त सत्याग्रह स्थगित कर दिया। पर इस स्थगन का यह तात्पर्य कतई नहीं था कि शराबबन्दी के कार्य में ढिलाई आये! आज हम देखते हैं कि उत्तर प्रदेश की सरकार इस दिशा में १४ साल पहले जो कदम उठा चुकी थी, उससे भी पीछे चली गयी है। युद्ध प्रयत्न के नाम पर शराबबन्दी जैसी परम आवश्यक और अनिवार्य वस्तु को समाप्त कर देना हमें तो सर्वथा अनुचित प्रतीत होता है। युद्ध काल के अवसर पर समाज विरोधी तत्त्व मौका पाकर सक्रिय हो उठते हैं। उन्हें शराब पीने की खुली छूट देना कहाँ तक उचित होगा, इस पर भी हमारी सरकार ने शायद समुचित ध्यान नहीं दिया। बुराइयों के लिए सहूलियत पैदा कर देना कहाँ तक उचित है, यह एक विकट प्रश्न है।

महात्मा गांधीजी ने ८ जून १९२१ को 'यंग इंडिया' में ठीक लिखा था कि "राज्य का काम लोगों की बुराइयों के लिए सहूलियत पैदा करना नहीं है। हम व्यभिचार के अड्डों का संचालन नहीं करते और न उनके परवाने देते हैं। हम चोरों को उनकी वासना पूरी करने लिए सुविधा नहीं देते। मैं शराबखोरी को चोरी और कदाचित् व्यभिचार से भी अधिक निन्दनीय समझता हूँ। क्या यह प्रायः दोनों की जननी नहीं होती?"

भारतीय संविधान में सरकारी नीति के निर्देशात्मक सिद्धान्तों की धारा ४७ में कहा गया है—"जनता के लिए पौष्टिक भोजन और उसके जीवन का स्तर ऊँचा उठाना अथवा उसके स्वास्थ्य की उन्नति करना राज्य अपना प्रधान कर्तव्य समझेगा। इसके अतिरिक्त राज्य इस बात का विशेष प्रयास करेगा कि स्वास्थ्य के लिए हानिकर मादक पदार्थों का—औषधीय उपयोग छोड़ कर—निषेध हो।"

शराब तथा अन्य मादक पदार्थों के उपयोग से जनता के स्वास्थ्य, धन और चरित्र की जो हानि होती है, वह किसी से छिपी नहीं है। भारत सरकार के योजना-आयोग द्वारा स्थापित शराबबन्दी जाँचसमिति की रिपोर्ट (१९५४-५५) में इस विषय का जो विस्तृत वर्णन किया गया है, वह किसी भी व्यक्ति की आँख खोल देने के लिए पर्याप्त है। इस समिति ने यह माँग की थी कि १ अप्रैल १९५८ तक भारत के सभी राज्यों में पूरी शराबबन्दी हो जानी चाहिए। समिति ने आबकारी करों के आर्थिक पहलू पर भी विचार किया था और उन्हें 'सर्वथा अनुचित और समाज-विरोधी' बताया था। बाद में सारे देश में पूर्ण शराबबन्दी की अन्तिम सीमा सन्

**पहले मनुष्य मदिरा पीता है, फिर मदिरा मदिरा को पीती है,
और अन्त में मदिरा मनुष्य को पी जाती है।**

लोकनागरी लिपि *

कम से कम त्याग और ज्यादा से ज्यादा फायदा

गांव में ग्रामसभा बनाओ। कुछ लोगों ने अपनी जमीन का हीस्सा दूसरों को दीया और उसका पट्टा ग्रामसभा के नाम कर दीया, तो उसमें यह संकेत रहेगा की आज जो मालीक है, वह जीन्दा रहेगा, तब तक जमीन उसके पास रहेगी, फीर उसके बारे में सब मील कर सोचेंगे। उस जमीन का बहुत सा हीस्सा उसके बच्चों को देंगे और थोड़ा अंश फीर बांटेंगे। यों करते-करते पांच-पचास साल में समता आयेगी। इस तरह कुशलता से करुणापूर्वक कीसी को तकलीफ नहीं होगी और उसके परीणामस्वरूप गांव-गांव एक कीला बन जायेगा। इससे सस्ता सौदा और क्या हो सकता है? कम-से-कम त्याग और ज्यादा-से-ज्यादा फायदा। देश पर संकट आया है तो आप सरकार को दान दे रहे हैं। लेकीन हम बारह साल से समझा रहे हैं की संकट आने से पहले दान दो। मैं मानता हूं की हीन्दुस्तान का हर नागरीक दान देने वाला है। भगवान ने हर एक के हृदय में करुणा दी है। जीन्होंने दान नहीं दीया, वे आज भूमी दान दें। भूमीदान नहीं, भूदान। उससे जो बंगाल छीन्न भीन्न हो रहा है वह मजबूत होगा और भारत भी मजबूत बनेगा।

[भीतोल, प० बंगाल
१३-११-'६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ि, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

१९६६ मान ली गयी। पर आज हो क्या रहा है? शराबबन्दी की उल्टी दिशा में प्रयत्न आरम्भ हो गये हैं। राष्ट्रीय संकट के बहाने एक उत्तम कार्य को समाप्त करना बिल्कुल गलत है। उत्तर प्रदेश का यह गलत उदाहरण महाराष्ट्र, मैसूर तथा अन्य राज्यों पर भी गलत प्रतिक्रियाएँ डाल रहा है। हम चाहेंगे कि उत्तर प्रदेश की सरकार इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करके कम-से-कम इतना तो करे कि फिलहाल जिन ११ जिलों और ३ तीर्थ-स्थानों में शराबबन्दी थी, वहाँ शराबबन्दी जारी रखे और पौने दो करोड़ की आमदनी के नाम पर वह सारे प्रान्त में शराबखोरी की खुली छूट का गलत आदर्श उपस्थित न करे। रही बात आमदनी की, उसके लिए मनोरंजन-कर आदि के माध्यम कहीं अधिक लाभकर सिद्ध हो सकते हैं। आवश्यकता है इस दिशा में सोचने की। क्या उत्तर प्रदेश की सरकार हमारे इस निवेदन पर ध्यान देने की कृपा करेगी?

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

चमत्कार के दिन नहीं गये!

• अन्नपूर्णा महाराणा

आजकल विनोबाजी पश्चिम बंगाल के माल्दह जिले के ऐसे क्षेत्र में घूम रहे हैं, जहाँ मिथिला से ब्राह्मण परिवार काफी तादाद में आकर करीब २०० साल हुए, बस गये हैं। २१ नवम्बर को ऐसे ही एक गाँव, बागीटोला में विनोबाजी का पड़ाव था। यहाँ के ग्रामवासियों ने ग्रामदान का विचार पहले से सुना था। उस पर काफी चर्चा भी की थी। फिर उसी दिन सुबह पड़ाव पर पहुँचते ही अपने स्वागत-भाषण में विनोबाजी ने ग्राम-दान के लिए गाँव वालों को आवाहन किया था। लेकिन आम तौर पर जैसा होता है, गाँव में कुछ वैमनस्य था, जिसके कारण दो पक्ष बन गये थे।

पूर्वाह्न में विष्णुसहस्रनाम के पाठ के बाद जब गाँववाले विनोबाजी से मिले, तो फिर ग्रामदान की चर्चा शुरू हुई। पिछले पड़ाव, अटाईडांगा के एक सज्जन बागीटोला आये थे और इस चर्चा में उपस्थित थे। उनका नाम श्री अतुल बाबू है। उन्होंने कहा कि गाँव में दो पक्ष बन गये हैं। इन पक्षों में कुछ झगड़ा चल रहा है, जिसके कारण गाँव में अब एकता नहीं है।

यह सुन कर विनोबाजी ने कहा कि यह झगड़ा आज ही मिटा दीजिये। दोनों पक्ष अगर मेरा फैसला मानने के लिए राजी हैं, तो वे मुझको लिखित पत्र दे दें कि हम दोनों पक्ष आपका फैसला मान लेंगे तो फिर मैं फैसला कर दूँगा। ऐसे कई झगड़े हमने अपनी यात्रा के दरमियान तेलंगाना और पंजाब में मिटाये हैं।

फिर अपने पास पड़ी हुई बाइबिल 'न्यू टेस्टामेंट' उठा कर 'कुरिन्थियों के नाम पौलुस प्रेरित की पहली पत्री' के अध्याय ६ के वचन ५ से ७ पढ़ कर सुनाये:—

> "मैं तुम्हें लज्जित करने के लिए यह कहता हूँ: क्या सचमुच तुममें एक भी बुद्धिमान नहीं मिलता, जो अपने भाइयों का निर्णय कर सके? वरन् भाई-भाई में मुकद्दमा होता है, और वह भी अविश्वासियों के सामने। परन्तु सचमुच तुममें बड़ा दोष तो यह है कि आपस में मुकद्दमा करते हो; वरन् अन्याय क्यों नहीं सहते? अपनी हानि क्यों नहीं सहते?"

यह दो बार पढ़ कर सुनाने के बाद कहा, "देखो, शास्त्र में क्या लिखा है और मनुसंहिता भी यही बताती है। तो पहले अपना झगड़ा मिटाओ, उसके बाद ग्रामदान-भूदान की बात करेंगे।"

यह सुन कर गाँव के दोनों पक्षों ने श्रीमती आशादेवी तथा श्री अतुल बाबू के साथ एक जगह बैठ कर आपस में बातचीत की। आखिर दोनों पक्षों ने एकस्वर से कहा कि झगड़ा मिटाने का एकमेव पंथ ग्रामदान है। फिर उन्होंने तय किया कि दोनों पक्षों के पाँच-पाँच सज्जन एक-साथ मिल कर गाँव के हर घर में जायेंगे और ग्रामदान के लिए सम्मति के साथ-साथ हस्ताक्षर भी हासिल करेंगे, फिर विनोबाजी से मिलेंगे।

प्रार्थना-सभा के कुछ समय के पहले ग्रामवासी ग्रामदान का दानपत्र लेकर बाबा के पास आये और सभा में अत्यन्त गंभीर वातावरण में जब ग्रामदान की घोषणा हुई तब बाबा ने अपने प्रवचन में कहा, "यह एक चमत्कार है। लोग कहते हैं कि चमत्कार के दिन अब नहीं रहे। लेकिन चमत्कार के दिन नहीं गये!"

इस गाँव में कुल ९० परिवार हैं। जनसंख्या लगभग १००० होगी। जमीन करीब १००० एकड़ है। विनोबाजी ने इस दानपत्र में एक विशेषता यह देखी कि पत्र में अँगूठे का छाप एक भी नहीं था। सब

वैरवृत्ति नहीं, वीर-वृत्ति

गांधी का एक सूत्र सभी दुहराते हैं, "भीरुता से हिंसा श्रेयस्कर है।" परन्तु हम अक्सर यह भूल जाते हैं कि भीरुता से भी क्रूरता अधिक जघन्य है। जहाँ वीरता होती है, वहाँ कायरता तो हो ही नहीं सकती, लेकिन क्रूरता के लिए भी कोई अवकाश नहीं है। सिपाही और कसाई, योद्धा और हत्यारा, दोनों हथियार का ही उपयोग करते हैं, लेकिन दोनों के व्यवसाय में से परस्परविरोधी गुणों का विकास होता है। भारत में आज वीरवृत्ति का आविर्भाव होता हुआ दिखाई दे रहा है। उसका हम सच्चे हृदय से स्वागत और अभिनन्दन करते हैं। देश के सैनिकों और नागरिकों में स्वतंत्रता और देशभक्ति की प्रेरणा जाग्रत हो रही है, उसका परिपोष और संवर्धन हम सबको मिल कर करना चाहिए।

फिर भी एक बात का अवश्य स्मरण रहे। वैर-वृत्ति और वीर-वृत्ति में उतना ही विरोध है, जितना कि अंधकार और प्रकाश में। हमारे प्रधान मन्त्री तथा अन्य नेताओं ने यह दावा किया है कि सार्वनिक सद्भाव और सौहार्द हमारी विदेश-नीति का मूलमंत्र है। सशस्त्र युद्ध में भी वीरता उतने ही अंश में अधिक होती है, जितने अंश में वैर कम होता है। यह प्रश्न सांस्कृतिक है, यह प्रश्न लोकचारित्र्य का और सार्वत्रिक शील का है। इसलिए देश में युद्ध का उन्माद पैदा न हो, स्वदेश प्रेम और स्वतंत्रता की भावना की जगह विपक्षियों तथा प्रतिपक्षियों के लिए घृणा और द्वेष उत्पन्न न हो, इसके लिए सुज्ञ एवं सुबुद्ध नागरिकों को निरंतर जाग्रत रहना चाहिए।

स्वातंत्र्य-निष्ठा का सबूत चाहिए

आखिर चीन और रूस जैसे साम्यवादी देशों के पास ऐसी कौनसी मोहिनी है, जो अन्य देशों के लोगों को मुग्ध कर सकती है? जहाँ भूख और गरीबी है वहीं साम्यवाद पनपता और पलता है। स्वामित्व और संपत्ति में जिसे हिस्सा नहीं मिलता उसे ऐसा भ्रम हो जाता है कि स्वतंत्रता और लोकतंत्र के संदर्भ में भूख और गरीबी का निराकरण नहीं हो सकता। हम सबका इस संकट-काल में यह कर्तव्य है कि लोकतांत्रिक तथा शान्तिमय उपायों से भूख, बेकारी और गरीबी का अन्त किया जा सकता है, यह सिद्ध करें। जिन लोगों के पास संपत्ति और स्वामित्व है, उनमें यदि सचमुच स्वातंत्र्य निष्ठा और देश-निष्ठा हो तो उन्हें इस समय आर्थिक समानता की दिशा में कदम बढ़ाना चाहिए। केवल शस्त्र से किसी भी देश का संरक्षण नहीं हो सकता, यह एक सर्वमान्य तत्त्व है। अतः उत्साह और विश्वास के साथ सारी जनता को इस कार्यक्रम को उठा लेना चाहिए।

अक्सर यह कहा जाता है कि जहाँ भूख और गरीबी है, वहाँ कोई सांस्कृतिक और मानवीय मूल्य पनप नहीं सकते। यह तो निराशा का तत्त्वज्ञान है। इसका मतलब यह हुआ कि जो भूखा और गरीब है, उसमें कभी पराक्रम और सहृदयता जाग्रत हो ही नहीं सकती। अर्थात् उसे हमेशा दूसरों का भरोसा करना पड़ेगा। हमें इस भयंकर और मानव-द्रोही तत्त्वज्ञान को स्वीकारने से इन्कार करना चाहिये। जो गरीब है उसका अपना सत्त्व और शील होता है। दरिद्र-से-दरिद्र मनुष्य भी चोरी और बदमाशी नहीं करता, कंगाल-से-कंगाल स्त्री भी अपनी इज्जत और शील का विक्रय नहीं करती। जो भूखे और दरिद्र लोग अपने पराक्रम से भूख और दरिद्रता का नाश करना चाहते हैं, उन्हें अपने व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक जीवन में मानवीय मूल्य दाखिल करना चाहिये। इस दृष्टि से भारत के दरिद्र लोगों को आर्थिक क्रान्ति के ऐसे तरीके अपनाने चाहिये, जिनसे सम्पत्ति और स्वामित्व के संविभाजन के साथ-साथ बन्धुत्व और कौटुम्बिकता का भी विकास हो।

हमारे प्रधान मंत्री ने हमसे बार-बार कहा है कि यह लड़ाई लम्बे अर्से तक चलेगी, इसलिए नागरिकों को असीम धैर्य, सहनशीलता और सातत्य रखना होगा। युद्ध में कदम कभी आगे बढ़ता है, कभी पीछे हटता है, कभी लगातार पीछे हटता है। असफलता को हम पराजय न समझें। असफलता से पराक्रम को प्रेरणा मिलती है, तभी अपने लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं। सैनिक पराक्रम क्रियासिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं है। उस पराक्रम के पीछे नागरिक शक्ति का अधिष्ठान हो तभी सफलता प्राप्त हो सकती है। 'क्रियासिद्धिः सत्वे भवति महताम् नोपकरणे।' क्रिया सिद्धि हमारे सत्त्व में निहित है, न कि उपकरणों में। उस सत्त्व का संरक्षण करना और लोगों में आत्मबल का विकास करना हम सबका परम कर्तव्य है।

वेड़छी,
२३-११-६२

—दादा धर्माधिकारी

खान अब्दुल गफ्फार खाँ

खान अब्दुल गफ्फार खाँ का स्मरण आते ही चित्त में एक प्रकार की वेदना का अनुभव होता है। हिन्दुस्तान की आजादी के लिए हजारों लोगों को अपनी जिन्दगी के कई बहुमूल्य बरस जेल में बिताने पड़े हैं और तरह-तरह की यातनाएँ भोगनी पड़ी हैं। पर "बादशाह खान" की-सी कीमत शायद ही किसी को चुकानी पड़ी हो! आजादी के पहले तो उन्हें अनेक बार कई बरस जेल में बिताने ही पड़े, पर यह अत्यन्त दुःख का विषय है कि आजादी के बाद भी पिछले १५ बरसों में उनका अधिकांश जीवन जेल में ही बीता है। करीब ७५ बरस की उम्र में आज भी वे पाकिस्तान सरकार की जेल में बन्द हैं, और आजादी का अनुभव करना तो दूसरी बात है, इस बात की भी कोई आशा नजर नहीं आती कि वे अपने जीवन में अब जिन्दा जेल के बाहर आ सकेंगे। अभी पिछले सप्ताह रावलपिंडी के एक समाचार के अनुसार नजरबन्द व्यक्तियों के मामले को छानबीन करने वाले पाकिस्तान सरकार के बोर्ड ने खान अब्दुल गफ्फार खाँ की नजरबंदी जारी रखने का फैसला किया है। दुनिया भर में कहीं भी, स्वतन्त्रता-प्रेमियों के लिए यह समाचार अत्यन्त दुःखद है।

ऐसे अवसर पर व्यथित हृदय के साथ उनके चरणों में शतशः प्रणाम निवेदन करने के अलावा और हम क्या कर सकते हैं!

—सिद्धराज

चीनी आक्रमण को असफल करने का उपाय

विनोबा

चीन का आक्रमण अनपेक्षित नहीं था। इसीलिए लगभग १२ साल से सारे देश में घूम-घूम कर हम आपको दान देने के लिए समझा रहे हैं, ताकि संकट न आने पाये। एलवाल-सम्मेलन में हमने ग्रामदान को 'डिफेंस मेजर' कहा था। हमने बताया था कि गाँव से अगर भूमिहीनता, बेकारी, वैमनस्य, ऊँच-नीच के भेद और मालकियत की भावना आदि मिट जायेंगे तो हरएक गाँव एक-एक किला बन जायेगा। इस काम को पूरा करने में सारे देश की शक्ति लगनी चाहिए थी, वह नहीं लगी और इधर अब संकट आ गया है। इस समय संकट-निवारण के लिए त्याग और दान की धारा बह रही है!

संकट निवारण के लिए दान देना इस देश में नया नहीं है। सूर्य-ग्रहण होता है, तब सूर्य के संकट-निवारण के लिए लोग दान देते हैं। इस समय भी लोग दान दे रहे हैं। अब यह संकट चन्द दिनों में ही हट जायगा, ऐसा मानने का कोई कारण नहीं है। चीन और भारत दोनों बड़े देश हैं, इसलिए यह लड़ाई लम्बी भी हो सकती है। हम वैसा नहीं चाहते। हम तो आशा रखेंगे कि यह आपत्ति शीघ्र-से-शीघ्र हटे। लेकिन लम्बे अर्से के लिए हमें अपने आप को तैयार रखना चाहिए। भारत के लोग वीर हैं, महावीर हैं। सच्चे वीर का यह लक्षण है कि वह कठिन-से-कठिन परिस्थिति के लिए तैयार रहता है।

एकता की आवश्यकता

इस समय देश में एकता की आवश्यकता है। ऊपर ऊपर की एकता नहीं, अंदरूनी एकता यानी सामाजिक और आर्थिक, दोनों प्रकार की एकता होनी चाहिए। समाज में हिन्दू-मुसलमान-क्रिश्चियन आदि भेद हैं, उन भेदों को मिटाइये और यह समझ लीजिये कि भगवान् के अनन्त रूप हैं, अनन्त गुण हैं। हम अपनी-अपनी ग्रहण शक्ति तथा रुचि के अनुसार ईश्वर की अलग अलग उपासना करते हैं। लेकिन उसमें कोई विरोध नहीं होना चाहिए। हमारे समाज में ब्राह्मण, कायस्थ, हरिजन आदि जाति-भेद हैं। इन भेदों को भी मिटा कर हम एक दूसरे के सुख-दुःख में शरीक हो जायें, छुआछूत न मानें। इस तरह सामाजिक क्षेत्र में एकता आनी चाहिए।

आर्थिक क्षेत्र में एकता लाने का उपाय यह है कि भूमिहीनों को भूमि दी जाय। उन्हें अपने परिवार में दाखिल कर लिया जाय। जमीन की मालकियत का पट्टा ग्रामसभा को सौंप दिया जाय। हर घर से एक एक सदस्य लेकर ग्रामसभा बने। ग्रामसभा के जरिये गाँव के झगड़े मिटें। हरएक व्यक्ति अपनी आमदनी और उपज का एक हिस्सा ग्रामसभा को दे और गाँव की पूँजी बनाये। उस पूँजी के द्वारा बेकारों को काम देने की योजना बने, अपाहिजों को रक्षण दिया जाय। गाँव के लिए दो साल की जरूरत भर का आवश्यक अनाज ग्रामसभा के पास जमा रहे, ताकि लड़ाई के कारण गाँववालों को अन्न-वस्त्र की कमी न रहे। गाँव के तरुणों का स्वयंसेवक दल बने। वह दल ग्राम-रक्षा का काम सम्भाले। इस तरह आर्थिक और सामाजिक, दोनों क्षेत्रों में एकता लाने की जरूरत है।

विज्ञान की मांग

अब अगर कोई सोचे कि इस संकट के समय तो चीन के आक्रमण के कारण हम एक हो जायेंगे और फिर पुराना जीवन ही अपना लेंगे। तो उससे फिर खतरा आयेगा और बार-बार संघर्ष में पड़ना पड़ेगा, क्योंकि यह विज्ञान का जमाना है। इस जमाने में जन-संख्या बढ़ती है और जमीन कम पड़ती है तो उद्योगों से आमदनी बढ़ाने की जरूरत होती है। वह जरूरत विज्ञान के बिना पूरी नहीं होती। इसलिए मालकियत, ऊँच-नीच का भेद आदि मिटाना विज्ञान की माँग है। चीन का आक्रमण भले ही टले, विज्ञान का आक्रमण नहीं टलेगा। इसीलिए हमारा एकता लाने का, मालकियत मिटाने का, बेकारों को काम देने का, गाँव के झगड़े गाँव में मिटाने का, शांति-दल बनाने का जो कार्यक्रम है, वह कायम के लिए जरूरी है और अब चीन के आक्रमण के लिए तो फौरन जरूरी हो गया है।

विचार की लड़ाई

आजकल की लड़ाई विचार की लड़ाई होती है। विचार अगर गलत होता है तो शस्त्र कितना भी जोरदार क्यों न हो, जीत नहीं सकता। पिछले महायुद्ध में रूस जर्मनी से जोरदार नहीं था। लेकिन वह जर्मनी के सामने टिका, क्योंकि स्टालिनग्राड की लड़ाई केवल सिपाहियों की लड़ाई नहीं थी। वहाँ के सब किसान मजदूरों ने मान लिया था कि यह हमारा अपना युद्ध है। इसलिए विचार की सफाई रखनी पड़ेगी।

एक बनो और नेक बनो

हमें सोचना चाहिए कि विविध भाषा-भूषा-जाति धर्म आदि के सौंदर्य से अभिभूषित इस भारत भूमि को किस शक्ति ने एकता के धागे में बाँध रखा है? अंदरूनी प्रेम और सहयोग ने। यही अहिंसा है। इस अहिंसा और प्रेम शक्ति के आधार पर हमें एक बनना पड़ेगा। भारत में शूरता की कमी नहीं है। लेकिन जब यहाँ के लोग आपस में लड़ कर शत्रु से मिल जाते हैं, तब भारत को पराधीन बनाते हैं। जयचन्द, मीरजाफर की कहानी मशहूर है। इसलिए इस संकट के समय जाति, धर्म, भाषा, अंदरूनी अशांति और क्षोभ को मिटा दीजिये। इस देश की सामाजिक-आर्थिक विषमता को देख कर चीन भारत में फूट डालने की कोशिश कर रहा है। उससे बचने के लिए आप एक बनिये और नेक बनिये।

[सिरा, समसी, मिंगोल आदि के प्रवचनों से]

* * *

दाताओं ने हस्ताक्षर ही किया है। पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि गाँव में नब्बे प्रतिशत शिक्षित वर्ग है, जिनमें उपाधिधारी (ग्रेजुएट) चालीस से ज्यादा हैं। हिन्दुस्तान के ग्रामदान के इतिहास में यह ग्रामदान एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

दूसरे दिन, २२ नवम्बर को जब विनोबाजी अभयाश्रम के रेशम उत्पादन-केन्द्र शिरामपुर में पहुँचे, तो उनके वहाँ आने के पहले से ही बागीटोला के ग्रामदान का समाचार जैसे विनोबाजी कहते हैं, "भानिक शक्ति के सहारे" शिरामपुर में फैल चुका था। यह समाचार सुनते ही मुस्ताफापुर के ग्रामवासियों ने अपना मन्तव्य प्रकट किया कि "बागीटोला का झगड़ा खतम होकर ग्रामदान हो गया, यह 'अघटित' अगर घट सकता है, तो हमारे गाँव का अगर ग्रामदान न होगा, तो वही 'अघटित' होगा।"

फिर गाँव वालों ने विनोबा के सामने अपनी शंका पेश की और शंका समाधान के बाद ग्रामदान जाहिर किया। इस ग्रामदानी गाँव का नाम मुस्ताफापुर है, जिसमें कुल जमीन ४०० बीघे से कुछ ज्यादा है। परिवार-संख्या ४५ है, जिनमें ४ भूमिहीन हैं।

प्रार्थना-सभा में ग्रामदान की घोषणा करते हुए गाँव के मुखिया ने ऐलान किया–

> "हम भूमिहीनों को भूमि देंगे, गाँव के बेकारों को काम देने का प्रयत्न करेंगे। अपनी व्यक्तिगत मालकियत ग्रामसभा को समर्पण कर रहे हैं।"

उनके वचन में दृढ़ संकल्प तथा धर्मप्रीति का भास होता था। जब उधर चीन का हिंसात्मक आक्रमण चल रहा है, इधर विनोबाजी का प्रेमाक्रमण भी आगे बढ़ रहा है।

[बन्नाउपुर, २३-११-'६२]

अहिंसा शक्ति पैदा करने का तरीका

हमने अभी एक गाना सुना। उसका हमारे चित्त पर अमृत-तुल्य असर हुआ। गायन में बहुत बड़ी शक्ति है। तलवार में भी ऐसी ही शक्ति है।

तलवार अकेली चलती है तो वह क्रूर बनती है। लोगों को दबाना, लूटना, डाके डालना, कत्ल करना आदि तलवार के साथ जुड़े हुए हैं। लेकिन जब तलवार के साथ भक्ति जुड़ जाती है तो उससे क्षात्र-वृत्ति का निर्माण होता है और वीर-धर्म को बल मिलता है। फिर शस्त्रों का उपयोग दुर्बलों की रक्षा करने के काम में होता है। दुर्बलों को शस्त्रों से किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचती। क्षात्रवृत्ति के कारण जिसके साथ लड़ाई चलती है, उसके साथ भी मेल करने के लिए मन सदा तैयार रहता है। वृत्ति शांत और निर्वैर रहती है। इस तरह अकेली तलवार रहने से एक बात होती है और भक्ति के साथ तलवार रहने से दूसरी बात होती है। गायन के लिए भी यही बात है।

जहाँ सिर्फ गायन है, हारमोनियम है, तबला है, वहाँ व्यक्ति बिलकुल कायर बन जाता है, भोग विलास में मग्न हो जाता है और देश को भी दुर्बल बनाता है। इसलिए कर्मवीर पुरुषों ने संगीत का सदा निषेध किया है। संगीतज्ञ के लिए कायर बनना, विलासी बनना लाजिमी है, लेकिन उसके साथ भी भक्ति जुड़ जाती है तो कायरता मिट जाती है और अहिंसक शक्ति पैदा होती है।

आज हम थोड़ी देर रास्ते में बैठे थे। हमारे साथ जो लोग थे, वे "रामकृष्ण हरि" गा रहे थे। हमने उनके सामने यह विचार रखा कि मान लीजिये—गाँव पर डाका डालने के लिए डाकू आयें और आपसे डरा कर धन लेना चाहें तो क्या आप अपनी कुंजी उन्हें दे देंगे? और फिर रात भर हरिकीर्तन करते रहेंगे? क्या वह सच्चा हरिकीर्तन होगा? नहीं। यदि ईश्वर के प्रति हमारी भक्ति है और हम संकीर्तन कर रहे हैं, तब डाकू आ जायें तो हम यही समझेंगे कि भगवान् हमारी कसौटी करने आये हैं। हम अपना कीर्तन चालू रखेंगे। डाकू कहेंगे कि चुप रहो और पैसा दो, तो हम कहेंगे कि हमारा भजन बन्द नहीं हो सकता। आप हमें कत्ल करना चाहें तो कर सकते हैं। हमारे जीते जी न भजन बन्द हो सकता है और न आपको कुछ मिल सकता है। भगवान् ने उनका हृदय-परिवर्तन किया तो वे डाकू भी भक्त हो जायेंगे और हमारे साथ कीर्तन में शामिल हो जायेंगे और भगवान् ने अगर अपने भक्तों को अपने पास बुलाने का सोचा तो डाकुओं के हाथ कत्ल होगी और सभी भक्त भजन करते-करते भगवान् के पास पहुँच जायेंगे। इस तरह दोनों बाजू से हमारा भला होगा। ऐसा हो, तभी हरिनाम लेना ठीक है और तभी हमारी मुक्ति है।

[शेष पृष्ठ ९ पर]

आराम से आजादी अधिक महत्त्वपूर्ण

वैर-वृत्ति को छोड़ कर वीर-वृत्ति का विकास करें

सर्वोदय-सम्मेलन में दादा धर्माधिकारी का समारोप-भाषण

गांधी के जमाने में इस देश के तरुणों ने और इस देश की जनता ने अहिंसक प्रतिकार को स्वीकार किया, यह भ्रम अगर आप लोगों में से किसी के मन में हो, तो कृपा करके उसे हटा दीजिये। दूसरा कोई चारा नहीं था, राष्ट्र विवश था। कम-से-कम एक आदमी ऐसा था, और कुछ नहीं तो कम-से-कम अंग्रेजी सरकार की नाक में दम कर सकता था; इसलिए हम उसके पीछे गये और उसके कार्यक्रम में हिंसा और झूठ की जितनी गुंजाइश थी, उतनी हद तक हिंसा और झूठ को अपनाया। इसके कार्यक्रम में जितनी अहिंसक शक्ति थी, वह उसके लिए छोड़ दिया; क्योंकि उसको वही हजम कर सकता था।

मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि लोगों को और दुनिया के तमाम देशों को यह आशा और अपेक्षा है कि गांधी का भारत अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अहिंसा के प्रयोग का मार्गदर्शक बनेगा, यह भी भ्रम था। इसके दो कारण हैं: एक दरिद्रता और दूसरा, निःशस्त्रता। निःशस्त्रता से मतलब अशरणता और असहायता। भारत ने हथियार कभी फेंके नहीं, अंग्रेजों ने छीन लिये। गांधी ने कहा कि हथियार नहीं हैं, तो मेरे पीछे आओ। लोगों ने कहा कि हाँ हथियार हैं ही नहीं, तो तुम्हारे पीछे न आयें तो करें ही क्या! लेकिन हथियारों के बगैर जितना द्वेष और जितनी जबरदस्ती हम कर सकेंगे, जरूर करेंगे।

सिद्धांत बनाम मनुष्यता

पंजाब में एक स्थान में सभा थी। सरदारजी अध्यक्ष थे। उनके हाथ में एक डण्डा था। "हिन्दुओ-हिंदुओ, मुस्लिमो-मुस्लिमो, सिक्खो-सिक्खो", अध्यक्ष भाषण कह रहे थे। "खामोशी से बैठो, नहीं तो याद रखो, यह डण्डा!" सारी सभा खामोश हो गयी। "अब आचार्य दादा धर्माधिकारी का अहिंसा पर भाषण होगा!" खाक होगा! यह जहाँ अहिंसा के नाम पर हुआ, तब से मैं सिद्धांतों से डरने लगा हूँ। पहले मैं धर्म से डरता था। धर्म के नाम पर जितने अत्याचार हुए थे, उससे ज्यादा दुनिया में कहीं नहीं हुए! अब मैं सिद्धांतों से डरने लगा हूँ। **सिद्धांतों से हम जितने निकट जायेंगे, मनुष्य से उतने ही दूर जायेंगे।**

समन्वय की भूमिका

यह अगर अहिंसावादियों की एक मण्डली है, तो इस सम्मेलन से कम-से कम हम यह सीख लें कि अहिंसावादियों की कोई मण्डली नहीं बन सकती है और अगर बनी है तो बिखर जायगी। अगर आपको भिन्न विचार की स्वतंत्रता नहीं है, तो जो विचार की स्वतंत्रता है वह अनुविचार की स्वतंत्रता है। वैचारिक स्वतंत्रता में जितना विरोध है, उसका परिहार करेंगे, जितनी समानता है, उसका संग्रह करेंगे। इसका नाम समन्वय है। यह इस निवेदन में है। जितने भिन्न विचार हैं, वे फूलें-फलें।

यहाँ भिन्न भिन्न मतों के लिए अवकाश है, विचारों की स्वतंत्रता है। एक हद तक आचार की स्वतंत्रता है और इन सबका समन्वय है। आज तक आप यह कहते रहे हैं कि राष्ट्रीय सरकार कायम होनी चाहिए और यह माँग है कि भिन्न-भिन्न मत होते हुए भी एक 'कैबिनेट' हो। यहाँ इतना ही कहा गया है कि भिन्न-भिन्न मत होते हुए भी किसी एक जगह पर सबकी एक राय और एक स्वर हो और वह एक राय और स्वर यह है कि राष्ट्र की स्वतंत्रता अन्य सारे मूल्यों से अधिक महत्त्व की है। राष्ट्रीय स्वतंत्रता न हो तो वैचारिक स्वतंत्रता के लिए कोई अवकाश नहीं। **आराम से आजादी अधिक अच्छी है। सुख से स्वतंत्रता का महत्त्व अधिक है।**

अभूतपूर्व जागृति

यह कोई जरूरी बात नहीं है कि जो भूखा हो वह मक्कार और मोहताज भी हो। यह ऐसा देश है, जहाँ दरिद्र-से-दरिद्र स्त्री ने भी अपने पेट के लिए अपनी मर्यादा को नहीं बेचा है। कौन कहता है कि गरीबी में सांस्कृतिक मूल्य नहीं रह सकते! आज हम देख रहे हैं कि इस देश में इतनी गरीबी है, फिर भी चीन का आक्रमण होने पर सारे मुल्क के लोग उठ रहे हैं कि इस देश की चप्पा भर भी जमीन कोई नहीं ले सकेगा। इस जागृति के सामने, विश्व मानव की इस विभूति के सामने मेरा मस्तक नत होता है। मैं इसे बहुत बड़ी चेतना समझता हूँ। जो सिपाही कल तक ईमान के लिए लड़ता था, नमकहलाली के लिए लड़ता था, वह आज आजादी के लिए लड़ने लगा। अब उसकी तलवार में ताकत नहीं है, जो ताकत है वह उसके हृदय में है। आपने तो सुना होगा कि अपने उस सिपाही के हाथ में तो हथियार भी नहीं थे, जो थे वे भी घटिया थे। उसकी बंदूक अद्यतन नहीं थी। घटिया हथियार लेकर अद्यतन हथियार वाले से लड़ाई करना, यह बाहुबल नहीं था, यह मनोबल ही रहा होगा। इसलिए आज इस देश के सिपाही और जनता में शस्त्रों के लिए जो आग्रह, आकांक्षा जाग्रत हुई, वह तो कम करने की जरूरत है। लेकिन जो उसमें वीरवृत्ति जाग्रत हुई है, उसको मैं अभिमन्यु और जटायु से कम दर्जे की नहीं मानता। वे कोई लड़ाईखोर नहीं हैं, कोई युद्धवादी नहीं हैं। वह युद्ध दूसरा युद्ध है, जिसकी हमने आज तक निन्दा की और आज भी करते हैं। हाँ, इतना जरूर है कि शांति-सैनिक अगर बगैर हथियार के जाता और समझ कर जाता कि यहाँ मारने का क्या है, मरने का ही मौका ज्यादा है, तो उस इस पराक्रम की मैं सराहना करता।

हथियार केवल संरक्षण के लिए

हथियार-हथियार एक हैं, फिर भी हथियार उठाने में एक का जो रुख है, वह दूसरे का नहीं है, इसलिए फर्क किया है। लोग हमसे पूछते हैं कि हथियार-हथियार एक हैं, तो तुम क्यों नहीं उठाते! इसलिए नहीं उठाता कि वह ऐसा औजार है, जिसका उपयोग संहार के सिवा कोई दूसरा नहीं है। हथियार औजार जरूर है, लेकिन वह ऐसा है कि जिसका सही उपयोग ही गलत है। इसलिए हम नहीं उठाते। इसीलिए हम निःशस्त्रीकरण चाहते हैं, हो सके तो एकपक्षीय चाहते हैं। लेकिन ऐसा न हो सके, तो कम से-कम इतना चाहते हैं कि हथियार संरक्षण के सिवा और किसी कारण के लिए नहीं उठाया जाय।

दिल की बात सुनें

जवाहरलालजी असफल हो गये, यह भी सही है और हम उससे सौ गुना असफल हुए, यह उससे सौ गुना सही है। लेकिन आज दोनों को जागना है। इसलिए इसमें हमने यही कहा है कि लोगों से कहिये—अगर तेरा दिल यह कहता है कि बगैर हथियार के संरक्षण नहीं होगा, हथियार उठा कर ही संरक्षण करना चाहिए तो न तो तू सर्व-सेवा-संघ की परवाह कर, न गांधी की, तू हथियार लेकर चला जा। अगर तुझे लगता है कि हथियार उठाना गलत है, तो दुनिया कहे तो भी तू हथियार हाथ में न ले। आज आजादी का संरक्षण हथियार से हो रहा है। हमसे कहा गया है कि यह लड़ाई लम्बी चलने वाली है। अगर यह लड़ाई लम्बी चली तो आज जो जोश दिखाई दे रहा है, वह टिकाऊ साबित हो, तो इसके लिए कौन क्या करेगा?

असफलता और पराजय

एक बात साफ समझ लेनी है कि असफलता पराजय नहीं है। असफलता से प्रेरणा मिलती है, पराजय से प्रेरणा नहीं मिलती; इतना लोगों को समझाइये। यह लड़ाई अगर लम्बी चली, अमेरिका के भरोसे चली, तो इस देश में वीर-वृत्ति का विकास नहीं होगा, वैर वृत्ति का विकास होगा। मानसिक अवलम्बन, परतन्त्रता में से वीरवृत्ति जाग्रत नहीं होती, वैरवृत्ति जाग्रत होती है। अगर गांधीजी ने यह कहा कि भीरुता शस्त्रवादिता से श्रेयस्कर है, तो उसने कम-से-कम इतना कभी नहीं कहा कि क्रूरता भीरुता से अच्छी है। इसमें से क्रूरता आयेगी—जो आपको साम्प्रदायिक दंगों के अन्दर दिखाई दी, जो भाषिक आन्दोलन में दिखाई दी, जो चीन के नागरिकों के खिलाफ दिखाई दे रही है और जो कम्युनिस्टों के दफ्तर जलाने में दिखाई दे रही है।

निरपवाद स्वतंत्रता

अमेरिका ने एक शर्त लगायी है कि हमारे हथियारों का उपयोग पाकिस्तान के खिलाफ नहीं करना है। हमने भी अमेरिका से मांग की थी कि आप हथियार पाकिस्तान को दे रहे हैं, पर उनका उपयोग हमारे खिलाफ न हो! अब वही मांग वे कर रहे हैं। अब अमेरिका और ब्रिटेन कह रहे हैं कि यह संकट तेरा ही नहीं है, अब मेरा है। दोस्ती का यही लक्षण है। फिर अगला कदम यह होगा कि अगर सुलह करना हो तो मेरे पूछे बगैर नहीं करना। जब तक हमारी शस्त्र-शक्ति के पीछे ब्रिटेन और अमेरिका की शस्त्र शक्ति का समर्थन है, तब तक इस देश की स्वतन्त्रता निरपवाद नहीं। जिस दिन इस देश की शस्त्र-शक्ति के पीछे नागरिक-शक्ति का अनुमोदन होगा, उस दिन इस देश की स्वतंत्रता सुरक्षाजनक होगी। नागरिक संरक्षण का इसके सिवा कोई दूसरा चारा नहीं है।

अहिंसा विधवा नहीं हो सकती

लोग आपसे पूछेंगे, मुझसे भी पूछते हैं कि अब तुम्हारी अहिंसा कहाँ है! तब हम कहेंगे, हम जाने को तैयार हैं। तो लोग कहेंगे, जाते क्यों नहीं हो! जाने को तैयार हैं, शर्त इतनी ही है कि तुम मेरे साथ सिपाही को न भेजिये। तो वह कहता है कि तुम्हारे भरोसे नहीं चलेगा। तो क्या तुम कहना चाहते हो कि हम निकम्मे हैं! यह अपनी प्रतिष्ठा रखने की

एक हिकमत बतला रहा हूँ। हमने यह मान लिया है कि अहिंसा का प्रतिपादन अगर हम नहीं करेंगे तो दुनिया में अहिंसा नहीं रहेगी। मित्रो, अहिंसा विफल नहीं होने वाली है। अगर समाजशास्त्र का यह एक अबाधित सिद्धान्त है कि दो मनुष्य अगर एक दूसरे के साथ अहिंसा के बिना नहीं रह सकते, तो आप हजारों बार असफल होइये, आपकी असफलता के बाद भी साधारण मनुष्य इस दुनिया में अहिंसा को कायम करके रहेगा। अहिंसा के रास्ते पर आप जितना चल सके होंगे, उतना कदम अहिंसा का बढ़ने ही वाला है। चाहे आप कितने ही असफल हुए हों। इसलिए मेरा आप सबसे निवेदन है कि नागरिक शक्ति का यह अनुमोदन शस्त्र-शक्ति के पीछे खड़ा कीजिये।

अस्पृश्यता और गरीबी

इस देश की परिस्थिति में दो प्रकार के आकर्षण हैं। वे कौनसे हैं, किसलिए हैं? एक परधर्म का आकर्षण है और दूसरा है साम्यवाद का। जिस देश में, जिस समाज में अस्पृश्यता रहेगी, उस समाज में, उस देश में परधर्म का आकर्षण रहेगा।

आज लोग हमसे पूछते हैं कि तुम्हारी अहिंसा चीन के मोर्चे पर क्या करनेवाली है?, गांधी से भी हम इसी तरह पूछते थे। हम अगर कहते कि स्वराज्य चाहिये तो गांधी कहते कि चरखा चलाइये। फिर हमने कहा कि अभी तक स्वराज्य नहीं आया, तो कहा कि झाड़ू हाथ में ले लो। हमने माना। ये सारे मित्र कहते हैं कि तेरी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण है। उसने हमसे कहा कि अगर अंग्रेजों को निकालना हो, तो तेरे यहाँ भंगी नहीं रहना चाहिए। तो सफेदपोश वालों में और मिट्टी में काम करने वालों में कम-से कम हार्दिक संबंध कायम हो जाना चाहिये। कम्युनिज्म की पकड़ और उसका आकर्षण भूख और गरीबी में है। यह आकर्षण होते हुए भी कितनी कृतार्थता का विषय है कि इस देश का गरीब आदमी भी आजादी के संरक्षण के लिए सन्नद्ध हो गया है। यह हमारे लिए बहुत सद्भाग्य का विषय है। यहाँ ब्राह्मण-भंगी का फर्क है, फिर भी आज की आजादी के लिए ब्राह्मण भी अपनी दक्षिणा में से कुछ दे रहा है और भंगी भी अपने वेतन में से कुछ दे रहा है। यह देव-दुर्लभ दृश्य है। लेकिन जैसा मैंने आपसे कहा, यह ज्यादा दिन तक टहरने वाली चीज नहीं है।

चीनी नागरिकों की सुरक्षा

इसके आगे एक बात और है। गोवा के साथ जब हमारा मुकाबला हुआ, उस समय पोर्तुगीजों के मुल्क में कुछ भारतीय रहते थे। हमने उनसे कहा कि इनके साथ सभ्यता का व्यवहार करो। तुम्हारे यहाँ अगर तुम भारतीयों को रक्षण नहीं दे सकते हो, तो तुम सभ्य कहलाने के लायक नहीं हो। अगर भारत में चीनी सुरक्षित नहीं रह सके, तो हमें हमारा सभ्य कहलाने का दावा निष्फल है।

वैर वृत्ति छोड़ो

कंधे पर बंदूक रख कर जो कालेज के लड़के-लड़कियाँ मोर्चे पर जाने के लिए तैयार हैं, वे ही कम्युनिस्ट पार्टी का दफ्तर जलाते हैं और चीनियों की दुकानों की तोड़फोड़ करते हैं। यह वीर-वृत्ति का लक्षण नहीं है, वैर-वृत्ति का लक्षण है। कहते हैं, चीन के दाँत खट्टे करेंगे, चाहे अमेरिका को सिर पर उठा लेना पड़े। मैं तो जवाहरलालजी को बहुत स्याना आदमी समझता हूँ। जब उन्होंने यह कहा कि रूस के अपने कारण हैं कि वह हमारी मदद कर रहा है, अमेरिका के अपने कारण हैं कि हमारी मदद कर रहा है। यह दूसरे लोगों को खटका। कृतज्ञता के साथ-साथ वास्तविकता की मर्यादा इस देश के नागरिकों की जाग्रति होनी चाहिए। देश आजाद रहेगा, लेकिन अपने भरोसे। आज आत्मबल की अधिक आवश्यकता है। जो सैनिक शस्त्र से वहाँ मोर्चे पर लड़ रहे हैं, उनके लिए भी आत्मबल की आवश्यकता है। इसलिए निवेदन में यह कहा गया है कि इस संकट के काल में भी उसका विकास अहिंसक शक्ति में हो सके। ऐसी आशा उसमें निवेदन प्रकट की गयी है।

जहाँ तक चीनियों और कम्युनिस्टों के संरक्षण का सवाल है, वह आपका काम है और इसमें बाधा भी नहीं है, बल्कि उलटे इसमें तो आप देशद्रोही कहलायेंगे, यानी आप मरेंगे भी और बाद में कोई आँसू भी नहीं बहायेगा। अगर शांति-सैनिकों में हिम्मत है, तो उन्हें यह करना चाहिए।

सैनिक शक्ति के पीछे नागरिक शक्ति

बंगाल में विनोबा ने कम्यूनिस्टों से कहा कि तुम पर शक किया जाता है। लोग मानते हैं कि तुम गद्दार हो। लोग यह कहते रहेंगे, लेकिन तुमको अपनी देशभक्ति साबित करनी होगी, अगर तुम ईमानदार हो तो। अगर ऐसा नहीं करोगे, तब तो उनकी बात सही साबित होगी। लोग कहेंगे कि तुम नाकाबिल हो, इसके बाद भी शांति-सैनिकों का यह दोयम दर्जे का काम लोकभक्ति से प्रेरित होकर करना पड़ेगा। अगर इस संदर्भ में इन सारे कामों की तरफ आप देखें और स्वतंत्रता के संरक्षण के लिए जितने मोर्चे हैं, उनमें से यह एक मोर्चा है, ऐसा अगर मान लें तो मैं समझता हूँ कि आपकी और हमारी, दोनों की उन्नति होने वाली है और उन लोगों की भी उन्नति होने वाली है, जिन्होंने शस्त्र हाथ में उठाये हैं, क्योंकि उनको यह आवश्यकता मालूम होती है कि इस देश की नागरिक-शक्ति सैनिक-शक्ति के पीछे खड़ी हो जाय।

इस निवेदन से यह आभास होता है कि हमने जो कुछ कहा है, वह अपने को अलग रख कर कहा है। अलग रख कर नहीं कहा है। हम भारतवर्ष के नागरिक हैं, इसका हमें गौरव है। अगर मैं लंदन में रहने वाले अपरिचित व्यक्ति को अपना मित्र मानता हूँ, नेफा की चप्पा चप्पा जमीन को अपनी मातृभूमि मानता हूँ, तो मेरा हृदय विशाल होता है। इसमें सबका स्वागत है, आक्रमणकारी का नहीं। आप मेरे घर आये हैं, आप अतिथि हैं, यजमान हैं तो अतिथियों का स्वागत है, लेकिन आक्रमणकारियों का नहीं। यह भावना जय जगत् की भावना से किसी तरह कम नहीं है।

चार बातें

राष्ट्रीय एकता के लिए आज अवसर है। वैसे अशोक मेहता की सम्मति ने कह दिया है कि आज राष्ट्रीय एकता की आवश्यकता नहीं रह गयी है। किन्तु यह एकता जो आज है कुरुक्षेत्र की है, समाज की नहीं है। तो कल से हम क्या करें? इसके लिए चार बातें कीजिये।

पहली बात, घर-घर जाकर यह समझाइये कि आजादी की कीमत आराम से ज्यादा है। जो अपनी आजादी आराम के लिए बेचता है, अमीर हो, चाहे गरीब हो, वह इंसान कहलाने के लायक नहीं है। अमीर के कुत्ते को चुपड़ी रोटी मिलती है, सारी अच्छी भोजन की सामग्री मिलती है। है। गरीब के लड़के को सूखी रोटी भी नहीं मिलती। इसलिए क्या गरीब का लड़का अमीर का कुत्ता बनना चाहेगा?

दूसरी बात, कल से यह समझाइये कि अगर तलवार चलाना चाहते हो तो जरूर चलाओ। देश की आजादी को याद रखो। यह भूल जाओ कि विनोबा और सर्वोदयवाले क्या कहते हैं। लेकिन तुम एक चीज याद रखो कि जब तक शस्त्र-शक्ति, नागरिक शक्ति का अधिष्ठान नहीं होगा तब तक शस्त्र-शक्ति कुछ नहीं कर सकती। नागरिक शक्ति शस्त्र की शक्ति कभी नहीं हो सकती। यह शांति-शक्ति हो सकती है, मनोबल की शक्ति हो सकती है। आज अगर बम चलाया जायगा तो अस्पताल में जो बीमार, बूढ़े पड़े हैं, वे भी वीरगति को प्राप्त होंगे! लोकव्यापी कुरुक्षेत्र हो गया है। स्थानीय लड़ाइयाँ, जैसे कोरिया, बर्लिन आदि की जितनी हुईं, सब दूसरों के भरोसे चल रही हैं। अणुबम नहीं आया, लेकिन भरोसा दूसरों का है। नतीजा यह है कि छोटे राष्ट्रों की स्वतंत्रता अब दुनिया में अक्षुण्ण नहीं रह सकती। उनको बताइये कि जिस देश में भूख है, गरीबी है, अस्पृश्यता है, उस देश में परधर्म और कम्यूनिज्म का आकर्षण रहेगा।

तीसरी चीज, आप जगह-जगह जाकर नागरिकों को यह समझाइये कि वीरवृत्ति का विकास करना है, तो वैरवृत्ति समाज से क्षीण होनी चाहिए। वैरवृत्ति में से क्रूरता और कायरता प्रकट होती है, बढ़ती है। इसलिए चीन के प्रधानमंत्री की मूर्तियाँ जला रहे हैं, चीनियों को तंग कर रहे हैं—इस सबमें से वैरवृत्ति का विकास होगा, वीरवृत्ति का नहीं।

चौथी बात लोकतंत्र की है। कम्यूनिज्म का एक आकर्षण यह है कि लोकतंत्र और लोकतांत्रिक शक्ति से समाज में एकता नहीं हो सकती है। यह उसकी मान्यता है। हमको यह सिद्ध करना चाहिए, जो पार्टी में हैं तथा जो बाहर हैं उन सबको, कि शांति और लोकतांत्रिक उपायों से भी समाज में विषमता का निराकरण हो सकता है।

[वेड़छी, २४-११-'६२]

सेवाग्राम में शान्तिवादियों और रचनात्मक कार्यकर्ताओं का सम्मेलन

महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित अहिंसा में विश्वास करने वालों के लिए चीन-भारत संघर्ष ने कठिन परीक्षा की घड़ी उपस्थित कर दी है। वेड़छी (गुजरात) के सर्वोदय-सम्मेलन में समस्त भारत से एकत्र कार्यकर्ताओं ने वर्तमान स्थिति पर विचार करके एक प्रस्ताव पारित किया और तय किया कि देश की सभी अहिंसक ताकतों को समग्र रूप से एक अहिंसक प्रतिरोध की योजना बना कर उसमें जुट जाना चाहिए।

उक्त प्रस्ताव को क्रियात्मक स्वरूप प्रदान करने के लिए सर्व-सेवा-संघ ने शांतिवादियों और रचनात्मक कार्यकर्ताओं का एक संयुक्त सम्मेलन १५ और १६ दिसम्बर को सेवाग्राम (वर्धा) में बुलाने का निश्चय किया है। सम्मेलन वहाँ १५ दिसम्बर की शाम को शुरू होगा और १६ तारीख की शाम तक चलेगा। सेवाग्राम के इस सम्मेलन में गांधी शांति प्रतिष्ठान, भारत सेवक समाज, पंचायत परिषद, खादी-संस्थाएँ, हरिजन सेवक संघ, आदिम जाति सेवक संघ, शांति-सेना मण्डल और क्वेकर सोसाइटी आदि संस्थाओं के प्रतिनिधि आमंत्रित किये गये हैं।

द्वितीय नशाबन्दी कार्यकर्ता-सम्मेलन स्थगित

भारत पर चीनी आक्रमण के उत्पन्न हुई संकटकालीन स्थिति घोषित किये जाने के कारण द्वितीय अखिल भारतीय नशाबन्दी सम्मेलन, जो हैदराबाद में १५-१६ दिसम्बर को होने वाला था, अब अनिश्चित काल तक के लिए स्थगित कर दिया गया है। —रूपनारायण, महामंत्री, अ० भा० नशाबन्दी परिषद, दिल्ली

देश में अहिंसा की शक्ति पैदा करना सरकार का काम नहीं, हमारा काम है; हम अपनी जिम्मेदारी महसूस करें

अहिंसक शक्ति उत्पन्न......

[पृष्ठ २ से आगे]

कानून का रास्ता रोका नहीं; बल्कि हम सब तो कानून का रास्ता प्रशस्त करते हैं। अगर ग्रामदान करना हो, तो जनमत तैयार है।

अन्त में दोनों देशों को शांति से बातचीत ही करनी होगी

आज भारत की जनता को और हम सब सेवकों को बैठ कर सोचना है। एक बडा धक्का लगा है। कुछ धीरे-धीरे, कुछ आधी नींद में हम अपना काम किये चले जा रहे थे। जाड़ा हो, बरसात हो, नदी हो, या पानी हो, हमारे नेता का हर दिन तीन-चार बजे सुबह उठना, लालटेन सामने है और चलना, यही क्रम है। शांति का संदेश, प्रेम का संदेश, मानव एकता का संदेश देते हुए घूमता ही रहा, लेकिन हम सुस्त रहे। आज विनोबाजी यहाँ होते तो हम उनसे प्रेरणा प्राप्त करते। आज सम्मेलन का यही महत्त्व है कि जो कुछ हम लोग इकट्ठे हैं, सब एक-दूसरे से शक्ति लेकर जाय। आज जो काम हम इतने वर्षों से कर रहे हैं उसको दुगुने, तिगुने उत्साह से आगे करें। अभी एक भाई कह रहे थे, जो बात हमने अक्सर अपने मित्रों से कही है कि इस प्रकार से सर्वोदय वालों का व्यवहार होता है कि उनका एक सम्प्रदाय बन गया है। अपनी बातों का कैसे दूसरों पर असर हो सकता है, उसकी तरफ जितना ध्यान है उतना इस तरफ नहीं है कि इस विशाल जनमत, जनसमूह को साथ कैसे ले चलें! एक सुवर्ण अवसर हमारे सामने युद्ध की परिस्थिति ने पेश किया। यह काम पण्डित जवाहरलालजी का नहीं था कि वे अहिंसा की शक्ति को पैदा करते, यह सब मानते हैं। जब वे दिल्ली में शांति-सेना रैली में आये थे, तब हम लोगों ने देखा था कि किस प्रकार उनका मन डोल रहा था। एक पैर इधर, एक उधर। उन्होंने कहा था कि अगर हम आपकी बातों को स्वीकार करें तो हमें दो में से एक काम करना पड़ेगा। पहली बात, या तो हमें प्रधानमंत्रित्व से मुक्त होकर आपके साथ आना पड़ेगा या दूसरी बात, हमें भारतीय सेना का विघटन करना होगा। तो यह काम हमारा था। अगर उनसे या श्री यशवंतराव चव्हाण से पूछिये, जिनके हाथ में देश की सुरक्षा आयी है या राष्ट्रपति से पूछिये, कोई नहीं कहेगा कि तलवार से इस समस्या का हल हो सकता है। हल शांति से ही होगा। तलवार चलाने के बाद भी बैठना ही पड़ेगा, बातचीत के लिए, समझने के लिए। इसलिए हमें इस सुवर्ण अवसर का पूरा लाभ उठाना चाहिए।

हमारी आँखें खुलनी चाहिए

आपस में हम लोगों ने बहुत बहस की कि आज हमें क्या करना है! शांति-सैनिक जितने हैं या जितने जल्दी-से-जल्दी भरती हो सकते हैं उनको सीमा पर जाना चाहिए या नहीं और दोनों फौजों के बीच में खड़ा होना चाहिए या नहीं! बहुत बड़ी-बड़ी बहसें हुईं। अंत में कुछ निर्णय हुआ। अहिंसक प्रतिकार जो हो सकता है उसका एक तरीका यह है कि इसमें काफी विचार करने की आवश्यकता है। मैं शांति सेना मण्डल का अध्यक्ष हूँ और पूरी जिम्मेदारी के साथ कहना चाहता हूँ कि ८ सितम्बर से यह आक्रमण शुरू हुआ और आज २३ तारीख नवम्बर की है, अभी तक हम बहस करते बैठे हैं। सुरक्षा कौन करनेवाला है? अगर हमारे ही हाथों में सुरक्षा होती और देश हम ही पर निर्भर करता कि विनोबा की शांति-सेना और सर्व-सेवा-संघ हमारी रक्षा करेगा, तो अभी तो हम निवेदन तैयार कर रहे हैं। मैं किसी को दोष नहीं दे रहा हूँ। कह रहा हूँ कि हमारी आँखें खुलनी चाहिए। केवल इतना ही नहीं कि मेरा उससे विरोध नहीं है। मेरी सहानुभूति है, मेरा नैतिक समर्थन है। मैं कोई काम ऐसा नहीं करना चाहता, जिससे सुरक्षा के काम में कोई रुकावट हो। अपना कोई भी भाई उस तरह नहीं कहेगा। सहानुभूति है, बस इससे आगे नहीं जायेंगे। आज ऐसी स्थिति है कि अभी तक जितना अहिंसा का विकास हुआ है, उससे हम अहिंसा की शक्ति से इस काम को नहीं कर सकते हैं। लेकिन हमको एक चेतावनी मिली है कि इस काम को तेजी से करो, विश्वास के साथ करो, और किसी तरीके से इसका असली हल नहीं होगा।

शांति-सेना देश की शांति की जिम्मेदारी ले

कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जो इस मसले को तलवार से हल कर सके। अंतिम समझौता बातचीत से, शांति से ही होगा, इसमें किसी को संदेह नहीं है। अब इसके लिए हम क्या करें? शांति-सेना की बराबर बात आयी है। ठीक है, शांति-सेना हम बनायें। कुछ उसके रास्ते में में वैधानिक बाधाएँ थीं, जो यहाँ आकर के दूर हुईं। यह सारा किस्सा चलता रहा, लेकिन इतने महीने के बाद वे बाधाएँ दूर हुईं और वह भी बड़े मुश्किल से। वहाँ जाना था न जाना, इस पर गहरा विचार होगा। अंत में हम अपने नेता के मार्ग-दर्शन पर चलेंगे। परन्तु केवल उतना ही शांति-सेना का काम तो नहीं है। हमें तो आज ऐसी परिस्थिति देश में पैदा कर देनी चाहिए कि हर पुलिस के सिपाही को वहाँ से मुक्ति मिल जाय और वह अगर फौज में जाना चाहे तो जाय और हल चलाना चाहे तो चलाये और शांति-सेना प्रजा की मदद करेगी और गाँव-गाँव और नगर-नगर की सुरक्षा करेगी। देश में शांति रहे, इसकी जिम्मेदारी शांति-सेना पर है।

बहुत बड़ा काम

बम्बई की जनता जब इकट्ठी हुई और हिंसक काम शुरू किया, तो पुलिस आयी और गोली चली! अब गोली के सामने पत्थर क्या करें! पत्थर की हार होती है और गोली की जीत होती है और उसके बाद 'ला एण्ड आर्डर' कायम हो गया! इससे कोई शांति की शक्ति समाज के अन्दर नहीं बढ़ी। यह सारा काम अगर हमने किया होता तो आसाम में यह काण्ड नहीं हुआ होता जो हुआ। अलीगढ़-चंदौसी आदि में जो कुछ हुआ वह नहीं हुआ होता। विद्यार्थियों का या किसी का झगड़ा हो, छोटी छोटी बातों के ऊपर मालूम होता है कि हम वहशी है जानवर हैं, एक-दूसरे को मारने-पीटने के लिए तैयार हो जाते हैं। अपने देश की सुरक्षा अगर शांति से हम कर सकें तो बहुत बड़ी बात है। यह बहुत बड़ा काम होगा।

हम ही लोग सौ वर्ष से गुलामी में रह रहे थे, पर बापू ने लोगों में ऐसी जान फूँक दी कि जिस तरह से मिट्टी के पुतले में जान भर दी जाय, उस तरह का सारा हुआ। उधर पुलिस की गोलियाँ चल रही हैं और इधर सत्याग्रह। इस भारत की जनता में मेरी श्रद्धा है, हम उनकी श्रद्धा है कि यह शक्ति पैदा हो सकती है। लोग कहते हैं कि ये अहिंसक लोग आसमान में रहने वाले हैं। यहाँ तो इतना बड़ा संकट आया हुआ है और ये लोग इतनी बड़ी बातें कर रहे थे कि भारतीय सेना का विघटन कर दो! मैं समझता हूँ कि आज की परिस्थिति में यह उल्टी बात लगेगी, लेकिन खास करके आज की परिस्थिति में हम जनता को यह समझा सकते हैं कि इसी रास्ते पर बढ़ने से तुम्हारा कल्याण नहीं होगा, हम फिर गुलाम हो जायेंगे।

त्याग में भी अन्तर

कल रात को हमने कहा था कि आज अमेरिका और रूस में 'आर्म्स रेस'—हथियारों की घुड़दौड़—चल रही है। वह उस तारे पर पहुँचना चाहता है तो यह उस पर। अब चीन हमारे मुकाबले में आ गया। हथियारों की जरूरत पड़ी। हम जितना पैदा कर सकते हैं, कर रहे हैं। गरीब लोगों का पेट काटा जायगा। ठीक है, अमीर लोग भी दे रहे हैं। रेडियो पर सुनते हैं कि एक गरीब ने अपनी जिन्दगी भर की कमाई रक्षा-कोष में दे दी। क्या लखपति-करोड़पति भी जिन्दगी भर की कमाई दे रहे हैं? किसीने बीस लाख दिया, किसीने पचास लाख। किसीकी जिन्दगी भर की कमाई एक ही हजार हुई! अब आप देखिये कि इस त्याग में कितना बड़ा अन्तर हो जाता है! मैं कोई वर्ग-संघर्ष की बात नहीं कर रहा हूँ। यह केवल इसलिए कि अमीर लोग इसको समझें। आज हम गरीबों का और भी पेट काट करके जितने हथियार बनाना चाहते हों, बनायें। जितने की आवश्यकता होगी उतने तो हम बना ही लेंगे। हमारे पास उतने साधन नहीं हैं तो अमेरिका, इंग्लैण्ड से भी माँगते हैं। उनको धन्यवाद है कि उन्होंने मदद की है। पर यह भी सोचना होगा कि उसका परिणाम क्या होगा!

पण्डितजी की शांति-नीति भी टिकेगी?

पण्डितजी ने घोषणा की एक वर्ष पहले कि "अगर भारत चाहे तो दो वर्ष में अणुबम बना सकता है, जैसा कि अमेरिका ने हिरोशिमा और नागासाकी पर डाले थे। लेकिन हम नहीं बनानेवाले हैं।" इस पर हम सबने अपनी पीठ ठोंकी। दुनिया में प्रशंसा हुई कि कितने उच्च विचार वाले हैं भारत के लोग!

लेकिन मैं पूछता हूँ कि आज की इस परिस्थिति में चीन अणु-बम बना ले, रूस तो देने वाला नहीं है, इसलिए नहीं कि यह हमारे खिलाफ इस्तेमाल करेगा, वह भस्मासुर का काम हो जायेगा, तो क्या हमारे प्रधान मंत्री उस वक्त भी यही कहेंगे। यह खबर फैलते ही चारों तरफ से यह आवाज आयेगी कि हमें भी अणुबम बनाना चाहिए।

रूस, अमेरिका के पास जितने साधन हैं, जनसंख्या है, उसका कोई मुकाबला नहीं है। हम अगर उस दिशा में जायेंगे तो कहाँ पहुँचेंगे? क्या कर सकेंगे? कोई भी अगर बुद्धिपूर्वक विचार करे, केवल गांधीजी या विनोबाजी के भक्त ही नहीं, तो इस नतीजे पर पहुँचेगा कि इससे हमारी रक्षा नहीं हो सकती है। हम लोगों को समझा सकते हैं कि शांति से ही हमारी रक्षा होगी।

बौद्धिक सन्तुलन की आवश्यकता

अभी तक तो चीन वाले बहुत बढ़े हुए हैं। २५ लाख की उनकी सेना है। ५ लाख की हमारी सेना है। ढाई हजार उनके पास हवाई जहाज हैं, जिनमें से १८०० जेट हैं। खैर, उनको बहुत जगह सुरक्षा करनी है। केवल भारत से ही सुरक्षा का सवाल उनके लिए नहीं है। ऐसे देशों को सबसे भय होता है। चारों तरफ से उनको भय है। इसलिए उनकी फौज फैली है। फिर भी अगर हम उनके मुकाबले कुछ-न-कुछ कर बैठेंगे तो पता नहीं क्या होगा! तानाशाही कायम होगी। युद्ध आया नहीं कि आपने देखा न कितने, न जाने कितने कानून बनने लगे!

अहिंसा का मार्ग स्पष्ट हुआ है

मान लीजिये कि भारत के नागरिकों

ने निर्णय कर लिया कि हम हथियार नहीं रखेंगे। हमको चीन, रूस, अमेरिका, पाकिस्तान, किसी से भय नहीं है। हम मरने को तैयार हैं। तो फिर क्या कोई भारत पर आक्रमण करेगा! तब तो वह अजीब होगा। इसलिए आज भले ही लोगों को लगे कि ये लोग आसमानी बातें करते हैं, लेकिन इसके सिवा इस देश के पास कोई रास्ता नहीं है। अगर इस रास्ते पर चल कर एक एक बच्चा खतम हो जाय, तो जैसा बापू ने कहा था, अपनी आत्महत्या करके सारी दुनिया को भारत बचा लेगा। मैं समझता हूँ कि पहले से दुनिया कुछ आगे बढ़ी है, कुछ जागृत हुई है, कुछ कदम ऊपर उठे हैं। ऐसे जमाने में इस तरह का कोई अच्छा-सा देश हो, जिसमें ४०-४५ करोड़ लोग हों, इतने खतम होते तो सारे देशों में क्रांति हो जानी चाहिए। सारी दुनिया हमारी मदद में आ सकती है। हम कह सकते हैं कि शांति से मरने को हम तैयार हैं, किसी की गुलामी हम नहीं कबूल करेंगे। हमारी सुरक्षा हमारा संकल्प है।

इस प्रकार का जो देश होगा, वह किसीकी जमीन को नहीं दबा लेगा। कोई पुराना संविधान है, उसको तोड़-मरोड़ कर मैं नहीं कह रहा हूँ। आज का भारत भी शांतिप्रिय है, लेकिन पूरा उस रास्ते पर नहीं गया है। पहले जो किताबी बातें होती थीं, वे खयाली बात समझी जाती थीं। जैसा कि राजेंद्रबाबू ने जब एकपक्षीय निःशस्त्रीकरण की बात कही, तो 'टाइम्स आफ इण्डिया' ने उसके लिए खास खास जुमलों का प्रयोग किया। लेकिन आज की स्थिति में अब ये सब चीजें सामने आयेंगी, चार सौ करोड़ रुपया खर्च करते हैं याने एक करोड़ से अधिक रोज खर्च करते हैं, तो भी देखिये सरहद पर क्या हालत हुई। दो, पाँच, दस करोड़ रोज खर्च करना पड़ेगा। स्कूल, कपड़े आदि का भी इन्तजाम करना पड़ेगा। ये सारी चीजें करनी पड़ेंगी। इसलिए भारत की जनता को बुद्धिपूर्वक सोचना होगा।

कल शाम को सम्मेलन खतम होगा। नम्रतापूर्वक एक-दूसरे के दिलों को जोड़ करके हम यहाँ से इस प्रकार से जायें कि बापूजी का जो मंगल उपदेश, विनोबाजी के जो उपदेश, जो कल्याणकारी मार्ग उन लोगों ने देश के सामने पेश किया है, आज के इस संकटकाल ने, आज की इस गोलाबारी ने जो प्रकाश पैदा किया है, उसकी रोशनी में आज वह रास्ता बड़ा साफ दीखता है। हम यहाँ से यह संकल्प करके जायें कि उस रास्ते पर हम तेजी से बढ़ें और खुद ही नहीं, बल्कि देश की जनता को भी साथ लेकर आगे बढ़ें। भगवान् हमारा साथ देगा और पथ-प्रदर्शन करेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

[वेड्छी-सम्मेलन, २३-११-'६२]

सर्व-सेवा-संघ के नवनिर्वाचित अध्यक्ष

श्री मनमोहन चौधरी

श्री मनमोहन चौधरी से पहली बार मिलने पर ऐसा लगता है, मानो रूखे-सूखे आदमी हैं! लेकिन दूसरी बार, तीसरी बार, बार बार जब हम उनसे मिलने लगेंगे, तब मालूम होगा कि वे कितना विशाल हृदय रखते हैं, कितने स्नेही हैं, कितने हास्यप्रिय हैं और कितने गहरे हैं! उनको लोग इसलिए ज्यादा नहीं जानते कि वे बातें कम करते हैं और काम ज्यादा करते हैं। उनका शरीर जितना स्वस्थ और दृढ़ है, उससे कहीं ज्यादा दृढ़ और स्वस्थ है उनका मन। उम्र से जवान होते हुए भी अनुभव और बुद्धिमत्ता में किसी बुजुर्ग से कम नहीं हैं। ये हैं हमारे सर्व-सेवा-संघ के नवनिर्वाचित अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी।

सेवा भावना मनमोहन भाई की पैतृक और पारिवारिक संपत्ति है। मनमोहन भाई के दादा कटक के ख्यातिप्राप्त वकील और क्रांतिकारी विचारक थे। मनमोहन भाई के माता-पिता, रमादेवी और गोप बाबू को सर्वोदय-परिवार में कौन नहीं जानता है? अभी अभी पद निवृत्त सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री नवबाबू, मनमोहन भाई के चाचा ही हैं। इस तरह मनमोहन भाई को जनसेवा की प्रवृत्ति ही नहीं, सर्व-सेवा-संघ का अध्यक्ष-पद भी विरासत में मिला है! ख्यातिप्राप्त पिता के यशस्वी पुत्र हैं, तो क्यों नहीं मिलेगा?

मनमोहन भाई का जन्म, सन् १९२५, अक्तूबर ११ को हुआ। बचपन से ही राष्ट्रीयता के वातावरण में पले। एक ओर अपने पिता गोप बाबू से राष्ट्रीय तथा गांधीजी के विचारों की प्रेरणा लेते हुए दूसरी ओर आपने १९२९ में मैट्रिक परीक्षा पास की। स्कूल की पढ़ाई मैट्रिक तक ही हुई, लेकिन उनका विश्वविद्यालय बना राष्ट्रीय आंदोलन। १९३० से कॉंग्रेस के स्वयंसेवक बने और १९३२ में सत्रह साल की उम्र में ही पहली बार अपने पिताजी के साथ जेल गये। उससे मनमोहन भाई के सार्वजनिक जीवन का शुभारंभ हुआ। जवानी का जोश और क्रांतिकारी भावना ने मनमोहन भाई को १९३३ में कॉंग्रेस समाजवादी दल का सदस्य बनाया। फिर भी रचनात्मक कार्य छोड़ा नहीं; बल्कि जोरों से चलाया। खादी प्रतिष्ठान में चर्मकारी काम उठाया। बारीगाँव में ग्राम निर्माण के कार्य में लग गये। १९४० में वैयक्तिक सत्याग्रह में। फिर '४२ के "भारत छोड़ो" आंदोलन में जेल गये।

जेल-जीवन मनमोहन भाई के लिए शिक्षा का स्थान बना। उनका अध्ययन वहाँ अच्छा चला। मातृभाषा उड़िया के अलावा, बंगाली, हिंदी, अंग्रेजी का अच्छा ज्ञान प्राप्त किया तथा तेलुगू, गुजराती, उर्दू, असमिया और मराठी भाषाओं का कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त किया। इस तरह मनमोहन भाई बहुभाषा ज्ञाता ही नहीं, कोविद भी हैं।

१९४१ में जेल से छूट कर आने के बाद भारत के राजनैतिक वातावरण में परिवर्तन होने लगा और कांग्रेस-समाजवादी दल से इस्तीफा दे दिया। तब तक मनमोहन भाई की शिक्षा और दीक्षा पूरी हो चुकी थी। तो १९४६ में बंगाली लड़की सुस्मिता से विवाह संपन्न हुआ।

१९४६ से '४८ तक मनमोहन भाई अ० भा० चरखा-संघ उत्कल शाखा के मंत्री रहे। १९४८ में कांग्रेस से भी इस्तीफा देकर स्वावलंबी जीवन का प्रयोग शुरू किया। श्रम-स्वावलंबन के लिए कृषि और बुनाई का काम किया। भूदान-आंदोलन के शुरू होने तक उसी प्रयोग में रहे।

१९५२ से भूदान आंदोलन में पूरा समय और पूरी शक्ति लगा दी।

१९५५ में उड़ीसा में विनोबाजी की यात्रा में विनोबाजी के हिंदी भाषणों का मनमोहन बाबू ने ही उड़िया में अनुवाद किया। मनमोहन बाबू ने उस समय सफलता का ही नहीं, अनुवाद के कार्य पर अपने आधिपत्य का भी परिचय दिया। इन पंक्तियों का लेखक मनमोहन भाई को अनुवाद में अपना गुरु मानता है। अब तक मनमोहन भाई उड़ीसा सर्वोदय-मंडल के मंत्री रहे और उड़िया भाषा का भूदान-पत्र 'ग्राम-सेवक' के तथा अंग्रेजी 'भूदान' के संपादक हैं। —लवणम्

चीनी आक्रमण को असफल बनाने का उपाय

[पृष्ठ ४ से आगे]

एक तरफ हरि-भजन चल रहा है और उधर से हमला करने के लिए कोई आ रहा है तो वैसे समय में हमला करनेवालों पर नजर न डाल कर भजन में मग्न रहते हैं तो बहुत बड़ी अहिंसक शक्ति प्रकट होती है। यह शक्ति संगीत के साथ जुड़ी हुई है। भक्तों का फर्ज है कि गायन के साथ जुड़ी हुई भक्ति को समझें और सोचें कि उससे अहिंसक शक्ति पैदा होती है या नहीं?

[चांचोल, १४-११-'६२]

* * *

भारत की एकता शक्तिपरक हो

मेरे सामने एक मिश्र समाज है। इन्द्रधनुष के अनेक रंग देख कर जैसा आनंद होता है, वैसा ही आनन्द हमें यह मिश्र समाज देख कर होता है। एक एक भाषा में, एक एक धर्म में और एक एक व्यक्ति में अलग-अलग गुण होती है। सभी एक-दूसरे के पूरक होते हैं, बल देने वाले होते हैं और कुल समाज की सुन्दरता बढ़ाने वाले होते हैं भारत के इतिहास से इसका हमें पूरा दर्शन होता है।

इस समय भारत में करीब ४५ करोड़ लोग हैं। इसके साथ ही मैं पाकिस्तान के ९ करोड़ लोगों को जोड़ देना चाहता हूँ। राज्य-कारोबार के लिए पाकिस्तान के लोग भले ही अलग हुए हों, लेकिन वे अलग नहीं हैं, ऐसा हम समझते हैं। भारत में अनेक मानव-वंश हो गये हैं। उनमें एकता थी। वह एकता धीरे धीरे कम हुई। इसीलिए अब चीन ने भारत के दरवाजे खटखटाये। यह आक्रमण देख कर भारत के सारे लोग एक हो गये। दुनिया ने यह चमत्कार देखा कि यहाँ के सारी राजनीतिक पक्ष भी एक हो गये और सबने चीन के आक्रमण का विरोध किया। इस समय जो यह एकता का प्रदर्शन हुआ, वह भक्तिपरक हुआ। लेकिन अब वह शक्तिपरक होना चाहिए।

केंद्रीय सरकार को लोग चन्दा दे रहे हैं, स्त्रियाँ गहने दे रही हैं और भी तरह-तरह का दान दिया जा रहा है। इससे भक्ति प्रकट हुई है, लेकिन इससे शक्ति निर्माण नहीं होती। शक्ति तो तब प्रकट होगी, जब गाँव एक होगा। ताना-बाना, दोनों मिल कर कपड़ा बनता है, वैसे ही ऊँच-नीच, श्रमनिष्ठ-बुद्धिनिष्ठ आदि घुल-मिल जायँ, तब ताकत प्रकट होगी। यह दर्शन गाँव गाँव में होना चाहिए। इसलिए हम जगह जगह भूदान की, ग्रामदान की और ग्रामोद्योग की बात समझाते हैं। हम ऐसी तालीम की बात समझाते हैं, जिससे ज्ञान और कर्म एक हो। कुछ लोग बुद्धि से काम करते हैं, तो हाथ से काम नहीं करते और जो हाथ से काम करते हैं, उनको बुद्धि के विकास का मौका नहीं मिलता। इधर ज्ञानशून्य कर्म और उधर कर्मशून्य ज्ञान। यह भी निर्जीव और वह भी निर्जीव। कर्म और ज्ञान को जोड़ने वाली तालीम चलनी चाहिए। इसलिए हम कह रहे हैं कि भूदान ग्रामदान करो, मालिक-मजदूर के भेद मिटाओ, गाँववाले एकरस होकर गाँव की योजना करो, गाँव के लिए जरूरी अनाज गाँव में ही पैदा करो।

लड़ाई के मौके पर यह कोशिश करनी चाहिए कि अनाज के भाव ऊपर न चढ़ें। फिर भी वे चढ़ते हैं। पिछले महायुद्ध में आपने देखा ही है कि कलकत्ता में ३० लाख लोग भूखों मरे। इसलिए इन सब बातों का खयाल करके गाँव एक परिवार हो जाना चाहिए।

[पड़ाव-समसी, प० बंगाल, १६-११-'६२]

अहिंसक शक्ति का निर्माण : हमारा मुख्य कर्तव्य

सिद्धराज ढड्ढा

कुछ प्रसंग ऐसे होते हैं जो भावना के होते हैं और कुछ प्रसंग वास्तविकता को ध्यान में रखने के होते हैं। आज जिस विषय पर हम चर्चा कर रहे हैं, वह प्रसंग और वह विषय भावना और वास्तविकता, दोनों से संबंध रखता है। यह भावना का मौका भी है और वास्तविकता को ध्यान में रखने का भी। लेकिन भावना और वास्तविकता, दोनों का इस विषय में किस प्रकार कहाँ हम उपयोग करें यह सोचने की बात है। भावना का इस विषय में बहुत बड़ा उपयोग है, और वह इस बात में कि भावना और कल्पना के द्वारा हम यह समझ सकते हैं कि यह प्रसंग कितना गम्भीर है। प्रसंग की गम्भीरता को ध्यान में लाने के लिए भावना आवश्यक है। प्रबंध-समिति की पीपला की बैठक में जब इस विषय पर चर्चा हो रही थी तो विनोबाजी ने कहा था कि शायद मानव जाति के सामने अपने भविष्य का फैसला करने का यह आखिरी मौका है। परिस्थिति की गम्भीरता इस पर से हमारी समझ में आयगी।

भावना का इस विषय में क्या स्थान है, यह समझ लेने के बाद वास्तविकता का क्षेत्र इसमें कहाँ आता है, यह भी समझ लेना चाहिये। जब यह सोचें कि हमको इस बारे में करना क्या है, वहाँ पर हमें वास्तविकता पर आना चाहिए। विनोबाजी ने अशेष चिन्तन की बात कही है। वैसा शब्द इस्तेमाल करने की तो मेरी पात्रता नहीं है, पर मैं इतना कह सकता हूँ कि यह बड़ा गम्भीर मौका है, इसलिए हम इस पर शांति के साथ विचार करें। भावना पृष्ठभूमि में है और वह रहे, लेकिन जब हम कार्यक्रम पर विचार करें तो थोड़ा शांत चित्त होकर हमको विचार करना चाहिए।

दो भूमिकाएँ

दो बातें हमें शुरू में साफ समझ लेनी चाहिए। पहली बात तो यह कि हम भारतीय हैं तब भी हम जो कुछ सोचेंगे वह समूची मानव-जाति की दृष्टि से सोचेंगे। ऐसी हमसे अपेक्षा भी है। दुनिया हमसे अपेक्षा रखती है कि हम मानवीय दृष्टि से इस सारे प्रश्न पर विचार करेंगे। इस जमात की भूमिका जय-जगत् की है। ऐसे मसलों पर हमारी भूमिका विश्व-नागरिक की ही हो सकती है। दूसरी भूमिका हमारी अहिंसानिष्ठ व्यक्तियों की है। उसमें सत्य को मैं जोड़ देना चाहता हूँ। अहिंसा और सत्य एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। हमारी अंतिम निष्ठा सत्य और अहिंसा की है। अतः देश की नहीं, राष्ट्रीयता की नहीं, और किसी चीज की नहीं, सत्य और अहिंसा की कसौटी पर हम सारी चीज को कसेंगे। उस कसौटी पर अपने आपको हम कसेंगे तो हो सकता है, किसी मौके पर सारा देश हमारे खिलाफ हो। गांधीजी ने आजादी के बाद जब पाकिस्तान को वादे के अनुसार भारत सरकार से रुपया दिलाया तो सारे देश की भावना उनके खिलाफ हो गयी और आखिरकार उनको बलिदान होना पड़ा। ऐसे कामों में यह तो होता ही है।

कार्यक्रम की दृष्टि से तीन बातें मुख्य हैं। पहली चीज तो यह कि हमें इस युद्ध को बंद कराने की कोशिश करनी चाहिए। दोनों देशों की इज्जत कायम रहते हुए युद्ध बंद हो जाय, हमें इस बात की कोशिश करनी चाहिए।

युद्ध-बंदी के लिए कोशिश

यह खुशी की बात है कि पिछले दो-चार साल में अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में कई लोगों का संपर्क और सहयोग हमें प्राप्त हुआ है। विश्वशांति-सेना तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं से हमारा संबंध कायम हुआ है। इस प्रकार के व्यक्ति और संस्थाओं का उपयोग हम युद्ध-बंदी के काम में करना चाहते हैं।

आज जिम्मेदार लोगों की तरफ से यह कहा जा रहा है कि इस समय हमको चीन से कोई बातचीत नहीं करनी चाहिए, जब तक कि एक-एक इंच जमीन हम वापस न ले लें। पर हम जरा दूसरे पहलू से सोचें। देश में आज क्या हवा तैयार हो रही है? चालीस करोड़ व्यक्तियों का यह देश, जिससे दुनिया को कुछ दूसरी अपेक्षा थी, आज उस देश में सारा वातावरण युद्ध का बन रहा है, वह उसी तरफ बढ़ रहा है।

बातचीत के लिए तैयार रहें

विश्वविद्यालयों में फौजी तालीम अनिवार्य हो गयी है। अब तक यह गरीब देश चार सौ करोड़ रुपया सेना पर हर साल खर्च करता रहा है। अब खुद पण्डितजी ने संसद में कहा था कि हजार करोड़ रुपया सालाना खर्च करें तब हमारी उस तरह की तैयारी होगी जैसी चीन की है। विनोबा ने बार-बार कहा था कि अगर युद्ध कभी होगा तो हमारी सारी पंचवर्षीय योजनाएँ खतम हो जायेंगी। अगर युद्ध लम्बा चला तो यह सारा देश आपके और हमारे देखते-देखते तानाशाही में जाने वाला है। इसलिए इस युद्ध को बंद कराना हर हालत में आवश्यक है। हमारा, आपका कर्तव्य है कि हम बातचीत का दरवाजा हमेशा खुला रखने का वातावरण बनायें।

युद्ध-बंदी के लिए दूसरी प्रकार की कोशिश यह हो सकती है कि किसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के तत्त्वावधान में प्रत्यक्ष मोर्चे पर भी एक दल जाना चाहिए। जा सकता है, ऐसा मुझे लगता है। उसकी कोशिश हमें करनी चाहिए। उसमें हम भी शामिल होंगे, लेकिन उसका स्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय ही होना चाहिए।

अहिंसक प्रतिकार

युद्ध-बंदी की इन कोशिशों के अलावा दूसरी चीज है अहिंसक प्रतिकार की। हम यह मानते हैं कि यह युद्ध भारत पर लादा गया है, इसलिए इस अन्याय का प्रतिकार तो आवश्यक है। अहिंसक पद्धति से प्रतिकार क्या हो सकता है, यह हमें सोचना है। कुछ लोगों का कहना है कि आज चूंकि अहिंसक प्रतिकार की देश में तैयारी नहीं है, अतः हमें सैनिक प्रतिकार में ही शामिल हो जाना चाहिए। पर मैं इस पक्ष में नहीं हूँ। उसके लिए जो कुछ लाञ्छन सहना पड़ेगा वह हम सहेंगे। हम एक रहेंगे तो अकेले वैसा करेंगे, दस रहेंगे, तो दस। युद्ध मानव-जाति के प्रति अपराध है। यह एक मानवता का सवाल है और उस दृष्टि से लांछित, अपमानित सब कुछ जो भी होना पड़े, होंगे; लेकिन अपनी निष्ठा से नहीं हटेंगे, ऐसा मैं आप लोगों से कहना चाहता हूँ। लेकिन क्या अहिंसक प्रतिकार का कोई तरीका नहीं है? जब अहिंसक प्रतिकार की बात आती है तो स्वाभाविक ही यह कल्पना आती है कि एक जत्था लेकर मोर्चे पर जायँ। पर यह ज्यादा सोचने का विषय है। यह चीज कितनी व्यवहार्य है, इस पर वास्तविकता की दृष्टि से सोचना चाहिए। पर अहिंसक प्रतिकार का एक कदम यह हो सकता है कि हम सीमावर्ती क्षेत्रों में अपनी छावनियाँ डालें और जनता में ऐसी ताकत पैदा करें कि अगर अहिंसक प्रतिकार का मौका आये तो वे वैसा कर सकें, भागे नहीं। शांति-सैनिक तो अहिंसक प्रतिकार करते हुए प्राण न्योछावर करने को तैयार रहेगा ही।

तीसरी चीज, जो हमारे सामने स्पष्ट होती नजर आती है वह यह कि अहिंसक शक्ति का निर्माण देश में करना चाहिए, उसमें हमें जुटना चाहिए। उस काम में हम तो दस-बारह वर्ष से लगे हुए ही हैं, पर आज उस काम को तीव्रता से करने का मौका आया है, जिससे अहिंसक शक्ति प्रकट हो। भूदान-ग्रामदान की जो पद्धति है, उसके बारे में किसी का आग्रह नहीं है। लेकिन जो आर्थिक विषमता का प्रश्न है, उसे हल करने की हमें पूरी कोशिश करनी चाहिए। इस कार्यक्रम का नाम आप कुछ भी दीजिये, लेकिन जनता की शक्ति बढ़ाने, उसमें सच्ची एकता स्थापित करने के लिए वह जरूरी है।

इस संदर्भ में एक बात मैं निवेदन कर देना चाहूँगा। हम लोग ऐसे मौकों पर अक्सर यह सोचते हैं कि अहिंसा नाकामयाब हो गयी। पर अहिंसा की शक्ति को प्रकट होने के लिए कुछ पूर्व-तैयारी तो होनी चाहिए न? हम पूर्व-तैयारी तो करेंगे नहीं और जब-जब समय आयेगा तब यह कहेंगे कि हम असफल हो गये, तो यह ठीक नहीं है। हम सब लोग अपने दिल पर हाथ रख कर अपने आप से पूछें कि हम पूर्वतैयारी के काम में कितने सातत्य से लगे रहे हैं?

अहिंसक शक्ति निर्माण करना हमारा मुख्य कर्तव्य है, यह कोई अभी के संदर्भ में ही नहीं, बल्कि हमेशा के लिए। यह जो भारत-चीन संघर्ष हमारे सामने आया है, वह समस्या लम्बे समय की चीज है। आज का सारा प्रसंग भावना का है और उस भावना का इतना फायदा उठायें कि जो कार्यक्रम तय करें उसके लिए उत्कटता और उत्साह लेकर जायँ।

[वेडछी में सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन में २० नवम्बर को दिये गये भाषण से।]

सूचना :

"विनोबा-प्रवचन" का प्रकाशन

भारत पर चीन के आक्रमण से उत्पन्न विकट परिस्थिति के कारण हम आज भीषण अग्नि-परीक्षा से गुजर रहे हैं। ऐसे समय देशवासियों का कर्तव्य क्या है, लोक-सेवक और शान्ति-सैनिक क्या करें आदि अनेक प्रश्नों पर आचार्य विनोबा अपने प्रार्थना प्रवचनों में *प्रायः नित्य ही कुछ-न-कुछ अवश्य कहते हैं।* सर्व-सेवा-संघ द्वारा यह व्यवस्था की गयी है कि विनोबाजी के प्रवचन साइक्लोस्टाइल होकर सप्ताह में दो बार पाठकों तक पहुँच सकें और और इसीलिए 'विनोबा प्रवचन' का प्रकाशन २२ नवंबर, १९६२ से पुनः आरम्भ किया गया है।

पहले भी 'विनोबा-प्रवचन' साइक्लोस्टाइल होकर दो वर्ष तक प्रकाशित होता रहा था और बाद में एक साल तक मुद्रित रूप में भी सप्ताह में तीन बार, ३१ दिसंबर, १९५९ तक प्रकाशित हुआ था। विशेष जानकारी के लिए लिखें—व्यवस्थापक, 'विनोबा-प्रवचन', राजघाट, वाराणसी–१

चौदहवाँ सर्वोदय-सम्मेलन : एक झाँकी

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

वेडछी (गुजरात), २३ नवम्बर, '६२

बापू की पुण्यभूमि गुजरात और गुजरात में श्री रविशंकर महाराज और जुगतराम भाई के साधना-क्षेत्र वेडछी में आज तीसरे पहर चौदहवाँ सर्वोदय सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सादगी और कलात्मकता से सजा हुआ पंडाल का वातावरण, चीन द्वारा भारत पर किये गये आक्रमण की भावना से अत्यंत गंभीर दिखाई पड़ रहा था। सम्मेलन की कार्रवाई विनोबा के इस संदेश से शुरू हुई कि "" आज देश पर जो प्रसंग है, वह अनपेक्षित नहीं था। उसकी आशंका मुझे बरसों से है और इसीलिए साढ़े ग्यारह साल लगातार पदयात्रा जारी रही है। हमारे विचारों के लिए जमाना तो अनुकूल था, पर लोकमानस उतना अनुकूल नहीं था। अब आज के संदर्भ में लोकमानस भी अनुकूल हुआ है, ऐसा मैं देख रहा हूँ। आज सर्वोदय-विचार सर्वथा अनुदित है। प्रतिगामी शक्तियाँ सब खतम हो चुकी हैं। "अनिकेतः स्थिरमतिः", यही गीता-संदेश मेरे कान में गूंज रहा है। इस वक्त सैकड़ों पदयात्राएँ भारत में चलेंगी, तो सर्वोदय का रूप प्रत्यक्ष होने में देर न लगेगी।"

राजेन्द्र बाबू ने भी सम्मेलन के लिए एक संदेश भेजा था, जिसमें इस बात पर जोर दिया था कि हम लोग संगठन दृढ़ बना कर और गाँव को यथासाध्य स्वावलंबी और आत्मनिर्भर बना कर एक ऐसी व्यवस्था का निर्माण कर सकते हैं, जो इस संकट के समय बहुत काम दे सकती है।

दोनों संदेशों के पाठ के उपरांत सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री रविशंकर महाराज ने प्रतिनिधियों का स्वागत करते हुए सम्मेलन-भूमि के पीछे रही भाई चुन्नीभाई मेहता की महती सेवा का वर्णन किया और बताया कि इस आदिवासी क्षेत्र में बापू की प्रेरणा से चुन्नीभाई ने कितना महान् कार्य खड़ा कर दिया। आज यहाँ की रानीपरज सेवा-सभा के आश्रय में ४० आश्रमीय संस्थाएँ चलती हैं, कोई साठ सहकारी मंडलियाँ चलती हैं, ढाई-तीन सौ आदिवासी कार्यकर्ता तैयार हुए हैं और आश्रम-संस्था में दो हजार से अधिक छात्र-छात्राएँ नयी तालीम की शिक्षा प्राप्त कर रही हैं, जिनकी प्रत्यक्ष शिक्षा इस मंडप और यहाँ के विभिन्न निवासों में प्रकट हो रही है।

रविशंकर महाराज ने गुजरात में प्राप्त भूदान की चर्चा करते हुए बताया कि अब तक यहाँ १ लाख एकड़ के करीब भूमि प्राप्त हुई है और १५० ग्रामदान हुए हैं, जिसमें से ५१ हजार एकड़ भूमि का वितरण हो चुका है। लगभग तीस कार्यकर्ता बड़ी लगन से काम कर रहे हैं। सम्मेलन के खर्च के लिए गुजरात की जनता, सरकार और बम्बई शहर ने बड़ी उदारता से हमारी सहायता की है।

अपनी पिछली चीन-यात्रा का वर्णन करते हुए रविशंकर महाराज ने बताया कि मुझे चीन की देहाती जनता से मिलने का अवसर मिला था। मुझे ऐसा लगा कि वह भी हमारी जनता के समान सीधी-सादी और शांतिप्रिय है। उस समय मैंने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि 'हिन्दी चीनी भाई भाई' का सूत्र बोलने वाले दो देश इस तरह संघर्ष में आ जायेंगे। ऐसी गंभीर परिस्थिति में अहिंसा में श्रद्धा रखने वाले हम जैसे कार्यकर्ताओं का क्या धर्म हो सकता है और हमारी शांतिप्रिय जनता को क्या राह दिखाई जाय, उसका विचार करने के लिए आप यहाँ इकट्ठे हुए हैं। हमने विनोबाजी को यहाँ मार्ग-दर्शन देने के लिए आमंत्रित किया था, पर वे हमारी प्रार्थना स्वीकार नहीं कर सके। हम जो कुछ भी निर्णय करेंगे, उसका असर विश्व पर भी होने वाला है। हम लोगों को गहराई से विचार करके योग्य निर्णय करना होगा।

सम्मेलन के अध्यक्ष श्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम् का दादा ने अपनी ओज-पूर्ण शैली में परिचय देते हुए कहा कि हमारे नायकम्‌जी की एक ही धुन है, और वह यह कि सबका पर्यवसान नयी तालीम की तरफ जाना चाहिये। समाज-परिवर्तन का सबसे प्रभावशाली साधन शिक्षण है। नायकम्‌जी राष्ट्रीय एकीकरण के प्रतीक हैं। हमें समाज में जिन गुणों का विकास करना है, उनमें वे मूर्तिमान हुए हैं।

महर्षि कर्वे, राजर्षि टंडन, डा० विधान-चन्द्र राय, श्री रामदेव ठाकुर, महात्मा भगवानदीन को श्रद्धांजलि अर्पण करने के उपरान्त अध्यक्ष ने अपने भाषण में गत वर्ष के कार्यों का सिंहावलोकन किया और इस बात पर जोर दिया कि संकट के इस अवसर पर अहिंसा में हम अविचलित निष्ठा रखें। (देखिये, आर्य-नायकम्‌जी का भाषण, 'भूदान-यज्ञ'—३० नवम्बर, प्रथम पृष्ठ।)

सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन ने सर्व सेवा संघ की प्रवृत्तियों का विवरण देते हुए कहा कि हमें खेद है कि हम भूदान में मिली हुई भूमि का अभी तक वितरण नहीं कर सके।

४० लाख एकड़ में ११ लाख बटी है और ११ लाख छूटी है, १८ लाख पड़ी है—यह हमारी अक्षमता की निशानी है।

विभिन्न समितियों का विवरण देते हुए श्री पूर्णचन्द्रजी ने कहा कि अन्य समितियों में विशेष उल्लेखनीय कार्य हम नहीं कर सके, परन्तु शांति-सेना का काम विशेष रूप से बढ़ा। हमारे सारे संयोजन को सजीव करने की आवश्यकता है। हमारा आर्थिक संयोजन तो बहुत ही कमजोर है।

श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने भाषण में विस्तार से बताया कि वर्तमान स्थिति में हमारा क्या कर्तव्य है। आपने कहा कि स्वराज्य प्राप्ति के बाद सबसे बड़ा संकट का काल आया है और यह सभी के लिए कसौटी का समय है। आज सारा भारत शांति चाहता है। युद्ध शीघ्र-से-शीघ्र बंद हो यह सभी चाहते हैं, पर कम-से-कम मैं इस चीज को बिल्कुल नहीं मानने वाला हूँ कि चाहे जिस शर्त पर सही युद्ध बंद हो। चाहे जिस शर्त से युद्ध बंद हो, उसमें से अहिंसा की शक्ति निकलेगी ऐसा नहीं माना जा सकता है। हम चाहते हैं कि सम्मानपूर्वक युद्ध बंद हो और किसी के साथ अन्याय नहीं हो तभी उसमें से शांति निकलेगी। रूस-अमेरिका के पास जो साधन हैं, उसका कोई मुका-बिला नहीं है। हम उस दिशा में जायेंगे तो कहाँ पहुँचेंगे, क्या कर सकेंगे? कोई भी विचार करे तो इसी नतीजे पर पहुँचेगा कि शांति से ही हमारी रक्षा होगी। (देखिये, जयप्रकाशजी का भाषण, अन्यत्र इसी अंक में।)

* * *

प्रात: २४ नवम्बर, '६२

तीन-चार दिन तक सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन में चीन के आक्रमण के प्रश्न को लेकर सर्व-सेवा-संघ के सदस्यों ने अत्यधिक विचार-मंथन करने के बाद सर्व-सम्मति से जो निवेदन स्वीकार किया, उसे सम्मेलन में प्रस्तुत करते हुए श्री नारायण देसाई ने कहा कि जिस अनाग्रह भाव से सामूहिक सत्य प्रकट हुआ, उसी भाव से हम कोशिश करेंगे तो सामूहिक अहिंसा-शक्ति भी प्रकट होगी। इस निवेदन में कई कार्यक्रम दिये गये हैं, सब लोग अपनी अपनी शक्ति के अनुसार उनमें से विभिन्न कार्यक्रमों को उठा सकते हैं। (देखिये, निवेदन, 'भूदान-यज्ञ', ३० नवम्बर, पृष्ठ ३।)

निवेदन पर चर्चा करते हुए श्री सिद्ध-राजजी ने कहा कि आज हमारे सामने दो सवाल मुख्य रूप से हैं कि हम राष्ट्र की रक्षा के साथ धर्मरक्षा कैसे करें, हमारा अपना विशिष्ट धर्म है और उस विशेष भूमिका को नहीं भूलना चाहिये। देश में ऐसी अहिंसात्मक प्रतिकार शक्ति बननी चाहिये, जो न केवल युद्धकाल में, किन्तु सामान्य काल में भी अन्याय का मुकाबला कर सके।

जापान के फुजी गुरुजी ने अपनी भाषा में प्रवचन करते हुए अपनी आश्रम की पृष्ठभूमि बतायी और कहा कि जैसा गांधीजी ने कहा है, भारत को पश्चिमीय सभ्यता की अंधी नकल नहीं करना चाहिए। आपने कहा कि चीन-भारत संघर्ष सिर्फ केवल चीन या भारत को खतरा है, किन्तु दुनिया के तमाम मुल्कों को भी खतरा है। 'अहिंसा परमो धर्म' को मानने वाला मुझ जैसा बौद्ध भिक्षु अगर युद्ध के बीच खड़ा होकर किसी व्यक्ति को बचा सके, तो बड़ी सेवा होगी। आप मुझे आज्ञा दीजिये कि नेफा में जाकर शांति के लिए प्राण अर्पण कर सकूँ। यही संकल्प करके मैं भारत आया हूँ। इतना ही नहीं जापान की मेरी संस्था में कई ऐसे अनुयायी हैं, जो शांति के लिए प्राणोत्सर्ग करने को तैयार हैं।

काकासाहब कालेलकर ने शांति-सेना के कार्यक्रम पर जोर दिया और कहा कि आज की सरकार कहेगी तो मैं कहूँगा कि आप मुझे चाहे जहाँ पर भेजेंगे, लेकिन मेरी ओर से किसी का खून नहीं होगा। बम वर्षा हो रही है। वहाँ पर भेज दीजिये, मैं जाऊँगा, कायरता सहन नहीं करूँगा। खतरे की जगह जाना अहिंसक लोगों का परम कर्तव्य है।

प्रथम महायुद्ध की बात की याद दिलाते हुए आपने कहा था कि जब गांधीजी युद्ध भरती के लिए कोशिश कर रहे थे तब भी गांधीजी ने कहा था, मैं किसी को मार नहीं सकता। तब मैंने कहा था कि बापूजी अगर मैं बंदूक चलाऊँगा तो क्या आप बंदूक में गोली भरेंगे। उन्होंने हामी भरी थी। यह नहीं भूलना चाहिए कि बापू सबसे उत्तम क्षत्रिय थे। उन्होंने कभी नहीं कहा कि युद्ध नहीं चाहिए। हिंसक युद्ध नहीं चाहिए। उसके लिए प्राण दे देंगे, लेकिन अन्याय का विरोध करेंगे।

इसके बाद धीरेन्द्र भाई ने निवेदन पर अपने विचार रखते हुए कहा कि जो लोग शांति सैनिक की तौर पर सरहद पर जाना चाहें, वे अपना विचार कायम रखें और अवश्य जायें, किन्तु जान देने के लिए नहीं, जिंदगी देने के लिए। आज सीमावर्ती क्षेत्रों में जम कर लम्बे अर्से तक काम करना है। वहाँ जाने वाले अपने प्रिय जनों से इस प्रकार विदाई लें कि शायद वापस नहीं आना पड़े। आपने आगे कहा कि शांति-सेना हमारे सब काम की रीढ़ है। इसके साथ देश में अहिंसक शक्ति पैदा करने के लिए पुलिस और अदालत से मुक्ति, स्थानीय उत्पादन और समाज में कोई साधनहीन न रहे, इस त्रिविध कार्यक्रम पर जोर देना होगा।

श्री जयप्रकाशजी ने सम्मेलन के सामने शांतिसैनिक का संशोधित प्रतिज्ञा-पत्र रखा (देखें, 'भूदान-यज्ञ' ३० नवम्बर, पृष्ठ-संख्या ११) और उपस्थित लोगों का आह्वान किया कि सीमावर्ती क्षेत्र में काम करने के लिए इच्छुक शांति-सैनिक अपना नाम आज ही लिखवा दें। आपने शांति-सेना के कार्य और संगठन के लिए

भूदान-यज्ञ   रजिस्टर्ड नंबर ए. ३५४ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की अनुमति प्राप्त, लायसेन्स नं० ए ३४]   ७ दिसम्बर, '६२

भारत में एकसाथ सैकड़ों पदयात्राओं का आयोजन हो

'शांतिसेना-कोष' के लिए भी अपील की।

तीसरे पहर सम्मेलन की अंतिम सभा स्वामी आनन्द के भाषण से प्रारम्भ हुई। स्वामी आनन्द ने जोर दिया कि इस वक्त मुनाफाखोरी नहीं बढ़नी चाहिये। यह एक बहुत बड़ा काम होगा। श्री ठाकुरदास बंग ने कहा कि शस्त्र-अस्त्र की घुड़दौड़ में हम कभी भी पश्चिम की ताकतों का मुकाबला नहीं कर सकते हैं, इसलिए वर्तमान परिस्थिति में शांति सेना ही एकमात्र रास्ता दिखाई देता है। आज खादी-ग्रामोद्योगों में लगे ४० हजार कार्यकर्ता हैं और १० हजार अन्य कार्यकर्ता हैं। उनमें से आधे, २५ हजार कार्यकर्ता अगर २ महीने के लिए टोलियाँ बना कर देहात-देहात निकल जायें, तो हम पूरे देश में अपना संदेश, निवेदन सुना सकते हैं।

श्री वजुभाई शाह ने कुछ प्रश्न रखे कि हमको यह बताया जाय कि सर्व-सेवा-संघ की स्पष्ट राय क्या है और हमें कल क्या करना चाहिए और उत्तर की अपेक्षा आचार्य दादा धर्माधिकारी से चाही, जो इस सम्मेलन में समारोप-भाषण करने वाले थे।

श्री वैद्यनाथ चौधरी ने पूर्णियाँ जिले के कार्य की योजना प्रस्तुत करते हुए कहा कि इस बार विनोबाजी की यात्रा के वक्त पूर्णियाँ जिले के कार्यकर्ताओं ने यह तय किया है कि जिले में (१) भूमिहीनता का निवारण, (२) प्रत्येक गाँव में ग्राम-सभा, (३) ग्राम स्वावलंबन, (४) ग्रामकोष और (५) शांति-सुरक्षा—इस पंचसूत्री कार्यक्रम पर जोर देकर सघन काम किया जायेगा। (देखिये, पूरी योजना 'भूदान-यज्ञ', ३० नवम्बर, पृष्ठ १२।)

इसके बाद हरविलास बहन ने कहा कि इस अवसर पर गांधी के गुजरात की विशेष जिम्मेदारी है। बाद में आग्रह से गुजराती में बोलते हुए हरविलास बहन ने कहा कि घर में आये हुए सम्मेलन का हमें पूरा-पूरा फायदा उठा कर अपने कार्य में जुट जाना चाहिए।

अन्त में समारोप भाषण करते हुए श्री दादा धर्माधिकारी ने अपनी विशिष्ट मनोहारी व्यंग-विनोदी शैली में आज की स्थिति का जिक्र करते हुए कहा कि आज हमें लोगों को यह समझाना है कि आराम से आजादी बढ़कर है, सुख से स्वतन्त्रता महत्त्वपूर्ण है। लोगों में जग रही वीर-वृत्ति का स्वागत करते हुए दादा ने चेतावनी दी कि वीर-वृत्ति कहीं वैर-वृत्ति में न बदल जाये। उन्होंने कहा कि कायरता से वीरता अच्छी है, किन्तु क्रूरता वीरता से कदापि बढ़कर नहीं है। (देखिये, इसी अंक में, पृष्ठ ६।)

अन्त में श्री जुगतराम भाई ने उपस्थित सभी कार्यकर्ता और जनता का आभार प्रकट करते हुए कहा कि यहाँ सम्मेलन रख कर आपने हमें सेवा और शिक्षण के लिए अमूल्य अवसर दिया।

श्री वल्लभस्वामी पदयात्रा करते रहेंगे

इस बार सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन और सर्वोदय-सम्मेलन में 'पदयात्रा' पर पुनः विशेष जोर दिया गया है। विचार-प्रचार एवं समग्र कार्यक्रम की दृष्टि से पदयात्रा एक प्रभावशाली माध्यम सिद्ध हुआ। श्री विनोबाजी ने भी अपने संदेश में सैकड़ों पदयात्राएँ एकसाथ भारत में चलें, इस पर जोर दिया है।

सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन में श्री वल्लभस्वामी ने जाहिर किया है कि वे अब आगे पदयात्रा करते रहेंगे। उन्होंने कहा कि अत्यन्त जरूरी अवसर पर वाहन का उपयोग भी करेंगे, किन्तु सामान्यतः वे पदयात्रा ही करते रहेंगे। उनकी पदयात्रा का क्षेत्र मुख्यतः दक्षिण भारत रहेगा।

श्री वल्लभस्वामी ने अन्य कार्यकर्ताओं से अपील की है कि वे साल का छठा भाग याने दो महीने, पदयात्रा के लिए समय दें।

तेजपुर में सेवा-कार्य

चीनी आक्रमण के कारण आसाम में तेजपुर कसबे को खाली कराना पड़ा। वहाँ आतंक की स्थिति थी। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने भी वहाँ शांति के लिए काम किया। इनमें श्री पुष्पलता दास, श्री उमय-कुमार दास आदि प्रमुख सर्वोदयी कार्यकर्ता हैं, जिनकी सेवाओं का उल्लेख श्रीमती इन्दिरा गांधी ने २२ नवंबर को अपने रेडियो-प्रसारण में भी किया।

सर्व-सेवा-संघ की नयी प्रबंध समिति

सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी ने अपनी प्रबंध समिति इस प्रकार बनायी है :-

(१) श्री मनमोहन चौधरी, अध्यक्ष
(२) श्री राधाकृष्ण, मंत्री
(३) श्री दत्तोबा दास्ताने, सहमंत्री
(४) श्री पूर्णचन्द्र जैन, क्षेत्रीय सहमंत्री
(५) श्री एस० जगन्नाथन, ,, ,,
(६) श्री क्षितीश राय चौधरी ,, ,,
(७) श्री नवकृष्ण चौधरी सदस्य
(८) श्री सिद्धराज ढड्ढा ,,
(९) श्री ठाकुरदास बंग ,,
(१०) श्री राधाकृष्ण बजाज ,,
(११) श्री अक्षय कुमार करण ,,
(१२) श्री ब्रह्मदेव बाजपेयी ,,
(१३) श्री ध्वजा प्रसाद साहू, सदस्य
(१४) श्री नारायण देसाई ,,
(१५) श्री जयप्रकाश नारायण ,,
(१६) श्री अमलप्रभा दास ,,
(१७) श्री हरविलास बहन शाह ,,
(१८) श्री प्रभाकर ,,
(१९) श्री जनार्दन पिल्लै ,,
(२०) श्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम् ,,
(२१) श्री मार्जरी साइक्स ,,
(२२) श्री चारुचन्द्र भंडारी ,,
(२३) श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ,,

सीमावर्ती क्षेत्र में कार्य के लिए शांति-सैनिकों का शिविर

अखिल भारत शांति-सेना मण्डल के मंत्री श्री नारायण देसाई ने सीमावर्ती क्षेत्र में कम-से-कम छः महीने तक काम करने की तैयारी रखने वाले शांति-सैनिकों के नाम एक परिपत्र भेज कर सूचित किया है कि शांति-सैनिकों को कौन से क्षेत्र में क्या काम सौंपा जाय, इसके निर्णय के लिए बिहार के दरभंगा जिला स्थित मधुबनी स्थान में ६ से १२ दिसंबर, ६२ तक एक शिविर रखा गया है।

विनोबाजी का पदयात्रा-कार्यक्रम

आचार्य विनोबा ने पश्चिम बंगाल के मालदह जिले की पदयात्रा समाप्त करके २६ नवम्बर को फरक्का ग्राम के द्वारा मुर्शिदाबाद जिले में प्रवेश किया। विनोबाजी का अगला कार्यक्रम इस प्रकार रहेगा : ७ दिसंबर—लालगोला, ८ दिसंबर-भगवानगोला, ९ दिसंबर-जियागंज और १० दिसंबर मुर्शिदाबाद।

मुर्शिदाबाद जिले में श्री विनोबाजी की पदयात्रा के समय पता यह रहेगा—

द्वारा—मुर्शिदाबाद जिला विनोबा सत्कार समिति, नेताजी रोड, पोस्ट-लगरा (जिला मुर्शिदाबाद), पश्चिम बंगाल।

अहिंसक प्रतिरोध के लिए आसाम, प० बंगाल और उत्तर प्रदेश में कई केन्द्र स्थापित किये जायेंगे

सर्व सेवा-संघ द्वारा चीन-भारत संघर्ष के बारे में पारित प्रस्ताव में कहा गया है कि आज की परिस्थिति में हमारा एक मुख्य कार्य यह होना चाहिए कि सीमान्त क्षेत्र की जनता में अहिंसक प्रतिरोध की भावना और ताकत विकसित की जाय। इसीलिए संघ द्वारा इस कार्य के वास्ते आसाम, पश्चिम बंगाल और उत्तर प्रदेश में कई केन्द्र प्रस्थापित करने का निर्णय किया गया है।

सीमान्त क्षेत्र में शांति-सैनिक गाँव-गाँव में घूम कर जनता में विश्वास और आक्रमणकारी के प्रति अहिंसक प्रतिरोध की भावना जाग्रत करने के लिए प्रयत्न करेंगे। इस कार्य के लिए शान्ति-सैनिक की तैयारी प्राण होम देने तक की होनी चाहिए और प्राणोत्सर्ग के लिए जनता को तैयार किया जाना चाहिए। सर्व-सेवा-संघ द्वारा भारत के कोने-कोने में, देश के जन-जन में आत्म विश्वास और अहिंसक प्रतिकार के लिए प्राणोत्सर्ग की भावना १२ फरवरी, '६३ तक जाग्रत करने के लिए प्राणार्पण से प्रयत्न किया जायगा।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८१६५ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८१३०   एक अंक १६ नये पैसे
वार्षिक मूल्य ६)

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १४ दिसम्बर '६२ | वर्ष ९ : अंक ११

भारत के सामने धर्म-युद्ध खड़ा है

विनोबा

यह ग्रामसेवा-केन्द्र है। इसे हम रामचन्द्रजी का आश्रम मानते हैं। भगवान् राम जंगल में गये, तो वे बिना तैयारी के नहीं गये थे। उनका अवतार होने से पहले ही अनेक देवताओं ने ऋषियों का रूप लेकर जन्म लिया और उन्होंने जंगलों में अनेक आश्रमों की स्थापना की थी। उधर भारद्वाज ऋषि के आश्रम से इधर अगस्त्य ऋषि के आश्रम तक सारा दण्डकारण्य आश्रमों से भरा हुआ था। इस जमाने का दण्डकारण्य हिमालय के आसपास है। वहाँ मनुष्यों की बस्ती हो गयी है। हम असम गये थे, तो उस जगह एक आश्रम की स्थापना की थी। इस समय हमारे उसी दण्डकारण्य पर चीन ने आक्रमण किया है।

चीन का आक्रमण होने के बाद हमारे सर्वोदय-विचारक ऐसा सोचने लगे हैं कि हमारी इस शांति-सेना को उस सशस्त्र सेना के सामने भेजना चाहिए। सशस्त्र सेना के सामने निःशस्त्र सेना खड़ी हो, इस तरह अहिंसा काम नहीं करती। रामचन्द्रजी दण्डकारण्य में पहुँचे तो उनसे पहले ऋषियों ने तैयारी कर रखी थी। उसी तरह इस जमाने का रामचन्द्र शान्ति सेना है। यह दण्डकारण्य में जाये तो इससे पहले वहाँ आश्रमों की स्थापना होनी चाहिए। उन आश्रमों ने सारे आरण्य को तपस्या से प्रभावित किया है, ऐसा होना चाहिए। अब तक वैसे आश्रमों की स्थापना नहीं की गयी, तो आगे की जाय।

'पावरहाउस' क्या करें ?

हमारे आश्रम जहाँ जहाँ बने हैं, उन्हें हम 'पावरहाउस', शक्ति केन्द्र मानते हैं। सारा गाँव अपने पाँव पर खड़ा है, वहाँ स्वावलम्बन है, सहयोग है, आपस में प्रेम है, सब मिल कर एक परिवार की तरह रहते हैं, कर्जे-वर्जे का सवाल नहीं है, हर घर को पूरा उद्योग मिल रहा है, अहिंसा से आक्रमण का सामना किया जा रहा है और घर-घर में राम-कथा, ग्राम-कथा चल रही है, पावरहाउस के द्वारा इस तरह का आयोजन होना चाहिए। एक 'पावरहाउस' की सत्ता २०-२५ मील तक चले और उसके बाद दूसरा 'पावरहाउस' बने। इस तरह सारे क्षेत्र को व्याप्त कर लेना चाहिए।

हमें यह सब काम करने के लिए १५ साल मौका मिला था। हमने उसमें बहुत थोड़ा काम किया। उसका कारण और कुछ नहीं, हमारी योजना नहीं थी। सब अलग-अलग अपना काम करते थे। एक-दूसरे से मिल कर, क्षेत्र बाँट कर परस्पर सहयोग से काम करें, ऐसा नहीं था। एक-दूसरे के बीच होड़ भी। हमने इस बारे में जगह-जगह समझाया और मिल कर काम करने को कहा। लेकिन काम बना नहीं। काम तभी बनता है, जब भगवान् की इच्छा होती है। हर काम में ईश्वर का एक नियत समय होता है। चीन को हमारे सरहद में भेज कर भगवान् ने वह समय ला दिया है।

दीन मन बनो

कल स्कूल के एक शिक्षक से पूछा गया कि चीनवाले आ रहे हैं तो आप क्या सोच रहे हैं? उसने कहा—"अब तक अंग्रेजी सीखनी पड़ती थी और अब चीनी भाषा सीखनी पड़ेगी!" हम यह विचार सुन कर शर्मिन्दा हो गये। दुनिया के ज्ञान के लिए पृथ्वी की अलग-अलग भाषाएँ सीखना हो तो सीखें। हर भाषा का साहित्य और हर देश की परिस्थिति का ज्ञान हमको होना चाहिए। इसी दृष्टि से चीनी भाषा सीखना हो तो अच्छी बात है। लेकिन शिक्षक महोदय ने जो कहा, उसका मतलब दूसरा है। उसका मतलब है कि हम दीन बन गये हैं। इसलिए हमने कहा कि इस तरह अहिंसा नहीं आती।

महावीर बनाने की भगवान् की योजना

जब चीन का आक्रमण हुआ, तब हमने बहुत शांति और तटस्थ भाव से सोचा तो हमारा यही निर्णय रहा कि यह आक्रमण है और बेजा है। यह भारत जैसे एक मित्र-राष्ट्र पर आक्रमण है, जिसने केवल मैत्री का भाव रखा। इसलिए हमारी स्पष्ट सहानुभूति भारत के युद्ध के साथ हो गयी। यद्यपि हम युद्ध में विश्वास नहीं रखते और यह मानते हैं कि शस्त्र-युद्ध से नुकसान होता है, तब भी हमको लगता है कि भारत के सामने धर्म-युद्ध खड़ा है।

धर्म-युद्ध के समय हमें सबसे श्रेष्ठ ग्रन्थ गीता लगता है। गीता आध्यात्मिक, आन्तरिक युद्ध के साथ-साथ बाहर के युद्ध का भी ख्याल रखती है। वह किसी को निर्वीर्य नहीं बनने देती। उसका संदेश है कि क्रूरता, कठोरता और कायरता न हो, पर वीरता हो। जो वीर होगा वही महावीर होगा। महावीर का अर्थ है—प्रेम के आक्रमण से सामने वाले के दिल को वश में कर लेना। जहाँ प्रेम होता है, वहाँ पूर्ण निर्भयता होती है। जो कायर होता है वह महावीर नहीं बन सकता। इसलिए निर्वैरता और निर्भयता दोनों हों, तब मनुष्य महावीर होता है।

आजकल जिस दृष्टि से व्याख्यान हो रहे हैं, इससे हमारे कई भाइयों को लगता है कि बाबा का दृष्टिकोण विचित्र है। वे समझते थे कि बाबा हर हालत में हर युद्ध का निषेध करेगा, यानी वह चीन के साथ-साथ भारत का भी निषेध करेगा। लेकिन बाबा ने ऐसा नहीं किया और अपनी सहानुभूति भारत को क्यों दी, इसे मैं काफी चर्चा के बाद समझा सका।

देश के सामने एक समस्या खड़ी है। इस समय हमारे शक्ति-केन्द्र खुद शक्ति महसूस करते हैं या नहीं? हमारा काम केवल उत्पादन का न होकर सारे जन-समाज को अहिंसक बनाने का है, यानी अहिंसक, शक्तिशाली, आत्म निर्भर, आत्म-विश्वासी, निर्भय, निर्वैर और कर्म-कुशल बनाने का है। यह काम हुआ तो इस प्रकार के केन्द्र हमारे शक्ति केन्द्र बनेंगे।

[पड़ाव : निरामपुर, जि० मान्दा, प० बंगाल, २२-११-६२]

स्थायी सुरक्षा-योजना के लिए
ग्रामदान और शांति-सेना आवश्यक

[वेडछी, गुजरात में सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर श्री धीरेन्द्र मजूमदार की वार्ता आकाशवाणी के अहमदाबाद केन्द्र ने टेप-रिकार्ड की थी। चीन के आक्रमण से उत्पन्न समस्या पर मत अभिव्यक्त करते हुए श्री धीरेन्द्र भाई ने समस्या के प्रति एक समग्र विचार पेश कर दिया। –सं०]

सरहदी संकट देश के लिए एक बड़ी चेतावनी और चुनौती है। ऐसे मौके पर सरहद पर जो 'डिफेन्स' का काम हो रहा है, केवल उसी के भरोसे बैठे रहने से बहुत बड़ा धोखा होगा। पूरे देश को मुल्क की रक्षा में लगना होगा और यह काम स्थायी रूप से करना होगा।

सरहदी युद्ध का सवाल तात्कालिक नहीं है। आज की जागतिक परिस्थिति में यह सवाल स्थायी बन गया है, क्योंकि जब तक पूर्ण निःशस्त्रीकरण तथा अहिंसक समाज की स्थापना नहीं होगी या इसके अभाव में संसार भर का अणु-युद्ध द्वारा सर्वनाश नहीं हो जाता, तब तक इस प्रकार की सरहदी लड़ाई हमेशा रह-रह कर होती रहेगी। अतः पूरी जनता को 'डिफेन्स' की स्थायी व्यूह-रचना करनी होगी। इसके लिए स्थायी रूप से देश में पक्ष-भेद, सम्प्रदाय भेद, वर्ग भेद आदि सारे भेदों को मिटाना होगा। यह तभी होगा जब व्यक्तिगत मिल्कियत का विसर्जन समत्व के आधार पर होकर स्थायी रूप से कौटुम्बिक समाज की स्थापना होगी। यही कारण है कि पिछले पाँच साल से संत विनोबा निरन्तर यह बात कह रहे हैं कि ग्रामदान मुल्क की स्थायी सुरक्षा-योजना है।

दूसरी बात यह है कि ऐसे अवसर पर देश में असामाजिक तथा विघटनकारी शक्तियाँ सिर उठाया करती हैं। इस परिस्थिति का लाभ प्रायः विरोधी पक्ष अपने एजेण्टों द्वारा युद्ध के लिए लिया करता है। उसकी संभाल हरएक देशवासी का कर्तव्य है। इसके लिए व्यापक प्रमाण में शान्ति-सेना का संगठन आवश्यक है। मुझे आशा है कि देश का हरएक व्यक्ति उपरोक्त दोनों योजनाओं की दिशा में शीघ्रता के साथ कदम उठायेगा।

–धीरेन्द्र मजूमदार

स्त्री-पुरुष में तुल्य सत्त्व

• दादा धर्माधिकारी

धर्मशास्त्र का एक वचन है—'गृहिणी गृहमुच्यते'—स्त्री का ही दूसरा नाम घर है। इसीलिए हमारी कुछ भाषाओं में उसे कुटुम्ब और कलत्र भी कहते हैं। स्त्री गृहिणी है, इसीलिए कुटुम्बिनी है। पार्वती को त्रिलोचन-कुटुम्बिनी कहा है। जो कुटुम्बिनी है, उसका क्षेत्र कुटुम्ब में ही होगा। जिसका क्षेत्र कुटुम्ब होगा, उसका संपर्क भी अधिकतर नातेदारी तक सीमित रहेगा। इसीलिए स्त्री के जीवन में रिश्तेदारी का जो स्थान है, वह मैत्री का नहीं है। उसके लिए नाता मुख्य है, सख्य गौण है। पुरुष अपने मित्र के लिए अपनी संपत्ति, प्राण और गृह का भी त्याग कर देता है, दोस्त के लिए वह स्त्री को भी छोड़ कर चला जाता है। हम कहते भी हैं, कैसी अनोखी दोस्ती है, दोस्त के लिए उसने स्त्री के जेवर भी बेच दिये! परंतु स्त्री ने अपनी सखी के लिए प्राण दे दिये हों या उसके लिए अपने पति के अलंकार भी बेच दिये हों, ऐसी गाथाएं हमारे लोक-साहित्य और वाङ्मय में भी बहुत कम हैं।

स्त्री अपने पति या पुत्र के लिए अपनी जान न्योछावर कर देती है, परंतु यह तो नातेदारी है, मैत्री नहीं। तुल्य भूमिका के सहजीवन के लिए कुटुम्बातीत संबंधों की आवश्यकता है। कुटुम्बातीत स्नेह-संबंध का ही नाम मैत्री है। पुरुष के जीवन में मैत्री का जो स्थान है, वही स्त्री के जीवन में भी होगा। तब आज जो गृहिणी है, वह समाज की एक घटक भी बनेगी। यह सख्य भावना ही ऐसे समाज की स्थापना का आधार हो सकती है, जिसमें स्त्री और पुरुष तुल्य-सत्त्व होंगे।

सामाजिक संबंधों में संपर्क का आधार सेवा होगी या नागरिकता होगी। यह एक और सवाल है। कहा जाता है कि सेवा नित्य धर्म है, नागरिकता नैमित्तिक। एक अर्थ में यह सच भी है; परंतु सेवा भी सहजीवन का आधार नहीं हो सकती। नागरिकता जिस प्रकार अपनी मर्यादा से बाहर एक सामाजिक दोष में परिणत हो जाती है, उसी प्रकार सेवा भी अगर बहुत व्यापक हो जाय तो वह समाज-कल्याण का साधन होने के बदले सामाजिक अस्वास्थ्य का लक्षण बन जायगी। हम जरा अपने-आप से एक प्रश्न पूछें, क्या हम यह नहीं चाहते कि सेवा की किसी को भी जरूरत न हो? सेव्य-सेवक भाव में समानता नहीं होती। कभी एक उपकर्ता होता है और कभी वही उपकृत होता है, कभी सेव्य श्रेष्ठ होता है, कभी सेवक। हम जब गुरु की या माता पिता की सेवा करते हैं तो 'मातृदेवो भव, पितृदेवो भव, आचार्यदेवो भव' की भावना होती है। जब किसी साधारण व्यक्ति की सेवा करते हैं तो हम उपकार करते हैं और वह उपकृत होता है। सेव्य-सेवक का नाता बराबरी का नहीं, स्नेह का भी नहीं है। यह तो औपाधिक संबंध है, निरुपाधिक और निरपेक्ष संबंध नहीं। भक्तियोग में भी सख्य भक्ति का स्थान लगभग अंतिम माना गया है। 'भक्तोऽसि मे सखा चेति'—तू मेरा भक्त और सखा है, इसलिए यह रहस्य तुझे बताता हूँ—अर्जुन से भगवान् कहते हैं। हमारा अंतिम ध्येय यह है कि समाज में सेव्य-सेवक संबंध ही न रहे, केवल स्नेह-संबंध रहे। मैं बीमार हूँ, आप तीमारदारी करने आये। अपने हाथ से पथ्य बना कर मुझे खिलाया। आप संतुष्ट हैं, मैं कृतज्ञ हूँ। परंतु मान लीजिये, मैं बीमार नहीं हूँ। आप बाजार से बढ़िया मिठाई लाये, एक कौर खाते ही आपको मेरी याद आयी। मेरे बिना खाने में मजा नहीं आया। खाने में मैं शरीक होता हूँ। मुझे भी आनंद आता है, आपको भी आनंद आता है। दोनों का दूना आनंद मिल कर चौगुना हो जाता है। यह स्नेह-संबंध है, यह मित्रता है। इसके लिए तुल्य भूमिका चाहिए।

सहजीवन का यह आधार स्थापित करना स्त्रियों के लिए अधिक दुष्कर है, उसकी स्थिति ही कुछ परस्पर-विरोधी है। एक तरफ से उसे पुरुष के संपर्क और संबंध का डर और दूसरी तरफ से पुरुष के बिना वह अपना संरक्षण भी नहीं कर सकती। दूसरे से डर है, अकेले में और भी डर है। इसलिए बुद्धि और भी उलझ जाती है। भगवान् बुद्ध भी असमंजस में पड़ गये थे। आनंद ने जब उनसे कहा कि कुछ स्त्रियों को भी मठ में आने देना चाहिए, तब उन्होंने यह आशंका प्रकट की थी कि मेरा धर्म अगर एक हजार साल तक चलने वाला हो तो तुम्हारी बात मानने से वह सौ साल में ही खतम हो जायगा। रामकृष्ण मिशन की भी यह मर्यादा है कि उसमें कोई संन्यासिनी नहीं रह सकती। जैन धर्म में कई भिक्षुणियाँ रहीं। उनको क्या-क्या सहना पड़ा, यह हम सब जानते हैं। ईसाइयों में भी स्त्रियों के मठ 'ननरिज' हैं, उन पर कई उपन्यास लिखे गये हैं। इन सबका आशय यह है कि ब्रह्मचारी तो फिर भी रह सकता है, परंतु स्त्री का संन्यास या ब्रह्मचर्य ठहर ही नहीं सकता।

मतलब यह कि अकेले में भी डर है और पड़ोसी से अंदेशा है। यह स्थिति न पुरुष के लिए वांछनीय है, न स्त्री के लिए। असल में होना यह चाहिए कि अकेले में घबराहट न हो और सोहबत में आनंद हो। जब मैं अपने से घबराता नहीं हूँ और दूसरे से डरता नहीं हूँ, तभी सहजीवन के योग्य बनता हूँ। समाज का आधार पारस्परिकता है, अन्योन्याश्रय है। जहाँ संबंध नहीं, वहाँ सहजीवन कैसा? मनुष्य को सहजीवन की आवश्यकता है, क्योंकि सहजीवन की आकांक्षा है और आवश्यकता तथा आकांक्षा है, इसलिए अपेक्षा है।

मानव के आध्यात्मिक और नैतिक सत्त्व की समस्या

मनुष्य यदि पड़ोसी के डर से संघ [illegible] तो उसके जीवन के और दो गोलार्द्ध बन जायेंगे, एक कौटुम्बिक और दूसरा सामाजिक। इन दो गोलार्द्धों में भी स्त्री का क्षेत्र कुटुम्ब तक सीमित रहेगा और सामाजिक क्षेत्र केवल पुरुष के लिए सुरक्षित रहेगा। फिर आप जो विश्वकुटुम्ब, कौटुम्बिक समाज या कौटुम्बिक ग्राम बनाना चाहते हैं, उसका क्या होगा? विश्व-कुटुम्ब वह कुटुम्ब है जहाँ वे लोग एक-दूसरे के साथ स्नेह से रहते हैं, जिनका न तो खून का रिश्ता है और न शादी का। आज जब कि दो राष्ट्रों के बीच सीमा-विवाद छिड़ गया है, राममनोहर लोहिया, जयप्रकाशजी, शंकररावजी जैसे मानवनिष्ठ व्यक्ति कहते हैं कि हमारे यहाँ से कुछ लोगों को सरहद के उस पार जाकर वहाँ के लोगों से संबंध स्थापित करना चाहिए। राजदूतों का राजदूतों के साथ नहीं, लोकदूतों का लोकदूतों के साथ नहीं, व्यक्ति का व्यक्ति के साथ संबंध होना चाहिए—औपचारिक संबंध नहीं, हार्दिक संबंध होना चाहिए। कौटुम्बिक समाज की स्थापना में जड़ का सवाल यही है कि जहाँ स्त्री और पुरुष में रक्त और विवाह के आधार पर कोई रिश्तेदारी नहीं है, ऐसे स्त्री-पुरुषों का क्या स्नेहाश्रित सहजीवन हो सकता है? यदि ऐसा नहीं हो सकता तो विश्व कुटुम्ब और कौटुम्बिक समाज असंभव है। यह प्रश्न उतना उलझा नहीं है, जितना कि लोग मानते हैं। यह बहुत मूलगामी समस्या है—यह मानव के आध्यात्मिक और नैतिक सत्त्व की समस्या है।

क्या स्त्री और पुरुष का सत्त्व तुल्य है? निवेदन यह है कि दोनों का सत्त्व तुल्य है। इसीलिए स्त्री भी मुक्त हो सकती है। जनाबाई, मीराबाई, आनंदमयी माँ, पांडिचेरी की माताजी अथवा शारदा माता मुक्त मानी जाती हैं। अगर ये तुल्य सत्त्व न होतीं तो मुक्त नहीं मानी जा सकतीं। हमारी सामाजिक दृष्टि से ब्राह्मण और भंगी मूलतः तुल्य सत्त्व हैं, इसीलिए अस्पृश्यता-निवारण संभव है।

प्रत्येक कुटुम्ब की ओर से एक वोट

नागरिकता की भूमिका पर भी ब्राह्मण और भंगी तुल्य सत्त्व हैं। इसी लिए दोनों के एक-एक वोट हैं। इस भूमिका पर स्त्री भी पुरुष के बराबर है, क्योंकि उसके भी एक वोट है। अगर दोनों बराबरी के न होते तो नागरिक के नाते दोनों को समान मताधिकार नहीं होता। हमारे प्रचलित लोकतंत्र में व्यक्ति ही प्राथमिक इकाई है; संस्था या कुटुम्ब नहीं। लेकिन स्विट्जरलैंड जैसे अत्यंत विकसित लोकतांत्रिक देश में स्त्री के वोट नहीं हैं। हमारे यहाँ भी इधर एक ऐसा विचार चल पड़ा है कि नागरिकता के लिए व्यक्ति की जगह कुटुम्ब को इकाई माना जाय। विनोबा और जयप्रकाश बाबू भी कभी-कभी इस विचार का प्रतिपादन करते हैं। हमारे लिए यहाँ उसकी चर्चा अप्रस्तुत होगी। उनके विचार में भी एक चीज हमारे काम की है। वे कहते हैं, कुटुम्ब की तरफ से जिस व्यक्ति को वोट देने के लिए भेजा जायगा वह स्त्री भी हो सकती है। यह कोई जरूरी बात नहीं है कि कुटुम्ब की तरफ से वोट पुरुष ही दे।

ग्रामदान से अहिंसा और वीरता बढ़ेगी

ग्रामदान में किसी प्रकार का खतरा नहीं है। यह अध्यात्म की दृष्टि से उत्तम चीज है, अहिंसा और नैतिक दृष्टि से उत्तम चीज है, उत्पादन बढ़ाने के ख्याल से भी उत्तम चीज है। इसके साथ-साथ यह 'डिफेन्स मेजर' तो है ही। ग्रामदान में अहिंसा और वीरता बढ़ेगी। यह अहिंसा की खूबी है कि उसमें अहिंसा बढ़ने के साथ-साथ वीरता भी बढ़ती है।

वीरता और क्रूरता में फर्क है। क्रूर वह है जो अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को खतम करता है और वीर वह है, जो न मरना टालता है और न डर। वह न्याय और मानवता की रक्षा के लिए मर मिटता है। इस कारण वीरता का अहिंसा के साथ विरोध नहीं होता। अहिंसा का विरोध क्रूरता और स्वार्थ के साथ है। चींटी को बचाने के लिए धर्म-युद्ध करना पड़ता है, तो उसमें अहिंसा की मदद होती है। अहिंसा वीरता का भक्षक नहीं है। वह वीरता से ऊपर है। वीरता उसके नजदीक है। इसलिए उसे अहिंसा से मदद मिलती है। वही बहुत बड़ा काम करती है। उसका उदाहरण [illegible] और [illegible] ऐसा है। [illegible] अनेकों की सेवा हो जाती है। यह उसका आनुषंगिक फल है। ग्रामदान से वीरता को मदद मिलती है, तो यह उसका आनुषंगिक फल है। ग्रामदान का मुख्य उद्देश्य तो गाँवों में अहिंसक समाज की स्थापना करना ही है।

ग्रामदान से सरकार की मदद गाँव को मिलेगी, लेकिन सरकार दखल नहीं देगी। [illegible] नहीं रहेगी, लेकिन [illegible] होगी। हम [illegible] नहीं चाहते। हम गाँव में प्रेम और करुणा चाहते हैं। ग्रामदान से प्रेम और करुणा बढ़ेगी, अहिंसा और वीरता बढ़ेगी।

[बेलगाम, प० खान्देश, १०-११-'६१] —विनोबा

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदान-यज्ञ

हमारी सब प्रवृत्तियों की रीढ़ : शांति-सेना

अदालत से मुक्ति, स्थानीय उत्पादन और कोई साधनहीन न रहे — त्रिविध कार्यक्रम पर जोर दें

धीरेंद्र मजूमदार

सर्व सेवा-संघ के अधिवेशन में मैंने जो प्रथम महत्त्व का कार्यक्रम रखा था कि सरहदी क्षेत्रों में जाकर स्थायी रूप से जनता के अंदर अहिंसक प्रतिकार की शक्ति कैसे बढ़े, उस काम को करना है और उस सिलसिले में मैंने जो कहा था कि जो लोग सरहद पर जाने की उत्कटा रखते हैं, वे जायँ, इस पर एक भाई ने कहा था कि आत्मबलि को लेकर आप विनोद करते हैं। मैं उसको बहुत नम्रता से साथ कहना चाहता हूँ कि मैं विनोद नहीं करता था, अत्यन्त गंभीरता के साथ मैंने उस प्रस्ताव को रखा था। केवल उत्तर के सरहद के लिए ही नहीं, बल्कि भारत में जितने सरहदी प्रदेश हैं, सबके लिए, क्योंकि आप जानते हैं कि विनोबाजी ने १९५७ में ही नेताओं से कहा था कि हमारा काम 'डिफेन्स मेजर' है। उस समय इमर्जेन्सी संकट की अवस्था नहीं आयी थी। लेकिन आज दुनिया इतनी छोटी हुई है और विज्ञान का इतना प्रसार हुआ है कि ऐसी स्थिति में साथ युद्ध की हिम्मत किसी को होती नहीं है और ऐसे समय सरहदी समस्या राजनीति में शायद स्थायी समस्या है।

'डिफेन्स' अगर फौज अपना रही है तो अहिंसा के क्षेत्र में जो देशव्यापी 'डिफेन्स मेजर' है वह भी स्थायी परिकल्पना होनी चाहिए। इस संदर्भ में, चीन के आक्रमण के संदर्भ में अगर हमारे दिल और दिमाग पर आलोडन हुआ है तो इस दिशा में सारी योजना बनानी चाहिए। कुछ भाइयों ने इस आलोडन में यह इरादा किया था कि हम सरहद पर जायेंगे, आत्म बलिदान के लिए; वे अपना इरादा इस निवेदन के कारण वापिस न लें, वह कायम रखें और जाते समय अपने प्रिय जनों के साथ विदाई लेते समय कहें कि अब जा रहा हूँ, शायद वापिस न आ सकूँ!

सीमा पर जाने की प्रेरणा दें

लोग कहते हैं कि आप क्या करेंगे? तो मैं आप लोगों को अपने बारे में बतला देना चाहता हूँ। जयप्रकाशजी ने रास्ता बतलाया। मैं काफी पाखंड करता रहा हूँ। स्वयं न जाकर तरुण साथियों को आग में झोंकने का धंधा मैं करता ही रहा हूँ। मैं आज भी झोंकने का ही धंधा करूँगा। पहला कार्यक्रम यही होना चाहिए कि जो लोग जाना चाहते हैं, दूसरों को भी प्रेरणा दें, क्योंकि सबसे महत्त्व का प्रश्न है, जगत् में अहिंसक शक्ति निर्माण करने की आवश्यकता।

तंत्र-मुक्ति और शांति-सेना

दूसरा कार्यक्रम देशव्यापी, व्यापक है। उस कार्यक्रम में देश की जितनी शक्तियाँ हैं, उन सारी शक्तियों को इकट्ठी करना है। बापू के नाम से काफी संस्थाएँ हैं। चालीस-पचास हजार कार्यकर्ता हैं। स्कूल हैं, पंचायत हैं। ऐसी काफी पंचायतें देहाती क्षेत्रों में फैली हुई हैं। सबको इस काम में जुटाना है। एक भाई ने सवाल पूछा था कि भिन्न भिन्न संस्थाएँ बिखरी हुई हैं, एक-दूसरी के साथ संबंध नहीं है और इसमें आप कहते हैं कि स्कूल और पंचायत भी जोड़ें, तो क्या इन बिखरी हुई संस्थाओं की एक संस्था बनानी है? तो मैं मानता हूँ कि ऐसा न बनाया जाय। उनमें एक धागा पिरोया जाय। आपको मालूम है कि मैं तन्त्र-मुक्ति की बात करता हूँ। तन्त्र-मुक्ति के बारे में एक चीज आपको कह देना चाहता हूँ। हमारी तन्त्र मुक्ति यह अहिंसा की कसौटी है। बापू ने कहा कि संगठन अहिंसा की कसौटी है। अर्थात् संगठन तंत्रमुक्त कैसे हो, उसकी खोज के लिए एक मंत्र मैं कहता हूँ—हमारी आराधना तंत्र-मुक्ति की होगी और प्रतिमा मुक्त तंत्र की होगी। संगठन में जितनी संस्थाएँ और व्यक्ति हैं वे मिल कर तंत्र बनायेंगे और जो बीच का धागा होगा, वह शांति-सेना होगा।

शांति-सेना सब कामों का सूत्र

बापू जब जेल से लौट कर आये और कहा कि अंग्रेज जा रहे हैं, हमें स्वराज्य कायम करना है, शासन से मुक्त अहिंसक समाज बनाना है, तो उन्होंने एक माँग पेश की देश के तरुणों के सामने। कहा था कि हमें सात लाख गाँवों के लिए सात लाख तरुण चाहिए, जो देश में अहिंसक शक्ति निर्माण करना चाहते हैं और सारी प्रवृत्तियों को एक करके करना चाहते हैं। तो बापू का जो आवाहन था, वह अब तक पूरा नहीं हुआ और आज उसे विनोबा और जयप्रकाश करते हैं तो यह समझ लीजिये कि जयप्रकाश का जो वाक्य है, वह उनका नहीं है, बापू का है। सात लाख शांति सैनिक चाहिए, सात लाख गाँवों के लिए। हर शांति-सैनिक आफिसर होगा। तब शांति-सेना बढ़ सकती है। तो शांति सेना रीढ़ होगी। वह सूत्र होगा, जो सारी प्रवृत्तियों को एक करेगा। माला बनती है फूल की। नाना प्रकार के रंग और रूप के फूल होते हैं। एक धागा माला बनाता है। अच्छी माला उसे कहते हैं, जिसमें सिर्फ फूल-ही-फूल दिखाई दे, धागा नहीं। प्रत्येक प्रवृत्ति अपने स्वभाव में पूर्ण विकसित दिखाई देगी। शांति-सेना दिखाई नहीं देगी। और इसकी सिद्धि के लिए विनोबाजी ने हर शांति-सैनिक को और लोक-सेवक को शून्य बनने के लिए कहा है। इसलिए कि वह शून्य बनेगा तभी उसका काम करते हुए उसका अस्तित्व दिखाई नहीं देगा। सौभाग्य की बात है कि इसका नेतृत्व खुद जयप्रकाश ले रहे हैं। इसका संगठन आप सब लोग करें। जो फूल हैं, वे भी जुटायें। इस प्रकार से हमारा काम जगह-जगह होगा और स्थानीय अभिक्रम से उसको बनायेंगे और धीरे-धीरे वे केंद्र से संबंधित होंगे। इस प्रकार के कार्यक्रम आप बनायेंगे, तब जाकर के आपका जो सुरक्षा के संदर्भ में रचनात्मक काम है, वह होगा।

दो कार्यक्रम

दो प्रकार के कार्यक्रम देश में होने चाहिए। एक तो अशांति न हो। देश में जितने गाँव हैं, पंचायत हैं, संस्थाएँ हैं, शांति-सेना है, उन सबको मिल कर यह परिस्थिति निर्माण करना। पहला काम है कि हमको पुलिस और अदालत की जरूरत नहीं है, ऐसी परिस्थिति निर्माण करें। पुलिस और अदालत के सिरदर्द से हम सरकार को मुक्त करना चाहते हैं। यह पहला काम होगा। दूसरा काम होगा कि देश की आवश्यकता की पूर्ति स्थानीय संगठन कर ले। किसी केंद्रीय स्थान से हमारी पूर्ति हो और उसके आधार पर देश को रहना पड़े तो धोखा खाना पड़ेगा। इसमें दो चीजें रहेंगी। गाँव-गाँव में और मुहल्ले मुहल्ले में शांति-समितियाँ बना कर यह संकल्प कर लें कि हमें पुलिस और अदालत की जरूरत नहीं पड़ेगी। हमारे गाँव में आवश्यकता की पूर्ति हम क्षेत्रीय ताकत से करेंगे। चूंकि क्षेत्रीय शक्ति से पूर्ति करनी है तो सहकार शक्ति से होगी। देश में संघर्ष पैदा करने वाली स्थिति को मिटाने के लिए यह कार्यक्रम उठाना है। इसके लिए एक कार्यक्रम और है साधन-हीन कोई न रहे। ग्रामदान, भूदान हो यह तो ठीक है; लेकिन साधन-हीन कोई न हो। जहाँ पर ज्यादा लोक-संख्या है, वहाँ लोगों के पास कोई-न-कोई उद्योग, साधन अपने गुजारे के लिए हो। तीसरा यह कि गाँव में कोई भूमिहीन न रहे।

सारी संस्थाओं का मोर्चा बना कर यह त्रिविध कार्यक्रम करना होगा। आपस में झगड़ा वगैरह हुआ तो उसके कारण पुलिस और अदालत नहीं होगी, क्षेत्रीय शक्ति से आवश्यकताओं की पूर्ति होगी

लोकनागरी लिपि *

चीन को पीछे हटाने की योजना

गांव-गांव में प्‌रेम की शक्‌ती प्‌रकट होती है और कुल देश की ताकत बनती है तो अुसे देख कर चीन की सेना अपने युद्‌ध का अुपसंहार कर लेगी, यानी अपना कदम वापस खींच लेगी। चीन के लोग समझ जायेंगे की अैसे देश से टक्‌कर लेने में कोअी लाभ नहीं है। कोअी बड़ा देश छोटे देश पर आक्‌रमण करता है तो अिस वीश्‌वास से करता है की अपने शस्‌त्रबल से छोटे देश को खतम कर देगा। लेकीन चीन अितना मूर्‌ख नहीं है की वह भारत को अपनी शस्‌त्र-शक्‌ती से खतम करने की अुम्मीद रखे। आज की दुनीया जाग्‌रत है। कीसी भी कोने में कोअी बात होती है तो अुसका असर सारे संसार पर पड़ता है। चीन ने आक्‌रमण तो कीया, लेकीन अुसकी अिच्‌छा पूरी नहीं हुअी। भारत पर यह आक्‌रमण होते ही यहां की जनता अेकदम अेक हो गयी। यह अेकता अन्‌दर की अेकता नहीं है। अिसलिअे अन्‌दर की अेकता बनाने के लिअे ग्‌राम-शक्‌ती खड़ी करनी होगी। हम ग्‌राम-परीवार बना लें और आपस में स्‌नेह तथा सहयोग से काम करने लग जायें तो अिसका दर्‌शन होते ही चीन जैसे आगे आया, वैसे ही पीछे हट जायगा।

[चांचोल, १० बंगाल
१४-११-'६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

अफ्रीका के लिए दूसरी होड़

मूल लेखक : डॉ० जूलियस के० न्यरेरे — अनुवादक : सुरेश राम

शुरू में मैंने "अफ्रीका के लिए दूसरी होड़" नामक मुहावरे का उपयोग किया। १९६१-'६२ की अफ्रीका के संदर्भ में अफ्रीका की दूसरी होड़ के बारे में कुछ भी कहना दूर की असंगत-सी बात मालूम होगी। लेकिन जो कोई भी इसे असंगत समझता है, वह यह कदापि नहीं देख पा रहा है कि अफ्रीकन महाद्वीप में क्या हो रहा है। कांगो की मिसाल लीजिये। कांगो की स्थिति में स्पष्टतया कुछ कमजोरियाँ थीं। लेकिन उन कमजोरियों का जानबूझ कर उपयोग कांगो पर काबू पाने की होड़ के लिए किया गया। अफ्रीकन महाद्वीप में स्पष्टतया कुछ कमजोरियाँ हैं। बर्लिन-सम्मेलन में कृत्रिम रूप से 'राष्ट्र' गढ़-गढ़ कर बनाये गये। अब हमारी कोशिश यह है कि इन राष्ट्रों को मानवीय समाज की स्थायी इकाइयों का रूप दे सकें। और इन कमजोरियों का भी दुरुपयोग किया जा रहा है। हमसे कहा जाता है कि कबीलेपन के कारण हम राष्ट्र बनाने में समर्थ नहीं हो पायेंगे। लेकिन जब हम कबीलेपन को दूर करने की दिशा में कदम उठाने की कोशिश करते हैं तो हम पर 'तानाशाही' का दोष लगाया जाता है।

अफ्रीकन महाद्वीप में बड़ी-बड़ी इकाइयों की दृष्टि से जब हम बात करने लगते तो हमसे कहा जाता है कि "यह नहीं हो सकता।" हमसे कहा जाता है कि जो इकाइयाँ हम बनायेंगे वे कृत्रिम होंगी। मानो आज की 'राष्ट्रीय' इकाइयों की अपेक्षा जिन पर आज हम निर्माण कर रहे हैं, वे और भी ज्यादा कृत्रिम होंगी! ऐसा कहने वाले कुछ लोग तो ईमानदारी के साथ महज एक दुश्वारी की तरफ इशारा करते हैं। लेकिन मेरा विश्वास है कि उनमें से बहुत से तो हमारे महाद्वीप की दुश्वारियों पर जान-बूझ कर जोर दे रहे हैं, ताकि वे हमेशा बनी रहें और ये लोग अफ्रीका के एक होने की हर कोशिश असफल कर देना चाहते हैं। इसकी तरकीब बहुत ही आसान है। एक दल एकता की कोशिश पर "साम्यवादी जाल" का आरोप लगा देता है। इसलिए नहीं कि वह साम्यवादी जाल है, बल्कि इसलिए कि वे उसे नहीं चाहते। दूसरा दल एकता की दूसरी कोशिश को "साम्राज्यशाही जाल" का आरोप लगाता है। इसलिए नहीं कि वह ऐसी है, बल्कि इसलिए कि वे उसे चाहते ही नहीं।

मुझे इस बात से कोई परेशानी नहीं होती कि सत्ता के भूखे राष्ट्र ऐसे ऐसे नारों का उपयोग करते हैं, क्योंकि उनसे इसी तरह की उम्मीद थी। लेकिन मुझे जिस बात पर गुस्सा आ जाता है वह यह है कि ये राष्ट्र हमसे यह उम्मीद करते हैं कि हम अपना दुरुपयोग इस तरह होने देंगे, मानो हम परले सिरे के गधे हों!

इस वास्ते मैं यह मानता हूँ कि अफ्रीका के लिए दूसरी होड़ सचमुच जोरों के साथ शुरू हो गयी है। और पहली होड़ के मुकाबले यह कहीं ज्यादा खतरनाक साबित होने वाली है। क्योंकि, पहली होड़ में क्या हुआ? लूट के माल के लिए एक साम्राज्यशाही ताकत दूसरी साम्राज्यशाही ताकत से लड़ती थी। आप बताइये, दूसरी होड़ में क्या होने जा रहा है? अफ्रीका पर राज जमाने के लिए कोई भी साम्राज्यशाही ताकत दूसरी साम्राज्यशाही ताकत से अब नहीं लड़ेगी—१९६१ या १९६२ के संदर्भ में यह तो बहुत भोंडी पद्धति होगी। नहीं, ऐसा नहीं। इस मर्तबा यह होगा कि एक साम्राज्यशाही ताकत अफ्रीका के एक देश को हथियार देगी और दूसरी साम्राज्यशाही ताकत अफ्रीका के दूसरे देश को हथियार देगी—और नतीजा यह होगा कि अफ्रीकन भाई खुद ही अफ्रीकन भाई का गला काटेगा—अफ्रीका के हित की खातिर नहीं, बल्कि पुराने और नये साम्राज्यवादी के हितों की खातिर में!

अफ्रीका का एक कमाण्ड

यही कारण है कि मैं अक्सर यह सोचा करता हूँ कि हमको कोई ऐसा तरीका निकालना चाहिए, जिसकी बदौलत हम अफ्रीका के अन्दर 'राष्ट्रीय' राज्य की कमजोरियों से अलग रह सकें। हमारे सामने योरप की मिसाल मौजूद है, जहाँ एक राष्ट्रीय राज्य दूसरे राष्ट्रीय राज्य के खिलाफ हथियारबन्दी करता है। आज की दुनिया में, कोई आदमी भी गम्भीरता के साथ यह नहीं कहेगा कि अफ्रीका का कोई राज्य अपने को इतना हथियारबन्द कर सकता है, या उसे इतना हथियारबन्द कराया जा सकता है कि वह दुनिया की बड़ी शक्तियों में से किसी से टक्कर ले सकेगा। अगर दरअसल किसी अफ्रीका राज्य की हथियारबन्दी की जाती है, तो वह दूसरे अफ्रीकी राज्य के खिलाफ लड़ने के लिए हो सकती है। मेरा विचार है कि हमें इस बारे में बहुत सावधान रहना चाहिए। दूसरे महाद्वीपों के राष्ट्रीय राज्यों ने जो गलतियाँ की हैं, हमको वे गलतियाँ नहीं करनी चाहिये—आपस में एक-दूसरे के खिलाफ हथियारबन्दी के माने हैं अपनी जनता का जीवन स्तर उठाने—जिसके लिए हम यहाँ हैं—की सम्भावनाओं को खत्म कर देना, यही नहीं, अफ्रीकी एकता की सम्भावनाओं को हमेशा के वास्ते खत्म कर देना। हमें इससे हमेशा ही बचे रहना है।

यही कारण है कि अब कांगो में कठिनाइयाँ भारी और अफ्रीका कमाण्ड का विचार पहले पहल रखा गया तो वह मुझे बहुत ही पसन्द आया। मैं मानता हूँ कि हमको अफ्रीका के अन्दर गम्भीरता के साथ कोई एक ऐसा रास्ता निकालना चाहिये, जिससे इस विचार को अमली जामा पहनाया जा सके। अपने-अपने राष्ट्रों की सीमाओं के अन्दर शांति रखने के लिए तो पुलिस से काम निकल जाना चाहिये, लेकिन जहाँ तक बड़े सैनिक सम्बन्धों का सवाल है, उन्हें तो अफ्रीकन आधार पर ही हल करना चाहिये।

अगर यह चीज कामयाब हो जाती है तो इससे कम-से-कम दो मकसद हासिल होंगे। पहला तो यह कि जिस खतरे की तरफ मैंने इशारा किया है, वह नहीं रहेगा। हमारी आपस में एक दूसरे के खिलाफ हथियारबन्दी करना और अफ्रीकन एकता प्राप्त करने एवं अपनी जनता का जीवन-स्तर ऊँचा उठाने की संभावनाओं से अपने को वंचित कर देना। और दूसरे, विदेशी हमले के खिलाफ अफ्रीका की सुरक्षा के लिए एक सच्ची सेना खड़ी हो जायेगी। मैं जानता हूँ कि लोग इस पर यही कहेंगे—"यह असम्भव है," "यह नहीं हो सकता।" लेकिन मेरा विश्वास है कि "यह हो सकता है।"

अफ्रीकन एकता का रहस्य

अफ्रीका दो दृष्टियों से एक जवान महाद्वीप है। अंतर्राष्ट्रीय विचार से, इसके राष्ट्र अभी जवान राष्ट्र ही हैं। लेकिन अफ्रीका एक दूसरी तरह से भी जवान है। यहाँ जवानों का ही राज्य चलता है। मेरे ख्याल से, आधुनिक संसार की दुश्वारियों में से एक यह है कि आर्थिक शक्ति का व्यवहार वे लोग चला रहे हैं, जो उन्नीसवीं सदी में पैदा हुए थे और उन्नीसवीं सदी में ही जिनकी तालीम हुई थी। ये वे लोग हैं, जिनका विक्टोरियन तर्ज का दिमाग है और जो विज्ञान के आविष्कारों और मानव व्यवहार की आधुनिक कल्पनाओं के कारण काफी पिछड़ गये हैं। वे अपने को नयी परिस्थिति के अनुकूल संभाल नहीं सके हैं और यदि वे ऐसे नारों को दुहराते हैं, जो बहुत "आधुनिक" मालूम पड़ते हैं (जैसा मैं पहले ही कह चुका हूँ, उनके बहुतेरे नारे तो आधुनिक कतई नहीं हैं।), उनके कारखाने का कदम गुजरे हुए जमाने का है। बात शान्ति की कहते हैं—काम करते हैं हथियारबन्दी का! बात एकता की कहते हैं—काम करते रहे बाँटने और लड़ाने का। जवानी का एक फायदा यह है कि उसमें यह दोमुँही नहीं चलती। जवानों को जो तालीम मिली है वह आजकल की तालीम है। उनके विचार आजकल के विचार हैं। गये-बीते वक्त के शक-शुबहों से मुक्त होकर, जवान लोगों के लिए यह संभव होना चाहिए कि आधुनिक समाज को जिन कल्पनाओं की चाह है, उन पर अमल करें। नारे लगाने वाले तो उन कल्पनाओं का बेसुरा राग ही अलाप सकते हैं, ज्यादा कुछ नहीं। दुनिया में हर जगह ही नौजवान यह देख रहे हैं कि उन्हें विक्टोरियन दृष्टिकोण वालों से लड़ना पड़ेगा।

अफ्रीकन राष्ट्रीयता का मान यूरोप की राष्ट्रीयता से भिन्न है, भिन्न होना चाहिए। हमें तो अफ्रीकन राष्ट्रीय शक्ति का उपयोग अफ्रीकन एकता के निमित्त करना है, और यह ध्यान रहे कि हमारे शत्रु हमारा इस्तेमाल अफ्रीका को बाँटने के लिए न कर पायें। अफ्रीकन राष्ट्रीयता के कोई माने नहीं हैं, वह एकदम असंगत है, उसमें बहुत खतरा है, अगर वह साथ ही साथ अखिल-अफ्रीकन एकता का समर्थन नहीं करती। अफ्रीकन राष्ट्रीयता और अखिल-अफ्रीकावाद एक-दूसरे के पर्याय होने चाहिए।

[३० नवम्बर '६२ के अंक से समाप्त]

और कोई कारण ऐसा नहीं होगा, जिसकी दिलचस्पी भूमि के साथ नहीं होगी। समस्त के आधार पर जो पहला काम करना है, उसका लक्ष्य कदम गाँव-गाँव में कोई भूमिहीन न रहे और साधन-हीन न रहे, यह काम हो।

[केरली-सम्मेलन, २४-११-'६२]

> "सफाई-दर्शन"
>
> —मासिक—
>
> भारत सफाई-मण्डल का मुखपत्र
>
> वार्षिक चन्दा २ रुपया। वर्ष जुलाई से शुरू होता है। ग्राहक बनने के लिए कभी भी चन्दा भेजा जाय तो भी वर्षारम्भ से, याने जुलाई से अंक भेजे जाते हैं।
>
> इस मासिक में सफाई विज्ञान और कला पर अनुभवी महानुभावों के तात्त्विक लेख आदि के अलावा गाँवों की दृष्टि से, व्यक्तिगत दृष्टि से और भंगी-मुक्ति आदि की दृष्टि से सफाई की समस्याओं की चर्चा रहती है।
>
> सम्पादक
>
> श्री गुलजारदास शाह
>
> पता : ११४ ई, विट्ठलभाई पटेल रोड, बम्बई-४

स्वराज्य के संरक्षण के लिए

शांति-सेना का प्रचंड संगठन आवश्यक

• काका कालेलकर

[सर्वोदय सम्मेलन में भाषण करते हुए काकासाहब ने शांति-सेना की आवश्यकता पर जोर देते हुए स्वयं अपना नाम शांति-सैनिक के तौर पर दिया। यहाँ उनके भाषण का मुख्य अंश दिया जा रहा है। —सं०]

यह जो निवेदन और कार्यक्रम आपके सामने रखा गया है, वह बहुत चिंतनपूर्ण है, सद्भावपूर्ण है और इसके अंदर भविष्य के लिए हम किस तरह से काम करें, इसका सूचन भी है। अभी आपको कहा गया कि इस निवेदन के बनाने में बहुत काफी चिंतन करना पड़ा, मेहनत करनी पड़ी और हरएक को अपना आग्रह छोड़ कर के समन्वय करना पड़ा। इसकी भाषा उत्तम है। जब हम लोग एक-दूसरे को समझ कर एक-दूसरे को साथ लेकर चलने की कोशिश करते हैं, तब हम समन्वय-शक्ति पैदा करते हैं। भारत ने समन्वय की वृत्ति ही दी है। हमने सर्व धर्मों को स्थान दिया है। हम एक परिवार बनाना चाहते हैं और सब धर्मों को मिला कर एक धार्मिकता ही सारी दुनिया में लाना चाहते हैं। इस काम को करने के लिए बहुत मार खाना पड़ता है। मार खा खाकर हम विजय पाने वाले हैं और यह जो विजय होगी वह हमारी नहीं, सत्य की, धर्म की, समन्वय-वृत्ति की विजय होगी।

इस समन्वय वृत्ति को देख कर मुझे संतोष हुआ, क्योंकि कुछ लोग अहिंसावादी हैं और सारे देश में अहिंसा का पूरा प्रचार नहीं हुआ है, इस वास्ते देश अहिंसा पर विश्वास नहीं रख सकता है। लोगों ने पूछा कि आप अहिंसक हैं तो इस हिंसक युद्ध में मदद कैसे कर सकते हैं? मैंने कहा कि इस युद्ध में जो सुरक्षा कोष है उसमें पैसा दिया है और देने वाला हूँ। हमारे देश के लोग जो अहिंसा में पूरा पूरा मानते हैं, अहिंसा के प्रति श्रद्धा रखते हैं, लेकिन उसकी शक्ति पर उनका पूरा विश्वास बैठा नहीं है। यह तब होगा जब उनके हृदय जीतेंगे और यह विश्वास दिलायेंगे कि हम उनके साथ पूरे पूरे हैं।

गांधीजी की मिसालें

जब महात्माजी ने अंग्रेजों को उनके युद्ध में मदद देने का वचन दिया तो कहा कि आप हमारी मदद मांगते हैं तो हमारी भाषा भी आपको सुननी पड़ेगी। जब वे आश्रम में आये और कहा कि हम अहिंसावादी हैं, फिर भी सरकार को वचन दे आया हूँ कि हम उनकी मदद करेंगे। बाद में पूछा कि आपमें से कितने लोग युद्ध में शरीक होने के लिए तैयार हैं? एक शिक्षक ने कहा कि हमसे यह काम नहीं होगा। लेकिन आखिर में तीन आदमी तैयार हुए। एक नरहरी भाई परीख, एक शुक्ल और मैंने युद्ध में जाने का वचन दिया; याने युद्ध में शरीक होकर गोली चलाने का वचन दिया था। गांधीजी ने कहा था कि सारा देश अहिंसक नहीं हुआ है तब तक अंग्रेजों की मदद कर मैं इस देश को मजबूत करना चाहता हूँ। जब पेसिफिज्म (शांतिवाद) बढ़ा तो पेसिफिस्टों (शांतिवादियों) ने पूछा कि आपने एक बार युद्ध में शरीक होने का वचन दिया था? तो गांधीजी ने कहा कि मैं तब साम्राज्य का सदस्य था, अब मैं बागी बन गया हूँ। इस साम्राज्य की अब मदद नहीं करूँगा। और उन्होंने यह भी कहा कि मैं आखिर में जो कहता हूँ वह सही मानना चाहिए। पहले मदद की, बाद में मदद करने से इन्कार किया। मेरी अहिंसा बढ़ गयी है इसलिए नहीं, बल्कि मैं इस साम्राज्य को तोड़ना चाहता हूँ। जब बहुमति साम्राज्य के साथ थी तो उसके साथ रहना, उसकी मदद करना हमारा कर्तव्य है। लेकिन अब हम अहिंसक हैं, हिंसक मदद नहीं करेंगे।

हम मारेंगे नहीं

आज की सरकार कहेगी तो मैं कहूँगा कि आप मुझे चाहे जहाँ पर भेजें, लेकिन मेरी ओर से किसी का खून नहीं होगा। बम वर्षा हो रही है। वहाँ पर भेज दीजिये, मैं जाऊँगा। कायरता सहन नहीं करूगा। खतरे की जगह जाना यह अहिंसक लोगों का सबसे बड़ा कर्तव्य है। जो निडर है वह ऐसा खतरा मोल लेगा। जो हिंसक होते हैं उनके हाथ में शस्त्र होते हैं। मैं मरने के लिए नहीं जाता हूँ, मारने के लिए जाता हूँ। लेकिन मरने का मौका हो तो मरने के लिए तैयार हूँ। यह फौजी बात है। मैं कहता हूँ कि हम मारेंगे नहीं, पर सब खतरा मोल लेने के लिए तैयार हैं।

समन्वय का रास्ता

आज जो युद्ध हो रहा है, वह हम लोग पसंद नहीं करते हैं और रोक सकें तो रोकना चाहिए, इसकी कोशिश करेंगे। चीन और भारत के बीच ऐसा भाई-भाई का सम्बन्ध आ जाय, यह कोशिश है। चीन के साथ लड़ेंगे, लेकिन दुश्मनी नहीं बढ़ेगी। यह वृत्ति है। इसके लिए जो फौज तैयार करके भेजी है, उनका विरोध नहीं करेंगे। मदद भी करेंगे। यह अहिंसा और समन्वय का तरीका है। अपना समन्वय फैला सकते हैं। अब यह भी हमको भूलना नहीं चाहिए कि हिंसावालों की बहुमति है। हम एक श्रेष्ठ संस्कृति के प्रतिनिधि हैं, लेकिन हम बहुमति में नहीं हैं। इसलिए देश के अन्दर बहुमति को पूरा पूरा अधिकार है अपने ढंग से काम करने का। जो लोग उसको मानते हैं पूरी पूरी मदद करेंगे।

मैं फिर से कहूँगा कि जब महात्माजी ने मुझे साम्राज्य के युद्ध में भेजने का तय किया तो कहा कि मैं आपकी हर तरह की मदद कर रहा हूँ। व्यक्तिगत मेरे लिए हिंसा करना अशक्य है। इसलिए मैं हिंसा में कहीं भी मदद नहीं कर सकूँगा। तो मैंने समझने के लिए कहा कि घोड़े पर बैठ कर मैं रायफल चलाता हूँ, लेकिन क्या आप उसमें गोली भरने का काम करेंगे? तो उन्होंने कहा कि तुम्हें मदद करने का काम आ जाय तो मैं करूगा, मेरा शरीर ही ऐसा बना है। तो यह भूलना नहीं चाहिए कि महात्माजी सबसे उत्तम क्षत्रिय थे। उन्होंने कभी नहीं कहा कि युद्ध नहीं चाहिए। हिंसक युद्ध नहीं चाहिए। उसके लिए प्राण देंगे, लेकिन अन्याय का विरोध करेंगे। हम यह दुनिया को दिखा देंगे कि अहिंसक ढंग से राष्ट्र की रक्षा होती है और मित्रता की रक्षा होती है और समवाय की रक्षा होती है। हिंसक युद्ध से हिंसा बढ़ती है। हमारे अहिंसक युद्ध से प्रेम बढ़ता है। हमारे पास दुनिया में सबसे श्रेष्ठ शस्त्र आया है। हमारा शस्त्र अभी तैयार नहीं है, इसलिए जो पुराना शस्त्र है उसे तब तक चलाना चाहिए। इस वास्ते जो लोग फौज भेजते हैं और जो लोग, अहिंसक सेना तैयार करना चाहते हैं— हम दोनों का उद्देश्य एक है और मैं सारी दुनिया को कहता हूँ कि हमारे पास फौज है, हम लड़ने के लिए तैयार हैं। लेकिन अहिंसा पर अधिकार लोगों विश्वास नहीं है। हमारा जवाहरलालजी पर विश्वास है कि उनसे कभी अनार्य कर्म नहीं होगा। वे राष्ट्र के प्रतिनिधि हैं, इसका गौरव है। दूसरा कोई चारा नहीं है, यह उन्होंने देखा और अन्त में हम एशिया-वासी अभी पश्चिम के एक संकट से मुक्त हुए हैं हमारी और चीन के प्रति सहानुभूति है। लेकिन उसकी मति बिगड़ गयी है, इसलिए वहाँ साम्राज्यवाद आया। मैं वहाँ गया हूँ और वहाँ के लोगों को देखा है। उन लोगों से अन्त में दोस्ती करनी है।

शांति-सेना की आवश्यकता

मेरे पास जवान आते हैं और पूछते हैं कि आपकी क्या सलाह है? मैं कहता हूँ कि मेरी सलाह एक है कि कायर बन कर घर में बैठना नहीं है। या तो जवाहरलालजी की बात सुनो या विनोबाजी की। लेकिन दोनों की बात नहीं सुनूँगा, ऐसा काम मत करो। दोनों जगह जाने के लिए मदद करो। मेरे कहने से कई जवान गये हैं। अन्त में अंतिम श्रेष्ठ कर्तव्य राष्ट्र की रक्षा है। मैं कहूँगा कि मैं तो शांति-सेना के साथ ही रहूँगा। जो कुछ मैंने पाया है, उसका सर्वोच्च उपयोग करने का मौका है। जवानों को वहाँ भेज दूँ और मैं यहाँ रहूँ! मैं बूढ़ा हो गया हूँ, लेकिन फिर भी मुझसे जो कुछ सेवा लेनी हो, वह ले सकते हैं। मैं फौज में लड़ने के लिए तैयार होऊँगा, तब भी मुझे नहीं लेंगे। लेकिन अहिंसक सेना में किसी को मना नहीं है, कोई भी जा सकता है। इसलिए अहिंसक सेना में मेरा नाम दर्ज करना मेरा काम है। आज तक हमने शांति-सेना का नाम लिया। जिस देश में बुद्ध भगवान, महावीर जैसे तपस्वी तैयार हुए, उस देश के अंदर विनोबा जैसे ने एक टहल लगायी दस वर्ष तक और सैनिक कितने मिले? तो तीन हजार से कम! यह अच्छा लक्षण नहीं है। इसमें ८० प्रतिशत लोग आने चाहिए। इतना हमारे देश पर संस्कृति का अधिकार है। हिम्मत करके विनोबा ने कहा कि दस हजार आदमियों के पीछे एक सैनिक हो। हिन्दुस्तान में गाँव कितने हैं? अगर पाँच सात लाख गाँव हैं तो क्या एक एक गाँव में एक एक सैनिक भी नहीं रखेंगे? इस वास्ते पूरी शक्ति लगनी चाहिये। यह शक्ति ला सकें तो ग्रामदान हो गया, ऐसा समझिये। ऐसे संकट के समय पर जब कि चीन के साथ मुठभेड़ है, तो हरएक गाँव और शहर के अंदर शांति-सैनिक होना चाहिए।

शांति-सेना देश को निर्भय बनायेगी

शांति-सेना की कोशिश करते हैं तो भारत सरकार भी खुश होगी। हम नहीं कहते हैं कि आप हट जाइये। पीछे दंगा फिसाद न हो, इसके लिए चिन्ता-मुक्त करने के लिए सारे देश में कोशिश की तो वह खुश हो जायगी और जिनकी लड़ने की आज तैयारी नहीं है, मौका नहीं है, अनुकूलता नहीं है, उनको कायर न कहें, यह हरएक की इच्छा होती है। हम मौका देते हैं। करोड़ों शांति-सैनिक हो जाय। अहिंसक आदमी कहता है कि मेरी जेब में जितने पैसे हैं, वह मैं जवाहरलालजी को दे दूँगा और मेरा हृदय लेकर मैं शांति-सेना में जाऊँगा। वहाँ कपड़ा मिलता है, खाने को मिलता है। और क्या चाहिए? और फिर वह तो देने को निकला है, मांगने के लिए नहीं। जो अहिंसक सैनिक हैं, वे सारे देश के लोगों को निर्भय बनायेंगे। खादी का कार्यक्रम गांधीजी ने शुरू किया। यह अनुभव बिहार की तरफ का ही है। मैं नदी पार करके आ रहा था। एक बदमाश ने एक आदमी को तकलीफ देना शुरू किया। वह इधर-उधर देख रहा था। मैंने पूछा, किसको देख रहे हो? तो वह कहता है

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

[मैत्री आश्रम की एक बहन श्री कुन्तुल के नाम २५ नवम्बर '६२ को लिखा पत्र]

लड़ाई की खबरें सुनती हूँ और तुम्हें याद करती हूँ। मैत्री की इच्छा से सीमा पर बाबा ने आश्रम बनाया और तुम लोगों को वहाँ रखा। मैत्री का नाम लेते ही हमारी प्रथम दृष्टि तो पड़ोसियों की ओर ही गयी थी। चीन, पाकिस्तान, बर्मा, सारे तुम्हारे नजदीक थे। तुमने तो चीनी भाषा की किताबें देखना भी आरम्भ किया था।

लेकिन यह अचानक क्या हो गया! आक्रमण के नाते चीनी क्यों तुम्हारे इतने नजदीक आ गये! नक्शे में देखती हूँ, बागडोग्रा और तुम्हारा स्थान, उत्तर लखीमपुर दोनों के बीच बहुत थोड़ा फासला नजर आ रहा है। तुम लोगों का क्या चिन्तन चलता होगा, क्या कार्यक्रम होगा, सुनने के लिए उत्सुक है। यहाँ परसों बाबा को किसीने सुनाया कि एक बहुत बड़े सरकारी अधिकारी कह रहे थे कि हमें जनता में चीन के लिए घृणा पैदा करना चाहिए, तब हम लड़ाई जीतेंगे!

बाबा ने जवाब दिया "घृणा किसके लिए? यंत्र के साथ घृणा! आपके हाथ में यंत्र होगा तो आपकी लड़ाई में काम देगा। घृणा से क्या काम होने वाला है? मन में घृणा होगी तो दूर भी भाग सकते हैं। घृणा होगी तो लड़ाई ही करेंगे ऐसा नहीं। दूसरी बात, आपने उसके लिए घृणा पैदा की, तो वह भी आपके लिए घृणा पैदा कर सकता है। इससे क्या काम होने वाला है!"

कल मैं और चुन्नी आपा बाबा के पास वहीं बैठी थीं। सामने भारत का नक्शा टंगा हुआ था। बाबा हमें कहने लगे, "१९४५ में सिवनी जेल में हम चर्चा कर रहे थे, तब हमने किशोरलाल भाई को कहा था कि आगे जनजातियों को महत्त्व आने वाला है। ये जो जनजातियाँ पड़ी हैं, इन पर कौन दावा करेगा, यह सवाल आयेगा। जनजातीय क्षेत्र दो देशों के बीच होता है और उसमें संमिश्र संस्कृति होती है। तो विस्तारवाद के लिए दोनों देश अपना दावा करेंगे। अब देखो, डाग आदिवासी जाति पर गुजराती और मराठी, दोनों भाषाओं का असर है। इस तरह जहाँ अविकसित भाषा और अविकसित लोग आये, वहाँ उनका कौन दावा करेगा, यह सवाल पैदा होगा। इस सवाल का हल उस पर किसका ७ आने असर है और किसका ९ आने असर है, यह सोच कर नहीं होने वाला है। हमने कहा था कि 'टास' करके इसका हल करना पड़ेगा।" देखा, कितना दूरदर्शन!

चुन्नी आपा बाबा से पूछ रही थीं, "स्त्रियों का काम क्या होगा, इस समय!" बाबा ने कहा, "हमें हमारा विचार समझाना चाहिए कि हमें अपने गाँव मजबूत बनाने हैं। उनकी चिन्ता सरकार को न करनी पड़े। स्त्रियों को भी इसी काम में लग जाना है।" मैं भी मानती हूँ, कार्यकर्ता इस काम में लगें तो जरूर ही काम होने वाला है। असम में तो हमने देखा कि ग्रामदान का विचार कितने जल्दी समझ जाते हैं लोग! बंगाल में भी खूब अनुकूलता दीख रही है। परसों हम एक गाँव में थे। भूमिकन्या सीता के वंशज, मैथिल ब्राह्मणों का वह गाँव था। गाँव में दो सौ घर थे और सारे मैथिल ब्राह्मणों के। काफी लोग विश्वविद्यालय की उच्च शिक्षा पाये हुए थे। आश्चर्य की बात तो यह कि गाँव के लोगों में आपस में कुछ मनमुटाव भी था। लेकिन बाबा ने उस गाँव में प्रवेश किया और सारे एकदिल हो गये! शाम को वह गाँव ग्रामदान घोषित हुआ! बाबा ने कहा, "चमत्कार के दिन अभी गये नहीं हैं!" गाँव उत्साह से फूला नहीं समा रहा था। स्कूल के बच्चों में भी इतना जोश पैदा हुआ कि उन्होंने उस दिन "किशोर-संघ" की स्थापना की।

कल हम एक छोटे गाँव में थे। "अभय आश्रम" का एक केन्द्र इस गाँव में है। यह गाँव भी ग्रामदान हो गया है। 'शेरशाह' के नाम पर यहाँ से थोड़ी दूर पर 'शेरशाही' नाम का एक गाँव है। उसके वंश का एक खानदान भी यहाँ रहता है। उस घर की गृहिणी कल बाबा से मिलने के लिए आयी थी। घर के बाहर परदा छोड़ कर प्रथम ही वह निकली थी, और वह केवल बाबा के पास आने के लिए। वह केवल दर्शन के लिए नहीं आयी थी, ७५ कट्ठा जमीन का दानपत्र साथ लेकर आयी थी। उसने अपनी जमीन में से 'बीघा में कट्ठे' के हिसाब से दान दिया। और सारा दान घर के मेहतरानी को दिया। कितना शुद्ध दान! अब तुम बताओ, ऐसी बातें सुन कर तुम्हें नहीं लगा कि देश में काम करने वालों की ही अब आवश्यकता है? मैं कई बार सोचती हूँ कि देश में कितने लोगों को सचमुच चीन-आक्रमण से धक्का लगा होगा?

बाबा प्रवचनों में कहते हैं, "अब तो जाग जाओ, चीन तुम्हारा दरवाजा खट-खटा रहा है!" लेकिन इस खटखटाहट की गंभीरता ध्यान में आकर भी कितने लोग कार्य में लग गये होंगे? सामान्य जनता में शादियाँ, उत्सव का प्रमाण कुछ कम हुआ है, वैसे ही कार्यकर्ताओं के सम्मेलन, सभाओं का प्रमाण भी कम हुआ है, इसमें शंका नहीं। लेकिन मुझे लगता है कि ये सारे सभा-सम्मेलन आदि बन्द होना चाहिए और हमारे कार्यकर्ताओं को बाबा का आदेश उठा कर तुरन्त गाँव-गाँव को मजबूत बनाने में लगना चाहिए। तुम्हें नहीं ऐसा लगता? अन्त में लड़ाई चले या न चले, हमारा यह काम तो स्थायी चलने वाला है। तुम्हें मालूम है न?

बाबा इसके लिए शंकराचार्य के "ततः किं" स्तोत्र की मिसाल देते हैं। शंकराचार्य गुरु के घर गये और पूछा "ततः किं?" तो गुरु ने कहा कि विद्या प्राप्त करो। विद्या प्राप्त की और पूछा, "ततः किं?" तो कहा, अब आश्रम स्थापन करो। आश्रम स्थापन किया और पूछा, "ततः किं?" शंकराचार्य इस तरह से पूछते जाते हैं। स्तोत्र का यही नाम दे दिया है "ततः किं!" इसका अर्थ यह है कि हम जहाँ काम करते हैं, वहाँ समाप्ति नहीं होती, आगे और कुछ करना होता है। यह तब तक करना होता है, जब तक मनुष्य देह से, वासना से मुक्त नहीं होता। इसमें जीवन का उत्साह है। अनन्त चित्त होना चाहिए, समत्व से काम करना चाहिए और उसमें कभी खण्ड नहीं पड़ना चाहिए।

और क्या लिखूँ! बंगाल में खूब उत्साह दीख रहा है। ग्रामदान, भूदान के स्वर गूँजने लगे हैं। इस हफ्ते का हिसाब दूँ, तो प्रवचनों के अलावा भी गाँव के लोग बाबा से मिलने के लिए आते हैं। प्रायः ग्रामदान, भूदान पर ही चर्चा होती है। कभी और भी कुछ विषय निकलते हैं। आज एक स्कूल में ठहरे हैं। बाबा का निवास तो स्कूल के ग्रंथालय में है। विचारों के सहारे किताबों का भार लेकर अलमारियाँ खड़ी हैं। बाबा सुबह से उन्हीं किताबों को देख रहे हैं। सुबह विद्यार्थियों को बाबा ने अध्ययन का महत्त्व सुनाया था। आचार्य बाबा से क्या कहती हैं?— "बाबा, आपने अभी अध्ययन के बारे में कहा, इसलिए आपको अध्ययन के लिए यह कमरा दिया है।" ग्यारह बजे शिक्षक मिलने के लिए आये थे। उनके साथ हिन्दी भाषा पर अच्छी चर्चा हुई। बाबा ने तो बंगाली लोगों को चेतावनी ही दे दी: "बंगाल में लोकसंख्या बहुत ज्यादा है। उसको निकास चाहिये। तो वह निकास कहाँ होगा? बिहार में होगा। तो हिन्दी नहीं सीखोगे तो कैसे चलेगा!"

भारत में प्रथम बंगाली लोग बहुत आगे बढ़े, क्योंकि वे प्रथम अंग्रेजी सीखे। बाकी प्रान्त के लोग बाद में अंग्रेजी सीखे। अब यही मौका हिन्दी के लिए आया है। जो हिन्दी सीखेगा, वह आगे बढ़ेगा। बंगाल में 'टैलेण्ट', प्रतिभा है। वह प्रतिभा सारे भारत के काम में आ सकती है। वे प्रतिभाएँ बाहर नहीं आयेंगी और उनको निकास नहीं मिलेगा, तो यहाँ आपस में लड़ाइयाँ करती रहेंगी।"

आज माल्दा जिले का आखिरी पड़ाव है। जिले के सब कार्यकर्ता यहाँ इकट्ठे हुए हैं। बाबा ने उनको अंदरूनी एकता बढ़ाने का संदेश दिया।

बाबा का स्वास्थ्य अच्छा है। यही दूध, दही, शहद और थोड़ी तरकारी का आहार है। अध्ययन के लिए तो अभी

[शेष पृष्ठ ११ पर]

कि कोई खादीधारी हो तो देख रहा हूँ। उसको ऐसा लगता था कि ऐसे वक्त और कोई खादीधारी मिल जाय तो वह जरूर मुझे बचा लेगा। ऐसा विश्वास था। वैसे ही शांति-सैनिक को माना जायगा। तो हम सारे राष्ट्र को निश्चित करें और जो युद्ध में जाने वाले हैं, उनके लिए युद्ध में जाने के लिए रास्ता साफ कर दें।

अच्छी शांति-सेना की फौज तैयार की तो भारत का 'नान-अलाइनमेंट', तटस्थता का जो पक्ष है वह मजबूत होगा। आपके गुट में शरीक नहीं होंगे, तटस्थ रहेंगे, अलग रहेंगे। हम युद्धवादी नहीं हैं। नहीं तो फिर हमको किसी पक्ष में जाना होगा, जैसा राजाजी कहते हैं। लेकिन अगर हम किसी गुट में चले गये तो मर गये! हम युद्ध में जायेंगे तो भी अहिंसा का झंडा लेकर जायेंगे। यह शक्ति तब प्रकट होगी, जब हम एक प्रचंड शांति-सेना तैयार करेंगे।

हमने एक करोड़ की शांति-सेना तैयार की तो सारा जगत् चकित होगा। गांधीजी के बाद नया अवतार देखना है तो एक करोड़ की शान्ति-सेना तैयार करके दिखाइये।

चालीस करोड़ के देश में यह कोई बड़ी बात नहीं है। हम यह नहीं कहेंगे कि मसाला खाओ तो इसमें नहीं लेंगे, खादी नहीं पहनोगे तो इसमें नहीं लेंगे। जब गांधीजी ने देश में सत्याग्रह शुरू किया तो सौगन्ध खाने वाले कितने सिपाही थे! मैंने नहीं खायी। मैं स्वराज्यवादी हूँ—हिंसा-अहिंसा, दोनों मार्ग मुझे मंजूर है। ऐसे आदमी को आश्रम में लेना हो तो लीजिये। उन्होंने कहा कि तुम्हारे जैसे लोगों की बहुमति है। तुम्हारा बहिष्कार करूँगा तो यहाँ कौन आयेगा? तुम्हें रख कर अगर मैं तुमको अहिंसक बना लूँ, तो मेरी बहादुरी। तुम आ जाओ। पसंद पड़े तो रहो, नहीं तो भाग जाओ। हिंसक है, यह अहिंसक है, यह स्वर्ग में जाने वाला है, यह नर्क में जाने वाला है, ऐसा भेद न करें। हम अपनी निर्वैरता से सारी दुनिया को अपनी ओर खींचना चाहते हैं। आज सारी बहुमति उस तरफ है, हमारी तरफ नहीं है। खतरा मोल लेने की वृत्ति, समन्वय-वृत्ति हमने चाहिए, यह इस निवेदन में है। आशा है कि हम उस निवेदन की ताईद केवल शब्दों से नहीं करेंगे, बल्कि कृति से करेंगे और एक-हृदय से करेंगे। भारत एक अहिंसक समर्थ राष्ट्र बने, यह मैं भगवान् से प्रार्थना करता हूँ।

[बेड़की-सम्मेलन, २८-११-'६२]

सर्व सेवा संघ का वेड़छी-अधिवेशन : एक सिंहावलोकन

मणीन्द्रकुमार

सर्व-सेवा-संघ का वेड़छी-अधिवेशन चीन-भारत सीमा-संघर्ष की पृष्ठभूमि में एक विशेष महत्त्व का अधिवेशन बन गया। प्रसंग की गम्भीरता इतनी अधिक थी कि एक ओर सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष श्री रविशंकर महाराज और दूसरी ओर सर्व-सेवा संघ की प्रबंध समिति ने विनोबा से अनुरोध किया कि वे पदयात्रा छोड़ कर मार्गदर्शन के लिए वेड़छी आयें। खैर, विनोबा तो न आये, फिर भी सारा वातावरण इसी एक मुद्दे पर केन्द्रित था। संकट के कारण अधिवेशन की अवधि में वैसे ही दो दिन कम कर दिये गये थे।

वेड़छी में जिस स्थान पर सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन और बाद में सर्वोदय-सम्मेलन हुआ, उसकी एक विशेष पृष्ठभूमि है। पिछले ४२ सालों में बापू की प्रेरणा से इस आदिवासी क्षेत्र में सतत रचनात्मक कार्य हुआ है और उस कार्य के विकास की झलक सहज ही सारे वातावरण में दिखाई दे रही थी। सम्मेलन और अधिवेशन की सारी तैयारी की जिम्मेदारी इस क्षेत्र में काम करने वाली उत्तर बुनियादी विद्यालय की संस्थाओं ने उठायी। करीब सौ दो सौ छात्र छात्राओं ने सम्मेलन के लिए बने सारे नगर का आयोजन किया, और वह भी शिक्षण की दृष्टि से। नगर-निर्माण के साथ शिक्षण की सब प्रक्रियाएँ समवाय दृष्टि से चलती रहीं। जैसा आयोजकों ने बताया कि इस विषय में केवल पैसा वगैरा इकट्ठा करने के अलावा न उनको कोई चिन्ता हुई और न परेशानी ही हुई।

वैसे सम्मेलन की तैयारी बहुत बड़े पैमाने पर की गयी थी। काफी लोग आसपास से आने वाले थे। एक बड़ी प्रदर्शनी होने वाली थी। वह सब आयोजन राष्ट्र पर आये संकट के कारण स्थगित कर दिया गया। फिर भी उस बड़े आयोजन की तैयारी की एक अच्छी छाप आये हुए प्रतिनिधियों के दिलों पर पड़ रही थी। कला, सादगी और सफाई, सब प्रकार की सुविधाओं से युक्त इस 'सर्वोदयनगर' में सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन शुरू हुआ।

अधिवेशन की शुरुआत १९ नवम्बर को ढाई बजे सूत्रयज्ञ से हुई। श्री अरुण भट्ट द्वारा 'समतणा रखवारा रे' और 'ऐ भुवन मनमोहिनी प्रथम प्रभाते उदय तव गगने' के समूहगान से अधिवेशन की कार्रवाई आरम्भ हुई। सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी ने सर्वप्रथम पुरुषोत्तमदास टंडन, रामदेव ठाकुर, महात्मा भगवानदीन, महर्षि कर्वे, डा० विधानचन्द्र राय आदि दिवंगत व्यक्तियों के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की।

अधिवेशन में उपस्थित भाई बहनों का स्वागत वेड़छी गाँव और आश्रम की ओर से श्री जुगतराम भाई ने किया। उन्होंने वेड़छी क्षेत्र के विकास की कहानी सुनाते हुए कहा कि यहाँ पर जो काम हो रहा है, वह यहाँ की आदिवासी प्रजा से निकले हुए कार्यकर्ताओं के द्वारा ही रहा है। इस क्षेत्र में शिक्षण की व्यवस्था का जिक्र करते हुए उन्होंने बताया कि हम बालवाड़ी, बुनियादी शाला, उत्तर बुनियादी और उत्तम बुनियादी के स्कूल भी चलाते हैं। यहाँ आश्रम में अनेक छोटी-मोटी संस्थाएं चालू हैं, जहाँ पर छोटे बच्चों से लेकर बड़े बच्चों तक की शिक्षा का काम होता है। कोई तीस-पैंतीस छोटी संस्थाएँ और छह-सात बड़ी संस्थाएँ हैं। इन सबका असर यहाँ के वायुमंडल में है।

इसके बाद संघ के मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन ने बताया कि अधिवेशन के सामने आज मुख्य काम यह है कि संघ की 'धारा ७ अ' के अनुसार सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष का चुनाव करना है। अध्यक्ष के लिए सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, दादा धर्माधिकारी, धीरेन्द्र मजूमदार, नवकृष्ण चौधरी, वल्लभस्वामी, सिद्धराज ढड्ढा, रविशंकर महाराज, जुगतराम दवे, मनमोहन चौधरी, आर० के० पाटिल, ओमप्रकाश गुप्त, आर० के० राम, प्रभाकरजी, गोराजी, जगन्नाथन् और ठाकुरदास बंग के नाम आये। इनमें से किसी एक को चुनने के लिए सर्वसम्मति से श्री पूर्णचन्द्र जैन, श्री राधाकृष्ण और श्री करणभाई की 'मनाव-समिति' बनायी गयी।

श्री दादा धर्माधिकारी ने खड़े होकर कहा कि मैं सर्व सेवा-संघ का लोक-सेवक भी नहीं हूँ। आगे उन्होंने कहा कि न केवल बहुमत का, बल्कि सर्वसम्मति दबाव भी व्यक्ति पर नहीं होना चाहिए, इसलिए मेरा नाम वापस लिया जाय। अध्यक्ष ने यह व्यवस्था दी कि आप मनाव-समिति के पास अपनी दरख्वास्त पेश कर सकते हैं। मनाव-समिति को एक घंटे का समय दिया, ताकि वह अपना काम करके अध्यक्ष का निर्वाचन कर सके।

इस बीच संघ के सहमंत्री श्री दत्तोबा दास्ताने ने पिछले अधिवेशन की कार्यवाही प्रस्तुत की। समय हो गया था और मनाव-समिति के सदस्य भी पुनः सभा में आ गये थे। सबमें उत्सुकता थी कि कौन सर्व-सेवा-संघ का अध्यक्ष चुना जाता है। किन्तु इधर मनाव-समिति के लोग श्री दादा धर्माधिकारी से कुछ विशेष आग्रह करते देखे गये। लोगों में उत्सुकता और भी बढ़ी। अन्त में दादा मंच पर आये और बोले कि समिति ने मुझसे कहा है कि उनका मन्तव्य मैं आपके सामने रख दूँ। उन्होंने कहा कि समिति ने मनमोहन चौधरी का नाम तय किया है। इसकी पृष्ठभूमि बताते हुए दादा ने कहा कि बुजुर्गों ने जब अध्यक्ष बनने से इन्कार किया तब सबसे छोटे होने के नाते श्री मनमोहन पर यह जिम्मेदारी आ गयी और वे इन्कार नहीं कर सके। दादा ने आशा प्रकट की कि श्री मनमोहन चौधरी जैसे तारुण्य और विवेकसम्पन्न व्यक्ति के नेतृत्व में सर्व-सेवा-संघ आगे कदम बढ़ायेगा।

सर्व-सेवा संघ के मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन ने अपना निवेदन प्रस्तुत किया। (देखें, 'भूदान यज्ञ', १६ नवम्बर '६२, पृष्ठ ६-७)

सभा की कार्रवाई समाप्त होने वाली थी, इतने में एक नौजवान कार्यकर्ता सामने आये और उन्होंने कहा कि यद्यपि अध्यक्ष का चुनाव हो चुका है, किन्तु जैसी आज की देश की परिस्थिति है, वैसी परिस्थिति में जयप्रकाश बाबू को जिम्मेदारी उठानी चाहिए। हम सबको प्रार्थना करनी चाहिए कि जयप्रकाश बाबू अध्यक्ष-पद सम्भालें।

बैठक के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी ने बताया कि हम सबने जयप्रकाश बाबू को अध्यक्ष बनाने की भरसक कोशिश की, उनसे बहुत विनति की। लेकिन सबका आग्रह होते हुए भी जयप्रकाशजी का जो निर्णय है, उस पर तो हमें चलना ही है।

इसके बाद आज की बैठक समाप्त हुई।

* * *

दूसरे दिन, २० नवम्बर को सबेरे प्रार्थना के बाद सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन की ओर से आयोजित 'साहित्य-प्रचार शिविर' का उद्घाटन श्री दादा धर्माधिकारी ने ज्ञानदीप जला कर किया है।

इसके पहले प्रकाशन के अध्यक्ष श्री सिद्धराज ढड्ढा ने साहित्य प्रचार शिविर की योजना रखते हुए दादा से निवेदन किया कि ज्ञानदीप जला कर शिविर का प्रारम्भ करें। यह ज्ञानदीप स्थूल ज्ञानदीप नहीं है। मुझे लगता है कि हम सब भाई-बहन जो इसमें लगे हुए हैं, उनके अंदर कहीं न कहीं अंधकार छिपा हुआ है। नहीं तो आज हम सब पूरे सातत्य के साथ लगे हुए होते। आज दादा के प्रवचन से यह ज्योति फिर से जाग्रत हो, ऐसी प्रार्थना है।

इसके बाद दादा ने कहा कि हमें विचार की ऐसी प्रक्रिया अपनानी चाहिए, जिससे हम आलोकित हों और उसका आलोक बाहर भी प्रकट हो। दादा ने विज्ञापन और विचार-प्रकाशन का भेद करते हुए बताया कि विचार का प्रकाशन जब करते हैं, तो उसका विज्ञापन नहीं करते। विज्ञापन, इश्तहारबाजी में विचार फैलता नहीं है, खपता है। विचार की प्रतिष्ठा पर अपना मत व्यक्त करते हुए दादा ने कहा कि विचार की प्रतिष्ठा का अर्थ है विभिन्न विचारों की प्रतिष्ठा। मेरे अनुसार जो विचार हो उसकी प्रतिष्ठा, उसकी इज्जत का नाम विचार की प्रतिष्ठा नहीं है। वह तो अनुविचार हुआ। दादा ने अंत में कहा कि जो सजीव साहित्य का प्रचारक होगा, उसके जीवन में भी विचार की आभा होनी चाहिए। जब ऐसा होगा, तब इस विचार की प्रतिष्ठा, जो आज नहीं दिखाई देती, सब तरफ दिखाई देगी।

दूसरे दिन, २० नवम्बर को संघ-अधिवेशन की दूसरी बैठक सवा आठ बजे नवनिर्वाचित अध्यक्ष के पदग्रहण से हुई। श्री करणभाई ने पदनिवृत्त अध्यक्ष श्री नव बाबू के प्रति आभार प्रकट करते हुए कहा कि वे गण-सेवकत्व की साकार प्रतिमा हैं।

श्री मनमोहन चौधरी ने अध्यक्ष-पद ग्रहण करते हुए कहा कि अब तक जो अध्यक्ष होते थे, वे खूँटे की तरह थे और उनकी चारों ओर हम घूमते थे; किन्तु आपने मुझे अध्यक्ष बना कर खूँटा ही निकाल दिया है, यानी सब को बन्धमुक्त कर दिया। शायद अन्त्योदय का विचार क्रियान्वित करने के लिए आपने मुझ जैसे छोटे व्यक्ति को अध्यक्ष बनाया। इसके बाद श्री जयप्रकाश नारायण ने सर्व-सेवा-संघ की प्रबंध-समिति में स्वीकृत निवेदन रखते हुए चीन भारत का सीमा-संघर्ष और उसके संदर्भ में हमारी भूमिका पर विषय प्रवेश किया।

श्री जयप्रकाश नारायण ने बताया कि पहले मैं एक सफाई कर देना चाहता हूँ। कल आपके सामने एक नौजवान भाई ने मुझसे सर्व-सेवा-संघ का अध्यक्ष-पद सम्भालने के लिए कहा था। मैं आप सबको आश्वासन देना चाहता हूँ कि जो कुछ मेरी शक्ति है, वह संघ की सेवा में पूरी लगेगी। अध्यक्ष-पद स्वीकार न करने का अर्थ यह कतई नहीं है कि मेरी तरफ से कोई भी कमी होगी।

भारत चीन सीमा संघर्ष पर चर्चा की शुरुआत करते हुए उन्होंने कहा कि इस परिस्थिति के पैदा हो जाने के काफी दिन

बाद मैंने अपना मुँह खोला और वह भी इस वजह से कि चुप रहना असम्भव हो गया था। इसका कारण यह था कि मेरी समझ में नहीं आता था कि हमें क्या कहना चाहिए! हम लोगों में शायद बाबा ही पहले व्यक्ति थे, जिन्होंने पहली घड़ी से ही इस संबंध में अपना विचार देश-दुनिया के सामने निःसंशय और स्पष्टता से रखना शुरू किया। जो निवेदन (देखें 'भूदान-यज्ञ', २३ नवम्बर, पृष्ठ २) आपके सामने है, वह एक जमात का निवेदन है, किसी व्यक्ति-विशेष का नहीं। इस पर अगर बाबा को कहना है तो वह अपने ढंग से कहेंगे, शंकररावजी दूसरे ढंग से कहेंगे, दादा या नव बाबू को कहना हो तो उनका ढंग दूसरा होगा, मेरा ढंग दूसरा होगा। लेकिन हम सब लोगों ने, जिसमें बाबा भी थे, यह निवेदन तैयार किया है और यह एक ऐसी चीज बनी है, जिसको हम सब लोगों ने सर्व-सम्मति से मान्य किया है।

आपने अपील करते हुए कहा कि सब लोग इस पर अपनी-अपनी राय रख सकते हैं; लेकिन हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि जो निवेदन होगा वह पूरे संघ का होगा। उसके लिए हमें समन्वय करने के लिए तैयार रहना चाहिए। बाबा ने भी एक बात पर बहुत जोर दिया कि जो भी बात करें, सब एक-स्वर से बोलें, मिल कर तय करें। इस अवसर पर हम आवेश और विक्षोभ छोड़ कर अत्यन्त शांत अवस्था में इस पर अपना विचार रखें।

आगे श्री जयप्रकाशजी ने बताया कि जो परिस्थिति बनी है, उस पर हम सर्व सेवा-संघ वालों की भी कम जिम्मेदारी नहीं है। याने केवल इस माने में नहीं कि भूदान-ग्रामदान, ग्राम-स्वराज का कार्यक्रम तेजी से और तीव्रता से नहीं चलाया, किन्तु दूसरे माने में भी कि सर्व-सेवा-संघ ने यह माना कि उसकी शक्ति बहुत छोटी है और उसने देश की जो राजनीतिक परिस्थिति होती रही, अंतर्राष्ट्रीय परिस्थिति बनती रही, उस पर कभी ध्यान नहीं दिया। जयप्रकाशजी ने आगे बताया कि आज आक्रमण का मुकाबला करने के लिए अहिंसक शक्तियाँ संगठित नहीं हैं और मुझे लगता था कि शांति-सेना का काम जिस ढंग से चल रहा है, उसमें कुछ परिवर्तन करना चाहिए। कुछ परिवर्तन अब किया जा रहा है, किन्तु बहुत देर हो गयी है। मेरी ऐसी मान्यता थी कि शांति-सेना का प्रतिज्ञा-पत्र कुछ हलका होना, तथा आसान होना तो मैं सारे देश में शांति-सेना के 'रिक्रूटिंग अफिसर' के तौर पर निकलता और लोगों को शांति-सेना में भरती होने के लिए आह्वान करता। अब शायद वैसी परिस्थिति नहीं रही। इस वक्त हम लोगों का क्या करना चाहिए? एक सुझाव आया है कि हम लोगों को मोर्चे पर जाना चाहिए। किन्तु हमारी कोई शक्ति बनी नहीं। हमने भूदान-ग्रामदान-ग्रामस्वराज का अधिक काम किया होता, लाखों की शांति-सेना होती, कुछ जन-मानस का परिवर्तन हुआ होता, चीन वालों से परिचय होता तो हमारी एक नैतिक शक्ति निर्माण होती और हम कुछ कर सकते थे। लेकिन आज वैसी परिस्थिति नहीं है।

जयप्रकाशजी ने अन्त में बताया कि अब हम कुछ सीमावर्ती क्षेत्र में वहाँ के लोगों का मनोबल ऊँचा उठाने के लिए काम कर सकते हैं। लोगों में निर्भयता, एकता ला सकते हैं। उनको यह बता सकते हैं कि आक्रमणकारी के सामने भागना नहीं चाहिए, असहयोग करना चाहिए, जैसी भी परिस्थिति हो वैसा करना चाहिए। सारे देश में हमें यह देखना चाहिए कि देश में शांति रहे, भ्रष्टाचार न बढ़े और चीनी नागरिकों और कम्यूनिस्टों के प्रति सद्व्यवहार हो; इन सबका लड़ाई से काफी सम्बन्ध है। यह काम हम कर सकते हैं। भूदान-ग्रामदान और शांति-सेना का काम तो ऐसी स्थिति में और भी आवश्यक लगता है।

जयप्रकाशजी के प्रवेश-भाषण के बाद प्रतिनिधियों ने इस पर अपने विचार रखे। सर्वप्रथम श्री गोराजी ने कहा कि निवेदन में यह कहा गया है कि 'आज के संयोगों में शांति-सैनिकों का युद्ध-क्षेत्र पर जाकर आक्रमणकारी का मुकाबला करना व्यवहार्य नहीं है', यह वाक्य ठीक नहीं है। इसको इस ढंग से रखा जाना चाहिए कि इस कार्यक्रम पर गम्भीरता से विचारने की आवश्यकता है। इससे शांति-सेना के 'फ्रण्ट' पर जाने का दरवाजा बंद नहीं होता है। उन्होंने आगे यह भी कहा कि देश में जो असमानता की हिंसा है, वह भी चीन के आक्रमण से बढ़कर है। इसके प्रति भी हमको ध्यान देना है। पक्षभेद भी कम होने चाहिए, क्योंकि हम देख रहे हैं कि सरकार के समर्थन के लिए भी अलग-अलग पार्टियों के अलग अलग जुलूस जा रहे हैं! यह सब बंद होना चाहिये। फिर गोराजी ने कहा कि आज फिर लगता है कि हम पुनः सेवाग्राम से निकलें और लोगों को अपना कार्यक्रम समझायें। उन्होंने कहा कि लोग हमें चाहे धोखा-बाज कहें, किन्तु मानवता के साथ धोखा न करें।

श्री महावीर सिंह और श्री प्यारेलाल शर्मा ने बताया कि उनके-उनके क्षेत्र में लोगों का मनोबल गिर रहा है, इसलिए वहाँ पर हमको नागरिकों के कर्तव्य पर जोर देना चाहिए। श्री के. कुमारन् कहा कि हमें सीमावर्ती क्षेत्र में जाकर आक्रमणकारियों के प्रति बहिष्कार करना चाहिए। श्री आर. के. राम ने कहा कि सब रचनात्मक संस्थाओं का एक 'सुप्रीम कमांड' बनना चाहिये और संकटकालीन अवस्था में यह 'सुप्रीम कमांड' यह बताये कि हमें क्या करना है! श्री बद्रीनारायण गाड़ोदिया ने कहा कि हमें यह ख्याल रखना है कि सरकार के युद्ध-प्रयत्नों में बाधा न डालते हुए किस प्रकार अहिंसा के प्रयत्नों पर आँच न आवे। शांति-सैनिकों के लिए मोर्चे पर जाने का दरवाजा खुला रहना चाहिए और विश्व शांति सेना के लोगों को वहाँ पहुँच कर शांति से कैसे समस्या का समाधान हो इस पर विचार करना चाहिए। श्री गाडोदिया ने यह भी कहा कि आज भी अगर जयप्रकाश नारायण शांति सेना में भरती के लिए आह्वान करेंगे तो पहले से ज्यादा लोग भरती होने के लिए तैयार होंगे।

इस बैठक के अंत में श्री जयप्रकाश नारायण ने एक स्पष्टीकरण किया कि विश्व-शांति-सेना के तीन अध्यक्ष हैं—एक माइकेल स्काट, दूसरे ए० जे० मस्ते और तीसरा मैं हूँ। अन्य दो अध्यक्षों को यहाँ बुलाने के लिए तार भी किया है।

दोपहर को ढाई बजे सूत्रयज्ञ से अधिवेशन की बैठक शुरू हुई। सर्वप्रथम श्री डोनाल्ड ग्रूम, इण्डो-पाकिस्तान, पीस कमेटी, श्री देवीप्रसाद, श्री प्यारेलालजी और श्री कंपान के पत्र पढ़ कर सुनाये गये।

इसके बाद श्री जैनेन्द्रकुमार ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि जो निवेदन अभी सुना है वह अच्छा है, किन्तु जयप्रकाशजी के भाषण से और अभी जो पत्र पढ़ कर सुनाये गये हैं, उनसे मेरा मन बिखर गया है। अहिंसा और हिंसा की चर्चा बहुत दिनों से चलती आ रही है। हिंसा की तो सर्वत्र निंदा होती है, किन्तु संगठित हिंसा, जिसको राष्ट्र बचाव के लिए चाहता है तो प्रश्न उठता है कि उसकी निन्दा की जाय या नहीं! उन्होंने कहा कि श्री जयप्रकाशजी ने ठीक बताया कि सर्वोदय या अहिंसा वालों की भूमिका अधिक तात्त्विक होती गयी है और राजनीतिक गतिविधियों की तरफ विमुख होती जा रही है। उन्होंने कहा कि अहिंसक शक्ति और पराक्रम सामयिक और अमुक मोर्चे पर नहीं होता है। वह लड़ी अथवा मरने के वक्त नहीं होता है, बल्कि जीने की हर घड़ी में होता है। मुझे लगता है कि हमें राजनीतिक प्रश्नों को अलग नहीं करना चाहिए। अंत में उन्होंने कहा कि कहीं न कहीं हमारी अहिंसा में कोई त्रुटि रही होगी, जिसके परिणामस्वरूप हम अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अभिन्न और आंतरिक रूप से कमजोर हैं। मैं मानता हूँ कि अगर यह शक्ति टूटी हुई नहीं होती तो चीन का आक्रमण नहीं हुआ होता।

श्री गोकुलभाई भट्ट ने कहा कि यह जो लड़ाई हो रही है, इसमें भारत की भूमिका न्याय की है। वह विस्तारवादी नहीं है। शांति और निर्वैरता से अन्याय का मुकाबला करने के लिए भारत लड़ रहा है। हमको दबी जबान से नहीं, बल्कि खुले तौर से भारत के प्रति सहानुभूति प्रकट करनी है। यह कमी मुझे निवेदन में लगनी है। श्री गोकुलभाई ने आगे बताया कि सर्व सेवा-संघ ने कभी यह जाहिर नहीं किया कि वह युद्धविरोधी है। अगर सर्व-सेवा-संघ युद्ध-विरोधी है, तो कौनसे युद्ध का विरोधी है? आगे श्री गोकुलभाई ने दुःख प्रकट करते हुए कि हम सुस्त बैठे हैं! हमको सेनापति की आज्ञा तो माननी चाहिए, किन्तु मैं यह कहना चाहता हूँ कि आप लोग सेनापति (विनोबा) से कहें कि वह बात और सोचें। मैं यह नहीं मानता कि बंदूक चलाने वाले आदमी नहीं हैं, मशीन हैं! अगर विनोबाजी हमें मोर्चे पर जाने की आज्ञा दें तो दो-चार हजार आदमी मर जायें तो उससे कुछ नुकसान नहीं होगा। हमारे देश का नाम उज्ज्वल होगा।

श्री ठाकुरदास बंग ने कहा कि आजादी के बाद यह पहला मौका आया है कि हमको हिंसा और अहिंसा के बीच चुनाव करना है। हमारी भूमिका विवेकपूर्ण युद्धविरोधी (डिसक्रिमिनेटिंग वार-रेजिस्टर) की होनी चाहिए। हम स्वयं में ही हीन-भावना के शिकार हैं। अगर आज भी शांति सेना के लिए आह्वान किया जाता है तो लाख-दो लाख व्यक्ति भरती के लिए मिल सकते हैं। अन्त में युद्धबंदी के लिए सुझाव रखते हुए श्री बंग ने कहा कि देश विदेश के उत्तम-से-उत्तम पचीस लोग 'फ्रंट' पर जायेंगे, और जाने के पहले काफी प्रचार करेंगे तो उनको रंगरूट नहीं मार सकेगा, हुक्म पीकिंग से ही आयेगा। अगर ये उत्तम लोग मारे जायेंगे तो युद्ध भी बंद हो सकता है। इस बलिदान का व्यापक असर दुनिया पर पड़ेगा।

बिहार के श्री श्यामबहादुर सिंह ने बताया कि हम लोग द्विविधाग्रस्त हैं। हम लोगों को क्या करना चाहिए, जब कि देश में जनसंगठन पैदा हो रहा है और पार्टियाँ भी कुछ काम कर रही हैं?

• श्री सिद्धराज ढड्ढा ने कहा कि देश में अहिंसक शक्ति निर्माण करना हमारा मुख्य कर्तव्य है। हमारी दो भूमिकाएँ हैं—एक जय-जगत् की और दूसरी अहिंसानिष्ठ की। इसलिए हमारी अंतिम निष्ठा सत्य और अहिंसा की है। हम प्रत्येक चीज को देश की नहीं, राष्ट्रीयता की नहीं, और किसी चीज की नहीं, सत्य और अहिंसा की कसौटी पर कसेंगे। (पूरा भाषण, देखें 'भूदान-यज्ञ', ७ नवम्बर, पृष्ठ १०।)

श्री दामोदरदास मूँदड़ा ने निवेदन में कुछ संशोधन सुझाये और कहा कि हमारी भूमिका दो ही प्रकार की हो सकती है—या तो गोरों की तरह कोई टैक्स न देकर सरकार से सब प्रकार का असहयोग करना चाहिए या सरकार का सम्पूर्ण समर्थन करना चाहिए।

मुश्कि बोलने वाले बहुत लोग थे, अध्यक्ष ने सुझाव रखा कि शाम को एक

जगा सकेंगे, और यह शांति-सेना के द्वारा होगा।

श्री ओमप्रकाश गुप्त ने कहा कि अक्सर हम रचनात्मक काम करने वाले 'निगेटिव' भूमिका से काम करते हैं। जय जगत् और जय भारत की भूमिका में कोई विरोध नहीं है। आज देश में जो त्याग की लहर आ रही है उसको हम सम्पत्ति के विसर्जन की प्रक्रिया मान कर अहिंसक ढंग से विषमता-निवारण के लिए उपयोग कर लें। आपने सुझाव दिया कि सर्व-सेवा-संघ को एक राष्ट्रीय सुरक्षा-समिति बनाना चाहिए, जो गांधी विचार से संबंधित लोगों के लिए कार्यक्रम बनावे।

इसके बाद अध्यक्ष महोदय ने सुझाया कि समय बहुत कम है, इसलिए अब हमने कुछ लोगों से नाम वापस लेने की अपील की थी; क्योंकि सारी चर्चा का समारोप अब श्री जयप्रकाशजी को करना है। किन्तु फिर भी कुछ लोगों ने अपनी बात रखने का आग्रह रखा।

श्री आत्माराम भट्ट ने कहा कि हमको गांधी-समाधि के पास आमरण अनशन करना चाहिए। श्री लक्ष्मीचन्द ने सुझाया कि हमारा मोर्चा तो अपने दरवाजे पर है, इसलिए हमें सरहद पर जाने की बात नहीं सोचना चाहिए। श्री सरस्वती प्रसाद और श्री अनादि नायक ने अपने विचार प्रकट किये।

अन्त में श्री जयप्रकाशजी ने समारोप करते हुए कहा कि मुझे बड़ा संकोच होता है कि कैसे इन तात्त्विक प्रश्नों का आप सब लोगों का समाधान कर सकूँगा। बाबा होते तो शायद सबको समाधान होता। दो दिन की चर्चा के बाद दो ही रास्ते दीखते हैं—या तो प्रबंध समिति का *निवेदन कुछ संशोधन के साथ स्वीकार* कर लिया जाय, या सब लोग अपना-अपना आग्रह लेकर लौटें कि सर्व-सेवा-संघ के अधिवेशन ने अपनी कोई राय नहीं बनायी है। जो निवेदन बनाया गया है, उस पर विनोबा ने कहा था कि जितना समय मैंने इस निवेदन पर खर्च किया उतना इसके पहले किसी वक्तव्य पर खर्च नहीं किया था। इस निवेदन में दो छोरों को मिलाया गया है। एक तरफ ऐसे लोग हैं, जो युद्ध युद्ध-विरोधी की स्थिति को मानते हैं और दूसरी ओर ऐसे लोग हैं, जो भारत के प्रयत्नों का नैतिक समर्थन करते हैं। पहले मेरी यह भूमिका बनती जा रही थी कि युद्ध मानव-जाति के प्रति अपराध है। किन्तु अब मैं ऐसी बात नहीं मान सकता, जिसे मेरा दिल गवाही न दे। अगर हम ऐसा मानेंगे तो पंडितजी गुनाहगार साबित होंगे। निवेदन में ऐसा कहने की कोशिश की गयी है कि दोनों पक्षों का समाधान हो। अगर हम अपूर्व बलिदान और त्याग की भावना की प्रशंसा और अधिक करते तो युद्ध में न मानने वालों को तकलीफ होती। वैसे मेरी अपनी भूमिका अलग ही है। पटना में पिछले दिनों प्रबंध-समिति के पहले ही प्रभावती ने पूछा कि ये जो गहने हैं वे बापूजी (राजेन्द्र प्रसाद) को दे आऊँ? प्रभावती ब्रजकिशोर बाबू की लड़की है। वे खुद गहनों के पक्ष में नहीं थे। फिर भी जो कुछ थोड़े-बहुत गहने वह प्रभावती दे *आयी।*

ब्रजकिशोर बाबू की याद से जयप्रकाशजी का कंठ भर आया था। उन्होंने आगे कहा कि यह मदद हिंसा के लिए हुई या अहिंसा के लिए हुई, यह निर्णय आप कीजिये। दूसरा छोर है कि मैं युद्ध का पूरी शक्ति से विरोध करूँगा। अगर ऐसी बात इस निवेदन में होती तो मेरे जैसा व्यक्ति इसमें नहीं होता। इसलिए यह जो निवेदन बना है, वह दोनों पक्षों के लिए ठीक है और हम सबको इसमें आवश्यक संशोधन करके मान्य करना चाहिए। श्री जयप्रकाश बाबू ने कहा कि जहाँ तक अहिंसा का सवाल है, वहाँ मैं अपनी बुद्धि विनोबा को समर्पण करूँगा। मैं नम्र भाव से कह रहा हूँ *कि इस मामले में हम* सबकी सम्मिलित शक्ति एक तरफ है और विनोबा की शक्ति एक तरफ है। अगर विनोबा मुझे समझा दें तो मैं सबसे पहले मोर्चे पर जाऊँगा।

अंत में जयप्रकाश बाबू ने सुझाव दिया कि हम लोग, जिनकी राय थोड़ी अलग-अलग पड़ती हैं, वे सब मिल कर रात को निवेदन की भाषा पर विचार करेंगे और कल आपके हाथ में स्वीकृत निवेदन की प्रति दी जायेगी।

* * *

अधिवेशन के चौथे दिन, २२ नवम्बर की प्रातः श्री नारायण देसाई ने चीन-भारत सीमा-संघर्ष पर संशोधित निवेदन पढ़ कर सुनाया (देखें, 'भूदान-यज्ञ', ३० नवम्बर, पृष्ठ ३) और सब लोगों ने उसको सर्वसम्मति से स्वीकृत किया।

इसके बाद शान्ति-सेना के प्रतिज्ञा-पत्र पर विस्तार से चर्चा हुई और शांति-सैनिक का प्रतिज्ञा-पत्र व्यापक चर्चा के बाद स्वीकार किया गया। (देखें, 'भूदान-यज्ञ', ३० नवम्बर, पृष्ठ ११) इस प्रतिज्ञा-पत्र में मुख्य विवाद का मुद्दा प्रतिज्ञा की तीसरी धारा पर था, जहाँ पर पहले यह लिखा है कि किसी युद्ध में शरीक नहीं होऊँगा। श्री गोकुल भाई भट्ट यह चाहते थे कि इसमें 'युद्ध' के पहले 'प्रत्यक्ष' शब्द जोड़ा जाय, जब कि श्री पूर्णचन्द्रजी एवं अन्य लोगों की राय थी कि 'प्रत्यक्ष' शब्द नहीं ही रहना चाहिए। इस पर श्री दादा धर्माधिकारी ने अपने विचार रखे और श्री जयप्रकाशजी ने अपील की और कहा कि जो धारा है, उसी को रखा जाय और प्रत्यक्ष-परोक्ष की बात व्यक्ति की *अपनी विवेक बुद्धि पर छोड़ दी जाय।* अंत में इस पर भी एक राय बनी और शांति-सैनिक का प्रतिज्ञा-पत्र तैयार हो सका। इस प्रतिज्ञा-पत्र के बनने से ऐसी उम्मीद की जाती है कि *अधिक-से-अधिक लोग* शान्ति-सैनिक बन सकते हैं। पहले कुछ शर्तें कड़ी और ऊँची थी। श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि अगर यह प्रतिज्ञा-पत्र पहले ही तैयार हो जाता तो अधिक अच्छा होता।

इसके बाद श्री बाबूलालजी मित्तल ने पटना-अधिवेशन में विधान में संशोधन का दूसरी बार पाठ किया और कार्रवाई समाप्त हुई।

दोपहर को श्री नारायण देसाई ने सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष के निमंत्रण से एकत्रित कुछ लोगों ने भावी काम का एक कार्यक्रम (देखें, इसी अंक में अन्यत्र) बनाया, उसको पेश किया। उन्होंने कहा कि *कार्यक्रम के तीन विभाग होंगे,* जो एक तो सर्व-सेवा-संघ को करना है, दूसरा राष्ट्रीय नेताओं को अपील करना है, तीसरा शासन के प्रति अपेक्षाएँ हैं और कुल मिला कर यह *त्रिविध कार्यक्रम जनता उठा ले, यह* अपेक्षा है।

इस संदर्भ में पदयात्राओं पर पुनः जोर दिया गया। तय हुआ कि सीमावर्ती क्षेत्रों में काम करने की पूर्वतैयारी के लिए श्री मार्जरी बहन, श्री आर० के० पाटिल, श्री नारायण देसाई और श्री राधाकृष्ण सम्मेलन के तुरंत बाद नेफा जाय। उत्तराखण्ड में श्री ब्रह्मदत्त वाजपेयी और श्री करण भाई योजना बनायें।

श्री मार्जरी बहन जाते-जाते कलकत्ता में चीनी भाइयों की सुरक्षा के संबंध में कलकत्ता के कार्यकर्ताओं से बातचीत करें।

पूर्णियाँ जिले में ऐसा प्रयत्न होगा कि वहाँ पर पुलिस और अदालत की आवश्यकता न रहे।

राष्ट्रीय नेताओं को अपील में यह सुझाया जाय कि इस संकटकालीन परिस्थिति में एकवाक्य के संकल्प को व्यवहार में लाने का प्रयत्न किया जाय और भूमिहीनता मिटाने का कार्यक्रम जोर से चलाया जाय। दूसरा यह कि लोग अपनी आय पर स्वेच्छा से कोई 'सीलिंग' लगायें।

शासन से यह अपेक्षा है कि वह पंचायती राज्य की प्रगति में किसी प्रकार की रुकावट न करे और जो सरकार को संकट के अवसर पर विशेष अधिकार मिले हैं, उसका उपयोग प्रजा के पीड़न में न किया जाय।

निवेदन पर कार्यक्रम सुझाते हुए श्री धीरेन्द्रभाई ने कहा कि हमको सरहदी क्षेत्र में लम्बे अरसे तक बैठ कर ईसाई मिशनरियों की तरह काम करना है। जो लोग फ्रंट पर जाना चाहते हैं, वे लोग वहाँ जरूर जायें—मरने के लि‍ नहीं, किन्तु जीवन देने की दृष्टि से जायें। *इस मामले में* मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि जिनको जाना है वे जायें, न कि कार्यकर्ताओं को भेजा जाय, जैसा कि भूदान में 'सीता-कढ़ा अभियान' में भेजते रहे हैं। कार्यकर्ता भेजने पर वहाँ काम लेने वाला कोई नहीं होगा। हर व्यक्ति को वहाँ जाकर नेता का काम करना पड़ेगा। दूसरा हमारा *अधिक व्यापक कार्यक्रम शांति-सेना का हो* सकता है। मैं मानता हूँ कि आज की परिस्थिति में शांति-सेना की बात को आम जनता में अच्छी तरह समझा सकते हैं। खादी का काम करने वाले कार्यकर्ताओं को शांति-सेना के लिए संगठन-अधिकारी का काम करना चाहिए और शांति-सेना मंडल के परिपत्र का इंतजार न कर तुरंत काम में लगना चाहिए।

श्री विट्ठलदास मोदाणी ने कहा कि हमको विचार-प्रचार के लिए विशेष जोर देना चाहिए और साथ ही आपने स्त्री-शक्ति की जागृति के कार्यक्रम पर जोर देने की बात की चर्चा की।

श्री विद्यासागर ने कहा कि हमें इस वक्त एकता के कार्यक्रम पर जोर देना चाहिए। विचारों की स्वतंत्रता का महत्त्व स्वीकार करते हुए भी विचार-भेदों को भुला कर काम करना चाहिए और शांति-सेना में सैनिक के नाते हमको सेनापति के आदेशों का पालन करना चाहिए।

श्री प्यारेलाल शर्मा ने शांति-सेना मंडल को कहा कि वह सीमावर्ती क्षेत्र पर आकर संरक्षण करें।

श्री अमर सिंह ने कहा कि हमारा प्रथम मोर्चा हमारा गाँव है और हमें ग्रामदान पर जोर देना चाहिए।

श्री विनय अवस्थी ने शांति सेना के संगठन के लिए अनुकूल अवसर आया है, ऐसा मान कर लोगों को भरती के लिए अपील करने की सलाह दी। 'सर्वोदय-मित्र' के कार्यक्रम पर भी आपने जोर दिया।

श्री प्राणलाल भाई ने कहा कि तब तक सरहद पर सिपाही कुछ नहीं कर सकेंगे, जब तक पूरा देश तैयार नहीं होगा। आपने कहा कि मेरी भूमिका शांति-सैनिक की नहीं है, किन्तु मैं लोगों को यह कहना अपना फर्ज मानता हूँ कि कम खाओ, कपड़ा मत खरीदो, कचरे का उपयोग करो और सरकार की मदद करो।

श्री बद्रीनारायण गाड़ोदिया ने कहा कि शांति-सेना पर जोर देना होगा। हमको पुलिस और कोर्ट की आवश्यकता *नहीं है, ऐसा सिद्ध करके दिखाना होगा और विदेशी वस्तुओं के त्याग के लिए* जनता को तैयार करना चाहिए। उन्होंने जयप्रकाशजी से अपील की कि शांति-सेना के लिए वे लोगों को आह्वान दें।

श्री महादेव वाजपेयी ने कहा कि विनोबा का अनुशासन मानने की आवश्यकता है। आपने चीन-भारत सीमावर्ती क्षेत्र में आंतरिक शांति और इसके लिए *विशेष तौर से ग्रामदान पर जोर दिया।* देश के श्रीमानों के पास जाकर उनको ट्रस्टीशिप के सिद्धांत चलने की आवश्यकता पर बताने की बात पर आपने जोर दिया। अन्त में बताया कि अहिंसक प्रतिरक्षा के लिए एक कोष कायम किया जाना चाहिए। आपने उसके लिए उत्तर-प्रदेश से ग्यारह हजार रु० देने की घोषणा भी की।

श्री वल्लभस्वामी ने कहा कि अब फिर मौका आ गया कि भारत के देहात-देहात में जाकर लोगों को हिला देना चाहिए। उन्होंने जाहिर किया कि वे २५ दिसम्बर '६२ या १ जनवरी '६३ से 'विश्वनीडम्', बंगलोर से निकल कर पदयात्रा करेंगे।

श्री हरिवल्लभ परीख ने कहा कि चीन की लड़ाई की चुनौती आज हमको सामाजिक-आर्थिक क्रांति करके देना होगा। हमें लोकयात्राएँ निकालनी चाहिए, जिसके द्वारा गाँव वाले संकल्प करें कि चीन की चुनौती का जवाब हम देंगे।

श्री इकबाल सिन्हा ने कहा कि आज हमको धर्म-समन्वय, उद्योग दान और मकान दान पर जोर देना चाहिए।

श्री राधाकृष्ण बजाज और श्री प्रभाकरजी ने सर्व-सेवा-संघ की आर्थिक स्थिति के बारे में जानकारी दी और चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि अब संघ का कोष करीब-करीब समाप्तप्राय है। इसके लिए हमें सर्वोदय-पात्र, सूतांजलि, सूतदान, अन्नदान और सम्पत्तिदान तथा बीच-बीच में चंदा आदि द्वारा पैसा प्राप्त करके तीस लाख रुपया इकट्ठा करना है। उसमें से पाँच लाख रु० सर्व-सेवा-संघ को और पचीस लाख रु० आबादी की दृष्टि से हरएक प्रांत में बाँटा जाय।

श्री सिद्धराज ढड्ढा ने इस अवसर पर यह घोषणा कि वे साल में दो महीने पदयात्रा के लिए देंगे।

अंत में श्री मनमोहन चौधरी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि यह अपना तीन साढ़े तीन दिन का अधिवेशन अब समाप्त हो रहा है। इस अधिवेशन की विशेषता यह है कि हमने एक ही विषय की चर्चा की है। उन्होंने कहा कि हमने जो निवेदन तैयार किया है, उससे हमको काफी प्रेरणा मिलेगी। हम उसको जनता में समझायें और उसके कार्यान्वयन में अपनी शक्ति लगायें। उन्होंने बताया कि हम जो भी काम करें, उसमें अहिंसा की, शांति की शक्ति प्रकट होती है या नहीं, यह देखें। इसमें अगर हमको अहिंसक शक्ति प्रकट होने वाला कार्यक्रम दीखता है तो उसे उठा लेना चाहिए।

श्री मनमोहन चौधरी जब यह कह रहे थे कि अब अपना अधिवेशन समाप्त हो रहा है, तब पीछे से सूचना मिली कि यह अधिवेशन कल भी चलेगा, क्योंकि कुछ आवश्यक बातें रह गयी हैं।

● ● ●

२३ नवम्बर को प्रातः अधिवेशन की एक अतिरिक्त बैठक में 'सर्वोदय-मित्र' की योजना रखी गयी। कहा गया कि इस योजना से अधिक-से-अधिक लोगों से संपर्क आयेगा, अर्थ-संग्रह अभियान में से 'सर्वोदय-मित्र' की कल्पना निकली है। इस पर काफी चर्चा हुई और अंत में 'सर्वोदय मित्र' का आवेदन-पत्र स्वीकृत हुआ।

इस प्रकार अत्यन्त व्यस्तता के साथ सर्व-सेवा-संघ का यह अधिवेशन समाप्त हुआ। समय की कमी के कारण अतिरिक्त बैठकें भी हुईं। चारों-पाँचों रोज एक ही विषय पर खूब चर्चाएँ होती रहीं कि सर्व सेवा-संघ जैसी अहिंसानिष्ठ संस्थाओं और उनके सदस्यों का भारत-चीन सीमा-संघर्ष की पृष्ठभूमि में क्या कर्तव्य होना चाहिए। अलग-अलग विचार आये। किसी ने किसी विशेष पहलू पर जोर दिया और किसी ने दूसरे पहलू पर। विचार का खूब मंथन और आलोडन हुआ और नवनीत के रूप में सबके सामने सर्वसम्मत निवेदन (देखें, 'भूदान-यज्ञ', ३० नवम्बर पृष्ठ ३) आया।

यह स्पष्ट हुआ कि हम सब लोगों के लिए अहिंसा और सर्वोदय के स्वरूप को साकार करने का अवसर आया है। हम इस अवसर के अनुरूप साबित हों। अब यह आवश्यक है कि हम अपना संदेश, अपना विचार और कार्यक्रम गाँव-गाँव फैला दें। जैसा कि विनोबा ने अपने संदेश में कहा है—इस वक्त अगर सैकड़ों पदयात्राएँ भारत में चलेंगी तो सर्वोदय का रूप प्रत्यक्ष होने में देर न लगेगी।

हैदराबाद सर्वोदय-विचार ट्रस्ट द्वारा साहित्य-प्रचार

हैदराबाद में सर्वोदय साहित्य प्रचार का कार्य सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट के तत्वावधान में श्री गिरधीचन्द्र चौधरी के देखरेख व प्रयत्नों से चल रहा है। श्री चौधरी ने अपनी सूझबूझ, लगन और प्रयत्नों से हैदराबाद में इस काम को व्यवस्थित रूप से जमाया है। अभी वहाँ सालाना करीब १० हजार रुपये साहित्य की बिक्री होती है। उनकी इच्छा है कि यह आँकड़ा बढ़-कर एक लाख तक हो जाये। यहाँ पर उनके कार्य का साल भर का विवरण दे रहे हैं।

माह	कुल बिक्री रु०-न०पै०
नवम्बर '६१	७०३-४५
दिसम्बर '६१	१,१७८-१५
जनवरी '६२	१,३१२-९८
फरवरी-मार्च	७८१-७४
अप्रैल-मई	७६९-६०
जून	७४४-६६
जुलाई	७१२-३३
अगस्त	७१७ ३४
सितम्बर	७९७-५६
अक्टूबर	१,२११-९९
कुल	९ ९४९-८०

नवम्बर '६१ से अक्टूबर '६२ तक कुल साहित्य-बिक्री ९९४९ रु० ८० न० पै० हुई। इसमें सर्वोदय-प्रकाशन ३,८२८ रु० ९७ न० पै०, नवजीवन प्रकाशन २,८२२ रु० ४८ न० पै०, प्राकृतिक प्रकाशन ६३६ रु० ३२ न० पै० और बाकी अन्य प्रकाशन की बिक्री है।

हैदराबाद शहर में कुल चार बिक्री-केन्द्र हैं। वहाँ गत अक्टूबर माह में हुई कुल बिक्री और उसका भाषावार प्रतिशत नीचे दे रहे हैं।

बिक्री-केन्द्र	कुल बिक्री रु०-न०पै०
(१) खादी-भंडार	६७८-१२
(२) नामपल्ली	३०८-७३
(३) सालारजंग संग्रहालय	१४६-५७
(४) फेरी	७८-५७

भाषा	कुल बिक्री का प्रतिशत
(१) हिन्दी	१९.२७
(२) तेलुगू	३१.२३
(३) अंग्रेजी	४९.५०

विनोबा-पदयात्री दल से

[पृष्ठ ६ का शेष]

बाइबिल ही हाथ में होती है और आजकल बाकी समय अखबार लेते हैं।

पू० ताई सम्मेलन के लिए गयी हैं और वहाँ से कुछ रोज के लिए "विश्व-नीडम्", बंगलौर जाने वाली हैं। यात्रा में आशादी, चुन्नी आपा, मंगला मौसी, इन लोगों के सहवास में समय बहुत ही अच्छी तरह से बीत रहा है। असम की यात्रा याद आती है, वह तेजपुर याद आता है, मिसिमारी याद आता है, उत्तर लखीमपुर याद आता है और फिर याद आती है—नीले आसमान के नीचे, नीले पहाड़ों के नजदीक रहने वाली तुम आश्रमवासियों की।

तुम्हारे जवाब की खूब अपेक्षा कर रही हूँ।

इन्दौर में "सर्वोदय-पर्व" में हुई साहित्य-बिक्री

	कुल बिक्री रुपयों में
पचास प्रतिशत छूट पर मालवा मिल में	३,४१९
श्री शालीनी मोघे के बाल मंदिर के साहित्य-प्रदर्शनी में	१००
अन्य स्कूल-कालेजों में फुटकर	१२५
शांति सेना विद्यालय की बहनों द्वारा	३२५
ग्रामस्वराज्य विद्याल के विद्यार्थियों तथा अन्य कार्यकर्ताओं द्वारा	७१
श्री बघेरवाल जी द्वारा	३४०
श्री हेमदेव शर्मा द्वारा	१७५
श्रमशिविर पुस्तकालय द्वारा	२८२
गांधी-स्मारक निधि	२६२
पुस्तकालयों, शालाओं आदि द्वारा	८७८
कुल	६०११

बम्बई से वेड़छी तक पदयात्रा

बम्बई सर्वोदय-मंडल के कार्यकर्ता श्री एली गडकर और श्री मधु रानकर बंबई से ता० ३ नवम्बर को सर्वोदय-सम्मेलन में वेड़छी जाने के लिए पदयात्रा पर निकले। आदिवासी क्षेत्रों में २१० मील की पदयात्रा करते हुए ये २१ नवम्बर को वेड़छी पहुँचे।

पदयात्रा में ३७७ रु० ९२ न० पै० की साहित्य-बिक्री हुई। भूदान-पत्रों के ७' ग्राहक बने।

'सर्वोदय-मित्र' का आवेदन-पत्र

सर्वोदय-मित्र बनाने के लिए यह आवेदन-पत्र वेड़छी के संघ-अधिवेशन में विशेष चर्चा के बाद स्वीकृत हुआ।-सं०

क्रमसंख्या.........

सर्वोदय मित्र

श्री मंत्रीजी,
अखिल भारत सर्व सेवा संघ,
राजघाट, वाराणसी

सत्य-अहिंसा में मेरी श्रद्धा है। मुझे सर्वोदय मित्र के तौर पर दर्ज किया जाय।

तारीख......... विनीत,

स्थान......... हस्ताक्षर ....

पूरा नाम व पता..................

क्रमसंख्या.........

सर्वोदय के काम के लिए सन्............की वार्षिक सहायता १ रुपया नकद/अन्न/सूत के रूप में प्राप्त हुआ।

स्थान......... हस्ताक्षर प्राप्तकर्ता...............

तारीख......... पता..................

सर्व सेवा संघ का आगामी कार्यक्रम

अ० भा० सर्व सेवा संघ ने अपने निवेदन में देश की वर्तमान परिस्थिति का जो विश्लेषण किया, उसके आधार पर संघ की वेड्छी में ११ से २२ नवम्बर तक हुई प्रबंध समिति ने निम्नलिखित कार्यक्रम तय किया :—

(१) देश के गाँव गाँव में १२ फरवरी, १९६३ तक निवेदन का संदेश पहुँचाना।

(२) जिले-जिले में सम्मेलन, शिविर आदि आयोजित कर स्थानिक लोकनेताओं से राष्ट्रीय-एकता और उत्पादन बढ़ाने के कार्यक्रम में सहयोग-प्राप्त करना।

(३) जिले जिले में पदयात्रा करके निवेदन का संदेश पहुँचाना, जिसमें विशेष भार नीचे लिखे मुद्दों पर दिया जाय।

(अ) भूमिहीनता मिटाना।

(आ) सीलिंग आन एक्सपेण्डिचर-खर्च-मर्यादा।

(इ) शांति-सेना।

(४) गाँव-गाँव में ग्राम-सुरक्षा की दृष्टि से शांति सैनिक भरती करना।

(५) अहिंसा और शांति में विश्वास रखने वाली संस्थाओं के प्रतिनिधियों का सम्मेलन आयोजित कर कार्यक्रम तैयार करना।

(६) राष्ट्र के नेताओं से विनति करना कि वे राष्ट्र की आज की विषम परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए 'डिफेन्स मेझर' के तौर पर निम्नलिखित दो कार्यक्रमों को अपना बनायें।

(अ) भूमिहीनता मिटाना।

(आ) लोग स्वेच्छा से अपनी कमाई या खर्च की मर्यादा तय करके बाकी की सारी रकम राष्ट्र के काम के लिए दें।

(७) देश के सीमावर्ती प्रदेशों में से आसाम, बिहार और उत्तराखण्ड में शांति-सेना के मोरचे खड़े किये जायें। यहाँ शांति-सैनिक गाँव-गाँव जाकर प्रजा को निर्भयता की शिक्षा दें। उन्हें ग्राम-स्वावलंबन की शिक्षा दें तथा आक्रमण होने पर आक्रमणकारी से असहयोग करने की कोशिश करें।

(८) राष्ट्रीय सरकार से यह निवेदन किया जाय कि इस समय देश को मजबूत करने वाले पंचायती राज के कार्यक्रम की गति में अवरोध न आने दें।

(९) राष्ट्रीय सरकार के वरिष्ठ अधिकारियों से मिल या लिखा-पढ़ी करके यह प्रयास किया जाय कि इस समय अधिकारियों के मिले हुए विशेष अधिकारों का दुरुपयोग करके प्रजापीड़न न हो।

शांति-सेना कोष में ११ हजार रुपये का अनुकरणीय दान

"शांति-सेना सुरक्षा-कोष" के लिए की गयी श्री जयप्रकाश नारायण की अपील पर उ०प्र० सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री ब्रह्मदेव वाजपेयी ने अपनी ओर से ११,०००रु० का एक बैंक-ड्राफ्ट अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ को भेजते हुए लिखा है कि श्री जयप्रकाश बाबू के कानपुर आने पर अहिंसक प्रतिरक्षा के निमित्त प्रस्तावित इस कोष के लिए पर्याप्त धनराशि एकत्र की जायेगी। इस कोष में कुछ सोने के आभूषण भी प्राप्त हुए हैं। अहिंसानिष्ठ और शांतिप्रिय जनता से अपेक्षा है कि अ० भा० सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी के "शांति सेना सुरक्षा-कोष" में यथायोग्य दान देगी।

सेवापुरी में चर्मोद्योग-प्रशिक्षण

श्री गांधी आश्रम सेवापुरी, वाराणसी में खादी-ग्रामोद्योग आयोग की ओर से चर्म-शोधन का एक वर्ष का प्रशिक्षण आगामी जनवरी माह से प्रारम्भ होने जा रहा है। प्रार्थना पत्र २५ दिसम्बर तक व्यवस्थापक श्री गांधी आश्रम सेवापुरी, वाराणसी के पास आ जाने चाहिये।

विद्यार्थी को प्रशिक्षण काल में ४५ रुपये मासिक छात्रवृत्ति दी जायेगी। प्रार्थना-पत्र में नाम, पूरा पता, जन्म-तिथि, जाति और अनुभव यदि कोई हो तो प्रमाण-पत्रों की सच्ची प्रतिलिपि के साथ भेजना चाहिए। प्रार्थी को प्रत्यक्ष चर्चा के लिए कोई मार्ग-व्यय नहीं दिया जायेगा। योग्यता हाईस्कूल या उसके समकक्ष, आयु २० से ३० वर्ष, हरिजन तथा संस्थाओं से आने वाले उम्मीदवारों को प्राथमिकता दी जायेगी।

—व्यवस्थापक, श्री गांधी आश्रम, सेवापुरी

आवश्यकता

सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा में मातृसेवा सदन के लिए एक लेडी डाक्टर और एक प्रशिक्षित प्रसूति-सेविका की आवश्यकता है। वेतन योग्यता और अनुभव के अनुसार दिया जायगा। आवेदन करने वाले, मंत्री ग्राम-निर्माण मंडल सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा, गया के पते पर पत्र-व्यवहार करें।

विनोबाजी का पदयात्रा-कार्यक्रम

आचार्य विनोबा को पश्चिम बंगाल में भी निरंतर ग्रामदान मिल रहे हैं। विनोबाजी को शांति-निकेतन में आने के लिए विश्वभारती विश्वविद्यालय द्वारा आमंत्रित किया गया है और विदित हुआ है कि वे जनवरी में शांतिनिकेतन भी पहुँचेंगे। श्री विनोबाजी का मुर्शिदाबाद जिले की पदयात्रा का १४ दिसंबर से कार्यक्रम इस प्रकार है :—

१४ दिसम्बर शक्तिपुर, १५ आलोकग्राम, १६ कान्दी, १७ खड्ग्राम, १८ नगर, १९ इन्द्रानी, २० पाँचग्राम, २१नवग्राम, २२ सागरदीघि, २३ बोखरा।

नवग्राम, जहाँ श्री विनोबा २१ दिसंबर को पहुँचेंगे, हावड़ा से ६९ किलोमीटर दूर रेल का स्टेशन भी है। २४ दिसंबर को विनोबाजी लोहापुर होकर पश्चिम बंगाल के वीरभूम जिले में प्रवेश करेंगे।

मुर्शिदाबाद जिले में श्री विनोबाजी की पदयात्रा के समय पता यह रहेगा—

द्वारा—मुर्शिदाबाद जिला विनोबा सत्कार समिति, नेताजी रोड, पोस्ट-बरहमपुर (जिला मुर्शिदाबाद), पश्चिम बंगाल।

कलकत्ता के मिलों में साहित्य-प्रचार

कलकत्ता से श्री दाताराम मक्कड़ २६ नवम्बर के पत्र में लिखते हैं—

"कलकत्ते के मिलों में साहित्य प्रचार का जो काम हुआ, उसकी जानकारी इस प्रकार है :—

(१) केमोलाइट इंडिया लि० के मालिक श्री धनपतरायजी करनानी हैं। आप १११ रु०-वार्षिक के अर्थदाता हैं। इन्होंने अपने मिल के कर्मचारियों को ५० प्रतिशत कमीशन साहित्य प्रचार के लिए दिया। यहाँ कुल २०० रु० का साहित्य बिका। इस मिल में मजदूरों की संख्या ३०० है।

(२) श्री गौरीशंकर जूट मिल लि० के मालिक श्री महादरायजी भगत हैं। आप भी १११ रु० वार्षिक के अर्थदाता हैं। इन्होंने बड़ी श्रद्धा से हमें आमंत्रित किया और साहित्य प्रचार के लिए ५० प्रतिशत कमीशन दिया। यहाँ कुल ५०० रु० का साहित्य बिका। इस मिल की मजदूर-संख्या ३३०० है।

(३) हायलस प्रिंट्स लि० से बातचीत चल रही है। इसमें मजदूर-संख्या १०० है। इसी मिल के दफ्तर में ३० कर्मचारी हैं। मालिक ने २५ प्रतिशत कमीशन देना मंजूर किया और कर्मचारियों ने ३५ रु० का साहित्य खरीदा।"

कार्यक्रम

श्री जयप्रकाश नारायण

माह दिसम्बर, '६२

१५ से १७ सेवाग्राम : शांतिवादियों और रचनात्मक कार्यकर्ताओं का सम्मेलन।

२० से २ जनवरी : दक्षिण के प्रदेशों में।

माह जनवरी '६३

४ से ६ पूर्णियाँ (बिहार)

८ से १४ महाराष्ट्र

१६ से २१ मध्यप्रदेश

२३ से ३१ बड़ौदा और अहमदाबाद

फरवरी, '६३

२ से ५ राजस्थान

७ से १२ उत्तर प्रदेश

श्री पृथ्वीनाथजी भार्गव का निधन

हमें अत्यंत दुःख के साथ लिखना पड़ता है कि भार्गव भूषण प्रेस के अध्यक्ष श्री पृथ्वीनाथजी भार्गव का हृदयगति रुक जाने से ११ दिसंबर, मंगलवार को सायं देहावसान हो गया है। हम दिवंगत आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करते हैं।

श्री भार्गवजी की मृत्यु के कारण प्रेस तीन दिन बन्द रहा, इसलिए "भूदान-यज्ञ" का यह अंक पाठकों की सेवा में कुछ विलम्ब से जा रहा है। सं—

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८१३० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८१७० एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार, २१ दिसम्बर '६२, वर्ष ९ : अंक १२

विश्व-हृदय जीतने की आवश्यकता

विनोबा

भारत और चीन में जो संघर्ष हो रहा है, हम नहीं समझते कि वह ज्यादा देर टिकने वाला है; क्योंकि वह टिकेगा तो दुनिया नहीं टिकेगी या तो संघर्ष टिकेगा, या तो दुनिया टिकेगी। ईश्वर की इच्छा में प्रलय की योजना तो हमको दीखती नहीं है। ऐसा हम क्यों कहते हैं? क्योंकि दुनिया में आज ऐसे मनीषी मौजूद हैं कि जिनके दिल में और दिमाग में प्रेम भरा है और कुल दुनिया में आज विचारों का मंथन हो रहा है और ध्यान में आ रहा है कि केवल शस्त्रों से मसले हल नहीं होने वाले हैं। एक बहुत ही बड़ी चीज अभी आपने इस वक्त देखी कि एक विजयी सेना वापस जा रही है और वह कह रही है कि अब हम लड़ाई बन्द करते हैं। हम अभी बातचीत करने के लिए तैयार हैं, आप भी बातचीत करने के लिए तैयार हो जायें।

अब सवाल उठता है कि उनकी बात पर कितना विश्वास रखा जाय! खैर, इसकी परीक्षा की जाय। सचाई जाँचें, गाफिल न रहें, सावधान रहें, अपनी जो तैयारी करनी है वह करते रहें, देश को मजबूत बनाने में जो जागृति आयी है उसमें कुछ भी कम न होने दें, यह सब ठीक है। लेकिन यह जो घटना हुई है कि विजयी सेना शस्त्र-प्रहार बन्द करके अपनी ओर से पीछे हट रही है, क्या पुराने जमाने में कभी ऐसा हुआ था? दुनिया भर की लड़ाइयों के इतिहास में क्या आपने कोई ऐसी घटना सुनी है या पढ़ी है कि विजयी सेना आगे आक्रमण करने का मौका होते हुए भी आक्रमण नहीं करती और पीछे हट जाती है? इसका मतलब क्या है? आज दुनिया में विवेक बुद्धि जागृत हुई है, जिसे 'वर्ल्ड कान्शन्स' कहते हैं, वह जाग उठा है।

पुराने जमाने में ऐसी घटना कहीं हुई होती, हिमालय में कोई लड़ाई होती, तो उसका दुनिया को पता नहीं चलता! ऐसी कितनी बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ दुनिया में हो गयीं और किसी को पता नहीं चला! लेकिन इस जमाने में छोटी घटना भी होती है, तो वह कुल दुनिया का ध्यान खींचती है। इसलिए अब छोटी घटना तो होती नहीं। दो बड़े देश आमने-सामने खड़े हों, करोड़ों लोग इधर हैं, करोड़ों लोग उधर हैं। दोनों हजारों वर्षों के प्राचीन देश हैं। दोनों को जोड़ने की कड़ी भगवान् बुद्ध के रूप में खड़ी है और दोनों का सम्पर्क कायम रहने वाला है, ऐसी हालत में जो घटना बनती है, उसका कुल दुनिया पर असर पड़ता है और दुनिया के विवेक-बुद्धि में कुछ विचार आते हैं। हमने किसी रणांगण को जीत लिया, तो उतना पर्याप्त नहीं है। इस जमाने में लोगों के हृदय को, विश्व-हृदय को हम जीतें, ऐसी इच्छा आज रखते हैं।

चीन वाले क्यों लौटे?

विश्व हृदय को जीतने के लिए चीन पीछे हट रहा है। विश्व हृदय जीतने के सामने नेफा की सीमा की विजय कोई महत्त्व नहीं रखती। नेफा में चीन के प्रवेश करने के कारण कुल हिन्दुस्तान जाग गया, सम्पूर्ण एकता आ गयी।

दुनिया की सहानुभूति हिन्दुस्तान की तरफ आयी। चीन और रूस के बीच में भी कुछ फरक आया। हिन्दुस्तान तटस्थ देश रहते हुए भी मित्र देश उसकी मदद करने के लिए आये। यहाँ तक कि दुनिया भर में कम्युनिस्ट पार्टियों तक में मतभेद हो गये हैं। इस वास्ते चीन के लिए सोचने की बात हुई कि क्या हमको कोई एक छोटी-सी लड़ाई लड़ कर जीतनी है और विश्व-हृदय को जीतने में हारना है? अगर हम सारे मानवों के हृदय में चलने वाले विचारों के, कल्पनाओं के युद्ध में जीत हासिल नहीं करते हैं तो किसी प्रदेश को जीत कर भी हम हार जाते हैं, यह बात चीन ने समझ ली, यह हम सबको समझनी चाहिए। हमको यह नहीं कहना चाहिए कि हम तो बातचीत के लिए तैयार नहीं। अगर सामने वाला बातचीत के लिए जरा भी मौका देता है, तो आत्मविश्वास के साथ उसके लिए तैयार रहना चाहिए। जिनको आत्मविश्वास नहीं वे अक्सर को चिपके रहते हैं और शर्तें खड़ी करते हैं। ये बातें शर्तों से हल नहीं होतीं। बड़े देशों के बीच जहाँ मुकाबला होता है और जैसे रणांगण में जरा कहीं पैठने के लिए मौका आया तो सेना एकदम पैठ जाती है, वैसे बातचीत के क्षेत्र में जरा भी प्रवेश करने का मौका मिलता है तो फौरन प्रवेश करने की हिम्मत करनी चाहिए। यह सब इस जमाने के लिए जरूरी होता है।

बहादुरी केवल लड़ने में नहीं

अभी आपने क्यूबा में क्या देखा! ऐसा मौका आया था कि दुनिया में लड़ाई छिड़ जाती और 'एटोमिक वार', अणु-युद्ध में मुक्ति हासिल करके एकदम दुनिया खत्म हो जाता! ऐसे मौके पर एकदम रूस ने अपना बम फेंका! उनके पास जो ऐटम बम तो थे बहुत। उसने उससे बहुत जोरदार बम फेंक दिया। हम अपना बिस्तर-बोरा बाँध करके वापस जाते, लड़ने के लिए हमारे साथ शान्ति-क्षेत्र में। तैयार हो कुश्ती के लिए! हमने हाथ बढ़ा दिया, शांति के मैदान में उतरो। देखिये, कौन जीतता है! जैसे रण-मैदान में हिम्मत के साथ कूदने का होता है, वैसे शांति के मैदान में भी कूदने की हिम्मत होनी चाहिए। जो भीरु होते हैं, वे सोते हैं। डरपोक होते हैं, वे न रण-मैदान में कूद सकते हैं, न शान्ति के मैदान में। वे कहीं कूद ही नहीं सकते, बल्कि मार ही खाते हैं। लड़ना पड़ता है, इसलिए वे लाचारी से लड़ते हैं। शान्ति की बातचीत करनी पड़ती है, इस-लिए करते हैं। यह हिम्मत नहीं करते कि शान्ति की बातचीत का आक्रमण हम करेंगे। हमें यह सीखना होगा।

भारत में विशेष जागृति

अभी भारत और दुनिया के इतिहास में नये अध्याय लिखे जा रहे हैं। यह नया अध्याय शुरू हो गया है। सारा भारत जाग गया है। कुछ लोग हमको उलाहना देते हैं कि अब अहिंसा का क्या होगा? इस परिस्थिति में अहिंसा क्या काम देगी? अरे भाई! देश के इस संकट के समय अगर अहिंसा का आश्रय नहीं लेंगे, तो देश के अंदर झगड़ा, मारा-मारी चलेगी। कहीं मालिक-मजदूर का झगड़ा, कहीं हिंदू-मुसलमान का झगड़ा होता था और गोली चलती थी जगह-जगह! यह सब देखा कि नहीं आपने? इसका अर्थ क्या हुआ? अब इस वक्त क्या यह सब करेंगे आप? बोले, हम इस वक्त तो बिल्कुल ऐसा नहीं करेंगे। इसका अर्थ क्या हुआ? अहिंसा हुई कि हिंसा? अजीब बात है! जिस अहिंसा के आधार से सारा देश एक हो सकता है, और केवल थोड़ी-सी सेना मोरचे पर भेजनी पड़ती है। इस पर भी हम मान लें कि अहिंसा की कोई जरूरत नहीं रही, कितनी विचित्रता है! अगर हम जरा भी चिन्तन करेंगे तो समझ लेंगे कि इस वक्त अहिंसा की बहुत बड़ी जरूरत है। गाँव-गाँव एक हो जायें। सब पक्ष-वाले एक हो जायें। भिन्न-भिन्न धर्मों में हृदय-समन्वय हो और हम कसम खायें कि हिन्दुस्तान में अब हम कभी हिंदू-मुसलमान नहीं लड़ेंगे। अल्लाह का नाम लेकर, रामजी को याद करके कसम खाना चाहिए कि हम ऐसा झगड़ा यहाँ नहीं करेंगे। तब तो हमने सबक लिया। चीन से मुकाबला हुआ तो, आवश्यकता हमको महसूस हुई।

वे देश कमजोर पड़ेंगे

अभी पाकिस्तान हिन्दुस्तान के बीच बातचीत चली है। क्या आवश्यकता पड़ी? प्रेम की आवश्यकता, अहिंसा की आवश्यकता पैदा हुई। अभी कोलम्बो में तटस्थ राष्ट्रों की परिषद् हो रही है। चीन उस पर प्रभाव डालना चाहता है कि हम शान्ति के लिए तैयार हैं। अजीब बात है! लड़ाई का हमला करता है और फिर भी शान्ति की बात करता है! लोग समझते हैं कि वह बदमाश है। बदमाश नहीं है। यह मानव-जीवन की आज विसंगति है! ये जो मसले हैं, वे हिंसा से हल नहीं होंगे, ऐसा पक्का विश्वास है। लेकिन अहिंसा से कैसे हल होंगे, यह युक्ति ध्यान में नहीं आयी है। अहिंसा की युक्ति की तलाश हो रही है। वह युक्ति अगर हाथ में आ जाती तो न वह आक्रमण करता, न हमको वहाँ सेना भेजनी पड़ती, बल्कि हमारे शान्ति-सैनिक ही जाते। सार यह है कि अहिंसा की आवश्यकता महसूस होती है। इधर हिंसा पर विश्वास नहीं

रहा। शस्त्र तो चलाना है, लेकिन शस्त्र पर विश्वास नहीं, क्योंकि दूसरी शक्तियाँ विश्व में काम कर रही हैं। उन शक्तियों को आवाहन करने की जरूरत महसूस होती है। लेकिन अहिंसा से काम कैसे होगा, यह युक्ति अभी सूझी नहीं।

पक्की बात है कि नदी में हम जा नहीं सकते, आगे भी पैदल चलना सम्भव नहीं और इधर जमीन पर रास्ता दीख नहीं रहा, तो मनुष्य क्या करेगा? भागीरथी में कूदने की कोशिश करेगा? देखेगा, कहीं थोड़ा पानी हो। अन्दर गया, जरा वापस आया, फिर जमीन पर वापस आया। जमीन देख रहा है, इधर काँटे, उधर राह मिलती नहीं, क्या किया जाय? ऐसी बीच की हालत में आज दुनिया का चित्त है। रणमैदान में जीतने की जिसकी तैयारी हुई होगी और शांति के मैदान में आक्रमण करने की जिनकी तैयारी नहीं होगी, वे देश कमजोर पड़ जायेंगे।

रूस ने दिखा दिया कि क्यूबा में हम शांति के मैदान में आक्रमण कर सकते हैं। यह वही कर सकता है, जिसके हृदय में विश्वास है। चीन पर हम विश्वास रख सकते हैं कि नहीं, यह सवाल नहीं है। सवाल है, हम अपनी आत्मशक्ति पर विश्वास रख सकते हैं कि नहीं? लड़ेंगे तो ताकत से लड़ेंगे, शान्ति के मैदान में लड़ेंगे तो भी ताकत से लड़ेंगे। हमारे शस्त्र में शक्ति होगी इतना ही बस नहीं है, हमारे शब्द में शक्ति होनी चाहिए।

भारत की तटस्थ नीति

अभी भारत तटस्थ रहा है और लोग कहते हैं कि जरा आओ न अमेरिका के पक्ष में। यह कहना पड़ता है कि बड़े-बड़े लोग इस तरह बोलते हैं, वे मुझे माफ करेंगे। हम उसमें बिलकुल बुद्धि नहीं देखते।

इसका मतलब क्या होगा? दूसरी बाजू रूस चला जायेगा और दो मुँह बन जायेंगे और चीन और भारत रणमैदान बन जायेगा और होली सुलगेगी। इस वास्ते आजकल अमेरिका के लोग बोल रहे हैं कि भारत की नीति अच्छी है, हम भारत की मदद करने को राजी हैं। किन्तु हम नहीं चाहते कि वह हमारे गुट में आये, वह अपनी तटस्थता की नीति कायम रखे। यह सब क्या बोल रहे हैं? यह कौन बुलवा रहा है? यह अहिंसा बुलवा रही है। वह समझ रही है कि आमने-सामने रणमैदान में, कुदरती के लिए लड़े रहोगे तो उसमें से कुछ नहीं होने वाला है। उससे यह होगा कि सर्व समाप्तम्। तो क्या सब समाप्त करना है?

[पड़ाव: मुर्शिदाबाद, पं० बंगाल, १० दिसम्बर '६२]

सीमान्त प्रदेश में ग्रामोद्योग और संगठन-कार्य

श्री वैकुण्ठभाई मेहता की कार्यकर्ताओं से अपील

[खादी और ग्रामोद्योग कमीशन के अध्यक्ष श्री वैकुण्ठभाई मेहता ने सीमान्त प्रदेश में शांति-सैनिक की भावना से कार्य करने के लिए यह अपील प्रसारित की है। इस अपील के उत्तर में समस्त पत्र-व्यवहार आदि श्री द्वारकानाथ वि० लेले, सदस्य, खादी-ग्रामोद्योग मंडल, ग्रामोदय, इर्ला रोड, बंबई ५६ के पते पर करने की कृपा करें। —सं०]

चीन ने भारत पर जो नृशंस आक्रमण किया और उसे तीव्रता से जारी किये हुए है, उसे देखते हुए कांगड़ा और कुल्लू घाटी से लेकर अलमोड़ा तक हिमालय के अंचल में उक्त भूभाग को एक नया महत्त्व प्राप्त हो गया है।

इन सीमा-प्रदेशों के कुछ हिस्से की, यद्यपि अभी चीन के हमले से मुक्त है, जनसंख्या बहुत विरल है। इन क्षेत्रों के बहुत ऊँचे स्थानों पर बसे लोगों की ओर भारत सरकार और संबंधित राज्य-सरकारों ने विशेष ध्यान देना अभी शुरू किया है, जिसके माध्यम हैं, सामुदायिक विकास योजना और क्षेत्रीय विकास-प्रवृत्तियाँ।

सामाजिक और आर्थिक समृद्धि

एक लम्बी अवधि से इन क्षेत्रों के ये गठीले, ताकतवर और कड़ी मेहनत करने वाले लोग अपने मुख्य उद्योगों के लिए आवश्यक ऊन के लिए तिब्बत पर और जीवन के अन्य जरूरतों के लिए मैदानों पर निर्भर रहते आये हैं। अपने जीवन-क्रम का पुनर्गठन करने के लिए वे अब बहुत उत्सुक हैं, क्योंकि परम्परागत व्यापार के रूप में तिब्बत के साथ उनका जो संबंध रहा, वह अब हमेशा के लिए टूट चुका है।

इन क्षेत्रों के कृषि और उद्योग संबंधी विकास की आवश्यकताओं ने इस वक्त नये रूप में प्राथमिकता प्राप्त कर ली है। पिछले दो वर्षों से अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ के कुछ कार्यकर्त्ताओं ने सीमा स्थित इन लोगों के बीच कुछ आरंभिक काम किया है। आज की संकट की घड़ी के संदर्भ में, इस काम का तेजी से विस्तार और संगठन करना अब जरूरी हो गया है।

यहाँ के लोगों में ऊन-कताई और बुनाई के काम के कौशल की परंपरा चली आयी है। इसके अतिरिक्त अन्य अनेक ग्रामोद्योगों में काम आने वाली कच्ची सामग्री भी इन क्षेत्रों में प्रचुरता से पायी जाती है।

यदि स्थानीय रूप से उपलब्ध कच्ची सामग्री पर आधारित ऊनी खादी और वहाँ के लिए अनुकूल ग्रामोद्योगों के विकास का कोई समग्रतायुक्त कार्यक्रम हाथ में लिया जाय, तो उन लोगों का आर्थिक जीवन काफी सुदृढ़ व सम्पन्न बनेगा और वे सामाजार्थिक सुरक्षा और समृद्धि के द्वारा एक नयी और महत्त्वपूर्ण स्वरक्षण की चेतना से युक्त होंगे, जो कि हमारी विस्तृत सीमाओं की रक्षा के लिए बहुत जरूरी है। इन ग्रामोद्योगों और अन्य इसी तरह की प्रवृत्तियों के जरिये यह समृद्धि और सामाजार्थिक सुरक्षा सहज संभव हो सकेगी। हिमालय के क्षेत्र के लोगों का जीवन सुदृढ़ व सुसम्पन्न बनाना बहुत जरूरी है, ताकि आक्रमण से प्रत्यक्ष रूप में प्रभावित तथा सुरक्षा और बचाव-कार्य से भी उसी प्रकार संबंधित नागरिकों के रूप में वे इस योग्य हो सकें कि वे अपनी इच्छा-शक्ति और नैतिक मूल्य को दृश्य रूप में स्थापित कर सकें। हमारी फौजों द्वारा निर्णयात्मक और अंतिम विजय प्राप्त करने के लिए जो कुछ किया जायगा, उसमें सहायता करने की दृष्टि से यह नैतिक बल और इच्छा शक्ति अत्यंत महत्त्वपूर्ण तथा आवश्यक है।

गांधी-स्मारक-निधि ने इन सीमा-क्षेत्रों में अपने प्रयत्नों को एकाग्र करने और वहाँ रचनात्मक प्रवृत्तियाँ सघन रूप में चलाने का जो निर्णय किया है, वह समुचित है। खादी और ग्रामोद्योग कमीशन ने भी योजना बनायी है कि ऊनी खादी-उद्योग तथा वहाँ के लिए उपयोगी अन्य ग्रामोद्योगों का विकास उन क्षेत्रों में किया जाय। तथापि इस काम की जिम्मेवारी उठाने की दृष्टि से और इच्छित लक्ष्य, रूप और दिशा उसे प्राप्त कराने की दृष्टि से स्वयंस्फूर्ति से काम करने के लिए बड़ी संख्या में कार्यकर्ताओं का उस क्षेत्र में जाना और जाकर स्थिर होकर वहाँ बस जाना बहुत जरूरी है।

शांति-सैनिक की भावना

देश के विभिन्न भागों से कई लोगों ने, जो सर्वोदय की विचारधारा से प्रेरित हैं, सीमा-प्रदेशों में जाने की तथा वहाँ अहिंसक प्रतिकार करने की इच्छा प्रदर्शित की है। अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन ने, जो अभी-अभी वेड़छी (गुजरात) में हुआ, अहिंसक प्रतिकार की आकांक्षा से प्रेरित इन लोगों के उत्साह का यद्यपि अभिनन्दन किया, तथापि यह सुझाव दिया है कि अहिंसा के ध्येय की पूर्ति के लिए इस प्रकार उनका बलिदान करने के बदले उनसे कहा जाय कि शांति-सैनिक की सच्ची भावना से वे अपना जीवन सीमा-क्षेत्र की सेवा में अर्पित करें।

अतः खादी-ग्रामोद्योग के कार्य में लगे हुए कार्यकर्ताओं का तथा उन लोगों का भी, जो अहिंसा तथा शोषणरहित व्यवस्था की बुनियाद पर समाज-रचना का कार्य पुनर्संगठित करने में विश्वास रखते हों, कमीशन आवाहन करता है कि वे आगे आयें और हिमालय के क्षेत्रों की सेवा और काम में अपने को स्वेच्छा से लगायें, ताकि हिमालय के अंचलों से आयी हुई तीव्र पुकार का प्रभावशाली रूप में प्रत्युत्तर दिया जा सके।

सीमावर्ती इलाकों में ९ शांति-सेना केन्द्र

शांति-सैनिकों द्वारा ६ पदयात्राएँ आरम्भ होंगी

सर्व-सेवा-संघ और शांति-सेना मण्डल की ओर से श्री रा० कृ० पाटिल, श्री मार्जरी साइक्स और श्री नारायण देसाई आसाम का ९ दिन का दौरा करके लौट आये हैं। उन्होंने आसाम के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने वाले व्यक्तियों से चर्चाएँ कीं, शरणार्थी-शिविर देखे, घायल सैनिकों से मुलाकात की और सीमावर्ती क्षेत्रों के देहात में जाकर वहाँ की परिस्थिति का अध्ययन करके असम सर्वोदय-मण्डल के साथ मिल कर शांति-सेना के कार्यक्रम की एक रूपरेखा तैयार की है।

यह निश्चय किया गया है कि १५ दिसम्बर से असम के मैदानी भाग में शांति-सैनिकों की ६ पदयात्रा-टोलियाँ निकलें। इस माह के अन्त से श्री जयप्रकाश नारायण का भी असम में एक माह का दौरा होगा। सीमावर्ती इलाकों में ९ स्थानों पर "शांति-सेना केन्द्र" प्रस्थापित करने का तय किया गया है। इन केन्द्रों में आसाम तथा अन्य प्रदेशों के शांति-सैनिक भाई-बहन रहेंगे और इर्द-गिर्द के क्षेत्रों में ग्राम शांति-सेना का कार्यक्रम सफल बनायेंगे। शरणार्थी-शिविरों में सेवा-कार्य और बड़े पैमाने पर श्रम-कार्य शिविरों का आयोजन भी विचाराधीन है।

विश्वशांति-यात्री १८ दिसंबर को टेब्रिज में

श्री सतीशकुमार और श्री ई० पी० मेनन २,२३० मील की पदयात्रा करके ईरान की राजधानी, तेहरान में ७ नवम्बर को पहुँचे और संभवतः १८ दिसम्बर तक टेब्रिज पहुँचेंगे तथा वहाँ रोटरी क्लब के प्रेसिडेण्ट श्री मोजतहेदी के अतिथि रहेंगे। वे जनवरी, १९६३ में रूस की सीमा में प्रवेश करेंगे।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

डेमोक्रेसी की कसौटी

आज लोग समझते हैं कि 'डेमोक्रेसी,' लोकतंत्र का अर्थ है ढीला कारोबार। ऐसा कैसे चलेगा? मशीन के पुर्जे ढीले हों, तो कितना भी घुमाइये, कोई लाभ नहीं होगा। वैसे ही लोकतंत्र का यंत्र ढीला रहा तो बेकार बनेगा। यंत्र को सख्त बनाने के लिए उसमें तेल डाला जाय—यह है डेमोक्रेसी की व्यवस्था। यंत्र सुव्यवस्थित हो, लोग स्नेहपूर्वक, प्रेमपूर्वक आज्ञा मानें और यह स्नेह-प्रक्रिया चलती रहे। हम ग्यारह साल से स्नेह डालते चल रहे हैं। अब यह यंत्र मजबूत हो और स्नेह भी रहे, तो दोनों मिलकर यह सफल हो सकता है। इस समय 'डेमोक्रेसी' के सामने एक प्रश्न खड़ा है कि तुम एकतंत्रीय राज्य के खिलाफ टिक सकती हो या नहीं? एकतंत्रीय बने बिना भी यह टिकी तो डेमोक्रेसी यशस्वी हुई। अगर हमारे यहाँ भी हर बात कानून से होने लगे और मान लीजिये कि हिन्दुस्तान जीत जाय, तो वह जीत भी हार हो जायेगी, क्योंकि उसके बाद जो तंत्र बनेगा, वह सवाई चीन-तंत्र बनेगा। चीन जीतना शक्त है, उससे सवाई शक्त वह तंत्र होगा और देखते ही देखते सारी सत्ता मिलिटरी के हाथ में आ जायगी। इसलिए अभी हमारी डेमोक्रेसी की कसौटी है।

[नयनसुख, प० बंगाल, २७-११-'६२] —विनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ी, ख = ख; संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

उत्तर प्रदेश की सरकार द्वारा विश्वासघात

संकटकालीन परिस्थिति का बहाना लेकर कुछ प्रान्तीय सरकारों ने शराबबन्दी के मामले में जो किया है वह अत्यन्त दुःख और वेदना का विषय है। यह सब जानते हैं कि शराबबंदी का ध्येय देश के विधान में स्वीकार कर लिये जाने पर भी शराब के उत्पादन और व्यापार से अनाप शनाप मुनाफा कमाने वाले वर्ग का शराबबन्दी के खिलाफ बराबर कड़ा विरोध रहा है। निहित स्वार्थ वाले इस पूंजीपति वर्ग ने शराबबन्दी को विफल करने की हमेशा भरसक कोशिश की है। इन पूंजीपतियों के प्रच्छन्न प्रभाव और दबाव में आकर देश की अधिकांश प्रान्तीय सरकारें विधान की मनशा और आदेश को ठुकरा कर भी शराबबन्दी को आगे बढ़ाने के मार्ग में एक या दूसरे बहाने से बराबर रोड़ा डालती रही हैं। देश के अधिकांश अखबार इस पूंजीपति वर्ग के हाथ में होने कारण वे भी निरन्तर शराबबंदी के खिलाफ प्रचार करते रहे हैं। देश की गरीब जनता को शराब पिला-पिला कर उसका शोषण करने और उसे बेहोश रखने के इस षड्यन्त्र का मुकाबला करना देश के प्रगतिशील और हितचिन्तक तत्त्वों के लिए सामान्य समय में भी बड़ा दुष्कर काम रहा है।

आज देश की सुरक्षा का प्रश्न स्वाभाविक ही सबके मन में सर्वोपरि है। सुरक्षा के लिए अधिकाधिक धन की आवश्यकता है, यह भी सब जानते हैं। इस परिस्थिति का फायदा उठा कर चीन के आक्रमण के साथ-साथ निहित-स्वार्थ वाले लोगों ने शराबबन्दी के खिलाफ भी एक जबरदस्त हमला शुरू किया है। अखबार वालों ने व्यवस्थित ढंग से संवाद-समाचार, सम्पादकीय, अग्रलेख, व्यंग-चित्र, विशेष लेख आदि हर संभव तरीके से शराबबंदी का मखौल उड़ाने और उसके खिलाफ जनमत बनाने का एक अभियान शुरू कर रखा है। इस धुएं के बादल की आड़ में सरकारों को भी पीछे कदम हटाने का अच्छा मौका मिला है। पंजाब-सरकार ने किसी कमजोरी के क्षण में शायद वहाँ के कुछ भले और आदर्श प्रिय मंत्रियों के प्रभाव से तीसरी पंचवर्षीय योजना के अन्त तक सारे प्रान्त में पूरी शराबबन्दी करने की घोषणा कर दी थी। पर होश आते ही उन्होंने जनमत जानने आदि का बहाना बना कर अपने वादे से पीछे हटने की तरकीब निकालना शुरू कर दिया था, हालाँकि शराब पिलाने का व्यापार करने के लिए उन्होंने कभी जनता का मत जानने की कोशिश नहीं की थी। अब लड़ाई शुरू होते ही अपने वादे को उन्होंने वापस लेने की घोषणा कर दी। मैसूर राज्य के कुछ हिस्सों में और केरल में भी जो लूली लंगड़ी शराबबन्दी है उसको खतम करने की बात चल रही है, क्योंकि लड़ाई के लिए रुपया चाहिए। उत्तर-प्रदेश के ५४ जिलों में से ११ जिलों में शराबबंदी थी। वहाँ की सरकार ने भी वह शराबबन्दी खतम कर दी है। इतना ही नहीं, बल्कि शब्दों का जाल रच कर जनता को धोखे में डालने की भी कोशिश की है। वहाँ ११ जिलों में पूरी शराबबन्दी थी वह तो उन्होंने रद्द कर दी और सारे प्रदेश में हर हफ्ते में एक दिन शराब की दुकानें बन्द रहेंगी, यह जाहिर करके शराबबन्दी को उन्होंने सिर्फ "रिऑर्गेनाइज"—पुनर्गठित किया है, यह बताने की कोशिश की है। ताज्जुब है कि सरकार लोगों को इतना मूर्ख या भोला समझती है! हफ्ते में एक दिन तो दुनिया का और भी कारोबार बन्द रहता ही है। ईसाई लोगों की मान्यता के अनुसार तो हफ्ते में एक दिन भगवान् ने भी विश्राम किया था। क्या उत्तर प्रदेश की सरकार यह समझती है कि छः दिन शराब की दुकानें खुली रहेंगी और एक दिन बन्द रहेंगी तो उससे शराबबंदी जैसी कोई चीज बनेगी? यह पुनर्गठन शराबबन्दी के लिए किया होता तो फिर दो करोड़ की आमदनी इससे बढ़ेगी यह कैसे माना? शराबबन्दी खतम ही करनी थी तो इस तरह लोगों को धोखे में डालने की क्या जरूरत थी? जो सही बात है, उसे मानने में और कहने में सरकार को इतना डर क्यों है?

देश की सुरक्षा के लिए धन चाहिए, यह बहाना बना कर शराबबन्दी को खतम करना तो और भी हास्यास्पद है। अमनचैन के दिन होते तब शराब पीकर लोग पागल रहें तो उतना हर्ज शायद न हो। पर जब कि देश को प्रत्येक नागरिक की बुद्धि और शक्ति के पूरे उपयोग की, और उसके चरित्रबल को बढ़ाने की आवश्यकता है, ऐसे समय शराबखोरी को उत्तेजन देना कहाँ की बुद्धिमानी है? लड़ाई के पहले अगर शराबबन्दी के लिए कुछ कम तीव्रता रही हो तब भी लड़ाई के समय में तो शराबबन्दी ज्यादा आवश्यक है। लोगों का चरित्र और नैतिक बल गिरा कर उत्तर प्रदेश की सरकार किस चीज की 'सुरक्षा' करना चाहती है? लड़ाई के पहले आगरे में वहाँ के नागरिकों के पूर्ण समर्थन से सरकार द्वारा शराब का व्यापार चलाये जाने के खिलाफ सत्याग्रह जारी था। उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल ने अपनी सारी शक्ति इस काम में लगाने का तय किया था। पर लड़ाई छिड़ते ही विनोबाजी की सलाह से यह सत्याग्रह इसलिए स्थगित किया गया कि संकट के समय सरकार को परेशानी में डालना उचित नहीं है। पर इसी संकट का सहारा लेकर शराब-बन्दी के कार्यक्रम को खतम करके उ० प्र० की सरकार ने एक तरह से विनोबाजी के और जनता के प्रति विश्वासघात किया है। लड़ाई के दिनों में सबका ध्यान एक ही ओर लगे, इस गरज से जनहित के बहुत से काम और सुधार बंद रहते हैं, यह भी आखिर-कार गलत ही है, पर सुरक्षा की आड़ में शराबखोरी को बढ़ावा देने जैसे समाज-द्रोही और प्रतिगामी कदम उठाये जायँ यह सर्वथा निंदनीय है।

—सिद्धराज

सुरक्षा और उत्पादन-वृद्धि

विनोबा

अभी दिल्ली में "डिफेन्स कौन्सिल", सुरक्षा-समिति की बैठक हुई थी। उसमें यह तय हुआ कि गाँव-गाँव में उत्पादन बढ़ाने का काम सुरक्षा के अन्दर रखेंगे। यह बिल्कुल सीधी-सादी बात है, लेकिन इसकी ओर ध्यान देने का मौका अब आया है! जिस दिन हमको स्वराज्य प्राप्त हुआ, उसी दिन समझ लेना चाहिए था कि उत्पादन बढ़ाना 'डिफेन्स' की बात है।

बाबा जब तेलंगाना में घूम रहा था, तब भारत सरकार की ओर से श्री आर० के० पाटिल मिलने आये थे। तब सरकार की योजना पर सख्त प्रहार करते हुए बाबा ने कहा था कि देश को जल्द-से-जल्द अनाज में स्वावलंबी बनाना चाहिए। यह बात सन् १९५१ की है। अब ग्यारह साल के बाद ध्यान में आया है कि देश में उत्पादन बढ़ाना चाहिए।

उत्पादन बढ़ना चाहिए, यह जो विचार है, वह अधूरा है। गाँव गाँव में उत्पादन बढ़ाने का काम तभी हो सकेगा, जब उत्पादन बढ़ाने में रुचि उत्पन्न होगी होगी। आज जो व्यक्ति खेतों पर मजदूरी करता है, उसके पास न जमीन है, न उद्योग है, न साल भर काम मिलने का आश्वासन है और न साल भर तक निश्चित अनाज मिलने की ही आशा है। ऐसी हालत में अगर वह भूखा रहेगा तो चोरी करेगा। उसकी उत्पादन बढ़ाने में रुचि कैसे आयेगी? खेतों में जो मजदूर काम करते हैं, उनको रुचि हुए बिना उत्पादन नहीं बढ़ेगा। इसलिए जो भूमि-मान हैं, उनका फर्ज है कि वे भूमिहीनों और कम भूमिवालों को अपनी जमीन का एक हिस्सा देकर अपने परिवार में दाखिल करें। ऐसा होगा, तभी गाँव में प्रेम बढ़ेगा, खेती करने वालों में रुचि पैदा होगी और उत्पादन बढ़ेगा।

[परवक्का, जि० मुर्शिदाबाद, २६-११-'६२]

चीनी आक्रमण के खतरे के अवसर पर

असम में क्या देखा, क्या समझा?

• निर्मला देशपाण्डे

‘‘तुम असम जाओ। परिस्थिति का निरीक्षण कर आओ और देखो, वहाँ पर क्या काम करना होगा।’’

पश्चिम बंगाल का मालतीपुर पड़ाव। मैं बाँस के घने जंगल की मर्मर ध्वनि सुन रही थी। विनोबाजी ने फिर से कहा- ‘‘तेजपुर, लखीमपुर, गौहाटी, जोरहाट, डिब्रूगढ़, शिलांग और सुवर्णश्री का ग्रामदानी अंचल देख लेना, तो असम का पूर्ण निरीक्षण हो जायेगा।

दिनांक १५ नवम्बर को असम जाने के लिए मैं कटिहार जंक्शन पर पहुँची तब देखा कि उसी दिशा में जाने वाले पचासों यात्री तीन दिन से प्लेटफार्म पर पड़े थे। उन दिनों ट्रेनों में भयानक भीड़ थी। मेरा ट्रेन में घुसना, अपने में एक लम्बी कहानी है। हमारी उस ट्रेन में तीन-चौथाई फौजी भाई थे। जब ‘‘आसाम एक्सप्रेस’’ ने स्टेशन छोड़ा तब बाहर से नारे सुनाई दे रहे थे—‘‘भारतीय फौज जिन्दाबाद’’ और अन्दर से नारा उठाया गया ‘‘सत् श्री अकाल।’’

गौहाटी असम का सबसे बड़ा शहर है। यहाँ पर दो दिन रह कर मैंने सब प्रमुख व्यक्तियों से चर्चा की। चर्चा का सार यही था कि असम की जनता में हिम्मत और उत्साह है, कोई घबराहट नहीं है। अधिकतर नेताओं ने यह भी कहा, ‘‘आज की परिस्थिति में बाहर से माल नहीं आ सकेगा। इसलिए हम गाँव गाँव में जाकर यही समझा रहे हैं कि गाँव को स्वावलम्बी बनाना होगा, गाँव में पैदा होने वाली चीजें ही इस्तेमाल करनी होंगी। बाहर से आने वाली चीजों के बिना चलाने की आदत डालनी होगी।’’ मुझे याद आयी सन् ’५६ की दक्षिण-यात्रा। विनोबा प्रतिदिन गाँव वालों से कहते थे-‘‘गाँव-गाँव को स्वावलम्बी बनाना, गाँव में पैदा होने वाले कच्चे माल का पक्का माल गाँव में ग्रामोद्योगों के जरिये बनाना, देश की रक्षा के लिए आवश्यक है। लड़ाई छिड़ने पर तो यह अनिवार्य हो जायेगा।’’ वहाँ पर छोटे-बड़े सब पूछ रहे थे-‘‘विनोबाजी क्या करते हैं! हमारे लिए आप क्या संदेश लायी हैं!’’

गौहाटी में दिन-रात हवाई जहाज की आवाज सुनाई दे रही थी। लगता था जैसे हर पाँच मिनट पर हवाई जहाज गौहाटी हवाई अड्डे पर उतर रहा हो और वहाँ से उड़ रहा हो। रेडियो कह रहा था-‘‘जंग और वालांग के पास घनघोर लड़ाई चल रही है।’’ नेफा के पाँच डिवीजन में से कामेंग और लोहित डिवीजन युद्धक्षेत्र बना था। दुर्गम पहाड़ों पर बर्फ की चट्टानों पर घने जंगलों में युद्ध चल रहा था, जिसमें भारतीय हवाई जहाज अपना फर्ज पूरी तरह से अदा कर रहे थे।

अठारह नवम्बर की शाम को मैं तेजपुर पहुँची, जो युद्ध क्षेत्र का सबसे निकटवर्ती शहर था। वहाँ के एक प्रतिष्ठित नागरिक श्री अग्रवाल के घर पहुँचते ही मैंने देखा कि तेजपुर के बारे में मैंने जो सुन रखा था, उससे यहाँ पर कुछ अधिक ही जोश और हिम्मत है। तेजपुर की सब महिलाओं ने एक रात जाग कर जवानों के लिए गरम कपड़े बनाये थे। स्कूल-कालेज के लड़कों ने श्रमदान करके कुछ ही घंटों में फौज के लिए एक सड़क ठीक कर दी थी। श्रीमती मैना अग्रवाल जो यहाँ की स्त्रियों की अगुआ थीं, कह रही थीं-‘‘होमगार्ड के लिए इतनी बहनें आयीं कि सबको प्रवेश देना सम्भव न था। [illegible] की दो वृद्ध महिलाएँ जिद कर रही थीं कि हमें ट्रेनिंग दीजिये। हम भी देश की रक्षा के लिए मरना चाहती हैं। बड़ी मुश्किल से उन्होंने बात मानी और बन्दूक के बजाय ‘फर्स्ट एड’ की ट्रेनिंग लेना स्वीकार किया।’’

बातचीत चल ही रही थी कि किसी ने कहा—‘‘रेडियो की खबर है कि वालांग का पतन हुआ और सेला के निकट लड़ाई चल रही है।’’ वातावरण गंभीर हो गया। सेला का भी पतन हो तो चीनी बोमडीला की ओर बढ़ेंगे, जहाँ से तेजपुर सिर्फ साठ-पैंसठ मील दूर है।

उन्नीस तारीख की सुबह मैं बहनों की ‘परेड’ देखने गयी। बहनों ने कहा, ‘‘हम तो मोर्चे पर सबसे आगे रहना चाहती हैं। असम की एक प्रमुख महिला कार्यकर्त्री श्री पुष्पलता दास उस समय तेजपुर में थीं। वह कह रही थीं कि मेरी तो अहिंसा में दृढ़ निष्ठा है। मैं गाँव-गाँव जाकर सुनाती हूँ कि अगर हम गांधीजी को भूल जायें तो फिर भारत के साथ रहेगा ही क्या? हम सब अहिंसक प्रतिकार करते हुए मर जायेंगे, तो चीन के इतिहास में लिखा जायेगा कि यह एक अजीब कौम थी, जिसने गुलामी की अपेक्षा मरना पसंद किया, हमारे खिलाफ हथियार नहीं उठाया लेकिन पूरा असहयोग किया, जिसके कारण हम यहाँ टिक न सके। हाँ, मैं यह भी कहती हूँ कि जिसकी बंदूक में निष्ठा है, वह बन्दूक भी उठाये, लेकिन कोई डरपोक न बने।’’

मैंने उन्हें विनोबा-विचार सुनाया: ‘‘जो निर्भयता और निर्वैरता के साथ, किन्तु शस्त्र लेकर लड़ेगा वह वीर होगा और जो बिना शस्त्र के लड़ेगा वह महावीर बनेगा। चाहें आप वीर बनिये या महावीर, लेकिन कायर मत बनिये।’’

तेजपुर के बच्चों में तो मैंने अद्भुत भावना देखी। आठ साल की एक लड़की अपनी माँ से कह रही थी, ‘‘माँ तुम क्यों नहीं होमगार्ड में भरती होती?’’

‘‘बेटा, फिर तुम बच्चों को खाना बना कर खिलायेगा कौन! इधर पेट का प्रबन्ध हो जाता है और तुम्हें स्कूल भेजने के लिए तैयार करना पड़ता है।’’

‘‘माँ, आज हम सारे छोटे बच्चे देश के दुश्मन बन गये हैं!’’ माँ चौंक पड़ी।

लड़की गंभीरता से कह रही थी—‘‘हम न होते तो तुम होमगार्ड में भरती हो जाती, देश की रक्षा करती। माँ, कोई ऐसी दवा नहीं निकली है, जिसको खाने से बच्चे एकदम बड़े हो जाते हैं! फिर हम सब परेड करेंगे, देश के लिए मर मिटेंगे।’’

शहर में अफवाह फैली थी कि बोमडीला गिर गया, चीनी फुटहिल्स की ओर बढ़ रहे हैं, जो तेजपुर से चालीस मील पर है। सरकारी अधिकारियों के परिवारों को सुरक्षित जगह पर ले जाने के लिए वाहन आये और जनता सोचने लगी, ये जा रहे हैं हमें छोड़ कर। कुछ बड़े व्यापारी तथा बाहर वाले पहले ही भाग चुके थे। असमवाले कह रहे थे-‘‘हम कहीं नहीं जायेंगे, यहीं मर जायेंगे।’’

रात साढ़े आठ बजे प्रधान मंत्री ने रेडियो पर भाषण करते हुए कहा कि ‘‘बोमडीला भी हमारे हाथ से निकल गया है। मेरा दिल है असमवालों के साथ, जिन्हें बहुत तकलीफ उठानी पड़ेगी।’’

शहर में कुछ घबड़ाहट फैली। हर परिवार में एक ही चर्चा चली। पिता या पति, स्त्रियों से, लड़कियों से कह रहे थे ‘‘तुम बच्चों को लेकर ब्रह्मपुत्र पार करके नौगाँव जाओ। दक्षिण तीर सुरक्षित है।’’ स्त्रियाँ नहीं मान रही थीं-‘‘हम भी आपके साथ यहीं रहेंगी, हम नहीं जायेंगी।’’

बीस तारीख की सुबह हर चौराहे पर एक ही चर्चा चल रही थी-‘‘आ रहे हैं! कहते हैं, बीस हजार हैं! आज शाम तक तेजपुर पहुँच जायेंगे!’’

मुझसे कहा जा रहा था-‘‘आप कैसे बेवक्त यहाँ आ गयी! अच्छा होगा, अगर आप आज गौहाटी चली जायेंगी! गाड़ी तैयार है।’’

‘‘मैं ठीक वक्त पर आयी हूँ। भगवान् ने मुझे भेजा है, आपके साथ मरने के लिए! एक शांति-सैनिक के लिए इससे बढ़कर सौभाग्य क्या हो सकता है!’’

कोई धीरे से कह देता—‘‘विनोबा के प्रतिनिधि हमारे साथ मरने के लिए तैयार हैं, इससे हमें बड़ी तसल्ली मिल रही है।’’

तेजपुर एक छोटा-सा खूबसूरत शहर है। झील, पहाड़ और नदी की सन्धि में अधिक सुन्दर दिखाई देने वाले शहर के [illegible] पर! मैं एक परिचित घर में पहुँची। गृहिणी बच्चों को कपड़े पहना रही थी। उसकी आँखों में बादल छाये दिखाई दिये। मेरी ओर देखते ही वर्षा आरम्भ हुई। ‘‘बाइदेउ, (असम में दीदी के लिए बाइदेउ शब्द का प्रयोग होता है) मैं नहीं जाना चाहती हूँ। आपके साथ यहीं पर मरना चाहती हूँ। लेकिन मजबूर हूँ। बच्चों के लिए जाना पड़ रहा है।’’ घर छोड़ते समय उसने फिर से मुड़ कर देखा: ‘‘क्या मैं यह घर फिर कभी नहीं देखूँगी! साल भर का अनाज भरा है, अन्दर-बाहर सब कुछ है। सारा चीनियों को मिलेगा।’’ मैंने हँसते हुए कहा, जिसका नाम लिखा होगा, वह खायेगा।

तेजपुर में सुबह आम सभा हुई। नेताओं ने कहा, ‘‘हमें भागना नहीं है। यहीं पर शांति के साथ प्रार्थना करते हुए मरना है।’’

श्री पुष्पलता दास ने कहा ‘‘चीनियों के प्रति हमारे मन में कोई शत्रुता नहीं है। हम उन्हें अपना भाई ही समझते हैं। लेकिन वे हमला करते हुए आ रहे हैं, इसलिए हम उनके साथ असहयोग करेंगे। हमारे सौभाग्य हैं कि विनोबाजी ने हमारे साथ मरने के लिए महिला शांति-सैनिकों को भेजा है।’’

कुछ घरों में ताला पड़ रहा था। लेकिन फिर भी अधिक लोग हिम्मत के साथ यहीं पर मरने की बात कह रहे थे।

शिलांग से दो मंत्री आये थे, कमिश्नर भी साथ थे। खबर मिली कि कलेक्टर का कहीं पता ही नहीं चल रहा है! तुरत दूसरे कलेक्टर की नियुक्ति हुई। नये कलेक्टर श्री राय और कमिश्नर भी [illegible] दौड़धूप कर रहे थे। दो दिन तक न वे सो पाये थे, न ठीक से कुछ खा पाये थे। अपनी जान खतरे में डाल कर काम रहे थे। उनका अंतिम कार्य चल रहा था। कमिश्नर ने ट्रेजरी की छत्तीस-लाख की नोटें जलवायीं। जेल और पागल-खाने के निवासियों की फेहरिस्त बनायी गयी। जो छह महीने में रिहा होने वाले थे, उन्हें छोड़ दिया गया। पावर हाउस और वाटर वर्क्स आदि भी उड़ा देना था, ताकि चीनियों के हाथ सिवा खाक के और कुछ न लग पाये। अधिकारियों ने हिम्मत की और कुछ और इंतजार करने का सोचा। इसी बीच ‘‘सीज फायर’’-युद्ध बंद हो गया और तेजपुर की हर चीज सुरक्षित रही।

बीस ता० की शाम को सरकार की तरफ से ऐलान हुआ, नागरिकों को आज्ञा दी गयी कि वे तेजपुर छोड़ कर बाहर चले

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

मैंने पूछा, "के?" उन्होंने मुझे कहा, "अभी, विनोबा भावे........"

कहते-कहते वह बहन भावविभोर हो उठी! पचास साल की उम्र, दुबली-पतली काया, माँग में सिंदूर, चेहरे पर भक्ति के उत्कट भाव! सात साल पहले विनोबा ने उसको दर्शन दिया था!

बहन आगे कहने लगी, "रात को नींद एकदम खुल गयी। सामने एक महापुरुष खड़ा था, ऐसी ही छोटी धोती, ऐसी शुभ्र दाढ़ी। मैंने पूछा, आप कौन हैं? उन्होंने कहा, मैं विनोबा भावे हूँ, तुम पहचानती नहीं। मैंने कहा, मैं घर-गिरस्ती वाली स्त्री हूँ, मैंने आपको पहचाना नहीं। उन्होंने मुझे पूछा, मेरे काम का प्रचार करोगी?"

जिस व्यक्ति ने रात को दर्शन दिया था, वह व्यक्ति आज साक्षात् सामने था, दर्शन की उतावली थी। आखिर दर्शन हुआ। बाबा के पास भी यही कहानी दुहरायी गयी।

थोड़ी देर बाद वह बहन अपने पतिदेव को दर्शन के लिए ले आयी। प्रचार के पहले अपना आचरण तो दुरुस्त चाहिए, इसलिए उस बहन के पतिदेव साथ में जमीन का दान-पत्र लेकर आये थे। शाम को वे फिर से दर्शन के लिए आये। उनके साथ और एक भाई थे। बहन के पतिदेव ने इनसे भी एक दान प्राप्त किया था और शायद अब यह दान-प्राप्ति की मालिका आगे इसी तरह चलने वाली थी।

• • •

"दुनिया में इस वक्त विज्ञान और आत्मज्ञान की होड़ चल रही है। विज्ञान आत्मज्ञान को घसीट रहा है। विज्ञान आगे गया और आत्मज्ञान पीछे रहा, तो जीवन में विसंगति आयेगी, दोनों समानान्तर होने चाहिए।

"विज्ञान की उन्नति हो रही है, यह हम बाह्य सृष्टि में तो देख रहे हैं। लेकिन अन्तर में विज्ञान या विकास हुआ है, ऐसा हम नहीं देखते।

"विज्ञान याने सत्यशोधन, ऐसा अगर अर्थ लें तो वह आत्मज्ञान को दावेगा। वह उसका दूसरा अर्थ होगा। वहाँ विज्ञान का अर्थ भौतिक शास्त्र, सृष्टिज्ञान। आज आत्मज्ञान पीछे रह गया है और सृष्टिज्ञान आगे। होना उल्टा चाहिए—आत्मज्ञान आगे और सृष्टिज्ञान पीछे। उसमें भी विसंगति रहेगी, लेकिन वह चल जायेगी। आत्मज्ञान पीछे और सृष्टिज्ञान आगे, ऐसा हुआ तो क्या होगा, देखिये। मन हमेशा सृष्टिज्ञान और आत्मा के साथ रहता है।

"मन दोनों बाजू रहता है, याने आतरिक और बाह्य प्रक्रिया कर सकता है। 'नामघोषा' में कहा है—'जड़ और चैतन्य के बीच में जो रहता है, वह मन है।' 'सत्य असत्यार जड़ चैतन्यर माजते थिये प्रकाशे ताके बुलि मन।' मन की इधर जाने की प्रक्रिया चली है और उधर जाने की प्रक्रिया चली है। मन को अगर उधर की आदत रही तो वह इधर आना नहीं चाहेगा और इधर की आदत रही तो उधर जाना नहीं चाहेगा। कुछ मन इधर जाते हैं, कुछ मन उधर जाते हैं।

"इतिहास दिखा रहा है कि 'इस्टर्न माइण्ड'—पूर्वीय मस्तिष्क आत्मा के साथ है और 'वेस्टर्न माइण्ड'—पश्चिमीय मस्तिष्क सृष्टिज्ञान के साथ है। ऐसे दो भाग नहीं होने चाहिए। लेकिन दोनों बाजू दोनों ज्ञान होते हुए भी ऐसा हुआ है। पूरब कहते हैं, तो उसमें चीन भी आता है, लेकिन उसकी प्रकृति अब आत्मा के साथ नहीं रही। जहाँ तक भारत, पैलेस्टाइन आदि का ताल्लुक है, उनकी प्रकृति आत्मा के साथ रही है, यह मैं आधुनिक काल की बात कर रहा हूँ।"

एक संस्था के संचालक ने बीच में ही पूछा, "हमारी संस्था में क्या हम ब्रह्मविद्या का प्रवेश कर सकते हैं?"

"आपकी संस्था एक सेवाकार्य है। वहाँ के लिए ब्रह्मविद्या आसान नहीं, सहज नहीं।

"ब्रह्मविद्या 'संगठित करने की चीज' नहीं, सहजजन्य है। सूर्यनारायण स्वयं-प्रेरित है। ब्रह्मविद्या स्वयंप्रेरित है—सूर्य-नारायण के समान है। संस्था अग्नि-नारायण के समान है। अग्नि सिलग गया तो अच्छा है, काम बनेगा, नहीं तो धुआँ तकलीफ देगा। अग्नि में भी प्रखरता होती है, लेकिन वह सूर्य के समान प्रखर नहीं होती। सूर्यनारायण फसल पकाता है, लेकिन वह चावल नहीं पका सकेगा। लेकिन अग्नि चावल पका देगा। इसलिए आपने अग्निकार्य किया तो आपसे कुछ हुआ। नहीं तो सिर्फ धुआँ ही धुआँ बनेगा। फिर इसमें से कुछ लोग निकलेंगे, वे स्वयं विद्या से भर गये हों तो वे आगे ब्रह्मविद्या कर सकते हैं। यह ब्रह्मविद्या के लिए 'फीडर' है।"

• • •

गाँव के प्रमुख लोगों की सभा खतम हुई और वे उठ कर चले गये। बाद में सबसे पीछे दीवाल से सट कर बैठे हुए ८-१० जवान उठ कर खड़े हो गये। वे किसान थे। लेकिन चेहरों पर खूब उत्साह था, आँखों में खूब चमक थी। बाबा के साथ बातें करने के लिए वे उत्सुक थे। सारे मुसलमान थे। बाबा से बातें हुईं, फिर भी वे कितनी देर तक कमरे के बाहर ही खड़े थे, और फिर उनका नेता धीरे से आगे आया और आशादी के कानों में कहने लगा, "बाबा कुरान शरीफ अच्छा गाते हैं न! हम सुनना चाहते हैं। हमारी प्रार्थना है कि आज की सभा में वे कुरान के बारे में कुछ कहें और वहाँ गायें भी?"

पाकिस्तान की याद आयी। वहाँ भी इसी तरह से बाबा से कुरान सुनने के लिए लोग लालायित होते थे। इस प्रसंग ने बाबा को भी पाकिस्तान-यात्रा के स्मरण में डुबो दिया था। शाम की सभा में पाकिस्तान-यात्रा का वर्णन हुआ।

शाम को बहुत बड़ी सभा हुई। वह नवयुवकों का समूह सभा के अग्रस्थान में बैठा था, कुरान जो सुनना था।

"हिन्दू याने कौन है? 'हिं' याने हिंसा और 'दु' याने दुःख; हिंसा से जिसको दुःख होता है, वह हिन्दू है। मुसलमान किसको कहते हैं? जो हमेशा शांति चाहता है और जो ईश्वर का स्मरण करता है। 'इस्लाम' का अर्थ है, ईश्वर के स्मरण में आना और शांति चाहना। गीता में कहा है कि तुम अब मेरी भक्ति करो, क्योंकि तुम सब मेरे पास आ रहे हो।

"कुरान में भी यही कहा है कि आप सब मेरे पास आने वाले हैं। जो गीता का शब्द है, वही कुरान का शब्द है। एक-दूसरे का तर्जुमा ही समझ लीजिये। सब धर्मों में यही कहा है।

"पृथ्वी में कमाने की चीज यही है कि भगवान् को राजी करो। आये थे अकेले ही और जायेंगे तो भी अकेले ही। जिन्दगी में आकर भगवान् की कृपा हासिल की, सबका प्रेम हासिल किया, तो सब कुछ पाया। अगर भगवान् की प्रसन्नता हासिल नहीं हुई, सबका प्रेम हासिल नहीं हुआ, तो हमने कुछ नहीं पाया।"

आखिर के चार-पाँच वाक्य रुक-रुक कर बोले गये, स्वर भारी हो गया था, आँखों से आँसुओं की धारा झरने लगी थी और सैकड़ों आँखें एकटक उसी मुख की ओर लगी थीं।

• • •

आज मंगल भोर वेला, भगवान् सहस्र-रश्मि अभी जागे नहीं थे। रंजित रविकर अभी लोगों को जगाने के लिए आये नहीं थे। फिर भी दोनों बाजू के छोटे-छोटे घरों में से मंद-मंद प्रकाश बाहर आ रहा था और दीपक ले-लेकर लोग दर्शन के लिए दौड़े आ रहे थे। फूल-पत्तियों से सजाये हुए द्वार के पास लोगों ने विनोबा को घेर लिया और द्रुत गति से आगे बढ़ने वाले पैरों को थोड़ा रुकना पड़ा। अनेक हाथ फूलों की माला पहना रहे थे, अनेक पदधूली ले रहे थे, और इसके बीच, उन पैरों से बिल्कुल सट कर खड़ा था एक कुत्ता। बच्चे-बूढ़े, स्त्री-पुरुष, मनुष्यों में हो दर्शन की होड़ लगी थी, वहाँ एक कुत्ता बीच में दखल दे! कुत्ते को भगाया जाने लगा, और सहसा—"देखो, उस कुत्ते को भगाओ मत। वह हमारा साथी है। युधिष्ठिर महाराज स्वर्ग में गये तब कुत्ता ही उनके साथ गया था। रास्ते में सबने धीरे-धीरे साथ छोड़ दिया, लेकिन कुत्ता आखिर तक रहा। आखिर में स्वर्ग के द्वार उनके लिए खुल गये। लेकिन कुत्ते को द्वार पर रोक लिया गया। यह देखा, तब युधिष्ठिर महाराज ने स्वर्ग में जाने से इन्कार कर दिया। कहा, इसने आखिर तक मेरा साथ दिया है, स्वर्ग में इसके साथ ही जाऊँगा। आखिर दोनों को अन्दर लिया गया। तो आपको ऐसी भूतदया रखनी चाहिये, जानवरों पर प्यार करना चाहिये। आपस-आपस में प्रेम करना चाहिये, गाँव में जो दुःखी हैं उनको अपने सुख का हिस्सा देना चाहिये, अपनी जमीन का हिस्सा भूमिहीनों को देना चाहिये।..."

कल भगवान् सहस्ररश्मि काफी ऊपर आ गया था, घर-घर के सामने की जमीन गोबर से लिपी हुई थी, उस पर सफेद अल्पना झलक रही थी और मध्य बिंदु पर सिंदूर, पत्तियों से सुशोभित कलश रखे हुए थे। दूर सैकड़ों का जमाव स्वागत के लिए खड़ा था और शहनाई के मंगल सुर वातावरण में उत्साह भर रहे थे।

शहनाई एक मंदिर में बज रही थी। गाँव का वह मंदिर आज सब धर्मों के लिए खुल गया था। बाबा के साथ-साथ वहाँ के एम. एल. ए. ने, जो कि मुस्लिम हैं, मंदिर में प्रवेश किया। खुद को मिली हुई पुष्पमालाएँ बाबा ने उन्होंको पहनायीं। धर्म-समन्वय की वह विजय थी।

जोगीग्राम नजदीक आ रहा था, और स्वागत-द्वार पर एक ग्रामदान जाहिर हुआ। वह ग्रामदान एक विशेष ग्रामदान है। जोगाई ग्राम भारत के क्रान्तिकारी कम्युनिस्टपार्टी का (आर. सी. पी. आई.) का प्रमुख केन्द्र था और वहाँ के प्रमुख नेता श्री पन्नालाल दासगुप्ता १९३९ से '४९ तक जेल में थे। इस गाँव ने १९४२ के "चले जाओ" आन्दोलन में भी अपना योगदान दिया था।

और दूसरे दिन भगवान् सहस्ररश्मि अपनी किरणों को वापस ले रहा था, लेकिन अभी पूरा छिप नहीं गया था। घर-घर के दरवाजे बन्द थे, क्योंकि घर के निवासी मैदान में प्रार्थना सभा के लिए एकत्रित हुए थे। बाबा ने कहा, "हमारे प्रेम में कुल दुनिया को लपेटना होगा। प्रेम एकदम इतना व्यापक नहीं कर सकते, यह बात ठीक है। प्रेम परिवार तक ही सीमित रहा तो उसका रूपान्तर आसक्ति में होगा। इसलिए परिवार तक जो प्रेम सीमित है वह पहले ग्राम तक करना चाहिये, फिर वह धीरे धीरे व्यापक रूप लेगा।"

प्रेम व्यापक चाहिए, विश्वव्यापक चाहिए, लेकिन उसकी भी आसक्ति नहीं चाहिए। हम विश्वव्यापक प्रेम चाहते हैं स्वातंत्र्य के लिए, लेकिन स्वातंत्र्य किससे बचने वाला है? एक पत्र के जवाब में बाबा ने लिखा, "देश के स्वातंत्र्य के बारे में आसक्ति होना योग्य ही है। लेकिन किसी भी देश का स्वातंत्र्य आज विश्वस्वातंत्र्य पर निर्भर है और वह अनासक्ति से बचने वाला है।" ●

सरकार को हमारी नेक सलाह

अच्छी नीयत के साथ सही हिकमत चाहिए

रामभूति

अगर हमारे देश में नागरिक शक्ति संगठित होती तो इस राष्ट्रीय संकट के समय जो कई काम सरकार की ओर से हो रहे हैं, वे नागरिकों की ओर से होते। रुपया या सोना इकट्ठा करना, रक्त-दान, जनता में प्रचार, सड़क और पुल आदि की सुरक्षा तथा स्थानीय सुरक्षा-समितियों का संगठन आदि ऐसे काम हैं, जो गैर-सरकारी शक्ति से हो सकते हैं और होने चाहिए। लेकिन कई कारणों से ऐसा नहीं हो पा रहा है। गाँव और जिले के स्तर पर सरकार और गैर-सरकारी लोगों का केवल इतना मेल दिखाई देता है कि स्थानीय सरकारी अधिकारियों ने सुरक्षा-समितियों में कुछ 'प्रमुख' लोगों को नामजद कर दिया है।

इन प्रमुख लोगों में ज्यादा लोग शासक-दल के हैं, कुछ विरोधी दलों के हैं और इने-गिने ऐसे भी हैं, जो पक्ष-मुक्त नागरिक हैं। देहात में जो भी काम हो रहा है, वह सब पंचायतों के द्वारा। लेकिन हर जगह प्रेरणा और नेतृत्व सरकारी अधिकारियों का है, वे ही समितियों और उप-समितियों के अध्यक्ष या संयोजक हैं। इन समितियों का मुख्य काम इतना ही है कि वे ऊपर के आदेशों के पालन में या चंदे आदि के लक्ष्यांकों की प्राप्ति में स्थानीय अधिकारियों की सहायता करें।

यह सही है कि चीनी आक्रमण के कारण देश में जो एकता और उत्साह पैदा हुआ है उसे लेकर लोग बहुत कुछ करने को तैयार हैं, और कर रहे हैं, लेकिन यह भी आसानी से समझा जा सकता है कि कुछ लोगों को अपने पीछे-पीछे चला कर सरकारी अधिकारी उस ठोस, टिकाऊ, व्यापक नागरिक शक्ति का संगठन नहीं कर सकते, जिसकी देश की शांति-रक्षा, उत्पादन-वृद्धि और निर्माण के लिए आवश्यकता है। कुछ नागरिकों का सहयोग और सब नागरिकों की संगठित शक्ति, दोनों में बहुत अंतर है। आज संगठित नागरिक शक्ति के बिना न स्वतंत्रता की रक्षा संभव है, न लोकतंत्र का विकास संभव है, और न निर्माण संभव है। इसलिए जिस युद्ध-स्तर पर सैनिक शक्ति को विकसित किया जा रहा है, उसी स्तर पर नागरिक शक्ति को भी संगठित करने की कोशिश होनी चाहिए। हमारी दृष्टि में वास्तविक "सिविल डिफेन्स" का अर्थ ही है नागरिक शक्ति का संगठन।

सही नीयत सही हुकूमत की गारण्टी नहीं है। नीयत के सही होते हुए भी काम की हिकमत गलत हो सकती है और दोनों सही हों, फिर भी जरूरी हिम्मत के अभाव में काम बिगड़ सकता है। इसलिए हमें तुरंत यह सोचना चाहिए कि नागरिक-शक्ति संगठित करने की दृष्टि से हमारे ढंग में कहाँ कमी है और वह कैसे दूर हो सकती है। हम इस संबंध में अपने अनुभव के आधार पर मुख्य रूप से नीचे लिखी बातों की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं :—

(१) स्थानीय समितियों की जिस तरह रचना हुई है उसमें प्रधानता अफसरों की है और 'नेता' उसके साथी हैं। जहाँ तक जनता का संबंध है वह कहीं अपना स्थान नहीं देखती सिवाय इसके कि जब लोग उसके पास पहुँचें, तो वह चंदा या खून दे दे। बात कुछ ऐसी है कि पिछले १५ वर्षों में हमारे देश के नागरिक-जीवन का जिस तरह विकास हुआ है, उसके कारण जनता की नजर में अफसर भय या दुराव तथा नेता तिरस्कार या अविश्वास का पात्र बन गया है। इस संकट की स्थिति के कारण यह भावना कुछ दब जरूर गयी है, लेकिन बिलकुल दूर हो गयी हो ऐसी बात नहीं है। ये लोग जनता में उत्सर्ग की प्रेरणा नहीं भर सकते। समितियों की रचना में होना यह चाहिए कि अगर शहर की समिति बनानी हो तो हर मुहल्ले या वार्ड के हर परिवार से एक-एक बालिग 'वार्ड-सभा' में इकट्ठा हों और ये बालिग एकराय होकर—चुनाव न हो—तीन या पाँच व्यक्तियों की 'वार्ड-समिति' बनायें, जिसका एक संयोजक हो और विभिन्न कामों के लिए वार्ड-समिति की उप-समितियाँ बनायी जायँ, जिनके अलग-अलग संयोजक हों। इस तरह हर वार्ड के संयोजकों को लेकर 'नगर-समिति' बने, जो आवश्यकतानुसार अन्य सरकारी और गैर-सरकारी 'प्रमुख' व्यक्तियों को 'कोआप्ट' कर ले या उनमें से कुछ को अपनी बैठकों में स्थायी रूप से आमंत्रित कर लिया करे। इस तरह बनी हुई 'नगर-समिति' नागरिकों का विश्वास प्राप्त कर सकेगी और उन्हें त्याग और उत्सर्ग के लिए प्रेरित कर सकेगी और हर व्यक्ति यह महसूस करेगा कि देश की रक्षा और निर्माण में उसे केवल आदेश का पालन नहीं करना है, बल्कि अपने अभिक्रम से निर्णय करना है और अपने निर्णय से काम करना है।

इसी तरह ग्राम-समितियों की भी रचना होनी चाहिए—हर टोले के लिए अलग-अलग और पूरे गाँव के लिए सम्मिलित। टोले के हर परिवार से एक बालिग को लेकर 'टोला-सभा' बनायी जाय, जिसका एक संयोजक हो। 'टोला-सभा', अगर गाँव छोटा हो तो सीधे ग्राम-सभा बन सकती है—इकट्ठा होकर तीन या पाँच की 'टोला-समिति' बनाये, जो अपने संयोजक के नेतृत्व में टोला-सभा के निर्णयों को कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी ले। टोले में रहने वाले १६ से ४५ साल तक के सब पुरुष, जहाँ संभव हो स्त्रियाँ भी स्वेच्छा से अपना नाम देकर 'टोला-सेना' बनायें और संगठित ढंग से काम करें। इस तरह हर 'टोला-सभा' के संयोजक को लेकर और पंचायत, को-आपरेटिव और स्कूल के कुछ लोगों को तथा अन्य 'प्रमुख' लोगों को शामिल करके 'ग्राम-सभा' बने। यह ग्राम-सभा लगभग ११ सदस्यों की 'ग्राम-समिति' बनाये, जिसमें अन्य लोग भी रहें; लेकिन टोला-समितियों के संयोजक अवश्य रहें। हर टोला-सेना को मिला कर 'ग्रामसेना' कहलाये। कई ऐसे गाँव भी हो सकते हैं, जिनमें टोला-संगठनों की जरूरत न हो और एकसाथ पूरे गाँव का संगठन काफी हो। मुख्य बात यह है कि बालिगों की आम सभा समय-समय पर मिले और नीति तय करे, जिसका कार्यान्वयन एक छोटी समिति के नेतृत्व में ग्राम-सेना के द्वारा हो। ऐसा करने से ही अधिक-से-अधिक बालिगों में अभिक्रम और निर्णय की शक्ति जगेगी, जो लोक-शक्ति की बुनियाद होगी। जरूरत इस बात की है कि हर जगह इस संकट का मुकाबिला करने के लिए नया, समन्वित, विश्वास-पात्र नेतृत्व पैदा हो, कहीं किसी प्रकार का हठ या विरोध न रहे। किसी को पार्टी, जाति, धन, अधिकार या संस्था के कारण न प्रमुखता मिले और न दुराव। हमें नये सिरे से कोशिश करनी है कि राष्ट्रीय जीवन में ऐसे अधिकारियों और नागरिकों की जिनमें ईमानदारी, लगन और सेवा-भावना तो है, लेकिन कोई 'उपाधि' नहीं है, कद्र बढ़े और वे सामने आने को प्रोत्साहित हों। इसके लिए बने-बनाये नेताओं, दलों और संस्थाओं से परे जाकर जनता-जनार्दन को संबोधित करना पड़ेगा। अगर ऐसा नहीं होगा तो जनता अपने को उपेक्षित महसूस करेगी। उपेक्षा से लोग अन्यमनस्क हो जायेंगे, फिर मन में खटास आयेगी और खटास से असहकार की वृत्ति पैदा होगी और आज जो त्याग दिखाई देता है, उसका स्थान अविश्वास और स्वार्थ ले लेगा।

(२) छोटा किसान, मजदूर, हरिजन, आदिवासी तथा इसी तरह के दूसरे लोग जिनकी संख्या अपने देश में करोड़ों करोड़ है, आज भी स्वतंत्रता की भूमिका में-इस संकट का अर्थ नहीं समझ रहे हैं। उनके जीवन में यों ही इतना संकट रहता है और हमेशा से रहा है कि बड़ा-से-बड़ा संकट भी उनके लिए नया नहीं रह गया है। इन लोगों में सक्रिय देश-प्रेम जगाने का क्या उपाय है। इन्हीं के पास देश की श्रम-शक्ति है, और अगर इनके मन में सक्रिय देश-प्रेम न हो तो परिणाम क्या होगा, इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है। यही वह समुदाय है, जिसमें 'मुक्ति-सेना' का जादू भी काम करता है। देश की सुरक्षा की दृष्टि से इस विशाल जन-समुदाय को रोटी और इज्जत देने के प्रश्न को 'डिफन्स मेजर' मानना चाहिए। भूमि, धंधा, शिक्षा, मकान और स्वास्थ्य, ये इस समुदाय की आवश्यकताएँ हैं, जिनकी पूर्ति के उपाय तत्काल होने चाहिए। गाँव की पंचायत, ग्राम-सभा और ब्लाक को यह जिम्मेदारी अपने ऊपर लेनी चाहिए और निर्धारित अवधि के भीतर इसे पूरा करना चाहिए। अपने भीतर के अन्याय को मिटा कर ही हम बाहर के अन्याय का सफल प्रतिकार कर सकते हैं। यह भावना गाँव-गाँव, शहर-शहर में फैलनी चाहिए।

(३) युद्ध के लिए धन इकट्ठा करने में भी भूलें हो रही हैं। इन्कम टैक्स अफसर, सेल्स-टैक्स अफसर या इक्साइज इन्स्पेक्टर द्वारा चंदा वसूल करना गलत है। डरा धमका कर चंदा वसूल करना गलत है। डरा-धमका कर चंदा वसूल करना या लक्ष्यांक पूरा करने की उतावली में कुछ 'बड़ी मछलियों' को पकड़ कर काम चला लेने का परिणाम अच्छा नहीं होगा। इस काम में दबाव या भय का स्थान तो है ही नहीं, और चंदे के लिए भी चुने हुए लोगों के पास नहीं, हर घर जाना चाहिए। देश के लिए त्याग करने के आनंद से कोई भी वंचित क्यों रहे?

चंदा वसूल करने के अभियान में नेतृत्व नागरिक का हो और सरकारी अधिकारी उसका सहयोगी हो, और अगर अधिकारी इस काम में आगे बढ़े तो वह नागरिकों के बीच नागरिक की हैसियत लेकर जाय, सरकारी रोब-दाब लेकर नहीं। कुछ अधिकारी ऐसे हैं जो खूबी के साथ जनता का प्रेम प्राप्त कर रहे हैं, लेकिन बाकी अपने गलत तरीकों से दुराव की नयी दीवालें खड़ी कर रहे हैं। चंदे की बाकायदा रसीद दी जानी चाहिए और उसका हिसाब-किताब अधिकारियों के ही पास रहना चाहिए।

पंचायतों को भी चंदा वसूल करने का काम सौंपना ठीक नहीं है। बहुत कम गाँव ऐसे हैं, जिनमें पंचायतें दलबंदी और झगड़े का कारण न बनी हों। ऐसी हालत में वे पूरे गाँव का विश्वास नहीं प्राप्त कर सकतीं और व्यापक लोक-शक्ति का माध्यम नहीं बन सकतीं। कोई भी तंत्र जो कानून और पार्टी की शक्ति पर खड़ा है, यह काम नहीं कर सकता। इन कामों के लिए हमें निर्दलीय ग्राम-सभाओं और ग्राम-समितियों का ही सहारा लेना चाहिए।

(४) जब हम केवल कुछ चुने हुए लोगों को प्राथमिकता देते हैं तो वे बाद को किसी-न-किसी तरह हमारी बेबसी और अपने पद या स्थान का अनुचित

लाभ उठाने की कोशिश करते हैं। ठेकेदार या व्यापारी ज्यादा चंदा देकर मुनाफाखोरी की तरकीबें सोचते हैं। आज इस बात की बहुत बड़ी जरूरत है कि स्वार्थी अधिकारी, स्वार्थी व्यापारी और स्वार्थी नेता का गुट न बनने दिया जाय। अगर जगह-जगह इस तरह के गुट बन गये — और अगर हमारे काम के ढंग में सुधार न हुआ, तो ढील पड़ जायेंगे—तो निश्चित रूप से हमारे नागरिक-मोर्चे में बड़ी चौड़ी दरार पड़ेगी, जिसे बाद में भरना असम्भव नहीं तो अत्यंत कठिन अवश्य होगा।

(५) बाजारों के लिए हर जगह विजिलेन्स समितियाँ होनी चाहिए। एक ओर तो नगर-समितियाँ और ग्राम-समितियाँ यह काम करें और दूसरी ओर अनाज, कपड़ा, दवा, नमक, मिट्टी का तेल, सीमेन्ट और कागज आदि के व्यापारी अपनी ओर से ही समितियाँ बनायें, जो मुनाफाखोरी न होने दें। कई बार बाजार में गड़बड़ी अधिकारियों के गलत निर्णयों के कारण पैदा हो जाती है। ऐसा वातावरण बने कि किसी अधिकारी या व्यापारी को गलत काम करने का साहस न हो।

(६) हर ग्राम-सैनिक या नगर-सैनिक अपने पड़ोस के १० या १५ परिवारों की सेवा की जिम्मेदारी विशेष रूप से ले। उसका यह काम होगा कि वह उन परिवारों को आश्वस्त रखे, देखे कि उनका बाजार में शोषण न हो, उन पर कोई जुल्म न हो और बेकारी या बीमारी आदि के शिकार न होने पायें। गरीबों, कमजोरों या जो आज तक उपेक्षित और तिरस्कृत हैं उनकी ओर अब तत्परतापूर्वक ध्यान जाना चाहिए।

(७) अगर सरकार और जनता को राष्ट्रीय संकट में एकसाथ मिल कर चलना है तो आवश्यक है कि सरकारी कार्यालयों की सफाई हो—भ्रष्टाचार से टाल मटोल से, प्रमाद और अनास्था से। इसके बिना राष्ट्र का चरित्र ऊपर नहीं उठेगा। और चरित्र बिना शक्ति कहाँ से आयेगी?

हमारा यह खयाल है कि अगर इन बातों का ध्यान रखा जायगा, तो सरकार की सुरक्षा संबंधी जो भी योजनाएँ होंगी वे अच्छी तरह चलेंगी और सबसे बड़ी बात तो यह होगी कि शांति-रक्षा, उत्पादन-वृद्धि और निर्माण से संबंध रखने वाले सरकार के कई काम जनता की सहकार-शक्ति उठा लेगी और सरकार की शक्ति प्रत्यक्ष रूप से सुरक्षा के कामों के लिए बच जायगी। लेकिन यह तब होगा जब सरकार यह सोचेगी कि नागरिक शक्ति का संगठन एक शैक्षणिक प्रक्रिया है, यह काम अधिकारी के आदेश या नेता के उपदेश से नहीं हो सकता। इसीलिए यह आवश्यक है कि हर जगह कुछ जागरूक, निस्पृह, निष्पक्ष और निर्भीक व्यक्ति निकलें जो जनता और सरकार, दोनों के सामने सत्य रख सकें और जो दोनों के बीच 'पुल' बन सकें। यह संकट नया है, इसलिए इसका मुकाबला करने के तरीके नये होने चाहिए।

एक वेदना और प्रार्थना

• शांतिप्रिय

एक मित्र का कहना है कि यूरोप के उनके एक 'पैसिफिस्ट', शांतिवादी मित्र को इससे बहुत दुःख हुआ है कि हिंदुस्तान को चीन वालों से लड़ाई करना पड़ रहा है। उनकी अपेक्षा थी कि हिंदुस्तान इस प्रकार लड़ाई में नहीं उलझेगा। वे चाहते हैं कि किसी तरह से भी हिंदुस्तान को चीन से समझौता कर लेना चाहिए।

चीन से लड़ाई करने की यह आफत सिर पर आ पड़ी, इसका हमको भी दुःख है, और यह लड़ाई, जो अभी कुछ रुकी है फिर भी, पुनः प्रारंभ हो सकती है। पर दुःख करने से वास्तविकता तो नहीं बदलती। जो करना ही पड़ता है, उसे किये बिना छुटकारा नहीं होता। हम शांतिप्रिय होते हुए भी, चीन वालों के हमले का जो सामना भारत सरकार कर रही है, उससे हमारी सहानुभूति है। हम चाहते हैं कि इस देश में और दुनिया में जहाँ भी हमारे दोस्त हैं वहाँ, ऐसी कोई हरकत न हो, जिससे भारत देश की प्रतिकार-शक्ति में बाधा आये। हम वही सहायता देंगे, जो हम अपने विचारों के अनुसार दे सकते हैं। हम मानते हैं कि प्रत्येक अहिंसक कार्यकर्ता का आज इस विषय में यह कर्तव्य है।

चीन वाले हमला करेंगे, यह अंदेशा भारत ने नहीं रखा था। दुनिया जानती है कि इस हमले का सामना करने के लिए जो पूरी तैयारी चाहिए थी, वह यहाँ नहीं थी, क्योंकि एक शांतिप्रिय राष्ट्र पर कोई हमला करेगा, खासकर वह राष्ट्र जिसने "पंचशील" पर हिन्दुस्तान के साथ हस्ताक्षर किये थे, वह राष्ट्र भारत पर हमला ही कर बैठेगा, ऐसी कल्पना करना भारत के लिए कठिन था और फिर चीन वाले हिन्दुस्तान से बातचीत भी तो कर रहे थे। एक तरफ बातचीत भी होती रहे और दूसरी तरफ हमला भी हो यह एक अनोखी बात, विशेषतः हिन्दुस्तान के लिए तो अनोखी बात थी।

खैर, हमला हुआ। हजारों की संख्या में चीनी फौज हिंदुस्तान में घुस आयी। अब वह वापस जा रहे हैं। कहाँ तक? उसे वे ही तय करेंगे।

यह हमला उन्होंने क्यों किया? कहा जाता है कि अंग्रेजी साम्राज्यशाही के जमाने में हिंदुस्तान के अधिपति, अंग्रेजों ने चीन का कुछ हिस्सा लेकर हिन्दुस्तान में मिलाया था, उसे चीन वाले वापस लेना चाहते हैं। क्या खूब दलील है! "तूने नहीं, तेरे दादा ने मेरे दादा से कर्ज लिया था, उसके कर्जनामे फट गये हैं, लेकिन फिर भी वह कर्ज तो तुम पर हमारा है ही, वह कर्ज तुझे अदा करना होगा। कर्ज अदा किये जाने की कोई रसीद तेरे पास है, तो भी हम उसे नहीं मानेंगे, क्योंकि वह भी हमारे बेवकूफ दादा ने अपनी बेवकूफी में ही तेरे दादा को दे दी होगी।" इस प्रकार यह दलील है।

इस दलील का भी आश्चर्य कोई क्यों करे? क्योंकि जब कोई हमला करना तय है, तो उसके लिए दलील निकल ही आती है! पर आश्चर्य इसलिए होता है कि ऐसी दलीलों का प्रभाव बर्ट्रेंड रसेल जैसे मेधावी सज्जनों पर भी पड़ा, ऐसा भास होता है। उन्होंने भारत को सलाह दी थी कि चीन वालों की शर्तें मान कर उनसे बातचीत करो। उन्हें जब सारी स्थिति समझायी गयी, तब उनके ध्यान में आया कि भारत ने जो सूचनाएँ की हैं, वे ही सही हैं, चीन की नहीं।

अब चीन चाहता है कि भारत उससे समझौता करे और 'कुछ भी हो जाय, पर दुनिया में लड़ाई न रहे', ऐसा मानने वाले हमारे मित्र के दोस्त, शांति के भावुक भी चाहते हैं कि भारत इस मामले को किसी तरह पटा ले। हम जरा यहाँ सोचें कि भारत इस मामले में क्या कर सकता है?

यहाँ यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि "लड़ाई-झगड़ा अच्छा नहीं है," इस बात को बहुत ही अधिक कीमत चुका कर भारत मानता आया है और मान रहा है। लेकिन वह करे, तो क्या करे?

क्या वह अपनी जमीन, हमलावर को दे दे? यदि यह मान भी लिया जाय कि चीन की कुछ भूमि अंग्रेजों ने हिंदुस्तान में मिलायी, यद्यपि यह बात यथार्थ नहीं है, तो भी उसे वापस करना क्या न्यायसंगत है? यदि अंग्रेजों ने हिन्दुस्तान के अधिपति के नाते की हुई कमाई वापस करना न्यायसंगत है, तो उन्होंने हिंदुस्तान से जो भी संपत्ति, या भूमि या और जो कुछ यहाँ से जाने के पूर्व गँवाया, उसे हिन्दुस्तान को वापस करने का इस दुनिया में क्या किसी ने कोई आयोजन किया है? अंग्रेज गये तब तक उनकी कमाई-गँवाई सब ही भारत की संचित-निधि है और उसके बारे में किसी का कोई आपत्ति उठाना उचित नहीं समझा जायगा। हम मानते हैं कि दुनिया के सब शांतिवादी हमसे इस विषय में सहमत होंगे।

फिर भी यदि किसी त्रुटि के कारण दोनों देशों की सीमाओं के निर्धारण में कोई अनियमितता रह गयी हो तो उसकी बातचीत करने के लिए भारत पहले की भाँति अभी भी तैयार है, आंतर्राष्ट्रीय कोर्ट में मामला पेश करने के लिए भी तैयार है। लेकिन हमलावर अपना हमला वापस लेगा तभी तो यह होगा?

यदि कोई यह मानता हो कि भारत चूँकि शांतिप्रिय है, इसलिए कुछ जमीन देकर भी उसे झगड़े से पिंड छुड़ाना चाहिए, तो उसे कुछ बातें ध्यान में रेकर ही इस विषय पर सोचना होगा।

यह बात सही है कि भारत शांतिप्रिय है। वह शांतिप्रिय है, इसीलिए यहाँ भूदान हो सका और वह शांतिप्रिय है, इसीलिए यहाँ भाषानुसार प्रांतरचना हो सकी।

किन्तु यह होते हुए भी इस बात को ध्यान में रखना अति आवश्यक है कि भारत में एक अल्पसंख्या ऐसी भी है, जो अहिंसा को अपना जीवन ध्येय नहीं मानती। उसे नया दर्शन नहीं है। वह परम्परावादी है। यदि भारत को सब तरफ से तंग किया जाय, "हम कहते हैं, उस प्रकार करो, वरना हम तुम पर धावा बोल देंगे", इस प्रकार की धमकियाँ यदि अन्य राष्ट्र भारत को देने लगे तो यहाँ के शांतिप्रिय लोगों के लिए ऐसी स्थिति हानिकारक होगी और परम्परावादियों का बल इस देश में उभरेगा।

फिर किसी भी देश की आम जनता को यह समझाना मुश्किल होता है कि वह अपनी भूमि दूसरे राष्ट्र को दे दे और वह भी ऐसे राष्ट्र को दे, जिसने उस पर हमला किया है! परन्तु यदि कुछ जमीन चीन की भारत के नक्शे में दाखिल है, ऐसा न्याय स्वयं चीनवालों से या आंतर्राष्ट्रीय कोर्ट में, या पंच-फैसले द्वारा साबित हो जाय तो भारत की जनता उसे मान लेगी, इस प्रकार की आशा उससे की जा सकती है, ऐसा हम मानते हैं।

पर हमें वेदना इस बात की है कि हमारे मित्र के ये 'पैसिफिस्ट' दोस्त इस बात को इस दृष्टि से क्यों नहीं सोचते और क्यों नहीं अपनी सारी नैतिक शक्ति भारत के साथ कर देते? ऐसा करने में उनका युद्धविरोध अधिक प्रभावी होगा। यह भारत देश इन जैसे दोस्तों का आदर करता है और वे भी भारत पर प्रेम करते हैं ऐसा वह मानता है, तो क्या उनसे की हुई यह प्रार्थना मुनासिब नहीं होगी? हम आशा करते हैं कि इस विषय पर वे प्रेमपूर्वक सोचेंगे।

भारत सरकार से हमारे कई मतभेद हैं। पर विदेशों से मैत्री निबाहने के उसके जो प्रयत्न हैं, उनसे हम सहमत हैं और हम मानते हैं कि हमारी इस सहमति की दुनिया के सारे शांतिवादियों को कद्र करनी चाहिए।

हमने यह जो विचार व्यक्त किये हैं, वे हमले के शिकार हुए भूभाग के एक निवासी होते हुए भी उस नाते नहीं, अपितु एक अहिंसा के साधक के नाते किये हैं। हमारा खयाल है कि अहिंसक कार्यकर्ता इस तरह सोचने पर बाध्य है।

निर्भयता से अन्याय का प्रतिकार करें

– विनोबा

जब मुझे कहा गया कि आप लोगों (एन० सी० सी०) के सामने कुछ कहूँ, तो मैंने खुशी से स्वीकार कर लिया। 'एन० सी० सी०' रेगुलर आर्मी नहीं है, लेकिन यहाँ देश की रक्षा के लिए जीवन देंगे, ऐसी भावना रहती है। इसलिए आपको यह समझना चाहिए कि देश की रक्षा याने क्या और वह कैसे करेंगे? देश की रक्षा की शक्ति देश में लाना है।

आप सभी विद्यार्थी समाज के अंग हैं। आप मजबूत, निर्भय और निश्छल बनते हैं तो आपके नजदीक के गाँव भी वैसे ही बनते हैं और समाज भी वैसा ही बनता है। हम अगर समाज को कहेंगे कि हम आपकी रक्षा करेंगे तो समाज अनाथ बनेगा। हमें यह काम नहीं करना है। सबकी रक्षा का ठेका हमने नहीं लिया है। हमें साहस, धैर्य और हिम्मत रखना है। इसके साथ ही गाँव के लोगों को भी अपनी रक्षा करने की शक्ति लानी है। समाज को निर्भय बनाना आपका काम है। दही जमाना है, उतने दही को अलग रखेंगे तो वह खट्टा बनेगा, लेकिन वही दही दूध में डाल देंगे तो सारे दूध का दही बन जायगा। आप समाज-रूप दूध का दही बनाने वाले दही हैं। आपको समाज में निर्भयता पैदा करनी है।

अहिंसा कहाँ?

हिन्दुस्तान की मुख्य शक्ति अहिंसा है। निर्भयता के बिना अहिंसा आ नहीं सकती। यहाँ के महापुरुषों ने हमें सिखाया है कि जो डरपोक या कायर है, वह अहिंसा का पालन नहीं कर सकता। डरपोक व्यक्ति भय से भाग जाता है। वह शरीर से हिंसा नहीं करता, लेकिन मन से करता है। मानसिक हिंसा बहुत भयानक होती है। इसलिए जो कायर है, वह अहिंसा का पालन नहीं कर सकता।

क्रूर पुरुष भी अहिंसा का पालन नहीं कर सकता। वीर पुरुष क्रूर नहीं बनता। जहाँ लड़ना होता है, वहाँ की मर्यादाओं का पालन वीर पुरुष करता है। वह ध्यान रखता है कि जो दोषी नहीं हैं, उन्हें तकलीफ नहीं हो, जिनके साथ लड़ना है, उनके लिए व्यक्तिगत मत्सर न हो, मर्यादाओं का उल्लंघन न हो। ऐसी जगह अहिंसा पनपती है।

संघर्ष टिकेगा नहीं

मैं नहीं मानता कि चीन और भारत का संघर्ष टिकने वाला है। अगर यह टिका तो दुनिया नहीं टिकेगी! हिन्दुस्तान में ४५ करोड़ लोग हैं। पाकिस्तान हमारा ही अंग है। वहाँ के १० करोड़ लोग हमारे ही भाई हैं। वे और हम मिल कर ५५ करोड़ लोग होते हैं। उधर चीन के ६५ करोड़ लोग हैं। सब मिल कर दुनिया का ४० प्रतिशत हो जाता है। ये अगर आपस-आपस में संघर्ष, द्वेष और दुश्मनी बढ़ायेंगे तो विश्वयुद्ध हो जायगा। उसमें दुनिया भर के लोग शामिल होंगे। आजकल के जमाने में 'एटोमिक वेपेन्स' निकले हैं। वे मानव-समाज को नष्ट कर देंगे। इसलिए हमारा विश्वास है कि यह संघर्ष टिकेगा नहीं।

हम तैयार रहें

यह संघर्ष नहीं टिकेगा, लेकिन हमको तैयार रहना चाहिए। तैयार होने का जोश नहीं होना चाहिए। आप 'एन० सी० सी०' में तालीम ले रहे हैं, तो क्या आप सेवा छोड़ देंगे? क्या उत्पादन में भाग नहीं लेंगे? यह सब काम करेंगे, लेकिन इसके साथ-साथ शरीर को भी सख्त बनाना चाहिए और सहन-शक्ति बढ़ानी चाहिए। आजकल के जवानों में सहन-शक्ति कम होती है, तो वे चीन के साथ कैसे लड़ेंगे? इसलिए आप अभी जितनी मेहनत करते हैं, उससे ज्यादा मेहनत आपको करनी चाहिए। स्कूल से छुट्टी मिले, तब गाँव-गाँव में पैदल यात्रा करनी चाहिए। रोज २५ मील चलने की आदत होनी चाहिए। आप यह सब सीखेंगे तो देश का बल बढ़ेगा और उसी में से अहिंसा निकलेगी। अगर आप नरम बनेंगे, कमजोर बनेंगे तो काम नहीं होगा। इसलिए गाँव-गाँव के लोगों को अपनी रक्षा के लिए तैयार रहना चाहिए।

मौत से मत डरो

मरने से नहीं डरना चाहिए। आखिर मृत्यु कब आती है? जब समय आता है, तब। समय से पहले कोई नहीं मरता। बाबा जंगलों में घूमा, उसे रास्ते में साँप मिले, लेकिन किसीने काटा नहीं। साँप में मारने की क्या ताकत है! बाबा में इतना ज्ञान भरा हुआ है तो क्या एक साँप उसे खतम कर देगा? यदि हाँ, तो साँप बाबा से बड़ा हुआ। वह बाबा को खतम नहीं कर सकता। शरीर मर जाय, तब भी आत्मा नहीं मर सकती। शरीर भी तब तक खतम नहीं होगा, जब तक आयु का क्षय नहीं होगा। इसलिए मरने से नहीं डरना चाहिए। सारी प्रजा को इस प्रकार की शिक्षा मिलेगी तो उसे कोई नहीं डरा सकता।

आज कोई जुल्म करने वाला आता है तो प्रजा डर जाती है। यह जो डर है, उससे जुल्म चलता है। भय छोड़ो तो जीत गये। यह तालीम आपको, हमको और सबको लेना है। हमको किसी से भय नहीं है, न चीनी जनता से, न सिपाहियों से। सिपाही तो हुक्म बजाते हैं। अन्याय से आक्रमण होता है तो हम उसका प्रतिकार करेंगे, इतनी हमारी वृत्ति है। यह धर्म है। इस धर्म के लिए मर मिटने की शक्ति भगवान् आपको दें।

[पड़ाव: जियागंज, जि० मुर्शिदाबाद, प० बंगाल में ९ दिसंबर, '६२ को कालेज एन० सी० सी० के सामने दिये गये प्रवचन से।]

चीनी आक्रमण और शराब

• डा० युद्धवीर सिंह

चीनी आक्रमण पर जब लोकसभा में बहस हो रही थी, तो कुछ संसद-सदस्यों ने दो अद्भुत सुझाव दिये— एक—मद्यनिषेध बन्द कर दिया जाये! दो—नमक पर कर लगा दिया जावे!

और ये सुझाव तब दिये गये, जब कि पं० जवाहरलाल नेहरू की अपील पर रुपया और सोना रोज बरस रहा है! छोटा-बड़ा, बच्चा-बूढ़ा, स्त्री-पुरुष, हिन्दू-मुसलमान, कांग्रेसी-गैरकांग्रेसी, सब तन-मन-धन देश को अर्पण कर रहे हैं। लोग चन्दा दे रहे हैं—हर महीने देने के वचन दे रहे हैं, लगन से और खुशी से दे रहे हैं।

उस दिन दिल्ली के स्टेशन पर रोटियाँ बेचने वाली एक विधवा वृद्धा के अनुरोध पर उसे मैं पंडितजी के यहाँ लेकर गया। उसका अनुरोध था कि वह अपनी सचित पूंजी देश-रक्षा के लिए अपने प्यारे प्रधान मंत्री के चरणों में स्वयं अर्पण करेगी। मैं हैरान रह गया, जब उस फटी धोती पहनने वाली गरीब बुढ़िया ने १४० रु० प्रधान मंत्री को भेंट किये। शायद वह बुढ़िया उमर भर में भी इतना नमक न खायेगी, जिसका कर १४० रु० हो। इस रुपये के साथ जो आशीर्वाद और शुभकामना है, क्या उसका कोई मूल्य नहीं है? धनी लाखों दे रहे हैं और गरीब अपना सर्वस्व दे रहे हैं। उस दिन मुनीरका गाँव के भूतपूर्व नम्बरदार ने जब ११०० रु० मुझे रक्षा-कोष के लिए दिये, तो मैंने पूछा कि क्या यह आपने सारे गाँव से एकत्रित किये हैं, या जो ८-१० भाई उनके साथ थे, उनसे ही यह रुपया मिला है? मैं चौधरी गूगन सिंह को पहले से जानता हूँ। मैं हैरान रह गया, जब उन्होंने कहा कि यह रुपया केवल उनकी उम्र भर की कमाई है!

इतिहास में शायद यह पहला अवसर है, जब सारा भारतवर्ष एक बाहरी शत्रु के विरुद्ध लड़ रहा है। फौजें नहीं, देश का बच्चा-बच्चा युद्ध में शामिल है! इस समय हमें बहुत ही सोच विचार कर पूरे विचार विमर्श के पश्चात मुँह से निकालनी चाहिये। हमें न तो जोश में होश खोने चाहिये और न जोश को ठंडा पड़ने देना चाहिये। इस समय होश कायम रखने का वक्त है, न कि शराब पीकर या पिला कर होश खोने का। यह तो ऐसा अवसर था, जब कि यह अपील की जाती कि देश के शराबी शराब पीना छोड़ दें और वह धन जो शराब पीने से बचे, रक्षा-कोष में दें। आबकारी, अर्थात् शराब पर जो कर लिया जाता है, वह शराब के मूल्य से लगभग चौथाई हिस्सा होता है। आज चौथाई नहीं, बल्कि समस्त पैसा हमें चाहिए। ४०-५० करोड़ रु० की आबकारी की आमदनी को छोड़ कर २०० करोड़ शराब की कीमत हमें चाहिए। क्या आज यह अवसर है कि हम देशवासियों से यह कहें कि शराब पीओ, पर हमें रुपये में चवन्नी दे दो! चवन्नी के लिए न केवल हम १ रु० खोयेंगे, बल्कि पीने वाले का होश भी खो देंगे!

उस दिन एक समाचार पढ़ा कि गुड़गाँवा के एक सज्जन ने यह प्रतिज्ञा की कि वे सिगरेट पीना बन्द करते हैं और जो रुपया उससे बचेगा, वह प्रतिमास रक्षा-कोष में देते रहेंगे। मैं इन प्रतिज्ञा करने वालों को बधाई देता हूँ। आज इसी प्रकार की प्रतिज्ञाएँ हमारे शराब व तम्बाकू पीने वाले भाइयों से करवानी चाहिए, न कि यह कि थोड़े से रुपये के लोभ में शराब पीने को बढ़ावा देकर अपने देशवासियों को स्वास्थ्य, धन व आचार, तीनों की बरबादी करने दें।

यह खुशी की बात है कि संसद ने मद्य-निषेध बन्द करने के सुझाव को नहीं अपनाया और हम आशा करते हैं कि वह उस पर आइन्दा विचार भी करेगी। राज्य सरकारें भी मद्यनिषेध को और दृढ़ करेंगी, उनको ढीला करने के प्रस्तावों पर ध्यान न देंगी।

अभी तो गांधीजी के साथी और उनके नेतृत्व में स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने वाले लोग जिन्दा हैं और भारत तथा राज्य-सरकारों में अच्छे पद पर आरूढ़ हैं। नमक-कर और शराब के कर, दोनों को ही हटाना गांधीजी की दो मुख्य कामनाएँ थीं। नमक-कर उनके जीवन में ही स्वराज्य-सरकार ने हटा दिया था। शराब-कर महाराष्ट्र, मद्रास, गुजरात ने सम्पूर्ण तथा अन्य कई राज्यों ने आंशिक रूप में नशाबन्दी करके खतम कर दिया था। भारत के लिए वह दिन बदनसीब व बदकिस्मती का होगा जब वह इन दोनों में कुछ फेर-बदल कर राष्ट्रपिता की छाती में छूरा घोंपेगा! ईश्वर से प्रार्थना है कि हमारे नेताओं को सद्बुद्धि दे!

असतो मा सद्गमय, तमसोर्मा ज्योतिर्गमय। ●

अहिंसा की अपरिहार्यता

[पृष्ठ ७ का शेष]

लेंगे वे सबाई क्रूर होंगे। मान लीजिये, सेना ने जीत लिया, तो सिपाही क्रूर बन गये, वे देश में मालिक हो गये, उनके हाथ में विजयी होकर सत्ता आयी, तो हमको उस सैन्य से डर होगा। उस सैन्य को शान्ति के समय में कायम रखेंगे, तो वे आकर लूटेंगे। चम्बल घाटी में डाका डालने वालों को हमने देखा। दूसरे महायुद्ध में जो दाखिल थे और बाद में छूटे थे, वे थोड़े लोग उसमें शामिल थे। यह सिर्फ अपने देश में ही नहीं, बल्कि दूसरे देश में भी है, वैसे अपने देश में कम है। दूसरे देशों में यह हमेशा बना है कि जहाँ विजयी सेना के पल्ले में देश आया, वहाँ उसने क्रूरता से देश को पीड़न किया। इसलिए सेना वीर रहे, लेकिन क्रूर न रहे, यह जरूरी है, तो सेना के लिए भी अहिंसा को मान्य किया।

उत्पादन और अहिंसा

अहिंसा का एक दावा यह है कि उत्पादन बढ़ाना है। उसमें जो रचनात्मक शक्ति का उपयोग होता है वह सारी अहिंसक शक्ति है। और जहाँ सेना के आधार पर राज्य रहता है वहाँ भी सेना को खिलाना पिलाना, बाकी रचना कायम रखना, भाव ऊपर न चढ़े, मिलावट न हो, इस सारे के लिए अहिंसक काम जरूरी है। किसान खेती में लगे हैं, व्यापारी संयमपूर्वक, प्रेमपूर्वक व्यापार करते हैं, चूसते नहीं और भूतदया का ख्याल रख कर काम करते हैं, यह बहुत जरूरी होता है। इतना जो सारा रचनात्मक कार्य करना जरूरी है, वह अहिंसा के बिना होगा नहीं। यह अहिंसा का अंग है और उसका उपयोग वीर सेना को होता है।

अहिंसक प्रतिरोध

अहिंसा का आखिरी दावा यह है कि बिना सेना के वह शत्रु का सामना करती है। अहिंसक लोग शत्रु के सामने जाकर अपनी निर्वैर-वृत्ति से प्राण अर्पण करके शत्रु को रोक सकते हैं। यह अहिंसा का दावा अभी तक सिद्ध नहीं हुआ। व्यक्तिगत क्षेत्र में सिद्ध हुआ है। अनेक सत्पुरुषों ने, सामने जो क्रूर, सताने वाले लोग डाकू वगैरह लोग थे, उनको इसी तरह से जीत लिया। लेकिन अहिंसक सेना समूहरूपेण बाहर के हमले का विरोध सफलतापूर्वक कर रही है और कर सकती है, यह सिद्ध नहीं हुआ है। यह कल्पना में हो सकता है, लेकिन इतनी अहिंसा अभी तक हमारे हृदय में नहीं आयी और विकसित नहीं हुई।

यह तब होगा, जब अहिंसक शान्ति-सैनिक चित्त के ऊपर उठे होंगे और वे शत्रु की सेना का मुकाबला करते हैं, ऐसा भाव उनके हृदय में नहीं होगा। वे अपने भाई हैं, गुमराह हैं, उनको उनके सामने जाकर समझाना है, ऐसा मान कर बिलकुल हँसमुख-से सामने जायेंगे और मैत्रीभाव से जायेंगे और परिवर्तन करेंगे। उनके पीछे ऐसा समाज होगा जो अहिंसक-भाव से काम करेगा, गाँव गाँव में ग्राम-स्वराज्य होगा, झगड़े नहीं होंगे, मारपीट नहीं होगी, लोग स्वयस्फूर्त काम कर रहे होंगे, भोगवृत्ति कम होगी, स्वच्छन्दता कम होगी, संयम होगा और उस अहिंसक समाज के प्रतीक रूप एक सेना है, हमारी शान्ति-सेना है। सारा समाज हिंसामय है और थोड़े-से शांति-सैनिक, यह शांति-सेना का लक्षण नहीं है। सारा समाज अहिंसामय है और उसके प्रतिनिधि, पुष्पित अंश, फलित अंश, "शान्ति-सैनिक।" जैसे आम के वृक्ष का सर्वश्रेष्ठ अंश आम का फल होता है, लेकिन वृक्ष नीम का और फल आम का, यह नहीं हो सकता, वैसे सारा समाज हिंसा से भरा हुआ, भयभीत और थोड़े शान्ति-सैनिक, मीठा आम, यह नहीं हो सकता। पेड़ भी आम का होना चाहिए। मानो सारा समाज अहिंसक है और समाज में चुने हुए जो सर्वोत्तम अहिंसक हैं, उनकी शान्ति-सेना बने।

लेकिन अभी तक ऐसा हुआ नहीं। इसलिए अहिंसा का यह दावा कल्पना-क्षेत्र में आता है, अभी तक प्रत्यक्ष व्यवहार में नहीं ला सके। अहिंसा के कितने दावे सर्वमान्य हुए हैं और कौनसे सर्वमान्य होने की परिस्थिति में नहीं है, यह हमने अभी बताया है।

युद्ध-प्रयत्न !

हम ऐसे काम करेंगे, जिससे युद्ध रोक सकते हैं और "वार एफर्ट्स", युद्ध प्रयत्नों की मदद हो सकती है। हमने विनोद में कहा था कि हम पैदल यात्रा कर रहे हैं, तो युद्ध प्रयत्नों को मदद हो रही है। इस वक्त हम ट्रेन या हवाई जहाज का उपयोग नहीं कर रहे हैं, जो कि लश्कर का सामान यहाँ से वहाँ ले जाने में, व्यापारिक संवर्धन में आवश्यक होता है। इसलिए लोग पैदल यात्रा करेंगे तो युद्ध प्रयत्न को मदद मिलेगी। अब बाबा की यात्रा युद्ध का विरोध भी करती है। आप या हम ट्रेन में बैठेंगे तो टिकट खरीदनी पड़ेगी, वह पैसा युद्ध प्रयत्न में जायगा। तो यह कार्य ठीक काम को मदद करेगा। इससे जो राष्ट्र वीरतापूर्वक बचाव करना चाहता है, उसको मदद मिलती है। अगर वह ऊपर उठना चाहता है, लड़ाई टाल कर ऊपर के स्तर में आना चाहता है, तो उससे मदद मिलती है। इसके लिए सर्वोत्तम विचार भगवद्गीता है। भगवद्गीता पर कितने भाष्य हो गये! हरएक ने अलग-अलग अर्थ बताया। किसी ने भक्ति का अर्थ निकाला, किसी ने त्याग का अर्थ निकाला, किसी ने संन्यास का अर्थ निकाला, किसी ने ध्यान का अर्थ निकाला और उत्पादन को बढ़ाने का भी अर्थ निकाला। ये सब अर्थ गीता के मत में आते हैं। लेकिन जहाँ लड़ाई का प्रसंग आयेगा, लाचारी से लड़ेगा। लड़ाई टल नहीं सकती, ऐसी हालत आयेगी तो भागो या लड़ो, यही रास्ता होगा और ऐसी हालत में लड़ना होगा, तो वह धर्म-युद्ध करेगा। धर्म-युद्ध राग द्वेषरहित लड़ा जाता है, यह भी गीता सिखाती है। गीता का वही एक वाक्य शांति रखने के लिए मदद करता है और वही एक वाक्य वीरतापूर्वक लड़ने में मदद देता है। इस प्रकार का वचन सच्चा अहिंसक वचन है। इसी प्रकार का कार्य सच्चा अहिंसक कार्य होगा। मान लीजिये, गाँव-गाँव में ग्रामदान बन रहे हैं, झगड़ा खतम है, उत्पादन बढ़ाने में लोग लगे हैं, पुलिस, जेल, कोर्ट का काम नहीं है, यह हो रहा है तो वीरतापूर्वक लड़ सकते हैं और युद्ध खतम भी कर सकते हैं। अगर ऐसे ग्रामदान पाँच लाख हो गये तो नैतिक शक्ति उत्पन्न हो सकती है।

आज भारत में एकता दीखती है, लेकिन वह पोली है, ऊपर-ऊपर की है। भारत पर संकट आया, इसलिए यह एकता आयी। अन्तर में अगर एकता आयेगी तो उससे इतनी नैतिक शक्ति बनेगी कि चीन आदि का हमला करने का साहस नहीं होगा। सामने वाले का शस्त्र गलत साबित होगा। लेकिन इतना नहीं कर सके, काफी कर सके, लेकिन पूर्ण नहीं कर सके तो वह ग्रामदान 'डिफेन्स मेजर' होगा। देश सन्तुष्ट है, इधर ग्रामदान है, तो सरकार को गाँव की ओर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं। सरकार की शक्ति सेना बढ़ाने में लगी तो यह ग्रामदान 'डिफेन्स मेजर' हो सकता है और यही ग्रामदान युद्ध टालने का और अहिंसा का उत्तम साधन हो सकता है।

[पड़ाव : नूरपुर, जिला मुर्शिदाबाद; गांधी-निधि के कार्यकर्ताओं के बीच ता० ३० नवम्बर '६२ को दिया गया प्रवचन।]

चीनी हमले की आड़ लेकर नशाबंदी खत्म करना अव्यावहारिक

बेशक चीन ने भारत पर आक्रमण किया है और इसका मुकाबला पूरी ताकत से किया जाना चाहिये। उत्तरप्रदेश की सरकार ने ढाई करोड़ की आय बढ़ाने की गरज से राज्य में नशाबंदी उठा दी है। अरबों रुपयों का सोना बाजार में दबा पड़ा है और करोड़ों रुपये इन्कम टैक्स का व्यापारियों की ओर लेना निकलता है। सरकार शक्ति से यदि इस ओर कदम उठाये तो आर्थिक दृष्टि से शासन को काफी लाभ हो सकता है। मगर ऐसा न करके आय को बढ़ाने के लिए जनता को नशाखोर बनाना बुद्धि का दिवालियापन ही है।

युद्ध के मैदान में सर्दीले और बर्फीले स्थानों पर जवानों को जहाँ तक शराब पहुँचाने का सवाल है, पहुँचायी जाय, मैं इसकी निन्दा नहीं करता; मगर जनता में शराब सुलभ करने की नीति जनजीवन को विनाश कर देने वाली ही है। युद्ध के समय प्रत्येक नागरिक जागरूक रह कर बुद्धि और विवेक से अपना कर्तव्य पूरा कर सके, इसलिए और भी जरूरी हो जाता है कि नागरिक जीवन को नशाबंदी-कानून से मुक्त नहीं किया जाय, अर्थात् लोगों को आम-तौर पर शराब पीने की खुली छूट नहीं दी जाय।

शासन और जनता के बीच कटुता बढ़े, युद्ध प्रयत्न में बाधा पड़े, ऐसा कदम आज किसी को भी उठाने की जरूरत नहीं है। मगर मैं इतना जरूर चाहूँगा कि जिस चीज को आज तक बुरा समझा जाता था, वह एकदम अच्छी कैसे बन गयी, इसका खुलासा उत्तर प्रदेश की कांग्रेसी सरकार के नुमाइन्दा करने की कृपा करेंगे, तो उत्तम होगा।

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री मण्डलोई, विकास-मंत्री श्री जैन और आबकारी मंत्री श्री गंगवालजी ने राज्य में नशाबंदी नीति को चालू रखने की घोषणा करके सही कदम उठाया है। इस कदम की प्रशंसा करते हुए मैं मध्यप्रदेश शासन को धन्यवाद एवं राज्य की जनता को बधाई देता हूँ। मद्रास, गुजरात और महाराष्ट्र राज्य में भी नशाबंदी खत्म कर दी जायेगी, ऐसी खबर फैलाने वालों से सावधान रहने की आवश्यकता है। इन राज्यों में नशाबंदी का काम पूरे विश्वास और निष्ठा से किया जाता है। ये राज्य ही तो समाज-सुधार और जीवन विकास के लिए हमारी आशा के केन्द्र हैं। इन पर शंका करना अपने आप पर शंका करना है।

—अमृतलाल 'अमृत', मंत्री
अ० भा० नशाबंदी-परिषद, दिल्ली–६

"विनोबा-प्रवचन"

२२ नवम्बर '६२ से विनोबा के प्रवचनों का प्रकाशन हो रहा है। वार्षिक चंदा २० रुपये है। कम-से-कम ग्राहक ६ महीने तक के ही बनाये जायेंगे। ग्राहक बनने वाले रकम पेशगी भेजें। जो लोग चाहें, वे नमूने की प्रति के लिए लिखें।

—व्यवस्थापक, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी-१

चीन-भारत सीमा-विवाद सुलझाने के लिए पंचनिर्णय का समर्थन

नागरिक-स्वतन्त्रताओं की रक्षा करने का अनुरोध

सेवाग्राम में शांति और रचनात्मक सम्मेलन सम्पन्न

सेवाग्राम (वर्धा), १७ दिसम्बर: राष्ट्र से चीन-भारत सीमा विवाद का गौरव तथा शान्तिपूर्ण समाधान लाने और मध्यस्थता के सभी प्रयत्नों का समर्थन करने के आह्वान के साथ शांति और रचनात्मक कार्यकर्ता-सम्मेलन कल यहाँ समाप्त हो गया।

सम्मेलन ने चीन द्वारा आदिष्ट एक-पक्षीय युद्ध-विरामजनित परिवर्तित स्थिति और कुछ क्षेत्रों से चीनी सेनाओं की वापसी पर सन्तोष प्रकट किया।

सम्मेलन ने युद्धविराम स्थायी बनाने और भारत-चीन सीमा-विवाद के शांतिपूर्ण समाधान हेतु वार्ताओं का पथ प्रशस्त करने की दिशा में ६ एशियाई तटस्थ देशों के कोलम्बो-सम्मेलन के प्रयत्नों का स्वागत किया।

एक प्रस्ताव द्वारा सम्मेलन ने दुहराया कि आपसी बातचीत और पंचनिर्णय ही बल-प्रयोग का विकल्प हो सकता है। आज यह सम्भव नहीं प्रतीत होता कि दोनों देशों में प्रत्यक्ष वार्ता प्रारम्भ हो। प्रस्ताव में कहा गया कि सरकार ने पंचनिर्णय का सिद्धान्त अथवा मध्यस्थता का आवेदन स्वीकार करने का अपना इरादा घोषित कर दिया है। अतः सुझाया गया कि चीन को भी पंचनिर्णय-सिद्धांत स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया जाय।

नागरिक-स्वतन्त्रता के सम्बन्ध में सम्मेलन का मत था, वर्तमान संकट का एक ऐसा पहलू है, जिस पर बारीक निगाह की जरूरत है। सरकार और उसके बाहर लोकतन्त्र हर तरह से दृढ़ किया जाना चाहिये।

इस संकेत के साथ कि नागरिक स्वतन्त्रता पर आघात सम्भव है, प्रस्ताव में कहा गया कि कुछ परिस्थितियों में राष्ट्रीय सुरक्षा के हित में कुछ नागरिक-स्वतंत्रताओं का हनन किया जा सकता है, किन्तु विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा होनी चाहिये। लोकतन्त्र के ये ही आधार हैं।

प्रस्ताव में कहा गया है कि कुछ घटित घटनाओं से संकेत मिला है कि सिर्फ सरकारी कार्रवाई ही नहीं, बल्कि कुछ वर्गों की असहिष्णु प्रवृत्ति से नागरिक-स्वतन्त्रताएँ खतरे में पड़ सकती हैं। राष्ट्रीय शक्ति एकरूपता में नहीं होती। विभिन्न मतों के उन्मुक्त प्रकाशन को सहन करके ही इसकी रक्षा की जा सकती है, अतः सम्मेलन का राष्ट्र से अनुरोध है कि नागरिक-स्वतन्त्रता का सिद्धांत ढीला न होने पाये।

सम्मेलन ने एक समन्वय-समिति नियुक्त की, जिसमें सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, यू० एन० ढेबर, जी० रामचन्द्रन्, मनमोहन चौधरी और वैकुण्ठलाल मेहता भी हैं। समिति के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी को सरकार से बातचीत करने के लिए एक उपसमिति बनाने का भी अधिकार दिया गया।

द्विदिवसीय सम्मेलन में भाग लेने वालों में सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, यू० एन० ढेबर, श्रीमन्नारायण, जी० रामचन्द्रन् और प्रख्यात अमेरिकी शान्तिवादी ए० जे० मस्ते के नाम उल्लेख्य हैं।

सम्मेलन ने विश्वविद्यालयों में अनिवार्य सैनिक प्रशिक्षण आरम्भ करने की सरकारी योजना पर भी विचार किया।

—प्रेस ट्रस्ट

प्लासी का दान विनोबा को

विनोबा को पश्चिम बंगाल में काफी संख्या में ग्रामदान मिलते जा रहे हैं। १५ दिसम्बर का समाचार है कि इतिहासप्रसिद्ध प्लासी गाँव का ग्रामदान हुआ है। प्लासी युद्ध का वह स्थान है, जहाँ पर २३ जून, सन् १७५७ भारत में ब्रिटिश हुकूमत की नींव पड़ी थी। इस ऐतिहासिक स्थान का ग्रामदान होना एक विशेष महत्त्व की घटना है।

नदिया जिले में प्रवेश करने पर विनोबाजी को श्री चैतन्य की भूमि ने न केवल प्लासी का ग्रामदान, अपितु एक आदिवासी गाँव, नान्मधौरा का भी ग्रामदान समर्पित किया।

नदिया जिले में प्रवेश करने पर प० बंगाल के दो मंत्री एवं बड़ी तादाद में उपस्थित जनता ने विनोबाजी का हार्दिक स्वागत किया। एक सभा में विनोबाजी ने कहा कि इस भूमि में दानधारा की कमी न होगी, क्योंकि श्री चैतन्य ने प्रेम का संदेश देते हुए सर्वस्व-त्याग पर जोर दिया था। प्लासी के ग्रामदान का जिक्र करते हुए विनोबा ने कहा कि प्लासी का ग्रामदान ५०० ग्रामदानों के बराबर है। इससे ग्रामस्वराज्य का पथ प्रशस्त होगा।

श्री देवदत्त निडर द्वारा एक वर्ष की पदयात्रा का संकल्प

राजस्थान सर्वोदय-सम्मेलन के बाद श्री देवदत्त निडर के नेतृत्व में १० दिसम्बर से हायल ग्राम से एक पदयात्रा-टोली रवाना हुई है, जो पूरे वर्ष भर राजस्थान में पदयात्रा करेगी। पदयात्रा में सर्वोदय-सम्मेलन का संदेश और संकट के अवसर पर ग्रामीण जनता को स्वावलंबन एवं अपनी खुद की रक्षा करने के लिए निर्भर बनने पर जोर दिया जायेगा।

इस अंक में

तेलंगाना में भूमि-वितरण

आंध्र प्रदेश के तेलंगाना में भूदान में प्राप्त जमीन का बँटवारा शुरू हो गया है। वितरण-समिति के संयोजक श्री उन्नेत केशवरावजी ने यह निश्चय किया है कि आइन्दा चार-छह महीने तेलंगाना में जो भूदान के वितरण-योग्य जमीन है, उसको वे वितरित करके रहेंगे। जमीन अभी करीब ५० हजार एकड़ बाकी है। श्री केशवरावजी की सबसे बड़ी मुश्किल प्रवास-खर्च आदि के लिए अर्थ की है। फिर भी हिम्मत से मैदान में उतरे हैं। उनके मित्र श्री रामजी माणिकराव ने हुजूरनगर, मिढियालगुड़ा तालुके में ४१० एकड़ जमीन का वितरण किया। श्री० वी० सुब्बाराव ने पालोंचा और दुरगम पहाड़ में एक सौ एकड़ जमीन वितरित की और अब वे अचमपेट और नागरकरनूल की ओर जा रहे हैं। स्वयं श्री केशवराव वारंगल और सम्मपेट जिले में जा रहे हैं।

गांधी विचार उपकेन्द्र, आर्यनगर, कानपुर के सर्वोदय-पात्रों का अक्टूबर का आय-व्यय विवरण

२२५ सर्वोदय-पात्रों से ९६ रु० ८९ न० पै०, नागरिक सहयोग ६१ रु०; पिछला जमा ६८ न० पै०; कुल १५८ रु० ५७ न० पै० में से शान्ति-सैनिक का पारिश्रमिक ९० रु०, सर्व सेवा संघ को १६ रु० १४ न० पै०, क्षेत्रीय सेवा-कार्यों में २८ रु० १७ न० पै०, समाचार-पत्र का ३ रु० १३ न० पै०, मकान किराया २० रु०। शेष १ रु० १३ न० पै० रहा।

श्री अरेयर स्वामी की आंध्र में पदयात्रा

आंध्र के अनन्तपुर जिले में श्री अरेयर स्वामी की पदयात्रा २२ अक्टूबर से १० नवम्बर तक हुई। इस अवधि में ३२ गाँवों की २४२ की पदयात्रा हुई। अनन्तपुर के लोकश्रेय समाज के सेवक श्री रामस्वामी राव ने अस्वस्थ होते हुए २५ दिन इनके साथ पदयात्रा की। पदयात्रा में ७५ रुपये का सर्वोदय-साहित्य बिका। अँग्रेजी 'सर्वोदय' पत्र के २२ ग्राहक बने। आगे भी अरेयर स्वामी की पदयात्रा मैसूर के कोलार जिले में चल रही है।

विनोबाजी का संशोधित पदयात्रा-कार्यक्रम

दिसंबर ता० २१-इन्द्रानी, २२-पाँचग्राम (हवड़ा से २११ किलोमीटर दूर, लालबाग कोर्ट रोड स्टेशन के निकट), २३-नवग्राम, २४-सागरदीही और २५ दिसंबर-बोरसा।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८१७० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८१००
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रांति का संदेशवाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार   २८ दिसम्बर '६२   वर्ष ९ : अंक १३

प्लासी की विजय-यात्रा

विनोबा

[भारत में अंग्रेजी राज्य की नींव रखने वाले लार्ड राबर्ट क्लाइव ने २३ जून, १७५७ को प्लासी का ऐतिहासिक युद्ध जीता था। उसी स्थान, प्लासी में विनोबाजी १५ दिसंबर, १९६२ को अपनी सतत पदयात्रा (जो १८ अप्रैल, १९५१ को प्रारंभ हुई थी) करते हुए पहुँचे और उन्हें प्लासी ग्रामदान में मिला। इस प्रकार विनोबाजी की भी विजय हुई। प्लासी के ग्रामदान से ग्राम-स्वराज्य की नींव दृढ़तर होगी। विनोबा ने प्लासी गाँव ग्रामदान में मिलने के पहले जो प्रवचन दिया था, वह हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

मुर्शिदाबाद जिले के बाद हमें वीरभूम जिले में शान्तिनिकेतन जाना था। हमारे यात्रा-क्रम में प्लासी नहीं था। हमने कहा कि हमें वहाँ जाना है। वहाँ भारत की हार हुई है, फिर भी हमें वह स्थान देखना है। प्लासी का नाम कन्याकुमारी से कश्मीर तक भारत का बच्चा-बच्चा जानता है। सात हजार मील दूर से व्यापार करने के लिए अंग्रेज आये। छह-छह महीने उनको समुद्र में बिताना पड़ा। लेकिन वे स्वर्ण-भूमि खोजते हुए आखिर यहाँ पहुँच गये। यहाँ की भाषा सीखी और वे यहाँ के लोगों से व्यापार करने लगे। धीरे-धीरे उनकी ताकत बढ़ी और आखिर सारा राज्य उनके हाथ में आ गया।

प्लासी की लड़ाई क्लाइव ने जीती। उसके लिए जो कुछ किया गया, उसमें न भारत का गौरव था और न इंग्लैंड का गौरव। वहाँ जिन दुराइयों का आश्रय लिया गया, उसके लिए दोनों देश बदनाम हैं। जीतने वाले का नाम भी बदनाम है और हारने वाले का भी नाम बदनाम है। जहाँ विजय होती है, वहाँ कुछ सीखना होता है। लेकिन जहाँ हार होती है, वहाँ ज्यादा सीखना होता है। हमें प्लासी सीखना है। यहाँ हमें यह चिंतन करने का मौका मिलता है कि किन दुर्गुणों के कारण हम हारे।

प्लासी-दर्शन की भावना

यद्यपि यह स्थान-दर्शन की दृष्टि से अशुभ दर्शन है, फिर भी हमने यही माना कि हमारे लिए शुभ दर्शन ही होगा और हमें यहाँ से एकता का संदेश मिलेगा। हमारे मन में यह भावना पैदा हुई और हमने साथियों से कहा कि अगर प्लासी ग्रामदान होता है तो उसे हम सौ गाँव के ग्रामदान के बराबर मानेंगे और कह सकेंगे कि प्लासी की बदनामी धुल गयी। जिस प्लासी ने खोया था, उसने फिर से पाया। इससे सारे भारत पर उसका असर होगा। प्लासी के लोग ग्रामदान करेंगे तो सारे भारत पर उसका असर होगा।

ग्रामदान क्यों?

कोई गाँव ग्रामदान होता है तो उसकी ताकत बढ़ती है, सबका एक परिवार बनता है, एक दिल बनता है। संघ शक्ति के कारण हर ग्रामदानी गाँव को ये लाभ होते हैं। ये सारे लाभ प्लासी को भी होंगे, लेकिन इसके अलावा भी उसे बहुत ज्यादा लाभ होगा और सारे भारत की सहानुभूति प्लासी को मिलेगी।

गत १५ दिसम्बर को विनोबा को पश्चिम बंगाल के नदिया जिले का इतिहास प्रसिद्ध प्लासी गाँव ग्रामदान में मिला।

हमें बताया गया है कि यहाँ सरकार स्मारक बनाना चाहती है। प्लासी ग्रामदान हो जाय तो इससे बढ़कर क्या स्मारक हो सकता है? कोई बगीचा बनाया या कोई मकान बनाया और वहाँ आकर पर्यटक ठहरे और पूछें कि गाँव की क्या हालत है? उनसे कहा जायगा कि लोग अपने-अपने स्वार्थ में पड़े हैं, झगड़े चल रहे हैं, पचासों पक्ष हैं, तो पर्यटक क्या कहेंगे? इसके बजाय उन्हें यह जानकारी मिली कि प्लासी गाँव एक हो गया है, सब लोग मिलजुल कर काम करते हैं। भूमिहीनों को २० वाँ हिस्सा जमीन दे दी है, ग्रामसभा बना ली है, उस सभा के हाथ में अपनी मिल्कियत दे दी और ग्राम-सेवा की योजना ग्रामसभा कर रही है, तो वे पर्यटक यहाँ से स्फूर्ति लेकर जायेंगे। प्लासी के ग्रामदान होने से विदेशों से आने वाले लोग यहाँ से भारत के लिए आदर लेकर जायेंगे, यहाँ से अनादर की भावना लेकर लौटेंगे। प्लासी की लड़ाई में ठीक तरह से लड़ नहीं सके, बुरी तरह से हारे, आपस-आपस में युद्ध किया, यह तो कलंक हुआ ही और आज भी यहाँ शोषण चलता है, झगड़ा होता है तो भारत की बदनामी होगी। अगर ग्रामदान होकर एक परिवार हो जाता है तो आने वाले देखेंगे कि पुराना पातक धुल गया। इससे जो महान् कीर्ति प्लासी गाँव की होगी, उसके अलावा भी बहुत-से लाभ होंगे।

सरकार का ध्यान

प्लासी ग्रामदान के लिए लोगों को समझाने के लिए कलकत्ता से मंत्री लोग आ रहे हैं। अगर यह ग्रामदान हो गया तो इसके विकास के लिए क्या कलकत्ता की सरकार ध्यान नहीं देगी? हर ग्रामदानी गाँव के विकास की तरफ सरकार को ध्यान देना ही पड़ेगा, लेकिन प्लासी के विकास के लिए तो अवश्य ही देना पड़ेगा। जब यह ग्रामदान हुआ तो अखिल भारतीय स्मारक बन जायेगा। उस स्मारक को मण्डित करने के लिए और इस गाँव को श्रीनिकेतन बनाने के लिए सरकार की ताकत मदद में आयेगी, यह जरा भी अक्ल हो तो कोई भी मनुष्य समझ सकता है।

प्लासी ग्राम या कोई भी ग्राम सरकार का आश्रित बनें, यह मैं नहीं चाहता। गाँव तो अपने ही आश्रय में रहेगा। वह अपनी ही ताकत से काम करेगा। फिर भी सरकार है और वह गाँव से टैक्स लेती है, तो वह गाँव के विकास के लिए कुछ करती है, तो कोई गलत काम नहीं है। प्लासी जैसे गाँव के प्रति विशेष ध्यान वह देगी, यह तो कहे बिना भी समझा जा सकता है।

सच्चा स्मारक

यहाँ स्मारक बनेगा तो सरकार जमीन लेगी और हजारों रुपये खर्च करेगी। जहाँ एक मकान के लिए,

स्मारक के लिए हजारों रुपये खर्च करेगी, वहाँ सारे गाँव के विकास के लिए क्या कुछ नहीं करेगी? यह हो ही नहीं सकता। आज की हालत में अगर सरकार स्मारक बनाती है और लोगों में अधिग्रहण करके जमीन खरीदती है, तो लोगों को पूरा दाम नहीं मिलेगा। उस हालत में लोगों को तकलीफ होगी। इसलिए सरकार कहीं स्मारक बनाती है तो लोग उसे शाप देते हैं! उसके बजाय ग्रामदान हुआ और उसे विकसित करने के लिए सरकार ने ताकत लगायी, तो उस हालत में जो स्मारक बनेगा, वह सबका आशीर्वाद प्राप्त करेगा और वही सच्चा स्मारक होगा।

प्लासी का स्थान

एक अखिल दृष्टि रख कर बाबा अपने आग्रह से प्लासी आया है, क्योंकि वह मानता है कि प्लासी सिर्फ भारत के इतिहास में नहीं, इंग्लैंड के इतिहास में भी है। अंग्रेजों ने अपने राज्य की नींव यहीं डाली थी। इसके बाद उनके हाथ में उड़ीसा, बंगाल और बिहार आये। बंगाल और बिहार बहुत ही फसलवाले प्रदेश हैं। गंगा-भागीरथी, पद्मा का किनारा। सर्वोत्तम भूमि। अपार धन अंग्रेजों के हाथ में आया। तब उनका मुकाबला टीपू सुल्तान से हुआ, दौलतराम सिन्धिया से हुआ, रणजीत सिंह से हुआ। उसमें उनको कोई मुश्किल नहीं हुई। अंग्रेजों से वे लोग कस कर लड़े, फिर भी हारे। उसकी भी एक कहानी है। अगर टीपू सुल्तान और मराठे एक हो जाते तो दूसरी ही कहानी बनती! लेकिन उन दोनों के बीच विद्वेष था। टीपू को मराठों की मदद से खत्म किया और मराठे आपस के झगड़े के कारण खत्म हुए! फिर रणजीत सिंह से लड़ना आसान हो गया। इस तरह प्लासी में अंग्रेजी राज्य की नींव पड़ी।

पानीपत की लड़ाई में अहमदशाह अब्दाली के खिलाफ लड़ कर १७६१ में मराठे खत्म हुए। बाद में १०-१२ साल में उन्होंने अपनी ताकत बनायी, फिर भी उन पर जो प्रहार हुआ था, उसका लाभ अंग्रेजों को मिला। अंग्रेजों के लिए हरी झण्डी हो गयी। यह सारा संस्मरण प्लासी में होता है। इससे चित्त को वेदना पहुँचती है। उस वेदना का कोई उपदेश (उपचार) तो होना ही चाहिए। अगर यहाँ एकता नहीं होती तो यह वेदना और बढ़ेगी, लेकिन ग्रामदान हो जायगा तो वेदना मिटेगी और भारत के इतिहास को नया मोड़ मिल जायगा।

विशेष दृष्टि

आप लोग जानते हैं कि चीन के साथ हम लोगों का मुकाबला हो रहा है। पहले अंग्रेजों के साथ मुकाबला था और उनका मुकाबला करना कठिन नहीं था, क्योंकि वे सात हजार मील दूर से आये थे। लेकिन चीन तो हमारा पड़ोसी है। वह बड़ा देश है और हमारा भी बड़ा देश है। हमको पड़ोस-पड़ोस में कायम के लिए रहना है। ऐसी हालत में भारत को अपने पुराने सभी दुर्गुणों को खतम करना होगा। इसके लिए यह प्लासी का ग्रामदान काम देगा, ऐसी दृष्टि रख कर हम यहाँ आये हैं।

[पड़ाव-प्लासी, जिला-नदिया, प० बंगाल का स्वागत-भाषण, ता० १५-१२-६२]

हमारी क्रांति कसौटी पर

• राममूर्ति

अपने हजारों वर्षों के इतिहास में मनुष्य ने अपनी स्वतंत्रता को ऊँचे-से-ऊँचे मानवीय मूल्य के रूप में विकसित किया है, बल्कि उसने यह माना है कि स्वतंत्रता दूसरे सब मूल्यों का आधार है। इसीलिए वह स्वतंत्रता के लिए अपने दूसरे सब अधिकारों, आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का त्याग करने में एक विचित्र धन्यता का अनुभव करता है। प्राणों से बड़ा प्यार और प्यार से बड़ी आजादी, ऐसा वह मानता आया है; उसके लिए आजादी ही एक ऐसा सौदा है, जिसकी कीमत किसी दूसरी चीज में आँकी नहीं जा सकती। आजादी जमीन नहीं है; आजादी धन-दौलत नहीं है; आजादी इन सबसे बढ़कर स्वयं जीवन है। जीवन खोकर जीवित रहने में रस क्या है!

हम अपनी भूमि चाहते हैं, क्योंकि उससे हमारा अस्तित्व जुड़ा है; हम अपना देश चाहते हैं, क्योंकि उससे हमारा भविष्य जुड़ा है। चीन ने आज इन दोनों पर एकसाथ आघात किया है। हमारी भूमि की रक्षा हमारा सैनिक कर रहा है, लेकिन भविष्य की रक्षा सैनिक की नहीं, नागरिक की जिम्मेदारी है। लगता है कि हमारी जनता को अभी यह प्रतीति जगी नहीं है। शायद वह नहीं सोच रही है कि अंतिम चीनी सिपाही के चले जाने से ही आक्रमण खतम नहीं होगा; उसके चुभाये हुए काँटों को देख-देख कर, गिन-गिन कर निकालना होगा।

चीनी आक्रमण के कारण हमारी चिंताएँ कुछ बदलती दिखाई दे रही हैं। अभी तक हमारी चिंताएँ थीं—लोकतंत्र, सामाजिक न्याय, नागरिक अधिकार। हम अपनी स्वतंत्रता और अपने साधनों पर सरकार का एकाधिकार नहीं चाहते थे; हम चाहते थे दोनों को बिखेरना, गाँव-गाँव में बिखेरना, ४४ करोड़ को बड़े भाईचारे में साझेदार बनाना। यह हमारा सपना था। हमारे सपने के भारत में सैनिकवाद नहीं था; पूंजीवाद नहीं था; राष्ट्रीयता थी, लेकिन राष्ट्रवाद नहीं था! लेकिन हम देख रहे हैं कि सुरक्षा और स्वतंत्रता का छद्मवेश बना कर देश के जीवन में इन क्रांतिविरोधी प्रवृत्तियों का प्रवेश हो रहा है। यह 'साम्यवादी' चीन की देन है।

सैनिकवाद, पूंजीवाद और राष्ट्रवाद का सम्मिलित नाम है 'फासिस्टवाद'। चीन का साम्यवाद 'फासिस्टवाद' का ही एक नया संस्करण है। प्रश्न है—क्या हम चीनी आक्रमण से मुक्त होकर दूसरी दिशाओं में चीन का सूक्ष्म अनुकरण करेंगे! यह ठीक है कि चीनी आक्रमण से हमें जो धक्का लगा है, उससे प्रभावित होकर हमारी निगाहें राष्ट्रीय जीवन की कमजोरियों की ओर जा रही हैं और जानी भी चाहिए और उन्हें दूर करने की भरपूर कोशिश भी करनी चाहिए, लेकिन साथ ही यह भी जरूरी है कि हम सारी जिम्मेदारी लोकतंत्र के मत्थे न मढ़ दें तथा प्रगतिशील नेतृत्व और तत्त्वों में आस्था खो बैठें। ऐसा करना घातक होगा।

हमें सुरक्षा चाहिए, लेकिन सैनिकवाद नहीं; उत्पादन चाहिए, लेकिन पूंजीवाद नहीं; देश-प्रेम चाहिए, लेकिन राष्ट्रवाद नहीं। लोग कहते हैं कि बंदूक की लड़ाई लड़नी है तो जीवन के मूल्यों के साथ समझौता करना ही पड़ेगा। यों तो कोई भी संघर्ष हो, उसमें मूल्यों के साथ कुछ-न-कुछ समझौता करना ही पड़ता है लेकिन, आखिर, समझौते की कोई हद तो होगी! हमारा विश्वास है कि इस संकट में भी हमारे लिए यह अनिवार्य नहीं है कि हम समझौते को एक सीमा से आगे जाने दें।

नागरिक-शक्ति 'फासिस्टवाद' का बचाव (एण्टीडोट) है। नागरिक-शक्ति हमारे लिए एक उदात्त मूल्य ही नहीं है, बल्कि युद्ध के कारण पैदा हुई परिस्थिति में देश की आवश्यकता भी है। सुरक्षा के लिए केवल सैनिक काफी नहीं हैं; उत्पादन के लिए केवल कारखाने काफी नहीं हैं।

ऐसी हालत में सुरक्षा और उत्पादन, दोनों क्षेत्रों में नागरिक-शक्ति को प्रकट करना एकसाथ युद्ध और भावी विकास की आवश्यकता माननी चाहिए। इसका यह अर्थ है कि हमारा हर गाँव और शहर का हर मुहल्ला 'मोर्चा' बने, यानी अपनी संगठित शक्ति से अपनी रक्षा करे और अपनी श्रम-शक्ति से अपने लि[ए] उत्पादन और निर्माण करे।

इस वक्त जनता में जो जोश पै[दा] हुआ है, उसमें होश लाने का और उ[से] लोकशक्ति की दिशा में क्रांतिकारी मो[ड़] देने का यह सुनहला अवसर है। अगर हमने यह नहीं किया और हम गाफिल र[हे] तो हमें भय है कि हम प्रतिक्रांति के फं[दे] में फँसेंगे।

हमारी लड़ाई भारत की ही नहीं, मनुष्य-मात्र की आजादी की लड़ाई है—केवल भूमि की नहीं, विचार की भी। हरएक की अपनी भूमि, हरएक का अपना विचार, यह हमारी क्रांति की बुनियाद है। इस लड़ाई में हमारी क्रांति हमारा सबसे बड़ा 'स्टेक' है।

मद्यपान को पुनः खोलना रक्षा-प्रयत्न में बाधक

नगर सर्वोदय-समिति, कानपुर की यह बैठक इस बात पर खेद प्रकट करती है कि सरकार ने प्रतिरक्षा के लिए धनसंग्रह को निमित्त बना कर राज्य में जो सीमित मद्य-निषेध चालू था उसे भी समाप्त करने की घोषणा की है। समिति की मान्यता है कि जब जनता स्वेच्छा से स्वयं प्रतिरक्षा के लिए अपना योगदान कर रही है तथा कर आदि के अन्य साधनों, टैक्स की शेष रकम को वसूल करके तथा अपव्यय आदि रोक कर साधन बढ़ाये जा सकते हैं, तब नशे के उपयोग का द्वार खोल कर धन एकत्र करना नितांत अनावश्यक और अनुचित है। उत्तर प्रदेश सरकार ने इस सम्बन्ध में पहल की यह और भी दुःख एवं कलंक की बात है।

युद्धकाल में जब जनता का नैतिक अनुशासन और आन्तरिक मोर्चे को दृढ़ करने पर इतना बल दिया जा रहा है, तब समाज में असंयम को खुला प्रोत्साहन देना उस प्रयोजन को ही निर्बल बनाना है। वास्तव में संकट-स्थिति में जनता का चरित्रबल टिकाने के लिए मद्यनिषेध की और भी आवश्यकता अधिक है। अतः समिति सरकार से अनुरोध करती है कि वह नशाबन्दी खोलने के अपने निर्णय को तुरन्त वापस ले ले और नशाबन्दी खोलने के बजाय धनसंग्रह के जनता की और जनता की देशभक्ति और अन्य शुद्ध सात्विक साधनों पर भरोसा रखे। साथ ही समिति जनता से अनुरोध करती है कि वह इस प्रतिक्रियावादी कदम के प्रति विरोध प्रकट करें। जनता के प्रतिनिधियों से समिति अपील करती है कि वे सरकार के इस अनैतिक कार्य का विरोध कर उसे वापस करायें।

जनहितकारी सभी संस्थाओं से समिति का अनुरोध है कि वे देश और समाज में सुरक्षा की दृष्टि से और नागरिकों की नैतिक शक्ति का ह्रास लाने वाले खतरे के विरुद्ध लोकशिक्षण द्वारा वातावरण निर्माण करें। यह आंतरिक मोर्चे को दृढ़ बनाने में वास्तव में सहायक होगा। समिति ने निर्णय किया कि इस सम्बन्ध में एक नागरिक शिष्ट-मण्डल सरकार और जन-प्रतिनिधियों से सम्पर्क स्थापित कर जनता को शराब पिलाने का मार्ग खोलने वाले निर्णय को वापस करायेगी।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

भूदान का काम सर्वथा अनुपेक्षणीय

विनोबा

कुछ लोग कहते हैं कि "भूदान का काम बहुत हो चुका, आगे ज्यादा होने वाला नहीं है। आपने निधि-मुक्ति, तंत्र-मुक्ति की, फिर भी यह जनता का आंदोलन नहीं बना, इसलिए अब इसे छोड़ कर कोई दूसरा काम उठाना चाहिए।" लोगों की इस बात पर हमने काफी सोचा है। इसके बाद भी लगता है कि इस काम की पूरी जरूरत है। तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति से इस आंदोलन की नैतिक शक्ति बढ़ी है। जिस समय हमने वह कदम उठाया, तब सोचा था कि या तो यह जन-आंदोलन बन जायगा या खतम हो जायगा। लेकिन परमेश्वर की ऐसी इच्छा थी कि न यह जनता का आंदोलन बना और न खतम हुआ।

पंचवर्षीय योजना, सैनिक-प्रशिक्षण, खादी-ग्रामोद्योग, अस्पृश्यता-निवारण आदि जितने काम हैं, इनमें कौनसा काम जनता का बना है? इन सोलह सालों में कोई भी काम जनता का नहीं बना है। इसमें कार्यक्रम का दोष नहीं है और जनता का भी दोष नहीं है। दोष है, हमारे सोचने का।

सम्यक् दर्शन की आवश्यकता

कोई भी काम करते हैं तो हम अपने आप को जनता से अलग कर लेते हैं, इसीसे काम नहीं बनता। हम न करें और जनता करे, यह संभव नहीं है। कोई बीमार है, मृत्यु शय्या पर पड़ा है या मर गया, तो उसके लिए जो कुछ करना है वह जनता करे या न करे, हमें करना है। अगर कोई काम गलत है, ऐसा साबित हो जाय तो उसे छोड़ सकते हैं। लेकिन जनता नहीं करती, ऐसा कह कर आप ही उसे छोड़ देंगे, तो क्या होगा? लोगों को अच्छी तरह से समझाने के बजाय जो काम हम बारह साल से कर रहे हैं, उसे छोड़ देंगे और दूसरा काम उठा लेंगे तो उसे पूरा करेंगे ही, ऐसा विश्वास कैसे होगा? वस्तु का सम्यक् दर्शन होना चाहिए।

भूदान का असर

आज भूदान का कार्यक्रम न होता, तो क्या हम पाकिस्तान जाते? क्या वहाँ कुरान पर भाषण देने जाते या झाड़ू लगाने जाते अगर दो तीन भाषण देने के लिए ही पाकिस्तान जाना होता तो कराची, ढाका आदि शहरों में जाकर वापस आ जाते। जनसंपर्क की जरूरत नहीं पड़ती। तत्त्वज्ञान की बात लेकर या आध्यात्मिक सुधार की बात लेकर हम वहाँ जाते तो कोई सुनने नहीं आता। हम वहाँ भूदान की बात लेकर गये। लोगों ने सुना, दान दिया और जमीन बँट भी गयी। इस तरह वहाँ प्रेम बना। पाकिस्तान की सोलह दिन की यात्रा में जो हुआ, वह अव्यक्त प्रेम नहीं था।

आज यहाँ हजारों लोग नहीं आते, तो क्या मैं सिनेमा दिखाऊँ? जितने आये हैं, उन्हीं को समझाऊँगा। कोई गलत काम होने पर या 'आउट आफ डेट' होने पर उसे छोड़ सकते हैं। लेकिन इस काम के बारे में मुझे ऐसा नहीं लगता।

चीन आप पर हमला करता है, तो आप उत्पादन बढ़ाने की बात करते हैं। इसमें किसी का विरोध नहीं है। लेकिन अब तक जो उत्पादन बढ़ा, क्या वह नीचे के तबके के लोगों तक पहुँचा है? नहीं। सरकार की रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। उसमें यह जाहिर किया गया है कि राष्ट्र में कुछ आदमियों की आमदनी बढ़ी, लेकिन भूमिहीनों की आमदनी घटी है! इतना ही नहीं, भूमिहीनों पर पहले से ज्यादा कर्ज का भार बढ़ा है। इसका मतलब यह है कि जो राष्ट्रीय आय बढ़ी है, वह नीचे के तबके के लोगों तक नहीं पहुँची। उत्पादन का ढेर देख कर धाक नहीं जम सकती। जो भी उत्पादन हो रहा है, वह सब लोगों में बँट रहा है, ऐसा जब दिखाई देगा, तब असर पड़ेगा और लोगों को मालूम होगा कि कम्युनिज्म की जरूरत नहीं है। भूदान-ग्रामदान आंदोलन वही काम करने वाला है। इस आंदोलन से ज्यादा जमीन गरीबों में बँट जाती है। थोड़ी-बहुत बच जाती है तो उतना काम कानून से हो जायेगा।

विचारों की प्रेरणा

चीन ने युद्ध शुरू किया तो वह थोड़ी-सी जमीन के लिए नहीं किया है। क्या कोई भी बड़ा देश दूसरे बड़े देश के साथ थोड़ी-सी जमीन के लिए लड़ाई छेड़ सकता है? अगर थोड़ी-सी जमीन के लिए ऐसा होगा, तो दोनों का नाश हो जायगा। इसलिए यह समझने की जरूरत है कि यह विचारों का संघर्ष है। चीन को अपना विचार लड़ाई के लिए प्रेरणा दे रहा है। इसलिए हमें यहाँ ग्राम-परिवार बनाना है, सबको मिलजुल कर रहना है, जमीन और संपत्ति प्रेम से बाँटनी है और जाति भेद, पक्ष भेद मिटाने हैं। यह संकट आया है तो सभी दलवाले कहते हैं कि हम अपना अपना पक्ष भेद जेब में रखेंगे और सारे मिल कर देश की रक्षा करेंगे। हम कहते हैं कि जेब में रखने से क्या होगा? उसे खतम करो। बनावटी एकता से काम नहीं होगा। सच्ची एकता कायम करो।

दोहरा लाभ

मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि उत्पादन न बढ़ाने पर भी आज जो कुछ है, वही समान बँट जाय तो सब हो जायगा। उत्पादन बढ़ाने के साथ साथ अगर गंगा की तरह दान धारा नहीं बहेगी, तो कुछ नहीं होगा। आप लोग टैक्स की बात करते हैं। उसे टाला जा सकता है। टैक्स से लोग अपने को बचा सकते हैं, लेकिन दान-धारा से जो वातावरण बनेगा, उससे कोई नहीं बचेगा। अच्छे वातावरण की छूत से कोई दूर नहीं रह सकता। अच्छाई की छूत हरएक को लगती है। उससे कंजूस भी नहीं बच सकता। भूदान-ग्रामदान से उत्पादन का समान बँटवारा भी होगा और उत्पादन भी बढ़ेगा। उससे एकता बनेगी, तो अहिंसात्मक शक्ति को भी बल मिलेगा और क्षात्र-शक्ति को भी बल मिलेगा।

परिस्थिति का दबाव

जो कार्यक्रम हम आहिस्ता आहिस्ता बारह साल से कर रहे हैं, उसे अब सब लोगों को उठा लेना चाहिए, ऐसा समय आ गया है। ऐसे समय में हम इसे छोड़ दें तो यह बुद्धिमानी नहीं होगी। हृदय-परिवर्तन और परिस्थिति परिवर्तन को हम अलग कैसे करेंगे? परिस्थिति का जो थोड़ा दबाव होता है, वह सामाजिक परिवर्तन के लिए अनिवार्य होता है। दोनों के इकट्ठे होने से काम जल्दी बनता है। मैं आपको डरा नहीं रहा हूँ। आज की परिस्थिति मैं आपके सामने रख रहा हूँ। आप जिस नरम बिस्तर पर सोये हैं, उसके एक छोर पर साँप है, तो मैं यही दिखा रहा हूँ और कह रहा हूँ कि जागो। यह दबाव नहीं है। परिस्थिति का दबाव आया है तो अब दान के कार्यक्रम के लिए ज्यादा अवसर है। इसलिए भूदान-ग्रामदान का यह कार्यक्रम हम सबको मिल कर आगे ले जाना चाहिये।

[पड़ाव : मंगलहाट, जि०-संथाल परगना, बिहार, २७-१०-६२]

लोकनागरी लिपि •

नीर्भयता की तालीम

लड़का गलती करता है तो माता-पीता अुसे तमाचा मारते हैं और वे समझते हैं की अीससे बच्चा सुधर जायगा। लेकीन यह गलत बात है। वे तमाचा मार कर बच्चे को डरना सीखाते हैं और यह सीखाते हैं की जो तुम्हें मारे, अुससे डरो। तुम शरीर हो, अीसलीअे तुम्हें डरना चाहीअे, अैसा माता-पीता बच्चों को समझाते हैं। कोअी बच्चा स्कूल नहीं जाता तो मां-बाप अुसे मारते हैं। मान लीजीये की बच्चा फीर नीयमीत स्कूल जाने लगा तो अुसमें नीयमीतता तो आ गयी, लेकीन नीर्भयता नहीं रही। मार के डर से काम कीया, अीसका परीणाम यह होगा की आगे जो भी अुसे डरायेगा, अुससे वह डरेगा, अीसलीअे बच्चे को मारना यानी अुसको डर सीखाना है। लोगों को नीर्भय करने के लीअे यह जो दंड-श्रद्धा है, अुसको हटाना चाहीअे। बच्चों को समझा-बुझा कर कहने से वे मानेंगे और डरपोक नहीं बनेंगे। बच्चों को कहना चाहीअे की अगर छोटी लेकर कोअी कुछ कहे, तो अुसे कह दो की हम तुम्हारी बातें नहीं सुनेंगे। अैसी नीर्भयता बच्चों में पैदा होनी चाहीअे। अीससे गांव में नीर्भयता का वातावरण बनेगा और यह वातावरण बनाने में गीता का अुपयोग है।

[फरक्का, जीला-मुर्शीदाबाद, २६ नवम्बर, '६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ु = ू, ख = ष संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

चीनी आक्रमण और हमारा कर्तव्य

सिद्धराज ढड्ढा

आज की परिस्थिति में हम क्या करें, इस प्रश्न को लेकर सबका मन क्षुब्ध है। यह हमारे लिए कसौटी का समय है। हम अगर सामान्य नागरिक की भूमिका से ही सोचते होते तो हमारे लिए बहुत विचार करने की आवश्यकता नहीं थी। एक राजमार्ग खुला था, परन्तु हमने कुछ बातों की प्रतिज्ञाएँ की हैं, कुछ संकल्प लिये हैं, कुछ हमारी विशेष जीवन-दृष्टि है, इसलिए सोच कर कदम उठाना पड़ता है। हमारा रास्ता पहले से बना हुआ नहीं है, उसे अभी बनाना है।

संकट के समय धर्म-विचार करना इस देश के लिए नयी बात नहीं है। ठीक कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन को भी युद्ध के विषय में शंका उत्पन्न हो गयी थी और युद्ध के मैदान में ही भगवान् कृष्ण को गीता का उपदेश देना पड़ा। आज जो काम हम कर रहे हैं, जिस प्रकार की समाज-रचना के लक्ष्य को लेकर हम लगे हैं, जो हमारा जीवन-दर्शन है, उसके कारण हमारी भूमिका साधारण नागरिक से भिन्न होते हुए हमारे लिए यह सारा चिन्तन आवश्यक है। मानव-विकास की दृष्टि से कर्म से पूर्व चिन्तन आवश्यक होता है।

हम केवल शांतिवादी नहीं

पिछले कुछ बरसों में विदेशों के कई शांतिवादी लोगों और संस्थाओं से हमारा सम्पर्क हुआ है। जैसे पश्चिम में शान्तिवादियों का काम चलता है, वैसी हमारी भूमिका नहीं है। वे अपने आपको युद्ध से अलग रखते हैं। पश्चिम के देशों में अक्सर युद्ध होने पर हरएक को सरकारी आज्ञा के अनुसार फौज में भरती होना लाजिमी होता है। शांतिवादी लोग उसमें शामिल नहीं होते और उस कारण दण्ड वगैरह भुगतते हैं, जेल जाना कबूल कर लेते हैं। गांधीजी के मार्गदर्शन में हमने जो रास्ता स्वीकार किया है, वह इतना सरल नहीं है। एक रास्ता तो सशस्त्र फौजों द्वारा आक्रमण का मुकाबला करने का दुनिया के सामने रहा ही है, दूसरा रास्ता गांधी ने अहिंसक प्रतिकार का बतलाया—केवल युद्ध से अलग रहने का नहीं। अहिंसक प्रतिकार का रास्ता अभी पूरा तैयार नहीं हो पाया है। प्रयोग और प्रयत्न जारी हैं। पर इसी बीच अगर आक्रमण होता है, जैसा कि अभी हुआ है, तो हम क्या करें? क्या हम अहिंसा के नाम पर चुप बैठ जायें? यह तो, कायरता होगी, जो हिंसा से भी बुरी है। फिर क्या हम अहिंसक प्रतिकार का नया रास्ता बनाने का काम छोड़ कर हिंसा की ओर मुड़ जायें? जब सामने सरासर अन्याय नजर आये तो ऐसी प्रेरणा होना स्वाभाविक है। पर ऐसा करना आवश्यक नहीं है, क्योंकि प्रतिकार करना आवश्यक लगे तो भी अहिंसक प्रतिकार का नया रास्ता बनाने का काम ऐसा है कि नया रास्ता भी बनता रहता है और साथ-साथ प्रतिकार के आज तक बने-बनाये तरीके को भी उससे मदद मिलती रहती है।

हमारा कर्तव्य

आज यह बात मैं अपने कुछ साथियों को एक चित्र खींच कर समझा रहा था।

दुनिया के सामने प्रतिकार का एक राजमार्ग मौजूद है, वह हिंसा का रास्ता है। उस पूरे रास्ते में सड़क बनी हुई है। दूसरे रास्ते में थोड़ी-सी दूर तक ही सड़क बन पायी है, वह अहिंसक प्रतिकार का रास्ता है। अभी अहिंसा के रास्ते में मंजिल तक पहुँचने के लिए काफी परिश्रम और तैयारी बाकी है, वह सड़क अभी बनानी है। हम और आप प्रतिकार का एक अहिंसक विकल्प खड़ा करने की कोशिश कर रहे हैं। देश अन्याय का प्रतिकार करने के पुराने रास्ते पर जो कदम उठा रहा है, उसका हम समर्थन करते हैं, क्योंकि जब अहिंसक प्रतिकार के लिए तैयारी नहीं हो पायी है तब हिंसक प्रतिकार भी न करें तो वह कायरता ही होगी। इस मुल्क ने अन्याय के प्रतिकार का जो रास्ता अख्तियार किया है, उसके सिवा उसके पास कोई चारा नहीं था। पर हमारा कर्तव्य यह है कि जो अहिंसक प्रतिकार का रास्ता हम अब तक पूरा नहीं बना पाये हैं, उसको शीघ्र-से-शीघ्र पूरा करने एवं उस दृष्टि से देश को तैयार करने में और भी अधिक तत्परता और शक्ति से जुट जायँ।

दुहरा लाभ

यह पूछा जा सकता है कि ऐसे संकट के समय हम नया रास्ता बनाने के बजाय पुराने रास्ते पर ही चल कर देश को अपनी शक्ति का लाभ क्यों नहीं देते? इस संबंध में यह समझने और समझाने की जरूरत है कि हम जो काम कर रहे हैं वह सैनिक प्रतिकार के लिए आवश्यक ही नहीं, बल्कि अनिवार्य भी है। यह काम तो राष्ट्र को सुरक्षा की दृष्टि से हर हालत में करना ही होगा। हमारे काम से सुरक्षा के प्रयत्नों को बल ही मिलने वाला है। हम हमारे काम में लगे रहें या उसे छोड़ कर सैनिक प्रतिकार के प्रत्यक्ष काम में लगें, दोनों परिस्थितियों में हमारी शक्ति का तो राष्ट्र को समान उपयोग ही मिलेगा, पर अगर हम अहिंसक शक्ति निर्माण करने के अपने काम में लगे रहे तो राष्ट्र की आज की आवश्यकता-पूर्ति के साथ-साथ अहिंसक प्रतिकार का नया मार्ग बनाने का काम भी आगे बढ़ेगा। इस प्रकार हमारे काम से दुहरा लाभ होने वाला है।

तीसरा रास्ता

यह बात स्पष्ट समझ लेनी चाहिये कि जब हम अहिंसा की बात करते हैं तो उसका मतलब निष्क्रियता या कायरता नहीं है। यदि अहिंसा का यही अर्थ होता तो हम हिंसा को, वीरों की हिंसा को ही पसन्द करते। हिंसा कायरता से निस्संदेह श्रेष्ठ है। आज हमारे सामने सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि हिंसा और कायरता के अलावा कोई तीसरा रास्ता भी है या नहीं? हमारी अहिंसा परलोक से या पाप-पुण्य से सम्बन्ध रखने वाली अहिंसा भी नहीं है, वह जीवन से संबंध रखने वाली है। जो अहिंसा जीवन से संबंध नहीं रखती, केवल परलोक के ही वास्ते है, वह किसी मतलब की नहीं। आजादी की कीमत मनुष्य की जान से भी बढ़कर है। पर आजादी का मतलब है—समानता, शोषणरहित समाज। इन्हीं मूल्यों को कायम करने के लिए हम अहिंसक समाज-रचना की बात करते हैं। ये ऐसे जीवन-मूल्य हैं, जिनके लिए हम प्राण तक न्योछावर करने को तैयार हैं और इन्हीं मूल्यों की रक्षा के लिए हमें अहिंसा अनिवार्य मालूम होती है।

अन्याय का प्रतिकार करें

देश के मौजूदा संकट के संदर्भ में दो-तीन बातें साफ हैं। एक तो यह कि हमारे पड़ोसी देश चीन की ओर से हम पर आक्रमण हुआ है। सीमा सम्बन्धी प्रश्न को लेकर कुछ मतभेद थे। उनका कुछ दावा था, जिसके लिए भारत बात-चीत के लिए भी तैयार था—पर अपने इस दावे को वे बलपूर्वक आक्रमण करके भारत से मनवाना चाहते हैं। एक राष्ट्र जब बात के लिए तैयार था, उस हालत में भी शस्त्र का सहारा लेना और हमें मजबूर करना स्पष्ट ही अन्याय है। और जब अन्याय हुआ है तो उसका प्रतिकार करना हरएक का फर्ज है। इसमें किसी देश-विशेष के नागरिक होने का सवाल भी नहीं है। हम भारतवासी हैं, इसीलिए प्रतिकार की बात नहीं है। अन्याय का प्रतिकार करना हर मनुष्य का कर्तव्य है। यदि आज हम चीन के नागरिक होते तो अपने देश, चीन के इस कदम की भर्त्सना करते और तब भी यह स्पष्ट कहते कि भारत पर अन्याय हो रहा है।

युद्ध का परिणाम

विनोबा पिछले कई वर्षों से निरंतर यह कह रहे हैं कि विज्ञान ने हिमालय की दीवार तोड़ दी है और अब हमेशा के लिए भारत व चीन के सम्पर्क का दरवाजा खुल गया है। भारत की आबादी करीब ४१ करोड़ है और चीन की ६५ करोड़। दोनों देशों की मिल कर दुनिया की एक-तिहाई से अधिक आबादी होती है। इतनी बड़ी विशाल आबादी के दो देश जब सम्पर्क में आते हैं तो उससे सहयोग भी निष्पन्न हो सकता है और संघर्ष भी। आज इन दोनों देशों का सम्पर्क संघर्ष के रूप में प्रकट हुआ। जब इतने बड़े दो देश संघर्षलिप्त होते हैं, तो उसका क्या नतीजा निकलने वाला है, इसका ख्याल रख कर ही हमें सोचना होगा; क्योंकि इन नतीजों से हम बच नहीं सकते।

यदि इन दोनों देशों में वैर-भाव बढ़ा तो पहला नतीजा यह निकलेगा कि आजादी के बाद हमने अब तक जो सपने संजोये थे, वे सब खतम हो जायेंगे। पंच-वर्षीय योजनाएँ भी कहाँ रहने वाली हैं? आज भारत सरकार की आय करीब एक हजार करोड़ वार्षिक है। उसमें से करीब चार सौ करोड़ अभी तक हम सेना पर खर्च करते रहे हैं। चीन के झगड़े के कारण अब हमें सुरक्षा-खर्च कम-से-कम दुगुना तत्काल करना होगा, यानी आज की सारी की सारी सरकारी आय अब सेना पर खर्च होगी! तब बाकी सारे काम चलाने के लिए खर्च कहाँ से आयेगा? उसके लिए गरीबों का ही पेट काटा जायगा न? इस प्रकार यह गरीब देश कितना खर्च कर पायेगा? राष्ट्र को अपनी कुल मौजूदा आमदनी सेना पर खर्च करनी होगी, इसके अलावा विदेशों से माँग-माँग कर और लाना होगा। मैं यह नहीं कह रहा हूँ कि यह सब जरूरी नहीं है। यह सब जरूरी है यह मान कर ही कह रहा हूँ। परन्तु जरूरी होने पर भी उसके जो परिणाम होंगे, उनसे तो हमें बेखबर नहीं रहना चाहिये।

भारत में अणु-अस्त्र

अब तक हमने यह घोषणा की कि हम अणुबम नहीं बनायेंगे, परन्तु यदि झगड़ा बढ़ता है और चीन अणुबम बना लेता है तो हमें भी अपनी रीति में परिवर्तन करना पड़ सकता है। सबको मालूम है कि थोड़े दिनों पहले दिल्ली में अणुअस्त्रों

राजस्थान प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन, डायल (सिरोही) में ता० ९ दिसंबर को दिये गये भाषण से।

पर प्रतिबंध लगाने के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ था। उसमें हमारे देश के राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री तथा सब बड़े नेता शामिल हुए थे। राजेन्द्रबाबू तथा राजगोपालाचारीजी भी शामिल थे। इस दृष्टि से यह सम्मेलन विदेशों में अब तक जो इस संबंध में सम्मेलन हुए उन सबसे विशिष्ट था, क्योंकि विदेशों में किसी भी देश के राजपुरुष इस प्रकार के सम्मेलनों में भाग नहीं लेते। हमारे देश में सौभाग्य से आज जो नेता हैं, वे ऐसे हैं जो राज्यकर्ता होने पर भी गांधीजी के विचारों से अनुप्राणित हैं और हृदय से शांति चाहते हैं। मानवता में आस्था रखने वाले ऐसे राष्ट्रनेताओं को भी परिस्थितियों से मजबूर होकर अणुबम बनाने की घोषणा करनी पड़ सकती है।

आज हम अमेरिका और इंग्लैण्ड से शस्त्रास्त्र प्राप्त कर रहे हैं, वह आवश्यक भी है। परन्तु उनके साथ-साथ उनके आदमी भी यहाँ आ रहे हैं, क्योंकि हमारे लोग अभी इन शस्त्रों को चलाना नहीं जानते। तो अमेरिका से जो आदमी आये हैं, उनकी सुरक्षा का सवाल उठेगा, जो स्वाभाविक है। उनकी सुरक्षा की जिम्मेदारी अमेरिका की सरकार की होगी ही। हो सकता है कि वह सरकार आगे चल कर सुरक्षा की दृष्टि से आपकी भूमि पर अणुशस्त्रों के अड्डे रखने की बात करे। वे ऐसा करें तो उन्हें दोष भी नहीं दिया जा सकता। लड़ाई का एक तर्क होता है, उससे आप बच नहीं सकते। जब आप उस ओर एक कदम उठाते हैं तो दूसरा कदम भी उठाना ही पड़ेगा और उसका परिणाम भुगतने की तैयारी रखनी होगी, तो हो सकता है कि आज के इस संघर्ष का नतीजा यह हो कि हमारा सारा का सारा देश अणुशस्त्रों की लपेट में आकर भस्म हो जाय।

पुराने युद्धों में और आज के युद्धों में दिन रात का अंतर हो गया है। पहले के युद्धों में जब सेनाएँ आमने-सामने लड़ती थीं, तब साधारण नागरिक को विशेष खतरा नहीं था। युद्ध की प्रक्रिया भी ऐसी थी कि जिससे वीर-वृत्ति के विकास की बहुत गुंजाइश थी। परन्तु आज के युद्ध इस प्रकार के हो गये हैं कि उनसे सारी जनता सर्वनाश से नहीं बच सकती। आज अणुयुद्ध हुआ तो सारी की सारी मानव-सभ्यता और संस्कृति, सारी रचना ही समाप्त हो जाने वाली है।

चेतावनी

इसीलिए गांधी ने हमें चेतावनी दी थी कि अब ऐसा युग आ रहा है, जब कि हमें अपनी समस्याओं के निराकरण के लिए अहिंसक उपाय ही काम में लेने होंगे। गांधी के नेतृत्व में इस मुल्क ने अहिंसा से स्वराज्य प्राप्त किया। इसके पहले दुनिया में ऐसा एक भी उदाहरण नहीं था। हम लोग अब विनोबा के नेतृत्व में १०-११ वर्षों से देश में अहिंसक शक्ति के विकास के काम में लगे हैं। यह सही है कि वह पूरी तरह अभी विकसित नहीं हो सकी है। तैयारी के लिए अभी हो सकता है बहुत समय लगे। पर इसमें निराशा की कोई बात नहीं है, बल्कि अपने काम में तेजी लाने के लिए, यह हमारे लिए एक चुनौती है।

गांधी ने सच्चे स्वराज्य की परिभाषा करते हुए बतलाया था कि जब जनता के प्रत्येक स्त्री-पुरुष में अन्याय का प्रतिकार करने की शक्ति पैदा हो जाय तभी मुल्क सच्चे माने में आजाद हुआ, ऐसा मानना चाहिए। हमें समझना चाहिए कि किसी भी देश की सुरक्षा केवल हथियारों के बल पर नहीं होती। सैनिक शक्ति के पीछे भी उसे मजबूत करने के लिए नागरिक-शक्ति खड़ी करने की आवश्यकता है। इसीलिए नागरिक शक्ति खड़ी करने का काम कल भी महत्त्व का था, आज भी है और कल भी वैसा ही रहने वाला है, याने हर परिस्थिति में वह आवश्यक है। अब ऐसा काम करने वालों को कोई निष्क्रिय समझे तो उसे हम क्या कहें! हमारा काम ऐसा है कि हम मर-खप भी जाय, तब भी शायद दुनिया उसे न जान पायेगी। पर इससे उसका महत्त्व कम नहीं होता।

रक्षण का प्रश्न !

आपने देखा कि एक जरा-सा धक्का लगा कि सरकारी तंत्र का सारा का सारा ढाँचा तेजपुर में एक दिन में ढह गया! डिप्टी कमीश्नर भाग गया! जेलखाने खोल दिये गये, पागलों को छोड़ दिया गया। ऐसी भगदड़ मची कि गरीबों की किसी ने सुध नहीं ली। जिनके जिम्मे लोगों के रक्षण की जिम्मेदारी थी, उन्होंने लोगों के रक्षण के बजाय अपने-अपने रक्षण की चिंता की! क्या इसी आधार पर इस मुल्क का रक्षण हो सकेगा?

आज भारत की सेना ५ लाख है और चीन की कोई २५ लाख बताता है, तो कोई ४० लाख होने का अनुमान लगाता है। अब हम इसके मुकाबले सेना बढ़ाते चलें तो आखिर कितनी बढ़ायेंगे! मान लीजिये कि ३०-४०-५० लाख या या एक करोड़ की भी सेना खड़ी करने का फैसला किया, तो उतनी बड़ी सेना को खड़ी रखने के लिए, उसकी रसद जारी रखने के लिए जो मसले खड़े होंगे, वे तो हल करने होंगे। जो सेना में नहीं जायेंगे, उनको जब तक पूर्ण गतिशील, सक्रिय नहीं बनायेंगे तो सेना को खिलाने का या बाकी सारे राष्ट्र को जिन्दा रखने का काम हम नहीं कर सकेंगे। अतः नागरिक-शक्ति यदि देश में विकसित नहीं हुई तो सैनिक-शक्ति कहाँ-कहाँ मदद करेगी?

बुनियादी काम : लोक-शक्ति

लोग पूछते हैं कि हम सुरक्षा-कोष के लिए धन इकट्ठा करें या न करें? यदि आपको लगता है कि आपके पास और कोई प्रोग्राम नहीं है तो खुशी से करें। आपने अब तक कितना रुपया इकट्ठा किया? कुल मिला कर केवल १५ करोड़। जहाँ प्रतिदिन सेना पर ३ करोड़ का खर्च हो वहाँ यह सिर्फ ५ दिन का खर्चा है! आखिर सुरक्षा-कोष के लिए इस तरह कहाँ तक धन इकट्ठा कर सकेंगे? बुनियादी काम उत्पादन बढ़ाने का और लोक शक्ति खड़ी करने का है, उसकी ओर हम लापरवाही नहीं दिखा सकते। हमारे पास यह स्पष्ट और निश्चित कार्यक्रम है। यह काम शांति-काल के लिए भी आवश्यक है, और आज युद्ध-काल में तो वह और भी आवश्यक हो गया है। आज की परिस्थिति ने हमारे काम की न केवल आवश्यकता सिद्ध कर दी है, बल्कि उसके लिए अनुकूलता भी पैदा कर दी है। अब आवश्यकता है कि हम अपने कार्यक्रम को लेकर गाँव-गाँव में फैल जायँ।

अनिवार्य कार्यक्रम

आज के संदर्भ में जो कार्यक्रम हमने तय किया है, उसे लोग पुराना बतलाते हैं। परन्तु हमारा कार्यक्रम पुराना है तो यह शस्त्रों के जरिये युद्ध का जो प्रतिरोध हो रहा है, वह कौनसा नया कार्यक्रम है? वह भी तो पुराना ही है। वह तो हजारों बरस पुराना है—हमारे कार्यक्रम से भी पुराना! पर पुराना कार्यक्रम है, इसलिए आप उसे बेकार माने यह तो समझदारी की बात नहीं है। जब हम यह जानते हैं कि आज की परिस्थिति में यह अत्यंत आवश्यक कार्यक्रम है—युद्ध में विजय प्राप्त करने की दृष्टि से भी आवश्यक है—तो फिर नया हो या पुराना, करना तो वही है।

पर यह कार्यक्रम इस मामले में नया है, क्योंकि उसका संदर्भ बदल गया है। आप अब तक भी कहते थे कि गाँव में कोई भूखा, नंगा या बेकार नहीं रहे। अभी भी आप यही कहेंगे। पर अब उसके लिए आवश्यकता निर्माण हुई है। चीन जो आगे बढ़ रहा है, वह खाली सीमा-विवाद नहीं है। उसके पीछे उसका एक जीवन-दर्शन है। एक लक्ष्य और एक कार्यक्रम को लेकर वह आ रहा है। ऐसी हालत में हमें सोचना चाहिए कि हम क्या केवल सैन्य बल से ही उसका मुकाबला कर सकेंगे? कहा जाता है कि देश के गरीब लोगों में साम्यवादी सिद्धान्तों के प्रति हमदर्दी है, हर भूखा आदमी एक तरह से पचमार्गी है। हालाँकि गरीबों पर यह लाँछन लगाना गैरवाजिब है, फिर भी उसके आशय को तो समझना होगा। ऐसी हालत में यदि चीन आगे बढ़ता है, तो क्या उसकी प्रतिक्रिया से देश बच सकेगा? क्या यहाँ के गरीब चीन का स्वागत नहीं करेंगे? इसलिए अपने गाँव में बेजमीन, बेकार व भूखे आदमी रख कर क्या हम "मोराल", मनोबल—को कायम रख सकेंगे? गरीबों के दिल में चीन के हमले के विरुद्ध मर मिटने की प्रेरणा जगा सकेंगे? अतः आज की परिस्थिति में गरीबी और विषमता मिटाने का कार्यक्रम अनिवार्य कार्यक्रम है।

हमारे सामने सारा कार्यक्रम स्पष्ट है। सवाल इतना ही है कि जब तक हम स्वयं इस कार्यक्रम से अनुप्राणित नहीं होंगे, तब तक दूसरों को कैसे अनुप्राणित कर सकेंगे? यदि हमें ही अपने कार्यक्रम की आस्था नहीं हो तो अलग बात है! तब दूसरा रास्ता खुला ही हुआ है, उस पर आप कदम उठायें और जरूर बढ़ायें। आज की परिस्थिति में निष्क्रिय तो न रहें।

विनोबा ने सर्वोदय-सम्मेलन के लिए जो संदेश भेजा, उसमें दो शब्दों का प्रयोग किया है—"अनिकेतः स्थिरमतिः।" अनिकेतः यानी घरबार सब कुछ छोड़ कर, कोई दूसरा पुण्य-कार्य भी हो तो वह भी छोड़कर इस संकट काल में बाहर निकल पड़ने की आवश्यकता आ गयी है। सारे देश में उस दृष्टि से सतत पदयात्राओं का जाल फैलाने की जरूरत है। मेरा सुझाव है कि जब तक सेनापति का दूसरा हुक्म' न मिले, तब तक पदयात्राएँ चलती रहें। इस सिलसिले में जो लोग जरूरी काम में लगे हों, वे भी कम से कम अपने समय का छठा हिस्सा, यानी वर्ष में दो माह का समय, पदयात्रा के लिए अवश्य दें।

एक बात और! आज की हालत में आप कितना ही समझायें, हो सकता है, तब भी लोग आपकी टीका-टिप्पणी करें और कहें कि ये लोग आज संकट के समय भी पुराने काम में ही लगे हैं! हो सकता है, आपको देशद्रोही भी कहा जाय। परन्तु उससे घबराने की आवश्यकता नहीं है। देश के विभाजन के समय हिन्दू-मुस्लिम झगड़े चले, तब ऊँचे-से ऊँचे नेताओं में गांधी ही एक ऐसा सात्त्विक दिमाग वाला बचा था, जो यह कहता था कि हिन्दू मुस्लिमों के बीच भ्रातृत्व कायम रहना चाहिए, लोगों को पागल नहीं बनना चाहिए। हो सकता है और भी एक दो नेता ऐसे रहे हों। परन्तु उस समय उनकी बात कितने लोग सुनते थे? अंत में उसी बात से चिढ़ कर उनकी हत्या भी कर दी गयी! यह सब आपकी स्थिति हो सकती है, परन्तु आप मजबूती से अपने निश्चय पर डटे रहें, तो आपका बलिदान व्यर्थ नहीं जाने वाला है।

सेवाग्राम की संयुक्त परिषद्

वेड्छी के सर्वोदय-सम्मेलन में जो निवेदन स्वीकृत किया गया और उसके अनुसार शांति-सेना मंडल की ओर से कार्यक्रम की जो रूपरेखा तैयार की गयी, उसमें देश की प्रमुख रचनात्मक संस्थाओं का विचार और सहकार प्राप्त करने की दृष्टि से सेवाग्राम में १५ और १६ दिसम्बर को एक संयुक्त परिषद् सर्व-सेवा संघ की ओर से बुलायी गयी थी। इसके लिए निम्न संस्थाओं को निमंत्रित किया गया था: (१) गांधी स्मारक निधि, (२) गांधी पीस फाउंडेशन, (३) खादी-ग्रामोद्योग आयोग, (४) कस्तूरबा ट्रस्ट, (५) हरिजन सेवक संघ, (६) भारत सेवक समाज, (७) आदिमजाति सेवा संघ, (८) कस्तेवर सेंटर, (९) वर्ल्ड पीस ब्रिगेड, (१०) रामकृष्ण आश्रम, (११) अ० भा० पंचायत परिषद, (१२) प्रमुख खादी-संस्थाओं के प्रतिनिधि और अन्य प्रमुख व्यक्ति।

इस परिषद् में निम्न प्रमुख व्यक्तियों ने भाग लिया:

सर्वश्री (१) काकासाहब कालेलकर, (२) तुकडोजी महाराज, (३) स्वामी रामानंद तीर्थ, (४) शंकरराव देव, (५) दादा धर्माधिकारी, (६) आर्यनायकम्‌जी, (७) श्रीमन्नारायण, (८) देवरभाई, (९) जी० रामचंद्रन्, (१०) ध्वजाबाबू, (११) श्रीकांत भाई, (१२) र० श्री० धोत्रे, (१३) रा० कृ० पाटिल, (१४) नवकृष्ण चौधरी, (१५) ए० जे० मस्ते, (१६) स्टेऊ जोन्सन, (१७) जेम्स ब्रिस्टल, (१८) सिद्धराज ढड्ढा, (१९) करणभाई, (२०) वैद्यनाथ बाबू, (२१) के० अरुणाचलम्, (२२) मार्जरी साइक्स, (२३) बी० रामचंद्रन्, (२४) ओमप्रकाश गुप्त, (२५) डा० अरम्, (२६) अण्णासाहब सहस्रबुद्धे।

भारत सेवक समाज, हरिजन सेवक संघ, रामकृष्ण आश्रम, कस्तूरबा ट्रस्ट, इन संस्थाओं की ओर से कोई नहीं आ सके।

परिषद् श्री मनमोहन चौधरी की अध्यक्षता में शुरू हुई। प्रारंभ में उन्होंने परिषद का उद्देश्य और वेड्छी के निवेदन की प्रमुख बातें प्रतिनिधियों के सामने रखीं।

सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री राधाकृष्णन् ने परिषद् के कार्यक्रम की रूपरेखा और विचारणीय मुद्दे परिषद् के सामने प्रस्तुत किये। विचारणीय विषयों में निम्न बातें थीं:—

(१) सीमावर्ती क्षेत्र में सघन कार्य का स्वरूप और संयोजन।

(२) भारत-चीन सीमा-संघर्ष के संदर्भ में शांति-सैनिकों द्वारा प्रत्यक्ष अहिंसक प्रतिकार का स्वरूप।

(३) देश में सिविल डिफेन्स कमिटियाँ, मिलिट्री ट्रेनिंग, कंपल्सरी एन० सी० सी० ट्रेनिंग आदि की जो तैयारियाँ चल रही हैं, उसके साथ शांति-सेना के व्यापक कार्यक्रम का मेल कैसे रहेगा?—

(४) तटस्थ राष्ट्रों की कोलंबो परिषद् के पास श्री जयप्रकाश नारायण और श्री शंकरराव देव ने पंचफैसले (आर्बिट्रेशन) की दिशा में कुछ हल ढूँढ़ने की जो अपील तार द्वारा भेजी थी, उसके संबंध में परिषद् की राय।

नेफा बार्डर, नेपाल-सिक्किम बार्डर तथा उत्तराखण्ड की तिब्बत-नेपाल बार्डर पर परिस्थिति के अध्ययन के लिए जो टोलियाँ गयी थीं, उनके अहवाल श्री राधाकृष्णन्, श्री वैद्यनाथ बाबू और श्री करण भाई ने संक्षेप में परिषद् के सामने रखे।

चर्चाओं में प्रमुख दो बातों का बार-बार जिक्र किया गया: (१) देश में मिलिट्री ट्रेनिंग की दिशा में जो तैयारियाँ चल रही हैं, उसके साथ-साथ रचनात्मक कार्य का या शांति-सेना का कार्यक्रम कैसे फैल सकेगा? (२) आक्रमण का प्रतिकार करने का अहिंसक तरीका, प्रतीक-स्वरूप भी क्यों न हो, जब तक सामने नहीं आता है, तब तक अन्य सारे रचनात्मक कार्य फीके पड़ेंगे और अहिंसक प्रतिकार की बातें हवा में रहेंगी।

सर्वश्री जी० रामचन्द्रन् और ओमप्रकाश गुप्त ने जोर देकर यह बात कही कि ग्राम-स्वराज्य और ग्राम-निर्माण तथा खादी-ग्रामोद्योग के कार्य का महत्त्व समझते हुए भी आक्रमण के आज के संदर्भ में उन कार्यक्रमों को गौण मान कर मोर्चे पर आक्रमकों का अहिंसक मुकाबला करने के लिए देश के चुने हुए कुछ शांति-सैनिकों को भेजने का कार्यक्रम जब तक हाथ में नहीं लिया जाता, तब तक अहिंसा और रचनात्मक कार्य की शक्ति का प्रत्यक्ष प्रभाव और दर्शन देश में हम नहीं देख सकेंगे। आक्रमकों के सामने बहुत बड़ी संख्या में लोगों को भेजने की बात नहीं है। लेकिन संख्या की अपेक्षा गुण को प्रधानता देकर अहिंसक प्रतिकार में बलिदान करने की मिसाल इस समय हम पेश नहीं करेंगे तो आगे सैकड़ों सालों तक अहिंसा के प्रयोग का हम नाम भी नहीं ले सकेंगे।

श्री नवकृष्ण चौधरी ने चर्चा में भाग लेते हुए कहा कि श्री विनोबाजी भूदान-ग्रामदान का जो संदेश पिछले बारह वर्षों से देश के सामने रख रहे हैं, उसका आज के संदर्भ में एक राष्ट्रीय महत्त्व बन गया है। सरकार भी कह रही है कि उत्पादन बढ़ाना चाहिए और गाँवों को स्वाश्रयी और आत्मनिर्भर बनना चाहिए। इसलिए आज के आक्रमण के संदर्भ में कोई भूखा न रहे, बेरोजगार न रहे, गाँव में झगड़े न हों, गाँव का उत्पादन बढ़े, गाँव स्वयं अपनी रक्षा का प्रबंध करे, यह सारा कार्यक्रम एक राष्ट्रीय कार्यक्रम बनना चाहिए और बन सकता है।

श्री देवर भाई ने कहा कि श्री जवाहरलालजी पर एक जिम्मेवारी है, इसलिए वे फौज से देश की रक्षा की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन जो लोग उनके निकट संपर्क में हैं, उनको मालूम है कि वे चारों ओर से आने वाले दबाव का मुकाबला कितनी मेहनत से कर रहे हैं और शांति की या युद्ध की बातों का कितना खयाल रखते हैं। इसलिए अहिंसा के लिए सरकार की ओर से कोई प्रोत्साहन नहीं मिलेगा, ऐसा नहीं मानना चाहिए। पिछले १०-१५ दिनों में असम के बार्डर पर भी जो देखा, उसमें मुझे यही दिखाई दिया कि वहाँ भी अहिंसक तरीकों से काम करने में श्रद्धा रखने वालों की संख्या कम नहीं है। लेकिन हमारा संपर्क कम रहा, वह बढ़ाना चाहिए। खास करके नेफा क्षेत्र में अधिक संपर्क बढ़ाने की आवश्यकता है। लेकिन आज की मिलिटरी की तैयारी की हवा में अहिंसक प्रतिकार के लिए हम कैसे और कहाँ तक मार्गदर्शन दे सकेंगे, यह बड़ा सवाल है। पिछले चालीस सालों से गांधीजी के मार्गदर्शन में अहिंसा के जितने प्रयोग हुए, उनमें आक्रमण के सामने अहिंसक प्रतिकार के स्वरूप के संबंध में स्पष्ट चित्र नहीं रहा। पंजाब, उत्तर-प्रदेश, असम, इन सीमावर्ती क्षेत्रों में सफल प्रतिकार की हवा और तैयारी को तो मैं समझ सकता हूँ; लेकिन सारे हिन्दुस्तान में मिलिटरी ट्रेनिंग और ऐंटीएअररेड की तैयारी आदि जो बातें फैल रही हैं, उसकी आवश्यकता कहाँ तक है, मैं नहीं समझ पाया हूँ। चीन के आक्रमण के कारण नेपाल, भूटान, सिक्किम आदि छोटे देशों की भारत के रक्षण करने की ताकत के संबंध में श्रद्धा आज जरूर हिल गयी है। इसलिए जनता-संपर्क की दृष्टि से सघन के साथ-साथ व्यापक कार्य करने की भी आवश्यकता है। असम में तो हिन्दू-मुसलमान का सवाल भी जटिल बन सकता है, इसलिए उसके संबंध में भी सतर्क रहना आवश्यक है।

अनिवार्य एन० सी० सी० ट्रेनिंग के संबंध में श्री श्रीमन्नारायण ने कहा कि एन० सी० सी० में राइफल या मिलिटरी ट्रेनिंग कंपल्सरी, अनिवार्य करने की बात शायद नहीं है। फिजिकल ट्रेनिंग, कवायद, आदि बातें प्रमुख हैं। एन० सी० सी०

प्रस्ताव: १

संयोजन-समिति

आसाम, बिहार और उत्तराखण्ड के सीमावर्ती क्षेत्रों की स्थिति का अध्ययन करने के लिए जो टोलियाँ गयी थीं उनकी रिपोर्ट परिषद् के सामने विचारार्थ रखी गयीं। खादी-ग्रामोद्योग आयोग की ओर से सीमावर्ती क्षेत्रों में खादी-ग्रामोद्योगों की संभावनाओं के संबंध में अध्ययन करने के लिए जो समिति नियुक्त की गयी थी, उसकी रिपोर्ट भी पढ़ी गयी।

'सीमावर्ती क्षेत्रों में जो रचनात्मक कार्य किया जायगा, उसकी योजना बनाने और संचालन करने के लिए परिषद् की ओर से निम्न सदस्यों की एक संयोजन-समिति (कोआर्डिनेटिंग कमेटी) नियुक्त की गयी:—

(१) श्री जयप्रकाश नारायण
(२) श्री श्रीकांत भाई
(३) श्री वैकुण्ठलाल मेहता
(४) श्री राजलक्ष्मी चढन
(५) श्री जी० रामचन्द्रन्
(६) श्री देवर भाई
(७) श्री करण भाई
(८) श्री नारायण देसाई
(९) श्री मनमोहन चौधरी
(१०) श्री राधाकृष्णन् (मंत्री)

प्रस्ताव: २

पंचफैसले का तरीका

चीन की ओर से एकतरफा युद्धबन्दी किये जाने और १ दिसंबर, १९६२ से चीनी फौज वापस लिये जाने से परिस्थिति में जो परिवर्तन हुआ है, उस पर रचनात्मक कार्य में लगे हुए प्रतिनिधियों की सेवाग्राम में १५-१६ दिसंबर को जो सम्मिलित परिषद् हुई, उसमें विचार किया गया। चीन की ओर से जाहिर की गयी युद्धबन्दी आगे जारी रहे और चीन-भारत के सीमा-विवाद को बातचीत के शांतिमय तरीके से हल करने की दिशा में मार्ग ढूँढ़ने के लिए ६ अफ्रो एशियन देशों की कोलंबो में जो कान्फरन्स हुई, उसका यह परिषद् स्वागत करती है।

हम फिर एक बार यह दोहराना चाहते हैं कि शस्त्रबल के बदले समस्या को हल करने का एकमात्र पर्याय आपस की बातचीत या पंचफैसला ही हो सकता है। आज की परिस्थिति में चीन और भारत में सीधी बातचीत की संभावना नहीं दीख रही है। पंचफैसले या न्यायालय के द्वारा इस प्रश्न का हल निकालने की अपनी तैयारी भारत सरकार ने प्रकट की है। चीन सरकार की ओर से भी इस तरह की तैयारी घोषित कराने की कोशिश की जाय ऐसा हम चाहते हैं। हम भारत की जनता को आवाहन करते हैं कि इस समस्या का शांतिमय और सम्माननीय हल ढूँढ़ने की दृष्टि से पंचफैसले की दिशा में जाने वाले प्रयत्नों को वह पुष्टि दे। पंचफैसले की शर्तों और अन्य प्राथमिक तैयारी के संबंध में चीन और भारत के साथ बात करके उभयमान्य तरीका ढूँढ़ा जाय।

कोर्स पूरा करने के बाद मिलिटरी सर्विस में जाने की कोई शर्त भी शायद नहीं होगी।

श्री मार्जरी बहन ने गोहाटी युनिवर्सिटी का उदाहरण देते हुए कहा कि वहाँ मिलिटरी और नॉनमिलिटरी, ऐसे एन० सी० सी० के दो विभाग सोचे जा रहे हैं। किस विभाग में जाना है, इसका चुनाव विद्यार्थी करें।

श्री दादा धर्माधिकारी ने कहा कि एन० सी० सी० ट्रेनिंग को कंपल्सरी नहीं किया जाना चाहिए। अहिंसा की श्रद्धा के कारण फौजी तालीम में, शरीक न होने वालों की बात अलग है। लेकिन विद्यार्थी की आयु उसके बौद्धिक विकास और संस्कार को देखते हुए कंपलसरी ट्रेनिंग की बात शिक्षण में बैठती नहीं।

चर्चा में एक विचार यह भी आया कि फौजी तालीम न सही, लेकिन किसी-न किसी फिजिकल ट्रेनिंग की आवश्यकता हर विद्यार्थी के लिए माननी चाहिए। या तो वह एन० सी० सी० में जाय या शांति सेना में जाय, लेकिन अहिंसा के नाम पर दोनों में से किसी भी ट्रेनिंग में विद्यार्थी नहीं जाता है, तो तालीम में से बचने का एक बहाना बन जाने का खतरा है।

चर्चा में सर्वसाधारण राय यह रही कि इस विषय पर युनिवर्सिटी ग्रान्ट्स कमीशन से बात की जाय और एन० सी० सी० के सम्बन्ध में तथ्य क्या है, इसकी भी जानकारी प्राप्त की जाय। लेकिन एन० सी० सी० ट्रेनिंग कंपलसरी न की जाय।

श्री ए० जे० मस्टे ने कहा कि इस नाजुक परिस्थितियों में अहिंसा को मानने वालों का और गांधी-विचारकों का क्या मानस है और क्या कार्यक्रम वे सोच रहे हैं, इसके अध्ययन के लिए मैं आया हूँ।

देश की संकटकालीन स्थिति में नागरिक स्वातंत्र्य (सिविल लिबर्टी) पर अंकुश आने का बहुत बड़ा खतरा होता है, इसकी ओर श्री दादा धर्माधिकारी ने ध्यान खींचा। इस विषय पर परिषद् ने एक प्रस्ताव स्वीकृत किया है।

श्री जयप्रकाश नारायण और शंकरराव देव ने कोलंबो कान्फरन्स को आर्बिट्रेशन का कोई रास्ता निकालने की जो विनति की थी उस विषय की चर्चा की गयी और परिषद् ने उसकी पुष्टि करते हुए एक प्रस्ताव स्वीकृत किया है।

सीमावर्ती क्षेत्रों में आक्रमण की स्थिति को ध्यान में लेकर जो सघन कार्य करने का सोचा जा रहा है, उसके संयोजन के विषय में काफी चर्चा हुई। इस तरह के रचनात्मक कार्य के परिणामस्वरूप अहिंसक शक्ति प्रकट होनी चाहिये, इस विचार को जो संस्थाएँ मानती हैं, उनका सहकार इस कार्य के संयोजन में लिया जाय, इस दृष्टि से परिषद् में जिन संस्थाओं के प्रतिनिधि उपस्थित थे, उनमें से फिलहाल दस व्यक्तियों की एक कोऑर्डिनेशन कमिटी बनायी गयी। अन्य संस्थाओं से बात करके उनके प्रतिनिधि भी इस कमिटी पर लिये जा सकते हैं।

इस कोआर्डिनेशन कमिटी की प्रथम बैठक शीघ्र ही दिल्ली में होगी और कार्य की रूपरेखा तैयार की जायगी। उत्तराखण्ड, चम्बल घाटी, पूर्णिया जिला और नेफा तथा असम का सीमा-क्षेत्र फिलहाल हाथ में लिया जायगा। लद्दाख में अभी तक रचनात्मक कार्य की दृष्टि से कोई संपर्क नहीं बना है और वहाँ की स्थिति भी अस्पष्ट है। फिर भी हिमाचल प्रदेश के कुछ हिस्सों में काम उठाया जा सकता है। सीमावर्ती क्षेत्रों के कार्य में कुछ आर्थिक सहायता गांधी निधि की ओर से भी दी जाने का आश्वासन मिला है। शांति-सेना मंडल की ओर से शीघ्र ही इन क्षेत्रों में चुने हुए शांति-सैनिक भेजे जाने का कार्य दिसम्बर के चौथे सप्ताह तक पूरा हो जायगा। श्री जयप्रकाश नारायण २६ दिसम्बर से तीन सप्ताह के लिए असम के दौरे पर जा रहे हैं।

सर्व सेवा संघ
की ओर से। —दत्तोबा दास्ताने

प्रस्ताव : ३

नागरिक स्वातन्त्र्य

देश की संकटकालीन स्थिति में नागरिक स्वतंत्रता को खतरा पैदा होने की संभावना होती है, इसलिए लोकतंत्र की जड़ बनाये रखने और मजबूत बनाने की कोशिश करने वाले लोग जो शासन में और शासन के बाहर हैं उन सभी को ऐसे समय में बहुत सतर्क रहने की आवश्यकता है, ऐसा यह परिषद् मानती है।

देश की सुरक्षा के खयाल से नागरिकों की स्वतन्त्रता पर कुछ अंकुश लगाने की आवश्यकता विशेष परिस्थिति में पैदा हो सकती है यह मानते हुए भी हमारा विश्वास है कि जहाँ तक हो सके विचार और विचार प्रकाशन का स्वातन्त्र्य जो लोकतंत्र की बुनियाद है, सुरक्षित रहना चाहिए। ऐसी कुछ घटनाएँ भी हुई हैं जिनसे यह आशंका होती है कि नागरिक स्वतंत्रता को सिर्फ सरकार की ओर से ही नहीं, बल्कि जनता के कुछ असहिष्णु जमातों की ओर से भी खतरा पैदा हो सकता है। देश की ताकत इसमें नहीं है कि जो कुछ चल रहा हो उसी को सब चुपचाप मान लें, बल्कि जो लोकमान्य नहीं है—ऐसी राय भी मुक्तभाव से कोई प्रकट करे तो उसे बरदाश्त करने की वृत्ति में देश की ताकत है। हम देशवासियों का आवाहन करते हैं कि नागरिक स्वतंत्रता के इस तत्त्व की रक्षा वे दृढ़ता से करें।

दिल्ली से पीकिंग तक "मैत्री-यात्रा"

सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष, श्री मनमोहन चौधरी का वक्तव्य

"सर्व-सेवा-संघ ने अपने वेड्छी अधिवेशन में स्वीकृत निवेदन में सब व्यक्ति, संस्था और संगठनों को देश में अहिंसक प्रतिकार की शक्ति बढ़ाने और संकट की घड़ी में राष्ट्रीय एकता लाने के लिए आमंत्रित किया था। सर्व सेवा-संघ ने दुनिया के शांति में लगे व्यक्ति और संगठनों से भी अपील की थी कि वे चीन भारत-संघर्ष का शीघ्र अन्त करने में सहयोग दें।

इसी दृष्टि से सर्व-सेवा-संघ ने देश की शांति और अहिंसा के लिए समर्पित संगठनों की एक संयुक्त परिषद् १५ और १६ दिसम्बर को सेवाग्राम में आयोजित की। संघ की अपील के प्रत्युत्तर में विश्व शांति सेना (वर्ल्ड पीस ब्रिगेड) के सहअध्यक्ष श्री ए० जे० मस्टे और पश्चिम के अन्य शांतिवादी मित्रों ने परिषद् में भाग लिया। भारत और चीन में सद्भाव बढ़ाने के लिए दुनिया भर के शांति प्रेमी व्यक्तियों की दिल्ली से पीकिंग तक की एक मैत्री-यात्रा हो, यह विचार श्री ए० जे० मस्टे ने रखा, जिसका सब लोगों ने स्वागत किया। बाद में अ० भा० शांति-सेना मण्डल ने इस सुझाव पर विस्तार से चर्चा की और महसूस किया कि वर्तमान संघर्ष को दूर करने में यह एक सीधा और स्वागतार्ह कदम होगा। इसलिए अ० भा० शांति-सेना मंडल ने मैत्री-यात्रा का अभियान उठाने का तय किया और विश्व शांति सेना, फ्रेण्ड्स सर्विस कमिटी, दी कमिटी फार नॉनवायलेन्ट ऐक्शन और दुनिया की शांति और अहिंसा के लिए समर्पित अन्य संस्थाओं से प्रार्थना की कि वे इस अभियान को सफल बनायें।"

यह 'मैत्री-यात्रा' ३० जनवरी, १९६३ या अधिक-से-अधिक १२ फरवरी, १९६३ को गांधी-समाधि राजघाट, नयी दिल्ली से प्रारंभ होगी। इस यात्रा में कुल २०-२५ व्यक्ति होंगे, जिनमें आधे विदेशी शान्तिवादी होंगे। ऐसी उम्मीद है कि अमेरिका, इंग्लैण्ड, अफ्रीका, पाकिस्तान और अन्य पड़ोसी देशों के शान्तिवादी इसमें सम्मिलित होंगे। श्री शंकरराव देव इस यात्रा में शामिल हो रहे हैं।

श्री शंकरराव देव ने चर्चा में भाग लेते हुए कहा कि सर्व-सेवा-संघ के वेड्छी सम्मेलन के निवेदन में एक बात की मुझे कमी दिखाई देती है। संघर्ष से ऊपर उठ कर मैत्री की भावना से चीन और भारत के बीच संबंध स्थापित करके चीनी जनता के हृदय तक पहुँचने की प्रक्रिया होनी चाहिये। अहिंसा तभी काम कर सकती, है, जब सामनेवाला यह महसूस करे कि मैं उसका भी हित चाहने वाला एक मित्र हूँ। सरकार की ओर से फौज से आक्रमण का प्रतिकार यदि शस्त्रों के आधार पर और ब्रिटेन, अमेरिका के हथियारों के आधार पर भारत करना चाहेगा तो पश्चिम के राष्ट्र जिस दलदल में फँसे हैं, उसी में भारत भी फँसेगा! इसलिए पीकिंगवालों को समझाने के लिए शांतिवादियों का आंतर्राष्ट्रीय दल दिल्ली से पीकिंग तक 'पीस मार्च' करते हुए जाये और सीमा विवाद का हल शस्त्र से नहीं, बल्कि शांतिमय उपायों से करने का वातावरण दोनों देशों में बनाने की दिशा में प्रयत्न करे, ऐसा सोचा जाय। आक्रमण का प्रतिकार हो रहा है तो शांति-सेना की ओर से अहिंसा से प्रतिकार कैसे किया जाय, इस प्रतिकार के संदर्भ में ही हम सोचेंगे तो अहिंसक प्रक्रिया का विकास नहीं कर सकेंगे। इसलिए दिल्ली से पीकिंग तक 'पीस मार्च' ले जाने का जो प्रोग्राम बनाया जा रहा है उसमें मैं भी अपना नाम रखना चाहूँगा और चीन के हृदय तक पहुँचने की अहिंसक प्रक्रिया को हमारे देशवासियों को समझाने के लिए आवश्यक हो तो मैं घूमना भी चाहूँगा।

भारत-चीन युद्ध और बंगाल

आजकल भारत के सामने एक नयी समस्या खड़ी है। उसका स्पर्श बंगाल को हो रहा है। आसाम को ज्यादा स्पर्श है, लेकिन बंगाल को भी कम नहीं है। इन दिनों जो लड़ाइयाँ होती हैं, वे सीमित नहीं रहतीं। अभी भारत और चीन के साथ जो युद्ध चल रहा है वह घोषित न किया हुआ युद्ध है। मैत्री के अन्तर्गत ही वह युद्ध चल रहा है। अगर कहीं वह घोषित हो जाय तो उसका बहुत व्यापक रूप होगा। उसके क्या-क्या परिणाम होंगे, कितनी दूर जायेंगे, यह कोई नहीं कह सकता। इसलिए यह नहीं मानना चाहिए कि बंगाल रणक्षेत्र से दूर है। आसाम ज्यादा नजदीक है, बंगाल नहीं। लेकिन घोषित युद्ध में बंगाल ही ज्यादा नजदीक हो जायेगा। युद्ध का पहला असर कलकत्ते पर पड़ेगा, क्योंकि इस प्रदेश का जो कुछ सर्वस्व है, वह कलकत्ते में है। जब हम यह सोचते हैं तो ध्यान में आता है कि यहाँ के चित्त पर जो असर है, उसका पूरा अंदाज नहीं लग सकता। इस संकट से मुक्त होने के लिए जो कुछ करना पड़ेगा, वह दीर्घकालीन योजना होगी, लेकिन कम-से कम इस समय इतना तो कर ही लेना चाहिए जिससे सबके दिल एक हो जायँ।

[नयनपुर, जिला मुर्शिदाबाद, २७-११-'६२]

—विनोबा

खादी का भविष्य

ध्वजा प्रसाद साहू

(सदस्य, खादी-ग्रामोद्योग कमीशन तथा अध्यक्ष, खादी-ग्रामोद्योग समिति, सर्व सेवा संघ)

खादी का काम जब प्रारम्भ किया गया था, उस समय इसके जानकार कोई नहीं थे। हम लोगों को, चूँकि चरखे का प्रचार करना ही था, इसलिए 'अनाडी' होते हुए भी इस काम को करना शुरू किया। किसी तरह से चरखे का प्रचार हुआ और जो मोटा-झोटा सूत कता उसकी बुनाई भी होने लगी। पीछे अखिल भारत चरखा-संघ बना और संगठित रूप से हम जैसे नौसिखिये लोगों के द्वारा काम बढ़ाया गया। चरखा-संघ का काम जब खादी-बोर्ड ने लिया, उस समय सारे भारत में चरखा-संघ की शाखाएँ कायम थीं और एक-डेढ़ करोड़ की खादी देश में बनती थी।

खादी-बोर्ड, और पीछे खादी-कमीशन, से सहायता प्राप्त करके खादी-संस्थाओं ने खादी के काम को फैलाया। अब इन संस्थाओं के द्वारा सूती, ऊनी और रेशमी, कुल मिला कर लगभग १८ करोड़ की खादी बन रही है। सारे भारत में छोटी-बड़ी १५ सौ से अधिक संस्थाएँ काम कर रही हैं। ग्रामोद्योगों की संस्थाएँ भी कई हजार बन गयी हैं। उनमें अधिकतर सहयोग-समितियाँ हैं।

मौजूदा काम का स्वरूप

खादी-संस्थाओं में कुल मिला कर २५ हजार से अधिक कार्यकर्ता काम करते होंगे। सूत कातने वालों की संख्या १२-१३ लाख होगी और खादी के बुनकर भी करीब १ लाख होंगे। पर फिलहाल जितने काम हो रहे हैं, वे संस्था और कार्यकर्ताप्रधान हैं। जनता के द्वारा खादी का काम हो रहा है, यह नहीं कहा जा सकता। यह सही है कि लाखों सूत कातने वाले और बुनकर काम कर रहे हैं, फिर भी इसकी व्यवस्था में उनका हाथ नहीं है और न वे यह अनुभव करते हैं कि यह काम उनका है। वे इसके द्वारा अपनी रोजी मात्र प्राप्त करते हैं। 'रिबेट' और 'सबसिडी' घटाने या बिलकुल न लेने की बात वर्षों से चल रही है, लेकिन खादी-संस्थाओं का इस ओर ध्यान देने का कोई उत्साह नहीं होता है। उनको भय है कि 'रिबेट' घटाने से खादी की बिक्री बहुत कम हो जायगी, जिस कारण उत्पादन भी कम करना होगा और बहुत चरखे बन्द हो जायेंगे। आज जितने सूत कातने वालों और बुनकरों को वे काम दे रहे हैं उतने लोगों को काम नहीं दे पायेंगे। अगर दबाव से 'रिबेट' कम करने की बात संस्थाएँ स्वीकार भी कर लें, तो उसे यह कह कर स्वीकार करेंगी कि यह काम गलत हुआ है और इससे खादी मर जायगी।

पर जहाँ तक मैं देख सकता हूँ, ऐसा प्रतीत हो रहा है कि बावजूद 'रिबेट' और 'सबसिडी' के खादी का काम ठिठक गया है। संस्थाओं का ध्यान चरखे की ओर बहुत नहीं है। ऊनी और रेशमी कपड़ों, कम्बलों के उत्पादन की ओर ध्यान अधिक है। पर इसमें भी काम बहुत बढ़ने की गुंजाइश है, ऐसा प्रतीत नहीं होता। थोड़ी दूर जाकर इसमें भी अवरोध पैदा हो जायगा, क्योंकि इसके लिए भी बाजार चाहिये। मिलों की प्रतिद्वन्द्विता में इनका बाजार भी आज नहीं तो कल सीमित हो रहेगा।

अब काम आगे नहीं बढ़ेगा-अगर...

मैं समझता हूँ कि संस्थाओं का स्वरूप बिना बदले 'रिबेट' देने पर भी अब काम आगे नहीं बढ़ सकेगा। 'रिबेट' की मात्रा और बढ़ायी जायगी तो खादी का उत्पादन थोड़ा और बढ़ेगा। लेकिन अगर बाजार में मिलों के साथ मुकाबले की ही बात रहेगी तो 'रिबेट' की मात्रा बहुत अधिक बढ़ानी पड़ेगी, जिसको आज की परिस्थिति में सरकार से प्राप्त करना असंभव नहीं तो बहुत कठिन होगा। अतः खादी का काम आगे नहीं बढ़ने वाला है, यह साफ दीख पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में खादी-प्रेमियों और संस्थाओं को सोचना होगा कि आगे काम कैसे बढ़े।

मेरा निश्चित मत है कि अब समय आ गया है कि संस्थाएँ अपने स्वरूप को बदलें। आज तक उनके द्वारा जितना काम हुआ है, वह काफी अच्छा काम हुआ है। अगर संस्थाएँ नहीं होतीं तो खादी की जड़ नहीं जमती और हजारों कार्यकर्ता जो आज खादी के संबंध में तकनीकी ज्ञान रखते हैं, ऐसे कार्यकर्ता नहीं बन पाते। लेकिन अब खादी की व्यवस्था को जनता के हाथ में देने की तरकीब सोचनी होगी। आज देश में ग्रामपंचायतें बनी हैं, उनको प्रभावित करके पंचायत-स्तर पर सहयोग-समिति या दूसरी संस्था खड़ी करनी होगी और उसके हाथ में खादी और ग्रामोद्योग के काम देने होंगे। आज की संस्थाएँ जो प्रत्यक्ष रूप से उत्पादन और बिक्री का काम करती हैं, उनको सेवा संस्था के रूप में काम करना होगा, और पंचायत-स्तर पर जो समितियाँ बनें उन्हें नाना प्रकार से मदद करके काम करने के योग्य बनाना होगा। ग्राम-समितियाँ योजनाबद्ध काम करें, इसके लिए उनको तैयार करना पड़ेगा। खादी-कमीशन की ओर से ग्राम-इकाई का जो कार्यक्रम बना है वह इस दृष्टि से सामयिक है। आज खादी-संस्थाओं द्वारा एक लाख गाँवों में काम हो रहा है। संस्थाओं का सारा काम पंचायत स्तर पर ग्राम-इकाइयों के रूप में चलाया जाय तो खादी और ग्रामोद्योग का काम बहुत ज्यादा बढ़ेगा और इसके द्वारा गाँव के लोगों में व्यवस्था-शक्ति भी पैदा होगी। गाँव के लोग योजनाबद्ध काम करेंगे तो महँगी होने पर भी अपनी पैदा की हुई चीजों का इस्तेमाल करेंगे। अपनी आवश्यकता से अधिक चीजें बनायेंगे और उन चीजों को बाहर बेचने की आवश्यकता होगी तो वे सरकार से 'रिबेट' और 'सबसिडी' की माँग करेंगे। उनकी माँग में बल होगा, जो आज की संस्थाओं की माँग में नहीं है। उनकी माँग जनता की माँग होगी, जिसको कोई सरकार इन्कार नहीं कर सकेगी। जहाँ संस्थाओं का आज का स्वरूप बदलने का सुझाव दिया गया है, वहाँ कमीशन द्वारा खादी-काम की मदद के स्वरूप में भी परिवर्तन करना होगा, जिसमें पंचायत-स्तर पर काम हो सके और आज की संस्थाएँ उनको सक्षम रूप से अपनी सेवा दे सकें।

एक बात और! 'रिबेट' और 'सबसिडी' की आवश्यकता इसलिए होती है कि हमारे औजारों के द्वारा उत्पादन कम होता है। इसलिए हमको तकनीकी ज्ञान के ऊपर भी ज्यादा ध्यान देना होगा। आज इस ओर ध्यान बहुत कम है। जो चरखे परंपरागत के नाम से आज प्रसिद्ध हैं, वे ४० वर्ष पुराने हैं। अम्बर चरखे का आविष्कार हुआ और संस्थाओं ने उसे लाखों की संख्या में वितरित भी किया। लेकिन आज उनका बुरा हाल है, यह मानना होगा। इसके अनेक कारणों में प्रमुख कारण संस्थाओं के कार्यकर्ताओं में तकनीकी ज्ञान की ओर उदासीनता है। करघों में भी बहुत सुधार हुए हैं, किन्तु खादी-संस्थाओं ने उनका भी लाभ बहुत कम लिया है। औजारों में सुधार किया जाय और कच्चे माल का अर्थात् रूई का उत्पादन स्थानीय हो तो खादी आज की अपेक्षा बहुत सस्ती पड़ेगी और संभव है कि 'रिबेट' की आवश्यकता न पड़े। आज खादी और ग्रामोद्योगों के लिए जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित हो गया है। खादी-संस्थाओं को इस पर गंभीरता से विचार कर सही रास्ता निकालना चाहिये।

श्री ध्वजा बाबू खादी के पुराने और अनुभवी सेवक हैं। खादी-जगत् में आज उनका मान्य स्थान है। प्रस्तुत लेख में उन्होंने खादी-काम की मौजूदा स्थिति का विश्लेषण और उसकी भावी दिशा की ओर जो संकेत किया है, वह सब खादी-कार्यकर्ताओं के लिए अत्यन्त विचारणीय है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि जैसा ध्वजा बाबू ने कहा है, आज सारा-का-सारा खादी काम 'संस्था और कार्यकर्ताप्रधान' है, वह काम जनता ने अपना लिया है ऐसा नहीं कहा जा सकता। "काते सो पहने और पहने सो जरूर काते" के बापू के आदेश और आदर्श के नजदीक पहुँचने के बजाय इन पिछले वर्षों में हम उससे

खादी की बनियागिरी करते रहना हो तो बात दूसरी है, वरना खादी के काम के मौजूदा स्वरूप को हमें बदलना चाहिये, यह ध्वजा बाबू की राय बिलकुल सही है। उन्होंने दिशा का संकेत भी सही किया है।

पर एक बात की आगाही हम देना चाहते हैं। आज दुनिया का सारा व्यापार लोभ और असत्य पर चल रहा है यह कहना अत्युक्ति नहीं होगी। बापू ने खादी का शास्त्र विकसित करके संसार के सामने इस बात का उदाहरण रखने की कोशिश की थी कि सचाई और निःस्वार्थ वृत्ति से भी व्यापार चल सकता है और उसी प्रकार चलने पर लोगों का उससे भला होगा। पर आज इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकेगा कि खादी काम में भी असत्य काफी घुस गया है। इसी स्थिति में उसे गाँव-गाँव में पंचायतों या ग्राम-समितियों के हाथ में सौंप देने में खतरा है। सबसे पहले खादी-कार्यकर्ताओं को इस काम में सचाई और शुद्धता को फिर से प्रतिष्ठित करना चाहिए। काम कम हो जाने की चिंता छोड़ कर उसकी शुद्धता पर ध्यान देना चाहिये।

दूसरी बात जो इस समय खादी-काम के सिलसिले में सबसे जरूरी है वह कार्यकर्ताओं तथा कत्तिन-बुनकरों आदि को खादी के असली मकसद की जान-

जिन्दा नहीं रह सकेगी।

अतः श्री ध्वजा बाबू की सूचनाओं का पूरा समर्थन करते हुए हमने उपरोक्त दो बातों की ओर खादी-कार्यकर्ताओं का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक

आ गया है।

—सिद्धराज

प्लासी की लड़ाई हमने जीत ली

कालिन्दी

हिन्दुस्तान के इतिहास में कुछ ऐसे रणक्षेत्र हैं, जिन्हें हिन्दुस्तान का बच्चा-बच्चा जानता है। भगवान् कृष्ण ने गीता कही, वह कुरुक्षेत्र; मराठों ने अहमदशाह अब्दाली से हार खायी, वह पानीपत और जहाँ हिन्दुस्तान की आजादी खोयी, वह प्लासी, कौन नहीं जानता? अभी हम प्लासी के रणक्षेत्र में खड़े हैं।

दायें-बायें हाथ फैलाते हुए दुर्गाबाबू कह रहे हैं—"इधर थी सिराजुद्दौला की सेना और उधर थी अंग्रेजों की सेना। चार घंटे की लड़ाई में क्लाइव ने हिन्दुस्तान को जीत लिया।" डाकबंगले में रखे हुए छोटे मोडल को समझाते हुए डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट साहब बता रहे हैं—"सिराजुद्दौला ने अपना साफा मीरजाफर के चरणों में रख दिया और कहा कि इसकी इज्जत रखना आपके हाथ में है।"

दूसरे दिन क्लाइव की सेना मीरजाफर का कैम्प लाँघते हुए सिराजुद्दौला की तरफ गयी, लेकिन मीरजाफर ने उसे नहीं रोका। उस दिन बहुत भारी वर्षा हुई और सिराजुद्दौला की बारूद भींग कर बेकार हो गयी। क्लाइव की बारूद टारपोलीन (तिरपाल) से ढकी हुई थी, इसलिए क्लाइव ने लड़ाई जीत ली।

हम भी प्लासी जीतने के लिए ही आये हैं। हमारा आक्रमण अहिंसक है। इसमें किसी की हार नहीं। दोनों पक्षों की जीत है। सही बात तो यह है कि इसमें दो पक्ष हैं ही नहीं। बाबा ने कहा था कि जितने पक्ष हैं, वे सभी तो हमारे काम में लगे हुए हैं। सर्व-सेवा-संघ, गांधी-निधि, कस्तूरबा-ट्रस्ट, सर्वोदय-मण्डल, कांग्रेस, पी॰ एस॰ पी॰ तथा अन्य स्थानीय रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधि रणांगण में हाजिर हैं। इसके अलावा बंगाल सरकार ने भी दो जनरल (दो मंत्री) यहाँ भेज दिये हैं। इन सबके सामने हम प्लासी पर आक्रमण करने की घोषणा करते हैं। ऐसे इस आक्रमण की घोषणा पूज्य बाबा ने मुर्शिदाबाद जिले में प्रवेश करने के साथ ही कर दी थी—

> 'प्लासी का नाम सारे हिन्दुस्तान में बदनाम है। यहाँ हमने आजादी खोयी। अगर प्लासी ग्रामदान हो जाता है तो खोयी हुई आजादी वापस मिलेगी और हम समझेंगे कि पाँच सौ ग्रामदान मिले।"

आक्रमण की योजना हो गयी। क्षितिशदा और वहीं जाने वाले थे, लेकिन बाबा ने सुझाया कि वे प्लासी ही जायें। उधर मुख्य मंत्रीजी ने भी जब यह समाचार सुना तो उन्होंने भी अपनी तरफ से "कुमक" भेज दी।

पहले ही दिन मालूम हुआ कि प्लासी यात्रा के कार्यक्रम में नहीं है। बाबा ने कहा—"हम वहाँ जाना चाहते हैं और जरूरत हो तो एक दिन ज्यादा भी वहाँ रुक सकते हैं।" कार्यक्रम में परिवर्तन हुआ और प्लासी के लिए दिन निश्चित हुआ। १५ ता॰ को बाबा वहाँ आये और विजय की घोषणा हुई। प्लासी का ग्रामदान जाहिर हुआ।

रणक्षेत्र से तीन मील दूरी पर है—प्लासी गाँव। यहाँ कुल २८२ परिवार हैं और ६०० बीघा जमीन है। १२१ भूमिवान हैं, बाकी प्रायः भूमिहीन हैं। रणक्षेत्र पर ही चीनी का बड़ा कारखाना है। प्लासी-युद्ध के पहले प्लासी गाँव में काफी जमीन थी और उस पर खेती होती थी। युद्ध के बाद कंपनी ने धीरे-धीरे १४०० बीघा जमीन अपने काम के लिए ले ली थी। अब उस जमीन पर चीनी के कारखाने की मालिकी है और गाँव के ७५ प्रतिशत लोग इसी कारखाने में मजदूर हैं। गाँव में ब्राह्मण, मुस्लिम और ग्वाल लोग हैं। लेकिन गाँव की यह विशेषता है कि यहाँ हिन्दू-मुसलमानों के घर एक-दूसरों के सट कर हैं। सामान्यतः अलग-अलग बस्तियाँ होती हैं, ऐसा यहाँ नहीं है। गाँव में झगड़े भी बहुत कम होते हैं।

क्षितिशदा, शिशिरदा, सौरेनदा, दुर्गाबाबू, निरुपमा देवी आदि सब यहाँ आये। तब गाँव ठण्डा था। दो-एक मीटिंगें हुईं, फिर भी ठंढक कम नहीं हुई। शीत से मानो बर्फ जम गयी थी। क्षितिशदा कह रहे थे कि मुझे तो ऐसा लगा कि कहीं दूसरी जगह चला जाऊँ। लेकिन जाता कैसे! कमाण्डर का हुक्म जो प्लासी का था! आखिर एक दिन रात को गाँव के एक शिक्षित आदमी के घर गपशप हो रही थी, ग्रामदान की बात चल रही थी, तो यह तय हुआ कि गाँव के सबसे बड़े जो जमीन-मालिक हैं, उनके घर जाया जाय। बैठक समाप्त हुई। कुछ स्थानिक लोगों के साथ कार्यकर्ता उनके घर पहुँचे। मिश्र साहब ने उनकी बातें सुनीं और घर में कामकाज देखने वाले अपने बड़े पुत्र को बुला कर पूछा—क्या सारी जमीन गाँव के नाम पर लिख दूँ? जवान लड़का, जो कि कल जमीन का मालिक होनेवाला था, बोला—जी हाँ लिख दीजिये। मिश्र महाशय ने अपनी जमीन का दान पत्र कार्यकर्ताओं के हाथ में दे दिया।

बरफ पिघलना शुरू हो गया। एक के बाद एक दान-पत्र मिलते गये और यह ग्रामदान हो गया। मिश्र साहब के लड़के से पूछा—क्यों भाई, आपने जमीन क्यों दी? आप तो कल इसके मालिक बनने वाले थे? जवाब मिला मैंने गाँव की उन्नति के लिए जमीन दी। आखिर मरेंगे तब हम जमीन को साथ थोड़े ही ले जायेंगे।

चीनी कारखाने के मालिकों ने भी गाँव की उन्नति में सहयोग देने का वादा किया।

* * *

सुबह प्लासी गाँव के दर्शन के लिए जाना था। लोग इकट्ठे हुए। बाबा ने उनसे कहा—"हम अभी चीनी के कारखाने में गये थे। यह कुत्ता भी हमारे साथ आया था। (सात दिन से एक कुत्ता यात्री-दल का सदस्य बन गया है। वह साथ रहता है और साथ ही खाता पीता है।) इसमें अक्ल है। इसे इधर-उधर की जानकारी की चिन्ता नहीं थी। इसे किस चीज में रस है, यह कारखाने वालों ने जान लिया और इसके सामने थोड़ी चीनी डाल दी। वह चीनी खाता रहा और हमने कारखाना देखा। अब किसने पाया और किसने खोया, यह सोचने की बात है। वेदान्त में एक कहानी है—दो आदमी थे। वे बगीचा देखने गये। एक ने बगीचे की सारी जानकारी ली। दूसरा बगीचे के मालिक के पास गया और कहने लगा कि कुछ खिलाओगे भी या नहीं? उसे आम खिलाया गया। जिसको आत्मा का अनुभव हो गया है, वह बुद्धि से नहीं सोचता। कुत्ते ने अनुभव किया और हमने देखा। इस ग्रामदान से हमको आनन्द हुआ। हमने तो ग्रामदान देखा है, और आपने इसे चखा है।

"यह ग्रामदान सारे भारत में जाहिर होगा। यहाँ आजादी खोयी। आज देश की आजादी हुई, क्योंकि आपने ग्रामदान जाहिर किया। यह ईश्वर की कृपा हुई। ईश्वर के कितने उपकार हैं, यह हम शब्दों में व्यक्त नहीं कर सकते। कल चारू बाबू हमसे कह रहे थे कि विरक्त पुरुष वासना नहीं रखता। फिर आपने वासना रखी, तो प्रभु यह वासना जरूर पूरी करेगा। हम प्रभु को धन्यवाद देते हैं।"

इस मौजे का दूसरा गाँव, नूतन धावड़ा, जहाँ ४५ परिवार हैं, भी कल ग्रामदान जाहिर हुआ। प्लासी गाँव में थी क्लाइव की सेना और नूतन धावड़ा में थी सिराजुद्दौला की सेना। ये दोनों गाँव, ग्रामदान हो गये। भविष्य में कहा जायगा—'इधर था नूतन धावड़ा

> और उधर थी प्लासी। विनोबा यहाँ आये और दोनों गाँव ग्रामदान हो गये। ग्रामस्वराज्य की नींव यहाँ डाली गयी। क्योंकि विजय, उनकी बारूद सूखी थी, उनमें आसक्ति नहीं थी। वहाँ आपस में झगड़े नहीं थे, एकता थी और था प्रेम।'

गांधीजी की ऐतिहासिक प्रतिमा

यह गांधीजी की एक अलभ्य प्रतिमा की फोटो-नकल है। सौभाग्य से यह प्रतिमा अ॰ भा॰ सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी से प्राप्य है।

यह ऐतिहासिक अबाध प्रतिमा एक शान्तिवादी शिल्पकार, मैडम क्लेरा क्वीन होफमेन ने बनायी है। आप हालैंड से निर्वासित कर दी गयी थीं। आप १९४६ में वर्धा आयीं और आपने गांधीजी से उनकी मूर्ति बनाने की आज्ञा प्राप्त कर ली और गांधीजी जब दिन में कताई करते थे, तब यह उनकी प्रतिमा घड़ती रहती थीं। यह प्रतिमा बनने पर मैडम क्लैरा ने इसे अ॰ भा॰ ग्रामोद्योग-संघ को भेंट में दे दिया, जो अब अ॰ भा॰ सर्व सेवा संघ में विलीन हो चुका है।

प्लास्टर की यह प्रतिमा इटली भेजी गयी और वहाँ पर केवल इटेलियन कलाकारों द्वारा उपयोग में लाने वाले 'लास्ट वेक्स मेथड' के तरीके से तांबे और अलमुनियम में ढाली गयी। इस तरीके से मोडल प्रतिमा की बारीक-बारीक रेखाएँ भी अन्य अनुकृतियों में आ जाती हैं। मूल प्रतिमा वर्धा के 'मगन-संग्रहालय' में प्रस्थापित है। उच्च कलात्मक कृति होने के साथ, यह गांधीजी के जीवन-काल की अंतिम प्रतिमा है, जिसका मोडल किया गया था। इससे इसका महत्त्व बहुत अधिक हो जाता है।

इस प्रतिमा की कुछ प्रतिकृतियाँ एक हजार रुपये प्रति प्रतिमा के हिसाब से मंत्री, अ॰ भा॰ सर्व-सेवा-संघ, राजघाट, वाराणसी से प्राप्त की जा सकती हैं।

हमारा मोर्चा

● विनोबा

आज एक ग्रामदान हुआ और दूसरा भी ग्रामदान होने जा रहा था, लेकिन हमने उसे जाहिर करने से इनकार किया, क्योंकि उसमें एक-दो मनुष्य ऐसे थे, जो ग्रामदान में शामिल नहीं होना चाहते थे। हमने सोचा कि जो काम करें, वह पूरा करें। ग्रामदान में देशरक्षा का प्रधान उद्देश्य है। वह उद्देश्य तभी सधेगा, जब ग्रामदान पूरा होगा। इस वास्ते हमने यह फैसला किया है कि अब जो ग्रामदान पूरा होगा, वही ग्रहण करेंगे।

अहिंसा एक अंतःशक्ति है। वह अनेक क्षेत्रों में काम करती है। थोड़ा-सा व्यक्त काम करती है और बहुत-सा अव्यक्त। उतने से सारे काम पूरे हो जाते हैं। अहिंसा का यह दर्शन है। हिंसा में बाहर की क्रियाएँ बहुत ज्यादा होती हैं। अन्दर का सोचना क्षीण होता है। इसलिए चिन्तन पर जब प्रहार होता है, तो हिंसा टिकती नहीं। वह बाहर से जोर लगाती है। हिंसा पर आक्रमण करने वाले अगर बाहर से आक्रमण करते हैं तो दो में से कोई भी जीते, आखिरी जीत हिंसा की ही होती है। हिंसा से हिंसा पर आक्रमण हुआ। उसमें एक हिंसा हारी और दूसरी जीती तो जय हिंसा की ही हुई। इस वास्ते हिंसा का मुकाबला अहिंसा करेगी तो अव्यक्त रूप से करेगी। उसका मुख्य प्रहार सूक्ष्म में होगा। हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया उसका माध्यम होगी।

विचार की शक्ति

हमारे एक कम्युनिस्ट मित्र थे। वे अहिंसा के सिद्धान्त और कम्युनिज्म के सिद्धांत की चर्चा किया करते थे। एक दिन बोले—"हम विचार-परिवर्तन और हृदय-परिवर्तन को नहीं मानते। हमारा विश्वास प्रत्यक्ष क्रिया में है। जनता की तरफ से क्रिया हो, और उससे जीवन का परिवर्तन हो, तो उस प्रक्रिया को हम मानते हैं, लेकिन सूक्ष्म वैचारिक परिवर्तन की प्रक्रिया को हम नहीं मानते। यह नहीं कि वह बिल्कुल निकम्मी है, फिर भी उसे हम ज्यादा महत्त्व नहीं देते।" मैंने पूछा—आप कम्युनिस्ट कैसे बने? किसी ने आपको पीटा या धमकाया था? नहीं, तो फिर आप ही अपनी बात का विरोध अपने जीवन से कर रहे हैं। आपने कार्ल मार्क्स की किताब पढ़ी, उसका चित्त पर असर हुआ और आप कम्युनिस्ट बन गये। मार्क्स आप पर हमला करने नहीं आया था। उसने तो विचार ही दिया था न!

हमको समझना चाहिए कि चीन से हमारा जो मुकाबला हो रहा है, उसका भी मुख्य उत्तर हमें वैचारिक क्षेत्र में देना है। हम अगर पूर्ण रूप से विचार नहीं करेंगे, तो जो स्थूल रूप होगा, वह हिंसा को ही बढ़ावा देगा। फिर चाहे कोई भी पक्ष जीते, कोई फर्क नहीं पड़ेगा। जनता की स्थिति इतनी बुरी हो जायगी, जितनी इसकी हार में या उसकी हार में हो सकती है। मान लीजिये, हिन्दुस्तान की सेना ने क्रूर कर्म करके युद्ध जीत लिया और राज्य उन क्रूर लोगों के हाथ आ गया तो अपनी खुद की ही सेना पीड़क साबित होगी। मान लीजिये, अगर सेना क्रूरतापूर्वक लड़ कर हार गयी तो सामने वाली सेना जब आक्रमण करेगी, तब वह क्रूर बन कर खूब संहार करेगी। हम सारे क्रूरतापूर्वक लड़ने में दोनों तरफ से खतरा है। इसलिए यह जरूरी है कि क्रूरतापूर्वक न लड़ें, वीरतापूर्वक लड़ें। इधर कायरता से बचना है और उधर क्रूरता से बचना है। यह द्विविध विचार अहिंसा का विचार ही कर सकता है। आज चीन के साथ हमारा जो मुकाबला हो रहा है, उसके तीन मोर्चे हैं:

(१) वैचारिक क्षेत्र में,
(२) सारे देश में और
(३) रण-क्षेत्र में।

चीन के कदम क्यों रुके?

आधुनिक युद्धों में विचार का खयाल बहुत ज्यादा करना पड़ता है। अगर ऐसा नहीं होता और स्थूल रूप में लड़ी जाने वाली लड़ाई का ही महत्त्व होता, तो चीन की विजयी सेना वापस क्यों जाती? यह तो एक चमत्कार ही है न? एक सेना आक्रमण करती है, विजयी होती है और ऐसी हालत में भी उसे आज्ञा होती है कि आगे मत बढ़ो, वापस चलो! वे वापस होते हैं, तो क्या खेल करने आये थे? वापस क्यों जा रहे हैं? इसलिए कि चीनवालों ने महसूस कर लिया कि वैचारिक क्षेत्र में हम हार रहे हैं। जिसके ध्यान में यह बात नहीं आयी, उसे पता ही नहीं है कि आधुनिक समय में लड़ाइयाँ कैसे होती हैं।

पिछले चुनाव में यहाँ के बड़े-बड़े नेता एक-दूसरे के खिलाफ इस तरह लड़े तो क्या आप समझते हैं कि चीन को यह मालूम नहीं है? उसे सब मालूम है। इसलिए उसने आशा रखी थी कि हमारा जोरदार आक्रमण होगा तो भारत में फूट पड़ेगी। लेकिन यहाँ परिणाम उल्टा ही हुआ! भारत में एकता हो गयी। यहाँ तक कि कम्युनिस्ट पार्टी ने भी अनुकूल प्रस्ताव किया। क्यों किया? यह भी एक वैचारिक विजय है।

कम्युनिज्म की दीक्षा दो या सर्वोदय की दीक्षा लो

कम्युनिस्टों के अनुकूल प्रस्ताव के बारे में लोग संशय रखते हैं, लेकिन मैं नहीं रखता। मैं तो उनका स्वागत करने के लिए तैयार हूँ। वे आयें मेरे पास। मैं उनसे कहना चाहता हूँ कि आओ, देखो और समझो कि आपमें और मुझमें क्या फर्क है? आप सारी मिल्कियत राज्य पर छोड़ने की बात करते हैं और मैं सारी मिल्कियत गाँव पर छोड़ने की बात करता हूँ, ग्रामदान की बात करता हूँ, मालकियत मिटाने की बात करता हूँ। इसलिए या तो आप मुझे समझाइये, या मेरा विचार समझ कर खुद सर्वोदयी हो जाइये। मैं आपके साथ विचार-विमर्श करने के लिए तैयार हूँ। मुझे कम्युनिज्म की दीक्षा दीजिये, या मुझसे सर्वोदय की दीक्षा लीजिये।

कम्युनिज्म के दो विचार

एक जमाना था, जब कि कम्युनिज्म का एक ही विचार था। क्या विचार था? यह कि किसी एक देश में कम्युनिज्म हुआ, तो कार्य का आरंभ हुआ। उसके बाद कुल दुनिया में कम्युनिज्म की स्थापना करनी है। जब तक दूसरे देश कम्युनिस्ट नहीं बनते, तब तक हमारे देश का कम्युनिज्म खतरे में है। यह विचार कम्युनिज्म को मिला है। लेकिन आजकल कम्युनिज्म में दो विचार-धाराएँ शुरू हो गयी हैं: एक रूस में, दूसरी चीन में।

रूस कहता है कि 'को-एक्जिस्टेन्स' (सहअस्तित्व) करो। हमारा देश कम्युनिस्ट है। यहाँ हम अपने ढंग का राज्य चलायेंगे। आपके देश में दूसरे प्रकार की राज्य-व्यवस्था है, तो आप तदनुसार राज्य चलाइये, हम आप पर आक्रमण नहीं करेंगे, आप भी हम पर आक्रमण मत कीजिये। हमारा देश ज्यादा सुखी होता है कि आपका, यह देखिये। अगर हमारा देश सुखी हुआ और अवश्य सुखी होगा, तो कम्युनिज्म की विजय होगी। आप विचार के क्षेत्र में हार जायेंगे और फिर अपने आप कम्युनिज्म को स्वीकार कर लेंगे। रूस में इस तरह एक विचार का प्रवाह आया है। लेकिन चीन में यह विचार नहीं आया। उसने अफीम खाना तो छोड़ दिया, लेकिन कम्युनिज्म की जो अफीम खा ली, उसका नशा उतरा नहीं है! वह सोचता है कि हम किसी के साथ 'कम्प्रोमाइज' (समझौता) नहीं करेंगे। हमारे पास ६५ करोड़ लोग हैं। इस जनशक्ति से हम सारी दुनिया में फैल सकते हैं। इसी विचार के कारण उसने हिन्दुस्तान पर हमला किया है।

हिन्दुस्तान के कम्युनिज्म की स्थिति

हिन्दुस्तान के कम्युनिज्म में दो विचार आये हैं। एक विचार है कि कम्युनिज्म के प्रचार के लिए एक देश दूसरे देश पर आक्रमण करता है—जो कि दगा है—तो वह कम्युनिज्म के मूलभूत विचार के खिलाफ है। लोग समझते हैं कि देश मानने वाला पक्ष राष्ट्रीय बन गया है। वह राष्ट्रीय नहीं बना है, उसने समझ लिया है कि इस प्रकार के आक्रमण से कम्युनिज्म का फैलाव नहीं होगा। कुछ लोग मानते हैं कि होगा। भारत में उनकी संख्या कम हो गयी और दूसरे विचारवालों की संख्या ज्यादा हो गयी है। इसलिए पार्टी ने अनुकूल प्रस्ताव किया है। उस प्रस्ताव से भारत की एकता का दर्शन होता है।

वैचारिक लड़ाई

यहाँ करुणावान लोगों में विभाग पड़ गये हैं। कुछ करुणावान लोग यहाँ के कम्युनिस्ट पक्ष में हैं। वे समझते हैं कि कम्युनिज्म के बिना काम नहीं होगा। दूसरे करुणावान लोग सर्वोदय में हैं। कांग्रेस, पी० एस० पी० वगैरह दलों में सर्वोदय-पद्धति के करुणावान लोग ज्यादा हैं। वे कहते हैं कि सर्वोदय पद्धति से ही काम होगा। गरीबी यहाँ है और उसे किस तरह मिटाना है, यह दो करुणावादी अलग-अलग ढंग से सोचते हैं। इससे आपके ध्यान में आ सकता है कि यह लड़ाई वैचारिक किस तरह से है। इसमें मुख्य जिसकी हार होने वाली है, वह वैचारिक क्षेत्र में ही होने वाली है।

भारत की विजय

युद्ध के मोर्चे पर सेना हारी तो उसका मेरे पर कोई असर नहीं हुआ। मैंने कहा कि भारत की हार नहीं है, क्योंकि भारत ने वैसी तैयारी नहीं की थी। भारत ने तैयारी नहीं की, इसी में उसका गुण है। भारत मैत्री की भावना बाँटना चाहता था। उसका क्या परिणाम हुआ? यद्यपि उसकी सेना हारी, तथापि दुनिया भर की सहानुभूति वह प्राप्त कर रहा है। समरांगण में हारते हुए भी वैचारिक क्षेत्र में विजय हो रही है। उस विजय को मैं देख रहा हूँ। इसलिए आजकल मैं गर्जना हो करता हूँ कि भारत की हार नहीं हुई।

इसलिए यह जो ग्रामदान आदि कार्य चल रहा है, उसका वैचारिक महत्त्व है। इसके परिणामस्वरूप समाज में जो [illegible] आपस-आपस में लड़ रहे हैं, एक हो जायेंगे। यह बहुत बड़ी ताकत इसमें है। आप ग्रामदान करते हैं, तो कम्युनिस्टों का अच्छा विचार आपके पास आ जाता है और उनके विचार के दोष से आप मुक्त हो जाते हैं, तो उनको आप क्या देते हैं।

आधुनिक लड़ाइयों का तंत्र

बहुत लोग कहते हैं कि आज चीन बातचीत की बात कर रहा है, उसे नहीं मानना चाहिए और उसे खदेड़ देना चाहिए। मैं भी मानता हूँ कि उसे खदेड़ देना चाहिए, लेकिन कहाँ से? वैचारिक क्षेत्र से खदेड़ना चाहिए। इस वास्ते बातचीत का जो रास्ता खुला है, उसमें हमारी बड़ी जीत है। युद्ध वृद्ध के साथ शत्रु की तैयारी बढ़ाते हुए बातचीत के लिए हिम्मत से तैयार होना चाहिए। यह बात समझने की है कि यह वैचारिक लड़ाई है। अगर वैचारिक नहीं होती तो हाथ में आया हुआ मुल्क कौन छोड़ता! आधुनिक लड़ाइयों का तंत्र क्या है, इस पर से आप समझ सकते हैं।

बेचने का अधिकार

आप ग्रामदान जाहिर करते हैं तो क्या करना होता है? मिल्कियत छोड़नी पड़ती है। आज डर है कि हम भूमि की मिल्कियत छोड़ देंगे, तो क्या होगा? जमीन बन्धक नहीं रख सकेंगे और बेच भी नहीं सकेंगे, तो लड़की की शादी कैसे होगी? इस समय जमीन बेचते हैं तो कुछ पैसा मिल जाता है, पर ग्रामसभा को जमीन की मिल्कियत सौंपने से फिर क्या होगा? ऐसी मुश्किलें हैं! यह जमीन बेचने का अधिकार याने क्या है? इसी के लिए हिन्दुस्तान खोना पड़ा था। मीरजाफर ने देशद्रोही होकर अंग्रेजों की मदद की और उसने लिख दिया कि जो आपके शत्रु होंगे, वे ही हमारे शत्रु होंगे, चाहे हिंदी हों या योरोपियन। अंग्रेज कम्पनी बहादुर थी। उनको राज्य नहीं करना था, व्यापार करके पैसा प्राप्त करना था। इसीलिए कम्पनी ने पैसा मांगा। नेपोलियन ने कहा भी है कि वे बनिये थे। उनका राज्य बनियों का राज्य है। बनिये पैसे ही तो मांगते हैं! मीरजाफर पैसा नहीं दे सका, तो उसने पैसे के बदले चार जिले लिख दिये। यह है जमीन बेचने का अधिकार!

जिधर देखो उधर बेचो-बेचो-बेचो। पैसे के लिए भूमि बेचो, पैसे के लिए बेटे-बेटी बेचो और पैसे के लिए धर्म बेचो! धर्म बेचने की बात सुन कर आपको आश्चर्य होगा। पहले यहाँ मिशनरी वगैरह आते थे। उनके पास यहाँ के गरीब लोग आकर पूछते थे कि हम क्रिस्ती हो जायेंगे तो हमें क्या मिलेगा? यही बेचने की बात! यह सब डायरी में लिख रखा है, वह हमें पढ़ने को मिला। यह कैसी बात है कि पैसे के लिए धर्म बेचने को राजी हैं? अगर कल मैं कहूँ कि आपको पैसे के लिए बेटों को नहीं बेचना चाहिए, तो क्या आप यह कहेंगे कि इनसे पैसा मिल सकता है, तो उस अधिकार को हम छोड़ दें? तब मैं क्या कहूँगा? जमीन बेचने का अत्यन्त अभद्र अधिकार है, यह जमीन खोने का अधिकार है। इसे छोड़ देना चाहिए। अभी यह अधिकार छोड़ दें तो क्या तकलीफ होगी?

राजस्थान सर्वोदय-सम्मेलन, हाथल में स्वीकृत कार्यक्रम

चीनी आक्रमण के कारण उत्पन्न संकट की स्थिति के संदर्भ में अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन, वेडछी के अवसर पर सर्व-सेवा संघ ने जो निवेदन स्वीकार किया है, उसकी भावना और कार्यक्रम का राजस्थान समग्र सेवा संघ समर्थन करता है। हमारी मान्यता है कि भारत के सामने जो अकल्पित संकट उपस्थित हुआ है, उसका मुकाबला करने के लिए जनता का नीति धैर्य कायम रखना, और उसमें प्रतिकार की शक्ति जाग्रत करना आवश्यक है। राजस्थान समग्र सेवा संघ देश के सभी नागरिकों से, खास तौर से सर्वोदय-कार्यकर्ताओं से निवेदन करता है कि उपरोक्त उद्देश्य की पूर्ति के लिए अवसर की मांग के अनुरूप अपनी समस्त शक्ति नीचे लिखे कार्यक्रम को पूरा करने में लगायें :—

(१) देश की एकता और शक्ति बढ़ाने के लिए आर्थिक एवं सामाजिक विषमताएँ दूर करना जरूरी है, इस दृष्टि से गाँव गाँव में पंचायतों और ग्राम-समाज को अपनी इस प्राथमिक जिम्मेदारी को निभाने के लिए तैयार किया जाय कि उनके क्षेत्र में कोई व्यक्ति भूखा और बेकार न रहे, ताकि देश की पूरी शक्ति उत्पादन बढ़ाने के काम में लगे और लोगों को परस्पर भाईचारे का अनुभव हो इसके लिए गाँवों के गरीबों और भूमिहीनों को ग्राम-परिवार के अंग के तौर पर मान कर उन्हें भूमि या अन्य काम देने की योजना ग्राम-सभा बनाये। इसी प्रकार धार्मिक तथा अन्य अल्पसंख्यकों की सुरक्षा की जिम्मेदारी भी पूरे ग्राम-समाज को अपनी माननी चाहिये। विषमता के निराकरण तथा भूमि की मालकियत विसर्जन के लिए भूमिहीनता मिटाने के साथ-साथ ग्रामदान के कार्यक्रम को उठाना चाहिये।

(२) गाँवों में खेती तथा ग्रामोद्योगों द्वारा उत्पादन बढ़ाने की योजना की जाय, जिससे देश की आवश्यकताओं की पूर्ति हो और जनता के जीवन निर्वाह की चिन्ता से सरकार को यथासम्भव मुक्त किया जा सके।

(३) गाँव गाँव में हर व्यक्ति अपनी उपज या आय का एक निश्चित अंश ग्रामकोष के लिए दे, जिससे परिवार-भावना दृढ़ हो और गाँव के उद्योग-धन्धे व अन्य सुरक्षात्मक काम खड़े किये जा सकें।

(४) गाँव में झगड़े न हों और यदि हों तो उनका निपटारा वहीं कर लिया जाय। गाँव के झगड़े गाँव के बाहर न जाय।

(५) गाँव की रक्षा की जिम्मेदारी गाँव के लोग स्वयं उठा लें, इसके लिए उन्हें संगठित किया जाय।

(६) गाँव-गाँव में लोगों की नैतिक एवं आर्थिक शक्ति बढ़ाने होश हवास ठीक रखने और परस्पर झगड़ों की सम्भावनाएँ कम करने की दृष्टि से शराब-बंदी के लिए व्यापक प्रचार और प्रयत्न किया जाय।

उपरोक्त कार्यक्रम सामान्य समय में भी समाज को सुदृढ़ बनाने और उसमें प्रतिकार की शक्ति प्रकट करने के लिए आवश्यक है, पर आज जैसे संकट के समय देश की सुरक्षा की दृष्टि से लोगों में आत्म निर्भरता, निर्भयता तथा त्याग एवं बलिदान की भावना जाग्रत करने के लिए वह और भी आवश्यक है। राजस्थान समग्र सेवा संघ को विश्वास है कि उपरोक्त कार्यक्रम सभी क्षेत्रों में विशेषतः उन सीमावर्ती प्रदेशों में जहाँ अब तक हमारा ध्यान नहीं गया हो, उठाने में सभी प्रगतिशील शक्तियों का योग मिलेगा और साथ कुछ जिलों में समग्र विकास की दृष्टि से सघन कार्यक्रम हाथ में लिया जा सकेगा।

शराबबन्दी संबंधी प्रस्ताव

(१) राजस्थान प्रान्तीय दशम् सर्वोदय-सम्मेलन में एकत्रित हुए प्रान्त के हम सर्वोदय कार्यकर्ता राजस्थान प्रदेश में शराब के बढ़ते हुए प्रचार से अत्यन्त चिंतित हैं। हम ही नहीं, किन्तु आज विश्व भर के स्वास्थ्यचिंतक, धार्मिक महापुरुष, राजनैतिक, शिक्षक व समाज-सुधारक, सभी लोग शराब को नैतिक, बौद्धिक, शारीरिक, सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक, सभी दृष्टियों से घातक मानते हैं।

(२) राजस्थान-सरकार ने इसी वर्ष शराब से राज्य की आय बढ़ाने की नीति स्वीकार कर शराब की अधिकाधिक बिक्री के लिए जो गारंटी पद्धति प्रारम्भ की है, उसके फलस्वरूप अब ठेकेदारों द्वारा गाँवों में शराब पहुँचायी जाती है, जिससे शराबखोरी को खुला प्रोत्साहन मिला है। जो लोग व जातियाँ नहीं पीती थीं, वे भी अब आसानी से इसकी शिकार हो रही हैं और तेजी से आदतन पीने वाले बढ़ते जा रहे हैं। उनका शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आर्थिक एवं नैतिक स्वास्थ्य गिरता जा रहा है। शराब हर दृष्टि से घातक है, इसीलिए हमारे देश के विधान की धारा ४७ में इसकी रोक के लिए नीति स्वीकार की गयी है।

(३) आज देश पर युद्ध का भय छाया हुआ है। ऐसे संकट-काल में जब कि देश के नागरिकों के शारीरिक, नैतिक व बौद्धिक स्वास्थ्य-संरक्षण के हर संभव प्रयत्न किए जाने चाहिए। राज्य सरकार का शराब-बन्दी की ओर अग्रसर होने के बजाय उल्टा गारंटी-पद्धति लागू करके उसके प्रचार को बढ़ावा देना एक प्रतिगामी कदम ही माना जायगा। यही नहीं केन्द्रीय सरकार व जनता के कतिपय नेतागण और कुछ प्रादेशिक सरकारों में शराब-बन्दी को—चाहे वह वर्तमान राष्ट्रीय संकट के लिए आवश्यक वित्तीय साधनों को प्राप्त करने और बढ़ाने की दृष्टि से ही हो, ढीला करने और खत्म कर देने तक की प्रवृत्ति दिखाई दे रही है, जो जनता और जन-सेवकों के लिए अत्यन्त क्षोभ और चिन्ता की बात है। सम्मेलन का विश्वास है कि अनैतिक साधनों से कभी समाज का भला नहीं हो सकता और न किसी संकट का मुकाबला ही सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

अन्त में यह सम्मेलन राजस्थान राज्य की सरकार और देश भर के नेताओं से अनुरोध करता है कि इस संकट की घड़ी में राज्य में अविलम्ब शराब-बन्दी लागू करके प्रदेश की जनता से अपील करता है कि वह शराबबन्दी के इस आन्दोलन को सफल बनाने के लिए पूरा प्रयत्न करे।

सीधी बात

ग्रामदान में किसी का कुछ जाता नहीं, सभी पाते हैं। इसे समझने के लिए एक कहानी सुन लीजिये—

दो ब्राह्मण थे। वे काशी गये। वहाँ रिवाज है कि यात्रा में ब्राह्मणों को कुछ देना ही चाहिए। वे दोनों बिल्कुल दरिद्र थे। क्या दान दिया जाय, यह उन्हें सूझता नहीं था। आखिर एक को अक्ल आयी और बोला—देखो, मैं तुम्हें दान दूँगा और तुम मुझे देना। यह कह कर उसने कहा लो, एक लाख रुपये दे रहा हूँ! बेचारे के मुख से एक लाख ही निकला। वह एक करोड़ बोल सकता था, लेकिन दरिद्र था। उसने एक लाख रुपया दिया और दूसरे ने भी एक लाख दे दिया! दोनों का दान काशी-क्षेत्र में हो गया। न लेना पड़ा, न देना!

एक ही वस्तु सब करते हैं तो कौन खोता है और कौन पाता है? यह सादी बात आप नहीं समझेंगे तो कैसे होगा?

[पड़ाव : रघुनाथगंज (जंगीपुर),
जि० मुर्शिदाबाद (प० बंगाल)
ता० ४-१२-६२]

विश्वशांति-सेना के अध्यक्ष श्री ए० जे० मस्ते विनोबाजी से मिलने जायेंगे

विश्वशांति-सेना के सहअध्यक्ष और प्रमुख अमेरिकी शांतिवादी नेता श्री ए० जे० मस्ते और फ्रेण्ड्स सर्विस कमिटी के प्रमुख कार्यकर्ता श्री जेम्स ब्रिस्टल सेवाग्राम की संयुक्त परिषद् में भाग लेने के बाद २३ दिसंबर की रात को काशी आये। काशी में आपने सर्व-सेवा-संघ के प्रमुख कार्यकर्ताओं से दिल्ली से पीकिंग मैत्री-यात्रा की योजना पर विस्तार से चर्चा की। दोनों महानुभाव इसी विषय पर चर्चा करने के लिए विनोबाजी के पास जा रहे हैं। दो-तीन दिन विनोबा के साथ यात्रा करेंगे और उसके बाद दिल्ली जायेंगे। वहाँ वे प्रधान मंत्री श्री नेहरू और राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् से मिलेंगे और भारत-चीन सीमा-संघर्ष तथा मैत्री-यात्रा के बारे में अपने विचार रखेंगे। दिल्ली से १ जनवरी को आक्सफोर्ड, इंग्लैण्ड में हो रहे अणुबमविरोधी सम्मेलन में भाग लेने के लिए निकलेंगे। वहाँ भी इस विषय पर चर्चा होगी।

आक्सफोर्ड में अणुबम-विरोधी सम्मेलन

आक्सफोर्ड, इंग्लैंड में आगामी ४ से ७ जनवरी तक होने वाले अणुबम-विरोधी सम्मेलन में भाग लेने के लिए अ० भा० शांति-सेना मण्डल की ओर से श्री सिद्धराज ढड्ढा जा रहे हैं और वहाँ वे भारत-चीन सीमा-संघर्ष के संबंध में चर्चा करेंगे।

विनोबाजी की पदयात्रा का कार्यक्रम

श्री विनोबाजी पदयात्रा करते हुए अनुमानतः १४ जनवरी '६३ को शांति निकेतन पहुँचेंगे। उनकी पदयात्रा का कार्यक्रम इस प्रकार है :—

२९ दिसम्बर मलहाटी (रेलवे स्टेशन), ३० ता० सोनार कुण्ड, ३१ ता० रामपुरहाट, १ जनवरी १९६३ बसोआ, २ तारापुर, ३ ता० वीरचन्द्रपुर, ४ ता० हृदिग्राम, ५ ता० मोल्लारपुर, ६ ता० मरकटा, ७ ता० देंचा, ८ ता० पटेलनगर, ९ ता० सेवगपुरी, १० ता० सूरी, ११ ता० पुरन्दरपुर, १२ ता० अविनाशपुर, १३ ता० बर्नग्राम (रेलवे स्टेशन बोलपुर), १४ जनवरी—शांतिनिकेतन।

बम्बई की मिलों में साहित्य-प्रचार

ता० ९-१० और ११ दिसम्बर को बम्बई की इण्डिया युनाइटेड मिल्स नं० ४ में २०२६ रुपये की साहित्य बिक्री हुई। ५० प्रतिशत 'सबसीडी' मिल के 'मैनेजमेन्ट' की ओर से दी गयी।

पिछले महीने में इंडिया युनाइटेड मिल्स नं० १-२ और ३ में पाँच हजार रु० से अधिक की साहित्य-बिक्री हुई थी। इसमें भी मैनेजमेन्ट की ओर से ५० प्रतिशत 'सबसीडी' दी गयी थी।

अप्रैल से प्रारम्भ हुए मिल-कारखानों में साहित्य-प्रचार के इस कार्यक्रम में बम्बई सर्वोदय-मंडल की ओर से अभी तक ३५ हजार रुपये की साहित्य-बिक्री हुई है। बम्बई सर्वोदय-मंडल द्वारा की गयी अपील का जवाब देते हुए बम्बई के अन्य कारखाने इस अभियान के लिए खुद ही आमंत्रण दे रहे हैं।

भूदान की प्रगति

अक्तूबर, १९६२ में उड़ीसा में ४१४ एकड़ भूमि मिली और १,२०२ एकड़ वितरित हुई। उड़ीसा भूदान-यज्ञ समिति द्वारा अक्तूबर अंत तक २,८९,५०५ एकड़ भूमि प्राप्त की गयी, जिसमें १,००,२८७ एकड़ भूमि का वितरण हुआ।

मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ पर्षद (ग्वालियर) द्वारा गत अक्तूबर माह में १३२ एकड़ भूमि प्राप्त हुई और २८० एकड़ बाँटी गयी। उनकी कुल भूमि प्राप्ति २,९६,२३८ एकड़ हुई, जिसमें भूमि-वितरण व प्रयास १,८१,३८० एकड़ का रहा।

विन्ध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ बोर्ड द्वारा सन् १९६२ में ३१२ एकड़ भूमि आदाताओं को और २५० एकड़ सामुदायिक कार्यों के लिए दी गयी। इस वर्ष उन्हें ११ एकड़ का भूदान मिला। वहाँ अब तक १३,६६२ एकड़ भूमि दान में मिली और ५,२४५ एकड़ का वितरण हुआ।

मध्यप्रदेश भूदान-यज्ञ मण्डल, महाकोशल शाखा (जबलपुर) द्वारा गत अक्तूबर के अंत तक १,११,०३० एकड़ भूमि प्राप्ति हुई और ६८,६३३ एकड़ भूमि का वितरण हुआ।

केरल में गत अक्तूबर अंत तक २६,२१३ एकड़ भूदान मिला और ५,५१३ एकड़ भूमि वितरित की गयी।

आंध्रप्रदेश में गत नवम्बर माह में ८६३ एकड़ भूमि ३८५ भूमिहीन परिवारों में बाँटी गयी। वहाँ कुल भूदान २,४१,९५२ एकड़ मिला और ९७,३७० एकड़ भूमि वितरित हुई।

पंजाब भूदान-यज्ञ बोर्ड से प्राप्त सूचना के अनुसार वहाँ कुल भूदान १४,१६६ एकड़ का मिला और ३,८०९ एकड़ भूमि बाँटी गयी।

गुजरात में सर्वोदय-आन्दोलन

भूमि-प्राप्ति	१,०३,५३० एकड़	प्राथमिक सर्वोदय-मंडल	२१
भूमि-वितरण	५०,९८४ एकड़	पूरे समय के कार्यकर्ता	२५
ग्रामदान	१४४	पत्र प्रकाशन	५१
ग्राम-परिवार	५९	सामयिक पत्र	१
शांति-सैनिक	१३७	साहित्य-बिक्री	१,५०,७७३ रु०
शांति-सहायक	७५	सर्व-सेवा-संघ में प्रतिनिधि	१३
लोक-सेवक	४०६	१९६१ की सूताञ्जलि	१७,८६० गुण्डियाँ

चौरड़ी सर्वोदय-पात्र

राजस्थान में जोधपुर जिले के चौरड़ी गाँव में "शांति-मंदिर", सर्वोदय आश्रम चल रहा है। वहाँ ११ नवम्बर को श्री बद्रीप्रसाद स्वामी की अध्यक्षता में जिला सर्वोदय-मंडल की बैठक और शांति-मंदिर का वार्षिकोत्सव हुआ। चौरड़ी के सरपंच श्री लूणकरण के संयोग से गाँव में २१ सर्वोदय-पात्र रखे गये हैं। गाँव में कुल ४५ घर हैं।

बाँसवाड़ा जिले में भूमि-वितरण

श्री गोपाल हरि वर्मा ने नवम्बर मास में बाँसवाड़ा जिले की घाटोल तहसील में भूमि-वितरण के लिए यात्रा करते हुए १३२ परिवारों में ६०० बीघा भूमि वितरित की।

यात्रा-कार्यक्रम

श्री मनमोहन चौधरी

सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री मनमोहन चौधरी २८ से ३१ दिसंबर तक प० बंगाल का दौरा करेंगे। जनवरी माह में श्री चौधरी ४ से १० तारीख तक मध्यप्रदेश, १३ से १६ तारीख तक प० बंगाल और ३० जनवरी से ५ फरवरी तक उड़ीसा में रहेंगे।

श्री दादा धर्माधिकारी

माह जनवरी
६ से ९ पूर्णियाँ (बिहार)
१२ से २२ महाराष्ट्र
३० से ५ फरवरी उड़ीसा
माह फरवरी,
७ से १२ गुजरात

श्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम्

जनवरी १ से १० तक मैसूर
,, ३० से १२ फरवरी तक बटलागुण्डु (तमिलनाड)

श्री पूर्णचन्द्र जैन

जनवरी १ से ९ राजस्थान
फरवरी ६ से १२ हरियाणा

श्री कृष्णराज मेहता

जनवरी १ से १९ इन्दौर
,, १७ से ३० बिहार
फरवरी १ से १२ जौनपुर (उ० प्र०)

मध्यभारत भूदान-यज्ञ पर्षद्

अक्टूबर माह का कार्य

५ एकड़ भूमि का नया भूदान प्राप्त हुआ। २८० एकड़ भूमि बँट गयी और ९८ एकड़ भूमि छूट गयी। सर्वोदय-पात्रों द्वारा ८४ रु० ४१ न० पै० जमा हुए। ५९ रु० ९ न० पै० का सर्वोदय-साहित्य बेचा गया। ३ रु० ८० न० पै० सम्पत्ति-दान में प्राप्त हुए। इस माह में पर्षद् द्वारा वितरित भूमि के भू-कृषकों की वर्तमान स्थिति का सर्वे-कार्य आरम्भ किया गया है। यह कार्य परगना सबलगढ़, जिला मुरैना में आरम्भ किया गया है। इस वर्ष की पहली किरत में ११ ग्रामों में २० भू-कृषकों की सर्वे की गयी। इससे विदित हुआ है कि भू-कृषकों की कब्जे की भूमि में से ९० प्रतिशत भूमि आबाद हो चुकी है।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८१०० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८१०० एक प्रति १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार ५ जनवरी '६२ वर्ष ८ : अंक १४

विश्वशान्ति-सेना और उसकी आवश्यकता

जयप्रकाश नारायण

विश्व-शान्ति आन्दोलन की 'सक्रिय टुकडी' के रूप में विश्वशान्ति-सेना के संघटन की बात भारतीय शान्ति-सेना की प्रेरणा से दिमाग में आयी। भारतीय शान्ति-सेना का जन्म १९५७ में हुआ, जब कि इस सम्मेलन के एक संयोजक और भूदान-आन्दोलन के जन्मदाता विनोबा भावे ने १९५७ में भारत के दक्षिणतम राज्य, केरल में ८ स्वयंसेवकों को शान्ति-सैनिक बनने के लिए प्रेरित किया। इस प्रकार शान्ति-सेना को अस्तित्व में आये केवल चार वर्ष हुए। किन्तु इसका विचार चौथे दशक में ही पैदा हुआ था। आजादी के आन्दोलन के लिए बाधा-स्वरूप खड़े हो गये और देश की एकता के लिए खतरनाक बन गये साम्प्रदायिक दंगों का अहिंसात्मक तरीके से मुकाबला करने के लिए गान्धीजी ने इसे सबसे अधिक व्यावहारिक चीज समझी।

यह 'शान्ति-सेना' नाम भी उन्हीं का रखा हुआ है। किन्तु स्वतंत्रता के आन्दोलन से उनको इतना मौका न मिल पाया कि वे इसे अमली रूप देते। फिर भी उन्होंने इस चीज के बारे में इतना ज्यादा लिख रखा है कि हमें तनिक भी सन्देह नहीं रहता कि शान्ति-सेना से उनका मतलब क्या था और वे चाहते क्या थे। गान्धीजी ने इन सब बातों पर विचार किया कि शान्ति-सैनिक की क्या विशेषताएँ होनी चाहिये, उसको किस प्रकार की शिक्षा मिलनी चाहिये, उसकी पोशाक में कैसी एकरूपता हो, जिससे वह बड़े मजमे में भी झट से पहचान लिया जा सके तथा शान्ति-काल में उसे कौनसा काम करना चाहिये। भारत की आज की शान्ति-सेना करीब-करीब गान्धीजी की इस हिदायत पर ही चलती है। वैसे कुछ खास अन्तर भी है।

यद्यपि गान्धीजी ने आन्तरिक उपद्रवों के सिलसिले में ही शान्ति-सेना की बात सोची थी; फिर भी उनकी कल्पना-शक्ति बड़ी प्रखर थी और उन्होंने यह भी सोच लिया था कि बाहरी आक्रमण से अपनी रक्षा करने के लिए स्वतंत्र भारत को किस ढंग की अहिंसात्मक सेना खड़ी करनी चाहिये।

गान्धीजी ने हमें सिखाया है कि शान्ति आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य अहिंसात्मक समाज की—ऐसे समाज की, जिसका आधार सत्य और प्रेम है—स्थापना है। इसका मतलब यह हुआ कि लोगों की मानसिक वृत्तियों में परिवर्तन हो जाय; अर्थात् मूल्यों, प्रवृत्तियों, लाभों, विचारों आदि के सम्बन्ध की धारणाएँ बदल जायँ तथा ऐसी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक संस्थाओं का प्रवर्तन किया जाय एवं कार्य किये जायँ, जिनका मेल अहिंसात्मक ढंग की जीवन-शैली से बैठ सके तथा जो ऐसी जीवन प्रणाली को पुष्ट और प्रोत्साहित कर सकें। यह काम बड़ा जटिल है और जीवन के हर पहलू से इसका सम्बन्ध है। साथ ही अलग-अलग देशों में इसके लिए अलग-अलग ढंग अपनाने होंगे, अलग-अलग कार्यक्रम बनाने पड़ेंगे। और यह काम उन्हीं के बस का है, जो सत्य और प्रेम अथवा अहिंसा को सामाजिक जीवन का आधार मान कर चलते हैं। मगर यह बात आम तौर पर सभी लोग स्वीकार करेंगे कि शान्ति के लिए काम करने वाले लोगों ने इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया है कि अहिंसात्मक समाज के न केवल अपने विशेष मूल्य ही होंगे, अपितु इसके अपने अलग ढंग भी होंगे इसलिए यह जरूरी है कि अहिंसात्मक समाज के अनुरूप तथा उससे मेल खाने वाली सही ढंग की राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक संस्थाओं तथा व्यापारों की कल्पना की जाय और उन पर विचार किया जाय।

इस काम के पूरा होने में समय लगेगा। इधर इस बीच हिंसापूर्ण घटनाएँ, मार-काट, दंगे-युद्ध होंगे ही, जैसे कि पहले भी होते रहे हैं। अहिंसात्मक ढंग से शान्ति के लिए प्रयत्न करने वालों, आन्दोलन करने वालों के सामने अब यह सवाल पैदा होता है कि ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न होने पर वे क्या करें?

यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि मैं यहाँ उन लोगों की बात नहीं कर रहा हूँ, जो केवल 'अयुद्ध' की स्थिति को शान्ति मानते हैं, अर्थात् जिनकी कोशिश केवल इतनी ही होती है कि युद्ध न छिड़ने पाये। अशान्ति की स्थिति उत्पन्न होने पर, चाहे वह भीतरी हो या बाहर से उत्पन्न की गयी हो, हमेशा से यह माना जाता रहा है, और होता भी आया है, इसका मुकाबला करने का काम पुलिस या सेना का है, इसके लिए जिम्मेदार ये ही दोनों हैं। मगर पुलिस और सेना का काम, विचारतः और व्यवहारतः हिंसा पर आधारित है। इनकी सफलता का मतलब है हिंसा की की सफलता। इसमें सन्देह नहीं कि अहिंसात्मक ढंग से शान्ति के लिए प्रयत्न करने वालों ने इस बात पर गम्भीरतापूर्वक विचार नहीं किया है कि पुलिस का
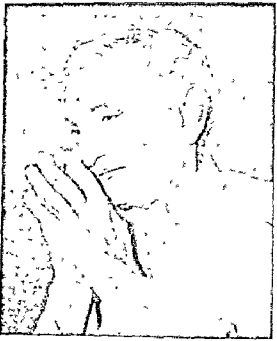
उत्तर बेरुत (लेबनान) के ब्रुमाना हाई-स्कूल में आयोजित विश्व-शांति-सेना सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा २८ दिसम्बर, १९६१ को भेजा गया भाषण।

श्री नानाभाई भट्ट का देहावसान !

जन्म : २१ अगस्त, १८८०] [मृत्यु : ३१ दिसम्बर, १९६१

देश के वयोवृद्ध शिक्षा-शास्त्री और प्रमुख रचनात्मक कार्यकर्ता श्री नानाभाई

शिक्षक के रूप में ही सामने आये। गुजरात ने अपने इस वयोवृद्ध महान् लोकसेवक और शिक्षक का सार्वजनिक सम्मान उनके ८० वें जन्म दिन के अवसर पर गत वर्ष ही किया था। नानाभाई के उठने से देश से एक महान् शिक्षक उठ गया है। इस अवसर हम सब प्रार्थना करते हैं कि दिवंगत आत्मा को शांति मिले।

अहिंसात्मक विकल्प क्या होगा। जहाँ तक सेना का सवाल है, अहिंसा में विश्वास करने वालों, अहिंसा के प्रति आस्था रखने वालों ने युद्ध अथवा शान्ति काल में सेना के साथ किसी प्रकार का सहयोग करने अथवा उसकी किसी प्रकार की मदद करने से इन्कार कर दिया है। इसके लिए उनको तरह-तरह से नुकसान भी उठाना पड़ा है। मगर, इसके बावजूद अहिंसात्मक ढंग से देश की प्रतिरक्षा की बात सोच सेना का अहिंसात्मक विकल्प खड़ा करने के मसले पर गंभीरता के साथ विचार नहीं किया गया है। शान्ति कर्मियों का रुख इस बारे में अब तक निष्क्रियता का रहा है। लेकिन समय आ गया है कि सक्रियता की नीति अपनायी जाय। शान्ति-सेना इस दिशा में एक छोटा-सा प्रयत्न है, या ऐसा कहिये कि अभी प्रारम्भ है, हालाँकि सफलता के नाम पर इसके पल्ले अभी कुछ पड़ा नहीं है। [यह बात तो बहुत ही लज्जाजनक है कि गोआ के मामले में भारतीय शान्ति-सेना बिल्कुल विफल हुई। लेकिन इसकी विफलता से बेरुत के इस सम्मेलन में किसी प्रकार की निराशा का भाव नहीं उत्पन्न होना चाहिये।]

ऊपर व्यक्त किये गये विचारों से यह बात पैदा होती है कि अहिंसक शान्ति-कर्मियों को अपने-अपने देशों में शान्ति-सेना का, शान्ति-टुकड़ी का संघटन करना चाहिये। इसका यह मतलब नहीं कि शान्ति-सेना के लिए नये लोगों की भरती की जाय। शान्तिकर्मी स्वयं मिल कर इसका संघटन करें।

जब तक वे अपना सामान्य, हर समय का स्थायी शान्तिकालिक कार्य करते रहते हैं तब तक तो वे शान्तिकर्मी, शान्तिवादी, मित्र, लोकसेवक आदि हैं; किन्तु जब वे शान्ति कायम करने के विशेष कार्य (आंतरिक अथवा बाह्य) में लग जायँ तो उन्हें शान्तिसेना के सिपाही कहना चाहिये। यह भेद करना जरूरी है, क्योंकि शान्ति-सेना नाम ही एक विशेष जिम्मेदारी का परिचायक है, जिसके साथ आवश्यक प्रशिक्षण, अनुशासन एवं शारीरिक तथा मानसिक तैयारी का भाव लगा हुआ है।

शान्ति के लिए अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर कार्रवाई आवश्यक है। अतः यह चाहिये और स्वाभाविक भी है कि विभिन्न देशों की शान्ति सेनाएँ मिल कर विश्वशान्ति सेना या शान्ति की टुकड़ी का संघटन करें। यदि राष्ट्रीय संघटन सुदृढ़ हों तो उनसे एकसाथ मिल कर काम करने की प्रवृत्ति ही इसका सबसे बड़ा सबूत होगी कि शांति के मामले में हम आश्वस्त हो सकते हैं। लेकिन सच बात यह है कि आज दुनिया में मामूली-सी भारतीय शान्ति-सेना को छोड़ कर कहीं भी शान्ति-सेना का संघटन अस्तित्व में नहीं है। फिर भी जिन देशों में अहिंसात्मक शान्ति-संघटन मौजूद हैं, उन देशों में बिना किसी कठिनाई के शान्ति-सेना कायम की जा सकती है। सब देशों के अहिंसात्मक शान्ति-संघटनों को मिला कर आज भी ऐसी विश्व संस्था खड़ी की जा सकती है, जो अच्छी खासी विश्वशान्ति सेना का काम चला सके।

गोआ सम्बन्धी भारतीय कार्रवाई को लेकर राष्ट्र-संघ में जो विचार हुआ, उससे यह साफ पता चला कि शस्त्रों के भारी भार से दबे हुए देश भी—चाहे शुद्ध हृदय से अथवा दिखावटी—इस बात पर जोर दे रहे हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय विवाद के विषयों का समाधान शांतिपूर्ण तरीके से हो। फिर भी विश्व शांति के लिए जिम्मेदार एकमात्र विश्व-संस्था, संयुक्त राष्ट्रसंघ विश्व-शांति बनाये रखने के लिए सशस्त्र सेनाओं से काम ले रही है। और तारीफ यह कि किसी को भी इसमें कोई असंगति नहीं दिखायी दे रही है! इस बात का विचार ही लोगों या सरकारों के दिमाग में नहीं उठ रहा है कि अहिंसात्मक तरीके से, अहिंसात्मक सेना के द्वारा विश्व-शांति सम्भव है। विश्व-शांति सेना के संघटन से इस विचार को अच्छी तरह बल मिलेगा, इस विचार की भली भाँति पुष्टि हो सकेगी। यदि यह हो जाय तो विश्व-शांति की खोज की दिशा में बड़ा भारी काम हो जाय।

सहसा यह कह सकना बड़ा आसान नहीं है कि यह विश्वशांति-सेना किस तरह काम करेगी। इस बात पर विचार करना बेरुत-सम्मेलन का काम है। मेरा विश्वास है कि सभी लोग यह बात स्वीकार करेंगे कि अब इस दिशा में कदम उठाने का अवसर आ गया है।

—(मूल अंग्रेजी से)

गोआ से दुहरा सबक

• शंकरराव देव

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि राजनीतिक स्वतंत्रता की लड़ाई ने अपना अंतिम लक्ष्य प्राप्त कर लिया और देश से उपनिवेशवाद का अन्तिम अवशेष भी समाप्त हो गया है। मैं गोआवासियों को उनकी स्वतंत्रता के लिए बधाई देता हूं और अपने स्वतन्त्र देशवासियों के साथ स्वतन्त्र और सहकारी जीवन बिताने के लिए उनका स्वागत करता हूँ।

किन्तु जिस तरीके से गोआ को आजादी मिली है, उसके कारण मेरी प्रसन्नता गहरे दुःख में डूब गयी है। भारतीय स्वतन्त्रता की मुख्य लड़ाई महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहिंसक साधनों से लड़ी गयी थी। और वह लड़ाई स्वतन्त्रता के लिए लड़ी गयी दुनिया की सब लड़ाइयों में एक गौरवपूर्ण घटना है।

इसके साथ-साथ अहिंसा की सामर्थ्य में विश्वास करने वाले हम सब लोगों के लिए और भारत की सरकार के लिए भी यह एक मूल्यवान सबक है।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद भारत-सरकार श्री जवाहरलालजी के नेतृत्व में अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में जिस नीति का अनुसरण कर रही है, वह नीति मोटे तौर से गांधीजी के सन्देश के अनुकूल है। युद्ध से कोई समस्या हल नहीं हो सकती है, इस दृढ़ विश्वास के साथ सरकार ने अपने तरीके की विशिष्ट नीति अपनायी, जिसके खास-मुद्दे ये हैं :—

(१) विश्व के मामलों में स्वस्थ तटस्थता या अलिप्तता का रुख।

(२) आत्मरक्षा को छोड़ कर हिंसा का सहारा न लेना और यहाँ तक कि कश्मीर में अथवा भारत स्थित विदेशी बस्तियों पर फिर से कब्जा पाने के लिए शस्त्रों का सहारा लेने से इन्कार करना।

(३) सब राष्ट्रों के साथ शांति और मैत्रीपूर्ण व्यवहार।

इस नीति से हमारी सरकार की प्रतिष्ठा बढ़ी है और इससे अद्वितीय नैतिक स्तर प्राप्त हुआ है। इसी कारण जवाहरलालजी की शब्द-शक्ति का बल बढ़ा है और उनको ऐसी प्रतिष्ठा मिली है, जो दुनिया के अन्य राजनीतिज्ञों के लिए दुर्लभ है।

मुझे डर है कि गोआ में सैनिक कार्रवाई से चौदह सालों में जो सद्भावना और प्रभाव हमने कठिनता से अर्जित किया है, वह छिन्न-भिन्न नहीं, तो कम अवश्य होगा।

अलिप्तता की नीति सही और ठीक है, किन्तु जहाँ तक सरकारों का सम्बन्ध है, इसकी कुछ मर्यादा है। यह नीति तभी सफल होगी, जब इसके पीछे अहिंसक शक्ति और नैतिक स्वीकृति होगी। केवल मीठे शब्दों से दी हुई सिखावन हमेशा लोग के दिल और दिमाग को उचित कार्य करने के लिए प्रेरित नहीं करती। जब गोआ का सत्याग्रह चल रहा था, तब मैंने भारत की वैदेशिक नीति पर लिखते हुए उसे "पुराने उदारवाद" की संज्ञा दी थी, जो कि अब असफल हो चुका है। उदारवाद के अनुसार लोगों के हृदय पर अपील की जाती है; किन्तु जिस हद तक मनुष्य का विकास हुआ है, यह तरीका अपर्याप्त रहा है। इसलिए अगर हम फिर से 'पशुता' या ताकत का सहारा नहीं लेना चाहते हैं, तो हमारे लिए गांधीजी का बताया हुआ जीवित और सक्रिय अहिंसा का स्वाभाविक और प्रगतिशील कदम उठाना ही शेष रह जाता है।

भारत की सरकार ने 'यह गलत कल्पना कर ली थी कि अलिप्तता की नीति अथवा उदारवाद अपना उद्देश्य प्राप्त कर ऐसा वातावरण तैयार कर सकेगा, जिससे परराष्ट्रीय और सुरक्षा-सम्बन्धी समस्याएँ बिना बलप्रयोग के हल हो जायेंगी।

वस्तुतः बलप्रयोग का रास्ता हमेशा खुला था, किन्तु सरकार ने यह घोषणा की थी कि उसने अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में गांधी के बताये हुए शांति और मैत्री के तरीके से चलने का रास्ता चुना है।

हिंसा का उपयोग नहीं करना कोई साधारण बात नहीं है। सामान्य स्थिति में कोई भी सरकार इसका उपयोग नहीं कर सकती। वस्तुतः सरकार का होना ही उसके ऊपर ऐसी वास्तविक मर्यादाएँ लाद देता है, जिनकी वह उपेक्षा नहीं कर सकती और अपनी जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए उसे कुछ मौकों पर शस्त्रों का सहारा लेना ही पड़ता है। सच पूछा जाय तो कोई भी सरकार अहिंसक ढंग से अपना काम नहीं चला सकती। वह अलिप्तता की नीति पर चल सकती है, बशर्ते कि उसके लिए वह आवश्यक स्वीकृतियों को बढ़ा दें। जवाहरलालजी इसमें असफल हो गये हैं। उन्होंने अलिप्तता की गहराई में जाये बिना असम्भव को सम्भव करने की कोशिश की। यही कारण है कि उन्हें गोआ में "मर्जी के खिलाफ" बल प्रयोग करना पड़ा।

गांधी ने जो कुछ किया और हमको सिखाया, वस्तुतः उसकी विरासत हमारी सरकार को मिली है। इसने ऐसे कुछ मूल्यों का प्रतिपादन किया जो अन्य सरकारों की कल्पना में नहीं आ सकते। इसलिए सारी दुनिया के लोगों को जवाहरलालजी से ऐसी अपेक्षा रखने का अधिकार है, जैसी अपेक्षा वे दूसरों से, जैसे नासिर अथवा ख्रुश्चेव से नहीं रखेंगे। किन्तु यह खेद की बात है कि जवाहरलालजी देश में ऐसी प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने में असफल रहे, जो कि अहिंसक मूल्यों और स्वीकृतियों के विकास की ओर ले जा रही थीं। भूदान-आंदोलन ने भारत में बहुत अधिक सफलता प्राप्त नहीं की, किन्तु यह थोड़ा-बहुत भी जो सफल हो सका है, उसका उपयोग सरकार अपनी अलिप्तता की पूर्ति के लिए आवश्यक स्वीकृति के रूप में नहीं कर सकी है। इसमें क्या आश्चर्य है कि सरकार का जहाज गोआ जैसे मामले से टकरा गया और उसे बल-प्रयोग का सहारा लेना पड़ा!

• • •

हम रचनात्मक कार्यकर्ताओं को इस दुःखद घटना से सबक लेना है।

[शेष पृष्ठ ११ पर]

आगामी युग की महान् शक्ति : साहित्य

विनोबा

जिस देश की वाणी दूषित होती है उस देश की उन्नति नहीं होती है। हमारे यहाँ कहावत है—'जहाँ लक्ष्मी होती है वहाँ सरस्वती नहीं होती है और जहाँ लक्ष्मी नहीं होती है वहाँ सरस्वती रहती है।' लेकिन वेद में आया है :—

"सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते। भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि।"

"जिस देश के लोग छलनी से छान छान कर वाणी बोलते हैं, याने जहाँ मननपूर्वक और बुद्धिपूर्वक, शांतिपूर्वक वाणी बोली जाती है, वहाँ उस देश में, उस समाज में लक्ष्मी रहती है।" ऐसा वर्णन किया है। यह वर्णन अनुभवयुक्त है।

आज आप देखिये, अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शक्ति किसमें है। जो मनुष्य तौला हुआ शब्द बोलेगा, जिस शब्द में अतिशयोक्ति नहीं होगी। सत्य हो, मधुरता हो, फिर भी काम की शक्ति हो और बोलने वाले का चित्त अक्षोभ हो, तो वह शब्द कारगर होगा और वह सर्वोत्तम 'स्टेट्समैन' होगा, सर्वोत्तम 'नीतिज्ञ' होगा। 'स्टेट्समैन' के लिए वही शब्द उत्तम होगा और वही दुनिया को बचायेगा। अगर राजनीतिवाले क्षोभयुक्त बोलने वाले हों, जिसमें अतिशयोक्ति होगी वह बात-बात में आग लगाने वाले होंगे। उससे शब्द-शक्ति नहीं रहेगी।

एक बात और। साहित्यिक को निर्विकार होना चाहिये। दुनिया के विकार का नाप करने के लिए उसे निर्विकार रहना चाहिये। नाड़ी देखनी है, ज्वर नापना है तो खुद को निर्विकार होना चाहिये, जैसे थर्मामिटर होता है। वह दूसरे का बुखार नापता है। अगर उसे खुद का बुखार हो तो? उसे बुखार नहीं होता, इसलिए दूसरे का बुखार बिल्कुल ठीक नापता है। ठीक ९८° डिग्री ही बतायेगा।

> इसी तरह से दुनिया के विकारों को जानना चाहिये। जो समाज का विकार नापेगा, उसे स्वयं निर्विकार होना चाहिये।

राजा रविवर्मा ने चित्र खींचा है—कृष्ण का, अंध धृतराष्ट्र, युधिष्ठिर दुर्योधन, और सात्यकी, सब बैठे हैं। धृतराष्ट्र आसन पर बैठे हैं। कौरव-पांडवों के बीच सुलह की बात हो रही है। बोलते-बोलते दुर्योधन ने कृष्ण को गाली दी है, तो सात्यकी तलवार खींच कर उस पर आक्रमण करना चाहता—उनके चेहरे पर क्षोभ है। सामने वाले भी क्षुब्ध हैं, सात्यकी का हाथ खड़ा है। भगवान कृष्ण आराम से बैठे हैं। इधर सारी सभा बैठी है। उस बाजू से उन्होंने मुँह फेर लिया है। उन पर कोई भाव नहीं, और सात्यकी का हाथ ऐसा पकड़ा है—बस, खत्म! कृष्ण के मुँह पर शांति है और मानों वह सात्यकी को कह रहा है कि ठहरो, यह मौका नहीं है, यह समास्थान की सभ्यता नहीं है। यह लड़ने का मौका नहीं है—यह है अनासक्ति की मूर्ति।

इसीलिए भगवान कृष्ण के शब्द में शक्ति थी, उस वाक्य से अर्जुन का संशय गया। यह तो पाँच हजार साल पहले की बात है। लेकिन आज भी वह लोगों के संशय दूर करता है। यह उनकी अनासक्ति थी। यह अनासक्ति साहित्यिक में न हो तो वह दुनिया को नाप नहीं सकेगा। मुझे गुस्सा आया तो दूसरे का गुस्सा मैं नहीं नाप सकूंगा।

> इसलिए सृष्टि और समाज को पहचानना चाहिए और यह पहचानने वाला सर्वज्ञ होता है उसे द्रष्टा होना चाहिए। साक्षी होना चाहिए, जो खेल में शामिल नहीं है। साहित्यिक को संसार के खेल में द्रष्टा होने चाहिए। यदि वह खेल का पात्र हो, तो उसका चित्र खिंचने वाला कोई दूसरा होना चाहिए।

ऐसे महाकवि थे व्यास। उन्होंने अपने कुल दोष महाभारत में प्रकट किये। स्वयं की उत्पत्ति और पांडवों की उत्पत्ति का यथावत् चित्र खड़ा किया। अपने बारे में ऐसा चित्र खड़ा करने वाला साहित्यिक कौन हो सकता है? व्यास खुद अलग हो गया, याने लेखक के तौर पर व्यास अलग होकर उसने लिखा। इस सृष्टि और संसार से अलग होने की शक्ति जिसमें होगी, वह उत्तम साहित्यिक होगा।

साहित्यिक संसार की तरफ अभिमुख होना चाहिए। विरक्त है और अभिमुख नहीं है, तो वह साहित्यिक नहीं होगा। वह मुक्त होगा। अपनी शांति वह पा सकता है, लेकिन साहित्यिक नहीं हो सकता, क्योंकि अभिमुख नहीं है। तो संसाराभिमुख भी होना चाहिए और फिर भी संसार के विकारों से अलग होने वाला चाहिए। साहित्यिक के शब्द में यह शक्ति आनी चाहिये।

विज्ञान के जमाने में सत्य की तरफ रुचि अधिकाधिक बढ़ रही है और बढ़ेगी। 'फिक्शन' में क्या होता है? कहते हैं कि उसमें चन्द्रप्रकाश की आवश्यकता होती है, सूर्य-प्रकाश की नहीं। सूर्यप्रकाश में साफ दीखेगा, चंद्र-प्रकाश में अस्पष्ट दीखेगा। चन्द्र-प्रकाश में कभी भूत दीखेगा, कभी गैंडा, कभी पुरुष दीखेगा एक सींगवाला दीखेगा और होगा पेड़ ही। ऐसा भ्रम होगा, तब काव्य होगा। अंधेरे में अमावस्या की रात हो तो काव्य नहीं होगा, क्योंकि कुछ भी नहीं दीखेगा। सूर्य-प्रकाश में सब स्पष्ट दीखेगा, इसलिए उसमें काव्य नहीं होगा। इसलिए काव्य के लिए भ्रम चाहिये। विज्ञान का जमाना है तो भ्रम का क्षेत्र कम होता गया है, इसलिए उत्तरोत्तर [illegible] कम होगी ऐसा मानते हैं। मैं उल्टा मानता हूँ। मैं मानता हूँ कि इसके आगे विज्ञान के जमाने में ऐसा साहित्य निकलेगा कि डॉटे और शेक्सपियर, वाल्मीकि और कालीदास पीछे पड़ेंगे। ऐसे महान् साहित्यिक होंगे। यह किस आधार से मैं कहता हूँ? इसलिए कि साहित्य के लिए जो चाहिये वह विज्ञान 'सप्लाय' कर रहा है। विज्ञान के कारण ज्ञान का क्षेत्र भी बढ़ता है और अज्ञात का भी क्षेत्र बढ़ता है। आज अज्ञात कितना है? खूब है। पर मालूम नहीं कितना है! विज्ञान के कारण कितना विशाल अज्ञात है, यह ध्यान में आयेगा। आज ज्ञात और अज्ञात का क्षेत्र कम है। विज्ञान के कारण अज्ञात का क्षेत्र भी बढ़ेगा। वह कितना अज्ञात है? न्यूटन बड़ा गणितज्ञ था। कितना ज्ञात और कितना अज्ञात है, इसका भी गणित वह बताता था। वह कहता था कि ज्ञात का क्षेत्र समुद्र के समान विशाल है। न्यूटन कहता था कि मुझे जो ज्ञात हुआ है, वह समुद्र के एक बिंदु का बिंदु है, इतना ही मुझे जानने को मिला है। याने कितना अज्ञात है, और कितना बाकी है तथा कितना वह जानता था, इसका भान उसे था। यह अकल्पनीय, अवर्णनीय, अनिर्वचनीय, शब्दातीत, कल्पनातीत है। प्रकट बोल नहीं सकते हैं। इससे ज्यादा प्रकाशन-सामर्थ्य नहीं था।

> लेकिन कितना लम्बा-चौड़ा, गहरा और व्यापक अज्ञात है, इसका अनुभव आयगा। काव्य-शक्ति के लिए कुछ ज्ञात और कुछ अज्ञात, कुछ ज्ञात-क्षेत्र, कुछ अज्ञात-क्षेत्र, कुछ अन्धेरा और कुछ प्रकाश चाहिए। ये दोनों खूब बढ़ेंगे। बहुत बड़ा चन्द्र प्रकट होगा। इसलिए साहित्य-कला और काव्यकला खूब बढ़ेगी।

आपको मैंने उत्साहित कर दिया है। निराश मत होइये। आपकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। आपको बहुत मौका मिलने वाला है! लेकिन समझना चाहिये कि आपका 'फंक्शन' (कार्य) क्या है? विज्ञान के क्षेत्र में हमें क्या करना चाहिए? जो बड़े ग्रंथकारों के ग्रंथों में जो शक्ति है वह देख कर लगता है कि बहुत अलौकिक है। बहुत बड़े-बड़े ग्रंथ हमने देखे। तो हम क्या करते हैं?

बहुत बड़े-बड़े ग्रंथ हम ही देखते हैं और कहते हैं कि इतना भाग अच्छा है और इतना भाग निकालना चाहिये। मतलब, उस ग्रंथ से हम बड़े, श्रेष्ठ हो गये। उन ग्रंथों में जो ज्ञान है, उससे ज्यादा ज्ञान हमारे पास है। यह कभी नहीं भूलना चाहिये कि प्राचीनों के पास जितना ज्ञान था, उससे हमारे पास कम ज्ञान नहीं है। बड़े-बड़े ऋषियों के पास ज्ञान था। लेकिन जैसे मैंने 'स्थित प्रज्ञ दर्शन' में लिखा है कि पुराने जमाने के स्थित प्रज्ञ से आज के स्थित प्रज्ञ बहुत आगे बढ़े हुए होंगे। यह समझना चाहिये कि उत्तरोत्तर मनन विकसित हो गया है। पुराने जमाने के बड़े-बड़े ऋषि और महापुरुषों ने जो ज्ञान हमें दिया है, उसे हम भावना-शक्ति से भावित करते हैं और उसमें अपनी बुद्धि डाल कर उसे हम रसमय बनाते हैं। हमारे युग में ऐसी शक्ति पड़ी है कि उसके प्रभाव से हम इतने महान हुए हैं।

इसके आगे हमारे सामने बहुत काम उपस्थित है। इसके आगे दुनिया में दो शक्तियाँ काम करने वाली हैं और बाकी शक्तियाँ नहीं चलेंगी। हमने बीसों बार यह कहा है। हमें उसके बारे में कोई भ्रम नहीं रही है। एक शक्ति है विज्ञान और दूसरी आत्मज्ञान की। कौन शक्तियाँ नहीं चलेंगी? ये धर्म, पंथ, खासकर राजनीति नहीं चलेगी। आज वे जोर लगा रही हैं। दीपक बुझने के समय जरा बड़ा बनता है और फिर बुझ जाता है। वैसे यह सारा 'पॉलिटिक्स' बड़ा हो रहा है, बुझने के पहले।

> विज्ञान आयेगा, आत्मज्ञान आयेगा। धर्म, पंथ और राजनीति जायेंगी। एक है प्राण और दूसरा है ज्ञान। एक है शक्ति और दूसरी है बुद्धि, वह मार्गदर्शन करेगी। मोटर में एक यंत्र होता है दिशा दिखाने वाला दूसरा और गति देनेवाला एक है मार्गदर्शक और दूसरा है वेगवर्धक। जीवन को इन्हीं दो की जरूरत है। विज्ञान से गति मिलेगी। आत्मज्ञान के मार्गदर्शन में विज्ञान काम करेगा। परिणामस्वरूप पृथ्वी पर स्वर्ग आयेगा।

साहित्यिक कौन हैं? उनको क्या करना होगा?

> साहित्य को इन दो शक्तियों को जोड़ने का काम करना होगा। यह बहुत बड़ा काम है। 'पुल' (ब्रिज) बनना होगा। दोनों के बीच खड़े होकर जीवन का योग करना होगा। वह किस शक्ति से होगा? चिंतन-शक्ति से, प्रतिभा शक्ति से और शब्द शक्ति से होगा।

जोरहाट में ता. ९ दिसम्बर, '६१ को असम के साहित्यिकों के बीच दिया गया भाषण। पिछले अंक से समाप्त।

स्वयं-नियंत्रित विराट आयोजन

• प्रभुदास गांधी

जन-सम्पर्क और जन-सेवा का जाप जपते हुए कई वर्षों से हम लोग रचनात्मक कार्यों में जुटे हुए हैं; परन्तु जिस समाज की हम सेवा करना चाहते हैं, उसके सम्बन्ध में बार-बार हमें भारी निराशा सताया करती है।

अभी-अभी कार्तिकी पूर्णिमा के स्नान की विराट सामूहिक प्रवृत्ति द्वारा एक प्रकार का आलोक देखने में आया। दशहरा, दीवाली, होली आदि का उत्सव भिन्न-भिन्न प्रदेशों में विविध रूप से भारत भर में मनाया जाता है; परन्तु कार्तिकी पूर्णिमा के स्नान का यह पर्व गंगा, यमुना, नर्मदा, गोदावरी आदि पवित्र और अनेक छोटी-बड़ी नदियों और सरोवरों पर बड़ी श्रद्धा से करोड़ों भारतवासी समान रूप से मनाते हैं, वहाँ पर स्नान, दान की महिमा विशेष रहती है।

तिगरी का स्थल मेरठ और मुरादाबाद जिले के बीच में बहने वाली गंगा-धारा पर है। मेरठ वाले किनारे पर जो मेला पड़ता है, वह 'गढ़मुक्तेश्वर का मेला' कहलाता है और मुरादाबाद वाले किनारे का 'तिगरी का मेला' कहलाता है। इस वर्ष तिगरी-मेले में डेढ़-दो लाख स्नानार्थी थे और सामने वाले गढ़ के मेले में तीन से चार लाख का अनुमान है। यह अधिक मास का वर्ष होने के कारण कार्तिकी पूर्णिमा तक ठंडी काफी बढ़ गयी थी। तीन-चार दिन पहले वर्षा और आसपास के क्षेत्र में ओले गिरने के कारण यात्री कम आये थे। फिर भी इतनी अधिक भीड़ थी कि मील भर तक दोनों ओर इतने लोग जमा थे कि कहीं जमीन नजर नहीं आ रही थी!

२२ नवम्बर को पूर्णिमा का स्नान सम्पन्न करके मध्याह्न में जो यात्री लौटे, उनके मुख पर संतोष और प्रसन्नता की झलक थी। विशेषतः इसलिए कि वर्षा ने दुबारा कष्ट नहीं दिया और कुछ सप्ताह पहले मेरठ व मुरादाबाद में दो सम्प्रदायों के बीच फैली अशान्ति के प्रभाव का कटु अनुभव सामने नहीं आया।

* * *

इतने बड़े मेले का समय-पत्रक और संचालन किस तंत्र द्वारा किया जाता है, यह एक आश्चर्य भरा प्रश्न है! घड़ी की सुई से एक के बाद एक कार्यक्रम लाखों व्यक्ति पूरे करते हैं, कोई मार्गदर्शक नहीं होता—जैसे चतुर्दशी की संध्या को एक समय सैकड़ों दीपक गंगाजी में प्रवाहित किये गये पर त्रयोदशी या पूर्णिमा को ऐसे एक भी दीपक नहीं देखा गया। इसी प्रकार पूर्णिमा को दिन निकलने से मध्याह्न तक गाजे-बाजे के साथ अनेक मंडलियाँ घाट पर पहुँची और बालकों के मुंडन-संस्कार करवाये। दूकानदार, पुजारी आदि मेले में जगह-जगह थे, परन्तु उन्हें मेले के संचालक नहीं कहा जा सकता, वे तो संचालित मात्र थे!

अरुणोदय के समय असंख्य नर-नारियों के समूह ने एकसाथ स्नान किया, मानों कोई महासेना विजय-यात्रा के लिए अपने प्रतापी सेना नायक के आदेश से कदम उठाये हुए द्रुत गति से आगे बढ़ रही हो। नन्हें भोले बालक-बालिकाएँ, जिनके तन पर जरा-सा कपड़ा रहता है, उन्हें भी वस्त्र उतार कर गंगा-स्नान करते देखा गया। कहीं-कहीं माता-पिता, बड़ी बहन व भाई, चाचा आदि बल-प्रयोग करके बहुत ही ठंडे जल में इन नन्हें बालकों को गोता लगवा रहे थे। बच्चों के काँपने व रोने पर ध्यान नहीं दे रहे थे। यह दृश्य तो उस कहानी की याद दिला रहा था, जिसमें स्पार्टावालों द्वारा अपने बच्चों को वीर बालक बनाने के लिए बरफ पर सुलाने की बात कही जाती है!

* * *

प्रेम से शीतल जल में स्नान, भक्ति-भाव से थोड़ा-बहुत दान और राष्ट्रीय भोजन के रूप में एक-सी उड़द की खिचड़ी का भोजन कर थोड़ा समय मेले की प्रदक्षिणा करने और मिलभेंटी में सामूहिक रूप से सबने अपना समय लगाया। किसी भी प्रकार के बनावटी आयोजन के बिना *सरल, सहज भाव से लोगों का सहृदयता* से मिलना, परस्पर राम-राम कहना और दो शब्दों में कुशल समाचार पूछ कर आगे बढ़ना, कितना आह्लादमय दृश्य होता है, वह!

कहा जाता है कि हमारे अधिकतर देशवासी 'कूप मंडूक' होते हैं! अनपढ़ या कुपढ़ तो वे होते ही हैं, लेकिन इससे अधिक दुःखदायी बात यह है कि अपने निजी स्वार्थ से बाहर वे कुछ देख ही नहीं पाते हैं, बहुत ही निम्न स्तर का उनका जीवन होता है। उदारता उन्हें छू तक नहीं गयी। परन्तु इस प्रकार के सारे विधान गंगा मेले जैसे अवसर पर बेबुनियाद *साबित हो जाते हैं। स्त्रियों और बालकों* के प्रति हेय वृत्ति और लापरवाही के रवैये के सम्बन्ध में जो निराशाजनक आलोचनाएँ जहाँ-तहाँ कानों में पड़ती रहती हैं, उस वृत्ति का भी बिल्कुल दूसरे सिरे का रूप मेले के अवसर पर देखा जाता है।

हमारे गाँवों के इन अनपढ़ लाखों *लोगों ने 'लेडीज फर्स्ट' का उद्घोष* स्वप्न में भी कभी सुना नहीं होगा। लेकिन कार्तिकी स्नान के लिए उत्साह से भरे आने वाले लोगों के जत्थों में निरपवाद रूप से सर्वत्र 'महिलाओं का ही समादर' दृष्टिगोचर होता है। बैलगाड़ी में हों या पैदल गीत गाती हुई हों, महिलाएँ निःशब्द आकाश को स्वरलहरियों से भर देती हैं और प्रसन्नता बिखेरती चलती हैं। उनके समूहों के पीछे-पीछे चल कर पुरुषगण उनकी यात्रा को सुखद और अविस्मरणीय बनाने की चेष्टा में अपने तन, मन, धन को खुले हाथों से खर्च करते हैं।

* * *

लाख-लाख लोग आये। भीड़ का और एक-दूसरे की देह, काया और शरीरांगों का परस्पर टकराने, भिंचने का कटु अनुभव प्रायः सभी को कदम-कदम पर हुआ; परन्तु कहीं भी अप्रसन्नता की, चिड़चिड़ेपन की, माथे पर सिकन तक की मनोवृत्ति ने स्थान नहीं पाया। असंख्य व्यापारियों और अनजाने लोगों के प्रति भी अनगिनत लोगों ने वैसा ही व्यवहार रखा, मानों सदा के परिचित प्रेमीजन हों, बिल्कुल निकट के स्वजन हों। विशेष बात तो यह देखी गयी कि मील भर लम्बे बाजार में और उससे भी दुगुने लम्बे गंगा-तीर पर रंग बिरंगे ठाट-बाट में लोग अपने अपने काम से घूम फिर रहे थे। तब उनमें कहीं भी ऊँच-नीचपन या दुराव दिखाई नहीं पड़ता था।

हिन्दुओं के इस विराट धार्मिक उत्सव में मुसलमानों के लिए भी दरवाजे बन्द नहीं थे। हजारों मुसलमान दूकानदार फल, खिलौने, बताशे आदि बड़ी निर्भीकता से जगह-जगह पर बेच रहे थे तथा गाड़ी-तांगा आदि किराये पर चला रहे थे। इसी प्रकार निम्न श्रेणी के कर्मचारियों से लेकर मोटर-जीपकार से नीचे धरती पर चलते हुए मन में ग्लानि का अनुभव करने वाले और सर्वत्र अपने को बड़ा जताने वाले बूट सूटधारी अधिकारियों की भी इस जन-समुद्र में उपस्थिति थी। परन्तु इतने सारे भेद के होते हुए भी गंगा के किनारे सभी इस प्रकृति मैया की सन्तान के रूप में विचरते हुए नजर आते थे। ठेठ देहाती लोगों की तरह ही चोटी से एड़ी तक के शहराती परिवारों की भी यहाँ मौजूदगी थी और सभी लोग समान भाव से प्रकृति का आनन्द लूट रहे थे।

* * *

वास्तव में यह मेला ही रहा, अर्थात् मानव से मानव का मिलन था। जो दूसरों से मिलते थे, वे अपने लिए कुछ हड़पने की प्रवृत्ति से नहीं, अपितु दूसरों को पत्र-पुष्प भर पहुँचाने की मनोवृत्ति वाले थे। सर्वत्र शालीनता, सौहार्द, सहिष्णुता और भद्रता का ही बोलबाला था, ऐसा कहा जाय तो कोई इसे अतिमानस का अतिरेक न समझें। दूकानदारों में भी अनेक ऐसे पाये गये, जिन्हें ग्राहकों के पैसे की जितनी तृष्णा होती थी उससे भी अधिक अपनी प्रतिष्ठा और प्रेमपूर्ण व्यवहार के परिचय की चिन्ता थी। उनमें से कइयों का शुद्ध माल और पूरी तौल का माल देने के प्रति सतर्क और सजग रहना सचमुच उनकी भद्रता का सूचक था। घाट पर पंडे पुजारी भी सौम्य शान्ति से अपना काम कर रहे थे। और इन लाखों दर्शकों एवं यात्रियों में असंख्य युवतियाँ और किशोरियाँ बेखटके नहाने का आनंद ले रही थीं। इसे भी संस्कारिता का सामूहिक प्रस्थापन कहना चाहिए। चारदीवारी के बीच बंद रहने पर ही स्त्रियों का शील और लज्जा टिक पाती है, पर्दे द्वारा ही पुरुषों की अभद्रता से बचा जा सकता है, इस विचार से भरे हुए इस प्रदेश में, हजारों नर-नारियों का खुले घाटों पर सह स्नान और सह-भ्रमण होने पर भी कहीं दुष्टता का फूट न पड़ना, क्या कम महत्त्व की बात कही जायगी! इसे हमारे देश और समाज की सुदृढ़ संस्कारिता का मूर्तिमान स्वरूप ही स्वीकार करना चाहिए। धर्म-भावना से स्नान करने आने वाले यात्रियों के सहस्र नयनों में यह सुशीलभाव समाया हुआ था। उनके मूक मिलन में साधुता और पुनीत भाव का संगीत गूंज रहा था।

* * *

सबसे बड़ी बात इस मेले में यह देखने में आयी कि हमारे देहाती किसान बन्धु-बांधव अनुद्यमी, आलस्यप्रिय और अकर्मण्य हैं, यह आलोचना कितनी बेबुनियाद है! ये सब दो-दो चार-चार दिन तक कठिन परिश्रम उठाते रहे। दस-बीस या चालीस घंटों के लिए बड़े परिश्रम से अपने-अपने डेरे खड़े कर दिये। तम्बू, रावटी तो केवल धनिक, सरकारी कर्मचारी या छोटी मोटी संस्थावालों को ही उपलब्ध थे। चटाई के झोंपड़े आदि दूकानदार लोग बना सके थे, परन्तु लाखों लोगों ने केवल अपने घर की चादर, बिछौने और बाँस-बैलगाड़ी से डेरे छा लिये। रसोई की, सोने की, रात की ठंड और ओस से बचने की पक्की व्यवस्था कर ली। सब कुछ श्रमाधारित था। बहुत कम धनाधारित था। इन लोगों को जो प्रमादी बताते हैं, वे स्वयं न देख सकने वाले ही कहे जायेंगे। गंगाजी की धारा तक पहुँचने के लिए बैलगाड़ी वालों को घोर परिश्रम करना पड़ रहा था, केवल बालू से बिछी हुई इस भूमि पर दो रात भी अपने बैलों को रखने के लिए चारे-दाने का प्रश्न छोटा नहीं होता। परन्तु ग्रामीण जन उसकी भी पूरी व्यवस्था घर से ही कर लाये थे। बैलों को नहला कर सजाने की स्फूर्ति और सूझ इन लोगों के पास थी। इन्हें अकर्मण्य बताना तो सूरज को अन-

देखा करने के बराबर ही कहा जायगा।

* * *

अन्त में जहाँ हमको जनता की स्वयं-स्फूर्ति और उत्साह पर आश्चर्य हुआ, वहाँ हमें मेले की व्यवस्था से अत्यन्त निराशा हुई! कहने को तो मेले की व्यवस्था जनता के लिए की गयी थी; किन्तु उसका उपयोग अधिक से अधिक सरकारी अधिकारी और विशिष्ट व्यक्तियों के लिए किया गया। अधिकतर डेरे, 'पेट्रोमैक्स', पानी के नल, बैठने उठने की सुविधाएँ, स्टाल आदि का उपयोग जनता के लिए नहीं हो सका।

एक और भी कटु अनुभव हुआ कि मेले में 'शराब बन्दी विभाग' ने जहाँ एक ओर बड़ा प्रदर्शन किया, वहाँ दूसरी ओर मेले से सट कर ही तिगड़ी गाँव की दूकानों में शराब की बोतलें भी बिकने लगीं। इस प्रकार अवैध शराब गंगा-तट पर बेची गयी।

उपर्युक्त सारी बात दो शब्दों में इस प्रकार प्रस्तुत की जा सकती है—श्रमिक किसान और छोटे छोटे दूकानदार आदि से कदम कदम पर सत्ता के बल पर भारी कर वसूल किया गया, लेकिन खर्च करते समय इन ९०-९५ प्रतिशत यात्रियों की सुव्यवस्था को अधिकतर भुला ही दिया।

सहृदय निराला!

उन दिनों श्री सुमित्रानन्दन पन्त दिल्ली में टाइफाइड के प्रकोप से पीड़ित थे। जब निरालाजी को यह समाचार मिला तो वह छटपटा उठे! वे इलाहाबाद में महादेवीजी के घर बैठे थे। महादेवीजी ने पन्तजी के स्वास्थ्य के सबंध में जानकारी प्राप्त करने के लिए दिल्ली जवाबी तार भेजा था, रात के दस बजे तक दोनों उत्तर की बाट जोहते रहे।

जब तार का उत्तर नहीं आया तो महादेवीजी ने निरालाजी से कहा—'अब रात बहुत अधिक हो गयी है। आप घर जायें और सवेरे फिर आ जायें।'

निरालाजी चुपचाप बाहर चले आये। महादेवीजी ने द्वार बन्द कर लिया और अन्दर जाकर सो रहीं।

सवेरे जब उन्होंने फिर दरवाजा खोला तो देखा कि दीवार के सहारे निरालाजी बैठे हुए हैं! द्वार खुलते ही उन्होंने पूछा—'कहिए, अभी तार तो नहीं आया?'

—सीनारानी

खरीदा हुआ आदमी!

मोतीलाल केजरीवाल

[हमको विश्वास नहीं होगा और शायद आश्चर्य भी होगा कि आज के युग में, भारत में गुलामी की प्रथा रूप बदल कर विद्यमान है। यहाँ पर हम एक 'सच्ची घटना' दे रहे हैं, जो हमारी चेतना को झकझोर कर इस प्रथा के उन्मूलन के लिए सोचने को मजबूर करेगी! —सं०]

यह बीसवीं सदी है। यद्यपि भारत में स्वराज्य हो गया ऐसा कहा जाता है, तथापि इस देश में गुलामी की प्रथा मिट गयी ऐसा कहना बिलकुल गलत होगा! भले ही उस प्रथा का नाम 'गुलामी' न हो और भले ही हम लोग उसको महसूस न करें, परन्तु यह उतना ही सत्य है, जितना कि सूर्य का उदय और अस्त होना!

एक सच्ची घटना का वर्णन यहाँ करता हूँ। स्थान का नाम नहीं दे रहा हूँ और आदमियों का नाम भी बदल कर इसलिए लिख रहा हूँ कि हम वास्तविकता को समझ सकें और इस बुराई को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए जोरदार प्रयत्न कर सकें।

किशोर उम्र का एक लड़का था। जाति का चमार, रंग साँवला, किन्तु चेहरे पर सरलता और सजनता दिखाई पड़ती थी। वह माता पिता के प्रेम से वंचित हो गया था। थोड़े में कहा जा सकता है कि वह लाचार और अनाथ था, भूमिहीनता तो उसका वंशगत भाग्य ही था!

संयोग ऐसा हुआ कि उस बालक के किशोरपन के उदय के साथ ही साथ उसके गाँव के नजदीक ही गांधी के लोगों ने एक आश्रम खोल दिया। वह आश्रम सर्वोदय-आश्रम कहलाने लगा। यह सन् १९५२ के लगभग की बात है। गांधीजी के नाम में आकर्षण या जादू तो है, सबके लिए न सही तो गरीबों के लिए तो है ही।

एक दिन वह लड़का आश्रम में आया। आश्रम के व्यवस्थापक करुणाभाई ने उसको अपने पास बुलाया और उसके अपने ही मुख से उसकी अपनी कहानी सुनी, सुन कर उनको उस बच्चे पर ही एक प्रयोग करने की बात सूझी। उस किशोर बच्चे को उन्होंने गाय चराने के लिए नियुक्त किया। सुन्दर सा नाम, 'नरेश' उसका उन्होंने रख दिया और पुत्रवत् उसको सम्हाल करने लगे। उसकी फुरसत के समय वे पढ़ाते भी थे। नरेश प्यार का भूखा था, आश्रम के कर्ममय वातावरण में वह कर्मरत हो गया। वह पढ़ता था, चरखा चलाता था, आश्रम की सफाई करता था, आश्रम की गाय की प्रेमपूर्वक सेवा करता था और प्रार्थना तो करता ही था। यहाँ तक कि मवेशी चराते समय भी वह स्लेट पर लिखा करता और पोथी पढ़ा करता। उसका प्यार और उसकी श्रद्धा तथा ममता का केन्द्र वह आश्रम ही बन गया।

नरेश के दुर्भाग्य से अथवा यों कहा जाय कि परिस्थितिवश करुणाभाई आश्रम छोड़ कर चले गये। बेचारा नरेश बेकार और अभिभावकहीन बन गया, भूमिहीन तो वह था ही। फिर अपने चाचा के पास वह रहने लगा। उस चाचा ने अपनी गरीबी के कारण तथा परम्परागत बुरी परिस्थिति के कारण गाँव के नजदीक एक पुराने जमादार श्री रघुनन्दन बाबू ५० रु० लिये और नरेश को गाली, झिड़की, अपमान सह कर पेट भरने के लिए वहाँ रख दिया। जब जब रघुनन्दन बाबू के यहाँ काम होता था, तब-तब ही वह मजदूरी या भोजन पाता था। अन्य दिनों वह बेकार रहता और यदि कहीं दूसरा काम मिले तो काम करता था। इस तरह कुछ वर्ष बीते।

करुणाभाई पाँच छह वर्ष के बाद पुनः आश्रम में लौट आये और आश्रम में फिर से चेतना भी लौट आयी। नरेश ने भी सुना और उसने आकर करुणाभाई से भेंट की और अपनी दर्दनाक बेकारी की बात कह कर आश्रम में रहने की इच्छा प्रकट की। इन दिनों रघुनन्दन बाबू के पास काम न रहने के कारण नरेश बेकार ही था। करुणाभाई ने उसको आश्रम में ले लिया और ता० ३ अक्टूबर १९६१ को नरेश आश्रम में पहुँच कर काम करने लगा।

अभी उसे काम करते दो तीन दिन ही हुए थे कि एकाएक रघुनन्दन बाबू के घर में कुछ मजदूरों की आवश्यकता हुई। नरेश, जिसको सब कोई "नरसा" कह कर पुकारते थे, की खोज की गयी। वह घर में तो था नहीं। बाबू साहब का लठैत सिपाही "नरसा" को खोजते-खोजते आश्रम में पहुँचा। करुणाभाई मौजूद नहीं थे। उनके सहकारी, दीनबन्धु मौजूद थे और 'नरसा' के साथ-साथ खेत में कुछ काम कर रहे थे।

अपशब्दों की बौछार करते हुए बाबू साहब के उस सिपाही ने जमीन पर बार-बार लाठी पटक कर नरेश को चलने के लिए कहा। न चलने पर लाठी से सिर फोड़ देने का भय दिखाया! शायद सिपाही नरेश को पकड़ कर ले भी जाता और मारता तो भी कोई आश्चर्य नहीं। किन्तु दीनबन्धु बाबू के बीच में आ जाने से सिपाही बड़बड़ाता हुआ वापस लौट गया। करुणाभाई के आश्रम आने पर उसने से विदा चाही, क्योंकि रघुनन्दन बाबू का नाम और सिपाही की लाठी का आतंक उसके हृदय को थरथराते हुए था। नरेश रघुनन्दन बाबू के सदर के डेरे में चला गया, जहाँ उसकी बुलाहट हुई थी।

दीपावली, ७ अक्टूबर का दिन था। दिन में साढ़े ग्यारह बजे श्री करुणाभाई पसीने में लथपथ खेत में काम कर रहे थे। एकाएक वही लठैत सिपाही वहाँ आ पहुँचा। वह कहीं दूसरी जगह से आ रहा था। उसको मालूम नहीं था कि उसका "नरसा" यहाँ से चला गया है। आते ही डपट कर उसने करुणाभाई से पूछा—"आप लोगों ने नरसा को छोड़ा है या नहीं?"

करुणाभाई चौंक पड़े! उन्होंने सम्हल कर नम्रतापूर्वक सिपाही से बात करने की कोशिश की, किन्तु सिपाही उबला हुआ था। वह कोसता ही गया, "आप लोगों ने बहुत भारी गलती की है। आप लोगों की बड़ी शिकायत है!" करुणाभाई ने जानना चाहा कि वह कौन है? सिपाही ने अवेश से उत्तर दिया—"क्या आप नहीं जानते हैं कि मैं रघुनन्दन बाबू का सिपाही हूँ? मैं 'नरसा' को पकड़ कर ले जाऊँगा।" करुणाभाई सारी स्थिति समझ रहे थे।

उन्होंने कहा—"सिपाहीजी, आपको इतना गर्व नहीं होना चाहिए। आप भी तो रघुनन्दन बाबू के एक नौकर हैं। अतएव बेकसूर किसीको क्यों पकड़ियेगा और क्यों मारियेगा?" करुणाभाई ने पुनः कहा—"सिपाहीजी, अब जमाना बदल गया है। १५ अगस्त १९४७ के बाद कोई किसी पर जुल्म नहीं कर सकता!"

सिपाही क्रोध से तमतमा उठा। वह नौकर है और किसीको पकड़ नहीं सकता, ऐसे शब्द सुनने को वह तैयार नहीं था। उसने तैश में आकर कहा—"आप भी तो नौकर हैं। 'नरसा' की तो बात ही क्या! मैं आपको पकड़ कर ले जा सकता हूँ और 'नरसा' के स्थान पर आपसे हल चलवा दूँगा।" सिपाही बोलता ही गया—"नरसा हमारा खरीदा हुआ आदमी है, हम उसको पकड़ कर ले जायेंगे। यदि वह नहीं जायेगा तो उसका घर जला देंगे!"

सिपाही बड़बड़ाता लौट गया, मेरा वर्णन भी यहाँ समाप्त हो गया। मैं कहता हूँ और जोर देकर कहता हूँ कि आज की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत पचास लाख नरसा पशु की जिन्दगी बिता रहे हैं! वे पीड़ित और अर्ध-क्षुधित हैं। आज का तथाकथित स्वराज्य सच्चा स्वराज्य नहीं कहा जा सकता है। सच्ची स्वाधीनता तो तब रह होगी, जब देश की भयंकर विषमता दूर होगी। इस देश में अभी भी लाखों रघुनन्दन बाबू मौजूद हैं!

दुहरी कसौटी के बीच

● लक्ष्मीनारायण भारतीय

ज्यों-ज्यों चुनाव नजदीक आ रहे हैं, हम लोगों में विचार-मंथन हो रहा है कि उसमें हमारी नीति क्या रहे ? मतदान करें या न करें, इससे लेकर तो सत्ता में जायें या न जायें, यहाँ तक चर्चा सोची जा सकती है, एवं इन दोनों सिरों के बीच में प्रचार करना, प्रचारक भर विधान-सभाओं में भेजना, पार्टी बनाना आदि चर्चाएँ समा जाती हैं। पर सर्वोदय को मानने वाले कोई पार्टी संगठित करके सत्ता तक पहुँचें, यह विचार—या यह आचार—कम-से-कम निकट भविष्य में तो भी संभवनीय नहीं रहा है, क्योंकि हमने अपने इर्दगिर्द अपने प्रचार से ऐसा वातावरण उत्पन्न कर दिया है कि सब यह मानने लग गये हैं कि "सर्वोदय वाले इसे या उसे मदद कर देंगे, खुद 'मैदाने-जंग' में नहीं उतरेंगे।' और यदि कोई उतरना चाहे, भी तो उस बेचारे को सर्वथा उपेक्षित बन जाना होगा।

फिर, इस आन्दोलन के नेता ने ऐसी लगाम खींच रखी है कि कुछ दिनों के बाद तो 'सर्वोदय वालों की सत्ता में आने की बात' कहीं पागलपन में ही शुमार न होने लग जाय ! और सच तो यह है कि शायद वह हमारे 'बूते' की भी बात नहीं रह गयी है ! उसके लिए कितनी बड़ी 'दहरथी' जमानी पड़ेगी और वह जमाने से ज्यादा वह किस तरह 'संभालनी' पड़ेगी, यह सोचते ही रूह काँप जाती है ! यह अलग बात है कि बिना इस धरन्दहरपी के ही हमें कोई सत्ता में आने की दावत दे दे और हम "भैंसजी के पड़ेजी, तुम्हे क्यों खींचतेजी" कहते-कहते चले भी जायें ! पर कोई राजनीतिक दल काहे ऐसा करने बैठेगा, जब तक कि वह हमें "तेल वाला तिल" न समझ ले !

सो पार्टी या संगठन बना कर या ताकत लेकर सत्ता में जाने की बात तो, अब सपने ही सजाने की रह गयी है ! खुदा न खास्ता कभी जनता ही भाँति कर बैठे एवं हमें सत्ता पर चढ़ाने, तो बात अलग है, सो वह भी अभी संभव नहीं दीखता है। इस तरह एक बात तो खत्म हो जाती है। अब रही बात, हम किसे अपनी 'मॉरल' (नैतिक) ताकत दें ! स्पष्ट है कि हमारे प्रस्ताव और हमारे बंधन सब अच्छे रह जाने वाले हैं एवं जहाँ हमारे हृदय की पुकार उठेगी, वहीं मॉरल ताकत पहुँचने वाली है, यद्यपि वह 'मॉरल ताकत' है, कितनी, यह किसीको पता भी नहीं है। खैर, वह हो न हो, हम मतदाता तो हैं एवं हमारे साथी भी कम नहीं हैं। अतः मत अमुक व्यक्ति या पक्ष को देने या न देने की बात तो चल पड़ने वाली है, यह प्रकट तथ्य है। एक बार बहुत से लोग रचनात्मक काम छोड़ कर एक व्यक्ति-विशेष के चुनाव-प्रचार में लग गये। पूछा गया, तो ईमानदारी से उन्होंने कह दिया कि 'हमारे सामने तो वह 'व्यक्ति' था, जो हमारा था। उसकी हार हम कैसे होने देते !' तो व्यक्ति निष्ठा, पक्ष-निष्ठा कह लीजिए, अंदर का कुछ अपनापन जिसके प्रति है, वहाँ मत जाने वाले हैं एवं खुले छिपे प्रचार भी होने वाला है। व्यक्ति एवं पक्ष भी यह जानते हैं, अतः वे भी अपने पुराने 'ताल्लुकात' या विशेष सामने रख कर हमें समझाने वाले हैं एवं हम समझने वाले हैं !

इस तरह 'क्या नहीं होने वाला है' एवं 'क्या होने वाला है', ऐसी दो यथार्थताओं के बीच हम आज हैं एवं शेष चर्चाएँ यों ही चलते रहने वाली हैं। फिर भी जब चर्चा उठी है, तो वह कर ही लेने में क्या हर्ज है ? दरअसल बात यह है कि एक 'शक्ति' के रूप में अभी हमारा खास कोई अस्तित्व नहीं है, यद्यपि आदर है, तटस्थता एवं निष्पक्षता के प्रति श्रद्धा है एवं ईमानदारी पर विश्वास भी है, तथापि ये सब अभी 'शक्ति' रूप नहीं बने हैं ! अब यह शक्ति कहाँ से आये ! राजनीतिक कार्य की मौजूदा प्रणाली अख्तियार करके 'शक्ति' प्राप्त करने का मार्ग विचार पूर्वक छोड़ दिया गया है। तब एक ही मार्ग रह जाता है, लोकनीतिक कार्य की विशिष्ट प्रणाली पर चल कर शक्ति-संचय करना। अर्थात् वह हमारी शक्ति नहीं होगी, न वह हमें अभिप्रेत भी है। चाहते यही हैं कि जनता स्वयं शक्तिशाली बने। जब जनता शक्तिशाली बनेगी, तो वह राजनीतिज्ञों एवं राजकीय पक्षों को काबू में करेगी। पर आज उल्टा ही हो रहा है। तो यह पाँसा कैसे पलटे ! इसीके लिए ऐसे सेवक-वर्ग की बात सुझायी गयी थी कि जिसका नैतिक प्रभाव जनता पर रहे, वह सत्ता या पक्ष से अलग रहे एवं उस नैतिक प्रभाव से वह लोकशिक्षण करते-करते लोकशक्ति जाग्रत करे। यदि इस नैतिक प्रभाव-युक्त लोक-शिक्षण-कार्य की परंपरा चल पड़ती है, तो फिर इस सेवक-वर्ग का शक्ति के रूप में भी अस्तित्व माना जा सकता है। यही लोक-नीति का मार्ग है और यही काम करने की कसौटी भी है। 'लोकशिक्षण' बाहर रह कर करें या अंदर जाकर, यह कोई बड़ी बात नहीं है। यह करने के पीछे हम कुछ 'ताकत' खड़ी कर सकते हैं या नहीं, यही मुख्य "कसौटी" है और अंदर जाकर कोई ताकत खड़ी करने लायक स्थिति जब नहीं दीखती है, तो खुशी से या लाचारी से, एक ही मार्ग रह जाता है कि जहाँ शक्ति का स्रोत है, वहीं पहुँचा जाय, तो आज नहीं, कल कुछ उम्मीद की जा सकती है।

ऐसी कसौटी के आधार पर हमें अपने प्रश्नों के उत्तर ढूँढ़ने होंगे कि हम मत दें या न दें, प्रचार करें या न करें एवं सभा-सार्थ किसीको भेजें या न भेजें। लक्ष्य साफ है कि जनता को शक्तियुक्त बना कर ही लोकतंत्र को कायम रखना है।

परंतु यह काम करते हुए यथार्थता को भी कुछ महत्त्व देना ही होगा। यथार्थता यह है कि आज लोकतंत्र भयानक कसौटी में से गुजर रहा है। हमारे इर्दगिर्द होने वाली सैनिक क्रांतियाँ जनता का विश्वास लोकतंत्र पर से हटा रही हैं। क्योंकि उसे वहाँ इस तात्कालिक उपाय से लाभ दीख पड़ता है। एक तरफ गरीबी, लाचारी, सत्ता का केंद्रीकरण, जनता की काहिली, राजनीतिक पक्षों की स्वार्थपरता, सेवकों की निष्क्रियता, सत्ताधारियों की विलासिता, परिस्थिति की स्फोटकता, गुंडा तत्त्वों की अवसरवादिता आदि पनप रही हैं, तो दूसरी तरफ 'सैनिकक्रांतियों' का खून महत्त्वाकांक्षी लोगों की दाढ़ों को लग चुका है। इस तरह त्रिकोणी संघर्ष में यह लोकतंत्र फँसा हुआ है। ऐसी हालत में सवाल उठता है कि क्या हम केवल नकारात्मक नीति द्वारा अनजाने उस हालत को तो लाने में हिस्सेदार नहीं बन रहे हैं, जिसमें 'वोट' की कीमत खत्म होकर सैनिक सत्ता की कीमत ही बनी रहने वाली है ! आज की पार्लमेंटरी डेमोक्रेसी पर हमारे आक्षेप जाहिर हैं एवं उसके पेट में पलने वाले सत्ता-लालसा, गुटबंदी, बहुमत-अल्पमत प्रणाली आदि भी प्रकट हैं। फिर भी यह कोई भी स्वीकार नहीं करेगा कि उसकी जगह सैनिक शक्ति आ जाय, फिर वह मध्यपूर्व में प्रचलित तरीके की या पाकिस्तान-नेपाल आदि के तरीके की अथवा या अन्य किसी तरह की हो। साम्यवादी तंत्र की 'पार्टी-डिक्टेटरशिप' या संप्रदायवादियों की एकतंत्र कल्पना भी कोई नहीं चाहेगा। टूटी-फूटी रूप में भी क्यों न हो, आज की प्रचलित डेमोक्रेसी हमें इन सभी तंत्रों के मुकाबले स्वीकार है। हाँ, इन तंत्रों से हट कर जब हम उस पर स्वतंत्र रूप से सोचते हैं, तब उसमें आमूलाग्र परिवर्तन करने की बात छोड़ नहीं सकते, क्योंकि आज भी पद्धति में से ही सैनिकशाही के या अन्य खुराफात पैदा हो रहे हैं, यह हम जानते हैं। बावजूद इसके, तुलनात्मक रूप से हम उसे ग्रहण करते हैं, दो बुराइयों में से एक छोटी अनिवार्य बुराई समझ कर। 'वैक्यूम', रिक्तता तो हम स्वीकार कर नहीं सकते। तब यही मार्ग रह जाता है कि हमारे कार्य का स्वरूप ऐसा हो कि एक तरफ हमारा अंगीकृत लोकनीति का कार्य सशक्त रूप में चले एवं दूसरी तरफ हमसे ऐसा भी कोई कदम न उठे, जिसके परिणाम-स्वरूप 'वोट' का अस्तित्व ही खत्म होकर इर्दगिर्द की परिस्थितियों में मौजूद लोकतंत्र-विरोधी शक्तियाँ पनप उठें। इस खतरे को हम अभी कोई ठीक से समझ नहीं पा रहे हैं। पर जिस समय भीतर का असंतोष अनुकूल वातावरण देख कर दूसरे के शिकंजे में जाने के लिए तैयार हो बैठेगा तथा राष्ट्रीय संग्राम में से निकली हुई पीढ़ी समाप्त हो चलेगी, तब यह खतरा हमें मुँह बाए खड़ा दिखेगा। जिन विभिन्नताओं में ही एकता की धारा बहती थी, वे विभिन्नताएँ भी आज संकट का कारण बन गयी हैं। बाहर से एवं भीतर से ऐसी परिस्थितियाँ आक्रमण कर रही हैं कि मौका पाकर वे सफल हो जायेंगी एवं किये कराये पर पानी फिर जायेगा। इन सबके लिए कौन दोषी है और कौन निर्दोष, इस व्याख्यान में हम न पड़ें। हमारे सारे कार्य-कलापों की मुख्य भित्ति यही होगी कि किन तरीकों से हम अपने अन्दर तक पहुँच कर जनता को शक्तिशाली बना सकते हैं एवं साथ ही वोट की कीमत नष्ट-भ्रष्ट होने से भी रोक सकते हैं। यह जो दुहरा कार्य है, उसीके चिंतन में से इन प्रश्नों के उत्तर मिल जाने वाले हैं कि वोट दें या न दें, इत्यादि। सिद्धान्ततः, वोट दिया जाय, ऐसा किसी ने संभवतः नहीं माना है। अगर ऐसा माना गया होता, तो 'मतदाता अपने में से ही उम्मीदवार चुनें' आदि बातें नहीं कही गयी होतीं। परंतु जब सिद्धान्ततः उससे विरोध नहीं है और विरोध हो भी नहीं सकता, तब किन परिस्थितियों में मत-शक्ति का उपयोग करें, इतना ही प्रश्न रह जाता है। इसकी सैद्धांतिक तथा व्यावहारिक कसौटी की ओर ही ऊपर संकेत किया गया है। 'वोट' का अस्तित्व आज दो तरफ से खतरे में है। 'वोट से यह या वह सरकार नहीं हटती है, तो इसे अन्य किसी भी तरीके से खत्म करो,' यह भावना बढ़ती जा रही है। दूसरी तरफ, 'वोट' के हद तक ही जनता रूपी धूमकेतु सामने आ जाता है, और वोट दिया गया कि 'वोटर' प्रगाढ़ निद्रा में सो जाता है। इस प्रकार वोटर के एवं वोट के बीच खाई आ जाती है। इसी में ऊपर उल्लेखित त्रिकोणी संघर्ष आ जुड़ता है। इन सबका परिणाम क्या होगा, यह अधिक स्पष्ट करने की जरूरत नहीं। जिस डेमोक्रेसी के बीच हम आज पल रहे हैं, वही कई खतरों को जन्म दे रही है, यह स्पष्ट ही जाहिर है। अतः उन खतरों से डेमोक्रेसी को बचाने का मार्ग ही लोकनीति प्रशस्त कर रही है। पर उसी के साथ-साथ यह भी ध्यान में रखना होगा कि जब तक हम उसे हटा कर सही लोकतंत्र को स्थापित न कर दें, तब तक भी वह तो चलने ही वाली है। अतः उसे इस प्रकार चलने देना है कि उसकी बुनियाद खत्म न हो, अर्थात् वोट का अस्तित्व ही न गिर जाय। क्या यह खतरा हम उठायेंगे ! बल्कि हमें तो वोट एवं वोटर का महत्त्व बढ़ाने का उपाय करना चाहिए।

निस्सन्देह तलवार की धार पर की यह कसरत है। परन्तु एक तरफ सिद्धान्त, दूसरी तरफ यथार्थता, दोनों का तकाजा यही है कि हम यह कसरत सही सलामत पूरी करने का चिंतन करें। ●

विनोबा-पदयात्री दल से

कुसुम देशपांडे

"मैं आपके शहर में शाम के छह बजे तक हूँ।"—जोरहाट शहर के मेयर को विनोबाजी ने कहा, पर वे कुछ समझे नहीं। तब सिद्धराज भाई ने उनको समझाया, "बाबा छह बजे सो जाते हैं, तब वे ब्रह्मलोक में जाते हैं, इसलिए वे न जोरहाट में रहेंगे, न भारत में, न दुनिया में। मतलब, दिनभर हमें काम करना है और उनको सोने के पहले रिपोर्ट देनी है।" मेयर ने कहा, "जी हाँ! हम पूरी कोशिश करेंगे।"

जोरहाट शहर असम की संस्कृति का केन्द्र माना जाता है, इसलिए वह "संस्कार-धानी" है। शहर की महिला समिति की बहनों ने विनोबाजी के स्वागत में बहुत उत्साह से भाग लिया था। पड़ाव पर रसोई का जिम्मा तो उन्होंने उठा ही लिया था, लेकिन इसके आगे भी शहर में सर्वोदय पात्र रखवाने का, सर्वोदय-साहित्य के प्रचार का भी जिम्मा कई बहनों ने उठाया है। महिलाओं की सभा में एक महिला ने सवाल पूछा था, "आज की शिक्षा पद्धति सदोष है। हम बहनों को कौनसी विद्या लेनी चाहिए?"

विनोबाजी ने कहा, "ब्रह्मविद्या सबसे आवश्यक विद्या है। अगर वह ब्रह्मविद्या स्त्री को मिलेगी तो भला होगा, स्त्री शक्ति जागेगी। आज स्त्री का स्थान समाज में गौण है। वह एक 'गुड़िया' बनी है। वैसे ही उसे सजाते हैं और वह भी सजती है। मनु ने तो लिखा है कि हजार पिताओं से माता श्रेष्ठ है। यह जो स्त्री-शक्ति है, वह ब्रह्मविद्या से ही प्रकट होगी। बाकी विद्या तो साधारण विद्या है।"

विनोबाजी ने उनको यह भी सुझाया कि सर्वोदय की शक्ति, असम कस्तूरबा ट्रस्ट की शक्ति और यह असम की महिला समिति की शक्ति, तीनों एक हो जायँ तो असम में स्त्रियों के उत्थान का काम जोरदार होगा।

* * *

जोरहाट के बार-असोसिएशन के प्रतिष्ठित वकील विनोबाजी से मिले। उन्होंने पूछा, "आपकी पद्धति से आप कम्युनिज्म को 'लिक्विडेट' (विसर्जित) करेंगे, क्या ऐसा आप मानते हैं?"

विनोबाजी : "मेरा वैसा उद्देश्य भी नहीं है। इस प्रकार 'निगेटिव' उद्देश्य लेकर मैं काम नहीं कर रहा हूँ। गरीबों का उत्थान हो, समाज एकरस बने; ऐसा 'पॉजिटिव' काम लेकर मैं घूम रहा हूँ। कम्युनिज्म को मैं गलत चीज नहीं मानता। उसमें भी अच्छे विचार हैं, उदार विचार हैं, बावजूद इसके कि इसमें कुछ कमियाँ हैं। और उनका मुकाबला क्या आप अपनी पूँजी बनाये रखने से करेंगे? आप अपनी गठरी कायम रख कर कम्युनिज्म को दूर कर सकेंगे क्या? आपने 'कीर्तन घोषा' पढ़ा है न? उसमें एक विचार यह आया है कि दाता और चोर एक ही हैं। मैं यही कहता हूँ। अगर दाता नहीं बनेंगे तो चोर आयेंगे। बाबा का आंदोलन आप चलायेंगे, दाताओं की संख्या बढ़ायेंगे तो चोरों की संख्या घटेगी। नहीं तो चोरों की संख्या बढ़ेगी।" इस पर सब हँस पड़े।

जोरहाट के 'चेंबर आफ कामर्स' के व्यापारी भी विनोबाजी से मिले।

हिंदू धर्म में महाजनों की कैसी प्रतिष्ठा है, यह बता कर विनोबाजी ने उनसे कहा, "आप अपनी प्रतिष्ठा को समझें और चीजों में मिलावट का काम न करें। खाने की चीजों में, दवाइयों में भी इन दिनों मिलावट होती है। उधर बीमारों को, अस्पताल को भी मदद देते हैं। लेकिन मिलावट बंद करके बीमारी जिन कारणों से बढ़ती है, वे ही कारण हटाने चाहिये। दूसरी बात, अगर आप चार भाई हैं तो एक मुक्त हो और सेवा का काम करे, उसके परिवार का जिम्मा तीन भाई उठायें।"

आखिर में विनोबाजी ने कहा, "जमनालालजी बजाज ऐसे थे। उनके कारण व्यापारियों की प्रतिष्ठा बढ़ी।"

* * *

असम में वैष्णवों के जगह जगह स्थान हैं, जिन्हें 'सत्र' कहा जाता है। उन सत्रों के प्रमुखों ने जोरहाट में विनोबाजी को उनकी लिखी हुई शंकरदेव, माधवदेव की किताबें भेंट दीं। उनसे विनोबाजी ने कहा, "गाँव गाँव जाकर हम भूदान समझाते हैं। मेरी दृष्टि से यह धर्म कार्य है। प्रेम से जमीन देने में करुणा का आविर्भाव है। दुनिया में स्वार्थ चला है। करुणा का मार्ग चलेगा तो भक्तिभाव फिर से जागेगा। लेकिन देखा कि गाँव-गाँव जाकर समझाने वाले नहीं हैं। यह संदेश स्वीकार करने वाले तैयार हैं। मिशनरी लोग सुव्यवस्थित ढंग से प्रचार करते हैं। अलग-अलग विभाग बाँट कर अधिकारी नियुक्त करके प्रचार करते हैं; अस्पताल, शिक्षण-संस्थाएँ वगैरा खोलते हैं। लोगों के साथ सम्पर्क रखते हैं, सेवा के जरिये प्रभु का संदेश पहुँचाते हैं। अच्छा है, वे प्रचार करते हैं, इसका दुःख नहीं है। लेकिन अपने यहाँ ऐसा प्रचार नहीं होता है, इसका दुःख है। मुझे लगा कि ऐसे दो-चार लोग निकलेंगे, नामघोषा, कीर्तन-घोषा, गीता, भागवत, सर्वोदय-विचार समझा कर आज का कर्तव्य बतला दें। ऐसी प्रेरणा लेकर आप घूमेंगे तो फिर से नया जीवन आयेगा। हमारे शास्त्रकारों ने तो आशा दी है—'पुरे महामहन सकल।' एक जमाने में तो ऐसे लोग निकलते थे, घूमते थे। तो फिर आज क्यों नहीं निकलने चाहिए? आज जवानों को धर्म विचार का परिचय नहीं है। कालेज की शिक्षा अलग है। सत्र में बैठने वाले हैं, शिक्षा देते हैं यह तो ठीक है। लेकिन घूमने वाले भी हों तो बहुत लाभ होगा।

* * *

जोरहाट सबडिवीजन की दस दिन की यात्रा जिस दिन समाप्त हुई उस दिन जोरहाट के वृद्ध पुरुष श्री नीलमणिजी ने जाहिर किया कि अब तक शिवसागर जिले में कुल १५० ग्रामदान प्राप्त हुए हैं, जिसमें जोरहाट सबडिवीजन के ५० ग्रामदान हैं।

उन्होंने यह भी कहा कि इन दस दिनों में हमने फिर से एक बार हमारे महापुरुष शंकरदेव की वाणी सुनी। पाँच सौ साल पहले यह वाणी असम ने सुनी थी, वही आज प्रतिध्वनित हुई है।

(क्रमशः)

हम हिंसा का मुकाबला कैसे करें ?

रमावल्लभ चतुर्वेदी

आक्रमणों का मुकाबला अहिंसा से हो सकता है या नहीं, यह एक सवाल है। गांधीजी की राय के अनुसार चीन जैसे मोर्चों पर अहिंसक बहादुरी से आक्रमण रोका जा सकता है। आक्रमणकारी की तोप की खुराक अगर सत्याग्रही बनने को तैयार हों, तो हिंसक युद्ध में भी जितनी प्राण हानि होती है, उससे कम प्राण हानि होकर आक्रमणकारी को उलटे पाँव लौटाया जा सकता है।

आक्रमण रोकने के लिए गांधीजी ने तीन तरीके बताये थे। एक तो यह कि उनको अपनी सीमा में बिना रोके घुस आने दिया जाय, लेकिन उनके साथ असहयोग और भद्र अवज्ञा की जाय। आक्रमणकारी को ऊब कर लौट जाना पड़ेगा। हिटलर की चढ़ाई के समय अंग्रेजों को गांधीजी ने यही सलाह दी थी।

दूसरा तरीका यह कि जीवित मनुष्यों की दीवार आक्रमणकारी की राह में खड़ी हो जाय और आक्रमणकारी को अपनी लाश पर ही होकर जाने दे। दीवार के ऐसे जीवित पत्थर एक के गिरते ही दूसरे आते रहेंगे तो आक्रमणकारी सिपाही, जो संवेदनशील मनुष्य ही है, अपना हथियार डाल देंगे।

तीसरा एक तरीका और है। वह यह कि जिस गाँव या शहर से होकर आक्रमणकारी बढ़ें उसे वीरान करके शहर और गाँववाले कहीं और चले जायँ और उस स्थान को मुर्दों का गाँव बना दें।

ये तीनों तरीके अपने और अन्य देशों में भी हिंसा-अहिंसा का विचार किये बिना इतिहास में आजमाये हुए हैं। स्वराज्य की हमारी पिछली लड़ाई में भी अहिंसक प्रतिकार की यह वीरता जगह-जगह हमने देखी थी। अहिंसा की छूत भी फैलती है। गोली खाने के लिए एक के बाद दूसरे पेशावर के लोगों जैसे आते गये और उसका क्या परिणाम रहा, यह भी हम देख चुके हैं।

ऐसी हालत में हमारा तो पूरा विश्वास है कि अगर हम अपनी फौज एकतरफा (यूनीलैटरली) तोड़ कर चीन आदि का अहिंसक प्रतिकार करें तो बहुत जल्दी सफलता ही नहीं, अभूतपूर्व यश भी हमें मिले। अपने जीवन में ऐसे अनेक प्रसंग हमारे सामने भी आये हैं, जहाँ अपनी नकली और कच्चर अहिंसा से हमने प्रबल हिंसा का मुकाबला किया है। मुकाबला करते समय यह मान लिया था कि अब इस जीवन का अंत आ गया, पर आश्चर्य हर बार हुआ कि जैसे सिर झुका लेने से पहाड़ की समुद्री लहर निकल जाती है और कुछ मालूम नहीं होता, उसी तरह मौत की तरह आया आक्रमणकारी विफल कर लौट गया है। अगर नकली और अधूरी अहिंसा का यह परिणाम हो सकता है तो सही और पूर्ण अहिंसा क्या नहीं कर सकती!

हमारा यह भी विश्वास है कि अगर शान्ति-सेना के सत्यक हिंसक सेना का मुकाबला करने के लिए भारतीयों का आवाहन करें तो इस देश में पर्याप्त सैनिक मिल जायेंगे, जो गांधीजी के शब्दों में परपक्ष के तोप की खुराक बनने की या जीवित दीवार के पत्थर बनने को उत्सुक रहेंगे। हम तो यह भी मानते हैं हमारी इस शान्ति सेना में भर्ती होने के लिए विदेशों से भी अनेक वीर आने की इच्छा करेंगे। हमें पूरा विश्वास है कि शान्ति-सैनिक चीन के मोर्चे पर अद्भुत सफलता पाकर चीन को सच्चा मित्र बना सकते हैं और हिंसक फौज की जरूरत व्यर्थ सिद्ध कर सकते हैं।

पड़िला में गोष्ठी

राज्य-निरपेक्ष स्वतन्त्र जनशक्ति

५ दिसम्बर से ११ दिसम्बर तक पड़िला नामक स्थान पर, इलाहाबाद से आठ मील दूर एक गोष्ठी हुई। गोष्ठी में उत्तर प्रदेश के चालीस साथी शामिल हुए। इनमें आठ बहनें थीं। चालीस में से तीस साथी अपने-अपने क्षेत्र में निधि-मुक्त तथा तन्त्र-मुक्त अवस्था में काम कर रहे हैं। गोष्ठी में ६ दिसम्बर से ९ दिसम्बर तक श्री नवकृष्ण चौधरी तथा ८ से ११ दिसम्बर तक श्री धीरेन्द्र मजूमदार उपस्थित रहे।

गोष्ठी में विचार करने का मुख्य मुद्दा 'राज्य-निरपेक्ष स्वतंत्र जनशक्ति के संगठन और संयोजन' का था। अतः गोष्ठी का संयोजन भी योजनापूर्वक इस तरह से किया गया, ताकि गोष्ठी की व्यवस्था करने की प्रक्रिया में जनता की शक्ति को उद्‌बोधित करने का मौका मिले।

गोष्ठी के खर्च आदि की व्यवस्था के लिए अन्न-संग्रह हेतु यमना ग्राम-पंचायत का क्षेत्र चुना गया। करीब चौदह मन गेहूँ और धान इस क्षेत्र के मित्रों के अभिक्रम से संग्रह किया गया। इलाहाबाद शहर से करीब ढाई सौ रुपये भी इकट्ठे हुए। जिन मित्रों से अन्न अथवा धन लिया गया है, उनके पूरे पते लिख कर रखे हैं। ये ही व्यक्ति जनशक्ति के उद्‌बोधन के लिए जनता में जागरण का काम करेंगे ऐसा, हम सोचते हैं। अतः गोष्ठी समाप्त होने पर इन मित्रों का सम्मेलन बुलाने का तय किया है; ताकि विचार से सहानुभूति रखने वाले ये मित्र परस्पर भी एक-दूसरे से सम्बन्धित होकर एक सामाजिक शक्ति का रूप ले सकेंगे।

राज्य-निरपेक्ष स्वतन्त्र जनशक्ति, दण्ड-शक्ति से भिन्न तथा हिंसा-शक्ति के विरोधी होना आवश्यक है। अब तक समाज में ऐसा माना गया है कि संगठन और दंड, ये दोनों अभिन्न हैं। एक का दूसरे के बिना अस्तित्व ही नहीं है। संगठन का बाहरी स्वरूप संस्था में प्रकट होता है और हिंसा का बाहरी स्वरूप दंड के रूप में सामने आता है। अतः संगठन, संस्था और हिंसा व दंड का परस्पर भाईचारा है। लेकिन संगठन के बिना अच्छा या बुरा कोई भी सामाजिक काम होना असम्भव-सा दीखता है, और संगठन के साथ तन्त्र व हिंसा जुड़ी है। अतः हमको ऐसा प्रयोग करना है कि संगठन तो हो, परन्तु तन्त्र और हिंसा न हो। इसलिए गांधीजी ने जो कहा था कि अहिंसा की परीक्षा संगठन के स्वरूप से ही हो सकती है, इसी विचार को सामने रख कर हम लोगों ने सोचा कि

हमारा संगठन संस्था-पद्धति से नहीं बल्कि गोष्ठी-पद्धति से हो। जिन दो-चार मित्रों को मिलने की आवश्यकता महसूस हो, वे सबको बुलायें, जो आयें आपस में चर्चा करें और मुक्त विचार की इस परिपाटी में से अपने-अपने लिए सम्बल प्राप्त करें।

इस पद्धति का विकास करने की कोशिश सर्व सेवा संघ के संविधान में है, परन्तु वह अभी लोक-सेवकों का संघ नहीं हुआ है, बल्कि लोक-सेवक ही सर्व सेवा संघ के हैं। अतः गोष्ठी में इस विचार पर गहराई से सोचा गया कि हम लोग प्राथमिक सर्वोदय-मंडलों को सक्रिय और संगठित करके सर्व सेवा संघ को लोकसेवकों के संघ बनने की परिस्थिति बनाने में सहयोग दें।

अभी सर्व सेवा संघ सरकार से एक रजिस्टर्ड संस्था है। इसका कारण यही है कि अभी उसकी बुनियादी 'इकाई', लोक-सेवक सक्रिय नहीं है। एक दिन ऐसा आना चाहिये कि जब सर्व सेवा संघ को सरकारी रजिस्ट्रेशन की जरूरत न पड़े और वह 'लोक रजिस्टर्ड' हो जाय।

जब हम लोगों ने यह गोष्ठी बुलाने का सोचा था, तो हमसे कई मित्रों ने पूछा था कि यह गोष्ठी किसकी तरफ से बुलायी जा रही है? हमारे सामने भी यह सवाल था कि किसकी तरफ से बुलायी जाय? इस प्रश्न का समाधान उस समय तो नहीं हुआ, परन्तु गोष्ठी समाप्त होने पर इसका समाधान भी हुआ तथा तन्त्र और निधि से मुक्त संगठित रूप से काम करने की एक पद्धति के दर्शन भी हुए।

गोष्ठी में आये हुए मित्रों ने आपस में तय किया कि वे अपने आसपास के जिलों वाले मित्रों के साथ नजदीक का सम्पर्क रखेंगे और समय-समय पर एक-दूसरे का सहयोग लेते-देते रहेंगे। दो तीन बुजुर्ग मित्र जिनके पास जीवन भर का अनुभव है, अपने क्षेत्र का काम वहाँ के नये मित्रों को सौंप कर व्यापक क्षेत्र में सतत घूमते रहेंगे।

गोष्ठी की समाप्ति यह तय करके हुई कि हम लोग संगठित रूप से कार्य करने के लिए समय-समय पर इस प्रकार के विचार-विमर्श को जारी रखेंगे। एक सप्ताह की यह गोष्ठी बहुत ही उत्साहपूर्ण ढंग से समाप्त हुई। गोष्ठी के दरमियान रोज सुबह छह बजे से साढ़े सात बजे तक चर्चा होती थी, साढ़े सात से आठ तक नाश्ता तथा आठ से डेढ़ बजे तक सफाई, सब्जी काटना, खाना बनाना, गाँव में श्रमदान, स्नान, भोजन और विश्राम होता था। *गोष्ठी का मुख्य कार्यक्रम यही था; क्योंकि* इसी समय परस्पर-परिचय तथा चिन्तन चलता था। डेढ़ से साढ़े चार तक फिर चर्चा होती थी तथा रात को आठ से नौ बजे तक व्यक्तिगत परिचय। इस गोष्ठी में संस्था और दंडमुक्त संगठन के स्वरूप के दर्शन हुए।

—नरेन्द्र भाई

कानपुर का वार्षिक सर्वोदय-शिविर

गांधी स्मारक निधि के 'गांधी-विचार केन्द्र' की ओर से गत ९ नवम्बर से १२ नवम्बर तक आर्यनगर में कानपुर के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं तथा 'गांधी स्वाध्याय-संस्थान' के छात्रों का वार्षिक सर्वोदय-शिविर सफलता-पूर्वक सम्पन्न हुआ।

ता० ९ की प्रात-वेला में आर्यनगर धर्मशाला के प्रांगण में शिविर प्रारम्भ हुआ। संस्थान के आचार्य डा० सोमनाथ शुक्ल के प्रारम्भिक निवेदन के पश्चात् आचार्य राममूर्तिजी ने शिविर का शुभारम्भ करते हुए 'सामाजिक चिन्तन धारा में सर्वोदय-विचार' की तात्त्विक विवेचना की। उन्होंने कहा कि घनघोर शोषण, दमन और शासन के इस जमाने में न व्यक्ति के जीवन में अनुबन्ध रह गया है, न समाज में। एक ओर युद्ध की तैयारी है, तो दूसरी ओर शान्ति की चाह भी।

क्रांति की प्रक्रिया का विकासक्रम बताते हुए श्री राममूर्तिजी ने आगे कहा कि मार्क्स ने हिंसा का उपयोग शोषण-मुक्ति के लिए किया। गांधी की व्यूह-रचना का आधार नैतिक था। उन्होंने क्रान्ति की शक्ति प्रत्येक नागरिक को सौंपनी चाही। क्रान्ति की व्याप्ति जितनी व्यापक होगी, उसकी उपलब्धि भी उतनी व्यापक होगी। गांधी की संघर्षमूलक शान्तिप्रधान क्रान्ति के बाद विनोबा आज संघर्षमुक्त क्रान्ति की तलाश में है।

तीसरे पहर शिविरार्थियों की गोष्ठी में राममूर्ति भाई ने सर्वोदय-आन्दोलन की वर्तमान स्थिति तथा कार्यक्रम आदि पर कार्यकर्ताओं के प्रश्नों का समाधान किया।

सायंकालीन गोष्ठी का विषय था 'शिक्षण एवं लोकशिक्षण की प्रक्रिया।' श्री विनय भाई ने विषय प्रस्तुत करते हुए आर्यनगर 'प्रेम-क्षेत्र' तथा आगामी चुनाव के सन्दर्भ में 'लोकशिक्षण की प्रक्रिया' पर मार्गदर्शन चाहा। आचार्य राममूर्तिजी ने आज की जाति केन्द्रित समाज नीति, सत्ता-केन्द्रित राजनीति, सम्पत्ति-केन्द्रित अर्थनीति, पुस्तक केन्द्रित शिक्षानीति और पुरोहित-केन्द्रित धर्मनीति की विशद व्याख्या की।

रात्रि में आचार्य राममूर्तिजी से नगर के प्रमुख श्रमिक नेता श्री राजाराम शास्त्री आदि ने 'ट्रेड यूनियन आन्दोलन' के सम्बन्ध में चर्चाएँ कीं।

दूसरे दिन प्रातः प्रार्थना के पश्चात् आध्यात्मिक चर्चा हुई, जिसमें श्री राममूर्ति ने वस्तुनिष्ठ सत्य, अक्षोभ मन और सामाजिक चारित्र्य को आत्मज्ञान का मूलाधार बताते हुए विज्ञान के साथ अध्यात्म के समन्वय की आवश्यकता समझायी। इसके बाद शिविरार्थियों की टोली ने आर्यनगर क्षेत्र में प्रभात फेरी की।

प्रातःकालीन गोष्ठी का विषय था 'वर्तमान राजनीति का विकल्प'। डा० सोमनाथजी के बाद गंगासहाय चौबे ने कहा कि भौतिक आधार पर चलने वाला वर्तमान लोकतन्त्र टिक नहीं सकेगा। उसमें अध्यात्म के पुट की अपेक्षा है। श्री राममूर्तिजी ने और श्री सुरेशराम भाई ने विषय पर समुचित प्रकाश डालते हुए लोकनीति की स्थापना के लिए लोक-चारित्र्य के विकास पर बल दिया।

तीसरे पहर 'सर्वोदय-महिला-मण्डल', आर्यनगर द्वारा आयोजित बहनों की विशेष सभा में स्वामी साधनानन्दजी ने अध्यात्म को ग्रामोद्योग का मूल बताते हुए सर्वोदय-आन्दोलन में योग देने की अपील की। माता मोहिनी मित्तल ने इस सभा का संयोजन किया।

सायंकालीन गोष्ठी का विषय था 'सर्वोदय का आर्थिक प्रतिमान' और इसके प्रमुख वक्ता रहे श्री सुरेशराम भाई। आचार्य राममूर्तिजी ने ग्रामदान के बाद उत्पन्न होने वाली समस्याओं का उल्लेख करते हुए कहा कि आज गरीब पारस्परिक सहकार से गरीबी से लड़ रहे हैं, इसे सर्वोदय की आध्यात्मिक उपलब्धि कहना उचित ही है।

ता० ११ की प्रात:काल निर्धारित विषय 'हृदय-परिवर्तन और सत्याग्रह' पर प्रो० ओंकारशरणजी विद्यार्थी के संयोजकत्व में विचार-गोष्ठी हुई, जिसमें आचार्य सद्‌गुरुशरण अवस्थी, डा० सोमनाथ शुक्ल आदि ने अपने विचार व्यक्त किये।

तीसरे पहर कार्यकर्ताओं की गोष्ठी में 'नगर के आन्दोलन की स्थिति' पर चर्चा के बाद भावी कार्यक्रम निर्धारित किया गया।

सायंकालीन सार्वजनिक विचार-गोष्ठी का विषय था 'मानवता की नवीन संस्कृति।' इस गोष्ठी के संयोजक थे डा० ब्रजलाल वर्मा। इसमें श्री नर्मदा प्रसाद अवस्थी, श्री रामस्वरूप गुप्त, डा० सोमनाथ शुक्ल

तथा श्री अशातजी ने अपने विचार प्रस्तुत किये। रात्रि में शिविरार्थियों में श्री हृदयनारायणजी ने 'स्वास्थ्य और भोजन' सम्बन्धी भाषण देकर अपने प्रयोगों का विवरण दिया।

ता० १२ नवम्बर को हमारे शिविर का अन्तिम दिन था। संयोग से इस दिन हमें श्री वियोगी हरि तथा श्री सिद्धराजजी ढड्ढा का लाभ मिला।

प्रातःकालीन सभा श्री बद्री भाई के भजन व गीतों से प्रारम्भ हुई। प्रमुख वक्ता श्री वियोगी हरिजी ने 'सर्वों की समता' बाँटते हुए बताया कि 'सामाजिक एवं राष्ट्रीय समरसता' राजनीतिक प्रयत्नों से नहीं लायी जा सकती। इसके लिए तो हमें व्यापक दृष्टि अपनानी होगी। भाव, ज्ञान और क्रिया की तीनों धाराएँ मिला कर विनोबा ने हमें बहुत बड़ी देन दी है। आज के अंधेरे में उनकी प्रकाश-किरणें बड़ा साहस बँधा रही हैं। इस गोष्ठी का संचालन श्री आनंद मिश्र ने किया।

तीसरे पहर शिविरार्थियों और आर्यनगर के सर्वोदय मित्रों से श्री ढड्ढाजी ने नगर तथा 'प्रेम-क्षेत्र' के सर्वोदय-कार्य की जानकारी ली और उनका यथोचित मार्गदर्शन किया।

श्री बद्रीभाई के गीतों से हमारे शिविर का दीक्षान्त-समारोह प्रारम्भ हुआ। शिविर संचालक श्री विनय अवस्थी ने श्री सिद्धराज ढड्ढा के स्वागत और परिचय में दो शब्द कहे। फिर शिविर व्यवस्थापक श्री एम० बी० वर्मा ने शिविर के आयोजन सम्बन्धी संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत करते हुए बताया कि इसमें कुल ४० शिविरार्थियों ने भाग लिया, जिसमें ७ बहनें शामिल हैं।

आर्यनगर के सर्वोदय मित्र, श्री राजाराम त्रिपाठी तथा श्री आनन्द मिश्र ने क्षेत्र के सर्वोदय-कार्य की जानकारी दी और 'नगर-सर्वोदय-समिति' के संयोजक श्री इकबाल सिनहा ने शहरी जीवन की समस्याएँ प्रस्तुत कीं।

श्री ढड्ढाजी ने सर्वोदय का मूल उद्देश्य, समाज में व्याप्त शोषण का निराकरण करके नये मानवीय मूल्यों की स्थापना करना बताया। उन्होंने कहा कि सर्वोदय शान्ति की प्रक्रिया में ही क्रान्ति करना चाहता है और उसकी आकांक्षा है कि नयी समाज-रचना प्रेम और सहयोग के आधार पर ही हो।

श्री ढड्ढाजी ने विश्व में चलने वाले अहिंसा के प्रयोगों का विवरण देते हुए अपने देश में अलीगढ़ आदि क्षेत्रों में हुई इन्सानियत को लजाने वाली घटनाओं का हृदयस्पर्शी चित्र रखा और नागरिकों से 'शान्ति-प्रतिज्ञा' लेने की अपील की।

शिविर के अन्तर्गत रात्रि में एक कवि-गोष्ठी भी हुई, जिसमें स्थानीय कवियों के अतिरिक्त रायबरेली के लोकप्रिय कवि श्री शिव बहादुर सिंह भदौरिया और श्री उपेंद्र बहादुर सिंह ने अपनी कविताएँ सुनाईं।

इस प्रकार कानपुर नगर के सर्वोदय-परिवार का शिविर के आयोजन में आर्यनगर के नागरिकों तथा नगर के सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने सक्रिय सहयोग प्रदान किया और कार्यक्रमों में उत्साहपूर्वक भाग लिया। श्री विजय भाई, कैलाश भाई, रामासरे भाई, ओम प्रकाश भाई तथा सुभाष भाई ने शिविर की व्यवस्था में विशेष परिश्रम किया।

—विनय अवस्थी

गोआ से दुहरा सबक

[पृष्ठ २ का शेष]

गोआ पुर्तगाल का एक उपनिवेश है, यह हम सब जानते थे और हम यह भी जानते थे कि गोआ की मुक्ति के बिना हमारी राजनीतिक स्वतन्त्रता अधूरी है। यह स्पष्ट था कि पुर्तगाल के अधिकारियों ने लगातार दमन की कार्रवाई चालू कर गोआवासियों के स्वतन्त्रता-आंदोलन को कुचल डाला था; किन्तु हम उदासीन रहे। कुछ वर्षों पहले गोआ में सत्याग्रह प्रारम्भ किया गया था, तब भी हमने उसकी ओर कुछ ध्यान नहीं दिया था। गोआ में साथी देशभक्तों को यंत्रणा सहते हुए हम देख कर चुप रहे। असहाय दर्शक की तरह हमने गोआ के लिए मजबूत अथवा कमजोर, कोई भी कदम नहीं उठाया। हमने गोआ के नागरिकों को अपना आंदोलन अहिंसात्मक रीति से चलाने में व्यावहारिक रूप से कोई मदद नहीं दी।

इस प्रकार हम गोआ के प्रति अपने कर्तव्य को पूरा करने में असफल रहे। हमने ऐसा वातावरण तैयार नहीं किया, जिससे वहाँ बलप्रयोग अनावश्यक हो जाता। अब हम इसकी क्या शिकायत करें!

हमको अन्तर्निरीक्षण करना चाहिए और यह कोशिश करनी चाहिए कि इस प्रकार के मामलों की पुनरावृत्ति न हो।

× × ×

गोआ से हम दुहरा सबक ले सकते हैं। पहला तो यह कि हम रचनात्मक कार्यकर्ताओं को गहरी निद्रा से उठना चाहिए और स्थिति का ठीक-ठीक ज्ञान प्राप्त कर अपने नम्र तरीके से जनता की समस्या को हल करने के लिए आगे बढ़ना चाहिए। दूसरा, भारत-सरकार को यह जानना चाहिए कि अहिंसा और मैत्री का तरीका तब तक नहीं चल सकता, जब तक कि उसके लिए आवश्यक पृष्ठभूमि और नैतिक स्वीकृति तैयार करने में मदद न मिले। सक्रिय अहिंसा के बिना अहिंसा निरा भ्रम है।

(मूल अंग्रेजी से)

फीजी द्वीपसमूह की चिट्ठी

फीजी द्वीप-समूह में बेकारी बढ़ रही है। स्थानापन्न 'कमिश्नर ऑव लेबर' श्री एल० एच० निकल्सन ने घोषणा की है कि जुलाई '६१ के अन्त तक १३४८ लोग बिना नौकरी के थे। अक्टूबर के अन्त में जब सी० एस० आर० कम्पनी ने लौटोका के मिल में गन्ना पेरने का काम बन्द किया तो बेकारों की संख्या में और वृद्धि हुई। मजदूरों में असन्तोष बढ़ रहा है।

फीजी का अगला आम चुनाव माह सितम्बर '६२ में होगा। इस चुनाव में पहली बार 'काईवीती' जनता को बालिग मताधिकार के आधार पर अपने प्रतिनिधियों को धारासभा में भेजने का अवसर मिलेगा। अभी तक फीजी में 'काईवीती' जनता को वोट देने का अधिकार नहीं था। स्त्रियों को तो वोट का अधिकार अभी भी नहीं है।

फीजी की एक प्रमुख पाठशाला 'थाईबकू भारतीय पाठशाला' आग से जल कर राख हो गयी। पुलिस का अनुमान है कि २२०० पौण्ड की क्षति हुई है। यह पाठशाला राकीराकी शहर के समीप ही थी और स्थानीय भारतीय जनता द्वारा संचालित होती थी। इस स्कूल के संस्थापक स्व० पं० बद्री महाराज थे, जो फीजी की धारासभा के प्रथम भारतीय सदस्य चुने गये थे।

लौटोका गोल्फ क्लब का मकान भी जल गया। मकान का सब सामान भी आग के पेट में समा गया। लगभग ७००० पौण्ड की हानि हुई। इस मकान की मालिकी लौटोका गोल्फ क्लब की थी, जो यूरोपियनों की एक संस्था है। 'फायर ब्रिगेड' वाले आग बुझाने में असफल रहे। पुलिस इस घटना की जाँच कर रही है।

स्थानीय व्यापार तथा व्यवसाय को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार की ओर से एक विकास-आयोग की स्थापना की गयी है। इस आयोग के सभापति हैं भूतपूर्व मिनिस्टर श्री ई० आर० वेलिंगटन। पाँच अन्य सदस्य भी हैं।

फीजी के सुवा नगर में बैंक ऑव बड़ोदा की शाखा स्थापित हो चुकी है। बैंक मैनेजर हैं श्री दीक्षित। इस बैंक में स्थानीय लोगों को भी नौकरी दी गयी है। लौटोका नगर में भी इसकी एक शाखा खोलने पर विचार हो रहा है।

फीजी की धारा-सभा तथा कार्यकारिणी सभा के भारतीय सदस्य श्री ए० आय० एन० देवकी छह सप्ताह तक लन्दन में उपनिवेश विभाग के अधिकारियों के साथ फीजी के भविष्य के सम्बन्ध में विचार विमर्श करके नवम्बर के शुरू में फीजी लौट आये हैं। लन्दन में आपने पार्लियामेण्टरी पद्धति का अध्ययन किया। लौटते समय श्री देवकी ने भारत तथा पाकिस्तान का भी भ्रमण किया।

ब्रिटिश सेना में फीजी के लोगों को भर्ती करने के लिए एक दल फीजी आया हुआ है। इस दल के नेता हैं मेजर ओस्ली। भर्ती का कार्य समाप्त हो चुका है। १२५ काईवीती, २२ भारतीय तथा ६३ अन्य, इस तरह कुल २११ लोग सेना में भर्ती हुए। इनमें १२ महिलाएँ भी हैं।

—आर० एन० गोविन्द

"सैंटोनिज्म" : एक नया इलाज

श्रीमती इलियट : "एक नयी बात है 'सैंटोनिज्म'। यह विचार अमरीका से आया है। हम लोग इससे लाभ उठा सकते हैं। मैं इसे आपको एक उदाहरण द्वारा समझाती हूँ।

मेरे पास गठिया रोग से पीड़ित एक रोगिणी है। कल उसके जोड़ों में दर्द बहुत बढ़ गया था। मैं उसके पास गयी और उसे एक आराम कुर्सी पर बिठा कर बोली, 'तुम शरीर नहीं हो, शरीर से बाहर आ जाओ। शरीर के निकट खड़ी हो जाओ, तुम्हारे किसी जोड़ में कोई दर्द नहीं है।'

तीन मिनट मैं चुप रही, फिर पूछा 'कहीं दर्द है?'

उसने कहा, 'बहुत आराम है।'

यह कार्य तीन मिनट में हो हो गया। मैंने रोगिणी को बताया कि जब दर्द हो, तब वह ऐसा ही करे। बस, यही 'सैंटोनिज्म' है।"

विट्ठलदास मोदी : "यह तो शरीर और आत्मा की बात हुई। शरीर और आत्मा का भेद रोगी को और प्रत्येक व्यक्ति को बताना बहुत अच्छा है, पर हमारे यहाँ तो यह सभी जानते हैं। वहाँ यह विषय विद्वानों तक ही सीमित नहीं है। सुबह नदी नहाने जाने वाली ग्रामीण स्त्रियाँ भी, जिनको कोई स्कूली शिक्षा नहीं मिली है, गाती जाती हैं कि शरीर तो पिंजड़ा है, पंछी इसमें से उड़ जाने वाला है!"

[श्री विट्ठलदास मोदी लिखित "यूरोप यात्रा" से]

आणविक प्रयोगों पर प्रतिबंध लगाने हेतु हस्ताक्षर-अभियान—उत्तर भारत में भयानक शीतलहरी का प्रकोप—महामना मालवीय जन्मशती समारोह—स्तालिन के दो ग्रंथ मान्य—उ० प्र० के सरकारी दफ्तरों में छुआछूत एक गंभीर अपराध—मालवीय विश्वविद्यालय—बाढ़पीड़ितों की सहायता।

आणविक प्रयोगों पर प्रतिबंध लगाने हेतु एक लाख हस्ताक्षर एकत्र करने के लिए सरदार श्री० जे० सिंह की अध्यक्षता में जो समिति गठित की गयी थी, उसकी अपील पर अब तक ७ केन्द्रीय मंत्री, ८ राज्य-मन्त्री, ४ उपमन्त्री और १७३ सदस्यों के हस्ताक्षर प्राप्त नहीं हो सके। इस समिति को एक लाख हस्ताक्षर कराने के अभियान में प्रधान मंत्री नेहरू का आशीर्वाद मिला है।

उत्तर भारत में पिछले दस-बारह दिन भयानक शीतलहरी से पंन्द्रहसौ काफी मनुष्य और पशुओं के प्राण चले गये। इस अवधि में भयानक सर्दी के कारण ईंधन बहुत महँगा हो गया और ऊनी कपड़े आदि बाजार में दुर्लभ-से हो गये। एक हफ्ते के बाद सूर्यनारायण के दर्शन से बहुत सुख हुए।

संपूर्ण भारत में, विशेषतः वाराणसी में महामना मालवीय का जन्मशती समारोह मनाया गया। इस अवसर पर काशी विश्वविद्यालय में विशेष कार्यक्रम आयोजित किये गये।

रूस ने स्तालिन-विरोधी अभियान के सिलसिले में कम्युनिस्ट पार्टी के 'प्रावदा' पत्र में स्तालिन-लिखित "समाजवाद के विला-ग्यासों पर" और "मार्क्सवाद तथा राष्ट्रीय प्रश्न पर" नामक दो ग्रंथों को सैद्धान्तिक रूप में ठीक बताया और उन्हें फेंके जाने से रोक दिया है। स्तालिन के अन्य कृतियों के बारे में यह बताया गया कि इन्हें मान्य ठहराने में कोई संगति नहीं है।

उत्तर प्रदेश सरकार के मुख्य सचिव ने सभी जिलाधीशों को एक परिपत्र में कहा है कि उ० प्र० के सभी सरकारी कार्यालयों एवं कर्मचारियों में छुआछूत के प्रयोग को एक गम्भीर अपराध समझा जाय।

उ० प्र० राज्य मालवीय शताब्दी समारोह-समिति की बैठक में काशी हिंदू विश्वविद्यालय के नाम से 'हिन्दू' शब्द हटा कर उसके स्थान पर संस्थापक मदन मोहन मालवीय का नाम जोड़ने का सर्व-सम्मति से सिफारिश की गयी। समिति ने इस सुझाव के सम्बन्ध में एक स्मृति-पत्र भारत सरकार को भेजने का निश्चय किया है।

सारण जिले के सभी प्रमुख स्थानों में ५ नवम्बर से २९ नवम्बर तक सारण जिला सर्वोदय युवक-सम्मेलन द्वारा बाढ़-पीड़ितों के लिए ९४० रु० ७ न० पै० एवं ७६ कपड़े संग्रहीत किये गये।

मौथा, गाजीपुर में २१ दिसम्बर को ग्राम-इकाई का उ. प्र. खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड के अध्यक्ष देवकरण सिंह ने उद्घाटन किया।

श्री गुणनिधि महन्ति

उत्कल के प्रमुख सर्वोदयी कार्यकर्ता श्री गुणनिधि महन्ति का देहांत १७ दिसंबर ६१ को स्ट्रोक से हुआ। मृत्यु के समय उनकी उम्र ७६ साल की थी। श्री महन्ति सन् १९२१ से सरकारी नौकरी छोड़ कर स्वराज्य के आंदोलन में शामिल हुए थे। इस बीच वे अनेक बार विभिन्न आंदोलनों में सत्याग्रह के सिलसिले में जेल भी गये थे। १९५१ से भूदान कार्यक्रम में श्री गोप बाबू के साथ आगे आये। उनके देहान्त से उत्कल का ही नहीं, बल्कि देश का एक प्रमुख कार्यकर्ता उठ गया।

करनाल जिला सर्वोदय-मंडल की प्रवृत्तियाँ

करनाल जिला सर्वोदय-मंडल के अक्टूबर-नवंबर माह के कार्यविवरण में बताया गया है कि गांधी-जयन्ती के अवसर पर साहित्य बिक्री और खादी बिक्री पर विशेष जोर दिया गया। एक हजार रुपये की खादी-गुंडियाँ बिकी।

श्री लालसिंहजी ने मछलौदा ब्लाक की ४४ पंचायत-समितियों से संपर्क स्थापित किया और करीब ४०० रु० का साहित्य भी पंचायतों को दिया।

अस्पृश्यता-निवारण मुहिम के अंतर्गत पानीपत में श्री सुमेरचन्द गुप्त के प्रयत्नों से इस विषय में काफी अच्छा लोकमत बनाया गया है।

श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् के आगमन के सिलसिले में शांति-सैनिकों की ४ सभाएँ की गयीं। इन सभाओं से मालूम होता था कि इस जिले में शांति-सेना के प्रति काफी उत्साह और काम करने की क्षमता है।

पानीपत में सर्वोदय-मंडल द्वारा एक अध्ययन-केन्द्र चल रहा है। एक लायब्रेरी भी है, जिसमें ५० व्यक्ति लगभग रोज ही लाभ उठाते हैं। इस जिले में करीब १०० सर्वोदय-पात्र चल रहे हैं। पिछले दो महीने में ११ रु० ८४ नये पैसे और डेढ़ मन अनाज संग्रहीत हुआ है।

खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय, किराना का दो दिन का शिविर लगा। इसमें मिडिल स्कूल किराना के विद्यार्थियों ने भी श्रमदान में भाग लिया। उसी दिन किराना में एक जलसा हुआ, जिसमें विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये गये और विशेषकर मद्यपान-निषेध के विचार पर प्रकाश डाला गया।

करनाल जिला सर्वोदय मंडल के लोक-सेवकों की एक बैठक १९ दिसम्बर को हुई। उसमें सर्वोदय-मंडल की प्रबंध-समिति का निर्वाचन हुआ। श्री उदयचंदजी अध्यक्ष और श्री निरंजन सिंह मंत्री सर्व-सम्मति से निर्वाचित हुए। सदस्यों में श्री ओमप्रकाशजी त्रिखा सहित अन्य ९ लोग हैं। बैठक में ग्राम-इकाई, सर्वोदय साहित्य-बिक्री और सर्वोदय पात्र का काम बढ़ाने के बारे में निर्णय लिये गये।

'इन्दौर सर्वोदयनगर अभियान' में ग्रामोद्योगों का सघन कार्य

खादी-ग्रामोद्योग आयोग की सहायता से मध्यप्रदेश सर्वोदय-मंडल द्वारा इन्दौर के सर्वोदयनगर अभियान के अन्तर्गत छह क्षेत्रों में सघन ग्रामोद्योग-कार्य हो, जहाँ ग्रामोद्योगी पदार्थों की बिक्री तथा उनका स्थानीय उत्पादन बेकारी तथा खादी-ग्रामोद्योग का विचार-प्रचार किया जाय—इसके लिए योजना बनाने तथा कार्यकर्ताओं के चयन हेतु जनवरी के तीसरे सप्ताह में एक त्रिदिवसीय शिविर विसर्जन आश्रम, नौलखा, इन्दौर में आयोजित किया गया है। योग्य भाई-बहन निम्न पते पर अपनी योग्यताओं तथा आवश्यकता का विवरण आवेदन-पत्र के रूप में भेजें। मासिक वेतन, योग्यता और आवश्यकतानुसार सौ से डेढ़ सौ रु० तक रहेगा और विशेष अवस्था में थोड़ा अधिक भी दिया जा सकेगा। निम्न पते पर १० जनवरी '६१ तक प्राप्त आवेदन-पत्रों पर विचार कर अंतिम चुनाव के लिए शिविर का निमंत्रण भेजा जायगा। शिविर के निमित्त प्रवास-खर्च उम्मीदवार को स्वयं करना होगा। आवेदन-पत्र भेजने का पता : श्री मंत्री, विसर्जन आश्रम संस्था, नौलखा, इन्दौर (म०प्र०)।

अ. भा. सर्व सेवा संघ का छहमाही अधिवेशन

अ० भा० सर्व सेवा संघ का छहमाही अधिवेशन, जो सेवाग्राम में ता० १७,१८ और १९ जनवरी को होने वाला था, वह अब संभवतः फरवरी के अन्तिम सप्ताह में होगा।

पंजाब भूदान-यज्ञ बोर्ड

चंडीगढ़ में ता० २४ दिसम्बर को पंजाब भूदान-यज्ञ बोर्ड की बैठक हुई। बोर्ड के प्रधान लाला अचिंतराम के अकस्मात देहावसान पर सभी उपस्थित सदस्यों ने खड़े होकर दिवंगत आत्मा के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की। उपस्थित सदस्यों के अनुरोध पर डा० गोपीचंद भार्गव ने बोर्ड का प्रधान बनना स्वीकार किया।

श्री सिद्धराज ढड्ढा की विदेश-यात्रा

विश्वशांति-सेना परिषद्- ब्रुमाना (बेरुत-लेबनान) में भारत से सर्वश्री जी० रामचन्द्रन्, नारायण देसाई, एन० जगन्नाथन्, देवी प्रसाद और सिद्धराज ढड्ढा भाग लेने गये हैं। श्री सिद्धराजजी परिषद में भाग लेने के बाद सुदान, मिस्र, युगांडा, टांगानिका आदि देशों में होते हुए फरवरी '६२ के प्रथम सप्ताह में भारत आ जायेंगे।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९९३० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९२५० एक अंक : १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १२ जनवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक १५

विश्व शांति-सेना परिषद् से

शांति का स्रोत : ब्रूमाना

सिद्धराज ढड्ढा

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर शांति-सेना का विचार दिसंबर, १९६० में गांधीग्राम (मदुरा) में "युद्ध विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय" की परिषद् का उद्घाटन करते हुए श्री जयप्रकाशजी ने गंभीरता के साथ रखा था। फिर परिषद् में, जिसमें ३० देशों के सौ से ऊपर प्रतिनिधि शामिल थे, इस प्रश्न पर चर्चा हुई और सबने महसूस किया कि अगर अहिंसा की शक्तियों को दुनिया में कारगर होना है तो अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर शान्ति-सेना का कायम होना जरूरी है। परिषद् ने अपने निवेदन में इस बात को मान्य किया और "डब्ल्यू० आर० आई०" की कार्य समिति को आदेश दिया कि वह "विश्व शांति-सेना" की स्थापना के प्रश्न पर विचार करने के लिए जल्दी-से-जल्दी एक अंतर्राष्ट्रीय परिषद् का आयोजन करे।

ब्रूमाना में अब इस सप्ताह जो परिषद् हो रही है, उसकी यह पृष्ठभूमि है। भूमध्य सागर के पूर्वी तट पर यानी एशिया के पश्चिमी छोर पर लेबनान करीब सवा सौ मील लंबा और तीस पैंतीस मील चौड़ा एक छोटा-सा देश है, मुश्किल से हमारे यहाँ का एक जिला। आबादी भी कुल देश की १५ लाख है, जो दिल्ली शहर से भी कम है। बेरूत उसकी राजधानी तथा सबसे बड़ा शहर है। बेरूत की आबादी करीब ४ लाख है। इसका महत्व लेबनान की राजधानी होने का उतना नहीं है, जितना यूरोप और एशिया के बीच का द्वार होने का। पूर्व से यूरोप अमेरिका आने वाली हवाई सर्विसें करीब-करीब सब यहाँ होकर जाती हैं।

आज के जागतिक पैमाने के आवागमन के कारण बेरूत एक अन्तर्राष्ट्रीय शहर और हवाई अड्डा ही हो गया है। नीले और हरे भूमध्य-सागर की सफेद फेनिल लहरें इसके तट का अभिषेक करती रहती हैं। दो चार मील पीछे ही एक ऊँची पर्वतमाला समुद्र के समानान्तर दूर तक चली गयी है, जिससे बेरूत की सुन्दरता काफी बढ़ गयी है। रात को बेरूत शहर से पीछे पहाड़ियों पर बसी हुई छोटी-छोटी बस्तियों की दीपमाला और उसी तरह पहाड़ियों पर से नीचे जगमगाता हुआ बेरूत शहर, दोनों ही दृश्य आकर्षक हैं। यहाँ का मौसम भी बहुत अच्छा रहता है। पृथ्वी के उत्तरी भाग में होने से ठंडा तो है ही, पर समुद्र-किनारे होने से यह ठंड कुछ सौम्य हो गयी है। ता० २७ दिसम्बर को सवेरे साढ़े सात बजे जब हमारा हवाई जहाज बेरूत पर उतरा, तो तापमान ६० डिग्री फारेनहाइट था। दिल्ली और उत्तर भारत की सीली और कँपा देने वाली सरदी के बाद बेरूत का मौसम बड़ा अच्छा लगा।

• • •

अमेरिका और रूस की प्रतिद्वन्द्विता ने ऐसा रूप धारण कर लिया है कि उसकी छाया से कोई चीज बच नहीं पाती है। शांति के नाम पर इस समय जो चंद संस्थाएँ काम कर रही हैं वे भी इस प्रतिद्वन्द्विता से प्रभावित हैं। विश्व शांति सेना का तो एक मुख्य काम ही दुनिया के जो संघर्ष और तनाव का वातावरण है उसे दूर करने का है, इसलिए यह जरूरी था कि उसके जन्म के समय जहाँ तक हो सके यह सावधानी रखी जाय कि उसके बारे में ऐसी शंका होने का मौका न आवे। इसलिए यह सोचा था कि इस परिषद् के लिए जगह भी ऐसी चुनी जाय, जो रूस-अमेरिकी तनाव के प्रभाव में न हो या कम-से-कम हो। लेबनान एक ऐसा देश माना जा सकता है। इसके अलावा पूर्व और पश्चिम से आने वालों के लिए यह एक मध्य का स्थान भी है—हालाँकि वैसे तो इस गोल दुनिया में सारे स्थान ही 'केन्द्र' और 'मध्य' माने जा सकते हैं। वैसे परिषद् जहाँ मिल रही है वह स्थान बेरूत से करीब १२ मील दूर, ऊपर पहाड़ पर ब्रूमाना नाम की एक बस्ती है। सामने नीचे की ओर भूमध्य सागर का विशाल जल-अंचल और उसके तट पर बसा हुआ बेरूत का शहर, तथा पीछे की तरफ ऊँची-ऊँची बरफ से ढँकी हुई पहाड़ियाँ—यह स्थान एक तरह से ऐसे काम के लिए अत्यंत उपयुक्त है। ब्रूमाना में क्वेकर संस्था की ओर से एक हाईस्कूल चलता है, उसी में प्रतिनिधियों के निवास, भोजन आदि की और सभा की व्यवस्था है।

परिषद् का स्थान तनाव के क्षेत्र से तथा उसके प्रभाव से दूर हो यह एक सावधानी तो बरती ही गयी थी, इसके अलावा यह कोशिश भी पूरी की गयी थी कि इस परिषद् में सभी क्षेत्रों से—खास करके 'पूर्व' और 'पश्चिम', दोनों गुटों के देशों से—शांति और अहिंसा की निष्ठा रखने वाले लोग आयें। पर इस कोशिश के बावजूद भी इस परिषद् में कम्युनिस्ट देशों के लोग उपस्थित नहीं हैं, यह खेद की बात है। परिषद् में इस समय इंग्लैण्ड, फ्रान्स, जर्मनी, स्विट्जरलैण्ड, अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, घाना, भारत, टांगानिका, लेबनान, इटली आदि १५-२० मुल्कों के करीब ६० प्रतिनिधि आये हैं।

• • •

दुनिया के भिन्न-भिन्न कोनों से आकर चंद लोग यहाँ मिल रहे हैं, इसमें कौनसी बड़ी बात है! आजकल अन्तर्राष्ट्रीय परिषदें एक साधारण बात हो गयी है। मामूली-मामूली कामों के लिए आये दिन बीसियों ऐसी परिषदें होती रहती हैं। उन परिषदों, सभाओं और सम्मेलनों का प्रचार भी खूब होता है, उनकी शान-शौकत भी और ही होती है! अखबारों में बड़े-बड़े अक्षरों में उसके समाचार छपते रहते हैं और पढ़ने वालों पर उनके महत्व का असर होता है। बेरूत की इस कान्फरेन्स के बारे में ऐसी कोई चीज नहीं कही जा सकती। यहाँ न वह शान शौकत है, न 'ग्लैमर' है, न धूम धड़ाका है, न अखबारों में चर्चा है। पर यहाँ एक बात है जो शायद और जगह देखने में न आती हो, यहाँ इकट्ठे होने वाले अधिकांश लोगों में, और उनमें नौजवानों की संख्या काफी है, यह एहसास है कि वे एक ऐसी आकांक्षा लेकर आये हैं, जो आज की प्रचलित दुनिया के लिए अनोखी है।

"आणविक अस्त्र-शस्त्रों के कारण दुनिया पर सर्वनाश की घटा छायी हुई है। आज तक लोगों के सामने अपनी समस्याओं के हल का आखिरी आधार हिंसा ही रहा है। सत्य और न्याय की 'रक्षा' भी आखिरकार हिंसा से की जा सकती है, यह मान्यता रही है। पर अब ऐसा करना मानव जाति के लिए आत्म-हत्या ही होगी! क्या अहिंसा के पास कोई विकल्प है? क्या अहिंसा की शक्ति समस्याओं के हल का कोई तरीका पेश कर सकती है? यह हो, तो हमें वह जल्दी से-जल्दी दुनिया में करके दिखाना चाहिये। समय हमारे हाथ से निकला जा रहा है!"

एक के बाद एक कई वक्ताओं ने, खासकर नौजवानों ने, ऐसे उद्‌गार इस कान्फरेन्स में निकाले। स्पष्ट है कि एक ऐसा

विश्व शांति-सेना बनाने का निर्णय

अफ्रिका में शांति-विद्यालय प्रारम्भ होगा

विश्व शांति-सेना के गठन के लिए ब्रूमाना (बेरूत) लेबनान में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर २८ दिसम्बर '६१ से १ जनवरी '६२ तक जो सम्मेलन हुआ है, उसने विश्व शांति-सेना बनाने का निर्णय लिया है। विश्व-शांति-सेना के संचालन के लिए एक विश्व शांति-सेना परिषद् की स्थापना की गयी। इसके २५ सदस्य हैं। भारत की ओर से सर्वश्री जयप्रकाश नारायणजी, जी० रामचन्द्रन्, आशादेवी और सिद्धराज ढड्ढा, ये चार सदस्य लिये गये हैं। विश्व-शांति-सेना परिषद् की ओर से अफ्रिका में एक शांति-विद्यालय चलाने का तय किया गया।

समूह यहाँ इकट्ठा हुआ है जो संख्या में, और आज प्रभाव में भी, चाहे छोटा हो, पर जो एक नये तारे की खोज में है। और इस तलाश में बार-बार जिस श्रद्धा, आदर और स्वीकृति की भावना से गांधीजी का नाम लिया जाता रहा वह हमारे लिए न सिर्फ गौरव और उत्साह की बात है, बल्कि वह हमें हमारी विशेष जिम्मेदारी का भान भी कराती है। कान्फरेन्स का सारा वातावरण सादा और जिसे अंग्रेजी में "बिजनेस-लाइक" कहते हैं ऐसा था। कोई विशेष सजावट, मंच आदि नहीं थे, पर एक नौजवान महिला ने आकर खिड़की के सहारे एक छोटा सा चित्र विनोबा का रख दिया और कहा—"इससे हमें इस परिषद् में उनकी उपस्थिति का भान रहेगा।" परिषद् में विनोबा की उपस्थिति का भान लोगों को रहा हो या न रहा हो, पर यह छोटी-सी घटना इस बात का संकेत थी कि दुनिया में नयी राह की तलाश करने वालों की नजर किधर लगी है। इसी सिलसिले में यह कहना भी प्रासंगिक होगा कि जयप्रकाशजी का अभाव भी लोगों को बहुत खटका। विश्वशांति सेना के विचार का पिछले साल गांधीग्राम में उन्होंने ही सूत्रपात किया था, इसलिए यह स्वाभाविक था।

• • •

यह सचमुच आश्चर्यजनक ही था कि आज जिन विचारों पर विनोबा बार-बार जोर देते हैं, वे एक या दूसरे रूप में परिषद् की अब तक की चर्चाओं में आते रहे हैं। लोकशक्ति की कल्पना धर्म और राजनीति सम्बन्धी विनोबा का विचार कि इन चीजों के दिन अब समाप्त हो गये हैं, अहिंसक क्रांति की आवश्यकता आदि का बार-बार उच्चारण होता रहा। प्रतिकार के अहिंसक विकल्प की तलाश के अलावा जो दूसरी बात लोगों के विचार में मुख्य नजर आती थी, वह लोकशक्ति को जाग्रत करने की बात थी। लोगों ने अपनी समस्याओं के हल और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कई प्रकार की सामाजिक और राजनैतिक शक्तियाँ खड़ी की हैं—शक्ति के भिन्न-भिन्न केन्द्रों, "पावर सेन्टर्स" का निर्माण किया है—पर यही केन्द्र अब इतने ताकतवर हो गये हैं कि दुनिया भर में आम लोग इनके पाश में जकड़ गये हैं, और इन केन्द्रों पर चन्द लोगों ने काबू कर लिया है। नतीजा यह हुआ है कि मानव आज सर्वत्र पराधीन है, अपने ही खड़े किये हुए संगठनों और शक्ति-केन्द्रों का वह गुलाम हो गया है, और अतः मानव को आजाद करना आज के क्रान्तिकारी का मुख्य काम है। यह क्रांति लोकशक्ति से और अहिंसा के जरिये ही हो सकती है, यह भान और यह श्रद्धा दुनिया के कोने-कोने से आये हुए लोगों ने बार बार प्रकट की।

• • •

इन बातों को ध्यान में रखें तो बेरुत-परिषद् का ऐतिहासिक स्थान हमारी समझ में आयेगा। गांधी और विनोबा के विचारों के बीज के अंकुरित होने का समय सन्निकट आया है ऐसा लगता है। परिषद् में आये हुए खास लोगों में से कई थे, जो गांधीजी की मृत्यु के बाद सन् १९४९ में भारत में हुई विश्व शांति परिषद् में यहाँ गये थे। उन लोगों ने एक से अधिक बार इस बात पर खेद प्रकट किया कि उसी समय अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करने का कोई औजार खड़ा नहीं किया गया। आज बारह वर्ष बाद शायद इस आकांक्षा को मूर्त रूप मिलने का समय आया है। दुनिया के कोने कोने में विचारों के जो ये छोटे-छोटे दीप प्रकट हो रहे हैं, वे अवश्य आगे का मार्ग प्रकाशित करेंगे, पर ब्रूमाना जैसी परिषद् का इतिहास में कोई स्थान होगा या नहीं यह इस बात पर निर्भर करता है कि उसमें शरीक होने वाले लोग संगठित रूप से कुछ कर पाते हैं या नहीं, या इस ऐतिहासिक आवश्यकता की दृष्टि से छोटे साबित होते हैं।

• • •

परिषद् में भाग लेने वालों में ए० जे० मस्टी (अमेरिका), आर्के-नियर (फ्रान्स), लांजा देलवास्तो (फ्रान्स), माइकेल स्कॉट (इंग्लैंड), डा० रदूमर्ट नेल्सन (अमेरिका), बायार्ड रस्टिन (अमेरिका), माइकेल रेण्डल (इंग्लैंड), बिल मट्टर्लैंड (घाना), आल्फ्रेड हिस्लेो (अमेरिका) आदि अहिंसक प्रतिकार के प्रमुख सूत्रधार शामिल हैं। इनके अलावा बीसों निष्ठावान् और शांति के क्षेत्र में ठोस काम करने वाले नौजवान तथा वृद्ध भाई-बहनें हैं, जो हजारों मील दूर से अहिंसा और प्रेम के मार्ग की तलाश में आये हैं। बर्टेंड रसल, जयप्रकाश आदि ऐसे कुछ लोग हैं, जिनका अभाव स्पष्ट ही नजर आता था। हिन्दुस्तान की ओर से सात लोगों के नाम थे, पर आशादेवी और जयप्रकाशजी नहीं पहुँच पाये। शेष पाँच मौजूद थे—जी० रामचन्द्रन्, एस० जगन्नाथन्, देवी प्रसाद, नारायण देसाई और सिद्धराज। देवीभाई तो पिछले सात-आठ महीनों से यूरोप में ही थे, शेष हम चार हिन्दुस्तान से सीधे यहाँ पहुँचे थे। देवी भाई ने पिछले महीनों में यूरोप के शांतिवादियों से तथा अन्य लोगों से अच्छा संपर्क किया है और शायद अब यह बात गुप्त नहीं है कि जल्दी ही उन पर "युद्ध-विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय" ("डब्ल्यू० आर० आई०") संस्था के मन्त्री-पद की जिम्मेदारी आने वाली है। देवी भाई के इस नये काम में पड़ने के कारण पश्चिम के और हिन्दुस्तान के गांधी-विचार के अनुयायियों के काम में और अधिक सामंजस्य आयेगा, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

ब्रूमाना की इस परिषद् की योजना काफी दिन पहले से बन गयी थी। हिन्दुस्तान से आने वालों के मन में उत्साह भी था। पर यहाँ आने के चंद दिन पहले ही गोआ की जो घटना हुई, उसके कारण कम-से-कम मेरे मन पर तो काफी बोझ था। जयप्रकाशजी ने इस प्रसंग पर जो वक्तव्य दिया है, उसमें उन्होंने हम लोगों की निष्क्रियता पर जो वेदना प्रगट की है वह सही ही है। हम ब्रूमाना में क्या मुँह लेकर आयेंगे—जब गोआ की आजादी शांतिमय साधनों से हासिल नहीं कर सके—यह विचार निरन्तर खा रहा था।

अहिंसा में निष्ठा रखने वालों की कमजोरी तो गोआ के मामले से स्पष्ट सामने आयी ही, पर इसका एक दूसरा बहुत महत्व का पहलू है जिसका जिक्र परिषद् के पहले ही प्रारंभिक भाषण में बायार्ड रस्टिन ने बहुत दर्दभरे शब्दों में किया। बायार्ड ने कहा, दुनिया के ऐसे लोग जिनका हिंसा पर से विश्वास उठ गया है, लेकिन अहिंसा के मार्ग की क्षमता और उसके प्रकार जिनके सामने स्पष्ट नहीं हुए हैं, नेहरूजी की ओर इस आशा से देखते थे कि एक ऐसा व्यक्ति है जिसके हाथ में फौज की सत्ता होते हुए भी वह उसका इस्तेमाल करने से इन्कार कर रहा है, यह इस मामले में रास्ता दिखा कर दुनिया को बड़े संकट से बचायगा। पर गोआ की घटना ने दुनिया की इस आशा को चकनाचूर कर दिया है। अब शायद यह राह दिखाने का काम हिन्दुस्तान नहीं कर सकेगा। बायार्ड ने यह भी कहा कि नेहरूजी के शब्दों से हिम्मत पाकर दुनिया के दूसरे पीड़ित राष्ट्र और लोग हिंसा का सहारा लेने से रुके हुए थे, अब उनकी हिम्मत और धीरज कायम नहीं रह सकेगी, बल्कि उन्हें हिंसा के प्रयोग के लिए एक सबल बहाना मिल जायगा। परिषद् की चर्चाओं में कई बार गोआ का जिक्र आया, जो अनिवार्य था।

परिषद् का काम अभी शुरू ही हुआ है। आज दो दिन हुए हैं। अभी तीन दिन तक परिषद् और चलेगी, पर ऐसा लगता है कि ब्रूमाना को विश्व-शांति-सेना का जन्म-स्थान होने का सौभाग्य अवश्य मिलेगा। और यह एक तरह का शुभ संयोग ही है। इस स्थान का पुराना लेबनानी नाम "आईन-ए-सलाम" है, जिसका अर्थ है शांति का चश्मा यानी स्रोत! आशा है ब्रूमाना हिंसा से पीड़ित दुनिया के लिए सचमुच शांति का स्रोत साबित होगा।

ब्रूमाना (लेबनान)
२९-१२-६१

गोआ की कार्रवाई : कुछ प्रतिक्रियाएँ ...

काकासाहब कालेलकर का मत

भारत के ही एक विभाग गोआ को मुक्त करने के लिए जो कदम श्री जवाहरलालजी ने हिम्मतपूर्वक उठाया उसकी सराहना स्वतंत्रता को चाहने वाली और विश्वशांति के लिए कोशिश करने वाली सारी दुनिया करेगी। लोग पूछते हैं कि क्या यह कदम गांधीजी की अहिंसा की नीति के साथ सुसंगत है?

मुझे तनिक भी शंका नहीं है कि गांधीजी की आत्मा पं० जवाहरलालजी ने संयम के साथ और धैर्य के साथ आज तक जो राह देखी और समझौते के जितने भी प्रयत्न हो सकते हैं किये उन्हें धन्यवाद ही देगी और जब दूसरा एक भी उपाय बाकी न रहा तब गोआ की मुक्ति के लिए जवाहरलालजी ने जो शस्त्र-बल का सहारा लिया उसके लिए भी गांधीजी की आत्मा उनको आशीर्वाद ही देगी। समझौते के साम प्रयोग के ये मानी हरगिज नहीं कि हम अपने को असहाय, लाचार और निर्वीर्य बना दें और आत्महत्या करें। अहिंसा-धर्म आत्म-बलिदान में मानता है, न कि आत्महत्या में।

जो लोग कहते हैं कि नेहरूजी की कसौटी हो चुकी और उसमें वे खरे नहीं उतरे, वे गलती करते हैं। अगर किसीका भण्डाफोड़ हुआ है तो वह पश्चिमी राष्ट्रों का। उनकी न्याय-बुद्धि, स्वातन्त्र्य प्रीति कितनी छिछरी है और विश्व-शांति के लिए कोशिशें करने की जवाबदारी का भान उनमें कितना कम है इसका प्रदर्शन हो चुका। हम आशा करें कि अब भी इस सारे किस्से से वे सबक सीखेंगे और हृदय को शुद्ध कर अपनी नीति को सुधारेंगे।

['मंगल प्रभात' से]

'जीवन-साहित्य' का मत

"'सच यह है कि आज के शासक बात अहिंसा की करते हैं, जब कि अपने छोटे-बड़े मसलों का हल दूसरे ही प्रकार से करते हैं। जरा-जरा-सी बात पर गोलियाँ चलती हैं और तनिक-सा मौका आने पर फौजों का इस्तेमाल होता है।

प्रश्न यह है कि क्या भारत सरकार के इस कदम ने फौजी ताकत के जोर पर अपनी समस्याओं को सुलझाने का रास्ता नहीं खोल दिया? कश्मीर और भारत-चीन की सरहद के मसले क्या अब शांति से हल होंगे? सम्भव है, वैसा चमत्कार हो जाय, लेकिन इसमें शक नहीं कि अब देश में कुछ दूसरी ही प्रकार की हवा तैयार हो रही है। उसका आगे चल कर क्या परिणाम होगा, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती है।'"

यदि भारत को विनाश के मार्ग से बचना है तो गांधीजी की अहिंसात्मक परम्पराओं का निष्ठापूर्वक अनुसरण ही एक एकमात्र उपाय है। हिंसा से थोड़ी-बहुत सफलता मिल सकती है, लेकिन उसका फल कभी टिकाऊ नहीं होगा। [जनवरी '६२]

श्रद्धा स्वयं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

वीज्ञान के साथ आत्मज्ञान की आवश्यकता

बहुतों को लगता है की आज वीज्ञान खूब बढ़ गया है, ईसलीअे अब कोअी आवश्यकता नहीं है। लेकीन यह भ्रान्त धारणा है। जीतनी ही वीज्ञान की शक्ती बढ़ेगी, अुतनी ही आत्मज्ञान की आवश्यकता बढ़ती जायगी। तीव्र साधन हाथ में आने के बाद अकल टीकाने रखना और भी अधीक आवश्यक हो जाता है, जो आत्मज्ञान से ही सधता है। पुराने जमाने में चाकू ही अेक हथीयार था, अुसका अुपयोग करने पर मामूली-सा घाव होता था। अुसके बाद तलवार और पीस्तौल जैसे अुत्तरोत्तर तीव्र साधन (हथीयार) हाथ आने लगे।

आज अमरीका में वीज्ञान काफी बढ़ गया है। लेकीन वहां आत्मज्ञान की कमी है। ईसी कारण वहां मामूली बातों पर झगड़े होते हैं और आये दीन आत्म-हत्याओं के समाचार मीलते हैं।

ईसके वीपरीत हमारे देश में वीज्ञान की कमी है, पर आत्मज्ञान पर्याप्त है। ईसलीअे यहां वीज्ञान कीतना ही क्यों न बढ़े, कोअी चींता नहीं है। मानव के अेक हाथ में आत्मज्ञान रूपी और दूसरे हाथ में वीज्ञान, अैसी स्थीती होनी चाहीअे।

१८-५-'५८ —वीनोबा

मावड़े (द. सातारा)

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

विश्व-शान्ति-सेना

आजादी के लिए भारत में जिन दिनों अहिंसात्मक आन्दोलन चल रहा था, उन दिनों देश की एकता के लिए परम घातक साम्प्रदायिक दंगों को रोकने के लिए गांधीजी ने सबसे पहले शान्ति-सेना की कल्पना की थी। उनका कहना था कि दंगों का अहिंसात्मक तरीके से मुकाबला करने के लिए सबसे व्यावहारिक चीज शान्ति-सेना ही हो सकती है। यह शान्ति सेना कैसी होनी चाहिए, शान्ति सैनिक में कौन-कौनसे गुण होने चाहिए, उसे किस प्रकार की शिक्षा मिलनी चाहिए, अशांति के मौकों पर उसे किस तरह परिस्थिति का सामना करना चाहिए, उसकी पोशाक कैसी होनी चाहिए, इन तमाम बातों पर बापू ने गम्भीरता से सोच कर अपने विचार प्रकट किये थे। पर स्वतन्त्रता के आंदोलन में फँसे रहने के कारण शांति सेना के अपने विचारों को वे कार्य-रूप में परिणत नहीं कर सके।

बापू के जाने के बाद आज से दस वर्ष पहले तेलंगाना के 'अशान्त' क्षेत्र में स्थिति का अध्ययन करने के लिए विनोबा जब गये तो सहज ही भूदान-आंदोलन का जन्म हो गया। विनोबा की पदयात्रा के साथ-साथ देश के कोने कोने में सत्य, प्रेम और करुणा की यह धारा प्रवाहित होने लगी। कोई चार साल पहले जब विनोबा केरल में घूम रहे थे तो उन्हें यह लगा कि अशांति के शमन के लिए शांति-सेना की स्थापना आवश्यक है। ८ शान्ति-सेवकों से उन्होंने २३ अगस्त १९५७ को इसका श्रीगणेश कर दिया। आज दो हजार से अधिक शांति-सैनिक भारत के विभिन्न अंचलों में शांति-सेना का कार्य कर रहे हैं।

शांति-सेना की स्थापना के बाद से विनोबा बड़ी गम्भीरता से इस समस्या पर विचार करते रहते हैं। गांधीजी ने शांति-सेना की बाकायदा स्थापना नहीं की, फिर भी विनोबा ऐसा मानते हैं और उनका ऐसा मानना ठीक भी है कि गांधीजी ने शांति-सेना स्थापित कर दी, जिसके पहले सेनापति भी वही थे और पहले सैनिक भी। विनोबा कहते हैं :

"शांति-सेना बन चुकी। उसका प्रथम सेनापति बन चुका। वह अपना काम करके चला गया। अब हमें उसके पीछे जाना है। गांधीजी शांति-सेना के प्रथम सेनापति थे और प्रथम सैनिक भी थे। सेनापति के नाते उन्होंने आदेश दिये और सैनिक के नाते उनका पालन करके वे चले गये।"

वस्तुतः गांधीजी ने अपने जीवन से और अपने बलिदान से शांति-सैनिक का कार्य और स्वरूप स्पष्ट कर दिया।

भारत में शांति-सेना का काम अभी शैशवावस्था में ही है, पर उसने विश्व के वैचारिक क्षेत्र में अपना एक, विशिष्ट स्थान बना लिया है। आणविक शस्त्रास्त्रों से बुरी भाँति त्रस्त विश्व में शांति-सेना की कल्पना ने लोगों को इस दिशा में सोचने का मौका दिया है कि हिंसा की सर्वनाशी लपटों से विश्व को बचाने की क्षमता यदि किसी में है तो वह अहिंसा में ही है और उसका एकमात्र साधन हो सकती है—शांति-सेना। दिसम्बर १९६० में गांधी-ग्राम में युद्ध-विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् में श्री जयप्रकाश नारायण ने इसी भावना से प्रेरित होकर एक विश्व-शांति-सेना खड़ी करने की बात सुझायी।

अभी हाल में ईसा-पुण्यतिथि के अवसर पर लेबनान के बेरूत के पास ब्रूमाना में इसी कल्पना को साकार करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय परिषद् हुई, जिसमें इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, स्विटजरलैण्ड, अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, घाना, भारत, टांगानिका, इटली आदि के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। इस बेरूत-परिषद् में विश्व शांति-सेना के संगठन पर व्यापक रूप से चर्चा हुई और परिषद् ने विश्व शांति-सेना बनाने का निर्णय किया। इसके लिए २५ सदस्यों की एक शांति-सेना परिषद् भी कायम की है, जिसमें चार सदस्य भारत के भी हैं। यह महत्त्वपूर्ण निर्णय निश्चय ही विश्व को संकट से मुक्त करने में सहायक सिद्ध होगा।

आज की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति अत्यन्त डाँवाडोल है। जैसा कि विनोबा कहते हैं—हिंसा पर से लोगों का विश्वास उठ गया है, पर मुश्किल यही है कि अहिंसा पर अभी तक लोगों का विश्वास पूरी तरह जम नहीं पाया है। इस बात को सभी स्वीकार करते हैं कि हिंसा के रास्ते से विश्व की समस्याओं का स्थायी निराकरण सम्भव नहीं है। आणविक शस्त्रास्त्रों की घुड़दौड़ जनता को आतंकित तो करती और कर सकती है, पर उसमें इस बात की कतई क्षमता नहीं कि वह एक भी त्रस्त अथवा आतंकित व्यक्ति को ढाढ़स बंधा सके। हिंसा की सबसे बड़ी विफलता यही है कि वह स्थायी शांति और सुख का साधन नहीं बन सकती। लोगों को सुख और शांति प्रदान करने की यह क्षमता यदि किसी में है तो वह अहिंसा में ही है।

बेरूत-परिषद् के लिए जयप्रकाश बाबू ने जो उद्घाटन-भाषण तैयार किया था, (विशेष कारण से वे वहाँ पहुँच नहीं सके) उसमें उन्होंने ठीक ही कहा था कि 'गोआ सम्बन्धी भारतीय कार्रवाई को लेकर राष्ट्रसंघ में जो चर्चा हुई, उससे यह बात एकदम साफ हो गयी कि शस्त्रों के भारी भार से दबे हुए देश भी इस बात पर जोर दे रहे हैं कि अन्तर्राष्ट्रीय झगड़ों का निपटारा शांतिपूर्ण तरीकों से ही होना चाहिए। फिर भी यह कैसी तमाशे की बात है कि विश्व शांति के लिए उत्तरदायी एकमात्र विश्वसंस्था—संयुक्त राष्ट्रसंघ विश्वशांति बनाये रखने के लिए हथियार-बन्द फौजें भेज रही है। किसी को भी इसमें कोई असंगति नहीं जान पड़ती! लोगों या सरकारों के मन में यह विचार ही नहीं उठता कि अहिंसात्मक तरीके से अहिंसात्मक सेना के द्वारा विश्व-शांति स्थापित की जा सकती है!'

वस्तुतः विश्वशांति स्थापित करने का एक ही तरीका हो सकता है, और वह है अहिंसात्मक तरीका। हिंसा की शक्ति पर लोग शताब्दियों से विश्वास करते आ रहे हैं, पर उसकी विफलता भी आँखों के सामने स्पष्ट है। अहिंसा की शक्ति धीरे धीरे ही विकसित होती है, पर उसका प्रभाव स्थायी होता है। बेरूत-परिषद् अहिंसा की शक्ति के विकास के लिए एक स्थायी आधार खड़ा करेगी, ऐसा हमारा विश्वास है। पीड़ित और संतप्त विश्व के लिए वह आशा और प्रेरणा का काम देगी। मशाल छोटी ही रहे, चिन्ता नहीं, एक दिन वह सारे विश्व को आलोकित कर देगी। अहिंसा के सिपाही भले ही मुट्ठी भर रहें, वे अपनी पूरी शक्ति से जुटेंगे तो विश्व-शान्ति में अवश्य ही उनका योगदान अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण सिद्ध होकर रहेगा।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

इस बार की सर्दी

बरसात में हर साल बाढ़ का प्रकोप हुआ करता है और काफी नुकसान होता है। गर्मियों में भी हमारे प्रदेश में जोरदार लू चला करती है और उससे लोगों को परेशानी हो जाती है। मगर जाड़ों में कोई विशेष तकलीफ नहीं होती थी और लोग डट कर अपना काम करते थे। लेकिन इस बार दिसम्बर के दूसरे पखवारे में ऐसी भयानक और जबरदस्त सर्दी पड़ी कि आफत ही आ गयी। सरकारी क्षेत्रों का कहना है कि उत्तर प्रदेश और बिहार में छह सौ से ऊपर आदमी इस सर्दी से ठिठुर कर चल बसे। जानवरों की तादाद तो हजारों तक पहुँचेगी। पेड़ों पर घोंसलों में चिड़ियाँ तो इतनी खत्म हुई हैं कि कुछ ठिकाना नहीं। सर्दी क्या आयी, बरबादी आयी।

कहा गया है कि बलोचिस्तान की तरफ से एक शीतलहरी आयी, जिसके कारण यह गजब हुआ। उत्तर प्रदेश के उत्तरी हिस्से में जहाँ जनवरी के अन्त या फरवरी में बरफ पड़ती थी, वहाँ इस बार दिसम्बर में ही पड़ गयी। प्रदेश के दक्षिणी हिस्से में मामूली सर्दी होती थी। मगर इस बार कानपुर में तापमान जीरो डिग्री सेंटिग्रेड हो गया और इलाहाबाद में तो जीरो के

[शेष पृष्ठ ११ पर]

सामूहिक पदयात्राओं की फलश्रुति

आज भी भूदान मिल सकता है

ठाकुरदास बंग

भूदान-यज्ञ को १० साल होने पर और देश भर में भूदान-प्राप्ति के बारे में कार्यकर्ताओं के मन में झिझक होने पर भी कि क्या भूदान मिल सकता है, विनोबाजी को असम में धड़ाधड़ ग्रामदान मिल रहे हैं। लेकिन विनोबाजी की बात दूसरी है, ऐसा कार्यकर्ता मान लेते हैं। बिहार में करीब ६००० एकड़ जमीन भूदान में १९६१ में मिली। लेकिन बिहार की परिस्थितियाँ असाधारण हैं। जयप्रकाशजी सरीखे नेता, गत वर्ष "दान दो इकट्ठा, बीघे में कट्ठा", यह नारा देकर स्वयं बाबा का शुरू किया हुआ बिहार का आंदोलन, सारे भारत से वहाँ पहुँची हुई मदद—यह सारा संयोग अन्य स्थानों में कहाँ?

अतः उंगतुल के सर्वोदय-सम्मेलन में भूमि-प्राप्ति का कार्यक्रम आगामी वर्ष के लिए मान्य किया जाने पर भी असम और बिहार को छोड़ कर भूमि-प्राप्ति का प्रयत्न कहीं भी विशेष तौर पर किया नहीं गया। धड़गाँव के महाराष्ट्र सर्वोदय-सम्मेलन में गत दिसंबर में भूमि-प्राप्ति का *कार्यक्रम पुरस्कृत किया गया था। तदनुसार श्री जयप्रकाश नारायण* की यात्रा के समय रत्नागिरी एवं वर्धा जिले में भूमि-प्राप्ति के प्रयत्न हुए। २ ग्रामदान एवं ३६० का एकड़ भूदान इन प्रयत्नों के फलस्वरूप मिला। फिर भी जयप्रकाशजी के आगमन के कारण यह सब हुआ, ऐसा इसका अर्थ लगाया जाता रहा। साथियों का आत्म-विश्वास जाग्रत नहीं हुआ।

अतः छोटे-छोटे कार्यकर्ता मिल कर सामुदायिक प्रयत्न करें, यह तय किया गया। अन्य कोई तैयार नहीं होते देख कर वर्धा *जिला इस काम के लिए चुना* गया।

वर्धा जिला इस काम के लिए सबसे अनुकूल क्षेत्र नहीं था। वर्धा जिला कोरी पाटी नहीं थी। यहाँ इसके पूर्व ही सब गाँवों में भूदान प्राप्ति का प्रयत्न हो चुका था। जिले के आधे गाँवों में से करीब १३००० एकड़ जमीन मिल चुकी थी। १९५८ से '६० तक स्थानीय कार्यकर्ता जिला छोड़ कर अन्नाणी के काम में मदद देने के लिए बाहर गये हुए थे। अतः भूदान समाप्त हो गया है ऐसी लोगों की धारणा हो गयी थी। चूल्हा ठंडा हो गया था, उसे फिर से गरम करना था।

५ नवंबर को तय किया गया कि दिसंबर में वर्धा जिले के समुद्रपुर ब्लाक के १५० गाँवों में पदयात्राएँ की जायँ। *२१ नवम्बर को जिले के पाँच कार्यकर्ता* इस विभाग में पहुँचे। प्रथम ७ दिन सभी पाँचों मित्र साथ-साथ घूमे, क्योंकि भूदान-प्राप्ति के तन्त्र की 'रिवीजन' करनी थी। नयी परिस्थितियों के सन्दर्भ में उसमें परिवर्तन करने थे। व्याख्यान में कौन-कौनसे मुद्दे हों, किस बात पर जोर दिया जाय, दान-पत्र के बजाय प्राप्ति-पत्र की बात को कैसे रखा जाय, जिससे तत्क्षण वितरण हो जाय आदि मुद्दों के बारे में सह-अध्ययन करना जरूरी था। एक सप्ताह के बाद दो टोलियाँ बनायी गयीं। सप्ताह में एक दिन आवागमन, पाँच दिन गाँवों में प्रत्यक्ष काम करना एवं आखिरी दिन प्राप्त अनुभवों पर परिसंवाद और आगे के सप्ताह के लिए व्यूह-रचना, इस प्रकार की काम की पद्धति तय की गयी। ता० १२ तक इस प्रकार आगामी पदयात्राओं की तैयारी की गयी।

महाराष्ट्र के चुने हुए कार्यकर्ताओं को, स्थानिक कार्यकर्ताओं को, वर्धा सेवाग्राम के विद्यार्थियों को ता० १३ दिसम्बर को *बुलाया गया। १४ को इन सबका* शिविर श्रीमती निर्मला देशपाण्डे के मार्गदर्शन में हुआ। उन्होंने "हर व्यक्ति दान क्यों दें", इस नियम को अच्छी तरह से समझाया। महिलाश्रम, वर्धा की २१ लड़कियाँ, नयी तालीम विद्यालय, सेवाग्राम के ३२ विद्यार्थी एवं ३ अध्यापक, जिले के २५ कार्यकर्ता एवं महाराष्ट्र के अन्य जिलों से १७ कार्यकर्ता आये थे। केवल भूदान की चर्चा न करते हुए जनजीवन से सम्बन्धित खेती, आरोग्य, शिक्षा, ग्रामोद्योग आदि विषयों पर अनुभवी कार्यकर्ताओं के प्रवचन शिविर में हुए। इससे सारे काम को ग्राम स्वराज्य की व्यापक बुनियाद मिली। १५० गाँवों के क्षेत्र के १०–१० गाँवों के १५ विभाग बनाये गये और हर विभाग में ५ से ८ व्यक्तियों की एक टोली भेजी गयी। टोली के साथ इस क्षेत्र में आज तक मिले हुए भूदान एवं वितरण की सूची, गत तीन सप्ताहों के तफसीलवार अनुभव, साहित्य, पत्रक, अणुबम विस्फोट बंद करने के लिए हस्ताक्षर लेने के लिए फार्म आदि सारे कागजात ठीक से दिये गये।

(१) नया भूमि-दान प्राप्त करना एवं पुराना भूदान न्यायालय ने अस्वीकृत किया हो तो दाता को समझा कर ठीक से दान-पत्र भरवा लेना।

(२) सर्वोदय-सहायकों की खोज।

(३) लोकनीति का प्रचार।

(४) मिली हुई जमीन का फौरन वितरण, ऐसा पद-यात्राओं का चतुर्विध हेतु माना गया।

जिनकी जमीन देहातों में थी, पर खुद हिंगणघाट आदि शहरों में रहते थे ऐसे लोगों में काम करने के लिए एक स्वतन्त्र टोली की रचना की गयी। १५ से २२ ता० तक १५ टोलियों ने १३५ गाँवों में पद-यात्रा की।

ता० २३ को सारे पदयात्री गिरड नाम के स्थान पर इकट्ठा हुए। इस पदयात्रा में नयी जमीन एवं पुरानी अस्वीकृत जमीन की फिर से प्राप्ति, ऐसी कुल ५०० एकड़ ३१ डिसीमल जमीन मिली। (इसमें से नया भूदान १५० एकड़ के करीब है।) नयी जमीन में से बहुत-सी *फौरन बाँट दी गयी।* पदयात्रा में जो सर्वोदय की वृत्ति रखने वाले लोग मिले, वे भी ता० २३ में गिरड में एकत्रित हुए थे। सब पदयात्रियों ने अपने-अपने अनुभव सुनाये। १५ में से ९ टोलियों को भूमि-प्राप्ति हुई थी। अतः कार्यकर्ताओं का उत्साह बढ़ा। माँगने से आज भी जमीन मिल सकती है, यह आत्मविश्वास जाग्रत हुआ। हिंगनघाट शहर के कुछ नागरिकों में पहले भूदान देने के बारे में बहुत तर्क चला करता था। दो-चार बार हिंगणघाट के इन बड़े भूमिपतियों के पास बड़े-बड़े कार्यकर्ता १९५७ तक जाकर आये थे। उन्होंने उस समय बार-बार जाने पर भी "भूदान से क्या होगा?" यही कहा था। इस समय उनमें से एक ने भी भूदान-यज्ञ के बारे में शंका प्रकट नहीं की—भले ही जमीन कम दी हो या न दी हो, यही अनुभव नगर के बड़े भूमिवालों के बारे में मुझे इस वर्ष आर्वी नगर में आया था। ऐसा लगता है कि नगर के बड़े भूमिवालों ने भूदान को "फेट अकम्प्ली" मान लिया है। तर्क की भूमिका पर भूदान का विरोध समाप्त हो गया है—भले ही व्यवहार में कोई भूमि के मोह को छोड़ सके या न छोड़ सके। *यह भी पाया गया कि जहाँ हम पद-*यात्राओं की तैयारी नहीं कर पाये थे, वहाँ टोलियों को जमीन नहीं मिली। इसलिए सामूहिक पदयात्राओं की तैयारी ठीक से होनी चाहिए, इस बात का महत्त्व फिर एक बार मन में जँचा। इस ब्लाक में से ७००-८०० एकड़ का भूदान १९५२ से ५६ तक प्राप्त हो चुका था। अतः जहाँ काफी भूदान प्राप्त हो चुका हो वहाँ भी प्रयत्न करने पर भूदान मिल सकता है यह सिद्ध हुआ। विद्यार्थी भाई-बहनों में तो मानों उत्साह समाता ही न था।

जमीन तो मिली ही, लेकिन इन पदयात्राओं के कारण जो जागृति हुई उसका महत्त्व अनन्य है। इसी के फलस्वरूप आगे काम को बढ़ाने के लिए स्थानिक कार्यकर्ताओं से जब समयदान माँगा गया तब कुछ नागरिकों ने समयदान दिया। अब इन नये सर्वोदय सहायकों को केन्द्र बना कर आगे के काम की रचना की जा रही है। गाँव-गाँव लोगों को लगा कि बन्द पड़ा हुआ यज्ञ फिर से चालू किया जा रहा है। कई गाँवों के लोगों ने कहा कि १९५६ में भूदान के कार्यकर्ताओं ने गाँव में सभा ली थी, उसके पाँच साल बाद फिर आप ही गाँव में आकर सभा ले रहे हैं। राजनैतिक कार्यकर्ता, सरकारी कर्मचारी, अन्य समाज-सेवक; किसी ने हमारे गाँव में आकर न सभा ली है, न हमको समझाया है। ऐसी है वर्धा जिले सरीखे जाग्रत जिले की दशा; तब पिछड़े भागों की क्या दशा रही होगी?

इस पदयात्रा में कुछ अमूतानुभव आये। *लहोरी के श्री शिवराम मडावी* ने अपने १५ एकड़ जमीन में से २ एकड़ का भूदान दिया। पीपरी के श्री पण्ढरंग चौधरी ने ३०-४० एकड़ जमीन में से ४ एकड़ जमीन अन्य टोली को २-३ दिन पूर्व दी थी। हम जब अकस्मात् उनसे दूसरे गाँव को जाते हुए खेत में मिले तो उसने एकाएक कहा, "मैं सोच रहा था कि मेरे ४ एकड़ में नये भूमिपुत्र का कैसे चलेगा? अतः इसे मैं ही अधिक जमीन क्यों न दूँ?", मैंने कहा कि आप सोच-विचार कर अगले सप्ताह एक टोली आयेगी तो उसे तुम्हारा निश्चय बताना। सिर पर घास का गट्ठा लेकर आने वाले श्री राजाराम मोगरे नाम के एक भाई ने यह बात सुनी। उसने पूछा कि क्या मैं भी दान दे सकता हूँ? "हाँ" उत्तर मिलने पर उसने घास का गट्ठा जमीन पर डाला और खेत में ही एक एकड़ का दानपत्र भर दिया। करूर नाम के एक गाँव में श्री तुकाराम चाकले ने अपनी ३० एकड़ जमीन में से २ एकड़ जमीन १९५६ में दी थी। उसका बँटवारा बाकी था। मैं जब उस गाँव में गया और बँटवारे के बारे में उससे बात की तो उसने कहा कि अभी सवेरा है, अतः जो पहला भूमिहीन दीखेगा उसी को हम जमीन दे दें। संयोगवश तुलसीदास नाम का एक भाई आया। वह २ एकड़ जमीन लेने के लिए आनाकानी करने लगा। कारण पूछने पर उसने कहा कि २ एकड़ से मेरा पेट कैसे भरेगा? तब तुकारामजी ने कहा कि ठीक है, २ एकड़ का जिस खेत में से टुकड़ा दिया था, वह [illegible] का पूरा ७॥ एकड़ का खेत मैं तुम्हें दिये देता हूँ और फौरन तुकारामजी ने दानपत्र भर दिया। लिखने की आवश्यकता नहीं कि तुलसीराम

भावी कार्यक्रम की दिशा

• दिवाकर

भूदान-आंदोलन का आरम्भ हुए दस वर्ष हो गये। उस समय देश के प्रमुख व्यक्तियों के समक्ष इसका कोई महत्त्व न था, परन्तु जैसे-जैसे विनोबा बढ़ते गये, उसके साथ आन्दोलन की संभावनाएँ भी स्पष्ट होती गयीं। विनोबाजी ने बिहार में आकर विश्वास के साथ कह दिया कि हम इस प्रान्त की भूमिहीनता ही मिटाना चाहते हैं। इस प्रकार जहाँ एक कट्ठा भूमि के लिए परस्पर भाई-भाई में लड़ाइयाँ होती थीं और भूमि जैसी प्यारी चीज कोई देना नहीं चाहता था, वहाँ ऐसा वातावरण बना कि लाखों एकड़ भूमि प्राप्त हुई। देश के अन्य पक्षों को भी लगा कि इसी पद्धति से देश की भूमि-समस्या हल हो सकती है। अतः सभी पक्षों ने इस आंदोलन का समर्थन किया।

इस प्राप्त-भूमि में से लाखों एकड़ भूमि का वितरण लाखों भूमिहीन परिवारों में किया गया। आज अगर हम कुछ प्रत्यक्ष कार्य की रूपरेखा किसी के सामने रखना चाहें तो इन आँकड़ों से लगता है कि हमें कितनी सफलता मिली और लाखों गरीबों को जीवन-यापन का साधन दिया। हमारे केवल गया जिले में ही ६५ हजार दान-पत्रों से सवा लाख भूमि प्राप्त हुई है और सवा ग्यारह हजार परिवारों में ढाई हजार गाँवों के भूमिहीनों में वितरण-कार्य सम्पन्न हुआ। इन आँकड़ों से अंदाजा लगायें कि कितना व्यापक सम्पर्क स्थापित किया गया तथा इस कार्य के द्वारा कितने व्यक्तियों में प्रवेश हुआ।

विनोबा की यात्रा के साथ-साथ और प्राप्त अनुभवों के आधार पर भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्यक्रम हमारे सामने आते गये। भूदान के बाद ग्रामदान, ग्रामस्वराज, शान्ति सेना तक हम पहुँचे। वैचारिक दृष्टि से इस आंदोलन का विकास 'जय जगत्' तक हुआ, परन्तु इन कार्यक्रमों का ऐसा प्रत्यक्ष दर्शन समाज ने अनुभव नहीं किया, जैसा भूदान-आंदोलन से जनमानस बना। सन् '५७ में हमारा संगठन टूट चुका था, शक्ति छिन्न-भिन्न हो गयी थी तो भी कार्यकर्ताओं की शक्ति बची। वह भिन्न भिन्न कार्यक्रमों को पूरा करने में बँट गयी और जैसी संगठित शक्ति भूदान-प्राप्ति में लगायी वैसी शक्ति किसी भी क्षेत्र में नहीं लगी। परिणाम यह हुआ कि जो स्थिति हमने भूदान-आंदोलन से पैदा की थी, वह भी सम्पर्क व सातत्य के अभाव में समाप्त हो गयी और भिन्न भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएँ और गलतफहमियाँ फैलने लगीं। जिन्होंने भूमि दी और जिन भूमिहीनों को भूमि दी गयी, उनसे हमारा सम्पर्क समाप्त हो गया और परस्पर की गलतफहमियों के कारण दोनों में प्रेम और सद्भाव बढ़ा नहीं, बल्कि तनाव व कटुता का वातावरण तैयार होता गया। गाँवों में दाताओं ने भूदान किसानों को जोती हुई भूमि से बेदखल करना शुरू किया। कहीं-कहीं परती भूमि को भूदान-किसान ने उपजाऊ बनायी, उस पर भी गाँव के भूमिवानों ने कब्जा किया। आज यह परिस्थिति दिनों दिन पैदा हो रही है। वितरित भूमि का संरक्षण हम नहीं कर पाये, इसलिए गरीब भूमिहीनों में भी हमारे प्रति अविश्वास पैदा होता जा रहा है। इस प्रकार गरीब और भूमिवान, दोनों की सद्भावना से हम वंचित होते जा रहे हैं। भूदान-यज्ञ का जो मूल उद्देश्य था कि गाँवों में परस्पर प्रेम बढ़ेगा, गरीब और अमीर एक-दूसरे के निकट आयेंगे, भाईचारे की भावना बढ़ेगी, वह सब दर्शन हमें नहीं हो सकता। अब हमें अब सोचना होगा कि पुनः पूर्व-स्थिति पैदा करने के लिए क्या करना है और गाँव के ग्राम स्वराज्य की स्थापना के लिए कहाँ से अपना कार्य शुरू करना है।

मुझे लगता है कि उन गाँवों में जहाँ भूमि का वितरण हुआ है, उन भूदान-किसानों को भी भान कराना होगा कि भूदान का वास्तविक मकसद क्या है। अगर इस वर्ग में इस विचार के प्रति आकर्षण नहीं होता है तो मैं समझता हूँ, आंदोलन की कल्पना प्रत्यक्ष नहीं हो सकेगी। इसी वर्ग से हमें कार्यकर्ता निकालने होंगे, जिनके द्वारा गाँव गाँव में प्रवेश किया जा सके और दाता और दाताओं की सभा बुला कर पुनः इन दोनों वर्गों से सम्पर्क आना चाहिये और मुझे विश्वास है कि भूमि सम्बन्धी जो समस्याएँ आज हैं, उनका निराकरण किया जा सकता है। आज जिन्हें भूमि की आवश्यकता है, अगर उनमें इसके लिए भूख नहीं जगायी जाती और केवल हम 'बीघे में कट्ठा' के लिए घूमते हैं, तो इस थोड़ी-सी शक्ति से कुछ भूमि प्राप्त होगी, परन्तु आंदोलन खड़ा नहीं हो सकता। अतः इन भूमिहीन गरीबों की टोलियाँ भूमि प्राप्ति के लिए निकलनी चाहिये।

बाद में प्राप्त कार्यकर्ताओं के शिविर भी लिये जाने चाहिये, ताकि इस विचार की जानकारी और गाँव में काम करने की पद्धति उनको बतायी जा सके। इन कार्यकर्ताओं की जो एजेन्सी गाँव में खड़ी होंगी, उसी के द्वारा सर्वोदय-पात्र तथा गाँव के अन्य कार्य किये जायें। साप्ताहिक सभाओं आदि का आयोजन हो। अगर यह संगठन खड़ा होता है, तो हर जिले में हमारी काफी शक्ति हो सकती है। इस प्रकार के संगठन के बल पर गाँव-गाँव की समस्याओं का निराकरण आसानी से हो सकता है। आज निराशा व शिथिलता का जो एक वातावरण है, उसमें भी स्फूर्ति का संचार होगा। आज की स्थिति को देखते हुए मेरा अनुभव है कि आज युवक इस आंदोलन को क्रांतिकारी समझते ही नहीं। उन्हें लगता है कि यह एक उपदेश करने वालों का समाज है और बुजुर्ग तथा पेन्शनयाफ्ता अनुभवी लोगों को लगता है कि इसमें आध्यात्मिकता नहीं है, केवल आर्थिक प्रश्न को लेकर ये लोग चल रहे हैं। इस प्रकार दोनों ही ओर से प्रवेश बन्द है। दूसरी धार्मिक व आध्यात्मिक संस्थाओं में जिस प्रकार लोग आत्म-उन्नति की दृष्टि से जाते हैं और काफी सुखी, सम्पन्न स्तर के लोग वहाँ रहते हैं; ऐसे व्यक्ति किस प्रकार इस ओर बढ़ें, यह भी एक प्रश्न हमारे समक्ष है।

मैंने अभी वितरित भूमि का जिक्र किया। अवितरित भूमि भी काफी संख्या में है, जिसका वितरण हम नहीं कर पा रहे हैं। कारण कुछ भी हो, परन्तु जो भूमि आज से सात-आठ वर्ष पहले हमें प्राप्त हुई, उसका निस्तार हम अभी तक नहीं कर सके। यह हमारी नैतिक जिम्मेवारी है या तो पड़ी हुई भूमि की वास्तविक स्थिति की घोषणा करें, या इसके वितरण का कोई उपाय ढूँढ़ निकालें, ताकि गाँव के गरीबों को इसका लाभ मिले। दाताओं को भी लगता है कि जो भूमि हमने पहले दी, उसका अभी तक कुछ नहीं किया गया और अब पुनः 'बीघे में कट्ठा' की माँग करते हैं। इस कार्य के लिए जिला सर्वोदय मंडलों को अपनी जिम्मेवारी माननी चाहिये या इसकी जिम्मेवारी ग्राम-पंचायतों को दी जाये। अगर यह जिम्मेवारी ग्राम-पंचायतों को दी जाये, तो ऐसी हालत में हमें सतर्क रहना पड़ेगा। सम्भव है कि भूमि का उचित वितरण न हो और वास्तविक व्यक्ति वंचित रह जायें, लेकिन हमें यह खतरा लेना चाहिये।

अंत में कार्यकर्ताओं के जीवन विकास के सम्बन्ध में निवेदन है। आज जो भी कार्यकर्ता इस आंदोलन में लगे हैं, उनके जीवन के विकास का मूल्यांकन होना आवश्यक है। आज कार्यकर्ताओं की स्थिति डाँवाडोल-सी प्रतीत होती है। हमारे आंदोलन के जो मार्गदर्शक हैं, उनका सम्बन्ध कार्यकर्ताओं के साथ निकटतम हो, उनके व्यक्तिगत जीवन की जानकारी तथा आज जो भी उनका मानस और वे आंदोलन के लिए क्या सोचते हैं आदि बातों की चर्चा उनके साथ कुछ दिन रह कर करनी चाहिये। कार्यकर्ता अपना विश्लेषण स्वयं करें, ताकि इनकी मनःस्थिति को जान कर ही कोई योजना बनायी जा सके। इस प्रकार के आयोजन से पारिवारिक भावना बढ़ेगी और कार्यकर्ताओं का सम्बन्ध भी आपस में मधुर होगा। कार्यकर्ताओं की टीम बन सकेगी। अगर कार्यकर्ताओं की छोटी-छोटी भी समूह बनते हैं तो अच्छी शक्ति का निर्माण होगा, इसका समाज पर भी असर होगा तथा कार्यक्रमों को भी सफलता मिलेगी।

ने आनन्दित होकर इस भूमिदान को स्वीकार किया। पचरुखी में हमारी टोली भोजन करके दूसरे गाँव चल पड़ी थी तो उतने में एक भाई ने आकर पौने दो एकड़ भूमि-दान दिया। कुछ विपरीत अनुभव भी आये। सारे जिले में इस वर्ष फसल अधिकतः खराब होने से साहित्य बिक्री केवल २०० रु० की हुई। वैसे ही भूदान का काम चार वर्ष बाद शुरू होने के कारण स्थानिक शक्ति का सहयोग कम मिला। अन्यथा अधिक जमीन का दान मिलता। यह सच है कि एक बार चूल्हा ठंडा होने पर उसे गरम करने में कुछ समय लगता ही है।

सबसे बड़ा लाभ यह हुआ कि साथियों का आत्मविश्वास जगा। ऐसी सामूहिक पदयात्राएँ जगह-जगह ही जायँ, ऐसा ता० २४ को महाराष्ट्र के कार्यकर्ताओं ने मिल कर तय किया और इसके लिए योजना बनाने का काम श्री रामकृष्ण भादे, संयोजक, अकोला जिला सर्वोदय-मंडल को सौंपा गया।

शांति-सैनिक का शांति-कार्य

ता० २४ नवम्बर '६१ को हथुआ, जिला सारण के दो बस-चालकों के बीच हुए संघर्ष से उत्पन्न स्थिति के कारण लोग उत्तेजित हो गये थे। दोनों दलों में लाठी फर्सा आदि से मारपीट शुरू हो गयी। तब सर्वोदय-केन्द्र, मीरगंज के शांति-सैनिक कार्यकर्ता, श्री बनारसीजी ने बीच में पड़ कर कहा कि पहले मेरा सिर काट लीजिये और बाद में जो कुछ करना हो कीजिये। इसी बीच एक लाठी इनको भी लगी। लेकिन एक बस मालिक ने इनको पहचान लिया और सबको रोका। बाद में वहाँ शांति हो गयी।

साम्ययोग में सर्वसाधारण नागरिक और उनका उत्तरदायित्व

● विट्ठलदास बोदाणी

विज्ञान आज चुनौती दे रहा है कि आगे आने वाला युग सर्वसाधारण नागरिक का बनेगा, तभी दुनिया को सर्वनाश से बचाना सम्भव होगा। इसलिए सर्वसाधारण नागरिकों को हर प्रकार के कामों का अभिक्रम अपने हाथों में रखना होगा, अपनी प्रतिष्ठा बनानी होगी, तमाम प्रकार के आयोजन-नियोजन के केन्द्र में अपना स्थान प्राप्त करना होगा और मानवीय क्रान्ति का अग्रदूत बनना होगा। यह तभी हो सकता है जबकि सर्वसाधारण नागरिक स्वयं जागृत होकर अपने पुरुषार्थ को जगायेगा और बढ़ाते रहेगा। भूदान-आन्दोलन की विशिष्टता यह है कि नागरिकों को इस दिशा में प्रेरित व अभिमुख करने का प्रामाणिक प्रयत्न सातत्यपूर्वक वह दस साल से कर रहा है। असली बात यह है कि यह प्रयोग परिस्थिति-परिवर्तन के लिए या राहत-कार्य के रूप में नहीं, किन्तु मूल्य-परिवर्तन के लिए ही किया जा रहा है। इसका यह अर्थ नहीं है कि राहत-कार्य न किये जायें।

ज्ञान और तितिक्षापूर्ण प्रयत्न, ये दो अद्भुत शक्तियाँ मनुष्य के पास हैं। तत्वनिष्ठा और भक्ति उनका एकमात्र आधार है। ज्ञानपूर्ण, तितिक्षापूर्ण तथा भक्तियुक्त प्रयत्नों में सातत्य लाने से सर्वसाधारण नागरिक अपनी शक्ति का विकास व वृद्धि करके अपनी जिम्मेवारी निभा व वहन कर सकेगा। तत्वतः आज मुख्य आवश्यकता है तप की और तप द्वारा नैतिक सह-उत्थान की। तप याने व्यक्ति और समाज की सर्वांगीण शुद्धि। ऐसा तप यज्ञ-रूप बन जाता है।

विज्ञान का अन्तिम ध्येय है, परम शुद्धि। अंततोगत्वा दोनों एकरूप बन जाते हैं। अतः व्यक्ति और समाज की सर्वांगीण शुद्धि के लिए किये जाने वाला 'तप' विशुद्ध, वैज्ञानिक प्रक्रिया है। विज्ञान-युग में विज्ञान की प्रगति की यही पराकाष्ठा होगी कि सर्वसाधारण नागरिक अपनी अद्भुत कल्याणकारी शक्ति का प्रत्यक्ष रूपेण व्यवहार में स्पष्ट दर्शन कर सके। अहिंसा के साथ विज्ञान को जोड़ने की यह सूक्ष्म दृष्टि प्राप्त करना किसी भी सर्वसाधारण नागरिक के लिए अशक्य या असम्भव नहीं है, यद्यपि उनका प्रमाण अल्प या अधिक हो सकता है। इसका कारण यह है कि हर मनुष्य के पास व्यक्त या अव्यक्त रूप में एक विशिष्ट संपत्ति है, सेवा, संयम, सत्य, प्रेम, श्रद्धा और भक्ति।

सेवा यज्ञ का प्रत्यक्ष स्वरूप है, संयम तप का पहला कदम है। सत्य यज्ञ का आधारस्तंभ है। प्रेम तप की आत्मशक्ति है। अनन्य श्रद्धा तप का प्रेरणा बल है और भक्ति तप की—यज्ञ की—आत्मा है।

विज्ञान व आत्मज्ञान

सेवा, संयम, सत्य, प्रेम, श्रद्धा और भक्ति; मनुष्य की यह षट्संपत्ति सर्वश्रेष्ठ संपत्ति है। वैज्ञानिक परिभाषा में आसुरी व दैवीसंपत्ति का भेद बताना हो तो यह कहना सर्वथा उचित होगा कि "संपत्ति" वह है, जो सबको समान भाव से शक्ति प्रदान करती है। एक की शक्ति छीन कर दूसरे को दे, या एक की शक्ति खींच करके दूसरे की शक्ति बढ़ाये, वह "संपत्ति" नहीं है। दोनों को शक्ति मिले, दोनों की—सबकी शक्ति का विकास व वृद्धि हो तभी वह 'संपत्ति' है। संपत्ति की वैज्ञानिक कसौटी भी यही हो सकती है। विज्ञान 'है' या "नहीं है" इस दृष्टि से देखता है। आत्मज्ञान "दैवी" व "आसुरी", ऐसा भेद करता है। दोनों सही हैं, फिर भी दोनों के बीच अंतर है। विज्ञान स्वयं तय नहीं कर सकता कि शक्ति का सदुपयोग या दुरुपयोग होता है, क्योंकि विज्ञान तटस्थ है, यद्यपि यह तटस्थता में जड़ता का दर्शन होता है। कैसा उपयोग करना मानवहित की दृष्टि से उचित या अनुचित होगा, यह भी विज्ञान स्वयं बता नहीं सकता। यह विषय है आत्मज्ञान का जो कि उचित-अनुचित, सदुपयोग-दुरुपयोग, हित-अहित आदि भेद बता सकता है, उनका निराकरण करके निर्णय दे सकता है और जो शुभ एवं कल्याणकारी है, उनको पसन्द करने की दृष्टि देता है। तथापि अपने-अपने स्थान पर दोनों का होना अनिवार्य है। अहिंसा की अव्यक्त किंतु शक्य व सम्भवित सरक्षक एवं सामूहिक-संगठित शक्ति को व्यक्त करने के लिए दोनों की एक समान आवश्यकता है। इस आवश्यकता की पूर्ति दोनों के समन्वय से ही हो सकेगी। इसी प्रकार के समन्वय को प्रत्यक्ष व्यवहार में मूर्त स्वरूप देने का उत्तरदायित्व सर्वसाधारण नागरिकों का है। अपने इस उत्तरदायित्व को पूरा न्याय करने की शक्ति वे इन षट्संपत्ति से ही प्राप्त कर सकेंगे।

यह कोई वेदांती अर्थात् मात्र तत्त्वज्ञान का भव्य, किन्तु शुष्क विचार नहीं है काल्पनिक सृष्टि में स्वप्नवत् व्योम-विहार भी नहीं है। कुछ-न-कुछ मात्रा में, प्रमाण या स्वरूप में, इस संपत्ति का थोड़ा-बहुत प्रत्यक्ष दर्शन मानवसमाज के जीवन में होता आया है, आज भी हो रहा है। तथापि आज आवश्यकता है, इनको वैज्ञानिक ढंग से संगठित करने की, सामूहिक शक्ति के रूप में व्यक्त करने की। विज्ञान आज तकाजा कर रहा है कि सर्वसाधारण नागरिक अपनी इस सर्वश्रेष्ठ संपत्ति की शक्ति को पहचानें, बढ़ायें, संगठित करें और वैयक्तिक व सामाजिक जीवन के हर क्षेत्र में विशेष रूप से कार्यान्वित करें। सर्वोदय-विचार व कार्यक्रमों का यह नम्र, किंतु गौरवपूर्ण दावा है कि ऐसी मानवीय क्रांति के ध्येय की प्राप्ति के लिए एक भावात्मक कार्यक्रम और लगभग पूर्ण नक्शा जगत् के समक्ष रखने का प्रामाणिक व गहरा प्रयत्न इस देश में सातत्यपूर्वक, श्रद्धापूर्वक और निष्ठापूर्वक किया जा रहा है।

अंतिम ध्येय : साम्ययोग

सर्वोदय का अंतिम ध्येय सारे संसार में अभेद बुद्धि से और निर्दम्भ वृत्ति से साम्ययोग की स्थापना करने का रहा है। ऊपर-ऊपर का बाहरी परिवर्तन से या परिस्थिति परिवर्तन करने से यह ध्येय प्राप्त नहीं हो सकेगा। जैसा कि विनोबाजी ने बताया है, साम्ययोग नैतिक मूल्यों में परिवर्तन करता है, क्योंकि उनकी बुनियाद आध्यात्मिक है और वह जीवन की तमाम शाखा-उपशाखाओं में आमूल क्रान्ति करता है। नैतिक मूल्यों में परिवर्तन करने की शक्ति विश्वास, वेदांत और विज्ञान में है, इन तीन शक्तियों के समन्वय में है, जिसका दर्शन कराने का, अर्थात् अपनी अव्यक्त शक्तियों को व्यक्त कर सके, ऐसा सुसंगठित व सामूहिक पुरुषार्थ करने का उत्तरदायित्व वर्तमान काल और आने वाले युग में सार्वसाधारण नागरिक का है और रहने वाला है।

विनोबाजी ने अर्थ-गंभीर शब्दों में कहा है कि "बुद्धि और भावना का समन्वय ही विवेक है।" विज्ञान बुद्धि का विषय है और भावना आत्मज्ञान का। सर्वसाधारण नागरिक इसी प्रकार के समन्वय का, अर्थात् विवेक का दर्शन और सर्वोदय के युगधर्म के प्रति अपनी अखंड कर्तव्य-जागृति का दर्शन करा दे। यह आज आत्मज्ञान की पुकार है और पचास या सौ मेगाटन बम की चुनौती को स्वीकार करें। इसलिए आवश्यक हो जाता है कि नागरिकों को सर्वोदय-विचार का गहराई से और विश्लेषणात्मक बुद्धि से तलस्पर्शी अध्ययन कर के उसमें संशोधन करना होगा। विशेषज्ञों का भी कर्तव्य है कि वे सर्वोदय के विभिन्न पहलुओं को, यदि आवश्यक हो तो प्रचलित वैज्ञानिक परिभाषा में रखने और उनका 'टेक्नोलोजिकल' शास्त्र बनाने में एवं तदनुसार सर्वोदय का व्यावहारिक आयोजन नियोजन तैयार करने में अपनी विशिष्ट बुद्धि, ज्ञान, अनुभव, शक्ति व समय प्रदान करें।

कार्यकर्ताओं को चुनौती

विशेष रूप से सर्वोदय के कार्यकर्ताओं का धर्म है कि वे नागरिकों के पास सर्वोदय-साहित्य पहुँचाने के काम को ज्यादा महत्त्व दें; विशेषज्ञों का सहयोग-सहकार प्राप्त करने के लिए ज्यादा प्रयत्नशील रहें

> और सर्वोदय-विचार का व्यापक प्रचार करने हेतु प्रचार के उपलब्ध तमाम साधनों और माध्यमों का विवेकपूर्वक लाभ उठाने के बारे में अधिक गंभीरतापूर्वक सोचें।

क्रान्ति विचार से ही होती है। खास करके अहिंसक क्रान्ति का मुख्य साधन "विचार" ही है। इसलिए सर्वोदय में सबसे पहले विचार-परिवर्तन को प्रथम कदम माना गया है और विचार-प्रचार को अन्य अनेकविध कार्यक्रमों के बीच केन्द्रीय स्थान दिया गया है। सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को ५० मेगाटन बम की यह नयी चुनौती है कि अब तक किये गये प्रचार को पर्याप्त न समझ कर उसे और विशेष महत्त्व दें, नयी गति दें और आवश्यकता के अनुसार उनके ढंग, स्वरूप एवं पद्धति में भी कुछ-न-कुछ परिवर्तन करें। किसी भी कार्य-पद्धति का समय समय पर विश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा परीक्षण करना और उसके बाद, जरूरत हो तो संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा उसमें कुछ फेर बदल करना या नयी पद्धति तय करना यह एक मान्य वैज्ञानिक तरीका है। ऐसी वैज्ञानिक दृष्टि विचार-प्रचार के कार्यक्रम के लिए अंगीकृत करनी ही होगी। वर्तमान आंतरिक व बाह्य परिस्थिति की गंभीरता देख कर और वास्तविकता का ख्याल रख कर इस महत्वपूर्ण प्रश्न का विचार करना ही होगा।

हमारे सामने आज एक नयी आवश्यकता उपस्थित हुई है, वर्तमान परिस्थिति भी दबाव डाल रही है कि हमारे प्रयत्नों में हम कुछ-न-कुछ '[illegible]' करें। वास्तविकता यह भी है कि जहाँ ५० मेगाटन बम हमें नयी चुनौती दे रहा है, वहाँ साथ-साथ हमारे लिए एक नयी सुविधा भी प्रदान कर रहा है कि सारे संसार के लोग आज [illegible] के प्रति और सर्वोदय विचार के

प्रति विशेष रूप से अभिमुख हो रहे हैं। निस्संदेह हमारे विचार सुनने-समझने के लिए वे आज बहुत उत्सुक हैं। हमें इस असाधारण सुविधा का लाभ उठाने की चेष्टा करना ही चाहिये। जो मौका अनायास मिल गया है, वह हाथ से छटक न जाये इतनी सावधानी व जागरूकता रखनी ही होगी।

कहने का मतलब यह नहीं है कि हम क्रियाशील या जागरूक नहीं हैं। अभी-अभी राष्ट्रीय एकता परिषद ने शान्ति-प्रतिष्ठा का हमारा सुझाव मान्य कर लिया है। चुनाव-आचार-संहिता को मान्यता मिल रही है। इसी तरह विनोबाजी ने बेरूत में हुई विश्वशांति-सेना परिषद् को अपनी संमति देते हुए अपील में हस्ताक्षर कर दिया है और सर्व सेवा संघ के चुने हुए प्रतिनिधिगण इस परिषद में सहयोग देने के लिए गये भी हैं। पंचायती राज के प्रयोगों में सर्वोदय की दृष्टि स्वीकार करवाने का प्रयत्न भी जारी रहा है। अलावा इसके असम में ग्रामदान-गंगा फिर से बहने लगी है। हमने साहित्य प्रचार के लिए अभी-अभी एक विशेष अभियान भी चलाया। तथापि नम्रतापूर्वक निवेदन है कि आज की परिस्थिति में हमारा नैमित्तिक धर्म बन जाता है कि सारे कार्यकर्तागण विचार-प्रचार के कार्य में अपनी पूरी शक्ति व समय लगा दें, कम-से-कम एक सघन क्षेत्र पसंद करके वहाँ सौ प्रतिशत सफलता प्राप्त करने का कार्यक्रम हम अवश्य बना सकते हैं।

सर्वोदय के युगधर्म में सर्वसाधारण नागरिक अपना पूरा सहयोग प्रदान करें और अपने उत्तरदायित्व का महत्त्व समझें, इसलिए उनको प्रेरणा देना, गहरा अध्ययन या संशोधन और विचार विमर्श के प्रति अभिरुचि करना और सर्वोदय के अनेकविध कार्यक्रमों को वे अपना कार्यक्रम बना लें इसके लिए उत्साहित करना कोई सामान्य कार्य नहीं है, आसान भी नहीं है। आज की विकट परिस्थिति में पुराने ढंग से काम करते रहेंगे तो सम्भवतः हम ज्यादा प्रभाव नहीं डाल सकेंगे ऐसा दीखता है।

इस दृष्टि से साथियों से सद्भावना और नम्रतापूर्वक निवेदन है कि इधर-उधर कुछ औदासीन्य या निष्क्रियता हो तो उसका त्याग करें; जैसा कि आगे कहा, विचार प्रचार के कार्यक्रम को महत्त्व और प्राधान्य देकर हमारे कार्यक्रमों में 'शिफ्ट आफ एम्फसिस' करें और 'सर्वधर्मान् परित्यज्य,' इस कार्य में नयी गति और नया प्राण लाने के लिए १९६२ का पूरा वर्ष इस सघन कार्य में लगाने का संकल्प करें। 'अधिकस्य अधिकं फलम्।'

[गतांक से समाप्त]

श्रुतयोगी नानाभाई भट्ट : १ :

महेन्द्र कुमार शास्त्री

गत वर्ष की अंतिम तारीख को दिन के लगभग साढ़े दस बजे अपनी ज्ञान-साधना से अनेक चेतन-ग्रन्थ तैयार करने वाले गांधीयुग के एक महान् शिक्षा-शास्त्री का देहावसान हो गया। उनका लोक-विख्यात नाम था नानाभाई भट्ट। नानाभाई का जन्म सन् १८८१ के कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा को हुआ। जब वे सवा वर्ष के थे, तब उनकी माता उन्हें छोड़ कर स्वर्ग सिधार गयी।

नानाभाई की बाल्यावस्था अत्यंत गरीबी में व्यतीत हुई। स्वयं नानाभाई ने अपनी शैशवावस्था का एक रोमांचक प्रकरण अपने नाना के मुँह से कहला कर इस प्रकार अंकित किया है, "तू तो उस समय अधिक-से-अधिक ग्यारह महीने का होगा। तुम्हारी माँ प्रतिदिन प्रातःकाल जल्दी घास काटने के लिए जाती और यह बालक तुझे रखती। एक बार तुम्हारी माँ तुझे लेकर घास काटने गयी। रास्ते में रूपेटिया नाला पड़ता है। वहाँ तुझे किनारे पर सुला कर उसने नाले में स्नान किया। फिर अपने नित्य नियमानुसार 'विष्णुसहस्रनाम' का पाठ करती तुझे झोली में बाँध कर चली। उस दिन उसकी गठड़ी भी प्रतिदिन की अपेक्षा बड़ी थी।"

भगवान् ने नानाभाई को ऐसी माता का पुत्र होने का सौभाग्य अर्पित किया। उस समय भारतीय कार्यक्षेत्र में गांधीजी का प्रवेश नहीं हुआ था।

माँ की तरह नानाभाई के दादा भी एक सच्चे तपस्वी ब्राह्मण थे। आकिंचन्य वृत्ति उनकी रग-रग में समायी हुई थी, अपरिग्रह व्रत के वे सच्चे पुजारी थे। एक बार उनकी चिकित्सा-पद्धति से प्रसन्न होकर भाव नगर के लोगों ने उनके हाथ में सोने के कड़े पहनाये, पर वे उन्हें अपने पास नहीं रख सीधे नीलकण्ठ महादेव पर चढ़ा आये। इसी तरह भावनगर के महाराज भी उनकी प्रामाणिकता से प्रसन्न हो उन्हें कुछ भूमि देना चाहते थे। उन्होंने अपने दीवान के साथ मंत्रणा कर उन्हें थोड़े खेत दान करने का पट्टा लिखवाया और ढेंग पर अपने हस्ताक्षर के साथ राज्य की मुहर लगा कर उसे पक्का कर दिया। एक समय महाराज की उपस्थिति में राज्य-कर्मचारी ने वह पट्टा उन्हें दिखाया। विक्रम बापा ने लेख पर निगाह डाली, उसे पुनः कर्मचारी के हाथ में देकर बोले : 'तुम्हें मेरे लड़कों को ब्राह्मण रहने देना नहीं है न! मेरे लिए खेत क्या और जमीन क्या! क्या आप मुझे भ्रष्ट करना चाहते हैं!' इतना कह उनकी आँखें गीली हो गयीं।

नानाभाई के रक्त में अपने मातृ एवं पितृकुल के कर्मयोग, आकिंचन्य वृत्ति, शील एवं अध्ययन के ये संस्कार समाये हुए थे। भगवान् बुद्ध ने एक जगह सच्चे ब्राह्मण की पहचान कराते हुए कहा है कि जिसमें रूप, कुल, श्रुत, शील एवं प्रज्ञा, इन पाँचों का समन्वय हो वही सच्चा ब्राह्मण या शिक्षा शास्त्री है। नानाभाई में इन पाँचों का अद्भुत सम्मिश्रण था। रूप की दृष्टि से उनकी आकृति आकर्षक थी। इसके अतिरिक्त तमिल की कहावत के अनुसार "अहत्तिल अलहु मुहत्तिल तेरियम्" अन्दर का शीलजन्य सौन्दर्य उनके मुँह पर प्रतिबिंबित होता था, कुल की दृष्टि से उन्होंने परंपरा से एक अग्नि-उपासक निष्ठावान ब्राह्मण कुल में जन्म लिया था।

आजकल के युग में, हम पहले के रूप और कुल को छोड़ भी दें, तथापि अंत के श्रुत, शील एवं प्रज्ञा किसी भी शिक्षा-शास्त्री कहे जाने वाले शिक्षक के लिए नितान्त आवश्यक हैं। ठेठ विद्यार्थी अवस्था से जीवन की संध्या, अर्थात् अपने जीवन के ८१ वर्ष तक श्रुतयोग की उनकी यह उपासना अखण्ड रही। उनका जीवन सतत अध्ययन परायण रहा, वह भी जीवित कर्मयोग के साथ। श्रुतयोग की इस साधना में उन्होंने अनेक लोकोपयोगी ग्रन्थ तैयार किये। उनके महाभारत और रामायण के पात्र गुजराती तथा अन्य भारतीय भाषाओं में आदर प्राप्त कर चुके हैं। इसी प्रकार लोक-भागवत, लोक भारत तथा उपनिषद् की कथाओं ने भी बहुत प्रसिद्धि प्राप्त की है। दक्षिणामूर्ति संस्था के काल में भावनगर से उनके संपादकत्व में निकलनेवाले छात्रालय, शिक्षण-पत्रिका एवं दक्षिणामूर्ति त्रैमासिक ने शिक्षा-क्षेत्र में क्रान्ति का काम किया। शिक्षण-पत्रिका तो इतनी आकर्षक सिद्ध हुई कि उसकी आवृत्ति हिन्दी और मराठी में भी निकलती थी। हिन्दी में उसका संपादन और अनुवाद श्री काशिनाथजी त्रिवेदी करते थे एवं मराठी का संपादन श्री ताराबहन मोडक करती थीं। अपने जीवन के अन्तिम क्षण तक उनके संपादकत्व में निकलने वाला "कोडियुं" अपने नाम के अनुरूप अंधकार में घी के दीपक की तरह शीतल प्रकाश करता रहा। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'घडतर अने चणतर' के नाम से अपनी एक आत्मकथा भी लिखी है, जो गांधीजी की आत्मकथा का स्मरण दिलाती है। अपने जीवन के संध्याकाल में रुग्ण-शय्या पर पड़े पड़े उन्होंने शाश्वत दार्शनिक प्रश्नों की चर्चा की है, जो 'पथारी में पड्या पड्या' के नाम से प्रकाशित हुई है। इसकी गणना गांधीयुग के एक दार्शनिक ग्रंथ के रूप में होती है। अपने श्रुतयोग को इस प्रकार अक्षरबद्ध करने के साथ उन्होंने अनेक चेतन-ग्रन्थ भी तैयार किये, जो देश में विभिन्न क्षेत्रों में सेवा-परायण जीवन व्यतीत कर रहे हैं।

शिक्षा शास्त्री का श्रुतयोग के साथ दूसरा लक्षण है शील। वह शीलसम्पन्न होना चाहिये। नानाभाई के शरीर का सारा ढाँचा शील के कवच से वेष्टित था। गांधीजी और विनोबा की तरह उन्होंने अनेक जगह स्वीकार किया है कि अपने जीवन को शील-सम्पन्न बनाने के लिए ही मैंने अपने जीवन में अनेक संस्थाएँ स्थापित कीं। उनकी शीलवान आत्मा ने अनेक बार प्रबलतम प्रलोभनों को ठुकरा कर अभावों को स्वीकार किया। एक बार इसी कारण दक्षिणामूर्ति संस्था के लिए दिया जाने वाला तीन लाख रुपयों का बहुत बड़ा दान ठुकरा दिया। शील के प्रभाव से ही उन्होंने कालेज जीवन की बहुत वेतन वाली 'प्रोफेसर' पदवी छोड़ पाठशाला का मास्टर या मेहताजी होना स्वीकार किया। शील के प्रभाव से ही वे एक प्रान्त के शिक्षामन्त्री के पद को ठुकरा कर अपने असली शिक्षा-क्षेत्र में पुनः प्रविष्ट हुए। उनके जीवन की ऐसी अनेक रोमांचक घटनाएँ उद्धृत की जा सकती हैं कि इस शील-साधना में उन्होंने कितने कष्टों का वरण किया।

शिक्षा-शास्त्री का तीसरा गुण है प्रज्ञा। महाप्राज्ञ पं० सुखलालजी ने प्रज्ञा का लक्षण इस प्रकार किया है, 'प्रज्ञा को ही शास्त्र परिभाषा में विवेक ख्याति कह सकते हैं। अंधश्रद्धा और तन्मूलक धर्म-संस्कार जीवन में महान् ग्रन्थियाँ हैं। ये ग्रन्थियाँ व्यक्ति को आगे नहीं बढ़ने देतीं। प्रज्ञा ही भगवान् बुद्ध की दृष्टि है।' प्रज्ञा या विवेक-ख्याति का सच्चा लक्षण यही है कि सत्य की प्रतीति होने पर उसे निर्भयता और स्पष्टतापूर्वक स्वीकार करना तथा झूठी प्रतिष्ठा को छोड़ उसका आचरण करने के लिए सदैव तत्पर रहना। नानाभाई में यह बीज मूल में था, पर गांधीजी का संपर्क होने पर उनकी दृष्टि का विशेष उन्मेष हुआ। बाद में उन्होंने अपने बचपन में पोषे हुए सब मिथ्या संस्कारों का सर्प की केंचुली की तरह परित्याग किया। उनकी इस प्रज्ञा ने ही उनके लिए ईश्वर स्वरूप श्रीमन्नथूराम शर्मा का समय आने पर उन्हें दक्षिणामूर्ति संस्था में उपासना देने के लिए विरोध कराया।

---

१५ जनवरी को जिनकी पुण्यतिथि है

हमारे बाबाजी

• विनय अवस्थी

प्रातः स्मरणीय बाबा राघवदास के सम्पर्क में आने का सौभाग्य जिन्हें मिला है, वे उनके आध्यात्मिक विचारों, रचनात्मक-कार्य के अनुभवों एवं अहिंसक क्रान्ति के प्रति उनकी तीव्र भावनाओं से अछूते न रहे होंगे। बाबाजी की दृष्टि में गहराई और व्यापकता का अनोखा समन्वय था।

इसीसे वे जीवनोपयोगी ज्ञान के अद्भुत भण्डार थे। कृषि-विज्ञान हो या खादी-ग्रामोद्योग का शास्त्र, शिक्षा-दर्शन हो अथवा राजनीति का सिद्धान्त, आहार-शास्त्र हो या चिकित्सा प्रणाली; सभी विषयों में उनकी गहरी पैठ थी और उन्हें इन विषयों का कोरा पुस्तकीय ज्ञान नहीं था; परन्तु प्रत्येक के प्रयोगात्मक रूप का भी उन्हें प्रत्यक्ष अनुभव था। उदाहरण के लिए मालिश के सम्बन्ध में जहाँ उन्होंने देशी-विदेशी अधिकृत विद्वानों की पुस्तकों का अध्ययन किया था, वहाँ उसका व्यावहारिक प्रयोग भी स्वयं पर करके, उन्होंने अपने शरीर को स्वस्थ रखने और आँख के चश्मे को उतार देने में सफलता पायी थी।

सम्भवतः १९५० की बात है। बाबाजी अपने साथी स्व० विश्वम्भर दयालु त्रिपाठी के निमंत्रण पर उन्नाव पधारे। उस समय उन्हें उत्पादन-वृद्धि के लिए छोटे सिंचाई-साधनों के रूप में श्रमदान से तालाब खोदने-खुदवाने की धुन थी। सुभाष कॉलेज की सभा में उन्होंने इस दिशा में पूर्वी जिलों में हुए कार्यों का बड़ा चमत्कारपूर्ण वर्णन किया—किस प्रकार तुलसीदल बाँट कर जनता को श्रम-यज्ञ के लिए बुलाया जाता और कैसे उन्हें अपने सामूहिक शक्ति के दर्शन मिलता! अपनी उस प्रथम भेंट में ही बाबाजी ने मुझे आकर्षित कर लिया।

जब अहिंसक क्रान्ति की प्रेरणा और विनोबाजी के आह्वान पर बाबाजी ने पचासों संस्थाओं का संचालन और सैकड़ों संस्थाओं की सदस्यता से अपने को मुक्त करके उत्तर प्रदेश में भूदान-यज्ञ-आन्दोलन को गति देने के लिए अखण्ड पदयात्रा प्रारंभ की, तब मूल्य-परिवर्तन की क्रान्ति में गहरे पैठने पर भी देश और समाज के सामयिक समस्याओं की अवहेलना वे नहीं करते थे। जहाँ वे ग्रामों की पुनर्रचना के लिए भूमि के स्वामित्व का विसर्जन और ग्रामोद्योगों के विकास की मूलभूत आवश्यकताओं पर बल देते थे, वहाँ वे गाँव की जिन्दगी, शोषण एवं रिश्वतखोरी आदि के लिए तात्कालिक कदम उठाने से भी नहीं चूकते थे। राष्ट्रभाषा की अवहेलना उन्हें असह्य थी। रेलवे स्टेशनों के बुक-स्टालों पर रहने वाले अश्लील साहित्य को हटाने के लिए वे प्रयत्नशील थे। रेलवे स्टेशनों पर यात्रियों के लिए पानी आदि की समुचित व्यवस्था कराने में भी बाबाजी का ही प्रमुख हाथ था।

कार्यकर्ताओं के तो वे सहायक, मार्गदर्शक और प्रेरणा-स्रोत ही थे। कार्यकर्ताओं पर विश्वास करने में कभी-कभी उन्हें धोखा तक खाना पड़ता था, फिर भी इस खतरे के कारण उन्होंने अपनी स्वभावगत उदारता नहीं छोड़ी। उनके तेजस्वी व्यक्तित्व, उत्साहवर्द्धक कार्यपद्धति और नये-नये रचनात्मक सुझावों से हजारों कार्यकर्ताओं को प्रेरणा, प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन मिलता रहता था। जीवन और जगत् के पहलू पर उनका चिन्तन चलता रहता और वे उसके सुधार, संशोधन तथा परिवर्तन के लिए नयी-नयी कल्पनाएँ करते रहते। इन सबके लिए स्वयं कुछ करना एक व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं, इसका उन्हें भान था। इसीलिए वे विनोद में कहते—'मेरा काम तो ढेला फेंकना है, *लग गया तो तीर, नहीं तो तुक्का*।' कभी स्वयं विनोबाजी कहते "बाबाजी ब्रह्म हैं, नयी-नयी सृष्टि निर्माण करते रहते हैं। उनके साथ कोई विष्णु भी चाहिए जो उनकी कल्पना को सँवारे, सम्हाले, साकारे।" और उनकी दैनिक डाक में देश की मूल समस्या से लेकर देखने में छोटी लगने वाली बातों तक से सम्बन्धित अनेक पत्र होते। राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू और प्रधान मन्त्री नेहरूजी से लेकर छोटे-छोटे कार्यकर्ताओं को वे लिखते रहते। लिखने में उनकी गति बड़ी तेज थी। अतः अक्षर साफ नहीं आते तो मैं मजाक में कहता, "बाबाजी, आप अपना समय बचाने के लिए दूसरों का समय ले लेते हैं।"

वे दरिद्रनारायण के सच्चे उपासक थे। पदयात्रा में कई बार देखा कि किस प्रकार गरीब भूमिहीन हरिजनों की दयनीय दशा देख कर उनका हृदय करुणा-प्लावित हो उठता था और नेत्र सजल। उसी समय उनकी मदद के लिए वे यथाशक्ति प्रयत्न करते थे। कई बार तो वे ठंड में ठिठुरते ग्रामीण बालकों को देख वे अपने शरीर के कपड़े ही उतार कर उन पर डाल देते।

जब तक उनकी अखंड पद-यात्रा उत्तर प्रदेश में चली, दो वर्ष तक तो जब कभी अवसर मिलता मैं भी उनके पास नयी प्रेरणा और नये सुझाव लेने चला जाता और वे भी मेरे अनुभवों, को मेरी कठिनाइयों को प्रेम से सुनते, उन पर परामर्श देते और आवश्यक तत्काल कार्यवाही भी करते।

आज जब कि प्रदेश के सर्वोदय-परिवार को एक स्नेह-सूत्र में पिरो कर रखने वाले व्यक्तित्व के अभाव में कार्यकर्ता टूट और बिखर रहे हैं, बाबाजी की याद रह-रह कर अन्तर् को झकझोर देती है। प्रभु हमें शक्ति दे कि जिस महान् पथ की यात्रा में उनका बलिदान हुआ, उस पर लगन और निष्ठापूर्वक हम चलते रहें। आज उनके बलिदान-दिवस पर उनकी आत्मा से भी हमें इसी आशीर्वाद की अपेक्षा है। •

नये साल का आवाहन!

दुनिया में विभिन्न राष्ट्रों के बीच पिछले साल तनाव व मनमुटाव बहुत काफी रहा, मगर यह बड़ी बात है कि लड़ाई नहीं हुई और शान्ति कायम रही। यद्यपि दोनों दलों ने, जिनके मुखिया अमरिका और रूस थे, अपनी फौजी तैयारियाँ जोरों से बढ़ावा जारी रखा, मगर वे यह अच्छी तरह समझते थे कि अगर एक हद से ज्यादा गये तो ऐसी भयानक तबाही आयेगी, जिसके असर से कोई भी सही-सलामत नहीं बच पायेगा।

गत जून में आस्ट्रिया में ख्रुश्चेव और कैनेडी की जो मुलाकात हुई, वह इस बात का सबूत है कि दोनों ही एक-दूसरे का दृष्टिकोण समझना चाहते हैं और मिल कर शान्ति से रहना पसन्द करते हैं। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सामने उसके महामन्त्री, डाग हैमरशोल्ड की अचानक मौत के कारण एक भारी संकट आया था। लेकिन वह भी उसे पार कर गया और यूथान ने कुशलता से काम संभाल लिया। अफ्रीका में कई देशों का आजाद होना और संयुक्त राष्ट्र के सदस्यों की तादाद १०२ तक *पहुँच जाना बताता है कि* अफ्रीका में एक नयी जान पैदा हो गयी है।

इसके अलावा, गये साल यह भी जाहिर हो गया कि पश्चिम की सरनाम शक्तियाँ, विशेषकर इंग्लैण्ड और यूरोप की अन्य देश सिद्धान्ततः तो उपनिवेशवाद के खिलाफ हैं, मगर पूरे और सच्चे मानों में उसे अमल में उतारने को तैयार नहीं हैं। शायद उनके कुछ निहित स्वार्थ हैं, जिनके ऊपर वे उठ नहीं पाते हैं। साथ ही, यह भी साफ पता चल गया कि अगर सचमुच जंग छिड़ जाए तो तटस्थ राष्ट्र उससे अछूते नहीं रह पायेंगे और किसी-न-किसी गुट में जरूर शामिल हो जायेंगे। इसलिए यह जरूरी है कि तटस्थता के साथ-साथ उनको कुछ ऐसी मान्यताओं और मूल्यों को खड़ा करना होगा, जिन्हें बड़े-बड़े राष्ट्र आज नहीं मानते हों। ये राष्ट्र भले ही दो गुटों में हों और एक-दूसरे के विरोधी हों, मगर इस बात को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता कि ये दलों की एक समान उपासना करते हैं और हिंसादेवी के मन्दिर के पक्के पुजारी हैं। उनका अन्तिम आधार हथियारों पर है। इस वास्ते तटस्थ राष्ट्र अगर दिल से शान्तिमय और प्रभावशाली रहना चाहते हों तो उन्हें शस्त्र-शक्ति का आसरा छोड़ना पड़ेगा। वरना आखिरी वक्त पर उन्हें मजबूरन शान्ति की राह से हट कर हिंसात्मक कदम उठाना पड़ जायेगा, जैसा भारत सरकार को गोआ में करना पड़ा।

सन् १९६२ का स्पष्ट संकेत यह है कि जनता अगर चाहती है कि सरकार सुरक्षा नीति को नये साँचे में ढाले और हथियारों का हमेशा के *लिए त्याग* कर दे, तो जनता को हिम्मत के साथ आगे कदम रखना होगा और शान्ति की शक्ति पैदा करनी होगी। हम जानते हैं कि यह हँसी-खेल नहीं है। सुनने में स्वप्न जैसा लगता भी है। *मगर इतिहास गवाह है कि आज* जो असलियत है वह कल तक स्वप्न ही थी। भौतिक विज्ञान के विकास में यह क्रम चलता रहा है। तब नैतिक और समाज-विज्ञान में यह होना स्वाभाविक ही है।

लेकिन अब शुरुआत हो जानी चाहिए। सौभाग्य से बेरुत में यह किया गया और विश्व शान्ति-सेना का श्रीगणेश हुआ। लेकिन इसमें जान तभी पैदा होगी, जब दुनिया में जगह-जगह और कम-से-कम हमारे हिन्दुस्तान में तो जरूर होगा, सक्रिय अहिंसा के किले खड़े हो जायँ। नये साल का यही आवाहन है हम सब उस दिशा में अग्रसर हों। और एक ऐसा वातावरण बने कि पोप के शब्दों में, इस साल के अन्दर दुनिया भर से "तमाम तनाव और युद्धों का अंत" हो जाये।

—सुरेश राम

विनोबा-पदयात्री दल से

• कुसुम देशपांडे

शिवसागर और उत्तर लखीमपुर, इन दो जिलों के बीच ब्रह्मपुत्र में माजूली नाम का द्वीप है। यह द्वीप लगभग बीस मील लम्बा और पाँच मील चौड़ा है। इसमें दक्षिणपात नाम के गाँव में वैष्णवों का बहुत बड़ा सत्र है, वैष्णव भक्ति का स्थान है। यह असम के सत्रों का केन्द्र है। शिवसागर जिले की यात्रा समाप्त करने के बाद उत्तर लखीमपुर जिले में जाने के पहले विनोबाजी ने इस स्थान में एक दिन बिताया। वहाँ यादव का बहुत बड़ा मन्दिर है। वही सत्र का स्थान है। उसके अहाते में एक छोटा-सा तालाब है। उसके किनारे चारों ओर केले और सुपारी के ऊँचे पेड़ खड़े हैं। सुन्दर और शांत स्थान है। वहाँ के जो प्रमुख हैं, उन्हें 'गोस्वामी' कहा जाता है, 'सत्राधिकार' भी कहा जाता है। उनके स्थान पर विनोबाजी गये। मन्दिर और सत्र को देखा।

गोस्वामीजी के साथ थोड़े समय बातें हुईं, जिससे पता चला कि उस स्थान में गीता और भागवत का रोज पारायण होता है। शंकरदेव और माधवदेव के ग्रंथ—कीर्तनघोषा और नामघोषा—का पाठ भी होता है और उस पर चर्चा होती है। उस सत्र में करीब १०० ब्रह्मचारी हैं, जिनमें से कुछ धर्म प्रचार के लिए आस-पास के गाँवों में घूमते हैं। असम में वैष्णवों का 'शरणीया धर्म' कहलाता है उसके महापुरुषीया और दामोदरीया, ऐसे दो पंथ हैं। यह सत्र दामोदरीया पंथ का है। श्रीधर स्वामी के भक्तिप्रधान अद्वैत को यह सत्र मानता है।

विनोबाजी ने अपने भाषण में कहा: "शंकराचार्य ने एक स्तोत्र में नारायण की स्तुति करते हुए कहा है, 'नारायण करुणामय है।' और कहा है कि यह सही है कि तेरे और मेरे में फर्क नहीं है। "सत्यपि भेदापगमे नाथ तवाहं न मामकीनस्त्वम्।" —यद्यपि यह सत्य है कि तेरे और मेरे में फर्क नहीं, हे नाथ! मैं तेरा दास हूँ, लेकिन तुम मेरे दास नहीं हो। "सामुद्रो हि तरंगः क्वचन समुद्रो न तारंगः"—समुद्र का तरंग होता है, तरंगों का समुद्र नहीं। इस तरह से अत्यन्त नम्रता प्रभु के सामने उन्होंने प्रकट की और प्रभु से प्रार्थना की है कि 'भूतदया विस्तारय'—भूतदया का विस्तार कर। अद्वैत का अनुभव कैसे आयेगा? आप और हम एक हैं, जीवमात्र और परमेश्वर एक है, तो एकता की परिसीमा हो गयी। दया, प्रेम और करुणा है, लेकिन घर में बन्द है तो परिणाम क्या होगा? पानी का बहना बन्द होता है तो वह सड़ जाता है, वैसे घर में जो प्रेम बद्ध होता है उसे कामवासना का रूप आता है, वह परिशुद्ध नहीं होता। अगर प्रेम का बहना शुरू हो जाय तो पड़ोसी पर प्रेम, दूसरी जाति पर, मानव पर, प्राणीमात्र पर और भूतमात्र पर प्रेम, इस तरह से उसका विस्तार होते होते जहाँ परम विस्तार होगा, वहाँ अद्वैत अनुभूति होगी।"

* * *

बीच में दस दिन गुजरात सर्वोदय-मंडल के मंत्री श्री किसनभाई त्रिवेदी, सहमंत्री श्री अरुण भट्ट और मीराबहन तथा सौराष्ट्र के श्री करसन भाई आये थे। मीराबहन विनोबाजी की यात्रा में तीन साल रह चुकी हैं। उनके साथ उनकी पौने दो साल की बेटी—'अमी'—थी। अमी को मीराबहन की गोद में देख कर विनोबाजी कहा करते थे—"भूदान-आंदोलन चलाने से एक बेटी को सँभालना ज्यादा कठिन काम है!" कभी-कभी अमी की हरकतें देख कर वे कहा करते थे—"इस लड़की को कितनी अकल है! दस साल के जानवर को भी इतनी अकल नहीं होती है। इसे अपना कौन है, पराया कौन है, यह समझता है, 'पंढरनापध्द' है, गुस्सा करना मालूम है, फलानी चीज करनी है तो वही वह करेगी। देखो, तुम अब इसे रोकती हो, पर यह वही किताब उठाना चाहती है, याने 'विल पावर' (इच्छा-शक्ति) भी है 'फुल परसनालिटी' (पूर्ण व्यक्तित्व) है।"

बाँस के घने जंगल से गुजर रहे थे। रात खतम हुई थी, पर दिन का उजाला नहीं हुआ था, चारों ओर शांति थी। शांति का भंग करते हुए श्री करसन भाई ने पूछा—"गुणविकास के लिए स्वदोष-दर्शन कहाँ तक मदद दे सकता है?"

फिर बाबा ने कहा: अगर दोष दिखाई देते हैं तो कुछ-न-कुछ मदद देते हैं। हमारी कोठरी में अगर कचरा हमें दिखाई दिया तो वह अच्छा ही है। हम झाड़ू लगा कर उसको बाहर फेंक सकेंगे। कचरे का पता चले तो उस पर बिछाना बिछायेंगे नहीं, उसे ढाँकेंगे नहीं।

करसन भाई: जैसे स्वदोष-दर्शन मदद देता है, वैसे परदोष-दर्शन तो कुछ मदद नहीं करता होगा?

बाबा: पहले तो 'स्व' और 'पर', यह भेद ही मिटाना चाहिए। किसीका कचरा निकालने से अपना कचरा निकालना ही अच्छा है। फिर भी किसीके साथ यदि निकटता है तो उसकी कोठरी भी साफ कर सकते हैं। लेकिन उसकी इच्छा ही नहीं होगी तो उसकी कोठरी में उसे पूछे बिना तुम कैसे घुसोगे?

करसन भाई: मन से ऊपर उठने की बात तो समझ में आती है, लेकिन फिर भी जो प्रवाह चलता है उसमें बह जाते हैं तो उससे कैसे बचें?

बाबा: यह भी मन से ऊपर उठने की बात है। अपने को अच्छे काम में लगाना चाहिए। अच्छे काम में लगने से बुरी चीजों से बच सकते हैं। अगर सत्-प्रवाह में बहते हैं तो अच्छा ही है। गलत प्रवाह में न बह जाय उतनी जागृति रखनी चाहिए।

* * *

गुजरात के मित्रों के साथ बड़ौदा की बातें चलीं। अरुणभाई ने कहा, बड़ौदा में आपके परिचय के कुछ लोग मिलते हैं। क्या आपको कोई याद है? बड़ौदा के लिए बाबा के मन में विशेष प्रीति है। उनको बड़ौदा की गली-गली याद है। बड़ौदा का नाम सुन कर वे गुनगुनाने लगे—"सब हमार प्रभु पग-पग जोहा' कोल और किरात लोग रामचन्द्रजी से कहते थे कि हमने तो इस जंगल के रास्ते देखे हैं, हमारे पाँवों ने देखे हैं, इसलिए आपको हम ले जायेंगे; ऐसा वर्णन तुलसीदासजी ने किया है।

बाबा पूछने लगे कि तुम लोग वहाँ कहाँ रहते हो? किस रास्ते पर? मानों बड़ौदा नगरी उनकी आँखों के सामने खड़ी थी!

फिर वे अतीत को याद करने लगे: "हमारे एक शिक्षक थे, 'एच० एम०' देसाई उनका नाम था। फ्रेंच सिखाते थे। बहुत ही सज्जन! उनके लिए हमारे मन में बहुत ही आदर था। पर उनको जब हम दूर से आते हुए देखते थे तो कहते थे कि देखो, हाफ मैड ('एच०' 'एम०') देसाई आ रहे हैं! पर वे नजदीक आते ही पूर्ण आदर से हम पेश आते थे।

किसीने कहा कि वे अब इस दुनिया में नहीं हैं।

"और एक थे हमारे हेडमास्टर 'दीडमीशे' उनका नाम था। अपने नाम की जैसी ही मूँछ वे रखते थे। सन् '५७ में जब मैं बड़ौदा आया था, तब वे हमसे मिले थे। बड़ौदा की एक विशेषता यह है कि गुजरात के सभी पेन्शनर्स वहाँ इकट्ठे हुए हैं और होते हैं, क्योंकि वहाँ तरकारी बहुत सस्ती मिलती है। मुझे याद है कि उन दिनों पाँच पैसे का एक आना होता था। मैं एक पैसे में बाजार से साग, हरी धनिया और नीबू लेता था।"

* * *

१२ ता० को ब्रह्मपुत्र नाव से पार करके उत्तर लखीमपुर जिले में विनोबाजी का प्रवेश हुआ है। इस जिले में यह दूसरी यात्रा हो रही है। उत्तर लखीमपुर के उत्तर-पूर्व (नॉर्थ इस्ट) विभाग में—'सुवर्ण श्री' अंचल में—यात्रा हो रही है। इस अंचल में करीब ३०० ग्रामदान हुए हैं। तीन दिन धोहाँई मौजे के कार्हगुरी गाँव में विनोबाजी का मुकाम था। यहाँ आस-पास १६ गाँव हैं, जिनमें कुछ गाँव दस-बारह घर के हैं, कुल चालीस-पचास घर थे। यहाँ प्रायः कछारी लोग याने आदिवासी रहते हैं। कुछ गाँवों में 'मीरी' लोग रहते हैं।

इस विभाग में सर्वश्री सोमेश्वर बारुवती, द्वारीक फूकन, चन्द्र गगई, सत्य धरा, ये भाई घूम रहे हैं। श्रीमती हेमा मराली इसी विभाग की रहने वाली हैं। वे भी इस काम में दिन रात लगी हैं। इन सबके लिए प्रेरणा का स्रोत हैं—अमलप्रभा बहन! विनोबाजी कहते हैं कि वह असम की देवता है। उनके लिए असम में सर्वत्र आदर-भाव दीखता है। ग्रामदान की धुन उन पर सवार हो गयी है। खाने-पीने की, आराम की परवाह किये बगैर वह अपने को खपा रही हैं। इन सबके कार्य के फलस्वरूप तीन दिनों में १६ में से १० गाँवों का ग्रामदान हुआ है।

* * *

लगातार तीन दिन अलग-अलग गाँव के लोग आते रहे और अपने दिल तथा दिमाग की उलझनें, शंकाएँ आदि सब उन्होंने विनोबाजी के सामने रखीं। इसलिए इस विभाग में सर्वत्र एक ही चर्चा चली है—'ग्रामदान'। नदी पर स्नान करने जाते हैं, गाँव की बहनें वहाँ मिलती हैं, वहाँ भी वही शब्द सुनाई देता है—'ग्रामदान'। इर्दगिर्द बच्चे खेलते-कूदते रहते हैं, तो बीच-बीच में उनकी बातों से भी एक ही ध्वनि निकलती है—'ग्रामदान'।

गुजरात के अरुण भाई ने बाबा से पूछा था, "आपने एक जमाने में कुछ कविताएँ बनायी हैं। आज भी आप क्यों नहीं बनाते हैं?"

उनको जवाब मिला. "ग्रामदान का काम पूरा करो, फिर होगा हमारा काव्य-लेखन।" चर्चा में, भाषण में इसी बात पर वे जोर दे रहे हैं—"घर में शादी होगी, तो उसकी खुशी में ग्रामदान देना चाहिये, जन्म होगा तो भी ग्रामदान देना चाहिये। किसी की मृत्यु हुई तो उसे सद्गति मिले, इसलिए ग्रामदान देना ही चाहिये।"

इधर अजीब भ्रम फैला है, खासकर गाँव के लोग पूछते हैं, "सुना है कि १९६२ में प्रलय होने वाला है!"

बाबा कहते हैं: "देखो, अगर प्रलय होने वाला है तो हम सबको पुण्य कार्य करके मरना चाहिये। इसलिए प्रलय होने वाला हो तो ग्रामदान करके हम मरें; अगर नहीं होने वाला तब भी चैन से रहने के लिए ग्रामदान जरूरी है। पृथ्वी पर स्वर्ग आयेगा। जीते जी हम स्वर्ग देखेंगे। तात्पर्य हर हालत में ग्रामदान करना ही चाहिये।"

ग्रामदान! ग्रामदान!! ग्रामदान!!! यहाँ के वातावरण में यही एक चर्चा चली है और बाबा तो तुलसीदास के "सावन के अंधे' के समान एक ही बात कहते हैं। चीन और भारत के बीच जो तनाव है, उस बारे में कोई सवाल पूछे तो उनके लिए भी उनका जवाब है—"ग्रामदान! यह तो उनका 'डिफेन्स-मेशर' है।" और गुनगुनाते हैं "मोंहि तो सावन के अंधहिं ज्यों सूझत रंग हरो।"

———

लाला अचिन्तराम ! :१:

• मल्लानन्द

लाला अचिन्तरामजी से पहली बार मेरी भेंट २२-२३ अक्टूबर, १९५४ को श्री श्रीकृष्णदासजी जाजू के साथ मोगा, जिला फिरोजपुर, पंजाब में हुई। ये दोनों 'गुरुजन' हमारे ही गरीबखाने पर रहे। जाजूजी ने एक सार्वजनिक सभा में सम्पत्ति-दान का विचार रखा, परन्तु लाला अचिन्तरामजी तो मुझ पर ही अपनी प्यार भरी बातों का प्रभाव डालते रहे और भूदान-आन्दोलन के लिए प्रेरित करते रहे। तत्पश्चात् लालाजी ने दो-तीन पत्र भी मुझे लिखे। परन्तु मैंने एक कटु उत्तर दिया कि "यदि आप मुझसे काम लेना चाहते हैं तो मैं सिवाय आपके और किसी के आधीन काम नहीं कर सकूँगा। यदि आप मुझे सँभाल सकते हैं, मेरी गलतियों को, क्रोध को बरदाश्त कर सकते हैं, तो मैं आपके चरणों में हाजिर हूँ।" लालाजी ने मुझे स्वीकार किया और ६ दिसम्बर, १९५४ को पहली बार अबोहर में मुझे यात्रा पर बुलाया।

उन्होंने २ बजे का समय दिया था, परन्तु मेरे मोगा से थोड़ी देरी से पहुँचने के कारण वे अबोहर छोड़ ५ मील दूरी पर एक गाँव में पड़ाव डाल चुके थे। अबोहर से प्रेमवश मैं अनजान गाँव की ओर अकेला चल पड़ा और पूछता-पूछता लगभग ५ बजे जाकर लालाजी के चरणों में प्रणाम किया। लालाजी ने मुझे झट अपने चरणों से उठाया और सीने से लगा लिया। लालाजी उस समय अन्य चार पद-यात्री साथियों के साथ—जिनमें एक नवयुवक श्री ओंकारचन्दजी थे, जो लालाजी के अन्तिम दिन तक साथ रहे गाँव में—सम्पर्क कर रहे थे, मैं भी साथ हो लिया।

अगले दिन को प्रातः ४ बजे लालाजी उठे, हम सबको उठाया, नित्य कर्म करने के बाद, बाहर ही घोर सर्दी में ठंडे जल से स्नान करने के लिए निकल पड़े। मेरे आलसी जीवन को एकदम पहले दिन ही ऐसी कड़ी साधना के लिए साहस करना बहुत मुश्किल-सा दीखा, परन्तु लालाजी की आयु को देख कर कपड़े मैंने भी उतारे और लग गया स्नान करने। राम-राम नाम जपते हुए स्नान समाप्त किया। हाथ-पाँव सुन्न हो गये। दाँत कटकटा रहे थे। जीवन का एक नया अनुभव मिल रहा था। अपने स्थान पर पहुँचे। अपने-अपने गर्म कम्बलों में लिपटने के पश्चात् प्रार्थना हुई और तत्पश्चात् लालाजी ने प्रार्थना में "जब जो देखता है भूत सब, उसका किसी के प्रति नहीं रहता कहीं," इन पंक्तियों पर विचार प्रकट किये। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि एक ज्ञानी कर्मयोगी ही बोध दे रहा है। मुझे बहुत आनन्द आया, उनके इस पहले ही सत्संग में।

प्रार्थना की पंक्तियों पर वे अपने जीवन-काल में सतत आचरण करते रहे और दूसरों पर भी प्रेम से जोर डालते थे। प्रार्थना पर लालाजी का बहुत विश्वास था, कभी-कभी तो प्रातःकाल हमारे जागने के पहले एक-एक घण्टा मुँह ढँक कर ध्यान में मस्त रहते, कभी गाने लगते तो एक ही धुन को पचासों बार दोहराते। 'आश्रम भजनावली' के गीत सुन कर मस्त हो जाते थे और कहते—मेरे बच्चे, मुझे तो बस, सदा तू इन गीतों को ही सुनाता रहा कर। जब मैं कभी गाता, "घूँघट के पट खोल रे, तोए पिया मिलेंगे।" लालाजी बार-बार हाथ उठा कर बोलते, जैसे कोई नयी दुलहिन स्वयं अपने हाथों से धीरे से संकोच से अपने घूँघट उठा कर अपने प्यारे प्रीतम के दर्शन कर रही हो। अजीब ही मस्ती थी उनकी और उनकी ही मस्ती ने इस बच्चे को भी मस्त कर दिया। "संन्यस्त करके सर्वथा संकल्प निज, हे जीव मेरे, स्मरण करता रह उसे।" इसको गाते गाते। कई बार भूल जाते थे अपने आपको।

फिर लालाजी विनोबाजी के 'भूदान-यज्ञ' में छपे हुए लेखों को सुनते और स्वयं चरखा चलाते। खास-खास पंक्तियों को दो-दो बार भी सुनते। तब फिर गाँव के लोगों का आना-जाना शुरू हो जाता तो लालाजी अपनी आध्यात्मिक भाषा से विनोबाजी की बातें लोगों के सामने रखते—भूदान, सम्पत्तिदान, साधनदान इत्यादि। फिर गाँव में जन-सम्पर्क के लिए निकल पड़ते। गाँव की पूरी बस्ती के दर्शन करते, हरएक का शंका-समाधान करते।

लालाजी कभी-कभी किसी व्यक्ति को समझाने में घंटों लगा देते थे। मैं तो आध घण्टे में ऊब जाता और सोचने लगता कि यह सब क्या है, दूसरा आदमी कुछ नहीं समझ सकेगा। परन्तु लालाजी का विश्वास था कि वह जरूर समझेगा और इसीलिए कभी भी अपना धीरज नहीं छोड़ते थे और उस व्यक्ति पर अपना पूरा प्यार बरसाते थे। इस तरह वे कई बार अपने इस प्रयोग में सफल होते थे।

लालाजी हर काम समय और व्यवस्था से करना पसन्द करते थे। जहाँ ठहरते थे, वहाँ की पूरी सफाई का ख्याल रखते थे। बड़े व्यक्ति होते हुए भी नारे लगाना, गीत गाना, मुनादी करना आदि छोटी बातों में भी संकोच नहीं करते थे।

भूमिवालों में किसी प्रकार की बेचैनी न हो, इसका भी पूरा ख्याल रखते थे। एक बार हम कालरखिया गाँव में गये। गाँव का जमींदार पूरे गाँव का मालिक था, लालाजी उन्हीं के यहाँ ठहरना चाहते थे। परन्तु हवेली के अन्दर से उनके कारिंदे ने कहा कि आपको ठहराने का हमें कोई हुक्म नहीं है, आप अपना अन्य इन्तजाम कीजिये। सूर्य छिप चुका था और चूँकि गाँव वाले जमींदार से बहुत डरते थे, इसलिए कोई भी हमें ठहराने को तैयार नहीं था। लालाजी ने सामान को हवेली के बाहर रखवा कर हमें सभा की मुनादी करने के लिए कहा और करीब पौन घंटे बाद लालाजी ने एक गरीब जुलाहे के कमरे में हमारे ठहरने का इन्तजाम कर दिया। रात को सभा हुई। एक हरिजन को लालाजी ने साहस देकर प्रधान बनाया। जमींदार के परिवारवाले भी चोरी-चोरी अपने घरों में सभा की कार्रवाई सुन रहे थे। जमींदार के डर के मारे किसी ने हमको भोजन भी नहीं करवाया, थोड़ा दूध पीकर हम सोने लगे। परन्तु दिसम्बर की ठंड और ओढ़ने-बिछाने की कमी के कारण किसी को नींद नहीं आयी। पिछले दिन की यात्रा की थकान और भोजन के अभाव में हम लोग थोड़ा थक-से गये थे। लालाजी ने कहा कि हमें खुद अपना भोजन बना लेना चाहिए और हमने वैसा किया; क्योंकि अगर गाँव में से हमको कोई खाना खिलाता तो उसको गाँव से बाहर निकालने की सम्भावना सामने थी।

हम लोग गाँव से नये पड़ाव पर जाने वाले थे कि गाँव का बड़ा सरदार अबोहर से आया। घरवालों ने उनके आते ही सब खबर उनको दी।

वह लालाजी से मिलने आया और उसने उनके परिवार की ओर से किये गये असद्‌वर्तन के लिए क्षमा चाही। लालाजी ने बड़े प्रेम और उदारता से बातचीत की और भूदान की बात उनको समझायी। जमींदार ने लालाजी को इस पर सोचने का वचन दिया। कुछ दिनों के पश्चात् इसी गाँव के गरीब लोग लालाजी से मिलने आये और कहा कि आप लोग यदि एक दो बार फिर गाँव में आयेंगे तो बहुत अच्छा होगा, क्योंकि आपके जाने के बाद जमींदार ने सबको बुला कर बड़े प्रेम से बात की है और उसके स्वभाव में भी काफी परिवर्तन आ गया।

गाँव-गाँव में पार्टीबाजी होती है तो पंजाब के अबोहर तहसील के गाँव भी इस बीमारी से नहीं छूटे! दोनों पक्षवाले बन्दूकों के सहारे के बगैर नहीं घूम सकते थे।

पैदल यात्रा करते हुए मैं और लालाजी किलार गाँव में भूदान के लिए गये थे। एक बड़े जमींदार के घर ठहरे, तो दूसरे पक्षवाले नाराज। लालाजी के लिए तो दोनों पक्ष बराबर थे, परन्तु उनका समाधान न हुआ। आपस में उन पक्षों की रिश्तेदारी भी थी। एक पक्ष की लड़की को दूसरे पक्षवाले घर में नहीं आने देते थे। बहुत कशीदगी थी। लालाजी भूदान की बात को छोड़ कर उनके घर के मामले सुलझाने के लिए १५ दिन उसी किलार जैसे छोटे-से गाँव में रुक कर दोनों पक्षों को रजामन्द कर सके। जब लालाजी ने उपवास शब्द का प्रयोग किया, तब दोनों पक्षों ने सोचा कि लड़ाई, भेद, झगड़ा हमारा और लालाजी उपवास क्यों रखें! पक्षों को असर हो गया। दोनों पक्षों ने लालाजी को विश्वास दिलाया कि भविष्य में नहीं झगड़ेंगे, लड़की अपने ससुराल रहेगी। इस आश्वासन के बाद वहाँ लालाजी ने भोजन किया और तत्पश्चात् उन लोगों ने भूदान-पत्र भी भरे और श्री पुरुषोत्तमदासजी टण्डन के करकमलों द्वारा भू-वितरण भी हुआ।

सन् १९५५ में पंजाब-पेप्सू भूदान-समिति का कार्यालय पहले अम्बाला छावनी में था। मासिक सभाएँ भी बहुत बार वहीं होती थीं, लालाजी कभी-कभी अपनी डाक का उत्तर दो-तीन दिन वहीं रुक कर देते। मुझे उन्होंने हिन्दी और अंग्रेजी के दो नये टाइप-राइटर खरीद दिये थे। जब पहली बार टाइपराइटर लेकर अम्बाला गया तो दिन भर कुछ काम किया और थोड़ी देर शाम को टहलने के पश्चात् जब फिर टाइप करने के लिए मशीन पर बैठा तो देखा कि किसी अनजान ने उस मशीन को इस्तेमाल किया है। फौरन मैंने लालाजी से कहा, तो पास में ही जिस व्यक्ति ने उसे थोड़ा खराब किया था, वह बोल उठा कि "इन्हें तो ऐसे ही शिकायत करने की आदत दीखती है!" मैं अभी नया-नया ही ऐसे वातावरण में आया था, तो फौरन मेरा क्रोध जाग उठा और अपने आपे से बाहर होने को ही था कि लालाजी मुझ पर खिलखिला कर हँस पड़े तो फौरन मुझे अपने क्रोध के दोष का आभास हुआ। परन्तु लालाजी बोले कि

"मेरे बच्चे, तुझे जो क्रोध आया, यह मेरा ही दोष है। अभी यह मेरी ही कमजोरी है।"

मैं बहुत लज्जित हुआ। परन्तु लालाजी ने अगले दिन प्रातः काल, मेरी आत्मशुद्धि हो और वाणी में नम्रता आवे इसलिए मुझे बगैर बताये उपवास रखा। उन दिनों लालाजी ने पंजाब के तमाम कालेजों के अध्यापकों का एक सेमिनार भी बुलाया था, कुछ मुद्दे उन लोगों के सामने रखने थे। लालाजी ने मुझे एक प्रोफेसर श्री गोपालदासजी के पास नाश्ता करवा कर भेज दिया। काम की समाप्ति के पश्चात् जब कार्यालय में आया तब व्यवस्थापक भाई श्री जगन्नारायणजी—अब जिला-संयोजक, रोहतक—ने कहा कि भोजन करें। मैंने पूछा कि क्या लालाजी ने भोजन कर लिया तो उन्होंने उत्तर दिया कि लालाजी ने तो

प्रातःकाल से नाश्ता भी नहीं किया, तो मैंने कहा कि अब मैं दिन भर भोजन नहीं करूँगा। फिर लालजी को उस भाई ने बताया। परन्तु लालजी अपना फैसला दोपहर को भी न खाने का दे चुके थे, इसलिये उन्होंने मुझे भी खाने के लिए नहीं कुछ कहा, परन्तु शाम को लालजी ने मुझे जब भोजन के लिए कहा तो मैं तो रो पड़ा और लालजी से कहा कि दोष मेरा और उपवास आपने क्यों किया, तो कहने लगे, "बच्चे, यह मेरा दोष है, न कि तेरा।" मैं अपने को जब रोक न सका और अपना निश्चय न खाने का कहा तो लालजी ने कहा, तो फिर मैं भी नहीं खाऊँगा। मैंने कहा, "यदि आप मेरे साथ इस तरह करेंगे तो मैं तब तक नहीं खाऊँगा, जब तक आप न खायेंगे!"

तो इस प्रकार ७२ घण्टे तक लालाजी ने मेरे क्रोध की अग्नि को शान्त करने के लिए उपवास रखा और उपवास में ही अकेले फिर अम्बाला से दिल्ली चले गये। और लौंग का उबला हुआ पानी रास्ते में प्रयोग करते रहे। दिल्ली में भी तीन दिन उनकी तबियत बिगड़ी रही। आज मुझे अपने ऐसे दो चार प्रसंगों के कुकर्मों पर पर बड़ी लज्जा आती है। ●

इस बार की सर्दी

[पृष्ठ ३ का शेष]

भी नीचे तक चला गया! इलाहाबाद के मेट्रोलाजिकल दफ्तर वालों का कहना है कि यहाँ थर्मामीटर कभी इतना नहीं गिरा था। ऐसी सर्दी न कभी देखी गयी न सुनी गयी। फिर, जो ठंडी हवा चलती थी वह तो एकदम तीर की तरह मार करती थी।

इस मौके पर उदार सज्जनों, सार्वजनिक संस्थाओं और सरकार की तरफ से मदद की गयी, कुछ चावल तकसीम किये गये और बड़े-बड़े शहरों में हाथ पैर तापने के लिए लक्कड़ भी जलवाये गये। देहात वालों को तो कोई खास मदद नहीं पहुँचायी जा सकी। फिर भी, वे उसे झेल ले गये। मगर इस दौरान में एक चीज ऐसी हुई, जिसे देख कर किसे दुःख न होगा! वह यह कि हमारे व्यापारियों और दूकानदारों ने लकड़ी, कोयले, ऊनी माल वगैरह के दाम बढ़ा दिये। सूती मोजा, मफलर, बनियान और दास्ताने नापैद हो गये और पैसे की जगह चार पैसे वसूल किये गये। कोयला जो सात-आठ रुपये मन था, पंद्रह सोलह रुपये मन हो गया। फुटकर में तो आठ-दस-बारह आने सेर तक लिया गया।

यह कैसा दुर्भाग्य है! हमारे व्यापारी भाई जनता की मुसीबत से इस तरह फायदा उठायेंगे, ऐसा विश्वास नहीं होता था। लेकिन न उन्हें यह शोभा देता है और न इससे उनकी प्रतिष्ठा ही बढ़ती है। लेकिन उन्हें विचार करना चाहिए कि इस तरह दूसरे का, खासकर गरीबों की विपत्ति से जब वह लाभ उठायेंगे, तो उनको अन्त में घाटा ही रहेगा। न इसमें अर्थ ही सधता है, न धर्म। —सुरेशराम

गोआ का आँखों देखा हाल

गोविन्द वा० देशपांडे

दिसम्बर के पहले सप्ताह में ही मनमाड से पूना आनेवाली तथा पूना से बेलगाँव जानेवाली रेल-गाड़ियाँ अकस्मात् देरी से आनी शुरू हुईं। पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि फौजी सामान बेलगाँव की ओर जा रहा है। दूसरे ही दिन कई गाड़ियाँ बन्द की गयीं। दो ही दिन में पूना स्टेशन फौजी अड्डे के रूप में परिवर्तित हुआ। सड़कों में फौजी यातायात शुरू हुआ। प्रवासियों का आवागमन रोका गया। फौज से लदी हुई सैंकड़ों लारियाँ बेलगाँव और सावन्तवाड़ी की ओर जाती हुई हम देख रहे थे। अखबारों के समाचारों से पता चला कि ये तैयारियाँ गोआ-मुक्ति के लिए हो रही हैं। रक्षामन्त्री तथा प्रधानमन्त्री के वक्तव्यों से स्थिति स्पष्ट हुई कि गोआ के लिए लड़ाई होगी। साथ-साथ गोआ में दमन-चक्र बढ़ जाने की तथा राष्ट्रवादियों की हलचलें बढ़ने के समाचार भी प्रकाशित होने लगे।

छह साल पहले राष्ट्रवादियों की हलचलों के समाचार जिस प्रकार प्रकाशित होते थे, उसी प्रकार के ये समाचार थे। इनमें से वस्तुस्थिति का प्रत्यक्ष दर्शन होना मुश्किल था। क्या स्वयं जाकर देखना नहीं चाहिए? लड़ाई छिड़ जाती है, या किसी प्रकार की गम्भीर स्थिति पैदा होती है, तो पड़ोसी सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का, शांति-सैनिकों का क्या कुछ भी कर्तव्य नहीं होगा? कुछ करने लायक कर्तव्य अगर है भी, तो वस्तुस्थिति की जानकारी के अभाव में हम कुछ भी नहीं कर पायेंगे। इस प्रकार के विचार मन में आने लगे।

इतने में ही गोआ में काम करने वाले दो भाइयों से मुलाकात हुई। उनके कहने से पता चला कि प्रकाशित होने वाले समाचार अवास्तविक और अतिरंजित हैं। तब निर्णय किया कि गोआ की सीमा पर जाकर स्थिति प्रत्यक्ष देखनी चाहिये, जो कुछ दिखाई देगा वह नेताओं के सामने रखना चाहिये।

इस विचार से श्री बाबूलाल गांधी और मैं ता० १८ दिसम्बर की सुबह बेलगाँव पहुँचे। लड़ाई शुरू हो गयी थी। आवश्यक इजाजत आदि लेकर ता० २० की रात को हम पंजिम पहुँचे। गोआ की राजधानी का यह शहर 'फौजी कर्फ्यू' में सो रहा था! चारों ओर सिपाही डेरा डाल कर बैठे थे या टहल रहे थे। रास्ते में ही मैं पेडणे गाँव से हम गुजरे। फौज, पुलिस के अधिकारियों से मुलाकातें कीं, अन्य नागरिकों से मिले। इसके पहले पता चला कि ४३ गाँवों के इस तहसील का पुर्तगाली शासन तोपों के केवल आवाज से ही टूट पड़ा था! बिना एक गोली दागे, तहसील-कचहरी पर १८ तारीख की सुबह सामान्य नागरिकों ने तिरंगा ध्वज फहराया था। रत्नागिरी जिले के भूदान कार्यकर्ता श्री यादवराव चह्वाण, चन्द्राताई किर्लोस्कर, कामतेकर, नारकर, गोआ-सीमा के अन्दर आठ मील स्थित पेडणे गाँव में स्वयं हो आये थे। वे हमारे साथ भी आये।

सर्वप्रथम पंजिम में गोआ-कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री कामतजी से मुलाकात हुई। उन्होंने बताया कि

"पंजिम का पुर्तगाली शासन असलियत में भारतीय फौजों की हलचल के समाचारों से ही टूट चुका था। शासन के लिए लोगों में रत्ती भर भी प्रेम नहीं था। शायद इतनी बड़ी संख्या में निःशस्त्र भारतीय नागरिक भी एकसाथ गोआ प्रवेश करते, तो गोआ की जनता इससे कई गुना अधिक साथ देती। गोआ की जनता का पराक्रम सारी दुनिया को दीख पड़ता और शायद फौज का काम भी नहीं पड़ता! फौजी कार्रवाई से गोआ आजाद हुआ, फिर भी उसकी हमें खुशी है!"

गोआ के नवनिर्माण की चिंता उन्हें सता रही थी। "भारत के सारे के सारे विवाद—भाषा, सीमा, पक्ष आदि के—गोआ में आयेंगे तो शान्त प्रकृति के गोआ निवासी सभ्रम में पड़ेंगे। इससे हम कैसे बच सकते हैं?" इस दिशा में उनका चिंतन चल रहा था।

श्री टोनी डिसूजा नामक एक रोमन केथोलिक तरुण कार्यकर्ता ने निष्पक्ष भूमिका से युवकों का संगठन बनाने के बारे में हमसे व्यापक और गहरी चर्चा की। श्री डिसूजा १८ दिसम्बर को जेल से रिहा हुए। वे राजनीति से दूर रह कर समाज-सेवा करना चाहते हैं। चार दिन बद रहने के बाद पंजिम का बाजार २१ तारीख को खुला। नागरिक-जीवन करीब-करीब पूर्ववत् शुरू हुआ था। आजादी का जोश और खुशी चेहरे से, स्वभाव के साथ स्पष्ट रूप से नजर आती थी। कई दूसरे कार्यकर्ता भी हमसे मिले।

मुलगाँव शहर एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र है। यहाँ हम श्री पुरुषोत्तम काकोडकर तथा उनके साथियों से मिले। कई दिनों से श्री काकोड़कर विधायक वृत्ति से लोक-जागृति के काम में लगे हुए हैं।

"भारतीय और गोआ की जनता के संयुक्त प्रयत्नों से आजादी आती, तो बहुत ही अच्छा होता। फौज का पराक्रम जनता का पराक्रम नहीं है। जन शक्ति से आजादी प्राप्त करना असंभव भी नहीं था। पुर्तगाली शासन क्रूर था, लेकिन शूर नहीं। कम-से-कम गोआ के विकास का आगे का कार्य जनता के प्रत्यक्ष सहकार से होगा, ऐसा रास्ता निकलना चाहिये। क्या सर्वोदय के नेता और कार्यकर्ता इस दिशा में हमारी मदद नहीं करेंगे! एक छोटा-सा दल निष्ठा से पक्षभेदों से दूर रह कर जनता की सेवा करने के लिए उत्सुक है। अनुभव की कमी हमारे रास्ते का रोड़ा है। हम आशा करते हैं कि आप लोग जरूर हमारी मदद करेंगे। मुझे बहुत खुशी हुई कि तुरन्त आप लोग आये। वेदना और संवेदना प्रकट करने का मौका मुझे मिला!" इन शब्दों में उन्होंने अपना हृदय प्रकट किया। महाराष्ट्र, कर्नाटक और गोआ के कार्यकर्ताओं का एक शिविर और पदयात्रा की कल्पना का उन्होंने हार्दिक स्वागत किया और जनवरी में ही इसे पूरा करने की कोशिश करने का विचार व्यक्त किया। उनके एक साथी श्री मोहन काटापूरकर जल्द ही गाँव में जाकर एक केंद्र शुरू करने वाले हैं। खादी-कार्य चलाने का भी इन लोगों का विचार है।

पेडणे तहसील में भी सर्वोदय-कार्य की काफी गुंजाइश मालूम हुई। जमीन की समस्या गोआ में मौजूद है। भूख और बेकारी का तांडव भारत के अन्य हिस्सों से बहुत कम नहीं है। गाँव स्वच्छ और सुंदर है। लेकिन ग्रामोद्योग नहीं के बराबर है। बाजारों में प्याज, आलू, शक्कर, कपड़ा, चावल आदि सब चीजें योरप, जापान, दक्षिण अमेरिका से आती हैं। महँगाई काफी है। चावल, नारियल, काजू और आम, ये खेती की मुख्य पैदाइश है। मैंगनीज और लोहे की खानें बड़ी संख्या में है। 'ट्रेड यूनियन' नहीं है, सहकारी संस्थाएँ नहीं हैं। जमीन पर पचास से सत्तर फीसदी लगान लिया जाता है। शिक्षितों का प्रमाण बीस फीसदी के करीब है। जंगल का प्रमाण काफी बड़ा है। यातायात के साधन विपुल और अच्छे हैं। शराब खूब पी जाती है। रोमन केथोलिक ४० फीसदी है।

कुल मिला कर हम लोगों ने जो देखा और सुना उस पर से हमें लगा कि गोआ के नवनिर्माण में सर्वोदय का बहुत बड़ा हिस्सा हो सकता है। आवश्यकता कुछ करने की है। चार दिन गोआ में रह कर, नयी आजादी का उत्साह और उत्सव देख कर हम लोग २५ तारीख को गोआ से लौटे। नयी पहचानें हुई, नया हृदय देखा, नयी आशा पैदा हुई।

(स. प्रे. स., पूना)

आगरा में गोराजी के अनेक कार्यक्रम

'दिल्ली-सत्याग्रह एक शुरुआत मात्र है'

गोराजी अपनी सत्याग्रह-पदयात्रा के सिलसिले में २६ दिसम्बर को प्रातः ८ बजे आगरा पहुँचे। कड़ाके की भीषण सर्दी में भी लोगों ने यमुना के तट पर गोराजी और उनके साथियों का शानदार स्वागत किया। गोराजी २८ दिसम्बर तक आगरा में रहे। इस अर्से में उन्होंने अनेक अवसरों पर सार्वजनिक सभाओं और समारोहों में अपने निर्दलीय प्रजातंत्र के विचार प्रकट किये और अपनी पदयात्रा का उद्देश्य बताया।

२७ दिसम्बर को [illegible] सर्वोदय-कार्यकर्ताओं से चर्चा करते हुए आपने बताया कि सर्व सेवा संघ और कांग्रेस के जननायक मेरे सत्याग्रह से मतभेद रखते हैं, परन्तु उनका स्नेह और शुभकामनाएँ मुझे प्राप्त हैं। गोराजी ने इस अवसर पर यह बताया कि दिल्ली में उनका सत्याग्रह तो केवल कार्यक्रम की शुरुआत ही है।

२९ दिसम्बर को सुबह जब गोराजी पदयात्रा के लिए निकले तो अनेक लोगों ने उनको विदाई दी। गोराजी के विचारों से विशेषतः नवयुवकों पर अच्छा प्रभाव पड़ा है।

अर्थ-संग्रह अभियान

'अर्थ-संग्रह अभियान' में २० नवम्बर '६१ तक अ० भा० भारत सर्व सेवा संघ कार्यालय में प्राप्त प्रांतवार रकम यहाँ दे रहे हैं।

प्रांत	रु.-न. पै.
दिल्ली	५८५.००
पश्चिम बंगाल	६३५०.५०
उत्तर प्रदेश	२२४८.९४
महाराष्ट्र	१६७०.०३
पंजाब	३१०.७५
गुजरात	२२०१.००
मध्यप्रदेश	१८९०.७४
उड़ीसा	७०२.००
कुल	१५,९५८.९६

पंचवर्षीय सहायता

ता० २० जुलाई से १६ नवम्बर तक पंचवर्षीय सहायता में प्राप्त रकम की सूची इस प्रकार है :

शहर	दाता	कुल रु०
कलकत्ता	१५८	२६,३४८
दिल्ली	२	२२२
बम्बई	१२	१,५७२
आगरा	१	१११
पंजाब प्रदेश	२	२२२
पटना	१	१११
अमरावती	१	१११
	कुल	२८,६९७

गोविन्दपुर के सब लोगों ने दान दिया

मुंगेर जिले में बिहार प्रान्तीय पदयात्रा-टोली का परिभ्रमण

मुंगेर जिले के तारापुर थाने में बिहार प्रान्तीय पदयात्रा-टोली द्वारा श्री ब्रजमोहन शर्मा के नेतृत्व में पदयात्रा हुई। "दान दो इकट्ठा बीघे में कट्ठा" मंत्र गोविन्दपुर ग्राम में सार्थक हुआ। सम्पूर्ण ग्राम के लोगों ने बीघा-कट्ठा दानपत्र दिया। उस ग्राम का पाँच सौ बीघे का रकबा है तथा कुल दान पाँच सौ तीस कट्ठे का मिला। संग्रामपुर और जलजपुर ग्राम में भी दान मिला। जलजपुर-ग्रामवासी भी पूरे ग्राम से दान देंगे।

भयंकर शीत-लहरी में भी नियमित रूप से पाँच बजे सुबह टोली की यात्रा आरम्भ हो जाती थी तथा कड़ाके के जाड़े में प्रत्येक पड़ाव पर सैकड़ों की संख्या में लोग विचार सुनने आते थे, जो आन्दोलन की सफलता का द्योतक है। सम्पूर्ण थाने में ११७५ कट्ठे का दान मिला एवं 'भूदान यज्ञ' के १२ ग्राहक बने। दिसम्बर अंत तक मुंगेर जिले में यात्रा चली और अब दरभंगा जिले में चल रही है। अब तक टोली लगभग ९ हजार मील चल चुकी है।

श्री रामकुमार 'कमल' की पदयात्रा

श्री रामकुमारजी 'कमल' अपनी भारत की अखंड पदयात्रा के सिलसिले में आजकल उड़ीसा में पदयात्रा कर रहे हैं। प्रतिदिन करीब १० मील चलते हैं। स्थानीय कार्यकर्ताओं का सहयोग इन्हें बराबर मिलता रहता है। पदयात्रा के सिलसिले में सर्वोदय-पात्र, सर्वोदय मंडलों की स्थापना और भूदान की प्राप्ति भी बीच-बीच में होती रहती है। कोरापुट में इन्हें एक ग्रामदान भी मिला है। इनका विशेष सम्पर्क शिक्षण-संस्थाओं से रहता है।

आम-चुनाव से संबंधित दो पुस्तिकाएँ

आम-चुनावों से संबंधित दो पुस्तिकाएँ—"सर्व सेवा संघ और आगामी आम-चुनाव" तथा "आम-चुनाव और राजनीतिक पक्षों के लिए आचार-मर्यादा" शीर्षक से हाल ही में प्रकाशित हुई हैं। इनके लिए इस पते पर लिखें : मंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ (लोकनीति-लोक-शिक्षण विभाग), राजघाट, काशी।

श्री देवी प्रसाद 'युद्ध-विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय' के मंत्री बने

श्री देवी प्रसादजी 'युद्ध-विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय' (वार रेजिस्टर्स इन्टरनेशनल) के मंत्री चुने गये हैं। अपने कार्य के सिलसिले में उन्हें करीब चार साल तक लन्दन में रहना होगा। १५ जनवरी को वे भारत आ रहे हैं और १ जून से अपना कार्यभार सम्हालने के लिए लन्दन जायेंगे, ऐसी संभावना है।

खादी-जगत् में नयी खोज

हमारे विद्यालय के अम्बर शिक्षक श्री हंसराजजी एक बार अम्बर चरखा चला रहे थे तो मैंने उनसे जिक्र किया कि इसका बाबिन ऐसे ढंग पर भरना चाहिये, जिससे कि वह सीधा बाने की 'शटल' में काम दे सके। इस बात को उन्होंने ध्यान में रख कर चरखे में आवश्यक संशोधन आरम्भ कर दिये। अन्त में वह इस बात में सफल हो गये कि अम्बर चरखे पर ही बाबिन इस ढंग पर भरा जाये कि वह सीधा बुनाई की 'शटल' में काम दे। श्री कृष्णदास गान्धी, संयोजक अखिल भारत सर्व सेवा संघ प्रयोग समिति, अहमदाबाद से यहाँ आकर इस आविष्कार का निरीक्षण किया और कुछ संशोधन करने के लिए भी सुझाया। श्री हंसराजजी ने वह संशोधन करके श्री कृष्णदास भाई को सूचित कर दिया। १ दिसम्बर को वे श्री द्वारकानाथजी लेले को साथ लेकर फिर विद्यालय में इस आविष्कार को देखने आये, और दोनों महानुभावों ने बहुत प्रसन्नता प्रकट की, क्योंकि इस आविष्कार से सूत अटेरने तथा खोल कर नली भरने तक का सारा समय बच जाता है। श्री लेलेजी ने इच्छा प्रकट की कि इसी तरह ताने के लिए भी नलियाँ तैयार हो सके ऐसा प्रयोग करने चाहिये, ताकि ताने के लिए भी जो समय बच सकता है वह बचा कर खादी की उत्पत्ति में समय की बचत की जा सके। श्री कृष्णदासजी ने इस प्रयोग को पूर्ण रूप देने के लिए श्री हंसराजजी को अहमदाबाद बुलाया है। इसके बाद मार्च १९६२ को होने वाले अखिल भारतीय सरंजाम-सम्मेलन में प्रदर्शन के लिए आविष्कार रखा जाये।

खादी विद्यालय,
समालखा —उदयचन्द

विनोबाजी का पता:—
मार्फत—मौजादार,
पो० ढकुआ खाना,
जिला : नार्थ लखीमपुर (असम)

बदायूँ में आम चुनावों के लिए आचार-मर्यादा स्वीकृत

बदायूँ (उत्तर प्रदेश) के जिला सर्वोदय-मंडल के तत्वावधान ३१ दिसम्बर, '६१ को विभिन्न राजनीतिक पक्ष-कांग्रेस, प्रजा-समाजवादी, जनसंघ और समाजवादी दल के प्रतिनिधि और अन्य गणमान्य व्यक्तियों की बैठक उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री त्रिवेणीसहाय की अध्यक्षता में हुई। बैठक में सर्वसम्मति से नौ सूत्रीय आचार-संहिता स्वीकृत की गयी है।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९२५० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९१०० एक अंक : १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १९ जनवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक १६

गोआ की कार्रवाई पर

व्यापक चिन्तन और बृहत् दृष्टिकोण की आवश्यकता

धीरेन्द्र मजूमदार

[गोआ में सैनिक-कार्रवाई के बाद, भारत में विशेषत: रचनात्मक कार्यकर्ताओं में इस प्रश्न को लेकर व्यापक चिंतन और मनोमन्थन हो रहा है। पिछले दिनों श्री विमलाबहन ठकार ने इस प्रश्न पर कुछ सवाल श्री धीरेन्द्र भाई से किये थे। श्री धीरेन्द्र भाई ने इन सवालों पर जो बुनियादी विचार प्रकट किये हैं, वे श्री विमलाबहन के प्रश्नों के साथ यहाँ दिये जा रहे हैं। —सं०]

विमलाबहन : आपने अखबारों में देखा है कि गोआ पर सैनिक कार्रवाई के प्रसंग को लोग गांधी-विचार की पराजय मान रहे हैं तथा गांधीवादियों पर इस बात की टीका हो रही है कि वे अन्तर्राष्ट्रीय सवालों पर बिलकुल उदासीन रहते हैं।

धीरेन्द्रभाई : हाँ, मैंने देखा तो है, लेकिन मैं मानता हूँ कि इसे गांधीवाद की पराजय मानना गलत है। गांधीवादी अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न पर बिल्कुल उदासीन रहते हैं, ऐसी टीका भी ठीक नहीं है। वस्तुतः आज विनोबाजी ही एकमात्र मनुष्य हैं, जो वर्तमान समस्याओं के अहिंसक समाधान निकालने के प्रयास में लगे हुए हैं। उन्होंने भूदान आन्दोलन द्वारा हिंसा के कारणों के निराकरण का प्रयास किया है। यह जरूर है कि वे इस दिशा में एक प्रकार से एकाकी यात्री हैं। दुनिया के हर ऐसे प्रसंग तथा परिस्थिति के प्रति वे निरन्तर जागरूक रहते हैं और उसमें से रास्ता निकालने के संघर्ष में अपने तरीके से लगे हुए हैं।

विमलाबहन : इसका मतलब यह हुआ कि आप इस बात को नहीं मानते हैं कि गोआ की कार्रवाई गांधी-विचार की पराजय है।

धीरेन्द्रभाई : निस्सन्देह, मैं ऐसा नहीं मानता हूँ। आखिर सारी दुनिया की सरकारें सब एक ही प्रकार की होती हैं। भारतीय सरकार भी दूसरी सरकारों से विशेष रूप से भिन्न नहीं है। हर राज्य-शक्ति की आखिरी निष्ठा हिंसा पर ही है। अतः यह स्वाभाविक है कि चौदह साल तक गोआ को मुक्त करने के शान्तिमय तरीके की कोशिश करने के बाद भारत-सरकार ने आखिर में सैनिक कार्रवाई की है, और उस कार्रवाई में सैनिक कार्रवाई के लिहाज से न्यूनतम हिंसा हुई है। आखिर भौगोलिक, ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से गोआ हिन्दुस्तान का हिस्सा है और इस कारण भारतवासी के दिल में आजादी अधूरी है, यह भावना भरी हुई थी।

मैं यह बात इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि मैं सैनिक कार्रवाई को उचित मानता हूँ। मैं सिर्फ आज की सार्वजनिक मान्यता के अनुसार नेहरू की इस कार्रवाई का विश्लेषण करने की कोशिश कर रहा हूँ। मैं इतना ही कहना चाहता हूँ कि यह कार्रवाई गांधीवाद की असफलता का इजहार नहीं है। अगर किसी कदर असफलता कही जा सकती है, तो वह सैनिक कार्रवाई की नहीं है, बल्कि उसके बाद सम्पूर्ण भारतवासियों द्वारा प्रदर्शित 'सार्वजनिक उल्लास' में है। इस बात से जाहिर होता है कि हम अभी तक भारत की जनता को अहिंसक भावना के लिए विशेष रूप से उद्बोधित नहीं कर पाये हैं। यद्यपि हम पिछले दस सालों से मानवीय मूल्यों के परिवर्तन की बात करते रहे हैं। हमको अपनी इस मर्यादा को महसूस करना चाहिए और इस बात को स्पष्ट रूप से समझना चाहिए कि हमारा काम अत्यन्त गुरुतर है।

दूसरी बात यह है कि अभी तक हम दुनिया की समस्याओं के लिए राष्ट्रवादी दृष्टि से ऊपर नहीं उठ सके हैं। हमने अभी तक यह महसूस नहीं किया है कि राष्ट्रवाद और अहिंसा का आपस में मेल नहीं बैठता है। हम क्यों इस बात की ग्लानि अनुभव करते हैं कि गोआ में हम कुछ नहीं कर सके हैं? क्या हममें नागा-समस्या के बारे में इतनी ही तीव्रता थी? क्या अंगोला और मोजाम्बिक के बारे में हमारे मन में इस प्रकार की भावना उठती है? यह सही है कि गांधीजी की स्वदेशी भावना के अनुसार गोआ का प्रश्न पहले आ सकता है। लेकिन सवाल यह है कि क्या हमारी भावना उसी के अनुसार रही है?

> हमारे मन में अहंकार है कि गांधीजी भारत के हैं और हम उनके वारिस हैं, और इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को अहिंसक तरीके से हल करने के लिए हम ही एकमात्र योग्य पात्र हैं! मेरी समझ में यह गलत रुख है।

हो सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर अहिंसक प्रक्रिया को सीखने के लिए हिन्दुस्तान को किसी दूसरे मुल्क की ओर देखना पड़े। क्या गांधी केवल भारत के ही थे? क्या भारतीय ही उनके एकमात्र वारिस हैं? अगर वे राष्ट्रपिता हैं, तो क्या वे दुनिया के हर मुल्क के राष्ट्रपिता नहीं हैं? कौन जानता है कि अहिंसक प्रक्रिया की सफलता बताने का नेतृत्व भारत के सिवाय कोई दूसरा मुल्क नहीं करेगा?

अगर हममें निराशा या ग्लानि पैदा होती है, तो शायद वह अहंकार का ही दूसरा पहलू है। वस्तुतः बजाय इसके कि हम हताश हों या हममें आत्म-ग्लानि पैदा हो, आवश्यकता इस बात की है कि हम इस प्रकार के बुनियादी सवालों पर पुनर्विचार करें। हमें बिलकुल ताजे दिमाग से ऐसे मौलिक प्रश्नों पर विचार करना चाहिए। हताश या ग्लानि तभी पैदा हो सकती है, जब निराश होकर प्रयास ही छोड़ दें। लेकिन हमने ऐसा नहीं किया है, हमारा संघर्ष तो जारी है। विनोबाजी संघर्ष कर रहे हैं और जय-प्रकाश बाबू भी लगे हुए हैं। उसी तरह मैं भी अपने ढंग से एक नम्र प्रयास कर रहा हूँ।

यह संघर्ष मनुष्य के विवेक का है। मानवीय मूल्यों के प्रति वर्तमान जगत् की जो नफरत है, उसके खिलाफ यह मानव-आत्मा का विद्रोह है। दुनिया में जो लोग जाग्रत हैं, वे यह महसूस कर रहे हैं कि उन्होंने जिस प्रकार की समाज-व्यवस्था खड़ी की है, वह अपने ही लिए एक कारागार बन गयी है! ऐसी जाग्रत आत्माएँ दुनिया के हर कोने में मिलेंगी।

अतएव यह स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए कि अहिंसक क्रान्ति भारत की सीमा तक ही मर्यादित नहीं है और न यह कोई राष्ट्रीय संघर्ष ही है। यह एक विश्वव्यापी अभियान है। ग्रेटब्रिटेन में बर्ट्रेण्ड रसेल यह काम कर रहे हैं, अमेरिका में मार्टिन लूथर किंग लगे हुए हैं और अफ्रीका में अलबर्ट लुथुली हैं। इसी तरह अनेक देशों में लोग अपने-अपने ढंग से कुछ-न-कुछ कर रहे हैं। क्या 'जय जगत्' का मन्त्र हमें यह नहीं बताता है कि हम सब एक-दूसरे के हैं? क्या यह मन्त्र हमें यह नहीं सिखाता है कि हममें से हर-एक व्यक्ति पूरे मानव समाज का सेवक है और मानव समाज की हर समस्याओं के लिए अहिंसा का मार्ग खोजना हमारा प्रधान काम है?

विमलाबहन : मुझे खुशी है कि आप परिस्थिति की ओर इस प्रकार की उदात्त दृष्टि रखते हैं, यह चीज मुझे बहुत अच्छी लगती है। क्या आप यह नहीं समझते हैं कि गोआ-कार्रवाई के कारण भारत ने अपना नैतिक वजन खोया है?

धीरेन्द्रभाई : एक प्रकार से यह सही है और शायद नेहरूजी भी ऐसा महसूस करते हैं; लेकिन दूसरे मुल्कों के राजनीतिज्ञ इस कारण नेहरू की शिकायत नहीं कर सकते हैं। वे उनकी ओर उँगली नहीं दिखा सकते हैं, क्योंकि उनमें से शायद ही कोई ऐसे हैं, जो पंडित नेहरू जैसा धैर्य रख सकते थे।

विमलाबहन : क्या आप मानते हैं कि कम्युनिस्ट लद्दाख, अंगोला या लाओस के प्रश्न पर बात करते समय इस कार्रवाई का इस्तेमाल नहीं करेंगे ?

धीरेन्द्रभाई : मुझे नहीं लगता है कि वे ऐसा कर सकते हैं। अंगोला, कांगो, लाओस, लद्दाख आदि का प्रश्न बिलकुल भिन्न है। गोआ हिन्दुस्तान का एक हिस्सा है। क्या अल्जीरिया के बारे में फ्रांस, कांगो के बारे में बेल्जियम, लाओस के बारे में रूस-अमेरिका या लद्दाख के बारे में चीन ऐसा दावा कर सकता है ! निःसन्देह वे ऐसा नहीं कर सकते हैं।

विमलाबहन : लेकिन हिन्दुस्तान ने गोआ की जनता की ओर से यह कार्रवाई की है, ऐसा कहा जाता है !

धीरेन्द्रभाई : हाँ, यह भी सही है। गोआ की जनता काफी दिनों से भारत-सरकार से यह माँग करती रही। भारत सरकार ने अन्ततोगत्वा उन्हें आवश्यक मदद पहुँचाने के अलावा और किया ही क्या है ! वस्तुतः आज की दुनिया की परिस्थिति को देखते हुए तथा भारत की राष्ट्रीय सार्वभौमत्व की वर्तमान मान्यता को सामने रखते हुए अगर देखा जाय तो इस कार्रवाई में जितनी हिंसा हुई है, वह अत्यन्त मृदु है, ऐसा मानना पड़ेगा। यह सब तो है, लेकिन पूरे प्रश्न पर हमें रचनात्मक दृष्टि से सोचना चाहिए। हमारा ध्यान समाज में हिंसा के कारणों की ओर जाना चाहिए। हमारा प्रयास उन आर्थिक तथा सामाजिक संदर्भों को बदलने के लिए होना चाहिए, जिनके कारण हिंसा का अवसर उपस्थित होता है।

मेरी मान्यता यह है कि ऐसे विराट् तथा बुनियादी प्रश्नों के हल का एक-मात्र कारगर माध्यम *तालीम ही है। तालीम केवल कुछ लोगों की नहीं,* बल्कि पूरे समाज की तालीम—उन सबकी जो खेत में हल चला रहे हैं, जो कमरे में चरखे चला रहे हैं जो कारखाने में हथौड़ी पीट रहे हैं, जो मैदान में पशु चरा रहे हैं और जो हँसिया लेकर घास काट रहे हैं। वस्तुतः अगर हम न केवल सामाजिक मूल्यों को ही बदलना चाहते हैं, बल्कि समाज के दृष्टिकोण तथा स्तर में भी परिवर्तन करना चाहते हैं, तो तालीम के अलावा दूसरा कोई कारगर तरीका नहीं है।

पूरी जनता के शिक्षण के लिए आवश्यक है कि हम आगे और जनता के बीच के हृदय और अहृदय खाइयों को पाट दें। हमें उनके बीच जाकर रहना होगा, उनके साथ अपने को समरस करना होगा। उनके कार्यक्रमों में शामिल होना होगा–उनके शिक्षक या गुरु के रूप में नहीं, बल्कि साथी के रूप में उनकी बिरादरी बन कर। सही दिशा का यह प्रथम कदम होगा कि हम महसूस करें कि हम उनमें से एक हैं।

करीब डेढ़ साल पहले मैं ऐसे प्रयोग के लिए निकला था। उस समय मुझे दिशा तो दिखाई देती थी, लेकिन मेरे पास कोई योजना नहीं थी और न काम करने के लिए कोई पद्धति ही थी। लेकिन मैंने एक छोटे गाँव में पहुँच कर जनता के बीच उनके जैसे रहने की प्रक्रिया से अपना प्रयोग शुरू किया। अब मुझे महसूस हो रहा है कि मुझे कुछ पद्धति का दर्शन हो रहा है और शायद दो-एक साल में कुछ निश्चित योजना हाथ लग जायेगी।

विमलाबहन : हाँ, मुझे स्मरण हो रहा है कि आपने सन् '५७ में यह कहा था कि अब केवल विचार-प्रचार का समय समाप्त हो गया है। आपने हम लोगों को अज्ञातवास में जाने के लिए कहा था; ऐसे-वैसे अज्ञातवास के लिए नहीं, बल्कि सुनिश्चित तथा नियोजित योजना के साथ।

धीरेन्द्रभाई : हाँ, मैंने ऐसा ही कुछ कहा था, *इसका स्मरण है। मैंने अपने साथी तथा मित्रों को यह भी कहा था कि* अगर हम योजनापूर्वक अज्ञातवास में नहीं जायेंगे, तो हमको निराशा घेर लेगी और फिर हम उसमें से निकल नहीं सकेंगे। वस्तुतः अत्यन्त हिम्मत के साथ ऐसे अज्ञातवास की ओर बढ़ना आवश्यक था और है। उससे हमको नया जोश, नया तेज और नयी शक्ति मिलती; उससे कार्यकर्ताओं का ठोस संगठन भी होगा।

लेकिन आज हम क्या देख रहे हैं ! *लोगों में कुछ मायूसी का असर दिखाई* दे रहा है। मैं मानता हूँ कि इसकी कोई जरूरत नहीं है और न अवसर है। मुझे आशा है कि रचनात्मक चिन्तन हमको ताजगी देगा।

---

*महिलाओं को पक्षमुक्त रहना ही शोभास्पद है**

आपका महिला-सम्मेलन के लिए असमिया में लिखा पत्र मिला। उस पत्र में ७१ शब्द थे। उनमें से ५५ शब्द २० मिनट में मैंने पढ़े। शेष १६ शब्दों के लिए मुझे दूसरे की मदद लेनी पड़ी। अक्षर आपके अच्छे थे। छपे अक्षर तो मैं पढ़ता ही हूँ। लिखे अक्षर पढ़ने की आदत कम होने से, और मेरी आँखें बिगड़ी हुई होने से, मैं पूर्ण 'पास' नहीं हो सका !

असम प्रदेश भारत के दूसरे प्रदेशों की तुलना में कई बातों में पिछड़ा है। लेकिन *महिला-शक्ति में यह प्रदेश किसी प्रदेश से पिछड़ा नहीं है।* हमारे लिए यह एक आशाजनक बात है। *महिलाओं की शक्ति* यहाँ अच्छी विकसित हो सकती है, ऐसा नौ महीनों की मेरी असम-यात्रा का अनुभव मुझे बता रहा है।

पर महिलाओं की शक्ति किस बात में है, या हो सकती है, यह पहचानने की बात है। उनकी शक्ति मुक्त मन से सबके दिलों को जोड़ने में रही है। भारत की शिक्षित महिलाओं के ध्यान में अभी तक यह बात नहीं आयी है, ऐसा मुझे कहना पड़ता है। गांधीजी ने अपेक्षा की थी कि भारत में एक 'लोक-सेवक संघ' बने। पुरुष यह आशा पूर्ण नहीं कर सके। इसके कई कारण हैं, उसमें पड़ने की यहाँ जरूरत नहीं है। गांधीजी की यह इच्छा पूर्ण करने के *लिए अगर महिलाएँ आगे आतीं तो आज* भारत में उनकी प्रतिष्ठा अद्वितीय होती। पुरुष भले अलग-अलग पक्षों में बट जायँ, महिलाओं को तो पक्षमुक्त रहना ही शोभा देता है। बच्चे एक-दूसरे के साथ झगड़ा कर सकते हैं। माता उनके झगड़ों को मिटा ही सकती है, उसमें भाग नहीं ले सकती।

इस आणविक युग में राजनीति के और अलग-अलग धर्म-पंथों के दिन लद गये हैं ! विज्ञान और अध्यात्म के दिन आये हैं। यह जो देखता है वही देखता है। यह बात बरसों से सारे भारत में कई बार मैंने घोषित की है। अगर महिलाएँ इस विचार को समझें और तदनुसार निष्पक्ष, निर्वैर, निर्भय सर्वोदय समाज बनाने में अपनी शक्ति लगायें तो उनकी "महिला" पदवी चरितार्थ होगी। "महिला" वह है, जिसका दिल और दिमाग महान् है। स्त्रियों को अब "महिला" बनना है, "अबला" नहीं।

इधर असम में सैकड़ों ग्रामदान हुए हैं। एक महति चेतना गाँव-गाँव के लोगों में जग रही है। शान्ति सेना, सर्वोदय-पात्र, राष्ट्रीय एकता आदि का एक विशाल क्षेत्र खुल रहा है। महिला-शक्ति उस क्षेत्र में अग्रसर हो, ऐसी सुबुद्धि असम की महिलाओं को परमात्मा की कृपा से लब्ध हो, यही मेरी शुभ कामना है।

—विनोबा का जय-जगत्

* असम के शिवसागर जिले के गोलाघाट स्थान में २९-३० और ३१ दिसम्बर '६१ को असम प्रादेशिक महिला-समिति का सम्मेलन सम्पन्न हुआ। उसके लिए भेजा गया संदेश।

आत्मा का वैभव

मद्रास नगर के निकट तिरुवनम्पूर नामक बस्ती में गत २७ दिसम्बर को अपने व्याख्यान में डा० राधाकृष्णन् ने कहा कि हम सबके आगे ज्यादा बड़ा और जरूरी कार्य यह है कि हमारी दृष्टि आध्यात्मिक हो, जिससे सारी दुनिया एक-दूसरे के नजदीक आती है। उनका कथन है :

"यह ठीक है कि हम यहाँ के दारिद्र्य को मिटाने की कोशिशें करते हैं। लेकिन आत्मा का दारिद्र्य जैसी भी एक चीज है, जिससे आज संसार पीड़ित है।"

अन्त में उन्होंने कहा :

"हम लोग उपदेश बहुत देते हैं, लेकिन अमल कम करते हैं। हम यह *समझते हैं कि एक काम सही है, इसे मानते भी हैं, लेकिन उसके अनुसार करते नहीं* हैं। हम यह भी समझते हैं कि एक काम गलत है, उसे बुरा भी कहते हैं, लेकिन फिर भी उसी के अनुसार चलते रहते हैं। जरूरी यह है कि मानव का रूपान्तर हो।"

"मानव के रूपान्तर" पर जितना जोर दिया जाय थोड़ा है। आज विज्ञान ने स्थान की दूरी को तो खत्म कर दुनिया वालों को एक-दूसरे के नजदीक ला दिया है। लेकिन दिमाग की दूरियाँ अभी तक बदस्तूर जारी हैं और हमारे अन्दर न तो परिवार के जैसी भावना पनप सकी है और और न हम पड़ोसी के साथ वैसा व्यवहार करते हैं, जैसा हम अपने प्रति चाहते हैं। इसके कारण अविश्वास और कटुता को बढ़ावा मिलता है और आपस के सम्बन्ध बिगड़ते हैं। इस वजह से एक तरफ तो जैसा उपराष्ट्रपतिजी ने कहा, "आत्मा का दारिद्र्य" बढ़ता है और दूसरी तरफ, भावनात्मक विघटन पैदा होता है। दुःख पूर्वक कहना पड़ता है कि राष्ट्रीय योजना आयोग ने अभी तक इस तथ्य की तरफ ध्यान नहीं दिया है। उसका सारा जोर भौतिक सुख-सुविधाएँ बढ़ाने की तरफ है, न कि नैतिक स्तर को उठाने की। जाहिर ही है कि अगर हमारी नैतिकता में कमी आती है तो वह नियोजन और आर्थिक समृद्धि में भी बाधाएँ खड़ी कर देगी। जो लोग यह मानते हैं कि नैतिक और भौतिक उन्नतियाँ एकसाथ नहीं हो सकती, वे दोनों को ही चोट पहुँचाते हैं। नैतिक और भौतिक, दोनों का मेल साध लेना हमारी क्षमता के परे नहीं है। आत्मा का दारिद्र्य दूर करने और उसके वैभव को अच्छी तरह बढ़ाने का सिलसिला हमारी योजनाओं और विकास-कार्यक्रम में समा जाना चाहिए। तभी नियोजन प्राणवान बन सकेगा।

—सुरेशराम

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

देश के भयस्थान मिटाये जायं

अपने देश में सबसे अधिक भय का स्थान कौनसा है? पहला, प्रजा में अत्यंत दारिद्र्य का होना और दूसरा, प्रजा में अेकरसता का न होना। ये दोनों बड़े भारी भय के स्थान हैं। लोकशाही में राज्य-संस्था से यह आशा की जाती है कि वह अिन दोनों भयस्थानों को दूर करे। लोकशाही में स्वराज्य-प्राप्ति के बाद सर्वप्रथम यह दर्शन होना चाहिये था कि सबसे गरीब, सबसे नीचे के स्तरवालों को मदद मिल रही है। जैसे पानी जहां से भी दौड़ता है, समुद्र को भरने के लिये ही वह बहता है। वैसे ही सरकारी और जनता की सारी संस्थायें दुःखियों का दुःख निवारण कर रही हैं, अैसा दीखना चाहिये था।

मैंने राज्यकर्ता से प्रश्न पूछा था कि जो पैसा खर्च किया जा रहा है, उसमें से कितना हिस्सा गरीबों के पास जाता है? भगवान को 'विश्वनाथ' और 'जगन्नाथ' कहते हैं, क्योंकि वह सबका रक्षक है। फिर भी उसका विशेष नाम है 'दीननाथ'—दीनों का रक्षण-कर्ता। हमारी राज्यसंस्था दीननाथ होनी चाहिये, लेकिन होता उससे उलटा है। गांव में 'अिलेक्ट्रीसीटी' आती है, तो वह आम लोगों के लिये नहीं रहती!

[करनूल, १८-५-'५८] —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

गोआ का संकेत

देश विदेश में गोआ पर बहुत चर्चा और टीका चली है। विशेषकर इंग्लैण्ड और अमरीका की पत्र-पत्रिकायें आग-बबूला हो उठी हैं और हिन्दुस्तान को खूब खरी-खोटी सुना रही हैं। मगर विदेश में कुछ ऐसे अखबार भी हैं, जिन्होंने गंभीरता के साथ गोआ की फौजी कार्रवाई को समझने की कोशिश की है। वे कबूल करते हैं कि गोआ में पुर्तगाली अन्याय का कोई ठिकाना नहीं था और हिन्दुस्तान मजबूरी की हालत में फँस गया था। वाम पक्षी "न्यू स्टेट्समैन" का कहना है कि हिन्दुस्तान ने जो धीरज दिखाया वह सराहनीय है। लेकिन उसने पूछा है कि क्या हिन्दुस्तान थोड़ा और नहीं ठहर सकता था? उसकी फौजी कार्रवाई से शान्ति और तटस्थता का एक मानो दुर्ग ही ढह गया है। और हो सकता है कि जो चीजें भी नेहरू को अत्यन्त प्रिय हैं, उन्हीं को अन्ततोगत्वा बड़ा धक्का इससे पहुँचे।

पश्चिम के विभिन्न देशों में युद्ध-विरोधी जो शान्ति या अहिंसा के आन्दोलन चल रहे हैं, उनका मुखपत्र "पीस न्यूज" है। उसने एक तरफ तो पश्चिमी राष्ट्रों को दोष दिया है कि परिस्थिति को इस हद तक पहुँचा दिया और दूसरे, अहिंसा-वादियों को आड़े हाथों लिया है कि हम बौद्धिक स्तर पर हिंसा से हानि और अहिंसा से लाभ के राग अलापते हैं, लेकिन अपनी सरकारों को गोआ के प्रति पुर्तगालियों से न्याय कराने के लिए प्रेरित नहीं कर सके। साथ ही, 'पीस न्यूज' ने शंका जाहिर की है कि गोआ के कारण मौजूदा में हिन्दुस्तान की मध्यस्थता का जो महत्त्वपूर्ण स्थान अब तक रहा, वह आगे नहीं रह सकेगा और अफ्रीका-एशिया के तटस्थ देशों की जो एकता थी वह भी खत्म हो जायेगी। इसके अलावा, दुनिया के शान्तिप्रेमियों से मांग की है कि सक्रिय और विचारपूर्ण अहिंसक मान्यताओं को खड़ा करना चाहिए और जिस मुद्दे पर अपनी सरकारों से टकराव आता हो, उनसे टक्कर लेने की क्षमता पैदा होनी चाहिए।

अपने देश में भी गहराई के साथ गोआ के प्रश्न पर विचार चल रहा है। श्री शंकरराव देव ने सुझाया है कि हमारे जो अन्य बड़े प्रश्न हैं, उनके सम्बन्ध में तुरन्त लोक शिक्षण का कार्यक्रम शुरू होना चाहिए। श्री जयप्रकाश बाबू का मत पहले आ ही चुका है। ग्राम-सेवा के कार्य में सदा जुटने वाले श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने तो कहा है कि हार मान लेने का कोई कारण नहीं है और हमें ठण्डे दिमाग से गोआ तथा दूसरे सवालों पर चिन्तन करना चाहिए और अपनी अहिंसक जिहाद जो चल रही है उसे जारी रखना है; क्योंकि यह संघर्ष किसी राष्ट्र विशेष का नहीं है, बल्कि आज की अनैतिक मान्यताओं के खिलाफ मानव का आर्त्तनाद है। इस प्रकार एक जबर-दस्त मंथन सर्वोदय-जगत् में चल रहा है।

गत अट्ठाईस दिसम्बर को अपनी प्रेस-कान्फ्रेन्स में प्रधान मंत्री ने गोआ-कार्रवाई पर विस्तार से रोशनी डाली। उन्होंने बताया कि बड़ी अजीब बात है कि गांधीजी के कुछ निकटतम अनुयायियों ने इस कार्रवाई पर मुझे बधाई दी है। जवाहरलालजी ने यह भी कहा कि कश्मीर में जो कदम उठाया गया—और वह अहिंसक नहीं था—उसका गांधीजी ने निश्चयपूर्वक समर्थन किया था। अब उस समय के घटनाक्रम की जानकारी जवाहरलालजी से ज्यादा किसी को नहीं हो सकती और वह यह भी अच्छी तरह समझते हैं कि गांधीजी खुशी-खुशी तो वैसा फैसला, निर्णय नहीं दे सकते थे; क्योंकि यह तो अब इतिहास की बात हो गयी कि बापू तो जापानी आक्रमण तक का मुकाबला अहिंसा के द्वारा करना चाहते थे।

बापू इस सम्बन्ध में चौदह बरस तक चुपचाप नहीं बैठे। उनके अन्दर जो एक अलौकिक सूझ-बूझ थी और साधन बटोरने की अद्भुत शक्ति थी, उसके बल पर यह कहा जा सकता है कि ज्यादा सम्भावना इस बात की है कि वे गोआ-मुक्ति का अहिंसक मार्ग खोज ही लेते। लेकिन आज यह अटकल लगाना बेकार है कि बापू होते तो क्या कदम उठाते या नहीं उठाते, क्योंकि उनकी अहिंसा बहुत प्रगतिशील और सजग थी। सवाल यह नहीं है कि बापू क्या करते, बल्कि यह है कि उनके सिखावन के अनुसार आज की परिस्थिति में हमें क्या करना चाहिए था या हम क्या करें। उन्होंने साधन-शुद्धि का मंत्र दिया। पंडित जवाहरलालजी के शब्दों में ही कहें तो, बापू ने यह सिखाया कि "हमारे लिए साधन उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं, जितना कि हमारे साध्य हैं।" बापू का विश्वास हृदय-परिवर्तन पर था, न कि दमन या बल-प्रयोग पर। वह अक्सर कहा ही करते थे कि हिंसा से प्राप्त स्वराज्य की उन्हें कोई चाह नहीं है। उनको तो खालिस अहिंसा प्यारी थी :

> "अहिंसा के लिए मेरा जो प्रेम है, वह लौकिक या पारलौकिक हर चीज से ज्यादा ऊँचा है। इसकी बराबरी सत्य के प्रति मेरे प्रेम से की जा सकती है। लेकिन मेरे लिए सत्य भी अहिंसा ही का पर्याय है और इसी अहिंसा के माध्यम से, केवल इसी के माध्यम से मैं सत्य को देख सकता और उस तक पहुँच सकता हूँ।"

यह अहिंसा ही हमारे स्वराज्य आंदो-लन के पीछे प्रेरणा का स्रोत रही है और इसी कारण स्वतंत्र भारत ने शांति और तटस्थता की वैदेशिक नीति अपनायी, जिसका प्रतिपादन पं० नेहरू ने निष्ठा और शक्ति के साथ किया। गोआ की कार्रवाई के कारण हिन्दुस्तान अपनी उस जगह से हट गया है, जिस पर वह अरसे से डटा था। शायद यही कारण है कि जब 'ब्लिट्ज' के संपादक श्री आर० के० करंजिया ने पंडितजी से पूछा कि क्या गोआ के कदम से हमारी नैतिक प्रतिष्ठा गिरी है? तो उन्होंने जवाब दिया :

> "प्रतिष्ठा गिरने की बात नैतिक प्रतिष्ठा हो या दूसरी, सरासर वाहियात है। लेकिन साथ ही साथ यह कहना होगा कि ऐसे तमाम मसलों के शान्तिमय हल वाला हमारा जो एक दर्शन था, उसकी दृष्टि से हमने कुछ खोया है। फौजी दृष्टिकोण, या किसी भी तरह की फौजी कार्रवाई, जैसा आप जानते हैं, हमारी सभ्यता और परम्परा के खिलाफ है। सच तो यह है कि हम चाहते हैं कि शक्ति का इस्तेमाल ही खतम हो जाये।"

पंडित जवाहरलालजी ने दुःख के साथ कहा कि मजबूरी की वजह से, दो बुराइयों में से एक पसन्द करने की वजह से, आगे सारे रास्ते बन्द हो जाने की वजह से उन्हें यह 'दुर्भाग्यपूर्ण फैसला' करना पड़ा है। लेकिन होने वाली बात को कौन टाल सकता है? मगर यह जरूर है कि गोआ का संकेत समझें और उसकी रोशनी में आगे के लिए सावधानी बरती जाये। आज भी देश के आगे बड़े गम्भीर, गोआ से भी कहीं ज्यादा गम्भीर सवाल मौजूद हैं। देश की सरकार और जनता, दोनों को ही इनके हल करने के लिए नैतिक और शान्तिमय उपाय अभी से खोजने चाहिए—ऐसे उपाय, जो अपनी प्रतिभा और संस्कृति के अनुकूल हों और जिनमें शक्ति के इस्तेमाल की नौबत ही न आवे। अगर हम ऐसा करने में कामयाब होते हैं, तो गोआ की कार्रवाई एक बड़ा भारी वरदान साबित होगी।

राष्ट्रीय मोर्चे की आवश्यकता

पिछले महीने भारतीय राजनीतिक विज्ञान परिषद् का चौबीसवाँ वार्षिक सम्मेलन कटक में हुआ। इसकी अध्यक्षता फर्ग्युसन कालेज, पूना के प्रोफे-सर एम० वी० कोगेकर ने की। उन्होंने इस परिषद् में जो भाषण दिया वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस पर राजनीतिक पक्षों, विचारवान सज्जनों और जिन्हें देश का हित प्यारा है, सभी को ध्यान देना चाहिए। उन्होंने बड़ी दृढ़ता के साथ सब पक्षों का एक राष्ट्रीय मोर्चा बनाने के लिए अनुरोध किया। उनका मत है कि इसके बिना

हमारे देश की जो राजनीति है वह नियोजित समाज की मांगों के साथ ठीक-ठीक पूरा न्याय नहीं कर सकेगी।

प्रोफेसर कोगेकर ने परिस्थिति का विश्लेषण करते हुए कहा कि हमने ब्रिटिश संसदीय पद्धति को अपना कर अच्छा नहीं किया। वह अपने देश की वस्तुस्थिति के अनुकूल नहीं है और राष्ट्रीय मोर्चे के खड़े होने में सबसे बड़ी बाधा है। उनका आग्रह है कि पार्टियों को परंपरागत संसदीय जनतंत्र के विचार अपने दिमाग से निकाल देने चाहिए और आपस में एक-दूसरे के ज्यादा नजदीक आना चाहिए। महत्त्व इस बात का नहीं है कि हम अमुक संस्थागत ढाँचा चला रहे हैं या नहीं, बल्कि इसका है कि हम जनतांत्रिक मूल्यों, अधिकारों और स्वतन्त्रताएँ सुरक्षित रख पाते हैं या नहीं। यह मानने की कोई वजह नहीं है कि ब्रिटिश नमूना ही लोकतन्त्र में अंतिम शब्द है। प्रोफेसर कोगेकर ने देश के राजनीतिक वैज्ञानिकों से अपील की है कि देश की असली स्थिति के अनुरूप एक नयी राजनीतिक पद्धति की खोज करें। यह ठीक वही चीज है, जिस पर पिछले कई बरसों से विनोबाजी और अन्य सर्वोदय-विचारक जोर देते रहे हैं।

कटक में प्रोफेसर कोगेकर ने कहा कि अपने यहाँ ऐसी पार्टी की सरकार है, जिसका ऐतिहासिक स्थान रहा है और जिसे बड़ी प्रतिष्ठा प्राप्त है। लेकिन ऐसी पार्टी की सरकार भी कुल जनता को प्रोत्साहित नहीं कर सकी और राष्ट्रीय विकास का बोझ उठाने के लिए उसका पूरा-पूरा कंधा नहीं लगवा सकी। फिर जनतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का जो आंदोलन चल रहा है, वह भी दलबन्दी की दल-दल में फँस कर रह जायेगा और हो सकता है कि पंचायती राज की संस्थाओं का पार्टियाँ अपने हित में दुरुपयोग करें। इसलिए प्रोफेसर महोदय ने अपने भाषण में कहा कि जिन छोटी-छोटी बातों पर पार्टियों की एक-सी राय है, उनके आधार पर एक राष्ट्रीय मोर्चा तैयार किया जाये (विस्तार की बातों में भेद होने से कोई डर नहीं है)।

प्रोफेसर कोगेकर के सुन्दर विवेचन पर और एक नया लोकतांत्रिक ढाँचा खोजने की उनकी साहसपूर्ण माँग पर हम उनको बधाई देते हैं। अपने देश के कई समाचार-पत्रों ने उनके निवेदन को स्वभावतया 'विचित्र', 'अव्यावहारिक' आदि विशेषण दे डाले हैं। हमें याद आती है उन टीका-टिप्पणियों की जो डेढ़-दो बरस पहले श्री जयप्रकाश बाबू के राजनीति सम्बन्धी प्रबन्ध पर की गयी थीं। लेकिन हमें विश्वास है कि इन आलोचनाओं की चिन्ता न करके, हमारे देश के प्रोफेसर बन्धु और राजनीति-शास्त्र के अन्य गम्भीर विद्यार्थी इस विषय में गहराई से सोचेंगे और आवश्यक खोज करेंगे।

राजनीतिक पक्षों से भी निवेदन है कि प्रोफेसर कोगेकर के वचन के महत्त्व को नजर अन्दाज न करें। नाजुक समय है और गम्भीर विचार की जरूरत है। जैसा प्रोफेसर महोदय ने कहा, विशेष उत्तरदायित्व कांग्रेस का है, जिसके हाथ में सत्ता है। यह किसी से छिपा नहीं है कि आज की संसदीय प्रणाली और चुनाव-पद्धति से देश में विघटनकारी तत्त्वों और धाराओं को बड़ा बल मिला है। अगर कांग्रेस सचमुच यह फैसला करती है कि पुरानी झंझटों से उसे निकलना है और लोकतांत्रिक तथा गैर-पार्टी आधार पर एक राष्ट्रीय मोर्चा बनाने में तत्पर हो जाना है, तो उसे देश की समूची जनता का समर्थन और सहयोग पूरे दिल से मिलेगा।

—सुरेश राम

सवालों के हल के लिए
जन-सेवकत्व की आवश्यकता

• बाबूराव चंदावार

[२७ अक्तूबर '६१ के "भूदान-यज्ञ" में प्रकाशित श्री अप्पासाहब पटवर्धन तथा श्री शंकरराव देव के दो लेख और अ० भा० सर्व सेवा संघ का चुनाव-प्रस्ताव प्रकाशित हुआ था। उसी अंक के संपादकीय में पाठकों को इन लेखों तथा चुनाव-प्रस्ताव के संदर्भ में चर्चा करने का निमन्त्रण भी दिया गया है। तदनुसार श्री बाबूराव चंदावार के विचार हम यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

मैंने दो साल के पहले श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे से कुछ सवाल पूछे थे। एक जवाब में उन्होंने लिखा कि यदि निकट भविष्य में हम अपना कार्यक्रम यशस्वी करके शक्ति निर्माण नहीं कर सकेंगे तो अन्य राष्ट्रों के 'शान्तिवादी' –'पैसिफिस्ट'– लोगों की जो स्थिति है वैसी ही हमारी होगी। शान्तिवादियों का तत्त्वज्ञान अच्छा होते हुए भी वह उन देशों में अरण्यरोदन के समान आज दीखता है। राज-सत्ता पर अंकुश लगा सके, ऐसी जन-शक्ति वे संगठित नहीं कर सके। उनका न तो समाज पर और न राज-सत्ता पर प्रभाव है, शान्तिवादी अच्छे विचारों के निरुपद्रवी लोग हैं, ऐसा कहा जाता है। यदि ग्रामदान की क्रान्ति हम यशस्वी न कर सके, तो अब शान्तिवादियों जैसी स्थिति हम सर्वोदयवालों की होने का डर है। इससे निराश होने की जरूरत नहीं है, बल्कि जरूरत इस बात की है कि उत्साह और दृढ़ निश्चय के साथ हम कार्यक्रम पर अमल करें।

मैंने श्री अण्णासाहब के जवाब का जिक्र इसलिए किया है कि क्या शान्तिवादियों की जैसी हमारी स्थिति आज हो रही है, ऐसी शंका मन में पैदा हुई है!

राज-सत्ता पर नैतिक अंकुश लगाने की नीति लोकनीति है, ऐसी मेरी मान्यता है। यदि लोकनीति विचार क्रियाशील हो सके तो निस्संदेह इस नीति का अंतिम परिणाम शासन-निरपेक्ष समाज-रचना ही होगा। राज-सत्ता पर नैतिक अंकुश लगाना जनता की पूर्णतः अभिक्रमशीलता पर निर्भर है। इसीलिए जन-शक्ति अभिक्रमशील कैसी हो, यह विचारणीय है। ग्रामदान से आशा बँधी थी, वैसे आज पूर्ण रूप से निराश होने की जरूरत नहीं है। लेकिन आज हमारे सामने मूल सवाल यह है कि जनशक्ति कैसे अभिक्रमशील हो? भूदान, संपत्तिदान, ग्रामदान आदि कार्यक्रमों से जनशक्ति का निर्माण हम कर सके, लेकिन इस शक्ति में अभिक्रम नहीं ला सके।

लोगों में त्याग और सेवा की भावना निर्माण हो सकेगी, लेकिन उसके आगे जाकर जिस उद्देश्य को लेकर त्याग और सेवा की आवश्यकता हम समझते हैं, उस उद्देश्य का दायित्व संभालने की जागृति लोगों में नहीं पैदा हो सकी, यह हमने अनुभव किया है। इससे स्वाभाविकतया यह निष्कर्ष निकलता है कि किया हुआ त्याग या कार्य उद्देश्य को समझ कर किया हुआ नहीं था; वह केवल एक भावनाविवशता या अज्ञान था। किसी की सद्भावना पर शंका करने का मेरा उद्देश्य नहीं है, बल्कि वृत्ति को विचार का बल न मिलने से ही वृत्ति परिणामशून्य बनती है, यही मैं बतलाना चाहता हूँ।

आखिर हम इस स्थिति से कैसे ऊपर उठ सकेंगे, यह एक समस्या हम सबके सामने है। इसका जवाब पुरी के सर्वोदय-सम्मेलन में विनोबाजी ने दिया है। उन्होंने सूत्र बताया—सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम सत्याग्रह। इसी बात को श्री शंकरराव देव 'आत्मक्लेश' कह कर समझाते हैं। इसे ही हममें से बहुत सारे 'तपश्चर्या' के नाम से पहचानते हैं। सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम सत्याग्रह को विकसित करना, यही एकमात्र उपाय आज की सारी स्थिति को पार करके आगे जाने का है, ऐसा निश्चय सर्वोदय में मानने वाले सब लोगों का हुआ इसका कोई आधार मुझे नजर नहीं आ रहा है। लेकिन इसके कारणों की हमें खोज करनी होगी। इसका एक कारण यह हो सकता है कि सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम सत्याग्रह का व्यावहारिक स्वरूप स्पष्ट नहीं हुआ। मेरा यह मानना है कि इस वजह से सर्वोदय के क्षेत्र में सत्याग्रह की कुछ भिन्न-भिन्न कल्पनाएँ बनी और इससे सामान्य जनता संभ्रम में पड़ी।

यही हालत चुनाव के सम्बन्ध में भी नजर आ रही है। सर्व सेवा संघ ने चुनाव-प्रस्ताव स्वीकृत किया है, फिर भी उसे अमल में लाने का निर्विरोध तरीका सर्व सेवा संघ के पास है, इसके कोई आसार मुझे नहीं दीखते। सार्वत्रिक चुनाव के सम्बन्ध में प्रो० गोरा के विचार श्री शंकरराव के विचारों से बिल्कुल भिन्न हैं। श्री अप्पासाहब ने भी अपने कुछ स्वतन्त्र विचार जनता के सामने रखे हैं। विनोबाजी और श्री जयप्रकाशजी ने भी अपने भिन्न-भिन्न विचार प्रकट किये हैं। लेकिन इससे आखिर लोगों को और दिन-रात उनके सम्पर्क में आने वाले कार्यकर्ताओं को क्या करना चाहिए, इसका ठीक मार्ग दर्शन नहीं हो पाता।

हम आज की जीवन-पद्धति बदलना चाहते हैं। आज के जीवन के मूल्य बदल कर नये जीवन-मूल्य निर्माण करना चाहते हैं। इसी को हमने क्रान्ति माना है। इस क्रान्ति की दिशा में अगर हमें बढ़ना है तो उसके संगठन के महत्त्व को ध्यान में लेकर ही चुनाव आदि जैसी सामयिक घटनाओं पर हमें सोचना होगा। इस दिशा में सोचते हुए सर्व सेवा संघ के पास राष्ट्र को देने के लिए सर्वमान्य 'राष्ट्रीय कार्यक्रम' (नेशनल कामन प्रोग्राम) चाहिए। यदि ऐसा कार्यक्रम निश्चित नहीं हुआ हो तो उसे निश्चित करने की कोशिश हमें करनी चाहिए। सर्व सेवा संघ के प्रमुख लोग इस दिशा में सोचते ही होंगे ऐसा मैं मानता हूँ।

येलवाल में सारे राजनैतिक पक्षों के लोग इकट्ठे हुए थे। वहाँ तो नेताओं ने ग्रामदान को राष्ट्रीय कार्यक्रम के नाते मान्यता दे दी, लेकिन बाद में अमली रूप उसे नहीं आ सका। जब हम ऐसी स्थिति देखते हैं, तो अब सीधे जनता तक जाने की शक्ति हमारी बढ़नी चाहिए। हमें नेताओं के पीछे जाने की वृत्ति छोड़नी चाहिए। *विनोबाजी नेताओं का पीछा न करते हुए* सातत्यपूर्वक अपना विचार लोगों को समझा रहे हैं और इसीलिए सर्वोदय का आंदोलन टिका है। लेकिन आज की स्थिति में जन-आन्दोलन करने के लिए सीधे जनता तक पहुँचने वाला ठोस अमली कार्यक्रम और कार्यकर्ता चाहिए।

तीन-चार साल पहले सघन पदयात्राओं का संगठित आयोजन देश भर में हुआ। इससे जन-सेवकत्व निर्माण करने की शक्ति हममें आयी। छोटे लोग आगे आये और निडर होकर काम भी करते रहे।

[शेष पृष्ठ ११ पर]

लाला अचिन्तराम! :२:

• ब्रह्मानन्द

बात सन् १९५५ की है। एक शिविर के सिलसिले में श्री दादा धर्माधिकारी और विमलाबहन रोहतक के पास 'अस्थल बोहर' नामक स्थान में आये थे। दो दिन तक शिविर चला और बाद में रोहतक शहर में एक सार्वजनिक सभा रखी गयी। प्रचार और व्यवस्था करने के लिए लालाजी ने मुझे पहले ही रोहतक भेज दिया था। करीब तीन घंटे तक व्यवस्था के सारे कार्य करके जब मैं आया, तब भोजन का वक्त हो चुका था। किन्तु मेजबान ने मुझे खाने के लिए नहीं कहा। लालाजी तथा अन्य लोग वहाँ भोजन करने वाले थे। मेरी इच्छा थी कि घर से बाहर चला जाऊँ, किन्तु फिर सोचा कि अगर लालाजी की नजर पड़ गयी तो मुझे अवश्य पुकारेंगे। थोड़ी देर में जब सब लोग भोजन करने लगे, तो मैं धीरे से वहाँ से खिसकने लगा; किन्तु लालाजी की नजर मुझ पर पड़ी ही गयी। मुझे दो तीन बार पुकारा, लेकिन मैंने रुकना ठीक नहीं समझा और सीधा सभा-स्थल पर चला गया। जब दादा और विमला-बहन के साथ लालाजी सभा में आये, तो आते ही उन्होंने मुझसे कहा, "मेरे बच्चे, आओ भोजन करो। तेरे बिना मैंने भोजन किया, यह मुझसे भूल हुई। मुझे क्षमा कर। मुझे अकेले को भोजन खाना मुश्किल हो गया था, परंतु मजबूरी थी, इसलिए भोजन करना पड़ा।" पर मैं क्रोधी कब मानने वाला था! मैंने कहा, "लालाजी, अब तो मैं इस घर का पानी तक नहीं पीने वाला हूँ! ऐसा दुर्व्यवहार किया है भले आदमी ने!" इतना कह कर मैं टल गया, किन्तु लालाजी कहाँ मानने वाले थे! सभा के बाद स्टेशन पर पहुँचे तो लालाजी ने कहा, "कुछ तो खा ले!" मैंने दो तीन बार इन्कार किया, किन्तु उनके प्यार भरे आग्रह के कारण एक ग्लास दूध लालाजी के हाथ से पीया। इससे उनका मन थोड़ा प्रसन्न हुआ और कहने लगे, "बच्चे, मुझे क्षमा कर। फिर कभी मैं ऐसी गल्ती नहीं करूँगा, तेरे बगैर नहीं खाऊँगा।"

लालाजी ने लगभग एक साल के लिए अबोहर तहसील को अपना कार्य क्षेत्र बना रखा था। अबोहर में लोक सेवा-मंडल का आश्रम था। परन्तु सफाई का कोई विशेष ख्याल कार्यकर्ता नहीं करते थे। लालाजी जब कभी आते, तब सफाई करते ही थे। एक बार लालाजी मुझसे कहने लगे कि अगले दिन हमें रसोई और ऊपर की छतों पर गोबर से लिपाई करनी है, साथ में पाखाना-सफाई भी करेंगे। आश्रम में भंगी नहीं आता था। पाखाने का उपयोग भी अक्सर लोगों द्वारा नहीं किया जाता था; किन्तु जब कोई उपयोग करता था, तब वह सफाई की ओर ध्यान नहीं देता था। लालाजी की बात सुन कर मेरे मन में काफी विचार आने लगे। मैंने कभी झाड़ू-सफाई नहीं की थी। यह सोच कर कि अब मेरा इम्तहान है, प्रातः चार बजे उठ कर मैंने चुपचाप पाखाना-सफाई कर दी और फिर सो गया। बाद में लालाजी जब पाखाना-सफाई के लिए गये, तो सारा साफ देखा, तब मुझे जगा कर उन्होंने छाती से लगा लिया। इससे मेरा काम करने का हौसला बढ़ा।

अब लिपाई की बारी थी। मैं गोबर लाया और लिपने लगा। जिंदगी में कभी लिपाई की नहीं थी और सर्दी भी जोर की थी। इससे उंगलियाँ ठीक से जुड़ती नहीं थी। लालाजी ने कहा, 'ऐसा नहीं करते मेरे बच्चे, तुम छोड़ दो। मैं लिपाई करके बताता हूँ।' और फिर दो घंटे तक लालाजी लिपाई करते रहे।

एक बार लालाजी के साथ ताँगे में मैं जा रहा था, तो फलों का एक लिफाफा फट जाने पर मैंने उसकी पुड़िया बना कर फेंक दिया। लालाजी की नजर दूर तक उस कागज को देखती रही और अंत में कहने लगे—'देखो, केवल तुम्हारी पुड़िया ही सड़क पर दीख रही है!' तब से मैंने ऐसी गल्ती कभी नहीं की। बात तो यह मामूली-सी है, किन्तु उससे मालूम होता है कि लालाजी का सफाई के प्रति कितना आग्रह था!

लालाजी लगातार कठिन परिश्रम करते रहे। अक्सर उनकी रातें सफर में और दिन कार्यों की व्यस्तता में बीतता था। लोकसभा के सदस्य होने के कारण उनको अक्सर दिल्ली जाना पड़ता था। वहाँ भी लोग उनका बड़ी व्याकुलता से इंतजार करते थे। अक्सर कोई विधवा, कोई यतीम, कोई गरीब विद्यार्थी, टी० बी० का मरीज, कभी 'पोस्टमैन यूनियन' का कर्मचारी, किसी कालेज का प्रोफेसर, कोई एम० एल० ए० या 'सर्वेंट्स ऑफ पीपुल सोसाइटी' के कर्मचारी, राजनीतिक दल के कार्यकर्ता आदि बीसों प्रकार के लोग उनसे मिलते रहते थे। पंजाब की भाषा-समस्या, शरणार्थियों का पुनर्वास आदि अन्य समस्याओं पर भी इनका ध्यान रहता था। लोकसभा का काम तो था ही। इतनी व्यस्तता में भी प्रार्थना करना वे कभी नहीं भूलते थे और कहते थे कि पहले प्रार्थना, सब काम बाद में। 'साधो सहज समाधि भली', यह गीत बड़े ही प्यार से सुनते और गाते थे।

एक बूढ़ा जब भी लालाजी आते तब सबसे पहले हाजिर होती और हमेशा कहती कि मैं तो सबसे पहले आयी हूँ, खाना भी नहीं खाया, बस का किराया भी नहीं है! मैं तो बूढ़ा का रवैया देख कर चिढ़ उठता था। किन्तु लालाजी का ढंग तो अलग ही था। लालाजी उसे खाना भी खिलाते, बस का किराया भी देते और दुबारा आने के लिए कहना भी नहीं भूलते थे।

एक बार लालाजी ने बताया कि जब पहली बार उनको भूदान का विचार जँचा और उसके प्रचार के लिए निकले तो रास्ते में विचार आया कि 'भूदान-प्राप्ति के लिए तो जा रहा हूँ, किन्तु मैंने अपनी घर की जमीन तो नहीं दी है, यह ठीक नहीं है।' ऐसा सोच कर वापस चले आये और अपने वृद्ध पिताजी को समझाया कि ऐसे पवित्र काम के लिए मैं निकल तो रहा हूँ, परंतु मन नहीं मानता है। हमें दान की शुरूआत अपने घर से ही करनी चाहिए। तब पिताजी ने कुछ थोड़ी-सी जमीन दान देने के लिए कहा। किन्तु लालाजी ने कहा, "जब हम खेती नहीं करते हैं, तो फिर जमीन रखने का हमें क्या हक है? फिर भी आप सारी जमीन नहीं देते हैं तो बाग वाली जमीन तो अवश्य ही दें और सारी जमीन का चौथा हिस्सा भी देना चाहिए।" पिताजी को यह विचार जँचा नहीं, किन्तु लालाजी तो पिताजी से प्रेमपूर्वक दानपत्र पर हस्ताक्षर करवा कर ही भूदान माँगने के लिए घर से निकले। इसी प्रकार जब संपत्तिदान का विचार निकला तो पहला संपत्तिदान-पत्र आपने खुद अपना भर दिया। समय की दृष्टि से भी वे अधिकांश समय भूदान के लिए देते थे। महीने में केवल दो दिन लोक सभा के लिए, दो दिन शरणार्थियों के पुनर्वास के लिए और दो दिन अन्य कामों के लिए देते थे।

एक बार किसी स्कूल में किसी को गलत ढंग से प्रवेश देने के लिए सिफारिश करने से लालाजी ने इन्कार कर दिया। इस मामले में मैंने एक विदेशी भाई से मदद प्राप्त करने के लिए पत्र लिखा, किन्तु जब लालाजी को मालूम हुआ तो उन्होंने कहा कि इस प्रकार पत्र लिख कर देश की प्रतिष्ठा को तो मत गिराओ। लालाजी की इस बात ने मुझे पत्र फाड़ने और सोचने के लिए मजबूर कर दिया।

लालाजी के अत्यंत व्यस्त कार्यक्रम में करीब आठ महीने उनके साथ रहने पर अधिक काम और थकान के कारण मेरा स्वास्थ्य बिगड़ गया और बरवटा गाँव में जहाँ एक शिविर चल रहा था, मुझे बुखार आया। जब लालाजी दिल्ली जाने लगे तो वे चाहते थे कि मैं भी उनके साथ दिल्ली चलूँ। किन्तु मैंने यह सोच कर जाने से इन्कार कर दिया कि लालाजी का थोड़ा समय मेरी देख रेख में जायेगा और उससे घरवालों को असुविधा होगी। मोगा से मेरे भाई आये और मुझे घर ले गये। यह जानने पर लालाजी ने मुझे लिखा—" मैं तुमसे बहुत शर्मिन्दा हूँ। जब तेरा स्वास्थ्य अच्छा रहा, तब काम लेता रहा और अब बीमार पड़ा है तो मैं कुछ नहीं कर सका!" लालाजी ने हमारे कई साथियों को बीमारी की हालत में अपने पास रख कर उनकी सेवा की और चिकित्सा की पूरी सुविधाएँ अपने खर्च से जुटा दीं।

बुखार छूटने पर मैं कुछ कमजोर हो गया था, इसलिए मैंने लालाजी को लिख दिया कि इस हालत में आपकी ज्यादा सेवा नहीं कर सकूँगा, इसलिए आप मुझे मुक्त कर दीजिये। लालाजी ने मुझे २ अक्टूबर '५५ को बुलाया और ३ अक्टूबर को बीबी अमतुस्सलाम के पास भेज दिया। तब से मैं आज तक मुक्त ही हूँ। उनकी आज्ञा से कार्यक्रम बनाता रहा और यदा कदा शिविरों में शामिल होकर उनका प्यार पाता रहा।

पिछले दिनों विनोबा की पंजाब की यात्रा में मैं रहा था। उन दिनों लालाजी व्यवस्था के सिलसिले में बीच-बीच में आते रहते थे। एक बार लालाजी ने मुझसे कहा कि बच्चे, तू अब मुझे छोड़ता जा रहा है। मैंने कहा, नहीं लालाजी, यह कभी नहीं हो सकता। तो फिर उन्होंने सूर्य के सामने लाकर कहा—"देखो, सूर्य हमारा साक्षी है। हम प्रतिज्ञा करें कि हम एक-दूसरे को कभी नहीं छोड़ेंगे।" परन्तु मुझे विश्वास नहीं था कि लालाजी इतनी जल्दी मुझे छोड़ कर चले जायेंगे।

मेरे जीवन में जो थोड़ी-बहुत तब्दीली आयी है, वह लालाजी के कारण ही आयी है। लालाजी के कारण ही मैं भूदान जैसे परम पवित्र आन्दोलन में भाग ले सका। अब मुझे इस आन्दोलन में काम करते करते सात वर्ष हो गये हैं। जिस आनंद का अनुभव मैं कर रहा हूँ, वह वर्णन के बाहर है। भगवान करे, देश के हजारों नवयुवकों को आनन्द का रसास्वादन करने का मौका मिले, ताकि देश में गांधी और विनोबा के विचारों का नया भारत बन सके।

तटस्थता की नीति और अहिंसा

● शंकरराव देव

गोआ सम्बन्धी "भूदान-यज्ञ" के ता० ५ जनवरी '६२ के अंक में प्रकाशित मेरा लेख पढ़ने के बाद एक मित्र ने एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उठाया है। उनको गोआ विषयक मेरे मत में कुछ असंगतियाँ मालूम होती हैं। उनका तर्क यह है कि एक सरकार, जिसका आधार शक्ति या हिंसा है, उससे यह आशा नहीं की जा सकती कि वह अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में अपनी तटस्थता एवं शक्ति-गुटों से निरपेक्षता की नीति को अंजाम देने के लिए शांतिमय एवं नैतिक साधनों का सहारा ले। इस लेख द्वारा मैं उनकी इस शंका का निवारण करने का प्रयास करूँगा।

इसमें संदेह नहीं कि किसी भी सरकार का अन्तिम अस्त्र शक्ति अथवा हिंसा ही होता है। यह भी ठीक ही है कि अपने स्वधर्मानुसार यदि किसी सरकार को सरकार के रूप में सफल होना है, तो उसे शक्ति का सहारा लेना ही पड़ेगा। जिस लेख के बारे में यहाँ चर्चा की गयी है, उसमें मैंने यह माना है कि कोई भी सरकार सदा अहिंसा को संबल मान कर नहीं चल सकती। सरकारों की प्रकृति में ही दमन अथवा शक्ति का भाव सन्निहित है। परन्तु 'अंतिम' एवं 'तात्कालिक' के बीच के अन्तर से न केवल मात्रा में ही भेद होता है, बल्कि गुण में भी भेद हो जाता है। यह अन्तर सरकार के स्वरूप एवं विभिन्न प्रणालियों द्वारा व्यक्त होता है; जैसे तानाशाही सरकार और लोकतंत्रात्मक सरकार, या अच्छी सरकार और बुरी सरकार। औपनिवेशिक देश के निवासी होने के कारण हम तीन तरह के सरकारों के संबंध में आ चुके हैं। इनमें से दो तो लोकतंत्रात्मक थी और एक तानाशाही!

जिस अन्तर का हमने जिक्र किया वह इतिहाससिद्ध है। साथ ही शासनारूढ़ व्यक्ति के व्यक्तित्व के कारण भी मात्रात्मक एवं गुणात्मक रूप से काफी अन्तर पड़ता है। हम साफ देखते हैं कि कितने ही तानाशाह उदार-बुद्धि के होते हैं और कितने ही लोकशाह (लोकतंत्रात्मक सरकार के संचालक) अयोग्य और अक्षम होते हैं।

शक्ति-गुटों से पृथक् रहने की नीति

हमने इस देश में लोकतंत्रात्मक सरकार कायम कर रखी है, जिसके प्रधान पं० जवाहरलाल नेहरू हैं। नेहरूजी जन्मजात महान् हैं। किसी के बड़े बनाने से वे बड़े नहीं हो गये हैं। इसलिए यह ठीक ही है कि गांधीजी का सेहरा उनके सिर पर पड़ा। गांधीजी ने खुद अपनी जिन्दगी में कहा था कि नेहरूजी हमारे राजनीतिक उत्तराधिकारी हैं। इसमें शक नहीं कि पं० जवाहरलाल नेहरू ने उस विरासत को राष्ट्रीय और खासकर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में निभाने की कोशिश की है।

> तटस्थता अथवा शक्ति-गुटों से पृथक् रहने की भारत की नीति का कारण किसी प्रकार की दुर्बलता, स्वार्थ अथवा आवश्यकता से प्रेरित नहीं है। उल्टे, इस नीति का आधार भारत की प्राचीन परम्परा और महात्मा गांधी की शिक्षा है।

कुछ ही दिन हुए भारत-चीन सीमा-विवाद सम्बन्धी अपनी नीति के आलोचकों को जवाब देते हुए नेहरूजी ने कहा था—"हमारी नीति सबसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने की है, यहाँ तक कि चीन से भी। लेकिन जरूरत पड़ने पर हम उससे लड़ भी सकते हैं। अपने जीवन के पिछले ४०-५० वर्षों के भीतर, विशेषकर गांधीजी के सम्पर्क में, मैंने जो कुछ शिक्षा प्राप्त की है, वह यही है कि सबसे मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध बनाये रखा जाय, किन्तु किसी के सामने झुक जाने की बात न सोची जाय।" राष्ट्रसंघ के मंच से ऐसे जोरदार तरीकों से किसी भी अन्य राजनायक ने शान्ति की अपील न की होगी और अन्त में उन्होंने जो कुछ कहा, उसके लिए गांधीजी के प्रति अपनी कृतज्ञता भी प्रकट कर दी।

यही वजह है कि यदि संसार जवाहरलालजी से भिन्न प्रकार की नीति और व्यवहार की आशा करता है, तो उसका ऐसा आशा करना उचित ही है। वस्तुतः यह हमारे प्रति सम्मान ही है।

अतः भारत की निरपेक्षता और तटस्थता की नीति गांधीजी की नैतिक और शान्तिपूर्ण ढंग से समस्याएँ हल करने की शिक्षाओं पर आधारित है, इसलिए नेहरूजी तथा उनकी सरकार से हमारे लिए यह आशा करना उचित ही है कि वे अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए शक्ति के प्रयोग की अपने आप लादी हुई बन्दिश स्वीकार करेंगे। साथ ही नैतिक बंधनों को मान्य करेंगे और शान्तिपूर्ण तरीके को प्रोत्साहन देंगे। मैं जानता हूँ कि मुझे यही जवाब दिया जायगा कि सरकार के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह शक्ति के प्रयोग पर प्रतिबन्ध की तथा शान्तिपूर्ण और नैतिक ढंग से ही समस्याएँ हल करने की नीति को प्रोत्साहन देने की बात तक अपने को सीमित रखे। इसी से मैंने अपने उस लेख में यह बात साफ तौर पर मानी है—'यह बड़े खेद का विषय है कि जवाहरलालजी ऐसी प्रवृत्तियों को बढ़ावा देने में सफल नहीं हो पाये, *जिनसे अहिंसात्मक मूल्यों का विकास होता।*'

लोकतंत्र का संकट

ऊपर-ऊपर से देखने पर तो ऐसा लगेगा कि जिस सरकार के पास अन्ततः दमन और शक्ति-प्रयोग का ही संबल है और जो अपने को उनसे बिलकुल मुक्त रख सकने में समर्थ न हो उसके लिए सम्भव नहीं है कि वह शान्ति और नैतिकता की यह पाबन्दी स्वीकार करे या उसको बढ़ावा दे। मगर थोड़ा गहराई से देखें तो समझ में आयेगा कि वस्तुतः बात ऐसी है नहीं। जिस तरह से जीवन और समाज का विकास बहुत ही अनुकूल परिस्थितियों में नहीं हुआ है, उसी तरह से अहिंसा की पंखुड़ियाँ हिंसात्मक परिस्थितियों में ही विकसित होंगी। स्वयं लोकतन्त्र का विकास इस प्रक्रिया का प्रमाण है। यह दूसरी बात है कि लोकतंत्र भी अभी अन्तिम अस्त्र के रूप में दमन और शक्ति-प्रयोग को त्याग नहीं सका है। लेकिन इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि लोकतन्त्र की मूल प्रकृति में ही यह बात है कि व्यक्ति-व्यक्ति के बीच, वर्ग-वर्ग के बीच, राष्ट्र-राष्ट्र के बीच झगड़े मिटाने के लिए नैतिक और शान्तिपूर्ण उपायों का सहारा लिया जाय। आज लोकतंत्र के समक्ष जो सबसे बड़ा खतरा है, वह यही है कि इसका संचालन करने वाले उसकी मूल प्रकृति से, उसकी आत्मा से दूर जा पड़े हैं। वे उसके इस तत्त्व को आधार मान कर नहीं चल रहे हैं कि सारे विवाद शान्ति से सुलझाये जायँ। लोकतंत्र का मूलभूत सिद्धान्त यही है कि हर व्यक्ति को, वर्ग को इस बात की आजादी रहे कि वह अपने तरीके से अपनी विवेक-बुद्धि के अनुसार हर मसले पर गौर कर सके। इसीलिए गांधीजी कहा करते थे कि आधुनिक लोकतंत्र को नैतिकता पर आधारित लोकतंत्र में बदल देना चाहिए। मनुष्य की विवेक-बुद्धि की अभिव्यक्ति और किसी रास्ते से ही नहीं, केवल अहिंसा के ही रास्ते से हो सकती है; क्योंकि युद्ध (भले ही उसका पक्ष न्याय्य हो) हिंसा को—धार्मिक मान्यता प्राप्त हो जाने के कारण—बहुत बड़े पैमाने पर फैल जाने का मौका देता है।

अतः दलीय पद्धति और बहुमत शासनप्रधान लोकतंत्र के स्थान पर प्रबुद्ध व्यक्तियों के विवेक पर आधारित नैतिक लोकतन्त्र को प्रतिष्ठित करना चाहिए। पं० जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में चलने वाली भारत सरकार ने राष्ट्रसंघ के मंच से दुनिया को इसका रास्ता दिखाया है। भारत सरकार ने बराबर ही विरोधी गुटों में से आँख मूँद कर किसी का साथ देने से इन्कार किया है और हर प्रश्न पर अपने विवेक के अनुसार सोचने और तदनुसार काम करने की अपनी आजादी और अपना अधिकार बनाये रखा है। भारत के लम्बे इतिहास में इसके और भी उदाहरण मिलते हैं। यह कोई नयी चीज नहीं है।

प्रोफेसर ट्वायनबी ने लिखा है—'अपनी राजनीतिक शक्ति का प्रयोग करने में विवेक को स्थान देने के कारण अशोक सदा ही स्मरण किया जायगा।'●

लोग कह सकते हैं कि यह कल्पना-लोक में विचरण करने जैसी बात है। किन्तु यह समझ लेना चाहिए कि नैतिकता को राजनीति में प्रविष्ट करना या मानव-सम्बन्ध के किसी क्षेत्र में उसको ले आना अब स्वप्न की बात नहीं है। अपनी नयी किताब 'ह्यूमनिस्ट फ्रेम' की प्रस्तावना में जूलियन हक्सले ने लिखा है—खौलती कड़ाही में पड़ने वाले बुलबुले जैसे इस बात की सूचना देते हैं कि अब पानी द्रव से गैस की शकल में बदलने जा रहा है उसी प्रकार आज की विचारधारा में जो उफान आ गया है वह इस बात का परिचायक है कि अब हम उसी स्थिति में आ पहुँचे हैं, जहाँ मनोविज्ञान की सीमा के बाद चेतन-स्तर पर विकास का प्रयोजनात्मक चरण प्रारम्भ होता है।

इतिहास की चुनौती

यह बात कही जा सकती है कि आज के जमाने में सरकारों का संघटन जिस ढंग का है, उसको देखते हुए यह बात उनके अधिकारों के दायरे के बाहर की है। *हो सकता है कि यह बात सही है।* मगर जिस सरकार को यह सौभाग्य प्राप्त हो कि उसके प्रधान पं० जवाहरलाल नेहरू हैं, उससे यही आशा की जा सकती है कि वह 'विकास के उस सचेतन प्रयोजनात्मक स्तर' तक उठ सकेगी, जिसकी चर्चा हक्सले ने की है। इसमें सन्देह नहीं कि नेहरूजी यथाशक्ति यह काम करेंगे। लेकिन कम से कम जिस बात की उनसे आशा की जाती है वह यह है कि वे भारत में इस दिशा की ओर अग्रसर प्रवृत्तियों को बढ़ावा दें। दुर्भाग्य की बात यह है कि लक्षण प्रतिकूल दिखायी पड़ते हैं! ऐसा प्रतीत होता है कि जहाँ तक सरकार का सम्बन्ध है, गोआ के मामले से इस दिशा में शुरुआत हो गयी है। आगे कदम बढ़ाने के लिए अब शंख बज चुका है। देश के जिम्मेदार समाचार पत्र और अधिकारारूढ़ व्यक्ति इस बात की माँग करने लग गये हैं कि नागाओं की समस्या हल करने के उद्देश्य से तथा चीन के अधिकार से अपनी भूमि छुड़ाने के उद्देश्य से युद्ध के लिए तैयारी शुरू हो जानी चाहिए।

● ऐरनाल्ड ट्वायनबी-"बन वर्ल्ड ऐण्ड इंडिया", पृष्ठ १६

गोआ के मामले से सबक लें

—"पीस-न्यूज" का मत

हिंसा की निंदा करना, उसके प्रति घृणा का भाव प्रदर्शित करना दक्षिणपन्थियों (अपरिवर्तनवादियों) के लिए एक प्रकार की चाल-सी हो गयी है। पहले कटांगा का नाम लेकर यह भाव व्यक्त किया गया और अब गोआ की बारी आयी है! लेकिन गोआ में भारत की 'अभ्याक्रामक कार्रवाइयों' की निन्दा करते समय ये लोग उस सन्दर्भ को बिलकुल ही भूल जाते हैं, जिसके अन्तर्गत यह कार्रवाई हुई है। यह ऐसा सन्दर्भ है, जिसके अन्तर्गत सैनिक कार्रवाई करके भारत ने अपयश का ही अर्जन किया है, फिर भी यह काम बहुत आवश्यक था।

जैसे ब्रिटेन को भारत में बने रहने का कोई अधिकार नहीं था, वैसे पुर्तगाल को गोआ में बने रहने का कोई अधिकार नहीं था। ब्रिटेन के भारत छोड़ने के १४ वर्ष बाद भी पुर्तगाल की कोई प्रवृत्ति गोआ छोड़ने की नहीं दीख पड़ी। गोवाइयों ने अहिंसात्मक आन्दोलन का सहारा लिया, हजारों पकड़ कर जेल में डाल दिये गये, सैकड़ों मौत के घाट उतार दिये गये और जनता पर जो भारी अत्याचार और निरंकुश दमन हुआ उसकी तो कहानी ही अलग है! १९५५ में भारतीय सत्याग्रहियों ने गोआ में प्रवेश करने का प्रयत्न किया और उन पर पुर्तगालियों ने गोलियाँ चलायीं!

गोवाइयों का निर्दयतापूर्वक दमन करने वाली सालाजार की हुकूमत ने अंगोला में अफ्रीकियों को मटियामेट कर देने, उनको नेस्तनाबूद कर देने के लिए भयानक युद्ध छेड़ रखा है। वर्षों से उसका यह जुल्म चल रहा है, जिसके कारण हजारों आदमी बुरी तरह पिस गये। स्वयं पुर्तगाल में विरोधियों को बन्दी बना कर तथा उन्हें आतंकित कर सालाजार अपनी सत्ता कायम किये हुए हैं।

इसलिए असल अपराधी सालाजार की हुकूमत है, जिसने असहाय व्यक्तियों को निर्दयतापूर्वक कुचला है, अन्तर्राष्ट्रीय विधानों और मानव अधिकारों की अवहेलना की है तथा जितने दिन भी वह गोआ में बनी रही है, उसने जनता के विरुद्ध अभ्याक्रमक कारवाइयों का परिचय दिया है। गोआ के आन्दोलनकारी नेताओं ने हमेशा ही चाहा कि गोआ भारत का अंग बन जाय। १४ वर्ष तक अहिंसात्मक आन्दोलन करके जब गोआ के लोग निराश हो गये और उन्हें अपनी मुक्ति की आशा न दिखायी पड़ी, तो उन्होंने भारतीय हस्तक्षेप को वरदान समझा और यह उम्मीद उनको हो गयी कि अब हमारी यातना के दिन लद गये।

ब्रिटेन और अमेरिका द्वारा नेहरूजी की गोआ सम्बन्धी कार्रवाई की निन्दा बिलकुल ढोंग है। यही नहीं कि ब्रिटेन ने

कश्मीर की समस्या तो ऐसा नासूर है, जिसका विष हमारे राजनीतिक शरीर में फैल कर एक पड़ोसी देश के साथ हमारे सम्बन्ध खराब कर रहा है! स्थायी मैत्री सम्बन्ध की तो बात ही दरकिनार!

हिंसा का यह सिलसिला हमें कहाँ ले जाकर पटकेगा!

यह बात कही जा सकती है कि हिंसा हो या नहीं, कोई भी सरकार अनिश्चितकाल तक किसी मसले को लटकाये नहीं रह सकती और खास करके लोकतन्त्रात्मक सरकार, तो और भी नहीं जिसका भविष्य जनता की माँगों की पूर्ति के साथ जुड़ा हुआ है। लेकिन सवाल है कि क्या गांधी का भारत अपनी आत्मा की बलि चढ़ा कर अपने भविष्य की रक्षा के लिए यह रास्ता अपनाना पसन्द करेगा? इतिहास ने यह बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रश्न हमारे सामने उपस्थित कर दिया है। [मूल अंग्रेजी से]

५ वर्ष पूर्व मिस्र पर हमला किया और अमेरिका ने इसी वर्ष क्यूबा पर हमले का आयोजन किया, वरन् यह कि दोनों ही ने सालाजार की हुकूमत को बनाये रखने में मदद दी। और यह पुर्तगाल स्वतन्त्र संसार का एक देश है।

इस बात को मानते हुए कि सालाजार की हुकूमत एकदम अमानुषिक है और यह भी मानते हुए कि गोआ के लोगों को आजाद होने का अधिकार है, भारत सरकार द्वारा गोआ में प्रवेश करने का निश्चय वस्तुतः बहुत ही गम्भीर बात है और आज यह कहना मुश्किल है कि आगे चल कर इसका क्या परिणाम होगा। हो सकता है कि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से इससे सालाजार की हुकूमत पर बुरा असर पड़े या यह भी हो सकता है कि उसके लिए यह अनुकूल साबित हो, किन्तु यह उदाहरण खतरनाक है और यदि अफ्रीका में इसको लागू किया गया तो यह और भी घातक सिद्ध हो सकता है।

ऐसा प्रतीत होता है कि स्वतंत्र अफ्रीकी देशों के राजनीतिक दबाव के कारण नेहरू ने यह कार्रवाई की। यदि अफ्रीकी राज्यों ने अंगोला और मोजाम्बिक पर और कदाचित् दक्षिण अफ्रीका पर हमला किया तो इससे भयानक नर संहार होगा और लोगों की मुसीबत बढ़ जायगी और इस प्रकार जो भयानक विनाश होगा, उससे स्वतन्त्र अफ्रीका का उद्भव कठिन ही है। जहाँ तक आज के जमाने में युद्ध का ढंग है और अफ्रीका में शक्ति-गुटों की स्थिति है यह साफ है कि इसके परिणामस्वरूप अफ्रीका और भी शक्ति-गुटों में बँट जायगा। लेकिन सबसे बुरी बात तब होगी, जब कि 'नाटो' और कम्युनिस्ट शक्तियाँ भी मैदान में कूद पड़ें और तब अफ्रीका एकदम शीतयुद्ध का कारण बन जायगा, या फिर आणविक युद्ध प्रारम्भ स्थल सिद्ध हो।

हम लोगों ने सदा ही युद्ध का या यूरोप में चल रही युद्ध की तैयारियों का विरोध किया है। हमारी जो नीति रही है उसे देखते हुए यह सर्वथा असम्भव-सा है कि हम अत्याचार का विरोध करने के लिए सैनिक-हस्तक्षेप का समर्थन करें। हमें ठीक-ठीक भरोसा अहिंसा पर ही रखना चाहिए, उसीको अपना सम्बल मानना चाहिए। हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि गोआ की समस्या एकांगी नहीं है। विश्व-परिस्थितियों के सन्दर्भ से इसे अलग भी नहीं देखा जा सकता। अन्य बातों के अलावा नेहरू की कार्रवाई के परिणामस्वरूप शीतयुद्ध में मध्यस्थता का भारत का जो महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है, उससे वह गिर गया है। यह भी हो सकता है कि एशियाई-अफ्रीकी तटस्थ गुट पर इससे आँच आ जाय।

हमें यह भी मानना होगा कि गोआ में या संसार के अन्य देशों में जिस ढंग का जुल्म हो रहा है उसकी असली हालत के प्रति हम लापरवाह हैं। साथ ही इस अत्याचार से पीड़ित लोगों की विपत्ति दूर कराने के लिए हममें उतनी तत्परता नहीं है तथा इस उत्पीड़न के शिकार लोगों का दुःख-दर्द मिटाने के लिए सक्रिय होने की भावना मनुष्य में स्वाभाविक और अनिवार्य होती है।

अहिंसा के लिए बार-बार हमारा आग्रह करना, बड़े जोरदार तरीके से उसकी वकालत करना, एक प्रकार से शास्त्रीय स्वरूप सा हो गया है। हिंसा से फट पड़ने वाली विपत्तियों और उसके खतरों की हम जो भी चर्चा कर लें और अहिंसा के मूल्यों पर जो भी बातें कर लें, यह तय है कि इससे हम उनकी समस्याओं का कोई समाधान नहीं निकाल सकते, जिन्हें कल पकड़ कर जेलों में डाल दिया जा सकता है या जिन्हें अत्याचार का शिकार बनाया जा सकता है।' बहुत बार तो तात्कालिक समस्याओं का भी हम इससे कोई समाधान नहीं प्रस्तुत कर पाते और तब भी हम हिंसा की इतने जोरदार शब्दों में निन्दा करते हैं; हालाँकि हमने स्वयं इस दिशा में कोई विशेष कार्य नहीं किया है।

हमने दरअसल अपनी सरकार को इस बात से कभी रोकने की कोशिश नहीं की कि वह पुर्तगाल को हथियार देना बन्द कर दे, न इसी बात का प्रयत्न किया कि वह पुर्तगाल की राजनीति का समर्थन करती रहने से विरत हो जाय। हमने पुर्तगाल द्वारा अपने उपनिवेशों में किये जा रहे जुल्मों के विरुद्ध कभी जोरदार आवाज भी नहीं उठायी। खुद अपनी निष्क्रियता से हमने वह स्थिति पैदा होने दी है, जिसके कारण भारत को सैनिक कार्रवाई करनी पड़ी है।

मजे की बात यह है कि गोआ के आसपास जब भारत ने सैनिक मोरचेबन्दी शुरू की तो उसके कुछ ही पूर्व यह प्रस्ताव किया गया कि जो विश्वशान्ति सैन्य-दल स्थापित किया जाने वाला है, वह अपनी पहली कारगुजारी गोआ में दिखाये। लेकिन अब तो घटनाएँ बहुत आगे बढ़ गयीं और यह सोचने-समझने का मौका ही नहीं रह गया कि गोआ में कि अन्तर्राष्ट्रीय आधार पर किये जाने वाले किसी अहिंसात्मक कार्य से तानाशाही का मुकाबिला कैसे हो सकता है या स्थिति में उसके द्वारा कैसे परिवर्तन किया जा सकता है। लेकिन इस प्रकार के ठोस कार्यों और जहाँ हमारी सरकार सामने आये, वहाँ सही प्रतिरोधों से काम चल सकता है। अब इसकी जरूरत है। दक्षिण अफ्रीका, फेडरेशन और अंगोला के लिए अब भी समय बाकी है। ['पीस न्यूज' लंदन, २२ दिसम्बर, ६१ के अंक से, मूल अंग्रेजी।]

श्रुतयोगी नानाभाई भट्ट : २ :

महेन्द्र कुमार शास्त्री

नानाभाई के श्रुत, शील एवं प्रज्ञा का उत्तरोत्तर विकास 'दक्षिणामूर्ति' संस्था की स्थापना के काल से दृष्टिगोचर होता है। देश में जब सर्वत्र शिक्षण-संस्थाएँ पुरानी लीकों पर चल रही थी, शिक्षण-क्षेत्र में दंड या सजा का दौर-दौरा था। शिक्षा-क्षेत्र का यह मंत्र था, "छड़ी बाजे छम छम, विद्या आवे गम गम।" उस समय नानाभाई के हृदय में अहिंसक दृष्टि से एक आदर्श संस्था स्थापित करने की इच्छा हुई। उस समय उन्होंने पच्चीसी भी पूरी पार नहीं की थी। अपने जीवन के अट्ठाइसवें वर्ष में भावनगर में उन्होंने 'दक्षिणामूर्ति' संस्था की स्थापना की। सन् १९१० से भी पहले का यह काल है। इस संस्था का सत्ताईस से अधिक वर्ष का इतिहास अत्यन्त भव्य, रोचक एवं आकर्षक है। 'दक्षिणामूर्ति' के अनुकरण पर उस समय देश में अनेक अन्य शिक्षण-संस्थाएँ स्थापित हुईं। यहाँ तक कि गुजरात विद्यापीठ ने भी उसे मान्यता प्रदान की और नानाभाई की शिक्षण-पद्धति से प्रसन्न हो गांधीजी ने उन्हें अपने विद्यापीठ का उपकुलपति निर्वाचित किया। सौभाग्य से उन्हें अपनी संस्था में स्व० गिजुभाई और हरभाई जैसे शिक्षाशास्त्री मिले। गिजुभाई ने अकेले हाथों बाल-साहित्य के एक अधूरे अंग की पूर्ति की। गिजुभाई द्वारा रचित बाल-साहित्य देश की अनेक भाषाओं में अनूदित हो चुका है।

दक्षिणामूर्ति की छोटी सी संस्था ने अब महान् रूप धारण किया था। वह वट के बीज से निकल कर बृहद् बरगद के पेड़ में परिणत हो चुकी थी, अनेक संस्थाएँ उसकी अधीनता में अहिंसक तरीके से शिक्षा-क्षेत्र में क्रान्तिमूलक कार्य कर रही थीं, उसी समय गांधीजी ने देश के सामने बुनियादी शिक्षा का एक नवीन सूत्र रखा। प्रगतिशील नानाभाई इस दृष्टि को अपनाने वाले शिक्षा-शास्त्रियों में अग्रणी हैं। वे अपनी फली-फूली भावनगर की दक्षिणामूर्ति संस्था को छोड़ सोनगढ़ के पास आंबला में आकर बैठ गये और वहाँ गाँवों के विकास की दृष्टि से ग्रामदक्षिणामूर्ति, आंबला की स्थापना सन् १९३७ में की।

भावनगर और आंबला की संस्था में 'दक्षिणामूर्ति' शब्द अत्यन्त सूचक है। नानाभाई को यह शब्द बहुत प्रिय था। ऐसे प्रसिद्ध उपनिषद् एकादश हैं, कुछ लोग अठारह भी मानते हैं। पर एक एक-सौ आठ उपनिषदों वाला गुटका भी मिलता है। उसमें एक उपनिषद् का नाम है 'दक्षिणामूर्ति'। एक बार भगवान शिव बाल-वेश में जंगल में विचरण कर रहे थे। उनकी आकृति अत्यन्त भव्य थी। उपनिषद् में यह आकृति 'दक्षिणामूर्ति' नाम से अभिप्रेत है। चलते-चलते रास्ते में उन्हें वृद्ध मुनि मिले। मुनिगण इस बालगुरु को प्रणाम कर एक ओर बैठ गये। दक्षिणामूर्ति उपनिषद् में उल्लेख है :

> "चित्रं वटतरोर्मूले वृद्धाः
> शिष्या गुरुर्युवा।
> गुरोस्तु मौनं व्याख्यानं,
> शिष्यास्तु छिन्नसंशयाः ॥"

दक्षिणामूर्ति संस्था का भी यही ध्रुव लेख है।

स्व० नानाभाई के पास दक्षिणामूर्ति संस्था की स्थापना करने के पहले से ही बहुत विद्या-संपत्ति थी। दक्षिणामूर्ति स्थापना के बाद उसमें और भी वृद्धि हुई। उनका अनुभव कोई छोटा-बड़ा नहीं था। उसके साथ गांधीजी की शिक्षा-विषयक सत्यान्वेषी नवीन दृष्टि प्राप्त हुई। इसलिए उन्होंने इसी दक्षिणामूर्ति की आत्मा के साथ गाँव की ओर प्रयाण किया। यहाँ से ही दक्षिणामूर्ति की सच्ची उपासना प्रारम्भ हुई। आंबला, ग्रामदक्षिणामूर्ति का १३-१४ वर्ष का इतिहास देखने से पता चलता है कि इस समय देश में नयी तालीम की दृष्टि से जो संस्थाएँ काम कर रही हैं, उनमें ग्राम-दक्षिणामूर्ति आंबला का स्थान महत्त्वपूर्ण है। भावनगर और आंबला की संस्थाओं में स्थान-भेद होने पर भी दोनों की आत्मा एक है। विकास की दृष्टि से उनमें शहर से ग्राम की ओर प्रयाण है और उसमें लोकसंपर्क की अपेक्षा लोक-कल्याण की भावना अधिक है।

भावनगर और आंबला में नानाभाई ने शिक्षा के क्षेत्र में जो अनेक प्रयोग किये, उनके इन्हीं प्रयोगों ने उन्हें 'लोक-भारती ग्राम विद्यापीठ', स्थापित करने की ओर प्रेरित किया। और उन्होंने सणोसरा में अपनी कल्पना के अनुरूप एक आदर्श 'लोकभारती ग्राम-विद्यापीठ' की स्थापना की।

देश में इस प्रकार की और भी अनेक संस्थाएँ होंगी। मेरी जानकारी में एक ऐसी ही संस्था भारत के शिक्षामंत्री श्री श्रीमालीजी द्वारा स्थापित है, जो उदयपुर के 'विद्या-भवन' के अन्तर्गत 'लोक-भारती ग्राम-विद्यापीठ' के नाम से विख्यात है। मद्रास में सन् १९५८ में जब मैं श्री श्रीमालीजी से मिला, उस समय उन्होंने नानाभाई की इस सणोसरा की संस्था की बहुत प्रशंसा की। प्रत्येक प्रकार की सामग्री उपलब्ध करने के लिए श्री श्रीमालीजी के पास प्रचुर द्रव्य राशि होने पर भी वे अपनी संस्था में सणोसरा का यह आदर्श स्थापित नहीं कर सके हैं।

यह है नानाभाई की शिक्षा-विषयक साधना। वे सच्चे शिक्षाशास्त्री थे। साथ ही उनमें अतिथि-सत्कार, निर्भयता आदि ऐसे अनेक गुण थे, जो व्यक्ति को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे। उनकी अतिथिप्रियता यहाँ तक पहुँची हुई थी कि अपनी संस्था में आये हुए मेहमानों को लौटाते समय साथ में पाथेय बांध कर देते थे।

निर्भयता की तो वे मूर्ति ही थे। बड़े-बड़े चोर और डकैतों से भी नहीं डरते थे। उनके जीवन की एक घटना इस प्रकार है :

आंबला में काम करते समय एक बार वहाँ के सरदारों को लूटने के लिए कुछ डकैत चढ़ आये। नानाभाई को पता चलने पर वे अपने साथी मूलशंकर के साथ केवल एक पंचा पहने हाथ में डंडा लिये संस्था के बाहर आ खड़े हुए। नानाभाई ने डकैतों को पुकारा। डकैतों ने भी प्रत्युत्तर दिया। उनमें से मुखिया ने कहा, "नानाभाई, आप हट जाइये। मैं आपको तथा आपकी संस्था को कुछ भी हानि पहुँचाने नहीं आया हूँ। यहाँ के अभिमानी सरदारों को कुछ सबक सिखाना चाहता हूँ।"

नानाभाई ने कहा—"यह नहीं हो सकता। पहले मुझे ढेर कर मेरे शव पर होकर तुम आंबला में आ सकते हो।"

अन्त में नानाभाई की इस अटल टेक के सामने उन्हें झुकना पड़ा। वे सबको अपने घर ले गये और उन्हें भोजन कराया। विदा करते समय उनसे आंबला आदि चार गाँवों में डाका नहीं डालने की प्रतिज्ञा करायी।

स्व० किशोरलालभाई के देहावसान के समय जैसा बाबा धर्माधिकारी ने लिखा था कि वे वशिष्ठ की कोटि के मनीषी थे। स्व० नानाभाई की गणना भी इसी परंपरा में होती है। उन्होंने प्राचीन समर्थ शब्दों को नवीन शक्ति प्रदान की है, समाज में हेय दृष्टि से देखे जाने वाले मास्टर या पंतुजी शब्द को स्वयं वरण कर उन्होंने 'मास्टर' शब्द की प्रतिष्ठा बढ़ायी है, उन्होंने अनेक शिष्यों को दीप्त-दीप-दीक्षा● देकर दीपकों की तरह देश में अनेक ज्ञान-ज्योतियाँ प्रकट कीं। अक्षर और चेतन के रूप में बोये हुए उनके ये श्रुतबीज चिरकाल तक जन-मानस को शील और प्रज्ञा की ओर प्रेरित करते रहेंगे।

● तंत्रशास्त्र में दो प्रकार की दीक्षा प्रसिद्ध है : स्पर्श-दीप-दीक्षा और दीप्त-दीप-दीक्षा। पारस एक प्रकार की मणि होती है। उसका लोहे के साथ स्पर्श हो जाने पर लोहा अपनी मलिनता छोड़ स्वर्ण बन जाता है, पर उस लोहे से बने स्वर्ण में इतनी शक्ति नहीं होती कि दूसरे लोहे का स्पर्श कर उसे स्वर्ण बना सके। यह है स्पर्श-दीप-दीक्षा। इस परिपाटी में दीक्षित शिष्य का ज्ञान अपने तक ही सीमित रहता है। वह अपने समान अन्य व्यक्तियों को तैयार नहीं कर सकता। इसके विपरीत दीप्त-दीप-दीक्षा में एक दीपक से प्रज्वलित दूसरे दीपक में भी पहले दीपक की तरह ज्योति रहती है और उसके प्रकाश की यह परंपरा निरवच्छिन्न रहती है। वह कभी लुप्त नहीं होती। इस परंपरा में दीक्षित शिष्य अपनी ज्ञान-ज्योति से अपने समान अनेक समर्थ व्यक्तियों को तैयार करता है।

"रामनाम : एक चिंतन"

लेखक—विनोबा; प्रकाशक—अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी; मूल्य—तीस नये पैसे।

संत विनोबा द्वारा रचित यह पुस्तक गीता और रामायण की भाँति भक्त-साधकों का कण्ठहार बनने योग्य है। भक्त ने गहरी डुबकी लगा कर भक्ति का जो मक्खन पाया है, वही इस पुस्तक में सर्वसुलभ कर दिया गया है। राम-नाम संबंधी बापू की आस्था का रहस्य विनोबा की इस पुस्तक से खुल जाता है। इससे राम नाम संबंधी अनेक शंकाओं की निवृत्ति होकर हृदय को शान्ति प्राप्त होती है। प्रत्येक आस्तिक भक्त को परम भक्त विनोबा की यह छोटी पुस्तक पढ़नी ही चाहिए। इसमें गागर के भीतर अमृत का सागर भरा है। इसमें केवल भक्ति और मुक्ति का ही दिग्दर्शन नहीं है 'राम-नाम का उपचार' शीर्षक में कुदरती इलाज के साथ राम-नाम रूपी संजीवनी का मिश्रण कर आरोग्य के सरल सूत्र भी दिये गये हैं। (अ) हमेशा शुद्ध, स्वच्छ, युक्त और मित आहार और विशेष प्रसंगों में अल्प आहार और निराहार। (आ) देह, वाणी, मन की शुद्धि और आसपास के सब वातावरण की स्वच्छता। (इ) कुदरत पर प्यार और उसका उन्मुक्त सेवन। (ई) योग्य परिश्रम और विश्राम की व्यवस्था। (उ) अपने को देह से भिन्न जानना, प्राणिमात्र की सेवा में लग जाना और विशुद्ध चित्त से परमेश्वर का निरंतर स्मरण करना, यह है जीवन-चर्या, इसी को ब्रह्मचर्य कहते हैं। यही राम-नाम का उपचार है। सन्त का यह नुसखा कितना उपयोगी है। इसमें शरीर और मन का सम्पूर्ण प्रमाद दूर करने की शक्ति है।

विनोबा-पदयात्री दल से :

● कुसुम देशपांडे

"हाथी जंगल में भाग गया है !"—दूर से हेमा बहन की आवाज आयी। सब चौंक पड़े ! अब क्या होगा ? सुबह के चार बजे होंगे। ठंड खूब थी। 'करईगुरी' नाम के बारह घर वाले गाँव में घासफूस की झोपड़ी थी। बीच में परदा लगाया था। एक बाजू बाबा माधवदेव के साथ वार्तालाप कर रहे थे। दूसरी बाजू लालटेन के इर्दगिर्द बहनें बैठी थीं। किसी के हाथ में 'गीताई' थी, तो किसी की कलम चल रही थी। कोने में मोमबत्ती के स्निग्ध प्रकाश में अमलप्रभा बहन बंगाली गीता लिये बैठी थीं। जंगल की यात्रा थी। जीप तो साथ नहीं थी। हाथी पर सामान जाने वाला था। अब हाथी तो भाग गया !

समय होने पर साढ़े पाँच बजे बाबा ने चलना आरम्भ कर दिया। हेमा बहन दो साथियों को लेकर पीछे रह गयी और सामान दूसरे रास्ते से नदी को पार करके लाया गया। उस दिन ग्यारह बजे सामान पड़ाव पर पहुँचा। इसी प्रदेश में देखा कि बैल के बदले गाड़ी को हाथी खींचते हैं ! जब से जंगल में यात्रा हो रही है, हाथी की गाड़ी में सामान जाता है। एक पड़ाव पर कहा गया कि हाथी बीमार है, उसका पेट बिगड़ा है। कहते हैं कि जब हाथी का पेट बिगड़ जाता है तो वह मिट्टी खाता है, उससे उसको आराम मिलता है। उस दिन सब सामान गाँव के लोगों ने ढोया। बाबा को जहाँ-तहाँ 'नामघोषा' की याद आती है, भाषणों में तो कई बार वे उसका जिक्र करते हैं, 'गीताई' सिखाते हुए भी कई बार 'नामघोषा' के श्लोक बताते हैं। हमारा गौतम कहता है कि पाँच सौ साल बाद आज ही 'नामघोषा' का इतना अध्ययन होता होगा ! सामान ढोते हुए हाथी को देख कर बाबा ने कहा, "माधवदेव ने हाथी का जिक्र 'नामघोषा' में किया है :

"पुण्य अरण्यर माजे, माधवर नामसिंह,
प्रकाश करय आति बड़े।
जार ध्वनि शुनि भये, महापाप हस्तीचय,
पलाय आति त्रासन लवड़े।"

[पुण्य अरण्य के बीच माधव का यानी भगवान् का नाम-रूपी सिंह प्रकट होता है, तो उसकी आवाज सुन कर पाप-रूपी हाथी का समूह भाग जाता है।]

इस तरह सात दिन यात्रा का रास्ता घने जंगल से पगडंडी का और कहीं दो-दो तीन-तीन नदियों को लाँघने वाला था। ऐसे रास्ते में चलते हुए बाबा कहते हैं कि थकान नहीं आती है। वे कहते हैं गुरुदेव ने लिखा है, 'पतन अभ्युदय बन्धुर पन्था'—यह जो बन्धुर पंथ है, सुन्दर पंथ है, वह यही है। अगर सीधा रास्ता हो, ऊँची-नीची पगडण्डी न हो तो उस पर चलते हुए जी ऊब जायगा।

एक दिन ऐसे ही उत्तर की दिशा में जा रहे थे। दोनों बाजू बाँस के और कई तरह के ऊँचे-ऊँचे पेड़ थे। कहीं कहीं सरसों के पीले रंग के खेत थे और ठीक सामने 'नेफा' के नीले पहाड़ यात्रा के साक्षी बन कर मौन खड़े थे। सूर्य की पहली किरणों ने कुहरे को हटाया और उस प्रकाश में देखा कि नीले पहाड़ों के उस पार हिम-शिखर चमक रहे थे। वह सुहावना दृश्य देख कर पाँच मिनट बाबा रुक गये। गाँव के कुछ भाई साथ थे। बाबा ने उनसे कहा कि इस हिमालय का ध्यान करो। तो यहाँ जितने गाँव हैं, कुल के कुल ग्राम दान हो जायेंगे। उन भाई की समझ में नहीं आया कि बाबा क्या कह रहे हैं। प्रश्नार्थक मुद्रा से वे देखने लगे, बाबा ने समझाया, तुम जानते हो न कि उस पार चीन खड़ा है। भारत और चीन के बीच एक सवाल है। तभी वह हल होगा, जब तुम लोग ग्रामदान करोगे। ग्रामदान 'डिफेंस मेजर' है।

इस जंगल की यात्रा में 'मीरी' नाम के आदिवासी गाँव में जाना हुआ। एक-दो गाँव में ऐसा अनुभव आया कि वहाँ के लोग शराब ज्यादा पीते हैं। जिस दिन उस गाँव में पड़ाव था, उस दिन बाजार था, इसलिए शायद पीने वालों की संख्या ज्यादा होगी। पड़ाव के इर्दगिर्द हमेशा ही लोग घेरे हुए रहते हैं। उस दिन दो-तीन लोग जरा ज्यादा ही बोल रहे थे। बीच-बीच में उनके बीच झगड़ा भी चलता था। उस दिन सभा के बाद बाबा ने कहा कि आज की सभा में मेरे मन पर यह असर रहा कि लोगों का चित्त एकाग्र नहीं था। तब एक कार्यकर्ता ने बताया कि यहाँ के लोग बहुत शराब पीते हैं ! जैसे चाय पी जाती है, वैसे इनकी शराब चलती है ! इसलिए सभा में लोगों को इसके बारे में आप कुछ समझायेंगे तो अच्छा रहेगा।

बाबा ने कहा, "मैं समझाऊँगा, लेकिन वे लोग अगर हाजिर नहीं होंगे यानी उनका दिमाग ठिकाने पर नहीं होगा तो वे क्या सुनेंगे और क्या समझेंगे !" ऐसा होते हुए भी मीरी लोगों के गाँव में कुछ अनुभव अच्छा आया। कई ग्रामदानी गाँव ऐसे हैं, जहाँ मीरी लोगों की बस्ती है। शराब पीने की आदत छोड़ कर बाकी उन लोगों के रहन-सहन से पता नहीं चलता है कि वे आदिवासी हैं।

असम में स्वागत में फूल की माला के साथ पान और सुपारी देने का रिवाज है। एक दिन बाबा के हाथ में गाँव के लोगों ने चार सुपारियाँ रखीं। बाबा ने कहा—"एक-एक सुपारी याने एक-एक ग्रामदान है। मैं आशा करता हूँ कि आज मुझे चार ग्रामदान मिलेंगे।" और सचमुच ही उस दिन कार्यकर्ताओं ने चार गाँवों का ग्रामदान जाहिर किया।

एक छोटे-से गाँव में बाँस की झोपड़ी में बाबा का निवास था। उस झोपड़ी की रचना में एक भी चीज गाँव के बाहर की नहीं थी। झोपड़ी के दरवाजे के लिए भी कहीं कीलों का उपयोग नहीं किया था। बाबा ने कहा, "यह झोपड़ी ग्रामदानी गाँव का नमूना है। अक्सर हम झोपड़ी पर टीन देखते हैं। लेकिन इस झोपड़ी में न टीन है, न कहीं कीलों का उपयोग हुआ है। बाँस, घास और लकड़ी के सिवाय और कुछ भी नहीं है। ऐसा ही काम आप करेंगे, तो शहर का आक्रमण गाँव पर नहीं होगा।"

उस दिन गाँव की बहनों ने बाबा का स्वागत करते हुए बाबा को चन्दन का टीका लगाया। बाबा ने कहा, "चन्दन तो आपके गाँव में नहीं होता है, आपके गाँव में खेत है। खेत की मिट्टी पवित्र होती है। स्वागत में टीका लगाने की तो जरूरत नहीं है। लेकिन आप चाहते हैं तो खेत की मिट्टी का टीका लगाइये।"

इन दिनों दरुआखाना मौजे में बाबा की यात्रा हो रही है। अक्सर गाँव के लोग बच्चों की तालीम के बारे में चिंता प्रकट करते हैं। उस चर्चा में एक दिन बाबा ने कहा, "आज की शिक्षा में बच्चों को ज्यादा ज्ञान नहीं मिलता है। थोड़ा असमी, थोड़ा हिन्दी, थोड़ा संस्कृत, ऐसा चलता है। सारा ज्ञान अधूरा होता है। किसी ज्ञान में बच्चे पक्के नहीं होते हैं। किसी-को हमने पूछा कि तैरना जानते हो, तो उसने कहा कि हाँ, थोड़ा-थोड़ा तैरना जानता हूँ। अब तैरना थोड़ा जानना याने क्या ? डूबने लायक तैरना होगा। तैरना तो वह होगा, जिसमें वह मनुष्य खुद ब्रह्मपुत्र पार करेगा और दूसरे को भी ले जायेगा। मतलब यह कि किसी भी विषय का पूरा ज्ञान होना चाहिए। बच्चों को उत्तम हिन्दी आनी चाहिए, हिसाब भी आना चाहिए। यह बहुत जरूरी है। असम में हिसाब बहुत कम है, इसीलिए व्यापार में असमी लोगों का कुछ नहीं चलता। खेती का और उद्योग का भी ज्ञान होना चाहिए। गाँव में वनस्पति होती है। उसका ज्ञान होगा, तो गाँव के आरोग्य की रक्षा आप कर सकेंगे। 'नामघोषा', 'कीर्तनघोषा' आप लोग पढ़ते हैं। बच्चों को स्कूल में यह पढ़ाना चाहिए और एक बात का ख्याल रखना चाहिए कि सीखने में नौकरी की आशा नहीं रखनी चाहिए। हम तो यह चाहते हैं कि गाँव में ऐसे स्कूल हों, जिसमें बच्चों को नई तालीम दी जायगी और स्कूल के बाहर ऐसा बोर्ड रहेगा, जिस पर लिखा रहेगा कि स्कूल के बच्चों को नौकरी से कोई मतलब नहीं है।"

ऐसे एक-दो गाँव मिले जहाँ के लोगों ने यह विचार कबूल किया है।

रास्ते में विविध विषयों की चर्चा होती है। एक दिन किसी ने शंकराचार्य के बारे में सवाल पूछा। बाबा ने कहा, "शंकराचार्य एक महान् विभूति थी। उन्होंने भारत की पदयात्रा इस सिरे से उस सिरे तक की। ज्ञान का प्रचार किया, महान् ग्रंथ लिखे। चार शिष्यों को तैयार किया और खुद अनुभव लेकर वे चले गये। अब उनके ग्रंथ उनका काम करेंगे। अगर उन ग्रंथों को प्रचारक मिलेंगे, तो दुनिया में वे ग्रंथ फैलेंगे। इतने महान् दैवी पुरुष शंकराचार्य को चार ही लोग मिले। ईसा को बारह मिले।"

बीच में एक साथी ने पूछा, "वह जमाना तो अलग था। इसलिए आज के इस बदले हुए जमाने में सर्वोदय विचार को ज्यादा शिष्य मिलेंगे, प्रचारक मिलेंगे ऐसी आशा क्या नहीं कर सकते हैं !"

बाबा—"जमाना तो बदला है, लेकिन इस जमाने में ज्ञान का भी प्रहार तीव्र होता है और माया का भी प्रहार उतना ही तीव्र होता है। भूदान का काम बहुत ज्यादा तो नहीं हुआ, फिर भी उसका असर दुनिया में हुआ है। छोटी-सी भी चीज क्यों न हो, वह अच्छी है, तो उसका परिणाम व्यापक होता है। बुराई का भी परिणाम चाहे वह छोटी-सी क्यों न हो, व्यापक होता है। दो हजार साल पहले हमने भूदान चलाया होता तो जर्मनी से फोटो खींचने के लिए लोग नहीं आते। आज तुम लोग देखते हो कि प्रचार के तीव्र साधन किनके हाथों में हैं ? सर्वोदयवालों के हाथों में हैं या असर्वोदयवालों के ? उनकी खबरें रोज रेडियो पर आती हैं। हमारे पास रेडियो है। लेकिन हम जिस चीज के लिए उसका उपयोग करना है, उसके लिए करते हैं और बाकी छोड़ देते हैं। नहीं तो असम में सिलोन के गाने सुनते। रेडियो पर इन दिनों सिलोन के गीत चलते हैं और मीरा के भजन भी ! इधर सिलोन, उधर सिलोन और बीच में मीरा। दरबार में बैठ कर उसके गीत सुन कर खुश होते हैं। कहते हैं, वाह वाह कितना अच्छा दरबारी राग है ! उसके भजनों का कुछ परिणाम होता है ? वह गाती है "मुरलीवाली माया लागी रे मोहन प्यारा।" और ये समझते हैं मोहन याने उनके मोहन भाई। उसमें जो भावना है, वह लोगों के परिचय की नहीं है ऐसा तो नहीं; लेकिन उसने वह भावना ईश्वर के चरणों में रखी थी और ये लोग तो ईश्वर को पति मानने के बदले पति को ही ईश्वर मानने के लिए कहते हैं।"

यात्रा में दिन भर का काम खतम हो जाता है, तब शाम को बाबा की खटिया के पास छोटी-सी महफिल जुटती है। उसमें कई तरह की बातें होती हैं। एक शाम को बाबा ने कहा,

"हमारे इर्दगिर्द जितने लोग हैं, वे सब स्वामी हैं और मैं सेवक हूँ, ऐसी भावना होनी चाहिए; तभी चित्त प्रसन्न रहेगा। सबके लिए आदर-भावना होनी चाहिए। दूसरों के लिए हमारे मन में आदर कम हुआ, तो उसका कुछ नहीं बिगड़ता, हमारा ही बिगड़ता है। हमें गुण-दर्शन नहीं हुआ, तो यह हमारी ही कमी मानी जायगी। हमारे चित्त का लाभ होगा। गुण-दर्शन याने हरिदर्शन, देव दर्शन।"

"क्या दोष-दर्शन होना ही नहीं चाहिए? और हुआ तो उसका उच्चार नहीं करना चाहिए?"—किसीने पूछा।

बाबा—"दोष हमें कैसे मालूम होगा, उसके लिए सबूत क्या है? कोर्ट में भी सबूत के बिना 'केस' स्वीकार नहीं करते। सामने के मनुष्य के मन में क्या है, यह आपको कैसे मालूम होगा? आप उसके अन्तर्यामी तो नहीं हो सकते हैं। किसी पर भी दोष का आरोप नहीं कर सकते हैं। वह अगर कहता है कि फलानी चीज मैंने नहीं की तो आपको वह मानना चाहिए। अपनी ही बात 'परसिस्ट' नहीं करनी चाहिए।"

बाबा को महाराष्ट्र के संत एकनाथ की कहानी याद आयी। "बारिश के दिन थे। रात का समय था। मूसलधार बारिश हो रही थी। अतिथि आये, उनको खिलाना था। आँगन में लकड़ी भीग रही थी। अब रसोई कैसे बनायी जाय? एकनाथ महाराज ने पत्नी को कहा, 'गिरजा, नारायण घर में आया है, उसे खाना खिलाना है।' उन्होंने क्या किया? सोने के लिए खटिया थी, उसकी लकड़ी तोड़ी। वह जला कर उस पर रसोई बनायी। कभी-कभी उनका चित्र हम यहाँ असम में, स्कूल में देखते हैं। चार सौ साल पहले उन्होंने नहीं सोचा होगा कि उनका चित्र असम में लगाया जायगा।

"तुकाराम कहता है, हे भगवन्, मेरे दोषों का निराकरण करने वाला तू ही एक है। जो दुर्जन हैं वे तो मुझमें जो दोष नहीं हैं, उनका आरोपण करते हैं और संतों की बात क्या कहूँ? उनको तो सब भूतों में ब्रह्म ही दीखता है। उनको तो मेरे दोष दीखते ही नहीं। इसलिए भगवन् मेरे दोषों को हटाने वाला तू ही एक है।' इस तरह संतों का वर्णन तुकाराम ने किया है। उनको सब ब्रह्म-स्वरूप ही दीखता है।"

अगले सप्ताह में विनोबाजी के पास अखिल भारत सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति की बैठक होने वाली है। उसके लिए डकुआखाने में तैयारी हो रही है। बैठक का प्रबंध करने के लिए श्री गायत्री भाई काशी से आये हुए हैं। श्री कांति-बहन और श्री यशोदाबहन कौशानी से सरला देवी के आश्रम से अनुभव लेने के लिए यात्रा में आयी हैं।

मदारगुरी (लखीमपुर) २-१-'६२

महाराष्ट्र के भंडारा जिले में

श्री अप्पासाहब की शोषणमुक्ति-पदयात्रा

श्री अप्पासाहब पटवर्धन की २४ नवम्बर से ७ दिसम्बर तक, २४ दिन की इस शोषणमुक्ति-पदयात्रा का स्थान भंडारा जिले के कार्यक्रमों में प्रमुख, संगठित एवं अनन्य रहा। भूदान-आन्दोलन के प्रारम्भ में हुई श्री दादाराव देव की सन् १९५२ की पदयात्रा का स्मरण इसने दिलाया। कार्यकर्तागण पूरे एक महीना भर इस पदयात्रा के कार्यक्रम के कारण व्यस्त रहे।

भूदान की नवीनता अब नहीं है और आगामी चुनाव का आकर्षण सत्ताधारी नेताओं को होने से इस पदयात्रा के प्रति उनकी उदासीनता खटकती थी। इसके विपरीत जनसाधारण तथा सत्तानिरपेक्ष कार्यकर्ताओं ने उत्साह तथा उमंग से श्री अप्पासाहब का स्वागत कर साथ दिया। जनता में दुःख-दर्द भरा पड़ा है; लेकिन काँटा कहाँ चुभता है, यह उसकी समझ में नहीं आ रहा है। श्री अप्पासाहब ने उसी मर्म पर अंगुली रख कर उसका इलाज बतलाया।

श्री अप्पासाहब की इस पदयात्रा में भंडारा जिले में क्रमशः पौनी, गोन्दिया, तुमसर, इन नगरों में तीन कार्यकर्ता-शिविर सम्पन्न हुए।

> १७० मील की इस पदयात्रा में ४० गाँवों में ४० आम सभाएँ हुईं। ४०२ रु० का सर्वोदय-साहित्य बिका, २९९ सर्वोदय-पुरस्कर्ता (मित्र) बने। २ एकड़ का भूदान प्राप्त हुआ। १०५ रु० ६३ न० पै० भेंट तथा प्रचार के रूप में 'असे हाले पाहिजे' विषय के ४९१ भित्ति-पत्रक बिके।

पौनी, गोन्दिया और तुमसर में भंगी-मुक्ति तथा नगर-सफाई का विशेष रूप से आयोजन हुआ। दलित भंगी समाज को अपना भ्राता मिलने का-सा आनन्द हुआ। हर जगह उन्होंने शिविरार्थियों को तथा नगरपिताओं को प्रेम से भोजन खिलाया। अस्पृश्यता-निवारण का यह कार्यक्रम कार्यकर्ताओं को चुनौती देने वाला था। नगरपिता, नागरिक, सफाई-कर्मचारी तथा कार्यकर्ताओं का चतुष्कोण सधने पर ही सामाजिक विषमता का विष-बीज हट सकेगा। अंत्योदय के बिना सर्वोदय ऊपर की मलहमपट्टी मात्र ही साबित होगी, इसका स्पष्ट भान कार्यकर्ताओं को हुआ। व्यक्तिगत पुरुषार्थ से भी कुछ अंशों में यह समस्या सुलझ सकती है। लेकिन असल में इस समस्या की जड़ आर्थिक शोषण-युक्त समाज-रचना में है, यह बात श्री अप्पासाहब हर समय अपने भाषणों में समझाते थे।

शोषण-मुक्ति का आन्दोलन भूदान द्वारा विनोबाजी ने दस वर्ष पूर्व प्रारम्भ किया। वह अब सीमित हुआ दीख रहा है और भूमि-वितरण, अर्थात् शोषण-मुक्ति के अन्यान्य तरीके ढूँढ़ने की फिक्र में सर्वोदय-कार्यकर्ता लगे हुए हैं। इसी विचार-मंथन में से श्री अप्पासाहब को अपना नवसन्देश फैलाने की स्फूर्ति हुई। केवल दान-वृत्ति से ही समाज क्रान्ति होने वाली नहीं है। सामाजिक, आर्थिक, न्यायान्याय प्रकाश में लाने से तथा जनसाधारण की विवेक-शक्ति जाग्रत करने पर सामूहिक पुरुषार्थ से, जनतन्त्र के सब वैधानिक पद्धति से ही क्रान्ति होगी, यह श्री अप्पासाहब की भूमिका आज के जनमानस के अनुकूल लगती है। चुनाव के वक्त मतदाता इस कसौटी पर उम्मीदवार को कसें, ऐसा श्री अप्पासाहब का आग्रह है।

पोखट की कमाई के एक प्रकार, सट्टेबाजी के खिलाफ भूदान ने आवाज उठायी। दूसरा प्रकार है ब्याज-किराया, डिव्हिडण्ड और तेजी-मन्दी में प्राप्त होने वाला मुनाफा। इन दोनों के सहयोग से ही आज की शोषण-व्यवस्था चल रही है। इन दोनों प्रकारों का एक ही समय में निर्मूलन करने के आन्दोलन से ही क्रान्ति सुसाध्य होगी, यह विचार श्री अप्पासाहब समझाते हैं।

संचित धन के केवल स्वामित्व से किसी का निर्वाह न चले। सट्टा और ब्याज-बट्टा, दोनों नीतिहीन हैं, इसलिए गैर-कानूनी करार दिये जायें। सबके लिए एक ही तत्त्व लागू करने से सर्वसम्मति सुलभ होगी, सामूहिक पुरुषार्थ को मौका मिलेगा। कोरकसर से तथा कुशलता-पूर्वक किया हुआ धन-संचय को खर्च करने का हरएक को हक है। उसमें किसी का शोषण नहीं होगा। कुछ विषमता रहेगी। वह गुणमूलक होगी, इसलिए निर्दोष समझी जाय। डंक टूटे हुए बिच्छू के समान यह विषमता निरुपद्रवी है, लेकिन शोषणमूलक विषमता अनीति स्पर्धा, गुटबंदी, काला बाजार, रिश्वतखोरी, द्वेष, वैमनस्य तथा लड़ाइयों को जन्म देती है। इस शैतानी खेल को मूल से ही निकाल फेंकने का समाज दृढ़ संकल्प करे।

सामाजिक विषमता की जड़ आर्थिक शोषण-रचना में है। अड़चन में फँसे दीन जनों पर जबरदस्ती से हीन धन्धे लादे गये हैं। उनकी आर्थिक बाधाएँ दूर होने पर सभी को सम्मान्य प्रतिष्ठित जीवन हासिल होगा। इसलिए विनोबाजी और श्री अप्पासाहब का लक्ष्य शोषण-मुक्ति केन्द्रित हुआ है।

हाथ से भंगी-मुक्ति का विधायक पुरुषार्थ काम और मुख से शोषण-मुक्ति का विचार-प्रचार, यही श्री अप्पासाहब का हमारे कार्यकर्ताओं के लिए सन्देश है।

—प्रभाकर बापट

खादी-समिति के लिए अर्थ-संयोजन

[अखिल भारत सर्व सेवा संघ के खादी-ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य-समिति के मंत्री श्री करण भाई ने समिति के आर्थिक संयोजन के लिए खादी-ग्रामोद्योगों की संस्थाओं को जो निवेदन किया है, वह यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

अखिल भारत सर्व सेवा संघ खादी-ग्रामोद्योग ग्राम-स्वराज्य समिति अब अनेक कार्यक्रम अपने हाथ में ले रही है। समिति का सारा कार्य आप लोगों के सहकार और सक्रिय सहयोग से ही चलता रहा है। कार्य के विस्तार और आगे की जिम्मेदारी को देखते हुए यह आवश्यक महसूस हुआ कि खादी-समिति के काम के लिए एक स्थायी आर्थिक संयोजन हो। प्रयोग का काम मुख्य है।

खादी, खेती, ग्रामीण उद्योग; इन सभी क्षेत्रों में प्रगति करने के लिए हमें प्रयोग करना होगा। उसके लिए कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण भी हमें करना है। कत्तिन, बुनकर आदि कामगारों का शिक्षण भी सोचना और करना है। इसी प्रकार समय-समय पर रचनात्मक संस्थाओं के सामने ऐसे कई दैवी संकट आते हैं, जिनमें कुछ सहायता के संयोजन की नितांत आवश्यकता दीखती है। इसलिए एक स्थायी और केन्द्रीय आर्थिक संयोजन की तो आवश्यकता है ही। इस सम्बन्ध में ता० १२ और १३ अक्टूबर '६१ को अहमदाबाद में हुई खादी-समिति की बैठक में काफी चर्चा हुई।

मुख्य निर्णय यह लिया गया कि ग्राम-स्वराज्य समिति के लिए आर्थिक संयोजन हो, यह आवश्यक प्रतीत होता है और उसके लिए सभी खादी-ग्रामोद्योग संस्थाएँ खादी, सरंजाम तथा अन्य हर प्रकार की ग्रामोद्योगी

वस्तुओं के अपने उत्पादन पर ७५ न०पै० प्रति हजार के हिसाब से रकम निकाल कर खादी ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य समिति को दें।

इसी प्रकार खादी, सरंजाम तथा सभी ग्रामोद्योगी वस्तुओं की फुटकर बिक्री पर ७५ नये पैसे प्रति हजार के हिसाब से रकम निकाल कर खादी-ग्रामोद्योग ग्राम स्वराज्य समिति को दें।

आप इसकी आवश्यकता और उपादेयता समझते ही हैं। बूँद-बूँद से सागर भरता है। आप लोगों का थोड़ा थोड़ा सहयोग उपर्युक्त आधार पर मिलने पर खादी ग्रामोद्योग ग्राम स्वराज्य समिति का ठोस और स्थायी आर्थिक आधार हो जायगा और हम बहुत से काम संगठित रूप से कर सकेंगे।

आपसे साग्रह अनुरोध है कि आप अपनी संस्था द्वारा यह निर्णय लें और सन् ६२-६२ के अपने आर्थिक संयोजन में इस निर्णय को कार्यान्वित करें। हमें पूरा विश्वास है कि खादी संस्थाएं इस प्रकार का निर्णय लेकर इस पारिवारिक संगठन को सुदृढ़ बनायेंगी।

जन-सेवकत्व की आवश्यकता

[पृष्ठ ४ का शेष]

इसीको विनोबाजी ने 'जन सेवकत्व का निर्माण' कहा है। नयी स्थिति में नये सवालों को लेकर उसके हल के लिए 'जन सेवकत्व' निर्माण करने का नया राष्ट्रीय कार्यक्रम हमारे पास आज की स्थिति में चाहिए। इसीसे चुनाव आदि के सवाल भी सहज ही हल हो सकते हैं।

इस दृष्टि से मैं जब गहराई से सोचता हूँ तो लगता है कि सार्वजनिक चुनाव के सम्बन्ध में एक 'सिटिजन मैनिफेस्टो' बनना चाहिए। उसमें सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति की योजना हो और इसे मतदाताओं के द्वारा राजनैतिक पक्षों के सामने रखा जाय। इसलिए लोक शिक्षण का भार हमको उठाना होगा। इससे कुछ हद तक राजनीतिक पार्टियों के संघर्ष में आने का डर तो है, लेकिन हमको इस दृष्टि से कभी-न-कभी सोचना ही होगा। निरुपद्रवी और केवल 'शांतिवादी' कहला कर हमारा क्रियाशून्य बने रहना आज की आवश्यकता को देखते हुए एक तरह की कर्तव्यच्युति है। इस दृष्टि से सोचने की आवश्यकता है।

कन्नड 'भूदान' पाक्षिक का नया पता

बंगलोर से कन्नड भाषा में प्रकाशित होने वाला "भूदान" पाक्षिक पत्र अब सिरसी से प्रकाशित हो रहा है। नया पता इस तरह है: सपादक 'भूदान', मार्गदर्शक-सर्वोदय कार्यालय, पो० सिरसी, जिला नार्थ कनरा (मैसूर)।

सेवापुरी में गांधी निधि का शिविर—हनुमानगढ़ में सर्वोदय मंडल की स्थापना—बीगोद सेवा संघ का शराबबंदी अभियान—सातपुड़ा सर्वोदय मंडल का गोआ सम्बन्धी प्रस्ताव—नोकता में शराबबंदी के संकल्प—'सरस्वती' मासिक पत्र की हीरक जयंती—ऊ नू और नेहरू काशी में—चीन में 'जनता से प्रेम करो अभियान'—दिल्ली में सर्वोदय साहित्य-मण्डल की स्थापना।

● सेवापुरी में उ० प्र० गांधी स्मारक निधि के ग्राम सेवा केन्द्र, तत्त्व प्रचार केन्द्र, निर्माण-केन्द्र एवं नयी तालीम संस्थाओं के १२५ कार्यकर्ताओं का एक शिविर २० से २५ दिसम्बर तक श्री प्रभुदास गांधी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ।

● हनुमानगढ़ टाउन, श्रीगंगानगर के ७ सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने एक प्राथमिक सर्वोदय मंडल बनाया। स्थानीय सर्वोदय पुस्तक-भंडार के कार्यकर्ताओं ने 'गांधी-जयंती' से एक अच्छा क्रम चलाया है। वे घर-घर और दूकान दूकान जाकर पढ़ने के लिए सर्वोदय-साहित्य लोगों को देते हैं। पहली पुस्तक पढ़ने के बाद दूसरी पुस्तक भी देते हैं। इस प्रकार उत्साहपूर्वक साहित्य प्रचार का काम वहाँ चल रहा है।

● बीगोद सेवा संघ की ओर से श्री मनोहर महता गाँव गाँव घूम कर शराबबंदी के सिलसिले में सभाएँ कर रहे हैं। इस कारण वैध शराब बेचने वाले अनेक ठेकेदारों ने आगामी मार्च माह के बाद ठेका न लेने का संकल्प जाहिर किया। इस प्रकार कई शराब पीने वालों ने भी शराब न पीने का संकल्प जाहिर किया।

● सातपुड़ा सर्वोदय मंडल, धड़गाँव (अकराणी महाल) की २ जनवरी की बैठक में गोआ की कार्रवाई के संबंध में एक प्रस्ताव पास किया गया। बैठक में श्री शेंडुर्णीकरजी, श्री गोविंदराव शिंदे आदि कार्यकर्ता उपस्थित थे।

● ग्रामसेवा केन्द्र, नोकता (डूंगरपुर) के प्रयत्नों से गाँव के प्रमुख ३१ भाइयों ने प्रतिज्ञा की कि हम लोग आज से शराब नहीं पीयेंगे। २६ दिसम्बर को नोकता की ग्राम पंचायत ने भी शराबबंदी के खिलाफ प्रस्ताव पास किया।

● हिंदी मासिक पत्रिका 'सरस्वती' का हीरक जयंती समारोह दिल्ली में मनाया गया। इस अवसर पर वक्ताओं ने महावीर प्रसाद द्विवेदी के हिंदी पत्रकारिता में योगदान का जिक्र करते हुए कहा कि आज हमें उनकी तरह मौन होकर हिंदी की सेवा करनी चाहिए; क्योंकि हिंदी से राष्ट्रीय एकता मजबूत होगी।

● बर्मा के प्रधान मंत्री ऊ नू दो दिन के लिए काशी आये। उन्होंने काशी हिंदू विश्वविद्यालय में 'मंगल और मैत्री क्या है' इस विषय पर दो भाषण दिये। आपने बताया कि आज शत्रु पर विजय और संकटों से मुक्ति पाने के लिए मैत्री की भावना की अत्यंत आवश्यकता है। श्री ऊ नू के साथ भारत के प्रधान मंत्री श्री नेहरू भी काशी में दो दिन रहे। उन्हें श्री विश्वनाथ प्रसाद द्वारा संपादित "रामचरित मानस" का काशीराज संस्करण विशेष समारोह में भेंट किया गया। इस अवसर पर नेहरूजी ने कहा कि दुनिया में ऐसी बहुत कम धार्मिक पुस्तकें हैं, जिनका प्रभाव आम जनता पर इतना है, जितना कि 'रामचरित मानस' का। श्री ऊ नू सारनाथ गये और उन्होंने काशी में एक बौद्ध विहार का शिलान्यास भी किया।

● चीन में श्रमिकों और सैनिकों का पारस्परिक सम्बन्ध सुधारने के लिए चीन सरकार ने 'जनता से प्रेम करो' अभियान चलाया है। चीनी सेना के सामान्य राजनीतिक विभाग ने अपने सैनिकों का आवाहन किया है कि वे स्थानीय जनता से अपना सम्बन्ध दृढ़ करें और दैवी विपत्ति आदि के समय लोगों के कामों में हाथ बँटायें।

● दिल्ली में श्री मदन 'विरक्त' की अध्यक्षता में सर्वोदय साहित्य मंडल की स्थापना की गयी। इस मंडल का मुख्य उद्देश्य अश्लील साहित्य के प्रचार व प्रकाशन को रोकना है। इसके अतिरिक्त सर्वोदय-साहित्य घर-घर पहुँचाना और स्वस्थ जीवनोपयोगी साहित्य निर्माण करना भी एक उद्देश्य है।

गांधी-साहित्य का सर्वेक्षण और सृजन

अ० भा० सर्व सेवा संघ के तत्वावधान में काशी में 'गांधी विद्या संस्थान' नामक एक शोध-संस्था का गठन हुआ है। 'गांधी विद्या संस्थान' की स्थापना का उद्देश्य इस तरह है:

(१) मनुष्य के सामाजिक विकास से सम्बन्धित ऐसे ज्ञान की वृद्धि में योगदान देना, जिसके द्वारा पारस्परिक प्रेम और सहयोग पर आधारित मानव जीवन की अभिवृद्धि हो और विश्व के लोगों के साथ मानवीय सम्बन्ध स्थापित हो।

(२) भारतीय समाज के विकास के हेतु, इस प्रकार के ज्ञान को व्यावहारिक रूप देने में मदद देना और इसके लिए :—

(अ) भारत की समस्याओं, राष्ट्रीय योजनाओं और आर्थिक विकास की अन्य प्रवृत्तियों का अध्ययन करना।

(आ) देश के जिस क्षेत्र में सघन रचनात्मक कार्य कार्यान्वित हो रहे हैं, वहाँ से निकट सम्पर्क रखना।

(इ) विश्व के ऐसे व्यक्ति और संस्थाओं से सम्पर्क स्थापित करना और उनसे सत्य और अहिंसा पर आधारित विश्वसमाज-व्यवस्था का निर्माण करने में सहकार करना, जो अपने यहाँ इसी प्रकार की प्रवृत्तियों और प्रयोगों को रूपान्तरित करने में संलग्न हैं।

(३) उपर्युक्त लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निम्नलिखित विषयों में तात्त्विक और व्यावहारिक अध्ययन तथा शोध-कार्य करना तथा इन विषयों में छात्रों को शोध-कार्य के लिए प्रशिक्षित करना : विज्ञान और आत्म ज्ञान, दर्शन, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान, समाजशास्त्र, शिक्षा और मनोविज्ञान।

(४) उपर्युक्त विषयों में स्वयं शोध-कार्य करना, इसमें सहायता प्रदान करना तथा इस प्रकार के शोधकार्य में संलग्न दूसरी संस्थाओं से अपने शोध कार्य को संबद्ध रखना।

(५) वे अन्य सभी कार्य करना, जिनसे उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति को बढ़ावा मिले अथवा जो इनकी सिद्धि में आकस्मिक रूप से आवश्यक प्रतीत हों।

इस उद्देश्य की पूर्ति में संलग्न होने के साथ-साथ 'गांधी विद्या संस्थान' ने भारतीय भाषाओं में अब तक प्रकाशित गांधी साहित्य में से शिक्षा की दृष्टि से ऐसी पुस्तकों का सर्वेक्षण और चयन करना आरम्भ किया है, जो गांधीजी के जीवन, उनके सिद्धान्तों और सामाजिक मूल्यों को नयी पीढ़ी (प्राथमिक शाला से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक) के भीतर उसकी शिक्षा के अंग के रूप में प्रतिष्ठित करने में उपयोगी हो सकती हैं।

इस हेतु 'गांधी विद्या संस्थान' नयी पुस्तकें लिखवायेगा अथवा स्वयं नयी पुस्तकों का सृजन करेगा। 'गांधी विद्या संस्थान' ने गांधी साहित्य के सर्वेक्षण और सृजन का यह कार्य भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के सहयोग से शुरू किया है।

गांधी विचार परिवार के सुधीजनों, लेखकों और शिक्षण संस्थाओं के गुरुजनों से निवेदन है कि वे इस कार्य में निम्नलिखित रूप में सहयोग देने की कृपा करें :—

(१) आप हमारे पास अपनी भाषा की ऐसी चुनी हुई पुस्तकों की सूची यथाशीघ्र भेजें, जो उपर्युक्त दृष्टि से नयी पीढ़ी के शिक्षण के लिए आवश्यक प्रतीत हों। आप सूची में इसका भी संकेत कर दें कि

कौनसी पुस्तक शैक्षणिक दृष्टि से किस आयु के छात्रों के लिए उपयुक्त होगी। आप ऐसी पुस्तकों का भी उल्लेख करें, जो अपने वर्तमान रूप में न सही, किन्तु संशोधित या परिवर्द्धित होकर कार्य में उपयोगी हो सकती हैं।

(२) गांधी-साहित्य के सृजन में संलग्न लेखकगण उपर्युक्त उद्देश्य के अनुरूप कुछ लिखना चाहते हों, तो वे इसकी जानकारी हमें दें। हम उनके सहयोग का यथाशक्ति आदर करेंगे।

गांधी-साहित्य सृजन में अभिरुचि और अनुभव रखने वाले विज्ञजन इस कार्य से सम्बन्धित सुझाव या सलाह भेज कर हमें अनुगृहीत करेंगे ऐसी आशा है।

गांधी विद्या स्थान,
राजघाट, वाराणसी —मनोरंजन गुहा

अजय घोष का देहान्त !

प्रसिद्ध कम्युनिस्ट नेता और भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी में महामंत्री श्री अजय घोष का १३ जनवरी को नयी दिल्ली में देहान्त हो गया! श्री अजय घोष की अवस्था ५२ वर्ष की थी। आप सन् '५१ से भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के महामंत्री थे। श्री घोष संतुलित राष्ट्रीय दृष्टिकोण वाले व्यक्ति थे। राष्ट्रीय एकता के लिए इनका प्रयत्न चलता रहता था। पिछले दिनों राष्ट्रीय एकता-सम्मेलन में इनका योगदान महत्त्वपूर्ण था। शुरुआत में आप चन्द्रशेखर आजाद के निकट सम्पर्क में आकर क्रांतिकारी आंदोलन की ओर झुके। सन् '३४ में वे कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य हो गये। अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट सम्मेलनों में भी उनके विचारों का आदर होता था। ऐसे व्यक्ति की असमय मृत्यु से सारा राष्ट्र दुःखी है।

वैयक्तिक और सामूहिक विकास के तत्त्वों पर चर्चा

इंग्लैण्ड में 'इंस्टिट्यूट फॉर ग्रुप एण्ड सोसाइटी डेवलपमेंट' के डायरेक्टर श्री रिचर्ड हाउजर अखिल भारत सर्व सेवा संघ के आमंत्रण पर तीन सप्ताह के के लिए भारत आ रहे हैं। वे बड़ौदा में पाँच-पाँच दिनों के ३ सेमिनारों में भाग लेंगे। सर्व सेवा संघ की ओर से ऐसा प्रथम 'सेमिनार' ६ से १० फरवरी, '६२ तक बड़ौदा में आयोजित किया गया है। ये सेमिनार ग्राम विकास और कार्यकर्ता-प्रशिक्षण के कार्य में लगे व्यक्तियों के लिए चलाये जा रहे हैं और इनमें "वैयक्तिक और सामूहिक विकास के तत्त्वों" पर श्री हाउजर विचार-विनिमय करेंगे।

कस्तूरबा शान्ति-सेना विद्यालय, इन्दौर का दूसरा सत्र

विद्यालय का दूसरा सत्र १ जुलाई '६१ से आरंभ होकर ३० नवम्बर '६१ को समाप्त हुआ। इस सत्र में प्रशिक्षण के लिए कुल ३१ महिलाएँ आयी थीं। २० विभिन्न सर्वोदय-मंडलों से तथा ११ 'कस्तूरबा गान्धी राष्ट्रीय स्मारक निधि' की ओर से इनकी प्रान्तीय संख्या इस प्रकार है: पंजाब-१, दिल्ली-२, हिमाचल प्रदेश-४, उत्तर प्रदेश-६, बिहार-२, बंगाल-३, उत्कल-१, मध्यप्रदेश-१, कर्नाटक-२, केरल-१, महाराष्ट्र-४ और गुजरात-१।

विद्यालय के समय का विभाजन इस प्रकार किया गया :—

प्रातःप्रार्थना आधा घंटा, शरीरश्रम ढाई घंटा, बौद्धिक वर्ग पौने चार घंटे, पाठाभ्यास, समाचार पत्र पाठ आदि सवा-तीन घंटा, इस तरह कुल १० घंटा।

नित्य कर्म के लिए १४ घंटे इस प्रकार नियत किये गये :—

स्नान, सफाई आदि डेढ़ घंटा, भोजन व जलपान दो घंटे, खेल, व्यायाम आदि एक घंटा, शयन आठ घंटे, वर्ग की तैयारी के लिए डेढ़ घंटा।

निम्नलिखित विषयों पर पाठ्यक्रम के अन्तर्गत व्याख्यान आयोजित किये गये :

(१) शान्ति-सेना के जीवनाधार : (अ) आध्यात्मिक विद्या के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाशित मुख्य सर्वोदय-साहित्य का परिचय, (ब) संकलित भजन।

(२) समाज में तनाव के कारण : (क) सामाजिक, (ख) धार्मिक, (ग) राजनैतिक और (घ) आर्थिक संगठनों के सिद्धान्त आदि का परिचय।

(३) सामाजिक क्रांति शास्त्र : (क) संक्षिप्त विश्व-इतिहास, (ख) स्वराज्य-आन्दोलन, (ग) भूदान व शांति-सेना आदि का विकास, (घ) लोकनीति शास्त्र, (ङ) प्रमुख धर्मों के मूलभूत सिद्धांत।

(४) विदेश में शान्ति-आन्दोलन का विकास तथा अहिंसा का विचार : (क) अहिंसक विचारों का परिचय, (ख) अहिंसक जीवन-पद्धति के प्रयोग, (ग) युद्ध विरोधी आन्दोलन।

(५) स्त्री जीवन : (क) समस्याएँ तथा उनका समाधान, (ख) विश्व की प्रमुख महिलाओं के जीवन परिचय।

(६) हिन्दी भाषा का सामान्य ज्ञान।

(७) सामान्य ज्ञान : (क) बाल मानसशास्त्र, (ख) विज्ञान की साधारण जानकारी, (ग) सामयिक विचार, (घ) आसपास का ज्ञान।

(८) 'स्काउटिंग' तथा 'गर्ल्स गाइड' के कार्यों की साधारण जानकारी।

इसके अतिरिक्त नगर में साहित्य-बिक्री, सर्वोदय-पात्र, पोस्टर-विरोधी आन्दोलन आदि कार्यक्रमों में भाग लेकर शान्ति-सैनिकाओं ने नगर में जन-सम्पर्क का भी अनुभव प्राप्त किया। ३ दिनों के शैक्षणिक प्रवास के द्वारा उन्हें विश्वविख्यात अजंता और एलोरा गुफाओं को देखने का भी अवसर मिला।

विद्यालय के प्रशिक्षण-कार्य में निम्नलिखित व्यक्तियों का सहयोग प्राप्त हुआ : (१) सर्वश्री दादा धर्माधिकारी, (२) शंकरराव देव, (३) वियोगी हरि, (४) मार्जरी साइक्स, (५) राजलक्ष्मी बहन, (६) सरला बहन, (७) अन्नपूर्णा महाराणा, (८) अन्नपूर्णा दास, (९) वी० वी० वारपुते, (१०) वी० टी० सरवटे, (११) नीरा सरवटे, (१२) बनवारीलाल चौधरी (१३) देवेन्द्र गुप्ता, (१४) काशिनाथ त्रिवेदी, (१५) जॉन भाई, (१६) कैलाश कोट, (१७) सरमंडल, (१८) नरेन्द्र दुबे, (१९) गीता मिश्रा, (२०) सावित्री अग्रवाल, (२१) नर्मदा दिवेकर, (२२) प्रभा गुप्ता, (२३) कैलाश कौर, (२४) प्रमिला चवलंकर, (२५) भानुमती, (२६) श्रीमती सावगाँवाले, (२७) वी० मंगलवादी, (२८) लल्लू सिंह, (२९) हरिकृष्ण भाई, (३०) पंड्याजी, (३१) श्याम सिंह, (३२) रामचन्द्र दिल्लौरे तथा (३३) निर्मला देशपांडे।

शिवसागर सर्वोदय-मंडल

शिवसागर सर्वोदय-मंडल का एक अधिवेशन गड़गाँव के सर्वोदय-आश्रम में १८ दिसम्बर को श्री लक्ष्मणचन्द्र बरुआ की अध्यक्षता में हुआ। अधिवेशन में विनोबाजी की यह अपेक्षा कि 'शिवसागर ग्रामदान सागर बने' पर विशेष चर्चा हुई।

अधिवेशन में तय किया गया कि (१) ग्रामदानदान-प्राप्ति के लिए अविरत प्रचार किया जाय और इसमें पूरा समय देने के लिए एक जिला-कार्यकर्ता दल तैयार किया जाय। (२) हर मौजे में स्थानिक कार्यकर्ताओं को जिम्मेदारी सौंप कर ग्रामदान के अनुकूल वातावरण बनाया जाय। (३) जो ग्रामदान प्राप्त हुए हैं, उनमें संगठित रूप से काम किया जाय।

पंद्रह कार्यकर्ताओं ने १ जनवरी से प्रचार-कार्य की जिम्मेदारी लेकर काम शुरू किया है।

पाँच कार्यकर्ताओं का दूसरा दल ग्रामदानी गाँवों में 'सर्वे' आदि का काम कर रहा है। बकता, आठखेल, खामेलाटी, बरहाट, मैरा बाजार, सिलाकुटी; इन छह मौजों में स्थानीय कार्यकर्ताओं द्वारा ग्रामदान के लिए प्रचार कार्य शुरू करने का तय हुआ।

ग्रामदान-प्रचारक दल के साथ एक सचल पुस्तकालय रखा जायेगा, जिससे कार्यकर्ता सतत अध्ययन भी कर सकेंगे। प्रचार के साथ-साथ सूतांजलि संग्रह, भूदान-पत्रों के ग्राहक बनाने आदि कार्य भी चल रहे हैं।

विषय-सूची

बिहार प्रा० नशाबंदी-सम्मेलन

श्री जगलाल चौधरी की अध्यक्षता में 'बिहार नशाबंदी समिति' गठित हुई है। श्री जयप्रकाश नारायण भी इसके सदस्यों में हैं। २० जनवरी को मलेपुर (मुंगेर) में बिहार प्रां० नशाबंदी सम्मेलन होने वाला है। सहानुभूति रखने वाले व्यक्ति और संस्थाएँ आमंत्रित हैं। पत्र-व्यवहार का पता : श्री मावलम्ब चतुर्वेदी, बिहार प्रादेशिक नशाबंदी समिति, पो० मलेपुर (जिला मुंगेर)।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९१०० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९०००
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २६ जनवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक १७

जापान को विनोबाजी का संदेश

देश-देश में मैत्री का विस्तार हो

• विनोबा

दुनिया भर में सरकारें चलती हैं और जनता ने अपनी सब सत्ता सरकारों के हाथ में सौंपी है। अब जमाना आया है कि जनता को सरकार के हाथ में कम-से-कम शक्ति देनी चाहिए और अपना अधिक-से-अधिक काम लोगों को करना चाहिए। सरकारें जो बनती हैं वह एक-दूसरे से डरती हैं। उनका सारा आधार सेना पर रहता है। लोकशक्ति जब बनती है तो उसका आधार सत्पुरुषों का मार्गदर्शन रहेगा। ऐसी लोकशक्ति खड़ी करने का प्रयत्न थोड़ा-बहुत दुनिया के सब देशों में हो रहा है। अभी एक कान्फरेन्स योरप में हुई थी, जिसमें दुनिया भर के सर्वोदय में मानने वाले लोग इकट्ठे हुए थे। अब दुनिया की भूख है कि शान्ति के तरीके से दुनिया के मसले हल हों।

उसका उपाय जनता ही ढूँढ सकती है, सरकारें नहीं। जनता जब अहिंसा और सत्य की निष्ठा बढ़ायेगी, प्रेम और करुणा का विचार जीवन में लायेगी और इस प्रकार के सर्वोदय के नमूने गाँव-गाँव में जनता बनायेगी, तो फिर जो सरकारें बनेंगी वे जनता की सच्ची आवाज प्रकट करेंगी। उसके बाद हिंसा दुनिया से जायेगी। हिंसा अवश्य जाने वाली है, क्योंकि आणविक शस्त्र आये हैं। ये मनुष्य के सामने समस्या खड़ी कर देते हैं कि तुम या तो प्रेम से रहो या तुम सब मिट जाओ। यह मानव के सामने एक 'चेलेन्ज' है, आवाहन है। उसका जवाब हम विज्ञान और अध्यात्म, दोनों के योग से दे सकते हैं। इसलिए अब साइंस और अध्यात्म के दिन आये हैं।

जो लोग सच्चे धर्म पर श्रद्धा रखते हैं, उन्होंने माना है कि सब धर्मों का सार सत्य, प्रेम और करुणा में है। यही हमें वेद ने सिखाया है। यही हमें रामकृष्ण ने सिखाया, यही हमें बुद्ध और महावीर ने सिखाया। ईसा-मसीह और मुहम्मद पैगम्बर ने यही सिखाया। खाओत्से और साक्रेटीस ने यही सिखाया है। इस जमाने में यही टाल्स्टाय, गांधी और रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने सिखाया है और इसी का आधार लेकर हम अभी भारत में काम कर रहे हैं। भारत की जनता दिन-प्रतिदिन इस विषय में अब प्रतिज्ञा बना रही है और वे दिन दूर नहीं हैं, जब कि भारत, जापान, चीन, इंग्लैण्ड, अमेरिका, रूस आदि सब देशों की जनता एक होगी और भेद भाव छोड़ेगी और जिस प्रेम से कुटुम्ब, परिवार में रहते हैं उस प्रेम को फैलायेगी। आज हालत क्या है? रूस में लोग कुटुम्ब में रहते हैं, बाल-बच्चों पर प्यार करते हैं, प्रेम को पहचानते हैं। वैसा ही अमेरिका में होता है। वही जापान में होता है, वैसा ही चीन और भारत में होता है। इंग्लैंड, जर्मनी वगैरह देशों में वही होता है।

मानव के हृदय में प्रेम कम नहीं है। प्रेम से हृदय भरा है। लेकिन प्रेम को हमने कुटुम्ब तक सीमित कर दिया। परिणाम उसका यह हुआ कि बहता हुआ पानी का स्रोत कुण्ठित हो गया। एक गड्ढे में पानी आ गया तो फिर पानी सड़ने लगता है। वैसी हालत आज हमारे प्रेम की हुई। प्रेम को हमने घर में बंदी बना दिया। उस प्रेम को हम खोलें और मानव पर प्रेम करें। इसके दिन नजदीक आये हैं।

दीखने में ऐसा दीखता है कि जगह-जगह समस्याएँ खड़ी हो रही हैं। कहीं हिंसा के भी प्रयोग हो रहे हैं। लेकिन 'यू०नो०' बनी है, तो एक आशा होती है।

'यू० नो०' ने बड़ी गलती की है—ठीक सोचा नहीं गया, इसलिए गलती हुई है। वह यह कि उसने सेना रखी है। सेना तो देश-देश की सरकारों के पास है। 'यू० नो०' को चाहिए था कि सेना न रखता और शांति सेना बनाता। उतनी तैयारी 'यू० नो०' की शुरुआत में नहीं हुई। मेरा विश्वास है कि आगे हो जायगी।

इस दिशा में हमें काम करना चाहिए। तब अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अहिंसा का प्रयोग कैसे हो सकता है, इसका दर्शन होगा। दुनिया भर के अहिंसक लोग 'यू० नो०' की उस सेना में भर्ती होने के लिए तैयार रहेंगे। 'यू०नो०' एक अच्छा आरंभ है, उसमें यह शक्ति जुड़ जायगी तो 'यू०नो०' की नैतिकता बढ़ेगी। इसलिए हमें अपने देश के आंतरिक सवाल शांति से हल करने की कोशिश करनी चाहिए। तब अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में किस तरह अहिंसा काम करती है, उसका दर्शन होगा।

यह हमारे विचार की दिशा है। इस विचार में हम सर्वोदय वाले यहाँ सोचते हैं और कुछ काम करते हैं। हमें पूरी आशा है कि उस दिशा में दुनिया के सब लोगों को हम ले जा सकेंगे। आज दुनिया भर में एक 'कानशन्स', एक व्यापक विवेक बुद्धि निर्माण हुई है, इसलिए दुनिया के किसी कोने में कोई घटना होती है, तो कुल दुनिया का ध्यान उस तरफ जाता है। यह एक अच्छी चीज है। यह पहले कभी नहीं होता था कि दुनिया के किसी देश में हिंसा हुई तो दुनिया के दूसरे देश को पता भी नहीं चलता था और अगर पता चलता था तो उसकी परवाह नहीं करते थे। आज यह हालत नहीं है। आज छोटी-सी घटना किसी देश में हो तो सब दुनिया में फैल जाती है और दुनिया के लोग उस पर कुछ न-कुछ सोचते हैं। यह अच्छा लक्षण है।

जब तलवार से लोग लड़ते थे तो हिंसा कम होती थी। लेकिन जो होती थी वह क्षोभ के साथ होती थी। उसमें क्रोध होता था। एक-दूसरे का गला काटने में क्रोध होता है। आज एटम बम से लड़ाई होती है तो क्रोध का सवाल नहीं, आवेश का सवाल नहीं, मनुष्य को देखते ही नहीं, कहीं कोई किसी का चेहरा देखते नहीं, जानते नहीं, सिर्फ दूर से बम डालते हैं। 'पैलेस्टीक वेपन' भी दूर से भेजते हैं। उसमें संहार बहुत ज्यादा होता है, लेकिन फिर भी उसमें क्रोध नहीं होता है। उसमें द्वेष होता है और मूर्खता होती है। आरंभ के जमाने में गोली चलाने वाले सिपाही को, तलवार चलाने वाले सिपाही को भी शांति से काम करना पड़ता है। नहीं तो वह लड़ाई में हार जाता है। गणित करना पड़ता है। गणित के साथ आगे बढ़ो, गणित के साथ पीछे हटो। डर से पीछे नहीं हट सकते हो, गुस्से से आगे बढ़ नहीं सकते हो। सब दल चलें नियन्त्रित होती हैं। इसका मतलब सेना में भी अहिंसा दाखिल हो चुकी है। यह मैं इसलिए कह रहा हूँ कि एटम के युग में जो शस्त्रों का उपयोग हुआ, उसमें संहार तो बहुत हुआ, लेकिन फिर भी वह अहिंसा के नजदीक है। उसके बाद फौरन अहिंसा आयेगी। इसलिए हमें निराश होने का कारण नहीं है। हर देश में सर्वोदय की योजना हम करें और उसे मजबूत मानवता की बुनियाद पर हम रखें। हम सिर्फ भारत और जापान के मैत्री की बात न करें। हम सब दुनिया के देशों की मैत्री की बात करें।

अभी हम भारत और जापान के मैत्री की बात करते हैं, वह इसलिए करते हैं कि गौतम बुद्ध ने दोनों को जोड़ा है। तो जुड़ने में सरलता होती है। गौतम बुद्ध ने चीन को भी जोड़ा है, हिन्दुस्तान के साथ और जापान के साथ। लेकिन आज चीन और हिन्दुस्तान के बीच कुछ मसले खड़े हुए हैं। जापान और चीन के बीच भी जो मित्रता और प्रेमभाव चाहिए वह नहीं है। यह हालत आज है। लेकिन हम कभी नहीं भूल सकते हैं कि इन देशों को गौतम बुद्ध ने जोड़ा था। अब इसके आगे जाकर सब देशों को जोड़ने का काम हमें करना है।

आरंभ हम कहाँ से करें? जहाँ से पहले जुड़ा था वहीं से करें। इसलिए हम हिन्दुस्तान और चीन, हिन्दुस्तान और जापान, हिन्दुस्तान और ब्रह्मदेश, हिन्दुस्तान और सीलोन ऐसी बात करते हैं। यह नहीं कि इन देशों की 'पोलिटिकल' ताकतें एक हो जायें और हम दुनिया के खिलाफ खड़े हो जायें। हमारा उद्देश्य यह है कि ये देश गौतम बुद्ध की करुणा से एक हुए थे और उनसे हम आरम्भ करते हैं। लेकिन हमारा काम उन तक सीमित नहीं रहेगा। हम तो कुल दुनिया को जोड़ने का काम करना चाहते हैं। यह केवल हमारा आरंभ मात्र है।

जापान के सब भाइयों को और बहनों को आप हमारा प्रणाम कहियेगा और कहियेगा कि भारत में एक ऐसा समूह है, जो कि बहुत आदर से और प्रेम से सर्वोदय का प्रयत्न करने वाले जो जापान के लोग हैं, उनको तरफ देखता है।

सबको प्रणाम। जय जगत्!

पड़ाव : ढेकुआखाना (असम)
ता० ११ जनवरी, ६२

सभी रचनात्मक संस्थाओं की सेवा में

सर्वोदय-पक्ष : सूतांजलि

'सर्वोदय पक्ष' करीब है। ३० जनवरी से १२ फरवरी तक 'सर्वोदय-पक्ष' मनाने का आयोजन प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी होगा। सर्वोदय पक्ष में सूतांजलि संग्रह करने का हमारा मुख्य कार्यक्रम रहता है। अब रचनात्मक संस्थाओं का काफी विस्तार हो गया है। लाखों गाँवों में हमारा प्रवेश है। हजारों कार्यकर्ता सेवा-कार्य में लगे हुए हैं। अगर हम व्यवस्थित ढंग से सर्वोदय-पक्ष का आयोजन करें तो सूतांजलि-संग्रह का काम बड़े-से-बड़े पैमाने पर कर सकते हैं।

हमारे सभी कार्यकर्ता सपरिवार अपने हाथ के कते सूत की एक-एक गुण्डी अर्पण करें। प्रत्येक कार्यकर्ता योजनापूर्वक कम-से-कम २० व्यक्तियों से संपर्क स्थापित कर उनसे एक-एक गुण्डी सूत लें। हर गाँव में व्यापक पैमाने पर सूत्र-यज्ञों का आयोजन हो और सूतांजलि-समर्पण का एक वातावरण बनाया जाय। अपने क्षेत्र में आने वाली बुनियादी शालाओं और अन्य शिक्षण-संस्थाओं से सम्पर्क साध कर हरएक अध्यापक और विद्यार्थी से एक-एक गुण्डी सूत प्राप्त किया जाय। इस प्रकार योजना बने तो सूतांजलि का कार्यक्रम सफल हो सकता है।

इस वर्ष भी सारे देश से २५ लाख गुण्डियाँ सूत प्राप्त करने का लक्ष्य रखा है। जितनी शक्ति इस काम में हमें लगानी चाहिए, कई कारणों से उतनी शक्ति हम नहीं लगा पाये हैं। पर सभी जगहों में कार्य का जो विस्तार हुआ है, उसको दृष्टि में रखते हुए प्रयत्न करें तो यह लक्ष्य कोई अधिक नहीं है।

हमारे पास बहुत थोड़ा समय है। फिर भी हम अगर अभी से योजना करें, सबंधित क्षेत्र से अपना संपर्क साध कर योजना को व्यावहारिक रूप दें तो यह कार्यक्रम कोई बहुत कठिन नहीं होगा।

हमें आशा है कि आप इसके लिए समुचित योजना बनायेंगे और प्रदेश के लिए जिनके ऊपर जिम्मेदारी सौंपी गयी है, उन्हें पूरा सहयोग देकर सारे प्रदेश के लक्ष्यांक को पूरा करने में आप मदद करेंगे।

—अक्षय कुमार करण

मंत्री, खादी-ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य समिति

राजघाट, काशी

१९६२ के लिए सूतांजलि-संग्राहकों की सूची

प्रदेश	(लक्ष्यांक : गुण्डियाँ)	संग्राहकों के पते
असम	२० हजार	श्रीमती हेमप्रभा काकती, सूतांजलि समिति, सरनिया आश्रम, गौहाटी (असम)
आंध्र	७५ हजार	श्री पी० वी० राघवन्, खादी-ग्रामोद्योग आयोग, आंध्र विभाग, काकिनाडा (आंध्र)
उत्तर प्रदेश	५ लाख	श्री कपिल भाई, श्री गांधी आश्रम, गोलघर, गोरखपुर
"		श्री ब्रजमोहन त्रिपाठी, स्वराज्य आश्रम, कानपुर
उत्कल	२० हजार	श्री राधेश्याम महाराज, उत्कल सर्वोदय-मंडल, कटक (उत्कल)
मैसूर	५० हजार	श्री वेंकटरमण ऐयर, कर्नाटक सर्वोदय मंडल, गांधीनगर, बंगलोर-९
कच्छ	१० हजार	श्री मणिलाल संघवी, कच्छ जिला भूदान कार्यालय, गदसीसा, (कच्छ)
केरल	७५ हजार	श्री दिवाकरन कर्त्ता, केरल सर्वोदय संघ, गांधी आश्रम, कालीकट-६ (केरल)
गुजरात	१ लाख	श्री मंत्री, गुजरात सर्वोदय मंडल, हरिजन आश्रम, अहमदाबाद-१३
तामिलनाड	२॥ लाख	श्री वी० रामचंद्रन्, तामिलनाड सर्वोदय संघ, तिरुपुर, कोयम्बतूर (मद्रास)
दिल्ली	१० हजार	श्री रामजस भाई, श्री गांधी आश्रम, चांदनी चौक, दिल्ली-६
नाग-विदर्भ	२५ हजार	श्री मंत्री, ग्राम-सेवा मंडल, गोपुरी, वर्धा
पंजाब	२॥ लाख	श्री हरिराम चोपड़ा, पंजाब खादी-ग्रामोद्योग संघ, आदमपुर द्वाबा (जालंधर)
पेप्सू	२५ हजार	श्रीमती अमतुस्सलाम बहन, कस्तूरबा सेवा मंदिर, राजपुरा
बिहार	५ लाख	श्री गजाननदास, बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर
बंगाल	५० हजार	श्री चारुचंद्र भण्डारी, खादी मंदिर, पो० डायमण्ड हारबर, जिला-२४ परगना, बंगाल
बंबई शहर	२० हजार	श्री गणपतिशंकर देसाई, मणिभवन, १९ लेबरनम रोड, गामदेवी, बंबई-७
महाकोशल	२५ हजार	श्री गणेशप्रसाद नायक, म० प्र० भूदान-यज्ञ मंडल, रुद्रप्रतापनगर, नरसिंहपुर
मद्रास शहर	१० हजार	श्री मंत्री, तामिलनाड सर्वोदय संघ, ६५-६६, रतन बाजार, मद्रास-३
महाराष्ट्र	५० हजार	श्री गोविंदराव शिंदे, महाराष्ट्र सेवा मंडल, ७२७ सदाशिव पेठ, पूना-२
मध्य प्रदेश	५० हजार	श्री काशीनाथ त्रिवेदी, ग्रामभारती, टवलाई जिला-धार
राजस्थान	४ लाख	श्री मंत्री, राजस्थान समग्र सेवा संघ, किशोर निवास, त्रिपोलिया, जयपुर
विन्ध्य प्रदेश	२० हजार	श्री चतुर्भुज पाठक, विन्ध्य प्रदेश भूदानयज्ञ बोर्ड, गांधी-स्मारक भवन, छतरपुर
सौराष्ट्र	२५ हजार	श्री रतिभाई गोंधिया, सौराष्ट्र रचनात्मक समिति, राष्ट्रीय शाला, राजकोट
कुल	२५ लाख गुंडियाँ	

असम में 'राष्ट्रीय एकता केन्द्र'

आजकल हम दकुआखाना मौजा में हैं। यहाँ ग्रामदान काफी संख्या में हुए हैं। यह कोशिश की जा रही है कि सुवर्णश्री अंचल के सारे मौजों का दान हो। इसके लिए स्थानीय लोग कोशिश कर रहे हैं। सुवर्णश्री अंचल के छह मौजे हैं : दकुआखाना, घर-दलनि, माजुलीवा, धेमाजी, गोहाई, चिचिपाहक महल। इस अंचल में नौ जगह केन्द्र बना कर २९ कार्यकर्ताओं ने काम शुरू किया है। छह केन्द्रों में पुरुष कार्यकर्ता और तीन में कस्तूरबा की सेविकाएँ काम करेंगी।

बहुत संभव है, जल्दी ही 'ग्रामदान' के 'बिल' पर राष्ट्रपति की सम्मति प्राप्त हो जाये। बाबा यहाँ हैं, उस बीच 'ग्राम-दान बिल' मंजूर हो जाय, तो काम करने में सुविधा होगी। उम्मीद है कि उस समय तक बाबा नार्थ लखीमपुर अंचल में ही रहेंगे।

आजकल बाबा के मन में यह विचार चल रहा है कि असम में एक 'राष्ट्रीय एकता केन्द्र' (नेशनल इंटीग्रेशन सेंटर) बने। एक बार आपने भी ऐसा कहा था कि 'एकता-केन्द्र' में हम कुछ लोग बैठें। इसलिए बाबा की यह बात सुनते हुए [illegible] दर आती है। किसको मालूम था कि वही भाव बाबा के मन में ही आयेगा। आध्यात्मिकता ऐसी ही किया करती है। हम बाबा को इस काम का शुभारंभ करने के लिए अनुरोध करेंगे।

[श्री विमला बहन को ता० २१ दिसम्बर '६१ को लिखे पत्र से] —शकुन्तला चौधरी

सिन्धी समाज का सत्याग्रह

सिन्धी भाषा को विधान में शामिल कराने के लिए सिन्धी समाज ने एक अनुपम कदम उठाया है। लोकसभा के शिशिरकालीन सत्र के पहले दिन सिन्धी समाज के ४ सत्याग्रहियों ने लोकसभा में पहुँच कर छह वर्ष के बालक के नेतृत्व में लोकसभा के अध्यक्ष को एक निवेदन और "कराची हलवा" का पैकेट दिया। वहाँ एकत्रित अन्य सरकारी कर्मचारियों को भी 'हलवा' वितरित किया। बाद में लोकसभा के सदस्यों को भी 'हलवा' देकर उनको अपनी माँग के बारे में समझाया। इस प्रकार से अपनी माँग रखने के नये तरीके से वहाँ के लोग बहुत प्रभावित हैं, क्योंकि अब तक अपनी माँगों को मनवाने के लिए प्रदर्शन और विवादों का ही सहारा लिया जा रहा था। एक नयी बात और हुई कि इन्होंने नैतिक समर्थन प्राप्त करने के लिए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को ही अपने सत्याग्रह में शामिल किया, अर्थात् राजनीतिक पक्षों का समर्थन नहीं प्राप्त करके इस मसले को दलगत राजनीति से ऊपर रखा।

—सी० एल० मेनन

गोरांजी दिल्ली पहुँचे

श्री गोरांजी सत्याग्रह-पदयात्रा के सिलसिले में १६ जनवरी '६२ को दिल्ली पहुँचे। आप ८ अक्टूबर '६१ को सेवाग्राम से निकले थे। करीब १ हजार मील महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, उत्तरप्रदेश व दिल्ली के विभाग में इनकी पदयात्रा हुई। दिल्ली पहुँचने पर गांधीजी की समाधि पर सैकड़ों लोगों ने आपका हार्दिक स्वागत किया। स्वागत-सत्कार के बाद बोलते हुए प्रो० गोरा ने कहा कि दलरहित और आडम्बररहित लोकशाही को बनाने के लिए और लोकमत तैयार करने की दृष्टि से मैंने यह पदयात्रा शुरू की है। श्री गोरा ने आगे कहा कि यदि प्रधान मंत्री अपनी शानदार कोठी छोड़ कर साधारण मकान में रहना मंजूर नहीं करते हैं और संसद का स्वरूप दलरहित नहीं बनाते हैं तो मैं सत्याग्रह करूँगा। श्री गोराजी ३० साथियों के साथ ता० १९ जनवरी को प्रातः नौ बजे प्रधानमंत्री से मिले और उनके सामने माँगें रखीं।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

पुरुषार्थ बनाम 'डीग्री'

स्वराज्य के बाद देश के सामने पुरुषार्थ के कई काम उपस्थित हैं। पहले पुरुषार्थ के खास काम नहीं थे। अंग्रेज सरकार यहाँ थी, तब पुरुषार्थ के काम अंग्रेज करते थे। हमारे लोग नौकरी के लोभ 'डीग्री' की अपेक्षा रखते थे और 'डीग्री' की प्रतिष्ठा मानी जाती थी। आज वैसा नहीं है। मान लीजिये कि कल युद्ध शुरू हो जायेगा तो 'डीग्री' वाला आयेगा तो प्रतिष्ठा होगी और बिना 'डीग्री' वाला लड़ेगा तो क्या प्रतिष्ठा घटेगी? व्यापार में व्यापारी देश का धन बढ़ाता है। उसे 'डीग्री' नहीं है, तो क्या प्रतिष्ठा घटेगी? और कोई 'डीग्री' वाला देश का धन घटाता है, तो क्या उसकी प्रतिष्ठा ही होगी? आगे भारत में जो जितना पुरुषार्थ करेगा, उतनी उसकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। देश के इतिहास में जो महान व्यक्ति हुए हैं, वे कौन 'डीग्री' वाले थे? पराक्रमी लोग क्या 'डीग्री' वाले होते हैं? इसीलिए 'डीग्री' का महत्त्व एक भ्रम ही है। आज वास्तव में सबसे ज्यादा प्रतिष्ठा होगी समाज-सेवा में, शरीर-परिश्रम से उत्पादन बढ़ाने में और देश की रक्षा की फौज में। कौन कामों के लिए ज्ञान की आवश्यकता है। फिर भी 'डीग्री' की प्रतिष्ठा दीखती है, पर वह धीरे-धीरे कम होगी।

टीटागढ़, [शिवसागर] —विनोबा
६-१२-'६१

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ई, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

एक महान् उत्तरदायित्व

पिछले महीने गोरखपुर विश्वविद्यालय में दीक्षांत भाषण देते हुए देश के सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री और दिल्ली विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति डा० वी० के० आर० वी० राव ने एक कटु सत्य कहा कि भारत में जो तालीम चल रही है, उसके कारण आम जनता और ऊँचे वर्गों के बीच खाई ज्यादा चौड़ी होती जा रही है। साथ ही उन्होंने एक और भी बात बतायी जो कहीं ज्यादा दुःखदायी और ठोस है। उन्होंने यह शिकायत की कि हिन्दी भाषा भाषी प्रदेशों में तीन भाषावाला सिद्धांत ईमानदारी के साथ नहीं अपनाया गया। डा० राव ने दर्द भरी आवाज से कहा कि अहिन्दी क्षेत्र में तो अपनी-अपनी मातृभाषा, हिन्दी और अंग्रेजी, तीन भाषाएँ बच्चों को पढ़नी पड़ती हैं, मगर हिन्दी क्षेत्र में उन्हें सिर्फ हिन्दी और अंग्रेजी ही सिखायी जाती हैं। इसके लिए उन्होंने हिन्दी प्रदेशों की सरकारों को दोषी ठहराया।

डा० राव की शिकायत एकदम सही और सच्ची है। हिन्दी प्रदेशों की सरकार और जनता, दोनों ने देश की विभिन्न भाषाओं के प्रति जो उदासीनता दिखलायी है, वह बहुत वेदनाजनक है। इससे अहिंदी भाषा भाषियों को न केवल तकलीफ पहुँची है, बल्कि राष्ट्रीय एकता और विकास की धारा भी धुन्धली गयी है। सच तो यह है कि हिंदी भाषा भाषियों के ईमान पर ही शक किया जाने लगा है।

किसी देश में एकता तभी पैदा हो सकती है जब वहाँ के निवासी एक-दूसरे के प्रति प्रेम और हमदर्दी रखते हों। इसके लिए यह जरूरी है कि एक-दूसरे को समझें, उनके गुणों की कदर करें और ज्यादा नजदीक आयें। समझने के लिए भाषा एक जबरदस्त दरवाजा है। भाषा जाने बिना सारा रास्ता ही बंद हो जाता है। लेकिन अगर हमें भाषा से ही चिढ़ है और उदासीनता दिखलाते हैं, तो मानना होगा कि हमारे दिल में ही कुछ और है। इस सत्य से इंकार नहीं किया जा सकता कि उत्तर भारत के निवासियों ने सामान्यतया, दक्षिण को समझने की ज्यादा कोशिश नहीं की है और इसी वजह से वे दक्षिण का बहुत स्नेह और विश्वास नहीं पा सके हैं। इसके विरुद्ध राष्ट्रीयता और देश की एकता के नाम पर उन्होंने सारे देश पर हिन्दी लाद रखी है। अहिंदी समाज के लिए न तो सहानुभूति है और न उसके दुःख-दर्द में साथ देने की चिंता है। इसमें से एक तरह की भाषिक साम्राज्यवादिता की गंध निकलती है। और दोनों के दिल एक-दूसरे से हटते चले जाते हैं। और जहाँ दिल फटे तो कोई भी सरकारी दबाव या शक्ति का प्रदर्शन उन्हें मिला नहीं सकता।

लेकिन देर आयद दुरुस्त आयद। हिन्दी क्षेत्र के लोगों को अपना उत्तरदायित्व समझना होगा और अपना कलेजा खोल कर रखना पड़ेगा। लेकिन अगर वे ऐसा न करके, पुराना दस्तूर जारी रखेंगे और अपने को हिन्दी तक ही सीमित कर देंगे, तो राष्ट्रीय एकता और मेल-मिलाप को गहरा धक्का पहुँचायेंगे। बड़े सन्तोष की बात है कि 'सम्पूर्णानन्द शिक्षा समिति' ने तीन-भाषा वाले फार्मूले के अमल पर सख्ती से जोर दिया है।

हिन्दी वालों को तो सचमुच एक कदम और आगे जाना होगा। उनको उर्दू भी सीखनी चाहिए। उर्दू लिपि और भाषा, दोनों की जानकारी बहुत आसानी से की जा सकती है। इससे उनकी मानसिक सम्पन्नता बढ़ने के साथ-साथ, साम्प्रदायिक समस्या के समाधान में बहुत मदद मिलेगी। इससे हिन्दू और मुसलमानों की आपसी कटुता दूर होगी और दोनों में प्रेम और सद्भाव बढ़ेगा। उत्तर भारत के बच्चे अगर चार भाषाएँ (अपनी मातृभाषा हिन्दी, उर्दू, एक अन्य भारतीय भाषा और अगर चाहें तो अंग्रेजी भी) सीख जाते हैं तो उनका समुचित विकास होगा और देश के अन्दर एकता और सौहार्द की शक्तियों को बहुत बल मिलेगा। हिन्दी वालों पर यह एक महान् उत्तरदायित्व है, जिसे पूरा करने पर यह देश खिल और चमक उठेगा।

—सुरेश राम

अमरीका से आये हुए नवयुवक मित्रों से

अमेरिका के राष्ट्रपति केनेडी ने एक नयी संस्था, शांति दल ('पीस कोर') का निर्माण किया है। उसका उद्देश्य है कि अमरीका सरकार या निजी संगठनों और संस्थाओं द्वारा शिक्षित अमरीकी युवक विदेश भेजे जायँ, ताकि उन देशों में वे कुशल कारीगरों की कमी पूरी कर सकें।

वे ऐसे स्त्री पुरुष होंगे जो इन सार्वभौम राष्ट्रों की विकासशील अर्थनीति की माँगों को पूरा करने की योग्यता रखते हों और समर्पण-भावना के साथ इस योग्यता द्वारा उन देशों के गाँवों, मैदानों, कस्बों, शहरों और कारखानों में काम कर सकें। इस शांति दल की पहली टुकड़ी गत माह हिन्दुस्तान पहुँची। इसमें पचीस युवक युवतियाँ हैं। वे लुधियाना (पंजाब) गये हैं, जहाँ खेती और दस्तकारी के विशेषज्ञ के तौर पर उन्होंने काम शुरू कर दिया।

अपने इन मित्रों का हम स्वागत करते हैं और उनके आनन्दमय प्रवास के लिए कामना करते हैं। लेकिन उनके ही हित में एक निवेदन करना आवश्यक है। खुशी की बात है कि ये मित्र अमरीका में कई हफ्ते की प्रारंभिक ट्रेनिंग लेकर आ रहे हैं। मगर उतने से, हमारा ख्याल है, काम नहीं चलने वाला है। अगर वे सचमुच ही हिन्दुस्तान या अन्य पिछड़े देशों में सफल होना चाहते हैं तो उन्हें यहाँ के निवासियों की सच्ची हालत और उनके काम करने के ढंग की सही जानकारी करनी होगी। उनको यह दोष देना व्यर्थ होगा कि यहाँ के लोग आलसी, उदासीन या पिछड़े हुए हैं। सच तो यह है कि उनके अन्दर सूझ-बूझ है, ज्ञान है, जीवट है। लेकिन अभी यह सब गुण दबे पड़े हैं और उनको जाहिर होने का मौका नहीं मिलता। शांति-दल का काम है कि इस तथ्य के कारणों की खोज करें और फिर उसे सुधारने के लिए तरीके सुझायें। लेकिन यह न करके, अगर वे कारीगरी की जानकारी देने में ही पड़े रहते हैं तो इसका मतलब होगा कि विकास के सम्बन्ध में पश्चिम में जो धारणाएँ और पद्धतियाँ हैं, उन्हीं को यहाँ पर थोपना चाहते हैं। इससे तो यहाँ वालों की शक्ति और अभिक्रम और भी ज्यादा कुंठित होगा और हमारे अमरीकी मित्र भी अंत में खीझ उठेंगे। न हमारे पल्ले कुछ पड़ेगा और न उनको ही कुछ मजा आयेगा।

फिर हमें शंका है कि यह 'शांति दल' नाम भी गलत है। शांति दल के सैनिक को शांति के काम में, शांति के साधन से और शांत चित्त से लगना चाहिए। दूसरे शब्दों में, शांति-दल वाला शांति और अहिंसा का सिपाही होना चाहिए। वरना, फिर उसमें और शस्त्रयुक्त फौज के सिपाही में फर्क ही क्या रहेगा! हमें डर है कि अमरीका से आने वाले हमारे मित्र यह नहीं मानते। यह बात बड़े दुःख की है, जिसे हम "पीस-न्यूज" में छपे एक समाचार के आधार पर कह रहे हैं।

समाचार यह है कि चौबीस वर्ष का एक नौजवान था। नाम जान टिकलर। वह अपनी अन्तरात्मा के अनुसार हिंसा विरोधी है और शांत समाज की प्रारम्भिक ट्रेनिंग भी ले चुका था। मगर शांति दल में उसको शामिल नहीं किया गया। भर्ती करने वाले बोर्ड के एक सदस्य ने कहा, हम नहीं समझते कि टिकलर जैसे आदमी को शांति-दल में लेना चाहिए। एक तो हम यह नहीं जानते कि अन्तरात्मा के अनुसार हिंसा विरोध किस चिड़िया का नाम है, दूसरे हम यह मानते हैं कि अपने देश की रक्षा की खातिर तो हथियार हर किसी को उठाने ही चाहिए। न्याय विभाग ने उस युवक के बारे में फैसला दिया कि वह अपने विश्वास का तो पक्का है, मगर इसके विश्वास कानून की हद में नहीं आते। इस

[शेष पृष्ठ ११ पर]

गांधी-पुण्यतिथि के अवसर पर

सफल नेतृत्व के गुण

पर्ल बक

परमाणु बम एक अस्त्र मात्र नहीं रह गया है। महाप्रलयकारी विस्फोटक की प्रसिद्धि उसने प्राप्त कर ली है। अगस्त १९४५ में जब एक छोटी-सी चमकीली वस्तु के रूप में वह आकाश से गिरा और क्षण भर में लाखों व्यक्तियों का सफाया कर दिया, तब लोग उसे एक अस्त्र समझते थे। उस समय भी सारी दुनिया आतंकित और भयभीत हो गयी थी। कुछ वर्ष और बीते, पुराना भय और आतंक तो था ही, उसकी भयंकरता का और भी अधिक दर्शन लोगों को हो गया है। अब एक ऐसे भविष्य की आशंका हो रही है, जिसकी कल्पना भी पहले कभी किसी ने नहीं की थी।

एक अजीब जमाने से हम गुजर रहे हैं। जेट विमान में रख कर मानव का यह देह कुछ ही घंटों में आज दुनिया के एक कोने से दूसरे कोने में भेजा जा सकता है। न्यूयार्क में नाश्ता करके दोपहर का भोजन लन्दन में कर सकते हैं। नयी दिल्ली और दक्षिण अफ्रीका पास-पड़ोसी से हो गये हैं।

हमें यह मालूम है, किन्तु हमारी ग्रहण-शक्ति साथ नहीं दे रही है। वास्तव में हम अभी भी भूतकाल में ही रह रहे हैं। हमारा ज्ञान अपूर्ण है। हमारी दृष्टि तेज नहीं है। जिस दुनिया में हम स्थूल देह से रह रहे हैं, हमारी भावनाएँ अभी भी उसके लिए तैयार नहीं हैं। आज की दूरियाँ आर्थिक और सांस्कृतिक हैं, भौगोलिक नहीं। जेट विमान हमें एक प्रकार के आर्थिक एवं सांस्कृतिक स्तर से उठा कर सर्वथा भिन्न दूसरे ही स्तर पर लाकर रख देता है। ऐसी स्थिति में हम कहाँ हैं, यह समझ कर तुरन्त उसके अनुकूल बन जाना हमारे लिए असंभव नहीं तो भी बहुत कठिन होता है। चीन महाद्वीप की मिसाल लें—यूरोप और अमेरिका की अपेक्षा यहाँ के लोगों का रहन-सहन सैकड़ों साल पुराना है। किसानों के बच्चे जिन्हें पढ़ने-लिखने का भी अवसर नहीं मिला वे राज्य चला रहे हैं। भविष्य की बात छोड़ दीजिए, आज दुनिया पर क्या बीत रही है, इसका भी उन्हें भान नहीं है। राजनीतिक स्कूलों में पढ़ लिख लेने को ही सच्चा शिक्षण नहीं कहते। मेरे एक कनाडा-निवासी मित्र हैं। चीन में खूब घूमे-फिरे हैं। उनका अनुमान है कि १७ और २२ के बीच की उम्रवाले नौजवान ही वहाँ का सारा राज्य चला रहे हैं। पश्चिम की अपेक्षा ये बच्चे सदियों पीछे हैं। रूस के लोग कुछ चीजों में कम और कुछ में इनसे भी ज्यादा पिछड़े हुए हैं। चीन में शिक्षण को पसन्द करते हैं और ज्ञान की प्रतिष्ठा है। अमेरिका की तुलना में आदर्श और उद्देश्य की उतनी भिन्नता इन देशों में नहीं है, जितनी आर्थिक और सांस्कृतिक स्तरों की।

सुप्रसिद्ध अमेरिकन लेखिका कु० पर्ल बक के अतिरिक्त और किसी भी महिला को आज तक साहित्य के लिए 'नोबुल पुरस्कार' नहीं मिला। आपकी सर्वश्रेष्ठ रचनाएँ हैं: "गुड अर्थ" और "ड्रेगन-सीड"। द्वितीय गांधी स्मारक व्याख्यान-माला के अन्तर्गत हार्वर्ड विश्वविद्यालय, वाशिंगटन में दिया गया भाषण।

एशिया का औद्योगीकरण होना ही चाहिए, क्योंकि हमारी इस आधुनिक दुनिया में पिछड़ी हुई जनता चल नहीं सकती। देश के औद्योगीकरण के लिए असंगठित प्रजा को एक सूत्र में बाँधना आवश्यक है। लोकतांत्रिक पद्धति बहुत मन्द गति से चलती है। औद्योगीकरण की धुन में इसीलिए लोकतांत्रिक पद्धति के खत्म हो जाने का खतरा रहता है।

हिंसा-आधारित हमारे इस आधुनिक *समाज में इसलिए जो नेता प्रकट होते हैं*, वे स्वयंभू होते हैं; कोई उन्हें चुनता नहीं। वे आन्दोलन को अपने हाथ में लेकर अपने प्रभाव से हिंसक या अहिंसक क्रान्ति का रूप उसे दे देते हैं। लोगों की माँग हो और नेतृत्व का जन्मजात गुण व्यक्ति में हो तो लोग उसे नेता बना देते हैं। नेता और जनता के बीच एक अद्भुत भावना काम करती है। एक बार नेता मिला कि लोग अन्धे-बावले होकर उसके पीछे रहते हैं। हिटलर मिला तो नेता और जनता, दोनों का सर्वनाश हो गया। गांधी मिला तो अन्तिम सफलता तक लोग उसके पीछे रहे। हिटलर क्यों अपनी जनता को सर्वनाश की ओर ले चला और गांधी क्यों उन्हें सफल बना सका? उत्तर है, जैसा नेतृत्व वैसा परिणाम। नेता के व्यक्तिगत गुण दोष पर नेतृत्व निर्भर रहता है। जनता प्रायः सावधान नहीं रहती। गलत व्यक्ति नेता बन जाता है। वह लोगों को अपनी ओर खींच तो सकता है, किन्तु अच्छे नेतृत्व के लिए जिन गुणों की आवश्यकता होती है वे गुण उसमें नहीं होते।

नेता बनने की क्षमता रखने वाले हर व्यक्ति में अपूर्व कल्पना-शक्ति होती है। वह सोचता रहता है कि यदि ऐसा हुआ तो क्या होगा, क्या करना चाहिए? यदि ऐसा हुआ तो दुनिया सुधर सकती है, जीवन अधिक पूर्ण हो सकता है, जनता अधिक समृद्ध हो सकती है, इत्यादि। वह हमेशा जमीन-आसमान के कुलाबे मिलाता रहता है।

अधिकांश लोगों के स्वप्न बड़े संकुचित होते हैं। वे अपनी सुख-सुविधा, मोटर, खाना, कपड़ा, व्यापार, वेतन आदि से आगे नहीं सोचते। इस स्वप्न से भी श्रम होता है, अधिक काम करने, अधिक कमाने की प्रेरणा मिलती है। हम उन स्वप्नों की बात कर रहे हैं, जो पूरे मानव-समाज के हित और लाभ के स्वप्न होते हैं। जो लोग भावनाशील होते हैं, सदैव किसी शाश्वत आनन्द, सौन्दर्य या जीवन-व्यवस्था के सम्बन्ध में विधायक चिन्तन जिनका चलता है, वही लोग इस प्रकार के बड़े स्वप्न देखते हैं। उनमें वस्तु-स्थिति को समझने और अपने स्वप्न को सिद्ध करने की तीव्रता और हिम्मत होती है। जनसाधारण के मन की बात को वह इस प्रकार की भाषा में व्यक्त कर देता है कि लोगों को उसमें विश्वास हो जाता है कि वह उनके प्रश्न हल करा देगा। वह उनकी माँगों को पूरा करने का वचन देता है और जनता उसके पीछे हो जाती है।

जैसे ही वह अपने चारों ओर रहने वाले और अपने ऊपर निर्भर रहने वाले व्यक्तियों की जरूरतों को देखता है, उसकी तीव्रता बढ़ती चली जाती है। उनकी जरूरतों को पूरा करना वह अपना धर्म मानने लगता है। उसे स्वयं विश्वास रहता है कि उनकी जरूरतों को पूरा करने के अपने स्वप्न को वह सत्य करके दिखा सकता है। अब वह मनोनीत नेता बन जाता है।

नेता का दूसरा गुण उसकी प्रतिभा और कौशल्य है। मनसूबे बनाना सरल है। हम सब ही मनसूबे बनाते हैं। उन मनसूबों को पूरा कर सकने के सामर्थ्य से नेता की पहचान होती है। प्रेरणा, दृष्टि और भावना ये प्रतिभा के अंग हैं। प्रतिभा और कौशल्य में अन्तर है। प्रतिभा गुण है, सिद्धान्त है, कौशल्य उसकी अभिव्यक्ति और उपयोग। प्रतिभा को इसीलिए कला और कौशल्य को उसका उपयोग कहते हैं। प्रतिभा और कौशल्य में वही सम्बन्ध है जो कला और उद्योग में होता है। किसी में प्रतिभा है, किन्तु कौशल्य नहीं है, तो ऐसा नेता सफल नहीं हो सकता और असफल नेता को या तो छोड़ कर लोग दूसरे नेता के पास चले जाते हैं या फिर क्रुद्ध होकर उसे खत्म ही कर देते हैं। कोई नेता वास्तव में जान-बूझ कर जनता को धोखा नहीं देता। कार्यकुशलता के अभाव में ऐसा हो जाता है। उसने नक्शा तो बनाया, किन्तु उसे अमल में नहीं ला सका। नेता में प्रतिभा और कार्य-कुशलता, इन दोनों की विशेष आवश्यकता होती है, क्रान्तियों के इतिहास पढ़ने से मालूम हो जायगा। शायद ही कोई क्रान्तिकारी नेता ऐसा हो, जो आरम्भ से अन्त तक स्वतन्त्र और कार्यरत रहा हो। प्रायः दूसरे लोग जो अधिक कार्यकुशल होते हैं, उसकी जगह नेता बन जाते हैं।

गांधीजी में प्रतिभा थी, किन्तु प्रतिभा के साथ साथ उसे अमल में लाने की अद्भुत कार्यकुशलता भी थी। वे एक राजनीतिज्ञ थे, बड़े समाज-सुधारक थे और साथ ही बड़े विचारक भी थे। उनके कार्यक्रम ठोस और जनता की बुनियादी जरूरतों पर आधारित होते थे। वह केवल आदर्शवादी नहीं थे। वह जनता को खूब अच्छी तरह पहचानते थे, जनता की गति को पहचान कर, उसी गति से उसे आगे बढ़ाते थे और उन्हीं रास्तों से ले चलते थे। उन्होंने जब नमक चरखा और अहिंसा की बात कही तो बड़े लोग मजाक करते थे; किन्तु साधारण लोग इन्हें समझते थे। नमक उनकी दैनिक आवश्यकता थी, चरखे को वे विदेशी मशीन से मुक्ति का प्रतीक समझते थे और अहिंसा उनके सनातन धर्म का अंश थी। गांधी ने यदि इन साधनों का उपयोग न किया होता तो वह सफल नहीं होते। गांधीजी के कहने पर उन्हें क्या करना है, लोग जानते थे; इसीलिए इतना सहयोग लोगों का उन्हें मिला। यदि गांधीजी में नेतृत्व की कुशलता जरा भी कम होती तो वह सफल नहीं होते। यदि वह लोगों के सामने अपनी कल्पना ही रखते, उसे अमल में कैसे लायें, यह वे न बतलाते तो वह उतने सफल नेता नहीं बन सकते थे। वह असफल नहीं हुए, जनता को भी उन्होंने गिरने नहीं दिया, क्योंकि वह जो-कुछ जनता से कराना चाहते थे, पहले स्वयं कर लेते थे। वह अपने उद्देश्य को कभी भूलते नहीं थे, वह जो-कुछ दूसरे काम भी करते थे वे भी मूल उद्देश्य की पूर्ति के साधन स्वरूप ही करते थे।

प्रतिभा और कार्यकुशलता के बाद सत्य-निष्ठा का नम्बर आता है। सत्य और निष्ठा में अन्तर है। ईमानदारी में अपने भरसक सत्य बोलने की बात आती है, किन्तु सत्य निष्ठा में कोई न देखे तब भी ईमानदार रहने की शर्त है। मनसा, वाचा, कर्मणा सत्य-निष्ठ होना एक नेता का अनिवार्य गुण होना चाहिए। प्रतिभा और कार्यकुशलता के साथ ही सत्य निष्ठा भी उसमें चाहिए। केवल प्रतिभा और कार्यकुशलता या केवल सत्य निष्ठा से काम नहीं चल सकता।

(क्रमशः)

नागरिक और आम-चुनाव

• दादा धर्माधिकारी

आज मनुष्य जाति और हम सब एक भयानक परिस्थिति में से गुजर रहे हैं। सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि साधारण मनुष्य इतिहास का विषय बन गया है, विधाता नहीं। अगर साधारण मनुष्य लड़ाई नहीं चाहता है तो तैयारियाँ क्यों हो रही हैं? किसकी रक्षा के लिए हो रही हैं? शायद वह समझ-बूझकर नहीं कहता है, या उसके हाथ में परिस्थिति नहीं रह गयी है। आज तक हमने सुना था कि पूंजीपति इतिहास के विधाता हैं। जिसके पास पैसा है, वह मनुष्य के गुण को खरीदता है, भगवान को भी खरीदता है। लेकिन जहाँ पूंजीवाद का अन्त हो गया है, उन देशों में भी साधारण मनुष्य इतिहास का विधाता नहीं। पूंजीवाद की जगह अब राज्यवाद आ रहा है। पहले जिनके पास पैसा था, वे दुनिया को खरीद कर बनाते थे। आवश्यकता पड़ने पर क्रान्ति को भी खरीद लेते थे। आज यह ठेका उन्होंने ले लिया, जिनके हाथ में सत्ता है। सम्पत्ति मनुष्य को लालच दिखाती है। उसके लोभ से लाभ उठाती है। सम्पत्ति का आधार लोभ है, तो सत्ता का आधार भय है। पहले भगवान को भी पैसे वाला खरीदता था। आज साधारण मनुष्य यह अनुभव करता है कि जिसके हाथ में हुकूमत है, वह भगवान को भी दबा सकता है।

आज साधारण मनुष्य को यह प्रत्यय दिलाने की जरूरत है कि अब दुनिया को वह बदलेगा, जिसके पास न सत्ता है, न पैसा है। पूँजीवाद का अपराध था कि पैसा मनुष्य को बिगाड़ता है। पर क्या केवल पैसा मनुष्य को बिगाड़ता है, हुकूमत नहीं? क्या केवल सम्पत्ति का उन्माद होता है, सत्ता का नहीं? इस विचार को केवल सारी पार्टियाँ ही नहीं, नागरिक एक-दूसरे को समझायें। जो साधारण मनुष्य सत्ता और सम्पत्तिधारियों के अधीन रहा है, उसे समझाना होगा कि इतिहास का विधाता राजा भी नहीं होगा, सन्त भी नहीं होगा, साधारण नागरिक होगा। इस युग की विभूति साधारण नागरिक है। इसलिए सम्पत्तिधारी की, सत्ता की, वीर पुरुष की और सन्त की सत्ता भी हम नहीं चाहते।

लोकतन्त्र की आधार शिला मनुष्य है। इस बात को मैं सारी पार्टियों से कहता हूँ कि वे इसका आत्म प्रत्यय आम आदमी के द्वारा दिलावें। अब इस देश में किसी के मन में संशय नहीं रह गया है कि साधारण नागरिक इस देश का भाग्यविधाता होगा।

आज इस देश का साधारण नागरिक राज्याभिमुख बन गया है। वह मानने लगा है कि ईश्वर से भी अधिक शक्ति राज्य के हाथ में है। इसका मतलब यह है कि अगर राज्य मेरे हाथ में हो तो मैं दुनिया को बदल सकता हूँ। यही सम्पत्ति वाला कहता है। सत्ता वाला आज कहता है कि मैं सत्ता का केन्द्रीकरण इसलिए कर रहा हूँ कि दुनिया को बदलूँगा।

चुनाव और नागरिक

कल अगर चुनाव आ जायें तो इस आचार-संहिता पर अमल होगा। लेकिन उस चुनाव में साधारण नागरिक कहाँ होगा? कुछ उम्मीदवार होंगे, कुछ एजेन्ट होंगे। यह चुनाव लोक शिक्षण का महापर्व कहलाता है। दशहरा हो, दिवाली हो, होली हो, साधारण नागरिक दिखाई देता है। लेकिन चुनाव में वह कहाँ रहता है? चुनाव में उम्मीदवार और उसके एजेन्ट उसकी खुशामद करने आते हैं।

जिस लोकतन्त्र में साधारण नागरिक सक्रिय नहीं है, वह लोकतन्त्र मिथ्या लोकतन्त्र है। खाली है, 'फाउल्टर रिट' है। इसलिए साधारण नागरिक को जाग्रत करने की आवश्यकता है। कुलीन स्त्री के लिए उसके सतीत्व का जितना महत्त्व है, देशभक्त के लिए जितना महत्त्व स्वतन्त्रता का है, उतना ही महत्त्व नागरिक के लिए वोट का है।

जो सत्ता की स्पर्धा में शामिल होगा, वह मतों का याचक होगा। जो याचक होगा, वह मतों का परिवर्तन और जागरण नहीं कर सकता। यह लोकशाही नहीं होगी, उम्मीदवारशाही होगी। साधारण नागरिक सक्रिय नहीं होगा।

समाजवाद और साम्यवाद परिपूर्ण नहीं हुआ है। वह हर रोज नये-नये अगले कदम रख रहा है। आपने कभी सोचा था कि समाजवादी और साम्यवादी कभी 'शान्ति की प्रतिज्ञा' ('पीस प्लेज') भरायेंगे। आज अगर यह परिस्थिति की आवश्यकता है तो समाजवाद और साम्यवाद का अगला कदम यही होगा कि समाज से सत्ता की स्पर्धा मिटनी चाहिए। चुनाव के वक्त नागरिक का कर्तव्य क्या होगा? जो उम्मीदवार या उम्मीदवार का एजेन्ट मत याचना के लिए उसके पास आवे, उससे कह दे कि मेरा वोट मुझसे न माँगिए। मेरा यह मूलभूत अधिकार है कि अंतिम क्षण तक मैं अपना मत बदल सकता हूँ। शायद आपको मालूम हो कि संसदीय लोकतन्त्र पार्टी को नहीं पहचानता है। प्रतिनिधि जब चुना जाता है तो वह पार्टी का नहीं, अपने क्षेत्र का प्रतिनिधि होता है।

आराम से आजादी श्रेष्ठ है

इस दृष्टि से हम आम मनुष्य को जगाना चाहते हैं। विनोबा से बहुत पहले ये सारी बातें मानवेन्द्रनाथ राय ने कही हैं। साधारण पुरुष और स्त्री का आविर्भाव समाज में पुनः होना चाहिए। 'दी अर्ज टु फ्रीडम इज दी एसेन्स ऑफ ह्यूमन एक्झीस्टन्स!' मनुष्य सुखाकांक्षी नहीं है। है। सुख की आकांक्षा तो पशु में भी होती है। जिस देश में स्वतन्त्रता की अपेक्षा सुख की आकांक्षा अधिक हो वह देश स्वतन्त्र नहीं रह सकता। आराम से आजादी श्रेष्ठ है।

अब तक लोगों ने हमको समझाया कि भूखा भगवान को भी खा सकता है। किन्तु गरीबी में भी अपराध कम होते हैं, यह चमत्कार मैंने कहीं देखा है, तो उत्तराखण्ड में देखा है। भूखा चोरी करता है, बेकार चोरी करता है, मुहताज चोरी करता है। यह वैज्ञानिक स्पष्टीकरण है। परन्तु यहाँ देखकर मुझे आशा होती है कि इस देश के नंगे भूखे इन्सान हमें सिखाते हैं कि आराम से आजादी बड़ी होती है। यह लोकतन्त्र की बड़ी बुनियाद है।

लोकतन्त्र के तीन दुश्मन

इस देश में तीन पापग्रह हैं, जो लोकतन्त्र का विनाश कर रहे हैं। वे हैं, जातिवाद, सम्प्रदायवाद और भाषावाद। जब मैं अपने सम्प्रदाय को अपनी राष्ट्रीयता का आधार बनाता हूँ तो मैं सम्प्रदायवादी बनता हूँ। मुसलमानों ने कहा, हमारा सम्प्रदाय अलग है, भाषा अलग है। अतः अलग राष्ट्र चाहिए। देखा देखी सिक्ख भी कहने लग गये। क्या सम्प्रदाय की भी कोई भाषा होती है? हमारे देश में भाषा को सम्प्रदाय के साथ जोड़ा गया। पहले एक पंजाब के दो भाग हुए। एक बंगाल के दो बंगाल बने। मैं उनसे पूछता हूँ अगर भाषा ही प्रमुख है तो हिन्दू मुसलमानों का संयुक्त बंगाल या संयुक्त पंजाब राज्य क्यों नहीं बना? हमारे देश में सम्प्रदाय ने शिक्षण के क्षेत्र में भी प्रवेश किया है। यह लोकतन्त्र का एक शत्रु है।

दूसरा शत्रु लोकतन्त्र का हिन्दुओं का जातिवाद है। हिन्दुओं के चुनावों में जातिवाद आता है। जब मैं अपनी जाति को अपनी नागरिकता का आधार बनाता हूँ, तो मैं जातिवादी हूँ। अभी-अभी द्रविड़ कड़गम के नेता रामास्वामी नायकर ने अपनी वर्षगाँठ के अवसर पर कहा—मैं अब्राह्मण के राज्य का समर्थन करूँगा, चाहे किसी पार्टी का क्यों न हो।

हमारे देश में मुसलमानों का सम्प्रदायवाद हिन्दुओं के जातिवाद से पैदा हुआ है। अगर हिन्दुओं में जाति नहीं होती तो कोई सम्प्रदाय नहीं पनपता। पाकिस्तान बनाने या दूसरे सम्प्रदाय को दबाने से यह समस्या हल नहीं होगी। हिन्दुओं के जातिवाद को खत्म करने से होगी। यह वस्तुस्थिति है, जिसको हमें पहचानना चाहिए। कहा जाता है कि ये राजनैतिक लोग हमारी जाति से फायदा उठाते हैं। मैं कहता हूँ जब है, तो क्यों नहीं उठावें।

जो देश सम्प्रदायों में बँटा हो, उसका संरक्षण कोई भी सेना नहीं कर सकती। जैसा नागरिक होगा, वैसी सेना होगी। सारी दुनिया में एक ऐसा देश जहाँ पूँजीवाद नहीं और साम्यवाद भी नहीं, भारत ही है। ४० करोड़ लोगों के रहते हुए अगर हम लोकतन्त्र का संरक्षण नहीं करेंगे तो दुनिया में एक चप्पा जमीन भी लोकतन्त्र को कदम रखने के लिए नहीं मिलेगी।

नागरिकों की चुनाव-संहिता

चुनाव के पर्व में साधारण नागरिक को जागृत करना आवश्यक है। साधारण नागरिक की अब यह आदत हो गयी है कि हमसे कोई करावेगा तो करेंगे, नहीं तो नहीं करेंगे। हमारे साथ एक लड़का था नाम था लल्लोरेलाल। आज हमारा नागरिक भी लल्लोरेलाल बन गया है। जब तक उसे कोई धमकाता नहीं, लालच नहीं देता है, वह कुछ समझता ही नहीं है। हम तो ललचाते भी नहीं, डराते भी नहीं, धमकाते भी नहीं। इसलिए वह कहता है सर्वोदय अव्यावहारिक है। अगर साधारण नागरिक अपनी पीठ पर नमदा लेकर ही पैदा हुआ है तो उस पर सवारी करने वाले आ ही जावेंगे। यह नमदा उतारने की जरूरत है।

चुनाव के अवसर पर वोट देने के लिए उम्मीदवार की सवारी में न जावें। उम्मीदवार और उसके प्रतिपक्षी उसके घर पर 'वोट दो' 'वोट दो' लिखना चाहे तो कह दे कि मैं अपनी दीवाल रंगवाना नहीं चाहता। यह मनुष्यों का नीलाम हो रहा है। साधारण नागरिक को कहना चाहिए, 'यह अन्याय है। यह अनार्य है।' मत-याचना करने जो आवेगा, उससे वायदा न करें। मिथ्या आरोप जिस सभा में किये जा रहे हों, सभा में केवल सत्ता की स्पर्धा के लिए भाषण हो रहे हों, उसमें न जावें और यदि गये हों तो उठकर चले आवें। इतनी दृढ़ता जब आयेगी, तब यह लोकतन्त्र सफल होगा!

आज हमारे देश की लोक-गंगा कलुषित हो रही है कि लोकजीवन की इन मर्यादाओं का संरक्षण और संवर्धन करने का संकल्प नागरिक करें।

[टिहरी, ८ अक्टूबर, '६१]

सर्वोदय साहित्य भण्डार, सुमननगर, टिहरी, उ० प्र० द्वारा उत्तराखण्ड में श्री दादा धर्माधिकारी द्वारा दिये गये प्रवचनों का संकलन;—"नागरिकों से" के एक अध्याय से। मूल्य ४० न० पै०।

लोकनीति और चुनाव : १ :

• शंकरराव देव

लोकशक्ति को प्रकट और संगठित करने पर ही हम लोकनीति की स्थापना कर सकेंगे और लोकतंत्र को खड़ा कर सकेंगे। इसका एकमेव साधन या प्रक्रिया अखण्ड और व्यापक लोकशिक्षण है। लोगों के सामने छोटी-बड़ी समस्याएँ जो रोज खड़ी होती रहती हैं, उनके हल करने के ऐसे तरीकों का शिक्षण लोगों को देना है, जिनसे लोकनीति को पोषण मिल सके और सच्चा लोकतंत्र स्थापित हो सके। लोगों के सामने आज जो लोकतंत्र है, वही एक बड़ी समस्या बन गया है, जिसका हल होने पर ही सही लोकनीति और लोकतन्त्र इस देश में रूढ़ हो सकेगा। आज की लोकशाही नाममात्र की लोकशाही है; क्योंकि आज की लोकशाही का सारा कारोबार जिस तरह से चल रहा है, उससे लोग अपनी आत्म-निर्भरता और उपक्रमशीलता खो बैठे हैं। आज की लोकशाही का स्वरूप ऐसा बन गया है कि "नाम लोगों का, पर राज्य प्रतिनिधियों का।" आज की लोकशाही पक्षनिष्ठ लोकशाही है। इसका एक परिणाम यह हुआ है कि यद्यपि लोगों को मतदान करने का अधिकार तो प्राप्त हो गया है, लेकिन लोकशक्ति के प्रकट होने में ये पक्ष ही एक बड़ी बाधा बन गये हैं।

समाज में जो अनेकविध समस्याएँ पैदा होती हैं उन पर मुक्तचिंतन और अपनी-अपनी राय की मुक्त अभिव्यक्ति सम्भव होगी, तभी लोकजीवन की निर्मल धारा अबाध गति से बह सकेगी और शुद्ध लोकजीवन साक्षात् हो सकेगा। लेकिन आज की पक्षनिष्ठ लोकशाही में प्रत्येक समस्या पर विचार और चिंतन करने का काम राजनैतिक पक्षों के हाथ में चला गया है। यही नहीं, बल्कि आज की पक्षपद्धति जिस तरह से काम करती है, उससे प्रतिनिधियों को भी मुक्त चिंतन करने की इच्छा, शक्ति और अवसर शनैः शनैः लुप्तप्राय होता जा रहा है, क्योंकि पक्षों के अनुशासन के कारण पक्ष जो निर्णय करेगा, उसीके अनुकूल उन प्रतिनिधियों को अपनी राय देनी पड़ती है।

पक्षनिष्ठ लोकशाही के कारण लोगों की एक और बड़ी हानि हुई है। वह यह कि समाज सुधार के काम के लिए आज की पक्षनिष्ठ लोकशाही का सारा दारोमदार सत्ता पर है। फलस्वरूप लोग अपनी शक्ति पर विश्वास खो बैठे हैं और शासन-शक्ति पर ही अधिकाधिक निर्भर रहने के आदी हो गये हैं। अंततोगत्वा अपने हर प्रकार के सुख के लिए लोग चूँकि सर्वात्मना परावलंबी हो जाते हैं, इसलिए अपनी स्वतंत्रता खो बैठते हैं।

आज की लोकशाही में चुनाव चूँकि प्रत्यक्ष निर्वाचन-पद्धति से होते हैं, इसलिए प्रतिनिधियों और मतदाताओं में प्रत्यक्ष सम्पर्क या निकट परिचय नहीं के बराबर होता है। चुनाव बहुत खर्चीले होते हैं, इस कारण उसमें भ्रष्टाचार सहज ही घुसता है और पनपता है। लोक-प्रतिनिधियों को किसी-न-किसी पक्ष का आसरा लिये बिना आज के चुनावों में सफलता प्राप्त करना सम्भव नहीं होता है। इसके परिणामस्वरूप परिस्थिति ऐसी बन जाती है कि "प्रतिनिधि लोगों के, लेकिन सेवक पक्ष के" हो जाते हैं। इस तरह से आज की पक्षनिष्ठ लोकशाही में अपनी-अपनी सद्‌असद्‌विवेक बुद्धि के अनुसार विचार और आचार करने की स्वतंत्रता करीब-करीब अस्त हो गयी है।

जब तक लोकशाही के इन दोषों का निरास नहीं होगा, तब तक आज की इस लोकशाही से सर्वोदय-समाज का विकास सम्भव नहीं है। सर्वोदय-समाज की स्थापना तभी सम्भव है, जब जनता अपनी सद्‌असद् विवेक-बुद्धि के अनुसार विचार और आचार करने को स्वतन्त्र होगी और अपनी शक्ति और अपने संगठन पर भरोसा करके अपने जीवन की सारी व्यवस्था को चलाने योग्य नीति पर चलने को प्रयत्नशील होगी। यही कारण है कि सर्व सेवा संघ ने सत्ताप्राप्ति की राजनीति में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी प्रकार का हिस्सा न लेने का निर्णय किया है और लोकसेवकों के लिए यह जरूरी माना है कि वे सत्ता की राजनीति और दलगत चुनावों से अलग रहें।

लेकिन इस लोकनीति और लोकशाही का शिक्षण हम जिस जनता को देना चाहते हैं, उसी जनता पर आज की प्रचलित लोकशाही चलाने का भी भार है। इसलिए सर्व सेवा संघ के लोकसेवकों को लोकशिक्षण के अपने कार्यक्रम में यह एक महत्त्वपूर्ण काम मानना होगा कि वे आज की इस प्रचलित लोकशाही के गुण-दोषों का स्वयं अध्ययन करें और उस आधार पर लोगों को शिक्षित करें। यह तो वैसी ही बात है जैसे जो तैरना नहीं जानता हो उसके लिए पानी में उतरने में खतरा तो है, पर तैरना सीखने के लिए उसे पानी में उतरना अनिवार्य है। सर्व सेवा संघ ने पिछले दस वर्षों में चुनाव के सम्बन्ध में जो तीन प्रस्ताव स्वीकृत किये हैं, उन पर से यह स्पष्ट होता है कि उपर्युक्त वस्तुस्थिति का भान सर्व सेवा संघ को है। तभी संघ ने लोकनीति पर चलने वाले, लोकनीति में मानने वाले और आज की लोकशाही को स्वीकार करने वाले, सबके लिए उन प्रस्तावों में अधिकार भेदेन अलग-अलग मार्ग-दर्शन किया है।

उगमुरू (आन्ध्र) सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर स्वीकृत अपने प्रस्ताव में सर्व सेवा संघ कहता है कि—

"......स्पष्ट है कि सर्वोदय और लोकनीति के विचार को व्यापक मान्यता मिलने पर प्रशासन, चुनाव आदि की पद्धति आज के ढंग की नहीं रहेगी। पर ऐसा नहीं होता, तब तक लोकतंत्र की रक्षा के लिए और उसे सही दिशा में ले जाने की दृष्टि से उन चीजों में परिवर्तन आवश्यक है, ऐसा पिछले वर्षों के हमारे अनुभव से जाहिर होता है।... आम चुनाव सन्निकट है। सर्व सेवा संघ की राय में अब वह समय आ गया है, जब कि चुनाव की पद्धति के बारे में हमें थोड़ी गहराई से सोचना चाहिए और लोकतन्त्र को वास्तव में लोकनिष्ठ बनाने के लिए उसमें आवश्यक सुधार करने चाहिए......।"

सर्व सेवा संघ का मुख्य सुझाव यह है कि—

"...लोकतंत्र को सफल और सक्रिय बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उम्मीदवारों का चयन लोग स्वयं करें। मतदान-केन्द्रों के छोटे-छोटे दायरों में मतदाताओं के मंडलों के जरिये यह काम हो सकता है। चुनाव के बाद मतदाताओं और प्रतिनिधियों में जीवित सम्पर्क भी इन मतदाता-मण्डलों के जरिये कायम रखा जा सकता है।"

"....कुछ ऐसे क्षेत्रों में जहाँ वातावरण तथा लोगों की मनोवृत्ति अनुकूल हो, वहाँ अगले आम चुनावों के समय उम्मीदवारों का चयन मतदाता स्वयं करें और चुनाव संघर्ष यथासम्भव टालने की कोशिश करें।"

लेकिन आज की प्रचलित लोकशाही में मानने वालों को सर्व सेवा संघ का यह सुझाव अव्यावहारिक लगता है, इतना ही नहीं, बल्कि लोकनीति और सर्वोदय में मानने वालों को भी यह आज की परिस्थिति में 'अधूरा' और 'असम्भव' सा लगता है। कोई भी चीज अपने आप में कठिन या असम्भव नहीं होती है। वह हमारी समझ में नहीं आती है, इसलिए हमें कठिन या असम्भव जैसी दिखती है। उसे ठीक समझ लेने से उसका रास्ता खुल जाता है। लोकशक्ति और लोकनीति से ही मतदाता-मण्डलों का बनना तथा उनके आधार पर लोकजीवन की सारी व्यवस्था खड़ी करने के लिए चुनावों का होना, तभी सम्भव होगा, जबकि लोगों के जीवन में कुछ हद तक सहकारिता का प्रवेश हो चुका होगा। आज की लोकशाही को इन राजनैतिक पक्षों ने बुरी तरह जकड़ रखा है। इसका कारण यह है कि आज समाज में ऐसे प्रबुद्ध व्यक्तित्व वाले लोगों का अभाव है, जिनके आचार और विचार की प्रेरणा सर्वहित की प्रेरणा हो और अपने विचार और सद्‌असद् विवेक-बुद्धि पर अमल करने के लिए जिन्हें किसी प्रकार की बाहरी शक्ति या अनुशासन की आवश्यकता न पड़ती हो। इस प्रकार के आत्मानुशासित प्रतिनिधियों के अभाव के ही कारण लोगों को किसी-न-किसी पक्ष का आसरा लेना पड़ता है। प्लेटो ने तत्त्ववेत्ता राजा की कल्पना की थी, जो आज तक कभी व्यवहार में नहीं आ पायी है, आज की लोकशाही में तो प्रतिनिधि-स्वरूप राजाओं की भरमार है। आज की लोकशाही लोकशक्ति और लोकनीति के लिए अनुकूल नहीं है। इसीलिए सर्व सेवा संघ ने लोकनीति के प्रचार पर अधिक जोर दिया है और आज की अप्रबुद्ध लोकशाही की चुनाव-पद्धति के अनिष्ट परिणामों से भारतीय जनता को जहाँ तक बचाया जा सकता हो, बचाने के लिए पठानकोट की अपनी बैठक के एक प्रस्ताव में राजनैतिक दलों के लिए आचार संहिता की बात सुझायी है जिसे सारे राष्ट्र ने आज मान्यता दी है। लोकशिक्षण में और सही लोकनीति की स्थापना की दृष्टि से लोकसेवकों का यह एक महत्त्वपूर्ण काम बन जाता है कि लोकनीति के साथ-साथ आचार संहिता का भी व्यापक पैमाने पर वे प्रचार करें, यही नहीं, अपनी निष्पक्षता और तटस्थ वृत्ति के आधार पर आम जनता और खास कर भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों के साथ सम्पर्क साध कर क्षेत्रीय स्तर पर इन बातों पर उनसे अमल करायें।

सर्वोदय-विचारधारा आधुनिकतम और वैज्ञानिक

श्रीमन्नारायण

हिन्दी में विश्व की आर्थिक विचारधारा के इतिहास को लिख कर श्रीकृष्णदत्त भट्ट ने एक महत्त्व का कार्य किया है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, हिन्दी भाषा में इस प्रकार का इतिहास व्यवस्थित ढंग से पहली बार ही लिखा गया है। इस पुस्तक में श्री भट्ट ने प्राचीन युग से लेकर वर्तमान आर्थिक विचारधारा के विकास का सुन्दर ढंग से विवेचन किया है। उन्होंने यह भी दिखाया है कि किस प्रकार आधुनिक आर्थिक विचारों का झुकाव सहज रूप से सर्वोदय की ओर जा रहा है।

मेरा विश्वास है कि गांधीवादी अर्थशास्त्र या सर्वोदय विचारधारा पश्चिम के आधुनिक अर्थ शास्त्रियों के विचारों के भी अनुरूप है। हाल ही में प्रकाशित यूरोप व अमेरिका के अर्थशास्त्र सम्बन्धी ग्रंथों में इस बात पर बहुत जोर दिया जा रहा है कि आर्थिक संयोजन को सफलतापूर्वक चलाने के लिए कई प्रकार के ऐसे तत्त्वों को ध्यान में रखना जरूरी है, जिनका अर्थ से कोई सम्बन्ध नहीं है।

प्रो० डेविड मैक्लीलैंड'[1] ने इस बात पर बहुत जोर दिया है कि आर्थिक विकास का मसला सिर्फ अर्थशास्त्रियों पर नहीं छोड़ा जा सकता। मानवीय जीवन में इस प्रकार के कई गैर-आर्थिक तत्त्व (नान इकॉनॉमिक फैक्टर्स) हैं, जिनका आर्थिक संयोजन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। इस प्रकार मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक पहलुओं की अवहेलना करके हमारा आर्थिक विकास अधूरा ही रह जायगा।

स्वीडन के सुविख्यात अर्थशास्त्री प्रो० गुनार मिर्डेल'[2] का स्पष्ट कथन है कि आर्थिक प्रगति के लिए "मानवीय पूँजी" को समृद्ध बनाने की नितान्त आवश्यकता है और यह कार्य व्यापक जन-शिक्षण द्वारा ही किया जा सकता है, ताकि मनुष्य का स्तर ऊँचा उठ सके। प्रो० गालब्रेथ'[3] ने भी इस तथ्य को बार-बार दोहराया है कि आर्थिक विकास के लिए मशीनों की अपेक्षा मनुष्य के विकास का अधिक महत्त्व है। मानवीय पूंजी को विकसित किये बिना केवल स्थूल एवं भौतिक साधनों के विकास से हमारा संयोजन कदापि सफल नहीं हो सकता। यही बुनियादी विचार महात्मा गांधी ने संसार के सामने पेश किया और इस दृष्टिकोण को आज आचार्य विनोबा भारत व दुनिया के सामने बड़ी स्पष्टता से रख रहे हैं। विनोबाजी का कथन है कि आधुनिक विज्ञान व 'टैक्नालॉजी' मनुष्य के आध्यात्मिक विकास के बिना सर्वनाश का कारण बनेगी। यदि विज्ञान का उपयोग मानवीय प्रगति के लिए करना है तो उसे अहिंसा व आत्मज्ञान के साथ जोड़ना होगा। प्रो० टायन्बी'[4] जो वर्तमान युग के सबसे बड़े इतिहासकार हैं, हमें बार-बार चेतावनी दे रहे हैं कि अणुयुग में विश्व बन्धुत्व के बिना सारा संसार नष्ट हुए बिना न रहेगा; किसी की विजय न होगी, सभी पराजित होंगे।

1- "दी अचिविंग सोसाइटी": डेविड सी० मैक्लीलैंड, पृष्ठ १२।

२. "बियाण्ड दी वेलफेयर स्टेट": गुनार मिर्डेल, पृष्ठ ८५।

३ "दी लिबरल आवर": जे० के० गाल्ब्रेथ, पृष्ठ ४६।

४ "ए स्टडी ऑफ हिस्ट्री" खंड १२ (रिकन्सीडरेशन्स)—आर्नोल्ड टायन्बी पृष्ठ ५१८।

सर्वोदय विचारधारा का यह बुनियादी सिद्धान्त है कि शोषणरहित समाज को बनाने के लिए आर्थिक व राजनीतिक विकेन्द्रीकरण आवश्यक है। केन्द्रीकरण के कारण न केवल व्यक्ति का विकास कुंठित होता है, बल्कि समाज का राजनीतिक व आर्थिक जीवन भी अपंग बन जाता है। श्री चेस्टर बोल्स'[5] ने जोरदार शब्दों में संसार के अर्थ शास्त्रियों व राजनीतिज्ञों का ध्यान भारतीय ग्रामपंचायत व्यवस्था की ओर खींचा है और निवेदन किया है कि इस व्यवस्था को विकसित होने का पूरा अवसर दिया जाय। यदि ऐसा न हुआ तो यह एक बड़ी दुःखद घटना होगी। प्रो० आल्डस हक्सले'[6] ने इस बात का प्रबल समर्थन किया है कि लोकशाही को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है राजनीतिक और आर्थिक विकेन्द्रीकरण को हिम्मत के साथ आगे बढ़ाया जाय। रूस और चीन में भी यह महसूस किया जा रहा है कि आर्थिक सत्ता को विकेन्द्रित किये बिना कृषि व औद्योगिक विकास की गति कुण्ठित हो जाती है। श्री ख्रुश्चेव ने हाल में ही एक वक्तव्य प्रकाशित किया है, जिसमें रूस के कलेक्टिव फार्म्स को अधिक स्वतन्त्रता दी जायगी। युगोस्लाविया में मार्शल टीटो ने भी विकेन्द्रीकरण की ओर व्यवस्थित ढंग से कदम उठाये हैं। इस दृष्टि से भारत में पंचायती राज का जो आन्दोलन चलाया जा रहा है, वह सब दृष्टि से वैज्ञानिक है और उसका प्रभाव दुनिया के देशों पर भी पड़े बिना न रहेगा।

यह ख्याल करना बिल्कुल गलत होगा कि विकेन्द्रीकरण एक दकियानूसी कदम है, जो वर्तमान विज्ञान के प्रवाह के विरुद्ध है। सच तो यह है कि विज्ञान की प्रगति के साथ साथ व्यापक विकेन्द्रीकरण अधिक आवश्यक बन जाता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि विज्ञान के जमाने में विकेन्द्रीकरण ही अधिक वैज्ञानिक तरीका है। जब हमारे उद्योग कोयले पर निर्भर थे, तब उन्हें केन्द्रित करना कुछ

५ "आइडिआज, पिपुल एण्ड पीस": श्री चेस्टर बोल्स, पृष्ठ १३२।

६. "ब्रेव न्यू वर्ल्ड रिविजिटेड": आल्डस हक्सले, पृष्ठ १८९।

हद तक आवश्यक हो जाता था। बिजली-शक्ति के प्रयोग होने पर औद्योगिक विकेन्द्रीकरण अधिक मात्रा में सम्भव हो सका है। किन्तु अणुशक्ति का विकास होने के बाद उद्योगों को ग्रामों में फैलाना और भी सुलभ हो जायगा। अणुयुग में भी अगर हम सभी उद्योगों को बड़े शहरों में केन्द्रित करने का प्रयत्न करें तो यह बिल्कुल अवैज्ञानिक ढंग होगा। ऐसा करना न आवश्यक है और न राजनैतिक बुद्धिमानी ही। आचार्य विनोबा तो बार बार कहते हैं कि खादी व ग्रामोद्योगों के लिए वे बिजली के अलावा अणु शक्ति का भी प्रयोग करने को तैयार हैं। उनकी शर्त केवल इतनी है कि इन आधुनिक शक्तियों का प्रयोग इस प्रकार किया जाय कि मनुष्य का मनुष्य द्वारा आर्थिक शोषण न हो। हाल ही में प्रकाशित एक लेख में जान स्ट्रेची'[7] ने इस विचार का बड़े कड़े शब्दों में खंडन किया है कि कृषि या उद्योगों का विकास बड़ी मशीनों के द्वारा ही किया जा सकता है। उनका ख्याल है कि भारत और चीन जैसे देशों में, जहाँ जनसंख्या अधिक है और पूँजी की कमी है, वहाँ आर्थिक संयोजन के लिए विशाल मशीनों द्वारा केन्द्रित व्यवस्था करना बुद्धिमानी न होगी। छोटी छोटी मशीनों की सहायता से इस प्रकार की विकेन्द्रित आर्थिक व्यवस्था संयोजित की जा सकती है, जिसमें मशीन व मनुष्य दोनों शक्तियों का सन्तुलित विकास हो।

बेकारी की दृष्टि से भी अब लगभग सभी अर्थशास्त्री, शास्त्र शास्त्री, आर्थिक संयोजक, समाज शास्त्री व राजनीतिज्ञ यह स्वीकार करते हैं कि लघु उद्योगों के रूप में विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के सिवाय इस समस्या का भारत जैसे अर्ध विकसित क्षेत्रों में हल करना सम्भव नहीं है। गांधीजी ने इस तथ्य को बहुत वर्ष पहले भारतवर्ष व दुनिया के अन्य देशों के सामने रखा था। किन्तु उस समय यह माना जाता था कि गांधीजी की विचारधारा मध्यकालीन है और उसके मूल तत्त्व अणुयुग से मेल नहीं खाते। किन्तु अब अमेरिका के भी प्रतिष्ठित अर्थ-शास्त्री और भारत में वर्तमान राजदूत प्रो० गाल्ब्रेथ'[8] भी महसूस करते हैं कि सभी दृष्टि से पूर्ण रोजगार देने का लक्ष्य केवल उत्पादन बढ़ाने से अधिक श्रेयस्कर है। इस दृष्टि से भारत की तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी लघु, ग्राम और कुटीर उद्योगों को महत्त्व का स्थान दिया गया है और सभी प्रदेशों में यह प्रयत्न किया जा रहा है कि जो लोग काम करने को तैयार हों, उन्हें किसी-न-किसी प्रकार का उत्पादक कार्य दिया जाय। लघु उद्योगों में बड़ी मशीनों की अपेक्षा छोटी मशीनें काम में लानी होंगी। हो सकता है कि प्रारम्भ में लघुयंत्रों में उतनी कुशलता (एफीशियन्सी) न हो जितनी बड़े यंत्रों में हो सकती है। किन्तु विभिन्न देशों के अर्थशास्त्री'[9] अब यह सिद्धान्त भी स्वीकार करते हैं कि आर्थिक संयोजन का ध्येय आर्थिक कुशलता (इकॉनॉमिक एफीशियन्सी) होनी चाहिए, न कि सिर्फ यांत्रिक कुशलता (टैक्नीकल एफीशियन्सी)। प्रो० नर्क्स'[10] भी इस विचार का समर्थन करते हैं कि गरीब देशों में अपेक्षाकृत कम कुशल यन्त्रों से भी काम लेना आर्थिक दृष्टि से हितकर है।

वर्तमान अर्थशास्त्र सम्बन्धी साहित्य का मैं जितना अधिक अध्ययन करता हूँ, मेरा विश्वास उतना ही दृढ़ होता जाता है कि सर्वोदय विचारधारा एक दकियानूसी दृष्टिकोण नहीं, किन्तु आधुनिकतम व वैज्ञानिक दृष्टिकोण है जो भारतवर्ष के लिए ही नहीं, बल्कि संसार के अन्य देशों की भी सर्वांगीण प्रगति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु इस बात को समझने के लिए आर्थिक विचारधारा के इतिहास की विस्तृत जानकारी जरूरी है। इस दृष्टि से श्री भट्ट द्वारा लिखित यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।*

७ "दी मेड अवेकनिंग" (इनकाउंटर, लंदन): जान स्ट्रेची

८ "दी अफ्ल्युएंट सोसाइटी"—जान गाल्ब्रेथ, पृष्ठ १५३।

९. "दी इकॉनॉमिक्स ऑफ अंडर-डेवलप्ड कंट्रीज"—पी० टी० बॉयर एण्ड बी० एस० यामे, पृष्ठ ११८।

१०. "प्राब्लम्स ऑफ कैपिटल फारमेशन इन अंडर डेवलप्ड कंट्रीज", पृष्ठ ४५।

* अ. भा. सर्व सेवा संघ से प्रकाशित "आर्थिक विचारधारा" पुस्तक की भूमिका। लेखक : श्री कृष्णदत्त भट्ट, पृष्ठ ४८४, मूल्य छह रुपया।

बाबा के 'दरबार' में......

• कालिन्दी

एक छोटा-सा न्यायालय। उत्तर लखीमपुर (आसाम) के छोटे-से गाँव में था यह न्यायालय बांस की एक छोटी झोंपड़ी में। झोंपड़ी के इर्दगिर्द धान के खेत, सुपारी और केले के पेड़। झोंपड़ी के सामने खुले मैदान में बैठी है देहाती जनता। न्याय की तुला हाथ में लेकर बैठा हुआ न्यायाधीश यहाँ नहीं है। सत्य और करुणा से दिलों को साधने वाले 'बाबा' यहाँ बैठे हैं। पैसों की गरमी के साथ आने वाले लोग यहाँ नहीं हैं, प्यार की हरारत साथ लेकर आये हुए देहात के श्रद्धावान लोग यहाँ हैं। न्याय-अन्याय का मुकाबला यहाँ नहीं है, किन्तु मन की आशंकाओं के निराकरण से मिलने वाला समाधान भी यहाँ है।

ग्रामदानी गाँव में झगड़ा हुआ। चालीस घरों का गाँव था। सब परिवारों ने ग्रामदान को मान्यता दी थी। गाँव में जंगल था। जंगल की जमीन पर दूसरे गाँव के एक-दो परिवार आकर बसे। खेती के लिए उन्होंने जंगल की जमीन तैयार की, पड़ोसी व ग्रामदानी गाँव के एक भाई में जमीन की सीमा तय करते करते झगड़ा उपस्थित हुआ। बाबा का पड़ाव पास के ही गाँव में था। दोनों दलों के भाई बाबा विनोबा के पास आये और उन्होंने अपना झगड़ा उनके सामने पेश किया। उस दिन बाबा कुछ देरी से ही पहुँचे थे। सब कार्यक्रम को कुछ देरी ही हुई। बाबा के छोटे-से कमरे में लोग इकट्ठे हुए। नहा कर बाबा अन्दर से आये और अपनी खटिया पर बैठे। शुभ्र वस्त्र में बैठी इस महान् मूर्ति के सामने मन की सारी अपवित्रता अपने आप ही दूर हो जाती है।

आरंभ में ही बाबा ने उन लोगों को कहा, "यह बाबा का 'दरबार' है, 'कोर्ट' नहीं है। जो कुछ बात हो, वह साफ बताना है, परमेश्वर का स्मरण कर सत्य बोलना है।"

कमरे में एक क्षण तक पूर्ण स्तब्धता रही। वहाँ में बैठे सब स्त्री-पुरुष, वृद्ध-जवान, सब क्षणमात्र तटस्थ, स्थिर रहे; मानों सत्यकथन के लिए परमेश्वर का स्मरण कर रहे हों और फिर दोनों दलों ने अपनी-अपनी बातें सामने रखीं। एक ने कहा, "ग्रामदानी गाँव वालों ने मेरे खेत में से सुपारी व केले के कुछ पेड़ और थोड़ा धान जला कर नष्ट कर दिया, क्योंकि मैं ग्रामदान में शामिल नहीं हूँ। मैं जब ग्रामसभा के पास झगड़ा लेकर गया, तब उन्होंने मेरी बातें सुनने से इन्कार कर दिया। मैं ज्यादा कुछ नहीं चाहता था, सिर्फ मेरे खेत के लिए बीच में एक छोटा-सा रास्ता चाहता था। लेकिन मेरे पड़ोस-वाले भाई ने उसी कारण मेरे साथ झगड़ा किया और धान की खेती जला दी।"

ग्रामदानी गाँववालों ने कहा, "यह ग्रामदानी गाँव पर इल्जाम है। धान के खेत और सुपारी, केलों के पेड़ तो इसने खुद ही जलाये हैं। ग्रामदानी गाँव की बदनामी हो, यह इसका उद्देश्य था। हमारा कहना था कि सामूहिक खेती में शामिल हो, नहीं तो यह अकेला हो पीछे रह जायेगा। इस समस्या को हल करने के लिए खास ग्रामसभा बुलायी गयी थी। लेकिन उस दिन यह आया नहीं। कुछ बहाना करके उसने समय माँग लिया और उतने समय में अपना एक दल बनाया। इस पर ग्रामसभा ने उस दल के साथ बातें करने से इन्कार कर दिया।"

हरएक दल इस यह बताने की कोशिश कर रहा था कि दूसरा दल दोषी है। बाबा ने दोनों की बातें शांति से सुन लीं और फिर कहा :

"कोर्ट में हर मनुष्य दूसरे की गलती बताता है। हमारा 'कोर्ट' दूसरे प्रकार का है। यहाँ हर पार्टी अपना-अपना दोष बतायेगी। झगड़े में कुछ गलती अपनी होती है, कुछ गलती दूसरे की होती है। इसलिए हर पार्टी अपनी भूल बताये, दूसरे की भूल न बताये। इस प्रकार के कई झगड़े मैंने हल किये हैं। हर हमेशा मैंने यही कहा है कि जो अपनी गलती समझता हो वह बताये। जो जिसकी भूल होगी, स्वयं बताये। अगर छोटी-सी भी गलती हो, तो भी वह बताये।"

वातावरण एकदम बदल गया। दोनों पार्टियाँ कुछ देर तक चुप रहीं। गलती महसूस करना तो इतना कठिन नहीं है, लेकिन महसूस हुई गलती को प्रकट करना हिम्मत का काम है। लेकिन बाबा के सामने मनुष्य के मन के दरवाजे खुल जाते हैं। मनुष्य कुछ छिपा कर रख ही नहीं सकता। बाबा के सान्निध्य से ही गलती को प्रकट करने की हिम्मत आ जाती है। दोनों दलों ने अपनी-अपनी भूल बता दी। पहिले दल के नेता ने बताया कि "झगड़ा तो मेरे साथ हुआ था। मुझे अपने साथ मेरा पूरा दल ले जाने की आवश्यकता नहीं थी। मैं मेरे साथ दस-बारह लोगों को ले गया, यह मेरी गलती हुई।"

अब दूसरे दल को भी हिम्मत हुई। उसने बताया, "हमने उसकी बातें सुनने से इन्कार कर दिया, यह हमारी गलती थी। हमें ग्रामसभा में उसकी बातें सुननी चाहिये थीं।"

अब फैसले का समय आया। सब बाबा की तरफ उत्सुकता से देख रहे थे। लेकिन फैसले की अपेक्षा बाबा से करना गलत ही था। बाबा कोई न्यायाधीश नहीं हैं। वे क्यों भला फैसला देंगे। उन्होंने कहा, "अब तुम लोग ऐसा करो, दोनों बाहर जाकर बैठो और दोनों मिल कर दोनों के बीच-में समाधान करके मेरे पास आओ। हमको तो सबके साथ प्रेम करना है। इसलिए इकट्ठा बैठ कर चर्चा करो और प्रेम से समाधान करो।"

दोनों दलों के प्रतिनिधियों की एक छोटी कमेटी मैदान में एक कोने में बैठी। दो घंटा बातचीत होती रही और फिर हाथ में हाथ डाल कर दोनों दलों वाले बाबा के पास आये। दोनों का समाधान हो गया और दोनों दलवाले झगड़े से मुक्त थे, द्वेष से मुक्त थे। दोनों के हृदय जुड़ गये थे। ग्रामसभा ने मान्य किया कि वे उस भाई को हरसों खेने के लिए जमीन देंगे। सामूहिक खेती में आने की आवश्यकता नहीं। उस भाई ने खुद ही कहा कि मैं अपनी कुछ जमीन सामूहिक खेती में लगाऊँगा और कुछ हिस्से में स्वतंत्र रूप से खेती करूँगा। दोनों दलों ने तय किया कि गाँव के लिये और उसके खेत के लिए एक अच्छा रास्ता रखा जाय।

बाबा ने उनसे कहा, "हमको आपस में ही झगड़ा मिटाना है। हमारे देश का मुकाबला चीन के साथ हो रहा है। भारत देश और चीन देश के बीच में झगड़ा है। इस हालत में हम अगर आपस में लड़ते रहें तो उनका मुकाबला कैसे करेंगे? इसलिए हमारे बीच झगड़े हमको खतम करने हैं।"

शाम के प्रार्थना-प्रवचन में भी इसका जिक्र करते हुए बाबा ने कहा :—

"हमारा 'कोर्ट' दूसरी तरह का है। आज 'कोर्ट' में क्या चलता है? हर कोई दूसरे का दोष दिखाता है और अपना दोष छिपाता है। हमारे 'कोर्ट' में हर कोई अपना दोष दिखाता है। मनुष्य स्खलनशील है, गलतियाँ करता है। इसलिए अपनी-अपनी भूल कबूल करनी चाहिये और समाधान करना चाहिये। यह ग्रामदानी गाँव का का तरीका है। ग्रामदान सत्य, प्रेम, करुणा के आधार पर बनेगा। झगड़ा हुआ तो आमने-सामने बैठ कर प्रेम की राह निकालनी है। इस तरह से करोगे तो खोओगे नहीं, बहुत पाओगे।

"दुर्योधन और पांडव की बात जानते हो? पांडवों का राज्य पर हक था, पूरा सत्य उनका था। दूसरे पक्ष का कहना था, पूरा सत्य दुर्योधन का है। धर्मराज ने कहा कि आधा तुम्हारा, आधा हमारा। दुर्योधन ने नहीं माना। धर्मराज ने कहा कि हम पाँच हैं, पाँच गाँव हमको दे दीजिये, बाकी गाँव तुम्हारे रहें। दुर्योधन ने यह भी नहीं माना। दुर्योधन के नसीब में विनाश ही लिखा था; इसलिए विपरीत बुद्धि हो गयी। भगवान ने भी कोशिश की, लेकिन दोनों के बीच मेल नहीं हुआ। आखिर लड़ाई हुई और दोनों खतम हुए।

"इनके बाजू के सिर्फ पाँच पांडव और सात्यकि ही रह गया, और कोई रहा होगा तो याद नहीं। उधर अश्वत्थामा और और कोई रहे होंगे। बाकी सारे खतम हो गये। यह किसका परिणाम था? समाधान के अभाव में जब लड़ाई होती है तो उसमें एक पक्ष की जीत होती है तो दूसरे पक्ष की हार होती है। जिसकी हार होती है वह दुःखी होता है। जिसकी जीत होती है वह सुखी होता है। हमारे महापुरुषों ने हमको एक रास्ता दिखाया है। उसमें दोनों पक्षों की जीत होती है। हार किसी की नहीं। इसीलिए हम बोला करते हैं कि हमारा मन्त्र 'जय जगत्'।

"इस पर से ध्यान में आता है कि ग्रामदानी गाँव का कितना महत्त्व है। एक मनुष्य होता तो गुस्सा करता और झगड़ा बढ़ता। लेकिन ग्रामसभा हो गयी तो ठंडे दिमाग से सोचेंगे। पाँच पांडव बारह साल जंगल में रहे। उनकी आपस में बहुत चर्चा चलती थी। लेकिन आखिर युधिष्ठिर महाराज जो कहते उसे वे सब प्रमाण मानते थे। इसलिए फूट पैदा नहीं हुई और इसलिये पांडव पाँच ही थे, पर कौरवों को भारी हो गये। भगवान् भी पांडवों के पक्ष में रहते थे, क्योंकि वे धर्म पर चलते थे और मिलजुल कर रहते थे। ग्रामदानी गाँव की ग्रामसभा दान और प्रेम के आधार पर बनती है, इसलिए कभी अन्याय नहीं होता।"

मैदान में सभा बैठी थी। सामने था अनंत आसमान और आसमान के बादलों समान दिखनेवाले नागा पर्वत। बिखरे बैठे हुए वे अर्धनग्न वीर पुरुष बाबा की वाणी का कानों से श्रवण कर रहे थे। उनकी आँखों से श्रद्धा और प्रेम टपक रहा था। बाबा ने मौन प्रार्थना के लिए आदेश दिया और कहा, "ॐ शांतिः शांतिः"। श्रद्धा से उमड़ी हुई जनता ने परमेश्वर के स्मरण के लिए क्षण भर आँखें मूँद लीं।

(२८-१२-'६१)

लोक-शिक्षण की दिशा में एक प्रयास

लोगों का लोकप्रतिनिधि

हरिवल्लभ परीख

चेंगलपट्टु का सर्वोदय-सम्मेलन कई दृष्टि से महत्त्वपूर्ण था, लोकस्वराज्य की दिशा में उसने देश को स्पष्ट मार्ग-दर्शन दिया। आने वाले पंचायतराज को लोकशिक्षण का माध्यम बना कर लोकस्वराज्य की ओर ले जाने का सर्व सेवा संघ ने सराहनीय प्रस्ताव किया। लोकस्वराज्य से जिसका तात्कालिक सम्बन्ध आने वाला है, ऐसे आम चुनाव में लोगों का क्या रुख हो? लोकसेवक क्या करें? राजनैतिक पक्षवालों से क्या अपेक्षाएँ रखी जायें? इन सब प्रश्नों पर सर्व सेवा संघ और सम्मेलन ने अच्छा प्रकाश डाला। नतीजा यह हुआ है कि देश के राजनैतिक आकाश में आज आचार-मर्यादाओं के सितारे किसी-किसी राज्य में चमकने लगे हैं। ये सितारे चुनाव-दिवस के प्रकाश में कितना काम देंगे, यह दूसरा प्रश्न है! किन्तु चारों ओर इस सुविचार की चर्चा होना, अच्छी शुरुआत का शुभ चिह्न है।

संघ ने यह भी अपेक्षा प्रकट की थी कि जहाँ लोकसेवक बैठे हों, लोकसम्पर्क गहरा हो, वहाँ मतदाताओं के संघ गठित करके मतदाता ही अपना प्रतिनिधि निश्चित करें। यह प्रतिनिधि लोगों का हो, लोगों के प्रति जिम्मेदार व जवाबदेह रहे। लोकशाही की बुनियादें पक्की और मजबूत बनाने का यह एकमात्र उपाय है, ऐसा प्रतीत हुआ है। दलगत राजनीति का नतीजा यह आया है कि १४ साल के स्वराज्य के बाद भी जनता को स्वराज्य का अच्छा स्वाद नहीं मिला है। दूसरी ओर देश की एकता खटाई में पड गयी है। एकता-सम्मेलन की आवश्यकता इस बात को साबित करती है। उक्त सम्मेलन के मंच से जो सुर प्रकट हुआ, वह हमने सुना। सुर तो अच्छा है, किन्तु राष्ट्र के अखंडत्व को जिन तत्त्वों ने तितर बितर किया है, कर रहे हैं, इसका विवेचन करते हुए राजनीति के माहिर आचार्य कृपलानीजी ने जो कहा, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है।

आपने कहा कि राष्ट्रीय एकता को खंडित करने वालों को बाहर ढूँढ़ने की जरूरत नहीं। इसी पंडाल में बैठे हुए वे लोग हैं, जिन पर इस खंडन का सबसे ज्यादा दायित्व है—फिर वह खंडन भाषा के, प्रान्त के, धर्म के या और किसी बहाने से किया गया हो। दादा कृपलानी के ये शब्द बहुत महत्त्व रखते हैं। आज की राजनीति को नया मोड़ देने की नितांत आवश्यकता इसमें निहित है।

इसीलिए यह आवश्यक है कि नये प्रयोग किये जायँ। संघ की अपील गुजरात के बड़ौदा जिले के पैणाई क्षेत्र के वनवासियों ने स्वीकार कर ली। नसवाडी और छोटा उदेपुर, इन दो तहसीलों में इस नये प्रयोग का शुभ आरंभ करने का तय किया। पैणाई क्षेत्र के लोकसेवकों की सभा हुई। उसमें निश्चय किया गया कि यह प्रयोग किया जाय, फिर दोनों क्षेत्रों के कुछ प्रमुख लोगों की सभा हुई। सबने विचार पसंद किया। बाद में गुजरात सर्वोदय मंडल को साथियों के इस प्रयोग की यथार्थता समझाने की कोशिश की गयी। समय काफी बीत गया। लोग बार-बार पूछने आते रहे। आखिर दिसंबर में फैसला किया कि प्रयोग करना ही है।

लोकसभाओं और 'लोककूच' लोगों के सामूहिक टोलियों द्वारा प्रचार करते हुए, यहाँ के पूरे क्षेत्र को इस नये विचार से परिचित कराया। 'पैणाई' प्रदेश ग्रामस्वराज सर्वोदय-मंडल' ने आज तक प्रचारार्थ तीन सूचना-पत्रिकाएँ प्रकाशित कीं। लोकशिक्षण की इन पत्रिकाओं ने पढ़े लिखे लोगों में हलचल पैदा की। प्रश्न, प्रतिप्रश्न और उत्तर आदि तरीके से इस विचार को पूरी तरह समझाने का अच्छा मौका मिला। राजनैतिक विचारकों ने भी इसे पसंद किया। किन्तु इस पर इसी वर्ष अमल करने की तैयारी सब पक्षवाले नहीं बता सके। इसके लिए हम भी कुछ दोषपात्र थे। पक्षवालों ने अपने प्रतिनिधि नियुक्त करके प्रचार आरंभ कर दिया था। हम विलंब से उन्हें मिल पाये। फिर भी दो तीन राजनैतिक पक्षों ने मतदाता संघ के प्रतिनिधि के खिलाफ अपना प्रतिनिधि खड़ा नहीं करने का फैसला किया और उन्होंने जहाँ खड़े किये गये थे उन्हें भी बैठा देने का वादा किया। अब भी प्रयत्न जारी है। आखिरी मिनट तक यह प्रयत्न जारी रखने की कोशिश होगी कि पक्षवाले प्रजा के फैसले को मान कर प्रतिनिधि के चुनाव की नयी पद्धति के प्रयोग में सहयोग दें।

ग्रामजनों ने स्वयस्फूर्ति से थोड़े से समय में ४०० से अधिक गाँवों का दौरा करते हुए लोकस्वराज्य की बातें समझायीं और गाँव-गाँव मतदाता-संघ का गठन किया। १२० गाँवों ने चर्चा के बाद अपने अपने गाँव से दो दो, तो कहीं बड़े गाँव में तीन या अधिक प्रतिनिधि तय किये। ऐसे प्रतिनिधियों की एक परिषद् गत २६ दिसम्बर '६१ को रंगपुर आश्रम में संपन्न हुई। ३०५ गाँवों के प्रतिनिधियों ने इस परिषद् में भाग लिया। तीस मील दूर से जो प्रतिनिधि आ रहे थे, उनकी गाड़ी बिगड़ जाने से कुछ प्रतिनिधि परिषद् तक नहीं पहुँच पाये। अन्य कई लोग नये प्रयोग को देखने-समझने आये थे। २५-३० मील दूरी से पैदल चल कर लोग आये। प्रतिनिधियों ने घंटों चर्चा और विचार विनिमय किया।

इसी अवसर पर एक सर्वोदय-कार्यकर्ता बहन, जिसने पहले वर्षों तक दलगत राजनीति में सक्रिय हिस्सा लिया है, मौजूद थीं। यह सब देख कर उसने कहा: "महान् आश्चर्य है कि ये लोग न तो जातिपाँति की बात सोच रहे हैं और न धर्म सम्प्रदाय की। गरीब-अमीर की हैसियत भी यहाँ नहीं देखी जाती। और तो और उसका भी भेद नहीं बरतते। किसी विशेष गाँव या विभाग का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठाते। सब यही सोच रहे हैं कि कौन ज्यादा लायक है, कौन उत्साह और अकल के साथ हमारा प्रतिनिधित्व कर सकेगा। वे सोच रहे हैं कि कौन अधिक इस नये प्रयोग को आगे बढ़ा सकेगा। सचमुच यह दृश्य मैंने कभी दलगत राजनीति में नहीं देखा।"

उस बहन की इस समालोचना में काफी तथ्य सबको नजर आया। मैं भी वहाँ मौजूद था, किन्तु मेरा प्रयत्न यही रहा कि वे सब अपने आप ही आपस में चर्चा करें।

विचार-विमर्श के अन्त में छोटा उदेपुर क्षेत्र के मतदाता संघ के प्रतिनिधियों ने २६ वर्षीय एक उत्साही जागृत युवक को अपना प्रतिनिधि बनाने का फैसला किया। नसवाडी मतदाता क्षेत्र के तरुण और प्रौढ़ प्रतिनिधियों ने मिल कर सर्वानुमति से ४८ वर्षीय एक प्रौढ़ व्यक्ति को चुना। नसवाडी की दूसरी 'सीट' अमानत है। उसके लिए एक ग्रामदानी गाँव के भाई को आग्रहपूर्वक पसन्द किया।

मैं यह इच्छा पहले ही प्रकट कर चुका था कि मेरे साथियों में से किसी को पसन्द न किया जाय, और मेरा यह भी आग्रह था कि इस बार ग्रामदानी गाँवों में से भी किसी को पसन्द न करें। नसवाडी क्षेत्र में २७ ग्रामदान हैं। मेरे न चाहने पर भी जो ग्रामदानी गाँवों के नहीं थे, ऐसे प्रतिनिधियों ने काफी आग्रहपूर्वक ग्रामदानी गाँव के एक भील भाई को ही पसन्द किया। श्री मथुरभाई भील अच्छे विचारवान और सेवाभावी किसान हैं। छोटा उदेपुर मतदाता क्षेत्र के प्रतिनिधियों ने सर्वानुमति से एक आदिवासी नवयुवक को चुना। यह युवक 'इण्टरमिडिएट' तक पढ़ा है, राजनैतिक दृष्टि से जागृत है। इसमें सेवा की लगन है।

सब उम्मीदवारों को खुली परिषद में लाया गया और उनके नाम के प्रस्ताव व समर्थन की विधि प्रतिनिधियों ने की, तब सब लोगों ने हर्षध्वनि के साथ उनको स्वीकार किया। ग्राम-प्रतिनिधियों ने १४ साल के अपने अनुभव सुनाये और अन्त में नये प्रतिनिधियों से विनती की कि वे पुराने प्रतिनिधियों की तरह पाँच साल में सिर्फ एक बार मुँह दिखाने वाली पुरानी पद्धति का अनुसरण न करें, किन्तु बार-बार जनता के बीच में आते रहें। कम-से कम ३ महीने में एक बार तो ग्राम प्रतिनिधियों से उनकी भेंट होनी ही चाहिए। उन चुने गये दोनों प्रतिनिधियों ने सबके प्रति कृतज्ञता प्रकट की और प्रार्थना के साथ प्रतिज्ञा की कि वे प्रजा की सेवा में ही अपनी सफलता मानेंगे।

मैंने प्रारम्भ और अन्त में प्रतिनिधियों से दो बातें करते हुए कहा, नये प्रयोग की पहली परीक्षा में प्रतिनिधि का चुनाव करने की सफल होने के लिए सब को बधाई दी। आगे अपने प्रतिनिधियों का मार्गदर्शन करने के काम में और नयी पद्धति के अनुसार अपने प्रतिनिधियों को लोक प्रतिनिधि के रूप में समाज के सामने खड़े करने के काम को अंजाम देने की अपील की। इस प्रयोग पर सारे भारत की नजर होगी। विशेष जिम्मेदारी आप सब पर है। परिषद् आनन्द के वातावरण में समाप्त हुई।

यहाँ मुझे एक दो बातों का जिक्र करना है। जनता और पक्षों के बड़े निष्ठावान सज्जनों ने मुझे कहा, अगर आप चुनाव के लिए खड़ा होते हैं। तो अविरोध चुनाव होगा, ऐसा भी उन्होंने विचार व्यक्त किया। लेकिन बहुत जल्दी ही उनका भ्रम मैंने दूर कर दिया। मुझे इस पद्धति में लोक-स्वराज्य की नींव नजर आती है इसीलिए इसे आजमाने की आवश्यकता महसूस करता हूँ, ऐसी बातें मैंने व्यक्त कीं। तब मेरे साथियों के लिए भी वे ज्यादा आग्रह करने की हिम्मत नहीं कर सके। उसके बाद ही इस प्रयोग की भूमिका बनी।

जो प्रतिनिधि चुने गये हैं, उन्होंने भी हृदयपूर्वक यह भावना प्रकट की है कि चुनाव के आखिरी दिन तक भी मतदाताओं को इससे अच्छा प्रतिनिधि मिल सके तो हम जनता की आज्ञा को मान्य करके उस प्रतिनिधि को मतदाता संघ का प्रतिनिधि मानेंगे और उसकी सेवा व सराहना करेंगे।

एक ओर टिकट (सीट) के लिए छीना-झपटी और दूसरी ओर चुने जानेके

साहित्य-परिचय

नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद-१४

स्वेच्छा से स्वीकार की हुई गरीबी

ले० गांधीजी, पृष्ठ ३२, मूल्य ३५ नये पैसे।

गांधीजी ने सत्य की खोज में अपना जीवन लगाया। सत्य के अनुसार जिन्दगी जीने की कोशिश के कारण उनको यह स्पष्ट रूप से महसूस हुआ कि परिग्रह इस दिशा में बढ़ने में बाधक है। जिस प्रकार की समाज-रचना आज है, उसमें संग्रह और धन की सत्ता चलती है, परन्तु गांधीजी ने देखा कि बिना स्वेच्छा से अपरिग्रह व्रत अर्थात् गरीबी स्वीकार करने से सच्चा सुख, सन्तोष और शांति नहीं प्राप्त होगी, किन्तु उनका यह मानना था कि अगर मनुष्य अपना जीवन इस प्रकार बीतायें, जिससे वह अपने जीविका की व्यवस्था श्रम द्वारा करे तो उसमें स्वतः ही एक ऐसा अपरिग्रह आयेगा, जो समाज में रहते हुए भी वांछनीय होगा।

अपरिग्रह के लिए संसार छोड़ कर संन्यास लेने की जरूरत नहीं है। अगर व्यवहार में अहिंसा लाना है तो उसका मतलब यह है कि लोग शरीरश्रम करके अपना जीवन बीतायें। गांधीजी ने स्वयं अपने जीवन में इस सिद्धान्त का अमल किया और अपने साथियों को इस ओर मुड़ने के लिए प्रेरित किया। इस तरह यह पुस्तक जीवन में जो सत्य और अहिंसा लाना चाहते हैं, उनके लिए विशेष उपयोगी है।

भारतीय विद्यार्थियों को संदेश

ले० गांधीजी, पृष्ठ ७२,

मूल्य ५० नये पैसे।

गांधीजी के शिक्षा विषयक विचारों से सब लोग परिचित हैं ही। नये समाज की रचना के लिए उन्होंने नयी तालीम की कल्पना दी, किन्तु प्रस्तुत पुस्तक उस विषय पर नहीं है। आज जो प्रचलित शिक्षा-प्रणाली भारत में है, उसकी कुछ समस्याओं पर गांधीजी ने समय-समय पर विद्यार्थियों के प्रश्नों के जवाब में, पत्रों के उत्तर में एवं अपने लेखों में जो विचार प्रकट किये हैं, उसका यह एक संक्षिप्त संकलन है। हमें लगता है कि यह पुस्तक भारत के सभी विद्यार्थियों के पास पहुँचनी चाहिए, ताकि जिस प्रकार की शिक्षा उनको मिल रही है। उसकी बुराइयों से निकल कर वे अपने सहज धर्म को समझ सकें।

शान्तिनिकेतन की यात्रा

ले० प्यारेलाल, पृष्ठ ३२

मूल्य ३५ नये पैसे।

गुरुदेव और गांधीजी का संबंध, जैसा कि इस पुस्तिका के लेखक श्री प्यारेलाल जी ने कहा है कि "गुरुदेव और गांधीजी भारत की आत्मा के दो रूपों का प्रतिनिधित्व करते थे—एक रूप सौंदर्य से संबंध रखता है, दूसरा तपस्या से दोनों में से कोई एक-दूसरे से अलग नहीं है।" गुरुदेव के देहान्त के बाद बापू उनके आश्रम में गये। उसका एक संस्मरणात्मक वर्णन इस पुस्तिका में है। गुरुदेव के शांति निकेतन के साथियों ने गांधीजी से शांति निकेतन के बारे में मार्गदर्शन चाहा। गांधीजी ने सामूहिक रूप से और अलग-अलग कार्यकर्ताओं से जो चर्चा की, उसका सार भी इस पुस्तक में आ जाता है। गांधीजी ने कहा कि गुरुदेव का सच्चा स्मारक यह होगा कि जिन आदर्शों की वे प्राप्ति करना चाहते थे, अब सब शान्ति निकेतनवासियों और कार्यकर्ताओं का—और असल में तो गुरुदेव की भावनाओं से भरे हुए सभी लोगों का—विशेष कर्तव्य है कि वे सामूहिक रूप में उनके आदर्श का प्रतिनिधित्व करें। गुरुदेव-जन्मशताब्दी के अवसर पर यह पुस्तिका गुरुदेव और गांधीजी के संबंधों पर अच्छा प्रकाश डालती है।

—मधुराम्य

इन सर्च आफ दी सुप्रीम :

लेखक—मो० क० गांधी, संपादन-कर्ता व्ही० बी० खेर, पृष्ठ ३४७, मूल्य ५ रु०

उस परमतत्त्व की खोज में गांधीजी ने अपना सारा जीवन अर्पित कर दिया। इस सम्बन्ध में गांधीजी के अमूल्य विचारों का यह अंग्रेजी संकलन अनूठा है। यह पुस्तक ४ खण्डों में विभाजित है। पहले खण्ड में मूल व्रतों पर—सत्य, अहिंसा, अभय, ब्रह्मचर्य, अस्वाद, अस्तेय, अपरिग्रह, श्रम और नम्रता पर गांधीजी के विचार हैं। दूसरे खण्ड में गांधीजी की धर्म साधना है जिसमें धर्म, ब्रह्मचर्य, आत्म-विश्लेषण, त्याग, तपस्या, आश्रम जीवन आदि की चर्चा है। तीसरे खण्ड में व्यक्तिगत बातें हैं—जैसे मैं महात्मा नहीं हूँ, मेरी लंगोटी, सिनेमा और मैं, संगीत का प्रभाव, मेरा उदर, मेरा दावा, मेरी मूर्ति आदि। चौथे खण्ड में राजनीति और धर्म के सम्बन्ध में गांधीजी के विचार हैं।

गांधीजी के विचारों का कण-कण प्रेरक होता है। एक उदाहरण लीजिये :

एक मिशनरी पूछता है, "लोग कहते हैं कि आपको कभी गुस्सा नहीं आता, क्या यह बात सही है?"

गांधीजी : "ऐसा नहीं है कि मुझे गुस्सा नहीं आता। बात इतनी ही है कि मैं गुस्से को अपने पर हावी नहीं होने देता। मैं सहनशीलता की तरह अक्रोध के गुण का अभ्यास करता हूँ और प्रायः उसमें मुझे सफलता मिलती है। पर क्रोध जब आता है तभी मैं उस पर काबू पाता हूँ। उस पर मैं कैसे काबू पाता हूँ, यह पूछना व्यर्थ है, क्योंकि यह तो आदत की बात है। हर आदमी को ऐसी आदत डालनी चाहिए और निरन्तर अभ्यास से उसमें सफलता प्राप्त करनी चाहिए।"

गांधीजी के ऐसे अनूठे विचारों की यह पोथी अंग्रेजी जानने वाले प्रत्येक व्यक्ति को अवश्य पढ़नी चाहिए।

सरल योगासन विधि

लेखक—श्री केदारनाथ गुप्त, प्रकाशक—छात्र हितकारी पुस्तकमाला, दारागंज, प्रयाग। पृष्ठ-संख्या १७५, मूल्य २ रु० ५० नये पैसे

यह बात तो सभी स्वीकार करते हैं कि स्वस्थ रहने के लिए व्यायाम अनिवार्य है। यों तो सभी प्रकार के व्यायाम शरीर को कुछ-न-कुछ लाभ पहुँचाते हैं, बशर्ते कि उन्हें ठीक ढंग से किया जाय, पर आसनों का व्यायाम अत्यन्त प्राकृतिक है। उनसे नाना प्रकार के रोग भी दूर होते हैं, शरीर तो स्वस्थ होता ही है।

प्रस्तुत पुस्तक में सर्वांगासन से लेकर शिवासन तक १८ आसनों का विशेष रूप से सचित्र वर्णन किया गया है। लेखक ने स्वयं अनुभव करके अपने दिल, दिमाग और आँखों को आसनों के द्वारा लाभ पहुँचाया है।

हम समझते हैं कि सभी लोग इस पुस्तक से भरपूर लाभ उठायेंगे। विद्यार्थियों को तो इससे लाभ उठाना ही चाहिए। आसनों के सम्बन्ध में आवश्यक हिदायतें, आहार, प्राणायाम, उपवास आदि की जानकारी दे देने से पुस्तक की उपयोगिता और भी बढ़ गयी है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

असमिया परिचय

ले : विधुभूषण दासगुप्त

प्रकाशक : समन्वय भारती, दासगुप्त प्रकाशन, ३ रामनाथ मजूमदार स्ट्रीट कलकत्ता ९। पृष्ठ ११८

मूल्य १ रु० ७५ न० पै०

भारतवर्ष बहुभाषा-भाषी प्रदेश है। भाषायें राष्ट्र-समृद्धि का प्रतीक हैं। लेकिन जब हम एक-दूसरे के विचार नहीं जानते हैं, तो उससे गलतफहमी या मनमुटाव होना भी संभव है। आज राष्ट्र के सामने भाषा की समस्या एक प्रमुख समस्या बन गयी है। इसलिए आवश्यक है कि राष्ट्र की भावात्मक एकता के लिए भारत का नागरिक एक से अधिक भाषायें सीखें। श्री विधुभूषण दासगुप्त इस दिशा में पिछले कई दिनों से प्रयत्न करते आ रहे हैं। इस बार उन्होंने हिन्दी भाषा-भाषियों के लिए असमिया सीखने की दृष्टि से यह पुस्तक लिखी है। उनका मानना है कि इस पुस्तक से पाठक असमिया का पूर्ण परिचय प्राप्त नहीं करेंगे; यह तो केवल प्रेम-परिचय के लिए है, ज्ञान-परिचय के लिए और भी गहन अध्ययन आवश्यक है। किन्तु उनकी राय में आज की स्थिति में प्रेम-परिचय भी आवश्यक है और इसके लिए लेखक प्रकाशक इस प्रयत्न के लिए साधुवाद के पात्र हैं।

'नया जीवन' मासिक

सं०-प्र० कन्हैया लाल मिश्र 'प्रभाकर' विकास लि० सहारनपुर (उ० प्र०)

वार्षिक मूल्य पाँच रुपये।

सन् १९४० से प्रकाशित 'नया जीवन' सन् १९६२ के प्रथम अंक में पुनः नया जीवन प्राप्त कर रहा है। श्री प्रभाकरजी के संपादन में 'नया जीवन' का जीवन और समाज के प्रति स्वस्थ और स्वस्थ चिंतन पर जोर देना रहा है। आत्मचिंतन, राष्ट्रचिंतन और विचार और कला के क्षेत्र में एक स्वस्थ दृष्टिकोण से समस्यायें पेश करने का प्रयत्न भी रहा है। आशा है, विचारशील पाठक 'नया जीवन' से लाभ उठायेंगे।

—मधुराम्य

घाद भी यह तैयारी। पद्धति, परिस्थिति पर भी अपना प्रभाव डालती है, इसका अच्छा अनुभव हमें हुआ।

३२० गाँवों ने अपने-अपने ग्राम-प्रतिनिधि चुने। फिर ३०५ गाँवों के ग्राम-प्रतिनिधियों ने एकसाथ मिल कर, अपने में से दो प्रतिनिधि चुने।

लोकशाही जिन पर आधारित है, उन प्रतिनिधियों की पक्ष-रहित विकेन्द्रीकरण से हो तो बाद में केन्द्रीय सत्ता का विकेन्द्रीकरण करने की कम से कम आवश्यकता रहेगी, यह तथ्य जितनी जल्दी सब लोग समझेंगे उतनी जल्दी लोकस्वराज्य हासिल होगा। लोकशाही को लोकाधार मिलेगा, लोगों को राज्य के कारोबार में हिस्सा लेने का उत्साह होगा। फिर जो योजनाएँ बनेंगी, उनको लोग अपनी मानेंगे और उत्साह से उसे पूरा करेंगे।

नये प्रयोग की पहली मंजिल पर हम पहुँचे हैं। अभी बहुत अनुभव आयेंगे। मैं और मेरे भाई सावधानी और सतर्कता से इस प्रयोग को सफल बनाने में लगे हैं।

पंजाब में आम चुनावों की आचार-संहिता

यह आचार-संहिता पंजाब के विभिन्न राजनैतिक दलों द्वारा जालन्धर के सर्वदलीय सम्मेलन में ५ जनवरी को स्वीकृत की गयी।

"चुनाव के अवसर पर अनुचित आचरण, अनावश्यक तनाव तथा विषम वातावरण को रोकने के लिए हम निम्नलिखित आचार-संहिता के पालन करने की स्वीकृति देते हैं तथा हमारा यह भरसक प्रयत्न रहेगा कि हम इसका पालन ऊँचे आदर्शों और भावनाओं को सामने रखते हुए ठीक प्रकार से करेंगे :

(१) हम आपस में एक-दूसरे पर असत्य आरोप और जवाबी आरोप नहीं लगायेंगे।

(२) हम व्यक्तिगत आरोप, व्यक्तिगत प्रशंसा तथा परनिन्दा आदि के स्थान पर केवल अपने दल के चुनाव-घोषणा-पत्र या उसकी पालिसी के उज्ज्वल पक्ष को पेश करेंगे।

(३) हम चुनाव-प्रचार के लिए कम उम्र के बच्चों और विद्यार्थियों का संगठन नहीं करेंगे, जिससे उनकी पढ़ाई तथा बुद्धि पर बुरा असर पड़े।

(४) हम जात-पाँत, भाषा या साम्प्रदायिक भावनाओं को उभार कर कटुता और आपसी घृणा का वातावरण पैदा नहीं करेंगे।

(५) हम अपेक्षा करते हैं कि प्रत्येक नागरिक पूरी आजादी के साथ, स्वतंत्र बुद्धि से तथा अपनी आत्मा के आदेश के अनुसार अपने वोट का प्रयोग करेगा।

(६) हम चुनाव में किसी भी प्रकार की हिंसा जैसे सभाओं तथा जलूसों में रुकावट डालना, उनको भंग करना आदि की सम्मति नहीं देते हैं।

(७) हम किसी भी प्रकार की राज-नैतिक शक्ति का उपयोग अपनी पार्टी के हित तथा विरोधी पार्टी के नुकसान के लिये नहीं करेंगे।

(८) हम किसी भी प्रकार के अवै-धानिक तथा अनैतिक तरीकों का जैसे बोगस वोट डालना, रिश्वत तथा शराब पेश करना आदि का प्रयोग नहीं करेंगे।

(९) जहाँ कहीं चुनाव प्रचार के सम्मिलित मंच बन सकें, हम उनका स्वागत करेंगे।" ●

चुनावों के वक्त शासन से अपेक्षा

पंजाब सर्वोदय मण्डल द्वारा जालन्धर में बुलाये गये ५ जनवरी '६२ के सर्व-दलीय सम्मेलन में एक आचार-संहिता पारित की गयी थी। उस आचार-संहिता की धारा नं० ७ के अनुसार शासन से निम्नलिखित अपेक्षाएँ की गयी थीं।

(१) चुनाव-काल में मंत्रीगणों को विकास तथा स्वैच्छिक कोषों की मदों से किसी भी व्यक्ति या संस्था को आर्थिक सहायता नहीं देनी चाहिए।

(२) जनसम्पर्क विभाग चुनाव काल में मंत्री तथा कॉंग्रेस के नेताओं की सभाओं का प्रबन्ध न करे तथा किसी भी प्रकार की ऐसी पुस्तिकाओं का प्रकाशन न करे, जिनसे सत्तारूढ़ पार्टी की सफलताओं का दिग्दर्शन हो।

(३) चुनाव-काल में राजकीय कर्मचारियों की विशेष परिस्थितियों को छोड़ बदली न की जाय।

(४) चुनाव के लिए लाउडस्पीकरों के प्रयोग पर प्रतिबंध हटा दिया जाय तथा उन पर जो 'स्टाम्प ड्यूटी' लगती है, उसे भी हटा दिया जाय। रेकार्डों के बजाने पर पाबन्दी लगायी जा सकती है।

अमरीका से आये हुए ...

[पृष्ठ ३ का शेष]

तरह रिटक्स्टर का नाम खारिज कर दिया और उसे शांति-दल में नहीं लिया गया।

यह बात बहुत तकलीफ देने वाली है। रिटक्स्टर को न लेना बताता है कि यह शांति-दल शस्त्री और फौजी कार्रवाई का अनुगामी है। तब इस तरह से शांति का कार्य कैसे कर सकेगा? इस वास्ते हमें लगता है कि ईमानदारी का तकाजा है कि इस दल को "शिक्षक दल" या ऐसा ही कुछ दूसरा नाम देना ज्यादा मुनासिब होगा।

अमरीका से आने वाले मित्रों के सामने काम बड़ा नाजुक है। अगर वे सचमुच शांति की राह पकड़ते हैं और भारत की जनता को समझ जाते हैं, तब तो वे शक्ति और कर्मठता के ऐसे शानदार सोते खुद ही खोद निकालेंगे कि देखते देखते काम बनता जायेगा। तभी वे अपने मिशन को भलीभाँति पूरा कर सकेंगे और हिन्दुस्तान की मीठी याद उन्हें सदा सुखी और सन्तुष्ट रखेगी।

—सुरेश राम

ग्वालियर में आचार-संहिता

ग्वालियर में १५ जनवरी को सर्वोदय-मंडल ग्वालियर द्वारा राजनीतिक दलों की आचार-संहिता के लिए बैठक हुई। नगर कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी के नेताओं ने सर्वोदय-मंडल द्वारा प्रस्तुत आचार-संहिता में [illegible] किया। अष्टसूत्रीय आचार-संहिता मान्य की। १६ जनवरी को प्रजा-समाजवादी दल के मंत्री ने भी इस पर अपनी स्वीकृति दी।

उत्तराखंड में शराबबंदी

पौड़ी, गढ़वाल में शराबबन्दी के लिए भी भूमिहीन प्रचार कर रहे हैं। हाल ही में टिहरी-गढ़वाल के जिला अंतरिम परिषद् ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव द्वारा राज्य सरकार से टिहरी गढ़वाल में शराब की नयी दुकानें न खोलने और पुरानी दुकानों को बन्द कर देने की माँग की है। उधर आबकारी विभाग ने चम्बा में विदेशी शराब की एक दुकान खोलने की योजना बनायी है। संभवतः १ अप्रैल '६२ से यह दुकान चालू हो।

उत्तराखण्ड के धार्मिक महत्त्व के अलावा यहाँ पर शराबबन्दी का एक और पहलू भी है। आपने सुना होगा कि पिछली गर्मियों में बद्री-केदार यात्रा मार्ग पर चार भयंकर मोटर दुर्घटनाएँ हुईं, जिनमें लगभग १०० जानें गयीं। दुर्घटनाओं के अन्य कारणों के अलावा चालकों द्वारा शराब पीना भी एक कारण है। शराब की ये दुकानें मोटर मार्गों पर खुली हुई हैं। बद्री-केदार और गंगोत्री-यमुनोत्री की मोटरें ऋषिकेश और कोटद्वार से रवाना होती हैं। इन दोनों स्थानों (कोटद्वार और ऋषिकेश के पास डालवाला) में शराब की दुकानें हैं। फिर रास्ते में ठीक मोटर के पड़ावों के पास ही शराब की दुकानें हैं। इस प्रकार पियक्कड़ों के लिए जगह जगह पर पीने के लिए खुला न्योता है। इस पहलू पर भी हम जोर दे रहे हैं।

शराब की नयी दुकानें खोलने के लिए सरकार की दलील यह है कि यहाँ पर कच्ची शराब का व्यापक प्रचार है। उधर कच्ची शराबवालों का कहना है कि पहले सरकारी दुकान बन्द हो। हम लोग दोनों के विरुद्ध लोकमत तैयार करने की कोशिश कर रहे हैं।

—सुन्दरलाल बहुगुणा

सर्व सेवा संघ का अधिवेशन

अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति की बैठक ता० १०-११ जनवरी को लखीमपुर, जिला नार्थ लखीमपुर, असम में विनोबाजी की उपस्थिति में हुई। प्रबंध समिति में निर्णय हुआ कि सर्व सेवा संघ का अधिवेशन ३-४-५ अप्रैल को बिहार में होगा।

कार्यकर्ता-गोष्ठियाँ

जिला सर्वोदय-मंडल मुंगेर के तत्वावधान में ८ जनवरी से १४ जनवरी तक सर्वोदय-कार्यकर्ता एवं सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियों की सात गोष्ठियाँ क्रमशः मुंगेर, विवकुंड, लखीसराय, बेगुसराय, गोगरी, कन्हैया चक तथा असरगंज में आयोजित की गयी, जिनमें सर्वश्री रामनारायण सिंह, संयोजक बिहार सर्वोदय-मंडल, भवानीसिंह एवं निर्मल कुमार सिंह ने खादी के नये मोड़, विकेन्द्रीकरण आदि पर प्रकाश डाला। श्री रामनारायण सिंह ने आगामी आम चुनाव के लिए बिहार के राजनीतिक दल द्वारा स्वीकृत ग्यारह सूत्री कार्यक्रम पर भी विस्तृत रूप से प्रकाश डाला। उपर्युक्त सात गोष्ठियों में लगभग चार सौ खादी एवं अन्य रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता शामिल हुए।

श्रम-यज्ञ संपन्न

पश्चिम निमाड-गांधी स्मारक निधि में ग्राम-सेवा केन्द्र, बबलाई की ओर से मोगावाँ में गत २९ से ३१ दिसंबर तक श्रम-यज्ञ, शिविर के रूप में आयोजित किया गया। आसपास के चार गाँवों के ६० किसान युवकों ने इसमें भाग लिया। श्रमदान द्वारा डेढ़ फर्लांग का ग्रामपथ और एक सार्वजनिक घाट बनाया। शिविर का उद्घाटन श्री वि० स० खोडेजी ने किया। श्रमदान के अलावा ५ चर्चा-सभाएँ और २ आम सभाएँ भी की गयी। इस अवसर पर एक भाई ने ६ एकड़ का भूदान भी दिया।

—चम्पारण जिले के बेरोज ताडगुड उत्पादक सहयोग समिति की ओर से २३ दिसम्बर को 'ताडगुड दिवस' मनाया गया।

श्री अप्पासाहब की पदयात्रा

श्री अप्पासाहब पटवर्धन की पदयात्रा नागपुर जिले में ८ दिसम्बर से ३० दिसंबर तक हुई। अपने भाषणों में श्री अप्पासाहब ने 'सामाजिक व आर्थिक समता' इस विषय पर विचार रखे। २१६ रुपयों की साहित्य बिक्री हुई। 'ऐसा होना चाहिए'—इस शीर्षक के २४० पत्रक बेचे गये और २३ रुपयों की निधि प्राप्त हुई। इस पदयात्रा से लोगों में सर्वोदय-विचार के बारे में नवचैतन्य निर्माण हुआ, ऐसा मालूम होता है।

श्री एस० जगन्नाथन् का कार्यक्रम

तमिलनाड सर्वोदय-मंडल के सेक्रेटरी श्री एस० जगन्नाथनजी अ० भा० सर्व सेवा संघ की ओर से विश्वशांति-सेना परिषद में भाग लेने गये थे। वे लौटते वक्त ४ जनवरी से ५ फरवरी तक इजराइल में, १ मार्च से १ अप्रैल तक युगोस्लाविया में और २८ अप्रैल से १ जुलाई तक रूस में रहेंगे।

महाकोशल क्षेत्र में २४४ एकड़ भूमि वितरित

म० प्र० भूदान-यज्ञ मंडल, महाकोशल शाखा, नरसिंहपुर के कार्यालय मंत्री श्री गणेशप्रसाद नायक द्वारा प्रदत्त जानकारी के अनुसार माह दिसम्बर ६१ में भूदान में प्राप्त जमीन में से २४४-०६ एकड़ भूमि भूमिहीन कृषकों में वितरित की गयी। वितरण काल में १७-४८ एकड़ नया भूदान भी मिला।

एक अन्य जानकारी के अनुसार अब तक महाकोशल क्षेत्र में प्राप्त १,१०,७१८-९४ एकड़ भूदान में से ६५,७११-८३ एकड़ जमीन भूमिहीन परिवारों में वितरित की जा चुकी है; जबकि १,२२६-८६ एकड़ भूमि वितरण के अयोग्य तथा ११,३०८-९९ एकड़ जमीन किन्हीं कारणोंवश शासन द्वारा निरस्त कर दी गयी। अब कुल ३३,२२९-७६ एकड़ भूमि वितरण करना शेष है।

३० जनवरी से शांति-सेना विद्यालय, इंदौर का तृतीय सत्र आरंभ होगा

३० जनवरी '६२, बापू-पुण्य-तिथि से अ० भा० कस्तूरबा महिला शांति-सेना विद्यालय का तृतीय सत्र इंदौर से ६ मील दूर 'कस्तूरबाग्राम' में प्रारम्भ होगा। प्रशिक्षण के लिए कस्तूरबा ट्रस्ट, गांधी स्मारक निधि एवं प्रांतीय सर्वोदय-मंडलों की ओर से लोकसेवा में लगी विभिन्न प्रान्तों की बहनें आ रही हैं। इनके अतिरिक्त शांति-सेना का प्रशिक्षण प्राप्त करने की इच्छुक बहनों को संचालिका, कस्तूरबा शांति-सेना विद्यालय, पो० कस्तूरबाग्राम (इंदौर) से संपर्क स्थापित करना चाहिए।

ईरान में क्रांतिकारी भूमि-सुधार कानून

तेहरान, ११ जनवरी: ईरानी सरकार ने परसों रात मन्त्रिमण्डल की एक विशेष बैठक में क्रान्तिकारी भूमि-सुधार कानून स्वीकृत कर शाह के पास हस्ताक्षर के के लिए भेज दिया है। इस कानून के अनुसार पाँच से अधिक गाँवों के भूमि-स्वामियों को अपने तालुके सरकार को सौंप देने होंगे, जिन्हें सरकार समुचित मुआवजा देगी और सरकार उक्त जमीन भूमिहीन किसानों को लम्बी अवधि की किस्तों के आधार पर बेच देगी। कृषिमंत्री श्री हसन अरसनजानी ने बतलाया यह कानून पहले ऐसे प्रायः १० हजार गाँवों पर लागू होगा, जो ऐसे भूमि-स्वामियों के हाथों में हैं, जिनके पास पाँच से अधिक गाँव हैं। इसके बाद यह कानून उन भू-स्वामियों पर लागू होगा, जिनके पास पाँच से कम गाँव हैं। पता चला है कि शाह ने प्रधानमंत्री डा० अली अमीन को गत नवम्बर में ही, संसद की बैठक के अभाव में ही, ऐसा कानून बनाने का अधिकार दिया था। —रायटर

हजारीबाग जिले में भूमि-वितरण

हजारीबाग जिले के देवरी थाने में भूदान-यज्ञ में प्राप्त भूमि के सर्वेक्षण और बँटवारे का काम बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी, पटना से संचालित भूमि का वितरण हजारीबाग के टोली नं० १ द्वारा सितम्बर ६० से हो रहा है। माह नवम्बर ६१ तक इस थाने के ८७ ग्रामों में कुल २७ दाताओं द्वारा प्राप्त ५२६६ एकड़ १२ डि० भूमि का सर्वेक्षण हुआ, जिसमें से २६४५ एकड़ ७५ डि० भूमि बाँटने योग्य निकली। इसका बँटवारा कुल १३४३ भूमिपुत्रों के बीच हुआ। अब इस थाने का काम समाप्त हो रहा है। देवरी अंचल के हल्का नं० १० में सर्वेक्षण एवं भू-वितरण का काम हुआ।

नवम्बर '६१ तक कुल वितरित भूमि के १३४३ भूमिपुत्रों (आदाताओं) में से ८०६ को प्रमाण-पत्र (पट्टे) दिये जा चुके हैं। शेष ५३७ एवं दिसम्बर ६१ में हुए वितरण के भूमिपुत्रों को बाद में प्रमाणपत्र दे दिया जायगा।

जोरहाट सर्वोदय-मंडल की बैठक

जोरहाट सर्वोदय-मण्डल की एक विशेष बैठक ८ जनवरी को श्री नीलमणि फूकन की अध्यक्षता में हुई। निर्णय लिया गया कि ३० जनवरी तक विभिन्न ग्रामदानी गाँवों में विचार-प्रचार किया जाय और बाद में लोकसेवक बनाना, प्रत्येक सर्वोदय-मंडलों का गठन करना, ग्रामदानी गाँवों का सर्वे करना, वहाँ ग्रामसभाएँ बनाना, इसके अलावा सर्वोदय-पात्र, सूत्रांजलि, साहित्य-प्रचार आदि के कार्यक्रम पर जोर दिया जायगा। ३० जनवरी को 'कृष्णनगर समाज उन्नयन केन्द्र' में कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन होगा। बैठक में मण्डल के कार्यालय, ग्रामनिर्माण कार्यकर्ताओं का योगक्षेम, प्रशिक्षण युवक-संगठन आदि के बारे में भी चर्चा हुई। श्री रविकान्त संदिकै के साथ श्री हरि दास देवशर्मा को सहसंयोजक नियुक्त किया गया।

सेवाग्राम में अंतर्राष्ट्रीय श्रम-शिविर

सेवाग्राम (वर्धा) में १९ जनवरी से ९ फरवरी तक सर्व सेवा संघ, सेवाग्राम तथा स्थानीय मजदूर सहकारी समिति की तरफ से एक अंतर्राष्ट्रीय 'श्रम शिविर' लेने का आयोजन किया गया है। इस श्रम शिविर में कनाडा आदि के करीब १० विदेशी युवक और अलग-अलग प्रान्त में से १० भारतीय, इस तरह अंदाजन २० शिविरार्थी रहेंगे। यह शिविर तीन हफ्ते तक चलेगा और इस अवधि में सेवाग्रामवासियों के लिए पीने के पानी की टंकी का काम पूरा किया जायगा।

भूल-सुधार :

"भूदान-यज्ञ" के ता० ५ जनवरी '६२ के अंक में पृष्ठ ८ पर प्रकाशित 'दुहरी कसौटी के बीच' लेख में चौथे कॉलम में "सिद्धान्ततः बोट 'न' दिया जाय, ऐसा संभवतः किन्हीं ने संभवतः नहीं माना है", इस वाक्य में से 'न' छूट गया है, जो कृपया पाठक दुरुस्त कर लें।

विनोबाजी का पता :

मारफत-मौजादार
पो० ढकुआखाना
जिला : नार्थ लखीमपुर (आसाम)

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९००० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९०५०
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २ फरवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक १८

बुनियादी तालीम में जनता की रुचि

• विनोबा

[पिछले दिनों असम के शिवसागर जिले के टीटाबर पड़ाव पर बेसिक ट्रेनिंग कालेज के छात्रों के बीच विनोबाजी के प्रवचन के बाद जो प्रश्नोत्तर हुए थे, उनमें से कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर यहाँ दिये जा रहे हैं। —सं०]

प्रश्न : बुनियादी तालीम में जनता की अरुचि दीखती है, तो क्या किया जाय ?

उत्तर : अरुचि क्यों है, यह देखना चाहिए। अरुचि तो इसलिए है कि आज जनता के सामने असल चीज नहीं है—जिसे 'बुनियादी तालीम' कहते हैं, वह सही अर्थ में नहीं है। अगर होती तो जनता को अरुचि नहीं होती। बुनियादी तालीम में ज्ञान और कर्म एक होना है। हमारी सर्वश्रेष्ठ किताब है, गीता और हमारे सर्वश्रेष्ठ पुरुष हैं भगवान् कृष्ण। दोनों में यह मिसाल है। भगवान कृष्ण एक हाथ घोड़े पर रखते हैं और दूसरी बाजू से अर्जुन को उपदेश देते हैं। यह है बुनियादी तालीम। केवल तकली चलाने से बुनियादी तालीम नहीं होती है। जब दिमाग को भी काम मिलेगा और हाथ को भी काम मिलेगा, तब बुनियादी तालीम होगी। बेंच पर बैठो और ज्ञान हासिल करो, इतने से काम पूरा नहीं होता है।

हमारी यात्रा में हम देखते हैं कि विद्यार्थी आते हैं, तो वे सवाल पूछना चाहते हैं। बाबा कहता है, रास्ते में आना, हम तीन चार घंटे चर्चा करेंगे। विद्यार्थी हाँ तो कहते हैं, लेकिन नहीं आते हैं! ठंड में तीन बजे कौन निकलेंगे! कैसे चलेंगे! वे न ठंड में उठ सकते हैं, न चल सकते हैं, पर सवाल पूछते हैं चीन और हिन्दुस्तान की सीमा का! वहाँ तो ठंड ही ठंड है। जो ठंड में उठ नहीं सकते हैं, वे चीन का मुकाबला क्या करेंगे! ऐसी पुरुषार्थहीन विद्या, वीर्यहीन विद्या चली है।

ये लोग विद्यार्थियों की परीक्षा लेते हैं। लेकिन बाबा कहता है, परीक्षा में क्या देखेंगे? क्या हम यह देखेंगे कि आपकी *छाती कैसी है, आरोग्य है या नहीं? क्या* आप घोड़े पर चढ़ सकते हैं या पेड़ पर चढ़ सकते हैं? आप ब्रह्मपुत्र पार कर सकते हैं? बाढ़ आती है तो तैरना जानते हैं? यह सब नहीं जानते हैं।

एक वकील किश्ती में बैठे थे। नाव चलाने वाला शिक्षित नहीं था। वकील ने पूछा, तुम गणित जानते हो? उसने कहा, नहीं जानता हूँ। वकील ने कहा, तब तो तुम्हारा चार आना जीवन खतम है। फिर पूछा, साहित्य जानते हो? उसने कहा, मैं यह शब्द भी नहीं जानता। तो उन्होंने कहा कि तुम्हारा आठ आना जीवन खतम हुआ! इतने में हवा आयी, नौका हिलने डुलने लगी। तब उस मल्लाह ने वकील साहब से पूछा—क्यों साहब, आप तैरना जानते हैं? वकील साहब ने कहा, नहीं जानते हैं। मल्लाह ने कहा—फिर तो आपका सोलह आने जीवन खतम है!

असम जैसे जलमय प्रदेश में रह कर भी तैरना नहीं जानते हैं, उसे 'पास' कैसे करेंगे? ऐसे पराक्रम के काम सिखाने चाहिये। उसके साथ-साथ ज्ञान देना चाहिये। गणित, नामघोषा, गीता, उपनिषद्, *राजनीतिशास्त्र, समाजवाद, साम्य*वाद, 'डिस्पेपरइज़्म'; यह सब जानता है, तब तो उसे 'पास' करेंगे? यहाँ तो तकली की बात चलायी, उसके साथ और कुछ नहीं! यह उपहासास्पद होता है। अगर असली चीज मिलेगी तो जनता को अरुचि नहीं होगी।

जयपुर में चित्रकला की प्रदर्शनी थी। उसमें एक सुन्दर केला बना कर रखा था, बिल्कुल पका हुआ, देखते ही खाने की इच्छा हो जाय ऐसा था। लेकिन वह गोबर का बनाया हुआ केला था! वह देखने की चीज थी। आज भारत में जो नयी तालीम चली है, वह है गोबर का केला; अगर सच्चा, सुन्दर केला हो तो क्या अरुचि होगी? हर कोई कहेगा वह हमें चाहिये। ज्ञानशून्य कर्म नयी तालीम नहीं है। कर्मशून्य ज्ञान और ज्ञानशून्य कर्म, ये दोनों नयी तालीम में नहीं होते हैं। इस वास्ते नयी तालीम में ज्ञान और कर्म, दोनों हों। भले ही उसकी शालाएँ स्कूलें न चलें, लेकिन अब सरकार समझ गयी है और 'बोर्ड' बनाने का सोच रही। अब नयी तालीम का 'बोर्ड' बनेगा, उसके बाद भारत में नयी तालीम का काम होगा।

मेरे पास लड़के और लड़कियाँ सीखी हैं। बचपन से आज तक मैं विद्यार्थी हूँ और शिक्षक भी हूँ। इस यात्रा में भी मेरा अध्ययन चला। इसी यात्रा में जापान के एक भिक्षु आये थे, उनसे मैंने जापानी सीखी। एक जर्मन बहन आयी थी, उससे जर्मन सीखी। पंजाब में युगोस्लाविया के भाई आये थे, उनसे 'एसपरेन्टो' सीखी। अब असम में असमिया सीख रहा हूँ, 'नामघोषा' और 'कीर्तनघोषा' का अध्ययन चल रहा है। अध्यापन भी चल रहा है। 'गीताई' याने मराठी गीता यहाँ की लड़कियों को सिखाता हूँ। मैं समझ ही नहीं सकता हूँ कि नयी तालीम में ज्ञान की कमी होती है। एक घंटा पूर्ण एकाग्रता से पढ़ना और पढ़ाना चाहिये। आज कल तो दिन भर खेलने और खाने में जाता है। लड़का स्कूल में भी जाता है, और रात में पढ़ता है तो नींद आती है। पन्ने इधर उधर पलटने से ज्ञान नहीं होता। रात में जल्दी सो जाना चाहिये। अभी गुजरात की हमारी एक लड़की (मीरा भट्ट) यहाँ आयी है। डेढ़ साल की बच्ची साथ में लेकर आयी है। वह सात बजे सोती है और बाबा उससे भी छोटा है, शाम को छह बजे ही सो जाता है। बाबा अद्वितीय है। रात में जल्दी सोता है और सुबह जल्दी उठता है। जल्दी उठने पर अध्ययन करने से दिमाग अच्छा चलता है। रात के घंटों तक के अध्ययन की अपेक्षा सुबह का एक घंटे का अध्ययन ज्यादा अच्छा और शुभदायी होता है। रात में पढ़ते हैं तो आँखें बिगड़ती हैं। शहर में इन दिनों रात में सिनेमा देखते हैं, *उससे आँखें बिगड़ती हैं। दिमाग भी* बिगड़ता है। निद्रा से बढ़कर सांस्कृतिक प्रोग्राम नहीं है। उससे दिमाग ताजा रहता है और जल्दी ग्रहण करता है। इसलिए नयी तालीम में ज्ञान के अध्ययन के लिये कम समय देना चाहिये। एकाग्र होकर थोड़ी देर पढ़ने से लाभ होता है।

पढ़ना एक गुना होना चाहिये, चिन्तन दुगुना होना चाहिये और आचरण चौगुना होना चाहिये। बहुत ज्यादा पढ़ते हैं तो भूलते भी हैं। इसलिए कम पढ़ें और चिन्तन ज्यादा करें। यह अवकाश नयी तालीम में बहुत है। उसमें ज्ञान पक्का होगा। काम के साथ जो ज्ञान दिया जाता है, वह भूला नहीं जाता। इसलिए नयी तालीम का दोष नहीं है। उसका ढंग गलत है, इसलिए जनता को उसमें अरुचि है।

अभेद की आवश्यकता

प्रश्न : हिंदुस्तान में भिन्न-भिन्न राजनैतिक पक्ष लोगों के दिमाग में 'कनफ्यूजन' पैदा करते हैं। भिन्न भिन्न धर्मवाले झगड़ते हैं। ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिए? दो में से किसका स्वीकार करना चाहिए और इन दोनों के बारे में आपकी राय क्या है?

उत्तर : हमको तो जोड़ने का काम करना चाहिये। किसी तरह के भेद में नहीं पड़ना चाहिये। आज देश में तरह-तरह के भेद हैं—मालिक-मजदूर के भेद हैं, जाति भेद है, धर्म-भेद है, भाषा-भेद है, पक्ष भेद हैं। इन सब भेदों को मिटाना चाहिये। आपने पूछा है कि हम किसका त्याग करें—'रिलीजन' का कि 'पालिटिक्स' का? थाली में रोटी के बदले किसी ने पहले पत्थर डाला और फिर ईंट डाली और फिर पूछा जाता है कि खाने के लिए क्या अच्छा है? पत्थर से ईंट तो नरम है, लेकिन खाने के लिए दोनों निकम्मे हैं। झगड़ने वाले तत्त्व निकम्मे हैं। उन सबको मिटाना है। मैं यह दो सालों से कहता आया हूँ कि भारत में राजनीति और धर्म इसके आगे नहीं चलेगा। इसके आगे 'साइंस'—विज्ञान—और अध्यात्म चलेगा। धर्मवाले झगड़े धर्म के साथ खतम होंगे। आज तो 'जोरशोर' में भी 'पालिटिक्स' का जोर होगा! वह जोर है आपस-आपस में झगड़ा करने का। उससे हिंदुस्तान का काम नहीं बनेगा। वास्तव में असल ताकत वह है, जिससे 'सीमेंटिंग' (जोड़ना) होता है। वह ताकत उनमें से किसी में भी नहीं है। इसलिए दोनों का उपयोग नहीं है। ऐसी युक्ति पानी होगी कि दोनों से छुटकारा मिले। आज तो उनका जोर है, लेकिन दीया

सर्वोदय-भावना और कार्यकर्ता का जीवन

रामश्रेष्ठ राय

बुजुर्गों का कहना है कि गाँवों में काम करने का हमारा ढंग शैक्षणिक होना चाहिए और नयी तालीम के माध्यम से जन-जागरण का काम प्रारंभ होना चाहिए। इसी प्रकार, गाँवों में काम करने के लिए कार्यकर्त्ता की दृष्टि ऐसी होनी चाहिए कि जनता कार्यकर्त्ता की दृष्टि की अपेक्षा करे और सृष्टि खुद करे। काम का यह तरीका मुझे भी जँचता है और इसी ढंग से पूसा क्षेत्र में कुछ काम किया भी जा रहा है। अक्सर मेरा अधिकतर ध्यान काम की ओर रहता है, पर उस पर विचार और आदर्श का नियन्त्रण रहे, इसका भी ख्याल रहता है। मैं कोई शिक्षक नहीं हूँ, शिक्षक के रूप में कभी काम किया नहीं है और शिक्षक का अनुभव मुझमें नहीं है। पर जो कुछ है वह अच्छे-अच्छे लोगों की संगति से और ग्रामीण वातावरण में प्रत्यक्ष कार्य करने का जो अवसर मिला, इससे प्राप्त हुआ है। यही कारण है कि मेरे जीवन में भी कुछ नया मोड़ आया है और कुछ नये ढंग से सोचने की शक्ति आयी है।

मैं समझता हूँ कि यह जो मेरा परिवर्तन है, वह भी नयी तालीम की ही फलश्रुति है और इसी पर से मेरी यह पक्की धारणा है कि समाज का भी परिवर्तन नयी तालीम की प्रक्रिया से संभव है। मूल विचार शुरू से एक ही है, पर कार्यक्रम और पद्धति अधिकाधिक विकास की प्रक्रिया ही रही है। इसके पीछे अभ्यास का बड़ा हाथ है। मैंने मान लिया है कि मनुष्य अभ्यास से बनता है और अभ्यास से ही बिगड़ता है। इसलिए मनुष्य जो कुछ भी काम स्वयं जीवित रहने के लिए करता है, उसमें भी इसी अभ्यास पर जोर देना चाहिए कि उसकी दृष्टि एक अच्छा समाज बनाने की रहे। यानी उसका जीवन स्वार्थमय न रह कर परमार्थिक होगा।

ग्राम-निर्माण के काम करते समय हमें अतीत के भारतवर्ष की ओर भी अपना ध्यान आकृष्ट करना चाहिए। पुराने जमाने का हमारा गाँव एक जमाने में पूर्ण एवं स्वावलम्बी गाँव था। दूसरे शब्द में गाँव को हम एक महान् संस्था कह सकते थे। जहाँ लोगों की सारी सुविधा उपलब्ध थी, जिससे सदैव ग्राम के मार्फत लोगों की दिनचर्या नियंत्रित रहती थी और लोग बनते थे।

समुन्नत, सभ्य एवं सुसंस्कृत जीवन के लिए जितने भी उपादान हैं—जैसे शिक्षा, संगीत, ललित कलाएँ, धर्मस्थली, गृह, मनोरंजन आदि वे सबके सब किसी-न-किसी उद्योग के स्रोत पर ही निर्भर करते हैं। और प्राचीन भारत में गाँवों में ये सब स्रोत उद्योग एवं उत्पादन थे। वे गाँवों के लिए ही थे और यही कारण था कि समस्त विश्व में भारतीय जीवन-दर्शन समुन्नत, सुसभ्य और सुसंस्कृत था। लेकिन अंग्रेजों ने इस संगठन को तोड़ दिया यानी गाँव से सारे उद्योगों को विनष्ट कर दिया। तरह-तरह के उपाय, उद्योग छिन गये। कृषि का विकृत रूप गाँवों में रह गया। इसके अलावा जीवन बनाने के लिए उपयुक्त जितनी सुविधाएँ गाँवों के लिए होती थीं, वे सब समाप्त हो गयीं। हाँ, कहीं-कहीं वे गाँवों में बचे हुए हैं, किन्तु वे गाँवों के लिए नहीं रह गये हैं। जैसे जैसे उद्योग हटते गये, लोग अनाड़ी बनते गये और परमुखापेक्षी हो गये। देखने में ऐसा लगता है कि जिसका उद्योग जितना पहले छीना गया वे समाज में उतने ही अधिक उपेक्षित और बेवकूफ हैं। गांधीजी ने कहा है कि जैसे-जैसे लोगों का उद्योग खतम होता गया वैसे-वैसे वे अनाड़ी हो गये। अनाड़ी होने से बेरोजगार हो गये। बेरोजगार होने से गरीब हो गये। फलस्वरूप संस्कारविहीन और बेवकूफ हो गये। इस तरह उनमें नीति-अनीति का विवेचन करने का विवेक ही ह्रास हो गया और उनके लिए आज जो कुछ भी लाचारी की संज्ञा दे सकें, सब ठीक समझा जा रहा है।

दूसरी तरफ जिनके पास कुछ जमीन-रूपी साधन रह गया, उन्होंने झूठी मर्यादा की रक्षा के लिए जमीन पर खुद काम करना छोड़ दिया, जिससे वे भी अनाड़ी हो गये और खेती की भी दुर्दशा हुई। वे भी उन लोगों से खेत में काम कराने लगे जो समाज में उपेक्षित, पराश्रयी और निराश हैं और उनकी जैसी-तैसी अकुशल कमाई पर जीवन व्यतीत हो गया। फलतः उन लोगों पर शासन करते करते उनका हृदय कठोर हो गया है। जो स्कूल कॉलेज में पढ़ते हैं वे किसी भी विषय के विद्वान बन बैठते हैं, बुद्धिमान नहीं हैं, क्योंकि जिस विषय को वे पढ़ते हैं, उसका अभ्यास उनके जीवन में नहीं होता है, जिससे उसका अनुभव नहीं प्राप्त होता है और अनुभव की प्राप्ति से ही आदमी बुद्धिमान बनता है। चाहे कृषि के विद्वान हों, पशुपालन के विद्वान् हों, किन्हीं को न तो कृषि से संबंध रहता है, न पशु से, न सत्य से। फलतः वे भी समाज में एक भारी अनाड़ी बन बैठे हैं। समाज में नारियों की हालत भी वही है। घर में दिनभर कलह करना, गलत ढंग से बच्चे पालना, खाना बनाना, यानी सही ढंग से वे भी कुछ करने के योग्य नहीं रह गयी हैं, न धनोपार्जन के योग्य, इसलिए वे भी अनाड़ी हैं। इस तरह बालू की भीत पर आज देश खड़ा है, यानी जो सबसे नीचे का आदमी है, जिसको समझ-बूझ नहीं है, वही जो गलत ढंग से थोड़ी मिहनत करता है, उसकी कमाई पर सारी सामाजिक इमारत हम खड़ी करना चाहते हैं, जो संभव नहीं है।

इसलिए मेरे दिल में यह भावना बराबर उठती रहती है कि इतनी बड़ी संख्या अनाड़ी लोगों की खड़ी हो गयी है, उनका यह अनाड़ीपन कैसे हटाया जाय और यह भी समझदारी के साथ, गाँवों में कैसे लोग अति आधुनिक ढंग से अपना कपड़ा खुद तैयार करने लग जायँ, समुन्नत खेती करने लग जायँ, यानी अपनी आवश्यकता की हर तरह की चीजें यथा साध्य गाँवों में लोग पैदा करने लग जायँ। यह सब तभी होगा, जब कारीगरी जगेगी। दूसरे शब्दों में, लोग को सब काम करने का मौका मिलेगा, तभी कारीगरी भी बनेगी। कारीगरी जगने पर लोग काम करने लग जायेंगे। सब दूसरे के ऊपर आश्रित रहने की भावना मिट जायगी और फिर संस्कार, सभ्यता, कला-संगीत सब पुनर्जीवित हो उठेंगी। जिस विपरीत परिस्थिति में हम क्रमशः बिगड़ते गये हैं, ठीक उसी प्रकार से अनुकूल परिस्थिति पैदा कर हम बनते जायेंगे। इस काम की प्रक्रिया में शिक्षा एवं सर्वोदय-विचार को जोड़ना होगा। इसीको 'समग्र विकास' कहते हैं। भले ही इसकी गति धीमी होगी, क्योंकि अच्छा बनने में पीढ़ी दर पीढ़ी इन्तजार करना होगा, तब हम बनेंगे।

मुझे ऐसा लगता है कि काम को शैक्षणिक बनाने के लिए, समाज में कुछ ऐसे काम हैं, जिसको हमें छोड़ना पड़ेगा। मनुष्य उसी काम को खुद अपने हाथ से करे, जिसमें उसका विकास हो एवं जिसमें कुछ शैक्षणिक प्रवृत्तियाँ विद्यमान हों। कुछ ऐसे काम जैसे अरकशिया का काम, रिक्शा चलाने का काम, भार ढोने का काम, आदि-आदि कामों को रोकना होगा। ये समुचित काम नहीं हैं और न इनसे मनुष्य बनता ही है, बल्कि ऐसे कामों से मनुष्य जानवर बनता है।

इस तरह व्यक्ति गाँव को जिन्दा रखने के लिए काम करने लग जायें इस समझदारी के साथ जब गाँव के प्रत्येक व्यक्ति काम करने लग जायेंगे, तो हमारी नयी तालीम सफल होगी और सभी व्यक्ति का संबंध एक दूसरे से जुड़ जायगा। एक-दूसरे से संबंध जुटने से ही प्रेम और भाई-चारा बढ़ेगा। इस तरह प्रेम बढ़ने से आपसी कलह, झगड़ा, वैमनस्य मिटेगा और सहयोगी जीवन की ओर हम अग्रसर होंगे। इस तरह गाँवों की मुकदमेबाजी वगैरह भी मिटेगी। ऐसा लग सकता है कि यह तो बहुत बड़ा विचार है। गाँवों में होगा कैसे! गाँव में गाँव के लोगों की जैसी क्षमता है, वैसा विचार है इस हिसाब से हर तरह से गाँव के बनने का काम विभिन्न उद्योगों के जरिये गाँव वालों का पुरुषार्थ जगाने के लिए चलाना चाहिए और अंग्रेजों की देन जो हम लोगों के दुम पर नाच रही है कि हमने यह किया, यह कहना छोड़ना होगा। यानी समाज को, मनुष्य को बनाना है, तो मनुष्य समाज को स्वयं खुद सब करना ही होगा ऐसी वृत्ति हमारी निकलनी चाहिए। जो कुछ भी थोड़ा-बहुत काम गाँवों में हो रहा है वह, मानना चाहिए कि गाँव वालों के द्वारा प्रारम्भ हो और इसीको तो विकेन्द्रीकरण कहते हैं। यानी जिस काम को हम जिनके लिए करना चाहते हैं, उस काम के करने की जिम्मेवारी हमें उसी समाज पर छोड़ना होगा। तभी तो व्यक्ति बनेगा और व्यक्ति बनेगा तो समाज बनेगा। खादी के काम को लीजिये, इस काम को भी गाँव वालों के मार्फत हर गाँव में शुरू कराना चाहिए। गाँव वाले इसको करेंगे, बिगाड़ेंगे तभी बनेगा बिना बिगाड़े कभी कोई बन सकता है क्या!

दूसरी बात यह है कि काम प्रारंभ करने में हम यह भूल करते हैं कि निस्संकोच हमें काम प्रारम्भ कर देना चाहिए। हमको यह जानना छोड़ देना

[शेष पृष्ठ ११ पर]

बुझने के पहले बड़ा होता है, वैसे 'पालिटिक्स' का जोर चल रहा है। उसका मरने का समय आ गया है। मुझे विश्वास है कि वह खत्म होगा। इसी विश्वास पर मैं घूम रहा हूँ।

पिछले 'इलेक्शन' के समय मैं तमिलनाड में घूम रहा था। उस वक्त मुझसे पूछा गया कि 'इलेक्शन' की तरफ आप ध्यान क्यों नहीं देते? उन दिनों मैं वेद का अध्ययन करता था। अध्ययन करते-करते कभी-कभी हाथ पर मक्खी बैठती थी। मैं उसे उड़ा देता था, याने उसकी परवाह नहीं करता था। भीम और बकासुर का युद्ध हुआ, यह कहानी आप जानते होंगे। भीम उस वक्त भात खा रहा था और बकासुर उसे गुद्दे मार रहा था। भीम ने पूरा भात खा लिया और फिर बकासुर को पटक दिया। यह मेरा कार्यक्रम है। मैं जानता हूँ कि ये मुझे गुद्दे मार रहे हैं। पर मैं भूदान और ग्रामदान का भात खा रहा हूँ। हजारों ग्रामदान हो जायेंगे, तब मैं उनको पूछूँगा कि क्यों है ताकत मेरे साथ लड़ने की?

पड़ाव : टीटाबर, जि. शिवसागर
ता० : ६ दिसम्बर '६१

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

महापुरुषों का आश्रय

लोगों का खयाल है की जो बड़े पुरुषों की छाया में रहते हैं, उनका वीकास यानी पूरा वीकास नहीं होता। इसकी मीसाल भी दी जाती है। कहा जाता है की बड़े पेड़ की छाया में जो छोटे पौधे होते हैं, उनका पोषण नहीं होता और वे बढ़ते नहीं। आखीर यह क्यों होता है, यह सोचने की जरूरत है। असलीयत होती है की बड़े पेड़ छोटे पौधों का सारा पोषण खा जाते हैं, जो पौधों के लीए जरूरी है। लेकीन, यह मीसाल महापुरुषों को लागू नहीं होती। महापुरुषों के लीए तो दूसरी मीसाल है। महापुरुषों के आश्रय में जो रहते हैं, वे वैसे ही होते हैं, जैसे गाय के कोठे में बछड़े। गाय अपने शरीर का दूध बछड़ों को दे देती है, जब की बड़ा पेड़ छोटे पौधों का पोषण खुद चूस लेता है। महात्मा गांधी के बारे में यही अनुभव उन सभी लोगों को आया, जीन्होंने उनका आश्रय लीया। उनके आश्रय में जो भी आये, वे अगर बुरे थे, तो भी अच्छे बने; जो अगर छोटे थे, वे बड़े बने। उन्होंने हजारों का महत्व बढ़ाया। अपने को वे सबसे छोटा समझते थे। हम अपना जीवन धन्य समझते हैं की हमें महात्मा गांधी के आश्रय का मौका मीला।

पोचमपल्ली, —वीनोबा
३०-१-'५६

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

बापू की पावन स्मृति में

आज से १४ वर्ष पहले की बात है। ३० जनवरी १९४८ को हमने अपने राष्ट्रपिता को खो दिया! अहिंसा और सत्य के शुद्ध और पवित्र साधनों के द्वारा जिस महापुरुष ने भारत को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराया, उसे हम असमय ही खो बैठे। आजादी की नींव को दृढ़ बनाने के लिए, राष्ट्र की एकता को पक्का करने के लिए जिस समय गांधी की सबसे ज्यादा जरूरत थी, उसी समय हमने अपने हाथों उसे इस पृथ्वी तल से उठा दिया! विश्व इतिहास की अत्यन्त दारुण और बेढब घटना है यह।

हम प्रति वर्ष ३० जनवरी से १२ फरवरी तक राष्ट्रपिता को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। किसी के प्रति श्रद्धा और आदर व्यक्त करने का सर्वोत्तम उपाय होता है, उसके सर्वप्रिय आदर्शों को आगे बढ़ाना। बापू अहिंसा और सत्य के पुजारी थे, सेवा और त्याग के प्रतीक थे, श्रमसाधना और सादगी के उपासक थे। उनकी स्मृति को जीवित रखने का एकमात्र उपाय यही हो सकता है कि हम उनके इन पवित्र आदर्शों को अपने जीवन का अंग बना लें।

बापू के निधन पर अन्य तीर्थों की भाँति सेवाग्राम से तीन मील पर विनोबा के आश्रम के पास धाम नदी में भी उनके फूलों का विसर्जन किया गया था। दूसरे वर्ष जब वहाँ सर्वोदय मेला भरा तो कुछ लोगों ने श्रद्धापूर्वक फल-फूल चढ़ाये और कुछ लोगों ने सूत की गुण्डियाँ। सूत की गुण्डियों का यह समर्पण विनोबा को बहुत रुचा और उन्होंने सोचा कि यह सूतांजलि बापू की स्मृति को जीवित रखने का सर्वोत्तम साधन हो सकती है।

गांधी की सबसे अधिक प्रिय वस्तु थी चरखा। एक बार उन्होंने कहा भी था कि 'मेरे पीछे आप मेरी सभी बातें भूल सकते हैं, पर इस बात को आप कभी न भूलेंगे कि गांधी ने हमें चरखा दिया।' चरखा प्रेम और अहिंसा, श्रम और सेवा का सर्वोत्तम प्रतीक है। इस चरखे पर काती हुई सूत की गुण्डी ही बापू के लिए सर्वोत्तम श्रद्धांजलि हो सकती है—ऐसा विनोबा को लगा और उन्होंने सारे देश से यह अपील की कि हर आदमी, छोटा हो या बड़ा, बूढ़ा हो या जवान, स्त्री हो या पुरुष, बापू की स्मृति में ६४० तार की एक गुण्डी अर्पण करे। उन्होंने कहा कि 'सूतांजलि प्रेम की निशानी है। सत्य के प्रति, सर्वोदय के प्रति, जनता के प्रति, श्रम के प्रति जिनके जी में प्रेम जगता है, वे सूत की एक गुण्डी अर्पण करें। जिन लोगों को सर्वोदय विचार से प्रेम है, जो सत्य और अहिंसा को मानते हैं, जो गांधीजी की कीर्ति चाहते हैं और उससे जिन्हें बल मिलता है, वे अपनी भावना के निदर्शन के तौर पर हर साल एक गुण्डी सूत अर्पण किया करें।'

बापू कहते थे कि कताई की उपासना राष्ट्रीय उपासना है। बच्चा भी कात सकता है, बूढ़ा भी, स्त्री भी कात सकती है, पुरुष भी। जवान भी कात सकते हैं, कमजोर भी। कताई ऐसा उत्पादक श्रम है, जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए साध्य है। एक छोटा बच्चा भी कात कर इस बात पर गर्व कर सकता है कि देश के लिए उसने कुछ किया। धार्मिक और पाथिक उपासनाएँ जहाँ भेद पैदा करती हैं, वहाँ कताई की उपासना अभेद पैदा करती है। विनोबा की माँग है कि राष्ट्र का प्रत्येक व्यक्ति अपने हाथ के कते सूत की एक गुण्डी बापू की स्मृति में अर्पण करे।

जो लोग सर्वोदय में, सत्य और अहिंसा में, श्रमनिष्ठा और सेवा में आस्था रखते हैं, उनका कर्तव्य है कि वे बापू की पुण्यतिथि पर सूतांजलि अर्पण करके राष्ट्रपिता के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धांजलि व्यक्त करें। सूतांजलि का समर्पण विनोबा के शब्दों में 'सर्वोदय का वोट' है। हम जिस शोषणहीन वर्गविहीन समाज की स्थापना के लिए कृतसंकल्प हैं, उसकी दिशा में समाज को ले जाने का यह एक उत्तम साधन है। अधिक-से-अधिक लोगों को सूतांजलि अर्पित करके बापू के प्रति अपनी श्रद्धा अर्पित करनी चाहिए। १९५० में जहाँ आठ हजार व्यक्तियों ने सूतांजलि अर्पित की थी, १९६० में वहाँ आठ लाख से अधिक व्यक्तियों ने सूतांजलि अर्पित की। पर भारत की ४० करोड़ जनता में ८ लाख की सूतांजलि का अर्थ ही क्या होता है? श्री कृष्णभाई ने इस बार कम से कम २५ लाख गुंडी अर्पित करने की अपील की है। बापू की पावन स्मृति में कम-से-कम इतना करना तो हमारा कर्तव्य है ही!

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

साम्प्रदायिकता की जड़ें कहाँ हैं?

ओम् प्रकाश गुप्त

गीता में भगवान कृष्ण कहते हैं, "सर्वधर्मान परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज, अहं त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।" यहाँ किन धर्मों को छोड़ने की बात भगवान कृष्ण कर रहे हैं? निश्चय ही देहजनित धर्मों को छोड़ने की सलाह गीता में दी गयी है। इन सब धर्मों को छोड़ कर भगवान की शरण में जाने से क्या मिलेगा? भगवान सब पापों से मुक्त कर देने का आश्वासन देते हैं!

देहजनित धर्म कौनसे हैं? देह के रक्षण-पोषण, हर्ष और विषाद का जिन कर्मों पर आधार रहता है, अथवा देह के रक्षण-पोषण तथा हर्ष-विषाद की दृष्टि से जिन कार्यों का करना आवश्यक होता है, वे सब मनुष्य के देहजनित धर्म होते हैं। गीताकार ने, इन धर्मों को छोड़ने पर सब पापों से मनुष्य बच सकता है, कह कर इन धर्मों के पालन में जो पाप होता है, उस पाप की ओर संकेत किया है। इस पाप से बचने का सीधा रास्ता तो यह था कि मनुष्य को कहा जाता कि वह इन कर्मों को करे ही नहीं। न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी, न वह ऐसे कर्म करेगा और न पाप होंगे। भगवान की शरण में आकर पाप मुक्ति का यह टेढ़ा रास्ता क्यों बताया गया?

हमें भूख लगती है, तो खाना खाते हैं, प्यास लगती है तो पानी पीते हैं, ठंड और गर्मी से बचने के लिए वैसे ही घर बनाते हैं। जिन्हें हम अपना कहते हैं, उनके रक्षण और पोषण में भी हमें आनन्द मिलता है। ये सब हुए देहजनित धर्म। ये सब प्रत्येक देह के साथ जुड़े हुए होते हैं। सभी देहधारियों को भूख लगती है और सभी देहधारी अपनी भूख मिटाने के लिए प्रयत्न करते हैं। जानवरों में भी एक हद तक अपने प्यारों की रक्षा और पोषण करने की वृत्ति होती है। एक गाय के बच्चे को आप उससे अलग करिये, वह उसे पसन्द नहीं करेगी। बन्दर तो प्रत्यक्ष प्रतिकार में मर मिटने को ही तैयार हो जाते हैं।

अब प्रश्न होता है कि यदि ये ही देहजनित धर्म हैं, तो क्या इन्हें छोड़ा जा सकता है? यदि नहीं छोड़ते हैं तो इनमें क्या पाप है? क्या भूख मिटाने के लिए आहार-प्राप्ति का जो धर्म है, उसे त्याग कर जीवन टिकाया जा सकता है? फिर जीवन टिकाने के लिए जो कर्म किये जाते हैं, उनमें पाप कैसा? और यदि यह पाप है तो भगवान की शरण में जाने से मुक्ति कैसे हो सकती है?

दरअसल भगवान की दी हुई इस देह का रक्षण और पोषण तो होना ही चाहिए। इस काम को छोड़ा नहीं जा सकता। इस काम को करने में जो पाप होते हैं, उनसे मुक्ति पाने का ही कोई रास्ता

[शेष पृष्ठ ११ पर]

सफल नेतृत्व के गुण

पर्ल बक

[पिछले लेखांक में श्री पर्ल बक ने बताया था कि सफल नेतृत्व के लिए प्रतिभा, कार्यकुशलता और सत्यनिष्ठा की आवश्यकता है। सत्यनिष्ठा से उनका क्या अभिप्राय है, इस अंक में पढ़िये। —सं०]

सत्य-निष्ठा से यहाँ अभिप्राय तिहरी वफादारी से है। उद्देश्य के प्रति वफादारी, जिन लोगों की सेवा करनी है उनके प्रति वफादारी और फिर वफादारी के साथ अपनी पूरी बुद्धि और शक्ति लगा कर काम करना। सत्य-निष्ठा की एक सरल और स्पष्ट मिसाल गांधीजी की इंग्लैंड-यात्रा है। वह भारत में सफल नेता बन चुके थे, किन्तु विदेशों में लोग भी उनके नेतृत्व को स्वीकार करेंगे, यह किसी को मालूम नहीं था। आपको स्मरण होगा कि किस प्रकार हाथकती-बुनी पोशाक और कड़ाके की सर्दी होते हुए भी ऊनी खादी की शाल लपेटे वह लन्दन पहुँचे थे। बकरी का दूध पीते और चटाई पर सोते थे। अनेक मोटे-मोटे लबादों से लदे हुए प्रतिष्ठित अंग्रेजों के बीच में वह विचित्र-से लगते थे। अखबार और पत्रिकाओं में उनका खूब मजाक बना था, हास्य-चित्र छापे गये थे। किन्तु गांधीजी पर उपहास और आलोचना का कोई असर नहीं हुआ। वह जानते थे, वह क्या कर रहे थे। गांधीजी अच्छी-से-अच्छी पोशाक पहन सकते थे, किन्तु यदि वह ऐसा करते तो उनके लोग उनमें सन्देह कर सकते थे। उन्हें लगता, कहीं अनजाने में ही यह आदमी अंग्रेजों के सामने झुक तो नहीं रहा है। अपने अनुयायियों के साथ एकाकार होकर रहना था। हिन्दुस्तान में उनके साथी जो खाते-पीते थे, वह उनसे अच्छा या भिन्न खाना-पहनना नहीं चाहते थे। उन्होंने अपने छोटे या नगण्य व्यक्तित्व से करोड़ों भारतीय किसानों को मन्त्र-मोहित कर लिया और यह कोई नाटक नहीं था। यदि नाटक ही होता तो काम नहीं चलता। यह उनकी सत्य-निष्ठा या सत्य का आग्रह समझना चाहिए।

इसी का परिणाम था कि वह कह सके कि मैं अकेला ही अपने देश के करोड़ों लोगों का प्रतिनिधित्व करता हूँ। भारत के लोगों ने अपने समाचार-पत्रों में जब उनके चित्रों को देखा तो कोई उपहास नहीं किया। उलटे उनकी भक्ति ही गांधीजी के प्रति बढ़ी। वह उन्हीं के थे और उन्हीं को उन्होंने आत्म-समर्पण कर दिया था। वह जब समृद्धिशाली बाहर के देशों में गये, तब भी उन्हें कुण्ठा नहीं। वह लन्दन की सुन्दर सड़कों पर इसी तरह चलते थे, जैसे भारतीय या देहातों की गर्दभरी सड़कों पर। जनता इसलिए सदैव उनमें विश्वास रखती थी। गांधीजी ने एक बार कहा था, "सत्य केवल शब्दों तक ही सीमित नहीं है; वास्तव में सत्य को जीवन में बरतने की जरूरत है।"

यह विश्वास एक घंटे या एक वर्ष में नहीं पैदा हुआ। वर्षों तक कठोरता के साथ सत्याचरण की साधना के बाद वह अपने देश के लोगों के पूर्ण विश्वास-पात्र बने और अन्त में अखिल विश्व के। उन्होंने केवल विचार और आचार की ईमानदारी के कारण नहीं, बल्कि अपनी अद्भुत स्पष्टवादिता के कारण भी इतना विश्वास हासिल किया। उन्होंने अपने सम्पूर्ण जीवन को लोगों के सामने उघाड़ कर रख दिया। वह स्वयं अपनी वासनाओं से कैसे लड़े, कहाँ असफल हुए और कैसे एक बार असफल हो जाने पर भी बिना हतोत्साह हुए फिर से प्रयत्न शुरू किया। दूसरे मनुष्यों की तरह उनमें भी दुर्बलताएँ थीं और वे उनसे जूझे। उनकी स्पष्टवादिता कभी-कभी तो अखरने लगती थी। कुछ लोग इसे प्रदर्शन कहते थे। इसमें प्रदर्शन नहीं था, वह अपना सच्चा स्वरूप लोगों के सामने रखते थे, ताकि लोग उन्हें ठीक तरह से समझ सकें। चूँकि उन्होंने अपने ऊपर विजय पा ली थी, इसलिए दूसरों को भी अपने लिए विजय की आशा बँधी।

गांधीजी की सत्य-निष्ठा अपने जीवन और अपने विचारों के सम्बन्ध में जनता से किसी प्रकार का दुराव या छिपाव न रखने में थी। वह जो-कुछ करते थे, सबके सामने और सबको बता कर करते थे। यहाँ तक कि खाना, पीना, सोना, उठना, बैठना सब कुछ सबके लिए खुला था। साप्ताहिक मौन को छोड़ कर, जबकि वह बिल्कुल अन्तर्मुखी होकर अपने में ही स्थित, अपने उद्देश्य और आदर्श का चिन्तन करते थे, बाकी दिनों में उनकी सब बातें सबको मालूम रहती थीं। वह जनता के और जनता उनकी होकर रहती थी।

गांधीजी जनता के साथ, खास तौर से उनके साथ जो लोग उनके निकट सम्पर्क में रहते थे, इतने एकरूप हो गये थे कि उनकी व्यक्तिगत बातों में भी हिस्सा लेते और माँगे या बिना माँगे सलाह देते थे। लोग विवाह शादी, स्वास्थ्य, भोजन, राजनीति तथा अनेक दूसरी व्यक्तिगत बातों में भी उनकी सलाह मानने के आदी हो गये थे। चूँकि गांधीजी को उनसे प्रेम था, उनमें रुचि थी, सब-लोग उनकी बातों को सहते और मानते थे। गांधीजी हर चीज को पवित्र मान कर उसे जाँचते और उसमें हिस्सा लेते थे। जब कभी उनकी सलाह नहीं मानी जाती थी या उसका विरोध होता था तो वह सामनेवाले को कुछ न कह कर स्वयं प्रायश्चित किया करते थे। इसके पीछे लेशमात्र भी प्रतिकार की भावना नहीं रहती थी। ईसा मसीह ने अपने साथियों को जो नसीहत की कि "यदि एक गाल पर कोई तमाचा मारे तो दूसरा गाल सामने कर दो।" हिन्दू-शास्त्रों में भी कहा गया है—"पानी के बदले पानी देना बड़ी बात नहीं; बुराई के बदले में भलाई करना चाहिए।"

दूसरा गाल सामने कर देने से बढ़कर शत्रु को हिला देने वाला शायद ही कोई दूसरा रास्ता मिले। दूसरा गाल देखते ही कठोर से-कठोर अन्तःकरण भी पिघल जायगा; नहीं पिघलेगा तो हतबुद्धि हो जायगा या फिर क्रुद्ध हो जायगा। सत्य नम्रतापूर्वक कहेगा, यदि तुम क्रुद्ध हो तो आओ फिर मारो। फिर मारना माने अपनी क्रूरता स्वीकार करना। फिर जो मार खाने को तैयार है उसे मारने से लाभ क्या ! गांधीजी उपवास की प्रक्रिया से काम लेते थे। उनकी संकल्प शक्ति इतनी प्रबल थी कि कितनी ही बार उन्होंने मर जाने की स्थिति तक उपवास किये। वह जनता के साथ इतने एकरूप हो गये थे कि वह जानते थे कि जनता को उनकी मृत्यु से अधिक घबराहट देने वाली दूसरी कोई चीज नहीं है। गांधीजी बड़े विनोदप्रिय और मजाक करने वाले थे। उनके साथी अच्छी तरह समझते थे और उनकी मजाक में आनन्द लेते थे। करोड़पति, श्रीमानों और हरिजन, सबसे वह मित्रता रखते थे। एक बार जब वह किसी करोड़पति मित्र के यहाँ ठहरे और सुन्दर ढंग से सजाया हुआ जो कमरा उन्हें दिया गया था, उन्होंने उसमें पड़े हुए कीमती फर्नीचर और कालीनों को हटवा दिया, उस समय सरोजिनी नायडू ने, जो उनकी बहुत भक्त थीं; विनोद में कहा था, "बापू, आपकी सादगी और गरीबी भी बड़ी महँगी पड़ती है।"

लोग गांधीजी का मजाक भी उड़ाते थे, इज्जत भी करते थे और उनमें विश्वास भी रखते थे। गांधीजी उनसे कभी किसी ऐसे काम को करने के लिए नहीं कहते थे जिसे उनके प्रेरित करने पर भी वे कर ही न सकें। उन्होंने कभी लोगों से कोई हीन या बेईमानी का काम नहीं कराया। जिस उच्च उद्देश्य के लिए उन्होंने अपने प्राण दिये, उससे नीचे स्तर का काम उन्होंने जनता से नहीं लिया। यह बात फिर से दुहराता हूँ कि वे जो-कुछ दूसरों को करने को कहते थे, पहले स्वयं कर लेते थे। उन्होंने जब अस्पृश्यता मिटाने की बात कही तो एक अछूत कन्या को अपनी लड़की बना लिया। जब उन्होंने अछूतों को 'हरिजन' या 'हरि के जन' संज्ञा दी, तब उन्होंने बहुत धीरे-धीरे जनता को हरिजन और परिजन के भेद से मुक्त किया। उन्होंने जनता का मार्गदर्शन किया, पर जितना कर सकते थे उससे अधिक करने के लिए मजबूर नहीं किया। इसी का नाम सत्यपरायणता है। उनकी अपनी सत्यपरायणता जिनका वह नेतृत्व करते थे, उनकी सत्यपरायणता को भी जाग्रत कर देती थी।

महात्मा गांधी अपने स्वप्न को पूरा करने में सफल हुए। उन्होंने अपनी कल्पना को पूरा कर दिखाया। प्रतिभा और कार्यकुशलता, दोनों गांधीजी में थीं। उनके स्वर्गवास के बाद उनकी यह शक्ति कुछ कम स्तर के लोगों के हाथ में नहीं पड़ी। इससे एक महत्त्वपूर्ण सबक मिलता है। नेता के असफल होने पर छोटे लोग उनकी जगह लेते हैं, किन्तु यदि नेता सफल रहता है तो क्रान्ति रुकती नहीं। गांधीजी की जगह, प्रधान मंत्री नेहरू ने, जो उनके अनुयायी थे, उनके नेतृत्व को सँभाला। इन लोगों ने गांधीजी के द्वारा स्थापित सिद्धान्तों को नहीं छोड़ा है। क्रान्ति के बाद दूसरे देशों में जैसी बरबादी हुई, भारत में नहीं हुई। उसकी प्रगति में कोई बाधा नहीं पड़ी। गांधीजी के नेतृत्व की सबसे अधिक प्रशंसनीय चीज तो यह है कि अंग्रेजों तक ने उस नेतृत्व की तारीफ की और आज तो सारे विश्व में गांधीजी के बाद आने वाले नेतृत्व को मान्यता मिलनी शुरू हो गयी है। गांधीजी ने व्यक्तिगत विद्वेष को कभी स्थान नहीं दिया। वह औपनिवेशिकता के विरुद्ध बराबर लड़ते रहे और अपने लोगों की स्वतंत्रता के लिए ही वह जिये और उसी के लिए मरे। तो भी जिस राज्य को वह हटाना चाहते थे, उसे चलाने वाले व्यक्तियों के प्रति उनके मन में बराबर प्रेम रहा। लार्ड माउन्टबेटन और श्रीमती माउन्टबेटन उनके व्यक्तिगत मित्र थे और प्रशंसक थे। जिस गौरव और पारस्परिक प्रतिष्ठा के साथ भारत को स्वतंत्रता मिली यह मानव-इतिहास की एक अनुपम घटना है। इसका श्रेय, गांधीजी के महान् नेतृत्व और आन्दोलन चलाने के उनके अद्भुत ढंग को ही है।

आज खास तौर से जब दक्षिण के, या कहिए पूरे अमरीका के नीग्रो में एक नया नेतृत्व विकसित हो रहा है, हमें गांधीजी के नेतृत्व को याद करना चाहिए। अंग्रेजों ने किस गौरव और पारस्परिक प्रतिष्ठा के साथ भारत को छोड़, हमें याद रखना चाहिए। दक्षिण अमरीका के गोरे लोगों को सोचना चाहिए कि इस तरीके से कैसे अंग्रेजों की और ब्रिटेन की इज्जत बढ़ी है।

शांति-विद्यालय, इन्दौर के कुछ संस्मरण

पुष्पलता रणदिवे

मैं बंबई में लोगों को मिलने जाती थी, तब लोग तरह-तरह के सवाल पूछते थे; मगर मैं ठीक से जवाब नहीं दे पाती थी। मेरी पढ़ाई कम हुई है, यह चीज मन में खटकती थी और लोगों के पास पहुँचने में थोड़ा डर भी मालूम होता था। इच्छा थी कि उसे दूर किया जाय। शांति-सेना विद्यालय में जाने का मौका पाकर मन ही मन बड़ी खुश हुई और समझी कि अब इच्छा पूरी हो गयी। मन में इस तरह आनंद की लहरें उठती थीं। फिर जाते समय मन में यह विचार आया कि आश्रम-जीवन का मेरा यह पहला प्रसंग है, वहाँ की कठिनाइयाँ क्या मुझसे सही जायेंगी? बुद्धि ने निश्चयात्मक निर्णय दिया और ट्रेन में बैठी, तब मैं मन से निश्चित हो गयी थी।

कस्तूरबाग्राम, इन्दौर पहुँचने पर देखा तो हर बहन के चेहरे पर हास्य की रेखा थी। सबने मेरी पूछ-ताछ शुरू की। विद्यालय शुरू होकर दस दिन बीत चुके थे। बहुत सारी बहनें पहले ही पहुँच गयी थीं। जैसी-जैसी नयी बहनें सामने आती थीं, वैसे-वैसे मेरा आनंद बढ़ता था और मन में आता था कि अब इन्हीं बहनों के साथ मुझे घुल-मिल कर रहना है और कुछ ही मिनटों में मैं उनमें से एक बन गयी।

हमारी काम की 'ड्यूटियाँ' लगती थीं। हम अपना काम पूरा करतीं और कोई बहन बीमार हो तो उसका भी काम हम कर लेती थीं। इस तरह हमारा एक परिवार ही बन गया। जैसे घर में वैसे ही यहाँ काम करते समय एक-दूसरे की गलतियाँ तथा दीदी की डाँट हमें बुरी तो लगती थी, मगर सब अपना ही मान कर सह लेने में कभी तकलीफ नहीं हुई।

काम तो क्या, रसोई और सफाई ये ही पारिवारिक कार्य थे। स्त्री होने के नाते अपने परिवारों में हम इनका अनुभव ले चुकी थीं; लेकिन इतने बड़े पैमाने पर सब मिल कर आपस में काम के बँटवारे का सलाह-मशविरा करें और ४० तक लोगों का रोज भोजन तथा आगन-सफाई करें, यह नया ही अनुभव था। कोठार सम्हालते समय अनाज, सब्जी के नाप-तौल की जानकारी मिली। खुले में परिश्रम करने की आदत न होने के कारण घास-कटाई में भी कड़ी मेहनत मालूम होती थी। संडास-सफाई तो एक अजीब अनुभव था। यह सब काम करते समय 'हर काम भगवान की पूजा समझ कर करो', निर्मला बहनजी के यह शब्द कानों में गूँजते रहते। हमें काम करते देख कर वे तथा दीदी भी हमारे मदद में दौड़ आतीं।

मिर्च-मसाले की हमारी आदत ही यहाँ छूट गयी। वैसे पदार्थ कौन से बनाना इस विषय में हम बहनों को पूरी आजादी थी। इसका लाभ उठा कर विभिन्न प्रांतों की बहनें अपने-अपने वैचित्र्यपूर्ण पदार्थ बना कर सबको खिलाती थीं। यहाँ पर अकेले खाना पाप था और बाँट कर खाना पुण्य; भोजन में अनाज, सब्जी, दाल कौनसी और कितनी रहे, घी कितना लिया जाय, यह सब हिसाब देख कर हमें ही तय करना था। कुछ बहनें मटली न पाने के कारण नाराज तो रहीं, लेकिन कुल मिल कर यहाँ के निवास में करीब-करीब सब बहनों का वजन बढ़ा। इससे इन्दौर की बढ़िया हवा का भी हाथ रहा होगा। व्यक्तिशः मेरी छोटी-छोटी कमजोरियाँ दूर हो गयी, १५ पौंड वजन भी बढ़ा। गाय का बढ़िया दूध जी भर पीया।

कहना चाहिए कि हमारी बहनें बीमार भी बहुत रहीं। उन्हें हास्पिटल में भेज दिया जाता था। ऐसी बहनों की सेवा तथा रात में जागरण के मौके भी कम नहीं आये। मेरे मन में तो यह सवाल हमेशा ही उठता रहा कि इस तरह की बीमारियाँ हमें क्यों होनी चाहिए!

घंटी लगते ही प्रार्थना के लिए, वर्ग के लिए तथा भोजन के लिए इकट्ठे हो जाने की हमें आदत हो गयी। यही हमारा सैनिकी प्रशिक्षण था। लेकिन हमें इसका भार महसूस नहीं हुआ, हँसते-खेलते ही हमने सब जिम्मेवारियों को निभाया। जवान लड़कियों से वृद्धा औरतों तक सब उम्र की हम बहनें साथ में रही थीं। अपने-अपने जीवन की कहानियाँ हमने एक-दूसरे को सुनाईं।

शहर में हम प्रयोग-कार्य के लिए जाती थीं। इसमें हमारा उद्देश्य था, लोगों से पहचान करना तथा उनमें तनावों के जो विविध कारण होते हैं, उनका अध्ययन करना। हमसे मिल कर लोग खुश होते थे। सर्वोदय के प्रति उनके मन में काफी श्रद्धा दिखाई दी। विनोबाजी के यात्रा के समय इनमें से अनेक घरों में सर्वोदय-पात्र रखे गये थे, किन्तु सर्वोदय के सेवक वहाँ न पहुँच पाने के कारण उन्हें बन्द करना पड़ा, ऐसा कई लोगों ने हमें बताया। लोगों में यह अपेक्षा दिखाई दी कि हम बार-बार उनके पास पहुँचे तथा नये-नये विचार उनके सामने रखे। इस प्रयोग-कार्य के एक-दूसरे के अनुभव सुनने में हमें बड़ा रस मालूम होता था। जिन्होंने इस तरह का काम पहले नहीं था, उन्हें तो यह अनुभव अजीब से लगते थे।

दो बार कुल मिला कर सात दिन हम सब बहनों ने साहित्य-प्रचार के लिए दिये। निर्मला बहनजी की कोशिश पर हमारी रहने की व्यवस्था अलग-अलग घरों में की गयी। यह तो सबके लिए विशेष ही अनुभव था। घर वालों ने हम पर स्नेह का वर्षाव किया। उन दिनों उस घर में सर्वोदय का ही वातावरण रहता। उसी की चर्चा चलती। हमें तरह-तरह के सवाल भी पूछे जाते, मानों ये ही हमारी परीक्षा के दिन थे। लोगों ने हमें आग्रहपूर्वक फिर से अपना ही घर समझ कर आने का न्यौता दिया। इस तरह हम परीक्षा में पास हो गयी।

शहर में विनोबाजी के बारे में तथा निर्मलाबहनजी के बारे में भी बहुत आदर-भाव दिखाई दिया। खासकर निर्मला-बहनजी की मीठी वाणी तथा कार्य के उत्साह की लोग तारीफ करते थे। मन ही मन हम ऐसी गुरु को पाकर अपने को धन्य समझती थीं। कुछ लोगों ने तो कहा कि यही एक विचार है, जिसमें दुनिया का भला होगा। कुछ लोगों को विचार है जिससे दुनिया का भला होगा। कुछ लोगों को विचार तो नहीं जँचता था, मगर हम बहनों को देख कर उन्हें अचरज तथा आदर भी होता था और वे हमें सहायता करने या हमारे पास का सर्वोदय-साहित्य खरीदने को तैयार हो जाते थे।

'स्काउटिंग' के बारे में हमने सुना तो था, मगर प्रत्यक्ष अनुभव नहीं था। यहाँ श्री वारघुतेजी ने दस दिन हमारा 'स्काउटिंग' चलाया। इसमें सब उम्र की बहनों ने खूब उत्साह के साथ भाग लिया। हमारे साथ वृत्ति से सब जवान हो गयी थीं। श्री वारघुतेजी की उम्र ८२ साल की है, लेकिन सबसे जवान तो वे ही थे। उनका कसा हुआ शरीर तथा मर्दानी चाल हमें बड़ी अच्छी लगती थी। हमें कभी संकोच ही महसूस नहीं होता था। वे हमें दौड़ने को कहते, खेलने को कहते और नाचने को कहते! हमारी गलती हुई तो खुद गाने और नाचने लग जाते—"ढीला-ढाला हिन्दुस्तान, भोला-भाला हिन्दुस्तान!" 'स्काउटिंग' के लिए हमें साड़ी का खास पेहराव भी बताया गया। आते ही वे हमारे दाँत, नाखून तथा पोशाक की जाँच करते। विभिन्न प्रकार के खेल और नृत्य उन्होंने सिखाये और हमने खूब दिलचस्पी से खेले। रस्सी की गठानें, सीटी और डोरी के प्रकार आदि बहुत उपयुक्त सामग्री हमने पायी। हमें लगा कि शान्ति-सेना को इस प्रकार के शिक्षण की बहुत आवश्यकता है।

संसार के भूगोल का हमारा ज्ञान करीब-करीब नहीं के बराबर था। यहाँ नक्शा सामने रख कर देश व दिशाओं की जानकारी हमने ली, भिन्न भिन्न देशों की खबरें, बड़े चाव से, सुनीं और फ्रान्स, अमेरिका तथा चीन की क्रांतियों का इतिहास का अध्ययन किया। कैसे कैसे महान् क्रान्तिकारी संसार में हो गये!

कस्तूरबाग्राम में स्त्री-शक्ति पर बाबा के जो अमूल्य प्रवचन हो गये थे, उन पर हमने आरम्भ में ही मनन किया था। समाज में काम करते समय स्त्री के नाते हम पर जो जिम्मेदारियाँ आयेंगी, उनका भान अपने वात्सल्यपूर्ण शब्दों में अमृततुल्य वाणी ने मन में अनेक सवालों का जवाब दे दिया। स्त्री-जीवन का महत्व हमें मालूम हुआ। आज के समाज में स्त्रियों की जो हालत है, उसका पूरा चित्र हमारे सामने खड़ा हुआ। वैसे विद्यालय से जो बहनें आयी थीं, उनकी जीवनियाँ भी तो हमने सुनी थीं। समाज द्वारा अपेक्षित इस स्त्री को हमारे सेवा की बहुत जरूरत है, ऐसा मुझे लगा। यह काम शांति-सेना के जरिये ही हो पायेगा। इस विषय में मेरे मन में कोई शंका नहीं रही। जब निर्मलाबहनजी ने शान्ति-सेना के बारे में हमें तफसील से सारी बातें समझायीं, तभी मैंने मन में निश्चय कर लिया कि इसी काम में अपना जीवन बिताना है।

सर्वोदय का व्यापक अर्थशास्त्रीय विवेचन हमने सुना। साथ-साथ ग्राम-स्वावलम्बन की बातें भी। रसोड़े का अर्थ-शास्त्र, आरोग्य, विज्ञापन, बाल्मानस-शास्त्र सुनते समय उनकी कई बारीकियाँ ध्यान में आयीं, जिन पर हमने कभी सोचा नहीं था।

विविध भाषाओं के भजन हमने सीखे। भजन में तो हमें रुचि थी ही। विद्यालय में हमें नये-नये भजनों के राग सीखने में हमें दिलचस्पी होती थी। इसमें निर्मला बहनजी का खूब प्रोत्साहन रहा। वे खुद तंबूरा लेकर कई भजन गाया करती थीं। कम-से-कम अपने आनंद के लिये हम भजन गा सकें, इतना संगीत सीखना जरूरी है, ऐसा उनका कहना था। उनके भक्तिभाव की छूत लगे बिना कैसे रहती! संत-साहित्य तथा चरित्र पर वियोगी हरि के भाषण भी हमने सुने। बंगाली, हिन्दी, पंजाबी तथा महाराष्ट्रीय संतों के बारे में उन्होंने बताया। उन्होंने भी भक्ति-भावना का पोषण किया। अस्पृश्यता-निवारण तो उनका सेवा का विषय है, वह भी उन्हीं के मुँह से हमने सुना।

ईशावास्य, स्थितप्रज्ञ के लक्षण, एकादशव्रत और नाममाला पर निर्मला बहनजी ने काफी मेहनत की। एक-एक शब्द का उच्चारण वे हमसे बार-बार करवा लेती। व्यवहार में भी वे हमें इन विचारों की याद दिलातीं, विद्यालय का वातावरण ही मानों इन्हीं शब्दों से गूंजता रहता। इससे पहले मुझे संस्कृत की गंध भी नहीं थी। स्त्रियाँ भी इस तरह संस्कृत सीखती हैं और इतनी आसानी से इसका प्रथम ही दर्शन हुआ।

"स्त्रियों को वेदों का अधिकार प्राप्त करना चाहिये," यह आदर्श हमारे सामने रखा गया था।

इस विद्यालय में मेरे लिए सबसे महत्त्व की घटना थी श्री निर्मला बहनजी का सहवास। वे हमारे जीवन के प्रश्नों को लेकर हमारे साथ सोचती, छोटे से-छोटे तथा गंभीर-से गभीर विषयों पर हमें सूचनाएँ-सलाह दिया करती, जिम्मेवारी के काम हम पर डालती तथा उन्हें करने के लिए हममें हिम्मत सौंपती, हमारी छोटी-सी छोटी सफलताओं पर स्वयं खुश हो जाती तथा हमें प्रोत्साहन देती, हमारे काम से हाथ में हाथ बटाने के लिए दौड़ आती तथा माँ के समान हमें खिला कर तृप्त हो जाती।

संबंधियों से सैकड़ों मील दूर आकर हम पाँच महीने रही, मेरे लिए तो यह इस तरह का पहला ही अवसर था। हममें से कुछ बहनें अनुभवी भी थीं, फिर भी यह स्वाभाविक ही था कि हमें बार-बार घर की याद आया करे। लेकिन अन्नपूर्णा दीदी की छत्रछाया में कस्तूरबाग्राम को अपना घर बनाने में हमें देरी न लगी। यहाँ वही प्यार था, वही डाँट भी थी। वे हमसे गपशप करती, अपने जीवन के अनुभव सुनाती, अपना नाम उन्होंने सार्थक किया और हमें किसी चीज की कमी नहीं महसूस होने दी।

श्री अन्नपूर्णा महाराणा जब चली गयीं, तब सब बहनों को दुःख हुआ। दादीदीदी ने हमारे पीछे पड़ कर हमें आसन सिखाये। मुझे लगता है कि यह उनकी देन कायम के लिए हमारे साथ रहेगी। शुरुआत में हम इन्हें कर पायेगी ऐसी कल्पना ही हम नहीं कर सकती थी। धीरे-धीरे आदत हो गयी और आसनों के प्रति हमारी रुचि भी बढ़ गयी।

भारतीय संस्कृति की खूबी यह है कि यह किसी धर्म को पराया नहीं मान सकती। यह उसकी अहिंसा वृत्ति का स्वाभाविक विकास है। यहाँ के प्रभु मेले में सर्व धर्मों की बातें श्रद्धापूर्वक कहने वाले तथा आदरपूर्वक सुनने वाले लोग दिखायी देते हैं। विद्यालय में हमें इस चीज का भली भाँति परिचय हुआ। यहाँ पर मौलवी आये, ईसाई, पादरी आये और अपने धर्म का आख्यान उन्होंने अपनी वजूदेदार शैली में हमारे सामने किया। दोनों धर्मों की छोटी-सी प्रार्थनाएँ हमने उच्चार सहित ग्रहण की। इसके अलावा निर्मला बहनजी ने हिंदू, बौद्ध तथा जैन धर्मों के बारे में बताया। बौद्धों के कुछ मंत्र हमने याद किये।

समूह की विशेषता यह है कि उसमें एक दूसरे के प्रति सोचना पड़ता है। हमने जब अजंटा-एलोरा, औरंगाबाद तथा ओंकारेश्वर की यात्रा की तब हमें इसका पूरा-पूरा अनुभव हुआ। समय पर सब एक जगह जाना, भरी हुई गाड़ियों में सब मिल कर सामान सहित चढ़ जाना, ये सभी काम जल्दी जल्दी निपटाने पड़ते थे। यात्रा तो क्या, वह भूगोल-इतिहास का पाठ ही था। इस यात्रा में हमने बुद्ध-चरित्र सुना, बुद्ध की मूर्तियों के सामने बौद्ध मंत्र गाये, कालग्लानि के सामने परास्त होने वाले महान् प्रयत्नवादी सम्राट् औरंगजेब को श्रद्धांजलि अर्पित की। पुराने जमाने के किलों की अभेद्य तथा भयानक रक्षण योजना देखी। अंत में नर्मदा के पुण्यपावन जल से अपने शरीरों को धोया।

पाँच महीने हम सब बहनें एकसाथ रहीं। दिन कैसे चले गये, मालूम नहीं पड़ा! हमारे शिक्षक भी इस तरह हमारे साथ घुल-मिल गये थे कि शिक्षक और विद्यार्थी यह भेद भी मिट गया था। विदाई के समय, अब हम सबको एक-दूसरे से अलग रहना है, यह कल्पना कष्टदायक लगी। भगवत् कृपा से हम सब बहनों का एक परिवार बना था।

लोकनीति और चुनाव :२:

शंकरराव देव

हर पंचवर्षीय निर्वाचन का और दो निर्वाचनों के बीच की अवधि में जो आज का लोकतन्त्रीय कारोबार चलता है, उसका लोगों के विचार और आचार पर गहरा प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा। यह बिल्कुल साफ है कि हम किसी राजनैतिक दल या किसी उम्मीदवार का पक्ष नहीं लेंगे, लेकिन हमारी इच्छा यह रहेगी और रहनी चाहिए कि हमारा यह सारा काम हमारे लक्ष्य की सिद्धि के लिए अनुकूल हो और सर्वोदय के हमारे तत्त्व और कार्यक्रमों को जनता की तथा नेताओं की अधिक-से-अधिक मान्यता मिले। हम किसी व्यक्ति या पक्ष का पुरस्कार और प्रचार करना नहीं चाहेंगे, पर जनता को अपने तत्त्व और कार्यक्रम का शिक्षण देना चाहेंगे। इसके लिए भिन्न-भिन्न दलों के घोषणा-पत्रों का अध्ययन करेंगे और सर्वोदय की दृष्टि से उनमें जो अंतर या विसंगतियाँ हों, उनके बारे में लोगों को समझायेंगे।

यही कारण है कि सर्व सेवा संघ ने आंध्र सर्वोदय सम्मेलन के अवसर पर अपने निवेदन में कहा है कि पंचायती राज के इस कार्यक्रम को सफल करने के लिए यह जरूरी है कि

> "पंचायती राज की संस्थाओं का निर्वाचन, गठन और कार्य-संचालन आदि को पूरी तौर पर दलीय राजनीति से बचाया जाय। सभी पक्षों को एकमत होकर पंचायती राज को सफल बनाने में पूरा सहयोग देना चाहिए। यह भी समझ लेना आवश्यक है कि आर्थिक विकेंद्रीकरण के बिना, केवल राजनैतिक विकेंद्रीकरण सफल नहीं हो सकता। गरीब समाज में परिवार भावना जगाने और कायम रखने के लिए आर्थिक समता का वातावरण पैदा करना भी जरूरी है। इस दृष्टि से भूमि का ग्रामीकरण एक आवश्यक कदम हो जाता है।"

इस ग्रामीकरण के लिए लोकसंमति पर आधारित कानून की अपेक्षा यहाँ गृहीत है। राजनैतिक और आर्थिक सत्ता का विकेंद्रीकरण सर्वोदय का मूलतत्त्व है। यही कारण है कि किसी व्यक्ति-विशेष के या नौकरशाही के हाथ में सत्ता और संपत्ति के केंद्रीकरण का सर्वोदय विरोधी है। आज के मानवीय जीवन में जितना केंद्रीय संगठन अनिवार्य हो, उतना छोड़ कर सारा जीवन विकेंद्रित नीति पर चलना चाहिए, यह सर्वोदय की मान्यता है।

विश्वशांति सर्वोदय का लक्ष्य है। लेकिन देश के हित की रक्षा और झूठी शांति की स्थापना के नाम पर आक्रामक के प्रति तटस्थता बरतने का वह विरोधी है।

यह सारा शिक्षण जनता को देने का काम जिस लोकसेवक का है और जो यह मानता है कि चुनाव लोकशाही के शिक्षण का एक सर्वोत्तम अवसर है, उसके लिए किसी को वोट देना या न देना बहुत गौण बात हो जाती है। लेकिन सर्वोदय के सिद्धांतों को मानने वाले और उस पर चलने का प्रयत्न करने वाले लोग जो अपने मतदान के हक का उपयोग करना चाहेंगे वे किसको अपना मत दें, इस बारे में सर्व सेवा संघ ने अपने आज तक के हरएक चुनाव संबंधी प्रस्ताव में अपनी राय दुहरायी है कि–

> "जो व्यक्ति भिन्न भिन्न राजनैतिक पक्षों के सदस्य हैं, उनका भी यह कर्तव्य है कि उनका पक्ष यदि गलत आदमियों को उम्मीदवारी के लिए खड़ा करे, तो उनको अपना वोट न दें।" ......"लोकनिष्ठ नागरिक स्वाभाविक ही हिंसा, जाति, वर्ग, संप्रदाय, भाषा आदि संकीर्ण भावनाओं से प्रभावित होकर अपने वोट या मत का उपयोग नहीं करेगा।"

और जो इनसे प्रभावित हैं, उनको अपना वोट नहीं देगा। सर्वोदय की लोकशक्ति, लोकतंत्र और लोकनीति को जो अनुकूल और समीप के लगें उसी को अपना वोट देगा।

यहाँ एक प्रश्न सहज ही उठता है कि जब हम किसीको वोट देंगे, तो फिर उसका प्रचार क्यों न करें?

वैयक्तिक अधिकार का उपयोग करना एक बात है और उसका खुल्लम खुल्ला प्रचार करना बिल्कुल दूसरी बात। इन दोनों के बीच बहुत बड़ा अंतर है और इसकी तरफ सर्व सेवा संघ ने अपने प्रस्तावों द्वारा जनता को सचेत किया है।

सत्ता और संपत्ति का यह नैसर्गिक स्वभाव है कि उसमें से निहित स्वार्थ पैदा होते हैं और जहाँ निहित स्वार्थ पैदा हुआ वहाँ शिक्षण की प्रक्रिया दूषित हो जाती है। यही कारण है कि सर्व सेवा संघ ने कहा है कि लोकसेवक सत्ता और संपत्ति से अलग रहें और चूँकि सर्वोदय की प्रक्रिया, हृदयपरिवर्तन की प्रक्रिया है, इसलिए न्यायाधीश बन कर किसी के अनुकूल या प्रतिकूल प्रचार न करें। आज की लोकशाही की एक प्रकार से झुण्डशाही में अधोगति हो रही है। इसके कई कारण हैं, उनमें से एक बड़ा कारण प्रत्यक्ष प्रचार तंत्र का अपनाया जाना है। इसलिए लोकशिक्षण में और चुनाव-प्रचार में बड़ा फरक है। लोकशिक्षण लोकशाही का आत्मा है, तो प्रचार उस आत्मा को मारने वाली चीज है। मेरी नम्र राय में मत-स्वतंत्रता और गुप्त मतदान–ये जो आज की दूषित लोकशाही के भी प्राण हैं, उनकी तरफ हमारा ध्यान कम होता गया है। किसीके विचार या बुद्धि को प्रभावित करने का अर्थ है, उसकी स्वतंत्रता को संकुचित करना। हमारे राष्ट्रपति ने आज के चुनाव प्रचार के बारे में यह जो सुझाव दिया था कि चुनाव के एक महीने पहले सारे प्रचार-कार्य बंद किये जायँ, उसके समर्थन में उन्होंने यह जो दलील दी थी कि दो चुनावों के बीच के चार या पाँच साल तक की अवधि में पक्ष जो लोकशिक्षण का काम करते हैं या जो उनको करना चाहिए, उस पर उन्हें विश्वास करना चाहिए, अंतिम समय में प्रचार बंद रखना चाहिए यह बहुत महत्त्व का सुझाव है।

आज का यह अनुभव है कि जैसे-जैसे चुनाव समीप आते हैं, वैसे-वैसे वह शिक्षण का काम प्रचार का रूप ले लेता है। मेरी दृष्टि में राष्ट्रपति के इस सुझाव में सही लोकनीति की स्थापना की दृष्टि से बहुत बड़ा तथ्य है। आज की लोकशाही के संचालक की हैसियत में रह कर भी राष्ट्रपति जो बात सुझा रहे हैं, उसे एक लोकशिक्षक के नाते हम कैसे नहीं मानेंगे! लोकसेवक हमेशा शिक्षक ही रहेंगे, प्रचारक नहीं बनेंगे। यदि प्रचारक बनेंगे, तो सर्वोदय की स्थापना के काम के लिए अपने को असमर्थ बना देंगे।

'शारदापुरी' की भूदान-बस्ती

• दत्तोबा दास्ताने

कुछ साथियों के साथ गत ३० नवम्बर को, भूदान में मिली 'शारदापुरी' की जमीन पर जो नयी बस्ती बसायी गयी है, उसे देखने का मौका मिला। लखनऊ-काठगोदाम रेलवे-लाइन पर स्थित मैलानी जंक्शन से पलामू कलाँ स्टेशन पर उतर कर बस द्वारा २५ मील चलने पर शारदापुरी पहुँच सकते हैं। उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी और पीलीभीत जिलों की सीमा पर पीलीभीत जिले में यह जमीन है। आखिरी बस-स्टाप भानखजुरिया है। यही शारदापुरी का पोस्ट आफिस भी है। यहाँ से करीब डेढ़-दो मील पैदल चल कर शारदापुरी बस्ती में हम पहुँच जाते हैं। नेपाल की सीमा यहाँ से ५-७ मील पर है। आसपास जंगल है। हाथी और शेर बीच-बीच में उपद्रव करते हैं। नेपाल की पहाड़ियों की आड़ से हिमालय की कुछ ऊँची चोटियाँ झाँकती हुई नजर आती हैं और हिमालय चलने के लिए लालायित करती हैं !

शारदापुरी को वैसे साढ़े सात हजार एकड़ भूमि भूदान में मिली है। लेकिन उसमें से चार हजार एकड़ में बस्ती बसायी गयी है और बाकी की साढ़े तीन हजार एकड़ भूमि सरकार द्वारा जंगल के लिए सुरक्षित रखी गयी है, जिसके बदले में सरकार अन्य जगह की तीन हजार एकड़ भूमि भूदान-समिति को देने वाली है।

इस भूदान की जमीन पर १९५७ तक कोई बसाया नहीं गया था। पाकिस्तान बनने के बाद पश्चिम पंजाब में से जो लोग अपनी जमीनें और वतन छोड़ कर भाग आये, उनमें से रायसिख जाति के और कंबो जाति के कुछ सिख भाई भूदान की जमीन की तलाश करते-करते नैनीताल तक पहुँच गये।

वहाँ उनको पता लगा कि उत्तर प्रदेश भूदान-समिति का दफ्तर सेवापुरी में है और वहाँ पहुँचने पर बसने के लिए भूमि मिल सकती है। जंगली इलाका, जंगली जानवरों का उपद्रव और डाकुओं के अड्डे, इन कारणों से शारदापुरी जैसे इलाके में कोई बसेगा, ऐसा संभव नहीं दीखता था। फिर भी इन सिखों को वह भूमि बतायी गयी और उन्होंने बसना तय कर लिया, क्योंकि ये सिख पाकिस्तान में बेजमीन काश्तकारी मजदूर थे। इतना ही नहीं, बल्कि इनको 'क्रिमिनल ट्राइब' (जरायम पेशा जाति) भी समझा जाता था। इसलिए ये लोग मेहनत-मजदूरी से या डाकुओं से, या जंगली जानवरों से डरने वाले नहीं थे। वैसे उनमें से कुछ लोगों के पास बन्दूकें भी थीं।

लेकिन इन सिखों को शारदापुरी की भूमि पर बसाने की बात पीलीभीत के जिला-अधिकारियों को मालूम हुई तो उन्होंने आपत्ति उठायी कि सीमावर्ती क्षेत्र होने के कारण ऐसे 'क्रिमिनल ट्राइब' को वहाँ बसाना ठीक नहीं होगा। आखिर यह तय रहा कि ये लोग अपने हथियार सरकार को वापिस कर दें और चोरी-डाके की कोई घटना न होने पाये। खुशी की बात है कि पिछले चार सालों में एक भी शिकायत पुलिस के पास नहीं पहुँची। अब अधिकारी लोग तो उलटे इन्हीं लोगों की मिसाल अन्य बस्तियों को दे रहे हैं।

इस भूदानी क्षेत्र पर बस्ती बसाने का कार्य उत्तर प्रदेश निर्माण-समिति की ओर से किया जा रहा है। निर्माण-समिति को 'शांतिपुरी' की एक बस्ती का अनुभव आ चुका था, जहाँ व्यक्तिगत मालिकी बन जाने के बाद और माली हालत सुधर जाने के बाद भूदान का पारिवारिक या सामूहिक जीवन का तत्त्व भुलाया गया और दलबंदी, पार्टीबाजी आदि शुरू हो गयी। इसलिए शारदापुरी की बस्ती बसाते समय निर्माण-समिति ने तीन बातें इन सिखों के सामने रखी :

(१) जमीन व्यक्तिगत मालिकी की नहीं, बल्कि सामूहिक मालिकी की रहेगी।

(२) कोई भी परिवार खेती के काम के लिए बाहर से मजदूर नहीं रखेगा।

(३) इस क्षेत्र के विकास के लिए बाहरी धन की, साधनों की, या सरकारी मदद कम-से-कम ली जायगी। मुख्यतया स्थानीय मेहनत से ही विकास का कार्य किया जायगा। शुरू में जो पूंजी दी जायगी, वह कर्ज के रूप में होगी और पाँच किस्तों में वह लौटानी होगी।

उपर्युक्त तीनों शर्तें इन लोगों ने मान ली, तब निर्माण-समिति ने निम्न पद्धति से बस्ती बसाने की योजना बनायी और कार्यान्वित की।

(१) चार हजार एकड़ भूमि पर बसने वाले कुल ३५० परिवारों की ४० टोलियाँ बनायी और हर टोली को करीब १०० एकड़ भूमि दी गयी।

(२) इन टोलियों को ९ बस्तियों में बाँट दिया।

(३) निम्न प्रकार से पाँच रजिस्टर्ड देहात बना दिये और नौ बस्तियों इस को प्रकार विभाजित किया :–

(अ) 'विनोबा नगर' नं० १ और २

(आ) 'राघवपुरी' नं० १, २ और ३

(इ) 'नानक नगरी' नं० १ और २

(ई) नानकसर, (उ) भगवानपुर।

उपर्युक्त पाँचों देहात मिल कर 'शारदापुरी' बन जाती है।

(१) शारदापुरी की सारी जमीन 'शारदापुरी सर्वोदय सहकारी समिति' के नाम पर है।

(२) अभी तक लगान लागू नहीं हुआ है। लेकिन करीब ५-६ हजार रुपये *लगान लग जायगा।*

(३) ९५ हजार रुपये कर्ज में से अब तक १३ हजार रुपये वापिस किये गये हैं।

(४) सर्वे करने वालों की मदद से सारे क्षेत्र को बस्तियों के अनुसार फिर से नाप कर मकानों की जगह, खाद के गड्ढे की जगह, सामनेवाली सड़क और मकानों के पीछे से बैलगाड़ियों के लिए सड़क, हर मकान के आसपास 'किचन गार्डन' और गाय बैलों के कोठे के लिए चौथाई एकड़ खुली जमीन; इस तरह नक्शा बना कर जमीनों के टुकड़ों को दुबारा नम्बर दिये गये हैं।

(५) बैल, ट्रेक्टर, जमीन तुड़वाना आदि काम के लिए कुल एक लाख रुपये दिये गये, जिसमें ६५ हजार रुपये कर्ज के रूप में और ३५ हजार रुपये दान के रूप में है।

हम लोग बैलगाड़ी से करीब सभी बस्तियों का चक्कर लगा आये। वहाँ सफाई बहुत अच्छी पायी गयी। हर परिवार ने घर के अड़ोस-पड़ोस में केले, अमरूद, पपीते और सागभाजी की बागवानी की है। केले के पेड़ सड़क के दोनों ओर इतने ऊँचे और घने हैं कि ऊपर से दोनों ओर के पेड़ों के सिरे एक दूसरे के साथ मिल कर आने-जाने वालों के स्वागत के लिए मानो मकान बना कर खड़े हैं!

मकान अभी तक पक्के नहीं बने हैं। लोगों ने अपनी मेहनत से घास-फूस के मकान बना लिये हैं। लेकिन लीप-पोत कर मकान बहुत साफ रखे गये हैं। खाद के गड्ढों का पूरा उपयोग किया जा रहा है। कम्पोस्ट खाद का मूल्य ये लोग अच्छी तरह समझते हैं, ऐसा दिखाई दिया।

पीने के पानी की व्यवस्था 'बोअरिंग' के हैंड पम्प द्वारा की गयी है। शारदापुरी की लम्बाई में एक तरफ से शारदा नदी बह रही है। सिंचाई की व्यवस्था थोड़ी मेहनत से की जा सकती है, लेकिन फिलहाल कोई व्यवस्था नहीं है।

गन्ने की खेती अधिक की जा रही है, जिससे कर्ज चुकाने के लिए धन प्राप्त हो जाता है। गुड़ बनाने के दो-तीन अड्डे दिखाई दिये।

'आयल इंजिन से' चलने वाली आटे की चक्की एक बस्ती में है। हाथ-सिलाई के यंत्र बहुत घरों में हैं।

अब तक जमीन तोड़ने और खेती की व्यवस्था ठीक लगाने में इन लोगों का समय गया। अब पक्के मकानों का और सिंचाई की व्यवस्था की चिंता इन लोगों को लगी है। कोयले का और चूने का इन्तजाम किया जाय तो ईंट बनाना और मकान बनाना ये लोग अपनी मेहनत से करने के लिए तैयार हैं।

इस बस्ती में वस्त्र का उद्योग तेलघानी और गुड़ बनाने का काम जल्द-से-जल्द किया जाना चाहिए, जिससे ग्राम-स्वावलम्बन की ओर इस बस्ती को आसानी से ले जा सकेंगे।

करीब सभी लोग अनपढ़ हैं। इस बस्ती में लोकल बोर्ड द्वारा एक पाठशाला शुरू की गयी है। लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में भी अभी से अगर जागरूकता रखी जायगी

शारदापुरी की प्रगति-तालिका

सन् १९५७ से १९६१ तक की शारदापुरी की प्रगति का पता निम्न तालिका से लग सकता है।

साल	भूमि काश्त में	खरीफ :	फसल : रबी	गन्ना
	एकड	मन	मन	मन
१९५७	४१५	२४५	–	–
१९५८	२०००	१८३५	४४५	–
१९५९	२०००	४६२०	२२३०	–
१९६०	२६००	९६३६	५५०९	४३०००
१९६१	२६००	५०१२*	७३४२	७००००

शारदापुरी की बस्ती में साधन सामग्री किस रफ्तार से बढ़ती गयी इसका चित्र भी देखने लायक है।

	१९५७ में	'५९	'६१		१९५७ में	'५९	'६१
हल	२९	२४४	३३०	चारा काटने की हाथ की मशीनें	२	२२	७०
बैल-गाड़ियाँ	१३	६३	१०१	हैंड-पंप के नल	५	१५	७५
बैल	४८	२९४	५७८	ट्रैक्टर	०	१	२
गायें	८	६८	९२	कोल्हू आदि	०	७६	१८२
भैंसें	१३	९३	१५५	आटा-चक्की	०	१	०
साइकिलें	५	२२	४८	रेडियो	०	१	३
हाथ-सिलाई मशीन	५	११	३०				

* बाढ़ के कारण फसल कम हुई।

जो नयी तालीम का अच्छा चित्र यहाँ खड़ा करने की गुंजाइश है। अन्यथा वही हाल स्कूल, कालेज, नौकरी की तलाश आदि की पुरानी बेढंगी चाल चलेगी। इस बस्ती को शून्य में से खड़ी करने से लेकर नगर बनाने तक यहाँ के बच्चे अपने माँ-बाप के साथ, हर काम में हिस्सा लेने वाले हैं। यही उनकी तालीम का बढ़िया जरिया है। इन लोगों के बच्चे बड़े होने पर और पढ़ने पर बाबू और बेकार नहीं, बल्कि अपनी बस्ती को वैज्ञानिक ढंग से स्वयंपूर्ण बनाने में अपने माता पिता से आगे बढ़ जायेंगे, तभी इनकी शिक्षा सही ढंग की हुई, ऐसा कहा जायगा। इस बस्ती में जो शिक्षा का क्रम और माध्यम रहेगा, वह अगर नयी तालीम की असलियत का रहेगा तो जरूर हम चाहते हैं, वैसा नक्शा यहाँ दिखाई देगा।

आज इन लोगों में भावना है, उत्साह है, उमंग है, अपनी बस्ती को अच्छा खासा नगर बनाने की अभिलाषा है। नये-नये उद्योग हाथ में लेकर खेती की आमदनी के साथ अन्य आमदनी बढ़ा कर अपनी माली हालत सुधारने का मीठा सपना वे देख रहे हैं। पाकिस्तान में भी उनके पास खुद की जमीन नहीं थी। वे बेजमीन मजदूर ही थे। अब उनके पास अपनी जमीन बन गयी है। इसीलिए झगड़े करनेवाली यह जमात भी यहाँ पिछले ३४ साल में सब लोगों को देखने लायक काम कर रही है। करीब एक ही जाति का एक समानधर्मी समूह है।

इन लोगों की यह सामूहिक जीवन की भावना को पुष्ट करना, उनके बच्चों में भूदान की, बाँट कर खाने की वृत्ति बढ़ाना और माली हालत सुधर जाने के बाद भी झगड़े, कोर्ट-कचहरी, व्यसन, पार्टीबाजी, आदि की दलदल में फसने से बचाना; इस मौलिक और बुनियादी काम के लिए यह क्षेत्र बहुत अनुकूल है, इसमें कोई संदेह नहीं है।

इस इलाके के चारों ओर सरकार की 'कालोनायजेशन' की स्कीम जोरों से चल रही है। सड़कें बन रही हैं, मकान बन रहे हैं, स्कूल कालेज खुल रहे हैं, हर परिवार को १० एकड़ जमीन मिल रही है। लेकिन सरकारी लोग और अन्य बस्ती वाले लोग भी सरदारपुरी की भूदानी बस्ती की मुक्त कंठ से प्रशंसा करते हैं। उसका कारण यही है कि यहाँ ग्रामदान में निहित सामूहिक भावना को सामने रख कर काम किया जा रहा है। पुराने गाँवों को ग्रामदान के बाद नये ढंग से स्वरूप देना कुछ मुश्किल काम है। लेकिन यहाँ भूदान में मिली जमीन पर नये सिरे से पारिवारिक भावना के आधार पर नया गाँव आकार ले रहा है, वहाँ ग्रामदानी आदर्श गाँवों का हमारा स्वप्न साकार होने का पूरा मसाला मौजूद है। क्या यह हमारे लिए एक आह्वान नहीं है?

श्री धीरेन्द्र भाई के विचार

बुनियादी शिक्षा की बुनियाद आवश्यक

हाल ही में चौदहवें नई तालीम-सम्मेलन, पचमढ़ी में डा० जाकिर हुसैन ने सम्मेलन-अध्यक्ष के नाम पत्र में लिखा कि "बुनियादी-शिक्षा, जैसी कि आज प्रचलित है, देश के साथ छल है, धोखा है। श्री आर्यनायकम्‌जी और श्रीमती आशादेवीजी अभी जब ग्वालियर आयी थी तब उन्होंने भी बड़ी व्यथा के साथ कहा कि ऊपर-ऊपर पत्ते रगने का काम हो रहा है। बुनियादी-शिक्षा की मूल भावना कहीं नहीं दिखती, जिसे शिक्षा कहा जा रहा है। यह राष्ट्र को बनाने के बजाय बिगाड़ रही है।

सुना कि श्री धीरेन्द्र भाई ने इस अंधेरे में एक छोटा-सा दीप जलाया है। इस साल की कटकटाती शीत में भी इलाहाबाद के ग्रामदानी गाँव बरनपुर के तीन मील के अर्धव्यास में स्थित २८ गाँवों की ता० १५ दिसम्बर से ग्राम स्वराज्य पदयात्रा आरम्भ की है। यह पदयात्रा दो दो, तीन-तीन मील के छोटे-छोटे पड़ावों की सघन पदयात्रा है, जिसमें उनके साथ चार युवक कार्यकर्ता हैं, जिन्होंने उनके बताये रास्ते पर चलने का तय किया है।

ग्रामभारती!

इस २८ गाँवों के क्षेत्र को श्री धीरेन्द्र भाई ने 'ग्राम-भारती क्षेत्र' की संज्ञा दी है। बरनपुर के ग्रामवासियों ने ४० बीघा जमीन चार कार्यकर्ताओं को परिवारों के निर्वाह के लिए दी है। ६० बीघा जमीन उनके सर्वोदय-काम के खर्चे के लिए दी है और ८० बीघा में एक सार्वजनिक बाग लगे यह गाँव के लोगों ने सर्वसम्मति से तय किया है। सभी किसानों ने अपनी-अपनी जमीन का छठा भाग गाँव के भूमिहीन किसानों को दिया है। ६०-७० घरों के इस छोटे से गाँव में अब 'ग्रामभारती' खुलेगी। उससे पड़ोसी २८ गाँव लाभान्वित होंगे, क्योंकि किसी की दूरी ३ मील से अधिक नहीं है, इसलिए आसानी से आ जा सकते हैं और कार्यकर्ता भी किसी भी गाँव तक जाकर शाम को अपने केन्द्र पर लौट आ सकता है। इस ग्राम भारती की कल्पना को श्री धीरेन्द्र भाई गाँववालों को समझा कर फिर अन्नदान का कहते हैं, जिसे उनके दूसरे गाँव जाने के बाद फिर कार्यकर्तागण ले जायेंगे। उनका काम न्योता देना और फिर बाद में कार्यकर्ताओं का काम ग्रामवासियों से सतत सम्पर्क बनाये रखना है।

ग्रामभारती से क्या होगा?

ग्रामभारती में पूरा गाँव विद्यालय होगा, उसमें बूढ़े से लेकर बच्चे तक सब छात्र होंगे। वह तय करेगी कि—

(१) गांव में कोई भूखा नहीं रहेगा।
(२) गाव में कोई वस्त्रहीन नहीं रहेगा
(३) गांव में कोई बेकार नहीं रहेगा।
(४) गाव में कोई बीमार नहीं रहेगा।
(५) गाव में कोई अज्ञानी नही रहेगा।

उपर्युक्त पाँचों स्थितियों को प्राप्त करने के लिए ग्रामभारती में 'पंचयज्ञ' (अन्नयज्ञ, वस्त्र-यज्ञ, उद्योग-यज्ञ, चिकित्सा-यज्ञ और शान्ति-यज्ञ) की व्यवस्था होगी। अन्न-यज्ञ से अभिप्राय है खेती-सहकार। आज सहकारी खेती का बड़ा होहल्ला है, पर सहकार कभी दो सामग्री के बीच नहीं, दो मनुष्यों के बीच होता है। शरीर से भी नहीं, वरन् दिल-दिमाग से होता है। राजनैतिक एवं आर्थिक नहीं वरन् सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक भूमिका पर होता है। केवल लाभ बाँटने के लिए सहकार सच्चा सहकार नहीं है। ग्रामभारती में शिक्षक विद्यार्थी का सहकार तथा गाँव में दो से लेकर जितने सम्भव हो सकें, व्यक्तियों का परस्पर सहकार चलेगा। पहले वर्ष दो व्यक्तियों ने मिल कर खेती की। उसमें सम्मिलित शक्ति का उन्होंने प्रत्यक्ष प्रभाव देखा, तो अगले वर्ष एक-दो को अपनी सहकार में और शामिल कर लिया।

इसी तरह शिक्षकों के बीच भी दो शिक्षकों से लेकर आठ शिक्षकों तक का सहकार चल सकता है। टोली के दो परिवार जब अपने मेल के होंगे तो अधिक-से-अधिक परिश्रम करने की प्रेरणा स्वभावतः होगी, लेकिन साथ-साथ अगर पूरे समाज के चिन्तन का अभ्यास नहीं होगा तो टोली सहकार अत्यन्त संकुचित दायरे में होगा और ग्राम भावना का विकास नहीं होगा।

इस सबके लिए प्रेरणा

प्रेरणा प्रेरणा एक हौआ सा बन गया है। सहकार जब शिक्षण की निष्पत्ति होगी और वह सचेतन होगी, तब उसमें पुरुषार्थ की प्रेरणा दिखाई देगी। आज क्या होता है कि सरकार ने चकबन्दी शुरू की तो लोगों ने अपने भाई और रिश्तेदारों में जमीन बाट कर अपनी जमीन कम बतायी और कहीं-कहीं तो बाटने के बाद उन सबकी सहकारी समिति बना कर सरकार से जो कुछ आर्थिक सुविधा-सहायता मिल सकती थी, वह भी ले ली। और तो और, कल्पित नामों तक की समिति बनी! सरकारी रिपोर्ट में मथुरा की जिस समिति की भूरि भूरि प्रशंसा हुई कि वह अपने सदस्यों को विदेश अध्ययन के लिए भी भेजती है, उसके बारे पता चला कि वह एक परिवार की ही समिति है, जिसमें पिता भी सदस्य, पुत्र भी सदस्य हैं। आज पढ़े-लिखे लोग अपनी पढ़ाई का उपयोग धोखा देने में करते हैं, फिर समाज बदलेगा तो आखिर कैसे बदलेगा? इसलिए सबसे पहली जरूरत शिक्षा के ढाँचे में फर्क करने की जरूरत है।

विकल्प बुनियादी शिक्षा है तो!

आज की प्रचलित शिक्षा का विकल्प बुनियादी शिक्षा है जरूर और धीरेन्द्र भाई ने भी ग्रामभारती में बुनियादी, उत्तर बुनियादी वर्ग ही रखे हैं; पर उनका मानना है कि बुनियादी शिक्षा की भी बुनियाद बनाने की जरूरत है। बिना बुनियाद बनाये उसकी इमारत खड़ी नहीं होने वाली है। आज तो नयी बुनियाद की तालीम की जरूरत है। नीचे जमीन से ठेठ गाँव से उठे बिना नयी बुनियाद नहीं बनने वाली है।

नगरों का क्या होगा?

श्री धीरेन्द्र भाई का ऐसा कि स्वभाव है कि अगर, मगर, लेकिन; किन्तु सुनते ही वह तिलमिला उठते हैं और कहने लगते हैं, जिनको कुछ करना-धरना नहीं है वे शंकाएँ करना खूब जानते हैं! सारी समस्याओं को सिर पर ओढ़ कर सिर धुनने के बजाय, माथा पीटने और परिस्थिति की ढेर सारी निन्दा करते रहने से कहीं अच्छा है कि कहने वाला कुछ करना शुरू करे। आज की समस्याओं का छोर ढूँढ़ कर काम शुरू करने का समय है। दूसरा सिरा भी तभी मिलेगा।

चलते समय...

ग्वालियर से जब मैं श्री धीरेन्द्र भाई से मिलने चला था तो एक विद्यार्थी के नाते रास्ते में सोच रहा था कि विद्या की अर्थी ढोने वाले विद्यार्थी और उसमें कँधा लगाने वाले सभी लोग 'राम-राम सत्य है' की तरह चिल्ला चिल्ला कर कहते जरूर हैं कि आज की शिक्षा निकम्मी है, पर अर्थी को उतार कर चिता पर रखना, यानी विनोबाजी के शब्दों में पुराने का विसर्जन और विशेष का सर्जन नहीं होता, लेकिन मुझे २४ दिसम्बर को चांदी गाव में उनसे भेंट करने पर विशेष सर्जन का स्पष्ट संकेत मिला, उनके विचारों का सृजनात्मक पहलू भी दिखा, जिसमें कि वे आज स्वयं लगे हैं, कहते हैं कि मैं तो मिस्त्री हूँ, आखिरी दम तक इमारत बनाने का ही काम करूँगा।

—गुरुशरण

पाठकों की ओर से

गोआ का सवाल

[२२ दिसम्बर '६१ के "भूदान-यज्ञ" में गोआ में सैनिक कार्रवाई पर जो सम्पादकीय प्रकाशित हुआ था, उस पर विचार करते हुए श्री भाऊ धर्माधिकारी ने एक लम्बा पत्र लिखा है, उसके आवश्यक अंश यहाँ दिये जा रहे हैं। –सं०]

"भूदान-यज्ञ" के ता० २२ दिसम्बर १९६१ के अंक में मैंने आपका "गोआ का सवाल" वाला लेख पढ़ा। उस लेख में आप अपने ही पर (याने "गांधी के अनुयायी कहलाने वालों" पर) परीक्षण-ज्योति डालते तो मुझे जँचता, लेकिन आपने भारत सरकार की कार्रवाई पर लिखते हुए जो उसकी तीव्र समालोचना की है, वह मुझे अखरी है। मुझे इस बात का दुख हुआ कि आपके जैसे सम्यक् विचार रखने की इच्छा करने वालों का विचार-सन्तुलन उसमें बिगड़ा है। इस तरह की समालोचना करते वक्त अपनी (याने अहिंसानुयायियों की) जिम्मेवारी और कूवत का भान शायद आपके मन में नहीं था।

आपने उस लेख में लिखा है–"अपनी ही सरकार द्वारा की जा रही सैनिक तैयारियों और कार्रवाइयों का जाहिर विरोध करें और साफ-साफ कहें कि किसी भी हालत में शस्त्र उठाना या लड़ाई करना अनुचित और निन्दनीय है।" और आगे जाकर आप लिखते हैं–"यह जाहिर करना हमारा कर्तव्य है कि देश में ऐसे लोग भी हैं–चाहे उनकी संख्या मुट्ठी भर ही हो–जो इस तरह की कार्रवाई को सर्वथा उचित नहीं मानते हैं।"

मेरे मन में विचार आया कि ये जो "मुट्ठी भर" लोग हैं, उन्होंने या उनमें से किसीने क्या कभी यह बतला दिया था कि *गोआ जैसी हालत में शान्ति के तरीके से* कैसे पेश आना चाहिए कि जिससे देश की गर्दन पर टँगा हुआ खतरा तुरन्त खतम हो? क्या अन्तर्राष्ट्रीय सियासी मामलों को प्रत्यक्ष हल करने की इन "मुट्ठीभर" लोगों ने कभी कोशिश की है और सरकार को दिखा दिया है कि यह है अहिंसक तरीका, ऐसे मामलों को हल करने का?

मेरा स्मरण अगर गलत न हो, तो १९५५ में जब गोआ का सवाल महाराष्ट्र के प्रजासमाजवादी पक्ष ने उठा कर सत्याग्रह शुरू किया था, तब विनोबाजी ने कहा था कि ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय सवाल सरकार के ही स्तर पर हल किये जा सकते हैं और करने चाहिए, क्योंकि उसमें 'स्टेट-लेवल' के कई प्रश्न उपस्थित होते हैं। आप मानते हैं कि भारत सरकार ने अब तक शान्ति का ही तरीका अख्तियार किया था और गत १४ साल तक इसी तरीके से काम लिया था। लेकिन आपको उसके "अचानक सैनिक तैयारियों" का सखेद आश्चर्य होता है!

फर्ज कीजिये कि पुर्तगाल की राजनीति में भारत सरकार को तुरन्त खतरे का अन्देशा हुआ हो और समय पर कार्रवाई करने की आवश्यकता महसूस हुई हो, तो क्या परिणाम की दृष्टि से सरकार शान्ति की, याने अहिंसा की यह कार्रवाई कर सकती थी? सरकार के स्तर पर ऐसा, क्या शान्ति का तरीका आप सुझाते हैं, जो भारत सरकार ने अब तक नहीं आजमाया था?

इसीमें से और *कुछ मूलभूत सवाल* पैदा होते हैं, जिनके बारे में सोचना हम *"गांधी के अनुयायी कहलाने वालों"* का कर्तव्य हो जाता है। क्या सरकार का अन्तिम बल (अल्टिमेट सैंक्शन) शुद्ध अहिंसा हो सकता है? आज के राज्य का जो लोकतन्त्रात्मक स्वरूप है, उसको मद्देनजर रखते हुए क्या सरकार अहिंसा को ही अपना शस्त्र बना कर अपनी जिम्मेवारी *पूर्णतया अदा कर सकती है?* ("पूर्णतया" याने लोगों का पूर्ण प्रतिनिधित्व करते हुए) अब आज के "मुट्ठी भर" कल बहुसंख्यक हो जायेंगे या बहुसंख्यक पर अपना काबू पायेंगे तब तो बात अलग हो जाती है, यह कहने की जरूरत नहीं। टॉल्स्टॉय की "इवान दी फूल" वाली कहानी में इवान के शासन और देशरक्षण का जो चित्र खड़ा किया हुआ है, उस तरह की कार्रवाई की आज आप कल्पना करते हैं? आज की परिस्थिति में (याने लोगों की जो मानसिक अवस्था आज है उसमें) क्या वह व्यवहार्य होगा, उपयुक्त होगा, ऐसा आप मानते हैं?

खुद गांधीजी की भी ऐसी कल्पना नहीं थी। पाकिस्तान के बारे में एक दफा कहते हुए उन्होंने अपने भाषण में कहा था—

"वह (गांधीजी) सब प्रकार के लड़ाइयों के विरोधी हैं। किन्तु अगर पाकिस्तान से इन्साफ हासिल करने के लिए कोई तरीका शेष नहीं रहता और पाकिस्तान अपनी साबित गलतियों को मानने से इन्कार और नजरअन्दाज करता है, तो भारत सरकार को उसके खिलाफ लड़ने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। कोई लड़ाई नहीं चाहता। वह तो विनाश का रास्ता है, किन्तु किसी को यह सलाह नहीं दी जा सकती है कि अन्याय के सामने झुक जाओ।"

('दिल्ली डायरी', पृष्ठ ४०)

दूसरी जगह उन्होंने स्वराज्य-सरकार की अहिंसा की नीति के बारे में कहा था–

"राष्ट्रीय सरकार शी नीति अख्त्यार करशे ते तो हुं नथी जाणतो। आजना संजोगो जोता त्यांसुधी हुं जीवुं एम नथी लागतुं। पण हुं तो केटली वर्षोमां वधारे हदसुधी अहिंसक नीतिने खेंची शकाय एटली खेंचवानुं कहुं। जगतनी शांति अने दुनियानी नवरचनानी प्रगतिमां हिंदनो सच्चार हिस्सो होय। परन्तु साथे-साथे पण कहुँ के हिंदुस्तानमां अनेक लडायक प्रजा छे। हिन्दुस्ताननो इतिहास पण एवोज छे, अने तेथी राष्ट्रनी नीति कोइक सौम्य प्रकारना युद्धवाद तरफ झुकनारी तो हशेज। छता ए आशा तो जरूर राखीनेज हुं मरीश के छेल्लां त्रीस वर्षनी महेनत पाणीमां तो नहींज जाय अने साची अहिंसानुं प्रतिनिधित्व धरावनारो देशमां एक बलवान पक्ष हशेज..."

("बिहार की कोमी आगमां," पृष्ठ १४४)

गांधीजी हवा में बातें नहीं करते थे, इसका यह एक अच्छा सबूत है और "गांधी के अनुयायी कहलाने वालों" को अनुकरण करने लायक है। आदर्श अहिंसा-राज्य की कल्पना मन में रखते हुए भी गांधीजी स्वतंत्र भारत में लश्कर बरदाश्त कर सकते थे, क्योंकि लोकतन्त्र में लोगों की शक्ति का ख्याल रखना आवश्यक होता है।

उपर्युक्त उद्धरण में गांधीजी ने एक अहिंसानिष्ठ पक्ष की बात की है। उसकी आवश्यकता भी हम समझ सकते हैं। इस पक्ष से या ऐसे अहिंसानिष्ठ लोगों से यह अपेक्षा रखी जा सकती है कि ये अहिंसा का सामाजिक प्रयोग करें। हर क्षेत्र में, हर परिस्थिति में, हर स्तर पर करें; जिससे लोगों को अहिंसा में आहिस्ता-आहिस्ता *विश्वास और श्रद्धा* होने लगे, उनकी मानसिक अनुकूलता बढ़े, अहिंसा की आवश्यक तालीम वे पायें, इस तालीम से उनकी अहिंसक ताकत बढ़े। ऐसी तालीम से शायद आज के "मुट्ठी भर" कल आम लोगों का नेतृत्व भी कर सकेंगे, देश में अहिंसा की आबोहवा पैदा होगी। अहिंसा से ही राष्ट्र का रक्षण, विश्वशांति को धक्का न पहुँचाते हुए हो सकता है यह निष्ठा स्थिर होगी। ऐसी प्रक्रिया जब तक नहीं हो पाती, तब तक सरकार से अहिंसा-निष्ठा की और अहिंसक तरीके की अपेक्षा रखना अयुक्त होगा। अभी "शांति-सैनिकों" के बीच श्री जवाहरलालजी ने जो नम्रता और सहानुभूतिपूर्ण भाषण किया, उसमें क्या यही अपेक्षा प्रकट नहीं होती?

अच्छा, दूसरा एक सवाल यह कि "अहिंसक" तरीका याने कैसा तरीका? सिर्फ शस्त्र-संन्यास का या हृदय-परिवर्तन का? पहला तरीका याने "पैसिव रेसिस्टेन्स?" अगर अहिंसा के मानी हृदय-परिवर्तन नहीं होता, तो वह कुछ काम की नहीं रहती। क्या आप भारत सरकार से हृदय-परिवर्तन के तरीके की अपेक्षा रखते थे? और अगर ऐसा सवाल किया जाय कि भारत सरकार ने अहिंसा-नीति की प्रतिज्ञा कब की थी, तो उसका क्या जवाब है? क्या सचमुच कांग्रेस ने भी कभी गांधीजी की अहिंसा उसके सच्चे मानी में अपनायी थी? आप कहते हैं कि "हिन्दुस्तान जैसे बड़े राष्ट्र की आजादी हमने अहिंसक आन्दोलनों के जरिये हासिल की", लेकिन वह अपूर्ण सत्य है। स्वराज्य-प्राप्ति तक कांग्रेस की नीति शांतिपूर्ण उपायों की ही रही और आज भी भारत सरकार शांतिपूर्ण उपायों से ही बँधी हुई है। "शांतिपूर्ण (पीसफुल)" का अर्थ गांधीवाले भले ही "अहिंसक" करें, सरकार का अर्थ है सिर्फ "शांतिमय" और "पीस" की मानी अन्तर्राष्ट्रीय "कोड" में जो गृहीत है, वही है। वह अहिंसा नहीं है, यह तो स्पष्ट है।

ऐसी वस्तुस्थिति में अगर आपके जैसे विचारवान गोआ के किस्म की सरकारी कार्रवाई पर अपना निषेध प्रकट करेंगे, तो वह शायद देशद्रोह नहीं, लेकिन नासमझी जरूर मानी जायगी। उसमें तारतम्यभाव का अभाव दीख पड़ेगा।

आज जो "मुट्ठी भर" हैं, उनको सिर्फ हवा में बातें करना ठीक नहीं होगा। आर्थिक क्षेत्र में जिस तरह हमने "भूदान" का प्रयोग सिद्ध किया, उसी तरह सियासी मामलों में भी हमको अपना प्रयोग सिद्ध करके बताना होगा। वरना हममें सिर्फ "सेल्फ राइचसनेस" की भावना बढ़ेगी, शक्ति नहीं आयेगी। सुज्ञेषु किं बहुना?

–भाऊ धर्माधिकारी

साम्प्रदायिकता की जड़ें...

[पृष्ठ ३ का शेष]

निकालना होगा। गीताकार ने इसीलिए भगवान की शरण में आने का रास्ता बताया है। खाना तो खाओ, किन्तु खाना खाने को धर्म मत समझो। धर्म भगवत् दर्शन ही को समझो। भगवत् दर्शन के लिए देह का पोषण जरूरी है, इसलिए खाना खाओगे तो देह-पोषण के लिए जितना और जो भोजन चाहिए उतना और वही भोजन करोगे और वह भी अपना हक मान कर नहीं, बल्कि यज्ञशेष प्रसादी के रूप में। सबको खिला कर खाने की भावना यज्ञ भावना है। गीताकार ने ही "सर्वभूत हिते रत", यानी भूतमात्र के हित चिन्तन की वृत्ति को यज्ञ-वृत्ति कहा है।

बाईबिल में जब यह कहा गया कि "जब मैं भूखा था तब तूने मुझे खिलाया नहीं···" तो इसका अर्थ यही है कि उसकी सृष्टि में जो भूखे लोग थे, उनको तूने खिलाया नहीं। संक्षेप में देह को ही अन्तिम सत्य मान कर उसके पोषण के लिए जो प्रयत्न होते हैं, उनमें से पाप का निर्माण होता है। मनुष्येतर सारे प्राणी इस पाप में फँसे हुए हैं। वे आहार प्राप्ति को अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं। दूसरों को मार कर, हटा या भगा कर भी वे आहार प्राप्त करने को अपना धर्म मानते हैं और अपने इस धर्म के पालन में अपनी जान तक दे डालते हैं!

मनुष्य पशु से इसीलिए अधिक विकसित और श्रेष्ठ माना गया है कि वह देह और देही के अन्तर को समझता है। शरीर नाशवान है और आत्मा शाश्वत। शरीर अति संकुचित है और आत्मा सर्व-व्यापक, शरीर गागर है तो आत्मा सागर, महासागर। वन्दनीय सागर ही है गागर नहीं, गागर तो एक साधन मात्र है। इस भावना से, प्राणी मात्र में समाविष्ट परमात्मा का दर्शन करते हुए प्राणी मात्र की रक्षा और पोषण के आयोजन को यज्ञ कहना चाहिए। समाज में सबके रक्षण और पोषण के आयोजन की वृत्ति में से सामाजिकता पैदा होती है। मुझे भूख लगती है, इसलिए सबको भूख लगती होगी और खाने से मेरी भूख मिटती है, इसलिए खाने की सबको जरूरत है। मुझे खाना पैदा करना चाहिए। बाईबिल कहती है, तुझे पृथ्वी की क्षति पूर्ति के लिए और अन्न की वृद्धि के लिए कृषि करनी चाहिए। गीता कृषि को यज्ञ मानती है। कृषि तथा उपभोग की अन्य सामग्रियों के उत्पादन में जहाँ तक यज्ञ की भावना रहेगी, वहाँ तक मनुष्य की सामाजिकता बढ़ेगी। यज्ञ लोकहिताय होता है, किन्तु व्यवसाय में स्वार्थ बुद्धि रहती है। व्यवसाय-बुद्धि में व्यक्तिगत दैहिक स्वार्थ प्रधान रहता है और इसलिए उसमें से साम्प्रदायिकता उत्पन्न होती है।

आज जीवन के धार्मिक क्षेत्र में ही नहीं, राजनीतिक, आर्थिक आदि प्राय सभी क्षेत्रों में व्यवसाय बुद्धि प्रधान हो गयी है। इसलिए साम्प्रदायिकता भी विविध क्षेत्रीय हो गयी है। राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, यहाँ तक कि राष्ट्रीय क्षेत्र में भी साम्प्रदायिकता ने अपने पैर जमा लिये हैं। प्रत्येक राष्ट्र अपने राष्ट्रीय स्वार्थों की पूर्ति के लिए दूसरे राष्ट्रों से सौदे कर रहा है, स्पर्धा कर रहा है। जिस दिन प्रत्येक राष्ट्र अपने राष्ट्र के व्यक्तिगत स्वार्थ की दृष्टि से सोचना बन्द करके अखिल विश्व और अखिल मानव समाज के हित की दृष्टि से सोचना शुरू करेगा उस दिन सारे युद्ध खत्म हो जायेंगे, विश्व में शान्ति कायम होगी और सच्चे समाजवाद का दर्शन होगा। दरअसल "सब धर्मों को छोड़ कर मेरी शरण में आ", ऐसा कह कर भगवान् ने सब प्रकार के धार्मिक, राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक या राष्ट्रीय संकुचित स्वार्थों को छोड़ कर "सर्वभूत हिते रत" के परम परमार्थ की ओर बढ़ने का ही आदेश मनुष्य को दिया है। गांधीजी ने भगवान के इस आदेश को मान कर ही अपने राष्ट्रीय स्वार्थ से ऊपर उठ कर पाकिस्तान को उसके हिस्से का रुपया दिलाने का आग्रह किया। साम्प्रदायिकता के अन्तिम बन्धन को भी गान्धीजी ने तोड़ दिया। हाँ, इस बन्धन को तोड़ने की कीमत उन्हें जरूर अपने प्राणों से चुकानी पड़ी।

सर्वोदय पखवारा और हमारा कर्तव्य

[३० जनवरी से १२ फरवरी तक देश भर में सर्वत्र 'सर्वोदय-पक्ष' मनाया जाता है। किन्तु आज आवश्यक है कि बापू के स्मरण के साथ-साथ वे जो निष्ठाएँ छोड़ गये, उन पर अमल करें। ग्राम-स्वराज्य-समिति के अध्यक्ष श्री ध्वजाप्रसाद साहू द्वारा प्रस्तुत निवेदन, आशा है, हम सबके लिए इस अवसर पर प्रेरक होगा। —सं०]

वर्ष के ये चौदह दिन राष्ट्र के जीवन में विशेष महत्त्व के हो गये हैं। ३० जनवरी को बापू हमसे अलग हुए, इसलिए यह हमारे लिए स्मरण का दिन है। लेकिन १२ फरवरी—जिस दिन चौदह वर्ष पहले हमने उनका श्राद्ध किया, अब हमारे लिए श्रद्धा का दिन हो गया है। इसलिए इन चौदह दिनों का महत्त्व इस बात में है कि इस अवसर पर हम बापू का हृदय से स्मरण करें और हमारे लिए जो जीवन-निष्ठाएँ वे छोड़ गये हैं, उनके प्रति अटल श्रद्धा प्रकट करें।

पिछले वर्षों से हम इस अवधि को श्राद्ध-पक्ष के रूप में मनाते आये हैं। मुख्य रूप से हमारा प्रयत्न यह रहता है कि हम सूतांजलि के रूप में अधिक-से-अधिक सूत गुण्डियों का संग्रह करें। कार्यक्रम की यह रूपरेखा हम कायम रखें, यह आवश्यक है।

साथ ही हमारी चेष्टा इस दिशा में भी होनी चाहिए कि बापू की जीवननिष्ठाएँ जन-जीवन में फैलें और सूतांजलि का संग्रह श्रद्धापूर्ण समर्पण द्वारा हो, क्योंकि सूत-गुण्डी के पीछे अगर देने वाले की श्रद्धा नहीं है तो वह सर्वोदय का वोट कैसे होगी? आज आवश्यकता है, गांधी-विचार के प्रति मूलभूत, विवेकपूर्ण श्रद्धा जगाने की।

बापू ने चरखे और खादी को अहिंसा का प्रतीक बनाया। अगर हम मानते हैं कि खादी के द्वारा अहिंसा की अर्थनीति (स्वावलम्बन), राजनीति (लोकनीति) और अन्त में जीवन-नीति (सर्वोदय) का प्रतिनिधित्व हो सकता है और अगर हमें विश्वास है कि खादी शोषण और दमन से ग्रस्त मानव की मुक्ति का वाहन बन सकती है, तो अब तत्काल आवश्यक है कि हम राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं की भूमिका में खादी का सर्वांगीण विचार जनता के सामने प्रस्तुत करें और इसके लिए गोष्ठियों तथा सभाओं आदि के द्वारा सघन, सुनियोजित विचार-प्रचार अविलंब आरम्भ कर दें।

देश में लाखों घरों में हमारा चरखा चलता है, लाखों गाँवों में खादी आदर के साथ पहनी जाती है और हजारों साथी कोने कोने में खादी ग्रामोद्योग का काम करने में लगे हुए हैं। इतना विशाल खादी परिवार हो, फिर भी भारतीय गगन में खादी का घोष न ध्वनित हो, यह चिंता का विषय है। हमारा निवेदन है कि इस अवसर पर हम व्यक्तिगत और सामूहिक रूप से सोचें कि यह स्थिति क्यों है और कैसे दूर हो सकती है। हम सोचें कि कैसे हम कातने वाले, बुनकर, दूसरे कारीगर तथा ग्राहक की बुद्धि और भावना में प्रवेश कर सकते हैं और यह प्रतीति जगा सकते हैं कि खादी-ग्रामोद्योग का काम जितना हमारा है, उतना ही उनका है। हमें विश्वास है कि प्रतीति जग जाने पर हमारा खादी परिवार निश्चित रूप से राष्ट्रीय जीवन को रचनात्मक मोड़ दे सकता है।

इस भूमिका को सामने रख कर हम ३० जनवरी से १२ फरवरी तक का कार्यक्रम बना सकते हैं। प्रभात फेरी, सायंकालीन कताई, प्रार्थना, सभा-प्रवचन आदि कार्यक्रम हम बराबर रखते आये हैं और इन्हें आगे भी रखना है। साथ ही-साथ मेरा सुझाव है कि अब हमारी चेष्टा मुख्य रूप से खादी-परिवार को विचार सूत्र में बाँधने की होनी चाहिए। कातने वाले, दस्तकार खादी कार्यकर्ता तथा खादी प्रेमी नागरिक—इनमें से कोई भी अछूता न रह जाय। विशेष रूप से गाँवों में, जहाँ हमारी लाखों कत्तिनें बिखरी हुई हैं, कुछ व्यवस्थित कार्यक्रम रखा जाय। १२ तारीख को स्वच्छ स्थान पर गांधीजी का चित्र रखा जाय, वहाँ सब श्रद्धा से एकत्रित हों, कताई करें, गांधी विचार की सरल, सुबोध भाषा में चर्चा सुनें और सूतांजलि समर्पित करें। गाँववालों के सामने ग्राम-स्वराज्य का विचार रखा जाय, उनमें ग्राम भावना जगायी जाय और ग्राम-सहकार के लिए प्रेरित किया जाय।

आशा है, सब इस दिशा में अवश्य अपना कार्यक्रम बनायेंगे और सुनियोजित ढंग से इस सर्वोदय पक्ष को सफल बनायेंगे।

—ध्वजाप्रसाद साहू,
अध्यक्ष
खादी ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य समिति
राजघाट, काशी।

सर्वोदय भावना...

[पृष्ठ २ का शेष]

चाहिए कि गाँव में इतना झगड़ा, कलह, फूट, अनाड़ीपन रहते हुए हम कैसे काम शुरू करें! आखिर में कहीं-न-कहीं से हमें शुरू तो करना ही होगा। इसीलिए तो गांधीजी ने कहा कि गाँव में हमारे काम करने का ढंग ऐसा होना चाहिए कि चरखे बीच में हो, उसके एक बाजू में दूसरे-दूसरे उद्योग हों और दूसरी बाजू में नयी तालीम हो और कृषि-आधार हो।

इस ढंग से इन सभी कामों को करने वाली जितनी भी संस्थाएँ गाँवों में हैं, उनकी एक समन्वय समिति होनी चाहिए और सबके सब अपने को नये मोड़ में ढालते हुए एक जोली से गाँव के समग्र विकास में लग जाना चाहिए। जैसे-जैसे वे गाँव के बनाने के बारे में सोचेंगे, उनका और गाँव का भी विकास होने लगेगा। धीरे-धीरे वे संस्थाएँ समुन्नत ढंग से सोचने लग जायेंगी। गाँवों में काम करने वाली जितनी संस्थाएँ हैं और उनमें जितने कार्यकर्ता हैं इन सबका यही कर्तव्य है कि गाँव के लोगों की चाहे वे कैसे ही क्यों न हों, प्रगति और सेवा करनी है। यदि गाँव वालों को हम अप्रगतिशील और अविकसित कह कर उन्हें छोड़ दें, तो फिर सेवा के लिए रह ही क्या जाता है? आज हम

कुछ ऐसा ही मान कर चल रहे हैं, ऐसी बात मेरी समझ में आ रही है। भले ही मेरा ऐसा समझना गलत हो, लेकिन मुझे ऐसा लग रहा है कि अगर कहीं ऐसा विचार है तो भूल है। दूसरे, मुझे ऐसा लगता है कि गाँव वालों के मार्गदर्शन के लिए जितने कार्यकर्ता एवं गाँव में रहने वाले होंगे, उन्हें किसी-न-किसी एक विषय का विशेषज्ञ होना होगा। साथ ही उसमें उनका अपना विश्वास भी होना चाहिए। किन्तु सिर्फ विश्वास ही नहीं, वरन् जब उनमें अपने विश्वास को जीवन में उतारने की क्षमता होगी, तभी विश्वासपूर्वक गाँवों में वे अपनी दृष्टि दे सकेंगे। आज सबसे अधिक अभाव यह है कि विश्वासपूर्वक काम प्रारंभ करने की क्षमता कार्यकर्ताओं में नहीं है, जिससे निराश होकर वे कहीं-न-कहीं अटक जाते हैं। कार्यकर्ता का ध्यान एक ओर जाना चाहिए कि जिस समाज में वे रह रहे हैं वहाँ अपने को बहुत बड़ा त्यागी, विद्वान आदि नहीं बताना चाहिए। अधिक बताने से समाज उनको अपना नहीं पाता है, बल्कि अपने को असमर्थ पाता है। जैसे-जैसे समाज का विकास होता जाय, वैसे-वैसे कार्यकर्ता भी आगे बढ़ता जाय। जल में कमल के पौधे की जैसी गति होती है, वैसी गति कार्यकर्ता की होनी चाहिए, यानी पानी एक हाथ बढ़ता है, तो कमल का पौधा सवा हाथ।

विचारों को हमें समाज में बहुत भारी और गंभीर बना कर नहीं रखना चाहिए, जिससे कि जन-साधारण उसको अपने जीवन से उतार नहीं सके और उसके अनुकूल चलने में अपने को समर्थ नहीं पा सके। यह सब क्षमता होनी चाहिए कार्यकर्ताओं की। इस ढंग से काम प्रारंभ हो जाने पर हर जगह समस्या का निदान भी आपसे आप होता जायगा। चूँकि आज काम विचार में है, आचार में नहीं है इसलिए समस्या ज्यों की त्यों बनी ही नहीं है, बल्कि दिन-प्रतिदिन जैसे-जैसे हमारा विचार ऊँचा उठता जा रहा है और आचार जहाँ का तहाँ है। वैसे-वैसे समस्या भी हमारी बड़ी होती जा रही है, समस्या का निदान तो आचार से निकलनेवाला है।

अंत में इतना विचार स्पष्ट कहूँ कि हम लोग जहाँ कहीं भी हैं, आपस में एक-दूसरे के विचार से लाभान्वित होते हुए लोगों को कुशल कारीगर बनाने के लिए, कोई-न-कोई काम प्रारम्भ हमें करना ही चाहिए। तभी हम (कार्यकर्तागण) पुरुषार्थी बनेंगे और समाज जितना भार उठायेगा और जितनी कारीगरी बढ़ेगी उसी अंश में समाज भी पुरुषार्थी बनेगा। हम सबों से जितना बन पड़ेगा, उतना हम करेंगे, बाकी आनेवाली पीढ़ी करेगी। आज अच्छे कामों की नींव तो पड़ ही जानी चाहिए।

उम्मीदवार और मतदाता

आचार-संहिता पर अमल करें

श्री ओम् प्रकाश त्रिखा की अपील

पंजाब के हिसार जिले की राजनैतिक पार्टियों के प्रतिनिधियों तथा आम चुनावों में खड़े होने वाले उम्मीदवारों की एक सभा में भाषण करते हुए पंजाब सर्वोदय मण्डल के संयोजक श्री ओमप्रकाश त्रिखा ने अपील की कि वे सब चुनावों में आचार-संहिता पर निष्ठा रखते हुए अमल करें।

इस सभा का आयोजन जिला सर्वोदय-भूदान मण्डल, हिसार द्वारा किया गया था। उन्होंने कहा कि यह संहिता ५ जनवरी की बैठक में जो जालन्धर में हुई थी, सभी दलों द्वारा स्वीकार की गयी है।

उन्होंने इस आचार-संहिता पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला। कुछ वक्ताओं द्वारा प्रकट की गयी शंकाओं का निराकरण करते हुए श्री त्रिखा ने कहा कि आचार-संहिता पर अमल करवाने के लिए हमारे पास कोई कानून अथवा शक्ति नहीं है। हम केवल जनता को लोक-शिक्षण देना चाहते हैं, ताकि चुनाव में सवैधानिक और शान्तिपूर्ण ढंग से सम्पन्न हो। इस सभा में दादा गणेशीलाल, बख्शीराम किशन, बा० जुगल, किशोर, श्री बाबूनन्द शर्मा तथा श्री सहीराम जोहर ने अपने विचार व्यक्त किये।

इस सप्ताह जिला सर्वोदय भूदान-मण्डल द्वारा ग्राम चौटाला, मण्डी डबवली हिसार, डाबड़ा, लाडवा, में सार्वजनिक सभाएँ आयोजित की गईं, जिनमें इस आचार संहिता पर प्रकाश डाला। महाराष्ट्र के श्रीकान्त आपटे, दादा गणेशीलाल तथा श्री जयनारायण और श्री परमानन्द जी भवनेश ने भाषण दिये।

पंजाब में पदयात्रा

श्री हलधर भाई और श्री बनवारी लाल २३ सितम्बर '६१ से १४ जनवरी '६२ तक भटिंडा, गुड़गाँव, महेन्द्रगढ़, हिसार, संगरूर, रोहतक और दिल्ली में पदयात्रा करने के बाद करनाल जिले में पदयात्रा कर रहे हैं। अब तक ७८१ मील की पदयात्रा हुई है।

बिहार सर्वोदय-पद-यात्रा टोली का मुंगेर जिले में परिभ्रमण

बिहार प्रान्तीय सर्वोदय पदयात्रा-टोली द्वारा मुंगेर जिले में क्रमशः श्री ब्रजमोहन शर्मा श्री उदित नारायण चौधरी एवं श्री ब्रजनन्दन भाई के नेतृत्व में १९६ मील की पदयात्रा हुई। कुल १० ग्रामों में ४७ पड़ाव हुए तथा १२० ग्रामों से सम्पर्क हुआ। भयङ्कर शीतलहरी में भी यात्रा खण्डित नहीं हुई। इस अवधि में ८५ दानपत्रों द्वारा १७७९ कट्ठे का दान मिला। स्मरण रहे कि गोविन्दपुर ग्राम का पूरा बीघे कट्ठे का दान मिला है। 'भूदान-यज्ञ' पत्र के २६ ग्राहक बने, ४८ रुपये की साहित्य एवं १७९२ रुपये की खादी-बिक्री हुई।

१ जनवरी से प्रान्तीय टोली की पदयात्रा दरभंगा जिले में होने वाली थी, लेकिन १६ जनवरी से पटना जिले में पदयात्रा प्रारम्भ हुई है। स्व० लक्ष्मी बाबू की स्मृति में यह टोली १५ अगस्त '५८ से निरन्तर पदयात्रा कर रही है।

राजस्थान की अखंड पदयात्रा

सीकर जिले के कार्यकर्ता श्री देवर निडर और मनभावती बहन १२ वर्ष से राजस्थान की पदयात्रा करने वाले हैं। शुरुआत में चुनावों के लिए आचार-संहिता और नशाबंदी का प्रचार करेंगे। इन्होंने एक 'सर्वोदय अन्ताक्षरी' नाम की पुस्तिका भी प्रकाशित की है। इस अवसर पर विनोबाजी ने उनको पत्र द्वारा आशीर्वाद दिया।

पत्र में विनोबाजी ने लिखा है :

> सर्वोदय विचार-प्रचार के लिए जन्म भर की पदयात्रा दोनों मिल कर सोच रहे हो, यह खुशी की बात है। आशा करता हूँ कि जनता का अच्छा सहयोग आपको मिलेगा।

पोस्टरों के लिए जाँच समिति नियुक्त

भारत सरकार ने फिल्मों के पोस्टरों के प्रकाशन के पूर्व उनकी जाँच के लिए फिल्म निर्माताओं की सलाह से एक अनौपचारिक समिति बनायी है, जिसमें कुछ प्रमुख निर्माता भी हैं।

पिछले महीने गृहमंत्री, सूचना-मंत्री, फिल्म के विभिन्न संघों के प्रतिनिधि और कुछ निर्माताओं के बीच चर्चा के परिणाम स्वरूप यह निर्णय लिया गया।

इस समिति के अध्यक्ष फिल्म डिविजन बम्बई के कंट्रोलर हैं। दूसरे अन्य सदस्य हैं : सर्वश्री मेहबूब खान, जे० बी० एच० वाडिया, बी० आर० चोपड़ा, विजय भट्ट और के० एम० मोदी।

समिति पोस्टरों को छापने के पहले उनको देखेगी, जो पोस्टर अवांछनीय मालूम होंगे, उनको या तो छापने के लिए मंजूरी नहीं देगी अथवा उनमें कुछ संशोधन या परिवर्तन के बाद छापने के लिए मंजूर करेगी।

मुरैना जिले में मतदाता मंडल की स्थापना का प्रयत्न

मध्य प्रदेश के मुरैना जिले में विजयपुर, सबलगढ़ और जोरा क्षेत्र में मतदाता मंडल की स्थापना के उद्देश्य से श्री लक्ष्मीचन्द वैश्य ने सबलगढ़ में १५ जनवरी को एक सम्मेलन बुलाया। अपने स्वागत भाषण में श्री लक्ष्मीचन्द वैश्य ने विस्तार से सर्व सेवा संघ के चुनाव नीति पर प्रकाश डालते हुए मतदाता मंडलों की स्थापना का उद्देश्य बताया।

इस अंक में

विनोबाजी का पता :

मार्फत—मौजादार
पो० ढकुआखाना
जिला : नार्थ लखीमपुर (असम)

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९०५० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९०५० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ९ फरवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक १९

दुनिया की रक्षा अहिंसा-शक्ति ही कर सकती है

विनोबा

आप एक ऐसे नगर के नागरिक हैं, जो प्राचीन सभ्यता का प्रतिनिधि है और साहित्य का एक बड़ा केन्द्र है। यह सारे आसाम के मध्य-स्थान में है और धीरे-धीरे हो यह रहा है कि यह आपका जोरहाट नगर अन्तर्राष्ट्रीय केन्द्र बनने जा रहा रहा है। आज तक यह भारत के एक कोने में था और दुनिया के भी एक कोने में था। उसकी एक बाजू बड़ा भारी हिमालय पहाड़ और दूसरी बाजू ब्रह्मदेश का बड़ा पहाड़, इस तरह चारों ओर से यह पहाड़ों से घिरा हुआ है। आज भी वे पहाड़ अपनी-अपनी जगह कायम हैं। पहाड़ों ने अपनी जगह नहीं छोड़ी, लेकिन पहाड़ों का पहाड़पन अब खतम हो गया। अब ये पहाड़ छोटे हो गये।

एक जमाने में हिमालय पहाड़ चीन को भारत से अलग कर रहा था, लेकिन अब ऐसा काम वह नहीं कर रहा है। मनुष्य के हाथ में अब ऐसे औजार आ गये हैं कि वह बड़े-बड़े पहाड़ लाँघ सकता है। अपने यहाँ वैष्णवों ने गाया है : 'पंगुम् लंघयते गिरिम्'—भगवत् कृपा से पंगु गिरि लाँघ सकता है। लेकिन अब पंगु तो क्या, एक कुत्ता भी गिरि लाँघे, ऐसी शक्ति मानव के हाथ में आयी है। तिब्बत से भारत में आना अब दस मिनट का काम समझ लीजिये। दुनिया में चीन और भारत सबसे बड़े देश माने जाते हैं। भारत की जनसंख्या पाकिस्तान के साथ गिने तो ५० करोड़ और ख्याल है कि चीन की ७५ करोड़ होगी।

दोनों देश दुनिया के सबसे प्राचीन देश हैं, जिनकी सभ्यता, संस्कृति पाँच-पाँच हजार साल से लगातार चली आयी है। ऐसे दो देशों का संपर्क हुआ है, कुछ खट्टा सा। वह मीठा भी बन सकता है और ज्यादा खट्टा भी यह संबंध कायम के लिए बना है। यह कोई एक, दो या दस साल का सवाल नहीं है। जो विज्ञान-शक्ति मनुष्य को हासिल हो गयी है, उस हालत में पहाड़ छोटे पड़ गये, और भी छोटे पड़ जायेंगे। अब मनुष्य चन्द्र पर जाने की तैयारी कर रहा है, ऐसी हालत में हिमालय क्या करेगा? वह तो छोटा-सा टीला हो गया। उसको गिरि, पर्वत नाम देना भी ठीक नहीं। इस हालत में चीन और भारत का संबंध कायम के लिए आया ऐसा कहना चाहिये। योरप में फ्रांस और जर्मनी के बीच ६०-७० साल से लड़ाइयाँ चल रही थीं। उसके परिणामस्वरूप दो महान् जागतिक युद्ध हो गये और कुल दुनिया को इसका परिणाम भुगतना पड़ा। ये तो दुनिया के दो छोटे देश हैं। लेकिन चीन और भारत तो दुनिया के सबसे बड़े देश हैं। इसलिए यह सोचने की बात है।

दुनिया की स्थिति क्या है, इसका भान हमारे हर काम में हमको रखना होगा। हम एक भी काम ऐसा नहीं कर सकते, चाहे वह छोटा भी क्यों न हो, जिसमें विश्व की स्थिति की तरफ ध्यान न दें। आज कोई नहीं कह सकता कि एक साल में या दो साल में, क्या अष्ट-भ्रष्ट आने वाला है! न केनेडी कह सकता है, न क्रुश्चेव। वह किसी की शक्ति के बाहर की बात हो गयी। दुनिया का भविष्य क्या है, कोई नहीं कह सकता। ऐसे बड़े-बड़े बम तैयार हो रहे हैं। कहते हैं कि उसके लिए भंडार बनाते हैं, उसकी रखवाली करनी पड़ती है, सिपाही रखने पड़ते हैं। मान लीजिये, किसी सिपाही को नींद आयी और कोई बटन अनवधान से दब गया, तो सारी दुनिया नष्ट हो सकती है! जानबूझ कर प्रयोग करें, तब तो दुनिया खाक होगी ही, लेकिन गफलत से भी स्फोट हो जाय, तब भी दुनिया नष्ट हो जायगी, ऐसी हालत है। दिन-ब-दिन भय बढ़ रहा है। जर्मनी जैसे एक देश पर रूस और अमेरिका, दोनों टूट पड़े। एक जमाने में ये रूस, अमेरिका, इंग्लैंड, सारे दोस्त थे; लेकिन जब जर्मनी कब्जे में आ गया, तब ये जो परम मित्र थे, वे परम शत्रु हो गये! दोनों आमने सामने खड़े हैं, बीच में है जर्मनी। तो उसके दो टुकड़े कर दिये। उसमें भी बर्लिन आ गया, जो एक-दूसरे को देना नहीं चाहते थे, तो उसको बाँट लिया। आधा बर्लिन उनके हाथ में, आधा बर्लिन इनके हाथ में! अब यह बड़ा भारी मसला पैदा हुआ कि क्या किया जाय?

दो भाइयों का आपस-आपस में झगड़ा हुआ, तय किया कि बँटवारा हो। दस एकड़ जमीन थी। पाँच-पाँच एकड़ बाँट ली। थोड़े पैसे थे, वह भी बाँट लिये। अब बचे माँ और बाप! एक ने कहा कि माँ हमको दे दो, बाप तुम ले लो। तो दूसरा कहता है कि माँ की बराबरी बाप कभी नहीं कर सकता, इसलिए समान बँटवारा होना चाहिये, तो माँ और बाप दोनों के दो-दो टुकड़े किये जायँ और दोनों में बाँटे जायँ। फिर क्या पूछते हो? यही अक्ल इन लोगों (बड़े राष्ट्रों) ने बतायी। बर्लिन के दो टुकड़े कर लिये। एक ही शहर में कोट बना रहे हैं, इधर से उधर आ नहीं सकते!

यह तो बच्चों के खेल जैसा लगता है। लेकिन ये बच्चे बड़े भयंकर हैं। उनके हाथ में शस्त्र आया है। भस्मासुर को वरदान मिला है! उनकी कृपा जिस देश पर उतरेगी, उसका भस्म हो जायगा। अब क्या किया जाय? मोहिनी शक्ति आनी चाहिये तब काम होगा। उसके बाद ये लोग अपने सिर पर हाथ रख कर नाचेंगे तब उनका भस्म होगा और दुनिया का छुटकारा होगा। इसलिए कहता हूँ कि अहिंसा शक्ति प्रकट होनी चाहिये। वह ही विष्णु की मोहिनी शक्ति है। उसके असर से ये लोग अपने हाथ से शस्त्र शक्ति खतम करेंगे। आज एक-दूसरे के शस्त्र खतम करते हैं।

बचपन में मैंने बड़ौदा में देखा था कि घर की महिलाएँ अपने छोटे बच्चे को सामने वाले घर के आगन में शौच के लिए बिठाती थी, तो सामने की घरवाली भी अपने बच्चे को दूसरी के घर के आगन में बिठाती थी! यह तमाशा मैं रोज देखता था। एक दिन मैंने पूछा कि बहन, शौच बिठाना है तो अपने ही घर के सामने बिठाओ न! ऐसा पराश्रयी या परस्परावलंबी कार्यक्रम क्यों? ऐसी हालत आज है। दोनों देशों के बीच दुनिया खतम हो सकती है। इसलिए जब मोहिनी का अवतार होगा, तब दुनिया की रक्षा होगी और किसी अवतार में यह सामर्थ्य नहीं है। मोहिनी शक्ति, अहिंसा-शक्ति हमें सही करनी है।

जोरहाट (असम) में विनोबाजी ने ९ दिसम्बर को जो महत्त्वपूर्ण प्रवचन दिया, उसका एक अंश।

राजनीति और लोकनीति में अंतर

राजनीति और लोकनीति की भूमिका में तथा प्रक्रिया में यह मूलभूत अन्तर है :

(१) राजनीति से राज्यवाद पुष्ट होता है। लोकनीति से नागरिक पुरुषार्थ को प्रोत्साहन मिलता है।

(२) राजनीति राज्य-संस्था को लोक-कल्याण का मुख्य उपकरण मानती है, इसलिए वह लोगों को राज्यावलम्बी एवं सत्ताभिमुख बनाती है। लोकनीति नागरिकों को एक-दूसरे की स्वतन्त्रता के अभिभावक मान कर उनके अभिक्रम से स्वायत्त संस्थाओं के द्वारा लोक-हित का मार्ग प्रशस्त करती है।

(३) राजनीति में प्रशासन अधिक विस्तृत और तीव्र होता जाता है, लोकनीति में प्रशासन की जगह अनुशासन और आत्मसंयम लेता है।

(४) राजनीति में सत्ता की प्रतिस्पर्धा और अधिकार-ग्रहण तथा प्रतिनिधित्व के लिए उम्मीदवारी होती है, लोकनीति में लोकचारित्र्य के विकास के लिए सेवा की तत्परता होती है, उम्मीदवारी का निषेध होता है।

(५) राजनीति में प्रत्येक नागरिक अपने-अपने अधिकार और स्वत्व के प्रति नित्य जागरूक रहता है, लोकनीति में हर नागरिक अपने कर्तव्य के प्रति और पड़ोसी के अधिकार के प्रति जाग्रत रहता है।

—दादा धर्माधिकारी

धीरेन्द्र भाई के विचार

सर्वोदय-आंदोलन और सर्व सेवा संघ

• मीरा भट्ट

बिहार के 'बीघा-कट्ठा-दान' आंदोलन के सिलसिले में गुजरात से हम चौदह भाई-बहन पूर्णियाँ जिले के रानीपतरा क्षेत्र में दो महीने से देहातों में घूमते रहे। इसी यात्रा के बीच, हम सभी एक दिन श्री धीरेन् भाई के पास हो आये। धीरेन् भाई के जनाधारित प्रयोगतीर्थ के बारे में सुना तो बहुत था, इसलिए हम बहुत उत्सुक थे धीरेन् भाई से मिलने के लिए, साथ-साथ बलिया को देखने के लिए भी। लेकिन उनसे मिलते ही उन्होंने बताया कि यहाँ मैंने देखने जैसा कुछ किया ही नहीं, न कुछ करने वाला हूँ।

वैसे हम गये तो थे शाम को, लेकिन दिन ढल चुका था, इसलिए उनसे सुबह में ही मुलाकात हो पायी। सुबह के तीन घंटे और दोपहर के तीन घंटे धीरेन् भाई के मूलोद्योग—'गरताप'—में ही बीते। कुछ देख नहीं पाये। बातचीत से ही सारी जानकारी प्राप्त की।

आन्दोलन के विषय में चर्चा चल रही थी। उन्होंने कहा, "मैं तो जनवरी, १९५८ से कहता आया हूँ कि अब आन्दोलन का स्वरूप बदल देना चाहिये। १९५१ से '५७ तक आन्दोलन का एक खास 'स्टेज' रहा। उसके बाद जैसे सभी आंदोलनों में होता है, उसका पहला 'स्टेज' पूरा हुआ। किसी भी आन्दोलन के आलोडन के लिए किसी न किसी प्रसंग विशेष का निमित्त आवश्यक होता है। केवल विचार-प्रचार से समाज में प्रभाव होता है, आन्दोलनकारी आलोडन नहीं होता। तेलंगाना का प्रसंग नहीं होता, तो शायद यह आन्दोलन शुरू नहीं हो सकता था। स्वराज्य के पहले भी हमने देखा कि बंग-भंग, जलियानवाला बाग, पूर्ण श्वेत 'साइमन-कमीशन,' क्रिप्स मिशन की इन्कारी, आदि निमित्तों का हमारे आन्दोलन में उपयोग हुआ। ये सारे निमित्त आन्दोलन के आलोडन के लिए आवश्यक होते हैं। लेकिन ऐसे निमित्त रूप प्रसंगों की शक्ति सीमित होती है। कुछ हद तक आन्दोलन को आगे ले जाकर उसका काम पूरा होता है और उसके बाद फिर किसी नये प्रसंग की आवश्यकता पैदा होती है।

"आन्दोलन का एक 'स्टेज' समाप्त हुआ और दूसरा प्रसंग नहीं आया, उस बीच का जो समय है, उस समय का उपयोग जैसे गांधीजी करते थे—क्रान्ति की पूर्वतैयारी के रूप में देश भर में जहाँ हो सकते हैं वहाँ रचनात्मक कार्य के रूप में क्रांति के 'सेल्स' खड़े करने चाहिये। इसी को मैं 'अज्ञातवास' कहता हूँ। अज्ञातवास तो हो, लेकिन उसका संयोजन भी होना चाहिये। यदि उसका संयोजन नहीं हुआ तो बनी-बनायी कुल ताकत तितर-बितर हो सकती है।

"इसी ख्याल से मैंने सुझाया था कि अब जितने प्रमुख कार्यकर्ता हैं, उन लोगों को कोई-न-कोई एक क्षेत्र चुन कर वहीं बैठ जाना चाहिये। जिला, प्रांत और राष्ट्र के जितने भी कार्यकर्ता हैं, उन्हें अपना 'सेल' खड़ा करने की दिशा में कोशिश करनी चाहिए। जो नये-नये कार्यकर्ता होंगे, वे इन प्रमुख कार्यकर्ताओं के साथ दो-तीन की संख्या में रहेंगे।

"यह विचार मेरे मन में चल रहा था, इसलिए आखिर सन् '५८ के बाद मैंने कहा था कि अब मुझे संघ के अध्यक्षपद से अलग होना है। मेरे इस कदम को साथियों ने धीरेन् भाई का एक 'फेड' माना। जे० पी० को भी असंतोष हुआ कि धीरेन् भाई जैसी एक बड़ी शक्ति अलग हो रही है।"

अज्ञातवास का दूसरा भी कोई स्वरूप हो सकता है, इस प्रश्न के जवाब में उन्होंने कहा :

"हाँ, चरैवेति, चरैवेति। अपने परिचित क्षेत्र में ही अखंड पदयात्रा चले, और यह नहीं कि एक ही दिन एक गाँव में रहना है; गाँव के लोगों को अभिमुखता देख कर कम-ज्यादा समय का पड़ाव रहे। इससे विचार-शिक्षण का काम चलेगा।"

सर्व सेवा संघ और सरकार

सर्व सेवा संघ की आज की परिस्थिति की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा :

"आज सर्व सेवा संघ की सब प्रवृत्तियाँ धीरे-धीरे सरकार के पेट में जा रही हैं। जैसे गांधी का कांग्रेस के साथ सम्बन्ध था, वैसा अब विनोबा का सम्बन्ध सर्व सेवा संघ से हो गया है। हम सरकार का उपयोग करें, इसमें कोई एतराज नहीं है; लेकिन जैसे श्रीकृष्ण ने पूतना का दूध भी पिया, साथ-साथ उसका खून भी चूस लिया, वैसा हमारा होना चाहिये। अर्थात् सरकार के विघटन की प्रक्रिया भी साथ-साथ चले। अगर हम क्रमशः सरकार के अधीन होते जायेंगे, तो घनिष्ठ सहयोग (क्लोजेस्ट कोआपरेशन) के नाम से हमारा सारा कारोबार सरकार के आश्रित हो जायेगा और क्रांति नहीं होगी। विनोबा को श्रीकृष्ण की कला हासिल है, जो सर्व सेवा संघ को नहीं है, इसी कारण ऐसा हो रहा है।

"कल्याणकारी राज्य के लिए राज्य-शक्ति की भी स्वतंत्र पूरक जन शक्ति की आवश्यकता होती है, क्योंकि केवल दण्ड-आधारित राज्य-शक्ति से कल्याण-कार्य चल नहीं सकता। भारत सेवक समाज के जन्म का हेतु इस पूरक शक्ति को ही संगठित करना था। आज उन लोगों को लगता है कि वह काम सर्व सेवा संघ कर सकता है। लेकिन हमें समझना चाहिये कि हमारा असली उद्देश्य राज्य की पूरक शक्ति बनना नहीं है, बल्कि उसके विकल्प में स्वतंत्र जन-शक्ति पैदा करना है। कल्याण राज तो यह चाहेगा कि लोक-सेवक की मदद लोक-कार्यों के लिए मिले। ऐसी मदद करना उचित और आवश्यक भी है, लेकिन वह हमें अपने पैरों पर खड़े होकर करनी चाहिये। यदि ऐसा हो तो वह दोनों के लिए अच्छा है, नहीं तो हम निस्तेज बनेंगे और स्वतंत्र शक्ति नहीं बनेगी।"

नया मोड़ का सवाल

नया मोड का प्रश्न छिड़ गया। कहने लगे, "मुझे लगता है कि यह सारा बिना विचार से ही हो रहा है। यह विकेंद्रीकरण नहीं है, लेकिन टुकड़े करने की प्रक्रिया चल रही है। टुकड़े की कीमत पूरे से कम ही होती है। किसी चीज को काटना है तो या तो धार से कटे और नहीं तो भार से कटे। इकाइयों में विचार की धार तो बन ही नहीं रही और बड़ी संस्था का जो भार था वह भी टूटा।"

चांडिल में विनोबाजी ने 'हिंसा शक्ति से विरुद्ध और दण्ड शक्ति से भिन्न ऐसी लोकशक्ति को जाग्रत करना है,' यह बात बतायी थी, उसका जिक्र करते हुए कहा :

"आज वही काम हमें करना चाहिये। अभी खा के बारे में जे० पी० का निवेदन पढ़ा। लोग कुछ नहीं कर रहे हैं। सारा जिम्मा सरकार को सौंप दिया है। निरपेक्ष जन शक्ति निर्माण के कार्यक्रम के बिना ऐसा ही होगा।

"विनोबा तो नित्य जाग्रत आत्मा है। जाग्रत रहने की हम सबको जरूरत है। हमारा काम निरपेक्ष लोकशक्ति जाग्रत करने का है, यह हम न भूलें। इसलिए यहाँ मैं बैठा हूँ, तो खुद कुछ नहीं करता हूँ। लोगों के सामने बात रखता हूँ, उन्हीं के अभिक्रम से जो होता है, वह होता है। पिछले साल यहाँ जो सामूहिक खेती हुई, उसमें काफी मात्रा में राग-द्वेष आदि विकार प्रकट हुए और सारी की सारी फसल बिगड़ी। लेकिन मैं एक शब्द भी नहीं बोला, न कुछ किया। अगर मैं उसी समय अपने हाथ में सब कुछ ले लेता तो कुछ नहीं बिगड़ता, लेकिन खामोश रहा। तो उन्होंने सीखा। लोकशक्ति बनानी है, तो कलेजा चाहिये। अगर मन में यह हो जाय कि यह सारा बिगड़ रहा है—हमारे बिना, और हम अपने हाथ में ले लें तो काम तो सुधर जायगा, लेकिन लोकशक्ति नहीं बनेगी।

"अब यहाँ बिहार में तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति हुई तो इसके बाद हमें जनाधारित होना चाहिये था। लेकिन यहाँ क्या हुआ? पहले गांधी निधि से लेते थे, तो अब खादी-कार्यकर्ताओं के संपत्तिदान में से कार्यकर्ता निर्वाह चलता है। अब यह संपत्तिदान, कहाँ का! यह तो कटौती है कटौती! मैं प्रायः मजाक में कहता हूँ कि पहले हम गांधी-निधि के चौके में बैठ कर खाते थे, अब तो हो गये हैं उनके जूठन चाटने वाले! यही तो हुआ न! सरकार-आधारित संस्था खादी-कार्यकर्ताओं को वेतन दे, उसमें से जो कटौती हो, उसमें से हमारा निर्वाह चले, तो यह और क्या है!"

विश्व-सरकार कब ?

प्रश्न : 'वन वर्ल्ड गवर्नमेंट' (विश्व-सरकार) क्या नजदीक के भविष्य में होगी?

उत्तर : हम 'जय-जगत्' बोलते हैं। पहले विचार आता है, फिर मनुष्य बोलता है और उसके बाद वह करता है। पहले संकल्प विचार में होता है, फिर वह वाणी में आता है और बाद में कृति में आता है। संकल्प तो है 'जय-जगत्' का, वाणी में भी आने लगा है। आज बोलते भी हैं 'जय-जगत्', अब कृति में आने में कितना समय लगेगा! मैं समझता हूँ कि वह जल्दी होगा। इसलिए कि विज्ञान पीछे लगा है। अगर 'जय-जगत्' जल्दी नहीं होता है, तो आत्म-विनाश जल्दी होगा।

हम गाँव-गाँव में ग्रामस्वराज्य बनाते हैं। गाँव के लोग कोर्ट में नहीं जाते हैं। भारत सरकार को कहते हैं कि पुलिस और सेना की हमें जरूरत नहीं है; तो भारत की आवाज दुनिया में बुलंद होगी। आज भी भारत की आवाज बुलंद है, पर नैतिक ताकत इतनी नहीं है। हम कहते हैं कि इधर से जय-जगत् और उधर से ग्रामदान, दोनों की पकड़ में, जिससे ये सारे भेद खतम हो जायेंगे। इस बेस पर सारी योजना आगे-पीछे होंगे, जब होंगे तो 'वन वर्ल्ड गवर्नमेंट' जरूर होगी।

—विनोबा

[दिनारा, जि० दिनाजपुर, ६ दिसंबर '६१]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

पक्ष-भेदों का बुरा असर

आगे चुनाव आने वाला है, अिसलिअे भिन्न-भिन्न राजनैतिक पार्टियाँ गांवों में पहुँच कर वहां भेद पैदा करने की कोशिश कर रही हैं। वे लोग यह नहीं समझते कि अिस तरह की राजनीति से, जिससे गांव के दो-दो टुकड़े हो जाते हैं, हिन्दुस्तान का क्या भला होगा? हिन्दुस्तान में जो प्रान्तीय भेद थे, क्या वे काफी नहीं? हिन्दुस्तान में भिन्न-भिन्न भाषाअें हैं। अुन भाषाओं के जो झगड़े चले, क्या वे काफी नहीं हैं? यहां असंख्य मत-संप्रदायों के भेद थे, वे क्या कम हो गये? फिर यह पार्टी का नया भेद डाल कर भारत की क्या अुन्नति होगी?

अिसका परिणाम यही होता है कि अेक भी अच्छा काम करने के लिअे कोअी अेकट्ठा नहीं होता। कहते हैं कि अिसमें मनुष्य के साथ हम काम करेंगे, तो अुसका भी महत्त्व बढ़ेगा। अिसलिअे अच्छा काम करेंगे भी, तो हमारी संस्था को अिसकी 'क्रेडिट' मिलनी चाहिअे! अितना ही नहीं, सामने वाला कोअी अच्छा काम करता है, तो अुसके हेतु पर आरोप करते हैं और अुसका वह कार्य यशस्वी न हो, अिसकी भी कोशिश की जाती है।

सर्वोदयपुरम् —विनोबा
(कोयंबुतूर) २६-५-'५६

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

सर्वोदय-पक्ष में अपना दिल टटोलें

इन दिनों, ३० जनवरी से १२ फरवरी तक, देश में जगह जगह 'सर्वोदय-पक्ष' मनाया जा रहा है। प्रभात फेरी, सामुदायिक प्रार्थना, सूत्र-यज्ञ, सफाई आदि प्रवृत्तियाँ राष्ट्रपिता बापू की स्मृति में चलती हैं। सभाओं में श्रद्धांजलि भी अर्पित की जाती है और आखिरी दिन सूताञ्जलि का आयोजन होता है। लेकिन सारी चीजें मानों यंत्रवत् चलती हैं और इनसे न तो हमारी अपनी चित्त शुद्धि होती है और न देश के अन्दर स्वतंत्र जन शक्ति खड़ी हो पाती है। यह एक बड़ी चिंताजनक स्थिति है, जिस पर ध्यान से विचार करना जरूरी है।

हमें यह स्वीकार करना होगा कि यद्यपि सर्वोदय या रचनात्मक कार्यकर्ताओं की तादाद कोई खास ज्यादा नहीं है, फिर भी हमारी एक मिली जुली ताकत नहीं बन सकी है। हम एक-दूसरे से खुलते नहीं हैं और आपस में स्नेह संबंध भी कम है। अक्सर एक दूसरे का भरोसा भी नहीं रखते। कमेटियों की मीटिंगों से इतने बँधे रहते हैं कि फुरसत से बैठ कर मन की बातें तक नहीं कह पाते। यह जरूर है कि एक-दूसरे के प्रति वैर या मैल नहीं रहता, फिर भी पीठ पीछे, कभी अनजान में, कभी ईर्ष्या से निन्दा करते हैं, नेकनियती पर भी शक कर बैठते हैं और फालतू नुक्ताचीनी में समय बरबाद करते हैं। ऐसी हालत में हमारे काम या बात में वजन कैसे आ सकता है और जनता पर हम क्या असर डाल सकेंगे?

इसके अलावा हमारे रास्ते में आज तीन मुख्य प्रलोभन हैं : हमारी संस्थाएँ, पैसा और सत्ता। सार्वजनिक क्षेत्र में संस्थाओं का बड़ा भारी स्थान है। वे क्रान्ति का वाहन होती हैं। उनके बिना टिकाऊ काम हो नहीं पाता। लेकिन दुःख की बात है कि हममें से अधिकांश लोग संस्थाओं के जंजाल में फँस गये हैं। उनमें नयी-नयी तरह की प्रवृत्तियाँ खोलते जाते हैं और उन्हें खूब सम्पन्न बनाना चाहते हैं। जिन विचारों या तत्त्वों को लेकर संस्था शुरू की थी, वे ओझल होते जाते हैं और काम फैलता जाता है। इसे संभालने के लिए पैसा चाहिए। पैसे की खातिर जगह-जगह भटकना पड़ता है, मदों की छानबीन करते रहते हैं और जहाँ से भी मिले पैसे ले आते हैं। इसके दो नतीजे निकलते हैं। पहले तो यह कि संस्थाओं में महत्त्व के पदों पर या तो खुद रहते हैं या अपने खास आदमी रखने पड़ते हैं। फिकर यह लगी रहती है कि संस्था या संगठन हाथ से न निकल जाये! परमहंस बाबा राघवदास जैसे तो बहुत थोड़े हैं, जो संस्थाओं और कमेटियों से—वे भी ऐसी जिन्हें हमने खुद खड़ा किया या बनाया हो—एकदम अलग होकर क्रांति के काम में कूद पड़े। जाने-अनजाने हम पद के फेर में पड़ जाते हैं। दूसरे यह कि शासन या हुकूमत वालों का रुख देखा करते हैं। कोशिश यह रहती है कि उनकी कृपा बनी रहे, ताकि संस्था के लिए पैसा या अन्य सुविधाएँ मिलती रहें। कुछ लोग सत्ताधारी पार्टी की गुटबंदी तक में भी रस लेने लगते हैं। नतीजा यह है कि सारा रचनात्मक काम तेजी के साथ सरकार के अन्तर्गत होता जा रहा है। और जितना ज्यादा हम सरकार की तरफ झुकते हैं, उतना ही जनता से दूर हटते जाते हैं।

खादी को ही लीजिये। सारे रचनात्मक काम का यह केन्द्र बिन्दु है। पिछले सात आठ बरस में खादी के उत्पादन में बहुत काफी वृद्धि हुई है। लेकिन खादी की जो अपनी अपील थी, जो खिंचाव था, वह कमजोर पड़ गया है। वह पहले जैसी प्रेरणा नहीं देती। हमारे भण्डारों की शानदार आलमारियों में तरह तरह के, सिले सिलाये और रंग बिरंगे डिजाइन भरे हुए हैं। मगर काउन्टर पर खादी बेचने वाला कार्यकर्ता नियमित रूप से न तो चरखा चलाता है और न उसे अहिंसा का प्रतीक मानता है। देहात की कत्तिन सूत जरूर कातती है, मगर खादी नहीं पहनती! उसकी मजदूरी इतनी कम है कि खादी उसकी औकात के बाहर है। हमारे सूत का पचरा बुना जाता है, लेकिन उसके अन्दर सत्य और अहिंसा का ताना-बाना नहीं दीखता।

> हम यह भूलते जा रहे हैं कि खादी की मजबूती उसके सूत के अंक या नम्बर पर नहीं, बल्कि उसके अन्दर समायी हुई अहिंसा पर निर्भर करती है। हमारे धागे में से अगर अहिंसा निकल जाती है तो वह मिल का मुकाबला नहीं कर सकता।

अहिंसा-रहित सूत कमजोर, कच्चे और टूटे धागे की तरह है, जिस पर भूख से भी कोई हाथ नहीं लगायेगा। अहिंसक या नैतिक शक्ति के तौर पर हम खादी की चिंता नहीं रख रहे हैं। हम खादी के प्रति पूरे वफादार नहीं हैं। खादी से हम पोषण और बल तो ले लेते हैं, लेकिन हम खादी को खुद कुछ नहीं दे पाते। खादी-उत्पादन के साथ-साथ अहिंसक शक्ति का विकास नहीं हो रहा है।

हमारे सामने तीन बड़ी चुनौतियाँ भी हैं—आर्थिक नियोजन, पार्लियामेंटरी पद्धति और मिलिटरी या फौज। जाहिर बात है कि नियोजन का ढाँचा कुछ ऐसा विचित्र है कि देश के दीन-दुःखी, लाखों-करोड़ों को उससे लाभ नहीं मिल पाता। जनतंत्र का जो स्वरूप अपने यहाँ चल रहा है, वह भी कुछ ऐसा अनोखा है कि देश के अन्दर अविश्वास, संघर्ष और फूट की शक्तियाँ बढ़ रही हैं। हमारे नियोजन और जनतंत्र, दोनों फौज के आधार पर चल रहे हैं। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से फौजी दृष्टि का असर हमारी आर्थिक और राजनीतिक गतिविधि पर पड़ रहा है। यह सब बदलना है और जड़ से बदलना है। खादी, ग्रामोद्योग, रचनात्मक काम और भूदान-ग्रामदान की सफलता की कसौटी ही यह है कि हथियार, पुलिस और फौज का उपयोग हम कहाँ तक खत्म करा सके। राष्ट्रीय तंत्र का सूत्र है—"सत्यमेव जयते।" सत्य की ही जय होती है। लेकिन उन्हें इसका विश्वास नहीं है और अब कहते हैं कि सत्य और सेना की जय होती है। लेकिन हमें उनको बताना है कि पहली वाली बात ही सही है और दूसरी वाली बहुत खतरनाक और विनाशक है।

अपने सामने लक्ष्य स्पष्ट है। आज की दुनिया का सारा बहाव अहिंसा और नैतिक शक्ति की तरफ है। विज्ञान की हर प्रगति हमें अहिंसा के शब्दों में सोचने को मजबूर करती है। लेकिन अपने देश में हवा कुछ दूसरी नजर आती है। मगर यह ऊपर-ऊपर की है और चंद्रोजा है। कमी हमारी अपनी तरफ से पड़ रही है। हम सब निष्ठा के साथ जरा डट जायें तो देखते देखते नक्शा बदल जायेगा। सर्वोदय-पक्ष में हमें अपना दिल टटोलना होगा और फिर भक्तिभाव से, संकल्पपूर्वक, नम्रता के साथ आगे कदम रखना है।

कॉंग्रेस और जनता

कॉंग्रेस का वार्षिक अधिवेशन साल की एक महत्त्वपूर्ण घटना होती है। इसकी चर्चाओं में मानसिक खुराक रहती है और देश अपनी विभिन्न समस्याओं के सिलसिले में इससे मार्गदर्शन की उम्मीदें रखता है। लेकिन गत जनवरी के शुरू में पटना में जो अधिवेशन हुआ, उससे यह उम्मीद पूरी नहीं हो पायी, क्योंकि अधिवेशन पर गोआ मुक्ति और आगामी चुनाव छाये हुए थे। किसी तीसरी चीज की वहाँ गुंजाइश नहीं थी। पटना-कॉंग्रेस का मानो एक ही संदेश है—'कॉंग्रेस को वोट दो।' और इशारा यह है कि कॉंग्रेस के सत्ता पाने से—जिस बारे में विरोधी दलों तक को कोई शक नहीं है—लोगों की मुँह माँगी मुरादें पूरी हो जायेंगी। इस बार भीड़ भी जबरदस्त थी। लेकिन जाहिर है कि यह कॉंग्रेस के प्रति उत्साह नहीं, बल्कि व्यक्ति-पूजा या अन्धश्रद्धा के कारण थी!

जन तंत्र में चुनाव का बड़ा महत्त्व माना गया है। उनसे लोक शिक्षण का काम सधता है। लेकिन अपने देश में उम्मीदवारों की सूचियाँ इतनी देर में तैयार हो सकी हैं कि महीने डेढ़ महीने से

ज्यादा समय उन्हें नहीं मिलेगा। इस दौरान में जो सम्पर्क स्थापित किये जाते हैं, वे भी वोट की दृष्टि से और मकसद लोक-शिक्षण का उतना नहीं रहता, जितना अपने वोट बढ़ाने और दूसरे के फोड़ने का! आज हमारा लोकतंत्र जो चल रहा है, वह अपनी खानदानी परम्परा और जनता की शान्त वृत्ति के कारण। पार्टियाँ जो 'प्रोपेगेण्डा' करती हैं, उससे लोक-शिक्षण न होकर भावनाएँ और उत्तेजित होती हैं, लोग चक्कर उठते हैं और जन-तंत्र में उनका विश्वास भी डगमगा जाता है।

ज्यादा दुःख की बात यह है कि कांग्रेस और अन्य पक्ष जनता के हित का और जनता की दृष्टि से चिन्तन ही नहीं कर पाते। फुरसत से न उसके पास जाते हैं, न उसका सुख-दुःख बँटाते हैं और न *उसकी जैसी चाहिये वैसी मदद करते हैं।* अपनी मर्जी, अपने विचार और अपना नक्शा उस पर लादते हैं। नतीजा यह है कि जनता का अभिक्रम खत्म हो रहा है और अपनी समझ के अनुसार काम करने *की उसकी शक्ति कुंठित हो रही है।* अपने विचारों पर टिकने की हिम्मत नहीं है। सोचने की बात है कि पिछले चौदह बरस में जनता में आत्म-विश्वास बढ़ाने पर आत्म-निर्भरता पैदा करने के लिए हमने क्या किया? एक जमाने में कांग्रेस रचनात्मक कार्यक्रम पर अमल करती थी। उससे दो काम बनते थे—एक तो यह कि उसके सदस्यों का जन-सम्पर्क सधता था, दूसरे यह कि जनता में हिम्मत और भरोसा पैदा होता था। कहा जा सकता है कि पंचवर्षीय योजना ने रचनात्मक कार्यक्रम के अधिकांश अंगों को सरकारी तौर पर अपना लिया है। उसे पूरा करने *के लिए करोड़ों रुपया है! किसी तरह के* की कमी नहीं है। ठीक है। मगर उसका नतीजा क्या है?

हाल की एक घटना लीजिये। एक बड़े प्रदेश में 'अछूतोद्धार-सप्ताह' मनाया गया। एक गाँव में एक मन्दिर था, वहाँ हरिजनों के जाने की मनाही थी। तो अधिकारियों का एक *जत्था उत्साही* कार्यकर्ताओं के साथ निकला। साथ में कुछ हरिजन भी थे। जुलूस बना कर वे लोग मन्दिर की ओर चले। लेकिन जब वहाँ पहुँचे तो देखते क्या हैं!—मन्दिर के दरवाजे पर ताला पड़ा है और पुजारी महाराज लापता हैं! वे सबके सब अपने-अपने घर उल्टे पाँव वापिस लौट गये!

कानून तो कहता है कि पुजारी हरिजनों को रोक नहीं सकता था। लेकिन पुजारी अपने विचारों के अनुसार उन्हें अन्दर नहीं जाने देना चाहता था। मगर उसके अन्दर यह हिम्मत नहीं थी कि अपने विचारों पर डटता और हरिजनों को रोकता। इस वास्ते वह गायब हो गया! कमाल यह है कि गाँव का कोई आदमी मन्दिर का ताला खोलने को आगे नहीं बढ़ा। इससे पता चलता है कि हम कहाँ हैं। हमारे पास योजना है, उसके चलाने के लिए पैसा है, अधिकारियों की एक पलटन है, मगर काम करने के लिए चाह नहीं है!

रचनात्मक कार्यक्रम की एक बड़ी भारी देन यह थी कि इसने लोगों के अन्दर यह शक्ति पैदा कर दी कि अपनी बुद्धि के अनुसार अमल कर सकें। अगर कोई चीज नापसंद होती थी तो उसका विरोध करते थे और कोई भी कीमत चुकाने से डरते नहीं थे। आज एकदम दूसरी हालत है। लोग अपने मन से कुछ नहीं करते और चीजें लटकती जाती हैं, लटकी रहती हैं। अगर यह प्रवृत्ति जारी रही तो हम आजाद होते हुए भी गुलाम जैसे हो जायेंगे। यह ऐसा सवाल है, जिसे कोई भी देशप्रेमी नजरअन्दाज नहीं कर सकता। फिर कांग्रेस जैसी जिम्मेदार संस्था तो हरगिज नहीं कर सकती।

लोगों के वोट पाने से कहीं ज्यादा महत्त्व की चीज यह है कि लोक शिक्षण हो, ताकि जनता में आत्म निर्भरता आये और वे अपने विचारों पर चल सकें। नयी-नयी शक्तियों के सोते फूटने चाहिए, ताकि जनता जिस दबाव से कुचली जा रही है, उसे हटा दे और देश के नव निर्माण में जोश के साथ भाग ले सके। इस मसले पर कांग्रेस और राजनीतिक पार्टियों को, जिनमें आज सत्ता की होड़ लगी है—गम्भीरतापूर्वक विचार कर, इसका हल खोजना चाहिए।

—सुरेश राम

आगे क्या किया जाय?

• शंकरराव देव

गोआ के सम्बन्ध में पिछले दो लेखों में जो कुछ कहा गया है, उससे यह न समझ लिया जाना चाहिये कि विश्व-समस्याओं के समाधान के सम्बन्ध में नेहरूजी की शान्ति और मैत्रीपूर्ण नीति की निन्दा की गयी है। सच तो यह है कि इस पेचीदे प्रश्न का शान्तिपूर्ण हल पा लेने के लिए भारत १५ वर्षों की लम्बी अवधि तक प्रतीक्षा करता रहा। इसमें सन्देह नहीं कि धीरज और सब्र की हद हो गयी। लेकिन यही तो गान्धीजी के साथ रह कर नेहरूजी और उनके साथियों ने सीखा था। इसलिए जो देश, खासकर यूरोपीय देश, गोआ में भारतीय कार्रवाई को लेकर भारत की निंदा कर रहे हैं, उन्हें चाहिये था कि इसके बजाय भारत को इतने दिनों तक धैर्य का परिचय देने के लिए साधुवाद देते, भारत की प्रशंसा करते।

फिर भी, इन सबके बावजूद, यह मानना पड़ेगा कि भारत के बारे में दुनिया के *लोगों के मन में जो तस्वीर खिंची थी, उस पर धब्बा लगा है।* शान्ति और मैत्री की अपनी घोषित नीति और आचरण के बाद भी हम इस दुखदायी को—मैं इसे जानबूझ कर दुखदायी कहता हूँ टाल नहीं सके अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए भारत को हिंसात्मक साधनों का सहारा लेना पड़ा। नतीजा यह हुआ कि हम दुनिया के सामने संघर्षपूर्ण और उत्तेजक अन्तर्राष्ट्रीय मसलों का शान्तिपूर्ण तथा नैतिक समाधान करने *का विकल्प प्रस्तुत कर सके। जो लोग युद्ध की विभीषिका देख या भुगत चुके हैं,* उनके लिए यह स्थिति और भी भयानक एवं पीड़ादायक रही। अतः इससे आश्चर्य नहीं होना चाहिये कि संसार के बहुत से प्रबुद्ध लोग भारत का पक्ष सही मानते हुए भी सम्भाव्य परिणाम से काँप जाते हैं।

डर जाने की जरूरत नहीं। खुद *नेहरूजी की बात लीजिये। अभी महीना* भर भी नहीं हुआ कि उन्होंने पत्र-प्रतिनिधियों के सम्मेलन में यह कहा था—'मैं इस (शक्ति) का प्रयोग नहीं करना चाहता था। गोआ में या भारत में कहीं, वरन् विदेशों में होने वाले निश्चित परिणाम का खयाल करके मैं इससे बचना चाहता था।...इसमें शक नहीं कि ऐसा कोई भी काम, भले ही वह कितना भी उचित हो, यदि किया जाय तो उससे ऐसी बातों के लिए रास्ता खुल जाता है, *जिसका गलत या सही ढंग से दूसरे लोग* लाभ उठा लें।' (टाइम्स ऑफ इण्डिया, २९ दिसम्बर, १९६१)

इन परिणामों के ज्ञान से देश की अहिंसक-शक्तियों को सचेत और जागरूक हो जाना चाहिये। नेहरूजी ने बड़ी ईमानदारी के साथ इसे मान लिया है। हमें इसका बचाव ढूँढ निकालने के लिए तत्पर हो जाना चाहिये। बहुत पुराने जमाने *से 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की नीति पर* लोग चलते आ रहे हैं। आज भी इसीका जोर है। इसका कारण यह है कि सत्य अपनी रक्षा के लिए पैर पर खड़ा नहीं रह सका। इसको यों भी कह सकते हैं कि लाठी के जोर के बिना सत्य कभी मनवाया न जा सका। यह तो गान्धीजी थे, जिन्होंने कहा *कि सत्य को स्वयं इतना सशक्त* होना चाहिये कि उसको खड़े होने के लिए किसी प्रकार के सम्बल की जरूरत न हो। इसलिए सत्य को मनवाने का उन्होंने एक नया विकल्प यह निकाला कि इसके पीछे व्यापक रूप से शान्तिपूर्ण और नैतिक समर्थन हो। शान्तिपूर्ण और नैतिक समर्थन की इस भावना के मूल में यही बात है कि जो कुछ सही हो, उचित हो, सत्य हो, अर्थात् जो कुछ सच हो—बिना लाग-लपेट के—उसका रक्षण हो, उसको कोई क्षति *नहीं पहुँचने पाये। न्याय पक्ष के रक्षण के* लिए यदि हिंसात्मक साधनों का सहारा लिया जाय तो उसके उचित होते हुए भी उसका परिणाम कभी अच्छा न निकलेगा। सत्य अर्थात् न्याय पक्ष को स्वयं इतना शक्तिसम्पन्न होना चाहिये कि वह अपनी रक्षा आप कर सके।

यह बात बिल्कुल सही है कि शान्ति की स्थायी इमारत अहिंसात्मक समाज व्यवस्था की नींव पर ही खड़ी की जा सकती है। लेकिन अहिंसात्मक शक्तियाँ चाहे वे इस दिशा में कितनी भी सक्रिय हों, तात्कालिक समस्याओं की ओर से उदासीन *नहीं रह सकतीं। अन्तिम और अनन्त, इन* और तात्कालिक से ही आविष्कृत होता है। जीवन तात्कालिकता में ही भरा है, तात्कालिकता की उपेक्षा से हिंसा भी उत्पन्न होती है। खासकर भारत की परराष्ट्र-नीति के मामले में तो ऐसे बहुतेरे *खतरनाक स्थल हैं,* जहाँ जरा भी गलती हुई कि दूसरों के साथ स्थायी रूप से हम युद्ध की स्थिति में पड़ जायेंगे। कश्मीर का मसला, भारत-चीन की सीमा का झगड़ा, नागाओं की समस्या एक ही तरह के प्रश्न हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन सारे प्रश्नों पर सम्पूर्ण देश में *युद्ध का मनोभाव पैदा हो गया है।* इसलिए अहिंसक शक्तियों को स्थिति का सामना करने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। यदि हम लोग व्यापक रूप से शान्तिपूर्ण और नैतिक जन-समर्थन का कार्यक्रम नहीं अपनाते तो यह निश्चित है कि हमारे पहले बरबादी पड़ कर रहेगी।

जिस शान्ति-सेना का हम इधर कुछ समय से संगठन कर रहे हैं, उसे इन तात्कालिक समस्याओं की ओर अपने को लगा देना चाहिये। लेकिन इसके काम का ढंग क्या हो, इस पर हमें गंभीरतापूर्वक विचार करना होगा। नेहरूजी ने अपने उक्त प्रेस-कानफेंस में इस प्रसंग में कहा था—'अहिंसा को स्वीकार करने का यह भी मतलब है कि हमारे देश के निवासी एक *सीमा तक अपनी जीवन-शैली को उसके* अनुरूप ढाल लें।'

हमारे मत से निम्नलिखित तीन बातों पर तत्काल ध्यान देना बहुत जरूरी है—

(१) देश के समक्ष आज जो जो समस्याएँ उपस्थित हैं, उनके सम्बन्ध में हमें निश्चित नीति निर्धारित कर लेनी चाहिये। इनमें भी कश्मीर, नागा-समस्या और भारत-चीन सीमा-विवाद पर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है। इन प्रश्नों के सम्बन्ध में हमारी नीति और हमारी भूमिका बहुत ही स्पष्ट रूप से निश्चित और निर्धारित हो जानी चाहिये। यहाँ यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिये कि हम जो भी निश्चय करें, उसमें किसी प्रकार के

आपके नेत्र भी काम आ सकते हैं !

● शं० गो० नेने

[मनुष्य के शरीर में आँखों का विशेष महत्त्व है। कहा भी गया है कि 'आँख है तो जहान है।' आँखों के माध्यम से हम दुनिया को देख सकते हैं। हमारे अनेक भाई-बहन ऐसे भी हैं, जो आँखों के सुख से वंचित हैं, किन्तु पिछले दिनों शरीर-वैज्ञानिकों ने इस बात में सफलता प्राप्त की है कि वे मृत व्यक्तियों की आँखें नेत्रहीनों को लगा सकते हैं, जिससे वे अन्य व्यक्तियों की तरह दुनिया को अपनी ही आँखों से देख सकें। आज आवश्यकता है कि हम लोग नेत्रदान का महत्त्व समझें। हम इस दिशा में कैसे योग-दान कर सकते हैं, इस सम्बन्ध में श्री शं० गो० नेने द्वारा प्रस्तुत यह लेख हम सबके लिए प्रेरणादायी होगा। —सं०]

डेढ़ सौ साल की दीर्घ तपश्चर्या के बाद चिकित्सा-तज्ञों ने एक तरीका खोज निकाला, जिससे 'आपरेशन' द्वारा अंधों को दृष्टि-लाभ हो सकता है। यह तरीका है, मृत व्यक्ति की आँख अन्धे की आँख के स्थान पर बैठाना। इसी में से 'दृष्टि-दान' की पुनीत कल्पना निकली है।

'दृष्टि दान' के सन्दर्भ में नेत्र की रचना के बारे में जान लेना अप्रासंगिक न होगा। बाह्य आवरण, मध्य आवरण और आन्तर आवरण; ये तीन मुख्य भाग आँख में होते हैं। हमें नेत्र के जो भाग बाहर से सामान्य तौर पर दीख पड़ते हैं, वे बाह्य आवरण हैं। उसमें शुभ्रपटल, पारदर्शक पुतली, इन्द्रधनु, नेत्रमणि और पलकों के बाल, ये आते हैं।

इसमें महत्त्वपूर्ण भाग है, पारदर्शक पुतली। शुभ्रपटल के ऊपर यह पुतली रहती है। अन्दर से यह पलकों के साथ संयुक्त रहती है। घड़ी की काँच की तरह यह पुतली कुछ ऊपर उठी हुई रहती है। इसीको "ओपेक कार्निया" भी कहते हैं।

तमाम जिस्म भर में केवल यही एक भाग पारदर्शक होता है, जिसकी खासियत यह है कि एक आँख से दूसरी आँख में उसका स्थानान्तरण बहुत आसानी से तथा सफलतापूर्वक हो सकता है। इस गुण के कारण ही आज दृष्टिदान का प्रयोग सफल होता नजर आ रहा है। करीब-करीब साठ-सत्तर फीसदी 'आपरेशन' ऐसे होते हैं, जिनमें सम्पूर्ण दृष्टि वापस मिल जाती है, जब कि करीब पचीस फीसदी आपरेशन लोगों को अपने रोजमर्रा काम-काज को किसी तरह कर लेने लायक बना देते हैं।

जिस मृत व्यक्ति की आँख का उपयोग इसमें करना हो, उसका नीरोग रहना लाजमी है। तभी यह आपरेशन सफल हो सकता है। फिर तो मृत्यु के समय उस व्यक्ति की उमर के बारे में भी नहीं सोचना पड़ता। छोटे बच्चे से लेकर बड़े बूढ़े तक सबकी आँखों का उपयोग किया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति का 'कार्निया' किसी भी व्यक्ति के लिए उपयुक्त हो सकता है। रक्त दान में जिस तरह यह आवश्यक रहता है कि खून देने वाले का खून लेने वाले के खून के समान-धर्मी हो, वैसी कोई बात दृष्टि दान के संबंध में नहीं है।

इसी कार्य को पूरा करने के लिए जहाँ-तहाँ 'नेत्र-बैंकों' की स्थापना हो रही है, जो निहायत जरूरी है। इनके जरिये तमाम दुनिया में इस तरह के दृष्टि-दान की प्रक्रिया का प्रचार तथा प्रसार किया जाता है। इस 'आपरेशन' से सम्बद्ध हर तरह की कार्रवाई इस तरह के बैंक भली भाँति करते हैं।

'नेत्रबैंक' सर्वप्रथम अमेरिका के न्यूयार्क शहर में १८८४ में स्थापित हुआ। इसके बाद दुनिया के कई देशों में भी नेत्रबैंकों की स्थापना हुई। भारत में नेत्रबैंक की स्थापना सर्वप्रथम मद्रास में हुई। दूसरा प्रयत्न अलीगढ़ में हुआ। बम्बई में तो अभी कुछ ही महीने पहले "नेत्र-बैंक" कायम किया गया है। दिल्ली के इरविन अस्पताल में जल्दी ही इसकी स्थापना हो जाने का अनुमान है।

कई स्थानों से संगृहीत मृतकों की आँखों को सुरक्षित रखने की व्यवस्था यद्यपि नेत्रबैंकों में हुई है, तो भी आज की परिस्थिति यह है कि विदेशों के अस्पतालों में ऐसे हजारों लोगों की नामावलि है, जो इस 'आपरेशन' द्वारा अपनी आँखें दुरुस्त करवाना चाहते हैं। केवल अमरीका में तीस हजार अंधे आशा लगाये बैठे हैं। इसलिए नेत्र दान में मिली हुई आँखों को जमा कर रखने का सवाल ही नहीं उठता। प्रश्न है पर्याप्त नेत्र प्राप्त करने का। रक्त-दान के बारे में अब यह अड़चन नहीं है, लोग स्वेच्छा से रक्त-दान करते हैं। दृष्टि-दान का भी उचित रीति से प्रचार होने से यह अड़चन दूर हो सकती है। भारत में विशाल जनसंख्या और बाल-रोगों की अधिकता से नेत्ररोगियों तथा अंधों की भरमार है।

"कार्निया-ग्राफ्टिंग" के इस अभिनव प्रकार से भारत ज्यादा से ज्यादा फायदा उठा सके, इसके लिए कुछ सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं :

(१) "नेत्र दान" प्राप्त करने के लिए तदनुकूल वातावरण का निर्माण देश में करना होगा। इसके लिए कानून में सुधार अपेक्षित है। गैरसरकारी तौर पर भी कोशिशें चलनी चाहिये। सरकार द्वारा तो इसका प्रचार हो ही, साथ-साथ लोकप्रिय सामाजिक नेताओं को चाहिये कि वे भी आम जनता को इस सत्कार्य का महत्त्व और पुण्य समझायें। इससे जनमत अनुकूल होगा और दृष्टि-दान करने वाले लोग काफी तादाद में मुहैया हो सकेंगे।

(२) अंधे बने हुए आबाल-वृद्धों की डाक्टरी परीक्षा करके यह तय कर लिया जाय कि 'कार्निया' के अपारदर्शकत्व के ही कारण दृष्टि नष्ट हुई है और अगर ऐसा नहीं है तो किस रोग से अंधत्व आया है। वह इस चिकित्सा द्वारा साध्य है या नहीं ? फिर उन सबकी एक सूची उनके पतों के साथ तैयार की जाय। उसके लिए सभी बड़े-बड़े अस्पतालों में चिकित्सा-केन्द्र खुलने चाहिये।

(३) बम्बई, मद्रास, कलकत्ता, दिल्ली, नागपुर, पूना, अहमदाबाद जैसे स्थानों के साधन-सम्पन्न अस्पतालों में इस आपरेशन की शिक्षा देने के लिए विशेष वर्ग चलाये जायँ तथा उनमें तज्ञ डाक्टरों को तैयार किया जाय।

(४) उक्त शहरों में "नेत्रबैंक" चलाये जायँ।

(५) मौत के तुरन्त बाद आसानी से आँख निकाली जा सके, इसलिए "चिकित्सा दल" हमेशा तैयार रखे जायँ। समय का अपव्यय न हो, इसके लिए यह परम आवश्यक है। एम्बुलेंस, फायर-ब्रिगेड तथा पुलिस की तरह इस व्यवस्था के लिए भी "विशेष टेलीफोन नंबर" होना चाहिये।

(६) किसी दुर्घटना से मरने पर सार्वजनिक अस्पतालों में आये हुए मुर्दों की देह से भी आँखें निकालने की व्यवस्था हो, इसके लिए कानून में सुधार करना होगा।

(७) "नेत्रदान-पत्रक" देने वालों को उनकी जीवितावस्था में सार्वजनिक अस्पतालों की तरफ से कुछ खास सुविधाएँ डाक्टरी चिकित्सा में दी जानी चाहिये। इससे बहुत से लोग नेत्रदान के लिए तैयार होंगे।

(८) नेत्र-दान करने के इच्छुक व्यक्ति को चाहिये कि वह अपने मृत्यु-पत्र में ही इस तरह लिख कर रख दे कि "मेरी मृत्यु के बाद मेरी आँखें 'नेत्रबैंक' को दी जायँ, जो उनका उपयोग अन्धे के लिए करे।"

अपने आप को इन्सान कहने वाले हर शख्स के लिए यह सुवर्ण अवसर है। रुपये-पैसे के द्वारा तो केवल धनवान् ही मदद कर सकता है, पर नेत्र-दान करके कंगाल भी पुण्य का भागी हो सकता है। जिस्म के साथ जल कर खाक हो जाने से या कब्र में मिट्टी बन जाने की अपेक्षा अगर आँखें किसी के काम आ रही हों, तो इससे बढ़कर पुण्य मनुष्य के लिए और क्या हो सकता है !

[आधारित]

दुर्भाव या राष्ट्रीय ग्रह का लेश भी नहीं होना चाहिये।

(२) एक बार हम अपनी नीति निश्चित कर लें, तो हमें जनता को उस ओर मोड़ने के लिए भरपूर शक्ति लगा देनी चाहिये। जनता को भली भाँति शिक्षित किये बिना काम नहीं चल सकता। किसी प्रकार के भय या संकोच का विचार किये बिना हमें अपने समाधान के साथ विवाद से सम्बद्ध दोनों पक्षों के पास जाकर उनसे अपनी बात कहनी चाहिये। दूसरे शब्दों में, हमें अपने विचार के पक्ष में नैतिक समर्थन प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिये।

(३) निश्चयों को कार्यान्वित करने के लिए हमें सक्रिय होना चाहिये और इस सम्बन्ध में स्पष्ट कार्यक्रम बना कर अग्रसर होना चाहिये।

[मूल अंग्रेजी से]

कुरान-सार

विनोबाजी पिछले कई सालों से 'कुरान' का अध्ययन और उस पर चिन्तन-मनन कर रहे हैं। पिछले दिनों उन्होंने 'कुरान' की आयतों का सार रूप में संकलन किया है। जल्दी ही "कुरान-सार" हिंदी में, "एसेंस ऑफ कुरान" अंग्रेजी में और "रूहुल कुरान" उर्दू में अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशित कर रहा है। इन पुस्तकों के प्रकाशन के निमित्त श्री अच्युत देशपांडे काशी आये हुए हैं। इस सिलसिले में आप बिहार के राज्यपाल डा० जाकिर हुसेन से भी मिल चुके हैं। कुरान-सार के बारे में अपनी राय प्रकट करते हुए विनोबाजी ने उर्दू "भूदान तहरीक" पाक्षिक के संपादक श्री अहद फातमी को जो पत्र लिखा है, उसका आवश्यक अंश यहाँ दिया जा रहा है :

"हमारी मंशा क्या है ? हमारी इस किताब से कुरान-शरीफ को 'रिप्लेस' तो नहीं करना चाहते। वह तो अपनी जगह रहेगी। हमारी किताब का मकसद महदूद है। इस्लाम की रूहानी तालीम क्या है, वह चुन-चुन करके हमने र दी है। सब धर्मों वालों के सामने और कुल दुनिया के सामने वह रखी गयी है।

मुझे यकीन है कि यह किताब जिस सद्भावना से बनी है, उसका असर सब कौमों पर अच्छा पड़ेगा। मैंने इस काम को बहुत ही श्रद्धा-भक्ति से किया है।"

पर मेमने को लेने के लिए आया। कसाई ने पूछा कि 'क्या दोगे?' तो उसने कहा कि 'बाजार में तो ढाई रुपये चलते हैं, मैं पाँच रुपये दे दूँगा।' कसाई ने कहा कि 'पाँच रुपया भी कम है, क्योंकि यह तो हमारा सबसे प्यारा मेमना है। समय ऐसा न आता, तो हम इसे बेचते भी नहीं।' दूसरे कसाई ने पैसे दे दिये और वह मेमना लेकर चलने लगा। लेकिन बच्चे मेमने को गले लगा कर फूट-फूट कर रोने लगे और अपने बाप से कहने लगे कि 'हम भूखे रहेंगे, इस मेमने को खिलायेंगे, आप इसे बेचिये मत।' यह दृश्य देख कर खरीदनेवाले कसाई की आँखों में भी आँसू आ गये। आँसू पोंछते-पोंछते उसने कहा कि 'तुम ये पैसे भी ले लो और मेमना भी ले लो। मुझे कुछ नहीं चाहिए।' पैसे और मेमना, दोनों उसने उसे वापस दे दिये। मेमना को पाकर बच्चे खुश हो गये और वह कसाई भी खुश हो गया।

यह कोई इस देश की बात नहीं है। यह उस देश की बात है, जहाँ लोग मांस भक्षण करते हैं। यह मनुष्य का स्वभाव है। मनुष्य मांस भक्षण करता है, तो भी वह पशु से प्यार करता है।

मनुष्य के आवश्यक संयोजन में भी जीवन की प्रतिष्ठा अधिक बढ़नी चाहिए। आवश्यकताओं की परिपूर्ति जिसमें हो, ऐसे संयोजन में भी जीवन की प्रतिष्ठा बढ़नी चाहिए।

मनुष्य एक तरफ खेती करके वनस्पति को खाता है, लेकिन दूसरी तरफ फूलों के बगीचे भी लगाता है, जहाँ फूल तोड़ने की मुमानियत भी कर देता है। यह परस्पर-विरोधी भावना मनुष्य में है। अब प्रश्न यह है कि इनमें से किस वृत्ति का विकास हम करना चाहते हैं?

हम ऐसा संयोजन करें कि अकाल की परिस्थिति में भी मनुष्य मनुष्य को न खाये। अकाल में यह हो सकता है, लेकिन ऐसा न हो। इसका नाम है—संयोजन। जीवन की प्रतिष्ठा अधिक-से-अधिक बढ़े, इस दृष्टि से मैंने कसाई का उदाहरण दिया।

मनुष्य की अन्न-व्यवस्था और स्वच्छता, ये दो प्रगति के लक्षण हैं। रेडियो और मोटर जितना प्रगति का लक्षण है, उतना ही प्रगति का लक्षण है मनुष्य का बाथरूम। गांधी की पद्धति के पाखाने को क्रान्ति के रचनात्मक कार्यक्रम का अंग माना गया है। क्यों, आखिर इसमें क्या है?

भंगी-कार्य और आत्मीयता

एक भंगी है और मैं हूँ। मैं यहाँ का पाखाना साफ करने लगता हूँ, तो भंगी का काम करता हूँ। इससे भंगी के साथ मेरा हार्दिक सम्बन्ध कायम होता है। लेकिन मान लीजिये कि एक दिन ऐसा आता है, जब मैं पाखाना साफ नहीं करता, लेकिन ऐसी व्यवस्था करता हूँ कि पाँच-दस साल के बाद किसीको साफ न करना पड़े—भंगी को भी नहीं, मुझे भी नहीं—तो भंगी के साथ मेरा कोई रिश्ता रहेगा? इस क्रान्ति की प्रक्रिया में भंगी का काम करनेवाले में और मुझमें सम्बन्ध स्थापित होगा? भंगी का काम खतम करने की जो प्रक्रिया है, उसमें भंगी के साथ आपकी आत्मीयता कैसे कायम रहेगी?

यंत्र आयेंगे, तो किसीको काम नहीं करना पड़ेगा। आज भंगी है, उसके साथ आपका हार्दिक सम्बन्ध कैसे कायम होता है? केवल 'ट्रेड यूनियनिज्म' से सम्बन्ध कायम नहीं होता। सम्बन्ध तब कायम होता है, जब उसका परिश्रम आप खुद करते हैं। इससे अस्पृश्य नहीं रहेंगे, अस्पृश्यता-निवारण होगा। लेकिन मान लीजिये कि एक ब्राह्मण और एक चमार बाटा-कम्पनी में नौकरी करते हैं। वह ब्राह्मण उस चमार की लड़की के साथ शादी नहीं करेगा। यंत्रीकरण से मनुष्य का हार्दिक सम्बन्ध कायम नहीं होता। किसी मनुष्य के काम में मेरा हिस्सा न हो, तो मुझमें और उसमें सम्बन्ध कायम नहीं होता। जब मैं उसके लिए कुछ काम करता हूँ, तब उसका और मेरा सम्बन्ध कायम होता है।

मान लीजिये कि एक कमरे में मेज पर दस्तरखान बिछा हुआ है, उसमें सबके लिए चाय और दूध के प्याले तैयार हैं। जवाहरलाल बैठे हैं और कृष्णैया भी बैठे हैं। कृष्णैया अपना प्याला उठा कर जवाहरलाल को देते हैं और जवाहरलाल अपना प्याला उठा कर कृष्णैया को देते हैं। क्यों? यह काम भी तो यंत्र से हो सकता है, फिर एक-दूसरे को प्याला देने की आवश्यकता क्या है? पर हार्दिक सम्बन्ध जोड़ने के लिए ऐसा करना आवश्यक है। संयोजन में यह गुंजाइश होनी चाहिए।

'टेकनिक'—प्रक्रिया कैसी चाहिए? ऐसी, जिसमें टेकनिक का आग्रह न हो, मनुष्य के साथ सम्बन्ध जोड़ने का आग्रह हो; नहीं तो हाथ में 'टेकनिक' रह जायगी, मनुष्य के साथ सम्बन्ध नहीं रहेगा। मनुष्य के साथ सम्बन्ध रहे, उसके लिए क्या किया जाय? अहिंसक प्रक्रिया में मनुष्य के साथ सीधा सम्बन्ध होता है। ऐसा न हो, तो ढाँचा ही हमारे हाथ में रहेगा और मनुष्य के साथ हमारा कोई सम्पर्क नहीं रहेगा।

सह-पुरुषार्थ

विनोबा ने मैसूर में कहा था कि तुम सत्य को सँभालो, आग्रह को छोड़ो। सत्य अपना आग्रह कर लेगा। इसी तरह प्रक्रिया पर हमारा जोर नहीं है। हमारा जोर मनुष्य पर है। अगर टेकनिक पर जोर होगा, तो वह चुस्त दुरुस्त प्रक्रिया बन जाती है और वह मनुष्य को कसती है। इसलिए इस आग्रह से बचाने के लिए मैं कहता हूँ कि क्रान्ति में सह-पुरुषार्थ होना चाहिए।

मैं भंगी से कहता हूँ कि तेरा काम गंदा है, इसलिए अप्रतिष्ठित हुआ है, तो तेरा काम मैं करूँगा। इस काम के सम्बन्ध से उसकी हीनता को मैं मिटाता हूँ। यह चीज यंत्रीकरण से नहीं आती। यंत्र आयेगा, तो हरिजन हरिजन ही रह जायगा और यंत्र आ जायेंगे। दूसरे देशों में ऐसी परिस्थिति नहीं है, क्योंकि वहाँ ऐसी जात पात नहीं थी। इस क्रान्ति की प्रक्रिया में हमें देखना है कि क्रान्ति हो, लेकिन वह करुणा और सहानुभूति की हो।

भंगी का काम यंत्र करे, यह भंगी भी चाहता है; लेकिन ऐसी परिस्थिति कौन लायेगा? परिस्थिति वे लायेंगे, जिनकी भंगी के साथ सहानुभूति है। सहानुभूति का क्या लक्षण है? यह कि उसका काम मैं करूँ। अस्पृश्यता को मिटाने के लिए भंगी के साथ हार्दिक सम्बन्ध जोड़ना पड़ेगा। इसलिए जब तक सार्वत्रिक यंत्रीकरण नहीं हुआ है, तब तक एक दूसरे में काम बँट जाने चाहिए।

संस्कार और व्यवसाय

मनुष्य का संस्कार व्यवसाय के साथ जुड़ना आवश्यक है। व्यवसाय को हमने जाति के साथ जोड़ा है। और व्यवसायों को छोड़ कर मैंने केवल दो चरम सीमा वाले व्यवसाय लिये—एक कसाई का लिया, दूसरा भंगी का। इनमें से एक और चीज आयेगी। आपको यदि पाखाना साफ करना पड़े, तो आप हाजमे की फिक्र ज्यादा करेंगे। आपको यह चिन्ता होगी कि कम दफा पाखाना जाना पड़े। मनुष्य के पेटूपन में अन्तर पड़ जायगा। यह मैं दूसरे मूल्य की बात कर रहा हूँ। इसमें आरोग्य की और स्वास्थ्य की दृष्टि है। जो बर्तन आपको माँजना पड़ता है, वह आप गीला नहीं रहने देंगे, उसे साफ रखने की कोशिश करेंगे। इस तरह मनुष्य की स्वच्छता की भावना का विकास होता है। आपको साफ करना होगा, तो आप गंदगी कम करेंगे। जो कमरा रोज आपको साफ करना होता है, उसमें आप कम से-कम गंदगी करते हैं। कपड़ा आपको धोना पड़ता है तो आप जमीन पर बैठने में सावधान रहते हैं। इसमें से मनुष्य का स्वच्छता का संस्कार बनता है।

मनुष्य का संस्कार व्यवसाय से जुड़ना चाहिए। मनुष्य के सांस्कृतिक कर्म का विकास होना चाहिए। सब कुछ मानवता-केन्द्रित होना चाहिए। इस दृष्टि से हमने दो उदाहरण लिये। एक कसाई का और दूसरा भंगी का। एक में तो यंत्रीकरण के सिवा चारा नहीं है। सब कसाई का काम नहीं कर सकते, लेकिन सब लोग भंगी का काम करें, यह कह भी सकते हैं और चाहते भी हैं। यह हम कब तक चाहते हैं? तब तक, जब तक सार्वत्रिक यंत्रीकरण नहीं हो जाता। सार्वत्रिक यंत्रीकरण होगा, तब भंगी भी समझेंगे कि ये लोग हमारे साथ थे। इसलिए जब यंत्रीकरण होगा, तब हम एक कदम आगे होंगे। इसमें मनुष्य का प्रेम प्रकट होता है। सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया का मनुष्य के लिए स्नेह प्रकट होना चाहिए। केवल व्यवस्था अलग चीज है, मनुष्य के लिए स्नेह अलग चीज।

सबको सब चीजें हासिल हैं, फिर भी अदल-बदल होता है। जैसे वस्तु की भेंट होती है, वैसे कला और श्रम की भी हो सकती है। मेरा रूमाल गिर गया है। मैं असमर्थ नहीं हूँ कि न उठा सकूँ। लेकिन आप दौड़ कर आते हैं और मुझे देते हैं तो यह इस बात का एक प्रतीक है कि हम आपकी इज्जत करते हैं। यह मनुष्य की मनुष्य के लिए इज्जत है, जिसे मानव-जीवन में 'प्रतिष्ठा' कहते हैं। यह प्रतिष्ठा हमारी क्रान्ति की प्रक्रिया में प्रकट होनी चाहिए। कसाई के काम की हम पूर्ण समाप्ति चाहते हैं, भंगी के काम की भी। लेकिन इनको मिटाने की प्रक्रिया में मनुष्य के साथ हार्दिक सम्बन्ध रहे, इस बात की आवश्यकता है।*

---

* अ० भा० सर्व सेवा संघ—प्रकाशन, काशी से इसी सप्ताह प्रकाशित होने वाली "अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया" पुस्तक से।

यू० नो० और दुनिया की रक्षा का सवाल

प्रश्न : क्या 'यू० नो०' दुनिया को बचा सकेगी?

उत्तर : दुनिया को बचाने का काम सबको करना चाहिये। 'यू० नो०' से काफी काम होता है, इसलिए 'आशा की जा सकती है कि उससे दुनिया का काम होगा। लेकिन आज का 'यू० नो०' का ढाँचा दूसरे 'बेसिस' का है। 'यू० नो०' को शान्ति सेना रखनी चाहिये। शस्त्रास्त्र तो सभी राष्ट्रों के पास हैं। आज रूस के पास शस्त्रास्त्र हैं, अमेरिका के पास शस्त्रास्त्र हैं और 'यू० नो०' के पास भी हैं। उससे 'यू० नो०' की शक्ति खत्म होती है। पाँच-पचास हजार शान्ति-सैनिक 'यू० नो०' के बनते तो उसका असर होता। या तो 'यू० नो०' के पास सेना है और दूसरों के पास नहीं है, ऐसा होना चाहिये। लेकिन ऐसा भी नहीं है। ऐसी हालत में 'यू० नो०' का उपयोग और लाभ सीमित होता है। फिर भी आज कुछ तो लाभ 'यू० नो०' से होता ही है और हम समझते हैं कि वह अच्छा है।

[टीकमगढ़, ६-१२-६१]

—विनोबा

मानव-संस्कार और व्यवसाय

• दादा धर्माधिकारी

मनुष्य के कामों पर जब हम विचार करते हैं, तो देखते हैं कि कुछ काम ऐसे हैं, जिनके विषय में संस्कार से ही अरुचि प्राप्त हैं। यह अरुचि केवल संस्कारजन्य है और इस कारण है कि समाज में ये काम अप्रतिष्ठित माने गये हैं। पशुओं के, गुलामों के और स्त्रियों के कुछ काम अप्रतिष्ठित माने गये हैं। लेकिन कुछ काम ऐसे हैं, जो अपने में अरुचिकर हैं, जैसे : कसाई का काम, भंगी का काम। ये काम अपने में अरुचिकर हैं, फिर भी आवश्यक हैं।

उद्योग में जितना आवश्यक परिश्रम है, वह संयोजन के साथ जोड़ा जाना चाहिए। अकुशल श्रम को पूरी तरह समाप्त करने के लिए एक ही साधन है और वह यह कि यंत्रों का उपयोग उसके लिए करें, जैसे पश्चिम में कसाई का काम यंत्र करता है। अब कसाई की जरूरत कम हो रही है। भंगी का काम भी ज्यादातर यंत्र कर लेते हैं। इसमें व्यवस्था की दृष्टि से कोई दोष नहीं है। यह हो जाय, तो हमें कोई शिकायत नहीं होनी चाहिए। परन्तु एक दोष इसमें है। यंत्र मनुष्य में स्वच्छता की भावना का विकास नहीं कर सकता। स्वच्छता पवित्रता है। 'क्लीनलीनेस इज गॉडलीनेस।' यंत्र इस भावना का विकास मनुष्य में नहीं कर सकता। दूसरे, यंत्र जब कसाई का काम करने लगता है, तो वह सहृदयता का विकास नहीं कर सकता।

हमारे यहाँ सज्जन कसाई-धर्म व्याध था। यहाँ मैं कई दफा छोटे छोटे लड़कों को मुर्गों को उल्टा टाँग कर घसीटते देखता हूँ। मारने से पहले क्रूरता से घसीट कर वे उसे ले जाते हैं। पश्चिम का मनुष्य ऐसा नहीं करता। हमारे यहाँ भूतदया का इतना विकास हुआ, लेकिन पश्चिम का आदमी बैल और घोड़े को सताता नहीं। जिस पशु को वह खाता है, उसके प्रति घृणा भी वह नहीं करता। मशीन से एक प्रकार की निर्घृणता पैदा होती है। मशीन से संवेदना का अभाव आता है। क्रूर उद्योग में भी एक प्रकार की 'कैलेसनेस' पैदा होती है। इन्सान का दिल पत्थर बन जाता है।

क्रूर उद्योग में भी सहृदयता

जो उद्योग क्रूर समझा जाता है, उसमें भी सहृदयता होती है। कसाई का उद्योग क्रूर माना गया, लेकिन वह हृदयहीन न हो, इसलिए कुछ मर्यादाएँ हैं। मर्यादा यह है कि जिस पशु को वह काटता है, उसे तुरन्त काट डाले। सिख और मुसलमान झटका और हलाल में विश्वास करते हैं। मरे हुए जानवर का मांस नहीं खायेंगे, इसलिए मुसलमान हलाल करते हैं। पशु को थोड़ा सा जिन्दा रहने देते हैं। वे स्वच्छता और पवित्रता की भावना के लिए बलिदान करते हैं। वे कहते हैं कि ऐसे जानवर को खायेंगे, जिसमें थोड़ी-सी जान बची हो।

किसी जेल में सिख और मुसलमान दोनों हों, वहाँ झगड़ा होगा। एक कहेगा कि हमें झटके का मांस चाहिए, दूसरा कहेगा कि हमें हलाल का चाहिए। मुसलमान कसाई होगा, तब भी वह जानवर से क्रूरता का व्यवहार नहीं करेगा। दोनों में एक दृष्टि रहेगी कि जिसको वह जबह या हलाल करता है, उसके प्रति वह क्रूरता नहीं करता। इसका नतीजा मनुष्य-मनुष्य के आपसी व्यवहार में भी दिखाई देता है।

यंत्रणा देना अलग चीज है और मार डालना अलग चीज। यंत्रणा देने में क्रूरता है, मार डालने में उतनी क्रूरता नहीं है। फाँसी दस सेकण्ड में लगा दी, तो कम क्रूरता है। जो हलाल करता है, उसके लिए भी मर्यादा है कि वह एक-एक अंग नहीं काटता। सारे धर्मों में अलग-अलग प्रकार की मर्यादाएँ रही हैं, फिर भी पशु के प्रति दुर्व्यवहार नहीं करते थे।

किसी जेलर से कहा जाय कि इसे रोज एक-एक तमाचा मारना है, तो वह ऐसा नहीं कर सकता; कानून की दृष्टि से भी नहीं कर सकता। जल्लाद में जो क्रूरता नहीं है, वह सत्तावादी राज्य में आ गयी। यंत्रणा देने वाला पुलिसमैन जल्लाद से अधिक क्रूर है।

कसाई का उद्योग

मांसाहारी की भी एक मर्यादा है। मांसाहारी होते हुए भी यह आवश्यक नहीं है कि वह क्रूर हो। यह आज तक के रोजगार की परम्परा है। मनुष्य ने आज तक जो क्रूर उद्योग किये, उनमें हाथ का स्पर्श होने के कारण क्रूरता की एक मर्यादा रही। अगर यह काम यंत्र करे तो क्या? तो मानवीय संवेदना कम होगी। तो क्या यंत्र से इसे न कराया जाय? कराया जाय, लेकिन साथ-साथ शिक्षण और संयोजन में ऐसी व्यवस्था करनी होगी कि मनुष्य में, यहाँ तक कि मांस खाने वाले मनुष्य में भी निर्घृणता न आने, क्योंकि वह स्वयं तो नहीं मारता।

कोई न्यायाधीश फाँसी की सजा नहीं देख सकता और स्वयं फाँसी दे भी नहीं सकता। उसे यदि स्वयं फाँसी देनी और देखनी होगी, तो फाँसी की सजा खतम होगी, क्योंकि उसमें हृदयहीनता है। उससे हम बचना चाहते हैं।

यान्त्रिकता का परिणाम मनुष्य की हृदयहीनता में न हो, यह आवश्यक है। कसाई का रोजगार करना भी एक जाति का काम न हो। हम बिल्कुल नहीं चाहते कि यह काम मनुष्य करे। लेकिन साथ-साथ मुझे काटना नहीं पड़ता, इससे जो निघृणता आती है, वह न आये। आज कसाई मांस काटता है, तो उसकी वेदना हमारे चित्त में नहीं है। इसका कारण यह है कि क्रूरता का व्यवसाय एक विशिष्ट वर्ग को हमने सौंप दिया।

अब वर्ग की जगह यंत्र दाखिल करते हैं। यंत्र दाखिल हो, इसमें हमारी कोई शिकायत नहीं है, लेकिन परिणाम यह न हो कि कसाई काटता था, तो हम जिम्मेवार नहीं थे, वैसे ही यंत्र काटता है, तो हमारी जिम्मेवारी नहीं है, क्योंकि हमको तो काटना नहीं पड़ता। ऐसा नहीं होना चाहिए।

आप पशु को पूरे अन्न के स्तर पर न लायें। आजकल 'पिग फॉर्मिंग' (सुअर-पालन) होता है। मेसोपोटेमिया में फौज के सिपाही घोड़े खाते थे। हमारे सब सैनिक—ब्राह्मण और जैन भी—घोड़े का मांस खाकर आये हैं। घोड़े का मांस खाना अलग चीज है और घोड़े को खाद्य मानना अलग चीज है। ये लोग घोड़े का मांस खाकर आये हैं, लेकिन घोड़े को खाद्य नहीं मानते। पशुमात्र मेरा खाद्य है, ऐसा कोई धर्म नहीं मानता। मांस खाने वाले भी नहीं मानते कि पशु हमारा खाद्य है। पशु को खाद्य मानना आज के मनुष्य का रुख नहीं है, जैसे कि वृक्षमात्र हमारे खाद्य हैं, ऐसा हम नहीं मानते।

मांसाहारी हैं, पर उनके मन में दयाभाव है। ईसा के मन में जो आत्यन्तिक दया थी, वह किसी शाकाहारी के मन में भी नहीं होगी। फिर भी वे शाकाहारी नहीं थे। पंचानवे फीसदी लोग मांस खाते हैं, फिर भी वे निर्दय नहीं हैं। पौधा सूखता देख कर आपको दया आती है, कोई लड़का वृक्ष को काटता है, तो भी दया आती है; लेकिन मूली खाते हुए आपको दया नहीं आती। यह संस्कार है। जो मांसाहारी हैं, वे पशु को अपना खाद्य नहीं मानते, उसे रक्षणीय मानते हैं। कुत्ते को मोटर के नीचे आते देख कर वे उसे बचा लेने की कोशिश करते हैं। खाने के लिए जितना अनिवार्य है, उतनी हिंसा वे करते हैं। खाने वाले में भी दया हो सकती है। राम मृगया करते थे, फिर भी वे दयावान् थे।

कुछ हिंसा का मनुष्य में संस्कार हो गया है। उतना उसका स्वभाव हो गया है। उतनी हिंसा उसे क्रूर नहीं बनाती। लेकिन एक दूसरी हिंसा है, जो उसे क्रूर बनाती है। मनुष्य का सामान्य स्वभाव जीव-रक्षण का है। भोजन के लिए जितना अनिवार्य है, उतनी हिंसा वह करता है। यंत्रीकरण ऐसा न हो कि मनुष्य को हृदयहीन बनाये। मछली और सूअर दो ही ऐसे प्राणी हैं, जो भोजन के लिए ज्यादा मात्रा में रखे जाते हैं। मनुष्य इन दो प्राणियों का ज्यादा-से-ज्यादा उपयोग बगैर खतरे के कर सकता है। इसलिए पश्चिम में 'पिग फॉर्मिंग' अधिक हो रहा है।

मनुष्य के आहार में व्यवस्था होनी चाहिए। हमें जीवन की प्रतिष्ठा बढ़ानी है। जो मनुष्य मनुष्य का भक्षण करता है, वह अपने बेटे का, बाप का भक्षण नहीं करता। मरने पर वह भले बाप को खावे! आखिर इसका मतलब यह है कि यह मिथ्या तर्क है। 'भावना' नाम की वस्तु मनुष्य की जीवन-प्रतिष्ठा का आधार है। उसके पीछे भौतिक आधार हो सकता है। तरुण स्त्री पुरुष का सम्बन्ध हो सकता है, लेकिन भाई-बहन का नहीं हो सकता। इसकी कोई दलील है क्या? ये नियम क्यों बने? जीवन की प्रतिष्ठा कायम रहे, इसलिए मनुष्य आत्मीयता का दायरा बढ़ाता है। आपके अपने जीवन का दायरा आप बढ़ाते हैं। माँ जिससे आप पैदा हुए, उसके लिए पहला, पिता के लिए उसके बाद, आपके साथ पैदा हुआ, उसका उसके बाद और आपका विवाह जिससे होता है, उसका उसके बाद, इस प्रकार आप दायरा बढ़ाते हैं। यह आत्मीयता का दायरा है। यह मनुष्य से प्राणियों तक जाना चाहिए।

यह मछली का मांस है, इसे खाना नहीं है। यह बकरे का मांस है, इसे खाना नहीं है। यों, हम प्राणियों में ही विवेक करते चले आते हैं। मछली सबसे प्राथमिक अवस्था का प्राणी माना गया है। जितनी उत्क्रान्ति हुई है, उसमें वह प्राथमिक माना गया। प्राथमिक अवस्था में यह जीव मानी जाती है। इसलिए मछली खाते हो तो मनुष्य को खाओ, ऐसा कोई नहीं कहेगा। यह तर्क नहीं है।

पशु से प्यार

जो मनुष्य मांस खाता है, वह पशु से प्यार भी करता है। एक कसाई ने अपने यहाँ एक मेमना पाला था। सब बच्चे उस मेमने को बहुत प्यार करते थे। जो कमाई होती थी, उसमें से कुटुम्ब के सब लोग खाते थे और मेमना भी खाता था। एक दिन कमाई न हुई, तो कसाई ने अपने हिस्से में से मेमने को खिलाया। दूसरा दिन भी ऐसा ही गया। दूसरे दिन माँ के हिस्से में से खिलाया। बच्चों ने भी अपने-अपने हिस्सों में से मेमने को खिलाया, पर किसीको मेमना बेच देने का विचार नहीं आया। सब अपने-अपने हिस्से में से उसे खिलाते थे। मगर एक दिन नौबत ऐसी आयी कि मेमना बेचना पड़ा।

लेने वाला दूसरा कसाई उसके घर

निर्विरोध बनाम सर्वसम्मत

• पूर्णचन्द्र जैन

एक साथी लिखते हैं कि उनके जिले के एक विधान-सभा निर्वाचन-क्षेत्र से अमुक पक्ष के एक व्यक्ति निर्विरोध निर्वाचित घोषित किये गये हैं। पाँच-सात अन्य उम्मीदवार भी थे। लेकिन सर्वोदय-कार्यालयवालों के चुनावों सम्बन्धी आचार-मर्यादा का विचार सामने रखने पर उन लोगों ने नाम वापिस ले लिये और एक भाई के बिना विरोध चुने जाने की घोषणा की गयी।

अन्य कुछ स्थानों पर भी, चाहे वे सारे देश के चुनाव-क्षेत्रों और खड़े होने वाले व्यक्तियों की विशाल संख्या की तुलना में बहुत थोड़े ही हों, ऐसी स्थिति, खास तौर से निर्विरोध निर्वाचन के महत्त्व के थोड़े या बहुत उपयोग व मूल्यांकन की दृष्टि से बनी होगी। निर्विरोध चुनाव के महत्त्व को समझा जाता है, योग्य व्यक्ति के पक्ष में नाम वापस लिया जाता था लिये जाते हैं और इसमें जनता अथवा पक्षों का जा बेजा दबाव नहीं पड़ता, यह अपने आप में महत्त्व की बात है।

मैदान छोड़ने या तथाकथित सज्जनतावश पलायन कर जाने की स्थिति के नतीजे के रूप में कहीं निर्विरोध चुनाव की बात हो तो वह खतरनाक होगी, यह सावधानी सर्वोदय विचारवालों को भी, इस विचार को लोगों के सामने रखते समय अपने ध्यान में रखनी होगी।

इस सिलसिले में दूसरी एक महत्त्व की बात और भी है। निर्विरोध निर्वाचन एक स्थिति है तथा सर्व सम्मति मिलने की दूसरी। पहली स्थिति कुछ तत्त्वों की शरारत और अन्य कुछ तत्त्वों की भलमनसाहत, उदासीनता या शिथिलता से पैदा हो सकती है। लेकिन दूसरी स्थिति समाज में औसतन सज्जनता और विवेक के सजग और सक्रिय होने से ही बन सकती है। कायर की अहिंसा जैसे कमजोरी है, उसी प्रकार शरारती पक्ष को, मौजूदा चुनाव-पद्धति को मंजूर करते हुए, विरोध न मिलना भी समाज में दब्बूपन साबित होगा। साफ ही कायरता और दब्बूपन हर सूरत में, व्यक्ति और समाज में, भयानक और खतरे से भरे हैं।

इसलिए मुख्य बात सर्वसम्मति के महत्त्व, उसकी शक्ति (पोटेंशियालिटी) और वह कैसे सजीव सक्रिय हो, यह समझे जाने की है। इसे थोड़ा भी समझा जायगा तो निर्विरोध चुने जाने वाले व्यक्ति और अपना विरोध वापस लेने वाले व्यक्ति व समाज, सबको विशेष कुछ अपनी-अपनी जिम्मेदारी अनुभव करनी होगी।

निर्विरोध चुने जाने वाले व्यक्ति को देखना होगा कि वह पूरी तौर पर पक्षातीत रहता है या नहीं। विरोध न मिलने के रूप में जो उसे अन्य सबका विश्वास मिला है उसे कहीं भी, कभी भी खोता तो नहीं। वह अपने क्षेत्र की नुमाइंदगी या उसका प्रतिनिधित्व एक पक्ष विशेष की ओर से करने की संकुचितता से ऊपर उठ रहा है या नहीं।

निर्विरोध निर्वाचित होने वाला व्यक्ति स्वतंत्र रूप से खड़ा हो तो ठीक है, अन्यथा जिस पक्ष का वह है उस पक्ष के ऊपर भी उसके अपने एक व्यक्ति के निर्विरोध चुने जाने पर, जिम्मेवारी आ जाती है। उस पक्ष को भी समझना चाहिए कि अपने उस क्षेत्र के नुमाइंदे या प्रतिनिधि को विधान सभा में या अन्यत्र कहीं अपनी पक्षगत संकुचितता में एक या दूसरे प्रकार से 'पार्टी-डिसिप्लिन' या अन्य किसी नाम पर, वह न घसीटने की कोशिश करे। पक्ष स्वयं इस संबंध में कुछ उदार रहेगा और समाज में नये मूल्य लाने की दृष्टि रखेगा तो उसके ही एक व्यक्ति की क्षेत्र में साख बढ़ेगी, क्षेत्र का समाज वस्तुतः ताकतवर बनेगा और एक प्रबुद्ध लोकशाही की स्थापना की दिशा में कदम उठेगा।

इस सबमें क्षेत्र के मतदातागण का क्या स्थान और जिम्मा है! अप्रत्यक्ष चुनाव में और अपने क्षेत्र के प्रतिनिधि की गलतियों पर उसे वापस बुला लेने का अधिकार स्पष्ट रूप से न हो तब तक, क्षेत्र की मतदाता जनता मूक दर्शक ही शायद मानी जायगी। जिन व्यक्तियों ने नाम वापस लिये और निर्विरोध निर्वाचन की स्थिति ला दी, उनके बारे में जनता की धारणा (कान्सेन्सस) कुछ ऐसी बने कि उसे इन नाम वापस लेने वालों ने धोखा दिया, तो उससे पेचीदगियाँ पैदा हो सकती हैं। जनता भी उस निर्विरोध निर्वाचन के परिणाम से खुश हो तो सर्वसम्मति या लोक सम्मति की भूमिका बन कर अच्छा आरंभ हुआ, काम ठीक तौर से बढ़ने की संभावनाएँ बनीं, ऐसा माना-जायगा। लेकिन दरअसल देखा जाय तो साधारणतः जनता ऐसे अवसरों पर उदासीन रहती है। अप्रत्यक्ष चुनाव में वह बहुत कुछ निश्चिन्त और बेलाग अपने आपको मान लेती है। निर्विरोध निर्वाचन हो गया तो शायद बला टली, ऐसा समझ कर चुनाव अवधि के बाद की एवज पहले ही अपनी कुण्डली में सिर डाल कर जनता आराम करने लग जाती है।

गहराई से देखा जाय तो निर्विरोध निर्वाचन को सर्व-सम्मति की शक्ति देने में या उसे बोगस साबित करने में क्षेत्र की जनता का बड़ा हाथ और भारी जिम्मा हो सकता है, होना चाहिए। यह निर्विवाद है कि सर्वसम्मति की अहमियत को समझा जायगा और वह शक्ति बनेगी, तभी निर्विरोध के शुभारंभ में से नैतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक नवजीवन का दर्शन हो सकेगा। निर्विरोध निर्वाचन आरम्भ है। सर्वसम्मत सक्रिय समर्थन की ओर उसका विकास होना चाहिए। तब ही इसमें से समाज में स्वस्थ और जीवंत लोकशाही का प्रकाश निकलेगा।

मलयपुर से शराब की दूकान उठाने के लिए कई महीने से सत्याग्रह चल रहा था, जिसका समर्थन बिहार सर्वोदय मंडल ने किया था। बिहार सर्वोदय मंडल समूचे बिहार में जनशक्ति को जगा कर सरकार द्वारा नशाबन्दी लागू करने का कार्यक्रम बनाने का विचार कर रहा है। इस ओर कुछ प्रगति भी हुई है और कुछ ही दिनों राज्य-सम्मेलन करने का निश्चय भी किया जा रहा है।

—रामनन्दन सिंह

सभी दलों के उम्मीदवारों के लिए एक सभा-मंच

मुंगेर जिले के सूर्यगढ़ा में २४ जनवरी को सभी दलों के उम्मीदवारों द्वारा एक ही सभा-मंच से अपना चुनाव प्रचार किया गया। सभापतित्व बिहार सर्वोदय-मण्डल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह ने किया। सभापति की ओर से प्रत्येक दल के उम्मीदवार को मंच से बोलने के लिए आधा-आधा घण्टे का समय दिया जाता था। इस अभिनव चुनाव-प्रचार की सभा देखने के लिए लगभग ५ हजार की भीड़ एकत्र थी।

सर्वप्रथम सर्वोदय मण्डल की ओर से श्री रूपकान्त शास्त्री तथा श्री गोखले चौधरी ने आम निर्वाचन के सम्बन्ध में सर्वोदय विचार के दृष्टिकोण से परिचित कराया। तत्पश्चात् प्रजा-समाजवादी दल के उस क्षेत्र के उम्मीदवार श्री गीताप्रसाद सिंह ने बताया कि देश की मुख्यतः चार विचार धाराएँ हैं। स्वतंत्र पार्टी देश को पुरानी व्यवस्था की ओर वापस ले जाना चाहती है। काँग्रेस यथास्थिति कायम रखने की पक्षपाती है। कम्युनिस्ट पार्टी की राष्ट्रीयता विशुद्ध नहीं है और उसका विश्वास तानाशाही पद्धति से गरीबी के निराकरण की ओर है। प्रजासमाजवादी दल विकेन्द्रित लोकतांत्रिक समाजवाद पर विश्वास करता है। भारत के लिए सबसे बेहतर मार्ग यही है।

कांग्रेस की ओर से श्री भागवत प्रसाद ने कहा कि काँग्रेस और प्रजासमाजवादी पार्टी का दृष्टिकोण में फर्क नहीं है। केवल सत्ता हस्तांतरण करने के लिए ही इस पार्टी का रहना अच्छा नहीं है। प्रजासमाजवादी दल प्रतिदिन क्षीण होता जा रहा है। काँग्रेस यथास्थिति बनाये रखने वाली होती तो जमींदारी उन्मूलन नहीं होता, हदबन्दी नहीं होती और न 'सीलिंग' लगाने की बात होती। जनता के लिए होने वाले एक-एक विकास के कार्य लोगों के सामने हैं। स्वतन्त्र पार्टी निहित स्वार्थ का प्रतिनिधित्व करती है तथा देश की प्रगति में बाधक होना चाहती है।

स्वतन्त्र दल के उम्मीदवार श्री भागवत प्रसाद मेहता ने कहा कि स्वतन्त्र दल पर अमीरों की संस्था होने का आरोप लगाया जाता है, लेकिन काँग्रेस में तो उससे भी अधिक राजा-महाराजा और पूँजीपति पड़े हैं। आज सरकारी खर्च से छोटे छोटे बच्चों के द्वारा 'चाचा बहादुर जिन्दाबाद' के नारे लगवाये जाते हैं! स्वतन्त्र पार्टी के नेता श्री कामाख्या नारायण सिंह का त्याग बहुत बड़ा है।

कम्युनिस्ट पार्टी के जिला-मन्त्री श्री भोला प्रसाद ने कहा कि भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी चीन के मामले में राष्ट्रीय दृष्टिकोण से सोचती रही है। जनता को आर्थिक न्याय दिलाने की दिशा में काँग्रेस कामयाब नहीं हुई। देश में भ्रष्टाचार बढ़ता जा रहा है। भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी यथाशीघ्र गरीबी का परिमार्जन करना चाहती है।

स्मरणीय है कि सूर्यगढ़ा विधान-सभा चुनाव-क्षेत्र से चार चार उम्मीदवार खड़े हैं। अंत में श्री रामनारायण बाबू ने सभी राजनीतिक दलों को इस बात के लिए धन्यवाद दिया कि उन्होंने एक मंच से शांतिपूर्वक अपने विचार जनता के सामने रखे।

"हमारा राष्ट्रीय शिक्षण"

मूल्य : २ रु० ५० न० पै०, सजिल्द ३ रु०

प्रकाशक : अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

श्री धीरेन्द्र बाबू की कृति—"हमारा राष्ट्रीय शिक्षण" नयी तालीम का हार्द समझने के लिए कार्यकर्ताओं को अच्छी सहायता करने वाली होगी।

श्री चारबाबू कहते हैं कि वे शिक्षक का पेशा करने वाले नहीं हैं। एक दृष्टि से यह संयोग अच्छा ही है। जब एक पेशेवर शिक्षक लिखता है, तो वह 'डिटेल्स' से अपने को छुड़ा कर विचार नहीं कर सकता। राष्ट्रीय विशाल दृष्टि समझने-समझाने के लिए तटस्थ विचारक अधिक सुयोग्य हो सकता है।

—जुगतराम दवे

बिहार की चिट्ठी

बिहार के शांति-सैनिकों का जत्था राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद को लगभग छह हजार बीघे के दानपत्र उनके जन्म-दिवस पर समर्पण करने के बाद दिल्ली से लौट कर 'बीघा-कट्ठा अभियान' में फिर से जुट गया। बिहार में फिर जोरों से एक सप्ताह तक शीतलहरी के प्रकोप एवं अन्य कारणों से 'बीघा-कट्ठा अभियान' में कुछ शिथिलता आ गयी। बिहार सर्वोदय-मंडल ने 'बीघा-कट्ठा अभियान' में तीव्रता लाने एवं आगामी आम चुनाव में राजनीतिक दलों द्वारा स्वीकृत आचार-मर्यादा को उम्मीदवारों द्वारा पालन-हेतु ११ दिसम्बर से ३१ दिसम्बर तक बिहार के १७ जिलों में त्रिदिवसीय शिविर का आयोजन करने का निश्चय किया।

शिविर में सर्वश्री दादा धर्माधिकारी, धीरेन्द्र भाई, शंकररावजी देव, जयप्रकाश नारायण आदि नेताओं ने शामिल होने की स्वीकृति दे दी थी, लेकिन शिविर प्रारंभ होने के कुछ दिन ही पहले श्री दादा धर्माधिकारी ने अस्वस्थता एवं श्री धीरेन्द्र भाई ने अन्यत्र आवश्यक कार्य के कारण शिविर में शामिल होने में अपनी असमर्थता दिखायी। इसके अतिरिक्त कुछ जिला सर्वोदय मंडलों ने भी अन्य कामों में उलझे रहने के कारण शिविर की सफलता पर सन्देह प्रकट किया। लाचार होकर मुजफ्फरपुर, सारण, सहरसा, संथाल परगना, शाहाबाद, भागलपुर, मुंगेर, राँची, पलामू, धनबाद एवं सिंहभूमि के शिविर स्थगित कर दिया गया।

केवल दरभंगा, चंपारण, पटना, हजारीबाग, गया और पूर्णियाँ जिले में ही त्रिदिवसीय शिविर का आयोजन किया गया। अन्य वक्ताओं के अतिरिक्त सर्वश्री जयप्रकाश नारायण एवं शंकरराव देव ने सर्वोदय-विचार तथा ग्रामदान आदि पर अपने विचार शिविरार्थियों के बीच व्यक्त किये। शिविर में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त गांधी स्मारक निधि, पंचायत-परिषद्, खादी-ग्रामोद्योग संघ, हरिजन सेवक संघ, भारत सेवक समाज, भूदान कमिटी एवं अन्य रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधियों के अतिरिक्त विधायक आदि भी शामिल हुए।

सम्मेलन

दिसम्बर के अन्तिम सप्ताह में जिला सर्वोदय मंडल, पूर्णियाँ का वार्षिक सम्मेलन श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के मार्ग-दर्शन में आयोजित किया गया, जिसमें सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, श्यामसुन्दर प्रसाद, रामनारायण सिंह के अतिरिक्त बिहार सरकार के कल्याण मंत्री श्री भोला पासवान शास्त्री, उपमंत्री श्री कमलदेव नारायण, प्रो० जगन्नाथ प्रसाद मिश्र सदस्य विधान परिषद्, पूर्णियाँ कालेज के प्राचार्य डा० जनार्दन झा 'द्विज' एवं कई अन्य वक्ता शामिल हुए थे। दिसम्बर माह के मध्य में श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा संस्थापित सोखोदेवरा के सर्वोदय-आश्रम का वार्षिक सम्मेलन भी सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ, जिसका उद्घाटन श्री ढेबर भाई ने किया।

अणुबम परीक्षण विरोधी हस्ताक्षर अभियान

बिहार की जनता को अणुबम सम्बन्धी शिक्षण देने एवं जनशक्ति द्वारा अणुबम-परीक्षण बन्द करने के हेतु श्री जयप्रकाश नारायण के निर्देशानुसार श्री के० जे० सिंह द्वारा संचालित 'अणुबम-परीक्षण बन्द करो हस्ताक्षर आन्दोलन' का कार्य बिहार में भी प्रारम्भ किया गया। २८ दिसम्बर को पटना विश्वविद्यालय के सिनेट हाल में पटना उच्च न्यायालय के न्यायाधीश श्री सतीशचन्द्र मिश्र की अध्यक्षता में अभियान का प्रारंभ करने के लिए एक आम सभा का आयोजन किया गया था, जिसका उद्घाटन श्री जयप्रकाश नारायण ने किया। शीतलहरी के कारण मौसम खराब होने पर भी सिनेट हाल कालेज के प्राध्यापकों एवं छात्रों से भरा था। हाल में जगह न मिलने पर बाहर भी सैकड़ों व्यक्ति खड़े होकर शान्त चित्त से श्री जयप्रकाश नारायण का भाषण सुन रहे थे। आपने विस्तारपूर्वक अणुबम-परीक्षण से होने वाली हानि का वर्णन किया।

कार्यकर्ता-निधन !

पटना जिले के कर्मठ कार्यकर्ता श्री रमण बिहारी सिंह का देहान्त इसी मास अपने निवास स्थान फतहपुर में हृदय-गति रुक जाने के कारण हो गया! श्री रमण बिहारी बाबू को सर्वोदय के प्रति गहरी श्रद्धा थी और अपने जीवन में उन्होंने मानव-सेवा का ही व्रत ले रखा था। हाल ही में बाढ़पीड़ितों की सेवार्थ रमण बाबू ने सप्ताहों तक पटना जिले के बाढ़-मोकामा एवं अन्य क्षेत्रों का दौरा किया और पीड़ितों की सेवा उनके घर की सफाई, बीमारों को दवा आदि की सहायता से की। रमण बाबू की सेवा से प्रभावित होकर पटना जिले के लोग श्रद्धा से उन्हें "गांधीजी" कह कर पुकारते थे! उनके निधन से पटना जिला सर्वोदय मंडल को जो क्षति हुई है, उसकी पूर्ति निकट भविष्य में होने वाली नहीं है!

सर्वोदय-पात्र एवं साहित्य-बिक्री

पटना शहर में तीन महीने से सर्वोदय-पात्र से अन्न संग्रह करने का कार्य कई कारणों से स्थगित था। दिसम्बर महीने से संग्रह-कार्य फिर शुरू कर दिया गया है। इस महीने में सर्वोदय-साहित्य की बिक्री सन्तोषप्रद हुई है।

अखंड प्रांतीय पदयात्री दल

स्व० श्री लक्ष्मीनारायणजी के श्रद्धा स्वरूप अखण्ड पदयात्री दल का आयोजन बिहार सर्वोदय-मंडल ने किया, जो कई वर्षों से बिहार के गाँवों की यात्रा जमीन इकट्ठा करने का प्रयास कर रहा है। दिसम्बर महीने में टोली ने श्री मोहन शर्मा के नेतृत्व में ११ सौ जमीन 'बीघा-कट्ठा अभियान' में की है।

नशाबन्दी-कार्य

बिहार सर्वोदय-मंडल ने नशाबन्दी सम्बन्धी कार्य करने एक स्थायी समिति का गठन जिसके संयोजक श्री श्यामसुन्दर बनाये गये। श्री जयप्रकाश एवं श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी से बिहार सरकार ने मुंगेर जिले पुर से शराब की दूकान

भावग्राही जनार्दन !

इन पद्यों में जो सुन्दर सत्य छिपा हुआ है, मैं चाहता हूँ कि वह हम सबके हृदय में बस जाय। —गांधीजी

हजरत मूसा ने लख्यो,
राह चलत इक बार।
या विध टेरत है कोउ,
भेड़ चरावन हार ॥ १ ॥

"सब समरथ भगवान मोहि,
है तू कहाँ बताव।
तोहि पाय तेरो बनौं,
मैं सेवक सब भाव ॥ २ ॥

तो हित पनही मैं गढ़ूँ,
करूँ केस विन्यास।
कर चूमूँ चांपू चरन,
मन में होय हुलास ॥ ३ ॥

तेरे पीढ़न हेत मैं,
भूमि बुहारूँ हाथ।
रोग ग्रसित तू होय तो,
करूँ शुश्रूषा नाथ ॥ ४ ॥

संतति सम्पति सहित मैं,
तोपै बलि बलि जाउँ।
अपनी सगरी भेड़ मैं,
तेरे चरन चढ़ाउँ ॥ ५ ॥

घर लौटत निज भेड़ कौं,
मैं टेरत पुचकार।
सोऊ तेरो ध्यान है,
हे मेरे करतार ॥ ६ ॥

रह्यो गड़रिया रटत जब,
या विध, हूँ बेचैन।
"केहि खोजत तू है अरे,"
बोले मूसा बैन ॥ ७ ॥

"सो बोल्यो खोजत अहों,
तोहि जो सिरजन हार,
जाने उपजायी धरा,
और दिव्य संसार" ॥ ८ ॥

"श्रद्धाहीन प्रमत्त तू",
बोले मूसा "हाय।
मुसलमान तू नहिं रह्यो,
काफिर प्रगट लखाय ॥ ९ ॥

ऐसे बचन न बोल तू,
मुख कौं राखै छुपाय।
नहिं तो नरकागिन जगत,
करिहै भसम जराय" ॥१०॥

दीन गड़ेरिया ने कही,
हे मूसा तव घात।
वाने मेरो मुँह सियो,
मन मेरो पछतात ॥११॥

चींथ चींथ निज वसन करि,
प्रतत उसांसें लेत।
गवन कियो वन ओर तेहि,
बहुत विसाद समेत ॥१२॥

मूसा के कानन परी,
प्रभुन बानी या भाव।
मेरे सेवक कौ कियौ,
क्यों मोसे बिलगाव ॥१३॥

आयौ तू या जगत में,
मेल करावन काज।
आयौ तूनहिं जगत में,
बिलगावन के काज ॥१४॥

मैं देखत बहिरंग नहिं,
और न बचन बनाव।
पहिचानत भीतर बहा,
और हृदय को भाव ॥१५॥

मूसा ने ज्यौंही सुने—
प्रभु के बचन सकोह।
त्यौंही जंगल में भजे,
लैन भेड़िहर टोह ॥ १६ ॥

पाय ताहि मूसा कही,
'तो हित सुभ सम्वाद।
अनुमति मोहि भगवान ने,
दयी कहन सहलाद ॥१७॥

मोसों बोलन हेत नहिं,
विधि को करि तू सोच।
मन की सारी बात कह,
मोसों तजि संकोच" ॥१८॥

मसनवी ए मौलाना रूम के मूल फारसी से श्री रमावल्लभ चतुर्वेदी द्वारा अनुवादित

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १६ फरवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक २०

ग्रामसंजीवन-वटिका : ग्राम पंचायत

दादा धर्माधिकारी

स्वतन्त्र भारत के संविधान का मसविदा संविधान-परिषद को पेश करते हुए भारत के मशहूर विधान-पंडित और दलित जनता के नेता डा० भीमराव अंबेडकर ने हमारे गांवों के बारे में कहा था, "मेरी राय में इन ग्रामीण गणतन्त्रों की बदौलत भारत का सत्यानाश हुआ है। यह गांव क्षुद्र क्षेत्रवाद के डबरे और अज्ञान, संकीर्णता तथा सम्प्रदायवाद के सिवा और है क्या ?" संविधान-परिषद में जो सदस्य ग्रामीणता और ग्रामवाद के हिमायती थे, उन्हें डा० अंबेडकर के ये शब्द अखरे। ग्रामों का गौरव और गुणगान करने के बदले डा० अंबेडकर ने बड़ी कड़वी भाषा में ग्रामीण जीवन की आलोचना की थी। आप लोग, जो ग्राम-पंचायतों के संचालन में सक्रिय भाग लेने वाले हैं, उनके लिए डा० अंबेडकर के इन शब्दों का बहुत महत्त्व है। हमें देखना यह है कि क्या डा० अंबेडकर ने गांव का जो वर्णन किया वह वास्तविक नहीं ? ऐसे गांवों में आपको नवनिर्माण का काम करना है। आज जो घूरा है, उसे साफसुथरी और सुसंस्कृत बस्ती में, मानवोचित उपनिवेश में बदलना है।

ग्राम-पंचायत का कानून बन गया। उसमें कोई त्रुटियाँ या दोष रह गये हों, तो उन्हें दूर करने के लिए कानून में संशोधन हो सकता है। परन्तु जो ग्राम पंचायत बनेंगी, उनमें तो ग्रामजीवन ही प्रतिबिंबित होगा। तालाब के पानी में इमारत की परछाईं दिखाई देती है। इमारत सुन्दर होगी तो प्रतिबिंब भी सुन्दर होगा। लेकिन इमारत ही बेढब और अनगढ़ हो, तो प्रतिबिंब भी भद्दा ही दिखाई देगा। तालाब का पानी साफ होने पर भी प्रतिबिंब सुन्दर नहीं होगा। कानून जीवन-निर्माण के लिए सहूलियत और मौका दे सकता है। सहूलियत और मौके से फायदा उठाने की सिफत और ताकत कोई कानून नहीं दे सकता। हमारे सामने बुनियादी सवाल यह है कि ग्रामपंचायतों का ठीक ठीक उपयोग करने की कुशलता और सामर्थ्य ग्राम निवासियों में कैसे आये ? जैसे गाँववाले होंगे, वैसी उनकी पंचायतें होंगी।

ग्रामीण नागरिक आज चिरमूर्छा की स्थिति में है। ऐसा बेखबर है, मानो उसने मदक पी ली हो। गाँव में जो लोग शोहदे, शरारती और खुराफाती होते हैं, वे जरूर चौकने और सजग होते हैं। कानून जो सुयोग और सुविधाएँ उपस्थित करता है, उनसे अधिक-से अधिक लाभ उठाने में वे नहीं चूकते। जिनके पास पैसा है, वे उन सुयोगों और सुविधाओं को खरीद लेते हैं और जिनमें चतुराई और धूर्तता होती है, वे सत्ता हथिया लेते हैं। जिसके लिए ये ग्राम-पंचायतें बनी हैं, वह सामान्य नागरिक बेचारा हाथ मलता, शिकायत करता और किस्मत को कोसता रह जाता है। आपके सामने सबसे अहम सवाल यह है कि हुकूमत किसके हाथ में हो। साधारण नागरिक को जगा कर यह समझाना चाहिए कि उसकी उदासीनता और असावधानी से उसका और सारे गाँव का सर्वनाश होने वाला है।

आसमान में आठ ग्रह इकट्ठे होने वाले हैं तो सब तरफ कैसा तहलका मचा है ! लेकिन गाँव की धरती पर तीन पाप-ग्रहों की युति तो हमेशा रही—पटेल, पटवारी और स्कूल-मास्टर। चौथा ग्रह था पत्रा पंचांगवाला पोथी-पंडित और अब पाँचवाँ ग्रह होने वाला है गाँव पंचायत का प्रमुख ! आकाश के अष्टग्रहों की अपेक्षा ये पंचग्रह प्रलय करने में ज्यादा कामयाब साबित हो सकते हैं। साधारण नागरिक अचेत रहेगा तो वास्तविक सत्ता इन्हीं के हाथ में जायेगी और साधारण नागरिक को यह अनुभव होगा कि पंचायत के रूप में एक चण्डिका भवानी और आ गयी, जो चढ़ौती भी मांगेगी और बलिदान भी।

अब तक के अनुभव से हमें सबक सीखना चाहिए। कई जिला-काउन्सिलें, म्युनिसिपालिटियाँ, लोकल-बोर्ड न नौकरों की तनख्वाहें वक्त पर देती हैं, न सफाई की तरफ ध्यान देती हैं और न सड़कों की मरम्मत कराती हैं। दवाखानों में दवाएँ नदारद होती हैं और डाक्टर शहर काम-ख्वाह होते हैं। तब लोग राज्य-सरकार से या केन्द्रीय सरकार से दरख्वास्त करते हैं कि इनके अधिकार छीन लीजिये। साधारण नागरिक अगर गाफिल और बेखबर रहेगा तो ग्राम-पंचायतों की भी यही हालत होगी। वे बिलकुल जुलमी हो जायँगी, इसलिए ग्राम-पंचायतें ऐसे व्यक्तियों के हाथ में आनी चाहिए, जिनकी पीठ कुर्सी की तरफ हो और मुँह लोगों की तरफ हो। आज उल्टी बात है। सत्ता उनके हाथ में जाती है, जिनका मुँह कुर्सी की तरफ या गद्दी की तरफ होता है और पीठ लोगों की तरफ। ग्राम पंचायतों के सदस्य लोकाभिमुख हों और सत्ता-विमुख हों। यह इस प्रयोग की सफलता का सूत्र है।

हमें अपनी तरुण बहू-बेटी को दूसरे गाँव भेजना हो तो हम उसके लिए अच्छी सोहबत खोजते हैं। कोई पहचान का बुजुर्ग मिलता है तो तसल्ली होती है। क्यों ? उसे स्त्री की अभिलाषा नहीं है, इसलिए उसकी संरक्षता में क्षेम है। हमें घर में ताला लगा कर बाहर गाँव जाना हो, तो हम अपनी जोखिम की चीजें किसे सौंप कर जाते हैं ? ऐसे आदमी को, जो निःस्पृह हो, जिसे धन का लोभ न हो। दौलत से भी हुकूमत में ज्यादा जोखिम है। इसलिए हुकूमत ऐसे शख्स के पास होनी चाहिए, जिसे हुकूमत का लालच न हो, जो कुर्सी का उम्मीदवार न हो। लोक प्रतिनिधि का यह सर्वप्रथम और सबसे महत्त्वपूर्ण गुण है। ग्राम पंचायतों के निर्माण में उम्मीदवारी और सत्ता की होड़ बिलकुल नहीं होनी चाहिए।

आज हमारे गाँवों का जीवन पुराणवाद में घुट रहा है। डबरे के पानी की तरह वह थमा हुआ है। उसमें बहाव नहीं है। इसीलिए प्रगति नहीं है। शहरों के जीवन में प्रगति भले हो न हो, लेकिन गति जरूर है, उसमें प्रवाह है, धारा है। बहती धारा में गन्दे परनाले छोड़ने से भी पानी गन्दा रह नहीं पाता। प्रवाह उसे साफ कर देता है। लेकिन थमे हुए पानी में छोटा सा नाबदान छोड़ने पर भी सारा पानी गन्दला हो जाता है। गाँव का जीवन गतानुगतिक, रूढ़िवादी और दकियानूसी है। हमारी परंपरा में नीति-धर्म और समाज-धर्म की अपेक्षा जाति धर्म की प्रधानता है। कोई रिश्वतखोरी करे, खाने की चीजों में मिलावट करे, रेल और बस में बगैर टिकट चले, तो लोग उसे धर्म-भ्रष्ट नहीं मानते। परन्तु यदि कोई दूसरी उपजाति के घर भी भोजन कर ले तो वह धर्म-भ्रष्ट समझा जाता है और जाति-पंचायत उसे दण्ड देती है। हमारे गाँव तो जातिवाद के गढ़ हैं। शहरों में चुनावों में जातिवाद ने भयंकर अनर्थ किया है। गाँव पंचायतों के चुनावों में अगर यह भूत प्रवेश पा गया तो वह जो सितम ढायेगा, उसका कोई ठिकाना नहीं। ग्राम-पंचायतें ऐसे शख्सों के हाथ में होनी चाहिए, जिन्होंने जातपाँत और छूआछूत को तिलांजलि दे दी हो, जो कानून के सामने और नागरिक के नाते सारे स्त्री-पुरुषों को बराबर मानते हों, जो गुनाहगारों में और शरीफों में यह ब्राह्मण है, यह भंगी है, यह हिन्दू है, यह मुसलमान है, ऐसा भेद नहीं करेंगे। 'एक जने के एक वोट' का यही रहस्य है। उस सूत्र में मूलभूत मानव-दर्शन छिपा हुआ है।

हमारे देश में चौदह साल तक लोकतंत्र जिस पैमाने पर और जिस मात्रा में चला, उस तरह और उतनी कम असफलता से दुनिया के इतिहास में कहीं नहीं चला। इसकी एक वजह यह थी कि हमारे देश की सभी पार्टियों के मुख्य मुख्य नेता ईमानदार हैं और खुदगर्ज नहीं हैं। लेकिन अब तो हम सत्ता का विकेन्द्रीकरण कर रहे हैं। उसे साधारण मनुष्य तक, नागरिक तक पहुँचा रहे हैं। अब अगर घूसखोरी, मक्कारी और फरेब का बाजार गर्म हो तो ये ग्राम पंचायतें शैतान के औजार बन जायँगी और लोकसत्ता का काम तमाम कर देंगी।

एक अंग्रेज-लेखक ने हमारे देश के बारे में एक बात बड़ी पते की कही है। वह कहता है, "हिन्दुस्तान व्यक्तिगत स्वच्छता और सामुदायिक गन्दगी का देश है। इस देश की जमीन वसुन्धरा है, धन से भरी हुई है, मगर लोग कंगाल हैं।" इसमें हमें अपनी तरफ से एक बात और जोड़ देनी चाहिए—"यह देश व्यक्तिगत पवित्रता और सार्वजनिक भ्रष्टता का देश है।" नागरिक चारित्र्य, सामाजिक सदाचार, लोकनीति की कमी है। सार्वजनिक स्थानों, इमारतों, संस्थाओं के विषय में आत्मीयता तो दूर रही, आस्था

काशी में ता० २ तथा ७ फरवरी को ग्राम-पंचायत-कार्यकर्ताओं के लिए किये गये दो भाषणों का सारांश।

भी नहीं है। घूरों से लेकर मंदिरों तक, गलियों से लेकर गंगाजी के घाटों तक सारे सार्वजनिक स्थानों को गंदा और अशोभनीय बनाने में मानों निरन्तर स्पर्धा हो रही है। सार्वजनिक दायित्व लोकनिष्ठा का पहला लक्षण है। ग्रामीण नागरिकों में दयानतदारी, जिम्मेवारी और विश्वासपात्रता का विकास करने में ग्रामपंचायतों का प्रयत्न प्रमुख होना चाहिए। गाँव में धन-दौलत, शान-शौकत, ओहदा-हुकूमत और जात पाँत तथा खानदान की बनिस्बत नागरिक चारित्र्य की इज्जत और वक़त ज्यादा होनी चाहिए। गांधी ने कहा था कि मेरे लिए वह दिन आनन्द और गौरव का होगा, जिस दिन मैं एक निर्धन भंगी की लड़की को राष्ट्रपति की कुर्सी पर विराजमान देखूँगा। इस आकांक्षा में लोकतंत्र की परिपूर्ति है। गांधी की आकांक्षा का द्योतक यह महावाक्य हमारा घोष मंत्र बने। तभी ये ग्राम पंचायतें ग्राम-संजीवन की अमृतवटी बनेंगी; अन्यथा वह हलाहल की पुड़िया साबित होगी।

एक दफा का जिक्र है कि न्यायपंचायत की वर्षगाँठ के लिए मैं एक गाँव में गया। न्याय पंचायत की रिपोर्ट सुन कर मैंने सन्तोष प्रकट किया। इतने में कोने में बैठा हुआ एक ग्रामीण खड़ा होकर बोला, "तारीफ तो आपने बहुत कर दी; मगर मेरी गुजारिश पर गौर फरमाइये। उस दिन मैंने एक अमराई में से कुछ आम चुरा लिये। मुझे न्याय-पंचायत ने अजीबोगरीब सजा दी। जूते में पानी भर कर मुझे उसीसे पिलाया गया। मैं कहाँ फिर्याद लेकर जाऊँ? यह हुकूमत क्या आयी? कजा आ गयी।" मैं अवाक् रह गया। ग्राम-पंचायतों को यह अच्छी तरह जानना और समझना होगा कि जो सजा कानून में बतलायी न गयी हो, वह सजा किसी को देना अपने में जुर्म है। ऐसी सजा देने वाले को सजा हो सकती है। सत्ता का विकेन्द्रीकरण असल में स्वतंत्रता का आश्वासन है। हर नागरिक को यह भरोसा और यकीन होना चाहिए कि उसकी आजादी कानून की इजाजत के बिना राष्ट्रपति भी नहीं छीन सकता। आजादी का दूसरा अर्थ है जिम्मेवारी। आजादी मैंपन, आपा या खुदी का नाम नहीं है। आजादी से मतलब है मैं-तू पन, अपनापा, एक दूसरापन, अन्योन्यता। आजादी अकेलेपन में नहीं होती, वह मुस्तरका होती है। गाँव के प्रबन्ध में दक्षता, सभ्यता और नम्रता के साथ-साथ सहृदयता और सौहार्द भी होना चाहिए। नहीं तो हमारी ग्रामपंचायतें गँवारू और अनाड़ी बन जायेंगी।

मतदान का अधिकार एक पवित्र और अनमोल वरदान है। फिर यह गुप्त-मतदान की पद्धति, चुपके से रुक्का डालने का तरीका क्यों अपनाया गया। गाँव में कुछ लोग मालदार होते हैं, कुछ उद्दण्ड होते हैं और कुछ हुक्काम होते हैं। उनके रूबरू या जाहिरा तौर पर उनके खिलाफ हाथ उठाने में या रुक्का डालने में संकोच या भय होता है। इस मुसीबत को टालने के लिए यह खुफिया वोट का तरीका खोजा गया। लेकिन जिस नागरिक के मन में सत्ता का भय, पैसे का लोभ या डंडे का आतंक होगा, वह कैसे लोकनिष्ठ हो सकता है? उसमें चारित्र्य कहाँ से होगा? *मतभिन्नता का आदर और आलोचना की कद्र, लोकतंत्र के दो फेफड़े हैं। इसलिए नागरिक को निर्भयता और नम्रतापूर्वक* मतदान करने की प्रेरणा और प्रोत्साहन देना आप लोगों का परम कर्तव्य है।

हमने जमींदारी खत्म कर दी। जाती मालकियत के दिन भी लद चुके हैं। अब हम ग्राम-स्वामित्व की बात करते हैं। तो क्या ग्राम-स्वामित्व का अर्थ गाँव की जमींदारी होगा? क्या हरएक गाँव अपने गाँव की संपत्ति का अपने को एकान्त स्वामी मानेगा? पड़ोस के गाँव की कोई जिम्मेवारी अपने ऊपर नहीं मानेगा? तब तो यह ग्राम-स्वराज्य डाकुओं का, दस्युओं का राज बन जायेगा। गाँव की मालकियत का यह अर्थ हरगिज नहीं है। ग्रामस्वामित्व लोकस्वामित्व का छोटा सा प्रतिरूप है। उसका कद छोटा है, लेकिन गुण अनन्त है।

ग्रामीण नागरिक का निवास तो छोटे-से गाँव में होगा, लेकिन उसकी तबियत बुलंद और विश्व के बराबर व्यापक होगी। समस्याएँ गाँव की होंगी, लेकिन दर्शन और भावना सारे विश्व के जीवन की होगी। तभी पंचायत राज और ग्रामस्वराज्य मानवकल्याणी लोकसत्ता का और विश्वकुटुंब का प्रतीक होगा।

धीरेन्द्र भाई के विचार

तंत्र-मुक्ति और जनाधार का सवाल

• मीरा भट्ट

[पिछले अंक में श्रीमती मीराबहन भट्ट द्वारा श्री धीरेन्द्रभाई के साथ की मुलाकात का विवरण दिया गया था। अब कुछ महत्त्वपूर्ण प्रश्नोत्तर यहाँ दिये जा रहे हैं। —सं०]

प्रश्न : तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति से आपका क्या "इंटरप्रोटेशन" (अभिप्राय) है ?

उत्तर : तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति, दोनों एक ही चीज हैं। तंत्र-मुक्ति की 'कारोलरी' ही निधि-मुक्ति है। जहाँ केन्द्रित निधि होगी, वहाँ केन्द्रित संचालन के अंकुश में रहना ही पड़ेगा। कल्याणकारी राज्यवाद के युग में गैरसरकारी फंड नहीं चल सकते, क्योंकि हम भी टैक्स मांगें और सरकार भी टैक्स मांगे, यह नहीं चल सकेगा। कल्याणकारी राज्य में अनाथाश्रम, विधवाश्रम आदि भी सरकार के होंगे। इसके पहले स्वतन्त्र फंड होते थे, लेकिन अब वे नहीं हो सकते। गांधी-निधि के बाद अब दूसरा कोई केन्द्रीय फंड होने वाला नहीं है, यह हकीकत है। जनता दुगुना भार कैसे उठायेगी? दण्ड-शक्ति और प्रेम-शक्ति, दोनों जनता से मांगेंगी तो फिर जनता क्या खायेगी?

अब मुक्त तंत्र का स्वरूप कैसा होगा, यह सवाल है। उसका स्वरूप जनाधारित होगा। समाज के हर काम, समाज का हर विकास सरकार-निरपेक्ष स्वतंत्र शक्ति पर होना चाहिए। वह होगी स्वतंत्र जनशक्ति। तंत्र एक नियंत्रित संगठन होगा। तंत्र नहीं रहेगा, परन्तु संघ रहेगा। तंत्र-मुक्ति याने संघ-मुक्ति नहीं है। तंत्र-मुक्त संघ का रूप सम्मेलन-पद्धति से चलेगा, तंत्र-पद्धति से नहीं।

भारत में इसका प्रयोग हुआ है, लेकिन इसको अब वैज्ञानिक रूप देना होगा। हमारे यहाँ जो कुंभ मेला होता है, वह तंत्रमुक्त संघ का रूप है। कुंभ मेले में विचारों का आदान-प्रदान होता था। *इसी तरह परिव्राजकों के द्वारा समाज-शास्त्र, धर्मशास्त्र दुनिया में फैलता था। सम्मेलन यह एक पद्धति है। जैसे मान लीजिये, गुजरात में ५०० लोकसेवक हैं। सबका पता एक-दूसरे को है, पूरी जान-कारी है। अब मिलने की इच्छा हो रही है, तो सबको पोस्टकार्ड लिख दिया कि भाई मिलना है। जैसे प्यास लगती है वैसे मिलना लग रहा है तो चलो, मिलें। यह* 'टेक्नालाजी' हमारे यहाँ हजारों वर्षों से *विकसित हुई है, उसी को और विकसित* करना है। पहले दंडशक्ति समाज की धृति-*शक्ति थी, लेकिन अब वह नहीं है। राजदंड* अब खत्म हो रहा है, क्योंकि दंडशक्ति की बुनियाद शस्त्र-शक्ति के खतम करने की आवश्यकता और परिस्थिति की अनिवार्यता *बन गयी है। इसलिए अब दूसरी "सोशल-*टेक्नालजी" ढूंढ़नी पड़ेगी। अब तक जो "टेक्नालजी" विकसित हुई है, वह हमारे काम की नहीं है। आगे की "टेक्नालजी" क्या होगी, यह काम आप लोगों का है। हमने दिशा बतायी, जैसे गांधी ने चरखे द्वारा दिशा बतायी थी। अब उसमें से 'अंबर' चरखा निकला, और भी साधन निकलेंगे। *वैसे इसमें भी ढूढ़ना पड़ेगा।* अब तक जितनी क्रांतियाँ हुईं, उसमें दण्डशक्ति इंजिन रहा, दण्डशक्ति ही समाज की चालक शक्ति थी। अब यंत्र और शस्त्र, दोनों को बदलना है, यह चिन्तन का, शोध का विषय है।

अब सर्व सेवा संघ का जो नया स्वरूप हुआ है, उसमें कोई तत्त्व का परिवर्तन नहीं हुआ है; सिर्फ नीचे से ऊपर हुआ है। यह तो आज की दुनिया का 'ट्रेण्ड', चलन है। आज जो पंचायत-राज आदि की बात हो रही है, यह दण्ड-आधारित *लोकतंत्र की स्वाभाविक प्रक्रिया है। आज* जो अयूब खान भी "बेसिक डेमोक्रेसी"— बुनियादी लोकतंत्र की बात कर रहा है। यह स्वाभाविक परिस्थिति का परिणाम है। यह क्रांति नहीं है। सारे विश्व का आज का जो 'ट्रेण्ड' है, उसी का यह अमल है। यह राजनैतिक लोकतंत्र का विकास जरूर है, लेकिन इसमें दण्ड-निरपेक्ष समाज की क्रांति नहीं है।

गुजरात में सप्तमी सभा का जो स्वरूप था, वह इसके आगे का कदम था। उसमें कुछ संशोधन, सुधार की आवश्यकता थी। लेकिन वहाँ भी निधि-मुक्ति तो नहीं है। निधि-मुक्ति के बिना तंत्र-मुक्ति नहीं हो सकती। निधि-मुक्ति याने क्या? मैं अगर पटना से फण्ड इकट्ठा करके कार्यकर्ताओं को दूँ, तो वह निधि-मुक्ति नहीं है। *जिस जनता की हम सेवा करते हैं, उसी* का आधार जनाधार है। जनाधार और *निधि-मुक्ति में फर्क है।* अगर गुजरात में महाराज या बबलभाई फण्ड इकट्ठा करके *लायेंगे तो उसकी गतिविधि भी उनको* देखनी पड़ेगी, तो उसमें तंत्र आ ही जायगा और खत्म हो गयी तंत्रमुक्ति तथा निधिमुक्ति। इसलिए बिना जनाधार के तंत्रमुक्ति हो ही नहीं सकती। नहीं तो वह जन-शक्ति नहीं, 'महाराज-शक्ति' होगी।

प्रश्न : पूर्ण जनाधारित होने के लिए क्या-क्या कदम उठाने होंगे ?

उत्तर : जो कार्यकर्ता जिस क्षेत्र में काफी काम कर चुका है, लोकप्रिय भी हुआ है, उसके लिए वह क्षेत्र ही उसका 'प्रेमक्षेत्र' बने और वहीं वह जनाधारित बने। जो एकदम नया कार्यकर्ता है, उनके लिए 'चरैवेति' का ही कदम है। वह घूमेगा और जनता के सामने विचार रखेगा कि हम क्या करना चाहते हैं। जब तक कोई क्षेत्र उसको स्वीकार नहीं करता है, तब तक वह घूमेगा। आखिर लोकधर्म का भी निर्माण करना पड़ेगा, तभी तो निमंत्रण मिलेगा। जब तक यह नहीं होता, तब तक घूमना यही कदम होगा। कुछ नये कार्यकर्ता पुराने के साथ भी बैठ सकते हैं। जो गाँव में बैठेगा वह जनता की जो आज की समस्या है, जो जनता महसूस करती है, उसका समाधान करेगा।

[शेष पृष्ठ ११ पर]

मेरी विदेश-यात्रा : १

• देवी प्रसाद

सात माह की विदेश-यात्रा के बाद १४ जनवरी को मैं सेवाग्राम वापस पहुँचा। सात माह का अरसा बहुत छोटा नहीं होता, यह मैंने इन दिनों में महसूस किया। हालाँकि जहाँ-जहाँ भी गया, यह महसूस करता था कि इतने कम दिनों में किसी देश को या उसके जीवन के एकाध पहलू को भी समझना अत्यन्त कठिन है। और उसके साथ-साथ भाषा का एक बहुत बड़ा प्रश्न मेरे सामने हमेशा रहा। यूरोप की भाषाओं में से मैं केवल अंग्रेजी ही थोड़ा जानता हूँ। इन महीनों में मुझे आठ-नौ भाषाओं से सरोकार पड़ा। एक देश में आठ-दस दिन रहने के बाद जब दस-बीस शब्दों को समझने और उनका उपयोग करने की थोड़ी-सी जानकारी हो जाती थी, तभी वहाँ से छोड़ कर दूसरी भाषावाले देश में चले जाने का प्रोग्राम होता था। इस तरह अधिकतर दुभाषियों के आधार पर ही सब बातचीत करनी पड़ती थी और कहीं-कहीं तो जब कोई अंग्रेजी समझने वाला नहीं होता तो इशारों की भाषा से ही काम चलाना पड़ता था। मैं अपने आपको इस मामले में बड़ा भाग्यवान् समझता हूँ। मदद में जो दुभाषी मित्र मिले, वे बहुत अच्छे मिले। तो भी सबसे गहरी बात मेरे मन में यह बैठी कि किसी देश को, उसकी संस्कृति को थोड़ा भी समझना हो तो बिना उसकी भाषा सीखे, वह नहीं हो सकता। इसलिए जो अनुभव मुझे हुए वे कोई बहुत ठोस या बिलकुल सच्चे होंगे, ऐसा मैं विश्वास के साथ नहीं कह सकता हूँ; तो भी जो मैंने देखा-समझा वह आप लोगों के समक्ष थोड़े में पेश करना चाहता हूँ।

प्रवास के मेरे मुख्य कार्य दो थे। एक तो यूरोप के कुछ देशों में जो शांति कार्य हो रहा है, उसके साथ परिचय करना और जहाँ तक हो सके हमारे यहाँ के कार्य के साथ उसे सम्बन्धित करना। मैं खास तौर से 'युद्ध-विरोधक अन्तर्राष्ट्रीय' की कौन्सिल की वार्षिक बैठक, जो सीचीलिया में जुलाई के चौथे हफ्ते में हुई, उसमें शामिल होने के लिए और अंतर्राष्ट्रीय द्वारा आयोजित युवक-अध्ययन शिविर, जो हालैण्ड में अगस्त महीने के तीसरे सप्ताह में हुआ था, उसमें शांति-सेना के विषय पर चर्चा करने के लिए गया था।

दूसरा कार्य जो मैंने करने का प्रयत्न किया, वह तो उन देशों की शिक्षा-प्रणाली को समझने का था। जहाँ-जहाँ मैं गया, वहाँ मेरा प्रयत्न रहता था कि वहाँ के शिक्षकों से मिलूँ और शिक्षा की विशेष संस्थाओं को देखूँ। पश्चिमी जर्मनी, हालैण्ड, पूर्वी जर्मनी और युगोस्लाविया स्विट्ज़रलैंड, इन पाँच देशों में इस ओर खास ध्यान दे पाया। पश्चिमी जर्मनी और युगोस्लाविया की सरकार ने मुझे विशेष निमन्त्रण देकर उनकी शिक्षा प्रणाली को समझने में खास सहायता की, मैं उनका विशेष तौर पर आभारी हूँ।

सीचीलिया, श्री दानिलो दोल्ची के केन्द्रों में एक महीना, जुलाई की २१ तारीख तक रहा था। पार्टिनिको के इस केन्द्र के बाद मैंने चार-पाँच दिन स्विट्ज़रलैंड में बिताये और फिर चार दिन के लिए सेन-फ्रान्सिस्को-मास्कोवाली युद्धविरोधी पद-यात्रा में भाग लिया था। चाहे इस यात्रा से लोगों के द्वारा युद्ध के होने या न होने पर कोई असर न हुआ हो, किन्तु इसमें भाग लेने वाले मित्रों ने यह अनुभव तो किया कि दुनिया से युद्ध खतम हो, इस पर सारा संसार गहराई से सोच रहा है। ये पचीस-तीस नवयुवक कठिन तपस्या करके शांति के संदेश को विश्व के कोने-कोने में ले जा रहे थे, इनके प्रति जो भावना लोगों को होती थी वह बड़ी आशा प्रदान करने वाली थी। मुझे याद है कि हैनोवर शहर में जब चौराहे पर कंधे पर एक बड़ा पोस्टर रखे मैं शान्ति-संदेश का चार-पाँच भाषाओं में लिखा पर्चा बाँट रहा था, तो कितने ही लोग आकर बड़ी उत्सुकता के साथ हमारी बातों को समझना चाहते थे। एक अधेड़ उमर की बहन दौड़ी-दौड़ी आयी थी। उसने तीन-चार मिनट तक जर्मन भाषा में कुछ-कुछ कहा। मैं उसका एक शब्द भी नहीं समझ पाया था, केवल इतना समझा था कि वह हमें शुभकामनाएँ दे रही है—आशीर्वाद दे रही है। इतने में एक दूसरी बहन आयी, जो थोड़ा-बहुत अंग्रेजी जानती थी। उससे पूछा कि यह बहन क्या कहना चाहती है। वह युद्ध के कठिन समय का अनुभव कर चुकी थी। उसका सब कुछ खो गया था। उसने मुझसे कहा, "मेरे जैसा अब भविष्य में और किसी को अनुभव न हो, इसलिए मेरी मनोकामना है कि तुम्हारा यह आन्दोलन सफल हो।" ये पचीस-तीस नवयुवक महीनों तक अपनी यात्रा के दौरान में रोज इस तरह के अनुभव करते थे।

हैनोवर के नजदीक श्री पार्टर मैनशन का एक आश्रम है। उसका नाम 'फ्रेण्ड-शिप हाउस' (मित्रता गृह) है। वहाँ भी तीन दिन रहने का मौका मिला। केन्द्र के संचालक श्री स्याक्से हेमन्स के आग्रह पर, जिस आग्रह के लिए मैं उनका बड़ा कृतज्ञ हूँ, उस समय चलने वाले एक शांति शिविर के बारह-तेरह नवयुवक भाई-बहनों के साथ रहने का अवसर मेरी इस यात्रा का एक सुहावना अनुभव है। उनमें से कुछ तो ऐसे जवान थे, जिन्हें शान्ति या अहिंसा के कार्य का अनुभव तो था ही नहीं, उसके बारे में जानकारी भी नहीं के बराबर ही थी। गांधीजी का नाम मात्र वे जानते थे। किन्तु जगत् में शान्ति हो और वह अहिंसा के आधार पर हो, इस विचार के प्रति जो श्रद्धा उनमें बनी, उसने मुझे मोहित कर दिया और हेमन्स दंपति व पार्टर मैनशन के स्नेह ने बुजुर्ग के इस मित्रता गृह को मेरे लिए एक अपना घर ही बना दिया।

डेनमार्क की लोकशाला के आन्दोलन के कर्मठ नेता श्री पीटर मानीके ग्रीष्म-शिविर चलाया करते हैं। उन्होंने मुझे हिस्सा लेने के लिए निमंत्रित किया था। जगत् प्रसिद्ध कथाकार हैन्स अन्डरसन् के शहर ओडेन्सी से बीस किलोमिटर दूर एक रमणीय स्थान में यह शिविर चल रहा था। कई देशों के व्यक्ति इसमें शामिल होने के लिए आये थे, उनमें अरबी और पूर्वी देशों के लोग भी थे। वे सभी समाज-शिक्षा या अन्य समाज-सेवा के कार्य के अनुभवी लोग थे। अरब के देशों और इजराइल के बीच के तनाव को कौन नहीं जानता! आपस में बोलना तो दूर रहा, वे एक ही मेज पर बैठ कर भोजन नहीं करते! किन्तु मैंने एक दृश्य ऐसा देखा, जिससे मेरा विश्वास पक्का हो गया कि अगर हम अपना अवगुंठन उतार कर—संकीर्ण राष्ट्रीयता का, भाषावाद का, पंथवाद का अवगुंठन उतार कर—केवल मानव के तौर पर एक-दूसरे के समक्ष खड़े हों तो प्रेम के सिवाय और कोई संबंध मनुष्य के बीच नहीं हो सकता। मैंने देखा कि रात का समय था, भोजन के बाद मनोरंजक कार्यक्रम चल रहा था और अरब और इजराइल की बहनें और भाई एक-दूसरे के बगल में हाथ डाल कर सब-कुछ भूल कर नृत्य कर रहे थे।

नयी तालीम और शांति-सेना व भूदान के विषय में इस शिविर में दो दिन चर्चा करने के बाद मैं हालैंड चला गया। वहाँ एक ग्रीष्मकालीन भ्रमण-स्थान पर युवक-अध्ययन शिविर था; विषय था शांति-सेना। चर्चा में लगभग ३५ व्यक्ति यूरोप के कई देशों से इस शिविर में भाग लेने के लिए आये थे। शान्ति-सेना का कार्य यूरोप में कैसे हो सकता है? शान्ति-सैनिक की तैयारी में, उसके कार्य-क्षेत्र में सेवा का क्या स्थान है? जब कि हालैण्ड जैसे देशों में गरीबी पूरी पूरी मिट गयी हो, समाज-सेवा के सभी कार्य सरकार के द्वारा होते हों, किसी दूसरे की सेवा की आवश्यकता विशेष महसूस न होती हो, ऐसी परिस्थिति में शान्ति-सैनिक यदि जनता में गहराई से प्रवेश करना चाहे, जनता के साथ प्रेम सम्बन्ध कायम करना चाहे तो उसे किस प्रकार की सेवाएँ करनी होंगी? इन सब कठिन प्रश्नों पर चर्चाएँ हुईं।

हालैण्ड की समृद्धता और स्वच्छता देख कर अपने देश के बारे में तरह-तरह के विचार मन में आते रहे। बरसों से हालैण्ड को 'पवन-चक्कियों का देश' कह कर समझता रहा हूँ। उसकी कला से भी बरसों से परिचित था। रेंब्रान्त, वर्मीर, फ्रान्सहाल्स और वेनगाक की कृतियों का प्रत्यक्ष दर्शन करने का सौभाग्य यहाँ प्राप्त हुआ। इनकी कलाओं की स्तुति जो मन ही मन की थी, वह केवल पुस्तकों में उनके चित्र जो देखे थे, उनके बारे में पढ़ कर जो समझा था उसी के आधार पर थी। किन्तु जब उनके समक्ष खड़ा हुआ, तब समझा कि वे मेरी स्तुति से भी बहुत ऊँचे स्तर के हैं।

अमस्टर्डम और हेग बड़े-बड़े शहर हैं। उनकी अपनी-अपनी विशेषता तो है ही। लेकिन डेल्फ्ट का वही सदियों पुराना स्वरूप आज भी वैसा ही है। उसकी नहरें, नहरों में चलती हुई किश्तियाँ, एक निराला वातावरण बनाती हैं। सड़क पर बड़ा 'मेकानिकल' बाजा, जो एक पहिया घुमाने से बजता रहता है, और उसके साथ टीन का डब्बा लिये इस बाजेवाले की पत्नी पैसे इकट्ठा करती हुई जब देखी तो पुराने कई चित्र याद आ गये। राटर्डम पिछले महायुद्ध में आधे से भी अधिक तहस-नहस हो गया था। आधुनिक वास्तुकला का, एक खास विशेषज्ञ को यह बड़ा मौका मिला और अब जो राटर्डम बना है, वह तो आधुनिक वास्तुकला का नमूना ही है। विशाल से विशाल इमारतें एक तरफ और उसी के साथ-साथ उन्होंने परिवारों के लिए छोटे छोटे मकान बनाये हैं। आधुनिक विज्ञान ने जो सुविधाएँ उपस्थित की हैं, वे सब उनमें हाजिर हैं। घर का काम करने के लिए किसी नौकर की जरूरत न रहे, इस तरह से सारी योजना दीखती है। घरों-घरों में कपड़े धोने की मशीन, टेलिफोन, टेलीविजन और खाद्यपदार्थ को ठंढा रखने की मशीनें दीखती हैं। हरएक के पास टेलिफोन। कभी कभी तो मन में ऐसा ख्याल आता था कि कहीं ऐसा न हो कि ये सुविधाएँ इतनी बढ़ जायँ और अधिक न हो जायँ कि एक मनुष्य को दूसरे मनुष्य से प्रत्यक्ष मिलने की आवश्यकता ही न रहे और हर कोई घर बैठे ही सब कुछ काम चला ले! हिन्दुस्तान का दूधवाला याद आ जाता है, जो सुबह पुकार कर घरवाली को दूध लेने के लिए कहता है और जब वह दूध लेने के लिए आती है तो उन दोनों का आपस में राम राम तो होता है और वे एक-दूसरे के परिवार की कुशलता पूछते हैं और इधर दूधवाला दूध की बोतलें घर दरवाजे के सामने रख गया, किसी को कुछ मालूम

कृत्रिम संतति-नियंत्रण समाज-मारक है!

• गरुड़ शर्मा

आज सरकार, समाज के प्रत्येक अंग को अपनी सत्ता में लेकर अपने ही बल पर सारे कार्यक्रम चलाने का प्रयत्न कर रही है। आर्थिक, सामाजिक, भौतिक आदि सभी पहलुओं का विकास अपने हाथ में लेकर उसने विषम केन्द्रीकरण भी कर दिया है। आज की सरकार ने सारे देश को अपनी पार्टी के सिद्धान्तों के अनुसार चलाने का सोचा है। उसी के अनुसार कानून और कार्यक्रम बनाते हुए उसने समाज के मौलिक सिद्धान्तों की उपेक्षा करके बहुत समय से चली आने वाली परम्परा को एवं समाज के ढाँचे को उलट दिया है और नये समाज की स्थापना के भ्रम में अर्वाचीन, अपक्व एवं भयंकर पद्धतियों को एक ही साथ प्रवर्तित करने की कोशिश कर रही है। इस प्रकार वह समाज-विघातक के काम में हाथ बढ़ा रही है, ऐसा लगता है।

उदाहरणार्थ, कुटुम्ब नियंत्रण के नाम से चलने वाली योजना को लीजिए। राष्ट्रपिता महात्माजी ने ३० वर्ष पहले ही कुटुम्ब-नियंत्रण के इस कृत्रिम उपाय के बारे में समाज को आगाह किया था कि यह योजना नीति का दिवालियापन है। प्राचीन और अर्वाचीन संस्कृतियों के उदाहरण के साथ एवं अपने जीवन के व्यवहार में यह स्पष्ट प्रयोग करके उन्होंने बता दिया कि संयमित गृहस्थ-जीवन में ब्रह्मचर्य शक्य और सम्भव है। उन्होंने लिखा था कि फ्रांस की बरबादी का कारण कृत्रिम गर्भ-नियंत्रण ही है।

पश्चिमी राष्ट्र अपने रंगभेद के निहित-स्वार्थ और अधिकारों पर अन्य राष्ट्रों से खतरा महसूस करते हैं। इसलिए उन्होंने मानव विनाश का जो भयानक ढंग दुनिया के सामने रखा है, वह गर्भ-निरोध का विचार है। वेदों में भी जिसके लिए निषेध किया गया है, ऐसी निष्करुण, अमानवीय पद्धति को समाज में लाने का कारण आर्थिक पृष्ठभूमि को बता कर पाप में भारतीय समाज को हाथ धोने के लिए प्रेरणा दी जा रही है। इतना ही नहीं, बल्कि पश्चिमी देशों का अनुकरण करने वाले अधकचरे विशेषज्ञों के अर्थशून्य, शुष्क सिद्धान्तों को समाज के सामने रख कर सरकार उसे कानून का रूप देना चाहती है। ऐसी यह सरकार समाज के लिए पूरक न होकर मारक ही साबित होगी।

समाज के विकास के लिए हम अभी नियंत्रण का विरोध तो नहीं करते, पर वह नियंत्रण नैतिक होना चाहिए। लेकिन हमारा प्रश्न तो यह है कि क्या समाज की मौलिक साधन संपत्ति का व्यवस्थापूर्वक न्यायोचित बँटवारा हुआ है? यह बहुत महत्त्वपूर्ण सवाल है। जिस देश की बुनियादी आर्थिक नीति कृषिमूलक है, वैसे देश में जब तक उत्पादन करने वालों को उत्पादन का साधन नहीं मिलेगा, तब तक किसी भी सरकार को और किसी भी समाज को सामान्य जनों पर अपना सिद्धान्त लादने का अधिकार नहीं है।

वर्तमान समाज अनैतिक राह पकड़ कर ही अनेक बीमारियों के खतरे में पड़ गया है। गर्भपात, गर्भ निरोधक साधन, वीर्य नाली छेदन (हार्मोन आपरेशन) गर्भ-कोष अव्यवस्थीकरण (स्टरलाइजेशन) आदि के प्रचार का जो भार सरकार ने उठाया है, जो व्यभिचार प्रेरक है। इससे गृहस्थों का संयम-जीवन नष्ट हो जाता है और वे शाश्वत रोगों के शिकार हो जाते हैं। अमेरिका में भी जो बहुत प्रचलित बीमारियाँ हैं, वे अति कामुकता से ही उत्पन्न हुई हैं, ऐसा डाक्टरों का निर्णय है। वहाँ पर पागलखाने, गुह्येन्द्रिय चिकित्सालय, मर्मेन्द्रिय रुग्णालय आदि की संख्या बड़े पैमाने पर बढ़ रही है। यह भी अति कामुकता का ही परिणाम है।

गांधीजी के मार्ग से हिन्दुस्तान आजाद हुआ, इसलिए अन्य देश भी अपनी समाज रचना में हिन्दुस्तान का आदर्श ग्रहण करने के लिए तैयार हो रहे हैं। बरबाद होने के बाद उन देशों को अब सद्बुद्धि आ रही है। इस अपूर्व संदर्भ में हम उन पश्चिमी देशों की बुराइयों का अंधानुकरण करते जा रहे हैं। यह आश्चर्य ही नहीं, बल्कि अपमानकारक और गांधी की आत्मा को मारने वाली बात है। आज हम दुनिया को एक महान् आदर्श सिखा सकने का अवसर हाथ से खो रहे हैं, यह बात अत्यन्त शोचनीय है।

फ्रांस देश में पिछले ५० वर्षों से ऐसा समझा जाने लगा है कि बच्चे होना कोई पापोदय है। इसी तरह भारत के उच्च मध्यम वर्ग में भी पिछले १०-१५ वर्षों से एक ऐसे वर्ग का निर्माण हो रहा है, जो फ्रांस के ही मार्ग पर चलने की तैयारी कर रहा है। सरकार भी गर्भ नियंत्रण लागू करने की जल्दबाजी में समाज को नैतिक अधःपतन की ओर ढकेल रही है तथा शान से हृष्ट-पुष्ट पीढ़ी को समाप्त करने के लिए हाथ बढ़ा रही है। प्राचीन समाजशास्त्रज्ञ भगवान बोधायन, आपस्तम्भ, आश्वलायन और गौतम ने भी विवाह के मूल में जन-नियंत्रण की मर्यादा बतायी थी। उन्होंने बताया था कि पागल, मन्द बुद्धि, अनाचारी, अनाध्यात्मिक, गुप्त रोगी, कुष्ठ रोगी आदि प्रकार के मनुष्य विवाह के लिए अयोग्य हैं। सामान्य शास्त्रों में भी यह बताया गया है कि निरुद्योगी परिवारों में संतान वृद्धि न की जाय। संतान-वृद्धि केवल श्रमजीवी वर्ग के लोग ही करें, उस श्रमजीवी वर्ग को सब प्रकार की सुविधाएँ दी जायँ।

विनोबाजी ने भी बहुत दिन से कुटुम्ब-नियंत्रण के बारे में अपना विचार बार बार बताया है। वे कहते हैं कि पैदा होने वाला मनुष्य दो हाथ और एक पेट लेकर आता है, इसलिए इस विशाल भू-मंडल में श्रम करने वालों के लिए किसी चिन्ता की बात नहीं है। उन्होंने यह भी कहा है कि यदि संतति नियंत्रण की जरूरत ही हो, तो उसके लिए सर्वसुलभ और बिना खतरे का उपाय संयम से रहना ही है। अतः विवाह की उम्र बढ़ा देना भी इसके लिए एक सहज सुलभ मार्ग है। कृत्रिम उपायों से संतति निरोध समाज घातक है। समाज उदात्त चिंतन की ओर बढ़े, ऐसी योजना होनी चाहिए, ताकि अधिक संतान-वृद्धि रुक सके। सिंह को केवल एक या दो ही संतानें होती हैं। सूअर तथा कुत्ते को आठ दस तक संतानें होती हैं। मनुष्य भी सिंह की तरह यदि व्यवस्थित आहार-विहार से चले तो देश में मित, वीर्यवान और तेजस्वी संतानें होंगी और तब यह देश भी दुनिया में एक प्रतिष्ठासंपन्न राष्ट्र बनेगा। सिंह की तरह उदात्त और गंभीर चिन्तन का स्वभाव बढ़ाने से मनुष्य की सहज ही संतानें कम होने लगेंगी।

सरकार की ओर से जो अन्यायपूर्ण तथा असामंजस्यपूर्ण तथाकथित योजनाएँ चलती हैं, उसका लाभ उठाने वाला निहित स्वार्थी, अतिभोगवादी मध्यमवर्ग उन योजनाओं को तुरत अपना लेता है। यही हिन्दुस्तान का मध्यम वर्ग वर्तमान में देश को अच्छे ज्ञानी, डाक्टर, वैज्ञानिक, इंजीनियर आदि दे रहा है। प्रजातंत्र के आरंभ के इस युग में संतति-निरोध करके उपर्युक्त उत्कृष्ट संतति को रोका जा रहा है। हिन्दुस्तान का मध्यम वर्ग अत्यंत स्वार्थपरायण और अति भोगवादी है। यही मध्यम वर्ग अपने हितों के अनुकूल सारे समाज को मोड़ लेता है। ऐसे निहित स्वार्थी वर्ग को देश अथवा समाज के आगे-पीछे का कोई भान नहीं है। इस वर्ग को यदि तात्कालिक सुख-सुविधाएँ मिलें, तो वही पर्याप्त है। इस वर्ग में अकर्मण्यता, व्यसन और फिजूल-खर्ची बहुत चल पड़ी है। संतति निरोध से ऐसे वर्ग को अपनी व्यसन-वृत्ति व भोग वृत्ति को खुली छूट मिल जाती है।

एक तरफ व्यभिचार और वेश्यावृत्ति निरोध का कानून बनाया गया है और दूसरी तरफ जन नियंत्रण के नाम पर कृत्रिम गर्भ-निरोध के साधनों का प्रचार किया जा रहा है, यह विचित्र सा है। अन्य देशों में कृत्रिम गर्भ-निरोध के कारण पुरुषों में प्राकृतिक नियम नहीं रह गया है। वहाँ अकालिक अति भोग से अपत्व, विकलांगता, बुद्धि विभ्रम, विक्षिप्तता आदि रोग उत्पन्न हो गये हैं। वहाँ का सांसारिक जीवन नारकीय बन गया है। गर्भ निरोध के तथाकथित विशेषज्ञ लोग असंबद्ध वक्तव्य दे रहे हैं। उनके कथन वादग्रस्त हो गये हैं। अमेरिका आदि देशों में शिक्षित होकर आये हुए अनेक डाक्टरों ने भी कहा है कि संतति-निरोध की आवश्यकता, विकलांग, मेह, कुष्ठ आदि रोगग्रस्त पीढ़ी को रोकने के लिए हार्मोन आपरेशन, स्टरलाइजेशन, आदि की जरूरत है, न कि आर्थिक कारणों के लिए।

(कन्नड "भूदान" से)

नहीं! आखिर दूधवाले से क्या मतलब, दूध मिल गया न! किन्तु मनुष्य, मनुष्य के बिना कैसे रह सकता है—यह अवस्था भी बदलेगी और कोई नया तरीका मनुष्य को सूझेगा, जिससे वह मानव-सम्बन्ध को अधिक महत्त्व दे सकेगा।

उस समय हालैण्ड से निकलने के पहले अमस्टर्डम क्वेकर केन्द्र में एक सभा रखी गयी, जिसमें मैंने भारत के शांति आन्दोलन और भूदान यज्ञ के बारे में कहा। मित्रों ने बड़े आग्रह के साथ कहा कि मैं फिर एक सप्ताह के लिए हालैण्ड आऊँ। वे अलग-अलग शहरों में इस प्रकार की सभाओं की योजना बनाना चाहते थे। मैं उनके इस आग्रह को टाल न सका। २० अक्टूबर को मैं फिर हालैण्ड गया।

सात दिनों का यह कार्यक्रम एक दिन के शांति-सेना सम्मेलन में शुरू हुआ, जो अमस्टर्डम में हुआ था। युनिवर्सिटी में भी 'सोशल साइकॉलॉजी फैकल्टी' में बहुत अच्छी चर्चा हुई। हेग में ह्यूमेनिस्ट संगठन और रोटेरियन क्लब के लोगों के साथ दो बैठकों में, एक छोटे से शहर में मजदूरों और इसी तरह कई सभाओं में तरह तरह के विचारवाले लोगों के साथ मिला। वैसे तो कई तरह के अनुभव हुए, पर इतनी समृद्धि के बावजूद भी लोग अपनी परिस्थिति से सन्तुष्ट नहीं हैं, यह महसूस किया।

मेरा अगला कार्यक्रम

• विनोबा

[१९५७ तक भूदान-आन्दोलन का जो स्वरूप और उत्साह था, वह उसके बाद नहीं रहा है और आज की परिस्थिति और जनमानस को देखते हुए आन्दोलन की व्यूह-रचना में कुछ परिवर्तन करना जरूरी है, इस तरह की चर्चा कार्यकर्ताओं में चलती है, उस सन्दर्भ में प्रबंध-समिति की ढकुआखाना में हुई बैठक में विनोबाजी का जो भाषण हुआ, उसका सार यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

इन दिनों चर्चा चलती है कि फिर से वही पुराना अवतार काम नहीं देता है। रामचन्द्रजी ने धनुष चलाया, कृष्ण भगवान् ने वंसी बजायी तो भगवान बुद्ध ने मौन चलाया। भूदान-ग्रामदान का अवतार समाप्त हुआ, अब नये अवतार की, आन्दोलन के नये स्वरूप की आवश्यकता है, ऐसा कहा जाता है। सम्भव है कि यह तर्क ठीक भी हो! लेकिन मैं अलग ढंग से सोचता हूँ। यह बात सही है कि दुनिया का और भारत का लोक-प्रवाह हमारे साथ नहीं है। लेकिन हम इतना जरूर जानते हैं कि जमाना हमारे साथ है। जमाना और लोक-प्रवाह, दोनों अनुकूल बन जाते हैं, तब लोक-रक्षण होता है, अन्यथा लोक-क्षय होता है।

भूमि के जैसा बुनियादी और अकाल्पनिक साधन व्यक्तिगत मालकियत का हो नहीं सकता, यह भूदान-आन्दोलन का विचार वैसे नया नहीं है। वेदों में और कुरान में यह विचार मिलता है। लेकिन आज उस विचार के लिए जमाना भी माग कर रहा है। उस माग को रोकने की कोशिश लोक प्रवाह करेगा तो वह मार खायेगा।

यह लोक प्रवाह हम चाहिए उतना अनुकूल नहीं बना सके। उसका कारण है हमारी तपस्या की कमी। लेकिन कुल मिला कर हमारे प्रयत्न के हिसाब से भगवान् ने हमें अधिक फल दिया है। अब इस आन्दोलन के लिए शक्यता नहीं है, ऐसा मान कर क्या हम कोई नया अध्याय शुरू करें, ऐसा जब मैं सोचता हूँ तो दस साल पहले इस आन्दोलन के लिए जितना आधार था, उससे आज बहुत ज्यादा आधार है, ऐसा मैं देखता हूँ। इसलिए इस काम को बुनियादी समझ कर चिपके रहना चाहिए, ऐसा मैं मानता हूँ। इस आन्दोलन को परिपूर्ण बनाने के लिए इर्द गिर्द अन्य कामों को इसके साथ जरूर जोड़ें। लेकिन हमारा अधिष्ठान हमें छोड़ना नहीं चाहिए।

अब ग्यारह साल में सारा भारत घूमने के बाद मैं जहाँ कहीं जाऊँगा वहाँ बोने के लिए नहीं, बल्कि काटने के लिए—जो विचार-बीज बोया है, उसको काटने के लिए—जाऊँगा ऐसा मेरा विचार है।

दूसरा विचार मन में यह आता है कि अभी हम भारत की दृष्टि से एक कोने में आये हैं, लेकिन दुनिया की दृष्टि से पृथ्वी के मध्य भाग में आये हैं। भारत और चीन मिल कर करीब सौ करोड़ आबादी हो जाती है, पृथ्वी की करीब आधी आबादी। चीन और भारत का जो सम्पर्क आया है, उसके साथ हम खिलवाड़ नहीं कर सकते। यह सम्पर्क काँटे के जैसा कभी कभी चुभता है। लेकिन दो-चार साल में हम चीनियों को खदेड़ देंगे, इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए। यह सम्पर्क कायम रहने वाला है। ऐसी हालत में इस सम्पर्क को हम मधुर बनाने में कामयाब हुए तो कुल दुनिया के उद्धार की शक्ति उसमें पड़ी है। और अगर यह सम्पर्क कटुता में परिणत हुआ तो वह कुल दुनिया का नाश करने वाला साबित होगा। जब से मैं आसाम में आया हूँ, तब से मेरे मन में यही आ रहा है कि मैं ऐसे स्थान पर आया हूँ, जहाँ से विश्व शान्ति या विश्व विनाश हो सकता है। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई का सवाल यहाँ है, आदिवासी-अनादिवासी का सवाल है, भाषा का सवाल है, पाकिस्तान, बर्मा, चीन, तिब्बत, नेपाल की सीमाओं का सम्पर्क है।

ऐसी हालत में मुझे यहाँ अधिक समय देना चाहिए और इस सम्पर्क को मधुरता में परिणत करने की कोशिश करनी चाहिए, ऐसा मुझे लगता है।

कोरापुट में ग्रामदान की धारा फूट निकली। मैं वहाँ था उस समय सोचता था कि क्या मुझे यहीं अपनी शक्ति लगाना ठीक नहीं होगा! लेकिन काश्मीर पहुँचने का आकर्षण था। वहाँ जाने का कबूल भी किया था और भारत का दूसरा हिस्सा घूमना बाकी था, इसलिए मैं आगे बढ़ा। महाराष्ट्र में अकाणी में बड़ी संख्या में ग्रामदान मिले। फिर से वहाँ मैं सोचने लगा कि क्या यह इलाका छोड़ कर आगे बढ़ूँ या यहीं रहूँ? सात दिन सोचने के बाद पहले निश्चय के अनुसार आगे बढ़ना ही ठीक समझा।

अब सारा भारत घूम कर यहाँ आया तो यहाँ काफी मात्रा में ग्रामदान मिले। अब मैंने तय किया है कि अन्य ग्रामदानी क्षेत्र छोड़ कर तो मैं आगे बढ़ता गया, लेकिन अब यहाँ ज्यादा रुक जाऊँ। इसलिए फिलहाल दो महीने यहाँ रहने का तय किया है। यहाँ आसपास आठ-सौ केन्द्र बनाने का तय हुआ है। उन केन्द्रों में ही चक्कर लगाता हुआ मैं दो महीने घूमूँगा। मेरे सब साथी उन केन्द्रों में बँट जायेंगे और मैं अकेला चलूँगा।

मैं चाहता हूँ कि यहाँ के मेरे काम में आपमें से जो तज्ञ लोग होंगे, वे मेरी मदद करें। खादी के क्षेत्र में इन दस सालों में काफी संशोधन हुआ है। मैंने कताई-बुनाई के काफी प्रयोग किये हैं, लेकिन अब मेरा ज्ञान पुराना हो गया है। आसाम की आबोहवा में गोसेवा का काम कैसे बढ़ सकता है, इसके लिए आपमें से उस विषय के जो तज्ञ होंगे, उनकी मदद की आवश्यकता है। इस तरह आपकी 'टेलेन्ट्स' की मुझे जरूरत पड़ेगी। श्री अण्णा सहस्रबुद्धे और श्री रा० कृ० पाटिल ने यहाँ समय देने की व्यक्तिगत तैयारी प्रकट की है। मैं चाहता हूँ कि हम सब लोग मिल कर सोचें और जो गलतियाँ पहले हुईं, उनसे सबक लेकर आगे के काम की रचना करें, तो निर्दोष समाज-रचना का नमूना यहाँ पैदा कर सकते हैं।

> मैं निर्माण-कार्य को कम महत्त्व देता हूँ, ऐसी गलतफहमी कोई न कर लें। भूदान-विचार हमारी पटरी है और निर्माण-कार्य ट्रेन है। दोनों की आवश्यकता होती है। विचार के क्षेत्र में गौण और मुख्य आता है, लेकिन जीवन के क्षेत्र में गौण भी चाहिए और मुख्य भी चाहिए। यह क्षेत्र परमेश्वर ने ऐसा उपस्थित किया है कि यहाँ पर हम जोर लगायेंगे तो हमारी बुद्धि का विकास होगा और बहुत बड़ा काम होगा।

सरकारी मदद और हमारी मर्यादा

खादी, ग्रामोद्योग आदि रचनात्मक कार्य या ग्राम-निर्माण की प्रवृत्तियों में सर्वोदय के कार्यकर्ता फँस जाते हैं तो दण्ड शक्तिनिरपेक्ष और हिंसा-शक्ति से भिन्न जन-शक्ति के निर्माण के 'बेसिक रेवोल्यूशनरी' कार्य से हम भटक जाते हैं और देखते-देखते हमारे कार्यकर्ता सरकार-आश्रित या निधि-आश्रित हो जाते हैं, ऐसा कुछ कार्यकर्ताओं को लगता है। इस प्रश्न की चर्चा करते हुए विनोबाजी ने प्रबन्ध-समिति की बैठक में कहा :

"जिसको हम लोग निर्माण-कार्य कहते हैं, वह वस्तुतः विकास-कार्य है। ग्राम-निर्माण स्वतन्त्र ही वस्तु है। आज ग्राम नाम की कोई चीज ही नहीं है। दिल्ली की सरकार के हाथ में हमने सम्मति और पूँजी दे रखी है, इसलिए केंद्रीय सरकार है। प्रदेश की सरकारों के हाथ में हमने पूंजी और सम्मति दी है, इसलिए प्रादेशिक सरकार है। हरएक घर में पूँजी और सम्मति है, इसलिए गृह-संस्था है। लेकिन गाँव में इस तरह की कोई व्यवस्था नहीं है, तो गाँव बना ही नहीं है। इसलिए मैं कहता हूँ कि जहाँ पर लोगों ने ग्रामदान किया और अपनी सम्मति और पूँजी गाँव को दी, वहाँ ग्राम-निर्माण हो गया। उसके आगे गाँव में जो काम करना है, वह ग्राम विकास का कार्य है।

ग्रामदानी गाँव पर यदि कर्जा हो तो गाँववाले मिल कर तुरन्त वह कर्जा साहूकार को वापस कर देंगे तो ग्रामदान की प्रतिष्ठा और साख बढ़ेगी, ग्रामदानी गाँव के लोग ईमानदार होते हैं और पारिवारिक भावना से काम करते हैं, यह सिद्ध होगा। उसका असर सरकार पर, साहूकारों पर और आसपास के गाँवों पर पड़ेगा। सरकार की ओर से पैसा लेकर गाँव का कर्जा चुकाया गया तो गाँववालों का लोभ ही हमने बढ़ाया, ऐसा होगा। त्याग दो मात्रा में और भोग एक मात्रा में (त्रैभ) यह प्रमाण होना चाहिए।

"दूसरी बात यह है कि जिस मदद के कारण हम फीके या पंगु बनते हैं, ऐसी मदद हमें नहीं लेनी चाहिए। सरकार हमारी ही है और रचनात्मक कामों में मदद देना उसका कर्तव्य है। इसलिए इस तरह की मदद देकर सरकार हम पर उपकार नहीं करती है, यह सही है। लेकिन सरकार की मदद हमारे काम में अपकारक न बने, यह देखना चाहिए। मकान में जहाँ गोल कमान बनानी पड़ती है, वहाँ नीचे ईंटों का आधार देते हैं। कमान पक्की बनने पर उन ईंटों को निकाल लेते हैं। सरकार की मदद उन ईंटों के समान होनी चाहिए। इसलिए मदद का परिमाण हर साल कम होते होते चार पाँच सालों में वह मदद बन्द हुई और काम खड़ा हो गया, ऐसा होना चाहिए।

"तीसरी बात यह है कि सरकार की मदद हम हमारे काम के लिए भले ही लें, लेकिन हमारे कार्यकर्ता जन आधारित ही होने चाहिए। हमारे कार्यकर्ता अगर सरकार के पैसे से खड़े होंगे, तो हम सरकार के पेट में चले गये ऐसा होगा। हम अपने पैरों पर खड़े हैं और कार्य के लिए सरकार से मदद लेते हैं, ऐसा होगा तभी वह 'सहयोग' कहा जायगा। हमारी भूमिका मित्र की होनी चाहिए, पुत्र की

[शेष पृष्ठ १० पर]

विश्व-शांति के लिए दृढ़ लोकशक्ति आवश्यक

• विनोबा

आज दुनिया की हालत भग्न व्यक्तित्व–स्प्लीट पर्सनालिटी–जैसी है। जो शस्त्र-सज्जित है, उनका हिंसा पर से विश्वास हट गया है और अहिंसा पर विश्वास बैठा नहीं। नेपोलियन की हिंसा पर श्रद्धा थी; केनेडी, ख्रुश्चेव की नहीं है। दोनों के पास भयानक शस्त्र आ गये। दोनों एक-दूसरे को देख कर शस्त्र बढ़ाते जाते हैं। शस्त्र-शक्ति बेवकूफ है, वह यह अकल नहीं रखती कि किसके हाथ में उसे रहना चाहिए। वह दोनों के हाथ में रहती है।

यह दर्शन जब रूसवालों को हो गया, तब वहाँ नयी खोज हुई कि स्टालीन ने रूस को बरबाद किया। अब नयी खोज के अनुसार नया इतिहास बच्चों को सिखाया जायगा। जब तक वह तैयार नहीं होगा, तब तक स्कूल में यह विषय पढ़ाना बंद! पहले लेनिन भगवान का अवतार था–भगवान श्रीकृष्ण। विष्णु भगवान दूसरे थे–कार्ल मार्क्स! अब लेनिन महाशय का, कृष्ण भगवान का एक हलधर था–स्टालीन! दोनों को इकट्ठा बोलते थे, लेनिन और स्टालीन। किन्तु नयी खोज के अनुसार स्टालीन ने बड़ा संहार किया, बहुत हिंसा की, रूस का बड़ा भारी नुकसान हुआ। अब वह तो राक्षस है, पहले देव था। अब तक किताबों में गुणगान गाये गये थे।

अब नया इतिहास बनाया जायगा, जिसमें स्टालीन राक्षस जैसा चित्रित किया जायगा। उसको समय लगेगा, तब तक स्टालीन की कब्र खोद-खोद कर, उसको दूसरी जगह भेजा जायगा। मृतमारणं–मरे हुए को मारना, पिष्टपेषणम्–आटे को पीसना। स्टालीन तो बेचारा मर गया, शांतिधाम में पहुँच गया! अब उसकी मृतदेह को वहाँ से उखाड़ते हैं, दूसरी जगह रखते हैं, कितनी दुष्ट प्रक्रिया है! मन का इतना खराब चित्र दिखता है। यह सब रूस में चल रहा है। इतना भी भान नहीं कि इस तरह का बरताव करने में मनुष्य के मन की स्थिति चंचल होती है, लेकिन इसकी परवाह कौन करे। अब यह शख्स (ख्रुश्चेव) शांति की बात करता है और कहता है कि स्टालीन अशांतिवादी था और शान्ति के बिना रूस का, दुनिया का कल्याण नहीं होगा; क्योंकि दोनों ओर, रूस और अमेरिका में चंडी–संहार-शक्ति–आ गयी। एक चंडी ने दूसरी चंडी को 'न्यूट्रलाइज' किया, इसलिए वे लोग शांति की बात करते हैं। लेकिन हिंसा पर से विश्वास हट गया, अहिंसा पर बैठा नहीं। ऐसी बीच की हालत में आज दुनिया के 'स्टेट्समैन', राजनीतिज्ञ, राजनीतिवेत्ता हैं। उनको रक्षा के लिए करोड़ों रुपये दिये गये हैं। 'लोग बेचारे अनाथवत् बन गये। उनकी रक्षा करो, अनाथों के नाथ रक्षा करो,' ऐसी प्रार्थना दुनिया कर रही है। उनके हाथ में हम ही ने सत्ता दी है। हम देवता बनाते हैं उनको। पत्थर की मूर्ति ली और उसमें भगवान का आवाहन किया कि हे भगवान, आ जा, मेरी मूर्ति में बैठ, ताकि नमस्कार करूँ। मैं ही मूर्ति में भगवान बिठाऊँगा, मैं ही उसे नमस्कार करूँगा और प्रार्थना करूँगा–'तू ही मेरा तारक, तू ही मेरा रक्षक!'

इस तरह हम लोगों ने राजनीतिज्ञों के हाथ में सत्ता दी है। वे सत्ता इस्तेमाल करते हैं। हम समझते हैं कि हम अनाथ हैं, कुछ नहीं कर पाते, उनकी दया पर निर्भर हैं। आज की दुनिया की हालत को मैं 'नृसिंहावतार' कहता हूँ। सबसे भयानक अवतार नृसिंह का है। मैं नहीं डरता हूँ, न आपको मैं डराता हूँ। हम तो प्रह्लाद के अनुयायी हैं। हमको कोई कारण नहीं डरने का। नृसिंहावतार में वह न तो था पशु, न मानव। इसके बाद मानवावतार की शुरुआत हुई–वामन, राम आदि हुए। नृसिंह के पहले सारे प्राणी-जंतु–मत्स्य, कच्छ, वराह; ये सारे जानवर। इधर जानवर, उधर मानव, बीच में नृसिंहावतार! ऐसी हालत है आज दुनिया की। शांति चाहिए, इसलिए आकाश में बम का स्फोट करना शुरू करते हैं! उससे सब दुनिया का वातावरण बिगड़ता है। मानवीय गर्भ पर भी असर होता है, सकलांग गर्भ बढ़ने के बजाय विकलांग गर्भ होगा। जन्म से पंगु संतति पैदा होगी।

यह कह कर आपको मैं डरा नहीं रहा हूँ। ये वैज्ञानिक लोग कह रहे हैं कि सब शस्त्र खत्म होने चाहिये; किन्तु फिर भी दोनों देशों ने शस्त्र के स्फोट करना शुरू किया! आप आग लगाते हैं, तो हम भी आग लगायें, तो दुनिया ठंडी हो जायगी! वाह रे अकल! एक ने आग लगायी, तो दूसरे को पानी लाना चाहिये न! पर कहते हैं कि हम आसमान में स्फोट नहीं करते, पाताल में करते हैं! अरे भाई, कहीं भी करो, आखिर इसमें बुद्धि क्या है! लोगों को राज्यकर्ता डर सिखाते हैं। हरएक बच्चे को डर सिखाया जाता है कि हम बमस्फोट कर रहे हैं, क्योंकि वह दुनिया के कल्याण के लिए अत्यन्त जरूरी है–'परित्राणाय साधुनाम्...' साधुओं के रक्षण के लिए दुर्जनों के संहार के लिए! कौन दुर्जन! उसमें मतभेद है। मेरी राय में तुम, तुम्हारी राय में मैं, भगवान की राय में दोनों दुर्जन! अब क्या कहा जाय, सज्जनों की रक्षा के लिए शस्त्रास्त्र बनते हैं! नाम अहिंसा का, काम हिंसा का; ऐसी बीच की हालत में हमारी क्या दशा है! गांधी आये तो अहिंसा सूत्र चली, अब भी वे आयेंगे तो चलेगी, लेकिन कहाँ चलेगी! क्या कांगो का सवाल यह हल कर सकती है, बर्लिन का सवाल यह हल कर सकती है? क्या हिन्दुस्तान-चीन का झगड़ा मिटा सकेगी?–ऐसा लोग हमें पूछते हैं।

सेना बनाने के लिए तो सरकारों को करोड़ों रुपये दे दिये और अब हमें पूछते हैं कि अहिंसा से क्या क्या होगा? एक भाई पूछ रहे थे कि चीन आगे बढ़ रहा है, यह सुन कर भारत ने सेना भेजी तो यह ठीक किया या नहीं? अब बाबा एक उत्तर दें तो भी गलत, दूसरा उत्तर दें तो भी गलत! ऐसी अकल से सवाल पूछता है, ताकि बाबा का जवाब 'प्रेस' में जा सके! हमने कहा, "भारत ने अच्छा ही किया। सेना रखी है, तो क्या आराम, चैन से बैठ कर केला खाने के लिए खड़ी की है! भेजनी ही चाहिये। नहीं भेजेंगे तो मूर्ख साबित होंगे। सेना पर खर्चा भी करेंगे और मौके पर भेजेंगे नहीं, तो क्या उसे बैठे-बिस्किट खिलाते रहेंगे? ऐसा करेंगे तो मूर्ख साबित होंगे। हाँ, अगर सैन्य ही रखते नहीं हैं, तब तो बात दूसरी है!"

वह पूछने लगा, "अगर सैन्य नहीं रखेंगे तो चीन हम पर हमला नहीं करेगा क्या?"

"हिन्दुस्तान के जैसा बड़ा राष्ट्र शस्त्र छोड़ देता है, तो उसकी नैतिक शक्ति दुनिया में बढ़ेगी। उस पर कोई हमला करेगा तो 'वर्ल्ड वार'–विश्व-युद्ध–होगा। उसका क्या डर रखते हो?" यह मैंने कहा तो वह चुप हो गया।

सवाल यह है कि भारत एकदम सेना छोड़ सकता है–यह हिम्मत, शक्ति भारत में अभी नहीं आयी, इसलिए सरकार में भी नहीं है। सरकार तो लोगों की प्रतिनिधि है। लोग तो सरकार के सरकार हैं, उसको बनाने वाले हैं। लोगों में हिम्मत नहीं आयी है कि अहिंसा की शक्ति हम बना सकते हैं, कोई आक्रमण करता है तो असहयोग हम कर सकते हैं, मर जायेंगे, लेकिन पाप के साथ असहयोग करेंगे। एक देश में यदि ऐसी शक्ति आ जाती है, तो दुनिया को मार्गदर्शन मिलेगा।

इस हालत में शिवसागर, जोरहाट क्या करेंगे? हम कहते हैं कि नीचे से भी काम होना चाहिए–जिसे मिलीटरी की भाषा में 'पीन्सर्स मुवमेंट' कहते हैं। सेना में जैसे दोनों बाजू से पकड़ते हैं–चिमटे से इस बाजू से और दूसरी बाजू से–तब शत्रु का पराभव होता है। ऐसे दोनों बाजू से काम करना चाहिए। एक मंत्र है, "जय जगत्"–सारा विश्व एक बनाना है, परस्पर राष्ट्रों के बीच प्रेमभाव स्थापित कराना है, शान्ति की शक्ति में वजन लगाना है। यह कुछ प्रमाण में पं० नेहरू कर रहे हैं, परन्तु पूरे प्रमाण में नहीं कर पाते। नहीं करना चाहते हैं सो नहीं, कर नहीं पाते हैं; क्योंकि पं० नेहरू 'नेहरू' नहीं हैं, 'प्रधानमंत्री नेहरू' हैं, हमारे 'प्रमुख मंत्री' हैं। हम हैं दुर्बल तो वे हैं, दुर्बलों के प्रधानमंत्री! इसलिए उनमें दुर्बलता आ जाती है। एक बाजू से यह कोशिश हो कि राष्ट्रों के बीच संघर्ष न हो, नैतिक शक्ति की प्रेरणा दूसरे राष्ट्रों को मिले और दूसरी बाजू से हिन्दुस्तान एक बने। आज भारत में गाँव है ही नहीं, घर हैं। गाँव तब बनेगा, जब ग्रामशक्ति होगी, गाँव की पूँजी होगी, गाँव का विचार होगा। आज तो पूँजी तीन स्थान में है: घर में, शिलांग में और देहली में। अगर शिलांग में टैक्स नहीं दिया होता तो प्रान्त बनता नहीं, केवल घर ही रहते। यदि देहली को टैक्स नहीं दिया होता तो देश नहीं बनता। इसलिए आज देश है, प्रदेश है, घर है; परन्तु गाँव नहीं है। इधर घर, उधर शिलांग। इस घटना पर आप विचार कीजिये। मेरा लड़का बीमार पड़ा तो गाँव से मदद नहीं मिलती, तो आरोग्य-मंत्री को तार भेजा जाय कि मेरा लड़का बीमार पड़ा है, उपाय करो! गाँव को बचाने के लिए घर की जगह गाँव को लेनी चाहिए। वैसे यहाँ भगवद्नाम-स्मरण के लिए हर गाँव में 'नामघर' बनाये हैं। भगवान के स्मरण के लिए ऐसे घर की क्या जरूरत थी? वह तो हृदय में हो सकता था, परन्तु गाँव को एक करने के लिए 'नामघर' बनाये गये। अकेले-अकेले हरिनाम नहीं लेंगे, सब साथ रामनाम लेंगे और कहा:

"लयो हरिनाम साते-पाँचे हुया साजु।
आपुन-हुरे पलाइबेक काल-माया-बाजु॥"

तो कालमाया ऐसे ही भाग जायगी। तो गाँव बनाने का 'नाम-घर' से आरंभ हुआ। तब तक घर ही घर थे, परंतु नामघर बना तो गाँव बना। लेकिन इससे पूरा गाँव नहीं बना, गाँव की बुनियाद बनी, परंतु जैसे 'नाम घर' बना, वैसा 'काम-घर' बनेगा, तब पूरा गाँव बनेगा। सारा गाँव मिल कर एक परिवार, सभी के पास काम, सब सुखी। इधर यह करेंगे, उधर 'जय जगत्' करेंगे। चिमटे के एक पकड़ में विश्व प्रवृत्ति, दूसरी पकड़ में ग्राम प्रवृत्ति।

जोरहाट (आसाम) में विनोबाजी ने ९ दिसम्बर को जो महत्त्वपूर्ण भाषण दिया, उसका दूसरा अंश।

तुच्छ, फिर भी तुच्छ नहीं !

• रणजीत राय

मैं किसी प्रसिद्ध व्यक्ति की कथा सुनाने नही जा रहा हूँ। किसी विदेशी की कथा भी नही। हमारे ही देश के एक तुच्छ लड़के की कथा है। नाम नही जानता। परिचय भी नही जानता।

ट्रेन से कलकत्ता जा रहा हूँ। खूब भीड है। आदमियों, सन्दूक बिस्तरो और गठरियो से डिब्बा भरा हुआ है। गाडी का फर्श भी कूडे से इतना भरा है कि बैठने की इच्छा नही होती। थूक, बादाम के छिलके, चना जोर गरम के फटे कागज और खाली पैकेट और आईसक्रीम की सीकें, सब इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। किसी यात्री के अखबार में मुँह छिपाये बैठा हूँ।

सामने की बेंच पर एक प्रौढ़ सज्जन बैठे हैं। उनके पास एक दस ग्यारह वर्ष की आयु का लड़का बैठा है। शायद उनका नाती ही हो। प्रौढ़ सज्जन बैठे बैठे पान खा रहे हैं। हठात् वह चिल्ला कर बोले, "ओ चाय वाले!"

गाडी में एक आदमी चाय बेच रहा था। जैसे ही उसने आकर एक कुल्हड चाय उनको दी, वह मुँह का पान फर्श पर थूक कर चाय पीने लगे।

क्या देखता हूँ कि दादा से छिपा कर लड़के ने उसे इकट्ठा कर लिया और उसके बाद मौका पाकर बाहर फेंक दिया। थोडा आश्चर्य हुआ, क्योंकि ऐसी बात प्रायः देखने को नही मिलती। थोडी देर बाद लड़के का कण्ठ-स्वर कान में पड़ा, "ओह दादा, अब कुल्हड भी यहीं फेंक दिया।"

देखा कि दादा के मना करने पर भी लड़के ने फर्श से कुल्हड उठा कर बाहर फेंक दिया। और भी आश्चर्य हुआ। लड़के से पूछा, "क्या बात है बेटा, एक बार देखा कि तुमने चबाया हुआ पान फेंका। अब देखता हूँ कि कुल्हड भी फेंक दिया। ऐसा न करते तो वे वहाँ पड़े ही रहते।"

लड़का कुछ देर मेरे मुँह की ओर देखता रहा। उसके बाद बोला, "गाडी पर हम लोग ही चढ़ते हैं। उसको गंदा करने से हमारी ही तो हानि होती है!"

मैं हँस कर बोला, "किन्तु गाड़ी के फर्श की ओर तो देखो। गंदा तो हो ही रहा है।"

लड़का भी हँस पडा। बोला, "सब गंदा करते हैं, तो क्या इसीलिए हम भी करेंगे?"

मैं मुग्ध हो गया। उन प्रौढ़ सज्जन से बोला, "आपके नाती ने तो बडी अच्छी शिक्षा पाई है। हम स्वाधीन हो गये हैं, किन्तु आज तक भी स्वाधीनता का सम्मान करना नहीं सीखा। आज इस छोटे से लड़के से मैंने वास्तविक स्वाधीनमन का परिचय पाया है।"

गाडी के सभी लोग उस छोटे-से लड़के को देख रहे थे। शायद सोच रहे थे—यही तो नूतन दिवस का आलोक है। इसी प्रकार इन सब सुकुमार किशोरों के भीतर नया भारत नये रूप में जन्म ले रहा है।

❀ ❀ ❀

एक दिन श्रीरामपुर के अस्पताल गया था। वहाँ का एक रोगी हमारा संबंधी था, उसे ही देखने जाना था। मिलने का समय सध्या के चार बजे था। लेकिन चूँकि मैं समय से कुछ पहले पहुँच गया था, इसलिए अस्पताल के आफिस में जा बैठा था और वहाँ के एक कर्मचारी के साथ बातें कर रहा था कि देखता हूँ आठ-दस किशोरी कन्याएँ अन्दर घुस आयी हैं।

कर्मचारी ने उनसे पूछा, "तुम्हें क्या चाहिए?"

उनमें से एक लड़की आगे आयी और बोली, "हम लोग 'शांतिकामी भगिनीमेला' से आ रही हैं। आज भाई दूज है। हमने निश्चय किया कि इस अस्पताल के रोगी भाइयों को भैयादूज के उपलक्ष में कुछ फल भेंट करेंगी।"

लड़की की बात सुन कर कर्मचारी ने एक बार मेरे मुँह की ओर देखा। फिर धीरे-से बोला, "अद्भुत! ऐसा तो कभी नहीं देखा।"

इसके बाद वह उठा और उन्हें साथ लेकर रोगियों के कमरे की ओर चला। मैं भी पीछे-पीछे हो लिया।

एक छोटा-सा अस्पताल। एक हॉल में केवल पच्चीस रोगियों के रहने की व्यवस्था है। हम सब रोगियों के कमरे में जाकर हाजिर हो गये। कर्मचारी ने मुस्कराते हुए रोगियों के साथ लडकियों का परिचय कराया और बोला, "ये लोग भैया-दूज के उपलक्ष में आप लोगों की मगल कामना के लिए कुछ फल देने आयी हैं। आपकी इन नयी बहनों के साथ मैं भी प्रार्थना करता हूँ कि इनकी यह अपूर्व भैया दूज सार्थक हो। आप लोग नीरोग होकर लौटें।"

स्तब्ध-मुग्ध होकर मैं उस अपूर्व दृश्य को देखने लगा। रोगियों के हाथ में फल देकर और प्रणाम करके वे लोग समवेत स्वर में बोलीं, "आप लोग नीरोग हो जायँ।"

देखते देखते मेरा मन भर आया। खुशी के प्रकाश से रोगियों के भी मुख और नेत्र चमक उठे। मन-ही मन बोला, जिस देश की सुकुमारियों के प्राणों में इतनी ममता, सेवा का इतना बड़ा स्रोत छिपा है, उस देश को नये पथ पर चलने से कौन रोक सकता है। यही तेजस्वी प्राणवाली बालाएँ तो नये भारत का कल्याण करेंगी और उसे उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ायेंगी।

× × ×

श्रीरामपुर में नेताजी सुभाष रोड के ऊपर एक बगाली होटल है। नाना कार्यों के लिए श्रीरामपुर जाना पडता था। बीच बीच में वहीं खाना खाता था। उस दिन भी गया था। होटल में खाने बैठा था कि उसी समय एक किशोर वहाँ आकर खड़ा हो गया।

होटलवाला बोला, "यहाँ क्या करने आया है?"

कुंठित स्वर में लड़का बोला, "मुझे थोड़ा-सा भात खाने को देंगे?"

"भात! नहीं, नहीं, यह सब नहीं होगा। भिक्षा देने के लिए होटल खोल कर नहीं बैठा हूँ।"

होटलवाले ने विरक्त होकर मुँह फेर लिया। लड़के की आँखें छलछला उठीं। हाथ जोड कर बोला, "केवल आज के दिन बाबू! फिर कभी नहीं आऊँगा। कल से कुछ खाने को नहीं मिला है।"

इस बात पर होटलवाले का मन पिघल गया। उसने उसे सिर से पैर तक अच्छी तरह देखा। मैंने भी देखा। उसने एक फटी हुई पतलून और कमीज पहनी हुई थी। भूख और क्लान्ति से उसका मुँह सूख गया था। उसका भाव देख कर ऐसा लगता था कि वह इस तरह भीख माँगने का अभ्यस्त नहीं है।

होटलवाला बोला, "अच्छा, आज तो खाना दे रहा हूँ, किन्तु ऐसे भीख माँगने से कब तक चलेगा? तेरा शरीर स्वस्थ है। मेहनत करके क्यों नहीं खाता। भीख माँगना क्या अच्छी बात है?"

"कोई भी काम नहीं मिला, बाबू। आप मुझे कुछ काम देंगे?"

होटलवाला फिर विरक्त हो उठा। बोला, "मैं काम कहाँ से लाऊँ? कहीं भी ढूँढ ले। इस समय एक मुट्ठी भात खाता जा।"

"नहीं बाबू!" बालक के कठ में अचानक दृढ़ता भर उठी, "आपने ठीक ही कहा है। अब भीख का भात नहीं खाऊँगा। दया करके मुझे कुछ काम दीजिये। उसके बाद मैं खाऊँगा।"

मैं खाना भूल कर उसी ओर ताकता रहा। लड़के ने किसी तरह नहीं खाया। अत में होटलवाला बोला, "तब तू उन सब बर्तनों को माँज डाल।"

लड़का एकदम राजी हो गया। कुछ बर्तन माँजने के बाद वह तृप्ति के साथ भोजन करने बैठा। होटलवाला भी मेरी तरह मुग्ध हो उठा। बोला, "क्यों, कल आयेगा?"

मृदुल हँसी हँस कर लड़का बोला, "हाँ बाबू, आपका काम करूँगा और खाऊँगा। समझ रहा हूँ, बाबू। बिना काम किये भोजन की इच्छा करना ठीक नहीं है।"

मेरे मन को चोट पहुँची। ऐसा प्रतीत हुआ आज मानो परिश्रम से विमुख जनों को रास्ता दिखाने के लिए यह किशोर कर्म के मार्ग पर उतर आया है। उसकी ही बात ठीक है। छोटे बड़े काम का अंतर मिट जाना चाहिए। काम केवल काम ही होना चाहिए।

('जीवन-साहित्य' से)

बीच में देश के सारे भेद नष्ट करने पड़ेंगे। इधर सारा गाँव एक, उधर दुनिया एक, ऐसे दुहरे आन्दोलन के बीच भेदासुर को खतम करेंगे, तब दुनिया में शांति स्थापना होगी। इस बात की बहुत जरूरत है कि मसला हल करने का कोई शान्तिमय तरीका निकले, इसलिए मैंने ग्रामदान, सम्पत्तिदान, सर्वोदय पात्रादि की बात रखी है। जोरहाट में आठ दस हजार सर्वोदय-पात्र रखे जायँ। सेना के लिए करोड़ों रुपये दे रहे हैं तो शान्ति के काम के लिए इतना अगर किया जाय तो शाश्वत धर्म की स्थापना होगी, करुणा फैलेगी। दूसरे को दिये बिना नहीं खाना चाहिए, यह बच्चे सीखेंगे तो नयी शक्ति पैदा होगी। आपके धर्मग्रंथ ने आज्ञा दी है: "फुरा महत सकले हरिगुण गाई।" ऐसे संत-महंत बाहर निकले थे, सतत घूमते थे, धर्म की बात समझाते थे। चरा फिरो रे फिरो! हजार वर्ष पहले के ऋषि ने गाया है कि "कलि शयानो भवति"-सोया रहा तो कलियुग, उठ बैठा तो द्वापर, उठ खड़ा हुआ तो त्रेता और चलने लगा तो कृतयुग में, सत् युग में प्रवेश किया। 'चरैवेति चरैवेति'! वेद भगवान आदेश दे रहा है। चलो रे चलो, बैठे रहोगे तो नसीब तुम्हारा बैठेगा, चलने लगोगे तो नसीब चलेगा। इसलिए उठो और चलना आरम्भ करो। प्रभु का सन्देश घर घर पहुँचाओ। भगवान आपको ऐसी प्रेरणा दे, यही प्रार्थना।

तेनाली में सर्वोदय-पात्र का कार्यक्रम

विनोबा के आशीर्वाद से तथा डा० वेंकटि सूर्यनारायणजी के परिश्रम के फलस्वरूप आंध्र प्रदेश के तेनाली शहर में ता० २८ अगस्त '५८ से सर्वोदय-पात्र की व्यवस्था शुरू हुई तथा उसने धीरे-धीरे इन साढ़े तीन सालों की अवधि में आंध्र प्रदेश के विविध नगरों और गाँवों में शाखोपशाखाओं के साथ विस्तृत रूप धारण किया। अब नीचे दिये केन्द्रों में सर्वोदय-पात्र का काम चल रहा है। केन्द्र के नाम के साथ वहाँ काम करने वाले कार्यकर्ताओं की संख्या भी दी गयी है।

तेनाली—२; गुंटूर—४; विजयवाड़ा—५; बापटला—४; चीराला—३; दुग्गिराला—१; एलूरु—१२; हैदराबाद (तीन केन्द्र)—१०; सिकन्दराबाद—८ खम्मममेट—५; सिरिपुरम—१; मद्रास—२; ओंगोल—४; नरसारावपेट—३; इस तरह सेवा-सैनिक इन सब केन्द्रों में काम कर रहे हैं।

ये सब सेवा-सैनिक दिन में एक वक्त निश्चित पद्धति के अनुसार सर्वोदय-पात्र रखने वाले गृहस्थों के घर जाकर चावल संग्रह कर लेते हैं और दूसरे वक्त कुछ सेवा-कार्यों में भाग लेते हैं। ये सेवा-सैनिक अपनी सतत सेवा तथा सदाचरण के द्वारा जनता में क्रमशः सर्वोदय विचार के प्रति रुचि उत्पन्न करने का प्रयास करते रहते हैं।

इस प्रकार सेवा-सैनिक संकल्पित होकर कुल सभी केन्द्रों में अब तक २५,००० सर्वोदय-पात्रों की स्थापना कर सके। हैदराबाद तथा खम्मममेट के कुछ मुस्लिम भाइयों के घरों में भी सर्वोदय-पात्र रखे गये हैं।

हमारे कार्यकर्ताओं के दैनिक अनुभव के द्वारा यह सिद्ध होता है कि इस सर्वोदय-पात्रों के द्वारा शान्ति की स्थापना में बड़ी मदद मिलती है। आज के बच्चे ही कल के नागरिक हैं। ऐसे बच्चों के द्वारा नित्यप्रति नियम से "सत्य, प्रेम, करुणा, शान्ति एवं भ्रातृत्व की समृद्धि समाज में हो," ऐसे मंत्र के साथ मुट्ठी भर चावल डलवाने का काम फिलहाल देखने में एक छोटा-सा काम लगे तो भी भविष्य में इसका बड़ा अद्भुत प्रभाव होगा और समस्त भारत में शान्ति-बीजों को बोने में सफल होगा, ऐसा हमारा अनुभवपूर्ण विश्वास है। हर दिन नियम से सर्वोदय पात्र में चावल डालने वाले बच्चे कार्यकर्ताओं के इस विश्वास को बढ़ा रहे हैं।

इस सर्वोदय पात्र की व्यवस्था के द्वारा ये सेवा-कार्य चल रहे हैं :

(१) सर्वोदय-विचार का प्रचार।
(२) स्वच्छिक सेवा-कार्य, वालंटियर के काम।
(३) काम धंधों की शिक्षा देना।
(४) शिक्षा का प्रचार।
(५) सर्वोदय बालसमाज का संगठन करना।

सर्वोदय-विचार प्रचार

आंध्र प्रदेश सर्वोदय साहित्य प्रचार-समिति के द्वारा प्रकाशित सर्वोदय साहित्य का घर घर में प्रचार करना इसका काम है। कार्यकर्ताओं के द्वारा इस साल कुल ४५०० रुपये के साहित्य की बिक्री हुई। हमें उम्मीद है कि इस दिशा में और भी प्रगति हो सकती है।

डेमाई साइज की ८ पृष्ठों की "साम्ययोगम्" नाम की पाक्षिक पत्रिका इसी सर्वोदय-पात्र की व्यवस्था के द्वारा संचालित हो रही है। इसकी हरएक पक्ष में २४ हजार प्रतियाँ छपती हैं। सर्वोदय पात्री गृहस्थों के लिए सवा रुपये के तथा अन्य लोगों को तीन रुपये के वार्षिक चन्दे पर यह पत्रिका दी जा रही है। पत्रिका का चन्दा वसूल करने का काम हाल ही में शुरू किया गया है। यह काम उत्साहवर्धक रीति से ही चल रहा है।

गत ता० २६ नवंबर, '६१ को अखिल आन्ध्र प्रदेश के स्तर पर आन्ध्र के सर्वोदय-प्रेमी साहित्यकारों की एक मंडली कायम की गयी, जिसके अध्यक्ष आन्ध्र के प्रमुख राष्ट्रीय कवि एवं गांधीजी की आत्म-कथा के पद्यानुवादक श्री तुम्मल सीताराम मूर्तिजी हैं तथा "साम्ययोगम्" पत्रिका के संपादक श्री के० वे० सु० अप्पारावजी मंत्री हैं। यह एक स्वतंत्र संस्था है, जो सर्वोदय-साहित्य प्रचार-समिति तथा सर्वोदय-पात्र व्यवस्था के नैतिक मार्गदर्शन में काम करती है। आंध्र सर्वोदय-साहित्य समिति के संचालक डा० श्री वेंकटि सूर्यनारायणजी इसके उपाध्यक्ष एवं कोषाध्यक्ष चुने गये हैं। आन्ध्र के विविध जिलों के करीब २५ प्रमुख कवि तथा लेखक इसके सदस्य बन चुके हैं। "जगद्धित" अथवा "सर्वश्रेय" को लक्ष्य के रूप में मान कर "अनुद्वेग-करं वाक्यं" के गीता-वचन के अनुसार होने वाली शैली में जाति, धर्म, कुल, वर्ग आदि के विभेदों से परे समन्वयात्मक दृष्टि से साहित्य का सृजन करना इसका उद्देश है।

सेवा के कार्य

ये सेवा-सैनिक अपने-अपने क्षेत्रों में होने वाले उत्सव, सभा-समारोह आदि में स्वच्छंद सेवा का कार्य करते हैं। श्रीराम-नवमी, संक्रांति, विजयादशमी वगैरह त्योहारों के अवसर पर होने वाले धार्मिक, सांस्कृतिक इत्यादि कार्यक्रमों के उपलक्ष्य में जो समारोह होते हैं, उनमें ये सेवा-सैनिक वालंटियरों के तौर पर काम करते हैं। चूंकि ये काम इनके द्वारा योग्यता के साथ निभाये जाते हैं, इसलिए उन सब धार्मिक कार्यक्रमों में उनके संयोजक इन कार्यकर्ताओं को निमंत्रण दिया करते हैं। ऐसे कार्यों में भाग लेते रहने के कारण जनता में इन सेवा सैनिकों के प्रति आदर तथा स्नेह का भाव बढ़ रहा है। इसके अतिरिक्त ये लोग रोगियों की सहायता, भटके हुए बच्चों को अपने माँ बाप के पास पहुँचाना, ग्राम सफाई, श्रमदान आदि सेवा-कार्य भी करते हैं।

काम-धन्धों की शिक्षा की व्यवस्था

अम्बर चरखा, किसान चरखा, मशीन की सिलाई, निवार की बुनाई इत्यादि छोटे मोटे-उद्योगों को सिखाने की व्यवस्था की जाने के कारण मध्यम वर्ग की कई बहनों को अपने परिवारों की आर्थिक दशा को थोड़ा सुधार लेने में मदद मिल रही है। जिन जिन शहरों में सर्वोदय-पात्र स्थापित हुए हैं, उन उन जगहों में सर्वोदय महिला सेवा केन्द्र चलाये जा रहे हैं, जहाँ पर उपर्युक्त गृहोद्योगों की शिक्षा देने का इन्तजाम किया जाता है।

शिक्षा का प्रचार

उपर्युक्त महिला सेवा केन्द्रों में राष्ट्र-भाषा हिंदी की शिक्षा, गीता के श्लोकों तथा 'गीता प्रवचन' की शिक्षा, नित्य प्रार्थना, कुछ सांस्कृतिक कार्यक्रम इत्यादि की भी व्यवस्था की जाती है। हर केन्द्र, में उत्तम पुस्तकों से युक्त एक ग्रंथालय भी चलाया जाता है।

सर्वोदय बाल-समाज

ता० १४ नवंबर ६१ को आंध्र प्रदेश सर्वोदय बाल-समाज की स्थापना की गयी है। सर्वोदय पात्री गृहस्थों के ८ साल से लेकर १४ साल की उम्र तक के बालक बालिकाओं को सदस्य बनाया जाता है। सर्वोदय-पात्र में नियमित रूप से चावल डालने के अतिरिक्त उन्हें एक कदम आगे बढ़ाने के ख्याल से इसकी योजना की गयी। इसके सदस्य इसके लिए तैयार किये गये नौसूत्री दीक्षा-पत्र पर हस्ताक्षर करके अपने घर में रखते हैं, जिसके नियमों का नित्यप्रति पठन तथा मनन किया करते हैं। हर रविवार की शाम को एक घंटे के लिए ये सारे सदस्य अपने-अपने शहर के किसी एक निश्चित स्थान पर जमा होते हैं। कुछ समय की मौन प्रार्थना, "ओम् तत्सत् नारायण ...." गीत तथा अन्य सर्वोदय-गीत सिखाना, किसी एक महापुरुष के सत्य जीवन की कथाएँ सुनाना, उस हफ्ते में हुए किसी सेवा-कार्य की जानकारी देना आदि उस दिन के कार्यक्रम होते हैं। आगे चल कर इसकी तरक्की होने पर इन सदस्यों के द्वारा छोटे-मोटे श्रमदान के काम भी कराने का विचार है।

शांति-पात्र प्रचार-मंडली

इस प्रकार के विविध सेवा कार्यों के द्वारा जनशक्ति को जाग्रत एवं संगठित करने के लिए प्रयास किया जा रहा है। इस सर्वोदय-पात्र के प्रचार की व्यवस्था को प्रांतीय स्तर पर व्यापक तथा समर्थ बनाने की दृष्टि से हाल ही में विविध जिलों के सज्जनों के सहयोग से एक "शांति पात्र प्रचार-मंडली" का भी आरंभ किया गया है। अतः हमारी आशा है कि यह काम दिन-ब दिन बढ़ेगा।

—आजनमुल्लु

सरकारी मदद............

[पृष्ठ ७ का शेष]

नहीं। सरकार के पास का पैसा लोगों का ही पैसा है। उसमें से हम हमारे लिए हिस्सा नहीं माँगेंगे।

"हमारा कार्यकर्ता-वर्ग इस तरह निराधार या जनाधार पर हम खड़ा करेंगे तभी प्रसंग आने पर सरकार के साथ असहयोग करने की हैसियत हम रख सकेंगे, वरना भीष्माचार्य को भी 'अर्थस्य पुरुषो दासः' कहना पड़ा था।"

विनोबाजी ने यह स्पष्ट किया कि कि हमारे कार्य के पीछे जो बुनियादी दृष्टि या लक्ष्य है, वह साफ होना चाहिए और अन्य-अन्य कार्यक्रम व योजना तथा उनमें सहयोग उसी लक्ष्य की पूर्ति में हो रहा है, यह मुख्य ध्यान रखा जाना चाहिए।

अफ्रीका-निवासियों से अपील

[पृष्ठ ३ का शेष]

मिला था। इस परिषद् ने एक विश्व-शांति-सेना की स्थापना का निर्णय लिया है।

प्रेम और अहिंसा का रास्ता

भूमाना की इस परिषद् में स्वीकृत घोषणा में जैसा कहा गया है, मानव समाज जीवन के करीब करीब सब सम्बन्धों में एक महान् संकट की अवस्था को पहुँच गया है। क्योंकि, सरकारें और समाज—सब अपनी ही खड़ी की हुई परंपराओं तथा सिद्धान्तों और हिंसक संगठनों के जाल में फँस गये हैं, और 'सभ्यता का, बल्कि शायद मानव-जाति का ही अस्तित्व इन बन्धनों को काटने पर निर्भर करता है।' एशिया और अफ्रीका के नये राष्ट्रों के लोगों को शायद दूसरों की अपेक्षा ज्यादा आसानी से ऐसा कर सकने का मौका है। अतः अफ्रीकानिवासी भाइयों से मेरा इतना ही अनुरोध है कि वे बिना सोचे विचारे किसी भी चीज को गृहीत मान कर न चलें। हमें यह जानने की कोशिश करनी चाहिए कि मौजूदा रास्ते के सिवा कोई दूसरा रास्ता भी है या नहीं! हमारी मान्यता है कि दूसरा रास्ता है, और वह रास्ता अहिंसा, प्रेम और सहयोग का है। इस रास्ते को अभी अख्तियार करने से मनुष्यों की शक्ति और बुद्धि जो आज एक-दूसरे का नाश करने के काम में लगी हुई है, वह जीवनदायी कामों में लग सकेगी और परिणामस्वरूप मानव जाति गरीबी, गुलामी और युद्ध से छुटकारा पा सकेगी।

तंत्रमुक्ति और जनाधार...

[पृष्ठ २ का शेष]

जैसे मैंने बार बार कहा है कि समग्र नयी तालीम के जरिये ग्राम विकास हो, वैसे तीन कदम होंगे :

(१) परिव्राजक
(२) पुरोहित की हैसियत का और
(३) नागरिक का।

आखिर में हमें नागरिक की स्थिति पर पहुँचना है, क्योंकि स्वावलंबी समाज का मतलब है कि नागरिक परस्परावलंबित हों, किसी विशिष्ट सेवक श्रेणी के आधार पर न रहें।

आज सर्व सेवा संघ की हालत "हैंगिंग गार्डन" जैसी है। वह लोक-सेवक के आधार पर नहीं है। लोकसेवक की इकाइयाँ जितनी ज्यादा बनेंगी, उतना ही अभिमन्यु के चक्रव्यूह में छेद पड़ेगा। मैं जो बैठा हूँ, वह लोकसेवक की इकाई बनाने के लिए ही बैठा हूँ। ऐसी इकाइयाँ बनाने में लोकसेवक को भूखा भी मरना पड़ेगा! क्रांति में आकस्मिक दुर्घटनाएँ तो होंगी ही। हजारों में से हजार लोक-सेवक भूखों मरेंगे, तभी तो दधीचि की हड्डी काम में आयेगी। मरने की निरन्तर तैयारी और जीने की शिक्त जिसमें होगी, वह सच्चा लोकसेवक बनेगा।

प्रश्न : आज लोकनीति की दिशा में "वोटर्स काउंसिल" के जो प्रयत्न हो रहे हैं, उसके बारे में आप क्या सोचते हैं?

उत्तर : इस बात में दलाधारित राज-नीति को अधिक वास्तविक बनाने की कोशिश है, वेग है। परन्तु इसमें लोक-नीति का कोई अधिष्ठान नहीं है। इसे राजनीति का सुधार कह सकते हैं। आज जो सारा कारोबार केन्द्रस्थ और अधिनायक तंत्रीय हो गया है, उसे लोकतांत्रिक बनाने की कोशिश है। लेकिन यह कोई विकल्प नहीं है। आखिर यह काम भी तो अच्छा काम है। समाजवादी लोकतांत्रिक नेता का भी यह काम है।

प्रश्न : देश में अशांति के छुटपुट प्रसंग होते ही रहते हैं, तो संगठित शांति-सेना हो, इसके लिए क्या किया जाय?

उत्तर : हम मानते हैं कि आज की स्थिति में शांति के लिए यह जरूरी है कि पहले हमारे लिए विश्वास पैदा हो। आज जो कोशिश हो रही है, वह ठीक है। अशांति के बाद भी राहत का काम करेंगे तो लोगों में श्रद्धा की भावना पैदा होगी। जब तक लोगों में एक विचार की मान्यता पैदा न कर सकेंगे, तब तक और क्या कर सकते हैं! आज जो करते हैं वह व्यूह रचना का एक अंग ही है। इससे ज्यादा अभी हम कुछ नहीं कर पायेंगे। आम लोगों के दिल में शांति-सेना के बारे में कुछ मान्यता होगी तब कुछ कर पायेंगे, इसलिए आज जो हो रहा है वह बिल्कुल ठीक है।

अशांति न हो, इसलिए जो पूर्व-सावधानी रखनी चाहिये, उसका अभी समय नहीं आया, वह तो दूसरा कदम है।

अब कौन कौनसे ऐसे तत्त्व हैं, जो ऐसी परिस्थिति का फायदा उठाते हैं! उन तत्त्वों का हमें अध्ययन करना चाहिए, फिर जब अशांति होने वाली है उसी समय चल देने की दूसरी स्थिति आयेगी, फिर उसका संगठित स्वरूप निखरेगा। तो, संगठन के स्वरूप में दो स्थितियाँ होंगी : (१) परिस्थिति का अध्ययन और (२) अशांति के पहले ही पहुँच जाने की तैयारी।

प्रश्न : आक्षेप किया जाता है कि आन्दोलन व्यक्ति-केन्द्रित और गुरुवादी बन गया है। आपका क्या मानना है?

उत्तर : यह आक्षेप ऐसों का हो सकता है, जिसको किसी का भी बंधन स्वीकार्य नहीं है और खुद अपने में कुछ करने की कूवत नहीं रखते हैं। यह भाषा नैराश्य की भाषा है। अगर आन्दोलन व्यक्ति केन्द्रित लगता है तो खुद अपना स्वतंत्र काम कर दे—जैसे मैंने अपना शुरू कर दिया है। विनोबा ने तो मना किया था, लेकिन मैं नहीं माना। आज विनोबाजी कह रहे हैं कि ठीक है। वस्तुतः विनोबा अपने आप को आन्दोलन से इतना अलग रखते हैं कि हमारे देश और दूसरे देश के लोगों का आक्षेप है कि आन्दोलन संगठित नहीं है, विनोबा आंदोलन की बागडोर नहीं सभाल रहे हैं। विनोबा के विषय में यही शिकायत बार बार मुख्य रूप में आयी है।

ब्रिटेन में सिगरेट पीने की आदत छुड़ाने के लिए आंदोलन

सिगरेट पीने से होने वाली हानियों के संबध में रायल कालेज के चिकित्सकों की विशेष समिति द्वारा तैयार की गयी एक रिपोर्ट लंदन के प्रमुख चिकित्सकों में बाँटी जा रही है। इस रिपोर्ट में डाक्टरों ने अनेक आँकड़े एकत्र करके यह प्रतिपादित किया है कि सिगरेट पीने से फेफड़ों का तपेदिक, श्वास-नली की 'ब्रोंकाइटिस', पेट में पीड़ा, फेफड़ों में घाव और हृदय की धड़कन आदि बहुत से रोग हो जाने का भय रहता है। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि ब्रिटेन में फेफड़ों के कैन्सर तथा हृदयरोग से मरने वालों की संख्या प्रतिवर्ष बढ़ रही है। ब्रिटेन के बहुसंख्यक डाक्टरों का दृढ़ मत है कि सिगरेट पीने के खिलाफ देश में भारी आंदोलन करना आवश्यक है। बच्चों को इसे पीने से सर्वथा रोक देना चाहिए।

उत्तराखंड सर्वोदय-मंडल

उत्तराखंड सर्वोदय मंडल की बैठक नवजीवन आश्रम, सिल्यारा में १९ से २१ जनवरी तक हुई। उपस्थित सदस्यों ने अपने-अपने क्षेत्र में किये जाने वाले सेवा कार्यों की चर्चा की। चर्चाओं में यह महसूस किया गया कि उत्तर प्रदेश के कार्यकर्ताओं की पत्नियों के लिए १५-१५ रोज का शिविर सिल्यारा और कौसानी में आयोजित किया जाय। उसी प्रकार कार्यकर्ताओं की बालिकाओं की शिक्षा की व्यवस्था सिल्यारा और कौसानी में हो सकेगी, किन्तु लड़कों की शिक्षा का प्रबंध वहाँ नहीं है। इस पहलू पर आगामी बैठक में विचार किया जायेगा।

उत्तराखंड में पर्वतीय नवजीवन मंडल को चार ग्राम इकाइयों का संयोजन करना है। तीन इकाइयाँ और शुरू करने का सुझाव है। सर्व सेवा संघ से प्रार्थना की गयी है कि ग्राम इकाई के कार्यक्रम को सफलतापूर्वक चलाने के लिए पर्वतीय परि-स्थितियों के अनुरूप एक ग्राम इकाई विद्यालय श्रमभारती-खादीग्राम के तरीके पर खोला जाय।

श्री भूभिक्षुजी ने गढ़वाल में चल रहे शराबबन्दी के कार्यक्रम का ब्योरा प्रस्तुत किया। निश्चय हुआ कि शराबबंदी के पक्ष में लोकमत बनाने का कार्यक्रम जारी रखा जाय; परन्तु इस समस्या को प्रांतीय स्तर पर लेने के लिए प्रदेशीय सर्वोदय मंडल से प्रार्थना की जाय। गढ़वाल में शराबबन्दी के समर्थकों के एक सम्मेलन का भी आयोजन किया जाय।

सन् १९६१ के कार्य के लिए विनोबा-जी के सामने जो योजना बनायी थी और कुछ लक्ष्य निर्धारित किये थे। उसकी प्रगति इस प्रकार है :—

जिला	साहित्य बिक्री	भूदान ग्राहक	कार्यकर्ता प्राप्ति	शिविर
अल्मोड़ा, पिथौरागढ़	४०० रु०	२५	१ शांतिसैनिक	२ कौसानी
चमोली गढ़वाल	१२०० रु०	६६	स्थानिक ३ शांतिसैनिक ४५ शांति सहायक	७ गोपेश्वर तथा जोशीमठ
टिहरी उत्तरकाशी	१९०४ रु० ७७ न०पै०	५१	स्थानिक १ शांतिसैनिक	—

पिथौरागढ़ के चौगाड़ गाँव में और टिहरी गढ़वाल के थातीकठूड गाँव में एक एक जन आधारित ग्राम सेवा केन्द्र खुला है।

ता० २२ सितम्बर से ९ अक्तूबर तक श्री दादा धर्माधिकारीजी ने चमोली गढ़वाल और टिहरी गढ़वाल जिलों की यात्रा की। श्री दादा की यात्रा के दौरान में दिये गये प्रवचन "नागरिकों से" और 'विद्यार्थियों और शिक्षकों से" शीर्षक से पुस्तिका के रूप में प्रकाशित किये गये।

संयोजक ने पूरे क्षेत्र में ३९५२ मील मोटर द्वारा और ११७१ मील पैदल यात्रा की। १४६ सभाओं में सर्वोदय विचार का प्रचार हुआ।

टिहरी गढ़वाल में सब राजनैतिक पक्षों ने आम चुनावों के लिए आचार-संहिता स्वीकार की है। ३ पंचायतराज शिविरों में सर्वोदय विचार समझाया गया। गोपेश्वर और केमर में महिलाएँ निर्वाचित हुईं।

तय हुआ कि आगामी कार्यक्रम में शांति सहायकों के प्रशिक्षण के लिए पदयात्रा आयोजित की जाय। जहाँ पर शांति-सहायक ज्यादा हैं, वहाँ का पड़ाव लम्बा भी किया जा सकता है। पदयात्रा में बाहर के कार्यकर्ता भी आमंत्रित किये जायें। पदयात्रा मई में प्रारंभ होगी।

—सुंदरलाल बहुगुणा

साहित्य-परिचय : "लोकशाही कैसे लायें ?"

ले० हरिवल्लभ परीख, प्रकाशक अ० भा० सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी। पृष्ठ-संख्या ४८, मूल्य तीस नये पैसे।

पिछले सर्वोदय सम्मेलन में सर्व सेवा संघ ने आगामी आम चुनावों का लोक-शिक्षण की दृष्टि से उपयोग करने का विचार किया। आजकल चुनावों में लोक-शिक्षण को नजरअंदाज कर केवल 'वोट' बटोरने पर ही ज्यादा ध्यान दिया जाता है। मतदाता अनेक पक्षों की अजीबो-गरीब दलीलों में उलझ जाते हैं और यह नहीं जान पाते कि उन्हें क्या करना चाहिए। मतदाता सजग और सक्रिय हों तो लोकतंत्र शुद्ध और दृढ़ हो सकता है। सर्व सेवा संघ का सुझाव है कि मतदाता अपना मंडल बना कर सर्व सम्मति से अपना उम्मीदवार खड़ा करें, न कि ऊपर से थोपे हुए उम्मीदवारों में से किसी एक को चुनें। श्री हरिवल्लभ परीख एक निष्ठावान लोक सेवक हैं। उन्होंने इस पुस्तिका में हिन्दुस्तान के सब प्रमुख पक्षों की बात रखी है और अंत में मतदाता मंडल क्यों और कैसे बनाना चाहिए, यह संवादों के जरिये समझाया है। पुस्तक की भूमिका में श्री दादा धर्माधिकारी ने ठीक ही लिखा है :

> "श्री हरिवल्लभ की भूमिका पक्ष-विरोध की नहीं, लोकनिष्ठा की है। इसी दृष्टि से उन्होंने यह छोटी-सी पुस्तक लिखी है। पुस्तक जितनी रोचक है, उतनी ही लोकशिक्षणा-त्मक है।"

—मधुराम्ल

सर्वोदय-मंडल, पूर्णियाँ का शिविर

जिला सर्वोदय-मंडल पूर्णियाँ के तत्त्वावधान में २७ दिसम्बर से ३० दिसम्बर तक कस्बाखेला में पूर्णियाँ जिले के सर्वोदय, पंचायत, विधायक एवं अन्य कार्यकर्ताओं का शिविर श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के मार्गदर्शन में हुआ। इस अवसर पर महिला-सम्मेलन, छात्र और अध्यापक-सम्मेलन, जिला सर्वोदय-मंडल का वार्षिक सम्मेलन, युवक-सम्मेलन आदि का आयोजन किया गया था।

जिला सर्वोदय-मंडल, पूर्णियाँ के वार्षिक सम्मेलन का उद्घाटन श्री श्यामकान्त नारायण एवं सभापतित्व बिहार सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह ने किया। लगभग तीन सौ प्रतिनिधि सम्मेलन में शामिल हुए थे, जिनमें महिलाओं की संख्या सन्तोषप्रद थी। श्री श्यामकान्त नारायणजी के अतिरिक्त सर्वश्री श्याम सुन्दर प्रसाद, संयोजक भूमि-प्राप्ति समिति; श्री महेश प्रसाद शर्मा, कल्याणमंत्री, बिहार सरकार; रामनारायण सिंह, संयोजक, बिहार सर्वोदय-मंडल; कमलदेव नारायण सिंह, उपमंत्री बिहार सरकार आदि सम्मेलन में शामिल हुए थे। इस अवसर पर एक आकर्षक खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था।

इसी समय पूर्णियाँ जिला सर्वोदय युवक सम्मेलन का वार्षिक सम्मेलन भी २९ दिसम्बर को किया गया, जिसका सभापतित्व पूर्णियाँ कालेज के प्राचार्य डा० जनार्दन झा 'द्विज' ने किया और उद्घाटन श्री जगन्नाथ प्रसाद मिश्र, सदस्य बिहार-परिषद ने किया।

धनबाद जिला सर्वोदय-मंडल

दिसम्बर महीने में भूदान-किसानों को १८४२ रुपये अनुदान के रूप में बाँटे गये, ६१४ रुपये कर्ज के रूप में दिये तथा १ बैल खरीद कर दिये गये। १४ थैलियाँ और १६ कुदालें बाँटी गयीं। २३२ रु० ६६ न० पै० की साहित्य-बिक्री हुई। नगरपालिका के मेहतरों में कर्ज की समस्या का हल निकालने में सहायता दी। महाजनों को उचित रुपया चुका कर सहयोग समिति द्वारा यह काम हो रहा है। 'बीघा-कट्ठा अभियान' में जिले ३०७१ कट्ठा जमीन का वितरण किया।

१ हजार कट्ठा भूदान मिला

शाहाबाद जिले में ता० २ जनवरी से २२ जनवरी तक स्वामी सत्यानन्दजी की पदयात्रा से १ हजार कट्ठा जमीन १८ गाँव के ८१ दाताओं द्वारा भूदान में प्राप्त हुई। यह सब जमीन दाताओं ने स्वयं भूमिहीनों में वितरित की है। इसके अलावा ३५ रु० की साहित्य-बिक्री हुई और भूदान-यज्ञ पत्रिका के ४ ग्राहक बने। इस यात्रा में श्री अम्बिका सिंह तथा रामडिहरा का खास सहयोग रहा।

जिला खादी-ग्रामोद्योग संघ, मुंगेर का सम्मेलन

जिला खादी और ग्रामोद्योग संघ, मुंगेर का त्रिदिवसीय सम्मेलन २१ और २२ जनवरी को मुंगेर से ६ मील दूर, सिकंदरा में संपन्न हुआ। शिविर में जिला-संघ के १०८ कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त कई विशेष आमंत्रितों ने भाग लिया।

सम्मेलन का उद्घाटन श्री करम भाई एवं सभापतित्व संघ के अध्यक्ष श्री आचार्य राममूर्ति ने की। सर्वश्री रामदेव ठाकुर, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, धीरेन्द्र भाई, श्याम सुन्दर प्रसाद, रामनारायण सिंह आदि ने भी अपने विचार व्यक्त किये। इस अवसर पर एक छोटी, लेकिन बहुत ही आकर्षक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था, जिसे हजारों स्त्री-पुरुषों ने देख कर लाभ उठाया। सम्मेलन में विभिन्न वक्ताओं ने विकेन्द्रीकरण, नया मोड़, भूदान, ग्रामदान, सर्वोदय आदि पर विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला।

सम्मेलन में जिला खादी-ग्रामोद्योग संघ को ग्राम-स्तर पर विकेन्द्रित करने का निर्णय भी किया गया। सम्मेलन के प्रथम दिन, २१ जनवरी को संघ के मंत्री श्री निर्मल कुमार ने वार्षिक प्रतिवेदन उपस्थित किया। चर्चा में प्रमुख कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। संघ के सहमंत्री और नियामक मंडल के सदस्य, श्री जमुना बाबू के स्थान पर श्री पारसनाथ भाई को नियुक्त किया गया।

मुजफ्फरपुर के बेतुआ क्षेत्र में राजनीतिक कार्यकर्ताओं की बैठक जिला सर्वोदय मंडल के तत्त्वावधान में ६ फरवरी को हुई, जिसमें कांग्रेस, कम्युनिस्ट, जनसंघ आदि पार्टियों ने और एक निर्दलीय उम्मीदवार ने सर्वोदय मंडल द्वारा प्रस्तुत आचार-संहिता का स्वागत किया।

संडवा के लोक-सेवक श्री माधवराव मारू ने एक पत्रक प्रकाशित करते हुए मतदाताओं, उम्मीदवारों और दलों से प्रार्थना की है कि चुनाव-काल में स्वस्थ परंपराएँ कायम करनी चाहिए।

पूर्णियाँ जिले में श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के नेतृत्व में ता० २९ जनवरी से ५ फरवरी तक पदयात्रा हुई। इस अवधि में २५० कट्ठा जमीन, १०१ गुंडियाँ सूताञ्जलि, ६०४ रु० की खादी-बिक्री और १६ रु० ५० न० पै० की साहित्य-बिक्री हुई। 'भूदान-यज्ञ' पत्र के २ और 'सर्वोदय-संवाद' के १० ग्राहक बने।

भोपाल में २९ जनवरी को म० प्र० भारत सेवक समाज और 'यूटेड-टेड फोरम' की ओर से एक सर्वदलीय गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें कांग्रेस, जनसंघ, हिंदू महासभा, कम्युनिस्ट, प्रजासमाजवादी और समाजवादी दल के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। गोष्ठी का उद्घाटन राज्यपाल श्री ह० वि० पाटस्कर ने किया। गोष्ठी में सर्वसम्मति से दस सूत्रीय आचार-मर्यादा स्वीकृत हुई।

श्री सिद्धराजजी काशी पहुँचे

श्री सिद्धराजजी विदेश प्रवास से १ फरवरी को बम्बई और १२ फरवरी को काशी सकुशल पहुँच गये।

प्राप्ति-स्वीकार

सस्ता साहित्य मंडल, नई दिल्ली

(१) गांधीवादी संयोजन के सिद्धांत
(२) सच्चे संत-चरित
(३) सरल योगासन
(४) आज का इंग्लिस्तान
(५) बालकों का पालन-पोषण
(६) यूरोप-यात्रा
(७) रेखा
(८) सिपाही की बीवी
(९) अनोखा
(१०) संघर्ष नहीं, सहयोग
(११) अतलांतिक के उस पार
(१२) सूक्ति रत्नावली
(१३) गुरुदेव और उनका आश्रम
(१४) 'समाज विकास-माला' की कुल इक्कीस पुस्तकें।

सर्वोदय तथा भूदान-ग्रामदान साहित्य

धीरेन्द्र मजूमदार		दादा धर्माधिकारी	
समग्र ग्राम-सेवा की ओर (दो खंड)	२.५०	सर्वोदय-दर्शन	३.००
,, ,, ,, (तीसरा खंड)	२.५०	मानवीय क्रांति	०.२५
शासनमुक्त समाज की ओर	०.५०	साम्ययोग की राह पर	०.२५
नयी तालीम	०.५०	क्रांति का अगला कदम	०.२५
बुनियादी शिक्षा-पद्धति	०.६०	दादा की नजर से लोकनीति	०.५०
ग्राम-स्वराज्य : क्यों और कैसे ?	०.११	अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया	५.००

जे० सी० कुमारप्पा		महात्मा भगवानदीन	
गाँव-आन्दोलन क्यों ?	२.५०	सत्य की खोज	१.५०
गांधी-अर्थ-विचार	१.००	माता-पिताओं से	०.३८
स्थायी समाज-व्यवस्था	२.५०	बोलती घटनाएँ (पाँच भाग) प्रत्येक	०.५०
ग्रामों और ग्रामोद्योग	०.२५	बालक सीखता कैसे है ?	०.५०
ग्राम-सुधार की एक योजना	०.७५	बिल्ली की कहानी (तीन भाग)	२.००
		लोकमान्य	०.५०

अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९००० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९००० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २३ फरवरी '६२ | वर्ष ८ : अंक २१

विजय-यात्रा

विनोबा

अभी आपको कुछ पढ़ कर सुनाया गया, उसमें यह आशा व्यक्त की है कि हमारी यात्रा विजय-यात्रा हो। साढ़े दस साल से हम घूम रहे हैं। आप देखते हैं कि हम यात्रा अखंड करते हैं। आज तो भीगते-भीगते आये। यह कोई पहला प्रसंग नहीं है। दस वर्षों में सैकड़ों ऐसे प्रसंग आये। परमात्मा ने एक प्रेरणा दी है, उस प्रेरणा से प्रेरित होकर मैंने यात्रा चलायी है। मेरे हाथ में ज्यादा से ज्यादा इतना ही है कि यात्रा अखंड चले। लेकिन यह विजय यात्रा होगी कि पराजय-यात्रा, यह आपके हाथ में है। विजय-यात्रा हुई तो आपकी जय है और पराजय-यात्रा हुई तो आपका ही पराजय है। हम तो जय और पराजय भगवान् को समर्पण करके मुक्त होते हैं। वास्तव में हम कोई नयी चीज भारत के या असम के सामने रखते हैं, ऐसा नहीं।

उस भाई ने यह भी उल्लेख किया कि गौतम बुद्ध के जमाने से यही बात हमारे देश में चली है। हम कहना चाहते हैं कि हम वही चीज नयी भाषा में, नये जमाने के अनुकूल वह जैसी होगी वैसे रखते हैं, जैसे शंकरदेव और माधवदेव ने उनके जमाने के अनुकूल बात रखी। उनके जमाने में इतनी जनसंख्या नहीं थी, जमीन काफी थी, जंगल ही जंगल था। काश्त भी करते थे। कुल मिला कर सुख था। आज जो संपत्ति की विषमता है, वह उस युग में नहीं थी। उन्होंने गाँव में उनके जमाने में 'नामघर' बनाया। 'नामघर' में सब लोगों को इकट्ठा किया और सामूहिक जीवन का आरंभ किया। मनुष्य कुटुम्ब में रहता है। उसका जीवन ज्यादातर कौटुम्बिक रहता है। कौटुम्बिक जीवन की जगह सामाजिक जीवन आरम्भ हो, इसलिए उन्होंने 'नामघर' का आरम्भ किया।

जिस उद्देश्य से उन्होंने 'नामघर' बनाया वह उद्देश्य तब तक पूरा नहीं होता, जब तक और एक चीज आप नहीं करते। 'नामघर' में सब लोग आते हैं। उसमें कोई सुखी है, कोई दुखी है। एक-दूसरे के सुख दुख की परवाह किये बिना दूसरे के सुख का अनुभव किये बिना, क्या भगवान के नाम में आप तल्लीन होंगे? हम 'नामघर' में बैठे हैं, कीर्तन करते हैं, उतने में बिच्छू ने एक को काटा, तो क्या बाकी के लोग ध्यान न देते हुए नाम-कीर्तन करेंगे? यह संभव नहीं है। उसके दुख के निवारण की कोशिश करनी ही होगी। यह तो मैंने एक उदाहरण दिया। मैं कहना यह चाहता था कि नाम-स्मरण के लिए इकट्ठा होने वाले एक दूसरे के दुख की परवाह किये बिना नहीं रहेंगे। इसलिए महापुरुषों ने कहा कि नाम-स्मरण करो और इसके साथ-साथ एक और बात करो—अन्याय न करो। हमारे हाथ से अन्याय होता है, हमें मालूम नहीं होता है और अन्याय हो जाता है, तो वह खोजना चाहिये और ठीक ढंग से अन्याय का निवारण करना चाहिये।

इसीलिए हमने सुझाया कि गाँववाले सब एक हो जायँ और एक-दूसरे के जीवन में दिलचस्पी लें। सारा गाँव मिल कर एक परिवार बने। हरएक के सुख दुख में हिस्सा लेकर चर्चा करें। यह विज्ञान का जमाना है। अगर हम मिल-जुल कर काम करेंगे तो हमें विज्ञान का लाभ मिल सकता है। मिल-जुल कर काम नहीं करते हैं तो वह गाँव ही नहीं रहता, घर-ही-घर रहता है। उस हालत में गाँव के लिए चिंतन कौन करेगा? हर कोई अपने-अपने घर की चिंता करता है। अपने घर की चिंता करने के बाद भी गाँव की चिंता करो। इतनी सादी-सी बात हम समझाते हैं। इसलिए आपके पास जो चीज है वह सबकी बने। घर में घरवाले अलग-अलग कमाते हैं तो भी खाना उनका अलग-अलग नहीं होता। सबकी कमाई का भोग एकसाथ मिल कर करते हैं। घर में हम प्रेम और सहयोग का कानून लागू करते हैं, इसीलिए घर में सबको आनन्द मिलता है। हम समझाते हैं कि जो प्रेम-तत्त्व घर में तुम लागू करते हो, वही गाँव में लागू करो, तो आनन्द बढ़ेगा। भूमिहीनों को जमीन मिलनी चाहिये। जिनके पास कम जमीन है उनको भी थोड़ी मिले। जिनके पास ज्यादा जमीन है, उनके पास थोड़ी जमीन रहे, याने उनकी सब भूमि गाँव को नहीं देनी है। गाँव की जमीन सबकी हो। सिर्फ मिलकियत व्यक्तिगत न हो, गाँव की मिलकियत हो। हरएक को जमीन रहेगी और उसमें हरएक मेहनत कर फसल पैदा करेगा। उसका थोड़ा हिस्सा गाँव के काम के लिए लिया जायगा। वह गाँव की पूँजी होगी। उसी के आधार पर ग्राम उद्योग खड़े किये जायेंगे और गाँव के दुखियों को मदद मिलेगी। आज तो केवल घर ही घर हैं। आपने सिलांग को टैक्स नहीं दिया होता और सरकार को सम्मति नहीं दी होती तो असम प्रदेश नहीं बनता, सारे अलग-अलग घर हो जाते। लेकिन आपने टैक्स के रूप में सरकार को सम्मति दी। उससे असम प्रदेश बना। ऐसे ही दिल्ली को भी आपने टैक्स दिया और सम्मति दी, तो देश बना। उधर भारत देश बना और इधर असम प्रदेश बना। लेकिन गाँव है ही नहीं, घर ही घर हैं। गाँव तो तब बनेगा, जब गाँव की कोई पूँजी बनेगी, गाँव के लिए कोई सम्मति देंगे, गाँव के लिए चिंता करेंगे। नहीं तो जंगल के जानवरों जैसे रहेंगे, समाज नहीं बनेगा। ऐसा जंगल तो हमें नहीं बनाना है। इसलिए 'नामघर' जिस उद्देश्य से बने, उसी उद्देश्य से 'ग्रामघर' बनने चाहिए। इन दिनों आर्थिक दबाव भी आ रहा है। उस हालत में यह जरूरी है कि सब गाँव एक बनें।

आपने सवाल पूछा है कि ग्रामदानी गाँव में मनुष्य-संख्या ज्यादा और जमीन कम है तो क्या करेंगे? यह सवाल कोई ग्रामदानी गाँव के सामने ही नहीं है, सब गाँवों के सामने यह सवाल है। जमीन कम है और लोग ज्यादा हैं। असम में तो कुछ जमीन है, लेकिन उस हिसाब से केरल में कुछ भी नहीं है। वहाँ भी ग्रामदान हुए हैं। जहाँ जमीन कम है, वहाँ ग्रामदान किया ही जायगा। सिर्फ जमीन पर गुजारा तो नहीं होगा। उसके लिए परिश्रम करना होगा, उद्योग और सहयोग करना होगा। यह सवाल हिंदुस्तान के कई प्रांतों में है। ग्रामदान ने यह सवाल पैदा नहीं किया। यह सवाल पहले से ही है। ग्रामदान से यह सवाल सुलझाने में थोड़ी मदद मिलेगी। ग्रामदान से प्रश्न कठिन नहीं, सुलभ होगा।

दूसरा सवाल है, ग्रामदानी गाँव में जो सभा बनेगी उसमें अगर मतभेद होगा तो क्या होगा? आपको समझना चाहिए कि अभी जो ग्राम-पंचायत है, वह एक पंचायत ही है। ढाई हजार जनसंख्या और दस-दस गाँव उसमें होते हैं। हर गाँव में ऐसी ग्राम पंचायत है। वह करुणा और प्रेम के आधार पर नहीं, सरकार की सत्ता के आधार पर बनी है। इसलिए वहाँ खींचातानी होती है। वह 'ग्राम-पंचायत झगड़ों का एक क्षेत्र हो जाता है। ग्रामदानी गाँव में यह नहीं होगा। ग्रामदानी गाँवों को सरकार ग्राम पंचायत का अधिकार देगी। उसमें जो सभा बनेगी, वह सरकारी सत्ता के आधार पर नहीं बनेगी। उसमें ऐसे लोग होंगे, जिन्होंने अपनी जमीन गाँव को दी है। तो उस सभा को प्रेम का आधार होगा। प्रेम नहीं होता तो ग्रामदान ही नहीं बनता। प्रेम से हमने समझाया और आपने प्रेम से और समझ कर ग्रामदान दिया। ऐसे गाँव में जो ग्राम सभा होगी, उसमें चुनाव नहीं होगा। इक्कीस साल के ऊपर वाले सब बालिग लोग उसमें होंगे। गाँव के बारे में चर्चा करेंगे। कभी मतभेद हुआ तो मौन रखेंगे और निर्णय करेंगे। मौन में भगवान की प्रार्थना करेंगे। उसके बाद फिर से शांति से मिलेंगे तो निर्णय जल्दी हो जायगा। अगर महत्त्व का सवाल नहीं है, तो अपनी-अपनी राय लोग दे देंगे। फिर ज्यादा लोग जिधर मत देंगे उसको सब अपनी अनुमति देंगे और प्रस्ताव पास करेंगे, याने प्रेम का अमल होगा। कभी बहुत महत्त्व का सवाल है तो चिट्ठी से भी फैसला करेंगे। भगवान् का कौल लेंगे। यह अपने पूर्वज करते थे, हम भी करते थे। इससे आपके ध्यान में आयेगा कि ग्राम-पंचायत और ग्राम-सभा में बहुत फर्क है। यह सभा बनाते समय बहुत त्याग हुआ है। ग्राम

मेरी विदेश-यात्रा : २

• देवीप्रसाद

मैं बीस अगस्त को लंदन पहुँचा था। श्री आरलो टाटम स्टेशन पर लेने आये थे। चाहे सफर करने की आदत कितनी ही पड गयी हो, तो भी अपना आदमी स्टेशन पर लेने आ जाता है तो कितना सुख मिल सकता है, इसका अंदाज तभी लगता है, जब लंदन जैसे शहरों के स्टेशन पर आप पहली बार पहुँचते हैं। हालांकि वहाँ के वाहन आदि बड़ी सुविधा के होते हैं, यदि आप टैक्सी में बैठ कर टैक्सी वाले को आपका पता, जहाँ आप जाना चाहते हैं, दे दें तो बिना किसी दिक्कत के वह आपको पहुँचा देगा। तिसपर भी जब आरलो टाटम का हाथ हवा में हिलते हुए दिखा और उन्होंने दूर से हँस कर मेरा स्वागत किया तो मानो मेरे सिर का बोझ जो कुछ अधिक-सा लग रहा था, फौरन उतर गया। अगले दिन उन्हीं के घर में आठ-दस नवयुवक इकट्ठे हो गये थे। संगीत के वातावरण में दिन बीता। हम दोनों आक्सफोर्ड में होने वाली शांति-संस्थाओं की कान्फरेन्स में गये। वहाँ भी शांति-सेना का विषय एक मुख्य विषय था। जब कि अर्ल एटली ने एक सशस्त्र विश्व-पुलिस का विचार सम्मेलन के सामने रखा, माईकेल स्काट ने अहिंसक विश्व-शांति सेना का।

यह अब अनेक लोग मानने लगे हैं कि बहुत मौके ऐसे होते हैं, जहाँ शस्त्रों से सुसज्जित सेना के बदले यदि बिल्कुल निःशस्त्र अहिंसक सेना हो तो शांति का स्थापित होना अधिक संभव होगा। खास तौर पर अनेक अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ ऐसी हैं, जहाँ शस्त्रों का होना ही तनाव को बढ़ाने वाला होता है। ऐसा दीखता है कि यदि अहिंसक सेना अपनी उपयोगिता कुछ परिस्थितियों में सिद्ध कर देती है, तो उसका असर बड़े-बड़े जागतिक मामलों पर भी पड सकता है।

उसके बाद 'युद्धविरोधक अन्तर्राष्ट्रीय' की इंग्लैण्ड की शाखा 'पीस प्लेज युनियन' के ग्रीष्म कालीन शिविर में एक सप्ताह के लिए वेल्स के बोर्थ नामक स्थान पर बीस पच्चीस परिवारों के साथ समुद्र-तट पर मिलने का मौका मिला। दिन भर हम लोग इधर-उधर घूमते थे और रात को दो-ढाई घण्टे डट कर चर्चा करते थे। एक दिन मैंने हमारे सर्वोदय-आन्दोलन की गतिविधि के बारे में मित्रों को परिचित कराया।

बोर्थ से लंदन वापस आते-आते बर्नीघम, वुडब्रोक, श्री आर्नेस्ट बाडर की फैक्टरी का प्रयोग आदि देखते-देखते आया। सर्वोदय-परिवार के पुराने साथी वासन्ती बहन (बारबरा) और उनके पति के साथ दो दिन मध्य इंग्लैण्ड के ग्रामीण क्षेत्र में एक पुराने मकान में रहने का आनन्द मेरे लिये स्मरणीय रहेगा। बारबरा बहन, सुना है अब कोई भारतीय मित्र उनके यहाँ जाता है तो उसे मेरी आसवार्न के केन्द्र में ले जाती हैं। वे मुझे भी वहाँ ले गयी थीं। एक छोटे-से गाँव में मेरी बहन कताई-बुनाई के उद्योग को केन्द्र बना कर सेवा कर रही हैं। वे खास तौर पर बच्चों और स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष ध्यान दे रही हैं। वे कहती हैं कि जो उन्होंने गांधीजी से उनकी इंग्लैण्ड-यात्रा के समय लंदन में सीखा था, वे उसीको अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न कर रही हैं। इस बहन की इस श्रद्धा और साहस को देख कर मेरा मन भर गया। जब वापस घर पहुँचा तो डाक में देखा कि उनका एक पत्र भी यहाँ पहुँचा! गांधी का परिवार कितना बड़ा है, यह हम बहुत कम समझ पाते हैं।

लंदन आठ दिन रहा, नये-पुराने मित्रों से मिलना, म्युजियम और कला-संग्रह देखना और मीटिंगों में भाग लेना, यह इतना चला कि आठ दिन कैसे बीत गये, यह मैं जान भी न पाया। बहुत व्यक्तियों से मिलने की आशा रखी थी, उनमें से आधों से भी नहीं मिल पाया, उसका बड़ा खेद है। भाई श्री जयप्रकाश लंदन में आणविक शस्त्रों के विरोध में होने वाले सम्मेलन के लिए आये थे। वे १२ सितम्बर की विश्व-शान्ति-सेना की तैयारी में होने वाले सम्मेलन में भी उपस्थित हुए थे। उनसे मिल कर बहुत अच्छा लगा था। हेनोवर आते समय दो दिन ज्यूरिख में था। तब हमारे नवयुवक मित्र, राबर्ट अक्नेगर के परिवार के साथ रहा था। वहाँ विमला बहन ठकार भी थीं। दो दिन ऐसे रहे थे, जैसे भारत में ही हों।

लंदन के दो आणविक युद्ध-विरोधक के प्रदर्शनों को प्रत्यक्ष देख कर एक दर्शन ही हुआ था। शान्ति का आन्दोलन तरह-तरह से जगह-जगह पर हो रहा है और वह बढ़ रहा है, यह भी देखा।

लंदन के बाद आठ-नौ दिन पेरिस में रहा। एक कोठरी में बिल्कुल स्वतन्त्र ढंग से पेरिस में रहूँगा, यह कल्पना नहीं की थी पर बड़ा मजा आया। खूब घूमता था और मुख्य काम मेरा था कला दर्शन। नत्रोदाम का गिरजाघर, लुव्र और गीमें संग्रहालय और शार्त का गिरजा देखने की जो अभिलाषा थी, वह पूरी हुई। पेरिस भी एक निराला नगर है और ऐसा नगर जो केवल 'पेरिस' ही हो सकता है। फ्रान्स का ब्यालेट थियेटर भी देखा। उनकी कला-रुचि का स्तर देख कर मैं तो अवाक् रह गया।

पेरिस के बाद स्टुटगार्ड, मून्शेन, हाइडेलबर्ग, बिलेफेल्ड, वुर्टेबर्ग और हेमबर्ग आदि पश्चिमी जर्मनी के शहरों में भूदान और शांति सेना पर मेरे व्याख्यानों का कार्यक्रम मित्रों ने आयोजित किया था। वहाँ के अनेक व्यक्तियों के साथ मिलना हुआ और जहाँ-जहाँ संभव हुआ, शिक्षा-केन्द्रों को देखता हुआ दस अक्टूबर को पूर्वी बर्लिन पहुँचा। पश्चिमी जर्मनी में खास तौर पर कुछ सहशाला स्वाध्याय शालाएँ और आधुनिक स्कूलों को देखा।

पूर्व जर्मनी में खास तौर पर शिक्षा-व्यवस्था का ही अध्ययन किया। वे लोग शिक्षा के बारे में सचेत हैं और सबसे बड़ी बात जो मुझे लगी वह यह थी कि राष्ट्र के हर बालक-बालिका, जवान और वृद्ध, सभी की शिक्षा का इन्तजाम है। जो लोग ऊँची शिक्षा के बारे में कल्पना भी नहीं कर सकते थे, वे भी आज उसे पा सकते हैं और पा रहे हैं। वहाँ शिक्षा 'डिग्री' पाने के लिए नहीं, बल्कि राष्ट्र की संपत्ति बढ़े इसके लिए हो रही है। हम उनके जीवन-दर्शन से सहमत भले ही न हों, पर उनकी कोशिशें उनके अपने रास्ते की दृष्टि से कितनी साफ हैं, यह चीज सराहनीय है। बर्लिन, ड्रेसडन, वायमार, एरफोर्ड इत्यादि स्थानों में जाकर शिक्षा के अलग-अलग पहलुओं को देखा। बर्लिन में उनकी 'पीस कौन्सिल' के सेक्रेटरी से भी मिला। उनसे हिंसा और अहिंसा के विषय पर खूब अच्छी चर्चा हुई। 'आज वे कहते हैं कि अहिंसा ठीक है, किन्तु व्यावहारिक नहीं है। वह गलत है, यह कहने का आज किसी को साहस नहीं। जर्मनी जाकर वहाँ के दार्शनिक गोयते के घर का दर्शन करने की इच्छा ही नहीं पूरी हुई, बल्कि जिसकी कल्पना भी नहीं की थी कि गोयते के शहर में जाकर गोयते की सर्वोत्तम कृति का नाटक वहाँ के थियेटर में देखने का मौका मिलेगा। 'फौस्ट' देखने का यह संयोग बड़ा आनन्ददायक था।

पंचायत में जो लोग हैं, उन्होंने त्याग नहीं किया और वह ऊपर से लादी जाती है। उसका लाभ उठाया जाता है। वे लोभ से प्रेरित हैं और ये प्रेम से प्रेरित हैं।

एक और प्रश्न है। ग्रामदानी गाँवों में काँग्रेस का तन्त्र होगा कि सर्वोदय का? यह मजेदार प्रश्न है। ग्रामदानी गाँव में ग्राम तन्त्र होगा। उसमें न काँग्रेस-तन्त्र होगा, न पी० एस० पी० तन्त्र होगा, न सर्वोदय-तन्त्र होगा, न विनोबा भावे तन्त्र होगा। चुनाव में वोट माँगने के लिए पार्टीवाले आयेंगे। उनसे आप कहेंगे कि आप हमारे गाँव को आग नहीं लगा सकते हैं! आप सब पार्टियाँ मिल कर एक सभा कीजिए और उसमें अपने-अपने विचार बता दीजिए। जिसको मत देना है उसको हम देंगे। लेकिन पार्टी के कारण हमारे गाँव में मतभेद नहीं होगा। हम पार्टीवादी नहीं हैं, न साम्यवादी हैं, न समाजवादी हैं, न सर्वोदयवादी हैं, हम ग्रामवादी हैं। हमारे गाँव के टुकड़े हम नहीं होने देंगे। हमारा 'तन्त्र काँग्रेस को पसन्द होगा तो वह कहेगी कि यह हमारा तन्त्र है। इसी तरह जिस किसी को पसन्द होगा, वह कहेगा कि यह हमारा तन्त्र है। महासाधु कबीर मर गये तो मुसल्मानों ने कहा कि कबीर हमारे थे, हिन्दुओं ने कहा कि कबीर हमारे थे। वे सबके थे। यह पुरानी मिसाल हो गयी। महात्मा गांधी चले गये, वे किसी पार्टी के नहीं थे, काँग्रेस को सलाह देते थे, पर उसके 'चार आना' मेम्बर भी नहीं थे, तो भी सब पार्टियाँ मानती थीं कि वे हमारे थे। हम अपनी ही मिसाल देते हैं। कुल पार्टी वाले हमारे पास आते हैं और अपनी सब बातें दिल खोलकर रखते हैं। वे जानते हैं कि यह आदमी हित-बुद्धि से सलाह देगा। जहाँ सलाह दे सकेगा वहाँ देगा। जो सलाह देगा, उसके मुताबिक चलना ही चाहिये ऐसा नहीं, इसलिए सभी कहते हैं कि ग्रामदान-आंदोलन हमारा है। सोशलिस्ट लोग कहते हैं कि यह हमारे विचार के मुताबिक है। काँग्रेस कहती है कि यह हमारे 'बाप की इस्टेट' है। अब असम सरकार ग्रामदानी गाँवों को सम्मति देने वाला कानून लागू करेगी। उसके बारे में जब यहाँ असेंबली में चर्चा हुई, तब कुल पार्टियों ने सर्वसम्मति से वह बिल पास किया। मतलब यही हुआ कि सब इसे पसंद करते हैं। इसलिए आपको अब डरने का कारण नहीं है। आप संकल्प करेंगे तो आपको सबकी मदद मिलेगी!

[देवराजा, जि० शिवसागर, १२-१०-६१]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

सेवा द्‌वारा सत्‌ता की समाप्‌ती

यह सर्‌वोदय का वीचार है की हम अेक मनुष्‌य पर भी अपनी सेवा नहीं लादेंगे। कोअी पर कोअी पूछेगा की 'क्‌या सब लोग हमें पसंद न करेंगे, तो हम सेवा ही नहीं करेंगे ?' अुसका अुत्‌तर यह है की हम सेवा जरूर करेंगे, पर चुनाव के जरीये नहीं, चुनाव के बीना ही। सेवा के लीये चुनाव की जरूरत ही क्‌या है ? बाबा सेवा करते हुअे पंद्रह साल का हुआ है, अुसे कीसने चुना है ? अुसने खुद अपने को चुना। लोग अुससे यह नहीं कहते की 'आप यहां से चले जाओ। आपकी सेवा हम नहीं लेंगे, हम आपको नहीं चुनते।'

यहां चुनाव का सवाल ही क्‌या है ? कोअी भला मनुष्‌य बीमार के पास जाकर कहे की 'मेरे पास दवा है, मैं तुम्‌हें दूंगा,' तो क्‌या वह बीमार यह कहेगा की 'मुझे तुम्‌हारी दवा नहीं चाहीये। मैंने तुम्‌हें चुना नहीं है।' कोअी भी दुःखी अैसी दवा ले लेगा। सेवा के लीये चुनाव की जरूरत नहीं है, यों समझ कर वह कार्‌यकर्‌ता चुनाव के जरीये मीलने वाला कोअी भी स्‌थान, जीम्‌मेवारी या पदवी नहीं लेगा। वह लोकनीती को मानेगा और सीधा लोकसेवक बनेगा। सरकार के जरीये लोगों को बदलने के बदले लोगों के जरीये सरकार को बदलेगा। हमारा यह दूसरा ही पंथ है।

गांधीग्राम, —वीनोबा
३०-११-'५६

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

मांगते हैं वोट, दिखाते हैं पिस्तौल !

शक्ति और सत्ता का लोभ, पद और प्रतिष्ठा की लालसा मनुष्य से क्या नहीं कराती ! इस बार सारे देश में आम चुनाव की जो सरगर्मी रही, उसमें इसी कारण हमारी आचार-संहिताओं के बावजूद जगह जगह कुछ शर्मनाक घटनाएँ घटीं ! नाना प्रकार के सब्जबाग दिखा कर चुनाव के उम्मीदवारों ने जनता से वोट की भीख मांगी और कहा कि आप हमारे हाथी, घोड़ा, बैल, मुर्गा, शेर, बरगद, झोंपड़ी, तारा, सूर्य, तीर-कमान, दीपक, सीढ़ी, साइकिल आदि पर निशान लगा कर अपना भविष्य सुरक्षित करा लें। असेम्बली या पार्लमेण्ट में आप हमें भेजेंगे तो आपके लिए भरपूर भोजन, वस्त्र, मकान, काम, रोजगार, सुख-सुविधा आदि की पूरी-पूरी व्यवस्था हम करा देंगे। हमारे दूसरे प्रतिद्वंद्वी नालायक हैं, बेईमान हैं। उनमें दुनिया भर के दोष हैं। केवल हमी दूध के धोये हैं। आप अपना भला चाहते हैं, तो आप अपना अमूल्य वोट हमें ही दें।

आत्म-स्तुति और परनिन्दा का यह चक्र देश में जगह-जगह चला। और यह तो स्वाभाविक है कि भेड़ियाधसान की प्रवृत्तिवाली जनता ऐसे मौकों पर विवेक खो बैठती है। वोट के भिक्षुक स्वयं भी स्वार्थ के वशीभूत होकर आचार-संहिता को उठा कर ताक पर रख देते हैं। कभी-कभी तो ऐसी स्थिति हो जाती है कि ये लोग मांगते हैं वोट, दिखाते हैं पिस्तौल ! प्रार्थना और समझाना-बुझाना जब कारगर नहीं होता तो चुनाव में उम्मीदवार हिंसा की प्रक्रिया पर उतर आता है, कहता है—"अभी तक मैं तुमसे हाथ जोड़ कर भीख मांगता रहा। लेकिन तुम मेरी बात मानते ही नहीं। तो अब यह है पिस्तौल, यह है गंडासा, यह है लाठी ! देखूँ, अब तुम कैसे नहीं देते मुझे वोट !"

हरदोई जिले के संडीला थाने के दूमामऊ गाँव में गत ७ फरवरी को इसी प्रकार की शर्मनाक घटना घटी। जिलाधीश की विज्ञप्ति में कहा गया कि 'दूमामऊ में कांग्रेस तथा जनसंघ-समर्थकों में ७ फरवरी को संघर्ष हो गया, जिसमें दो व्यक्तियों की घटनास्थल पर ही मृत्यु हो गयी तथा एक व्यक्ति अस्पताल जाकर मरा। संघर्ष में लाठियों के अलावा बन्दूक भी चली, जिससे ९ व्यक्ति घायल हो गये। घायलों में १ की दशा चिन्ताजनक है। चोट खाये लोगों में पुलिस का एक अधिकारी भी है, जिसे बन्दूक की चोट है। लाठी प्रहार से चार व्यक्तियों को चोट आयी है।'

हमारे शान्ति-सैनिक ने घटनास्थल से रिपोर्ट भेजी है, उसमें कहा है—

"३१ जनवरी '६२ को दूमामऊ बाजार में क्षेत्र गोरखो, तहसील सन्डीला, जिला हरदोई में कांग्रेस तथा जनसंघ ने सभाएँ कीं। एक पक्ष की ओर से उत्तेजनात्मक कार्रवाई बरती गयी और दूसरे पक्ष की सभा भंग की गयी। अशोभनीय तथा अपमानजनक नारे लगा कर उत्तेजना बढ़ायी गयी, और चाकू आदि के प्रयोग किये गये। सौभाग्य से हम लोग घटनास्थल पर शान्ति-स्थापना करने में सफल हो सके, चाकू आदि छीन लिये गये। लेकिन उस दिन के बाद ४ फरवरी, रविवार को एक पार्टी की प्रदर्शन आदि करती गयी।

"मैं बुधवार ७ फरवरी के दिन उपर्युक्त दूमामऊ बाजार में दिन के ३ बजे पुनः शान्ति-स्थापना के लिए गया। वहाँ पर कांग्रेस तथा जनसंघ की सभाएँ हो रही थीं। दोनों दलों की दूरी केवल लगभग २० गज थी। दोनों ओर के 'माइक' आत्म-स्तुति, परनिन्दा, मिथ्या भाषण तथा कटुता पूर्ण उत्तेजनात्मक गालियाँ दे रहे थे ! पुलिस बीच में थी। मैं अपने पुत्रों तथा अपने साथी श्री रामकुमार के साथ पुलिस के सहयोग से बराबर शान्ति-स्थापना में तत्पर रहा।

"दोनों सभाओं के बीच में जो २० गज की दूरी थी उस पर हम लोग तथा पुलिस गश्त लगा कर लोगों को एक-दूसरे की ओर न जाने के लिए रोकते रहे। आधे घंटे के लगभग हम लोग भीड़ पर काबू पाते रहे और अनुनय-विनय करते रहे। लेकिन दोनों ओर लगभग ३ हजार जनता थी। बाजार तो था ही। गाली देने के बाद एक पक्ष की ओर से ईंटें बरसने लगीं। दूसरी ओर से भी उसी प्रकार जवाब दिया गया। पुलिस ने भीड़ को तितर-बितर करने के लिए 'फायर' किये, परन्तु पुलिस और हम लोगों की शक्ति काबू न पा सकी। दोनों दलों की ओर से देशी तथा विदेशी पिस्तौलें और बन्दूकें चलने लगीं। एक घंटे गोली चली। मेरे एक पुत्र के दाहिने पैर में घुटने से ऊपर एक गोली लगी और वह भूमि पर गिर पड़ा। हम लोग उसे उठा कर पड़ोस के घर में गये और वहाँ उसे छिपा दिया और तुरन्त लौट कर घटना स्थल पर पहुँचे। उस समय भी छुटे-छिटे 'फायर' हो रहे थे। १०० 'फायर' हुए। घटना स्थल पर तीन व्यक्ति भूमि पर पड़े थे। देखने पर दो के प्राण-पखेरू उड़ चुके थे। एक प्राणजीवन के साथ जूझ रहा था, जिसकी दूसरे दिन अस्पताल संडीला में जाकर मृत्यु हो गयी। घटना-स्थल से निपट कर हम लोग अपने लड़के को लेकर घर आये और प्रारम्भिक उपचार आदि करने के बाद दूसरे दिन प्रातः पुलिस के आदेश पर थाने जाकर अस्पताल में उसे दाखिल किया। उसकी दशा सन्तोषजनक है। अब क्षेत्र में १४४ धारा लगा दी गयी है तथा क्षेत्र में पुलिस गश्त कर रही है।

"लगभग चालीस व्यक्तियों के चोटें आदि लगी हैं। एक आदमी संडीला अस्पताल से ठीक न हो सकने के कारण लखनऊ मेडिकल कालेज भेजने की व्यवस्था हो रही है। एक सिपाही के भी सिर में साधारण चोट लगी है।"

हमने अन्तिम शक्ति हिंसा मानी है, उसी के कारण ऐसी शर्मनाक घटनाएँ घटती हैं। यह पशुबल ही यदि लोक-मानस पर हावी रहेगा तो सच्ची लोकशाही अभी बहुत दूर की चीज मानी जायगी।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

विवेक की माँग

हमारे देश के ज्योतिषियों ने एक भयानक भविष्यवाणी की थी। वह यह कि तीसरी फरवरी के तीसरे पहर से अड़तालीस घंटे के अन्दर-अन्दर जबरदस्त तबाही आयेगी और ऐसी ऐसी चीजें होंगी, जो पिछले दो ढाई हजार साल में भी नहीं हुईं। मगर सन्तोष की बात है कि इस दौरान में कोई अस्वाभाविक बात न हुई और यह समय एकदम शांति, खामोशी और इतमीनान से गुजरा। इस विषय की कोई जानकारी हमें नहीं है और न हम इस स्थिति में हैं कि इसके बारे में जो दावे किये जाते हैं, उनका समर्थन या खण्डन कर सकें। हमें तो दिलचस्पी इस बात से है कि जन-मानस पर उसका कैसा असर पड़ता है।

कई-कई ग्रहों का एकसाथ नजदीक आना एक दुर्लभ घटना है। इससे अध्ययन और शोध के लिए सामग्री मिलती है और बहुत से परिणामों को जिन पर गणित के द्वारा हम पहुँचते हैं, परखने का मौका हाथ आता है, जैसा कि पूरे सूर्य-ग्रहण और अन्य घटनाओं से मिलता है। लेकिन बड़े दुःख की बात है कि हम अष्टग्रह आदि से डरते हैं और अपना होश या मन खो बैठते हैं। जो विवेकशील लोग हैं, वे सोच-समझ कर काम करते हैं, और जो उतना भयभीत नहीं होते हैं, वे भी ऐसे समय घबरा जाते हैं और उनका चिंतन तक लड़खड़ाने लगता है। आम लोग तो ऐसे भोले-भाले हैं कि वे सुध-बुध खो बैठते हैं और उनके सारे काम धाम पर एक तरह से पाला पड़ जाता है। हमारी

सारी श्रद्धा जड़ बन जाती है और जो ज्ञान बरसों की मेहनत से कमाया गया है, उसका मानों हम निषेध करने लगते हैं। अब यह ऐसी लज्जाजनक स्थिति है, जो किसी इन्सान को बर्दाश्त नहीं होनी चाहिए।

थोड़ी देर के लिए हम यह मान लेते हैं कि इस अष्टग्रह के कारण पृथ्वी और उसके वायुमण्डल में इस तरह के परिवर्तन हो सकते थे कि सारे प्राणियों को मुसीबत आ घेरती। बहस की खातिर, हम यह भी मान लेते हैं कि सावधानी के तौर पर कुछ कदम ऐसे उठाये जा सकते थे कि इस संकट का असर न होता। इसके लिए निर्भयता चाहिये, स्वच्छ मन चाहिए और तटस्थ दृष्टि से चीजों को देखना-समझना चाहिए। मगर इसके बजाय भगवान् को संतुष्ट रखने के लिए कुछ पूजा-पाठ या विधि करना तो बहुत खतरनाक है। यह तो मानों ऊपरवालों (!) को खुश करने के लिए एक तरह की रिश्वत देना है। यह धर्म के सभी सिद्धान्तों के खिलाफ है और हिंदू धर्म के तो एकदम खिलाफ है, क्योंकि उसकी मान्यता एक परमात्मा की है जो विश्व-व्यापी है, सर्वज्ञ है और सर्वशक्तिमान है। भजन-पूजन का महत्त्व तो है, लेकिन सार्वजनिक कल्याण के लिए प्रार्थना करना एक बात होती है, और उच्च कुल या ईनाम या लोभ के लिए परम्परागत विधि करना दूसरी बात है। जान बचाने के लिए इस तरह का पूजा-पाठ तो हमें डरपोक, कमजोर और निस्तेज बनाता है और अपने अन्दर की जिज्ञासा, आत्म निर्भरता और कर्तव्य-परायणता को ठेस पहुँचाता है। तमाम प्रगति कुंठित हो जाती है और सारा विकास रुक जाता है।

सच तो यह है कि ग्रहों के संयोग या नक्षत्रों की इस तरह की घटनाओं का हमें वैज्ञानिक अध्ययन करना चाहिए। इनसे हमें बौद्धिक, भावात्मक और आध्यात्मिक खुराक मिलती है। इनसे हमारी जिज्ञासा जाग्रत होती है और प्रकृति के रहस्य को जानने की उत्सुकता पैदा होती है। ये चीजें तो सत्य की शोध के लिए अद्भुत माध्यम हैं। उनका संकेत है कि हम संकीर्ण परम्पराओं, मान्यताओं और पाखंड को छोड़ दें और व्यक्तिगत या जातिगत आर्थिक, सामाजिक या राजनीतिक स्वार्थों से ऊपर उठकर सामुदायिक हित की दृष्टि से अपना काम करें। यह तो बहुत तकलीफदेह है कि ऐसी दुर्लभ चीज से हम भागें और अज्ञान आतंक के कारण घर का दरवाजा बन्द करके अन्दर बैठ जायें। चाहिए तो यह कि इसका स्वागत करें और दृढ़ता व साहस के साथ इसका सामना करें। हमारी विवेक-बुद्धि और कर्तव्य-प्रेरणा को ऐसे समय ज्यादा गतिशील होना चाहिये। भाग्य के भरोसे इस तरह छिप जाना न मर्दानगी है, न वैज्ञानिकता, न धार्मिकता। देश के अन्दर से यह कायरता और परवशता जितनी जल्दी खत्म हो उतना अच्छा। सभी सार्वजनिक कार्यकर्ताओं और हितैषियों का फर्ज है कि जन-मानस के अन्दर से इन हानिकारक और निराधार तत्वों को निकालने का प्रयत्न करें और उसे ऐसी राह पर ले जायें, जिससे हर किसी को विश्व-व्यापी एकता का सम्यक् दर्शन हो सके।

—सुरेश राम

तीसरा आम चुनाव

सुरेश राम

गत सोलह तारीख को स्वतंत्र भारत का तीसरा आम चुनाव शुरू हो गया। हिमालय के कुछ पहाड़ी हिस्से को छोड़ कर २५ फरवरी तक इसका कार्यक्रम समाप्त हो जायेगा। केरल और उड़ीसा को छोड़ कर, सारे प्रदेशों की विधान-सभाओं के लिए और केंद्र में संसद के लिए यह चुनाव हो रहे हैं। इस बार प्रदेश की २८५५ सीटों की खातिर १२६२५ उम्मीदवार हैं। इनमें कांग्रेस के २८३६ प्रजा-समाजवादी पार्टी के १०००, सोशलिस्ट पार्टी के ५९७, कम्यूनिस्ट पार्टी के ८३०, स्वतंत्र पार्टी के १०३१, जनसंघ के १०६५ हैं और शेष अन्य दलों के या निर्दलीय आजाद उम्मीदवार हैं। संसद के अन्दर ४९४ सीट हैं, जिनके लिए १९७९ उम्मीदवार हैं। इनमें कांग्रेस, प्रजा-समाजवादी पार्टी, सोशलिस्ट पार्टी, कम्यूनिस्ट पार्टी, स्वतंत्र पार्टी, जनसंघ के क्रमशः ४८५, १६६, १०७, १३७, १७२ हैं और शेष अन्य दलों के या निर्दलीय हैं। इस चुनाव में लगभग साढ़े पांच करोड़ रुपया खर्च होगा और जिसमें तीन करोड़ रुपया केन्द्रीय सरकार खर्च करेगी और शेष प्रदेश की सरकारें।

इस मर्तबा एक चीज अच्छी रही है। वह यह कि पिछले छह-सात महीनों में लगभग सभी प्रदेशों के विभिन्न पक्षों के नेता आपस में मिल कर बैठे और आचार-संहिता तैयार की। केन्द्र में भी, राष्ट्रीय एकता-सम्मेलन के अवसर पर, सितम्बर के अंतिम सप्ताह में दिल्ली में आचार-संहिता स्वीकार की गयी। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि राजनीतिक पक्षों ने सोलह आने इस आचार-संहिता पर अमल किया है। मगर उसकी याद तो उन्हें जरूर चुभती रही होगी। कहीं-कहीं जैसे आगरा में पक्षों द्वारा यह भी तय किया गया कि प्रचार में बच्चों का इस्तेमाल नहीं करेंगे और रात के ग्यारह से सवेरे के छह बजे तक लाउड स्पीकर भी काम में न लायेंगे। इस तरह की या और सावधानियाँ दूसरी जगह भी बरती होंगी।

मगर इतने पर भी चुनाव-प्रचार के दौरान में उत्तर प्रदेश में हरदोई जिले में, महाराष्ट्र में नागपुर में, मैसूर में, बंगलौर में खून-खराबी हो गयी, मार-पीट तो और जगह भी हुई। प्रचार में वाणी का संयम तो सभी खो बैठे। कांग्रेस के एक बहुत प्रतिष्ठित नेता ने एक आम सभा में कहा कि जो राजे-महाराजे अंग्रेजी सरकार के जूते चाटते थे, वे आज कांग्रेस का विरोध कर रहे हैं। लेकिन जब खुद कांग्रेस ने राजे-महाराजों को टिकट दिये हैं, तब दूसरे क्यों न दें! और यह तो कहना ज्यादती है कि कांग्रेस में आने से कोई राजा समाजवादी हो जाता है और विरोधी दल में जाने से सामन्तवादी हो जाता है। जनता की दृष्टि से देखें तो कोई फर्क नहीं पड़ता है। राजा या पूँजीपति किसी दल में भी रहें, उनमें आपस का जो नाता है वह कायम रहता है और दीन-हीन का शोषण सब एक-सा और अचूक ढंग से करते हैं। आज कांग्रेस के अन्दर, पूंजीवादी वर्ग तेजी से हावी होता जा रहा है। सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो० डी० आर० गाडगिल ने नागपुर यूनिवर्सिटी के कन्वोकेशन में इस तथ्य पर सार्वजनिक ध्यान खींचा है और दुःख प्रकट किया है। देश के अन्दर सम्पत्तिवान का जितना जोर और असर आज है उतना कभी नहीं था। अब वह सत्ता की लगाम भी अपने हाथ में ले रहा है।

एक अजीब बात और भी देखने में आ रही है। यों तो साम्प्रदायिकता को सब बुरा कहते हैं। मगर चुनाव में आँखें बचा कर सब कुछ किया जा रहा है। तीन बरस पहले केरल में कांग्रेस और प्रजा-समाजवादी दल ने मुस्लिम लीग से समझौता किया और कम्यूनिस्टों को हराया! उसी तरह आज भी आपस-आपस में जगह जगह कहीं कांग्रेसवालों ने प्रजा समाजवादियों से साँठ-गाँठ की है, कहीं समाजवादियों से, कहीं कम्यूनिस्टों और जनसंघवालों तक से। यही नहीं, कम्यूनिस्ट मित्रों ने भी जनसंघ वालों से या दक्षिण में द्रविड़ कड़हम वालों से मुरचाय नाता जोड़ दिया है; ताकि विरोधी हारे। लक्ष्य सबका एक ही है सत्ता। और अंग्रेजी की जैसी कहावत है, "प्रेम और युद्ध में सब कुछ उचित है" जैसी बात चरितार्थ हो रही है। देश को आशा थी कि कम-से-कम कांग्रेस, क्योंकि उसके पीछे एक पुरानी शानदार परम्परा है और उसकी सत्ता कहीं गयी नहीं है, इन मर्यादाओं की तरफ ध्यान देती। मगर उन उम्मीदों को वह पूरा नहीं कर सकी। सच है, हुकूमत का नशा किसे बद-हवास नहीं कर देता!

लेकिन इस बार चुनाव के लिए, जैसा चुनाव-आयुक्त का कहना है, लोगों में ज्यादा उत्साह नहीं दीख रहा है। इससे साफ पता चलता है कि पार्लियामेन्टरी पद्धति में उन्हें कोई तथ्य नजर नहीं आता और न उसमें कोई भरोसा है। दलगत राजनीति से जनता तंग आ चुकी है। देश के नव-निर्माण में जनता का कोई हाथ नहीं है और अभी तक वह सजग और सचेत अवस्था में नहीं आयी है। इसलिए यह जरूरी हो जाता है कि इस संसदीय पद्धति को बदला जाय और इसकी बजाय लोकतंत्र का ऐसा ढंग अपनाया जाय कि सारी जनता उत्साह से उसमें शिरकत कर सकें। इस पर गंभीरता से सोचने का समय आ गया है। साथ ही हमें उन लाखों-करोड़ों को नहीं भूलना है, जिनके आधार पर देश चल रहा है और जिनके नाम पर लोकशाही की दुहाई दी जाती है। उनके ऊपर का बोझ हलका होना चाहिये। वरना चुनाव कोई भी क्यों न जीते, हार हर सूरत में दीन-दुःखी की ही होती है। और अगर उनकी हार होती है तो फिर किसकी जीत मानी जायेगी!

साहित्य का मूल्य क्या?

साहित्य सेवा है, सेवा का मूल्य पैसे में नहीं आँका जा सकता! साहित्यिकों का काम है कि वे आज के इस बाजार को खतम करें, जो बाजार साहित्य के साथ मोल-भाव करता है और साहित्य से भी अधिक मूल्यवान पैसे को समझता है। सेवा जो नैतिक होती है, उनका भौतिक मूल्य कैसे हो सकता है? एक का संबंध भूख इत्यादि भौतिक वस्तुओं के साथ है जब कि दूसरे का संबंध करुणा इत्यादि आध्यात्मिक वस्तुओं के साथ है। हमें अब यह घोषणा कर देनी चाहिए कि साहित्य बाजार की चीज नहीं है। साहित्य की कीमत पैसे में नहीं हो सकती।

[काशी, १६-१२-'६०] —विनोबा

आराम बनाम आजादी

दादा धर्माधिकारी

आज हम सब लोग महात्मा गांधी का स्मरण करने के लिए यहाँ इकट्ठे हुए हैं। अब इस राष्ट्र में गांधी की याद लोगों को तब होती है, जब उसका नाम बेचना होता है; या तो व्यापार के लिए या राजनीति में सत्ता प्राप्त करने के लिए या लोगों में यश और कीर्ति प्राप्त करने के लिए गांधी का नाम बेचा जा सकता है! आज इस प्रश्न का महत्त्व बहुत अधिक है और इसलिए अधिक है कि जिस स्वतंत्रता के लिए गांधी ने आमरण प्रयत्न किया और जिस सिद्धांत के लिए उन्होंने अपना बलिदान भी दिया, उस सिद्धांत की परीक्षा का अवसर हमारे देश में और दुनिया के अन्य देशों में बहुत निकट आ गया है। भारतवर्ष की स्वतंत्रता का संरक्षण क्या जवाहरलालजी करेंगे? क्या उनकी सेना करेगी? क्या सरकार के कर्मचारी करेंगे? आज तक दुनिया के किसी भी देश की स्वतंत्रता का संरक्षण क्या उसकी सेना ने कभी किया है? अगर लोगों को उसकी चिन्ता नहीं हो, तो कौनसा देश कब स्वतंत्र रह सका है?

हमको अपने आपसे पूछना चाहिए कि जिस देश के लोगों को स्वतन्त्रता से सुख की कीमत अधिक मालूम होती है, क्या वह देश कभी स्वतन्त्र रह सका है? क्या दुनिया में कोई देश ऐसा है, जिसने आराम से आजादी को ज्यादा पसन्द किया हो और उसके बाद भी आजाद रह सका हो? हिटलर की पहली चोट खाते ही फ्रांस तबाह हो गया था। १९३९ के महायुद्ध में उसका कारण यह बताया गया था कि फ्रांसीसी लोग विलास प्रिय हो गये हैं, आराम-पसन्द हो गये हैं। आजादी से आराम को ज्यादा पसन्द करते हैं, इसलिए हिटलर के सामने दो रोज भी नहीं टहर सके। भारतवर्ष १४ वर्ष में ही आजादी से ऊबने लगा है। कुछ लोग कहते हैं कि स्वतन्त्रता नहीं चाहिए और अधिकतर लोग कहते हैं कि स्वतन्त्रता भले ही रह जाय, लेकिन कम-से-कम लोक-राज्य न रहे।

बहुत गम्भीरतापूर्वक हमको आज इस प्रश्न पर विचार करना चाहिए। अन्यथा आज तक बहुत से बलिदान हुए, उनमें गांधी का भी एक बलिदान शामिल हो जायगा और दूसरे लोग जैसे इतिहास में जमा हो गये हैं, ऐसे ही गांधी भी इतिहास में जमा हो जायगा; वह इस देश में जीवित नहीं रह सकेगा!

एक बहुत बड़े विचारक ने मुझसे एक सवाल किया, जिसका उत्तर मैं नहीं दे सका। उन्होंने कहा कि 'रूस का एक मन है, हम जानते हैं, चीन की एक तबीयत है, यह भी हम जानते हैं। अमेरिका और इंग्लैण्ड की एक प्रकृति है, हम जानते हैं। तो क्या भारतवर्ष का भी अपना कोई मन है? क्या उसकी भी अपनी कोई प्रकृति है? क्या उसका भी किसी तरफ कोई झुकाव है? क्या आप मुझे इसे बतला सकेंगे?'

मैं इतिहास की बातें करने लगा, पुराणों की बातें करने लगा। इस पर वे भाई कहने लगे, 'इतिहास और पुराण की बातें जाने दीजिए, मैं तो आज की बात कर रहा हूँ। आज की अमेरिका, आज का चीन, आज का योरोप, इन सबकी बात मैं कर रहा हूँ' और उसने अभिमानपूर्वक कहा, क्योंकि वह योरोप का था, 'आप जानते हैं कि सारा योरोप अब एक हो रहा है। अब तो हम लोगों ने अपना बाजार भी एक कर लिया! लोग यह मानते थे कि हम व्यापारी हैं, पैसे के लोभी हैं। उनका मोह कभी नहीं जायगा। आपने देखा कि अब तो हमारा बाजार भी एक हो गया।

सबसे ज्यादा स्पर्धा, प्रतियोगिता अगर कहीं रहती है तो बाजार में रहती है। योरोप में अब वह दिन आ गया है, जब कि दुकानदारी राष्ट्रीय पैमाने पर खतम हो रही है। भारतवर्ष को हम एक देश कहते हैं। इसकी एकता हम स्थापित नहीं कर सके। योरोप को महाद्वीप कहते हैं। उसकी एकता की तरफ उनका कदम बढ़ रहा है।

भारतवर्ष को योरोप से बहुत-सी चीजें लेनी हैं, लेते भी आये हैं। यह जो मेरे बाल कटे हैं, योरोपीय ढंग से कटे हैं। सड़कें योरोपीय ढंग से बनी हैं, मकान योरोपीय ढंग से बने हैं। ये हमारी रेल-गाड़ियाँ, मोटरें, हवाई जहाज, सब कुछ योरोपीय ढंग की बनी हैं। इन सब चीजों को तो हमने योरोप से लिया, लेकिन आजादी की तबीयत हमने उनसे नहीं ली। जो असली लेनी चाहिए—स्वतंत्रता और एकता—वह तो ली ही नहीं। यों तो वे हमसे कहीं ज्यादा झगड़ालू हैं। आज तक जितनी बड़ी बड़ी लड़ाइयाँ हुई हैं, उनकी जमीन पर हुई हैं। लेकिन यह सब होते हुए भी एक बात उन लोगों ने सीखी कि अब इस वैज्ञानिक युग में कोई राष्ट्र अलग-अलग नहीं रह सकता, या तो सब एक हो जायेंगे या फिर सबके सब मरेंगे। भारतवर्ष अभी योरोप से इस सबक को नहीं सीख सका।

गांधी राष्ट्रपिता हैं। किसके राष्ट्र-पिता हैं? गुजरातियों के हैं, बंगालियों के हैं, महाराष्ट्रियों के हैं? किसके हैं? जिस राष्ट्र का वह पिता है, वह राष्ट्र है कहाँ?

सुभाषचन्द्र बोस का उत्सव बंगाली करते हैं। सरदार वल्लभभाई की जयन्ती गुजराती मनाते हैं, एकनाथ की महाराष्ट्र में होती है। देश के इतिहास में कभी कोई अखिल भारतीय पुरुष रहा ही नहीं। पहले के इतिहास में तो कभी कोई रहा ही नहीं। राम, कृष्ण, बुद्ध आदि को छोड़ दीजिए। ये सब ऐतिहासिक पुरुष नहीं, पौराणिक पुरुष माने जाते हैं। कोई पुरुष भारतवर्ष में ऐसा नहीं हुआ, जिसको सारे भारत ने माना हो। यह तो अंग्रेजों के जमाने से होने लगा। अंग्रेजों के जमाने से ही कुछ अखिल भारतीय नेता हुए। अंग्रेजों के आने से पहले कोई भी अखिल भारतीय नेता इस देश में नहीं था। जब हम गुलाम थे, तब अखिल भारतीय नेता थे। जब से हम स्वतंत्र हुए अखिल भारतीय नेता, जो बच गये थे सो बच गये—हमारी बदकिस्मती से, लेकिन हमने पैदा नहीं होने दिया।

इस विचार को आपके सामने गम्भीरता-पूर्वक इसलिए रख रहा हूँ कि अब जितने प्रांतीय दंगे होते हैं, उनमें जितने अत्याचार होते हैं, वे पुराने पौराणिक अत्याचारों से भी अधिक भीषण हो रहे हैं। एक मित्र से मैंने कहा कि दुनिया की बहुत उन्नति हो गयी है। उसने पूछा कैसे? मैंने कहा कि धर्मराज का सगा भाई भीम दुःशासन का खून पी सकता है। आज आप इसकी कल्पना कर सकते हैं कि धर्मराज जैसे व्यक्ति का भाई हो और खून पीता हो! राम का भाई लक्ष्मण हो और एक स्त्री का नाक-कान काट लेता हो! उसने जवाब दिया—'कांगो में जो अत्याचार हो रहे हैं, रूस में गैरकम्युनिस्ट पर या जिनसे मतभेद हो जाता है, उनके साथ जो व्यवहार हो जाता है, वह भीम और लक्ष्मण के व्यवहार से क्या कम बर्बरतापूर्ण है?'

धर्म के नाम पर स्त्रियों पर बलात्कार किया गया, भाषा के नाम पर स्त्रियों का अपमान किया है, भिन्न भाषी और भिन्न धर्मी स्त्रियों के साथ धर्म और संस्कृति के नाम पर जिस देश में यह किया जा सकता है, उस देश का कोई भारतीय मन भी है? और अगर है, तो इन अत्याचारों का धिक्कार कहीं-कहीं क्यों न हो? किसी की जबान क्यों नहीं खुली? हरएक ने पूछा किससे? विनोबा से, दादा धर्माधिकारी से, जयप्रकाश बाबू से? पर आप क्यों नहीं कुछ कर रहे हैं? क्या इस देश में और कोई सज्जन है ही नहीं? क्या और सबने मान लिया था कि इस प्रकार के अत्याचार हो सकते हैं? याद रखिये अगर एक बार इस प्रकार के अत्याचार की रीति चल पड़ेगी तो वह कहीं नहीं रुकेगी। मजदूर-मालिकों में ये अत्याचार होंगे, धार्मिक और साम्प्रदायिक दंगों में भी ये अत्याचार होंगे और आये दिन चुनावों के दंगों में इस प्रकार के अत्याचार होने लगेंगे।

आचार-संहिता पार्टियों के कुछ लोगों ने मिल कर बना ली। नागरिक कहीं का नहीं। क्या जो प्रतिनिधि है, उसी के लिए समाचार की मर्यादा है और जो देने वाला है, उसकी कोई नहीं? जो चुनाव में खड़े हो रहे हैं वे कहते हैं कि वोट मत खरीदो। वोटर एक-दूसरे से क्यों नहीं नहीं कहते कि वोट मत बेचो? जो चुनावों में खड़ा हो रहा है, उससे आप कहते हैं कि लोगों को सवारियों में मत ले जाओ। लेकिन जो देने जाते हैं उनसे आप क्यों नहीं कहते कि जाना हो तो अपनी सवारी में जाओ, अन्यथा पैदल जाओ! यह जब तक नहीं होगा, तब तक इस देश में साधारण नागरिक के लिए कोई राष्ट्रीय जीवन नहीं रह जाने वाला है। सर्व सेवा संघ हो या नागरिकों का दूसरा कोई वर्ग हो, कोई समूह हो, उन सबका यह कर्तव्य हो जाता है कि सारे नागरिकों को दो बातें समझायें।

> एक तो यह समझायें कि जो अपना वोट लालच और भय के कारण बेचता है यानी देता है, उसकी स्वतंत्रता का संरक्षण विधाता भी नहीं कर सकता, फौज और पुलिस तो कर ही नहीं सकती! यह उन लोगों को समझाना चाहिए जो कि किसी पार्टी में नहीं हैं और स्वयं उम्मीदवार नहीं हैं। दूसरी चीज हमें सब लोगों को समझानी चाहिए कि झगड़े चाहे जितने हों, उनमें एक मर्यादा रहेगी। सबसे पहली मर्यादा, जैसी आपने चुनाव के लिए कही है कि छोटे बच्चों का उपयोग नहीं किया जायगा, झगड़ों में सबसे पहली मर्यादा स्त्रियों का अपमान नहीं होगा, बच्चों पर अत्याचार नहीं होगा और दूसरी मर्यादा यह है कि किसी भी झगड़े में मारपीट और हिंसा नहीं होगी।

भीष्म ने जब कहा कि मैं कृष्ण-भगवान् से शस्त्र ग्रहण करवाऊँगा। सवाल यह था कि इस प्रतिज्ञा की पूर्ति कैसे हो? इसके लिए दो ही विकल्प थे, या तो पाण्डवों का नाश हो या उनकी खुद की ही मृत्यु हो! उन्होंने कहा था कि मेरी मर्यादा है। मैं वीर पुरुष हूँ। मेरे सामने तुम अगर किसी नपुंसक को खड़ा कर दोगे तो मैं हथियार नहीं उठाऊँगा, चाहे वह मेरी गर्दन काट ले। शिखण्डी को आड़ में खड़ा करके उसके आड़ में अर्जुन ने बाण मारा। उन्होंने कहा कि

'मैं जानता हूँ कि अर्जुन बाण मार रहा है लेकिन मैं हाथ नहीं उठाऊँगा।'

एक सभ्य पुरुषों का झगड़ा होता है, एक झगड़ा असभ्य पुरुषों का। जिनको आप भौतिकवादी, विलासप्रिय कहते हैं, उनके शहर में ऐसे झगड़े नहीं होते, जैसे हमारे यहाँ होते हैं। इसके लिए शांति की एक प्रतिज्ञा निकाली गयी है, सारी पार्टियों ने जिसको पसन्द किया है तथा जो एक राष्ट्रीय प्रतिज्ञा है। इस पर दस्तखत लेने का काम देश में इस वक्त शुरू होगा। सारे नागरिकों का यह काम है कि गांधी ने जिस एकता और मित्रता के लिए अपना बलिदान किया, उस एकता के लिए सारे नागरिकों में, विद्यार्थियों और शिक्षकों में झगड़ा हो तो हो, लेकिन हिंसा नहीं होगी। हिंसा का मतलब मार-पीट ही नहीं, अपितु डराना और धमकाना भी है। जितने झगड़े होते हैं, चाहे किसानों के हों, चाहे सम्प्रदायों के हों, चाहे मजदूरों के हों, इन सारे झगड़ों में एक मर्यादा होनी चाहिए कि उनमें दो काम नहीं होंगे—लालच और भय। लोगों को खरीदना और उनको धमकाना असभ्यता के काम हैं। ये दो काम नहीं होने चाहिए।

पश्चिम के लोगों ने यहाँ के लोगों से आकर पूछा। एक बात और है, यहाँ तो बड़े-बड़े महर्षि हुए हैं। विनोबा हैं, अरविंद थे। इसी तरह शंकराचार्य आदि कई हुए ही हैं। महर्षियों से या इस देश से आकर पश्चिम के लोगों ने पूछा कि हमें यह बताइये कि जिस आध्यात्मिक मूल्य के लिए आपका देश प्रसिद्ध है उनको हम कहाँ देखें? उन्हें हम इस देश में देखना चाहते हैं। उनका दर्शन हम कहाँ करें? उन्होंने कहा कि सारे भारतवर्ष में कीजिए। फिर दुबारा उन लोगों ने कहा कि हम सारा भारतवर्ष घूम कर आ रहे हैं। एक तरफ लोग कहते हैं अन्न दो, दूसरी तरफ कहते हैं हथियार दो। अमेरिका से हमको कर्जा चाहिए और पाकिस्तान को हथियार। इसके सिवा और कोई माँग हमने नहीं देखी। आप कौनसे अध्यात्म की बात कहते हैं? हमने जो कुछ कहा था, वह पूरा किया। यहाँ के लोगों को देखने के लिए हमारे यहाँ बहुत-सी चीजें हैं। हम आपको हवाई जहाज से उड़ा सकते हैं। एक मिनट में अणुबम का धड़ाका देख लीजिए। आपने जो कुछ कहा था, वह तो आपके यहाँ दिखायी नहीं दे रहा है। हम तो कहीं नहीं देख रहे हैं। हमने कहा कि हम भूखे हैं, इसलिए ऐसा हो रहा है। इस पर पश्चिमवालों ने कहा कि हम लोगों ने भौतिकता को अधिक महत्त्व दिया, इसलिए ऐसे हो गये और आध्यात्मिकता ने आपको भिखारी बना दिया। तो आप अच्छे हैं या हम?

गोवा के कांड में लोगों ने कहा कि हमारी हार हुई। लेकिन विजय किसकी हुई? क्या विजय उन लोगों की हुई, जो कहते हैं कि हथियार चलाना आवश्यक है। अगर आप कहते हैं कि हथियार चलाना आवश्यक है, तो ऐसे जमाने में, जब कि ख्रुश्चेव और कैनेडी, दोनो कह रहे हैं कि हथियार हम फेंकना चाहते हैं तो मुझे बताइये कि कौन आध्यात्मिकता की तरफ जा रहा है, कौन भौतिकता की तरफ? क्या वे ऋषि-मुनि विलास में रहते थे, जिनको इसका दर्शन हुआ? यह इस देश के लिए चुनौती है। इस देश का नाम अगर दुनिया में किसी के कारण लिया जाता है, तो केवल गान्धी के कारण। आज पश्चिम से कोई व्यक्ति अध्यात्म, नीति या अहिंसा सीखने भारत नहीं आता। हो सकता है अहिंसा, अध्यात्म और नीति का उदय प्रत्यक्ष व्यवहार प्रयोग में पहले पश्चिम से हो और बाद में हमारे यहाँ हो। एकता और अखण्डता को अगर हम बनाये रखना चाहते हैं। इस देश की कोई एक संस्कृति थी, एक भारतीय मानस, एक भारतीय हृदय था, उसको अगर आप अक्षुण्ण रखना चाहते हैं तो देश के अन्दर जितने कलह-विग्रह होते हैं, उन सबमें मर्यादा होनी चाहिए। इसके लिए नागरिक-जागरूकता की आवश्यकता है। आज इस देश का नागरिक तटस्थ ही नहीं, अपितु मृतवत् हो गया है।

एक ग्रंथकार ने अन्तिम प्रश्न यह किया है कि हमने प्रतिज्ञा की थी कि हम सबको हवा में उड़ा देंगे! हमने यह प्रतिज्ञा की थी कि हम सब को फुरसत देंगे। हवा में तो आज सब उड़ ही रहे हैं। ख्रुश्चेव ने ऐलान कर दिया है कि २० साल में सबको खाना-पीना, मकान और फुरसत मिल जायगी। क्या हमारे देश में भी यह सम्भव है? हमने तो प्रतिज्ञा भी नहीं की थी। हमने तो कहा था कि यह रैन बसेरा है। इसमें चिरंजीव होंगे। लेकिन चिरंजीव तो मर्यादा के खिलाफ हैं। पर वे चिरंजीव ही कहाँ हैं?

भयानक संकट आ रहे हैं, जनता मूर्छित-सी है। हम और आप गांधी-युग को देखने के बाद आज तो अर्ध-मूर्छित, अर्ध-सचेत हैं। सब से मैंने प्रार्थना की है कि इन समस्याओं पर सोचें, यही गान्धीजी की स्मृति में सबसे बड़ा स्मारक इस देश में है।

[काशी, ३०-१-'६२ के भाषण से।]

विनोबा के साथ : १

• वल्लभस्वामी

सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति की बैठक के निमित्त बाबा विनोबा के साथ ता० ८ से १२ जनवरी तक मैं रहा। आसाम के जिलों के दो हिस्से होते हैं, मैदानी और पहाड़ी। मैदानी जिलों के ईशान्य कोने में आखिरी जिला नार्थ लखीमपुर है, जिसमें पिछले कुछ महीनों से बाबा हैं और आगे कुछ महीने रहेंगे। ब्रह्मपुत्र के उत्तर किनारे से सात मील पर ढकुआखाना में बाबा का पड़ाव उन दिनों था। उनके पास जल्द-से-जल्द पहुँचने के लिए पदयात्रा से लेकर हवाई जहाज तक का उपयोग करना पड़ता है। कलकत्ता से हवाई जहाज से चार घंटे में जोरहाट, वहाँ से बस या मोटर से करीब तीन घंटे में दिसागमुख, आगे स्टीम लाँच से मटमारा ढाई घंटे में और वहाँ से सात मील पैदल या जीप से ढकुआखाना पहुँचा जा सकता है।

ढकुआखाना क्षेत्र में अच्छे रास्ते नहीं हैं। जीप के लिए जो रास्ता है, वह भी इतना कम चौड़ा है कि जीप को घुमाने के लिए दो-चार मील दूर जाना होगा। रास्ता ऊँचा है, बाकी सारी जमीन नीची है। संघ के अध्यक्ष श्री नब बाबू ने उस दिन हमारे सामने पहेली रखी कि नदी के किनारे से ढकुआखाना सात मील है। हम चार मील पैदल चले और ग्यारह मील जीप में आये, बताइये। वे पैदल चार मील तक आये, सामने से जीप आयी; लेकिन घुमाने के लिए जगह न होने से नदी के किनारे तक जाना पड़ा।

इस तरह बाह्य दृष्टि से अविकसित यह प्रदेश सांस्कृतिक दृष्टि से काफी विकसित है। जगह-जगह 'नामघर' बने हुए हैं। चार-पाँच सौ साल पहले के प्रसिद्ध संत शंकर देव और माधव देव का आसाम पर काफी असर है। उन्होंने मंदिर के बजाय 'नामघर' की स्थापना की, जिसमें मूर्ति नहीं होती, 'नामघोषा' वगैरह ग्रन्थ होते हैं। यह क्षेत्र जीवन की जरूरतों के बारे में बहुत हद तक स्वावलंबी है। चार-पाँच साल पहले ही वहाँ लगभग पचास ग्रामदान हुए थे। अब पाँच सौ ग्रामदान हुए हैं।

"आप कब तक आसाम में रहेंगे?" बाबा ने कहा—"अब तक कोरापुट, बतलागुंडु, मंगरोठ वगैरह सघन ग्रामदान क्षेत्र मिलने पर भी मैं वहाँ रुक नहीं सकता था, क्योंकि भारत की एक प्रदक्षिणा करना था। अब कहीं जाने की जल्दी नहीं है। इसलिए यहाँ के ग्रामदानों में ठीक तरह से काम शुरू होने तक रहने की तैयारी है। दूसरा कारण यह भी है कि हिन्दुस्तान की दृष्टि से यह क्षेत्र एक कोने में है, परंतु हिन्दुस्तान और चीन के बीच में है। इन दो प्राचीन देशों का संपर्क आया है। पास में ही बर्मा, पाकिस्तान है। बंगाली-आसामी और नागा वगैरह की समस्याएँ भी हैं। यहाँ से विश्वशान्ति के या विश्वविनाश के बीज फैल सकते हैं। इस कारण भी यहाँ अधिक समय देने की जरूरत दीखती है।

"तीसरी बात यह कि आगे का कोई कार्यक्रम तय नहीं करना, यह मैंने तय किया है। १९४५ में जेल से छूटने के बाद बापू से मिला और उनसे कहा कि अहिंसा की खोज के लिए सब संस्थाओं से मैं मुक्त होना चाहता हूँ। अच्छी संस्थाओं में भी कुछ बंधन होते हैं। बापू ने थोड़ी चर्चा करके कहा कि 'तू अधिकार में नहीं रहते हुए सेवा करना चाहता है, ठीक है।' अब मुझे विचार आया है कि हम अपना कोई लंबा कार्यक्रम तय करते हैं तो ईश्वर कुछ मुस्काने से दूर रहता है। इसलिए कुछ तय नहीं करना, यह तय किया है। सिलसिला तो महीने के लिए कार्यक्रम बनाया है कि ग्रामदान-क्षेत्र में नौ केन्द्र बनाये जायँ, जहाँ कार्यकर्ता रहेंगे। मेरे साथ 'पार्टी' में रहने वालों को भी मैं बाँट दूँगा। मैं हर रोज एक-एक केन्द्र में जाऊँगा। दसवें दिन उसी केन्द्र में फिर से पहुँचूँगा। बीच के दिनों में कार्यकर्ता देहातों में जायेंगे। क्या काम चल रहा है, दिक्कतें क्या हैं आदि जानेंगे और दसवें दिन कार्यकर्ता और ग्रामवासी मुझे मिल कर उस पर चर्चा करेंगे और आगे का रास्ता निकालेंगे।"

तीन साल से सर्वोदय सम्मेलन में बाबा नहीं आये हैं। कार्यकर्ता और जनता की यह इच्छा है कि बाबा के मुँह से उनके विचार सुनने को मिलें। इसलिए अगले सम्मेलन में, जो गुजरात में होने वाला है, बाबा आयें ऐसी माँग रखी। बाबा ने कहा कि "उसके लिए पाँच महीना का समय मुझे देना होगा। मैंने अभी कहा है कि कुछ तय नहीं करना है, ऐसा मैंने तय किया है। मेरी गैरहाजिरी में भी सम्मेलन अच्छे हों, यह मैं चाहता हूँ।"

सम्मेलन में पहुँचने के लिए बाबा को बहुत समय न देना पड़े, इस दृष्टि से यह सुझाया गया कि गुजरात के बजाय सम्मेलन आसाम-बंगाल की सरहद के पास बंगाल में कहीं किया जाय। बाबा ने इसको भी अनुमति नहीं दी। उन्होंने कहा कि सत्य सूक्ष्म होता है। एक बार जाहिर हो चुका कि सम्मेलन गुजरात में होगा, अब उसे बदलना ठीक नहीं है।

इन्दौर से आसाम आते हुए बिहार में बाबा ने "बीघे में कट्ठा, हाथ में हथकट्ठा" का नारा दिया। बिहारवालों को बिहार की जमीन का छठा हिस्सा, यानी ३२ लाख एकड़ भूमि भूदान में देने की अपनी प्रतिज्ञा की याद दिलायी। "रघुकुल रीत सदा चली आई, प्राण जाय पर वचन न जाई" का सार्वजनिक अमल में कर दिखाना। प्रतिज्ञा पूरी करने का आसान रास्ता भी बता दिया। 'बीघे में कट्ठा' याने अपने पास की कोई भी जमीन का बीसवाँ हिस्सा। बिहारवालों ने यह

[शेष पृष्ठ ११ पर]

'बा'-पुण्यतिथि के अवसर पर

माता कस्तूरबा का स्मरण

• श्रीकृष्णदत्त भट्ट

महाशिवरात्रि का पर्व। रात्रि का प्रथम चरण।

'असोशियेटेड प्रेस' की टेलीप्रिण्टर मशीन खटखटा उठी। तार फाड़ते ही आँखें भर आयीं, हृदय सन्न हो उठा। तीन दिन से जिस निर्मम समाचार की आशंका से अन्तस्तल व्यथित हो रहा था, वही तो आँखों के सम्मुख था—

'बम्बई सरकार को यह घोषणा करते हुए खेद हो रहा है कि आज शाम को ७ बज कर ३५ मिनट पर पूना में आगाखाँ के महल में श्रीमती कस्तूरबा गांधी का देहान्त हो गया!'

• • •

और दूसरे दिन छपते छपते हमें यह समाचार मिला—

'जब कस्तूरबा का शव चिता पर रखा जा रहा था महात्माजी शाल से आँखें पोंछते देखे गये!'

• • •

बा के निधन पर सारे देश ने ही नहीं, सारे विश्व ने आँसू बहाये, यहाँ तक कि उस स्थितप्रज्ञ महात्मा का हृदय भी विचलित हो उठा, जिसने सुख और दुःख को एक तुला पर तौला था और भीषण-से-भीषण सङ्कट में भी जिसके चेहरे पर मुस्कराहट ही किलोल्ती रही थी!

परन्तु आखिर वह भी तो मानव था! माना, वह मानव से भी ऊपर था, तब भी यह घटना ऐसी थी, जिससे उसके भावुक अन्तस्तल में करुणा के निर्मल स्रोत का तीव्र गति से उमड़ पड़ना स्वाभाविक था। इसे रोकने की सामर्थ्य भला थी ही किस में!

आदर्श सती

जिस देवी ने अपना सर्वस्व, अपना सारा 'अहं', अपनी सारी आकांक्षाएँ, अपनी सारी इच्छाएँ, अपना सारा सुख और विलास अपने पति के चरणों पर अर्पित कर दिया है, उसके प्रत्येक आदेश को 'ब्रह्मवाक्य' मान कर उसके पालन में कभी रत्तीभर भी चूक न की हो, उसके इशारों पर अपने अरमानों की हँसते-हँसते बलि दे दी हो, और जेलों में भी अलख जगायी हो, उसके शव को चिता पर रखते देख यदि वह पति सिसक उठे तो इसमें आश्चर्य ही क्या!

ओह, न जाने कितनी नयी पुरानी, खट्टी मीठी स्मृतियाँ उमड़ उठी होंगी उस समय जब गांधीजी ने सदा के लिए अपनी जीवन संगिनी के शव को अग्नि में समर्पित होते देखा होगा! जीवन के साठ बासठ साल जिस देवी के साथ एकाकार होकर बीते हैं, जिसने महात्माजी को वस्तुतः 'महात्मा' बनने दिया और उनकी जीवन-व्यापी साधना सफल होने दी तथा उनके गार्हस्थ्य-जीवन में ही नहीं, उनके सार्वजनिक जीवन में भी मधु की अविरल वृष्टि की और अपने अस्तित्व को उनके अस्तित्व में पूर्णतः एकाकार कर दिया—वह देवी आँखों के सम्मुख चिता की लपटों में भस्म हो रही है! ओह, कितनी भीषण है यह मार्मिक वेदना!

• • •

न्यूमैन ने भक्तों को सलाह दी है—'प्रभुदरबारविन्दों में सर्वार्पण के लिए भक्त को स्त्री बनना होता है। पत्नी जिस प्रकार अपना सब कुछ पति में एकाकार कर देती है, उसी प्रकार भक्त को भी सब कुछ भगवान के चरणों में अर्पण कर देना होता है।' जो वस्तु पुरुष को बड़ी कठोर साधना के उपरान्त उपलब्ध होती है, वही स्त्री को सहज प्राप्य है। भारतीय नारी के लिए पति साक्षात् परमेश्वर है। उसकी साधना और साध्य घर पर ही उपस्थित है। भारतीय नारियों की मूक साधना का यह उज्ज्वल आदर्श बा सरीखी सती नारियाँ आज भी चरितार्थ कर रही हैं।

पति-भक्ति

बा उम्र में गान्धीजी से थोड़ी सी बड़ी थीं! १३ साल की उम्र में गान्धीजी ने उनका पाणिग्रहण किया और तब से अन्त तक उनके जीवन में वे दूध में मिश्री की भाँति घुली रहीं। महात्माजी के आश्रम का कौनसा ऐसा अतिथि होगा, जिसका बा ने समुचित सत्कार न किया हो! अधिक शिक्षा न हो पाने पर भी बा रूढ़िगत संस्कारों और भारतीय नारी के उज्ज्वल आदर्शों पर पत्नी होने के कारण अपना कर्तव्य भली प्रकार समझती थीं। गांधीजी उन्हें मनमाना नाच नचाया। 'राजी हैं हम उसी में जिसमें तेरी रजा है'—वाले सिद्धान्तवाली बा ने गांधीजी का कठोर से कठोर आदेश पालन करने में अपने जीवन की सार्थकता समझी।

देशवासियों के सेवार्थ बा ने बड़ी प्रसन्नतापूर्वक जेलों में भी तपस्या की। १९१४ में अफ्रिका की जेल से तो आप अस्थि-पंजर मात्र निकली थीं और राजकोट की तनहाई भी आपके स्वास्थ्य के लिए घातक सिद्ध हुई थी। १९३०-'३२ के आन्दोलनों में भी आप बाहर न रहीं। पर यह अन्तिम जेल, जो कहने को 'महल' थी, आपके हृदय-रोग का कारण बनी और अन्त में आपके प्राण लेकर ही मानी। — —

दाम्पत्य-जीवन के आरम्भ में गांधीजी का विषयों की ओर अधिक झुकाव था। साथ ही उनमें 'स्वामी'-पन का अभिमान भी मात्रा से अधिक था। इसके फलस्वरूप बेचारी बा को न जाने कितना अधिक कष्ट झेलना पड़ा।

सन् १८९८ की एक घटना लीजिये। डरबन की बात है। गांधीजी का एक ईसाई क्लर्क था, जिसके माता पिता पंचम जाति के थे। मकान में नाबदान न होने से मूत्रत्याग के लिए बर्तन का उपयोग होता था और उसकी सफाई बा और गांधीजी स्वयं कर लिया करते थे। उक्त ईसाई के पेशाब के बर्तन की सफाई बा को असह्य लगी और इस पर दम्पति में कुछ कहा-सुनी भी हुई। गांधीजी उसे उठाते हैं तो बा को अच्छा नहीं लगता और स्वयं उठाने की तबीयत नहीं होती। लाचार आँखों से मोती टपक रहे हैं और बर्तन हाथ में लिये बा सीढ़ियाँ उतरती जा रही हैं।

पर गांधीजी को इतने से भी सन्तोष कहाँ! वे चाहते थे कि बा इसे करें और हँसते हुए करें। डाँट डपट भी चलती है। आप कहते हैं—'देखो, यह बखेड़ा मेरे घर में न चल सकेगा।'

'तो लो रखो यह अपना घर। मैं चली।'

गांधीजी का स्वामीपन का अभिमान जाग पड़ा। बा को द्वार तक खींच ले गये। आधा दरवाजा खोला ही था कि आँखों से गंगा-यमुना बहाती बा बोलीं—'तुम्हें तो कुछ लाज है नहीं, मुझे है। जरा तो लजाओ। बाहर निकल कर आखिर मैं जाऊँ तो कहाँ! माँ-बाप यहाँ होते तो वहीं चली जाती। मैं ठहरी स्त्री जाति की, सो तुम्हारी धौंस सहनी ही पड़ेगी। अब जरा शर्म खाओ और दरवाजा बन्द कर लो। कोई देखेगा तो दोनों की फजीहत होगी!'

लाज से कट गये गांधीजी।

• • •

गहने नारी को सहज ही प्रिय होते हैं। शिक्षित नारियाँ भी उनका मोह नहीं त्याग पातीं; उनका रूप और डिजाइन भले बदल जाय! बा भी इसका अपवाद न थीं। पर गांधीजी ठहरे व्यावहारिक आदर्शवादी। वे भला क्यों मानने लगे! लिहाजा सन् १९०० में अफ्रिका से भारत लौटते समय एक विवादग्रस्त प्रश्न उठ खड़ा हुआ।

गांधीजी को अनेक वस्तुएँ भेंट में मिलीं, उनमें बा के लिए भी एक हार था—५० गिनी का। बच्चों की बहुओं का खयाल कर वे उसे किसी भी प्रकार से देने को तैयार न हुईं। इस पर काफी गरमागरमी हुई। बा की अश्रुधारा भी उसमें आ मिली। गांधीजी बोले—'पहले लड़कों की शादी भी होने दो। बड़े होने पर वे शादी करेंगे। और फिर, क्या हमें ऐसी बहुएँ खोजनी हैं, जो गहने-कपड़े की शौकीन हों! और मान लो, ऐसा भी हो तो मैं कहाँ गया थोड़े हूँ!'

'हाँ खूब जानती हूँ तुमको। वही न हो, जिन्होंने मेरे भी गहने उतार लिये! बहुओं को तो तुम जरूर गढ़ा लाओगे! लड़कों को अभी से बैरागी बना रहे हो! ये गहने मैं न लौटाऊँगी। और फिर, मेरे हार पर तुम्हारा हक ही क्या!'

'पर यह हार तुम्हारी सेवा के बदले में मिला है या मेरी!'—गांधीजी ने पूछा।

बा—'जो हो। तुम्हारी सेवा में क्या मेरी सेवा का हिस्सा नहीं! मुझसे रात-दिन मजदूरी कराते हो, वह क्या सेवा नहीं है! मुझे रुला-रुला कर जो ऐरों-गैरों को घर में रखा और मुझसे सेवा टहल करायी, उसका कुछ भी मूल्य नहीं!'

पश्चात्ताप

इन अकाट्य दलीलों के बावजूद गांधीजी बा से वह हार लेकर ही माने और उपहार की अन्य वस्तुओं के साथ उसे ट्रस्ट को दान में दे दिया।

ऐसी छिटपुट घटनाओं के बावजूद गांधीजी ने बा को अपने साँचे में ढाल कर ही छोड़ा। बाद में अपने अत्याचारों के लिए पछिताये भी। उन्होंने अपनी आत्मकथा में लिखा था—

'उस समय मुझे इस बात का ज्ञान न था कि पत्नी तो केवल सहधर्मिणी, सहचारिणी और सुख दुःख की साथिन है। मैं यह समझ कर बरताव करता था कि पत्नी विषय भोग की सामग्री है, उसका जन्म पति की हर तरह की आज्ञाओं का पालन करने के लिए हुआ है।

'किन्तु १९०० में मेरे इन विचारों में गहरा परिवर्तन हुआ। १९०६ में उसका परिणाम प्रकट हुआ।··· ज्यों-ज्यों मैं निर्विकार होता गया त्यों-त्यों मेरा घर-संसार शान्त, निर्मल और सुखी होता गया।

'इस पुण्य-स्मरण से कोई यह न समझ ले कि हम आदर्श दम्पति हैं, अथवा मेरी पत्नी में किसी किस्म का कोई दोष नहीं है अथवा हमारे आदर्श अब एक हो गये हैं। कस्तूर बा अपना स्वतन्त्र आदर्श रखती है या नहीं, यह तो वह बेचारी खुद भी शायद न जानती होगी। बहुत सम्भव है कि मेरे आचरण की बहुतेरी बातें उसे अब भी पसन्द न आती हों। परन्तु अब हम उनके बारे में एक-दूसरे से चर्चा नहीं

करते। फरने में कुछ सार भी नहीं है। उसे न तो उसके माँ-बाप ने शिक्षा दी है और न मैं ही समय रहते शिक्षा दे सका; परन्तु उसमें एक गुण बहुत बड़े परिमाण में है, जो अन्य कितनी ही हिन्दू स्त्रियों में थोड़ी-बहुत मात्रा में पाया जाता है। मन से हो या बेमन से, जान में हो या अनजान में, मेरे पीछे-पीछे चलने में उसने अपने जीवन की सार्थकता मानी है और स्वच्छ जीवन बिताने के मेरे प्रयत्नों में उसने कभी बाधा नहीं डाली।'

एक पत्र

बा के लिए गांधीजी के हृदय में कितना स्नेह था, यह उनके इस पत्र से स्पष्ट है—

'आज तुम्हारी तबीयत के विषय में मि० वेस्ट का भेजा हुआ तार मिला। मेरा हृदय विदीर्ण हो गया। मैं रो रहा हूँ, परन्तु तुम्हारी सेवा करने के लिए वहाँ आने योग्य मेरी स्थिति नहीं। मैंने सत्याग्रह के इस युद्ध में अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया है। मेरा वहाँ आना सम्भव नहीं। तुम जरा साहस रखो, पथ्य से रहो; फिर अच्छी हो जाओगी। परन्तु मेरे दुर्भाग्य से यदि तुम नहीं बच सकोगी, तो मैं तुमको केवल इतना ही लिखता हूँ कि इस वियोगावस्था में मेरे जीवित रहते हुए यदि तुम चली जाओगी तो कोई हानि नहीं। तुम पर जो मेरा उत्कट प्रेम है, उसके कारण लोगों की दृष्टि में चाहे तुम चली जाओ; परन्तु फिर भी तुम मेरे लिए जीवित रहोगी। तुम्हारी आत्मा अमर है। मैं तुमको विश्वास दिलाता हूँ कि यदि तुम्हारा अन्त हो जायगा तो जैसा मैंने तुमसे अनेक बार कहा है, मैं फिर दूसरी स्त्री से विवाह नहीं करूँगा। परमात्मा पर विश्वास रख कर तुम सुख से प्राण छोड़ो। तुम्हारी मृत्यु भी सत्याग्रह का एक अंग ही है। मेरा युद्ध केवल राजनीतिक ही नहीं, धार्मिक भी है और इसलिए अत्यन्त शुद्ध है। उसमें मर जायँ तो भला और जीते रहें तो भी भला। यह समझ कर तुम मन में कुछ भी खेद नहीं करोगी, यही मुझे आशा है; यही मेरी तुमसे याचना है।'

९ नवम्बर १९०८ को महात्माजी ने बा को यह पत्र लिखा था। और, कितनी मार्मिक वेदना भरी है इसमें!

• • •

गांधीजी ने आत्मकथा में लिखा था—

'कस्तूरबा का रक्तस्राव रोकने के लिए जब मेरे दूसरे उपचारों में सफलता न मिली तो मैंने उसको समझाया कि दाल-नमक छोड़ दो। मैंने उसे समझाने की हद कर दी, तो उसने झुंझला कर कहा—दाल और नमक छोड़ने के लिए तो तुमसे भी कोई कहे तो तुम भी न छोड़ोगे।'

यह सुन कर एक ओर जहाँ मुझे दुःख हुआ, वहाँ दूसरी ओर हर्ष भी हुआ; क्योंकि इससे मुझे अपने प्रेम का परिचय देने का अवसर मिला। बोला—'ऐसा नहीं। मैं यदि बीमार होऊँ और मुझे यदि वैद्य इन चीजों को छोड़ने के लिए कहे तो जरूर छोड़ दूँ। पर ऐसा क्यों? लो, तुम्हारे लिए आज से ही दाल और नमक एक साल के लिए छोड़ देता हूँ। तुम छोड़ो या न छोड़ो, मैंने तो छोड़ दिया।'

यह देख कर बा को बड़ा पश्चात्ताप हुआ। वह कह उठी—'माफ करो, तुम्हारा स्वभाव जानते हुए भी यह बात मेरे मुँह से निकल गयी। अब मैं तो दाल और नमक न खाऊँगी, पर तुम अपना वचन वापस ले लो। यह तो मुझे भारी सजा दे दी।'

मैंने कहा—'तुम दाल और नमक छोड़ दो तो बहुत ही अच्छा होगा। मुझे विश्वास है कि उससे तुम्हें लाभ होगा, परन्तु मैं जो प्रतिज्ञा कर चुका हूँ, वह नहीं टूट सकती। मुझे भी उससे लाभ ही होगा।'

'तुम तो बड़े हठी हो, किसी का कहा मानना तुमने सीखा ही नहीं'—कह कर वह आँसू बहाती हुई चुप हो गयी।

इसके बाद कस्तूरबा का स्वास्थ्य खूब सम्हलने लगा। अब यह नमक और दाल के त्याग का फल था, या उस त्याग से हुए भोजन के छोटे बड़े परिवर्तनों का फल था, या इस घटना के कारण जो मानसिक उल्लास हुआ उसका फल था—यह मैं नहीं कह सकता। परन्तु यह बात अवश्य हुई कि कस्तूरबा का सूखा शरीर फिर पनपने लगा। रक्तस्राव बन्द हो गया।

बहुत कुछ अध्ययन और मनन के उपरान्त सन् १९०६ में गांधीजी ने ब्रह्मचर्य का व्रत ग्रहण किया। इसके लिए उन्होंने बा से स्वीकृति माँगी। रामकृष्ण परमहंस देव की पत्नी शारदामणि की भाँति बा ने भी इसमें कोई आपत्ति न की। ब्रह्मचर्य का उनका आदर्श उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार था—

'ब्रह्मचारी रहने का यह अर्थ नहीं कि किसी स्त्री का स्पर्श न करूँ, अपनी बहिन का स्पर्श न करूँ। ब्रह्मचारी होने का अर्थ यह है कि स्त्री का स्पर्श करने से किसी प्रकार का विकार न उत्पन्न हो, जिस तरह कि कागज को स्पर्श करने पर नहीं होता। मेरी बहिन बीमार हो और उसकी सेवा करते हुए, उसका स्पर्श करते हुए ब्रह्मचर्य के कारण मुझे हिचकना पड़े तो वह ब्रह्मचर्य तीन कौड़ी का है। जिस निर्विकार दशा का अनुभव हम मृत शरीर को स्पर्श करके कर सकते हैं, उसी का अनुभव जब हम किसी सुन्दरी युवती का स्पर्श करके कर सकें तभी हम ब्रह्मचारी हैं।'

महात्माजी ब्रह्मचर्य के इस आदर्श का पालन करने में समर्थ हुए, इसका बहुत कुछ श्रेय बा को है। वे भी यदि साधारण कोटि की स्त्रियों में से होतीं तो यह सम्भव नहीं था कि महात्माजी की यह साधना सफल हो सकती।

गान्धी सरीखे महापुरुष की पत्नी होने के नाते बा चाहतीं तो बहुत प्रकाश में आ सकती थीं, परन्तु वे तो दूसरी धातु की बनी थीं। उन्हें तो भाषण करना, सभाओं में जाना पसन्द ही न था। पति के पद-चिह्नों पर चलना, उनकी सेवा करना, अतिथि-सत्कार, रोगियों की सेवा, भोजनादि की व्यवस्था, बच्चों की देखभाल और चरखा कातना; बस, इतना ही तो वे जानती थीं। गान्धीजी जहाँ असंख्य भारतीयों के 'बापू' थे, वहाँ बा उनकी 'माँ'। माँ का अविरल स्नेह उन्होंने अपने हीरालाल, रामदास और देवदास पर ही नहीं, विश्व के असंख्य बच्चों पर बिखेरा था और इसीलिए तो उनके निधन पर सारा देश मातृशोक में मग्न हो गया।

निर्वाण

प्रभु-पदारविन्दों में सर्वार्पण कर महाशिवरात्रि की पुण्य-वेला में पति की गोद में बा ने सदा के लिए आँखें मूँदीं। भला कौन भारतीय नारी ऐसी सौभाग्यपूर्ण मृत्यु के लिए स्पृहा न करेगी? बा की मूक-सेवामयी पावन चरितगाथा युग-युग तक भारतीय नारियों को अनुपम शिक्षा प्रदान करती रहेगी। जेल की चहारदीवारी के भीतर उनका निधन भारत को गुलामी की जंजीरों को तोड़ कर रहा।

अशेषा मातुश्री कस्तूरबा के पावन पदारविन्दों में हमारी कोटि-कोटि श्रद्धांजलियाँ।

['सेवा के पुजारी' से, पृष्ठ ५६, मूल्य ७५ नये पैसे। प्रकाशक : सस्ता साहित्य मंडल, सिंधिया बाग, वाराणसी-१]

क्रांति करना अभी बाकी है!

• विनोबा

कोई कहता है, मैं जेल में गया था, मुझे चुनिये। मैंने यह किया, वह किया, इसलिए मुझे यह या वह पद मिलना चाहिये। यदि इस प्रकार कोई अपने हक जताने लगे और उसका उपभोग करने की वृत्ति जगाने लगे तो समझ लीजिये कि क्षय का प्रारंभ हो गया। जरा से त्याग से यदि भोग-वृत्ति बढ़ती है तो यह स्वराज्य टिकने वाला नहीं है। हमें सिर्फ अपने स्वराज्य की ही रक्षा नहीं करनी है, बल्कि समस्त संसार की स्वतंत्रता को सिद्ध करना है। झण्डे के गीत में कहते हैं न "विश्वविजय करके दिखलायें तब होवे प्रण पूर्ण हमारा।"—अर्थात् यह करके दिखाना है कि समस्त संसार में एक भी राष्ट्र गुलाम नहीं रहेगा।

जब तक यह नहीं होता, हमारा कार्य अधूरा ही माना जायगा। इसलिए कार्यकर्ताओं के आलसी बनने से अलसाने लगेंगे तो काम नहीं चलेगा। इसीलिए मैं कह रहा हूँ कि यह सेवा करने का समय है। जिस-जिसके मन में लगन है, उसे अपने-अपने ढंग से सेवा करने के लिए दौड़ पड़ना चाहिये।

एक सज्जन ने हमसे पूछा—"हम गृहस्थ हैं। हम बहुत अधिक तो नहीं कर सकते, परन्तु, यह बताइये कि घर पर बैठे-बैठे हम क्या कर सकते हैं?"

मैंने कहा—"घर पर बैठे-बैठे आप जो कर सकते हैं, ऐसा ही काम आपको बताऊँगा। अपने घर में एक हरिजन बच्चे को रख लीजिये। आपके तीन लड़के हैं, तो उसे चौथा समझ लें। क्या चार लड़के होते तो उसे आप छोड़ देते?"

तब वह सज्जन कहने लगे—"फिर तो लोग हमें गाँव में रहने भी नहीं देंगे।"

मैंने कहा—"यही तो हमें करना है। क्रांति इसी को कहते हैं।

घर से शुरू कर ठेठ समाज के स्तर तक पहुँच जाय ऐसी ही हलचल हमें करनी चाहिये। लोग कहते हैं, "हमारे मन में अस्पृश्यता नहीं है।" मैं कहता हूँ, "आपके मन को कौन पूछता है? आप अपने घर में हरिजन को रखने के लिए तैयार हैं क्या?" तब कहते हैं "घर में माँ राजी नहीं होगी।" मैं कहता हूँ, "माँ हरिजन को जहाँ बैठायें वहीं आप भी बैठें।" सच तो यह है कि यह सब टालने की बातें हैं।

मुझे विद्यार्थी हमेशा कहते हैं कि हमें तो क्रांतिकारी कार्यक्रम चाहिये। तो मैं कहता हूँ कि क्रांतिकारी कविता बना कर आपको दे दूँ? वह क्रांति कहलायेगी? यदि विद्यार्थी सच्चे दिल से चाहें तो वे बहुत कुछ कर सकते हैं। भारत की गरीब जनता तपी हुई जमीन के समान हो गयी है। बारिश की भाँति वह सेवकों की राह देख रही है। मैं अपनी सारी शक्ति और भावना को बटोर कर आपसे कहना चाहता हूँ कि यदि स्वराज्य सचमुच आ गया है तो जिस प्रकार सूर्योदय के समय सारे पक्षी एकत्र हो जाते हैं, उसी प्रकार स्वराज्य के सूर्योदय के बाद भी चारों तरफ से कार्यकर्ता एकत्र होने लगेंगे। लोग आपको सेवक मानने लगेंगे और तब क्रांति आसान हो जायगी। आज अभी क्रांति नहीं हुई है। क्रांति करना तो अभी बाकी है।

('मराठी हरिजन', ६-१०-१९४९)

अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, काशी से प्रकाशित विनोबा की 'क्रांति-दर्शन' पुस्तक से। पृष्ठ २००, मूल्य १ रु० २५ न० पै०।

सिमला जैसा है। एक-एक अलग-अलग बंगला है, खुली हवा खाते हैं। सिमले में हर घर में एक मोटर होती है, यहाँ हर घर में नाव है।

"आप लोगों को सुपारी के बदले नारियल के पेड़ लगाने चाहिए। जहाँ पानी और मछली है वहाँ नारियल अच्छा होता है। समय पर उसका दूध भी आपको मिल सकता है। फिर मछली खाने की जरूरत नहीं रहेगी। यहाँ पानी ज्यादा है, मछलियाँ भी है। मछली का खाद नारियल के पेड़ को मिलेगा। नारियल खाने से आप दीर्घायु होंगे।" 'गाँव में कपास बोने के भी सुझाव बाबा ने दिया है।

"आठ केन्द्रों की एक ही प्रदक्षिणा में बाबा ने कहा कि "अब यह कार्यक्रम बदलना चाहिए।" वैसे कार्यकर्ताओं ने काम तो किया, पर शक्ति अल्प थी। 'सर्वे' का काम तथा निर्माण का काम बहुत थोड़े गाँवों में हो पाया। इसलिए फिर से सारे कार्यकर्ताओं को बाबा के पड़ाव पर बुलाया गया। वहाँ सर्वश्री अमलप्रभा बहन, खगेश्वर भुइयाँ बारूवती, हेमा बहन, गुलाब दत्त आदि सब कार्यकर्ताओं ने विचार विनिमय किया। श्री जयदेव भाई और श्री सोमेश्वर बारूवती का ढेमाजी मौजे का अनुभव अच्छा था। उनकी राय रही कि इसी एक मौजे में बाबा घूमें, सब कार्यकर्ता भी जोर लगायें तो काम हो सकता है।

उस मुताबिक कार्यक्रम बना। ६ टोलियों में २३ कार्यकर्ता ६ दिन घूमे। तीन पंचायतों के ३१ गाँव लिये थे। ६ दिनों के बाद सब कार्यकर्ता इकट्ठे हुए। हरएक का अनुभव अच्छा रहा। इस बीच २७ गाँवों से संपर्क हुआ। २० गाँवों में 'सर्वे' का काम हुआ और उन गाँवों की २० वाँ भाग जमीन सामूहिक खेती के लिए लोगों ने अलग रखी। १० गाँवों में भूमि का पुनर्वितरण हुआ। २२ परिवारों में १११ बीघा जमीन बाँटी गयी। जिन गाँवों में भूमिहीन नहीं है, उन गाँवों में जो कम भूमिवाले थे, उनमें जमीन बाँटी गयी। इन गाँवों के स्थानिक शिक्षक और सार्वजनिक सेवा का काम करने वाले लोगों ने भी कार्यकर्ताओं को सक्रिय सहयोग दिया। बारिश के पहले ग्रामदानी गाँवों का पट्टा बन जाय, यह कोशिश कार्यकर्ताओं की रहेगी।

आज से पुन: टोलियाँ घाटघरिया-पंचायत में घूमने के लिए गयी हैं। जनता में उत्साह है। कहीं ऐसा अनुभव नहीं आया है, जहाँ ग्रामदान वापस लेने की बात हो। उल्टे, दान देने के बाद वे राह देख रहे थे कि उनकी जमीन कब बटेगी। जनता उठ रही है, कार्यकर्ता आत्मविश्वास पा रहे हैं।

इस मौजे में तीन सप्ताह देने का बाबा ने सोचा है। तीन-चार दिन का कार्यक्रम लगता रहता है। वैसे यह अज्ञात यात्रा ही चली है। बिलकुल छोटे-छोटे गाँव हैं। बारिश के दिनों में ये गाँव मुख्य रास्ते से कट जाते हैं। उनका व्यवहार नाव में चलता है, जंगल में छोटी-छोटी नाव लेकर जाते हैं, उनमें लकड़ी भर कर लाते हैं। सुवर्णश्री नदी ने पात्र बदला है। उसमें इन गाँववालों की काफी जमीन गयी है। एक गाँव में सरकार ने बाँध बाँधा है, अन्यथा 'सुवर्णश्री' नदी घरों में प्रवेश करती। अब आँगन तक खेलती रहती है। आँगन में भी नाव चलती है। उस गाँव से 'सुवर्णश्री' दस मील दूर है, पर बाढ़ में कुछ हिस्सा बहा देती है।

ग्रामसेवक की कार्य-पद्धति

काका कालेलकर

ग्रामसेवक को किस ढंग से काम करना चाहिए, इसके बारे में कई बार पूछा जाता है। ऐसे समय किस ढंग से रहना और किस तरह की प्रवृत्तियां शुरू करना उसके बारे में ग्रामसेवकों को थोड़ी-बहुत प्रारंभिक सूचनाएं मिलें तो वे उनको उपयोगी होंगी ऐसा लगता है। इसलिए उनके लिए नीचे की नोंध तैयार की है। बाद में वे अपने अनुभव से उनमें सुधार करेंगे और इस क्षेत्र के सम्बन्ध में उपयोगी चर्चा भी करेंगे।

(१) सेवक का स्वच्छता का स्तर देहात से बहुत ऊँचा होना चाहिये। शरीर, कपड़े, पानी, खाने की चीजें, घर के सरसामान की व्यवस्था, आँगन वगैरा सब आदर्श स्वच्छता तक पहुँचाने का उसका प्रयत्न होगा। और यह सब फिनाइल जैसी चीजें इस्तेमाल करके नहीं, बल्कि जात मेहनत और मिट्टी, पानी, धूप तथा हवा जैसी कुदरती शक्तियों का इस्तेमाल करके ही करना है।

(२) पेशाब और शौच के बारे में हमारी आदतें सुधारने की बहुत जरूरत है। इसमें जो स्वच्छता नहीं रखता वह असंस्कारी और अधार्मिक है, ऐसा लोगों को महसूस होना चाहिये। गांधीजी ने इस बारे में बहुत लिखा ही है। सेवकों को चाहिये कि वे बिना संकोच और शरम के पहले से ही इसका सबक सिखायें।

(३) भाषा के बारे में देहातों का स्तर बहुत हलका होता है। गाली-गलौज का उपयोग लगभग सार्वत्रिक है। हरिजनों के प्रति, मजदूरों के प्रति, गाँव के छोटे पेशेवालों के और स्त्री जाति के प्रति भाषा में तुच्छता ही रूढ़ है। उसे दूर करने का सौम्य, लेकिन लगन के साथ प्रयत्न चालू रहना चाहिये।

(४) पुरानी धार्मिक मान्यताओं, रिवाजों और वहमों की जड़ें देहाती लोगों के दिल में गहरी उतरी हुई हैं। उनको धर्म का शुद्ध मंगलमय और जीवन-व्यापी स्वरूप समझाना आवश्यक है। इस सम्बन्ध में धार्मिक और सामाजिक सुधारों का सेवक अपने जीवन में अमल करना होगा; यहाँ इतनी सावधानी बरती जाय कि इसमें लोगों पर कहीं ऐसी छाप न पड़े कि सेवक अधार्मिक है। सेवक को धार्मिक ग्रन्थों का वाचन, विवेचन, दो समय की प्रार्थना, आहार-शुद्धि, जीवदया और संयम के बारे में हमेशा जाग्रत रहना चाहिये।

(५) ऐसी ऐसी बातों में सेवक देहात के वातावरण से और लोगों से अलग पड़ेगा सही, लेकिन सामान्य जीवन में उसके रहन-सहन का स्तर देहात के जैसा ही होना चाहिये।

(६) सामाजिक सुधार का क्षेत्र बहुत विशाल है। अनगिनत उपायों से ऊपर चढ़ाने की जरूरत है। जिस चीज को समाज बिलकुल ग्रहण न कर सके, उसका कड़ा आग्रह सेवक न रख सके तो कोई बात नहीं, लेकिन उसके निजी जीवन में और वायु-मण्डल में समझौता, नरमी या गफलत तो बिलकुल नहीं होना चाहिये। खास करके अस्पृश्यता-निवारण, स्वच्छ नैतिक सम्बन्ध, सामाजिक रीति-रिवाज, किफायतशयारी, मानव मानव के बीच की समानता वगैरह बाबतों में अपना वर्तन आदर्श रखने का वह प्रयत्न करेगा।

(७) मुश्किलियों और अभावों में ग्रस्त होने पर भी देहाती लोग आलस में समय व्यतीत करते हैं। सेवकों को उस वातावरण से मुक्त रह कर अपने क्षण-क्षण का उपयोग होते दिखाना चाहिये।

(८) बढ़ई, लोहार, राज वगैरह कारीगरों के औजार हरएक को इस्तेमाल करना आना चाहिये। उतना कौशल्य प्रजाव्यापी नहीं हुआ, तो जीवन दिन-ब-दिन मुश्किल हो जायेगा। सेवक इसमें मिसाल बन कर पहल करेगा।

(९) जब से मोटर-बस का आक्रमण बढ़ने लगा है, तब से लोग मील-दो मील चलने में भी कष्ट अनुभव करने लगे हैं। घण्टों तक बस की राह देखेंगे और नजदीक जाने के लिए भी पैसे खर्च करेंगे। लोगों के उद्योग बढ़े नहीं हैं। आय कम होती जा रही है और फिर भी लोग पैसे खर्च करने के प्रसंग बढ़ाते जाते हैं। उनके सामने उदाहरण रखने की जरूरत है। हमारे सेवकों को जब बहुत जल्दी न हो और पाँच-सात मील ही जाना हो तब चल कर ही जाना चाहिये। तन्दुरुस्ती भी सँभलेगी और लोगों को सबक भी मिलेगा।

(१०) सेवक का जीवन इस तरह का होना चाहिये कि शहरी चीजें, शहरी रंगढंग और शहरी आदतों की छूत देहात को न लगे।

(११) देहात में चाय, सोडा लेमन और मिठाई वगैरह ऊपर मत खाने की आदत बढ़ती जा रही है। शहरों में तो वह बड़ी फैली हुई है ही। बहुत से रोगों का वह मूल है। सेवक अपनी खुराक में सादाई और नियमितता बरतें, मिर्च मसाले और मिठाई का प्रमाण कम करें। स्वच्छ, ताजे पौष्टिक आहार का जहाँ-तहाँ आग्रह रखें और लोगों को जीवन में इस आहार का महत्त्व समझायें।

(१२) हरएक देहात में पार्टीबाजी होती ही है। सेवक को उस वातावरण से बिलकुल अलिप्त रहना चाहिये। शिष्टाचार के खातिर 'मैं तो सबका ही हूँ', ऐसा कहने के बजाय 'मैं किसी का नहीं हूँ, मैं अपने मिशन का हूँ', ऐसा ही उन लोगों से कह दे तो अच्छा ही है।

(१३) लवाद अथवा पंचायत का काम कानून के ज्ञान पर या व्यवहार-कुशलता पर निर्भर नहीं करता, लेकिन निर्णय देने वाले की सर्वोच्च नैतिक प्रतिष्ठा पर निर्भर रहता है। अतः सेवक लम्बे अरसे तक लवाद की झंझट में न पड़े। लोग कोर्ट में जाते हों और अपना नुकसान करते हों तो दोनों पक्षों में शुरू में उसका कोई असर न हो।

(१४) देहात का रोज का अनुभव आदत के कारण सामान्य मालूम होता है, लेकिन ऐसा अनुभव एकत्र करने से कीमती अनुमान निकाले जा सकते हैं और बड़े ही सिद्धान्त बाँधे जा सकते हैं। इसलिये सेवक को रोज-रोज अपनी डायरी लिखना चाहिये। उसमें लम्बे-लम्बे वर्णन और भावना का उफान न हो। ठोस तफसील आँकड़ों के साथ होनी ही चाहिये।

(१५) सेवा-कार्य में लोक-शिक्षण, श्रवण-वर्ग (किताबें पढ़ कर सुनाने के वर्ग), गाँव की सफाई, पेशाब और पाखाने की व्यवस्था, स्वास्थ्य-रक्षा और संवर्धन, अखाड़े, धार्मिक और राष्ट्रीय उत्सव, बांधकाम, रास्ते वगैरह सार्वजनिक सुविधाएँ, पुस्तकालय, वाचनालय, वस्त्र-स्वावलंबन तथा छोटे-छोटे ग्रामोद्योगों का पुनरुद्धार, किसानों की खेती-बाड़ी का हिसाब रखने का काम, अस्पृश्यता-निवारण, वहम दूर करना, समाज-सुधार इत्यादि लोकशिक्षा की प्रवृत्तियाँ चलनी होंगी।

('मंगल प्रभात' से)

दान एवं स्वयं-अनुशासन द्वारा निर्माण-कार्य चलें

ग्राम-निर्माण सम्मेलन में श्री धीरेंद्र भाई

रानीपतरा सर्वोदय-आश्रम द्वारा ग्राम-संकल्प, ग्राम-इकाई एवं ग्रामदानी गाँवों के कार्यक्रम पर आधारित पूर्णियाँ जिला ग्राम निर्माण सम्मेलन ११ फरवरी को 'गांधीयर' मुरसल में श्री ध्वजाप्रसाद साहु के सभापतित्व में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन श्री धीरेन्द्र भाई ने किया। श्री मजूमदार ने सर्वोदय-समाज की स्थापना के लिए कानून की जगह स्वयं-अनुशासन एवं टैक्स की जगह दान द्वारा निर्माण-कार्य की आवश्यकता पर जोर डाला। बिना स्वयं-अनुशासन एवं दान के सर्वोदय-समाज की स्थापना को आपने असंभव बताया।

अध्यक्ष पद से बोलते हुए श्री ध्वजाप्रसाद साहु ने अपने चालीस वर्ष के अनुभव की चर्चा करते हुए बताया कि सर्वोदय समाज की स्थापना नयी पद्धति, नया संगठन, नये कार्यकर्ता एवं नये कार्यक्रम के आधार पर ही होगी। श्री साहु ने अहिंसक समाज की स्थापना के लिए सामूहिक प्रयास की आवश्यकता पर विशेष प्रकाश डाला।

श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने पुराने कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए कहा कि वर्तमान परिस्थिति के अनुसार अपने विचार एवं आचरण में परिवर्तन करना चाहिए। श्री चौधरी ने बताया कि पुराने कार्यकर्ता यदि परिस्थिति के अनुसार अपने में परिवर्तन कर लेंगे तो उनके अनुभव का लाभ सर्वोदय-कार्यक्रम को कार्यान्वित करने में मिल सकेगा।

ग्राम-निर्माण समिति के संयोजक श्री त्रिपुरारि शरण ने ग्रामदानी गाँवों के निर्माण-पद्धति को एक विशिष्ट पद्धति की संज्ञा देते हुए गाँव की प्रगति करने वाले सहकारी कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की आवश्यकता बतायी। जिला सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री महावीर झा एवं अन्य लोगों ने भी अपने विचार व्यक्त किये।

कारी परिवारों के ५ बच्चे इस 'सहायता-कोष' द्वारा सहायता पाते हैं। इन वारियों द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकार से जो अभावग्रस्त अथवा पीड़ित परिवार के हैं, ऐसे १५ बच्चों को यह सहायता दी जा रही है।

कुछ लोग ऐसे भी गिरोहों से सम्बन्धित हैं अथवा वैसे ही फरार थे, जो अपने को पुलिस के द्वारा मान्य अपराधी समझते थे, किन्तु वास्तव में पुलिस उनके विषय में नहीं जानती थी; ऐसे लोगों को पुलिस को कोई जानकारी न देते हुए ही, फिर से घरों में पुनः आबाद किया गया।

श्री कृष्ण और रामअवतार : ये दोनों अपने घरों पर पहुँच गये हैं। जमीन वगैरह की व्यवस्था कर रहे हैं। श्री कृष्ण के छोटे भाई को 'चम्बल सहायता-कोष' से शिक्षण-पोषण की छात्रवृत्ति दी जा रही है।

श्री हरेलाल : इनका परिवार अपने गाँव, थर्रा मदोरिया में घर व जमीन पर आबाद है। इनका भाई हॉस्टल वारी व्यवस्था देखता है।

—:o:—

बहराइच में भूमि-वितरण

बहराइच जिला भूदान-समिति की ओर से ४ फरवरी को मिहींपुरवा में भूमि-वितरण समारोह हुआ, जिसमें तहसील के विभिन्न ग्रामों के भूमिहीनों को पट्टे दिये गये। इस अवसर पर एक बैठक में जिले में सर्वोदय-विचार के प्रचारण और सहायता के लिए अर्थ-संग्रह की योजना बनायी गयी। जिला-स्तर पर आदाताओं का सम्मेलन आयोजित करने का तय किया गया।

विद्यार्थियों में शांति की स्थापना

आंध्र के अनंतपुरम्, कडप्पा, करनूल, नेल्लूर और तिरुपति में विद्यार्थियों की हड़ताल का गंभीर परिणाम हुआ। पुलिस को लाठी और अश्रु-गैस का प्रयोग करना पड़ा। ३० जनवरी को अनंतपुरम् में श्री प्रभाकरजी को वहाँ के विद्यार्थी और शिक्षकों ने समझौता कराने के लिए आमंत्रित किया। उनके प्रयत्न से वहाँ का वातावरण सौम्य बन गया। इस कारण अनंतपुरम् के कलेक्टर ने उनसे प्रार्थना की कि अन्य स्थानों में भी शांति के लिए प्रयत्न करें। इसके बाद श्री प्रभाकरजी ने कडप्पा और तिरुपति में भी शांति-स्थापना की सफल कोशिश की।

'सर्वोदय-पखवारा' सम्पन्न

३० जनवरी से १२ फरवरी तक देश भर में 'सर्वोदय पखवारा' मनाया गया है। प्रार्थना, सूत्रयज्ञ, सामूहिक सफाई, विचार-गोष्ठी और सभाओं के कार्यक्रम आयोजित किये गये। नीचे लिखे स्थानों से समाचार प्राप्त हुए हैं।

खादी-ग्रामोद्योग महाविद्यालय त्र्यम्बक, नासिक; सहारनपुर जिला सर्वोदय-मंडल, हरिद्वार, सिंहरूच बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ, दरभंगा, खादी भंडार और सर्वोदय केन्द्र, छपरा।

मध्य प्रदेश में विसर्जन आश्रम, इंदौर; राजघाट बड़वानी, रतलाम, जबलपुर, दतिया, बगाना, रायपुर, सिवनी, उज्जैन, ग्वालियर, बालाघाट और छतरपुर।

जिला सर्वोदय मंडल और खादी ग्रामोद्योग संघ, भरतपुर, सीकर, गढ़ीमेरवा, जिला सर्वोदय मंडल सीतापुर, जिला हरिजन सेवक संघ नरसिंहपुर, तत्त्व प्रचार विभाग गांधी स्मारक निधि, गोरखपुर, सर्वोदय मंडल दिल्ली, लोकभारती, शिवदास पुरा।

इस अंक में

चमोली में सर्वोदय-कार्य

सन् १९६१ में चमोली (उत्तराखंड) में नीचे दिये अनुसार सर्वोदय-कार्य हुआ है।

साहित्य बिक्री	५२४ रु. ६४ नये
'भूदान यज्ञ' के ग्राहक	५७
सर्वोदय-पात्र अनाज	३१ म. ८
अर्थ-संग्रह	६२७ रु. ५६ न. पै.
सूतांजलि	८ ऐट्टा
शांति-सहायक २१	शांति-सैनिक ।

जिला-सर्वोदय-मण्डल के मन्त्री श्री चण्डीप्रसाद भट्ट ने शांति विद्यालय, काशी से लौटने के बाद मई से दिसम्बर तक १०७२ मील पद-यात्रा की तथा ६१ सभाओं में सर्वोदय-विचार समझाया।

अहमदाबाद में सर्वोदय-मित्र सम्मेलन

अहमदाबाद शहर में चलने वाले सर्वोदय-साधना केन्द्रों के मित्रों का लोक-सम्मेलन १८ जनवरी को प्रो० यादवजी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में अन्य कार्यक्रमों के साथ स्व० शांति-सैनिक श्री वेणुभाई पटेल को श्रद्धांजलि समर्पित की।

'श्रम भारती' का वार्षिकोत्सव

श्रमभारती, खादीग्राम का दसवाँ वार्षिकोत्सव २६ फरवरी को मनाया जायेगा। इस अवसर पर कार्यकर्ताओं की पारिवारिक गोष्ठी होगी।

शिवरामपल्ली में ग्राम-स्वराज्य विद्यालय

शिवरामपल्ली, हैदराबाद में ग्राम-स्वराज्य विद्यालय का प्रारम्भ श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे द्वारा हुआ। इस अवसर पर श्री अण्णासाहब ने बताया कि यह विद्यालय आसपास के दस ग्रामदानों अथवा पचास हजार की आबादी के क्षेत्रों की जीवन-समस्याओं का प्रयोग-क्षेत्र है।

श्री महानंद द्वारा साहित्य-प्रचार

सर्वोदय-साहित्य प्रचारक श्री महानंद ने गया तथा पटना शहर में जनवरी मास में कुल १२०० रु० की साहित्य-बिक्री की है।

रूस में योगाभ्यास

रूस में आजकल योगासनों के अभ्यास पर जोर दिया जा रहा है। कहा जाता है कि करीब डेढ़ साल पहले सोवियत सरकार ने भारत की योग-पद्धति के वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए अपने विज्ञान-अकादमी का एक दल भारत भेजा था। उस दल की अनुकूल रिपोर्ट के अनुसार यह कार्यक्रम अपनाया गया।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९००० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९००० एक अंक : १३ नये पैसे

हिरोशिमा का अणुबम-वर्षक

क्लौड ऐथर्ली आज भी पछता रहा है !

दूसरे महायुद्ध की समाप्ति के कुछ दिन पहले सारे विश्व के समाचार पत्रों में एक नवयुवक का चित्र छपा। वह था अमरीका के उत्तरी टैक्सास का निवासी क्लौड ऐथर्ली। वह आज भी पछता रहा है, यद्यपि अमरीकी सरकार ने उसे उस देश की वायुसेना का सर्वोच्च पदक देकर सम्मानित किया। ऐथर्ली ने ही ६ अगस्त '४५ को हिरोशिमा नगर पर अणुबम गिराया था। उसको युद्ध के दानवों ने यह नहीं बताया कि वह क्या करने जा रहा है, वह तो समझता था कि उसके बम से दानवता समाप्त होगी और मानवता का आगमन होगा।

ऐथर्ली ने कुछ ही दिन पहले विश्वविद्यालय छोड़ा था। उसका स्वास्थ्य सुन्दर था, नयी उमंगें, नया जोश, नयी आकांक्षाएँ उसके हृदय में डोल रही थीं, पर आज ऐथर्ली का सारा जोश ठंडा हो गया है। वह अमरीका के भूतपूर्व सैनिकों के अस्पताल में घोर पीड़ा से कराह रहा है! वह नहीं चाहता कि निकट या सुदूर भविष्य में कोई युद्ध हो, ताकि युद्ध के दानव फिर किसी निरपराध नवयुवक से आणविक बम गिराने का घृणित काम करवा सकें।

ऐथर्ली के अणुबम से एक लाख से भी अधिक बच्चे, बूढ़े, स्त्रियाँ क्षतविक्षत हो गयीं। हजारों लोगों का जीवन रेडियो-धर्मिता से अंधकारमय हो गया, उनके लिए अब केवल दुःख, पीड़ा और निराशा बच रही थी।

आज ऐथर्ली अणुबमों के उत्पादन को एक जघन्य अपराध समझता है। स्वयं उसका जीवन अंधकारमय हो गया है। वह कई प्रकार के रोगों से पीड़ित है। प्रारंभ में सारे राष्ट्र ने उसका सम्मान किया, पर बाद में जब उसने हिरोशिमा के विनाश के चित्र, सिनेमा 'न्यूज-रील' तथा रेडियो-धर्मिता से पीड़ित जापानी नागरिकों के चित्र देखे, तो उसका दिल दहल उठा! उसने अमरीकी वायुसेना से त्यागपत्र दे दिया, युद्ध की समाप्ति के पश्चात् भी कुछ समय तक निर्जन क्षेत्रों में उससे अणुबम गिरवाये गये। वह इन प्रयोगों से मन ही मन घृणा करने लगा।

आज ऐथर्ली रेडियो-धर्मिता से पीड़ित है। उसके रक्त तथा वीर्य में भयंकर विकार हो गये हैं। वह टेक्सास के एक फौजी अस्पताल में शारीरिक तथा मानसिक रोगों की चिकित्सा करवा रहा है। उसका जीवन अत्यन्त दयनीय हो गया है। अस्पताल में रोगशैया पर पड़े-पड़े वह चिल्ला उठता है, "बचाओ, बचाओ! हजारों जापानियों का दल मुझसे बदला लेने के लिए आ रहा है।"

सन् १९५० में तथा सन् १९५४ में उसके घर में दो मासूम पुत्रियों ने जन्म लिया। इन दोनों बच्चियों को भी जन्म से ही रक्त का विकार है। आज ऐथर्ली कभी घर में रहता है, तो कभी अस्पताल में। हँसमुख ऐथर्ली चिड़चिड़ा और कुरूप हो गया है। दो बार वह अस्पताल से भाग कर बाहर आ गया और चोरी करते हुए पकड़ा गया। उसने आत्महत्या का भी प्रयत्न किया, पर उसकी सेवापरायण धर्मपत्नी ने देख लिया और बेहोशी की हालत में उसे अस्पताल ले गयी।

उसके मित्र तथा सम्बन्धी उसको अस्पताल में समझाते हैं कि उसने कोई अपराध नहीं किया। डाक्टर उसका निदान करने में हार गये हैं। उसके कष्टों की तथा उसके पश्चात्ताप की खबर हाल ही में जापान के पत्र-पत्रिकाओं में छपी थी। इसके फलस्वरूप जापान के शान्तिवादियों के प्रमुख संगठन ने उसे एक पत्र भेजा था। इस पत्र में लिखा था, "हम आपको अपना परम् मित्र समझते हैं, शत्रु नहीं। जिस प्रकार हम गत महायुद्ध की विभीषिका के शिकार हुए थे, उसी प्रकार आप भी युद्ध की विभीषिका के शिकार हुए। हम आपके मंगल की प्रार्थना करते हैं।"

कुछ दिन पहले जापान की अ... बहनों ने भी उसे एक प्रेम भरा पत्र लिखा था, जो आज भी अस्पताल में रेडियो-धर्मिता से पीड़ित है। अमेरिका में ऐथर्ली के सम्बन्धियों का और मित्रों का होना संभव है, पर जापान में उसके अनेक मित्र हैं, जो उसके स्वास्थ्य की मंगल कामना करते हैं! शायद इस बार नये मित्रों को पाकर उसका निदान हो जाय। उसके अपराधों का कौन जनक है, वह या युद्ध!

(आधारित) —हरिश्चन्द्र पन्त

---

६९ वर्ष की अवस्था में अक्षरारंभ

एक दिन मैं लिखते-लिखते उठ कर नीचे की मंजिल में जाकर देखता हूँ कि मेरी माता भी लहरी बाई अपने छोटे भाई रवीन्द्रकुमार के पुत्र दिलीप को पढ़ाने के लिए लायी हुई 'प्राइमरी' खोल कर स्लेट पर अक्षर लिखने की चेष्टा कर रही है। इस वृद्धावस्था में माँ के इस प्रयत्न को देख कर मैं अवाक् रह गया! मैं उससे कुछ नहीं कह कर ऊपर चला आया। काम करने लगा, पर काम में मन नहीं लगा। सदैव से कुछ जल्दी उठ कर घूमने निकल गया। माता के विचार ही विचार में दूर चार मील तक चला गया। रास्ते भर माता का चिंतन चलता रहा। मेरी माता का सारा जीवन कठोर कर्मयोग में बीता है। शरीर श्रम का कोई ऐसा कार्य नहीं, जिसे उसने नहीं किया हो। जंगल में कंडे बीनना, अपने खेतों से घास तथा अनाज काट कर लाना, चक्की पीसना, कुएँ से पानी खींच कर लाना, कंडे थापना, चरखा चलाना, ओटनी पर रुई निकालना, गाय भैंस दुहना, दही मथना आदि शरीर-श्रम के अनेक कामों में उसकी सारी आयु बीती है।

मैं इसकी कल्पना तक नहीं कर सकता था कि उसके मानस में भी पढ़ने की उतनी तीव्र लगन है।

संध्या को भोजन करने के बाद मैंने अपनी माता से कहा कि 'माँ, कल से तुम मुझसे पढ़ना।'

मेरे द्वारा इतना कहते ही माता की वाचा फूट पड़ी। कहने लगी—'बेटा, मैं खुद तुम्हें कहना चाहती थी, पर कहते हुए लज्जा आती थी। तुम्हारे पिताजी का सारा समय पढ़ने में जाता था। वे खुद बाहर से अच्छी पुस्तकें मँगाते और घर में बहुओं को पढ़ने देते थे। तुम्हें भी मैं दिन रात पुस्तक हाथ में लिये देखती हूँ। तुम्हारे दूसरे भाई भी पढ़ने-लिखने की ही बात करते हैं। इन सब बातों को देख कर मेरी भी अनेक बार इच्छा होती है कि मैं भी थोड़ा-बहुत पढ़-लिख लेती और तुम्हें पत्र लिख सकती तो कितना अच्छा होता!'

मैंने कहा—'माँ, चिंता मत करो, बड़ी आयु होने पर भी तुम्हारी पढ़ने की इतनी तीव्र लालसा होने से तुम अवश्य ही पढ़ लोगी, यही नहीं तुमने मौखिक रूप से साध्वियों के पास बैठ कर सामायिक, प्रतिक्रमण, भक्तामर, कल्याण-मंदिर, अनेक स्तवन तथा सज्झायों का जो पाठ किया है, उन्हें भी तुम पुस्तकों द्वारा पढ़ कर समझ सकोगी।'

माता—'यदि तुम मुझे पढ़ाने की जिम्मेदारी लो तो मेरे पास जो कुछ है, उससे मैं सारे गाँव को भोजन करा कर बची हुई सम्पत्ति दीन-दुखियों को बाँट कर तुम्हारे साथ चली चलूँ। अपने पीछे मैं दान-पुण्य के लिए किसी से कुछ नहीं कहना चाहती। अपने हाथ से जो कुछ हो जाय वह ठीक है।'

दूसरे दिन वह नहा-धो, सामयिक कर स्लेट लेकर मेरे सामने आ बैठी और शांत भाव से नमस्कार-मंत्र का स्मरण करने के बाद मुझे प्रणाम कर स्लेट मेरे सामने बढ़ा दी। माता के इस व्यवहार से मैं हड़बड़ा उठा। कहने लगा—'माँ, यह अधर्म क्यों! तुम और मुझे प्रणाम।'

माता—'यह अधर्म कैसे! तुम अभी पुत्र नहीं, गुरु-स्थान पर हो। क्या तुम्हें श्रेणिक (बिंबिसार) राजा की वह कहानी मालूम नहीं कि वह एक भंगी से सिंहासन पर बैठ कर एक विद्या सीखना चाहता था, पर सिंहासन पर बैठे-बैठे सीखने के कारण उसे वह विद्या नहीं आ रही थी। अंत में जब वह सिंहासन से नीचे उतर कर उसके सामने विनम्र भाव से बैठ कर सीखने लगा तब कहीं उसे वह विद्या आयी।'

अपनी माता के इतना कहने के बाद मैं क्या बोलता! मैं स्वयं उसे प्रणाम कर अक्षर लिखने का अभ्यास कराने लगा। अब वह प्रति दिन घर के दैनिक कार्यों से निवृत्त होकर स्लेट लेकर बैठ जाती है और इस वृद्धावस्था में भी एकाग्र होकर बड़े परिश्रम से अक्षराभ्यास करती है।

ईश्वर से यही प्रार्थना है कि मेरी माता अपने श्रम से पढ़ लिख कर तैयार हो जाय और स्वस्थ रह कर विचारों को शुद्ध करने वाले धार्मिक और भक्तिप्रधान ग्रंथों का स्वयं पारायण कर भगवद् भजन में अपने सारे समय का उपयोग कर सके और एक दिन ऐसा हो कि वह अपने पास की संपत्ति गाँववालों के लिए छोड़ कर अनासक्त भाव से घर से निकल पड़े, वह हमें ही अपने परिवार के नहीं समझ कर जगत् को अपना परिवार समझे और विशाल अर्थ में मातृत्व को प्राप्त करे। —महेन्द्रकुमार शास्त्री

कानपुर में संयुक्त चुनाव

इस बार कानपुर के चुनाव-प्रचार में सर्वोदय की प्रेरणा से आयोजित चुनाव सभाओं का भी अपना विशिष्ट स्थान रहा। गत २१ फरवरी को रात्रि में ...गंज में आयोजित सभा में विशाल जन-समूह ने एक ही मंच से नगर के लोकसभा के सात प्रत्याशियों के विचार सुने। सभा की अध्यक्षता सर्वोदय कार्यकर्ता श्री गिरिजाशंकर अवस्थी ने की। लोक-शिक्षण के इस अभिनव प्रयोग का जनता द्वारा अच्छा स्वागत हुआ है।

गांधी श्राद्ध-दिवस

निम्न स्थानों पर गांधी श्राद्ध दिवस मनाया गया। बापू की समाधि पर सर्वोदय-मंडल, दिल्ली; फिल्लौर (जालंधर), पंजाब; खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय, कस्तूरबा (करनाल) द्वारा सूत्रांजलि-अर्पण मात्र। शांति-मंदिर, ... (जोधपुर); खादी ग्रामोद्योग विद्यालय, ...; महाराष्ट्र सेवा संघ और महाराष्ट्र सर्वोदय-मंडल, पूना।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्ति: जीवनं सत्य शोधनम्
भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

ज्ञान और करम का अंतर मीटायें

आज देश में शीक्षण-संस्थाअें चलती हैं, छात्रालय भी चलते हैं। छात्रों को आध्यात्मीक संस्कृती मीले, अैसी व्यवस्था भी होती है। सवेरे अुन्हें जल्दी भी अुठाया जाता है, काम कराया जाता है और स्कूल में जो नहीं मीलता है, वैसा ज्ञान पूरा करने के लीअे अुनको मौका मीलता है। परन्तु, अुसका मुख्य अंश तो वीद्यालय में जो मीलता है, वही रहता है। छात्रालय वाला ज्ञान तो चटनी जैसा हो जाता है। भोजन में रुची आये, अीसी के लीअे चटनी है, कीन्तु आहार की मुख्य वस्तु तो गरम रोटी और करेले की तरकारी है। वीद्यालय जो परोसे, वही मुख्य रहेगा। अुससे ज्यादा छात्रालय सेवा नहीं कर सकेगा। अुसमें वीद्यालय की थोड़ी बहुत रुची बढ़े, अीसके सीवा दूसरा कुछ नहीं होगा। छात्रालय में जल्दी अुठना पड़ता है, अीसलीअे अुठते भी हैं। लेकीन वीद्या पूरी करने के बाद नौकरी में लग जाते हैं, तो फीर क्यों जल्दी अुठेंगे? याद करेंगे की छात्रालय में जल्दी अुठते थे, ठंडे पानी से नहाते थे। अीन सब बातों को याद करने से ज्यादा कीमत नहीं दी जाती। यह कीमत तभी दी जायगी, जब वीद्यार्थीयों को आज जो मूल्य सीखाये जाते हैं, वे बदलें और नये मूल्यों की स्थापना हो। —वीनोबा

(मलीयावाड़ा, २६-११-'५८)

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

बिहार में फिर से

ग्यारह साल के करीब हुए, तैलंगाना (आन्ध्र प्रदेश) में भूदान-यज्ञ-आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ। मगर इसका व्यापक और प्रभावशाली रूप तो बिहार में १९५३-५४ में प्रकट हुआ। वहाँ विनोबाजी सत्ताईस महीने रहे, करीब बीस लाख एकड़ जमीन का दान तीन लाख दाताओं ने दिया और जमीन की मालकियत के विचार की बुनियादें हिल गयीं। एक नयी हवा तैयार हुई। क्या गरीब, क्या अमीर, दोनों को संतोष हुआ—गरीबों को इस कारण से कि उत्पादन के साधन पाने का उनका हक पूरा होगा और समाज में पारस्परिक सम्बन्ध भी सौहार्द और एकता के आधार पर बने रहेंगे, अमीरों को इस कारण से कि उनका व्यक्तित्व का बाल भी बाँका न होगा और समाज के हित में वे अपना पूरा योगदान कर सकेंगे। आर्थिक क्रांति के लक्ष्य पर पहुँचने का स्पष्ट मार्ग सामने आया। मगर अभी मंजिल थोड़ी दूर पर है और कुछ फासला तय करना बाकी है।

इस तथ्य की तरफ विनोबाजी ने बिहार के मित्रों का ध्यान जनवरी १९६१ में आसाम जाने के दौरान में आकर्षित किया। उन्होंने याद दिलाया कि ३२ लाख एकड़ का संकल्प किया गया था, ताकि बिहार में हर भूमिहीन को जमीन मिल जाये और यह मसला हल हो। उनको लगा कि अगर बिहार के भूमिवान लोग अपनी जमीन का बीसवाँ हिस्सा ही दान में दें—एक बीघे में केवल एक कट्ठा ही दें—तो यह लक्ष्य पूरा हो सकता है। इसलिए विनोबाजी ने एक नया मन्त्र ही दे दिया : "दान का इकट्ठा! बीघे में कट्ठा!!"

विनोबाजी की इस माँग पर उस समय बिहार में भूदान मिला भी। बिहार से उनके चले जाने के बाद, यहाँ के मित्रों ने काम को कुछ आगे बढ़ाया। लेकिन बरसात में भयानक बाढ़ आ गयी और मुंगेर जिले में जो कुछ तबाही हुई वह कौन नहीं जानता! फिर यह चुनाव आ गये! इस वजह से काम थोड़ा शिथिल पड़ गया। मगर बिहारवाले अब फिर अपने संकल्प की पूर्ति में लगने जा रहे हैं। गत जनवरी में प्रबन्ध समिति की बैठक जो विनोबाजी के पड़ाव पर हुई, उसमें भी इस कार्य को पूरा करने की आवश्यकता महसूस की गयी। जैसा कि श्री दत्तोबा दास्ताने के लेख से, जो पहले छप चुका है, स्पष्ट है कि इस बारे में विनोबाजी और प्रबन्ध समिति, सभी बहुत उत्सुक हैं। अगर पाँच हजार कार्यकर्त्ता-साथी जुट जाते हैं तो सहज ही यह काम हो जायेगा। एक दिन में पाँच बीघे जमीन पाना मुश्किल बात नहीं है। इस तरह दो माह में तीन सौ बीघे जमीन होती है। और अगर पाँच हजार कार्यकर्त्ता इस प्रकार जुट जाते हैं तो देखते-देखते लक्ष्य पूरा हो जायेगा। यह कोई असम्भव कार्य नहीं है। महज करने की देरी है। अगर मजबूती और नम्रता के साथ सब लग जाते हैं, तो सब हो जायेगा।

इस सम्बन्ध में हाल ही में बिहार सर्वोदय-मंडल की पटना में बैठक हुई। इस प्रश्न के सारे पहलुओं पर विचार किया गया। व्यूह-रचना भी बनायी गयी। बिहार सर्वोदय मंडल के भूतपूर्व संयोजक श्री श्याम सुन्दर प्रसाद को इस आयोजन का भार सौंपा गया है। अन्य प्रान्तों से भी कार्यकर्त्ता-बन्धु बुलाये जायेंगे और भूदान-आन्दोलन के प्राणवान कार्यकर्त्ता, वर्धा के भी ठाकुरदास बंग इसमें अपनी पूरी शक्ति लगायेंगे। इस तरह बिहार की और सारे देश की ताकत से मिल कर आगामी अप्रैल से काम शुरू होगा और १५ अप्रैल से १५ जून तक, दो माह यह अभियान चलेगा।

बिहार तो सदा से अहिंसा की भूमि रहा है। महावीर और गौतम बुद्ध ने अहिंसा के उत्तम से उत्तम प्रयोग और आविष्कार वहाँ किये। बीसवीं सदी में भी, हिन्दुस्तान के अन्दर अहिंसा का पहला प्रयोग बिहार में ही गांधीजी ने किया। उससे जो सत्याग्रह की ज्योति निकली, वह कौन नहीं जानता! स्वराज्य-प्राप्ति के बाद भूदान-यज्ञ के आन्दोलन को भी बिहार में अद्भुत सफलता मिली। उससे पता चल गया कि बिहार का मानस सच्चा और सात्विक है और अहिंसा के अनुकूल है। आज भी यहाँ की जनता अहिंसक क्रांति की तरफ आँख लगाये बैठी है। जरूरत यह है कि उसकी शक्ति और साधनों को सही पटरियों पर रख दिया जाये। फिर तो गाड़ी चल पड़ेगी। इसलिए भूदान-कार्यकर्त्ताओं को अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह उठानी है। आज अगर बिहार में भूदान-आन्दोलन अपने लक्ष्य को पाता है, तो फिर फल सारे देश में पावेगा। प्रभु से विनती है कि निमित्त मात्र बन कर सब इसमें लगें और नयी क्रांति के सन्देश-वाहक बनें।

काशी शराब-बन्दी की दिशा में

कविवर रवि ठाकुर ने कहा है कि अपने देश की विशेषता है कि यहाँ का किसान मजदूर दिन भर के काम धंधे के बाद रात को भजन-कीर्तन करके सोता है, लेकिन योरप-अमरीका में रात को नाच गाना और शराब का कार्यक्रम चला करता है। नशीली वस्तुओं के सेवन को अपनी सभ्यता और संस्कृति में कोई यश नहीं दिया गया। समाज में उन्हें नीचा समझा जाता है और उनसे होने वाली हानि किसी से छिपी नहीं है। महात्मा गांधी ने हिंदुस्तान में जब आजादी के आन्दोलन की बागडोर अपने हाथ में ली, तो देश के सामने जो पचसूत्री कार्यक्रम रखा उसमें शराब-बन्दी का प्रमुख स्थान था। शराब-बन्दी के लिए उन्होंने जो बड़े-बड़े आन्दोलन चलाये और माताओं-बहनों से पिकेटिंग आदि करवाया, वह हमारे स्वतन्त्रता-संग्राम के इतिहास के उज्ज्वल अध्यायों में से है। सन्तोष की बात है कि इसका महत्त्व स्वराज्य प्राप्ति के बाद भी महसूस किया और देश के विधान में भी इस पर जोर दिया गया। राजकीय नीति के निर्देशात्मक सिद्धान्तों में शराब-बन्दी को रखा गया है। विधान की धारा ४७ में कहा गया है :

"राज्य के बुनियादी कर्त्तव्यों में से यह भी है कि जनता का पोषण-स्तर और रहन-सहन का माप ऊँचा उठे और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार होता रहे। विशेषकर, राज्य की यह कोशिश रहेगी कि शराब, नशीली वस्तुओं तथा अन्य हानिकारक चीजों का इस्तेमाल, सिवाय उतना जितना दवा दारू या उपचार के लिये जरूरी हो, बन्द हो।"

दुर्भाग्य का विषय है कि इस निर्देश पर ठीक से अमल नहीं किया गया और आजाद हिन्दुस्तान में शराब की खपत बढ़ती ही जा रही है। इसका कारण यह है कि प्रदेश सरकारों ने इस तरफ ध्यान नहीं दिया। मद्रास, महाराष्ट्र और गुजरात को छोड़ कर, किसी भी प्रदेश में सरकार ने दिल लगा कर इसकी कोशिश नहीं की। अधूरे मन से जो काम किये जाते हैं, उनसे तो लाभ के बदले हानि ही होती है। यही वजह है कि आज शराब बन्दी का मखौल उड़ाया जाता है और इसकी सफलता में ज्यादा कठिनाई आती जाती है। प्रदेश सरकारें उत्साह से इस कार्यक्रम को चलाने के लिये तैयार नहीं हैं; क्योंकि उनका कहना है कि इससे आर्थिक नुकसान होता है, आमदनी मारी जाती है। मगर यह तो बड़ी पुरानी दलील है, जो आर्थिक दृष्टि से एकदम बेबुनियाद और नैतिक दृष्टि से खोखली है।

इधर कुछ अर्से से केन्द्रीय सरकार ने इस दिशा में कुछ फिकर करनी शुरू की है। योजना-आयोग की मंशा है कि जल्दी-से-जल्दी शराब बन्दी लागू हो और तीसरी योजना के अंत तक देश भर में शराब-बन्दी हो जाये। साथ ही, उन्होंने यह भी आश्वासन दिया है कि प्रदेशों का जो आर्थिक घाटा है, उसे भी बहुत हद तक पूरा कर देंगे। लेकिन सच तो यह है, जैसा कि श्री श्रीमन्नारायणजी ने अपने एक भाषण में चंडीगढ़ में बताया, शराबबन्दी फायदे का सौदा है। उनका कहना है कि प्रदेशों को चालीस करोड़ रुपये साल का नुकसान तो होगा, लेकिन

कुल देश को लगभग सवा सौ करोड़ का व्यय होगा ! स्पष्ट है कि आर्थिक घाटे की दलील में कोई सार नहीं है। अब जब चुनाव खत्म हो चुके और नयी सरकारें बनने जा रही हैं, तो उनका फर्ज है कि नशाबन्दी का कार्यक्रम श्रद्धा और लगन के साथ पूरा करें।

मगर सरकार के बूते पर ही नहीं रहा जा सकता। जनता को भी आगे कदम रखना पड़ेगा और तभी सरकार में चेतना आयेगी। बड़े आनन्द की बात है कि काशी में इस दिशा में कुछ काम करने का निश्चय किया गया है। गत १७-१८ फरवरी को उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल ने व्यापक रूप से काशी में शराबबन्दी का आन्दोलन चलाने का फैसला किया। सोचा यह गया है कि २६ मार्च से काम शुरू हो, एक लाख लोगों के हस्ताक्षर लिये जायें, सभा-जुलूस आदि का आयोजन हो और ऐसा लोकमत बने कि उत्तर प्रदेश सरकार ६ अप्रैल १९६२ के पहले ही काशी में शराबबन्दी का ऐलान कर दे। याद रहे कि सवा साल पहले जब विनोबाजी आसाम जाने के रास्ते में काशी आये थे, तो उन्होंने इस कार्यक्रम को उठाने के लिए कहा था और इसके लिए सत्याग्रह तक की अनुमति दे दी थी। इस वास्ते उत्तर प्रदेश के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं पर बड़ी भारी जिम्मेदारी आ जाती है। उन्हें चाहिए कि अपनी पूरी शक्ति से काम करें, व्यवस्थित ढंग से व्यूह-रचना करें और दृढ़ता और नम्रता से उसको पूरा करें।

लेकिन उनका काम केवल आंदोलन या प्रचार का नहीं होना चाहिए। दरअसल उनका काम लोक-शिक्षण का है। उनका प्रयत्न इस ढंग से होना चाहिए कि समाज में एक नयी शिक्षणात्मक प्रक्रिया शुरू हो जाय। शराब और नशा-सेवन के जो अनेक नतीजे निकलते हैं, उसकी पूरी जानकारी जनता को हो जानी चाहिए। सभी पहलू के–आर्थिक, शारीरिक, मानसिक, मनोवैज्ञानिक और नैतिक–उसके सामने आने चाहिये। शराब से तुरन्त भले कोई नुकसान न दीखे, लेकिन कुछ काल के अन्दर इससे व्यक्तिगत तबाही और राष्ट्रीय बरबादी होती है। जैसा कि फ्रांसीसी लेखक, अलेक्सी कैरल ने अपने एक ग्रंथ में कहा है :

> "शराब, नशीली चीजों और हर तरह की ज्यादती का नतीजा यह होता है कि लोगों की विवेक-शक्ति मंद पड़ जाती है और उनकी बुद्धि भी कमजोर हो जाती है। इसका कारण नैतिक अनुशासन का अभाव है। नशा-सेवन और समाज के मानसिक पतन में अटूट सम्बन्ध है। फ्रांस को ही देख लीजिए–यहाँ शराब सबसे ज्यादा पी जाती है और नोबेल पुरस्कार सबसे कम मिला करते हैं। यह जरूर है कि

सिनेमा, बेतार के तार और स्कूलों के पेचीदा पाठ्यक्रमों के कारण भी फ्रांसीसी मस्तिष्क इस जटिल अवस्था को पहुँचा है। मगर इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि उनकी गिरावट का मूल कारण शराब और नशा ही है। शराब की वजह से ही ये लोग जो एक जमाने में संसार में सबसे ज्यादा तीव्र बुद्धि के माने जाते थे, आज पतन की ओर अग्रसर हैं।

यह दृष्टि है जिसे ध्यान में रख कर कार्यकर्ता-बन्धुओं को काम करना होगा। इसके खातिर उन्हें पूरी तैयारी भी करनी चाहिए और समझ-बूझ कर कदम उठाना चाहिए। बेशक यह कार्य आसान नहीं है। लेकिन है बहुत महत्त्व का और शक्तिशाली काम, जिसे कोई दूसरा न कर सकता है, न कर रहा है। यह वह काम है जिससे जन-शक्ति भी जाग्रत होगी और अपनी समस्याएँ खुद हल करने की कुंजी भी लोगों के हाथ लगेगी। हमें यकीन है कि कार्यकर्ता-मित्र समय की माँग के अनुसार ऊपर उठेंगे और निष्ठा व समर्पण वृत्ति से जुटेंगे। तभी काशी से शराब दूर होगी और यह नगरी देश की धर्मधानी बनेगी। —सुरेश राम

यह अनोखा लोकतन्त्र !

• रामाधार

देश में आम चुनाव के शोरगुल की धूम है। यह तीसरा आम चुनाव है। कहा जाता है कि इससे लोक-शिक्षण होता है। लेकिन पहले दो चुनावों और वर्तमान चुनाव का जो अनुभव आया और आ रहा है, उसमें शिक्षण तो बहुत दूर की बात है, कुशिक्षण ही हो रहा है, ऐसा देखने में आता है। यह ठीक है कि इससे एक मोटा लाभ यह जरूर है कि देश का शासन चलाने वाले लोगों में कहीं-कहीं थोड़ा-बहुत परिवर्तन होता है, लेकिन जब हम चीजों को गहराई से देखते हैं तो इस सामान्य परिवर्तन का मूल्य नगण्य-सा हो रह जाता है।

दरअसल आजादी प्राप्त करने के बाद से ही हम एक भूल भुलैया में पड़ गये हैं। हमारे नेताओं ने मान लिया है कि प्रचलित शासन-व्यवस्थाओं में से पश्चिम का लोकतन्त्र ही श्रेष्ठ व्यवस्था है और हमें उसे ही अपनाना चाहिए। सामान्यतः इस मान्यता में दोष नहीं है। लेकिन पद्धति को चुनने के बाद उसके लिए अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करना भी आवश्यक होता है। अगर वे परिस्थितियाँ पैदा न की जायँ तो किसी भी पद्धति का मूल रूप विकृत होकर ऐसा हो जायगा, जिसका अपने वास्तविक रूप से कोई सम्बन्ध नहीं रह जायगा। दुर्भाग्य से हमारे देश में लोकतन्त्र की यही गति हो रही है!

किसी भी व्यवस्था को चलाने के लिए सबसे आवश्यक साधन मानव-सामग्री है। अल्पसंख्यक मानवों के द्वारा, जो सरकार के संगठन को चलाते हैं, वृहत् मानव-समूहों की व्यवस्था होती है। अतः इस अल्पसंख्यक शासक-समूह के चुनाव तथा प्रशिक्षण का प्रश्न असाधारण रूप से महत्त्वपूर्ण है। अगर कोई जाति अथवा देश इस प्रश्न को वह अहमियत नहीं देता, जो देनी आवश्यक है तो अन्ततः उसकी व्यवस्था में इतने दोष पैदा हो जाते हैं जिससे व्यवस्था और अव्यवस्था में कोई अन्तर नहीं रहता। इसका अभिप्राय यह हुआ कि किसी भी जाति अथवा देश के नेताओं का सबसे आवश्यक कर्तव्य यह है कि वह स्वयं अपनी भावनाओं तथा आचरण को देश के हित के अनुकूल बनाये और देश का शासन चलाने के लिए ऐसे लोगों को चुने, जो अपना व्यक्तिगत स्वार्थ गौण रख कर देश के सामूहिक हित को प्रधानता देकर उसके साथ एकरूप हो जाय। यदि इसमें कहीं भी असावधानी रहेगी तो उसका असर देश या समाज की व्यवस्था में कहीं-न-कहीं प्रकट हुए बिना नहीं रहेगा।

हमने देश में यही असावधानी की है। गांधीजी की मृत्यु के बाद हमने लोकतन्त्र के जड़ ढाँचे को तो जरूर पकड़े रखा है, लेकिन लोकतन्त्र की मूल भावना के प्रति हम उदासीन रहे हैं। परिणाम-स्वरूप शासन-व्यवस्था चलाने के सम्बन्ध में सही और अच्छी मानव-सामग्री चुनने के बारे में ऐसी स्वार्थपरता या अभाव लिया गया है, जिसकी मिसाल आसानी से कहीं नहीं मिलती। आज सत्ता के सारे सूत्र सिमट कर ऐसे लोगों के हाथ में आ गये हैं, जिन्होंने अपने जीवन में अपना निजी स्वार्थ ही प्रधान रखा था। धीरे-धीरे इन लोगों ने वृहत् परिमाण में "निहित स्वार्थों" की रचना की और अब उनका प्रभाव इतना व्यापक हो गया है कि हर क्षेत्र में निजी स्वार्थों का ही बोलबाला हो गया है। इसी प्रक्रिया का शिकार कर हमें आम चुनावों में भी देखने को मिल रहा है।

राष्ट्रीय कांग्रेस, जो एक समय हमारे देश में सर्वसाधारण जनों की आशाओं और आकांक्षाओं का केन्द्र थी, आज विभिन्न प्रकार के द्वंद्वों और उनके स्वार्थों में होने वाले आपसी संघर्ष की युद्धस्थली बन गयी है। यही वजह है कि कांग्रेस का टिकट लेने के बारे में ऐसा विकट और विकराल संघर्ष हुआ, जिसको देख कर इन्सान का अन्तःकरण विभिन्न प्रकार की निराशाओं से अभिभूत हो जाता है। अब यही परिस्थिति प्रकारान्तर से चुनावों में अपने को प्रकट कर रही है।

यह चुनाव आजकल क्या है ! जिसके पास कम-से-कम १५-२० हजार रुपये खर्च करने की सुविधा नहीं है, वह चुनाव में उम्मीदवार बनने का स्वप्न भी नहीं देख सकता। इसी प्रकार लोकसभा के लिए रुपये ढाई-तीन गुनी रकम होनी चाहिये। जिस लोकतान्त्रिक व्यवस्था में चुनाव इतने महँगे हों और जिस देश की ९० फीसदी जनता इतनी दरिद्र हो कि उन्हें दोनों समय रूखी-सूखी रोटी भी नसीब नहीं होती, वह अपने वादियों का प्रतिनिधित्व करने का स्वप्न भी कैसे देख सकते हैं ! इतना ही नहीं, आज तो निर्विरोध चुने जाने के लिए भी राशि-राशि धन व्यय करना पड़ता है। सुना गया है कि जो लोग अभी निर्विरोध चुने गये हैं, उन्हें अपने विरोधियों को बिठाने के लिए अपार धन-राशि खर्च करनी पड़ी है। देश में इस समय जो भ्रष्टाचार फैला हुआ है, उसे देखते हुए ये अफवाहें निराधार नहीं मालूम होतीं। कहने का अभिप्राय यह है कि जिस देश में प्रतिनिधि चुने जाने में धन का महत्त्व इतना अधिक और व्यापक है, वहाँ लोकतन्त्र की हत्या तो अपने आप ही हो गयी। फिर तो यह लोकतन्त्र न रह कर 'पैसा-तन्त्र' हो गया !

जिन लोगों के हाथ में धन के अलावा प्रभुता के दूसरे साधन हैं, उनका भी इस चुनाव प्रक्रिया में विशेष महत्त्व है। वे लोग मतदाताओं पर हर प्रकार का दबाव डाल कर ऐसे लोगों को चुनवाने की व्यवस्था करते हैं, जो उनकी प्रभुता की रक्षा करें और उसे और भी फैलायें। इनमें अधिकार, जाति-पाँति, रिश्तेदारी आदि सभी प्रकार के दबावों का प्रयोग होता है। आज इन सारी ही बातों का बोलबाला इतना अधिक है कि जो लोग किन्हीं विशेष अधिकारों से विभूषित नहीं हैं, वे किसी भी तरह चुने जाने की आशा नहीं कर सकते, चाहे उनके अन्दर सार्वजनिक सेवा की भावना कितनी ही प्रबल हो।

इस प्रकार जहाँ तक लोकमत-दान का प्रश्न है, अनुभव यह आ रहा है कि मतदाता अपनी इच्छानुसार अपना मत देने के लिए स्वतंत्र नहीं है। भिन्न-भिन्न प्रकार उनके ऊपर प्रभाव या दबाव डाल कर उनसे मत लिया जाता है। आश्चर्य तो यह है कि अधिकांश पिछड़े वर्गों के लोगों का मत देने से वंचित रखा जाता है। अतः इसे हम लोक-शिक्षण कहें अथवा लोक-अत्याचार ! यह परिस्थिति,

जैसा हमने पहले ही कहा है, हमारी प्रारम्भिक भूलों से ही पैदा हुई है। योग्यता और कुशलता के नाम पर हमने शासन-व्यवस्था चलाने के लिए ऐसे लोगों को नियुक्त किया, जिन्होंने अपना स्वार्थ-साधन करना ही सीखा था। उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य अपना 'कैरियर' बनाना था। धीरे धीरे उनका प्रभाव राजनीति को चलाने वाले नेताओं पर भी बढ़ा और अन्त में इन दोनों वर्गों के सम्मिलित प्रभाव से सारे देश में ऐसी हीन प्रक्रिया फैल गयी, जिससे लोकतन्त्र की वास्तविक और मूल भावना का गला घुट रहा है।

लेकिन यह सब अरण्यरोदन ही है। अब तो हम ऐसे प्रवाह में पड़ गये हैं कि उसमें से निकलने के लिए एक व्यापक क्रांति की ही आवश्यकता पड़ेगी। इस नयी क्रांति के लिए हमें नया गांधी चाहिये। निहित स्वार्थों की स्थापना इतनी दृढ़ हो चुकी है कि उनको उखाड़ फेंकना आज छोटे मोटे प्रयत्नों से सम्भव नहीं। व्यापक एवं निरन्तर प्रचार के बल निहित स्वार्थों को गढ़ने वाले आज लोकप्रिय भी बन गये हैं। पण्डित नेहरू स्वयं इसके बहुत बड़े उदाहरण हैं। भारत का जनमानस पिछली कई शताब्दियों से ऐसी परिस्थितियों का शिकार रहा है कि उसके लिए दो प्रकार के विशिष्ट जन ही पूजनीय बन गये हैं। पहले तो गांधीजी जैसे महात्मा, जिनकी संख्या नहीं के बराबर है, और दूसरे वह जो अपनी शान शौकत और राजसी ठाट-बाट से जनता की आँखों को चौंधिया सकते हैं। इस दूसरी वजह के कारण इस देश में बड़े-बड़े राजा महाराजा आज भी प्रिय हैं। यह परिस्थिति लोकतन्त्र के लिए असाधारण रूप से अहितकर है।

वैसे भी इस लोकतन्त्र का स्वरूप कुछ ऐसा सीमित तथा संकीर्ण है कि अधिकांश राज्यों में अल्पसंख्यक मतदान के आधार पर ही राज्य-व्यवस्थाएँ चल रही हैं। मसलन, उड़ीसा से काँग्रेस दल का बहुमत १५ फी-सदी मतदान के आधार पर ही राज्य-व्यवस्था चला रहा है। यह कैसा लोकतन्त्र है! दुनिया के सभी देशों और जातियों में राज्य व्यवस्था को अपरिहार्य मान लिया गया है। और भी बड़ा दुर्भाग्य यह है कि सभी राज्य-व्यवस्थाएँ अपने स्वरूप और अपने अधिकार-क्षेत्र को बढ़ाती चली जा रही हैं। अब परिस्थिति यह बन गयी है कि हम मानने लगे हैं कि राज्य चलाने वाले कोई-न-कोई होना ही चाहिये। अगर अच्छे लोग नहीं हैं तो बुरे लोग ही सही। इसी दृष्टि से इस अल्पमत काँग्रेसी राज्य की सार्थकता मालूम होती है, यद्यपि लोकतन्त्र की भावना पर विचार किया जाय तो यह किसी भी तरह लोकतन्त्र नहीं है। वैसे अगर हम इस बात को भूल जायँ कि इस देश में प्रायः ३१ वर्ष तक गांधीजी का नेतृत्व रहा है और हम यह भी भूल जायँ कि भारतीय संस्कृति की परम्परा में ऐसे तत्त्व काम करते रहे हैं, जो मानव समाज की विभिन्न कठिनाइयों को हल करने के लिए कुछ समाधान दे सकते हैं, तो वर्तमान परिस्थिति अपने आप में विशेष निराशाजनक नहीं है। लेकिन प्रथम विश्वयुद्ध के बाद सारी दुनिया में जैसी उथल-पुथल मची थी और जिसके फलस्वरूप व्यापक रूप से हृदय मन्थन और चिन्तन हुआ था, उससे पश्चिम के अनेक विचारकों और मनीषियों ने भारतवर्ष की ओर मुँह करके कहा था कि हमारे दुःख-दर्द की औषधि सम्भवतः यहाँ मिल सकेगी। सौभाग्य से तभी यहाँ गांधीजी का उदय हुआ और उनके प्रयोगों ने यह सिद्ध कर दिया कि संसार में आपसी कलह, संघर्ष, हिंसा और स्वार्थपरता आदि का हल शांतिपूर्ण उपायों से ही हो सकता है। इन्हीं कारणों से भारतवर्ष की आजादी के सवाल को दुनिया के विभिन्न देश गहरी दिलचस्पी से देखते आये थे। जब भारत आजाद हुआ, उसके कुछ ही पहले विश्व दूसरे महायुद्ध की विभीषिका से बाहर निकल कर सका ही हुआ था। ऐसे सन्धिकाल में सभी ओर यह आशा बंधी थी कि भारतीय जन किसी ऐसी व्यवस्था का निर्माण करेंगे, जिसमें उन भ्रान्त तथ्यों का समावेश नहीं होगा, जिनके कारण पश्चिम में ऐसी भयानक उथल-पुथल मचती आयी है। दुर्भाग्य से तभी गांधीजी इस जगत् से उठा दिये गये और उसके बाद जो कुछ होता आ रहा है, वह सभी कुछ पश्चिम की भद्दी और कुरुचि पूर्ण नकल मात्र है। यह लोकतन्त्र भी वहीं का ही एक कुरूप संस्करण है। इस पृष्ठभूमि में ही हमारी वर्तमान अवस्था विशेष निराशाजनक लगती है। हाँ, जिन-जिन लोगों ने इस देश के लिए और इस देश के सर्वसाधारण के सम्बन्ध में चिन्तन नहीं किया है और सुन्दर-सुनहले सपने नहीं देखे हैं, उन्हें इस निराशा में भी सब कुछ हरा भरा दृष्टिगोचर होता है।

अगर हम विचारपूर्वक चलते और लोकतन्त्र को सही अर्थों में लोकतन्त्र बनाने का इरादा रखते तो हम उसके बाहरी ढाँचे पर जोर न देकर उसके भीतर निहित मूलभावना के संरक्षण पर कहीं अधिक बल देते। तब इस पद्धति का स्वरूप निखरता आता और हम एक विकसित लोकतन्त्रीय पद्धति इस देश में गढ़ सकते। हमारे देश का प्राचीन इतिहास बहुत अस्पष्ट है, लेकिन अनेक प्रमाणों से यह साबित होता है कि बीच-बीच में ऐसे अवसर आये हैं, जब किन्हीं प्रदेशों में लोकतन्त्र की स्थापना का प्रयत्न किया गया था और कहीं-कहीं उसका स्वरूप यथेष्ट निखरा हुआ भी था। लोकतन्त्र में मुख्य विचार बहुमत-अल्पमत का नहीं है। बहुमत-अल्पमत का सिद्धान्त तो एक आपद्धर्म के रूप में ही है। लोकतन्त्र की मूलभावना सर्व सहमति की पोषक है। हर कार्य में सब लोग सहमत हों, यह प्रयत्न निरन्तर होता रहना चाहिए और अगर यह सम्भव न हो पाये तो अधिक-से-अधिक लोग सहमत हों और कम-से कम लोग असहमत हों, ऐसी कोशिश रहे। जब बिल्कुल ही ऐसी सम्भावना न हो और कोई अमुक निर्णय करना अपरिहार्य हो जाय, तभी ४९-५१ के सिद्धान्त की कसौटी अपनानी चाहिये। लेकिन यह बात सामान्यतः ऐसे मामलों के सम्बन्ध में मान्य होनी चाहिये, जिनके लिए सामान्य बहुमत काम में लाया जा सकता है और आगे चल कर उससे कोई कठिनाई न पैदा हो। पर समाज व्यवस्था से सम्बन्ध रखने वाले कुछ ऐसे मसले भी हो सकते हैं, जिनको सर्वसम्मति के बिना कभी तय नहीं करना चाहिये। कुछ और मसले हो सकते हैं, जिनके लिए कम-से-कम तीन चौथाई बहुमत अनिवार्य मानना चाहिये। इस विचार को बाजाब्ता विधान में शामिल करने की आवश्यकता नहीं है। विधान तो बहुमत-अल्पमत के आधार पर बना लेने में हर्ज नहीं है, पर परम्परा ऐसी बननी चाहिये कि आम तौर पर सर्वसम्मति अथवा बहुत बड़ा बहुमत ही किसी प्रश्न का निर्णायक हो सके। यह मार्ग निश्चय ही लम्बा है, लेकिन लोकतन्त्र के विकसित और निखरे हुए रूप के लिए अत्यन्त आवश्यक है। जिस नेतृत्व में यह बुनियादी दृष्टिकोण मौजूद होगा, वह नेतृत्व ही सही अर्थों में लोकतन्त्र की स्थापना कर सकेगा; अन्यथा आजकल का पाखण्ड-युक्त लोकतन्त्र ही हमारे मत्थे मढ़ा रहेगा। इस समय जो लोकतन्त्र हमारे भाग्य में पड़ा है, उसमें नित्यप्रति शासन-कार्य चलाने की व्यवस्था में लोकप्रतिनिधित्व प्राय शून्य हो गया है। चुनावों में पूरे लोग भाग नहीं लेते। सामान्यतः पाया गया है कि ५०-६० और कभी-कभी इससे भी कम फी-सदी लोग मतदान में भाग लेते हैं। उसमें भी यदि दो से अधिक उम्मीदवार खड़े हों तो उनमें से सबसे अधिक मत पाने वाला चुन लिया जाता है। इस पद्धति से कई बार १५-२० फीसदी या उससे भी कम मत पाने वाला उम्मीदवार उस चुनाव-क्षेत्र का प्रतिनिधि बन जाता है। यह लोकतन्त्र का उपहास ही तो है। उड़ीसा में काँग्रेस पार्टी को कुल मिला कर १५ फीसदी मत मिले हैं और इस १५ फीसदी पर ही उनका काफी बड़ा बहुमत हो गया है। यह कागजी लोकतन्त्र है। लेकिन यह सिलसिला यहीं समाप्त नहीं होता। काँग्रेस दल का कुल मिला कर तो बहुमत बनता है, लेकिन उसके अन्दर भी अलग-अलग कई पार्टियाँ होती हैं और हैं। उनमें फिर मतदान होता है और जिसको ज्यादा मत मिलें वह नेता चुना जाता है। वह नेता ही अपना मन्त्री-मण्डल नियुक्त करता है। इस प्रकार एक पार्टी के अन्दर बहुमत अल्पमत के सिलसिले से जन प्रतिनिधित्व और भी कम हो जाता है। बाद को यह मन्त्री-मण्डल भी अक्सर बहुमत-अल्पमत के आधार पर ही अनेक बातों का निर्णय करता है। बहुधा तो उसके अन्दर जो एक-दो दबंग आदमी होते हैं और जो 'पार्टी-बॉस' कहलाते हैं, वे जो कुछ निर्णय कर दें, उसी पर मन्त्रीमण्डल की स्वीकृति की मोहर लगा दी जाती है। इस प्रकार घटते घटते आखिर में जो व्यवस्था रह जाती है, उसमें 'लोक' तो गायब हो जाता है और 'तन्त्र' ही रह जाता है। इस तरह इस व्यवस्था में और अन्य व्यवस्थाओं में ऐसा क्या खास अन्तर है, यह निश्चय कर पाना कठिन मालूम होता है। अन्तर यदि है भी तो उसका विशेष मूल्य नहीं है। अतः जो लोग इस लोकतन्त्र के लिए बड़ी लम्बी-लम्बी और खूबसूरत बातें कहते हैं, वह सब बहकावे की बात है और एक व्यापक स्वार्थपरता की शृङ्खला की एक कड़ी मात्र है।

इसीलिए हमें बार-बार यह पूछने की आवश्यकता पड़ रही है कि आखिर हमारा प्रचलित लोकतन्त्र किन अर्थों में लोकतन्त्र है। यह बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रश्न है और जो लोग इस सवाल को मजाक में उड़ा देना चाहते हैं, वे अपनी सेवा भले ही कर लें, देश या जनता की सेवा उनके द्वारा सम्भव नहीं है। वैसे हमें यह आशा नहीं है कि हमारे देश का वर्तमान शासक-वर्ग समस्या के इस पहलू पर विचार करने के लिए राजी होगा। लेकिन फिर भी इसकी उपेक्षा करने से जो खतरे आने की सम्भावनाएँ हैं, उनकी ओर विचारशील लोगों का ध्यान आकर्षित करना आवश्यक है।

हृदय-परिवर्तन

गुजरात के भूदान के प्रतिष्ठित कार्यकर्ता श्री चन्द्रवदन लश्करी की तपोभूमि और ग्रामसेवा-केन्द्र, चिलोड़ा के अनपढ़ ग्रामीणों ने आजीवन मद्यपान न करने की प्रतिज्ञा की।

गत पंद्रह वर्षों से तो श्री लश्करी पैरों में जूते भी नहीं पहनते, क्योंकि उन्होंने प्रतिज्ञा की थी कि जब तक चिलोड़ा के निवासी शराब के व्यसन से संपूर्ण मुक्त नहीं होंगे, तब तक मैं अपने पैरों में जूते नहीं पहनूँगा, नंगे पैरों ही रहूँगा।

१९ जनवरी, '६२ को चिलोड़ा-निवासी लोगों ने ढ़ुमाते पीट कर उनका स्वागत किया और गाँव के प्रमुख सरपंच ने उनके चरणों में पदत्राण समर्पित किये। बाद में ग्रामवासियों की सभा में श्री लश्करी ने भाषण देकर आनंद व्यक्त किया।

गाँववालों ने एक के बाद एक खड़े होकर सर्वनाशी शराब न पीने की प्रतिज्ञा की।

श्री लश्करी को नौ वर्षों की तपस्या की सिद्धि मिली और ग्रामवासियों का हृदय-परिवर्तन हुआ। बाद में सामूहिक भोजन हुआ।

—सुभद्रा मो० गांधी

मेरी विदेश-यात्रा : ३

• देवीप्रसाद

[भाई श्री देवीप्रसाद, जो आम तौर से 'देवीभाई' के नाम से जाने जाते हैं, पिछले साल विदेशों में, विशेषतः यूरोप में शांति-आन्दोलन के अध्ययन के सिलसिले में गये थे। बेरूत के विश्वशांति-सेना परिषद में भी आपने भाग लिया था। आप 'युद्ध-विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय' के मंत्री भी चुने गये हैं और शीघ्र ही लन्दन में अपना कार्यभार सम्हालने वाले हैं। उनकी यात्रा के संस्मरण पिछले दो अंकों में दिये जाते रहे हैं। यह है, उनकी यात्रा का अंतिम संस्मरण। —सं०]

जर्मनी से हालैण्ड गया। वहाँ के मित्र श्री कार ट्रक ने मेरी यात्रा का अधिकतर इन्तजाम किया था। उन्हीं शहरों के शांतिवादी मित्रों का बुलावा मेरे पास आया। अन्टवर्प, लिवेज आदि स्थानों पर अच्छी सभाएँ हुईं। विनोबाजी और भूदान-आन्दोलन के बारे में जानने की कितनी उत्सुकता है, इसका अनुभव सब जगह पर होता है। लिवेज जैसे शहर में अकस्मात् एक बहन से मुलाकात हो गयी। मुझे कुछ असमंजस हुआ, किन्तु बड़ा सुखकर। इस बहन ने विनोबाजी से बिना मिले, बापू से मिलना तो क्या उनके बारे में अधिक जानकारी न पाते हुए भी, उनके काम पर लिखी हुई श्री सुरेशराम भाई की पुस्तक "विनोबा एण्ड हिज मिशन" का अनुवाद किया। क्या बात है कि यूरोप के उस कोने में बैठी हुई एक बहन को इस आन्दोलन के प्रति इतनी श्रद्धा पैदा हो!

इंग्लैण्ड में किसान-जीवन के साथ थोड़ा-सा परिचय हुआ था, पर यहाँ तो उस वातावरण में दो दिन रह कर काफी समझने का मौका मिला। यह एक गाँव है, किन्तु इन किसानों को शहर की सभी सुविधाएँ उपलब्ध हैं। उनके जीवन का स्तर किसी भी हालत में शहरी जीवन-स्तर से नीचा नहीं है। कई बातों में, जैसे हम लोग यहाँ भारत में भी देखते हैं, उन्हें अधिक सुविधाएँ रहती हैं, खाने-पीने की चीजें बिल्कुल ताजी और सस्ती। पर एक बात देख कर वर्तमान समाज-व्यवस्था पर विश्वास और भी कम हो गया। किसान के लड़के वहाँ भी किसान बने रहने के लिए तैयार नहीं हैं। यदि परिस्थितिवश या कुछ बुद्धि की कमी के कारण किसी को रहना भी पड़े तो वह सामाजिक जीवन में सर्वमान्य स्तर पर पहुँच सकेगा, इसकी उसे आशा ही नहीं रहती—यहाँ तक कि कोई पढ़ी-लिखी लड़की उससे विवाह भी करने के लिए तैयार नहीं होगी।

बर्फ पड़नी शुरू हो गयी थी। थोड़ी-थोड़ी पड़ रही थी। पूरा बर्फ ढँके देश को देखने की इच्छा थी। पहली रात इधर तो बर्फ नहीं पड़ी, लेकिन कुछ दूर के पहाड़ों पर देखा कि वे बर्फ से ढँके हैं। मेरे आतिथेय ने कहा कि यदि मैं उन पहाड़ियों तक जाना चाहता हूँ तो स्विट्जरलैण्ड की सरहद पार कर फ्रान्स में जाना होगा। सरहद पार करने का भी एक नशा हो जाता है। मुझे लगा कि जरूर आज फिर एक बार फ्रान्स की सरहद पार करके वापिस आ जाएँ। हम सब उन बर्फीली पहाड़ियों पर घूमने गये। वहाँ देखा कि अनेक परिवार अपने बच्चों को लेकर बर्फ में खेलने आये हैं। बर्फ का जीवन कठिन होता है। इसके बावजूद भी उन्होंने उसे कम कठिन बनाने के लिए अपना खेल का साथी बना लिया है।

बर्न में बिल्कुल अपने घर में रहने के जैसे दस दिन रहा। उसके बाद ज्यूरिख, फिर एक बार दो दिन के लिए एकनायर परिवार के साथ। रावर्ट के माता-पिता ने दोनों बार मुझ पर स्नेह की वर्षा की।

सीसली रहते समय दानिलो के साथी श्री अछुवार्डो से घनिष्ट मित्रता का सम्बन्ध महसूस किया। उन्होंने आग्रह के साथ लिखा कि मैं उनके घर होता हुआ इटली जाऊँ। वे स्विट्जरलैण्ड के दक्षिण में आस्कोना में रहते हैं। छह माह दानिलो के केन्द्र में और बाकी छह माह यूरोप के देशों में समाज-सेवा का अध्ययन-कार्य करते हैं। पिछले दिनों उन्होंने डेढ़-दो महीना स्पेन की परिस्थिति का अध्ययन किया था। दानिलो छह सप्ताह रूस भ्रमण करके आये थे और सीसली जाने के रास्ते में अछुवार्डो के साथ उनकी मुलाकात हो गयी थी। स्पेन के अनुभव और दानिलो के रूस के अनुभव जानने की उत्सुकता थी, इसलिए स्विट्जरलैण्ड से इटली जाते समय आस्कोना का रास्ता ही लिया। एक दिन श्री अछुवार्डो और उनके परिवार के साथ रहा। आस्कोना में कुछ व्यक्तियों से मिला और वहाँ का प्राकृतिक सौन्दर्य का आकण्ठ पान किया।

आस्कोना से मिलानो आते समय स्विट्जरलैण्ड की बर्फीली चोटी व सेन्ट गोथार्ड का दर्शन किया और बर्फ से ढँकी धरती के ऊपर से दर्जनों सुरंगों में से गुजरते हुए मिलानो पहुँचा। मौसम बिल्कुल बदल चुका था। इटली में जाते समय ऐसा लगता था कि मानो किसी 'ट्रापिकल' आबोहवा में ही हूँ। पहले तीन-चार महीने सोचता था कि न जाने क्यों, यूरोप के लोग अपने आबोहवा को मिथों से और कुहरे से भरी आबोहवा मानते हैं। कई बार मित्रों से मजाक करता था कि भारत वापिस जाने के बाद सबसे कहूँगा कि यूरोप भी धूप का ही देश है। मेरा भाग्य कुछ अच्छा था, जहाँ-जहाँ उन महीनों गया, मुझे धूप ही मिली। पर अब पता चला कि किसे कहते हैं यूरोप की आबोहवा। दोनों-तीनों दिन मिलानो कुहरे से ढँका रहा। मैंने मुझे वहाँ दो-तीन चीजें ही देखनी थीं और उनमें भी खास तौर पर लियोनार्डो का भित्तिचित्र 'लास्ट सप्पर' और मैकल अंजालो की कुछ मूर्तियाँ। यहाँ भी वही बात! सैकड़ों बार बहुत अच्छी फोटो आदि इन कृतियों की देखी थीं, किन्तु जो प्रत्यक्ष देखा, वह कुछ अलग ही दुनिया की चीज है।

मिलानो से फ्लारेन्स। वृद्ध महिला मारिया कौनेर्ती ने कमरा दिखाया और एक लम्बे से पुराने लाल चोगे की तरफ इशारा करते हुए कहा, "कपड़े बदल कर इसे पहन लेना, जब मेरा लड़का यहाँ रहता है वह इसे पहनता है!" पाँच दिन इनके मातृत्व की छाया में बड़े मीठे रहे और फिर शहर भी फ्लारेन्स, कला-जगत् की स्वप्न-नगरी! मारीया कौनेर्ती 'क्वेकर' हैं और इटली में शांति-कार्य के प्रति बड़ी संभावनाशील सहायक हैं। इसलिए तरह-तरह के लोगों से मिल पाया। एक बैठक साहित्यकारों की हो रही थी। न जाने क्यों, उन्होंने मुझसे हमारे इस कार्य के बारे में कुछ कहने के लिए कहा। मैं जानबूझ कर पन्द्रह मिनट ही बोला। मुझे कुछ ऐसा लगा कि क्यों मैंने उस दिन कुछ कहने का स्वीकार किया? क्यों इन लोगों को, जो इस सुख-दुःख की दुनिया को छोड़ कर सात आसमानों के पार उड़ान ले रहे थे, पकड़ कर इस दुःखमय धरती के ऊपर पटकने जैसी बात कर दी! चलो, अच्छा ही हुआ इन सब मित्रों ने कहा कि वे मेरे इस छोटे संभाषण से बड़े खुश हुए, क्योंकि मैंने जो बात की वह इस तरह के श्रोताओं के सामने आम तौर पर नहीं कहता, और क्योंकि मैं न इन श्रोताओं से परिचित था और न इस साहित्य-कला के रंग से। अगर मैं वहीं का व्यक्ति होता तो मेरा यह कहना भी कठिन होता। वैसे तो मैंने कुछ भी नहीं कहा, केवल इतना कहा कि दुनिया में बहुत ऐसे लोग हैं, जिन्हें दो वक्त का खाना भी नहीं मिलता और विनोबाजी इसी प्रकार की समस्याओं को प्रेम से हल करना चाहते हैं।

मिलानो से रोम। यह भी एक कमाल का शहर है! दो हजार वर्षों का इतिहास, कला के श्रेष्ठतम नमूने। संस्कृति का एक अपना ही स्वरूप। रोम से असीसी और दुब्रविया देखते हुए वेनीसीया गया। जो असर असीसी ने मुझ पर किया, उसका वर्णन करना मेरे लिए शायद ही कभी सम्भव हो। सन्त फ्रान्सिस की उपस्थिति की अनुभूति वहाँ के एक-एक पत्थर और पत्ते में होती थी। गिरजे के मौजेक आदि की कला, उसकी भव्यता तो मेरे लिए एक आकर्षण थी ही, किन्तु असीसी की गलियों में पदयात्रा करने का सुख भी अपूर्व था।

वेनीसीया पहुँचने के पहले कुछ घण्टों के लिए [illegible] के रोमन म्यूजियम देखने के लिए रुक गया था। वेनीसीया अपने ढंग का संसार में एक ही नमूना है। कला की दृष्टि से श्रेष्ठ। अस्सी प्रतिशत से अधिक यातायात किश्तियों से होती है, सड़कें यानी नहरें। किन्तु 'टूरिस्टों' का है, यह शहर। जो कॉफी का प्याला साठ लिरे में रोम में मिलता है, वह शायद बड़े महँगे होटल या 'बार' में यहाँ मिले। साधारण 'बार' में उसकी कीमत सौ-सवा सौ।

इसके बाद बारह दिन युगोस्लाविया। अच्छे खासे डटे बारह दिन और उनमें से अधिकतर बर्फीले। युगोस्लाविया की सरकार ने बड़े आदर के साथ जिस जिस तरह के शिक्षा-केन्द्र मैं देखना चाहता था, दिखाये। वहाँ अंग्रेजी बोलने वाले अधिक मिले, इसलिए सामान्य तौर पर बातचीत भी अधिक कर सका। आखिर उनका प्रसिद्ध कोआपरेटिव सोसाइटी देखते हुए उन्नीस तारीख को एथेन्स पहुँचा।

कितने लोग एथेन्स देखने के लिए क्यों तरसते रहते हैं, यह वहाँ जाकर ही पता चलता है। दुर्भाग्यवश बेरूत जाने वाला मेरा जहाज बीस को निकलना था। मुझे एक ही दिन एथेन्स में मिला था। इंग्लैंड ट्रान्जिट कर लेने को भी क्या लेना कहेंगे, इसी तरह जो एथेन्स में ट्रान्जिट कर देखा, क्या उसे भी एथेन्स देखना कहेंगे!

भू-मध्य सागर का यह भाग तूफानी हो उठा था। चार दिन की यात्रा काफी हिलते डुलते खासी रही। यहाँ भी मेरा भाग्य अच्छा ही रहा। जहाज के अधिकतर मुसाफिर उल्टी करते-करते बेरूत पहुँचे। मैं 'डेक' पर की 'डोरी सीढ़ी' में था। रात को सोते सोते कभी इधर से उल्टी करने की आवाज और उधर से उल्टी करने की आवाज! तिसपर भी मैं मस्त रहा, पता नहीं भाग्य ने काम किया या उन गोलियों ने, जो मैंने सफर के शुरू में ही ले ली थी।

बेरूत में चौबीस ता० को पहुँचा और पहुँच कर सम्मेलन की तैयारी में जो कुछ सामान्य-सी सहायता हो सकती थी, करने का प्रयत्न किया। लगातार [illegible] की शाम से विश्वशांति-सेना सम्मेलन शुरू हुआ। दो जनवरी को भाई सिद्धराज और मैं इटालियन जहाज से कराँची चला गया। मुझे तीन तारीख को [illegible] जाने के लिए [illegible] जहाज पकड़ना था और भाई सिद्धराज को अफ्रीका के कुछ देशों में यात्रा करनी थी। वे अन्ते दिन मुझे [illegible] जहाज तक छोड़ने के लिए मेरे साथ आये।

[illegible] बहुत आराम का जहाज है और मैं बिल्कुल [illegible] करते हुए [illegible] को कराँची पहुँच गया।

[illegible] महीनों के विदेश भ्रमण में बहुत कुछ सीखने को मिला। बहुत से मित्र और बहुत [illegible]। भारत के प्रति इतनी श्रद्धा देख कर [illegible]

विनोबा के साथ : २

वल्लभस्वामी

मनुष्य का अहम् भिन्न-भिन्न रूप में प्रकट होता है। आम तौर से मनुष्य अपने को श्रेष्ठ मानता है। शायद इसीलिए संस्कृत व्याकरण में 'मैं' (अहम्) को उत्तम पुरुष कहा जाता है। सर्वोदय कार्यकर्ताओं में भी यह अहम् शांति का काम और निर्माण का काम, ऐसा भेद करके गड़बड़ मचाता है। विनोबाजी, धीरेन् भाई वगैरह के कभी कभी कुछ उद्गार इस भेद के पोषक हैं, ऐसा कइयों को लगता है।

इस बारे में सफाई करते हुए बाबा ने कहा : "मेरे सभी व्याख्यान एक ढंग के नहीं होते हैं। कभी गणित की, कभी काव्य की, कभी भक्ति की और कभी विनोद की भाषा में मैं बोलता हूँ। परसों एक गाँव में मैंने कहा कि निर्माण की बात क्या कहते हो ! तुम्हारा प्रदेश भूकंप का प्रदेश है। एक बार आयेगा तो निर्माण ही निर्माण करना पड़ेगा ! अब इस विनोद पर से कोई कहे कि बाबा भूकंप चाहता है, तो इसको क्या कहा जाय ! मैं सभी काम को महत्त्व देता हूँ।"

फिर से उनसे पूछा गया कि भूदान-ग्रामदान यह बुनियादी काम है और पंचायती राज, मतदाता मंडल वगैरह दोयम दर्जे के काम हैं; ऐसा कई बार सुनने में आता है।

बाबा ने कहा : "बुनियादी कहने में ही उसका महत्त्व और मर्यादा प्रकट होती है। कोई मकान की बुनियाद बना कर ऊपर का मकान न बनायें तो उस बुनियाद का क्या उपयोग ? इसलिए भूदान-ग्रामदान की बुनियाद पर पंचायती राज वगैरह काम खड़े करने चाहिये। उन दोनों में कोई विरोध नहीं है।"

एक तर्क-पटु ने कहा कि "किसी को लगे कि बुनियाद पक्की नहीं हुई है तो ?" बाबा ने हँसते हुए कहा, "रूपक को बहुत खींचना नहीं चाहिये।"

भूदान-ग्रामदान के कार्यकर्ताओं के अलावा दूसरे हजारों कार्यकर्ता खादी वगैरह में लगे हुए हैं, जिनके कामों की बुनियाद सर्वोदय विचार है। इन कार्यकर्ताओं को आम तौर से रचनात्मक कार्यकर्ता कहा जाता है। उनसे अपनी अपेक्षा व्यक्त करते हुए बाबा ने कहा : "साहित्य प्रचार का काम उनको उठाना चाहिये। बिना विचार के आधार के खादी वगैरह टिकने वाली नहीं है। इसलिए खादी की उत्पत्ति-बिक्री के साथ ही साहित्य-प्रचार का काम भी अपना काम मानना चाहिये।"

इस बारे में उन्होंने सुझाया कि हरएक कार्यकर्ता को वेतन में से पाँच रुपये प्रतिमाह साहित्य के रूप में दिये जायँ। वह जो सकेगा वह साहित्य दिया जाय। यदि वह बेच सकता है तो उसे किताबों की कीमत के अलावा सवा रुपया कमीशन भी मिलेगा। नहीं बेच पाया तो साल भर में उसके पास साठ रुपये की लाइब्रेरी होगी।

दूसरा सुझाव उन्होंने दिया कि कार्यकर्ताओं के छोटी छोटी अवधि के शिविर लिये जायँ, जिनमें उन्हें सर्वोदय विचार से परिचित किया जाय। उसी तरह कुछ अभ्यास क्रम बना कर कार्यकर्ताओं की परीक्षा भी ली जाय। परीक्षा में 'फेल' हो तो भी उनको काम पर से निकाला न जाय। फिर से अध्ययन करके परीक्षा देने का मौका दिया जाय।

साहित्य प्रचार की तरह सर्वोदय-पात्र का काम भी रचनात्मक कार्यकर्ता, विशेषतः खादीवाले उठा लें, ऐसा बाबा ने कहा। उनके पास हिसाब वगैरह रखने की एजेन्सी होती ही है। खादी-काम के निमित्त सतत संपर्क भी आता है। कहा जाता है कि खादीवालों का एक लाख देहातों से सम्बन्ध है। हर देहात में पचीस सर्वोदय-पात्र के हिसाब से पचीस लाख सर्वोदय पात्र देश में हों।

इसी सिलसिले में उन्होंने तेनाली (आंध्र) के सर्वोदय-पात्र के साथ विचार-प्रचार भी किया जाता है, इसका जिक्र किया। हरएक सर्वोदय पात्र रखने वाले को तेलुगू भाषा की सर्वोदय-पाक्षिक पत्रिका 'साम्ययोगमू' पहुँचायी जाती है। आठ पृष्ठों के पाक्षिक का सालाना चंदा तीन रुपये है। लेकिन सर्वोदय-पात्रवालों को सवा रुपये ही में दी जाती है। फिलहाल इस पत्रिका की चौबीस हजार प्रतियाँ प्रकाशित होती हैं।

सवा रुपये में पत्रिका देना कैसे संभव होता है, यह जानने के लिए डा० सूर्यनारायण के खत में से नीचे का हिस्सा दे रहा हूँ।

२४००० प्रतियों का हिसाब

आकार डबल-डिमाई

कागज २४ रीम, दर २५)	६००) रु०
कम्पोजिंग खर्च आठ पन्ने	२६) रु०
छपाई-दर ५) हजार	१२०) रु०
	कुल ७४६) रुपये

याने एक अंक की सालाना लागत ७५ न० पै० पड़ती है। छपे पर्चों को एक-साथ करना, काटना वगैरह सब काम हमारे सर्वोदय-पात्र के कार्यकर्ता ही कर रहे हैं। यह काम दूसरों से करवाया जाय तो प्रति हजार ढाई रुपया खर्च होगा। सर्वोदय पात्र का काम जहाँ चल रहा है, वहाँ हमारे कार्यकर्ताओं द्वारा पत्रिका घर-घर पहुँचायी जाती है। जहाँ पात्र नहीं रखे गये, उनसे हम तीन रुपये सालाना चन्दा लेते हैं। इसलिए दो-दो नये पैसे की डाक-टिकट लगा कर डाक द्वारा भेजने पर भी कोई नुकसान नहीं होता। पत्रिका के संपादक को हम कोई वेतन नहीं दे रहे हैं। वे अपना समय दान दे रहे हैं। दूसरी व्यवस्था देखने के लिए एक दो कर्मचारियों की जरूरत पड़ती है। उनको वेतन दिया जाता है।

ग्रामदानी गाँवों के निर्माण के बारे में क्या दृष्टि हो, इस पर भी चर्चा हुई। लोगों की शक्ति का उपयोग होने के बाद बाहर की मदद लेने की नीति रहे, यह सब मानते हैं। लेकिन व्यवहार में बहुत बार यही होता है की बाहर की मदद पर या मदद के भरोसे ही निर्माण का काम चलता है।

बाबा ने कहा : "इसमें मैं खतरा देखता हूँ। हमारा काम अच्छा है, इसलिए सरकार वगैरह इस काम की मदद करने से इनकार नहीं कर सकते, नहीं करेंगे। लेकिन यदि हम सावधान न रहें तो उस मदद के कारण लोग पंगु व निस्तेज हो सकते हैं।"

बाबा खुद किस तरह काम करना चाहते हैं, वह नीचे के किस्से पर से ध्यान में आयेगा। कुछ दिन पहले एक ग्रामदानी गाँव में वे थे। उस गाँव पर १७०० रुपये का कर्ज था। ग्रामदान होते ही सबसे पहले यह दिक्कत खड़ी होती है कि पुराने साहूकार अपना कर्ज चुकाने का तगादा लगाते हैं। नया कर्ज उनसे मिलता नहीं है। सरकार या 'कोआपरेटिव' सोसाइटी से भी नहीं मिलता, क्योंकि आज के कानून के अनुसार बिना 'सुअरिटी' कर्ज नहीं दिया जा सकता। ग्रामदान होने के कारण जमीन व्यक्ति की नहीं रहती। बाबा ने उन गाँव वालों को कहा कि "आपका कर्ज आप तुरंत देंगे तो साहूकारों पर बहुत अच्छा असर होगा। उनको लगेगा कि ग्रामदान होने पर भी हमारे पैसे को कोई खतरा नहीं है; बल्कि हमारा पैसा वापस करने का काम इन लोगों ने तुरत किया। इसके कारण ग्रामदानी गाँव की प्रतिष्ठा बढ़ेगी और साहूकारों से नया कर्ज मिलने की भी अनुकूलता होगी।" गाँव वालों को यह बात जचती थी। लेकिन पैसा कहाँ से दिया जाय, यह सवाल था। उनकी अपेक्षा थी कि बाहर से कहीं से इतनी व्यवस्था हो जाय। बाबा ने कहा : "आपके पास पैसे नहीं है, यह मैं समझ सकता हूँ। आपके गाँव के चार गरीब घरों ने यह कर्ज लिया है। लेकिन ग्रामदान होने के बाद यह वापस करने जिम्मेवारी सारे गाँव पर है।

सभा में बैठी हुई बहनों की ओर संकेत करते हुए उन्हों ने कहा की इन बहनों के शरीर पर गहने हैं, उनसे कर्ज वापस किया जाय। बहनों से पूछा कि क्या यह हो सकता है ? तो एक बहन ने कहा कि हो सकता है। गाँव वालों ने कहा हम इस पर सोचेंगे।"

आता था, कभी अपने ऊपर गर्व और कभी संकोच। किन्तु आम तौर पर यही सोचता रहा कि क्या, हम उस श्रद्धा के सच्चे पात्र हैं, यह सिद्ध कर पायेंगे। जब विनय 'सहायता करता था तब मन कहता था कि यह श्रद्धा न भारत के प्रति है न भारतवासियों के प्रति यह तो उस महान आत्मा के प्रति है, जिसने इस आशाहीन युद्ध में दुनिया, को आशा दी, जिसने दुनिया को दिखाया कि मनुष्य प्रेम के आधार पर अपना जीवन सुख पूर्वक बिता सकता है।

"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक का प्रकाशक-वक्तव्य

[न्यूजपेपर-रजिस्ट्रेशन एक्ट (फार्म न० ४, नियम ८) के अनुसार हरएक अखबार के प्रकाशक को निम्न जानकारी पेश करने के साथ साथ अपने अखबार में भी वह प्रकाशित करनी होती है। तदनुसार यह प्रतिलिपि यहाँ दी जा रही है। —सं०]

(१) प्रकाशन का स्थान	वाराणसी
(२) प्रकाशन का समय	सप्ताह में एक बार
(३) मुद्रक का नाम	श्रीकृष्णदत्त भट्ट
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी–१
(४) प्रकाशक का नाम	श्रीकृष्णदत्त भट्ट
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी–१.
(५) संपादक का नाम	सिद्धराज ढड्ढा
राष्ट्रीयता	भारतीय
पता	"भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक, राजघाट, वाराणसी–१.
(६) समाचार-पत्र के संचालकों का नाम-पता	अखिल भारत सर्व सेवा संघ (सोसायटीज रजिस्ट्रेशन ऐक्ट १८६० के सेक्शन २१ के अनुसार रजिस्टर्ड सार्वजनिक संस्था)

मैं श्रीकृष्णदत्त भट्ट यह स्वीकार करता हूँ कि मेरी जानकारी के अनुसार उपर्युक्त विवरण सही है।

वाराणसी, २८–२–६२

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट, प्रकाशक

विनोबा-पदयात्री दल से

• कुसुम देशपांडे

दोपहर का समय था। लक्ष्मी ने कहा, मील-डेढ मील दूरी पर एक गाँव में जाना है। हरी टोपी पहन कर बाबा छोटी-सी कुटिया के बाहर निकले। एक खेत से जाने के बाद कच्ची सड़क पर चलने लगे, इतने में हवा में धूल उडाती हुई एक 'जीप' कहीं से आकर खड़ी हुई। जीप से उतर कर एक सज्जन बाबा के पास आये। प्रणाम करते हुए उन्होंने कहा, "बाबाजी, आपकी तबीयत अच्छी है न?" बाबा ने हँसते हुए जवाब दिया और आगे बढे। वे सज्जन जीप में बैठ कर चले गये। जीप पर एक पार्टी का झण्डा लगाया था, जिससे जाहिर होता था कि चुनाव के रण-मैदान में जीप दौड़ रही है! वे सज्जन यहाँ के असेंबली के लिए के लिए खड़े हैं। थोड़ी दूर चलने पर एक पेड़ पर देखा कि चुनाव में लडने वाली विरोधी पार्टी का इश्तहार लाल कपड़े पर था। उसके पास ही एक झोपड़ी में पार्टी का दफ्तर था। एक-दो भाई वहाँ बैठ कर कुछ पढ रहे थे।

असमिया में लिखे वे अक्षर बाबा ने पढ़े और कहा, "क्यों रे, 'ग्रामदान करक' (करो) नहीं लिखा!" वे भाई कहने लगे, "यह तो हमारी पार्टी की नीति के खिलाफ है।" बाबा के चेहरे पर मुस्कराहट थी। "आपके बड़े-बड़े नेता एलवाल में इकट्ठे हुए थे और ग्रामदान का समर्थन किया था और अब असम की असेंबली ने ग्रामदान का बिल भी पास किया है। वहाँ तो विरोध नहीं किया है।" वे भाई चुप रहे, बोले नहीं। उनको एलवाल-परिषद की कोई जानकारी नहीं थी। बाबा हँसते हुए आगे बढ़े। पीछे चलने वाले गाँव के एक भाई कह रहे थे, "जिधर-उधर चुनाव की ही दौड़-धूप है।"

थोड़े ही समय के बाद नियोजित स्थान आया। केले के पत्तों से सजाये हुए द्वार पर भाई-बहन हाथ में मंगल आरती लिये खड़े थे। सब जयघोष कर रहे थे "हमारा मंत्र जय जगत्, हमारा तंत्र ग्रामदान!" स्वागत हुआ। पास ही एक 'नामघर' था। वहाँ बाबा के इर्द गिर्द सब गोलाकार बैठे। 'नामघर' के गम्भीर पवित्र वातावरण में बैठे पवित्र हृदय के भाई-बहन इस युग का पवित्र धर्म-कार्य कर रहे थे। बीच में एक थाली में फूल रखे थे। उस पर एक प्रशान्त दीप जल रहा था, वह साक्षी था। गाँव के लोगों के हृदयों में ऐसी ही ज्योति है, इसका मानों वह प्रतिबिंब था। श्री जयभाई और काशी के शांति-सेना विद्यालय में रह कर आये हुए श्री चन्द्रकान्त साइकिया इस विभाग में काम कर रहे थे। दोनों ने बाबा के सामने बताया, "आपके हाथों से भूमिहीनों को जमीन दी जायेगी।"

गाँव के प्रमुख भाई ने बाबा को गाँव की जमीन का हिसाब बताया। उस गाँव के जो सबसे धनी भाई थे, उन्होंने प्रेम से अपनी जमीन का दसवाँ हिस्सा ग्रामसभा को दिया था। गाँव के दूसरे सब परिवारों ने अपनी बीसवाँ हिस्सा जमीन दी थी। गाँव में मालिक कोई नहीं था। ग्रामसभा ही मालिक थी। अब ग्रामसभा की ओर से पाँच भाइयों को जमीन दी जा रही थी। जमीन का लेखा-जोखा लिखे हुए कागज पर बाबा ने भी हस्ताक्षर किये और फिर एक-एक भाई का नाम पढ़ा गया। उनमें एक नेपाली भाई थे। उनकी गोद में बच्चा सो रहा था। उनका नाम पढ़ा गया तो बच्चे के साथ वे उठे, भक्ति-भाव से उन्होंने प्रणाम किया और जमीन ली। "प्यारे भाइयो, आपने आज प्रेम दिया है। आप भर भर के प्रेम पायेंगे।"—बाबा ने इतना ही कहा और असम के प्रिय पूज्य महापुरुष माधवदेव की 'नाम-घोषा' का एक श्लोक समझाया :

"सुवासना दुर्वासना दुइ बंधर
मोक्षर मूल हेतु।
शुना येन मते उपजय पुरुषत।
सतर कृपात सुवासना सुखे पुरुषक
पाबे जाना।
होवे दुर्वासना सन्तर मन कोपत।"

"सुवासना रही तो मनुष्य मुक्त होता है। दुर्वासना रही तो बन्धन में पड़ता है। सत्पुरुषों को प्रसन्न रखेंगे, सेवा करेंगे तो उनकी कृपा से सुवासना होगी। कंजूस बनेंगे, एक-दूसरे का द्वेष करेंगे तो दुर्वासना होगी।"

• • •

घेशारी गाँव में तीन दिन पड़ाव था। वसन्त पंचमी का दिन था। स्कूल के बच्चे सरस्वती-पूजा करते हैं और उस दिन अपनी स्लेट दवात आदि धोकर साफ रखते हैं, ऐसा कहा गया। स्कूल में ही पड़ाव था। इसलिए यह सब देखने को मिला। बच्चों ने स्कूल को लिपा-पोता था। पूजा की, नाम-कीर्तन गाया और प्रसाद बाँट कर खाया।

उसी दिन शाम को असम प्रदेश के मुख्य मंत्री, श्री चलिहाजी बाबा से मिलने आये थे। कई विषयों पर चर्चा हुई। उनमें 'नेशनल इंटीग्रेशन' और तालीम में भाषा के मुद्दाव के बारे में भी चर्चा हुई। पर मुख्यतः ग्रामदान के बने हुए नये कानून और उसे अमल में लाने के लिए जो नियम बनाने हैं, उस पर चर्चा हुई। बाबा की राय है कि यह काम शीघ्राति-शीघ्र हो जाय तो सबको लाभ होगा। वारिश के पहले जमीन का वितरण आदि हो जाय, ग्रामनिधि और ग्राम-सभाएँ बनें, तो फिर सरकार से सीधा सम्बन्ध ग्राम-सभा का ही आयेगा। मुख्य मंत्री ने आश्वासन दिया कि इस महीने के अन्त तक कानून के अमल के लिए नियम बनाने का काम हो जायेगा। बाबा की राय में असम-सरकार का बनाया कानून इतना अच्छा है कि असम के कुल गाँव ग्रामदान होने में देर नहीं लगनी चाहिए। श्री चलिहाजी से बाबा ने यह बता कर कहा कि आप इस कानून का प्रचार कीजियेगा।

इधर एक अजीब वहम फैला है। कहीं-कहीं सुनते हैं कि गाँव के कुछ लोगों को यह भय लगता है कि "हम ग्रामदान देंगे तो बाबा हमारी जमीन पर बाहर के लोग लाकर बसायेगा!" इस अज्ञानजन्य शंका का उत्तर देते हुए बाबा कहते हैं : "कैसे मूरख हो तुम! कोई ठग इतना लंबा फासला पैदल चल कर आयेगा? देखा नहीं, करीब ग्यारह महीने से बाबा असम में घूम रहा है। यहाँ ग्रामदान भी हुए हैं। क्या उनमें बाहर के लोगों को लाया है बाबा ने?"

तीन दिन एक स्थान पर निवास था। पर बाबा के पाँवों को चैन कहाँ? 'ईशावास्य' का पाठ हुआ और निकले बाहर खुले आसमान का सेवन करने, हरी सृष्टि को निहारने, आने वाला प्रसन्न प्रभात का स्वागत करने! पथरीली कच्ची सडक थी। सामने 'नेफा' के पहाड़ थे और सडक के दोनों बाजू कहीं खेत थे, कहीं विविध वृक्ष, बेलियाँ थीं! निःशब्द, नीरव शांति थी। बाबा चुप थे। उनका चिंतन-चक्र कहाँ घूमता होगा? बीते हुए भूत में, चल रहे वर्तमान में या आने वाले भविष्य में? हम पीछे पीछे चल रहे थे, इतने में बाबा की वाणी सुनी, मानो अपने से ही बोल रहे हों :

"आज ११ तारीख है। जमनालालजी (बजाज) को गये २० साल हो गये हैं। विज्ञान के जमाने में २० साल में दुनिया कहीं की कहीं जाती है। हमारी आँखों के सामने हमने देखा कि इन २० सालों में कितने ही परिवर्तन हुए हैं! पर भारत का जहाँ तक ताल्लुक है, इतने २० वर्षों में जमनालालजी जैसा काम करने वाला कोई मिला नहीं है। यह तो कोई नहीं मानेगा कि वे अलौकिक पुरुष थे। फिर भी हम देखते हैं कि इन २० सालों में कोई नहीं निकला है तो सोचने जैसी बात है।

"२० साल कोई कम अवधि नहीं है। ५-१० साल में न निकले तो समझ सकते हैं। इसलिए अपने समाज में कुछ दोष आया है, ऐसा समझना चाहिए। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद बड़ा विशाल ध्येय, अधिक चैतन्यदायी प्रेरणा होनी चाहिए थी। यह नहीं हुआ। स्वराज्य प्राप्त हुआ तो कुछ भोगना चाहिए, यह भावना आयी है। उत्तम-से-उत्तम विद्वान और सर्वोत्तम लोग सरकार में जाते हैं, स्वराज्य-सरकार की नौकरी प्रामाणिकता से करते हैं, तो वे सेवक ही हैं। यह गलत नहीं है। लेकिन एक ध्येयवाद होता है, जो प्रचलित समाज की स्थिति में समाधान नहीं मानता है और आगे कूदना चाहता है, वह ध्येयवाद नहीं रहा। बिना ध्येयवाद के रवींद्रनाथ, गांधी, अरविंद नहीं हो सकते हैं। लेकिन एक अच्छे प्रोफेसर, अच्छे न्यायाधीश, अच्छे 'एडमिनिस्ट्रेटर' बिना ध्येयवाद के हो सकते हैं।

"आज सुबह मैं जाग गया तब से मुझे जमनालालजी का स्मरण हो रहा है। मेरा उनसे जो परिचय हुआ, उसमें देखा कि उनके हृदय में दो विलक्षण गुण थे : सबके साथ सहानुभूति थी और उनके साथ करुणा थी और वैराग्य था। कितने ही कार्यकर्ताओं के साथ उनका परिचय था और सबके लिए सहानुभूति से सोचते थे। दूसरी बाजू से हृदय में अपने को उससे पूर्ण अलग रखने की कोशिश करते थे। उन्होंने मुझे सुनाया था—जब १४-१५ साल की उम्र थी, तब वे घोराड़ (वर्धा) नाम के छोटे गाँव में गये थे। वहाँ केजाजी महाराज भजन करते थे। जमनालालजी ने दुकान वगैरह का काम सम्भालना शुरू ही किया था। केजाजी महाराज के एक भजन का उनके चित्त पर गहरा असर हुआ—'हीरा तो गया तेरा कचरे में।' "

कहते-कहते बाबा का दिल भर आया, आँखें गीली हो गयीं, बाबा रुक गये।

• • •

दूसरा दिन आया।

शांति के काम में अपनी जीवन-ज्योति बुझाने वाले शांति-सेना के सेनानी का श्राद्ध-दिन! छोटा-सा गाँव, छोटी-सी कुटी! उस महान् की स्मृति में श्रद्धांजलि अर्पण हुई। हेमा भराली, लक्ष्मी और चंद्रगगई भाई ने शांति-सेना के प्रतिज्ञा-पत्र लिख कर बाबा को अर्पण किये। उनकी पीठ पर प्यार के हाथ का स्पर्श हुआ। हेमा बहन असम के सर्वोदय समाज की प्रमुख महिलाओं में से एक हैं। 'शांति-सेना के काम में उनका प्रवेश महत्त्व की बात है,' ऐसा यहाँ के कार्यकर्ता महसूस करते हैं। लक्ष्मी बहन कस्तूरबा-ट्रस्ट की सेविका हैं और यात्रा में बाबा के अनुवाद का काम कुशलता से करती हैं।

इने-गिने कार्यकर्ताओं की टोली बैठी थी। बाबा ने कहा—"ग्रामदान आरोहण का रास्ता है। इसके सिवा समाज में प्रेम और करुणा निर्माण करने के सिवाय दूसरा रास्ता नहीं है। यहाँ कानून बनेगा। सरकार-द्वारा काम में भौतिक और नैतिक लाभ होते ही हैं। पर उसके लिए कार्य में प्रेम और प्रेम के लिए त्याग की तैयारी होनी चाहिए। यह होगा है तो उसमें हम

प्रकार से भान होता है। देखना यह चाहिये कि ग्राम की शक्ति बन रही है। सहयोग जीवन में आता है। सहयोग के बिना पारमार्थिक काम भी नहीं होता है और विज्ञान भी नहीं हो सकता है। प्रेम और करुणा के बिना सहयोग को दूसरी बुनियाद नहीं है। आप सब कार्यकर्ताओं को ऐसी भावना से गाँव गाँव जाना चाहिये। आपको 'दही' बनना चाहिये। यह दही गाँव समाज के दूध में डाला जायेगा। इस तरह दही बनाते जायें। १९१६ में हम गांधीजी के पास गये थे। उन्होंने कहा था—'कार्यकर्ताओं को गाँव-गाँव जाना चाहिये और ग्राम-स्वराज्य बनाना चाहिये।' ४६ साल हो गये, पर अभी तक ग्राम स्वराज्य बना नहीं है। अब हम देखते हैं कि ग्राम-स्वराज्य के दिन आये हैं। हमें आशा है कि गांधीजी का सपना जल्दी पूरा होगा।"

तीन दिन हुए, उत्तर प्रदेश के त्यागी, उत्साही और निष्ठावान् सेवक श्री ब्रह्मदेव वाजपेई आये हैं। उनके साथ एक दिन रास्ते में चर्चा हो रही थी। उनके एक प्रश्न के जवाब में बाबा ने कहा: "हमें यह ध्यान में लेना होगा कि आज हमारे आंदोलन में 'कीपोजिशन' में कोई है तो ये गाँव हैं, देहात हैं। गौतम बुद्ध अगर समझते कि राज्य पर रहने में ही 'की-पोजिशन' है तो वे उसका त्याग नहीं करते, वहीं रह कर पंचवार्षिक योजनाएँ बनाते रहते! इतने बड़े बड़े राजा-महाराजा हो गये, मुगल बादशाह हो गये! अब क्या बचा है उनका? ताजमहल और कुतुबमीनार! उत्तर प्रदेश की जनता के हृदय में किसका राज है? कबीर और तुलसीदास का, उनके जो ग्रंथ हैं, खास करके 'तुलसी रामायण', वह 'कीपोजिशन' में है। उसके आधार पर उत्तर भारत खड़ा है। मैं कई दफा कहता हूँ कि इतिहासकार अंधे होते हैं, वे लिखते हैं कि अकबर के जमाने में तुलसीदास हो गये! मैं कहता हूँ कि अरे भाई, तुलसीदासजी के जमाने में अकबर हो गये।"

टेमाजी मौजे में जो कार्यकर्ता अलग-अलग टोलियों में घूम रहे हैं, उसकी फलश्रुति अब तक ऐसी आयी है:

> ६० ग्रामदानी गाँवों में से ५६ गाँवों में सम्पर्क हुआ, ४२ गाँवों में 'सर्वे' हुआ, ४० गाँवों के लोग बीसवाँ हिस्सा देने के लिए तैयार हुए, २७ गाँवों में वितरण हुआ, और ७६ परिवारों में ४५० बीघा, २ कट्ठा ८ धूर जमीन का वितरण हुआ।

बाबा १९ फरवरी तक इस मौजे में हैं।

[१९-२-'६२]

—०—

मासिक चिट्ठियाँ

बिहार की चिट्ठी

नये साल का प्रारम्भ हुआ। लोगों ने सोचा था कि 'बीघा-कट्ठा' अभियान के साथ-साथ अन्य सर्वोदय-कार्य भी जोर-शोर से चलाया जाय, लेकिन सोचा कुछ भी और हुआ। कुछ अभी बाढ़ की विभीषिका का परिणाम बिहारवासी भूल भी नहीं पाये थे कि शीतलहरी का प्रकोप का सामना करना पड़ा। सैकड़ों मनुष्य एवं जानवरों को अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। एक बार फिर बिहार में त्राहि-त्राहि होने लगी! शीतलहरी के बाद कार्यकर्ता फिर 'बीघा-कट्ठा' अभियान में जुट गये।

आम चुनाव के कारण जनमानस 'बीघा कट्ठा' की ओर आकर्षित नहीं था, फिर भी कुछ जमीन इस अभियान में मिली। प्राप्त सूचनानुसार शाहाबाद में १६७१, सहरसा में ३००, पूर्णियाँ में ६०००, मुंगेर में १७७९ एवं भागलपुर में ५० कट्ठा जमीन भूदान में प्राप्त हुई है।

आचार-मर्यादा

बिहार के राजनीतिक दल द्वारा स्वीकृत ग्यारह सूत्री कार्यक्रम के प्रचारार्थ बिहार की विधान-सभा एवं लोकसभा के कांग्रेस, प्रजासोशलिस्ट, सोशलिस्ट, कम्यूनिस्ट एवं स्वतंत्र पार्टी के सभी उम्मीदवारों को स्वीकृत आचार-संहिता छपवा कर डाक से भेज दी गयी। इसके अतिरिक्त २५ हजार प्रतियाँ जिला सर्वोदय-मंडल के द्वारा आम जनता एवं अन्य उम्मीदवारों के बीच वितरित की गयी हैं। जगह जगह एक ही मंच से राजनीतिक दलों एवं स्वतंत्र उम्मीदवारों ने अपने दल की नीति एवं कार्यक्रम पर प्रकाश डाला तथा दूसरे दलों की नीति एवं कार्यक्रम की टिप्पणी की। बड़ा ही आकर्षक दृश्य था। इस तरह की सभा बिहार राज्य के जिलों में सर्वोदय मंडल की ओर से आयोजित की गयी थी, लेकिन मुंगेर जिले के सूर्यगढ़ा एवं मुजफ्फरपुर जिले के रोहुआ की सभा उल्लेखनीय है। इस तरह की सभाओं में भारी भीड़ इकट्ठी होती थी और शान्ति से लोग वक्ताओं के विचार सुनते थे।

भूमि-वितरण कार्य

बिहार भूदान कमिटी के अतिरिक्त जिला भूदान कमिटी, मुंगेर एवं संथाल परगना द्वारा भूदान में प्राप्त भूमि का वितरण कार्य किया गया है। उपर्युक्त तीन वितरण टोलियों द्वारा २,६४७-९५ एकड़ भूमि ५५५ हरिजन एवं २०५ आदिवासी तथा ९२ अन्य; इस तरह कुल १७१२ आदाताओं के बीच वितरित की गयी है। वितरण का कार्य पूर्ववत् चल रहा है। 'बीघा कट्ठा' अभियान में मिली हुई जमीन का वितरण दाता द्वारा ही किया जाता है।

महात्मा गांधी का निधन दिवस

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के निधन-दिवस, ३० जनवरी के अवसर पर विभिन्न स्थानों पर अखंड सूत्रयज्ञ एवं मौन प्रार्थना का आयोजन किया गया था। श्री जयप्रकाश नारायणजी द्वारा संचालित महिला चरखा समिति, पटना के तत्वावधान में ५ बजे सुबह से ५ बजे संध्या तक अखंड सूत्रयज्ञ का आयोजन किया गया। संध्या ४ बजे से सामूहिक कताई का आयोजन किया गया, जिसमें पटना नगर के विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। जिला सर्वोदय मंडल पूर्णियाँ के तत्वावधान में बिहार के सर्वोदयी नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के नेतृत्व में ३० जनवरी को एक पदयात्रा का आयोजन किया गया। टोली ३० जनवरी से प्रारंभ हुई, जिसका समावर्तन समारोह १२ फरवरी को कुरसेला में हुआ। राष्ट्रपिता की निधन तिथि सर्वोदय-मंडल के प्रयास से बिहार के विभिन्न स्थानों पर आयोजित की गयी।

सम्मेलन एवं प्रदर्शनी

जिला खादी-ग्रामोद्योग संघ का सम्मेलन मुंगेर से ६ मील दूर शिवकुंड में आयोजित किया गया। इस अवसर पर संघ की ओर से बड़ी ही आकर्षक खादी ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। जिला ग्राम-सम्मेलन एवं जिला सर्वोदय-मंडल, मुंगेर का सम्मेलन भी शिवकुंड में आयोजित किया गया था। सम्मेलन में सर्वश्री धीरेन्द्र मजूमदार, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, श्याम सुन्दर प्रसाद, आचार्य राममूर्ति, रामदेव ठाकुर, रामनारायण सिंह एवं अन्य लोगों ने अपना विचार व्यक्त किया।

गोसंवर्द्धन

अखिल भारतीय कांग्रेस-अधिवेशन के अवसर पर श्री देवर भाई से बिहार सर्वोदय-मंडल के सर्वश्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, श्याम सुन्दर प्रसाद, ध्वजा प्रसाद साहू, रामदेव ठाकुर, रामनारायण सिंह एवं अन्य लोगों ने बिहार में गोसंवर्द्धन कार्य सम्बन्धी सविस्तार में विचार विमर्श किया। निर्णयानुसार गोसंवर्द्धन-कौंसिल के मंत्री श्री पारनेरकरजी एवं श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने पूसा, रानीपतरा एवं बेरौई क्षेत्र का दौरा किया और गोसंवर्द्धन सम्बन्धी स्थिति का अध्ययन किया। सोखोदेवरा एवं भागलपुर की स्थिति का अध्ययन करने के बाद इन क्षेत्रों के लिए एक योजना बनने वाली है, जो जल्द ही कार्यान्वित की जायगी।

अणुअस्त्र-परीक्षण के विरोध में हस्ताक्षर

अणुअस्त्र-परीक्षण के विरोध में हस्ताक्षर कराने का काम भी जोर से शुरू कर दिया गया है। विभिन्न स्थानों में ५ लाख हस्ताक्षर कराने के लिए कार्यकर्ताओं ने जनता से हस्ताक्षर कराना शुरू कर दिया है। कई स्थानों से हस्ताक्षर करा कर कार्यकर्ताओं ने बिहार सर्वोदय-मंडल के कार्यालय में फार्म लौटा भी दिया है। बिहार के कार्यालय एवं विश्वविद्यालय में भी काफी संख्या में हस्ताक्षर कराने का प्रयास किया जा रहा है। बिहार हरिजन सेवक संघ एवं अन्य संस्थाओं की ओर से बिहार के विभिन्न स्थानों में सामाजिक मेले का आयोजन किया गया, जिसमें वक्ताओं ने अस्पृश्यता से होने वाली हानि का सविस्तार वर्णन किया।

बाढ़-पीड़ितों की सेवा

बिहार सर्वोदय मंडल एवं गांधी स्मारक निधि, बिहार शाखा के प्रयास से बिहार सर्वोदय मंडल के निर्णयानुसार मुंगेर जिले के लक्खीसराय बड़हिया, सिरारी, खड़गपुर, बरियारपुर, असरगंज, खगड़िया और बेगुसराय, भागलपुर जिले के सुल्तानगंज एवं नारायणपुर; पटना जिले के बाढ़ और अस्थावाँ; गया जिले के फकीरबरावाँ एवं नवादा तथा पूर्णियाँ जिले के कुरसेला, कुल १५ केन्द्रों द्वारा बाढ़-पीड़ितों की सेवा की गयी। ३१ दिसम्बर के बाद नारायणपुर, सुल्तानगंज और अस्थावाँ केन्द्र तो पीड़ितों की सेवा करता रहा। अन्य केन्द्र उठा लिये गये। उजड़े हुए गाँवों में से कुछ को आदर्श ढंग से बसाने की योजना बनायी जा रही है। सरकार एवं अन्य समाज सेवी संस्थाओं की सहायता से नये ढंग से बसाने का विचार है। इस ओर कुछ प्रयास भी किया गया है।

—रामनन्दन सिंह

—

बिहार में 'बीघा में कट्ठा' अभियान

[सर्व-सेवा-संघ की पिछली प्रबन्ध-समिति ने टुकुमपाला में अपनी बैठक में यह निर्णय लिया है कि 'बिहार में बीघे में कट्ठा अभियान' में पूरी शक्ति लगायी जाय। भारत के अन्य प्रदेशों के कार्यकर्ता भी वहाँ करीब दो महीने के लिए समय दें, ऐसी अपेक्षा प्रबंध समिति ने जाहिर की है। यहाँ पर हम सर्व-सेवा-संघ के सहमंत्री श्री दत्तोबा दास्ताने का एक परिपत्र प्रकाशित कर रहे हैं, जिसमें 'बीघा में कट्ठा अभियान' की जानकारी दी गयी है। -सं०]

श्री विनोबाजी आसाम जाते हुए २५ दिसम्बर, '६० को जब बिहार से गुजरे, तब बिहार में "बीघे में कट्ठा" की बात उन्होंने उठायी। बिहारवालों ने भी उत्साह के साथ इस आंदोलन को उठाया। बिहार का संकल्प भूदान में ३२ लाख एकड़ भूमि प्राप्त करने का था, जिसमें से करीब २१ लाख एकड़ भूमि प्राप्त हो चुकी थी और ११ लाख एकड़ प्राप्त करना बाकी थी।

अच्छी फसलवाली जमीन मिले और उसका तुरन्त वितरण हो, इस दृष्टि से यह तय किया गया था कि दाता अपनी जोत की भूमि में से बीघे में कट्ठे के हिसाब से यानी एकड़ का बीसवाँ हिस्सा दान दें और वह भूमि जिसको वह देना चाहता हो, उसको स्वयं वितरित कर दें और ऐसे प्राप्ति-पत्र ही भूदान समिति को दें।

इस आंदोलन को, श्री राजेन्द्र बाबू के जन्म दिन, ३ दिसम्बर '६१ तक पूरा करने का संकल्प भी किया गया था और अन्य प्रदेशों से कुछ भाई मदद के लिए बिहार में गये थे। लेकिन अचानक बाढ़ के कारण यह आन्दोलन स्थगित करके बाढ़पीड़ितों की सेवा में लगना पड़ा था, इसलिए आन्दोलन पूर्ति की मियाद बढ़ा कर ३ जून, '६२ कर दी गयी थी।

अभी जनवरी '६२ में श्री विनोबाजी के सान्निध्य में सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक हुई। उसमें तय किया गया था कि 'बीघा में कट्ठा' आंदोलन को एक अभियान के रूप में हाथ में लिया जाय और छहमाही संघ-अधिवेशन भी अप्रैल में बिहार में ही किया। अधिवेशन में आने वाले लोग अपना दो महीने का समय बिहार में दें, इस दृष्टि से सर्व सेवा संघ की ओर से सबको आवाहन किया जाय, यह भी तय हुआ था।

प्रबन्ध-समिति के इस प्रस्ताव पर बिहार सर्वोदय-मण्डल की कार्यकारिणी ने ता० १६ फरवरी, '६२ की बैठक में विचार किया और निम्न योजना तैयार की है।

बिहार सर्वोदय-मण्डल द्वारा स्वीकृत 'बीघा-कट्ठा' अभियान की योजना

(१) सर्व सेवा संघ का छहमाही अधिवेशन ९-१०-११ अप्रैल को सदाकत आश्रम, पटना में किया जाय।

(२) कितने जिलों में या अंचलों में यह अभियान चलाया जाय, इसका निर्णय जिलों के कार्यकर्ताओं की बैठक में तय किया जाय।

(३) जिन जिलों में काम करने का निर्णय होगा, उनके लिए जिला-संगठक नियुक्त किये जायँ।

(४) जिला-संगठक अपने जिलों में प्राथमिक तैयारी करने की दृष्टि से १५ मार्च से ३१ मार्च तक घूमेंगे और १ अप्रैल को अपनी रिपोर्ट पेश करेंगे।

(५) २ से ५ अप्रैल तक जिला-संगठक और जिला-सहायकों की प्रत्यक्ष तालीम (रिहर्सल) पूर्णियाँ जिले में होगी, जिसमें अभियान की प्रक्रिया और पद्धति के सम्बन्ध में अनुभव के आधार पर मार्ग-दर्शन किया जायगा।

(६) 'बीघा-कट्ठा' अभियान में हिस्सा लेने वाले सब प्रदेशों के कार्यकर्ताओं का एक शिविर १२ अप्रैल को अधिवेशन के स्थान पर सदाकत आश्रम, पटना में होगा, जिसमें अभियान की पूरी जानकारी और साहित्य टोलियों को दिया जायगा।

(७) १४ अप्रैल को बिहार के हर जिले में जिला स्तर पर कार्यकर्ताओं और सहायकों की बैठक होगी।

(८) १५ अप्रैल से १५ जून तक 'बीघा कट्ठा' अभियान चलेगा।

(९) जमीन प्राप्त करना, बाँटना, और आदाताओं को जमीन का कब्जा दिलाना, इतना काम पूरा करके ही टोली अगले पड़ाव पर जाय।

सिर्फ अमुक एक आँकड़ा पूरा करने का लक्ष्य न रहे, बल्कि जितना काम किया उतना पूरा ही किया जाय, यह ध्यान रखा जाय।

(१०) कार्यकर्ताओं के लिए एक नमूने का लिखित भाषण मार्गदर्शन के तौर पर छपा हुआ दिया जायगा।

(११) अभियान चलाते हुए गाँवों में से कुछ स्थानीय लोग कार्यकर्ता के तौर पर इस काम में मदद के लिए मिलते जायँ, इसकी भी कोशिश रहे।

(१२) ८ जून से १५ जून तक एक विशेष सप्ताह मनाया जायगा, जिसमें बिहार प्रदेश की सभी रचनात्मक संस्थाएँ तथा राजनीतिक संस्थाएँ एवं प्रमुख नागरिक अभियान में हाथ बटायेंगे।

मोटे तौर पर अभियान की यह रूप-रेखा है। समय समय पर बिहार सर्वोदय मण्डल की ओर से सूचनाएँ मिलती रहेंगी।

किस जिले में से कितने कार्यकर्ता आ सकेंगे, इसकी जानकारी यथाशीघ्र निम्न पते पर दी जाय: श्री श्यामसुन्दर प्रसाद, बिहार सर्वोदय-मण्डल, कदमकुआँ, पटना-३

जिला-सहायक के तौर पर काम कर सकने वाले कार्यकर्ता ऐसे हों, जो १ अप्रैल से १५ जून तक समय बिहार में दे सकें और बिहार के आहार, विहार और मौसम को सहन कर सकें।

कुछ कार्यकर्ता दो महीने से कम समय दे सकने वाले भी हो सकते हैं। जहाँ तक संभव हो, अपने कार्यकर्ताओं की सूची बनवा कर हरएक कितना समय कब दे सकेगा, इसकी जानकारी उस नाम के आगे हो तो अच्छा होगा।

जो सूचि बिहार सर्वोदय-मण्डल को भेजी जायेगी, उसकी एक प्रति सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय को भी मिलनी चाहिए।

—दत्तोबा दास्ताने

सौराष्ट्र-सर्वोदय-मंडल की चिट्ठी

सौराष्ट्र में सर्वोदय का कार्य गुजरात सर्वोदय-मण्डल की एक शाखा द्वारा चलता है। यहाँ पूरा समय देने वाले ९ भाई-बहन काम करते हैं। पिछले दिनों श्री लालजी भाई, श्री करसन भाई और श्री बगूभाई बिहार में 'बीघे में कट्ठा' अभियान में भाग लेने के लिए गये थे। श्री करसन भाई बिहार से विनोबाजी से मिलने के लिए असम गये थे।

करीब तीन माह से श्री वसन्तभाई व्यास ने सब राजनीतिक पक्षों के नेताओं से मिल कर आचार-संहिता के बारे में चर्चा की। सभी पक्षों के नेताओं ने आचार-संहिता का पालन करने की जिम्मेवारी ली। साथ ही विभिन्न जिलों के विभिन्न पक्षों के एवं स्वतंत्र उम्मीदवारों ने आचार-संहिता का पालन करने का आश्वासन दिया।

आचार-संहिता के पालन के सम्बन्ध में साहित्य, शिक्षण और सामाजिक क्षेत्र के नेताओं ने भी जनता से सहयोग के लिए अपील की। कुछ उम्मीदवारों ने माँग की कि आचार-संहिता का पालन ठीक ढंग से हो और कोई पक्ष या उम्मीदवार आचार-संहिता भंग करता है तो उसको रोकने के लिए एक नैतिक सत्ता-सम्पन्न मध्यस्थ मंडल बनना चाहिये।

२६ जनवरी से १६ फरवरी तक 'सर्वोदय की राजनीतिक दृष्टि' (लोकनीति) का प्रचार करने की दृष्टि से सौराष्ट्र के प्रथम ग्रामदानी गाँव, आमसर से एक पदयात्रा शुरू हुई।

—वसन्तभाई व्यास

ग्राम-स्वराज्य विद्यालय, जयपुर

वसंत-पंचमी, ता० ९ फरवरी को जयपुर में ग्राम-स्वराज्य विद्यालय की शुरुआत हुई। इस विद्यालय में अ० भा० खादी-ग्रामोद्योग आयोग की तृतीय पंचवर्षीय योजना के अंतर्गत गाँवों के समग्र विकास की दृष्टि से ग्राम इकाई योजना में काम कर रहे ग्राम-सहायकों को प्रशिक्षण दिया जायेगा। इस विद्यालय का संचालन राजस्थान समग्र सेवा संघ के मंत्री श्री बद्रीप्रसाद स्वामी करेंगे।

मुजफ्फरपुर जिले में पदयात्रा

मुजफ्फरपुर जिले के कटरा उत्तरी क्षेत्र में जिला सर्वोदय-मंडल के तत्वावधान में 'बीघा-कट्ठा' का प्रचार, चुनाव में आचार-संहिता का पालन हो, अणु-आयुध परीक्षण बंद हो, बेदखली न की जाय तथा क्षेत्र के 'सर्वे' की दृष्टि से 'चतुःसूत्री कार्यक्रम' लेकर एक टोली १२ जनवरी से पदयात्रा कर रही है। इस टोली ने ८० गाँवों की यात्रा की। सत्साहित्य-समारोह किया गया। इसके बाद एक सर्वदलीय सभा द्वारा सर्वमान्य चुनाव-आचार-संहिता पर चर्चा हुई। प्रायः सभी दलों व उम्मीदवारों ने सर्वोदय के जनमंच का स्वागत किया और आचार-संहिता पर अमल करने का आश्वासन भी दिया।

इन्दौर में सर्वोदय-पात्र

विसर्जन आश्रम, इन्दौर द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार माह जनवरी में कार्यकर्ताओं द्वारा ४१४२ परिवारों से संपर्क किया गया। १८८७ सर्वोदय-पात्रों से अनाज तथा नकदी के रूप में ५७१ रु० २८ न० पै० संग्रहीत हुए। ५४१ नये सर्वोदय-पात्र स्थापित किये गये। १०१० ४७ न० पै० की सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। चल-पुस्तकालय से २१ पाठकों ने लाभ उठाया। मोहल्लों में सर्वोदय-मित्र पात्र संग्रह में मदद दे रहे हैं।

निजलपुर में ७९ सर्वोदय-पात्र स्थापित

इन्दौर नगर-सीमा से ही लगे हुए ग्राम निजलपुर में लोकसेवक श्री सुन्दरी रायजी ने संपर्क स्थापित किया तथा सर्वोदय-विचार समझा कर ७५ सर्वोदय-पात्र की स्थापना की एवं भूदान-यज्ञ-पत्रिकाओं की फुटकर बिक्री की।

राजस्थान में शराबबन्दी योजना

श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में पिछले दिनों गांधी स्मारक निधि के तत्वावधान में नशाबन्दी कार्यक्रम पर जयपुर में विचार किया गया और नीचे के अनुसार एक योजना प्रस्तुत की गयी :

(१) सभी प्रकार की शराब की दुकानों को आम रास्तों व जन-केन्द्रों से हटाया जाय और जब तक पूर्ण शराबबन्दी नहीं हो जाती, उन्हें शहर, कस्बा या गाँव से एक तरफ एकान्त में ले जाया जाय।

(२) जहाँ की ७५ प्रतिशत जनता शराबबन्दी की माँग करे और हस्ताक्षरों सहित अपना संकल्प प्रकट करे तो वहाँ से शराब की दुकान हटा दी जाय। यदि ठेकेदार का 'लाइसेंस' कालशेष हो तो मुआवजा देकर भी दुकान हटायी जाय।

(३) हर जिले से पूर्ण शराबबन्दी की व्यवस्थित माँग की जाय और सारे प्रान्त की बहुसंख्यक जनता की माँग आने पर सरकार पूर्ण शराबबन्दी की घोषणा करे और इसके लिए आवश्यक कानूनी व प्रशासकीय कदम उठाये।

(४) राज्य का जनसंपर्क विभाग, प्रान्त की समस्त रचनात्मक संस्थाएँ, लोक सेवक और राज्य का शिक्षा विभाग अपनी समस्त उपलब्ध शक्ति से शराबबंदी का वातावरण बनायें तथा इसके लिए हैण्डबिल, पोस्टर्स, स्लाइड्स, सिनेमा, संवाद, नाटक, व्याख्यानमालाएँ आदि सभी प्रकार की प्रचार सामग्री का उपयोग करें।

(५) हर जिले में इसके लिए सम्मेलन आयोजित किये जायँ, कार्यकर्ताओं व पंचायतों के पंचों के शिविर रखे जायँ और शराबबन्दी के लिए उपयुक्त तौर-तरीके सोचे जायँ तथा प्रभावकारी कदम उठाये जायँ।

(६) प्रान्त में समस्त समाचार पत्र एवं विचार-पत्र विशेष प्रकार से ऐसा वातावरण तैयार करें और शराब-बिक्री के विज्ञापन न छापें आदि।

करेगी कि ६ अप्रैल के पूर्व ही काशी को मद्य निषेध क्षेत्र घोषित कर दिया जाय। जनता से शराब न पीने की प्रतिज्ञाएँ कराना, विभिन्न मोहल्लों में शराब की दुकानें हटवाने का प्रयत्न करना आदि कई कार्यक्रम भी रखे गये हैं।

गढ़वाल में मद्य-निषेध सम्मेलन

श्रीनगर (गढ़वाल) में १ और २ मार्च को समस्त पर्वतीय जिलों का मद्य-निषेध सम्मेलन जिला अंतरिम परिषद के अध्यक्ष श्री सकलानन्द की अध्यक्षता में होगा।

सर्व-सेवा-संघ का अधिवेशन

अखिल भारत सर्व-सेवा संघ का छहमाही अधिवेशन अब ९-१० और ११ अप्रैल '६२ को पटना में किया जाना तय हुआ है। बिहार में "बीघा में कट्ठा" अभियान को गतिशील बनाने की दृष्टि से ही यह अधिवेशन सेवाग्राम के बजाय पटना में हो रहा है। अधिवेशन में सम्मिलित होने वाले संघ-सदस्यों और कार्यकर्ताओं से यह अपेक्षा की गयी है कि वे इस अभियान में दो महीने का समय देंगे। "बीघा में कट्ठा" अभियान को सफल बनाने के लिए पूर्णियाँ जिले में कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण के लिए एक सप्ताह का शिविर भी, लगाये जाने की योजना है। उक्त अभियान में उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल ने १०० भूदान-कार्यकर्ता भेजने का निर्णय किया है। देश के सभी प्रान्तों से सैकड़ों की संख्या में भूदान-कार्यकर्ता बिहार के इस अभियान में सम्मिलित होंगे। सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक भी पटना में ही ७ और ८ अप्रैल को आयोजित किये जाने की सूचना मिली है।

काशी में शराबबन्दी अभियान

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल की एक आवश्यक बैठक १७ और १८ फरवरी को साधना-केन्द्र, राजघाट, काशी में हुई और सर्वसम्मति से यह तय किया गया कि यहाँ मद्य निषेध के लिए नगर-अभियान कार्यक्रम पुनः शुरू किया जाय। इसके लिए मास्टर सुन्दरलालजी (भूतपूर्व अध्यक्ष, उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल) के संयोजकत्व में एक समिति बनायी गयी। शराबबन्दी के प्रश्न को लेकर २६ मार्च '६२ तक एक लाख व्यक्तियों के हस्ताक्षर कराने, सार्वजनिक सभाएँ आयोजित करने, धार्मिक संस्थाओं से ऐसे प्रस्ताव पारित कराने के अतिरिक्त यह समिति अपने आन्दोलन द्वारा सरकार से अनुरोध

गांधी विद्या-स्थान द्वारा दिल्ली में सेमिनार आयोजित

श्री जयप्रकाश नारायण ने गांधी विद्या-स्थान, राजघाट, काशी की ओर से दिल्ली के "इन्स्टिट्यूट आफ इकानोमिक ग्रोथ" में प्रमुख अर्थशास्त्रियों और सर्वोदय विचारकों का एक सेमिनार आगामी १ अप्रैल से ४ अप्रैल तक रखा है। उक्त इन्स्टिट्यूट के अतिरिक्त दिल्ली स्कूल आफ इकोनोमिक्स और इण्डियन स्टेटिस्टिकल इन्स्टिट्यूट, कलकत्ता भी इस सेमिनार के आयोजन में सहयोगी हैं। इस सेमिनार में "जीवन में आर्थिक और नैतिक मान्यताओं के संतुलित विकास के संदर्भ में आयोजन", इस विषय पर विचार होगा।

महाराष्ट्र सर्वोदय-मण्डल

बारडोली में ७ फरवरी को श्री रा० कृ० पाटील की अध्यक्षता में महाराष्ट्र सर्वोदय-मण्डल की बैठक हुई और यह तय किया गया कि महाराष्ट्र सर्वोदय-सम्मेलन का अगला अधिवेशन अमरावती जिले में २४, २५ और २६ मार्च को सम्पन्न हो। स्थान का निर्णय बाद में किया जायगा। महाराष्ट्र से २५ कार्यकर्ता बिहार में "बीघा में कट्ठा" आन्दोलन में भाग लेने जायँगे। गोआ के भारत में विलीन होने के बाद की परिस्थिति से श्री गोविन्दराव शिन्दे ने सबको अवगत किया तथा श्री गद्रे गुरुजी को लिखा गया पत्र पढ़ा गया। गोआ में सर्वोदय-कार्य करने का भी निर्णय किया गया और उसका प्रारम्भिक खर्च महाराष्ट्र सर्वोदय-मण्डल देगा, ऐसा तय हुआ।

श्री नवबाबू की पदयात्रा

अखिल भारत सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी आजकल उड़ीसा में पदयात्रा पर हैं। २६ जनवरी से ३ फरवरी तक उन्होंने कोरापुट जिले के बेआपारीगुडा, जयपुर, रायगडा आदि क्षेत्रों का भ्रमण किया और उसके बाद ९ फरवरी तक पुरी जिले के केलाग थाने में पदयात्रा करते रहे। पुरी जिला सर्वोदय-मण्डल के संयोजक श्री कस्तुरीचरण नायक पदयात्रा में साथ थे। केलाग में उन्होंने ६० मन धान एकत्र किया। कुछ दिन कटक रह कर नव बाबू १७ फरवरी को कोरापुट जिले के नरसिंह-पटना क्षेत्र के लिए पदयात्रा पर चल पड़े।

सामूहिक मंच पर राजनैतिक प्रचार

पंजाब सर्वोदय मण्डल द्वारा जालंधर में आयोजित एक सभा में विभिन्न राजनैतिक पक्षों के उम्मीदवारों ने एक ही मंच से भाषण किये। ११ फरवरी को ऐसी ही एक सभा फर्रुखाबाद में भी सर्वोदय-मण्डल द्वारा आयोजित की गयी। सर्व सेवा संघ द्वारा प्रचारित चुनाव आचार-संहिता का जगह जगह जनता ने अच्छा स्वागत किया। नरसिंहपुर जिले के सपनापुर गाँव में एक आचार प्रचार मर्यादा-कार्यकर्ता-शिविर भी १० से १२ फरवरी तक आयोजित किया गया, जिसमें श्री गणेशप्रसाद नायक ने व्याख्यान दिये।

मतदाता-मण्डल का प्रयोग

अधिकृत सूचना मिली है कि आगरा की तहसील किरावली में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने १४३ ग्रामों में ग्राम-सभाओं से संपर्क स्थापित कर "मतदाता-मण्डल" बनाये हैं। १५ जनवरी १९६२ को, किरावली में १३१ गाँवों के १०२२ प्रतिनिधियों ने एक सम्मेलन आयोजित किया और सर्वसम्मति से उस क्षेत्र के लिए मास्टर शान्तिस्वरूप का नाम विधान-सभा के लिए चुना गया। उस सभा में तत्काल १२८२ रुपये जमा किये गये और यह भी तय रहा कि चुनाव में सरकार द्वारा स्वीकृत रकम से कम ही खर्च किया जायगा। सर्वोदय सम्मेलन, किरावली आगरा के संयोजक श्री चिम्मनलाल "मतदाता मण्डल" की सफलता के लिए विशेष प्रयत्नशील हैं। ऐसा ही एक प्रयोग गुजरात के बड़ौदा जिले की नसवाडी और छोटा उदेपुर तहसीलों में श्री हरिवल्लभ परीख के उद्योग से सम्पन्न हो रहा है।

बिहार में 'लेवी' कानून और भूदान

बिहार भूमि हदबंदी विधेयक (बिल) की "लेवी" सम्बन्धी धारा २८ के पास होने के बाद लोगों के मन में यह भ्रम पैदा हुआ है कि भूदान में जमीन का हिस्सा देने के बाद सरकार की ओर से लगने वाली "लेवी" में वह मिन्हा (एडजस्टेड) होगी या नहीं। धारा २८ के अनुसार राज्य-सरकार एक एकड़ से अधिक जमीन वाले भूमि वानों से उनकी भूमि का कुछ भाग अर्जित कर सकती है। इसके अन्तर्गत सरकारी 'गजट' में विज्ञप्ति प्रसारित करके राज्य-सरकार अध्याय १० की धाराओं को ऐसे क्षेत्रों में, जिन्हें वह निर्धारित करे, लागू कर सकती है। 'गजट' में प्रकाशन के बाद कलेक्टर निर्धारित रीति से जिनके पास एक एकड़ से अधिक भूमि है, उनसे यह माँग कर सकते हैं कि वे राज्य को—

(क) यदि उनके पास एक एकड़ से अधिक, किन्तु पाँच एकड़ से अधिक भूमि नहीं है, तो अपनी कुल भूमि का बीसवाँ भाग,

(ख) यदि उनके पास पाँच एकड़ से अधिक, किन्तु बीस एकड़ से कम भूमि है, तो अपनी कुल भूमि का दसवाँ भाग,

(ग) यदि उनके पास बीस एकड़ या उससे अधिक भूमि है, तो अपनी कुल भूमि का छठा भाग समर्पित करें।

लेकिन यदि भूमिवान ने २१ दिसंबर १९६० को या उसके बाद अपनी भूमि का कोई भाग, बिहार भूदान-यज्ञ अधिनियम (एक्ट) १९५४ के अन्तर्गत स्थापित बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी को या आचार्य विनोबा भावे को भूदान-आन्दोलन के उद्देश्यों के लिए दान दिया है, तो उपर्युक्त अध्याय १० की धाराओं के अनुसार उन्हें भूमि मिन्हा कर दी जायगी।

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल की बैठक

१७ फरवरी, ६२ को उ० प्र० सर्वोदय-मण्डल की कार्यसमिति की बैठक श्री विचित्रसहाय—अध्यक्ष, उ० प्र० सर्वोदय-मण्डल की अध्यक्षता में वाराणसी में सम्पन्न हुई। उसमें तय किया गया कि मण्डल का प्रधान कार्यालय अब हरदोई से स्थानान्तरित करके मेरठ में रखा जाय। 'काशी नगर शराबबन्दी अभियान' के अतिरिक्त उसमें बिहार में 'बीघा में कट्ठा' अभियान, चम्बल घाटी क्षेत्र में निर्माण-कार्य, वार्षिक बजट, सर्वोदय-पात्रों की योजना, सहजीवन का प्रयोग आदि कई विषयों पर निर्णय किये गये। उत्तर प्रदेश के जिला सर्वोदय-मण्डलों के प्रमुख कार्यकर्ताओं के अलावा सर्व-सेवा-संघ के कुछ कार्यकर्ता इस बैठक में सम्मिलित हुए।

चम्बल घाटी क्षेत्र में बागी भाइयों ने श्री विनोबाजी को आत्मसमर्पण किया था। वहाँ 'चम्बल घाटी शान्ति-समिति' कार्य कर रही है। उस क्षेत्र में सृजनात्मक कार्य की दृष्टि से निर्माण की ओर ध्यान देने के प्रश्न पर विचार हुआ। इसके लिए निश्चित किया गया कि आगरा में एक बैठक बुलाई जाय, जिसमें श्री बाबूलाल मित्तल, 'चम्बल घाटी शान्ति-समिति' के कार्यकर्ता और सर्वोदय-मण्डलों के कुछ साथी एकत्र होकर वहाँ के कार्य पर गहराई से चिंतन करें। वहाँ के लिए प्रादेशिक सर्वोदय-मण्डल ने आर्थिक सहायता देना भी मंजूर किया है।

उत्तराखण्ड में सर्वोदय और शांति-सेना के कार्य को गतिशील बनाने के लिए विशेष विचार किया गया और सीमा का क्षेत्र होने के कारण वहाँ के लिए एक विस्तृत योजना बनाने का जिम्मा श्री सुन्दरलाल बहुगुणा को दिया गया। लक्ष्मी-आश्रम, कौसानी जि० अल्मोड़ा से सुश्री सरला बहन भी मण्डल की बैठक में सम्मिलित हुई थीं।

उन्होंने बतलाया कि इसी दृष्टि से महिलाओं के दो शिविर कौसानी में लगाये जा रहे हैं। गृहस्थ बहनों के लिए शिविर ११ मई से २६ मई तक और विद्यार्थिनियों एवं शिक्षिका बहनों के लिए यह शिविर आगामी १ जून से १६ जून तक आयोजित किये जायेंगे। ये शिविर श्री विनोबाजी के आवाहन के अनुसार स्त्री-शक्ति को जगाने के विनम्र प्रयत्न हैं।

ग्राम समनापुर में लोक-शिक्षण शिविर

नरसिंहपुर जिला हरिजन सेवक संघ एवं सर्वोदय मंडल के तत्वावधान में १० से १२ फरवरी तक ग्राम समनापुर में लोक-शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें १० लोक-सेवकों ने भाग लिया। शिविर में लोक शिक्षण की दृष्टि से प्रभात फेरी, सामूहिक सफाई, सूत्र-यज्ञ, आदर्श चर्चा तथा सभाओं का आयोजन किया गया। शिविर का उद्घाटन बरमपुर के प्रमुख सर्वोदय-सेवक श्री [illegible] नायक ने किया। शिविर का संचालन श्री [illegible] पाठक ने किया। शिविर द्वारा इस क्षेत्र के लोगों को एक नयी प्रेरणा मिली है।

धुलिया (पश्चिम खानदेश) जिला सर्वोदय-सम्मेलन

धुलिया जिले के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का प्रथम सम्मेलन ११ और १२ फरवरी को प्रकाशा में श्री शेन्दुर्णीकर वकील की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। विविध संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने अपने-अपने कार्य की सूचना दी। जंगल-कामगार संस्थाओं की ओर से भाषण करते हुए श्री भिड़े ने बतलाया कि सरकार का रुख मजदूरों के हक में है या विरुद्ध, यह समझ में नहीं आता। श्री माधवराव देवरे ने ग्रामदानी गाँवों की स्थिति पर प्रकाश डाला। श्री पटवर्धन अप्पासाहब ने भंगी-मुक्ति कार्यक्रम पर जोर दिया।

उक्त सम्मेलन में कई प्रस्ताव भी पास हुए और यह सोचा गया कि जिले की सभी रचनात्मक संस्थाओं का एक 'फेडरेशन' बने। प्रकाशा के *"गांधी-धाम" में गांधीजी के स्थायी स्मारक बनाने* का प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ। जिला सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष श्री दामोदरदास मूँदड़ा ने लोक-शक्ति के निर्माण पर बल दिया और बतलाया कि इतनी अधिक संख्या में कार्यकर्ताओं का यहाँ उपस्थित होना स्पष्ट दर्शाता है कि यहाँ रखी गयी गांधीजी की अस्थियाँ भी हमें दधीचि की हड्डियों की तरह प्रेरणा दे रही हैं।

श्री धीरेन्द्र भाई की फसल-कटनी यात्रा

पिछले दिनों श्री धीरेन्द्र मजूमदार ने "ग्रामभारती" की नूतन योजना प्रकाशित की है। इसका प्रयोग इलाहाबाद जिले के बरमपुर ग्राम में शुरू भी कर दिया गया है।

श्रम विद्यापीठ, पगना, जिला इलाहाबाद से श्री धीरेंद्र भाई की कटनी-यात्रा १२ मार्च '६२ से शुरू होगी तथा ५ अप्रैल तक चलेगी। इस यात्रा में २४ गाँवों में, प्रतिदिन एक ग्राम में पड़ाव के हिसाब से २४ पड़ाव इस प्रकार रहेंगे : नमनपट्टी, भलहा, धाव, उल्दा, देवघाट, संसारपुरा, पैतिहा, गाढ़ा, बढ़ोसर, लोआ-कोन, मगदपुर, डीहो, हँडीधारी, देंवारी, किहुनीकलाँ, बघौत, गोबरा, डिहार, टोंगा, छापर, कोरॉव, बदौर, सिरोसर और ५ तारीख को पसना पहुँचना।

श्री धीरेन्द्र भाई और "ग्रामभारती" के कार्यकर्ता १२ मार्च की सुबह नमनपट्टी पहुँच कर किसानों को फसल-कटनी में सहयोग देंगे, और ग्राम को यहाँ सर्वोदय-विचार का प्रचार करेंगे। इसी प्रकार प्रत्येक ग्राम में कटनी तथा प्रचार का कार्यक्रम रहेगा। ग्राम भारती के लिये प्रत्येक ग्राम से अन्नसंग्रह भी किया जायगा।

युग-क्रांति की बुनियाद "ग्रामभारती" योजना चार आने मूल्य पर सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी से प्राप्त की जा सकती है।

विनोबाजी बिहार की ओर

असम के पूर्वी क्षेत्र में—दक्षिण में ब्रह्मपुत्र और पश्चिम में सुवर्णश्री, इन दो नदियों के बीच बैठे "सुवर्णश्री अंचल" स्थित ४०० गाँव श्री विनोबाजी को ग्रामदान में प्राप्त हुए हैं। असम-सरकार द्वारा "ग्रामदान एक्ट" भी बनाया गया है। असमी कार्यकर्ताओं के अविरत श्रम से उत्तर लखीमपुर जिले में भूदान-ग्रामदान की यह गंगा बही है। मार्च १९६१ में श्री विनोबाजी ने असम में प्रवेश किया था। अब आप "सुवर्णश्री अंचल" से पदयात्रा करते हुए बिहार की ओर बढ़ रहे हैं।

अहमदाबाद में सरंजाम-सम्मेलन

श्री दत्तोबा दास्ताने, सहमंत्री, अ० भा० सर्व सेवा संघ २, ३ और ४ मार्च को साबरमती प्रयोगशाला, अहमदाबाद में सम्पन्न होने वाले सरंजाम सम्मेलन का सभापतित्व करेंगे। यह सम्मेलन खादी-ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा आयोजित किया गया है।

ग्राम-स्वराज्य-समिति की बैठक

अ० भा० सर्व सेवा संघ की ग्राम स्वराज्य-समिति की एक आवश्यक बैठक हरिजन-आश्रम, अहमदाबाद में ५ और ६ मार्च '६२ को होगी। सर्वश्री शंकरराव देव, धीरेन्द्र मजूमदार, राधाकृष्ण, सहमंत्री अ० भा० सर्व सेवा संघ तथा अन्य सदस्य उसमें उपस्थित रहेंगे।

इन्दौर में मद्य-निषेध योजना

१ अप्रैल १९६२ से इन्दौर नगर में पूर्ण मद्य निषेध लागू किये जाने की संभावना है। इस बारे में मध्य प्रदेश सर्वोदय-मण्डल ने एक योजना भी तैयार की है और मध्य प्रदेश नशाबन्दी सम्मेलन भी २५ मार्च को इन्दौर में आयोजित किया जा रहा है। श्री श्रीमन्नारायण (सदस्य, योजना-आयोग) उक्त सम्मेलन की अध्यक्षता करेंगे। विशेष जानकारी के लिए विसर्जन आश्रम, नौलखा, इन्दौर के पते पर लिखा जाना चाहिए।

साधना-केन्द्र, काशी में सामूहिक जीवन पर चर्चा

साधना-केन्द्र, राजघाट, काशी में सामूहिक जीवन तथा उसके प्रयोग के बारे में २७ से ३१ मार्च १९६२ तक एक वैचारिक गोष्ठी आयोजित की गयी है। श्री जयप्रकाश नारायण भी इस अवसर पर यहाँ उपस्थित रहेंगे। सर्वश्री धीरेन्द्र मजूमदार, शंकरराव देव, नवकृष्ण चौधरी, अण्णासाहब सहस्रबुद्धे, दादा धर्माधिकारी और बाबा भाई आदि से भी इस अवसर पर उपस्थित रहने की प्रार्थना की गयी है।

विषय-सूची

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९००० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८८९० एक अंक : १३ नये पैसे
वार्षिक मूल्य ६)

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ९ मार्च '६२ | वर्ष ८ : अंक २३

विश्वशांति-सेना का प्रथम अभियान

टांगानिका से उत्तरी रोडेशिया में 'मार्च'

['भूदान यज्ञ' के पाठक यह जानते हैं कि करीब दो महीने पूर्व बेरुत (लेबनान) में विश्वशांति सेना के गठन के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ था। सम्मेलन में सर्वसम्मति से विश्वशांति-सेना की स्थापना का प्रस्ताव हुआ था। यह खुशी की बात है कि विश्वशांति-सेना की स्थापना के बाद शीघ्र ही विश्वशांति-सेना परिषद टांगानिका से उत्तरी रोडेशिया में सविनय अवज्ञा के लिए 'मार्च' आयोजित कर रही है। यहाँ पर विश्वशांति-सेना परिषद की ओर से सर्वश्री माइकेल स्काट, बायर्ड रस्टिन और बिल सदरलैंड की अपील प्रकाशित कर रहे हैं, जिसमें हर देश से विश्वशांति सेना के लिए शांति-सैनिक मांगे हैं। —स०]

अहिंसक प्रतिकार के लिए अफ्रीका में विश्वशांति-सेना की एक 'परियोजना' शुरू की गयी है। श्री जूलियस न्येरेरे, श्री केनेथ कौंदा और उनके राजनीतिक दलों के आमंत्रण से विश्वशांति-सेना परिषद, टांगानिका और उत्तरी रोडेशिया में एक 'मार्च'-'पदयात्रा'-की योजना बना रही है, जिसमें सीमा पार करने में 'सविनय अवज्ञा' का कार्य भी सम्मिलित है। सीमा के पार करने के साथ-साथ उत्तरी रोडेशिया में एक आम हड़ताल करने की योजना भी है। इस आम हड़ताल की घोषणा शीघ्र ही की जाने वाली है। श्री कौंदा ने विश्वशांति-सेना परिषद से यह प्रार्थना की है कि हमारे अभियान के समर्थन में तत्काल सारी शक्ति लगा दें।

टांगानिका से उत्तरी रोडेशिया में अभियान का प्रस्तावित मार्ग

हमारे अभियान के दो हिस्से होंगे।

(१) टांगानिका से उत्तरी रोडेशिया में पदयात्रा, जिसमें दुनिया के हर हिस्से के लोगों के साथ अफ्रीकी देशों के लोग भी शामिल होंगे।

(२) हर देश में जहाँ हमारे सदस्य और समर्थक हैं, वहाँ भी कौंदा और उनकी 'युनाइटेड नेशनल इंडिपेंडेन्स पार्टी' के समर्थन में तत्काल कार्रवाई और प्रचार किया जाय।

केनेथ कौंदा

'मार्च' : पदयात्रा

हमें २० से लेकर ३० तक व्यक्तियों की एक सप्ताह की अवधि में दारेसलाम में आवश्यकता है, जो दुनिया के हर हिस्से से आये हुए हों। हम चाहते हैं कि हर देश से तीन प्रकार के लोग भाग लें। एक, अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त व्यक्ति; दूसरा, वह व्यक्ति, जिसका अहिंसक आंदोलन से काफी लंबा संबंध रहा हो और तीसरा, एक ऐसा नौजवान जो दफ्तर और 'मार्च' के संगठन के कठिन काम की जिम्मेदारी संभाल सके। यह व्यवस्था की जा रही है कि प्रवास के खर्च का व्यय राष्ट्रीय संगठन वहन करे। इसमें भाग लेने वालों को गिरफ्तार होने, तथा उत्तरी रोडेशिया की सुरक्षा-सेनाओं की हिंसा को बरदाश्त करने, जेल जाने अथवा बहुत या कम दिनों तक हवालात में पड़े रहने की तैयारी होनी चाहिये।

स्थानीय कार्रवाई और प्रचार

तत्काल श्री कौंदा को अपने अभियान के समर्थन की जरूरत है। इस अभियान में वे चाहते हैं कि सार्वत्रिक वयस्क मताधिकार के आधार पर उत्तरी रोडेशिया में अफ्रीका के लोगों का शुद्ध बहुमत हो। साथ ही 'ब्रिटिश साउथ अफ्रीका कंपनी' के विरुद्ध भी आंदोलन की जरूरत है, जो खुले रूप से श्री वेलेन्स्की का समर्थन कर रही है।

माइकेल स्काट

स्थानीय कार्रवाइयों के दो प्रकार हो सकते हैं :

(१) ब्रिटिश राजदूत के समक्ष लोगों के प्रतिनिधि-मंडल, युनाइटेड नेशनल इंडिपेंडेन्स पार्टी का समर्थन करें।

(२) जहाँ जहाँ भी ब्रिटिश और सेंट्रल अफ्रीकन कौन्सुलेट, राजदूतावास और व्यापार-कार्यालय हों, उनके समक्ष प्रदर्शन और 'पिकेटिंग' किया जाय। साथ ही ब्रिटिश साउथ अफ्रीका कम्पनी के कार्यालयों के सामने भी 'पिकेटिंग' और प्रदर्शन किये जायँ।

कुछ सुझाये हुए नारे इस प्रकार हैं :

"उत्तरी रोडेशिया में मुक्त चुनाव हो।"

"उत्तरी रोडेशिया की जनता को स्वराज्य और स्वतंत्रता मिले।"

"ब्रिटिश साउथ अफ्रीका कंपनी : इस देश का धन उत्तरी रोडेशिया के निवासियों का है!"

"वेलेन्स्की, चले जाओ!"

ज्यूलियस न्येरेरे

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

हर गांव में विद्यापीठ

मेरी कल्पना है कि हर गांव में संपूर्ण तालीम होनी चाहिए। जिसे हम 'युनिवर्सिटी' कहते हैं, विद्यापीठ कहते हैं, वह हर गांव में होनी चाहिए; क्योंकि हर एक ग्राम, चाहे कितना भी छोटा हो, सारी दुनिया का प्रतिनिधि है और कुल दुनिया थोड़े में वहां पर मौजूद है। इसलिए पूरी तालीम वहां मिलनी चाहिए। प्रत्येक गांव का सृष्टि के साथ प्रत्यक्ष संबंध है, इसलिए मनुष्य को सृष्टि-अभिज्ञान सब तरह से वहां हासिल हो सकता है। असंख्य प्राणी, पक्षी, पशु इत्यादि के साथ संपर्क रहता है। इसलिए मानव को जो प्राणिशास्त्र का ज्ञान चाहिए, वह वहां मिल सकता है। वहां पर रास्ते बनेंगे, वहां पर खेती और ग्रामोद्योग होंगे, इसलिए उन सब चीजों के जरिये और उन चीजों के लिए जो ज्ञान की जरूरत है, वह सारा ज्ञान ग्राम में प्राप्त होना चाहिए। ग्राम में प्राचीन काल से मानव-समाज चला आया है, अतः वहां इतिहास भी मौजूद है और समाज-ज्ञान भी मौजूद है। ग्राम में एक-दूसरे से अधिक नजदीक संपर्क आता है—शहर में जितना आता है, उससे ज्यादा। इसलिए वहां नीतिशास्त्र और धर्म-शास्त्र बहुत विकसित हो सकता है।

—विनोबा

(मसुरंदरवार, अकोला, ६-३-'५५)

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

ईमानदारी का नतीजा

एक व्यापारी भाई ने नीचे लिखी दुविधा पेश की है और समाधान चाहा है :

"मैं एक छोटा-सा दुकानदार हूँ, आढ़त का धन्धा करता हूँ। किसान जो माल लेकर आते हैं, उसका उचित भाव लगा कर हम वह माल दुकानदारों को दिला देते हैं, किसान को अपने माल की कीमत मिल जाती है और हम लोगों को अपनी वाजिब मजदूरी आदि।

उत्तर प्रदेश की सरकार ने इस प्रकार के आढ़तियों पर पिछले दो वर्ष से 'सैल्स-टैक्स'—बिक्री कर—लगा दिया है। लोगों में आम प्रवृत्ति यह है कि इस प्रकार के कर को चुरायें। पर इस प्रकार से चोरी करके खाना मेरे मन को नहीं रुचता।

पर माल खरीदने वाले जो दुकानदार हैं, वे सैल्स-टैक्स का लाभ होते हुए देख कर हमारे द्वारा माल न लेकर अन्य व्यापारियों से माल लेते हैं, जो उन्हें टैक्स की बचत कर देते हैं (याने वे सौदे दर्ज नहीं किये जाते और उन पर सरकार को बिक्री-कर नहीं दिया जाता)। इस प्रकार हमारा धन्धा तो समाप्त होता जा रहा है और टैक्स की चोरी करने वाले गलत आदमी पनप रहे हैं।

दूसरी ओर, बिक्री-कर वसूल करने वाले अधिकारी लोग हमारी इस घटती हुई बिक्री को सही न मान कर हम पर पहले की तरह अधिक टैक्स निर्धारित कर देते हैं। वे समझते हैं कि हम झूठा हिसाब दे रहे हैं, जैसा कि करीब-करीब सब व्यापारी करते हैं। इस तरह इधर तो हमारी आमदनी घट रही है और उधर सरकार टैक्स ज्यादा माँगती है। इस दुहरी मार से मैं बहुत परेशान हूँ। ईमानदारी के कारण भुखमरी की नौबत आ रही है। इस परीक्षा में अपने को डाल कर बड़ी असमंजस दशा में आ गया हूँ।"

अपनी इस दुविधा का बयान करके इन भाई ने पूछा है कि इस परिस्थिति में वे क्या करें? चोरी और ईमानदारी समाज में सदा से रही है। पर सामान्य स्थिति में साधारण तौर पर लोग ईमानदारी को पसन्द करते हैं और चोरी करने वाले को तथा चोरी करने को बुरा मानते हैं। ऐसी स्थिति में ईमानदार की इज्जत भी होती है और लोग उसे अच्छी निगाह से देखते हैं। पर आज परिस्थिति बिलकुल उलटी हो गयी है। बेईमानी, चोरी, भ्रष्टाचार और घूसखोरी इतनी व्यापक हो गयी है कि इस प्रकार ईमानदारी से चलने का सोचने वाले कम ही रह गये हैं। जैसा इस भाई ने वर्णन किया है, ईमानदारी के कारण उल्टे भूखे रहने की नौबत आती है; इतना ही नहीं, ईमानदार को लोग ईमानदार भी नहीं समझते, बल्कि समझते हैं कि वह झूठा ही होगा। सचमुच ईमानदार है, ऐसा भरोसा होने पर भी लोग उस ईमानदारी की कदर नहीं करते, बल्कि ईमानदार को बेवकूफ बतलाते हैं।

स्वाभाविक है कि ऐसी परिस्थिति में ईमानदारी से चलना चाहने वाले लोग भी सब इस तरह की कड़ी परीक्षा में अन्त तक टिक नहीं सकते। अधिकांश लोग हार मान कर वही रास्ता अख्तियार करते हैं, जिस पर उनके आसपास वाले सब चलते हैं। यह समझ लेना चाहिए कि जब समाज में बेईमानी, भ्रष्टाचार आदि इतना व्यापक है तो ईमानदारी की राह पर चलने वाले को राहत मिलना कठिन है। उसे व्यक्तिगत रूप से तो अपना भोग देना ही पड़ेगा, और कठिन तपस्या में से भी गुजरना पड़ेगा।

उसे राहत की या लोगों की प्रशंसा और आदर की आशा नहीं करनी चाहिए। जब अधर्म व्यापक हो जाता है तब धर्म को इस प्रकार कड़ी परीक्षा देनी ही होती है। इसके सिवा कोई चारा नहीं है। अन्त में अधर्म अवश्य पराजित होगा, चाहे स्वयं ईमानदार व्यक्ति को राहत मिले या न मिले, इस निष्ठा पर कायम रहना और दृढ़तापूर्वक सहन करते जाना ही एकमात्र उपाय है।

—सिद्धराज ढड्ढा

ये दहलाने वाले आँकड़े

राष्ट्रसंघ की ओर से हाल में एक आर्थिक 'सर्वे' हुई थी। उसमें बताया गया है कि एशिया में २५ देश कम-विकसित हैं, उनमें भारत का नम्बर है बीसवाँ।

भारत की स्थिति का विवेचन करते हुए रिपोर्ट में बताया गया है कि भारत में ४५ फीसदी लोगों की मासिक आमदनी १०) से लेकर २०) के बीच में है।

३० फीसदी लोगों की मासिक आमदनी २०) से लेकर ३०) के बीच में है।

२४ फीसदी लोगों की मासिक आमदनी ३०) से लेकर ५०) के बीच में है।

सौ में केवल एक आदमी की मासिक आमदनी ५०) से ऊपर है।

सन् १९६० में भारत की औसत सालाना आमदनी फी आदमी थी ३३०) और इस औसत आमदनी से केवल २५ फीसदी लोगों की आमदनी ऊपर थी। यानी सौ में ७५ आदमियों की आमदनी साल में ३३०) से भी कम है।

एक तरफ यह हाल है, दूसरी तरफ भारत के १० बड़े उद्योगपतियों की आमदनी पिछले दस साल में (सन् १९५१ से लेकर १९६१ तक) १ अरब रुपये से बढ़कर ढाई अरब रुपये हो गयी है।

१९५७-'५८ और १९५९-'६० के बीच पूँजी पर दिया जाने वाला 'डिवीडेण्ड' २८७ प्रतिशत बढ़ गया।

सम्पत्ति कर १९४४-'४५ में ११३ करोड़ रुपये था; १९५९-'६० में यह २०२ करोड़ हो गया, पर अप्रत्यक्ष कर से १९४४-'४५ में जहाँ १५० करोड़ की आमदनी थी, वह १९५३-'५४ में ३११ करोड़ हुई और १९५९-'६० में वह हो गयी ८५४ करोड़।

साफ है कि गरीब दिन दिन गरीब होते चल रहे हैं, अमीर दिन दिन अमीर।

और जब यह स्थिति है तो यह स्वाभाविक है कि बेकारी दिन-दिन बढ़ती चले। १९५६ में जहाँ ५३ लाख लोग बेकार कूते गये थे, १९६१ में उनकी संख्या बढ़कर ९० लाख हो गयी। ऐसी आशा की जाती है कि अगले पाँच सालों में उनकी संख्या बढ़कर १ करोड़ २० लाख हो जायगी।

इसके साथ-साथ भरपूर काम न पाने वाले भारतीयों की संख्या है डेढ़ करोड़ से लेकर १ करोड़ ८० लाख।

भारत की गरीबी के ताजे-से ताजे ये आँकड़े इस बात का सबूत हैं कि हम डींग चाहे जैसी मारें, हमारी हालत दिन-दिन बदतर होती चल रही है। जिस देश के तीन-चौथाई आदमियों की आमदनी इस महँगी के जमाने में एक रुपये रोज से भी कम हो, देश की आधी जनता को महीने में मुश्किल से दस पन्द्रह रुपये ही मिल पाते हों, लाखों आदमियों को हाथ पर हाथ धर कर बेकार बैठना पड़ता हो और डेढ़-दो करोड़ आदमियों को पूरा काम ही न मिलता हो, उस देश के निवासियों की दयनीय हालत का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

ये दहलाने वाले आँकड़े देश का दर्द रखने वाले हर आदमी से यह माँग करते हैं कि वह उन्हें सुधारने के लिए जी-जान से कोशिश करे।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

अनाज और शान्ति या युद्ध ?

स्वराज्य के बाद से अपने देश में जो नियोजन कार्यक्रम चला है, उसकी एक विशेषता यह है कि देश में अनाज का उत्पादन बढ़ा है। मगर आश्चर्य की बात है कि विदेशों से जो अनाज मँगाने का सिलसिला था, वह अभी तक जारी है। पिछले दस बरस में केवल अमरीका से ही तीन करोड टन अनाज मँगाया है, जिसके लिए लगभग तेरह सौ करोड रुपये देने पड़े। पिछले महीने भारत के खाद्य-मंत्री को एक सौ चालीस लाखवें टन गल्ले के उपलक्ष में अमरीकी गेहूँ की एक बोरी निशानी के तौर पर बाकायदा भेंट में दी गयी। इस आयात का आयोजन 'पी० एल० ४८० शान्ति, के लिए गल्ला' नामक कार्यक्रम के अन्तर्गत चला करता है।

इस कार्यक्रम की कुछ विशेषताएँ हैं। इसकी कीमत रुपये में ही अमरीका वाले ले लेते हैं और देश पर विदेशी मुद्रा का बोझ नहीं पड़ता। बिक्री का जो रुपया है, उसमें से सत्तासी-प्रतिशत (रुपये में चौदह आने) भारत में ही जमा होता रहता है और अमरीका से उधार व सहायता के रूप में अपने देश को मिल जाता है। अमरीकी सरकार की सलाह के अनुसार भारत-सरकार इस रुपये को खर्च करती है। ध्यान देने की बात है कि आजादी के बाद से भारत को अमरीका से अब तक चार सौ करोड डालर (या लगभग सोलह सौ करोड रुपये) की जो मदद मिली है, उसमें से आधी से ज्यादा वस्तुओं के रूप में 'पी० एल० ४८०, शान्ति के लिए गल्ला' की मार्फत आयी है। गल्ले की इस आयात के कई फायदे बताये जाते हैं—देश में गल्ले के दाम न चढ़ने देने में मदद मिली है, बाजार में आम चीजों के दाम स्थिर हुए हैं, अपने यहाँ गल्ले की स्थिति संभली है और सूखा-बाढ़ आदि संकटों के खिलाफ एक तरह से बीमे का काम किया है। अमरीकी सरकार इस कार्यक्रम पर बहुत बल देती है। "इससे सचमुच नयी सार्थक सीमाओं" का श्रीगणेश होता है। राष्ट्रपति कैनेडी के शब्दों में ही, "यहाँ घर के (अमरीकी) बाहुल्य और समुद्र पार अकाल के जैसी स्थिति के बीच की जो दूरी है, उसे यह कार्यक्रम कम करने की कोशिश करता है। मानवता और दूरदृष्टि, दोनों का ही तकाजा है कि हम इस दिशा में अच्छी तरह कोशिश करें।" फिर "अगर एक स्वतन्त्र समाज उन गरीबों को नहीं बचा सकता, जो बडी तादाद में हैं, तो उन अमीरों को क्या बचायेगा, जो थोडी तादाद में हैं।" अमरीका की इस कार्यक्रम के पीछे यह दृष्टि है।

अपनी सरकार ने जो तीसरी पंच-वर्षीय-योजना प्रकाशित की है, उसमें कहा है कि गल्ले की पैदावार, तीस फीसदी और अन्य फसलों की इकतीस फीसदी इन पाँच साल में बढ़ेगी। इसलिए यह बड़े दुःख की बात है कि इस कार्यक्रम को अभी और आगे चलाया जायेगा। कोशिश यह है कि एक काफी अर्से तक यह आयात जारी रहे। समर्थन में बड़ी पुरानी दलीलें दी जा रही हैं—इससे खुराक का स्तर बढ़ेगा, सरकारी भंडारे में गल्ले की मात्रा बढ़ेगी और विकास सम्बन्धी जो तरह-तरह के आयोजन चल रहे हैं, उनमें एक मजबूती और स्थायित्व आयेगा और कल्याणकारी आयोजनों में मदद मिलेगी। इनमें कोई विशेष सार नहीं है।

आज खुद अमरीका के अन्दर भी जनमत इस कार्यक्रम के बहुत ज्यादा अनुकूल नहीं है। वहाँ के जो कृषि-मंत्री हैं, उनका कहना है कि इस 'स्कीम' में गल्ला अब ज्यादा न भेजा जाये। अमरीकी सीनेट की वैदेशिक सम्बन्ध कमेटी के आगे एक बड़े सीनेटर ने कहा कि जब देश-देश में हमारे पास स्थानीय सिक्का ज्यादा तादाद में रहने लगेगा तो उन देशों से अपने सम्बन्ध बिगडने का खतरा है।

लेकिन इसके अलावा भी बहुत-सी बातें हैं, जिनके कारण भारत-सरकार को इस कार्यक्रम से हाथ धो लेना चाहिए। कौन नहीं जानता कि ऐसे कार्यक्रमों से देश के अन्दरूनी मामलों में दखलअन्दाजी होती है। यद्यपि इसके साथ कोई शर्तें या डोरियाँ नहीं रहती, फिर भी अन्दर ही अन्दर इनसे पेचीदगी पैदा होती है और मामले बिगडते हैं। उससे हमारे लोकतन्त्र के चलने पर भी असर पडता है। साथ ही, जनता के अन्दर घोर निराशा पैदा हो जाती है।

इसी कार्यक्रम द्वारा स्कूली बच्चों को दोपहर को खाना भी दिया जाता है। इसकी शुरुआत मद्रास सरकार ने की। अब यह केरल और पंजाब में भी चल रहा है। इससे जबरदस्त अनैतिक असर पैदा होता है। जरा देर के लिए हम मान लेते हैं कि इससे स्वास्थ्य संभलता है (यद्यपि इस बात का कोई सबूत नहीं है कि बिना इसके स्वास्थ्य बिगड जायेगा)। लेकिन इसका हानिकर असर बच्चों के बौद्धिक और नैतिक मानस पर तो पड़े बिना नहीं रह सकता। हमारे सारे नियोजन पर इससे पानी फिर जाता है। अगर हिन्दुस्तान अपने बच्चों को दूध या खाना नहीं दे सकता, तो फिर उसका लोहे व स्पात, या रेल्वे इन्जनों में स्वावलम्बी होने और 'एवरो-७४८' जैसे जहाजों के बनाने का क्या मतलब रहा ! एक बार नयी पीढ़ी के दिल में अगर यह बात बैठ जाती है कि हम खाने के मामले में दूसरे देशों के मुहताज हैं, तो फिर अन्य क्षेत्रों में हम कितने ही स्वावलम्बी क्यों न हो जायें, उनके अन्दर की लाचारी बनी रहेगी और वे कभी भी गर्दन उठा कर और सीना तान कर नहीं चल सकेंगे।

एक और भी खतरा आगे आ सकता है। इस तरह के परोपकारी कार्यक्रमों के कारण धनी देश को विशेष आशाएँ होने लगती हैं। वह यह समझता है कि आदाता-देश की सरकार सदा उसका साथ देगी और उसके खिलाफ तो हरगिज नहीं जायेगी। अगर उसने जरा भी अपना रुख बदला तो दाता-देश आग-बबूला हो उठता है और आदाता के ईमान तक पर शक करने लगता है—जैसा गोआ के मामले पर अमरीका व ब्रिटेन में हुआ। इस तरह एक ऐसा सिलसिला जारी होता है, जिससे आपस में कटुता बढ़ती है और दूसरे देशों के साथ जो अपने सम्बन्ध हैं, उस पर भी आँच आती है। तब यह गल्ला शान्ति की बजाय युद्ध को बढ़ावा देने लगता है। भारत को चाहिये कि अपना गल्ला खुद पैदा करें और बाहर से अनाज मंगाने का दुर्भाग्यपूर्ण क्रम एकदम बन्द हो।

अब तक अनाज-स्वावलम्बन की जो कोशिशें की गयी, उनमें गंभीरता का अभाव रहा। दस साल के नियोजन से यह तो स्पष्ट हो ही गया कि चकबन्दी, जोत की हद, सहकारी खेती आदि कानूनों से ज्यादा बनता-बिगडता नहीं। अनाज की पैदावार में कुछ बढ़ोतरी हो जाती है, मगर लोगों के पारस्परिक आर्थिक सम्बन्धों में कोई फरक नहीं पडता और शोषण की प्रक्रिया भी बदस्तूर चलती है और जैसा कि खेतिहर मजदूरों की रिपोर्ट से स्पष्ट है, भूमिहीन मजदूरों की दशा में भी कोई सुधार नहीं हुआ।

सच यह है कि अनाज-स्वावलम्बन तब तक एक स्वप्न ही बना रहेगा, जब तक भूमि-सुधार की दिशा में क्रांतिकारी कदम नहीं उठाये जाते। जब तक जोतने वाले को जमीन नहीं मिलती, तब तक ऊपरी चीजों से काम नहीं होगा। भूदान-ग्रामदान आन्दोलन ने जो सफलता, कम ही क्यों न हो, प्राप्त की है, उससे जाहिर है कि वह ऐसा रास्ता है, जिससे यह सवाल ठीक से हल हो सकता है। जिस भारत में विदेशों से अनाज आता रहेगा, वह कभी स्वतंत्र हो ही नहीं सकता; न वहाँ शान्ति ही रह सकती है। भारत की स्वतंत्रता और शांति तभी सच्ची और ठोस समझी जायेगी, जब उसमें बाहर से अनाज न आये। अगर अनाज का आयात जारी रहता है तो इससे साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बल मिलेगा, चीजें उलझेंगी और यह शांति का अनाज न रह कर युद्ध का अनाज साबित हो सकता है !

—सुरेश राम

जनसंख्या का सवाल

[विनोबा से सवाल पूछा गया कि जनसंख्या बढ़ रही है, तो उसका ग्रामदानी गाँवों में क्या इलाज होगा ? विनोबा ने जो उत्तर दिया है, वह यहाँ दिया जा रहा है।—सं०]

यह सवाल ग्रामदानी गाँवों का ही नहीं है, सबके सामने है। इसका उपाय यही है कि लोग संयम सीखें। मुहम्मद पैगम्बर ने कुरान में लिखा है कि चालीस साल के बाद मनुष्य का ध्यान परमेश्वर की तरफ जाना चाहिये और विषय-वासना से मुक्त होना चाहिए। हिन्दू धर्म में भी यह बताया है कि एक उम्र में संसार से अलग होना चाहिये। समाज की सेवा में, परमेश्वर की सेवा में बचा हुआ जीवन बिताना चाहिये, यह समाज को सिखाना चाहिये, यही एक उपाय है। दूसरा उपाय नहीं।

संयम के बिना मानव समाज नहीं टिकेगा। संयम नहीं रहा तो मानव समाज आस-पास के प्राणियों को खायेगा। मनुष्य भी आपस-आपस में मार-पीट कर मरेंगे, इसलिए संयम की तालीम पानी होगी। अपने पर अंकुश रखना होगा। यह इतना मुश्किल नहीं है। मनुष्य अगर सोचे तो यह कर सकता है। 'नामघोषा' में आया है—"विषय संबंध सुख समस्त योनिते पाये। हरि सेवा एको याने नाहीं।" विषय-सुख सब योनि में है, लेकिन हरि की सेवा करने का मौका मानव जन्म में ही मिलता है। इसलिए यही सबको समझाना चाहिये कि भाई घर-गृहस्थी चालीस-पैंतालीस साल तक तुमने चलायी, अब जरा अलग हो जाओ। अब समाज की सेवा में लगो। "धर्मार्थे उत्तवः।"

मनुष्य किसलिए जन्मा है ? वह धर्म के लिए जन्मा है। सबकी सेवा प्रेम से करे। अपनी वासना न रखे। परमेश्वर का दर्शन कर सके और यह दुनिया छोड़ते समय हँसते-हँसते जाय। दूसरे लोग रो रहे हैं और यह हँस रहा है, ऐसा होना चाहिये। जब यह जन्मा तब रोते-रोते आया और दूसरे हँसते थे। अब जाते समय उलटा होना चाहिये। यह तभी संभव होगा, जब जीवन भर समाज की सेवा करेगा और परमेश्वर का नाम नहीं भूलेगा। हमेशा "लोकर हित चित", लोगों के हित में सदा सोचता रहेगा। यह हमारे महापुरुषों का आदेश है। यही बात कुरान में है, बाइबिल में है। हर धर्म में उसकी चर्चा है। हम चाहते हैं कि गाँव-गाँव में ऐसे ग्रंथों का पठन हो। मनुष्य के जीवन में जरा रस आयेगा। वह रसमय भक्ति सीखेगा। आज नीरस भक्ति हो रही है। उसमें मनुष्य का जी नहीं लगता है। इसलिए समाज की सेवा में समाज-रूपी परमेश्वर की भक्ति में अपना समय जो बितायेगा वह रसमय भक्ति का आनन्द पायेगा। इसके सिवाय दूसरा कोई सुख नहीं हो सकता है।

—विनोबा

[देवाजा, जि० शिवसागर, १२-१०-'६१]

अहिंसक क्रान्ति : क्या ? क्यों ? कैसे ?

• श्रीकृष्णदत्त भट्ट

क्रान्ति और सो भी अहिंसक ?

ऐसा भी भला कभी सम्भव है ?

और पल भर के लिए मान भी लें कि अहिंसक क्रान्ति सम्भव है, तो क्या हिंसक क्रान्ति की भाँति उसकी कोई प्रक्रिया भी हो सकती है ?

सवाल टेढ़ा है जरूर, पर टेढ़ा कह कर ही हम उसे टाल नहीं सकते।

जनवरी-फरवरी, १९६० में यही सवाल आचार्य दादा धर्माधिकारी के सामने पेश किया गया और उन्होंने साधना-केन्द्र, काशी में एक माह तक लगातार इस पर भिन्न-भिन्न पहलुओं से विचार करके अपनी 'हितं मनोहारि' शैली में बताया कि अहिंसक क्रान्ति हुई है, हो सकती है और उसकी प्रक्रिया भी होती है। जरूरत है उसे समझने की और उसे अमल में लाने की। सत्याग्रही उपयुक्त समस्याओं को चुन कर इस प्रक्रिया के अनुसार समाज-परिवर्तन कर सकते हैं और जरूर कर सकते हैं। शर्त केवल इतनी ही है कि सत्याग्रही के मन में यह भान रहना चाहिए कि संघर्ष में से भी मनुष्य का मनुष्य के लिए सद्भाव ही निष्पन्न होगा।

❀ ❀ ❀

दादा कहते हैं कि समाज-परिवर्तन आखिर हम चाहते क्यों हैं ? इसीलिए कि मनुष्य को जो सदा प्राप्त है, उससे वह असन्तुष्ट रहता है। वह परिवर्तन चाहता है।

सवाल है कि ऐसी कौनसी अवस्था है, जिसमें यह असन्तोष न रहे। वह या तो जड़ता की अवस्था हो सकती है या परिपूर्णता की। मनुष्य के विकास के लिए न तो स्वयं-सन्तुष्टि ही चाहिए और न नित्य व्यग्रता ही। उसके लिए आवश्यकता है अहिंसक या अनासक्त चित्त की। हमारा चित्त ऐसा मुक्त होना चाहिए कि वह सबकी बात समझने के लिए तैयार रहे। वह किसी को दबाये नहीं।

अहिंसक क्रान्ति समझने और समझाने की ही क्रान्ति है। पहले हम समझेंगे और बाद में समझायेंगे।

पर होता उल्टा है। हम समझने की कोशिश करते नहीं, समझाने की ही सारी कोशिश करते हैं। अपनी बात मनवाने का ही हमारा प्रयत्न रहता है। फिर वह चाहे भौतिक स्तर की बात हो, चाहे वैज्ञानिक स्तर की; धार्मिक स्तर की हो, चाहे आध्यात्मिक स्तर की।

अपनी बात मनवाने के लिए कोई दूसरों के शरीर पर अपना आधिपत्य जमाना चाहता है, कोई विज्ञान के रूप में दूसरों पर हावी होना चाहता है, कोई योग का चमत्कार और विभूतियों का सहारा लेता है, वशीकरण की मोहनी डालता है और कोई यह चाहता है कि सारे विश्व पर एकमात्र मेरा ही विचार छा जाय।

आज हम देखते हैं कि समाज में ये सारी प्रक्रियाएँ चल रही हैं और अपने पूरे जोर से चल रही हैं।

परिणाम हमारी आँखों के सामने है। हम देख रहे हैं कि हम नाना प्रकार के विरोधों, अन्तर्विरोधों में फँसे हुए घड़ी के पेंडुलम की भाँति इधर से उधर भटकते फिर रहे हैं। मनुष्य का व्यक्तित्व खण्ड-खण्ड हो रहा है, उसकी प्रतिभा कुण्ठित हो रही है, उसकी स्फित खिल नहीं पा रही है, उसकी बुद्धि का विकास हो नहीं पा रहा है।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी से प्रकाशित श्री दादा धर्माधिकारी की 'अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया' पुस्तक की प्रस्तावना से। पृष्ठ-संख्या २६८, मूल्य : सजिल्द तीन रु०, अजिल्द ढाई रु०।

लोग कहते हैं कि यंत्रीकरण जितना होता चलेगा, उतना ही मनुष्य की बुद्धि का विकास भी होता चलेगा, पर देखने में तो उल्टा ही आ रहा है। यंत्रीकरण जितना बढ़ चला है, बुद्धि का कार्य उतना ही कम होता चल रहा है।

हमारे चारों ओर इन्द्रजाल फैला है। उपभोग की सुलभता हो रही है, पर निर्माण की क्षमता घटती चल रही है।

हम शब्द की गति से प्रवास करते हैं, प्रकाश की गति से दूसरों से सम्बन्ध स्थापित करते हैं। यह तो ठीक है, पर सम्बन्ध स्थापन के लिए जो तीव्रता, उत्कटता और करुणा अभीप्सित है, उसका हमारे जीवन में कहीं पता नहीं लगता।

आकाश पर हम कब्जा करते जा रहे हैं, पर धरती से हमारे पाँव उखड़ते चल रहे हैं। हमारी हार्दिकता, बन्धुता और सहृदयता कम होती चल रही है।

वैज्ञानिक युग के ये अन्तर्विरोध हमारे देश को भी प्रभावित कर रहे हैं। विज्ञान मनुष्य को सुख देता चल रहा है, पर वह हमें निष्क्रिय भी बनाता चल रहा है। हमारा आध्यात्मिक जीवन दर्शन, जो 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' का हामी था, वह हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने में, आलस्य की उपासना करने में रत्ती भर भी नहीं झिझकता। आलस्य हमारा स्वभाव नहीं है, फिर भी सुभिक्ष की आकांक्षा हमारे भीतर घुसी बैठी है। अभिमान आध्यात्मिकता का है, पर आकांक्षा वैभव की है।

प्रश्न खड़ा होता है कि इस विषम परिस्थिति से छुटकारा कैसे मिले ?

हमें समाज परिवर्तन की ऐसी प्रक्रिया चाहिए, जिसमें से दूसरी प्रतिक्रिया पैदा न हो, जिसमें क्रान्ति की प्रति-क्रान्ति न हो।

इसके लिए मानस बदलने की आवश्यकता है। यह मानस बदला जा सकता है—शिक्षण से, विचार से, संवाद से।

अभी तक मनुष्य को सत्कर्म की ओर प्रेरित करने के लिए दो प्रकार की ही प्रेरणाएँ दी जाती रही हैं—या तो लोभ की या भय की। व्यावहारिक और धार्मिक क्षेत्र में स्वर्ग का आकर्षण और नरक का भय ही मुख्य रूप से छाया रहा है। धर्म जहाँ एक ओर शारीरिक सुख का लोभ और शारीरिक दुःख का भय दिखाता है, वहाँ वह शरीर के प्रति जुगुप्सा भी उत्पन्न करता है। उसे मल-मूत्र, श्लेष्मा का आवास बताना और घृणा की दृष्टि से देखना धार्मिकता का एक फैशन-सा हो गया है।

परन्तु शरीर का यह द्रोह अहिंसा के विकास के लिए घातक है। जहाँ शरीर-द्रोह रहेगा, वहाँ अहिंसा के लिए कोई गुंजाइश नहीं रहेगी।

इसका एक ही उपाय है, शरीर को रत्न चिन्तामणि मानना।

विश्व की महान् विभूति आल्बर्ट श्विट्जर ने विश्व के तमाम दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन करके एक परम उत्कृष्ट सिद्धान्त हमें दिया है—VENERATIO VITÆ 'रिवरेन्स फार लाइफ'—जीवमात्र के लिए आदर!

श्विट्जर कहता है : किसी भी व्यक्ति को सदाचारी या धार्मिक केवल तभी माना जा सकता है, जब उसके भीतर सतत यह प्रेरणा होती रहती है कि मैं जीवमात्र की यथाशक्ति सेवा करूँ और किसी भी प्राणी को किसी भी प्रकार का क्लेश न पहुँचाऊँ। उसके लिए प्रत्येक प्राणी का जीवन पवित्र है। वह किसी वृक्ष का पत्ता तक नहीं तोड़ता, कोई फूल नहीं तोड़ता। वह इस बात का ध्यान रखता है कि उसके पैरों तले कोई जीव कुचल न जाय। गर्मी के दिनों में रोशनी से यदि वह काम करता है, तो वह खिड़की बन्द करके उमस में बैठना कबूल करता है, बजाय इसके कि पतंगे बाहर से आ-आकर मेज पर शहीद हों!

इस 'रिवरेन्स फार लाइफ' में—जीवमात्र के लिए आदर में—धर्म का सारतत्त्व—प्रेम और करुणा—ऊपर से नीचे तक ओतप्रोत है। यह प्रेम मानवमात्र के लिए ही नहीं, प्राणिमात्र के लिए है। पशु और पक्षी, कीट और पतंग—कोई भी उससे अछूता नहीं रह सकता।

श्विट्जर का कहना है कि 'रिवरेन्स फार लाइफ' का पुजारी हर काम को इस कसौटी पर कसेगा। वह सोचेगा कि मुझे अपने जीवन, अपनी सम्पत्ति, अपने अधिकार, अपने आनन्द, अपने समय और अपने सर्वस्व का कितना अंश दूसरों को अर्पित कर देना है और कितना रखना है।

वह यदि प्रसन्न है, तो अपने आप से प्रश्न करेगा कि मुझे स्वास्थ्य, प्राकृतिक अनुदान, कार्यक्षमता, सफलता, सुन्दर बाल्यावस्था, उत्तम पारिवारिक परिस्थिति आदि बातों में अन्य लोगों की अपेक्षा जो अधिक सुविधा प्राप्त है, उसे मुझे यों ही सहज मान कर स्वीकार नहीं कर बैठना चाहिए। मुझे जीवन के लिए सामान्य से अधिक आदर व्यक्त करना चाहिए। जिसे अधिक मिला है, वह अधिक त्याग करे।

अहिंसा की प्रक्रिया में जीवन के प्रति आदर की यह भावना अनिवार्य है। शरीर मात्र को—फिर वह अपना हो या पराया—पवित्र मंगलायतन मानना उसकी पहली सीढ़ी है। यों शरीर की पवित्रता तो न्याय भी स्वीकार करता है, पर अहिंसा का पुजारी न्याय को परे रख कर गांधी के शब्दों में कहता है—'मेरा धर्म न्याय नहीं, करुणा है।'

स्वस्थ समाज के विकास के लिए इस बात की आवश्यकता है कि हमारी अर्थ-व्यवस्था, राज्य-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था इस प्रकार की हो, जिसमें मनुष्य का कर्म स्वातन्त्र्य बना रहे, मनुष्य आत्म-निर्भर रहे। आत्मनिर्भरता का अर्थ है—परस्पर निर्भरता। मनुष्य किसी संस्था, राज्य या किसी अवान्तर शक्ति पर निर्भर न रहे।

आज के समाज में सभी उत्पादक श्रम पशुओं, गुलामों और स्त्रियों के ज़िम्मे कर दिये गये हैं। कुछ अरुचिकर, पर आवश्यक काम जैसे कसाई या मेहतर के काम विशिष्ट वर्ग के लोगों के जिम्मे कर दिये गये हैं। यह गलत है। होना यह चाहिए कि उद्योग में जितना आवश्यक परिश्रम है, वह संयोजन के साथ जोड़ दिया जाय। मनुष्य का आर्थिक और औद्योगिक संयोजन इस प्रकार का हो कि कष्ट कम होता जाय और कौशल बढ़ता जाय। अकुशल श्रम समाप्त करने के लिए यंत्रों का उपयोग किया जा सकता है, पर यंत्र तो ठहरा जड़। वह न तो स्वच्छता की भावना का विकास कर सकता है, न सहृदयता का।

—— (अपूर्ण)

स्वतन्त्र भारत के विद्यार्थियों से तीन अपेक्षाएँ

गहरा अध्ययन, व्यापक बुद्धि और निरलस जीवन

विनोबा

विद्यार्थियों की सभा प्रातःकाल रखी, यह ठीक ही हुआ है। प्रातःकाल के समय अध्ययन उत्तम होता है। इन दिनों तो बहुत बुरी आदतें सारे भारत में पड़ी हैं। दीया-बत्ती के सामने रात में अध्ययन करते हैं! नींद तो आ रही है, उसी में पढ़ते हैं और फिर बेचारे सो जाते हैं! सूर्यनारायण के उदय के बाद उठते हैं, तो रात में जो कुछ अध्ययन करते हैं उसे भूल जाते हैं! अध्ययन के बाद एक निद्रा हुई तो अध्ययन खतम। यह आजकल चला है। इसीलिए विद्यार्थियों में गहरा अध्ययन बहुत कम होता है। स्वतन्त्र भारत को गम्भीर अध्ययन की आवश्यकता है।

जब भारत स्वतन्त्र नहीं था, तब तो विद्यार्थियों पर जिम्मेवारी नहीं थी, याने उस वक्त भारत के सामने 'मिशन' नहीं था; बल्कि भारत देश दुनिया के नक्शे में था ही नहीं। ऐसे तो नक्शे की किताब में भारत का नक्शा था, लेकिन लाल रंग में रंगा हुआ था, याने अंग्रेजों के राज्य का रंग नक्शे पर लाल दिखाया जाता था। फिर जिस पन्ने पर भारत का नक्शा होता था, उसी पन्ने में एक कोने में, उसी परिमाण में इंग्लैंड का नक्शा रहता था; यह दिखाने के लिए कि इतने से छोटे-से इंग्लैंड के ताबे में इतना बड़ा देश है! यह देख कर हमें यह भान होता था कि हम गुलाम हैं और इसलिए हिंदुस्तान की आवाज दुनिया में बुलंद नहीं होती थी।

भारत की तरफ से बोलने वाले दूसरे होते थे। उस बीच में दो-दो महायुद्ध हुए। उस वक्त भारत को किसी ने यह पूछा नहीं कि लड़ाई में शामिल होना है या नहीं! लड़ाई में भारत की सेना जापान और फ्रांस के खिलाफ लड़ने के लिए गयी थी। उसमें भारत की सम्मति का सवाल नहीं था। किसान बैल की सम्मति नहीं पूछता है कि 'अभी हम गेहूँ बोने जा रहे हैं तो हे बैल भइया, बताओ तुम्हारी क्या राय है!' मालिक ने तय किया कि गेहूँ बोना है, तो उस काम के लिए बैल को जाना है। इंग्लैंड ने तय किया कि हिंदुस्तान को युद्ध में शामिल होना है, तो हिंदुस्तान शामिल हो गया और हिंदुस्तान की सेना दूसरों के खिलाफ लड़ने के लिए गयी।

उन दिनों भारत को अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं था। धर्म-शास्त्र में कहा है—"स्वतन्त्र कर्ता", जो स्वतंत्र है उसीको कर्म के लिए शास्त्रकार आज्ञा दे सकते हैं। शास्त्र की आज्ञा स्वतंत्र मनुष्य के लिए होती है। जो स्वतंत्र नहीं होते, उनके लिए शास्त्र में आज्ञा नहीं है। तो उन दिनों एक राष्ट्र के नाते हमारा अस्तित्व नहीं था। फिर भी इस देश में ऊँचे-से-ऊँचे आदमी खड़े हुए और विश्व पर उन्होंने प्रभाव डाला। शिकागो के 'कान्फ्रेंस' में यहाँ का एक नौजवान जाकर व्याख्यान देता है, कुल दुनिया में वेदान्त होगा, ऐसी गर्जना करता है। स्वामी विवेकानन्द की उस गर्जना का दुनिया में बहुत असर हुआ। उससे भारत की इज्जत बढ़ी। रवीन्द्रनाथ ठाकुर 'विश्व कवि' निकले। उनके साहित्य का दुनिया पर परिणाम हुआ। महात्मा गांधी आये तो दुनिया को मानना पड़ा कि भारत में भी आदमी रहते हैं, मानव रहते हैं और ऊँचे मानव हैं। भारत के ऊँचे आदमियों ने भारत को ऊपर उठाया। लेकिन तब तक भारत के समाज का स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं था।

हमारे सामने सब हमारे बेटे बैठे हैं। हम ऐसे ही बेटे थे। उन दिनों हमारे सामने एक ही विचार रहता था, वह यह कि भारत मुक्त होना चाहिए। आज तो स्वतन्त्र भारत को चौदह साल हो गये हैं। यहाँ कितने ही लड़के चौदह साल के अन्दर-अन्दर के होंगे। उनका जन्म ही स्वतन्त्र भारत में हुआ। उनका यह बड़ा भाग्य था, जो आजादी के पहले जन्मे और जिन्होंने काम किया। जिनके प्रयत्न से भारत को आजादी मिली, वे भी धन्य हैं। अभी जो स्वतन्त्र भारत में जन्मे हैं, उनको तो जन्म से ही भाग्य मिला है, बहुत बड़ी पूँजी मिल गयी है। इसके आगे वे क्या करेंगे!

कुल दुनिया की नजर भारत पर है। हजारों साल पुराना देश अहिंसा के तरीके से आजाद हुआ तो भारत के लिए दुनिया में एक आशा है। दस-ग्यारह साल से हमारी भूदान-यात्रा चल रही है। योरप का शायद ही कोई देश बचा होगा, जहाँ से कोई भाई या बहन यात्रा में न आये हों। दो-चार दिन या एक-एक महीना वे रहे और देख कर वापस गये और वहाँ जाकर इस पर लेख लिखे, ग्रंथ लिखे। कइयों ने तो भारत की मदद के लिए 'फंड' इकट्ठे किये। जितना ध्यान भारत के प्रति दुनिया में है, एक आशा है। क्यों? यहाँ ज्यादा संपत्ति नहीं है, शस्त्रास्त्र शक्ति नहीं है। बहुत बड़ा विज्ञान नहीं है। ऐसी हालत में दुनिया के लोग आशायुक्त दृष्टि से क्यों देखते हैं! आज दुनिया बड़ी हैरानी में है। सब दूर बेचैनी है, समस्या खड़ी है। दुनिया भर में अपने-अपने समाज के मसले हैं। कहीं मजदूर-मालिक के झगड़े हैं, कहीं अन्तर्राष्ट्रीय मसले हैं, कहीं जाति-भेद के मसले हैं, कहीं भाषा के मसले हैं। इस प्रकार तरह-तरह की समस्याएँ, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक समस्याएँ हैं। इनका निराकरण होना चाहिए।

वह किस शक्ति से होगा? मानवी शक्ति से या दानवी शक्ति से? दानव शक्ति से समस्या के निराकरण की कोशिश बहुत हुई। दानव बहुत बड़ा हो गया। आणविक अस्त्र हाथ में आये। अपने समाज का भला किस तरह करना चाहोगे, यह समस्या आज के जमाने में, आज के इन शस्त्रों ने दुनिया के सामने रखी। क्या हिंसा से करना है? ऐसा है, तो जिनके हाथों में हिंसा के अधिक शक्ति वाले शस्त्र हैं, उनके गुलाम होना चाहिए—या तो रूस के या तो अमेरिका के। दो ही पन्थ हैं, विश्व के सामने। ये दो बड़ी बलवान ताकतें हैं। अगर हिंसा शक्ति से समस्या के निराकरण का मार्ग सोचते हैं, तो उनके गुलाम होना चाहिए।

अगर समस्याओं का निराकरण अहिंसा से करना है तो देखना चाहिए कि भारत में भूदान और ग्रामदान की कोशिश हो रही है। एक छोटी-सी नदी है, लेकिन है वैकुंठ की नदी। "वहे वैकुंठर परा प्रेम अमृतर नदी।" बाकी तरह-तरह के पुरुषार्थी लोग हैं, बहुत पराक्रमी हैं। "चारी पुरुषार्थ ताहार निझरा हरि नामे मूल धारा"—यह मूल धारा है। प्रेम से समस्या का निराकरण करना है। इसलिए यह नदी छोटी दीखती है, लेकिन अमृत के समान है। इसीलिए दुनिया को आशा मालूम हो रही है।

आजाद भारत में जन्मे आप लोग 'अब हम विश्व-नागरिक' बनेंगे, ऐसी आकांक्षा रखेंगे। हमारा जन्म पृथ्वी में हुआ है, सारी पृथ्वी हमारी है और हम पृथ्वी के हैं। हम सबके सेवक हैं, सबके भाई हैं, किसी से हमारा शत्रुत्व नहीं है। ऐसी भावना हममें हो और इस भावना से सारे विद्यार्थी प्रेरित हों, प्रभावित हों।

मुझे खुशी होती है, जब मैं सुनता हूँ कि स्वतन्त्र भारत के बच्चे जयघोष करते हैं, "हमारा मन्त्र जय-जगत्।" हम ऐसी जय नहीं चाहते हैं कि जिसमें दूसरे की हार हो। हम दोनों पक्षों की जय हो, ऐसी चाह रखते हैं। ऐसी जय, जिसमें किसी की हार नहीं हो। जंगल में क्या होता है? शेर के डर से हिरण भागता है। किसी पौधे के पीछे छिपता है। शेर वहाँ नहीं पहुँच सकता और दुखी होता है। हिरण के सुख में शेर का दुख है। मान लीजिए कि शेर ने कोशिश की हिरन को खाने की और उसे हिरण मिला तो शेर खुश हो जायगा, पर हिरण थरथर काँप रहा है। एक के सुख में दूसरे का दुख है। एक की हार में दूसरे की जय है। एक की जय में दूसरे की हार है। यह जंगल का न्याय है, मनुष्य का नहीं। हम ऐसी विजय प्राप्त करेंगे, जिसमें सबकी जय होगी। यह भारत की भावना जो निर्माण हो रही, बहुत महत्त्व की है। इन दस-बारह सालों में हम 'जय-हिन्द' से 'जय-जगत्' तक पहुँचे। 'जय-हिन्द' के पहले 'वन्दे मातरम्' कहते थे। मतलब उससे भी वह छोटा ही था। लिखने वालों ने तो "सप्तकोटि कंठ" लिखा, आखिर में उसे तीस कोटि किया। 'जय हिन्द' उससे बड़ा बन गया। अब 'जय-जगत्' कहते हैं। दस-दस साल में इतना परिवर्तन हुआ! क्यों? इसलिए कि मानव में नूतन आकांक्षा पैदा हो रही है। हम आजाद भारत के बाशिन्दे हैं। कुल विश्व को हम आजाद करना चाहते हैं। यह भारत का 'मिशन' रहेगा। उस मिशन का काम ये बच्चे करेंगे। ऐसी महती आकांक्षा विद्यार्थियों को होनी चाहिए।

विद्यार्थियों को गहरा अध्ययन करना चाहिये। हर विषय में देश की प्रगति होनी चाहिए। जीवन की जितनी शाखाएँ और उप-शाखाएँ हैं, सबमें उनको निष्णात और प्रवीण होना चाहिए और वे हो सकते हैं। भारत में अध्ययनशीलता नयी वस्तु नहीं है। बहुत पुराने काल से, प्राचीन काल से, वेद के काल से अध्ययन की परम्परा अखंड चली आयी। अब वह लुप्त-सी हो गयी है। विद्यार्थी गहरा अध्ययन नहीं करते। वे अर्थार्थी और धनार्थी हो गये हैं। धन की, अर्थ की प्राप्ति के लिए विद्या सीखी जाती है; पैसे को सीखते हैं, वे सब विद्यार्थी नहीं हैं, अर्थार्थी हैं। मतलब विद्या से धन-संग्रह सधेगा, ऐसी आशा से विद्या बटोर लेते हैं। इसमें उनका दोष नहीं है। ऐसी विद्या सिखायी जाती है। उसमें शरीर-परिश्रम से चरितार्थ चलाये, ऐसी शक्ति नहीं रहती है। विद्या के जरिये धन कमाने का काम करते हैं। इसलिए वह तेजस्वी नहीं होती। उस विद्या में तेजस्विता, गंभीरता, गहराई नहीं होती।

मुझे असम की जानकारी चाहिये थी। उसके लिए सब व्याकरण, शब्दकोश, इतिहास आदि सब अंग्रेजी में मिले। असमी में नहीं था। आखिर अंग्रेजी में ही सारा सीखना पड़ा। उन लोगों ने कितना पराक्रम किया? हिंदुस्तान की हर भाषा सीखने के लिए अंग्रेजी में साधन हैं। यहाँ मैं पढ़ता था असम के साहित्य का इतिहास आधुनिक और प्राचीन, दोनों अलग-अलग हैं। आधुनिक साहित्य के इतिहास में पहले

प्रकरण में यह लिखा है कि असम के साहित्य पर मिशनरियों का उपकार हुआ है, याने ये हमारी गंगोत्री हैं। उपकार मानना पड़ता है। कोई अच्छा काम करते हैं, तो उपकार क्यों न माना जाय ! इतना पराक्रम उन्होंने किया और हमने क्या किया ? इन दिनों 'नामघोषा' और 'कीर्तनघोषा' मैं पढ़ता हूँ। शंकरदेव और माधवदेव के ये सुन्दर ग्रंथ हैं। इसका भारत को अभी ज्ञान हो रहा है। हमारे भाषणों में उसका जिक्र होता है। उसकी रिपोर्ट पढ़ कर लोग हमें लिखते हैं। मतलब यह कि अब तक उनको इसकी जानकारी नहीं थी।

भारत में कहीं भी जाइये, कबीर को लोग जानते हैं। कबीर असम में तो नहीं हुआ था, लेकिन उनका नाम यहाँ के लोग जानते हैं। नानक को भी भारत में लोग जानते हैं। लेकिन शंकरदेव का नाम पंजाब के लोग नहीं जानते। इसमें शंकरदेव का दोष नहीं है, आपका और हमारा अपराध है। शंकरदेव धुबरी से डिब्रूगढ़ तक कैद नहीं थे। वे बारह साल भारत में घूमे और भारत का पूरा दर्शन उन्होंने किया। दुबारा भारत की यात्रा के लिए निकले थे। यह उस जमाने की बात है, जिस जमाने में यातायात के साधन नहीं थे। इस जमाने में पार्लियामेंट के सदस्यों को रेलवे का 'पास' मिलता है। वे सारे भारत में घूम सकते हैं। उन्हें कौड़ी का खर्चा नहीं आता है। लेकिन यहाँ से दिल्ली तक जाते हैं और पार्लियामेंट खतम होने पर वापस आते हैं, भारत में घूमते नहीं। शंकरदेव १२ साल घूमे। क्या गरज पड़ी ? क्योंकि ज्ञान के लिए उनको प्रेम था। जगह-जगह का ज्ञान प्राप्त करना चाहते थे, अनुभव लेना चाहते थे। उस युग में उनको व्यापक दृष्टि की आवश्यकता महसूस हुई और इस युग में हम संकुचित हो जायँ, भारत में सफर न करें। शंकरदेव पंजाब में गये होंगे, तो उनको पंजाबी सीखना ही पड़ा होगा। आप तो हिन्दी भी नहीं जानते। हमारा और आपका भी आधा समय इस तर्जुमे में खतम हो रहा है। अगर हम मराठी में ही भाषण देते, हिन्दी हम नहीं जानते होते, तो जोरहाट में हमारी जबान नहीं खुलती। मराठी है बड़ी समर्थ भाषा, लेकिन वह अपने प्रांत में। अपने प्रांत के बाहर उसकी क्या चलेगी ? उसका तर्जुमा यहाँ नहीं होता। इसलिए आन्तरभारतीय होने के लिए सब विद्यार्थियों को हिन्दी का उत्तम अध्ययन करना चाहिये। हिन्दी में अच्छा साहित्य है, इतिहास है। वह सब आपको पढ़ना चाहिये। दिल्ली, पूना, बंबई, मद्रास, लखनऊ और अमृतसर में आपको जाना चाहिये। वहाँ आपके हिन्दी में व्याख्यान होने चाहिये। आज इसका कोई अध्ययन नहीं है ! "सुजल में धनेच में"। जमीन अच्छी है, उर्वरा है और ब्रह्मपुत्र की प्रीति है। ब्रह्मपुत्र 'इंटरनेशनल' (अंतर्राष्ट्रीय) है। तिब्बत से पानी आता है और पाकिस्तान में ले जाता है। धुबरी से डिब्रूगढ़ में कैद नहीं है। लेकिन आप छोटे बन गये। आपका मुँह बंद हो गया है और मुझे यहाँ के लोग पूछते हैं कि हमारे लिए भारत में क्या विचार है। मैं यहाँ के लोगों को कहता हूँ कि भारत के लोगों को ज्यादा जानकारी नहीं है तो तुम लोग भारत में क्यों नहीं जाते हो और समझाते क्यों नहीं ? कम-से कम अखिल भारतीय तो बनो। उतना भी इस जमाने में काफी नहीं होगा। 'विश्व मानुष' बनना होगा। गहरा अध्ययन करना होगा। हिन्दी का अध्ययन करना होगा। उड़ीसा के एक मित्र ने मुझे कहा कि अमेरिका का एक विद्यार्थी 'थीसिस' (प्रबन्ध) लिखना चाहता था, 'भारत के जंगल में रहनेवालों के जीवन का इतिहास' और वह अमेरिका का लड़का पत्नी को साथ लेकर उड़ीसा के जंगल में एक डेढ़ साल रहा। उसने निरीक्षण किया, जानकारी ली। अमेरिका जाकर वह अंग्रेजी में 'थीसिस' लिखेगा। यह एक व्यापक दृष्टि है। व्यापक दृष्टि उनको साहित्य ने दी है।

माधवदेव का एक पद है, जिसमें उन्होंने लिखा है : "बल महागुल पुण्य करी। अपवर्ग भोग्य नरतनु पायापृथिवीत।" 'पाया पृथिवीत', ऐसा उन्होंने लिखा। 'पाया असमत', ऐसा नहीं लिखा। इतनी व्यापक दृष्टि उनकी थी। वह आपको मिली है। अब यह व्यापक दृष्टि के दिन हैं। १२ घंटे में बंबई से लन्दन जा सकते हैं। जहाँ कुत्ते भी आठ आठ सौ मील ऊपर जाते हैं, वहाँ मानव सीमित और संकुचित रहा तो मार खायेगा, टिकेगा नहीं। इसलिए व्यापक बुद्धि होनी चाहिये। उसके लिए व्यापक अध्ययन करना होगा। मुझे बार बार यहाँ के लोग पूछते हैं। मैं कहता हूँ कि यहाँ की सृष्टि रमणीय है, सौम्य है, यहाँ के लोग सौम्य हैं। उनमें भक्तिभाव है, प्रेम है। लेकिन इन सबको खतम करने वाला एक अवगुण है। कौनसा है ? पहले दिन से एक शब्द मैं यहाँ सुनता आया हूँ, "लाहे लाहे" (धीरे धीरे)। मैं कहता हूँ, भाई ! यह 'शार्ट', का जमाना है। इस "लाहे लाहे" से आपको ऊपर उठना होगा, आलस छोड़ना होगा।

माधवदेव ने 'भक्त रत्नावलि' नाम का ग्रंथ लिखा है। बहुत छोटा ग्रंथ है। उनको किसी ने पूछा कि इस देश में भागवत जैसा ग्रंथ था, तो तुम्हारे ग्रंथ की क्या जरूरत थी ? तो उन्होंने जवाब दिया कि हमारे देश में दो प्रकार के लोग रहते हैं। एक ऐसे उद्योगी होते हैं कि उनको एक क्षण भी नहीं मिलता है वो इतनी बड़ी किताब वे नहीं पढ़ सकेंगे। "पोसे पुत्र भार्या मात्र", बस इसी में उनका समय जाता है, दूसरा काम नहीं होता है। तो इतनी बड़ी किताब कौन पढ़ेगा ? दूसरे लोग आलसी होते हैं। उनके पास समय है, लेकिन नहीं पढ़ेंगे। इसलिए यह छोटा ग्रंथ मैंने लिखा है। किसी आलसी के हाथ में आया तो भी वह पढ़ सकता है। इसलिए यहाँ छोटे ही ग्रंथ की बहुत जरूरत है। बड़े ग्रंथ कौन पढ़ेंगे ? हाँ, उसके लिए आदर है तो क्या करेंगे ? अच्छे स्थान में रख कर उस पर फूल चढ़ायेंगे, उसकी आरती करेंगे, धूप, दीप आदि रखेंगे। दीपक भी ऐसा रखेंगे, ताकि उस पर ज्यादा प्रकाश नहीं आयेगा। इस तरह कभी उसे खोलेंगे नहीं और आदर बहुत करेंगे। इसलिए छोटी सी रत्नावलि लिखी है। बड़ा मनोरंजक युक्तिवाद उन्होंने किया है। मैं कहता यह था कि यह आलस सब सद्गुणों को खतम करता है। संस्कृत में एक कहावत है, काम-क्रोध ये मनुष्य के रिपु हैं, लेकिन महा रिपु है आलस। काम, क्रोध, लोभ ये मामूली रिपु हैं। लेकिन आलस सबसे बड़ा भयानक रिपु है ! इसलिए गुण तो पड़े हैं, लेकिन उनका प्रकाशन नहीं होता है। उसके लिए मेहनत करनी पड़ेगी। इधर बाबा पर ग्रामदान की वर्षा हो रही है। कल तो पाँच ग्रामदान हुए। पहले क्यों नहीं हुए ? सद्भावना तो थी। यह नयी नहीं है, लेकिन कौन उठेगा और लोगों के पास जायेगा और कौन समझायेगा ? "लाहे लाहे होव" (धीरे धीरे होगा)।

आज तीन बातें आपके सामने रखी : एक, विद्यार्थियों को गहरा अध्ययन करना चाहिये। दूसरी बात, बुद्धि व्यापक होनी चाहिये, संकुचित नहीं। तीसरी बात, उनको आलस छोड़ना होगा।

(जोरहाट, जि० शिवसागर, ९-१२-'६१)

कार्यकर्ताओं — उस काली रात में !

किसी विशेष अवसर पर अथवा कोई विशेष वस्तु को बाँट कर खाने का स्वभाव अभी तक गाँवों में बना हुआ है। खाने वाला व्यक्ति उस वस्तु का स्वाद तथा गौरव तभी महसूस करता है, जब कि सारे गाँव में उसका वितरण हो जाय। उस काली रात में, यह बात एक बूढ़े ने तब व्यक्त की जब कि जंगली सूअर के गोश्त को खाने से गाँव के लगभग एक सौ से भी अधिक लोग रोग से पीड़ित हुए तथा बाद में दो व्यक्तियों की मौतें हो चुकी हैं, कुछ की हालत अभी भी चिन्ताजनक है !

उस बूढ़े ने बताया कि साल भर में एक दो बार खेत में नुकसान करते हुए जंगली सूअर मारा जाता है। उसका माँस गाँववालों के लिए अप्राप्य होता है और सारे गाँव में बाँटा जाता है, हर माँसाहारी परिवार उसे प्रसाद-स्वरूप लेता है। बूढ़े ने आगे बताया कि इस बार शायद उस जंगली सुअर ने साँप अथवा विष खा लिया हो या मारे जाने पर उसका विषाक्त रक्त सारे शरीर में फैल गया हो, जिससे कि गाँव के सारे लोग जिन्होंने मांस खाया है, बीमार पड़े हुए हैं"।

पिछले साल २१ नवम्बर को जब हम २८ मील की यात्रा के बाद सायंकाल छह बजे गोपेश्वर पहुँचे तो शान्ति सैनिक श्री चिरंजीलाल भट्ट ने हमारे पास एक पत्र दिया, जिसमें बताया था कि निकट ही गगोल गाँव में ८० व्यक्ति एकसाथ बीमार हुए हैं। रात को ही हम तीन शांति-सैनिक चमोली के जिला अस्पताल गये। वहाँ सिविल सर्जन की अनुपस्थिति के कारण जिलाधीश को फोन से परिस्थिति बताई। जिलाधीश ने पुन: सुबह ५ बजे हमें सही समाचार लेकर आने के लिए कहा। इसलिए रात को ही हम तीनों गगोल गाँव गये। रात के १२ बज चुके थे, गाँव में कहीं भी रोशनी नहीं थी। मकानों के अन्दर से कराहने की आवाज आ रही थी। हम लोग पहले हरिजन बस्ती में गये। उपर्युक्त बूढ़े का दरवाजा खटखटाया तो अन्दर से आवाज आई—

"यदि साथ में दवाई है तो दरवाजा खोलो" अपना परिचय देने के बाद दरवाजा खोला, तो देखा कि बूढ़ा तैश है, लड़के दर्द से चीख रहे हैं, बहुएँ दीवार के सहारे सिर टिका कर बैठी हुई हैं। बूढ़े के छह लड़के और बहुओं में सभी बीमार हैं। बूढ़े की हालत अधिक चिन्ताजनक है। एक-दो परिवारों में और जाकर हम लोग उसी समय वापस चमोली लौटे।

इधर चमोली में जिलाधीश से समाचार मिलते ही सेवापरायण मातृ हृदय श्री डाक्टर नेगी ने रात को ही गाँव के लिए अपने कर्मचारियों सहित प्रस्थान किया। पर हमारे चमोली आते समय वे हमें रास्ते में नहीं मिले। डाक्टर साहब रास्ता भूल गये थे, पहाड़ी-चट्टानी एवं पगडंडी होने के कारण फेर में पड़ गये थे। अत: सुबह तीन बजे गाँव में पहुँच सके।

हमें रास्ते में एक भाई ने बताया कि डाक्टर गाँव को चले गये। इसीलिए हम भी वापस गाँव को लौटे। रात के थके-भटके राहगीर डाक्टर नेगी ने सुबह ५ बजे हर परिवार के पास जाकर सभी बीमारों को देखा तथा तुरन्त चिकित्सा की व्यवस्था की। इस प्रकार एक सौ से भी अधिक बीमार उस गाँव में पड़े हुए थे। इस प्रकार उस काली रात में हम शांति-सैनिक सेवाभावी डाक्टर की मदद से बीमारों को ठीक कर सके।

—चण्डीप्रसाद भट्ट

जनाधार के लिए संघर्ष

• नरेन्द्र

[कार्यकर्ताओं के सामने यह समस्या है कि सेवा करते हुए जीवन-यापन के लिए किसका सहारा ले? स्वतंत्र जनशक्ति के जागरण व कार्यकर्ता के खुद के अपने सम्मानित जीवन के लिए जनाधार का विकल्प सुझाया गया है; किन्तु जनाधार प्राप्त करना कोई आसान बात नहीं है। यहाँ पर हम एक ऐसे कार्यकर्ता के जनाधार की कोशिश का विवरण दे रहे हैं, जो इस दरमियान रोग से भी संघर्ष करता रहा। —सं०]

सर्वजनाधार की साधना से राज्य-निरपेक्ष स्वतंत्र जनशक्ति के संगठन की खोज का प्रयोग बिहार प्रदेश के बलिया गाँव में श्री धीरेन्द्र भाई के मार्गदर्शन में शुरू हुआ। हम लोग वहाँ १८ अप्रैल '६० को पहुँच गये थे। प्रारम्भ से ही मुझे वहाँ का जलवायु तथा भोजन अनुकूल नहीं पड़ा। लेकिन इसकी चिन्ता न करके यही सोचा कि खाने-पीने में कुछ सावधानी रखने पर जलवायु भी धीरे-धीरे अनुकूल हो जायेगा। परन्तु वैसा हो नहीं सका। छह महीने बाद माह सितम्बर '६० में मेरी चमड़ी पर कुछ निशान शुरू हुए। अक्तूबर में इन निशानों ने कुछ घाव जैसी शक्ल धारण कर ली। नवम्बर-दिसम्बर में ये घाव सारे शरीर में फैल गये। बड़ी जलन होती थी। कहीं-कहीं खून भी बहता था। काम करना बिलकुल बन्द हो गया। स्थानीय देहाती दवाइयाँ की गयीं, गांधी-निधि के ग्राम-सेवा केन्द्र पर एक वैद्यजी थे, उन्होंने भी दवाई दी, परन्तु जनवरी में यह चर्म रोग और भी अधिक बढ़ गया!

ऐसे समय मन में बड़ी उहापोह होती थी, कई बार सोचता था कि क्या करूँ! घर जाकर इलाज कराऊँ, यह विचार आते ही सामाजिक कार्यकर्ता की स्थिति का पूरा चित्र सामने आ जाता था। यह मेरी कसौटी जैसी ही थी, क्योंकि जब सर्व-जनाधार का संकल्प लिया है, तो अपने परिवार में जाकर क्यों पड़ना! कुछ समझ में नहीं आता था।

बलिया गाँव के लोग कहने लगे थे कि यह तो कुष्ट रोग है, इसका कहीं बाहर जाकर इलाज कराना चाहिये। मुझे भी कुष्ट का ही सन्देह हो गया था। तरह-तरह की कल्पनाएँ भविष्य के जीवन के बारे में आने लगी थीं। मेरे सामने विचारणीय प्रश्न यही था कि कहाँ रह कर चिकित्सा कराऊँ तथा चिकित्सा का खर्चा कहाँ से आये! सहज ही सूझता था कि अपने भाई के पास जाकर रहूँ। उन्हीं से इलाज का खर्च भी लूँ; परन्तु तुरन्त सर्वजनाधार के संकल्प की बात सामने आती थी। मैं सोचने लगता कि अगर इस इलाज के लिए मदद लेने में सर्वजनाधार के विचार के प्रतिकूल मदद लेने की चूक कर बैठा तो जो व्यक्ति सर्वजनाधार की साधना के लिए आयेंगे, उनके मन में एक प्रकार की हिचक होगी। वे सोचेंगे कि जब तक शरीर ठीक है तब तक सब प्रयोग चल सकते हैं; लेकिन बीमार होने पर कोई पूछता नहीं है! अतः मैंने सोचा कि यह चर्म रोग नहीं, बल्कि सर्वजनाधार के प्रयोग में एक समस्या आयी है। इसे उसी विचार की दृष्टि से हल करना होगा। मैं श्री धीरेन्द्र भाई के साथ रहता था, वे आसानी से किसी भी संस्था में रख कर मेरे इलाज कराने का प्रबन्ध कर सकते हैं, ऐसा भी कई बार मन में आया, परन्तु उनसे कहा नहीं। मेरी पत्नी भी कहीं नौकरी करके खर्च की जिम्मेदारी उठा सकती थी। परन्तु सर्व-जनाधार के प्रयोग में ये सब ऐसे समझौते हैं, जो सर्वसुलभ नहीं हैं। इसी तरह की उहापोह मन में चलती रही, कुछ निर्णय नहीं कर पा रहा था!

सेवक की खाने-कपड़े की आवश्यकताएँ सेवक के अपने श्रम अथवा जनता के प्यार भरे सहकार से पूरी हों, यह मूल सिद्धान्त सामने रख कर जब सोचता हूँ तो एक प्रश्न सामने आता है कि सेवक जब रोगी हो तो उस समय के लिए कुछ संचय करे क्या? व्यक्तिगत सम्पत्ति बटोरने की प्रेरणा भी तो इसी से मिलती है। अतः रोग की अवस्था में भी सेवक सर्वजन के प्यार का आधार ले, यही ठीक लगता है। विनोबाजी का एक वाक्य मुझे हमेशा सहारा देता था। उन्होंने एक बार कहा, "सेवक को गाँववालों से कष्ट सहन-शक्ति सीखना चाहिए।" मन में यह भी एक प्रश्न था कि मैं चला जाऊँगा तो श्री धीरेन्द्र भाई के साथ कौन रहेगा!

श्री विजय भाई ने आकर यह प्रश्न हल कर दिया। अब तो श्री धीरेन्द्र भाई ने भी कह दिया—"नरेन्द्र, अब तुमको कहीं बाहर इलाज कराने जाना ही चाहिये।"

सब लोगों की राय से इस रोग के इलाज के लिए दिल्ली की तरफ रवाना हुआ। बलिया ग्राम में जो मजदूरी हमको गाँववालों से मिलती थी, उसमें से बचे रुपयों में से सौ रुपये अपने साथ लिये। मन में यह दृढ निश्चय किया था कि चाहे जो हो, मित्रों की सद्भावना और उनके प्यार का ही आधार इस रोग के इलाज में सम्बल बनेगा। जब मैं दिल्ली के लिए रवाना हो रहा था तो श्री धीरेन्द्र भाई कहने लगे, "इतना समझ लो कि यह सिर्फ चर्म रोग नहीं है, बल्कि किसी अन्य कार्य का निमित्त है, परोक्ष में जरूर इससे कुछ सधने वाला है।" इस वाक्य ने भी मुझे बड़ा सहारा दिया। रोग की वेदना तो इस वाक्य ने बिल्कुल ही महसूस नहीं होने दी। शरीर में रोग था, उसकी वेदना भी थी, परन्तु उसके कारण आह कभी नहीं निकली! यह सब मित्रों के प्यार और विचार की प्रेरणा के बल पर हुआ। काशी में श्री सिद्धराजजी और इलाहाबाद में श्रीमती दमयन्ती बहन ने रोग की भयंकरता के लिए कुछ मदद करना चाहा।

दिल्ली आने पर मेरे बड़े भाई ने बड़े प्यार से और तत्परता से बहुत-से डाक्टरों को दिखा कर रोग का निदान कराया। सबने 'सोरियासिस' नामक चर्म रोग बताया। मेरठ में श्री कुंजबिहारीलालजी होमियोपैथ ने बड़े प्रेम से दवा देना शुरू किया। चमड़ी साफ होने लगी, घाव ठीक होने लगे।

इस प्रकार फरवरी '६१ से जनवरी '६२, पूरे साल भर तक मित्रों के प्यार और सहकार से रोग की चिकित्सा चलती आ रही है। इस रोग के सिलसिले में कुछ घटनाएँ बड़ी मजेदार हुईं, जिनमें से एक का जिक्र यहाँ करूँगा।

चिकित्सा के लिए हम जयपुर प्राकृतिक चिकित्सालय में ठहरे हुए थे। मेरी पत्नी, विद्या भी साथ थीं। हमारे पास जो पैसे थे, सब समाप्त हो चुके थे। कहीं से मिलने की भी उम्मीद नहीं थी। जब दस आने शेष बचे तो हम दोनों सोचने लगे कि अब यहाँ से कुछ रुपया सफर-खर्च के लिए उधार लेकर हमें वापस दिल्ली चले जाना चाहिये। शाम को अचानक श्री राधाकृष्ण बजाज आये। वे सब स्थिति जान कर कहने लगे, "हम लोग किसलिए हैं! तुमको यह सब बताना चाहिये था।" उन्होंने पचास रुपये दिये और कहा कि यहीं रह कर इलाज कराओ! खर्च का प्रबन्ध हम सब कर लेंगे।

इस एक साल में उत्तर प्रदेश के मित्रों से ज्यादा सम्पर्क आया। सर्वजनाधार की साधना और राज्य निरपेक्ष स्वतंत्र जनशक्ति के विचार पर काफी गहराई से खालकर्ट नरौरा, (बुलन्दशहर), शुमेड़ा (बुलन्दशहर), पडिला (इलाहाबाद) की तीन गोष्ठियों में विचार किया गया। पडिला गोष्ठी के बाद इस बार जब श्री धीरेन्द्र भाई से मिला तो वे कहने लगे "अब तुम्हारा चर्म रोग ठीक हो जायेगा, अगर तुमको यह चर्म रोग न हुआ होता, तो शायद उत्तर प्रदेश में तुम न आते और इतना विचार-मंथन शायद न होता!"

पडिला-गोष्ठी में बारह परिवारों ने इस नये प्रयोग के लिए नाम दिये। बिहार की तरह उत्तर प्रदेश में भी इलाहाबाद जिले के बरनपुर गाँव के पास तीस गाँव के क्षेत्र में इस प्रयोग के लिए निमन्त्रण दिया है।

मेरा चर्म रोग उत्तरोत्तर ठीक हो रहा है। यह रोग बरसात में बढ़ता है, अतः इस बार अक्तूबर '६२ तक लगातार चिकित्सा चलाते रहने का सोचा है।

माह फरवरी १९६१ से जनवरी १९६२ तक का हिसाब यहाँ दे रहा हूँ गोष्ठियों में जाने-आने तथा चिकित्सा के लिए जाने-आने का खर्च ही सफर-खर्च है। भोजन-खर्च में सिर्फ फल, शहद तथा दवा का ही खर्च शामिल है। सामान्य भोजन तो जहाँ रहा वहाँ खाया, वह खर्च इसमें शामिल नहीं है। किसी साथी को आवश्यकता पड़ने पर उसको दी गयी आर्थिक मदद साथियों की सहायता मद में शामिल है। जो रकम मुझे मिली है, वह कोई चन्दे के रूप में इकट्ठी की गयी रकम नहीं है बल्कि मित्रों ने स्वयस्फूर्त होकर सहज रूप में भेज दी है। इस एक साल के अनुभव में परस्पर-सहायता के एक शास्त्र के दर्शन मुझे हुए हैं। वह शास्त्र तन्त्रमुक्त भी है और निधि-मुक्त भी, उसमें राज्य-निरपेक्ष स्वतन्त्र जनशक्ति के संगठन की सम्भावनाओं का मार्ग खुलता नजर आता है।

माह फरवरी '६१ से जनवरी '६२ तक का हिसाब

जमा रु०-न०पै०		खर्च रु०-न०पै०	
४७-७१	इलाहाबाद के मित्रों से सफर खर्च	६६५-०४	सफर खर्च
२२७-२१	अ० भा० सर्व सेवा संघ से सफर-खर्च	५२१-४७	भोजन-खर्च (दूध, घी, फल, शहद, दवा)
२५-५५	कस्तूरबा ट्रस्ट से सफर-खर्च	१६४-२७	साथियों को सहायता दी
७६-०७	खादीग्राम से सफर-खर्च	३८-००	दाँत-बनवायी
६०-५०	सफर खर्च, मित्रों से	४७-२९	कपड़ा-खरीद
९९४-५१	विभिन्न मित्रों से, निजी खर्च के लिए	११-५०	बरसाती-खरीद
५९-१०	लेखन का पारिश्रमिक मिला	४-५५	फुटकर खर्च
०-०८	रोकड़ बढ़ती	२-२५	पुस्तक-खरीद
१७-३०	उधार लिया, बलिया से	१६-७०	पोस्टेज
		९-३८	तेल मिट्टी, बरनपुर
		१७-३०	दूसरों के नाम
		१०-२८	रोकड़ बाकी
१५०८-०३	कुल	१५०८-०३	कुल खर्च

सर्वोदय-पक्ष की हमारी पदयात्रा

काशिनाथ त्रिवेदी

सर्वोदय के क्षेत्र में पदयात्राओं का अपना एक विशिष्ट स्थान और महत्त्व है। लोक-दर्शन, लोक-सम्पर्क और लोक-शिक्षण की दृष्टि से पदयात्राएँ बहुत उपयोगी सिद्ध हुई हैं। इनके कारण कार्यकर्ताओं को एक नयी जीवन-दृष्टि मिली है और उनमें नया आत्म विश्वास भी जागा है। लोक-शिक्षण के लिए सातत्यपूर्ण पदयात्राएँ बड़े काम की होती हैं। उनका अपना एक विशिष्ट प्रभाव होता है। प्रासंगिक पदयात्राएँ उतनी कारगर नहीं होतीं, फिर भी सद्विचार के प्रचार में और सद्भाव के निर्माण में उनका अच्छा उपयोग होता है।

पिछले १०-११ साल का हमारा यही अनुभव है। छह वर्षों से हम लोग धार जिले की मनावर तहसील के अपने सेवा-क्षेत्र में हर साल सर्वोदय-पक्ष के निमित्त पदयात्राएँ करते हैं। पिछले साल हमने अपनी पदयात्रा को शैक्षणिक पदयात्रा का रूप देने का यत्न किया था। कोई ४५ व्यक्तियों का एक पूरा दल हमारे साथ था। सारी व्यवस्था स्वावलम्बी थी। रोज एक गाँव में दिन-रात का पड़ाव रहा। गाँव की हमारी दिनचर्या सुबह से रात तक भरी रही। अच्छा लोकसम्पर्क हुआ। कुमार-मन्दिर के हमारे बालकों और शिक्षकों को लोकजीवन के अध्ययन का अच्छा अवसर मिला। लोकमानस के विविध रूपों का दर्शन हमारे लिए उद्बोधक और प्रेरक बना। गाँवों की जनता भी सुबह से रात तक हमारी सारी गतिविधियों को निकट से देखती थी और हमें समझने की कोशिश करती थी। लगभग सभी जगह जनता का सद्भाव, सहयोग और आशीर्वाद मिला। विचार-प्रचार, साहित्य प्रचार, सुभाषित प्रचार और सूक्ति लेखन का अच्छा काम हुआ। थोड़ी खादी भी बिकी। आश्रम-परिवार को व्यवस्थित समूह-जीवन का अभ्यास हुआ।

इस बार की हमारी पदयात्रा का रूप कुछ भिन्न रहा। ३१ जनवरी से ११ फरवरी तक पदयात्रा चली। आरम्भ में हम सात साथी रहे। अन्त अन्त में तीन चार साथी और जुड़ गये। पदयात्रा के कुल १२ पड़ाव रहे। इनमें आधे पड़ाव ठेठ आदिवासी क्षेत्र के गाँवों में रहे और बाकी मिली-जुली बस्तियोंवाले गाँवों में। ३० जनवरी से विचार-प्रचार का काम शुरू हुआ। पहली सभा ३० की रात को खुटेरा में हुई। सभाओं में हमने मुख्यतः ग्राम-स्वराज्य, पंचायतीराज, सर्वोदय, नयी तालीम, लोकनीति और आचार संहिता के विचारों को विस्तार से समझाने की कोशिश की। सब जगह लोगों ने सारी बातें बहुत ध्यान से सुनीं। क्षेत्र में चुनावों की हलचल शुरू हो चुकी थी। फिर भी अनुकूल-प्रतिकूल सब तरह के मानसवाले गाँवों में सभाएँ अत्यन्त शान्त और प्रसन्न वातावरण में हुईं। कहीं-कहीं हमारे पड़ाव का आरम्भ अविश्वास से और परायेपन के वातावरण से हुआ, पर पड़ाव से विदा होने के समय तक वातावरण में विश्वास, आत्मीयता और सद्भाव जागा। दोनों तरफ श्रद्धा बढ़ी और हम हर पड़ाव से नयी आस्था लेकर आगे चले।

पदयात्रा की हमारी पहली सभा धरमपुरी में हुई। ३१ जनवरी की शाम को धरमपुरी की जनता ने शायद पहली बार लोकनीति और आचार-संहिता की बात सुनी। उसी रात दामड गाँव में गाँववालों की सभा हुई। प्रार्थना के बाद उन्हें ग्राम स्वराज्य और पंचायतीराज की बातें समझायी गयीं। इस बार की यात्रा में हमने अपने साथ लोकशिक्षण की दृष्टि से लाउडस्पीकर और ग्रामोफोन की विशेष व्यवस्था रखी थी। पाठशालाओं को गांधी-जीवन का परिचय कराने के लिए 'गांधी-चित्रावली' का जगह जगह उपयोग किया। भारत शासन द्वारा प्रकाशित 'महात्मा गांधी' नामक चित्रावली बहुत उपयोगी सिद्ध हुई। हर जगह गाँवों के बच्चों, बड़ों और बूढ़ों ने भी इस चित्रावली के द्वारा गांधी-जीवन का विस्तृत परिचय पाया। सबने कहा, इस निमित्त से उन्हें जीवन में पहली बार ऐसा अलभ्य लाभ मिला। गांधीजी के प्रार्थना-प्रवचन के दो रेकार्ड हमारे साथ थे। इधर के गाँवों में लोगों ने पहली बार गांधी वाणी गांधीजी के मुँह से सुनी। छोटी-बड़ी सब सभाओं में लोगों ने इस कार्यक्रम को पसन्द किया।

दामड के बाद १ फरवरी को हम कालीबावड़ी रहे। २ को सुरानी। सुरानी में वहाँ के लोग अठवाड़ी के निमित्त से यज्ञनारायण की उपासना में लगे थे। बड़ी संख्या में आदिवासी भाई-बहन इकट्ठे हुए थे। भजन-कीर्तन, हवन, सामूहिक भोजन आदि का वातावरण था। लोगों की भोली भावना का एक भव्य, किन्तु करुण दर्शन हुआ। ऐसे निमित्तों से लोग किस प्रकार इकट्ठा होते हैं और कितना उत्साह दिखाते हैं, इसे हम प्रत्यक्ष देख सके। परन्तु इस सारे आयोजन में हम सम्मिलित नहीं हुए। अपनी बात जनता के सामने रखना चाहते थे। पर चुनाव और यज्ञ का जो मिलाजुला वातावरण वहाँ बना था, उसमें स्वस्थतापूर्वक और स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी बात जनता के सामने रखना सम्भव नहीं। इसलिए हमने वह लोभ छोड़ा। दूसरे दिन सुबह यज्ञ आदि के निमित्त से जो ब्राह्मण और साधुसमाज वहाँ इकट्ठा हुआ था, उसके साथ प्रार्थना के बाद थोड़ी चर्चा हुई और आज के लोकतान्त्रिक युग में हमें त्रिगुणत्व की उपासना किस प्रकार करनी चाहिए, इसकी दृष्टि 'शान्ताकारम्' श्लोक के आधार पर श्रोताओं के सामने रखी। सुरानी से ३ फरवरी को हम उमरबन पहुँचे। पाठशाला के बच्चों से बातचीत की। 'गांधी चित्रावली' दिखाई। रात में प्रार्थना सभा के बाद जनता को ग्राम स्वराज्य, पंचायतीराज और आचार-संहिता का विचार समझाया। ४ को धनोरा पहुँचे। एक आदिवासी भाई ने अपने घर में बड़े प्रेम से हमारे पड़ाव की व्यवस्था की। आसपास के गाँवों में रात की सभा की सूचना भेजी। रात को बड़ी संख्या में लोग आये, बहनें भी आयीं। सर्वोदय का और लोकनीति का सारा विचार समझाया। ५ को सुबह धनोरा से कुवाड के लिए निकले। लगभग ६ मील चल कर कुवाड पहुँचे। वहाँ के पटेल ने बड़ी आत्मीयता से हमें अपने घर में ठहराया। सुन्दर व्यवस्था रही। रात की सभा भी अच्छी जमी। आसपास की कई बस्तियों के लोग आ गये थे। बहनें भी बड़ी संख्या में आयी थीं। कुवाड से ६ को सुबह हम टनगाँव पहुँचे। पाठशाला में ठहरे। वहाँ भी पाठशाला के पड़ोस में ही यज्ञ चल रहा था। रात की सभा अच्छी हुई। जनता को खरे और खोटे यज्ञ की कसौटी दी। आज के सन्दर्भ में सच्चा यज्ञ क्या हो सकता है और किस प्रकार के यज्ञों से गाँव वालों का वास्तविक हित और उत्कर्ष सध सकता है, इसकी चर्चा की। आचार-संहिता के बारे में समझाया। ७ को सुबह टनगाँव से अजन्दा के लिए निकले। लगभग ८ मील का रास्ता था। इस गाँव में हमें अनपेक्षित रूप से आत्मीयतापूर्ण स्वागत मिला। गाँव के बच्चों को पाठशाला-भवन में गांधी चित्रावली दिखाई। रात राममन्दिर के चौक में प्रार्थना के बाद आमसभा हुई। राज्य और स्वराज्य का, राजनीति और लोकनीति का तथा पंचायतीराज के कार्यक्रम का विचार जनता के सामने रखा। आम चुनावों के अवसर पर आचार-संहिता का पालन कितना आवश्यक है, इसकी भी चर्चा की। लगभग डेढ़ घण्टे तक शान्त और एकाग्र वातावरण में सुन्दर चर्चा चली। जवाबदार लोगों ने इस प्रकार की चर्चा का स्वागत किया और इसकी आवश्यकता कबूल की। ८ को अजन्दा से सिरसाला पहुँचे। इस गाँव में सम्पन्न पाटीदारों की अच्छी बस्ती है। श्री पूजाभाई ने अपनी गोशाला में हमारे पड़ाव की व्यवस्था की। पाठशाला के बच्चों को चित्रावली दिखाई। रात की सभा में ग्रामस्वराज्य का विचार विस्तार से समझाया। सिरसाला आते हुए छोटी बड़गाँव की पाठशाला में गाँववालों के साथ बैठ कर भजन-धुन गाये और उन्हें रात की सभा के लिए निमंत्रित किया। ९ को सुबह सिरसाला से अजन्दी पहुँचे। वहाँ भी पाठशाला के लगभग १०० बच्चों ने और गाँव के बड़े बूढ़ों ने गांधी चित्रावली देखी। रात की सभा भी अच्छी रही। इस क्षेत्र के तीन साथी अजन्दी से हमारे साथ हो गये थे। हर जगह उनकी बड़ी मदद रही। अजन्दी से १० को सुबह हम गांगली पहुँचे। जाते ही वहाँ सभा की। नर्मदा-स्नान का लाभ मिला। भोजन-विश्राम के बाद हम लोग देवगढ़ पहुँचे। यहाँ भी सम्पन्न और समझदार पाटीदारों की अच्छी बस्ती है। शाम को भजन धुन के साथ सभा हुई। जनता को गाँव-स्वराज्य की बातें और आचार-संहिता की बातें समझायीं। देवगढ़ से शाम को सिरली पहुँचे। पाठशाला में ठहरे। रात प्रार्थना और सभा का कार्यक्रम बहुत अच्छा रहा। आसपास के कई गाँवों के भाई बहन बड़ी संख्या में आ गये थे। इस गाँव के लोगों से हमारा पुराना परिचय है। सरपंच श्रद्धावान व्यक्ति हैं। उन्होंने अच्छी मेहनत की। सभा खूब जमी। बड़ी शान्ति से लगभग दो घण्टों तक जनता ने सारा विचार सुना। ११ को सुबह हम राजघाट के लिए रवाना हुए। रास्ते में गणपुर ठहरे। वहाँ सभा हुई। पिछले साल इस गाँव में हमारा पूरे दिन का पड़ाव रहा था। गाँववालों ने ग्राम-स्वराज्य का विचार ध्यान से सुना। मुख्य चर्चा सार्वजनिक धन के उपयोग के बारे में हुई। पंचायतीराज में सार्वजनिक धन का सही उपयोग न हुआ, तो उसके क्या-क्या दुष्परिणाम होंगे और राज की साख को कितना धक्का पहुँचेगा, इसकी चर्चा की। गणपुर से चिखल्दा होते हुए लगभग ११ बजे हम लोग राजघाट पहुँचे। स्नान, भोजन और आराम के बाद बड़वानी के बुनियादी प्रशिक्षण महाविद्यालय-परिवार के साथ ४ से ६ बजे तक 'गांधी विचार के मर्म' पर विस्तार से चर्चा हुई। रात ८-३० से १०-३० बजे तक इन्द्रभवन के चौक में बड़वानी के नागरिकों की आम सभा हुई। उसमें गांधीजी के पुण्यस्मरण के साथ परराज्य, राज्य और स्वराज्य के भेद की तथा आचार संहिता की विस्तार से चर्चा हुई। साथियों ने बताया था कि चुनाव प्रचार के कारण बड़वानी का वातावरण बहुत उत्तेजनापूर्ण और दूषित हो रहा है। उन्हें डर था कि ऐसे वातावरण में हमारी सभा शायद न जमे। पर भगवान् की दया से सभा खूब जमी और जनता ने एकाग्र भाव से सारी चर्चा सुनी।

१२ फरवरी को राजघाट पर १४ वाँ सर्वोदय-मेला लगा। सुबह सामूहिक प्रार्थना, प्रभातफेरी, झण्डावन्दन, सामूहिक सफाई,

सामूहिक गीतापाठ, सामूहिक सूत्रयज्ञ, सूत्रांजलि-समर्पण, सभा, श्रद्धांजलि और सर्वधर्म प्रार्थना के कार्यक्रम हुए। विद्यार्थी, शिक्षक, नागरिक, ग्रामवासी, नगर की बहनें आदि ने बड़ी संख्या में भाग लिया। प्रतिष्ठित नागरिक भी सम्मिलित हुए। सूत्रयज्ञ के समय दो घण्टों तक गांधीजी के पावन-प्रसंग सुनाये गये। डर था कि चुनाव के कारण मेला फीका रहेगा, पर सौभाग्य से वह डर मिथ्या सिद्ध हुआ। इस क्षेत्र में राजघाट के सर्वोदय-मेले की अपनी एक स्वास्थ्य और सुदृढ़ परम्परा बनी है। लोक हृदय में उसने अपना स्थान भी बनाया है। नगर की और क्षेत्र की शिक्षा-संस्थाओं का अच्छा सहयोग रहता है। बड़वानी के भूतपूर्व राणा श्रीमन्त देवीसिंहजी, जिनके हाथों १२ फरवरी,' ४८ को नर्मदा में गांधीजी के फूल विसर्जित हुए थे, इस मेले के लिए प्रतिवर्ष १०१ रु० की उदार सहायता देते हैं। नगरपालिका की ओर से भी सफाई, पानी, बिछायत आदि की मदद मिल जाती है। राजघाट की पाठशाला का परिवार भी बड़ी मदद करता है। १२ फरवरी का दिन राजघाट पर हर साल सत्संग और सत्चर्चा का पर्व-दिन रहता है।

लोकभावना अब यह बन रही है कि राजघाट के इस मेले को स्थायी स्वरूप दिया जाय और उसकी स्थायी व्यवस्था की जाय। कल्पना यह है कि राजघाट पर एक ऐसा केन्द्र चले, जो वहाँ पहुँचने वाली जनता को नित्य ही गांधी-जीवन और गांधी विचार का सन्देश पहुँचाता रहे और स्वाध्याय, सहजीवन तथा सहचिन्तन का लाभ देता रहे। इस निमित्त इस बार जो चर्चाएँ हुईं, उनके परिणामस्वरूप ऐसी व्यवस्था के लिए कुल ७५४ रुपये की सहायता के अभिवचन मिले। संकल्प यह है कि सन् '६२ की समाप्ति से पहले राजघाट पर बन रहे नर्मदा-पुल के आस पास गांधी-स्मारक के रूप में एक केन्द्र खड़ा हो जाय। बड़वानी नगर के प्रतिष्ठित नागरिकों ने इसमें हाथ बँटाने का वचन दिया है।

१३ फरवरी को उच्चतर कन्या-विद्यालय, बड़वानी की बहनों से 'स्वराज्य में नारी का स्थान' विषय पर विस्तार से चर्चा हुई। बहनों ने बड़ी एकाग्रता से और चाव से सारी बातें सुनीं।

१४ की रात को हमने टवलाई गाँव में प्रार्थना-सभा के बाद आम सभा की और अपने गाँव की जनता को ग्राम-स्वराज्य, पंचायती राज तथा आचार-संहिता का सारा विचार विस्तार से समझाया।

इस प्रकार इस पखवाड़े में छोटी-बड़ी कुल २१ सभाएँ हुईं। ७७ रु. ३५ न.पै. का सर्वोदय-साहित्य बिका। लगभग ५० *गाँवों की जनता के सामने सर्वोदय-विचार* रखने का मौका मिला और जनता-जनार्दन के सद्भाव तथा शुभाशीर्वाद की पूँजी लेकर हम अपने सेवा-क्षेत्र में वापस आये। यात्रा के दिनों में 'भारतीय संस्कृति क्या है?' नामक स्व० श्री नानाभाई भट्ट का और 'हमारे युग का भस्मासुर' नामक श्रीमती सुभद्रा बहन गांधी की पुस्तिका के हिन्दी अनुवाद तैयार हुए और 'नयी तालीम की तारक शक्ति' शीर्षक एक लेख लिखा गया।

१२ फरवरी को राजघाट पर कुल ४१५ गुण्डियाँ सूत्रांजलि के रूप में समर्पित हुईं। टवलाई-क्षेत्र की पाठशालाओं से प्राप्त गुण्डियाँ बाद में जुड़ीं। यों हमारे पास इस बार कुल ५७० गुण्डियाँ इकट्ठी हुईं। हर साल के मुकाबले इस साल गुण्डियाँ आधी के लगभग मिलीं। शिक्षा-संस्थाओं की ओर से मिलने वाली गुण्डियों में प्रायः कई प्रकार के दोष पाये जाते हैं। गुण्डियाँ ६४० तार की नहीं होतीं। अच्छे सूत की नहीं होतीं। सब कातना जानने-वालों की नहीं होतीं। प्रशिक्षण-संस्थाओं से हाथ-कते सूत की गुण्डियाँ नहीं आतीं। कहीं कहीं लोग मिल का सूत खरीद कर उसकी गुण्डियाँ भी भेज देते हैं। सूत्रांजलि का सारा विचार ठीक से न समझने के कारण ये दोष रह जाते हैं। शिक्षा-संस्थाओं के कार्यकर्ता चाहें, तो इन दोषों को आसानी से दूर कर सकते हैं। वर्ष में एक बार राष्ट्रपिता के निमित्त से दी जाने वाली सूत्रांजलि उत्तम-से-उत्तम सूत की हो और परिपूर्ण हो, इसकी चिन्ता तो सब जिम्मेदार लोगों को रखनी ही चाहिए।

विनोबा-पदयात्री दल से

• कुसुम देशपांडे

पके हुए बाल हैं, चेहरे पर झुर्रियाँ हैं, जीवन की संध्या की सारी निशानियाँ हैं! झोपड़ी में एक खंभे से टेक कर वह बैठा है, सुन रहा है चर्चा! कोई पूछ रहा है, क्या हमें एक ही रसोई में खाना होगा? किसी ने पूछा, सरकार से संबंध कैसे होगा? कई सवाल और जवाब हुए। चर्चा खतम हुई, सभा भी खतम हो रही थी। उससे रहा नहीं गया, कह बैठा—"सब ठीक है। हमारा गाँव गोकुल बनेगा, पर हमारी मुख्य मुसीबत यह है कि हमारे सिर पर कर्जा है—किसी की दो बेटियाँ हैं, उनकी शादी करवानी है!"—उसकी आँखों में चिंता क्यों है, इसका जवाब इन शब्दों में था।

'कर्जा' की बात सुन कर सब चौकन्ने हो गये। बहनें भी जो अभी तक आपस में बातें कर रही थीं, चुप हो गयीं। उनकी ओर देखते हुए बाबा ने कहा, "कितना आसान सवाल है! हमारी ये बहनें हैं। इनके पास गहने हैं। गहनों का उपयोग क्या है? दे दें गहने और चुका दें गाँव का कर्जा!"

"पर ये तो धरम है बाबा!"—कान के कुंडलों पर हाथ रख कर बहनें बोलीं।

"धरम? क्या पैदा हुई थी तो गहनों के साथ पैदा हुई थी? भगवान की इच्छा होती तो क्या वह कान में छेद नहीं करता? देखो, माधवदेव तो कहते हैं—"कर्णपथे भक्तर हियात प्रवेशि हरि"—भगवन् कानों से प्रथम प्रवेश करते हैं। तुम्हारे कान में गहने हों तो भगवान को प्रवेश करने के लिए तकलीफ होगी। कर्ण के भूषण ये गहने नहीं हैं, हरिनाम है।"

बहनें समझ गयीं। एक ने कहा, "हम कबूल करती हैं।" बूढ़े की आँखों में चिंता के बदले आशा चमकने लगी। सबके साथ उसने भी बाबा को प्रणाम किया और चला गया झोंपड़ी के बाहर।

* * *

चौखाम गाँव की बात है। सूरज ढल चुका था। बाबा 'नाम-घोष' की बातें गौतम के साथ कर रहे थे। श्री सोमेश्वर बारुवती ने कमरे में आकर बाबा से कहा, "इस गाँव के पच्चीस लोगों ने ग्रामदान-पत्र पर हस्ताक्षर किये हैं।"

"गाँव में घर कितने हैं?"

"साठ"

"तो बाकी लोग सभा में भी नहीं आये होंगे?"

"जी! नहीं आये थे। अब हम सब इनके घर-घर जायेंगे।"

श्री सोमेश्वर भाई चले गये। बाबा ने कहा, "अब ये 'लालटेन' घर-घर घूमेंगे, अच्छा ही है। सूरज की किरणों की पैठ गुफा के सामने कुछ नहीं चलती! गुफा में तो लालटेन लेकर ही जाना होगा, तभी वहाँ प्रकाश होगा।" लक्ष्मी मेरे कान में फुसफुसाई—"दो लालटेन तो ग्यारह साल से देश में घूम ही रहे हैं। रोजाना सुबह पदयात्रा के वक्त अंधेरे में दो व्यक्ति बाबा के आस-पास लालटेन लेकर चलते हैं। लक्ष्मी का संकेत इस बात पर था।

* * *

ढेमाजी मौजे का कार्यक्रम तीन सप्ताह के लिए तय हुआ था। उसके बाद बाबा क्या फैसला करते हैं, इसकी तरफ सबका ध्यान था। कभी-कभी नक्शा लेकर बाबा बिहार की सीमा कितनी दूर है, इसकी चर्चा करते हैं। कभी कहते हैं, "आज सुबह मैं चिंतन करता था, तब बिहार के कुछ भाइयों का स्मरण हुआ..." कभी कामरूप जिले में ग्रामदान की संभावना की चर्चा करते हैं। हेमा बहन, गुलाब दत्त, सोमेश्वर भाई, मन-ही-मन में चिंता करते हैं कि क्या बाबा असम छोड़ने का फैसला करेंगे?

१९ ता० को ढेमाजी मौजे में प्रमुख लोग, गाँव-सभा के सभापति और कार्यकर्ता इकट्ठे हुए। उन्होंने अलग सभा की। दो घंटे तक उनकी सभा चली। उसमें सबने तय किया कि चुनाव के बाद—२४ ता० के बाद—एक सप्ताह खूब जोर लगायेंगे और इस मौजे के बचे हुए गाँव में ग्रामदान करवायेंगे। स्थानीय शिक्षक किसान, ऐसे लोगों ने पूरा समय देने का निश्चय किया, बहनें भी निकलीं। बीस तक संख्या गयी। फिर सब मिल कर बाबा के पास आये और सभा की कार्रवाई और निश्चय बताया और कहा "आप और दो सप्ताह देंगे तो हमें बल मिलेगा।" बाबा बाहर सभा के लिए हँसते हुए चल पड़े। हरियाली पर सब कार्यकर्ता, गाँव के भाई-बहनें, मौजे के प्रमुख लोग, शिक्षक आदि बैठे थे। और नन्हें मुन्ने हाथ में डफ, सारंगी जैसा एक वाद्य लेकर बहुत मधुर, मंजुल आवाज में भजन तल्लीन होकर गा रहे थे। उनके चेहरों पर निर्दोषता थी। बाबा ने भाषण के आरंभ में ही बच्चों की पीठ थपथपायी और कहा, "हम प्रथम इनका अभिनंदन करते हैं।" और फिर कहा, "आप हमें यहाँ रखना चाहते हैं तो हम रहने के लिए तैयार हैं।" सब खुश हो गये।

बाबा बोलने लगे: "बाबा के लिए सब प्रदेश समान हैं। एक भाई ने मुझे पूछा कि आपका घर कहाँ है, तो मैंने कहा, ब्रह्मपुत्र कहाँ का है? पाकिस्तान, तिब्बत, हिंदुस्तान, सब उस पर अपना हक बताते हैं, कहते हैं कि ब्रह्मपुत्र हमारा है। जैसे ब्रह्मपुत्र सबका है, वैसे हम सबके हैं! हमारा जन्म जहाँ हुआ वह महत्त्व का स्थान नहीं है। हमारी मृत्यु जिस प्रदेश में होगी, वह हमारे लिए महत्त्व का स्थान होगा। हमने भगवान से कह दिया है कि जिस स्थान पर, जिस दिन, जिस क्षण वह हमें बुलायेगा हम उस स्थान को, उस दिन को, उस क्षण को पवित्र समझेंगे और अत्यन्त आनन्द से जायेंगे। इस देह में रहने देते हैं तो भी हम राजी हैं, भगवान के सेवकों की सेवा करेंगे। आप भूमि-माता के सेवक हैं, तो आप भगवान के सीधे सेवक हैं। हम आपके सेवक हैं। हम हमेशा कहते ही हैं कि हम "दासर दास तान दास भैलो आमी।"

• • •

अब ४ मार्च तक कार्यक्रम तय हुआ है। ६ मार्च को बाबा हरदलोनी मौजे में जायेंगे। उसके बाद यात्रा कौनसी दिशा लेगी, अंदाज करना भी संभव नहीं है।

यात्रा में रोज सुबह दस बजे 'विष्णु सहस्र नाम' का पाठ होता है। उसके बाद बाबा लक्ष्मी, असमी, हेमाबहन, कुंदेश्वरी को कभी 'गीताई' सिखाते हैं, तो कभी

मध्यप्रदेश की चिट्ठी

मध्यप्रदेश में ३० जनवरी से १२ फरवरी (गांधी-पुण्यतिथि से श्राद्ध-दिवस) तक जगह-जगह सर्वोदय-मेलों तथा सूत्रांजलि-पर्व के आयोजन किये गये। स्थान-स्थान से सर्वोदय-मण्डलों तथा लोक सेवकों से हमें जो जानकारी अब तक प्राप्त हुई है, वह इस प्रकार है।

बड़वानी, राजघाट (जिला निमाड़) : प्रति वर्षानुसार इस वर्ष भी नर्मदा किनारे राजघाट पर १४ वाँ सर्वोदय-मेला लगा। ११ फरवरी की शाम तक पदयात्रियों के दल अपने-अपने क्षेत्र की पदयात्रा पूरी करके राजघाट पहुँचे तथा दूसरे दिन उषाकाल से शाम तक प्रभात फेरी, प्रार्थना, ध्वज-वन्दन, ग्राम-सफाई, नर्मदा-स्नान, अखण्ड गीता-पाठ, सामूहिक फलाहार, सामूहिक सूत्रयज्ञ, श्रद्धांजलि, सूतांजलि-समर्पण एवं सर्व-धर्म-प्रार्थना के कार्यक्रम हुए।

सूतांजलि में ५७१ गुंडियाँ समर्पित हुई तथा राजघाट पर गांधी-स्मारक निर्माण के लिए ७५० रु० की धनराशि नकद जमा हुई। ७७ रु० ३५ न० पै० का सर्वोदय-साहित्य की बिक्री तथा ७५ मील की पदयात्रा हुई।

महेश्वर (जिला निमाड़) : मंडल-पंचायत एवं महेश्वर धर्मपुरी सर्वोदय सघन क्षेत्र के संयुक्त तत्वावधान में सर्वोदय-मेला लगाया गया। प्रभात फेरी, स्नान-घाट की सफाई, गीता-पाठ एवं सूत्र-यज्ञ हुआ। इस अवसर पर सुप्रसिद्ध सर्वोदय-सेवक श्री वि० स० खोड़े ने गांधी जीवन दर्शन के संबंध में प्रवचन दिया तथा सुश्री कुमुदिनी श्रीवास्तव एवं मैना बहन जैन ने बापू के महाप्रयाण संबंधी गीत गाये। ११५ गुंडियाँ सूतांजलि में समर्पित हुईं।

लखनवाड़ा (जिला सिवनी) : जिला सर्वोदय मंडल के अन्तर्गत लखनवाड़ा घाट पर सर्वोदय मेले का आयोजन किया गया। इस अवसर पर एक हजार समुदाय की उपस्थिति में विंध्यप्रदेश के जाने पहचाने सर्वोदय-सेवक भाई श्री चतुर्भुजजी पाठक ने गांधी विचार के संबंध में बताया। मेले में तीन चार सौ महिलाएँ भी उपस्थित थीं। सूतांजलि में १२०० गुंडियाँ समर्पित हुई। मेले को सफल बनाने में सर्वश्री परमानन्द अग्रवाल, श्याम सुन्दरजी तथा नारायण प्रसाद सोनी के अतिरिक्त समाज-सेवा, जनपद-सभा, नगरपालिका का पूरा-पूरा सहयोग मिला। बस मालिकों ने मेले तक मुफ्त बस की व्यवस्था की थी।

ग्वालियर (जिला भिंड) : गांधी श्राद्ध दिवस, १२ फरवरी को 'खादी-सदन' श्रीवास्तव मैं मौन सूत्रयज्ञ के उपरान्त विभिन्न संस्थाओं की ओर से गांधीजी को अपनी श्रद्धांजलि के प्रतीक रूप सूत गुंडियाँ समर्पित की गयी। तत्पश्चात श्री राधा-रमण दुबे, श्री बालप्रसाद दुबे तथा श्री गुरुशरण ने अपने विचार व्यक्त किये।

मुरझड़ (जिला बालाघाट) : ग्राम-सेवा केन्द्र के अन्तर्गत सर्वोदय मेला आयोजित किया गया। २४ घण्टे का अखंड-सूत्र यज्ञ हुआ, जिसमें करीब ५० भाई-बहनों ने भाग लिया। सूत्रांजलि में २५ गुंडियाँ समर्पित की गयी। रात्रि को सांस्कृतिक कार्यक्रमों के अन्तर्गत "पहली रोटी", "यमपुर सरकार की मिनिस्ट्री" तथा "दहेज प्रथा" नाटक खेले गये, जो काफी बोधप्रद रहे। सहभोज के कार्यक्रम में २०० भाई-बहनों और बच्चों ने भाग लिया।

पावटी (जिला मन्दसौर) : ग्राम-सेवा केन्द्र, पावटी के अन्तर्गत सर्वोदय-पखवाड़ा मनाया गया। १२ गाँवों में सभाएँ की गयी। ५० रु. के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। भूदान-पत्रों के ३ ग्राहक बनाये गये। सूतांजलि में ४५ गुंडियाँ मिलीं।

जबलपुर : जिला सर्वोदय-मंडल के तत्वावधान में नर्मदाजी के तिलवारा घाट पर सर्वोदय-मेला आयोजित किया गया। इस अवसर पर सामूहिक सूत्रयज्ञ तथा प्रार्थना के कार्यक्रम हुए। सुप्रसिद्ध साहित्य-कार श्री सेठ गोविन्ददास, श्री ब्यौहार राजेन्द्रसिंहजी, श्री गणेशप्रसाद नायक तथा म० प्र० सर्वोदय-मण्डल के अध्यक्ष श्री रामानन्दजी दुबे ने बापू के जीवन एवं सत्य अहिंसा पर विचार व्यक्त किये। जबलपुर के महापौर श्री रामेश्वर प्रसाद गुरु की उपस्थिति उल्लेखनीय है। सूतांजलि में ९८५ गुंडियाँ समर्पित हुईं।

पालिया (जिला इन्दौर) : पालिया के ग्राम इकाई क्षेत्र के अन्तर्गत ग्राम बघाना में 'बापू श्राद्ध-दिवस' पर ग्राम-सेविका श्री सरयूबहन मंडलोई के सद्प्रयत्नों से ग्रामवासियों ने सामूहिक सफाई, श्रमदान द्वारा सड़क निर्माण, बालवाड़ी एवं प्रौढ़-शाला का शुभारम्भ किया। अम्बर परि-श्रमालय द्वारा सामूहिक सूत्रयज्ञ का आयोजन किया गया। बाद में सूतांजलि समारोह हुआ।

मारडा (जिला उज्जैन) : लोकसेवक श्री त्र्यम्बकजी तिवारी ने मारडा के क्षेत्र के ग्रामों में संपर्क साध कर ५१ गुंडियाँ सूतांजलि में प्राप्त की तथा १३ रुपये की सर्वोदय साहित्य बिक्री की। कुछ गाँवों में आपसी झगड़े निपटाने का काम किया तथा कुछ लोगों ने शराब का व्यसन छोड़ने का वचन दिया।

इन्दौर : विभिन्न शिक्षण-संस्थाओं की ओर से गुंडियाँ नियमित प्राप्त हो रही हैं। अब तक सूतांजलि की गुंडियाँ बढ़कर ६६२ हो गयी हैं।

बिहार में प्रांतीय नशाबन्दी-सम्मेलन सम्पन्न

मलेपुर, जि० मुंगेर में गत ३० जनवरी को बिहार प्रांतीय नशाबंदी सम्मेलन श्री जगलाल चौधरी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन में सर्वश्री नगेन्द्र नारायण सिंह, गौरीशंकर डालमिया, निर्मलचन्द्र आदि प्रमुख व्यक्तियों ने भाग लिया। श्री रमावल्लभ चतुर्वेदी ने सबका स्वागत करते हुए कहा कि मलेपुर में तो कलाली हटा दी गयी, किन्तु बिहार के अन्य हजारों गाँवों में यह काम करना है।

सम्मेलन में यह भी चर्चा हुई कि सन् १९३४ में नशाबन्दी के लिए जो 'टैक्स' लगाये गये थे, वे अभी तक वसूल किये जाते हैं, यद्यपि सरकार नशाबंदी नहीं कर रही है। ऐसी सूरत में सरकार का नैतिक कर्तव्य है कि अब से वह धन नशाबन्दी कार्य के लिए ही खर्च करे!

सम्मेलन में सात प्रस्ताव पास किये गये हैं, जिनमें नशाबन्दी के लिए हस्ताक्षर-संग्रह, गैरसरकारी संस्थाओं और पंचायतों से नशाबन्दी के प्रचार के लिए अनुरोध, बिहार सरकार से १९६२-'६३ के वित्तीय वर्ष में संपूर्ण नशाबंदी की माँग आदि प्रस्ताव प्रमुख हैं।

'नाम-घोषा।' इन दिनों गौतम बुद्ध के 'धम्मपद' के वचन सिखाते हैं। कल ही सुबह समझा रहे थे :

"न पुप्फ गन्धो पटिवातमेति।
न चन्दन तगरं मल्लिकावा।
सतञ्च गन्धो पटिवातमेति।
सब्बा दिसा सप्पुरिसो पवाति।"

"फूलों की गंध हवा के साथ बहती है, जिधर हवा जाती है उधर जाती है। संतों की गंध हवा के खिलाफ भी बहती है। उनके लिए हवा अनुकूल न हो तो भी उनकी गंध बहती है। इस तरह सत्पुरुषों की गंध सब दिशाओं में बहती जाती है।"

आज की डाक में अमरीका से एक भाई की चिट्ठी आयी है। वे बाबा को भक्तिपूर्वक लिखते हैं : "मैंने आपकी पुस्तक 'टाक्स ऑन गीता'(गीता प्रवचन) पढ़ी है। उसका मेरे चित्त पर बहुत अच्छा परिणाम हुआ है। मैं फूल की पंखुड़ी की जैसी—एक अल्पसी भेंट (कुछ डॉलर) सर्वोदय के काम के लिए भेज रहा हूँ।"

सन् १९३२ में दिये गये ये प्रवचन १९६२ में भी दूर-दूर बसे हुए परदेशी भाइयों के दिलों को हिला देते हैं। बाबा कहते हैं, "जिस विचार के पीछे आचरण है, अनुभव है, नम्रता है, वे विचार दुनिया में फैलते हैं।"

बाबा का "नाम घोषा" का 'सिलेक्शन' का काम या हुआ है। "नाम-घोषा-सार" शीर्षक से वह किताब प्रथम असमिया भाषा में प्रसिद्ध होगी। उस काम के लिए गौतम गौहाटी गया है।

(मारीतोल्य, २४-२-'६२)

महिला शांति-सेना विद्यालय

कस्तूरबाग्राम, इन्दौर में महिलाओं के शांति विद्यालय का नया सत्र चालू हो गया है। सुश्री निर्मलाताई देशपाण्डे इस विद्यालय की प्रिंसिपल हैं। अधिकृत सूचना मिली है कि महिला शांति-सेना विद्यालय की २५ बहनें बिहार के 'बीघा-कट्ठा अभियान' में १५ अप्रैल से १५ जून तक सहयोग देने के लिए जायेंगी। सुश्री अन्न-पूर्णा दास इस दल की संचालिका रहेंगी। इस बारे में पूर्वतैयारी के लिए श्री अन्नपूर्णा महाराणा के शीघ्र ही पटना पहुँचने की सूचना मिली है।

भूदान-कार्य का मूल्यांकन

बिहार में चल रहे 'बीघा-कट्ठा आन्दोलन' का अध्ययन करने तथा भूदान-कार्य के मूल्यांकन की दृष्टि से शांति-सेना विद्यालय, राजघाट, काशी के कुछ विद्यार्थी बिहार में भेजे जायेंगे। शांति विद्यालय के आचार्य श्री नारायण देसाई ने इस बारे में एक योजना बनायी है। ये विद्यार्थी सम्भवतः १ अप्रैल से १५ जून तक बिहार के भूदानी क्षेत्रों में दौरा करेंगे।

थाना जिले में पदयात्रा

महाराष्ट्र प्रदेश में थाना जिले की डहाणू तहसील में श्री वसंतराव नारगोलकर ने ११ से १६ फरवरी तक लोकनीति और आचार-संहिता का प्रचार करने की दृष्टि से ३९ मील की पदयात्रा की। चुनाव-प्रचार जोरों पर होते हुए भी लोगों ने लोकनीति के विचार को पसंद किया। पदयात्रा में तीन भाई साथ थे। सर्वोदय-साहित्य के प्रचारार्थ डा० यशवंत कुलकर्णी गये थे। ७० रु० का साहित्य बेचा गया।

हैदराबाद में साहित्य-प्रचार

सर्वोदय विचार प्रचार ट्रस्ट, हैदराबाद के साहित्य विभाग द्वारा जनवरी माह में विभिन्न स्थानों में लगभग ११६३ रु० की साहित्य बिक्री हुई।

प्रकाशा में गांधी-श्राद्ध-दिवस

प्रकाशा, जिला पश्चिम खानदेश में "गांधी धाम" संस्था की संरक्षता में आयोजित पन्द्रहवें सर्वोदय-दिवस के उपलक्ष्य में, महाराष्ट्र के राज्यपाल श्री श्रीप्रकाश ने भावभीनी श्रद्धांजलि समर्पित की। उन्होंने बतलाया :

"गांधीजी के निधन के सत्ताईस दिन पूर्व जब मैं उनसे मिला तो मुझे बहुत अचम्भा हुआ कि महात्माजी सिंध के बारे में कितने विस्तार से जानकारी रखते हैं। उन दिनों मैं पाकिस्तान का हाईकमिश्नर था। गांधीजी ने मुझे वहाँ के काम के बारे में महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ भी दीं। वही मेरी उनसे अंतिम मुलाकात थी।"

आदिवासी भाइयों की सेवा का जो महत्त्वपूर्ण कार्य अक्काणी-अकलकुवा के इलाके में स्वतंत्र सर्वोदय मण्डल की ओर से चल रहा है। उसकी प्रशंसा करते हुए श्री श्रीप्रकाश ने इस बात पर जोर दिया कि आदिवासियों की सभी आदतें गलत हैं या सुधारने योग्य हैं, ऐसा नहीं मानना चाहिए। उनके द्वारा गांधीजी के जीवन-विषयक परिसंवाद में भाग लेने वाले विजयी छात्रों को पुरस्कार तथा "गांधी-धाम" के निसर्गोपचार प्रशिक्षण-केन्द्र के शिविरार्थियों को प्रमाणपत्र भी दिये गये। उन्होंने सामूहिक सूत्र-यज्ञ में भाग लिया और जिले से प्राप्त १६०० गुण्डियों की सूत्रांजलि महात्माजी की स्मृति में समर्पित की।

कमलेश्वरी स्वाध्याय-संस्थान

कमलेश्वरी स्वाध्याय-संस्थान की ओर से ३० जनवरी को प्रातः अस्पृश्यता विरोधी प्रभात फेरी निकली, जिसमें डेढ़ सौ भाई-बहन शामिल थे। इसके अलावा सूत-यज्ञ, सूत्रांजलि-संग्रह, कुष्ठ-निवारण आदि कार्यक्रम किये गये।

कमलाबेन भट्ट गुजरात पहुँची

गुजरात सर्वोदय-मंडल की भूदान-कार्यकर्त्री श्रीमती कमलाबेन भट्ट २४ सितंबर, '६१ को बिहार के "बीघा-कट्ठा आन्दोलन" में भाग लेने गयी थीं। बाद में उन्होंने मुंगेर जिले में बाढ़-पीड़ितों में सेवा-कार्य किया और राजेन्द्रबाबू के जन्म-दिवस पर शांति-सेना रैली में भाग लिया। वे एक महीना मथुरा जिले में रहीं और बम्बई होकर अब अपने गाँव-सतलासणा, जिला मेहसाना, गुजरात पहुँच गयी हैं।

सेवाग्राम :— सर्वोदय सहकारी संघ

जनवरी • में सेवाग्राम, वर्धा के संघ के व्यवस्थापक मण्डल की बैठकें हुईं। उसमें कस्तूरबा-खाखाना की खेती को १ जनवरी '६२ से संघ के अन्तर्गत लेने बाबत श्री नलिनिभाई के सुझाव पर विचार हुआ। एक व्यक्ति को धान से पोहा बनाने के उद्योग की प्रत्यक्ष जानकारी तथा अनुभव लेने की दृष्टि से वर्धमान भेजने का भी तय किया गया। जनवरी माह में कस्तूरबा-दवाखाना में बीमारों की संख्या कुल ११९१ इस प्रकार रही :—

	नये मरीज	पुराने मरीज	कुल
आउटडोर	५००	३२८	८२८
इन्डोर	१२६ प्रसूति	१२	१३८
पवनार केन्द्र	१३९	७९	२१८
कोपरा केन्द्र	७	—	७

सेवाग्राम आश्रम में दर्शनार्थियों की संख्या २२४१ रही और ५७३ रु० का सर्वोदय-साहित्य बिका।

खादी-ग्रामोद्योग संगठन पाठ्यक्रम

खादी-ग्रामोद्योग महाविद्यालय, पो० त्र्यम्बक विद्यामंदिर, नासिक में १ अप्रैल से खादी-ग्रामोद्योग संगठक पाठ्यक्रम प्रारम्भ हो रहा है। इस पाठ्यक्रम में ऐसे कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जायेगा, जो आगे जाकर खादी ग्रामोद्योग के संगठन, विकास एवं उत्पादन-केन्द्रों की व्यवस्था का भार संभाल सकें। पाठ्यक्रम की अवधि बारह मास की है, जिसमें क्षेत्रीय अनुभव के चार मास भी शामिल हैं। प्रशिक्षण-काल में ७५ रु० मासिक छात्रवृत्ति और घर से विद्यालय तक आने-जाने का खर्च भी दिया जायेगा। इस पाठ्यक्रम में प्रवेश की न्यूनतम योग्यता हाईस्कूल व खादी-ग्रामोद्योग कमीशन की 'खादी-ग्रामोद्योग कार्यकर्ता' परीक्षा में उत्तीर्ण होना आवश्यक है। मार्च तक आवेदन-पत्र पहुँचने चाहिए। —आचार्य

श्री फुलिया भगत की यात्रा

श्री फुलिया भगत ने फरवरी माह में रोहतक, करनाल और संगरूर जिले के ८५ गाँवों में २१४ मील की यात्रा की। इस बीच २७ रु० की साहित्य बिक्री की और ४० सर्वोदय मित्र बनाये।

'श्रमभारती' का वार्षिक सम्मेलन

'श्रमभारती', खादीग्राम का दसवाँ वार्षिकोत्सव २६ फरवरी '६२ को सुबह साढ़े आठ बजे से 'किशोरलालभाई भवन' में परिवार-गोष्ठी के रूप में सम्पन्न हुआ। गोष्ठी में करीब ७० भाई-बहनों ने भाग लिया। श्रमाधार-जीवन तथा वर्ग निराकरण की साधना श्रमभारती में करने के सम्बन्ध में काफी चर्चा हुई। सभी साथियों ने अपने कार्य का परिचय दिया।

विसर्जन आश्रम, इंदौर में "ग्रामभारती" शिविर

८ और ९ मार्च '६२ को विसर्जन आश्रम, इन्दौर में एक "ग्रामभारती" शिविर का आयोजन हो रहा है। इसमें 'ग्रामभारती' योजना के प्रणेता श्री धीरेन्द्र भाई मजूमदार मार्गदर्शन के लिए पधार रहे हैं। शिविर में ग्रामीण क्षेत्र में काम करने वाले कार्यकर्तागण भाग लेंगे।

ग्रामदानी गाँवों में भूमि-पुनर्वितरण

असम के 'सुवर्णश्री' अंचल के धेमाजी क्षेत्र में, जहाँ फरवरी में विनोबाजी की यात्रा चल रही थी, उस क्षेत्र में तीन सप्ताह के अन्दर २३ ग्रामदानी गाँवों में भूमि का पुनर्वितरण और व्यवस्था पूरी हुई है।

[एक पत्र से]

सर्वोदय-विचार-गोष्ठी का आयोजन

सर्वोदय स्वाध्याय मंडल, टीकमगढ़ के तत्त्वावधान में २५ फरवरी को सर्वोदय-विचार-गोष्ठी श्री महावीर प्रसाद अग्रवाल, प्राचार्य राजकीय महाविद्यालय की अध्यक्षता में हुई। गोष्ठी के प्रमुख वक्ता श्री बनारसीदास चतुर्वेदी, संसद-सदस्य ने अपने भाषण में शहीदों, राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं व उनके परिवारों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने और उचित कर्त्तव्य पालन करने की दृष्टि से प्रेरणा दी। रचनात्मक कार्यों का महत्त्व बतलाते हुए उन्होंने कहा कि सत्ता और दलगत राजनीति तथा भोगवाद में ये समाज को तोड़ने व लोक-शक्ति घटाने वाले हैं। अध्यक्षीय भाषण में श्री अग्रवालजी ने श्री बनारसीदास चतुर्वेदी की साहित्य-सेवाओं पर प्रकाश डाला व नवयुवकों की विचारधारा को सही दिशा में मोड़ने के लिए स्वाध्याय-मंडलों का उपयोग करने की प्रेरणा दी। गोष्ठी में नगर तथा जिले की शिक्षा संस्थाओं के प्रमुख अधिकारी, रचनात्मक तथा राजनैतिक कार्यकर्ता तथा नागरिक उपस्थित थे।

संथाल परगना जिला सर्वोदय-सम्मेलन

संथाल परगना जिला सर्वोदय-सम्मेलन १०-११-१२ मार्च को पोड़ैयाहाट में श्रीमती मालतीदेवी चौधरी की अध्यक्षता में हो रहा है। इस अवसर पर जिला सर्वोदय-महिला सम्मेलन एवं शांति-सैनिकों की रैली भी होगी।

भद्रावती में ग्राम-सफाई शिविर

गांधी-स्मारक-निधि की ओर से ग्रामोदय संघ, भद्रावती, जिला चांदा में २६ जनवरी से २४ फरवरी तक सफाई के लिए उपयोगी मल-मूत्र-पात्र बनाने का एक शिविर आयोजित किया गया था। इसमें महाराष्ट्र के १४ शिविरार्थी आये थे। शिविर में श्री अप्पासाहब पटवर्धन ने 'सोपा संडास' व मूत्री-पात्र बनाने आदि का प्रशिक्षण दिया। २४ फरवरी को श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे ने शिविर का समारोप किया। इस अवसर पर नागपुर के केंद्रीय स्वास्थ्य एवं सफाई संशोधनालय के डाइरेक्टर डा० मेहता, श्री रा० कृ० पाटील आदि भी आये थे।

सूचना :

गांधी-विद्या स्थान के दिल्ली 'सेमिनार' के बारे में सूचना

गांधी विद्यास्थान, साधना केन्द्र, राजघाट, काशी से प्राप्त एक सूचना के अनुसार दिल्ली में होने वाला 'सेमिनार' केवल निमंत्रितों के लिए है।

विषय-सूची

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८८५० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८८९० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १६ मार्च '६२ | वर्ष ८ : अंक २४

बिहार में भूदान की संकल्प-पूर्ति के लिए

'दान दो इकट्ठा, बीघे में कट्ठा' अभियान के लिए

विनोबा का संदेश

["दान दो इकट्ठा-बीघा मे कट्ठा" बिहार को यह मंत्र श्री विनोबाजी ने अपनी द्वितीय बिहार-यात्रा के प्रथम दिन—२५ दिसम्बर १९६०—को दुर्गावती (शाहाबाद) पडाव पर दिया था। बिहार के ८५ लाख खेतिहर मजदूरों और भूमिहीन किसानों की भूमिहीनता मिटाने के लिए बाबा ने ३२ लाख एकड भूदान की माग की थी, जिसमें २२ लाख एकड भूमि तो मिल भी चुकी है।

पिछली बार विनोबाजी ४७ दिन बिहार में रहें और उन्होंने यही कहा "मैं 'लैंड लेबी' नहीं चाहता, 'लैंड देवी' चाहता हूँ", *अर्थात् कानून से बीघा-कट्ठा जमीन ली जाय। यह नहीं, प्रत्युत समझ-बूझ कर अपने* भूमिहीन पडोसी भाई के लिए प्रत्येक भूमिवान प्रेम से जमीन दें। १५ अप्रैल से १५ जून तक चलने वाले इस अभियान के लिए उनका सन्देश इस प्रकार है। —सं०]

२५ दिसम्बर १९६० को, महात्मा ईसा के जन्म-दिन मैंने बिहार में दूसरी बार प्रवेश किया था। उसी दिन "बीघे में कट्ठा, दान दो इकट्ठा", यह मंत्र लोगों के सामने रखा था। उसके ठीक १४ महीने बाद उस बारे में मैं लिख रहा हूँ।

बिहार में ३२ लाख एकड जमीन भूदान मे एकत्रित करने का हम सब लोगो ने मिल कर संकल्प किया था। संकल्प में कांग्रेस पक्ष, विरोधी पक्ष, सर्वोदय के सेवक और जनता, सब शामिल थे। दो साल सतत आंदोलन चला। बिहार के हर गांव में सेवक पहुँचे। वहाँ के प्राय कुल ७५ हजार ग्रामो में से आधे ग्रामो ने ३ लाख दान-पत्रों द्वारा लगभग २२ लाख एकड जमीन दान में समर्पित की। उस संकल्प की पूर्ति के लिए और १० लाख एकड की जरूरत थी। हिसाब करने से मालूम हुआ कि "बीघे में कट्ठा" देने से वह पूर्ति पूर्ण हो सकती है। इसलिए वह मंत्र था।

उसके लिए गत साल कार्यकर्ताओं ने कुछ कोशिश की। लेकिन कई कारणों से, जिनमें प्राकृतिक आपत्तियाँ शामिल हैं, जोरों से काम नहीं हो सका था। अब इस साल अप्रैल के दूसरे हफ्ते से इसके लिए एक व्यापक अभियान करने का सोचा गया है।

हमारे पूज्य और प्रिय राष्ट्रपति अपनी बीमारी से मुक्त होकर फिर से हम लोगों के बीच आ रहे हैं। करुणामय प्रभु ने कठिन बीमारी से हमारे लिए उनको बचाया है। उनके स्वागत में इस अभियान की निष्पत्ति समर्पित की जायगी।

भूमि का मसला सारे एशिया में पेश है। उसके हल के लिए करुणा का रास्ता ही सबसे श्रेष्ठ है, इसमें दो रायें नहीं। कानून से जमीन मिल सकती है, लेकिन दिल नहीं मिलेगा। करुणा के रास्ते से मसला भी हल होगा और सबके दिल जुड कर ग्राम-स्वराज्य की बुनियाद पक्की होगी।

दिलों को जोडने के ख्याल से हमने एक विशेष योजना इसमें की है कि दाता स्वय जिस भूमिहीन को देना चाहे उसको अपने हाथ से जमीन दे दें।

इस प्रक्रिया को हमने 'देवी' कहा है और बिहार की जनता से हम अपील करते हैं कि बिहार की जनता इस राजमार्ग को अपनाये।

सब राजनीतिक पक्षों के कार्यकर्ता, अपक्ष और रचनात्मक कार्यकर्ता, ग्राम-पंचायत के और अन्य ग्रामीण सेवक, प्रौढ़ विद्यार्थी और शिक्षक आदि सब इसमें अपना सहयोग दें, यह मेरा सबसे निवेदन है। सारे भारत के अनुभवी कार्यकर्ता भी इसमें योग दें, ऐसा हमारा सुझाव है।

दान तो व्यक्तिगत होता है, लेकिन "इकट्ठा दान" हो, ऐसी खास कोशिश की जाय। व्यक्तियों का दान भी लेना ही है। लेकिन सामूहिक के लिए समझाना है। प्राप्त दान तुरंत बंटे, यह देखा जाय।

सेवकों की वाणी में प्रेम, नम्रता और ज्ञान हो। नर-समूह के अंतर्यामी नारायण प्रत्येक हृदय में विराजमान हैं, उनकी भक्ति से हृदय भरा हो।

विनोबा

भूमि का मसला सारे एशिया में पेश है। उसके हल के लिए करुणा का रास्ता ही सबसे श्रेष्ठ है, इसमें दो रायें नहीं। कानून से जमीन मिल सकती है, लेकिन दिल नहीं मिलेगा। करुणा के रास्ते से मसला भी हल होगा और सबके दिल जुड़ कर ग्राम-स्वराज्य की बुनियाद पक्की होगी

इन्दौर शहर में

नशीली चीजों का व्यापार और सरकार

देवेन्द्रकुमार गुप्त

भारत के संविधान में राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धांतों के रूप में नशीली चीजों के उपभोग के प्रतिषेध को राज्य का आवश्यक कर्तव्य माना गया है। मूल धारा इस रूप में है :—

"राज्य अपने लोगों के आहार पुष्टितल और जीवन-स्तर को ऊँचा करने तथा लोक-स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में से मानेगा तथा विशेषतया स्वास्थ्य के लिए हानिकर मादक पेयों का ओषधियों के लिए औषधिय प्रयोजनों के अतिरिक्त उपभोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा।"

इसके अनुसार इन्दौर शहर में क्या प्रगति हुई, उसको देखें तो देशी शराब की बिक्री के निम्न आँकड़े मिलते हैं।

कुल बिक्री : एल० पी० गैलन में

५१–५२ तथा ५२–५३ में ६४ हजार
५३–५४ तथा ५४–५५ में ७६ हजार
५५–५६ तथा ५६–५७ में ९७ हजार
५७–५८ तथा ५८–५९ में ९३ हजार
५९–६० तथा ६०–६१ में ९० हजार

इसमें '५६-'५७ के बाद बिक्री में कुछ कमी दिखाई देती है। इसका कारण यह दिखता है कि दुकानों की संख्या कम कर दी गयी है और दुकान खुलने के दिन भी साल में ५० दिन कम कर दिये गये। परंतु शराब के व्यापार में लगे लोगों का अपना अनुमान है कि इस कमी की पूर्ति नाजायज शराब ने ले ली है। जो सरकारी टैक्स दिये बिना चोरी से बनायी तथा बेची जाती है।

ता० २४ फरवरी '६२ को अपनी असम-पदयात्रा से एक पत्र के उत्तर में इन्दौर के सर्वोदय कार्यकर्ता को लिखे गये पत्र में विनोबाजी ने लिखा है :

"शराब-बन्दी से होने वाला नुकसान ५० प्रतिशत तो स्टेट को उठाना ही चाहिए, ऐसा मैं भी मानता हूँ। उतना भी करने के लिए स्टेट राजी न हो और सारा भार केन्द्र पर डाले तो राज्यकर्ता के नाते यह उनकी नालायकी होगी। कुल प्रांत में एकदम शराब-बन्दी हो, यह विचार भी योग्य ही है। लेकिन जब हम इन्दौर जैसे स्थान-विशेष की बात करते हैं तो सर्वोदय के कार्यकर्ता नैतिक प्रचार के जरिये बल पहुँचा सकते हैं। इसका फायदा मिल सकता है।"

आँकड़ों का भुलावा और असलियत

सरकार के आबकारी विभाग की नीति यह दीखती है कि सालाना टैक्स की मात्रा में बिना कमी किये संविधान की नशाबन्दी की मंशा पूरी हो जाय। इसलिए टैक्स की मात्रा बढ़ाते जाते हैं और शराब की बिक्री पर रोक लगाते हैं। इसका नतीजा यह होता है कि शराब बनाने की मूल कीमत और बिक्री की कीमत का अंतर बढ़ता जाता है। इससे नाजायज शराब में लाभ का अंश बहुत बढ़ जाता है और उसकी उत्पत्ति तथा खपत बढ़ती है। यह विषचक्र कितनी बुराई पैदा करता है, यह सोचा जा सकता है। शासन की नीति यह है कि लोग शराब कम पियें, पर शराब की सरकारी आमदनी पर आँच न आवे। इससे जो भुलावा आँकड़े पैदा करते हैं, यह धोखा नहीं दे सकते। यदि पिछली दो पंचवर्षीय योजनाओं में यही सिद्धांत अपनाया गया होता तो बहुत गलत था और अब तीसरी पंचवर्षीय योजना में इसका बदलना अत्यंत आवश्यक है।

केन्द्र उत्सुक, परंतु प्रांत सुस्त

योजना-आयोग ने इस दिशा में स्पष्ट मार्ग-निर्देश किया है कि इस काल में पूरी नशाबन्दी हो जानी चाहिए। थोड़ी या बहुत-सी कमाई के लोभ में लोगों की जिन्दगी का खिलवाड़ बनाने में मदद पहुँचाना अब नहीं चल सकता। केन्द्रीय शासन ने यह भी ऐलान कर दिया है कि प्रान्तीय सरकारें इस नापाक आमदनी को समाप्त करने में समर्थ बनें। इसके लिए ५० प्रतिशत मदद भी केन्द्र देने को तैयार है।

विनोबा ने स्वयं इस बारे में शासन के प्रमुख व्यक्तियों से बात की और नगरों की समस्याओं के अहिंसक हल ढूँढ़ने की दिशा में जो प्रयोगशाला इन्दौर में सर्वोदयनगर अभियान के रूप में प्रारम्भ की गयी, उसका एक विशेष विषय इस समस्या को बताया।

सन् ६०–६१ के बाद ६१–६२ के ठेके इन्दौर नगर में रोके जा सकते थे, पर उस दिशा में कोई कदम नहीं उठाया गया। पिछले वर्ष में दो बार म० प्र० शासन से विशेष प्रार्थना की गयी कि कम-से-कम इन्दौर नगर में नशाबन्दी लागू करें। जो ठेके जनवरी में होते थे, उनको शासन ने बन्द भी रखा और उसे आशा थी कि इन्दौर के लिए केन्द्रीय शासन सौ प्रतिशत मदद देगा तथा प्रांतीय शासन को बिना नुकसान उठाये नशाबन्दी लागू करने का मौका इन्दौर में मिल सकेगा। परंतु केन्द्र से वैसी मदद नहीं मिलने पर अब सुनते हैं कि पुनः यथावत शराब के ठेके नीलाम होने वाले हैं!

आखिरी सवाल

निम्नलिखित कुछ सवाल इस संदर्भ में सहज उठते हैं।

(१) म० प्र० शासन अपनी प्रमुख नगरी में संविधान के सिद्धांतों को लागू करने में कोई प्रयत्न क्यों नहीं कर रहा?

(२) क्या आर्थिक लाभ नैतिक हानि से अधिक महत्त्व का है? जो ५० प्रतिशत हानि-पूर्ति केन्द्र से मिलने पर भी शासन नशाबन्दी लागू नहीं कर रहा?

(३) सर्वोदय-कार्यकर्ता तथा सार्वजनिक संस्थाओं के नैतिक आन्दोलन का बल मिलने पर नशाबन्दी के इन्दौर नगर में सफल होने में अनुकूलता है, तो भी क्यों इस ओर से आँख बन्द की जा रही है?

एक ही जवाब समझ में आता है कि शासन को नशीली चीजों के व्यवहार, व्यापार के द्वारा जनता को जो हानि हो रही है उसकी प्रतीति नहीं है। यह प्रतीति कराने के लिए क्या जन आन्दोलन की आवश्यकता पड़ेगी?

नैतिक शक्ति सरकार नहीं ला सकती है

जब तक दो हाथों को काम नहीं मिलता, सब योजनाएँ बेकार हैं

विनोबा

कुछ लोग मिलने आये थे। उन्होंने सवाल पूछा कि क्या भारत की अर्थ-रचना में ग्रामदान और भूदान से फरक पड़ेगा? हमने कहा, भारत की अर्थ-नीति में फरक पड़ना मामूली बात है! भारत में दो पंचववर्षीय योजनाएँ हो चुकीं और तीसरी की तैयारी चल रही है। करोड़ों रुपयों का खर्च हो चुका, परदेश से पैसा लिया। परिणाम क्या है? कहते हैं, अभी तक बेकारी घटी नहीं, तो अर्थ-रचना में कैसे फरक होगा? देश में विकास-योजना चल रही है, पर देश की भूमिहीनता मिटी नहीं, गरीबी हटी नहीं, बेकारी हटी नहीं, झगड़े भी जारी हैं!

यह सारी योजना क्या है? अगर जगत् में अशांति हो गयी, कहीं युद्ध छिड़ गया तो देश के आयात-निर्यात में फरक पड़ेगा। बाहर की चीजें आना बन्द हो सकती हैं। यहाँ की चीजें बाहर जाना बन्द हो सकती हैं। वस्तु के भाव बढ़ सकते हैं। सर्वत्र विश्व में शांति रहेगी, इस पर यह योजना खड़ी है।

अर्थ-रचना में तब तक फरक नहीं होगा, जब तक लोगों के दोष दूर नहीं होते और कुछ गुण हम सीखते नहीं। दो गुणों की जरूरत है। सब हाथों को काम करना चाहिये। थोड़े हाथ काम करते हैं और बहुत-से हाथ बेकार हैं। चौदह-पन्द्रह साल के बच्चे उत्पादन नहीं करते, पचास साल के बूढ़े उत्पादन नहीं करते। प्रोफेसर, कवि, शिक्षक, साहित्यिक, डाक्टर, वकील उत्पादन नहीं करते। कालेज के विद्यार्थी उत्पादन नहीं करते, वैष्णव-भक्त उत्पादन नहीं करते। ज्ञानी तो करते ही नहीं। ऐसी स्थित देश में है। इससे अर्थ-रचना में कैसे फरक पड़ेगा?

ये छोटी बच्चियाँ जो बैठी हैं, सूत कात सकती हैं। घर-घर में चरखा चल सकता है। आज काम ही नहीं है। लोग हाथ पर हाथ रख कर बेकार बैठे हैं! कुछ उच्च जाति के लोग परिश्रम करना शर्म मानते हैं। अब कैसे उत्पादन होगा? अर्थ-रचना कैसे बदलेगी? यह फरक होना चाहिये। बहुत-से हाथ काम ही नहीं करते। जो हाथ काम करते हैं, वे एक-दूसरे के खिलाफ करते हैं। पहला दोष यह है कि बहुत-से लोग काम करते नहीं। जो करते हैं वे दूसरे के खिलाफ करते हैं। दो और दो मिल कर चार हाथ होने चाहिये। लेकिन दो और दो मिल कर होते हैं शून्य! ये दो गुण हिन्दुस्तान में आयें तो अर्थ-रचना में फरक पड़ेगा। ये गुण सरकार नहीं ला सकती।

नैतिक शक्ति पैदा करना सरकार के वश के बाहर है, वह भौतिक शक्ति पैदा कर सकती है।

ग्रामदान में भूमिहीनों को जमीन दी जायेगी, ग्रामोद्योग दिये जायेंगे। दूसरी बातें ग्रामदान में क्या होती हैं? लोग प्रेम

[शेष पृष्ठ ११ पर]

बीस साल के बाद भी श्री जमनालाल बजाज की जगह खाली क्यों ?

विशाल ध्येय और व्यापक प्रेरणा की आवश्यकता

विनोबा

आज जमनालालजी की पुण्यतिथि है। उनको गये बीस साल हो गये हैं! बीस साल में दुनिया कहीं की कहीं जाती है। हमारी आँखों के सामने कितने ही परिवर्तन हुए हैं। जहाँ तक भारत का ताल्लुक है, बीस वर्षों में जमनालालजी जैसा काम करने वाला व्यक्ति मिला नहीं। यह तो कोई नहीं कहेगा कि वे एक अलौकिक पुरुष थे, जिस अर्थ में यहाँ असम के शंकरदेव, माधवदेव और अन्य प्रदेश के महापुरुषों को माना जाता है। यद्यपि मैं उनको भी अलौकिक नहीं मानता हूँ, क्योंकि मैं मानता हूँ कि जो भी चाहेगा, वह ब्रह्मवेत्ता हो सकता है। कुछ लोग शक्तिशाली, अलौकिक माने जाते हैं, देखा जाय तो यह मानना ठीक भी है। उस कोटि के अलौकिकों में जमनालालजी को नहीं माना जाता है। फिर भी हम देखते हैं कि पिछले बीस सालों में उन-सा कोई नहीं निकला है, तो सोचने जैसी बात हो जाती है। बीस साल की छोटी अवधि नहीं है। पाँच-दस साल की अवधि हो तो ठीक है, लेकिन इतनी ज्यादा अवधि जाती है, तो अपने समाज में कुछ दोष आ गया है, ऐसा समझना चाहिए।

दोष यह आया है कि स्वराज्य प्राप्ति के बाद नया विशाल ध्येय और चैतन्यदायी व्यापक प्रेरणा होनी चाहिए, वह सब नहीं हुआ और स्वराज्य-प्राप्ति के बाद कुछ भोग भोगना चाहिए, ऐसी भावना देश में आ गयी। उत्तम से-उत्तम शिक्षित और सर्वोत्तम लोग सरकार में आते हैं। वे वहाँ प्रामाणिकता से काम करते हैं, तो वे देश के सेवक हैं, ऐसा माना जायेगा और कोई उसे गलत नहीं कहेगा। स्वराज्य-सरकार की नौकरी करना कोई गलत नहीं है।

लेकिन एक ध्येयवाद होता है, जो प्रचलित समाज की स्थिति में समाधान नहीं मानता है और आगे कूदना चाहता है। वह ध्येयवाद अब नहीं रहा। कोई त्याग करता है तो ऐसी सलाह भी देते हैं कि त्याग क्यों करते हो? नौकरी करो। यहाँ तक देखा है कि निर्मला जैसी लड़की को जो प्रवक्ता है, ग्रंथकार है, सारा भारत उसने देखा है, जहाँ जाती है निर्भयता के साथ विचार समझाती है, किसी भी गलत विचार का अपने पर परिणाम होने नहीं देती है। सामान्य नहीं, एक समर्थ कार्यकर्त्री है, पर उसे भी एक बुजुर्ग ने सलाह दी कि 'अरे क्या पागलपन है? क्यों बाबा के पीछे पड़ी हो? अभी तो जवान हो, बुढ़ापे में क्या होगा? इसलिए वही मार्ग लो, जो सब लोग लेते हैं।' सलाह देने वाला व्यक्ति एक बुजुर्ग गांधीवाला था। अब 'गांधीवाला' कौन है और कौन नहीं है, इसकी परीक्षा कौन करेगा? लेकिन 'गांधीवाला' कहलाने वालों में से एक ऐसी सलाह देने वाला निकला कि सुरक्षित जीवन ले लो, क्यों आती हो, इस मार्ग में?

यह आज की स्थिति है। इससे ऊपर उठ कर दुनिया में कुछ करना हमारा कार्य है। भारत को आज तक मौका नहीं था, अब स्वराज्य आया है तो विश्व-कार्य करने का मौका मिलेगा। उसके लिए सोचना है, त्याग करना है। इसका नाम है 'ध्येयवाद'। वह कम पड़ गया। बिना ध्येयवाद के रवीन्द्रनाथ नहीं हो सकते, बिना ध्येयवाद के गांधी, अरविंद नहीं हो सकते। लेकिन एक अच्छे प्रोफेसर, एक अच्छे न्यायाधीश, अच्छे 'जनरल', अच्छे प्रशासक बिना ध्येयवाद के हो सकते हैं! स्वराज्य-प्राप्ति के बाद यह हुआ है। जो स्वलत ध्येयवाद मनुष्य को प्रेरित करता था और सामान्य पत्तों को भी हवा में उड़ाता था, वह ध्येयवाद आवाम के सामने नहीं रहा।

जमनालालजी का मेरा परिचय सन् १९१८ में हुआ। उस वक्त उन्होंने मुझे देखा और मेरे विषय में पूछताछ की। मैंने उनको देखा और कोई पूछताछ नहीं की। उस वक्त वर्धा में एक आश्रम बने, यह जमनालालजी की इच्छा थी। बापू इस पक्ष में नहीं थे कि सत्याग्रह-आश्रम की कोई शाखा निकले। लेकिन जमनालालजी की तीव्र इच्छा देख कर बापू ने कहा, ठीक है। उसके लिए जमनालालजी ने मेरी माँग की। मैं विद्यार्थियों को सिखाता था, प्रार्थना में आता था, यह सब उन्होंने देखा। मेरे विषय में पूछा भी, और उन्हें लगा होगा कि वर्धा-आश्रम के लिए यह शख्स ठीक रहेगा। लेकिन मगनलाल भाई ने कहा कि इसे नहीं भेज सकते हैं। फिर रमणीकलाल भाई को भेजने का तय हुआ। उनके साथ में और मगनलाल भाई, दोनों गये। वहाँ काम शुरू करके वापस आ गये। फिर दो तीन महीनों के बाद रमणीकलाल भाई बहुत बीमार हो गये। उन पर उस काम का बोझ रखना ठीक नहीं, ऐसा तय हुआ। अब काम शुरू हुआ तो उसे बन्द तो नहीं कर सकते। आखिर बापू ने मगनलाल भाई को कहा कि 'अब विनोबा को छोड़ना चाहिए।' तब मैं कुछ साथी और विद्यार्थियों को लेकर १९२१ में वर्धा गया। सन् १९२१ से '५१ तक, ३० साल वर्धा के आसपास ही मैं रहा— मगनवाड़ी, बजाजवाड़ी, महिलाश्रम, नालवाड़ी और आखिर पवनार। वहाँ जमनालालजी का परिचय होता ही गया। वे सवाल पूछा करते थे—कुछ व्यावहारिक, कुछ आध्यात्मिक। मैं कुछ उत्तर देता था और उनका कुछ समाधान होता था। कई दफा वही प्रश्न वे बापू को भी पूछते थे। बहुत दफा दोनों के जवाब में समानता देखते थे। कभी मुझे मालूम नहीं होता था कि उन्होंने वही सवाल पूछा था। कभी फर्क मालूम होता था, तो ज्यादा चर्चा कर लेते थे। उसमें कभी बापू को सलाह बदलनी पड़ती, कभी विनोबा को। एक-दूसरे के विचार सुन कर ऐसा होता ही है। चिंतन में कभी कुछ पहलू छूट सकता है। इस तरह दोनों की सलाह मानते थे।

इतना होने पर भी मेरी ओर से उनका परिचय नहीं था। वे प्रश्न पूछ लेते थे।

> "यथा खनन् खनित्रेण नरो
> वार्यधिगच्छति।
> तथा गुरुगतां विद्यां शुश्रू-
> षुरधिगच्छति।"

बाद में धुलिया-जेल में मैं था और जमनालालजी विसापुर के जेल से धुलिया जेल में आये। हमारी दोनों की कोठडियाँ आमने-सामने थीं। खाना-पीना, बैठना-उठना वहीं होता था। छह महीने लगातार हम वहाँ रहे। वहीं गीता पर मेरे व्याख्यान ('गीता-प्रवचन') हुए थे, उसमें वे बैठते थे। उसकी चर्चा जेल में साथी करते थे। जमनालालजी भी अनेक प्रश्न पूछते, चर्चा आदि करते थे। इससे सम्बन्ध घनिष्ठ हुआ। सम्बन्ध तो घनिष्ठ ही होता है, जो घनिष्ठ नहीं, वह सम्बन्ध ही नहीं। मतलब, तेरह-चौदह साल के बाद हम वहाँ परिचित हुए।

उसके बाद सन् १९४० में 'व्यक्तिगत सत्याग्रह' में मैं जेल गया। वे वहाँ बाद में आये। वहाँ भी सतत दो तीन महीने परिचय रहा। जेल के दोनों वक्त के परिचय में देखा कि उनके हृदय में दो विलक्षण गुण थे: एक गुण था सबके साथ सहानुभूति और उसके साथ करुणा, दूसरा गुण था वैराग्य। वे मुझसे कहा करते थे कि उनकी उम्र जब चौदह-पन्द्रह साल की थी, जब दूकान वगैरह का काम देखना शुरू ही किया था, तब वे वर्धा के नजदीक के बोरगाँव नाम के एक गाँव गये थे। वहाँ केजाजी महाराज भजन करते थे। उनके एक भजन का जमनालालजी के चित्त पर बहुत गहरा असर हुआ। वह भजन था—"*हीरा तो गया तेरा कचरे में।*" मनुष्य कौड़ी-कौड़ी सम्हालता है, लेकिन भगवान ने एक हीरा दिया है, उसकी परवाह नहीं करता। इसका उनपर कितना गहरा असर हुआ, यह कहानी उन्होंने मुझे धुलिया-जेल में सुनाई।

जेल में, जहाँ मनुष्य अत्यंत निकट आते हैं और शहर के सब उद्योग खत्म हो जाते हैं, वहाँ मनुष्य की परीक्षा होती है। जेल में हमें बहुत अनुभव आये। ऊँचे-से-ऊँचे आदमी कितने नीचे आते थे, गिरते थे, यह वहाँ देखा। थोड़ी देर कोई बैठक में, सभा में किसी काम के लिए बैठते हैं तो ऐसी कसौटी नहीं होती है। मैं कह सकता हूँ कि जेल में हम दोनों के बीच अच्छे संबंध बने। एक-दूसरे के लिए बहुत अनुराग और भक्ति पैदा हुई। उनके मन में हुई, इसका आश्चर्य नहीं है, वे तो गुणग्राही थे; आलोचक तो थे, पर गुणग्राही भी थे। पर मेरे मन में प्रेम और अनुराग पैदा हुआ, यह विशेष बात माननी चाहिए। इसलिए नहीं कि मैं गुणग्राही नहीं था, पर मनुष्यों को कसने की जो कसौटियाँ मेरे पास थीं, वे जरा कठिन थीं। एक बाजू से वे इतने सारे कार्यकर्ताओं के साथ सहानुभूति से सोचते थे और दूसरी बाजू से अपने को पूर्ण अलग रखने की कोशिश करते थे। कोशिश सरल नहीं होती थी, इसलिए उनको दुःख भी होता था। कारुण्य और वैराग्य, दोनों उनमें था। छोटे-छोटे कार्यकर्ताओं के घर का परिचय, उनकी मुसीबतें-जानकारी उनको रहती थी और उनकी मुसीबतें हल करने की पूर्ण दिल से कोशिश करना यह उनका जीवन-कार्य रहा। बीस सालों के बाद भी उनका वह स्थान खाली रहा है। भूदान-आंदोलन चला, सम्पत्ति दान चला। ऐसे मौके पर वे होते तो क्या करते, यह सोचना बेकार है। लेकिन इसके साथ जितना उनका हृदय सहज भाव से जुड़ सकता था, उतना और किसी चीज से जुड़ता, ऐसा मैं महसूस नहीं करता।

हर साल इस दिन तो उनका स्मरण होता ही है। लेकिन इसके अलावा भी उनका स्मरण होता है, क्योंकि उनका अभाव महसूस होता है और आज बीस साल की समाप्ति के बाद बहुत ही स्मरण होता रहा। सुबह जाग गया, तभी से स्मरण हो रहा है।

स्वराज्य के बाद जिस हालत का मैंने वर्णन किया, उससे मैं निराश नहीं हूँ। राष्ट्रों के इतिहास में यह पाया गया है

[शेष पृष्ठ १० पर]

अहिंसक क्रान्ति : क्या ? क्यों ? कैसे ?

● श्रीकृष्णदत्त भट्ट

कसाई का उद्योग हमने कसाई-वर्ग को सौंप दिया है। वह मांस काटता है। उसकी वेदना हमारे चित्त में नहीं है। पर कसाई भी और मांस खाने वाले भी दयालु हो सकते हैं और होते हैं। पर अहिंसक समाज में तो हमें जीवन की प्रतिष्ठा बढ़ानी है और उसी के हिसाब से हमें इस व्यवसाय का परिमार्जन करना पड़ेगा। माता पिता, भाई बहन, पति पत्नी से हम जिस प्रकार अपनी आत्मीयता बढ़ाते चलते हैं, उसी प्रकार हमें आत्मीयता का यह दायरा उत्तरोत्तर बढ़ाते चलना चाहिए। यह आत्मीयता जब मनुष्य से बढ़कर पशुओं तक पहुँच जायगी, तो कसाई का व्यवसाय अपने आप समाप्त हो जायगा।

भंगी का कार्य भी यंत्र को सौंपा जा सकता है, पर यंत्रीकरण से आत्मीयता का विकास नहीं होगा। वह तो तभी होगा, जब हम भंगी से कहेंगे—'भैया, तेरा काम गंदा है। इसलिए यह अप्रतिष्ठित है। ला, मैं तेरा काम करूँगा।'

कसाई के व्यवसाय का यंत्रीकरण करने के पहले यह आवश्यक है कि कसाई का और हमारा दिल एक-दूसरे के निकट आये। 'तू काटता है, मैं खाता हूँ। इसलिए मुझसे तू अधिक अधम नहीं'—यह भावना हममें आनी चाहिए। शाकाहारी जैन और कसाई जब एक-दूसरे के निकट आयेंगे, तब क्रान्ति की प्रक्रिया धन्य होगी।

भंगी के व्यवसाय का यंत्रीकरण करने के पहले भी यह आवश्यक है कि भंगी का और हमारा दिल एक दूसरे के निकट आये। भंगी और हम, दोनों ही यह महसूस करें कि 'तुम हमारे हो, हम तुम्हारे हैं।'

इसके लिए अकुशल आवश्यक परिश्रम, कुशल परिश्रम के साथ मिलना चाहिए। उसमें से कला का उद्भव होगा। अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया मानव-केन्द्रित हो। यंत्रीकरण के कारण जीवन का स्पर्श क्षीण न हो।

यंत्रीकरण की तीन मर्यादाएँ हों :—

(१) अर्थ-व्यवस्था में मनुष्य को अपने उत्तरदायित्व का भान रहे।

(२) उद्योग और कला में विच्छेद न हो।

(३) शरीर धारण के लिए कुछ 'रफेज'—कष्टदायक अरुचिकर परिश्रम आवश्यक रहे।

संस्कृति के दो मानदण्ड हो गये हैं। व्यक्ति के लिए जहाँ अभिमान, गर्व, आत्मश्लाघा अवगुण है, वहाँ समूह के लिए, राष्ट्र के लिए गुण है। इसके कारण एक वैयक्तिक नीति बन गयी है, दूसरी सामुदायिक। व्यक्तिगत जीवन में चोरी, असत्य, सूदखोरी आदि गलत मानी जाती है, सार्वजनिक जीवन में उसे गलत नहीं मानते। इस प्रकार जीवन के दो हिस्से हो गये हैं।

कुल, रक्त, वर्ण, राष्ट्र आदि के ये अभिमान संस्कृति के अंग बन बैठे हैं। इन अभिमानों के कारण मनुष्य मनुष्य में कृत्रिम भेद पड़ जाता है। यों मनुष्य स्वभावतः दूसरे मनुष्य से मिलना चाहता है, परन्तु संस्कृति की ये दीवारें उसमें भेद पैदा कर देती हैं। होना तो यह चाहिए था कि संस्कृति मनुष्य में विनयशीलता लाती, पर वह लाती है अभिमान और भेद। इससे व्यक्तित्व के टुकड़े होते चलते हैं, 'आठ कनौजिया नौ चूल्हे' बनते हैं। पशु की रक्षा के लिए मनुष्य की हत्या कर डालने में लोगों को संकोच नहीं होता। इस अविवेक का त्याग आवश्यक है। संस्कृति के नाम पर दोषों का संरक्षण नहीं होना चाहिए। हाँ, जिन सांस्कृतिक प्रथाओं को सर्वमान्य सांस्कृतिक सिद्धान्त की कसौटी पर कस सकते हैं, केवल उन्हीं का संरक्षण होना चाहिए।

सांस्कृतिक संस्पर्श की भूमिका पर मनुष्य एक होंगे, तभी जागतिक मानवीय संस्कृति का विकास हो सकेगा।

व्यक्ति के दायरे से निकल कर जब हम समाज रचना की ओर बढ़ते हैं, हम तो देखते हैं कि विज्ञान के कारण मनुष्य की आस्थाएँ, उसकी रुचियाँ बदलती चल रही हैं। साथ ही मनुष्य राज्य की ओर से समाज की ओर बढ़ रहा है।

लोग बने-बनाये ढाँचे के इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि वे समाज रचना का भी कोई बना-बनाया ढाँचा चाहते हैं, परन्तु हम केवल उसकी दिशा सोच सकते हैं। मूल बात यह है कि हम विश्व को एक सामुदायिक संस्था नहीं बनाना चाहते। सारे विश्व को मानव कुटुम्ब बनाना चाहते हैं।

हमारे इस मानव कुटुम्ब में शोषण के लिए कोई स्थान नहीं रहेगा। उसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं रहेगी, मालकियत नहीं रहेगी। कुटुम्ब में रक्त और विवाह का जो सम्बन्ध होता है, कुटुम्ब की जो परवशता होती है, विश्व कुटुम्ब में हमें उसे निकाल देना है। स्वेच्छा और स्नेह के आधार पर हमें यह विश्व-कुटुम्ब बनाना है।

आज हमारे सामने कई समुदाय हैं—कारखाने का समुदाय, बाजार का समुदाय, कुटुम्ब का समुदाय, राज्य का समुदाय। इन सब समुदायों का शोधन किये बिना काम चलने वाला नहीं।

कारखाने में मनुष्य केवल 'फंक्शन' बन कर रह जाता है। उसका व्यक्तित्व उसके व्यवसाय में खो जाता है।

पूँजीवादी समाज में सबसे प्रभावशाली संस्था है—बाजार। वह हमारे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रविष्ट हो गया है। हर चीज पर लगी हुई चिप्पी जाने-अनजाने मनुष्य के मन और जीवन में परिवर्तन लाती है। उसके कारण जीवन में काम और श्रम का महत्त्व घट जाता है।

यह सही है कि कुटुम्ब में बाजार का कम-से कम प्रवेश होता है, परन्तु वहाँ भी जो कमाता है, उसका महत्त्व अधिक माना जाता है।

बाजार के समुदाय का प्रभाव यह होता है कि मनुष्य का स्वतन्त्र विकास रुक जाता है। बाजार के कारण मनुष्य का व्यक्तित्व तक बाजार बन जाता है। यह मनुष्य के लिए, मनुष्य के विकास के लिए बड़ी ही घातक वस्तु है। और यही कारण है कि सभी क्रान्तिकारी सदा से ही सौदेबाजी का विरोध करते रहे हैं। सभी प्रकार के क्रान्तिकारी ऐसी घोषणा करते हैं कि हमारे समाज में सौदेबाजी नहीं चलेगी। वे भाव निश्चित कर देते हैं, वस्तु की किस्म, उसकी शुद्धता निर्धारित कर देते हैं। तात्पर्य यह है कि बाजार न रहे, व्यक्तित्व का सौदा न हो, विज्ञापन और विक्रय-कला द्वारा माँग पैदा करने की कोशिश न हो।

भारत में श्रम विभाग की योजना गुण विभाग पर की गयी। गुण के आधार पर मनुष्यों का वर्गीकरण अच्छी चीज नहीं। समाज में यदि दुष्ट और सुष्ठ, ऐसे दो वर्ग रहेंगे, तो अहिंसक प्रक्रिया के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। जिस प्रकार हमें सम्पत्याश्रित और धनाश्रित वर्गीकरण नहीं चाहिए, उसी प्रकार गुणाश्रित वर्गीकरण भी नहीं चाहिए। हम चाहेंगे कि गुण की प्रतिष्ठा हो। गुण सार्वजनिक बने।

गांधी और विनोबा ने वर्ण-व्यवस्था का विवेचन करते हुए कहा है कि वर्ण में तीन बातें न रहें, तो झगड़ा नहीं रहेगा :

(१) रोटी-बन्दी, बेटी-बन्दी न हो।

(२) मानवीय सार्वत्रिक शिक्षण सबको समान मिले।

(३) जन्म के आधार पर मनुष्य का वर्गीकरण न हो।

राज्य का समुदाय आज सर्वगामी बन रहा है। रक्षण, पोषण और शिक्षण राज्य ही करता है और उसके बदले में वह मनुष्य की बुद्धि और हृदय पर अपना अधिकार चाहता है।

अहिंसात्मक प्रक्रिया को माननेवाला मनुष्य राज्य के नियन्त्रण को नहीं मानता। वह कहता है कि समुदायवाद में मनुष्य की सत्यनिष्ठा और आत्मनिष्ठा का लोप नहीं होना चाहिए। राज्य की व्यवस्था ऐसी हो, जिससे व्यक्ति की आत्म संयम की क्षमता बढ़े और संरक्षण की आकांक्षा और आवश्यकता घटे।

प्रोधों, मैक्स्टर्नर, क्रोपाटकिन, गाडविन आदि विचारकों ने राज्यसंस्था को निरर्थक बताया।

गाडविन ने राज्य-संस्था के विघटन का उपाय बताया—समझाना-बुझाना। पर सवाल है कि समझाने बुझाने से काम न चले तब ? थोरो और तोल्स्तोय ने इस प्रश्न का थोड़ा-सा उत्तर देने की कोशिश की, पर पूरा उत्तर किसी के पास नहीं था। वह दिया गांधी ने।

गांधी ने इसका उपाय बताया—सत्याग्रह। सत्याग्रह का आधार समझाना नहीं, मत-परिवर्तन है। उसमें हमेशा अपने मत परिवर्तन की तत्परता गर्भित है। इसी में से लोकनीति का विकास होता है।

सत्याग्रह के शास्त्र का गांधी ने विकास किया। उसकी एक आवश्यक शर्त यह है कि सत्याग्रही की बुद्धि में विकार नहीं रहना चाहिए। वह निर्विकार होकर तटस्थ वृत्ति से काम करे। सर्वोदय समाज-रचना के लिए अहिंसक संगठन आवश्यक है। सत्याग्रही उपलब्ध साधनों से काम लेगा, पर उसमें विजय की आकांक्षा नहीं रहनी चाहिए। स्नेह और विवेक के आधार पर ही सत्याग्रह पुष्पित-पल्लवित होगा।

समाज परिवर्तन की अहिंसक प्रक्रिया में एक अत्यन्त अनिवार्य वस्तु है—'ट्रस्टीशिप। सम्पत्ति मेरी नहीं, समाज की है'—इस भावना के विकास में क्रान्ति की बुनियाद छिपी पड़ी है। ट्रस्टीशिप में हर वस्तु के लिए, सृष्टि के लिए, उपकरणों के लिए अपने शरीर और श्रम के लिए भी हमारे हृदय में आदर रहना चाहिए। इससे संयम स्वतःस्फूर्त होगा और किसी भी वस्तु का विनाश नहीं किया जायगा। अहिंसक समाज में हम अपनी श्रम शक्ति, बुद्धि शक्ति और अन्य शक्ति को धरोहर मानेंगे, अपने स्वामित्व की वस्तु नहीं मानेंगे। प्रत्येक वस्तु की हम प्रतिष्ठा करेंगे और यह जीवन की प्रतिष्ठा में अन्तर्भूत है।

अहिंसक क्रान्ति की यह सारी प्रक्रिया दादा ने अत्यन्त विस्तार से शिविरार्थियों को समझायी है। मुझे इसका अवगाहन करने का अवसर मिला, यह मेरा सौभाग्य !

[गतांक से समाप्त]

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी से प्रकाशित श्री दादा धर्माधिकारी की 'अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया' पुस्तक की प्रस्तावना से। पृष्ठ-संख्या ३६८, मूल्य : सजिल्द तीन रु०, अजिल्द ढाई रु०।

मेरी विदेश-यात्रा

• नारायण देसाई

रूमानिया की विश्व-शान्ति परिषद के बाद डेढ़ महीने तक मैंने विदेश-यात्रा की। युगोस्लाविया में ६ दिन, इटली में १० दिन, ग्रीस में ४ दिन, इजिप्त में ४ दिन तथा इजराइल में १५ दिन रहा। युगोस्लाविया और इजराइल का प्रवास तो वहाँ के सामाजिक प्रयोगों के अध्ययन के लिए था। अन्य देशों में घूमना ही मुख्य उद्देश्य था। युगोस्लाविया में सोशियालिस्ट 'अलायन्स' की सहायता से सर्बिया स्टेट में घूमा। वहाँ के कुछ कारखाने, खेती-मंडलियाँ तथा पाठशालाएँ देखीं और अनेक प्रकार के लोगों से काफी गहराई में जाकर बातचीत हो सकी।

उद्योगों में मजदूरों की व्यवस्था, समाज में आम जनता का तन्त्र (सोशियल मैनेजमेंट) तथा शासन के विकेन्द्रीकरण के युगोस्लाविया के प्रयोग काफी दिलचस्प मालूम हुए। उनके बारे में हिन्दुस्तान में काफी जानकारी तो पहले भी आ चुकी है, लेकिन उन प्रयोगों को सफल करने में छोटे बड़े सब प्रकार के लोगों की प्रामाणिकता को देख कर मैं काफी प्रभावित हुआ। नौकरशाही की बुराइयों से बचने के लिए उन लोगों ने काफी जोर लगा कर कोशिश की है, समानता की दृष्टि से भी वे काफी आगे बढ़े हुए हैं। कम-से-कम और अधिक-से-अधिक कमाई करने वाले लोगों के बीच १ और ५½ का अंतर ही रहा है। पाठशालाओं में किसी खास प्रकार के दावे के न होते हुए भी श्रम और ज्ञान का स्वाभाविक समन्वय हुआ है। कारखानों के साथ शिक्षा को जोड़ कर कारखानों में काम करने वाले हरएक व्यक्ति तथा उसके परिवार के शैक्षणिक उन्नति की व्यवस्था की गयी है।

'डिक्टेटरशिप' वहाँ जरूर है, लेकिन रूस की तरह हर बात पर परदा नहीं है। वहाँ के सामान्य-से-सामान्य नागरिक में भी पूरे देश की अस्मिता का भान है। यह सब देख कर मैं काफी उत्साहित हुआ।

इटली में मेरी इच्छा तो केवल वहाँ के कुछ देखने लायक स्थान देखने की ही थी, लेकिन इटालियन शांतिवादियों की एक परिषद में भी हिस्सा ले सका। इटली का शांति-आंदोलन अभी नया-नया ही शुरू हो रहा है। श्री आल्डो कैपिटिनी उसके नेता हैं। उनके अधिकांश प्रश्न ऐसे ही मालूम हुए जैसे भूदान-आंदोलन के आरंभ काल में हमारे प्रश्न थे। वहाँ के शांतिवादियों और हमारे बीच में एक मुख्य फर्क जरूर है। वहाँ के लोगों ने युद्ध के बुरे परिणाम देखे हैं। इसलिए युद्ध निरोध के बारे में वे अधिक व्याकुल हैं। लेकिन समाज के मूल्य परिवर्तन के विषय में उन्होंने उतना अधिक नहीं सोचा।

इटली की कई कला प्रदर्शनियाँ देखीं। इतने महान कलाकार दुनिया के शायद किसी देश में नहीं हुए होंगे! इटली में विलासिता खूब मालूम हुई। उसे देख कर जी मचल-सा गया।

ग्रीस यूरोप के पिछड़े देशों में है। लेकिन वे अब आगे बढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। ग्रीस में खेती और ग्रामोद्योग बहुत सारे हमसे मिलते-जुलते हैं। बहुत सामान्य झाड़ियों में भी सैकड़ों मधुमक्खियों की कालोनियाँ लगायी हुई देखीं। उत्तम प्रकार का ऊनी हाथ-बुनाई का काम देखा। खुश्क पथरीली जमीन पर अच्छे अंगूर की खेती देखी।

इजिप्तवासियों के लिए गर्व लेने लायक मुख्यतः उनका पाँच हजार से अधिक साल पुराना इतिहास ही है। उसके बाद का कुछ नहीं। आधुनिक लश्करशाही और मध्य एशिया के अत्याचार का असर ही वहाँ दीख पड़ता है।

इजराइल में 'हिस्ताद्रुत' का मेहमान था। वहाँ के करीब सब मुख्य स्थान, साधारण प्रकार की सब सहकारी खेतियाँ तथा साधारण प्रकार की पाठशालाओं के नमूने देखे और इजराइल के बहुत-सारे प्रमुख व्यक्तियों से मिला। यहूदी देश के अलग बनाने के संबंध में मतभेद हो सकते हैं, लेकिन इन लोगों के पौरुषार्थ के संबंध में किसी से मतभेद नहीं हो सकता। इजराइल में शायद ही कोई आदमी ऐसा मिलेगा, जिसका कोई-न-कोई रिश्तेदार किसी-न किसी कान्सेंट्रेशन कैम्प में न मरा हो। इस शताब्दि का सबसे भयानक अत्याचार यहूदियों पर ही हुआ था। लेकिन इस सारे अत्याचार के बावजूद भी इन लोगों ने केवल बदला लेने के भाव को छोड़ कर निर्माण करने की जो शक्ति दिखाई है, वह अचरज में डालने वाली है। यहाँ की अर्थ-रचना 'मिक्स्ड इकानामी' है। लेकिन यहाँ का आदर्शवाद 'किबुत्स' के प्रयोगों के आधार पर बना है। विदेश के यहूदियों की ओर से आने वाला अपरंपार धन भी इनके लिए बहुत बड़ी सहायता है। लेकिन इस धन का वितरण इन लोगों ने कुशलता से किया है। इसलिए 'हिस्ताद्रुत' यह दावा कर सकता है कि उसके आठ लाख सदस्यों में सबसे नीचे और सबसे ऊपर के वेतन पाने वाले के बीच में केवल एक और तीन का अंतर है। खेती के प्रयोग तीन प्रकार के हैं। 'किबुत्स', जहाँ संपूर्ण जीवन सामूहिक है। इनमें से कोई बहुत ही धनवान 'किबुत्स' हैं। यहाँ के जीवन-मान से हमारे अच्छे किसानों की भी कोई तुलना नहीं हो सकती। लेकिन आज नये 'किबुत्स' नहीं हो रहे हैं और कुछ लोग 'किबुत्स' छोड़ रहे हैं। 'मुशाव'—दूसरे प्रकार का सेटलमेंट है, जिसमें खेती व्यक्तिगत होती है, लेकिन अन्य सारी सेवाएँ सामूहिक होती हैं। इनकी भी समृद्धि असाधारण है। 'मशाव शितुफी', तीसरे प्रकार का सेटलमेंट है, जिसमें खाना पीना और बच्चे की सम्भाल रखना व्यक्तिगत होता है, बाकी सब 'किबुत्स' की तरह सामूहिक होता है। ये अभी नये-नये ही शुरू हो रहे हैं। लेकिन इनकी संख्या बढ़ रही है।

इजराइल की पाठशालाओं में विज्ञान को बहुत छोटी उम्र के बच्चों से ही शुरू किया जाता है और उसके कारण इस दिशा में उनकी काफी उन्नति हो रही है। नई तालीम की हमारी अच्छी पाठशालाओं की तुलना में यहाँ की या युगोस्लाविया की पाठशालाओं की अवस्था मुझे अधिक अच्छी नहीं मालूम हुई। मैं मानता हूँ कि हमारी कुछ पाठशालाएँ शैक्षणिक प्रयोग में इन शालाओं से भी अच्छी हैं। लेकिन यहाँ सभी शालाओं का दर्जा काफी अच्छा है। इसका मुख्य कारण यह है कि हर शैक्षणिक संस्था में शिक्षकों की संख्या बहुत होती है तथा शिक्षण सामग्री प्रचुर प्रमाण में दी जाती है। हमारी पाठशालाओं में ये दोनों चीजें करीब-करीब दुर्लभ हैं। इजराइल तथा युगोस्लाविया, दोनों देशों में फौजी तालीम लाजिमी है और हर लड़का जीवन के कुछ साल फौज में देता है।

इजराइल के मुख्य व्यक्तियों से भारत, इजराइल तथा दुनिया के मुख्य प्रश्नों के बारे में चर्चा करने का मौका मिला। प्रो० बूबर, जो जगत् के एक विद्वान मनीषी समझे जाते हैं, उनसे शांति के सम्बन्ध में डेढ़ घंटे तक बातें हुईं। प्रधान मंत्री, बेन-गुरिआन की भारत के सम्बन्ध में जानकारी काफी अच्छी है। बौद्ध साहित्य का उनका अध्ययन गहरा है। उन्होंने यह निमंत्रण दिया कि सर्व सेवा-संघ कुछ चुने हुए कार्यकर्ताओं को एक साल के लिए इजराइल की विविध प्रकार की संस्थाओं में काम करने के लिए भेजें, ताकि वे वहाँ के वातावरण का कुछ हिस्सा भारत में ले जा सकें।

इजराइल का आदर्शवाद अधिकांश में उन लोगों के द्वारा दिया गया है, जो कि ३०-४० या ५० साल पहले अपने देशों से पैलेस्टाइन में आकर बसे थे और जिन्होंने पैलेस्टाइन को नये सिरे से बसाने में अपनी पूरी आयु लगा दी। नयी पीढ़ी के लड़कों ने वैसे कठिन दिन नहीं देखे हैं। इसलिए स्वाभाविक तौर पर वे पश्चिम की दुनिया के अनुकरण की ओर जा रहे हैं। लेकिन उनमें कुछ नया पराक्रम करने की इच्छावाले लोग हैं। इजराइल का दक्षिणी हिस्सा अब भी रेगिस्तान है। उस रेगिस्तान में एक नया सहकारी शहर बसाने का साहस अभी-अभी किया है। इन साहसियों से मैं मिला था। अधिकांश जवान लड़के-लड़कियाँ हैं। पूरी जिंदगी आराम में ही बितायी है, लेकिन अभी रेगिस्तान की सारी मुसीबतों को सहन करते हुए वे वहाँ पर नया शहर खड़ा कर रहे हैं। इस दृश्य को देख कर काफी आनंद हुआ।

हर स्थान पर कई नये संपर्क हुए, जिनमें से कुछ आगे भी टिके रहेंगे, ऐसी उम्मीद है। हर जगह भूदान, शांति-सेना और विश्व शांति के प्रश्नों पर चर्चाएँ तथा छोटी-मोटी सभाएँ भी होती रहीं।

———

तालीम एक वरदान का काम करती है। यह हमारा दुर्भाग्य ही है कि नई तालीम की इस महान् और अद्भुत शक्ति को हम अभी तक पहचान नहीं पाये और उसकी सही परख करने के बजाय उसके नाम से ही भड़कने लगे। जब तक अज्ञान अन्धविश्वास, स्वार्थ, प्रमाद, आलस्य, जड़ता और अनास्था से उत्पन्न यह भड़क लोक मानस से दूर नहीं की जाती है, तब तक इस देश में नई तालीम का भविष्य आज की तरह ही सन्देहास्पद बना रहेगा और हम अपने लोक जीवन में उसकी सही प्रतिष्ठा नहीं करा पायेंगे।

हर साल इस देश में नई तालीम के विकास के लिए बड़े पैमाने पर सप्ताह मनाने की रीति पिछले कुछ सालों से शुरू हुई है। किन्तु इन सप्ताहों को भी हमने जाब्ते की जकड़ में इस तरह बांध दिया है कि बहुत चाहने और यत्न करने पर भी हम इनके द्वारा लोक मानस में नई तालीम की प्राण प्रतिष्ठा नहीं करा पा रहे हैं। हर शुद्ध विचार की अपनी एक प्रतिभा होती है, किन्तु जब उसे किसी विधर्मी अशुद्धता से जोड़ दिया जाता है, तो उसकी असल प्रतिभा पर एक आवरण-सा पड़ जाता है और फलतः लोग उसके सही स्वरूप को देख-समझ नहीं पाते। हमारे देश में आज नई तालीम के साथ कुछ ऐसा ही व्यवहार हो रहा है। इस असंगति के कारण ही नई तालीम के नाम पर देश में जो श्रम, शक्ति, बुद्धि और सम्पत्ति आज खर्च हो रही है, उसका कोई सुफल हमें इधर कहीं देखने को मिल ही नहीं रहा है। नई तालीम की तारक शक्ति पर पड़े इस आवरण को हटाने का प्रचण्ड पुरुषार्थ आज की तात्कालिक आवश्यकता है। भगवान् से हम यही चाहते और मनाते हैं कि अपने दिल-दिमाग पर पड़े इस आवरण को उतार फेंकने की शक्ति वह हममें से हरएक को दे!

———

नई तालीम की तारक शक्ति कुण्ठित क्यों ?

● काशिनाथ त्रिवेदी

लोक-जीवन में समय-समय पर अनेक प्रवाह आते और जाते रहते हैं। कभी शुभ प्रवाहों का दौर चलता है और कभी अशुभ प्रवाह जोर पकड़ते हैं। शुभ प्रवाह लोक-जीवन के लिए तारक होते हैं। अशुभ प्रवाह लोक-जीवन को गलत दिशा में ले जाते हैं और उसकी ऊर्ध्वमुखी शक्ति को कुण्ठित कर देते हैं। मानव-समाज के आदिकाल से आज तक संसार में शुभ-अशुभ प्रवाहों का यह चक्र लगातार चलता रहा है। यह आवश्यक नहीं कि दोनों प्रवाह अलग-अलग समय में अलग-अलग रीति से चलें। प्रायः सुख-दुःख, हानि-लाभ, जीवन-मरण और यश-अपयश की तरह ये प्रवाह भी व्यक्ति, समाज, देश और दुनिया के जीवन में एकसाथ, एक ही समय में अपना काम करते पाये जाते हैं। जब शुभ भावनाओं का प्रवाह जोर पकड़ता है, तो समाज में व्यापक मांगल्य की और सुख-शांति तथा समृद्धि की स्थिति बनती है। जब अशुभ प्रवाह बलवान होते हैं, तो दिशा बदल जाती है। व्यक्ति, समाज तथा देश ऊपर उठने के बदले नीचे गिरने की रुचि-वृत्ति वाला बनता है और फिर उसी में रम जाता है। *मानव-जीवन के अंग-प्रत्यंग में हमें इस सत्य के दर्शन सदा ही होते रहते हैं, आज भी हो रहे हैं।*

अपने देश में आज अन्य क्षेत्रों की तरह शिक्षा के क्षेत्र में भी ऐसे शुभ-अशुभ प्रवाहों का दर्शन हमें निरन्तर होता रहता है। हमने यह माना था कि स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जब शिक्षा-दीक्षा के सारे सूत्र हमारे हाथ में आयेंगे, तो सहज ही हम अपने देश की शिक्षा के प्रवाह को उचित दिशा में मोड़ सकेंगे। देश के सभी सत्प्रवृत्त और सदाकांक्षी लोगों की यही अपेक्षा थी। आज भी वे इसी अपेक्षा से अपनी शक्ति-भर शिक्षा के प्रवाह को शुभ दिशा में ले जाने का प्रयत्न कर रहे हैं। किन्तु जिस प्राचीन और बद्धमूल प्रवाह के विपरीत उन्हें चलना पड़ रहा है, उसके कारण शुभ प्रवाह को पूरे वेग से गतिमान करना उनके लिए बहुत ही कठिन हो रहा है।

स्वतंत्रता के बाद भी लोक-मानस पर *पराधीनता के समय की रीति नीति और* शिक्षा-दीक्षा का जो प्रभाव बना हुआ है, उसके कारण नये और शुभ प्रवाह के लिए *लोक-मानस में वह सद्भाव नहीं बन पाया है,* जिसके सहारे वह इस शुभ और श्रेयस्कर प्रवाह को अपने जीवन में स्थान दे सके *और उसके साथ तद्रूप तदाकार हो सके।* यही कारण है कि *लगभग पच्चीस वर्षों* का लम्बा समय बीत जाने पर भी आज *देश में नई तालीम के विचार के लिए* वह अनुकूलता नहीं बन पायी है, जो समाज में उसकी प्राण प्रतिष्ठा के लिए *नितान्त आवश्यक है।* प्रतिष्ठा आज भी पुरानी, परम्परागत और दासतामूलक शिक्षा की ही बनी हुई है। जब तक देश का *लोक-मानस पुरानी शिक्षा की प्रतिष्ठा* को विचारपूर्वक विसर्जित नहीं करता, तब तक लोक जीवन में नई तालीम के *लिए वह व्यापक प्रतिष्ठा सुलभ नहीं होगी,* जो उसे अपना काम प्रभावशाली और परिणामकारी ढंग से करने में समर्थ बना सके। *प्रश्न केवल थोड़े हेर फेर का नहीं है,* प्रश्न आमूल-चूल परिवर्तन का, समग्र क्रांति का है। पुरानी पटरी पर नई चीज को चलाने में *उसका सारा तेज और* प्रभाव कुण्ठित हो जाता है। नई तालीम के क्षेत्र में हमारे यहाँ आज यही हो *रहा है। इसी कारण हम अपने देश में* नई तालीम की जीवन-पद्धति का अप्रतिहत और अबाधित विकास करने में असमर्थ हो रहे हैं। वैसे, देखा जाय तो नई तालीम का सारा विचार एक स्वतंत्र और सक्षम विचार है। वह किसी, *क्रिया की* प्रतिक्रिया के रूप में नहीं जनमा है। उसका जन्म तो लोक-जीवन के गहरे चिन्तन में से और एक स्वतंत्र जीवन-दर्शन में से हुआ है। इसलिए वह किसी पद्धति या प्रवाह की काट के लिए *नहीं है।*

पराधीनता की स्थिति में देश के लोक-जीवन में आचार विचार और व्यवहार *आदि की जो मर्यादाएँ खड़ी हुईं और* जीवन की अनेक शुभ शक्तियों का जो ह्रास हुआ, उसके परिणामस्वरूप मानव-*समाज सहज भाव से ऊर्ध्वाभिमुख रहने* की अपनी शक्ति और गति खो बैठा और पतनोन्मुखता की ओर उसका रुझान बढ़ *गया। दीनता, दासता, विवशता,* पराधीनता, परमुखापेक्षिता और अज्ञान आदि का कुछ ऐसा प्रहार उस पर पीढ़ियों तक पड़ता रहा कि वह अपने मूल स्वरूप को ही भूल गया और आज के अपने पतित स्वरूप को ही अपना सहज स्वरूप मानने *लग गया। बुद्धि, भावना, संस्कार,* आचार-विचार, रीति-नीति आदि की जड़ता ने मानव-मन को दासता के उस *भीषण काल में इस बुरी तरह जकड़* लिया कि उससे पिण्ड छुड़ाना आज के इस स्वातंत्र्य-काल में भी उसके लिए *अत्यन्त कठिन हो गया है। लोक-जीवन* की यह व्यापक जड़ता और गतानुगतिकता ही आज नई तालीम के मार्ग की *सबसे बड़ी बाधा बन बैठी है। जब तक* इस जड़ता पर समाज स्वयं कड़े से कड़े प्रहार करने को खड़ा न होगा, तब तक नई तालीम के लिए लोक मानस में नव-चेतन और आत्म-भाव जाग ही नहीं सकेगा। तपस्वी लोक-सेवकों के सामूहिक और संगठित पुरुषार्थ के बिना लोक-मानस की इस जड़ता पर विजय पाना संभव न होगा। अखण्ड जागृति, अविचल निष्ठा, कठिन साधना और अविरल प्रयत्न के सहारे ही लोक-मानस को सही दिशा में मोड़ने का काम किया जा सकता है।

एक द्रष्टा के रूप में जब गांधीजी ने देश के सामने नई तालीम का अपना जीवन-दर्शन रखा, तो उनके मन में नाना प्रकार की दासताओं से जकड़े हुए लोक-जीवन और लोक मानस का ऐसा ही एक करुण चित्र था। मनुष्य की स्वतंत्रता के साथ उसके आचार-विचार की जड़ता और दासता का कोई मेल गांधीजी के मन में बैठता नहीं था। अगर देश स्वतंत्रता चाहता है, तो उसे उसका समग्र आकलन और स्वीकार करना ही होगा, ऐसी उनकी श्रद्धा थी। स्वतंत्रता का उपासक तन मन *की किसी भी दासता से बंधा रहे, यह उन्हें* जरा भी मंजूर नहीं था। इसीलिए उन्होंने देश के सामने नई तालीम के रूप में स्वतंत्रता, *स्वावलम्बन, स्वयस्फूर्ति, सहकारिता और* सामूहिकता के क्रांतिकारी विचार रखे थे। वे समूचे समाज का विकास और उदय चाहते *थे। उनकी दृष्टि और आस्था अंत्योदय* में नहीं, सर्वोदय में थी। परिपूर्णता, समग्रता उनका एक जीवन-स्वप्न बन गयी *थी। नई तालीम के द्वारा वे स्वतंत्र* भारत के लोक-जीवन में इस परिपूर्णता को ही प्रतिष्ठित करना चाहते थे। स्वतंत्र *भारत का शिक्षित व्यक्ति जीवन की किसी* भी दिशा में अपूर्ण और अपंग न रहे, उसके जीवन के प्रत्येक अंग का समग्र *विकास हो और वह अपने मनःप्राण से* शुद्ध-बुद्ध बन कर जीवन को अधिक-से-अधिक पूर्ण और पुष्ट बनाने वाला बने, *यही उनकी आकांक्षा थी। इसीलिए* उन्होंने नई तालीम के कार्यक्रम में स्वच्छता, स्वावलम्बन, शरीर श्रम, लोक-सेवा और सहकारिता जैसे तत्त्वों को अग्र-स्थान दिया था। नई तालीम के माध्यम से वे देश के लोक-जीवन में ज्ञान, कर्म और भक्ति की एक ऐसी प्रबल त्रिवेणी प्रवाहित करना चाहते थे, जिससे लोक-मानस की कुण्ठा समाप्त हो जाय और लोकजीवन व्यापक रूप से नई चेतना से भर जाये।

पिछले २४-२५ वर्षों में देश के शासकीय और अशासकीय क्षेत्रों में नई तालीम का जो काम हुआ है, उसने अभी लोक-मानस को इस तरह प्रभावित और प्रेरित नहीं किया है कि जिससे वह अपनी पुरानी जड़ता और दासता को खंखेर कर फेंक सके और नई चेतना के रस में डूबे रहे। यह जानते और मानते हुए भी कि नई तालीम के गर्भ में मानवता के लिए आशीर्वाद और वरदान की प्रचंड शक्तियाँ पड़ी हुई हैं, आज सारे देश में उसके लिए बड़ा अनमनापन है। उत्कट भाव से इस विचार को जीवन में सिद्ध करके दिखाने की तत्परता और चिंता क्वचित् ही कहीं दिखाई पड़ती है। लोगों ने उसे प्रयोग और साधना के क्षेत्र में हटा कर जाब्ते की चीज बना दिया है। जाब्ते में जो सहज जड़ता है, उसने आज नई तालीम के काम को भी ग्रस लिया है। उसके विकास में जाब्ता एक बहुत बड़ी बाधा है। अगर कोई सोचे कि निरे जाब्ते के भरोसे वह नई तालीम को उसके शुद्ध रूप में सिद्ध कर सकेगा, तो इसमें उसे बड़ा धोखा होगा और निराशा ही पल्ले पड़ेगी। जाब्ता एक चीज है, नई तालीम उससे बिलकुल भिन्न दूसरी चीज है। नयी तालीम का स्वभाव तो नित्य-नूतन रहने का है। जिस तरह सूर्य नित्य उगता है और फिर भी नित्य नया ही बना रहता है, उसके निकट किसी प्रकार बासीपन नहीं टिकता, उसी तरह नयी तालीम भी नित्य-नूतन रहना चाहती है। इसीमें उसकी तारक शक्ति भी निहित है। जो नित्य-नूतन नहीं है, उसमें कोई तारक शक्ति भी नहीं होती।

अपनी पराधीनता के काल में हम भारतवासियों को अनेक मारक शक्तियों *के बीच में घिर कर जीना पड़ा। आज* स्वतंत्रता के काल में भी वे ही शक्तियाँ काम करती चली जा रही हैं, इसे हम *अपने देश का दुर्भाग्य मानते हैं। देव की* बड़ी विचित्र लीला है! जिस देश ने स्वतंत्रता के लिए कड़ी-से-कड़ी तपस्या की, वही देश आज अपने स्वातंत्र्यकाल में तारक शक्तियों की एकनिष्ठ उपासना करने के बदले मारक शक्तियों के आराधना में रत है, यह देख कर मन व्यथा से भर जाता है। पता नहीं, देश के भाग्य में व्यथा का यह काल कितना लम्बा रहेगा!

हमारी यह दृढ़ मान्यता है कि सत्य विचार अन्त तक सत्य ही बना रहता है और समय की अनुकूलता और प्रतिकूलता का उस *पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।* हमें लगता है कि नई तालीम का विचार भी ऐसा ही एक सत्य विचार है और सत्य की भाँति ही वह मानव-जीवन के लिए तारक भी है। मानव-मन और जीवन की अनेक छोटी-बड़ी दुर्बलताओं पर विजय पाने के लिए जिस साधना की आवश्यकता रहती है, नई तालीम के माध्यम से हम उसके लिए सही अनुकूलता कर देते हैं। जिस प्रकार भवसागर से तरने के लिए भक्ति नाव का काम करती है, उसी प्रकार मानव-मन को उसकी अनेकविध कुण्ठाओं से मुकाबला करने के लिए नई

दूसरे शब्दों में साम्प्रदायिकता का वर्तमान रूप हमारे शिक्षित मध्यम वर्ग के सत्तारूढ़ और सत्ता से वंचित लोगों की राजनीति और उनके संघर्ष से निकला है। इसी राजनीति ने और भी कई प्रश्नों को जन्म दिया है। देश को यह तोड़ रही है और अपने को फैलाती जा रही है। इसीलिए देश में भ्रष्टाचार है और वह भीतर से खोखला होता जा रहा है। मजा तो यह है कि यह राजनीति ही इन व्याधियों के इलाज के लिए सबसे अधिक शोर भी मचा रही है। अत: जाहिर है कि यह राजनीति ऐसी समस्याएँ पैदा तो कर सकती है, पर उनका हल नहीं निकाल सकती, जैसे साँप के पास विष तो है, किन्तु उस विष की औषधि नहीं। इसलिए इन समस्याओं का हल पाने के लिए राजनीति के पास नहीं, उससे किसी अधिक व्यापक और बड़ी चीज के पास जाना पड़ेगा।

यहीं पर जिन्दगी के बुनियादी उसूलों का प्रश्न उठता है। हम शिक्षा तथा विद्या-वृद्धि के नाम पर जिस तरह का जीवन बिताने की कल्पना बनाये बैठे हैं, वह अपने आप में जीवन की स्वीकृति नहीं, जीवन का निषेध है। हमारा उठना-बैठना, खाना पीना, कपड़ा पहनना, जीवन की विभिन्न सुविधाओं का उपभोग आदि करना, सभी कुछ आज जीवन की श्रीवृद्धि नहीं करते, बल्कि उसका क्षय करते हैं। सुविधाओं के उपभोग करने की प्रक्रिया में अपनी नासमझी के कारण अपव्यय कितना कर देते हैं, मुँह धोना है तो पानी का नल खोल दिया जाता है और वह चलता रहता है और हम दाँतों और मसूड़ों को अंगुली से रगड़ते रहते हैं। कुल्ले के लिए आधा छटाँक पानी ही चाहिये, लेकिन व्यवहार करते समय सेरों पानी बह-बह कर नष्ट होता रहता है। इस अपव्यय से वह बहुत से लोगों को पीने के लिए भी पानी नहीं मिल पाता। अनेक शहरों को इसका कितना कष्ट है, हमें उसकी कल्पना नहीं है। इसी प्रकार अनेक छोटे छोटे दैनिक कामों में अपव्यय के द्वारा हम अनेक चीजें नष्ट करते रहते हैं और दूसरों को उससे वंचित करने के साथ-साथ अपने लिए भी उन्हीं चीजों की प्राप्ति के लिए शोर मचाते हैं। हमें तो जीवनमान बढ़ाने का यही अर्थ प्रतीत होता है कि हमें अधिक से अधिक अपव्यय की सुविधा हो। भोजन हमारे शरीर के लिए आधा पाव आवश्यक हो तो हम डेढ़ पाव खायें और फिर बीमार पड़ें, जिससे डाक्टरों और दवाइयों की आवश्यकता पड़े। यह आवश्यकता ही सभ्य जीवन का मापदण्ड है। अपव्यय की इस प्रक्रिया से अभाव और भी बढ़ते हैं, फिर उनकी पूर्ति के लिए योजनाएँ बनती हैं, योजनाओं को कामयाब करने के लिए भाषण दिये जाते हैं। लेकिन यह कोई नहीं कहता कि अपव्यय न हो, जीवन का संस्कार हो, कृत्रिमता छोड़ी जाय और जिन्दगी की सही जरूरियात को हासिल करने की कोशिश की जाय। एक ओर उत्पादन हो और दूसरी ओर अपव्यय न हो तो अभावपूर्ति आसानी से हो सकती है। आदमी की आदतें सही और संस्कृत हों तो वह स्वस्थ भी होगा। स्वस्थ इन्सान की आवश्यकताएँ बीमार की आवश्यकताओं से हमेशा बहुत कम होती हैं। लेकिन आज तो हम सभी बीमार हैं। इसीलिये हमें बहुत कुछ चाहिये। इसी बहुत कुछ के लिए सारी मार काट है।

दुनिया के प्रायः सभी विचारशील लोगों का जोर सादे और स्वस्थ जीवन पर रहा है। सामूहिक रूप से इसे व्यवहार में अपनाने से स्वार्थपरता के लिए गुंजाइश बहुत कम हो जाती है। स्वार्थपरता कम होने से संकीर्णता को पनपने की सुविधा नहीं रहती। स्वार्थपरता और संकीर्णता के अभाव में मानवजीवन में सहज ही सद्भाव और सहयोग की वृद्धि होती है। अतः जब तक हम जीवन के इन बुनियादी तथ्यों की ओर ध्यान नहीं देंगे और तरह-तरह के मसलों के शोर से वातावरण को क्षुब्ध बनाये रखेंगे तब तक साम्प्रदायिकता तो क्या, किसी भी समस्या का हल नहीं निकलेगा।

भारतवर्ष को आजाद हुए लगभग १५ वर्ष हो गये हैं। आश्चर्य है कि आज भी भारत के शहरों और कस्बों में किसी जाति-विशेष की स्त्रियाँ अपने सारे शरीर को मैले कुचैले वस्त्र में लपेटे, सिर पर पाखाने का बड़ा सा टोकरा रखे, परम्परा से अपनाये हुए अपने काम को करती-फिरती नजर आती हैं। इस गरीब देश का करोड़ों रुपया खर्च करके पचासों तरह का कूड़ा-कर्कट विदेशों से खरीदा जाता है। लेकिन पं० नेहरू जैसे इन्सानों को भी यह नहीं सूझा कि बड़ी बड़ी योजनाएँ जब पूरी होंगी तब होती रहेंगी, लेकिन किन्हीं आधुनिक साधनों के व्यवहार से कम से-कम इन अभागन बहनों को सिर पर विष्ठा ढोने के नर्क से तो बचा लिया जाय। आज तक किसी स्वामी रामेश्वरानन्द या मास्टर तारासिंह को इस घृणित अवस्था को सुधारने के लिए आमरण उपवास करने का विचार नहीं सूझा। एक साहब पंथ की रक्षा के लिए, पंजाबी सूबे को आवश्यक मान कर उसके लिए जान देने पर तुले हुए थे और दूसरे उन्हें नाकामयाब करने तथा हिन्दी की रक्षा के लिए मरने को कटिबद्ध थे। दोनों ओर से बड़े-बड़े सिद्धान्तों की दुहाई दी जा रही थी। अगर मर गये होते तो दोनों शहीद ही कहलाते! पर जिन अभागन बहनों की बात हमने कही है अथवा जो लोग प्रतिदिन जी तोड़ कर परिश्रम करके भी आधे पेट सोने के लिए मजबूर हैं, उनकी सुविधा के लिए इन उपवासों की क्या सार्थकता थी?

हाँ, इन उपवासों का सीधा सम्बन्ध कुछ चन्द लोगों की नौकरियों, विधान-सभाओं की सीटों और उन्हें पाने के लिए दो भाषाएँ सीखने की मेहनत न करने की मनोवृत्ति से अवश्य दिखाई देता है। और यह हुआ था उन अव्यक्त समूहों के नाम पर, जिनमें उन बहनों और शरीर तोड़ देनेवाली मेहनत करने वाले मजदूरों की संख्या प्रायः नब्बे फी सदी है।

हाय रे दुर्भाग्य! इस श्री रामकृष्ण, गांधी, तिलक, अरविन्द, रवीन्द्रनाथ, विनोबा आदि जैसी महान् विभूतियों के देश में यह सब क्या हो रहा है! रवीन्द्र ने विश्व मानव का स्वप्न देखा था। गांधी भारतवर्ष को विश्व-सेवा के उपयुक्त साधन के रूप में गढ़ना चाहते थे। वह भव्य स्वप्न और कल्पनाएँ इन चन्द वर्षों में ही धुएँ की तरह कहाँ विलीन हो गयीं!

शान्ति-सैनिकों का कार्य

शान्ति-काल में शान्ति-सैनिकों से अपेक्षा है कि वे अपने को ऐसे रचनात्मक कार्यों में लगाये रहें, जिनके द्वारा समाज में फैले हुए अज्ञान, अभाव, असमानता आदि की परिस्थितियाँ दूर हों और लोगों में सद्भाव, सहकारिता, करुणा आदि के भाव विकसित हों जिससे व्यक्ति अधिक जागरूक रह कर अपने श्रम और अभिक्रम से स्वयं ही अपनी समस्याओं और कठिनाइयों का हल निकालने में समर्थ हो सके और समाज विभिन्न परिस्थितियों का सामना स्वयं कर सके, इस प्रकार वह नवसमाज निर्माण के कार्य में सहयोग दे, ऐसी उससे आशा है।

वस्तुतः शान्ति-सैनिक स्वयं ही अपना नेता और मार्गदर्शक है, अतः वह जहाँ भी जिस क्षेत्र में होता है, अपनी स्वयं की प्रेरणा से अथवा परिस्थितियों के अनुसार काम में लग जाता है। कुछ शान्ति-सैनिकों द्वारा विभिन्न स्थानों में जो काम हुआ, उसकी जानकारी हमें प्राप्त हुई है, जो संक्षेप में नीचे दी जा रही है।

श्री प्रफुल्लचन्द साहु
जि. ढेंकानाल (उत्कल)

आदिवासियों को संगठित करके उनमें धान कुटाई, तेलघानी, मधुपालन आदि ग्रामोद्योगों के प्रचार के कार्य में लगे हैं। खानों में काम कर रहे मजदूरों का शोषण मालिकों द्वारा न हो, इस दृष्टि से उत्कल संयुक्त मजदूर संघ संगठित किया है, जिसके २०० मजदूर सदस्य हो गये हैं।

२९ और ३० जनवरी को जिले का सर्वदलीय प्रजा-सम्मेलन आयोजित किया। पंचायती राज, भूदान आदि विषयों के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास हुए और उन्हें कार्यान्वित करने के लिए एक समिति का संगठन किया, जिसका नाम रखा गया "लोक-शक्ति अभियान समिति।"

श्री सुरेन्द्र घोष : कानपुर (उ०प्र०)

कानपुर के बाबूपुरवा श्रमिक बस्ती में सेवा-कार्य कर रहे हैं। एक मजदूर की लड़की की मृत्यु हो जाने पर अन्य व्यक्तियों का सहयोग लेकर मृत लड़की के दाह-संस्कार की व्यवस्था करने में सहायता दी।

एक साइकिलवाले को तांगे के साथ भिड़ जाने से चोटें आ गयीं और उन दोनों में मारपीट होने लगी। उनमें समझौता करा कर उसी तांगे पर घायल साइकिलवाले को डाक्टर के पास ले जाकर उपचार कराया और उसके घर पहुँचाया।

प्रातः एक घंटा बस्ती में सफाई करते हैं और सन्ध्या को हरिजन बच्चों की पढ़ाई व अन्य सेवा-कार्य करते हैं।

'सर्वोदय-पक्ष' में प्रातः स्कूलों व अन्य सार्वजनिक स्थानों की सफाई का कार्यक्रम चालू रखा। ११ फरवरी को सफाई-प्रदर्शनी आयोजित की गयी।

श्री वी० आ० कल्याणकर : पूना

रत्नागिरि जिले के कार्यकर्ता संघ की बैठक में भाग लिया। यह एक अनुकरणीय सत्र है, जिसमें विभिन्न रचनात्मक प्रवृत्तियों के काम कर रहे कार्यकर्ता संगठित हुए हैं और कुछ मिलेजुले कार्यक्रमों के द्वारा आपस के परस्पर सहयोग के आधार पर जिले में कार्य कर रहे हैं। लोक नीति की भावना जनता में जाग्रत हो, इस ओर आजकल लोक शिक्षण के कार्यक्रम को हाथ में लिया है।

श्री बलवंतसिंह भारती
उत्तराखण्ड

क्षेत्र में पदयात्रा की। ११ स्कूलों से सम्पर्क किया, १४ सभाओं में भाग लिया तथा एक किसान मेले में शांति-सेना, शराबबंदी, आदि के संबंध में जनमत जाग्रत करने का प्रयत्न किया। उत्तराखण्ड कार्यकर्ता शिविर में भाग लेकर क्षेत्रीय समस्याओं पर विचार विनिमय किया।

'सर्वोदय-पक्ष' के कार्यक्रम में सहयोग दिया। क्षेत्र में राजनीतिक पक्षों द्वारा चुनाव प्रचार में संयम बरता जाय, जिससे किसी प्रकार की अशान्ति न फैले, इस सम्बन्ध में प्रयत्न किया।

साम्प्रदायिकता की जड़ कहाँ?

● रामाधार

जबलपुर के दंगों ने साम्प्रदायिकता की वीभत्सता का सम्पूर्ण चित्र हमारे सामने उपस्थित किया था। लेकिन दुर्भाग्य से हम उनसे वह सबक नहीं ले पाये, जो आवश्यक थे और जो वस्तुस्थिति को समझाने में सहायक हो सकते थे और जिनके द्वारा किसी सही हल के पाने की आशा की जा सकती थी। वैसे उन दंगों की प्रतिक्रिया सभी क्षेत्रों में हुई थी। पं० नेहरू का चिरपरिचित रोष प्रकट हुआ था। कांग्रेस के कुछ प्रमुख लोगों ने वहाँ का निरीक्षण किया और अपनी रिपोर्ट पेश की। राष्ट्रीय महासभा ने एक एकता-समिति नियुक्त की थी, जिसने देश की राष्ट्रीय एकता और संगठन आदि के सम्बन्ध में कोई योजना भी पेश की है।

स्वयं मुसलमानों में इसकी प्रतिक्रिया यथेष्ट तीव्र हुई थी, जो स्वाभाविक ही था। अखबारों के अनुसार उन्होंने साम्प्रदायिकता के विरुद्ध संघर्ष करने का दृढ़ संकल्प प्रकट किया है। कुछ समय पहले राष्ट्रीय भावनाशील मुसलमानों का एक सम्मेलन भी बुलाया गया था, जिसमें तरह-तरह के भाषण हुए थे और कुछ प्रस्ताव पास करके उन्होंने अपना रोष प्रदर्शित किया था। बाद में इसी सम्मेलन के सम्बन्धों में एक तरह का वितण्डावाद-सा पैदा हो गया था और कहा गया था कि अनेक संजीदा मुसलमान इस तरह की कान्फ्रेन्स वगैरह करना उचित नहीं मानते।

लेकिन अन्ततः इस प्रश्न को लेकर जो चर्चाएँ चल रही हैं और जिस तरह का हल पाने का प्रयास हो रहा है, उसमें हमें कोई तथ्य नजर नहीं आया है। हमें लगता है कि यह बालू में से तेल निकालने जैसी ही प्रक्रिया है।

किसी भी रोग की चिकित्सा के लिए प्रथम अनिवार्य आवश्यकता उस रोग के निदान की होती है। अतः इस प्रश्न की जड़ में जाकर इसकी असलियत को देखना होगा और तभी इसके इलाज के सम्बन्ध में कुछ निश्चित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं और उसी हालत में इसका कुछ कारगर इलाज पाने की आशा भी की जा सकती है।

भारतवर्ष के दुर्भाग्य से हमारा शिक्षित वर्ग किसी भी प्रश्न के बारे में तटस्थ दृष्टि से विचार करने में असमर्थ हो गया है। उसे अपनी ही पड़ी है और अपने स्वार्थ की रक्षा के लिए वह अपनी शिक्षा-दीक्षा को बड़ी कुशलता से व्यवहार में लाता है। हमारे जनसाधारण साम्प्रदायिक दृष्टिकोण नहीं रखते। उनकी भावनाओं का बुनियादी स्वरूप इन्सानियत से भरा हुआ है। सामान्यतः उनके व्यवहार में इन्सानियत ही प्रमुख रहती है। लेकिन लोक संगठन तथा लोक व्यवहार में वे अपने को बौद्धिक दृष्टि से हीन मानते हैं, इसलिए शिक्षितों का मार्गदर्शन स्वीकार करने के लिए तैयार रहते हैं। इस देश का असली दुर्भाग्य यहीं है! शिक्षित वर्ग उनकी इस निर्भरता का हमेशा अनुचित लाभ उठाता है। वे लोग अपना 'कैरियर' बनाने की राक्षसी भूख के शिकार हैं और इसलिए उन्हें सर्वसाधारण जनों और देश की बिलकुल चिन्ता नहीं है। साम्प्रदायिकता की जड़ शिक्षितों की इसी राक्षसी स्वार्थपरता में है।

यह साम्प्रदायिक समस्या अंग्रेजी राज्यकाल में ही हर सम्प्रदाय के शिक्षितों ने उभारी थी और आज भी वही इसकी जड़ में है। दुर्भाग्य से साम्प्रदायिकता भी आज उनके स्वार्थ-साधन के लिए यथेष्ट नहीं रह गयी है। अतः जात-पात भेद, जाति-भेद, भाषा भेद, संस्कृति भेद, प्रान्त-भेद आदि अनेक भेद उन्होंने और खड़े कर लिये हैं, ताकि उनकी आड़ में उनके निहित स्वार्थों की रक्षा हो सके। उन्हें विधान-सभाओं और संसद में सीटें चाहिए, बड़ी-बड़ी नौकरियाँ और ओहदे चाहिए, विदेश जाने के लिए सरकारी मदद की सुविधाएँ चाहिए, और ये सब अधिकार और सुविधाएँ अधिक-से-अधिक संख्या में तभी मिल सकती हैं, जब कि इस भेद-बुद्धि का सहारा लेकर किसी अव्यक्त समूह-विशेष के नाम पर नारा उठा कर उसकी दुहाई दी जा सके। कुछ लोग 'सेक्यूलरिज्म' के नाम पर भी यह स्वार्थ सिद्धि कर पाते हैं। अतः ऐसे लोगों को साम्प्रदायिकता की आड़ लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती, बल्कि इस 'सेक्यूलरिज्म' के नाम पर वाहवाही भी मिलती है और सुविधाएँ भी। किन्तु ऐसे लोग बहुत थोड़े हैं। अतः जिन्हें यह सुविधा नहीं है, वे जातीयता तथा सम्प्रदाय आदि के नाम पर ही तरह-तरह के बतालने पेश करते हैं और अपनी माँगों को मनवाने के लिए हर तरह की धमकियाँ देते हैं और फिर दंगों आदि की नौबत भी खड़ी कर देते हैं। हमारे सर्वसाधारण चूंकि बहुत सीधे सादे हैं, अन्धविश्वासी और अशिक्षित हैं, इसलिए वे इस तरह के बहकावे में आ जाते हैं और जहाँ एक बार लड़ाई-झगड़े की आबहवा बनी तो फिर तरह तरह की अफवाहें आग में घी का काम करती हुई अत्यन्त सोचनीय स्थिति का निर्माण कर देती हैं। मूलतः इस समस्या के पैदा होने का यही दुश्चक्र है।

मध्यम वर्ग को समाज का कूड़ा कचरा कहा गया है। उसकी स्वार्थपरता बड़ी प्रचण्ड होती है। प्रचलित समाज व्यवस्था के स्तर पर मार्क्स का यह मन्तव्य अक्षरशः सत्य है। मानवीय मूल्यों के स्तर पर हम इसे बुनियादी तथ्य के रूप में नहीं ग्रहण कर सकते, किन्तु समाज-व्यवस्था में विभिन्न क्रिया-कलापों और उतार-चढ़ाव के फलस्वरूप जब वर्गों का निर्माण होता है, तो वहाँ पर मध्यम वर्ग अत्यधिक स्वार्थ-परायण वर्ग के रूप में गठित हो जाता है। इस कथन की सच्चाई के दर्शन हमें आज के भारत वर्ष में पग-पग पर हो रहे हैं। साम्प्रदायिक समस्या के मूल में भी मध्यमवर्गीय स्वार्थपरता काम कर रही है। अतः इस तथ्य को सामने रख कर ही इस समस्या का समाधान ढूंढना होगा। यों शोरगुल हम चाहें जितना मचाते रहें, हमारे हाथ कुछ नहीं आने वाला है। वस्तुस्थिति तो यह है कि यह शोर और गुल और इस समस्या का समाधान ढूँढने के बारे में धूआँधार भाषण इसी व्यापक स्वार्थपरता की प्रक्रिया के ही अंग हैं। ये लोग पहले इस समस्या को पैदा करते हैं और फिर गला फाड़-फाड़ कर इसका समाधान ढूँढने निकलते हैं।

इसीलिए गांधीजी ने अपना काम करने की विधि सर्वथा भिन्न रखी। वर्ग-व्यवस्था की मनोवृत्ति और स्वार्थ-वृत्ति उनके जीवन से बिलकुल निकल गयी थी। उनका सारा व्यवहार मानवीय स्तर पर मानवीय मूल्यों को लेकर था और इसलिए उनकी दृष्टि मानव-समूहों के निम्नतम वर्गों की हितकामना के साथ जुड़ी हुई थी। जो उनसे ऊपर थे, उनका मुख्य काम निम्नतम श्रेणी के लोगों की सेवा करना मात्र था। यही कारण है कि खादी-कार्य की संस्था का नाम उन्होंने 'स्पिनर्स एसोसियेशन' रखा था। इसका आशय था कि देश में जिनकी आय कम-से-कम है और जिनकी संख्या भी बहुत बड़ी है, वे ही प्रधान हैं। बुनकर उनसे उतर कर हैं, क्योंकि उनकी आमदनी कातने वालों की अपेक्षा अधिक है और संख्या में भी वे उनसे बहुत कम हैं। कार्यकर्तागण उनसे भी गौण हैं और उनका अधिकार केवल अपने से नीचे वालों की अर्थात् कातने वालों की सेवा करना है। इस सेवा के लिए उन्हें शरीर-धारण और पोषण के मोटे साधन मात्र मिलेंगे और कुछ नहीं। लेकिन इस मोटे रहन सहन की असुविधा और अटपटेपन को वे अपने सहयोगियों को जीवन की वृहत्तर सच्चाइयों के प्रति जागरूक बना कर तुच्छ कर देते थे। इस पद्धति के कारण मध्यम वर्गीय शिक्षित लोग भी उनके हाथ के कुशल औजार बन गये थे, और बहुत हद तक अपनी वर्गजनित स्वार्थपरता छोड़ कर उनका साथ दे रहे थे। कम-से-कम जो लोग उनके सम्पर्क में आये थे, उनके साथ ऐसा ही हुआ था, मानों साँप ने अपने विष का परित्याग कर दिया हो, अथवा यों कहिये कि अपने अन्दर उस विष की उपस्थिति भूल गया हो।

पर जो लोग गांधीजी के प्रभाव में नहीं आये थे और जिनकी संख्या बहुत अधिक थी, वे अपनी स्वार्थ सिद्धि में ही लगे रहे। फलतः साम्प्रदायिकता वगैरह समस्याएँ किसी हद तक उनके समय में भी बनी रहीं। अंग्रेजी हुकूमत भी अपनी सत्ता को बनाये रखने के लिए इस स्वार्थपरता की प्रक्रिया में मदद देती थी, लेकिन उस समय एक बहुत बड़ा अन्तर था। इन स्वार्थ सिद्धि करने वालों की समाज में प्रतिष्ठा नहीं थी। आदर-सम्मान, प्रतिष्ठा और मुहब्बत वगैरह अधिकतर उनके ही हिस्से में पड़ी थी, जो लोग निम्नतम वर्गों की सेवा के लिए अपनी स्वार्थपरता को छोड़ चुके थे अथवा भूल गये थे।

परन्तु गांधीजी के जाने के बाद ही यह कल्याणकारी सिलसिला भी समाप्त हो गया। जवाहरलाल नेहरू का नेतृत्व प्रारम्भ होते ही मध्यम वर्ग अपनी स्वार्थपरता पर फिर लौट आया। कहावत भी है कि कुत्ते की पूँछ टेढ़ी की टेढ़ी। अब फिर व्यवस्थापक प्रधान हो गया है। स्वयं पण्डित नेहरू जो देश की सेवा कर रहे हैं, उस सेवा के बदले में और उसको ठीक से अंजाम देने के नाम पर हर तरह की सुविधाएँ और शान शौकत लेना और रखना पसन्द करते हैं। इस गरीब देश के लिए ये सुविधाएँ और शान-शौकत कितनी महँगी पड़ती हैं, इस ओर वे ध्यान देना पसन्द नहीं करते। उनका ख्याल है कि बिना इस आडम्बर के 'एफिशियेन्सी' नहीं आती, मानों गांधीजी में कोई 'एफिशियेन्सी' थी ही नहीं! यह नजरिया और सिलसिला उनके पास से फिर नीचे की ओर चलता है और फैशन बन कर सब जगह फैल जाता है। यह शोषण की भी एक प्रक्रिया है। पर देश गरीब है, अतः यह चोंचले बहुत थोड़े लोगों को ही हासिल हो पाते हैं। तो बाकी लोग क्या करें? वे भी पढ़े लिखे हैं, उनके पास भी विद्या बुद्धि है, वे दूसरों से किस बात में कम हैं? लेकिन देश की गरीबी के कारण सबको सब कुछ मिले कहाँ से? अतः जो सत्ता और सुख सुविधाओं से वंचित हैं, वे उनको हस्तगत करने के लिए सम्प्रदाय और समूहों के नाम पर शोरगुल मचाने लगते हैं। अब भाषा और प्रदेशों के नाम पर भी यही हो रहा है। कभी-कभी इस तरह के प्रश्नों को खड़ा करने वाला कोई मुख्य आदमी निस्पृह भी दिखाई देता है, जैसे कि आजकल मास्टर तारासिंह। यह भी मानव-जीवन का एक विचित्र अन्तर्विरोध है। कोई-कोई व्यक्ति निजी जीवन में सादे और निस्पृह रहते हैं, किन्तु वे ही लोग वर्ग विशेष की स्वार्थपरता के औजार और प्रतीक बन जाते हैं। किसी वर्ग विशेष का वाहन बनना भी गहरे नशे का काम करता है।

दूसरे शब्दों में साम्प्रदायिकता का वर्तमान रूप हमारे शिक्षित मध्यम वर्ग के सत्तारूढ़ और सत्ता से वंचित लोगों की राजनीति और उनके संघर्ष से निकला है। इसी राजनीति ने और भी कई प्रश्नों को जन्म दिया है। देश को यह तोड़ रही है और अपने को फैलाती जा रही है। इसीलिए देश में भ्रष्टाचार है और वह भीतर से खोखला होता जा रहा है। मजा तो यह है कि यह राजनीति ही इन व्याधियों के इलाज के लिए सबसे अधिक शोर भी मचा रही है। अतः जाहिर है कि यह राजनीति ऐसी समस्याएँ पैदा तो कर सकती है, पर उनका हल नहीं निकाल सकती, जैसे साँप के पास विष तो है, किन्तु उस विष की औषधि नहीं। इसलिए इन समस्याओं का हल पाने के लिए राजनीति के पास नहीं, उससे किसी अधिक व्यापक और बड़ी चीज के पास जाना पड़ेगा।

यहीं पर जिन्दगी के बुनियादी उसूलों का प्रश्न उठता है। हम शिक्षा तथा शिक्षा बुद्धि के नाम पर जिस तरह का जीवन बिताने की कल्पना बनाये बैठे हैं, वह अपने आप में जीवन की स्वीकृति नहीं, जीवन का निषेध है। हमारा उठना-बैठना, खाना पीना, कपड़ा पहनना, जीवन की विभिन्न सुविधाओं का उपभोग आदि करना, सभी कुछ आज जीवन की श्रीवृद्धि नहीं करते, बल्कि उसका क्षय करते हैं। सुविधाओं के उपभोग करने की प्रक्रिया में अपनी नासमझी के कारण अपव्यय कितना कर देते हैं, मुँह धोना है तो पानी का नल खोल दिया जाता है और वह चलता रहता है और हम दाँतों और मसूढ़ों को अंगुली से रगड़ते रहते हैं। कुल्ले के लिए आधा छटाँक पानी ही चाहिये, लेकिन व्यवहार करते समय सेरों पानी बह-बह कर नष्ट होता रहता है। इस अपव्यय से वह बहुत से लोगों को पीने के लिए भी पानी नहीं मिल पाता। अनेक शहरों को इसका कितना कष्ट है, हमें उसकी कल्पना नहीं है। इसी प्रकार अनेक छोटे छोटे दैनिक कामों में अपव्यय के द्वारा हम अनेक चीजें नष्ट करते रहते हैं और दूसरों को उससे वंचित करने के साथ साथ अपने लिए भी उन्हीं चीजों की प्राप्ति के लिए शोर मचाते हैं। हमें तो जीवनमान बढ़ाने का यही अर्थ प्रतीत होता है कि हमें अधिक से अधिक अपव्यय की सुविधा हो। भोजन हमारे शरीर के लिए आधा पाव आवश्यक हो तो हम डेढ़ पाव खायँ और फिर बीमार पड़ें, जिससे डाक्टरों और दवाइयों की आवश्यकता पड़े। यह आवश्यकता ही सभ्य जीवन का मापदण्ड है। अपव्यय की इस प्रक्रिया से अभाव और भी बढ़ते हैं, फिर उनकी पूर्ति के लिए योजनाएँ बनती हैं, योजनाओं को कामयाब करने के लिए भाषण दिये जाते हैं। लेकिन यह कोई नहीं कहता कि अपव्यय न हो, जीवन का संस्कार हो, कृत्रिमता छोड़ी जाय और जिन्दगी की सही जरूरियात को हासिल करने की कोशिश की जाय। एक ओर उत्पादन हो और दूसरी ओर अपव्यय न हो तो अभावपूर्ति आसानी से हो सकती है। आदमी की आदतें सही और संस्कृत हों तो वह स्वस्थ भी होगा। स्वस्थ इन्सान की आवश्यकताएँ बीमार की आवश्यकताओं से हमेशा बहुत कम होती हैं। लेकिन आज तो हम सभी बीमार हैं। इसीलिये हमें बहुत-कुछ चाहिये। इसी बहुत कुछ के लिए सारी मार काट है।

दुनिया के प्रायः सभी विचारशील लोगों का जोर सादे और स्वस्थ जीवन पर रहा है। सामूहिक रूप से इसे व्यवहार में अपनाने से स्वार्थपरता के लिए गुंजाइश बहुत कम हो जाती है। स्वार्थपरता कम होने से संकीर्णता को पनपने की सुविधा नहीं रहती। स्वार्थपरता और संकीर्णता के अभाव में मानवजीवन में सहज ही सद्भाव और सहयोग की वृद्धि होती है। अतः जब तक हम जीवन के इन बुनियादी तथ्यों की ओर ध्यान नहीं देंगे और तरह-तरह के भाषणों के शोर से वातावरण को क्षुब्ध बनाये रखेंगे तब तक साम्प्रदायिकता तो क्या, किसी भी समस्या का हल नहीं निकलेगा।

भारतवर्ष को आजाद हुए लगभग १५ वर्ष हो गये हैं। आश्चर्य है कि आज भी भारत के शहरों और कस्बों में किसी जाति-विशेष की स्त्रियाँ अपने सारे शरीर को मैले कुचैले वस्त्र में लपेटे, सिर पर पाखाने का बड़ा-सा टोकरा रखे, परम्परा से अपनाये हुए अपने काम को करती-फिरती नजर आती हैं! इस गरीब देश का करोड़ों रुपया खर्च करके पचासों तरह का बुश-कर्कट विदेशों से खरीदा जाता है। लेकिन पं० नेहरू जैसे इन्सानों को भी यह नहीं सूझा कि बड़ी बड़ी योजनाएँ जब पूरी होंगी तब होती रहेंगी, लेकिन किन्हीं आधुनिक साधनों के व्यवहार से कम-से-कम इन अभागिन बहनों को सिर पर विष्ठा ढोने के नर्क से तो बचा लिया जाय! आज तक किसी स्वामी रामेश्वरानन्द या मास्टर तारासिंह को इस घृणित अवस्था को सुधारने के लिए आमरण उपवास करने का विचार नहीं सूझा। एक साहब पंथ की रक्षा के लिए, पंजाबी सूबे को आवश्यक मान कर उसके लिए जान देने पर तुले हुए थे और दूसरे उन्हें नाकामयाब करने तथा हिन्दी की रक्षा के लिए मरने को कटिबद्ध थे। दोनों ओर से बड़े-बड़े सिद्धान्तों की दुहाई दी जा रही थी। अगर मर गये होते तो दोनों शहीद ही कहलाते! पर जिन अभागिन बहनों की बात हमने कही है अथवा जो लोग प्रतिदिन जी तोड़ कर परिश्रम करके भी आधे पेट सोने के लिए मजबूर हैं, उनकी सुविधा के लिए इन उपवासों की क्या सार्थकता थी?

हाँ, इन उपवासों का सीधा सम्बन्ध कुछ चन्द लोगों की नौकरियों, विधान-सभाओं की सीटों और उन्हें पाने के लिए दो भाषाएँ सीखने की मेहनत न करने की मनोवृत्ति से अवश्य दिखाई देता है। और यह हुआ था उन अव्यक्त समूहों के नाम पर, जिनमें उन बहनों और शरीर तोड़ देनेवाली मेहनत करने वाले मजदूरों की संख्या प्रायः नब्बे फी सदी है।

हाय रे दुर्भाग्य! इस श्री रामकृष्ण, गांधी, तिलक, अरविन्द, रवीन्द्रनाथ, विनोबा आदि जैसी महान् विभूतियों के देश में यह सब क्या हो रहा है? रवीन्द्र ने विश्व मानव का स्वप्न देखा था। गांधी भारतवर्ष को विश्व-सेवा के उपयुक्त साधन के रूपमें गढ़ना चाहते थे। वह भव्य स्वप्न और कल्पनाएँ इन चन्द वर्षों में ही धुएँ की तरह कहाँ विलीन हो गयी!

शान्ति-सैनिकों का कार्य

शान्ति-काल में शान्ति-सैनिकों से अपेक्षा है कि वे अपने को ऐसे रचनात्मक कार्यों में लगाये रहें, जिनके द्वारा समाज में फैले हुए अज्ञान, अभाव, असमानता आदि की परिस्थितियाँ दूर हों और लोगों में सद्भाव, सहकारिता, करुणा आदि के भाव विकसित हों जिससे व्यक्ति अधिक जागरूक रह कर अपने श्रम और अभिक्रम से स्वयं ही अपनी समस्याओं और कठिनाइयों का हल निकालने में समर्थ हो सके और समाज विभिन्न परिस्थितियों का सामना स्वयं कर सके, इस प्रकार वह नवसमाज-निर्माण के कार्य में सहयोग दे, ऐसी उससे आशा है।

वस्तुतः शान्ति-सैनिक स्वयं ही अपना नेता और मार्गदर्शक है, अतः वह जहाँ भी जिस क्षेत्र में होता है, अपनी स्वयं की प्रेरणा से अथवा परिस्थितियों के अनुसार काम में लग जाता है। कुछ शान्ति सैनिकों द्वारा विभिन्न स्थानों में जो काम हुआ, उसकी जानकारी हमें प्राप्त हुई है, जो संक्षेप में नीचे दी जा रही है।

श्री प्रफुल्लचन्द साहु
जि. ढेंकानाल (उत्कल)

आदिवासियों को संगठित करके उनमें धान कुटाई, तेलघानी, मधुपालन आदि ग्रामोद्योगों के प्रचार के कार्य में लगे हैं। खानों में काम कर रहे मजदूरों का शोषण मालिकों द्वारा न हो, इस दृष्टि से उत्कल संयुक्त मजदूर संघ संगठित किया है, जिसके ३०० मजदूर सदस्य हो गये हैं।

२९ और ३० जनवरी को जिले का सर्वदलीय प्रजा सम्मेलन आयोजित किया। पंचायती राज, भूदान आदि विषयों के सम्बन्ध में प्रस्ताव पास हुए, और उन्हें कार्यान्वित करने के लिए एक समिति का संगठन किया, जिसका नाम रखा गया "लोक शक्ति अभियान समिति।"

श्री सुरेन्द्र घोष : कानपुर (उ०प्र०)

कानपुर के बाबूपुरवा श्रमिक बस्ती में सेवा-कार्य कर रहे हैं। एक मजदूर की लड़की की मृत्यु हो जाने पर अन्य व्यक्तियों का सहयोग लेकर मृत लड़की के दाह-संस्कार की व्यवस्था करने में सहायता दी।

एक साइकिलवाले की तांगे के साथ भिड़ जाने से चोटें आ गयीं और उन दोनों में मारपीट होने लगी। उनमें समझौता करा कर उसी तांगे पर घायल साइकिलवाले को डाक्टर के पास ले जाकर उपचार कराया और उसके घर पहुँचाया।

प्रात एक घंटा बस्ती में सफाई करते हैं और संध्या को हरिजन बच्चों की पढ़ाई व अन्य सेवा-कार्य करते हैं।

'सर्वोदय पक्ष' में प्रात: स्कूलों व अन्य सार्वजनिक स्थानों की सफाई का कार्यक्रम चालू रखा। ११ फरवरी को सफाई-प्रदर्शनी आयोजित की गयी।

श्री वी० आ० कल्याणकर : पूना

रत्नागिरि जिले के कार्यकर्ता-संघ की बैठक में भाग लिया। यह एक अनुकरणीय संघ है, जिसमें विभिन्न रचनात्मक प्रवृत्तियों के काम कर रहे कार्यकर्ता संगठित हुए हैं और कुछ मिलेजुले कार्यक्रमों के द्वारा आपस के परस्पर-सहयोग के आधार पर जिले में कार्य कर रहे हैं। लोक नीति की भावना जनता में जाग्रत हो, इस ओर आजकल लोक शिक्षण के कार्यक्रम को हाथ में लिया है।

श्री बलवंतसिंह भारती
उत्तराखण्ड

क्षेत्र में पदयात्रा की। ११ स्कूलों से संपर्क किया, १४ सभाओं में भाग लिया तथा एक किसान मेले में शांति-सेना, शराबबन्दी, आदि के संबंध में जनमत जागृत करने का प्रयत्न किया। उत्तराखण्ड कार्यकर्ता शिविर में भाग लेकर क्षेत्रीय समस्याओं पर विचार विनिमय किया।

'सर्वोदय-पक्ष' के कार्यक्रम में सहयोग दिया। क्षेत्र में राजनीतिक पक्षों द्वारा चुनाव प्रचार में संयम बरता जाय, जिससे किसी प्रकार की अशान्ति न फैले, इस सम्बन्ध में प्रयत्न किया।

श्री उदितनारायण : मुंगेर

असम में पदयात्रा करके निम्नलिखित कार्य किये :

ग्राम-संपर्क : २५ ग्रामों से

सभाएँ : ११

युवक-गोष्ठियाँ : ६

विद्यार्थी-गोष्ठियाँ : ४

आपसी झगड़े निबटाये ३

साहित्य-बिक्री : ३५६०.५३ न० पै०

अब बिहार में प्रादेशिक सर्वोदय-विचार-प्रचार अखंड पदयात्रा-टोली में सम्मिलित होकर कार्य प्रारंभ किया है।

श्री यमुना प्रसाद शाक्य फरूखाबाद (उ. प्र.)

जिले में हो रही चकबंदी के सम्बन्ध में गाँवों में अनेक अनियमितताएँ हुईं, ऐसा ग्रामीणों से सम्पर्क करने पर ज्ञात हुआ। अतः चकबन्दी-अधिकारी से मिल कर इस सम्बन्ध में पुनः जाँच करना निश्चित हुआ, जिससे काश्तकारों की शिकायतें दूर हो सकें।

'सर्वोदय-पक्ष' में सूतांजलि-संग्रह करने के लिए प्राइमरी पाठशालाओं और ब्लाक-केन्द्रों में दौरा किया।

चुनाव के दिनों में जनता व राजनीतिक पक्षों में शांत वातावरण बनाये रखने के सम्बन्ध में सभाओं और परिपत्रों के प्रचार के द्वारा जन-शिक्षण के कार्यक्रम में संलग्न थे। विभिन्न पक्षों द्वारा आचार-मर्यादाओं का समुचित पालन किया जाय, ऐसा प्रयत्न भी किया जा रहा था।

[अ० भा० शान्ति सेना मंडल, प्रधान कार्यालय, राजघाट, काशी से प्राप्त।]

समाज में विशाल .....

[पृष्ठ ४ का शेष]

कि एक पराक्रम के काम के बाद राष्ट्र को थकान आती है। लेकिन यह थकान ज्यादा दिन नहीं रहेगी। भूदान, ग्रामदान में अपना सब कुछ छोड़े हुए कार्यकर्ता भले कम हों—हजार-पाँच सौ हों—पर इसीमें से चिनगारी प्रकट होगी। इसमें जो ध्येयवाद भरा है, वह प्रेरणा देगा और मुझे यह भी विश्वास है कि इसमें जो चिनगारी है, वह सिर्फ भारत में ही नहीं, दुनिया के कोने-कोने में प्रकट होगी और सबकी सम्मिलित शक्ति प्रकट होगी। हमारे सब साथी इसी विश्वास से काम करें कि एक ईश्वरी प्रेरणा काम कर रही है, तो दुनिया का भविष्य बहुत उज्ज्वल होगा।

[पेंगारी, असम, ११-२-'६२]

धनबाद जिला सर्वोदय-मंडल

हमारा वर्ष इस गांधी मेला से शुरू होता है। पिछली बार मेला लगाने में धनबाद के भाइयों से बहुत ही मदद मिली थी। इस बार यहाँ के कालेज, बेसिक स्कूल तथा प्रशिक्षण विद्यालय ने भी अच्छी सहायता की। सरकारी सहायता भी प्रदर्शनी के रूप में और जनता को लाभ देने वाले भाषणों के रूप में पर्याप्त मात्रा में मिली। गोविन्दपुर के विकास पदाधिकारी की विविध सहायता तथा विद्युत विभाग का सहयोग भी खास रूप में उल्लेखनीय है। कांग्रेस के स्थानीय नेताओं ने, श्री दलपत चनचनीजी एवं अन्य सहयोगियों ने हमारे कार्यक्रम को सफल बनाया।

१९६१ के आरम्भ में ही हमें विनोबाजी ने नया रास्ता दिखाया और बिहार के अधूरे संकल्प की ओर ध्यान खींचा। ३ दिसम्बर तक बिहार ने १,५१,७६२ कट्ठा जमीन के दानपत्र लिये, जिसमें धनबाद जिले से १०,२८५ कट्ठा जमीन मिली।

इस वर्ष यहाँ तीन पदयात्राएँ हुईं। एक गांधी-स्मारक-निधि के रघुनाथपुर केन्द्र से पिपलाटाँड, पोखरिया, आसुरबाथ, लटानी, फतेहपुर आदि गाँवों में गयी, जिससे सर्वोदय विचार का प्रचार हुआ तथा कुछ जमीन भी मिली।

इसके बाद प्रान्तीय पद-यात्रा टोली ने तोपचाँची में ११ जून ६२ को प्रवेश किया जो राजगंज, तेलमोचो, रावतडीह, चास, चन्दनकियारी, कुड़ी, महुदा, धनबाद, गोविन्दपुर, आसामनिरसा, मैथन होते हुए संथाल परगना गयी। इससे २०० मील की पदयात्रा हुई, इसमें ९०० कट्ठा जमीन दान में मिली।

२८ तथा २९ मई '६१ को पड़ोस के हजारीबाग जिले के कोडरमा में बिहार सर्वोदय-सम्मेलन हुआ और नई स्फूर्ति लेकर जिले के कार्यकर्ता लौटे। इससे जिले में 'बीघा-कट्ठा अभियान' शुरू हुआ।

तीसरी पदयात्रा २ अक्टूबर '६१ से आरंभ हुई, जिसने वामनदारिका, भागाबाद, चास तथा मोदीडीह, बराजोर, बरकम्पा आदि गाँवों से पर्याप्त जमीन इकट्ठी की।

कस्तूरबा ट्रस्ट के महिला सेवा-केन्द्र सारे देश में चल रहे हैं। परन्तु इसका कोष समाप्तप्राय हो चला है। अतः इसकी पूर्ति का प्रश्न उठा। बिहार के लिए मध्य जून में श्री रामदेव ठाकुरजी आये और यहाँ के नेताओं तथा कोलियरी के मालिकों के सहयोग से उसमें करीब पाँच हजार रुपये का सहयोग यहाँ से दिया गया।

मुंगेर जिले के मलयपुर में नशाबन्दी के लिए श्री रमावल्लभ चतुर्वेदीजी ने सत्याग्रह किया। उनका उद्देश्य वहाँ से मद की दूकान हटाना था। इसके लिए उन्होंने जनमत अपने पक्ष में किया, उपवास किया। रोज पत्र लिख कर उन्होंने वहाँ मुख्यमंत्री को आने के लिए विवश कर दिया। उनके समर्थन में बिहार के कुल २०,७६३ सर्वोदय सेवकों ने उपवास किया। धनबाद के ११ सेवकों ने उपवास किया था। ९ अगस्त, '६१ को 'नशाबन्दी दिन' रखा गया था। यहाँ धनबाद में भी सांकेतिक निरोध किया गया। गत २ अक्टूबर '६१ को मलयपुर से दूकान हटा ली गयी।

गांधीजी के जन्मदिन, २ अक्टूबर तथा श्री विनोबाजी के जन्मदिन, ११ सितम्बर को जुलूस निकाल कर मनाये गये एवं उनकी शिक्षा और सर्वोदय-विचार का प्रचार किया गया।

इन्दौर में रहते विनोबाजी ने अश्लील पोस्टरों की बुराइयों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया था। यहाँ भी धनबाद जिले के सब सिनेमा-मालिकों को पत्र लिखा गया था। स्थानीय अखबारों द्वारा भी ध्यान आकृष्ट किया था। हमें मालिकों के सहयोग के आश्वासन मिले हैं। प्रगति भी हुई है।

अक्टूबर माह में प्रकृति के प्रकोप से मुंगेर जिला परेशान हुआ। खड़गपुर इलाके के ३६ गाँव बाढ़ से पीड़ित हुए थे। १६-१०-६१ को यहाँ से ५ भाई सहायता के लिए रवाने हुए। वहाँ पर खादीग्राम के श्री राममूर्ति भाई कैम्प डाले हुए थे। २५ आदमी काम कर रहे थे। उनके साथ यहाँ वालों को काम करने *का मौका दिया गया।* ३०-१०-६१ तक वहाँ हम लोगों ने काम किया। विशेषतया सर्वेक्षण का काम हम लोगों ने हको, खोला, कटिया, खैरा, बरूई आदि गाँवों में किया, जहाँ प्रायः सब घर ध्वस्त थे। लोग किसी तरह छप्पर बना कर रह रहे थे। क्षति-ग्रस्त स्थानीय लोगों को उनके कर्तव्य का भान उनसे धन, अन्न, वस्त्र माग कर हम लोगों ने कराया। इस काम के लिए हमें धनबाद जिला बाढ़पीड़ित कोष से २५० रु० की सहायता मिली थी। इसके सदस्यों को हम धन्यवाद देते हैं।

'भूदान प्राप्ति' सर्वोदय-कार्यक्रम का मुख्य अंग है। केवल इसलिए नहीं कि इससे भूमिहीनों को पेट भरने का आर्थिक साधन मिलता है, बल्कि इसलिए कि *लोगों में दान देने की प्रवृत्ति पैदा होती* है, करुणा जाग्रत होती है; व्यक्तिगत मालकियत का विचार मिटता है तथा मनुष्यत्व का विकास होता है। जो मनुष्य यह जानता हुआ भी कि उसके बगल का आदमी अन्न की कमी से भूखा सो गया खुद भरपेट खाकर सोता है, वह मनुष्यत्व को नहीं पहचानता। भूदान-यज्ञ इस कलंक से उसे बचाता है, गाँव की आर्थिक विषमता मिटाता है, साथ ही दाता के हृदय को कोमल बनाता है। इसलिए हम भूदान प्राप्ति पर अधिक जोर देते हैं।

धनबाद जिले में दिसम्बर '६१ तक कुल ७,६२५ एकड़ भूमि प्राप्त हुई, १८७२ एकड़ भूमि ११७७ आदाताओं में वितरित हुई। लगान-सूची में ९६३ आदाता-किसानों के नाम दर्ज कराये गये।

इस जिले में अभी १००० एकड़ जमीन ऐसी है, जो वितरित हो सकती है। बाँटने में एक बाधा है, बेदखली की। दूसरी है, विवरण न देने की। हम प्रार्थना तो यह करते हैं कि जो लोग दान की भूमि पर अपनी दखल बताते हैं, वे गलत दावे को छोड़ दें और गरीब भूदान किसानों पर दया करें। उन्हें अपनी ही जमीन समझ कर वे उन्हें दे दें।

दूसरी बाधा हमने बतायी विवरण न देने की। यह भी दाताओं की दुर्बलता है। जब एक बार दान दे दिया तो मोह क्यों? इसका ब्योरा देकर दान पर मोहर लगायें और अपने यश की रक्षा करें।

भूदान-किसानों की सहायतार्थ केन्द्रीय सरकार ने ३० लाख रुपये बिहार को दिये हैं, जिसमें धनबाद जिले को ८० हजार रुपये मिले हैं।

अभी तक इस जिले में कुल ५३ बैल खरीद कर भूदान-किसानों में बाँटे गये हैं। ६६ कुदाल, ५७ गैंता तथा नकद रुपया बाँटा जा चुका है।

इस जिले में खादी-ग्रामोद्योग के काम के लिए चरखा चलाने का बहुत ही प्रयास हुआ, पर उसमें सफलता नहीं मिली। एक उत्पादन-केन्द्र की आवश्यकता है। ग्रामोद्योग के काम में कुछ तेलघानी केन्द्र सहयोग समितियों द्वारा चल रहे हैं, जो पर्याप्त नहीं हैं। कुछ और दूसरे ग्रामोद्योगों के काम होने चाहिये। इसकी ओर प्रयास है। अभी इस जिले में खादी-ग्रामोद्योग के ७ बिक्री-केन्द्र हैं। धनबाद, झरिया, कतरास, चास, चिरकुण्डा तथा सिन्द्री में दो केन्द्र हैं। तीन जगह खादी-एजेन्ट भी खादी-बिक्री का काम करते हैं, जिनका काम मुख्य रूप से खादी-प्रचार का है। इस वर्ष विशेष छूट की अवधि में ११/२ माह में करीब ३ लाख रुपये की खादी-बिक्री हुई है।

जिले में हरिजन सेवक संघ हरिजनों की भलाई का काम करता है। इनकी एक सहयोग-समिति बनायी गयी है। इससे इन्हें सहायता पहुँचाने का कार्यक्रम है।

इस वर्ष हमने १४५७ रु० ६६ न० पै० का सर्वोदय-साहित्य बेचा है। साहित्य-प्रचार इस आन्दोलन का मुख्य सहारा है। हमारी ऐसी मान्यता है कि यह विचार जितना फैलेगा, जितना अंगीकृत होगा, मानव-समाज उतना ही उन्नत और सुखी होगा। विनोबाजी इस कारण ही साहित्यिकों की गोष्ठी बुलाते हैं कि इनके विचारों को उत्तम रचना की जाय। तभी विचार को मान्यता मिलेगी।

भूली, वामनदारिका और धनबाद में शान्ति-पात्र चल रहे हैं। इस वर्ष इससे ४१ रु० ७२ न० पै० की आय हुई है।

—शीतलप्रसाद तायल

पत्र-व्यवहार से—

मद्य-निषेध के लिए पिकेटिंग

टिहरी, गढ़वाल (उत्तर प्रदेश) से श्री सुन्दरलाल बहुगुणा लिखते हैं :

"सम्मेलन (नशाबंदी) कल समाप्त हो गया। 'पिकेटिंग' का निर्णय हुआ है। यहाँ पर समस्या केवल शराब की दुकान की ही नहीं है, बल्कि 'टिचरी' नाम के एक मादक पदार्थ की बिक्री रोकने की भी है। हाईकोर्ट ने इसे दवा करार दिया है। अब जो निर्णय हुआ है, उसके अनुसार आगे बढ़ना है। मुझे सौंपे हुए निरंतर घूमते रहने के काम के कारण मैंने तत्काल 'पिकेटिंग' में शामिल होने के लिए अपना नाम नहीं दिया है। इसके लिए शांति सेना के प्रधान कार्यालय की स्वीकृति मांगी है।

मैं आज हरद्वार में आयोजित कुम्भ-मेला साहित्य प्रचार के सिलसिले में जा रहा हूँ। वहाँ से १० तारीख को लौट कर पौड़ी श्रीनगर जाऊँगा और पिकेटिंग की प्रगति के समाचार दूँगा।

कार्यालय के काम के लिए मेरे साथ चमोली से एक नवयुवक श्री विश्वम्भर दत्त आये हैं। योजना यह है कि पांच-छह महीने साथ रह कर, अनुभव प्राप्त करके वे क्षेत्र में काम करने के लिए निकल पड़ें, फिर कोई दूसरा कार्यकर्ता आवे और इसी प्रकार क्रम चलता रहे। हम लोग निरंतर यात्रा में ही रहेंगे।"

बूंद-बूंद से प्रवाह

श्री सिद्धेश्वर मोदी राजस्थान के उन नौजवान कार्यकर्ताओं में से हैं, जो अपने अध्ययन-काल में ही सर्वोदय विचार से प्रेरित होकर सीधे आन्दोलन में आये और पिछले दस वर्षों से लगातार सार्वजनिक कार्य में लगे हैं। इस समय वे खादी-ग्रामोद्योग कमीशन के कार्यकर्ता हैं। दुर्भाग्य से कुछ अर्से पहले उन्हें लकवा हो गया था। अब ठीक होकर फिर काम में लगे हैं। अगर निष्ठा और लगन हो, तो बावजूद शारीरिक प्रतिकूलता के भी व्यक्ति क्या कर सकता है, इसका एक छोटा-सा नमूना नीचे के पत्र में है। वे लिखते हैं :

"··· (राजस्थान) प्रांतीय सम्मेलन, टोंक (नवम्बर, १९६१) के बाद मैंने नियमित कताई का प्रयास किया। प्रवास-काल को छोड़ कर शेष समय में ३ मार्च तक १४ गुण्डियाँ २६ तार कात पाया हूँ। प्रवास में मैं साहित्य बिक्री व 'ग्रामराज' के ग्राहक बनाने का कार्य भी नियमित रूप में करने का प्रयत्न करता हूँ। दिसम्बर से फरवरी तक लगभग दो सौ रुपये का भूदान-सर्वोदय साहित्य बेचा है और 'ग्रामराज' के १० ग्राहक भी बनाये हैं।

नियमित कताई से विचार-बल के साथ-साथ मेरे बाएँ हाथ के काम में भी थोड़ी गति आयी है।

जहाँ मैं अभी रहता हूँ, अड़ोस-पड़ोस के लोगों में सर्वोदय-पात्र, शान्ति-सेना का विचार भी समझाने की कोशिश करता हूँ। अपने घर के अलावा दो और सर्वोदय-पात्र भी रखवाये हैं।' स्थानान्तर के बाद सम्पत्तिदान की नियमितता टूट गयी थी। गत माह में उसे भी पुनः प्रारम्भ कर दिया है।"

जब तक दो हाथों को···

[पृष्ठ २ का शेष]

से जमीन देते हैं, तो सबका सहयोग होता है। दो और दो हाथ मिल कर चतुर्भुज हो जायेंगे। फिर देश की दौलत बढ़ेगी। ग्रामदान से इसका प्रयत्न हो रहा है। युद्ध छिड़ने पर पंचवर्षीय योजना नष्ट हो जायेगी; पर युद्ध के समय भी ग्रामदान चलेगा। महायुद्ध छिड़ने पर भी ग्रामदान से देश का रक्षण होगा। लड़ाई के समय गाँव में अनाज रख लेंगे तो ग्राम रक्षा होगी। ग्राम-रक्षा होगी तो देश-रक्षा होगी युद्ध की सूरत में भी ग्रामदान चल सकता है, पर युद्ध के समय में पंचवर्षीय योजनाएँ नहीं चल सकती।

विज्ञान कहता है कि मिलजुल कर काम करोगे तो काम बनेगा। इसलिए वैज्ञानिक साधनों का उपयोग करना है तो ग्रामदान से बढ़कर कोई योजना नहीं हो सकती, यह सब जानते हैं। इसीलिए सब पार्टी वालों ने भूदान, ग्रामदान का 'सपोर्ट' किया। अभी असम की असेंबली में 'ग्रामदान एक्ट' सर्वसम्मति से पास हुआ। यह क्या कम है! ये पार्टी वाले एक-दूसरे के खिलाफ लड़ते हैं—जैसे रीछ भालू के खिलाफ।

[दिखौगपानी, जि० शिवसागर, असम, २५-१०-'६१]

हिसार जिले के समाचार

हिसार (पंजाब) जिले में १९५३ से '६० तक पदयात्राओं के दौरान में कुल मिला कर ३०,१८४ बीघा ५ बिस्वा भूमि १,४८४ दाताओं से ३४८ ग्रामों में प्राप्त हुई। उपर्युक्त भूमिदान में लगभग दस हजार बीघा जमीन या तो मुकदमेबाजी की थी, या १ बिस्वा से ४ बीघा तक के छोटे दान-पत्रों की थी, जो कि वितरण योग्य नहीं मानी गयी। शेष भूमि में से अब तक ८,३७४ बीघा-४ बिस्वा भूमि ४१३ भूमिहीन किसान-परिवारों में तकसीम की जा चुकी है।

हिसार जिले की पाँच तहसीलें हैं, जहाँ पर १९६१ में नीचे दिये अनुसार वितरण कार्य हुआ।

तहसील	ग्राम संख्या	बीघा बिस्वा	परिवार-संख्या
भिवानी	१३	६२२–०३	३७
हाँसी	७	१०४–१२	९
हिसार	४	५३–००	७
फतहबाद	५	११८–०६	९
सिरसा	४	११४–००	९
	३३	१०१२–०१	७१

शेष भूमि की पड़ताल जारी है। सरकार की तरफ से भी सहयोग मिलता है। फिलहाल जिले की तीन तहसील : सिरसा, फतहबाद और भिवानी में चकबन्दी (कन्सालिडेशन) चालू है, अतः नये रकबे मिलने पर शेष वितरण कार्य किया जा सकेगा।

इस कार्य में हिसार जिला सर्वोदय-भूदान मंडल के श्री दादा गणेशीलाल, पं० सन्तलाल, श्री शंकरलाल आदि का सहयोग तो मिलता ही है। पर मुख्यतया भूदान बोर्ड पंजाब की तरफ से कुल जिम्मेदारी श्री परमानन्द शर्मा पर है।

छतरपुर के समाचार

छतरपुर में, जिले के लोक सेवकों की एक बैठक पूर्वनिश्चय के अनुसार ३ मार्च,' ६२ की शाम को हुई। अब जिले में ३३ व्यक्तियों ने निष्ठा-पत्र भरे हैं। उनमें से २१ व्यक्ति बैठक में उपस्थित थे।

श्री बलराम मिश्र सर्वसम्मति से जिला सर्वोदय मण्डल के संयोजक नियुक्त किये गये। जिला सर्वोदय-मण्डल का कार्यालय गांधी स्मारक भवन, छतरपुर में रहेगा। सर्व-सेवा संघ के लिए जिला-प्रतिनिधि का चुनाव अगली बैठक के लिए स्थगित किया गया। जिले में नव गाँव, कुसमा और छतरपुर, तीन जगह प्राथमिक सर्वोदय मण्डल गठित किये गये हैं, जिनके संयोजक क्रमशः श्री बाबू सिंह बुंदेला, श्री पुरुषोत्तमदास पुरोहित और श्री सुरेंद्रकुमार जैन हैं।

पिछली बैठक में जिले से सूतांजलि में एक हजार गुण्डियाँ इकट्ठी करने का संकल्प किया गया था। बैठक में दी गयी जानकारी के अनुसार पिछले सर्वोदय-मेले के अवसर पर १०४३ सूतांजलि समर्पित हुई। पिछले वर्ष की अपेक्षा इस बार २०५ गुण्डियाँ अधिक प्राप्त हुईं। विंध्य क्षेत्र के सूतांजलि-संग्राहक श्री चतुर्भुज पाठक ने सूतांजलि के लिए "सूत्रयज्ञ" के आयोजन के महत्त्व को अनुभव से उचित बतलाते हुए सभी लोकसेवकों से प्रार्थना की कि अगले वर्ष अगर सूत्रयज्ञ का आयोजन किया जाय तो दुगुनी सूतांजलि आसानी से प्राप्त हो सकती है।

बिहार में 'बीघा कट्ठा अभियान' के संबंध में श्री चतुर्भुज पाठक ने संघ-अधिवेशन के बाद १५ दिन का समय और श्री शिवचरण सोनिकिया के एक माह का समय उपर्युक्त कार्य के लिए देने का निश्चय जाहिर किया।

भूमि-क्रान्ति के लिए सुझाव

मेरे जैसे कार्यकर्ता खादी की ऐसी संस्थाओं में सदस्य या पदाधिकारी के रूप में न फँसें, जिनको खादी-कमीशन या 'स्टेट बोर्ड' से रुपये मिले हों या मिलने वाले हों।

बिहार प्रदेश में चल रही अखण्ड पदयात्रा-टोली को प्रेरक और स्फूर्तिदायक बनाया जाय। वह एक जंगम प्रशिक्षण-केन्द्र का भी काम करे। उसमें रहने वाले सभी पदयात्री और प्रशिक्षार्थी नियमित धुनाई-कताई करें। बिहार सर्वोदय-मण्डल सम्प्रति अखण्ड पदयात्रा टोली की आवश्यक खोज खबर नहीं रखता है। बेचारे श्री ब्रजमोहन शर्मा इसमें जैसे-तैसे लगे हुए हैं। यह टोली एक प्रकार से उपेक्षित बनी हुई है। इसको ठीक करना चाहिए।

प्रान्त के पाँच-दस कार्यकर्ता, जो प्रान्त में प्रसिद्ध हैं, भूमि प्राप्ति के लिए रोज भूमिवानों से मिलें। इनका समय शिविर सम्मेलन में जाने-आने या समितियों की बैठक करते रहने में ही न बीते।

उपरोक्त बातें मैंने बिहार प्रांत को ही दृष्टि में रखते हुए लिखी हैं। कुछ अन्य मौलिक सुधार भी करना होगा।

—मोतीलाल केजरीवाल

अहमदाबाद में सरंजाम सम्मेलन संपन्न

२-३ और ४ मार्च को साबरमती प्रयोगशाला, अहमदाबाद में सरंजाम-सम्मेलन अ० भा० सर्व सेवा संघ के सहमंत्री श्री दत्तोबा दास्ताने के सभापतित्व में संपन्न हुआ। इस अवसर पर खादी-ग्रामोद्योग एवं कृषि के वैज्ञानिक एवं सुधरे हुए औजारों का प्रदर्शन भी किया गया था। यह सम्मेलन खादी ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा आयोजित किया गया था।

कौसानी में ग्रीष्मकालीन महिला-शिविर

अल्मोड़ा जिले में कौसानी स्थित लक्ष्मी-आश्रम के तत्वावधान में आगामी ग्रीष्मकाल में दो महिला-शिविरों का आयोजन किया गया है। गृहस्थ बहनों के लिए पहला शिविर ११ मई से २६ मई तक और विद्यार्थिनियों एवं शिक्षिका बहनों के लिए दूसरा शिविर १ जून से १६ जून तक, इस तरह दो महिला शिविर कौसानी में आयोजित किये जायेंगे।

गृहस्थ महिलाओं के प्रथम शिविर में २ से ७ वर्ष की उम्र के बीच के दो से अधिक बच्चों के साथ किसी शिविरार्थी बहन को प्रवेश देना संभव न होगा। बहनों के वर्ग के समय बच्चों के देखभाल की पूरी पूरी व्यवस्था होगी। अन्य समय में बहनें बारी-बारी से गृहस्थों तथा अन्य सामूहिक कामों में भाग लेंगी। सामूहिक जीवन, स्वास्थ्य, बच्चों के पालन-पोषण तथा नागरिक शास्त्र पर सर्वोदय दृष्टिकोण से वर्ग चलेंगे। भोजन-खर्च आश्रम बरदाश्त करेगा। प्रवास-खर्च शिविरार्थिनियों को स्वयं करना होगा।

शिविरों की संचालिका श्री सरलाबहन (अंग्रेज नाम मिस हेलीमन) ने लिखा है कि ये शिविर श्री विनोबाजी के आवाहन के अनुसार स्त्री शक्ति को जगाने के विनम्र प्रयत्न हैं। विशेष जानकारी के लिए 'संचालिका, लक्ष्मी आश्रम, पो० कौसानी (अल्मोड़ा) उ० प्र० को लिखा जाना चाहिए।

शान्ति-यात्रा और सत्याग्रह के लिए

शान्ति-सैनिक दार-एस-सलाम पहुँचे

लन्दन से प्राप्त समाचार के अनुसार पूर्वी अफ्रीका में विश्व-शान्ति-सेना की ओर से आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति यात्रा और सत्याग्रह के लिए ता० २४ फरवरी को इंग्लैंड से जान पैपवर्थ और बार्नेबी मार्टिन दार-एस-सलाम के लिए रवाना हो गये हैं। नार्वे के नील मेथिजन तथा फिलिप सीड ता० २७ को रवाना हो गये। इटली, हालैण्ड और पश्चिमी जर्मनी से भी इस शान्ति यात्रा के लिए स्वयंसेवकों के जाने की सम्भावना है।

अफ्रीका के इस सत्याग्रह के लिए विश्व-शान्ति-सेना की ओर से आर्थिक मदद के लिए एक आवश्यक अपील जारी की गयी है। किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय अभियान में स्वभावतः ही आवागमन, डाक-तार, टेलीफोन का काफी खर्च होता है। विश्व-शान्ति सेना की ओर से यह अपेक्षा की गयी है कि दुनिया के तमाम मुल्कों के शान्तिवादी लोग इस काम के लिए जल्दी-से-जल्दी जो कुछ और जितनी मदद भेज सकें, वह तुरंत भेजें। हिन्दुस्तान से मदद भेजने वाले व्यक्ति मंत्री, सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी के नाम से रकम भेज सकते हैं।

दरभंगा जिला सर्वोदय-मंडल

दरभंगा जिला सर्वोदय-मंडल के लोकसेवकों की एक बैठक दरभंगा में १३ फरवरी को श्री श्रीकिंकर झा की अध्यक्षता में हुई। इस बैठक में श्री रामचन्द्र मिश्र 'साधक' को दरभंगा जिला सर्वोदय-मंडल के संयोजक, श्री श्याम बहादुर सिंह को सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधि के रूप में और प्रांतीय सर्वोदय-मंडल के लिए श्री गजानन दास, श्री गोपाल झा शास्त्री और डा० लक्ष्मीश्वरी चरण सिन्हा सर्वसम्मति से चुने गये। जिला सर्वोदय मंडल की कार्य-समिति में २५ सदस्य हैं।

रोडेशिया संघ की संसद भंग

सरकार का इस्तीफा

संघ का विघटन रोकने के लिए जनमत लेने की घोषणा

राष्ट्रवादी चुनाव का बहिष्कार करेंगे

सैलिसबरी (दक्षिण रोडेशिया), ९ मार्च : रोडेशियाई संघ की संसद आज सविधि भंग कर दी गयी। कल रात प्रधान मंत्री सर राय वेलेंस्की ने कहा था कि मैं जनता का आदेश प्राप्त करना चाहता हूँ, जिससे संघ का विघटन रोका जा सके। संसद भंग किये जाने की घोषणा आज सरकारी गजट में प्रकाशित की गयी, किन्तु यह नहीं बताया गया कि चुनाव कब होगा।

उत्तरी रोडेशिया संयुक्त राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य दल के नेता केनेथ कौण्डा ने कल रात कहा कि प्रदेश के अफ्रीकी राष्ट्रवादी चुनाव का बहिष्कार करेंगे।

आधिकारिक रूप से आज बताया गया कि सर राय ने गवर्नर जनरल लार्ड डलहौजी से रात भेंट की और अपनी सरकार का इस्तीफा पेश किया।

दक्षिणी रोडेशिया की अफ्रीकी जनता संघ के नेता परिरेनयातवा ने बताया है कि हमारा दल चुनाव में भाग न लेगा। इतना ही नहीं, संघीय संसद की सदस्यता के लिए उम्मीदवार अफ्रीकियों की उम्मीदवारी के कागजात पर दस्तखत करने से भी अपने आदमियों को मैं रोक दूँगा।

उदारपन्थी मध्य अफ्रीकी पार्टी के नेता म० ए० पेटर ने कहा कि इस समय चुनाव का परिणाम यह होगा कि जातियों और वर्गों के आपसी सम्बन्ध और बिगड़ जायेंगे, क्योंकि वर्तमान संघीय मताधिकार-प्रणाली के अन्तर्गत निर्वाचक केवल यूरोपीय हो सकते हैं।

—रायटर

विश्व शान्ति-सेना की बैठक

विश्व शान्ति-सेना के अन्तर्राष्ट्रीय कौंसिल की अगली बैठक आगामी ता. ३० जुलाई से २ अगस्त तक कैम्पबेल हाल, लन्दन में होगी।

गुजरात के कार्यकर्ताओं की सभा

गुजरात में होने वाले अगले अप्रिल भारतीय सर्वोदय-सम्मेलन की स्वागत-समिति का गठन करने के लिए तथा सम्मेलन का स्थान आदि निश्चित करने के लिए गुजरात प्रांत के कार्यकर्ताओं की सभा हरिजन आश्रम, अहमदाबाद में ता० १० मार्च, '६२ को हो रही है। बिहार के 'बीघा-कट्ठा अभियान' के लिए गुजरात से कितने और कौन कार्यकर्ता जा सकेंगे, उसकी बातचीत भी इस सभा में तय होगी।

इंदौर में म० प्र० सर्वोदय-मंडल की बैठकें

ता० २३-२४ मार्च को वि-सर्जन आश्रम, इंदौर में म० प्र० सर्वोदय मंडल के जिला-संयोजकों और प्रतिनिधियों का सम्मेलन होगा। मंडल की कार्य-समिति की बैठक भी इन दिनों होने वाली है। इसके तुरंत बाद २५-२६ मार्च को प्रांतीय नशाबंदी सम्मेलन भी आयोजित होगा।

म० प्र० सर्वोदय-मंडल के मंत्री का दौरा

म० प्र० सर्वोदय-मंडल के मंत्री श्री दीपचंदजी ने सिवनी तथा छिंदवाड़ा जिले में दौरा किया। सिवनी में श्री सत्यनारायण शर्मा और छिंदवाड़ा में श्री वडसमुद्रकर ने आपको यहाँ के रचनात्मक प्रवृत्तियों से परिचित किया। लोकसेवकों की एक बैठक हुई। उसमें जिला सर्वोदय-मंडल का गठन किया गया।

विनोबाजी का कार्यक्रम

ता० ५ मार्च से १० मार्च तक विनोबाजी का पड़ाव मैत्री आश्रम, कल्याण केंद्र, नार्थ लखीमपुर में रहा। ता० ११ मार्च को नार्थ लखीमपुर से रवाना होकर विनोबाजी पश्चिम की ओर तेजपुर होते हुए आसाम-बंगाल सीमा पर ता० २० और २५ अप्रैल के बीच में पहुँचेंगे, ऐसी आशा है। उसके बाद का कार्यक्रम अभी निश्चित तो नहीं है, लेकिन बहुत करके विनोबाजी वहाँ से सीधे बिहार की तरफ बढ़ेंगे, जहाँ १५ अप्रैल से १५ जून तक दो महीने देश के विभिन्न भागों से आये हुए कार्यकर्ता मिलकर 'बीघा-कट्ठा अभियान' में सहयोग देंगे। इस बीच अगर आसाम में काम की दृष्टि से और अधिक रुकने की आवश्यकता महसूस हुई तो विनोबाजी कुछ दिन और वहाँ रुक सकते हैं या बंगाल में कुछ दिन अधिक दे सकते हैं अगर सीधे बिहार गये तो १५ मई के आसपास बिहार की सीमा में प्रवेश करने की सम्भावना है।

आमाँ गाँव में सर्वोदय-पात्र

भिलवाड़ा जिले के आमाँ गाँव के ग्रामवासियों ने सर्वोदय-पात्र में एक मुट्ठी अनाज रोज डालेंगे, ऐसा संकल्प किया है। इसके कार्य-सचालन के लिए एक सर्वोदय-मंडल बनाया गया।

विषय-सूची

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८८२०: इस अंक की छपी प्रतियाँ ८७७० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार — २३ मार्च '६२ — वर्ष ८ : अंक २५

विश्वशांति की बुनियाद : ग्रामस्वराज्य

विनोबा

खुशी की बात है कि असम के लोग ग्रामदान के लिए काम कर रहे हैं और अभी दो ग्रामदानों के साथ कुछ भूदान, संपत्तिदान भी हुआ है। किन्तु यह सब अल्प है। इस विज्ञान के जमाने में अल्प से कुछ नहीं होगा। इतना ही नहीं, हमारे उपनिषदों ने आध्यात्मिक दृष्टि से भी कहा है, "नाल्पे सुखमस्ति" अल्प में सुख नहीं है, पूर्ण में ही सुख है। इसलिए इस ग्रामदान-कार्य को असम के लोग पूर्ण करेंगे तो असम प्रदेश सारे हिंदुस्तान का नेतृत्व करेगा। आज तो यह पिछड़ा हुआ प्रदेश है। सभी प्रदेशों से शायद कम विकसित है और हिंदुस्तान के किनारे पर है, इसलिए बिलकुल एक बाजू है और चारों ओर दूसरे देश हैं, बल्कि पौने चार दिशाओं में अन्य देश हैं, पाव दिशा में भारत का संबंध है।

बर्मा, तिब्बत, पाकिस्तान आदि की सीमा मिलाकर करीब २२०० मील होगी। भारत के साथ संबंध करीब ५०-६० मील से जुड़ा है, ऐसी विकट परिस्थिति है, लेकिन यह सब-का-सब अच्छा हो सकता है और यह प्रदेश भारत के नक्शे में प्रमुख स्थान ले सकता है, अगर गाँव गाँव में ग्रामस्वराज की बुनियाद बने। उसका आरंभ तो यहाँ कुछ हो ही गया है, जब हर गाँव में 'नामघर' बना तो ग्रामस्वराज की बुनियाद बनी; किन्तु मकान नहीं बना। उस बुनियाद के आधार पर हम ग्रामस्वराज्य को खड़ा कर सकते हैं और इसलिए बहुत ज्यादा प्रचार अब नहीं करना पड़ेगा।

सरकार ने यहाँ कानून भी अच्छा बना दिया है कि हरएक ग्रामदानी गाँव को, चाहे वह १००-२०० घर का हो या ४०-५० घर का हो, तो भी उसको ग्राम-पंचायत का अधिकार दिया जायगा। यह बहुत बड़ी बात हो जाती है। आज की ग्राम पंचायत में २५०० लोग होते हैं। इसमें ८-१० गाँव आ जाते हैं। यह सत्ता के आधार पर बनी हुई है, प्रेम के आधार पर नहीं, इसलिए हरएक गाँव वाले अपनी-अपनी दिशा में सोचेंगे। इस तरह ग्रामपंचायत एक झगड़े का स्थान बन सकती है। यह मैं कहना से नहीं कहता हूँ। सारा भारत देख कर मैं यहाँ आया हूँ, सारे भारत का मुझे दर्शन है, इसलिए ग्राम-पंचायतों का भी कुछ दर्शन है। इसमें अपने लोगों का दोष नहीं है। प्रेम के आधार के बिना पंचायत बनायी गयी। केवल सत्ता के जरिये और बहुमत से सब काम होगा। ऐसी हालत में सब अपनी तरफ बहुमत करने की कोशिश में रहते हैं। इसलिए हर गाँव में झगड़े पैदा होते हैं। उसको मिटाने का क्या उपाय है?

सत्ता नीचे आनी चाहिए, लेकिन वह प्रेम के आधार पर आनी चाहिये। ऐसा आधार ग्रामदान में मिलता है। ग्रामदान में व्यक्तिगत मालकियत खत्म करके सारी संपत्ति ग्रामसभा को समर्पण करते हैं। सारा गाँव प्रेम का एक परिवार बनता है। विज्ञान के जमाने में छोटे-छोटे परिवार नहीं चलेंगे। बड़ा परिवार बनाना होगा।

> छोटे-छोटे देशों को भी अब टिकना मुश्किल होगा, इसलिए देशों को भी अन्योन्य अनुराग से बँध जाना होगा।

अनेक देश-समूह के देश बनेंगे। यह अपना भारत अनेक देशों का एक देश पहले से बना हुआ है। यह भारत की प्रतिभा है, जिसके कारण भारत ने इतने राज्यों को एक राज्य समझ कर चलाया। इस प्रकार अनेक विकसित भाषाएँ किस देश में हैं? यूरप में हैं, लेकिन वह एक देश कहाँ है? यह तो भारत ने ही पहला प्रयोग किया। यह भारत का वैभव है। यह वैभव यूरप को भी हासिल करना पड़ेगा। यूरप का आगे जाकर फेडरेशन होगा, तब दुनिया को शांति मिलेगी। आज तो यूरप के फेडरेशन की बात तो दूर, जर्मनी के भी टुकड़े हो गये और उसमें बर्लिन के भी दो टुकड़े! इधर के लोग उधर परमीशन के बिना नहीं जा सकते। ऐसी आज हालत है। इसके कारण दुनिया आग से झुलस सकती है। यह झगड़ा मिटेगा तो उसके बाद अक्ल आयेगी, फिर वह अनेक भाषाओं का एक देश बनेगा, तब हिंदुस्तान की योग्यता उसमें आयेगी। हिंदुस्तान की राजनैतिक योग्यता इग्लैंड से ज्यादा है। आज हिन्दुस्तान 'एडवान्स्ड' है और यूरप तो पिछड़ा हुआ है। यूरप में आदिवासी विचार 'ट्राइबलिज्म' चल रहा है वहाँ एक भाषा का एक-एक देश है। यहाँ ज्यादा-से ज्यादा झगड़ा हुआ तो हर भाषा का एक प्रदेश बना, इतना ही हुआ। हर भाषा का एक-एक देश बने, यह किसीने नहीं कहा। अपनी भाषा अपने प्रांत में मुख्य रहे, इतनी ही माँग की। अब उसमें कुछ झगड़े हुए यह ठीक है, लेकिन वे हुए और खत्म हो गये। अब भारत की एकता पहले जैसी हो गयी है। यह एकता न होती, अगर अलग देश की माँग करते। ऐसा होता तो यूरप जैसी हमारी हालत होती। एक लड़ाई खत्म हुई और दूसरी लड़ाई शुरू हुई, ऐसा होता है। बीच में थोड़ा समय शांति में गया। शांति का समय याने आगे की लड़ाई की तैयारी का समय। यूरप में ४००-५०० साल से यही चल रहा है। हमने एक किताब पढ़ी दुनिया की लड़ाइयों की। उसमें २५०० लड़ाइयों की बात है। उसमें से ४५ लड़ाइयाँ एशिया की, बाकी यूरप की हैं।

यूरप में किसी धर्म चलता है,

अफ्रीका के अहिंसक सत्याग्रह के लिए

विनोबा का संदेश

[रोडेशिया की यूनाइटेड नेशनल इंडिपेंडेन्स पार्टी के अध्यक्ष—केनेथ कौंडा और टंगानिका अफ्रीकन नेशनल यूनियन के उपाध्यक्ष–कवावा, राष्ट्रीय नेता ज्यूलियस न्येरेरे आदि के आमंत्रण पर विश्व-शान्ति-सेना-परिषद् द्वारा आयोजित पदयात्रा और सत्याग्रह के लिए श्री विनोबा जी ने अपना यह सन्देश भेजा है। –सं०]

कुल अफ्रीका में इस वक्त खलबली है, और वहाँ की मानवता बंध-मुक्त होना चाह रही है। बंध-मुक्ति के लिए हिंसा का उपयोग अब पुराना पड़ गया है, क्योंकि साइन्स के कारण हिंसा-शक्ति ने अब संहार-शक्ति का रूप ले लिया है। इसके अलावा हिंसा-शक्ति के उपयोग से शीत-युद्ध दाखिल होने का भी खतरा है। ऐसी हालत में अहिंसा ही एक-मात्र तारक उपाय हो सकता है, और खुशी की बात है कि विचारवान अफ्रीकनों का कुछ रुझान अहिंसा की तरफ हो रहा है, और किसी जगह सत्याग्रह की बात भी सोची जा रही है।

मुझे इसमें सिर्फ एक ही बात सुझानी है कि सत्याग्रह केवल निष्क्रिय प्रतिरोध (पैसिव रेसिस्टेन्स) का रूप न ले। निष्क्रिय प्रतिरोध नकारात्मक (निगेटिव) होता है, सत्याग्रह भावात्मक (पाजिटिव) होता है। निष्क्रिय-प्रतिरोध में हिंसा के कुल दोष मौजूद होते हैं + भावात्मक दुर्बलता का भान = दोनों मिल कर वह वीर्यहीन बन जाता है। रचनात्मक कार्य के आधार पर खड़ा हुआ सत्याग्रह सामने वाले की विचार-शक्ति को जागृत करता है, कुंठित नहीं। सत्याग्रह एक आत्म-शुद्धि का प्रयत्न है, जिसका अनिवार्य परिणाम सामने वाले की हृदय-शुद्धि में होना है। सत्याग्रह में प्रमाण का महत्त्व कम है, गुण का अधिक है।

इस तरफ ध्यान खींचना मैंने इसलिए उचित समझा कि अफ्रीका में जब कि नव-जागरण हो रहा है, हर कदम सावधानी से, सम्यक्-चिन्तनपूर्वक उठाया जाना जरूरी है।

भूदान-पदयात्रा, असम
७-३-'६२

–विनोबा का जय जगत्

बाइबिल का भाषांतर अनेक भाषाओं में हुआ है। हर रविवार को सब लोग बाइबिल पढ़ते हैं। बाइबिल की जितनी खपत है, उतनी दूसरी पचास किताबें मिल कर भी नहीं होती है, लेकिन बाइबिल की तालीम वहाँ गायब है। बाइबिल कह रही है कि *हिंसा का प्रतिकार अहिंसा* से ही करना चाहिये। कोई तमाचा लगाये तो प्रेमपूर्वक दूसरा गाल दिखा देना चाहिये। यह हुआ–खिस्ती धर्म। इसके प्रचार के लिये बाइबिल चली। बाइबिल सोसायटी ने दुनिया भर में जाकर प्रचार किया, लेकिन यूरप में खिस्ती लोग आपस-आपस में जितने लड़ते हैं शायद ही दुनिया के कुल लोग उतना लड़े होंगे। मैं बाइबिल का विरोधी नहीं हूँ, बल्कि बाइबिल का प्रेमी हूँ। उसका मैंने आदर से अध्ययन किया है लेकिन कहाँ उपदेश और कहाँ आचरण! यह तो हम लोगों में भी दोष है। हम चर्चा तो करेंगे अद्वैत की, ईश्वर और भक्त में फर्क नहीं माना, और व्यवहार में जाति के टुकड़े टुकड़े! पेड़ की कितनी पत्तियाँ हैं—क्या हम *गिन सकते हैं? उसी तरह हिन्दुस्तान* में कितनी जातियाँ हैं—उन्हें हम नहीं गिन सकते हैं। यह भयानक विरोध हिंदुस्तान में भी है, यूरप में भी है। धर्म-शिक्षण अहिंसा का और कुल राष्ट्र शस्त्रसज्जित! अखंड संग्राम चल ही रहा है।

हरएक देश शस्त्र बनाते हैं और एक-दूसरे के शस्त्रों का नाश करते हैं। निरंतर झगड़ा चलता रहता है। वह कब खत्म होगा, मालूम नहीं। हिंदुस्तान आगे बढ़ा हुआ है और अनेक भाषाओं का एक बड़ा राष्ट्र है। हिंदुस्तान ने स्वराजप्राप्ति भी अहिंसा से की है। ऐसी हालत में असम प्रदेश ग्रामदान में आगे बढ़ता है तो सारा मसला अहिंसा से कैसे हल हो सकता है। वह यह असम दिखायेगा। हमको अभी बेरूत की परिषद् में बुलाया गया। वहाँ अखिल जागतिक शांति-परिषद् हो रही थी। उस परिषद् को 'सपोर्ट' करने के लिये मुझे बुलाया गया, तो मैंने कहा कि 'बहुत बड़ा विश्व-शांति का कार्य यहाँ कर रहा हूँ। यहाँ ग्रामदान हो रहे हैं, इससे बढ़कर विश्व-शान्ति का काम क्या हो सकता है? इसलिए मेरी सहानुभूति है, ऐसा समझ लो।' उन लोगों ने मान लिया।

यह जो ग्रामदान हो रहा है, यह समझ-बूझकर करेंगे तो एक-एक गाँव मजबूत किला बनेगा। गाँव-गाँव में स्वशक्ति प्रगट होगी। वह प्रेम के आधार पर बनेगी। केवल सत्ता के जरिये काम होगा, तो गाँव-गाँव में दंडनीति चलेगी। हमारी लोकनीति नहीं चलेगी। ग्रामदान में सारा काम प्रेम से होगा। गाँव-गाँव में 'नाम-घर' के साथ 'कामघर' होंगे। शांति की स्थापना विश्व में हो सकती है, इसका नमूना हर गाँव में देखने को मिलेगा।

अब ग्राम-स्वराज और ग्राम-शांति, देश-स्वराज और देशशांति, और विश्व-राज्य और विश्व-शांति—इन सबमें कोई *फर्क नहीं है। आकार का फर्क है, प्रकार* में कोई फर्क नहीं है। एक प्यालाभर दूध और एक मनभर दूध—दोनों दूध समान हैं, सिर्फ प्रमाण ज्यादा-कम! हर गाँव में खेती की, तालीम की, आरोग्य की, रक्षा की, पोषण की 'मिनिस्ट्री' होनी चाहिये। गाँव-गाँव में शान्ति होनी चाहिये।

अपना एक देश भारत देश है। माधवदेव ने गाया कि इस पृथ्वी में जन्म पाया, कितना बड़ा भाग्य है! यह है महापुरुष की दूर दृष्टि! असम का नाम ही नहीं लिया। असम भारत में और पृथ्वी में आ गया। मैं कह रहा हूँ–जय-जगत्। शंकराचार्य ने यही कहा, "स्वदेशो भुवन-त्रयम्"। हमारा स्वदेश त्रिभुवन है। *ऐसी दिव्य, भव्य भावना भारत के महा*-पुरुषों ने हमें सिखायी। एक गाँव याने सारे विश्व का छोटा नमूना। वेद भगवान ने कहा "विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन् अनातुरम्।"

गाँव सारे विश्व का प्रतिनिधि होगा। वह तुष्ट, परिपुष्ट होगा। यह अगर गाँव-गाँव में होता है तो विश्व-शान्ति हमारी मुट्ठी में आ गई। एक त्रिकोण में दो-तीन कोण मिल कर दो काट कोण होते हैं, यह सिद्धान्त जितना बड़े त्रिकोण पर लागू होता है, उतना ही छोटे त्रिकोण में लागू होता है। इस तरह गाँव-गाँव में जाय तो सारे विश्व को मार्ग-दर्शन मिल सकता है। आज विश्व चाहता है कि कहीं भी शान्ति का तरीका कारगर हो। *इसका कहीं प्रत्यक्ष दर्शन हो। आशा है,* आपको भी उससे प्रेरणा मिलेगी। मुझे तो इस विचार में इतनी उत्साहप्रेरक शक्ति मालूम होती है कि बोलते-बोलते मुझे ऐसा *मालूम होता है कि मैं कुछ अमृत पी रहा* हूँ, और कोई मधुर चीज पीने की जरूरत नहीं। इतना सुंदर मधुर विचार है, इसलिये मेरे पाँव में जोर आता है। यहाँ एक *व्याख्यान दिया, कल और दिया,* दस-बारह मील चलने की तैयारी हो जाती है, क्योंकि इस विचार में प्रेरणा है। आशा है कि आप लोगों को भी प्रेरणा होगी। आप नव-ग्राम-शान्ति की स्थापना होगी तो विश्व-शान्ति होगी। यह असम प्रदेश के लिए मौका है। हमारी यात्रा यहाँ ९ महीने से हो रही है। *सारा भारत देख रहा है कि* यहाँ कुछ बनेगा। मेरा विश्वास है कि यहाँ कुछ होगा। यह तो भारत का पूर्व प्रदेश है। प्रकाश कहाँ-से कहाँ जायेगा! यह पूर्व में से पश्चिम की ओर प्रकाश जायेगा। उसके लिये उनका व्यापक, उदार मन बनाना चाहिये, अब छोटा मन नहीं चलेगा। यह मन तब होगा जब ग्रामदान होगा।

आपका ब्रह्मपुत्र क्या संदेश देता है? पानी लाता है—तिब्बत से, पाकिस्तान में भेजता है। वह बिल्कुल उदार है, अखंड बहता रहता है। इधर से लेता है, उधर से देता है। इसलिये तो उसका नाम ब्रह्मपुत्र है! आप सारे ब्रह्मपुत्र और ब्रह्म-कन्याएँ हैं। विशाल ब्रह्म-भावना यहाँ जाग उठान है। जवानों के लिये व्यापक ध्येय यही होगा कि विश्वव्यापक शान्ति बनानी है। 'विश्व-नागरिकत्व सिद्ध करना है। इसलिये गान्धी ने 'स्वराज्य' शब्द के बाद सर्वोदय शब्द दिया। हमें एक नया मंत्र मिल गया, एक तंत्र हमारे हाथ में आ गया। यह असम का प्रदेश मंत्र-तंत्र का प्रदेश है। भारत के लोग कहते हैं कि अरे भाई, असम में जाते हो तो जरा चिन्ता रखना! यह क्या गड़बड़ है भैया! यह तो मन्त्र-तन्त्र का प्रदेश है। हम तो ९ महीने से घूम रहे हैं। यहाँ जय-जगत् मन्त्र और ग्रामदान तन्त्र खूब चला। बच्चे-बच्चे बोल रहे हैं। असम में यह नया *मन्त्र-तन्त्र चल जाय तो भारत में शक्ति-संचार होगा।*

[पड़ाव—मोरीयानी (शिवसागर)
असम, ५-१२-'६१]

विनोबा द्वारा नये आश्रमों की स्थापना

भारत की पूर्वोत्तर सीमा के कुछ ही मील के अन्दर नागा क्षेत्र की रमणीय पर्वतमाला की तलहटी में गत ता० ५ मार्च को विनोबा ने एक नये आश्रम की स्थापना की। पिछले साल इसी दिन अर्थात् ५ मार्च को विनोबा ने भूदान-पदयात्रा के सिलसिले में असम में प्रवेश किया था। उसके ठीक एक वर्ष बाद नार्थ लखीमपुर कस्बे से सटे हुए कल्याण-केन्द्र में नये आश्रम का उद्घाटन करते हुए विनोबा ने बतलाया कि इस "आश्रम का ध्येय, नियम, उप-नियम और कार्यक्रम सब कुछ एक ही शब्द के अन्तर्गत आ जाता है—मैत्री।" आश्रम का नाम भी मैत्री-आश्रम रखा गया है।

ब्रह्म-विद्या-मन्दिर, पवनार (वर्धा) की तरह मैत्री आश्रम भी केवल बहनों के लिए है। श्री कुसुम देशपाण्डे को, जो पिछले ८ वर्षों से बराबर विनोबा के साथ पदयात्रा में रही है, विनोबाजी ने अब इस आश्रम में रहने का आदेश दिया है। कल्याण-केन्द्र की पुरानी सेविका श्री गुणदा भूयाँ और लक्ष्मीबहन तथा कुसुमबहन, ये तीनों मुख्य रूप से आश्रम में रहेंगी। फिलहाल आश्रम की मुख्य प्रवृत्ति आसपास के ग्रामदानी गाँवों से सम्पर्क रखने और प्रांत के सर्वोदय-कार्य के सूचना-केन्द्र के रूप में काम करने की रहेगी। आश्रम में विभिन्न भाषाओं का और विभिन्न धर्मों का अध्ययन भी करने की योजना है।

विनोबाजी द्वारा स्थापित किए गये आश्रमों में मैत्री-आश्रम छठा है। इसके पहले दक्षिण-भारत बेंगलोर में विश्वनीडम्, इन्दौर में विसर्जन आश्रम, पवनार में ब्रह्म-विद्या-मन्दिर, उत्तरी सीमा पर पठानकोट में प्रस्थान आश्रम और बोधगया में समन्वय आश्रम की स्थापना हो चुकी है।

हिन्देशिया के भारतीयों द्वारा मुक्ति-संग्राम में योग

हिन्दुस्तान तथा पाकिस्तान से जाकर उत्तरी सुमात्रा में बसे हुए लोगों ने पश्चिमी ईरियन के मुक्ति-संग्राम में योग देने के लिए अपनी एक स्वयं-सेवक टुकड़ी खड़ी की है। समाचार के अनुसार सैकड़ों भारतीय तथा पाकिस्तानी हिन्देशियाई सेना में भरती हुए हैं। हिन्दुस्तान से जाकर बसे हुए हिन्देशियाई नागरिकों के संघ ने एक वक्तव्य द्वारा उत्तरी सुमात्रा की सेना के नायक के पास संदेश भेजकर यह जाहिर किया है कि पश्चिमी ईरियन से साम्राज्यवाद का अन्त करने के लिए उनकी सेवाएँ अर्पित हैं।

मैसूर में सीलिंग से २ लाख एकड़ जमीन मिलने की संभावना

गत वर्ष मैसूर राज्य में जो भूमि-सुधार-कानून बनाया गया था, उसे अब राष्ट्रपति की स्वीकृति मिल गयी है। इस कानून के अनुसार जमीन के मौजूदा खातेदारों के लिए २७ स्टैण्डर्ड एकड़ की अधिकतम सीमा-सीलिंग-रखी गयी है। नये सिरे से जमीन लेनेवालों के लिए अधिकतम सीमा १८ स्टैण्डर्ड एकड़ यानी मौजूदा से दो-तिहाई रखी गई है।

बगीचे, बड़े-बड़े फार्म तथा इसी प्रकार के अन्य भूखण्ड कानून के दायरे से अलग रखे गये हैं। सरकारी अनुमान के अनुसार इस कानून के लागू होने से राज्य के भूमिहीन किसानों के लिए करीब २ लाख एकड़ जमीन उपलब्ध होने की आशा है।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

"दण्ड जतीन कर"

तुलसीदास जी ने कहा है "दण्ड जतीन कर" यानी संन्यासी के हाथ में दण्ड होना चाहिए। अर्थात् जो ज्ञानी विज्ञानी हैं, उनके हाथ में समाज-नियमन की शक्ति सौंप दें। किन्तु दण्ड-शक्ति स्वयमेव ऐसी अक्ल नहीं रखती। दण्ड में यह अक्ल नहीं कि वह और किसी के हाथ में जाने से इनकार कर दे और संन्यासी के ही हाथ में आये। वह तो जड़ है। इसलिए हमें ज्यादा-से-ज्यादा तकलीफ उनसे होती है, जो सज्जन धर्मशील, भोग-विलासी न होते हुए भी ऐश्वर्य का दावा करते हैं। कहते हैं कि हमने परोपकार के लिए सत्ता ली है। हम अनासक्त होकर, विकारहीन होकर संहार की आज्ञा देते हैं। उनका यह दावा पुराने जमाने में थोड़ा-बहुत संभव था; क्योंकि उस समय विज्ञान बढ़ा नहीं था। इसलिए हिंसा-शक्ति को रोकने की शक्यता शायद उस जमाने में कुछ सम्भव थी। अतएव उस जमाने में संहार में गीता की अनासक्ति कुछ चल सकती थी। किन्तु आज विज्ञान बढ़ा है, उसे हम रोक नहीं सकते। इसलिए आज सज्जन में भी ऐसी शक्ति नहीं कि वह हिंसा-शक्ति का तटस्थ भाव से उपयोग करें और चाहें तब उसे वापस ले लें। यानी हिंसा-शक्ति का स्वामी बनकर उसका उपयोग करें, यह विज्ञान के युग में सम्भव नहीं। —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ई, ख = क्ष संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

प्रतिष्ठा का गलत मापदण्ड

आम चुनावों के बाद बने पंजाब के नये मंत्रि मण्डल ने एक सराहनीय निर्णय लिया है। शपथ लेने के तुरन्त बाद नये मंत्रिमण्डल की ओर से घोषणा की गई कि मंत्रियों, राज्य मंत्रियों तथा उपमंत्रियों ने आठ सौ रुपया मासिक वेतन लेने का तय किया है। मौजूदा कानून के अनुसार मंत्री पन्द्रह सौ रुपये और उपमंत्री आठ सौ रुपये वेतन ले सकते हैं, पर कुछ अरसे पहले से ही मंत्रियों ने स्वेच्छा-पूर्वक अपने वेतन में कमी की थी। मुख्यमंत्री बारह सौ रुपये मासिक ले रहे थे, और अन्य मंत्रीगण एक हजार रुपया मासिक।

अब नये निर्णय के अनुसार न सिर्फ मंत्रियों ने अपने वेतन में दो सौ रुपये मासिक की और कमी की है, बल्कि वेतन के मामले में मंत्री, राज्यमंत्री या उपमंत्री में कोई भेद नहीं रखा गया है। सब समान रूप से आठ सौ रुपये माहवार वेतन लेंगे। साथ ही नये मंत्रि-मण्डल ने यह भी तय किया है कि मंत्री-गण दौरे के समय पन्द्रह रुपये के बजाय बारह रुपये दैनिक भत्ता लेंगे।

पंजाब-मंत्रिमण्डल के ये निर्णय स्वागत योग्य हैं और आशा है, दूसरे राज्यों के मंत्री भी इसका अनुकरण करेंगे। वास्तव में देश की सामान्य जनता की स्थिति के साथ हमारे देश के विभिन्न राज्यों के मंत्रियों के मौजूदा वेतन तथा विधान-सभाई सदस्यों के भत्ते आदि का कोई मेल नहीं है। अक्सर यह दलील दी जाती है कि आज की कीमतों को देखते हुए मौजूदा वेतन और भत्ते आदि भी मंत्रियों और विधान-सभाइयों की 'प्रतिष्ठा' के अनुकूल रहन सहन के लिए पर्याप्त नहीं हैं। पर सच यह है कि 'प्रतिष्ठा' का यह मापदण्ड और यह मूल्य ही पुराना है और जनतंत्र की भावना के प्रतिकूल है। प्रतिनिधि या नौकर की प्रतिष्ठा मालिक की प्रतिष्ठा से भिन्न नहीं हो सकती, और जनतंत्र में अगर जनता मालिक है तो प्रतिनिधियों की प्रतिष्ठा का मापदण्ड जनता की परिस्थिति के अनुरूप ही होना चाहिए। —सिद्धराज

एक सुन्दर कदम

पहली जनवरी १९६२ को भूमाना में विश्व शांति सेना की स्थापना हुई थी। उसने अपना पहला कदम पूर्वी अफ्रीका में उठाने का सुन्दर निश्चय किया है। पिछले अंक में वह अपील निकल चुकी है, जो इस सम्बन्ध में माइकेल स्कॉट, बायर्ड रस्टिन और बिल सदरलैण्ड ने दुनिया के शांति-सेवकों के आगे रखी है। इस कार्यक्रम के दो हिस्से हैं—पहले तो यह कि टांगानिका से उत्तरी रोडेशिया की सीमा तक शांति-यात्रा निकाली जायगी और दूसरा यह कि उत्तरी रोडेशिया में श्री केनेथ काउण्डा और उनकी पार्टी यूनिप जो आन्दोलन अपने देश में करेगी उसका समर्थन करना। इस शांति-यात्रा में दुनिया के विभिन्न देशों से शांतिवादी और शांति सैनिक शरीक होंगे। यह पहला मौका है, जब कई देशों के नागरिक किसी एक देश (उत्तरी रोडेशिया) की आजादी के लिए मिलकर कोई अहिंसात्मक आयोजन करने जा रहे हैं, और सामूहिक रूप से उस देश की मदद करेंगे।

इस आन्दोलन के पीछे जो सत्य है, वह किसीसे छिपा नहीं है। आजादी की लहर जब सारी दुनिया में फैलती है, तब अफ्रीका उससे अछूता नहीं रह सकता। यह अँधेरा कहलाने वाला महाद्वीप अब उजाले में आ रहा है और यहाँ के तगड़े व सीधे सादे लोग अपनी खुमारी छोड़कर खड़े हो रहे हैं। मिस्र, सूडान, इथोपिया, घाना, नाईजीरिया, टांगानिका आजाद हो चुके हैं। यूगाण्डा अभी आजाद हो गया। कीनिया भी उसी राह पर है। दक्षिण की ओर बढ़ने पर आते हैं—उत्तरी रोडेशिया, न्यासालैण्ड और दक्षिणी रोडेशिया और उन सबके बाद है—दक्षिणी अफ्रीका।

यह तो स्वाभाविक है कि साम्राज्यवादी शक्तियाँ अपने स्वार्थों से चिपकी हुई हैं। वे नहीं चाहतीं कि अफ्रीका में आजादी आये। इसलिए वे अपने हितों को जकड़कर अपने ही काबू में रखना चाहती हैं और अपनी सत्ता या चंगुल छोड़ने या ढीला करने को तैयार नहीं हैं। लेकिन जो लोग आजाद होना चाहते हैं, उनका जन्मसिद्ध अधिकार कौन छीन सकता है? कोई भी शक्ति या बल-प्रयोग उन्हें अपने लक्ष्य पर पहुँचने से नहीं रोक सकता। गांधीजी ने तो स्पष्ट दिखा ही दिया—पहले दक्षिणी अफ्रीका में और फिर हिन्दुस्तान में—कि सामुदायिक अहिंसा के आगे कोई बल या शक्तियाँ नहीं टिक सकतीं। जिनके पास हथियार-बल होता है, वे अक्सर घुटना टेक देते हैं या उनका मन ह्रास-पतित हो जाता है। मगर अहिंसा वालों को कोई ताकत नहीं गिरा सकती, न उन्हें किसी बात का डर ही रहता है। उनके पास खोने को भी कुछ नहीं रहता। उनकी कुर्बानी से देश अपने लक्ष्य के और भी ज्यादा निकट आ जाता है।

इस वास्ते विश्व-शांति-सेना ने केनेथ काउण्डा और उनके अहिंसक-आन्दोलन की मदद में जो कदम उठाये हैं, उनका हम स्वागत करते हैं। हमें विस्तार से यह नहीं मालूम कि काउण्डाजी की योजना क्या है। लेकिन हमें विश्वास है कि उनका सारा आन्दोलन अहिंसा के आधार पर ही चलेगा और वे तथा उनके साथी जो कुछ भी करेंगे, उसमें सबके प्रति सद्भावना होगी। उत्तरी रोडेशिया के हमारे जो मित्र हैं, उन्हें अपने विरोधियों के खिलाफ मन में कोई मैल नहीं लाना है और हिम्मत तथा शांति के साथ परिस्थिति का सामना करना है। उन्हें यह नहीं भूलना है कि उनकी तपस्या और त्याग पर ही विश्व शांति-सेना के सदस्यों की सफलता निर्भर करती है। उन्हें अपने कदम सावधानी और मजबूती के साथ उठाने होंगे।

विश्व-शांति-सेना वाली पार्टियों पर भी एक बड़ी भारी जिम्मेदारी आती है। उन्हें मनसा, वाचा, कर्मणा अहिंसा का पालन करना है। नम्रता और सौम्यता की तो मानो वे मूर्ति ही सिद्ध हों। सारी दुनिया उनके इस प्रयोग पर आँखें लगाये है। उनके इस काम का असर सारे मानव-समुदाय के सोचने और काम करने के ढंग पर पड़ेगा। यही नहीं, तमाम सरकारों और राजसत्ता पर भी इसका असर पड़े बिना नहीं रह सकता। उनका एक ऐतिहासिक कार्य है। भगवान करे कि वे अपने उद्देश्य की पूर्ति में अग्रसर हों और किसी की भी दृष्टि से कोई कसर बाकी न रखें। —सुरेशराम

आम चुनाव का इशारा

तीसरा आम चुनाव बड़ी शान के साथ सम्पन्न हो गया। कुछ जगहों को छोड़कर कहीं उपद्रव या अशांति नहीं हुई। वोटिंग के परिणाम भी जाहिर हो चुके हैं। लगभग पचपन प्रतिशत वोटरों ने वोट डाले। इससे पता चला कि आम जनता को उसमें बहुत ज्यादा दिलचस्पी नहीं थी, विशेषकर उनको जो दीन-दुखी हैं और सुदूर देहात में टूटी-फूटी झोपड़ियों में या शहर की गंदी बस्तियों में रहते हैं। वोट देने वालों में भी बहुत कम ऐसे होंगे, जिन्हें इस बात का भान रहा हो कि हम व्यापक प्रजातांत्रिक प्रयोग के अंग हैं और न वे इसकी जिम्मेदारी ही अच्छी तरह समझते होंगे।

चुनाव के बाद जो नया नक्शा सामने आया है, वह भी ज्यादा उत्साहवर्धक या संतोषजनक नहीं है। प्रतिक्रियाशील, सम्प्रदायवादी और विघटनकारी प्रवृत्तियों और शक्तियों का पलड़ा ऊपर उठा है और सारे देश में उनको बल मिला है। प्रदेशों में तो उनका पंजा इतना मजबूत हो गया है कि उसे नजरअन्दाज करना अपने-आपको भुलावे में डालना होगा।

सचमुच यह बहुत सोचने विचारने की बात है कि दो बड़े-बड़े प्रदेशों—मध्य प्रदेश और राजस्थान—में कांग्रेस बहुमत नहीं पा सकी। वैसे कुछ

लूटो होली की बहार : होली आ गई

● सुरेश राम

वसन्त आया
आम में बौर खिलने लगे
खेतों में गेहूँ, जौ, चने की बालियाँ लहलहाने लगीं
हँसियाँ चटकने लगीं
कोयल की कूक गूँजने लगी
होली आ गई !

× × ×

गरीबी पाप है
अमीरी भी पाप है
अपनी गलत करतूत से इन्सान गरीब बनता है
अपनी ही गलत करतूत से इन्सान अमीर बनता है
गरीबी मिटनी चाहिए
अमीरी भी मिटनी चाहिए।
जमाना मेल, बराबरी और दोस्ती का है,
होली आ गई !

× × ×

मालकियत का पूरा जाल बिछा है।
जमीन की मालकियत
मकान और जायदाद की मालकियत
खान और कारखाने की मालकियत
फिर—
पैसे और खजाने की मालकियत
डंडे और हथियार की मालकियत
कुर्सी और हुकूमत की मालकियत
और फिर—
कला और कलम की मालकियत
बुद्धि और विद्या की मालकियत
ज्ञान और विज्ञान की मालकियत।
और उधर—
जांगर की मालकियत
मेहनत की मालकियत
झोपड़ियों की मालकियत।
और हाय !
ईमान और न्याय की भी मालकियत
दया और दान की भी मालकियत
पुण्य और वैराग्य की भी मालकियत
स्वर्ग और नर्क की भी मालकियत
सत्य और अहिंसा की भी मालकियत
धर्म और मोक्ष की भी मालकियत,
जैसा जिसका अहंकार
वैसी उसकी मालकियत

× ×

जमीन की मालकियत के पट्टे जलेंगे
सारी मालकियतों के दावे खारिज
कुल की कुल मालकियतें स्वाहा
इस सब का बस—अन्त !
अपने हाथ से
अपने कलम से
अपने मन से
अपने धन से
अपने यज्ञ से।
तब—
सभी मिलकर मालिक होंगे
सभी मिलकर मेहनत करेंगे
सभी मिलकर एक साथ रहेंगे।

× ×

फिर—
फसल का बँटवारा होगा
दुख-दर्द का बँटवारा होगा
अमन-चैन का बँटवारा होगा
गुण-ज्ञान का बँटवारा होगा
पाप-पुण्य का बँटवारा होगा।
तब—
आयेगी हर चेहरे पर रौनक
खिलेगा हर जीवन जैसे कि गुलाब
महकेगी हर कोने से सुगंध
और,
मजा देगी—
हँसिये की चटक
कोयल की कूक
होली का रंग।
लूटो, होली की बहार,
होली आ गई !

स्वतंत्र सदस्यों को मिला कर कांग्रेस-मंत्रिमण्डल तो दोनों में बन गये हैं, लेकिन स्थिति डाँवाडोल जरूर है। फिर बिहार, राजस्थान और गुजरात में मुख्य विरोधी दल के तौर पर स्वतंत्र पार्टी आगे आयी है, जिसमें सामन्तशाही स्वार्थों का जोर है, और तमिलनाड में अगुआ द्रविड मुन्नेत्र कडघम है, जो दक्षिण भारत का स्वतंत्र द्रविड़स्थान बनाने का स्वप्न देख रहा है। इससे भी ज्यादा चिन्ता का विषय है कि उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश में जनसंघ मुख्य विरोधी दल बना है। ये ही वे दो प्रदेश हैं, जिनमें गत दो तीन वर्षों में भयानक साम्प्रदायिक उपद्रव हुए थे। पश्चिमी उत्तरप्रदेश तथा पश्चिमी और केन्द्रीय मध्यप्रदेश में जनसंघ का असर बहुत बढ़ा। अवध में भी, जो एक जमाने में कांग्रेस का गढ़ समझा जाता था, उसकी जड़ें कायम होती दीखती हैं।

इस आम चुनाव ने यह सिद्ध कर दिया कि कांग्रेस का किला कमजोर पड़ गया है और उसकी चहारदीवारी पर जगह-जगह दरारें पड़ गयी हैं। यह सही है कि इसने बहुत-से नेताओं और विरोधी पक्षों के अनेक पदाधिकारियों को चित कर दिया। लेकिन कांग्रेस के अपने उम्मीदवार इस बार कम मतों से ही जीत सके हैं और इसके प्रमुख नेताओं के मुकाबले साधारण उम्मीदवारों ने काफी वोट पाये और कहीं-कहीं तो उनके छक्के तक छुड़ा दिये। कांग्रेस यह दावा नहीं कर सकती कि गरीबों का पक्ष लेने के कारण उसकी मुसीबत बढ़ गयी। क्योंकि राजा और श्रीमान् लोग जितने अन्य पक्षों में हैं, उतने ही या उनसे ज्यादा कांग्रेस में हैं। मगर एक जरा साफ फर्क है। कांग्रेस के अन्दर जो हैं, उनका दृष्टिकोण मिश्रित है, औद्योगीकरण के वे पुजारी हैं और जनता का शोषण करने की कला में वे प्रवीण हैं। लेकिन दूसरे पक्षवालों का दृष्टिकोण सामंतवादी है, वे पुराने राजसी दर्रे के पक्षपाती हैं और एक ऐसे युग के भोंडे नमूने हैं, जो दिन दिन खत्म होता जा रहा है। चुनाव में जिस ढंग से प्रचार किया गया, उससे मालूम हो गया कि हमारे यहाँका समाजवाद और धर्मनिरपेक्षता—दोनों ही कितने उथले हैं। वामपक्षी और मानी हुई समाजवादी या साम्यवादी पार्टियों ने भी इसी तरह का व्यवहार किया और उनके उम्मीदवार वोटों की खातिर आपस-आपस में समझौते या राजीनामे करने से नहीं झिझके। वोट की खातिर ही कांग्रेसवालों ने कहीं वामपक्षी उम्मीदवारों की मदद ली, तो कहीं एकदम प्रतिक्रियावादियों की।

गत आम-चुनाव का सबसे महत्वपूर्ण इशारा यह है कि जनता के साथ न तो पार्टियों का सीधा और सच्चा सम्पर्क है, न कार्यकर्ताओं का। इस देश में ऐसे सैकड़ों-हजारों इलाके हैं, जहाँ चुनाव को छोड़ कर कभी कोई राजनीतिक कार्यकर्ता भूल से भी नहीं भटकता। वोटरों के प्रति हमारी उदासीनता बड़ी भयानक है। यही कारण है कि चुनाव लोक-शिक्षण का काम नहीं कर पाते। हमारे देश की जनता की जो विवेक-बुद्धि और सहज दृष्टि है, वही इस लोकशाही को सलामत रखे है, न कि पक्षों या पक्षों की कुछ मेहनत। तिस पर भी पक्षों को हम बधाई दिये बिना नहीं रह सकते कि इस बार चुनाव के पहले ही उन्होंने एक आचार-संहिता स्वीकार की थी। यद्यपि इस पर सोलह आना अमल नहीं हो सका, लेकिन इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि इसकी याद से वातावरण में शांति रहने में मदद मिली।

सर्वोदय के हम कार्यकर्ता भी समय की माँग के अनुसार ऊँचा नहीं उठ सके। सर्व सेवा-संघ के उंगलुरु-प्रस्ताव पर देश भर में पाँच-छह मुकामों पर भी अमल नहीं किया जा सका, न वोटरों या जनता से हम आपस का नाता जोड़ सके। हमें स्वीकार करना चाहिए कि लोक सेवकों

(शेष पृष्ठ ११ पर)

सामूहिक और सामाजिक विकास के मूलतत्त्व

ठाकुरदास बंग

श्री रिचर्ड हौसर व श्रीमती हेवाजिवा हौसर—दोनों लंदन की एक सामूहिक और सामाजिक विकास-संस्था के संचालक हैं। गत साल श्री जयप्रकाश नारायण इंग्लैण्ड गये थे, तब उनकी इनसे भेंट हुई थी। इस दम्पति के ज्ञान का उपयोग सर्वोदय-आंदोलन को हो सकेगा, ऐसा श्री जयप्रकाशजी को लगा। इसलिए श्री जयप्रकाशजी के कहने से सर्व सेवा संघ ने इन्हें भारत आने का और कार्यकर्ताओं के शिविर लेने का निमंत्रण दिया। अतः दोनों जनवरी के मध्य में तीन सप्ताह के लिए भारत आये। दिल्ली में 'देश के पुनर्निर्माण में युवकों का स्थान', इस विषय पर एक गोष्ठी आयोजित की गयी।

२५ जनवरी से ८ फरवरी तक बारडोली में पाँच पाँच दिन की तीन गोष्ठियाँ हुईं। पहली गोष्ठी में निरक्षर और थोड़े-से अक्षर ज्ञानवाले ग्रामनेताओं ने भाग लिया। दूसरी गोष्ठी में ग्रामदानी गाँवों में और ग्राम-इकाई के क्षेत्र में निर्माण के काम में जुटे हुए कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। सर्वोदय-आंदोलन या कार्यकर्ता प्रशिक्षण का काम करने वाले भारत के चुने हुए कार्यकर्ताओं ने तीसरी गोष्ठी में भाग लिया। आखिर की गोष्ठी ५ से ८ फरवरी तक हुई और उसी में भाग लेने का मौका मुझे मिला।

चुने हुए ३५ कार्यकर्ताओं ने इस तीसरी गोष्ठी में भाग लिया। हौसर दम्पति का व्यक्तित्व असाधारण है। अहिंसा पर इनका संपूर्ण विश्वास है। वे खुद को गांधी कार्यकर्ता मानते हैं। गांधीजी विश्व-नागरिक थे, ऐसी इनकी मान्यता है। गांधीजी के बताये हुए अहिंसक मार्ग से दुनिया से हिंसा जड़मूल से किस तरह उखाड़ फेंक दी जा सकेगी, इसका शोध और कार्य इनके जीवन का 'मिशन' है। श्री रिचर्ड हौसर जन्म से आस्ट्रियन हैं और श्रीमती हौसर अमेरिकन हैं। पिछले चार साल से आप दोनों इंग्लैण्ड में रहते हैं। कैदियों में, विकृत कामवासना के भुक्तभोगियों में, परीक्षा में अपयश मिले हुए विद्यार्थियों में, पागलखाने के मानसिक विकृतिवाले रोगियों में, सामाजिक काम करने वाली संस्थाओं में—इस तरह के ८० प्रकल्पों में आपकी संस्था काम कर रही है।

ता० ५ को बारडोली की आखिरी गोष्ठी के प्रारम्भ में उन्होंने कहा, "गांधीजी का अहिंसा का तत्त्वज्ञान मुझे मान्य है। मैं सिर्फ आपके काम की पद्धति के बारे में बोलने वाला हूँ। पहली बात यह ख्याल रखनी चाहिए कि लोगों के लिए आपको आंदोलन नहीं करना चाहिए। आज भूदान आंदोलन का स्वरूप करीब-करीब ऐसा ही है। लोगों को खुद अपना आंदोलन चलाना चाहिये। यही लोकशाही का तत्त्व है। आज भूदान-आंदोलन या तो जमींदारों के लिए या भूमिहीनों के लिए या दोनों के लिए चलाया जा रहा है। इसे मैं 'पितृभाव' कहता हूँ। पुराने समय के पैतृक समाज में यह भाव शोभा देता, पर आज के मातृसमाज में यह बात पुरानी हो गयी है। अतः जिनके लिए यह आंदोलन है, वे ही इसे चलायें। हम सलाह देने का, प्रेरणा देने का व मूल्यांकन करने का काम करें। यानी हम लोग स्थानीय कार्यकर्ता (श्री हौसर इन्हें 'कम्युनिटी लीडर' कहते हैं) खोजें और उन्हें आंदोलन चलाने दें। भूदान-आंदोलन की दूसरी और तीसरी मंजिल तो हमने बनायी है। पर इस इमारत की निचली मंजिल या नींव ही नहीं है। निचली मंजिल या नींव के बिना किसी भी इमारत की कल्पना नहीं की जा सकती। बिना इस नींव के इतनी भूमि और इतने ग्रामदान आपको मिले ही कैसे, इसीका मेरे जैसे सामाजिक इंजिनियर को आश्चर्य होता है। अतः आप इस तरह के कार्यकर्ताओं—इन्हीं को 'आत्मिक समयदानी' कहते हैं—की खोज करें और वे ही यह आंदोलन चलायें, ऐसी परिस्थिति निर्माण करनी चाहिये।

इसलिए हमारा आंदोलन समग्र होना चाहिये, याने हम केवल जमीन का प्रश्न हल करने के पीछे न पड़ें, बल्कि जीवन के सभी प्रश्नों को आंदोलन स्पर्श करे, यह भी देखें। जनता स्वयं अपने प्रश्न हल करे। नींव के कार्यकर्ताओं को जो बातें आवश्यक महसूस होंगी, वे करेंगे। हमारा काम यह है कि ईप्सित बातें ग्रामीण कार्यकर्ताओं को करने दी जायें और उन्हें अहिंसा व समता की ओर मोड़ा जाय। उन पर कोई भी बात लादी न जाय। नहीं तो उनका विकास नहीं होगा और आंदोलन भी स्वयंस्फूर्त नहीं होगा।"

श्री हौसर के विश्लेषण के अनुसार दुनिया में तीन प्रकार के नेता होते हैं :

(१) सत्ता-नेता : उसके हाथ में सत्ता होने से वह काम करता है। वह जिनका काम करता है, उनके स्तर से ज्यादा ऊँचा नहीं जा सकता। पंडित नेहरू, सुखदेव आदि इस तरह के नेता हैं।

(२) प्रभाव-नेता : गांधीजी या विनोबाजी इस तरह के नेता हैं। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में नेहरूजी भी प्रभाव-नेता हैं। श्री जयप्रकाशजी ने जबसे राजनीति छोड़ी, तबसे वे प्रभाव-नेता बने हैं। सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी को भी यह बात लागू होती है। हमारा काम प्रभाव-नेता का है, सत्ता-नेता का नहीं।

(३) नौकर-नेता : नौकरी के कारण मिलने वाली सत्ता की वजह से प्राप्त होने वाली नेतागिरी, यह एक तीसरा नेता-वर्ग है। उदाहरणार्थ : शिक्षण-विभाग का संचालक।

हमें दूसरे वर्ग की भूमिका से काम करना है, यह अच्छी तरह जान लेना चाहिए। अतः हम देहाती और शहर के सामाजिक कार्यकर्ताओं पर अपना विचार जबरदस्ती लाद नहीं सकते। उन्हें जिन कामों में रुचि हो, वही करने दिये जायँ। उसमें से निर्माण होने वाले उत्साह को योग्य विचारों की ओर मोड़ने की कुशलता हमें हासिल करनी चाहिये। इसके लिए हमारी काम की पद्धति या दृष्टिकोण समग्र होना चाहिये। फिर यह जरूरी है कि बुद्धि और विवेक की हम उपासना करें। सॉक्रेटिस की तरह हर बात अच्छी तरह परख कर ही उसको स्वीकार करने की वृत्ति देहात में या शहर में काम करने वाले कार्यकर्ताओं में और अन्य सभी लोगों में बढ़ानी चाहिये।

श्री हौसर ने हम सबको सम्बोधित करके कहा, "आप पर सब लोग प्रेम करते हैं। दिल्ली में सभी लोगों ने आपके बारे में अच्छे उद्गार निकाले।" सबको हमारे आन्दोलन का परीक्षण करना चाहिये। उसकी समालोचना करनी चाहिये और इसके लिए भावना से बुद्धि का अधिक प्राधान्य होना जरूरी है। प्रश्न पूछने की और विचार करने की आदत हम सबको लगानी चाहिये।

गांधीजी आन्दोलन शुरू करते थे, उस समय उनके बारे में विरोधक के मन में भी आदर-भाव रहता था। प्रेम में शंकाओं को, प्रश्नों को स्थान नहीं होता। आदर-भाव में मौन-भिन्नता के लिए स्थान है। श्रद्धा के बजाय बुद्धि पर अधिक जोर देना चाहिये। इससे आंदोलन ज्यादा स्थायी बनेगा।

भूदान की कार्यपद्धति में करुणा का उपयोग किया गया है। पर अन्यायी समाजरचना के विरोध में प्रकोप का उपयोग नहीं किया गया। करुणा की तरह ही प्रकोप की भी बहुत बड़ी शक्ति है। व्यक्ति पर प्रेम, होना चाहिये लेकिन समाज-रचना के विरोध में प्रकोप! इससे समाज में बहुत बड़ी शक्ति निर्माण हो सकती है। फिर उसमें से अद्भुत उत्साह निर्माण हो सकेगा। प्रकोप को उद्रेक मिलना चाहिए। आज भारत की जनता में बहुत बड़े प्रमाण में सुप्त या थमी हुई हिंसा है। पंजाब के बँटवारे के समय या आसाम में भाषा के प्रश्न पर उसका दर्शन हुआ। इस थमी हुई हिंसा को प्रकोप के रूप में प्रकट करना चाहिये और उसका उपयोग उत्साह-निर्मिति में होना चाहिये। महात्माजी ने इस सुप्त हिंसा का उपयोग सत्याग्रह के लिए किया था। हम भी जन-समाज के संगठन करने की बात नींव के कार्यकर्ताओं से करें।

आदाता को जमीन दी जाती है, उसके बदले में हम उससे कुछ भी नहीं लेते। यह ठीक नहीं है। उसे भी समाज के लिए कुछ-न-कुछ देना ही चाहिए। इसका अर्थ जमीन की कीमत लें, ऐसा नहीं। समाज के लिए वह श्रमदान दे, भूदान-आंदोलन को मदद करे, अन्य भूमिहीनों को जमीन दिलाने का प्रयत्न करे, दूसरे गरीबों को मदद करे। यानी किसी-न किसी प्रकार से वह जमीन के बदले में कुछ दे। लेने से मनुष्य हतप्रभ होता है, उसकी आत्मशक्ति कुंठित होती है। जमींदारों को भी अपने दान के बदले में कीर्ति, पद, सम्मान आदि मिलने चाहिए।

यह सारा करने के लिए लोगों का हम भिन्न भिन्न प्रकार से 'सर्वे' करें। लोगों को अपनी कठिनाइयाँ कहने दी जायँ और उसीमें से मार्ग खोजने के लिए तैयार करना चाहिए। विचारों को चालना देने का हमारा काम है, प्रत्यक्ष काम हम नहीं करने वाले हैं। वह तो जनता करने वाली है, हम यह बात ध्यान में रखें। हम धीरज रखें। यश जल्द ही मिलेगा, ऐसी झूठी कल्पना लोगों में न फैलायें, बल्कि ऊबड़खाबड़ रास्ते की और बीच-बीच में आने वाले ज्वार भाटे की कल्पना जनता को अच्छी तरह दें। लोगों को दीर्घ समय के संघर्ष के लिए तैयार करें। समग्र पद्धति को स्वीकार करने के कारण किसी एक बात में कुछ समय के लिए अपयश नजर आयेगा, तो किसी दूसरी में यश नजर आयेगा और कुल मिला कर प्रगति ही होगी। इससे वैफल्य और निराशा नहीं निर्माण होगी।

श्री हौसर दम्पति ने अपरिमित परिश्रम उठा कर यह विषय समझाया, विचार करने के लिए प्रेरित किया और हर पाँच-दस मिनट के बाद विनोद निर्माण करके तात्त्विक विषय के कारण निर्माण होने वाला मन पर का तनाव महसूस नहीं होने दिया।

गांधीजी के प्रति अत्यन्त श्रद्धा; बुद्धियुक्त अन्तःकरण से किया हुआ अहिंसा का स्वीकार; भूदान आन्दोलन आगे बढ़े, इसकी लगन और यदि यह असफल हुआ तो दुनिया को बचाने वाली दूसरी शक्ति नहीं है, ऐसी चिन्ता; आज की दुनिया में सबसे बड़े अहिंसक कार्यकर्ताओं के समूह के सामने मैं खड़ा हूँ, ऐसी हर क्षण महसूस होने वाली अनुभूति; भावना और अध्यात्म की जगह विवेक और तर्क से आलोकित वैज्ञानिक दृष्टि—हौसर दंपति की इन सब बातों ने गोष्ठी को स्फूर्ति और प्रकाश प्रदान किया।

['नई तालीम' से] ● ●

तुम हनुमान बनो

दादा धर्माधिकारी

जो तुम लोग छोटे-छोटे बच्चे यहाँ बैठे हो, तुम्हारे सामने में अपनी इच्छा प्रकट करने आया हूँ। तुमको आगे चलकर पता होगा कि आदमी की उम्र जब ढल जाती है, तो वह कुछ बातें अपने बाल-बच्चों से कहना चाहता है। उसकी कुछ इच्छाएँ होती हैं। इस तरह कुछ इच्छाएँ मेरे मन में रह गयी हैं, उन्हें तुम्हारे सामने रख रहा हूँ। उपदेश तो तुम रोज किताबों में पढ़ते ही हो।

महाराष्ट्र के एक स्कूल में एक दफा मैं गया था। मास्टर साहब ने पहली कतार में कुछ होशियार लड़के बिठा दिये थे, क्योंकि उन्हें अंदेशा था कि मैं कुछ सवाल न पूछ बैठूँ। मैंने पहले लड़के से पूछा, "तू कौन है?"

उसने कहा, "ब्राह्मण हूँ।" दूसरे से पूछा, उसने कहा, "कोंकणस्थ ब्राह्मण हूँ।" तीसरे से फिर यही सवाल पूछा, उसने सोचा, पहले दो के उत्तर में जरूर कुछ कमी रह गई है; उसने उत्तर दिया, "मैं ऋग्वेदीय कोंकणस्थ ब्राह्मण हूँ।"

सबसे अन्त में एक लड़का बैठा था। मैंने उससे पूछा, तो हड़बड़ा कर उठा और कहने लगा, "मैं लड़का हूँ।" मैंने कहा, "यह लड़का सच्चा जवाब देता है।"

आज की दुनिया में यह हालत है कि मनुष्य यह भूल गया है कि मैं मनुष्य हूँ, और तो उसे सब कुछ याद है। गुरुद्वारे में जो बैठा है, वह सिख है। मंदिर में जो बैठा है, वह हिन्दू है। मस्जिद में जो बैठा है, वह मुसलमान है। कोई कांग्रेसी है, कोई कम्यूनिस्ट है, कोई सोशलिस्ट है—सबके माथे पर एक चिप्पी लगी हुई है। जैसी चाय पर लगी रहती है कि यह 'ब्रुकबांड' है, यह 'लिप्टन' है। हर मनुष्य पर केवल एक-दो नहीं, अनेक चिप्पियाँ लगी हुई हैं। पहले मैं ब्राह्मण हूँ, मर्द हूँ, कांग्रेस का सदस्य हूँ। इतनी चिप्पियाँ लगी हुई हैं कि आदमी दिखाई ही नहीं देता। एक घुमक्कड़ था, जो दुनिया के कई देशों में घूमा था। हर नये देश में उसके बक्स पर एक चिप्पी लग जाती थी। अन्त में सारा बक्स चिप्पियों से ढँक गया। घर लौट कर आया, तो घर वाले पहचान ही नहीं पाये कि यह वही बक्स है।

अपने जमाने में हम सब चिप्पियाँ (लेबुल्स्) हटा दें। मनुष्य मनुष्य है। यह ब्राह्मण भी नहीं है, भंगी भी नहीं। यह अमीर भी नहीं है, गरीब भी नहीं। इस जमाने का मनुष्य केवल मनुष्य होगा, और उसका देश होगा—सारी दुनिया।

हम चाहते हैं कि तुम अपने जमाने में चिप्पियाँ हटा दो। मनुष्य मनुष्य है। वह ब्राह्मण भी नहीं है, भंगी भी नहीं। वह अमीर भी नहीं है, गरीब भी नहीं। तुम्हारे जमाने का मनुष्य मनुष्य होगा और उसका देश होगा सारी दुनिया।

सीमाओं को मिटा दो !

स्कूल में हमें एक अंग्रेजी कविता पढ़ायी जाती थी। उसका लेखक था किपलिंग। कविता का अर्थ था—"पूरब पूरब है, पश्चिम-पश्चिम है। इन दोनों का मिलाप कभी नहीं हो सकता।" बाद में जब मैं मास्टर हुआ तो लड़कों को यही कविता पढ़ाने लगा। एक छोटा लड़का मुझसे पूछ बैठा, "गुरुजी! यह कविता किसने लिखी है?" मैंने कहा, "एक बड़े आदमी ने लिखी है।" उसने कहा, "वह कैसे बड़ा आदमी हो गया? क्या वह नहीं जानता था कि पृथ्वी गोल है? कोई जापान से जाता है, तो अमेरिका में निकलता है?" इस पृथ्वी में पूरब और पश्चिम सिर्फ नाम हैं, संकेत हैं। पृथ्वी में कोई सीमा नहीं है। सीमा नक्शे पर होती है, मनुष्य के मन में होती है। कहीं धरती पर भी सीमा बनी है? ये जबर्दस्ती सीमाएँ बना दी गयी हैं।

पहली चीज जो तुम्हें सीखनी है, वह है—कम-से-कम इस भारतवर्ष में तुम्हारे लिए कोई सीमा नहीं। जोशीमठ और त्रिवेन्द्रम में रहने वाले लड़के भाई-भाई ही नहीं, बल्कि एक हों। इन दोनों का सारा देश एक देश है और अब तुमको इसके नाप का आदमी बनना है। जितना बड़ा देश हो, उतना ही बड़ा आदमी चाहिए। एक बड़ा कमरा हो, उसमें चींटी दिखाई नहीं देगी। अंग्रेजों के जमाने में इस देश में बड़े ऊँचे-पूरे आदमी होते थे। महात्मा गांधी, नेहरू, मौलाना आजाद, जयप्रकाश, खान अब्दुल गफ्फार खां। कश्मीर से लेकर कन्या कुमारी तक का आदमी इन्हें जानता था। इनके बाद का कोई आदमी क्या तुम्हें मालूम है। सकस करो कि तुममें से ऐसे आदमी निकलें। १९४७ के बाद छोटे छोटे बौने आदमी होने लगे हैं। यह आदमी तुम लोगों में से नहीं निकलेंगे, तो आगे इस देश में छोटे-छोटे आदमी होंगे, जिन्हें दुनिया नहीं पहचानेगी। दुनिया उसे पहचानेगी, जिसे भारत पहचानेगा।

राम को पहचानो !

एक दफा १५ अगस्त को हम ट्रेन में जा रहे थे। लड़के शोर मचा रहे थे। किसीने कहा, "लड़के और बन्दर एक समान होते हैं।" मैं तुमसे कहना चाहता हूँ कि बन्दर नहीं, हनुमान बनो। सीताजी ने एक दफा अपनी मणियों की माला हनुमानजी को पहनने के लिए दी। उन्होंने एक-एक मणि तोड़कर दाँतों के नीचे दबायी और उसे तोड़कर फेंक दिया। सीताजी ने यह देखकर कहा, "मैंने नाहक बन्दर को माला पहनने के लिए दी।"

इस जमाने में सब को यह बात सीखनी-समझनी चाहिए कि समाज में सही मूल्य उतना ही है, जितना मनुष्य उत्पादक परिश्रम करता है। आने वाले युग की विभूति वह पुरुष है, जो परिश्रम करता है, चाहे जैसा परिश्रम नहीं, केवल उत्पादक परिश्रम!

हनुमानजी ने कहा, "माताजी, मैं एक एक मणि को खोलकर देख रहा हूँ कि इसमें राम है या नहीं। अगर राम होगा, तो मेरे काम की है, नहीं तो नहीं है।"

तुम बड़े होगे। कोई व्यापारी बनेगा, कोई बाबू बनेगा। हनुमान की तरह हर-एक चीज को खोलकर देखो कि क्या उसमें राम है? क्या उसमें गिरे हुए को ऊपर उठाने की कोई चीज है? दूसरों को चूसकर बड़े बनने का रोजगार है या दूसरों को ऊपर उठाने का है। मेरे जमाने के आदमियों ने यह नहीं देखा। मेरे जमाने के जितने रोजगार हैं, वे दूसरों को चूसने के हैं। कुछ आदमी ऐसे होते हैं, जो भेड़िये की तरह खा जाते हैं और कुछ ऐसे हैं, जो जोंक की तरह मनुष्यों का खून चूसते हैं। तेल में, आटे में और दवाइयों में मिलावट करने वाले—ये सब जोंक की तरह हैं। दूसरा जो तलवार लेकर आता है, वह भेड़िये की तरह है। तुम्हारी यह शपथ हो कि न किसीका खून चूसेंगे, न गिरायेंगे। इसके दो साधन हैं—सिपाही और सौदागर। तुम्हारा जमाना ऐसा हो, जिसमें ये दोनों न हों—कम से कम तुम ऐसे न बनो।

हनुमान में और दूसरे बन्दरों में कितना फर्क है! हनुमान ने लंका में आग लगायी, पर विभीषण का मकान बचा दिया। अगर वह साधारण बन्दर होता तो लंका भी जलाता और अयोध्या भी जलाता। तुम जब बड़े हो जाओ, तो समाज में क्या अच्छा है और क्या बुरा है, इसको समझो। आज लड़के उठते हैं, तो कहीं आग लगाते हैं, कहीं पत्थर फेंकते हैं, खिड़कियाँ मारते हैं। नाम होता है विद्यार्थी-आन्दोलन का। यह विद्यार्थी-आन्दोलन है क्या? या मर्कटलीला है?

मर्यादा के अन्दर रहें !

सीता का स्वयंवर हो रहा था। जनक के यहाँ शिवजी का धनुष तोड़ने के लिए बड़े-बड़े राजा-महाराजा आये थे। एक-एक सामने आया, पर धनुष उठाना तो दूर रहा, उसे हिला भी नहीं सके। सन्नाटा छा गया। हताश होकर राजा जनक बोल उठे :

"वीर विहीन अवनि मैं जानी।"

लक्ष्मण से यह बात सही न गयी। बोल उठा,

"ज्यों राउर अनुशासन पाऊँ,
कंदुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ।
काचे घट जिमि डारेउ फोरी।"

"आपकी (रामचन्द्र जी की) यदि आज्ञा हो तो मुझमें इतनी ताकत है कि गेंद की तरह ब्रह्माण्ड उठाऊँ। कच्चे घड़े की तरह फोड़ दूँ और मेरु को मूली की तरह काट दूँ।" मगर उसने एक चीज कही, 'अगर आपकी आज्ञा हो।' लक्ष्मण का सारा पुरुषार्थ राम की मर्यादा के अधीन था। जब जब पुरुषार्थ मर्यादा में रहता है तब-तब बहादुरी कहलाती है, नहीं तो वह शरारत है। तुम जितने विद्यार्थी हो, तुम-में भी मर्यादा रहनी चाहिए। कोई उन्मत्त आदमी होता तो वह भी कहता कि लक्ष्मण की तरह मैं सारे ब्रह्माण्ड को उठाकर फेंकता हूँ। लेकिन लक्ष्मण कहता है कि यदि 'आप की आज्ञा हो तो!' हमारे समाज की एक मर्यादा है, उसमें अगर विद्यार्थी रहता है तो समाज का कल्याण कर सकता है।

देश पसीने के फूलों से खिल उठे !

राजा हरिश्चन्द्र ने अपना सारा राज्य विश्वामित्र को दान में दे दिया। विश्वामित्र ने कहा, "जब तक दक्षिणा नहीं देते, यह दान पूरा नहीं होगा।" हरिश्चन्द्र अपने कीमती वस्त्र और अलङ्कार देने लगा। विश्वामित्र ने कहा, "इनपर अब तुम्हारा क्या अधिकार है। ये तो पहले ही मेरे हो चुके हैं। तेरे पास तो तेरे साढ़े तीन हाथ के शरीर के सिवा कुछ नहीं रह गया।" तब हरिश्चन्द्र विश्वनाथ की काशी नगरी के बाजार में खड़ा हो गया और चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगा, "कोई मुझे खरीदेगा?" जो भी आता, कहता, "पत्र तो हमारे पास है नहीं। तुम्हें खरीद कर क्या करेंगे?" आखिर चक्रवर्ती हरिश्चन्द्र को चाण्डाल के हाथ बिकना पड़ा, वह भी श्मशान की चौकीदारी के लिए।

इस प्रकार सत्यवादी हरिश्चन्द्र जब खालिस इन्सान के नाते बाजार में खड़ा हुआ, तो जितना परिश्रम कर सकता था, उतनी ही उसकी कीमत हुई। मनुष्य की दूसरी सारी प्रतिष्ठाएँ झूठी हैं। हरिश्चन्द्र राजा था, लेकिन उसकी कोई पूछ नहीं थी। तुम्हारे जमाने में तुम सब लड़के-लड़कियों, स्त्री और पुरुषों को यह बात सीखनी और समझनी है कि समाज में सही मूल्य उतना ही है, जितना मनुष्य उत्पादक परिश्रम करता है। आनेवाले युग की विभूति वह पुरुष है, जो परिश्रम करता है। चाहे जो परिश्रम नहीं, केवल उत्पादक परिश्रम।

एक बार मेरा बेटा मेरे साथ था। रास्ते में एक आदमी दण्ड-बैठकें लगा रहा था। बेटे ने कहा, "पिता जी, यह क्यों उठ और बैठ रहा है?" यह व्यर्थ परिश्रम कहलाता है। एक सार्थ परिश्रम होता है, जिससे जिन्दगी की वस्तुएँ बनती हैं। पहाड़ों में वे अछूत हैं, जो सार्थ परिश्रम करते हैं। जो निठल्ले हैं, वे सवर्ण कहलाते हैं। इन मूल्यों को बदलना होगा। जब तुम्हारा जमाना आयेगा, शान उसकी होगी, जो औजारों से काम करेगा, जीवन के लिए चीजें बनायेगा। उसके एक हाथ में वेद और उपनिषद् होगा और दूसरे हाथ में हल। महादेव देसाई वकालत करते थे। गांधीजी के सेक्रेटरी बनने आये, तो गाँधीजी ने सवाल पूछा, "रोटी बनाना जानते हो? पाखाना साफ करना जानते हो?"

गांधी इस युग का धर्मराज था। धर्मराज ने जब राजसूय यज्ञ किया तो कामों का बटवारा हुआ। पूछा "किसको क्या काम देना चाहिए?" सबकी राय हुई कि रसोई का काम भीम को दें। धर्मराज ने कहा, "इसमें दस हजार हाथियों की शक्ति है।" राजसूय यज्ञ में रसोई का काम भीम को दिया गया। अग्रपूजा के लिए उम्मीदवारी शुरू हुई। शिशुपाल सबसे बड़ा उम्मीदवार था। धर्मराज ने कहा, "अग्रपूजा का काम श्रीकृष्ण भगवान को मिलेगा।" उनको काम सौंपा गया, सबके चरण धोने का और सबकी जूठन उठाने का। बाइबिल में कहा है: "जो सबका सेवक होगा, वह सबसे महान् होगा।"

रामचन्द्र जो बनवास को निकले तो चलते चलते मातङ्ग मुनि के आश्रम में पहुँचे। मातङ्ग की शिष्या थी शबरी। उसके यहाँ एक टोकरी में कुछ फूल और कुछ गीले कपड़े रखे हुए थे। राम ने पूछा, "शबरी! ये कपड़े किसके हैं?" शबरी ने कहा, "गुरुजी के हैं।" "और ये फूल?" "ये फूल मैं गुरुजी की पूजा के लिए तोड़ कर लायी थी। रखे हुए हैं।"

आश्चर्य मिश्रित स्वर में राम ने पूछा, "ये फूल सूखे क्यों नहीं हैं?"

शबरी ने कहा, "ऋषिपुत्र और राजपुत्र गुरुजी के पास शिक्षण के लिए आते थे। वे हर रोज लकड़ी काटते थे और गट्ठर बाँधकर सिर पर उठाकर आश्रम में लाते थे। उनके पसीने की बूँदें इन फूलों पर टपकती थीं। इसलिए ये कभी नहीं सूखते हैं।"

मनुष्य के पसीने से जो अन्न बनता है, उसमें पौष्टिकता और गुणकारिकता स्वर्ग के अमृत से भी अधिक होती है। हमारे इस देश को अगर नन्दनवन बनाना है तो इसमें वे फूल खिलने चाहिए, जो तुम्हारे पसीने से सींचे गये हों।

[जोशीमठ हाईस्कूल उत्तराखण्ड के विद्यार्थियों के बीच, ९ अक्टूबर, '६१ को दिया गया भाषण।]

—●—

पंचायती राज्य पर एक चिन्तन

दिवाकर

हमारे देश का विकास ग्राम-विकास पर ही आधारित है, क्योंकि अस्सी प्रतिशत व्यक्ति गाँवों में ही रहते हैं और इनका जीवन-यापन गाँव में चलने वाले धंधों पर ही अवलम्बित है। अगर गाँव खुशहाल होते हैं तो नगर भी जीवित रहते हैं और जीवनोपयोगी वस्तुओं का उपयोग कर सकते हैं। अगर गाँव की व्यवस्था में किसी प्रकार की गड़बड़ी होती है तो उसका असर सारे देश पर पड़ता है। इसलिए गांधीजी ने स्वराज्य-प्राप्ति के लिए जब आन्दोलन शुरू किया, उसी समय ग्राम-स्वराज्य की कल्पना देश के समक्ष रखी, जिसका स्पष्ट चित्र आज विनोबाजी उपस्थित कर रहे हैं।

ग्राम-स्वराज्य की कल्पना गाँव में प्रत्यक्ष हो, इसके लिए यह आवश्यक है कि गाँववालों की शक्ति जागृत हो और उनमें अभिक्रम भी पैदा हो। स्वराज्य प्राप्ति के बाद गाँव गाँव में जन शक्ति जागरण का कार्य न तो समाज-सेवी संस्थाओं ने किया और न सरकार की ही ओर से इस दिशा में कोई कदम उठाया गया। गाँववालों की वृत्तियाँ शासनोन्मुख हो गयीं। इसका कारण पंचवर्षीय योजनाएँ हैं, जिनसे अधिक-से-अधिक लेने की भावना बढ़ी है और ग्राम शक्ति का ह्रास हुआ है।

गांधीजी चाहते थे कि ग्राम की पूरी व्यवस्था गाँववालों पर ही सौंपी जाय और अपने गाँव के विकास के लिए उन्मुख ग्रामवासी स्वयं सोचें। जहाँ गाँव शासन की कुछ मदद चाहते हों, वहाँ शासन उन्हें सहायता करे, पर गाँव का संचालन दिल्ली से न हो, बल्कि ग्राम की संस्थाएँ स्वयं करें। इस प्रकार जनतंत्र के अनुरूप विकेन्द्रीकरण हो सकता है।

अभी बिहार में पंचायती राज्य की योजना लागू की जा रही है, जिसके अंतर्गत गाँव से लेकर जिले के स्तर तक पंचायत, पंचायत समिति तथा जिला-परिषद् के गठन की बात कही जा रही है और इन्हें प्रशासन के अधिकार भी सौंपे जा रहे हैं। यह कदम आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक विकेन्द्रीकरण के लिए उठाया गया है और इस दिशा में अगर गाँव की व्यवस्थाएँ खड़ी होती हैं तो मैं समझता हूँ कि सर्वोदय समाज-रचना का बड़ा अंश सम्पन्न हो सकता है।

अभी प्रशासन के द्वारा इन व्यवस्थाओं को कायम करने के लिए कानून बनाये गये हैं। इन कानूनों के जरिये ग्राम पंचायतों को विशेष अधिकार सौंपने से केवल कुछ पंचवर्षीय योजना के विकास-सम्बन्धी कार्य कराये जा सकते हैं, परन्तु इससे ग्राम स्वराज्य के विचारानुसार गाँव का भाईचारा और आर्थिक समता कायम नहीं हो सकती। प्रत्येक गाँव के सभी वर्गों के लोग परिवार भावना से जब तक नहीं सोचते, तब तक गाँव सुखी-सम्पन्न नहीं हो सकते। ऐसी व्यवस्था से सम्भव है कि दलबन्दी, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार आदि बुराइयाँ और भी बढ़ें। आज पंचायतों की स्थिति है, उससे लगता है कि कानून द्वारा गठित समितियाँ राजनीति के अड्डे न बन जायें। अभी भी चुनाव में पार्टियों की मुख्य दृष्टि इन पंचायतों पर ही केन्द्रित है और पंचायतों के जरिये ही जातीयता आदि का प्रचार हो रहा है। पंचायतों के मुखिया भिन्न भिन्न पार्टियों के सदस्य हैं तथा जिले की पंचायत परिषदों में राजनैतिक पार्टियों के ही लोग हैं, अतः इन पंचायतों का उपयोग प्रायः राजनैतिक कार्यों में ही विशेष रूप से किया जाता है। अंचल की परिषदें भी राजनैतिक दृष्टि से ही गठित की जाती हैं और मुखियों के चुनाव में जो प्रक्रियाएँ और साधन बरते जाते हैं, वे पार्टियों के चुनाव से कम नहीं लगते, इसलिए इस प्रकार की आज की परिस्थितियों में पंचायती राज्य योजना की सफलता में खतरा लगता है।

अगर प्रत्येक गाँव में ग्राम सभाएँ गाँव के सभी बालिग पुरुषों द्वारा गठित हों और वे ग्राम जीवन का पूरा ढाँचा बनाने में सक्रिय हों, समय-समय पर वे मिलें और क्षेत्र की समस्याओं के विषय में वे स्वयं सोचें, ग्रामसेवा-संस्थाओं द्वारा ग्राम-स्वराज्य का विचार इनके समक्ष प्रचारित हो। ग्रामसभा पंचायत-समितियों, जिला-परिषदों के निर्णय सर्वसम्मति व सर्वानुमति से हों तो इस गुटबन्दी से ये संस्थाएँ सुरक्षित रखी जा सकती हैं। पंचायती राज्य का शिक्षण भी दिया गया और अगर राजनीति का प्रवेश इन संस्थाओं में हो गया, तो गाँवों को परिवार बनाने की बजाय गाँवों के छोटे छोटे टुकड़े हो जायेंगे और हो रहे हैं, इसलिए यह जरूरी है कि पंचायती राज्य की संस्थाओं का निर्वाचन, गठन व कार्य-संचालन आदि को पूर्णरूपेण दलीय राजनीति से बचाया जाय। अतः सभी राजनैतिक पार्टियों का कर्तव्य हो जाता है कि इस लोकतंत्र के विचार को सफल बनाने में वे सहयोग दें।

इस योजना को सफल बनाने के लिए यह भी जरूरी है कि गाँव की विषमता दूर हो और आर्थिक समता कायम हो। गाँव की जमीन के कारण ही आज बड़े-छोटे का प्रश्न है। अगर गाँव की भूमि का ग्रामीकरण कर दिया जाय, तो मैं समझता हूँ कि परस्पर भाईचारे की भावना का विकास होगा। सभी ग्रामवासी पूरी शक्ति व स्वेच्छा से ग्राम रचना के कार्यों को सम्पन्न करेंगे। गाँव के वर्गीकरण के कारण आज सभी का सहयोग पाना असम्भव होता है। जब तक गाँव के सभी व्यक्ति ग्राम विकास में नहीं पड़ते, तब तक ग्राम-स्वराज्य स्थापित नहीं हो सकता।

मैं यह भी महसूस करता हूँ कि पंचायती राज्य के इस बड़े खतरे को मोल लिये बिना दूसरा कोई उपाय भी नहीं है। देश में अगर जनतंत्र कायम करना है, तो शासन का विकेन्द्रीकरण करना लाजमी है और ग्राम-इकाई के आधार पर व्यवस्थाएँ कायम करनी आवश्यक हैं। अन्य प्रदेशों में जो अनुभव आये हैं, उससे लगता है कि अभी से लोक शिक्षण का कार्य आरम्भ कर देना चाहिये। लोक शिक्षण केवल जनता का ही न हो, बल्कि कार्यकर्ताओं का, अधिकारियों का, पंचों व सरपंचों का भी होना चाहिये। इस योजना के अंतर्गत जो प्रशासनिक कर्मचारी नियुक्त हों, उनकी विशेषताएँ शिक्षण योग्यता पर आधारित न हों, बल्कि उनके पूर्व-जीवन तथा सामाजिक सेवाओं को भी प्राथमिकता दी जानी चाहिये। इन कर्मचारियों की नियुक्ति अगर जिले के स्तर पर स्वतंत्र समिति द्वारा की जाय तो शायद विचार वाले व्यक्ति आ सकते हैं। इस योजना की सफलता निष्ठावान कर्मचारियों पर भी अवलम्बित है।

पंचायती राज्य-स्थापना की दिशा सर्वोदय विचार के बड़े अंश को सम्पन्न करने में सहायक है, अतः सर्वोदय-कार्यकर्ताओं पर विशेष जिम्मेवारी है कि इस योजना को सफल बनाने के लिए वास्तविक विचार का प्रचार करें और लोक-शिक्षण के लिए विशेष आयोजन करें। अगर इस विचार के लिए जन-मानस तैयार होता है तो सम्भावित बुराइयों का प्रवेश कार्य-सम्पादन में नहीं हो सकेगा। देश के अधिकतर गाँव लोक-राज्य या ग्राम-स्वराज्य की दिशा में बढ़ते नजर आयेंगे।

———

आध्यात्मिक वृत्ति बनाम क्रांति-भावना

• मीरा भट्ट

प्रश्न : विनोबा कहते हैं कि इस आन्दोलन में क्रांति की भावनावाले कार्यकर्ता नहीं टिकेंगे, जो आध्यात्मिक वृत्ति के कार्यकर्ता हैं, वे ही टिकेंगे। आपका क्या मानना है ?

उत्तर : आध्यात्मिक बातों में मैं सबसे पहला अनुपयुक्त आदमी हूं। मैंने न कभी साधना की, न कभी प्रार्थना। त्याग दो प्रकार के होते हैं : पहले प्रकार में मनुष्य अपना आराम, संपत्ति आदि सब कुछ छोड़ देता है, लेकिन अपने को नहीं छोड़ता। कुछ लोग आकर मुझसे कहते हैं कि यहां हमारा विकास नही हो रहा है। तो जहां अपना विचार आता है, वहां आत्म-त्याग नहीं है। अरुचिपूर्ण होने पर भी जो आनंद दे, वह आत्म-त्याग है। उसमें अपने अलग विकास की आकांक्षा समाप्त हो जाती है। समाज का विकास ही मेरा विकास है, सेवा ही विकास का जरिया है—इत्यादि भावना जहां पैदा होती है, उसमें आध्यात्मिक विकास "बाइ-प्रोडक्ट" के रूप में हो जायगा। आध्यात्मिक निष्ठा याने क्या ? अपना जो इष्ट देवता है, उसके साथ तन्मयता। हमारा इष्ट देवता याने हमारा "उद्देश्य"। उसी उद्देश्य के लिए हमारी जितनी एकात्म-भावना होगी, उतनी हमारी आध्यात्मिक निष्ठा पनपेगी।

प्रश्न : सर्वोदय-पात्र के कार्यक्रम के विषय में आप क्या मानते हैं ?

उत्तर : जब तक सर्वोदय-पात्र नहीं होता है, तब तक जड़ नहीं बनती। जैसे सैनिक-शक्ति में 'परेड' होती है, वैसे ही यह त्याग-शक्ति की 'परेड' है। हमें इन्द्र-शक्ति की जगह शिव शक्ति स्थापित करनी है। इन्द्र-शक्ति याने वज्र-शक्ति और शिव-शक्ति याने तप और त्याग की शक्ति। शिव-शक्ति संगठित करने के लिए यह बुनियादी काम है। जब सर्वोदय-पात्र का विचार विनोबा को सूझा, तब उन्होंने कहा कि मैं ऋषि हो गया, यह अक्षरशः सही है। यह वैकल्पिक शक्ति का जरिया है। इसीसे अभ्यास होता है, लेकिन इससे शुरू नहीं करना चाहिये। क्रांति की बुनियादी प्रवृत्ति को ग्राम-भावना निर्माण होने के पहले नहीं शुरू करना चाहिये।

क्रांति की व्यूह-रचना में यह बुनियादी प्रवृत्ति है। इसलिए यहाँ भी मैंने सर्वोदय-पात्र का काम शुरू नहीं किया। पहली सभा में बात रख दी थी, लेकिन कार्यक्रम के तौर पर नहीं उठाया, तो क्रांति में भी "मार्जिनल एप्रोच" होना चाहिये।

जैसे अर्थशास्त्र में "मार्जिनल एप्रोच" होता है, वैसे सभी क्षेत्र में होना चाहिये, सांस्कृतिक क्षेत्र में भी। ग्राम-सेवा सफल होगी कि नहीं, उसमें कपड़े कैसे रहेंगे, यह भी निर्णायक होगा। हमारा बिलकुल सफेद, साफ-सुथरा कपड़ा सफाई की प्रेरणा नहीं दे सकता, और चाहे कोई भी प्रेरणा दे।

प्रश्न : विनोबा ने साथ-साथ यह भी कहा है कि 'सर्वोदय पात्र का कार्यक्रम असम्भव कार्यक्रम है, यद्यपि मैं उसे उठा रहा हूं,' ऐसा क्यों ?

उत्तर : वे मरने से पहले सब कुछ कह देना चाहते हैं, इसलिए कह देते हैं। वे न तो नेता हैं, न कार्यकर्ता; वे तो संदेशवाहक हैं। लेकिन उनकी यह जो लक्ष्य वाली बात है, यह समझ में नहीं आती। मैं तो उन्हें हमेशा कहता हूँ कि आप ही लाए 'शोशलिज्म' सिखाते हैं, इसके लिए जिम्मेदार आप ही हैं। वे आग्रह रखते हैं कि इतने शांति-सैनिक चाहिये, तो फिर बिहार में एक जिले में ७०० लोक-सेवक खड़े हो गये। उनमें ६२५ तो खादी-सेवक ही रहते हैं, बाकी जो रहते हैं, वे हैं जूठन चाटने वाले। कुमारप्पाजी को इधर का ही एतराज था।

प्रश्न : जे० पी० अभी लोक-स्वराज्य, पंचायतराज के बारे में जो कह रहे हैं, उसके बारे में आप क्या मानते हैं ?

उत्तर : अभी जे० पी० का जो चल रहा है, वह शासन-निरपेक्षता की बात नहीं है। इसमें शासन को नियंत्रित करने की बात है। यह भी तो अच्छा ही है। अगर शासन जनता के नियंत्रण में आ जाता है, तो सर्वोदय को प्रारम्भिक बिंदु मिल जाता है। ऐसे काम इतिहास की कड़ी होते हैं। अगर कड़ी के स्वरूप में सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, लोकमान्य आदि न होते तो गांधीजी को रिस्पान्स, मौका नहीं मिलता। जे० पी० की बात से लोग अगर महसूस करेंगे कि हम मालिक हैं, तो आगे का काम सरल होगा। लोगों को कहेंगे कि आप अगर मालिक हैं तो आपका 'बजट' आप बनाइये। हम आगे जाकर पूछेंगे कि अगर तुम मालिक हो तो अपने लिए इतना महँगा नौकर क्यों रखते हो ? तो ऐसे कार्यक्रम कड़ी के रूप में काम आते हैं। यह जोड़ने का कार्य आज सर्व-सेवा-संघ कर रहा है। बाद का काम या तो सर्व-सेवा-संघ भी कर सकता है, या कोई नया संगठन भी करे। यह तो नेतृत्व पर निर्भर है।

प्रश्न : आप एक ओर समाधार की बात करते हैं और दूसरी ओर सर्वोदय-पात्र को समर्थन दे रहे हैं, तो सर्वोदय-पात्राधारित कार्यकर्ता आपके विचार से सुसंगत है ?

उत्तर : सर्वोदय-पात्र के आधार पर ही लोकसेवक का गुजारा सदा के लिए चले, यह बात शास्त्र में बैठती नहीं। भिक्षा अब "आउट आफ डेट" हो गयी है, यह अब चलने वाली चीज नहीं है। इस युग में उसे पुनर्जीवित नहीं कर सकते। वर्गविहीन समाज में भिक्षु-संप्रदाय नहीं बैठता। सामंतवादी समाज-रचना में यह हो सकता है। इसलिए शांति-सैनिक का यह कोई स्थायी कार्यक्रम नहीं है। संक्रमण काल में शांति-सैनिक, लोकसेवक वर्ग जनाधारित हो सकता है। लेकिन आखिर में लोक-सेवक को नागरिक ही बनना पड़ेगा। अगर लोकसेवक नागरिक बनता नहीं, तो लोगों की जीवन-वीणा के तार में झंकार नहीं होगा।

आज हम १३५ मन अनाज लेते हैं। अब कल अगर अनावृष्टि हो जाय या अकाल पड़े, तो भी हमारे लिए बाहर से १३५ मन ला दिया जाय, तो गाँव की जिन्दगी के उत्थान-पतन के साथ हमारा कोई ताल्लुक नहीं रहेगा। हम मानते हैं कि सेवा के लिए हममें अपात्रता आ गयी। अभी हमारा जीवन का मानदंड इन लोगों से कुछ ऊँचा है। लेकिन "अप्स और डाउन्स" का आलेख उतना ही रहना चाहिये, अन्यथा उनके लिए सहानुभूति प्रकट नहीं होगी। सहानुभूति तब होती है, जब समान रूप से सह-अनुभूति होती है। उनके और हमारे जीवन-संघर्ष के प्रकार में फर्क रहेगा तो सह-अनुभूति नहीं होगी और जहाँ सहानुभूति नहीं होगी, वहाँ सेवा की प्रेरणा नहीं होगी। प्रकार में फर्क नहीं होना चाहिये, आकार में भले ही हो जाय। फसल कम आयेगी तो दोनों को सहन करना पड़ेगा। बाकी भिक्षु-सम्प्रदाय हमारे समाजशास्त्र में नहीं बैठता, सामंतवाद में सेवा समाज का एक कार्य ही था, ब्राह्मणों का कार्य था, परन्तु हमारी कल्पना के समाज-शास्त्र में सेवा किसी का पेशा हो, यह नहीं चलेगा। अब विनोबा के मानस में ब्राह्मण-संस्कार है, इसलिए ऐसा हो जाता है। मैं मानता हूं कि इसमें परिव्राजक का काम तो चलेगा, लेकिन सर्वोदय-पात्र से गृहस्थ लोकसेवक स्थायी आधार से रह सकेंगे, इसमें मेरा मत-भेद है।

१९२३ की बात है। हम लोग स्वराज-आन्दोलन में घूमते थे और कहते थे, गांधीजी रोज ६ पैसे का खाना खाते हैं। एक दिन एक बूढ़े चमार ने हमें खूब सुनाया। कहने लगा, 'बाबा, गांधी रोज ६ पैसे का खाता है, यह तो ठीक है, लेकिन उसको छह पैसे कहाँसे मिलेंगे, इसकी चिन्ता नहीं करनी पड़ती, जो हमें करनी पड़ती है।' यह जो संघर्ष है, वह हम नहीं जानते। यह हो सकता है कि पहले हमारा ५०० रुपये में चलता हो और अब हम ५० रुपये में चला लेते हों। इसमें त्याग जरूर है, लेकिन इसमें जनता के जीवन-संघर्ष का अनुभव हमें नहीं होता। जैसे कालप्रास होता है, वैसे शोक-दुःख, पाप-पुण्य और त्याग का भी ग्रास हो सकता है। दो-चार वर्षों में हम 'लेवल' को 'एडजस्ट' कर लेते हैं, परन्तु जीवन-संघर्ष नहीं होगा, जो तक-लीफ नागरिकों को होती है, उसका अनु-भव नहीं कर सकेंगे। जैसे बालवाड़ी का शिक्षक माँ का प्यार नहीं अनुभव कर सकेगा, वैसी ही यह बात है। तो हम नागरिक होने का संकल्प करें। जब तक संकल्प पूरा नहीं होता, तब तक चाहे जो करें। केवल संचित निधि न हो, फिर चाहे वह संस्था की हो या व्यक्ति की।

अभिक्रम की बुद्धि क्रांतिकारी में चाहिये। आजादी के आन्दोलन के जैसे सेवक अब नहीं चलेंगे। सेवक में गुरु का गुरुत्व चाहिये। मैंने नाम ही शिक्षक-सेवक रखा है। ऐसे कार्यकर्ता जो होंगे, वे नींव डालेंगे, बाकी जो त्यागी और भावनाशील-कार्यकर्ता होंगे, वे सेवक के साथ रहेंगे। वे खुद नहीं बैठ सकते, लेकिन साथ में रहेंगे। वे भी बहुत उप-योगी हैं।

प्रश्न : संत-प्रभावमुक्त और प्रलो-भन-मुक्त ऐसे स्वतंत्र रूप से ग्रामदान-प्राप्ति की प्रक्रिया क्या हो सकती है ?

उत्तर : आजकल जो ग्रामदान हुए हैं, उन्हें मैं "संत निष्पत्ति" कहता हूं। स्वतंत्र रूप से ग्रामदान-प्राप्ति के लिए मैंने आठ कदम बताये हैं, वे हैं :

(१) ग्राम-भावना (२) ग्राम-सह-कार (३) ग्राम-संकल्प (४) ग्राम-दाक्षिण्य (५) ग्रामश्रम (६) ग्राम निर्माण (७) ग्राम-भारती (शिक्षण) (८) ग्राम-स्वराज्य।

आज तो गाँव भी नहीं है, समाज भी नहीं। एक जंगल है। गाँव में चरित्र ही नहीं है। गाँव में कुछ-न-कुछ होता रहे, इस भावना के कुछ अंकुर हैं, उनको विकसित करना होगा। सामूहिक पुरु-षार्थ में अधिक सुरक्षा है, इतना अगर सिद्ध हो जाता है तो लोग ग्रामदान के लिए तैयार हो जायेंगे। विशेष साधन

कैसा जीवन ?

काका कालेलकर

बचपन के दिन याद आते हैं। उन दिनों रेलगाड़ी बिलकुल नयी चीज थी, गोरे लोगों का राज था। फर्स्ट क्लास के डिब्बों का रंग सफेद, सेकण्ड का हरा और तीसरे दर्जे का रंग आज है, वैसा रहता था। फर्स्ट क्लास में गोरे लोग ही बैठते थे। राजे-महाराजे शायद बैठते होंगे। सेकण्ड क्लास में साहब लोग ही बैठते थे। थोड़े देशी अमले और अर्धगोरे लोग बैठते थे। देशी लोगों के लिए तीसरा दर्जा ही था, जिसमें टट्टी की व्यवस्था न थी। पेशाबघर भी न था। स्टेशन आते ही लोग दौड़ कर शौचालय ढूंढ़ते थे। गाड़ी छूटी तो हम रह जायेंगे, इस डर से और शौचालय का उपयोग किस तरह से किया जाय, इसका ज्ञान न होने से लोग सारा स्थान बिगाड़ देते थे ! पानी का लोटा तो साथ लेते थे, लेकिन उसे रखने की जगह शौचालय में हो तब न ? पुरानी लज्जा, शरम और स्वच्छता सब छोड़ कर मनुष्य को प्राकृतिक व्यापार करने पड़ते थे। बैठने के लिए जगह नहीं, असबाब रखने की जगह नहीं और देशी कर्मचारी गोरे लोगों का अनुकरण करके यात्रियों के साथ ऐसा ही व्यवहार करते थे, जैसा कि गुनहगारों के साथ !

रेलगाड़ी नई चीज थी। थोड़े समय में और थोड़े पैसे में दूर तक ले जाती है और बैल या घोड़े के बिना चलती है, इस आश्चर्य में लोग अपना सारा दुख डुबो देते थे और भूल जाते थे। लोकशिक्षण की आवश्यकता उन दिनों स्वीकृत नहीं थी। कष्ट सहन करते-करते हमारी जनता तैयार हुई। ठोकर-ठोकर पर जो ज्ञान मिलता था, वही था लोकशिक्षण।

उन दिनों एक विचार मन में आता था कि लोगों को घण्टों तक स्टेशन पर बैठना पड़ता ही है। उनको इकट्ठा करके मुसाफिरी के नियम समझाये जाते, लोकशिक्षण का प्रयोग किया जाता तो हमारे लोग जैसे अबूझ और असहकारी दीख पड़ते हैं, वैसे दीख न पड़ते। रेलवे की संस्कृति नई है, उनसे परिचित नहीं है। इस वास्ते वे इतने अव्यवस्थित, असहकारी और गन्दे दीख पड़ते हैं।

जहाँ पुराने ढंग से सैकड़ों और हजारों लोग भोज के लिए एकत्र आते हैं, वहाँ उनकी निजी संस्कृति दीख पड़ती है। वहाँकी व्यवस्था उन्हें परिचित होती है, वहाँ गड़बड़ी नहीं होती। समय बचाने के लिए दौड़ना नहीं पड़ता। गोरे लोग जो नई संस्कृति ले आये, उसके प्रारम्भ के साथ अगर लोकशिक्षण ले आते और प्रेम और धैर्य के साथ लोगों को उन्हींकी भाषा में सिखाते तो सबका कल्याण हो जाता। हमारी अव्यवस्था और स्वार्थमूलक अन्धेपन का कारण ये गोरे लोग ही हैं और हमारे लिए अपरिचित ऐसी उनकी परायी संस्कृति ही है।

लेकिन जब हम सोचने लगे कि अपनी संस्कृति के नियम क्या हैं, व्यवस्था क्या है और लोगों में उसके संस्कार कहाँ तक दृढ़मूल हुए हैं, तब ज्यादातर निराश ही होना पड़ा !

हमारे लोग प्राचीन काल से तीर्थस्थान की यात्रा करते हैं। गरीब लोग पैदल यात्रा भी करते हैं। मध्यम वर्ग के लोग पालकी, मेणा आदि साधन लेते हैं। घोड़े पर चढ़ने वाले भी लोग होते हैं। हरएक पड़ाव में धर्मशाला होती है। लोग पेड़ के नीचे तीन पत्थर रख कर कामचलाऊ चूल्हा बनाते हैं, खाना पकाते हैं और वहीं रात को सोते भी हैं। लोगों की सादगी और सूझ देखकर सन्तोष हुआ। लेकिन वहाँ पर भी जैसी सुव्यवस्था होनी चाहिए वैसी दीख नहीं पड़ी। जैसे तो भी करो, लेकिन कुछ-न-कुछ करो और प्रसंग को निभा लो, यही वृत्ति दीख पड़ती थी। जीवन सबके लिए सुखमय, सुव्यवस्थित होना चाहिये, इस ओर किसीका ध्यान ही नहीं।

जनेऊ मिलते ही हम सन्ध्यावन्दन करने लगे। आचमन के लिए कटोरे से पानी बार-बार लेना पड़ता था। उसके लिए हमें एक आचमनी मिली। उसका आकार देख कर पुरानी कला का ख्याल आया। लेकिन उसमें सहूलियत नहीं थी। बाद में जब गोरे लोगों के देश से चम्मच आने लगे, तब मन में चम्मच की और आचमनी की तुलना होने लगी। चम्मच का आकार कितना अनुकूल था ! चम्मच से हम दूध पी सकते थे, आचमनी से नहीं। चम्मच मांजना और साफ करना आसान था। आचमनी की कठिनाई स्पष्ट थी। ख्याल आया कि हमारे लोग सहूलियत का ख्याल ही नहीं करते। कष्ट उठाने को तपस्या का रूप दिया और छुट्टी पायी। दिमाग न चलाने का दोष ढँक गया। आचमनी में तरह तरह की कला आयी, किन्तु सुभीता न आया, स्वच्छता न आयी और चन्द आचमनियाँ वजन में इतनी बढ़ीं कि उनका बोझ सहन करते मन अप्रसन्न होने लगा।

हमारे घर के बरतन कलापूर्ण होते हैं। उनमें सहूलियत का कुछ ख्याल भी रहता है, किन्तु पूर्ण रूप से नहीं। थोड़ा दिमाग चलाया और थक गये और एक रूप के आदी बन गये तो उसीको कायम किया। बरतनों में नये-नये सुधार करने की बात किसीको सूझी ही नहीं !

जीवन में भी हमने व्यापक दृष्टि से कभी सोचा नहीं है। हमारे कपड़े और अंगरखे हमने प्रथम मुसलमानों से लिये, बाद में अंग्रेजों से। हर तरफ से हमने कला की प्रगति की, सहूलियत की नहीं।

मन में विचार आया कि रेलवे तो गोरों की ईजाद है, हमारे लिए नई है। किन्तु नदी पार करने की किश्तियाँ तो हमारे यहाँ हजारों बरसों से हैं। नदी पार करने की और समुद्र-यात्रा की भी आदत हमारे लिए नई नहीं है। लेकिन उसमें भी हमारी सूझ कम दीख पड़ती है। अज्ञानता, रूढ़िनिष्ठा, सहनशीलता और अबूझ ही सर्वत्र प्रकट होती है।

हर साल हम अखबार में पढ़ते हैं कि ज्यादा लोगों के बैठने से फलानी किश्ती डूब गयी। लोग दुखी होते हैं। मरे हुओं का श्राद्ध करते हैं। लेकिन ऐसी दुर्घटना टालने का उपाय आज तक कभी भी किसी ने नहीं किया।

हर साल हम मोटर-गाड़ी के नये-नये मॉडल देखते हैं, खरीदते हैं, उनकी कदर करते हैं। लेकिन पूना के तांगे, बनारस की टमटम, मद्रास की गाड़ी और हिमालय की कण्डी या झंपन, किसीमें भी हमने सुधार नहीं किया। पहले से जो चला आया, उसीको आगे चलाया।

किश्ती का ही उदाहरण ले लें। किश्ती में कितने लोग अच्छी तरह से बैठ सकते हैं, इसका हिसाब लगा कर उससे ज्यादा लोग न बैठें, ऐसा इन्तजाम करना कठिन नहीं है। लेकिन हम करते ही नहीं। उसके लिए कानून बनाये, तो भी उनका पालन नहीं करते। हम मानते हैं कि चार-दस आदमी ज्यादा बैठें तो भी चल जायगा।

'चल जायगा', यही है हमारे स्वभाव का और संस्कृति का सूत्र। एक ओर हिसाब, दूसरी ओर 'चल जायगा' का अन्धा सूत्र ! इन दो में से यह अन्धा सूत्र ही हमारी संस्कृति का सामान्य लक्षण दीख पड़ता है। गाड़ी में या बस में हद से ज्यादा लोग बैठते ही हैं। किश्तियाँ हर साल डूबती हैं। यह अनुभव किसी एक प्रान्त का नहीं है। बंगाल से लेकर पंजाब तक और कश्मीर से लेकर कन्याकुमारी तक एक ही बात सुनने को मिलती है।

हमारा दिमाग चलता है केवल धार्मिक आचार-विचार में। शाक्तों ने और वैष्णवों ने अपने-अपने ढंग का आचार-विचार सर्वत्र एक सा चलाया है। सूक्ष्मातिसूक्ष्म ब्यौरा निश्चित हो चुका है। उपदेशक और प्रचारक उसमें तनिक भी गफलत नहीं होने देते। कहावत जैसी स्थिर है, वैसे ही हमारे धार्मिक विधि स्थिर हैं। जिस प्रान्त की भाषा का एक अक्षर भी मैं नहीं जानता, उस प्रान्त में जब लोग श्राद्ध आदि विधि करते हैं, तब उनकी नुक्ताचीनी भी मैं कर सकता हूँ, क्योंकि आसेतु हिमाचल एक ही पन्थ के विधि एक-से होते हैं।

पश्चिम से जो किश्तियाँ आती हैं, उनमें हम नये-नये सुधार देखते हैं। बड़ा जहाज हो या छोटा स्टीमलॉंच (बाष्प) हो, नये नये सुधार होते जाते हैं। लेकिन हमारी नदी की किश्तियाँ हजारों बरस से वैसी-की वैसी हैं। मानो काल और दिमाग स्थगित हो गये हैं। चलना ही भूल गये हैं।

अगर कहीं रेलवे की दुर्घटना हुई तो वह क्यों हुई, कैसी हुई, कसूर किस का था, व्यवस्था में खामी कौन सी थी, इसका निर्णय करने के लिए 'कमीशन' बिठाया जाता है, लेकिन जब नदियों में किश्तियाँ डूबती हैं, तब वह तो नसीब का खेल है ! देव और दैव, दोनों की कृतियाँ मान्य करना यही हमारा धर्म है। नई दुनिया नये ढंग से चलेगी। पुरानी दुनिया पुराने ढंग से चलेगी, यही है हमारी राष्ट्रनीति। इन दोनों का समन्वय तो क्या, एकत्र चिन्तन भी हमें मान्य नहीं है। मध्वाचार्य ने सही कहा था कि भेद ही सही है। लेकिन जीवन में यह नहीं चलेगा। योजना-आयोग में यह एक नया विभाग या महकमा खोलना पड़ेगा, जिसमें जीवन के अंग प्रत्यंग में सुधार हो सकता है, इस विश्वास से चिन्तन चला कर केवल उद्योगों में नहीं, किन्तु सारे जीवन क्रम में सुधार करना ही होगा।

['मंगल प्रभात' से]

बढ़कर आर्थिक स्थिति बढ़ा देंगे, तो उससे श्रमदान की प्रेरणा नहीं होगी। वह प्रेरणा तो, किसी व्यक्ति को साधन दिये जायँ तो, वह भी कर सकता है। व्यक्तिगत पुरुषार्थ से सामूहिक पुरुषार्थ में विकास की संभावना अधिक है, यही हमें सिद्ध करना है।

प्रश्न : इसमें 'टाइम फैक्टर'—कालतत्त्व का भी तो सवाल है।

उत्तर : क्रांति में कोई काल नहीं होता है। अनंत काल भी लग सकता है और इसी क्षण भी हो सकता है। क्रांति का कोई भूगोल नहीं, क्रांति का कोई काल नहीं। वह कहीं भी, कभी भी हो सकती है। "टाइम फैक्टर"—कालतत्त्ववाली बात जिस कार्यकर्ता के मन में आयी हो, वह कार्यकर्ता हुआ समझो। क्रांतिकारियों की जल्दबाजी के कारण ही प्रतिक्रांतियाँ दुनिया में हुई हैं।

मासिक चिट्ठियाँ: बिहार की चिट्ठी

बिहार सरकार ने 'लेवी' कानून में २५ दिसम्बर, '६१ या उसके बाद भूदान में जमीन देने वालो को 'लेवी' में मिन्हा करने का समावेश किया है। बिहार सर्वोदय मंडल की कार्यसमिति एव विशेष आमन्त्रितों की बैठक १६ फरवरी को महिला चरखा समिति के भवन में श्री ध्वजाप्रसाद साहु की अध्यक्षता में हुई। बैठक में 'श्री जयप्रकाश नारायण भी उपस्थित थे। 'बीघा-कट्ठा अभियान' की सफलता के लिए विस्तार से विचार-विमर्श हुआ। कार्यसमिति की बैठक के पहले प्रमुख लोगों की अनौपचारिक बैठकें १४ और १५ फरवरी को हुईं।

बैठक में रचनात्मक संस्थाओं के प्रतिनिधि भी शामिल थे। बैठक के निश्चयानुसार बिहार के १७ जिलों में 'बीघा कट्ठा-अभियान' चलने के लिए १७ संचालकों की नियुक्त की गयी है। बिहार के बाहर से आये हुए कार्यकर्ताओं में से एक सहायक संचालक बनाये जायेंगे। संचालक एवं सहायक संचालकों की पंचदिवसीय शिविर का आयोजन १ अप्रैल से ५ अप्रैल तक पूर्णियाँ जिले के नरपतगंज में किया जा रहा है।

शिविर में बीघा-कट्ठा कार्यक्रम का व्यावहारिक प्रदर्शन करने का प्रयास किया जायगा। अनुमान है कि लगभग चार हजार कार्यकर्त्ता १५ अप्रैल से १५ जून तक, दो महीने तक 'बीघा-कट्ठा अभियान' में सघन रूप से जुट पड़ेंगे। राष्ट्रीय स्तर के सर्वोदय एवं राजनीतिक नेताओं को अभियान में सहयोग देने के लिए निमन्त्रित किया जा रहा है।

३० जनवरी से १२ फरवरी तक बिहार के विभिन्न स्थानों में सर्वोदय-कार्यक्रम को विशेष रूप से कार्यान्वित करने का प्रयास किया गया। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, गांधी-स्मारक-निधि आदि संस्थाओं ने अपने सभी शाखाओं को 'सर्वोदय पखवारा' के अवसर पर खादी-ग्रामोद्योग आदि का प्रचार विशेष रूप से करने का निर्देश दिया। श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के नेतृत्व में पूर्णियाँ जिले में ३० जनवरी से १२ फरवरी तक पदयात्रा का आयोजन किया गया। मुंगेर शहर में बिहार सर्वोदय मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह एवं जिला सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री गोखले भाई के प्रयास से प्रतिदिन नगर के विभिन्न मुहल्लों में आम सभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर सर्वोदय-गायक हरि भाई ने विभिन्न महल्लों में घूम-घूमकर सर्वोदय-सन्देश लोगों को सुनाया। १२ फरवरी को पटना गांधीघाट पर सूत्रयज्ञ और सर्वधर्म प्रार्थना का कार्यक्रम आयोजित किया गया।

खादी-कमीशन की सहायता से बिहार सर्वोदय मंडल के तत्त्वावधान में सिक्किम में खादी-प्रचार का कार्य शुरू किया गया है। सिक्किम-निवासियों को कम्बल-बुनाई एवं अन्य ग्रामोद्योग में प्रशिक्षित करने की व्यवस्था की जा रही है।

आम चुनाव में लोकनीति कार्यक्रम

बिहार के राजनीतिक दल द्वारा स्वीकृत आचार मर्यादा के प्रचारार्थ विभिन्न स्थानों पर सम्मिलित मंच का आयोजन तो किया ही गया, चुनाव में खड़े सभी उम्मीदवारों से मिल कर एवं पत्र द्वारा आचार-मर्यादा के पालन हेतु निवेदन किया गया। सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं ने चुनाव के अवसर पर विभिन्न क्षेत्रों में जाकर स्थिति का अध्ययन किया। स्वीकृत मर्यादा का पालन बहुत कम अंशों में लोगों ने किया।

सर्वोदय पात्र

पटना नगर में सर्वोदय-पात्र का कार्यक्रम कई कारणों से व्यवस्थित ढग से नहीं चल सका, फिर भी कुछ परिवारों से मिलकर अन्न-संग्रह का प्रयास किया गया है।

आदर्श ग्राम

बाढ़ से ध्वस्त गाँवों को नये सिरे से बसाने की योजना पर भी विचार विमर्श किया गया और बिहार सर्वोदय-मंडल की देख-रेख में लगभग एक दर्जन गाँव बसाने की योजना है। इस सम्बन्ध में बिहार-सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह ने अन्य सहयोगियों के साथ बिहार सरकार के राहत-अधिकारी श्री हरिवंश नारायण सिंह से मिल कर सर्वोदय-मंडल की योजना बतायी। बिहार सरकार की निश्चित नीति इस सम्बन्ध में निर्धारित नहीं हो सकी है। अतः आदर्श ग्राम सम्बन्धी योजना में कोई विशेष प्रगति नहीं हो सकी।

हस्ताक्षर आन्दोलन

अणुबम-परीक्षण के विरोध में हस्ताक्षर-आन्दोलन जोर से चलाया जा रहा है। राज्य के विभिन्न स्थानों से हस्ताक्षर कराकर बिहार सर्वोदय मंडल के कार्यालय में फार्म भेजा गया है। ३१ मार्च तक इस आन्दोलन को चलना है। अन्य सर्वोदय कार्यों के साथ साथ हस्ताक्षर आन्दोलन भी चलाया जा रहा है।

—रामनन्दन सिंह

विश्व-दर्शन

फीजी द्वीप समूह की चिट्ठी

गत दिसम्बर में जब धारासभा की 'बजट'-बैठक हुई थी, तो उसमें कई विधेयक उपस्थित किये गये थे। उसमें एक विधेयक निर्वाचन-पद्धति में सुधार लाने पर था, दूसरा देश के संविधान में परिवर्तन लाने के सम्बन्ध में था।

इस अवसर पर फीजी के गवर्नर महोदय ने कहा था कि धारासभा के सदस्यों की संख्या में वृद्धि की जायगी। आगामी धारासभा में चार यूरोपियन, चार फीजियन (काईवीती) तथा चार भारतीय सदस्य जनता द्वारा चुने जायेंगे।

दो फीजियन सदस्य 'कौंसिल ऑफ चीफ्स' चुनेगी तथा दो यूरोपियन और दो भारतीय सदस्यों को स्वयं सरकार मनोनीत करेगी।

इस परिवर्तन के फलस्वरूप वर्तमान धारासभा की अवधि बढ़ा दी गयी है। जो चुनाव इसी वर्ष सितम्बर में होने को था, अब वह अगले साल, सन् '६३ में होगा।

सन् '६३ के चुनाव में महिलाओं को भी मत देने का अधिकार रहेगा। फीजी की महिलाओं को यह हक प्रथम बार प्राप्त होगा।

धारासभा के इसी अधिवेशन में जनता को सावधान करते हुए फीजी के अर्थमन्त्री श्री रिची ने कहा था कि संसार का चीनी-बाजार सीमित है तथा उस पर भरोसा नहीं किया जा सकता। उन्होंने आगे कहा कि खुले बाजार में चीनी का दाम बहुत कम है।

विगत जनवरी में फीजी की धारासभा की एक विशेष बैठक हुई थी। इस अधिवेशन में चीनी जाँच-आयोग की रिपोर्ट पर सविस्तार विचार किया था। फलस्वरूप फीजी में चीनी उद्योग की देख-रेख के लिए 'चीनी उद्योग सलाहकार परिषद्' और 'चीनी उद्योग मंडल' की स्थापना कर दी गयी थी।

'चीनी उद्योग सलाहकार परिषद्' में तीन स्वतंत्र तथा निष्पक्षीय सदस्यों के अतिरिक्त कम्पनी, किसान और चीनी मिल-मजदूरों के भी प्रतिनिधि रहेंगे। इस कौंसिल के प्रधान पद पर सर आर्थर सेण्डर्स की नियुक्ति हुई है और किसानों के अग्रगण्य प्रतिनिधि के रूप में श्रीमत् स्वामी रुद्रानन्द जी कार्य करेंगे।

'चीनी उद्योग सलाहकार परिषद्' अपने कार्यों में संलग्न है। गन्ने के नये शर्तनामे पर विचार कर रही है। फेडरेशन कमिटी की ओर से सब जिलों में किसानों की सभाएँ भी हो रही हैं। नये प्रस्तावित शर्तनामें का किसान विरोध कर रहे हैं।

किसान-सभा के महामन्त्री श्री अयोध्या प्रसाद ने किसानों को नये शर्तनामे को ज्यों का त्यों मान लेने की सलाह दी है।

चीनी जाँच-आयोग के सुझावों के अनुसार 'कोलनियल शुगर रिफाइनिंग कंपनी लि०' को अपनी व्यवस्था में परिवर्तन लाने पड़े हैं। अब कम्पनी का नया नाम 'साउथ पैसिफिक शुगर मिल्स लि०' पड़ा है। परिवर्तन के लिए कम्पनी को एक लाख पौण्ड 'स्टाम्प ड्यूटी' की छूट दे दी गयी है।

फीजी के मजदूर वर्ग में असन्तोष बढ़ रहा है। विगत जनवरी में 'होलसेल एण्ड रिटेल वर्कर्स जनरल यूनियन'—थोक और फुटकर बिक्री कर्मचारी संघ के सदस्यों ने हड़ताल कर दी थी। फीजी के रजिस्ट्रार-जनरल श्री ग्रेग ने इस 'युनियन' की कार्यवाहियों की जाँच करवायी थी।

फलस्वरूप रजिस्ट्रार ने युनियन के प्रधान श्री महादेवसिंह तथा मंत्री श्री महम्मद तोरा के साथ साथ बारह अन्य सदस्यों को आदेश दिया कि कानूनन वे इस यूनियन की सदस्यता का अधिकार नहीं रखते।

श्री तोरा मैजिस्ट्रेट तथा रजिस्ट्रार के निर्णय से सहमत नहीं हुए उन्होंने उनके आदेश का पालन करने से इन्कार कर दिया।

श्री तोरा ने यह घोषणा की कि वे समुचित न्याय की माँग करते हैं और 'प्रिवी कौंसिल' तक मामले को ले जायेंगे।

विगत जनवरी को सूवा में 'इण्डियन असोसिएशन ऑफ फीजी' का एक वृहत् अधिवेशन वयोवृद्ध भारतीय नेता श्री सी० चतुरसिंहजी के सभापतित्व में हुआ। असोसिएशन ने प्रस्तावों द्वारा ब्रिटिश न्यायप्रियता में विश्वास दर्शाते हुए यह आशा प्रकट की कि जब फीजी को स्थानीय स्वशासन मिलेगा तो यहाँ बसी प्रत्येक जाति के लोगों के हितों की रक्षा न्यायपूर्ण ढंग से की जायेगी। सभा ने काईवीती, यूरोपियन तथा अन्य लोगों को आश्वासन दिलाया कि भारतीय जनता किसी भी जाति का अधिकार नहीं छीनना चाहती, बल्कि सबसे सहयोग करके समस्त फीजी की उन्नति के लिए काम करना चाहती है।

पिछले वर्ष के अन्त में श्रीमत् स्वामी वल्लभदासजी अपने अन्य दो साथियों सहित भारतीय संगीत के प्रचार हेतु फीजी द्वीपसमूह पधारे थे।

अपनी कला के प्रचार तथा प्रदर्शन के लिए सरोदवादिका श्रीमती शरण रानी और तबलावादक श्री चतुरलाल भी दिसम्बर में फीजी आये थे।

गत वर्ष फीजी-निवासी भारतीयों का एक दल एयर-इण्डिया के भारत-दर्शन-योजना के तत्त्वावधान में भारत गया था। यह दल लगभग दो मास तक भारत के भिन्न भिन्न मनोरम दर्शनीय स्थानों का भ्रमण करता रहा। अब यह दल पुनः फीजी आ गया है।

—आर० एन० गोविन्द

आजमगढ़ की चिट्ठी

आजमगढ़ जिले में वयोवृद्ध जनसेवक व भूतपूर्व सदस्य लोकसभा श्री सीतारामजी अस्थाना का मार्गदर्शन, श्री अवधबिहारी पाण्डेय, आचार्य हरिजन गुरुकुल दोहरीघाट और अध्यक्ष जिला सर्वोदय मंडल का सक्रिय सहयोग पाकर जिला सर्वोदय-मंडल एक सक्रिय एवं प्राणवान इकाई बन गया है।

१२ जून से १२ फरवरी तक के कार्य का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है।

(१) साहित्य-प्रचार : साहित्य-प्रचार-पखवारे में व उसके बाद कुल लगभग ६०० रु० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। साहित्य बिक्री में चार पहिये वाली खोमचे-गाड़ी पर पोस्टर आदि लगा कर शहर में फेरी की गयी। जुलाई से 'भूदान-यज्ञ' व 'भूदान तहरीक' की एजेन्सी शुरू की गयी। २० हिन्दी 'भूदान-यज्ञ' व ५ उर्दू 'भूदान-तहरीक' शुरू कर के नवम्बर तक ८० हिन्दी भूदान-यज्ञ व २० उर्दू तक लाकर रोक दिया गया है। आजमगढ़ नगर के अतिरिक्त दोहरीघाट में भी 'भूदान-यज्ञ' की २५ व मुस्तानीपुर में १० प्रतियाँ खप रही हैं। नगर में सर्वोदय स्वाध्याय-मण्डल भी सर्वोदय मण्डल की ओर से खोला गया है, जिसमें प्रति रविवार को अध्ययन-गोष्ठी हुआ करती है।

(२) सर्वोदय-पात्र : अनुमान से लाभ उठा कर सर्वोदय-पात्रों की संख्या बढ़ाने पर जोर नहीं लगाया गया। लगभग ५० पात्र नगर में व २५ देहाती क्षेत्रों में चल रहे हैं।

(३) सूतांजलि : आजमगढ़ जिले में स्व० स्वामी सत्यानन्दजी की तपस्या के फलस्वरूप खादी-कार्य की स्थिति अच्छी है। श्री गांधी आश्रम, हरिजन गुरुकुल दोहरीघाट, सघन क्षेत्र विकास समिति दोहरीघाट, ग्रामराज्य आश्रम विनोबापुरी आदि प्रमुख रचनात्मक संस्थाएँ हैं। ये संस्थाएँ कत्तिनों से सूतांजलि लिया करती थीं। विद्यालयों से भी कुछ गुंडियाँ आ जाती हैं। इस वर्ष यह सोच कर कि हमारी गुंडियाँ सचमुच सर्वोदय की वोट हों, १९ जनवरी से १२ फरवरी तक सूतांजलि-अभियान चलाया गया। रचनात्मक संस्थाओं के उत्पत्ति व खरीद बिक्री के २९ केन्द्रों पर ३६ दिन सर्वोदय मेलों का आयोजन किया गया। कत्तिनों के द्वारा सूत दान व सूतांजलि-अर्पण का कार्यक्रम कई केन्द्रों पर बड़ा ही स्फूर्तिदायक रहा। चरखा चलाने वालों तक सीधे पहुँचने का एक अच्छा साधन सूतांजलि-अभियान सिद्ध हुआ। कत्तिनों के अतिरिक्त माध्यमिक माध्यमिक एवं उत्तर विद्यालयों व ग्रामीण लोगों के बीच भी इसी बहाने सर्वोदय-विचार रखने का अच्छा मौका मिला। अभी सब गुंडियाँ इकट्ठी तो नहीं हो सकी हैं, किन्तु उम्मीद है कि हम अपने लक्ष्यांक २५,००० के पास पहुँच सकेंगे। इस अभियान में रचनात्मक संस्थाओं ने सराहनीय सहयोग किया है। श्री गांधी आश्रम, आजमगढ़ के व्यवस्थापक श्री दलजीत भाई ने हरिजन गुरुकुल खादी-ग्रामोद्योग-समिति के व्यवस्थापक श्री देवपति मिश्री ने काफी दिलचस्पी से सहयोग किया।

(४) लोकनीति, शांति-सेना : जिले की प्रमुख राजनैतिक दलों की संयुक्त सभा में आचार-संहिता बनायी गयी। सभाओं व पर्चों के द्वारा जनता के लोक-शिक्षण का कार्य किया गया है। जिले में 'शांति-सभा' नाम से एक संगठन किया गया है, जिसके अध्यक्ष श्री सीतारामजी अस्थाना हैं। लगभग ८-१० मामलों में शांति-सभा ने समझौता कराया। ६ कार्यकर्ता, ४ भाई, व २ बहनें बिहार के बीघाकट्ठा आन्दोलन में गये थे।

(५) नशा-निषेध : जिला सर्वोदय मंडल, आजमगढ़ के अध्यापक श्री हीरालालजी महाशय नशा निषेध के विषय में सराहनीय कार्य करते हैं। महाशयजी के सामने से कोई भी सामान्य या विशिष्ट आदमी यदि नशे का उपयोग करते दीख पड़ेगा तो बिना उसे समझाये जाने नहीं देंगे। जो लोग मान जाते हैं, उनसे हाथ की सुर्ती, बीड़ी आदि दान मांग लेते हैं। और कहते हैं कि समझ बूझकर दान देना।

अर्थ संग्रह अभियान : अर्थ-संग्रह-अभियान हम लोग थोड़े दिन ही चला सके, जिसमें २५२-८४ न० पै० मिले थे। उसका १।६ हिस्सा अ० भा० सर्व सेवा-संघ के पास जमा किया। श्री धीरेन्द्र भाई की ग्राम-भारती योजना में भी श्री ब्रजबिहारी राय व श्री मेवालालजी दो साथी लगने वाले हैं। ग्राम चुनने की बात चल रही है। आजमगढ़ या आसपास के जिलों में यदि ऐसा गांव व क्षेत्र नहीं मिला तो इलाहाबाद के बरनपुर गाँव में बैठने का सोच रहे हैं।

भूदान : भूदान-यज्ञ समिति के संयोजक श्री मेवालालजी भूदानयज्ञ समिति की आर्थिक सहायता लिये बिना ही कुशलता पूर्वक कार्य कर रहे हैं। सरकारी आँकड़ों के हिसाब से जमीन प्रायः बँट चुकी है।

—रामसुन्दर

'सर्वोदय'

अंग्रेजी मासिक

संपादक : एन० रामस्वामी

वार्षिक शुल्क : साढ़े चार रुपये

पता : सर्वोदय-प्रचुरालयम्, तंजौर

(अ. भा. सर्व सेवा संघ)

बिहार अखंड पदयात्रा

बिहार सर्वोदय मंडल के तत्वावधान में अखंड पदयात्री टोली ने पिछले महीने में पटना जिले के विभिन्न गाँवों की २०९ मील की यात्रा की। टोली का नेतृत्व सर्व-श्री ब्रजमोहन शर्मा, रामनारायण सिंह एवं विष्णुदेव भाई समय-समय पर करते रहे। इस अवधि में पटना जिले के १० थानों में ४४ पड़ावों द्वारा ९६ गाँवों से सम्पर्क स्थापित कर सर्वोदय कार्यक्रम पर विस्तार से प्रकाश डालने का प्रयास किया गया। २६५६० की साहित्य की बिक्री हुई। पटना जिले की यात्रा करने के बाद टोली ने मुंगेर जिले के बेगूसराय सबडिवीजन में प्रवेश किया।

सोखोदेवरा में कृषि-प्रशिक्षण

श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा स्थापित ग्राम निर्माण मंडल, सर्वोदय आश्रम, पो० सोखोदेवरा, जिला गया में एक वर्ष का कृषि-प्रशिक्षण-सत्र चलाया जाता है। आगामी सत्र मई, ६२ से शुरू होगा। जो भाई इसमें शामिल होना चाहते हों अथवा जो रचनात्मक संस्थाएँ अपने कार्यकर्ताओं को इस प्रशिक्षण के लिए भेजना चाहती हों, वे प्राचार्य, कृषि प्रशिक्षण विद्यालय, सर्वोदय आश्रम, पो० सोखोदेवरा, जिला गया के पते पर कृपया पत्र-व्यवहार करें। प्रशिक्षण-काल में ४० रुपये मासिक खर्च पड़ता है।

पूर्णिया जिले में प्रशिक्षण शिविर

बिहार में 'बीघा कट्ठा-अभियान' के लिए जिला और जिला सहायक संगठनों का एक शिविर पूर्णिया जिले में १ से ५ अप्रैल, '६२ तक आयोजित किया जा रहा है। इसमें बिहार के १७ जिलों से भूदान-संगठन तथा देश के विभिन्न प्रदेशों से सहायक संगठन भाग लेंगे। सभी जिला संगठक ३० मार्च को पटना से चलेंगे और ३१ मार्च को पूर्णिया में एकत्र होंगे। 'अभियान' में सक्रिय सहयोग के लिए कार्यकर्ताओं का एक प्रशिक्षण-शिविर ५ मार्च से 'समन्वय-आश्रम', बोधगया में चालू भी हो गया है और ५ अप्रैल तक चलेगा। इसका संचालन श्री द्वारकोजी और श्री विष्णुदेव सिंह कर रहे हैं।

असम में एक लाख रुपये का सर्वोदय-साहित्य बिका

मार्च, ६१ से ५ मार्च, '६२ तक असम में श्री विनोबाजी की पदयात्रा के समय लगभग एक लाख रुपये का सर्वोदय-साहित्य बिका। उसमें ७५ हजार मूल्य का साहित्य असमिया भाषा में था। साहित्य प्रचार की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण प्रयत्न है।

आम चुनाव का इशारा

(शेष पृष्ठ ४ का)

के लिए बापू ने जो दो जरूरी काम बताये थे, उन्हें हम नहीं कर सके। वे यह हैं :

(१) उसकी यह कोशिश होगी कि वोटर लिस्ट पर जिनके नाम नहीं हैं, वे उस पर चढ़ा दिये जायें।

(२) उसकी यह कोशिश होगी कि जिन्हें वोट का अधिकार अमल में लाने की कानूनी मान्यता नहीं मिली है, उन्हें यह मिल जाय।

यह काम हमसे नहीं ही बन सका और न हमने भूदान-ग्रामदान और सर्वोदय-पात्र के कार्यक्रमों को ही इतनी बुलंदी पर उठाया कि जनता में अपनी निज की शक्ति आ जाय और वह अपनी पीठ का बोझ फेंककर सीधी खड़ी हो सके। इस सब पर हमें मन्थन करना होगा। सबसे बड़ी बात यह है कि बढ़ती हुई साम्प्रदायिक और प्रतिक्रियावादी प्रवृत्तियों के खिलाफ हमको अहिंसा की शक्ति पैदा करनी होगी। आने वाले समय में हमारी बड़ी जबरदस्त कसौटी होने वाली है।

—सुरेश राम

म० भा० भूदान परिषद् द्वारा भूमि वितरित

म० भा० भूदान यज्ञ परिषद्, ग्वालियर द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार गत जनवरी माह में मध्य भारत क्षेत्र के १६ जिलों में से ३ जिलों के ३२ गाँवों में भूदान-यज्ञ-आन्दोलन में प्राप्त भूमि में से २२९ भूमिहीन परिवारों के बीच ७८६ एकड़ भूमि वितरित की गयी। इसमें केवल २६ एकड़ जमीन व्यक्तिगत दाताओं से मिली थी, जबकि शेष शासन द्वारा भूदान में प्राप्त भूमि थी। अब तक कुल ४८,८३० एकड़ भूमि परिषद् द्वारा १९,६८४ भूमिहीन परिवारों में वितरित की जा चुकी है। परिषद्-कार्यालय में इस माह सर्वोदय-पात्रों से २६ रु० ९४ न० पै० रकम जमा हुई। ३ रु० ८० न० पै० सम्पत्तिदान से आये तथा १५ रु० ७५ न०पै० की सर्वोदय साहित्य की बिक्री हुई। परिषद् ने पिछले तीन साल में कुल ६६५७ रु० ८४ न० पै० का सर्वोदय-साहित्य बेचा है।

असम-सर्वोदय-मण्डल का अधिवेशन

असम प्रांतीय सर्वोदय मंडल का आगामी अधिवेशन २० मार्च, १९६२ को दरांग जिले के तेजपुर स्थान में, श्री विनोबाजी के सान्निध्य में संपन्न होने जा रहा है। इसमें ग्राम निर्माण और सघन कार्यक्रम की दृष्टि से विचार होगा। असम के नार्थ लखीमपुर जिले के सुवर्णश्री अंचल में ८०० ग्रामदान हुए हैं। वहाँ सघन कार्यक्रम की भी योजना है। विनोबाजी का कहना है कि यही क्षेत्र समग्र भारत में ग्राम-स्वराज्य-रचना की दृष्टि से सबसे अनुकूल है।

उत्तराखंड में पूर्ण नशाबंदी के लिए पौड़ी में शराब की दुकानों पर धरना प्रारम्भ

३ व ४ मार्च को उत्तराखंड के सभी पर्वतीय जिलों के कार्यकर्ताओं के सम्मेलन के निश्चय के अनुसार दो दिन की पूर्व सूचना के बाद दिनांक ७ मार्च ६२ से पौड़ी, गढ़वाल, में सभी प्रकार की शराब, टिंचरी व अंग्रेजी शराब की दुकानों पर पिकेटिंग प्रारम्भ कर दी गयी है। इस समय पौड़ी, चमोली तथा गढ़वाल जिलों के १२ सर्वोदय और गांधी-निधि के कार्यकर्ता स्वयंसेवक के रूप में कार्य कर रहे हैं।

श्री सकलानन्द डोभाल इसका संचालन कर रहे हैं। दोनों जिलों तथा टिहरी व उत्तरकाशी के सैकड़ों सेवक आदेश की प्रतीक्षा में हैं कि उन्हें भी पिकेटिंग में भाग लेने का मौका दिया जाय। महीनों तक पिकेटिंग जारी रखने की व्यवस्था की है।

पिकेटिंग प्रारम्भ होने से पूर्व ५ मार्च को वर्षा और बर्फ में फेरी हुई। ६ मार्च को सभी विद्यालयों के हजारों छात्र व छात्राओं का जुलूस निकला तथा ७ मार्च से पीला साफा बाँधे स्वयंसेवक दुकानों के सामने शराब खरीदने वालों से निवेदन करके उन्हें वापस भेज देते हैं। जनता का भारी समर्थन इसमें मिल रहा है। कई शराब पीने वाले संकल्प भी कर जाते हैं। इस समय निम्नलिखित कार्यकर्ता पिकेटिंग कर रहे हैं—श्री मानसिंह रावत, कु० राधा पाण्डेय, श्री बलवन्त भारतीय, श्री हरि प्रसाद आर्य, श्री चंडी प्रसाद भट्ट, श्री नरेन्द्र जमलोकी, श्री हरि सिंह देउपा, श्रीमती रेवती देवी उनियाल तथा श्री प्रकाशचन्द्र जोशी।

अप्रैल से इन्दौर में पूर्ण मद्य-निषेध की संभावना

[illegible] सूत्रों के आधार पर यह अनुमान है कि १ अप्रैल १९६२ से इन्दौर नगर में पूर्ण मद्य-निषेध किये जाने की संभावना है। अप्रैल सन् '६२ से प्रारंभ होने वाले शराब के ठेके राज्य-शासन द्वारा फिलहाल नीलाम होने से रोक दिये गये हैं और ऐसी संभावना है कि इन्दौर नगर पूर्ण मद्य-निषेध की दिशा में कदम बढ़ायेगा। ठेकों के नीलाम न होने के कारण ठेकेदारों में भी खलबली मची हुई है और ज्ञात हुआ है कि पिछले दिनों नई दिल्ली में इन्दौर के आबकारी व्यापारी-संघ ने योजना आयोग के सदस्य श्रीमन्नारायण की सेवा में विचारार्थ एक स्मृति-पत्र प्रस्तुत किया है, जिसमें इन्दौर नगर में नशाबन्दी की दिशा में कुछ सुझाव देते हुए यह मांग की गयी है कि जो व्यवसायी इस व्यापार से वंचित कर दिये जायँ, उन्हें यातायात, प्रजा-कार्य-विभाग तथा अन्य व्यवसाय जो परमिट से चलते हैं, उनमें प्राथमिकता दी जाय।

तारीख २५ व २६ मार्च '६२ को श्री श्रीमन्नारायण की उपस्थिति में मध्य-प्रदेश का प्रान्तीय नशाबन्दी-सम्मेलन भी इन्दौर में होने जा रहा है।

पिछले सप्ताह इन्दौर में सम्पन्न जिला स्तरीय सम्मेलन में म० प्र० शासन से अनुरोध करते हुए पारित एक प्रस्ताव में कहा गया है कि प्रांत के सबसे महत्त्वपूर्ण नगर होने के नाते व्यसन-मुक्ति के राष्ट्रीय संकल्प को तत्काल १ अप्रैल ६२ से ही इन्दौर नगर ही नहीं वरन् जिले में पूर्ण नशाबन्दी की जाय। एक दूसरे प्रस्ताव में आगामी वर्ष पूरे इन्दौर संभाग में नशाबंदी की माँग की गयी है। इन्दौर नगर की सभी राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं धार्मिक आदि संस्थाओं के नाम अपील करते हुए कहा गया है कि इन्दौर जिले में नशाबंदी के कार्यक्रम को पूरी तरह सफल बनाने के लिए समग्र एवं निश्चित कार्यक्रम बना कर नगर में पूर्ण नशाबंदी का वातावरण बनाने में हर संभव प्रयत्न किये जायँ। साथ ही यह भी सुझाया गया है कि नगर की चेतनाशील सभी संस्थाओं की मिली-जुली तिमाही बैठक हुआ करे, जिसमें नशाबंदी की दिशा में हो रहे कार्य का समन्वय—संयोजन किया जा सके। अंतिम प्रस्ताव में प्रदेश सर्वोदय मंडल के अभिक्रम से २५-२६ मार्च को इन्दौर में बुलाये जा रहे प्रांतीय नशाबंदी सम्मेलन के आयोजन का स्वागत किया गया है।

विश्व-शांति-सेना के प्रथम अभियान के लिये :

आर्थिक सहायता के लिये अपील

पूर्वी अफ्रीका में विश्व-शांति-सेना की ओर से आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय शांति-यात्रा और सत्याग्रह के लिए इंग्लैण्ड से जान पैपवर्थ और बार्नी गार्टिन दार-एस-सलाम के लिए रवाना हो गए हैं। नार्वे के नील मेथिजन तथा सिग्रि सीड भी चल चुके हैं। भारत, इटली, हालैण्ड और पश्चिमी जर्मनी से भी इस शांति-यात्रा के लिए स्वयंसेवकों के जाने की संभावना है।

अफ्रीका के इस सत्याग्रह के लिए विश्व-शांति-सेना की ओर से आर्थिक मदद के लिए एक आवश्यक अपील जारी की गयी है। किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय अभियान में स्वभावतः ही आवागमन, डाक-तार, टेलीफोन का काफी खर्च होता है। विश्व-शांति-सेना की ओर से यह अपेक्षा की गयी है कि दुनिया के तमाम मुल्कों के शांतिवादी लोग इस काम के लिए जल्दी-से-जल्दी जो कुछ और जितनी मदद भेज सकें, वह तुरंत भेजें। हिन्दुस्तान से मदद भेजनेवाले व्यक्ति—मंत्री, सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी (उ० प्र०) के नाम से रकम भेज सकते हैं।

कड़प्पा जिला नव-निर्माण समिति

आन्ध्र प्रदेश में कड़प्पा जिला नव निर्माण-समिति ४४७ ग्रामदानी गाँवों में कार्य कर रही है। इन गाँवों में कुल ११,७५८ परिवार और जनसंख्या ६६,५०० है तथा २३ हजार एकड़ भूमि है। यहाँ ग्रामोदय-समितियाँ बनी हैं, और जनवरी मास में २५९ ग्रामोदय समितियों की सभाएँ हुईं। उस क्षेत्र में कार्यकर्ताओं ने २०८१ मील की पदयात्रा की। वहाँ चर्मोद्योग ही प्रमुख घरेलू उद्योग है। उन ग्रामों के १७७५ व्यक्ति चर्मोद्योग में लगे हैं। स्वावलंबन के लिए ९५७२ गज खादी बुनी गई, २५७७ व्यक्तियों ने कातना सीखा तथा १०७३ व्यक्ति सीख रहे हैं। ग्रामदान में सम्मिलित लोगों की कार्य प्रणाली से प्रभावित होकर अन्य लोग भी, जो ग्रामदान में शामिल नहीं हुए हैं, उन कार्यक्रमों में अभिरुचि लेने लगे हैं।

राजस्थान खादी-विकास मंडल कार्यकर्ता-सम्मेलन

राजस्थान खादी-विकास मंडल कार्यकर्ता संम्मेलन गोविंदगढ़, मलिकपुर में हुआ। सर्वश्री जवाहरलाल जैन, फूलचन्द्र अग्रवाल, रामेश्वर अग्रवाल, स० स० देशपांडे, छितरमल गोयल, ओमदत्त शास्त्री, मदनलाल खेतान आदि कार्यकर्ताओं ने अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि गाँवों की हालत सुधरे बिना भारत की हालत सुधरना असंभव है। गांधीजी की खादी समाज-व्यवस्था में परिवर्तन का औजार है। खादी के साथ जीवन-यापन के अन्य साधन जोड़ना भी आवश्यक है।

श्री सीताराम कावले

भंडारा जिले के एक प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री सीतारामजी कावळे का गत २७ फरवरी को देहांत हो गया। गत पाँच साल से यद्यपि वे बीमार रहते थे, फिर भी पदयात्रा व सम्मेलनों में भाग लेने से कभी नहीं चूकते थे। विदर्भ का दिसम्बर १९५६ का अविस्मरणीय क्रांतिकारी सम्मेलन उन्हीं की प्रेरणा से बड़े गाँव में सम्पन्न हुआ था।

सम्मेलन के तुरंत बाद ही उन्होंने अपनी संपूर्ण जमीन और जायदाद के स्वामित्व विसर्जन की घोषणा की थी। अपनी दूकान तथा खेती सर्वोदय-परिवार को समर्पित कर 'सबै भूमि गोपाल की' और 'सब संपति रघुपति कै आही' के मुताबिक जीवन बिताने की कोशिश आप कर रहे थे।

स्वराज्य के आंदोलन से भूदान-आंदोलन तक की सभी राजनीतिक एवं विधायक प्रवृत्तियों में भी कावळेजी अपने क्षेत्र में मुख्य माने जाते थे। वे निःस्पृह, निर्भीक और जन्मजात समाज-सेवक थे। मृत्यु के समय आपकी आयु ४८ वर्ष की थी।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८८००। इस अंक की छपी प्रतियाँ ८८९०
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक : १३ नये पैसे

प्रेम-रसायन : ग्रामदान

• विनोबा

लोगों के दर्शनों से हमें बहुत आनन्द होता है। दस साल से यह दर्शन हमें रोज हासिल हो रहा है। हम इसी को भगवत्-दर्शन समझते हैं। भगवान सृष्टि से और समाज से अलग नहीं है। सृष्टि के और समाज के अन्दर वह छिपा रहता है। उसमें अनेक मंगल गुण भरे है। सत्य, प्रेम, करुणा, दया जैसे अनेक गुण भरे हैं। उस परमात्मा की मूर्ति हरएक के हृदय के अन्दर पड़ी है। यह सब परमात्मा के गुण मनुष्य में हैं ही। मानव मात्र में यह गुण हैं, लेकिन छिपे हैं। अन्दर गहराई में है। उन गुणों को बाहर लाने की कोई तरकीब मिल जायगी तो सृष्टि में स्वर्ग आयेगा। दस साल से हमारी यही कोशिश हो रही है।

लोगों को हम समझाते हैं कि भाई, तुम एक गाँव में एक साथ रहते हो तो एक-दूसरे पर विश्वास रखो, सब मिल-जुलकर काम करना सीखो। हर बात में अलग-अलग सोचते हो तो न गाँव की उन्नति होती है, न घर की। गाँव की उन्नति में हमारी उन्नति है, यह सोचना चाहिये। अलग-अलग विचार करते हैं तो एक-दूसरे के विचार आपस में टकराते हैं। उस टकर से दोनों दुःखी बनते हैं। दोनों सुखी बनना चाहते हैं; किन्तु सुख का रास्ता जानते नहीं।

अपने ही सुख की चिंता करनेवाला मनुष्य हमेशा दुःखी होता है। सबके सुख की चिंता जो करेगा, वह सुखी होगा। यह है सुखप्राप्ति की कुंजी।

यह कुंजी हम लोगों ने खोयी है। परिणामतः हम सारे समाज से अलग पड गये हैं। समाज में टुकड़े हो गये तो जिंदगी नहीं रही। अभी आप सुन रहे हैं और हम बोल रहे हैं। अगर मेरी जीभ काट कर लाऊडस्पीकर के सामने रखी जाय तो वह बोल नहीं सकेगी। आपके कान काट कर यहाँ रखे जायँ तो वह सुनेंगे नहीं। लेकिन दोनों देह के साथ और प्राण के साथ जुड़े हुए हैं, इसलिए काम होता है। यही हालत समाज की है। जहाँ समाज से कट गये, वहाँ ईश्वर से भी कट जाते हैं, तो खत्म हो जाते हैं। समाज में और ईश्वर में चिपके रहते हैं तो हम जिंदा हैं। यह बात इतनी सरल और सादी है कि हर कोई समझ सकता है। समझानेवाला चाहिये। जो करुणा में, ईश्वर में श्रद्धा रखता है और सब पर प्यार रखता है, ऐसा सुनानेवाला और समझानेवाला हो तो सब इसे आसानी से समझ सकते हैं।

आज कुछ जवान हमसे मिलने आये थे। उन्होंने कहा था कि जिस गाँव में पढ़े-लिखे लोग नहीं हैं, वे ग्रामदान और भूदान की ऊँची बातें कैसे समझेंगे! यह हमारी गलत धारणा है। पढ़ने-लिखने को ज्ञान नहीं कहा जाता। उससे ज्ञान प्राप्त हो सकता है, यह अलग बात है; लेकिन पढ़ना-लिखना आ गया सो ज्ञान प्राप्त हो गया, ऐसा नहीं मान सकते और किसी को लिखना-पढ़ना नहीं आया तो उसे ज्ञान नहीं हुआ, ऐसा नहीं कह सकते।

मैंने उस भाई को कहा कि माँ ने बच्चे को मातृभाषा सिखाई, तो कौन-सी पुस्तक और व्याकरण सिखाया। आप लोग १४–१५ साल अंग्रेजी सीखते हैं, लेकिन फिर भी अच्छी अंग्रेजी नहीं जानते हैं। इंग्लैंड में माँ बच्चे को दो-तीन साल में ही अंग्रेजी पढ़ाती है। कोई पुस्तक नहीं पढ़ाती। सिखाती है और दिखाती है यह है चाँद। तो शब्द भी आ गया और चाँद भी देखा। यह क्या चमत्कार है? पढ़ने-लिखने से यह नहीं होता। माँ सिर्फ मातृ भाषा नहीं सिखाती, प्रेम की भाषा भी सिखाती है। प्रेम के लिए त्याग करना पड़ता है। वह सब करके दिखाती है और प्रेम सिखाती है। प्रेम की तालीम यदि माँ न देती और सरकार पर उसकी जिम्मेवारी आती तो न मालूम कितना खर्चा होता। प्रेम सिखाने के लिए शिक्षक वर्ग तैयार करना पड़ता। और हर साल शायद अरबों रुपयों का खर्चा सरकार को आता, *और फिर भी शिकायत रहती कि हमें तो* प्रेम सिखाया नहीं। यह तो पक्षपात कर रही है। लेकिन ईश्वर ने एक ऐसी योजना की कि बच्चे को पैदा होते ही प्रेम की तालीम माँ के जरिये मिलने लगती है और भगवान ने हरएक के लिए ज्ञान प्राप्त करने की योजना बनायी। याने क्या किया? हरएक के पेट में भूख रखी। भूख है तो उठना ही पड़ता है। बीज बोना ही पड़ता है, जमीन अच्छी करनी ही पड़ती है। तो ज्ञान प्राप्त होता है। नहीं तो खेती का ज्ञान कहाँ से मिलता? फिर कालेज में कौन जाता? पढ़ने की और नौकरी करने की जरूरत क्या थी? ज्ञान की यह अनिवार्य शिक्षा भगवान दे रहे हैं। भूख के जरिये ज्ञान और माँ के जरिये प्रेम की मुफ्त तालीम! मुफ्त और लाजमी तालीम बच्चे को मिलती है। ईश्वर की कितनी करुणा है कि उसने प्रेम की और मातृभाषा की तालीम माँ के जरिये बच्चों को दी। इसलिए गाँव के लोग पढ़े लिखे नहीं हैं तो भी ज्ञान उनके पास है ही और प्रेम की महिमा वे जानते हैं। इसलिए ग्रामदान की बात समझाना और समझना बिल्कुल आसान है। समझाना क्या है? यही कि मिल-जुलकर रहो, एक-दूसरे पर प्यार करो, एक-दूसरे की चिंता करो। गाँव में बीमार, बिमार, बेकार होंगे, उन सबका इन्तजाम हमें करना है, इसलिए गाँव की जमीन सबकी बनाइये। हम जमीन के मालिक नहीं हैं, हम जमीन के खिदमतगार हो सकते हैं। उसी मिट्टी में पैदा होते हैं और उसीमें दफनाये जाते हैं, इसलिये जमीन की मालकियत का विचार गलत है। ईश्वर की तरफ से ग्राम-सभा गाँव के जमीन की मालिक होगी। जमीन सबकी, फसल सबकी। सरकार में एक ही नाम रहेगा, ग्रामसभा का। धीरे-धीरे ग्रामोद्योगों के जरिये गाँव की दौलत बढ़ेगी।

पड़ाव शिवसागर (असम) १३-१०-'६१

है। लोकशक्ति को जाग्रत करने के लिये शायद और भी कोई कार्यक्रम सोचा जा सकता है, जो उपरोक्त पाँचों बातों की पूर्ति कर सके। पर जमीन का मसला हल हुए बिना इस प्रकार के किसी भी कार्यक्रम की नींव कच्ची रहेगी, यह स्पष्ट है। भूदान-ग्रामदान के कार्यक्रम ने जमीन के मसले का सर्वोत्तम हल पेश करने के साथ-साथ *ग्रामस्वराज्य तक बढ़ने का रास्ता भी साफ* कर दिया था। ग्रामदान ग्रामस्वराज्य का द्वार है, और भूदान ग्रामदान तक पहुँचने की सीढ़ी। और कोई कार्यक्रम समस्या के मूल पर इतना सीधा और सचोट प्रहार नहीं करता। एक और छोर है, जिसे पकड़ कर समस्या के हल तक पहुँचा जा सकता है। वह है–गाँव में कोई भूखा और बेकार नहीं रहे, यह ग्रामसभा की जिम्मेदारी है, इस बात का भान लोगों में जाग्रत करके उन्हें इस जिम्मेदारी को निभाने के लिये योजना करने की प्रेरणा देना। इसमें भी एकदम शुरू में नहीं तो थोड़े कदम बाद ही जमीन के न्यायोचित पुनर्वितरण का सवाल खड़ा होगा और आखिरकार वह किये बिना गाँव की भुखमरी, बेकारी और गरीबी का पर्याप्त हल नहीं निकल सकेगा।

हर हालत में हमें ग्राम-स्वराज की आवश्यकता लोगों को समझा कर उन्हें गाँव की आर्थिक योजना अपने हाथ में लेने के लिये प्रेरित करना चाहिए। बिना इस आर्थिक प्रश्न को हाथ में लिये और लोगों को इसका हल बताये ग्रामस्वराज्य का आंदोलन आगे नहीं बढ़ सकेगा ऐसा लगता है। इस काम में जितनी देर हो रही है और ज्यों-ज्यों समय बीत रहा है, त्यों-त्यों सरकार की योजनाओं का पाश आम लोगों को अपनी पकड़ में जकड़ रहा है। सरकार की पंचवार्षिक योजनाएँ ग्राम स्वराज्य के सर्वथा विपरीत दिशा में मुल्क को ले जा रही हैं। इस घातक बाढ़ का मुकाबला लोग ग्रामदान-ग्रामस्वराज्य के कार्यक्रम या गाँव के आर्थिक नियोजन को अपने हाथ में लेकर ही कर सकते हैं। पटना अधिवेशन में हमें इस प्रश्न पर गहराई से विचार करना चाहिये। यह खुशी की बात है कि विनोबा ने 'बीघा-कट्ठा' के रूप में फिर से भूदान के कार्यक्रम पर जोर दिया है और आर्थिक प्रश्न की ओर लोगों का ध्यान खींचा है। इस कार्यक्रम में पूरी शक्ति से लगकर इसे हम सरल बनाते हैं तो भूदान-आन्दोलन को फिर से गतिमान करने और उसे जन-आन्दोलन बनाने का छोर हमें मिल सकता है।

ग्रामस्वराज्य-सप्ताह

पिछले साल देश भर में ६ अप्रैल का दिन ग्रामस्वराज्य दिवस के रूप में मनाया गया। हजारों गाँवों में सामूहिक रूप से ग्रामवासियों ने ग्रामस्वराज्य का घोषणा-पत्र पढ़ा और दुहराया। सर्व-सेवा-संघ की खादी-ग्रामोद्योग ग्राम-स्वराज्य-समिति ने अपनी अहमदाबाद की पिछली बैठक में यह तय किया है कि ६ अप्रैल का दिन पिछले साल की तरह ग्रामस्वराज्य दिवस के रूप में तो मनाया ही जाय, किन्तु साथ ही ६ अप्रैल से १३ अप्रैल तक का राष्ट्रीय सप्ताह भी ग्राम-स्वराज्य सप्ताह के रूप में मनाया जाय।

स्वराज्य के चौदह सालों के बाद, आज जनता स्वराज्य की शक्ति महसूस नहीं कर पा रही है, अपितु जहाँ जनता की स्वतंत्र शक्ति बननी चाहिये थी, वहाँ आज जनता अधिकाधिक सरकार-आश्रित बनती जा रही है। यह जनतंत्र और स्वराज्य के लिए बड़ा खतरा है। देश में सच्चा स्वराज्य और लोकतंत्र तभी स्थापित होगा, जब लोग मिल-जुलकर अपनी व्यवस्था आप करेंगे। गाँव एक ऐसी प्राकृतिक इकाई है, जहाँ यह सम्भव हो सकता है।

हमारा देश गाँवों का देश है। इसलिए देश का स्वराज्य तब सार्थक होगा, जब देश भर में सर्वत्र मजबूत और प्राणवान ग्रामस्वराज्य की इकाईयाँ सजग और सक्षम होंगी। इसी दृष्टि से ग्राम-स्वराज्य दिवस और सप्ताह की ओर हमें देखना है। खादी ग्रामोद्योग ग्रामस्वराज्य समिति के अध्यक्ष श्री ध्वजाप्रसाद साहु ने अपने निवेदन (देखें अन्यत्र इसी अंक में) में ठीक ही कहा है कि इस सप्ताह में "हमारी मुख्य चिंता यह होनी चाहिए कि हमारे कार्यक्रम से हमारे भारत के गाँवों और शहरी मुहल्लों में ग्रामस्वराज्य की सक्रिय इकाईयाँ बनें...।" कार्यक्रम स्थानीय परिस्थिति के अनुसार बनाये जा सकते हैं, किन्तु स्वतंत्र जनशक्ति प्रकट हो, लोग अपना दायित्व समझ सकें, यही हमारी मुख्य कोशिश होनी चाहिए। आशा है, गाँव-गाँव में इस सप्ताह के जरिये नव-चेतना और शक्ति प्रकट होगी।

—मनीन्द्रकुमार

बिहार का आगामी अभियान

ठाकुरदास बंग

१९५२ में जब विनोबाजी ने बिहार में प्रवेश किया, तब बिहार के सम्मुख भूमिहीनता मिटाने के लिए ३२ लाख एकड़ जमीन की माँग रखी। बिहार भूदान यज्ञ समिति, बिहार कांग्रेस कमिटी, प्रजा समाजवादी दल आदि ने इतनी जमीन जल्द से जल्द इकट्ठा करने के संकल्प किये। दो साल से अधिक समय तक बाबा स्वयं इस प्रदेश में रहे। और कुछ समय के लिए सारे देश के प्रमुख कार्यकर्ताओं का सहयोग इस कार्य को प्राप्त हुआ। फलस्वरूप देने की हवा बनी, और २१ लाख एकड़ जमीन ३ लाख से अधिक दाताओं द्वारा प्राप्त हुई। ११ लाख एकड़ जमीन भूदान यज्ञ में प्राप्त करना बच गया।

विनोबाजी के बिहार से प्रस्थान के बाद कार्यकर्ता वितरण में लग गये। इतनी अधिक जमीन मिलने पर वितरण एक आवश्यक काम हो गया था। इसे करते-करते भूदान-प्राप्ति की-पुरानी प्रक्रिया की कई अपूर्णताएँ नजर आयीं। आज तक ढाई लाख एकड़ से अधिक जमीन करीब डेढ़ लाख आदाताओं में बाँटी गयी और साढ़े दस लाख एकड़ वितरण के अयोग्य जमीन वितरण करते-करते छाँटी गयी। अभी करीब साढ़े सात लाख एकड़ जमीन का वितरण होना बाकी है। १९५६-५७ में सारे देश में ग्रामदान की लहर आयी। बिहार में भी कई ग्रामदान हुए। और इसमें से ग्राम स्वराज्य का काम उपस्थित हुआ, जिसमें कुछ कार्यकर्ता लग गये। शान्ति-सेना, सर्वोदय-पात्र, लोकनीति, पंचायत-राज आदि कई कार्यक्रम एक के बाद एक आते गये, और कार्यकर्ताओं की शक्ति उनमें लगती गयी।

यह सारे काम आवश्यक थे। इन कामों में लगने के कारण भूदान-प्राप्ति का काम १९५५ के बाद करीब-करीब बन्द रहा। १९६० के दिसम्बर में जब विनोबाजी ने बिहार में फिर से प्रवेश किया, तब उन्होंने शेष संकल्प की पूर्ति की याद बिहार को दिलायी। गणिती बुद्धि के कारण हिसाब लगाकर देखा तो बाबा ने यह पाया कि हर भूमिवान से बीसवाँ हिस्सा जमीन मिल जाती है तो ११ लाख एकड़ जमीन मिल सकती है और संकल्प पूरा हो सकता है। साथ-साथ वितरण के समय जो कई त्रुटियाँ नजर आयी थीं, उनका हल ढूँढ़ना जरूरी था। पहला अनुभव यह था कि भूदान-प्राप्ति के दीर्घकाल के बाद यदि जमीन का बँटवारा किया जाता है तो जमीन के नम्बर आदि मिलने में बड़ी कठिनाई होती है। दान में मिली हुई जमीन बँटवारे के योग्य है या नहीं, इसकी भी ठीक जानकारी नहीं होती है। प्राप्ति और वितरण के बीच दीर्घकाल का अन्तर पड़ने से कुछ दाताओं का मन डावाँडोल हो जाता है। एक अनुभव यह भी आया कि बिहार की विशिष्ट परिस्थितियों में पुरानी जमींदारी-प्रथा के कारण वितरण का काम प्राप्ति की तुलना में अधिक पेचीदा एवं अधिक समय की अपेक्षा रखने वाला होता है। चूँकि आदाता का चुनाव गाँव के लोग करते हैं, इसलिए कई स्थानों में गलत आदमी को जमीन मिलने के कारण जमीन परती रह सकती है। गाँव के द्वारा बँटवारा होने से दाता और आदाता के बीच मधुर सम्बन्ध हमेशा निर्माण नहीं होता। आदाताओं को खेती करने के लिए साधनदान दिलवाने की समस्या भी उपस्थित हो जाती है। कई स्थानों पर वितरण के बाद दाता ने जमीन का कब्जा आदाता से नहीं लिया या आदाता ने जमीन का लगान नहीं दिया। इन सब अनुभवों से लाभ उठाना और त्रुटियों को दूर करना जरूरी था।

अतः बिहार में दूसरी बार प्रवेश करते ही विनोबाजी ने भूदान फिर से माँगा जाय, इतना ही नहीं कहा, बल्कि साथ साथ "दान दो इकट्ठा, बीघे में कट्ठा" यह मंत्र दिया। वैसे ही दाता अपनी जमीन का वितरण तत्काल भूमिहीनों में वितरण के नियमानुसार करें, यह भी निर्देश उन्होंने दिया। इस नयी प्रक्रिया से जो जमीन मिलेगी, वह वितरण योग्य मिलेगी, वितरण तत्काल होगा और भूमि का कब्जा भी मिल जायगा। चूँकि दाता ने ही आदाता को चुना है, इसलिए बेदखली की समस्या कम खड़ी होगी और आदाता ने लगान नहीं दिया, यह भी सामान्यतः नहीं होगा। कई दाता आदाताओं को साधनों की सहायता भी करेंगे। भूमिवान और भूमिहीन के सम्बन्धों में मधुरता निर्माण हो, यह भूदान का प्रमुख लक्ष्य रहा है। यह इसी प्रक्रिया से संभव होगा। चूँकि वितरण दाता एवं आदाता के बीच का खानगी व्यवहार नहीं होगा, लेकिन सार्वजनिक सभा में समारोह के साथ वितरण विधि भूदान-यज्ञ के नियमों के अनुसार संपन्न होगी, इसलिए आदाता का चुनाव दाता के द्वारा होने से अन्य त्रुटियों के उपस्थित होने की सम्भावना कम रहेगी।

वैसे ही "दान दो इकट्ठा" की प्रक्रिया से गाँव में सामुदायिक वृत्ति का निर्माण होने में मदद मिलेगी। आज तक अलग अलग व्यक्तियों से दान लिया गया। अब भी अलग-अलग व्यक्तियों से दान लेने का निषेध नहीं है। लेकिन कोशिश यह की जायगी कि गाँव के सब भूमिवान इकट्ठा दान दें। इसलिए दिन में एक या दो गाँव पूरा करने की जल्दी न करते हुए सारे गाँव से भूमिदान प्राप्त करने का प्रयत्न मिली हुई जमीन का वितरण और उसका कब्जा दिलवाना—ये कार्य करके ही उस गाँव से कार्यकर्ताओं की टोली प्रस्थान करे। भले ही इसमें एक गाँव में दो या तीन दिन लग जायँ। गाँव में जितने भूमिहीन मजदूर हैं, उनकी भूमि की आवश्यकता कितनी है, यह गाँव वाले तय करें और उतनी जमीन प्राप्त करने का लक्ष्य गाँववालों के सम्मुख रखा जाय। सम्भव है, कई स्थानों पर 'दान दो इकट्ठा' की प्रक्रिया से भूमिहीनता मिट जाय। जहाँ न मिटे, वहाँ उतना प्रयास करना बाकी है, यह भान गाँव वालों को कराया जाय।

इन दिनों बिहार में भूमि-हदबन्दी कानून (सीलिंग) बना है। इस कानून में भू-शुल्क (लैंड लेवी) का नियम है। बिहार में भूदान यज्ञ का काम अन्य प्रान्तों से अच्छा हुआ है। इस कारण यहाँ हरएक काश्त करने वाले को जमीन मिले, यह हवा बनी है। १९५५ में जब सीलिंग का बिल बन रहा था, तब बिहार के भूदान-कार्यकर्ताओं ने हर भूमिवान से भू-शुल्क लेने का सुझाव रखा। उस समय वह बिल विधान-सभा में पेश नहीं किया गया। लेकिन गत वर्ष यह बिल पेश हुआ और पारित हुआ। अब उस पर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर हो गये हैं। इस विधेयक के अनुसार एक एकड़ से पाँच एकड़ जमीन होने पर जमीन का बीसवाँ हिस्सा, पाँच एकड़ से बीस एकड़ तक जमीन होने पर उसका दसवाँ हिस्सा और बीस एकड़ या उससे ऊपर जमीन होने पर छठाँ हिस्सा जमीन भू-शुल्क के रूप में ली जायगी। इस विधेयक में यह सुविधा रखी गयी है कि २५ दिसम्बर, १९६० के बाद कोई भूदान में जमीन देता है तो उससे उतनी कम जमीन सरकार इस कानून के अनुसार लेगी। भूदान-आन्दोलन के परिणाम से वातावरण तैयार हुआ, वातावरण के परिणामस्वरूप कानून बना और इस कानून में भी स्वेच्छापूर्वक दिये जाने वाले दान को स्वीकृति प्रदान की गयी।

स्वराज्य के बाद आन्दोलन के परिणामस्वरूप कानून बने, और फिर उनमें आन्दोलन को जगह रहे, ऐसा यह अनोखा उदाहरण उपस्थित हुआ है। ऐसा लगता है कि जब तक मानव-स्वभाव आज जैसा है, तब तक स्वेच्छापूर्वक किया हुआ त्याग और कानून इन दोनों के समन्वय से समाज के मसले हल होंगे। केवल वैयक्तिक प्रयत्नों से सबका हृदय-परिवर्तन होगा, यह अविकसित मानव को ख्याल में रखते हुए संभव नहीं मालूम होता है। वैसे ही बिना जन आन्दोलन के केवल कानून का ही रास्ता अपनाया जाय, तब उसमें जबर्दस्ती के अलावा और कोई तत्त्व नहीं रहेगा। और ऐसा कानून किताब में पड़ा रहेगा। वातावरण बन जाने पर और काफी लोगों के आचरण करने पर यदि कानून बनता है तो ऐसे कानून का स्वरूप जन-समाज में स्वीकृत मान्यताओं को वैधानिक रूप देने जैसा होता है। वैसे ही जिन लोगों को नया तत्त्व जँच जाता है, लेकिन दूसरे नये तत्त्व के अनुसार आचरण करें या न करें, अकेले आचरण करने की हिम्मत नहीं होती, उनसे कानून सामूहिक प्रयत्न करवाता है। जन-आन्दोलन और कानून के समन्वय का एक नया मार्ग बिहार का अनुभव प्रशस्त करता है। इसलिए विनोबा ने कहा है कि "अगर समस्या भूदान से हल होती है तो मैं नाचने लगूँगा, लेकिन अगर वह कानून से हल होती है तो भी मुझे खुशी होगी।"

इसी प्रकार इस कानून के बनने पर श्री जयप्रकाशजी ने एक वक्तव्य के द्वारा कहा था "बिहार का भूमि-हदबन्दी कानून एक साहसिक और विलक्षण कानून है। इसके द्वारा तय की गई हदबन्दी में, जो मेरी राय में बहुत ऊँची है, ऐसी कोई विशेषता नहीं है। लेकिन इसमें तथाकथित लेवी की जो व्यवस्था है, उसे हम अवश्य ही साहसिक और विलक्षण कह सकते हैं। बिहार सरकार इसके लिए बधाई की पात्र है। जहाँ तक भूदान के आदर्शों को कानूनी रूप दिया जा सकता है, इस कानून को 'भूदान की विजय' कहना गलत नहीं होगा।"

गत वर्ष बिहार में बीघा-कट्ठा अभियान चला, जिसके फलस्वरूप करीब छः हजार एकड़ जमीन भूदान में मिली। मुँगेर जिले में गोविन्दपुर गाँव के सब भूमिवानों ने बीघा में कट्ठा के हिसाब से जमीन दी। इस प्रकार काम का प्रारंभ हो गया है। ठंडा चूल्हा गरम होने में कुछ देर लगना स्वाभाविक है। विनोबाजी ने बिहार से बहुत उम्मीदें बाँधी हैं। बीघा-कट्ठा आन्दोलन की ओर उनकी आँखें बराबर लगी हुई हैं और १५ अप्रैल से १५ जून तक इस अभियान को जोरों से चालू करने के लिए उन्होंने सूचित किया है। वे अपेक्षा करते हैं कि पाँच हजार कार्यकर्ता दो महीना लगातार घर-घर जाकर दान माँगते हैं और हर रोज औसत दस दानपत्रों की प्राप्ति होती है तो बिहार में घर घर पहुँचा जा सकता है।

बिहार में १७ जिले हैं और करीब ६८ हजार गाँव हैं। अपेक्षा है कि उत्तरप्रदेश से १२५, राजस्थान से ५०, मध्यप्रदेश से २५, महाराष्ट्र से २०, बंगाल से १०, उत्कल से १०, केरल से २५, गुजरात

२३६०, आंध्र से ११, तमिलनाड से १०, मैसूर से ५, दिल्ली से ५, केरल से ४, कश्मीर से १ एवं हिमाचल प्रदेश से १ कार्यकर्ता इन दो महीनों के लिए अभियान में मदद करने के हेतु बिहार पहुँचेंगे। शान्तिसेना विद्यालय, इन्दौर की बहनें और शान्तिसेना विद्यालय, काशी से भाई भी आयेंगे। लेकिन मुख्य काम बिहार की जनता को एवं कार्यकर्ताओं को करना है। दाता, आदाता, अध्यापक, विद्यार्थी, पंचायत के मुखिया, राजनीतिक कार्यकर्ता, रचनात्मक कार्यकर्ता आदि सभी बिहार के लोग इस अभियान में किस प्रकार हिस्सा लेंगे और यह अभियान कार्यकर्ता-संचालित न रहकर स्वयंचालित कैसे होगा, इसे ढूँढना है। साथ साथ गाँव से सामूहिक दान प्राप्त करने की प्रक्रिया खोजनी है। अभियान समाप्त होने पर आगे काम कैसे जारी रहे, इसका संशोधन कर तंत्र निर्माण करना है। विभिन्न प्रदेशों के कार्यकर्ता बिहार के कार्यकर्ताओं के साथ और जनता के साथ जब काम करेंगे तो राष्ट्रीय एकता में अनायास मदद मिलेगी।

बिहार में यह सामुदायिक प्रयत्न करने के कारण स्पष्ट हैं। यहाँ कई अनुकूलताएँ हैं। बिहार में चला हुआ भूदान आन्दोलन, उसका २२ लाख एकड़ भूमि प्राप्ति का संकल्प, वहाँ बड़ी मात्रा में चलने वाला रचनात्मक कार्य, रचनात्मक कार्यकर्ताओं का एवं भूदान-कार्यकर्ताओं का दूध में शक्कर जैसा घुला मिला स्वरूप, श्री जयप्रकाश नारायण सरीखे नेता, और भू-शुल्क को स्थान देनेवाला बिहार का हदबन्दी कानून —ये सारी बिहार प्रदेश की विशेषताएँ हैं, जो अन्य प्रदेशों को उपलब्ध नहीं हैं। बीघा-कट्ठा आन्दोलन से फिर हवा तैयार होकर जमीन मिलती है और सिलसिला चलती हैं, तो सारे देश में भूदान गंगा फिर से प्रवाहित होने में मदद मिलेगी। जमीन का दबा हुआ प्रश्न फिर से लोगों के सम्मुख आयेगा और अन्य प्रांतों के विधायकों को बिहार के समान कुछ दूरगामी कदम उठाने पड़ेंगे। ये सारी संभावनाएँ इस अभियान की तह में छिपी हुई हैं। आवश्यकता है, सब लोगों के एक साथ मिलकर जोर लगाने की।

विनोबाजी ने कई बार कहा है कि जब कोई पत्थर रास्ते से हटाना पड़ता है तो सब लोगों को एक साथ जोर लगाना होता है। ऐसा मौका कई वर्षों बाद उपस्थित हुआ है। आवश्यकता है—इस समय कौन से काम को प्राथमिकता दी जाय, इसका निर्णय करने की। हम सब मिलकर जोर लगायें और भूमि का मसला हल करने की दिशा में सामूहिक प्रयत्न कर आर्थिक समता और न्याय का मार्ग प्रशस्त करें।

'सेवाग्राम विद्यापीठ' की आवश्यकता

सुमन बंग

आज की शिक्षा-पद्धति सभी दृष्टियों से निरर्थक साबित हुई है, ऐसा सामान्य नागरिक से लेकर राष्ट्रपति तक कहते हैं। शरीर और मन की अनंत शक्तियों में से केवल बुद्धि, और बुद्धि में से भी केवल स्मरण-शक्ति पर जोर दिया जाता है। शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक समग्र विकास का कोई प्रयत्न नहीं होता है। यह शिक्षा-पद्धति अत्यंत खर्चीली होने से गरीबों की पहुँच के बाहर है, अतः गांधीजी ने विद्यार्थी के समग्र विकास के लिए १९३७ में नई तालीम का विचार रखा।

१९३८ से १९५८ तक सेवाग्राम में नई तालीम का प्रयोग श्री आर्य-नायकम् दम्पति के मार्गदर्शन में किया गया। पूर्व-बुनियादी से उत्तर-बुनियादी तक एक ढाँचा खड़ा किया गया। कई स्नातक बाहर निकले। ये स्नातक व्यावहारिक काम करने, समाज-जीवन एवं समुदाय-संचालन में अन्य युनिवर्सिटी के स्नातकों की तुलना में अच्छे साबित हुए हैं। साथ-साथ यह भी मानना होगा कि बौद्धिक ज्ञान में कई कठिनाइयों के कारण ये स्नातक कुछ कमजोर रहे। आज के समाज में इन स्नातकों की परीक्षाओं को मान्यता न होने से वे हीन ग्रन्थि के शिकार हो रहे हैं, ऐसा भी दीख रहा है। पर्याप्त मात्रा में शिक्षार्थी यहाँ न आने से काम करने में काफी कठिनाइयाँ होती हैं। इन सब परिस्थितियों में एक प्रयोग यहाँ बीस साल तक चला।

१९५९ में तालीमी संघ और सर्व सेवा संघ का संगम हुआ। १९६० में उत्तम बुनियादी कक्षाएँ बंद हो गयीं और उत्तर-बुनियादी शिक्षा का काम भी सुचारु रूप से न चल पाया। नये विद्यार्थियों का आना तो करीब-करीब बंद ही हो गया था।

अच्छी तरह शुरू किया गया प्रयोग शनैः शनैः क्षीण क्यों होने लगा, इसके कारणों में जाना जरूरी है। पुराने साथियों ने इस काम को छोड़ दिया। राष्ट्रीय वातावरण में भी परिवर्तन हुआ।

१९४७ में स्वराज्य मिला और जनता में एक अपेक्षा निर्माण हुई कि अब शिक्षा पद्धति में आमूल परिवर्तन हो। पाँच-दस साल तक लोगों ने राह देखी। कई कमिटियों और कमीशनों की नियुक्ति हुई और अहवाल प्रकाशित हुए। लेकिन शिक्षा-पद्धति सुधरने के बजाय बिगड़ती ही गयी। शिक्षा का स्तर गिरता गया। विद्यार्थियों में अनुशासनहीनता बढ़ती गई। विद्यार्थी व अध्यापक के पवित्र संबंध अतीत की बात रह गई। इन्हीं दिनों भूदान आन्दोलन का जन्म हुआ और सर्वोदय के विभिन्न कार्यक्रमों के बारे में रुचि पैदा होने लगी। श्री जयप्रकाश नारायण सरीखे लोकनेता ने यहाँ तक कहा कि ऐसा कोई विद्यालय चलाया जाय, जहाँ 'नौकरी के लिए शिक्षा नहीं दी जायगी' ऐसी तख्ती टंगी हो। और ठीक ऐसे समय बापू द्वारा प्रज्वलित किया गया सेवाग्राम का नई तालीम का दीप बुझ रहा है।

पूर्व-बुनियादी से उत्तम-बुनियादी तक शिक्षा का उचित प्रबन्ध न कर यदि केवल बुनियादी और उत्तर-बुनियादी की शिक्षा का प्रबंध हो तो नई तालीम में विश्वास रखनेवाले अधिकतर अभिभावक अपने बच्चों को वहाँ नहीं भेजते हैं। कारण स्पष्ट है। क्योंकि विद्यार्थी उत्तम-बुनियादी में जाने योग्य रहने पर भी अन्य कॉलेजों में उसे प्रवेश नहीं मिलता और अपने यहाँ उत्तम बुनियादी का कोई प्रबंध नहीं रहता। इसलिए नयी तालीम के प्रयोग में उत्तम बुनियादी का प्रबन्ध नितान्त आवश्यक है। उसी तरह अनुभव से यह पाया गया है कि केवल हम उत्तर बुनियादी से प्रारंभ करते हैं तो बच्चों पर योग्य संस्कार डालना कठिन होता है। अतः पूर्व बुनियादी से या जब बच्चा माता पिता को छोड़कर अन्यत्र विद्याध्ययन के लिए जा सके, ऐसे समय से—याने ५ वीं कक्षा से—तालीम का प्रबंध सेवाग्राम में किया जाना चाहिए।

शिक्षा का माध्यम उद्योग के रूप में कताई-बुनाई के साथ साथ खेती भी हो। उन्नत कृषि आज देश की प्रथम आवश्यकता है। हर्ष की बात है कि सेवाग्राम में कृषि को शिक्षा के माध्यम के रूप में स्वीकार किया गया है। अब इस पर अधिक जोर देना चाहिये और अन्य स्थानों पर लागू किया जा सके, इस शर्त के साथ खेती के द्वारा विज्ञान के विषय दाखिल करने चाहिये। विज्ञान की दिशा विकेन्द्रीकरण और स्वावलंबन की हो।

समवाय का काम सेवाग्राम में और देशभर में शुरू हुआ, लेकिन प्रचुर मात्रा में पाठ्यपुस्तकें इसके लिये तैयार नहीं हो सकीं। समवाय के व्यापक अर्थ में समवाय का प्रयोग, यह हमारी शिक्षा-पद्धति का मुख्य उद्देश्य होना चाहिये। लेकिन समवाय के अत्युत्साह में कृत्रिम समवाय यानी खींच तानकर समवाय करना या शैक्षणिक स्तर गिरने देना अनुचित होगा। इन सारी सावधानियों के साथ समवाय-पद्धति का अवलंबन किया जाय। शिक्षा का स्तर ऊँचा उठने एवं समुचित प्रबंध होने से विद्यार्थी में हीन भावना नहीं आयेगी।

कृषि से प्रारंभ हम भले ही करें, लेकिन अन्ततोगत्वा इन्जीनियरिंग, चिकित्सा, अध्ययन विशारद, मन्त्रविद्या आदि में भी उत्तम बुनियादी तक की शिक्षा का प्रबंध करना होगा। उत्तम बुनियादी के बाद भी स्नातकोत्तर विद्या का एवं संशोधन का प्रबंध किया जाना चाहिये। थीसिस, प्रबन्ध की भी सुविधा होनी चाहिये, हालाँकि नई तालीम का थीसिस केवल बौद्धिक न होकर प्रयोगात्मक भी होगा। इस भाँति समग्र विचार करने पर सेवाग्राम विद्यापीठ की कल्पना सम्मुख आती है। इससे छोटी योजना बनाने से विद्यार्थियों का, अध्यापकों का और अर्थ का अभाव—ये त्रिविध समस्याएँ बनी रहेंगी। देश में आज नये शिक्षण की माँग है। विद्यार्थी, शिक्षक और पैसा—तीनों लाये जा सकते हैं। इस समय आवश्यकता है कल्पना शक्ति की। पूरे भारत से दो चार सौ विद्यार्थी मिलना और इस काम के लिए जान की बाजी लगा देने वाले २०-२५ शिक्षक जुटाना असाध्य नहीं है। सेवाग्राम में पुराने अनुभवों का लाभ उठा कर काम शुरू किया गया तो देश-विदेश से यथेष्ट मात्रा में अर्थ जुटाया जा सकता है।

स्थान स्थान पर पूरा चित्र प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त अनुकूलताएँ पैदा न हुई हों, लेकिन देश में एक स्थान पर काम करने की सामग्री जुटाई जा सकती है। उत्तम बुनियादी का समुचित प्रबंध न होने से कई सर्वोदय सेवकों को, दिल मसोसकर अपने बालकों को पुरानी शालाओं में भेजना पड़ता है और विद्यार्थी भी ऐसी शालाओं में निराश होकर जाते हैं। पुरानी तालीम लेने के बजाय विद्यार्थी अशिक्षित रहना पसंद करे, ऐसी सर्वोदय-प्रेमियों की मान्यता मान्य नहीं हुई है। लेकिन स्वच्छ पानी का सोता उपलब्ध होने पर कई सर्वोदय सेवक गंदा पानी अपने बच्चों को नहीं पिलायेंगे। आशा है कि बापू की इच्छा, सेवाग्राम का महत्त्व, सेवाग्राम की शिक्षा विषयक पुरानी परंपरा, अच्छे शिक्षण की माँग और तालीमी संघ और सर्व सेवा-संघ के संगम से बनी आशाएँ, इन सब बातों को ख्याल में रखकर सेवाग्राम में विद्यापीठ की स्थापना का आयोजन किया जायगा। इस साल यहाँ ५ से ११ तक के बुनियादी और उत्तम बुनियादी के वर्ग चलेंगे। अगले साल कृषि कॉलेज खोलने का तय हुआ है। अतः सब भाई बहनों से नम्र निवेदन है कि वे इस काम में मदद करें।

[सेवाग्राम (वर्धा), महाराष्ट्र]

सिकता, या शान्ति और बड़े बड़े बाजारों की भूख अथवा कहिये शान्ति और बड़े पैमाने पर उपभोग की सामग्री तैयार करके बाहर भेजने की मनोवृत्ति, दोनों एक साथ नहीं चल सकते। दोनों को साथ रखना शेर और बकरी को एकसाथ रख कर दोनों के सह-अस्तित्व की बातें करने जैसा है। हक्सले अपनी पुस्तक "साइंस, लिबर्टी एण्ड पीस" में लिखते हैं :

> "मेरा व्यक्तिगत विचार है, जो दरअसल विकेन्द्रीकरण के समस्त समर्थकों का विचार है, कि जब तक शुद्ध विज्ञान के निष्कर्षों का उपयोग बड़े पैमाने पर उत्पादन और वितरण करने वाली उद्योग-व्यवस्था को महंगे मूल्य पर अधिक विस्तृत और अधिकाधिक विशिष्ट बनाने में होता रहेगा, सत्ता का निरन्तर थोड़े-से-थोड़े हाथों में अधिकाधिक केन्द्रीकरण होने के सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता। आर्थिक तथा राजनीतिक सत्ता के इस केन्द्रीकरण के परिणाम स्वरूप जनता निरन्तर अपनी नागरिक स्वतन्त्रता, अपनी व्यक्तिगत स्वाश्रयता और स्वशासन के अपने अवसर खोती रहेगी। किन्तु हमें यह बात समझ लेनी चाहिए कि निर्लिप्त वैज्ञानिक अनुसन्धान अपने में कोई ऐसी वस्तु नहीं है, जो केन्द्रित आर्थिक व्यवस्था, उद्योग और सत्ता के लाभ के लिए अपने उपयोग को अनिवार्य बनाती हो।

अहिंसा में विश्वास करने वाला कोई भी राष्ट्र अतएव किसी दूसरे राष्ट्र पर अपना पक्का माल थोपने का प्रयत्न नहीं करेगा। इसका अर्थ होगा किसी भी अहिंसक राष्ट्र में उसका हरएक ग्राम अपने निजी श्रम के आधार पर अपने गाँव की एक स्वतन्त्र स्वावलम्बी अर्थ-व्यवस्था तैयार करेगा।

गांधीजी ने अहिंसक प्रतिकार और असहयोग के द्वारा हमें स्वतन्त्रता दिलाई। गांधीजी स्वतन्त्रता को ही अपने आन्दोलन का अन्तिम उद्देश्य नहीं मानते थे। उनका अन्तिम उद्देश्य था, एक अहिंसक समाज की रचना करना। स्वतन्त्रता तो उसका एक साधन मात्र थी। यही कारण है कि जब किसी ने उनसे पूछा, गांधीजी! हमारे एक हाथ में स्वतन्त्रता हो और दूसरे हाथ में अहिंसा, तो आप अपने देश के लिए किसको पसंद करेंगे? गांधीजी ने तुरन्त कह दिया, अहिंसा को। पन्द्रह अगस्त सन् १६४७ को क्या हुआ? दिल्ली में सत्ता हस्तान्तरित हो रही थी, नेता और जनता प्रथम स्वतन्त्रता दिवस मनाने की धुन में थे, बड़े पैमाने पर तैयारियाँ चल रही थीं। सारे नेताओं ने जोर लगाया कि उस दिन गांधीजी दिल्ली में रहें। पर गांधीजी ने नोआखाली नहीं छोड़ा। वह दिल्ली नहीं आये। वह उन लोगों के घावों को भरने के काम में लगे हुए थे, जिनका सब कुछ बरबाद हो गया था। सोचने की बात है, यदि गांधीजी का स्वतन्त्रता ही ध्येय होता तो वह ऐसे शुभ अवसर पर भी दिल्ली आने से इन्कार करते? और यदि सचमुच आजादी के लिए ही उन्होंने आन्दोलन चलाया होता तो आजादी मिलने के बाद आन्दोलन के नेता कांग्रेस के उच्चाधिकारियों को बुला कर इतनी साफ-साफ भाषा में पूरे कांग्रेस-संगठन को जिसे उन्होंने स्वतन्त्रता के लिए एक अहिंसक सेना की तरह तैयार किया था 'लोक-सेवक-संघ' में परिवर्तित कर देने की सलाह न देते।

स्वतन्त्रता के लिए गांधीजी का वह अहिंसक आन्दोलन, मनुष्य को अधिक-से-अधिक ऊपर कैसे उठाया जाय, इसकी शोध करने के लिए वातावरण तैयार करना था। वह कहा करते थे, मैं जो काम सेवाग्राम में बैठ कर रहा हूँ, वह सारे देश की और इसलिए सारी दुनिया की बेहतरी के लिए है। उनकी आकांक्षा भारतवर्ष में विश्व-शान्ति का एक रूप खड़ा करने की थी।

आप सब जानते हैं, उन्होंने अहिंसक प्रतिकार के प्राथमिक प्रयोग दक्षिण अफ्रीका में किये। प्रश्न होता है, यदि भारत की स्वतन्त्रता ही उनका ध्येय न होता तो भारत को ही वह अपनी प्रयोग-भूमि क्यों बनाते, दक्षिण अफ्रीका में भी प्रयोग कर सकते थे। इसका यही उत्तर है कि कई कारणों से भारत वर्ष ही उनके प्रयोगों के लिए अधिक उपयुक्त और आसान क्षेत्र था। वह भारतीय थे, भारत को स्वतन्त्र करना भी चाहते थे, इसलिए यह नहीं कह सकते कि भारतीय स्वतन्त्रता उनका ध्येय नहीं था। हाँ, अन्तिम उद्देश्य यह नहीं था। इसीलिए उन्होंने भारत को अपनी प्रयोग-भूमि नहीं बनाया था। इसके दूसरे भी कारण थे। एक कारण जैसा विश्व का इतिहास कहता है, भारत का उद्देश्य कभी भी किसी दूसरे देश को जीतने और उस पर हुकूमत करने के लिए आक्रमण करना न था। शुरू से ही भारत की किसी पर आक्रमण न करने की परम्परा रही है। दूसरे, भगवान बुद्ध के समय से ही किसी-न किसी रूप में और प्रकार से यहाँ अहिंसा के प्रयोग और प्रचार बराबर चलते आ रहे हैं, जिसके कारण अहिंसा की बात पूरे राष्ट्र की नस-नस में समा गई है। तीसरे, भारत को ऐसे अनेक सन्त और द्रष्टा मनीषियों के आध्यात्मिक अनुभवों की बपौती मिली है, जो आत्मा की एकता और इसलिए विश्व-बन्धुत्व में मानते थे। यह भी इस देश का सौभाग्य है कि यहाँ सन्तों की लड़ी कभी टूटी नहीं है, एक के बाद दूसरे कोई-न-कोई बराबर आते ही रहे हैं। ये और इसी प्रकार के कुछ कारण हैं, जिनसे गांधीजी ने भारत को ही अपने प्रयोगों के लिए चुना।

लाओ-त्से के बोध-वचन

युद्ध-निवृत्ति

शस्त्रास्त्र कितने ही नक्काशीदार क्यों न हों, वे सुख के साधन नहीं हो सकते, बल्कि सभीको उनसे भय लगता है।

इसलिए ताओ से युक्त पुरुष, जहाँ ये चीजें हैं, वहाँ नहीं रहेगा।

कुलीन व्यक्ति घर में आदर का स्थान अपने बायें हाथ की ओर रखता है, लेकिन सैनिक रणांगण पर पहुँचते ही दाहिने को सम्मान देता है, क्योंकि शस्त्र अशुभसूचक है। ज्ञानी पुरुष उनका उपयोग नहीं करते। लाचारी की बात अलग है।

उसकी प्रबल इच्छा शान्ति की ही होती है और विजय पाने में उसे प्रसन्नता नहीं होती।

विजय में प्रसन्नता मानना, मानव की प्राणहानि में प्रसन्नता मानना है।

जो रक्तपात में प्रसन्नता मानता है, वह राज्य करने के लिए अयोग्य है।

जब समृद्धि रहती है, तब वे बायीं बाजू (शान्ति) पसन्द करते हैं। किन्तु विषम परिस्थिति उत्पन्न होने पर दाहिनी बाजू (युद्ध) का ही स्वागत करते हैं।

इसलिए उप-सेनापति बायीं ओर रहता है और प्रधान सेनापति दाहिनी ओर।

मुझे लगता है कि अन्त्यविधि के समय भी यही पद्धति होती है।

जिसे बहुतों का वध करना पड़ता है, उसपर अतिदुःख और आँसू बहाने का भी अवसर आता है।

इसलिए सफल सेना अन्त्यविधि के अवसर की पद्धति का अनुसरण करती है।

* * *

दान का अर्थ

उस महान् तत्त्व को प्राप्त कीजिये, सारी दुनिया आपकी ओर दौड़ पड़ेगी।

दुनिया आपकी ओर दौड़ पड़ेगी, तो उसमें उसे किसी तरह का कष्ट नहीं होगा। क्योंकि उसे अद्भुत शान्ति प्राप्त होगी।

जहाँ उत्सव चलता हो, वहाँ यात्री ठहरेगा ही।

ताओ जीभ के लिए बेस्वाद और फीका है।

उसे देखने से आँखों की तृप्ति नहीं होती।

सुनने से कान तृप्त नहीं होते।

फिर भी उसकी उपयुक्तता का अन्त नहीं है।

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन, काशी, द्वारा प्रकाशित 'ताओ-उपनिषद्-लाओ-त्से के बोध-वचन' पुस्तिका से। पृष्ठ-संख्या ८८, मूल्य ७५ न० पै०।

जो लोग गांधीजी को नजदीक से जानते हैं, उन्हें मालूम होगा कि स्वतन्त्रता के तुरन्त बाद उनके मन में एक दूसरा राष्ट्रीय आन्दोलन चलाने की बात चल रही थी। वह उसके रूप और आकार-प्रकार की शोध कर रहे थे। इसलिए वह कांग्रेस को लोक-सेवक-संघ में बदल देना चाहते थे। श्री जयप्रकाशजी कहते हैं : वह यही काम है, जो विनोबाजी ने उठा लिया है। इसलिए भूदान का यह आन्दोलन गांधीजी के अहिंसक असहयोग आन्दोलन का ही दूसरा पहलू है। चूँकि पहले आन्दोलन की जड़ें इस देश में गहरी उतर चुकी थीं, इसीलिए दस वर्ष की छोटी-सी अवधि में विनोबा जी इतनी सफलता पूर्वक जन-शक्ति के आधार पर सामाजिक क्रान्ति और पुनर्निर्माण का ऐसा अद्भुत आन्दोलन खड़ा कर सके।

(अपूर्ण)

तुच्छ, फिर भी तुच्छ नहीं

• रणजीत

[१६ फरवरी '६२ के भूदान-यज्ञ में हमने श्री रणजीत का 'तुच्छ, फिर भी तुच्छ नहीं', लेख प्रकाशित किया था, जिसमें दिखने में छोटी, किन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ऐसी घटनाओं का जिक्र किया गया था, जो राष्ट्र की चारित्र्य-शक्ति बढ़ाने में सहायक होती हैं। यहां हम 'जीवन-साहित्य' से उसके आगे का अंश उद्धृत कर रहे हैं। —सं०]

उस दिन हावड़ा शहर के एक व्यस्त रास्ते पर एक छोटी-सी घटना ने मेरे मन को चंचल कर दिया। रास्ते के किनारे म्युनिसिपैलिटी का एक नल है। पता नहीं, सुबह से ही वह नल किसने खोल दिया था! परिणामस्वरूप पानी बह-बह कर रास्ते में इकट्ठा होने लगा। मैं उसी रास्ते से आ रहा था। वहाँ आकर रुकना पड़ा। रास्ते में बहुत पानी इकट्ठा हो गया था। कुछ कीचड़ भी भर गया था। कितने ही लोग आ-जा रहे थे। अत्यंत सावधानी से अपने जूते-कपड़े बचा कर, नाली फांद कर वे चले जा रहे थे। किन्तु असली समाधान की ओर किसीकी दृष्टि नहीं थी।

क्षण भर में निश्चय करके नल की ओर पैर बढ़ाया, किन्तु फिर रुकना पड़ा। रास्ता चलते हुए लड़कों के दल में से एक तीव्र स्वर गूंज उठा, "देखता है, रास्ते की क्या दशा हो गयी है। कितने लोग आ जा रहे हैं! क्या कोई भी नल बंद नहीं कर सकता था?" एक किशोर के कीचड़ पार कर नल बंद करने से पानी बंद हो गया। लड़कों का दल शोर मचाता हुआ फिर रास्ते पर चला गया।

मैं भी चल पड़ा। परंतु मेरा हृदय भर आया था। उस रास्ते पर कितने लोग आये और गये। उनमें कितने ही पढ़े-लिखे पंडित होंगे, कितने ही राजनीतिज्ञ होंगे, किन्तु यह छोटा सा लड़का आज मानो उन सबके पांडित्य और *राजनीति का उपहास कर गया! स्वाधीनता हमने प्राप्त कर ली है। परंतु स्वाधीन* जाति के गुण कितनों ने पाये हैं? स्वाधीन भारत के नागरिकों को कहाँ खोजते फिरेंगे? उत्तर भी मिल गया। अनजान अपरिचित किशोरों के मन में ही नया देश जन्म ले रहा है। उनकी साधना, उनका त्याग और उनके हृदय का उत्ताप, ये ही सब भारत को पृथ्वी पर महान बनायेंगे।

* * *

एक छोटी महाप्राण लड़की। जिस महान् जीवन का संकेत उसने पाया, वह हजारों पढ़े-लिखे मनुष्यों में भी नहीं देख सका। लड़की का नाम था सुधा। गरीब की बेटी थी। उसके परिवार में रोगी पिता, माँ और कई भाई-बहन थे। घर की गाय का दूध बेच कर खर्च चलता था। रोज तीसरे पहर उसे दूध का लोटा लेकर छात्रावास में आते हुए देखा करता था। उस दिन साधारण-सा ज्वर था, इसलिए उससे कहा, "सुधारानी! आज *शाम से पहले मुझे आध सेर दूध दे* जाना। तुम्हारा दूध अच्छा तो है?"

"हाँ, मास्टरसाहब! आप पीकर देखिये!"

ठीक समय पर वह दूध दे गयी। संध्या के समय मेरा एक मित्र दूध को उबालने के लिए स्टोव जला रहा था कि उसी समय सुधारानी आकर हाजिर हो गयी। मैं चुपचाप बिस्तर पर लेटा था। *पास ही उसका व्याकुल कंठ-स्वर सुनाई* पड़ा, "मास्टरसाहब!"

"सुधारानी! इस समय! क्या बात है?"

"क्या आपने दूध पी लिया?"

"नहीं! क्यों, बताओ तो?"

"मास्टरसाहब, दूध मुझे वापस दे दीजिये। उसे आप न पीजिये।"

जैसा कि स्वाभाविक था, मुझे आश्चर्य हुआ। पूछा, "क्यों?"

"मास्टरसाहब!"

सुधारानी का गला भर्रा गया और वह आगे न बोल सकी। मैं उठ कर बैठ गया और स्नेह के साथ उसकी ठोडी पकड़ कर बोला, "बोलो सुधारानी, दूध क्यों लौटाना चाहती हो, क्या हो गया?"

स्नेह के स्पर्श से उसकी आँखों से जल टपकने लगा। भरे गले से बोली, "वह दूध अच्छा नहीं है। उसमें दूध का पाउडर मिला हुआ है। घर में माँ की बातों से मुझे पता लग गया है। *मास्टरसाहब, आप उसे न पीजिये।"*

मित्र बोले, "परंतु वही दूध तो सबको देती हो!"

भर्राये हुए गले से वह बोली, "हाँ, मैं नहीं जानती थी कि माँ ऐसा काम करती है। मैं अब दूध न लाऊँगी, मास्टरसाहब।"

किन्तु मैं उसे मना न कर सका। उतनी शक्ति भी नहीं थी। सारी छाती पीड़ा और आनन्द से आन्दोलित हो उठी। आँखें सजल हो आयीं। चुपचाप छोटी सी सुधारानी को स्नेह से पास खींच लिया। सुना है, दूध बेच कर ही माँ गुजारा करती है। शायद अभाव की चोट सह कर ही उसने इस बुरे रास्ते को अपनाया है। किन्तु मैं यह न समझ सका कि इस गरीबी के बीच भी इस छोटी-सी लड़की का हृदय देवकन्या जैसा कैसे बन गया। केवल मन-ही-मन बोला, "असंख्य बुराइयों की कीचड़ के बीच कमल के फूल के समान लड़की जिस देश में जन्म लेती है, वह देश अवश्य फिर एक दिन धरती का श्रेष्ठ देश हो उठेगा।"

* * *

उस दिन कलकत्ते में ट्राम में बैठ कर श्यामबाजार से धर्मतल्ला की ओर जा *रहा था। भीड़ का समय था। गाड़ी में* बहुत से लोग खड़े थे। इसी भीड़ में एक गुदड़ी के लाल के दर्शन हुए!

"आप यहाँ बैठिये!"

पीछे एक किशोर स्वर सुनकर मुड़ा *और देखा—एक किशोर अपने स्थान से* उठकर एक प्रौढ़ सज्जन से वहाँ बैठने का अनुरोध कर रहा था। प्रौढ़ सज्जन ने उस लड़के को अत्यन्त प्यार से गोद में खींचकर बैठा लिया और पूछा, "तुमने मेरे लिए जगह क्यों छोड़ दी, भाई?"

लड़का लज्जा के कारण कुछ नहीं बोला। केवल धीमे से मुस्करा कर उसने गर्दन मोड़ ली। प्रौढ़ सज्जन अत्यन्त प्यार से बोले, "तुम किस क्लास में पढ़ते हो? कौन-से स्कूल में?"

"सातवीं क्लास में। शारदाचरण की पाठशाला में।"

"वाह!" गंभीर स्वर में प्रौढ़ सज्जन बोले, "तुम्हारे जैसे समझदार लड़के आजकल कम ही दिखाई पड़ते हैं। धन्य हैं तुम्हारे माँ-बाप और सार्थक हैं तुम्हारे *शिक्षकगण! मैं भी शिक्षक हूँ, किन्तु* लगता है, तुम्हारे जैसा छात्र मैं आज तक भी तैयार नहीं कर पाया। मैं केवल भाषा की शिक्षा देता हूँ। मनुष्य बनने की शिक्षा देना मैंने नहीं सीखा।"

प्रौढ़ सज्जन की बात से मेरा मन भर आया। शिक्षित और अशिक्षित मनुष्यों से भरी हुई गाड़ी पर जिस अमूल्य हृदय का परिचय पाया है, उसे किस तरह तुच्छ माना जा सकता है। हम लोग जो आयु और शिक्षा की बड़ाई करते हैं, नये भारत के नवजीवन के प्रति क्या गहरी श्रद्धा प्रकट न करेंगे?

* * *

रास्ते पर घूमना ही मेरा नशा है। उस दिन नशा मिटाने गया तो एक अमूल्य रत्न का परिचय मिला।

कामारकुण्डु स्टेशन तारकेश्वर-बर्दमान लाइन का जंक्शन स्टेशन है। साइकिल लेकर फिर घुमाते उसीके प्लेटफार्म को लंबे-लंबे कदमों से पार कर रहा था—यह सोचते हुए कि दूसरे *किनारे जाकर बड़ा रास्ता पकड़ूंगा।* प्लेटफार्म के बड़े-बड़े बेंच यात्रियों से भरे थे। बहुतों ने छोटे-छोटे पेड़ों के नीचे भी आश्रय लिया था। सब प्रकार के फेरीवाले इधर-उधर घूम रहे थे। प्लेटफार्म लगभग पार कर ही चुका था कि दो किशोरों के आ जाने से रुकना पड़ा। एक ने पूछा, "अच्छा, आप साइकिल पकड़ कर क्यों ले जा रहे हैं?"

उसके चपल प्रश्न से मुझे कौतुक हुआ। बोला, "क्यों, बताऊँ?"

"बताइये न," लड़का मुस्कराता हुआ बोला, "हममें बहस हो गयी है। यह कहता है कि आपकी साइकिल खराब हो गयी है। परंतु मेरा विचार कुछ और है। आप बताइये न।"

मेरी उत्सुकता बढ़ गयी। लड़के की आँखों में मुझे एक नये प्रकाश की झलक मिली। धीरे-धीरे बोला, "रेलवे स्टेशन के प्लेटफार्म पर साइकिल पर चढ़ कर जाना, रेलवे-विधान की ओर से मना है भाई! उसका पालन करना हमारे लिए उचित नहीं है क्या?"

"देख लिया!" किशोर आनन्द से *प्रफुल्लित होकर अपने साथी से बोला,* "मैंने कहा था न?"

मेरा मन भी खुशी से भर गया। बोला, "तब तो तुम जीत गये।"

लड़के के मुख पर लजीली हँसी थी। *उसने केवल चुपचाप गर्दन हिला दी।* मैं फिर बोला, "किन्तु तुम लोगों के मन में यह बात आयी कैसे?"

वह बोला, "एक दिन साइकिल पर चढ़ कर प्लेटफार्म पर से जा रहा था। स्टेशन-मास्टर ने मुझे मना किया। बोले, 'यह कानून के विरुद्ध है!' उस दिन से मैं प्लेटफार्म पर साइकिल पर नहीं चढ़ता। शायद उन्होंने आपको भी मना किया है!"

किशोर की सरलता के सामने अपनी सच्चाई प्रकट करने में मुझे झिझक हुई। स्नेह के स्वर में बोला, "हाँ भाई, तुम्हारी तरह मुझे भी एक दिन उन्होंने मना किया था। इसीसे मैं भी तुम्हारी तरह कानून मान कर चलता हूँ।"

उस दिन सारे रास्ते केवल यही बात सोचता रहा। सोचा—नया भारत क्या इन्हीं कुमार किशोर प्राणों के भीतर से नये रूप में आविर्भूत होगा? कितनी बार देखता हूँ, कितने शिक्षित मनुष्य, कितने विद्या-अभिमानी युवक उपेक्षा से इस प्रकार के छोटे-मोटे कानून तोड़ते रहते हैं। कोई लज्जा या अपराध अनुभव नहीं करते।

हमारे देश के पारसमणि ये हैं। इनके स्पर्श से हमारे मन की जड़ता कटे और हमारे मन में एक सच्ची स्वाधीन जाति का जन्म हो, इसके अतिरिक्त कामना करने के लिए और क्या है!

———

विनोबा यात्री दल से

• कुसुम देशपाण्डे

ढेमाजी में कस्तूरबा-ट्रस्ट का एक केंद्र चलता है, वहाँकी बात है। तीन दिन वहाँ बाबा का पड़ाव था। कार्यकर्ता आस पास के गाँवों में घूम रहे थे। ५ मार्च तक इसी अंचल में यात्रा तय हुई थी। पर इन दिनों हम देख रहे थे कि बाबा कुछ सोच रहे हैं। उनका चिंतन चक्र गतिमान हुआ है। कब क्या करेंगे, क्या निर्णय लेंगे, कोई नहीं कह सकता था। वैसा ही हुआ। २८ फरवरी को दोपहर को २ बजे बाबा केंद्र के अहाते में धूप में हरियाली पर घूम रहे थे। कहने लगे "कल एक मार्च है। सोचता हूँ—कल से हमारा 'मार्च' शुरू हो जाय तो अच्छा।"

अमल प्रभा बहन ग्रामदान-कानून के सिलसिले में सरकार से बात करने के लिए गयी थी, वह २७ की रात लौटी थी। हेमाबहन भराली, लखेश्वर भुइया, सोमेश्वर बारुवती, गुलाबदत्त आदि साथ थे। सब बाबा के कमरे में बैठे थे। बाबा ने प्रकट चिंतन करते हुए कहा कि "इस क्षेत्र में बहुत अनुकूल वातावरण है। अब यहाँ मेरा काम नहीं है। आप सब कार्यकर्ताओं का काम है। ग्रामदानी गाँवों के पट्टे ग्रामसभा के नाम से तैयार करने का काम है। यह काम आप पूरा करें। मार्च के अंत तक कानून के नियम आदि तैयार हो जायँगे।" सुवर्णश्री अंचल में जो कार्यकर्ताओं की टोली काम कर रही थी, वह टोली आगे भी काम करती रहेगी। १ मार्च से सुवर्णश्री अंचल के आखिरी ३ गाँवों में जाकर ४ मार्च को बाबा जब सुवर्णश्री नदी पार कर रहे थे, तब पूर्व क्षितिज पर लाल रंग छाया हुआ था। नेफा के नीले पहाड़ मौन दिखाई दे रहे थे।

"अब मैं यहाँसे जा रहा हूँ। फिलहाल असम में तो हूँ, पर कह नहीं सकता, कितने दिन!" बाबा गाँववालों से कहते जा रहे हैं। कार्यकर्ताओं से उन्होंने कह दिया है कि "यदि कामरूप की तरफ ग्रामदान का जोर हुआ तो मैं वहाँ ज्यादा दिन दे सकता हूँ।"

जियामरीया गाँव तो छोटा-सा है, पर वहाँका 'नामघर' बहुत बड़ा है। असंख्य वृक्ष-वेलियों के बीच सड़क के नजदीक ही वह स्थित है। सड़क से नीचे उतर कर एक पगडंडी से जाना पड़ता है। पगडंडी के दोनों ओर सुपारी के ऊँचे पेड़ भी आकाश के साथ गपशप करते हुए खड़े हैं। कभी कभी इन पेड़ों की तरफ बाबा की नजर जाती है, तब वे कहते हैं—"ये पेड़ सुंदर दीखते हैं। कम से कम जगह घेरते हैं। जमीन को जितना कम स्पर्श होता है, उतना अच्छा।"

उस 'नामघर' में गाँववाले इकट्ठे हुए थे। बाबा ने उनसे कहा "इस क्षेत्र में ५०० ग्रामदान हुए हैं। मैं इतना मूरख नहीं हूँ कि यह मानूँ कि यह मेरा पराक्रम है। यह तो इन 'नामघरों' का प्रभाव है। ये नामघर याने ग्रामदान का आरंभ ही है। लोगों को इकट्ठा करने के लिए सत्पुरुषों ने ये नामघर बनाये हैं। एक साथ भगवान का नाम-संकीर्तन हो, भगवत्-स्मरण हो, यह इसका हेतु है। नामघर में भगवान के सामने सब मिल-जुलकर कीर्तन करेंगे तो सारा गाँव एक परिवार बनेगा और महापुरुषों को खुशी होगी।"

"आप यह तय कीजिये कि गाँव में शराब का इस्तेमाल न हो। शराब से बुद्धि नष्ट होती है। आचार्य चाणक्य ने कहा है "मेरा सब जाये, पर मेरी बुद्धि साबित रहे!" गाँव में पुलिस का कोई काम नहीं होना चाहिए। सबके मुख में सत्य वचन, हाथ में काम हो। हर गाँव में नामघर हो तो महापुरुषों के हृदय आनंद से भर जायेंगे और रामजी ऐसे गाँव में आकर रहेंगे।"

ऐसी बात समझाते हुए बाबा जा रहे हैं। ये छोटे छोटे गाँव याने छोटे छोटे बगीचे हैं। माली बगीचे को पानी देता हुआ जा रहा है। आशा की जा रही है कि इन बगीचों में फूल खिलते रहेंगे, फल पैदा होते रहेंगे।

"इस गाँव में जो सबसे गरीब है, उनके घर मुझे ले चलो।" श्री गोराजी कह रहे थे। मैं उन्हें एक घर ले गयी। एक किसान का घर था। ग्रामदान में उसे जमीन मिली थी। उसमें मेहनत करके वह गुजारा कर रहा था। उसने अभिमान से कहा—"अब इस गाँव में आपको गरीब कैसे मिलेगा! यह तो ग्रामदान हो गया है।" चन्द दिनों से बाबा से मिलने श्री गोराजी आंध्र से आये हुए हैं। असम में आने के लिए उनको काफी लंबी सफर करनी पड़ी और रास्ते में कई जगह दिक्कत भी हुई। वे कहते थे "बद्रीनारायण की यात्रा इससे आसान होती। पर इसमें बाबा से मिलने का आनंद था, इसलिए सफर की तकलीफ महसूस नहीं हुई।"

श्री गोराजी ने उनके 'दिल्ली मार्च' की रिपोर्ट बाबा के सामने पेश की। सब जानते हैं कि शान शौकत, आडम्बर के खिलाफ और निर्दलीय प्रजातंत्र का प्रचार इन दिनों श्री गोराजी कर रहे हैं। बाबा के साथ इसी विषय पर चर्चा करने के लिए उनकी भाषा में कहूँ तो "विचार-विनिमय" के लिए वे आये हैं। इस विषय पर उनसे चर्चा करते हुए बाबा ने उनसे कहा "आडम्बर और पार्टी दोनों अलग-अलग चीजें हैं। हाँ! इनका प्रचार एकत्र भले ही आप करें। लेकिन जहाँ आप आखिरी कार्रवाई करने जाते हैं, वहाँ आपको इन दोनों चीजों को मिश्रित नहीं करना चाहिए। निर्दलीय प्रजातंत्र—यह एक नया विचार हमने रखा है। और इस नये विचार के लिए आप प्रचार करें। किन्तु उसके लिए धीरज की जरूरत रहेगी। ग्राम-पंचायत और नगर निगम के स्तर पर उसका आरंभ कर सकते हैं। दलीय पद्धति के होते हुए भी किस तरह देशहित की दृष्टि से एकत्रित कार्य किया जा सकता है, इस बारे में लोगों को शिक्षित किया जा सकता है, किया जाना चाहिए। पार्टी पालिटिक्स—दलगत-सत्ता से मुक्ति हो, यह विचार हम दे रहे हैं। साथ ही हम यह भी मानते हैं कि इस विषय पर सत्याग्रह नहीं हो सकता है।

"पाम्प, आडम्बर क्या है, इसकी व्याख्या आप कैसे तय करेंगे! वह तो रिलेटिव होती है। मैंने कुछ ऐसे भी लोग देखे हैं, जो मंत्री पद पर जितनी तनख्वाह पाते हैं, उससे अधिक वे दूसरे काम में कमाते थे। मैं भी आस्टेरिटी सादगी पसंद करता हूँ। किन्तु आस्टेरिटी अपने आप में गुण नहीं है। आपने सुना होगा, औरंगजेब, हिटलर ऐसे थे, जिनका जीवन अत्यन्त सादा था।"

इस पर गोराजी ने कहा "मैं यह कबूल करता हूँ कि ऐसे कुछ महत्त्व के काम करने वाले व्यक्तियों को सुविधाएँ दी जानी चाहिए। पर प्रजातंत्र में 'पाम्प'-आडम्बर लोगों के प्रतिनिधियों को जनता से अलग करता है।

बाबा: सब कार्यकर्ता, जो इस कार्य-क्रम में लगे हैं, उनको एक सामान्य सूझ बूझ होनी चाहिए और "पाम्प" तथा सुविधाओं की मर्यादाएँ तय करनी चाहिये। लेकिन इस विषय पर सत्याग्रह उचित नहीं हो सकता है। लोकशाही में हृदय-परिवर्तन के लिए सत्याग्रह हो सकता है। हमने गंदे पोस्टरों के खिलाफ सत्याग्रह किया था। हम में से कुछ लोग वेदखली के लिए भी सत्याग्रह करते हैं। ठीक है। पर जहाँ विचार परिवर्तन की बात आती है, वहाँ सत्याग्रह नहीं हो सकता। फिर वहाँ मास एज्यूकेशन, लोक शिक्षण, और सतत प्रचार—कन्सटेन्ट प्रोपेगण्डा यही साधन हो सकता है।

गोराजी की प्रधान मंत्री के साथ जो मुलाकात हुई, उसका बयान सुन कर बाबा ने कहा "आप पंडितजी के पास गये और वहाँ जो नम्र व्यवहार किया, वह हमें अच्छा लगा। खुशी हुई।"

दूसरे दिन रास्ते में एक छोटी नदी पार करके जाना था। छोटी सी नाव में बैठे बैठे बाबा गोराजी से कह रहे थे—प्रजातंत्र पर मेरे चार आरोप हैं। अभी तक की पद्धतियों में यह श्रेष्ठतम पद्धति है, यह मानी हुई बात है, पर उसमें कई दोष हैं।

(१) दूसरी पद्धति के समान यह पद्धति भी हिंसाश्रित है।

(२) इसमें काउण्टिंग आफ नम्बर्स—संख्या गिनती को महत्त्व दिया है, जो केवल यांत्रिक है।

(३) अनेक पार्टियों का होना, इसमें जरूरी माना जाता है, जो हानिकारक है।

(४) आज की हालत में यह संकुचित प्रदेश भावनाओं का निवारण नहीं कर सकी है, जिनमें राष्ट्रवाद भी एक है।"

चर्चा के दौरान में बाबा ने एक बात की ओर गोराजी का ध्यान खींचा की आज जब कि हम बुनियादी सामाजिक क्रान्ति और मूल्य-परिवर्तन का प्रयत्न कार्य करते हैं, हम सबकी शक्ति उस एक मुख्य काम में केंद्रित नहीं होती है, बँट जाती है, तो शक्ति प्रकट नहीं होगी। भिन्न भिन्न तारिकाएँ प्रकट होंगी, सूरज प्रगट नहीं होगा।

आज भूदान, ग्रामदान का एक पॉजीटिव (विधायक) अहिंसात्मक क्रांतिकार्य हमारे हाथ में है। पर इस मुख्य वस्तु को हम गौण मान कर, या अनेक अंगों में से एक अंग मात्र मान कर चलें और एक बाजू रखें तो श्रम विभाजन के नाम से डिसइन्टीग्रेशन, छिन्न भिन्न होने की संभावना है। साथ ही अगर ग्यारह साल के आरोहण का मूल्यांकन करने में कोई स्थूल दृष्टि न रख कर सोचेंगे तो ध्यान में आयेगा कि हमने जितनी शक्ति लगायी, उससे बहुत ज्यादा परिणाम निकला है। इसका मुझे कोई कारण नहीं मिलता, सिवाय इसके कि यह युग की प्रेरणा है। इस समय सब स्तरों में हमारे विचारों को जितनी मान्यता मिली है, उतनी इसके पहले कभी नहीं मिली थी।"

आखिरी दिन विदाई लेते लेते श्री गोराजी ने पूछा "इन दिनों आप विज्ञान और आध्यात्मिकता की बात करते हैं। आध्यात्मिकता का मतलब क्या है?"

बाबा ने कहा "सर्वोच्च नैतिक मूल्यों में और जीवमात्र की एकता में विश्वास तथा मृत्यु के बाद जीवन के अस्तित्व में भी विश्वास।"

"क्या सब धर्म इन चीजों को मानते हैं?"

"जी हाँ!..."

'बीघे में कट्ठा' अभियान क्यों ?

• गोपाल कृष्ण मल्लिक

प्रायः १२ साल से विनोबाजी भारत के कोने-कोने में घूमकर लोक-शक्ति की जागृति में लगे हुए हैं। लोगों में प्यार और विश्वास बढ़े, इसके लिए उन्होंने एक छोटी-सी तरकीब बताई है, जिससे हरएक को त्याग करने का मौका मिलता है। ज्यादा त्याग नहीं, थोड़ा त्याग ! यानी जिसके पास पाँच बीघा जमीन है, वह पाँच कट्ठा दान दे। इससे क्या होगा ? गाँव में सबका प्रेम बढ़ेगा। आज गाँव की ताकत किसी भी तरह नहीं बन रही है। इसीलिए सबके दिल में फौरन प्रेम बढ़ना अनिवार्य है। विनोबाजी ने इसीलिए "बीघे में कट्ठा" अभियान चलाया है। उनकी यह बात देखने में कितनी छोटी है, पर उसका परिणाम अत्यन्त ही महान् है। छोटा त्याग और महान् परिणाम, इसे ही कहते हैं।

विनोबा कहते हैं : मरते सभी हैं, पर मरनेवाले अपने साथ क्या ले जाते हैं ? मकान, खेत, दौलत, बीबी, बच्चे ? नहीं, यहाँ तक कि शरीर भी यहीं छोड़ जाते हैं। साथ में धर्मस्तिष्ठति केवलम्। मनुष्य के साथ सिर्फ धर्म ही जाता है। जिस धर्म का आचरण हम करते हैं, वही साथ जाता है। अतः मनुष्य का प्रियतम सखा धर्म है। धर्मो रक्षति रक्षितः—अर्थात् हम धर्म की रक्षा नहीं करेंगे तो धर्म हमारी रक्षा नहीं कर सकता। दान-धर्म से मनुष्य की और समाज की भी रक्षा होती है। नदी का पानी जैसे आगे बढ़ता जाता है, उसी तरह समाज में दान-धर्म चलना चाहिए। हमें उसी तरह अपने से नीचे वालों के पास, दुखियों के पास दौड़ जाना चाहिए।

विनोबा कहते हैं : "पहले बिहार में प्रेम पैदा हो तो पीछे सब जगह का काम सहज हो जायगा और इससे ग्राम स्वराज्य आयेगा।" आज तो गाँव-गाँव में गुलामी का कितना बड़ा गड्ढा पड़ा है, इसका भी हमें भान नहीं है। उसे मिटाने के लिए ही विनोबाजी ने "बीघे में कट्ठा" अभियान चलाया है। दिल को जोड़ने के लिए नरम दिल की जरूरत होती है। नरम दिल जुड़ेंगे तो ग्रामदान होगा। नरम दिल के लिए दिल में स्नेह चाहिए। दिल सख्त नहीं होना चाहिए। इसलिए विनोबाजी ने जोत की जमीन में से "बीघे में कट्ठा" देने को पुनः कहा है। इस काम को हर कोई उठा सकता है; यह जमीन मालिक चाहे जिसे दे सकते हैं। अपने मजदूरों को भी दे सकते हैं और उन्हें अपने परिवार में दाखिल कर सकते हैं। इस प्रकार मालिक और मजदूर एक होंगे। कोई बेजमीन नहीं रहेगा। उसके बाद ग्रामदान की बात सहज ही स्वतः आगे बढ़ सकेगी।

इससे मनुष्य मनुष्य के बीच माधुर्य बढ़ेगा और मनुष्य जीवन में माधुर्य बढ़ेगा तो मनुष्य का दुःख-दर्द भी घटेगा। यह *काम भूदान और ग्रामदान से ही सधेगा।* इसे "साझा" भी कहा गया है : "साझा" में मालकियत का अंश मालिक और मजदूर दोनों का होता है। आज तो एक के ही हाथ में मालकियत है। उसे ही "साझा" के रूप में बाँटने के हेतु "बीघे में कट्ठा, दान दो इकट्ठा" की बात विनोबा ने रखी है। देनेवाले खुद बाँटें, पर यह जमीन जोत की जमीन होनी चाहिए। इस तरह गाँवों की दो हजार एकड़ में से २०० एकड़ ही जमीन क्यों न मिले, पर इससे स्नेह बढ़ता है. हृदय का क्षेत्र विशाल होता है और दिल से दिल का माधुर्य फैलता है। हृदय से हृदय जुड़ता है और वे एक दूसरे के सुख-दुःख में भी सम्मिलित होते हैं।

बिहार राज्य की कुल ४ करोड़ ४० लाख जनता के ८८ लाख परिवारों में ११ लाख परिवार भूमिहीन हैं, जिनके पास जोतने के लिए जमीन नहीं है।

विनोबाजी प्रथम बार सन् '५२ में जब बिहार आये थे तो लगभग सवा दो वर्ष रहे और उनके प्रयास से लगभग २१ लाख एकड़ जमीन भूदान में मिली। बिहार ने विनोबाजी की प्रथम यात्रा के समय ही अपनी भूमिहीनता मिटाने के लिए ३० लाख एकड़ भूमि इकट्ठा करने का संकल्प लिया था। पर उस समय २१ लाख एकड़ भूमि ही मिल सकी, जिसमें नौ लाख एकड़ का बँटवारा हो सका। इस नौ लाख एकड़ में साढ़े छः लाख एकड़ जमीन नदी, पहाड़, एवं बंजर थी, और बाकी २॥ लाख एकड़ जोत की थी, जो भूमिहीनों को दे दी गई।

बिहार में अब प्रायः बँटने लायक अच्छी जमीन नहीं रह गई है। इसीलिए विनोबाजी ने "बीघे में कट्ठा" अभियान चलाया है। इसमें जो जमीन मिलेगी, वह अच्छी जमीन ही होगी। विनोबा के इस विचार का सभी पार्टियों ने समर्थन भी किया है। ग्रामपंचायत वालों ने भी मदद करने का वचन दिया है। फिर तो सबको मिलकर इस काम में लग जाना चाहिए। बिहार ने अपना पहला संकल्प अभी तक पूरा नहीं किया। अब यह संकल्प "बीघे में कट्ठा, दान दो इकट्ठा" के मंत्र से पूरा करना है। पर यदि संकल्प को अधूरा छोड़ दिया तो आत्म निष्ठा कम होगी और फिर आगे कोई दूसरा काम पूरा करने में बल नहीं मिलेगा।

विनोबा से यह प्रश्न पूछा जाता है कि पहले तो आप छठांश माँगते थे, पर अब बीसवाँ भाग माँगते हैं। क्या इससे भूमि-समस्या का समाधान संभव है ? "सवाल समस्या के समाधान का नहीं, बल्कि चित्त के समाधान का है।" बाबा उन्हें यही जवाब देते हैं। राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर और गांधी भी आये और गये, किन्तु समस्या बाकी ही पड़ी है। जब तक मानव रहेंगे, समस्या भी रहेगी ही। अतः असल सवाल मनुष्य के चित्त के समाधान का है।

आज संपूर्ण एशिया में भूमि-समस्या एक महासमस्या बनी हुई है। इसलिए विनोबा जमीन की मालकियत ही समाप्त करना चाहते हैं। लेकिन अहिंसक ढंग से। इसीलिए इस हिंसा-प्रधान-युग में विनोबा की बात बहुत टेढ़ी लगती है। किन्तु विनोबा का लक्ष्य ही नहीं, साधन भी महान् है। इसी लक्ष्य पर पहुँचने के लिए विनोबाजी ने "बीघे में कट्ठा, दान दो इकट्ठा" का मंत्र दिया है। यह उनकी माँग भी है, जो सौम्यतर माँग है। क्योंकि यह अत्यन्त ही स्वल्प है। इसमें हरएक को देना है और हरएक के पास कार्यकर्ता को पहुँचने का कार्यक्रम भी है। गाँव में किसी एक के जमीन देने से शक्ति प्रकट नहीं होती, पर सब मिलकर देते हैं तो अपूर्व शक्ति प्रगट होती है।

"बीघे में कट्ठा, दान दो इकट्ठा" कार्यक्रम से क्या होगा ? हरएक से मिलेगा, अच्छी जमीन मिलेगी और दाता ही बाँटेंगे। परिणाम क्या होगा ? हवा बनेगी, क्रियाशीलता बढ़ेगी, शक्ति एकत्रित होगी। इसलिए विनोबाजी इसे सौम्यतर, सरलतर प्रक्रिया कहते हैं। उनसे पूछा गया है कि क्या जिन्होंने पहले जमीन दी है, वे भी दुबारा देंगे ? तो विनोबाजी ने उन्हें जवाब दिया है—"यह कैसा सवाल है ? जिन्होंने पहले छठा हिस्सा दे दिया है, वे आज खाते हैं या नहीं ? खाते हैं तो देना ही चाहिए। और छठा हिस्सा दिया तो अब बीसवाँ हिस्सा देने में क्या तकलीफ होगी ? तो जिन्होंने पहले दी थी, वे तो देंगे ही, पर जिन्होंने पहले नहीं दी थी, उनके लिए यह नया मौका आया है, वे भी दें।"

छोटे-बड़े सब कार्यकर्ता और अलग-अलग पार्टी के लोग मिलकर इस महान् पुनीत कार्य को उठा लें तो बाबा की इतनी-सी माँग अब पूरी होने में कसर नहीं है। चुनाव का बोझ भी अब कार्यकर्ताओं के सिर पर से उतर चुका है। विनोबा की माँग, एक प्रेम की माँग है; जिसे सीलिंग कभी भी पूरा नहीं कर सकता। अतः इस भ्रम में न रहें कि सीलिंग कानून बिहार राज्य-सरकार ने पास किया और यह पूरा हो गया। सीलिंग से क्या होगा ? जमीन भी कितनी मिलेगी ? कैसी जमीन मिलेगी ? जो कुछ हो, किन्तु उससे विनोबा का लक्ष्य नहीं सधता है। दिल-से दिल नहीं जुड़ता है। जमीन भी अच्छी नहीं मिलेगी और फिर मुकदमेबाजी की तो भरमार ही हो जायगी। फिर दान और सीलिंग से तो तुलना ही नहीं हो सकती। विनोबा अधोगति की नहीं, ऊर्ध्वगति की ओर बढ़ना चाहते हैं। उनकी प्रक्रिया सौम्य से सौम्यतर की ओर जाने की है। उससे क्रियाशीलता बढ़ती ही है, घटती नहीं। अतः इस कार्य में सबको सारी शक्ति से जुट जाने की नितान्त आवश्यकता है।

साहित्य-परिचय

आर्थिक विचार-धारा : उद्भव से सर्वोदय तक

लेखक—श्रीकृष्णदत्त भट्ट प्रकाशक—सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी

पृष्ठ संख्या ४८३, सजिल्द, मूल्य ६ रुपया।

गांधीजी की विचारधारा भी संसार में एक विशिष्ट संपूर्ण अर्थ विचार का स्थान रखती है। यह बात आज के बौद्धिक जगत में सर्वमान्य नहीं दिखती। अहिंसा के अर्थशास्त्र का क्रमगत विकास मानवता का पशुता में से विकास का ही एक सिलसिला है। इस बात को समझने और समझाने में ग्रंथों की मदद चाहिए, ऐसा एक ग्रंथ बहुत मनन-अध्ययन के बाद श्री श्रीकृष्णदत्त भट्ट ने लिखा है।

छोटी-छोटी पुस्तिकाओं और व्याख्यानों से जो शांति का अर्थशास्त्र हम प्रसारित करते हैं, उससे पूरी भूमिका नहीं मिल पाती। ऐसी पुस्तक की आवश्यकता थी, जो अलग-अलग अर्थ-विचारों के साथ तुलना करती हुई और ऐतिहासिक भूमिका समझाती हुई सर्वोदय का अर्थ विचार अर्थशास्त्र के विद्यार्थी के लिए पेश करती। हिन्दी में इस प्रकार का यह पहला ही प्रयास है। श्री भारतन कुमारप्पा ने अंग्रेजी में 'समाजवाद, पूँजीवाद और ग्रामवाद' पुस्तक लिखी थी, तथा श्री जे० सी० कुमारप्पा तथा अन्य गांधीवादी अर्थशास्त्रियों ने मौलिक विचारों का एक बड़ा भंडार हमें दिया, जो विनोबा युग में और भी विकसित और प्रसारित हुआ। पर सम्पूर्ण विचार को किताबी जगत के उपयुक्त बौद्धिक शिक्षा को मान्य रूप में रखने के प्रयास नाकाफी हुए हैं। यह पुस्तक इस दिशा में तथा इस कमी को पूरा करने की ओर एक सराहनीय प्रयास है। पुस्तक को तीन हिस्सों में बाँटा है। प्रथम भाग में अठारहवीं सदी से पहले धीरे धीरे मानव के क्रमगत विकास तथा विभिन्न सांस्कृतिक भूमिकाओं में अर्थ-व्यवस्था का अध्ययन है तथा कैसे वाणिज्यवाद का प्रादुर्भाव

हुआ तथा राज्य और अर्थ-व्यवस्थाओं सामंतशाही और व्यापारी को ही सर्वेसर्वा बनाने में सक्षम हुईं।

दूसरे भाग में औद्योगिक क्रांति के बाद १९ वीं सदी में अर्थ-जगत में जो तेजी आई तथा विभिन्न विचार प्रणालियाँ प्रचारित हुईं, उनका विशद वर्णन है तथा व्यक्तिगत स्वार्थमूलक विचारधाराओं को जिन दो वादों ने प्रभावित किया, उनका विवेचन है। एक है समाजवादी विचारधारा, दूसरी राष्ट्रवादी विचारधारा। विभिन्न अर्थशास्त्रियों के चित्र तथा विचार छोटे रूप में दिये गये हैं तथा अलग-अलग सिद्धान्तों के बारे में समझाया गया है।

तीसरे खंड में बीसवीं सदी में अर्थ-विचार का विकास संकुचितताओं को छोड़कर आगे बढ़ा है। व्यक्तिगत स्वार्थ और राष्ट्रगत स्वार्थों से निकलकर सर्वोदय की ओर सोचने का प्रादुर्भाव होता है। इसमें देश-विदेश की अर्थ-प्रणालियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन है तथा अन्त में गांधी, कुमारप्पा तथा विनोबा पर अलग-अलग अध्याय दिये हैं।

सामाजिक जीवन अर्थ विचार पर कितना अधिक आधारित है, यह प्रतीति दिन-व-दिन स्पष्ट होती जा रही है। अर्थ-विचारों के बारे में अच्छी जानकारी हर सार्वजनिक कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है। इस दृष्टि से यह पुस्तक 'गागर में सागर' भरकर रखी गयी है। यह पढ़कर ऐसे सब लोग, जिन्होंने अर्थशास्त्र को स्कूली रूप में नहीं पढ़ा है, सारी आवश्यक भूमिका प्राप्त कर सकेंगे और जो स्कूली रूप में पढ़ चुके हैं, उन्हें भी एक तारतम्य में और क्रमगत विचार-विकास के रूप में सारी बातें समझाने में बड़ी आसानी होगी।

स्पष्ट ही है कि श्री मशरूवाला ने इस ग्रंथ को तैयार करने में बड़ी मेहनत की है। हमें विश्वास है कि उनकी यह आशा—"यह पुस्तक सर्व-साधारण के लिए तो उपयोगी सिद्ध होगी ही, भारतीय विश्वविद्यालयों में पढ़ने वाले अर्थशास्त्र के स्नातकोत्तर छात्रों के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी"—पूरी होगी।

श्री श्रीमन्नारायणजी पुस्तक की भूमिका में लिखते हैं :

"वर्तमान अर्थशास्त्र-सम्बन्धी साहित्य का मैं जितना अधिक अध्ययन करता हूँ, मेरा विश्वास उतना ही दृढ़ होता जाता है कि सर्वोदय विचारधारा एक दकियानूसी दृष्टिकोण नहीं, किन्तु आधुनिकतम व वैज्ञानिक दृष्टिकोण है, जो भारतवर्ष के लिए ही नहीं, बल्कि संसार के अन्य देशों की भी सर्वांगीण प्रगति के लिए अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु इस बात को समझने के लिए आर्थिक विचारधारा के इतिहास की विस्तृत जानकारी जरूरी है। इस दृष्टि से भी भट्ट द्वारा लिखित यह पुस्तक बहुत उपयोगी सिद्ध होगी।"

६ अप्रैल से १३ अप्रैल तक का राष्ट्रीय सप्ताह

ग्रामस्वराज्य सप्ताह के रूप में मनायें

[अ० भा० सर्व-सेवा-संघ के खादी ग्राम-स्वराज्य-समिति के अध्यक्ष श्री ध्वजाप्रसाद साहु ने समस्त रचनात्मक कार्यकर्ताओं और संस्थाओं के नाम ग्रामस्वराज्य सप्ताह के लिए जो अपील की है, वह यहाँ दी जा रही है। —सं०]

वर्षों के बाद पिछले साल इस देश ने एक अनूठी एक नई भूमिका दी—ग्रामस्वराज्य की। यह भूमिका सर्वोदय आन्दोलन से जुड़ी होने के कारण सही थी, इसलिए लोकप्रिय हुई। इस साल हम उस भूमिका को राष्ट्र की चेतना में जड़ और गहराई से प्रवेश कराना चाहते हैं। अपने देश के जन-जीवन के विकास में हम उस स्थल पर पहुँच गये हैं, जहाँ ग्राम-स्वराज्य केवल सर्वोदय की आकांक्षा नहीं रह गया है, अब ग्राम-स्वराज्य की व्यापक प्रतीति कुछ जल्दी ही दिखाई देने लगी है।

क्या सम्पत्ति और क्या सत्ता, दोनों क्षेत्रों में केन्द्रीकरण के जो दुष्परिणाम हिंसा, शोषण और दमन के रूप में प्रकट हुए हैं, और होते जा रहे हैं, उनके कारण राष्ट्र का चिन्तन बदल रहा है और यह मान्यता बढ़ रही है कि स्वराज्य तभी होगा, जब वह ग्राम-स्वराज्य होगा। शोषण और दमन से पीड़ित इस युग की आकांक्षा हमारे अनुकूल है, लेकिन यह अनुकूलता सिद्ध तो तब होगी, जब हम अपना पुरुषार्थ परिस्थिति के साथ जोड़ देंगे। राष्ट्र के पुरुषार्थ से राष्ट्र का स्वराज्य हुआ, अब गाँव के पुरुषार्थ से ग्राम-स्वराज्य होगा—इस संदेश को गाँव गाँव में पहुँचाना हमारा काम है। इस समय का हमारे लिए यह सबसे बड़ा महत्त्व है। ग्राम-स्वराज्य क्या है, वह कैसे प्राप्त होगा, सरकार की शक्ति से भिन्न जनता की सहकार शक्ति कैसे बनेगी, कैसे गाँव की बुद्धि का, शक्ति का, और साधनों का सबके द्वारा सबके हित में इस्तेमाल होने से ही सबको ईमान की रोटी और इज्जत की जिंदगी मिल सकेगी—इन सबका हमें पूरा कार्यक्रम देना पड़ेगा। पंचायतें, सहकारी समिति और ग्राम-इकाई आदि का जो संगठन हुआ है, और हो रहा है, वह हमारे लिए ग्राम स्वराज्य के व्यापक लोक शिक्षण का अवसर है। पहला कदम गाँव में ग्राम भावना का निर्माण है।

कार्यक्रम की दृष्टि से सात दिनों में किस दिन क्या किया जाय, यह बहुत कुछ स्थानीय परिस्थिति पर निर्भर होगा। कार्यक्रम हम कोई भी अपनायें, हमें हवा में ग्राम-स्वराज्य की गूँज पैदा करनी है। सच्चा स्वराज्य सबके सहयोग से होगा, इसलिए हम किसी तरह का भेद भाव न रखकर सभी लोगों का समान रूप से सहयोग लें। ग्राम स्वराज्य के इस पर्व के अवसर पर प्रभात-फेरी, जुलूस, कताई-प्रदर्शन, बच्चों के खेल, सार्वजनिक सभा आदि परिचित कार्य होंगे ही, और होने चाहिए, लेकिन मेरा सुझाव है कि हमारी मुख्य चिंता यह होनी चाहिए कि हमारे कार्यक्षेत्र के, हमारे सम्पर्क के गाँवों और शहरी मुहल्लों में ग्राम स्वराज्य की सक्रिय इकाइयाँ बनें, जिनमें कुछ ऐसे चेतनाशील व्यक्ति सम्मिलित हों, जो स्थानीय समस्याओं तथा उनके निराकरण के सहकारी उपायों की चर्चा करें तथा सम्मिलित रूप से कुछ निर्णय करके कुछ करना शुरू करें। आज देश में लगभग एक लाख गाँवों में खादी का काम हो रहा है। जितने ही गाँवों में भूदान में जमीन मिली और बँटी है तथा कितने ही गाँवों में हमारे खादी प्रेमी ग्राहक बिखरे हुए हैं। ये सब ग्राम-स्वराज्य की सजग और सचेष्ट इकाइयों के लिए अनुकूल क्षेत्र हो सकते हैं। इकाइयाँ चेतन और सक्रिय बनी रहें, इसके लिए आवश्यक है कि उनसे हमारा सम्पर्क बना रहे, ताकि धीरे-धीरे ग्राम भावना में से सामूहिक शक्ति प्रकट हो और गाँव की गरीबी, बेकारी, बीमारी, वहाँ की अशांति और अन्याय लोगों के चिन्तन का विषय बनें और उनके निराकरण के लिए सहकारी पुरुषार्थ प्रकट हो।

ग्राम स्वराज्य की स्थापना के निमित्त हम सबकी शक्ति लगे।

—ध्वजाप्रसाद साहू

हर पुस्तकालय और विद्यालय में यह पुस्तक पहुँचाई जानी चाहिए तथा हर कार्यकर्ता तथा विचारनिष्ठ द्वारा पढ़ी जाने लायक पुस्तक है।

—देवेन्द्र कुमार गुप्त

पत्र-व्यवहार से

भीलवाड़ा जिले में शराबबंदी के लिए व्यापक जन-शिक्षण

पंचायत-समितियों के सर्व-सम्मत प्रस्ताव

सेवा सदन, बीगोद, भीलवाड़ा जिले की सबसे पुरानी रचनात्मक संस्था है। इसने प्रारम्भ से ही हर समस्या को हाथ में लिया है और जब जैसा काम हाथ में लेना आवश्यक था, इसने हाथ में लिया था—इस महीने से उसने शराबबंदी का काम हाथ में लिया है और विधिवत् आगे बढ़ रहा है। उससे पहले जिले भर की पंचायत-समितियों से शराब बंदी करवाने के लिए सर्वसम्मत प्रस्ताव पास किये गये।

इसके पश्चात् मांडलगढ़ तहसील की करीब-करीब सभी ग्रामसभाओं ने तथा ग्राम-पंचायतों ने शराब की दुकानें तथा पेयर-हाउस उठाने के संबंध में सर्वसम्मत प्रस्ताव पास किये, जिनकी प्रतियाँ राज्य-सरकार को यथासमय भेज दी गयी थीं। इसके पश्चात् सचिव महोदय एक्साइज की मार्फत एक पत्र भेजा गया कि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की मूल भावना को लक्ष्य करके इस जिले से शराब की दुकानें उठा लीजिये, लेकिन उनका कोई उत्तर नहीं मिला। इसके पश्चात् उन्हें एक पत्र और लिखा गया कि यदि आप ३१ मार्च सन् १९६२ के बाद लोगों के न चाहने पर भी दुकानें जारी रखेंगे तो जिले में ६ अप्रैल से ही सत्याग्रह चालू किया जायगा। इस पत्र का भी कोई उत्तर नहीं मिला है और ११ मार्च से ही शराब की दुकानें फिर से नीलाम की जा रही हैं।

सुना तो यह जाता है कि सरकार भी दुकानें बंद करना चाहती है। जब वह बंद करना चाहती है तो फिर भीलवाड़ा जिले में बंद करने से उन्हें कौन रोक रहा है?

एक तरफ ५४००० वोटर्स में से केवल ८००० वोट मिलने पर ही जनता का प्रतिनिधि मान लिया जाता है और दूसरी ओर सर्वसम्मत प्रस्ताव पास होने पर भी शराब की दुकानें ज्यों की त्यों चालू रहती हैं। क्या, यह लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण है? क्या, जिस राज्य ने सबसे पहले लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का कदम उठाया, वही राज्य सबसे पहले इसको दफनाना भी चाहता है?

बीगोद का बच्चा-बच्चा चाहता है कि बीगोद से शराब की दुकान तथा पेयर-हाउस हटाये जायँ। बीगोद पर तो एक बड़ी जिम्मेदारी यह भी है कि यहीं पर बहने वाली प्रयागराज की तरह पवित्र नदी त्रिवेणी में पूज्य बापू की भस्मी का अंश भी प्रवाहित किया गया है। जहाँ पूज्य बापू की भस्मी का अंश प्रवाहित किया गया है, वहाँ शराब की दुकान तथा पेयर हाउस लोगों के न चाहने पर भी खुले रहें, यह नहीं हो सकता। अतः ता० ६ अप्रैल से बीगोद में सत्याग्रह चालू किया जायगा।

—मनोहर सिंह मेहता

अश्लील साहित्य के खिलाफ लोकमत-जागरण आवश्यक

दिल्ली में प्रदेशीय सर्वोदय साहित्य सम्मेलन का निर्णय

आर्य-समाज मंदिर, करौलबाग दिल्ली में सर्वोदय साहित्य मंडल के तत्त्वावधान में प्रान्तीय सर्वोदय साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता भारतीय आदिम जाति सेवक संघ के मंत्री श्री धर्मदेव शास्त्री ने की। मासिक "जीवन-साहित्य" पत्रिका के संपादक श्री यशपाल जैन, हिन्दी साहित्य सम्मेलन के स्नातक संघ के अध्यक्ष श्री रामेश्वराचार्य शास्त्री, दिल्ली मुद्रक संघ के अध्यक्ष श्री वेदव्रत, श्री प्रभात विद्यार्थी, श्री रामेश्वर दास गुप्त एवं श्री सी० ए० मेनन और मदन चिरक ने अश्लील साहित्य की समस्या को राष्ट्र के नैतिक उत्थान में बाधक बताते हुए उसके समाधान के लिए विभिन्न क्षेत्रों में विचार-गोष्ठियों के आयोजन पर बल दिया और पाठकों के सचेत एवं सशक्त लोकमत को जाग्रत करने के लिए आवश्यकता अनुभव करते हुए कहा कि इस क्षेत्र में मुद्रक, प्रकाशक, लेखक, पाठक, साहित्य विक्रेता, साहित्य प्रचारक एवं सरकारी अधिकारियों की संयुक्त शक्ति को सुसंगठित करने के लिए "सेमिनार" आयोजित किये जाने चाहिये।

सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि सर्वोदय साहित्य मंडल द्वारा अधिकारियों का ध्यान भी सड़क पर बिकती अश्लील साहित्य की पुस्तकों की ओर आकृष्ट किया जाय। इस अवसर पर श्री बनारसीदास चतुर्वेदी जी द्वारा भेजे गये शुभ संदेश को पढ़कर सुनाया गया, जिसमें उन्होंने कहा कि "इस अनाचार पर कई तरीकों से, कई दिशाओं से आक्रमण होना चाहिये। संसद के दोनों भवनों का भी उपयोग आवश्यक है। वैसे सर्वोदयी तरीका तो यह है कि उसकी बिल्कुल ही उपेक्षा की जाय और सर्वोत्तम साहित्य को अधिकाधिक लोकप्रिय बनाने के लिए भरपूर जी-जान से प्रयत्न किया जाय।"

आगामी सर्वोदय-सम्मेलन

आगामी सर्वोदय सम्मेलन सुरत जिले के वेडछी क्षेत्र में नवम्बर के तीसरे सप्ताह में होने वाला है। रविशंकर महाराज सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष होंगे। सर्वश्री जुगतराम दवे, सरला बहन, डा० द्वारकानाथ जोशी और नारायणदास गांधी, उपाध्यक्ष और सर्वश्री मोहन परीख, नानू मजूमदार, रतिभाई गोंदिया और हीणाभाई दर्जी मंत्री होंगे।

इन्दौर में सर्वोदय-पात्र

इन्दौर में फरवरी ६२ में कार्यकर्ताओं ने २६७६ परिवारों से व्यक्तिगत सम्पर्क किया। १०३ नये सर्वोदय पात्रों की स्थापना की तथा १७०२ सर्वोदय-पात्रों से अन्न तथा नकदी के रूप में रु० ५६३) न० पै० ३६ की रकम संग्रहीत हुई। सर्वोदय-पखवाड़े के अन्तर्गत विभिन्न मुहल्लों में लोक-संपर्क हुआ तथा सभाएँ हुईं। कार्यकर्ताओं तथा साहित्य-भंडार के संयुक्त प्रयास से ११३१ रु० २६ न० पै० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री की गयी। १०८ भूदान पत्र-पत्रिकाओं की फुटकर बिक्री हुई। चल पुस्तकालय से २१ परिवारों ने लाभ उठाया। प्रति रविवार आश्रम में विभिन्न विद्वानों के व्याख्यान भी हुए।

आरा जिले में बीघे में कट्ठे की तैयारी

बिहार सर्वोदय मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह ने शाहाबाद जिला में 'बीघा-कट्ठा' अभियान की व्यवस्था का निरीक्षण करने के लिए जिले में ३ दिन का दौरा किया। ग्राम सरैंजा और तियरा में २ सभाएँ हुईं। गाँववालों ने लगभग ६०० कट्ठा जमीन भूदान में अर्पित की। सरैंजा गाँव वालों ने अपनी पंचायत में 'बीघा कट्ठा' अभियान चलाने के लिए गाँववालों की एक कमेटी बनायी है। आरा जिले के सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं की एक बैठक शाहाबाद में हुई, अभियान सफल बनाने के लिए जिले के चारों सब-डिविजन में संगठन कार्य करने का भी निश्चय किया गया।

ग्राम-भारती शिविर सम्पन्न

विसर्जन आश्रम, इन्दौर में श्री धीरेन्द्र भाई के मार्ग दर्शन में ग्राम-भारती शिविर सम्पन्न हुआ—जिसमें गांधी स्मारक निधि के ग्राम सेवक, नगर में काम करने वाले कार्यकर्ता एवं अन्य संस्थाओं के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया।

सर्वोदय-विचार-गोष्ठी का आयोजन

सर्वोदय स्वाध्याय मंडल, टीकमगढ़ के तत्त्वावधान में एक सर्वोदय विचार-गोष्ठी का आयोजन दिनांक १७ मार्च को किया गया। गोष्ठी के प्रमुख वक्ता श्री लोकेन्द्र सिंह ने "सर्वोदय" व "भूदान-यज्ञ-आन्दोलन" पर चर्चाएँ कीं। गोष्ठी में सामूहिक प्रार्थना, भजन व सर्वोदय आरती पारायण का भी कार्यक्रम हुआ।

श्री धीरेन्द्र भाई की कटनी-यात्रा

श्री धीरेन्द्र भाई ने ग्राम-भारती के विचार को मूर्त रूप देने के लिए इलाहाबाद जिले के ग्राम ... बरनपुर के आस-पास १२ मार्च से तीन सप्ताह की कटनी-यात्रा प्रारम्भ की है। गाँव-गाँव में श्री धीरेन्द्र भाई और सहयात्री दिन को किसानों के साथ फसल काटने में मदद देंगे और शाम को ग्राम-भारती के विचार को गाँव वालों के सम्मुख रखेंगे। ५ अप्रैल को यात्रा समाप्त होगी।

गुजरात-शांति सेना शिविर

गुजरात के शांति सैनिकों का एक शिविर २१ से २४ मार्च तक साबरमती में हुआ। गुजरात से २५ कार्यकर्ता बिहार के बीघा-कट्ठा अभियान में भाग लेंगे।

मुंगेर जिलेमें बीघा-कट्ठा अभियान की तैयारी

मुंगेर जिले के सर्वोदय कार्यकर्ताओं की बैठक १९ मार्च को प्रो० श्री राममूर्ति जी के सभापतित्व में हुई। बैठक में १५ अप्रैल से १५ जून तक जिले में बीघा-कट्ठा अभियान चलाने की योजना स्वीकृत हुई। स्वीकृत योजना के अनुसार ११ केन्द्रों के माध्यम से २६ अंचलों में बीघा-कट्ठा संग्रह किया जायगा। सर्वश्री राममूर्ति भाई, भाई गोखले, निर्मल भाई तथा भवानी भाई क्रमशः बेगुसराय, जमुई, खगड़िया तथा सदर सब डिविजनों के केन्द्रों से संपर्क रखेंगे। उपरोक्त कार्य में लगभग एक सौ कार्यकर्त्ता लगने वाले हैं, जिसमें जिला खादी ग्रामोद्योग संघ के ५१, सर्वोदय मंडल के १६ तथा बाकी सर्वोदय विचार धारा से सहानुभूति रखने वाले अन्य कार्यकर्ता हैं। फिलहाल लगभग ४५० ग्राम-पंचायत क्षेत्रों में कार्य प्रारम्भ किया जा रहा है। श्री जंगबहादुर प्रसादजी, संयोजक-जिला भारत सेवक समाज, अभियान के लिये दो माह तक पूरा समय देंगे। श्री गोखले, चौधरी जी, संयोजक जिला सर्वोदय मंडल ने जिला-पंचायत परिषद् तथा राजनैतिक दल के कार्यकर्ताओं से भी अभियान में लगने का निवेदन किया है।

गोरखपुर में शराबबंदी के लिए लोक-शिक्षण

गोरखपुर जिले में गांधीनिधि, सर्वोदय मंडल, स्कूलों, कालेजों, विविध रचनात्मक संस्थाओं के सहयोग से "नैतिक उत्थान समिति" गोरखपुर शराबबंदी-आन्दोलन चला रही है।

शराब के ठीकेदारों से अपील की गई है कि वे ठीका न लें। सरकार को भी जिले का मद्यनिषेध क्षेत्र घोषित करने के लिए लिखा गया है। नागरिकों से हस्ताक्षर कराया जा रहा है। जगह-जगह गोष्ठियाँ और बैठकें आयोजित की जा रही हैं। १५ अप्रैल तक यह कार्यक्रम चलेगा, उसके बाद दूसरे कदम उठाये जायेंगे।

सत्याग्रह-समाज का शिविर

पूर्व निश्चयानुसार अ०भा० सत्याग्रह समाज का एक शिक्षण शिविर गाजियाबाद (मेरठ) उ० प्र० में दि० २८ मार्च से १ अप्रैल तक होने जा रहा है, जिसमें निर्दलीय जनतंत्र तथा सत्याग्रह पर प्रो० गोरा के भाषण होंगे, इसके अलावा सत्याग्रह के संगठन तथा भावी कार्यक्रम पर विचार होगा।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१११
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८७९०। इस अंक की छपी प्रतियाँ ८७६०
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ६ अप्रैल '६२ | वर्ष ८ : अंक २७

ग्राम-स्वराज्य घोषणा

[६ अप्रैल को पिछले साल की तरह इस साल भी 'ग्राम-स्वराज्य दिवस' मनाया जायेगा। इस दिन गाँव-गाँव में सब लोग मिल कर 'ग्राम-स्वराज्य' के लिए अपने संकल्प को दुहरायेंगे। 'ग्राम स्वराज्य दिवस' के दिन सामूहिक पढ़ा जाने वाला घोषणा-पत्र यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

हम मानते हैं कि हमारा सारा गांव एक परिवार है। एक परिवार के नाते ग्राम-समाज को यह जिम्मेदारी लेनी चाहिए और ग्राम-समाज को अपनी ओर से पूरी कोशिश करनी चाहिए कि गांव के सभी लोगों को उनके जीवन की जरूरतें सुलभ हों और समाज में रहते हुए वे यह महसूस करें कि वे पूरी तरह से सुरक्षित और स्वतंत्र है। यह ग्राम-समाज की जिम्मेदारी है कि गांव में कोई न तो भूखा रहे, न बेकार। हम इस जिम्मेदारी को मानते हैं।

इसके लिए हमारी पूरी कोशिश होगी कि बेजमीनों और बेकारों को जमीन मिले और उन्हें किसी उपयोगी उद्योग-धंधे में लगाया जाय।

गांवों में आज बहुत-से साधन पड़े हैं। उन सारे साधनों का हम लेखा-जोखा करेंगे और पूरी कोशिश करेंगे कि गांव की जरूरी आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए उन साधनों का पूरा और सही उपयोग हो।

हम चाहते हैं कि हमारा गांव स्वावलंबी हो। गांव को स्वावलंबी रखते हुए हम पूरा ध्यान रखेंगे कि हम सारे भारतवर्ष के बड़े परिवार के एक अंग हैं और उस नाते उसकी आवश्यकता और राष्ट्रीय-एकता की दृष्टि से अपनी बड़ी जिम्मेदारी निभाना भी हमारा फर्ज है।

हम वे सारे उपाय काम में लायेंगे, जिनसे हमारे आर्थिक जीवन में विविधता आये, हमारा रहन-सहन अच्छा हो और हमारे समाज में रहने वाले सभी लोगों की हालत सुधरे, समाज के हरएक व्यक्ति को उपयोगी और समाज की दृष्टि से हितकारी काम मिले। साथ ही इस ढंग से काम का विकास हो, जिससे गांव के पढ़े-लिखे लोगों की आज शहर की तरफ जाने की जो रुचि है वह रुके। योजना इस तरह की हो, जिसमें पढ़े-लिखे नौजवान गांव में रह कर अपनी शक्ति और बुद्धि का विकास कर सकें और उनकी बुद्धि-शक्ति का गांव को पूरा लाभ मिले।

खादी अहिंसक समाज-रचना की प्रतीक है। आज खादी गांवों के हजारों-लाखों गरीबों और उपेक्षितों के लिए आशा का चिह्न है, रोजी-रोटी का एक साधन है। नया मोड़ और ग्राम-इकाई का नया विचार गांव के लिए प्रेरणादायी विचार है। उसी के आधार पर हमें गांव के सर्वांगीण विकास का संयोजन करना चाहिए।

कृषि-उद्योगप्रधान अहिंसक समाज-रचना में खादी और ग्रामोद्योगों का बहुत बड़ा महत्त्व है, यह हम मानते हैं। हम गांव के आर्थिक जीवन की रचना नये सिरे से इस तरह करेंगे, जिससे उस नवनिर्माण में खादी-ग्रामोद्योगों का महत्त्वपूर्ण स्थान हो और समाज में सबके लिए स्वतंत्रता और समानता की स्थिति कायम रह सके।

हम घोषणा करते हैं कि हम सारी शक्ति इस प्रकार के सहकारी, समन्वित और एकरस समाज के निर्माण में लगायेंगे। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमारे सारे प्रयत्न सफल हों, यही कामना है।

नोट :—यह घोषणा दिनांक ६ अप्रैल, १९६२ को भारत के गाँव-गाँव में गाँववासियों में से कोई एक व्यक्ति एक-एक वाक्य पढ़े तथा सारे लोग मिल कर दोहरायें।

गृहस्थाश्रम से मुक्त होकर लोक-सेवा में लगें

विनोबा

सुबह लोगों ने माधवदेव का एक पद सुनाया। अपने देश में समाज की एक बहुत बड़ी रचना हुई थी। मनुष्य गृहस्थाश्रम में विधिपूर्वक प्रवेश करता था और विधिपूर्वक उसमें से मुक्त होता था। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने पर आखिर तक उसी में रहे, ऐसा नहीं था; बल्कि थोड़े वर्षों के अनुभव के बाद परिवार की आसक्ति से मुक्त होने का धर्म हमने माना था। माधवदेव ने उसी धर्म का उल्लेख अपने पद में किया।

"हे कृष्ण पुत्र पत्नी संग तजी, त्यजु पद विति नित।
सर्वशून्य संत सबर आश्रमें आइय।
ता संसार मुल पड़ेि बाज तनु कृपामृत नदी।
तातें मन होइया बेहेर हात एराइबो।"

यह वानप्रस्थाश्रम का उल्लेख है।

भगवान तो सब दूर भरे हैं, गृहस्थाश्रम में, घर में भी भगवान का निवास है। अब तक गृहस्थाश्रम चला उस भगवान की सेवा हुई। लेकिन वह छोटे भगवान थे। व्यापक भगवान की भी सेवा करनी चाहिए, याने नर-समूह में जो भगवान हैं, उनकी जो सेवा करते हैं, ऐसे सेवक को भक्तों ने नारायण-परायण कहा है। सत्ययुग में ध्यान होना चाहिए, त्रेतायुग में यज्ञ होगा, द्वापर में पूजा होगी, तो कलियुग में क्या होगा? कलियुग में लोग नारायण-परायण होंगे।

कलियुग में हमने यह देखा कि गांधीजी, स्वामी दयानंद, स्वामी रामतीर्थ, विवेकानंद, दादाभाई, श्रीअरविंद आदि सबके सब लोगों की सेवा में लगे। क्या चमत्कार है कि कलियुग में लोग नारायण परायण बने! थोड़े दिन गृहस्थाश्रम करने के बाद अपने चित्त को विषय-वासना से अलग हटा कर, घर की चिंता बड़े लड़के पर या छोटे भाई पर सौंप दें। कभी सलाह दें, लेकिन अपना सब समय लोक-सेवा में लगाना चाहिए, याने लोगों के हित की चिंता करनी चाहिए।

आजकल मुझे यही चिन्ता होती है कि लोक सेवा के लिए सेवक कहाँ से मिलेंगे? सरकार के ५५ लाख नौकर हैं, वे सेवा तो करते हैं, लेकिन वह सरकार की सेवा है, 'नारायण' की सेवा नहीं है। कुछ लोग राजनीतिक दलों में काम करते हैं, उसमें भी सूक्ष्म स्वार्थ भरा है, केवल परमार्थ नहीं। अपने दल का ख्याल, कुछ अपना भी ख्याल, कुल समाज की सेवा होती है, ऐसा भास नहीं होता है। निष्काम सेवा नहीं हो रही है। इसलिए निष्काम सेवा के लिए सेवक कहाँ से

कहाँ गये वह महामहंत! वे क्यों नहीं बाहर निकल रहे हैं? निज स्थान में बैठे रहते हैं और धर्म प्रचार के लिए बाहर निकलते हैं, सो क्या यह धर्म प्रचार नहीं है? जिस जमीन के लिए भाई-भाई के बीच झगड़े होते हैं, वह जमीन हम प्रेम से दूसरे को दिलाते हैं। क्या यह धर्म-विचार नहीं है? इस धर्म विचार के प्रचार के लिए बाहर क्यों नहीं निकलते हैं? ये सब बातें लोग धर्म-विचार से प्रेरित होकर गाँव गाँव घूम कर लोगों को समझा सकते हैं।

निरंतर घर में रहना हमारे ख्याल से गलत है। कुछ दिनों तक अनुभव ले लिया, और फिर 'नारायण' की सेवा के लिए निकल पड़े। हम संन्यास की दीक्षा दिलाना नहीं चाहते हैं। यह कितनी गंभीर बात है, यह मैं जानता हूँ। लेकिन विषयासक्ति से चित्त को हटाओ और लोगों की सेवा में मानव के नाते लग जाओ। हम पक्षवाली सेवा में नहीं मानते, उसमें सार नहीं है। ऐसी राजनीति को जाना ही होगा। छोटे धर्म पंथ हैं, उनको तोड़ना होगा। विज्ञान और आत्मज्ञान आयेगा, यह तो

इस जमाने की यह मांग है कि समाज राजनीति से मुक्त हो जाय—भले ही एक विश्वयुद्ध होने के बाद हो, मुझे धीरज है, होगा शांति से। मुझे परवाह नहीं है, क्योंकि उसके बिना दुनिया टिकेगी नहीं।

आयेंगे, यह मेरे सामने समस्या है।

यह सारे प्रश्न जब मेरे सामने आते हैं, तब मुझे वानप्रस्थाश्रम याद आता है। माधवदेव ने गाया: "पुत्र पत्नी संग तजी"—यह वानप्रस्थाश्रम है। माधवदेव का यह भजन आपने सुनाया तो भक्ति-भाव से हृदय भर आया। यही भारत की सभ्यता है। गृहस्थाश्रम में चंद दिन रह कर उसमें से मुक्त होते हैं, आजीवन उसमें नहीं रहेंगे।

मैंने सतत कहा है। कीर्तनघोषा में है: "राजनीति राक्षसर शास्त्र"—अर्थात् राजनीति याने राक्षसों का शास्त्र। यह राजनीति खत्म होगी, तभी दुनिया बचेगी। राजनीतिज्ञों के हाथ में दुनिया अत्यंत खतरे में है।

इस जमाने की यह मांग है कि समाज राजनीति से मुक्त हो जाय—भले ही एक विश्वयुद्ध होने के बाद हो, मुझे धीरज है। होगा शांति से, मुझे परवाह नहीं है, क्योंकि उसके बिना दुनिया टिकेगी नहीं। ग्रामदान तो मिल रहे हैं, सेवक चाहिए। लाखों वानप्रस्थ लोग जो कि संसार का अनुभव ले चुके हैं, जिनकी वृत्तियाँ शांत हो चुकी हैं, जिनके चित्त में समत्व है, अब निकल पड़ें।

हर कोई ब्रह्मचारी नहीं हो सकता, लेकिन गृहस्थाश्रम से हर कोई मनुष्य निवृत्त हो सकता है, हरएक को होना चाहिए। यहाँ के धर्म की यही आज्ञा है।

भागवत में एक विचार आया कि चोर और दाता दोनों समान हैं। भागवत में है कि स्तेन और ब्राह्मण्य को समान मानना चाहिए। ब्राह्मण्य शब्द का सीधा अर्थ दाता नहीं होता है। लेकिन शंकरदेव का भावार्थ ठीक है। वह तर्जुमा करने वाले नहीं थे, अपना विचार रखने वाले नहीं थे। भागवत की खूँटी पर विचार रख दिया। तुम अगर दाता नहीं बनते हो तो चोर बनोगे। प्रेम से देता है, वह दाता है, जैसा जो नहीं देता है, उसे चोर आकर लूट लेते हैं। आपके घर की संपत्ति से छुड़ाने वाला या तो दाता है या तो चोर आकर छुड़ाता है। भगवान कृष्ण रुक्मिणी को ले गये। रुक्मिणी ने ले जाने के लिए पत्र लिखा था। रुक्मिणी का कन्या-संप्रदान नहीं हुआ था। अब कन्या-संप्रदान और कोई कन्या छीन ले जाय—उसमें कुछ फर्क होगा या नहीं। कन्या-संप्रदान में दोनों पक्षों में प्रेम बढ़ेगा। यह जो फर्क है, वही ग्रामदान और जमीन छीन लेने की बात में है। एक चोर विचार है, दूसरा दाता विचार है। शंकरदेव कहते हैं कि दाता और चोर समान हैं। जब हम दाता बनते हैं, तो समाज की उन्नति होती है और चोरी होती है तो समाज की उन्नति नहीं होती है। संपत्ति के वितरण का काम हो गया। उसके अलावा हमें और भी काम करने हैं। सबके दिलों को जोड़ना है, यह संपत्तिहरण से नहीं होगा, संपत्तिदान से होगा, ग्रामदान से होगा।

आज इतने ग्रामदान हो रहे हैं तो क्या अखबार में इसके समाचार आते हैं? यह तो प्रेम का काम हुआ। अगर मान लीजिये कि किसी गाँव के भूमिहीन लोग, मजदूर लोग उठ कर मालिकों का कत्ल करके जमीन छीन लेते हैं तो कुल दुनिया के सब अखबार में रिपोर्ट छपेगी कि फलाने गाँववाले उठ खड़े हो गये, बड़े-बड़े जमीनवालों को दबाया, मारपीट करके लोगों को भगा कर जमीन छीन ली, तो सबका ध्यान एकदम जायगा। ऐसी हालत में काम करने के लिए शीलवान, चरित्रवान्, प्रेम से भरे हुए, विषय वासना से मुक्त हुए वानप्रस्थ लोग चाहिए, तब यह आंदोलन जोर पकड़ेगा।

हर कोई ब्रह्मचारी नहीं हो सकता, लेकिन गृहस्थाश्रम से हर कोई मनुष्य निवृत्त हो सकता है, हरएक को होना चाहिए। यहाँ के धर्म की यही आज्ञा है।

[टीटाबर, शिवसागर, ४-१२-'६१]

पढ़ना-लिखना बनाम ज्ञान-प्राप्ति

कुरान में एक कहानी मुहम्मद साहब खुद कहते हैं—वे पढ़े-लिखे नहीं थे। उन्होंने कहा कि ईश्वर पहली दफा हमारे पास आये तो उन्होंने अपना रूप प्रकट नहीं किया। अव्यक्त में खड़े हो गये और हमारे सामने उपदेश के तौर पर एक चिट्ठी फेंकी। उसमें कुछ लिखा था। हमने ईश्वर से कहा कि भगवान, हम तो लिखना-पढ़ना नहीं जानते, इसलिए हमारे लिए आपकी चिट्ठी बेकार है। तब भगवान ने हमें दर्शन दिये। वे प्रकट हो गये और उन्होंने उपदेश दिया।

मुहम्मद कहते हैं कि अगर हम पढ़ना-लिखना जानते तो हम न भगवान को देख सकते, न उनकी वाणी सुनते। भगवान को प्रकट होना पड़ा, बोलना पड़ा। वे पढ़ना लिखना नहीं जानते थे तो क्या उनके पास ज्ञान कम था? यह पुराने जमाने की बात हो गयी। इसी जमाने में रामकृष्ण परमहंस हो गये। वे पढ़ना-लिखना बहुत थोड़ा जानते थे, लेकिन बहुत बड़े ज्ञानी थे। हमारे सामने यह बड़ी भारी किताब खुली है। ये चन्द्र, सूर्य, पेड़, पहाड़, खेती, गाय, बैल, घोड़े, पक्षी उड़ रहे हैं और सब मानव सामने हैं। यह सब आप देख रहे हैं, सुन रहे हैं और अनुभव कर रहे हैं। तो पढ़ना-लिखना क्या जरूरी है? सुनने से भी ज्ञान होता है। गुड़ मीठा होता है, यह आपने पढ़ा। लेकिन खाया नहीं, फिर भी ज्ञान आपको हो गया। आप लोगों को समझा सकते हैं कि भाई, गुड़ मीठा होता है। इसलिए पढ़ना-लिखना आया तो ज्ञान होता है, यह गलत ख्याल है।

—विनोबा

[शिवसागर, असम १२-१०-'६१]

के समता-युक्तपूर्वक समरस समाज की स्थापना की जा सके।

परिस्थिति की इस अनुकूलता के साथ-साथ एक दूसरा भी महत्त्वपूर्ण और गहरा कारण है, जिसकी वजह से हिन्दुस्तान में वर्ग-संघर्षों के बिना वर्ग-विहीन समाज की स्थापना सम्भव है। वह कारण है, यहाँ के दीर्घकालीन संस्कारों और परम्पराओं के कारण इस प्रकार के परिवर्तन के लिए जनता की मानसिक तैयारी। सदियों से निरंतर यहाँ के जनमानस पर संतों ने मानवीय एकता, उदारता, सहिष्णुता, त्याग और भाईचारे के आदर्श की छाप डाली है। इस सारी विरासत का फायदा आज हमें मिल सकता है। गांधीजी ने अपने जीवन-काल में निरंतर इस आदर्श के लिए प्रयत्न किया और पिछले दस वर्षों से विनोबा सतत इसका प्रचार करते हुए देश भर में पैदल घूम रहे हैं। हिन्दुस्तान के लिए वास्तव में अभी तक एक सुनहला मौका है, जब कि वह दुनिया को "करुणामय क्रांति" की एक नयी राह दिखा सके। समता और वर्ग-विहीन समाज की स्थापना युग की माँग है, उसे रोका नहीं जा सकता। वर्ग-संघर्ष अब तक उसका तरीका रहा है, पर वह असफल ही नहीं, उल्टा नुकसानदेह भी साबित हुआ है। क्या हिन्दुस्तान एक नयी राह दिखा सकेगा ?

—सिद्धराज

घूसखोरी का इलाज क्या ?

• काका कालेलकर

उत्कोच माने घूसखोरी के बारे में सब लोग बीच-बीच में बोलते हैं, लिखते हैं, चर्चा करते हैं, लेकिन सारे देश में कहीं भी घूसखोरी के खिलाफ किसी ने कमर कसी है, ऐसा दीख नहीं पड़ता। हमने इसके पहले लिखा ही है कि घूसखोरी हमारा प्राचीन और स्वदेशी पाप है। यह कह कर हम अपना बचाव नहीं कर सकते कि हमारे यहाँ घूसखोरी थी ही नहीं, पठान, मुगलों के साथ आयी अथवा पुर्तगाली, फ्रेंच अथवा अंग्रेज उसे ले आये। हम यह भी नहीं कह सकते कि पुर्तगाली, पठान, फ्रेंच और अंग्रेज लोगों ने घूसखोरी का निर्मूलन करने की कभी कोशिश की।

अंग्रेजों ने इसका कुछ इलाज किया नहीं। जो लोग गरीब हैं और जिनको तनख्वाह भी कम मिलती है, ऐसे लोग घूस लें तो उसमें आश्चर्य ही क्या ! इलाज एक ही है कि नौकरों को पूरी तनख्वाह दो, उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा बढ़ाओ। फिर तो उनको घूस लेने की इच्छा ही नहीं होगी और इच्छा हुई तो हिम्मत नहीं होगी। घूस लेकर आदमी जितना ऐशआराम में रहना चाहता है, उतनी तनख्वाह अगर आदमी को मिली तो उसकी कुछ-न-कुछ तृप्ति होगी।

अनुभव तो यह है कि लोभ की तृप्ति होते ही वह बढ़ता है। तनख्वाह बढ़ाने से घूसखोरी बन्द हुई है, ऐसा तजुरबा भी नहीं है। इससे उलटा ज्यादा तनख्वाह-वाले को उसके योग्य घूस की रकम बढ़ानी पड़ती है।

हम यह भी नहीं कह सकते कि गरीबों में घूसखोरी ज्यादा है, धनी लोगों में कम है। जब कभी न्यायनिष्ठा और निःस्पृहता के उदाहरण सामने आते हैं, तब ज्यादातर वे गरीब वर्ग में से ही पाये जाते हैं। गरीब आदमी अपने मन में सोचता है—गरीबी तो मेरे लिए सदा की है ही। घूस लेकर मैं थोड़े ही धनी बनने वाला हूँ ! घूस लेकर मैं अपना परलोक क्यों बिगाड़ूँ ?

यह भी पाया गया है कि श्रमजीवी गरीब लोग कई दफे दान भी नहीं लेते। कहते हैं, हमारे पास धन-दौलत नहीं है सही, लेकिन हमारे पास अपनी आबरू तो है। किसीसे दान लेकर हम कमीने क्यों बनें ?

जो हो, जबसे अंग्रेजों का राज शुरू हुआ, कर्मचारियों को पहले कभी नहीं थीं, इतनी अच्छी तनख्वाहें मिलने लगीं। (अंग्रेजों को जितनी मिलती थीं, उतनी तो कभी भी नहीं मिलीं, यह बात अलाहिदा।)

बड़ी-बड़ी तनख्वाहें देकर अंग्रेजों ने हमारे लोगों की निष्ठा खरीद ली और हमारे लोगों के द्वारा अन्याय चलाना उनके लिए आसान हो गया। बड़ी तनख्वाह वाली और पेन्शनेबल नौकरी आसानी से कोई छोड़ता नहीं।

ऐसी विचित्र परिस्थिति में हम स्वतंत्र हुए हैं और देश का राज हमारे हाथ में आया है। हम कैसे अपेक्षा करें कि स्वराज्य होते ही घूसखोरी एकदम बन्द हो जाय ! अगर हम इतना भी कह सकते कि स्वराज-सरकार के प्रयत्न के कारण घूसखोरी बहुत कुछ कम हुई है तो भी हमें संतोष होता। लेकिन ऐसा कहने की स्थिति भी आज नहीं है। आज हम अधिक-से-अधिक इतना ही कह सकते हैं कि घूसखोरी बढ़ी नहीं है, लेकिन इतने से किसको संतोष होगा !

और जब हम सुनते हैं और देखते हैं कि घूसखोरी में हमसे भी ज्यादा प्रवीण चीन देश में साम्यवादी सरकार होते ही घूसखोरी एकदम बन्द हो गई है, मन विचार करने लगता है कि इस एक बात में तो साम्यवाद का वायुमंडल डेमोक्रेसी की अपेक्षा अधिक शुद्ध है और उसका नैतिक स्तर ऊँचा है। रशिया और अमेरिका दो देशों की तुलना आजकल बार-बार की जाती है। कहते हैं, रशिया में घूसखोरी के लिए अवकाश ही नहीं है। घूस लेकर आदमी करे क्या ! ज्यादा ऐशआराम में वह रह नहीं सकता और घूस का धन संभालना भी मुश्किल है।

जो हो, घूसखोरी की थोड़ी-थोड़ी चर्चा करके और अपना दुःख-प्रकोप जाहिर करने से स्थिति सुधरनेवाली नहीं है।

अंग्रेजों के दिनों से हम एक दलील हमेशा सुनते आये हैं। आज भी अखबार वाले और समाज के नेता उसीको दुहराते हैं, तब दर्द होता है।

जिन लोगों को कानून के खिलाफ जाकर अन्याय्य लाभ उठाना होता है वे तो कर्मचारियों को घूस देंगे ही। कर्मचारियों को लालच में गिराये बिना वह अन्याय का काम, अधर्म का काम और जोखिम का काम क्योंकर करेगा ? ऐसे किस्सों में घूस देनेवाला और लेने वाला दोनों एक-से अपराधी हैं। कानून का अमल अगर शुद्ध रहा, तो दोनों को सजा होनी चाहिये, होगी भी। इसके बारे में कोई शिकायत नहीं हो सकती। ऐसे किस्सों में घूस देने-वाले को अगर ज्यादा सजा हुई तो किसी को तनिक भी एतराज नहीं होगा। लेकिन ऐसे किस्सों में दोनों पक्ष बड़े चालाक होते हैं। शायद ही पकड़े जाते हैं और पकड़े गये भी तो सजा से बचने के कई तरीके उनके पास होते हैं और समाज का और सरकार का तन्त्र ही कुछ ऐसा विचित्र है कि बचने वालों को आसानी से मदद मिल सकती है।

हमारे दिल के सामने दूसरे ही किस्म के हजार प्रसंग हैं, जहाँ घूस देने वाला सज्जन है, कानून के खिलाफ कुछ करना या करवाना चाहता भी नहीं है, उसकी माँग सीधी होती है, और तो भी कर्मचारी वक्र और चालबाज होने के कारण उसे परेशान होना पड़ता है, काफी आर्थिक नुकसान सहन करना पड़ता है। जो काम आसानी से और तुरन्त होना चाहिये उसके लिए दस दफा धक्का खाना पड़ता है। चीजें बिगड़ती हैं। औरों के साथ किये हुए वादों का पालन नहीं हो सकता। प्रतिष्ठा खोनी पड़ती है और कभी-कभी अपनी या मरीजों की जान का खतरा भी मोल लेना पड़ता है।

घूस लेने वाला जब चालाक और निर्दय होता है, तब वह तरह तरह के बहाने आगे करता है, तरह तरह के कानून सामने पेश करता है और धर्मात्मा बन कर कहता है—मैं क्या करूँ, कानून ही ऐसे हैं। मैं उनके खिलाफ कैसे जा सकता हूँ ?

आप ऐसे कर्मचारी का कुछ भी कर नहीं सकते। जिनके हाथ के नीचे ये कर्मचारी काम करते हैं, वे ऊपर के लोग भी ज्यादा कुछ कर नहीं सकते।

फिर तो मुसीबत में फँसा हुआ आदमी मन में कहता है कि मैं घूसखोरी के खिलाफ कहाँ तक लड़ूँ ? लड़ने का मेरा माद्दा ही खतम हो गया है। पाप तो पाप, लेकिन घूस दिये बिना चारा ही नहीं। या तो धन्धा-रोजगार छोड़ कर बाबा बन करके बैठ जाऊँ, बीबी और बाल-बच्चों की हालत भी न रखूँ, या घूसखोरी के खिलाफ लड़ते-लड़ते तबाह हो जाऊँ। अगर इसके लिए मैं तैयार नहीं हूँ तो व्यभिचारी से जो भी देना पड़े, देकर छुट्टी पाऊँ।

और हमारे राजतन्त्र की और सामाजिक मानस की खूबी ऐसी है कि जो घूस देता है वह कभी शिकायत कर ही नहीं सकता। देने वाले ने अपना गुनाह कबूल कर लिया। उसका अपराध सिद्ध हुआ। उसे तो सजा होनी ही चाहिये। और तुरन्त वही सनातन सूत्र सुनना पड़ता है कि घूस देने वाला अगर न होता तो कोई घूस लेता कैसे ? असली गुनाह देने वाले का है।

बात सही है, लेकिन इसके पीछे असाधारण कठोरता है और पाप-निवारण की वृत्ति नहीं, किन्तु न्याय माँगने वाले का मुँह बन्द करने की वृत्ति है। दीन-दुखी दुनिया को इससे मदद नहीं मिलती। धर्म, कानून और न्याय जब कठोर बनते हैं, तब मानवता रोती है और गरीबों के आँसू पोंछने के लिए उपन्यासों का सहारा लेती है। धर्मशाला में, मुसाफिरखानों में और रेलवे के थर्ड क्लास के डिब्बों में गरीबों का सच्चा दुख सुनने को मिलता है। जब जेल की सजा भुगतने वाले गरीब कैदी आपस में बात करते हैं, तब उस समय भी सारा पूरा सत्य प्रगट होता है। और धर्म, कानून और न्याय कितने कठोर होते हैं और उनमें मानवता का कितना अभाव होता है इसका प्रत्यय मिलता है।

घूसखोरी की चर्चा हम दिन-रात करें। घूसखोरी के खिलाफ कड़े-से-कड़े कानून करने हैं तो वे भी करें। लेकिन भूलना नहीं चाहिये कि कड़े कानून से घूस लेने के नये और सूक्ष्म मौके पैदा होते हैं। घूस देने वाले और लेने वाले ही घूसखोरी के खिलाफ जोरों से आन्दोलन करने लगते हैं। कालाबाजार के दिनों में उस गुनाह के प्रवीण लोगों की आवाज काफी जोरों से सुनाई देती थी कि गुनहगारों को कड़ी-से-कड़ी सजा होनी चाहिये।

हमें तो एक ही इलाज दीख पड़ता है कि चारित्र्यवान समाज-सेवक धार्मिकता का वायुमंडल पैदा करने में लग जायँ। समाज हृदय को जाग्रत कर और ऐश-आराम, धन-दौलत और अधिकार लोलुपता की सामाजिक प्रतिष्ठा तोड़ते जायँ। कानून से नहीं, किन्तु सदाचार की तेजस्विता से ही घूसखोरी का इलाज हो सकेगा।

('मंगल प्रभात' से)

तृतीय महानिर्वाचन के अवसर पर

प्रयाग में शान्ति-सेना कार्य

• बनवारीलाल शर्मा

सर्वोदय-समाज की स्थापना के लिए विनोबाजी ने देश को अनेक क्रांतिकारी कार्यक्रम दिये, उनमें 'शान्ति-सेना' के कार्यक्रम का अपना एक विशिष्ट स्थान है। यों तो शान्ति-सेना का विचार बापू ने दिया और वे उसके 'प्रथम सेनापति और प्रथम सिपाही' बन कर चले गये, तथापि विनोबाजी ने १९५७ में केरल-यात्रा के समय शान्ति-सेना की पहली टोली का संगठन कर बापू की कल्पना को साकार किया। शान्ति-सेना में कितनी संभावनाएँ एवं शक्ति है, यह तो अभी प्रकट होना शेष है, लेकिन इस विचार ने मानव-कल्पना को पकड़ लिया है, यह विश्व-स्तर पर संगठित 'विश्वशान्ति-सेना' तथा अफ्रीका में उसके प्रस्तावित प्रयोग से झलकता है।

शान्ति सेना की स्थापना के समय से ही अपने देश में उसके जहाँ-तहाँ प्रयोग होते रहे हैं और कहीं कहीं अच्छी सफलता भी मिली है। किन्तु जैसे संगठन की अपेक्षा है, वैसा अभी नहीं बन सका है। गोआ में सैनिक कार्यवाही ने इस बात को गहराई से सोचने का अवसर दिया है। शान्ति सेना की छोटी छोटी टोलियाँ स्थान-स्थान पर संगठित हों, जो बृहत् शान्ति सेना की इकाइयों का काम करें, तो शीघ्र शक्ति प्रकट होगी, ऐसी मान्यता है।

प्रयाग के सर्वोदय मित्रों में शान्ति-सेना-टोली बनाने का विचार कुछ समय से चल रहा था। गत वर्षों में नगर में हुई घटनाओं—जैसे मानसरोवर गोली-काण्ड, विश्वविद्यालय में छात्रों के झगड़े आदि—में शान्ति-सैनिकों ने काम किया था। नगर महापालिका के गत चुनाव के अवसर पर भी कुछ शान्ति-सैनिकों ने शान्ति स्थापना का कार्य किया। तीसरे महानिर्वाचन के समीप आने से नगर के वातावरण में तनाव और अशान्ति की आशंका थी। अतः इस अवसर पर अधिक संख्या में शान्ति-सैनिकों की टोली काम करे, ऐसा निश्चय किया गया। इसका उद्देश्य था—चुनाव शान्तिपूर्ण ढंग से और सुगमतापूर्वक सम्पन्न हो, तनाव और संघर्ष के कारणों का अहिंसक एवं शान्तिमय साधनों द्वारा निराकरण हो और यदि कभी उपद्रव अथवा विषम स्थिति उत्पन्न हो तो व्यक्तिगत जोखिम उठा कर भी उसका सामना किया जाय।

पूर्व-तैयारी

हमारी शान्ति सेना टोली में ४१ सेवक थे, जिनमें २ बहनें, विश्वविद्यालय १८ के छात्र तथा शेष सर्वोदय मित्र थे। नगर में चुनाव २१ फरवरी को था। प्रशिक्षण की दृष्टि से १७ तथा २१ फरवरी को दो गोष्ठियाँ हुईं, जिनमें अहिंसा तथा शान्ति-सेना विचार पर प्रकाश डाला गया और शान्ति-सैनिक के गुण, कार्य-पद्धति एवं कर्तव्य पर विशद चर्चा हुई।

अपने कार्य के अनुकूल वातावरण निर्माण करने के लिए कुछ कार्यकर्ता २१ फरवरी से ही नगर के विभिन्न वार्डों और मुहल्लों में घूमते रहे तथा स्थिति का अध्ययन करते रहे। समाचार पत्रों द्वारा अपने कार्यक्रम की जानकारी करायी तथा विभिन्न राजनीतिक दलों एवं प्रत्याशियों के पास अपने कार्यक्रम के प्रस्तावों की प्रतियाँ भेजीं।

चुनाव से दो दिन पूर्व, २३ फरवरी को सायंकाल ५ बजे शान्ति-सेना का जुलूस निकला। सभी शान्ति सेवक सिर पर हरा रूमाल बाँधे थे तथा बाँह पर हरी पट्टी, जिस पर 'शान्ति सेवक' लिखा था। अहिंसा, प्रेम और शान्ति का सन्देश देने चल पड़े शान्ति के सिपाही! नगर के मुख्य स्थानों पर हम लोग घूमे। अजीब दृश्य था। चुनाव प्रचार का अन्तिम दिन होने के कारण विभिन्न दलों का प्रचार-कार्य चरम सीमा पर था। उनके बड़े-बड़े जुलूस निकल रहे थे, लाउडस्पीकरों की ध्वनि कोलाहल उत्पन्न कर रही थी। लोगों में बड़ा मानसिक तनाव था। ऐसे वातावरण में शान्ति-सैनिक गाते आ रहे थे—

शान्ति के सिपाही चले।
क्रान्ति के सिपाही चले।
वैर भाव तोड़ने,
दिल को दिल से जोड़ने,
काम को सँवारने,
जान अपनी वारने,
शान्ति के सिपाही चले।

बीच-बीच में नारे भी लगाते थे—

हमारा मंत्र–जय जगत्,
हमारा लक्ष्य–विश्व शान्ति,
हमारे साधन–सत्य, अहिंसा।

सड़कों पर भीड़ बड़े कौतूहल से हमें देख रही थी। हमारे साथ लाउड स्पीकर नहीं था, अतः हमारी बात सुनने के लिए कहीं-कहीं दलों ने अपने लाउड-स्पीकर भी बन्द कर दिये। लोग अनेक प्रश्न पूछते थे। जुलूस के पीछे के हमारे साथी उनको जानकारी देते थे। हम २॥ घण्टे तक नगर के प्रमुख स्थानों पर घूमे। सभी साथियों को बड़ा उत्साहवर्धक अनुभव हुआ। साथ ही हमारे कार्यक्रम की जानकारी लोगों को हो गयी।

मतदान-दिवस का कार्य

नगर में दो चुनाव-क्षेत्र थे, उत्तरी क्षेत्र और दक्षिणी क्षेत्र। प्रत्येक क्षेत्र में लगभग २५ मतदान-केन्द्र थे। कार्य की सुविधा की दृष्टि से हमने प्रत्येक क्षेत्र को चार वृत्तों में बाँट लिया और प्रत्येक वृत्त में शान्ति सेवकों की एक छोटी टोली तैनात हुई, जिसमें ५-६ शान्ति-सेवक थे। इस प्रकार हमारी आठ टोलियाँ नगर के प्रत्येक क्षेत्र में शान्ति स्थापना का कार्य मतदान के समय प्रातः ८ बजे से सायंकाल ५ बजे तक लगातार करती रहीं। कुछ साथी सभी टोलियों से सम्पर्क स्थापित करते हुए पूरे नगर की परिस्थिति का अध्ययन कर रहे थे।

'प्रीति और शान्ति' के हथियारों से सुसज्जित शान्ति सेवक अपने-अपने वृत्त में घूमते रहे। झगड़ा होने ही न पाये, यही हमारा लक्ष्य था। कई मतदान केन्द्रों पर विभिन्न दलों द्वारा मतदाताओं की छीना-झपटी में संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हुई, वहाँ शान्ति सेवकों ने स्थिति को सँभाला। कहीं-कहीं अनियमितताओं के कारण लोगों में उत्पन्न रोष को शान्त करने के लिए शान्ति-सेवक अधिकारियों से मिले और उन अनियमितताओं को दूर कराया। कहीं-कहीं अन्धे, अपाहिज मतदाताओं को मतदान कार्य में सहायता की। साथ ही लोगों के प्रश्नों के उत्तर देकर सर्वोदय और शान्ति-सेना के विचार की जानकारी करायी। हम सभी को ऐसा अनुभव हुआ कि व्यापक विचार-प्रचार का इससे अच्छा दूसरा अवसर हम नहीं खोज सकते थे। लोगों को यह देख कर आश्चर्य होता था कि ये कौन हैं, जो न तो कोई झण्डा लगाये हैं, न वोट की बात कहते हैं, शान्त घूम रहे हैं तथा झगड़े में सबसे पहले कूद पड़ते हैं। वे कौतूहलवश हमारे पास आते थे, अनेक प्रश्न पूछते थे। अधिकांश लोगों को समाधान भी होता था। कहीं-कहीं तो हमें बुला-बुला कर हमसे प्रश्न किये गये।

अनुभव

इस कार्य में हमें अनेक कड़वे-मीठे अनुभव आये। हम सभी कार्यकर्ताओं को इस कार्य ने नयी प्रेरणा दी। दिन भर शान्ति-स्थापना-कार्य में लगातार ९ घण्टे घूमते रहने पर भी जब सायंकाल हम सब मिले, सभी के चेहरों पर थकान के चिह्न न होकर प्रसन्नता दिखाई दे रही थी, हृदय में उत्साह और उमंग थी। इस कार्य में हमें प्रत्यक्ष अनुभव हुआ कि प्रेम और अहिंसा से समस्याएँ सुन्दर ढंग से हल हो सकती हैं। प्रायः सभी स्थानों पर शान्ति-सेना के विचार का लोगों ने हृदय से स्वागत किया। प्रायः सभी राजनीतिक दलों के नेताओं ने हमारे कार्य के लिए प्रशंसात्मक शब्द प्रयोग किये। लोगों की सद्भावनाएँ हमें सर्वत्र मिलीं। सरकारी अधिकारियों और कहीं कहीं पुलिस आफीसरों ने भी हमारे कार्य की सराहना की। जहाँ हमें ऐसे सुखद अनुभव हुए, वहाँ कुछ व्यंग्य और उपहास भी सुनना पड़ा। कहीं-कहीं युवकों ने हमारा उपहास किया और 'कायरों की जमात' शब्द से हमें सुशोभित किया। एक-दो स्थानों पर कांग्रेस का एजेण्ट होने का आरोप भी हम पर लगाया। हमारे सिर के हरे रूमाल को देख कर एक पार्टी वालों ने हमें मुस्लिम-लीगी कह डाला।

यह कार्य करते समय कुछ विशेष घटनाएँ हुईं, जिनकी चर्चा यहाँ असंगत न होगी। हम दो साथी एक मतदान-केन्द्र पर पहुँचे और वहाँ की स्थिति की जानकारी करने के लिए जहाँ मत पड़ रहे थे, उस ओर चलने लगे। पुलिस-इन्स्पेक्टर ने हमें रोका। उन्होंने कहा कि १०० गज के अन्दर आप नहीं जा सकते। हमने कहा कि हमें डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट से यह अनुमति प्राप्त है कि हम कहीं भी घूम सकते हैं और इस बात की सूचना उन्होंने हर केन्द्र पर भेज भी दी होगी, ऐसा हमें बताया गया है। जब उन्होंने बताया कि हमें ऐसी कोई सूचना नहीं मिली तो हमने कहा कि हम कानून-भंग नहीं करना चाहते। यह कह कर हम लौटने लगे। इतने में ही उस केन्द्र के प्रिसाइडिंग आफीसर आ गये और बड़े क्रोध से बोले, 'यह मेला नहीं है, यहाँ सेवा समितिवालों की आवश्यकता हो। हम सब प्रबन्ध कर लेंगे। आप तुरन्त यहाँ से चले जाइये।' मेरे साथी ने उन्हें समझाया कि चुनाव शान्तिपूर्ण ढंग से हो, इसका उत्तर-दायित्व प्रत्येक नागरिक पर है। हम भी अहिंसात्मक ढंग से शान्ति-स्थापना का कार्य कर रहे हैं तथा आपके काम में सहायक हैं। यह सुन कर आफीसर महोदय कुछ शान्त हुए और जब मैंने अपने साथी का उनसे यह कह कर परिचय कराया कि ये विश्वविद्यालय के एक विभाग के अध्यक्ष हैं तो वे शर्मिन्दा हुए और कहने लगे—'आप काम करें, मुझे कोई आपत्ति नहीं है।'

वोट डालने के लिए जाते समय मतदाताओं की खींचातानी विभिन्न प्रत्याशियों के प्रचारक काफी किया करते हैं। एक मतदान केन्द्र पर एक मतदाता को दो पार्टी वाले अपनी-अपनी बात सुनाने के लिए अपनी ओर खींच रहे थे। एक शान्ति-सेवक वहाँ पहुँच गये और पूछने लगे, 'आप इन्हें क्यों खींच रहे हैं?' दोनों

खादी-ग्रामोद्योग : तालीम का कार्यक्रम

ध्वजाप्रसाद साहु

[*पिछले दिनों अहमदाबाद में खादी-ग्रामस्वराज्य समिति की बैठक में ध्वजाप्रसाद साहु ने खादी-ग्रामोद्योग के कार्यक्रम में लगे हुए कार्यकर्ताओं को सचेत करते हुए कहा कि खादी को व्यापार अथवा राहत का काम मानना दिशाभ्रष्टता का सूचक होगा। खादी-ग्रामोद्योग वस्तुतः व्यापक लोक-शिक्षण का कार्यक्रम है, जिसके द्वारा ग्रामस्वराज्य का पथ प्रशस्त हो सकता है। उनके भाषण का मुख्य अंश यहाँ दिया जा रहा है।* —सं०]

सन् १९२१ से लेकर आज तक खादी काम के लगभग ४० वर्ष बीत गये। जब पहले-पहल बापू ने चरखे की बात कही थी तो आर्थिक दृष्टि से चरखा और खादी का युग समाप्त हो चुका था, लेकिन उन्होंने अपनी सूझ और साधना से स्वराज्य-प्राप्ति के पहले ही चरण में चरखे को मुक्ति का चिह्न बना दिया और धीरे-धीरे उन्होंने चरखे के चारों ओर एक अहिंसात्मक जीवन-दर्शन विकसित किया। चरखा यत्र के बाद 'चरखा अहिंसा का प्रतीक है,' यह मंत्र हमें बापू से विरासत के रूप में मिला है, जो हमारे लिए एकसाथ चुनौती, आह्वान और साधना का विषय बन गया है।

आज देश में १२ लाख से अधिक चरखे चलते हैं और १५-१६ करोड रुपये की खादी बनती है। बड़ी छोटी संस्थाओं को मिला कर कुल २५-३० हजार कार्यकर्ता इस काम में लगे हुए हैं। सरकारी सहायता मिलने से खादी का उत्पादन बहुत बढ़ा है और अम्बर के बाद मुख्य तथा पूरक उद्योग के रूप में खादी में इससे भी अधिक वृद्धि की संभावना प्रकट हुई है। केन्द्रित उद्योगवाद के जमाने में खादी की यह प्रगति देख कर किसी भी खादी प्रेमी को आनन्द होना स्वाभाविक है। लेकिन जब हम जरा गहराई से सोचते हैं तो मन में कुछ प्रश्न पैदा होने लगते हैं। क्या सचमुच जिस खादी की बात बापू ने कही थी, उसकी प्रगति हो रही है? अगर हो रही है तो क्या जन-जीवन में शक्ति के विकास का दर्शन भी हो रहा है? क्या सचमुच चरखा किसी जीवन-दर्शन का प्रतीक बन रहा है? क्या उसकी कोई प्रक्रिया है, जो अभी तक हमारे हाथ नहीं आयी है, इत्यादि? हम जिस काम में लगे हैं, उसका मूल्यांकन हम करते रहेंगे तो हमारी प्रगति ठीक दिशा में होती रहेगी अन्यथा दिशाभ्रष्ट होकर गलत रास्ते में चले जाने की संभावना रहेगी। खादी को व्यापार मानना अथवा केवल राहत का काम समझना दिशाभ्रष्टता का सूचक है, जिससे हमको सावधान होने की आवश्यकता है।

खादी समाज रचना का आन्दोलन है। खादी केवल उद्योग है, जिसके द्वारा बाजार में बिकने लायक कपड़ा तैयार होता है और बनाने वाले को थोड़ी मजदूरी मिलती है, यह कोरा आर्थिक दृष्टिकोण हमने कभी मान्य नहीं किया। हमने माना कि खादी एक उद्योग होते हुए भी एक विशेष प्रकार के समाज रचना का आंदोलन है। खादी और ग्रामोद्योग के द्वारा हमको समाज के प्रत्येक घटक को छूने का अवसर प्राप्त होता है। इस सहज-प्राप्त अवसर को हम मनुष्य-मनुष्य को एकसाथ जोड़ने में, उनके अंदर प्रेम और सहानुभूति पैदा करने में इस्तेमाल कर सकते हैं। चरखा लगभग एक लाख गाँव में प्रवेश कर सका है, उनमें ग्राम भावना पैदा हो और जनता एक दूसरे के सुख में सुखी और दुःख में दुःखी होना सीखे, इस अवस्था को लाने की चेष्टा हम कर सकते हैं। खादी महँगी होते हुए भी बिकती है, इससे हमको पता चलता है कि हमारी जनता अपढ़ और दरिद्र होते हुए भी हृदयहीन नहीं है। इस भावना को पूँजी बना कर हम शोषणरहित और सहयोगी समाज-रचना का काम कर सकते हैं, जिसकी अपेक्षा बापू ने रखी थी। इसकी प्रक्रिया होगी, कार्यकर्ताओं को खादी की दृष्टि देने की तालीम और उनके द्वारा इस प्रक्रिया में लगे हुए कत्तिन, बुनकर, दूसरे कामगार तथा ग्राहकों की तालीम।

खादी और ग्रामोद्योग का कार्यक्रम एक व्यापक तालीम का कार्यक्रम है। जब तक खादी के इस पहलू को हम नहीं समझेंगे, खादी को सही दिशा में मोड़ने में हम असफल रहेंगे। आज जो संस्थाओं के संगठन का स्वरूप है, उससे जैसे सहयोगी समाज की रचना हम चाहते हैं, वह नहीं हो सकता है। इतने वर्षों में इस ओर हम थोड़े भी आगे नहीं बढ़े हैं। कातने वाले, बुनने वाले और दूसरे कामगार और ग्राहकों से व्यापक संपर्क होते हुए भी हमने अपना परिवार बढ़ाया हो और बन्धुत्व की भावना पैदा की हो ऐसा नहीं हो सका है।

संस्थाओं को ग्राम-इकाई के रूप में पुनर्जन्म लेना होगा। इसकी प्रक्रिया क्या होगी, इस पर संस्थाओं को विचार करना होगा और यथाशीघ्र इस ओर बढ़ने का कार्यक्रम बनाना होगा। ग्राम-इकाई का कार्यक्रम जनता का कार्यक्रम है, जो परिस्थिति के प्रयोग से हमारे सामने आया है। अगर हम ग्राम-इकाई के कार्यक्रम को सही ढंग से उठा लें तो जनता में यह प्रतीति जग जायगी कि उसके समग्र विकास में खादी और ग्रामोद्योग के लिए क्या स्थान है और उसके लिए उसको अपने अभिक्रम और शक्ति से क्या करना है। ग्राम-इकाई के कार्यक्रम के द्वारा सहज ही खादी जनता की आवश्यकता और आकांक्षा, दोनों का विषय एकसाथ बन जायगी और इतना हो जाने पर आगे का रास्ता आसानी से खुल जायगा।

खादी की गति जो समय-समय पर बिक्री नहीं होने के कारण अवरुद्ध हो जाती है, वह भय जाता रहेगा। जनता स्वयं अपना रास्ता निकाल लेगी। रिबेट और सबसीडी की भी उसे परवाह नहीं रहेगी। आज देश में जो कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं, उनके द्वारा जनता को प्रतिद्वन्द्विता और मुनाफाखोरी का ही अभ्यास हो रहा है। ऐसी हालत में ग्राम-इकाई एकमात्र कार्यक्रम है, जो जनता में सहकार की वृत्ति पैदा करेगा, पंचायत को सेवा-धर्म देगा तथा राष्ट्र में लोकतंत्र की भूमिका के निर्माण की सही दृष्टि पैदा कर सकेगा। इन कारणों से यह कार्यक्रम बहुत महत्त्व का है। क्या हमारे कार्यकर्ता इस नये उत्तरदायित्व के लिए तैयार हैं? यह प्रतीति कार्यकर्ताओं में जिस मात्रा में पैदा होगी, उतना ही काम आगे बढ़ेगा। आज खादीवालों के बीच मनुष्य शक्ति, पशु शक्ति और गैस तथा बिजली शक्ति के लिए वाद-विवाद चल रहे हैं। पर इस प्रश्न पर उलझ कर मुख्य प्रश्न को आँखों से ओझल करना भूल होगी। शक्ति का इस्तेमाल किस मर्यादा में हो, इस संबंध में विनोबाजी ने स्पष्ट मार्गदर्शन किया है। शक्ति का प्रश्न आज ही हल होना चाहिये और इसके बगैर हमारा कदम आगे नहीं बढ़ेगा, यह बात भी नहीं है। शक्ति बहुत कम गाँव में पहुँची है, गोबर-गैस या जल-शक्ति या वायु शक्ति से हम बहुत कुछ कर पायेंगे, इसकी भी संभावनाएँ बहुत नहीं हैं। ऐसी हालत में इसीके ऊहापोह में पड़ कर बुद्धिभेद करने से लाभ के बदले हानि होने की संभावना है। मनुष्य शक्ति से चलने वाले औजारों में जो सुधार की गति बढ़ रही है, वह धीमी पड़ेगी और बिजली या दूसरी शक्ति उपलब्ध भी नहीं होगी।

इसलिए यह प्रश्न स्वाभाविक ढंग से हल होगा, यह निर्णय लेकर समय की प्रतीक्षा करनी चाहिये। वास्तव में यह प्रश्न बुनियादी नहीं है। वास्तविक प्रश्न है जन-जीवन में शक्ति के विकास का दर्शन, शोषणरहित सहयोगी समाज का निर्माण, दूसरों के सुख में सुखी और दुःख में दुःखी होने की अनुभूति। यह तालीम का प्रश्न है और इसके द्वारा इसका हल निकालना होगा।

पार्टी वाले बोले, 'ये हमारे दोस्त हैं।' हमारे शान्ति-सेवक भाई ने विनोद में कहा, "यदि आपके ये दोस्त हैं तो इनकी खींचा-कसी क्यों हो रही है?" दुखी मतदाता बोल पड़ा, 'भइया, ये तो मारे डाल रहे हैं, तुम्हीं बचा लो।"

एक मतदान-केन्द्र पर हमारे एक भाई जो विश्वविद्यालय के छात्र हैं, प्रत्याशियों के कैम्प के पास घूम रहे थे। एक पार्टी के कार्यकर्त्ताओं ने कानाफूसी की 'सी० आई० डी०' मालूम होता है' देखना चाहिये। उनका एक कार्यकर्त्ता आया और उसने हमारे साथी का निरीक्षण किया। हमारे मित्र चुपचाप घटना का आनन्द ले रहे थे। 'शान्ति सेवक' का बैज देख कर भी उनका समाधान नहीं हुआ और कैम्प में जाकर उन्होंने सूचना दी कि कांग्रेस पार्टी का एजेंट लगता है।

एक केन्द्र पर पुलिस इन्सपेक्टर ने, जो वहाँ ड्यूटी पर थे, शान्ति-सेवक को चुनौती दी कि आप क्या शान्ति स्थापित कर सकते हैं? संयोग की बात, उसी समय दो दलों के पोलिङ्ग एजेण्टों में कहा-सुनी हो गयी तथा स्थिति गंभीर बनने लगी। इन्सपेक्टर ने हमारे साथी से कहा—इस स्थिति को शान्त कर लें, तब जानें कि आप शान्ति सेवक हैं। प्रेम और अहिंसा का पुजारी हमारा साथी पहुँच गया वहाँ और स्थिति को प्रेमपूर्वक शान्त कराकर उसने दिखा पर प्रेम की विजय घोषित कर दी।

इन्हीं भाई के साथ एक अन्य मनोरंजक घटना घटी। इनके शांति-स्थापना के कार्य को देख कर एक वयोवृद्ध सज्जन मुग्ध हो गये। खिलाने के लिए ले आये मिठाई। उनके प्रश्नों के सिलसिले में जब हमारे भाई ने उन्हें बताया कि यह शांति-सेना का काम विनोबाजी ने चलाया है और हम उनके ही अनुयायी हैं, तो वे प्रसन्न होकर बोले, हाँ, विनोबाजी का नाम मैंने सुना है। कृपया मुझे बता दीजिये कि वे किस पोलिंग स्टेशन पर काम कर रहे हैं? मैं उनके दर्शन करना चाहता हूँ।

यद्यपि नगर में शान्ति-सेना का संगठित रूप में यह पहला विनम्र प्रयास था, हमारी संख्या भी आवश्यकता से बहुत कम थी, तथापि बड़ी प्रेरणा मिली, उत्साह बढ़ा और स्थायी रूप से शान्ति-सेना-टोली बनाने का निश्चय किया गया है, जिससे समाज के सामने समस्याओं का अहिंसात्मक ढंग से हल करने का एक विकल्प पैदा किया जा सके।

मैत्री-आश्रम

• कुसुम देशपांडे

तथागत ने आँखें खोली, चारों ओर देखा, क्षितिज पर अक्षर अंकित थे–"मैत्री", "करुणा", "मुदिता", "उपेक्षा"। ये चार रूप चारों दिशाओं में दिखे और फिर चालीस साल कारुण्यमूर्ति का विहार हुआ, एक ही संदेश देते हुए–"मैत्री"। काल-चक्र घूमता रहा। कई सालों के बाद दुनिया ने देखा कि सम्राट् का राज-प्रासाद छोड़ कर सुकुमार राजकन्या भिक्षुणी बन कर निकली और सागर की लहरों पर उसकी नाव हिलती-डुलती लंका के किनारे पहुँची और तथागत का "मैत्री" संदेश पहुँचाते हुए उसकी जीवन-ज्योति समाप्त हुई। आज उत्तर में विराजमान हिमालय यही कह रहा है, "मैत्री" करो। पूर्व, पश्चिम, दक्षिण में फैला हुआ विशाल सागर यही कह रहा है, "मैत्री" करो!

५ मार्च, १९६१। असम की नयनरम्य भूमि में साम्ययोगी विनोबा की यात्रा का आरंभ हुआ था। उस वक्त इस सुन्दर भूमि की हवा बिगड़ी थी, लोगों के दिल टूटे थे, एक असंतोष था। धीरे धीरे वह असमाधान कम होता गया। भूदान ग्रामदान, शांति सेना, साम्ययोग के विविध पहलुओं को असमवासियों ने सुना। ग्रामदान और फिर ग्राम-स्वराज्य की दिशा में असम की जनता कदम बढ़ाने लगी। विनोबा की असम-यात्रा का अंतिम पर्व आरंभ हुआ और ५ मार्च, १९६२, ठीक एक साल के बाद वेद, नामघोषा और गीताई के मंत्रोच्चारण के साथ "मैत्री-आश्रम" की स्थापना हुई।

भारत के पूर्व में यह प्रदेश है। इस प्रदेश के पूर्व में उत्तर लखीमपुर जिला है। इस जिले में उत्तर-लखीमपुर शहर से ५ मील दूरी पर यह शांत, एकांत स्थान है। इसके उत्तर और पश्चिम में 'नेफा' के ऊँचे नीचे पहाड़ हैं। इन पहाड़ों के पीछे ही हिमालय खड़ा है। ये पहाड़ हिमालय तो नहीं, पर "हिमालय पुत्र" हैं, ऐसा बाबा कहते हैं। यह स्थान भारत और चीन (तिब्बत) की सीमा का प्रदेश है। शहर के पास है। फौज की छावनियाँ हैं, इनकी ओर संकेत करते हुए बाबा ने कहा, "अहिंसा में मैं मानता हूँ। उसमें निर्विवाद भूमिका होते हुए भी मैं क्षात्र-वृत्ति में मानता हूँ और मैं मानता हूँ कि सैनिकों में ऐसे 'वीर' होंगे, जो 'महा-वीर' हो सकते हैं।" सारे भारत के साथ तथा दुनिया के साथ भी सीधा संबंध जोड़ने का साधन भी यहाँ मौजूद है, "हवाई जहाज" का अड्डा–जो आश्रम से १ मील के फासले पर है। इसके नजदीक ही सुवर्णश्री का ग्रामदानी क्षेत्र है।

बाबा ने कहा, "असम-यात्रा का यह अंतिम पर्व है। सीमा तक तो पहुँचूँगा, आगे कुछ निश्चित नहीं है। लेकिन यह सोचा कि यहाँ से जाने के पहले इस प्रदेश में सर्वोदय की बुनियाद मजबूत बने और इस विचार का परिणाम है, मैत्री-आश्रम।"

असम प्रदेश और चीजों में दूसरे प्रदेशों से पिछड़ा हुआ है, पर स्त्री शक्ति में वह आगे बढ़ा है। बाबा यह कहते ही हैं। इस आश्रम की स्थापना का वह भी एक कारण है। बाबा ने कहा, "वैसे दुनिया भर में पुरुष काम कर रहे हैं। असम में भी हैं। वे नहीं होते तो गाँव-गाँव में ग्रामदान का काम कौन करता? लेकिन सारे भारत में देखा जाय, तो यहाँ स्त्री शक्ति के विकास के लिए काफी अवकाश है। इसलिए ऐसे स्थान की और भी आवश्यकता मालूम हुई। भास हुआ कि यहाँ से जाऊँ और ऐसा स्थान न बनाऊँ, तो गलती होगी। इस अर्थ में काम अधूरा रह जायगा। वैसे तो सब प्रकार से बन्दोबस्त करने पर भी काम बिगड़ सकता है, वह फिर हरि की इच्छा!"

'नामघोषा' का श्लोक बहनों ने गाया था। उसका जिक्र करते हुए बाबा ने कहा, "ईश्वर का बहुत ही उपकार है कि यहाँ पर एक कल्याणमयी शक्ति बन रही है। अभी 'नामघोषा' सुन रहा था–"पुरपे सहिते सखित्व करिय। चलय हरिर काछे।"

> यहाँ (मैत्री-आश्रम में) हमारा एक ही ध्येय होगा 'मैत्री', एक ही कार्यक्रम होगा 'मैत्री' और एक ही नियम होगा 'मैत्री'। आग्रह किसी चीज का नहीं होगा, 'मैत्री' रहे, यही आग्रह होगा। —विनोबा

"परमेश्वर से सख्य करने की बात माधवदेव कहता है। अक्सर भगवान् के साथ सख्य की बात भक्त कम बोलते हैं, दास्य की बात बोलते हैं। आज आप गा रही थीं तो मुझे भास हुआ कि मैत्री-आश्रम के लिए उस महापुरुष का आशीर्वाद मिला। हम यहाँ ईश्वर के साथ, विश्वात्मा के साथ, मानव के साथ सखीत्व करने जा रहे हैं। अंतःकरण में एक ही कामना रखते हैं कि सर्वत्र "सखीत्व" हो।"

तीन साल पहले बाबा बड़ौदा में पहुँचे थे। वहाँ उनके बचपन के साथी इकट्ठे हुए थे। मित्र मंडली के सामने बोलते हुए बाबा ने कहा था, "मेरे जीवन में मुझे मित्रभाव का दर्शन होता है और वह मुझे खींचता है। माँ के लिए मेरे मन में आदर है, पितृभाव के लिए भी आदर है। गुरु के लिए तो अत्यन्त आदर है। इतना होते हुए भी मैं सबका मित्र ही हो सकता हूँ और सब मेरे मित्र ही हो सकते हैं।"

इन ११ सालों की अवधि में यह "मैत्री आश्रम" छठा आश्रम है। उसकी स्थापना के वक्त बाबा ने आरंभ में कहा था, "अब से मुझे समझ आयी है, मुझे मेरा कोई काम याद नहीं है, जिसकी शुरुआत में मैंने गीता को याद न किया हो। गीता कहती है, भक्त कोई आरंभ नहीं करता है। जैन तत्त्वज्ञानियों ने भी अनारंभ एक बहुत ही प्राथमिक मूल्य, महामूल्य मानव जीवन का माना है। मैं सोच रहा था, इन १०-११ वर्षों में जो भूदान यज्ञ का काम हुआ, उसके बारे में पहले कभी कुछ भी नहीं सोचा था। जब वह अनिवार्य हुआ, टाल नहीं सकता, टालने में कायरता होगी ऐसा महसूस हुआ, तभी वह शुरू किया। इसके बाद के एक-एक काम को याद करता हूँ तो हर काम जो प्रवाह से प्राप्त हुआ वही किया। प्रवाह से प्राप्त कर्म जब मनुष्य करता है, तब उसे पाप नहीं छूता।

चंद दिन पहले श्री गुणदा बहन को लिखी हुई चिट्ठी में बाबा ने लिखा था, "यह विज्ञान का जमाना है। विज्ञान का जमाना कहता है, 'दुनिया के मनुष्यो, तुम एक हो जाओ।' लेकिन पुराने राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक संस्कार, जो मनुष्यों के चित्त पर आरूढ़ हैं, वे एकता में बाधा डाल रहे हैं और आज मानव-समाज पहले से भी अधिक छिन्न-विच्छिन्न है। ऐसी हालत में भारत के इस सीमा प्रदेश में "मैत्री-आश्रम" की स्थापना मेरे लिए अनिवार्य हो गयी और उसके लिए स्थान जहाँ तुम बैठी हो वही सबसे अच्छा लगा। उस आश्रम की प्रथम साधिका तुम ही होगी।"

"मैत्री आश्रम" जिस स्थान में है, उस स्थान में इसके पहले "कस्तूरबा-कल्याण-केन्द्र" नाम की संस्था काम करती थी। उसकी संचालिका श्री गुणदा बहन थीं। सन् १९५० में असम में इस विभाग में भूकंप हुआ था। उस वक्त राहत के लिए, सेवा कार्य करने के लिए असम की निष्काम, मूक सेविका अमलप्रभादेवी यहाँ दौड़ी आयी थीं। उनके साथ ही उनके काम में हमेशा मदद पहुँचाने वाली श्री शकुंतला बहन, जो इन दिनों असम कस्तूरबा ट्रस्ट की प्रतिनिधि हैं, हेमाबहन और गुणदा बहन आयी थीं। भूकंप में हजारों लोग बेघर हुए थे। उनमें महिलाओं की समस्या विकट थी। ऐसी महिलाओं के लिए शुरू में "विधवा केन्द्र" शुरू हुआ। आगे जाकर उसका नाम बदल दिया और वह "कल्याण-केन्द्र" बना। उसके संचालन का बोझ गुणदा बहन पर सौंप कर अमलप्रभा बहन निश्चिंत हुई थीं। यह केन्द्र आरंभ में सुवर्णश्री नदी के किनारे ३॥ मील दूरी पर था। पर कुछ ऐसा संयोग था कि यह नदी हर साल अपना पात्र बदलती गयी और हर साल केन्द्र का स्थान बदलता गया। इस तरह चार साल चलता रहा और आखिर उस नदी से करीब १८ मील दूरी पर उज्ज्वलपुर नामक छोटे-से गाँव में यह केन्द्र लाया गया। तब से उसी स्थान में यह है। आगे जाकर इस केन्द्र की बहनों में से किसी के चाचा, तो किसी के मामा, या ऐसे ही रिश्तेदार आते गये और एक-एक करके बहनें चली गयीं। कुछ बहनों ने शादी की और वे चली गयीं। इनमें मुख्यतया "मीरी" और "कछारी" जाति की आदिवासी बहनें थीं। इतना होने पर भी जो तीन-चार साल की नन्हीं मुन्नियाँ थीं, वे कहाँ जातीं? गुणदा बहन ने उनको मातृच्छाया में रख कर तालीम दी। उनमें से कुछ बहनें कस्तूरबा की ग्राम-सेविका बन कर सेवा में लगी हैं। चार-पाँच लड़कियों को तालीम देकर रिश्तेदारों के पास भेज दिया है और चार अभी यहाँ हैं, जो सीख रही हैं।

यहाँ मिट्टी और बाँस के बने छोटे-छोटे मकान हैं। आठ बीघा जमीन है, उसमें धान होता है। आश्रम के अहाते में गोभी, बैंगन, टमाटर आदि थोड़ी तरकारी होती है। अमरूद, केला, पपीता के पेड़ हैं और अभी थोड़े अनानास के पेड़ लगाये गये हैं। अम्बर चरखा, बुनाई का काम भी होता है।

ऐसा यह स्थान सहज ही उपलब्ध था, इसलिए इसे चुना। इस स्थान से उज्ज्वलपुर गाँव एक डेढ़ मील दूर है। आसपास खुले मैदान हैं, कहीं खेत हैं। "हिमालय पुत्र" का साथ है।

बाबा ने कहा, "यहाँ हमारा एक ही ध्येय होगा "मैत्री"। एक ही कार्यक्रम होगा, मैत्री और एक ही नियम होगा, मैत्री। आग्रह किसी चीज का नहीं होगा, "मैत्री" रहे, यही आग्रह होगा।"

इस स्थान में देश की भिन्न भिन्न भाषाओं का अध्ययन, अध्यापन होगा। खास करके असमिया, उड़िया, बंगला, नेपाली, पंजाबी, हिंदी, उर्दू, संस्कृत, मराठी, गुजराती और अंग्रेजी। दुनिया के अनेक धर्मों का अध्ययन होगा। सर्वोदय विचार का और दूसरे विचार का भी अध्ययन, अध्यापन होगा और उस प्रकार का साहित्य निर्माण करने का काम होगा।

आसपास ग्रामदान का जो काम चल रहा है, उसके साथ अनुबंध रहेगा। खेती, बुनाई और कताई शरीर-परिश्रम का काम भी होगा। विशेषता यह है कि यह बहनों का आश्रम होगा। सिवाय इसके कि इसकी स्थापना एक पुरुष ने की है और किसी भी काम में पुरुष नहीं रहेगा। फिलहाल नौ बहनें हैं।

श्री अमलप्रभा देवी का पूर्ण मार्ग-दर्शन आश्रम को मिलेगा। श्री शकुंतला बहन भी बीच-बीच में कुछ समय दिन देने वाली हैं। श्री हेमा बहन भराली भी आश्रम की हर तरह की मदद करती रहेंगी। श्री गुणदा बहन आश्रम की अन्तर्गत व्यवस्था रखेंगी। श्री लक्ष्मी बहन, जो कस्तूरबा ट्रस्ट में पिछले १४ साल से काम करती आयी हैं, असम की यात्रा में बाबा के साथ थीं और अनुवाद का काम कुशलतापूर्वक करती थीं, उनको बाबा ने गीताई के जरिये मराठी सिखायी है। बाबा की आज्ञा से वे भी यहाँ रहेंगी। इनके अलावा यहाँ श्री गुणदा बहन के साथ रहने वाली तीन बहनें हैं और तीन बहनें ग्राम-दानी गाँव से आयी हैं, जो बाबा की यात्रा में रह चुकी हैं।

बाबा का सान्निध्य आश्रम को छह दिन मिला। उन दिनों में आश्रम के बारे में काफी चर्चा हुई है और आश्रम चलाने के लिए कई सूचनाएँ और सुझाव बाबा ने दिये हैं। उसमें यह भी कहा है कि असम प्रदेश के काम की जानकारी इस आश्रम में आती रहेगी और यहाँ से वह अखिल भारत को मिलेगी। भारत में भिन्न-भिन्न स्थानों में जो काम चलेगा, उसकी जानकारी इस आश्रम के जरिये असम के कार्यकर्ताओं को मिलेगी, जान-कारी की लेन-देन होगी। इसके अलावा भारत में जो अन्य पाँच आश्रम बने हैं, उनके साथ संबंध रहेगा। मतलब, इन छह आश्रमों में अन्योन्य अनुबंध रहेगा। विचारों की, अनुभवों की लेन-देन होगी। अन्य पाँच आश्रम हैं—पठानकोट में "प्रस्थान-आश्रम" इन्दौर में "विस-र्जन-आश्रम", बेंगलोर में "विश्वनीडम्", पवनार में "ब्रह्मविद्या-मंदिर", गया में "समन्वय-आश्रम"।

इन्हीं दिनों में बंबई के विद्वान् श्री पांडुरंग शास्त्री आठवलेजी बाबा से मिलने के लिए आये थे। गीता और उपनिषदों पर उनके प्रवचन बंबई, गुज-रात सौराष्ट्र में होते हैं। ठाना में उनका तत्त्वज्ञान-विद्यापीठ चलता है। उनके साथ चर्चा में बाबा ने इस बात पर ज्यादा जोर दिया कि पुराने ग्रंथों में से सार अंश ले करके लोगों के सामने रखना चाहिये। ऐसा करने से उन ग्रंथों की कान्ति, तेज बढ़ेगा। नहीं तो उन ग्रंथों में जो असार अंश है, उनके कारण सारा ग्रंथ ही खत्म होने का डर है। विज्ञान के जमाने में इसकी अत्यंत आव-श्यकता है।

श्री आठवलेजी के साथ बंबई के व्यापारी श्री वाडीलाल भाई और पूना के डा० दातार भी आये थे। खुशी की बात तो यह रही कि आश्रम-स्थापना के समय श्री सिद्धराज भाई और श्री गोराजी भी उपस्थित थे।

११ मार्च का दिन आया। ब्राह्म-मुहूर्त पर ३ बजे बाबा "ब्रह्म-लोक" से लौटे और ३ बजे उनके चरण आगे बढ़ने लगे। एक साल समाप्त हुआ था। वैसे देखें तो ११ साल की यात्रा का एक चरण समाप्त हुआ था। "मैत्री-आश्रम" की स्थापना के साथ १२ वें साल की यात्रा आरंभ हुई थी।

"कहाँ जा रहे हैं बाबा?"—पूछा किसी ने।

"पश्चिम में जा रहा हूँ, इतना निश्चित है। पश्चिम में कई देश-प्रदेश हैं—बंगाल है, बिहार है, पाकिस्तान है, इंगलैण्ड भी है।"

"मैत्री-आश्रम" को मंगल-आशीर्वाद देकर बाबा निकल पड़े, तब आकाश में मेघ-गर्जना हो रही थी, बिजली चमक रही थी, बारिश की बूँदें गिर रही थीं—टप-टप।

आश्रम की बहनें दरवाजे पर खड़ी देख रही थीं। बाबा दूर जा रहे थे। बिदाई देते हुए बहनों की आँखों से आँसुओं के मोती गिर रहे थे—टप-टप।

कार्यकर्ताओं [illegible] मकराने की हड़ताल

सूचना मिलने पर कि राजस्थान के नागौर जिले के मकराना में ५ दिन से हिन्दुओं द्वारा हड़ताल जारी है, मैंने सारे हालात जानने का प्रयत्न किया और ८ मार्च को मौके पर पहुँचा। हिन्दू और मुसलमानों से अलग-अलग मिला और दोनों तरफ की बात समझने का प्रयत्न किया। हिन्दुओं में काफी रोष छाया हुआ था। काफी बड़ी तादाद में वे इकट्ठे हो रहे थे और उनका कहना था कि ये मुसलमान लोग नाजायज ढंग से बाजार निर्माण करते जा रहे हैं और कानून-कायदा अपने हाथ में ले लिया है, इसलिए हमने हड़ताल की है।

कुछ जोशीले नवयुवक कह रहे थे कि दुकानों के सामने बना चबूतरा जब तक नहीं हटेगा, तब तक हड़ताल नहीं तोड़ी जायगी। कुछ का कहना था कि बनी-बनायी सब दुकानें ही तोड़ी जानी चाहिये। इस प्रकार उत्तेजित समूह के भिन्न-भिन्न उत्तर मैं सुनता चला गया। अंत में मैंने उनकी जायज मांगों की पूर्ति के लिए मुस्लिम भाइयों से बातचीत करने की इजाजत मांगी। कुछ लोगों ने इस पर एतराज किया कि बातचीत से कोई नतीजा नहीं निकलेगा। मैंने उन्हें कहा कि अगर बातचीत से कोई नतीजा नहीं निकले तो आप अपनी हड़ताल जारी रखना, परन्तु मुझे यह प्रयत्न करने दीजिये। अंत में सब लोगों ने रात के दो बजे मेरी यह बात स्वीकार की। उसके बाद प्रातः छह बजे विचार जानने के लिए मैं नगरपालिका के अध्यक्ष के घर गया।

प्रमुख मुस्लिम भाइयों से सारी बात-चीत की। मुस्लिम भाई न उत्तेजित थे और न रोषपूर्ण। अधिकतर भयभीत थे, हड़ताल के कारण परेशान थे और शीघ्र शांति के इच्छुक थे। इतना जरूर था कि उनमें भी कुछ लोग अपनी बातों पर अड़े हुए थे। मैंने जब सारी परिस्थिति उनके सामने रखी तो नगरपालिका के अध्यक्ष श्री गुलाम मुस्तफा, उपाध्यक्ष श्री फरीदबक्ष व अन्य प्रमुख लोगों ने अपनी तरफ से सारी जिम्मेवारी मेरे ऊपर डाल दी और कहा कि आप जो कुछ कर देंगे, हमें मंजूर है। मैं जिस दृढ़ विश्वास के साथ उनसे मिलने गया था, उनके इस व्यवहार से मुझे अत्य-धिक बल मिला। मैंने सर्वाधिकार अपने हाथ में लेना उचित न समझ कर उनकी तरफ से ५ प्रमुख लोगों के नाम तय करने के लिए निवेदन किया और इसी प्रकार फिर हिन्दुओं से भी ५ प्रमुख लोगों के नाम मांगे। इस प्रकार इन १० आदमियों ने २ व्यक्तियों को और शामिल करके १२ आद-मियों की अमन कमेटी का निर्माण किया।

आपस में हुई बातचीत की जान-कारी देते हुए मैंने हिन्दुओं से प्रार्थना की कि आप अब तुरन्त बाजार खोल हड़ताल तोड़ दीजिये, मुझे पूरा विश्वास है कि सम-झौता हो सकेगा। परन्तु कुछ लोगों ने एत-राज किया कि समझौते की लिखापढ़ी के पूर्व हड़ताल तोड़ना उचित नहीं है। मैंने उन्हें समझाया कि अपनी हुई बातचीत पर विश्वास कर आप यदि हड़ताल समाप्त करेंगे तो इसका मुस्लिम भाइयों पर बहुत अच्छा असर होगा और समझौते की लिखापढ़ी करना भी आसान हो जायगा। अन्त में ५ दिन के बाद ९ मार्च को दोपहर को बारह बजे हड़ताल समाप्त हुई। उसके बाद उक्त अमन कमेटी के सदस्यों को इकट्ठा करके आपसी रजामंदी से हिंदू और मुसलमान भाइयों की भावनाओं और हकों का ध्यान रखते हुए विवादग्रस्त मुद्दों के संबंध में समझौता पत्र लिख कर सबने हस्ताक्षर कर दिये और नगर में खास तौर पर उपस्थित प्रथम श्रेणी के न्यायाधीश के पास वह पेश कर दिया गया और उनसे निवेदन किया गया कि नगर में अब पूर्ण शान्ति है, अतः नगर में लगायी गयी पुलिस को हटा लें, ताकि लोगों में भय और आतंक न रहे।

समझौता पेश करते समय यह भी निवेदन किया गया कि विवादग्रस्त जमीन और इमारत को सरकारी अधिकार से मुक्त करें, ताकि पुनः काम शुरू हो सके और लोगों के खिलाफ दुतरफा कायम किये गये मुकदमों को खारिज करें। इसके बाद शाम को नगर में शांति रही। रात्रि को और दूसरे दिन दोनों तरफ से कई तरह की भ्रमात्मक अफवाहें आयीं, कुछ ने कहा कि चबूतरी हरगिज हटाने नहीं देंगे, कुछ ने कहा कि हड़ताल पुनः जारी करेंगे। कुछ ने दुकानदारों से सामान नहीं लेने की बात भी कही। इस प्रकार भिन्न-भिन्न तरह की बातें सामने आयीं। शाम को पुनः अमन कमेटी की बैठक बुला कर सबने मिल कर यह तय किया कि मकराने के २-४ आदरणीय बुजुर्ग आदमियों को और शामिल कर लिया जाय, और यह कमेटी भविष्य के लिए नगर में अमन कायम रखने के लिए बराबर प्रयत्न करे। नगर में फैल रहे भ्रम को दूर करने के लिए मोहल्ले-मोहल्ले के लोगों को इकट्ठा करके समझाये और जहाँ भी, जिस तरह से भी अशांति का कोई कारण बने, उसे तुरन्त दूर करने का यह कमेटी प्रयत्न करे। विवादग्रस्त मामलों के संबंध में जो निर्णय लिये गये हैं, उन्हें कार्यान्वित करने में अभी जब तक जनता में पूर्ण शांति न हो जाय, जल्दबाजी नहीं की जाय।

इसमें कोई शक नहीं कि हिन्दुओं का विवादग्रस्त जमीन के संबंध में कोई भी व्यक्तिगत या सामूहिक स्वार्थ नहीं था, वे उस जमीन को सबके उपयोग के लिए नगरपालिका के अन्तर्गत ही रखने के पक्ष में थे।

इसलिए इस प्रश्न पर तो वास्तव में हिन्दू और मुसलमानों को एकमत ही होना चाहिये था, बल्कि उनका ज्यादा-से-ज्यादा रोष नगरपालिका के खिलाफ हो सकता था, परन्तु क्योंकि अन्जुमन ने यह निर्माण किया था, इसलिए सर्वसाधारण मुसलमान भाइयों ने इसे अपना प्रश्न बना लिया। इस प्रकार यह एक हिन्दू-मुस्लिम प्रश्न बन गया। जहाँ तक हड़ताल का प्रश्न है, उसमें हिन्दुओं ने यह कदम उठाने में अत्यधिक जल्दबाजी की, जिसके फलस्वरूप जिन समझदार मुस्लिम भाइयों का इस मसले के हल करने में सहयोग मिल सकता था, उससे वे वंचित रह गये। इसके अलावा आम गरीब जनता का अनायास ही रोष मोल ले लिया।

आज जहाँ कहीं भी ऐसे अवसर आते हैं, सिवाय पुलिस और फौज भेज कर जनता में भय निर्माण करने के और कोई मार्ग अधिकारी वर्ग को नहीं सूझता। आज के युग में क्या सरकारी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का यह फर्ज नहीं है कि वे कानून के द्वारा सख्त कदम उठाने से पूर्व लोगों में समझौता कराने का भरसक प्रयत्न करें।

—बद्रीप्रसाद स्वामी

केरल के एक ग्राम का आर्थिक-सामाजिक सर्वेक्षण

के० श्रीकान्तन् नायर

केरल राज्य के त्रिवेन्द्रम जिले के चार तालुकों में नेडूमानगड सबसे बड़ा तालुका है। नेडूमानगड के पूर्वी सीमान्त पर वामनपुरम् ग्राम स्थित है। केरल राज्य की राजधानी से यह गाँव २० मील की दूरी पर बसा हुआ है। यह गाँव आठ कड़ाओं में विभक्त है, जिनमें से कीजवेरी को मद्रास विश्वविद्यालय के एग्रीकल्चरल इकानामिक्स रिसर्च सेन्टर ने सर्वेक्षण के लिए चुना था। इस लेख में 'गाँव' शब्द का प्रयोग कड़ा के लिए किया गया है। यह जाँच अगस्त मास के मध्य में १९५८ में शुरू की गयी थी और लगभग ६ मास तक चलती रही।

केरल राज्य को प्राकृतिक आधार पर तीन क्षेत्रों में विभक्त किया जा सकता है—निम्न भूभाग, मध्य भाग और पहाड़ी भाग। कीजवेरी मध्यभाग में स्थित है और यह इस क्षेत्र के ग्रामीण भागों का प्रतिनिधित्व करता है। यह भू-प्रदेश पहाड़ी है और इस गाँव में आठ पहाड़ियाँ हैं। इस गाँव की घाटी में धान उगाया जाता है, जब कि टैपियोका, नारियल, काली मिर्च जैसी दूसरी फसल आम, काजू के पेड़ों के अतिरिक्त लगायी जाती है। पहाड़ी भूमि की तुलना में इस गाँव की भूमि अधिक उपजाऊ है और धान की खेती के लिए अधिक उपयुक्त है।

इस गाँव में प्रति वर्ष ७०" वर्षा होती है। यहाँ वर्षा दक्षिण-पश्चिम मानसून से होती है। सिंचाई की सुविधाएँ इस गाँव को उपलब्ध नहीं हैं और खेती के लिए कृषक को पानी की आवश्यकता वर्षा से पूरी होती है। इस गाँव की पश्चिमी सीमा पर आतिंगल नदी बहुत ही निचाई पर बहती है। इसलिए उसका पानी सिंचाई के लिए उपलब्ध करना सम्भव नहीं होता।

संचार-साधन

गाँव में उपलब्ध वर्तमान संचार-साधन पर्याप्त नहीं माने जा सकते। कीजवेरी गाँव से आतिंगल तक, जो तालुका हेडक्वार्टर है, एक कच्ची सड़क जाती है, जिस पर मोटर-गाड़ियाँ कीजवेरी से अन्य स्थानों तक चल सकती हैं। कीजवेरी गाँव से वामनपुरम् गाँव तक सड़क बनाने का काम शुरू हो गया है और सड़क के निर्माण का कार्य पूरा होने पर कीजवेरी गाँव का सीधा सम्बन्ध प्रमुख केन्द्रीय सड़क से स्थापित हो जायगा।

इस गाँव से निकटतम रेल्वे-स्टेशन १५ मील की दूरी पर है। वामनपुरम् का डाकखाना इस गाँव से डेढ़ मील दूर है। यहाँ तार और टेलीफोन की सुविधाएँ उपलब्ध हैं। इस सर्वेक्षण के समय इस गाँव को बिजली प्राप्त नहीं हुई थी।

शिक्षा और चिकित्सा

इस गाँव में केवल एक स्कूल है, जो सरकार ने सन् १९२८ में खोला था। इसमें पाँचवीं कक्षा तक शिक्षा दी जाती है। १९५८ में इस स्कूल में शिक्षा पाने वालों की संख्या ४२८ थी। इस गाँव के निकटतम मिडिल स्कूल वामनपुरम् में है और निकटतम हाईस्कूल तीन मील दूरी पर है। कालेज में शिक्षा प्राप्त करने के लिए इस गाँव के छात्रों को त्रिवेन्द्रम जाना पड़ता है।

वामनपुरम् का सरकारी अस्पताल कीजवेरी गाँव के सबसे ज्यादा नजदीक है और बहुत से गाँव के लोग इस सुविधा का लाभ उठाते हैं। इस गाँव में दो आयुर्वेदिक अस्पताल भी हैं। सामान्यतः इस गाँव के रोगी त्रिवेन्द्रम मेडिकल कालेज अस्पताल में जाते रहते हैं। राज्य के लोक स्वास्थ्य विभाग ने कीजवेरी में एक दाई नियुक्त की है और गाँव के लोग उसकी सेवाओं का फायदा उठाते हैं। लेकिन दो देसी दाइयाँ भी गाँव में यह काम करती हैं। गाँव के लोगों के अज्ञान और अंधविश्वास के कारण उनका काम भी अच्छा चलता है।

आमोद-प्रमोद

गाँव के लोगों के मनोरंजन के लिए गाँव में एक पुस्तकालय और उसके साथ लगा हुआ वाचनालय भी है। ग्राम-पंचायत के खेल के मैदान का उपयोग गाँव के किशोर वालीबाल तथा बैडमिंटन खेलने के लिए करते हैं। गाँव के बालक इस मैदान का उपयोग कबड्डी का खेल खेलने के लिए भी करते हैं।

स्थानीय प्रशासन

ग्राम-पंचायत में कीजवेरी गाँव के दो प्रतिनिधि हैं, जब कि ग्राम-पंचायत के कुल सदस्यों की संख्या ८ है। इस सभा के प्रमुख काम लोक-कार्यों की देख-रेख, गली की रोशनी, बाजार पर नियंत्रण, सफाई आदि हैं। वामनपुरम् से कीजवेरी तक सड़क निर्माण का कार्य पंचायत के जरिये किया गया है और यह एक उल्लेखनीय सुलक्षण है।

कीजवेरी ग्राम और वामनपुरम् में गहरा भौगोलिक, प्रशासनिक और सामाजिक सम्बन्ध है। इतनी सुविधाओं के बावजूद यह गाँव पिछड़ी और गरीबी हालत में है।

जनसंख्या

१९५१ की जनगणना के अनुसार कीजवेरी की जनसंख्या २,१६६ थी, १९५८ में यहाँ की आबादी बढ़ कर २४३८ हो गयी और इस प्रकार जनसंख्या वृद्धि की वार्षिक दर में १.८ प्रतिशत वृद्धि हुई। इस गाँव की कुल आबादी में ४४.८ प्रतिशत १४ वर्ष तक आयु वर्ग के लोग हैं। १५ और ५४ वर्ष के बीच की आयु के लोगों की संख्या ४४.२ प्रतिशत है।

इस गाँव के ६०.३ प्रतिशत व्यक्ति अविवाहित, ३२.२ प्रतिशत विवाहित, ५.१ प्रतिशत विधुर अथवा विधवा और शेष २.४ प्रतिशत परित्यक्त हैं। वैवाहिक विश्लेषण से प्रकट होता है कि यहाँ लड़कियों का विवाह १५ और २४ वर्ष के बीच हो जाता है और लगभग सभी का विवाह ३४ वर्ष की आयु तक हो जाता है।

साक्षरता

केरल राज्य का यह एक गाँव होने के नाते यहाँ साक्षरता का प्रतिशत काफी ज्यादा है। गाँव की कुल जनसंख्या में १३४८ व्यक्ति, अर्थात् ५५.३ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। साक्षर व्यक्तियों में ५७.३ प्रतिशत पुरुष हैं और ४२.७ प्रतिशत स्त्रियाँ हैं। ५ वर्ष से कम उम्र के बालकों को छोड़ कर शेष गाँव की आबादी में ६४.१ प्रतिशत लोग साक्षर हैं, जो अखिल भारतीय साक्षरता के प्रतिशत से चार गुना है। वयस्क व्यक्तियों में ५८.८ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। १२-१४ वर्ष के आयु-वर्ग के व्यक्तियों में ९०.५ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं। ६ से १२ वर्ष के आयु-वर्ग में साक्षरता का प्रतिशत ८६.८ है। व्यवसायों के अनुसार साक्षर व्यक्तियों का विभक्तीकरण करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि मजदूर वर्ग में साक्षरता का प्रतिशत निम्नतम है, अर्थात् ३६.५ प्रतिशत है। अन्य वर्ग में साक्षरता का प्रतिशत ५० से ऊपर है और जिन परिवारों के सदस्य अध्यापन-व्यवसाय में लगे हुए हैं, उस वर्ग में साक्षरता सबसे ज्यादा है। इस गाँव में ४४ मैट्रिक पास व्यक्ति हैं और ५ व्यक्तियों ने विश्वविद्यालय-शिक्षा प्राप्त की है।

इस गाँव की पूरी आबादी को जाति के आधार पर बाँटने से गाँव की सामाजिक स्थिति का आभास मिलता है। नायर, नाडर और वारियर जाति के लोगों के अतिरिक्त शेष जनसंख्या (८६ प्रतिशत) अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्ग की है।

इस गाँव की कुल जनसंख्या का अधिकांश भाग हिन्दुओं का है और एक ईसाई को छोड़ कर शेष लोग मुसलमान हैं। हिन्दू १४ जातियों में बँटे हुए हैं और उनमें सबसे बड़ी संख्या इळवा जाति के लोगों की है। इस गाँव में ज्यादातर इळवा जाति के लोग रहते हैं, इसके बाद पिछड़ी और अनुसूचित जातियों का नम्बर आता है।

इस गाँव के लोगों के रहन-सहन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यहाँ के लोग गरीबी की हालत में रह रहे हैं।

निम्नलिखित तालिका में इस गाँव में विभिन्न जातियों के लोगों के आँकड़े दिये गये हैं।

तालिका : १ :

धर्म	जाति	जनसंख्या	गाँव की कुल जनसंख्या का प्रतिशत
हिन्दू	इळवा**	१४००	५७.५४
	नायर	३३६	१३.८१
	अचारी**	११७	४.८१
	नाडर	४९	२.०१
	याचन**	३६	१.४८
	वारियर	५१	२.१०
	चेटियर**	१९	०.७८
	कुरवा***	१४८	६.०८
	पानर**	१३	०.५३
	पुलाया***	१९	०.७८
	वेडर***	२५	१.०१
	मानन***	८	०.३३
	वारियर	८	०.३३
	पानडन***	६	०.२५
		२२३५	९१.८६
मुस्लिम		१९५	८.०१
ईसाई		३	०.१३
	योग	२४३३	१००.००

मालिकों के साथ रहने वाले ५ नौकरों की जाति का पता नहीं लगा।

** पिछड़ी जातियाँ।

*** अनुसूचित जातियाँ। [अपूर्ण]

करते थे, यदि तुम मुझे एक सच्चा सत्याग्रही दे दो तो मैं तुम्हारे लिए स्वतन्त्रता प्राप्त कर दूँ।

यह आन्दोलन इसलिए मनुष्य के अन्दर बैठे हुए प्रेम और करुणा के परमाणुओं को तोड़ कर एक ऐसा 'रि-एक्टर' बनाने की योजना और प्रक्रिया है, जिसकी मदद से मानव-समाज में अपना आधिपत्य जमा कर बैठे हुए भय, लोभ, अविश्वास और स्वार्थ आदि रिपुओं को उड़ाया जा सके। विनोबाजी ने कहा था, एटम बम का मुकाबला करने के लिए हमें 'आत्म'-बम बनाना होगा। [समाप्त]

मध्य प्रदेश की चिट्ठी

म० प्र० सर्वोदय-मंडल की तीसरी वार्षिक बैठक वि-सर्जन आश्रम, इन्दौर में शुक्रवार २३ मार्च, ६२ को प्रातः साढ़े आठ बजे मंडल के अध्यक्ष श्री रामानंद दुबे की अध्यक्षता में हुई।

प्रदेश के १६ जिलों में ६० प्रतिनिधि और जिला-संयोजक इस बैठक में सम्मिलित हुए। कार्यवाही प्रारंभ करते हुए मंडल के मंत्री श्री दीपचंद जैन ने प्रदेश-मंडल की गतिविधियों का वार्षिक विवरण और आय-व्यय का वार्षिक लेखा-जोखा प्रस्तुत किया।

'बीघे में कट्ठा' अभियान

अ० भा० सर्व सेवा संघ के परिपत्र के अनुसार बिहार में अ० भा० स्तर पर होने वाले 'बीघे में कट्ठा-अभियान' के लिए प्रदेश से की गयी अपेक्षा पर बैठक में गंभीरतापूर्वक विचार हुआ। बैठक में सम्मिलित होने वाले साथियों में से १७ मित्रों ने बिहार में 'बीघे में कट्ठा' अभियान के लिए अपना नाम दिया, साथ ही अपने-अपने जिलों से और भी साथियों को तैयार करने का वचन भी दिया। प्रयत्न यह रहेगा कि इस प्रदेश से की गयी अपेक्षा के अनुसार ३५ साथी बिहार पहुँचें।

पंचायत-प्रशिक्षण

सन् '६२-'६३ में ग्राम पंचायत-प्रशिक्षण विद्यालय प्रदेश मंडल की देख-रेख में चलाने के बारे में श्री वि० स० खोड़ेजी ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की। निश्चय किया गया कि फिलहाल दो विद्यालय—एक सर्वोदय शिक्षण समिति, माचला (इंदौर) तथा दूसरा मानव-साधना-केन्द्र, मुरार (ग्वालियर) द्वारा चलाये जायँ। इन विद्यालयों की नैतिक जिम्मेदारी प्रदेश सर्वोदय मंडल की रहेगी। मंडल की प्रबंध समिति ने पालिया (इंदौर) में २६ नवम्बर '६१ की अपनी बैठक में इस कार्य के लिए जो समिति बनाई थी, उसी को इस वार्षिक बैठक में यह अधिकार दिया गया कि वह प्रदेश मंडल की ओर से इन दोनों विद्यालयों के मार्गदर्शन और निरीक्षण का काम करेगी। इस समिति के सदस्य श्री काशिनाथजी त्रिवेदी, श्री शंकरलाल जोशी और श्री वि० स० खोड़ेजी संयोजक रहेंगे। समिति को दो सदस्य और नामजद करने का अधिकार भी दिया गया।

भूमि-वितरण

प्रदेश में भूदान यज्ञ में प्राप्त भूमि के वितरण पर काफी गंभीरतापूर्वक सोचा गया। विशेषकर महाकोशल क्षेत्र में वितरित भूमि आदाताओं के नाम चढ़वाने तथा वितरित भूमि में से जो भूमि अभी तक भूदान यज्ञ मंडल में शासन की ओर से निहित नहीं हुई है, उसे निहित कराने की मूलभूत समस्याएँ हैं। इस विषय में निर्णय हुआ कि जिला स्तर पर अधिकारियों से प्रत्यक्ष संपर्क द्वारा निराकरण के लिए भरसक प्रयत्न किया जाय। भूदान मंडल के पदाधिकारी इस ओर विशेष ध्यान दें।

महाकौशल-क्षेत्र के लिए भूदान-मंडल

प्रदेश के महाकोशल-क्षेत्र के लिए भूदान मंडल के सदस्यों के जो नाम श्री विनोबाजी के पास भेजे गये हैं, उसकी जानकारी अध्यक्ष महोदय ने बैठक को दी। प्रस्तावित भूदान मंडल इस प्रकार है :

(१) श्री दादाभाई नाइक, अध्यक्ष
(२) श्री रामानन्दजी दुबे, मंत्री
(३) श्री गणेशप्रसाद नायक, सहमंत्री
(४) श्री सेठ गोविन्ददास, सदस्य
(५) श्री गंगाधरजी पाटणकर ,,
(६) श्री हरिदास मंजुल ,,
(७) श्री राजेन्द्र शुक्ल ,,

इस प्रस्तावित भूदान मंडल की पुष्टि बैठक द्वारा की गयी। साथ ही यह भी अपेक्षा व्यक्त की गयी कि इस बार जो भी भूदान-मंडल प्रस्तावित किये जायँ, वे प्रदेश-सर्वोदय मंडल की प्रबंध-समिति के परामर्श से ही किये जाने चाहिए।

कार्य की भावी योजना

कार्य की भावी योजना पर विचार-विमर्श हुआ। आगामी वर्ष में निम्न कार्यक्रमों पर विशेष जोर देना तय हुआ।

(१) प्रदेश के प्रत्येक जिले में प्राथमिक जिला सर्वोदय मंडल स्थापित किये जायँ। इसका प्रयत्न प्रदेश मंडल करे।

(२) भूदान-भूदान के विचार-प्रचार के लिए पद यात्राओं का आयोजन किया जाय।

(३) पंचायती-राज : स्वायत्त संस्थाओं में पक्ष-मुक्ति और सर्व-सम्मति का सिद्धांत प्रयोग में लाया जाय, इसके लिए नगर-सेविकाओं, ग्राम पंचायतों और जन पदों में प्रयत्न किया जाय। जिस क्षेत्र में विशेष अनुकूलता हो, वहाँ प्राथमिकता दी जाय।

(४) अस्पृश्यता-निवारण : अस्पृश्यता निवारण और भंगी-कष्ट-मुक्ति के कार्यक्रम, जो हरिजन सेवक संघ द्वारा चलाये जा रहे हैं, उनको सफल बनाने में विशेष प्रयत्न किये जायँ।

(५) बुनियादी तालीम : बुनियादी तालीम की सरकारी शालाओं में कताई तथा अन्य उद्योगों के लिए जितना प्रावधान है, उन पर पूरी तरह से अमल हो, इसका प्रयत्न शासकीय विभागों की सहायता से किया जाय।

(६) नशाबन्दी : मध्यप्रदेश में नशाबन्दी की दिशा में अभी तक शासन की ओर से आजादी के बाद कोई खास काम नहीं हुआ है। अब आवश्यक है कि नैतिक उत्थान के इस कार्यक्रम की ओर जनता और शासन, दोनों का ही ध्यान आकर्षित किया जाय। नशाबन्दी के लिए जन आधारित तथा लोक शिक्षण प्रधान कार्यक्रम आयोजित किये जायँ। श्री देवेन्द्रभाई द्वारा बैठक में नशाबंदी के लिए एक योजना प्रस्तुत की गयी, जिसके अनुसार शराब के आदतमन्दों के लिए पहिचान-पत्र पर नियत मात्रा में निश्चित स्थानों पर ही दवा के रूप में सामने पिलाने की व्यवस्था की जाय, जिससे कि वे इस आदत को दूसरों में न फैला सकें और इस प्रकार दी गयी शराब से किसी प्रकार का आर्थिक लाभ शासन न उठाये, जिससे कि अवैध शराब में लाभ समाप्त हो जाने से उसकी आसानी से रोकथाम की जा सके। साथ ही नशे के आदतमन्दों को समझा-बुझा कर तथा सामाजिक प्रभाव से उनकी शराब पीने की आदत छुड़ायी जाय। यह योजना सिद्धांततः बैठक में स्वीकार की गयी और निश्चय किया गया कि इस दिशा में अनुकूल वातावरण प्रत्येक जिले में बनाया जाय।

चम्बल-घाटी

चम्बल-घाटी क्षेत्र में श्री विनोबाजी के सामने बागियों के आत्म-समर्पण के बाद आत्म समर्पणकारियों के मुकदमों की पैरवी, उनके परिवारों के पुनर्वास, उनके द्वारा पीड़ित परिवारों के बच्चों की शिक्षा के लिए चंबल घाटी शांति समिति द्वारा किये गये प्रयत्नों के परिणामस्वरूप क्षेत्र में सद्भावना का जो वातावरण बना है, उसकी जानकारी श्री हेमदेव शर्मा ने दी। बैठक का यह सुझाव रहा कि "बागी-आत्म-समर्पण दिवस" १८-१९ मई को चम्बल-घाटी क्षेत्र में कार्यकर्ताओं का एक शिविर आयोजित किया जाय, जिससे पिछले कार्य के सिंहावलोकन के साथ भावी कार्य की रूपरेखा भी तय की जा सके।

भूमि-क्रांति

म० प्र० सर्वोदय मंडल के साप्ताहिक मुख-पत्र "भूमि क्रांति" के विषय में यह तय किया गया कि प्रदेश के हर जिले में कम-से-कम ५० ग्राहक और बनाये जायँ। गांधी स्मारक निधि से इस पत्रिका के घाटे की पूर्ति के लिए १२००० रु० के अनुदान की माँग की जाय। 'भूमि क्रांति' के प्रचार के लिए एक कार्यकर्ता को पूरे समय के लिए रखा जाय। प्रदेश में जगह-जगह घूम कर वह प्रचार करे। पंचायत, शिक्षा विभाग और समाज सेवा विभाग से परिपत्र निकलवा कर जिला कार्यालय को भिजवाए जायँ।

शांति-सेना-मंडल

प्रदेश में शांति-सेना के काम को बढ़ाने और सुव्यवस्थित बनाने के लिए श्री दीपचंदजी जैन को जिम्मेवारी सौंपी गयी।

सूत्रांजलि

सूत्रांजलि विषय में विचार होकर निश्चय किया गया कि इस वर्ष के सूत्रांजलि के आँकड़े श्री काशिनाथजी त्रिवेदी को भेजने के लिए जिला सर्वोदय-मंडलों को निवेदन किया जाय। साथ ही जिला *सर्वोदय-मंडलों को निवेदन किया जाय* कि वे सूतांजलि का छठा हिस्सा सर्व सेवा-संघ प्रदेश-मंडल को भिजवा दें।

प्रदेश-सर्वोदय-मंडल का नया गठन

जिला सर्वोदय मंडलों के संयोजकों एवं प्रतिनिधियों द्वारा प्रदेश सर्वोदय-मंडल के नवीन अध्यक्ष का नियमानुसार सर्व सम्मति से चुनाव किया गया। श्री रामानन्दजी दुबे, रायपुर पुनः नये साल के लिए अध्यक्ष चुने गये। इसी प्रकार श्री हेमदेव शर्मा, ग्वालियर (मंत्री) तथा श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त, इंदौर, श्री चतुर्भुज पाठक, छतरपुर, श्री सत्यनारायण शर्मा, सिवनी सहमंत्री चुने गये। कार्यकारिणी के अन्य सदस्य इस प्रकार हैं।

श्री दादाभाई नाइक, वि-सर्जन आश्रम, नौलखा, इंदौर

श्री वि० स० खोड़ेजी, खरगोन

श्री गंगाधरजी पाटणकर, करजगाँव, बैतूल

श्री गणेश प्रसाद नायक, दीक्षितपुरा, जबलपुर

श्री दीपचन्द जैन, वि सर्जन आश्रम, नौलखा, इंदौर

श्री काशिनाथजी त्रिवेदी, ग्राम भारती आश्रम, टवलाई

श्री मुकुन्दलालजी बघेरवाल, गरोठ (मंदसौर)

श्री दामोदर प्रसादजी पुरोहित, छतरपुर

श्री पथरामजी, मर्दा (दुर्ग)

श्री संचालक, गांधी स्मारक निधि, छतरपुर

श्री मंत्री, वनवासी सेवा मंडल मंडला

श्री मंत्राणी, कस्तूरबा ट्रस्ट, कस्तूरबाग्राम, इन्दौर

श्री अध्यक्ष, म० प्र० खादी ग्रामोद्योग फंड, उज्जैन

श्री मंत्री, हरिजन-सेवक संघ, इंदौर

म० प्र० का पाँचवाँ सर्वोदय-सम्मेलन

निश्चय किया गया कि विंध्य क्षेत्र के साथियों की इच्छा के अनुसार आगामी २० व २१ जून '६२ को छतरपुर में सम्मेलन का आयोजन किया जाय।

———

मद्य-निषेध के संबंध में शासन की दोहरी नीति खतरनाक

इंदौर के मद्य-निषेध कार्यकर्ता-संगोष्ठी में महत्त्वपूर्ण चर्चा

इंदौर में २६ मार्च '६२ को 'गांधी हाल' में श्री एन० डी० जोशी की अध्यक्षता में "मद्य-निषेध कार्यकर्ता-संगोष्ठी" हुई, जिसमें मध्य-प्रदेश के विभिन्न जिलों के निमंत्रित लगभग ६० कार्यकर्ताओं ने भाग लिया। संगोष्ठी में मुख्य रूप से पूरे प्रांत में संपूर्ण मद्य-निषेध के व्यावहारिक एवं लोक-शिक्षणात्मक स्वरूप पर सविस्तार चर्चा की गयी। गोष्ठी में प्रमुख रूप से सर्वश्री रामसिंहभाई वर्मा, देवेन्द्रकुमार गुप्त, दीपचंद जैन, लहरसिंह भाटी, तात्यासाहब शिखरे, चुन्नीलाल महाराज के अतिरिक्त म० प्र० के मद्य-निषेध प्रचार अधिकारी श्री आनन्दरामजी त्रिवेदी ने अपने विचार व्यक्त किये।

गोष्ठी के प्रमुख प्रवक्ता श्री देवेन्द्र गुप्त ने कहा : "बगैर सोचे-समझे की गयी कानूनन नशाबन्दी समस्या का हल नहीं है, वरन् उससे उसे विकराल रूप मिल सकता है, क्योंकि एकाएक नशाबन्दी कर देने से हम मद्य-पान की पूर्ति पर ही नियंत्रण रखने में सफल होते हैं, पीने वालों पर कोई नियंत्रण रख पाना कठिन होता है, अतः वे लोग अवैधानिक शराब का आश्रय लेते हैं। इसलिए हमें नशाबन्दी की दिशा में मनोवैज्ञानिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से विचार करना होगा, जिससे मद्य-पान की पूर्ति तो न हो सके, परन्तु उसकी माँग भी निरन्तर कम होती जाय। नये पीने वालों की संख्या न बढ़े, इसका भी विचार होगा। इसका यह उपाय सूझता है कि शराब के आदतमन्दों को पहिचान-पत्र पर नियत मात्रा में निश्चित स्थानों पर दवा के रूप में शराब पीने को दी जाय और नियत 'कोटे' में निरन्तर कमी की जाती रहे। यह बात देशी विदेशी सभी प्रकार की शराब पर लागू की जानी चाहिए। इस प्रकार दी गयी शराब में शासन किसी भी प्रकार का आर्थिक लाभ न उठावे और संभव हो तो उसकी कीमतें इतनी कम कर दे, ताकि जिस लालच से अवैध शराब का आज निर्माण होना सुनाई देता है, उस पर अपने आप रोकथाम हो सकेगी। यह तो मद्य-मोचन का एक व्यावहारिक पहलू हो सकता है, परंतु हमें लोक-शिक्षणात्मक पहलू भी अमल में लाने होंगे। शराब के आदतमन्दों को समझा-बुझा कर, उनसे निकट संपर्क कर और उन्हें विश्वास में लेकर सामाजिक प्रभाव के जरिये उनकी शराब छुड़वानी होगी। अतः यह आवश्यक है कि

> नैतिक उत्थान तथा लोकशिक्षण, ये प्रधान कार्यक्रम अपनाये जायँ और लोक पुरुषार्थ से इस दिशा में जो भी सम्भव हो वे कदम उठाये जायँ। इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि सरकार मद्य-निषेध के अपने कर्तव्य से वंचित अथवा गाफिल रहे।"

गोष्ठी में वक्ताओं द्वारा इस बात पर खेद और आश्चर्य प्रकट किया गया कि एक ओर सरकार पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा जनता के जीवन विकास पर विदेशों से ऋण लेकर करोड़ों रुपया खर्च करे और दूसरी ओर सरकार और ठेकेदार मिल कर शराब के ठेकों द्वारा शोषण करे, कमाई करे। यह कैसा खिलवाड़ है! शासन को मद्य निषेध और शराब के ठेके नीलामी की इस दोहरी नीति को त्यागना चाहिए।

गोष्ठी की यह आम राय रही कि म० प्र० शासन सम्पूर्ण प्रांत में पूर्ण नशाबन्दी की दिशा में शीघ्रातिशीघ्र योग्य कदम उठा कर अन्य प्रांतों का मार्गदर्शन करे एवं सन् '६३-'६४ से इन्दौर जिले तथा नगर में पूर्ण मद्य-निषेध लागू करे।

गोष्ठी में हुई चर्चाओं के आधार पर एक प्रतिवेदन भी तैयार किया जा रहा है, जिससे प्रांत के प्रमुख कार्यकर्ताओं एवं रचनात्मक संस्थाओं को भेजा जा सके ताकि उनका भी पूरा-पूरा योग मद्य-निषेध को सफल बनाने में मिल सके।

बम्बई सर्वोदय-मंडल की वार्षिक सभा

बम्बई सर्वोदय-मंडल की वार्षिक सभा तारीख १७ मार्च को 'मणिभवन' में हुई। अध्यक्ष-स्थान श्री वैकुंठलाल भाई मेहता ने ग्रहण किया था। सर्वश्री अण्णा साहब सहस्रबुद्धे, मिनु मसानी, अन्य कार्यकर्ता तथा सर्वोदय-मित्र उपस्थित थे। प्रारम्भ में सन् १९६१ के कार्य का विवरण और आय-व्यय का हिसाब स्वीकृत किया गया। बाद में सन् '६२ का कार्यक्रम और बजट पेश किया गया।

सन् '६२ के लिए बम्बई सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री कान्तिलाल वोरा तथा अ० भा० सर्व सेवा संघ के लिए बम्बई के प्रतिनिधि श्री राम देशपांडे सर्वसम्मति से नियुक्त किये गये।

अन्त में श्री अण्णासाहब ने बम्बई में कार्यकर्ताओं का मार्गदर्शन किया और श्री वैकुंठलाल भाई के प्रवचन के पश्चात् प्रार्थना से सभा समाप्त हुई।

म० प्र० सर्वोदय-मण्डल, इन्दौर का आय-व्यय पत्रक

१ जनवरी '६१ से २८ फरवरी '६२ तक

म०प्र० सर्वोदय-मंडल की वार्षिक बैठक वि-सर्जन आश्रम, इंदौर में हुई। उस वक्त पिछले वर्ष का हिसाब पेश किया गया था, वह यहाँ दिया जा रहा है।

खाता	आय रकम रु.-न.पै.	खाता	व्यय रकम रु.-न.पै.
पिछली बाकी	२५२४-१०	बैंक ड्रोप	११७२-१५
अर्थ संग्रह अभियान	१४७९-३७	स्थायी सामान	४३२-०९
सहायता	६-००	पेशगी	३२-२१
सूतांजलि	९१४-०५	विविध व्यय	९३-४२
विविध आय	१७-७४	डाकतार-टेलीफोन	६७५-९३
	योग ४९४१-२६	मेहमान, सम्मेलन आदि	१७२-०९
		स्टेशनरी व छपाई	२११-९४
		प्रचार-प्रकाशन	३३-७३
		मकान, प्रकाश आदि	२१८-३३
		कार्यकर्तावृत्ति	३७२-०४
		कार्यकर्ताप्रवास	१४०७-२६
		म० प्र० शांति सेना मंडल	५९-८३
		म० प्र० नशाबंदी सम्मेलन	५८-५५
		बाकी	१-६९
			योग ४९४१-२६

शराब पीने की आदत छुड़ाने का प्रयत्न

श्री पी० एम० राजभोज को गृह-मंत्रालय के मंत्री श्री बलवंत नागेश दातार ने बताया कि दिल्ली में शराबियों की लत छुड़ाने के लिए ५ केन्द्र खोलने का विचार है। दिल्ली-प्रशासन इस पर विस्तार से जाँच पड़ताल कर रहा है।

अखाद्य तेल-बीज संग्रह प्रशिक्षण

अखाद्य बीज-संग्रह और उसका तेल निकालने के प्रशिक्षण का पाठ्यक्रम खादी ग्रामोद्योग कमीशन द्वारा सर्वोदय केन्द्र, खीमेल, पो० रानी, जिला पाली (राजस्थान) में १५ जून '६२ से प्रारम्भ हो रहा है। पाठ्यक्रम ६ मास का है। इस बीच प्रशिक्षणार्थी को ४१ रु० माहवार छात्रवृत्ति दी जायेगी। यदि स्थान की व्यवस्था वे स्वयं न कर सकें, तो स्थान-व्यवस्था का ५ रु० माहवार प्रशिक्षणार्थी से लिया जायेगा। इस पाठ्यक्रम में सीमित स्थान हैं, इसलिए उपर्युक्त पते से शीघ्र आवेदन करें।

—व्यवस्थापक

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८७६० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९०८० एक अंक : १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १३ अप्रैल '६२ | वर्ष ८ : अंक २८

करुणामूलक साम्य : नया दर्शन

विनोबा

अपने इस देश की एक परम्परा है। पृथ्वी में मानव अनेक देशों में विकसित हुआ है। उसमें कुछ देश पुराने और कुछ देश आधुनिक माने जाते हैं—जैसे अमेरिका आधुनिक देश माना जायगा। योरप उस हिसाब से कुछ पुराना है, लेकिन फिर भी आधुनिक है। भारत और चीन आदि देश प्राचीन माने जाते हैं।

आज दो शक्तियाँ दुनिया में काम करती हैं : एक है, बाहर की सृष्टि और दूसरी है, अंदर का द्रष्टा। दोनों के मिलने से मानव-जीवन का नाटक चल रहा है। सिर्फ सृष्टि होती तो द्रष्टा के अभाव में यह नाटक नहीं बनता। द्रष्टा होता और दर्शन के लिए सृष्टि नहीं होती; तो वह एकाकी अपने में समाप्त हो जाता। जिसे आज हम जीवन कहते हैं, वह एक नाटक-सा है, लेकिन वह सृष्टि और द्रष्टा मिल कर बनता है।

कुछ लोगों का, अधिकतर लोगों का झुकाव बाह्य सृष्टि की खोज में होता है, क्योंकि इन्द्रियाँ बहिर्मुख हैं और कुछ का झुकाव अंतर की तरफ होता है, द्रष्टा की तरफ। दो प्रवृत्तियाँ होती हैं। लोग समझते हैं कि प्राचीन और अर्वाचीन देशों के मनोविकास में कुछ अपनी विशेषताएँ हैं। अक्सर यह माना जाता है कि जो प्राचीन स्थान हैं—एशिया मायनर से लेकर ब्रह्मदेश तक, जिसके अंतर्गत चीन वगैरह भी हैं—उनमें अंतर की तरफ ज्यादा ध्यान दिया गया और दूसरे अर्वाचीन क्षेत्र में सृष्टि की तरफ ज्यादा ध्यान दिया जाता है, किन्तु यह मानना सही नहीं है।

दोनों विभागों में (अगर ऐसे दो विभाग करना ऐतिहासिक कारणों से अच्छा लगता हो तो किये जायँ।) दोनों प्रवृत्तियों के मनुष्य होंगे, दोनों झुकाव पाये जायेंगे। बाहर की खोज में लगने वाले स्वाभाविकतया ज्यादा अंतर की खोज में नहीं जाते, कम जाते हैं। यह जो खयाल है कि प्राचीन विभागों में आंतरिक खोजें ज्यादा हुईं, यह ठीक नहीं है। इन देशों में भी थोड़े ही लोग थे, जिन्होंने आंतरिक खोजें की थीं। वैसे इन प्राचीन देशों में वैज्ञानिक खोजें ही ज्यादा हुई हैं। प्राचीन विभागों में ही खेती की खोज, अग्नि की खोज, पशु के इस्तेमाल की खोज, औजार बनाने की खोज, पत्थर और धातुओं के औजार, गणित शास्त्र, अंकगणित, शास्त्र, नक्षत्र आदि विज्ञान, ये सब खोजें प्राचीन काल में हुई हैं। लेकिन आज जो मान्यता फैली है कि वैज्ञानिक मनोवृत्ति पश्चिम में है, इसका कारण यह है कि आधुनिक जमाने में जो खोजें हुईं, वह ज्यादातर सृष्टि की हुईं और वे भी ज्यादातर पश्चिम में हुईं। ब्रह्मदेश, चीन पूर्व विभाग में है और काल के लिहाज से प्राचीन हैं। वहाँ इस जमाने में सृष्टि की खोजें ज्यादा नहीं हुई हैं। पर अभी अभी जैसे पूर्व विभाग में सृष्टि की खोजें ज्यादा नहीं हुईं, वैसी आंतरिक खोजें भी ज्यादा नहीं हुईं; याने यह पूर्व विभाग, जहाँ तक अर्वाचीन काल में शोधन का सवाल है, परती जमीन रहा।

इसका मतलब यह नहीं है कि इन चार पाँच सौ सालों में हमने कुछ किया नहीं या ऐसा नहीं कि यहाँ महापुरुष नहीं हुए, बल्कि यहाँ असम में ही एक महापुरुष चार सौ साल पहले हुए शंकरदेव। चार सौ साल पहले का काल भी आधुनिक युग ही माना जायेगा। असम का जहाँ तक ताल्लुक है, वे ही युग-प्रवर्तक माने जायेंगे। लेकिन आप यह नहीं पायेंगे कि चाहे शंकरदेव हों या और कोई महापुरुष हों, उन्होंने आध्यात्मिक खोज की है। भागवत लिखने वाले को जो श्रेय हासिल है, वह उसके आधार पर लिखने वाले संतों को हासिल नहीं है। उन्होंने उसका आचरण किया, अनुभव किया और वह विचार लोगों में पहुँचाया और अगर गहराई में जायँ तो पता चलेगा कि जो खोज गीता, उपनिषद ने की है, वह भागवत ने नहीं की है। भागवत में ऐसी कोई चीज नहीं है, सिवाय इसके कि सगुण भक्ति पर जोर दिया गया है।

सार यह है कि हिंदुस्तान में नयी खोज आंतरिक क्षेत्र में या बाह्य क्षेत्र में इन पाँच सौ सालों में नहीं हुई है। कुछ आध्यात्मिक खोजें हो रही हैं, वे अभी हो रही हैं। भारत में ब्रह्मविद्या का फिर से नया आरंभ हो रहा है। भागवत के विषय में कहा गया कि वह वेद-रूपी वृक्ष का सर्वोत्तम मधुर फल है। फल मीठा होता है, अच्छा होता है। पर फल परिणाम है, खोज नहीं। तो आध्यात्मिक खोजों का श्रेय इस पूर्व विभाग को प्राचीन काल में मिला, जो उस विभाग को नहीं मिला था, ऐसा माना जाता है। इस जमाने में सृष्टि की खोजों का श्रेय उस पश्चिम विभाग को बहुत कुछ मिला। जहाँ तक पुराने जमाने का ताल्लुक है, उधर ज्यादातर आंतरिक और बाह्य खोजें भी नहीं हुईं, और जो कुछ खोजें हुईं, दोनों प्रकार की, पूर्व विभाग में हुईं। उस विभाग में आंतरिक खोजें तो और भी कम हुईं और कम लोगों ने की है। बाह्य खोजें ज्यादा हुईं और ज्यादा लोगों ने की। अर्वाचीन काल में यहाँ न सृष्टि की खोज हुई, न अंतर की। यह एक अपेक्षाकृत, तुलनात्मक विचार है।

अब भारत में नये सिरे से सृष्टि की खोजों की तरफ और ब्रह्मविद्या की तरफ भी जोर से ध्यान गया है। ब्रह्मविद्या के लिए पुराना आधार है, इसलिए नयी ब्रह्मविद्या जो यहाँ बन रही है, वह ज्यादा मजबूत है। विज्ञान भी यहाँ जोर कर रहा है, लेकिन परिणाम इसलिए नहीं दीखता है कि पाँच सौ सालों में यहाँ कुछ था ही नहीं। उतने में पश्चिम ने काफी जोर किया। लेकिन इस जमाने में भी रामन्, जगदीशचन्द्र बसु, इन्होंने जो खोजें की, वे मौलिक हैं। अब विज्ञान में भी भारत जाग रहा है। उसमें उसे आज बहुत कुछ सीखना है। लेकिन उसका दिमाग ताजा हो रहा है, क्योंकि जमीन इतने सालों तक परती थी और 'जमीन परती रहने से [illegible] होता है। इसलिए मैं मानता हूँ कि विज्ञान में भी भारत नयी-नयी खोजें करेगा। ब्रह्मविद्या में तो वह अवश्य नयी नयी देन दे रहा है, यह चीज दुनिया भी महसूस करती है।

बहुत ज्यादा सूक्ष्म विवरण में हम न जायें, तो भी सर्वधर्म समन्वय और सर्व उपासनाओं के समन्वय की जो एक नयी दृष्टि भारत में आयी, जिसका उद्गम राम-कृष्ण माने जायेंगे, चित्त के ऊपर के स्तरों में जाकर परमात्मा की अनुभूति पाकर, फिर से नीचे उतर कर उस अनुभूति में सारे विश्व को लपेट लेना और विश्व को ऊपर के स्तर पर चढ़ाना, यह जो एक दर्शन यहाँ मिला, जिसका उद्गम तो नहीं, लेकिन विशेष प्रकाशन श्रीअरविंद ने किया, यह हिंदुस्तान की इस जमाने की विशेष देन है। फिर जीवन का जहाँ तक ताल्लुक है, आध्यात्मिक तत्त्व जो ऊपर के स्तर में थे और ध्रुव तारे की तरह ध्येयमात्र थे, वह ध्येय तो है ही, लेकिन उसके साथ-साथ वे अनुसरणीय हैं, अनुवर्तनीय हैं, जीवन के क्षेत्र में लागू हो सकते हैं, यह जो सत्याग्रह दर्शन है, जिसका उद्गम तो नहीं, प्रकाशन गांधीजी से हुआ। यह भी एक विशेष देन है।

तीन मिसालें मैंने दीं। तीनों कुछ नयी चीजें तो नहीं हैं। तीनों के लिए पुराने आधार मौजूद हैं, लेकिन इस तरह सूक्ष्मता से देखते हैं तो मालूम होता है कि नया कुछ ज्ञान मनुष्य को मिलता ही नहीं। सनातन ज्ञान किसी न किसी रूप में मौजूद रहता ही है। वही स्वरूप में आता है, उसमें नयी चमक आती है। उसी का नाम खोज है, जिसे हम 'इनवेंशन' कहते हैं, पर यहाँ ऐसा नहीं है। दुनिया में जहाँ तक अध्यात्म का ताल्लुक है 'डिस्कवरी' होती है। जो चीज मिलती है, उस पर नया प्रकाश डालते हैं। प्रकाश पड़ता है तो नया दर्शन होता है। उसे खोज का स्वरूप आता है।

अब हम नम्रतापूर्वक कहते हैं कि जो चौथी चीज निकल रही है वह है, साम्ययोग। यह दुनिया की माँग है, यह प्राचीन काल से चली आ रही है। आज विज्ञान वह भूख बढ़ा रहा है। साम्ययोग की प्रेरणा दुनिया के सब देशों के कोनों में दीखती है। किसी-न किसी रूप में वह सामने आती है। हम गीता में देखते हैं। उसे हमने नाम ही 'साम्ययोग' दिया है। 'निर्दोषं हि समं ब्रह्म' याने परम साम्य, समता। यह ब्रह्म की व्याख्या गीता ने की है। हमने खूब सोचा और पढ़ा, लेकिन इससे बेहतर व्याख्या ब्रह्म की नहीं हो सकती है।

विज्ञान के कारण उस समता को हम प्रत्यक्ष में ला सकते हैं, दृश्यगत कर सकते हैं, मूर्तिमंत कर सकते हैं, सगुण-साकार कर सकते हैं। लेकिन भारत में वह नये रूप में निकल रहा है, वह है करुणामूलक

समता। मत्सरमूलक साम्य तो होता ही नहीं है। लेकिन इन दस ग्यारह साल में जो दर्शन हो रहा है, वह यह है कि साम्य तो आकर ही रहेगा, क्योंकि वह मानव समाज की आकांक्षा में है और विज्ञान ने उसे निकट भविष्य की चीज बनाया है। किन्तु साम्य तो करुणा द्वारा ही आयेगा। प्रश्न यह है कि साम्य करुणामूलक हो, या मत्सरमूलक ? मुझे यह दर्शन हो रहा है कि वह करुणामूलक होना चाहिए और करुणामूलक ही हो सकता है। हम समझते हैं कि यह नया दर्शन प्रकट हो रहा है। प्रकाश पुराना वही है, लेकिन किरण नयी है। ये चार चीजें इस आधुनिक जमाने की हैं :

(१) सर्वोपासना-समन्वय।

(२) अधिचित्त पर-आरोहण।

(यह शब्द हमने गौतम बुद्ध से लिया।)

(३) सत्याग्रह-दर्शन।

(४) करुणामूलक साम्य।

अब विज्ञान को जोर के साथ आना है, लेकिन इस आध्यात्मिक दर्शन के मार्ग-दर्शन में उसे चलना चाहिए।

ऐसे विचार हमें हिलाते हैं, डुलाते हैं, अन्दर से रोज धक्का देते हैं। उत्तरोत्तर स्फूर्ति बढ़ाते रहते हैं। कोई थकान नहीं आती है। न रात को, न दिन को, थकान जैसी कोई चीज ही हमें महसूस होती है। विज्ञान की मदद से यह करुणामूलक साम्य, यह अति भव्य दर्शन हमारे सामने खड़ा है।

यहाँ छोटा-सा आश्रम 'मैत्री' के नाम से हुआ है। हम आशा करते हैं कि हम और कुछ काम करें, न करें; पर हम कर्म जड़ न बनें। हमारा कर्म थोड़ा हो, लेकिन शास्त्रीय हो। सुव्यवस्थित हो, ज्ञानमय हो, उपासनामय हो। वो जो मुख्य कार्य हमें करना है, भगवत् कार्य, इस जमाने के लिए उसके लायक हम बनेंगे। बहुत थोड़ी सी, पाव एकड़ जमीन रखें, लेकिन उपासना बुद्धि से रखें। एक घास-पात का तिनका भी उसमें नहीं है, जैसे दर्पण होता है, वैसा वह होना चाहिए। ऐसा दृश्य देख कर चित्त प्रसन्न होगा और नया ज्ञान मिलेगा। कर्म की मात्रा हम ज्यादा न बढ़ायें अनेक कर्म बढ़ा कर कर्म-जाल में न फँसें। अनेक प्रकार के कर्म हम खड़े करते हैं, वह पार नहीं पड़ता और मुख्य वस्तु की तरफ ध्यान नहीं जाता। मुख्य वस्तु गौण मानी जाती है और गौण वस्तु मुख्य हो जाती है, ऐसा यहाँ नहीं होना चाहिए।

[मैत्री-आश्रम, असम, ६ मार्च, '६२]

क्या देश समृद्ध हो रहा है?

• रामाधार

कुछ दिन पहले एक सज्जन से चर्चा हो रही थी। यह एक सरकारी विभाग के पदाधिकारी हैं। उन्होंने कहा, सारे देश का चेहरा बहुत शीघ्रता से बदल रहा है और हमें आशा है कि थोड़े ही अर्से में सारा भारतवर्ष खुशहाली की गोद में आनन्द मना रहा होगा। उनके हूबहू शब्द मैंने नहीं लिये हैं। उनका कहने का आशय यही कुछ था।

मैं सोचने लगा और मैंने कहा भी कि सारे देश की बात तो हम बाद को करेंगे, पहले हम दिल्ली को ही ले लें। दिल्ली अपने आप में किसी भी रूप में भारतवर्ष का प्रतिनिधित्व नहीं करती है। राजधानी होने के कारण सारे देश से विभिन्न प्रकार के करों द्वारा पैसा इकट्ठा होता है, उसका अच्छा खासा भाग राजधानी को सुन्दर बनाने में खर्च किया जाता है। इसमें यह प्रश्न ही नहीं उठता कि कहाँ से कितना पैसा, किन साधनों द्वारा आया तथा भारतवर्ष का ख्याल करते हुए दिल्ली में यह किस अनुपात से खर्च होना चाहिये। यह राजधानी है, इसलिए हमारे शासकों का विचार है, जो परम्पराओं को देखते हुए स्वाभाविक भी दिखाई देता है कि इसकी शान-शौकत, शासन-व्यवस्था की प्रतिष्ठा और गौरव आदि का विशेष ध्यान रहना चाहिये।

कहने का अभिप्राय यह है कि यहाँ अनेक प्रकार की सुविधाएँ उपलब्ध हैं और इसलिए सामान्यतः देश के दूसरे भागों की तुलना में दिल्ली कहीं अधिक समृद्ध है। लेकिन अगर हम इस समृद्ध नगरी के दर्शन करने निकलें और अपनी आँखों को खुला रखें, तो मालूम होगा कि विराट वैभव के साथ-साथ विराट दारिद्रय इसी नगरी के अन्दर व्यापक रूप से फैला हुआ है, जिसे देख कर मानव-अन्तःकरण सिकुड़ सा जाता है।

भारतवर्ष की राजधानी में ही सैकड़ों ऐसी छोटी-बड़ी बस्तियाँ हैं, जहाँ घुसते ही मन एक ऐसी दारुण निराशा से भर जाता है, जिससे लगता है कि इस जीवन में कोई सार नहीं है। ऐसी झोपड़ियाँ, जो 'झोपड़ी' शब्द का भी उपहास करती लगती हैं, जिनकी ऊँचाई इतनी है कि आदमी उनके अन्दर बैठ ही सकता है, खड़ा होने की सुविधा नहीं है, जगह इतनी है कि मुश्किल से एक चारपाई समा सकती है, पर उसके अन्दर पूरा एक परिवार रहता हुआ मिलता है। उनके सारे कार्य, लोक व्यवहार, इसी के अन्दर होते हैं। बर्तन भी वहीं मले जाते हैं और धोवन का गन्दा पानी वहीं इकट्ठा होकर सड़ाँध पैदा करता रहता है। किसी घर में एकाध बकरी हुई तो उसका निवास भी वही झोपड़ी है और उसका नित्य-कर्म भी वहीं होता है। अक्सर इस प्रकार की झोपड़ियाँ एक जगह पर काफी संख्या में होती हैं। दिल्ली शहर कोई गाँव तो है नहीं, विराट नगरी है और राजधानी है। अतः भूमि का यहाँ बड़ा महत्त्व है। खुली जगहों की कल्पना तो यहाँ की नहीं जा सकती। अतः इतनी बड़ी तादाद में जो आदमी, औरतें और बच्चे यहाँ रहते हैं, वे अपना नित्य-कर्म कहाँ करते होंगे, इसकी कल्पना हम आसानी से कर सकते हैं। इन सबका सम्मिलित परिणाम एक ऐसे दुर्गन्धमय और वीभत्स वातावरण की सृष्टि करता है कि इन स्थानों को देख कर नरक के सम्बन्ध में कौतूहल के लिए स्थान नहीं रहता।

अगर राजधानी का यह हाल है तो भारतवर्ष के दूसरे भागों के बारे में हम सहज ही अनुमान कर सकते हैं।

इसके बावजूद भी अधिकारीगण और ऐसे लोग जो सम्पन्न हैं तथा अपनी शिक्षा दीक्षा और सम्पर्कों के कारण अपनी सम्पन्नता और बढ़ा सकते हैं, उनका यही कहना है कि भारतवर्ष का चेहरा बड़ी तेजी से बदल रहा है। ये लोग जाने-अनजाने पं० नेहरू के शब्दों अथवा वाक्यों को तोते की तरह दोहराते रहते हैं।

उसी दिन एक और सज्जन से भेंट हुई, जो एक कांग्रेसी उम्मीदवार के चुनाव-क्षेत्र में काम करके लौटे थे। उस क्षेत्र के प्रायः सौ गाँवों में वह घूमते रहे। चुनाव के सिलसिले में उनके साथी आम लोगों से यही कहते थे कि कांग्रेस की योजनाओं और उसकी सेवाओं के कारण देश का चेहरा बहुत तेजी से बदल रहा है। वह क्षेत्र ऐसे भाग में है, जो अपेक्षाकृत खुशहाल माना जाता है। लेकिन उस खुशहाल इलाके के भी देहातों की दरिद्रता को देख कर उनका कलेजा मुँह को आता था। थोड़ी-बहुत खुशहाली के दर्शन वहाँ जरूर होते, हैं जहाँ कोई 'ब्लाक-डेवलपमेंट' आदि की योजना होती है। उस ब्लाक डेवलपमेंट के हेडक्वार्टर के आस पास के दो-चार गाँवों को प्रदर्शनी की भाँति सजा दिया जाता है और जो फैशनेबुल लोग तफरीहन गाँवों की खुशहाली देखने के लिए दौरा करने जाते हैं, उनकी तसल्ली और इत्मीनान के लिए यह सजावट बड़ा काम देती है।

दरअसल हिन्दुस्तान खुशहाली की ओर तरक्की कर रहा है या नहीं, यह जानने के लिए बहुत वादविवाद में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। यह मोटे तौर पर प्रचलित समाज-व्यवस्था के ढाँचे से आसानी से मालूम हो सकता है। परम्परा से चली आयी व्यवस्थाओं में वर्गीकरण अनिवार्य रूप से मौजूद था—चाहे वह सामन्तशाही रही हो, अंग्रेजी राज्य के जमाने का साम्राज्यवाद रहा हो, अथवा वर्तमान समय की पूंजीवादी नौकरशाही हो। इन व्यवस्थाओं में पूँजी प्रधान है। जिनके पास जिस परिमाण में पूँजी है, उसी परिमाण में वह समृद्ध हो सकेंगे। इन व्यवस्थाओं में श्रम का मूल्य अत्यन्त गौण रहता है, यद्यपि हर तरह के उत्पादन में श्रम प्रधान होता है। हम अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों की सहायता से यह भी जानते हैं कि पूँजी भी एकत्रित किया हुआ श्रम ही है। इसकी प्रक्रिया क्या है, इस बारे में विभिन्न मत तो होंगे, लेकिन पूँजी मुख्यतः इकट्ठा किया हुआ श्रम है, इस स्थापना के बारे में सामान्यतः सभी सहमत हैं। अतः यद्यपि हर प्रकार से श्रम ही प्रधान है, लेकिन वर्गीकरण करने वाली व्यवस्थाओं में श्रम गौण हो जाता है और पूँजी प्रधान हो उठती है; क्योंकि एकत्रित श्रम पूँजी में बदल कर श्रमिक के पास नहीं रह पाता, बल्कि समाज में जो लोग सम्पन्न कहलाते हैं, उनके पास पहुँच जाता है। वे इस पूँजी के कारण ही सम्पन्न कहलाते हैं।

जिस व्यवस्था में पूंजी का महत्त्व अधिक होगा और श्रम को गौण समझा जायगा, उसमें धनी अनिवार्यतः धनी होते जायेंगे और श्रमिकों की अवस्था या तो ऐसी होगी, जिसमें वह किसी तरह ढंगी में आध पेट अपना गुजर-बसर करते होंगे अथवा काम के अभाव में बेकारी के कारण भुखमरी का शिकार बनेंगे। धन जब पूंजी के रूप में व्यवहार में लाया जायगा, तब उसी परिमाण में श्रम के उपयोग की व्यवस्था भी हो सकेगी। पूंजी कम होगी तो श्रम भी थोड़ा ही लगेगा। अतः जहाँ पूंजी कम होगी और मनुष्य-श्रम की बहुतायत होगी, वहाँ बेकारी होगी और इस प्रकार मजदूरों के भी वहाँ पर दो भाग हो जायेंगे। एक वह भाग, जिसके पास काम होगा और दूसरा वह जो बेकार होगा। पूंजी को अनावश्यक महत्त्व देने का यह अवश्यम्भावी परिणाम है। इस बेकारी के कारण काफी बड़ी संख्या में लोग भूखे और नंगे रहते आये हैं और रहेंगे, जैसा कि एशिया और अफ्रीका के अनेक देशों में हो रहा है। पश्चिम की भाषा में ये अविकसित अथवा अर्धविकसित देश कहलाते हैं।

पूंजी को अनावश्यक महत्त्व देने से पारिश्रमिक की पद्धति में भी बड़ी पेचीदगियाँ पैदा हो जाती हैं। परिणामतः योग्यता और कुशलता आदि भेद अपने आप में बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाते हैं और सिद्धान्त का रूप ले लेते हैं। इस कारण विभिन्न उत्पादन इकाइयों में पारिश्रमिक एक गुने से लेकर हजार गुने तक या कहीं कहीं इससे भी अधिक विषम हो जाता है। इस अन्तर के पीछे न कोई सिद्धान्त है, न ही सहज बुद्धि-ग्राह्य कोई तत्त्व। हमारी अर्थव्यवस्था में इसकी मौजूदगी ही अन्ततः इसका औचित्य मालूम होता है। असली कठिनाई यहीं है। यह औंधी पद्धति ही हमने चुनी है। हमने

[शेष पृष्ठ १० पर]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

हमारी मूर्ती-पूजा

गांवों की जनता स्वयंभू महादेव है। वह गांवों ही में रहेगा। यदी तुम शिव महादेव के पूजक हो तो तुम्हें उसके पास जाना चाहीअे। बीस-बीस गांव ले लीजे और लगातार घूमने की धूम मचा दो, अैसा होना चाहीअे। लोकसेवा हमारी मूर्ती-पूजा है। पांच पचीस गांवों का संग्रह हमारा महादेवालय है। गांवों में क्या-क्या है, उसकी हम फेहरिस्त बना लें। फेहरिस्त हम जन-सेवकों को दे दें; वे देवता का स्वरूप समझ लें। जान लें, वह दीगंबर हो गया है, धूल लोट रहा है, सीर से पानी बहता है, केवल बेल ही उसके पास संपत्ती रह गयी है और जंगल का नीवास। जन सेवक जान लें की देवता का स्वरूप क्या है, चेहरा कैसा है, भाव कौन-से है, उसकी रुची और अरुची की वस्तुअें क्या है और उसका नैवेद्य क्या हो गया है और उस पर कौनसे पुष्प चढते हैं। परीचय हुअे बीना पूजा न बनेगी। अैसा न करने पर शीव पर तुलसी होगी, वीष्णु पर बेलपत्र। देवपूजा में जल्दबाजी नहीं चलती। तुम्हें शीघ्रता हो, पर देवता को जल्दी नहीं पडी। वह शांती का अवतार है। उस पर ओकदम घडा उंडेलने से काम नहीं चलेगा; उसे तो बीन्दु बीन्दु की चाह है। ओकदम उंडेलने की अपेक्षा वह तो संतत धारा जारी रखने से ही प्रसन्न होता है।

['कार्यकर्ता-दर्शन' से] —वीनोबा

*लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

गंभीरता से सोचने का अवसर

खास करके पिछले महायुद्ध के बाद से शासन में सेना का हस्तक्षेप एक साधारण बात हो गयी है। शायद ही कोई महीना, या कभी-कभी तो सप्ताह भी निकलता हो, जब दुनिया के किसी न किसी मुल्क में सेना द्वारा 'क्रांति' न होती हो। अभी बर्मा में अचानक फौज ने शासन पर अधिकार किया ही था कि फिर सीरिया और अर्जेन्टाइना में भी फौज द्वारा हस्तक्षेप के समाचार मिले।

इन घटनाओं से एक बात बहुत नग्न रूप से सामने आ जाती है कि कहने को या नाम के लिए जो कुछ भी हो, दुनिया की सरकारों के पीछे आखिरी बल सेना का, अर्थात् संगठित हिंसक शक्ति का है। यह शक्ति अर्थात् सेना जिस तरह चाहती है उस तरह सरकारों को बनाती-बिगाड़ती है। सरकारें सेना के हाथ की कठपुतली मात्र हैं—जब चाहा तब एक को उलट दिया, दूसरे को बिठा दिया या खुद सेना के कमाण्डरों ने शासन अपने हाथ में ले लिया। कहने को आज का जमाना सभ्यता का युग कहलाता है, पर जब तक समाज हिंसा या दण्ड-शक्ति के बिना अपना काम-काज चलाना नहीं सीखता या वैसी व्यवस्था नहीं कायम करता, तब तक ये सब बातें व्यर्थ हैं। सभ्यता वगैरह की बात तो ठीक है, पर वास्तव में आज भी "जिसकी लाठी उसकी भैंस" वाली कहावत सोलहों आने चरितार्थ हो रही है। हालाँकि यह सब उलट-फेर किया जाता है, लोगों की भलाई के नाम पर, पर लोग तो अधिकतर खड़े ही देखते रहते हैं। वे तो अक्सर समझ नहीं पाते कि यह सब तमाशा आखिर क्या है? जनता के नाम से कभी-कभी जो प्रदर्शन आदि होते हैं वे भी—जैसा कि सभी जानते हैं—अधिकांश "नियोजित" ही होते हैं।

इस परिस्थिति की पृष्ठभूमि में लोकशाही, लोकतंत्र इत्यादि की बातें बिल्कुल मखौल-सी या बेबुनियाद मालूम होती हैं। असली लोकशाही तभी कायम हो सकती है, जब समाज दण्ड-शक्ति का आधार छोड़े। पर आज की समाजरचना के कायम रहते हुए यह सम्भव नहीं है। जब तक मौजूदा आर्थिक और राजनैतिक केन्द्रीकरण नहीं टूटता या तोड़ा जाता और विकेन्द्रित समाज की रचना नहीं होती तब तक यह सब असम्भव है। आजादी के तुरन्त बाद गांधीजी ने लोकसेवक संघ की योजना बनायी थी और संयोग से दूसरे ही दिन उनकी मृत्यु के कारण जो एक तरह से राष्ट्र के नाम उनका "आखिरी वसीयतनामा" बन गया, उसमें उन्होंने दंड शक्ति के बारे में स्पष्ट किया था:

"शहरों और कस्बों से भिन्न अपने ७ लाख गाँवों के लिए सामाजिक, नैतिक और आर्थिक स्वतंत्रता हिन्दुस्तान को अभी हासिल करनी है। लोकतन्त्र के आदर्श की प्रगति की राह में हिन्दुस्तान को दण्ड या सैनिक-शक्ति पर नागरिक शक्ति की विजय के लिए संघर्ष में से गुजरना होगा।"

आज की सारी योजनाएँ इस भविष्यवाणी और आगाही के खिलाफ शक्ति का उत्तरोत्तर केन्द्रीकरण करके हमें हिंसक शक्ति की गोद में ढकेल रही हैं। देश के शुभचिन्तकों के लिए गम्भीरता से सोचने का अवसर आया है।

—सिद्धराज

पंचायती राज बनाम ग्राम-स्वराज्य

चारों तरफ पंचायती राज की धूम है। सरकार इसको लोकतन्त्र की दिशा में एक बहुत बड़ा कदम मानती है। सर्वोदयवाले भी इसमें ग्राम-स्वराज्य का दर्शन करने की कोशिश कर रहे हैं। सचमुच गाँवों को पंचायती राज के अमल में आने से सारे अधिकार मिल जायेंगे। जिन कामों के लिए, थाना, परगना, तहसील और जिले के अधिकारियों के दफ्तर खटखटाने पड़ते थे, पंचायती राज के अमल में आने से वे सब काम गाँव में ही होने लगेंगे।

यह कहने सुनने और लिखने में तो बड़ा अच्छा लगता है कि लोग अपने मामले व मुकदमों को गाँव में ही पंचायतों के जरिए तय कर लेंगे, पर बात इतनी सीधी-सादी नहीं है। पंचायती राज के मार्फत अधिकार बाँटने की जितनी खुशी सरकार तथा अन्य सामाजिक संस्थाओं को है, उससे कई गुना अधिक गाँव के आम आदमी को डर और फिकर है। जब उसको पंचायती राज के फायदे तथा उसकी जानकारी दी जाती है, तो सुनते-सुनते घबराहट के मारे सिर्फ इतना ही कह पाता है कि अच्छा है भैया, जितनी जल्दी सर्वनाश हो! अगर सचमुच पंचायती राज की योजना लागू हो गयी तो भले आदमियों का तो गाँव में रहना दूभर हो जायगा।

गाँव के इन साधारण लोगों की बात में काफी सत्य है, क्योंकि पंचायती राज के इस नये विधान के अनुसार सत्ता का विकेन्द्रीकरण होगा, विकेन्द्रीकरण नहीं। जब सत्ता जिला व तहसील से गाँव की ओर आयेगी तो उसके साथ उसके भाई बन्धु चोरी, भ्रष्टाचार, दगाबाजी, दमन आदि भी आयेंगे, अर्थात् सत्ता के कारण पैदा होने वाली बुराइयों का भी विकेन्द्रीकरण होगा। इस विकेन्द्रीकरण का एक ही लाभ यह होगा कि केन्द्रीय नौकरशाही का नियन्त्रण और भी भद्दा रूप लेकर ग्राम के जन जीवन में व्याप्त हो जायेगा।

इतना होकर ही बस नहीं होगा, बल्कि गाँवों में आज जो थोड़ा-बहुत समाज के रूप में गाँव दिखाई देता है, वह समाज ऐसा छिन्न भिन्न होगा कि उसका रूप जंगल—जहाँ शेर, चीते, बाघ, भेड़िये, हिरन आदि हमेशा एक दूसरे को खाने की फिकर में रहते हैं—से भी बदतर हो जायेगा। मेरे ऐसा कहने के कई कारण हैं।

पिछले पंचायत के चुनावों में गाँव के अनेकों टुकड़े पार्टियों के नाम पर हो गये और फिर लाठी, बर्छी, बन्दूकों से सैकड़ों आदमी कतल हुए। वैसे भी कुछ गाँव हैं, जहाँ लोगों ने एकमत राय से सरपंच, प्रधान आदि के चुनाव किये। पर यह चुनाव और सत्ता बाँटने की पद्धति के खिलाफ ही हुआ, यानी उसके स्वधर्म के विपरीत हुआ।

कहा जाता है कि पंचायतों के चुनाव सर्व सम्मति से हों, भले लोग उसमें आयें पर इस सबका आज की पंचायतों के संदर्भ में कोई अर्थ नहीं होता, क्योंकि पंचायत चाहे चुनाव से हो अथवा सर्वसम्मति से चुनाव होने के बाद चुने हुए व्यक्तियों का मुख्य काम यह होता है कि वे केन्द्र से बनी हुई योजनाओं को अमल में लाने के लिए जन-सहयोग प्राप्त करें, अगर जन-सहयोग न मिले तो केन्द्र से प्राप्त पुलिस कानून और अदालत की शक्ति का इस्तेमाल करें। ऐसा करने से गाँव की शक्ति बढ़ेगी नहीं, टूटेगी ही।

—नरेन्द्र

सच्चा स्वराज्य जब होगा!

सच्चा स्वराज्य वह नहीं है, जिससे कुछ लोग सत्ता पर कब्जा कर लें। सच्चा स्वराज्य तब होगा, जब सब लोगों में क्षमता आ जायगी कि सत्ता के दुरुपयोग को रोक सकें। इसका अर्थ यह है कि स्वराज्य तब प्राप्त होगा, जब जनता में यह भावना जगा दी जायगी कि उसमें सत्ताधारियों को ठीक ढंग पर चलाने की और उन पर अंकुश रखने की क्षमता है।

——महात्मा गांधी

ग्रामदान में सामाजिक क्रांति की शक्यताएँ

पूर्णचन्द्र जैन

[अभी-अभी पटना में ९-१० और ११ अप्रैल को सर्व सेवा संघ का अधिवेशन हुआ। अधिवेशन में सर्व सेवा संघ के मंत्री, श्री पूर्णचन्द्र जैन ने जो निवेदन प्रस्तुत किया, उसके मुख्य अंश यहाँ दिये जा रहे हैं। —सं०]

आज एक प्रकार की विशेष परिस्थितियाँ अपने देश और विदेशों में बनती जा रही हैं। राजनीति और सत्ता आज अत्यंत दूषित हो गयी है और हिंसा के साधन बड़ा विकराल रूप धारण कर चुके हैं। अनेक राष्ट्रों के दो-एक गुट्ट में बँटने और उन्हें नजदीक लाने या लाये जाने के प्रयत्नों में कामयाबी न मिलने से एशिया, अफ्रीका आदि के जो छोटे-बड़े राष्ट्र स्वतंत्र हुए हैं, उनमें भी पेचीदगियाँ बढ़ गयी हैं। पक्षगत गुटबंदी, हिंसात्मक कार्रवाइयाँ आदि के कारण इन देशों की स्वतंत्रता खतरे में पड़ती नजर आती है और वहाँ जनता क्षुब्ध व परेशान हो रही है। बड़े गुटों के परस्पर संघर्ष के अखाड़े भी ये नवोदित स्वतंत्र राष्ट्र बन गये हैं। इन परिस्थितियों के कारण भयानक हिंसा के विस्फोट का खतरा है। लेकिन अहिंसा की शक्ति के परीक्षण और उसकी कारगुजारी प्रत्यक्ष दिखाने का अनुकूल अवसर भी आज पैदा हुआ है। स्वाभाविक ही इन परिस्थितियो मे गाधी के देशवालों से कुछ आशाएँ और अपेक्षाएँ हैं।

भूदानमूलक, ग्रामोद्योगप्रधान, अहिंसक क्रांति हमारा लक्ष्य रहा। भूदान से ग्रामदान और ग्रामदान से ग्राम-स्वराज्य हमारी मंजिल बनी। उसके पूरक, शोषण व शासन-मुक्त समाज के प्रतीक रूप, जीवन-दान, सर्वोदय-पात्र, शांति सेना, अपक्ष चुनाव, लोकनीति की स्थापना आदि के कार्यक्रम समय-समय पर हमारे सामने आये। खादी-ग्रामोद्योग, पंचायती राज, निर्माण-कार्य वगैरह में सहयोग देने अथवा उनमें से कुछ को जहाँ-तहाँ स्वयं भी उठा लेने के पीछे समाज-क्रांति की दृष्टि हमारी रहे, यह बराबर हमारा जोर रहा। आज देखना है कि भूदान-ग्रामदान आंदोलन में जो शक्यताएँ हमने मानी थीं, उसके प्रति जो आकर्षण कार्यकर्ताओं का था और जो आशाएँ देश-दुनिया के लोगों में बनी थीं, उन शक्यताओं, उन आकर्षणों और उन आशाओं की क्या स्थिति है।

विनोबा जहाँ-जहाँ जाते हैं, सारे आन्दोलन में, वहाँ-वहाँ के लोगों की भावना व विचारों में नया जीवन भर जाते हैं। असम में सैकड़ों की तादाद में हुए ग्रामदान, उन क्षेत्रों में भूमि का ग्रामीकरण और शीघ्र पुनर्वितरण, ग्रामदान-एक्ट की घोषणा वगैरह आन्दोलन की छिपी शक्ति—पोटेन्शियालिटी—के परिचायक हैं। यह विनोबा ने प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया है।

लेकिन यह मंजूर करने में ही इस छिपी शक्ति की हमारी खोज और सामान्य जन की तत्संबंधी जिज्ञासा को प्रेरणा मिल सकती है कि कुल मिला कर आंदोलन के प्रति रुचि व आकर्षण कम हुआ है। उसमें सार्वत्रिक शिथिलता-सी आयी है। वर्षों पहले मिली भूदान की भूमि का भी वितरण या निपटारा हम नहीं कर पाये हैं। ग्रामदानी गाँवों में अधिकांश 'कच्चे' करार दिये जा रहे हैं। आसाम अर्थात् विनोबा जहाँ हैं, वहाँ के अलावा और किसी क्षेत्र में ग्रामदान नहीं हो रहे हैं। सर्वोदय-पात्र, सूतांजलि, संपत्ति-दान बराबर कम होते जा रहे हैं। यह आंदोलन की शिथिलता का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

हमारा विश्वास

फिर भी हम कार्यकर्ताओं और देश के अधिकांश लोगों में यह आशा और विश्वास आज भी मौजूद है कि भूदान-ग्रामदान का कार्यक्रम आर्थिक व सामाजिक क्षेत्र के नये स्वरूप की स्थापना के लिए बलवान कार्यक्रम है। तब वह जोरों से कैसे चले, नया प्रेरक रूप वह कैसे पाये, यह सोचना हमारा पहला काम है।

भूदान-ग्रामदान पर पुनः जोर दें

हमें लगता है कि अनेक कार्यक्रम, चाहे वे आंदोलन के अंग-रूप व सहायक ही हों, सामने आ जाने से हम किसी के साथ भी न्याय नहीं कर पा रहे हैं। सीमित शक्ति के बँट जाने से वे और भी कम प्रभावकारी साबित हो रहे हैं। इसलिए मुख्य कार्यक्रम के तौर पर भूदान-ग्रामदान पर ही हमारी शक्ति केंद्रित होगी तो ठीक होगा। बिहार के 'बीघा-कट्ठा अभियान' से इस आंदोलन को पुनः जाग्रत करने का अवसर आया है। यह खोज हमारी सफल होगी तो स्वामित्व विसर्जन के बुनियादी नये मूल्य की स्थापना का रास्ता खुलेगा। भूमि की समस्या मूलभूत है और उस संबंधी स्वामित्व की भावना को बदल दिया तो आर्थिक व सामाजिक क्षेत्र की क्रांति का बहुत बड़ा कार्य होगा। भूमिदान के साथ उद्योग के स्वामित्व के मूल्य को बदलने का या उद्योग दान का कार्य भी बुनियादी तौर पर ले लिया जाय तथा अन्य-अन्य कार्यक्रमों से अभी शक्ति सामान्यतः हटा कर इन्हीं दो पर केंद्रित की जाय तो आर्थिक क्षेत्र को व्यापक रूप से छूने वाला हमारा आंदोलन होगा।

कार्य सघन हो

कार्यकर्त्ता, साधन आदि की हमारी शक्ति सीमित है, इसलिए कार्यक्रम की सीमितता के साथ क्षेत्र की दृष्टि से भी काम की व्यापकता के बदले में सघन रीति से करने की पद्धति अपनाना ठीक होगा। कुछ क्षेत्र चुनें और उसमें भूदान व उद्योग-दान के विचार को समझाने तथा उसे कार्यान्वित करने में सम्मिलित शक्ति लगे। 'बीघा-कट्ठा अभियान' आंदोलन के नवीनीकरण का एकरूप हो। उसके अनुभव से सघन कार्य की पद्धति को अधिक प्रभावशाली किया जा सकता है। इस दृष्टि से इस अभियान का मूल्यांकन भी हमें शीघ्र करना चाहिए। दो एक साथी अभी से इस ओर ध्यान देंगे तो ठीक होगा।

प्रभावशाली संगठन की आवश्यकता

आंदोलन संबंधी इस गंभीर चिंतन के साथ ही आंदोलन के वाहन सर्व सेवा संघ-संगठन, उसकी बुनियादी इकाई लोक-सेवक व प्राथमिक सर्वोदय मंडल, जिला व प्रदेश इकाइयों तथा अन्य समितियों व प्रवृत्तियों के प्राणवान किये जाने की बात विचारणीय है। इसमें आर्थिक संयोजन का प्रश्न भी शामिल है। निधि-मुक्ति के बाद हमारे संगठनों के आर्थिक संयोजन का प्रश्न विशेष विचारणीय बन गया है। निधि-मुक्ति के निर्णय को बदलना हो तो वह भी सोचें।

परस्पर-संपर्क बढ़े

एक बड़ी कमी परस्पर के संपर्क की मालूम देती है, जिसकी ओर संघ को ध्यान देना चाहिए। संगठन की स्थिति, कार्यकर्ताओं के योगक्षेम, आंदोलन की गति-विधि व प्रगति, आर्थिक संयोजना, क्षेत्र-विशेष की खास परिस्थिति या समस्या आदि की प्रामाणिक जानकारी परस्पर में होने की दृष्टि से संपर्क की बहुत आवश्यकता है। एक जगह के काम के अनुभवों का दूसरी जगह के कार्यकर्ता लाभ तब उठा सकते हैं, जब कि उस सबकी जानकारी परस्पर में प्रत्यक्ष संपर्क द्वारा हो तथा भूदान पत्र पत्रिकाओं में उसके समाचार वगैरह बराबर आते रहें।

प्रभावशाली विचार-प्रचार

विचार की स्पष्टता और परिपक्वता किसी भी आन्दोलन की आधारभूत आवश्यकता है। हमारे अपने विचारों और कार्यों की जानकारी तो हमें आपस में होनी ही चाहिए, देश-विदेश के घटनाचक्र और विभिन्न विचारधारा के अध्ययन आदि की भी वृत्ति हममें होनी चाहिए। सर्व सेवा संघ का और उसके साथ ही देश भर में प्रदेश-संगठनों का, पत्र-पत्रिकाओं व साहित्य प्रकाशन का खासा काम है। लेकिन देखने में यह आता है कि पत्र-पत्रिकाओं की ग्राहक-संख्या बढ़ नहीं रही है और न साहित्य भी अच्छे परिमाण में खपता है। इस कार्यक्रम पर भी सोचा जाना चाहिए।

सरकारी योजनाओं के प्रति रुख

हमारे क्रांति-कार्य को आगे बढ़ाने वाला आंदोलन का स्वरूप और कार्यक्रम हम बनायें यह जितना विचारणीय है, उतना ही यह प्रश्न भी विचारणीय है कि देश में सरकारी या गैरसरकारी स्तर पर कुछ योजनाएँ बनती हैं या कार्यक्रम चलते हैं, जो व्यापक-रूप से लोक-मानस को छूते हैं और सारे जन-जीवन को किसी-न-किसी प्रकार से प्रभावित करते हैं, उनके संबंध में हमारा क्या दृष्टिकोण होगा और उनके अच्छे या बुरे प्रभाव से लोक-जीवन को बचाने के लिए हमारा क्या कार्यक्रम होगा। एक दृष्टि यह है कि हम लोग क्रान्ति के या समाज में नये मूल्य स्थापित करने के बुनियादी काम में लगे हैं, इसलिए इन सब बातों में हमें नहीं पड़ना चाहिए। दूसरा दृष्टिकोण यह भी है कि इस प्रकार से व्यापक रूप में प्रभावित करने वाले कार्यक्रमों को दरगुजर करने से हमारा काम भी रुक सकता है। कुछ यह भी मानते हैं कि ऐसे कामों को ठीक तौर से सम्हाला जाय तो यह भी समाज को हमारे लक्ष्य की ओर ले जाने में मददगार हो सकते हैं।

जन-मानस पर असरकारी कार्यक्रम

ऐसे तीन सर्वस्पर्शी काम तो आज प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं :

(१) समय-समय पर होने वाले चुनाव।

(२) तीसरी पंचवर्षीय योजना।

(३) पंचायती राज।

तीसरे आम चुनाव का दौर अभी समाप्त हुआ है। इस संबंध में हमने अपनी नीति और विचार तथा कुछ कार्यक्रम सर्वोदय-सम्मेलन के समय जाहिर किये थे। लोकशाही के इस स्वरूप को ठीक न मानते हुए भी सारा काम शांतिपूर्वक हो तथा कुछ अच्छी परंपराएँ इस संबंध में पड़ें, इस दृष्टि से आचार-मर्यादा और मतदाता-मंडल वगैरह का कार्यक्रम हमने देश के सामने रखा। आचार-मर्यादा का विचार न सिर्फ राष्ट्रीय एकता परिषद ने स्वीकार किया, बल्कि प्रदेशीय स्तर पर विभिन्न राजनैतिक पक्षों ने भी मिल-जुल कर किसी-न-किसी रूप में उसे मान्यता दी और उसे कार्यान्वित करने का जिम्मा भी कई जगहों पर उठाना स्वीकार किया गया। जो कुछ जानकारी प्रदेशों से मिलती है, उसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि आचार-मर्यादा को मान्यता देने तथा उसे कार्यान्वित करने की जिम्मेदारी कुछ मंजूर करने पर भी इन चुनावों के समय उन्हें भूल जाने या उनके खिलाफ काम करने की ही स्थिति ज्यादा सामने

आयी। काम तो सामान्यतः शांतिपूर्वक हुआ, किन्तु जाति, धर्म, वर्ग, पक्ष आदि संकीर्णताओं को तथा अन्य अनैतिक व फिजूलखर्ची वगैरह की हरकतों को भी अमल में लाया गया। जनता आचार-मर्यादा के विचार को पसंद करती है, लेकिन लोक शिक्षण की कमी के कारण स्वयं उस विचार को कार्यान्वित करने की तैयारी जनता नहीं रखती।

आंदोलन को पुनर्जागृत और सघन किया जाय

मतदाता-मंडल

मतदाता-मंडल बनाने का प्रयास गुजरात व उत्तर प्रदेश आदि दो-एक स्थानों पर हुआ, लेकिन जो कुछ जानकारी मिली है, उसके अनुसार हमारे कार्यकर्ताओं की शक्ति भी वहाँ विभाजित हुई तथा अंततोगत्वा राजनैतिक पक्षों के कुप्रभाव ने प्रयास को सफल नहीं होने दिया। हमारे सामने विचारणीय प्रश्न यह है कि आचार-मर्यादा संबंधी विचार को लेकर लोक शिक्षण में कितनी शक्ति लगायी जाय और संसद, धारा-सभा आदि के उप चुनावों में तथा नगर निगम, नगरपालिका, पंचायत आदि अन्य प्रकार के चुनावों में आचार मर्यादा के पालन कराने की दृष्टि से हमारा सक्रिय कदम क्या हो? ऐसे अवसर पर राजनैतिक पक्ष या विचार-धारा से संबंधित देश के भविष्य को व्यापक रूप से प्रभावित करने वाले, किसी बुनियादी प्रश्न को लेकर चुनाव लड़ने वाले व्यक्तियों के बारे में कुछ कहने की क्या मर्यादा रखें? मतदाता मंडलों के गठन और आचार-मर्यादा के पालन किये जाने की परंपराएँ लोकशाही के किसी भी स्वरूप के लिए बहुत उपयोगी साबित हो सकती हैं, इसलिए उस संबंध के कार्यक्रम को बिलकुल ही छोड़ देना तो न उचित होगा, न सम्भव ही होगा। फिर भी उस संबंधी कार्यक्रम का स्वरूप क्या हो और हमारी सीमित शक्ति किस प्रकार से उसमें लगे, ताकि हमारे बुनियादी क्रांति कार्य को भी बल मिलता रहे, यह विचार करना चाहिए।

पंचायती राज संबंधी प्रश्न भी इसी प्रकार का है। जाति, धर्म आदि पुराने भेदों से और राजनैतिक पक्ष के नये भेदों के बदर से देहाती लोग बच सकें, अल्प-मत-बहुमत के आधार पर होने वाले निर्णयों के कारण जो जन-मानस टूटता है, उससे उनको बचाया जाय, सर्व-सम्मत निर्णय का विचार अमल में आवें, गाँव-गाँव की जनता ही स्वयं अपनी समस्याओं के बारे में विचार करे और उनके हल के लिए साधन शक्ति वगैरह जुटाने, इस सबकी ओर समाज को ले जाने में वर्तमान पंचायती राज का विधान व स्वरूप कितना आधार-भूत या मददगार हो सकता है, इस प्रश्न के उत्तर पर हमारे ऐसे कार्यों में आंशिक या पूरे सहकार की बात निर्भर होगी।

तीसरी पंचवार्षिक योजना भी हमारे सामने है। इन पंचवर्षीय योजनाओं से बनने वाले देश के सामाजिक व आर्थिक स्वरूप के खतरे से काफी लोग चिंतित हैं। गांधीजी की कल्पना, या सर्वोदय-विचार पर आधारित, विकेंद्रित अर्थ-व्यवस्था के लिए इस स्वरूप में क्या शक्यताएँ व सम्भावनाएँ हैं और खादी-ग्रामोद्योग आदि कार्यों को इस योजना में कितनी सहायता या प्रोत्साहन मिल रहा है, उससे ग्राम स्वावलम्बन या ग्राम-स्वराज्य की ओर कितना बढ़ा जा सकता है, यह विचारणीय है।

सहकार की मर्यादा

इस प्रकार एक ओर आर्थिक व राज्य-तंत्र संबंधी केंद्रित कार्य-पद्धति और दूसरी ओर स्वयपूर्ण, स्वाश्रयी ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के हमारे लक्ष्य, इनके संदर्भ में हमें सोचना है कि विभिन्न सरकारी, अर्द्ध सरकारी योजनाएँ, खादी ग्रामोद्योग, नयी तालीम आदि कार्यों के लिए हमें क्या दैनिक अपनाना होगा? हमारे संगठन के सहकार का क्या स्वरूप होगा और उसकी क्या मर्यादाएँ होंगी? आज तक जिस पद्धति से काम चला, उसके अनुभवों के आधार पर हमें आगे इस सहकार को बढ़ाने या कम करने का विचार करना चाहिए। हम जानते हैं कि इस प्रश्न को लेकर हमारे बीच में एक से अधिक रायें हैं। इसका कारण सिर्फ यह नहीं है कि हमारे पास समय, साधन या कार्यकर्ताओं की शक्ति मर्यादित है, बल्कि सरकार से इस प्रकार का सहकार लेकर काम करना क्रांति कार्य के लिए पूरक या सहायक नहीं है, ऐसा कुछ साथी मानते हैं। इतना ही नहीं, बल्कि कुछ हद तक उसे बाधक या प्रति क्रांतिरूप भी कुछ साथी मानते हैं। ऐसे विषयों में विचार-मंथन होकर दृष्टि स्पष्ट होगी तो ठीक होगा।

प्रतिकारात्मक कार्यक्रम

साथ ही जो योजना व कार्यक्रम हमारे आर्थिक व सामाजिक ढाँचे को विकृत करने वाले हैं अथवा हमारे विचार व आदर्शों को प्रतिकूल ले जाने वाले हैं उनके बारे में स्पष्ट विचार रखने, लोक शिक्षण करने और एक हद तक उनका प्रतिकार करने का भी प्रश्न विचारणीय है। प्रति-कारी, रचनात्मक या विधायक-पाजिटिव-कार्यक्रम में लगे रहने के साथ इस प्रकार के प्रतिकारात्मक कार्यक्रम की संयोजना का कुछ स्थान है या नहीं, यह विचार करना होगा। बेदखली, शराब जैसी मादक वस्तुओं के उपयोग व प्रचार या ऐसे ही कुछ अस्पष्ट समाज विरोधी कामों को रोकने में सरकार सक्रिय नहीं होती है, तो उस सम्बन्ध में प्रतिकारात्मक कदम उठाने जाने के साथ दूसरी भी ऐसी योजनाएँ या कार्य हो सकते हैं, जिनके प्रतिकार के लिए कुछ कहने या कभी कभी कदम भी उठाने की आवश्यकता हो। इस सबमें हमारी नीति व मर्यादा क्या हो, यह मिल-जुल कर स्पष्ट करना चाहिए और उसी के अनुसार हमारा कार्यक्रम क्षेत्र विशेष में या और व्यक्ति विशेष द्वारा बनाया जाना चाहिए।

शान्ति-सेना कार्य

परिस्थितियाँ जो भी हों, समाज में एक शान्ति और व्यवस्था की स्थिति बनी रहे और किन्हीं भी प्रसंगों को लेकर हिंसात्मक कार्रवाइयाँ न फूट पड़ें, इस प्रकार के प्रयत्न की आवश्यकता सभी अनुभव करते हैं। इस दृष्टि से शांति सेना के कार्यक्रम का सब तरफ स्वागत किया गया है। राष्ट्रीय एकता परिषद ने भी शान्ति प्रतिज्ञा लेने का अपना एक कार्य-क्रम माना है। राष्ट्रीय एकता परिषद संगठित हुए काफी दिन हो गये हैं। २६ जनवरी या अप्रैल के राष्ट्रीय सप्ताह में शान्ति प्रतिज्ञा लिये जाने का देश भर में व्यापक कार्यक्रम हो, ऐसा सुझाव राष्ट्रीय परिषद के सामने गया है। लेकिन उस विषय में अभी कोई कार्यक्रम बना नहीं है।

छोटे-से चुनावों में भी साम्प्रदायिक भावना कैसे बुरे परिणाम ला सकती है, उसका एक उदाहरण अलीगढ़ विश्व-विद्यालय के विद्यार्थी-संगठन के चुनावों का है। उस सिलसिले में वहाँ साम्प्रदायिक तनाव बढ़ा और उसका असर मेरठ, चन्दौसी आदि अन्य दो एक क्षेत्रों में पड़ा। इस प्रकार के दुर्भाग्यपूर्ण अवसर देश में यदा-कदा आ जाते हैं। शान्ति-सैनिकों के सामने ऐसे अवसर अपने को कसौटी पर कसे जाने के रहते हैं। शान्ति-सैनिकों की संख्या बहुत अधिक नहीं है, फिर भी अलीगढ़ में, या जहाँ कहीं भी विशेष परिस्थिति आती है तो उसमें शान्ति सैनिक उसे सम्हालने का प्रयत्न करते हैं। जनता का उसमें पूरा सहयोग मिलता है।

शांति-सेना-प्रशिक्षण का प्रश्न

शान्ति-सैनिकों के प्रशिक्षण का कार्य चल रहा है। काशी में भाइयों के लिए और इन्दौर में बहनों के लिए विद्यालय है। इन विद्यालयों के दो तीन सत्र समाप्त हुए हैं। अनुभव यह रहा कि प्रदेशों से जिस योग्यता व स्तर के कार्यकर्ताओं को इसमें भेजे जाने की अपेक्षा होती है, वैसे कार्यकर्ता नहीं आते। कुछ तो कुल मिला कर योग्य कार्यकर्ताओं की संख्या ही थोड़ी है, फिर अपने-अपने क्षेत्र की जिम्मेदारी के कारण भी दो-तीन महीनों के लिए उनका क्षेत्र छोड़ कर विद्यालय में आना शायद कम सम्भव होता है। इस सबमें विद्यालयों की कार्य-पद्धति, प्रशिक्षण की अवधि वगैरह के बारे में विचार करने और उस सम्बन्धी नया कुछ कार्यक्रम बनाने की आवश्यकता है। शान्ति-सैनिकों के अलावा अन्य कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण और उनके ज्ञान-वर्धन की भी बात है। पिछले संघ अधिवेशन में ऐसा सोचा था कि सभी कार्यकर्ता किसी-न किसी प्रकार के प्रशिक्षण शिविर में कुछ समय के लिए अवश्य आयें, ऐसी कुछ योजना बनायी जाय। इसलिए शान्ति-सैनिक और कार्यकर्ता सभी के समय-समय पर प्रशिक्षण और ज्ञान-वर्धन की कुछ योजनाएँ होनी चाहिए। देश भर के किन्हीं एक दो केन्द्रों में विद्यालय चलाने के बदले दो तीन प्रदेशों के सम्मिलित क्षेत्र के विद्यालय हों अथवा थोड़ी थोड़ी अवधि के दो-तीन शिविर के रूप में यह कार्यक्रम चले तो शायद ज्यादा व्यावहारिक होगा।

सीमावर्ती क्षेत्रों में शांति-सेना कार्य

शांति के कार्यक्रम में नगर या क्षेत्र-विशेष की तनाव की स्थिति के अलावा देश के सीमावर्ती क्षेत्रों की अन्तर्राष्ट्रीय या विशेष ढंग की तनाव की स्थिति के बारे में भी हमारी जितनी कुछ शक्ति है, उसके अनुसार कुछ कार्य होना चाहिये। इस पर एक से अधिक बार विचार हुआ और कुछ कार्यक्रम भी सोचा गया, लेकिन वास्तविक कुछ कार्य नहीं हो सका। ऐसी तनाव की स्थिति का अहिंसक रीति से किस प्रकार निराकरण हो सकता है और संबंधित क्षेत्रों की सरकारें जो भी सोचती हों तथा करती हों, वहाँ की जनता चूंकि समस्त मानवीय समाज की अभिन्न अंग है, इसलिए वह एक-दूसरे को प्रेमपूर्वक समझ सके और परस्पर नजदीक आ सके, ऐसा बुनियादी काम सर्व सेवा संघ जैसी अहिंसक क्रांति की संस्था के शांति-सेना मंडल का है। ऐसे विषयों में कुछ सोचेंगे तथा कार्यक्रम बनायेंगे तब ही गोआ सम्बन्धी भारत सरकार की कार्रवाई के प्रसंग पर जो क्षोभ, निराशा या समय से पिछड़े रहने की भावना सामने आयी, वैसे अवसर नहीं आयेंगे। कश्मीर, नागा क्षेत्र, भारत-चीन सीमावर्ती क्षेत्र, इस प्रकार के हमारे चिंतन और कार्यक्रम के लिए खुला निमंत्रण दे रहे हैं। कार्यकर्ता, साधन आदि की कमी के कारण हम विशेष कुछ न कर सकें, तब भी ऐसे क्षेत्रों के पेचीदा तनाव वगैरह की परिस्थिति का अध्ययन और उनके अहिंसक हल की खोज की ओर तो ध्यान देना ही चाहिये। सम्भव है कि ठीक से हमारा अध्ययन हो और समस्या का कुछ हल सामने आये तो उसके लिए आज जो हमारे दायरे में नहीं हैं, वे सहयोग करने के लिए या मदद देने को आगे आ जायें

[शेष पृष्ठ ११ पर]

ग्रामदान और उद्योगदान : सम्पूर्ण आर्थिक क्रांति-कार्यक्रम

इन्दौर के सर्वोदयनगर की ओर बढ़ते कदम

विसर्जन आश्रम की स्थापना १५ अगस्त १९६० को विनोबाजी के हाथों हुई थी। इसके ६ माह पूर्व से ही इंदौर नगर में सर्वोदय-कार्य की दृष्टि से कार्यकर्ता एकत्र होकर कार्य कर रहे थे। विनोबाजी के आने के बाद कार्य और कार्य की दिशा को व्यवस्थित रूप मिला। तब से इन डेढ़ वर्षों में निम्न प्रवृत्तियों को लेकर इंदौर नगर के वातावरण को सत्य, प्रेम और करुणा के आधार पर मोड़ने का प्रयत्न किया जा रहा है।

हर माह ३ हजार से ४ हजार घरों से संपर्क स्थापित करके दो-ढाई हजार घरों से सर्वोदय-पात्र का अन्न तथा धन एकत्रित किया जाता है। इन घरों में अहिंसा का विचार पहुँचे, इस दृष्टि से कहीं-कहीं साहित्य भी देते हैं और कभी कभी विचार-पत्रक बाँटते हैं। इस काम में फिलहाल ११ भाई-बहन लगे हैं।

सर्वोदय-मित्रों का संगठन

सर्वोदय-पात्र तथा सर्वोदय-प्रवृत्ति के कारण जिन मित्रों से संबंध आया है, वे स्वयं किसी-न-किसी कार्य द्वारा समाज की सेवा करें, इस हेतु प्रयत्न जारी रहता है। इस दिशा में निम्न कार्य सम्भव हुए हैं:

(क) गांधी-तत्त्व प्रचार के पुस्तकालय का संचालन चार स्थानों पर: नंदानगर, पाटनीपुरा, इमली बाजार तथा स्नेहलतागंज में हो रहा है।

(ख) बालवाड़ी का कार्य सिन्धी बस्ती, स्नेहलतागंज और मुराई मोहल्ले में चल रहा है।

(ग) गाँव से आने वाले सहकारी समिति के दूध का वितरण राज मोहल्ला, इमली बाजार, छावनी, नन्दानगर, परदेशीपुरा, सिन्धी बस्ती में होता है। इन स्थानों पर सर्वोदय मित्र दूध वितरण में सहयोग देते हैं और उसके द्वारा १५ सौ घरों से संपर्क आकर वैचारिक निकटता भी प्राप्त होती है।

(घ) यहाँ बड़े अस्पताल में एक भाई पिछले सात माह से सतत प्रतिदिन दो घंटे का समय अस्पताल के रोगियों को सांत्वना देने तथा उनको गांधी-साहित्य देने में लगा रहे हैं। सप्ताह में लगभग ४ सौ रोगियों से संबंध स्थापित करते हैं और उसके कारण अस्पताल में अच्छा सबंध स्थापित हुआ है।

(ङ) इसी प्रकार अन्य भी कई कार्य सर्वोदय-मित्रों को सिखाते रहते हैं, जिससे वे अपने आसपास में सेवा का सम्बन्ध स्थापित कर सकें और वातावरण के स्वस्थ बनाने में योग दे सकें। बीच-बीच में इन मित्रों की सभाएँ भी होती रहती हैं।

'स्वच्छ इन्दौर' कार्यक्रम

बाह्य वातावरण का प्रभाव जनमानस पर पड़ता है, इसलिए उसके सुधार के लिए भी अल्प प्रयत्न चलता रहा है। पहला कार्य अशोभनीय चित्रों के निवारणार्थ मुहीम से शुरू हुआ है, जिसका अखिल भारतीय प्रभाव पड़ा और सिनेमा के पोस्टरों पर रोक लगाने के लिए एक समिति की स्थापना पिछले माह केंद्रीय सरकार द्वारा हो गयी। साप्ताहिक सफाई का कार्यक्रम हर रविवार को किसी-न-किसी मोहल्ले में रखा जाता है, जिसमें १५-२० कार्यकर्ता तथा सर्वोदय-मित्र एकत्र होकर सड़कों और गलियों की सफाई करते हैं तथा लोगों के सामने सफाई और सफाई करने वालों की प्रतिष्ठा बढ़ाते हैं। यह सेवा-कार्य शांति-सैनिकों की साप्ताहिक 'रैली' का रूप ले, यह प्रयत्न हो रहा है।

नगर में ५-७ स्थानों पर गांधी विचार के बोर्ड लगाये जाते हैं तथा कई मोहल्लों में दीवारों पर सन्त-वचन लिखने का कार्यक्रम शुरू हुआ है, जिससे वातावरण की शुद्धि में बड़ी मदद मिलती है।

हरिजन सेवक संघ द्वारा हरिजन बस्तियों में जो सेवा-कार्य चल रहा है, उससे भी निकट सम्बन्ध रखते हैं।

विचार-प्रचार

सामाजिक क्रांति विचार के माध्यम से होगी, इस दृष्टि से विचार प्रचार हमारा मुख्य अंग है। इसके लिए गांधी-तत्त्व प्रचार केंद्र की बड़ी सहायता मिलती है और इसके अंतर्गत तथा उसकी सहायता से जो भी कार्य होता है, वह हमारे कार्य का अभिन्न अंग है।

हर माह में पाँच-सात बैठकें नगर में इस प्रकार की होती हैं, जिनमें आज की समस्याओं को लेकर गांधी और अहिंसा का विचार लोगों तक पहुँचाया जाता है। पुस्तकालय द्वारा हर माह ५०० लोगों तक पुस्तकें पहुँचायी जाती हैं तथा जितने भी पुस्तकालय हैं, उनमें गांधीवादी साहित्य पहुँचे, इसके लिए सतत प्रयत्न जारी रहता है।

साहित्य भंडार पिछले चार माह से चल रहा है और उसके द्वारा हर माह औसतन करीब १५०० रुपये का साहित्य बेचा जा रहा है। साहित्य-प्रचार के लिए समय-समय पर नगर-अभियान चलाये हैं, जिनमें हर मोहल्ले में संपर्क स्थापित किया गया है।

"भूमि-क्रांति" नाम का एक साप्ताहिक भी इन्दौर के सर्वोदय-कार्य का एक प्रमुख अंग है। उसकी १४०० से २००० तक प्रतियाँ प्रति सप्ताह छपती हैं और इन्दौर तथा मध्यप्रदेश के अन्य नगरों में जाती है। गांधीजी की विचारधारा के वाहन के रूप में मध्यप्रदेश में केवल यही एक पत्र है, जो हर प्रकार की संकुचितताओं से मुक्त है और प्रदेश में होने वाले रचनात्मक कार्यों का वाहक है।

नगर की समस्याओं का अहिंसक हल

समाज के भेदभाव के कारण ही समस्याएँ पनपती हैं, इसलिए हिंसा के कारणों को दूर करना ही समस्याओं का सच्चा हल है। इस विचार से निम्न प्रवृत्तियाँ प्रायोगिक रूप में हाथ में ली हैं:

(क) समाधान समिति: एक रिटायर्ड डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट और सेशन्स जज के नेतृत्व में करीब डेढ़ साल से हर शनिवार को एक बैठक रखी जाती है, जिसमें तीन-चार बुजुर्ग बैठ कर आपसी समझौते द्वारा ऐसे विवादों का हल करने का प्रयत्न करते हैं, जिनमें दोनों पक्ष आमने सामने बैठ कर बात करने को तैयार हों।

(ख) पक्षमुक्त राजनीति: विभिन्न राजनैतिक पक्षों के बीच में चुनाव तथा अन्य मौकों पर जो खींचातानी पैदा हो जाती है उसके प्रति भी सजग रहने के लिए आचार-संहिता तैयार करने तथा चुनाव में मतदाता के कर्तव्य के विचार को प्रसारित करने का काम किया गया। नगर-निगम पक्षमुक्त हो, इसके लिए भी प्रयास जारी है और कोशिश है कि अगले नगरनिगम के चुनाव में पक्षमुक्त आधार पर मतदाता-मंडल बना कर काम किया जा सके। विभिन्न राजनैतिक दलों से एक-सा संबंध बनाये रखने का प्रयास भी होता रहता है।

(ग) व्यसन-मुक्ति: इस दिशा में बढ़ने के लिए नगर में शराबबंदी की जाय, इसकी कमेटी बनायी गयी है, जिसकी बैठकें बीच-बीच में होती हैं।

(घ) समभाव: हिन्दू-मुस्लिम तनाव के मौके पर तथा मास्टर तारासिंह के उपवास के समय सिक्खों में तनाव था, तब संबंधित तबकों से सम्बन्ध स्थापित किया गया है। हिन्दू, पारसी, ईसाई, मुस्लिम, बहाई, ब्राह्म समाज, आर्य समाज, थियासफिस्ट आदि सभी समुदायों के मित्रों का कार्यक्रम विसर्जन-आश्रम में रविवारीय बैठक के समय रखा जाता है और उनके समारोहों में भी आश्रम की ओर से कोई न कोई आग्रहपूर्वक जाते हैं। इससे शांति स्थापन के कामों की भूमिका बनती है और एक-दूसरे को समझने का मौका मिलता है।

(ङ) कुष्ट-सेवा: कुष्टपीड़ित भिखारी जो इन्दौर की सड़कों पर घूमते थे, उनकी बस्ती में जाकर सेवा-कार्य प्रारंभ किया है, जिससे यहाँ के 'स्कूल आफ सोशल वर्क्स', केथलिक मिशन तथा स्वास्थ्य विभाग से निकट संपर्क आया है।

(च) बेकारी-निवारण तथा ग्रामोद्योग: नगर में भी गरीबी और बेकारी के जो स्थल हैं, उनमें हाथ से चलने वाले उद्योग राहत पहुँचा सकते हैं तथा नगर की जनता गाँव में पैदा होने वाली वस्तुओं को खरीद कर ग्रामोत्थान में अपना योग दे सकती है, इस दृष्टि से सात कार्यकर्ताओं की एक टोली के द्वारा कार्य करने की एक योजना खादी-ग्रामोद्योग आयोग द्वारा आश्रम के लिए मंजूर हुई है, जिसे शीघ्र ही क्रियान्वित किया जा रहा है। फिलहाल ग्रामोद्योगों का एक भंडार नगर में चलाया जा रहा है, जिसके द्वारा ग्रामोद्योग की वस्तुओं का प्रचार तथा उसका विचार समझाने में मदद मिलती है।

इन्दौर सब प्रकार

यह मैं 'मैत्री-आश्रम' में बैठ कर लिखवा रहा हूँ। इसकी स्थापना परसों, ५ मार्च को हुई। गये साल उसी दिन हमने असम प्रदेश में प्रवेश किया था। अब हम अपनी असम-यात्रा के आखिरी दौर पर हैं। 'मैत्री-आश्रम' में बैठा हूँ तो सहज ही 'विसर्जन आश्रम' का स्मरण होता है। इंदौर सर्वोदय-नगर बने, उसके लिए एक साधन के तौर पर विसर्जन आश्रम की कल्पना हमने की है। सर्वोदयनगर के लिए जिन-जिन साधनों की जरूरत है, वे साधन हमने खड़े करने की कोशिश की है। एक आश्रम, नजदीक कस्तूरबाग्राम में शांति-सेना विद्यालय, साहित्य-प्रचार की अखंड योजना, सर्वोदय-पात्र के जरिये घर-घर से संपर्क, 'भूमि-क्रांति' सबके पास पहुँचाने वाला विचार-दूत, समय-समय पर सामूहिक उत्सवों का आयोजन, दिवाली याने दिवाल-सफाई, उसके लिए पोस्टर-आंदोलन, समाधान समिति, वानप्रस्थ आश्रम की स्थापना, नगरनिगम में पक्ष-मुक्ति, मद्य-मोचन, नगर-सफाई आदि अनेक प्रेरणाएँ इंदौर में प्रकट हुईं और ऐसी और भी होंगी।

इंदौर सब प्रकार से भाग्यशाली है। यहाँ अनेक समाजों का प्रीति-संगम हुआ है। यहाँ अहिल्याबाई और माता कस्तूरबा अधिष्ठात्री देवता काम कर रही हैं। बड़ा नगर होते हुए भी राजधानी होने से वह बच गया है। यहाँ के काम के लिए सब ग्रह अनुकूल ही हैं। ऐसे स्थान में काम सफल नहीं होगा, तो और कहाँ होगा?

ग्यारह साल की भूदान-यात्रा में अनेक आश्रमों की स्थापना हुई। जहाँ आश्रमों की स्थापना होती है, धीरे-धीरे परिग्रह बढ़ने की संभावना रहती है और जैसा जैसा परिग्रह बढ़ता है, वैसे वैसे हम घटते हैं।

सेवकों को यह समझने की बात है कि हम परिग्रह-शून्य हो सकें तो हम

(छ) विशेष : नगर के वातावरण बदलने हेतु समाज में माने हुए मूल्यों की स्थापना करने में ऐसे सब वर्ग, संस्थाओं और व्यक्तियों का सहयोग लेना वांछनीय है, जो जीवन के आध्यात्मिक मूल्यों में विश्वास रखते हों, यद्यपि संस्थात्मक दीवारों के कारण अलगाव महसूस करते हैं। इस दृष्टि से धार्मिक, सामाजिक, शैक्षणिक और सेवा-कार्य में लगी ऐसी सभी संस्थाओं से सम्पर्क और समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न हमारे कार्य का प्रमुख भाग है। यद्यपि इन क्षेत्रों में अपनी पूरी शक्ति को भी सुचारू रूप से संगठित नहीं कर पाये हैं, फिर भी जो नतीजे आये हैं, वे प्रेरणा-दायी और आशास्पद हैं।

इस सारे कार्य में लोकाधार का बहुत बड़ा हिस्सा है, परन्तु ऐसे प्रयोग जिनके बारे में जनता अभी अपनी राय नहीं बना पायी है, ऐसी संस्थाओं की सहायता से ही किये जा सकते हैं, जो जीवन की नयी दृष्टि समाज के सामने रखना चाहती है। पूरे समय कार्य करने वाले १५-२० कार्यकर्ताओं की टोली सर्वोदयनगर के कार्य में लगी हुई है, जिसमें गांधी स्मारक निधि द्वारा ६ कार्यकर्त्ताओं का भार उठाना उल्लेखनीय है तथा कस्तूरबा ट्रस्ट द्वारा भी यह संकल्प प्रत्यक्ष अमल में लाया जा रहा है कि पाँच कार्यकर्त्रियों की एक टोली इन्दौर नगर में स्त्री शक्ति जागरण में आश्रम के अन्तर्गत काम करें। सुश्री निर्मला-बहन देशपांडे के प्रयास से नगर की महिला संस्थाएँ तथा सार्वजनिक कार्यकर्त्रियों का रस सर्वोदय के कार्य में जागा है और ऐसा समय दूर नहीं है, जब एक नयी चेतना महिलाओं के क्षेत्र में दृष्टिगोचर होगी।

गांधी स्मारक निधि से प्राप्त होने वाले कार्यकर्त्ताओं के ५२५ रु० प्रति माह की सहायता के अतिरिक्त सारा व्यय लोक-आधारित ही है।

यदि इन्दौर नगर को सर्वोदय-कार्य की प्रयोगशाला के रूप में, जो प्रयास विनोबा के मार्गदर्शन में चल रहा है उसे समुचित सहयोग हर ओर से प्राप्त होगा, तो अवश्य ही ४ लाख आबादी के इस नगर में वातावरण को बदलने में सफलता मिल सकेगी और नगरों में कार्य करने की कुंजी हाथ में मिल सकेगी।

अपनी सम्पत्ति का त्याग करके तू उसे भोग

महात्मा गांधी

धनवानों को आज अपना धर्म सोच लेना है। अगर अपनी संपत्ति की रक्षा के लिए उन्होंने सिपाही वगैरा रखे, तो मुमकिन है कि लूटमार के हंगामे में ये रक्षक ही उनके भक्षक बन जायें! इसलिए धनवानों को या तो हथियार चलाना सीख लेना चाहिये, या अहिंसा की दीक्षा ले लेनी चाहिये। इस दीक्षा को लेने और देने का सबसे उत्तम मंत्र है : 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः'—अपनी संपत्ति का त्याग करके तू उसे भोग।

इसको जरा विस्तार से समझा कर कहूँ तो मैं यह कहूँगा : "तू करोड़ों रुपये खुशी से कमा। लेकिन यह समझ ले कि तेरा धन सिर्फ तेरा ही नहीं है, बल्कि सारी दुनिया का है, इसलिए जितनी तेरी सच्ची जरूरतें हों, उतनी पूरी करने के बाद जो धन बचे उसका उपयोग तू समाज के लिए कर।" शांति की साधारण अवस्था में तो इस नसीहत पर अमल नहीं हुआ। लेकिन संकट के इस समय में भी अगर धनिकों ने इसे नहीं अपनाया, तो दुनिया में वे अपने धन के और भोग के गुलाम बन कर ही रह सकेंगे और अन्त में शरीर बलवालों की गुलामी में बंध जायेंगे।

मैं उस दिन को आता देख रहा हूँ, जब धनिकों की सत्ता का अन्त होने वाला और गरीबों का सिक्का चलने वाला है, फिर चाहे वह शरीर बल से चले या आत्म-बल से। शरीर बल से प्राप्त की हुई सत्ता मानव देह की तरह अजर-अमर रहेगी।

(हरिजनसेवक, १–२–'४२; पृष्ठ २०)

[गांधीजी ने ऊपर जो विचार प्रकट किये हैं, उनके सम्बन्ध में श्री शंकरराव देव ने एक प्रश्न उठाया था। उसका उत्तर गांधीजी ने 'सम्पत्ति आवश्यक रूप में अशुद्ध नहीं होती' नामक लेख में दिया था, जो नीचे दिया गया है।]

श्री शंकरराव देव लिखते हैं :

"पिछले 'हरिजन' में छपे एक 'दुःखद घटना' शीर्षक अपने लेख में आप धनवानों से कहते हैं कि वे करोड़ों खुशी से कमायें, लेकिन यह समझ लें कि उनका वह धन सिर्फ उन्हीं का नहीं है, बल्कि सारी दुनिया का है, इसलिए अपनी सच्ची जरूरतें पूरी करने के बाद जितना धन बचे, उसका उपयोग उन्हें समाज के लिए करना चाहिये। जब मैंने इसे पढ़ा तो पहला सवाल मन में यह उठा कि ऐसा क्यों होना चाहिये? पहले करोड़ों कमाना और फिर समाज के हित के लिए उन्हें खर्च करना! आज की इस समाज-रचना में करोड़ों कमाने के साधन अशुद्ध ही हो सकते हैं; और जो अशुद्ध साधनों से करोड़ों कमाता है, उससे 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' मन्त्र के अनुसार चलने की आशा नहीं रखी जा सकती, क्योंकि अशुद्ध साधनों द्वारा करोड़ों कमाने की क्रिया में कमाने वाले का चरित्र दूषित या भ्रष्ट हुए बिना रह ही नहीं सकता। इसके सिवा, आप तो हमेशा से शुद्ध साधनों पर जोर देते रहे हैं। मुझे डर है कि इस मामले में कहीं लोग गलती से यह न समझ लें कि आप साधनों की अपेक्षा साध्य पर ज्यादा जोर दे रहे हैं।

"अतएव मेरा निवेदन है कि आप कमाई के साधनों की शुद्धता पर भी अधिक नहीं तो उतना जोर अवश्य दीजिये, जितना कमाये हुए धन को लोकहित के कामों में खर्च करने पर आप देते हैं। मेरे विचार में यदि साधनों की शुद्धता का दृढ़ता से पालन किया जाय, तो कोई आदमी करोड़ों कभी कमा ही नहीं सकेगा, और उस दशा में समाज के हित के लिए उन्हें खर्च करने की कठिनाई बहुत गौण रूप ले लेगी।"

मैं इससे सहमत नहीं हूँ। मैं निश्चित रूप से यह मानता हूं कि आदमी बिलकुल शुद्ध साधनों से करोड़ों रुपया कमा सकता है। इसमें यह मान लिया गया है कि उसे कानूनन् सम्पत्ति रखने का अधिकार है। दलील के तौर पर मैंने यह माना है कि निजी सम्पत्ति अपने-आपमें अशुद्ध नहीं समझी गयी है। अगर मेरे पास किसी एक खान का पट्टा है और उसमें से मुझे अचानक कोई अनमोल हीरा मिल जाता है, तो मैं एकाएक करोड़पति बन सकता हूँ और कोई मुझ पर अशुद्ध साधनों का उपयोग करने का दोष नहीं लगा सकता। ठीक यही बात उस समय हुई थी, जब कोहिनूर से कहीं अधिक मूल्यवान क्यूलिनन नामक हीरा मिला था। ऐसे और कई उदाहरण आसानी से गिनाये जा सकते हैं। निःसंदेह करोड़ों कमाने की बात मैंने ऐसे ही लोगों के लिए कही थी।

मैं इस राय के साथ निःसंकोच अपनी सम्मति जाहिर करता हूँ कि आम तौर पर धनवान—केवल धनवान ही क्यों, बल्कि ज्यादातर लोग—इस बात का विशेष विचार नहीं करते कि वे पैसा किस तरह कमाते हैं। अहिंसक उपाय का प्रयोग करते हुए हमें यह विश्वास तो होना ही चाहिये कि कोई आदमी कितना ही पतित क्यों न हो, यदि उसका इलाज कुशलता से और सहानुभूति के साथ किया जाय तो उसे सुधारा जा सकता है। हमें मनुष्यों में रहने वाले दैवी अंश को जगाने का प्रयत्न करना चाहिए और आशा रखनी चाहिए कि उसका अनुकूल परिणाम निकलेगा। यदि समाज का हरएक सदस्य अपनी शक्तियों का उपयोग वैयक्तिक स्वार्थ साधने के लिए नहीं, बल्कि सबके कल्याण के लिए करे, तो क्या इससे समाज की सुख-समृद्धि में वृद्धि नहीं होगी? हम ऐसी जड़ समानता का निर्माण नहीं करना चाहते, जिसमें कोई आदमी अपनी योग्यताओं का पूरा-पूरा उपयोग कर ही न सके। ऐसा समाज अन्त में नष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। इसलिए मेरी यह सलाह बिलकुल ठीक है कि धनवान लोग चाहे करोड़ों रुपये कमायें (बेशक, केवल ईमानदारी से), लेकिन उनका उद्देश्य वह सारा पैसा सबके कल्याण में समर्पित कर देने का होना चाहिये। 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' मन्त्र में असाधारण ज्ञान भरा है। मौजूदा जीवन-पद्धति की जगह, जिसमें हरएक आदमी पड़ोसी की परवाह किये बिना केवल अपने ही लिए जीता है, सबका कल्याण करने वाली नयी जीवन-पद्धति का विकास करना हो, तो उसका निश्चित मार्ग यही है।

['त्याग के संदेश' से, प्रकाशक : नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद]

... से भाग्यशाली

धनंत बन जायेंगे। यह तो एक आदर्श हुआ। पर इतना हम देखें कि सेवा के लिए साधन हम जुटायें, पर वे परिग्रह का रूप न लें। यह खतरा ध्यान में रख कर ही इंदौर के आश्रम का नाम हमने 'विसर्जन' रखा। आश्रमवासियों की चिंता नगर और नगरवासियों की चिंता आश्रम करे, ऐसा होना चाहिए। मैंने यह सुना था कि वहाँ के कालेजवालों ने श्रमदान से विसर्जन आश्रम की शोभा बढ़ाने में मदद दी थी। मुझे उससे खुशी हुई थी, क्योंकि वह ठीक दिशा में आरम्भ था। विसर्जन आश्रम किसके बाप की इस्टेट है? वह तो लोकप्रतिनिधियों ने सर्व-सम्मति से दिया हुआ दान है। सबको जोड़ने वाली यह कड़ी होनी चाहिए।

भारत में हमारे जो आश्रम हैं, उनके बीच अन्योन्य विचार-विनिमय होते रहना चाहिए। ब्रह्मपुत्र का पानी गंगा में, गंगा का नर्मदा में, नर्मदा का कृष्णा में, कृष्णा का गोदावरी में, गोदावरी का कावेरी में और उनका फिर महानदी में, और सबका पानी समुद्र में पहुँचना चाहिए।

'सर्वं अंतरनिय नारायण।' हमारे लिए समुद्र स्थानीय है।

सेवकों में बुद्धि की विविधता और हृदय की एकता का सुन्दर संयोग होना चाहिए। विविध बुद्धि होने से काम में व्यापकता आयेगी। हृदय की एकता सब कामों को जोड़ेगी और उसमें प्राण संचार करायेगी।

पत्र मैं यहाँ समाप्त करता हूँ। लेखन के बढ़ने से भी 'हम' घटने का संभव रहता है।

—विनोबा का जय जगत्

[दिनांक ७ मार्च, '६२ को असम से विसर्जन आश्रम, इन्दौर के संचालक श्री दादाभाई नाइक को लिखा गया विनोबाजी का पत्र, जिसमें इन्दौरवासियों के नाम सन्देश है। —सं०]

केरल के एक ग्राम का आर्थिक-सामाजिक सर्वेक्षण

• के० श्रीकान्तन् नायर

केरल के पामनपुरम् गाँव के अधिकतर लोगों के रोजगार का मुख्य साधन कृषि है। कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसायों में लगे लोग कुल जनसंख्या के ⅙ भाग में हैं। गाँव की कुल जनसंख्या का विभक्तिकरण कामगरों और काम न करने वाले लोगों में करने से ग्राम समाज के आर्थिक स्तर का पता लगता है। कामगरों की संज्ञा उस विश्लेषण में इस व्यक्ति को दी गयी है, जो आर्थिक दृष्टि से सक्रिय हो अथवा उत्पादक श्रम में लगा हो। कीजचेरी के २४३८ व्यक्तियों में केवल ८२२ अथवा ३३-७ प्रतिशत मजदूर हैं। इससे स्पष्ट होता है कि उत्पादक कार्य में लगे लोगों का प्रतिशत बहुत कम है, जब कि इस गाँव की दो-तिहाई आबादी अन्य लोगों के उत्पादन पर निर्भर करती है। काम न करने वालों में बेरोजगार व्यक्ति, बालक, वृद्ध, छात्र, शारीरिक दृष्टि से अयोग्य व्यक्ति और घर-काम में लगे सभी व्यक्ति शामिल हैं। कामगरों में ४६ प्रतिशत पुरुष हैं और स्त्रियाँ २२ प्रतिशत हैं। १४ बालक मजदूर हैं, जिनमें ९ पुरुष जाति के हैं।

निम्नलिखित तालिका में कामगरों का व्यवसायगत विभक्तिकरण किया गया है।

तालिका : २ :

कामगरों का व्यवसायगत विभक्तिकरण

व्यवसाय	प्रधान कार्य के रूप में		सहायक कार्य के रूप में		तृतीय श्रेणी के कार्य के रूप में		कुल	
	पुरुष	स्त्रियाँ	पुरुष	स्त्रियाँ	पुरुष	स्त्रियाँ	पुरुष	स्त्रियाँ
कृषि	२९९	५६	१०७	६	३	—	४०९	६२
खेतिहर मजदूर	१३१	१७३	१०५	३०	१	२	२३७	२०५
अकृषिगत मजदूर	२३	२८	८	७	२	१	३३	३६
शिल्प और हस्तशिल्प	५३	१२	२३	—	१	—	६७	१२
अध्यापन	९	४	१	—	—	—	१०	४
व्यापार	६	—	८	—	—	—	१४	—
अनिवार्य सेवाएँ	४	२	२	—	—	—	१०	१
मिनिस्ट्रियल सेवाएँ	१०	१	—	—	—	—	१०	१
अन्य व्यवसाय	११	—	४	—	२	—	१७	—
कुल	५४६	२७६	२४८	४३	९	३	८०३	३२२

कृषि

ग्रामवासियों की यहाँ प्रमुख सम्पत्ति भूमि है। गाँव का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल १०७२ एकड है। गाँव के परिवारों के पास कुल भूमि ५६४-६३ एकड है। जाहिर है कि शेष कृषियोग्य भूमि पर स्वामित्व-अधिकार उन लोगों का है, जो अन्यत्र रहते हैं। निम्न तालिका में आराजियों के बारे में जानकारी दी गयी है।

इस गाँव में अधिकतर आराजियाँ १ एकड से भी कम हैं। जिन आराजियों पर खेती हो रही है, उनका औसत आकार १ ६४ एकड के लगभग आता है। इन आराजियों पर स्वामित्व का औसत प्रति परिवार और भी कम निकलता है।

प्रत्येक खेती की इकाई को उत्पादन की दृष्टि से लाभप्रद बनाने के लिए कृषक आसपास की भूमि किराये पर ले लेते हैं। कुल ६२५ ०७ एकड भूमि पर खेती की जाती है, इसमें से ९५ ४२ एकड भूमि किराये पर ली गयी है। भूमि जो कृषिकों के पास रेहन रखी गयी है और जिस पर उन्हें खेती करने का भी अधिकार प्राप्त है वह भी किराये पर ली गयी भूमि में शामिल कर ली गयी है। ९५ ४२ एकड भूमि में से ५३ ५८ एकड भूमि, अर्थात् ५६ २ प्रतिशत भूमि रेहन रखी गयी है। आर्द्र भूमि पर अर्द्ध बँटाई खेती आम तौर से की जाती है।

जहाँ तक फसलों के लगाने का सम्बन्ध है, समूची आर्द्र भूमि पर धान की खेती होती है। फसलों के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल ६८३-३८ एकड है, जिसमें से १७४ २२ एकड भूमि पर धान की खेती होती है।

शेष भूमि पर अन्य फसलें लगायी जाती हैं और विभिन्न फसलों के अन्तर्गत शुष्क भूमि के क्षेत्रफल का अनुमान लगाना असम्भव है। इसके अतिरिक्त हर बाग में टेपियोका, आम आदि के पेड लगे हुए हैं।

कृषकों द्वारा अधिकतर फार्म के खाद और हरी पत्ती के खाद का प्रयोग किया

तालिका : ३ :

भू-स्वामियों और कृषकों की आराजियाँ

आराजी का आकार	भू-स्वामियों की आराजियाँ				कृषकों की आराजियाँ			
एकड	संख्या	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत
०—१०	२०८	५६ ७	११६.२१	२० ६	१९०	४९.९	१०१ ११	१७ ५
१०—२५	९६	२६ २	१५२ १८	२६ ९	१२४	३२ ५	२०१.८७	३२ ३
२५—४०	३७	१० १	१२१ ६९	२१ ६	३६	९ ४	११६ ०४	१८ ५
४०—५०	१४	३ ८	६५ ४२	११.६	१७	४ ५	७८ ७१	१२ ६
५ ०—७ ५	४	१.१	२६ ४५	४.७	७	१ ८	४३.८९	७ ०
७ ५०-१० ०	५	१ ४	४३.८८	७.८	५	१.३	४५ ६७	७ ३
१० ०-१५ ०	२	०५	२०००	३ ५	१	०.३	१० ५६	१ ७
१५ ०-२५ ०	१	०.२	१८ ८०	३ ३	१	०.३	१९.२२	३ १
कुल	३१७	१०००	५६४.६३	१००.०	३८१	१००.०	६२५७	१००.०

जाता है। कृषकों की एक-तिहाई से अधिक संख्या रासायनिक खाद का प्रयोग करती हैं। लेकिन खाद जिस परिमाण में इस्तेमाल किया जाता है, वह अधिक प्रतिफल प्राप्त करने के लिए काफी नहीं है। अतः इस गाँव में कुल उत्पादन का प्रति एकड औसत १८३.२३ रुपये है। इसमें से कृषि की लागत निकाल कर खेत पर विशुद्ध आय १४३.३३ रुपये प्रति एकड़ निकलती है। खेती में इतना कम प्रतिफल प्राप्त होने के कारण कृषक को अन्यत्र व्यवसाय की आवश्यकता रहती है। कृषक की आय का दूसरा साधन खेतिहर मजदूरी है।

८२२ कामगरों में ४४२ व्यक्ति गाँव में खेतिहर मजदूरी का काम करते हैं। उनमें २३७ पुरुष जाति के हैं।

पुरुष जाति के मजदूर के लिए कम-से-कम १ रुपया रोज और अधिकतम १.७५ रुपये रोज मजदूरी मिलती है। फसल-कटाई की मजदूरी बहुधा किस्म में दी जाती है। ये मजदूर अर्द्धरोजगार प्राप्त हैं। मजदूर साल में आठ महीने बेकार रहते हैं।

आय स्तर (रुपये)	परिवार-संख्या	प्रतिशत	कुल आय	प्रतिशत
२५०	७८	१७.५	१३,२५३	५७
२५०—५००	२०६	४६ २	७,६५३	३२.७
५००—७५०	९२	२०.६	५५,४४७	२३.८
७५०—१०००	३०	६ ७	२५,५०४	१०.९
१०००—१२५०	१६	३.६	१७,६५१	७.९
१२५०—१५००	७	१.६	९,३०३	४.०
१५००—२०००	१०	२.३	१६,५८६	७ १
२०००—३०००	५	१ १	१२,७४३	५.४
३०००—५०००	२	०.४	६,५७६	२.८
योग	४४६		१०२,३३,३९६	१००

अ-कृषिगत व्यवसाय

इस गाँव के अकृषिगत व्यवसायों में हाथ-करघा उद्योग सबसे ज्यादा प्रमुख है। गाँव में ६८ करघे हैं और अधिकांश बुनकर सहकारी समिति के सदस्य हैं, जिसका निर्माण १९५५ में हुआ था। यह समिति गाँव के बाहर से सूत खरीदती है और बाजारों को तैयार कपड़ा बेचती है। बुनकरों को काम के परिमाण के अनुसार पारिश्रमिक दिया जाता है। कीजचेरी के बुनकरों की मुख्य समस्याएँ कार्यकारी पूंजी का अभाव है और माल का इकट्ठा हो जाना है।

लोहार और बढ़ई के अतिरिक्त इस गाँव में अध्यापक, व्यापारी, क्लर्क, अनिवार्य सेवाओं में लगे व्यक्ति आदि हैं। इन व्यवसायों में तरक्की की ज्यादा गुंजाइश नहीं है और पारिश्रमिक भी ज्यादा नहीं मिलता।

आय और जीवनयापन का स्तर

इस गाँव की कुल आय २,३३,३९६ रुपये के लगभग है और निम्न तालिका में आय-विवरण के आँकड़े दिये गये हैं।

लगभग दो-तिहाई परिवारों की आय औसत आय के ⅔ से भी कम थी। इस गाँव में प्रति परिवार आय ५२३ रुपये है और प्रति व्यक्ति आय ९६ रुपये है। अध्यापकों की औसत आय २९१ रुपये, सबसे ज्यादा है और अनिवार्य सेवाओं में काम कर रहे लोगों की औसत आय ७८ रुपये है, जो सबसे कम है।

यहाँ मकान मिट्टी और फूँस के हैं और ग्रामवासियों की स्थायी वस्तुओं में कुछ बर्तन और लैम्प ही हैं। कुछ लोगों के पास घड़ी और साइकिल भी हैं। इन चीजों की माँग में वृद्धि से स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्रों का सम्बन्ध शहरी क्षेत्र से बढ़ता जा रहा है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि गाँव के प्रमुख व्यवसाय, कृषि में ही लोग लगे हुए हैं, जिसके कारण बेकारी और अर्द्ध-रोजगार बहुत है। इस गाँव में ऐसी भूमि अब शेष नहीं है, जिसे जोता जा सके। हाथ-करघा उद्योग और अन्य अकृषिगत क्षेत्र में अधिक लोगों को रोजगार के अवसर उपलब्ध करने की गुंजाइश नहीं है। इस गाँव की अर्थ-व्यवस्था स्थिर प्रतीत होती है और उन्नति के चिह्न नहीं दिखाई देते। हाँ, एक बात अच्छी है कि शिक्षित पुरुष और स्त्रियों की संख्या गाँव में बढ़ रही है, जो बाहर रोजगार की तलाश में निकल जाते हैं।

इस गाँव की प्रमुख समस्या बेकारी और अर्द्ध-रोजगार की अवस्था को खत्म करना है। इस समस्या का व्यावहारिक हल सीमित साधनों से एक ऐसी योजना बनाना है, जिसके जरिए लोगों के जीवनयापन स्तर को ऊँचा उठाया जा सके और गाँव की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके। [समाप्त]

['आर्थिकसमीक्षा' से]

उत्तराखंड में पूर्ण मद्य-निषेध के प्रतीक स्वरूप

मदिरालयों में धरना-आन्दोलन

उत्तराखंड प्रदेश के नैनीताल जिले को छोड़ कर सभी पर्वतीय जिलों के २७ प्रतिनिधि उत्तराखंड प्रदेश में मदिरापान के दुष्परिणामों तथा मद्य-निषेध नीति को योजनान्वित करने के विविध पहलुओं पर विचार करने के लिए गत ३ और ४ मार्च को एकत्रित हुए थे।

सम्मेलन ने उत्तराखंड में पूर्ण मद्य-निषेध का नारा स्वीकृत कर ५ और ६ मार्च, दो दिन की पूर्वसूचना के बाद ७ मार्च, '६२ से सारे प्रदेश में पूर्ण निषेध के प्रतीक स्वरूप पौड़ी-गढ़वाल की सभी अंग्रेजी व देशी शराब तथा टिंचरी की दुकानों पर शांतिमय अहिंसात्मक 'पिकेटिंग' आरम्भ करने का निश्चय किया था। सर्वोदय तथा गांधी स्मारक निधि के १२ भाई-बहनों ने स्वयंसेवकों में अपने नाम लिखाये तथा संचालन का भार अन्तरिम जिला परिषद् पौड़ी-गढ़वाल के वयोवृद्ध क्रान्तिकारी अध्यक्ष श्री सच्चिदानन्द डोभाल को सौंपा गया।

उत्तराखंड प्रदेश के सातों जिलों के प्रमुख व्यक्तियों से सम्पर्क कर उत्तराखंड प्रदेश मद्य-निषेध समिति के संयोजन का भार भी श्री डोभालजी को सौंपा गया। ५ मार्च को पड़ती हुई वर्षा में श्रीनगर से पौड़ी पहुँच कर दो स्त्रियों व एक वर्षीय नन्हे शिशु सहित इन स्वयंसेवकों ने बाजार की फेरी की। ६ ता० को प्रातः प्रभात फेरी तथा दोपहर को सभी विद्यालयों के छात्रों ने बाजार से होकर मद्य-निषेध के समर्थन में जुलूस निकाला और ७ ता० को नियमित प्रभात फेरी के बाद पिकेटिंग का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। अंग्रेजी शराब, देशी शराब और टिंचरी की दुकानों पर धरनाधारी स्वयंसेवक निश्चित समय पर पहुँचे। शराब पीने या खरीदने जो भाई दुकानों पर आते थे, उन्हें विनयपूर्वक वे स्वयंसेवक भाई-बहनें न पीने-खरीदने का आग्रह करते थे और उस पैसे से अपने घर सब्जी, राशन, कपड़े, मिठाई आदि ले जाने की प्रार्थना करते। इनमें से कुछ लिहाज से, कुछ समझ कर तथा कुछ कभी भी न पीने-खरीदने का संकल्प कर लौट जाते थे। थोड़े-से लोग ऐसे भी थे, जो दवाई के लिए दूसरों की मंगायी हुई होने से कुछ बहाने से आग्रह करने पर भी ले जाते थे।

नियमित प्रभात फेरी के बाद ८ मार्च की पिकेटिंग में पहले दिन के अनुपात से बहुत कम लोग शराब या टिंचरी खरीदने आये और फिर इसी प्रकार ९-१० और ११ ता० को लगातार खरीदारों और पीने वालों की संख्या घटती जा रही है। इस कार्यक्रम में प्रारम्भ से ही बेचने वाले भाइयों से भी प्रार्थना की गयी है कि हमारा आप लोगों से कोई द्वेष नहीं है, आप सभी हमारे भाई हैं। फिर भी आप जैसे जानते और समझते ही हैं कि आपका यह पेशा सारे समाज के लिए फैलने वाली विनाशक महामारी से भी भयंकर शत्रु है, अतः हमारी आप लोगों से प्रार्थना है कि जितनी जल्दी हो सके, इसके स्थान में दूसरा ऐसा पेशा लें, जिससे आपके साथ समाज का भी लाभ हो। अधिकतर विक्रेता बन्धुओं का भी यथाशक्ति सहयोग व प्रेम इन स्वयंसेवकों को मिला, किन्तु टिंचरीवाले भाई हृदय से इस बात को स्वीकार करते हुए भी कार्यरूप में अभी तक सहयोग देने में कठिनाई महसूस कर रहे हैं।।

इस पिकेटिंग के अन्तर्गत हमने उन भाइयों के दर्शन किये, जो कुछ समय पहले नामी रईस थे और इस टिंचरी देवी के भयंकर जबड़े में जिनकी सारी धन-दौलत, मकान जेवर आदि सभी समा चुके हैं! हमने उन माताओं और बहनों के दर्शन किये, जिनके लड़के या पति पाँच-पाँच, छह-छह सौ रुपये मासिक कमाते हैं और फिर भी उनके तन पर फटे चिथड़ों के सिवाय कुछ नहीं रह गया है! हमने उन लाडले बच्चों को देखा है, जिनके पिताओं को यह भयंकर राक्षसी कुसमय में ही मृत्यु की गोद में पहुँचा चुकी है और अब वे अनाथ होकर दर दर की ठोकरें खाते भटक रहे हैं! हमने यह भी देखा कि बहनें दिन भर मेहनत करते हुए गाय भैंस की टहल कर दूध की बूंद अपने नन्हें बच्चों को न देकर राशन व कपड़े मँगाने के लोभ से बाजार भेजती हैं और वहाँ से लौटते हैं उनके पति या लड़के नशे की मस्ती में गालियों की बौछारें छोड़ते हुए फटे हाल, गली-गली की कीचड़युक्त विकृत सूरत लिये! और भी न जाने क्या क्या अभी देखने जानने को मिलेगा, जैसे-जैसे लोगों से परिचय होता जायगा तथा आन्दोलन की जड़ें गहरी पैठती जायेंगी!

हमारा उत्तराखंड में पूर्ण मद्य निषेध का कार्यक्रम तिहरा है—

(१) इस लत में फँसे हुए भाई-बहनों से लत छोड़ने की प्रार्थना करना और उन्हें *शराब पीने से रोकना।*

(२) बेचने वालों से यह धन्धा छोड़ देने का निवेदन करना।

(३) सरकार से उत्तराखंड प्रदेश को न केवल धार्मिक दृष्टि से, बल्कि यहाँ की साधनहीन गरीब जनता को विनाश से बचाने के लिए पूर्ण नशाबन्दी लागू कर कठोरता से उसका पालन करवाने की प्रार्थना करना।

पौड़ी के मदिरालयों की धरना देने का काम व्यवस्थित हो जाने के बाद सौड़ी, कोटद्वार, टिहरी, लैन्सडौन, गरुड़, पिथौरागढ, धराली, कटघर आदि समस्त उत्तराखंड के मदिरालयों पर और साथ ही अवैध शराब बेचने वालों पर भी धरना दिये जाने का प्रयत्न हो रहा।

गढ़वाल जिले का नैतिक समर्थन

मार्च ८-९ को पौड़ी में अन्तरिम जिला परिषद गढ़वाल ने सर्वसम्मति से गढ़वाल से पूर्ण मद्य-निषेध के लिए प्रस्ताव पास करते हुए, इस आन्दोलन का समर्थन कर भावना व्यक्त की है कि गढ़वाल का जन-जन नशाखोरी से अत्यन्त परेशान व आकुल है। परिषद ने दो अन्य प्रस्तावों में सुझाव रखा है कि टिंचरी का विक्रय सर्वथा निषिद्ध कर दिया जाय तथा अवैध शराब के प्रचलन को रोकने के लिए *ग्राम-पंचायतों, पट्टी-पटवारियों, ग्रामसेवकों* व स्कूल-अध्यापकों की जिम्मेदारी मानी जाय।

—मानसिंह रावत

पद्धति होगी। लोग मिलेंगे, सोचेंगे और तय करेंगे। फिर अलग होंगे और अपने-*अपने ढंग से काम करेंगे।* उसका भी तरीका निकालना होगा। राज का तरीका हजारों बरसों से राजनीति और धर्मनीति के माध्यम से चला। पर अब नई क्रांति में संग का तरीका निकालना होगा। गुजरात में 'सप्तमी सभा' के द्वारा इस दिशा में उसका कुछ काम हो रहा है। *मान लीजिये कि आपके संग में ५००* लोग हैं। सबके पते सबके पास हैं। जैसे प्यास लगती है, वैसे मिलना लग रहा है, तो किसी ने सबको एक कार्ड डाला कि हम मिलना चाहते हैं। फिर निश्चित स्थान पर पहुँचें—जिनको पहुँचना लगे, वे पहुँचें। उसमें से कुछ रूप निकलेगा। मैं नहीं कह सकता हूँ कि इसका विधान क्या होगा? पहले दिन राज्य बना, उस समय भी सोचा गया होगा कि विधान क्या होगा। हमें अब संग पद्धति का विकास करना होगा।

[*क्या देश समृद्ध हो रहा है?* …पृष्ठ २ का शेष]

भारतवर्ष की स्वाधीनता के बाद न्यायोचित अर्थ-व्यवस्था खड़ी करने के बारे में गहराई से विचार करने की आवश्यकता नहीं समझी। जो प्रचलित पद्धति हाथ में आ गयी उसे ही हमने पकड़ लिया, कुछ फुटकर परिवर्तन करके उसमें सजावट कर दी और अपने दिल को तसल्ली दे ली कि हम बहुत अच्छी व्यवस्था खड़ी कर रहे हैं!

लेकिन पूँजीप्रधान व्यवस्था में—चाहे वह पूँजी व्यक्तियों के हाथ में हो अथवा स्टेट के हाथ में (जिसका अभिप्राय यहाँ पर व्यवहारतः नौकरशाही से हो जाता है) किसी भी तरह ऐसा समाज नहीं *बनाया जा सकता, जिसमें निम्नतम वर्गों* के प्रति न्याय हो सके। ऐसी व्यवस्था में निश्चय रूप से उन्हीं को लाभ होगा, जिसके पास पूँजी है और जिनके पास केवल श्रम है, वे हमेशा कष्ट में रहेंगे। यही कारण है कि कहने को तो यह कहा जाता है कि अभी तक विभिन्न पंचवर्षीय योज-*नाओं के कारण लगभग ४२ प्रतिशत* राष्ट्रीय आय बढ़ी है, लेकिन यह समाज के किन भागों के पास गयी है, इसके बारे में सरकार और योजना-आयोग आदि मौन हैं। सुना है, हमारे प्रधान मंत्री महोदय ने बहुत नाराजगी के साथ इस बात की छानबीन का हुक्म दिया था कि यह बढ़ी हुई राष्ट्रीय आय आखिर कहाँ गायब हो गयी! लेकिन अभी तक यह पता नहीं चला कि इस छानबीन का क्या परिणाम हुआ! पता चलेगा भी नहीं! दरअसल इसमें *छानबीन की आवश्यकता ही नहीं है।* हमारी व्यवस्था का जो स्वरूप है, उसमें इसके अतिरिक्त और दूसरा परिणाम हो ही नहीं सकता कि यह बढ़ी हुई आय उन्हीं के पास जाय, जिनके पास पूँजी है।

देखने में आया है कि श्रम का मूल्य प्रचलित व्यवस्थाओं में या तो किसी हद तक साम्यवाद में है अथवा जिन पूंजीवादी देशों में साम्यवाद के डर के कारण विषमताएँ बहुत कम हो गयी हैं, कुछ-कुछ वहाँ पर है। ऐसे पूंजीवादी देश मुख्यतः पश्चिम योरोपीय हैं, जहाँ औद्योगिक और *तकनीकी प्रगति इतनी अधिक हो गयी* है और दो भयंकर लड़ाइयों के कारण मनुष्य-श्रम इतना कम है कि श्रम की प्रतिष्ठा उसके महँगेपन के कारण अपने आप बढ़ गयी है। गहराई से देखने पर यह स्थिति भी अपने आप में वांछनीय नहीं है। इसमें श्रम को जो अहमियत *मिली है, वह उसके स्वतःसिद्ध महत्त्व के कारण नहीं, बल्कि परिस्थितियों के* आकस्मिक आलोडन-प्रत्यालोडन एवं घात-प्रतिघात से मिली है। इसमें श्रम का सम्मान उसके महँगेपन के कारण है, उसकी आत्म मर्यादा के फलस्वरूप नहीं। वहाँ भी पैसा ही मुख्य है और यह मूल्य-*व्यवस्था हमारे यहाँ से भिन्न नहीं है।* परन्तु श्रम के महँगेपन की यह कृत्रिम सुविधा भी अफ्रीका और एशिया के देशों को प्राप्त नहीं है। यदि किसी सुदूर भविष्य में ऐसी कोई सम्भावना किसी को दिखाई देती है तो वह किसी सुखद स्वप्न की भाँति रोचक तो हो सकती है, लेकिन *उसका वर्तमान मूल्य कुछ नहीं है।*

दरअसल श्रमप्रधान व्यवस्था की

वैज्ञानिक तथा व्यवहारिक कल्पना गांधीजी ने ही की थी। उसे उन्होंने उसका मान्य तथा स्वतःसिद्ध नैतिक आधार भी दिया था। उस मूल्य-व्यवस्था का सूत्रपात उन्होंने विभिन्न रचनात्मक संस्थाओं के गठन द्वारा कर दिया था। आजादी के बाद इसी बुनियादी, श्रम प्रधान मूल्य-व्यवस्था के अन्तर्गत बनने वाली सामंजस्यपूर्ण अर्थ-व्यवस्था को सामने रखते हुए हमें अपने देश की पुनर्रचना करनी चाहिए थी। सर्वव्यापी तथा सामंजस्यपूर्ण सम्पन्नता उससे ही सम्भव हो सकती थी, पर दुर्भाग्य से हमने ऐसा नहीं किया, जिसके दुष्परिणाम हमें भोगने होंगे।

वर्तमान व्यवस्था से सम्पन्नता नहीं, सम्पन्नता का भ्रम ही हमारे हाथ आयेगा। यह सब बदलना होगा, वरना हम भटकते ही रहेंगे। अब तो श्रम का महत्त्व सर्वोपरि मानने वाली व्यवस्था इसलिए भी अनिवार्य है कि अन्ततः शोषण का प्रश्न श्रम के साथ ही जुड़ा हुआ है। श्रम को गौण बना कर ही शोषण सम्भव होता है, अन्यथा नहीं। मार्क्सवाद का भी सबसे मुख्य विचार यही है कि एक-दूसरे के द्वारा मानव श्रम का शोषण न हो।

यद्यपि इस विचार से सभी सहमत हैं, लेकिन यह शोषण किस प्रकार रोका जा सकता है, इसकी पद्धति के बारे में बड़ी-बड़ी कल्पनाएँ हैं जो आपस में एक-दूसरे की विरोधी भी हैं। जो लोग शोषण के द्वारा अधिक-से अधिक सम्पन्न बने हैं और अपनी सम्पन्नता इसी आधार पर निरन्तर बढ़ाते जाते हैं, वे भी यही कहते हैं कि शोषण नहीं होना चाहिए। वे लोग इलाज भी बताते हैं कि अमुक तरह की व्यवस्था में शोषण की गुंजाइश नहीं है। इन लोगों को खूबसूरत भाषा लिखने और बोलने वाले बुद्धिजीवी भी मिल जाते हैं, जो इनकी बातों का पोषण करते हैं। इस तरह वे बहुत अधिक विचार विभ्रम फैलाते हैं और सर्वसाधारण के लिए यह निश्चय कर पाना मुश्किल हो जाता है कि अन्ततः कौनसी पद्धति शोषणविहीन समाज को जन्म देगी। इसी कारण हमारे लिए गांधीजी की बतायी हुई पद्धति की उपेक्षा कर देना आसान हो गया है और इसीलिए निम्नतम वर्गों का शोषण पूर्ववत् चालू है।

इन बुनियादी तथ्यों की कसौटी पर कस कर अगर हम देश की वर्तमान अवस्था का अवलोकन करें तो हमें आसानी से पता लग जायगा कि प्रचलित योजनाओं और प्रयासों के फलस्वरूप देश नहीं, किन्तु कुछ अल्पसंख्यक वर्ग अवश्य सम्पन्न हो रहे हैं। इससे अधिक आशा करना बालू से तेल निकालने वाली कहावत को चरितार्थ करना है।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन समिति की बैठक

अखिल भारत सर्व सेवा संघ की प्रकाशन समिति की बैठक १२ मार्च, '६२ को श्री सिद्धराज ढड्ढा की अध्यक्षता में प्रकाशन विभाग कार्यालय, काशी में हुई। बैठक में ७ सदस्यों के अतिरिक्त, सर्व सेवा संघ के अन्य आमंत्रित कार्यकर्ता एवं नगर के मुद्रणालय और कागज के व्यापारी भी उपस्थित थे।

पिछली बैठक की कार्रवाई स्वीकृत होने पर 'नई तालीम' मासिक पत्रिका पर चर्चा हुई और यह तय रहा कि इसके प्रकाशन का प्रश्न सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति में रखा जाय।

अंग्रेजी 'भूदान' साप्ताहिक का वर्ष १८ अप्रैल को समाप्त होता है। उसके बाद अंग्रेजी 'भूदान' काशी से न निकल कर कलकत्ता से निकलेगा। अंग्रेजी 'भूदान' के प्रधान संपादक श्री मनमोहन चौधरी रहेंगे। इनके अलावा अन्य ८ व्यक्तियों का एक सम्पादक-मंडल भी होगा।

बैठक में प्रकाशन विभाग का १९६२-'६३ का बजट स्वीकृत किया गया।

अन्त में श्री राधाकृष्ण बजाज के त्यागपत्र के सम्बन्ध में श्री सिद्धराज ने बतलाया कि आज हम सब लोग एक विशेष प्रसंग पर एकत्र हुए हैं। जैसा कि पिछली बैठक में श्री राधाकृष्णजी ने बताया था, श्री देवरभाई की माँग पर उन्हें राजस्थान में गो सेवा कार्य में अधिक समय देना पड़ेगा और इसके कारण वे प्रकाशन विभाग के काम से मुक्त हो रहे हैं। प्रबंध समिति के निर्णय के अनुसार उन्होंने प्रकाशन विभाग के कार्य को सक्रिय रूप से संभालने की जिम्मेदारी स्वीकार की है।

श्री सिद्धराजजी ने आगे बताया कि किस तरह श्री राधाकृष्णजी ने प्रकाशन-विभाग का बीज लगाया, जो आज एक विशाल वृक्ष के रूप में मौजूद है। उनकी निष्ठा, लगन, व्यवहार निपुणता, सहृदयता के कारण आज यह प्रकाशन का कार्य इस रूप में दिखाई पड़ रहा है। श्री राधाकृष्णजी प्रकाशन-कार्य से भले ही मुक्त हो रहे हैं, पर उनका मार्गदर्शन सदा मिलता ही रहेगा।

श्री श्रीकृष्णदत्त भट्ट ने भी श्री राधाकृष्णजी की लगन, उनके मानवीय स्पर्श और सहनशीलता का उल्लेख किया। श्री सुरेशराम भाई ने भी अपने अनुभव सुनाये और श्री राधाकृष्णजी की सेवाओं की सराहना की।

अंत में श्री राधाकृष्णजी ने प्रकाशन-विभाग की स्थापना, काशी आगमन आदि का इतिहास बतलाते हुए साथियों और प्रेसों आदि के सहयोग के लिए कृतज्ञता जाहिर की और बताया कि जो बात उनके मन में शुरू से थी कि श्री सिद्धराजजी प्रकाशन का कार्य सम्हालें, वह भावना आज पूरी हुई, इसकी उन्हें खुशी है।

अंत में अध्यक्ष महोदय ने सूचित किया कि श्री राधाकृष्ण बजाज के स्थान पर श्रीकृष्णदत्त भट्ट प्रकाशन-समिति के मंत्री रहेंगे।

श्री राधाकृष्णजी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए अध्यक्ष महोदय ने नीचे दिया प्रस्ताव रखा, जो स्वीकृत हुआ :

> "अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की कृषि-गोसेवा-समिति के अध्यक्ष श्री देवरभाई की माँग पर श्री राधाकृष्णजी बजाज संघ के प्रकाशन-विभाग से मुक्त होकर गो-सेवा के काम के लिए जा रहे हैं। प्रकाशन-विभाग के काम को प्रारंभ से खड़ा करने का और उसे जमाने का श्रेय श्री राधाकृष्णजी को है। पिछले लगभग आठ वर्षों तक जिस निष्ठा, व्यवहार-कुशलता और कार्यक्षमता के साथ उन्होंने प्रकाशन के काम द्वारा सर्वोदय-विचार की अनन्य सेवा की है, उसके लिए प्रकाशन-समिति उनके प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती है।"

जलपान के बाद बैठक की कार्रवाई समाप्त हुई।

ग्रामदान में सामाजिक...

[पृष्ठ ५ का शेष]

और इस प्रकार इन विषयों में कुछ काम करने का भी अवसर हम निकाल लें।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र का शांति-सेना कार्य

विनोबा के शांति सेना विचार और कार्य को अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में महत्त्व और अनुसरण मिला है। ऐसी सेना के गठन का कार्य भी हुआ है। संघ के प्रतिनिधि ऐसे सभा सम्मेलन और प्रयास में अग्रणी भाग लेते हैं। लेकिन यह कार्य फिलहाल नैतिक और वैचारिक समर्थन तक ही सीमित रहेगा तो ठीक होगा। कार्यकर्ता-शक्ति जितनी-सी है और आर्थिक स्थिति जैसी है, उसमें अधिक जिम्मेवारियाँ न लेना ठीक है। इसका दूसरा पहलू भी है। वह यह कि अपने देश में हम फौज, पुलिस की सहायता के बगैर आंतरिक झगड़े, फसाद वगैरह की स्थिति को सम्हालने के उपयुक्त लोकमानस को नहीं बना पाये और वैसे कुछ प्रयोग सफल नहीं कर दिखाये, तब तक हम अपना कार्य यत्र मर्यादित रखें तो अच्छा ही है।

साहित्य परिचय

सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली

सिपाही की बीवी : ले० मामा वरेरकर, अनुवादक-रामचन्द्र रघुनाथ सर्वटे। पृष्ठ १८०, मूल्य सवा रुपया।

भारत की अन्य भाषाओं से हिंदी में अच्छी कृतियों का अनुवाद करने की एक नयी परम्परा बन रही है। श्री मामा वरेरकर मराठी के एक प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। प्रस्तुत उपन्यास मूल मराठी से अनूदित है। उपन्यास एक पूरे परिवार के दौर में है, जिसमें देवर भाभी और साली बहनोई के जीवन का स्वतन्त्रता-आंदोलन के साथ एक मनोवैज्ञानिक चित्र खींचा है।

रेबेका : ले० डाफने दू मारिये, अनुवादिका–शांति भटनागर। पृष्ठ २६०, मूल्य दो रुपये।

इस उपन्यास की लेखिका डाफने दू मारिये संसार के सफल उपन्यासकारों में से हैं। इसमें एक ऐसी नारी के जीवन को चित्रित किया गया है, जिसकी मृत्यु के बाद भी उसका मोहक व आकर्षक चरित्र आसपास के अपने वातावरण को काफी लम्बे अरसे तक प्रभावित कर सका। प्रेम और घृणा के ताने-बाने का यह उपन्यास मानव चरित्र की एक अच्छी समीक्षा करता है।

गुरुदेव और उनका आश्रम : ले० शिवाजी। पृष्ठ ८०, मूल्य एक रुपया।

गुरुदेव रविन्द्रनाथ ठाकुर और उनके आश्रम 'शांतिनिकेतन' के बारे में लिखी गयी यह पुस्तक हमारी जानकारी में एक अच्छी और रोचक पुस्तक है। श्री गुरुदेव के आश्रम में उनके जीवन के साथ साथ शांतिनिकेतन का सुन्दर, सजीव, भावपूर्ण चित्र खींचा गया है। पुस्तक पठनीय है।

अतलांतिक के उस पार : ले० रामकृष्ण बजाज। पृष्ठ १३०, मूल्य ढाई रुपये।

श्री रामकृष्ण बजाज ने सन् १९५९ में अमरीका की यात्रा की और उस यात्रा के वर्णन के रूप में यह पुस्तक तैयार हुई है। इसमें अमरीका के सामाजिक जीवन, कारखाने, शिक्षण-संस्थाएँ, मजदूर-आंदोलन, अमरीका भारत का संबंध आदि का वर्णन किया गया है। पुस्तक सचित्र है।

—मथुरामल

भूदान-यज्ञ रजिस्टर्ड नंबर ए. ३५४ [पहले से डाक-महसूल दिये बिना भेजने का परवाना प्राप्त, लायसेन्स नं० ए ३४] १३ अप्रैल, '६२

पटना में सर्व सेवा संघ का अधिवेशन

१५ अप्रैल से बिहार में 'बीघा-कट्ठा' अभियान प्रारम्भ

अ० भा० सर्व सेवा संघ का अधिवेशन ९-१० और ११ अप्रैल को पटना में हो रहा है। यह अधिवेशन कई दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। अधिवेशन के तुरन्त बाद १५ अप्रैल से १५ जून तक बिहार में बिहार के तथा देश के रचनात्मक कार्यकर्ता 'बीघा में कट्ठा' अभियान में, पूरी शक्ति लगा कर बिहार के भूदान-प्राप्ति के ३२ लाख एकड़ के संकल्प को पूरा करने की कोशिश करेंगे। बिहार के इस अभियान के लिए बिहार की सब रचनात्मक संस्थाएँ, राजनीतिक दल, पंचायत-परिषदें और अन्य सार्वजनिक कार्यकर्ता भी सहयोग देंगे। सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में भाग लेने वाले अधिकतर कार्यकर्ता भी इस अभियान में हिस्सा लेने के लिए दो महीने बिहार में रुकेंगे।

पूर्णियाँ जिले में 'बीघा-कट्ठा' के लिए तैयारी

जिले के कार्यकर्ताओं का निश्चय

जिला सर्वोदय मंडल, पूर्णियाँ के तत्वावधान में पूर्णियाँ जिले के राजनीतिक दलों, रचनात्मक संस्थाओं तथा जिला पंचायत परिषद् के प्रमुख व्यक्तियों की बैठक पिछले दिनों जिला परिषद् भवन में श्री वीरनारायण चन्द, सदस्य-बिहार विधान परिषद् के सभापतित्व में संपन्न हुई। बैठक ने सर्वसम्मति से पूर्णियाँ जिले में 'बीघा-कट्ठा अभियान' सघन रूप से चलाने का निश्चय किया। बैठक के निर्णयानुसार पूर्णियाँ जिले के ३७ अंचलों में भूदान-प्राप्ति के लिए टोलियाँ निकलेंगी। इन टोलियों में सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त विभिन्न राजनीतिक दलों, रचनात्मक संस्थाओं तथा पंचायत के कार्यकर्ता भी शामिल होंगे। बैठक में सर्वश्री भोला पासवान, कल्याण-मंत्री; बिहार कमलदेव नारायण, उपमंत्री; श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी एवं जिला पंचायत परिषद् के अध्यक्ष, श्री वासुदेव नारायण सिंह के अतिरिक्त कुछ विधायक भी उपस्थित थे। जिला कांग्रेस कमिटी के अध्यक्ष, श्री कामेश्वर चौधरी एवं जिला प्रजा सोशलिस्ट पार्टी के प्रतिनिधि श्री मोहितलाल पंडित ने अभियान में अपने दलों की ओर से सक्रिय सहयोग करने का आश्वासन दिया है। आशा है कि राजनीतिक दलों एवं रचनात्मक संस्थाओं के तथा पंचायत परिषद् के कार्यकर्ताओं के सहयोग से पूर्णियाँ जिले में 'बीघा कट्ठा' के आधार पर पर्याप्त जमीन प्राप्त होगी।

महोबा में महिला सर्वोदय-समिति की सक्रियता

शहरी क्षेत्र में सर्वोदय तथा भूदान-विचारधारा को व्यापक रूप देने और महिला-वर्ग में स्त्री-शक्ति को जगाने के उद्देश्य से जिला सर्वोदय मंडल, हमीरपुर की ओर से गत २६ मार्च को महोबा नगर की महिलाओं की एक बैठक हुई और अन्य कार्यक्रम के साथ साथ नगर महिला सर्वोदय-समिति का संगठन हुआ। श्रीमती रामप्यारी देवी गुप्ता अध्यक्षा तथा श्रीमती सावित्रीदेवी मंत्राणी के अतिरिक्त ११ सदस्याएँ हैं। इस [illegible] ने की साल भर में दो बैठकें और [illegible] जिनमें सर्वोदय-पात्र, शान्ति सेना, नशाबन्दी तथा 'अश्लील पोस्टर हटाओ' आन्दोलन पर विचार हुआ और तदर्थ निश्चित कार्य-प्रणाली को प्रचलित किया गया है। अश्लील पोस्टरों के बारे में पर्चे छपवा कर बाँटे गये और उत्तर प्रदेश सरकार, जिलाधीश, अध्यक्ष नगरपालिका तथा सिनेमा-मालिकों के पास लिखित माँग भेजी गयी कि वे इस दिशा में उचित कार्यवाही करें।

श्रीमती शकुन्तला पाण्डेय, प्रतिनिधि सर्व सेवा संघ के प्रयास से नगर में लगभग ३० परिवारों में सर्वोदय-पात्र चले और उनसे ६९ रु० ५९ न०पै० प्राप्त हुए। इसका छठा भाग ११ रु० ६० न० पै० अ० भा० सर्व सेवा संघ, काशी को भेज दिया गया है।

श्री रामगोपाल दीक्षित, अध्यक्ष जिला सर्वोदय मंडल ने सचल पुस्तकालय के रूप में सर्वोदय-भूदान साहित्य के अध्ययन की व्यवस्था की और नगर के २० परिवारों ने लाभ उठाया। स्थानीय सूचना-केन्द्र पर भी कुछ पुस्तकें रख दी गयी हैं, ताकि लोग उन्हें पढ़ सकें।

तीसरा महाराष्ट्र सर्वोदय-सम्मेलन

महाराष्ट्र प्रदेश का तीसरा सर्वोदय-सम्मेलन २४-२५ और २६ मार्च को अमरावती जिले के करजगाँव में अ० भा० सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। करजगाँव में श्री पराग गुरुजी गत ७८ सालों से रचनात्मक कार्य कर रहे हैं।

सम्मेलन में लोकनीति, पंचायत-राज, निर्माण-कार्य, सिक्के में कटौती, भंगी मुक्ति, शान्ति-सेना आदि मुख्य विषयों पर तीन दिन तक चर्चाएँ हुईं।

सम्मेलन में सर्वश्री अप्पासाहब पटवर्धन, अण्णासाहब सहस्रबुद्धे, यशवंतराव नारगोलकर, गोविंदराव शिंदे, दामोदरदास मूँदड़ा, गोविंदराव देशपांडे और गड़े गुरुजी आदि प्रमुख कार्यकर्ताओं ने उपस्थित होकर विचार विनिमय किया।

उड़ीसा के भूदान-यज्ञ समिति संबंधी विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति

राष्ट्रपति ने 'उड़ीसा भूदान-यज्ञ (संशोधन) विधेयक १९६१' को अपनी स्वीकृति दे दी है। अब इस विधेयक के कानून बन जाने से भूदान-यज्ञ समिति को उन व्यक्तियों के लिए, जिन्हें भूदान की जमीन मिली है, जमीन पर खेती करने के लिए बैल, खाद और खेती के औजार आदि खरीदने के लिए अनुदान मंजूर करने का अधिकार मिल गया है।

इसके अलावा इस कानून द्वारा जमीन पाने वालों को सरकार या सहकारी समितियों को गिरवी रखने के अलावा दूसरों को यह जमीन देने पर पाबंदी लगा दी गयी है। भूदान की जमीन के बँटवारे की क्रिया भी अब पहले से सरल हो जायेगी।

खादी-संस्थाओं के कार्यकर्ता 'बीघा-कट्ठा' अभियान में योग दें

श्री ध्वजाप्रसाद साहू का निवेदन

बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के मंत्री एवं खादी कमीशन के सदस्य श्री ध्वजाप्रसाद साहू ने बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ द्वारा संचालित बिहार राज्य के सभी खादी-केन्द्रों के व्यवस्थापकों को अपने अन्य कार्यकर्ताओं के साथ १५ अप्रैल से प्रारंभ होने वाले 'बीघा कट्ठा अभियान' में जुट जाने की अपील की है। संघ द्वारा पूरे राज्य में लगभग ५०० केन्द्र चलते हैं, जिनमें ५००० कार्यकर्ता काम करते हैं। श्री साहू ने व्यवस्थापकों को अपने भंडार के अन्य सहायकों को कार्यभार सौंप कर अभियान में जुट जाने की अपील की है। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के अलावा स्वतंत्र जिला खादी ग्रामोद्योग संघ पूर्णियाँ, गया, मुंगेर एवं संथाल परगना में भी इसी आशय की अपील व्यवस्थापकों एवं कार्यकर्ताओं से की है। इस कार्यक्रम के अनुसार लगभग तीन चार हजार खादी-कार्यकर्ताओं के 'बीघा कट्ठा' अभियान में आने की भी आशा की जाती है।

नये प्रकाशन

१. अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया —दादा धर्माधिकारी : मूल्य ३-००
२. गीता-प्रवचनानि (संस्कृत) —विनोबा : मूल्य ३-००
३. लाओ-उपनिषद् (लाओत्से के धर्म-वचन) —मनोहर दिवाण : मूल्य ०-७५ न० पै० सजिल्द १-००
४ Vinoba & His Mission —Suresh Ram Price Rs. 6.00 Library Edition Rs. 10.00

—अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९०८० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९६४० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार '२० अप्रैल '६२ वर्ष ८ : अंक २६

इस अंक में

सर्व सेवा संघ का पटना-अधिवेशन : एक झाँकी

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

नौ अप्रैल : अपराह्न

आज तीसरे पहर भागीरथी के तट पर पटना में मौलाना मजहरुल हक की तपोभूमि सदाकत आश्रम में बिहार विद्यापीठ की अमराइयों के नीचे अ० भा० सर्व सेवा संघ का अधिवेशन श्री अरुण भट्ट के ललित भजन—'हो रसिया मैं तो शरण तिहारी' द्वारा प्रारम्भ हुआ।

आरम्भ में श्री श्याम सुन्दर प्रसाद ने मौ० मजहरुल हक की तपस्या का धार्मिक वर्णन करते हुए बताया कि किस प्रकार यह दिल का फकीर बैरिस्टरी छोड़ कर सच्ची फकीरी करने के लिए आज से ४२ साल पहले इस आम के बगीचे में झोंपड़ी डालकर आ बसा था और किस प्रकार उसने यहाँ साधना की। श्रीमती प्रभावती देवी के पिता ब्रजकिशोर बाबू भी अपनी चलती वकालत छोड़ कर सदाकत आश्रम में धुनी रमाने के लिए आ पहुँचे। उनके बाद श्री राजेन्द्र बाबू और अनुग्रह बाबू भी इस आश्रम में आकर रहने लगे। असहयोग के बाद विद्यापीठ की स्थापना हुई। १९३४ तक बिहार के सार्वजनिक कार्यों का केन्द्र सदाकत आश्रम ही रहा। '४२ के बाद रचनात्मक कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण का काम यहाँ चला। देश के बड़े-से-बड़े नेताओं का सदाकत आश्रम से घनिष्ठ संबंध रहा है। क्रांति के कार्य में सदाकत आश्रम का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। सदा से वह लोगों को प्रेरणा देता रहा है और आगे भी देता रहेगा।

श्री श्याम बाबू ने सदाकत आश्रम की पृष्ठभूमि बताते हुए कहा कि यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि भविष्य में सर्वोदय के माध्यम से जो क्रांति होने वाली है, उसमें भी सदाकत आश्रम पीछे नहीं है। राजेन्द्र बाबू राष्ट्रपति के भार से मुक्त होकर अब यहाँ आकर बैठने वाले हैं। हम आज यहाँ सर्व सेवा संघ का अधिवेशन करने जा रहे हैं। मैं लक्ष्मी बाबू और रामनारायण बाबू के आदेश का पालन करते हुए 'आप सबका हृदय से स्वागत करता हूँ।

सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष, श्री नवकृष्ण चौधरी ने सबसे पहले दिवंगत साथियों को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा कि पिछले दिनों हमने महत्त्व के तीन साथी खो दिये हैं। वे हैं नानाभाई भट्ट, स्वामी अखिलराम और नबीन पारिख।

नबीन भाई का नाम लेते ही नवबाबू का गला भर आया। बोले—नबीनभाई मेरा बहुत आत्मीय था। उसके बारे में कुछ भी कहना मेरे लिए बहुत कठिन है। छोटा भाई कहिये या लड़का कहिये, उसके जाने से मेरा अपना नुकसान तो हुआ ही है, हमारे क्रांति के काम को भी बड़ा धक्का लगा है! नबीन भाई में जो उत्साह था, विचारों की जो गहराई थी, लोगों से मिलजुल कर काम करने की जो क्षमता थी, सबका प्रेम हासिल करने की जो योग्यता थी, वह देखने को नहीं मिलती। कोरापुट में ही नहीं, सारे उड़ीसा में नबीन भाई का स्थान लेना किसी के लिए भी बहुत कठिन है। उन्होंने जिस तरह सबकी दोस्ती पाकर सबका विश्वासपात्र बन कर गैरपढ़े लिखे आदिवासियों के बीच जैसा काम किया, वैसा करना बहुत कठिन है। उनका स्थान लेने के लिए हम सबको कड़ी साधना करनी पड़ेगी।

श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद संघ-अधिवेशन की कार्रवाई आरम्भ हुई।

श्री दत्तोबा दास्ताने ने संक्षेप में पिछली कार्रवाई पढ़ सुनाई। उसके बाद श्री पूर्णचन्द्र जैन ने अपना निवेदन पेश किया। आपने कहा कि हम देखते हैं कि ११ वर्ष आंदोलन के बाद हम आशा के अनुरूप समाज में परिवर्तन नहीं ला सके हैं। बाबा जहाँ जाते हैं, वहाँ परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देता है, पर चिंता का विषय यही कि हम 'फालोअप' नहीं कर पाते हैं। हमारे आन्दोलन में बहुत बड़ी-बड़ी सम्भावनाएँ छिपी हैं। सोचने की बात यह है कि हमारा भावी कार्यक्रम क्या हो।

श्री भाई पूर्णचन्द्र ने अपने निवेदन में भावी कार्यक्रम के कुछ मुद्दे पेश किये, जिन पर सम्मेलनों में खुली चर्चा आरम्भ हुई।

प्रो० ठाकुरदास बंग ने अपनी चर्चा के दौरान में कहा कि मैं दो साल तक भूदान में नहीं आया। तटस्थ होकर बाहर से देखता रहा। पटना में जब सम्पत्ति दान की घोषणा की गयी, तब लगा कि मुझे अब इस आन्दोलन में शामिल हो जाना चाहिए और मैं इस आन्दोलन में आ गया। मेरे विचार से भूदान कार्य को फिर से पूरे उत्साह से शुरू करना चाहिए। जहाँ ग्रामदान मिल सकते हों वहाँ ग्रामदान की भी कोशिश की जाय। यह सोचना गलत है कि बड़े आदमी जब जाते हैं, तभी जमीन मिलती है। छोटे आदमी को जमीन नहीं मिलती, ऐसा नहीं है। छोटे छोटे कार्यकर्त्ताओं को भी जमीन मिलती है—कम ज्यादा की बात दूसरी है।

श्री बंग साहब ने इस बात पर जोर दिया कि भूदान के कार्यक्रम में शोषण-मुक्ति का, उद्योग-दान का, ट्रस्टीशिप का, सामाजिक समता का, आर्थिक समता का, पंचायत आदि का और विचार-प्रचार का काम भी जोड़ना चाहिए।

श्री अक्षय कुमार कर्ण ने भावी कार्यक्रम की चर्चा करते हुए कहा कि मैं बंग साहब से सौ फीसदी सहमत हूँ। हमारी गति धीमी है, फिर भी हमें संतोष है कि हम आगे बढ़ सकेंगे। देश में चार हजार संस्थाएँ और चालीस हजार कार्यकर्त्ता भूदान से सम्बन्धित हैं।

श्री कर्ण भाई ने इस बात पर जोर दिया कि प्रारम्भिक सर्वोदय मंडलों को हमें मजबूत बनाना चाहिए और ऊपरवालों को आर्थिक संयोजन करना चाहिए।

हमने अर्थ-मुक्ति और तन्त्र-मुक्ति करके कार्यकर्त्ता को बल नहीं दिया। कुछ जगह उसका अच्छा फल हुआ, पर कुल मिला कर अच्छा नहीं हुआ। हमें चाहिए कि आज देश के एक लाख गाँव में हम कार्यकर्ताओं को साथ लेकर आगे बढ़ें।

श्री सदाशिवराव गद्रे ने सबसे पहले बताया कि साठ वर्ष पूरे होने पर मुझे लगा कि जीवन समाप्त करना चाहिए। उन दिनों विनोबा पंजाब में घूम रहे थे। मैंने कहा कि नौ महीने मुझे पुनर्जन्म के लिए पेट में रहना चाहिए। उस अज्ञातवास के बाद मैं बाहर निकला, तो विनोबा ने मेरा नाम रख दिया 'सद्रे'।

श्री सद्रेजी ने विनोबा के १९५३ के एक भाषण का हवाला देते हुए कहा कि हम शोषण-मुक्ति तो कर लेते हैं, पर शासन-मुक्ति की तरफ हमारा ध्यान ही नहीं है। हम देखते हैं कि आज हमारे मंत्रियों की संख्या बढ़ती जा रही है, उनकी तनख्वाहें भी बढ़ती जा रही हैं! कैसा तमाशा है कि हम जिन्हें नौकर रखते हैं, वे खुद ही अपनी तनख्वाह तय करते हैं। हमारी हालत आज अर्जुन की तरह है। कौरवों से लड़ने का सवाल है। हम सरकार के शोषण के विरुद्ध आवाज नहीं उठाते। कम्युनिस्ट कहते हैं कि राज्यसत्ता अपने आप ही समाप्त हो जायेगी। हम अहिंसक कम्यूनिस्ट बन बैठे हैं। कुछ नेता ऐसा मानते हैं कि विशिष्ट परिस्थिति में हमें राज चलाना पड़े तो हम वह जिम्मेदारी उठा सकते हैं। ऐसा लगता है कि हमारे कुछ नेता मानों मंत्रि मंडल में जाने को उत्सुक बैठे हैं!

इसके बाद श्री जयप्रकाश नारायण का भाषण हुआ। आपने देश की वर्तमान स्थिति का विस्तार से विवेचन करते हुए कहा कि संसदीय लोकतन्त्र में एक शासक दल होता है, दूसरा विरोधी दल। विरोधी दल के रास्ते जनता को अपना असंतोष प्रकट करने का मौका मिलता है। वह एक 'सेफ्टी वाल्व' है। भारत में स्वराज्य के बाद लोकतंत्र कायम हुआ। कांग्रेस ने अपनी पार्टी बनायी। सत्ता उसके हाथ में आयी। उसमें जनता की श्रद्धा थी। आज कांग्रेस सत्तारूढ़ है। केन्द्र में उसका बड़ा बहुमत है। लेकिन उसमें आंतरिक

शक्ति नहीं है, गुटबंदियाँ हैं, दुर्बलताएँ हैं। विरोध में ऐसा कोई सक्षम दल नहीं है, जो कांग्रेस का स्थान ले सके। जनता में निराशा है। अपना असंतोष प्रकट करने का उसके पास कोई आशा का मार्ग नहीं है। लोकतंत्र की यह बड़ी कमजोरी है।

श्री जयप्रकाश बाबू ने कहा कि कांग्रेस को नेहरू का समर्थ नेतृत्व प्राप्त रहा, आज भी है। संसदीय दुर्बलताएँ ढँक देने लायक उनका नेतृत्व है। परन्तु इससे समस्या हल नहीं होती। अरसे से मेरी यह राय रही है कि पंडितजी को पहले से ही प्रधान मंत्री के पद से अलग हो जाना चाहिए था। उन्हें अपना पद छोड़ कर गांधी की तरह राष्ट्रीय नेता के रूप में जनता का नेतृत्व करना चाहिए, ताकि नेहरू के बाद कौन, इस समस्या का समाधान उनके जीवन काल में हो सके। आज देश में ऐसी हवा है कि यदि १९६७ के बाद नेहरूजी देश का नेतृत्व करने के लायक न रहे, उनकी उम्र भी ज्यादा है, तो लोकतंत्र की दृष्टि से देश की हालत कमजोर हो सकती है, खतरे का वातावरण निर्माण हो सकता है। इस हालत में हिंसा की शक्तियाँ अपना सिर उठा सकती हैं और फिर जनतंत्र के स्थान पर अधिनायकवाद आ सकता है।

देश पर छाये हुए इस भयंकर संकट की ओर इशारा करते हुए श्री जयप्रकाश बाबू ने कहा कि हमारा सर्वोदय-आंदोलन अभी तक जन-आंदोलन नहीं बन पाया। देश पर उसका जितना प्रभाव पड़ना चाहिए था, नहीं पड़ा। वह जनता का आशा-केंद्र नहीं बना है, इसलिए जनता में नाजुक हालत आने पर घोर निराशा पैदा हो सकती है। उस समय तानाशाही आ सकती है, वामपक्षियों का या सेना का आधिपत्य हो सकता है, अराजकता हो सकती है। यह बहुत ही खतरनाक बात होगी। पंडितजी के रहने पर कांग्रेस कमजोर हो जायेगी और संसदीय लोकतंत्र खतरे में पड़ जायेगा।

श्री जयप्रकाश बाबू ने भूदान-आंदोलन की चर्चा करते हुए इस बात पर जोर दिया कि हमें जन-जीवन की दैनिक समस्याओं की ओर ध्यान देना चाहिए। जनता के दिल और दिमाग को छूने वाला रचनात्मक कदम जब हम उठायेंगे, तभी हमारा यह आंदोलन जन-आंदोलन बन सकेगा। हमें जनता का, गरीबों का, किसानों का दिल टटोलना चाहिए कि हम उनकी दैनिक समस्याओं को कैसे हल करें। हम यह सोचें कि किस प्रकार हम अहिंसा की शक्ति बढ़ा सकते हैं। जनता के निकट रह कर *विधायक दृष्टि से अपना काम* करना चाहिए। इसके साथ ही यह भी जरूरी है कि हम अपने को संकुचित न करें। हम बहुत शुद्ध या पवित्र हैं, ऐसा न मान बैठें। हमें व्यापक बनना चाहिए। हमें देखना चाहिए कि हर परिवार को जीवन की पाँच अनिवार्य आवश्यकताएँ—भोजन, वस्त्र, निवास, स्वास्थ्य और शिक्षा—तो प्राप्त हो ही जायँ। पर अभी तक हम इस दिशा में विशेष कुछ नहीं कर सके हैं।

पंचायतों की समस्या पर बोलते हुए श्री जयप्रकाश बाबू ने कहा कि १९६२ के अंत तक देश में तीन लाख पंचायतें, पाँच हजार ब्लाक पंचायतें और तीन सौ तीस जिला-परिषदें बन जायेंगी। मैं मानता हूँ कि यदि हम इन पंचायतों को छू सकें तो लोकनीति को बल मिलेगा। पंचायतों में पार्टियों का प्रवेश न हो, इस बात का हम प्रयत्न करें। इसके लिए नीचे से लोगों को समझाना जरूरी है। सर्व सेवा संघ को अपना भावी कार्यक्रम निर्धारित करने में अधिक सावधानी और सतर्कता बरतने की जरूरत है, तभी सर्वोदय आंदोलन जन-आंदोलन बन सकेगा।

* * *

दस अप्रैल

सर्व सेवा संघ का भावी कार्यक्रम क्या हो, इसके लिए इन चार मुद्दों पर आज विचार करने का निश्चय हुआ :

(१) आंदोलन के प्रति हमारा रुख क्या हो?

(२) हम किस कार्यक्रम को प्राथमिकता दें?

(३) अहिंसक प्रतिकार के लिए हम किस कार्यक्रम को चुनें?

(४) हमारे सामने तात्कालिक या स्थानीय प्रश्न क्या हो?

इन मुद्दों पर बड़ी सभा में विचार करने में अधिक लाभ नहीं हो सकेगा और सभी लोकसेवक अपने विचार व्यक्त नहीं कर सकेंगे, ऐसा सोच कर यह तय हुआ कि सब लोगों को अलग-अलग गोष्ठियों में बाँट दिया जाय और प्रत्येक गोष्ठी अपनी चर्चा की रिपोर्ट दे, जिस पर खुले अधिवेशन में विचार किया जाय।

पंद्रह टोलियों में सभी लोग बाँट दिये गये और सब लोग अलग-अलग बैठ कर कार्यक्रम के मुद्दों पर विचार करने चले गये।

तीसरे पहर श्री नवबाबू ने कृषि-गोसेवा समिति के अध्यक्ष श्री ढेबर भाई से अनुरोध किया कि आप सर्वोदय-परिवार के मित्र की हैसियत से बोलें। श्री ढेबर भाई ने कहा कि मुझे दो साल के बाद संघ के बीच आने का मौका मिला है। कल हमने आपके मुख्य मंत्री का अहवाल सुना। उससे पता चला कि किस प्रकार का मंथन आपके मन में चल रहा है। मैंने सोचा कि मैं उसी बारे में कुछ कहूँ। आज हिंदुस्तान में सब जगह मंथन चल रहा है, इसलिए निराश होने की कोई बात नहीं है। हिंदुस्तान में दिमाग के स्तर पर मामूली मंथन नहीं चल रहा है। गांधी के आशीर्वाद से हम अभी जीभ ही चलाते हैं, हाथ नहीं चलाते।

श्री ढेबर भाई ने कहा कि हमारे सामने दो सवाल खास हैं : एक रोजी-रोटी का सवाल और दूसरा है, सामाजिक और आर्थिक स्तर का सवाल। जीवन की अनिवार्य आवश्यकताओं का सवाल मामूली और आसान सवाल नहीं है। अप्रैल के शुरू में दिल्ली में एक 'सेमिनार' हुआ था, जिसमें एक समिति बनायी है, जो छह महीने में सोच समझ कर अपनी रिपोर्ट देगी। मैं समझता हूँ कि हमें कुछ समय निकाल कर इस सवाल पर सोचना चाहिए और व्यावहारिक ही नहीं, भावनात्मक दृष्टि से इस पर विचार करना चाहिए।

श्री ढेबर भाई ने इस बात पर जोर दिया कि देश की सामाजिक और आर्थिक समस्याएँ पंचायती राज्य के द्वारा हल हो सकती हैं। इस पर पंडितजी ने कहा था कि यदि ठीक ढंग से चलें तो पंचायती राज्य से अहिंसात्मक क्रांति हो सकती है। भूदान ग्रामदान आदि के साथ-साथ हमें पंचायतों को समझाने का *क्रांतिकारी कार्यक्रम* अपने हाथ में लेना चाहिए। इसमें हृदय-परिवर्तन की बड़ी शक्यताएँ हैं।

श्री अप्पासाहब पटवर्धन ने श्री नवबाबू के अनुरोध पर मुद्रा-ह्रास संबंधी अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि हम केवल जमीन की समस्या को लेकर न बैठें। हमें अपने कार्यक्रम में शोषण-मुक्ति के तमाम मुद्दों को भी लेना चाहिए। ब्याज-बट्टा, किराया, डिवीडेंड आदि सब बंद होने चाहिए। पैसे के कारण समाज में पूंजीशाही बढ़ी है, शोषण की प्रवृत्ति बढ़ी है। उसका हमें विरोध करना चाहिए। जो जोते, वही जमीन का मालिक हो; रिक्शे वाला रोज डेढ़ रुपया रिक्शे का भाड़ा देता है, वह सालभर में पाँच सौ पचास रुपये चुकाता है, फिर भी रिक्शे का मालिक नहीं बनता। इस तरह की वृत्ति बंद होनी चाहिए। मुफ्त की आमदनी वाले, औरों के श्रम पर जीने वाले लोगों की बेजा आमदनी बंद हो जानी चाहिए, तभी यह हमारा आंदोलन व्यापक बनेगा।

मुजफ्फरपुर के श्री रघुनाथ प्रसाद ओझा ने दो तीन मिनट में ऐसी खरी-खरी बातें सुनायीं कि सारा पंडाल हँसी से गूंज उठा। आपने कहा कि हमें अमेरिका से करोड़ों रुपया कर्ज लेकर भारत की प्लानिंग की योजना बनाने वालों पर तरस आता है। गाँव-गाँव में साइकिल, सिनेमा, पान जैसी विलासिता की चीजें फैला देने से क्या हमारे देश का उद्धार होने वाला है!

श्री नारायण देसाई ने शांति-सेना को व्यापक और सक्रिय बनाने के संबंध में शांति-सैनिक के निष्ठा-पत्र में संशोधन *का एक प्रस्ताव रखा। श्री निर्मला देशपांडे* ने उसका समर्थन किया। उसके बाद सर्वश्री बद्रीप्रसाद स्वामी, गद्रेजी, पूर्णचन्द्र जैन, विट्ठलदास मोदाणी, अरुण भट्ट, गोपाल सिंह, प्यारेलाल शर्मा और शेंडुर्णीकर आदि ने अनेक संशोधन पेश किये।

शांति सैनिक के निष्ठा-पत्र में संशोधन का एक खास मुद्दा यह था कि किसी भी पक्ष का व्यक्ति यदि पक्षातीत भूमिका में काम करना स्वीकार करे तो उसे शांति-सैनिक बनाया जा सकता है।

गुजराती में अपने अनुभव का वर्णन करते हुए श्री शिवाभाई पटेल ने कहा कि शांति सैनिक को पक्षमुक्त ही रहना चाहिए, तभी वह अपने उद्देश्य में सफल हो सकता है, ऐसा मेरा व्यक्तिगत अनुभव है।

श्री नारायण भाई ने इस बात पर हर्ष प्रकट किया कि इतनी जल्दी इस प्रस्ताव पर इतने अच्छे संशोधन आये। उन्होंने कहा कि रात को साढ़े नौ बजे इन संशोधनों पर विचार करके जो निर्णय होगा, वह कल यहाँ सुना दिया जायेगा। तभी श्री दादा धर्माधिकारी सभा के बीच उठ कर खड़े हो गये और बोले कि इस पर यहाँ बहस होनी चाहिए।

श्री नवबाबू ने कहा कि यह प्रसन्नता की बात है कि दादा बोले तो। शांति सैनिक के निष्ठा-पत्र संबंधी प्रस्ताव यहाँ आयेगा, फिर आप चाहे जो करें।

श्री सिद्धराजजी ढड्ढा ने विश्व-शांति सेना के संबंध में बेरुत सम्मेलन की जानकारी दी और बताया कि प्रबंध समिति ने उसके समर्थन में एक प्रस्ताव स्वीकृत किया है। आपने कहा कि विश्व-शांति सेना की स्थापना दुनिया के शांति इतिहास में असाधारण और महत्त्वपूर्ण है। विश्वशांति सेना ने अफ्रीका में साम्राज्यवाद के विरुद्ध जो अहिंसक प्रतिकार का आंदोलन छेड़ा है, उसकी भी जानकारी सिद्धराजजी ने दी।

* * *

ग्यारह अप्रैल : प्रातः

आज प्रातः सर्वप्रथम श्री नारायण देसाई ने कल की गोष्ठियों की राय प्रकट करते हुए कहा कि चार मुद्दों पर खूब चर्चाएँ हुईं।

आंदोलन के प्रति रुख क्या हो, इस विषय पर कोई सर्वसम्मत राय नहीं बन सकी। किन्तु दो प्रकार के विचार स्पष्ट रूप से सामने आये। एक विचार था—*हमारा आज का रास्ता तो अच्छा है,* लेकिन हम अपनी कमजोरी के कारण उस पर ठीक से नहीं चल पा रहे हैं और दूसरा विचार यह सामने आया कि आज के रास्ते में बदल होना चाहिए।

भावी कार्यक्रम क्या हो? इस पर हाउबर साहब के बारडोली शिविर का बहुत प्रभाव हमारी चर्चाओं में दिखता था। एक तो लोगों का कहना है कि कार्यक्रम का तय करना हमारे अर्थात् सेवकों के हाथ में न होकर जनता के हाथ में होना चाहिये। जनता किस प्रकार

भावी कार्यक्रम के लिए दिशा-संकेत

• धीरेन्द्र मजूमदार

आरोहण का कार्यक्रम बनाने की हमेशा यह पद्धति होनी चाहिए कि हम अपनी शक्ति को जाँचें और शक्ति से ज्यादा कार्यक्रम बनायें, ताकि उससे हमारी शक्ति बढ़े। हमें इतना ज्यादा कार्यक्रम नहीं बनाना चाहिए कि हमारी शक्ति टूटे। इस परिभाषा के अनुसार यह कार्यक्रम बना है और मैं उम्मीद करता हूँ कि कल सुबह से वातावरण में जो मायूसी थी, वह आज नहीं है। इसलिए कार्यक्रम के मुतल्लिक मुझे कुछ कहना नहीं है। मैं सिर्फ आपके सामने काम करने के बारे में अपने विचार रखना चाहता हूँ। हमें विचार करने के लिए कुछ बातें सोचनी चाहिए।

यह सब ठीक है कि हम कौन होते हैं सोचने वाले? जनता का काम है, जनता करे। तब फिर हम यहाँ क्यों बैठे हैं? दुनिया की जनता में आज परिस्थिति से क्षोभ है और उस परिस्थिति के बारे में 'सेन्सिटिव'—संवेदनाशील मनुष्य कुछ सोचते हैं। इसलिए हमको सोचना है। हम किस ढंग से सोचें, यह अलग बात है।

काम की पद्धति के बारे में पहली चीज यह सोचनी चाहिए कि हम समाज-परिवर्तन और समाज क्रांति की जो बात करते हैं, हमारी उस समाज-क्रांति का लक्ष्य क्या है? अगर हम परिवर्तन करने के संबंध में कुछ कहते हैं तो हम यह नहीं कहते कि परिवर्तित कर दो। हमारी दृष्टि साफ होनी चाहिए। अगर साफ है तो हमारी सारी व्यूह-रचना हम जिस दिशा में जाना चाहते हैं, उसके अनुसार उस दिशा में जाने वाली होगी।

कार्यक्रम का आकर्षण

चांडिल के सर्वोदय-सम्मेलन में सन् '५३ में विनोबाजी ने जो भाषण दिया था, उसे सर्व सेवा संघ ने "सर्वोदय का घोषणा-पत्र" माना था। देश के समाजवादी विचारक उसी भाषण से इस आन्दोलन में आकर्षित होकर आये। ठीक उसी भाषण के बाद सितंबर या अगस्त में जयप्रकाश बाबू ने मुजफ्फरपुर में मुझे अपने शिविर में बुलाया था। मुझे अलग-अलग लोगों से गप्प करने की आदत है। उस शिविर में करीब-करीब सभी ने गप्प में कहा कि चांडिल के विनोबाजी के भाषण ने हमको आकृष्ट किया। उस भाषण में विनोबाजी ने कहा कि

> हमें दंड-शक्ति से भिन्न, हिंसा-शक्ति से विरोधी स्वतंत्र जन-शक्ति का निर्माण करना चाहिए।

"दंड-शक्ति से भिन्न" कहना जरूरी था, क्योंकि हिंसा शक्ति का विरोध हिंसा-शक्ति नहीं कर सकती। जितने हमारे कार्यक्रम हैं, उनसे स्वतंत्र जन-शक्ति निकलती है कि नहीं, यह सोचना चाहिए।

हम जिस क्षेत्र में काम करते हैं, उन क्षेत्रों के लोगों की मानसिक, चारित्रिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थिति क्या है, यह सोचना होगा। 'मार्जिनल एप्रोच', अर्थात् जिनके लिए कार्यक्रम है, उनकी क्षमता के आधार पर कार्यक्रम बनाना होगा।

आधार-शक्ति कौनसी होगी?

काम करने की दिशा में जितने कार्यक्रम बनाते हैं, उनकी आधार-शक्ति कौनसी होगी? मान लीजिये कि हमारे पास भूदान ग्रामदान या बीघा कट्ठा का आंदोलन है। इस आंदोलन को आगे बढ़ाने का तरीका क्या होगा? आज प्रायः हम लोग गाँवों में जाते हैं और जनता को समझाते हैं कि भाई, 'लेवी' (बिहार में भूमि-हदबन्दी कानून) हो गया है। अब विनोबा कहते हैं, 'लेवी' नहीं, 'देवी' हो—अर्थात् हम दंड-शक्ति का आधार लेते हैं।

आज दंड शक्ति को छोड़ना नहीं है, क्योंकि आखिर में परिवर्तन करना है। हम राजनीति से लोकनीति की ओर जाना चाहते हैं; क्योंकि जिसकी शक्ति से समाज चलता है, नीति वही तय करेगा—चाहे आप लाख गिड़गिड़ायें। राजनीति से लोकनीति की तरफ जाने के लिए दंड-शक्ति से लोक शक्ति की ओर जाना है। इसका मतलब हम राजनीति को बदल कर लोकनीति करना चाहते हैं। राजनीति को छोड़ कर लोकनीति की स्थापना नहीं कर सकते हैं, यह स्पष्ट है। हमें यह साफ-साफ समझ लेना चाहिए कि अगर कोई कहे कि हमें राजनीति से मतलब नहीं है, लोकनीति से मतलब है; तो फिर हम क्या बदलने जा रहे हैं? हमारे उस बदल के जितने कार्यक्रम होंगे, उनकी आधार शक्ति और सहयोग-शक्ति क्या होगी? 'कलेक्टिव कोआपरेशन'—घनिष्ठ सहयोग—कहाँ है? आधार-शक्ति, पूरक शक्ति, सहयोग-शक्ति क्या है?

इसलिए जो हम सोचें, व्यूह-रचना करें, वह दंड-शक्तिनिरपेक्ष स्वतंत्र लोक-शक्ति होनी चाहिए। पकड़ में क्या चीज है? दंड-शक्ति का साकार रूप। हमारे समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए क्या हो?

वस्तुतः कार्यक्रम नहीं, बल्कि शक्ति ही असली चीज है। उदाहरणतः 'बीघा-कट्ठा' आंदोलन है। आप कहिये कि आज समाज में अमुक-अमुक परिस्थिति है। इस परिस्थिति से अगर आपको उबरना और भूमि समस्या का निराकरण करना है तो 'बीघा-कट्ठा' से शुरू कीजिये। इस प्रकार 'लेवी' का उल्लेख न करते हुए स्वतंत्र निरपेक्ष विचार रखिये। बहुत-से भाइयों के दिमाग में यह है कि पंचायतों में हम जायेंगे, तो कैसे होगा? "हम" शब्द इस्तेमाल करते हैं, लेकिन इसकी कोई शक्ति है क्या? 'नेशनल लेवल'—राष्ट्रीय स्तर-पर सर्व सेवा संघ की शक्ति है। उसका स्वतंत्र अस्तित्व है। 'युनियन गवर्नमेंट' के साथ काम कर सकते हैं। लेकिन लोग कहते हैं कि हममें शक्ति ही नहीं है, तो 'नेशनल लेवल' पर जाकर क्या करेंगे? अगर ऐसा महसूस करते हैं तो सोचना होगा कि हमने जिस साध्य का संकल्प है, उसकी पूर्ति कैसे करनी है।

शक्तियाँ दो प्रकार की हैं: एक सामाजिक शक्ति और दूसरी, आर्थिक शक्ति। दंड-शक्ति की सामाजिक शक्ति कानून है और आर्थिक शक्ति 'टैक्सेशन' है। लोक-शक्ति की सामाजिक शक्ति संकल्प है और आर्थिक शक्ति दान और यज्ञ है। हम भूदान मांगें, चाहें ग्रामदान, चाहें निर्माण-काम करें, चाहें ग्राम-इकाई का और चाहें पंचायती राज का ही काम करें; इन भिन्न भिन्न पहलुओं के सारे कार्यक्रमों की आधार-शक्ति संकल्प और दान हो—कानून और टैक्स सहयोगी और पूरक शक्ति हो, तो क्रांति में जो लक्ष्य है, जो आपने घोषणा-पत्र में जाहिर किया है, उस ओर ठीक चले जायेंगे।

यहाँ सर्व सेवा संघ के स्वरूप का सवाल आता है। जनता को हम 'रिहैबिलिटेट'—पुनर्वासित—करना चाहते हैं, तो वह कैसे होगा? क्या सर्व सेवा संघ बैठा रहेगा? लोक-सेवक संघ में सर्व सेवा संघ परिवर्तित हो जाय। सर्व सेवा संघ लोक सेवकों के आधार पर रहेगा। आज क्या है? लोक-सेवक सर्व सेवा संघ के आधार पर हैं। पृथ्वी शेषनाग के सिर पर नहीं है, शेष नाग पृथ्वी पर लटके हैं!

वाहन कौन होगा?

दूसरा जो पहलू है, वह यह है कि वाहन कौन होगा? क्योंकि देवता भी बिना वाहन के पंगु हो जाता है। यह वाहन महत्त्वपूर्ण है। हमारी इष्ट-देवता जन शक्ति से भिन्न स्वतंत्र जन-शक्ति है। इसके लिए वाहन क्या होगा, यह सोचने की जरूरत है। लोक-सेवकों का 'यूनिट' बनाना अपने कार्यक्रम में नहीं रहा है—कार्यक्रम है ही नहीं—वह कार्यकर्त्ता है।

> कार्यकर्त्ता जब तक नहीं होगा, कार्यक्रम की शुरुआत भी नहीं होगी। कार्यकर्त्ता का स्वरूप सब लोक-सेवक है। कार्यकर्त्ता अपना अपना स्वतंत्र अस्तित्व कायम करने की कोशिश करें।

आज शिकायत की जाती है कि नेता लोग कुछ करते नहीं हैं, सर्व सेवा संघ कुछ करता नहीं है। लेकिन आप लोग कुछ कार्यक्रम बनायेंगे, तब न होगा? एक 'पैरडॉक्स'—विरोधाभास—है, हमारे अंदर। इसको हटाने की जरूरत है। इसका अंतिम लोक-सेवक को लेना होगा। उसे अपना अस्तित्व और प्राथमिक सर्वोदय-मंडल का जो वाहन है, इसको कैसे बनायें, इस पर फिर से सोचने की जरूरत है। तब आगे जा सकते हैं। कार्यकर्ता महत्त्वपूर्ण चीज है। बहुत से कार्यकर्त्ता पूछते हैं कि कार्यक्रम का स्वरूप क्या होगा? हम कहते हैं कि कहाँ के बाद क्या होगा। यहाँ क्या कहना है? जो विशाल सेना या समाज बनायेंगे,

हमें करना क्या है?

मैंने कहा कि 'हमें स्वतंत्र लोक-शक्ति निर्माण करनी चाहिए।' मेरा अर्थ यह है कि हिंसा-शक्ति की विरोधी और दंड-शक्ति से भिन्न, ऐसी लोक-शक्ति हमें प्रकट करनी चाहिए। आज की हमारी जो सरकार है, *उसके हाथ में हमने दंड-शक्ति सौंप दी है, क्योंकि उस दंड-शक्ति में हिंसा* का एक अंश जरूर है, फिर भी हम उसे 'हिंसा' नहीं कहना चाहते। हिंसा से उसको अलग वर्ग में रखना चाहते हैं। हिंसा-शक्ति से भिन्न दंड-शक्ति, हम उसे कहना चाहते हैं, क्योंकि वह शक्ति उनके हाथ में सारे समुदाय ने दी है। इसलिए वह हिंसा-शक्ति नहीं, निरी हिंसा-शक्ति नहीं, पर *वह दंड-शक्ति है।* उस दंड-शक्ति का भी उपयोग करने का मौका न आये, ऐसी परिस्थिति देश में निर्माण करना हमारा काम होगा। यह अगर हम करेंगे तो हमने स्वधर्म पहचाना और उस पर अमल करना जाना। अगर ऐसा हम नहीं करेंगे और दंड-शक्ति के उपयोग से ही जो जन-सेवा हो सकती है उस जन-सेवा का लोभ रखेंगे, तो जिस विशेष कार्य की हमसे अपेक्षा की जा रही है, उस कार्य को, उस अपेक्षा को हम पूर्ण नहीं करेंगे, बल्कि संभव है कि हम बोझ-रूप भी साबित होंगे।

[चांडिल-सम्मेलन, ९ मार्च, '५३]

—विनोबा

वैसा उसका स्वभाव होगा। उसका स्वरूप दंड शक्ति का नमक खाता है कि जन शक्ति का, इस पर आधारित है। वह कैसे होगा, क्या होगा, उसका भी कोई 'टेकनिक' लोक-सेवकों को सोचना होगा।

कार्यक्रम समाज-आधारित रहेगा कि सेवक-आधारित रहेगा? ये साधु-वृत्तिवाले, लँगोटीवाले कार्यकर्ता घूमते हैं, उनको लोग खिलायें, तब उनको लोकाधारित कह सकते हैं। सैनिक-आधारित हैं तो वह जनाधारित, हैं, ऐसा नहीं कह सकते। समाज तो जनाधारित है। गृहस्थ के आधार पर समाज रहेगा तो नागरिकों में क्रांति का खून डालना होगा। क्रांतिकारी को नागरिक में विलीन होना होगा। आपका स्वरूप क्रांतिकारी नागरिक का रूप है। फिर हमको सोचना होगा कि सेवक नागरिक की हैसियत से हो। आज क्या है? अकेला कार्यकर्ता है। उसके बच्चे हैं। वे बीमार पड़ते हैं, और भी बहुत सारी बातें हैं। एक नागरिक जितनी बातें सोचता है, उनके साथ ही कार्यकर्ता का योगक्षेम जोड़ना होगा। साधु एक कमंडलु लेकर घूमता है, वैसा नहीं। इसलिए हमको हरएक चीज के बारे में साफ सोचना होगा कि हम एक गृहस्थ के नाते किस तरह से अच्छे नागरिक हो सकते हैं, उसका क्या 'टेकनिक' है? आपके योगक्षेम की हम व्यवस्था कर दें, उससे नहीं होगा। इसका एक 'टेकनिक' निकालना होगा, जिसमें से वह कार्यकर्ता स-परिवार अपनी व्यवस्था निकाल ले। नहीं तो कार्यक्रम कार्यकर्ता पर आधारित होगा, कार्यकर्ता नेता पर आधारित होंगे, नेता सरकार पर आधारित होंगे और सरकार दंड-आधारित है।

क्रांति की व्यूह-रचना

क्रांति के लिए तीन चीजें सोचनी पड़ती हैं :

(१) क्रांति का जो बुनियादी तत्त्व है, उस बुनियादी तत्त्व को डालते जाना और उसे मजबूत करते जाना।

(२) क्रांति के लिए अनुकूल जो तत्त्व हैं, उनका इस्तेमाल करना और उनके इस्तेमाल के लिए उन्हीं के अनुकूल प्रक्रिया करना।

(३) क्रांति के लिए जो प्रतिकूल तत्त्व हैं, उनका निराकरण करना चाहिए और उसके लिए वैसी प्रक्रिया सोचना।

सारे कार्यक्रम एक से नहीं हैं। सब कार्यक्रम सारे देश में एक ही समय तो चलेंगे नहीं। किसी बच्चे के हाथ में अगर आप ब्रश और रंग देंगे तो वह सारे रंग एक जगह पर छिड़क देगा। लेकिन वही ब्रश और रंग एक कलाकार के हाथ में देंगे, तो वह भी रंगों को छिड़क देगा, लेकिन एक सुंदर चित्र का रूप आपके सामने आयेगा। किस काम का कहाँ स्थान है, कौनसा काम 'बेसिक' है, कौनसा काम किधर है, इसकी स्पष्टता न तो कलाकार जैसा चित्र हम खड़ा नहीं कर सकेंगे, बच्चे की तरह सब रंग छिड़क देंगे। कौनसा काम बुनियादी है, किसका स्थान कहाँ है, 'लाइनिंग' में कौन है, 'एक्शन' में कौन है, यह मुकर्रर करना होगा, सोचना होगा। क्रांतिकारी व्यूह-रचना में प्रत्येक क्रांति-कार्य का स्थान निश्चित नहीं कर सकता है, तो वह 'फेल' करेगा।

सहकार की दृष्टि

समाज में संघर्ष के स्थान पर सहकार कैसे लाना है? कौनसे तत्त्व विस्फोटक हैं, यह जयप्रकाशजी ने बताया। उन्होंने कहा कि जो राजनैतिक लोक तंत्र चल रहा है, उसमें जो हमारे विरोधी तत्त्व हो रहे हैं, उसके बदले में उसको भी ठीक से 'रिहैबिलिटेट' करना है, क्योंकि राजनीति में भी अनुकूल प्रतिकूल तत्त्व हो सकते हैं। इंग्लैण्ड की सरकार में और घालचार की सरकार में भी सर्वोदय चल सकता है, लेकिन अपने राज्य में चलता है तो ज्यादा अनुकूलता होती है। राजनीति में प्रतिकूलता अनुकूलता है। उसका कार्यक्रम पंचायती राज के बारे में जयप्रकाशजी ने रखा। वह मैं उतना अच्छा नहीं रख सकूँगा, क्योंकि वे उसमें 'एक्सपर्ट' हैं। वह कार्यक्रम करना चाहिए। लोक तंत्र के जो अवसर हैं, उन्हें पूरक शक्ति के रूप में इस्तेमाल करना होगा। दंड शक्ति का निराकरण, स्वतंत्र लोक शक्ति का अधिष्ठान पंचायतों के द्वारा कैसे करेंगे? लोक-सेवक जब पंचायतवालों के साथ सहकार कर रहे हैं तो वे क्या कोशिश करेंगे? राजनैतिक पंचायतों को लोकनैतिक पंचायतों में परिवर्तित करने का प्रयत्न होना चाहिए। श्रम दान की बात लीजिए आपको कानून से अधिकार है वह लेने का, इसलिए आप वह कानून से ले सकते हैं। लोक-सेवक कहें, आपके पास दंड शक्ति है तो ठीक है, लेकिन आपके पास एक व्यक्तित्व भी है। समाज के साथ हम स्नेह-संबंध बढ़ायें और 'टैक्सेशन' न कर ग्राम-राज्य का संगठन करें, तो धीरे धीरे सत्ता के उनके जो अधिकार हैं, वे 'नाइल' हो जायगे। फिर जनता को अहसास हो जायगा कि हम लोग ही आपस में मिल कर कुछ करेंगे। इस प्रकार यह दूसरी चीज मैंने कही कि आज जो लोकनीति के लिए अनुकूल तत्त्व है, वह पंचायत है। पंचायत से सहकार की दृष्टि इस आधार पर होनी चाहिए।

कानून और संकल्प के लिए पंचायत का उदाहरण दिया। टैक्स और दान के संबंध में भी सब जगह तो लोक-सेवक नहीं होंगे—कहीं हमारे लोक सेवक होंगे, तो कहीं हमारी संस्थाएँ भी होंगी। तो जो अपने लोक सेवक रहें, वे जनता में से दान और यज्ञ के आधार पर काम करें, फिर टैक्स की सहायता हो।

> आज कहा जाता है कि अमुक काम आप करें और वह इतना हो जाय तो हम सहायता करेंगे। इससे लोग घबड़ाते हैं, करते नहीं हैं। लेकिन हमने नाम रखा है अनुदान। यह दान के बाद होगा न? दान के पीछे वह चलेगा। पहले दान हो जाय, फिर अनुदान शुरू होगा।

तब तो हमारी लक्ष्य पूर्ति की दिशा में कार्यक्रम का स्वरूप होगा। नहीं तो 'वेल-फेअर स्टेट' ने दंड शक्ति द्वारा विकास करने की जिम्मेदारी ले रखी है और दंड-शक्ति द्वारा विकास-कार्य हिटलर, अयूब, कम्युनिस्ट आदि सभी को करना है। वे विकास-कार्य करेंगे और हम भी उस काम के एजंट रहेंगे।

लोकनीति के लिए जो कार्यक्रम बना है, वह सुंदर है। लेकिन कार्यकर्ता कहाँ है? हमारी जो दिशा और लक्ष्य है, उसे स्पष्टता के साथ समझकर अगर हम आगे बढ़ेंगे, तो निश्चय ही हमारे काम में तेज आयेगा।

[पटना सम्मेलन, ११ मार्च '६२]

संघ-अधिवेशन : एक झाँकी

[पृष्ठ ३ का शेष]

देते। नयी तालीम में बालमंदिर से लेकर उत्तम बुनियादी और पी-एच-डी तक की पढ़ाई की व्यवस्था होनी चाहिए। नयी तालीम के विश्वविद्यालय खुलने चाहिए। सेवाग्राम में नयी तालीम के प्रयोग को यशस्वी करने की जिम्मेदारी आप सब लोगों पर है।

श्री श्याम सुंदर बाबू ने बीघा-कट्ठा आंदोलन के इतिहास का विवेचन करते हुए बताया कि १५ अप्रैल से १५ जून तक बीघ-कट्ठा आंदोलन को बिहार के सभी जिलों में पूरे जोर से चलाने का निश्चय हुआ है। इसमें सभी भाई-बहनों का सहयोग अपेक्षित है।

श्री दामोदरदास मूँदड़ा ने महाराष्ट्र प्रदेश के सघन ग्रामदानी क्षेत्र अक्राणी महाल का परिचय देते हुए कहा कि नर्मदा और तापी नदियों के बीच बसे इस आदि-वासी इलाके में ३५१ गाँव हैं। यहाँ के निवासियों की गरीबी अवर्णनीय है। ये बेचारे एक-दो माह आम खाकर गुजारते हैं, चार-पाँच महीने कंद-मूल उबाल कर खाते हैं, महुवा का प्रयोग करते हैं, शराब पीते हैं, आपस में लड़ते हैं। खून खराबी तक पर आ जाते हैं। किसी एकाध गाँव में कोई आदमी हस्ताक्षर भर करना जानता है। वे कहते हैं कि हमारा जीवन तो बरबाद हुआ ही, कम-से-कम हमारे बच्चों को तो बचाओ।

श्री दामोदर भाई ने बताया कि इस आदिवासी क्षेत्र में ग्रामोद्योगों का विस्तार करने की और तालीम फैलाने की बहुत बड़ी जरूरत है। हमारे पास न पैसा है, न कार्यकर्ता। अभी हमारे पास २५ कार्य-कर्ता हैं, हमारा २५०० रु० मासिक का खर्च है। कुछ कर्ज भी हो गया है। हमारी अपील है कि हर जिले से हमें १०० रु० की सहायता मिले और कुछ कार्य-कर्ता भाई-बहन भी मिलें।

इस अपील का तुरंत फल दिखाई पड़ा। वर्धा, आगरा, मेरठ, मिर्जापुर, गुरुदासपुर, खेड़ा, पंजाब सर्वोदय मंडल तथा श्री दादा धर्माधिकारी व श्री ब्रह्मदेव वाजपेयी ने सहायता जाहिर की।

श्री वल्लभस्वामी ने धन्यवाद देने की रस्म अदाई की और कहा कि बिहार अहिंसा की प्रयोगभूमि है। बुद्ध भगवान ने और बापू ने यहीं पर सत्याग्रह शक्ति का दर्शन कराया। आज आर्थिक क्षेत्र में अहिंसक क्रांति का मौका आया है। भूमि-हीनों के मन में भूदान के बारे में आशा का निर्माण हुआ है, उसे सफल बनाने के लिए हम अधिक से अधिक समय दें।

श्री दादा धर्माधिकारी ने अधिवेशन का समारोप करते हुए कहा कि इन तीन दिनों में मैंने यहाँ जो भाषण सुने, उन पर मेरे विचार ये हैं। देश का संरक्षण, विचार और भावना से होगा, शस्त्र से नहीं होगा। मेरी प्रार्थना है कि इस देश के लोगों को यह समझाइये और सिखाइये कि इन्सान की आजादी की शान स्वतंत्रता में है, आराम में नहीं है। इस देश का व्यक्ति अगर ऐसा कहता है कि अंग्रेजों का राज्य स्वराज्य से बेहतर था तो उसे समझाइये कि यह मानवीय मनोवृत्ति नहीं है। इन्सान वह है, जो भूखा होने पर भी आराम के लिए आजादी को नहीं बेचता। आप हरगिज यह न समझें कि लोगों के अभिभावक और संरक्षक आप हैं। शांति सेना अगर संरक्षकों की एक निःशस्त्र सेना बन जायेगी तो नागरिक आज जैसा पुरुषार्थहीन है, वैसा ही बना रहेगा। आज तक सिपाही बचाता था, अब शांति-सैनिक है, यह उसकी भावना बन जायेगी। हमारा कार्यकर्ता, शांति-सैनिक लोक सेवक परस्पर निर्भर हों, लेकिन अंत में आत्म-निर्भर हों। लोकतंत्र की परिस्थिति में नागरिक की स्वतंत्रता का अर्थ है, उसका मत—वास्तविक मत और औपचारिक मत। उसका 'ओपिनियन' और उसका वोट। इन दोनों का महत्त्व अक्षुण्ण रहे, यह हमारे लोक शिक्षण का आधार है। विकेंद्रीकरण के नाम पर क्षुद्र क्षेत्र-वाद को हम स्पष्ट करेंगे तो मानवीयता तो दूर रही, राष्ट्रीयता भी हमारे साथ नहीं रहेगी। अतः जो समस्याएँ हम लें, उनमें यह विवेक होना चाहिए।

श्री दादा ने अंत में कहा कि हमारे दोषों के बावजूद जनता का कम से कम अविश्वास हममें है। यह शक्ति हमारे आंदोलन की है और हमारे विचार की है। हम इसके मूल्यों का संरक्षण करें, उसकी मर्यादा का पालन करें। मैं किसी भी तरह से निराश नहीं हूँ। निराशा का कोई कारण नहीं है। जितनी शक्ति और समय हमने दिया है, उसके अनुपात में अगर सफलता कम हुई है तो आगे जितनी शक्ति और समय देंगे उसके अनुपात में इस देश को अधिक परिमाण में सफलता मिल सकती है।

रोजी-रोटी का सवाल हाथ में लिये बिना हम कहीं के न रहेंगे

लेकिन अपने सवालों का हल स्वयं जनता निकाल सके, उसमें हम कुछ मदद करें, जिससे यह जनता का आंदोलन बने।

जनता के सवाल लें

कार्यकर्ता किसानों में से पैदा हों, मजदूरों में से पैदा हों और जनता हमारे कार्यक्रम को उठा ले, इसी ख्याल से तंत्र-मुक्ति भी हुई। लेकिन जनता ने इस कार्यक्रम को नहीं उठाया। बात जनता की समझ में नहीं आयी। महँगाई, बेकारी, भ्रष्टाचार या सरकारी तंत्र के द्वारा या अमुक वर्ग के द्वारा अन्याय के जो प्रश्न हैं, उनमें से वह कैसे छुटकारा पाये, यह बात लोगों की समझ में नहीं आती है। इन समस्याओं को लेकर 'सोशिअल डायनेमिक्स' हो, समाज में गति निर्माण हो। जनता की परिस्थिति और उनके सवालों से कार्यक्रम का अनिवार्य संबंध हो तो यह होगा। मित्रों ने कहा कि भूमि की समस्या भी तो है देश के सामने—उसको लिया गया, ठीक है। लेकिन मांगनेवाले भी हम और बाँटनेवाले भी हम। देश के सामने भूमि की समस्या थी, लेकिन इस समस्या को सारी जनता ने उठा लिया होता तो हम कहते कि ठीक है, जनता के सामने समस्या थी और जनता ने उसका कार्यक्रम उठा लिया। अगर बिहार में इस कार्यक्रम को जनता ने उठाया होता तो सर्व सेवा संघ के लोग यहाँ आकर अभियान करें, इसकी जरूरत नहीं थी। बिहार में जितनी जमीन मिली, उसको अगर हमने पक्का किया होता तो प्रगति हुई होती। लेकिन हमने जैसा-तैसा काम चलाया।

भूदान के कार्यक्रम को हम छोड दें, ऐसा नहीं। जो मूल विचार है, उसको छोड़ना नहीं है, लेकिन वह किस विचार के साथ जोड़ कर हमें लोगों को समझाना है, यह सोचना चाहिए। जनता जो चाहती है कि यह होना चाहिए, वह जनता स्वयं किस प्रकार से करे, यह प्रश्न है। अगर जनता गतिमान होती है तो फिर उसमें भूदान, ग्रामदान, ग्राम स्वराज्य का विचार डालिये। उसको मुख्य देने को मैं नहीं कह रहा हूँ। एक आम सिद्धान्त रख रहा हूँ कि हमारा एप्रोच रख क्या हो। जनता के जो बड़े-बड़े सवाल हैं, उनको लें। शहरों को तो हमने अछूता ही छोड दिया है। जो निम्न मध्यम वर्ग है, उसकी क्या दशा है, यह सब स्वयं ही जानता है। बाबा ने कई बार कहा कि सरकार किसानों से लगान वसूल करती है तो अनाज के रूप में करे, किसानों से अनाज लेकर गोदाम में रखे और निचले कर्मचारियों को जो वेतन मिलता है उसका एक हिस्सा धान्य के रूप में दे। लेकिन हमने इस बारे में क्या किया? हमको तो भूदान करना है, ग्रामदान करना है, उसी में से हम समझते हैं कि क्रांति होगी। मैं कहता हूँ कि हमें इन सारे प्रश्नों पर सोचना चाहिए। ऐसे प्रश्नों को लेकर हम काम करें। फिर उसमें शराबबंदी, स्वामित्व-विसर्जन, ग्राम-स्वराज्य, शांति आदि सब विचार उसमें डाल सकते हैं।

तफसील में जायें

प्रबंध समिति की तरफ से या संघ-अधिवेशन की तरफ से प्रस्ताव हो कि अमुक-अमुक कार्यक्रम लिया, ऐसा नहीं है। तफ्सील में जाना चाहिए। हम आज जनता के लिए कार्यक्रम बना लेते हैं, वह भी गलत है। उनकी हालत को देखिये, उनके दिल को टटोलिये और बाहर इस दृष्टि से काम कीजिये कि वे स्वयं ही अपने आप कैसे अपने सवालों को हल कर सकते हैं। बाद में बाहर से जो कुछ मदद मिल सकती है, मिलेगी। अपने प्रान्तों में यह विचार करें, सोचें और देखें कि इस प्रकार से भी अहिंसक की शक्ति कैसे बढ़ायी जा सकती है। क्या जनता की जो शिकायतें हैं, उनकी शिकायतें दूर करने का तरीका प्रदर्शन आदि करना ही है? या और कोई प्रक्रिया अहिंसा के नजदीक की भी हो सकती है? आज हमने भूदान से एकदम ग्रामदान और ग्राम-स्वराज्य के कदम उठा लिये हैं, परन्तु बीच में सामाजिक, आर्थिक आदि कदम छोड दिये हैं। हम जनता से इतनी दूर न चले जायें। उसके नजदीक रहते हुए उसकी शक्ति को विधायक और अहिंसक रूप कैसे दे सकते हैं, यह सोचें।

व्यापक बनें

एक दूसरी बात, जो इसी सिक्के का दूसरा पहलू है। हमारी दृष्टि अपने को संकुचित करने की नहीं रहनी चाहिये। हम औरों से कुछ अलग, शुद्ध और पवित्र हैं, हम अपने ही दायरे में काम करेंगे, इस ढंग से न सोच कर हमें कुछ व्यापक बनने का प्रयत्न करना चाहिए। यह किस प्रकार से हो सकता है?

देश में कुछ व्यापक काम हो रहा है, उत्पादन के लिए कुछ योजनाएँ बन रही हैं, कृषि-उद्योगों का एक व्यापक कार्यक्रम चल रहा है, इन सबके ऊपर आपकी क्या छाप पड़ी है? पिछले सम्मेलन में मैंने ग्रामीण औद्योगीकरण की एक बात सुझायी थी, तो वह सिलसिला कुछ शुरू हो रहा है कि किस प्रकार से देहाती क्षेत्रों में औद्योगीकरण हो। भिन्न भिन्न पक्षों के लोगों के साथ भी बातें हुई हैं। जब पहली पंचवर्षीय योजना बन रही थी, तब विनोबा ने कहा था कि योजना का पहला काम यह होना चाहिए कि बेकारी खत्म होनी चाहिए। तब से वह बात चली आती है। पर तृतीय पंचवर्षीय योजना में भी कोई बेकारी खत्म हो जायगी, यह नहीं है। आर्थिक विकास हो रहा है—लोहा, सीमेंट, बिजली आदि का उत्पादन बढ़ रहा है—इसकी एक लंबी फेहरिस्त है, साइकिलें इतनी बन रही हैं, पेंसिलें इतनी बन रही हैं इत्यादि—पर दूसरी तरफ जो साधारण जनता है, उसके जीवन का स्तर नहीं उठ रहा है। तो ऐसी हालत में हमें क्या करना चाहिए? इन विषयों में जितना प्रयत्न सबको करना चाहिए था—जनता के अन्दर से भी और हमारी तरफ से भी, उतना नहीं हुआ। जो कुछ हुआ है, वह बहुत ही थोड़ा है।

असर डालने का तरीका

राजनैतिक क्षेत्र में, व्यापक रीति से सारे देश में १९६३ तक पंचायती राज लागू हो जायगा। तीन लाख ग्राम पंचायतें होंगी, पाँच हजार पंचायत समितियाँ और तीन सौ से ऊपर पंचायत परिषदें होंगी। पंचायती राज स्थापित होने से ये सब चीजें नीचे से बनेंगी। इनको हम छू सकें, इनके ऊपर कुछ असर डाल सकें तो लोकनीति की जो बात हम कहते हैं, उसमें बहुत बल पहुँच सकता है।

हम अपने क्षेत्र में जो काम कर रहे हैं, वह करें। उसके साथ ये जो काम हो रहे हैं, उनमें भी पूरी शक्ति लगानी चाहिए। उदुपुर-सम्मेलन में प्रस्ताव हुआ था, बारह महीने बीत गये, लेकिन ऐसा नहीं लगा कि हम लोगों ने यह काम अपने हाथ में किसी बड़े पैमाने पर लिया है।

गाँवों में हमें क्या करना है? गाँवों में एकता पैदा करनी है, गाँवों का ग्राम-परिवार बनाना है, गाँव की समस्याएँ गाँव के लोगों द्वारा ही हल करानी हैं, सबको प्रेम से रहना है, कोई भूखा, नंगा, बेघर न हो। आप फिर इन कामों के साथ चाहें अन्नदान माँगें, चाहें सम्पत्ति-दान या भूदान।

लोकतान्त्रिक विकेंद्रीकरण और संसदीय लोकतंत्र, ये दो अलग-अलग तंत्र हैं। संसदीय तंत्र व्यक्ति के ऊपर आधारित है। एक एक व्यक्ति को वोट का अधिकार है, उसके वोट से सरकार बनती है। इससे समाज, कम्यूनिटी नहीं बनती है। हम क्या चाहते हैं? हम चाहते हैं कि केन्द्र में तो व्यक्ति हो, पर फिर कई व्यक्तियों का मिल कर परिवार हो, कई परिवारों का मिल कर एक ग्राम-परिवार हो और कई ग्राम-परिवारों को मिल कर एक 'कम्यूनिटी' हो। व्यक्ति मुख्य है, लेकिन उसके व्यक्तित्व की सार्थकता है दूसरे लोगों के साथ रहने में। पंचायती राज इसी पर आधारित है। उसमें जो प्रतिनिधित्व है, वह 'कम्युनिटीज' का, समाजों का होगा। मान लीजिये कि किसी पंचायत समिति में ग्राम-पंचायतों के बीस मुखिया आये। उनमें बीस कांग्रेस के सदस्य होंगे और दस किसी और पार्टी के, तो वे इस पंचायती राज के विधान में 'फिट' नहीं होंगे। पंचायती राज में एक पक्ष हो शासन करने वाला और दूसरा पक्ष हो विरोध करने वाला, यह नहीं चल सकता। एक पंचायत समिति के हलके में तीस गाँव हैं, तो उनके सबके हितों का 'एडजस्टमेंट'—समन्वय करना होगा। तीस सदस्य उसमें आये हैं तो उसमें से बीस एक पक्ष के और दस और किसी पक्ष के, तो क्या क्षेत्र की समस्याएँ उस तरह से विभाजित होंगी और हर बात पर पक्ष के बहुमत से फैसला होता है? यह तो संसदीय लोकतंत्र की चीज है। युनाइटेड नेशन्स—संयुक्त राष्ट्र-परिषद्—में कोई कह दे कि बहुमत से फैसला होगा, तो वह टूट जायगा। जहाँ समाजों का प्रतिनिधित्व है, वहाँ एडजस्टमेंट करना ही होगा।

तो आर्थिक क्षेत्र में, राजनैतिक क्षेत्र में जो कुछ देश में चल रहा है—चाहे वह जनता की तरफ से चलता हो या राज्य की तरफ से चलता हो, उस पर हम किस प्रकार प्रभाव डाल सकते हैं, यह हमें सोचना चाहिये।

अभी बाबा ने एक बात कही थी, वह आपको बता दूँ। उन्होंने कहा कि हम नयी तालीम का काम करें, उसके लिए अपने विद्यालय भी चलायें, लेकिन आज जो व्यापक रूप से शिक्षा का काम चल रहा है उसमें क्या दोष है, उसके लिए क्या करना चाहिए, उसकी तरफ भी ध्यान देना आवश्यक है। उसी सिलसिले में उन्होंने शांति-सेना की बात कही थी। हम गांधी-विचार वाले ही शांति में दिलचस्पी रखते हैं सो बात नहीं है—देश में ऐसे कई नागरिक हैं कि जितनी हमारी तैयारी है शांति के लिए मर मिटने की, उतनी ही उन लोगों की भी है।

तो भावी कार्यक्रम के सिलसिले में ये दो बातें मैंने आपके सामने रखीं। एक तो यह कि हम लोगों के सामने अपना विचार रखें, पर बना-बनाया कार्यक्रम लेकर न जायँ। जनता अपने प्रश्नों को समझे और उनमें से कार्यक्रम निकलने दें। जनता अपने प्रश्नों को किस प्रकार अपनी शक्ति से हल करे, इसमें उसे मदद पहुँचायें और यह करते-करते, फिर साथ ही ग्रामस्वराज्य, स्वामित्व-विसर्जन आदि के अपने विचार भी उसमें डालें। दूसरी बात यह है कि अपने आपको सीमित दायरे में बंद न कर लें, व्यापक बनाने का प्रयत्न करें। देश के आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्र के जो व्यापक प्रश्न हैं, उन पर अपना असर डालें। अगर हमने ऐसा किया तो मैं समझता हूँ कि अगले पाँच वर्ष में—जो मेरे ख्याल से पिछले दस-बारह वर्षों के मुकाबले में कुछ ज्यादा नाजुक वक्त हो सकता है, हमसे जो अपेक्षा जनता रखती है, वह हम पूरी कर सकेंगे।

(पटना अधिवेशन, १४-४-'६२)

——

देश में गोसेवा की स्थिति और प्रगति

• उ०न० ढेबर

राजस्थान में बीकानेर से कच्छ तक पाँच-छह-सौ मील लंबे और डेढ़-दो सौ मील चौड़े विस्तार में गोसेवा का काम ठीक ढंग से चलना चाहिए, क्योंकि यहाँ गायों की संख्या अधिक है। यहाँ के राठी, मुसलमान गाय के दूध से दही, घी, खोआ आदि बना कर बेचते हैं और अपना निर्वाह करते हैं। केन्द्रीय सरकार से पचास लाख रुपये की माग इस क्षेत्र के गायों की देखरेख के लिए की गयी है।

घुमक्कड़ पशुपालकों (नोमेटिक ब्रीडर्स) को जमीन देकर बसाने के लिए भारत सरकार ने ४३ लाख की मंजूरी दी है। पैसा मिल जाने पर इस काम को शुरू करने में कठिनाई नहीं होगी। राजस्थान के बहुत-से गोपालकों के पास दो सौ से तीन सौ तक गायें हैं। सिंधी, हरियाना और थारपारकर नसल की गायें एक समय में ५ से ६ सेर तक दूध देती हैं। सैकड़ों मन दूध मिल सकता है। 'मार्केटिंग' की ठीक व्यवस्था न होने से दूध का भाव बहुत गिरा हुआ है। दूध का खोआ बना कर बेचा जाता है। जैसलमेर जिले में राजस्थान गो-सेवा संघ के दो घी-केन्द्र चलते हैं। वहाँ सरकार ने नसल-सुधार के लिए काम शुरू किया है। बीकानेर क्षेत्र में १ हजार मन गाय का दूध दिल्ली की दूध-योजना में लेने की *अपेक्षा है।*

१ मार्च, १९६२ को ८ मन दूध बीकानेर से दिल्ली आना शुरू हुआ था। महीने की अवधि में ही अब ४० मन दूध दिल्ली पहुँचने लगा है। अभी दूध सिर्फ पाँच गाँव से ही आता है। दूध को बर्फ के कारखाने में जमा कर ट्रेन में ले जाते हैं।

दिल्ली दूध-योजना की माग दस हजार मन की है। उनका ख्याल है कि उन्हें जितना भी दूध मिलेगा, वे ले लेंगे। दिल्ली, पंजाब, राजस्थान और आसपास की जगहों से गाय का दूध पहुँच जाय तो वह दूध भैंस के दूध के भाव खरीद लिया जायगा। १५० मन दूध उत्तर प्रदेश से आता है। दूध बेचना कृषि-गोसेवा समिति का काम नहीं है, लेकिन जहाँ भी नसल सुधार का सवाल पैदा होगा, वहाँ मार्केटिंग, फीडिंग, ब्रीडिंग और विडिंग आदि की व्यवस्था करनी होगी।

श्री लक्ष्मीसहायजी तय करेंगे कि हरएक क्षेत्र में कौनसी नसल हो। राजस्थान बैल और दूध के लिए मशहूर है। दोनों विकसित होकर गाय सर्वांगी बने, इसके लिए क्या करना है, यह सोचना होगा।

जयपुर में आज तो गोरस-भण्डार में केवल २० मन दूध लिया जाता है। वर्धा की तरह ही वहाँ का भण्डार चलता है। आजकल श्री माणिकचन्दजी वह स्कीम चलाते हैं। दूध बिना मशीनों के भी ५० मन तक बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए राजस्थान गोसेवा-संघ को साधन चाहिये। वे दिये जायेंगे। 'पास्चराइजेशन' की जब तैयारी हो जायेगी, तब १५० मन दूध की रोजाना माँग होगी। वह बढ़ते-बढ़ते ६००-७०० मन तक पहुँचेगी। फिर यह सवाल पैदा होगा कि कौनसी नसल बढ़ायी जाय?

'कांकरेज' नसल के लिए आणंद विश्वविद्यालय में एक प्रयोग हुआ। १०० 'कांकरेज' गायें तैयार की हैं और वे आशा करते हैं कि उनको सहायता मिले तो ५ साल में ७ हजार गायें तैयार कर सकते हैं, जो भैंस का मुकाबला कर सकती हैं। आज वहाँ ७१००० भैंसें हैं। योजना है कि गोपालकों को प्रति गाय दो सौ रुपयों की सहायता मिल जाय। सौ रुपया गुजरात वालों से और सौ रुपया गवर्नमेंट से मिलें। अहमदाबाद की डेयरी में सिर्फ भैंस का दूध लिया जाता था। अब रोजाना गाय का करीब १५० मन दूध लिया जाता है, लेकिन उनको आवश्यकता है एक हजार मन दूध की।

बंबई में भैंस का ही दूध चलता है। वहाँ के मुख्य मंत्री यशवंतराव चह्वाण से हमने बात की थी और उन्होंने तय किया है कि ५०० गायें 'आरे कालनी' में रखेंगे। दूसरी ओर एक कालनी वे तैयार कर रहे हैं। उसमें २५० गायें रखेंगे। हमारा 'पोटेन्शियल पीरियड' है। सरकार के अफसर 'मिशनरी' बन गये हैं। वे तो कहते हैं कि हम बापू का अन्य काम कर सकें या नहीं, लेकिन हम यह काम जितना कर सकते हैं, करें। उनकी इस पर श्रद्धा बैठी है, ऐसा तो नहीं कह सकते, लेकिन उन्हें अपील करते हैं, तो वे काम करते हैं।

अभी दो और कदम लेने जा रहे हैं: एक बिहार में और दूसरा मैसूर में। मैसूर में विदेशी नसल से वहाँ की जो स्थानीय 'ब्रीड' है, उसके साथ 'क्रास' किया जाता है। वहाँ के गोपालकों की हालत अच्छी है। वहाँ की गायें पंद्रह-बीस-पचीस सेर *तक दूध देती हैं। दिन में तीन-चार बार* दूध दुहा जाता है। देर होती है तो दूध टपकने लगता है और गायें खुद ही दुहाने के लिए चली आती हैं।

५-६ मई को करनाल में एक 'सेमिनार' हो रहा है। उसमें मुझे बुलाया गया है। गाय का दूध वे लेना चाहते हैं। वे अपने आप ही पहल करते हैं तो करने देना चाहिए।

हिन्दुस्तान में तीन क्षेत्र हैं। एक तो पहाड़ों में पाँच छह हजार फीट की ऊँचाई पर है। गाय को पहाड़ पर चढ़ना पड़ता है। हमारी गाय चढ़ नहीं सकती। पहाड़ पर चढ़ने के लिए उसके पैर अलग किस्म के होने चाहिए। वहाँ की जो भौगोलिक और जलवायु की स्थिति होती है, उसे देखते हुए हमारी गाय चल नहीं सकती। सौ-दो सौ इंच वर्षा होती है और लगातार पाँच छह महीने होती रहती है। वहाँ वे भैंस का इस्तेमाल करते हैं और बैल का भी चावल की खेती के काम में इस्तेमाल करते हैं। तीसरा क्षेत्र है बड़े-बड़े शहरों का, जहाँ दूध की माग है। इन तीनों जगहों पर हम क्या कर सकते हैं, यह सोचना है। जहाँ तक मैसूर का सवाल है वहाँ तो 'क्रास-ब्रीड' हो गया है। दो गायें भी जो रखता है, उस किसान के घर में रेडियो है। उनके लड़के पढ़ाई में बहुत आगे बढ़े होंगे। वहाँ की आबोहवा क्रास ब्रीडिंग के अनुकूल है। बिहार में हम मुजफ्फरपुर जिले में सघन प्रयास-कान्सेन्ट्रेट-करेंगे। हिन्दुस्तान में जो तीन-चार क्षेत्र हैं, जहाँ आबादी का घनत्व अधिक है और किसान के पास जमीन कम है। और हमारे पास संगठन है और अगर हम *अच्छी नसल की गायें किसानों को बाँट* सकें तो उनके लिए पूरक जरिया हो जायगा। २ अक्टूबर के पहले-पहले वैद्यनाथ बाबू के नेतृत्व में यहाँ काम की शुरुआत करना चाहते हैं-१५ दिन वे देंगे। यहाँ बरौनी में 'रिफायनरी' निकल रही है। आज गाय को मजबूत नहीं करेंगे, तो यहाँ की हालत भी बंबई जैसी हो जायगी। मार्केटिंग भी 'सरप्लस' के लिए आसान हो जायगी।

गांधी स्मारक निधि ने भी चार केन्द्र तय किये हैं। वहाँ समग्र-इंटीग्रेटेड-प्रयोग होने रहा है। गवर्नमेंट की ओर से काम की शुरुआत मार्केटिंग से होती है, यहाँ ब्रीडिंग से होती है। अब देखते हैं क्या होता है। इच्छा तो है ही कि इस प्रकार के केन्द्र सारे हिन्दुस्तान में हों। गांधी स्मारक निधि ने पाँच साल का बजट मंजूर किया है। एक केन्द्र के लिए पचीस हजार *रुपया लगता है।*

जहाँ इसकी शुरुआत नहीं कर सके, वह सारा आदिवासी-ट्राइबल-इलाका है। वहाँ पर काम की गुंजाइश भी है और जरूरत भी। जो ग्रामदानी गाँव हैं, वहाँ भी हम काम नहीं कर सके। गुजरात, राजस्थान और बंबई छोड़ कर बाकी के हिस्सों में जहाँ भैंसे पनप रही हैं-जवाहर के क्षेत्र में कम भैंसे हैं, कम गायें हैं, वहाँ कुछ नहीं कर सकते हैं। आन्ध्र में काम शुरू कर सकते हैं और इससे भी बढ़कर हम जनमत-'कान्शसनेस'-नहीं पैदा कर सकते हैं। रचनात्मक कार्यकर्ताओं की इतनी शक्ति पड़ी है इस काम में। अभी राधाकृष्णजी कह रहे थे कि जयपुर के पास एक गाँव है, जहाँ पर जितनी आमदनी जमीन से होती है, उतनी ही आमदनी गाय से भी होती है।

चार पाँच राज्यों का मिला कर, याने हिमाचल, पंजाब, उ० प्र०, राजस्थान *और कश्मीर के चीफ मिनिस्टरों का एक* बोर्ड बनाया गया है। आशा है, इस दिशा में अब ये जल्दी ही कुछ कर सकेंगे।

[कृषि-गोसेवा समिति की बैठक में ता० ९ मार्च '६२ को दिये भाषण से]

'खेती सम्बन्धी अनुभव': एक उपयोगी पुस्तक

खेती के विषय में श्री रेड्डी की यह छोटी-सी किताब केवल प्रयोगों और अनुभवों के आधार पर लिखी हुई होने के कारण बहुत ही उपयोगी हुई है। श्री रेड्डी केवल सिद्धांती—थ्योरिस्ट—नहीं हैं। मूल कर्नाटक के रहने वाले हैं। सेवाग्राम में गांधीजी के आश्रम में उन्होंने व्रत-दीक्षा संपादन की। वहाँ वे हिंदी और मराठी सीखे। खेती के प्रयोगों का उनको वहाँ मौका मिला। शरीर-परिश्रम आश्रमों के व्रतों में एक व्रत है। उस व्रत पर उन्होंने अपना जीवन खड़ा किया।

उड़ीसा के कोरापुट जिले में सैकड़ों ग्रामदान हुए। वहाँ किसी ग्रामदानी गाँव में खेती के आधार पर ग्राम-स्वराज्य की नींव किस तरह डाली जा सकती है, इसके प्रयोग करने के लिए वे कोरापुट जिले में पहुँच गये। वहाँ एक छोटे गाँव में ग्रामीणों के साथ एकरूप होकर उन्होंने खेती के प्रयोग किये और कराये। ये प्रयोग आर्थिक, सामाजिक और आध्यात्मिक, तीनों दृष्टि से किये गये और उसमें उनको काफी सफलता मिली। उसमें से जो निष्कर्ष निकले, वे इस किताब में पेश हैं।

श्री रेड्डी को वहाँ उड़िया भाषा भी सीखनी पड़ी, जो उनके लिए बिल्कुल ही नयी भाषा है। प्रथम-प्रथम भाषा—ज्ञान के अभाव में उनको काफी अड़चनें गयीं। लेकिन प्रेम की भाषा वे जानते थे। इसलिए गाँव वालों के साथ घुलमिल कर वे काम कर सके।

मैं आशा करता हूँ कि उनकी इस किताब से हमारे ग्रामस्वराज्य के सेवकों को बहुत लाभ मिलेगा और इसमें मिलेगी एक दृष्टि।

मैत्री-आश्रम, असम
७-३-६२

—विनोबा का जय जगत्

[अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी से शीघ्र प्रकाशित होने वाली श्री गोविन्द रेड्डी द्वारा लिखित "खेती सम्बन्धी अनुभव" पुस्तक की प्रस्तावना से।]

विनोबा पदयात्री दल से

• कालिन्दी सरवटे

"मैत्री-आश्रम का उद्देश्य क्या है ?"

"मैत्री-आश्रम किस तरह से भारत और दुनिया में मैत्री लायेगा ?"

"मैत्री-आश्रम का कार्यक्रम क्या है ?" "वहाँ के नियम क्या हैं ?"

रास्ते में, पड़ाव पर, चर्चा में आजकल रोजाना ही ये सवाल बाबा को पूछे जाते हैं। मैत्री-आश्रम के बारे में लोगों में बहुत उत्सुकता है। आश्रम के लिए दान भी दिया जा रहा है। अभी तक ५०० रुपयों का दान मिला है। असम के तूफान व बारिश में गाँव-गाँव घूमने वाला बाबा दुनिया और भारत के बीच मैत्री बढ़ाने के लिए भारत के एक सिरे पर एक आश्रम की स्थापना करता है। लोग क्यों भला उसमें दिलचस्पी नहीं लेंगे ? बाबा ने तो आश्रम के द्वारा अपना हृदय ही लोगों को दे दिया है।

तेजपुर में आश्रम के बारे में पूछा गया, तब बाबा ने बतलाया "सबके साथ मैत्री हो, सेवा-कार्य हो, इस काम के लिए हमने एक आश्रम की स्थापना की। भारत की और दुनिया की मैत्री बने, यह उसका उद्देश्य है। यहाँ अलग-अलग भाषाओं का, अलग अलग धर्मों का अध्ययन होगा। यहाँ आध्यात्मिक ग्रंथों का सर्वोदय विचारों का और अलग अलग विचारों का अध्ययन होगा। आसपास के ग्रामदानी गाँवों की सेवा के लिए बहनों को प्रशिक्षण देकर तैयार किया जायेगा। आश्रम की बुनियाद बहुत विशाल होगी। इस आश्रम का उद्देश्य मैत्री है, कार्यक्रम मैत्री है और नियम भी मैत्री है।

"हमने असम में बहुत प्रेम पाया और जितनी सेवा हम कर सकते थे, उतनी सेवा हमने प्रेमपूर्वक की। सबकी सब सेवा हम ही करेंगे, ऐसा मानेंगे तो वह अहंकार होगा। इसलिए इतनी सेवा में संतुष्ट होकर हम आगे बढ़ना चाहते हैं। आठ साल मेरे साथ रही हुई हमारी कन्या को हम यहाँ 'मैत्री-आश्रम' में रख कर जा रहे हैं, ताकि मेरे हृदय का संबंध यहाँ बना रहे।"

असम का उत्तरी क्षेत्र छोड़ कर यात्रा अब पश्चिम की ओर चल रही है। उत्तर के सिरे पर 'मैत्री आश्रम' की स्थापना हुई और हमने उत्तर लखीमपुर जिला छोड़ा। जिला तो छोड़ा, लेकिन संपर्क नहीं छोड़ा, वह तो मैत्री की तन्तु से पक्का बांध रखा है। आठ साल सतत अपने साथ रही हुई अपनी कन्या को, कुसुम देशपांडे को बाबा ने मैत्री का काम (गुड विलमिशन) चलाने के लिए यहीं रख दिया है। बाबा ने एक बार कहा, "कुसुम को मैंने यहाँ रखा है, मतलब मेरी आत्मा ही यहाँ है।" अब कुसुम बहन यहीं रहेगी। एकात्मीकरण के बारे में बाबा के अव्यक्त चिंतन को वह साकार रूप देगी। अपने आठ साल के अमूल्य अनुभवों का लाभ वह दुनिया को देगी।

कुसुम के साथ गुणदा और लक्ष्मी हैं। आश्रम की अन्दरूनी जिम्मेदारी तो गुणदा की ही है। गुणदा का और वर्णन क्या करें! अपने नाम से ही वे अपना परिचय देती हैं। गुणदा बहन बंगाल की यात्रा से ही बाबा के साथ थीं। आयी तो थीं बाबा को असमी भाषा के अध्ययन में सहायता करने के लिए, लेकिन बाबा की मदद करते करते खुद ही बाबा की शिष्या बन गयीं—सिर्फ शिष्या ही नहीं, एक भक्त! गुणदा बहन 'मैत्री-आश्रम' की एक मजबूत आधार स्तंभ हैं।

कुसुम और गुणदा के बड़े बड़े दीयों के बीच एक छोटी, फुर्तीली, चमकीली ज्योति है, हास्यमुखी लक्ष्मी। हास्य एक ऐसी चीज है, जो मनुष्य को खींच लेती है। लक्ष्मी से यह काम सहज ही होने वाला है। सुख में और दुःख में भी सतत हँसने वाली लक्ष्मी अपनी हास्य संपत्ति से 'मैत्री आश्रम' का वैभव बढ़ाने वाली है। असम में बाबा ने एक नया प्रयोग किया। बाबा ने बहुत दिनों से एक नारा चलाया है, "अलग अलग भाषाओं का अध्ययन करो, तब राष्ट्रीय एकात्मीकरण होगा।" असम में उन्होंने स्वयं उस दिशा में प्रयत्न भी किया। यात्रा में दो असमी बहनों को मराठी सिखाना शुरू कर दिया। मानों, 'मैत्री-आश्रम' का अंकुर ही बोया जा रहा था। अब ये दो बहनें मराठी बहुत अच्छी तरह जानती हैं। इन दो में से एक थी हमारी लक्ष्मी।

जैसे ही 'मैत्री-आश्रम' की स्थापना हुई, भारत के कोने कोने से मेहमान आने लगे। बंबई से श्री आठवले शास्त्री और डा० दातार आये थे। दो दिन आश्रम में रहे। श्री आठवले शास्त्री ने जाते समय कहा: "मैत्री-आश्रम से मेरी मैत्री हो गयी है। सोचता हूँ कि समय मिले तो कुछ दिन के लिए यहाँ आऊँ। मैत्री-आश्रम की बहनों को निमंत्रण भी दे रहा हूँ, बंबई आने के लिए।" काशी से श्री नारायण भाई देसाई और श्री कृष्णराजजी भी आये थे और अब श्री दादा तथा विमलाताई भी मैत्री आश्रम के रास्ते पर हैं।

• • •

दरंग में बाबा का अपूर्व स्वागत हो रहा है। दरंग जिले का कार्यक्रम तय हो रहा था, तब बाबा ने दरंग के कार्यकर्ताओं से पूछा: "हमको खाना क्या मिलेगा दरंग में?" कार्यकर्ताओं ने कहा: "बाबा को बहुत अच्छा खाना हम खिलायेंगे।" यहाँ बाबा को वाकई अच्छा खाना मिल रहा है! असम के और जिलों से दरंग में कुछ ठंडी तो अच्छा है ही, लेकिन ग्रामदान में भी दरंग शिवसागर, लखीमपुर से पीछे नहीं। दरंग में हवा कैसी है, कुछ कल्पना नहीं थी। सर्वोदय के करीब-करीब सब कार्यकर्ता लखीमपुर में 'सुवर्णश्री' अंचल में काम कर रहे हैं। बहुत ही थोड़े कार्यकर्ताओं ने यह काम उठा लिया। जनता की पूरी मदद उनको रही। पहले दिन से ही ग्रामदान की हवा महसूस होने लगी। रोजाना चार चार, पाँच-पाँच ग्रामदान मिल रहे हैं। इस क्षेत्र में बाबा पहली ही बार आ रहे हैं। मानों, जनता बाबा की राह देख ही रही थी।

कलई गाँव के श्री पानीराम भाई और श्री कमलेश्वर भाई तन मन से काम में जुटे हैं। दो रोज बाबा का पड़ाव कलई गाँव के "सेवाश्रम" में ही था। दूसरे दिन सुबह आसपास के गाँवों में जाना था। हेमाबहन डर रही थीं कि एक एक मील दूरी पर गाँव है, सुबह तीन बजे बाबा निकलेंगे तो इतनी जल्दी स्वागत के लिए लोग इकट्ठे कैसे होंगे! रात को डरते डरते उन्होंने बाबा को सुझाया, "बाबा कल जरा देरी से निकलेंगे!" बाबा ने तुरंत उत्तर दिया, "तीन बजे निकलेंगे, आलसी लोग हमारे साथ न आयें।" सुबह तीन बजे यात्रा आरंभ हुई। साढ़े तीन बजे एक गाँव में पहुँचे। पूरा गाँव स्वागत के लिए तैयार था। बाबा ने लोगों से पूछा, "कितने बजे उठे हो?" लोगों ने उत्तर दिया, "हम रात भर जग रहे हैं।" बाबा ने मुस्कराते हुए हेमा बहन की ओर देखा। हेमा बहन कहने लगी "अब असम के लोग आलसी नहीं रहे हैं।"

लोग रात भर बाबा के इंतजार में बैठे थे। उनको बाबा को ग्रामदान देना था। हर छोटे गाँव में लोग बाबा को घेर लेते थे। कहते थे, "बाबा दो मिनट इस आसन पर बैठिये, हम आपका स्वागत करना चाहते हैं।" बाबा कहते, "अरे भाई, आगे जाना है।" "बाबा, ग्रामदान लाया है।" सुबह ही सुबह इतना अच्छा नाश्ता बाबा को मिल रहा था! तब उसको छोड़ कर वे भला कैसे आगे चले जाते! मंगल वेला की छह मील की यात्रा में छह ग्रामदान प्राप्त हुए।

आश्रम के सब भाई काम में लगे थे। शाम को बाबा ने उन्हें कहा—"आश्रम, आसपास के लोगों के लिए मार्गदर्शन का, संपर्क का एक स्थान हो। गाँव में झगड़ा हुआ तो लोग आश्रम में आकर बुजुर्गों से उसका फैसला करवाते हैं, ऐसा हो। आश्रम गाँव की सेवा करे। यह हुआ मानव के साथ संपर्क। वृक्षों की सेवा हो, खेती की सेवा हो, गायों की सेवा हो, इस तरह से प्राणीमात्र की, सृष्टि की सेवा आश्रम की तरफ से हो। इसको 'खेती' कहते हैं, याने हाथों से खेती करना। आश्रम में स्वच्छता हो, हर चीज ठीक जगह पर हो, सब दूर प्रसन्नता हो, यह है कुदरत के साथ संपर्क। आश्रम में अच्छे ग्रन्थों का अध्ययन-अध्यापन हो। अध्ययन के लिए अच्छे अच्छे ग्रन्थों का संग्रह आश्रम में हो। गंभीर विषयों का चिंतन यहाँ हो। यह हुआ अच्छे ग्रन्थों के साथ संपर्क। परमेश्वर के संबंध में ध्यान हो, निष्काम कर्मयोग हो, भक्ति का मार्ग खुले, हर काम ज्ञान दृष्टि से हो और साक्षात् परमेश्वर के साथ संबंध पहचानने की चेष्टा करें। याने क्या होना चाहिये?

"मनुष्य के गुणों का विकास होना चाहिये, दोषों का परिमार्जन होना चाहिये और मुक्ति की कोशिश होनी चाहिये। इस तरह से परमात्मा जो सर्वगुणसंपन्न है, उसके साथ हार्दिक संबंध बना रहे। मनुष्य की सेवा होती है तो वह भगवान् की सेवा है, ऐसी भावना रहे, और इस तरह से भगवान् से नित्य संपर्क रहे। ये चतुर्विध संपर्क जहाँ होते हैं, वह आश्रम सच्चा है।"

कलई गाँव का 'सेवाश्रम' दस साल से आसपास के गाँवों की सेवा कर रहा है। 'सेवाश्रम' के अध्यक्ष असम के मुख्य मंत्री श्री चालिहाजी हैं। आश्रम में ही उनकी बाबा से मुलाकात हुई। घंटा-डेढ़ घंटा बाबा के साथ चर्चा हुई। श्री चालिहाजी ने सर्वोदय के काम के बारे में हार्दिक सन्तोष और दिलचस्पी दिखायी। उन्होंने कहा—"भूदान-आंदोलन ने विचार का क्षेत्र आरोग्यवान्–'हेल्दी'–किया है। केवल अच्छे बीज से ही खेती नहीं होती। अच्छी खेती के लिए अच्छे बीज और अच्छी जमीन, दोनों की आवश्यकता होती है। भूदान-आंदोलन से यह सधेगा। सर्वोदय विचार से गाँवों को संगठित विचार –आर्गनाइज्ड थिंकिंग–प्राप्त होगा।"

आगे उन्होंने यह भी बताया कि ग्रामदानी गाँवों में 'ग्रामदान-कानून' के बारे में जो कार्रवाई करनी है, उसमें हमारा पूरा सहयोग रहेगा। उसके लिए एडिशनल सब डिप्यूटी कलेक्टरों की नियुक्ति हम करेंगे।"

दरंग में हमने प्रवेश किया है, तब से यात्रियों को खुराक बहुत अच्छी मिल रही है—शारीरिक और मानसिक, दोनों। यात्रा में नित्य नये मेहमान आ रहे हैं और चर्चाएँ हो रही हैं। हाल ही में श्री जयप्रकाशजी और श्री प्रभावतीजी आकर गयीं। करीब १५ दिन यात्रियों को श्री कृष्णराजजी

विनोबा पदयात्री दल से

• कालिन्दी सरवटे

"मैत्री-आश्रम का उद्देश्य क्या है ?"

"मैत्री-आश्रम किस तरह से भारत और दुनिया में मैत्री लायेगा ?"

"मैत्री-आश्रम का कार्यक्रम क्या है ?" "वहाँ के नियम क्या हैं ?"

रास्ते में, पडाव पर, चर्चा में आजकल रोजाना ही ये सवाल बाबा को पूछे जाते हैं। मैत्री-आश्रम के बारे में लोगों में बहुत उत्सुकता है। आश्रम के लिए दान भी दिया जा रहा है। अभी तक ५०० रुपयों का दान मिला है। असम के तूफान व बारिश में गाँव-गाँव घूमने वाला बाबा दुनिया और भारत के बीच मैत्री बढ़ाने के लिए भारत के एक सिरे पर एक आश्रम की स्थापना करता है। लोग क्यों भला उसमें दिलचस्पी नहीं लेंगे ? बाबा ने तो आश्रम के द्वारा अपना हृदय ही लोगों को दे दिया है।

तेजपुर में आश्रम के बारे में पूछा गया, तब बाबा ने बतलाया "सबके साथ मैत्री हो, सेवा कार्य हो, इस काम के लिए हमने एक आश्रम की स्थापना की। भारत की और दुनिया की मैत्री बने, यह उसका उद्देश्य है। यहाँ अलग-अलग भाषाओं का, अलग अलग धर्मों का अध्ययन होगा। यहाँ आध्यात्मिक ग्रंथों का सर्वोदय विचारों का और अलग अलग विचारों का अध्ययन होगा। आसपास के ग्रामदानी गाँवों की सेवा के लिए बहनों को प्रशिक्षण देकर तैयार किया जायेगा। आश्रम की बुनियाद बहुत विशाल होगी। इस आश्रम का उद्देश्य मैत्री है, कार्यक्रम मैत्री है और नियम भी मैत्री है।

"हमने असम में बहुत प्रेम पाया और जितनी सेवा हम कर सकते थे, उतनी सेवा हमने प्रेमपूर्वक की। उसकी सब सेवा हम ही करेंगे, ऐसा मानेंगे तो वह अहंकार होगा। इसलिए इतनी सेवा में सन्तुष्ट होकर हम आगे बढ़ना चाहते हैं। आठ साल मेरे साथ रही हुई हमारी कन्या को हम यहाँ 'मैत्री-आश्रम' में रख कर जा रहे हैं, ताकि मेरे हृदय का सम्बन्ध यहाँ बना रहे।"

असम का उत्तरी क्षेत्र छोड़ कर यात्रा अब पश्चिम की ओर चल रही है। उत्तर के सिरे पर 'मैत्री आश्रम' की स्थापना हुई और हमने उत्तर लखीमपुर जिला छोड़ा। जिला तो छोड़ा, लेकिन संपर्क नहीं छोड़ा, वह तो मैत्री की तन्तु ने पक्का बाँध रखा है। आठ साल सतत अपने साथ रही हुई अपनी कन्या को, कुसुम देशपांडे को बाबा ने मैत्री का काम (गुड विलमिशन) चलाने के लिए यहीं रख दिया है। बाबा ने एक बार कहा, "कुसुम को मैंने यहाँ रखा है, मतलब मेरी आत्मा ही यहाँ है।" अब कुसुम बहन यहीं रहेगी। स्त्रीशक्ति-जागरण के बारे में बाबा के अव्यक्त चिंतन को वह साकार रूप देगी। अपने आठ साल के अमूल्य अनुभवों का लाभ वह दुनिया को देगी।

कुसुम के साथ गुणदा और लक्ष्मी हैं। आश्रम की अन्दरूनी जिम्मेदारी तो गुणदा की ही है। गुणदा का और वर्णन क्या करें। अपने नाम से ही वे अपना परिचय देती हैं। गुणदा बहन बंगाल की यात्रा से ही बाबा के साथ थीं। आयी तो थीं बाबा को असमी भाषा के अध्ययन में सहायता करने के लिए, लेकिन बाबा की मदद करते-करते खुद ही बाबा की शिष्या बन गयीं—सिर्फ शिष्या ही नहीं, एक भक्त। गुणदा बहन 'मैत्री-आश्रम' की एक मजबूत आधार-स्तम्भ हैं।

कुसुम और गुणदा के बड़े बड़े दीपों के बीच एक छोटी, फुर्तीली, चमकीली ज्योति है, हास्यमुखी लक्ष्मी। हास्य एक ऐसी चीज है, जो मनुष्य को खींच लेती है। लक्ष्मी से यह काम सहज ही होने वाला है। सुख में और दुःख में भी सतत हँसने वाली लक्ष्मी अपनी हास्य संपत्ति से 'मैत्री आश्रम' का वैभव बढ़ाने वाली है।

असम में बाबा ने एक नया प्रयोग किया। बाबा ने बहुत दिनों से एक नारा चलाया है, "अलग-अलग भाषाओं का अध्ययन करो, तब राष्ट्रीय एकात्मीकरण होगा।" असम में उन्होंने स्वयं उस दिशा में प्रयत्न भी किया। यात्रा में दो असमी बहनों को मराठी सिखाना शुरू कर दिया। मानों, 'मैत्री-आश्रम' का अंकुर ही बोया जा रहा था। अब ये दो बहनें मराठी बहुत अच्छी तरह जानती हैं। इन दो में से एक थी हमारी लक्ष्मी।

जैसे ही 'मैत्री-आश्रम' की स्थापना हुई, भारत के कोने कोने से मेहमान आने लगे। बम्बई से श्री आठवले शास्त्री और डा० दातार आये थे। दो दिन आश्रम में रहे। श्री आठवले शास्त्री ने जाते समय कहा: "मैत्री आश्रम से मेरी मैत्री हो गयी है। सोचता हूँ कि समय मिले तो कुछ दिन के लिए यहाँ आऊँ। मैत्री-आश्रम की बहनों को निमंत्रण भी दे रहा हूँ, बम्बई आने के लिए।" काशी से श्री नारायण भाई देसाई और श्री कृष्णराजजी भी आये थे और अब श्री दादा तथा त्रिवेणीबाई भी मैत्री आश्रम के रास्ते पर हैं।

• • •

दरंग में बाबा का अपूर्व स्वागत हो रहा है। दरंग जिले का कार्यक्रम तय हो रहा था, तब बाबा ने दरंग के कार्यकर्ताओं से पूछा: "हमको खाना क्या मिलेगा दरंग में?" कार्यकर्ताओं ने कहा: "बाबा को बहुत अच्छा खाना हम खिलायेंगे।" यहाँ बाबा को वाकई अच्छा खाना मिल रहा है। असम के और क्षेत्रों से दरंग में दूध दही तो अच्छा है ही, लेकिन ग्राम-दान में भी दरंग शिवसागर, लखीमपुर से पीछे नहीं। दरंग में हवा कैसी है, कुछ कल्पना नहीं थी। सर्वोदय के करीब-करीब सब कार्यकर्ता लखीमपुर में 'सुवर्णश्री' अंचल में काम कर रहे हैं। बहुत ही थोड़े कार्यकर्ताओं ने यह काम उठा लिया। जनता की पूरी मदद उनको रही। पहले दिन से ही ग्रामदान की हवा महसूस होने लगी। रोजाना चार-चार, पाँच पाँच ग्रामदान मिल रहे हैं। इस क्षेत्र में बाबा पहली ही बार आ रहे हैं। मानों, जनता बाबा की राह देख ही रही थी।

कलई गाँव के श्री पानीराम भाई और श्री कमलेश्वर भाई तन मन से काम में जुटे हैं। दो रोज बाबा का पड़ाव कलई गाँव के "सेवाश्रम" में ही था। दूसरे दिन सुबह आसपास के गाँवों में जाना था। हेमाबहन डर रही थीं कि एक एक मील दूरी पर गाँव है, सुबह तीन बजे बाबा निकलेंगे तो इतनी जल्दी स्वागत के लिए लोग इकट्ठे कैसे होंगे! रात को डरते-डरते उन्होंने बाबा को सुझाया, "बाबा कल जरा देरी से निकलेंगे!" बाबा ने तुरंत उत्तर दिया, "तीन बजे निकलेंगे, आलसी लोग हमारे साथ न आयें।" सुबह तीन बजे यात्रा आरंभ हुई। साढ़े तीन बजे एक गाँव में पहुँचे। पूरा गाँव स्वागत के लिए तैयार था। बाबा ने लोगों से पूछा, "कितने बजे उठे हो?" लोगों ने उत्तर दिया, "हम रात भर जग रहे हैं।" बाबा ने मुस्कराते हुए हेमा बहन की ओर देखा। हेमा बहन कहने लगी "अब असम के लोग आलसी नहीं रहे हैं।"

लोग रात भर बाबा के इंतजार में बैठे थे। उनको बाबा को ग्रामदान देना था। हर छोटे गाँव में लोग बाबा को घेर लेते थे। कहते थे, "बाबा दो मिनिट इस आसन पर बैठिये, हम आपका स्वागत करना चाहते हैं।" बाबा कहते, "अरे भाई, आगे जाना है।" "बाबा, ग्रामदान लाया है।" सुबह ही सुबह इतना अच्छा नाश्ता बाबा को मिल रहा था। तब उसको छोड़ कर वे भला कैसे आगे चले जाते! बगल देखा तो वह मोल की यात्रा में छह ग्रामदान प्राप्त हुए।

आश्रम के सब भाई काम में लगे थे। शाम को बाबा ने उन्हें कहा—"आश्रम, आसपास के लोगों के लिए मार्गदर्शन का, सलाह का एक स्थान हो। गाँव में झगड़ा हुआ तो लोग आश्रम में आकर बुजुर्गों से उसका फैसला करवाते हैं, ऐसा हो। आश्रम गाँव की सेवा करे। यह हुआ मानव के साथ संपर्क। वृक्षों की सेवा हो, खेती की सेवा हो, गायों की सेवा हो, इस तरह से प्राणीमात्र की, सृष्टि की सेवा आश्रम की तरफ से हो। इसको 'खेती' कहते हैं, याने हाथों से खेती करना। आश्रम में स्वच्छता हो, हर चीज ठीक जगह पर हो, सब दूर प्रसन्नता हो, यह है कुदरत के साथ संपर्क। आश्रम में अच्छे ग्रन्थों का अध्ययन अध्यापन हो। अध्ययन के लिए अच्छे अच्छे ग्रन्थों का संग्रह आश्रम में हो। गंभीर विषयों का चिंतन यहाँ हो। यह हुआ अच्छे ग्रन्थों के साथ संपर्क। परमेश्वर के संबंध में ध्यान हो, निष्काम कर्मयोग हो, भक्ति का मार्ग खुले, हर काम ज्ञान दृष्टि से हो और साक्षात् परमेश्वर के साथ संबंध पहचानने की चेष्टा करें। याने क्या होना चाहिये?

"मनुष्य के गुणों का विकास होना चाहिये, दोषों का परिमार्जन होना चाहिये और मुक्ति की कोशिश होनी चाहिये। इस तरह से परमात्मा जो सर्वगुणसंपन्न है, उसके साथ हार्दिक संबंध बना रहे। मनुष्य की सेवा होती है तो वह भगवान् की सेवा है, ऐसी भावना रहे, और इस तरह से भगवान् से नित्य संपर्क रहे। ये चतुर्विध संपर्क जहाँ होते हैं, वह आश्रम सच्चा है।"

कलई गाँव का 'सेवाश्रम' दस साल से आसपास के गाँवों की सेवा कर रहा है। 'सेवाश्रम' के अध्यक्ष असम के मुख्य मंत्री श्री चालिहाजी हैं। आश्रम में ही उनकी बाबा से मुलाकात हुई। घंटा-डेढ़ घंटा बाबा के साथ चर्चा हुई। श्री चालिहाजी ने सर्वोदय के काम के बारे में हार्दिक सन्तोष और दिलचस्पी दिखायी। उन्होंने कहा—"भूदान-आंदोलन ने विकास का क्षेत्र आरोग्यवान्—'हेल्दी'—किया है। केवल अच्छे बीज से ही खेती नहीं होती। अच्छी खेती के लिए अच्छे बीज और अच्छी जमीन, दोनों की आवश्यकता होती है। भूदान-आंदोलन से यह सधेगा। सर्वोदय विचार से गाँवों को संगठित विचार—आर्गनाइज्ड थिंकिंग—प्राप्त होगा।"

आगे उन्होंने यह भी बताया कि ग्रामदानी गाँवों में 'ग्रामदान-कानून' के बारे में जो कार्रवाई करनी है, उसमें हमारा पूरा सहयोग रहेगा। उसके लिए एडिशनल सब डिप्यूटी कलेक्टर्स की नियुक्ति हम करेंगे।"

दरंग में हमने प्रवेश किया है, तब से यात्रियों को खुराक बहुत अच्छी मिल रही है—शारीरिक और मानसिक, दोनों। यात्रा में नित्य नये मेहमान आ रहे हैं और चर्चाएँ हो रही हैं। हाल ही में श्री जयप्रकाशजी और श्री प्रभावतीजी आकर गयीं। करीब १५ दिन यात्रियों को श्री कृष्णराजजी

का भी लाभ मिला। अब भी दादा और विमलाताई साथ में हैं। आगरे के थी चिमनलालजी और मणिपुर के एक भाई साथ में हैं। सुबह यात्रा में प्रार्थना के बाद बाबा पुकारते हैं—"विमलानंद का अब सुनेंगे।" बाबा का दाहिना हाथ विमला बहन पकड़ लेती हैं और बातें शुरू हो जाती हैं। कभी चिमनलालजी के नाम से पुकार होती है। कभी "मणिपुरिया" को बुलाया जाता है। फिर चर्चा में रंग भर जाता है।

आज किसी ने कहा—"ईसा मसीह के शिष्यों में उसका भाई भी था।"

बाबा ने कहा—"जी हाँ, महापुरुषों के भाई एक तो उनके अनुयायी होते हैं या उनके शत्रु होते हैं। जब वृक्ष अच्छे-से-अच्छे फल देता है, तब वह खुद खतम हो जाता है। वैसे ही जब महान् पुरुष पैदा होते हैं, तब उस कुल का क्षय होता है। अब वह ब्रह्मचर्य से खुद ही कुल को खतम करें तो अच्छा ही है। नहीं तो कुल में, संतानों में सत्व नहीं रहता।"

"एकनाथ के कुल में तो मुक्तेश्वर जन्मे थे!"

"हाँ, लेकिन मुक्तेश्वर महाकवि थे, महापुरुष नहीं थे। वैसे तो तुकाराम के पितामह, माँ के पिता भी एक विद्वान् पुरुष हो गये; लेकिन वे सर्वोत्तम नहीं थे। जहाँ सर्वोत्तम आते हैं, वहाँ कुल-क्षय होता है। तुलसीदास, नानक, कबीर, शानेश्वर, शंकरदेव, माधवदेव, इनमें से कुछ ब्रह्मचारी थे और कुछ गृहस्थाश्रमी। किसी का भी कुल आगे चला नहीं। गौतम बुद्ध को एक लड़का था। किसी ने सुना है उसका नाम?

"पुत्र भी तीन प्रकार के होते हैं: औरस, दत्तक, और मानस। मानसपुत्र महापुरुषों की विचार संपदा आगे ले जाते हैं। औरस जो होते हैं, वे शरीर संपत्ति के मालिक होते हैं—जैसे बाप का रोग है तो वह वे ले लेते हैं या बाप का मजबूत शरीर ले लेते हैं और दत्तक जो होते हैं, वे सिर्फ संपत्ति ही लेते हैं।"

मानस-पुत्र! मानस-संतति! मैं सोचने लगी, मुझे एक नया प्रकाश मिला।

*   *   *

"आज सीताचरण की दूकान का दीवाला निकला या नहीं?" 'गीता-प्रवचन' पर दस्तखत करते करते बाबा ने पूछा। दिवाला तो कैसे निकलेगा? दरंग में प्रवेश करने से पहले ही शर्माजी की बुद्धि ने अंदाजा बांध लिया था और साहित्य का बहुत सा संग्रह उन्होंने साथ में रखा था। दरंग जिले में अभी तक ३१६० रुपयों की बिक्री हुई। शाम को लालटेन के प्रकाश से 'गीता प्रवचन' पर दस्तखत देने का कार्यक्रम चल रहा था। अनेक स्त्री-पुरुष आ रहे थे, बाबा के हाथ में 'गीता प्रवचन' दे रहे थे और दस्तखत लेकर जा रहे थे। बाबा ने मेरा ध्यान खींचते हुए कहा—"देखो, इतने लोग आ रहे हैं, लेकिन एक ने भी इस दरी पर पैर नहीं दिया। चार फुट दूर तक दरी है। वहाँ से लोग हमको किताबें दे रहे हैं, लेकिन दरी पर पैर नहीं रख रहे हैं। ऐसी छोटी-छोटी बातें हमारा ध्यान खींच लेती हैं। कितनी नम्रता है इनमें!" यह है असम की नम्रता और सभ्यता! हम एक साल से यह देखते आये हैं, और इसी में से पैदा होती है असम की श्रद्धा। आज सुबह से एक वृद्ध स्त्री बाबा के पास बैठी थी। बदन पर भगवे रंग का वस्त्र, मुँह पर बुढ़ापे की झुर्रियाँ और आँखों में शक्ति। संन्यासिनी सी थी। बाबा को कह रही थी—"मोक्ष मंत्र दिब लागे"—मुझे मंत्र दीजिये। लोगों ने उसको समझाया कि बाबा प्रवचन से ही मंत्र देंगे, उनका प्रवचन सुनो। उनकी 'गीता-प्रवचन' खरीदो। उसमें उनका मंत्र भरा है। लेकिन वृद्धा को उसमें दिलचस्पी नहीं थी।

'गीता-प्रवचन' पढ़ कर और सुन कर उसमें से मंत्र की खोज करने के लिए वह तैयार न थी। उसको बाबा के मुख से सादा सरल भगवत् नाम का मंत्र चाहिये था। दिन भर वह बाबा के पास बैठी रही। आखिर भक्ति ने विजय पायी। बाबा ने उससे पूछा—"की लागे?" क्या चाहिये? "मत बाबा, एक मंत्र दिब लागे।" मंत्र चाहिये। बाबा ने 'गीता-प्रवचन' की एक प्रति मंगवाई और लिख दिया—"राम-कृष्ण हरि, सत्य, प्रेम, करुणा, बाबा के आशीर्वाद।" वृद्धा की आँखों में आनंद और समाधान नहीं समा रहा था! रात को बाबा ने कहा—"उस वृद्ध स्त्री का चेहरा मुझे पूरी तरह याद है। कितनी शक्ति और श्रद्धा थी उसमें!"

श्रद्धा और भक्ति भारत में कहाँ नहीं है और बाबा को उसका कहाँ प्रत्यय नहीं आया है? अपनी ग्यारह साल की यात्रा के दौरान में बाबा सर्वत्र यही संपत्ति लूटते आये हैं।

काश्मीर में हिन्दू-मुसलमान भाइयों से उन्होंने क्या पाया?—श्रद्धा और भक्ति। चम्बल घाटी में बागियों से उन्होंने क्या पाया?—श्रद्धा और भक्ति।

डाकुओं के परिवर्तन की कहानियाँ संत और सत्पुरुषों की कही हुई हैं। बुद्ध भगवान के बारे में भी ऐसी ही एक कहानी कही जाती है। इस कहानी का जिक्र करते हुए बाबा ने एक बार कहा था:

"अंगुलिमाल नाम का एक डाकू था, बुद्ध के जमाने में। उसका धंधा डाकू का ही था। वहाँ का राजा उससे तंग आ गया था। कहा जाता है कि आखिर उस डाकू की भगवान बुद्ध से मुलाकात हुई और तब से उसने अपना धंधा छोड़ा। राजा को पता चला तो वह वहाँ पर आया और उस डाकू की उसने पूजा की और कहा कि आप भगवान की शरण में आये हैं, इसलिए हमारे लिए पूजनीय हैं। तब से वह आसपास के लोगों के लिए पूजनीय बन गया। पचीस सौ साल हो गये इस बात को।

"अब चंबल घाटी में बागियों ने अपनी बन्दूकें हमको समर्पित कर दीं। वे बन्दूकें बिल्कुल आधुनिक–'लेटेस्ट पैटर्न'–बनावट की थीं। उनमें 'टेलिस्कोप' लगा हुआ रहता है। उससे वे दूर का देख सकते हैं और वहाँ से बंदूक चलाते हैं। यही उनका शस्त्र रहता है। वह उन्होंने हमको समर्पित किया। हिन्दुस्तान भर में उसकी चर्चा हुई। फिर पुलिस ने उन पर मुकदमे चलाये, ज्यादतियाँ भी कीं। इसका परिणाम यह हुआ कि आसपास के डाकुओं में भय पैदा हुआ।

अब परिस्थिति क्या है? डाकुओं के भय से गाँव-गाँव में पुलिस बढ़ा रही है और उनके पास बंदूकें हैं। गाँव में रक्षक दल बनाया, उसके पास बन्दूक हैं और तीसरी बन्दूक डाकू वालों के पास है। अब इधर सरकार आशा कर रही है कि बागियों को, जिन्होंने हमको शस्त्र समर्पण किया था, उनको सजा करेंगे। लेकिन गुनाह साबित नहीं हो रहा है। सरकार समझती है कि केस चलाने में कानून की प्रतिष्ठा है। मध्यप्रदेश की सरकार, राजस्थान की सरकार और उत्तर प्रदेश की सरकार, तीनों सरकारें मिल कर बागियों पर अलग-अलग मुकदमें चला रही हैं। इसलिए हम कहते हैं कि सत्ता में जेल जारी रहेगी और नये नये डाकू होते जायेंगे। इससे कानून की प्रतिष्ठा होती है, ऐसा लोग मानते हैं और इसको 'डिमोक्रसी' नाम दिया है। 'डिमोक्रसी' में सत्पुरुषों का चलना चाहिये, लेकिन औसत का चलता है। 'डिमोक्रसी' औसत की होती है। यहाँ औसत ही आयेंगे, औसत से कानून की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। चीफ जस्टिस मुल्ला के हाईकोर्ट में एक झगड़ा आया। मुल्ला ने कहा—"पुलिस से बढ़कर और कोई डाकू नहीं है। और यह मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ।" सरकार ने कहा कि इससे पुलिस की अप्रतिष्ठा होती है। मुल्ला ने कहा–'पुलिस' परिवर्तन करती है और वह हम प्रकट करते हैं तो उसमें अप्रतिष्ठा नहीं होती है। परिवर्तन पर लिपा-पोती करें तो उसमें अप्रतिष्ठा है।
[दरंग जिला असम-पदयात्रा, ८-४-६२]

विदेशी पूँजी और राष्ट्रीय विकास

भारत का काम देश के साधनों से पूरा नहीं होता। देश की आमदनी बढ़े, इसके लिए ऐसे खर्चें भी करने पड़ते हैं, जिनका लाभ कुछ साल बाद हो। इस दृष्टि से आजादी के बाद के इन सालों में देश ने कर्जा लेकर अपने उद्योग-धंधों और विकास-कार्यों को बढ़ाया है। सन् '६२-'६३ के बजट-वर्ष के अंत में यह कर्ज ५९१२ करोड़ रु० के करीब हो जायगा।

इस कर्ज में देशवासियों से लिये गये कर्ज की मात्रा ४३९१ करोड़ रु० है तथा विदेशों से लिये गये कर्ज की मात्रा १५२१ करोड़ रु० की हो जायगी। विदेशों से लिये कर्ज के आँकड़े करोड़ रुपयों में देशवार इस प्रकार हैं: अमरीका ५९८, वर्ल्ड बैंक १९८, इंग्लैण्ड १७७, पश्चिम जर्मनी १२९, रूस १२३, जापान ४० और अन्य ३६६।

इस प्रकार राष्ट्र की प्रगति के साथ-साथ पूँजी की आवश्यकता बढ़ती जा रही है, पर यह प्रगति देश की गरीबी-अमीरी की खाई पाट नहीं सकी। प्रेसिडेण्ट केनेडी ने अमरीकी पार्लमेण्ट के सामने विदेशों को दी जाने वाली २४०० करोड़ रुपये की सहायता की मांग की पुष्टि करते समय भारत का जिक्र किया और कहा—"भारत, जहाँ की व्यक्तिगत आमदनी की औसत केवल ६० डालर (३०० रुपये) सालाना है—जैसे देशों को साम्यवाद के प्रभाव से बचाने के लिए मदद पहुँचाना बहुत आवश्यक है।" इसका अर्थ यह हुआ कि यह कर्ज और सहायता लेकर हम विश्व के पूर्व पश्चिम के तनाव को घटाने में सहायक नहीं हो सकते।

दूसरी बात यह भी सोचने की है कि पूँजी-आधारित औद्योगीकरण में पूँजीवाले वर्ग की प्रगति जल्दी और पहले हो रही है। पंडित नेहरू ने पार्लमेण्ट में भाषण देते हुए १९ मार्च को कहा, "कुछ अमीरों की अमीरी देश में बढ़ रही है, पर यह कहना गलत है कि गरीब और भी गरीब हो रहे हैं। यह कहना सही है कि आर्थिक शक्ति का केन्द्रीयकरण हो रहा है, परंतु उसको रोकने के लिए आर्थिक विकास को नहीं रोक सकते।"

बड़े कारखानों के उद्योग और केन्द्रित तथा पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था में उपर्युक्त दोष बना रहने वाला है। हमारी विदेशी पूँजी की भूख कभी भी पूरी नहीं होगी। उसके लिए अधिकाधिक निर्यात करके पूँजी लाना और अधिकाधिक औद्योगीकरण करना भी एक ऐसा दुष्चक्र है, जो अंतर्राष्ट्रीय तनाव और विश्व-युद्ध की ओर ले जाने का ही रास्ता है। गांधीजी ने श्रमाधारित स्वावलम्बी अर्थ-व्यवस्था को विश्व शांति की कुंजी कहा है, इस दिशा में बढ़ने की हिम्मत अपने देश में कब आयेगी?

—देवेन्द्रकुमार गुप्त

शान्ति-सेना मंडल का पुनर्गठन

अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति तथा अ० भा० शान्ति-सेना मंडल की संयुक्त बैठक सदाकत आश्रम, पटना में ७-४-'६२ को हुई। उसमें सर्वसम्मति से स्वीकृत हुए प्रस्तावों की जानकारी यहाँ दी जा रही है।

"अखिल भारत सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति देश की वर्तमान परिस्थिति को देखते हुए यह अनुभव करती है कि शान्ति-सेना को व्यापक और अधिक सक्रिय बनना चाहिए। शांति सेना को आज की तरह लोकसेवकों के दायरे तक ही सीमित न रखा जाय, बल्कि अशान्ति के प्रसंग पर भी हिंसक उपायों का अवलम्बन न लेते हुए प्राण-समर्पण करने की जिनकी तैयारी हो, ऐसे हर नागरिक को उस सेना में सम्मिलित होने का और फिर परस्पर विचार विनिमय में, सेना कार्यों में और शान्ति के काम में उत्तरोत्तर कुशल एवं प्रवृत्त होने का अवकाश दिया जाय। इस दृष्टि से विचार करके वर्तमान शान्ति सेना-मण्डल के पुनर्गठन और शान्ति सैनिक के निष्ठा-पत्र में आवश्यक परिवर्तन का निश्चय किया गया।

वर्तमान शान्ति सेना-मंडल सितम्बर १९५९ में सर्व सेवा संघ की पठानकोट की बैठक के समय श्री विनोबाजी द्वारा गठित किया गया था। अभी तक एक प्रकार से मंडल परामर्शदाता-संगठन के रूप में ही काम करता रहा है। यह महसूस किया गया कि मंडल को इस प्रकार पुनर्गठित किया जाय, जिससे वह अधिक सक्रिय हो सके और एक कार्यकारी संगठन के रूप में काम कर सके। श्री विनोबाजी ने भी शान्ति-सेना-मंडल का इस प्रकार पुनर्गठित किया जाना ठीक माना है।

नये मण्डल के सदस्यों के नाम घोषित करने का कार्य श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् तथा श्री जयप्रकाश नारायण से सलाह करके अ० भा० सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी करेंगे।"

* * *

शान्ति विद्यालय, काशी के संबंध में जानकारी देते हुए श्री नारायण देसाई ने मंडल के सदस्यों से विद्यालय को भविष्य में चलाने तथा उसे आगे बढ़ाने की सूचना मांगी। सदस्यों ने यह जरूरी समझा कि–

(१) भविष्य में शान्ति विद्यालय चलाया जाय।

(२) विद्यालय के अलावा देश भर के शांति-सैनिकों के शिविर लिये जायें और इन शिविरों में शान्ति विद्यालय के लिए शान्ति-सैनिक चुने जायें।

इसके अलावा ये सुझाव भी आये कि (अ) शांति-विद्यालय को भारत की किसी-न किसी समस्या के साथ जोड़ा जाय तथा (ब) विश्वशांति सेना के अफ्रीका प्रोजेक्ट में जाने के लिए उत्सुक शान्ति सैनिकों को भी पहले शान्ति विद्यालय में कुछ समय तालीम दी जाय।

तय हुआ कि इन सुझावों पर नया शान्ति-सेना मंडल तफसील से विचार करे।

* * *

बेरूत में हुई विश्वशान्ति सेना परिषद की बैठक की रिपोर्ट उसमें शरीक होने वाले भारतीय प्रतिनिधियों की ओर से श्री सिद्धराज ढड्ढा ने तैयार की थी, जो 'भूदान यज्ञ' में छप चुकी है। मंडल ने उसे मान्यता दी।

काशी में दिनांक २७ और २८ मार्च, '६२ को हुई विश्वशान्ति सेना परिषद के भारतीय प्रतिनिधियों की अनौपचारिक बैठक के संबंध में श्री सिद्धराजजी ने जानकारी प्रस्तुत की।

लेखा-जोखा समिति के सुझाव

भूदान आन्दोलन को शुरू हुए अप्रैल '६१ में दस साल पूरे हुए। इस दशक में हुए काम का मूल्यांकन करने की दृष्टि से संघ की प्रबंध समिति ने १७ अप्रैल '६१ की बैठक में लेखा-जोखा समिति गठित की। इसके सदस्य सर्वश्री क्षितीशराय चौधरी, श्यामसुन्दर प्रसाद, ओमप्रकाश गिरा, म० उ० पाटण्कर हैं और श्री वल्लभस्वामी संयोजक हैं।

लेखा जोखा समिति ने विभिन्न प्रान्तों से भूदान ग्रामदान आदि के अधिकृत आँकड़े तथा जानकारी प्राप्त की। समिति को आज मुख्य जरूरत भूदान में मिली जमीन का वितरण और ग्रामदानी ग्रामों में निर्माण की महसूस हुई। इसके लिए निम्न सुझाव प्रस्तुत हुए :

(१) जहाँ भूदान कानून नहीं बने हैं, वहाँ शीघ्र बनवाये जायँ या दूसरी कोई कानूनी कार्रवाई की जाय।

(२) जहाँ संभव हो, वहाँ वितरण का काम ग्राम-पंचायतों को सौंपा जाय।

(३) भूदान-बोर्ड अपनी ओर से भी वितरण की व्यवस्था करें। उसके लिए जरूरी पैसा सरकार से मिले।

(४) दान पत्र की पुष्टि वगैरह में काफी देर लगती है। इसलिए पुष्टि के बाद ही वितरण करने के तरीके के बजाय कोई दूसरा तरीका खोजा जाय और उसे कानूनी मान्यता दी जाय।

(५) जहाँ ग्रामदान कानून नहीं बने हैं, वहाँ शीघ्र बनवाये जायँ।

(६) जिन गाँवों ने ग्रामदान के बाद कुछ करने की वृत्ति दिखाई है, वहाँ ग्रामसहायक योजना, ग्राम इकाई योजना का लाभ लेकर काम शुरू किया जाय।

(७) ग्रामदान के बाद कुछ करने की वृत्ति न बतायी हो या कुछ न किया हो, फिर भी जहाँ के लोग कहते हैं कि हमने ग्रामदान किया है, उन गाँवों की–

(क) छठा हिस्सा जमीन भूमिहीनों को देना।

(ख) छठा हिस्सा जमीन पर सामूहिक खेती करना, सामूहिक खेती की उपज गाँव के काम के लिए खर्च करना।

(ग) बिहार के 'लेवी' के परिमाण में भूमिहीनों को जमीन देना।

(घ) गाँव से भूमिहीनता मिटाना।

इन बातों में से कोई एक बात करने की तैयारी हो, तो उन गाँवों के युवकों को साल भर में एकाध महीने के शिविर के लिए बुलाया जाय। सर्वोदय-विचार, ग्राम निर्माण की दिशा और कार्यक्रम से परिचित करके उनके द्वारा उन गाँवों से सम्पर्क रखा जाय।

ग्रामदानी गाँवों को आर्थिक मदद और आवश्यक 'लोन' मिलने की आसान व्यवस्था हो।

प्रबन्ध-समिति की अगली बैठक

श्री पूर्णचन्द्र जैन, मंत्री, अ० भा० सर्व सेवा संघ ने प्रबन्ध-समिति के सदस्यों को लिखा है

"कुछ समय से हम सब बराबर यह अनुभव करते हैं कि हमारे आन्दोलन, कार्यक्रम, व्यवस्था वगैरह संबंधी कुछ मुक्त, गहरी और स्पष्ट चर्चा के लिए हमको कम से-कम सप्ताह भर का समय एकसाथ बैठने को निकालना चाहिए। प्रबंध-समिति की बैठक केवल दो तीन दिनों के लिए होती है, तो चर्चाओं के लिए पर्याप्त समय नहीं मिलता। इसलिए प्रबन्ध समिति की पटना बैठक में तय हुआ कि आगामी बैठक ता० १७ जून से २३ जून तक, पूरे एक सप्ताह के लिए की जाय। विनोबाजी की भी सलाह है कि प्रबंध समिति महीने में एक बार सात दिन के लिए एकसाथ बैठा करे। जून की उपर्युक्त बैठक इस सारे सन्दर्भ में ही एक सप्ताह की बुलायी जा रही है। यह बैठक रानीपतरा (बिहार) में होगी।"

सर्व सेवा संघ, पटना-अधिवेशन में स्वीकृत प्रस्ताव

अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध-समिति ने विश्वशान्ति सेना परिषद के एशिया क्षेत्रीय कार्यालय, अफ्रीकी कार्यक्रम में मदद करने की तैयारी, विश्वशांति सेना का समर्थन तथा गोआ में 'सर्वे' के संबंध में भी नीचे दिये चार प्रस्ताव स्वीकृत किये।

विश्वशान्ति-सेना परिषद् का एशिया क्षेत्रीय कार्यालय

"विश्वशान्ति-सेना परिषद् का गठन इस वर्ष के प्रारम्भ में बेरूत में हुआ था। उसके लिए तीन क्षेत्रीय कमेटियाँ– अमेरिका, इंग्लैण्ड और एशिया के लिए बनाये जाने का निर्णय किया गया था। मार्च मास में विश्वशान्ति-सेना परिषद् की एशिया कमेटी की बैठक काशी में हुई थी। उसमें तय किया गया कि इसकी कौंसिल में १२ सदस्य रहें, जिनमें ६ भारत से तथा शेष एशिया के ६ अन्य देशों के प्रतिनिधि रहें। यह भी अपेक्षा की गयी थी कि एशिया की क्षेत्रीय कमेटी का कार्यालय सर्व सेवा संघ में, काशी में हो।

इस निर्णय का सर्व सेवा संघ स्वागत करता है और विश्वशान्ति-सेना परिषद् के क्षेत्रीय कार्यालय के लिए स्थान आदि की सुविधा, बिना किराया लिये देना स्वीकार करता है।"

अफ्रीकी कार्यक्रम में मदद देने की तैयारी

"विश्वशांति सेना ने अफ्रीका में उत्तरी रोडेशिया के स्वातंत्र्य आन्दोलन को अहिंसक मोड़ देने की दृष्टि से जो कार्यक्रम हाथ में लिया है, उसका सर्व सेवा संघ समर्थन करता है और इस कार्यक्रम को यथासंभव मदद पहुँचाने की अपनी तैयारी जाहिर करता है।

विश्व-शान्ति-सेना का समर्थन

"गत दिसम्बर मास में ब्रूमाना, लेबनान में एकत्र दुनिया के विभिन्न मुल्कों के शांतिवादियों ने विश्वशान्ति सेना–वर्ल्ड पीस ब्रिगेड–की स्थापना का जो निर्णय लिया, उसका सर्व सेवा संघ हार्दिक स्वागत करता है। इस घटना से अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अहिंसा की शक्ति को प्रकट करने और विकसित करने का मार्ग खुला है, यह विशेष संतोष का विषय है। ब्रूमाना-परिषद में विश्वशांति सेना के आधारभूत सिद्धांत और ध्येय के बारे में जो निवेदन स्वीकृत किया गया है, उससे संघ सहमत है और वह विश्व-शांति सेना को अपने समर्थन और सहयोग का आश्वासन देता है।"

गोआ में 'सर्वे'

"गोआ-कार्रवाई के बाद वहाँ की वर्तमान स्थिति के संबंध में श्री विमला ठकार और श्री गोविन्दराव शिन्दे के आये हुए पत्र पढ़े गये। गोआ में कृषि प्रधान विकेन्द्रित औद्योगीकरण का कार्यक्रम खादी ग्रामोद्योग आयोग या अन्य एजेन्सी के अन्तर्गत चलाने की दृष्टि से वहाँ एक 'सर्वे' किया जाय, इस सुझाव को स्वीकार किया गया। तय किया गया कि श्री अण्णासाहब सहस्रबुद्धे 'गोखले अर्थशास्त्र संस्थान' के साथ सम्पर्क स्थापित करके इस सर्वे

बिहार में 'बीघा-कट्ठा' अभियान का शुभारम्भ

१ अप्रैल को बिहार के १७ जिलों में 'बीघा-कट्ठा' अभियान का शुभारम्भ हुआ। सर्व सेवा संघ के अधिवेशन के अवसर पर भिन्न प्रदेशों से आये हुए २०० से अधिक कार्यकर्ता इस अभियान में शामिल हुए। इनमें से उत्तर प्रदेश के ७५, महाराष्ट्र के २३, मध्य प्रदेश के ५२, उड़ीसा के १९, गुजरात के १३, पश्चिम बंगाल के ९, राजस्थान के ८, मद्रास के ६ और मैसूर के ५ कार्यकर्ता हैं। इनमें लगभग ३० महिलाएँ भी हैं।

इन कार्यकर्ताओं के अलावा सर्वोदय-मंडलों के लगभग २५० कार्यकर्ता इस अभियान में सम्मिलित हुए हैं। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ और अन्य खादी-संस्थाओं तथा पंचायत-परिषद के सैकड़ों कार्यकर्ताओं से भी सहयोग मिलने की आशा है।

अन्य प्रदेशों से आये हुए प्रमुख लोगों में सर्वश्री अप्पासाहब पटवर्धन, दामोदरदास मूँदड़ा, कृष्णराज मेहता, प्रो० ठाकुरदास बंग, सदाशिवराव सटे, निर्मला देशपांडे और मनमोहन चौधरी का लगातार दो माह तक इस काम में सहयोग एवं मार्गदर्शन मिलता रहेगा। ये क्रमशः पटना, गया, संथाल परगना, पूर्णिया, चंपारण, दरभंगा तथा भागलपुर जिले में कार्य करते रहेंगे।

बिहार सर्वोदय-मंडल की ओर से 'बीघा-कट्ठा' अभियान के समाचारों के विशेष प्रकाशन के लिए एक साप्ताहिक बुलेटिन निकालने की व्यवस्था हुई है। यह बुलेटिन "भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक के ही पूरक अंक के रूप में प्रकाशित होगा। इसकी प्रतियाँ "भूदान-यज्ञ" के अंकों के साथ तथा अलग से भी उपलब्ध हो सकेंगी। अलग से इसकी एक प्रति का मूल्य दस नये पैसे रहेगा।

रतलाम जिले में 'ग्राम-स्वराज्य दिवस' मनाया गया

रतलाम जिले के पंचेवा ग्राम में ६ अप्रैल को 'ग्राम-स्वराज्य दिवस' मनाया गया। प्रातः प्रभात फेरी निकाली गयी। 'आजाद उपचार मंदिर' के प्रांगण में सभा का आयोजन किया गया, जिसमें म० प्र० सर्वोदय मंडल के मंत्री, श्री देवदेव शर्मा तथा म० प्र० शांति-सेना मंडल के संयोजक श्री दीपचंद जैन ने पंचायती राज के संबंध में आने वाली जिम्मेदारियों के संबंध में जानकारी दी। भूदान-पत्रों के ग्राहक बनाये गये तथा साहित्य बिक्री भी की गयी।

मध्य प्रदेश में जिलेवार सूतांजलि के आँकड़े

३० जनवरी से १२ फरवरी तक पूरे प्रांत में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की पवित्र स्मृति में जगह-जगह सर्वोदय मेले तथा सूतांजलि-पर्व आयोजित किये गये थे। सर्वोदय-रचना के लिए मतदान-स्वरूप अब तक जिलेवार प्राप्त सूतांजलि संबंधी जो जानकारी मिली है, वह इस प्रकार है :

जिला होशंगाबाद २६, झाबुआ १०२, सिहोर ४२, उज्जैन ४३९, बिलासपुर ३०८, पूर्व निमाड़ ५१, प० निमाड़ ८१९, राजगढ़ ८०, विदिशा १४२, रायपुर ११४, मुरैना २४१, ग्वालियर २४, मन्दसौर २१५, पन्ना १०८, सागर १७९, इंदौर ८४२, दमोह ३०, शिवपुरी १, गुना १४०, बैतूल ९६, रायसेन ७, बालाघाट १९८, शाजापुर ४१०, सिवनी १३०१, भिण्ड १, धार ७३, देवास ९१, मंडला ११७, नरसिंहपुर ९, रायगढ़ १८३, बस्तर ६१, दुर्ग ११२, छतरपुर १८७ और रीवाँ ४०५। कुल ७,४२४।

आसाम कांग्रेस-कमेटी द्वारा भूदान-कार्य करने का आवाहन !

आसाम प्रदेश कांग्रेस-कमेटी की आज की बैठक आसाम में ग्रामदान और भूदान-आन्दोलन के संबंध में पहले जो प्रस्ताव किया था, उसको जल्दी-से-जल्दी कार्यान्वित करने के लिए जिला कांग्रेस-कमेटी, कांग्रेस की विधान-सभा और संसद के सदस्यगण तथा कार्यकर्त्ता, इन सबको आवाहन करती है।

संत विनोबा भावे के पिछले वर्ष, १९६१ के ५ मार्च से आसाम में पदयात्रा करने के फलस्वरूप ग्रामदान-आंदोलन के कारण अनुकूल वातावरण पैदा हुआ है और एक जागृति दिखायी देती है। कमेटी को आशा और विश्वास है कि इस वातावरण से योग लेकर आसाम की कांग्रेस-कमेटी और कांग्रेस-कार्यकर्त्तागण सक्रिय रूप से और तत्परता से ग्रामदान आन्दोलन सफल करने में लगेंगे।

आज की सभा आसाम की आम जनता, को भी इस आन्दोलन को सफल बनाने का आवाहन करती है।

इस विषय में कार्य करने की योजना बनाने के लिए नीचे लिखे सदस्यों की एक कमेटी बना दी है :

(१) श्री शरत् चंद्र सिंह, संयोजक
(२) श्रीमान् प्रफुल्ल गोस्वामी
(३) श्री महेन्द्र चौधरी।

ये तीनों सदस्य क्रमशः प्रादेशिक कांग्रेस कमेटी के जनरल सेक्रेटरी, उपाध्यक्ष तथा असेम्बली के स्पीकर हैं।

२४ तकुवे वाले चरखे का प्रशिक्षण

१ दिसम्बर '६१ के 'भूदान-यज्ञ' में २४ तकुवे वाले 'जनता चरखे' की जानकारी प्रकाशित की गयी थी। उस पर कते सूत की जाँच अहमदाबाद में खादी-कमीशन द्वारा दो माह तक चली। परिणाम अच्छा निकला। अब कतिनों की सुविधा के लिए चरखे की लम्बाई ३६ इंच के बदले १८ इंच कर दी गयी है और पैर से घुमाने के बदले हाथ से घुमाने की व्यवस्था की है। दाहिना या बायाँ हाथ अदल-बदल कर चरखा घुमा सकते हैं, यह इस चरखे में खास विशेषता है। एक व्यक्ति एक दिन में एक सौ से सवा सौ गुंडी तक इस पर कात सकता है।

इस चरखे का एक 'ट्रेनिंग कोर्स'-प्रशिक्षण पाठ्यक्रम-१ जून '६२ से चलने वाला है। 'ट्रेनिंग' की अवधि तीन माह की रहेगी। जो निजी खर्च से 'ट्रेनिंग' लेना चाहते हैं, वे १५ मई तक व्यवस्थापक, सर्व सेवा आश्रम, पो० तोट्टमुक्कम, आलवाय (केरल), इस पते पर १५ नये पैसे के डाक-टिकट के साथ पत्र-व्यवहार करें। कताई की ट्रेनिंग के साथ-साथ घंटे में एक रत्तल पूनी बनाने की 'जनता-बेलनी' पर भी अभ्यास कराया जायगा।

—सत्यम्

सर्वोदय-साहित्य का प्रचार

साहित्य-प्रचारक श्री प्रह्लादजी ने गत फरवरी और मार्च में हजारीबाग, राँची, चाइबासा और जमशेदपुर में १४०० रु० का सर्वोदय व भूदान साहित्य बेचा।

टिहरी की शराब की दुकान के सामने धरना

जिला सर्वोदय-मंडल, टिहरी के मंत्री, श्री भवानी भाई टिहरी नगर से शराब की दुकानें हटाने के संबंध में वहाँ की महिलाओं द्वारा उठाये गये कदम का ब्योरा देते हुए लिखते हैं :

"शराब की दुकान का नया वर्ष प्रारंभ होने के दिन, १ अप्रैल '६२ को प्रातः ठीक ७ बजे जुलूस निकाला गया और महिलाओं का एक बड़ा जत्था शराब की दुकान के आगे जाकर बैठ गया। महिलाओं ने वहाँ पर धार्मिक भजन गाये और मैं इधर-उधर जाकर काम करता रहा, सायं चार बजे नगर के प्रतिष्ठित लोगों को मिटिंग के लिए आमंत्रित किया। चार बजे शराब की दुकान के सामने महिलाओं, पुरुषों और बच्चों की भारी भीड़ एकत्र हो गयी, जिसके लिए काफी व्यवस्था करनी पड़ी। इसमें जिला सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष, श्री सोमालजी भी पहुँच गये थे। कई लोगों के भाषण हुए। इसके बाद मैं दुकान के आगे बैठा रहा। आज १ अप्रैल को शराब की बिक्री नहीं हुई। ठेकेदार हाथ जोड़ कर कहने लगा कि मेरा भी इसमें सहयोग रहेगा और मैं चाहता हूँ कि यह बन्द हो तो अच्छा है। उसने कहा, जब तक जिलाधीश ने निर्णय नहीं देंगे, तब तक मैं शराब की दुकान नहीं खोलूँगा।

रात को नौ बजे 'गीता-भवन' में सभा हुई। सौ से ऊपर लोग आये और सबने आन्दोलन को आगे बढ़ाने के लिए स्त्रियों की एक कमेटी बनायी।"

टिहरी नगर की शराब की दुकान एक मुहल्ले के बीच में है और इसको हटाने के लिए वहाँ की महिलाओं का एक शिष्टमण्डल पिछले दिनों अधिकारियों से मिला था।

सर्वोदय मित्र-मण्डल, आर्यनगर, कानपुर

फरवरी-मार्च माह का संक्षिप्त विवरण

कानपुर के 'सर्वोदय मित्र मंडल' की प्रति रविवार को तथा 'सर्वोदय-महिला-मंडल' की बैठक प्रति शुक्रवार को गांधी विचार उपकेन्द्र, आर्यनगर में होती है।

उपकेन्द्र का वाचनालय नित्य प्रातः ७॥ से ९॥ बजे तक तथा पुस्तकालय सायं ५ से ७ बजे तक खुलता है। मार्च माह में १९५ वयस्कों तथा ६० बच्चों द्वारा २५५ पुस्तकों का स्वाध्याय किया गया। क्षेत्र के ३६ घरों में 'भूदान-यज्ञ' पत्रिका पहुँचती रही। उपकेन्द्र में सिराके बनाने का कार्य भी चल रहा है।

फरवरी माह में क्षेत्र में चल रहे २६५ सर्वोदय-पात्रों में से २२५ पात्रों द्वारा ९९ रु० ४२ न०पै० मूल्य का अनाज संग्रहीत हुआ। नागरिकों से ४० रु० प्राप्त हुए। २० रु० ९१ न०पै० पिछला शेष था।

उपकेन्द्र द्वारा साधारण रोगों के लिए दवाओं का मुफ्त वितरण किया गया है। ६६ रोगियों की चिकित्सा भी की गयी।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९६४०; इस अंक की छपी प्रतियाँ ९५०० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २७ अप्रैल '६२ | वर्ष ८ : अंक ३०

भक्ति-रहस्य

विनोबा

"जय जय कृपामय देव यदुपति,
तोमार चरण मागों अमूल्य भकति।"

अभी आपने 'नामघोषा' का बहुत सुन्दर पद्य सुना। उसमें माधवदेव ने भगवान् से प्रार्थना की है कि मुझे अमूल्य भक्ति दो। यह अमूल्य भक्ति क्या है? यह भक्ति वह है, जिसका कोई मूल्य नहीं हो सकता, यानी जिसका पैसों में हिसाब नहीं हो सकता। यह भक्ति का स्पष्ट अर्थ है।

लेकिन माधवदेव के मन में दूसरा ही अर्थ था। वे कहते हैं: 'नामधन दिया मोरे किना धनमाली!' मैं बिलकुल अमूल्य भक्त हूँ। हे भगवान्, मुझे कुछ नहीं देना पड़ेगा—तनख्वाह नहीं देनी पड़ेगी, खेती बारी नहीं देनी पड़ेगी, सन्तान नहीं देनी पड़ेगी, कुछ भी नहीं देना पड़ेगा। सिर्फ नाम धन दो और मुझे खरीद लो! अरे! मुफ्त का सेवक मिल रहा है, फिर भी नहीं अपनाते? कैसी अक्ल है भगवान् की! 'दास पाई नलवा कमन ठाकुरालि!'—यह कैसा ठाकुर है! कहाँ का स्वामित्व है! बिना मूल्य सेवक मिले, फिर भी नहीं लेते। 'अमूल्य' शब्द के दो अर्थ हुए: एक तो ऐसी भक्ति, जिसकी कीमत नहीं हो सकती। और दूसरा अर्थ है, ऐसा भक्त, जिसके लिए कुछ देना नहीं पड़ता।

भक्ति के दो रूप

निरपेक्ष भक्ति करना बहुत बड़ी बात है। मैं सेवा के लिए तैयार हूँ, और भगवान् मुझे सेवक के तौर पर रखने के लिए तैयार नहीं। इस पर भगवान् को कोसे, यह कोई छोटी भक्ति नहीं! कोई निकलेगा ऐसा भक्त, जो माधवदेव की तरह भगवान् को ऐसी खरी-खरी सुनाये? बहुत हैं भगवान् का नाम लेने वाले, पर वे क्या कहते हैं? कोई कहता है कि 'मैंने नौकरी के लिए अर्जी दी है, वह मंजूर हो जाय।' कोई कहता है: 'इस साल फसल अच्छी आये।' कोई कहता है कि 'मैं परीक्षा में पास हो जाऊँ।' और कोई कहता है: 'मेरे सन्तान हो।' इस तरह लोग अपने-अपने मतलब के लिए भगवान् का नाम लेते हैं। उनका प्यार भगवान् से नहीं, खेती बारी, बाल-बच्चे, मान-मुरव्वत और चुन कर आने से होता है! वे यह नहीं चाहते कि हमें भगवान् मिलें, उनके दर्शन हों, उनका वरदहस्त हमारे सिर पर रहे। वे तो अपने मतलब की ही बात चाहते हैं।

माधवदेव की भावना

लेकिन माधवदेव क्या कहते हैं? वे तो कहते हैं कि हमारी स्वतन्त्र इच्छा ही न हो। हम भक्त तो तुम्हारे सर्वथा अर्पण हैं। तुम स्वामी हो और हम हैं सेवक। तुम आज्ञाकारी हो और हम हैं आज्ञाधारी। तुम्हारे मार्गदर्शन पर हम चलें और अन्त में सर्वस्व तुम्हें समर्पण कर दें।

भगवान् की मूर्ति

आसपास जो मानव मूर्ति है, वह भगवान् का रूप है। हम उस भगवान् की सेवा के लिए जन्मे हैं। इस प्रकार मानव को परमात्मा की मूर्ति समझकर सेवा करें, फल की कामना न रखें, यह सब अर्थ निकलता है अमूल्य भक्ति, अत्यंत मूल्यवान भक्ति से। इसलिए भक्त भगवान् से ही माँगता है।

जय जय कृपामय देव यदुपति,
तोमार चरणे मागों अमूल्य भकति।
नामधन दिया मोरे किना धनमाली,
दास पाई नलवा कमन ठकुरालि॥

भक्ति का काम

हम ग्रामदान के काम को भगवान् की भक्ति समझते हैं। सब मिलकर रहना, एक-दूसरे के साथ प्रेम रखना, सहयोग करना इस दृष्टि से यह भक्ति का काम है। भगवान् के लिए स्वामी विवेकानन्द का एक शब्द है—दरिद्रनारायण। जो दरिद्र हैं, दुःखी हैं, उनकी हम कुछ-न कुछ सेवा करें। भगवान् स्वामी हैं। हमको यहाँ सेवा के लिए भेजा है। भगवान् हमें सेवा से प्राप्त होंगे। भगवान् स्वयं ही सेवापात्र बन कर हमारे सामने उपस्थित हैं।

जो लोग भगवान् को पहचानते नहीं हैं, वे क्या करते हैं? सुन्दर नैवेद्य बनाते हैं, प्रसाद तैयार करते हैं और भगवान् की पत्थर की मूर्ति के सामने रखते हैं। भगवान् तो खाते नहीं, वे खुद खा जाते हैं। उनके पास कोई भूखा व्यक्ति भीख मांगने आ जाये, तो उसे दुत्कार देते हैं! वे कैसे लोग हैं!

नामदेव का प्रेमाग्रह

नामदेव की कहानी है। वे छोटे थे, छह साल के। एक दिन उन्हें पिताजी ने कहा कि आज भगवान् की पूजा तुम करो। नामदेव पूजा करने गये। आवाहन, विसर्जन, मन्त्र-तन्त्र, धूप दीप से पूजा की। फिर दूध से भरा प्याला भगवान् के सामने रखा और फिर राह देखने लगे कि भगवान् कब दूध पीते हैं! भगवान् उठे नहीं। समय बीतता रहा। नामदेव ने भी तय कर लिया कि जब तक भगवान् दूध नहीं पी लेंगे, मैं भी नहीं उठूंगा। नामदेव ध्यानस्थ होकर बैठ गये। भगवान् उनके प्रेमाग्रह को टाल नहीं सके। नामदेव की इच्छा पूरी हो गयी।

वास्तविक भक्ति

नामदेव की तरह कल हम चढ़ायें, वह दूध भी मूर्ति पीने लगेगी, तो उसको अर्पण करना ही बंद कर देंगे! आज वह नहीं पीती है, इसलिए अर्पण करते हैं। यह भक्ति नहीं है। भूखे लोग हैं, गरीब लोग हैं, उनके लिए हमारे दिल में करुणा नहीं है, निष्ठुरता से उनके साथ व्यवहार करते हैं और भगवान को भोग चढ़ाते हैं, यह बिल्कुल गलत है।

विनोबा के दो पत्र

बुनियादी शालाओं का शिक्षण!

स्कूल के बच्चे तकली वगैरह चलाते हैं, यह तो मैं पसन्द करता हूँ, लेकिन उसका कपड़ा उनके बदन पर नहीं दिखता है। ऐसी कताई में कोई प्राण नहीं है!

अलावा इसके, बौद्धिक विषय अलग से सीखते जाना और साथ-साथ तकली भी चलाते जाना, यह ज्ञान और कर्म का समन्वय नहीं है। इस विषय की काफी चर्चा मैंने 'शिक्षण-विचार' नाम की किताब में की है। आश्चर्य की बात है कि वह किताब 'बुनियादी' कही जाने वाली शालाओं में अभी तक पहुँची नहीं!

[असम-यात्रा, २५-२-'६२] —विनोबा का जय जगत्

तेनाली के सर्वोदय-पात्र

सर्वोदय-पात्रों का काम तेनाली में, दो साल से सुव्यवस्थित चल रहा है। मेरा विश्वास है कि उससे कल्याणकारिणी शक्ति निर्माण होगी। अक्सर लोग पूछते हैं, काम तो ठीक चला, लेकिन उसमें क्रांति क्या हुई? ऐसे प्रश्नों में दूरदृष्टि का अभाव होता है। सेवा का हर कार्य क्रान्ति का बन सकता है, अगर उसके आयोजन में मूल्य-परिवर्तन की दृष्टि रहे। जो सेवक सतत काम करते हैं, उनकी जीवन शुद्धि उत्तरोत्तर होती जाय, इस तरफ दृष्टि रहे तो बाकी सब काम उसीमें से फलित होगा।

[असम यात्रा, २३-१-'६२] —विनोबा का जय जगत्

आन्दोलन तथा संगठन संबंधी प्रश्नों पर विनोबा की राय

दादा धर्माधिकारी द्वारा बातचीत का सार संघ की सभा में प्रस्तुत

सर्व सेवा संघ के पटना-अधिवेशन के तुरन्त पहले दादा धर्माधिकारी श्री विनोबाजी से मिलने आसाम गये थे। वहाँ सर्व सेवा संघ तथा सर्वोदय-आन्दोलन संबंधी प्रश्नों पर दादा की जो चर्चा विनोबाजी से हुई थी, उसका सार संघ-अधिवेशन में बतलाते हुए दादा ने कहा :

सर्व सेवा संघ

विनोबा मानते हैं कि पिछले दस वर्षों में संघ की शक्ति बढ़ी है, कम नहीं हुई है। संघ एक सज्जनों की जमात है। हर व्यक्ति में गुण-दोष, दोनों होते हैं—कुछ गुण और कुछ दोष। पर हमारे सारे दोषों और गुणों सहित, देश में निरपेक्ष विचार जनता के सामने रखने वाली यह एक जमात है। सबको मिल कर उसकी शक्ति बनाये रखनी चाहिए। सब देवताओं ने मिल कर अपनी-अपनी शक्ति दुर्गा को समर्पण की, तब दुर्गा महिषासुर को समाप्त कर पायी। संघ में भिन्न-भिन्न व्यक्ति, भिन्न प्रकार की विभूतियाँ वाले हैं। इन सबकी शक्ति मिलनी चाहिए, तब समस्याओं के हल निकाल सकने का सामर्थ्य मिलेगा। वैयक्तिक शक्ति के समर्पण में से सामूहिक शक्ति का जन्म होता है।

संघ में सब प्रकार के रसों से युक्त व्यक्तित्व रखने वाले व्यक्ति हैं। आम मीठा होता है, नीबू खट्टा और संतरा खट्-मिट्ठा। लेकिन सबका अपना-अपना स्वतंत्र रस है। अगर हरएक व्यक्ति अपने में रस-ग्रहण की शक्ति का विकास करेगा तो भिन्न-भिन्न रसों का स्वाद मिलेगा। सबका जीवन समृद्ध होगा।

प्रबंध समिति के सदस्यों को यह तय करना चाहिए कि हर महीने में ७ दिन के लिए वे इकट्ठे रहेंगे। देश की विभिन्न समस्याओं पर विचार विमर्श करेंगे, आन्दोलन की गतिविधि पर सह-चिन्तन करेंगे। सहजीवन से परस्पर स्नेह भी बढ़ेगा। बारी-बारी से भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में यह मिलन होगा तो क्षेत्र के कार्यकर्ताओं से भी परिचय बढ़ेगा। कार्यकर्ताओं में परस्पर सौहार्द बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है। अब ज्यादा जिम्मेदारी उत्तरोत्तर जो तरुण कार्यकर्ता हैं, उन पर सौंपनी चाहिए। संघ के संविधान में प्रान्त का स्थान नहीं है। केवल जिला है। जहाँ बहुत बड़ा प्रान्त हो, वहाँ जिले के आधार पर काम चलाया जा सकता है।

शांति-सेना

शांति-सेना को व्यापक बनाने की जयप्रकाशजी की जो कल्पना है, वह ठीक है। देश की गतिविधि पर हमारा असर हो सके और किसी भी विषम परिस्थिति में देश को सर्वोदय विचार से नेतृत्व मिल सके, उसके लिए तैयारी करनी होगी। वह तैयारी कैसे हो सकती है; यह पूछने पर विनोबा ने कहा—

(१) लोगों में अभिक्रम जाग्रत करना होगा, आकांक्षा पैदा करनी होगी।

(२) लोगों की आकांक्षा और आवश्यकताओं को अभिव्यक्त करने वाले और उनकी पूर्ति की कोशिश करने वाले कुछ कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होगी। वैसे कार्यकर्ता खोजने होंगे और उनकी एक सेना या वर्ग खड़ा करना होगा।

(३) शस्त्र-शक्ति का निराकरण करना होगा।

संघ और राजनीति

कोई ऐसी परिस्थिति पैदा हो जाय कि जिस परिस्थिति में हम तटस्थ नहीं रह सकते, हमको प्रत्यक्ष राजनीति में कुछ न-कुछ करना हो तो हम क्या करें? देश में ऐसी परिस्थिति पैदा हो सकती है कि किसी-न किसी प्रकार की तानाशाही आ जाय। फिर वह तानाशाही दक्षिण-पंथियों की हो या वामपंथियों की। ऐसे अवसर पर क्या हम देश में जो लोकतंत्र-वादी पक्ष हैं, उनमें से किसी में शामिल हो जायेंगे? विनोबा की राय थी कि इस प्रकार अगर हम शामिल होंगे तो कुछ नहीं कर पायेंगे। वर्तमान राजनैतिक सत्ताधारी जो पक्ष हैं, उसका कलेवर तो पुष्ट हुआ है, पर उसमें प्राण नहीं है। विरोधी पक्षों में से किसी में शामिल होने से भी कुछ नहीं निकलेगा। हम पक्ष-निरपेक्ष शक्ति खड़ी करेंगे तो शायद कुछ कर पायेंगे। यह लोकनीति के आधार पर ही हो सकती है। लोकनीति को मजबूत करने के लिए शांति सेना का कार्य व्यापक बनाना जरूरी है। पक्षीय राजनीति अब 'सेच्यूरेशन पॉइण्ट' पर पहुँच गयी है, अर्थात् इससे आगे वह नहीं जा सकती। उसके मार्फत हम कुछ कर पायेंगे, यह भ्रम है। लोकनीति को मजबूत बनाने के लिए कालेज के युवकों में काम करना हमारा एक विशिष्ट कार्यक्रम होना चाहिए। वे ही आगे जाकर मतदाता होंगे।

विनोबा ने कहा कि सर्व सेवा संघ यदि सर्वसम्मति से राजनीति में सक्रिय कदम उठाने का तय करे, तो मैं उसका विरोध नहीं करूँगा। दरअसल तो हम राजनीति में नहीं थे या नहीं हैं, यह मानना ही गलत है। हम जो कर रहे हैं, वह असली राजनीति है, दूसरे लोग जो कर रहे हैं, वह सत्ता की नीति है। फिर भी इसके अलावा कुछ करना हो तो सर्वसम्मति से बात तय हो, सम्मिलित चिन्तन के परिणामस्वरूप किया जाय।

जयप्रकाशजी और राजनीति

जयप्रकाशजी कभी कभी राजनैतिक समस्याओं पर उनके मन में जो आता है, कह देते हैं। कार्यकर्ता कहते हैं कि वे नेता हैं, इसलिए वे कुछ कहते हैं तो हमारी स्थिति अनुकम्पनीय हो जाती है। इस संबंध में विनोबाजी ने कहा कि क्या कार्यकर्ता यह चाहते हैं कि हमारी अपनी राय है, वही हम बार-बार सुनते रहें? अपनी शक्ल-सूरत हम स्वयं ही देखते रहें? इसमें न वैचारिकता है, न सुन्दरता है और न रसिकता। जे० पी० संघ में पदाधिकार पर रहते हुए भी राजनैतिक समस्याओं पर समय-समय पर कुछ कहना चाहें तो अवश्य कहें। कोई विचार व्यक्त करने से पहले जितने मित्र उस समय उपलब्ध हों, उनसे सलाह कर लिया करें, लेकिन प्रबंध समिति की सभा तक रुके रहें, यह जरूरी नहीं है। इस प्रकार की व्यक्तिगत राय कोई भी प्रकट करता है, वह अगर संघ की नीति के प्रतिकूल है तो संघ के अध्यक्ष या मंत्री वैसा कह सकते हैं और जाहिर कर सकते हैं कि यह उनकी व्यक्तिगत राय है। हाँ, कृति अगर करनी हो तो सबको मिल कर सर्वसम्मति से करनी चाहिए, यह मर्यादा मानी जाय। जे० पी० प्रत्यक्ष कुछ कृति करना चाहें तो संघ के साथ मिल कर सोचें, वे अपने को एकाकी न समझें।

काश्मीर का प्रश्न

काश्मीर के बारे में विनोबा ने कहा कि काश्मीर में जो अभी हाल ही में चुनाव हुए, उनके लिए चुनाव के जो नियम इस देश में हैं, वे ही वहाँ लागू किये जाने चाहिए थे। कहा जाता है कि ऐसा नहीं हुआ। अगर वे ही नियम लागू नहीं किये गये, तो गलत हुआ है। जैसे चुनाव हुए हैं, उनके विषय में भी शिकायत है। उन शिकायतों की तरफ ध्यान दिया जाना चाहिए।

बर्मा में घुड़दौड़, जूए और सौन्दर्य-प्रतियोगिता पर पाबंदी

बर्मा की नयी सरकार ने अभी हाल ही में रंगून के टर्फ क्लब—घुडदौड का आयोजन करने वाली संस्था—के संचालकों को बुला कर उन्हें हिदायत दी है कि वे एक साल के अन्दर-अन्दर अपना क्लब बंद कर दें। बर्मा के प्रमुख शासक, जनरल ने वीन ने क्लब के संचालकों से कहा कि वे स्वयं अपने विद्यार्थी-काल से, अर्थात् पिछले ३० वर्षों से घुडदौड के शौकीन रहे हैं और इसलिए वे जो कुछ कह रहे हैं, समझबूझ कर कह रहे हैं। जनरल ने वीन ने कहा कि 'घुडदौड ने एक भी व्यक्ति को मालदार नहीं बनाया है, जब कि लाखों लोग अपना पैसा वहाँ आकर लुटाते हैं! घुडदौड क्लब के संचालकों से उन्होंने कहा कि वे एक साल का समय उन्हें दे रहे हैं, ताकि वे अपना मौजूद कारोबार समेट लें और दूसरा काम खोजें।

रंगून के टर्फ क्लब की सम्पत्ति, विशाल घुडदौड़ का मैदान और अद्यतन सुविधाओं से लैस दर्शक गैलरी आदि है। हर रविवार को घुडदौड होती है और सरकार को खुद घुडदौड पर लगाये गये टैक्स से करीब एक करोड रुपये की आमदनी हर साल होती है। घुडदौड क्लब के संचालक ने वीन के इस अचानक आदेश से हक्के-बक्के रह गये, लेकिन उन्होंने उसका कोई विरोध नहीं किया। अपना कारोबार बंद करने के लिए एक साल की मोहलत देने पर उन्होंने आभार प्रकट किया।

इसी प्रकार के बर्मा में 'शान' इलाके में एक पुराना रिवाज चला आ रहा है कि वहाँ जब जब बौद्ध-मंदिर में उत्सव के दिन आते हैं, तब उस इलाके के जागीरदार अपने-अपने गाँवों में काफी बडी बडी रकमें वसूल करके जूआ खिलाने वाले लोगों को 'लाइसेंस' देते हैं और इन धार्मिक त्योहारों के दिनों में लोग खुल कर जूआ खेलते हैं। बहुत-से जागीरदार तो इसी आमदनी पर अपना निर्वाह करते आ रहे हैं। जनरल ने वीन की सरकार ने इन जूए के अड्डों को बंद करने का आदेश दिया है।

ने वीन की सरकार ने इसी प्रकार के एक तीसरे आदेश द्वारा सरकारी सहायता से चलने वाली व्यायाम और खेलकूद की संस्थाओं को स्वास्थ्य के नाम पर लड़कियों की सौन्दर्य प्रतियोगिताएँ आयोजित करने से रोक दिया। अपने आदेश में सरकार ने कहा है कि इन 'सौन्दर्य'-प्रतियोगिताओं ने बर्मा की परम्परागत शालीनता को धक्का पहुँचाया है, जब कि स्त्रियों के शारीरिक गठन और स्वास्थ्य में इस प्रतियोगिताओं से कोई लाभ नहीं पहुँचा है।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

भूदान का बीजमंत्र

हमारे अेक मित्र ने कहा की भारत को आज जरा भारत-प्रेम सीखने की जरूरत है। हमने जवाब में कहा की दुनीया की हालत देखते हुअे केवल भारत-प्रेम से काम नहीं चलेगा। अब तो 'जय जगत्' चलेगा। 'जय जगत्' के बीना 'जय हीन्द' नहीं होगा। अीसलीअे हम बराबर यह समझाते हैं की अब वीश्व होगा देश, भारत होगा प्रदेश, प्रान्त होगा जीला, गांव बनेगा परीवार। अीस वास्ते घर का वीस्तार गांव तक करो और देश का वीस्तार वीश्व तक करो। अीस प्रकार वीस्तार करना ही भूदान और ग्रामदान है।

भूदान का बीजमंत्र है—वीश्वास। 'सबमें ज्योती ज्योत है सोई।'—आत्मवीश्वास रखने से ही यह काम सफल होगा।

अीसा की कहानी है। अुसने अेक चोर को चोरी करते हुअे देखा, तो पूछा—"तुमने यह क्या कीया? कीसका धन चुराया है, अुसे वापस कर दो।" चोर बोला—"मैंने चोरी नहीं की।" यह सुन कर अीसा बोले—"देखो, मेरी आंखों से ज्यादा मैं तुझ पर वीश्वास करता हूं। अीसलीअे तुम कहते हो, तो मैं मान लेता हूं की तुमने चोरी नहीं की।"

अीसा के समान ही हमको हरअेक पर वीश्वास रखना चाहीअे। यही वीश्वास लेकर हम घूम रहे हैं। अैसे वीश्वास से दुनीया में धर्म-स्थापना होगी।

[अछाअीपुरीया,
शीरसागर, २५-९-'६१] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

आर्थिक योजनाओं की असफलता !

संयुक्त राष्ट्रसंघ की ओर से अभी हाल ही में दुनिया के आर्थिक सर्वेक्षण की एक रिपोर्ट प्रकाशित हुई है। उसमें प्रकाशित कुछ तथ्य हमारे विचार के लिए काफी गम्भीर सामग्री प्रस्तुत करते हैं। हिन्दुस्तान ने पिछले पन्द्रह वर्षों में काफी आर्थिक विकास किया है, ऐसी अक्सर दलील दी जाती है। भिन्न-भिन्न देशों से प्राप्त आँकड़ों के आधार पर संयुक्त राष्ट्रसंघ की रिपोर्ट में बताया गया है कि एशिया के अविकसित मुल्कों में पिछले सालों में हुए आर्थिक विकास की दृष्टि से हिन्दुस्तान का नम्बर बीसवाँ है!

जो कुछ भी आर्थिक 'प्रगति' इस मुल्क में हुई भी है, उसका असर कहाँ क्या पड़ा है, इस सम्बन्ध के आँकड़े और भी आँख खोलने वाले हैं! योजना-कमीशन तथा सरकार की ओर से अपनी रिपोर्टों में बार-बार इस बात का बड़ा बखान किया जाता है और जोर दिया जाता है कि हिन्दुस्तान की 'राष्ट्रीय आय' पिछले सालों में कई प्रतिशत बढ़ी है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की रिपोर्ट में दिये गये आँकड़ों से मालूम होता है कि राष्ट्र की औसत आय के बारे में जो कुछ भी स्थिति हो, जहाँ तक आर्थिक विषमता का सवाल है, उसका चित्र हिन्दुस्तान में आज भी भयावह है। रिपोर्ट में बताया गया है कि हर सौ व्यक्तियों के पीछे—

४५ व्यक्तियों की माहवारी आमदनी रु० १० और २० के बीच है।

३० व्यक्तियों की माहवारी आमदनी रु० २० और ३० के बीच है।

२४ व्यक्तियों की माहवारी आमदनी रु० ३० और ५० के बीच है।

१ व्यक्ति ही १०० में से ऐसा है, जिसकी माहवारी आमदनी रु० ५० से ऊपर है।

१९६० में हिन्दुस्तान में प्रति व्यक्ति औसत आमदनी रु० ३३० वार्षिक थी, अर्थात् करीब रु० ३० मासिक। ऊपर के आँकड़ों से स्पष्ट है कि हिन्दुस्तान के ३/४ व्यक्तियों की औसत आमदनी राष्ट्रीय औसत से नीचे है। सिर्फ २५ फीसदी लोगों की औसत से ऊपर आमदनी है। यह विषमता किस प्रकार उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है, उसका सबूत इस बात से मिलता है कि १९५१ और १९६१ के बीच हिन्दुस्तान के १० बड़े उद्योगपतियों की सम्पत्ति १०० करोड़ से बढ़ कर २११ करोड़ हो गयी है और यह सब हो रहा है उस समय जब कि हमारी सारी योजनाओं का ध्येय समाजवाद की स्थापना का बताया जाता है!

सरकार के हाथ में कर लगाने की जो सत्ता है, वह उसकी खास करके आर्थिक सामाजिक नीति को कार्यान्वित करने का एक बड़ा साधन मानी जाती है। समाजवादी व्यवस्था में सामान्य तौर पर यह माना जाता है कि सम्पत्ति और आमदनी इत्यादि पर सीधे कर ज्यादा मात्रा में हों और उपभोग की वस्तुओं के वसूल किये जाने वाले कर अल्प मात्रा में, क्योंकि उनका असर गरीबों पर ज्यादा पड़ता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ की रिपोर्ट में दिये हुए आँकड़ों पर से जाहिर होता है कि सीधे सम्पत्तिक करों से होने वाली सरकार की आमदनी जो सन् १९४४-४५ में १९३ करोड थी, वह १९५९-६० के वर्ष में बढ़ कर केवल २०२ करोड हुई, जबकि उपभोग की चीजों पर लगाये गये अप्रत्यक्ष करों से होने वाली आमदनी सन् १९४४-४५ में १५० करोड से बढ़कर १९५३-५४ में ही करीब ४०० करोड तक पहुँच गयी और १९५९-६० में ८५४ करोड तक।

बेकारी के मामले में भी आर्थिक योजनाएँ पूरी असफल रही हैं, जब कि १९५६ में लगाये गये कागजी हिसाब के अनुसार—वास्तविक नहीं—जिन्हें काम नहीं मिल सका होगा, ऐसे लोगों की संख्या ५३ लाख थी, १९६१ में वह संख्या ९० लाख हो गयी। तीसरी पंचवर्षीय योजना की समाप्ति के समय १९६६ में यह संख्या १ करोड ४० लाख तक पहुँचने का अंदाज है।

उपरोक्त आँकड़े अपनी कहानी अपने आप बतला रहे हैं। उन पर ज्यादा आलोचना करने की आवश्यकता नहीं है।

टिप्पणियाँ

बर्मा से सबक लें

शराबबंदी के खिलाफ जो सबसे बड़ी दलील दी जाती है, वह यह है कि उससे सरकार की आमदनी घट जायगी। इसी अंक में अन्यत्र बर्मा की नयी सरकार के उस नये आदेश का जिक्र छपा है, जिसकी ओर उन्होंने रंगून में घुड़दौड़ को बंद किया है। इस घुड़दौड़ के कारण बर्मा की सरकार को हर साल एक करोड से अधिक रुपये की आमदनी होती थी, जो बर्मा जैसे अपेक्षाकृत छोटे देश के लिए कम नहीं है। पर लाखों लोगों की बर्बादी का ख्याल करके बर्मा की सरकार ने बिना किसी हिचकिचाहट के घुड़दौड़ को बंद करने का आदेश दे दिया। इसी प्रकार उन्होंने त्यौहारों और उत्सवों के दिनों में चलने वाले जुए के अड्डों को भी बंद करने का आदेश दिया है। इन अड्डों से वहाँ के सैकड़ों छोटे-बड़े जागीरदार अपनी रोटी-पानी और ऐशआराम चलाते थे। शरीर स्वास्थ्य के नाम पर चलने वाली बर्मी नवयुवतियों की सौन्दर्य प्रतियोगिताएँ भी बर्मा की सरकार ने बंद की है।

लोगों को शराब पिला कर या उनको जुये, व्यभिचार इत्यादि अनीति के रास्ते पर लगा कर आमदनी करना किसी भी सभ्य सरकार के लिए क्षम्य नहीं कहा जा सकता। लोगों में अनीति फैला कर, उनकी कमजोरियों को प्रोत्साहन देकर उनके चरित्र और स्वास्थ्य के साथ खिलवाड़ करना शर्मिन्दगी की ही बात होनी चाहिए। आर्थिक दलील के अलावा इन चीजों को बंद नहीं कर सकने के बारे में एक दलील यह दी जाती है कि जनमत इस प्रकार की बंदिशों को सहन नहीं करेगा। नीति या चरित्र इत्यादि के मामले में जनता की रुचि को और उनके मत को मोड़ने की कोई कोशिश करने में अगर लोकतंत्र असफल साबित होता है तो तानाशाही के सामने वह अपनी हार कबूल करता है। पर वास्तव में लोकमत उन राजनैतिक नेताओं के स्वार्थप्रेरित डर का द्योतक है, जिन्होंने लोगों के सस्ते मत के बल पर सत्ता प्राप्त की है और जो उसे किसी भी हालत में छोड़ना नहीं चाहते। बर्मा की सरकार ने जिस क्षेत्र में जुये के अड्डों पर पाबन्दी लगायी है, उसके बारे में कहा जाता है कि वहाँ इस परम्परा के कारण अधिकांश लोग जुआ खेलने के शौकीन थे, लेकिन इस पाबंदी के लगने पर उन्होंने उसका स्वागत किया, क्योंकि वे उससे होने वाली अपनी बर्बादी से भी अपरिचित नहीं थे।

संगठन की पृष्ठभूमि 'जय जगत्' हो !

दुनिया की परिस्थितियाँ कितनी तेजी के साथ पुराने मूल्यों को बदल रही हैं, इसका एक उदाहरण दुनिया के भिन्न-भिन्न देशों द्वारा इस बात की अनुभूति है कि पिछले कुछ दशकों की तरह अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार अपने-अपने देश के हितों की दृष्टि से नियंत्रण लगाना और एक-दूसरे से व्यापार के मामले में होड़ करना स्वयं उन देशों के हित में अब उचित नहीं रहा है। १८ वीं शताब्दी के अन्त में एक विशेष दिशा में विज्ञान के विकास के कारण जो औद्योगिक क्रांति शुरू हुई और बड़े पैमाने पर आर्थिक शोषण सम्भव हुआ, उसके फलस्वरूप पिछले डेढ़ सौ वर्षों में नेशनलिज्म-राष्ट्रवाद-की भावना ने काफी जोर पकड़ा। दुनिया के गुलाम राष्ट्रों के लिए तो राष्ट्रवाद की भावना आवश्यक ही थी, पर स्वतंत्र राष्ट्रों में भी राष्ट्रवाद अपनी चरम सीमा को पहुँचा और राष्ट्रीयता को बहुत बड़े गुण के रूप में माना जाने लगा। छोटा-बड़ा हरएक राष्ट्र

अपने आप में सर्वतंत्र स्वतंत्र-सावरेन-है, इस भावना ने एक ओर पक्का और राष्ट्रीय हित के नाम पर हर देश ने आवागमन, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क इत्यादि पर प्रतिबंध लगाये। निजी पत्र व्यवहार इत्यादि का भी सेन्सर जायज माना गया। आज बिना अपने देश की सरकार और दूसरे संबंधित देश की सरकार की इजाजत के मनुष्य एक देश से दूसरे देश में जा भी नहीं सकता। इस प्रकार मानव जाति टुकड़े-टुकड़े में खण्डित हो गयी।

जिस तरह लोभ और मुनाफाखोरी के सन्दर्भ में भौतिक विज्ञान के विकास का परिणाम राष्ट्रवाद के रूप में प्रकट हुआ, उसी तरह अब विज्ञान का और अधिक विकास उसी राष्ट्रवाद की सीमाओं को तोड़ने के लिए मानव को प्रेरित कर रहा है। योरोप के कुछ देश, जो पीढ़ियों एक-दूसरे के कट्टर दुश्मन रहे, पिछले कुछ वर्षों से एक 'संयुक्त बाजार' बनाने की चेष्टा कर रहे हैं। योरोपीय भूखण्ड के छह देशों ने एक-दूसरे के बीच अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के बन्धन ढीले कर दिये हैं। इंग्लैण्ड भी इन राष्ट्रों का पड़ोसी होने के कारण उसका स्वाभाविक झुकाव इस संयुक्त बाजार में शामिल होने की ओर हो रहा है। इसी प्रकार अभी हाल ही में अफ्रीका के छह राष्ट्रों ने—घाना, गिनी, माली, मोरक्को, इजिप्ट और अलजीरिया ने—आपसी व्यापार पर से सब प्रकार के प्रतिबंध उठा लेने का तय किया है। विश्व-नागरिकता की बात करने वाले, जो आज आदर्शवादी माने जाते हैं, वे ही नहीं, बल्कि व्यावहारिक दृष्टि से सोचने वाले कई लोग भी अक्सर अमुक-अमुक देशों की संयुक्त नागरिकता कायम करने और पासपोर्ट इत्यादि के बंधन उठा देने की बात करते हैं। विज्ञान की अत्यधिक प्रगति ने दुनिया के लोगों को स्थूल दृष्टि से एक-दूसरे के इतना नजदीक ला दिया है कि अब छोटे-छोटे देशों के बीच के ये सारे बंधन लोगों को अपने स्वार्थों की पूर्ति में भी बाधक मालूम हो रहे हैं। पर यह सारा मोड़ स्वागत-योग्य होते हुए भी इतना समझ लेना जरूरी है कि भावनात्मक दृष्टि से सम्पूर्ण मानव जाति की एकता के आधार पर छोटे छोटे संकुचित दायरों और प्रतिबंधों को तोड़ कर या उन्हें अमान्य करके 'जय जगत्' के आदर्श की ओर अग्रसर होना एक बात है और भौतिक परिस्थितियों के कारण स्वार्थों के विस्तार के लिए किया जाने वाला संगठन या एकीकरण बिल्कुल दूसरी चीज है। हम आशा करते हैं कि कि केवल परिस्थितियों के दबाव से पैदा हुई विस्तार की ये भावनाएँ भी धीरे-धीरे मानव-जाति की एकता की वास्तविकता की ओर बढ़ेंगी और केवल परिस्थितियों के दबाव से नहीं, लेकिन समझबूझ कर मनुष्य इस सत्य की ओर बढ़ेगा कि सारी मानव जाति एक और अविभाज्य है, उसका हित भी एक है, और अहित भी एक है।

यह खतरनाक प्रलोभन !

पंजाब प्रदेश के पंचायत विभाग के मंत्री ने अभी हाल में एक भाषण में यह बताया कि गाँवों में जो परती जमीन पड़ी हुई है, उसमें से एक तिहाई जमीन हरिजनों और पिछड़ी जाति के लोगों को किराये पर दी जायगी और बाकी की दो-तिहाई नीलाम के जरिये बेच दी जायगी। हरिजनों को जो एक-तिहाई जमीन दी जाने वाली है, वह भी बोली लगा कर ही दी जायगी, अर्थात् जो सबसे ज्यादा किराया देने के लिए राजी होगा, उसी को जमीन मिलेगी, और बोली लगाने से जो रकम इकट्ठी होगी, वह गाँवों के उपयोग के लिए पंचायतों के ही सुपुर्द कर दी जायगी।

अखबारों में जो समाचार प्रकाशित हुआ है, उसमें स्वाभाविकतः पूरी तफसील नहीं है, लेकिन दो बातें साफ जाहिर होती हैं। पहली बात तो यह कि अब कि दो-तिहाई जमीन अन्य लोगों को सब प्रकार के मालिकाना हक के साथ बेच दी जायगी, हरिजनों को दी जाने वाली एक-तिहाई जमीन केवल किराये से दी जायगी। दूसरी बात यह है कि दोनों ही सूरतों में जमीन बोली या नीलाम के आधार पर दी जायगी, न कि आवश्यकता के आधार पर। जाहिर है कि इस तरह नीलाम के आधार पर जमीन उन्हीं लोगों के हाथ में जायगी, जो ज्यादा पैसा देकर उसे ले सकते हैं। हरिजनों के लिए सुरक्षित रखी गयी एक-तिहाई जमीन भी हरिजनों की आड़ में पैसे वालों के हाथ में ही जायगी। जमीन को इस तरह पैसे से खरीदी जाने वाली वस्तु बनाना और उसमें व्यक्तिगत मालकियत का तत्त्व दाखिल करना सर्वथा अनुचित है। जमीन मानव मात्र का बुनियादी आधार है। किसी भी कारण से अमुक लोगों को उसे अपने कब्जे में कर लेने की सुविधा देना और अमुक लोगों को उससे वंचित रखना सामाजिक दृष्टि से घातक है और अन्याय भी है। जमीन के लिए पैसे की बोली लगवाना, जिस जमींदारी और जागीरदारी को एक तरफ से समाप्त किया जा रहा है, उसी को दूसरे प्रकार से पुनर्जीवित करने जैसी बात है। पंजाब के मंत्री महोदय ने बोली की रकम गाँवों के काम के लिए पंचायतों को दिये जाने का प्रलोभन देकर पहले से ही गाँववालों के विरोध को समाप्त करने की कोशिश की है। पर उसके कारण इस सारी योजना के पीछे जो खतरा है, उसकी तरफ लोगों को नजरअन्दाज नहीं होना चाहिए।

सुरा-मंदिर की जगह शबरी-मंदिर

मलयपुर (बिहार) में किये गये शराबबंदी के आन्दोलन से 'भूदान-यज्ञ' के पाठक परिचित हैं। पिछले साल आठ महीने की सतत 'पिकेटिंग' के बाद बिहार-सरकार ने मलयपुर गाँव की कलाली बंद कर दी थी। शराब वहाँ से उठ गयी थी। पर गांजा-चरस इत्यादि अभी बिकता था। खुशी की बात है कि अब मलयपुर से गांजा और चरस भी उठा दिया गया और इस प्रकार यह गाँव एक तरह से निर्व्यसन हुआ है। पर बिहार के साठ हजार गाँवों में मलयपुर एक है और इतने लम्बे चौड़े वीरान प्रदेश में एक अकेला पौधा पनपना मुश्किल है। हम आशा करते हैं कि यह बात बिहार सरकार के ध्यान में होगी और वे बिहार में सम्पूर्ण नशाबंदी लागू करने की तरफ सोच रहे होंगे।

सर्व सेवा संघ के पटना-अधिवेशन के बाद ता० १२ अप्रैल को मलयपुर के पुराने मदिरालय के दर्शन करने का सौभाग्य हुआ। आम सड़क से थोड़ी दूर हट कर एक छोटे-से मकान में यह मदिरालय था। आसपास करीब-करीब सारी बस्ती हरिजनों की और गरीबों की है। थोड़ी दूर पर ही बाजार भी है। हमारे साथी श्री रमावल्लभजी चतुर्वेदी के साथ हमने मदिरालय की परिक्रमा की और मन में यह कल्पना आयी कि काश इस पवित्र स्थान पर, जहाँ नैतिकता की एक विजय हुई, उस विजय की यादगार में एक मन्दिर होता। उसके थोड़ी देर बाद ही हरिजन भाइयों की पुराने मदिरालय के पास एक कीर्तन सभा आयोजित की गयी थी और अचानक रमावल्लभजी ने कीर्तन के बाद अपने भाषण में यह सुझाया कि जिस स्थान पर पुराना मदिरालय था, वहाँ शबरी और राम का मंदिर हो। वहाँ पर मौजूद हरिजन भाइयों ने उत्साह के साथ इस सुझाव का स्वागत किया।

स्वर्गीय रवि बाबू ने एक बार कहा था कि हिन्दुस्तान के लोगों में और दूसरे देशों के लोगों में इतना ही अन्तर है कि अन्य देशों के लोग अपनी दिन भर के काम की थकान शराब पीकर भुलाने की कोशिश करते हैं, जब कि हिन्दुस्तान का व्यक्ति दिनभर की मेहनत के बाद भजन-कीर्तन से अपनी थकान मिटाना पसन्द करता है। दुर्भाग्य से पिछले वर्षों में यह परम्परा लुप्त होती जा रही है और कुछ तो 'बड़े' आदमियों की देखादेखी और कुछ शराब उत्तरोत्तर आसानी से मिलने लगने के कारण हिन्दुस्तान का व्यक्ति भी इस मामले में अन्य देशों का अनुसरण करने लगा है। मलयपुर के पुराने मदिरालय के स्थान पर शबरी मन्दिर की स्थापना सचमुच सब दृष्टियों से उपयुक्त और करने लायक चीज है। आसपास के थके-मांदे हरिजन नौजवान दिन भर की अपनी मेहनत के क्लेश को शबरी मंदिर के आंगन में बैठ कर जिस दिन थकान को भुला सकेंगे वह दिन कितना सुखद होगा !

क्या काशी शराबबंदी नहीं चाहती ?

काशी जैसे नगर में शराबबंदी का विशेष महत्त्व है। काशी के लोग दूसरे शहरों के लोगों की अपेक्षा कुछ भिन्न हैं या ज्यादा पवित्र हैं, ऐसी बात नहीं है, लेकिन फिर भी कुछ स्थानों के बारे में ऐसी परम्पराएँ और मान्यताएँ बन जाती हैं और उनके साथ ऐसी भावनाएँ जुड़ जाती हैं कि उनसे मनुष्य को अपनी भावनाओं के विकास में सहारा मिलता है। काशी ऐसे स्थानों में से है, जिसके साथ हजारों वर्षों से पावित्र्य की भावना जुड़ी हुई है। सारे देश की भावनात्मक एकता में भी काशी का विशेष स्थान है। ऐसे स्थानों के बारे में सामान्य दृष्टि की अपेक्षा कुछ भिन्न प्रकार से सोचना सब तरह से उचित और प्रासंगिक है। इसी खयाल से विनोबा ने एक से अधिक बार इस बात पर आश्चर्य और दुःख प्रकट किया है कि काशी जैसे शहर में भी नशाबंदी नहीं है। इस बारे में उनकी भावना कितनी तीव्र है, यह इससे प्रकट होता है कि जब कभी सर्वोदय की दृष्टि से काशी में कोई कार्यक्रम उठाने की बात सामने आयी, तब-तब विनोबा ने काशी में पूर्ण नशाबंदी को प्रथम स्थान दिया है। उन्होंने यहाँ तक कहा है कि इसके लिए अगर 'सत्याग्रह' करना पड़े तो वह भी किया जाना चाहिए।

ता० १६ अप्रैल को उत्तर प्रदेश विधानसभा में एक प्रश्न का जवाब देते हुए आबकारी मंत्री डा० सीताराम ने वाराणसी में शराबबंदी के बारे में जो यह कहा कि निकट भविष्य में वाराणसी में नशाबंदी करने की सरकार की कोई योजना नहीं है, वह इस दृष्टि से हमारे लिए एक गम्भीर चुनौती है। प्रांत में अन्य जगह भी नशाबंदी लागू करने का सरकार का कोई इरादा नहीं है, यह भी उन्होंने इसके साथ जाहिर किया। सरकार खुद होकर प्रजा के चारित्र्य और स्वास्थ्य के बारे में कोई कदम उठाये तो यह उसके लिए गौरव और प्रशंसा की बात होगी। पर यह गौरव और प्रशंसा पाने की उसकी तैयारी नहीं है, तो उसका एकमात्र विकल्प यही है कि लोगों की तरफ से वह मांग प्रकट हो। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि आज न तो आम लोगों में इतना अभिक्रम और साहस रहा है कि वे अपनी आवाज उठा सकें, न सर्वोदय कार्यकर्ताओं जैसे जनसेवकों ने, जिनसे इसकी अपेक्षा की जाती है कि वे जन-शक्ति को जाग्रत करके उसे असरकारक बनायें अपनी शक्ति या तीव्रता का कोई परिचय अब तक दिया है। जब तक जनता की शक्ति को जाग्रत करने के लिए निष्काम जन-सेवक आगे नहीं आते, तब तक आज की परिस्थिति में सरकार से किसी भले काम की आशा करना व्यर्थ है।

—सिद्धराज

देश का संरक्षण भावना से होगा, शस्त्र से नहीं

दादा धर्माधिकारी

अध्यक्षजी मुझसे कहते हैं कि उम्र भर बोलते ही रहे हो, तो इस वक्त समय के नाम पर चुप क्यों हो ? इस कारण से उपसंहार का भाषण करने को मैं आ गया हूँ। नहीं तो समय इतना कम होते हुए, जो काम की बातें और प्रेरणा की बातें कह सकते थे, उनका समय लूँ, यह प्रमाद मुझसे नहीं होता। एक योग्यता और अधिकार भी मेरा है। सर्व सेवा संघ की किसी भी संस्था या समिति का मैं सदस्य नहीं हूँ, परन्तु जो सर्व सेवा संघ में लगे हुए काम करने वाले भाई हैं, उन सबका मैं अनुचर हूँ। यह एक ऐसी योग्यता है, जो अपने आप में एक बहुत बड़ी योग्यता है। इस अधिकार से मैंने यह सोचा कि मैं कुछ कहूँ तो शायद वह एक ऐसे व्यक्ति की बात मानी जायगी जो सबके साथ है, लेकिन औपचारिक या अधिकृत रूप से किसी का सदस्य नहीं है। एक दूसरी और योग्यता है। इधर कुछ दो-तीन वर्षों से मैंने ऐसा माना कि इस आंदोलन में अब मेरी भूमिका नहीं रह गयी। तो जो कुछ मैं कहता हूँ, वह उस मनुष्य की आवाज या उस मनुष्य के शब्द जैसा है, जो मनुष्य एक तरह से निवृत्त हो गया है।

अब तक मैं समझाने और समझने का ही काम करता रहा। अब इतने वर्षों बाद भी अगर मैं यह सोचूँ कि मेरे साथी और साधारण जनता नहीं समझी है तो मैं अपनी बुद्धि पर तो तरस कर सकता हूँ, लेकिन आपकी और जनता की बुद्धि का अपमान कैसे कर सकता हूँ ! इसलिए मैंने माना है कि प्रयोगवीरों का यह जमाना है और उन्हें ही अपनी-अपनी बात कहनी चाहिए। दूर से तटस्थ भाव से निवृत्त होकर भी जो कुछ मैं सोचता हूँ, उतना ही आप लोगों की सेवा में पेश करूँगा। तीन दिन तक लोगों ने इस सभा में जो भाषण किये और जो भाषण सुने, उनमें से कुछ मुख्य-मुख्य बातें आप लोगों की सेवा में अब निवेदन करना चाहता हूँ।

समग्र दृष्टि की जरूरत

पहली बात जो मेरे मन में लगातार आती रही, वह यह कि अब इस देश का संरक्षण विचार और भावना से होगा, शस्त्र से नहीं। मैं अहिंसा-सर्वोदय निरपेक्ष देश के संरक्षण की बात कर रहा हूँ मेरी अपनी यह दृढ़ भावना है कि किसी देश का संरक्षण केवल शस्त्र से नहीं होता।

संरक्षण दो प्रकार का होता है : एक विधायक संरक्षण और दूसरा, प्रतिरक्षण। प्रतिरक्षण आक्रमण के विरोध में होता है और स्व-संरक्षण विधायक होता है, नित्य होता है।

यहाँ पर नई तालीम, लोक निर्माण की बात कही गयी। एक किस्सा है। मास्टरजी ने लड़कों को हाथी देखने के लिए भेजा। किसी ने हाथी की पीठ पर हाथ घुमाया, उसे वह दीवार के समान लगा, किसी ने उसकी सूंड पर से हाथ घुमाया, उसे वह खम्भे के समान लगा। किसी ने उसके कान पर से हाथ घुमाया, तो उसे सूप के समान लगा। किसी को रस्सी की तरह लगा। मास्टरजी ने लड़कों से पूछा कि ये लोग कौन थे ? लड़कों ने जवाब दिया, 'स्पेशियालिस्ट' थे। हमें जिस समग्र दृष्टि की आवश्यकता थी, वह नहीं आ सकी। वह समग्र दृष्टि शिक्षण में है।

लार्ड मोर्ले इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध राजशास्त्री थे। एक बात उन्होंने कही कि देश की स्वतंत्रता के संरक्षण और स्वतंत्रता के विस्तार के लिए मैं स्कूल मास्टर का ज्यादा भरोसा करता हूँ, क्योंकि उसके हाथ में 'प्राइमर' है। अब इसमें और जो कुछ जोड़ना चाहते हैं, जोड़ लीजिये। कोई कहेगा कि हाथ में झाड़ू भी हो, कोई कहेगा तकली भी हो—चाहे वह आप जोड़ लीजिये। लेकिन एक चीज उसके हाथ में होना आवश्यक है और वह है उसका विचार। यह विचार व्यापक और समग्र होना चाहिए।

लोकतंत्र को बचाने का उपाय

इसकी बहुत बड़ी आवश्यकता इसलिए है कि आज का जमाना 'रीजनल करेक्टर्स' का है। इस देश में क्षुद्र क्षेत्रवाद का नग्न नृत्य हो रहा है ! वल्लभस्वामी ने संकेत किया कि समस्या स्थानीय हो, वास्तविक हो। मैं इसमें इतना ही जोड़ूँगा कि स्थानीय समस्या भी विश्व रूप की हो, सार्वजनिक हो। भूमि की समस्या का यह गुण है। इसे हमने आधारभूत इसलिए माना कि उसके आधार पर सम्प्रदाय-निरपेक्ष, जाति और पक्ष निरपेक्ष अखिल भारतीय व्यासपीठ का निर्माण कर सकें। इस देश में अनेक अखिल भारतीय संस्थाएँ हैं, लेकिन सर्व सेवा संघ की अखिल भारतीयता में और उन संस्थाओं की अखिल भारतीयता में बहुत बड़ा अंतर है। इसको मैं लोकतंत्र के साथ मिला देता हूँ। लोकतंत्र जिस दिन संकट में आ जायगा, उस दिन आप खूब याद रखिये कि आपका स्थान या तो कैद में होगा या परलोक में होगा। इसलिए भी इस देश में लोकतंत्र को बचाने की बहुत बड़ी फिक्र है। मेरी प्रार्थना है कि घर घर जाकर इस देश के लोगों को यह समझाइये और सिखाइये कि इन्सान की आजादी की शान स्वतंत्रता में है, आराम में नहीं है। गोआ का व्यक्ति अगर कहता है कि पुर्तगाली राज्य इस स्वराज्य से अच्छा था; इस देश का व्यक्ति अगर ऐसा कहता है कि अंग्रेजों का राज्य स्वराज्य से बेहतर था; हैदराबाद के लोग अगर कहते हैं कि आपके राज्य से हमारे निजाम का राज्य श्रेयस्कर था, तो उनको समझाइये कि यह मानवीय मनोवृत्ति नहीं है। हमारे विचार में कोई दोष न हो। हम इतना लोगों को समझायें कि इन्सान वह है, जो भूखा होने पर भी आराम के लिए आजादी को नहीं बेचता।

लोकतंत्र की मूल भित्ति

ट्रेन में एक भिखारी का लड़का बैठा था। उसने कहा कि बहुत भूखा हूँ। लेकिन लोगों ने कहा कि यह भूखा नहीं है, स्वांग कर रहा है। मैं उसे दो आने देने लगा। लोगों ने मुझे समझाया कि उसे आप पैसे मत दीजिये, इसको पैसे देना अविवेक है। फिर भी मैंने उसे दो आने दे दिये। उसने दो आने का खाद्य पदार्थ खरीदा। बाद में उसने उसे खोल कर देखा और फेंक दिया। यह देख कर मुझे आश्चर्य हुआ। मैंने पूछा, 'अरे तुझे तो बहुत भूख लगी थी न ?' उसने कहा, 'हाँ !' 'तो फिर तू ने क्यों फेंक दिया ?' बोला, 'उसमें तो मछली थी, मैं मछली नहीं खाता।' इस देश के भिखारी का एक भूखा लड़का मुझे सबक सिखा रहा है।

यहाँ के पहाड़ों में हद दर्जे की गरीबी है। लेकिन नैनीताल, अल्मोड़ा शहरों को छोड़ कर किसी पहाड़ में कोई चोरी नहीं होती। भूख है, लेकिन उसके लिए सत्त्व छोड़ देने की मनोवृत्ति नहीं है। भारतीय संस्कृति जैसी कोई चीज है तो यह है। इस चारित्र्य का विकास हमारे लोकतंत्र की मूल भित्ति होगी।

समस्या का स्वरूप

समस्या स्थानीय हो, स्वरूप व्यापक हो, आकार छोटा हो, आशय अपरिमित हो, ऐसी अगर समस्या होगी तो उस समस्या में से लोक शक्ति जाग्रत होगी और ऐसी समस्या नहीं होगी तो उस समस्या में से लोक-शक्ति जागृति नहीं होगी। आपको लोक प्रियता प्राप्त होगी। लोक प्रियता प्राप्त करना अलग बात है, लोक शक्ति जाग्रत करना बिलकुल अलग बात है। इसलिए कार्यक्रम ऐसा हो और विचार भी ऐसा हो, जो केवल लोगों की प्रेरणा से नहीं चले, उनका अभिक्रम तो जाग्रत करे ही, लेकिन उस दिशा में भी अभिक्रम को ले जाय। यह अगर हम नहीं कर सकेंगे तो मेरा अपना विचार है कि हम कुछ नहीं कर पायेंगे। यह मनोवृत्ति गाँव की पंचायतों में जो सदस्य होंगे, उनके मन में पैदा होनी चाहिए।

आप हरगिज यह न समझें कि लोगों के अभिभावक और संरक्षक आप हैं। शांति-सेना अगर एक संरक्षकों की निःशस्त्र सेना बन जायगी, तो नागरिक आज जैसा पुरुषार्थहीन है, वैसा ही बना रहेगा। आज तक सिपाही बचाता था, अब शांति-सैनिक बचायेगा, ऐसी उसकी भावना बन जायगी। फिर भगवान् उसकी आवाज भले ही सुन लें, लेकिन लोक मानस पर उसका कोई परिणाम नहीं होगा।

हर व्यक्ति की राय की कीमत

आज लोकशक्ति का अधिष्ठान औपचारिक ही क्यों न हो, हर मनुष्य का स्वतंत्र मत है। इसे मैं बहुत बड़ी चीज मानता हूँ। कुछ लोगों ने कहा, आपके अधिवेशन में तो नव बाबू ने चाहे जिसका भाषण होने दिया। मैंने कहा कि यह भाषण-स्वातंत्र्य है। इसका अर्थ यह है कि हमसे जो भिन्न विचार रखता है, वह अपने विचार अभिव्यक्त कर सकता है। भिन्न विचार रखता है, वह बोल नहीं सकता तो वह भाषण स्वातंत्र्य नहीं है। जहाँ मत-स्वातंत्र्य नहीं होता, वहाँ लोकतंत्र की हत्या होती है। इस वस्तु का हम संरक्षण करना चाहते हैं। हम जानते हैं कि वर्तमान संसदीय लोकतंत्र दोषपूर्ण है, इसमें बहुत सुधार की गुंजाइश है। लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि इसमें हर व्यक्ति के मत की, उसकी राय की कीमत है। पूंजीवाद में बहुत दोष हैं। उसकी गाथा लिखी जाय तो वह महाभारत से भी बड़ी होगी ! लेकिन उसमें एक गुण रहा—विरोधी पक्ष का स्वीकार। हमारी जो राय है, उसके खिलाफ राय देने वालों की एक संस्था को उसने स्वीकार किया। ऐसी हिम्मत तानाशाही, अधिनायकवाद, डेमोक्रेट, प्रगतिवादी, क्रांतिवादी, समाजवादी, साम्यवादी आदि किसी ने नहीं की। यह लोकतंत्र का प्राण है। इसे बचाने की आवश्यकता होगी।

राजनैतिक संकट

राजनैतिक संकट की ओर जयप्रकाश बाबू ने संकेत किया। ऐसी परिस्थिति दोनों तरफ से आ सकती है। जितने भाषिक राज्य बने हैं, उनमें सत्ता भाषाभाषियों के हाथ में नहीं है, विशिष्ट जातियों के हाथ में है। इस देश के मुसलमानों ने कहा कि भाषिक राज्य हमारा नहीं। सब जगह उर्दू की माँग हुई। पाकिस्तान में जाने के बाद भाषा का प्रश्न आया, उससे पहले नहीं। वे लोग भाषिक आंदोलन में शामिल नहीं हुए। बंगाल और असम के आंदोलन में वे तटस्थ रहे। दोनों के

संरक्षक रहे। पहले संप्रदाय आया; बाद में जाति आयी। आज में दो जातियों की सत्ता है, केरल में दो जातियों की सत्ता है, महाराष्ट्र में जाति की सत्ता है, बिहार में तो लोग यहाँ तक पूछ लेते थे कि यह भी बाबू वाला था कि अनुग्रह बाबू वाला! यह कितनी भीषण परिस्थिति है! और यह सब जो स्पष्ट देखता होगा, उसके हृदय में कितनी व्यथा होती होगी, इसकी तरफ मैं आपका ध्यान नम्रतापूर्वक दिलाना चाहता हूँ। जयप्रकाशजी जैसे क्रांतिकारी हमसे यह कहते हैं कि राजनैतिक संकट का अवसर आ सकता है, तब उनका मतलब क्या हो सकता है?

हम डिक्टेटरशिप की बात करते हैं। लोग कहते हैं कि ऐसे 'डिक्टेटरशिप' से आयूब की ही 'डिक्टेटरशिप' अच्छी है। आज हमारी भावना क्षुद्र, संकीर्ण बन रही है। पढ़े-लिखे लोगों की भावना यह है कि तानाशाही अच्छी है। फिर क्यों नहीं बनते तानाशाह? कहेंगे हम नहीं बन सकते हैं। तानाशाह में ऐसे-ऐसे गुण होने चाहिए। किसकी कोख से तानाशाह आयेगा? आप बनायेंगे? तो फिर वह तानाशाह नहीं होगा, वह कठपुतली होगी। हम ऐसी बातें मजाक में करते हैं, जैसे कोई शब्द-पहेली हो।

तो, एक तरफ हममें वे व्यक्ति हैं, जो यह मानते हैं और लगातार कहते हैं कि दरिद्र, दीन और दुःखी मनुष्य की स्थिति बदलनी चाहिए, समाज में मूल्य-परिवर्तन होने चाहिए, क्रान्ति होनी चाहिए। दूसरी तरफ कहते हैं कि लोकतंत्र के संदर्भ में क्रान्ति होनी चाहिए। इस बात को मानते हैं, तो इतना तो कीजिये कि लोकतंत्र जिस दिन संकट में आवे, उस दिन हमारी सारी शक्ति उसमें लग जाय। यह पंचायतों की बात इस कारण कही गयी है।

मर्यादा पहचानें

मेरठ में आशा दीदी गयीं, असम में गयीं। सब जगह हम लोग गये, पर कुछ कर नहीं पाये। हमारी एक बहन ने प्रश्न उठाया कि आप लोगों ने क्या इस चीज की तरफ ध्यान दिया कि इन सारी घटनाओं में स्त्री पर बलात्कार हुआ? दुःशासन के बाद, और दुःशासन भी इतने बड़े पैमाने पर नहीं कर पाया था, स्त्री का इतना अपमान इतना बलात्कार भारत के इतिहास में अपूर्व घटना है। ये घटनाएँ कहाँ रुकेंगी? क्या गुंडों ने यह काम किया? असम में रहने वाली बंगाली स्त्रियों से क्या गुण्डों ने कहा था कि मेखला पहनो? क्या गुण्डों ने बलात्कार किया? पढ़े-लिखे, युनिवर्सिटी के उपाधिधारी व्यक्तियों ने यह किया। इसका कहीं अन्त आ सकता है? अगर धर्म के नाम पर बलात्कार हो सकता है तो भाषा, जाति के नाम पर भी होगा, संप्रदायवाद में भी होगा।

यहाँ आचार मर्यादा की बात कही गयी। जगन्नाथ बाबू ने कहा कि मैं तो इतना ही कहता हूँ कि इस देश के लोग विकारवश होने पर भी अगर इतनी मर्यादा का पालन करें कि स्त्रियों को नहीं सतायेंगे और एक दूसरे पर हथियार का प्रयोग नहीं करेंगे तो भी इस देश में सभ्य नागरिकता का जीवन आ जायगा, शायद अहिंसा का जीवन बाद में विकसित कर सकते हैं। शायद इसलिए कहा कि शान्ति-सेना को थोड़ा व्यापक बना लें। इसमें वे लोग भी आ सकें कि जो अहिंसा को उस मर्यादा तक नहीं मानते जिस मर्यादा तक हम मानते हैं। फिर भी जो लोग सभ्य नागरिक जीवन के कायल हैं। ऐसे लोगों को भी शायद हम शामिल कर सकें। शांति-सेना के प्रस्ताव पर उद्बोधक चर्चा हुई। उससे मुझे बहुत आनंद और संतोष हुआ। लेकिन उसका यह जो दूसरा पहलू है, उसकी तरफ भी आपका ध्यान दिलाना मुझे आवश्यक मालूम हुआ। इसलिए इस चीज को मैंने आपके सामने रखा।

मनोवृत्ति का प्रश्न

अंत में और एक चीज कह देना चाहता हूँ, जिसकी तरफ हमारा ध्यान कम गया है। हम लोगों में काफी सादगी है। हमारा जीवन गरीब आदमी के जीवन के मुकाबले अच्छा है, लेकिन दरिद्र जीवन है। मैं अपने और आपके जीवन को भी बहुत ऊँचा जीवन नहीं मानता, सुखी जीवन नहीं मानता। मनुष्य आज बुनियादी जिंदगी तक भी नहीं पहुँचे। आपका-हमारा गृहस्थ का जीवन है। सर्व सेवा संघ और हमारे साथी कार्यकर्त्ता बैरागी, भिक्षु, यति नहीं हैं। जो बैरागी हैं, उनका यह आंदोलन नहीं है। इसलिए हमारे जीवन की जो एक मर्यादा है, उसमें हम रहते हैं। दूसरी चीज यह है कि यह आंदोलन विधवाओं का नहीं है। संन्यासी स्वेच्छा से होता है, विधवा स्वेच्छा से नहीं होती। विधवा में किसी के वैभव को देख कर ईर्ष्या पैदा होती है। उसके चित्त में अहिंसा और शांति नहीं है। विधवा की मनोवृत्ति यह है कि उससे दूसरे का सुख देखा नहीं जाता, इसलिए वह हमेशा कोसती रहती है। कोई विधवा अगर पान खाती दिखाई दे, तो वह सचैल स्नान करेगी और इस ताक में रहेगी कि कौन-कौन विधवाएँ कहाँ जाकर पान खाती हैं! यह मानो हम लोगों का सांस्कृतिक कार्यक्रम सा बन गया है। इसमें से सौहार्द पैदा नहीं होता। हम एक-दूसरे के जासूस बनें, निरीक्षक बनें, परीक्षक बनें, इसमें से कभी सौहार्द पैदा नहीं होगा। जो वैभवशाली है उसके लिए सहानुभूति और जो दरिद्र है उसके लिए तादात्म्य भाव होना चाहिए। इसी में से हम आगे कदम बढ़ा सकते हैं। इस मर्यादा को भी हमारे इस आंदोलन में विकसित करना होगा। जिन लोगों का जीवन हमसे भिन्न है, हमारी परिभाषा में 'त्यागमय' नहीं है, उनके लिए भी क्या हमारे चित्त में सौहार्द होगा?

तरुण जिम्मेवारी समझें

अब उलटा होना चाहिए। हमारा कार्यक्रम बुजुर्गों पर निर्भर नहीं होगा, बुजुर्ग लोग कार्यकर्ताओं पर निर्भर होंगे। तरुण कार्यकर्ता कहेगा कि चालिस साल तक आपने बहुत किया, अब आप आराम करिये, हम करते हैं। अगर वह कहेगा कि 'अब मेरी भी फिक्र तुम्हें करनी चाहिए,' तो फिर सारा समाप्त है! वह कहेगा कि उसमें उर्मा है, शक्ति है, प्रेरणा है और हम 'मणिकर्णिका' की तरफ जा रहे हैं! मैं संकेत दे रहा हूँ।

विनोबा कहते हैं कि तरुणों को कार्यभार सौंपते जाइये। नहीं सौंपते हैं तो कहते हैं कि आपको मोह हो गया है। और जब सौंपने के लिए तैयार हो गये हैं, तो वे हिचकते हैं। मुझे बहुत डर है। मैं जवाहरलालजी को कहता हूँ कि आपको प्रधानमन्त्री का पद छोड़ देना चाहिए, छोड़ देना चाहिए, छोड़ देना चाहिए। लेकिन वे अगर कहेंगे कि 'हुजूर, हम छोड़ने के लिए तैयार हैं, आप आइये और सम्हालिये!' हम जब सम्हालने लगेंगे तो देखना होगा कि जवाहरलालजी जितना कर सकते हैं, उतना भी हम कर सकते हैं कि नहीं?

असफलता के कारण

आपके कार्यकर्ताओं ने एक दूसरे पर जो आरोप किये हैं, क्या वे कांग्रेस के सदस्यों के आरोपों से किसी कदर कम हैं? अभी शस्त्र भी नहीं हैं, सत्ता भी नहीं है, संपत्ति भी नहीं है, फिर भी भ्रष्टाचार में हम कोई कम साबित नहीं हो रहे हैं। हमको भीतर की तरफ मोड़ कर देखना चाहिए। साधारण प्रामाणिक नागरिक से जो अपेक्षाएं हैं, वे भी हम पूरी नहीं कर सकते। कार्यकर्ता के दोष, उसकी गलतियाँ, अपने दोष, अपने अवगुण, अपनी गलतियाँ क्या हम समझने के लिए तैयार हैं? उन गलतियों में, अपराधों में शामिल नहीं होंगे, लेकिन परिणामों को उसके साथ हम भी भुगतेंगे। इसकी आवश्यकता है। नैतिक स्तर से यह अलग चीज है। इसमें से लोकसेवकों का जन्म होगा। असफलता के लिए बाहर कारण खोजने की जरूरत नहीं है। 'बीघा-कट्ठा' आंदोलन में भी बेचारे जयप्रकाश बाबू को यह दरख्वास्त करनी पड़ी कि जितनी जमीन के दानपत्र हों, वे प्रामाणिक हों। मैंने विनोबा से कहा कि आपने एक लक्ष्य रखा, इसलिए हमारे आंदोलन में असत्य का प्रवेश हुआ। एक लाख दान पत्र चाहिये, ले आया। सही-गलत का विचार नहीं किया। विनोबा ने कहा कि मैंने लक्ष्य कभी नहीं रखा, हिसाब रखा। मैंने इतना ही कहा कि पाँच लाख ग्रामदान और पाँच करोड़ भूमि होनी चाहिए। यह गणित था, लक्ष्य नहीं था।

क्षुद्र क्षेत्रवाद में न फँसें

मैंने तीन बातों पर जोर दिया है। स्वतंत्र लोक-तंत्र की परिस्थिति में नागरिक की स्वतंत्रता का अर्थ है उसका मत—वास्तविक मत और औपचारिक मत। उसका 'ओपीनियन' और उसका 'वोट'। इन दोनों का महत्त्व अनुपम रहना चाहिए। यह हमारे लोक-शिक्षण का आधार हो, उद्देश्य हो। उसकी आवश्यकताएँ, माँगें, समस्याएँ हमारे सामने अवश्य हों; लेकिन उन समस्याओं को हल करने के, उनकी पूर्ति करने के, हम ठेकेदार नहीं होंगे। अगर हम होंगे तो लोकनीति के नाम पर एक 'आफिशिअल' (सरकारी) राज्य, एक 'नान-आफिशिअल' (गैरसरकारी) राज्य आ जायगा। यह नहीं होना चाहिए। इसमें से लोक-शक्ति का विकास नहीं होगा। इसलिए हम जो समस्याएँ लें, उन समस्याओं का स्वरूप व्यापक हो। विकेंद्रीकरण के नाम पर क्षुद्र क्षेत्रवाद को इस देश में पुष्ट करेंगे तो मानवीयता तो दूर रही, राष्ट्रीयता भी हमारे साथ नहीं रहेगी। इसलिए जो समस्याएँ हम लेंगे, उनके विषय में यह विवेक होना चाहिए।

हमने इस देश में अखिल भारतीय न्यायपीठ का निर्माण किया, जो सत्ता-निरपेक्ष न्यायपीठ है। पक्ष-निरपेक्ष भूमिका से लोगों की तरफ से आवाज उठाने वाले एकमात्र गैरसरकारी व्यक्ति जयप्रकाशजी हैं। जब से उन्होंने पार्टी छोड़ दी, पालिटिक्स छोड़ दिया, उनका कद बढ़ गया। हमारे न्यायपीठ की यह जो व्यापक भूमिका है, इसको हम क्षुद्र क्षेत्रवाद में न फँसने दें।

आन्दोलन की शक्ति

हमारे आंदोलन का लक्ष्य है समाज-क्रांति और मूल्य परिवर्तन।

यो ध्रुवाणि परित्यज्य, अध्रुवाणि निषेवते
ध्रुवाणि तस्य नश्यन्ति, अध्रुवं नष्टमेव च॥

आखिर क्रांतिकारी यही कहता है कि इन मुसीबतों की जड़ कहाँ है? आज जो समाज है, उसे बगैर बदले मुसीबतों को नष्ट नहीं कर सकते। इसलिए ध्यान में रखना आवश्यक है कि हम नहीं तो फिर अखिल भारतीयता को खो देंगे।

मैं किसी भी तरह निराश नहीं हूँ। मैं नहीं जानता क्यों मेरे भीतर कहीं यह श्रद्धा छिपी हुई है और उसका स्रोत अगाध ऊर्ध्वगामी है, वह यह कि मनुष्य की मृत्यु नहीं होने वाली है और इसलिए मानवता की मृत्यु नहीं होगी। हमारे दोषों के बावजूद यह परिस्थिति है कि जनता का हममें कम से कम अविश्वास है। हमारी जो शक्ति है, वह शक्ति हमारे आंदोलन की है और हमारे विचार की है। इस गंगा ने हमको भी कुछ पवित्र कर दिया। इसलिए इसके मूल्यों का संरक्षण करें, इसकी मर्यादाओं का पालन करें। जितनी शक्ति और समय दिया है उसके अनुपात में अगर सफलता कम हुई है तो आगे जितनी शक्ति और समय देंगे उसके अनुपात में इस देश को और इस देश की जनता को कहीं अधिक परिमाण में सफलता प्राप्त हो सकती है।

[पटना-अधिवेशन; ११-४-'६२]

श्री धीरेन्द्र भाई के विचार

सैनिकवाद और नौकरशाही का अंत कैसे हो ?

[शांति विद्यालय, कस्तूरबाग्राम, इन्दौर में ८ मार्च '६२ को किये गये प्रश्नों के उत्तर।]

प्रश्न : सैनिक-शक्ति हटाने की प्रक्रिया क्या होगी ? क्या वह काम आसानी से हो सकेगा ?

उत्तर : आज के समाज की ताकत सैनिक शक्ति है और सैनिक शक्ति ही समाज में संतुलन कायम रखती है। समाज में मनुष्य आपस में इसलिए झगड़ा करता है कि मनुष्य की प्रकृति में ही संस्कृति और विकृति, दोनों तत्त्व हैं। संस्कृति और विकृति, दोनों मिल कर प्रकृति होती है। जब मनुष्य ने सभ्य होना चाहा, तब उसने देखा कि सभ्य समाज अगर बनाना है, तो शांति चाहिए। हम निरंतर एक-दूसरे से लड़ते रहें, एक दूसरे को नोच कर खाते रहें, तो हमारी सभ्यता होगी ही नहीं। हम जिन्दा भी नहीं रहेंगे। वह तो पशु का जीवन होगा। पशु और मनुष्य में काफी समानता है, लेकिन फर्क यह है कि पशु में विकास की, आगे बढ़ने की, उन्नति की आकांक्षा नहीं है, जो मनुष्य में है। मनुष्य ने देखा, अगर हमें तरक्की करनी है तो उसके लिए कुछ रास्ता ढूँढ़ना होगा। रोज हम एक-दूसरे से लड़ते रहे तो उन्नति नहीं होगी। मानव ने अपनी प्रकृति का विश्लेषण करके रास्ता ढूँढ़ निकाला। उसकी प्रकृति में जो दो तत्त्व हैं, उसमें से संस्कृति विकसित होती जाय और विकृति नियंत्रित होती रहे तो विकास होगा, इस विचार का आविष्कार हुआ।

भागवत् की कहानी है, जिसमें एक रूपक है। सब लोग प्रजापति के पास पहुँचे तो उसने मनु को भेजा। मनु दंड लेकर गया। विकृति के नियंत्रण के लिए राजा और राज्य बनाओ तो नियंत्रण होगा, ऐसा माना गया। दूसरी तरफ से शिक्षण-प्रक्रिया निकाली गयी, जिससे संस्कृति का विकास हुआ और राजदण्ड से विकृति का नियंत्रण हुआ। यह 'सोशल टेक्नालॉजी'—सामाजिक यंत्र शास्त्र—था, जिससे आज तक समाज का विकास हो रहा है; शांति, अमन और चैन चलता रहा है।

धीरे धीरे लोगों के मन में यह आया कि राजा के हाथ में महाहिंसा देने से विकार का नियंत्रण नहीं होगा, क्योंकि विकार के नियंत्रण का काम संगठित, अत्यधिक विकार करता था। असंगठित विकार को संगठित विकार नियंत्रित करता था। स्वभावतः संगठित चीज असंगठित पर हावी होती है। संगठित विकार ने सैनिक-शक्ति का रूप धारण किया। यह विकार शान्त है। असंगठित विकार को संगठित विकार के नियंत्रण में रखने के लिए राजा के हाथ में राजदंड दिया गया।

जैसे-जैसे संस्कृति का विकास हुआ, ज्ञान विज्ञान बढ़ा, आत्म प्रत्यय बढ़ा, लोग जंगली नहीं रहे; तो उनके मन में आया कि राजा तानाशाह बन रहा है, मनमाना होता जा रहा है। एक तरफ से लोगों का रोष बढ़ा और दूसरी तरफ से राजा का राज्य चलाने का जोश बढ़ा। दोनों के बढ़ने पर एक नयी परिस्थिति की सृष्टि हुई। लोक-मानस को राजा की सत्ता अखरने लगी। आत्मप्रत्यय के साथ लोगों की स्वतंत्रता की आकांक्षा बढ़ी, आत्मतुष्टि बढ़ी। राजा का जोश बढ़ा, तो दमन का राज्य भी बढ़ा। दोनों बातों से समाज राजा को हटाने की ओर बढ़ा। दंड एक विकृत तत्त्व है, किन्तु वह संगठित है। वह राजा के हाथ में क्यों रहे, एक राजा मरने पर उसका बेटा राजा क्यों बने, सब लोग मिल कर उसे हाथ में क्यों न लें, इस तरह विचार शुरू हुआ। सब लोग उसे हाथ में ले लेंगे, तो उसमें विवेक होगा। जिसमें विवेक नहीं होगा, उसे हम हटायेंगे तो कर्तृत्व हमारे हाथ में रहेगा। उसमें से प्रजातंत्र का उसूल निकला। विकार तो प्रकृति के अंदर है ही। वह निर्मूल नहीं हो सकता है। इसलिए उसे नियंत्रित करना चाहिए। राज्य को एक आदमी के हाथ में नहीं सौंपना चाहिए। उससे शांति तो रहती है, लेकिन स्वतंत्रता जाती है, जिसके अभाव में आगे बढ़ने का रास्ता रुकता है। इस विचार के परिणामस्वरूप फ्रांस में क्रांति हुई और राजा को निकाला गया। जिस समय रूसो जैसा दार्शनिक ये बातें कहता होगा, उस समय किसी ने आज जैसा सवाल किया होगा, कि राजा कैसे हटेगा ? लेकिन वह मनुष्य की आकांक्षा थी, इसलिए सफल हुई। विकासशास्त्र में से संस्कार उत्पन्न हुआ, 'टेक्नालॉजी' आगे बढ़ी, विकार का इस्तेमाल नियंत्रित हो और लोग चाहते हैं वैसा हो, यह माना जाने लगा।

फिर लोगों ने समझा कि हमने अपनी केवल इतने ही भर के लिए ताकत इकट्ठी की कि कोई आपस में लड़े तो राजा नियंत्रण करे और बाकी समय बैठ कर खाता रहे। ऐसा करने पर महँगा पड़ता है। शुरू में वह महँगा नहीं पड़ता था, क्योंकि समाज की सभ्यता इतने निम्न स्तर पर थी कि विकृति के नियंत्रण का काम राजा को सतत करना पड़ता था। सभ्यता के बढ़ने के साथ नियंत्रण का अवसर कम होने लगा। संस्कृति ही सारा काम करने लगी। ऐसी हालत में स्वभावतः लोगों ने देखा कि राजा का कार्य केवल दुष्ट-दमन और शिष्ट-पालन हो, तो शिष्टता की वृद्धि के साथ साथ दुष्ट-दमन का अवसर भी कम होता गया, याने राजा की नौकरी कम हुई। वह बैठे-बैठे खाने लगा, तो लोगों को अखरने लगा कि हम इसके लिए इतना टैक्स क्यों देते हैं ? इसलिए दूसरे काम निकले। अब राजा का काम हुआ प्रजा-रंजन। उसमें से 'वेलफेयर स्टेट'—कल्याणकारी राज्य—की सृष्टि हुई।

कल्याण राज्य आया। उसके माने क्या है ? यहाँ तक आने पर अब परिस्थिति मनुष्य को फिर से सोचने के लिए बाध्य कर रही है। मानव सोचने लगा कि जिसके लिए हमने राजा को हटाया, क्या वह उद्देश्य साध्य हुआ ? धीरे धीरे लोग राजा के हाथ में सारा काम सौंपते गये। प्रजा जितना कम काम करे, उतना राज्य सफल माना जाता है। यही कल्याण राज्य का दर्शन है। उसका तर्क यह है कि राज्य को जनता की सारी समस्याओं के समाधान की जिम्मेवारी उठानी है। उस जिम्मेवारी को निभाने के लिए यह आवश्यक बना कि प्रजा की सारी सम्पत्ति और सत्ता राज्य के हाथ में देनी पड़ेगी। उससे अधिनायक तंत्र—'टोटेलिटेरियनिज्म'—निकला, चाहे वह 'फासिज्म' के नाम से या 'नाजिज्म' के नाम से निकला हो, चाहे वह 'कम्युनिज्म' के फौजी शासन से याने सेना के अधिनायक-तंत्र के नाम से या संसदीय लोकतंत्र के नाम से हो। नाम चाहे जो हो, उसका स्वरूप सर्वाधिकारी राज्यवाद का हो गया। जिस कारण और जिस परिस्थिति में राजा को हटाने का सोचा था, उससे कल्याण राज्य का विकास हुआ। किन्तु अब जनता होश में आयी तो वह यह बरदाश्त नहीं कर सकी कि राज्य के हाथ में इतनी सत्ता हो। ज्ञान विज्ञान आगे बढ़ता रहा।

आज सारी दुनिया के समाजशास्त्री चिंता में हैं कि सैन्यवाद और नौकरशाही का समाधान कैसे हो ? जैसे उस समय राजा की तानाशाही की समस्या थी, वैसे ही आज सेना और नौकरशाही की समस्या खड़ी हुई है। गांधीजी और विनोबाजी काल के प्रवक्ता हैं। काल के सामने समस्या है कि समाज के अंदर सैनिकवाद और नौकरशाही के खतरे का समाधान कैसे करें ! इसलिए आज की क्रांति का नारा है कि 'सैनिकवाद और नौकरशाही का अंत किया जाय'—उस क्रांति की प्रक्रिया को सर्वोदय, गांधीवाद अथवा मानवतावाद जो भी कहिये। आज मानव की मूलभूत समस्या यह है कि मनुष्य की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए सैनिकवाद और नौकरवाद को खत्म किया जाय। मनुष्य ने सामंतवाद खत्म किया, उसमें से पूँजीवाद खड़ा हुआ। पूँजीवाद का अंत करने पर नौकरवाद खड़ा हो रहा है, क्योंकि मनुष्य ने जिस समाजशास्त्र का शोध किया, उसमें प्रथम गलती यह हुई कि उसने समाज का ढाँचा बदलने की कोशिश की और समाज की चालक शक्ति वही कायम रखी। समाज की चालक शक्ति सैनिक शक्ति है, वह किसके हाथ में रहे, इतना ही सोचा गया। राजा के हाथ में रहे या पार्टी के या जनता के या गुट के हाथ में रहे, यही सोचा गया। आज यह अनुभूति हो रही है, आज का द्रष्टा देख रहा है कि आज समाज को प्रगति करनी है, स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ना है तो अब तक की जो शांतिमय समाज की आकांक्षा थी, उसे अहिंसक समाज की आकांक्षा में बदलना पड़ेगा। इन दोनों में फर्क है।

रिंगमास्टर के चाबुक से शांतिमय समाज बनाया जा सकता है, लेकिन अहिंसक समाज नहीं। अहिंसक समाज में विकृति का नियंत्रण कौन करेगा, यह मूलभूत प्रश्न है। विकृति का नियंत्रण संगठित विकृति करे तो शांतिमय समाज होगा, लेकिन अहिंसक समाज नहीं होगा। समाज का 'सैंक्शन'—सम्मति—'डायनेमिक्स' हिंसा रहे तो अहिंसक समाज नहीं बनेगा। मशीन का चाहे जो ढाँचा बनाया जाय, लेकिन उसे चलाने वाला कोयला रहे तो वह स्टीम इंजिन ही रहेगा, इलेक्ट्रिक इंजिन नहीं बनेगा। अगर इलेक्ट्रिक इंजिन बनाना है, तो यंत्र जो भी हो, उसकी चालक-शक्ति बिजली ही होनी चाहिए। लोग बहस करते हैं कि अहिंसक समाज में प्रत्यक्ष चुनाव हो। लोग पूछते हैं कि अहिंसक समाज का विधान क्या होगा ? हम कहते हैं कि विधान चाहे जो बनाओ, उसकी चालक-शक्ति अगर सैनिक शक्ति रहेगी, तो वह हिंसक समाज ही होगा, अहिंसक नहीं। इसी मुद्दे पर आज गांधीवालों में भ्रम है।

मनुष्य ने जिस तरह संस्कृति के विकास के लिए दंड-शक्ति का आविष्कार किया, उसी तरह आज खोज करनी पड़ेगी कि संस्कृति विकृति को नियंत्रित कैसे करेगी ? यह समाज विज्ञान का विषय है। लोकतंत्र का विधान कैसा होगा, यह सवाल महत्त्व का नहीं है, बल्कि यह है कि समाज का जो 'सैंक्शन' है, समाज की विकृति को सँभालने की जो शक्ति है, वह विकृति-मूलक होगी या संस्कृतिमूलक ? अहिंसक समाज बनाने में यही मुख्य बात है कि सैनिक शक्ति को हटाने का जो तरीका होगा, वह समाज शिक्षण का होगा। उसका ढाँचा और तरीका क्या होगा, इसको आप सब ढूँढ़िये। लेकिन मूल दिशा को समझना होगा। मनुष्य के संस्कृति की अभिव्यक्ति सहकार में होती है और विकृति की अभिव्यक्ति प्रतिद्वंद्विता में होती है। हर मनुष्य में प्रतिद्वंद्विता और

सहकारिता, दोनों होती हैं। सहकारिता की भावना संस्कृति का इजहार है और प्रतिद्वंद्विता की भावना विकृति का इजहार है। मानव के सामाजिक शिक्षण का, जिसे गांधीजी ने 'नई तालीम' कहा, मतलब यह लगाया जाता है कि स्कूल में दो-चार तकलियाँ रख दी जायँ! लेकिन गांधीजी ने कहा था कि नई तालीम का क्षेत्र गर्भ से लेकर मृत्यु तक है, याने समाज-शिक्षण ही नई तालीम है।

तालीम की प्रक्रिया आज तक क्या रही और गांधीजी की कल्पना के अनुसार शिक्षा का स्वरूप क्या होगा, इस पर हमें सोचना होगा। आज तक के शिक्षा-शास्त्रियों ने शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्व का विकास माना है। अब शिक्षा का उद्देश्य समाज के व्यक्तित्व का विकास होगा। शिक्षा के लिए संस्था नहीं होगी, समाज होगा। आज जिस तरह से स्कूल खोला जाता है, हम योजना बनाते हैं कि शिक्षा के २५ केन्द्र हों तो हमें २५ स्कूल खोलने पड़ते हैं, वैसा न करते हुए शिक्षा के लिए २५ गाँव लेने चाहिए। व्यक्तित्व के विकास का क्या मतलब है? व्यक्तित्व के विकास के माने हैं, एक व्यक्ति के अंदर जो संस्कृति और विकृति है, उस व्यक्ति में शिक्षण प्रक्रिया से संस्कृति का संगठन करके उसमें इतनी योग्यता, शक्ति लाये कि उसके अंदर जो विकृति है, उसका नियंत्रण उसकी अपनी विकसित संस्कृति ही करती रहे। शिक्षित और अशिक्षित, दोनों में विकृति तो रहती है, दोनों के जीवन में विकृति का प्रकोप होता है। इन्सान के अंदर विकृति और संस्कृति का अनुपात क्या है, यह देखा जाता है। सभ्य समाज में विकृति का प्रकोप कभी-कभी होता है और संस्कृति हमेशा रहती है। कभी-कभी जो विकृति पैदा होती है, उसको सँभालने के लिए ही दंड-शक्ति की जरूरत होती है। शिक्षित सांस्कृतिक व्यक्ति में कभी विकृति का प्रकोप होता है तो उसके अंदर की संस्कृति उस विकृति को दबाती है, याने वह संयम करता है। असभ्य मनुष्य क्रोध आने पर छुरा भोंक देता है। सभ्य मनुष्य छुरा नहीं भोंकेगा, संयम करेगा। उसके अंदर की विकसित संस्कृति उसके असंगठित विकृति को संभालेगी। इसी चीज को समाज में विकसित करने के माने हैं, समाज के व्यक्तित्व का विकास। जिस मनुष्य में संस्कृति की शक्ति अंदर की विकृति को नियंत्रित कर सकती है, उसका व्यक्तित्व ज्यादा ऊँचा, विकसित माना जाता है, याने उसका शिक्षण ज्यादा हुआ ऐसा कहा जाता है। इसी तरह जिस समाज में, समाज के अंदर का जो सांस्कृतिक जीवन है, वह विकृति के प्रकोप को संभाल सकता है वहाँ शिक्षण ज्यादा है, व्यक्तित्व का विकास ज्यादा हुआ है। अगर विकृति के प्रकोप के समय पर सांस्कृतिक तत्त्व अपने को असहाय महसूस करें और विकृति के नियंत्रण के लिए पुलिस को बुलाया जाय, तो वह समाज सभ्य या शिक्षित नहीं, बल्कि 'जंगली' कहलायेगा। आज के क्रांति की चालकशक्ति समाज-शिक्षा बनेगी। मानव के व्यक्तित्व का जैसे-जैसे विकास होता जायेगा, वैसे-वैसे संस्कृति बढ़ती जायेगी।

एक व्यक्ति ने पूछा कि छोटे समाज में आप यह कल्पना साकार कर सकते हैं, लेकिन बड़े समाज में कैसे होगा? इस पर मैंने इतिहास बताया। लोगों ने विकृति की शक्ति याने सैनिक-शक्ति को इसी तरह विकसित किया है। शुरू में राजा बनाया और छोटे-छोटे राज्य बने। राजा जितने लोगों को नियन्त्रित करता था, उतने ही राज्य बने। दो राज्यों के बीच लड़ाई चलती रही, तो फिर उसका तंत्र बना और आज 'यू० एन० ओ०' की फौज की कल्पना हो रही है। इस शास्त्र के अंदर पूरे विश्व को एकसाथ लेने का तरीका लोग हाथ में ले रहे हैं। इसी तरह संगठित विकृति के बदले संगठित संस्कृति ही असंगठित विकृति को नियंत्रित करेगी। इसकी प्रक्रिया भी छोटे-छोटे समाज में शुरू होगी और फिर उनका संघ, महासंघ आदि बनते-बनते सारे मानव समूह को घेर लेगा।

आज पृथकता की माँग हो रही है—कहीं कटांगा की, तो कहीं द्रविडीस्तान की। लेकिन कुल मिला कर इन्सान ने अनेक राज्यों को जोड़ कर एक में लाने की वैधानिक पद्धति निकाली। इसी तरह यह भी करना होगा। शिक्षा को व्यक्ति के दायरे से निकाल कर समाज के दायरे में ले जाना होगा और समाज को भी छोटे से बड़े तक ले जाना होगा। फिर संगठित विकृति, असंगठित विकृति को नियंत्रित करेगी यह विचार छूट जायेगा।

'समय और हम'

जैनेन्द्रजी की पुस्तक की प्रशस्ति में कहूँ? कोई तुक है? कोई जरूरत? कोई अधिकार?

अधिकार है, सिर्फ स्नेह का। जैनेन्द्रजी मुझे अपना सुहृद और आत्मीय मानते हैं। गौरव और लाभ मेरा है। भला, मैत्री में अधिकार के विवेक की गुंजाइश ही कहाँ है? जैनेन्द्रजी जो कुछ लिखते या कहते हैं, मुझे बहुत रुचिकर लगता है। वे अक्सर बिना प्रयोजन के नहीं लिखते, परन्तु प्रयोजन उनके स्वानन्द का सहोदर है। जीविका नीरव भाव से, प्रयोजन और स्वानन्द की गैल चलती है।

उनकी शैली सुश्लिष्ट है। उनकी वाग्वैजयन्ती के सारे मौक्तिक कौस्तुभ ही हैं, शायद ही कोई अतिरिक्त या व्यर्थ शब्द होता है। उनकी प्रतिभा में उनकी शैली ओप चढ़ाती है, परिणाम बहुत मनोज्ञ होता है। जैनेन्द्रजी कोई तत्त्व-प्रचारक नहीं हैं। अपनी बात का प्रतिपादन करने के लिए वे युक्तियों का व्यूह नहीं रचते, क्योंकि उनका अपना कोई पक्ष नहीं है। इसलिए उनके निरूपण में बुद्धि की प्रगल्भता के साथ-साथ चित्त का प्रसाद और शैली की सहजता होती है।

इस भूमिका की जरूरत इसलिए हुई कि इस पुस्तक के पीछे एक प्रसंग है। पुस्तक के कई अंश हमने मंत्रमुग्ध होकर सुने। प्रश्नोत्तरों के रूप में वह लिखी गयी है। इसलिए उसमें प्रफुल्लित सुमनों की सजीवता और सुगंध है। विवेचन में गंभीरता, समग्रता और मौलिकता का संगम है।

मैंने जैनेन्द्रजी की सभी, या अधिकांश रचनाएँ नहीं पढ़ी हैं, परन्तु उनके लेख और निबन्ध प्रायः बहुत चाव से पढ़ा करता हूँ। उनके लेखों का एक संग्रह कोई २७-२८ साल पहले निकला, जिसका नाम था—"जैनेन्द्र के विचार।" पूज्य किशोरलाल भाई ने उसकी प्रभावना की थी। वह उचित भी था। पूज्य किशोरलाल भाई के प्रस्तवन से पुस्तक की प्रतिष्ठा और प्रभाव बढ़ा। पुस्तक भी उनके जैसे मनीषी के परिशीलन के योग्य थी। वहाँ समसमानों का मिलन था। मैं अब इतना आत्म-सम्मानित नहीं हूँ कि उनके साथ अपनी तुलना करूँ। उल्लेख केवल इसलिए कर रहा हूँ कि पाठकों को यह विदित हो कि जैनेन्द्रजी का गांधी-परिवार के साथ आत्मीयता का सम्बन्ध बहुत पुराना है। सन् १९२० से ही वे गांधी-निष्ठ रहे हैं। उनके साहित्य पर गांधी की विभूति की उज्ज्वल आभा है। फिर भी जैनेन्द्रजी न तो गांधी के अनुयायी हैं और न सर्वोदय के अनुयायी। गांधी और सर्वोदय को वे सम्यक् रूप से मानते और समझते हैं, परन्तु उसमें खो नहीं जाते। वे केवल पूर्व-सूरियों और मनीषियों के भाष्यकार नहीं हैं, स्वयं अपनी जीवन-निष्ठा सहजरम्य शैली में प्रकट करते हैं। वे कोई संस्कृत के पंडित नहीं हैं, फिर भी उनकी शैली में संस्कृति की भव्यता है।

म. टालस्टाय ने अपना "कन्फेशन आफ फेथ" लिखा है। बार्ज बर्नार्ड शा ने "बैक टु मेथ्यूसेला" के "इपिलाग" में, एच० जी० वेल्स ने "फर्स्ट एण्ड लास्ट थिंग्स" में और सामरसेट माम ने "समिंग अप्" में अपनी-अपनी जीवन-निष्ठा का निवेदन किया है। मैं तुलना नहीं कर रहा हूँ, सिर्फ मिसालें दे रहा हूँ। यह जैनेन्द्र का जीवन-दर्शन है। इसकी अपनी विशेषता यह है कि इसमें प्रश्नकर्ता के व्यक्तित्व की सुषमा भी है। जीवन के प्रायः सभी अंगोपांगों का ऊहापोह है। जैनेन्द्रजी के तत्त्व-दर्शन की प्रगल्भता, उनके हृदय का सौहार्द और उनकी वस्तुनिष्ठ तथा वैज्ञानिकता का प्रत्यय इसमें प्रकट हुआ है। आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और आध्यात्मिक समस्याओं का मूलगामी विवेचन है। यह है, परन्तु जैनेन्द्र का अपना भी है।

इसमें जो विचार और मत व्यक्त किये गये हैं और जो निष्कर्ष सूचित किये गये हैं, उनसे पूरी तरह सहमत होना आवश्यक नहीं है। उसमें न तो जैनेन्द्रजी का गौरव है और न हमारी रसिकता। मत-भिन्नता बौद्धिक स्वतन्त्रता का उपलक्षण है। जैनेन्द्रजी के विचारों में और सर्वोदय के तत्त्वज्ञान में कौटुम्बिक साधर्म्य है। फिर भी उनकी रचनाओं में, उनकी अपनी बुद्धि के उन्मेष हैं। सर्वोदय के हम ऐसे प्रवक्ता जो कहने की कोशिश करते हैं, उसे वे कचन बना देते हैं। सर्वोदयनिष्ठ लोगों की दृष्टि से यह एक सर्वांग सुन्दर उपादेय ग्रन्थ है।

इससे अधिक लिखने में कोई तुक नहीं। अंग्रेजी में कहावत है, "पुडिंग को परखना हो तो खाकर देखो।" पाठकों से यही निवेदन है इस जीवनामृत का स्वयं रसास्वादन करें।*

—दादा धर्माधिकारी

*अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, काशी से शीघ्र प्रकाशित होने वाले श्री जैनेन्द्रजी के 'समय और हम' ग्रंथ की प्रस्तावना।

जनता कराह रही है—पत्नी को टी० बी० हो गयी है, लड़की की शादी करनी है, बच्चे को शिक्षा देनी है और सिर पर कर्ज चढ़ रहा है, ऐसे समय में आपको क्या करना है? साहित्य बेचना है! जनता पूछती है कि हम इस साहित्य को लेकर क्या करेंगे? पढ़ेंगे, पढ़ कर हजम करेंगे और उसके बाद कुछ करेंगे। तब क्या होगा? हम जनता की समस्या का विचार विधायक राजनीतिक दृष्टि से करें। —ज० प्र०

तख्ते लन्दन तक चलेगा प्रेम हिन्दुस्तान का !!

० मेरी आस्बोर्न

[जफर की तलवार लन्दन तक नहीं चली, पर बापू के प्रेम का अस्त्र, 'चरखा' लन्दन तक चलने लगा। मेरी आस्बोर्न नाम की एक अंग्रेज महिला इंग्लैण्ड में आजकल खादी-ग्रामोद्योगों का प्रचार जोर-शोर से कर रही हैं। उनको इस आन्दोलन की प्रेरणा गांधीजी के विचारों से प्राप्त हुई। वे अपने इस आन्दोलन में बहुत कुछ सफल भी हुई हैं। उनका कहना है कि 'चरखा-आन्दोलन' इंग्लैण्ड के ग्रामोत्थान में एक मजबूत कड़ी का रूप साबित होगा। उन्होंने अपना चरखा एक सार्वजनिक स्थान में, एक प्रसिद्ध पूजा-स्थल, सेन्ट-पाल के गिरजाघर में तथा लन्दन के व्यापारियों के गढ़ 'रायल एक्सचेंज' में चलाया। जहाँ कहीं भी वे इस 'मासूम' अस्त्र को लेकर पहुँचीं, वहाँ पर काफी खलबली मच गयी। नर-नारी तथा बच्चे, सभी के मध्य वे एक अजीब आकर्षण का केन्द्र बन गयीं। आइये, अब उनके ही शब्दों में उनके मधुरतम संस्मरणों की मीठी चुस्की का पान कीजिये। —सं०]

मैं एक दिन अपना चरखा लेकर लन्दन के सार्वजनिक पार्क में पहुँची। मेरा लक्ष्य तो यह जरूर था कि मैं लोगों को चरखे की उपयोगिता समझाऊँ, पर मैं अपने आप में उतना विश्वास नहीं बटोर पायी थी। चरखा लेकर पार्क के एक कोने में बैठ गयी और उसको चलाने लगी। उस दिन प्यारे-प्यारे नन्हें मुन्ने बच्चों की एक बड़ी टोली सैर के हेतु आयी हुई थी। उन्होंने मुझे घेर लिया और चहकने लगे। उन्होंने मुझसे न मालूम कितने सवाल किये। अधिक चंचल बच्चों ने तो चरखे को चला कर भी देखा। मैं एक जादू की तरह पूनियों से महीन से महीन तार निकालती जाती थी और देखने वालों का कौतूहल बढ़ता जाता था।

उस दिन पार्क में भीड़ अधिक थी। लोग छोटी-छोटी टोलियों में बैठ कर विभिन्न प्रकार की सामाजिक तथा राजनैतिक चर्चाएँ करने में व्यस्त थे, जैसा कि अक्सर सार्वजनिक पार्कों में होता है।

एक वृद्ध सज्जन तो मेरे इस चरखे से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने अपने लम्बे जीवन में शायद आज पहली बार ही चरखा देखा था। उन्होंने बच्चों की तरह मुझसे प्रश्न पूछने आरंभ किये, "क्या सब प्रकार का ऊन इसी प्रकार काता जाता है? इस ऊन से आप क्या करेंगी?"

कोई व्यक्ति उस चरखे की तकनीकी जानकारी प्राप्त करना चाहता था, तो कोई कहता था कि इस आणविक युग में चरखे की कोई आवश्यकता नहीं है।

विभिन्न प्रकार के राजनैतिक विचारों के कारण एक दूसरे पर आरोप प्रत्यारोप लगाने वाले भी चरखे से आकर्षित होकर मेरे निकट मंडराने लगे। तिरछी टोप लगाये हुए एक सज्जन बड़े गौर से मेरे इस 'यंत्र' को देख रहे थे। वे जरा कठोरता से बोले—"आप यहाँ पर क्या कर रही हैं? आपके इस काम से कुछ लाभ भी होता है?"

मैं बोली, "आपकी दृष्टि में मेरे इस कार्य का कुछ लाभ नहीं होगा, पर मेरी दृष्टि में इसके अकथनीय लाभ हैं। मैंने अपने इस कार्य का प्रयोग अपने पड़ोस के बेकार परिवारों में किया था। इससे मुझे बहुत सफलता भी मिली। चरखे के माध्यम से मैं वहाँ एक विशेष प्रकार के बन्धुत्व की स्थापना करने में सफल हुई हूँ। मेरा दृष्टिकोण रचनात्मक है।"

वे बोले, "आपके इस बन्धुत्व की कौन परवाह करता है! आज का प्रत्येक मनुष्य व्यक्तिवादी हो गया है। उसे केवल अपनी ही चिन्ता पड़ी है। ऐसे कुटिल समय में आपके इस चरखा-आंदोलन का मतलब है, आप वास्तविकता से दूर रह कर किसी काल्पनिक दुनिया में घूमना चाहती हैं। आज की हमारी राष्ट्रीय सरकार ही हमारी सब कठिनाइयों के लिए दोषी है।" इसके बाद उस महाशय ने एक लम्बा-चौड़ा भाषण दिया और चल दिये।

पार्क में भीड़ बढ़ती गयी। लोग कौतूहल से मेरी ओर देखते थे। कुछ मेरे इस आन्दोलन की उपयोगिता को समझ रहे थे। एक जिज्ञासु ने पूछा, "आप इस रफ्तार से कैसे आधुनिक मशीनों का मुकाबिला कर सकती हैं?"

मैं बोली, "मैं मशीन से मुकाबिला नहीं कर रही हूँ। मेरे इस कार्य का केवल एक ही उद्देश्य है, वह यह कि हमको एक नये प्रकार का जीवन मिले, हमको आत्मानुभूति हो। मानव-जीवन में अच्छाई की एक नयी कली खिले। आत्मा के चिरन्तन स्रोत से हमारी रचनात्मक बुद्धि का जो सतत प्रवाह बहता है, यह चरखा उसका प्रतीक मात्र है।" मुझे अपनी बातों की गहराई उसे गंभीरता-पूर्वक समझानी पड़ी।

मैं दिन भर उस पार्क में बैठी रही। एक नौजवान साम्यवादी मेरे पास आया। वह मानवता के वर्तमान कष्टों से बुरी तरह विकल था। वह कहने लगा, "आज जीवन का क्रम इस प्रकार चल रहा है कि मानव कुछ सोच ही नहीं सकता। सोचने के लिए उसके पास फुरसत ही नहीं है। आज मानव को मुक्त चिन्तन के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्र हो जाना चाहिए, पर हालत ऐसी है कि वह अन्धा होकर भेड़ों की तरह किसी के पीछे चलता है।"

वह साम्यवादी चाहता था कि सारे वातावरण का आमूल परिवर्तन हो जाय। मैंने उसे समझाया कि वातावरण के परिवर्तन से ही बात नहीं बनेगी। हमको सोये हुए आध्यात्मिक मूल्यों को भी जगाना पड़ेगा। वह मेरी बातों की गहराई में नहीं उतर सका और उसने मेरे विचारों को कोरा रहस्यवाद समझा।

नये-नये चेहरे आते जाते थे, वे मुझे चरखा चलाते हुए देखते और ठहर जाते थे और हमारी चर्चाओं को भी ध्यान से सुनते थे। मैंने भी कार्ल मार्क्स के उस चेले से काफी बहस की और उसे छोड़ा नहीं। मैंने उसे हजरत ईसा के विचारों की गहराई में उतारने की चेष्टा की, गृह-उद्योगों के महत्त्व को समझाने का प्रयत्न किया, महात्मा गांधी और अलबर्ट स्वीट्जर के विचारों से अवगत कराया। अहिंसा के समस्त दर्शन की बारीकियों को समझाया, व्यक्ति तथा राष्ट्रों के बीच के आपसी प्रेम-संवर्धन की उपयोगिता को समझाया और समझाया कि इन सब मूल्यों का न होना ही प्रलय है, सर्वनाश है। काफी देर तक गरमागरम बहस चली और अन्त में वह मेरे विचारों का कायल हो गया। उसने एक श्रद्धालु से कहा, "यह महिला ठीक ही कह रही हैं, इनका कार्य मंगल कार्य है और इनकी वाणी में इनका पवित्र मातृत्व बोल रहा है।"

दूसरे दिन मैं अपना चरखा लेकर सैन्ट पाल के गिरजे के बाहर बैठी। यह स्थल लन्दन का एक प्रसिद्ध दर्शनीय स्थान है और सर क्रिस्टोफर रेन की अमर शिल्प कला का महानतम नमूना है। आज जिन लोगों से मेरा वास्ता पड़ा वे, कुछ दूसरी ही मिट्टी के बने हुए थे। वे न केवल इंगलैण्ड के विभिन्न भागों से यहाँ पधारे थे, वरन् विश्व भर के अनेक देशों से यहाँ आये थे। वे मुझसे प्रश्न करते थे, तर्क नहीं। ग्रामोद्योगों के उत्थान के लिए जिस सहकार के कार्यक्रम के विषय में मैं सचेष्ट थी, उस कार्य के लिए उन्होंने अपनी शुभ कामनाएँ भी जाहिर कीं। उन्होंने मेरा पता-ठिकाना पूछा। मैंने भी उनके पते लिये। कुछ व्यक्तियों ने मुझे बताया कि उनकी और मेरी अगली मुलाकात उसी गाँव में होगी, जहाँ पर मेरा रचनात्मक कार्यक्रम चल रहा था।

तीसरे दिन मैं भौतिकता के सबसे बड़े गढ़ 'रायल एक्सचेंज' में पहुँची। लन्दन तथा दुनिया भर के व्यापारियों का हर समय यहाँ पर हुजूम जमघट रहता है। यहाँ का देवता पैसा ही है। यहाँ पर पीड़ा, निराशा और भौतिकता का नग्न नृत्य हो रहा था। सब उस मरीचिका की ओर भाग रहे थे, जिसकी मंजिल कभी नहीं मिलती। हाय पैसा, हाय पैसा, यही यहाँ का गीत था।

मैंने वहाँ पर कहा, "आज हमको भलाई के मूल्यों को जगाने के लिए यथा-शक्ति प्रयत्न करना पड़ेगा। आज आगे बढ़कर उन मूल्यों को खोजना पड़ेगा, अन्यथा सर्वनाश हो जायगा। हमको शक्ति का, तेजस्विता का आह्वान करना पड़ेगा।"

मेरी बातों को सुन कर एक धनी व्यापारी बोला, "आप ठीक कहती हैं। काश! हम यदि सात्त्विकता और सरल जीवन की ओर बढ़ते, कितनी प्रसन्नता तब हमको प्राप्त होती! आज हमको ऐसी ही चीज की आवश्यकता है।"—उसने मेरे चरखे की तरफ उंगली करते हुए कहा।

अब तक सब प्रकार के व्यक्तियों से मिल चुकी थी। मेरी परिक्रमा पूरी हो चुकी थी। मैं जब फिर दुबारा उस सार्वजनिक पार्क में पहुँची तो मुझे वातावरण बदला हुआ-सा प्रतीत हो रहा था। तिरछी टोप वाले उस सज्जन ने इस बार मेरा स्वागत बड़े प्रेम से किया और भीड़ की ओर देखते हुए जोर से कहा, "क्या आप जानते हैं कि यह महिला एक सुन्दर काम कर रही हैं? ये भलाई के एक संगठन के निर्माण में लगी हैं।"

आखिरकार वे मेरी बातों की गहराई में उतर ही गये।

[भावानुवादक : श्री हरिश्चन्द्र पन्त]

मद्य-निषेध कार्यकर्ता-संगोष्ठी के सुझाव

इन्दौर में २६ मार्च, '६२ को 'मद्य-निषेध कार्यकर्ता-संगोष्ठी' हुई थी, उसमें यह सर्वसम्मत राय रही कि तृतीय पंचवर्षीय योजना-काल में पूर्ण नशाबन्दी हो जानी चाहिए। इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए प्रतिवर्ष प्रगति होनी चाहिए और ऐसी योजना बनानी चाहिए कि नशाबन्दी के साथ-साथ नशीली वस्तुओं की मांग और सेवन कम होता जाये तथा अवैध शराब इत्यादि का व्यापार भी समाप्त होता जाये, इस हेतु निम्न सुझाव मान्य किये गये :—

सरकार क्या करे ?

(१) शराब और दूसरी नशीली वस्तुओं से जो कर प्राप्त होता है, वह अनैतिक व्यवसाय में साझीदारी का रूप बनता है और उससे मुक्त हुए बिना शासन नशाबन्दी की दिशा में मुक्त चिंतन करने में असमर्थ बनता है, इसलिए इस कर का मोह बिला विलंब फौरन छोड़ना शासन का प्रथम कर्तव्य है।

(२) क्रमागत मद्य-निषेध की दिशा में बढ़ने के लिए निम्न कदम उठाये जायँ—

(क) किसी भी नयी दुकान को 'लाइसेन्स' न दिया जाय और ऐसी दुकानों को बन्द किया जाय, जिनसे कि आम जनता को तकलीफ पहुँचती है।

(ख) साधारण तरीके से जो 'लाइसेन्स' खत्म हो जाते हैं, उन्हें फिर से जारी नहीं किये जायँ।

(ग) आदतमन्द लोगों को शराब की बिक्री 'राशनिंग' की पद्धति पर कार्ड—कूपन—द्वारा उचित अवधि तक दवा के रूप में और नियत मात्रा में दी जाय तथा इस 'कोटे' में निरन्तर कमी की जाती रहे। यह बात देशी विदेशी, सभी प्रकार की शराब पर लागू की जानी चाहिए। इस प्रकार दी गयी शराब में शासन किसी भी प्रकार का आर्थिक लाभ न उठाये और संभव हो तो उसकी कीमतें इतनी कम कर दे, ताकि जिस लालच से आज अवैध शराब का निर्माण होता सुनाई देता है, उस पर रोक थाम हो सके। बिक्री की व्यवस्था भी ऐसे सरकारी भंडारों से हो, जो इसी काम के लिए स्थापित किये गये हों अथवा ऐसी संस्था द्वारा हो, जो नशाबन्दी में विश्वास करती हो और जिसका शराब की बिक्री से कोई आर्थिक लाभ न होता हो।

(घ) किसी भी सार्वजनिक स्थल-जैसे होटलों, क्लबों, धर्मशालाओं, मंदिरों, आम रास्तों अथवा दावतों आदि में व्यक्तिगत अथवा सामूहिक रूप से मद्यपान का पूर्ण निषेध हो।

(च) किसी भी व्यक्ति का शराब पिये हुए मदमस्त की हालत में सार्वजनिक स्थल पर पाया जाना अथवा किसी के भी अधिकार में नशीली वस्तु का किसी भी मात्रा में पाया जाना अपराध माना जाय, अतिरिक्त उन स्थानों के जहाँ के लिए उसकी स्वीकृति दी गयी है।

(३) नशा निषेध को सफल बनाने के लिए सार्वजनिक एवं सेवाभावी व्यक्तियों की, जिनका कि नशाबन्दी में जीवित विश्वास हो, जिला एवं राज्य-स्तर पर सलाहकार-समितियाँ बनायी जायँ तथा उन्हें उचित अधिकार भी दिये जायँ।

(४) नशाबन्दी लागू करने के क्रमिक कार्यक्रम में ऐसे स्थानों को प्राथमिकता देनी चाहिए, जहाँ पर सार्वजनिक कार्यकर्ता एवं संस्थाएँ संबंधित कार्य को खत्म कराने के लिए माग करें और सहयोग देने को तैयार हों।

(५) सभी प्रकार की शराब की दुकानों को आम रास्तों व जनकेन्द्रों से हटाया जाय और जब तक पूर्ण शराब-बंदी नहीं हो जाती, उन्हें शहर, कस्बा या गाँव से एक तरफ एकान्त में ले जाया जाय।

(६) जिस आबादी की ७५ प्रतिशत वयस्क जनता शराबबन्दी की माग करे और हस्ताक्षर सहित अपना संकल्प प्रकट करे, वहाँ से तुरंत शराब की दुकान हटा ली जाय और यदि ठेकेदार का लाईसेन्स काल शेष हो तो मुआवजा देकर भी दुकान समाप्त की जाय।

(७) राज्य शासन प्रांत की समस्त रचनात्मक संस्थाओं और लोक सेवकों के सहयोग से और शासकीय विभाग अपनी समस्त उपलब्ध शक्ति से शराबबन्दी का वातावरण बनायें तथा इसके लिए हस्तपत्रक पुस्तकें, पोस्टर्स, स्लाइड्स, सिनेमा, संवाद, नाटक, व्याख्यानमालाएँ आदि सभी प्रकार की प्रचार-सामग्री का उपयोग करें।

(८) हर जिले में इसके लिए सम्मेलन आयोजित किये जायँ। कार्यकर्ताओं व पंचायतों के पंचों के शिविर रखे जायँ और शराबबन्दी के लिए उपयुक्त तौर-तरीके सोचे जायँ तथा प्रभावकारी कदम उठाये जायँ।

(९) देशी-विदेशी शराब अथवा नशीली वस्तुओं का किसी भी प्रकार से विज्ञापित होना रोका जाय। विज्ञापन द्वारा प्रलोभन देना अपराध माना जाय।

जनता क्या करे ?

(१) हर जिले से पूर्ण नशाबन्दी की व्यवस्थित माग की जाय और हस्ताक्षर-आन्दोलन प्रारंभ कर योग्य वातावरण बनाने में सहायक हो।

(२) ग्रामवासियों अथवा मोहल्ले के लोगों को संगठित कर सार्वजनिक स्थानों, जनपथों से शराब की दुकानें हटाने की माग करे और अपने मोहल्ले में जो इसके आदतमन्द हो, उनका रजिस्टर रखे तथा उनसे व्यक्तिगत सपर्क कर उसे शराब की लत से मुक्त कराने का प्रयत्न करे। इस कार्य-हेतु मोहल्ला तथा ग्राम मद्य निषेध समितियाँ बनायी जायँ।

(३) अपने मोहल्ले तथा गाव में इस योग्य वातावरण बनायें कि कोई भी व्यक्ति शराब पीकर हो-हल्ला करने की हिम्मत न करे और मद्य-पान को हीनता समझने लगे।

(४) व्यवस्थित माग करने और सभी वैधानिक मार्ग अपनाने पर भी शराब की दुकानें नहीं हटतीं तो शांतिमय धरना देकर भी शासन तक नैतिकता की आवाज पहुँचा, उसे हटाने के लिए मजबूर करें।

(५) अपने मोहल्ले में जो शराब पीने वाले हैं, उनके अतिरिक्त उसकी लत किसी नये व्यक्ति को न लगे—इसका ध्यान रखा जाय और हर सम्भव प्रयत्न किये जायँ कि कोई नया पीने वाला न बने।

(६) अपने मोहल्ले अथवा पास-पड़ोस में जहाँ अवैधानिक शराब का काम होता हो उसकी सूचना तुरंत अपने मोहल्ले की मद्य-निषेध समिति को दे तथा मद्य निषेध समिति उसे हटाने की राह सोचे।

व्यक्ति क्या करे ?

(१) सभी तरह की शराबें और तम्बाकू सहित सब तरह की नशीली चीजों का कभी इस्तेमाल न करने का व्रत लें।

(२) यदि आप नशीली वस्तुओं के सेवन से मुक्त हैं तो आप बड़े भाग्यशाली हैं। परन्तु नशीली वस्तुओं का सेवन से मुक्त रहना ही पर्याप्त नहीं है, आपका यह भी कर्तव्य है कि आप अपने परिवारजनों को भी इस आदत से मुक्त रखने में सहायक हों।

(३) अपने पास-पड़ोस में कोई मद्य-पान अथवा अन्य नशीली वस्तुओं का आदी हो, तो उससे व्यक्तिगत संपर्क करके उसे अपने विश्वास में लें और धीरे-धीरे वह नशे की गुलामी छूटे, इसका प्रयत्न करें।

(४) स्थानीय मद्य-निषेध के लिए काम करने वाली संस्था को हर समय सहायता करें।

(५) शराबबन्दी के बारे में निकले हुए साहित्य का स्वयं अध्ययन करें तथा उससे होने वाले नुकसानों तथा बुराइयों को अपने उन भाई बहनों को भी बतायें, जो अपढ़ हैं।

(६) अपने मोहल्ले में अवैधानिक अथवा चोरी से शराब लाने, बनाने और पीने वालों के साथ उनसे ये बुरी हरकतें छुड़वाने के लिए संपर्क स्थापित करें और उन्हें समझायें।

(७) अपने पास पड़ोस अथवा मोहल्ले की अवैधानिक शराब-भट्ठियों एवं बिक्री-केन्द्रों का पता लगायें तथा उसकी जानकारी यथासमय अपने मोहल्ले की मद्य मोचन समिति को दें।

(८) यदि आप किसी ऐसी जाति अथवा समाज के सदस्य हैं, जिसमें सामूहिक मद्यपान रिवाज माना जाता है, तो उसका विरोध करें और अपने जाति भाइयों को समझायें।

एक संस्मरण

निःस्पृहता का आदर्श

बम्बई के अभ्यास-काल के समय एक बार मेरे पास खर्च की व्यवस्था नहीं थी, इसलिए मेरी विनती से एक सेठ ने अपने यहाँ दो समय भोजन करने की व्यवस्था कर दी। सेठ स्वयं बहुत भले थे, परन्तु नयी सेठानी कुछ लालची स्वभाव की थी। सेठ का भोजन करने का समय प्रतिदिन दोपहर को बारह बजे का था, परन्तु मुझे कालेज जाना था, इसलिए मैं दस साढ़े दस बजे भोजन करने बैठता।

एक बार मैं भोजन कर रहा था, तब सेठानी आ धमकी। मेरी थाली में परोसा हुआ शाक देख कर बोल उठी: "इतना अधिक शाक परोसा जाता है! पीछे, सेठ के लिए नहीं रहता।"

इन शब्दों को सुनने की अपेक्षा मृत्यु अच्छी, पर अन्य उपाय नहीं था। मुझे पढ़ाई समाप्त करना था, इसलिए मैं चुप बैठा रहा, पर उस दिन के बाद सेठ के घर भोजन किया, तब तक केवल नमक के साथ रोटी खाने के सिवाय अन्य कुछ नहीं खाया।

सालों बाद भावनगर में जब मैं अध्यापक हुआ, तब इसी सेठ के पुत्र के घर में पढ़ाने के लिए रहा। तीन-चार महीने के अन्त में जब साल समाप्त हुआ, तब सेठानी डेढ़ सौ रुपये लेकर मुझे देने आयी।

मैंने कहा, "मुझे क्षमा कीजिये, मैं आपका ऋणी हूँ। आपने मेरे कमजोर दिनों में बम्बई में मुझे आश्रय दिया है, इसलिए यह रकम मैं नहीं लूँगा।"

सेठानी थोड़ी देर चकित हुई। सेठ को बुला लायी और कहने लगी। "मास्टर, हमने तो उस दिन आपको पहचाना तक नहीं, भूल-चूक हुई हो तो क्षमा करना।"

मैंने उत्तर दिया, "आपका उपकार स्मरण करूँ या आपकी भूलों को गिन कर गाँठ में बाँधूँ ?"

डेढ़ सौ रुपये हिंडोले पर रख कर मैं चलता बना। —नानाभाई भट्ट

उत्तराखण्ड सर्वोदय-पदयात्रा से

—सुन्दरलाल बहुगुणा

हमने पिथौरागढ़ से ६ अप्रैल को पदयात्रा प्रारंभ की। यह यात्रा पिथौरागढ़, अल्मोड़ा, गढ़वाल, चमोली, टिहरी और उत्तर काशी जिलों से होते हुए मई के तीसरे सप्ताह में समाप्त होगी। हिमालय की घाटियों और चोटियों में बसे हुए छोटे-छोटे पहाड़ी गांवों में सर्वोदय का संदेश पहुँचाने के अलावा हमारी यात्रा का उद्देश्य दूर-दूर बिखरे हुए इक्के-दुक्के शांति-सहायक साथियों को अपने चलते-फिरते स्वाध्याय शिविर में शामिल करना भी है। इसलिए हमारी इस यात्रा का शुभारंभ हिमालय की मूक सेविका और इस क्षेत्र के सर्वोदय-परिवार की माँ, श्री सरला बहन के आशीर्वाद से हुआ।

पिथौरागढ़ केवल उत्तरी सीमा पर स्थित होने या यहाँ से होकर गुजरने वाले कैलाश मानसरोवर के रास्ते पर पड़ने के कारण ही महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि नेपाल की सीमा भी इससे मिली हुई है। नेपाल के कई गाँवों का तो बाजार भी यही है। इसलिए हमारी सार्वजनिक सभा में स्थानीय श्रोताओं के अलावा बड़ी संख्या में नेपाली नागरिक और इक्के दुक्के तिब्बती शरणार्थी भी थे। पिथौरागढ़ के आसपास के गाँवों से प्रत्येक परिवार से कोई न कोई सेना में नौकरी करने गये हैं। देश की सुरक्षा की दृष्टि से हम क्या सोचते हैं? सब इस प्रश्न का उत्तर हमसे चाहते हैं और हमारा उत्तर है, 'ग्रामदान'।

हमने उनके सामने गाँवों को बाजार, व्यसन और अदालत से मुक्ति दिलाने का कार्यक्रम पेश किया। कुछ भूतपूर्व सैनिक भाइयों को, जो अपने गाँवों में सर्वोदय-पात्र भी चलाते हैं, यह बात पसंद आयी। उनकी ओर से सूबेदार श्री मानसिंह अपने चार साथियों का निश्चय पत्र देते हुए बोले

"२१ वर्षों तक मैंने मारने वाली सेना में नौकरी की है। अब दूसरों को जिलाने के लिए स्वयं मरने को तैयार रहने वाली विनोबा की शांति-सेना का सहायक बन रहा हूँ। हम कोशिश करेंगे कि हमारे गाँव स्वावलम्बी बनें, वहाँ कोई शराब पीने वाला न रहे और गाँव से एक भी मुकदमा बाहर अदालत में न जाये।"

शांति के कार्य के लिए स्त्री-शक्ति को जाग्रत करने का भी हमारा प्रयास है। उर्ग गाँव में रेवती बहन ने महिलाओं को संगठित किया है। वे नियमित रूप से सर्वोदय पात्र चलाती हैं। पिथौरागढ़ के नागरिकों ने आम सभा में १६१ रु० इकट्ठे करके भी हमें दिये और जिला सर्वोदय मंडल ने घोषणा की कि इसका उपयोग इस जिले में महिला शांति-सहायकों के प्रशिक्षण के लिए किया जायेगा।

मित्र-निकेतन

पिथौरागढ़ से डेढ़ मील ऊपर, चंडाक की चोटी पर एक 'क्वेकर' दंपत्ति, श्री और श्रीमती बेकर रहते हैं। एक स्कूल में सभा करने के बाद लगभग ११ बजे हम उनके घर पर पहुँचे। ये 'क्वेकर' मित्र पिछले १५ वर्षों से इस पर्वतीय क्षेत्र की मूक सेवा कर रहे हैं। उनका अस्पताल केवल आसपास के गाँवों के लिए ही नहीं, नेपाल और कुछ वर्ष पहले तक तिब्बत के रोगियों के लिए भी आरोग्य का केन्द्र रहा है। श्रीमती डाक्टर बेकर दक्षिण भारतीय महिला हैं। वस्तुशिल्प-कला के शास्त्री श्री बेकर अमेरिका से आकर भारत में बसे। वे पिथौरागढ़ में सेवा करने आये, तो उनके पास केवल ६ पैसे थे। इस दुःसाहसी जोड़ी को प्रारंभ में विदेशी मिशनरियों से उपेक्षा मिली। स्थानीय लोगों से भी आश्रय के लिए एक उजाड़ गौशाला के सिवाय कुछ न मिला। बेकर दंपति ने अपनी निःस्वार्थ सेवाओं के द्वारा लोगों के दिलों को जीत लिया। रोगी उनके लिए अपने घरों से राशन और लकड़ी ले आते, तब उनका चूल्हा चढ़ता। धीरे धीरे उन्हें अपना सेवा केन्द्र बनाने के लिए चंडाक की चोटी पर भूमि भी मिल गयी। वस्तु शिल्पकला के कार्यों से होने वाली आमदनी, क्वेकर मित्रों की सहायता और अपने श्रम से कुछ ही वर्षों में इस दंपति ने इस चोटी पर 'मित्र निकेतन' के नाम से अपना आश्रम बना लिया है।

श्री बेकर से हमने 'क्वेकर' समुदाय के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त की। अपने जीवन और कार्य के बारे में पूछने पर उनका उत्तर था, "हम गांधी, सेंट फ्रांसिस और विनोबा जैसे संतों को श्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं, परन्तु शांति के प्रचार के लिए घूम नहीं सकते। हम उन आदर्शों के अनुसार जीवन बिता कर अपने परिवार में शांति की स्थापना करने का प्रयत्न करते हैं। एक परिवार का प्रभाव गाँव पर और गाँव का प्रभाव सारे समाज पर पड़ेगा।"

स्थानीय जनता का जीवन-स्तर किस प्रकार उच्च हो, इसकी श्री बेकर को बड़ी चिंता है। बागवानी के विकास की दिशा में किये गये सरकारी प्रयत्नों से कुछ लाभ हुआ है, परन्तु कृषि की पैदावार बढ़ाने के लिए क्या प्रयत्न किये जायें, इसकी वे खोज कर रहे हैं। उन्होंने अपने केन्द्र में मिट्टी का परीक्षण करने का सामान (सॉइल टेस्टिंग किट) मंगाने का सुझाव पसन्द किया।

सादे पहाड़ी ढंग की बनी हुई खाने की मेज पर हमारी टोली जब भोजन के लिए बैठी और जब खाना परस चुका, तो बेकर गोद में आठ महीने के एक स्वस्थ शिशु को लेकर आये। यह उनका पुत्र 'तिलक' था। स्वयं उनकी कोई संतान नहीं है। कुछ वर्ष पहले बेकर दंपति ने एक पहाड़ी लड़की को गोद लिया था। इस वर्ष उनके फाटक पर कोई इस नवजात शिशु को छोड़ गया था, जिसका वे बड़ी हिफाजत से पालन-पोषण कर रहे हैं।

हम सब 'मित्र-निकेतन' के वातावरण और बेकर दंपति के आदर्श जीवन से बहुत प्रभावित हुए। पहाड़ों के भौतिक और आत्मिक जीवन के विकास के इस केन्द्र से हम सर्वोदय-सेवकों को बहुत कुछ लेना है। चलते-चलते हमने उनसे पूछा, "क्या आपके केन्द्र में आकर हम लोग कुछ दिन रह सकते हैं?" और श्री बेकर का उत्तर था, "सहर्ष! यह 'मित्र-निकेतन' शांति के लिए काम करने वाले मित्रों का अपना घर है।" अपने घर की देहली पर कदम रखते समय हमारे सामने पंचचुली, नन्दाकोट और नन्दा देवी के हिम शिखर चमक रहे थे।

चौगाड़, धुराऊँ, (जिला पिथौरागढ़)
९ अप्रैल '६२

सिक्किम प्रदेश में सर्वोदय-कार्य की संभावनाएँ

गांधीजी और उनके विचारों में आज सर्वत्र रुचि बढ़ रही है। राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक परिस्थितियों का तकाजा है कि नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापना हो। सर्वोदय विचार के लिए संभवतः आज सबसे अधिक अनुकूलता है।

भारत के बिलकुल पड़ोसी देश जैसे नेपाल, भूटान आदि में आर्थिक सामाजिक नवरचना का कौनसा काम हो और भारत आदि देशों की जनता आपस में नजदीक कैसे आये, ऐसे मसलों की ओर ध्यान देने की स्वाभाविक रूप से आज आवश्यकता है। सर्व सेवा संघ ने श्री विनोबाजी के मार्गदर्शन में इसी दृष्टि से लोक-सेवा द्वारा लोकनीति के निर्माण के लिए पठानकोट, उत्तराखण्ड आदि में खादी ग्रामोद्योग, शांति सेना व अन्य कार्यक्रम चलाने का विचार किया।

इसी संदर्भ में श्री जयप्रकाश नारायण ने श्री विद्यासागर व अन्य दो-एक सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को सिक्किम आदि क्षेत्र में भेजा था। उस दल ने क्षेत्र की परिस्थितियों और वहाँ के लिए उपयोगी कार्य की संभावनाओं वगैरह पर सुझाव दिये थे। बाद में सर्वश्री नरसिंह नारायण सिंह, रामचन्द्र ठाकुर और मक्खन प्रसाद शाह के दल ने नवम्बर, दिसम्बर '६१ का लगभग दो महीनों का समय लगा कर सिक्किम में खादी-ग्रामोद्योग कार्य प्रारंभ करने के उद्देश्य से खोजबीन की। यह दल बिहार सर्वोदय मंडल द्वारा बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ और खादी-आयोग के सहयोग से भेजा गया था।

सिक्किम के महाराजकुमार ने अपने एक पत्र में श्री जयप्रकाश नारायण को हार्दिक धन्यवाद दिया है कि उन्होंने सिक्किम में खादी ग्रामोद्योग काम को चालना देने के लिए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का दल भेजा। यहाँ के सभी राजनीतिक पक्षों, कार्यकर्ताओं और प्रशासन ने भी इस कार्य में सहयोग देने का आश्वासन दिया है।

दल ने अपने प्रतिवेदन में सिक्किम में खादी और ग्रामोद्योग कार्य की संभावनाओं पर प्रकाश डाला है। दल ने पश्चिमी सिक्किम के रम्ब, सिमतांग आदि कई स्थानों तथा गैंगटोक के आसपास के गाँवों की अपनी यात्रा में यह पाया कि खादी-ग्रामोद्योग कार्य से वहाँ के लोग नितांत अनभिज्ञ हैं, और तो और उन्हें भारत सरकार के पालिटिकल आफिस के कुछ कर्मचारियों की सर्वोदय के संबंध में अज्ञानता देख कर भी आश्चर्य हुआ। इसी प्रकार उन्हें लगा कि कई दशाब्दियों से सिक्किम में रहने वाले भारतीय व्यापारियों का सिक्किमवासियों के साथ कोई सामाजिक संबंध नहीं है।

सिक्किम के महाराजकुमार ने गैंगटोक में ही पहला अंबर वर्ग प्रारंभ करने की सलाह उक्त दल को दी। उत्तरी सिक्किम में ऊन के काम का विकास हो सकता है, क्योंकि वहाँ लोग भेड़ पालते हैं। बिहार से भेजे गये इस कार्यकर्ता दल का विश्वास है कि सिक्किम में सूती वस्त्रोद्योग, ऊनी वस्त्रोद्योग, चर्मोद्योग और दियासलाई उद्योग भले प्रकार चलाये जा सकते हैं तथा अन्य उद्योगों की संभावना के लिए गहरे अध्ययन की आवश्यकता है। वस्त्रोद्योग के लिए गैंगटोक में अंबर वर्ग एवं बुनाई वर्ग चालू किये जायेंगे। ऊनी उद्योग के लिए भी गैंगटोक में ही कताई वर्ग की तैयारी हो रही है और मौसम अनुकूल रहा तो उत्तरी सिक्किम में बुनाई वर्ग प्रारंभ किया जायगा। वहाँ खादी-भंडार भी खोलने की आवश्यकता है। सर्वोदय विचार के प्रसार और खादी ग्रामोद्योग की जानकारी के लिए नेपाली और तिब्बती भाषाओं में छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ तैयार करके, वहाँ की जनता में प्रचारित करने की बड़ी आवश्यकता है। प्रतिवेदन में अंत में लिखा है कि "सिक्किम में काम करने का हमें जो अवसर मिला है, उसे ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि हम वहाँ जो कुछ भी करें मुस्तैदी से, दृढ़ता से और शीघ्रता से करें।" ●

संथाल परगना में 'बीघा-कट्ठा' अभियान

प्रथम दिन ही १३८० कट्ठा भूमि मिली

बिहार के १७ जिलों के लगभग २५० अंचलों में 'बीघा-कट्ठा' अभियान की टोलियाँ १५ अप्रैल से निकली हैं। श्री जयप्रकाश नारायण इस अभियान में ४० दिन का और श्री ढेबर भाई १० दिन का समय देंगे। अभियान में सहयोग देने के लिए विभिन्न प्रदेशों से २०५ कार्यकर्त्ता बिहार में पहुँचे हैं। शान्ति-सेना विद्यालय, कस्तूरबाग्राम, इन्दौर की ३० बहनें भी इस कार्य के लिए गयी हैं।

संथाल परगना जिले के पोड़ियाहाट अंचल में 'बीघा कट्ठा' अभियान की शुरुआत के प्रथम दिन ही, १६ अप्रैल को १३८० कट्ठा भूमि दान में मिली। लोगों में काफी उत्साह है। संथाल पहाड़िया सेवा-मंडल के २५ कार्यकर्त्ता भी इस दिशा में सचेष्ट हैं। दुमका जिला पंचायत-परिषद के मंत्री ने अपने क्षेत्र की ६५० पंचायतों के मुखियाओं और सरपंचों को इस अभियान में सक्रिय होने की प्रार्थना की है।

२२ अप्रैल से २७ अप्रैल तक पाकुड़ में संथाल परगना जिले के छहों सब-डिवीजनों के पंचों और मुखियाओं का एक शिविर रखा गया है। अखिल भारत सर्व सेवा संघ की ओर से भी कृष्णराज मेहता इसमें भाग लेंगे।

गाँव-गाँव में पहुँचने के लिए कार्यकर्त्ताओं की कई टोलियाँ बनायी गयी हैं और 'अभियान' की तिहरी व्यूह-रचना हुई है।

(१) सघन : कुछ अंचलों में, जैसे पोड़ियाहाट, सरैयाहाट, रामगढ़ आदि के गाँव-गाँव में पहुँचना।

(२) व्यापक : सारे जिले में पंचायतों के जरिये पहुँचना। छहों सबडिवीजनों में से गोड्डा सबडिवीजन को सघन कार्य के लिए चुना गया है।

(३) प्रमुख भूमिवानों व प्रभावशाली लोगों से [illegible] गत संपर्क करके अभियान में सहयो[illegible] त किया जायगा। सारे कार्य का आरंभ व संयोजन उत्साहप्रद हो रहा है।

इन्दौर में सर्वोदय-पात्र तथा साहित्य-प्रचार

विसर्जन आश्रम, इन्दौर द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार गत मार्च माह में कार्यकर्त्ताओं द्वारा १८७५ परिवारों से व्यक्तिगत संपर्क किया गया। १०७ नये सर्वोदय-पात्रों की स्थापना की तथा १८१५ सर्वोदय-पात्रों से अन्न तथा नकदी के रूप में ५९९ रु० ५२ न० पै० संग्रहीत हुए। आश्रम-कार्यकर्त्ताओं तथा सर्वोदय-साहित्य भंडार के संयुक्त प्रयास से माह भर में करीब पौने छह हजार रुपये के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। ४७० भूदान पत्र-पत्रिकाएँ फुटकर बेची गयीं। चल-पुस्तकालय से २९ परिवारों ने लाभ उठाया तथा साप्ताहिक बैठक कार्यक्रम के अनुसार आश्रम में प्रति रविवार विभिन्न विद्वानों के व्याख्यान हुए।

विश्व-शान्ति पदयात्रा

श्री ई० पी० मेनन और श्री सतीश कुमार नामक दो नवयुवकों ने नई दिल्ली से मास्को तथा वाशिंग्टन तक विश्व-शान्ति-पदयात्रा करने का संकल्प किया है। ये दोनों नवयुवक देश के सर्वोदय-आन्दोलन से सम्बद्ध हैं तथा विनोबाजी द्वारा बंगलोर में स्थापित "विश्वनीडम् आश्रम" में निवास करते हैं। उनकी यात्रा जून '६२ के प्रथम सप्ताह में नई दिल्ली से प्रारंभ होगी।

शराब छुड़ाने का जापानी तरीका

नई दिल्ली : ४ अप्रैल : जापान की राजधानी टोकियो की पुलिस शराब के नशे में चूर आदमी को कैसे सजा देती है और उसकी आदत को छुड़ाने के लिए किस प्रकार के मनोवैज्ञानिक उपाय बरतती है, इसका रोचक उदाहरण आज यहाँ अमेरिका की 'लिवन' पत्रिका के संपादक फ्रांसिस ए० सोपर ने दिया। उन्होंने पत्रकारों को बताया कि पुलिस उस व्यक्ति को पकड़ कर थाने में ले जाती है और जो कुछ वह बोलता है, उसका टेप रिकार्ड कर चलचित्र भी साथ ही ले लिया जाता है। दूसरे दिन उस व्यक्ति के होश में आने पर वही सब दिखा-सुना कर उसे लज्जित किया जाता है।

सरकार द्वारा ग्रामोद्योग योजना-समिति का गठन

पिछले सर्वोदय-सम्मेलन में श्री जयप्रकाश नारायण ने ग्रामीण औद्योगीकरण आयोग का सुझाव रखा था। उस सुझाव के अनुसार भारत-सरकार ने एक ग्रामोद्योग योजना-समिति (रूरल इण्डस्ट्रीज प्लानिंग कमेटी) बनाने का निश्चय किया है।

ग्रामोद्योग योजना समिति गाँवों में उद्योगों की प्रगति की समीक्षा करेगी और उनके बारे में नीतियाँ और योजना बनायेगी। यह समिति गाँवों में उद्योगों की समस्याओं का अध्ययन करेगी और सरकार को अपने सुझाव आदि देगी।

समिति में ये व्यक्ति होंगे : योजना-आयोग के उपाध्यक्ष श्री गुलजारीलाल नन्दा, वाणिज्य और उद्योगमंत्री श्री के. सी. रेड्डी, उद्योग-मंत्री श्री नित्यानन्द कानूनगो, सामुदायिक विकास मंत्री श्री सुरेन्द्रकुमार दे, योजना आयोग के सदस्य सर्वश्री श्रीमन्नारायण और टी एन सिंह, श्री वी. एल. मेहता, श्री शंकरराव देव, श्री जयप्रकाश नारायण, प्रोफेसर डी. आर गाडगिल, श्रीमती कमला देवी चट्टोपाध्याय, श्री ध्वजा प्रसाद साहू, श्री कृष्णदास गांधी और डाक्टर डी के मल्होत्रा (संसद-सचिव)।

स्वर्गीय श्री विश्वेश्वरैया !

अक्सर किसी की मौत पर हम लोग कहते हैं कि अमुक की मृत्यु असमय हो गयी ! वास्तव में 'समय के पहले' किसी की मृत्यु होती नहीं, पर सामान्य तौर पर जब हमें ऐसा लगता है कि किसी का जीवन-प्रवाह अचानक बीच में टूट गया, तब हम उसकी 'अकाल-मृत्यु' पर शोक मनाते हैं। लेकिन जब भरे-पूरे जीवन के बाद किसी की मृत्यु होती है, तब वह स्वयं उसके लिए विश्राम की ही घड़ी होती है और दूसरों के लिए भी शोक का नहीं, कृतज्ञता-ज्ञापन का अवसर होता है।

श्री मोक्षगुण्डम् विश्वेश्वरैया का निधन इसी प्रकार की घटना है। पूरे सौ वर्ष से भी कुछ ऊपर की अपनी आयु में निरन्तर अपना सर्वस्व उन्होंने समाज की सेवा में समर्पित किया। एक अत्यन्त कुशल इंजीनियर, साथ-साथ उतने ही कुशल शासक, प्रखर विचारक और सेवा-भावी—ऐसा उनका विशिष्ट व्यक्तित्व था, जितना एक मनुष्य के लिए सम्भव हो सकता है, उससे भी शायद कुछ ज्यादा ही विश्वेश्वरैया ने अपने आसपास के समाज को दिया। वे जिन्दा थे तब भी दूसरों को समाज-कल्याण की सतत प्रेरणा देते रहते थे, अब वे नहीं हैं तब भी उनकी याद सदा इसी प्रकार प्रेरणा देती रहेगी।

विश्वेश्वरैया के नाम के साथ-साथ इसी प्रकार के भरे-पूरे जीवन वाले एक दूसरे आधुनिक महर्षि का सहज स्मरण हो आता है—महर्षि धोंडो केशव कर्वे। उम्र में वे विश्वेश्वरैया से भी बड़े हैं। अभी-अभी उन्होंने अपने जीवन के १०५ वर्ष पूरे किये हैं। उनकी सेवा और समाज के लिए उनकी देन भी अनुपम रही है। ऐसे लोगों के जीवन आगे आने वालों के लिए सदा प्रकाश-स्तम्भ का काम करते हैं।

—सिद्धराज

गुजरात नई तालीम संघ का नवम् वार्षिक सम्मेलन

गुजरात नई तालीम संघ का नवम् वार्षिक सम्मेलन आगामी २४ मई को श्री ढेबर भाई की अध्यक्षता में हरिजन आश्रम, अहमदाबाद में होगा। सम्मेलन का आरंभ श्री काकासाहब कालेलकर करेंगे। सम्मेलन में शिक्षण में अंग्रेजी की मर्यादा, गुजरात राज्य की शिक्षण-नीति, उत्तर बुनियादी तथा उत्तम बुनियादी का कार्यक्रम तथा नई तालीम की विभिन्न समस्याओं के सम्बन्ध में गंभीरतापूर्वक चर्चा-विचार होगा। इस अवसर पर नई तालीम शिक्षण पद्धति से संबंधित विविध अंगों की एक प्रदर्शनी भी आयोजित की जा रही है।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५०० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९८१० एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ४ मई '६२ | वर्ष ८ : अंक ३१

स्मृति-दिवस की प्रेरणा

● विनोबा

ग्यारह साल पहले इसी दिन हमको पहला भूदान मिला था। वह दिन और वह स्थान हमको याद रहता है। हमारी आँखों के सामने आज दिन भर उसका चित्र रहा। आज की तरह ही उस दिन भी शाम को सभा हुई थी। लेकिन आज आप लोग जितनी संख्या में यहाँ हैं, उस दिन शायद इसका दसवाँ हिस्सा रहा होगा। छोटी सभा थी। थोड़े लोग थे। उसी सभा में पहला दान जाहिर हुआ।

हरिजनों ने सौ एकड़ जमीन की माँग की थी। हमने गाँववालों के सामने उनकी माँग रखी। उसी समय एक भाई ने सौ एकड़ जमीन दान दे दी। तब हम विचार में पड़ गये। सोचने लगे कि क्या यह ईश्वर का इशारा है? क्या वह चाहता है कि हम भूमिहीनों के लिए जमीन माँगते फिरें? तब हमने और किसी की सलाह नहीं ली और मन में तय कर लिया कि अब भूदान के जरिए ही भूमिहीनों की समस्या हल की जायगी। हम भूदान माँगने लगे। लोग देने लगे। यह आपके इतिहास में और दुनिया के इतिहास में भी छोटी घटना नहीं मानी जायेगी कि लगभग छह लाख लोगों ने करीब चालीस लाख एकड़ जमीन दान में दी। प्रभु की इच्छा नहीं होती तो यह सब कैसे होता!

साथियों का स्मरण

इन ग्यारह सालों में हमारे कई अच्छे-अच्छे साथी चले गये। किशोरलाल भाई गये, धाजूजी गये, कुमारप्पा गये। गुजरात में नरहरि भाई परीख गये, मध्य प्रदेश में ठाकुर प्यारेलाल गये, पंजाब में अचिंतराम गये, कश्मीर में जनरल यदुनाथ सिंह गये, उत्तर प्रदेश में बाबा राघवदास गये, बिहार में लक्ष्मीबाबू गये, ओड़िशा में गोपबाबू गये। जाने वाले ये सब इस आंदोलन की बहुत बड़ी शक्ति थे। इन सबकी हमको क्षति महसूस होती है। इनकी जगह लेने वाले जवानों में से मिलने चाहिए, कुछ मिल रहे हैं। उनकी प्रतिष्ठा बन रही है। बनते-बनते कुछ दिन लगेंगे। थोड़े दिन प्रभाव कम दिखेगा, लेकिन आगे प्रतिष्ठा होगी, तब प्रभाव पड़ेगा। यह एक युग की बात है। इसलिए यह पूरी करके ही शान्ति होगी।

जो हमारे साथी परमेश्वर के पास गये, उनकी उम्र कम-बेशी थी। कोई दो चार साल बड़े थे तो कोई दो चार साल छोटे। छोटे बड़े सभी गये। हमारी बारी भी चल रही है। शरीर तो दिन ब दिन वृद्ध होता जा रहा है, लेकिन हृदय में अत्यन्त संतोष है। अगर आज परमेश्वर हमको बुलाये और हम यहाँ से उसके पास जायें, तो पूर्ण समाधान के साथ उसके पास जायेंगे। हमको यह नहीं लगता कि कोई वासना शेष है। यह ठीक है कि भगवान् ने और कुछ दिन शरीर में रखा तो हम नाराज नहीं होंगे। उस समय का उपयोग भगवान् की सेवा में किया जायेगा। उसमें भी हमको प्रसन्नता है। इस प्रकार का समाधान जिंदगी में आया तो हम समझेंगे कि मानव जन्म सार्थक हुआ।

प्रेरणा का झरना

आज ग्यारह साल से लगातार यात्रा चल रही है, जिससे लोगों को जरा आश्चर्य होता है। लेकिन आश्चर्य नहीं होना चाहिये। महापुरुष शंकरदेव तो बारह साल घूमे। वे जिस उद्देश्य से घूमे थे, वह ज्यादातर व्यक्तिगत उद्देश्य था। चित्त शुद्धि, हरिप्रसाद, संतों से मिलना, उनके विचार सुनना, अपने विचार उनको सुनाना, इस तरह से व्यक्तिगत भाव ही था। बाद में जब उनका पूरा समाधान हो जाता था, तब कुछ सामूहिक काम उठा लेते थे। वे ऐसे काम उठाते थे, जिनसे सारे समाज जीवन का उत्थान होता था। अतः शान्ति, अतः समाधान की प्राप्ति कर उनको प्रथम अपना पूर्ण समाधान कर लेना पड़ा। पहले हमने भी यही किया था। १९२१ से १९५१ तक हम उस काम में लगे रहे, जिसको आज शांति-कार्य कह सकते हैं। बाद में हम वहाँ से निकले। एक दफा राह खुल जाती है, तो हजारों मनुष्य उस राह पर चल पड़ते हैं। सबके लिए साधना की जरूरत नहीं होती। जिन्होंने बिजली की खोज की, उनको संशोधन की जरूरत थी। लेकिन आज लोगों को बिजली के संशोधन की, उतनी जरूरत नहीं है; क्योंकि बिजली के साधन उपलब्ध हैं। ऐसी ही अध्यात्म-शक्ति की बात है। जहाँ आध्यात्मिक शक्ति की खोज का सवाल आता है, वहाँ व्यक्तिगत संशोधन के लिए समय देना पड़ता है। लेकिन आध्यात्मिक शक्ति जीवन में लाने का सवाल जहाँ आता है, वहाँ रास्ता बन गया, ऐसा समझना चाहिये। हजारों लोग उस रास्ते पर चल पड़ेंगे। कुछ नये आयेंगे, पुराने जायेंगे। ऐसा तो होता ही रहेगा। पुराना पानी जाता है और नया आता है, तो नदी बहती रहती है। नदी में जो अपनी जान होती है, वह अंदर का झरना होता है। बाहर से आया हुआ पानी घटता भी है और बढ़ता भी है। आज भी हमारे शरीर में कोई थकान महसूस नहीं होती, क्योंकि अंदर एक प्रेरणा का झरना है। हम समझते हैं कि यह प्रेरणा भगवत् प्रेरणा है। वही हमको हिलाती-डुलाती रहती है। हम कौन हैं, चिंता करने वाले! हमने सारी चिंता ऊपर वाले पर छोड़ दी है। सफलता, निष्फलता, गुण दोष, सब उसीको समर्पण करके सब तरह से खुद को मुक्त पाते हैं।

असम-यात्रा की अनुभूति

असम की यात्रा से हमको बहुत आनंद हुआ। यहाँ आये तेरह महीने हो गये, अभी और भी कुछ दिन इधर लगेंगे। लेकिन अब असम की यात्रा समाप्त होने का समय आ गया है। हम यहाँ से जायेंगे, फिर भी यहाँ के लोगों के साथ हमारा हमेशा हार्दिक संबंध रहेगा। यहाँ का काम चलेगा तो उसको हम भी मदद दे सकते हैं, देते रहेंगे। लेकिन अभी ईश्वर कह रहा है कि इस प्रदेश की यात्रा की समाप्ति का समय आया है। हमने यहाँ के लोगों में बहुत सौम्य चित्त पाया। सुमति कुमति सबके हृदय में है।

"सुमति-कुमति सबके उर बसहीं,
नाथ पुरान निगम अस कहहीं।"

यह भजन तुलसीदास ने गाया है। नामघोषा में भी यह प्रार्थना की है कि 'गुसायोक कुमति, दियोक सुमति!' यह कामना हरएक के चित्त में होती है। परमेश्वर के साथ संबंध होता है, वह सुमति का होता है और वही संबंध टिकता है। कुमति आती है और जाती है। वह मनुष्य के चित्त का स्थायी भाव नहीं है। मनुष्य के चित्त का स्थायी-भाव तो सुमति है, सद्बुद्धि है। वह हरएक के हृदय में है। असम प्रदेश में भी हमने हरएक के हृदय में सद्बुद्धि भरी हुई पायी।

इस प्रदेश को हम भारत से अलग नहीं मानते। यहाँ के महापुरुषों ने अपना साहित्य ज्यादातर असमी भाषा में लिखा है और कुछ संस्कृत में भी लिखा है। उन्होंने भी ऐसी भावना नहीं रखी कि यह प्रदेश भारत से अलग है। "यह भारत भूमि है, यह धन्य भूमि है", ऐसा माना और कहा कि यहाँ हमको मानव-जन्म मिला, यह बहुत बड़ा भाग्य है! हमने भी यही महसूस किया कि यहाँ हम भारत में ही घूम रहे हैं।

दिल की भाषा

दुःख की बात है कि यहाँ तेरह महीने रह कर भी हम असमी भाषा नहीं बोल सकते। लेकिन आखिर एक मनुष्य कितनी भाषाएँ सीखने की कोशिश करेगा? हमने दिल की भाषा का अध्ययन किया है, लौकिक भाषा का नहीं। लोक संबंध तो आज है और कल नहीं। इसलिए महापुरुष की जो वाणी है, उसका परिचय कर लेना हमने हमारा कर्तव्य माना। इस दृष्टि से 'नामघोषा' का अध्ययन हुआ और हमने हृदय में कुछ भरा हुआ पाया। अब हम यहाँ से जायेंगे तो साथ में सद्भावना लेकर जायेंगे। हमको यह भास नहीं होगा कि हम इस प्रदेश को छोड़ रहे हैं। ऐसा लगेगा कि हम यहीं हैं। हमने यहाँ एक आश्रम की स्थापना की है और आशा रखी है कि इस आश्रम के जरिये आप खूब सेवा लेंगे। योजना हमने की है, उसका जितना अच्छा उपयोग आप करेंगे, उसी पर से कुछ चीजें निकलेंगी।

[पड़ाव : धमधमा, जि॰ कामरूप असम, १८ अप्रैल, '६२]

शक्ति के मुक्त संचार के लिए पूर्वाग्रह छोड़ें

शंकरराव देव

१८ अप्रैल को इस देश में एक नैतिक बल का विस्फोट हुआ, याने बिना किसी दबाव के, केवल अन्तःस्फूर्ति से, मानवता व करुणा से प्रेरित होकर एक मनुष्य ने, एक इन्सान ने, अपने कुछ भाइयों के कल्याण के लिए एक कदम उठाया। इस कदम के पीछे कोई प्रलोभन की भावना नहीं थी, कोई प्रसिद्धि मिलने की बात नहीं थी, कोई भय नहीं था, केवल कारुण्य था, जो फूट पड़ा और उससे प्रेरित होकर रामचन्द्र रेड्डी नामक एक व्यक्ति ने सौ एकड़ का दान कर दिया। इस अन्तःस्फूर्त करुणा का ही इतना बड़ा विस्फोट हुआ कि हजारों लोग उसके पीछे पागल हो गये और लाखों एकड़ जमीन का भूदान मिला।

इतनी बड़ी शक्ति उस छोटे-से दान से निकली। अब उस शक्ति का कोई हिसाब नहीं हो सकता। लेकिन जब यह आन्दोलन आँकड़ों के चक्कर में पड़ा, तब भी लाखों एकड़ जमीन तो मिली, परन्तु रामचन्द्र रेड्डी जैसे व्यक्ति के दान से जो शक्ति बनी वह फिर नहीं बनी। लाखों एकड़ का दान भी वह शक्ति नहीं पैदा कर सका, क्योंकि अब इसमें कारुण्य उतना नहीं है, जितना जोर आँकड़ों पर है। इसलिए १८ अप्रैल की याद आज भी प्रेरक व प्रेरणादायी बनी है।

हमारा जोर काम पर नहीं, शक्ति पैदा करने पर लगना चाहिये। जो परिवर्तन हम लाना चाहते हैं, उसके लिए शक्ति की जरूरत है। उदाहरण हमारे सामने है—आजादी के पहले जो करीब १५ लाख गज खादी पैदा होती थी, उसके मुकाबले *आज १५ करोड़ गज खादी पैदा होती है।* परन्तु १५ लाख गज खादी-उत्पादन से जो शक्ति उस समय पैदा हुई, वह आज १५ करोड़ के उत्पादन के बाद भी नजर नहीं आ रही है। ५० करोड़ के लक्ष्य तक भी हम पहुँच जायँ, तब भी आजादी के पहले के मुकाबले खादी-कार्य की शक्ति बनने वाली नहीं। क्या कारण है? यह कार्य जितना पहले प्रेम व करुणापूरित था, आज नहीं रहा। काम का विकास हुआ, *लेकिन गुण का विकास नहीं हुआ।* बुद्धि इसीलिए कर्म से श्रेष्ठ मानी गयी है, लेकिन इसके माने यह नहीं कि कर्म निकृष्ट है।

महापुरुषों से सबक लें

आज 'डेमोक्रसी' को जो खतरा है, वह यही कि आज का मानव प्रबुद्ध, चैतन्य नहीं है। शिक्षण के द्वारा हम उसकी चेतनता जगा सकते हैं। जितने भी महापुरुष पैदा होते हैं, वे हमारे लिए दिशा-सूचक का कार्य करते हैं; *परन्तु हम अपनी* कम अकल से उनको 'अपवाद' मान लेते हैं। हम यह नहीं सोचते कि जब वे ऊपर उठ सकते हैं, बंधन तोड़ सकते हैं तो हम क्यों नहीं कर सकते? लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि हम महापुरुषों की नकल करने की कोशिश करें। नकल करने की कोशिश करेंगे और जो हमारी बौद्धिक शक्तियाँ हैं, उनका ध्यान नहीं रखेंगे तो *कार्य सफल नहीं होगा, उससे* निराशा होगी। इसलिए नकल की कोशिश न करें। उनको समझने का प्रयत्न करें तो उससे हमें शक्ति प्राप्त होगी, आत्म-स्फूर्ति मिलेगी।

मानव की खोज

'पिछले हजार-दो हजार, पाँच हजार साल में मानव का काफी विकास हुआ है। *मानव-जीवन को समृद्ध करने वाली अनेक चीजें प्राप्त हुई हैं, परन्तु फिर भी आज* मानव शान्ति व सुख के लिए छटपटा रहा है। सुख व शान्ति उसे प्राप्त नहीं हुई है। उसके मन में भय है कि जो कुछ उसने अब तक प्राप्त किया है, *वह छिन न जाय, उसे वह खो* न बैठे।

जो कुछ उसके पास संग्रहीत है उसको जिसके पास उससे ज्यादा बल होगा उसके द्वारा छीना जा सकता है, या वह उनका *विनाश कर सकता है, यह भय उसके* मन में है। आज सुरक्षा का, मानव-जीवन को नियंत्रण करने वाला आखिरी शस्त्र उसके पास राजनैतिक बल यानी कानूनी बल है और उससे आगे 'शस्त्र-शक्ति' याने शारीरिक बल है। राजनैतिक बल यानी कानूनी बल का 'सैंक्शन' भी 'शस्त्र-शक्ति' ही है। *आज मानव की खोज इन दोनों—कानूनी बल व शस्त्र-शक्ति—से भिन्न तीसरी शक्ति के लिए* चल रही है।

दुनिया भर के सन्त पुरुषों ने, महापुरुषों ने *उस तीसरी शक्ति के खोज का* प्रयत्न किया है और उन्होंने यह बताने का प्रयत्न किया है कि दण्ड शक्ति के आसरे से कोई काम नहीं करना चाहिये। क्रोध से क्रोध का शमन नहीं हो सकता। शान्ति व प्रेम से ही क्रोध को जीता जा सकता है। बुद्ध, ईसा, महावीर सबने यही *बताया है कि प्रेम के मार्ग से ही, अहिंसा* के मार्ग से ही, सुख व शान्ति प्राप्त की जा सकती है और इन लोगों ने व्यक्तिगत जीवन के क्षेत्र में इसके विविध सफल प्रयोग भी किये हैं।

राजनीति व अर्थनीति के क्षेत्र में इसका उपयोग बहुत कम हुआ है और *अब तक मानव का ऐसा अनुभव रहा है* कि इस क्षेत्र में प्रेम-बल, अहिंसा-बल *अभी सफल नहीं हो पाया है। अर्थनीति* व राजनीति का आधार प्रेम हो सकते हैं, भोग धर्म से प्राप्त किया जा सकता है—इसका सन्तोषजनक उत्तर अभी तक मानव को मिला नहीं है।

राजनैतिक क्षेत्र के प्रयोग

इस देश में पिछले सौ-डेढ़ सौ साल से जो धारा बही, उसका मूल आध्यात्मिक विचार रहा है। अर्थनीति व राजनीति के क्षेत्र में भी इस देश ने प्रेम-शक्ति याने अहिंसा-शक्ति का एक प्रयोग गांधीजी के *नेतृत्व में स्वतंत्रता-आन्दोलन के दौरान में किया। कई लोगों का मत है कि गांधीजी* का यह प्रयोग थोड़ा-बहुत सफल रहा है। अन्याय का प्रतिकार सत्याग्रह से करने का जो विचार बना, उसके मूल में यही भावना काम कर रही है। सत्याग्रह याने सत्य का आग्रह। इसमें सत्य पर डटे रहने वाला व्यक्ति दूसरे के बजाय स्वयं को कष्ट में डालने के लिए अर्पण करता है।

विनोबाजी का प्रयोग गांधीजी के प्रयोग से भी एक कदम आगे है। इसमें व्यक्ति का आग्रह भी नहीं रहता। 'सत्य' को ही आग्रह के लिए छोड़ दिया जाय, यह इसके मूल में है। *हम केवल अपना* 'सत्य' विचार रखते चले जायँ तो उसका असर अवश्य होगा। 'सत्य' की विजय होगी, यह आस्था हमारी होनी चाहिये।

आर्थिक क्षेत्र के प्रयोग

राजनीति के क्षेत्र में जैसे गांधीजी ने सत्याग्रह के द्वारा अहिंसक शक्ति के विकास का प्रयत्न किया, उसी प्रकार आर्थिक क्षेत्र में भी इस देश ने प्रयोग किया है। 'भूदान-आन्दोलन' इस दिशा *में किया गया स्पष्ट उदाहरण है।* भूदान में कितनी जमीन प्राप्त हुई व बँटी, यह अलग सवाल है। *परन्तु यह मानना होगा* 'भूदान' के द्वारा नैतिक शक्ति के विकास का जो प्रयोग इस देश में हुआ, उसका आज भी बहुत बड़ा असर सारी दुनिया पर कायम है।

सहयोगी संसार बनायें

मानवीय व्यवहार का मतलब है—मानव मानव के बीच ऐसा व्यवहार, जिसमें किसी प्रकार का हिसाब न हो, स्वार्थ न हो, केवल प्रेरणा हो। प्रेम व करुणा से जो कार्य होगा, जो शक्ति पैदा होगी वह हिसाब से कार्य करने से नहीं होगी।

हम सोचें कि हम क्या करने जा रहे हैं। *हमारा लक्ष्य है—'सबसे ऊँची प्रेम-सगाई।'—हम विश्व के साथ प्रेम-सगाई करना चाहते हैं, एक नैतिक शक्ति* पैदा करना चाहते हैं। जो काम हम करना चाहते हैं उसके लिए शक्ति की खोज में हम हैं, क्योंकि जहाँ शक्ति नहीं, वहाँ कार्य, कृति हो नहीं सकती—न मानसिक, न भौतिक। गांधी के शब्दों में हम 'लव फोर्स' प्रेम शक्ति की खोज में हैं। मनुष्य के सुख व शान्ति के लिए *प्रेम-बल अत्यन्त* आवश्यक है। प्रेम में आत्म-बलिदान, समर्पण सब आ जाता है।

शक्ति का मुक्त संचार हो

मनुष्य के मन में जो भाव निरंतर उठते रहते हैं, वे शक्ति के ही रूप हैं। जब हम उन पर परख चढ़ाते हैं तो सद् या असद् रूप में हमारे सामने वे आते हैं। असल में विचार चाहे सद् हों या असद्, दोनों का प्रेरणा-स्रोत उद्गम शक्ति से ही होता है। उनके मूल में शक्ति ही होती है इसलिए असली तत्त्व शक्ति ही हुआ। जब हम यह सोचते हैं कि यह करना और यह नहीं करना, तो हम शक्ति के लिए अवरोधक बनते हैं, उसके मुक्त संचार में बाधक होते हैं।

मनुष्य की शक्ति अनन्त होती है, *परन्तु वह अपनी अल्पबुद्धि से, कल्पना* से, विचार से, द्वेष या अहंकार से उसे सीमित कर देता है। इसलिए उस पर किसी प्रकार की रोक नहीं होनी चाहिये। उसका मुक्त संचार होना चाहिये।

शक्ति के मुक्त संचार के *लिए आवश्यक है कि* हमारा मन पूर्वाग्रहों या बने-बनाये विचारों से परे हो, मुक्त हो। शक्ति के सदुपयोग व दुरुपयोग की चिन्ता से हम दुःखी नहीं हैं। आज शक्ति का मुक्त संचार नहीं हो रहा है, उसका दुःख हमें है। जहाँ हम यह सोचते हैं कि ऐसा होना चाहिये, *वैसा नहीं होना चाहिये, वहीं हम* उसके मुक्त संचार में बाधक बनते हैं; क्योंकि हम अपनी बनी-बनायी तस्वीर से उसे आँकने की कोशिश करते हैं तो हम उसे बाँध देते हैं। इसलिए हमें इसकी भी चिन्ता नहीं कि लोग सर्वोदय की ओर आकृष्ट क्यों नहीं हो रहे, हमें चिन्ता तो यह है *कि बंधन-मुक्त चिन्तन कर सकें,* सबके चिन्तन का स्वतन्त्र विकास हो सके।

कार्य की कसौटी

इसीलिए मैं कहता हूँ कि मनुष्य जिस हद तक निरुपाधिक बन कर रहेगा, उस हद तक मुक्त होगा। निरुपाधिक याने किसी प्रकार का आधार, अवलम्बन न होना। *जितना आधार घटता जायगा,* उतना ही मानव के अन्तर मन का विकास होता जायगा और वह निरुपाधिक बनता जायगा। हमारे कार्य की कसौटी यह है कि उससे हम 'विकास' की ओर बढ़ रहे *हैं या नहीं, विकास का अर्थ ही है*—निरंतर बढ़ती निरुपाधिकता।●

●लोकभारती शिवदासपुरा (राजस्थान) में दिया गया ता० १८ का प्रवचन।

रक्तदान वरदान है या अभिशाप ?

• श्रीकृष्णदत्त भट्ट

कई साल पहले की बात है। काशी के प्रसिद्ध होमियोपैथिक पं० बालकृष्ण मिश्र अस्वस्थ होकर अस्पताल में पड़े थे। उन्हें रक्त देने की आवश्यकता पड़ी। रक्त देने के बाद उनके शरीर में बड़ी उत्तेजना प्रतीत हुई। हमारे सहयोगी श्री रामपूर्ति शुक्ल के एक चिरंजीव ने रक्त वाली बोतल पर लिखा नाम पढ़ कर कहा—'नानाजी, यह तो ......रक्त है !' (नाम से लगा कि रक्तदाता मुसलमान है।)

बेचारे पूजापाठी आचारवान सनातन धर्मी पण्डित ! खोपड़ी पीट ली बेचारों ने—यह भी लिखा था अदृष्ट में !

पर रक्तदान भी उन्हें नहीं बचा सका !

* * *

रक्तदान की प्रक्रिया में सेवा और त्याग की भावना है, इससे इनकार नहीं किया जा सकता। यों आज गरीब भारत में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जब लोग पेट की क्षुधा शांत करने के लिए चन्द ताँबे या चाँदी के टुकड़ों के लिए 'ब्लडबैंक' में जाकर अपना रक्त दे आते हैं

सवाल यह है कि रक्तदान से क्या बीमारों को वस्तुतः लाभ पहुँचता है ? हमारे सामने इसका उज्ज्वल पक्ष तो बार-बार रखा जाता है, पर यह नहीं बताया जाता कि किसी का रक्त किसी को चढ़ा देने से हानि भी होती है ! बीमारियों से पीड़ित व्यक्तियों का रक्त देने से वे बीमारियाँ रक्त पाने वालों को नहीं सतायेंगी, इसकी कोई गारण्टी नहीं है।

डाक्टर एल० रह ने 'ब्रिटिश वेजीटेरियन' के जनवरी फरवरी १९६२ के अंक में कुछ प्रसिद्ध डाक्टरों के मत दिये हैं, जो अपने आप अपनी कहानी कहते हैं।

डाक्टर ए० जे० शेडवेल 'हू इज योर डाक्टर एण्ड व्हाई ?' (अप्रल १९५८) में लिखते हैं—प्राचीन युग और वर्तमान युग में जो उपहासास्पद डाक्टरी पद्धतियाँ चालू हैं, उनमें सबसे हानिकर पद्धति है—रक्तदान की। किसी जीवित व्यक्ति के शरीर से निकाला हुआ रक्त बाहर आते ही लौंदे की तरह हो जाता है, फिर वह चाहे जिस तरह से सुरक्षित क्यों न रखा जाय ! उससे किसी प्रकार की बीमारी में कोई लाभ नहीं होता। रक्त चढ़ाने के बजाय रक्त के स्वाभाविक आधार साधारण नमक का—सेलाइन का—उपयोग करना चाहिए। मैंने बीस हजार से अधिक सर्जिकल आपरेशन किये हैं। उसमें मैंने किसी भी रोगी को रक्त नहीं चढ़ाया और रक्त के अभाव में अपने किसी रोगी को मैंने मरने भी नहीं दिया। साधारण 'साल्ट सोल्युशन' मैंने अनेक बार दिया है। वह उससे अच्छा भी है और उसमें किसी तरह का खतरा भी नहीं है। हर प्रकार के खतरनाक मामलों में मैंने उसका उपयोग किया है और मेरा कोई बीमार मरा नहीं है। उनमें से कुछ लोग तो खड़िया की तरह सफेद और ठंडे जैसे हो गये थे, फिर भी जीवित बने रहे।

डा० विक्टर ए० डील १९५४ के 'फार्माकोलाजी इन मेडिसिन' में लिखते हैं कि किसी का रक्त किसी को चढ़ाने से रक्त-दाता के नीचे दिये हुए रोग अक्सर ही रक्त लेने वाले में आ जाते हैं—उपदंश (गर्मी), पीलिया, मलेरिया, चेचक, टायफड, इन्फ्लूएंजा, तपेदिक, गुर्दा का एलर्जी और मारात्मक मस्तिष्क कोप।

इंग्लैंड के पैथालॉजी के प्रो० डा० बी० एच० विंग ने 'पोस्टग्रेजुएट बर्लिन' के २१ वें खंड में लिखा है कि प्रयोग और भूल के रास्ते गलत रास्ते से, गलत भावनाओं और गलत उपचार के द्वारा चिकित्सा की प्रगति होती चलती है। पता नहीं, कितने आदमी इसके शिकार बनते हैं ! यह पुरानी कहानी हमेशा दोहरायी जाती है।

अभी उस दिन मेरे एक मित्र ने मुझसे कहा, 'अठारहवीं शताब्दी में बहुत से आदमी इसलिए मर गये कि व्यर्थ ही उनका रक्त निकाल लिया गया और आज व्यर्थ ही बहुत से आदमियों को रक्त देकर के उनकी हत्या की जा रही है !' उसी दिन सवेरे मैंने विसगत रक्त चढ़ाये जाने के फलस्वरूप एक नौजवान को मरते देखा था। मित्र की उस बात का मेरे पास कोई जवाब नहीं था।

जिन रोगियों को रक्त चढ़ाने से लाभ होता है, फिर वह किसी भी कारण से क्यों न हो, उसका श्रेय रक्त दान को ही दिया जाता है, पर रक्त चढ़ाने से यदि कोई हानि होती है अथवा रोगी मर जाता है तो ऐसा मान लिया जाता है कि वह जिस बीमार में मुब्तिला था, उसी के कारण मर गया। रक्त चढ़ाने के कारण कोई नुकसान भी हो सकता है, इसकी कल्पना भी लोग नहीं करते।

कुछ दिन पहले हमारे एक मित्र की पत्नी अस्पताल में थी। उसे डाक्टरों ने काफी रक्त चढ़ाया। उसके शरीर में रक्त की कमी तो थी, पर रक्त चढ़ाने से उसको विशेष लाभ नहीं हुआ। उसे घर पर आये हुए महीनों हो चुके हैं, फिर भी कई सौ रुपये के रक्त चढ़ाने के बाद भी अभी उसकी तबीयत ढीली ही है। उसके मन पर रक्तदान की प्रतिक्रियाएँ हैं सो तो हैं ही।

आज का विज्ञान दिन-दिन प्रगति कर रहा है, नयी-नयी दवाएँ निकल रही हैं, नये-नये प्रयोग किये जा रहे हैं। बेचारे मरीजों पर तरह-तरह के प्रयोग आजमाये जाते हैं। लाभ हुआ तो श्रेय दवा को और डाक्टरों को मिलता है। बीमार मर गया तो अपनी मौत से मर गया। रक्तदान के सम्बंध में इसी पद्धति का प्रयोग किया जा रहा है। जरूरत इस बात की है कि हम गम्भीरता से इस समस्या पर विचार करें कि रक्त दान वरदान है या अभिशाप ?

शिव की समझ !

नानाभाई भट्ट

तेरह चौदह वर्ष की अवस्था में मेरा ब्याह हुआ। मेरा लग्न प्रसंग मुझे स्मरण नहीं। इतना स्मरण है कि मेरी बहुजी (माताजी) की मुझे चतुर्भुज बनाने की बहुत इच्छा थी। मेरी अवस्था सोलह वर्ष की हुई, तब मेरे जीवन में एक महान् परिवर्तन हुआ। मेरी पत्नी का नाम शिवलक्ष्मी था। सब उसे शिवाबाई कहते। वह बहुत सुन्दर नहीं थी, पर मुझे सुन्दर लगती। ब्याह होने के बाद एक बार दीपमालिका पर शिव हमारे घर आयी। मेरे मन में उससे मिलने की उत्कट इच्छा पैदा हुई, पर मिलता किस तरह ?

मेरी समवयस्क बहनें चौकी-पहरा कर रही हों, वहाँ मेरा क्या चलता ? इतने में एक बार शिव स्वयं ऊपर की मंजिल पर चुपचाप पहुँची। जीवन में मैं पहले-पहल उससे मिला।

मैंने पूछा : "इस बार तो तुम रुकोगी न ?"

शिव की आँखों में आँसू आये : "मैं कैसे रुकूँ ? आप प्रतिदिन अपने भाई-बन्धुओं को लाते रहते हैं और मैं जल उठती हूँ। मैं तो अब वापिस आने वाली नहीं !"

इन शब्दों से मुझे बड़ा आघात लगा। "भाई-बंधु तो आते ही हैं न, तुम उनको कहाँ पहचानती हो ?"

"इन सबको मैं दाँतों से पहचानती हूँ। ये सब अच्छे नहीं हैं। ये रहेंगे, तब तक मैं आने वाली नहीं।"—शिवा ने रोते-रोते बताया।

"क्या इनके साथ का भाई बन्धु का रिश्ता छोड़ दूँ ?

"तब तो मैं वापिस तीसरे महीने ही आ जाऊँगी।"

"तुम्हारी माता नहीं आने देंगी तो ?"

"तो मैं कहूँगी कि मुझे जाना है।"

"पर यहाँ से बहुजी नहीं बुलायेंगी तो ?"

"मैं अपने भाई के साथ चली आऊँगी। ससुराल में आने जैसी हो गयी हूँ, तब अब निमन्त्रण की राह नहीं देखूँगी।"

"तो समझ लो कि ये भाई-बंधु गये।"

संवाद चल रहा था, इतने ही में 'सी० आई० डी०' का कर्मचारी आ पहुँचा और हम अलग हुए।

यह घटना धनतेरस के दिन हुई। नया वर्ष, अर्थात् मेरा जन्मदिन। इस दिन सुबह से मेरे मित्र आने लगे। मैंने उन सबको बता दिया : "आज से अपनी मैत्री का संबंध टूटता है।" दो दिन तक मुझे निद्रा नहीं आयी। "इन मित्रों को छोड़ कर मैं कहाँ जाऊँगा ?"—इस विचार ने मुझे बड़ी उलझन में डाल दिया। दो दिन न खाया, न पीया। शिव के शब्दों के पीछे के निर्मलता के आग्रह ने मानों मुझे बाँध लिया।

"क्यों नथु भट, इस प्रकार एकदम अपना भाई-बंधु का संबंध छोड़ने का क्या कारण है ?"

"कारण कुछ नहीं है।"

"पर हमारा अपराध क्या था ?"

"दोष या अपराध किसी का कुछ नहीं। मेरा ऐसा निश्चय है कि मुझे अब भाईबंधी नहीं रखना है।"

मेरे भाई बंधुओं ने मुझे समझाने की बहुत कोशिश की। दो दिन तक वे सब मेरे घर पर डटे रहे, पर अपने निश्चय पर दृढ़ रहा।

तब वे सब मेरे पास इकट्ठे होकर आये और बोले "राम राम, अब तू भी देख लेना !"

तब से वे मित्र गये। फिर से उनके साथ मैत्री नहीं हुई। इन सब मित्रों का उत्तर जीवन देखता हूँ तो लगता है कि ईश्वर ने ही मुझे अपनी स्त्री द्वारा बचा लिया। शिवलक्ष्मी के इस महान् उपकार को मैं आज तक भूल नहीं सका हूँ।•

• अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन से प्रकाशित होने वाली स्व० श्री नाना भाई भट्ट की जीवनी 'मेरी विकास-कथा' का एक प्रसंग।

राष्ट्रीय न्यूनतम आमदनी की प्राप्ति

अखिल भारत सर्व सेवा संघ, उससे संबद्ध संस्थाओं और अन्तर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त विभिन्न शोध-संस्थाओं के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित अर्थ-व्यवस्था के विषय पर जो दो विचार-गोष्ठियां हुईं, उनमें सबसे महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह सामने आया कि उस राष्ट्रीय न्यूनतम आमदनी का भरोसा कैसे कराया जाये, जो कि हमारी पंचवर्षीय योजनाओं में निर्विवाद रूप से सम्मिलित है। यह राष्ट्रीय न्यूनतम आमदनी कितनी व किस प्रकार की होनी चाहिए और कम-से-कम कितने समय में यह आमदनी निश्चित रूप से दी जा सकेगी, इस विषय पर भी चर्चा हुई। इस राष्ट्रीय आमदनी का स्वरूप ठीक-ठीक कैसा हो और कितनी अवधि के बाद यह निश्चय ही दी जा सकेगी, इस विषय पर उस समय विचार किया जायेगा, जब गोष्ठी की अगली बैठक इस वर्ष के अन्त में होगी।

पूना में जो विचार-गोष्ठी हुई थी, उसमें यह मत प्रकट किया गया था कि "सबसे महत्त्वपूर्ण लक्ष्य, जिसे सबसे अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए वह यह है कि जो भी व्यक्ति काम करने के लिए तैयार हो, उसे काम यानी रोजगारी दी जाये, जिससे वह व्यक्ति इतना कमा सके कि उसकी न्यूनतम बुनियादी जरूरतें पूरी की जा सकें, अर्थात् वह भौतिक सुख-साधन का न्यूनतम स्तर प्राप्त कर सके।"

स्पष्ट ही इसका अर्थ यह है कि जब काम की व्यवस्था की जाये, तब अधिक पारिश्रमिक पाने वाले कम लोगों को काम देने की अपेक्षा सभी लोगों या कम आमदनी प्राप्त करने वाले अधिक-से-अधिक लोगों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।

औद्योगीकरण का विस्तार

इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान देने योग्य है कि हाल में योजना-आयोग ने ग्रामीण औद्योगीकरण के विस्तृत राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम में निर्माण-कार्य शामिल किया है, ताकि लोगों को अधिक अतिरिक्त रोजगारी दी जा सके और इस तरह राष्ट्रीय न्यूनतम आमदनी निश्चित रूप से दे सकने की दिशा में प्रगति हो सके। यह आम तौर पर माना जाता है कि अर्थ-व्यवस्था को बहुमुखी बनाने की क्रिया के एक अंग के रूप में औद्योगीकरण का विस्तार ग्रामीण क्षेत्र तक होना चाहिए। इसी ग्रामीण क्षेत्र में बड़ी संख्या में ऐसे व्यक्ति पाये जाते हैं, जो कमजोर वर्ग के हैं। उनकी आमदनी का स्तर राष्ट्रीय औसत आमदनी से कम है और अर्ध-बेकारी व बेरोजगारी उनमें बहुत भीषण रूप में फैली हुई है। इस बात को मान कर पूना की विचार-गोष्ठी ने यह आग्रह किया कि जो औद्योगीकरण अपनाया जाये, उससे विकेन्द्रित उत्पादन का विकास इस प्रकार होना चाहिए कि शहरों में आबादी का जमाव न हो और सामुदायिक जीवन का विकास हो।

राष्ट्रसंघ (यूनाइटेड नेशन्स) के हाल के एक प्रकाशन में, जिसमें कम विकसित देशों में आर्थिक विकास के कुछ पहलुओं की चर्चा की गयी है, यही मत प्रकट किया गया है। इस प्रकाशन में यह लिखा है:

"यदि विकास के ऐसे मार्गों का अनुसरण किया जायेगा, जिनसे अपेक्षाकृत कम नौकरियाँ व काम धंधे दिये जा सकेंगे, तो प्रारम्भिक अवस्थाओं में जिन्हें अधिक कार्य की आवश्यकता है और जो ज्यादा काम चाहते हैं, उन्हें प्रगति से प्राप्त होने वाले लाभों में शायद ही हिस्सा मिल सकेगा। आर्थिक विकास का उद्देश्य यह है कि उससे लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा उठे और यदि इस बात पर जोर दिया जाता है कि आर्थिक विकास के विभिन्न मार्गों के चुनाव में रोजगारी के अवसर को प्रधानता दी जानी चाहिए तो उसका कारण यह है कि यही यदि एकमात्र नहीं तो पक्का उपाय है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि आर्थिक विकास की प्रगति के फलस्वरूप जीवन-स्तर में जो सुधार होते हैं, उनका वितरण व्यापक रूप से हो, अर्थात् अधिक लोगों को उसमें हिस्सा मिले।"

अहिंसात्मक समाज की रचना

दिल्ली में जो विचार-गोष्ठी हुई, उसमें एक कार्यकारी दल की नियुक्ति की गयी है, जिसे यह काम सौंपा गया है कि वह राष्ट्रीय न्यूनतम आमदनी का अर्थ क्या है, इसकी व्याख्या करे और यह बताये कि कितनी अवधि में यह राष्ट्रीय न्यूनतम आमदनी निश्चित रूप से प्राप्त करायी जा सकती है। इस कार्यकारी दल को आर्थिक विकास का एक ऐसा आदर्श नमूना तैयार करना होगा जो कि हमारी परिस्थितियों और आवश्यकताओं की पृष्ठभूमि में निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति सर्वोत्तम रूप से कर सके। इस दल के सामने जो कार्य है, उसके एक पहलू को इस कार्यकारी दल के संयोजक डाक्टर वी० के० आर० वी० राव ने 'बालचन्द स्मारक भाषणमाला' में अपने भाषण में प्रस्तुत किया था। उन्होंने आग्रह किया कि आर्थिक विकास के उद्देश्य के रूप में उत्पादन का स्वरूप और मात्रा का निर्धारण होना चाहिए, ताकि उसका समन्वय "हमारे आयोजन के आम उद्देश्यों व मूल्यों सम्बन्धी लक्ष्यों से अधिक स्पष्ट रूप से तथा सुनिश्चित व स्थिर आधार पर हो सके।"

डा० राव ने आगे कहा कि एक ऐसा मार्ग खोज निकाला जाय, जिसके द्वारा भौतिक विकास का तालमेल मानवीय मान्यताओं व सिद्धान्तों के लिए किया जा सके और ये मान्यताएँ कायम रखी जा सकें तथा वर्गविहीन एवं अहिंसात्मक समाज की रचना की जा सके।

जब कृषि के अतिरिक्त अन्य उत्पादन-कार्य के विस्तार के लिए योजनाओं पर विचार किया जाता है, तब इस विषय पर अक्सर विवाद उठ खड़ा होता है कि इस उत्पादन कार्य के लिए किस प्रकार की प्रविधियाँ अपनायी जायें। राष्ट्रसंघ के सर्वेक्षण से ऊपर जो उद्धरण दिया गया है, उसमें यह मत प्रकट किया गया है कि उत्पादनशील कार्य का केवल यह अर्थ नहीं है कि वह सिर्फ अधिक आमदनी प्राप्त करने का ही जरिया है। इस विषय में राष्ट्रसंघ के उक्त प्रकाशन में यह कहा गया है कि "यह ऐसा जरिया है, जिससे आत्म-सम्मान का विकास किया जा सकता है, मानवीय क्षमताओं का विकास किया जा सकता है और लोगों में समाज के सयुक्त लक्ष्यों की प्राप्ति में योगदान देने भावना पैदा की जा सकती है।"

डाक्टर वी० के० आर० वी० राव ने हाल में बम्बई में जो भाषण दिया, उसमें उन्होंने ऐसे ही विचार व्यक्त करते हुए यह आग्रह किया कि तकनीकों यानी प्रविधियों का चुनाव करने में उसके मानवीय पहलू पर मुख्य रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए यानी ऐसी तकनीकें चुनी जायें, जिनसे जन कल्याण हो और वे तकनीकें ऐसी हों, जो रोजगारी बढ़ा सकें यानी लोगों को अधिक-से अधिक संख्या में रोजगारी दे सकें। उतनी ही महत्त्वपूर्ण बात यह है कि विभिन्न प्रदेशों का संतुलित विकास हो और समुचित रूप से विस्तृत आधार पर उत्पादन-शक्ति प्राप्त हो यानी सभी प्रदेशों की जनता उत्पादन-कार्य में लगने के लिए तैयार हो। ये मत बहुत ही महत्त्वपूर्ण व सारगर्भित हैं, जिन पर कार्यकारी दल को आर्थिक विकास का आदर्श नमूना तैयार करते समय निश्चय ही विचार करना चाहिए।

('जागृति' से) —वैकुंठ ल० मेहता

शोषण के समस्त रास्तों को रोकें

भूदान-आंदोलन जब तक चल सकता था, चला। जिन सज्जनों को जमीन दान में देनी थी, दी है। जिन्होंने जमीन नहीं दी, उनके पास बार-बार जाने से वे जमीन देंगे, ऐसा आत्म-विश्वास मुझमें नहीं है। क्यों? इस काम में क्या-क्या रुकावटें हैं? इस विषय में अब सोचने का समय आ गया है।

लूट बंद करें

हम लोग खाली जमीन का ही मसला लेकर काम करते हैं, लेकिन जो पूंजीवाले हैं, उन्हें हम कुछ नहीं बतलाते। एक संपत्ति दान है, लेकिन वह ठोस चीज नहीं है। जमीन का मसला हल करना ठोस चीज है, शोषण के खिलाफ संघर्ष है। काश्तकार मेहनत-मजदूरी करता है, उसके बाल-बच्चे मेहनत करते हैं और फसल होती है तो मालिक उठा कर ले जाता है—यह लूट है। भूदान के जरिये इस लूट को हम बन्द करना चाहते हैं। लेकिन लूट का यह एक ही तरीका नहीं है।

संसार में कई तरह की लूटें चल रही हैं, जिसका दूसरा प्रधान तरीका है ब्याज-बट्टा। यह भी पूंजीशाही का एक पंजा है। इसी तरह किराया, कमीशन वगैरह और तरीके भी हैं। शोषण के इन सब तरीकों को, सभी रास्तों को एकसाथ रोकना चाहिए। मतलब बटाई के साथ ब्याज बन्द होना चाहिए। किराया भी उचित मात्रा में होना चाहिए। किराया याने 'डिप्रीशियेशन।' आज जो किराया वसूल किया जाता है। उसमें छीजन के अलावा ब्याज भी होता है। जो पूंजी लगायी गयी है, उस पर ब्याज भी लगाया जाता है। यह कोई नयी चीज नहीं है, बटाई-बन्दी की बात नयी है। लेकिन ब्याज-बन्दी की बात तो संसार के सारे धर्मों में है—मुसलमान, क्रिश्चन, नानक के सिक्खों के धर्मों में ब्याज का अत्यंत जोरों से निषेध किया गया है।

हम चाहते हैं कि अगर ये सब बातें एकसाथ की जायें तो एक बड़ा मोर्चा बन जाता है। हमारे मोर्चे में ज्यादा लोग शामिल हो जाते हैं—न केवल भूमिहीन, बल्कि जिनको ब्याज देना पड़ता है, वे लोग भी शामिल होंगे। पूंजी का बढ़ जाना आज 'सिविलाइजेशन' माना जाता है। हर आदमी को ब्याज देना पड़ता है। रेल में बैठूँ तो भी उसका एक हिस्सा ब्याज का होता है। हर कदम पर ब्याज तो हरएक को देना पड़ता है। इसके खिलाफ आवाज उठायें तो और भी लोग हमारे साथ हो जायेंगे और यह एक जन-आन्दोलन हो जायगा।

हम ग्रामदान करते हैं। यह एक सत्य विचार है। लोगों को पसंद आता है। इस तरह एक-दो साथी रहे तो पड़ोसी

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी सरवटे

"कोऽऽक ? कोऽऽक ? मितभुग हितभुग, सोऽऽक", इन शब्दों को दुहराता हुआ कोई मीठी-सी आवाज में गा रहा था। देखा, तो दस साल का किशोर था। पम्प से पानी निकालते-निकालते वह मस्ती में गाना गा रहा था–"कोऽऽक, कोऽऽक....।" उसे देखते ही मेरी आंखों के सामने सुबह की सभा का दृश्य घूम गया। प्रातः करीब आठ बजे बाबा पड़ाव पर पहुँचे थे। तेरह मील चलना पड़ा। रास्ता कच्चा था। ऊपर कड़ी धूप थी। बाबा काफी थक गये थे। फिर भी पड़ाव पर पहुचते ही नन्हें-मुन्नों की सभा देख कर बाबा ने प्रवचन प्रारम्भ किया–

"संस्कृत में तीन स्वर हैं : ह्रस्व (छोटा), दीर्घ (बड़ा) और प्लुत (उससे भी बड़ा)। सुबह-सुबह गुरुजी विद्यार्थियों को अध्ययन करने के लिए जगाते थे और उस समय मुर्गे की आवाज सुनाई देती थी–कुऽ कूऽऽ कूऽऽऽ। पहला कु ह्रस्व, दूसरा दीर्घ और तीसरा प्लुत। इस प्रकार पहले व्याकरण सिखाने के लिए मुर्गे का उपयोग करते थे।

एक गुरुजी विद्यार्थियों को आरोग्य सिखाते थे। वे बड़ी फजर में शिष्यों को स्नान करने के लिए नदी पर ले जाते थे। वहाँ एक पंछी बोलता था–

"कोऽरुक, कोऽरुक, मितभुग, हितभुग, सोऽरुक, इसका अर्थ है–जो हितकारक खायगा, नपातुला खायगा, वह बीमार नहीं पड़ेगा।"

बाबा ने बच्चों से पूछा–"बताओ, कोई पंछी आपसे पूछे कि कोऽरुक, कोऽरुक तो क्या जवाब दोगे?"

"हितभुग, मितभुग, सोऽरुक,"– बच्चे इन पद्यों को दुहराते गये।

बाबा विद्यार्थी भी हैं और शिक्षक भी। अध्ययन-अध्यापन के काम में वे तन्मय हो जाते हैं। यह तो विद्यार्थियों की सभा थी, लेकिन इससे अगले दिन 'नलबाड़ी' की विराट सभा में भी बाबा ने इसी तरह जन-समुदाय को जीवन-मंत्र सिखाया–"तेन त्यक्तेन भुंजीथाः"। पन्द्रह मिनट की कसरत के बाद सभी लोग शुद्ध उच्चारण करने लग गये।

नलबाड़ी असम में संस्कृत विद्या का बहुत बड़ा स्थान है। यहाँ दो दिन पड़ाव रहा। यह स्थान गौहाटी से २५ मील दूर है। बाबा ने इस स्थान की विशेषता बताते हुए अपने प्रवचन में कहा कि इस शहर में अच्छे संस्कार दिखाई देते हैं। मेरे चित्त पर इसका अच्छा असर पड़ा है।

संस्कृत क्यों पढ़नी चाहिए ?

दूसरे दिन सुबह संस्कृत कालेज के प्रिंसिपल और कुछ पंडित बाबा से मिलने आये। घंटे डेढ़ घंटे चर्चा हुई। चर्चा के संदर्भ में प्रिंसिपल ने अपना अनुभव सुनाते हुए कहा कि जनता आम तौर से संस्कृत में दिलचस्पी नहीं लेती। बाबा ने कहा, "क्यों नहीं लेती? किसी चीज का रस तभी लिया जा सकता है, जब वैसे कारण ध्यान में आवें। जब संस्कृत के रस के कारण लोगों के ध्यान में आयेंगे, तब वे जरूर पढ़ेंगे।

–संस्कृत बुनियादी है, बेशक है; ऐसा जिनको महसूस होगा, वे संस्कृत में रस लेंगे और यह सोचेंगे कि संस्कृत से हमारी भाषा को समृद्ध बनाना चाहिए।

–संस्कृत में वेदान्त है। जिन्हें आत्म-तत्त्व का परिचय करना होगा, वे इसमें रस लेंगे।

–संस्कृत में अच्छा साहित्य है। वह पढ़ने के लिए इसमें रस लेंगे।

–संस्कृत में जो इतिहास है, उसका अध्ययन इसमें रस लिये बिना नहीं हो सकता।

–हिन्दुस्तान के एकीकरण के लिए संस्कृत में रस लेना आवश्यक है।"

बाबा ने इस बात की विवेचना करते हुए बताया—"संस्कृत भाषा बुनियाद है, इसलिए इसे बच्चों पर लादने से कोई लाभ नहीं होगा। स्कूलों में थोड़ा-सा व्याकरण सिखा देने से भाषा को मदद होने के बजाय एक विषय बढ़ जाता है। इसलिए जिन संस्कृत शब्दों से असमी शब्द बने हैं, उतने संस्कृत शब्द सिखा देने चाहिए। संस्कृत शब्दों का प्रचलित शब्दों के समान उपयोग हो सके तो बहुत अच्छा। संस्कृत लाजिमी न हो और लाजिमी हो तो असमी भाषा के अन्तर्गत ही सिखायी जाय।

साहित्य के तौर पर संस्कृत का अध्ययन करने में मुझे ज्यादा दिलचस्पी नहीं है। फ्रेंच, इंग्लिश आदि भाषाओं में जितना साहित्य है, उतना साहित्य संस्कृत में नहीं है। थोड़ा गद्य साहित्य है, पर आधुनिक जीवन की तुलना में उसे नहीं रखा जा सकता।

अगर आप वेदान्त के स्कूल खोलें, और उसमें भाष्य, शास्त्र वगैरह आध्यात्मिक ग्रंथ पढ़ायें, तो वैसे स्कूल इस देश में खूब चलेंगे। सरकार को चाहिए कि कालेज में वेदान्त, गीता, उपनिषद् वगैरह जरूर पढ़ाये। प्राचीन इतिहास और राष्ट्रीय एकात्मीकरण के लिए संस्कृत का महत्त्व स्वयंसिद्ध है।"

जनता में उत्साह

नलबाड़ी में असम प्रदेश कांग्रेस कमेटी के लोग बाबा से मिले। उन्होंने इस काम के लिए अपनी पूरी शक्ति लगाने का विश्वास दिलाया। तामुलपुर गाँव में प्रजा-सोशलिस्ट पक्ष के विधान-सभा के सदस्य इस काम में लगे हैं। सरकारी अधिकारी ग्रामपंचायत के लोग और दूसरी पार्टियों के लोग भी गाँव-गाँव में जाकर लोगों को ग्रामदान का विचार समझाते हैं। प्रतिदिन बहुत ही उत्साह से लोग बाबा के पास आते हैं, चर्चा करते हैं और ग्रामदान भी मिलते हैं। जितना उत्साह पुरुषों में है, उतना ही उत्साह महिलाओं में भी दिखलाई पड़ रहा है।

रंगिया में असम प्रदेश महिला समिति की प्रतिनिधि बाबा से मिलीं। उस समिति के अध्यक्षा ने बाबा से कहा–"ग्रामदान का विचार हम लोगों ने अच्छी तरह समझ लिया। हमारा इस पर विश्वास है, लेकिन हम समझती हैं कि ग्रामदान में सामूहिक खेती की आयोजना मुख्य रूप से होनी चाहिए। उसके बिना सहकार और सहयोग की भावना नहीं आयेगी।"

बाबा ने जवाब में कहा–"महिला समिति अगर पाँच ग्रामदानी गाँवों का जिम्मा ले लें और वहाँ सामूहिक खेती के बारे में लोगों को समझा कर प्रयोग करवावें तो बाकी गाँवों के लिए वह एक मिसाल बन जायगी।"

महिला-समिति ने एक गाँव का और महिला समिति के अध्यक्षा ने चार गाँवों का जिम्मा लेने का निश्चय जाहिर किया।

असम में महापुरुषिया पंथी लोगों की 'श्रीशंकरसंघ' नाम की एक संस्था है। दस वर्षों से वह संस्था लोगों को धर्म-संस्कार का परिचय करवाती है। शंकर-साहित्य का प्रचार करना उसने अपना उद्देश्य माना है। उस संघ के सम्मेलन के लिए संदेश भेजते हुए बाबा ने कहा– "यह श्री शंकरदेव, माधवदेव की भूमि है। यहाँ मैं भूदान ग्रामदान के काम के लिए आया हूँ और यह एक धर्म-कार्य है। इस कार्य को श्री शंकरसंघ नहीं उठायेगा, तो कौन उठायेगा?"

सम्मेलन की समाप्ति पर श्री शंकर संघ ने बाबा को लिखा कि "आपका संदेश मिला। आपने जो सूचना दी है, वह जिम्मेदारी हम महसूस करते हैं। वह काम हम उठायेंगे।"

अधूरे काम की पूर्ति

बाबा बार-बार कहा करते हैं, "असम में हिन्दुस्तान की एक यात्रा पूरी होती है। सारा भारत असम की ओर देख रहा है, इसलिए यहाँ का काम अधूरा छोड़ कर मैं नहीं जाना चाहता।"

बाबा जिस काम को अधूरा नहीं छोड़ना चाहते, उस काम की पूर्ति के लिए भी लोग लग गये हैं। जो गाँव अभी तक दान में मिले हैं, उन गाँवों की जमीन के पट्टे व्यक्तिगत नाम पर से हटा कर ग्रामसभा के नाम पर करना है। ऐसा होगा तभी ग्रामदान पक्का होगा। उत्तर लखीमपुर में सुवर्णश्री अंचल में यह काम शुरू हो गया है। श्री रा० कृ० पाटिल इस काम के लिए यहाँ आये हैं। वे १५ दिन से इसी काम में लगे हैं। इनके साथ हैं–श्रीमती हेमा बहन। गाँव का वातावरण और सरकारी अधिकारी, दोनों इस काम के लिए अनुकूल हैं। इससे पाटिल साहब को बहुत संतोष है।

बाबा की फिल्म

असम की सभ्यता का उल्लेख करते हुए बाबा ने कहा, "जब महादेवी (ताई) मुझे खाना खा देती हैं और लोग बैठे रहते हैं तो वे तुरन्त बातें करना बन्द कर देते हैं पर हो सके तो वहाँ से चल देते हैं और दूसरी तरफ ये हैं सिनेमावाले!'

मुस्कराते हुए बाबा ने कहा–"देखो इनकी सभ्यता, हम खा रहे हैं और ये हमारे खाने का फोटो खींच रहे हैं!"

आजकल चार दिन से श्री विश्राम बेडेकर और श्रीमती मालतीबाई बेडेकर अपनी पार्टी के साथ यात्रा में हैं। बाबा की 'डाक्यूमेण्टरी' (फिल्म) निकाली जा रही है। ये लोग इसी काम के लिए आये हुए हैं। आज रास्ते में एक जगह अच्छी-सी हरियाली थी। बाबा उस जगह खड़े थे। पीछे हरा-भरा लम्बा मैदान था और ऊपर था—नीला आसमान! बाबा अकेले खड़े थे और हाथ में था नाश्ते का पात्र। ऐसा अच्छा मौका कौन छोड़ता?

चलते-चलते बाबा ने श्रीमती मालतीबाई से कहा—"आप हमारे पर फिल्म क्यों बना रही हैं? फिल्म तो उन लोगों की बनानी चाहिये, जिन्होंने अपना काम पूरा कर लिया है। जो जिन्दे हैं, अभी काम कर रहे हैं, उन पर फिल्म बनाने से आप कैसे विश्वास दिला सकती हैं कि वे आगे जाकर क्या काम करेंगे?"

"लेकिन हमको पूरा विश्वास है कि बाबा क्या करने वाले हैं?"–मालतीबाई ने निवेदन किया।

पंडितों का प्रश्न!

रामनवमी के दिन हम दामोदर धाम पहुँचे। दोपहर में यहाँ के कुछ पंडित बाबा से मिलने के लिए आये। वे कहने लगे, "भूदान-ग्रामदान आवश्यक है, लेकिन उसके लिए अध्यात्म की बुनियाद चाहिए और वह संस्कृत के अध्ययन के बिना नहीं बनेगी। असम में संस्कृत भाषा सीखने का अच्छा इंतजाम नहीं है। इसलिए वह इंतजाम पहले करना चाहिए।" बाबा जोर से हँस पड़े। बोले—"आप लोगों ने बहुत अच्छी बात कही है। इस बात को हम यों रखना चाहते हैं, संस्कृत पढ़ने के लिए पहले विद्यार्थियों की आजीविका का सवाल हल करना पड़ता है। भूदान ग्रामदान से आजीविका का सवाल हल होता है। इसलिए संस्कृत भाषा सीखने का इंतजाम करना हो, तो पहले भूदान-ग्रामदान आन्दोलन में हरएक को अपना हिस्सा देना चाहिए।"

संस्कृत पंडितों ने बाबा की बात मान ली।

(असम-यात्रा, २२-४-'६२) •

कटाई-यात्रा

• देवतादीन मिश्र

ग्रामसेवा-केन्द्र तथा ग्रामभारती विश्वविद्यालय के प्रभाव-क्षेत्र में ग्राम-स्वराज्य का व्यापक प्रचार करने के लिए श्री धीरेन्द्रभाई मजूमदार के मार्गदर्शन में 'कटाई-यात्रा' ता० १२ मार्च, '६२ से २ अप्रैल, '६२ तक की गयी। यहाँ एक कोरॉव ब्लाक, विकास-क्षेत्र है। उसी ब्लाक को हमने अपना प्रभाव-क्षेत्र माना है। इस क्षेत्र में ग्रामदानी गाँव बरनपुर भी है, जहाँ श्री धीरेन्द्र भाई जनाधार की साधना का एक प्रयोग कर रहे हैं। बरनपुर में ही ग्रामभारती विश्वविद्यालय बनाने की उनकी कल्पना है।

उन्हीं के शब्दों में—"योजना यह है कि पंचायत और ग्राम-इकाई में ग्रामविश्वविद्यालय की स्थापना हो, जिसमें शिक्षक-सेवक जनता के बीच में रहें, हर परिवार जिसका विद्यार्थी हो और सब मिल कर सबके लिए अच्छी खेती और उन्नत उद्योग द्वारा सुख और शान्ति की व्यवस्था करें। जीवन के विभिन्न कर्मों के माध्यम से गाँव में उच्चतम ज्ञान-विज्ञान का विकास हो।"

श्री धीरेन्द्र भाई कहते हैं कि यदि देश में सच्चा ग्राम स्वराज्य लाना या कायम करना है, तो हर गाँव से एक दो नौजवानों को त्याग करके निकलना होगा। जैसे देश में स्वराज्य लाने के लिए महात्मा गांधी के नेतृत्व में बड़े-बड़े लोगों ने त्याग किया, अपनी ऊँची कमाई छोड़ी और जेलों में जाकर तप किया, वैसे ही आज गाँव-गाँव में त्याग और तप की ताकत खड़ी करनी होगी। हर गाँव में ग्राम स्वराज्य समिति बने, समिति के लोग संकल्प करें और सबसे पहले भूमि-समस्या हल करें। यदि मोह और ममता के कारण ग्रामदान न हो सके तो हर भूमिवान अपनी भूमि का पंचांश दान करे और भूमिहीनता मिटाये। यदि ऐसा भी न हो सके तो बीघा में बिस्वा का ही दान करे। यानी त्याग की ताकत खड़ी हो, हर गाँव में भूमिहीनता मिटे। फिर साथ में मिल कर सब खेती करें, इससे लोगों में त्याग और तप की ताकत खड़ी होगी।

श्री धीरेन्द्र भाई ने इस कटाई-यात्रा के दौरान में लोगों को समझाया कि ग्राम-स्वराज्य दल बना कर चुनाव लड़ने से नहीं होगा, जाति को जाति से, गाँव को गाँव से, वर्ग को वर्ग से, परिवार को परिवार से लड़ाने से भी नहीं होगा। स्वराज्य होगा गाँव-गाँव में जनता के चेतने से, अपनी शक्ति को जगाने से, अपना जीवन अपने हाथ में लेने से। इसके लिए आप नवजीवन का संकल्प करें। सब मिल कर साधन जुटायें। शिक्षक व सेवकों को ग्राम परिवार में आमन्त्रित करें और उन्हें जीविका के साधन देकर अपने में शामिल करें।"

पूरे क्षेत्र के पड़ावों पर उन्होंने बताया, "आपके पड़ोस में बरनपुर गाँव का ग्रामदान हुआ है। वहाँ के लोगों ने हमें न्योता दिया है कि हम ग्राम भारती विश्व-विद्यालय की शर्तों को मानते हैं और आप इस प्रयोग को यहाँ व्यापक रूप से करें। इसलिए भाइयो, आपके कोरॉव विकास क्षेत्र को हम अपना ग्राम भारती विश्व विद्यालय का क्षेत्र मानते हैं और बरनपुर में एक नमूना खड़ा करना चाहते हैं। आप सब श्रमदान और अन्न दान से हमारी मदद करें।

यह कटाई यात्रा पूरे प्रभाव-क्षेत्र के दस न्याय पंचायतों (ग्राम इकाइयों) में हुई। बभनपटी, भड़वा, धाव, उल्दा, देवघाट, संसारपुर, पैतिहा, अमिलिया, गजनी, डीही, डेढ़िआरी, पँवारी, खिझुनी कलाँ, बघोल, गोबरा, लपटिहा, हौंगा, कौंदी और कोरॉव गाँव—इस प्रकार उन्नीस पड़ावों पर सार्वजनिक सभाएँ हुईं। ४७० लोगों ने श्रमदान किया। सवा सोलह बीघा खेत में फसल-कटाई हुई। करीब बारह घंटा श्रमयज्ञ चला। कुल मजदूरी चार मन तेईस सेर मिलेगी। बत्तीस रुपये का साहित्य बिका। श्री धीरेन्द्र भाई की अस्वस्थता के बावजूद यह ८५ मील की पदयात्रा हुई।

यह एक अपने ढंग की एक निराली पदयात्रा थी। इस समय सभी किसान अपने-अपने खेतों की कटाई में व्यस्त थे। इसलिए श्रमदान कम मिल पाया। नया कार्यक्रम होने के कारण लोगों में भिन्न भिन्न भावनाएँ उठती थीं। कोई कहता था कि 'भाई! यह सब भूदान वाले लोग हैं, जिस खेत की कटाई होगी, वह खेत ही भूदान में आ जायगा।' कोई कहते थे कि 'ये लोग फसल काटेंगे, वह सारी की सारी उठा ले जायेंगे।' इसी भ्रम के कारण दो पड़ावों पर श्रमयज्ञ नहीं हो सका।

सभा के अन्त में मैं गाँव की भाषा में सारे विचार समझाता था, फिर गाँव के तीन-चार बुजुर्ग बैठ कर तय करते थे कि किसका खेत कटेगा। खेत तय होने पर घोषणा कर दी जाती थी। प्रातःकाल दूसरे दिन जो श्रमदान के लिए तैयार होता था, वह अपनी-अपनी हँसिया लेकर उस खेत पर पहुँच जाता था। स्वेच्छा से इस यज्ञ में भाग लेकर ग्रामीण अपनी-अपनी कटाई पर चले जाते थे।

हर नये पड़ाव पर हमारी टोली शाम को पहुँच जाती थी। रात को ८ बजे से १० बजे तक सार्वजनिक सभा होती थी। सभा के शुरू में श्री सुधीरभाई तथा श्री हरिनारायण 'प्यारा' के सुमधुर गीत और भजन होते थे। फिर श्री धीरेन्द्र भाई का भाषण होता था। अन्त में ग्रामीण बोली में कटाई-यात्रा का मकसद मैं समझाता था और श्रमदान की अपील करता था। दूसरे दिन प्रातः पाँच बजे ही निश्चित हुए खेत पर लाउडस्पीकर द्वारा भजन और गीत शुरू हो जाते थे। लोग स्वेच्छा से श्रमयज्ञ में भाग लेते थे। आपस-आपस में खूब बहस भी चलती थी। श्रमयज्ञ के बाद जलपान स्नान और दोपहर का भोजन होता था। दोपहर में गाँव के लोग भाग लेते थे। फिर शाम को चार बजे दूसरे पड़ाव के लिए प्रस्थान हो जाता था।

कटनी-यात्रा समाप्त कर लौटते समय सभी पद यात्रियों के मन में यह आस्था दृढ़ हो गयी कि ग्रामभारती, ग्रामस्वराज्य की कल्पना सिद्ध करने के लिए अब निश्चय ही जन शक्ति त्याग और तप के आधार पर खड़ी होगी और महात्मा गांधी के अधूरे स्वप्न चरितार्थ होंगे।

—

ग्रामदानी गाँव : भड़रिया

• हृदयनारायण चौधरी

अभी हाल ही में पदयात्रा करते समय मुझे बिहार के दरभंगा जिले के ग्रामदानी गाँव, भड़रिया में जाने का सुअवसर मिला। यह गाँव उत्तर-पूर्वी रेलवे के रोसड़ा स्टेशन से करीब नौ मील कच्ची सड़क के पास बसा हुआ है। यहाँ हवा और आकाश पर्याप्त मात्रा में खाने के लिए मिलते हैं। रात्रि में काटने वाले मच्छर यहाँ नहीं हैं। सरकारी 'सर्वे' में इस गाँव का नाम 'नन्दग्राम' है, लेकिन लोग इसे 'भड़रिया' कहते हैं।

गाँव से पूर्व की ओर करीब एक फर्लांग पर एक बहुत अच्छा तालाब है, उसका पानी स्वच्छ तथा निर्मल रहता है। गाँव वाले उसमें नहाते हैं तथा उनके पशु उसका पानी पीते हैं। उसके पानी से कपड़ा बहुत साफ होता है, 'टीनोपाल' की आवश्यकता नहीं। उससे सिंचाई का भी काम लिया जाता है।

इस गाँव की जनसंख्या करीब ४०० है और परिवार कुल ८३ हैं। तथाकथित उच्च वर्ण और मुसलमानों को छोड़ कर प्रायः सभी वर्ण और सभी वर्गों के लोग हैं। ७८ परिवार ग्रामदान में सम्मिलित हुए हैं। ५ परिवार बच गये, वे भी ग्रामदान को पसन्द करने लगे हैं।

ग्रामदानी परिवारों के पास आवास-भूमि छोड़ कर कुल जमीन ४० एकड़ है, जो आड़ मेड़ तोड़ कर एकसाथ कर दी गयी है। यह जमीन ३ बड़े टुकड़ों में विभक्त है। कुल खेती एकसाथ होती है। अन्न भंडार, खलिहान, बैल सामूहिक हैं। इन लोगों ने अपनी व्यक्तिगत खेती के लिए एक धूर भी जमीन नहीं रखी है।

खेती की उपज पहले की अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ी है। यहाँ धान कम होता है, रब्बी और भदई फसल प्रधान हैं। प्रखंड विकास समिति की आधी और आधी गान्धी स्मारक निधि की सहायता से सिंचाई के लिए ३ बड़े कूएँ खुदवाये गये हैं। लेकिन इन कूँओं से यथेष्ट पानी नहीं मिलता। शीघ्र ही उनकी 'बोरिङ्ग' होने वाली है।

अभी इन लोगों के पास छह बैल हैं, जिनमें चार घानियों में लगे रहते हैं। दो सुधरी हुई घानियाँ नियमित चलती हैं। ये लोग विशेषतया 'आर्य' खेती करते हैं, यानी कुदाली का अधिक उपयोग करते हैं। छह तकुए वाले ३४अम्बर चरखे चल रहे हैं और २० शीघ्र आने वाले हैं। कुछ नवयुवकों ने बुनाई सिखना प्रारंभ कर दिया है। गाँव में 'सर्वोदय सहयोग समिति' है। वह समिति समस्त लोगों को पूरा काम देने में अपने को असमर्थ पा रही है। अतः कुछ लोगों को अपने जीविकोपार्जन के लिए इधर उधर बाहर जाना पड़ता है। लेकिन समिति को पूर्ण विश्वास है कि वह दो तीन वर्षों के अन्दर खेती, कताई, बुनाई, धान कुटाई तथा घानियों द्वारा सब लोगों को पूरा काम दे सकेगी।

ग्रामदान होने के बाद इन लोगों की रहन-सहन अपेक्षाकृत पहले से बेहतर हुई है। लोगों का आध्यात्मिक विकास भी समयानुसार हो रहा है। कोई छूतछात, जात-पाँत के नाम पर नहीं अड़ता। होने वाले तथाकथित अष्टग्रहजन्य प्रलय से भी ये लोग नहीं घबड़ाये। सामूहिक प्रार्थना नित्य होती है, लेकिन उसमें उपस्थिति संतोषजनक नहीं होती। कुछ लोगों ने तम्बाकू, बीड़ी आदि का व्यसन छोड़ा है, कुछ छोड़ने का प्रयत्न कर रहे हैं।

खाद शौचालयों का अभी तक समुचित प्रबन्ध नहीं हुआ है, लेकिन सब पुरुष लोग जोते हुए खेतों में शौच करते हैं और उस पर मिट्टी डालते हैं।

भड़रिया गाँव के आसपास के कुछ गाँवों में भी मैं घूमा। इन गाँवों पर भी ग्रामदान का अच्छा असर पड़ा है। इन सब कार्यों का सबसे बड़ा श्रेय बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ, पूसा क्षेत्र के व्यवस्थापक श्री रामश्रेष्ठ राय, भूतपूर्व कार्यकर्त्ता श्री गोविन्द भाई तथा श्री पल्टन आजाद को है।

यहाँ इस बात से बड़ा आश्चर्य हुआ कि इस इलाके में इतनी बड़ी हलचल हुई, लेकिन सरकार या उसके कर्मचारी इससे बिल्कुल बेखबर हैं! •

अ० भा० शान्ति-सेना मंडल की अर्धवार्षिक रिपोर्ट

गत अगस्त '६१ की ११-१२ तारीख को साधना केन्द्र, काशी में मिली अ० भा० शांति सेना मंडल की बैठक में यह तय हुआ कि फिलहाल उसका दफ्तर राजघाट, काशी में रहेगा। दफ्तर के पास अगस्त '६१ से मार्च '६२ तक की अवधि में देश के भिन्न-भिन्न स्थानों की शांति-सेना समितियों या शांति-सैनिकों से जो समाचार आये हैं, उसके आधार पर यह रिपोर्ट तैयार की गयी है।

शांति-सेना का मुख्य काम तो है हमारे सेनापति की पदयात्रा। असम के दंगों के बाद विनोबाजी का वहाँ जाना शांति-सेना की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण घटना रही। विनोबाजी के शब्दों में कहें तो इस यात्रा एक परिणाम यह है कि कछार की घटना के बाद असम में दुबारा दंगे नहीं हुए।

संयोजिका की यात्राएँ

मण्डल के लिए दूसरी संतोषकारक प्रवृत्ति हमारी संयोजिका की शांति यात्राएँ रहीं। श्रीमती आशादेवी इस अवधि में लगातार किसी-न-किसी शांति प्रवृत्ति में लगी रहीं। पंजाब, उत्तर प्रदेश आदि कई स्थानों पर शांति शिविर स्थापित किये। पंजाब और चम्बल घाटी की यात्राओं में श्रीआर्यनायकम्‌जी भी साथ रहे।

साहित्य-बिक्री पक्ष

दफ्तर की ओर से देश के कुल शांति सैनिकों को व्यक्तिगत रूप से परिपत्र भेज कर ११ सितंबर से २ अक्टूबर तक अपने-अपने क्षेत्रों में साहित्य-प्रचार करने का अनुरोध किया गया था, जिसके फलस्वरूप लगभग सभी प्रांतों के शांति-सैनिकों ने कम या अधिक रुचि दिखलायी। कुल मिलाकर लगभग ३० हजार रुपये की साहित्य-बिक्री के विवरण प्राप्त हुए। इस सिलसिले में इन्दौर के शांति-सैनिका विद्यालय की बहनों तथा गुजरात के शांति-सैनिकों का प्रयास विशेष उल्लेखनीय है।

शांति-विद्यालय

काशी में शांति-सैनिकों के विद्यालय का दूसरा सत्र १५ अगस्त से १४ नवबर तक संचालित हुआ। कुल १७ शांति-सैनिक विभिन्न प्रांतों से सम्मिलित हुए।

कस्तूरबाग्राम, इन्दौर में चल रहे महिला-शांति विद्यालय का भी दूसरा सत्र २९ नवम्बर को समाप्त हुआ। संक्षिप्त विवरण भूदान-यज्ञ में प्रकाशित हो चुका है।

श्री मार्जरी साइक्स द्वारा भी कोटागिरि में अपने स्थान पर एक शांति विद्यालय चलाया जा रहा है। इस कार्य की कोई रिपोर्ट अभी प्रकाशित नहीं हुई है।

शिविर संचालक वर्ग

हमारी प्रशिक्षण-योजना के अन्तर्गत आयोजित शिविर-संचालक वर्ग सफलतापूर्वक २५ अक्टूबर से ३१ अक्टूबर तक अखिल भारत सर्व सेवा संघ के प्रधान केन्द्र पर श्री मार्जरी साइक्स की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। वर्ग में २२ प्रशिक्षणार्थी केरल, तमिलनाड, कर्नाटक, महाराष्ट्र, गुजरात, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, मध्य प्रदेश, उत्कल, बंगाल और राजस्थान से सम्मिलित हुए। इस शिविर के संचालन में श्री राधाकृष्णन्, इलीनर हटन तथा नारायण देसाई ने सहयोग दिया।

शांति-सेना शिविर, अलीगढ़

साम्प्रदायिक दंगे के तुरंत बाद ही अलीगढ़ में शांति-स्थापना एवं दोनों संप्रदायों के बीच सद्भावनाओं के प्रचार के हेतु से शांति-सेना शिविर ४ अक्टूबर से २५ अक्टूबर तक श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् की अध्यक्षता में आयोजित हुआ, जिससे अल्पसंख्यक सम्प्रदाय के लोगों में फैले हुए भय का बहुत कुछ अंशों तक निवारण हुआ और शहर में शांति-वातावरण पैदा किये जाने में सहायता मिली। शांति विद्यालय से तीन शांति सैनिक व एक कार्यकर्ता, श्री सतीशचन्द्र दुबे, अलीगढ़ शिविर में भाग लेने भेजे गये थे।

प्रांतीय शांति-सेना समितियाँ

प्रत्येक प्रांत में शांति-कार्य का संचालन करने के लिए प्रांतीय सर्वोदय-मंडलों के अंतर्गत एक शांति-सेना समिति संगठित होने के निश्चय के अनुसार नीचे दिये प्रदेशों में शांति-सेना समितियाँ के संगठित हो चुकने के समाचार प्राप्त हुए हैं।

(१) बिहार, (२) मध्यप्रदेश, (३) गुजरात, (४) राजस्थान, (५) असम, (६) पंजाब, (७) उत्तर प्रदेश, (८) उत्कल, (९) बंगाल, (१०) तमिलनाड और (११) महाराष्ट्र।

दिल्ली, कर्नाटक, केरल, आन्ध्र तथा हिमाचल प्रदेश में समितियाँ संगठित होने की सूचना दफ्तर को नहीं मिली। इन प्रदेशों के सर्वोदय-मंडलों से प्रार्थना की गयी है कि वे इस संबंध में आवश्यक कार्यवाही शीघ्र करें।

इस साल अभी तक विभिन्न प्रांतों से १९२ शांति-सैनिकों के फार्म कार्यालय में प्राप्त हुए हैं। बिहार से १०७, पंजाब से ४७, मध्य प्रदेश से २६, उत्तर प्रदेश से ७ और असम से ५; इस प्रकार फरवरी के अन्त तक कुल २,३७५ शांति-सैनिकों के फार्म प्राप्त हुए हैं।

देश के कुछ प्रमुख क्षेत्रों में सघन रूप से शांति-कार्य के प्रयोग हो रहे हैं। वहाँ से जो कार्य-विवरण प्राप्त हुए हैं, उनका प्रकाशन समय-समय पर 'भूदान-यज्ञ' में होता रहा है।

शांति-सेना 'रैली'

३ दिसम्बर, '६१ को श्री जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में बिहार तथा अन्य कुछ प्रान्तों के शांति-सैनिकों की एक 'रैली' दिल्ली में हुई।

विश्व-शांति-सेना

विश्व शांति सेना के संगठित किये जाने के संबंध में बेरूत में २८ दिसम्बर से १ जनवरी तक एक कान्फ्रेंस आयोजित हुई थी, उसमें ५ भारतीय प्रतिनिधियों ने भाग लिया : श्री जी० रामचन्द्रन्, श्री देवीप्रसाद भाई, श्री सिद्धराज ढड्ढा, श्री एस० जगन्नाथन् और श्री नारायण देसाई। ●

पश्चिम के शान्ति-प्रयत्न

पारमाणविक परीक्षण बंद करने की अपील

अर्ल रसेल ने भारत तथा अन्य सात तटस्थ देशों के नेताओं से अपील की है कि वे क्रिसमस द्वीप क्षेत्र के समुद्र में, जहाँ अमेरिकी सरकार पारमाणविक परीक्षण-विस्फोट करने वाली है, अपने जहाज भेजें।

अस्सी वर्ष के विख्यात दार्शनिक अर्ल रसेल ब्रिटेन की अणुविरोधी कमेटी के अग्रणी हैं। उन्होंने अपनी अपील में कहा है—

"पारमाणविक परीक्षण-विस्फोटों से मानव जाति का भविष्य अन्धकारमय हो गया है। शक्तिशाली देश अन्तर्राष्ट्रीय कानूनों का भंग कर रहे हैं, अतः मैं तटस्थ राष्ट्रों से अपील करता हूँ कि वे इस विस्फोट का सक्रिय विरोध करें और मौत के मुँह में ले जाने वाली इस घुड़दौड़ रोकने के लिए क्रिसमस द्वीप क्षेत्र के समुद्र में अपने जहाज भेजें। उस क्षेत्र में परीक्षण करके वायुमंडल को दूषित करने का अमेरिका को कोई अधिकार नहीं है।"

'अहिंसक प्रतिकार कमेटी' का कदम

न्यूयार्क में युद्ध विरोधी आंदोलन जोर पकड़ता जा रहा है। 'अहिंसक प्रतिकार कमेटी' के सदस्य पारमाणविक-परीक्षण विस्फोट करने के विरोध में क्रिसमस टापू पर एक लघु नौका भेजने जा रहे हैं। इस समय 'वेस्ट कोस्ट' में इस नौका का निर्माण-कार्य चल रहा है। आशा है कि १ जून तक यह नौका 'केलिफ़ोर्निया' से समुद्र-यात्रा के लिए रवाना हो जायगी और २० जून के आस-पास क्रिसमस टापू में पहुँच जायगी।

अमेरिका की तरह सोवियत रूस के परीक्षणों के विरोध में भी प्रतिकार की योजना कार्यान्वित करने के लिए यह कमेटी कार्यक्रम बना रही है। कमेटी के सदस्यों का मानना है कि आणविक-परीक्षणों की भयंकरता का दिग्दर्शन कराने के लिए बम के नीचे एक मानव रखा जाय। सम्भव है, बम की भयंकर प्राण-ज्योति पर मर मिटने वाले एक मानव परवाने की प्रेम-समाधि पर विश्वबंधुता के बीज फल जायँ।

अहिंसक प्रतिकार कमेटी द्वारा भेजी जाने वाली नौका परीक्षण-प्रदेश में प्रवेश कर सकी तो सरकार के पास ३ विकल्प रह जायेंगे : परीक्षण बन्द करना, स्थगित करना या जारी रखना।

समुद्र-यात्रा के सलाहकार हैं—कॉस कॉन के एल्बर्ट बिगेलो। नौका में जाने के लिए वे चार-पाँच व्यक्तियों को चुनेंगे, प्रशिक्षण देंगे और सारी सामग्री जुटायेंगे। उनके पास आवेदन-पत्र आ रहे हैं। कहना न होगा कि आवेदन-पत्र भेजने वालों की न्यूनतम योग्यता यह मानी गयी है कि वे मौत के मुँह में जाने के लिए तैयार रहें और अहिंसा पर दृढ़ रहें। चूँकि सत्य तथा अगुप्तता अहिंसक प्रतिकार के आवश्यक अंग हैं, इसलिए यह कमेटी राज्य को अपनी समस्त गतिविधियों से अवगत रखती है।

यह संस्था समस्त राष्ट्रों से पारमाणविक-परीक्षण बन्द कराने के लिए अपील करती है और यह आग्रह करती है कि देश की रक्षा के लिए अपने नागरिकों को अहिंसक प्रतिकार करने का प्रशिक्षण दें।

एल्डर वेस्टन कूच

ब्रिटेन के पारमाणविक परीक्षण-विरोधी आंदोलन के कर्णधार श्री केप्टन जॉन कालिन्स के नेतृत्व में गत २३ अप्रैल को लन्दन में पाँचवीं बार "एल्डर वेस्टन कूच" हुआ। सन् '५८ से हर वर्ष इस प्रकार की कूच होता रहा है। यह चार दिवसीय ५० मील का कूच अब तक ब्रिटेन की "एल्डर वेस्टन" आणविक प्रयोगशाला से शुरू होकर लन्दन के 'ट्राफलगर स्क्वेयर' पर समाप्त होता था। इस बार इसकी समाप्ति "हाईड पार्क" में हुई।

इस कूच में सम्मिलित होने वालों की संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। गत वर्ष बत्तीस हजार व्यक्ति इस कूच में शामिल हुए थे और इस वर्ष चालीस हजार व्यक्ति। पाँच-पाँच की कतार में चलते हुए कूच करने वाले शांति-यात्रियों को "हाईड पार्क" में प्रवेश करने में ३ घंटे लगे। इस कूच में सम्मिलित होने के लिए यू० एस० ए०, स्वीडन, इटली, हालैण्ड, डेनमार्क तथा पश्चिम जर्मनी से प्रतिनिधि आये थे। वक्ताओं में हिरोशिमा-काण्ड के दो भुक्तभोगी तथा श्री केप्टन जॉन कालिन्स एवं कुछ मजदूर दलीय एम० पी० भी थे।

'ईस्टर' के इन्हीं चार दिनों में पश्चिम जर्मनी के बड़े आठ शहरों में भी अणु-आयुध विरोधी प्रदर्शन हुए, जिनमें करीब पचास हजार व्यक्तियों ने भाग लिया। ●

बिहार में 'बीघा-कट्ठा' अभियान की प्रगति

भूदान के भावी कार्यक्रम को सफल बनाने के निमित्त, जीवन में नवोल्लास और नवोत्साह के साथ विनोबाजी की प्रेरणा पाकर बिहार के १७ जिलों में १५० से अधिक अंचलों में ७०० सर्वोदय-कार्यकर्ता १५ अप्रैल से "बीघा-कट्ठा" अभियान में पुन. जुट गये हैं। यह अभियान दो माह तक चलेगा। बिहार में बाढ़ की भयंकर विभीषिका के कारण बीच में इसे स्थगित करना पड़ा था।

इस "अभियान" में सहयोग देने के लिए देश के भिन्न-भिन्न प्रदेशों से २०० से अधिक कार्यकर्ता बिहार में पहुँच गये हैं। गांधी स्मारक निधि, उत्तर प्रदेश के १९ ग्राम-सेवक भी इस कार्य के लिए वहाँ पहुँचे हैं। गुजरात सर्वोदय-मण्डल की ओर से १३ कार्यकर्ता पूर्णिया जिले में योग दे रहे हैं और वेडछी (सूरत) से २९ भाई-बहिन तथा महेसाणा जिले से ४ कार्यकर्ता ४ मई को पटना पहुँच रहे हैं। उड़ीसा से भी ३० और कार्यकर्ता शीघ्र ही बिहार पहुँचने वाले हैं। आन्ध्र प्रदेश से १० कार्यकर्ता ५ मई को बिहार पहुँचेंगे।

राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद के ७८ वें जन्म-दिवस पर उन्हें २५ दिसम्बर, '६० से ३ दिसम्बर १९६१ तक "बीघा-कट्ठा" अभियान में संकलित कुल १,५०,०७० कट्ठा भूमि श्री जयप्रकाश नारायण द्वारा समर्पित की गयी थी। ३ दिसम्बर, '६१ के बाद ९८०८ कट्ठा भूमि इस वर्ष जनवरी-फरवरी में मिली थी।

इस बार "अभियान" के लिए श्री जयप्रकाशजी ४० दिन तक दौरा करेंगे। उनका प्रारंभिक कार्यक्रम इस प्रकार है :—२ मई १९६२ शाहाबाद जिला, ३-४ मई पलामू जिला, ५ मई गया जिला, ८ मई संथाल परगना, ९ मई भागलपुर जिला, १५ मई पटना जिला।

कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री उ० न० ढेबर ने भी 'बीघा-कट्ठा' अभियान के लिए १७ मई से २२ मई तक का समय देना तय किया है।

दिलों को जोड़ने की योजना

पिछली बार श्री विनोबाजी ने २५ दिसम्बर १९६० को, अर्थात् अपनी द्वितीय बिहार-यात्रा के प्रथम दिन, शाहाबाद जिले के दुर्गावती पड़ाव पर "दान दो इकट्ठा, बीघे में कट्ठा" का मन्त्र दिया था। बिहार में ३२ लाख एकड़ जमीन भूदान में एकत्र करने का संकल्प हुआ था। उसमें ३ लाख दानपत्रों द्वारा लगभग २२ लाख एकड़ जमीन प्राप्त हुई थी। हिसाब करने से मालूम हुआ कि "बीघे में कट्ठा" भूमि देने से १० लाख एकड़ भूमि प्राप्त हो सकेगी। इसीलिए बिहार सर्वोदय-मण्डल द्वारा यह "अभियान" चलाया गया है।

"बीघा कट्ठा" अभियान की विशेषता यही है कि इसमें भूमि प्राप्ति के साथ ही भूमि वितरण का भी कार्यक्रम रखा गया है। दिलों को जोड़ने के ख्याल से श्री विनोबा ने इसमें विशेष योजना यह की है कि "दाता स्वयं जिस भूमिहीन को देना चाहे उसको अपने हाथ से जमीन दे दे।"

बिहार-सरकार के राजस्व विभाग ने भी १८ अप्रैल १९६२ के अपने परिपत्र द्वारा बिहार राज्य के सभी अतिरिक्त समाहर्ताओं—एडिशनल कलक्टरों—तथा अन्य राजस्व पदाधिकारियों को "बीघा-कट्ठा" अभियान के कार्यकर्ताओं को सहयोग देने की सूचना दी है, जिससे कि तत्काल जमीन बांटने के लिए उक्त जमीन का पूर्ण विवरण उपलब्ध रहे। बिहार राज्य पंचायत परिषद् के प्रधान मंत्री श्री लालसिंह त्यागी ने भी बिहार के सभी ग्राम-पंचायतों के मुखियाओं, सरपंचों तथा अन्य सदस्यों को "अभियान" में सहयोग की अपील की। उन्होंने लिखा है : "भूदान के काम से इस देश में प्रेम और करुणा की नदी बहेगी, शान्ति की हवा बनेगी, गरीबी दूर होगी, भूमिहीनों को अन्न उपजाने और खाने को जमीन मिलेगी, समाज में एकता और बल बढ़ेगा, साथ ही जनता और पंचायत की शक्ति का विकास होगा, जिसमें पंचायत की योजना सफल होगी।"

बढ़ चले चरण

"अभियान" प्रारम्भ होने के दूसरे ही दिन, अर्थात् १६ अप्रैल को ही संथाल परगना में १३८० कट्ठा जमीन मिली। इसी प्रकार पूर्णियाँ जिले में ६०० कट्ठा, पटना जिले में ५० कट्ठा और मुजफ्फरपुर में ७५ कट्ठा जमीन प्राप्त होने की सूचना बिहार सर्वोदय-मण्डल को मिली।

उत्कल में सर्वोदय-कार्य

उत्कल में गत फरवरी माह के अंत तक कोरापुट जिले में ३,७०,४०८ एकड़ और बालसोर जिले में ३०,२४६ एकड़ जमीन भूदान में मिली। वहाँ के १३ जिलों में फरवरी के अंत तक भूदान में ३,८०,२४५ एकड़ ४७ बीघा जमीन मिली थी और समस्त उत्कल में ८६,९८६ जमीन का वितरण हुआ। उत्कल में अब तक १६३ ग्रामदानों को सरकारी स्वीकृति मिल चुकी है।

फसल-कटनी के समय वहाँ ४३८ मन धान का संग्रह हुआ। पंचायती राज पर वहाँ एक 'सेमिनार' श्री रा० कृ० पाटिल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ था। कोरापुट के बीजापुर स्थान में ३० कार्यकर्ताओं का दो माह का शिविर लगाया गया। इसी प्रकार गोपालवाड़ी (कोरापुट), अनुगुल और कटक में शिविर आयोजित किये गये। कटक जिले में नयी तालीम का कार्य भी हरेकृष्ण विश्वाल संगठित कर रहे हैं। कटक के शान्ति-केन्द्र की ओर से शहर में सर्वोदय पात्र का कार्य चलाया जा रहा है। इनसे १,२०८ रु० ६२ नये पैसे संगृहीत हुए। दस हजार गुण्डियाँ भी सूताजलि में संगृहीत हुई हैं।

लखनऊ में गांधी-निधि का उपकेन्द्र

लखनऊ में गांधी स्मारक निधि के पुस्तकालय का एक उपकेन्द्र १५ मार्च को गन्नेवाली गली में प्रारम्भ किया गया। इस अवसर का मुख्य आकर्षण हिन्दू-मुस्लिम सौहार्द का वातावरण था। दोनों जमातों के उपस्थित लोगों ने जलपान किया। अब लखनऊ में सर्वोदय-विचार प्रचार के काम को काफी बल मिलेगा।

३८ ग्रामदान प्राप्त

विनोबा ने ५ अप्रैल को आसाम के कामरूप जिले में प्रवेश किया। वहाँ उन्हें पन्द्रह दिन की पदयात्रा में ३८ गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए। इनमें करीब ७० परिवार के श्रीमान गाँव भी शामिल हैं। इस अर्से में १,५५० रु० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। आशा की जाती है कि विनोबाजी १२ जून तक कामरूप जिले में ही रहेंगे।

कानपुर में ग्राम-स्वराज्य पदयात्रा

कानपुर जिले की घुखरायाँ तहसील के २५ गाँवों में शान्ति-सैनिकों ने ग्राम-स्वराज्य घोषणा-पत्र पहुँचाये। ६२ मील की पदयात्रा के दौरान में शान्ति-सैनिक दल ने नौ ग्राम-सभाएँ तथा एक कार्यकर्ता सभा आयोजित की। श्री रेवतीरमन सक्सेना ने ग्रामसभाओं की सफलता के लिए अच्छा काम किया।

कानपुर के किदवई नगर के शान्ति-सैनिक श्री सुरेन घोष अपने अन्य साथियों के सहयोग से हरिजनों की बस्तियों में लगन से काम कर रहे हैं। किदवई नगर में कानपुर म्युनिसिपल कार्पोरेशन द्वारा निर्मित हरिजन बस्ती में उनका शिक्षण-प्रयोग चल रहा है। हरिजनों की आर्थिक-सामाजिक स्थिति का सर्वेक्षण करके सर्वोदय-कार्यकर्ता वहाँ सेवाकार्य में दत्तचित्त हैं।

मध्यप्रदेश सर्वोदय-सम्मेलन

म० प्र० का चतुर्थ प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन आगामी २०-२१ जून को विन्ध्य क्षेत्र के छतरपुर नामक स्थान में आयोजित किया जा रहा है। सम्मेलन में प्रदेश के सर्वोदय-कार्य का सिंहावलोकन तथा आगामी कार्यक्रम के संबंध में विचार-विनिमय किया जायगा।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९८१० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९६८०
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक : १३ नये पैसे

जनता के सवाल हल करने के लिए सर्वसम्मत कार्यक्रम लें

उ० न० ढेबर

आज हिन्दुस्तान भर के कार्यकर्ताओं के दिल में मंथन चल रहा है। इस समय कोई भी ऐसा संगठन नहीं है, जहाँ जिस प्रकार का मंथन आप कर रहे हैं, उस प्रकार का मंथन न चलता हो। वह मंथन एक माने में हिन्दुस्तान की आज की हालत से सम्बन्ध रखता है। हिन्दुस्तान की आज की हालत में नहीं कहता कि बुरी है। एक पुराना ढांचा था, वह टूटा तो उसके टूटने से कुछ समस्याएँ खड़ी हुई हैं। लोग अलग-अलग ढग से उन समस्याओं को देखते हैं और अलग-अलग निष्कर्ष पर पहुँचते हैं।

आज तक हम सोचते थे और लोग श्रद्धा से हमारे पीछे चलते थे। अब इतना परिवर्तन आ गया है कि लोग अपने ही ढंग से सोचते हैं। हम उन्हें चाहे जिस तरीके से समझायें, वे समझे तो ठीक है, नहीं तो अपने ही ढग से वे काम करते जाते हैं। उनमें प्रश्न करने का 'स्पिरीट', साहस पैदा हो गया है। चुनाव में पड़ने वाले इस बात को समझते हैं। सर्व सेवा संघ चुनाव में नहीं पड़ता, यह अच्छा है। लेकिन हम जो चुनाव में पड़ते हैं, उन्हें पता है कि हमें कितने कितने सवालों का जवाब देना पड़ता है। लोग कैसे-कैसे सवाल पूछते हैं, आप अगर यह सुनें तो हैरान हो जायँ! कोई सभा नहीं होती, जहाँ किसी-न किसी सूरत में कोई-न-कोई सवाल नहीं रखा जाता। जो लोग उससे आजाद होते हैं, वे दूर दूर रह कर नारा लगाते हैं और जो उससे भी आजाद होते हैं, वे उछलते कूदते और सभा भंग करते रहते हैं। यह सब क्या दिखाता है? पहले जो समाज हमारे पीछे चलता था, मित्रता से रहता था, वही समाज आज स्वयं जवाब ढूंढ़ रहा है। उसको संतोषजनक जवाब किसी पार्टी से मिलता।

प्राथमिक संघर्ष

स्वराज्य मिल गया। अब देश के सामने अलग-अलग किस्म के सवाल हैं। यहाँ दिमाग के स्तर पर जो संघर्ष चल रहा है, वह मामूली नहीं है। गांधीजी के आशीर्वाद से लोग अभी तो जीभ चलाते हैं, हाथ नहीं चलाते; फिर भी वह संघर्ष नहीं है, ऐसा नहीं कह सकते। ऊँच-नीच का संघर्ष है, आर्थिक स्तर और सामाजिक स्तर पर पढ़े लिखे और अनपढ़, शहरों में रहने वाले और गाँवों में रहने वाले, कृषि का काम करने वाले और टेबल पर बैठ कर काम करने वाले जितने भी हैं, उन सबमें संघर्ष चल रहा है। दूसरा संघर्ष राजनैतिक क्षेत्र से सम्बन्ध रखता है। आप यह नहीं कह सकते कि आप राजनैतिक क्षेत्र से सम्बन्ध नहीं रखते। ऐसा कहना मुनासिब भी नहीं है। हम हर प्रकार के संघर्ष में पड़े हैं तो सोचना पड़ता है कि पहले कौन से संघर्ष को हाथ में लें। सभी संघर्षों को एकसाथ हाथ में नहीं लिया जा सकता। इसलिए किसी एक संघर्ष को प्राथमिकता देनी होगी और जब हम किसी संघर्ष को प्राथमिक देने के लिए सोचते हैं, तो हमारे सामने कितने ही प्रवाह आ जाते हैं। उन प्रवाहों से कुछ लोग दायें हट जाते हैं, तो कुछ बायें। दायें-बायें हटने वाले समाज से अलग हो जाते हैं। ऐसे अलग होने वालों को समाज भी भूल जाता है।

लोगों की मांग

गरीबी और बेकारी के संघर्ष का प्रवाह बड़ी तेजी से बह रहा है। हिन्दुस्तान में इसके लिए एक क्रांतिकारी चीज बन रही है। लोगों के दिमाग में इस संघर्ष ने अग्रस्थान बना दिया है। अब लोग कुछ चीजों के बारे में निश्चिन्त बनना चाहते हैं। वे चाहते हैं कि एक तो खाने-पीने का इन्तजाम हो और दूसरे हिन्दुस्तान के नागरिक होने के नाते सबका समान अधिकार हो। सैकड़ों सालों से दबे हुए लोग, जब ऊपर से दबाव हट जाता है, तब उछलते हैं। लेकिन हिन्दुस्तान के लोगों के लिए हम कह सकते हैं कि उनमें मर्यादा और विवेक रहने वाला है। और जगह अगर ऐसा कुछ होता तो कह नहीं सकते कि लोग क्या करते! ऐसे समय में जब कि यहाँ के लोगों के दिमाग में रोजी रोटी और समान अधिकारों की माग पूरी करने की चिन्ता सवार है, आप क्या कर सकते हैं, यह देखना है। इस प्रकार एक तो 'बेसिक नेसेसिटीज आफ लाइफ'–खाने, पीने, रहने, पढ़ने–की समस्या है और दूसरी 'सोशिअल स्टेटस' की समस्या है। और भी बहुत-सी समस्याएँ हैं। लेकिन इस समय लोगों की सम्पूर्ण शक्ति इन्हीं दो सवालों के पीछे लगी हुई है। अगर आप इन दो सवालों से हट गये तो लोग आपकी इज्जत करेंगे, सब तरह से मान सम्मान भी करेंगे और कहेंगे कि भले आदमी हैं, कुछ सोचते हैं, चिन्तक हैं; पर इनके चिंतन और विचार मंथन से जनता का कोई ताल्लुक नहीं है।

सर्व सेवा संघ से प्रार्थना

सर्व सेवा संघ से पहली प्रार्थना है कि मेरी बातें सही लगें तो निराश न होते हुए कुछ समय निकाल कर आप सब लोग पाँच सात-आठ दिन के लिए एकसाथ बैठें और विचार-विनिमय करें। दूसरी बात यह है कि इन सवालों को एक बाजू से भावनात्मक दृष्टि से देखना होगा, साथ साथ दूसरी बाजू से व्यावहारिक दृष्टि से देखना होगा। इसका मतलब यह नहीं है कि आप सोचते नहीं हैं। लेकिन कुछ मर्यादाओं को हम भूल नहीं सकते। जैसे हमारी कुछ मर्यादाएँ हैं, औरों की भी हैं। अगर तेजी से चलना है तो अपनी मर्यादाएँ, अपनी शक्ति, अपनी ताकत उसका पूरा खयाल हमारे सामने होना चाहिए। जिस घोड़े में पचास मील की स्पीड से चलने की शक्ति है, उसे और ज्यादा जोर से चलाने की कोशिश करेंगे तो वह थक जायगा। इसलिए जो भी सवाल हम हल करने का प्रयत्न करें उसमें हमको ही नहीं, साथ में और लोगों को भी ले चलना है। हर काम का एक बैक ग्राउंड होता है। उस बैक-ग्राउंड को छोड़ना भी नहीं है और उसमें खतरे भी हैं। अपना जो पुराना तरीका होता है, वह छोड़ने से पहले लोग पच्चीस बार पूछेंगे कि यह छोड देंगे और नयी चीज मिलेगी नहीं तो क्या होगा? लोग पुरानी चीज को छोड़ने के लिए एकदम तैयार नहीं होते, लेकिन जैसे-जैसे नये तरीके कारगर होते देखते हैं, पुरानी चीज छोड़ते चले जाते हैं।

चिंतन में मेल बिठाने की जरूरत

देश के सवाल हल करने के संबंध में काफी मतभेद हैं। लेकिन कुछ काम ऐसे भी हैं, जिन्हें एकमत होकर करने का अवकाश प्राप्त हुआ है–जैसे पंचायती राज। अगर पंचायती राज सही ढग से चले तो हिंदुस्तान में एक जबरदस्त अहिंसक क्रांति हो सकती है। मेरे खयाल से भूदान, ग्रामदान और इसी तरह के सर्व सेवा संघ के जो सभी कार्यक्रम हैं, उनको और पंचायती राज को हमारी दृष्टि से करने का एक मौका मिला है।

इन दोनों दृष्टियों की टक्कर हो तो एक चैलेंज भी है। लोगों के पास जाकर उनको समझाना होगा। हिन्दुस्तान में जितनी ग्राम-पंचायतें होंगी, उनके मुखिया होंगे, उन सबके पास जाकर समझाने का अवसर प्राप्त हुआ और फिर भी हम हिंसा की बात करते हैं। पंचायतों के जरिये से लोगों की बेसिक नेसेसिटीज का कार्यक्रम और सोशिअल जस्टिस का कार्यक्रम हम सफलता से पूरा करवा सकते हैं कि नहीं, यह हमारे सामने चैलेंज है। इस चैलेंज को स्वीकार करने के लिए आज जो कुछ हमारा विचार मंथन चल रहा है, उसका उसके साथ मेल बिठाना होगा। लोगों के जो बुनियादी सवाल हैं उनके साथ कदम मिला कर और दूसरी बाजू से पंचायती राज के द्वारा इस काम को करना होगा। इस विषय में गहराई से सोचने का अब समय आ गया है।

[संघ-अधिवेशन, पटना, १०-४-६२]

के कारण अलग-अलग हो जाना बिलकुल व्यर्थ है।

गुण-दोष-दर्शन की साधना

गुण-दोष दर्शन से भी भेद होता है। मेरे साथी में मुझे दोष दीख रहा है। उसमें दोष होगा, नहीं होगा या कम-वेशी होगा। मान लीजिये कि उसमें दोष है, तो उस दोष को बचा कर चलने में खूबी है। वह किसी बात पर चिढ़ता है, तो मैं भी चिढ़ जाऊँ, इसमें सार नहीं है। उसको चिढ़ने की आदत हो तो हम ऐसे ढग से बोलें कि उसके चिढ़ने के लिए गुंजाइश ही न रह जाय। उसमें दोष है, वही हमने मान लिया तो उसमें हमारा दोष है। थोड़ा दोष है और उसे हमने मान लिया, तो भी हमारा दोष है। व्यक्ति प्रति क्षण बदलता है। उसके विकास के लिए, परिवर्तन के लिए हमें गुंजाइश रखनी चाहिये और उसे 'एडजस्ट' करना चाहिये। गुण-दोष मिश्रित मनुष्य आगे बढ़ता-बढ़ता परमेश्वर के पास पहुँच जाता है।

गुण-दोष दर्शन को भी अपनी साधना समझना चाहिये। हम दोषों को महत्त्व नहीं देते, दोषों का उच्चारण नहीं करते तो वह हमारी साधना है। नहीं तो साधना क्या है? क्या खाने में एक-आध चीज छोड़ने से या खाना छोड़ने से साधना होती है? खाना छोड़ दिया वह तो आदत पड़ गयी। हमने मिर्च खाना छोड़ दिया। बाद में उसकी आदत हो गयी, इसलिए खाने-पीने में त्याग करने से साधना नहीं होती। साधना के लिए मुख्य बात यह है कि हम दोषों को महत्त्व न देकर गुणों को ही महत्त्व दें। ऐसा न करके हम अपने आपको सबसे अलग कर लें, तो इससे क्या हुआ? रणक्षेत्र यानी साधना का क्षेत्र ही छोड़ दिया तो आप कायर हो गये!

[पड़ाव : दामोदर धाम, जि० कामरूप, असम, १३ अप्रैल, '६२]

छोटी-छोटी बातों में निराग्रही होने वाला व्यक्ति ही उत्तम सत्याग्रही हो सकता है।
जो सत्य के अंगभूत कुछ मौलिक आग्रह होते हैं, वे सत्योपासना में सहज ही समा जाते हैं।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

गलत प्रार्थना

लोग भगवान से प्रार्थना करते समय कहते हैं—'तुम्ही भक्त कल्पतरु।' हे भगवान! आप भक्तों के लिये कल्पतरु हैं। लेकिन लोग समझते नहीं हैं कि कल्पतरु एक भयानक वृक्ष है। उससे तो आम और कटहल का पेड़ अच्छा है। आम आम ही देगा और कटहल कटहल ही देगा। लेकिन कल्पवृक्ष तो हम जो-जो कल्पना करेंगे, वही सब देगा। हमारी कल्पना बुरी होगी तो बुरा फल देगा। हम कितनी भी बुरी कल्पना करें तो भी आम का वृक्ष आम ही देगा, कड़ुआ फल नहीं देगा, लेकिन कल्पतरु कड़ुआ फल देगा।

अेक था मुसाफिर। गरमी के दिनों में घूमते-घूमते थक गया, तो अेक कल्पवृक्ष के नीचे बैठ गया। सोचने लगा कि बहुत भूख लगी है, खाना मिल जाता तो अच्छा होता! तत्काल थाली भर कर खाना आ गया, प्यास लगी तो पानी आ गया। फिर उसने सोचा कि नींद आ रही है, अब पलंग मिल जाय तो अच्छा है। पलंग भी मिल गया। उसको लगा कि जो-जो चीजें चाहिये, वे सब मिल रही हैं, तो क्या यहाँ कोई भूत है? इतने में भूत हाजिर! वह डर कर सोचने लगा कि क्या यह मुझे खायगा? तो भूत ने उसे खा लिया।

बाड़ीगाँव [दरंग]
१४-मार्च-'६२ —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

मानव-जाति की रक्षा के लिए बर्ट्रेण्ड रसेल की पुकार

अणुबम, हाइड्रोजन बम आदि आणविक शस्त्रों का उपयोग और उससे होने वाला प्रलयकारी विनाश तो जब होगा, तब होगा, पर इन अस्त्रों संबंधी होड़ अपने आप में ही समूची मानव जाति के लिए एक भयंकर खतरा साबित हो रही है। जब अणु-अस्त्रों के उपयोग से मानव जाति के विनाश के खतरे की बात कही जाती है, तब अक्सर इन अस्त्र-शस्त्रों की तैयारी में लगी हुई सरकारों की ओर से यह दलील दी जाती है कि चूँकि आणविक अस्त्रों के कारण सर्वनाश का खतरा उपस्थित हुआ है, इसीलिए अब कोई भी शासक आसानी से युद्ध का खतरा मोल लेने को तैयार नहीं है और इसलिए अणु अस्त्रों का अस्तित्व एक तरह से युद्ध रोकने वाला (डीटेरेंट) साबित हो रहा है। यह मान भी लिया जाय कि आणविक अस्त्रों के अस्तित्व से युद्ध टल रहा है, तब भी अन्यान्य कार्य मानव जाति के लिए अभिशाप साबित हो रहे हैं।

यह बात निर्विवाद है कि इन अस्त्रों को उत्तरोत्तर परिपूर्ण बनाने के लिए समय-समय पर जो प्रयोग और विस्फोट करने पड़ते हैं, उन विस्फोटों से सारी पृथ्वी का वायु मण्डल धीरे धीरे विषाक्त हो रहा है और न केवल मौजूदा लोगों पर, बल्कि सैकड़ों वर्षों तक आगे आने वाली पीढ़ियों पर भी इस विषवर्षा का बहुत घातक परिणाम होने वाला है, इसलिए न सिर्फ आणविक अस्त्रों का उपयोग, बल्कि उनको बनाना जारी रखना भी मानव जाति के प्रति एक जघन्य अपराध है।

दुनिया भर के विचारकों और बुद्धिमान लोगों की ओर से इन प्रयोगों और विस्फोटों के खिलाफ आवाज उठ रही है, लेकिन पाशविक शक्ति के मद से उन्मत्त राष्ट्रों पर इस सारे विरोध का कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा है। लार्ड बर्ट्रेण्ड रसेल जैसे वयोवृद्ध और जगत विख्यात दार्शनिक तथा विचारक को भी इस असामाजिक प्रवृत्ति के खिलाफ सत्याग्रह करके जेल जाने तक को मजबूर होना पड़ा है। दुनिया के सैकड़ों चोटी के वैज्ञानिकों ने एक से अधिक बार अणु शक्तिसम्पन्न राष्ट्रों को चेतावनी दी है। भारत के प्रधान मंत्री पण्डित नेहरू जैसे सर्वादरणीय व्यक्ति ने बार बार अमेरिका और रूस तथा अन्य अणु शक्तिसम्पन्न राष्ट्रों को इन कार्रवाइयों से बाज आने के लिए अनुनय विनय किया है। पर यह सारा अरण्यरुदन साबित हो रहा है!

इस परिस्थिति का अब सिवा इसके कोई इलाज नहीं मालूम होता कि दुनिया के समझदार लोग उन सरकारों की कार्रवाइयों के खिलाफ जो मानव जाति की जान और भविष्य खतरे में डाल रही हैं, खुला विद्रोह करें। कुछ दिन पहले सोवियत रूस ने प्रयोगों की शृङ्खला शुरू की थी, अब अमरीका ने प्रशान्त महासागर के बीच अपने विस्फोट शुरू किये हैं। अमेरिका की सरकार ने दुनिया भर को चेतावनी दी है कि जब तक ये प्रयोग चल रहे हैं, तब तक प्रशान्त महासागर के "क्रिसमस" द्वीप के चारों ओर करीब-करीब ५०० मील के घेरे में से कोई जलपोत या हवाई जहाज न गुजरे, क्योंकि उस क्षेत्र में होने वाले विस्फोटों के कारण ऐसा करना खतरे से खाली नहीं होगा। हवा, पानी, प्रकाश, पृथ्वी आदि प्रकृति के तत्व हैं। इन पर किसी व्यक्ति या राष्ट्र विशेष की मालकियत नहीं हो सकती। पशु बल के सहारे पृथ्वी पर तो लोगों ने मालकियत कायम कर ली है, जो अपने आप में मानव-जाति के प्रति एक अपराध है—पर अब वह दिन शायद दूर नहीं है, जब हवा और पानी पर भी पृथ्वी के राष्ट्र केवल पशु बल के आधार पर अपनी मालकियत कायम करेंगे। बर्ट्रेण्ड रसेल ने हिन्दुस्तान समेत दुनिया के ७ निष्पक्ष राष्ट्रों को क्रिसमस द्वीप के आसपास प्रशान्त महासागर में अपने जहाज भेजने के लिए जो आह्वान किया है, वह इस दृष्टि से बहुत सामयिक और उपयुक्त है। महासागर का वक्षस्थल या वायुमण्डल का दायरा किसी राष्ट्र की बपौती नहीं है, वह इसका ऐसा कोई उपयोग करने का अधिकारी नहीं है, जिससे किसी दूसरे राष्ट्र या मानव जाति को खतरा पैदा हो। यह ठीक है कि अमेरिका ने क्रिसमस महाद्वीप के चारों ओर के क्षेत्र के आवागमन के लिए इस्तेमाल न करने की जो चेतावनी दी है, वह उसका उपयोग करने वालों की खुद की सुरक्षा के लिए है, पर असली बात यह है कि इस तरह वायु मण्डल को विषाक्त करने का अधिकार किसी भी राष्ट्र को नहीं होना चाहिए।

'अमेरिका की सरकार की इस अनुचित कार्रवाई के खिलाफ स्वयं अमेरिका के कुछ नागरिकों ने एक जहाज प्रशान्त महासागर के उस क्षेत्र में भेजने का तय किया है। पर इतना पर्याप्त नहीं है। बर्ट्रेण्ड रसेल ने जिन ७ "निष्पक्ष" राष्ट्रों को आह्वान किया है। वे भी अगर अपने जलपोत इस क्षेत्र में भेजते हैं—जो कि वे तुरन्त कर सकते हैं और करने की क्षमता रखते हैं—तो उसका अमेरिका की सरकार पर और आगे भी इस प्रकार प्रयोग करने वाली दूसरी भी सरकारों पर तुरन्त असर पड़ सकता है, जैसा कि राजगोपालाचार्य ने अपने वक्तव्य में कहा है: "अगर भारत की सरकारें और दूसरे निष्पक्ष राष्ट्रों की सरकारें अमरीकी सरकार की चेतावनी की उपेक्षा करके प्रशान्त महासागर के उस क्षेत्र में अपने जहाज भेजते हैं तो वह एक बहुत असरकारक और अत्यधिक भव्य सत्याग्रह" होगा। दुनिया के आम लोगों को और गैरसरकारी संस्थाओं इत्यादि को तो अणुबम के विस्फोटों के खिलाफ आवाज उठानी ही चाहिए, पर स्वयं पण्डित जवाहरलालजी के अनुसार "अहिंसा के पथ पर चलने वाले भारत" के लिए बर्ट्रेण्ड रसेल की प्रार्थना स्वीकार करके अपने जहाज अमेरिका द्वारा वर्जित क्षेत्र में भेजना एक ऐसा कदम होगा, जिसके लिए समूची मानव-जाति और आगे वाली पीढ़ियाँ भारत की और पण्डित नेहरू की उपकृत होंगी। अब समय आया है कि मानव-जाति की रक्षा के लिए राष्ट्रों के बीच के सामान्य शिष्टाचार को तिलांजलि देकर तुरन्त कोई असरकारक कदम उठाया जाय।

जयप्रकाश अफ्रीका को

उत्तरी रोडेशिया के स्वातन्त्र्य आंदोलन में सहायता पहुँचाने का तय करके विश्व शांति सेना ने अहिंसा की प्रतिष्ठा के लिए एक महत्त्वपूर्ण कदम उठाया है। राजनैतिक या सामाजिक अन्यायों के प्रतिकार के लिए मानव जाति अभी तक मुख्यतः हिंसा का सहारा लेती रही है। दुनिया के इतिहास में पहली बार गांधीजी ने बड़े पैमाने पर अहिंसक प्रतिकार का प्रयोग किया। हिंसक साधनों का जो विकास हुआ है, उसके कारण परिस्थिति भी ऐसी बनी है कि समस्याओं के हल के लिए हिंसा को छोड़ कर शांतिमय तरीके अख्तियार करना मानव-जाति के अस्तित्व के लिए लाजमी हो गया है। पर अगर अहिंसा इन प्रश्नों को हल करने में कामयाब नहीं होती है तो सर्वनाश का खतरा होते हुए भी मानव जाति हिंसा से विमुख नहीं होगी, क्योंकि आये दिन उठने वाली समस्याओं का समाधान तो उसे चाहिए ही। विश्व शांति सेना ने अपनी स्थापना के निवेदन में दुनिया के विचारवान लोगों को आह्वान किया है कि वे समस्याओं के समाधान के अहिंसक विकल्प खोजने में जुट पड़ें, ताकि मानव-जाति त्राण पा सके।

उत्तरी रोडेशिया के तथा पूर्वी अफ्रीका के अन्य राष्ट्रों के अफ्रीकन नेताओं ने विश्व शांति सेना की मदद का स्वागत करते हुए अपना यह निश्चय जाहिर किया है कि वे अफ्रीकन आजादी की लड़ाई यथासम्भव अहिंसक उपायों से लड़ेंगे। विश्व शांति-सेना तथा अफ्रीका के दलों ने मिल कर इस काम के लिए एक संयुक्त मोर्चा बनाया है। उस मोर्चे की ओर से इसी सप्ताह तांगानिका और उत्तरी रोडेशिया की सीमा पर एक वृहत्

अफ्रीकन सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। अफ्रीकन स्वातंत्र्य के मोर्चे की ओर से विश्व-शांति-सेना के एक अध्यक्ष, भारतीय नेता, श्री जयप्रकाश नारायण को इस सम्मेलन के लिए निमंत्रण दिया गया है। जयप्रकाशजी और प्रभावतीबहन ता. ९ मई को पूर्वी अफ्रीका जा रहे हैं। इस क्षेत्र में आगे क्या क्या घटनाएँ घटती हैं, उनके बारे में न सिर्फ भारत में, बल्कि दुनिया के शांतिवादियों द्वारा भी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा की जायगी।

स्वागत !

राष्ट्रपति-पद के कार्यभार से मुक्त होकर ता० १४ मई को श्री राजेन्द्रबाबू वापस सदाकत आश्रम में आ रहे हैं। एक तरह से दिल्ली-प्रवास से करीब १५ वर्ष बाद वे वापस अपने घर आ रहे हैं। हालाँकि लगभग ७८ वर्ष की उम्र में, और खासकर पिछले साल की घातक बीमारी के बाद, आदरणीय राजेन्द्रबाबू का स्वास्थ्य काफी नाजुक है, फिर भी उन्होंने अपना यह निश्चय जाहिर किया है कि वे अपना समय, जन सेवा में लगायेंगे। २ सितम्बर, १९४६ से जब राजेन्द्रबाबू पहली बार खाद्य-मंत्री होकर भारत के मंत्री-मण्डल में शामिल हुए तब से १३ मई, १९६२ तक का समय भी, जब तक वे शासन के सर्वोच्च कामों में रहे, उनके लिए तो सेवा कार्य के अतिरिक्त और कुछ नहीं था। फर्क इतना ही है कि अब राजेन्द्रबाबू की सलाह और मार्गदर्शन बिना किसी दूसरे व्याघात के प्रत्यक्ष जन-सेवा-कार्य के लिए मिलते रहेंगे। शासन में आने से पहले भी वे सर्वोदय की दृष्टि से ही काम करते थे, शासन में भी यथा-सम्भव उन्होंने अपनी यह दृष्टि रखी और अब फिर सर्वोदय कार्य को खास तौर से उनके विचार और व्यापक अनुभव का लाभ मिलेगा। हमारा विश्वास है कि दिल्ली के 'राष्ट्रपति भवन' की अपेक्षा भी सदाकत आश्रम से वे देश की अधिक महत्त्वपूर्ण सेवा कर सकेंगे। परिवार में पुनरागमन के अवसर पर हम हृदय से उनका स्वागत करते हैं और प्रार्थना करते हैं कि वे शतायु हों।

—सिद्धराज

बिहार को बाबा का सन्देश

गत १७ अप्रैल को बिहार सर्वोदय-मण्डल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह और बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष श्री रामदेव ठाकुर आसाम में विनोबाजी से मिले और बिहार आने का निमंत्रण दिया। बाबा ने उनके निमंत्रण के उत्तर में आसाम वालों से पूछ कर यह उत्तर दिया कि मैं यदि अभी बिहार जाना भी चाहूँ तो १५ जून के पहले बिहार पहुँचना सम्भव नहीं है। इसलिए 'बीघा-कट्ठा' आन्दोलन को मेरी हाजिरी का लाभ मिल नहीं सकता। इधर आसाम में ग्रामदानों का सिलसिला जारी है और आसाम वाले अभी चाहते हैं कि मैं कुछ दिन यहीं रहूँ। तब क्यों न *और कुछ दिन आसाम में रहा जाय!*

बाबा ने कहा कि कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि विनोबा जहाँ जाते हैं, वहीं कुछ होता है। ऐसी हालत में अच्छा यह होगा कि बिहार में विनोबा के बिना भी कुछ करने का प्रयास किया जाय। एक तरफ विनोबा की शक्ति आसाम में लगी है, दूसरी तरफ देश भर के कार्यकर्ताओं की शक्ति बिहार में लगी है। अगर आसाम में कुछ होता है, तो उसका असर बिहार के 'बीघा-कट्ठा' आन्दोलन पर पड़ेगा और अगर बिहार में कुछ होता है तो उसका असर *आसाम के ग्रामदान-आन्दोलन* पर होगा। इस परस्पर के प्रभाव से सारे भारत को रोशनी मिल सकती है।

बिहार के कार्यकर्ताओं की शक्ति की चर्चा करते हुए बाबा ने कहा कि उनकी जो शक्ति है और बाहर के कार्यकर्ताओं की जो शक्ति इस समय वहाँ लग रही है, उसे देखते हुए अच्छा यह होगा कि सारी शक्ति कुछ ही जिलों में केन्द्रित करके कुछ काम किया जाय। तभी अपने काम का कुछ अच्छा परिणाम आ सकता है।

विनोबाजी ने ग्राम पंचायतों की चर्चा करते हुए इस बात पर विशेष जोर दिया कि हमें ग्राम पंचायतों को अपनी इकाई मान कर काम करना चाहिए। उन्होंने कहा कि यदि ये पंचायतें सक्रिय हो सकेंगी तो हमारे आन्दोलन को बहुत बड़ा बल मिलेगा और इनके जरिये ग्रामस्वराज्य की बुनियाद तैयार होगी। बिहार में इसके लिए इस समय अनुकूल वातावरण भी है। अखिल भारतीय पंचायत परिषद के अध्यक्ष जयप्रकाश बाबू और बिहार राज्य-पंचायत परिषद के अध्यक्ष विनोदा बाबू जैसे लोगों का सहयोग हमें प्राप्त है। यदि इन लोगों के सहयोग का हम ठीक ढंग से उपयोग कर सकें तो बिहार में पंचायतों को सक्रिय बना कर पंचायती राज्य की एक तस्वीर खड़ी की जा सकती है।

बिहार के लिए बाबा के इस सन्देश में तीन बातें मुख्य हैं—

(१) बिहार के और देश के अन्य भागों के कार्यकर्ता अपनी पूरी शक्ति बीघा-कट्ठा आन्दोलन में लगा कर उसे सफल बनायें।

(२) कार्यकर्ताओं की शक्ति समूचे बिहार में बिखेरने के बजाय कुछ थोड़े-से जिलों में उसे केन्द्रित करके काम किया जाय।

(३) ग्राम-पंचायतों को इकाई मान कर उन्हें सक्रिय बनाया जाय और इस प्रकार पंचायती राज्य की एक तस्वीर खड़ी करने का प्रयत्न किया जाय।

'बिहार का बीघा-कट्ठा अभियान तेजी से चल रहा है। आँकड़ों से पता चलता है कि दस दिन के भीतर कोई बीस हजार कट्ठे जमीन भूदान में मिली है; जिसमें से आधी जमीन ४४० भूमिहीनों में बाँटी जा चुकी है। बिहार के २८ नेताओं ने, जिनमें जयप्रकाश बाबू, विनोदा बाबू, कृष्ण वल्लभ सहाय (कांग्रेस), दलथन सिंह, रामानन्द सिंह, कर्पूरी ठाकुर (प्रजा-समाजवादी पार्टी), रामविनोद सिंह (स्वतंत्र पार्टी), सुशील कुमार बागे (झारखंड पार्टी), कार्यानन्द शर्मा (कम्युनिस्ट), दालसिंह त्यागी (पंचायत परिषद), गौरी बाबू (बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी), रामदेव बाबू (खादी-ग्रामोद्योग संघ), वैद्यनाथ चौधरी (गान्धी-स्मारक निधि), नगेन्द्र नारायण सिंह (हरिजन सेवक संघ), हरिनारायणानन्द (भारत सेवक समाज), सावित्री देवी (महिला-चरखा समिति) तथा अन्य अनेक प्रमुख सार्वजनिक कार्यकर्ता शामिल हैं, एक संयुक्त अपील में बिहार की जनता से अनुरोध किया है कि वह इस बीघाकट्ठा आन्दोलन को सफल बनाये। श्री ढेबर भाई भी इस आन्दोलन को गति देने के लिए बिहार का दौरा शुरू कर रहे हैं। स्पष्ट है कि सब लोगों के संयुक्त प्रयास से बिहार का बीघा कट्ठा आन्दोलन सफल होकर रहेगा। अच्छा हो कि हमारे कार्यकर्ता विनोबाजी के सन्देश की तीनों बातों को ध्यान में रख कर कुछ विशेष जिलों को केन्द्र बना कर अपना आन्दोलन चलायें और ग्राम-पंचायतों को सक्रिय बना कर ग्राम स्वराज्य का चित्र खड़ा करने का प्रयत्न करें। हमारा विश्वास है कि ऐसा करने से थोड़े ही समय के भीतर अच्छा परिणाम दिखाई पड़ सकता है, जिसका कि सारे देश पर स्थायी प्रभाव पड़ना अनिवार्य है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

इन्सान हूँ मैं !

एक बार दमिश्क में ऐसा सूखा पड़ा कि लोग भूखों मरने लगे। पानी नाम को भी नहीं था, परन्तु अगर कहीं मिल सकती थी, तो वह सिर्फ दुखियों की आँखों में।

ऐसे में एक मित्र आया। देखा, तो बड़ा सदमा पहुँचा। किसी जमाने में नगर का यह धनी-मानी व्यक्ति आज सूख कर अस्थि-पंजर रह गया था।

मैंने उससे पूछा—'मेरे नेक दोस्त, भला तुझ पर ऐसी कौनसी मुसीबत आ पड़ी, जो तेरा यह हाल हो गया?'

यह सुनते ही उसे क्रोध आ गया और लाल-लाल आँखों से मुझे दुत्कारता हुआ बोला-'अरे दीवाने, सब कुछ जानते हुए भी मुझसे पूछता है?'

मैंने उसे तसल्ली देते हुए कहा—'लेकिन तुझे इन सबसे डर क्यों हो, क्योंकि जहर तो सिर्फ वहीं फैलता है, जहाँ अमृत नहीं होता। मगर तू तो रोजमर्रा की जरूरतों से उसी प्रकार सुरक्षित है, जैसे तूफान में बत्तख!'

मेरी यह बात सुन कर बड़ी रंजीदगी से उसने मेरी तरफ देखा, एक सर्द आँह ली, मानो मुझ पर रहम कर रहा हो और बोला—'मेरे अनजान भाई, क्या उस तन्दुरुस्त आदमी का जीवन कभी सुखी हो सकता है, जिसकी बगल में एक बीमार पड़ा कराह रहा हो! यही हालत मेरी है। जब मैं देखता हूँ कि मेरे आस-पास हाय-हाय मची हुई है, तो मेरे हलक का निवाला मेरे लिए जहर बन जाता है।'

—शेख सादी

क्षुरस्य धारा

मैं लोक-सेवक हूँ। मैंने जिस निष्ठा-पत्र पर दस्तखत किये हैं, उसमें से एक निष्ठा यह बताती है कि मैं पूरा समय भूदान का काम करता हूँ, दूसरी यह बताती है कि मैं सत्य पर चलने की कोशिश करता हूँ, तीसरी यह बताती है कि मैं निष्काम सेवक हूँ।

जी हाँ, मैं भूदान-कार्यकर्ता हूँ। ट्रेन में या हवाई जहाज में किसी अपरिचित से परिचय देता हूँ तो जरूर अपने आप को भूदान-कार्यकर्ता कहता हूँ। उस नाम की आज समाज में एक प्रतिष्ठा है। लेकिन अपनी डायरी देखता हूँ तो पाता हूँ कि मैंने १९५९ में भूमि माँगी थी, उसके बाद नहीं। मई '६० में मैंने आखिरी पदयात्रा की।

मैं सत्य-निष्ठ हूँ, इसलिए कहता हूँ कि अब भूदान चल नहीं सकता। कहना शायद यह चाहता हूँ कि भूदान के लिए चल नहीं सकता।

मैं बहुत बढ़िया व्याख्यान देता हूँ। हमारे निष्ठा-पत्र को समझाता हूँ, तब एक-एक निष्ठा को इतनी खोल कर रख देता हूँ कि श्रोतागण अनेक प्रकार की प्रशंसा सुनाते हैं।

मेरी स्मरण शक्ति बड़ी तेज है। मुझे अपने व्याख्यान के बाद किस श्रोता ने क्या तारीफ की थी, इसकी पूरी याद है। भूल सिर्फ इतना ही जाता हूँ कि उस निष्ठा को समझाते समय मैंने यह कहा था कि निष्काम सेवा में पद की कामना न करना भी आ जाता है। और इसलिए एक के बाद एक पदग्रहण करता ही जाता हूँ। कभी बुजुर्गों के आग्रह के वश होकर, कभी यह समझ कर कि इसमें पद लेना क्या है! कभी यह समझ कर कि मैं यह पद नहीं लूँगा तो वह गलत हाथों में चला जायगा।

जी हाँ, मैं निष्ठावान लोकसेवक हूँ।

—नारायण देसाई

कृषि-उद्योग समन्वित विकेन्द्रित समाज क्यों और क्या ?

• जवाहिरलाल जैन

मनुष्य और पशु-शक्ति का उपयोग मानव अपने उद्योगों में आदि-काल से करता आया है। जल और वायु की ताकत का उपयोग भी कहीं-कहीं मानव करता रहा है। दुनिया में औद्योगिक क्रान्ति का आरम्भ तब हुआ, जब मानव ने भाप की शक्ति ढूँढ निकाली और उसका उपयोग एंजिन के रूप में अठारहवीं शताब्दी में करना शुरू किया। फिर तो एक तरफ मनुष्य भाप से तेल, तेल से बिजली और बिजली से अणु तक की शक्ति को पहचानता और काम में लेता गया और एक-दो घोड़े की ताकत वाले एंजिन से शुरू करके सैकड़ों-हजारों और शायद लाखों घोड़ों की ताकतवाले एंजिन और यन्त्र बनाता गया !

आदमी और पशु शक्ति के उपयोग की आवश्यकता कम होती गयी। कारखाने लगते गये, शहरों में मनुष्यों की संख्या बढ़ती गयी और जीवन के सभी क्षेत्रों में बड़े पैमाने में बड़े यंत्रों, बड़ी आमदनियों, बड़े संगठनों, बड़े निर्माणों और इनके साथ-साथ बड़े विनाश के साज सजते गये। इन्हीं में से एक तरफ बड़े धनिकों और बड़े सपन्न लोगों तथा दूसरी तरफ बड़े गरीबों और बड़े विपन्नों, दुखियों की दो अलग-अलग-सी दुनियाएँ बसती गयीं, विषमताएँ और असमानताएँ बढ़ती गयीं।

आज परिस्थिति यह है कि एक तरफ भयानक आणविक शस्त्र इस दुनिया से मानव जाति का समूल अंत कर देने को तैयार हैं, केवल स्विच दबाने भर की देर है। दूसरी तरफ न्यूयार्क, टोकियो, लन्दन, मास्को और बम्बई जैसे शहरों में एक-एक करोड़ से ऊपर या आस-पास की संख्या में लोगों का चींटियों की तरह ढेर हो रहा है। तीसरी तरफ दुनिया के भले-बुरे की सारी ताकत रूस और अमेरिका जैसे कुछ ही राष्ट्रों के इनेगिने व्यक्तियों के हाथ में इतनी केन्द्रित हो गयी है कि बाकी दुनिया के सौ से अधिक राष्ट्र और ढाई-तीन अरब लोग इनके सामने असहाय हैं, त्रस्त हैं, दीन हैं, भयभीत हैं! चौथी तरफ हरएक राष्ट्र में सारी राजनैतिक और आर्थिक शक्ति कुछ थोड़े से लोगों, छोटे से वर्गों में केन्द्रित हो गयी है और लगता है कि बाकी लोग इन्सान नहीं रहे हैं, भेड़-बकरी बन गये हैं।

केन्द्रीकरण को मिटाने का उपाय

इस भयानक, विनाशयुक्त और मारक केन्द्रीकरण का निर्माता कौन है? मानव स्वयं।

इसका विध्वंस और विघटन कौन कर सकता है? मानव, साधारण मानव, प्रबुद्ध मानव।

किस शस्त्र से यह संभव है?

विकेन्द्रीकरण के प्रेमपूर्ण, रचनात्मक और सजीव औजार से।

इसका उपयोग कहाँ होगा?

संयुक्त राष्ट्र-संघ से लेकर छोटे से-छोटे गाँव के परिवार तक, हर नगर, जीवन के हर क्षेत्र में, हर मनुष्य के विचार और कृति के क्षेत्र में।

हमें फिर नयी गिनती शुरू करनी है। हम अठारहवीं शताब्दी में चूक गये थे, हमें फिर वहीं से शुरू करना है। हम शहरीकरण, यन्त्रीकरण और औद्योगीकरण की धुन में बह गये। यह निश्चित है कि हम भाप, तेल, बिजली की ताकत को नहीं भूल सकते, विज्ञान और टेक्नोलाजी को सीख चुके हैं, उसे नहीं भूल सकते, जो उपकरण और साधन बना लिये हैं, वे हमारे ज्ञान और स्मृति में से गायब नहीं हो सकते, जो रहन-सहन की सुविधाएँ हमने निकाली हैं, उन्हें भी नहीं भुला सकते। हमें इन सबका उपयोग करना है, इन्हें विस्तृत और व्यापक करना है, लेकिन हमने शहरीकरण, यन्त्रीकरण और औद्योगीकरण—इन तीन शस्त्रों से युक्त जिस केन्द्रीकरण के दानव की प्रतिष्ठा कर रखी है, उसे अपने स्थान से हटा देना है, गिरा देना है, खतम कर देना है और उसकी जगह मानव को प्रतिष्ठित करना है।

नई सभ्यता का आधार

मानव को प्रतिष्ठित करने के उसके औजार होंगे ग्रामीकरण, ग्रामीण औद्योगीकरण और मानवी श्रमनिष्ठा। इसी के चारों तरफ हमें नई सभ्यता, नई संस्कृति और नई सामग्री का निर्माण करना है। इस नये समाज का आधार होगा गांधीजी के शब्दों में सत्य और अहिंसा, विनोबा की वाणी में सत्य, प्रेम तथा करुणा और आज की दुनिया की जबान में शांतिपूर्ण, सहयोगयुक्त, लोकतान्त्रिक, साम्ययोगी तथा विकेन्द्रित जीवन-व्यवस्था—'पीसफुल, कोआपरेटिव डेमोक्रेटिक, कम्युनिटेरियन एण्ड डीसेंट्रलाइज्ड वे आफ लाइफ'। इस बारे में आज दुनिया भर के चोटी के दार्शनिक, विचारक और विज्ञानवेत्ता प्रायः एकमत हैं।

इस व्यवस्था की भौगोलिक इकाई होगी—गाँव, हजार-दो-हजार से लेकर चार पाँच हजार की छोटी बस्ती, जिसमें लोगों का आपस का परिचय और स्नेह प्रत्यक्ष रूप से संभव हो। सामाजिक इकाई होगी परिवार, खून का भी विचार और स्नेह का भी। आर्थिक ढाँचा होगा खेती तथा उद्योगों की मिली जुली, वहाँ की मानव शक्ति और प्राकृतिक साधनों के अनुकूल, संतुलित और योजनाबद्ध। इसका पैमाना, मापदण्ड होगा मानवता, मानव मानव के बीच स्वाधीनता, समानता और बन्धुता की अनुभूति।

इसके ऊपर का खण्ड होगा जिला और राज्य। राज्य आज की परिस्थितियों में अनिवार्य इकाई है, लेकिन इन सबसे बड़ा और सबसे महत्त्वपूर्ण ऊपर की इकाई होगा विश्व। केवल तथाकथित सर्वप्रभुत्व-सम्पन्न, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ राज्यों का समूह नहीं, जो एक-दूसरे को डराना चाहते हैं, पर वास्तव में स्वयं के भय से डरते और काँपते हैं। जो दूसरों को मूर्ख बनाना चाहते हैं, पर स्वयं मूर्ख बनते हैं, जिनमें अपने केवल गुण दिखाई देते हैं और दूसरों के केवल दोष। ऐसी सरकारों से बना हुआ कोई राष्ट्रसंघ सफल नहीं हो सकता। विश्वसंघ राज्यों का नहीं, जनता का प्रतिनिधि होगा, उनके प्रतिनिधि दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि होंगे। वह जनता की, जनता के सबसे कमजोर अंग की सेवा करनेवाला होगा, उनकी दृष्टि से उनका बन कर सोचने वाला होगा। ऐसे संयुक्त राष्ट्र संघ या विश्व जनता संघ का विकास भी धीरे-धीरे होगा। इस अंतिम इकाई की दृष्टि से ग्राम-संघ सोचेगा, अपनी नीति निश्चित करेगा, अपनी योजना बनायेगा और उसे पूरी करेगा।

इकाई का स्वरूप

इस प्रकार गाँव हमारे वास्तविक व्यवहार की इकाई होगा, भरा पूरा, चेतनायुक्त और प्रगतिशील, और उसका निर्णायक आदर्श होगा विश्व, समन्वय युक्त, शांति तथा समृद्धि-सम्पन्न। गाँव व्यवहार का क्षेत्र और विश्व चिंतन, विचार और आदर्शों का मापदण्ड।

इस प्रकार की योजना में गाँव केवल खेतिहरों का समूह नहीं होगा, केवल अशिक्षितों, गरीबों और अभावग्रस्तों का केन्द्र नहीं होगा, केवल असहाय पशु और मूक दर्शकों का समुदाय नहीं होगा, जो शहरी राजनैतिक, औद्योगिक, आर्थिक और तकनीकी सत्ता के सामने हाथ बाँधे, भयाक्रांत तथा आश्चर्यचकित गुलाम की तरह खड़ा रहेगा।

इकाई-इकाई में खेती होगी—हाथ से, पशु से, यंत्र से, जैसा उस इकाई की मानवीय और औद्योगिक परिस्थितियों के संतुलन में आवश्यक होगा—उस क्षेत्र की योजना के अनुसार।

इकाई इकाई में उद्योग चलेंगे—छोटे, मध्यम और बड़े। हाथ से, पशु से, यंत्र से, जैसी उस इकाई की मानवीय, भौतिक और आर्थिक परिस्थितियों और शक्तियों के संतुलन में आवश्यक होगा—उस क्षेत्र की योजना के अनुसार।

इकाई इकाई में अपनी शिक्षण और स्वास्थ्य-व्यवस्था होगी, अपनी प्रारंभिक आवश्यकताओं के निर्णय और पूर्ति की योजना होगी, न्याय और सुरक्षा का इंतजाम होगा।

इकाई इकाई अपना योगदान देगी—अपने से आगे की सारी इकाइयों के लिए, खण्ड, जिले प्रांत, राज्य और विश्व के संगठनों के लिए। सारे कर स्वयं प्राप्त करेगी और आगे की इकाइयों को भिजवायेगी। प्रत्येक नागरिक को यह पता होगा कि वह गाँव में रह कर, गाँव में मेहनत करके दे रहा है—गाँव को, खण्ड को, जिले को, राज्य को और विश्व को और उसे सहयोग, सहायता और मार्ग-दर्शन मिल रहा है—इन सबसे।

परिणाम

तब गाँव का स्वरूप बदल जायगा, वह गांधीजी के शब्दों में केवल मैले और घूरे का ढेर नहीं रह सकेगा।

तब खण्ड और जिले का स्वरूप बदल जायगा, राज्य और राष्ट्र का रूप बदला जायगा। ये गाँव को 'लकड़ी चीरने वाला और पानी भरने वाला', इस रूप में नहीं रख सकेंगे। सारी संपत्ति को शहरों में और कुछ ऊपर के वर्गों के भोग, विलास और उपयोग के लिए नहीं खींच सकेंगे। केवल शहरों की चमचमाहट खतम हो जायगी। सम्पत्ति का स्रोत पानी की तरह ऊपर से नीचे नहीं बहेगा, बल्कि भाप की तरह नीचे से ऊपर उठेगा। ऊपर की इकाइयाँ वास्तविक और सही अर्थ में नीचे की इकाई की ओर देखेंगी।

तभी बड़ी बड़ी सेनाओं का और पुलिस का उपयोग खतम हो जायेगा, क्योंकि ये तो सत्ता के केन्द्रीकरण की सहचरी हैं, धन और सम्पत्ति के केन्द्रीकरण की अनुगामिनी हैं। केन्द्रित सत्ता झगड़े पैदा करती है, फिर झगड़ों को सुलझाने का नाटक करती है, उस नाटक की सुरक्षा के लिए फौज-पुलिस खड़ा करती है और फौज तथा पुलिस अपनी जिन्दगी चालू रखने के लिए फिर उस भ्रम को चलाती जाती है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण से यह नाटक ही खतम हो जायगा, तब नाटक के पात्रों की आवश्यकता ही नहीं रहेगी और वे अपना स्थान स्वयं समाज में खोज लेंगे और भगवान् ईसा के शब्दों में 'तलवार के हल बन जायेंगे और धरती पर परमात्मा का राज्य आ जायगा।'

इतना बड़ा कार्य और आदर्श इस विकेन्द्रित कृषि उद्योग समन्वित समाज के आदर्श के पीछे छिपा है—मानव-मानव की शान्तिपूर्ण, सहकारयुक्त, लोकतान्त्रिक, स्वावलम्बी और विकास की समाज रचना का चित्र। इस आदर्श के लिए गाँव से लेकर विश्व तक के प्रबुद्ध मानव अपने-आपको पुनः समर्पित करें और इसकी सिद्धि के लिए प्रयत्नशील हों।

नाम-घोषा-सार

असम में बहुसंख्य हिन्दू भागवत-सम्प्रदाय के अनुयायी हैं। श्रीधर स्वामी के भाष्यों को अधिक प्रमाण वे मानते हैं। इस सम्प्रदाय के संस्थापक श्रीशंकरदेव थे। उन्होंने और उनके शिष्य माधवदेव ने जो ग्रंथ-रचना की है, उसकी अमिट छाप असम के जन-हृदय पर हुई है। श्रीशंकरदेव का 'कीर्तन-घोषा' और 'दशम्' नाम-घरों में—गाँव के सामुदायिक भजनालयों में—पढ़े जाते हैं। कीर्तनकार उस पर कीर्तन भी करते हैं। माधवदेव के दो ग्रंथ विशेष प्रचलित हैं—'नामघोषा' और 'रत्नावलि।' 'नामघोषा' का प्रभाव इतना व्यापक है कि जिस प्रकार बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में अशिक्षित जनसाधारण की वाणी में भी रामचरितमानस के दोहे-चौपाइयाँ बसी हुई दीख पड़ती हैं, उसी प्रकार असम के देहातों-देहातों में पुरुषों और स्त्रियों की भी वाणी पर 'नामघोषा' का घोष जहाँ-तहाँ आपको सुनने को मिलेगा। शंकरदेव, माधवदेव आदि ने बरगीत भी लिखे हैं। वे भी गाये जाते हैं, किन्तु 'नामघोषा' का घोष जो व्यापक रूप से निनादित हुआ दीखता है, उसकी बराबरी कोई ग्रंथ अभी पाँच सौ सालों में कर नहीं पाया है। इसी जन-हृदय-प्रतिष्ठित ग्रंथ का विनोबाजी ने भक्त-हृदय जनता के लिए सार निकाला है, जिसका नाम भी उन्होंने दिया है—'नाम-घोषा-सार'। उसके प्रारम्भ में ही लिखा है—"भाल कथा शुनि आछि, मने लैलो सार बाछि।"

मूल असमिया भाषा में प्रस्तुत इस ग्रंथ के लिए विनोबाजी ने जो छोटी-सी प्रस्तावना लिखी है, उसका अनुवाद हम पाठकों के लिए उद्धृत कर रहे हैं। —सं०

हमारी पदयात्रा का 'मुख्य उत्पादन' है—भूदान, ग्रामदान। किन्तु उसके साथ-साथ उसमें अनेक गौण उत्पादन होते ही रहते हैं। महापुरुष श्रीमाधवदेव की 'नाम-घोषा' की यह संक्षिप्त आवृत्ति वैसा ही एक गौण उत्पादन है। पदयात्रा की दृष्टि से ही यह गौण है, किन्तु लोक-व्यवहार की दृष्टि से गौण नहीं है। भारत के हृदय को एक करने का कार्य इससे अपेक्षित है।

दस वर्ष की पदयात्रा के पश्चात् १९६१ के ५ मार्च के दिन मैंने इस रमणीय असम प्रदेश में प्रवेश किया। तब से आज तक एक वर्ष पार हो गया। यहाँ के समाज के साथ एकरूप होने के लिए 'देहे-मने-प्राणे' मैंने यत्न किया। उसका एक अंश था असमिया के आध्यात्मिक साहित्य का अध्ययन।

दो महापुरुषों को इस भूमि ने जन्म दिया, जिनका नाम यहाँ घर-घर में लेते हैं। यद्यपि भारत के बहुतेरे लोग उनका नाम ही नहीं जानते। इसमें किसी का दोष नहीं। ईश्वर की योजना में प्रत्येक वस्तु के विषय में एक उपयुक्त समय हुआ करता है। उसी समय वह वस्तु होती है। वही समय अब आया है, ऐसा दीख रहा है। सब महापुरुषों ने लोक-हृदय-सम्पर्क के हेतु प्रादेशिक भाषाओं में लिखा है। किन्तु प्रादेशिक अभिमान उन्होंने कभी नहीं रखा। "भारत-भूमित जनम लभिया" (भारत भूमि में जन्म पाकर) (घोष-२७८) "भारत रत्नर द्वीप" (भारत रत्न का द्वीप है) (घोष ४०७) इत्यादि अनेक वचन उनकी विशाल भावना के निदर्शक हैं। इतना ही नहीं, जिस प्रकार आजकल हम 'जय जगत्' कहते हैं, उसी प्रकार वे भी बोले—"अपवर्ग योग्य नरतनु पाया पृथिवीत" (मोक्ष-प्राप्ति के साधन योग्य यह नरतन इस पृथ्वी में तूने पाया) (घोष १०३)। ऐसी भाषा जो विश्वात्मा हुए, वे ही कह सकते थे।

असमिया के आध्यात्मिक साहित्य का मैंने जो थोड़ा अध्ययन किया, उसमें 'नामघोषा' ने मुझे विशेष रूप से आकर्षित किया। यह पुस्तक मैंने बहुत बार पढ़ी। उसके बहुत से वचन मेरे कंठस्थ हुए। उसकी संगति में मैंने मित्र-संगति का आनन्द पाया। उसे मैंने अपने लिए संक्षिप्त कर लिया, जिसे सब साधकों के लाभ के लिए प्रकाशित करने का सोचा गया है। मूल सहस्र घोषों से यहाँ ५५६ घोष चुने गये हैं। संख्या अंकन और पद्धति से करने के कारण घोषों की संख्या इस पुस्तक में ५०० हो गयी है। २० अध्यायों और २०० खण्डों में इसे विभाजित किया गया है। मुख्य तीन विभाग किये गये हैं: (१) प्रार्थना, (२) उपदेश और (३) महिमा। प्रथम विभाग में भगवत् प्रार्थना, भक्त-हृदय की व्याकुलता, आत्म-निरीक्षण आदि का समावेश किया गया है। द्वितीय और तृतीय विभाग पूर्ण रूप से विभक्त नहीं होते। उपदेश में महिमा पायेंगे और महिमा में उपदेश का अंश पायेंगे। "प्राधान्येन निर्देशः" इसी न्यायानुसार ये विभाग हैं। तर्कशास्त्र में जिस प्रकार विश्लिष्ट चिन्तन किया जाता है, उसी प्रकार भक्ति में नहीं हुआ करता। भक्ति में संश्लिष्ट एवं समन्वित चिन्तन किया जाता है। इसी कारण ये विभाग अन्योन्य-मिश्र इन्द्रधनु (रामधेनु) के रंग के समान हैं।

विभाग, अध्याय, खण्ड आदि रचना में घोषों का आज का क्रम स्वभावतः ही बन गया है। बोतल में भरी पीने की दवा, पीने के पूर्व प्रथम हिला कर फिर पीना पड़ता है, ऐसा ही औषधोपचार का नियम है।

माधवदेव ने बरगीत भी लिखे हैं। हर बरगीत के अन्त में उनका नाम अंकित है। ऐसा ही इस तरह के भजनों में हमेशा होता है। 'नाम घोषा' में उनका नाम चार बार आया है। ग्रंथ-समाप्ति में एक बार तो अपेक्षित ही है, किन्तु और तीन बार क्यों आया है भला? 'नामघोषा' को मैंने तीन विभागों में विभाजित किया है, उसे आशीर्वाद देने के अन्दाज से (हिसाब से) यह पूर्व व्यवस्था उन्होंने कर रखी है, ऐसा मैंने मान लिया है।

अध्याय और खण्ड के नाम जितने असमिया में हैं, वे तो स्पष्ट हो हैं। कुछ संस्कृत में दिये हैं, जो प्राचीन ग्रंथों से लिये हैं। कुछ सांकेतिक हैं, जिसका अर्थ समझने के लिए चिन्तन की आवश्यकता है। उदाहरणार्थ—"रत्न-त्रय" (अध्याय २४)। बौद्ध-जैन आदि सभी अपनी-अपनी पद्धति से रत्नत्रय की कल्पना रखते हैं। नामघोषा में "रत्न-त्रय" एक वैष्णव-संकेत है। (१) सर्वत्र गुण दर्शन (खण्ड-१५९), (२) पुरुषार्थ प्रेरणा (खण्ड-१६०) और (३) विधिमुक्ति (खण्ड १६१) यही भक्ति-मार्गीय रत्न-त्रय है। दूसरा उदाहरण "विघ्नत्रय" (खण्ड १४९)। अन्तर्नाद श्रवण (घोष-३८०) में तीन विघ्न हैं—विविध पुण्यासक्ति (घोष-३८१), विषय-वासना (घोष-३८२), व्यर्थ-विचार (घोषा-३८३)। इसी प्रकार जितने सांकेतिक नाम होंगे; वहाँ पाठकगण को चिन्तन से ही स्पष्टीकरण कर लेना होगा।

इसमें लिये हुए पाठ (टेक्स्ट) प्रायः श्रीनेओग की आवृत्ति से लिये हैं। अन्य प्रकाशनों से भी कुछ लिये हैं। एक जगह मैंने अपनी तरफ से भी मूल संस्कृत पद्यानुसार पाठ-संशोधन किया है (घोष-३४०)।

अध्यायों में "गीता-निर्णय" नाम का अठारहवाँ अध्याय पाठकों का ध्यान आकर्षित करेगा। यहाँ के अनेक घोष 'नाम-घोषा' में एक स्थान में हैं और कुछ अन्य स्थानों से एकत्रित किये गये हैं। माधवदेव की गीता का निष्कर्ष श्रीधर-भाष्यानुसार है (घोष-३२०)। "गीताई एकमात्र शास्त्र" (गीता ही एकमात्र शास्त्र है), इस प्रकार अपनी निष्ठा ग्रंथकार ने व्यक्त की है (घोष-३०५)।

'नामघोषा' के जो घोष यहाँ लिये हैं, उसके कम से कम आधे घोष अन्यान्य संस्कृत ग्रन्थों से लिये हुए हैं। बाकी उनके हृदय के सहज उद्गार हैं। दोनों समीचीन और हृद्य! असमिया साहित्य में सम्भवतः 'नामघोषा' अद्वितीय ही है। भारतीय भाषाओं में भी इसका एक महत्त्वपूर्ण स्थान रहेगा।

भगवान के स्मरण को मुख्य केन्द्र कर उसके आसपास अनेक जीवन मूल्यों को माधवदेव ने इशारे से ग्रथित किया है। उसका विवरण यहाँ देना मैं आवश्यक नहीं समझता। मेरे बहुत-से भाषणों में इसके अनेक घोषों का सहज भाव से ही विवरण हुआ है। इतने से ही मैं आज सतोषी हूँ।

श्रीकृष्णार्पणमस्तु

भूदान पदयात्रा,
सुवर्णश्री अंचल
(असम प्रदेश)

—विनोबा का
जय जगत्

मुक्ति में निस्पृह

मुक्तित निस्पृह जिटो सेहि भकतक नमो रसमय मागोहो भकति
समस्त-मस्तक-मणि निज भकतर वश्य मजो हेन देव यदुपति।

जार राम-कृष्ण-नाम-नावे भव-सिन्धु तरि पावे परम्पद पापी जत
सदानन्द सनातन हेनय कृष्णक सदा उपासा करोहों हृदयेत।

—जो मोक्ष की स्पृहा नहीं रखता, ऐसे भक्त को मैं प्रणाम करता हूँ और रस से परिपूर्ण भक्ति की याचना करता हूँ। भाइयो! सर्व-शिरोमणि एवं अपने भक्तों के वश में रहने वाले ऐसे यादव-कुलश्रेष्ठ देवाधिदेव की तुम भक्ति करो।

—जिसके रामकृष्ण-नाम रूपी नाव से भव-सिन्धु तर कर जितने भी पापी हैं, परम-पद प्राप्त करते हैं, ऐसे नित्यानन्द, नित्यस्थिति (सनातन) कृष्ण की मैं हमेशा हृदय उपासना करता हूँ।

गुण-ग्रहण

अधमे केवल दोष लवय, मध्यमे गुण—दोष लवे करिया विचार
उत्तम केवले गुण लवय, उत्तमोत्तमे अल्प गुण करय विस्तार।

—अधम मनुष्य दूसरों के केवल दोष ही ग्रहण करता है, मध्यम मनुष्य सोच-सोच कर गुण-दोष ग्रहण करता है। उत्तम मनुष्य वह है, जो गुण ग्रहण करता है और उत्तमोत्तम मनुष्य वह है, जो दूसरों के अल्प गुणों का विस्तार कर उन्हें ग्रहण करता है।

लक्ष्मीनिरपेक्ष सेवानन्द

लक्ष्मीपति भगवन्त जाहार प्रसन्न भैला ताहार दुर्लभ किछु नाई
नारायण-पर भैले तथापि किंचितो आन न वांछय सेवा-सुख पाई।

—जिस पर लक्ष्मी के स्वामी भगवान प्रसन्न हुए, उसको किसी चीज की प्राप्ति कठिन नहीं है। तथापि नारायण-परायण होने के कारण सेवा का आनन्द प्राप्त कर वह अन्य किसी भी चीज की वांछा नहीं करता।

'नाम-घोषा-सार': संपादक—विनोबा, प्रकाशक: मैत्री आश्रम प्रकाशन, सर्वोदय प्रकाशन समिति, गोहाटी, असम। पृष्ठ-संख्या: १२३, मूल्य: सजिल्द २ रु., अजिल्द १ रु।

फैणाई प्रदेश में मतदाता-संघ का प्रयोग

हरिवल्लभ परीख

भूदान के विकास-क्रम के साथ हमें नये-नये कार्यक्रम मिले। चेंगोल के सर्वोदय-सम्मेलन में एक और भी नया कार्यक्रम मिला और सर्व सेवा संघ ने यह निर्णय किया कि लोक-शिक्षण का कार्य करने वाले हमारे लोक-सेवक चुनाव के समय उदासीन रहें, यह उचित नहीं। लोकशाही में चुनाव लोक-शिक्षण का महापर्व होना चाहिए।

पिछले चौदह वर्षों से गुजरात के बड़ोदा जिले के अन्तर्गत फैणाई प्रदेश में लोक-शिक्षण का कार्य चल रहा है। इसलिए हमने सोचा कि इसी प्रदेश में चेंगोल सर्वोदय-सम्मेलन के निर्णयानुसार हमें मतदाता-संघ संगठित करने का प्रयत्न करना चाहिए। मतदाता-संघ संगठित करते समय हमारी दृष्टि इस प्रकार रही :

"हम सब मतदाता हैं। हमें अपने मत-विस्तार के लिए प्रतिनिधि तय करना है। आज जो प्रतिनिधि हमारे सामने आते हैं, उन्हें न तो जनता तय करती है और न जनता का नियंत्रण ही रहता है। कहने को तो वे हमारे क्षेत्र के प्रतिनिधि होते हैं, किन्तु प्रतिनिधित्व वे अपने पक्ष का ही करते हैं। पक्ष ही उनका मार्गदर्शन व नियंत्रण करता है। वास्तव में आज का प्रजातंत्र 'पक्ष-तंत्र' बनता जा रहा है। इसलिए लोकतंत्र के लिए यह आवश्यक है कि हर गाँव अपने प्रतिनिधि तय करें या दो-दो, चार-चार गाँवों के मतदान-क्षेत्र के लोग एक-दो प्रतिनिधि तय करें। यह प्रतिनिधि मतदाताओं का ही जिम्मेवार रहे।"

हमने अपने कार्य के लिए फैणाई प्रदेश की दो तहसीलें पसंद कीं : छोटा उदेपुर और नसवाडी। इन दोनों तहसीलों में अधिक संख्या आदिवासियों की है। छोटा उदेपुर के आदिवासी अपने नाम के आगे 'कोली' लिखते हैं। यह शब्द सरकार की वन्य जातियों में नहीं है। इस सरकारी भूल का लाभ उठा कर स्थानीय कांग्रेस के कार्यकर्ताओं ने सरकार से लिखा-पढ़ी करके १९६२ के लिए यह 'सीट' खुली करवा ली।

छोटा उदेपुर तहसील की स्थिति

छोटा उदेपुर का चुनाव-क्षेत्र २६५ गाँवों का है। इसमें ५७ हजार मतदाता हैं। एक तालुका टाउन और पाँच कसबे हैं। ११ हजार मतदाता तहसील के मुख्य स्थान में एवं ४६ हजार कसबों में रहते हैं। कसबे और तहसील टाउन को छोड़ कर हमने १८५ देहातों में मतदाता संघ बनाये। मतदाता-संघ बनाते समय अधिकांश देहातों में ५५ से ६५ प्रतिशत मतदाता उपस्थित होते थे। कहीं-कहीं व्यक्तिगत संपर्क के कारण अधिक भी हो जाते थे। उपस्थित लोग सर्वानुमति से ही संघ बनाते थे। जगह-जगह चर्चा अच्छी होती थी। चर्चाओं में लगभग १७ हजार मतदाताओं ने हिस्सा लिया।

छोटा उदेपुर तहसील का कुल मतदान ५०.४ फीसदी हुआ। छोटा उदेपुर खास का मतदान ७७ फीसदी हुआ और अन्य चार कसबों में भी ६५ से ७३ फीसदी तक मतदान हुआ। जिन गाँवों में मतदातासंघ बने थे, वहाँ का भी मतदान ४० से ७५ फीसदी तक रहा। किन्तु जिन गाँवों में मतदाता-संघ न बने, वहाँ २० से ३५ फीसदी तक ही मतदान हुआ। तहसील का कुल मतदान २९,२४० हुआ। इसमें मतदाता-संघ वाले गाँवों का मतदान ८,३०० रहा। कुल मतदान में से ४,२९१ मत बेकार गये। अतः मतदाता-संघ वाले भी १,३८० मत बेकार गये। मतदाता-संघ वाले मथकवाले गाँवों के कुल ६,९२० मत सच्चे रहे। इसमें से मतदाता संघ के प्रतिनिधि को ४,००१ मत मिले और २,९१९ अन्य दो पक्षों को मिले। मतदाता-संघ के प्रतिनिधि को अन्य गाँवों और कसबों से कुल मिला कर ९०१ मत अधिक मिले। अतः मतदाता संघ के प्रतिनिधि को ४,९०२ मत मिले। कांग्रेस के प्रतिनिधि को ८,२२३ और स्वतंत्र पक्ष के प्रतिनिधि को १२,२७० मत मिले। यहाँ स्वतंत्र पक्ष वालों की जीत हुई।

नसवाड़ी तहसील की स्थिति

यह मतदाता-क्षेत्र २३४ गाँव का बना है। कुल मतदाता ५२,८५५ हैं। यहाँ तालुका टाउन और १६ कसबों में कुल १६,८८६ मतदाता रहते हैं। ३५,४६४ मतदाता देहातों में रहते हैं। हमने १५५ गाँवों में मतदाता संघ बनाये। मतदाता-संघवाले गाँवों में १६,२५० मतदाता रहते हैं। किन्तु उसमें सक्रिय हिस्सा ११,८७५ मतदाताओं ने लिया। नसवाडी तहसील का कुल मतदान ५५ फीसदी हुआ। २५,०१५ मतदाताओं ने मतदान किया। खास नसवाडी का और कसबों का ६५ से ७५ फीसदी तक मतदान रहा और जिन गाँवों में मतदाता-संघ बने थे, वहाँ ३५ से ६५ फीसदी तक हुआ। किन्तु जहाँ मतदाता संघ नहीं बने, उन गाँवों का मतदान २० से ३५ फीसदी के बीच रहा।

तहसील का कुल मतदान २४,०१५ हुआ। ३,६१६ मत बेकार गये। अतः मतदाता संघवाले गाँवों के भी १,१०८ मत बेकार गये। मतदाता-संघ के प्रतिनिधि को १,८३५ मत मिले। अन्य मत दूसरे दो पक्षों को मिले। मतदाता-संघ के प्रतिनिधि को अन्य गाँवों से २१५ मत मिले। कुल मतदाता-संघ के प्रतिनिधि को २,०४२ और कांग्रेस के प्रतिनिधि को १२,५४४ मत मिले। स्वतंत्र पक्ष को १०,८१३ मत मिले। अतः यहाँ कांग्रेस की जीत हुई।

हमारी अपनी कमजोरियाँ

(१) *सर्व सेवा संघ ने चेंगोल में ही निर्णय लिया था, किन्तु गुजरात सर्वोदय-मंडल इस विषय में साफ नहीं था। अतः* लम्बा अरसा चर्चाओं में ही बीता। *आखिर नवम्बर १९६१ में गुजरात सर्वोदय-मंडल ने* मुझे यह प्रयोग करने की सिर्फ अनुमति दी, पर इस कार्यक्रम को अपनाया नहीं।

(२) समयाभाव के कारण मतदाता-संघ ज्यादा गठित नहीं हो सके।

(३) हमने सोचा था कि कसबों में व शहरों में बाद में संघ बनायेंगे, पहले देहातों में बनायें, लेकिन बाद में वक्त नहीं रहा। इसका बहुत बुरा असर हुआ। हमें डर था कि कसबों में सर्वसंमत संघ नहीं बन सकेंगे। वहाँ वार्ड वार्ड में सर्वानुमति से या अधिक बहुमति से संगठित किये होते तो *अच्छा परिणाम आता। इसका* प्रत्यक्ष अनुभव भी आया। छोटा उदेपुर शहर के *कुछ वोर्ड में अंत के दिनों में* संघ बनाये गये। वहाँ काम करने वाले भी मिले और मत भी मिले।

(४) हमारे कार्यकर्ताओं के द्वारा १८५ गाँवों में संघ गठित हो पाये थे। बाकी १५५ संघ ग्रामजनों ने व ग्रामकार्यकर्ताओं ने बनाये थे। अनुभव यह रहा कि जहाँ मुख्य कार्यकर्ताओं द्वारा संघ बनाये गये थे, वहाँ मतदान अच्छा हुआ। वहाँ के लोग धन व धमकी के असर में कम आये।

(५) *चुनाव की प्रचलित पद्धति की* जानकारी का अभाव रहा।

राजनीतिक पक्षों की अयोग्य नीतियाँ

(१) सिद्धांत, आदर्श व लोकशाही व्यवस्था के बारे में बताने की अपेक्षा व्यक्तिगत आक्षेप व अपने सिद्धांत से उलटी बातों का प्रचार करना जायज माना गया।

(२) हमारे इस नये प्रयोग को किसी-न-किसी तरह तोड़ने का हर संभव प्रयत्न किया गया।

(३) *पक्षों वालों ने देहातों के गुंडा-*तत्त्वों को अपने-अपने खर्च से साइकिलें *आदि देकर दो दो माह से रोक लिया* था। ये लोगों को डराते थे।

(४) लोकशाही की खरीद बिक्री खुल कर हुई।

(५) आपसरों का भी उपयोग होता देखा गया। सरकारी पक्ष ने तो इनका बहुतायत में उपयोग किया।

(६) सरपंचों पर दबाव, गाँव के मुखिया पर दबाव, किसानों पर दबाव, *विद्यार्थियों पर दबाव और इसी तरह दूसरों पर भी दबाव डालने का यत्न हुआ।*

(७) साधुओं का सहयोग लिया *गया। उनके द्वारा ढोंग-धतींग फैलाया* गया। एक साधु गाँव-गाँव जाता था और सबको बताता था कि देवी आयी और आदेश दे गयी हैं कि 'तुम गाँव-गाँव जाकर लोगों को बताओ कि बैलवाली पेटी में ही मत डालो। *अब बैल वालों* ने मेरा शराब मांस का भोग देने का कबूल किया है। इसके कारण फसल अच्छी आयेगी। जो बैल वाली पेटी में मत नहीं डालेगा, उसे इस साल सर्प काटेगा आदि।'

(८) पक्षवालों ने एक-एक 'सीट' के लिए ७५ हजार रुपया तक खर्च किया। मान्य खर्च आठ हजार रु. का ही है। एक जीप गाड़ी का महीने का खर्च *लगभग ५ हजार रुपया आता है।* पक्षवालों ने बारह से ज्यादा जीप गाड़ियाँ *एक एक मतदाता क्षेत्र के लिए दो* माह तक घुमायी। हरएक की १२ जीपें *घूमती थीं। मतदाता संघ* को दोनों क्षेत्रों का कुल ४२०० रु० खर्च आया। उनके पास सिर्फ एक जीप! १०० से ऊपर देहात, लोग पैदल ही घूमे!

(९) कांग्रेस व स्वतंत्र पक्षवालों ने ग्रामदान को ही प्रचार का मुद्दा बना दिया। ग्रामदान का उलटा चित्र पेश करते रहे। इससे हमें इसकी सफाई का अच्छा मौका मिला। प्रत्यक्ष ग्रामदान हमारे पास नमूने थे ही। अतः इन दिनों ५ नये ग्रामदान मिले।

(१०) *एक 'पोलिंग बुथ' के पास* २५ बकरे काट कर खिलाये गये! पक्ष के कार्यकर्ता से मैंने दर्द भरे स्वर में पूछा कि इस हद तक नीचे उतरेंगे क्या? जवाब मिला–'कोई खाता है, कोई खिलाता है। हम क्या करें?' एक पक्ष ने दो हजार लोगों को दो बार लड्डू आदि खिलाये। मोटरें गाँव-गाँव से लोगों को ले गयीं, छोड़ गयीं। एक पक्षवाले से मैंने कहा, "लोकशाही देवी को भी बकरे का भोग चाहिये, इसका आज ही मुझे ज्ञान हुआ!" लड्डूवाले सज्जनों की खबर लेते हुए कहना पड़ा कि इन्हें लोगों में तो विश्वास है ही नहीं, किन्तु अपनी संतान पर भी भरोसा नहीं है, अतः जीते जी अपने हाथों क्रिया कर रहे हैं।

(११) आखिरी मिनिट तक भी लोगों को धमकाना डराना चलता ही रहा।

उपसंहार

(क) धाक, धमकी, धन, ढोंग और *लड़ाई अगर ये ही लोकशाही के 'पंचशील'* हों और इन्हीं पर लोकशाही को आसीन होकर चलना हो, तो तानाशाही में इससे अधिक क्या होगा, यह सवाल उठता है।

(ख) हमारा मुल्क, प्रांत, जिला व तहसील; सब जगह तीन क्षेत्रों में राजकीय दृष्टि से हमारा जीवन बँटा हुआ है— अविकसित, अर्ध-विकसित व विकसित!

(ग) प्रचलित लोकशाही के ढाँचे में रह कर ही हमें आगे कभी मतदाता-

संघों का प्रयोग करना हो, तो तीनों तरह के विभागों के लिए अलग अलग सोचना होगा। आग लगा कर, विचार देकर, मतदाता संघ बना कर अलग हो जाने की हमारी भूमिका पुनः विचारणीय है।

(घ) लोकशिक्षण का काम वर्षों से हुआ और हो रहा हो, वहाँ संघ बनाना अनुकूल होगा। किन्तु चुनाव के एक वर्ष पहले से ही इस दिशा में विशेष व सीधा प्रयत्न करना होगा।

(च) आज से ही ग्रामपंचायतों में इस प्रकार का प्रयत्न करके कार्यारंभ हो, तो इस विचार को पनपने का अच्छा मौका है।

(छ) भय यह है कि जिस गति से लोकशाही का दैत्य लोकशाही को खाता जा रहा है, उसे देखते हुए हमें लोकशाही की रक्षा के लिए कुछ नये रचनात्मक कदम उठाने होंगे। वे किस तरह और कैसे होंगे, यह सोचने की बात है। सिर्फ मतदाता संघ का विचार लोकनीति की स्थापना के लिए अधूरा पड़ेगा।

प्रयोग की फलश्रुति

(१) इससे जन-जागृति बढ़ी।

(२) लोकनीति की स्थापना के लिए राजनीति की किन-किन गलियों को पार करना होगा, उसका कुछ सबक मिला।

(३) रचना-कार्यों द्वारा आज जो लोकशिक्षण हम लोगों को दे रहे हैं, उसमें बुनियादी तालीम की तरह लोक-स्वराज्य का अनुबंध भी जोड़ना होगा।

(४) पक्षवालों ने यह कबूल किया कि अब इस विभाग में हमारा जोर नहीं चलेगा। लोग तहसील के लिए सर्वानुमति वाला प्रयोग आजमाने लगे हैं। पंचायत में गाँव के सच्चे प्रतिनिधि ही चुनेंगे।

(५) लोकनीति के व्यापक प्रचार ने कई नये युवकों को आकर्षित किया।

(६) अंत में एक बात मुझे स्पष्ट कहनी चाहिए कि हर प्रकार के प्रलोभनों, तथा हर प्रकार की परेशानियों का मुकाबला प्रजा कर सकती है—बशर्ते कि हम उन्हें योग्य दिशा में शिक्षा दे सकें। लोग ही अपने कष्टों को दूर करने के लिए कमर कसेंगे, जब हमारा लोक-शिक्षण इस सीमा तक पहुँचेगा, तब लोकशाही के साथ खिलवाड़ करने की कोई हिम्मत नहीं कर सकेगा। प्रचलित राजनीति का विरोध मात्र हमारी इच्छित लोकनीति का आधार कभी नहीं बन सकेगा। लोकनीति का आधार जाग्रत लोकमत ही होगा, जो सिर्फ लोकशिक्षण के द्वारा ही संभव हो सकता है। भूदान-ग्रामदान व सर्वोदय के सारे कार्य लोक शिक्षण की दृष्टि से चले तो कितना अच्छा हो! *

---

* 'मतदाता-संघ' के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिए अ० भा० सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी द्वारा प्रकाशित श्री हरिवल्लभ परीख की 'लोकशाही कैसे लायें?' पुस्तक पढ़नी चाहिए। —सं०

देर है, अन्धेर नहीं

• म० भगवानदीन

"कहिये चौधरी साहब, आपने धर्मसिंहजी की नयी भाषा सुनी?"

"कौनसी, यही न कि ईश्वर के यहाँ अन्धेर है, अन्धेर है।"

"नहीं, नहीं चौधरी साहब, यह भाषा तो पुरानी हो चुकी, अब तो एक और चली है।"

"वह कौनसी?"—अचरज के साथ चौधरी साहब बोले।

"चौधरी साहब, वह यह कि 'ईश्वर के यहाँ देर है, अन्धेर नहीं।'"

"अच्छा! यह भाषा तो सचमुच नयी है, कब से शुरू हुई?"

"चौधरीजी! ठीक ठीक तो नहीं कह सकता, पर लोगों का कहना है कि यह भाषा शुरू हुई है उस दिन से, जिस दिन से उनके दोनों जवान पोते उस डाके में मारे गये, जो गाँव के सेठ छज्जूराम के यहाँ पड़ा था। कैसे खूबसूरत जवान थे! बेचारे भलाई करते करते जान दे बैठे। सुनते हैं, उस दिन के बाद से बाबा धर्मसिंह के मुँह पर यह बात चढ़ गयी है और वह हर किसी से यह कह बैठते हैं कि 'देर है, अन्धेर नहीं।'"

"तो क्या आप समझते हैं कि उनकी इस बात का पोते की मौत से सम्बंध है?"

"ठीक ठीक तो कैसे कह सकता हूँ चौधरी साहब, क्यों न बाबाजी के पास ही चल कर उनसे पूछा जाय?"

"सोचता हूँ, कहीं बुरा न मान जायँ।" चौधरी साहब बोले।

"नहीं चौधरी साहब, बुरा क्यों मानने लगे।"

*   *   *

"बाबाजी, हम आपकी सेवा में एक बात पूछने आये हैं, यदि बुरा न मानें तो पूछें?"

"वाह चौधरी साहब वाह! पूछिये, जरूर पूछिये! बुरा मानने की क्या बात है।"

"बाबाजी, बात यह है कि बरसों से हम लोग आप से मिलने आ रहे हैं, और बरसों से ही आपके मुँह से हम यह सुनते रहे हैं, 'ईश्वर के यहाँ बिल्कुल न्याय नहीं'; पर अब कुछ दिनों से आपके मुँह से बरसों पुरानी बात निकलनी बन्द हो गयी है और अब एक दूसरा भाषा निकलने लगी है। वह यह कि 'ईश्वर के यहाँ न्याय तो है, पर देर से!' बस बाबाजी, इसी बात का भेद जानने के लिए हम आपके पास आये हैं।'

सवाल सुन कर बाबाजी मुसकराये, हँसे और बोले: "बात तो सुनाने की नहीं थी, पर जब आप लोग आ ही गये हैं, तो भेद खोले ही देता हूँ। शायद अब वह समय भी आ गया है, जब भेद खुल जाने पर किसी का कुछ बिगड़ेगा नहीं। अच्छा तो सुनिये।

यह तो आप जानते ही हैं कि मैं ८५ वर्ष का हो चुका हूँ और ८६ वाँ मेरा चल रहा है। मेरे बेटे कृष्ण का जब विवाह हुआ था, तब वह पन्द्रह बरस का था और मैं पैंतीस बरस का। कृष्ण चालीस का हो गया, पर उसके कोई औलाद नहीं हुई। उसकी और उसकी बहू की फिकर बड़ी। एक दिन एक कनफटा साधु आया। बेटे की बहू ने उसे भीख दी और अपना दुखड़ा आँखों में आँसू भर उसे सुनाया। बच्चा होने के लिए जड़ी-बूटी माँगी, जो उसने दी नहीं। फिर आशीर्वाद माँगा, वह भी उसने नहीं दिया। इस पर बहू जब गिड़गिड़ा कर रोने लगी, तब साधु को न जाने क्या सूझा कि वह बहू से पूछ बैठा: 'कितने बच्चे चाहिए?'

बहू बोली: 'दो।'

साधु कुछ देर चुप रहा, फिर बोला: 'अगर तू एक प्राणी की जान लेकर रात को काली देवी का जप करेगी, तो तेरे एक लड़का होगा, दो प्राणियों की जान लेकर जप करेगी, तो तेरे दो लड़के होंगे।'

साधु यह बात कह कर चला गया। दूसरे दिन रात को ग्यारह बजे मैं इसी तख्त पर बैठा था, क्या देखता हूँ कि बहू ने पड़ोसी के उस छप्पर में आग लगा दी है, जिसमें उसकी एक गाय और बछड़ा बंधा हुआ था। मेरी आँखों देखते देखते वह छप्पर राख का ढेर बन गया।

बहुत शोर मचा। बड़ी पूछताछ हुई, पर किसी को कुछ पता न चल पाया। मैं अपनी छाती पर यह बोझ रखे ऐसा चुप चाप था, मानों किसी ने मेरे होंठ सी दिये हों। मन उमड़ता, पर उसे दबा कर रह जाता। अपने ही बेटे की बहू का मामला, क्या करता? मन मार कर रह गया।

नौ दस महीने के बाद देखता क्या हूँ कि घर में पोते का जन्म हुआ है।

खुशियाँ मनायी गयीं। मैं जल कर रह गया। उसी दिन से मेरे मुँह से यह भाषा निकलने लगी—'ईश्वर के यहाँ न्याय नहीं है।'

तीसरे बरस जब मेरे दूसरे पोते का जन्म हुआ, तब भी मैं ऐंठ कर रह गया। जन्म की खुशी का गुड़ मैंने भी खाया था, पर क्या वह मीठा लगा था! बाहर से मैं हँसा भी था, पर अगर कोई ताड़ने वाला होता, तो ताड़ जाता कि मेरे मुँह से हँसी नहीं निकल रही थी, ज्वालामुखी से लावा निकल रहा था।

उस दिन के बाद से मेरी भाषा हो गयी, 'ईश्वर के यहाँ बिल्कुल न्याय नहीं है।'

तब से मैं पोतों को खाते-पीते, खेलते-कूदते देख रहा हूँ। बच्चों को प्यार करता, पर जब भी करता, मेरा मन मुझे रोकता और इस कारण मैं बच्चों को पूरा प्यार न दे पाया। जैसे-जैसे वे बड़े हुए, मेरे पास खेलने आते। जब वह मुझे छूते या मैं उन्हें छूता तब ऐसा मालूम होता, मानों अंगारों को छू रहा हूँ या अंगारा मुझ पर गिर पड़ा हो। मैं समझता और अच्छी तरह समझता था कि बच्चों के मेरे यहाँ पैदा होने में दोष उनका नहीं है, पर क्या मेरा मन यह बात मानकर देता था और मुझे तसल्ली हो पाती थी?

जब पोते बड़े हुए और उनको मेरे साथ खेलने की जरूरत नहीं रही, तब मुझे कुछ कुछ तसल्ली तो हुई। पर जब भी मैं उनको देखता, मेरा जी जल उठता। उनका मुसकराना, खेलना, कूदना मुझे कुछ न भाता। फिर भी मैं बाबा होने का नाटक इस खूबी से खेलता रहा कि कोई मेरी हालत नहीं जान पाया।

उनके विवाह की बात उठती, तब न जाने क्यों मेरी यही सलाह होती कि विवाह की अभी क्या जल्दी है। न जाने मेरी सलाह या बेटों की मर्जी से, दोनों में से किसी का भी विवाह नहीं हो सका। इससे मेरे मन को कुछ तसल्ली थी। मन में कभी यह न आया कि मेरे पोते जवानी में ही चल बसेंगे। मैं तो समझ रहा था कि ईश्वर के यहाँ न्याय नहीं है और मेरे पोते बड़ी उमर पायेंगे। इनकी होने वाली यह खयाली बढ़वारी मेरे मन में काँटे की तरह चुभती थी। न जाने क्यों मुझे अपने पोतों की बढ़वारी से डाह होने लगी थी। मैं नहीं चाहता था कि उनका विवाह हो और घर फले-फूले, पर जिस दिन छज्जूराम के यहाँ डाका पड़ा और मेरे दोनों पोते उसमें काम आ गये, उस दिन मैं समझ पाया कि ईश्वर अपने बंदों के गुनाह को कभी माफ नहीं करता। अगर कभी गुनाह करने के बाद सजा मिलने में देर होती है, तब यही समझना चाहिए कि ईश्वर कोई भारी सजा देने वाला है।

पोतों के मरने पर शोक मनाने का नाटक भी मैंने पूरी होशियारी से खेला। अपनी जानकारी में मैंने कोई भूल नहीं की। फिर भी न जाने चौधरी साहब, आप किस तरह मेरे पोतों की मौत के साथ इस बात का मेल मिला बैठे!"

बूढ़े की यह बात सुन कर हम सब सन्न रह गये और मुँह खुले के खुले रह गये। पता चला कि वह बूढ़ा फिर दूसरे नहीं दीख पाया। *

---

* अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी द्वारा शीघ्र प्रकाशित हो रही पुस्तक 'देर है, अन्धेर नहीं' का एक प्रसंग।

वाराणसी में नशाबन्दी

हाल के प्रकाशित समाचारों से प्रतीत होता है कि उत्तर प्रदेश सरकार ने काशी में नशाबन्दी-कानून लागू करने की अपनी नीति को बदल दिया है। कुछ प्रमुख पत्रों ने सरकार के इस निश्चय की तीव्र आलोचना भी की है।

प्रदेश के ११ जिलों में मद्य-निषेध-कानून लागू किया गया। संविधान के नीति-निर्देशक तत्त्वों द्वारा जनता को सारे देश में पूर्ण मद्य-निषेध कानून लागू कराने का आश्वासन दिया गया था। गांधीजी अपने तमाम जीवन भर मद्य-निषेध के लिए आवाज उठाते रहे और अब उनके परम अनुयायी विनोबाजी ने मद्य-निषेध को अपने कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग माना है।

अखिल भारतीय स्तर पर गत १-२ अक्टूबर को दिल्ली में गैरसरकारी नशाबन्दी सम्मेलन हुआ, जिसका उद्घाटन श्री मोरारजी देसाई ने किया। ३-४ अक्टूबर को सरकारी अखिल भारतीय नशाबन्दी समिति की बैठक हुई, जिसके अध्यक्ष श्री बी० एन० दातार, भूतपूर्व राज्यमंत्री (गृह) भारत सरकार हैं, जिसमें शीघ्रातिशीघ्र सारे देश में नशाबन्दी कैसे लागू हो, इस पर विचार हुआ और कार्यक्रम बना और उधर 'प्लानिंग कमीशन' ने तीसरी पंचवर्षीय योजना में सारे देश में पूर्ण नशाबन्दी का ध्येय रखा। नशाबन्दी से और प्रदेशों में होनेवाले राजस्व के घाटे का आधा भाग केन्द्रीय वित्त मंत्रालय ने केन्द्रीय सहायता के रूप में पूरा करने का वचन दिया है। मद्रास, दिल्ली, बम्बई में पूर्ण नशाबन्दी है। आसाम के कुछ जिलों में यह नियम लागू हो रहा है। सारे देश के विभिन्न प्रदेश इस कानून को शीघ्रातिशीघ्र लागू कराने के प्रयास में हैं। कहीं-कहीं आंशिक रूप से लागू भी हो गया है। उसके बाद भी उत्तर प्रदेश सरकार *वाराणसी में नशाबन्दी के लिए दिये गये* वचन से क्यों पीछे हट रही है, यह विचारणीय विषय है।

वाराणसी का ऐतिहासिक और धार्मिक महत्त्व है। यहाँ से सदियों ज्ञान की गंगा बही है। विभिन्न धर्मों का स्रोत रहा है और कौमी एकता की नजर से अनेक विभिन्न हजारों राजनैतिक, धार्मिक कारणों के बाद भी आज काशी हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई आदि सभी धर्मों के लोगों का है। सभी मानवता के नाते रहते हैं। आज भी इस नगर में हिन्दू विश्वविद्यालय, संस्कृत विश्वविद्यालय, काशी विद्यापीठ जैसी तीन-तीन शैक्षणिक संस्थाएँ हैं। राजघाट पर अ० भा० सर्व सेवा संघ का प्रधान केन्द्र तथा साधना केन्द्र है। आज इसे श्री शंकरराव देव एवं श्री दादा धर्माधिकारी और अन्य विद्वान साधकों ने अपनी साधना का केन्द्र मान रखा है। *ऐसी पवित्र नगरी में गंगा में स्नान कर प्रातःकाल* दशाश्वमेध घाट से सड़क पर आते ही नशे में झूमते हुए लोगों के दर्शन होते हैं तो हृदय पर क्या प्रभाव पड़ता है, यह हर व्यक्ति समझ सकता है।

काशी में पिछले दिनों शराबबन्दी का कार्य शुरू हुआ। कार्यकर्ता नशाबंदी अधिकारी से मिले। मगर उस समय लखनऊ में राजनैतिक कुश्ती हो रही थी। अधिकारी बाँट जोह रहे थे कि कौन मुख्यमंत्री होता है। इसलिए हार-जीत का फैसला होने तक इस मसले को स्थगित करना उचित समझा गया। विनोबाजी ने कहा कि हम राजनीति में इतना फँस गये हैं कि सरकारी अधिकारी को हार-जीत का फल देखने के कारण जनता की समस्याओं पर विचार करने का भी अवसर नहीं रहा! खैर, गुप्तजी मुख्य मंत्री हो गये। मिर्जापुर में ४ दिसम्बर '६० को विनोबा ने अन्य बातों के साथ काशी में नशाबंदी की बात भी उनके सामने रखी। बात आगे बढ़ी और विचार-विमर्श हुआ। सरकार की ओर से ऐसी आशा बँधायी गयी कि अप्रैल सन् '६२ से काशी में नशाबंदी कानून लागू होगा। पर हुआ क्या? स्वप्न-स्वप्न ही रहा, अभिलाषाएँ धूमिल हो गयीं!

सर्वोदयी रचनात्मक कार्यकर्ताओं को *सरकार की ओर मुँह नहीं ताकना* चाहिए। पर गांधीजी ने कहा है कि सरकार यदि नशा पीने वालों को आशा *ही नहीं, सुविधा भी देती रहेगी तो सामा*जिक कार्यकर्ता कुछ भी नहीं कर सकेंगे। दोनों ही ठीक हैं। रचनात्मक कार्यकर्ताओं को लोक-शिक्षण का काम करना ही चाहिए, पर साथ ही सरकार को भी अपना फर्ज नहीं भूलना चाहिए। एक बात और मजे की है। ११ जिलों में नशाबंदी-कानून लागू है, पर वहाँ नशा लोग पीते हैं, अलबत्ता चोरी से! तो चोरी से पीने वालों की संख्या तो कम है ही और जो चोरी से नशाखोरी होती है, उनके कारणों की जाँच कर उसके निवारण की भी सरकार को कोशिश करना चाहिए। इसमें रचनात्मक कार्यकर्ताओं, समाज-सेवियों एवं सर्वसाधारण का सहयोग लेना चाहिये। पर सरकार ऐसा नहीं करती है। एक तरफ प्रदेश में नशाबंदी न हो, इस पर सरकार दृढ़ है और दूसरी तरफ नशाबंदी विभाग हर जिले में कायम है। आखिर सरकार की नीति के विपरीत यह विभाग क्यों? एक समाचार-पत्र के अग्रलेख में ठीक ही कहा गया है कि यदि नशाबंदी-कानून असफल रहा है, तो जिन ११ जिलों में यह कानून लागू है, उसे भी हटा लेना चाहिये। कम-से-कम यह ईमानदारी का मार्ग होगा।

एक ही प्रदेश के एक जिले में नशाबंदी कानून, वैसे ही वातावरण और परिस्थितियों वाले दूसरे जिले में नशाबंदी नहीं, तो नशाबंदी विभाग की फिर आवश्यकता ही क्या है? इसमें जो पैसा व्यय होता है, वह राजस्व से ही आता है। उसे भी क्यों नहीं बचाना चाहिए!

नशाखोरी एक गलत काम है। इससे मानसिक, नैतिक, आर्थिक, सामाजिक और स्वास्थ्य सभी दृष्टियों से मनुष्य पतन की ओर जाता है। यदि सरकार समाज कल्याण की बात करती है तो इस पतनकारी साधनों से समाज को बचाना सरकार का अपना फर्ज होना चाहिए।

गांधी स्मारक निधि, लखनऊ

—अविनाशचन्द्र

फिजूलखर्ची का संक्रामक रोग!

आप किसी भी बाजार में जायँ, तो वहाँ चारों तरफ ऐसी बहुत-सी चीजें दिखायी देंगी जो आकर्षक हैं, देखने में रंग-बिरंगी और चमकीली हैं, नयी भी हैं, पर जिनका कोई खास उपयोग नहीं है! फिर भी खरीददार का मन उन्हें लेने के लिए ललचाता है! खास तौर से मध्यम श्रेणी के लोगों की अर्थ-व्यवस्था पर इसका घातक असर पड़ता है, क्योंकि वे संयम नहीं रख सकते।

प्लास्टिक के थैलों का ही उदाहरण लें। खादी और हैण्डलूम के थैले कुछ-कुछ प्रचलित हो चले थे कि अब प्लास्टिक के थैले उनका स्थान तेजी के साथ छीन रहे हैं। इसी चीज की बनी हुई पानी रखने की रंग-बिरंगी बोतलें भी बाजार में बिकती हैं, जो आजकल हर फैशनेबल आदमी अपने कन्धे पर लटकाये फिरता है। हिन्दुस्तान जैसे गर्म मुल्क में ठण्डा पानी न सिर्फ नियामत है, बल्कि आवश्यक है। लेकिन फैशन के मारे चार-छह आने की सुराही के बजाय लोग रुपये सवा रुपये की इन बोतलों को लटका कर चलना और गरम पानी पीना ज्यादा पसन्द करने लगे हैं! होली के दिनों में पहले धातु की पिचकारियाँ बिकती थीं, जो अच्छी होती थीं और कई साल तक काम देती थीं। लेकिन पिछले एक-दो वर्षों में ही उन पिचकारियों का स्थान भी प्लास्टिक की पिचकारीनुमा बोतलों ने ले लिया है, जो मिलती तो सस्ती हैं, पर एक ही दिन में खराब हो जाती हैं और फेंक दी जाती हैं। इस प्रकार गरीबों का और मध्यम वर्ग का लाखों-करोड़ों रुपया हर साल उद्योगपतियों की जेब में चला जाता है!

अधिकांश लोग यह सब देखादेखी करते हैं। जो नहीं करता है, वह समझता है कि मैं *पिछड़ गया*। दूसरे लोग भी ऐसा ही समझते हैं। जिनके पास पैसा है, वे तो आये दिन पुरानी चीजें फेंक कर नयी-नयी तरह की और नयी-नयी चीजें खरीदने में अपनी शान ही समझते हैं! मध्यम वर्ग का आदमी अपनी बेवकूफी से इन्हीं 'ऊँचे' लोगों का अनुसरण करने की तरफ झुकता है, क्योंकि समाज में उनकी प्रतिष्ठा है। लेकिन इन सब बातों के खिलाफ जो थोड़ा बहुत सोचते हैं, वे भी इसलिए नहीं बोलते कि लोग उन्हें कहीं बेवकूफ न समझ बैठें।

अतः यह नितांत आवश्यक है कि ऐसी बातों के बारे आम लोगों का विवेक जाग्रत किया जाय और फिजूलखर्ची के संक्रामक रोग से होने वाली बरबादी से बचाया जाय।

धनबाद (बिहार)

—दीनदयालप्रसाद तायल

बुनियादी विद्यापीठ की समस्या

बुनियादी विद्यापीठ के सम्बन्ध में 'भूदान-यज्ञ' के गत ३० मार्च के अंक में श्रीमती सुमन बंग का लेख पाठकों ने अवश्य ही पढ़ा होगा। वास्तव में महाविद्यालय के स्तर पर बुनियादी शिक्षा का व्यापक प्रयोग होना ही चाहिए। यह आज की ज्वलन्त समस्या है। इसके लिए प्रायः सभी बुनियादी शिक्षक चिन्तित हैं।

आज के विद्यार्थी और अभिभावक बुनियादी शिक्षा की ओर नहीं आना चाहते। इसके दो कारण हैं: एक तो यह कि *विद्यार्थियों की ज्ञान-पिपासा शान्त नहीं होती* और दूसरा यह कि बुनियादी विद्यार्थियों का भविष्य सुरक्षित जैसा नहीं रहता। ये बातें मैं अपने अनुभव से कह रहा हूँ। मैंने बुनियादी विद्यार्थियों को सैद्धान्तिक शिक्षण के लिए लालायित पाया है और उन्हें काम मिलने की चिन्ता से ग्रस्त देखा है।

अच्छे-अच्छे शिक्षक रख कर विद्यार्थियों को बौद्धिक तृप्ति दी जा सकती है और रचनात्मक संस्थाएँ अपने यहाँ काम देकर उन्हें भविष्य के बारे में निश्चिन्त कर सकती हैं। अगर रचनात्मक संस्थाएँ बुनियादी महाविद्यालय के स्नातकों को *अपने यहाँ काम देने का आश्वासन दें* तो यह तुच्छ सेवक अपने यहाँ ही इस प्रकार की संस्था चलाने की हिम्मत कर सकता है। रचनात्मक कार्यकर्ताओं और नेताओं का सहयोग और आशीर्वाद पाने की हम आशा रखते हैं।

तव प्रभाव बड़वानलहिं,
सोखि सकइ खल तूल।

ज्योतिर्ग्राम —विद्यानन्द त्रिपाठी

'लैंड-लेवी' कानून के बाद भी

'बीघा-कट्ठा' आन्दोलन क्यों ?

• श्रीकृष्ण

बिहार में अभी जब 'बीघे में कट्ठा' भूदान प्राप्त करने का आन्दोलन तेजी से चल रहा है, यह प्रश्न अक्सर पूछा जाता है कि निजी जोतों की अधिकतम सीमा-निर्धारण के लिए और एक एकड से अधिक के भूस्वामियों से भू-शुल्क (लैंड-लेवी) प्राप्त करने के लिए जब कानून बन चुका है, तब 'बीघे में कट्ठा' भूदान मांगने की क्या आवश्यकता है ?

भूदान-आन्दोलन का उद्देश्य येन केन प्रकारेण भू समस्या का समाधान, व्यक्तिगत जोतों की अधिकतम सीमा का निर्धारण या भू स्वामियों से भू शुल्क की प्राप्ति नहीं है। इसका उद्देश्य है, अहिंसात्मक पद्धति से भूमि समस्या, आर्थिक समस्या तथा अन्य समस्त मानवीय समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना और सम्पूर्ण मानवीय सबधों को सत्य, प्रेम और अहिंसा की बुनियाद पर खड़ा करना। इसके लिए भूदान-आन्दोलन तो एक निमित्त मात्र है।

इस मूल विचार पर ध्यान केन्द्रित करते ही उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर सहज उपलब्ध हो जाता है। 'लैंड सीलिंग' और 'लैंड लेवी' कानून से कुछ भूमिहीनों के लिए थोडी-सी भूमि भले ही मिल जाय, पर इससे भूदान आन्दोलन का उद्देश्य पूरा नहीं होता और न भू समस्या का समाधान ही होता है। कानून के मूल में हिंसक शक्ति—पुलिस, फौज, जेल आदि—काम करती हैं। हिंसक शक्ति और कानून के उपयोग से समाज में अहिंसक शक्ति—सत्य, प्रेम, करुणा आदि—का विकास नहीं होता। सैंकड़ों वर्षों से कानून और हिंसक शक्ति का राज होने पर भी मानवीय संबंध मधुर नहीं हो पाये। इसके मूल में पारस्परिक भय, अविश्वास, क्षोभ, शोषण आदि आसुरी वृत्तियाँ न केवल पूर्ववत् बनी रहती हैं, बल्कि बढ़ जाती हैं, जिनके कारण आयतिक युद्धों का विस्फोट भी समय समय पर होता रहता है।

भू-समस्या का सच्चा समाधान

भू-समस्या का सच्चा समाधान जमीन पर उत्पादक श्रम करने वाले परिवारों के पास खेती करने के लिए आवश्यक साधनों के साथ पर्याप्त भूमि का होना और इसके साथ ही जमीन के माध्यम से अनुपार्जित आय करने वाले शोषक वर्ग का निराकरण करना है। वर्तमान 'लैंड-सीलिंग' और 'लैंड-लेवी' कानून से इसकी पूर्ति नहीं होती। इस कानून के बन जाने के बाद भी जमीन के माध्यम से अनुपार्जित आय करने वाले वर्ग के पास भूमिहीन, साधन-हीन श्रमिक वर्ग के शोषण के लिए बहुत जमीन रह जायगी और दूसरी तरफ भूमि-हीनों की भी बहुत बड़ी सख्या बनी रहेगी। अतः जब तक शोषक वर्ग का ही निराकरण नहीं होता और श्रमिक वर्ग की भूमिहीनता नहीं मिटती, तब तक अहिंसक तरीकों में निष्ठा रखने वालों के लिए भूदान मांगने की आवश्यकता बनी रहेगी।

विनोबाजी का कहना है कि शोषक वर्ग का निराकरण कानून के द्वारा नहीं किया जा सकेगा, क्योंकि कानून बनाने वाला सत्ताधारी वर्ग भी शोषक ही होता है। अतः वह वर्ग इस तरह का कानून बना ही नहीं सकेगा, जिससे उस वर्ग के अस्तित्व का लोप हो जाय। अतः इस शोषक वर्ग का निराकरण भूदान के द्वारा ही सभव है। भूदान के विचार-प्रचार से लोगों के विचारों में परिवर्तन होगा और इससे जीवन-परिवर्तन तथा जीवन-परिवर्तन से सामाजिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन से होगा। इस त्रिविध परिवर्तन से ही सामाजिक न्याय की स्थायी स्थापना सभव है।

'लैंड सीलिंग' और 'लैंड लेवी' कानून के द्वारा भूस्वामियों से जो जमीन ली जायगी, वह कानून के दबाव से ली जायगी। इसके प्रतिक्रिया स्वरूप भू-स्वामियों में क्षोभ उत्पन्न होगा और समाज में पारस्परिक दुर्भावना पैदा होगी। भू स्वामी भी कानून की आँच से बचने हुए इस बात की पूरी कोशिश करेंगे कि इस कानून का उद्देश्य पूरा न हो और वह असफल हो जाय। वे खराब-से-खराब जमीन देने की कोशिश भी करेंगे और यथासभव इससे असहयोग करेंगे।

इस कानून से जो जमीन भूस्वामियों से ली जायगी, उसका मुआवजा देना होगा और मुआवजे की वह रकम भूमि-हीनों से वसूल की जायगी। अधिकांश भूमिहीन खेतिहर-मजदूरों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है कि वे मुआवजे की रकम देकर जमीन प्राप्त कर सकें। फल-स्वरूप इस कानून के द्वारा जो जमीन सरकार को मिलेगी, वह ऐसे लोगों के पास जायगी, जो आर्थिक दृष्टि से कुछ सम्पन्न होंगे।

'लैंड लेवी' और विनोबाजी

विनोबाजी ने इन्हीं सब कारणों से 'लैंड लेवी' कानून का स्वागत नहीं किया। २१ दिसम्बर, १९६० को जब विनोबाजी दूसरी बार बिहार आये, तब बिहार के भूतपूर्व मुख्य मंत्री स्व० डा० श्रीकृष्ण सिंह ने इस बात की सूचना दुर्गावती पड़ाव पर दी कि वे भूस्वामियों से भूमि प्राप्त करने के लिए 'लैंड लेवी', भू शुल्क लगाने वाले हैं। विनोबाजी ने उसके उत्तर में तुरत कहा कि बिहार वालों को 'लैंड लेवी' नहीं, 'लैंड देवी' कबूल करना चाहिए।

इस कानून का स्वागत क्यों ?

जिन भूदान नेताओं ने 'सीलिंग' और 'लेवी' कानून का स्वागत किया है, उनका अभिप्राय यह नहीं है कि इस कानून से उस उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है, जिसके लिए भूदान-आन्दोलन द्वारा प्रयत्न किया जा रहा है। जमीन के माध्यम से अनुपार्जित आय और शोषण करने वाले भूस्वामियों को शोषण करने की छूट वर्तमान कानून द्वारा मान्य है। भूदान-विचार के प्रचार और कुछ अन्य तत्त्वों के प्रभाव से यदि समाज में न्याय बुद्धि विकसित होती है और वर्तमान कानून निर्माता किसी प्रच-लित कानून की त्रुटियों को, उसके क्रूर स्वरूप को, अन्याय और शोषण को, देख पाता है और उन त्रुटियों को दूर करने के लिए कोई दूसरा कानून बनाता है, जो पहले की अपेक्षा अधिक सामाजिक न्याय पर आधारित है, तो पूर्ण सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए प्रयत्नशील प्रत्येक व्यक्ति उस नये कानून का स्वागत करेगा। इस स्वागत का यह अर्थ कभी नहीं लगाना चाहिए कि पूर्ण सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए सघर्ष करने वाले व्यक्ति का उद्देश्य पूरा हो गया। इस स्वागत का केवल यही अर्थ है कि वह जिन उद्देश्यों के लिए सघर्षरत है, उसकी आवश्यकता समाज ने महसूस की और उसकी पूर्ति के लिए आंशिक रूप में समाज प्रयत्नशील हुआ है।

इस विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि 'लैंड सीलिंग' और 'लैंड लेवी' कानून के द्वारा समाज ने इस सत्य को कबूल कर लिया है कि भूमि के माध्यम से भूमिहीनों का शोषण अन्याय है। अतः जमीन उनके पास रहनी चाहिए, जो जमीन पर उत्पादक श्रम करते हैं। इस सत्य को स्वीकार करते हुए भी वर्तमान कानून निर्माता अभी अपने को इस स्थिति में नहीं पाते हैं कि वे इस अन्याय का पूर्ण निराकरण कर सकें। ऐसी अवस्था में आवश्यकता इस बात की है कि भूदान-आन्दोलन को तीव्रतर रूप दिया जाय, भूदान मांगने के माध्यम से उनके विचार को सघन रूप में प्रचार किया जाय और जन-मानस को इसके अनुकूल बनाया जाय, ताकि वह पूर्ण सामाजिक न्याय की स्थापना, शोषण के पूर्ण निराकरण के पक्ष में हो जाय। अतः 'लैंड सीलिंग' और 'लैंड लेवी' कानून के बावजूद 'बीघा में कट्ठा' भूदान मांगने की पूर्ण आवश्यकता है।

नया नहीं, तो पुराना भी नहीं

बिहार में विनोबाजी की उपस्थिति के के समय हजारों व्यक्तियों ने उत्साह में आकर दान-पत्र भर दिये थे, पर उनमें जमीन का पूरा विवरण नहीं दिया था। आज उत्साह का वह वातावरण नहीं रह गया है, इसलिए दातागण जमीन का ब्योरा देने में दिलाई दिखला रहे हैं। फलस्वरूप हजारों दानपत्र राजस्व पदाधिकारियों द्वारा ब्योरे के अभाव में अस्वीकृत किये जा रहे हैं। अनुभव बतलाता है कि 'बीघा कट्ठा' आन्दोलन से नयी जमीन के नये दानपत्र तो मिल ही रहे हैं, पुराने दानपत्रों की ब्योरा प्राप्ति में भी सुविधा हो रही है। अतः कहा जा सकता है कि भूदान की नयी माँग के कारण पुराना भूदान भी सुरक्षित हो रहा है। यदि नयी मांग न हो तो पुराना भूदान भी प्राप्त करने में कठिनाई होगी।

बिहार में 'बीघा-कट्ठा' अभियान की प्रगति

दस दिनों में बीस हजार कट्ठे भूमि प्राप्त

पचास प्रतिशत जमीन बाँटी गयी

गत १५ अप्रैल को बिहार में 'बीघा-कट्ठा' अभियान शुरू हुआ। प्रारम्भिक १५ दिनों में अभियान की प्रगति के जो समाचार विभिन्न जिलों से प्राप्त हुए हैं, उनसे इस अभियान की प्रगति का एक चित्र सामने खड़ा होता है। २५ अप्रैल तक प्राप्त समाचारों के अनुसार बिहार के तेरह जिलों में कुल मिला कर १९,६१९ कट्ठे जमीन प्राप्त हुई है, जिसमें से कुल ९,७४६ कट्ठे जमीन ४४० भूमिहीनों में बाँटी गयी है। इसके अलावा ८,२०० कट्ठे जमीन मिलने का आश्वासन प्राप्त हुआ है। वितरण के आँकड़े सब जिलों से उपलब्ध नहीं हुए हैं। लेकिन जो उपलब्ध हुए हैं, उनके मुताबिक प्राप्त जमीन में से ५० प्रतिशत जमीन बँट गयी है।

सूचना

'भूदान' अंग्रेजी का नया पता

'भूदान' अंग्रेजी साप्ताहिक का प्रकाशन अब कलकत्ता से हो रहा है। अतः उससे सम्बन्धित पत्र-व्यवहार आदि निम्न पते पर किया जाय :

पता :
श्री मैनेजर, 'भूदान', इंग्लिश वीकली
सी० ५२, कालेज स्ट्रीट मार्केट,
कलकत्ता—१२

मंत्री, अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी—१

श्री जयप्रकाशजी की अफ्रीका-यात्रा

गत ६ मई '६२ को श्री जयप्रकाश नारायण ने दारेस्सलाम के लिए बंबई से प्रस्थान किया। वहाँ वे उत्तरी रोडेशिया की सीमा पर टांगानिका देश के अन्दर एक वृहत रैली और सम्मेलन में भाग लेंगे। इस कार्यक्रम के लिए पूर्व अफ्रीका से रेवरण्ड माइकेल स्काट और बिल सदरलैंड ने श्री जयप्रकाश बाबू के नाम तार द्वारा जो निमंत्रण भेजा, वह इस प्रकार है—

"पैन-अफ्रीकन स्वतंत्रता-आन्दोलन का आग्रह है कि ६ मई से लेकर ९ मई तक आयोजित जन-रैली और कान्फ्रेंस में आप प्रमुख परदेशी वक्ता रहें। रैली के बाद पूर्व अफ्रीका में प्रवासी भारतीय समाज में महत्त्वपूर्ण कार्य करना है।"

श्री जयप्रकाश बाबू विश्व-शान्ति-सेना परिषद के तीन सभापतियों में से एक हैं और इस परिषद के एशिया महाद्विपीय कौन्सिल के अध्यक्ष हैं। पूर्व अफ्रीका में स्वतंत्रता-आन्दोलन को उनकी इस यात्रा से नयी गति मिलेगी। विश्व शांति-सेना-परिषद के कई प्रमुख कार्यकर्ता वहाँ पहले से ही मौजूद हैं।

श्री जयप्रकाशजी के साथ उनकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रभावती देवी भी पूर्व अफ्रीका जा रही हैं। ये दोनों लगभग १८ मई को भारत लौटेंगे।

प्राकृतिक चिकित्सा के विकास के लिए समिति नियुक्त

तीसरी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत प्राकृतिक चिकित्सा के विकास के लिए भारत-सरकार ने एक सलाहकार समिति की नियुक्ति की घोषणा की है। समिति के अध्यक्ष श्री श्रीमन्नारायण हैं। समिति के अन्य सदस्य नीचे दिये अनुसार हैं :–

डा० सौन्दरम् रामचन्द्रन्, भारत सरकार की शिक्षा-मंत्रालय की उपमंत्रिणी; डा० जे० एम० जसवाला, बम्बई, श्रीमती जयाबहन शाह, संसद सदस्य, राजकोट; श्री टी० आर० टण्डन, सचिव स्वास्थ्य मंत्रालय; श्री ओ० पी० रामपुरे, स्वास्थ्य मंत्रालय; श्री एम० के० कुट्टी, उपसचिव, स्वास्थ्य मंत्रालय। श्री कुट्टी सलाहकार-समिति के मंत्री रहेंगे।

समिति प्राकृतिक चिकित्सा के प्रयोग, अनुसंधान, प्रशिक्षण इत्यादि संबंधी नीति बनाने में तथा उसको कार्यान्वित करने में मदद करेगी। ●

● राष्ट्रपति के अभिभाषण पर लोकसभा में हुई बहस के दौरान में बोलते हुए आसाम की ओर से लोकसभा के सदस्य श्री विजयचन्द्र भगवती ने सरकार तथा सब राजनैतिक पार्टियों से अनुरोध किया कि वे विनोबाजी द्वारा संचालित ग्रामदान आन्दोलन को सफल बनाने के लिए भरसक प्रयत्न करें। उन्होंने कहा कि ग्रामदान-आन्दोलन समाज का मौजूदा ढाँचा बदलने के उद्देश्य से चलाया जा रहा है।

● पंजाब भूदान-यज्ञ एक्ट के अन्तर्गत निर्मित पंजाब भूदान-बोर्ड के अध्यक्ष-पद के लिए आचार्य विनोबा ने डा० गोपीचन्द भार्गव को मनोनीत किया है।

● अमेरिका के राष्ट्रपति, श्री कैनेडी द्वारा "पीस कोर"—शांति-दल-में इस समय ९०० सदस्य हैं। अभी हाल ही में इस काम के लिए जो रकम अमेरिकन कांग्रेस ने स्वीकार की है, उसके आधार पर बनने वाली योजना के अनुसार अगले साल के मध्य तक इस शांति-दल के सदस्यों की संख्या ९०७० हो जायेगी। इस काम के लिए कांग्रेस ने करीब ३२ करोड़ रुपया मंजूर किया है। इस दल में काम करने वाले अमेरिकन नौजवान और नव युवतियाँ कम विकसित देशों में भिन्न-भिन्न प्रकार के सेवा-कार्य करेंगी।

● लखनऊ की केन्द्रीय औषधि अनुसंधान शाला ने वनस्पति घी में रंग डालने की एक चीज की खोज कर ली है। अब इस चीज को विदेशी प्रयोगशालाओं के पास भेज दिया है।

महिला सेवा-मंडल, वर्धा का शिक्षा-क्रम

स्व० जमनालालजी बजाज द्वारा स्थापित महिला सेवा-मंडल संस्था, गत तीस वर्षों से शिक्षा तथा समाज सेवा द्वारा नारी-उत्थान का कार्य कर रही है। आज इसमें शिक्षा की व्यवस्था इस तरह है :—

(१) बुनियादी :—महिलाश्रम की ओर से बुनियादी की ५ वीं से ८ वीं तक की कक्षाएँ आश्रम में चलती हैं, जिनका माध्यम हिन्दी है और कक्षाएँ १ से ४ तक वर्धा शहर में चलती हैं, जिनका माध्यम हिन्दी और मराठी दोनों है। परीक्षाएँ सरकारी मान्यता प्राप्त हैं।

(२) उत्तर बुनियादी :—उत्तर बुनियादी की कक्षाएँ ९ वीं से ११ वीं तक महिलाश्रम में चलती हैं। शिक्षा का माध्यम हिंदी है। उत्तर बुनियादी उत्तीर्ण छात्रा को काशी विद्यापीठ और गुजरात विद्यापीठ में प्रवेश है, जहाँ ३ साल में कालेज का कोर्स पूरा करके एम० ए० या एम० ए० एस० में जा सकती हैं। 'रूरल इन्स्टीट्यूट' के सभी कोर्स में उत्तर बुनियादी से प्रवेश मान्य है।

(३) हायर सेकंडरी (११ वीं मैट्रिक) :—काफी अरसे से विचार चल रहा था कि उत्तर बुनियादी और 'हायर सेकंडरी' के पाठ्यक्रमों में विशेष फर्क नहीं, इसलिए उत्तर बुनियादी के साथ साथ 'हायर सेकंडरी' परीक्षा में बैठने की इजाजत हो, ताकि छात्राओं के लिए यूनिवर्सिटी का मार्ग खुला रहे। इस मांग का विचार होकर तय हुआ है कि २० जून, '६२ से शुरू होने वाले सत्र से उत्तर बुनियादी के साथ साथ 'हायर सेकंडरी' शिक्षा का भी प्रबंध किया जाय। मार्च, '६३ की परीक्षा में बैठने की अनुमति शिक्षा बोर्ड द्वारा प्राप्त हो गयी है।

पाठ्यक्रम की दृष्टि से 'हायर सेकंडरी' की अपेक्षा उत्तर बुनियादी में हिंदी, राजनीति, अर्थशास्त्र और कताई-बुनाई अधिक और इंगलिश कुछ कम है। अगले सत्र से ९ वीं के बदले ८ वीं से इंगलिश प्रारम्भ की जायगी, ताकि इंगलिश का स्तर दोनों का बराबर हो जाय।

(४) बुनियादी प्रशिक्षण :—महाराष्ट्र सरकार की सहायता से बुनियादी ८वीं कक्षा पास छात्राओं के लिए बुनियादी प्रशिक्षण कोर्स दो साल का जो आज चालू है, वह पूर्ववत् चालू रहेगा। महाराष्ट्र शिक्षा-विभाग की ओर से आने वाली छात्राओं को २५ रु० छात्रवृत्ति भी मिल सकती है। प्रशिक्षण का माध्यम मराठी है।

(५) छात्रालय :—महिलाश्रम में छात्रालय की व्यवस्था है। छात्रालय में प्रवेश १० वर्ष से बड़ी उम्र की और ४ थी उत्तीर्ण छात्रा को ही दिया जायेगा, छोटी उम्र वाली को नहीं।

प्रवेश के लिए आवेदन-पत्र ३१ मई तक पहुँच जाने चाहिए। १० नये पैसे के टिकट भेज कर अधिक जानकारी और प्रवेश फार्म मँगवा सकते हैं।

—रमा रुइया,
मंत्री और आचार्य

आवश्यकता

विश्व-शांति-सेना के एशियाई कार्यालय (राजघाट, वाराणसी–१) के लिए हिंदी-अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में ड्राफ्ट, नोट, पत्र-व्यवहार आदि कर सकने की अच्छी योग्यता रखने वाले सहायक की आवश्यकता है। कार्यालय सम्बन्धी सब प्रकार के कामों की जानकारी और आवश्यकतानुसार शहर आने-जाने, लोगों से सम्पर्क करने आदि की योग्यता भी हो। सर्वोदय-आन्दोलन से या इसी प्रकार के अन्य कामों से पूर्वसंपर्क तथा शान्ति और अहिंसा में श्रद्धा वांछनीय है। अंग्रेजी-हिंदी शार्ट हैंड का अभ्यास हो तो और अच्छा। इसी कार्यालय के लिए एक अंग्रेजी टाईपिंग जानने वाले व्यक्ति की भी आवश्यकता है। उसके लिए भी हिंदी का ज्ञान आवश्यक है।

इस अंक में

श्री धीरेन्द्र भाई सेवापुरी में

सेवापुरी के महामान्य श्री धीरेन्द्र मजूमदार डेढ़ मास के लिए २९ अप्रैल को सेवापुरी आश्रम आये। उनके साथ ५ बहनें तथा ८ बच्चे हैं। 'ग्राम-भारती' योजना के अनुसार आये हुए कार्यकर्ता भाई-बहनों को इस दृष्टि से प्रशिक्षित किया जा रहा है, जिससे वे गाँवों में बैठ कर योजना को आकार दे सकें। श्री धीरेन्द्र भाई के श्री श्री नारायण शर्मा आचार्य ने 'ग्राम भारती' योजना की रूपरेखा एवं वार्षिक कार्य-क्रम आदि पर चर्चा की। ●

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६)   पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९६८०। इस अंक की छपी प्रतियाँ ९५५०   एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १८ मई '६२ | वर्ष ८ : अंक ३३

विद्यार्थी गर्मी की छुट्टियों का उपयोग कैसे करें ?

महात्मा गांधी

[गांधीजी को विद्यार्थियों की सच्ची शक्ति का गहरा भान था। समय-समय पर वे उन्हें सलाह देते रहते थे। उन दिनों विद्यार्थियों ने जो कार्य किया, वह इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा रहेगा। आज भी विद्यार्थी बहुत कुछ करना चाहते हैं। हमें उनकी इस शुद्ध वृत्ति और शक्ति का अंदाज नहीं है, इसलिए उनका मार्गदर्शन नहीं कर पाते। हमने उन्हें "भारतीय नागरिक" बनाने या अनुशासन में लाने के लिए कई तरह के फन्दे रचना शुरू कर दिया है। जिस विद्यार्थी में गांधीजी करुणामय सेवक का और विश्व-नागरिक का चित्र देखते थे, उसे हम राष्ट्रियवाद का पुतला बनाना चाहते हैं ! उसके हाथ में बन्दूक देते हैं !! उसके मुँह में 'दुश्मन को मारो' का नारा देना चाहते हैं !!! 'दुश्मन को भी प्रेम करो' का मंत्र क्या केवल 'कल्चरल हिस्ट्री' की पुस्तकों में पढ़ने के लिए है ? गांधीजी के ये सुझाव, जो उन्होंने 'यंग इंडिया' २६-१२-२९; ५-११-३१ और 'हरिजन' १-४-३३ में दिये थे, 'कल्चरल हिस्ट्री की टेक्स्ट-बुक' में पढ़ने के लिए नहीं, अपितु विद्यार्थी जीवन को 'कल्चर्ड'—सुसंस्कृत—बनाने के लिए थे। —सं०]

विद्यार्थियों को अपनी गर्मी की पूरी छुट्टियाँ ग्रामसेवा में बितानी चाहिये। इसके लिए बने-बनाये रास्ते पर चलने के बजाय वे अपनी संस्थाओं के पास के गाँवों में घूमते हुए जायें, गाँववालों की हालत का अध्ययन करें और उन्हें अपने मित्र बनायें। यह आदत उन्हें गाँववालों के सम्पर्क में लायेगी। जब विद्यार्थी उनके बीच रहने के लिए जायेंगे, तब गाँववाले मौके-मौके पर स्थापित हुए पूर्वसम्पर्क के कारण मित्रों की तरह उनका स्वागत करेंगे, न कि अजनबी मान कर उन्हें शक की निगाह से देखेंगे। गर्मी की लम्बी छुट्टियों में विद्यार्थी गाँवों में जाकर रहें और प्रौढ़ों के वर्ग चलायें, गाँववालों को सफाई और स्वच्छता के नियम सिखायें और मामूली बीमारों की सेवा शुश्रूषा करें। वे गांव में चरखा भी दाखिल करें और ग्रामवासियों को अपने एक-एक मिनट का सदुपयोग करना सिखायें। ऐसा करने के लिए विद्यार्थियों और शिक्षकों को छुट्टियों के उपयोग की दृष्टि में संशोधन करना होगा।

अक्सर विचारहीन शिक्षक छुट्टियों में करने के लिए बहुत सा घरकाम विद्यार्थियों पर लाद देते हैं। मेरी राय में यह हर हालत में बुरी आदत है। छुट्टियों का समय ऐसा है, जब विद्यार्थियों के दिमाग स्कूल-कालेज के प्रतिदिन के काम के बोझ से मुक्त होने चाहिये और उन्हें स्वावलम्बी बनने तथा मौलिक विकास करने का मौका दिया जाना चाहिये। मैंने जिस ग्रामसेवा के काम का जिक्र किया है, वह उत्तम प्रकार का मनोरंजन है और उससे बिना किसी बोझ के विद्यार्थी गम्भीर न लगने वाला शिक्षण भी प्राप्त करते हैं। जाहिर है कि यह पढ़ाई खतम करने के बाद केवल ग्रामसेवा के ही लिए अपने आपको समर्पण कर देने की उत्तम तैयारी है।

अब समग्र ग्रामसेवा की योजना का विस्तृत वर्णन देने की जरूरत नहीं रह जाती। छुट्टियों में जो कुछ किया गया था, उसे अब स्थायी रूप देना है। गाँववाले भी ज्यादा उत्साह से इसका जवाब देने के लिए तैयार रहेंगे। अब ग्राम जीवन के आर्थिक, सफाई तथा स्वास्थ्य संबंधी, सामाजिक, राजनीतिक, हर पहलू को छूना होगा। बेशक, अधिकतर गाँवों की आर्थिक कठिनाई का तात्कालिक हल चरखा ही है। वह तुरन्त गाँववालों की आमदनी बढ़ाता है और उन्हें बुराइयों से बचाता है। स्वास्थ्य संबंधी काम में गाँव की गन्दगी को दूर करना और उसे रोगों से मुक्त रखना आता है। यहाँ विद्यार्थी से यह आशा रखी जाती है कि वह खुद परिश्रम करके मैले और दूसरे कचरे को दबाने और उसे खाद के रूप में बदलने के लिए खाइयाँ खोदेगा, कुओं और तालाबों की सफाई करेगा, आसानी से तैयार होने वाले बाँध बनायेगा, गाँव का कूड़ा-कचरा साफ करेगा और आम तौर पर गाँव को ज्यादा रहने लायक बनायेगा।

ग्रामसेवक गाँव के सामाजिक पहलू को भी छुयेगा और लोगों को छुआछूत, बाल विवाह, अनमेल विवाह, शराब और अफीम गांजे का व्यसन तथा अन्य स्थानीय अन्धविश्वास आदि कुरीतियों और बुराइयों को छोड़ने के लिए प्रेमपूर्वक समझायेगा और राजी करेगा। अन्त में राजनीतिक पहलू आता है। इसके लिए ग्रामसेवक गाँववालों की राजनीतिक शिकायतों का अध्ययन करेगा और उन्हें हर बात में स्वतंत्रता, आत्मनिर्भरता और स्वावलम्बन की प्रतिष्ठा सिखायेगा। मेरी राय में इसमें सम्पूर्ण प्रौढ़ शिक्षण आ जाता है।

इतना सब कर लेने पर भी ग्राम सेवक का काम पूरा नहीं हो जाता है। उसे गाँव के बच्चों की देखभाल का काम हाथ में लेना चाहिये, उन्हें तालीम देना शुरू कर देना चाहिये और प्रौढ़ों के लिए रात्रिशाला चलाना चाहिये। यह अक्षर ज्ञान तो सम्पूर्ण शिक्षाक्रम का केवल एक भाग और ऊपर बताये गये विशालतर उद्देश्य का साधन-मात्र है।

मेरा दावा है कि इस ग्रामसेवा के लिए उदार हृदय और पूर्ण शुद्ध चरित्र अत्यन्त आवश्यक है। ये दो मुख्य गुण ग्रामसेवक में हों, तो दूसरे गुण अपने आप उसमें आ जायेंगे।

अपनी योग्यता को आप रुपया-आना-पाई में भुनाने के बजाय देश की सेवा में अर्पित कीजिये :

—यदि आप डाक्टर हैं, तो देश में इतनी बीमारी है कि उसे दूर करने में आपकी डाक्टरी विद्या काम आ सकती है।

—यदि आप वकील हैं तो देश में लड़ाई झगड़ों की कमी नहीं है। उन्हें बढ़ाने के बजाय आप लोगों में आपसी समझौता करा दें और इस तरह विनाशक मुकदमेबाजी को दूर करके लोगों की सेवा करें।

—यदि आप इंजीनियर हों तो अपने देशवासियों की आवश्यकताओं के अनुरूप आदर्श घरों का निर्माण करें। ये घर उनके साधनों की सीमा के अन्दर होने चाहिये और फिर भी शुद्ध हवा, प्रकाश से भरपूर तथा स्वास्थ्यप्रद होने चाहिये।

आपने जो भी सीखा है, उसमें ऐसा कुछ नहीं है !

जहाँ गर्मी की छुट्टियों के उपयोग का सवाल है, विद्यार्थी यदि उत्साह के साथ काम हाथों में लें, तो वे जरूर बहुत-सी बातें कर सकते हैं। उनमें से कुछ मैं यहाँ देता हूँ :

(१) छुट्टी के दिनों में पूरा हो जाने लायक छोटा और सुनिश्चित अभ्यासक्रम तैयार करके रात और दिन की पाठशालाएँ चलाना।

(२) हरिजनों के मुहल्ले में जाकर वहाँ सफाई करना।

(३) बच्चों को सैर के लिए ले जाना। उन्हें अपने गाँव के पास के दृश्य बताना, प्रकृति का निरीक्षण करना सिखाना, आम तौर पर अपने आसपास के प्रदेश में दिलचस्पी लेना सिखाना और ऐसा करते करते उन्हें इतिहास और भूगोल का सामान्य ज्ञान देना।

(४) उन्हें रामायण और महाभारत की सादी कहानियाँ पढ़ कर सुनाना।

(५) उन्हें सरल भजन सिखाना।

(६) बच्चों के शरीर पर मैल चढ़ा हुआ दीख पड़े, तो उसे अच्छी तरह साफ कर देना और बड़ों तथा बच्चों, दोनों को सफाई की सरल शिक्षा देना।

(७) कुछ चुने हुए हिस्सों के हरिजनों की स्थिति की ब्योरेवार रिपोर्ट तैयार करना।

(८) बीमारों को दवादारू पहुँचाना।

क्या-क्या किया जा सकता है, इसका यह तो सिर्फ एक नमूना है। यह सूची मैंने लिख डाली है। मुझे इसमें शक नहीं कि समझदार विद्यार्थी इसमें और भी बहुत-सी बातें जोड़ लेंगे।

'अरिष्ट नेमि' का अवतार

• विनोबा

असम में आपका गांव संस्कृत विद्या का स्थान माना जाता है। यहां आपने वेद-मंत्रों से हमारा स्वागत किया। वेद-ध्वनि सुन कर हमको बहुत आनन्द होता है। वेद-मंत्र हमारी संस्कृति के लिए मूल-स्थान है। अभी जो मंत्र बोला गया, वह बहुत सुन्दर है। उसका अर्थ है: "अरिष्ट नेमि" हमारे लिए कल्याणकारक हो। 'नेमि' यानी मर्यादा, कानून। जिसकी मर्यादा को कोई तोड़ नहीं सकता, उस 'अरिष्ट नेमि' का आपके काम के लिए आशीर्वाद प्राप्त हो!

भगवान के नियम को तोड़ने वाला भगवान के खिलाफ काम करता है। वह कभी सुखी नहीं हो सकता। भगवान के कानून के खिलाफ जाकर सुख की कोशिश करने पर भी सुखी नहीं हो सकता। हम यही बात समझाते हुए आज ११ साल से घूम रहे हैं। भगवान की जो 'नेमि' है, मर्यादा है, उसे ठीक से समझना चाहिए।

यहाँ हम सारे खुली हवा में बैठे हैं। सब लोगों को एक जैसी हवा मिलनी चाहिए, यह भगवान की 'नेमि' है। ईश्वर के ऐन में, ईश्वर की 'नेमि' में हवा सबकी है, जमीन भी सबकी है। वेद में कहा है: "माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः।"—भूमि हमारी माता है, हम उसके पुत्र हैं। सभी सन्तानों का माँ पर हक होता है। एक संतान माँ पर कब्जा कर ले और दूसरे को माँ के पास न पहुँचने दे तो वह दुष्ट 'नेमि' होगा। अलग-अलग काल में लोग अलग-अलग नियम बना लेते हैं। अंग्रेजों ने भारत पर कब्जा किया। वे 'भारत आजाद हो', ऐसा कहने वालों को जेल में डाल देते थे। उनका वह कानून बन गया। भगवान की 'नेमि' तोड़ कर काल-नेमि बनता है। काल-नेमि बड़ा असुर है। भगवान उसको खतम करने के लिए अवतार लेते हैं। पुराण में वर्णन है कि काल-नेमि नाम का एक राक्षस था। उसने अपना कानून बनाया। लोग उस कालनेमि को मानकर भगवान की नेमि के विरुद्ध जाते हैं, तब कालनेमि का हरण करने के लिए भगवान अरिष्टनेमि अवतार लेते हैं। हर काल में ऐसा होता है। इस समय भी यह ग्रामदान-यज्ञ भगवान का अवतार हुआ है। यज्ञरूपेण प्रभु आये हैं और कहते हैं कि यह 'अरिष्ट नेमि' है। इस 'नेमि' को कोई नहीं तोड़ सकता।

जब से मैं आसाम में आया हूँ, सुना करता हूँ कि यहाँ पाकिस्तान की ओर से लोग जबरदस्ती घुस आते हैं, यह समस्या है, इसका समाधान कैसे करना चाहिए? क्या सीमा पर तार लगाये जायँ? दीवाल खड़ी की जाय? सशस्त्र पुलिस रखी जायँ? मेरे खयाल से इस समस्या का आसान हल यह है कि जमीन की मालकियत गाँव सभा को दे दी जाय। जमीन खरीदी न जाय, बेची न जाय, बंधक न रखी जाय, ऐसा हो। पाकिस्तानी घुस-पैठ करके क्या करेंगे? क्या जमीन पर कब्जा कर लेंगे? जहाँ जमीन बेची ही नहीं जा सकती, वहाँ क्या कब्जा करेंगे? जमीन बेचना भगवान की 'नेमि' के खिलाफ है। जिस जमीन के लिए झगड़े होते हैं, लड़ाइयाँ होती हैं, उस जमीन की मालकियत विसर्जित करने के लिए यहाँ लोग आ रहे हैं, ग्रामदान कर रहे हैं, यह 'अरिष्ट नेमि' का चमत्कार है।

[नलबाड़ी, असम, १० अप्रैल, '६२] •

पुराना रास्ता और नया

• वियोगी हरि

रास्ता वह पुराना था, बहुत पुराना, जिस पर सैकड़ों-हजारों सालों से यात्रियों का आना-जाना रहा। उसे तय करने वाले कोई-कोई यात्री बुरी तरह थके-मांदे दीखते थे। उन्होंने लम्बी-लम्बी डगें भर कर यात्रा पूरी की थी, या मान लिया था कि वह पूरी हो गयी। उनके चेहरों पर खुशी की रेखाएं उभरी नहीं दीख रही थीं, तथापि मानो कोई बाध्य कर रहा था कि वे अपना आत्मसंतोष प्रतिक्षण आँखों के द्वार से प्रचारित करते रहें। और कुछ यात्रियों के पैर पुरानी गहरी लीकों में धँस-धँस गये थे, और कहीं-कहीं पर नुकीले रोड़ों और कंकड़ों ने उनके सूजे पैरों को छेद डाला था।

आश्चर्य कि उन यात्रियों ने दूसरा रास्ता नहीं पकड़ा, जो उसके नजदीक ही था। पुराना रास्ता छोड़ना और गहरी निकम्मी लीकों पर से हटना, क्योंकि उनके विचार में—अगर उसे विचार कहा जाये—पतन था, पाप था। मन फड़फड़ा रहा था नया रास्ता जा पकड़ने के लिए, किन्तु पैर उधर मुड़ने को तैयार नहीं हो पा रहे थे।

एक दिन कुछ नये ही राहगीर उसी राह से गुजर रहे थे। सोचा कि वह रास्ता एक नया नक्शा सामने रख कर इस ढंग से दुरुस्त किया जाये कि उसका रूप ही बदल जाये। और यह प्रयत्न किया गया। मगर खास कुछ बदला नहीं। कहीं-कहीं तो और भी ऊबड़-खाबड़-सा हो गया। जहाँ भी वे कुदाल मारते, लीक को सही करने का यत्न करते, रोड़े हटाते, उनको ऐसा लगता कि किसी अदृष्ट के वे कोप-भाजन बन रहे हैं। विचित्र मनोदशा हो आयी उन नये राहगीरों की भी। वे भी रह-रह कर सोचने लगते कि उन्होंने मार्ग-सुधार का काम शुरू तो कर ही दिया।

भ्रान्ति का मनमाना अर्थ लगा लेने वालों की मनोदशा और होती ही क्या? आवश्यकता थी जड़-मूल से सोचने की थी। ऐसा नहीं किया गया। दिमाग को सड़े-गले चौखटे में से निकालने का साहस नहीं हुआ।

बहते-बहते एक स्थान पर जाकर प्रवाह रुक जाता है, सभी प्रकार का प्रवाह, धर्म का, शास्त्रों का, विज्ञान का और कर्तव्य-अकर्तव्य का।

जो शोधक आगे का, और-और आगे का शुभ्र-से शुभ्रतर और उससे भी शुभ्रतम हृदय अपने बन्धनमुक्त ज्ञान-विज्ञान की मुक्त दृष्टि से देख रहे थे, उनकी प्रगति ने पुराने रास्ते को छोड़ दिया, उसे जोड़ने-जाड़ने का प्रयत्न नहीं किया और नये-से-नये राजमार्ग बना लिये।

एक तरफ उस युग के प्रमाणों को पेश किया जाता रहा, जो कभी का गुजर चुका था। प्रमाणों की दासता से किसी भी प्रकार मुक्ति नहीं मिल पा रही थी।

लेकिन किसी-किसी ने फिर भी अपना दिमाग दौड़ाया। प्रमाणों को अपने उन साँचों में ढालने का उद्यम किया। यह हिम्मत नहीं हुई कि प्रमाणों और उदाहरणों से वे अपना पिण्ड छुड़ा लें। पुराने चित्रों पर अजीब-अजीब रंग भरने और पोतने का प्रयास किया गया। चित्रों के आन्तरिक आशय को वे समझ नहीं पा रहे थे और उसे ग्रहण करने या छोड़ देने का उनमें साहस नहीं था। तब चित्रों का रूपान्तर कर देना ही उनको जँचा।

प्रथम विश्व-युद्ध चल रहा था। जर्मनी वासियों की आँखों के सामने, चूँकि वे ईसाई-धर्मावलम्बी अपने आपको मानते थे, ईसा का चित्र अंकित था, किन्तु एक नये ही रूप में, कहना चाहिए कि बिलकुल विपरीत रूप में। उनकी कल्पना का चित्र यह था ईसा का:

"यदि नजारथ का ईसा, जो शत्रुओं से प्रेम का उपदेश देता था, आज फिर सशरीर हमारे बीच आ सकता—जर्मनी को छोड़ कर वह और कहीं जन्म लेना पसन्द न करता—तो तुम क्या सोचते हो वह कहाँ होता? क्या तुम समझते हो कि वह किसी चबूतरे पर खड़ा होकर कह रहा होता, 'ओ प्यारे जर्मनीवासियो, अपने शत्रुओं से प्रेम करो?' बिलकुल नहीं। इसके बजाय वह सीधा मोरचे पर दिखाई पड़ता, शस्त्रधारियों की सबसे अगली पंक्ति में, जो प्रचंड उग्रता के साथ युद्ध कर रहे हैं। हाँ, वह वहीं होता और लोहू-लोहान हाथों को और मार-काट करने के धन्धों को आशीर्वाद देता, और शायद खुद एक न्याय की तलवार उठा लेता और जर्मनी के शत्रुओं को प्रतिष्ठित भूमि की सीमाओं से ठीक उसी प्रकार दूर और दूर खदेड़ता जाता, जैसे उसने एक बार व्यापारियों और सूद-खोरों को धर्म मन्दिर से खदेड़ा था।"

किस चतुराई से महात्मा ईसा का यह चित्र खींचा गया है! इस दो हजार वर्ष पुराने जीर्ण-शीर्ण पट पर अंकित चित्र में कैसे कैसे नये रंग भरे गये हैं! सूरत ही बदल गयी है गिरि-प्रवचन करने वाले महात्मा की। उसी रूप में भूतल पर फिर से उतरने और वही प्रेम-प्रीति का राग अलापने की हिम्मत नजारथ का ईसा आज कर नहीं सकता। अगर करेगा, तो उसे उसी क्षण फिर सूली पर लटका दिया जायेगा। मगर उसका त्याग भी नहीं किया जा सकता। प्रमाणों और उदाहरणों से छुटकारा आखिर कैसे पाया जाय?

गांधी से भी चाहे जैसा मनमाना काम मौके-बेमौके लिया जा रहा है। जैसे, उसका चित्र चुनावों में एक पक्ष का जहाँ समर्थन करता है, वहाँ दूसरे पक्ष को तोड़ देने की सलाह देता है!

कहा जाता है, या मान लिया जाता है कि यदि अमुक महापुरुष आज जीवित होता तो वह वैसी ही सलाह देता और वैसा ही करता, जैसा हम सोचते हैं और जैसा हम स्वयं करना चाहते हैं। और शरीर छोड़ने से पहले यह कहना वह भूल गया कि "मेरे अनुयायियो, मेरे विविध स्मारकों को अमर-अमर रखने के लिए तुम लोग अधिक-से-अधिक धन इकट्ठा करना, क्योंकि मैं तुम्हारे ही सुख और हित के लिए जिन्दा रहा और उसी के लिए यह बहुमूल्य देह भी छोड़ रहा हूँ।"

सारांश यह कि महापुरुषों के उदाहरणों और प्रमाणों से मात्र इतना ही काम लिया जाय कि जो रास्ता निकम्मा हो चुका है, उस पर हम पैरों को न घसीटते रहें, जो कार्यक्रम निष्प्राण हो चुका है, उसे ढोना ही न रहें। निरन्तर आगे बढ़ते रहें। जो मंजिलें तय हो चुकी हैं, उनके रोड़ों और कंकड़ों को न गिनते रहें। चीथड़ी-पर-चीथड़ी टाँकने से यह कहीं बेहतर है कि उस चीथड़े को तन पर से उतार कर फेंक दिया जाय। सारे ही रचनात्मक कार्यों को इसी दृष्टि से देखना होगा कि उनके द्वारा कुछ नया जीवन निर्माण हो रहा है या नहीं, या पुरानी ही लकीर पीटते चले जा रहे हैं।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

'जय जगत्' का जमाना

जब से मानव-समाज बना, तब से आज तक समाज को अलग-अलग शब्‌द मीलते रहे हैं। अुन शब्‌दों ने समाज को सदा अुत्‌साह दीया है। परम, ज्‌ञान, भक्‌ती, आजादी, करुणा, प्‌रेम, समत्‌व आदी अनेक-अनेक शब्‌द अपने-अपने जमाने में आये और समाज को खींचते गये। अुनसे लोगों को अुत्‌साह मीला। कोअी मनुष्‌य आता है और अेक शब्‌द सामने रख देता है। अुस शब्‌द का स्‌वरूप जब समाज में आ जाता है, तब फीर नया शब्‌द लाने की जरूरत होती है।

हीन्‌दुस्‌तान में कुछ दीन 'वंदे मातरम्' शब्‌द चला। 'सप्‌त कोटी कंठ' पर से मालूम होता है की वह शब्‌द सीर्‌फ बंग देश के लीये ही था। लेकीन अुसको आगे बढ़ाया और तब 'जय हीन्‌द' शब्‌द आया। 'जय हीन्‌द' अभी तक चल ही रहा है और 'जय जगत्' शुरू हो गया। 'जय हीन्‌द' वालों ने अभी अपना शब्‌द छोड़ा नहीं है। अुसमें जो गुण है, अुसे लेकर छोड़ देना चाहीये। देश को अंग्‌रेजों से छुड़वाने के लीये 'जय हीन्‌द' ठीक था। लेकीन अब सारी दुनीया से संबंध रखना है, सहयोग रखना है, अीसलीये 'जय जगत्' की जरूरत है। यह 'जय जगत्' का जमाना है। हमें अुसके अनुरूप जीवन बनाना चाहीये।

[दामुलपुर, कामरूप
८ अप्‌रैल, '६२] —वीनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

अफ्रीकन स्वातंत्र्य की न्यायोचित माँग

अफ्रीका महाद्वीप के बहुत-से प्रदेश पिछले दस वर्षों में आजाद हो चुके हैं। इस भूखण्ड का उत्तर, मध्य और पूरब का हिस्सा करीब करीब सारा आजाद हो चुका है या होने जा रहा है। सिर्फ दक्षिण और दक्षिण मध्य का एक बहुत बड़ा क्षेत्र ऐसा बचा है, जो या तो सीधे योरोप के राष्ट्रों के मातहत है या जिसका शासन उस क्षेत्र में बसे हुए अल्पसंख्यक योरोपियन लोगों के हाथ में है।

अफ्रीका के दक्षिणी हिस्से के मध्य में रोडेशिया का एक बहुत बड़ा ऐसा क्षेत्र है, जिस पर वहाँ बसे हुए चन्द, योरोपियन लोगों ने अपना राज्य कायम कर रखा है और वहाँ के मूल निवासी बहुसंख्यक अफ्रीकन लोगों को जहाँ कि शासन में कोई भी हक प्राप्त नहीं है। दक्षिणी रोडेशिया में करीब २४ लाख अफ्रीकन हैं, लेकिन सारे मुल्क की सत्ता योरोपियन लोगों के हाथ में है, जिनकी आबादी सिर्फ १ लाख ६० हजार है। उत्तरी रोडेशिया में योरोपियन और अफ्रीकन लोगों की संख्या में और भी बड़ा अन्तर है। वहाँ सिर्फ ४० हजार गोरे हैं, जब कि अफ्रीकन लोगों की संख्या २० लाख है।

उत्तरी और दक्षिणी रोडेशिया के पूरब में एक छोटा-सा प्रदेश न्यासालैण्ड का है। इन तीनों प्रदेशों के गोरे निवासियों ने अपनी सत्ता को और भी मजबूत करने की दृष्टि से करीब नौ वर्ष पहले सन् १९५३ में इन प्रदेशों का एक "मध्य अफ्रीकन संघ" बना लिया था। इस संघ में तथा उत्तरी और दक्षिणी, दोनों रोडेशिया में शासन का ढाँचा इस प्रकार का बना रखा है कि सारी सत्ता चन्द योरोपियन लोगों के हाथ में सुरक्षित है, हालाँकि नाममात्र के लिए 'विधान' चुनाव "जनमत", "स्व-शासन" आदि सभ्य शासन-प्रणाली के सब प्रचलित शब्दों का उपयोग उसके सन्दर्भ में होता है। अभी अभी कुछ सप्ताह पहले इस मध्य अफ्रीकन संघ के प्रधान-मंत्री, सर राय वेलेंसकी ने जब यह देखा कि अफ्रीकन लोगों के स्वातन्त्र्य की प्रेरणा को अब वे बहुत दिन तक नहीं दबा सकते, तब उन्होंने यह जाहिर किया कि मौजूदा शासन और संघ-व्यवस्था 'लोगों' को मान्य है या नहीं, इसे जानने के लिए वे संघ की पार्लियामेण्ट का चुनाव करायेंगे। पर राय वेलेंसकी का यह 'चुनाव' एक नाटक मात्र था। यह इसीसे जाहिर है कि सारे मध्य-अफ्रीकन संघ के निवासियों में से सिर्फ १ प्रतिशत से कुछ अधिक लोगों को चुनाव में मत देने का अधिकार प्राप्त है, और इन १ प्रतिशत लोगों में भी करीब-करीब सब गोरे हैं। मुश्किल से १०० में से १ मतदाता अफ्रीकन है। इन तथ्यों पर से यह साफ जाहिर है कि 'चुनाव' और 'जनमत' आदि शब्दों का प्रयोग सिर्फ दुनिया को धोखा देने के लिए किया जा रहा है, जब कि नग्न वास्तविकता यह है कि अफ्रीकन लोगों को अपने ही देश की व्यवस्था में कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। इतना ही नहीं, वहाँ पर बसे हुए चन्द योरोपियन लोग उन देशों के प्राकृतिक साधनों का और मनुष्य-शक्ति का शोषण

अपने स्वार्थ के लिए कर रहे हैं।

इस सारे अन्याय के खिलाफ स्वाभाविक ही अफ्रीकन लोगों में तीव्र विरोध जागृत हुआ है और वे अपने मुल्क की व्यवस्था अपने हाथ में लेने की माँग कर रहे हैं। हर साम्राज्यवादी और आततायी की तरह राय वेलेंसकी का भी यह कहना है कि अफ्रीकन लोग और उनके नेता खून-खराबी पर आमादा हैं और सारे मुल्क में अशान्ति फैलाना चाहते हैं। रोडेशिया और न्यासालैण्ड के ये प्रदेश ब्रिटिश सरकार के अन्तर्गत रहे हैं और इसलिए इस अन्याय में इंग्लैण्ड की सरकार भी शामिल है। अभी चन्द दिन पहले जब संयुक्त राष्ट्रसंघ की दक्षिणी रोडेशिया से सम्बन्धित एक उपसमिति ने इंग्लैण्ड की सरकार से प्रार्थना की कि वह दक्षिणी रोडेशिया के लिए ऐसा विधान बनाये, जो वहाँ की "बहुसंख्यक जनता को" मंजूर हो, तो इंग्लैण्ड की सरकार ने यह कह कर किनाराकशी कर ली कि दक्षिणी रोडेशिया एक "स्व शासित"—सेल्फगवर्निंग—प्रदेश है। "स्व शासित" शब्द का यह कितना बड़ा मखौल है, जब कि सारी सत्ता उस प्रदेश के करीब डेढ़ लाख गोरों के हाथ में है और वहाँ के २४ लाख दूसरे निवासी शासन में किसी भी प्रकार के अधिकार से वंचित हैं! संयुक्त राष्ट्रसंघ की दक्षिणी रोडेशिया उपसमिति ने यह चेतावनी दी है कि अगर "मौजूदा नीति और शासन-प्रणाली को बदलने का ईमानदारी के साथ कोई प्रयत्न नहीं किया गया तो इस सारे प्रदेश में संघर्ष और हिंसा की आग निकट भविष्य में ही फूट पड़ सकती है।" उपसमिति ने यह सिफारिश की है कि दक्षिणी रोडेशिया का मामला संयुक्त राष्ट्रसंघ की आम सभा के सामने जल्दी-से-जल्दी विचारार्थ पेश होना चाहिए।

उत्तरी रोडेशिया में भी परिस्थिति इसी प्रकार विस्फोटक बन रही है। वहाँ की स्वातंत्र्य-पार्टी के नेता श्री केनेथ कौण्डा ने लन्दन में ब्रिटिश सरकार के सामने और न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्रसंघ के सामने अपनी यह निर्दोष माँग पेश की है कि उस प्रदेश में चन्द महीनों बाद जो चुनाव होने वाले हैं, उन चुनावों के सम्बन्ध में कम-से-कम इतना किया जाय कि "(१) मतदाता-क्षेत्रों का न्यायपूर्ण विभाजन हो, (२) चुनाव में अगर कोई स्थान खाली रहते हैं, तो वे नामजदगी द्वारा नहीं भरे जायँ। (३) स्वातंत्र्य पार्टी और उसके नेताओं पर जो प्रतिबंध लगे हैं, वे उठा लिये जायँ और (४) राजनैतिक बंदी चुनाव के पहले छोड़ दिये जायँ। इन शर्तों में से एक भी ऐसी नहीं है, जिनके बारे में यह कहा जा सके कि यह बदअमनी या हिंसा को प्रोत्साहित करने वाली है। वास्तव में तो राय वेलेंसकी के नेतृत्व में चन्द योरोपियन लोगों द्वारा सत्ता को हथियाये रहना और अफ्रीकन लोगों की आजादी की न्यायपूर्ण और स्वाभाविक माँग को ठुकराते रहना अपने आप में बदअमनी और हिंसा को

'जय जगत्' की पृष्ठभूमि

• हरिश्चन्द्र पन्त

उस दिन एक पढ़े-लिखे विद्वान हमसे उलझ पड़े और कहने लगे, "मैं आपकी सारी बातें मानने को तैयार हूँ, भूदान और ग्रामदान से भी सहमत हूँ। लेकिन आपका यह 'जय जगत्' का नारा मेरी समझ में बिलकुल नहीं आया। चीन अपनी टाँगें फैला रहा है, पाकिस्तान धमकी दे रहा है और आप कहते हैं, जय जगत् !"

'जय जगत्' के लिए ऐसे विचार एक के नहीं, अनेक लोगों के हैं। वे समझते हैं कि 'यह विनोबाजी का काल्पनिक आदर्श है। इस मंत्र की पृष्ठभूमि में विश्वबन्धुत्व और चिरंतन शान्ति के आसार नहीं दिखाई देते!' 'जय जगत्' के सम्बन्ध में विनोबाजी ने स्पष्ट चिंतन प्रस्तुत किया है। उनके इस चिंतन को इतिहास से प्रबल प्रेरणा मिलती रही है। कौन नहीं जानता कि इंग्लैण्ड वाले 'जय जगत्' का एक सफल प्रयोग कर चुके हैं! किसी जमाने में ये दोनों देश एक दूसरे के दुश्मन थे। अंग्रेज स्काच लोगों को असभ्य और बेवकूफ समझते थे और स्काच अंग्रेजों को क्रूर तथा बेईमान समझते थे। एक दिन दोनों राष्ट्रों ने सोचा कि लड़ने से कोई लाभ नहीं होता, तो क्यों न मिल कर एक हो जायँ! दोनों मिल कर 'ग्रेटब्रिटेन' बन गये और नये सम्मिलित राष्ट्र 'ग्रेटब्रिटेन' की 'ग्रेटनेस' (महत्ता) सार्थक हो गयी।

अमरीका में बसने के लिए विभिन्न योरपीय देशों से टोलियाँ आयीं। केवल पेन्सिलवानिया प्रान्त को छोड़ कर बाकी सभी प्रांतों में आदिवासियों और योरपियनों के बीच भयंकर युद्ध हुए। ईसाइयों में एक सम्प्रदाय होता है, जिसे 'क्वेकर सम्प्रदाय' कहते हैं। इस प्रांत में 'क्वेकर' लोग बसे हुए थे। वे हमेशा से युद्ध-विरोधी रहे हैं। उन्होंने और आदिवासियों ने समझौता कर लिया कि हम आपस में लड़ेंगे नहीं। उसमें 'जय जगत्' की भावना थी, इसीलिए युद्ध नहीं हुए। इतिहास इस बात का साक्षी है कि आदिवासियों ने आज तक किसी भी 'क्वेकर' की हत्या नहीं की!

विनोबाजी 'जय जगत्' की भावना को जगाना चाहते हैं। विदेशों में विभिन्न राष्ट्रों ने आपसी भाईचारे को बढ़ाने के लिए 'जय जगत्' के प्रयोग किये। श्री अल्बर्ट श्वीट्ज़र वर्षों से अफ्रीका में रह कर 'जय जगत्' की भावना को प्रवाहित कर रहे हैं। श्री लार्ड रसेल स्वयं प्रशांत महासागर के क्रिसमस टापू में जाकर शहीद हो जाना चाहते हैं, ताकि उनकी मृत्यु से दुनिया 'जय जगत्' का पाठ पढ़ ले।

"लिंक" नाम की एक प्रसिद्ध पत्रिका ने एक बार लिखा था कि दुनिया में डेढ़ अरब व्यक्ति ऐसे हैं, जिनकी वार्षिक आमदनी पाँच सौ रुपये से कम है। यदि रूस और अमरिका अणुबमों का बनाना बन्द कर दें और अपनी शक्ति रचनात्मक उद्योगों में लगा दें, तो इन डेढ़ अरब लोगों की आमदनी दुगनी हो जायगी और चौबीस करोड़ व्यक्तियों के लिए मकान की व्यवस्था हो सकेगी। इतने परिमाण में सेवा-आश्रम तथा अस्पताल खुल जायेंगे कि जितने पहले कभी नहीं खुले। अनुमानतः इस समय विश्व में डेढ़ करोड़ सैनिक हैं और छह करोड़ व्यक्ति सेना सम्बन्धी उद्योगों में लगे हुए हैं। इनमें डाक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक आदि सभी शामिल हैं। ये सभी 'बेकार' व्यक्ति आज विध्वंसात्मक उद्योगों में लगे हुए हैं। यदि 'जय जगत्' की भावना का संचार हो जाय और मानव-संहार के इन उद्योगों की समाप्ति हो जाय, तो इन 'बेकार' लोगों की शक्ति का उपयोग मानव मात्र के कल्याण के लिए हो सकेगा।

आज अन्न का उत्पादन इतना महत्त्वपूर्ण नहीं समझा जाता, जितना अणुआयुधों का उत्पादन। अमरीका के पास चालीस हजार से अधिक अणुबमों का भंडार बताया जाता है। रूस ने भी इतना ही या इससे अधिक बमों का संग्रह कर रखा होगा। जापान के हिरोशिमा नगर पर जो अणुबम गिराया गया, वह आज के बमों के सामने बच्चों का खेल ही था। आज तक जापान वाले उसका दुष्परिणाम भोग रहे हैं और आने वाली कई पीढ़ियाँ तक भोगते रहेंगे। हिरोशिमा का बम २० किलोटन का था। १००० टन की विस्फोट शक्ति की इकाई को एक 'किलोटन' कहते हैं। एक मैगाटन बम की विस्फोट-शक्ति १०,००,००० टन होती है। आज तो १०० मैगाटन के बमों का परीक्षण हो रहा है। रूस के ५७ मैगाटन बम की संहारक शक्ति हिरोशिमा के बम से २५०० गुना अधिक थी। १० मैगाटन के बम को यदि जमीन से ३० मील ऊपर छोड़ा जाय तो इससे जो भीषण गर्मी उत्पन्न होगी, वह ५००० वर्गमील को झुलसा देगी। गर्मी की प्रक्रिया से वायु का आक्सिजन समाप्त हो जायेगा और फलस्वरूप लोग दम घुट-घुट मर जायेंगे।

नेविलशूट नामक एक प्रसिद्ध उपन्यासकार ने अणुयुद्ध के विरोध में एक उपन्यास लिखा है, उसकी धारणा है कि पारस्परिक भय के कारण ही अणुबमों का उत्पादन होता है। वह कल्पना करता है कि किसी समय अमेरिका और रूस में आणविक अस्त्रों का इतना बड़ा अम्बार लग जायगा कि उनके लिए इन अस्त्रों और बमों को संभालना मुश्किल हो जायेगा। अपनी मुश्किल हल करने के लिए वे अपने पिछलग्गू छोटे-छोटे राष्ट्रों में इन बमों और अस्त्रों का वितरण शुरू कर देंगे। फिर एक दिन ऐसा आयेगा कि ये छोटे-छोटे राष्ट्र भी आणविक अस्त्रों से लैस हो जायेंगे। सीमा सम्बन्धी किसी छोटे झगड़े पर कोई दो छोटे राष्ट्र लड़ पड़ेंगे तो अपने-अपने गुट की मदद के लिए दूसरे राष्ट्र भी युद्ध में कूद पड़ेंगे और यह सीमा सम्बन्धी छोटा झगड़ा शीघ्र ही विश्व-युद्ध का रूप धारण कर लेगा, यह दुनिया का अन्तिम युद्ध होगा, क्योंकि रेडियोधर्मिता से सारा जीव-जगत् समाप्त हो जायगा! एच. जी. वेल्स तथा जूल्स वर्न ने अपने वैज्ञानिक उपन्यासों में जो भविष्यवाणियाँ की थीं, वे अधिकांश सच्ची निकलीं। हो सकता है नेविलशूट की कल्पना भी भविष्य में सच्ची साबित हो जाय! उसको गलत सिद्ध करने का एक ही उपाय है—अणुबमों के उत्पादन में रोक लगा दी जाय और सारा विश्व विनोबाजी के साथ ही बोल उठे 'जय जगत्'।

प्रोत्साहन देने वाली चीज है। अगर उत्तरी रोडेशिया का मामला भी शांति और न्यायपूर्ण ढंग से हल नहीं होता है, तो अवश्य ही वहाँ के लाखों निवासी उस स्थिति को हरगिज बर्दाश्त नहीं करेंगे और अगर आजादी की उनकी न्यायोचित प्रेरणा को कुचलने की कोशिश की गयी तो वहाँ होने वाली खून-खराबी और आजादी की सम्पूर्ण जिम्मेदारी राय वेलेंस्की और उनके हिमायतियों की तथा ब्रिटिश सरकार की होगी। —सिद्धराज

सम्पादक के नाम पत्र

रसेल के रूप में पश्चिम की आकांक्षा

जिन देशों में महायुद्ध में हिंसा-प्रतिहिंसा का ताण्डव हुआ था वहीं अब अहिंसा की आकांक्षा तीव्र होती जा रही है। अन्याय का प्रतिकार, चाहे हिंसक हो या अहिंसक, उसका प्रणेता महायुद्ध का संचालक हो या अहिंसक क्रांति का नेता—दोनों की मांग जान पर खेलने वाले शूरों की होती है। कौन जाने विश्व शांति की स्थापना के लिए अहिंसक प्रतिकार का उत्तरार्ध भारत में नहीं, पश्चिमी राष्ट्रों में घटित हो! क्या यह अतिशयोक्ति है कि वह मर मिटने की साध, वह त्याग-तेज जिसका दर्शन गांधी ने जीकर और मर कर कराया, हम भारतवासियों के पास आज उस प्रचुर मात्रा में नहीं है, जितना अणु-आयुधों को बेकार करने के लिए आवश्यक है।

पश्चिम के शौर्य और साहस का विकास हिंसा की भित्ति पर भले ही हुआ हो, (क्या भारतीय स्वातंत्र्य-संग्राम में भी खूँखार कहे जाते पठानों ने अहिंसक प्रतिकार में अद्वितीय स्थान प्राप्त नहीं किया था?) पश्चिम की आम जनता पूर्व की उपेक्षा विश्व-शांति के लिए अधिक सचेष्ट नजर आती है, क्योंकि दो विश्वयुद्धों की हृदयविदारक घटनाएँ उनकी स्मृति में अभी ताजा हैं, पर उनकी कठिनाई है एक अजीब बेबसी और भय-ग्रस्तता, जिसमें से वे गुजर रहे हैं। उन्हें यह समझ में नहीं आता कि वे क्या करें।

ठीक ऐसे समय वहाँ रसेल एक नवोदित तारे की तरह चमक रहे हैं; उन्हें 'अगला कदम' स्पष्ट दीख रहा है और उसे बढ़ाने में आगा-पीछा देखने की 'दुनियवी समझ' की उन्हें आवश्यकता नहीं। वे जानते हैं कि विश्व शांति की समस्या का हल गद्दी-नशीनों की पोथी दार्शनिकता में नहीं पर खतरनाक ढंग से जीकर ही निकल सकता है। जगत् को आत्म-हत्या से बचाने का उनके मन एक ही विकल्प है—'डू आर डाय', करो या मरो! अतः नब्बे वर्ष की आयु में काँपते शरीर की रही-सही शक्ति बटोर कर वे कटिबद्ध हैं अहिंसक प्रतिकार के लिए। अमरिका के अन्तर्राष्ट्रीय कानून का उल्लंघन करने और मानव की वर्तमान तथा भावी पीढ़ियों के अस्तित्व को खतरे में डालने के विरोध में उन्होंने उस क्रिसमस टापू को जाने का निर्णय किया है, जहाँ के वायुमंडल को अमरिका अणु विस्फोटों से विषाक्त बना रहा है।

दार्शनिक रसेल की दार्शनिकता सक्रिय बन रही है। आदर्शों का चेप (कंटेजियन) उन्हें जीकर ही फैलाया जा सकता है। जब वैसा नहीं होता तो उपदेश ग्रन्थों में पड़े रहते हैं। रसेल एक ऐसी परंपरा की स्थापना करने जा रहे हैं, जिसमें पश्चिम के लिए एक नई आशा, एक नया प्रकाश-स्तम्भ सिद्ध होने की क्षमता है।

काशी, —एक पाठक

भूमिहीनों को जमीन दिये बिना गाँव की प्रगति असंभव

जयप्रकाश नारायण

हम भूदान किसलिए माग रहे है, इसको ठीक से समझ लेने की जरूरत है। हम यह मानते है कि गाँव की आज की जो हालत है, उसे सुधारा जा सकता है, सबकी तरक्की हो सकती है, सबका दुख दूर हो सकता है, तो उसका एक ही तरीका है, और वह यह है कि आज गांव मे जो शोषण चल रहा है, थोड़े लोग बाकी सबका शोषण कर रहे है, इस हालत को हम बदल डालें।

अगर सौ में से दस व्यक्ति भोग करें और बाकी गरीब रहें, तो क्या नतीजा होता है, यह इतिहास बताता है। और देशों में जो हुआ, उसे हम अपने देश में पसन्द नहीं करेंगे। इसलिए चीन में या दूसरे देशों में जैसा हुआ, वैसा हम नहीं होने देना चाहते हैं। हम इस धोखे में न रहें कि पहले से बाप दादों के जमाने से जो चलता आया है, वह आगे भी चलेगा। अब लोग जागृत हो रहे हैं। पण्डित नेहरू को भी अपने इलाके में वोट के लिए घूमना पड़ता है। इसलिए अब यह नहीं चलेगा कि गाँव के मुट्ठी भर लोग बाकी सबको बेवकूफ बनाते रहें।

अब हमें सोचना होगा कि गाँव के सब लोगों की दशा कैसे सुधरेगी। गाँव के लोगों को सोचना चाहिये कि गाँव के सवाल कैसे हल होंगे। सबसे पहले गाँव के दुखियों का दुःख दूर करना चाहिये। जो भरपेट खाते हैं, उन्हें अधिक दूध घी मिलने में देर हो तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन जो भूखा है, उसको पहले अनाज मिलना चाहिये। गाँव के मुखियों का यह काम है कि जो सबसे दुखी हैं, उनको पहले मदद दिलायें। जो पददलित हैं, दबे हुए हैं, दबाये हुए हैं, पहले उनके आँसू पोंछे जायँ और उनके बच्चों के तन पर वस्त्र हो। पहले गरीब की झोंपड़ी बन जाय और फिर दूसरों के महल बनें।

आज गरीब लोगों को खाना भी नहीं मिलता है। उनके बच्चे रात को बिना खाये हुए सो जाते हैं, और उधर कुछ लोग ऐशो-आराम करते हैं, तब ज्वाला भड़कती है। जब करोड़ों भूखे हैं और कुछ करोड़पति बने हुए हैं, तो ज्वाला भड़केगी ही। आज हम सब ज्वालामुखी के मुंह पर बैठे हैं। पता नहीं कब गरीब की आह निकलेगी और ज्वालामुखी भड़केगा।

इसलिए हम चाहते हैं कि गाँववाले उठें और सोचें कि सबका भला कैसे होगा। हमारा आपस में मेल होगा, तो गाँव में एक शक्ति पैदा होगी। बेजमीन और जमीन-वाले, पढ़े-लिखे और अनपढ़, सब मिल कर, एक होकर जमीन का मसला हल करने की कोशिश करें। हमारे गाँव में जो झगड़े होते हैं, ईर्ष्या द्वेष पैदा होते हैं, फौजदारी होती है, उसका बड़ा कारण जमीन है। इसलिए जमीन का मसला इस तरह से हल होना चाहिए कि सबको संतोष हो, जमीनवालों को और बेजमीनों को संतोष हो, गाँव का उत्पादन बढ़े। हमें यह भी समझना चाहिए कि अगर गाँववाले सिर्फ खेती पर निर्भर रहेंगे तो गाँव की तरक्की नहीं होगी। गाँव में उद्योग आये बगैर गाँव में समृद्धि नहीं आयेगी। इसलिए गाँवों का औद्योगीकरण भी होना चाहिए। लेकिन यह भी तब तक हरगिज सफल नहीं होगा, जब तक गाँव में भूमि का मसला बना रहेगा। इसलिए विनोबा ने कहा है कि पहले जमीन का मसला हल किया जाय, गाँव की सारी जमीन गाँव की बने।

आज हम जमीन इसलिए माग रहे हैं कि गाँव के लोग यह समझें कि हमारी जमीन में सबका हिस्सा है। हमारी जमीन में दूसरों का हिस्सा नहीं है, इस बात को हमें सबके दिमाग से निकालना होगा। यह कानून से संभव नहीं है। 'लेवी' भी एक तरह से जबरदस्ती ही है। हमें तो समझना चाहिये कि जमीन की मालकियत नहीं हो सकती है। जमीन का मालिक परमात्मा है, जिसने हम सबको बनाया है। गाँव की सब जमीन सबकी है।

गाँव के सब लोग इकट्ठा बैठें और सोचें कि सबकी व्यवस्था कैसे हो? कुछ का काम खेती से चलेगा और कुछ को उद्योग देना होगा। गाँव में जो कच्चा माल है, उसका पक्का माल गाँव में ही बनाया जाय। आज गाँव में कारखाना खोलना हो तो सेठ, धनी ही खोल सकते हैं। उसका लाभ उन्हीं को मिलेगा। अगर गाँव के काम के लिए गाँव का हम कारखाना खोलना चाहें तो वह बगैर मेल के कैसे होगा? गाँव के लोग एक नहीं होंगे तो गाँव की कोई तरक्की नहीं होगी।

हम सब लोगों से उनकी जमीन का छठा हिस्सा या बीसवाँ हिस्सा इसलिए माँगते हैं कि लोग धीरे-धीरे जमीन का मोह छोड़ें और वह सबकी बन जाये। ऐसा होगा तो गाँव का वातावरण बदलेगा, गाँव वालों की चित्त शुद्धि होगी।

जागृति के माने हैं एक-दूसरे की मदद करते हुए सब आगे बढ़ें। जो सबसे पीछे हैं, उनको आगे ले जाने की अधिक कोशिश होनी चाहिये। मान लीजिये कि आप बीघे में कट्ठा देना चाहते हैं। लेकिन अगर ऐसा फैसला करते हैं कि हमारे अंचल में कोई भूखा नहीं रहेगा, नंगा नहीं रहेगा, गाँव के अनाथ बच्चों के लिए गाँव की तरफ से प्रबन्ध होगा, सब बच्चों की शिक्षा का प्रबन्ध होगा, बीमारों की सेवा का प्रबन्ध होगा; तो हम बीघा-कट्ठा मांगे बगैर ही लौट जायेंगे।

ग्राम-निर्माण के, ग्राम स्वराज्य के सर्वोदय-समाज के निर्माण के कामों में गाँव की पंचायत का बुनियादी हाथ होना चाहिए। ग्राम-पंचायत बिगड़ गयी तो गाँव में कुछ नहीं हो सकता है। न हम सर्वोदयवाले कुछ कर सकते हैं, न दूसरे लोग कर सकते हैं। बीघा कट्ठा आन्दोलन तो प्रेम, त्याग, सहयोग का वातावरण पैदा करने का पवित्र आन्दोलन है; ऐसा समझ कर ग्राम पंचायत यह संकल्प करे कि हमारे गाँवों में कोई भूखा या बेकार नहीं रहेगा।

आज गाँव में न त्याग है, न मेल है। आपको सोचना चाहिये कि सरकार की शक्ति कितनी है और देश के साढ़े पाँच लाख गाँवों की शक्ति कितनी है। आज बिहार सरकार की सालाना आमदनी लगभग १०० करोड़ है और बिहार राज्य की जनसंख्या ५ करोड़ है। सरकार की साल भर की आमदानी बढ़ती जाय और अफसरों को कुछ भी नहीं दिया जाय, तो एक व्यक्ति को साल भर में २० रुपया मिलेगा, और आज मजदूर भी महीने में २० रुपये से अधिक कमाता है। सरकार के पास संचित धन है, इसलिए वह ज्यादा मालूम होता है। गाँव का धन बिखरा हुआ है। सबसे बड़ा धन हमारे दो हाथ हैं। इनसे हम अनाज, कपड़ा आदि सब पैदा करते हैं। पटने के सचिवालय में न तो अनाज पैदा होता है, न कपड़ा और न लोहा पैदा होता है। वहाँ तो केवल कागज रंगे जाते हैं, पैदा तो आप करते हैं।

आज भूमि की एक बड़ी समस्या है। इसके निराकरण का रास्ता है कि गाँव की जमीन गाँव की हो। फिर कोई भूखा न रहे।

आज हम बीघा-कट्ठा मांग रहे हैं। अन्त में हम सबको ग्रामदान, ग्रामीकरण की तरफ जाना होगा। अगर भूमि का मसला हल नहीं हुआ, तो गांव का कोई आयोजन सफल नहीं होगा।

बड़े-बड़े लोग धन के बल पर योजना बना सकते हैं। लेकिन गाँव वाले किस बल पर योजना बनायेंगे? आज तो गाँव में भूमिवानों और भूमिहीनों की दो दुनिया हैं, दोनों के बीच चौड़ी दरार है। इसको पाटना होगा। इस खाई को पाटने के लिए ही बीघा कट्ठा आन्दोलन चल रहा है।

भूमिहीनों को जमीन दिये बगैर गाँव की तरक्की की जो योजना बनेगी, वह अन्याय की योजना होगी। इसलिए सब जमीनवालों से मेरी अपील है कि बीघा-कट्ठा मांगने वालों की झोली दानपत्रों से भर दें।

(फुलडीह, गया, २५ अप्रैल, '६२

भूदान और राजाजी

भूदान के सम्बन्ध में राजाजी (चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य) के विचारों के बारे में हमको कभी कोई शंका न थी। कांजीवरम्-सम्मेलन में राजाजी ने विनोबा और भूदान को जिन शब्दों में श्रद्धांजलि अर्पित की, वह आज भी हमारे कानों में गूंज रही है। पर उस समय राजाजी देश के एक वरिष्ठ अवकाशप्राप्त नेता, मित्र व दार्शनिक के रूप में प्रतिष्ठित थे। इसलिए आज जब वे कठिन सतर्पत स्वतन्त्र पार्टी के प्राण-प्रतिष्ठापक व नेता के रूप में रंगमंच पर आये हैं, तो लोगों का और विशेषतः स्वतंत्र पार्टी के लोगों का यह व्यक्त-अव्यक्त अनुमान बना कि अब राजाजी भूदान के हामीदार न होंगे। श्री गोकुलभाई भट्ट ने राजाजी से स्वतन्त्र पार्टी के नेता के रूप में भूदान को लेकर सीधा प्रश्न किया। राजाजी ने जो उत्तर दिया वह हम नीचे दे रहे हैं :—

"The Swatantra party as such has not taken any adverse attitude against Bhoodan As for me I always like people to make gifts of property to deserving people, be it land or any other from of property I appreciate the movement for inducing people to make Bhoodan which has achived such wonderful results I hope no one belittes the movement"

—Ch Rajgopalachar

"स्वतंत्र पार्टी ने एक दल की तरह भूदान के विरोध में कोई प्रतिकूल रुख नहीं अपनाया। और जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं हमेशा यह पसन्द करता हूँ कि लोग अपनी सम्पत्ति का दान चाहे वह भूमि हो कि अन्य कोई प्रकार, पात्रता का विचार कर दूसरों को दें। मुझे यह आंदोलन जो लोगों को भूदान करने को प्रेरित करता है और जिसने इतने गजब के परिणाम दिखाये हैं, बहुत अच्छा लगा है। मेरा विश्वास है कि कोई भी इस आंदोलन के महत्त्व को कम न समझेगा।"

—च० राजगोपालाचार्य

बुद्ध-महावीर की विहार-भूमि में

सच्चे अनुयायियों की आवश्यकता

शरदकुमार 'साधक'

महावीर और बुद्ध समकालीन थे। उनके धार्मिक सिद्धांतों में समानता थी। दोनो ने मानवता के कल्याणार्थ अपने जीवन को समर्पित किया। दोनो का कार्य-क्षेत्र भी एक था। तत्कालीन यज्ञों में होने वाली हिंसा को देख कर वे दोनो करुणाशील बने। उन्होंने यज्ञों का विरोध किया। 'अहिंसा परमोधर्मः' दोनो के जीवन का महान सिद्धांत रहा। वे व्यक्ति की उन्नति का अहिंसा को अन्यतम साधन मान कर प्रचार करते रहे। बिहार को समझने के लिए महावीर और बुद्ध के कार्यक्षेत्र में पदयात्रा कर लेना पर्याप्त है। मैंने बिहार-यात्रा मे उन दोनो ज्योति-स्तभो के बारे में जानने-समझने का प्रयत्न किया तो यह अनुभव आया कि उनका काम अभी भी अधूरा है।

बिहार के देहातों में बहुत गरीबी है। भुइयाँ, मुसहर, आदिवासी आदि अनेक पिछड़ी हुई जातियाँ हैं। वे सदियों से गुलाम हैं। जब किसी भुइयें की शादी होती है तो उसका मालिक उसे दस रु० नकद और आधा मन चावल देता है। यही रकम उसकी तथा उसकी आने वाली पत्नी की कीमत है। फिर वे आजीवन मालिक के 'कमिया' कहलाते हैं। उन्हें मालिक के घर का सारा काम करना होता है। वे दिन भर खटने पर भी पर्याप्त भोजन नहीं पाते। सूअर पालना उनका पेशा है। मांस खाते हैं, शराब पीते हैं। कड़कड़ाती सर्दी और वर्षा की नमी से बचने के लिए उनके पास सूअर का तेल होता है। डेढ़ हाथ का चिथड़ा लपेटे हुए जब भुइयाँ परिवार के लोग मेरे सामने आते हैं तो मैं अहिंसा की यशोगाथा गाना भूल जाता हूँ।

मनुष्य दुःखमय है। दुःख के इन कारणों को मिटाना बुद्ध और महावीर, दोनों को अभिप्रेत रहा है। पर आज वे दोनों कहाँ हैं! ऊँच-नीच के भेदभाव को मिटा कर सम्पूर्ण मानव-जाति को निर्वाण-प्राप्ति का अधिकार देने वाले उन दोनों महापुरुषों को संत्रस्त मानवता खोज रही है।

महावीर के उत्तराधिकारी जैन साधु कहाँ हैं! बुद्ध के उत्तराधिकारी बौद्ध भिक्षु कहाँ हैं! वे क्यों नहीं बिहार के देहातों में घूमते! 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' और 'सव्वजगजीवरक्खणदयट्ठाए' का आदेश करने वाले जैन और बौद्ध साधु बिहार के गाँव-गाँव में घूमें, तभी वे महावीर तथा बुद्ध के काम को गति दे सकेंगे। बिहार की हालत जैन साधुओं को यह तत्काल समझा देगी कि इससे पहले कि किसी के हाथ से मांस का टुकड़ा छीना जाय, उसे रोटी का साधन देना होगा। शराब की बोतल फोड़ने से पहले शराबी के लिए नींद, मनोरंजन और पारिवारिक आनन्द की स्थिति प्रस्तुत करनी होगी। सूअर के तेल का निषेध करने से पहले ठंड और वर्षा से बचने के लिए अनुकूलता करनी होगी।

समस्या

मांस न खाना, शराब न पीना इत्यादि आदर्श हैं। पर मांस क्यों खाया जाता है, शराब किन मजबूरियों में पी जाती है, इसका सही दर्शन भुइयों आदि के परिवारों में होता है। मद्य-मांस का सेवन करने वाले लोगों की परिस्थितियाँ बदल दी जायँ तो निश्चय ही वे सात्विकता को स्वीकार कर लेंगे। केवल उपदेश से काम नहीं चल सकता। उन्हें तो यह कहना होगा कि तुम मांस नहीं, मक्खन खाओ; शराब नहीं, शरबत पीओ; और उनको वैसे साधन भी जुटा देने होंगे।

मानव के विकास, समाज की समृद्धि और अशेष दुःख निरोध की दृष्टि से जैनों ने मांसाहार के निषेध का अभियान चलाया, पर अन्न की अपर्याप्तता के कारण सर्वत्र मांस त्याग न हो पाया। मजबूरी विलास का साधन बनी। तब वर्ग-भेद अस्तित्व में आया। अमुक जातियाँ आर्य जातियाँ हैं और अमुक जातियाँ अनार्य जातियाँ हैं, अमुक क्षेत्र आर्य क्षेत्र हैं और अमुक क्षेत्र अनार्य क्षेत्र हैं; इत्यादि धारणाओं के स्थिरीकरण की पृष्ठभूमि भी यही है। इसी धारणा के कारण मनुष्य-जाति एकता से अनेकता में बँटी। सामूहिक जीवन टूटा, शोषण को प्रोत्साहन मिला, शासन मजबूत हुआ और कृतवैषम्य स्वाभाविक लगने लगा। फलतः आर्य और अनार्य, दोनों का अहित हुआ।

अहिंसा

अहिंसा विश्व-वात्सल्य की भावना है। इसे जीवन की आवश्यकता भी कहा जा सकता है। और इसीलिए अगर अहिंसा आदरणीय है तो अब जैन विचारकों को एक बार फिर से अपनी चिरपोषित मान्यताओं की 'अग्निपरीक्षा' करनी होगी। उस सिद्धान्त का तब तक कोई मूल्य नहीं है, जब तक उसका प्रयोग जीवन के समस्त क्षेत्रों में न किया जा सके। अहिंसा के तर्कसंगत व्यापक प्रयोग अब तक राजनीति से दूर उपवनों, उपाश्रयों, मन्दिरों एवं धर्म-स्थानों में होते रहे; इसके विपरीत अब उन्हें आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीति के क्षेत्र में सफल करने की आवश्यकता है। गांधीजी ने इस आवश्यकता को समझा था। वे चाहते थे कि परिशुद्ध धर्म-विचार को व्यवहार में लाने के लिए एक जबरदस्त क्रान्ति हो। वह क्रान्ति, जिससे मानव समाज में समता, राष्ट्रीय जीवन में समग्रता और धार्मिक जीवन में समन्वय की प्रतिष्ठा हो सके। अहिंसा केवल परलोक के लिए ही नहीं, इहलोक के लिए भी है। महावीर और बुद्ध के अनुयायियों का कर्तव्य है कि वे अहिंसा की सार्वभौमता सिद्ध कर दिखायें।

जीवन के चार पक्ष हैं-धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष। साधु पुरुष अर्थ और काम का परित्याग कर देते हैं। उनके लिए केवल धर्म और मोक्ष ही रह जाता है। ऐसी स्थिति में धर्म और मोक्ष का समन्वय कैसे हो सकता है! धर्म और मोक्ष विरक्ति का रास्ता है और अर्थ तथा काम आसक्ति का रास्ता है, ऐसा मान कर चला जायेगा तो शायद महावीर को समझ पाना कठिन हो जायगा। महावीर जितना बल निवृत्ति पर देते थे, उससे कम बल उनकी प्रवृत्ति में नहीं था। वे महावीर ही थे, जिन्होंने कौशाम्बी की राजरानी मृगावती को उज्जैनी नरेश के पंजे से मुक्त कराया। आत्मधर्म की पूर्वपीठिका के रूप में महावीर ने ग्रामधर्म, नगरधर्म एवं राष्ट्रधर्म की मौलिकता स्वीकार की। बुद्ध को तो सभी प्रकार की चरम अवस्थाओं के बीच में रहना अभीष्ट था ही। इसलिए मुझे बिहार-यात्रा में यह बराबर लगता रहा कि अब आध्यात्मिक और भौतिक विकास को सर्वथा अलग-अलग मानने से काम नहीं चलेगा। अहिंसा हमारा आदर्श है। उसे भौतिक जीवन में सफल करने के लिए अस्तेय और अपरिग्रह व्रत हैं। ये दोनों ही व्रत भौतिक विकास की दृष्टि से ही प्रतिष्ठित किये गये हैं। विनोबाजी ने बहुत ही विचारपूर्वक इन दोनों व्रतों की व्याख्या की है। अस्तेय बताता है कि उत्पादक श्रम द्वारा शरीर-निर्वाह होना चाहिए। संसार में जो वैषम्य दुःख, कष्ट और पाप हैं, उनकी बुनियाद में शरीर-श्रम टालने की भावना ही है। शरीर-श्रम से उत्पन्न वस्तु का उपयोग करने का व्रत अपरिग्रह है।

पुकार

अहिंसा, अपरिग्रह आदि की लोक-जीवन में प्रतिष्ठा करने के लिए महावीर और बुद्ध ने अनेक संकटों को झेलते हुए काम किया। कितनी परेशानी और कितनी विपरीत स्थितियाँ उनके सामने थीं! फिर भी वे अविचलित भाव से अपने आदर्श की प्रतिष्ठा के लिए आगे बढ़े। अब उनके उत्तराधिकारी सिर्फ देहली, कलकत्ता, बम्बई, बंगलोर, मद्रास, जयपुर, अहमदाबाद जैसे केन्द्रों में पड़े रहते हैं। क्या इससे महावीर की साध पूरी हो सकेगी! बुद्ध की आत्मा को संतोष हो सकेगा! बिहार में उन दोनों महापुरुषों की तपस्या बोल रही है और यह बता रही है कि यहाँ का सारा काम अब तक अधूरा है। इसलिए जैन और बौद्ध साधु बिहार की तरफ ध्यान दें। बिहार देहातों का प्रतिनिधित्व करता है। देहातों में भ्रमण करने से महावीर और बुद्ध की कामना पूरी होगी और अहिंसा के विचार को आचार रूप में परिणत करने की प्रेरणा भी मिलेगी। ●

नाम-घोषा-सार

शुनिया सज्जन शास्त्र-सार सकले सम्पत्ति जाना तार
हरि-भक्ति-रसे सन्तोष मन जाहार
चर्म्मर निर्म्मित पानैजुडि चरण ढाकिले सिटोजने
जेन सबे भूमि चर्मावृत भैल तार।

—उसका मन हरिभक्ति की माधुरी से सन्तुष्ट है—यह बात ऐसी ही है, जैसे कि उसने अपने पाँव चमड़े के बने एक जोड़ी जूते से ढँक लिये और उस कारण उसके लिए समस्त भूमि चमड़े से ढँकी हुई हो गयी।

कृष्ण-पद-मात्र सेवा करे समस्ते कामना परिहरे
वेद-व्यवहार कदाचितो नलंघय
कृष्ण-पद-सेवा-सुख-मने करे अनुभव सर्वक्षणे
इहाक महन्त बुलिया जाना निश्चय

—जो केवल प्रभुचरणों की ही सेवा करता है, सकल कामनाओं का निरास करता है, वेद-व्यवहार का कभी भी उल्लंघन नहीं करता और जिसे नित्यनिरन्तर परमात्मचरण-सेवा के कारण आनन्द की अनुभूति होती है, उसे निश्चयपूर्वक महन्त जानो।

आध्यात्मिक क्रांति और क्रांतिकारी अध्यात्म

"मैंने इतना ही नहीं कहा कि 'आध्यात्मिक वृत्ति के बिना क्रान्ति की भावना वाले हमारे काम में नहीं टिकेंगे।' मैंने उसके साथ यह भी कहा है कि 'आध्यात्मिक वृत्ति-वाले भी क्रांति की भावना के बिना इसमें नहीं टिकेंगे। दोनों भावनाएँ जिनमें सम्मिलित होंगी, वे टिकेंगे।'"

—बाबा के आशीर्वाद

'बीघा-कट्ठा' अभियान के अनुभव

बद्रीप्रसाद स्वामी

बिहार के 'बीघा कट्ठा' अभियान के सिलसिले में मुजफ्फरपुर जिले में यात्रा करने का अवसर मिला। इस जिले की जमीन अधिक उपजाऊ और बेशकीमती है। १०० रु०से १००० रु० प्रति कट्ठा तक की कीमत यहाँ की जमीन की आँकी जाती है। सारा क्षेत्र आम, लीची और केलों से घिरा हुआ है। हर घर और गाँव छोटे छोटे बगीचों का सा रूप लिये हुए है। पानी की कमी नहीं है। जमीन की ऐसी तासीर है कि जहाँ जो बीज डाल दो, पेड़ और पौधे खड़े हो जाते हैं। जिस किसान के पास ५-१० कट्ठा जमीन है, वह भी अपना गुजर कर सकता है। प्रकृति की इतनी अनुकम्पा होने पर भी हमें यहाँ गाँव-गाँव में भयंकर विषमता, गरीबी और अशान्ता का नग्न दृश्य देखने को मिला।

एक तरफ भूमिवान साधन सम्पन्न लोगों के गाँव में सुन्दर और पक्के मकान हैं, काफी जमीन है, आम और लीची के बगीचे हैं, तो दूसरी तरफ गाँव गाँव में अधिकतर भूमिहीन परिवार इन्हीं भूमिवान लोगों के खेतों में अपने घासफूस के टूटे झोंपड़ों में भूमिवानों की मेहरबानी और मजदूरी पर अपना मजबूरी का जीवन बिता रहे हैं। उनके झोंपड़े की जमीन भी उनकी नहीं, उनके पैदा किये हुए केले भी उनको नसीब नहीं! इन लोगों के पास निज की जमीन बिलकुल नहीं। इनके मालिकों ने कुछ जमीन तो इनको आधा बटाई पर बता रखी है, जिसके एवज में इनसे मालिक काफी जमीन में अपनी खेती करवाते हैं और उन्हें एक बार भोजन और आठ आने मजदूरी देते हैं। भूमिहीन परिवार के बच्चों को अपने मालिक के पशु चराने होते हैं। बच्चों को खिलाने तथा घर के अन्य आवश्यक कार्य भी इन भूमिहीन परिवारों से लिये जाते हैं। मालिकों ने इन लोगों को कर्जा भी दे रखा है, जिसका सूद भी काफी भारी है और उनकी बटाई का अनाज तो ब्याज में ही चला जाता है।

इस प्रकार ये भूमिहीन परिवार अपने मालिक के शिकंजे में पूरे फँसे हुए हैं, निकलना चाहते हैं, परन्तु लाचार हैं! ये काफी भयभीत, डरे और दबे हुए रहते हैं। कई जगह मालिकों के डर के मारे ये सभा में भी नहीं आते थे, और जहाँ आये तो मालिकों के सामने बोलने की हिम्मत नहीं करते थे, यहाँ तक की उनसे कोई बातचीत करता तो भी मालिक बड़े नाराज होते थे। एक गाँव की सभा में काफी भूमिहीन परिवार आये," उनसे हम लोग बात कर रहे थे जो मालिकों को बड़ी ही नागवार मालूम हुई और उन्होंने सभा में बड़ा विघ्न डाला। इन भूमिहीन परिवारों में अधिकतर हरिजन लोग हैं, जिनकी एक मशहूर कौम तो चूहों को भी मार कर उससे पेट भरती है। ताड़ी का भी इनमें काफी रिवाज है। इन लोगों के घरों में 'अक्षर' प्रवेश नहीं हुआ है। अगर इन लोगों को 'ब्रेड लेबर' देकर 'अक्षर' सिखाया जाय तथा शिक्षित व संगठित किया जाय, तो ये अपने शोषण से मुक्त किये जा सकते हैं।

'बीघा-कट्ठा' परिस्थिति के अनुकूल

इसमें कोई शक नहीं कि विनोबाजी की प्रथम यात्रा के समय यहाँ के जमींदारों ने काफी जमीन भूदान में दी थी। उसका अभी तक पूरा वितरण न होने से लोगों को बड़ा ही असंतोष है। इसके अलावा इस बीच लोग अपनी काफी जमीन इधर उधर बेच चुके हैं। लोगों के पास अधिकतर थोड़ी-थोड़ी जमीन है, परन्तु वह भी उनसे स्वयं काश्त नहीं हो रही है। भूमिहीन मजदूरों से काश्त करवाते हैं और उन्हें उसमें न साझेदार बनाने को तैयार हैं और न भूदान देने को। इधर कीमती, उपजाऊ और कम जमीन होने के कारण बाबा ने 'बीघे में कट्ठा' आन्दोलन शुरू किया, जो यहाँ की परिस्थितियों के अनुकूल है। सरकार ने 'लैंड-लेवी' एक्ट भी तदनुसार बना दिया है, जिसमें ५ एकड़ तक बीसवाँ, २० एकड़ तक दसवाँ तथा इससे ऊपर की जमीन में से छठा हिस्सा तक भूमि सरकार कानून से प्राप्त कर सकेगी, जो भूदान में जमीन देगा उतना बाद देकर सरकार जमीन लेगी।

कानून की तलवार पर 'बीघे-कट्ठे' का स्वागत!

गाँवों में स्थिति यह है कि लोग 'बीघे में कट्ठा' देने को भी तैयार नहीं और साथ साथ कानून का भी सख्त विरोध कर रहे हैं। लोगों का कहना है कि हमारे सिर पर तलवार लटका कर आप बीघे में कट्ठा माग रहे हैं, यह कहाँ तक उचित है? पहले कानून का भय हटवाइये, तब जमीन देंगे। इसके अलावा बीघे में कट्ठा की कम-से कम माँग होने पर भी लोगों को पहले की बनिस्बत मुश्किल मालूम हो रहा है, क्योंकि भूमिवान को जितना बीघा जमीन उसके पास है, उतने कट्ठे देना है, उससे कम नहीं। इसके अलावा 'दान दो इकट्ठा', यह कदम तो कहीं भी सध नहीं रहा है। लोगों का कहना है कि सब देने को तैयार हो जायँ तो फिर ग्रामदान हो सकता है। फिर भी इस अभियान के फलस्वरूप सभी लोगों का ध्यान पुनः भूमि-समस्या के समाधान की तरफ आकर्षित हुआ है। भूमिवान कई जगह दान अपने सबंधी और मजदूरों के लिये दे भी रहे हैं। अधिकतर विचार तो पसंद करते हैं, परन्तु देने की हिम्मत नहीं कर पा रहे हैं। लोगों को ग्रामीकरण और ग्रामदान का सम्पूर्ण विचार ज्यादा पसन्द आ रहा है। उनका कहना है कि बीघे में कट्ठा दे देने से भूमि की सभी समस्याएँ हल होने वाली नहीं, तो ग्रामदान ही क्यों न किया जाय?

बिहार में 'बीघा-कट्ठा' अभियान की प्रगति

(१५ अप्रैल '६२ से ३० अप्रैल '६२ तक)

जिला	प्राप्त भूमि (कट्ठे में)	दाता-संख्या	वितरित भूमि (कट्ठे में)	आदाता-संख्या
पटना	२५९	१८	२५९	१४
गया	३०९१	२२५	५२३	४५
शाहाबाद	२६०	—	—	—
	२८८१*	११	२८८१	८५
मुजफ्फरपुर	१३२३	—	—	—
दरभंगा	४१२	२५	४१२	२५
सारण	३५०	४	३५०	५
चम्पारण	२३८	१७	२३८	२६
भागलपुर	३००	—	—	—
मुंगेर	३०००	—	—	—
पूर्णियाँ	५८९०	१६८	५८९०	२३९
सथाल परगना	७०००	—	६०००	—
सहर्षा	५६०	५१	—	—
राँची	१२२	२	१२२	—
पलामू	२०१७	९६	२०१७	१०५
हजारीबाग	१००९	४९	१००९	४९
सिंहभूमि	—	—	—	—
धनबाद	६०	—	—	—
	२०७	४	२०७	४
कुल	२८,९७९	६७२	१९,२६१	५९७

* शाहाबाद जिले में २८८१ कट्ठे जमीन डुमराँव-महाराज के परिवार से प्राप्त हुई है।

— यह चिह्न अप्राप्त आँकड़ों का सूचक है।

मजबूरी को अवसर में बदलें

गाँवों में भूमिवानों से बातचीत करते हुए मालूम हुआ कि मजदूरों के बिना उनका काम नहीं चल सकता। परन्तु उनकी शिकायत है कि वे ईमानदारी से पूरा काम नहीं करते। उधर भूमिहीन मजदूरों की शिकायत है कि उन्हें पूरी मजदूरी नहीं मिलती, हम कब तक इन्हें कमा कमा देते रहेंगे। दोनों तरफ के लोगों से बात करने पर लगा कि एक तरफ बुद्धि और साधन हैं और दूसरी तरफ श्रम और शक्ति और इन दोनों की ही दोनों को जरूरत भी है और कुछ हद तक दोनों में लाचारी का सहयोग भी है, इसलिए क्यों न इस मजबूरी के सहयोग को मन से, दिल से, स्वेच्छा के सहयोग में बदला जाय? उससे सहकार भी सम्भव होगा और शोषण भी बंद होगा। भूमिहीनता भी मिटेगी और मालकियत विसर्जन भी होगा तथा परिवार भावना भी प्रबल होगी।

समस्या का हल मजदूरों की साझेदारी—

इधर गाँव गाँव में उक्त परिस्थिति को देखने से मेरा बराबर चिन्तन चलता रहा और एक दिन मुझे लगा कि मालिक और मजदूर सहयोगी खेती क्यों न करें? मालिक अपने मजदूरों से जितनी जितनी जमीन में बटाई से खेती करा रहे हैं, उतनी-उतनी जमीन का उन्हें साझेदार बना लें और अपनी कुल जमीन में मालिक-मजदूर मिल कर खेती करें और जो परिवार जितना जितना श्रम करें उतनी मजदूरी देकर, कुल खर्चे की रकम बाद देकर जो उपज बचे उसे अपनी-अपनी जमीन के हिस्से के मुताबिक मालिक-मजदूर आपस में बाँट लें। इस प्रकार के प्रयोग से मालिक-मजदूरों का सम्बन्ध सुधरेगा, मजदूर मन लगा कर मेहनत करेगा, मालिक कुछ ज्यादा देगा उसको भी सहन करेगा तथा स्वयं बटाई और निश्चिंतता से मुक्त होगा। परिवार भावना बनेगी, सहकारी खेती की ओर ठीक कदम उठेगा और 'लेवी' और 'दवी', दोनों की ही आवश्यकता नहीं रहेगी।

जिस दिन मेरे मन में यह विचार आया उसी दिन से बराबर गाँव-गाँव में यह विचार मजदूर और मालिकों के सामने रखा। दोनों को ही बहुत पसंद आया। कई लोगों ने यह प्रयोग करने का आश्वासन भी दिया। मेरा विश्वास है कि भूमिहीनों की समस्या व सहकारी खेती की सफलता के लिए इस विचार और प्रयोग से आशातीत सफलता मिल सकेगी और ग्रामदान और ग्रामीकरण के लिए सुगमता हो सकेगी।

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

आज तीन दिन के बाद बाबा घूमने निकले। संध्या का समय था। आश्रम की हद छोड़ कर दाहिने मुड़ गये। जरा दूर एक छोटे टीले पर जाकर हम सब लोग बैठ गये। सामने दूर तक पेड़ और पेड़ों के पीछे पहाड़ नजर आ रहे थे। सूर्यनारायण धीरे-धीरे पहाड़ों के नीचे उतर रहा था। पंछी अपने घोसले की तरफ आ रहे थे। सामनेवाले छोटे, टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर से लोग खेत से घर की ओर लौट रहे थे। किसी की भी कृति में किसी प्रकार की जल्दी नहीं थी। शांति से व्यवहार हो रहा था। कुछ देर तक हम सब शान्ति से मौन हो बैठे थे। सबकी चित्तवृत्तियाँ मानो शान्ति से स्तब्ध थी। फिर धीरे-धीरे बाबा कहने लगे, "हमारी वृत्तियाँ शाम के समय आत्मा के अन्दर लौट रही हैं।

परा हि मे विमन्यवः पतन्ति वस्यइष्टये। वयो न वसतीरुपम्।
परा मे यन्ति धीतयो गावो न गव्यू-तीरनु। इच्छन्तीरुरु चक्षसम्।

"वयः याने पक्षी शाम को जैसे अपने घोंसले के तरफ आते हैं, वैसी ही मेरी विविध भावनाएँ, वृत्तियाँ व चिंतन अंदर लौट रहे हैं। 'परा हि मे विमन्यवः पतन्ति वस्यइष्टये'—वह जो परमात्मा सबसे सुन्दर और सबसे रमणीय है, उसके दर्शन के लिए, प्राप्ति के लिए, परमात्मा में लीन होने के लिए मेरी भावनाएँ वेग से अन्दर आ रही हैं। शाम को सब भावनाएँ अन्दर आ जानी चाहिये। फिर सुबह सब उठ कर सेवा के लिए बाहर आयेंगी। जैसे गाय सुबह निकलती है चरने के लिए घास वाले खेत की तरफ, वैसे मेरी वृत्तियाँ सेवा के लिए बाहर आ रही हैं।"

तीन दिन से द्वारिक भाई के गेरुआ आश्रम में ही पड़ाव था। बाबा की तबीयत कुछ ठीक नहीं थी। दो रोज से बुखार आ रहा था। टेंपरेचर ९९.६° तक गया था। कमजोरी बहुत महसूस हो रही थी। इसीलिए सोचा गया कि दो-तीन रोज गेरुआ में ही ठहरेंगे। बाबा ने तो इस योजना को एकदम अमान्य किया। लेकिन बाईदेव और द्वारिक भाई जब जिद पकड़ कर बैठे, तब आखिर बाबा ने मान लिया। तीन रोज बाबा और बाबा के कुछ साथी आश्रम में ही रहे। बाकी कार्यकर्ता काम के लिए आस-पास के गाँवों में निकल गये। एक ही दिन में यह खबर आसपास फैल गयी। डाक्टर को बुलाना या नहीं बुलाना, चर्चा चल रही थी; लेकिन बाबा ने कह दिया, 'अरे भाई, मेरी दवाई तो ग्रामदान है, वह लेकर आओ।' कार्यकर्ता तीनों दिन ठीक 'दवाई' लाते रहे और इधर बाबा का अपना हरिनाम का अध्ययन चलता रहा। बदन बुखार से गरम था, शरीर बहुत कमजोर था; फिर भी दिन भर 'नाम-घोषा' पढ़ते रहे। उसी दिन 'मैत्री-आश्रम' का पहला नया प्रकाशन 'नाम-घोषा सार', लेकर गौतम गौहाटी से आया। नीले कवर की वह छोटी किताब हाथ में लेकर दिन भर बाबा पलंग पर लेटे रहे। उस हालत में भी विनोद चल ही रहा था। गौतम से कहने लगे, 'तुम्हारी किताब तो बहुत अच्छी है, हलकी! बीमार आदमी भी हाथ में लेकर पढ़ सकता है।' पाँचवें दिन बुखार उतर गया। यात्रा तो चौथे दिन से ही शुरू हुई। अभी भी कुछ कमजोरी है, लेकिन स्वास्थ्य ठीक है।

द्वारिक भाई का यह आश्रम १९५२ में शुरू हुआ। इस आदिवासी क्षेत्र में आश्रम का बहुत अच्छा प्रभाव है। द्वारिक भाई खुद यहाँ के एक अच्छे सर्वोदय-कार्यकर्ता हैं। दस साल से, बहुत लगन से वे यहाँ काम कर रहे हैं। द्वारिक भाई तो आश्रम के बनने का और इतनी अच्छी तरह से यहाँ काम हो सकने का सारा श्रेय यहाँ के मौजादार को देते हैं। यह मौजादार कार्यकर्ताओं के लिए एक आश्रयस्थान हैं। आवश्यकता होने पर ये कार्यकर्ता अपना घर समझ कर मौजादार साहब के घर में रह भी सकते हैं और जरूरत पर उनसे मार्गदर्शन भी पाते हैं। हाथ में एक बड़ा भारी डण्डा लेकर मौजादार बाबा के साथ तीन-चार रोज घूमते रहे। बाबा ने तो उनका नाम 'लकड़ीवाला' ही रख दिया। मौजादार साहब खूब चाहते थे कि आश्रम को बाबा का मार्गदर्शन मिलें। द्वारिक भाई और मौजादार साहब आश्रम के कार्यकर्ताओं के साथ बाबा के पास आये। बहुत अच्छी तरह से चर्चा हुई। द्वारिक भाई कहने लगे, "बाबा, हम चाहते हैं कि कार्यकर्ताओं के विकास के बारे में आप कुछ कहें।"

बाबा ने कहा, "हमारे सामने तीन समस्याएँ हैं। एक तो यह कि हमारा अपने मन पर काबू कैसे हो? सर्वप्रथम यह समस्या हल करनी होगी। आत्म-विजय चाहिए—'महत्तर सेन हरिकथा असे मनव लियो भाई" असल में मन पर काबू, सत्ता पाने का सवाल है। इसके बिना मनुष्य सेवा करने की इच्छा रखता हुआ भी संसार में फँसता जाता है और धीरे-धीरे मकान का वृद्ध बनता है। फिर शरीर को हवा सहन नहीं होती, धूप सहन नहीं होती, बारिश सहन नहीं होती। फिर किसी आश्रम का या मठ का आश्रय लेता है और धीरे-धीरे कालग्रस्त हो जाता है। इसलिए चित्त पर काबू होना चाहिए तभी संसार से बचा जा सकता है।

दूसरी बात, कार्यकर्ता आपस-आपस में प्रेम से मिलजुल कर काम करें। सब कार्यकर्ता, फिर वे पंद्रह-बीस क्यों न हों, एकजीव, 'एकरस होकर' काम करेंगे तो काम सही तरह से आगे बढ़ सकेगा और व्यक्ति का विकास भी होगा।

तीसरी बात, आप लोगों के सामने जो जनता है, उसको 'फेस' करना है। जनसाधारण के सम्मुख हम लोग कम आते हैं, राजनैतिक पक्ष बहुत ज्यादा काम करते हैं ऐसा नहीं, लेकिन जनता के सामने आते हैं और हमारी पार्टी को करोड़ों मत मिले ऐसा जाहिर करते हैं। हम जनता के पास जाकर विचार समझाते हैं और हमारे विचारों को जनता कबूल करती है। छह लाख लोगों ने दान दिया, माने हमको उतने मत ही मिले। लेकिन हमको करोड़ों का 'रपोर्ट' चाहिए। इसलिए आपको सारे प्रदेश में व्यापक होना चाहिये। सतत घूमते रहेंगे तो यह होगा। लेकिन इसके बदले में हमने संस्था बना रखी। छोटी-छोटी संस्थाएँ समिति हो जाती हैं। किसी एक कोने में हमारा काम चलता रहे और वह व्यापक फैला हुआ नहीं हो तो वह काम सूख जायेगा। संस्थाएँ खोलें, लेकिन गाँव के लोग ही उनकी जिम्मेदारी लें। हम तो घूमते रहें, व्यापक बनें।

आज बहुत सुबह-सुबह पड़ाव पर पहुँचे। पड़ाव नजदीक आया तो बाँसुरी की मधुर आवाज कान पर आयी। आदमियों का एक समूह सामने खड़ा था। दोनों बाजू कतार में बैंडवाले खड़े थे और बीच में नीले, पीले, काले रंग के अपने खास वस्त्र पहनी हुई आदिवासी युवतियाँ एक हाथ में तलवार और एक हाथ में मयूरपंख लेकर खड़ी थी। बाबा के पास पहुँचते ही बैंड की ताल पर नृत्य आरंभ हुआ। दिल्ली, बंबई जैसे शहरों में ऐसे नृत्य देखने के लिए टिकट खरीदनी पड़ती है और सीमित जगह में बिजली के प्रखर प्रकाश में देखना पड़ता है। आज उषःकाल की प्रभा में, नीले आकाश के नीचे यह मुक्त नृत्य सहज ही देखने को मिला। पड़ाव पर पहुँचते ही गाँव ने अपना ग्रामदान जाहिर किया। इस आदिवासी क्षेत्र में प्रेम का बहुत लाभ हुआ। छोटे-छोटे गाँवों में भी भर-भर कर प्रेम और आदर पाया। अभी तक गौहाटी महकमे (कामरूप जिले का गौहाटी सबडिवीजन) में ३२ ग्रामदान मिल चुके हैं। फिलहाल हम जहाँ घूम रहे हैं, वह आदिवासी क्षेत्र है। इस क्षेत्र में मुख्यतः 'कछारी' लोग हैं। कछारी जाति में 'ब्रह्म' एक धर्म संप्रदाय है। इस सम्प्रदाय के लोग उपनिषद् को अपना मुख्य ग्रंथ मानते हैं। इस जाति के प्रमुख को ग्रामदान में बहुत दिलचस्पी है। वे गाँव-गाँव में जाकर लोगों को ग्रामदान के बारे में समझा रहे हैं।

असम प्रदेश समाज-कल्याण-बोर्ड की अध्यक्षा श्रीमती शोभा बाबा से मिलने के लिए आयी थीं। कह रही थीं कि वह सर्वोदय-क्षेत्र में काम करना चाहती हैं। केंद्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने असम के ग्रामदानी विभाग के लिए खास योजना बनायी है। उस बारे में भी वह बाबा से चर्चा करना चाहती थीं। दो-तीन रोज वह यात्रा में थीं। बाबा ने उनको एक नयी योजना दी :

"हर गाँव में साल में एक रुपया देने वाला सर्वोदय का एक सदस्य हो। वह अपने घर पर 'साइन बोर्ड' लगाये—'सदस्य, सर्वोदय-समाज।' वह एक रुपया देगा और उसके पास हमारा एक पत्रक (पेपर) रहेगा। वह हमारे विचारों को पसंद करता है, इतना बस है; हमारा उसके आचरण से संबंध नहीं। उसका पता आपके पास रहेगा। हिंदुस्तान में पाँच लाख गाँव हैं, तो हमारे पाँच लाख 'साइन बोर्ड' होने चाहिये। उस मनुष्य के पास हमारा चार आने का एक पत्रक हो। चार आने का पत्रक उसके पास देना और वे चार आने उसने लौटा दिये साल भर में, तो काम किया पत्रक का ऐसा मानना चाहिये। पाँच लाख पते हमारे पास तैयार हों। हमारा कोई मनुष्य या मित्र उस गाँव में काम के लिए जाय तो उसी सदस्य के पास ही पहुँचेगा। उसने हमको एक रुपया दिया है, तो वह एक रुपये का खाना भी खिलायेगा अतिथि को। एक आश्रय-स्थान मिलेगा। चाहे वह किसी राजनैतिक पक्ष का सदस्य हो, उसका कोई भी धंधा हो, हमारा उससे संबंध नहीं। हम तो सिर्फ चाहते हैं कि वह अपने घर पर एक 'साइन बोर्ड' लगाये—'सदस्य सर्वोदय-समाज।' गौहाटी शहर में ऐसे दो सौ 'साइन बोर्ड' होने चाहिये। जो व्यक्ति हमारी पत्रिका का ग्राहक बनेगा, उसको अलग से नया रुपया देने की जरूरत नहीं।

"आप हिंदू हैं। हिन्दू धर्म पर आप विश्वास रखते हैं, तो रोज संध्या करनी चाहिये, सुबह जल्दी उठना चाहिये। यह आप करते नहीं, लेकिन आप हिन्दू हैं यह आप मानते हैं। धर्म सिर्फ इतना चाहता है कि आप हिन्दू हैं, यह मानें; वैसे हम सर्वोदय-समाज के सदस्य हैं, इतना ही वे मानें। अलग-अलग पक्ष के और धर्म के लोग सदस्य होंगे। उनमें झगड़ा नहीं होगा। एक राजकीय पक्ष के दो सदस्य जैसे मानते हैं कि मैं हिंदू हूँ, मैं मुसलमान हूँ; वैसे सर्वोदय समाज के सदस्य होते हैं तो पक्ष, धर्म, भाषा से कुछ भेद नहीं होता।

"सर्वोदय पात्र, सूतांजलि और सर्वोदय-सदस्यता—ये तीन योजनाएँ लेकर हमको गाँव-गाँव पहुँचना है। सवाल यह है कि हम सारे भारत में पहुँच सकते हैं या नहीं। हमारी प्रतिष्ठा हम देहात-देहात में पहुँचते हैं तभी होती है।"

बाईदेव आदि का यह योजना बहुत पसंद आयी। पाटिल साहब भी यह योजना सुन कर खुश हुए। श्रीमती शोभा ने तो स्वीकार कर लिया कि वे इस काम को गौहाटी में आरंभ करेंगी। श्रीमती शोभा हमसे पूछ रही थीं, "बाबा तो कालेज शिक्षण के बहुत विरुद्ध हैं न ?" बाईदेव कहने लगी, हमको क्यों पूछती हो, बाबा को ही पूछना अच्छा है। तो बातें जाते उन्होंने पूछ ही लिया, "बाबा, क्या युनिवर्सिटी की शिक्षा स्त्रियों के लिए अच्छी नहीं है ?"

बाबा हँसने लगे और बोले, "नहीं, कालेज में बहिनों को क्या सिखाते हैं ? 'लाजिक' (तर्कशास्त्र) सीखाते हैं। 'लाजिक' में सीखना क्या है ? वह तो गाय भी जानती है। जो गाय मोटर की आवाज से परिचित है, वह मोटर का हार्न सुन कर धीरे से रास्ते के एक बाजू हो जाती है और जो इस आवाज से परिचित ही नहीं है, वह मोटर देख कर उसके आगे ही दौड़ती रहती है, यह 'लाजिक' है।"

हम सब खूब हँसे। बाबा ने तो कालेज में पाया हुआ ज्ञान जानवरों के ज्ञान की श्रेणी में ही रख दिया। लेकिन दूसरे क्षण बाबा गंभीरता से बोलने लगे, "चित्त में अनेक शक्तियाँ होती हैं, लेकिन इनमें से दो शक्तियों का ही संबंध युनिवर्सिटी की शिक्षा से आता है—एक है स्मरण-शक्ति और दूसरी है तर्क-शक्ति। बाकी अनेक शक्तियों के लिए युनिवर्सिटी के शिक्षण से संबंध नहीं है। आपने किताब पढ़ ली तो कितना याद रखते हैं और कैसे अनुमान रखते हैं ! यहाँ दो शक्तियों का संबंध आता है। चित्त की शक्तियाँ तो अनेक हैं। सहयोग, त्याग, सहनशीलता, प्रेम, हिम्मत, साहस, इन सबका शिक्षण से संबंध नहीं है। आपने सत्य पर निबंध लिखा। आपने अच्छा निबंध लिखा तो पास हो गये। फिर आप सत्य बोलते हैं या नहीं, इससे उसका संबंध नहीं, याने जीवन से संबंध नहीं। पहले लड़के और लड़कियाँ घर की सेवा करते थे। अब लड़के तो क्या, लड़कियाँ भी पढ़ने लगी हैं। उनको अभ्यास करना पड़ता है, तो वे घर का काम नहीं करतीं। इसके कारण सेवा करने का स्वभाव रहता नहीं। पुराने जमाने में गुरुगृह में विद्या प्राप्ति के लिए जाते थे, तो वहाँ सेवा करनी पड़ती थी। अब तो गुरुगृह रहा नहीं और सेवा का स्वभाव भी नहीं रहा। बिना सेवा के जो तालीम मिलती है, उस तालीम का अभिमान पैदा करने के अलावा खास उपयोग रहता नहीं।

"बुद्धि के अलावा एक धृति रहती है। धृति याने धीरज। उसका भी शिक्षण में विकास होना चाहिये। उससे आत्मविश्वास बढ़ता है। आजकल नियमन करने की शक्ति विद्यार्थियों में बहुत कम दीखती है। आज जिस उम्र में जितना ज्ञान रहता है, वह पहले के जमाने में नहीं था। लेकिन आत्मविश्वास, निग्रह, नियमन की वृत्ति थी, वह वृत्ति आज नहीं रही। विद्यार्थियों का अपने पर विश्वास नहीं ! शिक्षण एकांगी हो गया है। आज शिक्षण में बुद्धि का विकास होता है, धृति का नहीं। बहनों की शिक्षा में संस्कार हो, श्रद्धा हो, आत्मविश्वास हो, सेवा-कार्य हो, आध्यात्मिक विचार और साहित्य का अध्ययन हो, उत्तम भजन-संगीत हो, स्वच्छता के विज्ञान का पूर्ण ज्ञान हो, सहकार्य हो, अर्थशास्त्र हो, स्वास्थ्य के बारे में ज्ञान हो। ये बातें बहिनों को सिखायी जाय तो बहिनें बहुत काम कर सकती हैं।"

शकुन्तला बाईदेव आज गौहाटी से आयी थीं। बाबा के साथ बातें हो रही थीं। एक महीने की रिपोर्ट पेश की जा रही थी। शकुन्तला बाईदेव बहुत सी जिम्मेदारियाँ होते हुए भी यात्रा में आने के लिए हमेशा उत्सुक रहती हैं। कई बार कहती हैं, 'मन जैसा है, उड़ कर चला आता है यात्रा में।' गौहाटी से जब वे आती हैं, तब गौहाटी की पूरी रिपोर्ट हम लोगों को मिलती है। आज रिपोर्ट पेश करते-करते शकुन्तला बाईदेव ने सहज ही कहा कि 'शरणिया आश्रम' में मच्छर बहुत हुए हैं। शरीर को दिन-रात मच्छर तकलीफ देते रहते हैं।

सुनते ही बाबा ने कहा, "हाँ, आखिर वह है तो 'शरणीया' ही। आदमी, जानवर, कीटक सभी को वह आश्रय देगा। इन मच्छरों को सहन करने की साधना अब तुम लोगों को करनी चाहिए। महावीर ने साधना की थी। एक धोती और एक उत्तरीय वस्त्र पहन कर ही वे रहते थे। ऊपर का वस्त्र कुछ दिनों के बाद फट गया, सिर्फ धोती ही उनके बदन पर रही। घूमते थे, तो जंगल में से भी घूमना पड़ता था। अतः काँटे लग-लग कर के वह धोती भी फट गयी, तो वैसे ही रहते थे। वे जो साधना करते थे, उसको 'परिषहजय' साधना कहते हैं। मच्छर इत्यादि जंतु शरीर को दंश करें तो आनंदानुभूति होनी चाहिए। जैन शास्त्र में 'परिषहजय', यह एक खास शब्द है। हम भोजन करते हैं वैसे मच्छरादि का भी हमारे शरीर पर भोजन हो रहा है, यह परोपकार हो रहा है, ऐसी साधना महावीर ने कई दिन की थी। ऐसी साधना करने वाले हिंदुस्तान में बहुत निकले। उन्होंने ब्रह्मविद्या को समृद्ध किया। भारत का आध्यात्मिक विचार समृद्ध, परिपुष्ट है। इसका लाभ लेकर हम चलें तो आराम से परमार्थ-मार्ग पर चल सकते हैं। लाभ न उठायें और बार-बार वही चीज उठायें तो फायदा नहीं। अनुभवों से फायदा उठा लेना चाहिए। विज्ञान में एक खोज हुई तो उसे समझ कर आगे बढ़ते हैं। खोज में गलती हुई हो तो फिर से करेंगे। लेकिन जहाँ खोज पूर्ण हुई है वहाँ खोज का लाभ उठाना होता है। हम लोगों को आदत पड़ी है कि एक मंदिर बना देंगे और उसके चारों ओर घूमा करेंगे, प्रदक्षिणा करेंगे। वही-वही चीज हम करते हैं। चलते हैं तो हमारी गति कुंठित होती है। हमने एक बार कहा था, आत्मा की शक्ति विकसित करने के लिए तीन चीजों की आवश्यकता है : (१) इंद्रिय, मन, बुद्धि पर काबू। (२) अनेक सज्जनों के साथ रहना। (३) आम जनता को 'फेस' करना, उनके सम्मुख जाना।" [असम यात्रा, ३-५-'६२]

शारदापुरी : भूदान-कालनी

दत्तोबा दास्ताने

"भूदान यज्ञ" के २ फरवरी, '६२ के अंक में शारदापुरी भूदान-बस्ती के संबंध में मैंने जानकारी दी थी। उस लेख के प्रकाशित होने के बाद कुछ मित्रों की ओर से मुझे सूचना मिली है कि उस भूदान-बस्ती के संबंध में कुछ जानकारी अपूर्ण और अशुद्ध रह गयी है। उन मित्रों ने जो अधिकृत जानकारी भेजी है, उसके आधार पर यह स्पष्टीकरणात्मक छोटा नोट दे रहा हूँ। मेरे पिछले लेख का यह परिशिष्ट माना जाय।

उत्तर प्रदेश के जमींदारी-उन्मूलन के १९५२ के कानून के बाद यहाँ के मुस्लिम जमींदार श्री सम्सुल हसन द्वारा ७५०० एकड़ भूमि भूदान में प्राप्त हुई। इस भूमि के काफी हिस्से में जंगल था और अभी भी है। जंगल विभाग ने भूदान-समिति से जंगल के बदले में बस्ती योग्य भूमि की अदला-बदली की। अब बामनपुर भगीरथ मौजे में ११००, बेल्हा मौजे में २९०० और बीरखेड़ा मौजे में ३५०० एकड़ कुल मिला कर ७५०० एकड़ भूमि है। उसमें से सिर्फ ११०० और २९०० एकड़ वाले मौजे में बस्तियाँ बसी हैं। बीरखेड़ा मौजा अभी खाली पड़ा है।

इस भूमि के दाखिल खारिज होने में कुछ कानूनी दिक्कतें थीं। वह अब हल होने आयी हैं और जल्दी ही यह जमीन 'शारदापुरी सर्वोदय सहकारी समिति' के नाम पर चढ़ेगी। लेकिन अब तक नहीं चढ़ी है।

कुल परिवार ३५० और जनसंख्या १२०० है। परिवार में एक ही व्यक्ति होगा तो पाँच एकड़, अन्यथा दस एकड़ प्रति परिवार के हिसाब से जमीन बाँटी गयी है। हरएक बस्ती में कुछ जमीन सार्वजनिक काम के लिए रखी गयी है।

कुल पैदावार का बँटवारा ३० प्रतिशत परिवार के हिसाब से और ७० प्रतिशत श्रम के हिसाब से किया जाता है।

इन पाँच बस्तियों को देहात कहना शायद ठीक नहीं होगा। फिलहाल इन पाँच बस्तियों की रजिस्टर्ड समितियाँ दर्ज की गयी हैं। अभी तो शारदापुरी बस्ती बेल्हा ग्राम पंचायत में और अन्य चार बस्तियाँ बामनपुरी भगीरथ ग्रामपंचायत में लिखी गयी हैं। लेकिन इन पाँचों बस्तियों को 'शारदापुरी' के नाम से स्वतंत्र ग्रामपंचायत के रूप में मान्य कराने की कोशिश हो रही है।

शारदापुरी में जो काम चलता है, उसके लिए आर्थिक सहायता उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि ने दी है।

जून १९६१ तक निम्न प्रकार निधि का खर्च हुआ है :

वेतन आदि	१२,३४६ रु.
जमीन-तोड़ाई	४३,७८५ रु.
बैल-खरीद	३६,००० रु.
पानी-व्यवस्था	२,७०१ रु.
कुल	९४,८३४ रु.

प्रारंभ में बीज के लिए तेरह हजार रुपये कर्ज के रूप में दिये थे, वे वापिस मिल गये हैं। बैल खरीद के पैसे वापिस करने होंगे, ऐसा बस्तीवालों को कहा गया है। लेकिन अभी तो वह पैसा गांधी निधि खर्च कर चुकी है।

भूमि की सर्वे आदि का कार्य गांधी-स्मारक निधि के सर्वेअर्स द्वारा किया गया है।

इस बस्ती को जाने के लिए जो रेलवे स्टेशन है, उसका नाम गलती से पलामू कलाँ लिखा गया था। वास्तव में वह पलियाकलाँ है।

नेपाल की सीमा सिर्फ ५-७ फर्लांग पर दिखाई देती है। हर परिवार को पाव एकड़ भूमि दी है। उसमें 'किचन गार्डेन' आदि के अलावा आवास भी शामिल है।

प्राथमिक पाठशालाएँ एक नहीं, बल्कि तीन चल रही हैं। एक बहन भी सरकारी ग्राम-सेविका के तौर पर वहाँ के बालक बालिकाओं में काम करती है।

कोल्हू १८२ नहीं, बल्कि १२ हैं और बछड़े आदि मिला कर जानवर १८२ हैं।

सहकारी समिति की ओर से जो दूकान वहाँ चलायी जा रही है, वह घाटे में चलती है। बिक्री भी कम होती है, क्योंकि नकद व्यवहार की शर्त है। लेकिन अन्य दो तीन अनधिकृत दूकानें वहाँ खुल गयी हैं, जो उधार माल देती हैं। सहकारी-समिति इन दूकानों को सहकारी भंडारों में परिवर्तन करे, ऐसा सुझाव आया है। गांधी स्मारक निधि की ओर से दो कार्यकर्ता नियुक्त हैं। खादी-कमीशन द्वारा एक कार्यकर्ता है और अन्य एक कार्यकर्ता दूकान की व्यवस्था में हैं। लेकिन कार्यभार को देखते हुए अधिक शक्तिशाली और अधिक संख्या में कार्यकर्ताओं की वहाँ आवश्यकता है।

मध्य प्रदेश की चिट्ठी

बृहत्तर ग्वालियर नगर में बढ़ती हुई शराब की खपत और नशाखोरी पर विचार करने के लिए गत ता० २८ अप्रैल को म० प्र० सर्वोदय मण्डल के आवाहन पर नागरिकों की एक बैठक हुई। उस बैठक में नगर में बढ़ती हुई शराब की खपत की ओर ध्यान आकर्षित कराते हुए म० प्र० सर्वोदय मण्डल के मन्त्री श्री हेमदेव शर्मा ने जानकारी दी कि गत वर्ष, १९६१-६२ में ग्वालियर नगर में ८४,८८७ गैलन शराब बेची गयी, जिससे सरकार को तो ७,६४,६२२ रु० का लाभ हुआ; लेकिन शराब पर यहाँ की जनता के कुल २४,२५,८२६ रु० खर्च हुए। बृहत्तर ग्वालियर की जनसंख्या २,९३,९२७ है। इस प्रकार नगर में प्रति व्यक्ति ८ रु० २५ न० पै० औसत खर्च आया है। बैठक को यह भी जानकारी दी गयी कि लगभग इतनी ही शराब नगर में अवैध तरीके से भी बेची जाती है।

इसलिए सामाजिक, आर्थिक, नैतिक और लोक स्वास्थ्य की दृष्टि से यह गम्भीर चिन्ता का विषय है और इस पर विचार किया ही जाना चाहिये। गत मार्च माह में इन्दौर में हुई मद्य निषेध गोष्ठी के सुझावों से भी बैठक को अवगत कराया गया। परस्पर विचार विनिमय के पश्चात् नगर में नशाबन्दी के लिए उपाय खोजने, उसके लिए कार्यक्रम तैयार करके उस पर अमल करने के लिए मेयर, नगरपालिका-निगम की अध्यक्षता में १५ सदस्यों की एक मद्य निषेध समिति का गठन किया गया।

म० भा० भूदान यज्ञ पर्षद के द्वारा ग्वालियर जिले के बिलौआ ग्राम में जिले के १८ ग्रामों के ३१ भूमिहीन परिवारों को लगभग १६ बीघा भूमि के पट्टे सम्मान-पूर्वक समर्पित किये गये।

अगले वर्ष के लिए डा० श्री रघुवीर सिंह ग्वालियर जिले के प्रतिनिधि और श्री भूपकिशोरजी जिला संयोजक चुन लिये गये हैं। ग्वालियर जिले में कुल २७ लोकसेवक हैं।

जिला शिवपुरी की जनता ने हस्ताक्षरसहित शहर के बीच स्थित शराब की दुकान को हटाने की माँग आबकारी विभाग से की है। वहाँ के नागरिकों का कहना है कि नगर के वातावरण को स्वच्छ करने तथा बच्चों में दुर्व्यसन के संस्कार न पड़े इस दृष्टि से और लोक स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए वहाँ से शराब की दुकान हटायी जानी चाहिये।

भूमि-वितरण : गुना जिले की मुंगावली तहसील में म० भा० भूदान-यज्ञ पर्षद द्वारा आयोजित समारोह में १० ग्रामों के १०० भूदान-कृषकों को ८७६ बीघा भूमि के पक्के पट्टे सम्मान-पूर्वक समर्पित किये गये। इसी अवसर पर मुंगावली कस्बे के श्री बाबू जगन्नाथ प्रसाद पालीवाल के सहयोग से २५ घरों में सर्वोदय पात्र की भी स्थापना हुई।

महावीर-जयंती के शुभ अवसर पर मुंगावली के तरुण वकील श्री राजेन्द्र-कुमार सिंघई ने भूदान-कृषकों के न्याया-धीन प्रकरणों में निःशुल्क पक्ष-समर्थन करने के संकल्प किया है।

दतिया जिले में सूत्रांजलि में ३१५ गुण्डियाँ प्राप्त हुईं।

जिला होशंगाबाद के सर्वोदय-मण्डल की ओर से श्री हरिदास मंजुल अ० भा० सर्व सेवा संघ के लिए जिला-प्रतिनिधि चुन लिये गये हैं। जिले के सर्वोदय-कार्य के संयोजन का काम भी उन्हीं को सौंपा गया है।

जिला बालाघाट के ७ ग्रामों के १६ दाताओं द्वारा २० भूमिहीन परिवारों में ६७ एकड़ ५१ डेसीमल भूमि वितरित की गयी। २ दाताओं द्वारा ३ एकड़ १० डेसीमल भूमि के नये दानपत्र प्राप्त हुए। भूमि उसी समय वितरित की गयी। जिले में ९९ मील की पदयात्रा में २५ ग्रामों से सम्पर्क साधा गया और सर्वोदय का सन्देश वहाँ के निवासियों को पहुँचाया गया। जिला सर्वोदय मण्डल को १८ रु० की आर्थिक सहायता भी प्राप्त हुई।

जिला दुर्ग में भिलाई नगर के कैम्प नं० एक में प्राथमिक सर्वोदय मण्डल का गठन किया गया है।

महाकौशल भूदान यज्ञ मंडल द्वारा गत मार्च माह में २०३ एकड़ ८६ डेसीमल जमीन का वितरण किया गया। ४९ एकड़ ७४ डेसीमल नयी भूमि भी प्राप्त हुई।

जिला टीकमगढ़ के सर्वोदय-मण्डल द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में ६ मई को भारत की उपशिक्षा मन्त्राणी डा० श्रीमती सौन्दरम् रामचन्द्रन् ने भाग लिया।

टीकमगढ़ जिले में सूत्रांजलि से ११६ रु० ४६ न० पै० प्राप्त हुए हैं। इसमें से प्रदेश को छठा हिस्सा, १९ रु० ११ न० पै० प्राप्त हो गया है।

जिला सीधी में इस वर्ष २०४ और जिला रीवाँ में ४७१ गुंडियाँ सूत्रांजलि में प्राप्त हुई हैं।

म० भा० खादी-संघ से प्राप्त जानकारी के अनुसार सूत्रांजलि में प्राप्त ८५३ गुंडियाँ उनके विभिन्न खादी आश्रमों में जमा हुई हैं। इनका मूल्य २३१ रु० ३८ न० पै० सूत्रांजलि खाते में जमा किया गया है।

चम्बल घाटी क्षेत्र के अम्बाह परगने में बागियों और पुलिसों द्वारा पीड़ित परिवारों के ६ बच्चों को १२ रु० माहवार के हिसाब से छात्रवृत्ति दिया जाना तय हुआ है। यह छात्रवृत्ति ग्वालियर नगर में सर्वोदय-पात्रों द्वारा एकत्रित रकम में से दी जायेगी। ये छात्रवृत्तियाँ आगामी १ जुलाई से फिलहाल एक वर्ष के लिए देना तय किया गया है। चम्बल घाटी क्षेत्र में बागियों और पुलिसों द्वारा पीड़ित परिवारों के ३४ बच्चों को चम्बल घाटी शान्ति-समिति की ओर माहवार १६॥ रु० छात्रवृत्ति दी जा रही है।

ता० १७-१८ मई को कनेरा, भिण्ड में चम्बल-घाटी क्षेत्र में काम करने वाले कार्यकर्ताओं की एक अनौप-चारिक बैठक होने जा रही है। अभी तक के काम के सन्दर्भ में भावी कार्यक्रम पर विचार करने के लिए इस बैठक का आयो-जन किया गया है।

प्रो० गोरा ने २५ मार्च को भिण्ड, २६ को मुरैना और २७ को जौरा में आयोजित सभाओं में निर्दलीय लोकतन्त्र के विषय में अपने विचार व्यक्त किये।

म० भा० भूदान-यज्ञ पर्षद के तत्वाव-धान में इन्दौर जिले की देपालपुर तथा सांवेर तहसील के २६ ग्रामों के ६० भूमिहीन कृषकों को भूदान-आन्दोलन में प्राप्त १२६.७२ एकड़ भूमि के पक्के पट्टे अलग-अलग समारोहों में वितरित किये गये। देपालपुर में पट्टा-वितरण समारोह की अध्यक्षता श्री तहसीलदार महोदय ने की, जब कि पालिया ग्राम में उपमंत्री श्री सज्जन सिंह विश्नार ने पट्टे वितरित किये।

'ग्राम स्वराज्य' सप्ताह का अंतिम दिवस होने के कारण पालिया में स्थानीय ग्राम-स्वराज्य समिति के सभापति श्री शिवराम मंडलोई की अध्यक्षता में आयोजित ग्राम सभा में "ग्रामस्वराज्य घोषणा-पत्र" म० प्र० शांति-सेना मंडल के संयोजक श्री दीपचंद जैन द्वारा पढ़ा गया, जिसे ग्रामीणों ने सामूहिक रूप से दोहराया।

रामनवमी के पर्व पर ग्राम स्वराज्य समिति द्वारा एक पशु प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया, जिसमें अच्छी नस्ल के चौपायों को पारितोषिक वितरित किया।

'निस्पृहता का आदर्श' : एक स्पष्टीकरण

स्व० श्री नानाभाई भट्ट भारतवर्ष के शिक्षा शास्त्रियों में एक विशिष्ट स्थान रखते थे। शिक्षण के जगत् में वे एक ऋषि थे। उन्होंने अपने अन्तर्निरीक्षण द्वारा तात्त्विक और व्यावहारिक दृष्टि से अनेक प्रयोग किये, जो आज शिक्षण की दुनिया में विख्यात हैं। इसी प्रयोगवीर द्वारा गुजराती भाषा में लिखित 'घडतर अने चणतर' नामक पुस्तक गुजरात में बहुत प्रसिद्ध है। महात्माजी की आत्मकथा के बाद जीवन चरित्रों में उसकी गणना होती है। इस प्रसिद्ध पुस्तक का सर्व सेवा संघ ने हिन्दी में अनुवाद कराया। उसका कुछ अंश 'भूदान-यज्ञ' के पिछले दो अंकों में प्रकाशित हुए हैं।

स्व० नानाभाई ने अपनी पुस्तक के किसी प्रकरण में कोई शीर्षक नहीं दिया है। 'भूदान यज्ञ' में उस पुस्तक का अंश प्रकाशित करने के लिए शीर्षक देना आव-श्यक था। वह काम हमने किया। विद्यार्थी-अवस्था से ही स्व० नानाभाई हमारे श्रद्धेय रहे हैं। इससे शीर्षक देते समय हमारा मानस प्रधानता पा गया और पाठकों को यह आशंका हुई कि क्या नानाभाई जैसा व्यक्ति अपने लिए 'निस्पृह' विशेषण का प्रयोग कर सकता है!

हमारी इस भूल के लिए क्षमा करते हुए पाठक मूल पुस्तक में बिना शीर्षक के प्रकाशित उस अंश को पढ़ कर स्व० नानाभाई की महत्ता का अधिक दर्शन कर सकेंगे। —अनुवादक

सूचनाएँ :

शिवदासपुरा में नई तालीम विद्यालय का नया सत्र

लोक भारती, शिवदासपुरा में नई तालीम विद्यालय का नया सत्र १५ जून, '६२ से आरम्भ होगा। इस वर्ष में ८ वर्ष की आयु से ही बालकों के लिए छात्रावास की व्यवस्था की गयी है। जो लोग बुनियादी शिक्षा में विश्वास रखते हैं, वे अपने बालकों को अपने विचारों के अनुसार शिक्षित करवा सकें, इसके लिए यह सुविधा की गयी है। छात्रावास का २० रु० और शिक्षण-व्यय का ५ रु०, इस प्रकार २५ रु० मासिक खर्च होगा। जो लोग अपने बालकों को भेजना चाहते हैं, वे संचालक, लोक भारती, शिवदासपुरा, राजस्थान से पत्र-व्यवहार करें। प्रवेश-पत्र व नियमावली के लिए एक रुपया अग्रिम भेजना चाहिए। —आचार्य, लोकभारती, शिवदासपुरा

सेवापुरी में कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण

अ० भा० खादी ग्रामोद्योग-आयोग द्वारा संचालित श्री गांधी आश्रम खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय (खादी) सेवापुरी, वाराणसी का सातवाँ सत्र आगामी अगस्त माह से प्रारम्भ होगा। आवेदकों की निम्नतम शैक्षणिक योग्यता हाईस्कूल, उत्तर बुनियादी अथवा उसके समकक्ष तथा उम्र १८ से २५ वर्ष तक होनी चाहिये। कताई-बुनाई का ज्ञान रखने वालों को प्राथमिकता दी जायगी। खादी ग्रामोद्योग में रुचि रखने वाले ही आवेदन-पत्र दें। शिक्षण की अवधि डेढ़ वर्ष की होगी, शिक्षण-काल में ४१ रुपये छात्रवृत्ति मिलेगी। आवेदन-पत्र संचालक, श्री गांधी आश्रम खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय (खादी) सेवापुरी, वाराणसी के पते से १५ जून तक भेजें।

—संचालक

पंजाब में सर्वोदय-कार्य

हिसार जिला सर्वोदय-मंडल द्वारा मार्च और अप्रैल माह में ७०० सर्वोदय-पात्रों से १८२ रु० ७८ न० पै०,तथा अन्य सम्पत्ति-दाताओं से ७११ रु० ६५ न० पै० संग्रहीत हुए। हिसार पुस्तक भण्डार द्वारा ९१२ रु० और सिरसा पुस्तक भण्डार द्वारा २५० रु० के सर्वोदय-साहित्य की बिक्री हुई। जमीन के बँटवारे के लिए मण्डल के कार्यकर्ताओं द्वारा ३५ गाँवों का दौरा किया गया। सागवन ग्राम में ४४३ बीघा जमीन और १००० बीघा मौरुसी जमीन का मुआवजा लगभग ३००० रु० सम्पत्तिदान में मिलने की बात है। इसके लिए श्री परमानन्द शर्मा कार्रवाई कर रहे हैं।

हिसार नगर में दादा गणेशीलाल द्वारा नशाबन्दी-प्रचार किया गया। पिछले दिनों यहाँ दाता-संघ की बैठक में यह भी तय किया गया कि जिले में नशानिषेध के लिए अगस्त के अंत में एक सम्मेलन रखा जाय और शराब के ठेकों को बंद करने के लिए पंचायतों के माध्यम से जोरदार प्रयत्न किया जाय।

करनाल जिला सर्वोदय मण्डल में पूरा समय देने वाले ५ कार्यकर्त्ता हैं। वहाँ ९०० एकड़ भूमि दान में मिली थी, जिसका वितरण कार्य जारी है। गत वर्ष ३७४० रु० २९ न० पै० का सर्वोदय-साहित्य बेचा गया और भूदान-पत्र-पत्रिकाओं के ५४ ग्राहक बनाये गये। खादी-विद्यालय समालखा, महाविद्यालय नीलोखेड़ी और खादी-आश्रम पानीपत से क्रमशः ३०-३० और ५० रु० मासिक रूप में नियमित सम्पत्ति दान मिल रहा है।

करनाल के सर्वोदय-मण्डल द्वारा पानीपत के चौड़ा बाजार में एक 'गांधी अध्ययन केंद्र' खोला गया था, जो अब स्वावलंबी बन गया है। इस केन्द्र को पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं की प्रारंभिक सहायता पट्टी कल्याणा के गांधी स्मारक निधि ने प्रदान की थी। 'पंचायती राज' के संबंध में लोक-शिक्षण के वास्ते जिला सर्वोदय-मण्डल की ओर से हिंदी और उर्दू में "सरपंचों व पंचों की सेवा में निवेदन" पुस्तिका हजारों की संख्या में छपवा कर बाँटी गयी। खादी-ग्रामोद्योग विद्यालय, समालखा में इलाके की ५० पंचायतों का एक सम्मेलन किया गया।

सर्वोदय-शिविर सम्पन्न

गांधी विचार केन्द्र, कानपुर में चलने वाला त्रिदिवसीय सर्वोदय-शिविर ता० ३२ को सम्पन्न हुआ। अन्तिम दिन शिविर ने सहजीवन का रूप लिया, जिसमें नगर के विभिन्न क्षेत्रों के ३५ कार्यकर्ता शामिल हुए। सहभोज में ५ भंगी भाई भी सम्मिलित थे।

कार्यकर्ताओं ने श्री महादेव वाजपेयी तथा श्री ओमप्रकाश गौड़ की उपस्थिति में निश्चय किया कि नगर में शांति सेना का संगठन व्यापक एवं सक्रिय किया जाय और प्रत्येक शान्ति-सैनिक कुछ न-कुछ दान करे तथा कम से-कम १ घंटा प्रति दिन अपने प्रेम क्षेत्र में सर्वोदय पात्र, साहित्य-प्रचार और विभिन्न सेवा-कार्यों में लगाये अथवा नशाबन्दी, भंगीमुक्ति, रोगी-सेवा, अश्लील साहित्य निवारण और मजदूर-समस्या में से किसी एक के अहिंसक हल के लिए प्रयत्न करे।

शान्ति-सैनिकों की रैली १५ दिन में एक बार हुआ करेगी।

इन्दौर सर्वोदय-मंडल के चुनाव

ग्राम पालिया में आयोजित लोक-सेवकों की बैठक में जिला सर्वोदय-मंडल के सर्वसम्मत चुनाव सम्पन्न हुए। ग्राम-सेवक श्री रामचन्द्र भार्गव, संयोजक तथा श्री शंकरलाल मडलोई प्रतिनिधि चुने गये। मई के प्रथम सप्ताह में जिले के सभी लोक सेवकों का एक शिविर सर्वोदय केन्द्र, मानपुर में करने का सोचा गया है।

हिमाचल में सर्वोदय-कार्य

हिमाचल प्रदेश के छह जिलों में—सिरमौर, मण्डी, चम्बा, बिलासपुर, महासू और किन्नौर—छोटे-बड़े साढ़े तीन हजार गाँव हैं, जिनमें कुल जनसंख्या ग्यारह लाख है। ग्रामदान में वहाँ चम्बा जिले में ४ गाँव मिले हैं। प्रदेश में २१ सौ एकड़ भूमि का वितरण भी हुआ है। गत वर्ष १,३३६ गाँवों में लोक-शिक्षण का कार्य किया गया। पद-यात्रा टोली ने ११,०३६ मील की पैदल यात्रा की। ३६,९११ रु० का साहित्य-बेचा गया और उसके कमीशन के १,९११ रु० से प्रादेशिक सर्वोदय-कार्यालय का खर्च चलाया। वहाँ ३० लोकसेवक और ६ शांति सैनिक बने हैं।

काशी में नशाबन्दी के लिए सत्याग्रह

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल ने पिछले दिनों काशी नगरी में शराबबन्दी का प्रस्ताव पास किया था। ४ दिसम्बर १९६० को श्री विनोबाजी ने भी अपनी पदयात्रा के बीच मीरजापुर पड़ाव पर काशी में नशाबन्दी के बारे में उत्तर प्रदेश के मुख्य मंत्री से चर्चा की थी। सरकार की ओर से ऐसी आशा बंधायी गयी थी कि अप्रैल '६२ से काशी में नशाबन्दी कानून लागू होगा। परन्तु वह न हुआ।

श्री विनोबा ने काशी में शराबबन्दी के लिए सत्याग्रह करने की अनुमति सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को दे दी है। काशी विद्यापीठ के स्नातक और "शान्ति की राह पर" के सम्पादक तथा उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल के कार्यकर्ता श्री ओमप्रकाश गौड़ ने घोषणा की है कि यदि उ० प्र० सरकार द्वारा विधानसभा के वर्तमान अधिवेशन, जो ७-८ जून तक चलेगा, में ही काशी में शराबबन्दी की घोषणा न की गयी, तो वे १-७ साथियों सहित लखनऊ से पदयात्रा करते हुए काशी पहुँचेंगे और जून के अंतिम सप्ताह में सत्याग्रह प्रारंभ कर देंगे। सरकार को सूचना दी गयी है।

गढ़वाल में मद्य-निषेध आन्दोलन

पिछले दिनों गढ़वाल में सर्वोदय-कार्यकर्ताओं द्वारा शराबबन्दी के लिए 'पिकेटिंग' कार्य शुरू किया गया था। उसके फलस्वरूप पौड़ी में टिंचरी की बिक्री कम हुई और टिंचरी-विक्रेता के एक अन्य मामले में गिरफ्तार हो जाने से अब उसकी दूकान भी बन्द है। अब वहाँ शराब-बन्दी के लिए वातावरण तैयार किया जा रहा है। टिहरी नगर में गत मास महिलाओं ने शराब की दूकानों के सामने धरना दिया था। वहाँ के जिलाधीश द्वारा उस मुहल्ले से चालू बंदे शराब की दूकान हटाने का आश्वासन देने पर महिलाओं ने अपना आंदोलन स्थगित किया।

विनोबा-पदयात्रा की फलश्रुति

असम के कामरूप जिले में विनोबाजी की पदयात्रा के दरमियान ता० ५ अप्रैल से ३ मई तक निम्न प्रकार कार्य हुआ है :

(१) ग्रामदान : ७४ (२) ग्रामदानी गाँवों की जनसंख्या : ६४१६

(३) ग्रामदानी गाँवों की कुल भूमि : २१,९६३ बीघा २ लोसा

(४) प्राप्त भूदान : २२० बीघा ७॥ लोसा (५) वितरण : २०३ बीघा १॥ लोसा

(६) संपत्तिदान : ५६६० ५० न०पै० (७) एकमुश्त दान : १६७६रु० ७१न०पै०

(८) साहित्य-बिक्री : ४२१७ रु० १७ न० पै० (९) पदयात्रा मील : १४५ मील

दो सर्वोदयी युवक विश्व-शांति-यात्रा पर

मैसूर के राज्यपाल श्री जयचमराज वाडियार की अध्यक्षता में बैंगलोर के मेयर श्री कामथ हाल में ९ मई को की आयोजित एक सभा में सर्व सेवा संघ के "विश्वनीडम्" (बैंगलोर) आश्रम के दो उत्साही कार्यकर्ता, श्री ई० पी० मेनन और श्री सतीशकुमार को विश्व-यात्रा के लिए विदाई दी गयी। अपनी "अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति-यात्रा" पर ये दोनों नवयुवक १ जून '६२ को नई दिल्ली से चलेंगे और मास्को होकर वाशिंगटन पहुँचेंगे। भारत से वे पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईरान, ईराक, सिरिया, इसराइल, रूस, पोलेण्ड, चेकोस्लाविया, हंगरी, यूगोस्लाविया, जर्मनी, इटली, आस्ट्रिया, फ्रांस और बेल्जियम होकर ग्रेट ब्रिटेन पहुँचेंगे तथा वहाँ से संयुक्त-राष्ट्र अमेरिका के लिए प्रस्थान करेंगे।

इस अंक में

बम्बई सर्वोदय-मंडल

बंबई सर्वोदय-मंडल द्वारा 'सर्वोदय-पात्र' का कार्य संगठित किया जा रहा है। गत मार्च में बंबई में ४६९ सर्वोदय-पात्रों से ३१८ रु. ९८ नये पैसे संग्रहीत हुए। मार्च माह में २२०२ रु० ८५ नये पैसे का सर्वोदय-साहित्य बेचा गया।

बंबई सर्वोदय-मंडल की वार्षिक सभा श्री वैकुण्ठलाल मेहता की अध्यक्षता में २७ मार्च को हुई। उस बैठक में मासिक शिविर आयोजित करने, शांति-प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर कराने, गांधी विनोबा फिल्मों के प्रचार आदि के बारे में निर्णय किये गये।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
एक अंक ५१३ नये पैसे
वार्षिक मूल्य ६)
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५५० : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९९९४

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २५ मई '६२ | वर्ष ८ : अंक ३४

ग्रामदान ही क्यों ?

• विनोबा

आप लोगों से क्षमा माँग लेना चाहता हूँ। तेरह महीने इस प्रान्त में रहते हुए भी यहाँ की भाषा बोलने में मैं असमर्थ हूँ। इसलिए तर्जुमा आप लोगों पर लादा जायेगा। यह नहीं कि मैंने यहाँ की भाषा का अध्ययन करने की कोशिश नहीं की। बहुत प्रेम से बहुत कोशिश की। जैसा कि हमारा स्वभाव है और रुचि है, जो आध्यात्मिक साहित्य इस भाषा में मिला, उसका हमने सतत अध्ययन किया और उसके परिणाम-स्वरूप अब एक "नाम-घोषा" का संक्षिप्त संस्करण निकाल रहा हूँ। हमको उससे बहुत लाभ हुआ है। जिस भाषा में "नाम-घोषा" जैसी अद्‌भुत वस्तु है, वह भाषा अमर है।

लेकिन बोलने की आदत एक दूसरी बात होती है, और खासकर मेरे लिए और भी कठिन, क्योंकि हिन्दुस्तान की और बाहर की दस-बारह भाषाओं का अध्ययन हमने कर लिया। इसका परिणाम यह होता है कि बोलने के समय असंख्य शब्द सामने खड़े होते हैं, लेकिन यह नहीं कह सकते कि यह फलाना शब्द इस भाषा का है। इसलिए मैंने मेरी असमर्थता जाहिर की और क्षमा माँग ली। लेकिन इसमें आपको भी क्षमा माँगने की है, क्योंकि हिन्दी समझना आपका कर्तव्य है। दोनों को क्षमा माँगने का प्रसंग है। मेरा ख्याल है कि ज्यादा क्षमा आपको माँगनी है, क्योंकि एक आदमी से यह तो नहीं हो सकता कि हर प्रान्त की भाषा वह बोले।

मेरे मन की दूसरी बात बहुत आदर और नम्रतापूर्वक ही आपके सामने रख सकता हूँ, इसलिए कि मैं तो एक व्यक्ति हूँ और आप एक-एक लाख व्यक्तियों के प्रतिनिधि हैं। इसलिए आपकी जो हैसियत और शक्ति है, उसकी मैं बहुत इज्जत करता हूँ। आम तौर पर रोज हमारी सभा हुआ करती है। लेकिन ऐसे चुने हुए लोगों के सामने बोलना मेरे लिए भी जरा कठिन विषय हो जाता है।

अद्‌भुत सभा

इससे भी ज्यादा कठिन प्रसंग एक बार आया था, जब मैं मैसूर स्टेट में घूम रहा था। मैसूर के येलवाल नाम के गाँव में पड़ाव था। ग्रामदान की चर्चा करने के लिए अखिल भारत के नेता वहाँ आये थे। अपने पूज्य राष्ट्रपति भी थे और कई प्रान्त के मुख्य मन्त्री और केन्द्रीय सरकार के मन्त्री आये थे। दूसरे पक्ष के नेता भी थे और सर्व-सेवा संघ के नेता भी थे। वह एक अद्‌भुत सभा थी। उस प्रकार की सभा तब से स्वराज्य प्राप्ति के बाद नहीं हुई। हिन्दुस्तान के बुनियादी मसले पर चिन्तन करने के लिए सब पक्ष के नेता इकट्ठे हुए थे, उनके सामने बोलना पड़ा। वहाँ डेढ़ दो घंटा मेरा व्याख्यान हुआ था। बहुत नम्र होकर मैंने मेरी बात उनके सामने रखी। दो दिन चर्चा की। काफी समय लोगों ने चर्चा में दिया और सबने मिल कर एक प्रस्ताव पास किया।

सबका समर्थन

उसी प्रस्ताव के आज्ञानुसार मैं काम कर रहा हूँ। इसमें सभी पक्ष के नेता थे। ऐसा नहीं था कि उनके विचार एक दूसरे से मिलते थे, लेकिन फिर भी ग्रामदान के बारे में उनके विचार मिल गये। उन्होंने देश को आदेश दिया, वह मेरे लिए शिरोधार्य था। उसके पहले एक मनुष्य ग्रामदान समझाता था। कुछ ग्रामदान हुए भी थे। लेकिन यह मैं व्यक्तिगत तौर पर करता रहा। ग्रामदान के बारे में लोगों में कई शंकाएँ भी होती थीं। मैं अपनी तरफ से उस पर सोचता रहता था। तो उसका सांगोपांग विवेचन नेताओं के सामने रख दिया। उसमें एक दावा यह भी किया था कि ग्रामदान यह एक 'डिफेन्स मेजर' है। उसमें लाभ और हानि, दोनों हो सकते थे। लेकिन कुल मिला कर लाभ ज्यादा हो सकता है। इस पर सब लोगों ने सोच कर फैसला किया। इस विषय पर सांगोपांग चर्चा करके उन्होंने जो आदेश दिया, उससे मैं निःशंक हो गया। अपनी तरफ से मैं पहले भी काफी निःशंक था। लेकिन यह एक भारत की समस्या हल करने की बात थी। ऐसी हालत में एक विचार एक व्यक्ति को कितना भी अच्छा लगे और व्यक्ति कितना भी अच्छा चिन्तन करने वाला हो, यह मान लेना कि यह ठीक विचार है, तो यह जरा ज्यादा होता है। इसलिए मुझे जरूरत थी 'सपोर्ट'—समर्थन—या सुधार की। तो उन लोगों ने जो चिन्तन किया, उसका परिणाम जो निकला, वह आपके सामने है।

उस बात को लगभग पौने पाँच साल हुए। इतने वर्षों में मैं लगभग अकेला ही इस काम के लिए घूमता रहा। यद्यपि यह समर्थन मिला, जिन्होंने समर्थन दिया वे बेकार लोग नहीं थे। उनके पास अपने अपने काम थे। अच्छे लोग हों और बेकार भी हों, यह कैसे बनेगा! इसलिए उनके पास काम पड़ा था। लोगों ने जितनी आशा की थी कि बहुत काम करेंगे, उतनी मैंने लोगों से की नहीं थी। मैं यह लोगों को समझाता रहा कि ये लोग डिब्बे तो हैं नहीं कि किसी इंजिन के साथ जुड़ जायेंगे। ये खुद इंजिन हैं। ऐसे इंजिन नहीं कि पीछे डिब्बे न जुड़े हों, इसलिए यह हमारा इंजिन भी डिब्बा खींचने के लिए काफी है। इन लोगों ने हमको हरी झंडी दिखाई है कि चलो भाई, तुम्हारी ट्रेन आगे जाने दो और अपनी रफ्तार बढ़ाओ। इसको खतरा नहीं, ऐसा हरी झंडी दिखा कर उन्होंने हमको कहा, ऐसा मान कर हम घूम रहे हैं।

अब आप पूछ सकते हैं कि तब से आज तक कितनी प्रगति हुई! इतनी प्रगति हुई कि असम में प्रवेश करने तक चार हजार ग्रामदान हुए। उसके बाद पाँच सौ ग्रामदान हुए। यहाँ के ग्रामदान बहुत अच्छे हुए, क्योंकि जहाँ ये ग्रामदान हुए हैं, वहाँ मैं पाँच-छह महीने लगातार घूमा। इसलिए लोगों ने बहुत अच्छी तरह से समझ-बूझ कर ग्रामदान दिये हैं। कोई पूछेगा कि पाँच-सौ ग्रामदान हुए, बहुत अच्छे हुए, यह सब ठीक है, लेकिन इस काम के लिए एक साल लगा! तो क्या, असम में कुल २५००० गाँव हैं, उनके लिए "फिफ्टी इयर्स प्लान"—पचास साल की-योजना—है आपकी? मैं भी अपने मन को पूछता हूँ, अगर मुझसे यह काम होता है, हमको हरी झंडी दिखाई और मेरा इंजिन कितने भी रफ्तार से चले, साल भर में ५०० ही ग्रामदान होते हैं, तो भारत के ५ लाख गाँव के ग्रामदान होने के लिए १००० सालों का 'प्रोग्राम' बनाना पड़ेगा। जब मैं ऐसा विचार करता हूँ, तब मैं काफी निराश होता हूँ। इतने में जोरदार आशा मालूम होती है, जब मैं चुनाव की तरफ देखता हूँ। इतना बड़ा चुनाव का काम आठ दिन में खतम हुआ। अब वह "इलेक्शन कमिश्नर" बोलता है कि अगले समय यह काम शायद एक दिन में ही खतम करेंगे! मैं सोचता हूँ, कि

> २१ करोड़ मतदाताओं का मत लेने का काम अगर आठ दिन में हो सकता है तो पाँच लाख गाँवों में जाकर संदेश पहुँचाने का और ग्रामदान हासिल करने के काम को ज्यादा दिन नहीं लगेंगे।

मुझे बहुत आशा लगती है। उसी आशा से आप लोगों को आज यह तकलीफ दी।

असम में ग्रामदान

अभी तक पाँच सौ ग्रामदान हुए। उस काम में कितने कार्यकर्ता लगे थे और किस योग्यता के कार्यकर्ता लगे थे, यह देखना चाहिए। चालीस से ज्यादा कार्यकर्ता नहीं थे और उनकी योग्यता सामान्य योग्यता थी। प्रेम उनमें बहुत था, त्याग उनमें बहुत था। मेहनत उन्होंने बहुत की। यह सब किया, लेकिन "ओशियलिज्म" समझने की शक्ति, शब्द की योजना, यह सब सोचते हुए वे सामान्य कोटि के लोग थे और यह संख्या अपूर्ण थी। ये सब सोचते हुए, जितना काम हुआ उसका बहुत आश्चर्य लगता है। बाद में, ग्रामदान को स्थिर करने की दृष्टि से हमने सुवर्णश्री अंचल में दो महीना घूमने का तय किया। उस अंचल की जनसंख्या डेढ़ लाख होगी और उसमें सात मौजे हैं। एक-एक मौजे में एक-एक दिन रहने का तय किया। सात दिन में सात मौजे। ऐसी आठ प्रदक्षिणा करूँगा। एक एक मौजे में एक-एक केन्द्र बनाया और हमारे कार्यकर्ता थे, वे एक एक मौजे में बाँट दिये। दो-दो, तीन-तीन हर मौजे के दो चक्कर लगाने के ध्यान में आया कि दो-दो, तीन-तीन कार्यकर्ता काम नहीं कर सकते। शक्ति बहुत कम पड़ रही है। इसलिए हमने विचार किया कि अगर सब शक्ति एक ही मौजे में लगा दी जाय, तो काम अच्छा होगा। इसलिए घेमाजी के मौजे में कुल कार्यकर्ता रख दिये। प्रदक्षिणा का विचार छोड़ दिया और उसी मौजे में एक महीना घूमे।

आप समझ सकते हैं कि मेरे लिए मौका छोटा पड़ता था। एक मनुष्य पाँच हजार का नोट लेकर देहात में गया। वह चाय की दुकान पर चाय खरीदना चाहता था। दुकानदार ने पैसे माँगे तो उसने पाँच हजार की नोट दी। चाय तो थी आठ आने की! अतः दुकानदार को ४९९९ रु० ८ आने वापस देना चाहिए था। उसने कहा 'मेरी जिन्दगी में इतना पैसा आया नहीं, मैं इतने पैसे कैसे लौटाऊँ?' इस तरह आखिर उसको चाय मिली नहीं। तो पाँच हजार का नोट छोटे-छोटे गाँव में नहीं चलता। ऐसे बाबा अगर छोटे गाँव में जाता है तो यही हालत होती है। इसलिए यहाँ घूमने का बहुत ज्यादा उपयोग नहीं हुआ। फिर भी श्रद्धा है, उस श्रद्धा की निगाहों से लोगों ने देखा होगा और कुछ वचन पढ़ा होगा, जिसको मैं पसन्द नहीं करता। आपका भी वचन पढ़े, यह मैं नहीं चाहता। विचार समझना चाहिए। विचार समझने वाला मनुष्य चाहिए। वह मनुष्य अगर उन्हीं-में से हो तो बहुत अच्छा।

तुलसीदास के रामायण में कहानी है: विष्णु के वाहन गरुड़ थे। उन्होंने विष्णु भगवान् से पूछा कि रामजी के अवतार के बारे में शंका है तो आप उसके बारे में कुछ कहिये। विष्णु भगवान् ने कहा कि तुम शंकरजी के पास जाओ, वे बहुत ज्ञानी हैं, वे तुम्हें समझायेंगे। गरुड़ शंकर के पास गये। शंकरजी ने बतलाया कि मैं समझा सकता हूँ, लेकिन सामने एक पेड़ है, उस पर एक ज्ञानी, वृद्ध कौवा बैठा है वह तुमको समझायेगा। गरुड़ को बहुत आश्चर्य हुआ, लेकिन वह कौवे के पास गया तो उसने गरुड़ को बहुत अच्छी तरह से सब बातें समझायीं। "खग जाने खगही की भाषा"–पक्षी की भाषा पक्षी ही जानते हैं, पक्षी को समझाने के लिए पक्षी ही चाहिए।

असम के बाहर का आदमी कितनी भी कोशिश करे तो लोग श्रद्धा से सुनेंगे, लेकिन उसके भाषण का तर्जुमा करना पड़ेगा तो क्या होगा? एक बोतल में का इत्र दूसरी बोतल में डालते वक्त कितना इत्र हवा में उड़ जाता है, कह नहीं सकते।

तिस पर भी इतने ग्रामदान मिले, क्योंकि यहाँ यह चीज है। यहाँ की सभ्यता में यह चीज है। महापुरुषों की प्रेरणा से यहाँ गाँव-गाँव में 'नामघर' बने। ये 'नामघर' एक तरह से ग्रामदान ही थे।

हमने कहा, भाई उन्होंने 'नामघर' बनाया, तुम अब 'कामघर' बनाओ। हर गाँव में हर बेकार को पूरा काम मिले, और भी बहुत बातें हैं, जिसकी गाँव जिम्मेवारी उठाये। एक गाँव यानी राष्ट्र का एक छोटा-सा नमूना होता है।

देश का स्वराज्य आया, देश स्वाधीन हुआ; लेकिन गाँव पराधीन है। अंग्रेजों के जमाने में देश पराधीन था और गाँव भी पराधीन थे। अब आपको करना होगा स्वाधीन गाँवों का स्वाधीन देश। तब स्वराज्य कैसे चलाना, इसका अभ्यास गाँव-गाँव में होना चाहिए। फिर पंडित नेहरू के बाद कौन, यह जो सवाल भारत में पैदा हुआ है वह नहीं उठेगा। हर गाँव में कुशल लोग होंगे, जो स्वराज्य चलाते होंगे। आखिर ग्रामस्वराज्य और देश का स्वराज्य इसमें परिमाण के सिवा क्या फरक है? एक प्रमेय हमने छोटे काटकोन में सिद्ध किया तो बड़े काटकोन के लागू हो सकता है या नहीं। बड़े काटकोन में भी वह सिद्ध हो सकता है। छोटे-गाँव में भी वही समस्या होती है, जो देश में होती है। हम बच्चों को तालीम कैसी दें, जमीन का वितरण कैसा करें, अन्य गाँवों के साथ कैसा संबंध रखें, गाँव का रक्षण कैसे करें, शांति की स्थापना कैसी करें, इस प्रकार की अनेक समस्याएँ गाँव में होती हैं, अनन्त आकाश ऊपर होता है। गाँव का विस्तार छोटा पड़ता है, लेकिन आकाश अनन्त है। इसलिए कुल की कुल समस्याएँ वहाँ होती हैं।

अब अगर ग्रामस्वराज्य का ज्ञान गाँव-गाँव में है तो गाँव सुरक्षित है। अन्यथा योजना बनाये केन्द्र या प्रदेश के लोग और गाँव के लोगों को कहें कि उसमें सहयोग दें, तो लोगों को उसमें उत्साह नहीं आता। (क्रमशः)

[कांग्रेस पक्ष और विधान सभा के कांग्रेस-सदस्यों के बीच: नलबाड़ी, जि० कामरूप १०-४-'६२]

अणुबमों के परीक्षणों का विरोध: प्राणों को हथेली में लेकर

तीन अमेरिकी जवान परीक्षण-क्षेत्र के लिए नाव से रवाना

अमेरिका के राष्ट्रपति के विशेष सहायक सलाहकार श्री ली सी० व्हाइट ने अपने ता० ७ मई के पत्र में ए० जे० मस्ती (अहिंसक प्रतिकार-समिति के अध्यक्ष) को यह लिखा है कि 'अणुशक्ति-आयोग द्वारा परीक्षण-क्षेत्र में खतरे की अवधि तक प्रवेश करना कानून द्वारा वर्जित किया गया है। कानून के विरुद्ध वहाँ जाकर जीवन को खतरे में डालना क्षम्य नहीं हो सकता। हम आशा करते हैं कि फिर से इस पर विचार कर आप अपनी योजना को रद्द करेंगे। अगर वैसा नहीं करेंगे तो सरकार कानूनी कार्रवाई करेगी।'

उक्त कानून के विषय में अपना मन्तव्य व्यक्त करते हुए ए० जे० मस्ती ने कहा है: "हमें यह अच्छी तरह विदित है कि 'एवरीमेन'* नौका की यात्रा के कारण कानूनी दंड भुगतना पड़ेगा, पर अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री भागों में अमेरिकन नागरिकों को जाने से रोकने के कानून को हम गंभीरता से चुनौती देते हैं। किसी भी राष्ट्र द्वारा परमाणु-परीक्षण के विरोध के प्रतीक के रूप में हर हालत में हमें तो अपनी आन्तरिक भावना के अनुसार, जहाँ तक शक्य है, 'एवरीमेन' को यात्रा करना ही है, हमारा आग्रह है कि इन तीन यात्रियों की सुरक्षा के विषय में अमेरिका की सरकार को जितनी चिन्ता हो रही है, उतनी उन लाखों लोगों के लिए भी हो, जिन्हें वर्तमान प्रयोगों के फलस्वरूप गम्भीर परिणाम सहन करना होगा, और उन करोड़ों के लिए भी जिनका जीवन पारमाणविक युद्ध की बढ़ती हुई संभावना से खतरे में पड़ गया है।"

गत २६ अप्रैल को जैसा कानून फेडरल रजिस्टर में प्रकाशित हुआ है, उसी तरह के एक १९५८ के कानून को 'यू० एस० सर्किट कोर्ट ऑफ अपील्स' ने अवैध घोषित कर दिया था। यह उस समय की बात है जब 'फिनिक्स' जहाज एनिवेटोक के प्रयोग क्षेत्र में गया था। इसके यात्री थे अर्ल रेनाल्ड्स का कुटुम्ब तथा एक जापानी। इसके पहले 'गोल्डन रूल' जहाज को, जो वहाँ जा रहा था हवाई टापू में रोक दिया गया था और उसके यात्रियों को जेल भेज दिया गया था।

तेज गति का यह 'एवरीमेन' जहाज सोसलिटी के एक कारखाने में तैयार किया गया है। यह जहाज सानफ्रान्सिस्को से तीन हजार मील दूर दक्षिण-पश्चिम में स्थित क्रिसमस टापू के लिए ता० २२ मई के बाद रवाना होगा। ऐसी आशा है कि अपनी शुभ कामनाएँ प्रकट करने के लिए उस क्षेत्र में तथा गोल्डन गेट ब्रिज के दोनों ओर बहुत बड़ी संख्या में अनुमोदन करने वालों की भीड़ जमा होगी। इसके दो-तीन सप्ताह पश्चात् 'एवरीमेन' के प्रयोग क्षेत्र में पहुँचने की संभावना है।

इस तीस फुट लंबे जहाज में तीन व्यक्ति होंगे:–

हेरोल्ड स्टार्लिन्स: वय तीस वर्ष, केलिफोर्निया के मेन्लो पार्क के निवासी, फिलहाल पेसिफिक हाईस्कूल के डायरेक्टर। अर्लहम कॉलेज के स्नातक हैं, क्वेकर हैं और पहले 'अमेरिकन फ्रेन्ड्स सर्विस कमिटी' के सदस्य थे। किसी समय एक ४० फुटी जहाज के मालिक थे और उसे चलाया करते थे।

इवान डेड्रिक योज: वय तीस वर्ष, जहाज-चालक और रेडियो-आपरेटर, बर्कले, केलिफोर्निया के निवासी, नौसेना के अनुभवी। अभी कुछ समय पहले रेडियो इंजीनियर तथा एनाउन्सर का कार्य करते थे। टेक्सास युनिवर्सिटी के स्नातक हैं और स्टान्फोर्ड युनिवर्सिटी में इलेक्ट्रिकल इन्जीनियरिंग का अध्ययन किया है।

एडवर्ड लाजार: वय सत्ताईस वर्ष, नास्तिक, सानफ्रान्सिस्को (केलिफोर्निया) के निवासी, सैनिक-कार्य में अनुभवी, कोलम्बिया युनिवर्सिटी के स्नातक। शान्ति के लिए सानफ्रान्सिस्को से मास्को तक की पदयात्रा करने वाले दल के सदस्य, गत वर्ष यात्रा की समाप्ति पर इन्होंने रेड स्क्वेअर में सोवियत अणुबम-प्रयोग का विरोध किया था।

परमाणु प्रयोग की अनैतिकता की ओर जगत् का ध्यान आकृष्ट करने के लिए "बम के नीचे एक आदमी को रखना", यही 'एवरीमेन' की यात्रा का हेतु है। प्रयोग-क्षेत्र में पहुँचने पर जहाज के सरकार के पास ये विकल्प हैं: प्रयोग बन्द करना; जहाज की रसद समाप्त होने पर मजबूर होकर जहाज चला जाय, इस अवधि तक प्रयोगों को मुल्तवी रखना; अन्तर्राष्ट्रीय कानून के विरुद्ध इन समुद्री भागों में इस जहाज के यात्रियों को कैद करना, या यह निश्चित होने पर भी कि इसके यात्री मारे जायेंगे या बुरी तरह घायल होंगे, इन प्रयोगों को चलने देना।

विश्व के कोने-कोने से 'एवरीमेन' को हजारों व्यक्तियों का समर्थन प्राप्त है। ब्रिटेन के "केम्पेन फॉर न्यूक्लियर डिस्आरमामेन्ट" तथा "कमिटी आफ हन्ड्रेड" ने अधिकृत अनुमोदन दिया है, ब्रिटिश दार्शनिक बर्ट्रेन्ड रसल ने भी इस यात्रा का समर्थन किया है।

यह दिखाने के लिए कि परमाणु प्रयोग करने का गुनाहगार अकेला अमेरिका ही नहीं है, 'सी० एन० वी० ए०' सोवियत प्रयोगों के विरोध में भी योजना बना रही है (यह संभावना है कि रूस अमरीकी परीक्षण के बाद अपनी परीक्षण की शृङ्खला शुरू करे।) यह संभावना है कि किसी सोवियत बन्दरगाह पर एक दूसरा जहाज भेजा जाय। पूर्ण सत्य पर आधारित तथा कुछ न छिपाने की अपनी नीति के अनुसार, 'सी० एन० वी० ए०' ने वर्तमान समुद्र-यात्रा की अपनी योजना की सूचना अमरीका के राष्ट्रपति को दे दी है।

(मूल अंग्रेजी से)

* 'एवरीमन': उस छोटे जहाज का नाम है; जिसमें बैठ कर प्रशान्त महासागर में अणु-परीक्षण-क्षेत्र में जाकर प्रदर्शन करना है।

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

साहीत्यीक और राजाश्रय

साहीत्य कुछ वीचीत्र स्वभाववाली वस्तु है। उसको पोषण देते हैं, तो सूख जाता है, और पोषण नहीं देते हैं, तो भी सूख जाता है। बीच की जो हालत है, जीसमें पोषण दीया भी जाता है और नहीं भी दीया जाता, उसी हालत में ही वह जीता रहेगा। कुछ बड़े साहीत्यीक गरीब थे। तमीलनाड के भारती बहुत गरीब थे, पर वे दीन नहीं थे। परमेश्वर दरीद्रता देता है, सो हमारी कसौटी के लीये ही। अगर हम दीन नहीं बनते हैं, तो उसकी परीक्षा में पास होते हैं। वैसे ही कीसीको परमेश्वर श्रीमान बनाता है, तो भी परीक्षा लेने के लीये। गरीबी और वैभव, दोनों ईश्वर की देन हैं।

हम मानते हैं की जीसे हम सरकार या राजदरबार कहते हैं, उसने जीनको पोषण दीया, उनसे जो भी उत्तम-से-उत्तम साहीत्य मीला है, वह भी दूसरे दरजे का है। वाल्मीकी, तुलसीदास दरबारी कवी नहीं हो सकते थे। दरबारी कवीयों का उत्तम नमूना है, कालीदास। लेकीन कालीदास एक छोटा सा उद्यान है। अच्छा बनाया हुआ, सुंदर, परन्तु उद्यान है। वाल्मीकी तो जंगल है। वन और उपवन में जो फरक होता है, वह उन दोनों में था। फीर भी कालीदास स्वतंत्र वृत्ती का था।

—वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

बधाई !

डा० राधाकृष्णन् ने राष्ट्रपति के पद की शपथ ग्रहण करने के बाद घोषणा की कि वे अपना वेतन १० हजार रुपये मासिक से घटा कर २॥ हजार मासिक लेंगे, जिसमें आयकर भी सम्मिलित है। कर कटने के बाद उन्हें केवल १९ सौ रुपये मासिक मिलेंगे। भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने इस परम्परा का श्रीगणेश किया था। भारत के राष्ट्रपति का मासिक वेतन १० हजार रुपये है। साथ ही स्वागत-सम्मान आदि पर खर्च करने के लिए उन्हें २ हजार रुपये मासिक भत्ता भी दिया जाता है। राजेन्द्र बाबू ने पहले तो अपना भत्ता बंद कर दिया, फिर उन्होंने अपना वेतन १० हजार से घटा कर ६ हजार किया, फिर ५ हजार और अंत में २॥ हजार रु कर दिया। डा राधाकृष्णन् ने राजेन्द्र बाबू द्वारा स्वेच्छया प्रारम्भ की गयी परम्परा का अनुकरण कर एक प्रशंसनीय कार्य किया है। भारत जैसे दरिद्र राष्ट्र का राष्ट्रप्रतिनिधि भारी-भरकम वेतन ले, यह शोभा नहीं देता।

पैसे से प्रतिष्ठा को मापने का मापदण्ड न केवल पुराना है, अपितु गलत भी है। जनतंत्र में जनता के प्रतिनिधियों की प्रतिष्ठा का मापदण्ड जनता की परिस्थिति के अनुरूप ही होना चाहिए। पहले राजेन्द्र बाबू और अब डा राधाकृष्णन् ने राष्ट्र के प्रथम पुरुष की हैसियत से स्वेच्छया अपने वेतन में कटौती करने का जो निर्णय लिया, वह केन्द्र और प्रदेशों के मंत्रियों एवं अन्य भारी वेतन-भोगी सरकारी कर्मचारियों के लिए अनुकरण का विषय है।

डा राधाकृष्णन् ने एक नयी परम्परा की भी नींव डाली है। उन्होंने घोषणा की है कि प्रत्येक रविवार और बुधवार को प्रातः ९ से १०॥ बजे तक भारत का कोई भी सामान्य नागरिक पूर्वअनुमति प्राप्त किये बगैर उनसे भेंट कर सकता है। 'राष्ट्रपति भवन' का द्वार भारत के प्रत्येक नागरिक के लिए खोल देने का यह कदम—भले ही वह सीमित समय के लिए हो—एक प्रशंसनीय कदम है। भारत की जनता इसका हृदय से स्वागत करेगी। हम मानते हैं कि इसकी बहुत अच्छी प्रतिक्रियाएँ होंगी।

हम डा० राधाकृष्णन् का अभिनन्दन करते हैं कि उन्होंने अपने पूर्ववर्ती की अच्छी परम्परा को तो कायम रखा ही, एक अच्छी परम्परा की नींव भी डाली।

—मणीन्द्रकुमार

ईमानदारी का अपराध

एक सरकारी कर्मचारी लिखते हैं—

"मैं 'भूदान-यज्ञ' का ग्राहक और पाठक हूँ। बहुत दिनों से आपको लिखने का विचार कर रहा था, परन्तु लिख नहीं पाया। अभी अपने तबादले के अवसर पर लिख रहा हूँ। मैं सरकारी 'गजटेड' कर्मचारी हूँ।

"१९५४ से १९६२ तक मेरा आठ बार तबादला हुआ! दूसरे बहुत-से ऐसे कर्मचारी हैं, जो कि एक ही जगह आठ-दस साल से नौकरी कर रहे हैं। बार-बार तबादला होने से पैसे का अपव्यय तो होता ही है, साथ ही शासन का कार्य व्यवस्थित रूप से चल नहीं पाता। तबादले के लिए जो कुछ नियम हैं, उनका परिपालन होता ही नहीं। जो कर्मचारी इच्छित जगह नौकरी करना चाहते हैं, उनको इसके लिए काफी कीमत चुकानी पड़ती है और ये कर्मचारी वह कीमत देते हैं। इस तरह तबादला एक प्रकार का भ्रष्टाचार का रूप धारण करता है। जब तक यह भ्रष्टाचार—शिष्टाचार चलता रहेगा, तब तक कर्मचारी देश की या जनता की सेवा नहीं कर पायेंगे।

"मैं तो इस तरह के तबादलों के कारण न तो अपने बच्चे की पढ़ाई की तरफ ध्यान दे सकता हूँ और न तो अपने कुटुम्ब के स्वास्थ्य की तरफ ध्यान दे सकता हूँ। एक जगह तीन चार वर्ष नहीं रहने के कारण सामाजिक कार्य भी नहीं कर पाता। अभी थोड़ी-सी शुरुआत की थी कि एकदम तबादला कर दिया गया। ऐसी अशांत अवस्था में 'भूदान यज्ञ' का पढ़ना कुछ शांति जरूर प्रदान करता है।

"भ्रष्टाचार के बिना नौकरी करना अत्यन्त कठिन है। जिस कठिनाई के साथ अभी तक ईमानदारी से नौकरी की, उसी तरह आगे के पाँच वर्ष तक सेवा करूँ या नौकरी से अलग होकर कुछ सामाजिक कार्य करूँ, ऐसा विचार मन में आता रहता है। कुटुम्ब के पोषण व बालक की जिम्मेदारी तो पार करनी ही है।

"मैंने जो कुछ लिखा वह शायद 'कण्डक्ट रूल्स' के खिलाफ हो सकता है, परन्तु आज लिखने की प्रेरणा हुई, इसलिए आपको लिखा।..."

१४।४।६२

* * *

आज भ्रष्टाचार ने कितना व्यापक रूप धारण कर रखा है, उसका यह एक छोटा सा उदाहरण है। एक सीधा सादा सरकारी कर्मचारी ईमानदारी से अपने कर्तव्य का पालन करना चाहता है, परन्तु उसके मार्ग में तरह तरह की बाधाएँ उपस्थित कर दी जाती हैं। ईमानदारी उसके लिए अपराध बन बैठी है! जो लोग तबादला करने वाले अधिकारियों को 'येनकेन प्रकारेण' खुश कर लेते हैं, उनका तबादला दस दस साल तक नहीं होता। जो लोग इस कला में दक्ष नहीं हैं, अथवा जिनकी ईमानदारी आड़े आती है, वे बेचारे हर साल ही तबादले के शिकार बनाये जाते हैं। और तमाशा यह है कि वे बेचारे अपनी शिकायत तक जबान पर नहीं ला सकते। 'कण्डक्ट रूल्स' की कैंची उनकी गर्दन पर हमेशा लटकती रहती है।

सवाल केवल तबादले का नहीं है, जीवन के सभी क्षेत्रों का है। आज सभी जगह भ्रष्टाचार का बोलबाला है। साथ ही भ्रष्टाचार का यह चक्र इतना दूषित है कि जो लोग उससे दूर रहना चाहते हैं और ईमानदारी बरतना चाहते हैं, उन बेचारों को लोग सुख से दो रोटियाँ खाने नहीं देते। भ्रष्टाचार का खून जिनकी दाढ़ों में लग जाता है, वे अपने साथियों में ऐसे व्यक्ति को सुखपूर्वक रहने नहीं देते जो उनके गलत कार्यों में उनका साथ देने से इनकार करता है। वहां तो सभी का एक ही स्वर रहता है कि 'न तू कहे मेरी, न मैं कहूँ तेरी!' फलतः, सब के सब एक ही नाव पर सवार हैं। जहाँ भी जैसी भी गुंजाइश किसी को दिखाई पड़ती है, वह उसका लाभ उठा लेने को उत्सुक रहता है। उसके सामने केवल एक ही प्रश्न रहता है—पैसा! उसके लिए वह ईमानदारी को उठा कर ताक पर रख देता है। वह देखता है कि 'सर्वेगुणाः कांचनमाश्रयन्ते।' समाज में आज उसी की प्रतिष्ठा है, जिसके पास पैसा है। यह कोई देखने नहीं बैठता कि यह पैसा आता किस रास्ते से है। पैसे की यह गलत प्रतिष्ठा भ्रष्टाचार का मूल कारण है। इसे बदले बिना इस बीमारी से छुटकारा मिलना कठिन ही नहीं, असम्भव है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

अणु-विस्फोटों के खिलाफ प्रदर्शन

अमरीका की शांतिवादी संस्था "कमिटी फार नानवायलेन्ट एक्शन" ने यह घोषणा की है कि प्रशांत महासागर में होने वाले अणु विस्फोटों के खिलाफ अपना विरोध प्रदर्शित करने के लिए वे एक नौका महासागर के वर्जित क्षेत्र में भेज रहे हैं। सत्याग्रह के सिद्धांतों के अनुरूप इस अमेरिकन कमिटी के अध्यक्ष, श्री ए० जे० मस्ती ने अमेरिका के राष्ट्रपति श्री कैनेडी को कुछ दिन पहले इस प्रकार जहाज भेजे जाने की सूचना दी थी। उसके उत्तर में अमेरिकन राष्ट्रपति की ओर से कमिटी को यह सूचित किया गया है कि इस प्रकार वर्जित क्षेत्र में जहाज भेजना खतरे से खाली नहीं है और विस्फोट के समय कोई लोग खतरे के क्षेत्र में जायें, तो उनकी सुरक्षा के बारे में अमरीका की सरकार उदासीन नहीं रह सकती। अतः अगर जहाज भेजा जायगा तो अमरीकी सरकार कानून के अन्तर्गत उसके विरुद्ध आवश्यक कार्रवाई करेगी।

श्री मस्ती ने अमरीकी सरकार की इस कानूनी कार्रवाई की धमकी का जवाब देते हुए एक बयान में ठीक ही कहा है कि कमिटी की ओर से जो तीन लोग उस छोटे जलपोत को लेकर खतरे के क्षेत्र में जायेंगे, "उनकी सुरक्षा के बारे में अमेरिका की सरकार जितनी चिन्ता व्यक्त कर रही है, उतनी चिन्ता वह कृपा करके उन लाखों लोगों के लिए भी करे, जिन्हें अणुशस्त्र प्रयोग की मौजूदा योजना के फलस्वरूप जान का खतरा पैदा होगा, और उन करोड़ों-अरबों के लिए भी जो अणुशस्त्र के प्रयोग पर नष्ट हो सकते हैं।" वास्तव में अमेरिकन शांतिवादी कमिटी की ओर से जो तीन व्यक्ति उस जहाज को लेकर प्रशान्त महासागर में जा रहे हैं, वे तथा कमिटी, इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि वे मौत के मुँह में प्रवेश कर रहे हैं। लाखों-करोड़ों व्यक्तियों की, बल्कि समूची मानव-जाति की बर्बादी की जो योजनाएँ बन रही हैं, उनके खिलाफ जन मानस को तथा उन योजनाओं के निर्माताओं का ध्यान आकर्षित करने का और उन्हें ऐसी कार्रवाई से बाज आने की प्रेरणा देने का और कोई असरकारक तरीका बाकी नहीं रहा है। जब चारों ओर निराशा और *मायूसी छायी हुई हो*, दुनिया भर के विचारवान, पर सत्ता-रहित, लाखों लोगों की आवाज का शासनकर्त्ताओं पर कोई असर नहीं पड़ रहा हो, तब सिवा इसके कोई इलाज नहीं है कि कुछ निष्ठावान लोग अपने प्राणों की बाजी लगा कर मानव-जाति के खिलाफ होने वाले इस जघन्य अपराध के खिलाफ अपनी आवाज बुलन्द करें।

२२ मई को अमेरिका के तीन नौजवान नागरिक एक छोटी नौका लेकर ३ हजार मील दूर प्रशान्त महासागर के वर्जित क्षेत्र के लिए रवाना होने वाले हैं। २ या ३ सप्ताह में ये वर्जित क्षेत्र में पहुँच जायेंगे, ऐसा अन्दाज है। अमेरिका की सरकार के सामने तीन ही विकल्प हैं या तो वह प्रयोगों को बंद करे; या उस समय तक के लिए उनको स्थगित करे जब कि अपने साथ ली हुई खाने-पीने की सामग्री समाप्त होने के बाद शान्ति-सैनिकों को अपनी नौका वापस लौटाना पड़े; या वह सरकार खुले समुद्र में, अन्तर्राष्ट्रीय कानून के खिलाफ, इन सत्याग्रहियों को कैद करके अन्य जगह ले जाय। ये तीनों बातें नहीं होती हैं और अमेरिका की सरकार अपने प्रयोग जारी रखती है, तो निश्चित है कि जो तीन नौजवान उस जहाज को लेकर अमेरिका से जा रहे हैं, वे विस्फोट के फलस्वरूप या तो मरेंगे या बुरी तरह घायल होंगे। हमें आशा है कि उनका यह साहस मानव-जाति की अन्तरात्मा को छू सकेगा। शांति की चाह रखने वाले हर मानव की शुभ कामना इन तीन बहादुर शांति-सैनिकों के साथ है।

—सिद्धराज

विश्वशांति-पदयात्रियों को आशीर्वाद

विनोबा

["भूदान-यज्ञ" के पाठक इस समाचार से परिचित हैं ही कि दो नौजवान, श्री ई० पी० मेनन और सतीश कुमार दिल्ली से मास्को और वाशिंगटन तक की पदयात्रा युद्ध और शोषण. अणुयुद्ध-विरोधी वातावरण बनाने के लिए एवं विश्व-शांति की भावना के प्रसार के लिए कर रहे हैं। अभी पिछले दिनों ये दो नौजवान विनोबाजी का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए उनकी पदयात्रा में गये थे। २६ मई '६२ को प्रार्थना-प्रवचन के अन्तर्गत विनोबाजी ने इस विषय पर जो विचार प्रकट किये हैं, वे यहाँ दिये जा रहे हैं। —सं०]

आज हमारी यात्रा में दो जवान आये हैं। ये दिल्ली से पैदल चल कर मास्को और वाशिंगटन जायेंगे। इन्होंने एक साहस का कार्यक्रम उठाया है। यह एक अच्छा अभिक्रम है। इन लोगों का शांति-प्रचार का कार्यक्रम रहेगा। लोगों से ये दोनों कहेंगे कि युद्ध की तैयारी बंद होनी चाहिए। आणविक शस्त्रों का प्रयोग बंद करना चाहिए, अणुबमों का निर्माण भी बंद होना चाहिए। अभी बाबा का आशीर्वाद लेने के लिए यहाँ आये हैं।

भारत को स्वराज्य मिले १५ वर्ष हो गये, पर यहाँ जितनी प्रगति और जन-जागृति होनी चाहिए थी, वह नहीं हुई; जब कि विज्ञान ने इस बीच कल्पनातीत प्रगति की है। जापान में हिरोशिमा पर जो बम गिराया गया था, उससे हजार गुना ज्यादा ताकत वाले बम इस बीच बनाये गये हैं। यह अतिशयोक्ति नहीं है। स्वयं वैज्ञानिकों ने ये तथ्य प्रकाशित किये हैं। पर हमारे यहाँ की भोली जनता को न तो उस बम का भान है, जो हिरोशिमा पर गिराया गया और न इन बमों के बारे में कुछ मालूम है, जो अधिकाधिक भयंकर स्वरूप में बन रहे हैं। यदि एक बम हमारे देश पर कहीं गिरे तो १५-२० लाख आदमी जख्मी और रोगी बन जायेंगे। पर इसका अनुभव न होने से जनता आराम से निश्चित बैठी है! आज आम लोगों की दिनचर्या पुत्र भार्या पोषण मात्र ही बन गयी है। समाज में व्यक्ति के क्या उत्तरदायित्व हैं, इससे आम लोग अपरिचितवत् ही हैं। खाना, सोना, सिनेमा देखना और आजीविका कमाना इसी में संपूर्ण जीवन व्यतीत हो जाता है। विज्ञान ने समाज और दुनिया के लिए इस तरह के संहारक तथा मारक यंत्र पैदा किये हैं, उनका विरोध होना चाहिए, इस तरह से कोई सोचता भी नहीं है। अतः इन दो तरुणों ने इस दिशा में जनता को जाग्रत करने का कार्यक्रम सोचा है। ये दोनों ही हमारे कार्यकर्ता हैं। दोनों ने हमारे साथ यात्रा भी की है, भूदान का यथेष्ट काम किया है। मेरे परिचित हैं। आणविक शस्त्रास्त्रों के निषेध का कार्यक्रम लेकर ये जा रहे हैं। एक अमेरिकन वैज्ञानिक (जिसे नोबल प्राइज मिला है) ने यह सिद्ध किया है कि हाल में जो 'एटोमिक टेस्ट' हो रहे हैं, उनका प्रभाव गर्भ की संतानों पर भी पड़ेगा! वे अपंग, अक्षम और विकलांग पैदा होंगे। उन्हें जीवन भर दुःख भोगना पड़ेगा। उनका जीवन अपने पर भी बोझ-स्वरूप रहेगा तथा समाज पर भी भारभूत होंगे। फिर भी ये तथाकथित बड़े राष्ट्र 'एटोमिक टेस्ट' की प्रतिस्पर्धा में जुटे हुए हैं।

आखिर ये बम क्यों बनाये जा रहे हैं, इस पर भी थोड़ा विचार करना चाहिए। ये बम उस अमानवीय मनोवृत्ति के परिणाम हैं, जो दूसरों पर अविश्वास तथा दूसरों से भय के कारण उत्पन्न होती है। इस भय और अविश्वास के कारण ही आज संसार में अरबों रुपये प्रतिवर्ष फौज, पुलिस, कोर्ट, युद्ध की तैयारी आदि के लिए व्यय किये जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त दूसरों पर आक्रमण करके सत्ता हासिल करने की मनोवृत्ति और दूसरे काम करें व हम मौज करें, यह अभिलाषा भी इस आणविक तैयारी के पीछे है। अतः इन चार दोषों से जब तक लोग मुक्त नहीं होंगे, तब तक सरकारों द्वारा अणु-प्रयोग बन्द कर देने से भी कुछ नहीं होगा।

वास्तविक जागृति तो आम जनता में आनी चाहिए। उसी के लिए बाबा ११ साल से पैदल चल रहा है और ग्रामदान माँग रहा है। इन जवानों को भी ऐसी प्रेरणा मिली है, इसलिए ये लोग पैदल निकलने का निर्णय करके आये हैं।

[गोरेश्वर-आसाम ता० २६-५-६२]

समता की दिशा में एक प्रयोग

अन्त वाले को भी

गत वर्षों से मेहनत-मजदूरी के काम को सहकारिता के आधार पर करने का सकलर चमोली (उत्तराखण्ड) के कुछ गाँवों के लोगों ने सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के सहयोग से प्रारम्भ किया है। "पट्टीमल्ला नागपुर कोआपरेटिव लेबर कान्ट्रेक्टर सोसाइटी" का 'रजिस्ट्रेशन' भी हो चुका है। सार्वजनिक निर्माण विभाग ने सोसाइटी को ठेके पर काम देना प्रारम्भ कर दिया है। ठेके के चार काम सोसाइटी समाप्त भी कर चुकी है। इस बीच सोसाइटी एवं सदस्यों के सामने मुख्य प्रश्न श्रमिकों के श्रम-मूल्यांकन एवं श्रम की प्रतिष्ठा का था।

मजदूरी का स्तर श्रमिक की कार्य-क्षमता के आधार पर रखा जाय, या अवस्था के आधार पर? श्रमिक काम पर एक-दो या तीन घंटे तक देर से पहुँचते थे। सोसाइटी का कार्य-क्षेत्र गाँवों तक सीमित है, इसलिए गाँव के विद्यार्थी, युवा तथा प्रौढ़, सभी लोग काम करने आते हैं। जो देर से आता है, उसकी भी पूरे दिन की उपस्थिति लग जाती है। देर से आने वाले श्रमिक सभी सदस्यों के समक्ष देर से आने का कारण स्पष्ट कर देते हैं।

मजदूरी के बारे में सभी श्रमिकों ने यह स्वीकार किया है कि 'हम अपनी कार्य-क्षमता एवं शक्ति के अनुसार काम करेंगे, श्रम के मूल्य का सम-वितरण करेंगे।'

यह प्रस्ताव सोसाइटी के पढ़े-लिखे नौजवानों ने रखा, साथ ही ठेके के कार्य में श्रम-रत हुए। दिनों-दिन लोगों की निष्ठा बढ़ रही है। मेहनत और मजदूरी करने वाले भाइयों का ध्यान आकृष्ट हो रहा है।

कुछ दिन पहले ठेके का जो काम सोसाइटी द्वारा हुआ, वह इस प्रकार है— १० भाइयों की अवस्था २० वर्ष से ४० वर्ष तक, ४ भाइयों की ४० से ६० वर्ष तक और ५ भाइयों की अवस्था १४ से १० वर्ष तक है। औसत प्रति व्यक्ति के ३० दिन के श्रम द्वारा पूरा हुआ। प्रति व्यक्ति ने प्रति दिन ३ घंटे औसत श्रम किया।

ठेके की सम्पूर्ण रकम से ५ प्रतिशत कमीशन सोसाइटी के लिए दिया गया। ३ रु० ७५ न० पै० प्रति दिन के हिसाब से हरएक श्रमिक को मिला। श्रमिकों में विद्यार्थी और वृद्ध, हट्टे कट्टे नौजवान तथा कमजोर लोग भी हैं। मजदूरी का वितरण श्रम की क्षमता के आधार पर न होकर सभी में समवितरण किया गया है। इस प्रकार "अन्त वाले को भी" पूर्ण माना जा रहा है। दिल से दिल को जोड़ने की इस प्रक्रिया की ओर अन्य क्षेत्र के भाई भी प्रवेश कर रहे हैं।

चमोली —चण्डीप्रसाद भट्ट

हम गांधीजी को राजनीति में नहीं, उनकी व्यथा खोजें

• जैनेन्द्र कुमार

३० जनवरी १९४८ को गांधीजी देह से छूट गये थे, मानो वे ममता से छूट गये। पहले हम उन्हें अपनी ममताओं के माध्यम से, तात्कालिक उपयोगिता की दृष्टि से देखते थे। देह से छूट जाने पर अब उन्हें आत्मा से ही पाया जा सकता है।

एक समय आया, जब गांधीजी और कांग्रेस अलग अलग हो गये। कांग्रेस राष्ट्र-चेतना लेकर ही जीती थी, वही उसका स्वधर्म बना। अतः उसने सत्ता पकड़ी। गांधी ने कहा, 'सत्ता मत अपनाओ। कांग्रेस का राष्ट्रीय धर्म पूरा हुआ, अब राज्य के आसन पर मत बैठो, सेवा का धर्म रखो।' इस प्रकार जब तक कांग्रेसवाले शासन की अपनी जिम्मेदारी मानेंगे, वे गांधीजी की राह से अलग होते जायेंगे और आगे वे स्वय तो उल्टी दिशा में चले जायेंगे और गांधी के रास्ते चलने वालों को राष्ट्रद्रोही करार दिया जायगा, उन्हें दंड दिया जायगा और 'शहीद' भी बनाया जायगा। वही समय होगा जब कि गांधीजी की आत्मा का सन्देश प्रकट होगा। अभी तो चरखा और खादी एक फैशन मात्र है।

गांधीजी और राष्ट्रचेतना

राष्ट्रचेतना ही युद्ध की प्रेरक बनती है। राष्ट्र की सार्वभौम सत्ता को मानना भयकर है। गांधी भारत का न था–संस्कृति का, मानवता का था। हमने उसे राजनेता, राष्ट्रपिता मात्र माना, इससे हम स्वयं नीचे गये और उन्हें भी नीचे ले जा रहे हैं। अभी तो हमारा गांधीजी से उपयोगिता का नाता है। जब यह नाता स्नेह का बनेगा, तब वह राष्ट्र का ही न रह जायगा, सच्ची मानवता का बनेगा। गांधीजी को सामने रख कर हम राष्ट्रीयता और मानवता को निभा सकते हैं। जो हिंसा से प्राप्त हो और उसी से संरक्षित रखा जा सके वह मानवता का नाता नहीं। गांधीजी ने सिखाया कि असीम और आदर्श के निरोध में सीमा न आये, अन्यथा वह राष्ट्रीयता नहीं, राष्ट्रमद ही है और यह राष्ट्रमद ही आगे साम्राज्यवाद बन जाता है। राष्ट्रयुद्ध में गांधीजी सबसे आगे थे। बाद में जब वे नोआखाली में घूमते थे, वहाँ भी वे सच्ची राष्ट्रीयता का निर्माण कर रहे थे।

प्रार्थना और चरखे का सन्देश

गांधीजी का परिपूर्ण सन्देश ईश्वर-प्रार्थना और चरखे में मिल जाता है। रामनाम वे सोते-जागते कभी नहीं भूलते थे। चरखे का नियम भी उन्होंने बराबर निभाया। प्रार्थना से गांधीजी का अभिप्राय कि हम अपनी श्रद्धा उस परमनियन्ता से जोड़ कर चित्त की विषमतायें मला डालें। सामाजिक तत्त्व के अभाव में वे प्रार्थना को अपूर्ण मानते थे। बिना मानवेय सम्बन्ध के ईश्वरीय सम्बन्ध व्यसन मात्र बन सकता है। चरखे द्वारा हम दूसरे से–अपने पड़ोसी से–मिलते हैं। चरखा यह कार्य है, जिसमें मेरा और दूसरे का हित जुड़ जाता है, भक्ति और अध्यात्म में सामाजिक तत्त्व का प्रवेश करता है, आसमान को धरती पर लाता है और आदर्श को व्यवहार पर। आज तो समाज में प्रत्येक व्यक्ति दूसरे के लिए खतरा है।

हमारे कर्म की भाषा कमाई और पैसे से बनी है, अर्थ की कमाई पर आश्रित जीवन कर्म है। जीवन द्रव्य-संचालित है। लाभ की दृष्टि—बड़ा, व्यापक और प्रतिष्ठित बनने की दृष्टि–प्रमुख है। सिक्का श्रम को खींच लेता है। जहाँ दो-दो फर्लांग तक पक्की जमीन हो, वहाँ फल और मिष्ठान्न की बहुतायत हो जाती है। चरखा से गांधीजी ने चाहा था कि उत्पादन और उपयोग के बीच खाई न हो, बहुत-से बिचवइया न हों।

गांधीजी की व्यथा समझें

गांधीजी को विचार के द्वारा पकड़ना सम्भव नहीं। कोई ऐसा विषय नहीं, जो गांधीजी को ढकेले या उनसे बिछुड़ जाय। कोई ऐसा शब्द नहीं, जो उन्हें ढँक ले। यदि गांधीजी का पन्थ बना तो वो प्रीति का था वह तरह का बन कर रहेगा, जो इन्सान था वह गुरु रह जायगा। जब हम आत्म समर्थन में गांधीजी को लाते हैं, तो अन्याय करते हैं। जो गांधी मरने वाला नहीं, वह कर्म का नहीं था। हम उनका पन्थ नहीं, उनका दर्द, उनकी व्यथा देखें और समझें। राजनीति में भी गांधी को न देखें। राजनीति तो क्षण-क्षण बदलती है और जो कल पद पर था आज नहीं, जो आज है, कल नहीं रहेगा। गांधी अपने समय के साथ सीमित नहीं था। गांधी तो सत्य का साक्षात्कार चाहते थे, उनके मार्ग में राजनीति आ गयी, जैसे सागर की ओर बढ़ती हुई नदी के मार्ग में गड्ढे आ जाते हैं।

गांधीजी आत्मवान नेता थे। राजनीति में, नेतृत्व में भी उनसे अधिक सफल कौन हुआ? उनके सामने कई नेता आये, पर कभी भी किसी के प्रति उन्होंने विरोधी भाव नहीं रखा। सत्य और अहिंसा पर चलने से व्यक्तित्व कुंठित नहीं होता, ऐसी आस्था उन्होंने जगा दी। प्राणी-मात्र को प्रेम करना 'अहिंसा' है और असत के प्रतिकार के लिए उद्यत रहना 'सत्य' है। इन दोनों का 'युग-पथ' साध कर चलने से बड़ा 'योग' नहीं।

पहले दीन और दुनिया अलग अलग थे। गांधीजी ने उन्हें मिलाया। उन्होंने कहा कि काम सब दुनिया का और मन सब ईश्वर का। दरिद्र केवल दरिद्र नहीं, 'दरिद्रनारायण' है। अपने को उपकारी या सुधारक समझ कर चलने से नहीं चलेगा। समग्र पश्चाताप करें कि ये दीन उसके पाप के कारण हैं। इस प्रकार गांधी ने 'नर' में 'नारायण' का भाव भरा। 'नारायण' को 'नर' की सेवा में से प्राप्त करना सिखाया। यदि हमारे काम में 'उपकार' का भाव हो तो वह गांधी का न रहेगा।

गांधी का दान: आजादी नहीं, 'मूल्य'

अभी तो लगता है कि सारे रास्ते पैसे से खुलते हैं। मेरे पास पैसा इतना है ही, क्योंकि दूसरे को रोजगार हूँ। प्रत्येक आदमी जो हाथ और मन में प्रीति लेकर आता है, भूखा क्यों रहे? आज 'श्रम' और 'स्नेह' में मूल्य नहीं रहा। मूल्य सिक्के में आ गया है। आदमी को रुतिबाओ, पैसे को पकड़ो, जीवन व्यवहार बन रहा है। गांधीजी ने हमें क्या दान दिया? क्या केवल देश की स्वतंत्रता या 'मूल्य'? सत्याग्रह गांधीजी की सबसे बड़ी देन है। लाखों के विरोध में एक व्यक्ति को भी अपने लिए जीने और मरने का हक है। जब लोकतंत्र बहुमत के आधार पर नहीं चलेगा, तभी हम पशु समाज से मानव-समाज की ओर बढ़ेंगे। गांधीजी ने चाहा स्नेह में से श्रम आये। श्रम और स्नेह मूल्य बनें। जैसे रोगी के प्रति सहानुभूति, वैसेही अपराधी के प्रति भी हो। दण्डशक्ति से मानव संस्कार नहीं होता।

आज के दिन हम उस गांधी को याद करें, जो वेदना और व्यथा का था, जिसके लिए यह सम्भव नहीं था कि अपने लिए कुछ रख ले। मां ने चार रुपये रख लिये, उसके लिए भी अखबार में छपवा दिया। एक गरीब बहन को देखा, जिसने कहा नहाऊँ तो कपड़े कैसे धोऊँ? बस, बाद में वे पूरा कपड़ा न पहन सके। और आज हम सोचते हैं कि अमीरी लाने के लिए स्वय पहले हम अमीर बनें। कर्म, दौलत उत्पादन बढ़ रहा है, पर चैन कहाँ? दिल्ली का वैभव लंका की स्वर्णनगरी की तरह बढ़ रहा है। हम रावण को नहीं याद करते, राम को याद करते हैं। मरने के बाद आदमी का प्यार ही याद रह जाता है। आज एक आदमी दूसरे में आश्वासन नहीं पाता, अतः सब चिंतित हैं। ह्रास की स्थिति है। क्या यह स्वस्थ समाज है, जिसमें सभी को अपनी चिन्ता करनी पड़े?

कर्म-ज्वर में स्वास्थ्य नहीं प्रकट होगा। गांधी कर्म में नहीं, अकर्म में, अध्यात्म में है। गांधी का कर्म स्वच्छता और प्रामाणिकता में है। आप गांधी का काम नहीं, आत्मा का काम करें तभी गांधी का काम होगा।

[गांधी-विचार केन्द्र, कानपुर द्वारा गत ३० जनवरी '६२ को, गांधीजी की पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित 'गांधी-स्मृति व्याख्यानमाला' के अन्तर्गत व्यक्त किये गये विचारों का सार।]

आग और क्रांति में कूदना चाहता हूँ

[साहित्यिक सामाजिक जीवन का फोटोग्राफर होता है। हिन्दुस्तान का समाज आज जिन आघात प्रत्याघातों का शिकार हो रहा है, उसकी ओर से कोई भी सच्चा साहित्यिक आँख नहीं मूँद सकता। जैनेन्द्र का साहित्यिक भी क्रान्ति के लिए निकलना चाहता है। उनकी व्यग्रता की झलक कानपुर के श्री विनय अवस्थी के नाम लिखे नीचे दिये गये पत्र से देखी जा सकती है। —सं०]

चुनाव हो गये, कांग्रेस पद पर आ गयी। मेरा स्वय उसमें योग रहा—इस अर्थ में कि मेरा वोट गया। वोट इसलिए गया कि जिम्मेदारी कांग्रेस की थी और अब भी वह जिम्मेदारी से अलग नहीं है। इसलिए देश ने उसे जिम्मेदारी पर भेजा है तो ठीक किया है, क्योंकि परीक्षा पर भेजा है। लेकिन उसमें निर्वाह में चूक हो तो देश के हाथों में ताकत आनी चाहिए कि जिम्मेदारी वहाँ से छीन ली जाय। मैं इस काम के लिए निकल पड़ना चाहता हूँ। एक तरह आग लगाने का यह काम है! लड़के वय पा गये। वे अपने को देख लेंगे। मेरे लिए बस सच की सेवा ही रह जाती है। इधर तुमने मुझसे बोलने का काम ले डाला। मैं उससे बचता था, जैसे कि सांस्कृतिक और साहित्यिक को बचना चाहिए। लेकिन सच ही कभी नागरिक धर्म बड़ा हो जाता है। यानी अब मैं नहीं चाहूँगा कि बचा जाय। आग से और क्रान्ति से भी नहीं बचना है, बल्कि उसमें कूदना है। सोचता हूँ कि निवृत्त होते ही १५ रोज तुम्हें कानपुर के लिए दे डालूँ। सामने कोई नकशा नहीं है। बस तकलीफ है और भावना है। बोलो क्या कहते हो? साथी क्या कहते हैं? अभी किसी से बात नहीं हुई। रात का ४ बजा है, नींद खुल गयी है, ख्याल आया है और पहला पत्र तुम्हें लिख रहा हूँ। बड़ा असंतोष है और एक अलख जगाने को मन में आती है।

दिल्ली, २६-२-६२

—जैनेन्द्र

विनोबा, सर्वोदय तथा भूमिहीनों के प्रति विश्वासघात

वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी

समाचार-पत्रों में लैण्ड-लेवी कानून के संबंध में कांग्रेस पार्लमेन्टरी पार्टी की बिहार कमिटी का प्रस्ताव तथा ता० ११ मई '६२ के अखबारों में नयी दिल्ली से प्रकाशित बिहार के मुख्य मंत्री का वक्तव्य देखने को मिला है। इसके पूर्व कुछ दिनों से 'लैण्ड-लेवी' के सम्बंध में कांग्रेस-जनों के द्वारा जो विचार व्यक्त किये जा रहे हैं, वह भी देखने-सुनने को मिलते रहे हैं। अब इन विचारों की प्रबलता के कारण बिहार भूमि-सुधार (हदबंदी) कानून से 'लैण्ड लेवी' की धारा निकाल दी जाती है, या उसमें संशोधन किया जाता है, तो उसके क्या-क्या नतीजे हो सकते हैं, मैं इस सम्बन्ध में अपने कुछ विचार यहाँ रख रहा हूँ।

इस सम्बन्ध में जो कुछ हो रहा है, वह कोई अस्वाभाविक घटना नहीं है। यदि हम लोग याद करें तो हमारे ध्यान में आयेगा कि जमींदारी उन्मूलन का कानून जब पास हुआ था, उस समय उसका भी कितना विरोध जमींदारों की ओर से तथा जमींदार या जमींदारों से सहानुभूति रखने वाले कांग्रेस जनों की ओर से भी हुआ था! कितने अड़ंगे लगाये गये थे! परन्तु तत्कालीन मुख्य मंत्री स्व० श्री बाबू की दृढ़ता तथा श्री कृष्णवल्लभ बाबू की कर्मठता के कारण उन विरोधों के बावजूद जमींदारी-उन्मूलन का कार्य सम्पन्न हो सका। १९५२ की मिनिस्ट्री के काल में कृष्णवल्लभ बाबू ने आज जो भूमि हदबंदी कानून पास हुआ है, उससे प्रगतिशील बिल असेम्बली में पेश किया था। पर उसका क्या हुआ? कांग्रेस के अन्दर के प्रमुख लोग इस बिल को वापस कराने के लिए एक मत होकर प्रयत्नशील हुए और उनकी शक्ति प्रबल हुई। इस बार श्रीबाबू की भी दृढ़ता कायम नहीं रह सकी। कृष्णवल्लभ बाबू ने बहुत मेहनत की थी और उस बिल को सब स्टेजों से पार करके असेम्बली में पेश करने में सफल हुए थे। मैं जानता हूँ कि उनको बड़ा दुख हुआ था, जब उन्हें वह बिल कांग्रेस के अन्दर की प्रतिक्रियागामी शक्तियों की प्रबलता के कारण असेम्बली में पेश करने के बाद वापस लेना पड़ा था।

अब इस बार तो इसको भी मात करने वाली कार्रवाई होने के लक्षण दिखायी पड़ रहे हैं। उस बार तो असेम्बली में बिल पेश करके वापस लिया गया। अब इस बार कानून बन जाने के बाद उसे रद्द कराने का प्रयत्न हो रहा है। जो प्रयत्न हो रहा है, उसे कानून को ही रद्द करने की बात मैं जानबूझ कर लिख रहा हूँ। जहाँ तक इस कानून में 'सिलिंग' का हिस्सा है और जिसका समर्थन किया जा रहा है, वह १९५२ की 'मिनिस्ट्री' में जो बिल पेश हुआ था, उससे कहीं अधिक प्रतिगामी है। 'लेवी' की व्यवस्था के कारण ही यह कानून १९५२ के बिल की अपेक्षा अधिक प्रगतिशील बना है और इसी कारण हमारे राजस्व मंत्री भी यह कह कर गौरवान्वित हो सके हैं कि इस कानून के द्वारा 'सिलिंग' तथा 'लेवी' से जो जमीन मिलेगी, उससे बिहार के सभी भूमिहीन परिवारों को जमीन मिल जायगी। अब यदि लेवी के विरोधी विचारों की विजय होती है और 'लेवी' हटाने का संशोधन इस कानून में हो जाता है, तो राजस्व-मंत्री ने चन्द दिन पहले असेम्बली में जो घोषणा की है, उसका क्या होगा? 'लेवी' हटा कर उस घोषणा की पूर्ति की क्या योजना है?

यह कानून इस रूप में कैसे बना, इस पर भी थोड़ा विचार कर लेना अच्छा होगा। भूमि-सुधार कानून के इतिहास में 'लैण्ड लेवी' की योजना बिहार सरकार का एक नया तथा अत्यन्त प्रगतिशील कदम कहा जा सकता है। हमारे आज के मुख्य मंत्री श्री विनोदा बाबू जब राजस्व मंत्री थे, तब यह बिल 'लैंड लेवी' की धारा के सहित प्रवर समिति में स्वीकृत हुआ तथा उनके अंतरिम मुख्य मंत्रीत्व-काल में योजना आयोग ने लैण्ड लेवी की धारा में केवल बीसवाँ भाग लेने की जगह, बीसवां, दसवां और छठा हिस्सा लेने का भी तत्व दाखिल करके उसे अधिक प्रगतिशील बना दिया, और तब यह बिल असेम्बली और कौंसिल से स्वीकृत होकर राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के बाद कानून के रूप में आ सका। अगर प्रवर समिति एवं असेम्बली की कार्यवाही पर विचार करें तो उसे ज्ञात होगा कि शायद ही किसी प्रवर समिति के कांग्रेसी सदस्यों ने लेवी के विरुद्ध अपने 'डिसेन्ट नोट' में विचार व्यक्त किया है। उसी प्रकार असेम्बली और कौंसिल में जो इस बिल पर विचार करते समय बहस हुई, उसमें भी 'लेवी' की व्यवस्था का कम-से-कम विरोध किया गया है। जहाँ तक प्रांतीय कांग्रेस कमिटी का प्रश्न है, लेवी के संबंध में श्री लक्ष्मी नारायण सुधांशु का प्रस्ताव प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी में सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ था, उसमें ५ एकड़ से ऊपर-वाले पर लेवी लगाने तथा सब को 'फ्लैट रेट' बांधे में कट्ठे की 'लेवी' की बात थी।

कि प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी के इस सर्वसम्मत निर्णय के आधार पर प्रवर समिति में 'लैंड लेवी' की धारा इस बिल में जोड़ी गयी और योजना-आयोग के सुझाव के आधार पर उसे संशोधित कर, यों कहिये कि उसे अधिक प्रगतिशील बना कर कानून का रूप दिया गया।

इस भूमि-हदबंदी बिल के असेम्बली-कौंसिल में स्वीकृत होने के बाद आम चुनाव हुआ। निश्चय ही आम चुनाव में यह 'बिल' भी एक महत्वपूर्ण 'इशू'—मुद्दा—बना था। स्वभावतः ही कांग्रेस के विरोधी पार्टियों ने भी चुनाव में इसको एक महत्व का 'इशू' बनाया और कहना होगा कि इस 'इशू' पर कांग्रेस जीत कर आयी और उसकी सरकार बनी है।

इस बार के असेम्बली में १९५७ की अपेक्षा कांग्रेस को कुछ कम सीटें मिली हैं और यह कहा जा रहा है कि कांग्रेस को गत चुनाव से कम सीटें मिलने का एक महत्व का कारण 'लैंड लेवी' का कानून है। इस सम्बन्ध में कांग्रेस से अलग रह कर जो कुछ देखता हूँ, उस अनुभव पर से मैं कहना चाहता हूँ कि कम सीटें मिलने के क्या निम्नलिखित कारण नहीं हैं?

(१) कांग्रेसजनों की आपस की गुटबन्दी और एक गुट के कांग्रेसकर्मी का दूसरे गुट के कांग्रेस उम्मीदवार को हराने का प्रयत्न।

क्या ऐसा अनेक कांग्रेसजनों के विरुद्ध दोषारोपण नहीं हुआ है और उनका प्रश्न कांग्रेस आलाकमान के सम्मुख विचाराधीन नहीं है?

(२) केरल में कांग्रेस और मुस्लिम लीग का समझौता टूटना मुख्यतया उसके असर से तथा स्थानिक कारणों से मुस्लिम वोटरों का वोट इस चुनाव में पहले की तरह कांग्रेस को नहीं प्राप्त होना।

(३) जातीयता की भावना की वृद्धि।

(४) कांग्रेस पहले किसी योग्य-अयोग्य उमीदवार को जहाँ भी खड़ा कर देती थी, कांग्रेस के प्रभाव से वे चुने जाते थे। अब उस स्थिति में परिवर्तन होने तथा स्थानीय प्रतिनिधि को चुनने की भावना में वृद्धि होने के बावजूद कांग्रेस के द्वारा पुरानी पद्धति से ही चुनाव क्षेत्र के बाहर के उम्मीदवारों को खड़ा करने की नीति।

(५) ऐसे उम्मीदवार जो पहले असेम्बली में थे, पर चुनाव-क्षेत्र से कोई सम्पर्क नहीं रखते थे। किन्हीं अन्य कारणों से चुनाव क्षेत्र के लोगों की दृष्टि में गिर चुके थे। उन्हें पुनः उम्मीदवार बनाया जाना।

(६) उम्मीदवारों के चुनाव में मण्डल कांग्रेस कमिटियों के सदस्यों का मत लेना और फिर उसे कोई मान्यता नहीं देना।

(७) मुख्यतया जंगल-कानून तथा जंगल की व्यवस्था, कांग्रेस संगठन की दुर्बलता, कांग्रेस कार्यकर्ताओं का अभाव, जो थोड़े से कार्यकर्ता हैं, उनकी आपस की गुटबन्दी आदि कारणों के फलस्वरूप छोटा नागपुर डिवीजन के जिलों में कांग्रेस की व्यापक पैमाने पर अलोकप्रियता।

जमीन्दारी-उन्मूलन, भूमि हदबंदी कानून या ऐसे अन्य प्रगतिशील विचारों या कार्यों के कारण मध्यम वर्गों का झुकाव स्वतन्त्र पार्टी की ओर हुआ ही है और साधारणतः उनका अधिकांश वोट इस बार स्वतन्त्र पार्टी को प्राप्त हुआ है। लेकिन मानना होगा कि गरीबों का वोट इस बार अधिक संख्या में मुख्यतया कांग्रेस को प्राप्त हुआ है। स्वतंत्र पार्टी ने एलान किया था कि हम चुन कर आयेंगे तो 'लैण्ड लेवी' के कानून को रद्द करेंगे। उनकी सरकार नहीं बनी। कुछ सदस्य चुन कर आये हैं, वे तथा कुछ अन्य पार्टियाँ 'लैण्ड लेवी' का विरोध कर रही हैं। कांग्रेस ने कानून बनाया। चुनाव में तथा असेम्बली आदि में भाषण कर कांग्रेस-जनों ने गरीबों में एक आशा का निर्माण किया और अब यदि वह 'लैण्ड लेवी' कानून को अपनी कमजोरी से वापस लेती है या ऐसा संशोधन कर देती है, जिससे जो आशा उसने भूमिहीनों में पैदा की है उसकी पूर्ति नहीं होती है, तो उसकी जो प्रतिक्रिया भूमिहीनों में होगी, उसका सहज ही अन्दाज किया जा सकता है। इसी प्रकार यह भी कांग्रेस को सोचना चाहिये कि 'लैण्ड लेवी' की धारा हटायी गयी तो इसका यश कांग्रेस को मिलेगा या जो पार्टियाँ इसके विरोध में आवाज बुलन्द कर चुनाव में आयी थीं या आज जो आन्दो-

बधाई का पात्र

बिहार का भूमि हदबंदी कानून एक साहसिक और विलक्षण कानून है। इसके द्वारा तय की गयी हदबंदी में, जो मेरी राय में बहुत ऊँची है, ऐसी कोई विशेषता नहीं है। लेकिन इसमें तथाकथित 'लेवी' की जो व्यवस्था है, उसे हम अवश्य ही साहसिक और विलक्षण कह सकते हैं। बिहार सरकार इसके लिए बधाई का पात्र है।

(७ अक्तूबर '६१) —जयप्रकाश नारायण

कर रहे हैं उन्हें मिलेगा ? मानना होगा कि यह कानून बनाकर जमीन वालों को कांग्रेस यदि नाखुश कर चुकी है तो अब इसे वापस लेकर भूमिहीनों को भी नाराज करने और अपनी इस कार्रवाई से इस कानून को रद्द कराने का प्रयास करने वाली पार्टियों को ही शक्तिशाली बनाने की गलती करेगी।

इन राजनैतिक बातों के अतिरिक्त भूदान आन्दोलन के साथ इस कानून का भी सम्बन्ध आया है। इस कारण भूदान-आन्दोलन पर जो इसका असर होगा, वह भी विचारणीय है।

'लैंड लेवी' की धारा प्रवर समिति में स्वीकृत हो चुकी थी। उसके बाद विनोबाजी ने २५ दिसम्बर '६० को आसाम जाते समय बिहार में प्रवेश किया था विनोबाजी ने पुराने ३२ लाख एकड़ के संकल्प के लिए 'बीघा में कट्ठा' दान देने के लिए अपील बिहारवासियों से की। चूँकि 'लेवी' की व्यवस्था बिल में हो चुकी थी, इसलिए सहज ही विनोबाजी ने 'लेवी' के बदले 'देवी,' यानी कानून से किसानों की जमीन ली जाय, इसके बदले वे खुद भूमिहीनों में अपनी जमीन बाँट दें, यह विचार जाहिर किया और अपनी यात्रा में सब पड़ावों पर जमीन माँगने का काम किया। विनोबाजी के इस विचार को मान्य करके कांग्रेस सरकार ने कानून में यह व्यवस्था कर दी कि जो भूदान में २५ दिसम्बर '६० को या उसके बाद जमीन देगा, उससे 'लेवी' में ली जाने वाली भूमि में उतना मिनहा कर दिया जायगा।

इसके बाद सभी पार्टियों के विधायकों की सम्मिलित सभा हुई, जिसमें सर्वसम्मति से एक प्रांतीय भू-प्राप्ति समिति बनायी गयी और उसकी ओर से, पार्टियों के प्रमुख लोगों के हस्ताक्षर से, बिहार के भूमिवानों के नाम एक अपील प्रकाशित कर निवेदन किया गया कि वे 'बीघे में कट्ठा' दान दें। उस अपील में यह भी उल्लेख किया गया कि 'लेवी' से लगनेवाली जमीन में भूदान में दी गयी जमीन मिनहा हो जायगी। तदनुसार दिसम्बर '६० के बाद से अब तक जमीन माँगने का प्रयत्न होता रहा है। लाखों कट्ठे जमीन माँगी जा चुकी है, प्राप्त जमीन में से काफी जमीन का वितरण भी हो चुका है। जिन भूमिहीनों को जमीन दी गयी है, उन्होंने उस जमीन पर कब्जा भी प्राप्त कर लिया है। आज भी सारे भारत के सैकड़ों कार्यकर्ता बिहार के गाँव-गाँव में, भूदान यानी 'लेवी' के बदले 'देवी' की माँग को लेकर टोलियाँ बना कर घूम रहे हैं। उनके कार्य में सहयोग देने के लिए परिपत्र बिहार सरकार के राजस्व विभाग द्वारा निकाला गया है। जब विनोबाजी बिहार में थे, इस कार्य में कांग्रेस, अन्य पार्टियों तथा पंचायत परिषद् की ओर से उन्हें पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया गया था। थोड़ा-बहुत सबका सहयोग मिल भी रहा है।

अब यदि 'लेवी' कानून में संशोधन होता है या उसे हटा दिया जाता है, तो क्या जिनसे 'लेवी' के बदले 'देवी' के नाम पर दान प्राप्त किया गया है, उनको धोखा देना नहीं कहा जायगा ? मेरे जानते भूदान वालों के पास सिवा इसके कोई चारा नहीं रहेगा कि २५ दिसम्बर ६० से अब तक जो दानपत्र प्राप्त हुए हैं, उन्हें रद्द करके सारी स्थिति जनता के सामने रख दी जाय। निश्चय ही अगर भूमि हदबंदी कानून में लेवी की व्यवस्था मात्र होती, उसमें भूदान में दी जाने वाली जमीन को मिनहा करने की बात नहीं आती, तो यह स्थिति उत्पन्न नहीं होती। तब जो भूदान दाता होते, उनको लेवी में मिनहा का आश्वासन नहीं दिया जाता और वैसी स्थिति में प्राप्त दान वापस करने की बात नहीं होती। पर कानून के द्वारा जमीन लेने की बात हुई और उसी कानून के द्वारा एक आश्वासन दिया गया। अब उस कानून में ही संशोधन कर दिया जाता है तो वैसी स्थिति में मेरे जानते उक्त आश्वासन के आधार पर जो दान प्राप्त किया गया, उसका आधार ही मिट जाता है।

प्रान्तीय कांग्रेस कमिटी का प्रस्ताव होना, उसका लागू किया जाना, सबकी सम्मिलित भू-प्राप्ति समिति का गठन और उसके द्वारा 'लेवी' के उल्लेख के साथ अपील प्रकाशित करना, लोगों से दान देने की अपील और फिर उसके लिए विनोबाजी की प्रेरणा से अखिल भारतीय सर्व सेवा-संघ की ओर से भू-प्राप्ति के हेतु सारे भारत के सर्वोदय सेवकों का बिहार में आना और काम करना, और अब ऐसे समय में इस आन्दोलन के द्वारा अधिक-से अधिक लाभ उठाने की चेष्टा नहीं कर उसे विफल बनाने का प्रयत्न करना निश्चय ही बिहार सरकार तथा बिहार की कांग्रेस को अब तक जो यश सर्वोदय के क्षेत्र में मिला है, उसको मिटा कर भारत भर में उसे कलंकित करेगा और उनकी यह कार्रवाई विनोबाजी और सर्वोदय-आन्दोलन के प्रति तथा भूमिहीनों के प्रति एक बहुत बड़ा विश्वासघात मानी जायगी।

'बीघा-कट्ठा' आंदोलन के अनुभव

"जल्दी बाँटिये, ताकि गाँव के भूमिहीन सुखी हों !"

सन्ध्या रंग से रंगी हुई प्रकृति। आम, लीची और कटहल के फलों से लदे हुए वृक्ष। सारे फल पकने की तैयारी में थे। कच्चे फल देख कर हम मन ही मन कहा करते थे : 'ये फल तभी पकेंगे, जब हम यहाँ से चले जायेंगे।' मंद समीर के साथ झूमने वाले फल मुस्कराते हुए कहते थे : 'धीरज रखो।' नाव से कमला नदी पार कर हम तेजी से आगे बढ़ रहे थे। मंजिल दूर थी।

सड़क के किनारे काम करता हुआ एक किसान हमें रोकते हुए बोला : 'हमारे छोटे गाँव को आपके दर्शन का सौभाग्य मिले। रुकिये न !' हमें रुकना पड़ा। आस-पास की झोंपड़ियों में बसने वाले अपने साथियों को पुकारता हुआ वह पूछने लगा : 'आप खादी का ही काम करते हैं या विनोबाजी का भी काम करते हैं ?'

हमसे अनुकूल उत्तर पाकर वह आगे बढ़ा : 'हमारे गाँव की कुछ जमीन एक महंत की थी। महंत ने पहले ही दान दिया था। पर वह अब तक नहीं बँटी। जल्दी बाँटिये, ताकि गाँव के भूमिहीन सुखी हों।'

हमने कहा : 'उसका बँटवारा करना ही है। पर क्या आप अपने भूमिहीन भाइयों के लिए कुछ न देंगे ?'

'क्यों न देंगे, कहिये कितना दूँ ?'

हमने 'बीघे में कट्ठे' का विचार समझाया। उसने तुरत कहा : 'लाइये फार्म।' उसके पास २२ बीघा जमीन थी। करुणा की कृति को कलम से अंकित करते हुए उसने हस्ताक्षर किया : 'हंसराज जादव, ग्राम ताराप‍ट्टी, जिला दरभंगा।'

'हमारी औरतों को कुछ ज्ञान दिये बगैर आप कैसे जायेंगी ? इन्हें चरखे की बात तो समझाइये। खादी पहनने के लिए भी कहिये।' दीवार का सहारा लेकर खड़ी हुई औरतों की ओर बढ़ते हुए मैंने देखा कि उस भाई की मैली धोती खादी की थी। बहनों ने मेरा तथा मेरे साथ की सावित्री बहन का हाथ पकड़ कर कहा : 'आज यहीं रह जाइये न। छोटे गाँव में नहीं रहेंगी ?'

हमारा कार्यक्रम पहले से तय हुआ था। लम्बा रास्ता तय करना था। मजबूर होकर हमें उस प्रेमाग्रह को टाल कर आगे बढ़ना पड़ा।

सात मील की राह तय करके हम खरगवनी पहुँचे, तब शरीर ने अपने स्वभाव के अनुसार तमोगुण अपनाया और चारपाई की शरण ली। थोड़ी देर में बुलाहट हुई। सभा के लिए जनता इकट्ठी हुई थी। घड़ी में रात के दस बज चुके थे। जनता ने जिस तृप्ति के साथ सर्वोदय-विचार को पी लिया, उससे हमारी थकान कुछ मिटी।

दूसरे दिन दूसरे पड़ाव की ओर बढ़ते समय हमारे झोले में गाँव के करीब सभी भूमिवानों के दानपत्र थे।

गाँव के त्यागी निष्ठावान भूमिवान श्री शिवेश्वर मेहता ने स्वयं अपनी जमीन दी और औरों से जमीन दिलवायी थी। एक भूमिवान बाकी थे, उसका उन्हें दुःख हो रहा था। पर गाँव आँखों से ओझल होने के पहले हमारे पास खबर पहुँची कि बचे हुए भाई दान देना चाहते हैं।

गगन की ओर जाने की अभिलाषा लिये हुए बाँस, कृष्ण भगवान की बंसी की याद दिलाते हैं। पर उस दिन गाँव छोड़ते समय बाँस के कोमल पत्ते चीनी कलाकारों की कलाकृतियों का प्रतिबिंब मेरे मानस-पटल पर अंकित कर रहे थे। बाँस की शाखा चीनियों का सर्वप्रिय विषय। चीनियों की कला के साथ चीन की क्रांति का भी स्मरण हुआ। गाँव के मुखिया ने भूदान का विचार सुना। अखिल भारत पंचायत परिषद् के अध्यक्ष तथा बिहार पंचायत परिषद् का आदेश भी सुना। अंत में दान-पत्र भरने के बजाय हमसे कहा : 'हम दान कदापि नहीं देंगे। कानून से ले लो। आपको समझना चाहिये कि हमारे पास जमीन संपत्ति है, इसीलिए हम मुखिया बने हुए हैं। जमीन देंगे तो फिर हमारी क्या प्रतिष्ठा रहेगी ?'

इसके बाद सात आठ साल का भोला लड़का पिता से अनुरोध कर रहा था : 'दीजिये न, बाबूजी जमीन। अपने पास दो बीघा है, तो दो कट्ठे दीजिये।'

पिता भूदान कार्यकर्ताओं को टाल सका, लेकिन पुत्र को नहीं टाल सका। दो कट्ठे का दानपत्र भरा गया। पुत्र की आँखों में स्नेह और कार्यकर्ताओं की आँखों में आँसू।

—निर्मला देशपांडे

मोक्ष का मार्ग : देशसेवा

मुझे पृथ्वी के नश्वर राज्य की स्पृहा नहीं है। मेरा तो स्वर्ग के राज्य यानी मोक्ष-प्राप्ति का प्रयास है और वह साध्य प्राप्त करने के लिए गुफा का आश्रय लेने की कोई आवश्यकता नहीं है। एक गुफा हमेशा मैं अपने साथ लेकर फिरा करता हूँ, अगर उसका भान मुझे रहा करता हो तो। और गुफावासी तो मन में महल की भी रचना करता है, जब कि महल में रहने वाले जनक जैसे को किसी महल की रचना करने की आवश्यकता भी नहीं रहती है। जिस गुफावासी का चित्त हमेशा माया में भ्रमण करता हो, उसे शान्ति नहीं मिलती है। लेकिन अनेक राज-वैभव भुगतने पर भी जनक को ऐसी शान्ति मिली, जिसका कोई पार नहीं था। मेरे लिए तो मोक्ष का मार्ग अपने देश की और उसके जरिये जन-समाज की सेवा के लिए सतत परिश्रम करने में ही रहा है। मुझे तो प्राणीमात्र के साथ अभेद भाव का अनुभव करना है।

('लोकजीवन' से साभार)

—महात्मा गांधी

आश्रम-जीवन और साहित्यकार

विष्णु प्रभाकर

यंत्र-सभ्यता ने यों तो पूरी आधुनिक पीढ़ी को अभिशप्त कर दिया है, लेकिन साहित्यकार को तो जैसे उसने तोड़ ही दिया है। आज का साहित्यकार छटपटा उठा है किसी ऐसे विश्राम-स्थल के लिए जिसकी छाया में बैठ कर वह क्षण भर सुस्ता ले!

साहित्यकार अपने को स्रष्टा के समकक्ष मानता है। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने साहित्य की व्याख्या करते हुए उसे 'सम्मिलन' कहा है। साहित्य में 'सहित' का समावेश है, इसलिए वह सम्मिलन है। सम्मिलन मनुष्य-मनुष्य का, मनुष्य-प्रकृति का, मनुष्य-विज्ञान का, देश-देश का, देश-विदेश का, जड़-चेतन का—गर्ज यह कि प्रत्येक का सम्मिलन ही साहित्य है। सम्मिलन की इस प्रक्रिया में पूर्ण आत्म-समर्पण की शर्त है। 'अन्य' के आते ही वह खंडित हो जाता है। उसका अर्थ है सृजन में बाधा। अर्थात् सृजन के लिए जिस साधना और चिन्तन की शर्त है वह भीड़ के कोलाहल में सम्भव नहीं हो सकती। चिन्तन चाहता है शान्त वातावरण, आसपास से, उस क्षण से मुक्ति। यों तो साहित्यिक महाकाल का स्वामी होकर भी क्षण में रहता है। उसे रहना चाहिए, पर क्षण को जीने के लिए उसे क्षण से मुक्ति लेना भी अनिवार्य है। सामग्री उसे तत्कालीन संसार से मिलनी है, पर सृजन की प्रक्रिया में वह निश्चय ही यह अनुभव करता है, काश कि मुझे एकान्त मिलता, काश कि सन्नाटे में खो जाता! यह इच्छा पलायन नहीं है, बल्कि सृजन, अनुशीलन और अन्वेषण की प्रक्रिया है, आत्मसात करने की प्रक्रिया। इस आत्म-समर्पण के बिना सम्मिलन नहीं हो सकता। यों भी कह सकते हैं कि जो अर्धचर्वित है और अपचकर है उसी को पचाने के लिए ऐसे वातावरण की आवश्यकता है जहाँ चिन्तन की सुविधा हो। जहाँ मौन, शान्त, मनोरम प्रकृति हो, जहाँ तटस्थता हो। तटस्थता हो निःसंगता और निष्कामता है, प्रकृति के मौन सान्निध्य में थके प्राणों को आनन्द मिलता है। अध्यात्म की भाषा में कहें तो काम-क्रोध के शमन के कारण तटस्थ चिन्तन की प्रक्रिया को वेग मिलता है। साहित्यकार को इस भाषा के प्रयोग पर आपत्ति हो सकती है, इसलिए हम कहेंगे कि इससे प्राणों को जो नई स्फूर्ति मिलती है, उससे सृजन और चिन्तन की प्रक्रिया अधिक वैज्ञानिक होती है।

प्रकृति के सान्निध्य में प्रस्तुत सामग्री को न केवल आत्मसात ही किया जा सकता है, बल्कि उसका पुनर्मूल्यांकन भी हो सकता है। किसी भी वस्तु का एक ही पहलू नहीं होता। पूर्वाग्रह से मुक्त होकर देखें तो दूसरे पहलू भी सामने आ जाते हैं। वे क्यों हैं? उनके होने का महत्त्व क्या है? यह भी हम समझ सकते हैं। यही चिन्तन की वैज्ञानिक प्रणाली है। इसके विपरीत अर्धचर्वित और अपचकर सामग्री से जिस साहित्य का सृजन होगा वह वैसा ही दुर्गन्धित और अरुचिकर होगा, प्रगति-विरोधी तथा अवैज्ञानिक तो होगा ही।

तर्क किया जा सकता है कि एकान्त अपने आप में तो कुछ भी नहीं है। सन्नाटे में केवल अपनी ही आवाज सुनी जा सकती है और अपनी आवाज केवल दम्भी को प्रिय होती है। जब तक अन्तर में अनुशासन न हो, तब तक एक विशेष प्रकार के अभ्यास के लिए एकान्त आवश्यक तो है, परन्तु ध्येय में निष्ठा न हो तो वह भी व्यर्थ है। यह मात्र साधन है, साध्य नहीं।

आश्रम-जीवन : साध्य नहीं, साधन

निश्चय ही वह साध्य नहीं है। आश्रम-जीवन भी साध्य नहीं है। एक साधन के रूप में ही उस पर विचार किया जा रहा है। ऐसा साधन जो साहित्यकार को अपनी आवाज सुनने की नहीं, बल्कि शब्द से साक्षात्कार करने की सुविधा दे सके। जैसे धार्मिक व्यक्ति ईश्वर-साक्षात्कार के बीच में किसी को नहीं चाहता, इसी तरह साहित्यकार भी सृजन की प्रक्रिया में अनुशासन और एकान्त के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहता। इसीलिए जब हम साहित्यकार के लिए आश्रम की बात करते हैं, तो हमारी कल्पना निश्चय ही एक ऐसे एकान्त प्रदेश से होती है, जो यथासम्भव संसार के दैनन्दिन कोलाहल से दूर प्रकृति के सान्निध्य में स्थित हो, इसी को हमने आश्रम की संज्ञा दी है।

प्राचीन काल से ही ये आश्रम किसी-न-किसी रूप में भारतीय जीवन का स्वाभाविक अंग रहे हैं। आर्यसंस्कृति में जीवन के जिन चार आश्रमों की व्यवस्था है, उनमें ब्रह्मचारी विद्याध्ययन के लिए गुरु के आश्रम में ही रहता था और वानप्रस्थ का अर्थ ही है भवन छोड़ कर वन की ओर प्रस्थान करना। हमारे धर्मग्रन्थों और महाकाव्यों में जिन आश्रमों की चर्चा आती है, उनमें वाल्मीकि, वशिष्ठ, कण्व, च्यवन, अगस्त्य, शातकर्णी, शरभंग, मरीचि, जाबाली, अत्री, भारद्वाज, गौतम, सुतीक्ष्ण, विष्णु, शिव और शबरी के आश्रम प्रमुख हैं। नगरों से दूर अरण्यों के शान्तिपूर्ण वातावरण में ये आश्रम शिक्षा और स्वाध्याय के केन्द्र थे। इनमें कठोर अनुशासन में रहने वाले मृग-चर्मधारी और कुशा की चटाइयों पर सोने वाले ब्रह्मचारी आदर्श कुलपतियों से चौदह विद्याओं की शिक्षा ग्रहण करते थे। यहाँ का वातावरण पवित्रता और वात्सल्य से पूर्ण होता था। एक ओर रात्रि के चौथे प्रहर में शास्त्रों के स्वाध्याय का मधुर घोष उठता था तो दूसरी ओर हिरण शावक आश्रमवासियों से हिलमिल कर उछल कूद करते थे। यहाँ ज्ञान-विज्ञान की अजस्र धारा भी बहती थी और नृत्य नाट्य तथा संगीत की सुमधुर ध्वनि भी। वे साहित्य और ललित कलाओं के केन्द्र थे। रामायणकालीन वाल्मीकि और भारद्वाज के आश्रम इसके प्रमाण हैं। उनमें अनुशासन और कला का अद्भुत समन्वय था। सच तो यह है कि अनुशासन के बिना कला पनपती ही नहीं। आर्य लोग आनन्द के उपासक थे, इसीलिए उनके आश्रम-जीवन में भी उल्लास की मन्दाकिनी बहती थी। वे कूपमण्डूक नहीं थे। नियमित शैक्षणिक यात्राओं के अतिरिक्त व्यक्तिगत रूप से भी पर्यटन अत्यन्त लोकप्रिय था।

जो आश्रम मात्र तप के लिए स्थापित होते थे, वहाँ धार्मिक जीवन के विधि-विधान कुछ कठोर अवश्य रहते थे, परंतु अन्य आश्रमों में प्रकृति के रूप-सौन्दर्य, कृत्रिम नहरों, पशु-पक्षियों, मृग और मृग शावकों की क्रीडा, मुनि-कन्याओं द्वारा वृक्ष-सिंचन का मधुर उल्लेख मिलता है। ये आश्रम देश की सांस्कृतिक धरोहर के न्यासी, राष्ट्र के भावी कर्णधारों के निर्माता तथा संस्कृति के अथक प्रचारक भी थे। अरण्यों में आगे बढ़ कर नये-नये आश्रमों की स्थापना करने की प्रवृत्ति हमारे प्राचीन इतिहास में निरन्तर मिलती है। इन्हीं आश्रमों में वेद शाखाओं की रचना हुई। इन्हीं में ऋषियों ने उपनिषदों के मन्त्रों से साक्षात्कार किया और इन्हीं में रामायण और महाभारत-जैसे महाकाव्यों का सृजन हुआ।

आश्रम का रूप-परिवर्तन

प्रागैतिहासिक काल की इस आश्रम-व्यवस्था की परम्परा भारतीय इतिहास में बराबर जीवित रही। परिस्थिति के अनुसार उसका रूप अवश्य पलटता रहा। संकीर्णता भी आयी। उन्मुक्त वातावरण बार-बार धूमिल हुआ। परन्तु शिक्षा-केन्द्र के रूप में काशी, नालन्दा, तक्षशिला और विक्रमशिला उसी परम्परा के प्रतीक हैं। मध्यकाल में अवश्य संकीर्णता और अतिशय विधि-निषेधों ने आश्रम-जीवन से आनन्द का बहिष्कार कर दिया था और इसीलिए वे श्रीहीन हो गये थे, परन्तु यह परम्परा नष्ट नहीं हुई। इसका प्रमाण यह है कि हमारे युग में भी अनेक आश्रम स्थापित हुए। उनमें प्रमुख हैं—महात्मा गांधी के साबरमती और सेवाग्राम के आश्रम, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ का शान्तिनिकेतन, आर्य समाज आदि संस्थाओं के गुरुकुल, महर्षि रमण और योगी अरविन्द के योगाश्रम। गांधीजी के आश्रम रचनात्मक प्रवृत्ति के केन्द्र थे। चूँकि गांधीजी स्वतंत्रता-संग्राम के संचालक थे, इसलिए उनका रूप राजनीतिक अधिक था। स्रष्टा की प्रेरक शक्ति के अभाव में वे आज प्राणहीन हैं। कला का अन्तरराष्ट्रीय केन्द्र शांति निकेतन भी अब केवल एक विश्व-विद्यालय बन कर जीवित है। ऐसे ही हैं गुरुकुल। महर्षि रमण के आश्रम की भी यही कहानी है। यह सब इसीलिए हुआ कि ये आश्रम केवल किसी एक सिद्धिप्राप्त व्यक्ति के व्यक्तित्व से प्रेरित थे। पाण्डीचेरी के अरविन्द आश्रम में अभी भी जो जीवन-शक्ति दिखाई देती है, उसका कारण है—श्रीमाँ। सौभाग्य से श्रीमाँ का व्यक्तित्व अभी भी मार्गदर्शन के लिए सुलभ है।

आज हम विज्ञान के युग में रह रहे हैं। नक्षत्र-यात्रा अब केवल कल्पना-लोक का विषय नहीं रही है, इसीलिए आज के साहित्यकार से प्रागैतिहासिक युग का जीवन जीने को कहना असंगत होगा। सिद्धि और मोक्ष का प्रलोभन उसे नहीं रह गया है। परन्तु जीवन में किसी-न-किसी प्रकार का अनुशासन तो होना ही चाहिए। बाह्य भी हो, परन्तु आंतरिक तो अनिवार्य है। उसके बिना आश्रम-जीवन की कल्पना व्यर्थ है। हम जानते हैं कि अनुशासन से उद्भूत संयमित-जीवन की यह कल्पना साहित्यिक को सुखद नहीं लग सकती। महाकाल का स्वामी वह स्रष्टा कह उठेगा—छीः छीः किस आदर्शवाद की चर्चा आप ले बैठे! यह तो निरा पलायन है और जीवन से भागना जीवन का अप-

कार्यकर्ताओं

पोस्टर-विरोधी आन्दोलन का दूसरा पहलू

अश्लील पोस्टर-विरोधी आन्दोलन से विनोबाजी ने एक बार सबका ध्यान इस नैतिक प्रश्न की ओर आकृष्ट किया। मुझे लगता है कि अभी इस दिशा में जितना ठोस कार्य होना चाहिए था, उतना नहीं हो रहा है। हमें इस प्रश्न पर बहुत ही गहराई में जाकर सोचना चाहिए।

अश्लील पोस्टरों की तरह ही अश्लील गानों की बात है। रेडियो, सिनेमा हाल, क्लब, होटल और मनोरंजन के स्थानों के साथ साथ आज स्कूलों, सार्वजनिक स्थानों और धर्म-स्थानों में भी खुले आम अश्लील गाने गाये जाते हैं। इस तरफ किसका ध्यान है! काम-क्रोध मोह-ममता छोड़ कर सद्धर्म का उपदेश देने वाले साधु-संत भी आज फिल्मी गानों को अपना माध्यम बना रहे हैं, यह कितने खेद की बात है!

कुछ दिन पूर्व मैं आसाम में था। वहाँ एक मंदिर में जाने का मौका मिला। देखा तो आठ-दस भक्त और पुजारी मूर्ति के सामने बैठे हारमोनियम और तबलों के साथ 'नागिन' फिल्म के गीत गा रहे थे! मैं बिना दर्शन किये ही लौट आया।

राजस्थान में एक नैतिक आन्दोलन चलाने वाले साधु-साध्वियों के स्थान पर हो आया हूँ। वहाँ भी ऐसे ही निम्न स्तर के फिल्मी गीत सुनाई पड़े! प्रयोजन पूछने पर जवाब मिला कि धर्म के प्रचार के लिए सस्ते, बाजारू व फिल्मी गीतों के राग पर धर्म के दूसरे गीत और पैरोडिया बनाने का यह रूप है। इस प्रकार धर्म-गीतों की नींव में भी अश्लीलता-रूपी बारूद रखी जा रही है।

मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि आखिर धर्म के ये स्थान आध्यात्मिक, धार्मिक, नैतिक विचारों और सांस्कृतिक चेतना को बल देने के लिए हैं या धर्म की आड़ में संगीत के नाम पर दबी वासना की पूर्ति करने के लिए है! कुत्सित भावनाओं व अपराध की प्रवृत्ति से पूर्ण फिल्मी गानों की महफिल जमा कर आवारागर्दी का दूषित वातावरण पैदा करना कम से-कम हमारे धार्मिक साधुओं, पुजारियों और भक्तों के लिए तो किसी भी दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। संयम, सदाचार, सुधार तथा नैतिकता और पवित्रता की दुहाई देनेवाला हमारा पूजनीय साधुवर्ग भी यदि निम्न स्तर के थासलेटी संगीत को ही मान्यता देगा तो फिर शास्त्रीय संगीत को कहाँ आदर मिलेगा!

अपनी पंजाब की पद-यात्रा में विनोबाजी ने इस वाहियात फिल्मी संगीत के बारे में बड़ी मार्मिक बात कही, जिस पर गंभीरतापूर्वक सोचना आवश्यक है। उन्होंने कहा—"जो संगीत मानव की कोमल भावनाओं के प्रकटीकरण और विकास का अन्यतम साधन है, उस संगीत का सिनेमा के भद्दे, अश्लील और यौन-कामना को उत्तेजना देने वाले गीतों के जरिये दुरुपयोग किया जा रहा है। मैं शहरों में जाने से बहुत डरता हूँ, क्योंकि वहाँ रात्रि के प्रशान्त काल में मन को विकृत करने वाले गीतों के रेकार्ड लाउडस्पीकर पर लगा कर गाये जाते हैं। उस हालत में न तो मैं सो सकता हूँ और न कोई गहरा अध्ययन तथा चिन्तन ही कर सकता हूँ। जनरुचि को विकृत करने वाले ये लोग अपने स्वार्थ के लिए सिनेमा के इस प्रकार के निम्न स्तर के संगीत के द्वारा उन लोगों की सुविधा की निर्दयता से हत्या करते हैं, जो शान्त, सभ्य और सुरुचिपूर्ण जीवन बिताना चाहते हैं।"

विनोबाजी की उपर्युक्त बात कम-से-कम अध्यात्म और धर्म तथा नैतिकता और निर्माण का उपदेश देने वालों को तो माननी ही चाहिए। उन्हें यह जानना चाहिए कि इन्हीं फिल्मी गीतों के जाल में फँस जाने के कारण भले घर की औरतों का वेश्या बन जाना; युवतियों का गुण्डों के साथ भाग जाना; शिक्षित युवकों द्वारा शराबी बन कर चोरी-डकैती और हत्या तक करना तथा बच्चों द्वारा बीड़ी-सिगरेट पीने एवं प्रणय की नकल करने की वारदातें होना, आज साधारण-सी बात हो गयी है! इन वारदातों का कटु अनुभव समाज के किस व्यक्ति को नहीं है!

सभ्य, शान्त, सांस्कृतिक वातावरण के निर्माण हेतु धार्मिक वासनाओं को उभारने वाले स्थानों, साधु-सन्तों तथा समाज-विरोधी भड़कीले तत्वों का हैजे के रोग की तरह बहिष्कार करना चाहिए तथा संगठित होकर इनके द्वारा फिल्मी गीतों की सहायता से फैलायी जाने वाली गन्दगी के विरुद्ध डट कर एक स्वर से आवाज उठानी चाहिए। ऐसा करके ही हम अश्लील पोस्टर-विरोधी आन्दोलन सफल कर सकते हैं।

श्रीडूंगरगढ़ (चूरु, राजस्थान) —रतनचंद्र जैन 'निर्मल'

कुम्भ मेले में सफाई-प्रदर्शनी

इस वर्ष हरिद्वार में कुम्भ मेला पड़ा। उसमें लगभग २५ लाख तीर्थयात्रियों के आने की संभावना थी। उ० प्र० सर्वोदय-मण्डल के सामने इस मौके का उपयोग चर्चा का विषय बना। उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि ने सर्वोदय-मण्डल द्वारा आयोजित बैठक में सर्वोदय प्रचार कैम्प, भंगी-मुक्ति सफाई प्रदर्शनी आदि सर्वोदय-प्रवृत्तियों को मेले में दाखिल करने की सलाह दी। इस कारण श्री सुन्दरलाल बहुगुणा तथा जिला सर्वोदय-मण्डल सहारनपुर, जिसके अन्तर्गत यह स्थान हरिद्वार का पड़ता है, को कुम्भ मेले में सर्वोदय प्रचार करने के संयोजन की जिम्मेवारी सौंपी गयी।

कुम्भ मेले के मुख्य प्रवेश-द्वार व निकास-द्वार के ठीक मौके पर खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी के अन्दर भंगी-मुक्ति सफाई का एक बढ़िया आयोजन हुआ। इसके अतिरिक्त भूदान सर्वोदय-मण्डल मुनासिब तरीके से लोकमानस के सम्मुख पेश करने का प्रयत्न रहा।

'पी० आर० ए० आई० टाइप वाटर-सील' स्वच्छ शौचालय का स्वरूप प्रयोगित दृष्टि से जमीन में बना कर दिखाया गया था। दूसरा शौचालय का एक और साधन दिखाया गया था, जिसमें सोन खाद भी मिले, गन्दगी न हो और भंगी की भी आवश्यकता न हो, यह था 'गोपुरी संडास' का माडल। वह प्लाइवुड से बना कर दिखाया गया था। इसके अतिरिक्त ट्रेंच लैट्रिन, सोकेट पिट्स के प्रायोगिक माडल बनाये गये थे।

२८ मार्च से लेकर २० अप्रैल तक प्रदर्शनी का समय तीन बजे शाम से लेकर साढ़े दस बजे रात्रि तक रहा। प्रतिदिन यथासंभव प्रातः आठ बजे से दस बजे तक प्रत्यक्ष पाखाना-सफाई का काम मेहतर भाइयों के साथ भी किया।

इसके अतिरिक्त अन्तःसफाई व बाह्य सफाई संबंधी महात्मा गांधीजी के वाक्य, एकादशी व्रत तथा भंगी-मुक्ति संबंधी श्री अप्पा साहब पटवर्धन व विनोबाजी के वैचारिक सूत्र तख्ते पर लिखे गये थे। प्रदर्शनी के दरमियान सहारनपुर जिले के शारदानगर वाले गन्दे मुहल्ले की सफाई का कार्यक्रम स्थानीय धूप कंपनी के मैनेजर के प्रेमाग्रह पर किया गया।

'पी० आर० ए० आई० टाइप' शौचालय के हिस्सों का एक परिवार में प्रयोग हुआ। निर्माण तथा सोकेट पिट्स, एक सोख-नाली निर्माण करने में बस्ती का खर्च सामूहिक लगभग १७५ रु० का हुआ। कार्यक्रम की विदाई लेते समय 'सफाई दर्शन' पत्रिका का एक ग्राहक तथा 'भूदान' का एक ग्राहक हुआ तथा मुहल्ले के घर घर में सर्वोदय-पात्र रखने का विचार स्वीकार हुआ। इसके अतिरिक्त अखिल भारत पंचायत राज के सदस्य तथा ग्राम सभापति श्री श्याम नारायण शर्मा की माँग पर गजरौला मुरादाबाद क्षेत्र के लिए डेढ़ हफ्ते का समय स्वीकार किया।

पिछले अर्ध कुम्भ मेला हरिद्वार में पाखाने से १ लाख ७५ हजार रुपये की खाद राजकीय स्वास्थ्य व सफाई विभाग द्वारा तैयार कर किसानों को दी गयी। कुम्भ मेला प्रबंध की ओर से सफाई के लिए १२ हजार भंगी-भाइयों की व्यवस्था राजकीय सूचना के अनुसार की गयी थी। सूचना और प्रचार के समय 'भंगी' शब्द न कह कर सफाई करने वालों के लिए 'कार्यकर्तागण' ही शब्द इस्तेमाल होता था। —अलख नारायण

पाखाना-सफाई का एक प्रयोग

राजस्थान के खारीतट सर्वोदय-संघ, शाहपुरा ने रचनात्मक पाखाना-पेशाब सफाई तथा उसकी खाद बनाने का प्रयोग करके यह अनुभव लिया है कि समाज में से भंगी का काम भी जो एक पेशा बना हुआ है, सहज ही दूर किया जा सकता है एवं टट्टी और पेशाब का सुन्दर और लाभदायी उपयोग भी हो सकता है।

खारीतट संस्था का प्रयोग इस प्रकार किया गया :—

पचास व्यक्तियों के उपयोग के लिए दो खाई-पाखानों का निर्माण किया गया है। ये पाखाने ४ फीट लम्बी सतह पर पक्की ईंटों से चुने गये, जिनकी लम्बाई-चौड़ाई और गहराई लगभग अलग २०''×४''×८'' है। प्रत्येक पाखाने का उपयोग ६ माह होता है। जब यह पूर्ण हो जाता है, तब दूसरे का उपयोग प्रारंभ किया जाता है। जब दूसरा भी पूर्ण हो जाता है तो पहले वाले को, जो कि पहले पक कर खाद बन जाता है, निकाल लिया जाता है। पाखाने का उपयोग करने वाले टट्टी पर घास फूस या पीली-काली मिट्टी डाल कर उसे ढँक दिया करते हैं। प्रति सप्ताह धूमस द्वारा दबाया जाकर उसे पुनः काफी मिट्टी और घास-फूस से ढँक कर समतल बना दिया जाता है। इस खाई में टट्टी पेशाब तथा पानी, सबका समावेश होता है और सब समय पाकर सड़-गल कर पक कर बड़ी कीमती खाद तैयार हो जाती है। इस मूल्यवान् खाद में नाइट्रोजन और फास्फोरस आदि सब पदार्थों की पर्याप्त मात्रा रहती है। आर्थिक दृष्टि से भी साल भर में ५० व्यक्तियों के इन दोनों खाई पाखानों से पर्याप्त आमदनी हो जाती है। टट्टी, पेशाब, मिट्टी तथा घास पत्तों से मिश्रित यह खाद १२८० घनफुट के घनत्व में है और वजन में ३०० मन होती है। जो यदि कम से कम २ रु० प्रति मन भी आँकी जाय तो उसका मूल्य ६०० रु० वार्षिक होता है। इस गणित के अनुसार प्रति व्यक्ति मोटे तौर पर खाद की वार्षिक आय १२ से १५ रु० तक हो सकती है।

खारीतट सर्वोदय-संघ, शाहपुरा —रमेशचन्द्र

बिहार की चिट्ठी

शान्ति-स्थापना के विचार से असम जाते हुए विहार-प्रवेश के प्रथम दिन, २५ दिसम्बर '६० को विनोबाजी ने बिहार के भूमिवानों से 'बीघा में कट्ठा' जमीन की मांग की थी। विनोबाजी ने बिहारवासियों को ३२ लाख एकड़ जमीन भूमिहीनों के बीच वितरण करने के पुराने संकल्प को याद कराया। २१ लाख एकड़ जमीन तो पहले ही प्राप्त हो गयी थी, बाकी ११ लाख एकड़ जमीन इकट्ठी करने का उसी समय से प्रयास चल रहा है और बिहारवासी इसके लिए कोशिश भी कर रहे हैं। लेकिन कार्यक्रम में तीव्रता लाने के लिए १५ अप्रैल से १५ जून तक, दो महीना सघन रूप से 'बीघा-कट्ठा अभियान' चलाने का निश्चय किया गया। बिहार के बाहर के सर्वोदय-कार्यकर्ता एवं सर्वोदय-प्रेमियों को अभियान में जुट जाने की अपील सर्व सेवा संघ ने की।

बिहार सर्वोदय-मण्डल ने अभियान की सफलता के लिए विशेष ढंग से दो महीने के लिए व्यूह-रचना की और राज्य के कुल १७ जिलों में प्रत्येक जिले के लिए संगठक एवं सहसंगठक नियुक्त किये। अपनी योग्यता, अनुभव एवं उम्र का बिना ख्याल किये हुए बिहार राज्य के बाहर के लोगों ने सह-संगठक रहना ही पसन्द किया। सर्वश्री अप्पासाहब पटवर्धन, कृष्णराज मेहता, मनमोहन चौधरी, प्रो० ठाकुरदास बंग आदि जैसे प्रतिष्ठित व्यक्ति ने संगठक का पद सहर्ष स्वीकार किया।

'बीघा-कट्ठा अभियान' के पूर्वप्रयोग (रिहर्सल) के रूप में १ अप्रैल से ५ अप्रैल तक पूर्णिया जिले के नरपतगंज अंचल के मुख्यालय में बिहार सर्वोदय-मण्डल की ओर से पंचदिवसीय शिविर का आयोजन किया गया। बिहार के प्रतिष्ठित सर्वोदय-नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी का मार्ग-दर्शन शिविरार्थियों को प्राप्त हुआ था। कार्यकर्ताओं ने आसपास के भूमिवानों के घर घर जाकर 'बीघा में कट्ठा' जमीन की माँग की। शिविर में लगभग दो दर्जन संगठक एवं सहसंगठक के अतिरिक्त एक दर्जन अन्य कार्यकर्ता भी शामिल हुए थे। शिविरार्थियों के प्रयास से शिविर-काल में ६० सौ कट्ठा जमीन प्राप्त हुई। प्राप्त भूमि में से आधी भूमि तो भूमिवानों ने स्वयं भूमिहीनों के बीच वितरित की और बाकी समयाभाव के कारण नहीं बँट सकी। बाकी जमीन को बाँटने की व्यवस्था की जा रही है।

'बीघा-कट्ठा अभियान' की सफलता के लिए अ० भा० सर्व सेवा संघ का अधिवेशन ९ अप्रैल से ११ अप्रैल तक सदाकत आश्रम, पटना में ही किया गया। पटना में अधिवेशन का आयोजन 'बीघा-कट्ठा अभियान' में सहयोग करने वाले कार्यकर्त्ताओं को विशेष सूचना आदि देने एवं प्रचार आदि के विचार से किया गया था। अधिवेशन की समाप्ति के बाद १२ अप्रैल को अभियान में शामिल होने वाले सभी कार्यकर्त्ताओं का एकदिवसीय शिविर का आयोजन सदाकत आश्रम में ही किया गया। शिविर में कार्यकर्त्ताओं को नये ढंग से बनाये गये दानपत्र भरने की पद्धति आदि बतायी गयी। 'बीघा में कट्ठा अभियान' प्रारम्भ करने के समय तक पहले की पद्धति में नया परिवर्तन करना पड़ा। विनोबाजी के निर्देशानुसार भूमिवानों द्वारा भूमिदान में दी गयी जमीन को स्वयं वितरित करने एवं बिहार सरकार द्वारा नेती-कानून बनाने से दानपत्र भरने की पद्धति में भी परिवर्तन करना पड़ा। दानपत्र भरने की पद्धति की चर्चा के साथ-साथ भूमिप्राप्ति का कार्य करने की अन्य सम्भावित कठिनाइयों पर भी विस्तार चर्चा की गयी।

१३ अप्रैल की सुबह ही बिहार एवं बिहार राज्य के बाहर के कार्यकर्त्ताओं की टोली ने अपने-अपने संगठक एवं सह-संगठक के नेतृत्व में "दान दो इकट्ठा बीघे में कट्ठा" आदि नारे लगाते हुए विभिन्न जिलों के लिए प्रस्थान किया।

बिहार के कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त बिहार के बाहर के २०४ कार्यकर्त्ताओं ने, जिनमें शान्ति-सेना इन्दौर एवं अन्य स्थानों की ३५ महिलाएँ शामिल हैं, 'बीघा-कट्ठा अभियान' के लिए सदाकत आश्रम से विभिन्न स्थानों के लिए प्रस्थान किया। इन कार्यकर्त्ताओं में उत्तर प्रदेश के ७१, मध्य प्रदेश के ४२, महाराष्ट्र के २३, गुजरात के १३, राजस्थान के ९, पश्चिम बंगाल के ९, मद्रास के ६, मैसूर के ५, उड़िसा के ५, बंगाल के ३, नई दिल्ली १ एवं अन्य प्रान्तों के १३; कुल २०४ कार्यकर्त्ता अभियान में शामिल हुए।

बिहार सर्वोदय मण्डल के निश्चयानुसार १४ अप्रैल को बिहार राज्य के राँची तथा बाढ़रसा के सिवा अन्य सभी जिलों में आम सभा द्वारा 'बीघा-कट्ठा अभियान' का उद्घाटन किया गया। सर्वश्री पूर्णचन्द्र जैन, मंत्री सर्व सेवा संघ; अप्पासाहब पटवर्धन, ब्रह्मदेव वाजपेयी, कृष्णराज मेहता, मनमोहन चौधरी आदि जैसे राष्ट्रीय स्तर के सर्वोदयी नेताओं ने १४ अप्रैल के आयोजन का उद्घाटन विभिन्न जिलों में किया।

प्राप्त सूचना के अनुसार बिहार के लगभग १५० अंचलों में प्रतिवेदन-अवधि में अभियान शुरू किया गया, जिसमें बिहार एवं बिहार बाहर के कुल ७०० कार्यकर्त्ता हैं। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के लगभग ५० कार्यकर्त्ताओं का सहयोग अभियान को मिल रहा है। पूरा समय देने वाले इन ५० कार्यकर्त्ताओं के अतिरिक्त संघ के अनेक कार्यकर्त्ताओं ने अपने क्षेत्र में अभियान में सहायता की है। गांधी स्मारक निधि, बिहार हरिजन सेवक संघ, बिहार राज्य पंचायत परिषद् आदि रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्त्ता भी अभियान में जुट पड़े।

इस अवधि में राँची, सिंहभूम, चम्पारण एवं दरभंगा के सिवा बाकी १३ जिलों में १९,६१९ कट्ठा जमीन 'बीघा-कट्ठा अभियान' में प्राप्त हुई है। प्राप्त जमीन में ५,७४६ कट्ठा जमीन स्वयं भूमिवानों ने ४४० भूमिहीनों के बीच वितरित की। इसके अतिरिक्त ८,२०० कट्ठा जमीन का आश्वासन भी कार्यकर्त्ताओं को मिला।

—रामनन्दन सिंह

अणु-परीक्षण बंद करें

जेनेवा, ४ मई : हिरोशिमा में हुए सन् १९४५ के अणुबम विस्फोट में जीवित बचने वाले दो व्यक्तियों ने १७ राष्ट्र निरस्त्रीकरण-सम्मेलन से अणु-परीक्षण बंद करने और शस्त्रास्त्रों की होड़ समाप्त करने की एक अत्यन्त मार्मिक अपील की।

३० वर्षीय कुमारी मियो मत्सुबारा ने, जिनका शरीर १७ वर्ष पूर्व हिरोशिमा में उक्त बम विस्फोट में जल गया था, एक प्रेस-सम्मेलन में संवाददाताओं को अपने गृह-नगर के जीवित बचने वाले १०,००० व्यक्तियों की तकलीफें बतायीं। आपने कहा कि मैं उन समस्त व्यक्तियों और मानवता की ओर से अणु-परीक्षण बंद करने तथा निरस्त्रीकरण समिति से शस्त्रास्त्रों की होड़ खतम करने के लिए ठोस कदम उठाने की अपील करती हूँ।

संपत्तिदान का विनियोग-वितरण

छतरपुर के लोकसेवक श्री चतुर्भुज पाठक अपनी आय का ५ प्रतिशत सम्पत्तिदान में अर्पित करते हैं। १९६१ में उन्होंने इस प्रकार एकत्रित हुए १३५ रु० अन्य लोकसेवकों की सहायता, हरिजन-सेवा और विश्व शांतीय सर्वोदय-मण्डल की सहायता में लगाया।

मद्य-निषेध लागू करने का कार्य पुलिस से ले लिया जाय

श्री नवकृष्ण चौधरी, अध्यक्ष, अखिल भारत सर्व सेवा संघ ने उड़ीसा के कोरापुट जिला स्थित बोईपारीगुडा ग्राम में, पंचायत-राज सम्मेलन में भाषण करते हुए कहा कि राज्य सरकारों ने मद्यनिषेध विषयक जो कानून बनाये हैं, उनका परिणाम यह हुआ है कि गैरकानूनी ढंग से शराब बनायी जाने लगी है और पुलिस तथा अधिकारी निर्दोष लोगों को तंग करने लगे हैं।

उन्होंने बतलाया कि आबकारी से जो आय होती थी, उसका अधिकांश भाग भ्रष्ट अधिकारियों और गैरकानूनी रूप से शराब निकालने वालों की जेब में चला जाता था।

आगे श्री चौधरी ने कहा—"लोगों को शराब पीने की आदत छोड़ने के लिए बाध्य करने की अपेक्षा यदि सरकार जनता को शराब पीने के बुरे परिणामों से अवगत कराने में धन और साधनों का उपयोग करे तो अधिक अच्छा होगा।"

उक्त त्रिदिवसीय सम्मेलन में शराबबन्दी के बारे में एक प्रस्ताव भी पारित हुआ, जिसमें कहा गया है कि लोगों को शराब के बुरे परिणामों से अवगत कराने लिए गाँव-गाँव पदयात्रा का आयोजन किया जाय।

पटना-अधिवेशन में संघ के चुनावों संबंधी प्रस्ताव स्वीकृत

"सर्वोदयपुरम (आन्ध्र) के अप्रैल १९६१ के तेरहवें सर्वोदय-सम्मेलन के समय सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में तय किया गया था कि शिशिरी वर्ष की समाप्ति, विद्यार्थियों की परीक्षाएँ आदि के कारण सर्वोदय-सम्मेलन के लिए अप्रैल का महीना अनुकूल नहीं रहता और आयन्दा से सम्मेलन सामान्यतया अक्तूबर में किया जाय।

तदनुसार इस बार का सम्मेलन नवम्बर में हो रहा है। इस स्थिति में यह उचित दीखता है कि संघ के प्राथमिक सर्वोदय-मण्डलों, जिला सर्वोदय मण्डलों तथा जिला-प्रतिनिधियों का निर्वाचन आगामी सम्मेलन के पूर्व की तारीखों में सम्पन्न हो।

अतः सर्व सेवा संघ तय करता है कि इस बार वर्तमान प्रतिनिधियों का कार्यकाल बढ़ाया जाय और नये चुनाव इस बार के सम्मेलन की तारीखों के पूर्व पूरे किये जायँ। प्रबन्ध समिति इस निर्णय के संदर्भ में आवश्यक कार्रवाई करे।"

विनोबाजी से श्री श्रीमन्नारायण की भेंट

आसाम में विनोबाजी से मिल कर वापस आये योजना-आयोग के सदस्य श्री श्रीमन्नारायण ने बताया कि विनोबाजी से उनकी लम्बी वार्ता भूदान-आंदोलन के संबंध में हुई।

उन्होंने कहा कि यहाँ उन्हें लगभग सात सौ गाँव ग्रामदान में मिले हैं और संपूर्ण देश में अब तक ग्रामदानी गाँवों की संख्या ५५०० हो गयी है। योजना-आयोग के भूतपूर्व सदस्य श्री रामकृष्ण पाटिल आसाम में ग्रामदान आंदोलन में श्री विनोबाजी की सहायता कर रहे हैं।

आसाम-सरकार ने ग्रामदान-कानून बना दिया है। मद्रास, राजस्थान और उड़ीसा की सरकारों ने भी ग्रामदान कानून पास किये हैं। विनोबाजी को आशा है कि अन्य राज्य-सरकारें भी जल्द ही भूदान-कानून बनायेंगी। श्री श्रीमन्नारायण ने कहा कि विश्व की बिगड़ती राजनीतिक स्थिति, खासकर पारमाणविक परीक्षणों से विनोबाजी को बहुत दुःख है। विश्व-शांति के लिए वे सामुदायिक जीवन और परस्पर सद्भाव आवश्यक समझते हैं। उन्होंने विश्वशांति तथा विश्वबन्धुत्व के लिए इसी दृष्टि से ग्रामदान-आंदोलन को जन्म दिया है।

'बीघा-कट्ठा अभियान' की प्रगति

पिछले एक माह में, १५ अप्रैल से १४ मई तक, बिहार में कुल ६६,८८५ कट्ठा जमीन २,५५५ दाताओं से प्राप्त और ५१,४३९ कट्ठा जमीन ४,४१६ भूमिहीन परिवारों में वितरित की गयी है।

अभियान के जिला-संगठकों की सभा

गत १३-१४ मई '६२ को पटना में 'बीघा-कट्ठा अभियान' के जिला-संगठकों एवं सहायक संगठकों की एक सभा श्री अप्पासाहब पटवर्धन की अध्यक्षता में हुई। इस अवसर पर सर्वश्री कृष्णराज मेहता, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, रामदेव ठाकुर, ध्वजा प्रसाद साहु, सरयू प्रसाद (संचालक, गांधी-निधि), श्याम सुन्दर प्रसाद (संयोजक, बिहार भूदान शांति समिति), रामनारायण सिंह (संयोजक, बिहार सर्वोदय-मंडल), प्रो० ठाकुरदास बंग, सुशीला अग्रवाल, निर्मला देशपांडे तथा अन्य लोग उपस्थित थे।

सभा में अभियान की गत एक माह में हुई प्रगति का सिंहावलोकन किया गया और प्राप्त अनुभवों की रोशनी में भावी कार्यक्रम की रूपरेखा तय की गयी। साथ ही बिहार भूमि-हदबंदी-कानून से 'सेरी' की धारा हटाये जाने की माँग करने वाले बिहार के सभासदस्यों के प्रस्ताव और इस संबंध में प्रकाशित बिहार के मुख्य मंत्री के वक्तव्य पर गंभीरतापूर्वक विचार किया गया और सर्वसम्मति से एक निवेदन स्वीकृत किया गया।

विश्व-शांति के लिए जापानी दल का भ्रमण

सिंगापुर, १४ मई : विश्व में शान्ति-स्थापन के उद्देश्य से रवाना हुआ चार जापानियों का एक दल यहाँ पहुँच गया है। यह दल विश्व का दौरा करेगा।

जापानी वायुसेना के एक भूतपूर्व मेजर एवं बौद्ध पादरी श्री जिपत्सु एस० सातो के नेतृत्व में जो उक्त दल अपने देश से विश्व के विभिन्न नगरों का भ्रमण करने के लिए रवाना हुआ है, उसमें तीन विश्वविद्यालय के छात्र हैं।

श्री सातो ने बताया कि उनके दल का उद्देश्य विश्व के राष्ट्रों के बीच शान्तिपूर्ण सम्बन्धों की स्थापना को बढ़ावा देना है। ये लोग अपने साथ हिरोशिमा के मेयर का एक संदेश भी ले जा रहे हैं। यह संदेश विश्व के समस्त नगरों के मेयरों के नाम है। इसके अलावा और भी कई संदेश ये लोग अपने साथ ले जा रहे हैं।

रतलाम में पदयात्रा

रतलाम तहसील के ग्रामों में भूदान-यज्ञ पर्षद के कार्यकर्ता श्री मधुकरजी ने ग्रामवासी के सहयोग से पदयात्रा की। १२ ग्रामों के १९ भूमिहीन परिवारों में १०४ बीघा भूमि वितरित की, जिनमें ७ हरिजन, ७ आदिवासी तथा ५ सवर्ण परिवार हैं। ग्रामसभा में ४ दाताओं ने १४ बीघा भूमि दान में दी।

गांधीवाद पर आगरा विश्वविद्यालय में भाषण

महात्मा गांधी के सिद्धान्तों पर भाषण करने के लिए आगरा विश्वविद्यालय ने श्री जयप्रकाश नारायण को निमंत्रित किया है। विश्वविद्यालय के आगामी सत्र से श्री जयप्रकाशजी का भाषण आरंभ हो जायगा। पिछले चार वर्षों से आगरा विश्वविद्यालय ने सभी सम्बद्ध कालेजों में गांधीवाद की शिक्षा की व्यवस्था की है।

शराबबन्दी-सम्मेलन का विराट आयोजन

भीलवाड़ा जिले में पिछले एक वर्ष से शराबबन्दी-आन्दोलन बड़ी तेजी से चल रहा है। उस जिले की सभी पंचायत-समितियों एवं कई ग्राम-पंचायतों तथा ग्रामसभाओं द्वारा सर्वसम्मति से अपने-अपने क्षेत्र में शराब के गोदाम और दुकानें बंद करने की राज्य-सरकार से माँग करते हुए प्रस्ताव पारित किये गये हैं।

इस सम्बन्ध में जिला सर्वोदय-संघ द्वारा नियुक्त शराबबन्दी आन्दोलन समिति की ओर से भी विधान-सभा के सदस्यों, राज्य के मंत्रियों तथा अन्य अधिकारियों आदि की सेवा में भी निवेदन भेजे गये हैं।

भीलवाड़ा जिले में शराबबन्दी आन्दोलन को अधिक सक्रिय और गतिशील बनाने की दृष्टि से जिले के सभी रचनात्मक कार्यकर्ताओं, राजनीतिक दलों के नेताओं तथा अन्य विशिष्ट सामाजिक कार्यकर्ताओं का एक बड़ा सम्मेलन आगामी २९ अप्रैल को बीगोद में राजस्थान के वरिष्ठ एवं कर्मठ लोकसेवक श्री गोकुलभाई भट्ट की अध्यक्षता में आयोजित किया गया है, जिसका उद्घाटन योजना-आयोग के सदस्य और प्रसिद्ध गांधीवादी अर्थशास्त्री श्री श्रीमन्नारायणजी करेंगे।

आवश्यकता

विश्व-शांति-सेना के एशियाई कार्यालय (राजघाट, वाराणसी—१) के लिए हिंदी-अंग्रेजी, दोनों भाषाओं में ड्राफ्ट, नोट, पत्र-व्यवहार आदि कर सकने की अच्छी योग्यता रखने वाले सहायक की आवश्यकता है। कार्यालय सम्बन्धी सब प्रकार के कामों की जानकारी और आवश्यकतानुसार बाहर आने-जाने, लोगों से सम्पर्क करने आदि की योग्यता भी हो। सर्वोदय-आन्दोलन से या इसी प्रकार के अन्य कार्यों से पूर्वसंपर्क तथा शान्ति और अहिंसा में श्रद्धा वांछनीय है। अंग्रेजी-हिंदी टाइप का अभ्यास हो तो और अच्छा। इसी कार्यालय के लिए एक अंग्रेजी शार्टहैण्ड जानने वाले व्यक्ति की भी आवश्यकता है। उसके लिए भी हिंदी का ज्ञान आवश्यक है।

विश्व-शान्तिसेना के लिए धन की अपील

विश्वशान्ति-सेना की एशिया क्षेत्रीय परिषद् के मन्त्री श्री सिद्धराज ढड्ढा ने विश्व-शान्ति सेना के कार्य को संगठित करने के लिए अर्थ-संग्रह की अपील की है। नाम चेक, ड्राफ्ट आदि पंजाब नेशनल बैंक (चौक, वाराणसी) में विश्व-शान्ति-सेना की एशिया क्षेत्रीय परिषद् के नाम भेज कर जमा कराये जा सकते हैं। एशिया क्षेत्रीय परिषद् का कार्यालय, राजघाट, वाराणसी-१ में खुल गया है। श्री जयप्रकाश नारायण इसके अध्यक्ष हैं।

भरतपुर खादी-ग्रामोद्योग समिति

भरतपुर जिला खादी-ग्रामोद्योग समिति ने आगामी वर्ष के लिए १० लाख रुपये का उत्पादन और ८ लाख रुपये की खादी-बिक्री के लक्ष्य निर्धारित किये हैं। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आवश्यक धनराशि खादी-कमीशन बम्बई से प्राप्त हो गयी है। समिति का पिछले एक वर्ष का काम काफी सन्तोषजनक रहा है। इस वर्ष ६ लाख रुपये का उत्पादन और ४ लाख रु. की बिक्री हुई है। ४ लाख की फुटकर बिक्री के अलावा ५ लाख की थोक बिक्री भी हुई है। उत्पादन और बिक्री के आँकड़ों में पिछले साल के मुकाबले इस वर्ष क्रमशः ४१ और ५८ प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

विषय-सूची

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६)   पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५९४ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९५९२   एक अंक : १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १ जून '६२ | वर्ष ८ : अंक ३५

अणु-परीक्षण क्षेत्र में जाने वाले तीन यात्री गिरफ्तार

अमेरिका की सरकार ने अणुबमों के परीक्षणों का विरोध करने वाले 'एवरीमैन' नौका के तीन यात्री, सर्वश्री हेरोल्ड स्टालिंग्स, इवान डेट्रिक थोज और एडवर्ड लाजार को २६ मई को गिरफ्तार कर लिया। गिरफ्तारी के अवसर पर श्री स्टालिंग्स ने कहा : "हम न्यायालय के आदेश के उल्लंघन के परिणामों की अपेक्षा अणु-परीक्षणों के परिणामों से अधिक चिंतित हैं।" अहिंसक सभर्ष समिति के सूत्रों के अनुसार इसके बाद भी लगातार प्रतिकार करने के लिए अन्य स्वयंसेवकों को परीक्षण-क्षेत्र में भेजने की योजना है।

कुल जर्मनी एक राष्ट्र बनना चाहिए

बर्लिन शहर के टुकड़े होना गलत

—विनोबा

[विनोबा की अनेक बेटियों में पश्चिमी जर्मनी की मार्गरेट शोफेल ने बहुत दिनों तक भारत में भूदान-आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। बाबा ने उसका नाम 'हेमा' रखा। बेंगलोर के डॉ० अनन्तरामन् से उसका विवाह हुआ है। हाल में ही जर्मनी गयी है। अपने देश का दर्द उसे रह-रह कर टोसता है। जर्मनी के दो टुकड़ों के बारे में उसकी वेदना का विनोबा जी ने जो उत्तर भेजा है, वह उसके पत्र के साथ नीचे दे रहे हैं। —सं०]

हमारे बाबा,

बहुत दिनों से मैं आपको पत्र लिख रही हूँ। पर ये दो लड़के मुझे बिल्कुल थोड़ा फुरसत देते हैं। मैं २२ फरवरी को हवाई जहाज से जर्मनी आयी और ४ दिन बाद हमारे दूसरे बेटे का जन्म हुआ। उसका नाम मार्टिन प्रेम प्रकाश रखा है। आप उसे और हमारे बड़े बेटे सत्य प्रकाश को आशीर्वाद देंगे।

मैं यहाँ पर सर्वोदय ग्रुप वालों से मिली। उन्होंने बेंगलोर के पास चिल्लगनहल्ली गाँव में विकास कार्य करने के बारे में अपनी दिलचस्पी बतायी। इसके अलावा उनकी दूसरी दिलचस्पी जर्मनी के एकीकरण की समस्या है, जो कि दिन-दिन गंभीर होती जा रही है। मैं नहीं जानती कि आप इस समस्या को सुलझाने के लिए क्या हल पेश करेंगे। पूर्वी और पश्चिमी जर्मनी को अब भी ऐसा लगता है कि दोनों एक ही देश हैं, परन्तु उनके दो टुकड़े कर दिये गये हैं एक हिस्से को पूर्वी जर्मनी, दूसरे को पश्चिमी जर्मनी कहते हैं।

यहाँ मैं अपनी विमाता के साथ ठहरी हूँ। वह आपको प्रणाम कहती है। आपकी तबियत ठीक है। सप्रेम नमस्कार।

मार्बेर्गेन, ४ मई, '६२ — आपकी बेटी हेमा

पास होकर भी, बहुत हैं दूर हम !

पश्चिम और पूर्व बर्लिन की दो माताएँ बीच की कँटीली बाड़ से अपने बच्चों को मिलाती हुईं

हेमा,

मई ४ का पत्र मिला। उसके पहले का पत्र मुझे मिला नहीं दिखता।

तबीयत मेरी ठीक है।

प्रेम प्रकाश को आशीर्वाद। 'सत्य' और 'प्रेम' मिल कर विचार तो पूर्ण ही हो जाता है।

बर्लिन के भविष्य में मैं क्या राय दूँ? मेरे विचार में देशों को शस्त्रास्त्र छोड़ने चाहिए। शस्त्रों के साथ विचार करने बैठते हैं तो ठीक विचार सूझता ही नहीं! कुल जर्मनी एक राष्ट्र बनना चाहिए। पूर्व-पश्चिम भेद मिटना चाहिए। बर्लिन शहर के टुकड़े नहीं होने चाहिए। वह संपूर्ण जर्मनी की राजधानी बननी चाहिये पर हिंसायुक्त राजधानी नहीं, अहिंसायुक्त राजधानी, यानी "लोक-धानी"।

अब इतना हिंदी तुम समझोगी कि नहीं, मुझे मालूम नहीं। तुम्हारी माँ को मेरा 'जय जगत्' निवेदन करो।

—विनोबा का आशीर्वाद

१४ मई '६२

ग्रामदान ही क्यों ?

विनोबा
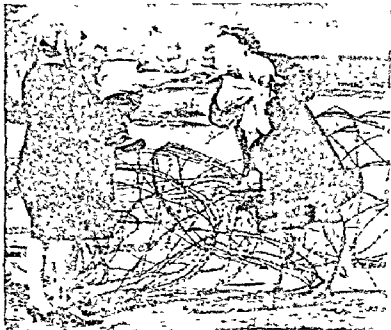
'कम्युनिटी डेवलपमेण्ट' का काम करने वाले केन्द्रीय सरकार के मंत्री, डे साहब हमसे एक बार मिले थे। उन्होंने एक बात बार-बार कही कि हम 'कम्युनिटी प्रोजेक्ट' चलाते हैं, लेकिन बहुत मुश्किल है हमारे सामने। गाँव में 'कम्युनिटी' है नहीं, तो 'कम्युनिटी प्रोजेक्ट' कैसे चलेंगे? फिर कहा, हम गरीबों की मदद करना चाहते हैं, लेकिन मदद उनको मिलती है, जो अपनी शक्ति से मदद खींच सकते हैं! ये उनके अनुभव और शब्द हैं।

हमारे सामने सवाल है कि गाँव में 'कम्युनिटी' कैसी बने और बिलकुल गरीब के तरफ ध्यान देने वाले, उनकी जिम्मेदारी उठाने वाले गाँव कैसे खड़े हों। ऊपर से सत्ता का वितरण किया तो उससे कुछ लाभ नहीं होता। अभी कोशिश हो रही है ग्रामपंचायत बनाने की और उसको कुछ सत्ता देने की और उतने अंश में सत्ता विकेन्द्रित करने की। इससे क्या होता है? सत्ता के साथ जो बुराइयाँ होती हैं, वे भी 'नेशनलाइज'–होती हैं। याने जो झगड़े केन्द्र में या प्रदेश में होते हैं वे सब तीव्ररूपेण गाँव में हो सकते हैं। सत्ता के कारण गाँव में अनेक समस्याएँ आती हैं। 'टैक्सेशन' किया और लोगों ने उसका विरोध किया तो झगड़ा पैदा होता है। उससे काम भी नहीं बनेगा और प्रेम भी नहीं रहेगा। इसलिए सत्ता दे दी तो केवल उससे होता नहीं। उस सत्ता को उठाने के लिए और उसका उत्तम उपयोग करने के लिए नीचे प्रेम की बुनियाद चाहिए। गाँव-गाँव में परस्पर प्रेम है और इस हमारे गाँव को स्वराज्य का नमूना बनाना है और एक परिवार जैसा व्यवहार करना है, ऐसा होता है और प्रेम और करुणा की भावना गाँव में पैदा होती है और साथ-साथ ऊपर से सत्ता आती है तो उसका उपयोग होता है।

गाँव में मत्सर न आये

पुराने जमाने में राजा-महाराजा रहते थे। उनके १५-२० सरदार होते थे, उनमें मत्सर रहता था। लेकिन जब से लोकशाही आयी है, तब से मत्सर का 'राष्ट्रीयकरण' हो गया है। कुल देश में उसका अनिरुद्ध संचार हो रहा है। यह मत्सर गाँव में आता है, तो उसको भूलना मुश्किल होता है। इधर ऊँचे स्तर में लोग मत्सर को भूल जाते हैं। चुनाव लड़ना होता है तो सब एक हो जाते हैं, मत्सर भूल जाते हैं, क्योंकि व्यापक दृष्टिकोण होता है। देश का भला करने की वृत्ति होती है। अलग दो पक्ष होते हैं, लेकिन तब एक हो जाते हैं। आज गांधीजी के कई साथी हैं, वे एक-दूसरे के खिलाफ बोलते हैं। तो क्या आप समझते हैं कि उनमें कोई मत्सर पैदा होगा? नहीं होगा, क्योंकि वे 'व्यापक दृष्टिकोण' रखते हैं, देश का भला चाहते हैं। उनमें मतभेद हुए, इसलिए जनता के पास मत माँगने के लिए गये। लेकिन सर्वसामान्य–कॉमन–कार्यक्रम मिला तो सब जोर लगायेंगे। गाँव में मत्सर आता है तो इस तरह की व्यापक बुद्धि वहाँ नहीं आती। इसलिए गाँव में द्वेष पहुँचा तो बहुत बुरा परिणाम होता है। इसलिए सत्ता यदि हम नीचे देना चाहते हैं तो नीचे से प्रेम और करुणा का स्रोत बहना चाहिए और इसके लिए कुछ योजना चाहिए। हमने सोचा इसके लिए ग्रामदान की योजना वहाँ पहुँच सकती है। येलवाल-कानफरेन्स में बहुत आक्षेप किये गये, जितने कि आक्षेप हो सकते हैं। वहाँ सब तरह की चर्चा कर फैसला किया था। आज भी जो आक्षेप आते हैं, उनका समाधान मैं कर सकता हूँ।

'इन्फिलट्रेशन' की समस्या

जब से मैं असम में आया हूँ, एक बात बार-बार सुनता आया हूँ। 'इनफिल्ट्रेशन' की समस्या। कितने प्रमाण में पाकिस्तान से लोग यहाँ आये, इसमें मतभेद है। कोई कहते हैं–बहुत आये। कोई कहते हैं, ज्यादा नहीं आये। लेकिन यह एक मानी हुई समस्या है। अगर लोग गाँव की जमीन गाँव में ही ही रखें और जमीन की खरीदी-बिक्री बन्द हो जाय, तो जो लोग आते हैं वे जिस उद्देश्य से आते हैं, वह सफल नहीं होता और यह समस्या अपने आप खतम हो जाती है। ऐसी सर्वोत्तम योजना हमने बनायी। नहीं तो सीमा पर क्या करना, यह सोचना पड़ता है? क्या सीमा पर तार लगायेंगे? या क्या दीवाल बनायेंगे? या शस्त्रास्त्र देकर पुलिस रखेंगे? या संरक्षण के लिए मिलिटरी को बुलायेंगे? हम समझते हैं कि इस समस्या का हल ग्रामदान में निकलता है। ग्रामदान में जमीन गाँव सभा के मालिकी की होगी। कोई एक व्यक्ति जमीन बेच नहीं सकता। जमीन नहीं मिलती तो बाहर के लोगों को यहाँ आकर बसने के लिए आकर्षण नहीं रहता।

कुछ लोग समझते हैं कि ग्रामदान में समान वितरण की बात आती है। यह तो हमने माना नहीं। धीरे-धीरे समता आयेगी। लेकिन जो बहुत कमजोर लोग हैं–भूमिहीन हैं, कम जमीन वाले हैं, उनको जमीन देनी है। यहाँ शायद ८ बीघा कम से-कम जमीन की आवश्यकता मानी है। हिसाब करके उतनी जमीन दान में देनी होगी। बाकी जमीन काश्त के लिए जमीन-मालिक के पास ही रहेगी। लेकिन जमीन की मिल्कियत गाँव-सभा की होगी। और बाकी पारस्परिक समझौता–'म्युच्युअल अण्डरस्टैंडिंग' गाँव में होगा। अभी हमको गाँव की स्थिति को ज्यादा–चलित–"डिस्टर्ब" नहीं करना चाहिए। धीरे-धीरे परिस्थिति बदलेगी और तदनुसार जमीन का वितरण करेंगे। लेकिन आरम्भ में समान वितरण की आवश्यकता नहीं। इसको कानून बना कर कानूनी स्वरूप हम नहीं दे सकते। यह तो परस्पर विश्वास पर निर्भर है।

ग्रामदान 'डिफेन्स मेजर'

जहाँ प्रेम, करुणा और विश्वास नहीं है वहाँ ग्रामदान नहीं करना चाहिए। भूदान करके समाप्त करना चाहिए। लेकिन भूदान से 'डिफेन्स मेजर' नहीं होगा। कोई लोगों के मन में करुणा उत्पन्न हुई, इसलिए भूदान दिया। परन्तु ग्रामदान का काम ग्रामदान से ही होगा। उसके लिए "म्युच्युअल अण्डरस्टैंडिंग" होना चाहिए और परस्पर विश्वास होना चाहिए। सारा ग्रामदान विश्वास के आधार पर है। बड़े लोगों को छोटे लोगों के लिए विश्वास नहीं है, तो ग्रामदान नहीं करना चाहिए। ग्रामदान, प्रेम, विश्वास और करुणा से होना चाहिए, जबरदस्ती से नहीं। यह अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए। समझाने वालों को यह गाँव-गाँव में समझा देना चाहिए।

विश्वास की बुनियाद

अभी श्री आर० के० पाटिल यहाँ आये हैं। सुवर्ण श्री अंचल में जो ग्रामदान हुए, उनको "रूल्स" वगैरह के अनुसार पक्के करने का काम करना है। उस काम के लिए ही वे आये हैं। वे बताते हैं कि गाँव-गाँव में लोग ग्रामदान पक्का करने के लिए तैयार हैं। विश्वास और प्रेम की बुनियाद एक बार पक्की हो जाती है तो सब अच्छा हो जाता है। तो इस हालत में विश्वास रख सकते हैं कि सब मालिकों की ग्राम-सभा बन जायेगी तो वे गाँव में समान वितरण का आग्रह नहीं रखेंगे। हम ८-१० साल में परिस्थिति को "डिस्टर्ब" नहीं करेंगे, परिस्थिति में फरक नहीं करेंगे, केवल जमीन की मिल्कियत गाँव-सभा की हो गयी, ऐसा तय कर सकते हैं।

लगान फसल के रूप में

हर साल फसल आयेगी, लगान देना पड़ेगा। वह गाँव-सभा के मार्फत दिया जायेगा, तो सरकार का काम आसान होगा। अब ५ लाख ग्रामदान हुए तो सरकार में पाँच लाख गाँव सभा के नाम होंगे, नहीं तो चार करोड़ जमीन मालिकों के नाम सरकार को रखने पड़ते। यह सरकार की दृष्टि से लाभदायी है। अब गाँव में, हर साल फसल का थोड़ा हिस्सा गाँव सभा को देना पड़ेगा तो वह गाँव की पूँजी बनेगी। पूँजी के आधार से गाँव में ग्रामोद्योग खड़े कर सकते हैं। दूसरे गाँवों में अनाज वगैरह बेचना है तो उसका भी 'लाइसेन्स' ग्राम-सभा को मिल सकता है। इस तरह गाँव सभा बन जाती है तो बड़े आंचलिक ग्राम पंचायत के पूरे अधिकार उसको मिल जाते हैं। ग्रामदानी गाँव में सरकारी जमीन होगी तो वह भी, अगर सरकार को खास काम के लिए नहीं चाहिए तो गाँव को मिल जायेगी।

राष्ट्र-विकास के अनुकूल स्थिति

यह सब क्या दिखाता है कि सब परिस्थिति आपके अनुकूल है। बिलकुल दरिद्री जनता होती है तो मुश्किल होता है। लेकिन यहाँ अति दरिद्री जनता नहीं और अति श्रीमान् जनता नहीं। इससे यहाँ राष्ट्र-विकास–"नेशनल बिल्डिंग"–का काम अच्छी तरह हो सकता है। ओरिसा में ऐसा नहीं देखा। केरल में भी जमीन पर "प्रेशर", जोर है। एक वर्ग मील में १५०० लोग वहाँ रहते हैं। वहाँ जंगल विभाग और पहाड़ छोड़ दें, सिर्फ पहाड़ी हिस्से को लें तो एक वर्गमील में ८०० लोग होंगे। यह दरिद्रता का सवाल है। केरल में यह सवाल जितना तीव्र है उतना यहाँ है नहीं। दारिद्र्य में दुर्गुण होते हैं। अति श्रीमान् होते हैं, तो उसमें भी दुर्गुण होते हैं। असम दोनों दुर्गुणों से बचा है। इसलिए यहाँ पर यह काम हो सकता है, लेकिन इसके लिए त्याग करना पड़ता है। यह त्याग करने की वृत्ति यहाँ पर है। हमने आशा की है कि ताकत आप लोगों की तरफ से भी लगे। सब मिल कर थोड़ा जोर लगा देंगे तो एक महीने के अन्दर काम बनेगा।

तेजपुर में पंचायत के लोग हमसे मिले थे। हमने उनको हमारा विचार समझाया। वे बोले, हम विचार समझ गये। लेकिन अभी निर्णय नहीं ले सकते। अभी जिला कांग्रेस के लोग यहाँ इकट्ठा होने वाले हैं। तब चर्चा होगी, फिर निर्णय करेंगे। मैंने उनको पूछा आपके घर में शादी का सवाल है तो क्या आप जिला कांग्रेस को सोचने के लिए कहेंगे। तुम्हारे गाँव में आग लगी हो तो उसको बुझाने के लिए तेजपुर से हुक्म की राह देखेंगे। तो इसके लिए क्यों रुकना चाहिए। उनका जवाब एक तरह से दुःख का था, एक तरफ से ठीक श्रद्धा का विषय था।

ऊपर वालों की आशा

तेजपुर में हमने कांग्रेस वालों को कहा कि आप देखते हैं, आप कुछ करिये। तो उन्होंने जिला कांग्रेस कमिटी की मीटिंग बुलायी, एक तारीख तय की। परसों उनकी मीटिंग थी। आज पूछा, वहाँ क्या तय हुआ तो कहा कि कुछ तय नहीं हुआ। नलबाड़ी में कांग्रेस की बड़ी मीटिंग थी, इसलिए सोचा वहाँ क्या तय होता है, देखेंगे और बाद में निर्णय लेंगे। इसलिए छह दिन के लिए आगे बढ़ाया। मान लीजिये, वे प्रस्ताव करें और पाँच-पचास

[शेष पृष्ठ ११ पर]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

संपादकीय

हिंसा की यह घुड़दौड़ ✓

अमेरिका ने जहाँ और बहुत-सी बातों में नाम कमाया है, वहाँ अणुबमों के परीक्षण और प्रयोगों में भी उसने अपने सिर पर सेहरा बाँध रखा है। १६ जुलाई १९४५ को उसने सबसे पहला आणविक विस्फोट किया था। उसी साल अगस्त ६ को और फिर अगस्त ९ को उसने अणुबम का प्रयोग किया। १ जुलाई और २५ जुलाई १९४६ को बिकनी में आणविक बमों के परीक्षण किये गये। रूस भी इस होड़ में पीछे कैसे रहता? उसने भी २९ अगस्त १९४९ को सबसे पहला आणविक परीक्षण किया। १ नवम्बर १९५२ को अमेरिका ने विश्व के पहले हाइड्रोजन बम का विस्फोट किया। रूस ने १२ अगस्त १९५३ को उसका जवाब दिया। १ मार्च १९५४ को अमेरिका ने आणविक विस्फोटों का रिकार्ड तोड़ डाला। ३१ अक्टूबर १९५८ को अमेरिका ने और ३ नवम्बर १९५८ को रूस ने (Moratorium) दीर्घविलम्ब काल शुरू कर दिया।

उसके बाद के विस्फोटों की कहानी का पता किसे नहीं है? हिरोशिमा और नागासाकी की करुण कहानी की पुनरावृत्ति न हो, यह सभी चाहते हैं, पर हिंसा और दण्डशक्ति की महत्ता में जिनका विश्वास है, वे दिन दिन आणविक परीक्षण करते जा रहे हैं और सेना तथा शस्त्रास्त्रों पर करोड़ों रुपये पानी की तरह बहाते चले जा रहे हैं।

हिंसा की यह दौड़ कितनी महँगी है, इसकी एक हल्की-सी झाँकी बेलग्रेड की पत्रिका 'मेज्जुनारोना पोर्लीटिका' में दी गयी है। उसके कथनानुसार द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद अमेरिका ने अपने सैनिक क्षेत्र में १७०० अरब डालर खर्च किये। यदि इस पैसे का समुचित उपयोग किया जाता तो ७४०० हजार नये कारखाने खोले जा सकते थे जिनमें सारे संसार की तिहाई आबादी को काम दिया जा सकता था। अमेरिका के आधुनिकतम आणविक भारवाही विमान का मूल्य है ४८५० लाख डालर। इतने पैसे में दस मंजिलवाली ८ हजार इमारतें तैयार की जा सकती हैं और उनमें ३ लाख २० हजार आदमी निवास कर सकते हैं। १९६१ को समाप्त होने वाली अवधि में रूस ने अपनी सेना और शस्त्रास्त्रों पर इतने रूबल खर्च किये, जिनसे २ करोड़ ८० लाख लोगों को काम दिया जा सकता है। एक 'ए' बम का मूल्य होता है ६० लाख डालर। उससे ७५०० हेक्टर (१ हेक्टर=२.४७१ एकड़) मरुभूमि उपजाऊ भूमि में बदली जा सकती है। आज सेना पर हर साल जितना पैसा बर्बाद किया जा रहा है, उसका उपयोग यदि खेती के लिए किया जाता तो फसल दुनी हो जाती और आज के विश्व की एक महान् समस्या अपने आप हल हो जाती। आज १२०० अरब डालर हर साल शस्त्रास्त्रों पर खर्च किये जाते हैं, जो कि विश्व के सभी अविकसित राष्ट्रों की कुल आमदनी के बराबर है। एक साल में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में भी इतना पैसा नहीं लगता!

विश्व में हिंसा की तैयारी पर खर्च किये जाने वाले रुपयों के ये आँकड़े अपनी कहानी आप कहते हैं। आज जिन आणविक प्रयोगों के लिए करोड़ों रुपये पानी में बहाये जा रहे हैं, सेनाओं पर जो करोड़ों रुपये खर्च किये जा रहे हैं, उन्हें यदि किसी प्रकार रोका जा सके और सम्पत्ति के इस प्रवाह की दिशा बदली जा सके तो पीड़ित और त्रस्त मानवता सुख और सन्तोष की साँस लेगी। विश्व का कोई भी नागरिक न तो स्वयं ही अपने प्राणों की बलि देना चाहता है, न उसकी माँ निपूती बनना चाहती है, न उसकी पत्नी अपनी चूड़ियाँ फोड़ना चाहती है। थोड़े से युद्धपिपासु लोग अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए विश्व में हाहाकार की सृष्टि कर रहे हैं और इस महँगे सौदे से सारी मानवता को सन्त्रस्त कर रहे हैं। हिंसा की यह घुड़दौड़ समाप्त होनी चाहिए। विश्व का प्रबल जनमत ही इसे रोक सकता है। अमेरिका के तीन जवान प्राणों को हथेली में लेकर जिस विरोध का प्रदर्शन करने के लिए समुद्र में नाव लेकर कूद पड़े हैं, आज विश्व के कोटि-कोटि मानवों को उनका समर्थन करना चाहिए। तभी और केवल तभी हिंसा की यह भीषण घुड़दौड़ बन्द हो सकेगी, अन्यथा नहीं।

लोकनागरी लिपि *

विज्ञान से आत्म-साक्षात्कार

आजकल कुछ लोग कहते हैं कि श्रद्धा नष्ट हो रही है। लेकिन विज्ञान के कारण श्रद्धा की जरूरत ही नहीं रहेगी। मानव को अनुभव होगा और वही अनुभव कहेगा कि सारी दुनिया में ब्रह्म-तत्व पड़ा है। विज्ञान तो प्रयोग करता है। आज विज्ञान और गणित के कारण ब्रह्म-विद्या का जितना स्पष्ट दर्शन हमें होता है, उतना प्राचीन काल के लोगों को नहीं होता था। उनके सामने तो स्थूल उपमाएं थीं। उपनिषदों में कथा-कहानियां आती हैं। पिता पुत्र को ज्ञान दे रहा है। उसमें वटवृक्ष की उपमा का उपयोग किया गया है। पिता कहता है कि छोटे-से बीज में से एक विशाल वटवृक्ष पैदा होता है। छोटे-से बीज में, जो नहीं दिखायी देता है, उसमें विशाल वटवृक्ष छिपा होता है। वैसे ही आत्मा का स्वरूप होता है। [illegible] हे सौम्य, श्रद्धा रखो। लेकिन आज तो हमारे पास सूक्ष्म मिसालें हैं। यह "एटम" का युग है, ऐसा कहा जाता है। लेकिन "एटम" से तो ब्रह्म-विद्या साफ दीख पड़ेगी। यह चेतन शक्ति कण-कण में प्रवेश कर सकती है। उसका साक्षात दर्शन होगा।

बालेश्वर उत्कल
६-२-'५५ —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ई, ख = ष संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

मलयपुर में नशाबन्दी

'भूदान-यज्ञ' के पाठक जानते हैं कि बिहार-सरकार ने मलयपुर में कलाली बंद कर दी। उसके लिए वहाँ ८ मास तक सतत पिकेटिंग करनी पड़ी थी। कलाली बन्द होने पर भी वहाँ गांजा, चरस आदि बिकने की व्यवस्था चालू रखी गयी थी। बाद में विरोध करने पर सरकार ने उसे भी उठा लिया और इस प्रकार मलयपुर गाँव निर्व्यसनी बन गया।

खुशी की बात है कि आज मलयपुर के चार मील इर्दगिर्द नशे की कोई दुकान नहीं है। हम चाहेंगे कि बिहार सरकार इस चार मील के क्षेत्र को नशाबन्दी का क्षेत्र घोषित कर दे। इससे अनैतिक व्यापार रोकने में भी सुविधा होगी और सरकार की प्रतिष्ठा भी बढ़ेगी कि उसने नशाबन्दी की दिशा में एक अच्छा कदम उठाया। आबकारी विभाग के मंत्री श्री बदरीनाथ वर्मा से हम अनुरोध करेंगे कि वे यथाशीघ्र यह कदम उठा कर मलयपुर की जनता का उपकार करें। छोटा-सा होने पर भी सारे राज्य में नशाबन्दी लागू करने के लिए यह एक दीपस्तम्भ का काम कर सकता है। हम मानते हैं कि बदरी बाबू और बिहार के मुख्य मंत्री विनोदा बाबू इसमें विलम्ब न करेंगे। शुभस्य शीघ्रम्।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

आत्म-दृष्टि की कुंजी

बर्मा के राजा थी'बा आत्म ज्ञान की गहराई में जनक की भाँति प्रसिद्ध थे। असीम राजसी वैभव के बीच रहते हुए भी उन्होंने सम्यक् दृष्टि प्राप्त कर ली थी। एक रात्रि को एक अहंकारी भिक्खु उनके पास आये। राजा ने उनकी आवभगत की। लेकिन, भिक्खु के मन में बड़ी आतुरता थी। बैठते ही वे बोले—"राजन्! आपके ज्ञानयोग की कीर्ति मैंने सुनी है, लेकिन मुझे विश्वास नहीं होता कि भोगों की प्रज्वलित आग में रह कर भी आप विरक्त बने रह सकते हैं। मैं वर्षों से अखण्ड तपस्या करता आ रहा हूँ, मगर मुझे आत्मदृष्टि अब तक नहीं मिली है। आपने उसे कैसे प्राप्त कर लिया! मुझे बताइये।"

थी'बा के चेहरे पर मुस्कान बिखर गयी। उन्होंने कहा—"आप असमय आये हैं। इस समय तो मैं मन्त्रणा कर रहा हूँ। आपके प्रश्नों का उत्तर कुछ देर बाद दूँगा। इस बीच आप यह दीपक ले जाइये और मेरे अन्तःपुर का वैभव देख आइये। लेकिन याद रखिये, यह दीपक कहीं बुझ न जाये, अन्यथा आप मार्ग-भ्रष्ट हो जायेंगे और आपको खोज निकालना भी असंभव हो जायेगा।"

अन्तःपुर की अविराम रंगरेलियों से भिक्खु जब वापस लौटे, तो राजर्षि थी'बा ने मुस्कान के साथ पूछा—"कहिये भिक्खु, अन्तःपुर की सुन्दरियाँ आपको पसन्द आयीं? कादम्ब की प्यालियों से आपको सुख मिला? अप्सराओं के नृत्य ने आपका मनोरंजन किया?"

"महाराज! इस मदनोत्सव के मध्य मैं लम्बे समय तक मौजूद रहा। कादम्ब भी पिये, नाच भी देखे, संगीत भी सुने। मगर देख कर भी कुछ नहीं देखा, सुन कर भी कुछ नहीं सुना! दृष्टि सदा इस दीपक की लौ पर रहती थी—कहीं यह बुझ न जाय।"

"क्यों?"—महाराज ने बनावटी आश्चर्य के साथ पूछा।

"क्यों! आपने ही तो कहा था कि अगर दीप बुझ गया, तो मैं मार्ग भूल जाऊँगा। इसीलिए बड़े यत्न से दीप को हवा के झोंकों से सुरक्षित रखा।"

"तो भिक्खु, आत्मदृष्टि की कुंजी भी आपको मिल गयी।"

भिक्खु का चेहरा लज्जा से नीचे झुक गया।

जनाधार के प्रयोग और अनुभव

• धीरेन्द्र मजूमदार

[गत दो-तीन सालों से श्री धीरेन्द्र भाई जनाधार का प्रयोग बिहार में पूर्णियाँ जिले के बलिया गाँव में कर रहे हैं। बीच-बीच में इस प्रयोग की जानकारी छिटपुट रूप में मिलती रही। यहाँ पर प्रयोग के क्या-क्या अनुभव आये हैं, उसकी जानकारी श्री धीरेन्द्र भाई ने हमारे नाम एक विस्तृत पत्र में लिखी है। जिसे हम क्रमशः प्रकाशित करेंगे। —सं०]

प्रारम्भ में जब मैं बलिया गया था, तो बिलकुल अनिश्चित और अंधकारमय मार्ग सामने था, कोई योजना सामने नहीं थी। विचार का तर्क स्पष्ट था। सर्व सेवा संघ के पलनी और चालीसगाँव के प्रस्ताव तथा तालीमी संघ के दिल्ली-प्रस्ताव के प्रति हम सबकी उदासीनता की ग्लानि भरपूर थी। इससे अधिक और कुछ मेरे पास नहीं था। अतः बलिया पहुँच कर मार्ग खोजने के काम में लग गया था। शुरू में मेरे इस टटोलने के काम के प्रति साथियों में विशेष दिलचस्पी नहीं थी, इसलिए जिज्ञासा भी नहीं थी। साल भर बाद जब मैं बीमार पड़ा था, तो एकाध साथी से प्रसंगवश चर्चा हो जाती थी। उन दिनों नरेन्द्र भाई अपने इलाज के सिलसिले में उत्तर प्रदेश में रहते थे और उत्तर प्रदेश के साथियों में विचार के फैलाने की कोशिश करते थे। धीरे-धीरे कुछ-कुछ जिज्ञासा मेरे पास पहुँचने लगी और उसकी पूर्ति में मुझे इधर-उधर जाना पड़ा।

बलिया पहुँच कर वहाँ जो सहकारी खेती का काम शुरू किया था, उसका उद्देश्य सहकारी खेती नहीं था, बल्कि खेती के सहकार के माध्यम से सहकारी समाज बनाने का था। इसलिए मैंने पूरे गाँव के हरएक मनुष्य को उसमें शामिल कर लिया था। जमीन के हर मालिक कुछ-न-कुछ जमीन का हिस्सा दें और जो जमीन के मालिक नहीं हैं, सिर्फ मेहनत के मालिक हैं, वे मेहनत का हिस्सा दें। मेरी माँग थी कि जमीन वाले अपनी जमीन का छठा हिस्सा दें और मेहनतवाले सप्ताह में एक दिन समय दें। गाँव में बैठने की यही शर्त थी, और सब लोगों ने इसे माना था। जमीनवालों ने जमीन देकर आपस में अदल-बदल कर एक प्लाट बना दिया और गाँव के सात टोले के मेहनत-मालिकों ने मिल कर एक-एक टोले के लिए सप्ताह का एक-एक दिन मुकर्रर कर लिया। उस हिसाब से खेती का काम शुरू हुआ।

बलिया गाँव के लोगों को यह ख्याल हुआ था कि मैंने जिस तरह खादीग्राम को बाहरी कोष से बनाया था, उसी तरह बलिया गाँव में कुछ बड़ा काम बाहर से कुछ धन लाकर खड़ा कर दूँगा। इसलिए उन लोगों ने मेरी सब शर्तें मान कर मुझे वहाँ रोकने की कोशिश की थी। अतः सामूहिक खेती के लिए उपर्युक्त व्यवस्था का अमल लोगों ने बड़े उत्साह से किया। लेकिन इस उत्साह के पीछे केवल लोभ था, यह भी कहना सही नहीं होगा। कई भावनाएँ उसमें काम कर रही थीं, जिसमें लोभ भी एक भावना, और काफी मजबूत भावना थी, ऐसा कहा जा सकता है। दूसरी भावना ग्राम-भावना की थी। उस गाँव की परम्परा यह है कि गाँव के सब लोग अपने गाँव का नाम हो, यह चाहते हैं और उसके लिए कुछ करना पड़े, तो करने को वे तैयार हो जाते हैं। अगर लोगों में लोभ की भावना आज इतनी तीव्र बन गयी है, तो मैं इतने दिनों के अनुभव से यह बात कह सकता हूँ कि इसकी जिम्मेदारी हमारी है।

हमारी दृष्टि

आज काम करने की हमारी दृष्टि ऐसी बन गयी है कि हम जहाँ कहीं काम शुरू करते हैं, वहाँ अपने पास जितनी प्रवृत्तियाँ हैं, वे सब जल्दी खड़ी हो जायँ, यह देखना चाहते हैं। अतः जहाँ कहीं थोड़ी भी अनुकूलता देखते हैं, वहाँ पर अपनी सारी योजनाओं को इस कदर भर देते हैं कि वे समाज-जीवन में न घुल कर गाँव के अन्दर एक टोले का रूप ले लेती हैं। फिर गाँव के धार्मिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक शक्ति के परे होने के कारण गाँव वाले उसे पचा नहीं पाते हैं। फलस्वरूप गाँव के लोग उन प्रवृत्तियों को पालने की जिम्मेदारी लेने के बजाय वहाँ के कुछ लोग उन्हीं के द्वारा अपने पालन का छोर खोजने लगते हैं।

हम कहते तो हैं कि विकास के काम में हमारी दृष्टि परिस्थितिमूलक होनी चाहिए। हमारा 'अप्रोच' 'मार्जिनल' होना चाहिए। लेकिन जब हम ग्राम-निर्माण की योजना बनाते हैं, तो प्रधान केन्द्र में बैठ कर अपने आप योजना बना कर देहातों में भेज देते हैं। परिस्थिति क्या है, 'मार्जिन' कहाँ है, इसकी खोज नहीं करते और न उस 'मार्जिन' को देख कर योजनाओं का कदम दर-कदम का सिलसिला आँकते हैं। ग्रामदानी गाँव में भी हमारी प्रक्रिया यही होती है। नतीजा यह होता है कि हमारे पहुँचने से पहले गाँव के लोगों में अपने से जो कुछ करने की भावना रहती है, वह भी समाप्त हो जाती है। ग्रामदानी गाँवों में भी हम ऐसी ही गलती करते हैं। आज हम खादी और ग्रामोद्योग के काम में नये मोड़ की जो बात करते हैं, उसमें भी हमारी दृष्टि उसी प्रकार की है, ऐसा दिखायी देता है। अभी हाल में साधना केन्द्र काशी में ग्राम इकाई विद्यालयों के आचार्य, ग्राम-इकाई को संगठित करने वाले तथा कुछ प्रान्तों के मुख्य व्यक्तियों की गोष्ठी हुई थी। उस गोष्ठी में काफी अच्छी-अच्छी बातें रखने का निर्णय हुआ। लक्ष्य आदि के बारे में काफी बुनियादी बातें रखी गयीं, लेकिन

जब मैंने प्रस्ताव रखा कि बाहरी मदद पहुँचाने से पहले गाँव के लोग सामूहिक त्याग द्वारा कुछ पूंजी निर्माण करें तथा उस पूंजी-निर्माण के सिलसिले में कुछ अपना संगठन और नेतृत्व निरपेक्ष रूप में खड़ा करें, साथ-साथ यह भी सुझाया कि इसके लिए कुछ निश्चित स्वरूप भी मुकर्रर किया जाय, जो कई विकल्पों में एक हो सकता है; तब यह बात किसी से यह मनवा न सका। इससे स्पष्ट दीखता है कि हमारा मानस कहाँ है?

क्रांति और निर्माण

पिछले कुछ दिनों से विनोबाजी आंदोलन के कुछ बुनियादी तत्त्व तथा कार्यक्रम पर जोर दे रहे हैं, तो साथियों की आम टीका यह होती है कि विनोबाजी निर्माण-कार्य को महत्त्व नहीं देते हैं। आसाम में उनके सान्निध्य में प्रबंध समिति की पिछले दिनों बैठक रखी थी, तो उन्होंने निर्माण-कार्य के बारे में अपनी दृष्टि की सफाई की थी। उस समय उन्होंने यह कहा था कि

> वे निर्माण-कार्य का महत्त्व कम नहीं समझते हैं। वे रेल-यात्रा में रेलगाड़ी का जो स्थान है, वही स्थान क्रांति-यात्रा में निर्माण-कार्य को भी देते हैं। लेकिन पटरी बिना बनाये रेलगाड़ी खड़ी कर देने से जिस प्रकार रेल-यात्रा सम्भव नहीं है, उसी तरह वैचारिक संदर्भ पर मानवीय तत्त्वों को बिछाये बिना निर्माण-कार्य खड़ा कर देने से क्रान्ति-यात्रा सम्भव नहीं है।

इसका संकेत उन्होंने किया था। मैं मानता हूँ कि सर्व सेवा संघ तथा सर्वोदय के कार्यकर्ताओं को विनोबाजी के इस संकेत पर गंभीर विचार करना चाहिए, नहीं तो हमारा अपना ही पुरुषार्थ अपनी क्रांति को दफना देगा ऐसा भय है।

ग्राम-भावना

बलिया गाँव के लोगों ने आजादी के आंदोलन में सचेतन भाग लिया था, ऐसा मालूम हुआ और उसी के फलस्वरूप गाँवों के लोगों में कुछ चेतना है, ऐसा दीखता है। उसी चेतना के कारण वहाँ के लोगों ने अपने आस-पास के गाँवों को संगठित कर अपनी ताकत से एक आश्रम खोला था। हमारी योजनाओं को इस गाँव में केन्द्रित करने की यह एक अनुकूलता थी, लेकिन इस अनुकूलता के दर्शन मात्र से ही गाँव में बाहर से आर्थिक साधनों का ताँता लगाया गया और वहाँ पर जितने भावनाशील युवक थे, उन्हें अपने संगठनों में वैतनिक सेवक के रूप में हम भर्ती करने लग गये। फलस्वरूप आज उस गाँव में कोई-न-कोई योजना बना कर बाहर से कुछ पा जाने की आकांक्षा बहुत तीव्र हो गयी है। मैं भी शुरुआत में इस आकांक्षा का शिकार बना। लेकिन जैसे ही मुझे इस आकांक्षा का पता चला, इसके पीछे वहाँ की जनता की ग्राम-भावना के अस्तित्व को भी देखा। और नयी आकांक्षा को लाँघ कर पुरानी भावना को कैसे उभाड़ा जाय, इसका छोर खोजने लगा।

लोकनीति बनाम राजनीति

इसके लिए पहला काम यह किया कि योजनापूर्वक गाँव के लोग सारा कार्य अपने अभिक्रम से खुद करें, यह परिपाटी रखी। नरेन्द्र भाई से कहा कि ये लोग जो बैठक करते हैं, उसमें भी हम लोगों को नहीं जाना चाहिए।

> मैंने उन्हें समझाया कि जनाधार का मतलब इतना ही नहीं है कि कार्यकर्ताओं के गुजारे की व्यवस्था सीधे जनता की ओर से हो, बल्कि सारे काम की योजना का नेतृत्व तथा उसके लिए फिक्र उनको हो।

कार्यकर्ताओं का काम केवल शिक्षण का होना चाहिए। वह नेता नहीं होगा, व्यवस्थापक नहीं होगा। नरेन्द्र ने एक दिन कहा, "मैंने अब जनाधार का मतलब ठीक समझ लिया। सवाल 'हैडेक'-सिरदर्द किसका हो यह है, कार्यकर्ता का या गाँव वालों का।"

मैंने कहा, "तुमने ठीक समझ लिया है। राजनीति और लोकनीति में इतना ही फर्क है।

> जिसके सिर-दर्द होगा वही न नीति तय करेगा? अगर समस्याओं के लिए सिर-दर्द राज्य का है, तो वह राजनीति है, और वह सिर-दर्द अगर सीधे लोगों का है, तो वह लोकनीति है।"

वस्तुतः आज तक समाज ने दर्द के लिए अलग से कुछ सिर मुकर्रर करके निश्चिन्तता रखी और उनके गुजारे का इन्तजाम कर दिया। यहाँ तक कि खुद धर्म कर स्वर्ग जाने के बजाय सीधा और दक्षिणा देकर उसके लिए भी 'एजेण्ट' मुकर्रर कर दिया। जिस जगह की जनता ने एजेण्टों की हिदायत ठीक से मानी, वहाँ लोकतंत्र ठीक है, ऐसा समझा गया। आज भी हमारे नेता इस बात की शिकायत करते हैं कि योजनाओं में जनता का सहयोग नहीं है, क्योंकि सिर-दर्द सरकार का और सहकार जनता की ऐसी मान्यता है। (क्रमशः)

राष्ट्रमूर्ति राजेन्द्र बाबू

• मणीन्द्र कुमार

राजेन्द्र बाबू को सदाकत आश्रम में पहुँचे करीब दो सप्ताह हो गये हैं। राजेन्द्र बाबू की उपस्थिति से सदाकत आश्रम एक राष्ट्रतीर्थ बन गया। भारत की जनता ने राजेन्द्र बाबू के राष्ट्रपति-पद से निवृत्त होने पर जितना सम्मान और श्रद्धा प्रकट की है, उतनी शायद ही किसी ऐसे व्यक्ति के लिए की गयी हो, जो लम्बे अरसे तक राष्ट्र के प्रमुख पद पर रह चुका हो। अक्सर देखा जाता है कि जब कोई व्यक्ति सर्वोच्च सम्मान के पद पर पहुँचता है, तब स्वत. उस पद के अनुरूप उस व्यक्ति को सम्मान मिलता है, किन्तु जब वह उस पद से निवृत्त होता है, तब तक सत्ता और अधिकार का मद उसे अप्रिय बना देता है। परन्तु राजेन्द्र बाबू का जो सम्मान और स्वागत भारत की जनता ने किया, वह वस्तुतः अभूतपूर्व ही है। डा० राधाकृष्णन् ने राष्ट्रपति का कार्यभार सम्हालते हुए अपने पूर्ववर्ती राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद को भावभरी श्रद्धांजलि प्रकट करते हुए ठीक ही कहा : "अपूर्ण मनुष्यों में विरले ही ऐसे भाग्यशाली पुरुष होते हैं, जो उसी कीर्ति और प्रेम के साथ-साथ ऊँचे पदों से अवकाश ग्रहण करते हैं, जिस यश के साथ वे उन पर आसीन हुए हों।" ऐसा क्यों? राजेन्द्र बाबू में कौनसी ऐसी विशेषताएँ हैं, जिनके कारण वे दिन-प्रतिदिन राष्ट्र की जनता का स्नेह और सम्मान पाते रहे?

राजेन्द्र बाबू सत्ता में आकर भी सत्ता के प्रति निरासक्त रहे। सत्ता के प्रति उन्हें कभी आकर्षण नहीं रहा। जब-जब भी राष्ट्र को उनकी सेवा की आवश्यकता महसूस हुई और उसके लिए जब-जब उन्हें सत्ता में प्रवेश करना पड़ा, तब-तब एक कर्तव्य और दायित्व समझ कर ही वैसा उन्होंने किया।

'राष्ट्रपति भवन' में जो आदर्श राजेन्द्र बाबू ने प्रस्तुत किया, उसकी तुलना भारत के राज-ऋषि जनक से की जा सकती है। वस्तुतः विदेह-रूप राजा जनक का विदेह-जीवन 'राष्ट्रपति भवन' के इस 'संत' के लिए वरेण्य था।

राजेन्द्र बाबू ने 'राष्ट्रपति भवन' के स्वरूप को धीरे धीरे बदल दिया। हालाँकि वे अपनी यह इच्छा पूरी नहीं कर सके कि 'राष्ट्रपति भवन' को एक 'म्यूजियम' बना दिया जाये, फिर भी 'राष्ट्रपति भवन' के बड़े भाग को सार्वजनिक राष्ट्रीय उपयोग के लिए खाली कर निजी उपयोग के लिए चार-पाँच कमरे ही रखे। 'राष्ट्रपति भवन' में राजेन्द्र बाबू ने सरलता, सादगी, सात्त्विकता तथा मितव्ययिता की नयी परम्पराओं की शुरुआत की।

जहाँ भी रहे, चाहे अपने गाँव में, जेल में, सदाकत आश्रम में, बापू के आश्रम में या 'राष्ट्रपति भवन' में, राजेन्द्र बाबू का जीवन सादगी, सरलता, विनम्रता और सात्त्विकता से ओतप्रोत रहा है।

त्याग उनके जीवन का आदर्श रहा। जीवन के आरम्भ में अपनी सफल चलती हुई वकालत छोड़ दी, ताकि नील की खेती कराने वाले अंग्रेजों के जुल्म से पीड़ित किसानों के उद्धार में गांधीजी का साथ दे सकें और इसके बाद वे गांधीजी के रंग में गहरे डूबते गये। स्वतंत्रता के संघर्ष में हमेशा आप अग्रिम पंक्ति में रहे। जेल कहीं घर बना। सन् १९१६ से '५० तक राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य रहे। सन् १९३४, '३९ और '४७-'४८ में कांग्रेस के अध्यक्ष रहे, जब लोग कांग्रेस-अध्यक्ष को प्रेम और श्रद्धा से 'राष्ट्रपति' के नाम से पुकारते थे। १९४६ में अंतरिम केन्द्रीय मंत्रिमंडल के खाद्यमंत्री रहे, जब कि उस वक्त कोई व्यक्ति देश की खाद्य अवस्था की बिगड़ती स्थिति देख कर उस पद को सम्हालने के लिए तैयार नहीं था। इस पद पर रह कर उन्होंने 'अधिक अन्न उपजाओ' अभियान को ठोस आधार दिला रखी। दिसम्बर १९४६ में आप सर्वसम्मति से संविधान-सभा के अध्यक्ष चुने गये। तीन वर्ष के काल में उन्होंने अत्यंत कुशलता और योग्यता से कार्य संचालन किया। १९५० में जब नया संविधान लागू हुआ और भारत गणराज्य बना, तब राजेन्द्र बाबू देश के प्रथम राष्ट्रपति बने। बाद में सन् '५२ और '५७ में पुन राष्ट्रपति चुने गये।

सार्वजनिक जीवन की शुरुआत से ही आपकी रचनात्मक कार्यक्रमों में विशेष दिलचस्पी रही। आप सन् १९२४ में गांधी-सेवा-संघ की स्थापना से उसके विसर्जन तक सदस्य रहे। सन् '२६ में जब चरखा-संघ की स्थापना हुई, तब आप उसके संचालक-समिति के सदस्य थे। गांधीजी की मृत्यु के बाद जब सेवाग्राम में रचनात्मक कार्यकर्ता-सम्मेलन हुआ, तब उसके अध्यक्ष आप ही थे, जिसमें सर्वोदय-समाज की स्थापना हुई। १९४९ में इन्दौर के पास राऊ में सम्पन्न प्रथम सर्वोदय-सम्मेलन के प्रथम अध्यक्ष होने का गौरव आपको ही प्राप्त है। उसके बाद तेरह सर्वोदय-सम्मेलन हो चुके हैं। राष्ट्रपति के जैसे अत्यंत महत्त्वपूर्ण और व्यस्त पद पर रहते हुए भी आप अधिकांश सर्वोदय सम्मेलनों में उपस्थित रहे। उगुरू आन्ध्र में हुए पिछले सर्वोदय-सम्मेलन में भाषण करते हुए आपने घोषणा की थी कि चन्द दिनों में राष्ट्रपति पद से निवृत्त होकर सर्वोदय के कार्यक्रम में शेष जीवन बिताऊँगा।

राष्ट्रपति रहते हुए भी आपने यथाशक्य सर्वोदय-आदर्शों के निकट आने का विनम्र प्रयास किया। राष्ट्रपति का मासिक वेतन १० हजार रुपये है साथ ही स्वागत सम्मान आदि पर खर्च करने के लिए २ हजार रुपये मासिक भत्ता भी दिया जाता है। राजेन्द्र बाबू ने पहले तो भत्ता लेना बंद किया, फिर उन्होंने अपना वेतन धीरे धीरे १० हजार से घटा कर ६ हजार, ५ हजार और अंत में २।। हजार कर दिया! हालाँ कि वे यह महसूस करते रहे कि यह भी ज्यादा है, किन्तु सरकारी शान शौकत का जो वर्तमान स्वरूप बन गया है, इस कारण वे इससे कम नहीं कर सके। फिर भी उन्होंने जो परम्परा डाली—और जिसका अनुकरण उनके वारिस डा० राधाकृष्णन् कर रहे हैं— वह राष्ट्र के इतिहास में एक प्रेरक और प्रशंसनीय मानी जायेगी।

राजेन्द्र बाबू की गांधीजी के आदर्शों पर दृढ़ निष्ठा है। 'राष्ट्रपति भवन' में रहते हुए भी आपने रुग्णावस्था को छोड़ कर नियमित 'सूत्रयज्ञ'—चरखा-कताई—करते रहे। जब विनोबाजी ने भूदान आंदोलन के सिलसिले में सर्वोदय पात्र की बात देश के सामने रखी, तो राजेन्द्र बाबू ने 'राष्ट्रपति भवन' में सर्वोदय पात्र रख कर सर्वोदय पात्र को राष्ट्रीय महत्त्व दिया। विनोबाजी अक्सर कहते हैं कि राष्ट्र को राष्ट्रपति के संकेत को समझ कर प्रत्येक घर में सर्वोदय-पात्र की स्थापना करनी चाहिए।

राष्ट्रपति के पद पर रहते हुए भी आपने निर्दलीय रहने का पूरा पूरा सफल प्रयत्न किया। आपके इस निर्णय का सर्वत्र स्वागत किया गया।

आज जब कि राष्ट्रीय एकता का गंभीर सवाल सामने है, राजेन्द्र बाबू के व्यक्तित्व से राष्ट्र को उम्मीद है कि वे इस समस्या को सुलझाने में पूरी शक्ति लगा देंगे। गत ८ मई को संसद-सदस्यों के बीच भाषण करते हुए आपने कहा, "स्वतंत्रता मिलने के बाद उसे दृढ रखने के लिए और भी त्याग की आवश्यकता है, पिछले १२ वर्षों की हमारी सफलताएँ अच्छी रही हैं और उससे भी भविष्य का अच्छा चित्र है। लेकिन मैं कहना चाहता हूँ कि आर्थिक उन्नति के साथ हमें नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति भी करनी चाहिए।"

दूसरा संकेत आपने चुनाव का खर्च कम करने के लिए किया : "भारत एक गरीब राष्ट्र है, यहाँ पर कानून जितना खर्च वैध बताता है, उतना भी खर्च मध्यम श्रेणी का व्यक्ति नहीं कर सकता। ऊपर के जो खर्च पड़ते हैं, वह तो दूर की बात है। ऐसा व्यक्ति सदा किसी दल या व्यक्ति के प्रति उपकृत रहेगा। अगर आप जनतंत्र को सफल बनाना चाहते हैं,

[शेष पृष्ठ ११ पर]

राजेन्द्र बाबू ने राष्ट्रपति पद से निवृत्त होने के बाद घोषणा की कि वे राष्ट्र की सेवा अब पार्टीबाजी से दूर रह कर करेंगे। यह एक ऐसा कदम है, जिसने उनके व्यक्तित्व में चार चाँद लगा दिये।

मार्गदर्शन की अपेक्षा

राजेन्द्र बाबू के प्रति देशवासियों का बहुत आदर है। ... उन्होंने देश की बहुत सेवा की है और उसके लिए अपना शरीर जीर्ण-शीर्ण किया। राष्ट्रपति होने पर भी उनमें जो नम्रता है, वह अद्वितीय और सबके दिलों को खींचती है। ... वे राष्ट्रपति-पद से मुक्त होने पर सीधे सर्वोदय के काम लगेंगे। वैसे भी जिस स्थान पर वे थे, वहाँ सर्वोदय की ही चिंता करते रहते थे। प्रायः हर सर्वोदय-सम्मेलन में उपस्थित होने की कोशिश उन्होंने की। वे बहुत सेवा कर चुके हैं, और उनसे अधिक अपेक्षा रखना निठुरता होगी। हमने उनसे काम की अपेक्षा की ही नहीं है। हमने तो उनके मार्गदर्शन की अपेक्षा की है। वे इतने बड़े व्यक्ति हैं कि उनके अकर्म में कर्म हो जायेगा।

—विनोबा

[३ दिसम्बर, '६१ को राजेन्द्र बाबू के जन्म दिन पर दिये गये प्रवचन से।]

हमारी कौन सुने? हमें कौन बचाये? हम कहाँ जायें? क्या करें?

काशिनाथ त्रिवेदी

"बाबा, पंचायती राज की सारी बातें हमने सुनीं, बहुत अच्छी लगीं; पर आज तो हमारे गाँवों में बदमाशों का राज है! इस 'राज' से हम कैसे छूटें?"—पचायती राज-प्रशिक्षण-शिविर में आये हुए कुछ बुजुर्ग और समझदार आदिवासी पंचों ने कहा।

शिविर म० प्र० में धार जिले की कुक्षी तहसील के डही गाँव में चल रहा था। १-२-३ अप्रैल '६२ के तीन दिन डही में पंचायती राज प्रशिक्षण के दिन रहे। आसपास के गाँवों से बड़ी संख्या में पंच आये थे। उस क्षेत्र में शिविर के नाम से यह पहला ही कार्यक्रम हुआ था। पंचों के अलावा गाँव के दूसरे भाई-बहनों ने भी शिविर की बातें ध्यान से सुनीं। जब तीन दिन की गहरी और दिलचस्प चर्चाओं के बाद शिविर खतम होने आया, तो कातरखेड़ा, छाछकुआँ, दसाना, कन्दा और दभाणी गाँवों के बुजुर्ग और जवान पंचों ने ऊपर के शब्दों में अपनी बात रखी। उनके चेहरों पर डर, परेशानी, घबराहट, लाचारी और निराशा के भाव साफ झलक रहे थे। बड़े दर्द के साथ उन्होंने अपना सवाल हमारे सामने रखा। शिविर में आये हुए गैरआदिवासी भाइयों ने भी आदिवासी भाइयों की इस पुकार का समर्थन किया।

मैंने पूछा: "ये बदमाश कौन हैं! ये क्यों आप पर 'राज' चला रहे हैं! आपकी तकलीफें क्या हैं?"

उन्होंने कहा: "बाबा, हम सब भिलाला हैं। हमारे गाँवों में नायक नाम के आदिवासी रहते हैं। उन्हें हम 'नायकडा' कहते हैं। हमारी बस्तियों में इनकी कुल आबादी पाँच-छह सौ के बीच है। ये लोग हमें दिन-रात, बारहों महीने परेशान करते हैं! लूटपाट का इनका पुश्तैनी धंधा है। पीढ़ियों से ये जरायमपेशा चले आ रहे हैं। हम भिलालों के साथ इनकी खास दुश्मनी है।

"हमें सताने, लूटने, डराने, मारने और बेइज्जत करने में इनको कभी कोई हिचक नहीं होती। मर्द-औरत, सभी दल बाँध कर हमारे घरों में जब चाहें, तब आ धमकते हैं और हमसे अनाज, पैसा, जो भी चाहते हैं, जोर-जबरदस्ती करके ले जाते हैं! इनके खिलाफ हम कुछ भी कहने या करने जाते हैं, तो ये हमें ज्यादा सताते और ज्यादा लूटते हैं। हम लोगों की बस्तियाँ खेतों में फैली हुई हैं। अपने गाँवों में हम कहीं भी इकट्ठा नहीं रहते। खेतों में घर बना कर बसे हैं। इस कारण हमें और हमारे बाल-बच्चों को अकेला पाकर नायक लोग हमारे साथ आये दिन ज्यादती करते रहते हैं। हमें लूटने, सताने का जैसे उनका हक ही हो, इस तरह वे हमारे साथ पेश आते हैं। पिछले १५-२० सालों से नायकों की ये ज्यादतियाँ बढ़ती जा रही हैं। हमने राज-दरबार में भी अपनी पुकार पहुँचायी। हमारे कुछ साथी भोपाल तक भी गये, मुख्य मंत्रीजी से भी मिले। इधर जिन-जिन मंत्रियों, उपमंत्रियों और बड़े सरकारी अधिकारियों के दौरे निकले, उनके सामने भी हमने अपना दुखड़ा रोया। १५ बरस से भटक रहे हैं, हैरान और परेशान हैं! हर जगह जाकर कोशिश कर ली। कहीं कोई सुनता नहीं! वादे तो सब करते हैं, पर ध्यान कोई नहीं देता। क्या करें! कहाँ जायें! कैसे बचें! रात-दिन इसी चिन्ता में घुलते रहते हैं। आप कहते हैं कि नये कायदे के हिसाब से हम अपने गाँव के राजा बनने वाले हैं। बाबा, राजा तो जब बनेंगे तब बनेंगे, पर अभी तो हमारी हालत गुलामों के गुलाम से भी बुरी है। आप आये हैं, तो इसका कोई रास्ता जरूर निकाल जाइये!"—कहते-कहते कइयों की आँखों में आँसू छलछला आये!

बूढ़ों-बूढ़ों को इस तरह दुःख से विह्वल होते देख मेरा भी दिल भर आया! थोड़ी देर के लिए हम सब गम्भीर हो गये। कुछ सूझता नहीं था कि इन भाइयों को क्या कह कर दिलासा दूँ। मैंने सभा में बैठे हुए डही गाँव के सरपंच और दूसरे गैरआदिवासी भाइयों से पूछा, तो उन्होंने भी बताया कि भिलाला भाइयों ने अपनी जो रामकहानी सुनायी है, वह बिलकुल सच है। उसमें थोड़ी भी बनावट नहीं है। नायकों का यह दुर्व्यवहार भिलालों तक ही सीमित है। ब्राह्मण, बनिये, राजपूत आदि अन्य बिरादरीवालों से उनके सम्बन्ध अच्छे हैं। उनको वे नहीं सताते। लेकिन भिलालों के साथ तो कभी-कभी नायक लोग बहुत ही जुल्म करते हैं। इनकी बहू-बेटियों को भी भगा कर ले जाते हैं! और भी इसी तरह की दूसरी तकलीफें देते रहते हैं। इन्हें यह सारी साँसत चुपचाप सहनी पड़ती है। अब तो नायकों का हौसला इतना बढ़ गया है कि वे पुलिसवालों की भी कोई परवाह नहीं करते! जब कभी उन पर सख्ती हुई है, वे डही का क्षेत्र छोड़ कर दूर नर्मदा पार चले जाते हैं और फिर जब देखते हैं कि हवा ठीक है, लौट आते हैं।

गाँववालों ने हमें यह भी बताया कि नायकों में भयंकर बेकारी है। उनके पास न पूरी खेती है और न रोजी-रोटी का दूसरा कोई जरिया है। इस कारण उन्होंने भी मजबूर होकर लूटपाट का धंधा अपना लिया है। अगर उनके लिए १२ महीनों के पक्के धंधे का इंतजाम हो जाय, उनकी नयी पीढ़ी को अच्छी शिक्षा का लाभ मिले और उनके बीच कुछ अच्छे निष्ठावान् अनुभवी और सहृदय लोक-सेवक जाकर बैठें, तो हो सकता है कि कुछ सालों की मेहनत के बाद नायक समाज का रवैया बदले और वे जरायम-पेशा मिट कर इज्जत-आबरू के साथ जीने वाले और अपनी मेहनत से कमा कर खाने वाले नागरिक बन सकें।

डही क्षेत्र के कोई २०-२५ आदिवासी गाँवों में से चार-पाँच गाँवों में ही नायकों के सौ-सवा सौ घर बसे हुए हैं और इसी क्षेत्र की जनता को दिन-रात परेशानी रहती है। इधर का सारा इलाका पहाड़ी है। लोगों ने लोभ में आकर जंगल सारे काट डाले हैं। छोटी-मोटी सब टेकरियाँ नंगी-उघाड़ी हो चुकी हैं। लोग टेकरियों के ढाल पर और सिर पर भी हल चलाने और खेती करने लगे हैं। हर साल बरसात में इन टेकरियों की उपजाऊ मिट्टी बड़ी मात्रा में बह जाती है। हलकी और कमजोर जमीन का इस तरह बेरोक घुलते रहना इस क्षेत्र की जनता के लिए एक भारी समस्या है। यहाँ-वहाँ कुछ कुओं को छोड़ दें, तो बाकी सारी जमीन एक फसली है। उसे भी खाद के रूप में कोई पोषण नहीं मिलता। आसपास का सारा जंगल कट जाने से लोगों की तरह ही ढोरों की हालत भी बहुत कमजोर होती जा रही है। चारे-दाने का कोई इन्तजाम नहीं है। चरागाह के लिए कहीं कोई जमीनें नहीं हैं। जंगल का पता नहीं है। गरमियों में ढोर पालना भारी हो जाता है। भूख-प्यास का कष्ट सह कर चार महीनों में ढोर इतने दुबले हो जाते हैं कि उनकी तरफ देखा नहीं जाता! धरती कमजोर, ढोर कमजोर, आदमी कमजोर, इस तरह सारे इलाके में कमजोरी का चक्र ही बढ़ता जा रहा है। कमजोरी आदमी को कामचोरी की तरफ ले जाती है और कामचोरी में से धीरे-धीरे आदमी लूटपाट की तरफ मुड़ जाता है। गरीबी के कारण लाचार होकर चोरी करने वाला चोर के नाम से बदनाम होकर समाज और राज की नजरों में गुनहगार ठहरता है। पर उसे चोर बनाने वाली समाज-व्यवस्था, अर्थ-व्यवस्था और राज्यव्यवस्था ज्यों की-त्यों बनी रहती है। जब तक सारा समाज मिल कर इस दुष्ट चक्र को तोड़ता नहीं है, तब तक भूख, बेकारी, चोरी और लूटपाट का यह ताण्डव इस क्षेत्र में इसी तरह चलता रहेगा और जनता, निरीह जनता इसके पैरों तले इसी तरह दबती, पिसती, मिटती और आतंकित होती रहेगी।

हमने अपने इस देश में पंचायती राज चलाने का शुभ संकल्प किया है। इसके जरिये हम गाँवों में गाँवों का अपना राज खड़ा करना चाहते हैं। जो हुकूमत अब तक एक जगह इकट्ठा होकर पड़ी थी, उसे गाँव-गाँव में पहुँचाना चाहते हैं। परन्तु हमारे गाँवों का सवाल हुकूमत बाँट देने से हल नहीं होगा। अगर गाँवों में गाँववालों के दिल दिमाग नहीं जुड़े, धन-धरती नहीं जुड़ी और मेहनत-मजदूरी नहीं जुड़ी, तो सिर्फ सत्ता उनके हाथ में दे देने से गाँव का गरीब हरीब नहीं बन सकेगा और उसकी मुँहताजी खुशहाली में नहीं बदल सकेगी। सत्ता के साथ सम्पत्ति, धरती और प्रतिष्ठा के बँटवारे का भी विचार हमको करना होगा। नहीं तो गाँव में पहुँचने वाली सत्ता गाँववालों के लिए वरदान बनने के बदले अभिशाप बन जायेगी और गाँवों की गरीब जनता स्वराज का सुख पा ही नहीं सकेगी।

गाँवों में और कसबों में जो सुखी हैं, सम्पन्न हैं, जवाबदार हैं और समझदार हैं, उनका काम है कि वे आगे आयें और दुखियों के दुःख को, भूखों की भूख को, गरीबों की गरीबी को और मुँहताजों की मुँहताजी को अपनी ही समझ कर उसे मिटाने में तन, मन, धन के साथ जुट जायें। गाँवों में गाँवों के राज्य को पक्का बनाने और उसकी जड़ों को पाताल तक पहुँचाने के लिए त्याग, सेवा, करुणा, प्रेम और बन्धुता का ही रास्ता काम देगा। कायदे-कानून के रास्ते, लूटपाट या जोर-जबरदस्ती के रास्ते हमारी यह सनातन समस्या कभी सुलझ नहीं सकेगी।

और अगर हमने जमाने की तरफ देख कर खुद ही राजी-मरजी से अपना रास्ता नहीं बदला और अपनों के साथ न्याय करना नहीं सीखा, तो गाँवों में जो लोग आज दीन भाव से त्राहि-त्राहि की पुकार मचा रहे हैं, वे किसी के बस के नहीं रहेंगे। अपने ऊपर भी उनका कोई बस नहीं चलेगा और एक दिन ऐसा आयेगा, जब सबकी रक्षा, सबका साथ और सबकी सहानुभूति चाहने वाले लोग, सबका संहार करने निकल पड़ेंगे। उस समय फिर न राज की कोई हिकमत चल सकेगी, न समाज कंगालों के उस कोपानल को शान्त कर सकेगा और न देव ही हमारी रक्षा करने में समर्थ हो सकेगा!

जो हाल डही क्षेत्र के २०-२५ गाँवों में रहने वाले आदिवासियों का है, वही थोड़े हेर-फेर के साथ, देश के साढ़े पाँच लाख गाँवों में बसे गाँववालों का है। डही में गरीब, बेकार और भूखे नायकों ने जरायम-पेशा बन कर अपने सवाल का एक हल खोज निकाला है। दूसरी जगह गाँवों में गरीबों को चूसने वाले ऐसे ढेरों लोग पड़े हैं, जिनकी गिनती जरायमपेशा लोगों में नहीं होती, पर असल में जो अपनी रोटि-

धोखा दिया किसने ?

गलत दिशा जा पकड़ने और गलत साधनों को अपनाने से परिणाम जहाँ-तहाँ आज उल्टे देखने में आ रहे हैं। मिथ्या आत्म-संतोष की भावना बढ़ रही है, पुरुषार्थ पंगु होता जा रहा है, तेजस् क्षीण हो रहा है और सत्य से हम दूर और दूर हटते जा रहे हैं। इस धोखेबाज दिग्भ्रम से कब छुटकारा मिलेगा।

यहीं आधी रात के बाद वह, यात्री उस गाँव में रास्ता भूलता-भालता, पहुँचा और गाढ़ी नींद में जा सोया। सुबह को जागा, तो अचरज में डूब गया। यह कैसा कि सूरज पश्चिम से उगा है! नहीं, सूरज डूबा नहीं, वह तो चढ़ रहा है। अपने ज्ञान पर उसे विश्वास था कि वह गलत हो नहीं सकता। किन्तु दिग्भ्रम ने चक्कर में डाल दिया। धोखा खा गया। दृष्टि-दोष आ गया गणितमूलक अभ्यास न होने से।

एक दूसरा राहगीर रास्ता काफी नाप आया था, पर न तो उसे पहाड़ का वह घाट मिला, और न वह नाला और वे चौकियाँ भी नहीं, जिनको उसने अपना नकशा कई बार खोल-खोल कर देखा था। आश्चर्य पग पग पर बढ़ता जा रहा था कि नकशा खींचने में जब कोई भूल नहीं हुई, तब उस पर अंकित वे सारे स्थान यात्रामार्ग में क्यों नहीं आये, और एक नया ही जंगल, दूसरी ही पहाड़ियाँ और ये गहरे खते नाले क्योंकर उसकी राह में आ खड़े हुए।

ज्ञात नहीं हो पा रहा था, दोनों ही यात्रियों को, कि वे असल में दिशा भूल गये हैं। इसीलिए एक का सूरज पश्चिम से उगा था और दूसरे के नकशे पर अंकित पहाड़ और नदी-नाले गृहीत मार्ग से हट गये थे।

उस रोगी का भी आश्चर्य बढ़ता जा रहा था, जिसने रोगोपचार में कोई कमी, अपनी जान में, नहीं रखी थी। दवा के सेवन से नये-नये रोग उभर आते और एक दूसरे से उलझ बैठे, तब भी उसे उपचार में कोई भूल दिखायी नहीं दी। समझ नहीं पाया वह कि नुस्खा तो दूसरे ही रोग का था, और आहार विहार भी कुछ ऐसा कि जिससे मूल रोग म उलझनें पैदा हो गयी थीं।

सूरज ने कोई भूल नहीं की थी, नकशे की कोई गलती नहीं थी, दवा भी अपने आप में वैसी ही सही थी। एक की आँखों को भ्रम हो गया था, दूसरे ने उल्टा रास्ता पकड़ लिया था और तीसरा किसी और ही रोग के नुस्खे से अपने रोग का इलाज कर रहा था। नतीजा तब कुछ-का-कुछ तो आना ही चाहिए, उल्टा आयेगा या फिर कुछ भी न आयेगा।

अपनी जान में हम रास्ता सही पकड़ते हैं और प्रयत्न या उपाय भी हमारा, अपनी समझ में, सही होता है, अथवा कुछ बातों में, कुछ अंशों में, अपनी असमर्थता को सामने रखकर समझौता कर बैठते हैं कि कार्य की दिशा सही है। मगर परिणाम या तो उल्टा आता है, या फिर शून्यवत्। तथापि उन मूलभूत कारणों की खोज निकालने की तरफ नहीं जाता। मान्यता रूढ़ बन जाती है।

मान लिया गया है राज्य शक्ति का आश्रय पाकर धर्म की वृद्धि तथा समृद्धि होती है। इतिहास के पन्नों ने भी ऐसी मान्यता को दृढ़ कर दिया है। ध्यान ही नहीं गया कि राज्य का आश्रय लेकर धर्म का शरीर तो बेहद मोटा हो जाता है, काफी फूल जाता है, परन्तु उसके अन्दर की प्राण-शक्ति समाप्तप्राय हो जाती है। माना कि जान-मान कर धर्म की परिभाषा को नहीं बदला गया, परन्तु उसका आमूल रूपान्तर तो हो ही गया। कारण कि रास्ता गलत पकड़ लिया गया था। सत्य तो असल में अपने ही स्थान पर स्थिर था, किन्तु दिशा-भूल से, उल्टे साधनों से वह हाथ नहीं आया। धीरे-धीरे वह आश्चर्य भी हट गया। हाथ में जो कुछ आया, उसे ही सच्चा मान लिया गया। तब सत्य दूर खड़ा खिलखिलाकर हँस पड़ा कि उसे खोजने वालों की आँखों पर कैसा मोहक आवरण आ गिरा!

अस्त्रों को नष्ट करने के लिए वे सामने जाते हैं,—सामने वाले पक्ष के अस्त्रों को समुद्र में फेंकवा देने के लिए। खुद अपने लबादों के अन्दर आस्तीनों में और जेबों में, घातक से घातक अस्त्र छिपा कर, शान्ति वाहक श्वेत कपोतों को उड़ाने का दावा करते हुए, वे शान्ति-परिषद् में भाग लेने आते हैं। अविश्वास या पग पग पर का सन्देह तब निरस्त्रीकरण को सही दिशा में उनको कैसे ले जा सकता है!

निरस्त्रीकरण यदि दो में से एक पक्ष सचमुच करना चाहता है, तो दूसरों के प्रति दृढ़ मूल अविश्वास को वह मन से निकाल दे, और पहले अपने ही अस्त्रों को समुद्र में डुबा दे। विश्वास से विश्वास पैदा होता है, और अविश्वास से अविश्वास। गलत दिशा पकड़ने से परिणाम गलत हो जाता है।

शिकायत कैसी कि लोक-सेवा की प्रवृत्तियाँ, बहुतेरी चलायीं, परन्तु परिणाम वैसा न आया, जिसकी आशा की थी। जिन लोगों की इतनी कुछ सेवा की, उन्होंने कृतज्ञता भी न दिखायी—जैसे ऊसर में बीज डालना हुआ। यहाँ भी रूढ़ मान्यता से ही काम लिया गया। प्रवृत्तियाँ चलाने से आशय यही कि अमुक संगठन या संस्था खड़ी की, उसका विधान बनाया, नियमों-उपनियमों का जाल फैलाया, धन इकट्ठा किया, चुनाव हुआ, पदों पर झगड़े चले और राग-द्वेष ने अड्डा जमा लिया। जनसेवा को अहंकार और कृतज्ञता पाने के लोभ ने मलिन कर दिया। सेवा खरीद फरोख्त की चीज बन बैठी। क्या यह गलत दिशा में कदम रखना नहीं था! तब रोना कैसा।

आश्चर्य प्रकट किया जाता है, कभी-कभी दुःख और क्षोभ के साथ भी, कि प्रयत्न तो ऐक्य की दिशा में किया गया, किन्तु परिणाम उल्टा ही आया। क्या इधर भी कभी ध्यान गया कि प्रयत्न चूँकि यान्त्रिक होते हैं, इसीलिए भावात्मक ऐक्य सिद्ध नहीं हो पा रहा। राजनैतिक हेतु से उसकी प्राप्ति के उपाय विफल तो जाने ही वाले हैं।

भुला दिया गया कि सत्य और प्रेम के विचारों को व्यापक बनाने का अमोघ साधन अपना स्वयं का त्यागमूलक चारित्र्य बल होता है। इसमें पूरा संदेह है कि यान्त्रिक रूप से किसी संगठन द्वारा चलायी गयी प्रवृत्ति का परिणाम सही-सही आयेगा। हो सकता है कि जिन कारणों ने विषमता को जन्म दिया और जिनमें वह फूली फली, उन्हें हटाने में वे यान्त्रिक प्रवृत्तियाँ न केवल असमर्थ सिद्ध हों, बल्कि न चाहते हुए, अप्रत्यक्ष रूप से, विषमता को उल्टे उनसे बढ़ावा भी मिले। अतः गलत दिशा में चलकर निर्दिष्ट स्थान तक पहुँचने की रूढ़ या मूढ़ मान्यता का त्याग करना ही होगा।

आश्चर्य कैसा कि प्रचुर मात्रा में धन खर्च करने तथा विशालकाय पुस्तकालयों में [illegible] वाल्मीकि, कालिदास, शेक्सपीयर तुलसी या कबीर की रचनाओं की तुलना का साहित्य क्यों निर्माण नहीं होता है। इस प्रकार के साधनों और भारी धन राशि खर्चने से भी साहित्य का निर्माण तो होता है, पर वह दूसरी ही कोटि का साहित्य होता है।

गलत दिशा जा पकड़ने और गलत साधनों को अपनाने से परिणाम जहाँ तहाँ आज उल्टे देखने में आ रहे हैं। मिथ्या आत्मसंतोष की भावना बढ़ रही है। पुरुषार्थ पंगु होता जा रहा है, तेजस् क्षीण हो रहा है और सत्य से हम दूर और दूर हटते जा रहे हैं। इस धोखेबाज दिग्भ्रम से आखिर कब छुटकारा मिलेगा।

नीति और आचार-विचार के कारण गरीबों के लिए जरायमपेशा लोगों से भी ज्यादा खतरनाक हैं। पर चूँकि आज कायदा उनके साथ है, समाज की व्यवस्था उनके साथ है, देश की अर्थनीति उनके साथ है, इसलिए वे गाँवों, शहरों और कस्बों में टहलते और इज्जतदार बन कर घूम रहे हैं। पर उनके कारनामे तो काले-से-काले ही कहे जा सकते हैं।

ऐसी जैसे क्षेत्र की यह समस्या हमारे सामने एक लाल बत्ती रख रही है। वहीं के आदिवासियों की पुकार और गुहार हमें चेतावनी दे रही है। सरकार सुने, समाज सुने, सेठ-साहूकार सुने, समाज का शिक्षित और समझदार वर्ग सुने और समय रहते इसका इलाज करे, यही आज की असली जरूरत है।

वहीं के आदिवासियों की वे आँसू-भरी आँखें निराशा और बेबसी से भरे उनके वे बोल और उनके रोज रोज के जीवन की वह हैरानी परेशानी हममें से कुछ को बेचैन करें और हममें जो लोक-सेवक हैं, शान्ति सैनिक हैं, दरिद्रनारायण की उपासना के व्रती और हामी हैं, वे उस क्षेत्र में जाकर जमें, धूनी रमायें, लोगों का दिल जीतें, दिमाग बदलें, उन्हें जीविका के साधन दें और जीवन की नयी पगडंडी पर अपने हाथ का सहारा देकर, उनको चला ले जायें, तो इस जमाने का वह एक बड़ा काम हो, बड़ी पवित्र, अनोखी और उत्तम सेवा हो। आदिवासियों को अपने सवालों का जवाब मिले और हवा में गूँजने वाले ये बोल कि 'हम कहाँ जायें!' 'क्या करें!' 'हमारी कौन सुने!' 'हमें कौन बचाये!' सदा के लिए शान्त हो जायें।

उस दिन और उस घड़ी के लिए सबका पुरुषार्थ जागे और सबकी स्नेह, दया, करुणाभरी सेवा वहाँ अपनी शीतल छाया फैलाये, यही कामना और प्रार्थना है।

अध्यात्म का अर्थ

अध्यात्म का अर्थ है तीन बातों का होना—

(१) निरपेक्ष नैतिक मूल्यों में निष्ठा।

(२) मृत्यु के बाद की 'कन्टीन्युइटी' (जीवन) में विश्वास—चाहे वह किसी रूप में हो। (३) जीव मात्र की एकता और पवित्रता में श्रद्धा। —विनोबा

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

एक ग्रामदानी गाँव। पचास घरों का गाँव, घास के मकान! मकान के इर्दगिर्द हरेभरे खेत! खेतों को और मकानों को घेरा हुआ गाँव का टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता। गाँव के बीच एक छोटी-सी पोखरी (तालाब) और पोखरी के पास ही एक पाठशाला। यहीं आज बाबा का निवास-स्थान था। सुबह साढ़े चार बजे पड़ाव पर पहुँचे। बारिश नहीं थी, लेकिन चारों ओर घटाएँ छायी हुई थीं। रात को वर्षा हुई थी, इसलिए रास्ता चिकना हो गया था। ठंडी-ठंडी हवा में गाँव में पहुँचे। बाबा के निवास-स्थान के सामने स्त्री-पुरुष, बाल-बच्चे इकट्ठे हुए थे।

बाबा ने उनसे कहा, "यह ग्रामदानी गाँव है। कुल-के-कुल परिवार ग्रामदान में शामिल होते हैं, तो गाँव की प्रगति बहुत अच्छी तरह से हो सकती है। ग्रामदान होने के बाद पहली बात वो यह करनी है कि गाँव का 'सर्वे' करना है। गाँव में घर कितने हैं? लोकसंख्या कितनी है? जमीन कितनी है? भूमिहीन, कम जमीन वाले कितने हैं? गाँव पर कर्ज कितना है? गाँव में उद्योग क्या-क्या हैं? 'एंडी' का उद्योग चलता है या नहीं? पढ़े-लिखे लोग कितने हैं? लोग 'नामघोषा' जानते हैं या नहीं? यह सब जानकारी हासिल करनी चाहिए। आज हम चौदह घंटे (सुबह साढ़े चार बजे से शाम को साढ़े छह बजे तक। साढ़े छह बजे बाबा सो जाते हैं।) आपके गाँव में हैं। आप अगर यह जानकारी लेकर हमारे पास आयेंगे, तो हम आपका मार्गदर्शन कर सकते हैं।"

नाश्ते के बाद कार्यकर्ता और गाँव के प्रमुख लोग काम में लग गये।

ठीक ग्यारह बजे गाँव के प्रमुख लोग, शिक्षक, कार्यकर्ता बाबा के कमरे में इकट्ठे हुए। बाबा ने उनसे पूछा, 'नाम-घोषा' गा सकते हो? सभा में से जवाब नहीं मिला। बाबा ने फिर से पूछा, "अरे, इतने 'डेका' (जवान) लोग हो, कोई क्या भी 'नाम-घोषा' गा नहीं सकता?" आखिर दो जवान गाने के लिए तैयार हुए। बाबा ने 'घोषा' चुन कर दिये। 'घोषा'-पठन के बाद बाबा ने उसका अर्थ भी समझाया, "दोनों 'घोषाओं' में पुनर्जन्म के बारे में कहा है:

> 'किसी जमाने में हम मनुष्य-योनि में थे और ऐसा गलत काम हमने किया कि जिससे मनुष्य-जन्म खोया। फिर अनेक दूसरी योनियों में घूमे और बहुत दुःख भोगा। उसके बाद पश्चात्ताप होकर नरतनु पाया और फिर-फिर से नरतनु मिलती गयी। अब हे भगवान, तुम्हारे चरण में आया हूँ, तुम्हारा सेवक बना हूँ। पहले मनुष्य-योनि में भोग भोगने की प्रेरणा हुई। लेकिन उतनी बुरी प्रेरणा नहीं कि पशु-योनि में जाय। इसलिए मनुष्य-जन्म बार-बार लेकर अब ऐसे मुकाम पर आया हूँ कि तुम्हारा किंकर होने की ही अब इच्छा है।'

तुम लोगों ने ग्रामदान दिया, तो तुम पुराने चक्र में से निकल गये हो। फिर से उस चक्र में घूमना नहीं और अब हरिचरण में स्थिर हो जाओ।"

हमें ऐसा लगा कि सभा समाप्त हो गयी। जो कहना था सारा सार बाबा ने कह दिया। लेकिन नहीं! लोग गाँव की जानकारी लेकर आये थे और साथ-साथ कुछ शंकाएँ भी थीं। बाबा तो 'समाप्तम्' कह कर बिस्तरे पर लेट गये थे। लेकिन लोगों में से एक ने पूछा, "बाबा हमने ग्रामदान दे दिया। लेकिन कुछ भय है मन में। महाजन लोग कहते हैं कि तुमने ग्रामदान दे दिया, अब हम तुमको मदद नहीं करेंगे। बाबा ही तुमको खिलायेंगे!"

आखिर इन लोगों का दिल बाबा के सामने खुल गया। ग्रामदान का विचार समझ में आया था। जँचा भी था, लेकिन मन में भय था। भय के बारे में कहने को सकोच भी हो रहा था, लेकिन बाबा के दर्शन में दिल के दरवाजे खुल गये।

बाबा ने कहा, "अच्छा ही है। वे मदद नहीं करेंगे तो आप काम करेंगे, मेहनत करेंगे। मदद क्या ऐसी मुफ्त में ही मिलेगी? और नहीं दी उन्होंने मदद तो बला गयी! आप पूँजी इकट्ठी करें, उससे गाँव को मदद मिलेगी। लाओ, क्या जानकारी लाये हो गाँव की?"

जानकारी इस प्रकार थी—

गाँव की जन संख्या : २४१
गाँव की कुल जमीन : ५८१ बीघा
बंधक जमीन : ७५ बीघा
सरकारी कर्ज : ५३० रुपया
गाँव का कर्ज : १४९० रुपया
महाजनों का कर्ज : २६५७ रुपया

"पहले तो महाजनों का कर्ज है, वह तुमको चुकाना पड़ेगा। उससे गाँव की इज्जत बढ़ेगी। गाँव का कर्ज थोड़ी देर रुक सकता है, सरकार का भी रुक सकता है; लेकिन महाजनों का कर्ज पहले चुका दो। कैसे चुकाओगे? घर घर में गहने होंगे वे ग्राम-सभा को दे दो। पूँजी बढ़ाओ। पहले इस कर्ज से मुक्त हो जाओ। कानून से तो सौ रुपयों पर सालाना तीन से पाँच रुपयों तक सूद ले सकते हैं, लेकिन तुमको महाजनों को २० रुपयों पर १६ रुपया देना पड़ता है! इसलिए गाँव के सब लोग एक होकर पहले इस कर्ज से मुक्त हो जाओ। ग्राम सभा महाजनों को लिख दे कि इस कर्ज की हमारी जिम्मेदारी है। वे कोई मनुष्य के पास रुपया माँगने के लिए न जायें। पहले महाजनों का कर्ज चुका देंगे, बाद में सरकार का देखा जायेगा। अब यह गाँव का कर्ज याने क्या चीज है?"

"गाँव की एक सामूहिक पूँजी है। गाँव ने जो रास्ता बनाने का, पुल बाँधने वगैरह के सामूहिक काम किये और उसके लिए जो-जो रकमें पायीं, उसकी यह पूँजी बनी है। उस पूँजी से जो कर्ज लिया है, वह गाँव का कर्ज है।"

"इस कर्ज का ब्याज लेंगे?"

"जी हाँ"

"क्यों ब्याज लेंगे?"

"बीस रुपयों पर आठ रुपया ब्याज लेते हैं। उससे पूँजी बढ़ेगी।"

"भूमिहीनों को, कम जमीन वालों को जमीन दे दी। प्रेम से आरंभ कर दिया। उसके बाद हर साल खेत की आमदनी का थोड़ा हिस्सा ग्रामसभा को दान दे दिया। उससे गाँव की पूँजी बनेगी। आपने जिसकी मदद की है, उतना पैसा वह वापिस कर देगा। पूँजी ब्याज से क्यों बढ़नी चाहिए?"

"यह एक गाँव की पूँजी नहीं। दस-बारह गाँवों की पूँजी है। दस-बारह गाँवों ने मिल कर काम किया था। उसकी यह सामूहिक प्राप्ति है। इस गाँव में स्कूल का मकान बनाने के लिए यह रकम इकट्ठी की गयी है। स्कूल का मकान बाँधने की गाँव योजना कर रहा है।"

"यह गलत है। यह काम 'अनप्राफि-टेबल' है, मुनाफा देने वाला नहीं है। पहली बात यह कि पूँजी आयी तो उससे पूँजी बढ़ाने का उद्योग करना चाहिए। स्कूल का मकान बाँधने का सोचा। क्या है उस शिक्षण में? सारी निकम्मी तालीम है। जीवन में उसका कुछ उपयोग नहीं। वह होगा, धीरे-धीरे जैसा-जैसा गाँव का विकास होगा। आपका पहला काम तो कर्ज से मुक्त होने का है। यह सब मिल कर करेंगे। मेरा गाँव होता, तो मैं मेरे गाँव में पहले उत्पादन बढ़ाता। उत्पादन बढ़ाने के लिए कुछ सीखना होगा तो बाहर से सीख कर आइये। मैं मानता हूँ कि आपके पास कुल ५८१ बीघा जमीन है। हर बीघे में ५ मन अनाज होता होगा। ठीक कह रहा हूँ न मैं?"

"जी हाँ, एक बीघे में साल में पाँच मन फसल आती है।"

"अब हर बीघे में साल भर में ५ मन फसल आती है, उसका बीसवाँ हिस्सा ग्रामसभा को दान दे दें। तो क्या हुआ? एक मन की कीमत आठ रुपया, तो आपका साल भर का ५ मन के पीछे दो रुपया दान हो गया। एक बीघा में दो रुपया दान। कुल ५८१ बीघा जमीन है, तो कुल दान करीब-करीब १२०० रुपया होगा। तो हर साल आपकी १२०० रुपये की पूँजी हो गयी। ग्रामदान बनता है तो सबकी ताकत बनती है। अब तुम बताओ, यह मेरा सुझाव व्यवहार में लाने लायक है या नहीं?"

"बाबा, यह थोड़ा कठिन है। अब मेरे पास ५ बीघा जमीन है, लेकिन खाने वाले ६ व्यक्ति हैं। अब मैं हर बीघे पीछे दो रुपया याने दस रुपया हर साल दूँ, तो कैसे चलेगा?"—एक असमाधान से भरी हुई आवाज सभा से निकली।

बाबा उठ गये और सीधे उस आदमी की ओर देख कर कहने लगे:

"जिनके पास ज्यादह है, वे ज्यादह देंगे। तुम ऐसा भी तय कर सकते हो। जिसके पास पाँच बीघे तक जमीन है, वे एक बीघे के पीछे एक रुपया दान दें। जिसके पास दस बीघा जमीन है, वे दो रुपयों तक दान दें। जिनके पास बीस बीघा जमीन है, वे तीन-चार रुपया दान दें। आप सब मिल कर तय करो। जब तक आप सब अपना गाँव एक परिवार है यह खयाल नहीं करोगे, तब तक आपको अकल सुझेगी नहीं। मेरी ५ बीघा जमीन है और मेरे घर में ६ मनुष्य हैं, ऐसा खयाल क्यों करते हो? मेरी ५८१ बीघा जमीन है और मेरे २०० लोग हैं, ऐसा समझना चाहिए। ग्रामदान का विचार समझने का यह विचार है। इसमें आप एक घर बनाते हैं और बाँट कर खाते हैं। जिसको कम है, उसको दे देंगे। इसमें कौन बड़ी बात है? पहले निकाल कर दे देंगे, फिर देखा जायेगा।"

सभा से अब भी असमाधान के स्वर निकल रहे थे। स्पष्ट कोई बोल नहीं रहा था। लेकिन असमाधान की कुछ झाँकी दिखायी दे रही थी। बाबा कहते गये। "तुमने ग्रामदान दिया सो क्या समझ करके दिया? क्या जमीन देनी नहीं पड़ेगी ऐसा सोचा? तो क्या नाटक सोचा ग्रामदान का? ग्रामदान में जमीन देनी पड़ेगी। जिनके पास ज्यादा जमीन है, उन लोगों को जमीन देनी पड़ेगी। उससे ही आरंभ होगा। भूमिहीन कोई नहीं रहेगा। पूरे गाँव की जमीन सबकी होगी। यहाँ दो सौ मनुष्य हैं और पाँच सौ बीघा जमीन है, तो एक मनुष्य के पीछे ढाई बीघा जमीन होगी। इतना सरल हिसाब है।"

"हम हिसाब करेंगे और बँटवारा करेंगे तो गड़बड़ होगी?"

"उसमें गड़बड़ी क्या होने वाली है? सबकी मिल कर जमीन है। जिन लोगों के पास कम जमीन है, उनको हिसाब करके उतनी दे दी। जितनी दी, उतनी बाकी लोगों के लिए कम हुई। यही प्रेम है। उस आधार से ही गाँव सभा बनेगी। गाँव के जितने बालिग होंगे, उनकी गाँव-सभा बनेगी। हर साल गाँव-सभा को दान देंगे। उसकी पूँजी बनेगी। पूँजी के

नवनिर्वाचित लोक-प्रतिनिधियों को चेतावनी

विट्ठलदास मोदाणी

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद जनतंत्रात्मक गणराज्य भारत में, अर्थात् लोकशाही से अलंकृत दुनिया के सबसे बड़े देश में तीसरा सामान्य चुनाव समाप्त हो चुका है। परंतु उसमें मतदानों के कितने ही बिलकुल नये तथा अकल्पित परिणाम देखे गये हैं!

यह बिलकुल स्वाभाविक है कि इन परिणामों के प्रति देखने की दृष्टि भिन्न-भिन्न हो। प्रत्येक की दृष्टि भिन्न-भिन्न होती है। इसमें कुछ बुरा नहीं कि हरएक अपनी-अपनी दृष्टि के अनुसार उसमें से सार निकालता है। सब इस प्रकार निरीक्षण और परीक्षण करने की सारग्राही दृष्टि का विकास करें। यह एक जागृति का प्रशंसनीय और इच्छनीय शुभ चिह्न है। यही जन-जागृति का मापदंड है। इसमें केवल इतनी ही सावधानी रखनी होती है कि अपने द्वारा निकाला हुआ सार ही सच्चा दर्शन है और अपने से भिन्न दिखाई देने वाली दृष्टि और भिन्न अभिप्राय मिथ्या या तथ्यविहीन है, इस प्रकार का स्वमताग्रह या दुराग्रह यदि कोई रखता है तो वह अलोकशाही का व्यवहार गिना जाना चाहिए। इसलिए इतनी सावधानी रखने की आवश्यकता रहती है कि ऐसी अवैज्ञानिक दृष्टि में हममें से किसी का अभिप्राय न हो।

सच्ची विवेक बुद्धि

किसी को पानी का आधा भरा हुआ प्याला आधा भरा हुआ दिखाई देता है, तो किसी को आधा खाली दिखाई देता है। केवल आधे भरे हुए की ओर ही अपना सारा ध्यान केंद्रित कर उसके ही गुणगान करते रहना और खाली भाग की ओर ध्यान नहीं देना जिस प्रकार मिथ्या है, उसी प्रकार आधे खाली भाग को ही महत्त्व देकर रोना रोते रहना या टीकाएँ करते जाना तथा जितना भरा हो उसकी अवगणना करते रहना भी उतना ही मिथ्या है।

सच्ची विवेक बुद्धि और सच्ची वैज्ञानिक तथा तटस्थ दृष्टि यही है कि पूर्वग्रह से परे होकर और खास करके पक्षातीत होकर सत्यग्राही दृष्टि से दोनों पार्श्वों का वास्तविक मूल्यांकन करना और उसके आधार पर प्रगति का मार्ग ढूँढ़ कर उस ओर प्रयाण करने का और समग्र हित की दृष्टि से विकास और प्रगति करने का जाग्रत बुद्धि से पुरुषार्थ करना।

नैतिक जिम्मेदारी

सब लोगों की लोकशाही की केवल रक्षा के लिए ही नहीं, परंतु उसके सतत विकास और प्रगति के लिए इस प्रकार की जाग्रत विवेक बुद्धि, सारग्राही वैज्ञानिक दृष्टि और सतत कार्यशीलता का प्रत्यक्ष व्यवहार में सचोट दर्शन कराने की नैतिक जिम्मेदारी है। इस दिशा में सबको अभिमुख करने की विशिष्ट शक्ति प्रगतिशील दैनिक और साप्ताहिक पत्रों के पास है। इसे सब कोई स्वीकार करेंगे कि इन साधनों का उपयोग कर वे इस कार्य में अपना श्रेष्ठ योगदान दे सकते हैं।

अंत में जिस प्रकार की नीतियाँ, परंपराएँ और प्रणालिकाएँ स्थापित होंगी, रची जायेंगी, उनके आधार पर ही लोकशाही चल सकेगी, तभी वह कामयाब होगी और सबको संतोष दे सकेगी। इसकी नैतिक जिम्मेदारी कुछ विशेष प्रमाण में विधान सभा तथा लोकसभा में गये हुए प्रतिनिधियों के सिर पर रहती है, फिर वे चाहे जिस पक्ष के हों या स्वतंत्र हों। जीते हुए अन्य उम्मीदवार खासकर सत्ताधीश पक्ष के सामने कम-से-कम इस एक बात में सहमत और संगठित हों तो दृढ़ और स्वस्थ परंपराएँ स्थापित करने के भगीरथ कार्य में वे महत्त्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। यदि वे इसे प्रथम पंक्ति का कार्य गिनेंगे तो वे विरोधी पक्ष के रूप में ऐसी शक्ति निर्माण करने के ध्येय को तो प्राप्त कर ही सकते हैं। इस प्रकार से ही वे सत्ताधीश पक्ष के ऊपर *अच्छा प्रभाव* डाल कर उसका सहयोग भी प्राप्त कर सकेंगे।

आह्वान

प्रतिदिन का व्यवहार, योजनाओं की चर्चा और उपयोग, औद्योगिक तथा *कृषि के क्षेत्र में उत्पादन बढ़ाने का कार्य*, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों और प्रश्नों के संबंध में सतत जागृति इत्यादि अनेक प्रकार की प्रवृत्तियों के ऊपर विधान-सभा और लोकसभा में गये हुए प्रतिनिधि विशेष ध्यान देते रहें, ऐसी अपेक्षा तो है ही। परंतु आजकल इन सबमें मुख्य कार्य प्रजातंत्र की रक्षा और उसके सतत विकास तथा प्रगति के लिए श्रेष्ठ नीतियाँ, परंपराएँ और प्रणालिकाएँ स्थापित करना है।

यह सही है कि भारतवर्ष ने स्वतंत्रता-प्राप्ति के १५ वर्षों के बीच इस दिशा में *ठीक-ठीक प्रगति की है।* परंतु मात्र इतने से ही संतोष मान लेने से काम नहीं चलेगा। सम्भव है कि कहीं थोड़े-बहुत अंश में झूठी अथवा अनिच्छनीय प्रणालिकाएँ भी जाने-अनजाने चालू हो गयी हों। यदि ऐसा कुछ नहीं हुआ मान कर मिथ्या आत्मसंतोष अनुभव करने की वृत्ति जोर पकड़ेगी तो सदैव के लिए अंधेरे में ही रहना बना रह जायगा।

देश और दुनिया में जो विविध परिबल काम कर रहे हैं, वे हमारे सामने ताकीद करते हैं कि हम लोकशाही की रक्षा के लिए सतत जाग्रत रहें, इस दृष्टि से विधानसभा और लोकसभा में गये हुए जनता के सब प्रतिनिधियों से सद्भावनापूर्वक आह्वान है कि वे पक्षातीत हो सबसे मिल कर विचार-विनिमय तथा संशोधन करें कि किस नीति से और किस नवीन परंपराओं और प्रणालिकाओं की स्थापना करने की तात्कालिक आवश्यकता है, राष्ट्र की एकता के लिए अनिवार्य है। इसी प्रकार हमारे देश में प्रचलित नीतियों और प्रणालिकाओं में से कौन-सी प्रजातंत्र के लिए भय रूप है, उसे भी वे निश्चित करें और इसके लिए प्रत्यक्ष व्यवहार के क्षेत्र में जो कुछ करना अनिवार्य हो, उसका पारस्परिक सहयोग से आरम्भ करें। इसे तो सब कोई स्वीकार करेंगे कि कम-से-कम इस ध्येय तक पहुँचने के लिए सब पक्षभेद भूल जायँ और थोड़ी देर के लिए पक्षहित को नजरअंदाज कर दें। यह बात *निःसंशय है कि जो समग्र देश के श्रेष्ठ* हित में है वह पक्ष के भी हित में है। प्रजातंत्र में राष्ट्र का हित ही सर्वोपरि हो सकता है। उसकी अवगणना की रीति से यदि पक्षहित को प्राधान्य दिया जायेगा तो परिणामस्वरूप प्रजातंत्र विचार ही नष्टप्राय हो जायेगा। ऐसी भावना से प्रेरित होकर ही जनता के प्रतिनिधियों और स्वयं जनता से यह आह्वान किया गया है कि हमारे देश में प्रजातंत्र का विकास करने का ध्येय प्रत्येक भारतवासी का होना चाहिए।

लोकशक्ति का निर्माण

प्रजातंत्र केवल व्यावहारिक तंत्र की एक प्रथा नहीं है, परंतु जीवन की एक राह है। सत्ता और कानून की दंडशक्ति के आधार पर न तो लोकशक्ति का निर्माण हो सकता है और न अपने सच्चे स्वरूप में प्रजातंत्र का प्रकटीकरण हो सकता है। लोकशक्ति का निर्माण शक्य हो, इस प्रकार की नीतियों, परंपराओं और प्रणालिकाओं की स्थापना की जायँ तभी प्रजातंत्र का जीवन की एक राह के रूप में प्रत्यक्ष व्यवहार में सार्वत्रिक दर्शन शक्य हो सकता है।

अभी हाल में ही समाप्त हुए सामान्य चुनाव का दृष्टांत लें। इस समय के मतदानों में खास आकर्षित करने वाली बात यह है कि उसमें "कांग्रेसवाद" और "कांग्रेसविरोधी" मानस बाहर आया है। यह स्थिति सबका गम्भीर चिंतन चाहती है।

ऐसी तरफदारी या विरोध का पृथक्करण करना और उनके कारण, गुण-दोष इत्यादि *ढूँढ़ना बहुत महत्त्वपूर्ण है*, परंतु सबसे विशेष महत्त्व की बात है कि कांग्रेस के १५ वर्ष के शासन और उसकी रीति-नीति के सामने जो रोष प्रकट हुआ है, वह यदि सदैव के लिए रोष ही बना रहेगा तो परिणामस्वरूप प्रजातन्त्र के प्राण समान—संत विनोबा जिसे हिंसा शक्ति की विरोधी और दंड-शक्ति से भिन्न स्वतंत्र जनशक्ति कहते हैं, वह स्वतंत्र पक्ष निरपेक्ष लोकशक्ति का निर्माण नहीं कर सकेगा। स्पष्ट है कि ऐसी विरोधी भावना प्रकट होने से व्यापक असंतोष और रोष को यदि रचनात्मक दृष्टि से रचनात्मक दिशा *में मोड़ने का जल्दी प्रयत्न नहीं हो तो देश* को बहुत नुकसान होगा। इतना ही नहीं, इस दिशा में प्रजातंत्र की नींव ही हिलने लग जायेगी।

इस भगीरथ कार्य को आरम्भ करने की—जनता जनार्दन की सर्वहितकारी जनशक्ति का निर्माण करने की—नैतिक जिम्मेदारी सबसे प्रथम चुने गये सब प्रतिनिधियों की है, क्योंकि वे जैसी परंपरा और प्रणाली स्थापित करेंगे, उसे दिशा देंगे *और अनिच्छनीयता का त्याग करेंगे* तो उसके आधार पर ही जनता का रोष, विरोध और असंतोष रचनात्मक दृष्टि से लोकशक्ति के स्वरूप में परिवर्तित किया जा सकेगा।

पुरुषार्थ का चमत्कार

एक बार हजरत मुहम्मद से एक व्यक्ति ने अपनी निर्धनता का उल्लेख करते हुए आर्थिक सहायता की याचना की। हजरत थोड़ी देर तो चुप रहे, फिर सोच कर फर्माया—"तुम्हारे पास क्या-क्या चीज मौजूद है?"

निर्धन—"मेरे पास एक बोरिया है, जिसके आधे हिस्से को ओढ़ता हूँ और एक प्याला है, जिससे पानी पीता हूँ।"

हजरत—"जाओ, वह प्याला और बोरिया ले आओ।"

जब वह गरीब बोरिया और प्याला ले आया, तो हजरत ने उसे दो दिरम में नीलाम कर दिया और वे दोनों दिरम उसे देते हुए आदेश दिया—"एक दिरम का अन्न घर में डालो और दूसरे की कुल्हाड़ी खरीद कर मेरे पास लाओ।"

जब वह निर्धन कुल्हाड़ी खरीद कर ले आया, तो हजरत मुहम्मद ने फर्माया—"जाओ लकड़ियाँ काट काट कर बेचो और १५ रोज तक मेरे पास न आओ।"

१५ रोज के बाद वह निर्धन हजरत मुहम्मद के सन्मुख उपस्थित हुआ, तो उसने कमाये हुए १० दिरम हजरत के चरणों में डाल दिये और बड़े अदब से एक तरफ खड़ा हो गया। हजरत का चेहरा प्रसन्नता से खिल उठा और उसे इसी तरह पुरुषार्थपूर्वक जीवन व्यतीत करते रहने को प्रोत्साहन उन्होंने दिया।

पंचायती राज की सफलता के लिए सभी ग्रामीणों का स्वेच्छया सहयोग आवश्यक

आसाम में ७०० ग्रामदान

पत्र-प्रतिनिधियों से श्री रा० कृ० पाटिल की वार्ता

श्री रा० कृ० पाटिल ने ता० २२ मई को साधना-केन्द्र काशी में आयोजित पत्रकार-गोष्ठी में बतलाया कि आसाम में विनोबाजी को अब तक ७०० ग्रामदान मिल चुके हैं। वे २९ मार्च, '६२ को गौहाटी पहुँचे थे और २१ मई को ही वहाँ से लौट कर काशी होते हुए अपने गाँव वरोरा (महाराष्ट्र) गये। श्री पाटिल ने आसाम सरकार का "ग्रामदान एक्ट" के सरल बनाने में दो माह तक अपना सहयोग दिया।

उन्होंने बतलाया कि "आसाम ग्रामदान एक्ट" में कुछ संशोधन आवश्यक है, क्योंकि यदि एक भी गाँववासी अपनी भूमिदान में देने से इन्कार करे, तो "ग्रामदान" नहीं हो सकता। वर्तमान "एक्ट" के मातहत ग्राम सभा भू-राजस्व और सरकारी बकाया रकम की जिम्मेदारी नहीं ले सकती। इस प्रकार "ग्रामदान" से पूर्व यह जरूरी है कि पहले सब हिसाब साफ किया जाय। अतएव अन्य भूमिपतियों के मुकाबले ग्रामदान करने के इच्छुक व्यक्ति घाटे में थे। आसाम के सुवर्णश्री क्षेत्र में जहाँ ग्रामदानी गाँवों की संख्या ६० से ऊपर है, भूकम्प और बाढ़ की वजह सरकारी रकमें कई सालों से चुकायी नहीं गयी हैं और अगर वे ग्रामदान से पूर्व बकाया रकम अदा करते हैं, तो उनकी स्थिति अधिक बदतर हो जायगी।

श्री पाटिल के सुझाव पर 'ग्रामदान' के लिए एक नया 'प्रार्थना-पत्र' तैयार किया गया है, जिससे आसाम में गाँवों का दान करना सुलभ हो जायगा। ऐसी आशा की जाती है कि इस सुझाव के प्रकाश में आसाम सरकार 'ग्रामदान-एक्ट' में भी संशोधन करेगी। उन्होंने सूचित किया कि ग्रामदान के कार्य में सुविधा के लिए मद्रास, राजस्थान, उड़ीसा और आसाम की सरकारें विशेष कानून बना चुकी हैं तथा बिहार के ग्रामदानी क्षेत्रों में निर्माण-कार्य से जनता की हालत सुधरी है। आसाम के गाँवों में जाने से उन्हें ज्ञात हुआ कि ग्रामीणों ने समझ-बूझ कर ग्रामदान किये हैं।

यह पूछे जाने पर कि आज के पंचायती राज कानून के अनुसार गाँवों में उसके जो दुष्परिणाम नजर आ रहे हैं, उन्हें देखते हुए ग्रामदानी गाँवों की ग्राम-समाजों की सफलता की क्या संभावनाएँ हैं, श्री पाटिल ने कहा कि आज के पंचायती राज्य का सबसे बड़ा दोष यही है कि यह सरकार की ओर से जनता पर लादा गया है। इससे गाँवसभा के जो अधिकारी एक बार चुन लिये जाते हैं, उन्हें ही सब अधिकार मिल जाते हैं और आम ग्रामवासियों का गाँव की व्यवस्था में कोई हाथ नहीं रह जाता तथा गड़बड़ी होती है। किन्तु ग्रामदानी गाँवों की गाँव-सभाओं में सभी काम गाँव के सभी लोग स्वेच्छा-पूर्वक मिल कर करते हैं, अतः वहाँ झगड़े की गुंजाइश नहीं है।

श्री पाटिल ने बताया कि ग्रामदानी गाँवों में ग्रामीणों को अपनी इच्छानुसार विकास करने का पूरा अवसर रहता है और वहाँ ग्राम-सभाएँ हर परिवार की आवश्यकताओं का ध्यान रखती हैं।

सहकारी कृषि के बारे में पूछे गये एक प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा कि ग्रामदान में मिले गाँवों में जनता स्वेच्छा से सहकारी कृषि या अन्य कार्यों के लिए उन्मुख हो रही है। चीन में तो सहकारी कृषि की व्यवस्था सरकार की ओर से लादी गयी है और भारत में सहकारी कृषि फार्मों द्वारा इसके विकेन्द्रित स्वरूप पर प्रयोग किया जा रहा है। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि श्री पाटिल भारत सरकार द्वारा १९५६ में चीन भेजे गये प्रतिनिधि-मण्डल के अध्यक्ष थे, जो वहाँ सहकारी कृषि पद्धति का अध्ययन करने के लिए भेजा गया था।

अर्थात अनेकविध शोषण चलता रहता है। सातपुड़ा सर्वोदय-मंडल इस परिस्थिति को बदलने के लिए वचनबद्ध है।"

मंडल द्वारा संघटित तीस ग्रामस्वराज्य सहकारी सोसायटियाँ, बारह जगह कामगार-सोसाइटियाँ हैं। अन्य शैक्षणिक व सांस्कृतिक काम की जानकारी देते हुए उन्होंने देशवासियों से वहाँ के कठिन काम में सहायता प्रदान करने की अपील की। वानप्रस्थी सुयोग्य कार्यकर्ता अपना जीवन आदिवासी भाइयों की सेवा में लगा दें, तो हमें और कोई सहायता नहीं चाहिए, यह भी उन्होंने कहा। सेवा के इच्छुक कार्यकर्ता मंडल से संपर्क कायम करें, ऐसी सूचना भी उन्होंने दी।

हिमाचल सर्वोदय-मंडल

पिछले दिनों शिमला में हिमाचल प्रदेश सर्वोदय मंडल के निजी भवन का उद्घाटन करते हुए हिमाचल के उपराज्यपाल श्री बी० वी० सिंह ने जनता से मानव-कल्याण के कार्य करने पर बल दिया। उन्होंने सर्वोदय कार्यकर्ताओं से अपील की कि हिमाचल प्रदेश में सर्वोदय के काम को तेजी से करने के लिए विस्तृत कार्यक्रम तैयार करें। मैं प्रादेशिक सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री प्यारेलाल शर्मा ने अपनी रिपोर्ट में बतलाया कि हिमाचल प्रदेश में २ लाख एकड़ जमीन भूदान में मिली और चम्बा जिले में ४ गाँव भी ग्रामदान में प्राप्त हुए। गत वर्ष उस प्रदेश में ३६,६११ रुपये का सर्वोदय-साहित्य बेचा गया। हिमाचल प्रदेश के छह जिलों में छोटे-बड़े १५०० गाँव हैं, जिनमें कुल जनसंख्या बारह लाख है। पिछले वर्ष वहाँ १२३६ गाँवों में लोकशिक्षण का कार्य और ११,०३६ मील की पदयात्रा हुई।

७ जून को अ० भा० नशाबन्दी-सम्मेलन

अखिल भारत नशाबन्दी परिषद् का विधान स्वीकृत करने के लिए आगामी ७ जून को दिल्ली में अ० भा० नशाबन्दी सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है। विधान का मसविदा २९ मार्च को एक समिति ने तैयार किया था, जिसके अध्यक्ष श्री श्रीमन्नारायण हैं। गत वर्ष सितम्बर में सम्पन्न अखिल भारतीय सम्मेलन में बी० एस० भक्तवत्सलम् की अध्यक्षता में ५१ सदस्यीय एक परिषद् सारे भारत से गठित हुई थी। सर्व सेवा संघ के मंत्री भी अ० भा० नशाबन्दी परिषद् के एक सदस्य हैं।

मानवता से बढ़कर पार्टी नहीं

—लार्ड रसेल का अभिप्राय

ब्रिटिश दार्शनिक लार्ड अर्ल रसेल ने—जो 'आणविक युद्धविरोधी शत समिति' के नेता हैं—मास्को में होने वाली विश्व निःशस्त्रीकरण सम्मेलन के संयोजन मंडल से नाम वापस लेने से इन्कार किया, चाहे इसके लिए उन्हें इंग्लैंड की मजदूर पार्टी से क्यों नहीं निष्कासित होना पड़े।

'शत समिति' के प्रवक्ता के अनुसार लार्ड अर्ल रसेल महसूस करते हैं :

"मजदूर दल की सदस्यता से मानवता के त्राण का मसला कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।"

डा० राजेन्द्र प्रसाद सर्वोदय का कार्य करेंगे

अब यह निश्चित है कि भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद के भावी कार्यक्रम में सर्वोदय का महत्त्वपूर्ण स्थान रहेगा।

पटना के सदाकत आश्रम में पहुँच कर उन्होंने बतलाया कि सर्वोदय के आदर्शों और वैज्ञानिक उन्नति में कोई संघर्ष नहीं है और विनोबाजी भी वर्तमान वैज्ञानिक व तकनीकी तरक्की के आधार पर सर्वोदय-आन्दोलन के अभिनवीकरण के लिए प्रयत्नशील हैं।

डा० राजेन्द्र प्रसाद से श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के नेतृत्व में बिहार के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं ने भेंट की और उन्हें वहाँ चल रहे "बीघा-कट्ठा अभियान" की गतिविधियों से परिचित कराया गया। बिहार सर्वोदय-मंडल और गांधी स्मारक निधि के संयुक्त तत्त्वावधान में एक केन्द्र सदाकत आश्रम में स्थापित किया जायगा, जिससे कि ठोस रचनात्मक कार्यक्रम के निर्माण में श्री राजेन्द्र बाबू का सहयोग प्राप्त हो सके।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५१२ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९६२२ एक अंक : ११ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा
वाराणसी : शुक्रवार ८ जून '६२ वर्ष ८ : अंक ३६

"कानून से जमीन बँट सकती है, लेकिन दिल नहीं जुड़ेगा"

'लेवी' रहे या न रहे, पूरे उत्साह से आंदोलन चले

बीघा-कट्ठा अभियान के लिए कार्यकर्ताओं को विनोबा का संदेश

पन्द्रह अप्रेल से "बीघा-कट्ठा अभियान" शुरू है। बिहार के और अन्य प्रदेशों के सैकड़ों कार्यकर्त्ता जुटे हैं। इस बीच में हजारों कट्ठा भूमि प्राप्त करके बाँटी भी गयी है।

बिहार की यात्रा के समय मैंने 'लेवी' की चर्चा सुनी थी। उस समय भी मैंने कहा था कि हमको तो 'लेवी' के बदले 'देवी' की उपासना करनी चाहिए। करुणामूलक दान-प्रक्रिया से ही भूमिहीनों को भूमि दिलानी चाहिए। बिहार के सब जिम्मेवार लोगों ने मिल कर प्रतिज्ञा की थी कि भूमिहीनों के लिए ३२ लाख एकड़ भूमि दान में प्राप्त करेंगे। सबके सम्मिलित प्रयत्नों से जैसी-वैसी भी हो, २२ लाख एकड़ जमीन हासिल हुई थी। १० लाख बची थी। हिसाब से देखा गया था कि "बीघा में कट्ठा" देने से उतनी हो सकती है, लेकिन मैंने कहा था कि कानून से जमीन बँट सकती है, लेकिन उससे दिल नहीं जुड़ेंगे।

बाद में बिहार की भूमिहीनता मिटाने के लिए 'लेवी' का कानून बना। 'बीघा-कट्ठा' आंदोलन में जो जमीन दी जायेगी, उतनी उस लेवी' में मिनहा होगी, ऐसी भी धारा उसमें रखी गयी है। फिर इस संदर्भ में चुनाव लड़ा गया। अब चुनाव जीतने पर जीतने वाले महाशय 'लेवी' को अमल में न लाने की बात करने लगे हैं! इससे वचन-भंग होकर सार्वजनिक जीवन का स्तर गिर जाता है, यही मेरे लिए दुःख की बात है। जहाँ तक मेरा ताल्लुक है, मैंने पहले से आज तक यज्ञ, दान और तप पर ही श्रद्धा रखी है। यज्ञ गरीबों का, दान भूमिवानों और संपत्तिवानों का, तप कार्यकर्ताओं का।

अभियान में लगे भाई-बहनों से मेरा निवेदन है कि वे पूरे उत्साह से अभियान को चलायें। 'लेवी' रहे या न रहे, हमें उससे कोई निस्बत नहीं। मुझे उम्मीद है कि बिहार के भूमि-मालिक इस वक्त अपने हृदय को उदारता पूर्ण-रूपेण खोल देंगे और अब पंचायत इस काम को पूरा करके ही छोड़ेंगी।

असम यात्रा,
जिला कामरूप
२१ मई, '६२

—विनोबा का
जय जगत्

'लेवी' कानून का स्थगन एक प्रतिगामी कदम

श्री ध्वजा बाबू का वक्तव्य

मैं चालीस वर्षों से खादी का काम कर रहा हूँ। मेरे जीवन की साधना खादी रही है। 'लैण्ड-लेवी' एक्ट के स्थगित हो जाने से मेरे अन्दर भी बेचैनी पैदा हुई है, जिस कारण मैं अपने विचार को व्यक्त करने का साहस कर रहा हूँ। ऐसे तो सार्वजनिक मामलों में चुप रहने का ही बराबर का अभ्यास है, लेकिन यह मामला ऐसा है, जिस पर मैं चुप्पी नहीं साध सका।

स्वराज प्राप्ति के करीब १५ साल हो गये। देश में बहुत बड़े बड़े काम हुए हैं, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। भिलाई, भाखरा नांगल, राउरकेला, चित्तरंजन, हमारे बिहार में हटिया, दामोदरघाटी, बरौनी आदि स्थानों में नये-नये तीर्थ स्थान बने। इन स्थानों को देख कर किसी भी भारतीय को निश्चय प्रसन्नता होगी।

हमें भी इससे प्रसन्नता है। लेकिन जब मैं गाँवों में जाता हूँ तो वही गरीबी और फटेहाली आज भी देखता हूँ, जो स्वराज के पहले थी। खेतों में हल चलाने वाला मजदूर पहले जैसा ही लंगोटी लगा कर हल चलाते हुए दीख पड़ता है। कल कारखानों से भले ही सेठ साहूकारों की थैलियाँ मोटी हुई हैं, कुछ मजदूरों को भी काम मिला है, लेकिन गाँव के मजदूर और किसान जैसे के तैसे हैं। स्वराज का सुख उनको प्राप्त नहीं हुआ।

चरखे के द्वारा गाँव के गरीब और मुहताजों को थोड़ी राहत पहुँचाने का काम हम लोग छोटे पैमाने पर कर रहे हैं, इस काम को करते हुए हम देख रहे हैं कि वर्ग-संघर्ष की आग जल रही है और वह कब भड़क उठेगी, इसका कोई अन्दाजा नहीं लगाया जा सकता है। पूज्य विनोबा भूदान का व्यापक आंदोलन छेड़ कर इस अग्नि को शान्त करने का प्रयास कर रहे हैं और जिनके पास कुछ है, उन्हें जिनके पास कुछ नहीं है, उनके साथ साझेदारी करने की प्रेरणा दे रहे हैं। जमीन वाले और सम्पत्तिवालों का हृदय-परिवर्तन भूदान आंदोलन के द्वारा कर रहे हैं।

यह बात सही है कि कानून से हृदय-परिवर्तन नहीं हो सकता, लेकिन कानून इस प्रक्रिया की गति को तेज करने में सहायक हो सकता है, इसमें कोई शक नहीं। इस दृष्टि से जब लैण्ड लेवी कानून में सुधार करने के बहाने स्थगित करने की बात की जाती है, तब हमें बहुत खतरे का आभास होता है, और ऐसा प्रतीत होता है कि सरकार नहीं चाहते हुए भी देश में वर्ग-संघर्ष को परोक्ष रूप से प्रोत्साहन दे रही है। आखिर सरकार ने करोड़ों बेजमीनों को जीवन का साधन मिले, भूदान के विकल्प में क्या सोचा है? या वह यह सोचती है कि जो स्थिति आज कायम है, वह जब तक बनी रहे तब तक कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। बेजमीनों को जीवन का साधन नहीं मिलेगा, तो वे कब तक चुप बैठे रहेंगे? सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के लिए सरकार ने एक विषम स्थिति पैदा कर दी है।

स्वर्गीय डाक्टर श्रीकृष्ण सिंह, जिनके हाथ में, उस समय प्रान्त की बागडोर थी, बहुत विचार करने के बाद ही उन्होंने पूज्य विनोबा के समक्ष भूमिहीनता मिटाने का वादा किया था। वर्तमान मुख्य मंत्री पण्डित बिनोदानन्द झा एवं उनके उनके साथियों ने बहुत सोच-विचार कर ही "लैण्ड लेवी" कानून को पास किया। लेकिन इस एक्ट के बारे में बिहार की लोकसभा के सदस्यों ने अपने दस-पन्द्रह मिनट की बैठक में स्थगित करने या रद्द करने का अपना विचार दिया और वह स्थगित कर दिया गया, यह दुःख का विषय है। इतने महत्त्वपूर्ण कानून पर विधान सभा में एवं विधान परिषद् में कई दिनों तक चर्चा हुई होगी, उसके सारे पहलुओं पर विचार करके ही यह पास हुआ होगा और फिर मात्र दस-पन्द्रह मिनट की बैठक में ही बिहार संसद-सदस्यों ने इसे स्थगित करा दिया, इससे बिहार सरकार की प्रतिष्ठा घटी, ऐसा लगता है। सरकार के किस कानून पर अब जनता विश्वास करेगी यह सोचनीय है। सरकार की एक प्रतिष्ठा होती है। उसे गँवा कर सरकार नहीं चलायी जा सकती। मैं आशा करता हूँ कि इस पर विधान सभा के सदस्य गौर से विचार करेंगे और यह कानून-स्थगन रोक कर सरकार की प्रतिष्ठा की रक्षा करेंगे तथा जनता का विश्वास प्राप्त करेंगे।

—ध्वजा प्रसाद साहु,
मंत्री,
बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ,
सर्वोदयग्राम, मुजफ्फरपुर।

बिहार के 'बीघा कट्ठा' अभियान के अनुभव

निराशा का कोई कारण नहीं, सतत प्रयत्न से जमीन मिल सकती है

—देवराव अंभूरे

बिहार के गया जिले के औरंगाबाद सबडिवीजन में 'बीघा कट्ठा अभियान' के लिए मुझे अकेले भेज दिया गया। औरंगाबाद में आया तो बेलहरा गाँव के कर्मठ निष्ठावान कार्यकर्ता श्री सम्मत नारायण सिंह से मुलाकात हुई। वह मेरी राह देखते थे। मुझ से मिलते ही उन्होंने संतोष प्रकट किया। आगे काम कैसा करना, क्या करना, किस क्षेत्र में घूमना इसका विचार हमने किया।

औरंगाबाद सबडिवीजन में सात सौ गाँव हैं। इन सात सौ गाँवों में कैसे पहुँचना, किस तरह से काम करना हमारी शक्ति सब गाँवों में पहुँचने की है या नहीं, आदि ये सवाल मेरे सामने खड़े हो गये। औरंगाबाद में वकील, डॉक्टर, प्रोफेसर, शिक्षक, राजनीतिक और रचनात्मक कार्यकर्ता काफी मात्रा में हैं। हम दोनों ने इन सब लोगों की सभाएँ कीं। सभाओं में विभिन्न व्यवसाय करने वाले लोग आये। उनके सामने मैंने टूटी-फूटी हिंदी भाषा में 'बीघा कट्ठा अभियान' में सहयोग देने की अपील की और दान माँगा। वे सब लोग मेरे विचार को मूक सम्मति देकर चले गये। बाकी हम दो कार्यकर्ता बैठे रहे।

तीसरे दिन तय किया कि 'बीघा-कट्ठा अभियान' सफल बनाने के लिए हम लोगों को भ्रमण करना होगा। सब भूमिवान, व्यावसायिक लोगों से परिचय कर लेना होगा। छोटी-छोटी सभाएँ, चर्चाएँ करनी हैं, हरएक भूमिवान का दरवाजा खटखटाना है—एक बार नहीं, कई बार मिल कर उनकी हृदयग्रंथी खोलनी होगी। बस, हम काम करने के लिए जुट गये। सघन काम और व्यापक उसमें विचार-प्रचार की एक योजना बन गयी। मुखिया, सरपंचों द्वारा 'बीघा-कट्ठा अभियान' के सूचना-पत्रक गाँव-गाँव में पहुँचवाना और प्रत्यक्ष भूमिवानों से मिल कर दान प्राप्त करना भी शामिल था।

औरंगाबाद और देव अंचल के चुने हुए गाँवों में दस दिन की पदयात्रा की। छोटे-बड़े भूमि-मालिकों को विचार समझाया। लोगों ने कई सवाल पेश किये। पहले सवालों की बौछार का सामना करना पड़ा कि 'सिलींग' कानून बना है, फिर आप क्यों तकलीफ उठा रहे हैं? पहले ही हमने भूदान दिया, फिर क्यों माँगते हैं? दिये हुए भूदान का बँटवारा क्यों नहीं हुआ? भूदान में जिसको जमीन मिली, वे लगान नहीं देते हैं। कई आदाता बेदखली किये गये हैं। आप लोग कानून वाले बन गये हैं, आदि। ये सब सवाल हम शांति से सुनते रहे। बाद में नम्रता से, प्रेम से सब सवालों के जवाब देते रहे। पहले सवाल जवाब, बाद में दान-देने लेने की भाषा, ऐसा कार्यक्रम १५-२० दिन तक चलता रहा। दौड़ धूप-करते रहे। दिन भर कड़ी लू रात में मच्छरों से मुकाबला, खाने को भात, सत्तू था! रोटी का नाम नहीं। मैं निराश होकर ऊब गया।

मैंने गया जाकर श्री दिवाकरजी को निराशा का अनुभव बताया। उन्होंने मुझे कौआकोल क्षेत्र में जाने का हुक्म दिया। कौआकोल क्षेत्र में सोखोदेवरा आश्रम देखने का मौका मिला। चार घंटे में पूरा आश्रम देख कर शाम को इस क्षेत्र में भ्रमण करने वाली टोली में शामिल हुआ। एक बहन से मैंने उस टोली का अनुभव सुना। उनको २५० कट्ठा भूमि प्राप्त हुई। मगर तीन-चार दिन से दान नहीं मिल रहा है। लोग हमें टालने का प्रयत्न कर रहे हैं। यह अनुभव सुनते ही मेरा दिमाग ज्यादा विचार करने लगा। इस टोली में तीन भाई और तीन बहनें अखंड भ्रमण कर रही हैं। रात में मुझे नींद नहीं आयी। मुझे जिस क्षेत्र में काम करने के लिए भेजा गया था, उस क्षेत्र में फिर जाना चाहिए। सुबह मैं औरंगाबाद क्षेत्र वापस आ गया।

जमीन मिले या न मिले, विचार-प्रचार में कभी कमी नहीं होनी चाहिए। फिर मैं श्री सम्मत बाबू के साथ चार दिन की पदयात्रा करने लगा। चाँदपुर, केशार, बेढनी, करंडी, जनवा दैरा, तेतराईन, बिलासपुर इन गाँवों के मुखिया व सरपंचों को हमने विचार समझाया। उन्होंने बड़ी दिलचस्पी से हमारे विचार ग्रहण किये, मगर दान नहीं मिला। आठ दिन के बाद फिर बुलाया। मैं निराश हो गया। फिर आठ दिन के बाद हमारी पदयात्रा का तीसरी बार श्रीगणेश हुआ। बेढनी गाँव में गये तो एक बड़े जमींदार उनका लड़का बीमार होने के कारण गया चले गये। गाँव के लोगों ने कहा कि वे दान देंगे, तभी हम विचार करेंगे। फिर निराशा का स्थान मेरे मन ने लिया!

सुबह प्रार्थना के बाद ६ बजे हमारी पदयात्रा आगे बढ़ने लगी। सुबह शांत, गम्भीर, निर्मल वातावरण के समय में हम चल रहे थे। पूर्व में एक टेकड़ी, दक्षिण में बड़ा पहाड़, बीच में छोटा-सा करडी गाँव बसा है। उस गाँव के मुखिया के दरवाजे पर हम बैठ गये और आपस में चर्चा करने लगे। लोगों में कितना स्वार्थ भरा है, देश में घूसखोरी बढ़ रही है! लोग घूस देकर अपना काम कर लेते हैं, भ्रष्टाचार है। गाँव-गाँव में जात-पाँत के नाम पर समाज लुटता जा रहा है! शराब, ताड़ी के अधीन गरीब भूखी जनता हो रही है। कानून से ये सब बुराइयाँ नहीं हट रही हैं और करुणा, प्रेम, अहिंसा का मार्ग धुंधला होता जा रहा है! इस तरह की चर्चा मुखिया श्री जगदीश्वरी भाई घर के अंदर से सुन रहे थे।

बाहर आते ही हमसे पूछा, 'आप नाश्ता करेंगे?' हमने कहा, 'हमें नाश्ता तो दानपत्र का चाहिए! हम १५ अप्रैल से भ्रमण कर रहे हैं। हमारी झोली आप दान-पत्र से भर देंगे, इस आशा से माँगने के लिए आये हैं।'

उन्होंने कहा, 'पहले नाश्ता तो करो, बाद में दानपत्र की बात करो।' नाश्ता बनवाने को कहने के लिए अंदर गये और हाथ में गाँव के भूमि का नक्शा लेकर बाहर आये। उन्होंने अपने परिवार के नाम पर जितनी जमीन थी, वह सब बतायी और कहा कि यह कुल सौ बीघा जमीन है। उपजाऊ, कम उपजाऊ, पड़ती जमीन की जानकारी बता कर कहा कि अच्छी उपजाऊ सौ कट्ठा जमीन ले लीजिए। उस दिन न केवल पेट का ही नाश्ता मिला, पर झोली भी भरने का श्रीगणेश हो गया। तुरन्त भूमिहीन किसानों में उस सौ कट्ठा जमीन का बँटवारा भी कर दिया। निराशा हट गयी।

नौ बजे हम जनवा दैरा गाँव में पहुँचे। जनवा दैरा गाँव के मुखिया ने अपने भाई और खुद के नाम पर सौ कट्ठा जमीन दान दी और तीन दाताओं से ४१ कट्ठा जमीन दान में मिली। दौड़-धूप करके चाँदपुर में आये, तो श्री जीवधर चौधरी मिले। उन्होंने शरबत-पानी देकर हमारा स्वागत किया। श्री जीवधर चौधरी ने अपने भाई को समझा कर ३० कट्ठा जमीन का दानपत्र भरवाया। श्री जीवधर चौधरी एक ब्रह्मचारी और बड़े साधक आदमी हैं। गाँव के लोगों का उनकी बातों पर बहुत विश्वास है। चाँदपुर के मुखिया श्री रामविलास ने दान देने की घोषणा की। श्री चौधरी ने गाँव के लोगों से कहा कि आप सब लोगों को मिल कर इकट्ठा दान देना चाहिए। सबने कहा, हम दान देंगे। मेरी निराशा कहाँ चली गयी, पता नहीं लगा! उत्साह बढ़ा।

अभी तक हमें २० दाताओं से ४०० कट्ठा जमीन ६ गाँवों में मिल सकी। १० गाँवों में हमने एक हजार लोगों तक संदेश पहुँचाया। १५ रु० की साहित्य-बिक्री की। दान में प्राप्त भूमि का बँटवारा सात गाँवों में २५ आदाताओं में किया। अभी आगे काम करने के लिए वातावरण बन गया है। लोग दान देने के लिए तुल रहे हैं। उम्मीद है कि एक हजार कट्ठा के दानपत्र प्राप्त करेंगे। हमें भगवान् ने करुणा का अच्छा दर्शन बतलाया, करुणा की, दान की धारा बहने लगी है। अभी मेरे मन में निराशा नहीं, आशा है।

साहित्य-परिचय

सम्पदा मासिक पत्रिका "दशाब्दि अंक" : सं० श्री कृष्णचंद्र विद्यालंकार, अशोक प्रकाशन मंदिर, शक्तिनगर, दिल्ली। मूल्य एक रुपया।

"सम्पदा" आर्थिक विचारधारा की मासिक पत्रिका है। उसका यह 'दशाब्दि अंक' अनेक दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है। संविधान बन जाने के बाद ही भारत ने औद्योगिक विकास की ओर कदम बढ़ाया है और इन दस वर्षों में दो पंचवर्षीय योजनाएँ भी पूरी हो चुकी हैं। इन्हीं दस वर्षों की प्रगति का आकड़ा निकालने का प्रयत्न किया गया है। दूसरी ओर इस पत्रिका के भी दस वर्ष हो गये हैं।

सैकड़ों वर्षों की गुलामी के बाद स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ उद्योगों के विकास का जो संकल्प देश ने किया और जो कार्य हुआ है, उसका धुंधला सा चित्र भी आम जनता देख नहीं पाती है, क्योंकि हमारा देश इतना विशाल और विस्तृत है एवं जनता के अभाव इतने गहरे और व्यापक है कि लाख प्रयत्न करके भी सुख-समाधान की राह नहीं निकल पाती।

इस अंक को पढ़ कर पाठक अपने देश की अनेकविध योजनाओं और प्रगतियों से परिचित होता है। दस बरस पहले का दीन-हीन भारत आज कितनी शीघ्रता के साथ प्रचंड शक्तियों के समकक्ष आ रहा है, यह देख कर प्रबुद्ध पाठक अभिभूत हो उठता है। प्रस्तुत अंक में पक्ष और अभिनिवेश से मुक्त, स्वतंत्र चिंतन को महत्त्व दिया गया है और आर्थिक योजनाओं के संबंध में अनुकूल-प्रतिकूल विचार व्यक्त किये गये हैं।

बहुत ब्योरेवार जानकारी की इस छोटे-से अंक में अपेक्षा भी नहीं रखी जा सकती, फिर सब मिला कर सामान्य लेखे-जोखे की दृष्टि से अंक अपने आप में अच्छी, सुरुचि संपन्न सामग्री देता है।

—जमनालाल

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

पैसा नहीं, पैदाइश चाहिए

भारत की जनता गांवों में रहती है। गांवों में पैसे की प्रतिष्ठा बढ़ी हुई बाद तो हमारी खेती में भी जरूर सुधार हो सकता है। पैसे के लिए तम्बाकू और जरूरत से अधिक कपास की भी खेती क्यों हो? पैसे की इतनी अधिक जरूरत हमें क्यों हो? इसलिए कि जरूरत की शेष सारी चीजें हमें कीमत देकर खरीदनी पड़ती हैं। कपड़ा खरीदना पड़ता है और अन्न भी खरीदनी पड़ती है, इसलिए पैसा चाहिए और इसलिए गलत चीजों की खेती होती है। इसका फल होता है अनाज की कमी। गांवों में सुविधाएं नहीं हैं। इसलिए वहां पर्याप्त अनाज पैदा नहीं हो पाता।

निस्संदेह खेती में बहुत सुधार की जरूरत है। वह यदि सुधर जाय तो अवश्य ही उत्पादन भी बढ़ेगा। परंतु यह काम आसान नहीं। खूब परिश्रम करना होगा। बरसों लग सकते हैं, फिर भी शायद काम नहीं चले; क्योंकि तब तक हमारी जनसंख्या भी बढ़ जायगी। इसलिए अब किसान को केवल काश्तकार नहीं बने रहना है। उसे खेती के अलावा खेती से उत्पन्न कच्चे माल से अपनी जरूरत की अन्य चीजें भी बनानी होंगी। खादी और ग्रामोद्योग के आंदोलन का भी यही उद्देश्य है।

('मराठी हरिजन', १९-१-४७) —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

सत्याग्रह की भावना से काम करें

सामान्य तौर पर लोगों की यह धारणा है कि सर्वोदय कार्यकर्ता अन्याय के प्रतिकार के लिए सक्रिय कदम नहीं उठाते, खास करके जहाँ इस प्रकार के प्रतिकार का संबंध सरकार से आता हो। अक्सर सभाओं और चर्चाओं में लोग कहते हैं कि वे राजनीतिक पार्टियों से ऊब गए हैं, उनकी ओर से उन्हें ज्यादा आशा नहीं है।

सर्वोदय कार्यकर्ता ऐसे हैं जो किसी भी पक्ष में न होने के कारण निष्पक्ष भाव से सोचते हैं और जनता की सेवा भी करते हैं, लेकिन लोगों की आम शिकायतों को दूर करने में या उन पर हो रहे किसी स्पष्ट अन्याय का प्रतिकार करने में वे मदद नहीं करते, इसलिए लोगों को मजबूरन राजनीतिक पार्टियों की शरण लेनी पड़ती है। दूसरी ओर सर्वोदय कार्यकर्ताओं की यह शिकायत रहती है कि उन्हें लोगों का सहयोग नहीं मिलता। इस प्रकार परस्पर सद्भाव होते हुए भी दोनों ओर से शिकायत रहती है। अब इस सारे प्रश्न पर थोड़ी गहराई से सोचने की आवश्यकता है।

राजनीतिक पार्टियों का तो यह काम ही है कि वे लोगों की रोजमर्रा की छोटी-बड़ी शिकायतों को हाथ में लें। बल्कि अक्सर तो वे उन शिकायतों को बढ़ा चढ़ा कर ही पेश करती हैं और अपनी-अपनी अनुकूलता के अनुसार उनके बारे में आंदोलन भी खड़े करती हैं। शिकायतों को रफा करने के लिए या अन्याय के प्रतिकार के लिए दूसरा कोई विधायक और कारगर रास्ता सामने न होने से लोग इन आंदोलनों में साथ भी देते हैं, हालांकि उनमें से अक्सर कुछ निकलता नहीं, सिर्फ सत्तारूढ़ दल के खिलाफ एक वातावरण बनता है।

सर्वोदय कार्यकर्ता यह समझते हैं कि हमारा काम तो बुनियादी परिवर्तन का है, इसलिए हम लोगों की छोटी-मोटी शिकायतों में या झगड़ों में नहीं फंस सकते, न हमें उनमें फंसना चाहिए। एक हद तक यह ठीक भी है। राजनीतिक पार्टियों में आपस में सत्ता की होड़ होती है। एक को गिरा कर दूसरा सत्तारूढ़ होना चाहता है। सर्वोदय कार्यकर्ता का ऐसा कोई लक्ष्य नहीं है। वह सबके सहयोग से और विचार-परिवर्तन द्वारा समाज को बुनियाद से बदलना चाहता है। यह सारा काम वह लोगों को किसी से लड़ाकर नहीं, लेकिन उनकी अपनी शक्ति को जाग्रत करके विधायक रूप से करना चाहता है। इसलिए जिस माने में राजनीतिक पार्टियाँ आए दिन "सत्याग्रह", प्रतिकार और आंदोलन का सहारा लेती हैं, उस प्रकार वह नहीं लेता, न उसे वैसा करने की आवश्यकता है।

लेकिन इसका यह मतलब कदापि नहीं है कि लोगों की रोजमर्रा की शिकायतों या उन पर होनेवाले अन्याय, अत्याचार के प्रति सर्वोदय कार्यकर्ता उदासीन रहें। वास्तव में जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वह काम करता है, उसी के लिए इस तरह की उदासीनता घातक है। हमारा मुख्य उद्देश्य जनता की सोयी हुई शक्ति को जाग्रत करने का है, ताकि वह किसी की मोहताज न रहे और न एक-दूसरे का कोई शोषण कर सके। अगर हम लोगों को अपने छोटे मोटे अभाव दूर करने का या अपने ऊपर होने वाले अन्याय का मुकाबला करने का रास्ता नहीं बतला सकते तो हम जनता की शक्ति कभी भी जाग्रत नहीं कर सकेंगे। भूदान का कार्यक्रम हमने इसीलिए उठाया था कि उसके जरिए जनता स्वयं अपने अभिक्रम से भूमि-समस्या का हल निकाल सकती है। इस समस्या के हल से समाज में बुनियादी आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन का रास्ता भी खुल जाता है। पर भूदान ग्रामदान के इस कार्यक्रम में भी हम सत्याग्रह की उस भावना से नहीं लगे जिस भावना से विनोबा पिछले ग्यारह वर्ष से सतत उसके पीछे लगे हैं। रात दिन उनके चिंतन का मुख्य विषय यही बना हुआ है और उसी के लिए वे अपनी शक्ति लगा रहे हैं, जब कि हमने उसे केवल एक कार्यक्रम माना है और इसीलिए जब कार्यक्रम में शिथिलता आयी तो हम खुद भी मायूस हो गए।

आज भी भूमि की समस्या ज्यों की त्यों खड़ी है। वह ऐसी बुनियादी समस्या है कि जिसके हल के बिना हमारा कोई भी काम आगे नहीं बढ़ सकता। साथ ही वह ऐसी समस्या है जिसका हल लोगों के अपने हाथ में है। भूदान-ग्रामदान के काम ने यह स्पष्ट जाहिर कर दिया है। अगर हम खुद इस कार्यक्रम में सत्याग्रह की भावना और सातत्य से लगे होते और सफलता के एक कदम पर उत्तरोत्तर जनता को आगे ले गये होते तो आज आन्दोलन की जो स्थिति है, वह नहीं होती। आज भी हम सबको अपनी ताकत बटोर कर भूमि-समस्या के हल के लिए जुट पड़ना आवश्यक है।

पर ऐसा समझना गलत होगा कि हम भूदान के काम में लगे हैं, इसलिए लोगों पर हो रहे दूसरे अन्याय या अत्याचार के खिलाफ आवाज उठाने की हमें जरूरत नहीं है। जहाँ भी कोई अन्याय या अत्याचार स्पष्ट नजर आता हो,—चाहे वह छोटा हो या बड़ा—वहाँ सत्याग्रही कभी उदासीन नहीं रह सकता। अगर वह ऐसे अन्यायों और अत्याचारों का मुकाबला करने में लोगों का साथ देकर उनको ऐसा रास्ता बतला सके जिससे वे उन्हें दूर कर सकें तो उसी प्रक्रिया में से लोगों का अभिक्रम, उनकी शक्ति और उनका आत्मविश्वास भी उत्तरोत्तर बढ़ेगा। आज जनता चारों से जिस प्रकार पिस रही है, उसे देखते हुए यह प्रत्येक सत्याग्रही का कर्तव्य है कि वह अन्याय के प्रतिकार में उसका साथ दे और उसे अहिंसक प्रतिकार का सही रास्ता बताये। वह प्रतिकार आस-पास के समाज के खिलाफ पड़ता है या सरकार के, इसकी चिन्ता करने की आवश्यकता सर्वोदय कार्यकर्ता को नहीं है, क्योंकि उसकी मनशा किसी को नुकसान पहुँचाने की नहीं है या किसी को नीचा गिराने की नहीं है, केवल जनता को सहारा देकर उसे उठाने की है।

—सिद्धराज

साहसिक कदम

पिछले दिनों मद्रास नगर निगम द्वारा दिये गये मानपत्र का उत्तर देते हुए राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने कहा कि मानवता की रक्षा के लिए दलों के हित की तो बात ही नहीं, राष्ट्रीय हितों को भी दबाया जा सकता है। डा० राधाकृष्णन् ने आगे कहा, "हम मानव इतिहास के निर्णयात्मक युग में हैं। हमारे ऊपर बड़ी-बड़ी जिम्मेदारियाँ हैं। मानवीय आशाएँ हम पर ही निर्भर हैं। हम अणुबम या उद्जनबम से उत्पन्न होने वाला विपत्ति रोकने के लिए प्रयत्नशील हैं। यदि सचमुच उस विपत्ति को रोकना है तो हमें अपने मस्तिष्क का विकास करना होगा। हमें अपने नगर या देश के प्रति ही नहीं, सम्पूर्ण विश्व के प्रति निष्ठा जाग्रत करनी होगी। मानवता पर हमें सब से पहले और अधिक ध्यान देना चाहिए। हमें अपने भीतर विश्वबन्धुत्व का विकास अनिवार्य रूप से करना है।"

डा० राधाकृष्णन् ने जो कुछ कहा, वह आज की युग की आकांक्षा है। शांति की जितनी तीव्रता आज दुनिया को है, उतनी शायद ही कभी रही हो। शांति और मानवता के लिए आज सब प्रकार के संकुचित क्षुद्र स्वार्थों से ऊपर उठने की जरूरत है।

पिछले दिनों शांति के लिए अनवरत प्रयत्न करने वाले ९० वर्षीय ब्रिटिश दार्शनिक रसेल ने भी कहा है कि मानवता से बढ़ कर पार्टी नहीं है। मास्को में होने वाले विश्व निःशस्त्रीकरण-सम्मेलन के संयोजकों में उनका नाम है। ब्रिटिश मजदूर दल ने उनसे कहा कि वे संयोजक पद से अपना नाम वापस ले लें। उन्होंने ऐसा करने से इन्कार किया, चाहे उन्हें ब्रिटिश मजदूर पार्टी से क्यों नहीं निष्कासित होना पड़े। 'आणविक युद्धविरोधी शांत समिति', जिसके रसेल प्रमुख हैं, के प्रवक्ता के अनुसार रसेल यह महसूस करते हैं कि "मजदूर दल की सदस्यता से मानवता के अस्तित्व का मसला कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है।" हम भी रसेल के साहसपूर्ण वक्तव्य का स्वागत करते हैं। रसेल ने वही कर दिखाया, जो भी राधाकृष्णन् ने अपने भाषण में कहा। उन्होंने विश्व शांति के लिए ब्रिटिश मजदूर दल की परवाह नहीं की। उनका यह कदम अन्य चेतनाशील राजनीतिज्ञों के लिए प्रेरक होगा, जिन्हें आये दिन राजनीतिक दलों के क्षुद्र स्वार्थों के लिए अपनी निष्ठा की-बलि देनी पड़ती है।

—मणीन्द्रकुमार

लेखांक : २

जनाधार के प्रयोग और अनुभव

• धीरेन्द्र मजूमदार

मैंने बलिया में इस बात की कोशिश की कि वहाँ की जनता यह समझे कि धीरेन्द्र भाई की मार्फत बाहर से साधन नहीं आयेंगे। इतना ही नहीं, बल्कि धीरेन्द्र भाई खुद कुछ उनके लिए कर देंगे, इसकी भी आशा नहीं है, ऐसा समझें। मतलब यह कि धीरेन्द्र भाई तो रास्ता बतायेंगे और करना सब उनको है, ऐसा वे महसूस करें। इस दृष्टि से सहकारी खेती की व्यवस्था वे ही करें। जमीन के मालिक अपने हिस्से की जमीन दें, इसके लिए भी सबके पास वे ही जायँ और मेहनत के मालिक सप्ताह में एक दिन की मेहनत दें, इसका भी संगठन वे ही लोग करें। उन्होंने उत्साह के साथ यह सब किया भी।

अनोखा ढंग

जैसा कि मैंने बताया है, ग्रामवासियों के उत्साह का कारण केवल लोभ नहीं था, ग्राम-भावना भी थी। उसका एक तीसरा कारण यह भी था कि मेरा ढंग इतना अनोखा था कि उसके प्रति वे आश्चर्य के साथ आकृष्ट हुए थे। आज तक ऐसी बात उनसे किसीने की नहीं थी। इसीलिए इसे करके देखने का उत्साह काफी जगा। शुरू शुरू में हर टोली के मजदूर-वर्ग ने अपने-अपने निर्दिष्ट दिन पर आकर खेत तैयार किया। जमीन के मालिक लोगों ने जमीन पर आकर काफी देखभाल की, अपने पास से बीज देकर अच्छी तरह बोआई भी कर दी। लेकिन बोआई के बाद जब खेत में कुछ दिन कोई काम नहीं रहा तो पहला जोश कुछ ठंडा पडने लगा। खेत में काम न रहने की अवधि उस साल इसलिए भी बढ गयी कि लगातार वर्षा होने के कारण समय पर मकई की गोडाई और कमाई के लिए काफी दिन तक मौका नहीं मिल सका। बाद में जब धूप होने के कारण मौका आया, तो समय काफी पिछड चुका था। इस तरह गाँव के लोगों के सामने दो समस्याएँ खडी हुई : एक तो देरी होने के कारण सबको अपनी अपनी व्यक्तिगत खेती की फिक्र तथा दूसरी समस्या यह कि इतने दिनों तक कोई काम न रहने के कारण शुरू का उत्साह ठंडा पड जाने से श्रम-सदस्यों की टोलियों को पुनः संगठित करना संभव नहीं हो रहा था, अतः वातावरण में कुछ मायूसी दिखाई देने लगी। काफी दिनों तक न मैंने कुछ कहा और न नरेन्द्र को कुछ कहने दिया। हम लोगों ने अपने लिए जो एक एकड की खेती रख ली थी, उसमें नियमित श्रम करने में लगे रहे।

दो प्रतिक्रियाएँ

इस मायूसी के दरमियान जब उत्साह का उफान कम हुआ, तो लोगों के मन में तरह तरह की प्रतिक्रियाएँ दिखायी देने लगीं। वे इस प्रकार की थीं :

(१) सबसे अधिक प्रतिक्रिया इस बात की हुई कि उनकी जो आशा थी कि धीरेन्द्र भाई की मार्फत लाखों रुपये की समृद्धि गाँव में पहुँच जायेगी, वह नहीं हुई। धीरे-धीरे वे लोग एक-दो करके हम लोगों से भी इस निराशा को प्रकट करते रहे। वे कहते थे कि हम लोगों ने सबसे कमजोर जमीन का 'प्लाट' इस काम के लिए इसलिए निकाला था कि हम मानते थे कि जो साधन बाहर से जुटायेंगे, उससे यह जमीन बहुत ज्यादा कीमती हो जायेगी। कुछ लोग कहते थे कि बडा धोखा हुआ, जमीन भी फँस गयी और कुछ मिला नहीं। एक भाई एक दिन कहने लगे, "यह कैसा 'कोआपरेटिव' हुआ ! बैल, बैल हम लायें, बीज हम दें, काम हम ही करें, तो 'कोआपरेटिव' क्या हुआ ?" नरेन्द्र भाई ने जब पूछा कि 'कोआपरेटिव' का आप मतलब क्या समझते हैं, तो उन्होंने कहा कि "इसका मतलब यह होना चाहिए कि जमीन हम दे देते हैं, आप पूंजी लाकर मजदूरों से खेती करा कर मुनाफा हम लोगों को बाँट दीजिये।" हम वहाँ मजदूर टोले में एक झोपडे में रहते हैं। वे चर्चा करते थे, "सुनते थे कि धीरेन्द्र भाई आयेंगे तो सबका घर पक्का हो जायेगा, लेकिन इतने दिन हो गये, कहीं कोई ईंटें वगैरह तो दिखाई नहीं देती हैं !"

इस प्रकार अनेक लोग अनेक प्रकार की बातें करने लगे। इन लोगों की इस प्रकार की चर्चा हमारे लिए विचार समझाने का प्रसंग उपस्थित करती थी। यह सब हमारे लिए सामाजिक प्रसंग के समवाय में विचार-शिक्षण का उदाहरण होता था और इस शिक्षण का असर भी होता था। नयी तालीम के लिए यह भी एक कार्यक्रम बन गया।

धीरेन्द्र भाई के बारे में शंका

इस सिलसिले में एक दिलचस्पी की बात बता देने का लालच हो रहा है। मजदूर-वर्ग में शक होने लगा कि धीरेन्द्र भाई के बारे में जो लोग कहते हैं कि ये सर्वोदय के बहुत बडे नेता हैं, यह ठीक है या नहीं ? एक दिन नरेन्द्र भाई जब टोले के लोगों के साथ गप कर रहे थे, तो उन्होंने पूछ ही दिया। उन लोगों की पूरी बातचीत ही लिख देना अच्छा होगा :

एक भाई—"भाईजी, लोग कहते हैं कि धीरेन्द्र भाई बहुत बडे नेता हैं !"

नरेन्द्र भाई—"वे सर्वोदय के ऊपर के नेता हैं।"

दूसरे भाई—"कितने बडे हैं ? वैद्यनाथ बाबू से भी बडे हैं क्या ?"

नरेन्द्र भाई—"हाँ, वैद्यनाथ बाबू से भी बहुत बडे हैं।"

तीसरे भाई—"अरे बाबा, इतना भारी नेता ! नहीं-नहीं गलत है, अगर ऐसा होता तो यहाँ आकर मिट्टी ढोते क्या ?" वस्तुतः जनता की मान्यता यह बन गयी है कि सर्वोदय के बडे नेता का मतलब सरकार से बहुत-से पैसे लाने की क्षमता रखने वाला व्यक्ति।

(२) दूसरी प्रतिक्रिया मजदूरों में हुई। यह इलाका सब दिन से सामन्तवादी इलाका रहा है। अतः मजदूरों के प्रति अनुचित व्यवहार तथा उनसे बेजा लाभ लेने की एक आम परम्परा थी। बीच में उत्साह ठण्डा पड जाने से मजदूरों पर मालिकों के पुराने व्यवहारों की प्रतिक्रिया होने लगी। उनमें शंका होने लगी कि कहीं ऐसा न हो कि मालिक लोग हमसे बेगारी करा लें और जमीन की फसल काट कर ले जायँ। इसलिए खेती की गोडाई और कमाई के लिए आना बन्द कर दिया। यद्यपि बन्द करने का एक दूसरा भी कारण था। वह यह कि खेती पिछड जाने के कारण किसान काफी अधिक नकद मजदूरी देकर अपने खेतों पर ले जाते थे और यहाँ काम करने से केवल हाजिरी मिलती। हाजिरी से कुछ मिलेगा या नहीं, उसकी भी निश्चितता नहीं। लेकिन कुल मिला कर अविश्वास की प्रतिक्रिया काफी थी।

उपर्युक्त दोनों प्रतिक्रियाओं के कारण सामूहिक खेती का काम एक प्रकार से बन्द ही हो गया था। मध्यम वर्ग के लोगों के साप्ताहिक श्रमदान से थोडा-थोडा काम अवश्य होता रहा, पर उतने से ही समस्या का हल कैसे होता ?

फसल क्यों बर्बाद करते

जब काफी दिन ऐसा चला, तो मैंने समझा कि मुझे थोडा सा इसमें पडना चाहिए। मैंने मालिकों को बुलाया और उनसे कहा कि क्या आपने यह सोचा है कि खेत धीरेन्द्र भाई को बँटाई पर दे दिया है ? अगर ऐसा नहीं सोचते, तो अपनी फसल बर्बाद क्यों कर रहे हैं ? [सबकी राय यह थी कि उस प्लाट में उस साल जैसी फसल थी वैसी आज तक कभी नहीं रही।] मैं कुछ नाराज हुआ और अपने ढंग से उनको डाँटा भी और सलाह दी कि यदि मजदूर लोग नहीं आ रहे हैं, तो आखिर आप ही लोग मजदूरी देकर काम करवा लीजिए और अपनी-अपनी हाजिरी लगवा लीजिए, ताकि मजदूरी का ६० प्रतिशत उतने हाजिरी पर आपको मिल जाय। उन्होंने वैसा किया और खेती सम्हल गयी।

मजदूरों से सम्पर्क

इस बीच नरेन्द्र भाई ने मजदूर-वर्ग से काफी सम्पर्क किया। मालिकों की तरफ से जब कभी अनुचित व्यवहार होता था, तो वे जाकर उन्हें पकडते थे। इस कारण उनका विश्वास नरेन्द्र भाई के प्रति धीरे-धीरे जमने लगा। नरेन्द्र भाई ने मजदूरों को यह समझाने की कोशिश की कि जिस चीज के लिए वे इतनी कचहरी-अदालत करते हैं, फौजदारी भी करते हैं, वह चीज जमीन के मालिक उन्हें दे रहे हैं तो हाथ से यह मौका वे क्यों जाने दे रहे हैं ! मालिक-मजदूर का परस्पर अविश्वास कितने दिन चलेगा ? इससे तो दोनों का नुकसान होगा, इत्यादि। उन्होंने उनको सलाह दी कि वे उसी प्लाट पर झोपडी डाल कर अपने जानवर लाकर रखें और मिलजुल कर वहाँ काम करें। उसी में जो खर-पूस व घास पात है, उसी से पशुओं का चारा निकालें और सामूहिक खेती को अपने हित में संगठित करें। नरेन्द्र भाई ने मालिकों को भी इस योजना के महत्त्व को समझाया और जब पन्द्रह-बीस श्रम-सदस्य तैयार हो गये तो जमीन-मालिकों से सामग्री लेकर वहाँ पर झोपड़ी बना दी। नरेन्द्र भाई ने भी रात को उनके साथ रहना शुरू किया। एक बार मजदूर-वर्ग में फिर से उत्साह की लहर दिखायी देने लगी। नरेन्द्र भाई के निरन्तर उनके साथ रहने के कारण वे झोपडियाँ विचार-शिक्षण की छात्रावास ही बन गयीं। आशा की जा रही थी कि प्रौढ शिक्षण के इस प्रकार में से सामूहिक पुरुषार्थ तथा परस्पर विश्वास की स्थापना के लिए रास्ता निकलेगा। लेकिन बीच में ऐसी घटना हो गयी कि विश्वास की भावना फिर से उमड गयी।

अविश्वास फिर पड़ा

खेत में खीरी (साँवा) की फसल पक रही थी। उसे काट कर जमा करने की बात सोची जा रही थी। इसी बीच एक किसान अपनी जमीन पर से खीरी की फसल काट कर उठा लिया। मैं उस समय बाहर चला गया था। अपनी नीति के अनुसार नरेन्द्र भाई ने बीच में पडने की बात नहीं की। उन्होंने सिर्फ गाँव के खास-खास लोगों को सूचना दे दी। लेकिन जैसा कि मैंने ऊपर कहा है, उन दिनों गाँव के ऊपर के लोगों में निराशा की प्रतिक्रिया चल रही थी, उन लोगों ने उस बात पर बहुत ध्यान नहीं दिया। इस घटना से मजदूर-वर्ग की पूर्व शंका उमड पडी। वे कहने लगे कि इन लोगों को आप पहचानते नहीं हैं, उन का हम विश्वास नहीं कर सकते। यह कह कर नरेन्द्र भाई ने जो संगठन जमाया था, वह छोड कर सब अपने-अपने घर चले गये। हालाँकि जिस किसान ने फसल काट ली थी, उन्होंने पूरी फसल गाँव के एक प्रधान व्यक्ति के घर रख दी थी, लेकिन मजदूर वर्ग को तसल्ली नहीं हुई।

(क्रमशः)

झोपड़ी वाले कहाँ जायँ?

गोपालकृष्ण मल्लिक

पिछले दिनों की यह दर्दनाक घटना है। दिल्ली-निगम के कर्मचारियों ने पुलिस की सहायता से राजधानी में जंगपुरा के निकट रेलवे लाइन के नीचे बसी झुग्गी-झोपड़ी की बस्ती को उजाड़ दिया। इससे लगभग चार हजार व्यक्ति बेघर और आश्रयहीन हो गये हैं। आखिर ऐसा क्यों किया गया?

राजधानी के लिए यह पहली ही घटना नहीं है! पिछले दो साल पूर्व भी राजघाट पुल के पास की झोपड़ियों में दिल्ली निगम की ओर से आग लगा दी गयी थी, जब कि उसमें कुछ ही दिन पूर्व मद्रास राज्य के गरीब भंगियों की एक उजड़ी बस्ती को देख कर भारत के कर्णधार पंडितजी की आँखों से आँसू क्या, खून चू पड़ा था। एक तरफ तो देश के प्रधान-मंत्री को इतना दर्द हो और दूसरी ओर उनके बगल में ही ऐसी दर्दनाक घटना घटे!

पहली बार दिल्ली निगम उन गरीबों को उजाड़ कर भगाने में कृतकार्य नहीं हो सका था, तो इस बार उसने घटना-स्थल पर पुलिस तैनात रखी, ताकि वे निस्सहाय अपने बाल बच्चों के सिर छिपाने के लिए फिर से कहीं वहाँ घर न बना लें। आखिर वे जायँ, तो कहाँ जायँ?

निगम के पदाधिकारी उन्हें राज-धानी से भगा डालने के लिए कोई भी अवसर से शायद ही चूके हों। उन्होंने उनके पानी के पम्प तक काट डाले। पानी के बगैर मनुष्य कहीं भी ज्यादा समय टिक नहीं सकता। उसमें भी इस भया-नक ताप-काल में निगम के अधिकारियों ने इन झुग्गियों के झोपड़ियों को गिराने में जिस तत्परता का परिचय दिया है, काश, अपने दूसरे कर्तव्यों के पालन में इसकी आधी भी तत्परता दिखा पाते, तो दिल्ली नगर के नक्शे पर चार चाँद उतर आते!

मुमकिन है कि ये झुग्गी वाले निगम की जमीन पर अनधिकृत रूप से आ बसे हों! किन्तु क्या यह उनकी विवशता नहीं थी, सीनाजबरदस्ती थी? ऐसे गरीब और विवश मानव, जो रोजी और रोटी के लिए दूर-दूर तक भटकते फिरते हों, क्या जोर-जबर्दस्ती कर सकने में समर्थ हो सकते? उसमें मिली-जुली ही राज्य-सरकार की जमीन थी और जिसे कुछ लोग बदो-बस्त लेकर भी बसे थे। उन्हें भी इसी धावली के सिलसिले में उजाड़ डाला गया। निगम की इस जोर जबर्दस्ती पर ध्यान देने वाला क्या कोई है इस देश में?

इस देश में प्रति वर्ष ७०—८० हजार आदमी रोजगार की तलाश में सिर्फ राज-धानी में आते हैं। अन्य नगरों की बात तो और है। निगम या सरकार ऐसे लोगों को एक स्थान से दूसरे स्थान तक निर्ममता से खदेड़ तो सकती है, पर क्या इनके आगमन पर अंकुश भी लगा सकती है? ऐसे लोगों का आखिर क्या हो, जिनके जीने को एक भी साधन तथा सुविधा सुलभ नहीं है! क्या इन्हें जीवित रहने का भी हक नहीं है?

पिछले भयंकर शीत-काल में 'फुटपाथ' पर सोने वाले कितने विवश इन्सान शीत से ठिठुर ठिठुर कर इस दुनिया से सदा के लिए चल बसे! उनकी ओर किसका ध्यान गया था? उस समय प्रधानमन्त्री नेहरूजी का हृदय अवश्य द्रवित हुआ। उनकी करुणा द्रवित हो उठी थी, और उनके कारण इसी निगम ने अपने 'टाउन हाल' के दरवाजे इन गृहहीनों के लिए खोल दिये थे। किन्तु अब सर्दी नहीं है, खुले आस-मान में भी इन्सान सो सकते हैं, इसीलिए क्या यह आराम उन्हें मुहैया किया गया है, उनके दूधमुँहे बच्चे इस भयंकर धूप को बर्दाश्त कर सकेंगे? तड़पा-तड़पा कर मारने की योजना और क्या हो सकती है!

अनधिकृत रूप से बसने वालों को उजाड़ डालना कदाचित् न्यायोचित हुआ हो, किंतु मानव के नाते मानव के दुःख दर्द में हिस्सा बँटाने के लिए क्या उन पर सहानुभूति नहीं दिखायी जा सकती? कोई बतायें तो कि ये उजड़े लोग अपना सिर छिपाने कहाँ जायें, जिन्हें रोटी के लाले पड़े हों, वे भाड़े के मकान कैसे लेंगे? राजधानी के विशाल बंगले और शानदार मकानों में रहने वालों के पास भी हृदय में क्या इन विवश इन्सानों के प्रति दया और करुणा जग सकेगी? क्या शासकों और संपन्न-वर्गों की सहानुभूति इन्हें मिलेगी? यदि नहीं तो रामकृष्ण, बुद्ध और गांधी का भारत संसार के सामने इज्जत से कैसे खड़ा हो सकेगा?

दिल्ली में झुग्गी झोपड़ी वाले करीब ४० हजार परिवार हैं, जिनमें अभी ये ४ हजार व्यक्ति ही उजाड़े गये हैं। शेष परिवारों को भी उजाड़ डालने की योजना अभी अभी दिल्ली की सरकार ने बनायी है। उन्होंने तीन वर्ष के अंदर अंदर झुग्गी-झोपड़ियों को हटा देने के लिए सख्त कदम उठाने का निर्णय किया है। गृहमंत्रालय के अधिकारियों तथा निगम के अधिकारियों ने एक-एक क्षेत्र को लेकर झुग्गी-झोपड़ियों का सफाया करने का फैसला किया है! सारा काम इस ढंग से चलाया जायगा कि एक बार जो जमीन लोगों से खाली करायी जायगी, उस पर फिर दुबारा उन्हें नहीं बसने दिया जायगा। दिल्ली नगर निगम एक सप्ताह के अंदर-अंदर क्षेत्रवार सफाये की योजना बना कर देगा और सारा काम तीन वर्ष के अंदर पूरा कर दिया जायगा।

इसके साथ ही एक बात और उसमें जोड़ी गयी है कि इन झोपड़ियों के बदले में जो प्लाट पाने के हकदार हैं, उन्हें विकसित प्लाट दिये जायेंगे। किंतु झुग्गी झोपड़ियों में रहने वाले सिर्फ उन व्यक्तियों को जमीन के 'प्लाट' दिये जायेंगे, जिनकी सन् '६० की विशेष मर्दुमशुमारी में गिनती आयी है और जो यह दावा करेंगे कि वे उस गिनती में गिने जाने से रह गये, उन्हें प्लाट पाने के लिए पर्याप्त प्रमाण उपस्थित करने होंगे, नहीं तो नहीं; और बाकी लोगों को तो किसी भी हालत में नहीं।

जो लोग अपनी झुग्गी झोपड़ियों की जगह प्लाट पाने के हकदार होंगे, उन्हें ८०-८० गज के विकसित प्लाट दिये जायेंगे और जिनकी आमदनी २५० रुपये से कम होगी, उनसे उनकी आधी कीमत वसूल की जायेगी, बाकी आधी कीमत सरकार की ओर से सहायता समझी जायेगी। किंतु इससे क्या झोपड़ी वालों की स्थायी समस्या सुलझ जायेगी? फिर तो कहाँ जायें ये झोपड़ी वाले!

संपादक के नाम पत्र

ब्याज मिटाने का सरल इलाज : मुद्रा-ह्रास

पटना के सर्व सेवा संघ के अधिवेशन में मैंने मुद्रा-ह्रास की योजना समझाने के लिए जो भाषण किया, वह संक्षेप में गत २० अप्रैल के "भूदान यज्ञ" में और कुछ विस्तार से बाद के ४ मई के अंक में दिया गया है। लेकिन मैंने मुख्य बात जो मुद्रा-ह्रास की बतलायी, उसका उसमें कहीं जिक्र भी नहीं है। सारे रामायण में राम का नामोनिशान भी नहीं!

मैं जरूर चाहता हूँ कि बटाई के साथ ब्याज-बट्टा भी छोड़ देना चाहिये और ब्याज के साथ किराया और डिविडेंड भी! इससे भूदान आंदोलन की शक्ति बढ़ेगी, क्योंकि जो जमीन के मालिक बटाई वसूल करते हैं, वे समवतः अपने कर्जों पर ब्याज भी देते हैं। उनको अगर ब्याज से मुक्ति मिले तो वे अपने असा-मियों को बटाई की सहूलियत देने को भी राजी होंगे, अर्थात् भूदान देने को राजी होंगे।

मैं शायद अपने भाषण में यह मुद्दा स्पष्ट न कर सका कि ब्याज मिटाने का सरल इलाज है मुद्रा-ह्रास। पैसा ज्यों बने, उसका मूल्य दिनों दिन घटता जाय। गेहूँ या शकरकंद जैसे पैदा हुए उसी दिन से प्रतिदिन सड़ने ही लगते हैं, वैसे ही पैसे भी १ जनवरी से प्रतिदिन घटते जायें। सौ रुपयों के नोट का मूल्य सौ होते हुए भी व्यवहार में १ फरवरी के दिन उसका मूल्य ९९॥ रु० माना जाय। हर महीने आधा फीसदी और साल भर में छह फीसदी घटौती हो। यह परिमाण कमबेशी भी हो सकता है। नया साल शुरू होते ही पिछले साल के नोट सरकारी खजाने में लौटा कर बदले में नये नोट लेने होंगे, जो सौ रुपये के बदले में चौरानबे रुपये के मिलेंगे।

मुद्रा-ह्रास के लिए सब लोगों की सम्मति हासिल करना भूदान प्राप्त करने से कई गुना सुलभ होगा। उसमें तात्का-लिक त्याग कुछ नहीं करना पड़ता और जो संभाव्य त्याग करना है, वह भी सबके साथ करना होता है। दान लोग देखादेखी देते हैं, औरों के साथ देना पसंद करते हैं। मुद्रा-ह्रास के द्वारा जो दान होगा, उसमें न केवल भूमि मालिकों का, बल्कि साहू-कारों का, मकान-मालिकों का, मिल-मालिकों का भी साथ होगा। इसलिए मेरा सुझाव है कि हम मुद्रा-ह्रास के लिए सर्वसम्मति प्राप्त करें, जिससे सरकार को ख्वामख्वाह उस पर अमल करना होगा और फिर ब्याज लेना पड़ेगा, किराया घटेगा और ग्रामदान भी आसान होगा।

अपने भाषण में शायद मैं अपना विचार स्पष्ट न कर सका और फलतः मेरे भाषण की दोनों रिपोर्टों में भी कमी रही। उसकी पूर्ति करने के लिए ही मैं लिख रहा हूँ। मेरा यह विचार १५ दिसम्बर, '६१ के 'भूदान यज्ञ' में "शोषण-मुक्ति का सरल इलाज : मुद्रा-ह्रास"—शीर्षक लेख में विस्तार से बताया जा चुका है और उसका तफसीलवार विवेचन "मुद्रा-ह्रास आन्दोलन" शीर्षक मेरी किताब में, जो सर्व-सेवा-संघ से शीघ्र ही प्रकाशित होगी, किया गया है।

पटना, —अप्पा पटवर्धन
१२ मई '६२

कुरान की कहानी, मियाँ की जुबानी

अच्युत देशपांडे

विनोबाजी जिस भक्ति-भाव से कुरान पढ़ते हैं, वह भक्ति-भाव उनकी आँखों से आँसुओं की प्रेममयी धारा बहाता है ! कुरान शरीफ में भक्तों का इसी प्रकार जिक्र है ।

['रस्ते जुदे जुदे हैं, मकसूद एक है !' सभी धर्मों की आधार-शिला है—सत्य, प्रेम और करुणा । विनोबा ने इसी भावना से विश्व के विभिन्न धर्मों का अध्ययन किया है । कोई पचीस साल पहले उन्होंने इस्लाम का अध्ययन करने के लिए कुरान शरीफ हाथ में ली, तब से उस पर उनका मनन और चिन्तन चलता रहा । हाल में उन्होंने कुरान का नवनीत प्रस्तुत किया है, जो शीघ्र ही 'दि एसेंस आफ कुरान' के नाम से अंग्रेजी में, 'रूहुल कुरान' के नाम से उर्दू में और 'कुरान-सार' के नाम से हिन्दी में प्रकाशित होने जा रहा है । इन भाषाओं में प्रकाशन होने के उपरान्त भारत की अन्य भाषाओं में उसका प्रकाशन होगा ।

'कुरान-सार' की तैयारी में विनोबा की दृष्टि क्या रही है, इसकी कहानी हमारे बहुत आग्रह करने पर बाबा के 'मियाँ'—श्री अच्युतभाई देशपाण्डे ने तैयार की है जिनकी मेहनत की दाद कौन नहीं देगा ! हम समझते हैं कि 'कुरान की कहानी, मियाँ की जुबानी' पढ़ कर हमारे पाठक 'कुरान-सार' की मूल पृष्ठभूमि को सरलता से समझ सकेंगे । —सं०]

मित्रों ने कहा, "कुरान के अध्ययन के बारे में कुछ कहो ।" हमने कहा, हमने कुछ पढ़ा सही, पर उसे अध्ययन नहीं कह सकते । पर आपका कहना हम टाल भी नहीं सकते । टालेंगे तो हमें ठौर कहाँ ? और टालेंगे भी कैसे ? यह प्रेम जो आपका हम पर है, वह आपको मुफ्त में थोड़े ही मिला है । प्रेम मिलता है प्रयत्नों से ! कुरान शरीफ में आया है—इन्नल्लजीन आमनू व अमिलि सालिहाति, सयज्अलु लहुमुर्रह्मानु वुद्दन् । —जिसको निष्ठा होती है और उस कारण जो सत्कृत्य करता है, उसमें वह कृपालु प्रेम की वृत्ति पैदा करता है । तो जो प्रेम आपका हम पर है, वह इन कारणों से आपको मिला है, इसलिए हमारे तो नहीं, पर विनोबाजी के कुरान के अध्ययन के विषय में और 'कुरान-सार' तैयार करने के विषय में हमें जो कुछ मालूम है और जितना याद है और हमने समझा है, वह आपको संक्षेप में कहने की हम कोशिश करेंगे ।

विनोबाजी ने जो भी धार्मिक साहित्य लिखा है, चुना है या अनूदित किया है—यों तो उन्होंने जो भी साहित्य लिखा, वह धर्म फैलने के लिए लिखा है, पर जिसे हम स्थूलतः धार्मिक साहित्य कहते हैं, वह लिखा—उस पर जब हम गौर करते हैं तो हमें ऐसा लगता है कि मानों उन्हें वह आशीर्वाद ही फलित हुआ है, जो महाराष्ट्र में भजन के अन्त में ईश्वर से माँगा जाता है । वह आशीर्वाद नित्य ही माँगा जाता है और सामूहिक रीति से माँगा जाता है । सैकड़ों वर्षों से यह रीति चली आयी है ।

मराठी भाषा में मूल आशीर्वाद की दुआ इस प्रकार है ।* इसका अनुवाद हम यहाँ उर्दू भाषा में कर रहे हैं :—

"मेरे रहीम के इन सब बन्दों की उम्मत को, ऐ खुदा ! तू ताअबद हमेशा कायम रहने वाली जिन्दगी बख्श । जन्न व गुमान का वसवसा उन्हें न छूये, और इन सब नेकबन्दों की जमाअत खैर व आफि-यत हासिल करे । उस वासिअ कादिरे मुतलक के इन बन्दों को, इन मुत्तकियों को, मेरे लाडलों को, ऐ खुदा ! खुदी और शिर्क की हवा का झोंका भी लग न जाय । और (यह आबिद माँग रहा है)—ऐ खुदाये करीम ! उन लोगों के लिए हमेशा फलाह व बहबूदी रहे, जिनकी जबान पर उस रब्बुल आलमीन रौउफुल बिल्इबाद का जिक्र हमेशा ही रहता है ।"

हम मानते हैं कि इस आशीर्वाद ने, उनसे धर्म पालन करवाया है और उसीके अनुसरण में कुछ लिखवाया है । कुरान शरीफ का काम भी इसी तरह ईश्वर ने उनसे करवाया है, ऐसा हम मानते हैं ।

कुरान शरीफ के विनोबाजी के अध्ययन की शुरुआत हमारी जानकारी के अनुसार इस प्रकार हुई :—

अध्ययन की शुरुआत

आश्रम में औरों की तरह एक मुसल-मान लड़का भी आया । उसने सुना था कि वहाँ जाने से वह कुछ जीवनदायी विद्या सीख सकेगा । कातना सीखा, धुनना सीखा, राष्ट्रीय जीवन जीना सीखा । आश्रम में जो प्रवचन होते थे, उन्हें भी वह सुनता था । कुछ दिन के बाद उसे इच्छा हुई कि वह कुरान सीखे ।

उसने विनोबाजी से प्रार्थना की कि वे उसे कुरान सिखायें । विनोबाजी धर्म-विषयक ग्रन्थों के अभ्यासी हैं । उन्होंने अंग्रेजी में तो कुरान पहले ही पढ़ी थी, पर अब इस बच्चे को पढ़ाने के लिए कुरान का मराठी अनुवाद मंगा लिया और उसे उन्होंने देख लिया । फिर कुछ और अनुवाद भी देख लिये और साथ ही मूल ग्रन्थ ही देखने का भी निश्चय कर लिया । जैसा कि उन्होंने सोचा होगा, इस कार्यकर्ता की इच्छा ने उन्हें एक ईश्वरी इशारे से ही आगाह किया और उनका कुरान का अध्ययन तीव्रता से आरम्भ हुआ । कुरान पढ़ाने के लिए देहात में जो मुल्ला प्राप्त हो सकता था, उसी से विनोबाजी कुरान पढ़ने के सबक लेने लगे । जाहिर है कि ऐसे मुल्लाओं को केवल पढ़ना ही आता है, अर्थ वे कुछ भी नहीं समझा करते और पढ़ने में भी उच्चारण का कोई विशेष ख्याल रहता है, ऐसा नहीं । विनोबाजी ने कुरान का उच्चारण कैसा हो, इसके लिए तद्विषयक ग्रन्थों के आधार से जानकारी प्राप्त की और भिन्न-भिन्न भाषाओं का उच्चारण शास्त्र, उनकी अपनी उच्चारण व्यक्त करने की विशेष क्षमता और उनका आग्रह, इनके आधार से कुरान शरीफ की आयतों को ऐसे उच्चारण में पढ़ना शुरू किया कि मुल्ला तो दंग रहा ही, पर दूसरे लोग भी स्तिमित हो गये । गांधीजी को थोड़े ही दिनों में पता चला कि उनका विनोबा कुरान का अध्ययन कर रहा है, तो कहते हैं कि उन्होंने कहा, 'हममें से किसी को तो भी यह करना ही था । विनोबा कर रहा है, यह आनन्द का विषय है ।'

बापू का आशीर्वाद

अब तो विनोबाजी को ईश्वर के इशारे के साथ बापू का आशीर्वाद भी मिला, और उनके नित्य उत्साह से उनका कुरान-पठन जारी रहा । उच्चारण ठीक हो, इस-लिए वह इतनी ऊँची आवाज से कुरान पढ़ते थे कि बहुत दूर से उनकी वह ध्वनि आने-जाने वाले सुनते थे । उच्चारण बिल्कुल शास्त्र-शुद्ध हो, इसलिए विनोबाजी ने आगे कुछ दिनों के बाद और एक युक्ति निकाली । दिल्ली-रेडियो पर से उन दिनों अरब देश से होने वाली कुरान की तिलावत और किर्अत भी प्रसारित होती थी । विनोबाजी रेडियो शुरू कर देते थे और एकाग्रता से, जो कि उनका स्वभाव ही हो गया है, उसे सुनते थे । उस पर से उच्चारण पकड़ कर उन्होंने उन्हें अपना लिया और आज जब विनोबा कुरान पढ़ते हैं तो उनके उच्चारण हम जैसों को तो बहुत ही अभिनव प्रतीत होते हैं ।

स्वाध्याय

इस प्रकार कुरान पढ़ने का आयो-जन होते ही विनोबाजी कुरान का अर्थ समझने के लिए अपने आपके शिक्षक हो गये । उन्होंने अरबी आयत और उसके सामने अंग्रेजी तर्जुमा की किताब हाथ में ली । एक आयत पढ़ी और उसका अर्थ पढ़ा । कई पारायण ऐसे हुए । फिर शब्द और प्रत्यय, क्रिया और उसके रूप, अव्यय और वाक्य एवं उस की प्रक्रियाएँ देखना शुरू हुआ । इस प्रकार कई पारायण करके विनोबाजी ने उसका एक व्याकरण अपने लिए तैयार किया और फिर अरबी व्याकरण मंगा कर उससे उसको मिला लिया । अब उन्हें आयतों का अर्थ, शब्दों की रचना और व्याकरण की जानकारी हुई और जैसा कि उनके अध्ययन की हमेशा रीति है, शब्दों का मूलगामी अर्थ भी उनके हाथ आ ही गया होगा । यह अध्ययन जेल में भी चला । इस प्रकार कई साल, कुरान-अध्ययन चलने के बाद उनकी अन्य कार्य-मग्नताओं के कारण यह कुछ दिन के लिए मुल्तवी हो गया । अध्ययन के जमाने में जितने अंग्रेजी अनुवाद मिल सके, उन्होंने देख डाले । उन ग्रन्थों में जिन विशेष ग्रन्थों का जिक्र आया हो—जैसे गजाली की 'नूर' पर किताब आदि—उन किताबों को मंगा कर उन्होंने पढ़ डाला । विनोबाजी जिस भक्ति-भाव से कुरान पढ़ते हैं, वह भक्ति-भाव उनकी आँखों से आँसुओं की प्रेममयी धारा बहाता है । कुरान शरीफ में भक्तों का इसी प्रकार का एक जिक्र आया है । उसका अर्थ करते हुए कई अनुवादकों ने 'आँखें तर हो आती हैं, भर आती हैं' आदि अर्थ किये हैं । विनोबाजी को देखते हुए हमें यह विश्वास हो गया है कि वहाँ उस शब्द का अर्थ 'आँखों में आँसू उमड़ आते हैं, वे सतत प्रवाहित होती हैं', इस प्रकार ही करना चाहिए ।

समभाव

कुरान के मकीसूरों में विनोबाजी को बहुत अधिक आनन्द की अनुभूति होती है । उनकी यह अवस्था उन्होंने धर्मनिष्ठ बादशाहखान—(खान अब्दुल्ल गफ्फार खान) से कही । वे वर्धा में आते थे तो मुलाकात होती थी । बादशाहखान विनोबा-जी से मुत्तफिक हुए और उन्होंने कहा कि उनका भी यही अनुभव है । उन्हीं दिनों कहते हैं कि अबुल कलाम आजाद वर्धा आये हुए थे । विनोबा बापू से मिलने गये । आजाद की उपस्थिति में बापू ने विनोबाजी से कुरान कहलवायी । मौलाना विनोबा-जी के उच्चारण से बहुत प्रभावित हुए । उन्हें जब पता चला कि देहात के एक मुल्ला से विनोबा पढ़ना सीखे हैं, तो उच्चारण

---

* आकल्प आयुष्य व्हावें तया कुळा ।
सकळा हरीच्या दासा ॥१॥
कल्पनेची बाधा न हो कोणे काळीं ।
ही संत मंडळी सुखी असो ॥२॥
अहंकाराचा वारा न लागो या राजसा ।
माझ्या विष्णुदासा भाविकांसी ॥३॥
नामा म्हणे सदा असावें कल्याण ।
ज्यामुखीं निदान पांडुरंग ॥ ४ ॥

शांति-यात्री की डायरी

जब विनोबा ने हमें आशीर्वाद दिया !

• सतीश कुमार

आज संसार में दो बूढ़े व्यक्ति, जो भावनाओं से और हृदय से जवानों से भी अधिक जवान हैं, शान्ति तथा अहिंसा के क्षेत्र में हमारे लिए सर्वाधिक प्रेरणा के स्रोत हैं और दीप-स्तंभ की तरह हमें मार्ग दिखा रहे हैं। एक हैं पश्चिम में अर्ल रसेल और दूसरे हैं पूर्व में विनोबा ! यदि विनोबा गाँव-गाँव जाकर मानव जाति के पुनर्निर्माण का संदेश दे रहे हैं, तो रसेल का प्रयत्न है कि कहीं शस्त्रास्त्रों की होड़ में एटोमिक शक्ति के प्रयोगों के कारण और युद्ध की विभीषिका में मानव जाति ही भस्म न हो जाय !

श्री प्रभाकर मेनन व मैंने जब अणुअस्त्रों के खिलाफ दिल्ली से मास्को और वाशिंगटन तक पदयात्रा करने के बारे में विचार किया, तो सबसे पहले इन दोनों की ओर हमारा स्वाभाविक रूप से ही ध्यान गया। अर्ल रसेल ने, जिनके साथ हमारा लंबा पत्र व्यवहार हुआ, हमें हर तरह से सहयोग देने का आश्वासन दिया और लिखा कि 'आज प्रत्येक साधारण-से साधारण मानव का कर्तव्य है कि वह मानव शांति-संहारक इन अणुअस्त्रों के खिलाफ खुले प्रतिकार और असहयोग की कार्रवाई करें। आप दोनों ने यह साहसिक निर्णय किया है, इससे मैं बहुत उल्लसित हुआ हूँ।'

विनोबा से पत्र-व्यवहार करने की अपेक्षा उनके पास जाना, उनसे विचार-विमर्श करना तथा प्रत्यक्ष आशीर्वाद प्राप्त करना ही हमारे लिए सर्वोत्तम मार्ग था। इसलिए यात्रा पर रवाना होने से पहले हम विनोबा के पास जायेंगे, ऐसा निर्णय किया।

हमने विश्वशांति-पदयात्रा के लिए जब निर्णय किया, तो अनेक मित्रों और हमारे परिचितों ने इसे 'पागलपन' की संज्ञा दी तथा हमारे कार्यक्रम के प्रति संदेह भी व्यक्त किया। परन्तु श्री वल्लभस्वामी ने, जिनके पास हम दोनों काम कर रहे थे, हमें आशीर्वाद देकर उत्साहित किया। जब हम विदा हो रहे थे, उस दिन उन्होंने यह कह कर हमारे हृदय को उत्साहित किया कि 'हमारे सर्वोदय-क्षेत्र के दो श्रेष्ठ साथी इस पदयात्रा पर जा रहे हैं, यह हमारे लिए गर्व और प्रसन्नता की बात है।' यह तो निश्चित ही है कि हम दो व्यक्ति ही जा रहे हैं, पर पीठ बल की तरह हमारे पीछे वे हजारों साथी हमें ताकत देंगे, जो अहिंसा एवं शांति के लिए काम कर रहे हैं।

बेंगलोर से हम विनोबा से मिलने के के लिए १० मई को रवाना हुए और मद्रास तथा कलकत्ता रुकते हुए १६ मई को गौहाटी से २७ मील दूर गोरेश्वर ग्राम में उनसे मिले। विनोबा टीन के छप्पर के नीचे बैठे हुए 'मैत्री आश्रम' की श्री लक्ष्मी बहन से बातें कर रहे थे। मुक्त हृदय से वे आश्रम-जीवन की कल्पना प्रस्तुत कर रहे थे कि बीच में ही हमने जाकर प्रणाम किया। "आ गये ?" कह कर जब विनोबा मुस्कराये तो ऐसा लगा, मानो यात्रा की थकान पल भर में ही विलीन हो गयी। थोड़ी देर में श्री लक्ष्मी बहन के साथ चल रही बातचीत को समाप्त कर हमारी तरफ अभिमुख हुए।

विनोबा ने पूछा कि "किस रास्ते से मास्को पहुँचोगे ?" हमने बताया कि "दिल्ली से पंजाब होकर पाकिस्तान, अफगानिस्तान, ईराक, ईरान, सीरिया, इजराइल, टर्की होते हुए रूस जायेंगे और मास्को के बाद यूरोप की तरफ आगे बढ़ेंगे।"

विनोबा ने 'वर्ल्ड एटलस' की पुस्तक श्री बाळ भाई से लेकर खोली और हमारे रास्ते के बारे में गहराई से व दिलचस्पी से देखने लगे। बोले—"क्यों इतना लंबा रास्ता ले रहे हो ? क्यों नहीं अफगानिस्तान से सीधे ताशकंद होकर मास्को की तरफ आगे बढ़ते ?" हमने इसके उत्तर में दो कारण बताये : एक तो हम अधिक-से-अधिक लोगों से मिलना चाहते हैं और दूसरा यह कि वह अधिक आसान तथा सड़क का रास्ता है।

इस प्रकार रास्ते की जानकारी, यात्रा की अब तक की तैयारी, मिशन इत्यादि के संबंध में थोड़ी चर्चा करने के बाद विनोबा ने पूछा कि "कल तक तो साथ रहोगे न ?" हमारे "हाँ" कहने पर बोले, "अच्छा, कल यात्रा में चलते समय बात करेंगे।" और उसके बाद हम लोग प्रार्थना प्रवचन में गये। हमें जितनी अपेक्षा नहीं थी, उससे भी अधिक प्रेरणादायक बाबा ने उस दिन प्रवचन किया। "दो जवान हमारे सामने बैठे हैं" इसी वाक्य से उन्होंने प्रवचन प्रारंभ किया। निःशस्त्रीकरण, अणुअस्त्रों का निर्माण व उनका प्रयोग, युद्ध की तैयारियाँ आदि के संबंध में करीब एक घंटे तक उन्होंने अपने विचार व्यक्त किये।

आसाम हिन्दुस्तान का एक किनारा है। पहाड़ों, नदियों एवं सुन्दर प्राकृतिक दृश्यों से भरा हुआ वातावरण दृष्टि के चिरसौन्दर्य की अनुभूति कराता रहता है। ऐसे शस्यश्यामल प्रदेश में विनोबा की यात्रा ने नये प्राणों का संचार कर दिया है। गाँव में रह कर गाँव की परिस्थिति के अनुसार जीकर विनोबा जिस तरह काम कर रहे हैं, यह संपूर्ण देश के लिए और विशेष रूप से राजनैतिक दाँव-पेंचों में व्यस्त रहने वाले तथाकथित नेताओं के लिए अद्भुत प्रेरणादायी है। एक व्यक्ति, जिसे उम्र से, शरीर से, हर दृष्टि से आराम की जरूरत है, तरह-तरह के कष्टों का सामना करते हुए वास्तविक काम कर रहा है। यात्रा में चलते समय, प्रवचन करते समय, कभी भी वर्षा आकर तर-बतर कर जाती है। गाँवों के मकान चूते रहते हैं। पर विनोबा कहते हैं कि 'ग्राम-स्वराज्य की प्राप्ति' तक मैं इसी तरह चलता रहूँगा। पूरे देश में केवल एक विनोबा ही हैं, जो आज ११ साल से अनवरत सवेरे ३ बजे उठता है और लालटेन के मद्धिम उजाले में चल पड़ता है।

वे हैं हमारी प्रेरणा के दीपस्तंभ, जो हम जवानों को सक्रिय प्रेरणा दे रहे हैं ! आज देश के अधिकांश लोग सामाजिक जीवन से मुँह मोड़ कर नौकरी करना, बच्चे पैदा करना, उनको पालना, खाना-पीना-सोना और जीवन पूरा कर देना, इतने में ही बंध गये हैं। 'पुत्र-भार्या-पोषण' तक ही कर्तव्य की इतिश्री मान ली जाती है और इन सीमित दायरों के इर्दगिर्द ही घूमते रह जाते हैं। यह स्थिति केवल हमारे देश में ही नहीं, बल्कि करीब सभी जगह है। अतः इस शांति-यात्रा के लिए विनोबा का आशीर्वाद और उनकी सक्रिय प्रेरणा हमें उठने, चलने और 'कुछ' करने के लिए स्फूर्ति दे रही है। विनोबा से मिलने के बाद हमें लगता है कि जब उन जैसा व्यक्ति ११ साल से लगातार घूम सकता है, तो हमारे जैसे तरुणों के लिए २ साल की पदयात्रा में क्या कठिनाई है ? इसी विचार से जब हमने पदयात्रा में विनोबा के साथ चलते समय विस्तार से बातें कीं, तो उन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये—

"रास्ते में पानी तो साथ रखोगे ही ?" —विनोबा ने पूछा।

"जी"

"पानी सदा गरम पीने की कोशिश करें, यह स्वास्थ्य के लिए ठीक रहेगा, हलका और सुपाच्य रहेगा तथा नाना प्रकार के पानी पीने से जो परेशानी हो सकती है, वह नहीं होगी।"

"हम कोशिश करेंगे बाबा।"—हमने कहा।

"आहार के सम्बन्ध में क्या सोचा है ?"—विनोबा ने पूछा

"हम दोनों ही पूरे शाकाहारी हैं, यह तो आप जानते ही हैं। अब आप ही सुझाइये ।"—हमारा प्रतिप्रश्न था।

"हाँ, यह ठीक है। आपका जो 'मिशन' है, शांति का और अहिंसा का, उसके लिए शाकाहार पूर्णतः सहायक है। पर इससे आपको कुछ शारीरिक कष्टों का सामना करना होगा। यदि आप इस समस्या से पार पा गये, तो आपके 'मिशन' को बड़ी मदद मिलेगी।"

विनोबा के इस उत्तर पर हमने कहा—"हम भी ऐसा ही सोचते हैं और हमें भरोसा है कि हम इस दिशा में आपकी सलाह के अनुसार चल सकेंगे।"

"कितने पैसे साथ लेकर जा रहे हैं ?"—फिर उन्होंने पूछा

"हम तो जनता के भरोसे पर जा रहे हैं। जनता के साथ काम करना है। लोग हमें ठहरायेंगे, खिलायेंगे, हर तरह की मदद करेंगे। फिर भी कुछ डाक, वस्त्र और अनिवार्य जरूरतें पूरी करने के लिए थोड़ा पैसा हम साथ लेंगे।"

"नहीं।"—विनोबा ने हमारी इस बात पर कहा—"या तो आप पूरे खर्च का प्रबंध साथ रखें, या बिल्कुल पैसा न ले जायें।" थोड़ी देर चुप रह कर फिर कहा—"यदि आपके साथ पैसा नहीं रहेगा, तो जनता स्वयं आपकी मदद करेगी।"

इस प्रकार लगातार करीब दो घंटे तक विभिन्न विषयों पर बातें होती रहीं। जब हम विदा लेने के लिए गये, तो विनोबा ने हम दोनों की पीठ थप-थपा कर कहा : "तुम्हारा उपक्रम बहुत अच्छा है। मुझे बराबर लिखते रहो। मुझे इसमें दिलचस्पी है।"

इस प्रकार उनका प्रेम, अपनत्व एवं आशीर्वाद पाकर हमारी आँखें भर आयीं तथा हृदय गद्गद हो गया।

की इतनी स्पष्टता का कारण दे पा न सके। जब विनोबाजी के सारे प्रयत्नों की जानकारी उन्हें मिली तभी उन्हें उस विषय में सन्तोषप्रद उत्तर मिल सका। विनोबा के कुरान के ज्ञान से मौलाना बहुत खुश हुए। विनोबाजी की बहुत इच्छा थी कि मौलाना कुरान शरीफ के अपने अनुवाद का कार्य पूरा करते और सूरे कहफ से सूरे अन्नास तक का तर्जुमा पूरा कर देते। कहते हैं कि मौलाना को जब कभी कोई इस प्रकार की सूचना करता था तो वे कहते, सारा मस्तिष्क में भरा पड़ा है, कभी कागज पर निकल आयेगा। पर उन्हें उसके लिए समय मिलना चाहिए था, फुरसत मिलनी चाहिए थी, वह नहीं मिल सकी और वह तर्जुमा हमें नहीं मिला ! उसके बाद उनसे हमें "गुब्बारे खातिर" मिला, "हिन्दुस्तान की आजादी की जीत" मिली; पर तर्जुमानुल कुरान का दूसरा हिस्सा नहीं मिला सो नहीं ही मिला !

(क्रमशः)

श्री धीरेन्द्र भाई से एक मुलाकात

संकट का मुकाबला

• कपिलदत्त अवस्थी

प्रश्न : 'गांधी के पथ पर' मासिक पत्र के गत मई के अंक में "गाँव की परेशानी" शीर्षक आपका भाषण देखा। आपने जो स्वराज्य की समस्या का वर्णन किया है, वह अक्षरशः सत्य है। जनता यह तो अनुभव करती है कि वह किसी चक्रव्यूह में फँसी हुई है, लेकिन उसे व्यूह का पता चल नहीं रहा है। आपने 'नाटक के राजा' का उदाहरण देकर उसको बिलकुल साफ कर दिया है! हमें स्पष्ट दीखता है कि आज का लोकतंत्र सैनिकवाद तथा नौकरशाही की वज्रमुष्टि के अन्दर पिस गया है। जो कुछ चल रहा है, वह अभिनय जैसा ही है! लेकिन सवाल यह है कि आज जब सारी जनता के जीवन में इस शक्ति का इतना दखल हो गया है तो उसमें से निकलने का उपाय क्या है? वैसे तो उपाय आपने बताया है, लेकिन जब सारी दुनिया उस चक्र में फँसी हुई है तो उस उपाय का छोर पकड़कर आगे कौन जायगा? जायगा भी तो क्या उस चक्र के नीचे दब नहीं जायगा?

उत्तर : हम लोग जब कम उमर के युवक थे और अंग्रेजी साम्राज्यवाद को हटाने की बात करते थे, तो लोग हमसे ऐसे ही प्रश्न करते थे कि जिस साम्राज्य में कभी सूर्यास्त नहीं होता, जिसके पास इतना भारी लश्कर है और जिसके लिए जनता की मान्यता यह है कि 'अंग्रेज सरकार माई-बाप' हैं, उसको भला कैसे हटायेंगे! हटाने की कोशिश भी करेंगे तो इतनी बड़ी ताकत के नीचे कुचल जायेंगे। लेकिन वह हटा। शुरू में जब बारिन्द्र घोष, खुदीराम बोस और उनके २-४ साथी इस काम को करते थे तो लोगों को ऐसा ही लगता था कि यह सब गिलहरी समुद्र सोखने चली है। लेकिन उनका त्याग और तप तथा उनके आत्म-बलिदान में से जो शक्ति निकली, उस शक्ति पर अधिक त्याग और तप की शक्ति जुटती गयी, जिससे आखिर में वह साम्राज्य भी समाप्त हुआ।

वस्तुतः त्याग और तप से जो नैतिक शक्ति खड़ी होती है उसका मुकाबला संसार की कोई भी ताकत नहीं कर सकती। पुराण की कथा है कि इन्द्र के पास उत्कट वज्र शक्ति हमेशा तैयार रहती थी, लेकिन उस शक्ति को शिव के त्याग और तप की शक्ति के आगे झुकना ही पड़ता था। बापूजी ने भी अंग्रेजों की वज्र शक्ति के मुकाबले में साधारण जनता की त्याग और तप की शक्ति को विकसित किया। आप अच्छी तरह जानते हैं कि वह त्याग और तप कितना छिछला था। फिर भी अंग्रेजी साम्राज्यवादी ताकत को उसने परास्त किया। तो, देश में अगर कहीं थोड़े भी वास्तविक आत्म-बलिदान की आधार-शिला पर त्याग और तप की शक्ति संगठित हो जाय तो वह आसानी से सैनिकवाद और नौकरशाही की बन्दूक-शक्ति को अवश्य परास्त करेगी।

प्रश्न : यह बात तो मेरी समझ में आती है। मैं मानता हूँ कि यही कारण होगा कि गांधीजी ने त्याग और तप की संगठनकारी संस्था, कांग्रेस को सलाह दी थी कि वह 'सत्ता रूढ़ न होकर उसी शक्ति को विकसित करे। लेकिन ऐसा तो नहीं हुआ! आज तो देश के सभी लोग जोरों से उसी सैनिक-शक्ति तथा नौकरशाही को आलिंगन करते जा रहे हैं। देश के सभी नौजवान उस शक्ति की तरफ पतिंगे जैसे भाग रहे हैं। तो फिर कौनसे नौजवान आपके बताये हुए त्याग के रास्ते पर जाने की रुचि रखेंगे?

उत्तर : हर युग में इसी प्रकार की समस्या खड़ी होती है। जो चीज चलती रहती है, उसकी सम्मोहनी शक्ति बड़ी जबरदस्त होती है। फिर भी जब कभी युग-परिस्थिति मानव के लिए संकटकालीन स्थिति पैदा करती है, तो कुछ-न-कुछ तरुण-हृदय उसके विरोध में खड़े हो ही जाते हैं। प्रारम्भ में वे अवश्य ही बहुत थोड़े होते हैं; लेकिन जैसे जैसे परिस्थिति के संकट की अनुभूति बढ़ती जाती है और प्रारम्भिक तरुणों के त्याग व तप के प्रति आकर्षण निर्माण होता है, वैसे-वैसे लोग अधिक उधर खिंचते जाते हैं और क्रमशः वह ताकत बढ़ती चली जाती है।

प्रश्न : लेकिन आज तो आपका आन्दोलन, जिसे आपने सैनिक शक्ति के निराकरण के लिए खड़ा किया है, भी उसी सैनिक शक्ति और नौकरशाही के पंजे में फँसा हुआ है। आन्दोलन का काम भी उस शक्ति के बिना नहीं चलता। फिर त्याग और तप के आधार पर स्वतंत्र लोक-शक्ति कैसे खड़ी होगी?

उत्तर : इसीलिए तो विनोबाजी कहते हैं कि आन्दोलन को तंत्र-मुक्त और निधि-मुक्त बनाना है; क्योंकि इस कल्याणकारी राज्यवाद के युग में दण्ड-शक्ति से कोई निरपेक्ष केन्द्रीय निधि नहीं खड़ी हो सकती। इसलिए अगर सैनिक-निरपेक्ष शक्ति खड़ी करनी है, तो निस्सन्देह इसका आधार भी दण्ड निरपेक्ष शक्ति होनी चाहिए। इसकी सामाजिक शक्ति तथा आर्थिक शक्ति; दोनों को ही दण्ड-निरपेक्ष रखना पड़ेगा। यह तभी होगा जब आन्दोलन संचित निधि-मुक्त होगा।

प्रश्न : दण्ड-निरपेक्ष सामाजिक तथा आर्थिक शक्ति कौन-सी हो सकती है, जिसका आधार कार्यकर्ता ले सकें?

उत्तर : दण्ड की सामाजिक शक्ति कानून होता है और आर्थिक शक्ति 'टैक्स' है। आज देश की सारी चीजें इन्हीं शक्तियों से चलती हैं। अगर दण्ड-निरपेक्ष शक्ति खड़ी करनी है, तो कानून के स्थान पर सामूहिक संकल्प तथा टैक्स के स्थान पर दान और यज्ञ की परिपाटी खड़ी करनी होगी। विनोबाजी आज इसी के प्रयास में लगे हुए हैं। कानून से भी जमीन का ग्रामीकरण किया जा सकता है और टैक्स लगा कर 'ग्राम निर्माण' का काम चल सकता है। लेकिन विनोबाजी ग्राम-संकल्प, ग्रामदान तथा दान यज्ञ की पद्धति से राष्ट्र-निर्माण का रास्ता बता रहे हैं और इस आन्दोलन के वाहन के रूप में कार्यकर्ताओं को श्रमाधार तथा जनाधार पर अपने को टिकाने को कहते हैं।

प्रश्न : आप तो पिछले दो सालों से यही प्रयास कर रहे हैं, लेकिन हम देखते हैं कि अभी तक आप अकेले ही चल रहे हैं। फिर हम कैसे आशा करें कि आन्दोलन कभी इस रास्ते पर भी चल सकेगा?

उत्तर : आपने ही तो अभी कहा कि आन्दोलन की सारी प्रवृत्तियाँ दण्ड-शक्ति के चक्रव्यूह में फँस गयी हैं, ऐसी हालत में जब कोई व्यक्ति इस व्यूह के घेरे को काट कर निकलना चाहेगा तो उसे अकेला ही निकलना होगा। इतिहास की यह कोई नयी घटना नहीं है। दो साल का समय कोई अधिक नहीं है, इतने में ही मेरे पास एक दर्जन युवक निकल आये हैं। दूसरी तरफ दण्ड-शक्ति के चक्रव्यूह में फँसे होने की अनुभूति दो साल पहले अपने साथियों में मिलती थी, उससे अधिक आज दिखाई देती है। यह परिस्थिति भी कुछ अधिक युवकों को उस घेरे से बाहर निकलने को प्रेरित करेगी। इतिहास में हमेशा ही क्रान्ति का यात्रा-क्रम ऐसा ही रहा है। आज की क्रान्ति का मार्ग भी उससे भिन्न नहीं होगा। अतः मुझे पूर्ण भरोसा है कि यात्रा का मार्ग बिलकुल साफ होता जायगा।

प्रश्न : यह सही है कि कुछ नौजवान आपके साथ निकले हैं। सम्भव है, और भी निकलें। लेकिन प्रश्न तो यह है कि उनका भविष्य क्या होगा? गुजारे के साधन कहाँ से आयेंगे? उनके परिवार और बच्चों का क्या होगा?

उत्तर : ऐसे सोचने वाले लोग क्रांति के अग्रदूत नहीं बन सकते। राणा प्रताप की कहानी पढ़े हो न? राणा प्रताप को दिल्ली के बादशाह को सलाम करना या बच्चों को घास की रोटी खिलाना, इन्हीं दोनों मार्गों में से एक को चुनना पड़ा था, क्योंकि तीसरा रास्ता होता नहीं है। तरुणों को भी इन दो मार्गों में से एक को चुनना ही पड़ेगा। दिल्ली के बादशाह यानी रूढ़ि, पद्धति को सलाम करना या बच्चों को घास की रोटी खिलाने के लिए तैयार होना, यही क्रांति का कदम होगा।

प्रश्न : लेकिन क्या नौजवानों के सपरिवार मरने से ही क्रांति आगे बढ़ेगी? आखिर उसे बढ़ाने वाले 'जिन्दा क्रांतिकारी' भी तो चाहिए?

उत्तर : क्रांति तभी सफल होती है, जब क्रांतिकारी में निरन्तर मरने की तैयारी होती है, लेकिन अपने को जिन्दा रखने की योग्यता भी रहती है। ऐसे ही नौजवान क्रांति को सफल करते हैं। कुछ लोग तो अवश्य मरेंगे, लेकिन आपको समझना चाहिए कि इतिहास में आज तक जितनी क्रांतियाँ हुई हैं, उन सबकी इमारत 'शहादत की बुनियाद' पर ही बनी है। तो यह क्रांति भी उससे कुछ भिन्न नहीं होगी।

दूसरी क्रांतियाँ हिंसक क्रांतियाँ हुई थीं, इसलिए उनमें भूखे मरते थे, और दुश्मन की गोली से भी मरते थे। इस क्रांति की चालक शक्ति विरोध नहीं, सद्भावना है। इसमें भी भूखे मर सकते हैं लेकिन दुश्मन की गोली से कम मरेंगे। गोली से तो इस क्रांति में भी मरेंगे, क्योंकि रूढ़िवाद अंधा होता है। क्रांतिकारी की सद्भावना के बावजूद वह इसका दुश्मन हो सकता है। स्वयं गांधीजी भी तो इसके शिकार हुए न!

प्रश्न : क्रांतिकारी में जिन्दा रहने की योग्यता होनी चाहिए यह ठीक है, लेकिन योग्यता रहने पर भी उसका तरीका क्या होगा?

उत्तर : तरीका तो गांधीजी ही बता गये हैं। उन्होंने इस लोकशाही की क्रांति के लिए देश के सात लाख नौजवानों का आह्वान किया था। उन्होंने कहा था कि समाज उन्हें उत्पादन के साधन दे और सेवक अपने श्रम तथा जनता के प्रेम से अपना गुजारा करें। मेरे साथ जो नौजवान आये हैं, वे यही संकल्प लेकर आये हैं। समाज उनको साधन देने को तैयार हो रहा है। मुझे विश्वास है कि देश के काफी नौजवान इसके लिए अपनी आहुति देंगे और जो नौजवान संकल्प-पूर्वक आगे बढ़ेंगे, समाज उनको साधन देने में पीछे नहीं रहेगा।

भारत व उसके इर्द-गिर्द बन रहे युद्ध के वातावरण को कैसे रोकें ?

भारत और पाकिस्तान में आपसी विवाद जो दोनों की आजादी के जन्म दिन से, या उससे पूर्व से चला आ रहा है और आज भी उसके शांत होने के कोई आसार नजर नहीं आते। पाकिस्तान का जन्म ही द्विराष्ट्र के सिद्धांत पर हुआ, जिसमें यह मान लिया गया कि एक ही देश में रहने वाली दो महान् कौमें, जिनमें केवल मजहबी मान्यताओं को छोड़ कर अन्य कोई भी विभेद की स्पष्ट रेखा नहीं है, मजहबी भिन्नता के कारण एक देश में एकसाथ रह ही नहीं सकतीं और इसीलिए एक ही देश को कृत्रिम सीमाओं द्वारा दो भागों में बाँट दिया गया।

१५ अगस्त, '४७ के दिन से एवं उसके पूर्व से भी प्रारंभ हिन्दू-मुस्लिम दंगों की आग बापूजी का बलिदान लेकर ही शांत हुई। तब ऐसा लगा था कि कुछ दिनों में ये जख्म भर जायेंगे और धीरे धीरे हिंदुस्तान और पाकिस्तान अलग-अलग रहते हुए भी दो अच्छे पड़ोसियों की तरह रह सकेंगे, और जो ताजे जख्म हुए हैं, वे समय के साथ भर जायेंगे।

किन्तु इसी बीच काश्मीर की समस्या पैदा हो गयी और उसके कारण हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के मध्य सदा के लिए एक संघर्ष का प्रबल कारण काश्मीर का प्रश्न बन गया, या बना दिया गया। इस संबंध में भी कई उतार चढ़ाव आये, किन्तु आज दोनों के बीच का विवाद बहुत तनावपूर्ण स्थिति में पहुँच गया है। दोनों ओर से भाषणों में, समाचार पत्रों में व पत्रों के सरकारी लेन-देन में जिस उत्तेजनात्मक भाषा शैली का प्रयोग होता है, उससे स्थिति दिन प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही है!

इससे खराब स्थिति हमारे और चीन के बीच चल रहे सीमा विवाद की हो गयी है! सन् '५६ तक हम चीन को अपना परम मित्र मान कर 'हिन्दी-चीनी भाई-भाई' के नारे लगा रहे थे, तभी अचानक चीन की ओर से भारतीय प्रदेश के लिए दावा ही नहीं किया गया, बल्कि कब्जा भी कर लिया गया। तब से अतिक्रमण की घटनाएँ लगातार जारी हैं और इसी विवाद को लेकर दोनों देशों के समाचार-पत्रों नेताओं के भाषणों में व सरकारी पत्रों के आदान प्रदान में भी युद्ध की भाषा का प्रयोग होने लगा है। दोनों ओर से अपनी स्थिति को न्यायपूर्ण बताते हुए रस से मस न होने की प्रवृत्ति प्रकट की जा रही है।

अब यह प्रश्न कुछ हजार वर्गमील भूमि की सीमा निर्धारण का न रह कर दोनों देशों की जनता एवं उनकी सरकारों की मान प्रतिष्ठा का बन गया है। अब दोनों में से किसी देश का नायक यदि स्वयं शांति का इच्छुक भी हो तो भी वह कुछ उदारता दिखला कर समझौता करने की स्थिति में नहीं है; बल्कि यदि वह ऐसा करने का प्रयत्न भी करे, तो जनता उसे ऐसा नहीं करने देने के लिए मजबूर कर देगी या उसके नेतृत्व के लिए ही खतरा पैदा हो जायगा, जिसे कोई भी उठाने को तैयार नहीं है। इस तरह भारत में चीन और पाकिस्तान को लेकर बहुत ही उत्तेजनात्मक वातावरण बनता जा रहा है और सर्व से दोनों-तीनों ओर से युद्ध की हवा बह रही है या बहायी जा रही है।

यह सही है कि यदि राष्ट्र के सम्मान के लिए युद्ध अनिवार्य ही हो जाय, तो भी उससे कतरा कर या कायरता दिखला कर राष्ट्र के सम्मान को धक्का लगाने की बात कोई भी स्वाभिमानी देशवासी नहीं करेगा। फिर भी आज के युद्ध की भयंकरता का अंदाज तो करना ही पड़ेगा व उसके द्वारा होने वाले मानव-संहार से भी अधिक मानवता के संहार पर भी विचार करना होगा। यदि कोई कारगर उपाय द्वारा इस भयानक संहार को टाला जा सके, तो उस दिशा में प्रयत्न करना प्रत्येक विवेकशील मानव का कर्तव्य है।

आज जो लोग यह मानते हैं कि हिंसा से कोई समस्या हल नहीं होती, बल्कि अनेक नयी समस्याएँ पैदा हो जाती हैं और आने वाली पीढ़ियाँ सदियों तक उन समस्याओं में उलझ कर अपना एवं विश्व का सर्वनाश करती रहती हैं, अतः जागतिक समस्याओं का समाधान अहिंसा के द्वारा ही हो सकता है; उनके लिए कुछ कर गुजरने का जितना अचूक अवसर आज है, उतना शायद इतिहास में आज तक कभी नहीं रहा और अवसर चुक जाने पर शायद भविष्य में भी पुनः नहीं मिल सकेगा!

इसी अहिंसा की शक्ति की पहचान कर इंग्लैंड के प्रसिद्ध दार्शनिक एवं लेखक श्री बर्ट्रेण्ड रसेल जैसे विचारक अपनी ८० वर्ष की आयु में निष्क्रियता छोड़ कर अहिंसा के पक्ष में मैदान में आ डटे हैं और हजारों नौजवान उनसे प्रेरणा लेकर अहिंसा के पक्ष में इंग्लैंड जैसे देश में एक तेजस्वी वातावरण निर्माण कर रहे हैं। तब स्वाभाविक ही विचार पैदा होता है कि बापू के देश में अहिंसा की शक्ति प्रकट होने देने का समय आज से उपयुक्त कब आयेगा?

आज भारत में अहिंसा की शक्ति के आचार्य, प्रणेता एवं व्याख्याकारों के मौजूद होते हुए हम कुछ नहीं कर सके, तो फिर हमारे लिए कोई मौका नहीं रह जायेगा।

मेरी नम्र प्रार्थना है कि आज विनोबाजी, जयप्रकाशजी एवं अन्य नेतागण, जिनकी अहिंसा में अटूट श्रद्धा है, अपने आंदोलनों को सर्वोदय-पात्र, 'बीघे में कट्ठा' आदि प्रत्यात्मक प्रवृत्तियों से आगे ले जाकर देश में एक युद्धविरोधी, निःशस्त्रीकरण के पक्ष में वातावरण बनाने में लगा सकें और भारत, चीन एवं पाकिस्तान के बीच आपसी बातचीत के द्वारा समस्याओं के समाधान का मार्ग प्रशस्त कर सकें तो मानव जाति की यह बहुत बड़ी सेवा होगी।

जब रूस और अमेरिका जैसे देश विचारों में उत्तर दक्षिण ध्रुव जितना अंतर रखते हुए भी एकसाथ टेबुल पर बैठ कर महीनों और वर्षों तक अपनी समस्याओं का हल ढूँढ़ते रहते हैं और ईमानदारी से युद्ध को टालने का प्रयत्न कर रहे हैं, तब हम तीनों पड़ोसी देश अपनी समस्याओं का समाधान युद्ध की भाषा से ऊपर उठ कर व एक टेबुल पर साथ बैठ कर क्यों नहीं कर सकते हैं, यह बात विचारणीय अवश्य है।

मेरा एक नम्र सुझाव है कि विनोबाजी इस विषय में सक्रिय हों और आवश्यकता हो, तो हवाई जहाज से पेकिंग तथा रावलपिण्डी की यात्रा कर आपसी समाधान के लिए योग्य भूमिका बनाने का प्रयत्न करें तो यह देश की ही नहीं, समस्त मानव-जाति की बहुत बड़ी सेवा मानी जायगी और विश्व की अहिंसात्मक शक्तियों को इससे बहुत बड़ा बल एवं प्रेरणा प्राप्त होगी।

इन्दौर, —लहरसिंह भाटी

अधिक दूध देने वाले मवेशी खरीदने के लिए कृषकों को 'मध्यावधि कर्ज' की सुविधा

गत दिसम्बर माह में 'कृषि सम्बन्धी उधार' पर सलाह देने वाली 'स्टैण्डिंग कमेटी' ने यह सिफारिश की है कि फिलहाल दुधारू मवेशी खरीदने के लिए जो लघु-अवधि के कर्ज दिये जाते हैं, साधारण तौर पर वे पर्याप्त हैं, पर कुछ क्षेत्रों में अधिक दूध देने वाले मवेशी खरीदने के लिए 'मध्यावधि कर्ज' की आवश्यकता हो सकती है और वहाँ इस तरह के कर्ज की सुविधा दी जानी चाहिए।

रिजर्व बैंक ने अपने उस 'मध्यावधि कर्ज' में से, जो खेती के लिए दिया जाता है, ऐसे दुधारू मवेशी खरीदने के लिए भी देना तय किया है, जो अधिक दूध देते हों। इस कर्ज की भी वे ही शर्तें हैं, जो खेती कर्ज के लिए हैं। इसके अतिरिक्त और भी कुछ शर्तें होंगी, जो इस प्रकार हैं :—

(१) कर्ज लेने वाले सदस्य को मवेशी की कीमत का स्वतः प्रबन्ध करना होगा। उसे कितनी रकम का प्रबन्ध करना चाहिए, इसका निर्णय कर्ज देने वाली सोसाइटी करेगी, पर कम-से-कम एक-चौथाई कीमत तो उससे लेनी ही चाहिए।

(२) चोरी, अपंग अवस्था तथा मृत्यु के विरुद्ध मवेशी का बीमा कराना होगा और तत्सम्बन्धी, पॉलिसी का कर्ज देने वाली सहकारी सोसाइटी के हक में करानी होगी।

(३) जिस क्षेत्र में यह मवेशी रहे, वहाँ दूध बिक्री की समुचित सुविधा होनी चाहिए। सोसाइटियों को यह सहूलियत दी जायगी कि वे अपनी मार्फत अपने कृषक-सदस्यों को मवेशी खरीदने के लिए केन्द्रीय बैंकों से मध्यावधि कर्ज दिला सकें। पर इस बात की उन्हें पुष्टि कर लेनी होगी कि कोई व्यक्ति दोनों 'रूरल क्रेडिट सोसाइटी' और 'मिल्क सप्लाय सोसाइटी', दोनों से ही इस कार्य के लिए कर्ज न ले ले।

(४) सोसाइटी इस बात का आग्रह रखे कि मवेशी की दूध अवधि के कर्ज की मासिक अदायगियाँ बराबर होते रहें।

(५) तीन साल के भीतर सब कर्ज चुकता हो जाना चाहिए।

(६) सोसाइटी की जानकारी के बिना कर्जदार उस मवेशी को नहीं बेचेगा, और अगर बिक्री करे तो सोसाइटी की अपनी रकम की वसूली का पहला हक होगा।

वेदांती संत स्वामी राम का स्मारक

'जय जगत्' की प्रेरणा का केन्द्र

आज से लगभग ६० वर्ष पहले एक नवयुवक संत ने भारत में ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी 'जय जगत्' के महामंत्र का घोष किया था। गत '२६ मार्च को टिहरी के छोटे-से नगर में भिलंगना नदी के तट पर उसके अमर संदेश को चिरस्थायी बनाने के लिए हैदराबाद के स्वामी रामानन्द तीर्थ ने स्मारक का शिलान्यास किया है। यह नवयुवक सन्यासी प्रसिद्ध वेदांती स्वामी रामतीर्थ थे, जिन्होंने सन् १९०६ में भिलंगना की वेगवती धारा में जल-समाधि लेकर अपने पार्थिव शरीर का अन्त कर दिया था।

जब स्वामीजी अन्तिम बार अपने आसन से उठ कर नदी की ओर गये, तो 'मृत्यु का आवाहन' शीर्षक कविता लिख कर छोड़ दिया था। स्मारक पर उनके अंतिम संदेश के रूप में यह कविता हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दू में अंकित रहेगी। स्मारक के रूप की चर्चा करते हुए स्वामी रामानन्द तीर्थ ने बताया कि भिलंगना के तट पर कमल की आकृति का घाट बनेगा, जिसके बीचो-बीच ३० फुट ऊँचा स्तूप होगा। घाट की ओर जाने वाले मार्ग पर एक महाद्वार बनेगा। टिहरी-नरेश के जिस भवन पर स्वामी राम अंतिम दिनों में रहते थे, उसे वेदान्त-ग्रंथों के एक बृहद् पुस्तकालय में परिवर्तित किया जायेगा और उसके आसपास देश-विदेश से अध्ययन के लिए आने वाले साधकों के निवास हेतु कुटियाँ होंगी।

इन योजनाओं के सम्पन्न हो जाने के बाद भिलंगना और भागीरथी के संगम पर स्थित लगभग ४ हजार आबादी के छोटे पहाड़ी नगर, टिहरी का एक वेदांतिक नगरी के रूप में विकसित होने का उज्ज्वल भविष्य है, क्योंकि चारों ओर से पहाड़ियों से घिरे होने के कारण इसका वातावरण बहुत शान्त है। निकटतम रेलवे-स्टेशन, ऋषिकेश यहाँ से ५१ मील दूर है। स्वामी राम को यहाँ पर टिहरी के तत्कालीन राजा स्व० श्री कीर्तिशाह की अगाध श्रद्धा ने टिका दिया। वे स्वयं विद्या-व्यसनी और स्वामीजी के परम भक्त थे। स्वामी राम को विदेश भेजने में, जहाँ पहुँच कर उन्होंने भारतीय संस्कृति का प्रचार कर सारे अमेरिका को चौंका दिया, महाराजा का बड़ा हाथ था।

इस छोटे-से स्मारक को, जिसके पीछे विनोबाजी, दादा धर्माधिकारी, स्व० बाबा राघवदास, डा. संपूर्णानन्द और श्री लाल-बहादुर शास्त्री आदि की प्रेरणा रही है, बहुत आश्चर्यमिश्रित महत्त्व की दृष्टि से देखा जा रहा है, क्योंकि अब तक बड़े-बड़े राजपुरुषों और सैनिकों के स्मारक बने हैं। संन्यासियों के यदि कहीं बने भी हैं, तो प्रायः उन्हींके, जिन्होंने कोई सम्प्रदाय चलाया। पर स्वामी राम का कोई सम्प्रदाय नहीं था। फिर भी *लगभग* आधी सदी पूर्व दिये गये उनके भाषणों ने गांधी-युग के नवयुवकों को झकझोरा और उन्हें भौतिक क्षेत्र में वेदान्त की स्थापना के लिए प्रेरित किया।

महापुरुष भविष्य द्रष्टा होते हैं। आज जिस दिशा में हमारा प्रयास है, स्वामी राम को उसका दर्शन साठ वर्ष पूर्व हो गया था। जितनी दूर देखते थे, श्रेष्ठतम संन्यासी नीचातिनीच शूद्रों से हाथ मिला रहे हैं। वह देखो, उनका भिक्षा-पात्र फावड़े और कुदाली में बदल गया है। संन्यासियों ने अपनी अकर्मण्यता त्याग दी है, शूद्रों के परिश्रम को संन्यास का गौरव प्राप्त हुआ है। त्याग-भाव सबके हृदयों में जोश मार रहा है। वेश्या का निर्लज्जतापूर्ण साहस और राम की पवित्रता एक में मिल गयी है, मेमने की कोमलता ने सिंह की वीरतापूर्ण दृढ़ता का आलिंगन किया है, उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव जैसे विरोधी मिल गये हैं और बीच के सभी अस्वाभाविक भेदभाव मिट गये हैं, विश्व एक कुटुंब बन गया है।

स्वामी राम के जीवन और उपदेशों से आज की पीढ़ी को भी अपनी समस्याओं के समाधान के लिए बहुत कुछ मिल सकेगा। इस दृष्टि से टिहरी का स्मारक 'जय जगत्' के मंत्र की सिद्धि में लगे हुए साधकों के लिए एक प्रेरणा-केन्द्र होगा।

ठक्करबापा छात्रावास,
टिहरी —सुंदरलाल बहुगुणा

उद्योग बनाम व्यापार

राष्ट्रबंधु

गुलाम वंश का सुप्रसिद्ध शासक नासिरुद्दीन टोपी काढ़ कर और कुरान-शरीफ की नकल करके अपनी आजीविका चलाया करता था। उसकी बेगम स्वयं परिवार का भोजन बनाती थी। इसके उपरान्त हमने यह भी पढ़ा है कि औरंगजेब भी इसी प्रकार राजा होते हुए भी अपनी रोजी खुद कमाने के लिए कुरान-शरीफ की नकल करता था। प्रजातंत्र में, फिर उद्योग की आवश्यकता को पूरा करने के लिए शासक-वर्ग अपने कर्तव्यों से क्यों उदासीन है!

इसमें मुझे तो वही भावना दिखलायी पड़ती है, जो राजाराम के लिए भरत ने नंदिग्राम में रह कर निबाही थी। राम की खड़ाऊ को सिंहासन पर रख कर, सेवक की भाँति भरत ने चौदह साल बिता दिये थे। उन्होंने राजकाज सँभाला तो था, लेकिन वे राजा नहीं थे। सूरदास के श्याम और तुलसी के राम में स्वामी और सेवक की यही समता, जीवन के व्यावहारिक पक्ष में बदली जा सकती है। गांधीजी ने कहा था कि धनी अपने को समाज का ट्रस्टी समझें। इसमें धनियों के अस्तित्व को मेटा नहीं गया है, परन्तु उनकी मक्कारी और बेईमानी को भी उभरने नहीं दिया गया है। वे भरत की तरह संपदा अपनी न समझें, उनकी यह भावना कम्युनिज्म के साम्यवाद को रक्त-विहीन क्रांति से ला सकेगी। गीता में *इसी स्थिति को 'स्थितप्रज्ञ' की संज्ञा दी* गयी है।

व्यापार और उद्योग में अन्तर है। व्यापार स्वयं और स्वार्थ से संबंध रखता है, जब कि उद्योग में योग है, आयोग है, परहित है। इसमें व्यापार जैसी कुचल कर बढ़ने की भावना नहीं है। एक रेखा को छोटी करने के लिए मिटाने की आवश्यकता नहीं है, वरन् उससे बड़ी रेखा खींचने की आवश्यकता है। उद्योग में यही अभ्यास है। इसमें व्यापार की तरह धन कमाने का साधन धन नहीं, वरन् परिश्रम है, पुरुषार्थ है। उद्योग में दैव, और अपरोक्ष शक्ति का प्रभाव नहीं होता।

आजकल मशीनों के कहे जाने वाले *युग में परिश्रम को कम स्थान दिया जा* रहा है। अन्याय और बुराई यहीं से पैदा होती है। परिश्रम को हटा देना समय बचाने का बहाना है। सचमुच में यह खाली समय मन को शैतान का घर बना देता है, मन की लगाम ढीली कर देता है *और ऐसी हालत में ऊटपटाँग की दलीलें* दी जाती हैं कि समय मिलने पर कला, साहित्य और संगीत सीखा जा सकता है। ऐसी बात नहीं है। मजदूर अपने पसीने से साहित्य लिखता है, संगीत की धुनें काम करने के बाद तरोताजगी देती हैं। हमें तो कला की अच्छाई उसकी प्रेरणा और उपयोगिता से माननी चाहिए।

मशीनों से बेकारी बढ़ी है। हजारों हाथों से रोजी छीनने में व्यापारी ने आगापीछा नहीं देखा। लेन देन के फेर में पड़ने से ही हमें व्यापारियों ने धोखा दिया। गुलामी से छुटकारा दिलाने में *उद्योग ने हमारा साथ दिया। आज हमारे* देश का निर्माण व्यापार नहीं, उद्योग पर निर्भर है। कबीर के करघे, रैदास की थापी और गांधीजी के चरखे की घरर-घरर, घर-घर गूँजती है। इसे आज के नक्कारखाने में भी पहचाना जा सकता है। मशीनों की घरघराहट में उद्योग की बाँसुरी को जब लोग सुनेंगे तो मशीनों का चलाना भूल जायेंगे। आवश्यकता इस समय आवाज पहचानने की है। नासिरुद्दीन और औरंगजेब प्रकारान्तर से उद्योग की महत्ता आज भी बताते हैं। हमें ध्यान रखना चाहिए कि हम खद्दर खरीद कर उस बूढ़ी और गरीब माँ को *भी उसकी मेहनत का पैसा देते हैं,* जो कमाने नहीं जा सकती। क्या उसका अधिकार जीवित रहने का नहीं है!

क्षुरस्य धारा

कुछ अन्तर्निरीक्षण करें

सत्य का मुख हिरण्यमय पात्र से ढँक जाता है।

आन्दोलन में भी कभी स्थूल, कभी सूक्ष्म रूप से सुहावने विचार सत्य को ढँक देते हैं। आँकड़े को के अक्सर बढ़ा देने की प्रवृत्ति होती है। साढ़े सात के बदले दस एकड़ या साढ़े चार हजार के बदले में पाँच हजार ग्रामदान कहना सुहावना है, लेकिन असत्य है। बजट में कुछ छंटनी होगी ही, इस अपेक्षा से पहले से ही बड़े आँकड़े देना भी असत्य है।

काम अच्छा दिखाने की दृष्टि से भिन्न-भिन्न अतिथियों के सामने वही दान पत्र बार-बार पेश करना यह जैसा स्पष्ट असत्य है, उसी प्रकार निर्माण, विकास-क्षेत्र या और किसी रिपोर्ट में एक ही कार्य का विवरण अलग-अलग तरह से देना सूक्ष्म असत्य है।

अपने दोषों तथा आन्दोलन की कमजोरियों को छिपाने या कम बताने में क्या असत्य नहीं है! प्रतिवादी की दलील का जब हम वर्णन करते हैं, तब उसे अक्सर थोड़ी कम दिखाने की प्रवृत्ति होती है।

बुजुर्गों से बात करते समय हम अक्सर उनसे सहमत हो जाते हैं, लेकिन अपने मन में उनसे मतभेद कायम रखते हैं। यहाँ 'विनय' "स्वर्ण पात्र" बन कर सत्य को आवृत्त करता है। जाने-अनजाने इसमें चापलूसी का अंश भी आ जाता है।

सबसे सूक्ष्म असत्य आदमी अपने साथ बरतता है। कहीं क्रान्ति के नाम से वह अपने को सेवा के दुर्गम पथ से बचाता है, कहीं सेवा के नाम से सत्ता (राज्य-सत्ता से भिन्न ऐसी "संस्था-सत्ता") के पथ पर बढ़ता है, कहीं विचार-प्रचार के नाम से आचार के आलस्य को पोषित करता है, कहीं "आचरण" के नाम से विचार-विमुख हो जाता है!

—नारायण देसाई

आंदोलन को सक्रियता के लिए

जमीन के बँटवारे में सब कार्यकर्ता शक्ति लगायें

पिछले दिनों "भूदान-यज्ञ" में देश के भूमिवितरण के बारे में जानकारी पढ़ी। भूदान में मिली हुई जमीन में से बँटने अयोग्य भूमि छोड़ कर भी हम १८ लाख एकड़ भूमि का बँटवारा कर सकते हैं, ऐसी परिस्थिति है।

मैं मानता हूँ और अनुभव भी यह है कि आज भी अगर देहात में घूमते हैं और जमीन के बँटवारे का कार्यक्रम चलाते हैं, तो भूमिहीनों को अत्यन्त प्रसन्नता होती है और जीवन मिलने का-सा आनन्द होता है! गर्मी का दिन हो, प्रवासी को प्यास हो, पानी भरा हो, फिर भी कोई पानी न पाये, यह चित्र कैसा लगता है!

मैं मानता हूँ कि बँटवारे के कार्यक्रम में हम इतनी तीव्रता महसूस करते हुए भी उदासीन हैं। यह स्थिति उपली सी लगती है। मैं उसको 'पाप' शब्द से पुकार सकता हूँ। यदि देश के भूमिहीन संगठित होकर हमारे सामने मुकदमा पेश करें, तो कितनी सजा हमको होगी?

मेरी विनति है कि हमें अपने हाथ में जो जमीन है और जिसका बँटवारा हम कर सकते हैं, उसके वितरण का कार्यक्रम फौरन बनाना चाहिए और हरएक को उसमें शक्ति लगानी चाहिए। मेरा अनुमान है कि आन्दोलन की जो मंद स्थिति आज है, इसमें यह कार्यक्रम बहुत उपयोगी होगा। पदयात्रा कर सकेंगे, विचार के लिए भी अनुकूलता होगी। क्रांति का न हो तो भी उत्तम प्रकार के राहत का काम भी होगा। यदि हम पाँच साल में भी यह कार्यक्रम पूरा करें तो भी मैं मानता हूँ कि देश में एक बड़ा काम होगा। आज की परिस्थिति में भूमिहीनों के लिए जो कुछ भी अल्पतम आशा है, वो इसमें ही है। 'सीलिंग' से देश में १० लाख एकड़ भूमि निकलेगी—कब, कहाँ, मालूम नहीं! तो हमारे हाथ में जो है, उसका बँटवारा करना चाहिए।

इसलिए मेरी विनति है कि सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति और मित्र इस पर विचार करें और तीव्रता से निम्न कार्यक्रम बनायें :—

(१) भूमि बँटवारे की समिति न बनी हो, तो एक समिति बनायी जाय।

(२) समिति हरएक प्रांत की परिस्थिति समझे। कितना वितरण बाकी है, कितनी शक्यता है, इत्यादि।

(३) प्रांत की परिस्थिति के अनुसार बँटवारे की पद्धति सोची जाय।

कानून के जरिये भी बँटवारा करने का सोचा जा सकता है।

—हर्षकान्त वोरा

भूदान ने जाति का बन्धन तोड़ दिया

गया जिले में परैया अंचल के अन्तर्गत तरौची गाँव में ३६ कट्ठे भूमि का दान मिला। जब भूमि वितरण हो रहा था, दाता ने आदाता को उसी खेत की मिट्टी से तिलक लगाया, जिसे उन्होंने आदाता को दिया। तिलक लगाने के बाद दाता ने जो एक उच्च सवर्ण कुल के थे, आदाता को जो एक हरिजन थे, गले से लगा लिया और कुछ देर तक आलिंगन करते रहे। प्रेम की गंगा बह निकली और भूदान ने जाति पाँति के बंधन को तोड़ दिया। सबने कर तल ध्वनि से "संत विनोबा की जय" का उद्घोष किया।

मदिरापान बन्द हो

मध्यप्रदेश नशाबन्दी सम्मेलन श्री भगवन्तराव मण्डलोई की अध्यक्षता में २० मई को इन्दौर में सम्पन्न हुआ। योजना-आयोग के सदस्य श्री श्रीमन्नारायण ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। प्रारम्भ में स्वागत-भाषण करते हुए श्री एन० डी० जोशी ने कहा : "मद्यपान तथा अन्य नशे अनीति-मार्ग के राजद्वार हैं, इस बारे में सभी एकमत हैं। पर इस अनीति की राह पर नशे की गुलामी में जो लोग फँसते जा रहे हैं, उनकी मुक्ति के लिए गांधीजी के निधन के बाद विशेष कुछ नहीं किया गया है।"

श्री जोशी ने आगे बताया : "मद्य पीनेवालों के दो वर्ग हैं : आदतमंद और शौकिया। आदतमन्दों में अधिकांश इस व्यसन को बुरा मानते हैं और उससे छुटकारे के लिए हमारे प्रयत्नों के साथ सहयोग के लिए तैयार हैं। किन्तु दूसरा वर्ग जो छोटा ही है, पर मौज शौक के ऐसे सिद्धान्त का हामी है, जो मद्यपान को फैशन मानने की गलती कर रहा है। पढ़े लिखे, पैसेवाले और ऊँचे ओहदे के लोग इसमें हैं। वे शराब को व्यसन के बजाय भोजन का अंग भी मानते हों तो आश्चर्य नहीं। ऐसे व्यक्तियों को जहाँ एक ओर समझा बुझा कर मद्य फैशन रोकने के लिए राजी किया जाना आवश्यक है, दूसरी ओर उन पर सामाजिक दबाव भी पड़ना जरूरी है। ऐसे मद्य-व्यसनी व्यक्तियों के द्वारा यह रोग दूसरों में न फैले, इसके लिए जरूरी है कि शिक्षक, अफसर या ऐसे सार्वजनिक व्यवस्था के पदों पर उनको न रखा जाय, जिसमें उनके आचरण का प्रभाव उनके पद के कारण आम समाज और उगती पीढ़ी पर पड़ता हो।

"श्री श्रीमन्नारायण ने कहा कि योजना-आयोग मद्यपान की समस्या को 'पुलिस और ताड़ना' के सहारे हल न करके किसी मानवीय और प्रचारात्मक तरीके से सुलझाने के पक्ष में है।

उन्होंने कहा कि मद्य निषेध लागू करने में राज्य-सरकारों की पचास प्रतिशत क्षति केन्द्रीय सरकार प्रति वर्ष पूरी करने को तैयार है। योजना आयोग ने मद्य-निषेध का कार्यक्रम हाथ में लेने वाली सेवा-संस्थाओं को भी वित्तीय सहायता देने के लिए ५० लाख रुपये निर्धारित किये हैं।

उत्तर प्रदेश में शराब-बंदी आंदोलन के लिये विनोबा का संदेश

शराब-बन्दी के लिए लोकमत तैयार करना, जरूरत पड़े तो दूकानों पर 'पिकेटिंग' करना आदि काम खास कर स्त्रियाँ उठा सकती हैं, जैसा बापू के जमाने में बापू ने करवाया था। इस प्रकार का सक्रिय आन्दोलन उत्तर प्रदेश में करना होगा, यह स्पष्ट दिख रहा है। उत्तर प्रदेश की सरकार अकल खोयी हुई है, पर हमको अकल खोना नहीं चाहिए और सुव्यवस्थित ढंग से काम में लग जाना चाहिए। सर्व-सेवा-संघ का इसमें मार्गदर्शन प्राप्त करना चाहिए।

शरणिया आश्रम, गौहाटी १४ मई '६२ —विनोबा का जय जगत

[पौड़ी गढ़वाल के श्री सोहनलाल 'भूमिक्षु' के नाम लिखा पत्र]

संपर्क-कार्यक्रम के संबंध में साथियों से निवेदन

[अखिल भारत सर्व सेवा संघ के मंत्री श्री पूर्णचन्द्रजी ने आन्दोलन के विकास और उसके सिंहावलोकन के लिए सम्पर्क-कार्यक्रम पर जोर देने के लिए निवेदन किया है वह यहाँ दिया जा रहा है।—सं०]

आंदोलन के विकास और उसका समय समय पर सिंहावलोकन करने की दृष्टि से संपर्क कार्यक्रम का सुझाव कुछ दिनों पूर्व भेजा गया था। साथियों ने इस संपर्क के कार्यक्रम के लिए विभिन्न प्रदेशों में समय देना स्वीकार किया था। उस कार्यक्रम के सिलसिले में साथियों का सम्बन्धित जिला और प्रदेश संगठनों से पत्र व्यवहार हुआ होगा। वह पत्र-व्यवहार न हुआ हो, तो अब शीघ्र किया जाना चाहिये।

'बीघा कट्ठा अभियान' के कारण स्वाभाविक ही संपर्क का यह कार्यक्रम नहीं बना होगा। अधिकांश साथी अभियान में लगे होंगे। लेकिन अब अभियान-समाप्ति अर्थात् १५ जून के बाद इस संपर्क, कार्यक्रम के लिए कुछ व्यवस्थित समय-शक्ति साथी लगायेंगे तो ठीक होगा। आगामी सर्वोदय-सम्मेलन नवम्बर के मध्य में होगा। उससे पूर्व, अर्थात् जुलाई से अक्तूबर, चार महीने का समय इस संपर्क-कार्यक्रम में लगाना चाहिये। साथी कितना समय अपने क्षेत्र में दें और कितना संपर्क के लिए स्वीकार किये गये दूसरे प्रदेश में, इसका तारतम्य बिठा लेना चाहिये।

यह ज्ञात ही होगा प्राथमिक सर्वोदय-मंडल का गठन जिला प्रतिनिधि का निर्वाचन आदि कार्य आगामी दो-तीन महीनों में ही होने वाला है। प्राथमिक सर्वोदय-मंडल तथा जिला व प्रदेश-स्तर की संगठन-इकाइयाँ सजीव और सूक्ष्म बन सकें और उनके द्वारा हमारे क्रांति कार्यक्रम व शान्ति सेना ग्रामदानोत्तर निर्माण-कार्य, पंचायती राज, आदि कामों को चालना मिल सके, इसके लिए भी यह संपर्क कार्यक्रम आवश्यक व उपयोगी होगा।

संपर्क-कार्यक्रम संबंधी फरवरी माह के मध्य में भेजे गये नोट की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए संगठन इकाइयों और प्रदेशों में समय देने वाले साथियों से निवेदन है कि वे परस्पर पत्र-व्यवहार करके संपर्क संबंधी कार्यक्रम तय कर लें और जून के आखिर या जुलाई के आरंभ से उसे अमल में लाने की कृपा करें। जो कुछ कार्यक्रम बने और अमल में आये उसकी समय समय पर जानकारी भिजवाने का भी कष्ट करें।

कैंप-जयपुर —पूर्णचन्द्र जैन
२३ मई, ६२

बिहार नशाबंदी सम्मेलन

वैद्यनाथधाम में ८ जुलाई को बिहार प्रांतीय नशाबंदी सम्मेलन का प्रथम अधिवेशन हो रहा है। आनेवाले प्रतिनिधि अपनी फीस एक रुपया सहित पूर्व सूचना मंत्री, स्वागत समिति बिहार प्रांतीय नशाबंदी सम्मेलन, मा० खादी भंडार, पो० वैद्यनाथ देवघर संथाल परगना को देने की कृपा करें।

उत्तरी रोडेशिया में अहिंसक सत्याग्रह की तिथि बढ़ी

विश्व शान्ति-सेना द्वारा पूर्वी अफ्रीका में, उत्तरी रोडेशिया के प्रस्तावित अहिंसक सत्याग्रह की तिथियाँ आगे बढ़ा दिये जाने की सूचना विश्व-शांति सेना के दार ए सलाम कार्यालय से प्राप्त हुई है। श्री जयप्रकाश नारायण, श्रीमती प्रभावती देवी और श्री सुरेशराम इसी कार्य को संगठित करने के लिए दार ए-सलाम गए हुए हैं।

श्री मेनन व सतीश विश्व शांति यात्रा के लिये रवाना

(विशेष संवाददाता द्वारा)

नई दिल्ली १ जून : सर्व सेवा संघ कार्यकर्ता श्री ई० पी० मेनन और श्री सतीश कुमार ता० १ जून की शाम को दिल्ली से मास्को तथा वाशिंगटन की अपनी प्रस्तावित पदयात्रा पर रवाना हुए।

शाम को ६-३० बजे गांधीजी की समाधि पर प्रार्थना के बाद श्री प्रबोध चौकसी ने यात्रियों का तथा यात्रा के उद्देश्य का परिचय दिया। हिन्दी के लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकार श्री जैनेन्द्रकुमार ने पदयात्रियों का अभिनंदन किया और शांति का संदेश लेकर देश-विदेश की पैदल यात्रा करने के उनके साहस की सराहना की। पदयात्रियों के राजघाट से रवाना होने के समय कुछ बूंदाबूंदी भी हुई, और मौसम अनुकूल हो गया। प्रार्थना सभा में करीब डेढ़ सौ व्यक्ति उपस्थित थे।

बापू की समाधि से चलकर श्री मेनन और सतीश अम्बाला, जालंधर, अमृतसर होते हुए पाकिस्तान में प्रवेश करेंगे। पाकिस्तान में जाने की अनुमति अभी मिली नहीं है, लेकिन आशा है कि जल्दी ही मिल जायेगी। रवाना होने से पहले दिल्ली में मेनन और सतीश ने उपराष्ट्रपति डा० जाकिरहुसैन तथा अन्य नेताओं से आशीर्वाद प्राप्त किया और जिन देशों में होकर वे गुजरनेवाले हैं, उन सम्बंधित देशों के राजदूतों इत्यादि से मुलाकात करके अपनी यात्रा के उद्देश्य से उन्हें परिचित किया। यात्रियों को सब ओर से सहानुभूति और सहयोग, के आश्वासन मिले हैं। विनोबाजी की सलाह के अनुसार पदयात्री युवकों ने यात्रा में अपने साथ पैसा न रखने का तय किया है। जगह-जगह वे परिचित-अपरिचित मित्रों के सहयोग पर निर्भर रहेंगे।

अफ्रीका के अहिंसक सत्याग्रह

विश्वशान्ति-सेना की एशिया क्षेत्रीय परिषद् (राजघाट, वाराणसी-१) द्वारा उत्तरी रोडेशिया और टांगानिका में चलने वाले अहिंसक सत्याग्रह के लिए ५००० रु० भेजा गया है। उक्त परिषद् के मंत्री श्री सिद्धराज ढड्ढा ने इस कार्य के लिए धन भेजने की अपील की है, जो वाराणसी के पते पर या श्री माइकेल स्काट, "वर्ल्ड पीस ब्रिगेड", पोस्ट बाक्स-८२२, दारे-सलाम (टांगानिका), पूर्वी अफ्रीका को भेजा जा सकता है।

श्रीमती सुमित्रा साहु का निधन

देश के सुप्रसिद्ध कार्यकर्ता श्री ध्वजा प्रसाद साहु की धर्मपत्नी श्रीमती सुमित्रा देवी साहु का निधन गत २२ मई को अकस्मात हृदयगति रुक जाने के कारण हो गया। आपकी आयु ५५ वर्ष की थी। हम दिवंगत आत्मा की शांति के लिये प्रार्थना करते हैं।

काशी नगरी को मद्य निषेध-क्षेत्र घोषित करें

उत्तर प्रदेश सर्वोदय मण्डल द्वारा काशी में शराबबन्दी के लेकर जुलाई १९६२ से प्रस्तावित सत्याग्रह की पृष्ठ भूमि के संदर्भ में अखिल भारत सर्व सेवा संघ के सहमंत्री श्री दत्तोबा दास्ताने ने उत्तर प्रदेश के आबकारी मंत्री डा० सीताराम को एक पत्र भेज कर आग्रह किया है कि हरिद्वार, ऋषिकेश और वृन्दावन आदि धार्मिक नगरों की भाँति काशी को भी मद्य निषेध क्षेत्र घोषित किया जाय।

उन्होंने लिखा है कि "काशी नगरी जैसे मध्यवर्ती पुण्य-क्षेत्र में शराब चालू रहना-जब कि उत्तर प्रदेश सरकार अपने प्रदेश में अन्य कुछ जगहों पर शराबबन्दी की भरसक कोशिश कर रही है—भारत के नाम पर कलंक स्वरूप है।" श्री दत्तोबा ने आशा प्रकट की है कि इस प्रश्न के संबंध में पूज्य विनोबा सहित सभी भारत-वासियों की भावना को कद्र करके उत्तर प्रदेश सरकार, अद्यतन नीति का पुनरावलोकन करते हुए, विधान-सभा के चालू अधिवेशन में ही काशी में शराबबन्दी की घोषणा करेगी।

कस्तूरबा शांति-सेना विद्यालय का तीसरा सत्र

कस्तूरबा शान्ति सेना विद्यालय का तीसरा सत्र १५ अगस्त, '६२ से प्रारम्भ होगा। विद्यालय कस्तूरबा ग्राम इंदौर में चलेगा। कार्यकाल ५ माह का होगा। कस्तूरबा ट्रस्ट की ओर से प्रशिक्षण काल में प्रत्येक छात्रा को ४० रु० प्रतिमाह छात्रवृत्ति दी जायेगी। अतः निवेदन है कि छात्राएँ जिला सर्वोदय-मंडल की ओर से प्रार्थना पत्र पर शीघ्र भेजने की कृपा करें। पता : संचालिका, शांति सेना विद्यालय, कस्तूरबाग्राम, इंदौर (म० प्र०)।

सरकारें पक्षों और आडम्बर से मुक्त बनें!

'सर्वोदय-शिविर' में प्रो० गोरा के विचार

"भारतीय संविधान में पार्टियों को कोई स्थान नहीं दिया गया है, फिर भी जाति-प्रथा की भाँति पार्टियों का प्रचलन हो गया है। आज संसदीय लोकतन्त्र तंत्र पार्टियों के आधार पर चलता है। सरकारें पार्टियों की बनती हैं, न कि जनता की। वास्तव में प्रतिनिधि तो जनता के होते हैं, न कि पार्टियों के और उन्हें विधान सभाओं में पार्टी-ब्लाकों में नहीं बैठना चाहिये और न आडम्बरपूर्ण जीवन बिताना चाहिये। अब केवल रचनात्मक कार्यों से काम नहीं चलने वाला है। हमें आडम्बर और पार्टियों वाली सरकार के विरोध में सत्याग्रह करना होगा।"

ये शब्दों अ० भा० सत्याग्रह समाज के अध्यक्ष प्रो० गोरा ने गांधी-विचार केन्द्र द्वारा संचालित सर्वोदय-शिविर का उद्घाटन करते हुए गत २० अप्रैल को प्रातः कहे।

गत १९ अप्रैल को गांधी-विचार उपकेन्द्र आर्यनगर, कानपुर में उन्होंने कहा, "गांधीजी ने सत्य को ऐसे सक्रिय सामाजिक शक्ति के रूप में विकसित किया, जो जन-जीवन के प्रत्येक पहलू को प्रभावित करे। हमारी जिम्मेदारी है कि हम सर्वोदय को अपना कर गांधीजी के काम को आगे बढ़ायें।"

प्रो० गोराजी ने ता० २० को दोपहर में किदवई नगर की भंगी बस्ती में भोजन किया और निवासियों से बातचीत की। तीसरे पहर आर्यनगर सर्वोदय महिला-मण्डल में उन्होंने जाति-उन्मूलन के लिए बहनों का आह्वान किया।

सर्वोदय शिविर के सायंकालीन कार्यक्रम में भी गोराजी का व्याख्यान हुआ। सभा की अध्यक्षता श्री ब्रह्मदेव बाजपेयी ने की।

पंढरपुर में शान्ति-सेना-शिविर का आयोजन

महाराष्ट्र प्रादेशिक सर्वोदय सम्मेलन के करजगाव-अधिवेशन में ११ से १४ जून ६२ तक पंढरपुर में एक शान्ति-सेना शिविर आयोजित किया जाना तय हुआ था। शिविर के संयोजक श्री माणिकचन्द दोशी ने शान्ति-सैनिकों, खादी-कार्यकर्ताओं, आदिवासी—सेवा में लगे बन्धुओं तथा सर्वोदय-प्रेमी शिक्षकों एवं विद्यार्थियों से इस सम्मिलित होने की अपील की है। २९ मई ५८ को श्री विनोबाजी के विनोबाजी के प्रवेश पर पंढरपुर का विट्ठल मंदिर सभी धर्मावलम्बियों के लिए खुला था और तब से यह दिन "समन्वय दिवस" के रूप में वहां मनाया जाता है।

विनोबाजी १२ जून तक असम के दरंग जिले में पदयात्रा करेंगे

३ मई से १६ मई के मध्य विनोबाजी को ४४ गाँव ग्रामदान में मिले। १८ मई को उन्होंने आसाम के दरंग जिले के मंगलदै सबडिवीजन में प्रवेश किया और १२ जून तक उनके उसी सबडिवीजन में पदयात्रा के समाचार मिले हैं। ग्रामदान के प्रति वहां के लोगों में बहुत उत्साह है।

श्रीमती सुफला पंडित का निधन

सर्व सेवा संघ प्रकाशन के बिक्री विभाग के व्यवस्थापक श्री विष्णु पंडित की पत्नी श्रीमती सुफला देवी का ५ जून '६२ को अकस्मात आग से जलने के कारण, मृत्यु हो गई। उनकी जलने व मृत्यु की खबर सुनकर काशी का सर्वोदय परिवार शोक से स्तब्ध हो गया। श्री विष्णु पंडित श्रीमती सुफला को बचाने के प्रयत्न में जल गये और हास्पीटल में भर्ती हैं। श्रीमती सुफला देवी की आयु केवल २४ वर्ष की थी। हम मृतात्मा की शान्ति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करते हैं।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
एक अंक : १३ नये पैसे
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५९३ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९५३२
वार्षिक मूल्य ६)

25 JUN 1962

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार २२ जून '६२ वर्ष ८ : अंक ३८

भारत एकपक्षीय निरस्त्रीकरण कर विश्व के सामने आदर्श प्रस्तुत करे

परमाणु अस्त्र-विरोधी-सम्मेलन में डा० राजेन्द्रप्रसाद का सुझाव

त्रिदिवसीय आणविक अस्त्रशस्त्र निषेध सम्मेलन का उद्घाटन डा० राजेन्द्रप्रसाद ने नयी दिल्ली के विज्ञान-भवन में किया। सम्मेलन में करीब सौ प्रतिनिधि भाग ले रहे थे, जिनमें बारह विदेशी भी थे। विदेशी प्रतिनिधियों में भाग लेने वालों में प्रमुख हैं, श्री एबी पियरे, ए० जी० मस्ती, रेवरेण्ड डे० सोकुन तथा डोलसी। सम्मेलन के प्रथम दिन डा० राजेन्द्रप्रसाद, डा० राधाकृष्णन, श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, आर० आर० दिवाकर आदि वक्ताओं ने जो विचार प्रकट किये, उनका संक्षिप्त सार यहाँ प्रस्तुत कर रहे हैं।—सं०

डाक्टर राजेन्द्रप्रसाद ने सुझाव दिया कि भारत एकाकी रूप से निरस्त्रीकरण कर विश्वव्यापी निरस्त्रीकरण में परस्पर भय, सन्देह एवं अविश्वास का जो कुचक्र बाधक हो रहा है, उसे भंग करने में योग दे।

गांधी शांति-प्रतिष्ठान द्वारा आयोजित त्रिदिवसीय परमाणु अस्त्र विरोधी सम्मेलन का शुभारम्भ करते हुए राजेन्द्र बाबू ने कहा कि भारत को यह अपूर्व गौरव प्राप्त है कि उसने महात्मा गांधी के नेतृत्व में अहिंसात्मक ढंग से अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त की।

पारमाणविक अस्त्रों का एकमात्र सुनिश्चित उत्तर उच्च कोटि की अहिंसा ही है। आज सारी मानवता परस्पर भय एवं अविश्वास से जो ग्रस्त है, उससे बचने का एकमात्र तरीका यही है कि सभी राष्ट्र शस्त्रयोग का पूर्णतः परित्याग करें।

यदि यह सम्भव न प्रतीत हो, तो किसी एक देश को पूरे साहस के साथ एकाकी रूप में निरस्त्रीकरण करना चाहिये। ऐसा देश इतिहास में मानवता का कल्याण करने वाला माना जायगा और संसार उसे आक्रमण का शिकार न होने देगा।

यह तर्क अवश्य दिया जा सकता है कि यह सब कुछ एक ही बार में नहीं हो जायगा। इसमें समय अवश्य लगेगा। यह सही है कि कोई चलती गाड़ी से कूद नहीं सकता। शान्ति-प्रयास परिस्थिति के अनुरूप किया जा सकता है, किन्तु इसके लिए आवश्यक संकल्प तो होना ही चाहिये और साथ ही क्या किया जा सकता है, इसका स्पष्ट ज्ञान होना चाहिये।

जहाँ तक गांधी शा.वि.-प्रतिष्ठान का प्रश्न है, वह पूर्ण विशुद्ध अहिंसा का ही प्रतिपादन कर सकती है। तात्कालिक संकट की दृष्टि से वह इस प्रश्न पर किसी प्रकार का समझौता नहीं कर सकती और शांति-स्थापना के लिए भी अन्य मार्ग का समर्थन नहीं कर सकती।

गांधीजी ने अहिंसा का जो मार्ग दिखाया था, वह उस विपरीत मार्ग से, जिसपर आज संसार चल रहा है, अधिक कठिन नहीं है। गांधीजी के मार्ग में आवश्यकता है केवल दूर दृष्टि, विश्वास एवं दृढ़ निश्चय और पुराना मार्ग छोड़कर नया पथ प्रशस्त करने की। नया मार्ग न केवल वर्तमान पीढ़ी का ही भला करेगा वरन् भावी असंख्य पीढ़ियों का कल्याण करेगा।

परमाणु बम की विनाश शक्ति की चर्चा करते हुए राजेन्द्र बाबू ने कहा कि ऐसा प्रतीत होता है कि बल प्रयोग एवं हिंसा के चक्र का चक्कर पूर्ण होकर इसकी निरर्थकता प्रमाणित हो रही है। यदि मनुष्य में बुद्धि है, तो उसे सर्वनाश की दिशा में भागने की वर्तमान तेज दौड़ न केवल बन्द करनी होगी, वरन् उसे विपरीत दिशा में बढ़ना भी होगा।

पारमाणविक अस्त्रों के परीक्षणात्मक विस्फोटों से केवल युद्धरत राष्ट्र ही प्रभावित नहीं होते वरन् युद्ध से सम्बन्ध न रखनेवाले एवं तटस्थ राष्ट्र भी प्रभावित होते हैं। यह उल्लेखनीय है कि पारमाणविक युद्ध होने पर तटस्थ राष्ट्रों को युद्धरत राष्ट्रों की तुलना में ५ से १० प्रतिशत क्षति अवश्य होगी।

स्वच्छ परमाणु बम अर्थात् जिनसे रेडियो सक्रिय धूल की वर्षा न हो, चर्चा करना प्रवंचना मात्र है। निश्चय ही ऐसे बम में स्ट्रोंनियम ९० तथा केसियम १३७ की मात्रा तो कम होगी, किन्तु कार्बन १४ कम न होगा जिसका नाश बहुत ही धीरे धीरे होता है। इसका प्रभाव हजारों वर्षों तक रहेगा तथा इसका प्रजनन पर हानिकर प्रभाव पड़ता रहेगा।

यदि पारमाणविक अस्त्रों के निर्माण की दौड़ न रोकी गयी, तो उसके तीन ही सामान्य परिणाम हो सकते हैं—

१—पश्चिमी एवं कम्युनिस्ट राष्ट्रों में पारमाणविक युद्ध प्रारम्भ हो सकता है, जिससे व्यापक रूप से दोनों ओर की जनता का विनाश होगा, सभ्यता का अन्त होगा तथा सारा संसार रेडियो सक्रिय निर्जीव

"आप बिना संकोच के सारे संसार में यह घोषणा कर दें कि मैं आणविक बम के व्यवहार को पुरुष, स्त्री और बच्चों के लिए सामूहिक रूप से नाश का यंत्र समझता हूँ।"

—महात्मा गांधी

यह वह वाक्य है, जो आणविक-शस्त्रास्त्र-निषेध सम्मेलन के सिंहद्वार पर लकड़ी के अक्षरों में एक बोर्ड पर लगा हुआ था।

अणु परीक्षण घातक : विरोध में संयुक्त मोर्चा बनाने को राजाजी की अपील

श्री राजगोपालाचारी ने परमाणु अस्त्र विरोधी सम्मेलन में भाषण करते हुए कहा कि वैज्ञानिकों की बारम्बार चेतावनी के बावजूद परमाणु परीक्षणों का जारी रहना अत्यन्त निन्दनीय है।

प्रमुख वैज्ञानिकों ने साफ से साफ भाषा में संकेत किया है कि पारमाणविक परीक्षण संसार के स्वास्थ्य और अगली पीढ़ियों के लिए बहुत ही खतरनाक है। जो भी मकसद या जरूरत हो, शीतयुद्ध के राष्ट्रों को संसार के स्वस्थ रहने का

(शेष पृष्ठ दो पर)

सम्मेलन में प्राप्त कुछ विशेष संदेश

विनोबा

यदि विज्ञान अध्यात्मवाद के अन्तर्गत काम करे तो पृथ्वी पर स्वर्ग स्थापित हो सकता है, पर यदि विज्ञान अध्यात्मवाद के विरुद्ध काम करे, तो संसार का पूर्ण रूप से विनाश हो जायगा।

बर्ट्रेण्ड रसेल

"मैं चाहता हूँ, तटस्थ राष्ट्रों के द्वारा इस मामले में जोरदार नेतृत्व हो।"

प्रो० ट्वायनबी

"अहिंसा द्वारा ही नाश को बचाया जा सकता है।"

अहिंसा से युद्ध-समस्या हल की जाय

—डाक्टर लोहिया

१६ जून को गोरखपुर में समाजवादी नेता डाक्टर राममनोहर लोहिया ने परमाणु-विरोधी सम्मेलन की चर्चा करते हुए कहा कि इस सम्मेलन में गांधीवादी कहानेवाली सरकार में अहिंसा की समस्या सुलझाने का प्रयास होना चाहिए।

संवाददाताओं के सामने भाषण करते हुए डाक्टर लोहिया ने कहा कि सम्मेलन में विश्व के निरस्त्रीकरण तथा गांधी विचारधारा के समर्थक महान् व्यक्ति

(शेष पृष्ठ दो पर)

प्रदेश हो जायगा।

२—अथवा जैसा बर्ट्रेण्ड रसेल ने बताया है—स्पर्धारत राष्ट्र आकाशीय पिण्डों पर प्रहार करने एवं अधिकाधिक शक्तिशाली पारमाणविक विस्फोट कर अपनी शक्ति प्रदर्शन करने में कहीं आकाशीय पिण्डों का संतुलन न बिगाड़ दें !

३—पारमाणविक अस्त्रों में श्रेष्ठता प्राप्त करने में पागलपन की दौड़ में सम्बद्ध राष्ट्रों का दिवाला निकल जाय और उससे सारा संसार भयाक्रान्त गन्दी बस्ती का रूप न ग्रहण कर ले !

राजेन्द्र बाबू ने कहा कि दोनों प्रमुख गुटों का जो मुख्य झगड़ा है, वह यह है कि कम्युनिस्ट ढङ्ग से संसार प्रभावित होगा अथवा अन्य तरीके से ! पारमाणविक अस्त्रों से किसी एक पक्ष की विजय होने के बजाय मानव मात्र का ई विनाश हो जा सकता है।

अणु-परीक्षण घातक

[पृष्ठ १ कालम १ का शेष]

अधिकार छीनने का कोई हक नहीं है। इस सिलसिले में राज्यों के खरीदे प्रतिनिधियों और वैज्ञानिक प्रशासकों की अपेक्षा जाने-माने महान् वैज्ञानिकों की राय अधिक माननीय होनी चाहिए।

'अप्रैल १९५७ में भारत के प्रधान मन्त्री ने खुले-आम सवाल उठाया था कि क्या पारमाणविक राष्ट्रों को संसार के अन्य भागों के ऊपर रेडियोधर्मिता फैलाने का अधिकार है ? पांच वर्ष बीत गये हैं और मानव जाति के अधिकार मान्य किये जाने के बजाय इस अवधि में प्रभूत मात्रा से विषाक्त रेडियोधर्मिता फैलायी गयी है।

यह पूछते हुए कि अब अन्तर्राष्ट्रीय कानून कहाँ है, राजाजी ने कहा कि अमेरिका के न्यायाधिकार क्षेत्र में समूचे संसार के आ जाने पर भी घरेलू कानून के अन्तर्गत पृथ्वी और आकाश को विषाक्त करने वाले ये परीक्षण दण्डनीय माने जायगे।

हिटलर के सभ्यता-शत्रु बन जाने पर कम्युनिस्ट तथा गैरकम्युनिस्ट देशों ने उसके विरुद्ध एक संयुक्त मोर्चा बना लिया था। पारमाणविक आतंक हिटलर से बहुत बड़ा आतंक है और सब शांतिप्रिय राष्ट्रों को इसके विरुद्ध संगठित होना चाहिये।

अहिंसा से युद्ध...

[पृष्ठ १ कालम ४ का शेष]

भारतीय गांधीवादियों से मिलकर विचार-विमर्श करेंगे। भारतीय गांधीवादी एक ओर पूर्ण निरस्त्रीकरण के समर्थक हैं, तो दूसरी ओर अन्य देशों से पुराने हथियारों को खरीदने के लिए छूट दे देते हैं। इस प्रश्न को सुलझाना इस सम्मेलन का कार्य होना चाहिये।

भारतीय गांधीवाद अब जिस स्थिति पर पहुँच गया है, उससे पता चलता है कि केवल भारत को छोड़कर विश्व के अन्य सभी भागों में गांधीवाद के समर्थक रह गये हैं। मैं स्वयं गांधीवादी हूँ। यद्यपि अधिकृत गांधीवादी इसको कम मानेंगे। उन्होंने आशा प्रकट की कि जिन समस्याओं का मैंने जिक्र किया है, उन्हें सुलझाने के लिए दिल्ली में होनेवाला परमाणु विरोधी सम्मेलन अवश्य प्रयास करेगा, यदि इस सम्मेलन में इन समस्याओं का समाधान नहीं हुआ, तो यह सम्मेलन केवल पानी में लकीर के समान होगा।

पारमाणविक विनाश से रक्षार्थ अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में महान् क्रांति जरूरी

• डा० राधाकृष्णन्

पारमाणविक-अस्त्र विरोधी सम्मेलन के सत्रारम्भ में राष्ट्रपति डाक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन् ने अपने भाषण में कहा—यदि विश्व को पारमाणविक संहार से बचाना है, तो अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धों के व्यवहार में महान् क्रान्ति करना आवश्यक होगा।

आपने आगे कहा—मानव आज इतिहास के महान् चौराहे पर खड़ा है। विश्व के सभी राष्ट्रों को चाहिये कि वे कानून की मान्यता के समक्ष नतमस्तक हों और संयुक्त राष्ट्रसंघ में प्रतिष्ठित शान्ति के सिद्धान्तों का पक्ष ग्रहण करें।

राष्ट्रों के पार्थक्य की भावना अब असामयिक हो चुकी है और समय आ गया है कि लोगों को 'विश्व-समाज' के रूप में विचार करना चाहिये। यदि हम राष्ट्र-विरोधी एवं समाज-विरोधी तत्वों को दबाने के लिए राष्ट्रीय सुरक्षा सेना रखते हैं, तो विश्व-सस्था के पास भी अन्तरराष्ट्रीय कानून के अवज्ञाकारी तत्वों को दबाने के लिए एक 'पुलिस-दल' होना ही चाहिये।

जिस समय पारमाणविक अस्त्रों की स्पर्धा बढ़ रही है, ऐसे समय कर्तव्य यही है कि अन्तर्राष्ट्रीय विवादों के निबटारे के साधन के रूप में स्वयं युद्ध का ही अस्तित्व समाप्त कर देने का प्रयत्न किया जाय।

पारमाणविक परीक्षणों का परिणाम केवल तात्कालिक ही नहीं वरन् दीर्घकालीन होता है। अतएव, भावी पीढ़ी की सुरक्षा का भरोसा केवल पूर्ण पारमाणविक निरस्त्रीकरण द्वारा ही सम्भव हो सकता है।

क्रोध, विभ्रम या तनाव, जिनसे पहले युद्धों की नौबतें आयीं, भविष्य में अब चलने नहीं दिये जा सकते। हम इस समय जो निश्चय करेंगे, उसी पर हमारा भविष्य का अस्तित्व या विनाश निर्भर करता है। यदि मानव की शान्ति विषयक दृढ़ अभिलाषा को व्यापक रूप धारण करना है, तो इतिहास को नवीन दिशा पकड़नी ही होगी।

यह दुर्भाग्य की बात है कि मानव आज क्रमशः अपना आत्मविश्वास खोता जा रहा है। अत्यन्त असहायावस्था की भावना में फँसकर लोग पीड़ित हैं। मानव बुराइयाँ नहीं चाहता, वरन् बुराइयाँ मानव के सिर सवार होकर उसके कलेजे में घुसकर उसे क्रमशः अभिभूत कर रही हैं। ऐसी दशा इसलिए उत्पन्न है कि व्यक्ति अपनी सहज तेजस्विता भूल बैठा है और वह अमूर्त शक्तियों (विकारों) का शिकार बन गया है। मानव-आत्मा की यह पराजय की दशा है।

यह कभी न भूलना चाहिये कि अभी तक मानव जो भी प्रगति कर सका है, वह आत्मा की स्वतन्त्र गतिविधि के ही बल पर, जिसने अतीत की जड़ताओं के विरुद्ध विद्रोह का भाव जागरूक रखा। किसी भी समाज के भीतर ऐसे लोगों का वर्ग लघु ही हुआ करता है, जो मानसिक दौर्बल्यों को पराभूत कर उस आत्मिक बल को जागरूक करता है, जो सर्वदा अजेय है।

जनता इस खामख्याली में न रहे कि मनुष्य का भविष्य केवल ऐतिहासिक शक्तियों की मुट्ठी में बँधा है और पूर्वनिर्धारित है। मानव का भविष्य प्रशस्त एवं उन्मुक्त है और उसमें कोई दुर्निवार्यता नहीं है।

आतंक युद्ध की चर्चा कर डाक्टर राधाकृष्णन् ने कहा—कम्युनिस्ट और कम्युनिस्ट विरोधी ये दोनों ही मनोविज्ञान के कथित 'मनोविभ्रम' के शिकार हैं, जिन्हें अपने विनाश का भय सता रहा है। ये दोनों ही एक-दूसरे की शिकायत करते हैं। एक के यहाँ स्वाधीनता नहीं है और दूसरे के यहाँ सामाजिक न्याय नहीं है। इन दोनों के झगड़े के बीच सही मार्ग पर हम लोगों को चलना चाहिए। चल ही रहे हैं और वही करते हैं जो सही है।

सोचने को तो सभी राष्ट्र यही सोचते हैं कि सही रास्ते पर हमीं चल रहे हैं और दूसरे का ही मार्ग सदोष है। पर, सत्य यह है कि कोई भी राष्ट्र अहंकार से शून्य नहीं। सभी दम्भ, क्रोध और अभिनिवेशों के दुर्गुणों के शिकार बने हैं।

विज्ञान ने विश्व को एक इकाई के रूप में ढाल रखा है। पिछले पाँच हजार वर्षों ने मनुष्य को कबाइली शृङ्खला से उठाकर राष्ट्रीयता के क्षेत्र में ला डाला। आज हमें ऐसे समीचीन, समन्वित और प्रभावशाली संयुक्त राष्ट्रसंघ के भीतर चलना है, जहाँ मानवमात्र के कल्याण की कामना के साथ राष्ट्रों की सहकार चले।

डा० राधाकृष्णन् ने अपने भाषण की समाप्ति में कहा—हमें मानव के सद्गुणों का भरोसा है कि वह पारमाणविक युद्ध जैसे पागलपन में फँसने को तैयार न होगा। भय और मिथ्यात्व की नहीं, वरन् विजय सत्य की होगी और प्रभाव पागलपन का नहीं वरन् विवेक का चलेगा।

गांधी-पथ के एक अथक पथिक—रामदेव बाबू

• गोपालकृष्ण मल्लिक

गांधी के उदय होते ही राष्ट्रीय जागृति के समुद्र-मंथन से जो रत्न निकल आये, रामदेव बाबू उन्हीं रत्नों में एक थे और बिहार में उनके रचनात्मक कार्यक्रम की गाड़ी को अपने कंधों पर ढोनेवाले एक कर्मठ कार्यकर्ता थे। लक्ष्मीबाबू, ध्वजाबाबू और रामदेव बाबू, यह त्रिमूर्ति ही बिहार में खादी-जगत् के मुख्य स्तंभ थी। दोनों दो सिरे के स्तंभ तो टूटकर ध्वस्त हो चुके, अब एक अकेले ध्वजाबाबू के मन की कातरता कौन समझे ! लक्ष्मीबाबू और ध्वजाबाबू तो दोनों एक ही परिवार से आये थे, पर रामदेव बाबू दूसरे परिवार से आकर भी ऐसे एक हो गये कि तीन शरीर एक प्राण हों। अग्रज लक्ष्मीबाबू का मार्ग दर्शन, ध्वजाबाबू की संचालन मन्त्रणा और रामदेव बाबू की कर्तव्य-पालन-तत्परता, ऐसी एक रस होकर चलती कि अद्भुत लगता। ऐसी विरल भावात्मक एकता, ऐसी अभिन्न आत्मीयता तो शायद ही लाखों में मिले। वे चले गये, किन्तु उनके जीवन के प्रेरणादायक गुण चिरकाल तक हमारा मार्गदर्शन करते रहेंगे। उस अथक पथिक का यह बिना थका जीवन बड़ा ही विलक्षण है।

सन् २९-३० का राष्ट्रीय उलट-पुलट का जमाना, साथ ही सामाजिक क्रांति का बिगुल भी गांधीजी ने बजा दिया था। कट्टर ब्राह्मणों के एक गाँव सिमरी को रामदेव बाबू ने अपना कार्यक्षेत्र बनाकर खादी आदि रचनात्मक कार्यों को हाथ में लेकर बैठ गये। गरीब ग्रामीणों ने चरखा तो झट अपना लिया, पर गांधीजी के सामाजिक क्रांति के कार्यक्रम पर वे बौखला उठे। कट्टर ब्राह्मण जो ठहरे ! छूत छात, जात पात, ऊँच-नीच, गरीब अमीर, ब्राह्मण-मोची के

[शेष पृष्ठ १२ पर]

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

युद्‌ध और भय से मुक्‌ती

आज अणु-बम के नीर्‌माण से संसार के सभी लोग डरने लगे हैं। सारे राष्‌ट्‌र के राष्‌ट्‌र डरते हैं। अमेरीका जैसा समृद्‌ध देश है, उसकी बराबरी का शायद ही कोअी दूसरा देश हो, पर समूचे अमेरीका को रूस का डर है, सारे समाज पर अेक डर छाया हुआ है। अीसी तरह रूस को अमेरीका का डर है, तो पाकीस्‌तान को हीन्‌दुस्‌तान का डर है, वे नीर्‌भय बनने का प्रयत्‌न कर रहे हैं। अेक जगह स्‌त्रीयों ने मुझसे पूछा की "अगर हम अपने हाथ लाठी रखें, तो आपका क्या मत है?" मैंने कहा: "अगर शस्‌त्र हाथ में रखकर डर कम होता है, तो बावजूद अीसके की मैं शस्‌त्र में वीश्‌वास नहीं रखता, कहूंगा की अवश्‌य शस्‌त्र रख सकती हो"।

कहा जाता है की "हीन्‌दुस्‌तान जैसे पूरे राष्‌ट्‌र को अंग्रेजों ने नीःशस्‌त्र बनाया। नतीजा यह हुआ की हीन्‌दुस्‌तानीयों के मन से डर गया; लेकीन अगर शस्‌त्र रखने से डर जाता है, तो अमेरीका में डर क्यों है? सारा अमेरीका आधुनीक अस्‌त्र-शस्‌त्रों से पूरी तरह सुसज्‌जीत है फीर भी वह डर रहा है। यानी डर तो मन में रहता है, फीर हाथ में शस्‌त्र रखें, तो भी वह अपने नहीं दूसरे के ही काम आयेगा। अेक मनुष्‌य बन्‌दूक लेकर सोया था। रात में चोर आये। वह अीतना डर गया की कुछ बोल ही न पाया। 'वह चोर आया' कहने के बजाय 'बन्‌दूक-बन्‌दूक' चील्‌लाने लगा। चोर ने उसकी बन्‌दूक ले ली, शस्‌त्र का फायदा उसे नहीं हुआ।"

मुंगेर
२०-१०-५३

—वीनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत ् चिह्न से।

सम्पादकीय

अपराध क्यों नहीं घट रहे हैं?

पुलिस विभाग की ओर से प्रकाशित होनेवाली रिपोर्टों से पता चलता है कि अपराधों की संख्या में दिन दिन वृद्धि होती चलती है। उच्च सरकारी अधिकारी भी समय समय पर घोषणा करते रहते हैं कि अपराधों की संख्या घट नहीं रही है, बढ़ रही है। सभी जानते हैं कि अनेक अपराध तो पुलिस की डायरी में दर्ज ही नहीं होते और ऐसे अपराधों की संख्या रिपोर्ट किये गये अपराधों से कम नहीं होती। स्पष्ट है कि अपराध बढ़ते ही चल रहे हैं। घटने का नाम ही नहीं लेते।

अपराधों के इस तरह बढ़ते चलने का कारण क्या है? हाल में मसूरी में रोटरी क्लब में भाषण करते हुए प्रयाग हाईकोर्ट के भूतपूर्व जज श्री ए० एन० मुल्ला ने इस पर प्रकाश डालते हुए कहा कि अपराधों की संख्या न घटने का एक बहुत बड़ा कारण यह है कि बहुत से राजनीतिक लोग अपराधियों के साथ मिले रहते हैं। ये लोग व्यापारी और दूसरे लोगों को अपराध करने की सुविधा देते हैं और उससे अपना उल्लू सीधा किया करते हैं। श्री मुल्ला का कहना है 'सफेदपोश' अपराधी जब राजनीतिक लोगों से मिलकर काम करता है, तो पुलिस उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाती। जब तक सरकारी स्तर पर इस कुप्रवृत्ति को रोका नहीं जायगा, तब तक स्थिति में किसी प्रकार का सुधार होने की कोई आशा नहीं। यदि जनता इस संकट से मुक्त होना चाहती है, तो उसे इस प्रकार के राजनीतिज्ञों के कारनामों का पर्दाफाश करना पड़ेगा। श्री मुल्ला ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि जमाना तो बदला है, पर पुलिस का रवैया नहीं बदला है। वह आज भी पुराने तरीकों से ही सारा काम करती है। अपराधी की बुद्धि का तो विकास हुआ है, पर पुलिस अधिकारियों की बुद्धि का कोई विकास नहीं हुआ है। अपराधों की संख्या में जिस तीव्र गति से वृद्धि हुई है, उस अनुपात में पुलिस की संख्या में वृद्धि नहीं हुई है। पुलिस में कर्मचारियों को वेतन भी कम मिलता है, आदमी भी अच्छे नहीं रहते, उनके हाथ में शस्त्रास्त्र भी भरपूर नहीं रहते, उनकी शिक्षा-दीक्षा भी ठीक ढंग से नहीं होती। इसके अलावा मुकदमों की सही जाँच पड़ताल में पुलिस दिलचस्पी नहीं रखती, वह झूठी शहादतें तैयार करने में ही पूरा जोर लगाती है। निरपराध लोग फँस जाते हैं और अपराधी छूट जाते हैं। श्री मुल्ला का कहना है कि 'सफेदपोश' अपराधियों की समस्या बड़ी विकट है। नये कानूनों के कारण नये प्रकार के अपराधी बनते हैं। ये लोग दिन दहाड़े कानून की आँखों में धूल झोंकते हैं। शानदार कपड़े पहनते और कारों में घूमते हैं। आज यह कहना मुश्किल है कि कौन आदमी कानून का पालन करता है, कौन उसका भंग करता है।

जिस व्यक्ति को जीवन भर अपराधियों से ही वास्ता पड़ा और जो अपराधों की ही तह में घुसने का सदा प्रयत्न करता रहा, उसके ये विचार अनेक अंशों में सही माने जा सकते हैं। अपराधों की बढ़ती हुई संख्या देश के प्रत्येक नागरिक के लिए चिन्ता का विषय है। श्री मुल्ला ने अपने जीवनव्यापी अनुभव के आधार पर यह बताया है कि अपराधों के बढ़ने में राजनीतिक लोगों का, 'सफेदपोश' अपराधियों का और सामान्य अपराधियों का बहुत बड़ा हाथ है। ये लोग जब मिल जाते हैं, तो पुलिस कुछ कर नहीं पाती। दूसरे, पुलिस की शक्ति और क्षमता भी सीमित है। अन्य उन्नत देशों की भाँति उसके पास अपराधों का पता लगाने के पर्याप्त साधन भी नहीं हैं। ये तमाम कारण तो हैं ही, इनके अलावा और भी कितने ही कारण हैं, जिनसे अपराधों की संख्या घटने का नाम नहीं लेती।

चम्बल घाटी जैसे क्षेत्रों में हमने देखा है कि पुलिस की बड़ी-बड़ी रेजीमेंटें पड़ी रहती हैं, फिर भी डकैतियों की संख्या में कोई कमी नहीं आती। अपराधियों को आधुनिकतम शस्त्रास्त्र उपलब्ध हो जाते हैं। लोग शिकायत करते हैं कि पुलिस भी अपराधियों से मिली रहती है। अपराधी मूँछों पर ताव देते घूमा करते हैं और निरपराध लोग झूठे मुकदमों में फाँस दिये जाते हैं। राजनीतिक दलों के लोग अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए अपराधियों का उपयोग करते हैं। सही बात जबान पर लाने का लोगों में साहस नहीं है—इन सब बातों का परिणाम हमारे सामने है।

राजनीतिज्ञों और सफेदपोश अपराधियों की जब तक 'मिली भगत' रहेगी, पुलिस जब तक अपने कर्तव्य के प्रति जागरूक न होगी, जनता जब तक हिम्मत के साथ अन्याय और असत्य का विरोध नहीं करेगी, तब तक यह स्थिति सुधरनेवाली नहीं। ये सारे हिंसा के प्रकार हैं। हिंसा से, असत्य से कभी भी समाज में सुख और शांति की स्थापना हो नहीं सकती। अपराधों की वृद्धि रोकने के लिए अपराधों के मूल में प्रवेश करना होगा। विनोबा ठीक ही कहते हैं कि 'यदि चोर को जेल की सजा दी जाती है, तो संग्रह करनेवाले सेठ को भी जेल की सजा क्यों नहीं दी जाती? एक को हम जेल में ठूँसते हैं, दूसरे को गद्दी देते हैं। यह गलत है।' समाज तभी सुख और शान्ति प्राप्त कर सकता है, जब अस्तेय के साथ अपरिग्रह की भी प्रतिष्ठा हो। आज के असंख्य अपराधों का कारण समाज की विषम परिस्थितियाँ ही हैं। समाज में पैठे गलत मूल्य जब तक बदले नहीं जायेंगे, तब तक अपराधों की यह वृद्धि रोकी नहीं जा सकती। हिंसा से हिंसा का उन्मूलन, असत्य से असत्य का उन्मूलन असम्भव है। उसके निवारण के लिए अहिंसा और सत्य का आश्रय लिये बिना चारा ही नहीं है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

रामदेव बाबू की मृत्यु से देशभर को क्षति

—डा० राजेन्द्रप्रसाद

[श्री रामदेव बाबू की मृत्यु की खबर पाकर भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्रप्रसाद जी ने निम्नलिखित शोकोद्‌गार प्रगट किये हैं।]

"मैंने कल सुना कि श्री रामदेव ठाकुर की अचानक मृत्यु हो गयी, तो मैं सन्न होकर रह गया। मैं उनको विधायक कार्यक्रम के सम्बन्ध में सन् १९१९ से जानता आया हूँ और बराबर मेरी यही धारणा उनके सम्बन्ध में रही है कि चाहे जो भी काम हो और जितना भी कठिन हो, अगर उनके जिम्मे कर दिया, तो वह उसको पूरा करके ही छोड़ेंगे। इसलिए विधायक कार्यों में जो कठिन से कठिन काम हुआ करता था, वह उनको दिया जाता और जिस मुस्तैदी और उत्साह के साथ वह उस काम को किया करते वह अत्यन्त उदात्त हुआ करता था। शरीर से स्वस्थ, कसरती और परिश्रम में अथक, हम उनमें इन्हीं गुणों को बराबर पाते आये हैं और इसलिए जब अचानक उनकी मृत्यु का समाचार मिला, तो मुझको पहले तो विश्वास नहीं हुआ, क्योंकि उनकी बीमारी की कोई खबर मुझे पहले नहीं मिली थी। मैं इस समय इतना ही कह सकता हूँ कि उनकी तरह का कर्मठ, लगनवाला, काम करनेवाला मिलना बहुत ही कठिन है। प्रान्त ने उनके निधन से एक विशिष्ट कार्यकर्ता खोया है और देशभर को क्षति हुई है।

"मैं उनके परिवार को समवेदना भेजता हूँ और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि उनकी आत्मा को शांति प्राप्त हो। जैसे मैंने पहले कहा, उनके निधन से जो क्षति पहुँची है, उसकी पूर्ति असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है, पर ऐसे मामले में चारा ही क्या हो सकता है।"

समाज-सेवा के मूलतत्त्व

डा० जाकिरहुसेन

सामाजिक कार्य अथवा समाज-सेवा में लगने के साथ ही व्यक्ति को आत्म-हित नहीं भूलना चाहिए। हमारा अपना व्यक्तित्व-आत्मरव किसी भी हालत में महत्त्वहीन नहीं हो सकता। वास्तव में किसी भी सेवा-कार्य के प्रारंभ करने के पूर्व उसमें हमें अपने हिताहित का विचार कर लेना चाहिए। स्वहित की दृष्टि में से नैतिकता का उदय होता है और नैतिकता कल्याण की जननी है। कल्याण-कार्य कभी भी बुरा तो हो ही नहीं सकता। वह हितकर ही होगा और कभी तो बहुत ही हितकर होगा, किन्तु मेरा खयाल है कि उसका हितकर होना ही पर्याप्त नहीं, यद्यपि उसका हितकर होना अनिवार्य भी है और निर्विवाद भी।

यदि आप अपने आस-पास देखें तो आपको कई लोग भलाई के काम में लगे दिखायी देंगे; किन्तु उनके पीछे उनके मन में कुछ-न-कुछ बुरा लक्ष्य छिपा होगा। ऐसा दिखावटी भलाई का काम मुँह में राम, बगल में ईंट रखने के समान होगा। इससे इतना तो बिल्कुल स्पष्ट हो जाना चाहिए कि नैतिक दृष्टि से इसे स्वस्थ स्थिति नहीं कहा जा सकता।

> यदि सच्ची सेवा करना हो तो हमें अपनी प्रकृतिदत्त क्षमताओं का सम्पूर्ण विकास करने के लिए कठिन श्रम, सतत साधना और शुद्ध निष्ठा जगानी होगी। सतत जागृत प्रार्थना और पूर्ण साधना के द्वारा अपने आपको सेवा के योग्य बनाना होगा, अपनी इच्छा-शक्ति को दृढ़, विवेक शक्ति को शिक्षित, दृष्टि को व्यापक, अपने प्रति प्रामाणिक रहना और शुद्ध आत्म-स्वरूप बनना सीखना होगा। यदि हम सेवा का कार्य अपने से प्रारम्भ नहीं करते, तो सेवा भी दया के समान ही असम्बद्ध, शिथिल और शक्ति का अपव्यय मात्र बनकर रह जायगी।

अपने आप से प्रारंभ करें

कहा गया है कि सच्चा जीवन सेवा है, वह एक 'मिशन' है, एक उपासना है यह ठीक है। किन्तु यह 'मिशन', जैसा कि अक्सर मान लिया जाता है, अपनी उपेक्षा करके दूसरों के लिए ही काम करते रहने में नहीं होता। उसका केवल दूसरों ही दूसरों के लिए होना जरूरी नहीं है। यदि हममें सेवा करने की महत्त्वाकांक्षा है, तो हम यह न सोचें कि कि हमें दूसरों की ही सेवा करनी है, उस सेवा का हमसे कुछ भी संबंध नहीं है। यह ठीक नहीं है। यदि हम सेवा का कार्य अपने से प्रारम्भ नहीं करते, तो सेवा भी दया के समान ही असम्बद्ध, शिथिल और शक्ति का अपव्यय मात्र बन कर रह जायेगी। यदि सच्ची सेवा करनी हो, और इस तरह की महत्त्वाकांक्षा रखना उचित है—यदि जीवन-मंदिर का सच्चा पुजारी बनना हो, तो हमें अपनी प्रकृतिदत्त क्षमताओं का संपूर्ण विकास करने के लिए कठिन श्रम करना होगा, सतत साधना करनी होगी, सफल सेवक बनने की शुद्ध निष्ठा जगानी होगी, सतत जागृत प्रार्थनापूर्ण साधना के द्वारा अपने आपको सेवा के योग्य बनाना होगा, अपनी इच्छा-शक्ति को दृढ़ करना होगा, अपनी विवेक शक्ति को शिक्षित करना होगा और अपनी दृष्टि को व्यापक करना होगा, हमें अपने प्रति प्रामाणिक रहना एवं शुद्ध आत्म-स्वरूप बनना सीखना होगा।

शुद्ध निस्वार्थ समाज-सेवक बनने के लिए हमें अपने आपको भी सुधारना है, इस केन्द्र-बिन्दु की ओर अपने जीवन की भाग-दौड़ में कभी-कभी हम दुर्लक्ष्य कर जाते हैं।

यह काम सफलतापूर्वक कैसे किया जाय? मेरे विचार से एक ही रास्ता है और वह यह कि जिन्दगी की अनगिनत भूलों के बावजूद हम अपने उपयोग के लिए अपने अनुरूप मूल्यों का, लक्ष्यों का, हितों का शोध करने का आग्रह रखें तथा शुद्ध और सरकारी बनने का समझ-बूझ के साथ प्रयत्न करते रहें। बौद्धिक विकास, नैतिक ज्ञान और सफल सेवा से परिपूर्ण जीवन बिताने के लिए हमारा सबसे पहला काम यह है कि हम अपने मानसिक और नैतिक मूल्यों का पता लगा लें। अपने मूल्यों, लक्ष्यों और हितों के अनुरूप स्वरूप का पता लगाकर ही हम अपने प्रकृत व्यक्तित्व को चरित्र का रूप दे सकते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि उसके लिए हमें अपने मूल व्यक्तित्व की विशेषताओं का पता लगाना होगा, अपनी प्रकृत क्षमताओं का, सावधानी तत्परता एवं प्रार्थनापूर्वक विकास साधना होगा। उनके अन्तर्द्वन्द्वों का परिहार करते हुए एवं विविध महत्त्वपूर्ण तत्त्वों के बीच सुसमन्वय स्थापित करके आवश्यक और अनावश्यक रूपों के बीच भेद करके हमें अपना सुसम्बद्ध सर्वांगीण विकास करना होगा। विविध महत्त्वपूर्ण तत्त्वों के बीच समन्वय स्थापित करने का काम कठिन तो है किन्तु फलप्रद है।

चरित्र और व्यक्तित्व

व्यक्ति की विशिष्टता उसका चरित्र है। परन्तु उस चरित्र का कोई नैतिक महत्त्व नहीं होता। वह अच्छा भी हो सकता है और बुरा भी। जड़, अपराधी, महान् डाकू और महान् सन्त सबका चरित्र होता है। चरित्र में जब लोकोपयोगी वाञ्छनीय नैतिक मूल्य पैदा किया जाता है, तभी वह नैतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हो सकता है। इसलिए कहने का आशय यह है कि हमें स्वतः चरित्र का संबंध जीवन के लोकोपयोगी उच्च मूल्यों के साथ जोड़ने का लक्ष्य सिद्ध करना है। महान् मूल्यों के प्रति समर्पण की भावना चरित्र को शुद्ध व्यक्तित्व का रूप प्रदान करती है। व्यक्तिगत गुणों की सीमा से चरित्र की सीमा में गुजरते हुए समुचित लक्ष्यों की सेवा में सम्पूर्ण व्यक्तित्व तक पहुँचना, मैं मानता हूँ, यही जीवन का राजमार्ग है।

यहाँ मैं शायद व्यक्ति को अनुचित महत्त्व दे रहा हूँ, इसलिए अपनी बात को स्पष्ट कर दूँ। महान् मूल्यों की ओर लगाव पैदा हो जाने पर उनमें अपने आपको संपूर्ण रूप से डुबाना पड़ता है। यह ऐसी प्रक्रिया नहीं कि जिसका रूप कहीं कुछ और कहीं कुछ हो। एक जगह हम अनैतिक व्यापार करें, दूसरी जगह नैतिकता बरतें, एक जगह अनुचित मुनाफा लें, दूसरी जगह बड़े-बड़े दान दें, एक जगह हृदयहीन क्रूरता करें और दूसरी जगह अत्यधिक करुणा बरसायें, एक जगह स्वच्छन्द लालच हो, दूसरी ओर अतिप्रशंसित उदारता हो, एक जगह उस कुशलता को मान दें जिसका जीवन मूल्यों से कतई संबंध न हो, और दूसरी जगह ऐसे मूल्य रखें, जिनमें कुशलता की आवश्यकता ही न पड़ी हो और यहाँ मुख्य बात हमें यह याद रखनी है कि जिस समाज में हम रहते तथा घूमते-फिरते हैं, उससे हमारा जितना गहरा संबंध होगा उतनी ही हमारे डूबने में गहराई होगी। व्यक्ति और समाज के बीच की यह जगमगाती हुई जंजीर, यह रेशम की डोर ही उसे जीवन की भूलभुलैया से निकलने का साधन है। इसमें यह स्वीकृति निहित है कि जिस व्यक्ति के संबंध में हम अब तक सोचते आये हैं, उसका पूर्ण विकास तब तक नहीं हो सकता, जब तक जिस समाज में वह रहता है, उसका उतना ही विकास नहीं हो जाता।

व्यक्ति और समाज

जो व्यक्ति में उत्तमता चाहता है, उसे प्रायः अनिवार्य रूप से अपने समाज को उत्तम बनाना होगा एवं अपनी उत्तमता की खोज समाज में करनी होगी। यदि व्यक्ति अपने ही मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक उत्कर्ष की ओर दुर्लक्ष्य करके अपने ही व्यक्तिगत संस्कारी जीवन की महान् इमारत की रचना में लगा रहे, तो उसे अपना आध्यात्मिक विकास करने में कितनी सफलता मिलेगी, यह शंकास्पद है। किन्तु जैसा वह करता है वैसा ही प्रायः समाज भी करेगा और उस हालत में व्यक्ति के संस्कार और विकास के मार्ग भी वीरान भूमि की ओर से जानेवाली अंधकारपूर्ण, भयानक सँकरी गलियाँ बन जायँगी। और तब केवल अपने आपका ध्यान रखनेवाला उच्च कोटि का आध्यात्मिक व्यक्ति शायद अपने आपको वीरान भूमि की किसी ऐसी चट्टान पर बैठा पायेगा, जहाँ कोई भी उस तक जाने की हिम्मत नहीं कर सकता। उस स्थिति में उसे अपने क्षुद्र व्यक्तित्व से महान् कोई नहीं दिखायी देगा। किन्तु यह स्थिति ठीक नहीं। जैसे व्यक्ति की उत्तमता के लिए समाज की उत्तमता आवश्यक है, उसी तरह समाज की उत्तमता के लिए व्यक्ति की उत्तमता आधारभूत है। व्यक्ति के विकास के लिए जरूरी है कि समाज अपने में सहकार की भावना, जिम्मेदारी उठाने की भावना, गरजमन्दों की गरज पूरी करने की व्यापक भावना पैदा करे और न्यायपूर्ण समाज रचना, शुद्ध राजनीतिक जीवन और समान लोकहित की भावना से ओतप्रोत प्रामाणिक लोकतांत्रिक नेतृत्व का दर्शन कराये।

व्यक्ति और समाज की अन्योन्याश्रयता का यह सिद्धांत यदि शब्दों की सीमा में ही रहा और व्यवहार में नहीं आया, तो सिद्ध नहीं होगा। सिद्धि के लिए उस पर अमल करना होगा। क्योंकि जैसे तैरना सीखने के लिए तैरना पड़ता है उसी तरह सेवा करना सीखने के लिए सेवा करनी पड़ती है। नीतिपरायण राज्य में संपूर्ण नैतिक व्यक्तित्व का निर्माण होता है। लोकतांत्रिक समाज में सच्चे नीतिपारायण राज्य का निर्माण करने में सहायता करना अन्य कर्तव्यों के समान ही महत्त्वपूर्ण और आवश्यक कर्तव्य है। इसके लिए हमें भारतीय गणराज्य में व्यक्ति और समाज के मूलभूत संबंधों को सुधारना एवं परिष्कृत करना होगा। हमें मूल्यों का समान स्तर बनाना होगा, समान राष्ट्रीय भावना पैदा करनी होगी, राज्य कारोबार में उच्चकोटि की प्रमाणिकता का आग्रह रखना होगा, वैधानिक शासन को यथार्थ बनाने का आग्रह रखना होगा तथा इस बात की भी खातरी करनी होगी कि राजनीतिक दलों का, जिनका राष्ट्रीय जीवन के निर्माण में अत्यधिक महत्त्व बढ़ता जा रहा है, व्यवहार ऐसा रहे कि जब भी उनमें अनुचित लाभ उठाने की अनीतिपूर्ण भावना पैदा हो और उसका विरोध किया जाय, तो वे उस विरोध को दबा न सकें।

लेखांक : ३

जनाधार के प्रयोग और अनुभव

• धीरेन्द्र मजूमदार

मैंने पहले लिखा था कि ऐसे समय में अगर हम लोग बीच में पड़ते तो शायद स्थिति सम्पूर्ण भिन्न होती। मैं वहाँ मौजूद होता तो क्या करता, कह नहीं सकता। हो सकता है कि कुछ मानस को देख कर मैं ऐसा ही निर्णय करता कि नरेन्द्र जाकर काटने से उन्हें रोक दे। लेकिन नरेन्द्र भाई ने पूर्वनिश्चित नीति के अनुसार ही काम किया। पिछले एक पत्र में मैंने लिखा था कि काफी विचार के बाद मैंने समझा कि जो हुआ है, ठीक हुआ है।

ग्रामसेवक क्या करें

ग्रामसेवक प्रश्न करेंगे कि ऐसे मौके पर वे क्या करें! क्या जनता के अभिक्रम और नेतृत्व स्वावलम्बन के विचार पर स्थिर रह कर काम बिगड़ने दें या ऐसे मौके पर परिस्थिति को अपने हाथ में लेकर सँभाल लें। अगर छोड़ देते हैं तो काम बिगड़ता है। अगर सँभालते रहते हैं, तो गाँव के लोग निश्चिन्त हो जाते हैं और जनाधार के लक्ष्य की ओर प्रगति नहीं होती है। एक तरीके से गाँव के लोग खड़े नहीं होते हैं और दूसरे तरीके में काम बिगाड़ कर भी गाँव के लोगों को खड़े करने की कोशिश है। लेकिन एक बात पर निश्चित ख्याल करना होगा कि काम स्थायी रूप से न टूटने पाये। उपर्युक्त परिस्थिति में अगर नरेन्द्र भाई काटने से रोक देते और तय करने के लिए गाँव वालों से कहते कि वे सभा करके तय करें तो वह ज्यादा अच्छा होता। साधारण क्षेत्रों में ऐसी परिस्थिति के अवसर पर वैसा ही करना ठीक होता है। लेकिन वहाँ पर हम लोग जनाधार के मामले में कुछ अधिक सावधान रहते थे। उसका कारण बलिया की विशिष्ट परिस्थिति थी। वह यह कि बलिया के लोगों ने यह मानकर ही हमको आमंत्रित किया था कि हम बाहर से साधन लाकर गाँव की तरक्की कर देंगे।

जनाधार की भावना का विकास तथा मेरे जरिये प्राप्ति की भावना को तोड़ने का काम दोनों हमारे सामने था। इसलिए मैंने समझा कि अच्छा ही हुआ कि गाँव के लोगों को ही फिक्र करनी है, इस बात पर हमारा आग्रह है, यह वे अच्छी तरह से समझेंगे। वस्तुतः ऐसे-ऐसे मौके पर कार्यकर्ता क्या करे, इस पर जनशक्ति के विकास का भविष्य निर्भर करता है। सेवक यदि गाँव की मानसिक परिस्थिति के आधार पर सही निदान कर अपनी नीति तय करते हैं तो वे सफल होते हैं और ऐसे मौके पर एक गलत निर्णय से सारा काम टूट सकता है। ग्रामसेवक को अपने अन्दर ऐसी परिस्थिति के लिए निर्णय करने की बुद्धि का विकास करना होगा, जो कि अनुभव से ही मिल सकता है। बलिया में इस प्रसंग की प्रतिक्रिया में से खड़ी फसल की काफी बर्बादी हुई, जिस कारण परिस्थिति को सुधारने में मुझको काफी मेहनत करनी पड़ी।

इस प्रसंग के सन्दर्भ में सर्वोदय-सेवक का काम करने का 'एप्रोच' क्या होना चाहिए, उस पर थोड़ा विचार कर लेना अच्छा होगा।

सबसे पहले सेवक को अपने मन में इस बात का स्पष्टीकरण कर लेने की जरूरत है कि सेवा के जरिये वे पहुँचना कहाँ चाहते हैं यानी उनका लक्ष्य क्या है? दोनों प्रकार का लक्ष्य हो सकता है: विकास और क्रान्ति।

• देश आजाद हुआ। एक हजार वर्ष की गुलामी के कारण जनता में कोई होश नहीं है। ये गरीब हैं, साधनहीन हैं तथा जो साधन हैं, उन्हें इस्तेमाल करने की योग्यता का भी इनमें अभाव है। आजाद तथा पिछड़े मुल्क के नेता तथा सरकार का कर्तव्य है कि वह देश की हालत सुधारें। आर्थिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक सुधार की योजना बनाये और उसे आगे बढ़ाये। सरकार की शक्ति दण्ड शक्ति होती है। उस शक्ति से समाज के आंतरिक विकार का नियन्त्रण हो सकता है। कर लगा कर साधन बटोरा जा सकता है। उस साधन को विकास के काम के लिए उपलब्ध भी कराया जा सकता है। ठेल कर उन्हें कुछ काम में भी लगाया जा सकता है। लेकिन दण्ड-शक्ति द्वारा किसी काम के लिए दिलचस्पी पैदा नहीं कराई जा सकती। इसलिए राष्ट्रीय विकास के काम के लिए स्वतंत्र तथा लोकप्रिय सेवक और संस्थाओं की जरूरत होती है, जो सरकारी विकास कार्य में मदद करें। सेवक का एक लक्ष्य इस काम को आगे बढ़ाना हो सकता है। दूसरा लक्ष्य यह है कि सेवक मानता है कि अहिंसक समाज की स्थापना के लिए समाज में कामकाज के लिए दण्ड-शक्ति के विकल्प में कोई स्वतंत्र तथा अहिंसक शक्ति खड़ी करनी है। वह शक्ति स्वभावतः जनता की स्वतंत्र तथा निरपेक्ष शक्ति ही हो सकती है।

अगर साध्य निरपेक्ष शक्ति का विकास है तो निस्सन्देह उसके लिए साधन भी दण्ड-निरपेक्ष होना चाहिए। दण्डशक्ति के लिए सामाजिक शक्ति कानून होती है और आर्थिक शक्ति 'टैक्स' की। तथा कानून और टैक्स की व्यवस्था करने वाला एक सेवक सम्प्रदाय होता है। सेवा उसका पेशा होता है। जिनमें से चुन कर जनता दण्ड चलाने का अधिकार कुछ लोगों को देती है। क्रांति की लक्ष्य पूर्ति का मतलब है कि इन तीन साधनों में परिवर्तन करना।

(१) सेवक-सम्प्रदाय के नेतृत्व का विकास करना, जिससे नागरिक अपना स्वधर्म छोड़े बिना ही समाज का नेतृत्व कर सकें। जिससे नेतृत्व और सेवा ही उसके लिए पेशा न बने। (२) कानून के स्थान पर ग्राम-संकल्प की परम्परा कायम करना और (३) टैक्स के स्थान पर दान और यज्ञ का संस्कार डालना।

मैंने ऊपर कहा है कि बलिया में नरेन्द्र को इस क्रांति के लक्ष्य की पूर्ति के लिए स्वयं गाँव वालों को ही 'सिर दर्द' हो और वह सेवक से काम ले यह 'एप्रोच' रखने को कहा था, क्योंकि हमारा उद्देश्य नागरिक का नेतृत्व विकास करना है। ऐसे ही प्रसंग पर क्रांति के सेवक प्रायः गल्ती कर जाते हैं। जिस तरह आज विकास की योजना बनाने वाले मार्जिन कहाँ है, इसकी खोज नहीं करते हैं, उसी तरह क्रांतिकारी भी इसकी फिक्र नहीं करते हैं कि जन मानस तथा जनशक्ति का मार्जिन कहाँ है! वे भी अपने आदर्श और उद्देश्य के अनुसार परिस्थिति-निरपेक्ष कार्य पद्धति बना लेते हैं और उसके अनुसार चलते हैं। उदाहरण के लिए हमारा आदर्श तथा उद्देश्य यह है कि नेतृत्व तथा व्यवस्था जनता करे और कार्यकर्ता शिक्षक तथा सहायक का काम करे। साथ ही कार्यकर्ता के गुजारे का भी इन्तजाम गाँव के लोग करें। यह हमारा लक्ष्य है, प्रारंभ नहीं है। यह बात क्रांतिकारी सेवक प्रायः भूल जाते हैं। वे भूल जाते हैं कि गाँव के लोग आज जहाँ हैं, वहीं से शुरू करना होगा। गाँव के लोग आज कहाँ हैं? आज का गाँव एक भौगोलिक इकाई मात्र है, समाज नहीं है। वह एक जंगल है। अतः वहाँ के नेतृत्व का कोई छोर नहीं है। जो दो-एक आदमी में कुछ भावना है, वही हमारे लिए प्रारंभिक पकड़ है, यह बात हमें ठीक से समझ लेनी होगी। आज तो कार्यकर्ता तथा कार्य दोनों का आधार दण्डशक्ति द्वारा बनाया कानून तथा उसीके द्वारा वसूल किया हुआ टैक्स है।

अगर गाँव के लोग कुछ थोड़ा बहुत संकल्प कर लें और उसकी पूर्ति के लिए कुछ दान करने लग जायँ तथा गाँव के दो-चार व्यक्ति कुछ समय देने लग जायँ तो समझना चाहिए कि आरंभ के लिए बहुत बड़ी पूँजी मिल गई। आज तो हमारी करीब करीब सारी प्रवृत्ति दण्ड सापेक्ष साधन से चलती है।

ऐसी हालत में अगर सेवक यह सोचता है कि सारा काम गाँव के लोग करेंगे और वे सेवक से सलाह मात्र लेंगे तो समझना होगा कि वह वस्तुस्थिति से बहुत दूर है और प्रायः ही क्रांति की भावना वाले युवक ऐसे दूर ही रहा करते हैं। यही कारण है, जब मेरे साथी मेरे मुँह से क्रांति के लक्ष्य और दिशा का विवेचन सुनते हैं और मुझको काम करते देखते हैं, तो उन्हें बहुत सी विसंगति दिखाई देती है; क्योंकि वे समझते नहीं हैं कि क्रांति-यात्रा की शुरुआत क्रांति की सिद्धि की परिस्थिति पर से नहीं होती है, बल्कि रूढ़ समाज की मौजूदा वास्तविक परिस्थिति पर से होती है, जिसे हम मार्जिन कहते हैं। अतएव क्रांतिकारी की सफलता केवल इस बात पर निर्भर नहीं करती है कि क्रांति का लक्ष्य स्पष्ट रहे बल्कि इस बात पर भी निर्भर करती है कि उसकी शुरुआत कहाँ से हो।

यद्यपि लक्ष्य की स्पष्टता के बिना क्रांतिकारी के लिए हमेशा प्रतिक्रियावादी की मुट्ठी में फँस जाने का डर रहता है, क्योंकि क्रांतिकारी का मानस आम तौर पर करुणामूलक होता है। इसलिए स्पष्ट लक्ष्य के अभाव में वे विभिन्न राहत की प्रवृत्तियों में उलझ जा सकते हैं।

(क्रमशः)

स्वतंत्र व्यक्ति की इच्छा की चीजों का चुनाव करने के लिए हमें उस व्यक्ति को तालीम देनी होगी। हमारी प्रवृत्ति प्रायः उच्चस्तरीय या व्यापक हितों की अपेक्षा संकुचित और हलके दर्जे के हितों का चुनाव करने की ओर रहती है। इसका हमें अभी के आम चुनावों में अनुभव हो चुका है। उसमें आपने देखा ही है कि व्यक्तिगत लाभ, अपने-अपनों का मला और जात-पाँत की भावना राष्ट्रीय हित को ठेल कर प्रायः आगे बढ़ गयी थी।

उत्तमता प्राप्ति के लिए कार्य करें

हमें क्या करना चाहिए, इसकी लम्बी सूची को अब मुझे समाप्त करना चाहिए। किन्तु इस बात पर पूरी तरह जोर दिये बिना मैं समाप्त नहीं कर सकता कि व्यक्ति-सहायता के समाजनिरपेक्ष कार्य और समाज सेवा के कार्य दोनों को अपना अपना उचित स्थान दिया जाना चाहिए। दोनों तरह के कार्य परिस्थिति-विशेष में सफल और सार्थक होते हैं। और वह परिस्थिति वैयक्तिक और सामाजिक उत्तमता प्राप्त करने में प्रयत्न में तन्मय होना है। इस 'उत्तमता' की प्राप्ति के लिए अपनी सीमाओं और अपने तरीकों के अनुसार काम करने की भगवान हमें शक्ति दें।

(अनुवादक कुशाल सिंह)

समाजवाद और सर्वोदय

–'समाजवाद और सर्वोदय में क्या फरक है?' यह प्रश्न विनोबाजी से पूछा गया, उन्होंने जो जवाब दिया है, वह यहाँ दिया जा रहा है।—सं०

विनोबा

समाज में क्रियायें, प्रतिक्रियायें, अनुक्रियायें कैसी होती हैं, यह समझना चाहिए। मानव-इतिहास में अनादि काल से विज्ञान चल आ रहा है। विज्ञान की खोजें हो रही हैं। प्राचीन काल में मनुष्य खेती नहीं करता था। बाद में वह खेती करने लगा। यह एक खोज थी। वह गाय का दूध निकालने लगा, गाय की सेवा करने लगा, यह भी खोज थी। उसने कुत्ते जैसे जानवरों का भी प्रेम संपादन किया और कुत्ता भी मानव पर प्रेम करने लगा, यह भी एक खोज ही थी। ऐसी खोजें प्राचीन काल से होती चली आ रही हैं। फिर भी गये दो सौ, तीन सौ सालों से यह युग विज्ञान का युग माना जाता है।

दो सौ साल पहले जिस विज्ञान का विकास हुआ, उससे तत्कालीन जीवन विषयक जो पुराने सिद्धान्त थे, वे सब सिद्धान्त खतम हुए और बदले में नये सिद्धान्तों ने स्थान लिया और आज भी ले रहे हैं। विज्ञान की गति बहुत जोरों से बढ़ रही है। विकासवाद आया, वह गया। अब सापेक्षवाद चल रहा है। ऐसे नये-नये सिद्धान्त निकल रहे हैं। विज्ञान बढ़ेगा, तो पुरानी खोजें काम में नहीं आयेंगी। मनुष्य को नये सिद्धान्त और नये विचार समझने के लिए सम्यक् भाषा की आवश्यकता होती है। इसके लिए नयी-नयी परिभाषा बनती है। नयी भाषा बनती है, तो पुरानी भाषा जँचती नहीं, उससे अर्थबोध नहीं होता। उसका आकर्षण भी नहीं रहता। गये दो सौ, ढाई सौ साल पहले विज्ञान की जो खोजें हुईं, वह चंद देशों में ही हुईं। उसका फायदा उन देशों ने लिया और दुनिया के साथ व्यापार बढ़ाया, उसका लाभ और राष्ट्रों को भी मिला। लेकिन जिन भाषाओं में खोज हुई, उन भाषिकों ने दुनिया के बाजारों पर कब्जा कर लिया। उसके लिए साम्राज्य भी बने। फिर भी याने व्यापार का कुल संघटन खानगी व्यक्ति के हाथ में था और जमीन की मालकियत भी व्यक्तिगत थी। व्यक्तिगत 'इन्सेन्टिव' और 'इनीशिएटिव' के लिए व्यक्तिगत मालकियत होनी चाहिए—यह विचार तब चला था। उसका नाम 'व्यक्तिवाद' है। यह वाद आज तक कमोबेशी चला रहा है। आज हम जब मालकियत मिटाने की बात करते हैं, तब लोग हमको पूछते हैं कि व्यक्तिगत मालकियत मिट जायेगी, तो उसके बाद व्यक्तिगत प्रेरणा भी मिट जायेगी। यह सवाल आज तक पूछा जाता है। इसको महत्त्व देकर ही 'स्वतंत्र पार्टी' बनी।

हम नहीं मानते कि उसमें बिलकुल तथ्य नहीं। उसमें कुछ तथ्य है। इसलिए हमने ग्रामदान में व्यवस्था की है कि जमीन की व्यक्तिगत मालकियत नहीं होगी, लेकिन जमीन बँटी रहेगी और जमीन पर व्यक्तिगत काश्त होगी। सामूहिक पूँजी के लिए दान की प्रक्रिया होगी। यह तो नहीं कि जमीन सामूहिक कर लें और जो लाभ होगा, उससे पूँजी बनायी जाय। उसके लिए तो गणित आना चाहिए और 'मैनेजमेंट' की बातें मालूम होनी चाहिए। आज गाँव के लोगों की स्थिति ऐसी नहीं है कि वे सामूहिक खेती करें। आज की हालत में स्वतंत्र पार्टी वाले कहते हैं, उसमें कुछ तथ्य है। अभी एक 'व्यक्तिवाद' पैदा हुआ है, उससे कुछ अच्छे, कुछ बुरे परिणाम निकले हैं। आरंभ में अच्छे परिणाम हुए। प्रत्येक काम के आरंभ में अच्छे परिणाम निकलते हैं। अंग्रेज आये तो शुरू में लगा अच्छा है। क्योंकि व्यवस्थित राज्य चला, तनख्वाह समय पर मिलती रही। यह भास हुआ कि राज्य अच्छा था। हर परिवर्तन होता है तो पुरानी बुरी चीज खत्म हुई, ऐसा लगता है। फिर थोड़े दिन में उसकी भी बुराइयाँ नजर आने लगती हैं। यही स्थिति व्यक्तिवाद के बारे में रही। यह जो पूँजीवाद से जुड़ा हुआ व्यक्तिवाद था, उसने विज्ञान का लाभ लेकर साम्राज्य बनाये। आरंभ में यह अच्छा लगा। फिर उस पर से कई प्रश्न निकले और उसकी जो प्रक्रिया बनी, वह है समाजवाद।

अब समाज का महत्त्व है, व्यक्ति का नहीं। अधिकतम संख्या, अधिकतम हित—यह सिद्धान्त अब निकला। अधिकतम संख्या में सौ में से नब्बे होते हैं। यह नया नीति-विचार है। यह 'बहुमत-अल्पमत' का विचार आया। सब बालिगों को वोट देने का अधिकार मिल गया। यह देखने में बड़ा-सा वेदांत लगता है, इसमें समत्व लगता है, लेकिन वस्तुस्थिति में यह वेदांत चलता नहीं है। विद्वान् मनुष्य को भी एक वोट देने का अधिकार है और सामान्य अशिक्षित मनुष्य को भी एक वोट देने का अधिकार है। तो क्या होता है? जो चिंतन करनेवाले बुद्धिशील व्यक्ति होते हैं, वे अपने-अपने पंथ बनाते हैं और सामान्य 'वोटर्स' उनके पीछे जाते हैं। इसलिए दुनिया में आज ये टुकड़े पड़े हैं। जहाँ अल्पमत होता है वहाँ बहुमत बनाने की कोशिश होती है। फिर यह भी सोचा गया कि बहुमत का राज्य करेंगे, लेकिन अल्पमत का कल्याण भी सोचेंगे। नये विचार के साथ यह कल्याणकारी राज्य आया। तब वह 'सोशलिज्म' था, अब वह वेल्फेअरिज्म बन गया।

अब सवाल यह है कि समाजवाद किस तरह आयेगा? उसका 'सैंक्शन' क्या होगा? उसकी शक्ति क्या होगी? आज हालत क्या है? चाहे समाजवाद हो, साम्यवाद हो या फासिज्म हो, सबने अपने-अपने बचाव के लिए सैन्य-शक्ति बढ़ायी है। परदेश के हमले से बचने के लिए सेना बनायी, लेकिन अब सवाल यह आता है कि इनको अपनी ही सेना से कौन बचायेगा? इसका उत्तर समाजवाद के पास नहीं, न और किसीके पास है। अपने बचाव के लिए सेना रखते हैं। अब यही एक शक्ति इनके पास है। अब यह शक्ति कैसी है? यह विद्वान् के हाथ में भी रह सकती है और मूर्खों के हाथ में भी रह सकती है। न्यायी लोगों के हाथ में रह सकती है और अन्यायी लोगों के हाथ में भी रह सकती है। अगर यह शक्ति कसम खाती है कि मैं कम्युनिस्टों के हाथ में ही रहूँगी, तो ये हिंसा को छोड़ने के लिए तैयार होंगे। लेकिन आज ये कहते हैं कि यह शक्ति परम दुष्ट अमेरिका के पास है। हम परमपवित्र, सत्यनिष्ठ कम्युनिस्टों के पास यह शक्ति नहीं है। अमेरिका भी यही कहेगा। आज वह शक्ति परम दुर्जनों के हाथ में है। वह मूढ़ शक्ति है। वह पतिव्रता नहीं है। इसका परिणाम यह है कि उस पर विश्वास रखना भयंकर है। तो इस हालत में और रास्ता क्या है? इसका उत्तर सर्वोदय से मिलता है।

अभी दुनिया में सर्वोदय का अमल नहीं हुआ है। लेकिन सर्वोदय का विचार समझना चाहिए। सर्वोदय में एक राय से चलते हैं। अब सवाल आता है कि एक राय कैसे बनेगी? यह किस तरह हो सकता है? एक मनुष्य अड़ंगा लगायेगा तो कैसे होगा? लेकिन यह प्रयोग दुनिया में हो रहा है। संयुक्त-राष्ट्रसंघ में दो प्रकार की सभाएँ होती हैं। एक सामान्य महासभा है और दूसरी सुरक्षा-परिषद्। महासभा में अल्प-बहुमत से काम चलता है याने प्रजातंत्र का प्रयोग चलता है। सुरक्षा-परिषद् में चार-पाँच राष्ट्रों को व्हिटो होता है याने सर्वसम्मति से काम चलता है। याने वहाँ सर्वोदय का प्रयोग हो रहा है। दो प्रयोग साथ-साथ चल रहे हैं। दोनों जगह सर्वोदय नहीं लेते, क्योंकि यह प्रयोग कैसे चलता है, इसकी कल्पना नहीं। इसकी अच्छी तालीम नहीं है। सुरक्षा-परिषद् में चर्चा करते हैं और निर्णय लेते हैं। अनेक राष्ट्रों के लोग वहाँ इकट्ठे होते हैं। इसलिए एकदम एक राय नहीं बनती। कौंसिल में एक राय नहीं बनी, तो थोड़ी देर मौन रखते हैं और फिर बिखर जाते हैं। फिर पन्द्रह मिनट के बाद मिलते हैं। उस दरम्यान सवालों पर चिंतन कर लेते हैं। फिर आपस में चर्चा करते हैं और जितनी बातों पर एकमत होता है, उतनी बातों पर अमल करते हैं। इस तरह से काम चलता है। वहाँ शिक्षण, समाज-सेवा, देश देशों के बीच समस्या—इन विषयों पर चिंतन होता है, निर्णय किये जाते हैं और उन निर्णयों पर अमल होता है। लेकिन फिर भी वहाँ एक राष्ट्र का पूरा राज्य चलाने जैसा काम नहीं होता। इसलिए प्रजातंत्र में भी यह शिक्षण देना होगा। 'सुरक्षा-परिषद्' यह नाम क्यों दिया? सोचते हैं तो ध्यान में आता है कि सुरक्षा याने सबका भला। सर्वोदय में भी यह सुरक्षा है—इसलिए यह नाम दिया होगा। इस पर से ध्यान में आता है कि सर्वोदय सबका समाधान करता है। सब पक्षों में सर्वसामान्य आधार लेकर, उस आधार पर कार्यक्रम बनायेंगे, तो उसमें मतभेद कैसे होंगे? यह कनव्हर्शन का प्रोसेस–परिवर्तन की प्रक्रिया–है। सामान्य सहमति पर कार्यक्रम बनाते हैं, तो उसके विरोध में कौन जायगा? ऐसा कार्यक्रम भले ही छोटा बने, उस पर अमल जरूर होगा, क्योंकि उसमें सब इकट्ठे हो गये हैं। एक-दूसरों के नजदीक आये हैं। सर्वोदय सबको कहता है कि सामान्य बात पर सबकी ताकत लगनी चाहिए। इसलिए सर्वसामान्य कार्यक्रम ढूँढ़ना चाहिए। और ऐसा एक सर्वसामान्य राष्ट्रीय कार्यक्रम बनता है, तो वह अगले पाँच साल में उस पर अमल करेंगे। लेकिन समाजवाद को यह पसंद नहीं। क्योंकि समाजवाद प्रतिक्रिया है। उसमें जिस वाद का आग्रह है, वह छूटता नहीं। इस वाद का यह आग्रह छूटेगा, तो व्यक्तिवाद के काम हम ले सकते हैं। दोनों की हानि से बच सकते हैं और सर्व-सामान्य कार्यक्रम बना सकते हैं। आपके जितने मतभेद हैं, उन पर अलग से विचार होना चाहिए, तो उसमें कटुता नहीं आयेगी। बातचीत की जो प्रक्रिया होगी, वह चर्चा की होगी, वादविवाद की नहीं। आज विधान सभा में एक बाजू बहुमत और एक बाजू अल्पमत होती है। एक बाजूवाले खुलकर बातें करते हैं, तो दूसरी बाजूवाले मुँह सी लेते हैं। एक ने बात मंजूर की, दूसरे को मंजूर नहीं। दोनों एक दूसरे के खिलाफ बोलते हैं। वहाँ अंकुश नहीं रहता, दोनों बह जाते हैं। वहाँ चर्चा नहीं होती, सामनेवाले की बात ग्रहण करने की मनोवृत्ति नहीं रहती। सर्वोदय में वाद विवाद नहीं होता, चर्चा होती है, इसलिए उससे कुछ न कुछ मक्खन निकलता है। ये लोग मंथन में नहीं मानते घर्षण में मानते हैं। मंथन में से मक्खन निकलता है। घर्षण में से अग्नि निकलती है। सर्वोदय में सब-का-सब मंथन चलेगा। यह समाजवाद और सर्वोदय में फरक है।

'यह भक्ति—'

• कालिंदी

हवा की तेजी से 'मेजर' के कपड़े पहने हुए एक व्यक्ति अन्दर आया और बाबा के चरणों में उसका मस्तक नत हुआ।

रुद्ध कंठ से आवाज निकली 'बाबा' बोलते बोलते बाबा रुक गये और बोले "कहिये।"

"मैं कश्मीर में आपको मिला था। उस वक्त आपके साथ जनरल यदुनाथ सिंह थे। आपसे आदेश चाहता था।" आँखें वैसे ही बंद थीं, हाथ प्रणाम की मुद्रा में बद्ध थे। आगे कहने लगा "मैं गांधीजी से मिला था। उन्होंने मुझे विश्वशांति के लिए 'ग्रंथ साहिब' का अखंड पाठ करने के लिए कहा था। तब से मैंने दिल्ली में गुरुद्वारा में पाठ जारी रखा है। अब दिल्ली से असम में आया, तो इच्छा हुई कि आपके दर्शन कर लूँ। पाठ के बारे में भी बातें करनी हैं।"

"आपकी बात हम जरूर सुनेंगे। कल हमारे साथ यात्रा में आइये।" मेजर साहब दूर दीवार के पास बैठ गये। इधर लोगों के साथ बाबा की चर्चा चल रही थी और उधर मेजर साहब की समाधि लग गयी थी। चर्चा के बाद बाबा ने उनसे पूछा, "कहिये मेजर साहब, क्या पाठ करते हैं आप, कुछ सुनाइये।" मेजर साहब बाबा के पास बैठे और भक्ति भाव से 'सुखमनी साहब' गाने लगे। बाबा ने हाथों से ताल दिया और फिर भक्तिगान ने उस महफिल में रंग भर गया। बाबा एक एक सुझाते गये और मेजर साहब गाते गये। आखिर उसकी समाप्ति हुई गुरु नानक की आरती में "गगन में थाल, रवि-चन्द दीपक बने।"

अन्धकार का पर्दा दूर हो रहा था। रविकर के रंजित स्पर्श से हरे भरे खेत और बाग के वन जागृत हो रहे थे। दूर से संगीत की हल्की सी ध्वनि सुनाई दे रही थी, "जागो कमलापति, उठो रे—।" वह ध्वनि भी हल्की हल्की होते होते विलीन हो गयी और इतनी देर में धुँधला सा दिखने वाला दृश्य स्पष्ट हो गया। पूर्व दिशा चमक उठी। साथ साथ बाबा का मौन भी भंग हो गया। मेजर साहब यात्रा में थे ही। वही भक्ति में भरा हुआ चेहरा और श्रद्धा से गद्गद् हुई आवाज। कहने लगे "बापू ने मुझे आदेश दिया तो मैंने जाहिर किया कि मैं अखंड पाठ करूंगा। तब से पांच साल दिल्ली के गुरुद्वारा में मैं सतत पाठ चला रहा हूँ।"

"पाठ के लिये क्या आपने कोई आदमी रखे हैं?"

"जी हां, चार पाठी रखे हैं। हर एक को पचास रुपया दर माह देता हूँ। इसका कुल खर्चा महीने का २६५ रुपया आता है। पूरा खर्चा मैं ही देता हूँ। जब दिल्ली में रहता हूँ तब खुद भी पाठ के लिये समय देता हूँ। बापू का आदेश है और विश्वशांति के लिए यह शुरू किया है। मैं चाहता हूँ यह चलता रहे।"

"आप नौकरी में हैं तब तक ठीक है। आगे इसका इंतजाम कैसा होगा?"

"आगे का तो भगवान देखेगा। हम क्यों चिन्ता करें? आखिर करनेवाला तो वही है," तीर जैसा जवाब मिला।

"जी हां, आपने बिल्कुल ठीक कहा और अब तक आप हैं उसका खर्चा देते ही रहेंगे।"

"जी हां, मैं तो अपनी तरफ से पूरी कोशिश करूंगा। लेकिन अब मैं यहाँ आया हूँ। वहां पाठ के लिये कौन निगरानी रखेगा? मेरा विश्वास है कि इससे विश्वशान्ति के लिये जरूर मदद होती होगी। मेरी पूरी श्रद्धा है और इसलिए लगता है कि कहीं ऐसा न हो कि पाठ में खंड आये और विश्वशांति को हानि पहुँचे। जब से यहां आया हूँ दिन रात यही फिक्र रहती है कि पाठ कैसा ठीक चलेगा। परसों रात को गांधीजी सपने में आये और कहने लगे "विनोबा को जाकर पूछो, वे तुम्हें सलाह देंगे।" इसलिए आपके पास आया हूँ।"

"पाठ करनेवाले पर निगरानी रखने की कुछ आवश्यकता नहीं। भगवन् नाम का पाठ हो रहा है। वही निगरानी करेगा।"

"यह तो ठीक है, जी। लेकिन मुझे चिंता यह है कि पाठ में खंड आयेगा, तो विश्वशान्ति को हानि पहुँचेगी। बापू का आदेश है। इसलिए मेरी तरफ से कुछ रुकावट न आये।" कितनी कर्तव्य-निष्ठा! कितनी श्रद्धा! विश्वशान्ति के लिए दिल की कितनी तड़पन! बात बार-बार दोहरायी गयी कि विश्वशान्ति के लिए पाठ चल रहा है, उसमें खंड न आये। साथ-साथ जीवन की कहानी भी कही गयी। पूरा जीवन भगवान की भक्ति से भरा था। बापू और विनोबा के प्रति श्रद्धा से भरा था। बाबा से माँग हो रही थी, पाठ अखण्ड जारी रखने के लिए मार्ग-दर्शन दीजिये।

"दिल्ली के गुरुद्वारा से 'ग्रंथ साहब' का पाठ वैसा ही चालू रहे। भगवान सब ठीक करेगा। साथ-साथ आप खुद भी पाठ जारी रखिये। दिन में एक घंटा पाठ करिये। पाठ के लिए कौन कौन से ग्रंथ पढ़ना, हम आपको कहेंगे। ऐसा तो नहीं कि सिर्फ 'ग्रंथ साहब' ही पढ़ा जाय।"

"नहीं जी, नहीं। हम तो सब धर्म के ग्रंथ पढ़ना चाहते हैं। आखिर भगवान तो एक ही है। वही कृष्ण है, वही अल्ला है और वही नानक है।"

"साथ साथ हम आपको और एक बात सुनाते हैं। पाठ के लिए आपने जो चार आदमी रखे हैं, उनके बजाय आठ विद्यार्थियों को रखिये—"

"बहुत अच्छा जी बहुत अच्छा" बाबा की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि मेजर साहब ने मतलब समझ लिया। "इससे तो पाठ भी चलेगा और विद्यार्थियों को मदद भी होगी। विद्यार्थी अपना अध्ययन भी कर सकेंगे। आपका जो आदेश होगा, वैसे ही हम करेंगे।"

"व्यक्तिगत पाठ के लिए मैं यह कहता हूँ (१) गांधीजी का 'गीता बोध' (२) 'धम्मपद' का महाबोधि सोसाइटी का हिंदी अनुवाद। (३) 'रूहुल कुरआन' जो थोड़े दिन में प्रकाशित होगा। (४) बायबल में से मैथ्यू का 'सरमन ऑन दी माउंट' और (५) सिक्खों की 'जपुजी' रोज एक घंटा पाठ हो।" मेजर साहब ने यह करना स्वीकार कर लिया।

बाबा ने कहा "हमें विश्वास है, ये सद्भावनाएँ जरूर काम करेंगी।"

एक हिन्दी कवि ने कहा है, संसार का संहार हुआ, सृष्टि पर पानी और प्रचंड चट्टानों के सिवा कुछ रहा नहीं। संहार से सृष्टि को कौन बचायेगा? लेकिन एक कठिन, प्रचंड चट्टान को फोड़कर एक छोटा सा अंकुर बाहर निकला। संहार-शक्ति का मानो मनोभंग हो गया।

दरंग, जिला असम
२६-५-६२

अब अगर समाजवाद कहेगा कि हम अहिंसा को मानते हैं, तो मैं कहूँगा कि आपका समाजवाद यानी सर्वोदय है। उतना आप करते हैं, तो दोनों एक हो जाते हैं। फिर सवाल आता है कि दोनों एक हो जायेंगे, तो शब्द कौनसा रखेंगे? जाहिर है कि समाजवाद एकांगी शब्द है। वह व्यक्तिवाद के विरुद्ध है। सर्वोदय किसीकी प्रतिक्रिया नहीं। इसलिए सर्वोदय यही एक शब्द टिकेगा। आप जोर लगाते हैं कि प्रजातांत्रिक समाजवाद करेंगे। प्रजातांत्रिक समाजवाद सर्वोदय के और नजदीक आयेगा। अब इतने नजदीक आते तो शब्द को भी इस्तेमाल करना चाहिये।

'इसे तो चमार ही खाते हैं!'

[श्रीराम भूदान आंदोलन के एक प्राणवान कार्यकर्ता हैं। पिछले कई महीनों से आप विचार प्रचार के लिये यात्रा करते हैं। वे मूलतः मध्यप्रदेश के भिंड जिले के निवासी हैं। यात्रा के दरम्यान जो मर्मस्पर्शी अनुभव होता है, वह उन्होंने हमें लिखा। सोचिये यह मर्मस्पर्शी चित्र। —सं०]

एक दिन भोपाल के पास रायसेन गाँव में रात को करीब ८ बजे मैं घूम रहा था, तो दूर से देखा कि किसान का एक परिवार बातें करते हुए कुछ बीन रहा है।

मैंने कहा, "क्यों भाई, आराम कर रहे हो? खाना खा लिया क्या?"

मजदूर किसान ने कहा, "अभी कहाँ? बनेगा तभी न खायेंगे!"

मैंने पूछा, "अभी तक बनाया ही नहीं?"

यह सुन कर अपनी सफाई देती हुई उस परिवार की एक बहन ने कहा: "भैया, अभी तो गुर्री से निबटे हैं!"

'गुर्री' से मतलब है, जो बैल दाँय पर बिना मुँह बंद किये चलते हैं और अन्न सहित भूसा खाते रहते हैं, उनका गोबर बीन कर उसका गल्ला निकाल लेना!

मैंने कहा, "इस काम के लिए कहाँ से आये हो," तो उन्होंने लगभग बीस मील दूर के गाँव का नाम बताया! पता चला कि ये लोग प्रतिदिन इसी तरह गोबर में से पाँच दस सेर गल्ला निकाल लेते हैं।

बच्चों की शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध नहीं, अँधेरी रात में प्रकाश नहीं, १२ घण्टे के कठिन श्रम के बाद भी रात को ११ बजे तक भोजन बना कर खा सकेंगे, इस काम के लिए २० मील से आये हैं। इनकी इन सब कठिनाइयों पर मैं विचार करता रहा।

दूसरे दिन शाम को फिर उस ओर गया तो एक किसान से फिर इस पर चर्चा की।

मैंने पूछा—"क्यों भाई, दाँय पर बैल चलाते समय बैलों का मुँह बन्द क्यों नहीं करते?"

किसान—"मुँह बन्द करेंगे, तो क्या बैल भूखे नहीं रहेंगे?

मैं—"कुछ देर खोल कर भूसा खिला दिया करो, तो इतना अन्न तो बेकार नहीं जायगा?"

किसान—"नहीं भाई, ऐसा चलन यहाँ नहीं कि बैलों के मुँह पर मुसक लगायें।"

मैं—"इस गोबर का क्या होता है?"

किसान—"चमार ले जाते हैं!"

मैं—"वे क्या करते हैं?"

किसान—"अनाज धोकर खा लेते हैं।"

मैं—"ऐसा तुम लोग क्यों नहीं करते?"

किसान—"नहीं भाई, इसे तो चमार ही खाते हैं!"

अधिक प्रश्नोत्तर करने से किसान नाराज सा हो चला था, इसलिए यह सोचते हुए मैं चल दिया कि चमार बैलों से भी गया बीता है क्या?

—श्रीराम

खादी कांग्रेस और सरकार

• जवाहिरलाल जैन

खादी गांधीजी के स्वराज्य के विचार को मूर्त रूप देने के लिए जन्मी थी। उसे इसी उद्देश्य पर मूल रूप से कायम रहना चाहिए। राहत और रोजगार इसके गौण उद्देश्य हैं। वे महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, यह बात नहीं है, पर वे मूलगामी नहीं हैं; यह स्पष्ट होना चाहिए। अगर जरूरत हो तो राहत और रोजगार के वस्त्रोद्योग को हम 'लोक-वस्त्र' के रूप में अलग कर दें, पर खादी तो अहिंसक समाज-रचना के साधन के रूप में चले और बढ़े, तभी खादी के मूल उद्देश्य की तरफ बढ़ा जा सकेगा। आधा तीतर, आधा बटेर की स्थिति में दोनों मारे जायेंगे और मतलब कुछ नहीं बनेगा।

खादी का आरंभ गांधीजी की सक्रिय प्रेरणा से भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक विभाग के रूप में हुआ। इसके बाद अ॰ भा॰ चरखा संघ की स्थापना हुई, पर आरंभ से ही इसे कांग्रेस का सक्रिय सहयोग और समर्थन मिला। कांग्रेस के सदस्यों में खादी पहनना अनिवार्य माना जाने लगा और कांग्रेस के नेताओं का मार्गदर्शन और संचालन इसे मिला। हिन्दुस्तान की आजादी की लड़ाई में राजनैतिक आन्दोलन और रचनात्मक कार्य –जिनमें खादी मुख्य थी– कांग्रेस के ही दो मोर्चे थे, जो एक-दूसरे के सहायक और पूरक थे गांधीजी के आदर्श का स्वराज्य तो रचनात्मक कार्यक्रम की पूर्ति में ही समाविष्ट था, जैसा कि वे हमेशा कहते थे—'रचनात्मक कार्यक्रमों की पूर्णता ही स्वराज्य है'।

स्वराज्य की प्राप्ति और गांधीजी के निर्वाण के बाद विनोबाजी के नेतृत्व में अ॰ भा॰ सर्व सेवा संघ की स्थापना हुई और अ॰ भा॰ चरखा-संघ उसमें विलीन हो गया। सर्व सेवा संघ ने गांधीजी की रचनात्मक संस्थाओं और रचनात्मक कार्यक्रम को एक सूत्र में बाँध कर गांधीजी की दृष्टि के स्वराज्य–अहिंसक तथा शोषणविहीन समाज की स्थापना–की ओर बढ़ने में देश का नेतृत्व करने का प्रयत्न किया। सर्व सेवा संघ की नीति विचार-प्रचार और आंदोलन पर विशेष बल देने की रही।

उधर कांग्रेस ने इस देश की केन्द्रीय और प्रादेशिक सरकारों के संचालन की जिम्मेदारी सँभाल ली और पंडित जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत राष्ट्र का राजकीय संचालन कांग्रेस का सबसे अधिक प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम बन गया। कांग्रेस देश का सबसे बड़ा शक्तिशाली राजनैतिक दल बन गया, जिसका मुख्य उद्देश्य गाँव-पंचायत से लेकर राष्ट्रीय संसद तक के लिए चुनाव लड़ना और सत्ता को संचालित करना हो गया। कांग्रेस ने देश को कल्याणकारी राज्य और समाजवादी ढंग के समाज की ओर बढ़ाने का प्रबल प्रयत्न किया।

भारत में केन्द्र तथा प्रांतों में पार्लियामेंटरी तरीके के लोकतंत्र की स्थापना से सरकार का विरोध भी उतना ही आवश्यक और अनिवार्य समझा गया और परिणाम यह हुआ कि कांग्रेस के विरोध में अनेक विरोधी दल बने और बढ़े और आज राजनैतिक दलों का निरन्तर विरोध और उनमें लगातार रस्साकशी इस देश के राजनैतिक जीवन का स्थायी लक्षण बन गया है।

सरकार और खादी

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, देश में कांग्रेसी सरकारें बनीं तो स्वाभाविक रूप से उनमें रचनात्मक कार्य को बलवान् बनाने और उसे सहायता देने की भावना थी। उधर सर्व सेवा संघ देश में आन्दोलनात्मक और विचारात्मक पहलू पर जोर देना चाहता था। दोनों के प्रमुख नेतागण बरसों एक-दूसरे के साथी, आजादी की लड़ाई में कंधे से कंधा भिड़ा कर लड़ने वाले तथा गांधीजी से अनुप्राणित थे, अतः खादी-कार्य के संचालन के लिए सर्व सेवा संघ की सलाह से भारत सरकार ने अ॰ भा॰ खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड की स्थापना की और सर्व सेवा संघ ने खादी के काम की सारी जिम्मेदारी उसे सौंप दी। बाद में खादी-कमीशन भी सर्व सेवा संघ की सलाह से ही बना, जो आज देश में खादी की प्रवृत्ति का संचालन करता है। राज्यों में भी राज्य सरकारों ने खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड लगभग उसी तरीके पर बनाये।

इस प्रकार आज इस देश में खादी-ग्रामोद्योगों का कार्य खादी-कमीशन और राज्यों के खादी-बोर्डों के मार्फत चलता है। वास्तविक कार्य आजादी के बाद देश भर में संगठित होने वाली रजिस्टर्ड संस्थाएँ और सहकारी समितियाँ करती हैं, जिनमें हजारों की संख्या में पुराने और नये कार्यकर्ता लगे हुए हैं। इनमें ऐसे लोगों की संख्या भी काफी है, जो कांग्रेस की आजादी की लड़ाई में भाग ले चुके हैं, पर बहुत अधिक संख्या तो अब ऐसे लोगों की भी होती जा रही है, जो आजादी के बाद बालिग हुए हैं।

अब सवाल यह है कि खादी से–जिसमें खादी कमीशन से लेकर खादी-संस्था और कार्यकर्ता तक सब शामिल हैं–कांग्रेस तथा सरकार के क्या संबंध हों। यह इससे भी स्पष्ट होगा कि खादी का अपना मूल उद्देश्य और मर्यादा क्या है ! इसके प्रति कांग्रेस और सरकार का क्या रुख है !

खादी, अहिंसा का प्रतीक

खादी गांधीजी के स्वराज्य के विचार को मूर्त रूप देने के लिए जन्मी थी। उसे इसी उद्देश्य पर मूल रूप से कायम रहना चाहिए। राहत और रोजगार इसके गौण उद्देश्य हैं। वे महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, यह बात नहीं है; पर वे मूलगामी नहीं हैं, यह स्पष्ट रहना चाहिये। अगर जरूरत हो तो राहत और रोजगार के वस्त्रोद्योग को हम 'लोक-वस्त्र' के रूप में अलग कर दें, पर खादी तो अहिंसक समाज रचना के साधन के रूप में चले और बढ़े, तभी खादी के मूल उद्देश्य की तरफ बढ़ा जा सकेगा। आधा तीतर आधा बटेर की स्थिति में दोनों मारे जायेंगे और मतलब कुछ नहीं बनेगा।

इस खादी को मदद सरकार से हमें जितनी लेनी हो, वह हमारी शर्तों पर दे तो लें, अन्यथा अपने पैरों पर जिस हद तक खड़ी हो सकती हो, उतनी ही हो। नहीं हो सकती हो, तो वह खत्म हो जाय। अहिंसक समाज रचना की ओर आगे बढ़ने का अन्य कोई दूसरा साधन हमारे हाथ आयेगा, इस दिशा में खोज करते रहें। लोक-वस्त्र को देश की वर्तमान मिश्रित अर्थ-व्यवस्था में स्थान मिले और वह समग्र रोजगारी और गरीबों तथा कमजोरों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने के साधन के रूप में बढ़े।

कांग्रेस और खादी

कांग्रेस ने खादी को जन्म दिया है और उसका पालन-पोषण किया है। शासन-भार सँभालने के बाद खादी के विस्तार में भी कांग्रेस की बहुत सहायता रही है। कांग्रेस की विचारधारा अन्य राजनैतिक दलों की विचारधारा के मुकाबले खादी के ज्यादा निकट और आत्मीयतापूर्ण है। कांग्रेसजनों में खादी का प्रचार भी अन्यों से अधिक है। इसलिए परम्परा से कांग्रेस और खादी की निकटता बहुत गहरी है। कांग्रेस खादी की माता है। खादी के मन में कांग्रेस के प्रति मातृनिष्ठा होनी चाहिए। पर खादी सारे राष्ट्र का रचनात्मक कार्यक्रम है। रचनात्मक कार्यक्रम में सबका समर्थन और सबका सहयोग चाहिए। किसी एक राजनैतिक दल के साथ–फिर वह चाहे जितना शक्तिशाली हो–खादी के जुड़ जाने से उसे अन्य राजनैतिक दलों के असहयोग और रोष का शिकार होना पड़ेगा। इसलिए जिस तरह माता अपनी बालिग लड़की को स्वयं आगे होकर अलग कर देती है, उसका अलग घर बसा देती है, उसी तरह कांग्रेस को भी चाहिए कि वह स्थिति खादी की ऐसी ही स्वीकार करे। इसी में माता का गौरव है और पुत्री का विकास है। पुत्री की समृद्धि ही माता का सबसे बड़ा सम्मान और सन्तोष है। माता का सम्मान पुत्री का आवश्यक कर्तव्य है।

सरकार की बेरोजगारी-निवारण, अल्प तथा अपर्याप्त रोजगारी-निराकरण और कमजोरों तथा गरीबों के जीवन स्तर बढ़ाने की प्राथमिकता, इन सामाजिक उद्देश्यों और जिम्मेदारियों को मान्य करना है, तो खादी को इस देश की अर्थ-व्यवस्था और आयोजन का अभिन्न और स्थायी भाग स्वीकार करना चाहिए और कांग्रेस दल के कार्यक्रम के रूप में नहीं, बल्कि राष्ट्र के कार्यक्रम के रूप में सब दलों के सहयोग से या पूरी तरह निर्दलीय रूप से इसे संचालित करना चाहिए। गांधीजी के विचार के स्वराज्य की खादी के रूप में अगर इसका स्वरूप अलग तय होता है, तो सरकार बेरोजगारी और राहत की खादी को पूरी तरह अपना ले और स्वराज्य की खादी के संबंध में अपने विचार स्पष्ट कर दे। या तो जिस तरह उक्त खादी वाले सहायता चाहें दें अन्यथा न दें, उसे अपने पैरों पर अपने आप खड़ी होने दें।

स्वतंत्र अस्तित्व हो

इस प्रकार यह अत्यन्त आवश्यक है कि खादी, कांग्रेस और सरकार, तीनों आपस में अपने उद्देश्यों और मर्यादाओं को स्पष्ट कर लें, एक-दूसरे की शक्ति और संभावनाओं को समझ लें, एक-दूसरे का सम्मान करते हुए किस हद तक एक-दूसरे को मदद कर सकते हैं, यह समझ लें और फिर अपना-अपना अस्तित्व मान्य करके अपना कार्यक्रम बनायें तथा उस पर चलें तो लोकतांत्रिक समाज-व्यवस्था में बालिग लोगों के परिवार की तरह सब अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में अपना-अपना विकास करते हुए एक दूसरे की सहायता करके सबको आगे बढ़ने के सुअवसर दे सकते हैं।

•

इंदौर में विदेशी शराब और चुंगी

महेन्द्रकुमार

इन्दौर के विदेशी शराब व्यापारिक संघ ने नगर निगम के महापौर, पार्षदों एवं अफसरों के नाम अपील करते हुए एक निवेदन जारी किया है। जिसका संक्षिप्त सार यह है कि इंदौर नगर में बाहर से आनेवाली विदेशी शराब तथा भारत निर्मित विदेशी शराब पर शहर में आयात करने पर व्यापारी को २५ प्रतिशत चुंगीकर (आक्ट्राय) जमा करना पड़ता है। पहले यह महसूल सिर्फ माल की कीमत व अन्य व्यय पर ही लिया जाता था, किन्तु दिनाङ्क १५-१२-६१ से उपकर की नयी विधियाँ प्रभावशील होने से अब चुंगीकर ऐसी शराब की वास्तविक कीमत तथा अन्य व्यय व उस पर लगने वाली एक्साइज ड्यूटी तथा कस्टम ड्यूटी पर भी लिया जाने का वैधानिक प्रावधान हो जाने से शहर में इस व्यापार को मृतप्राय सा कर दिया है। उनका यह भी कहना है कि २५ प्रतिशत चुंगीकर से विदेशी शराब की कीमत इतनी अधिक हो जाती है कि स्वाभाविक ही पास पड़ोस के अन्य शहरों एवं अन्य राज्यों से जहाँ इस शराब की कीमत कम है, यह शराब भारी मात्रा में चोरी-छुपे आकर बिकती है, परिणाम-स्वरूप नगर निगम की चुंगी के साथ ही प्रदेश शासन की एक्साइज ड्यूटी तथा बिक्री-कर का भी लाखों रुपयों का नुकसान होता है। अतः चुंगी कर को २५ प्रतिशत के बजाय ६ या ७ प्रतिशत तक कर दिया जाय, ताकि नगर-निगम की आमदनी बढ़ सके और भ्रष्टाचार व चोरी-छिपे होनेवाले तस्कर व्यापार की रोकथाम हो सके।

ऑडिट के आंकड़ों की दुहाई देते हुए निवेदन में यह भी बताया गया है कि करीब दस साल पूर्व जब इसी शराब पर सवा छः प्रतिशत चुंगी ली जाती थी, तब आमदनी ६ लाख रुपया सालाना नगर-निगम को होती थी। जब से २५ प्रतिशत चुंगी लेना चालू हुआ है, तब से आमदनी घटकर २ लाख रुपया रह गयी है। *मगर शहर में शराब की खपत पिछले दस* वर्षों से अब दुगुनी है। अब अगर ड्यूटी पर भी चुंगी ली जाय, तो शायद २ लाख तो दूर पचास हजार रुपये भी साल भर में आने की उम्मीद नजर नहीं आती व व्यर्थ में भ्रष्टाचार तथा तस्कर-व्यापारियों को बढ़ावा मिलता है।

अब इस अंतिम बात पर हम पहले विचार करें तो एक बात यह साफ हो जाती कि नगर निगम द्वारा शराब पर जो ऊंचे कर लगाये गये हैं, उन करों का पूरा-पूरा लाभ उसे नहीं मिल पाता जब कि शराब का उपभोग नगर में दुगुना हो गया है और आमदनी में निरन्तर कमी हो रही है। इससे तो नगर-निगम की अकार्यक्षमता ही सिद्ध होती है। *नगर-निगम के अधिकारियों पर* अकार्यक्षमता के आरोप के साथ ही यह संदेह पैदा होता है कि जिस काम के लिए अधिकारीगण तैनात किये गये हैं उनकी नाक के नीचे यह अनैतिक व्यापार चल रहा है और उन्हें पता ही नहीं। क्या यह संभव है कि लाखों का माल शहर की सीमाओं में चोरी छिपे आ जाय और संबद्ध अधिकारियों के कानों तक जूँ भी न रेंगे। यह बात संदेह पैदा करती है कि क्या संबद्ध अधिकारीगण भी इस समाजद्रोही एवं अनैतिक व्यापार में भागीदार नहीं हैं?

परन्तु इससे यह कदापि सिद्ध नहीं होता कि केवल इस कारण से चुंगी की दरों में रियायत की जाय। बल्कि नगर-निगम के लिए यह एक चुनौती है, जिसे उसे स्वीकार कर और भी अधिक कारगर तरीके अपनाने चाहिए।

प्रायः यह देखा—सुना जाता है कि आम जनता चुंगी अथवा ऐसे ही अन्य करों से बचना चाहती है। क्या इस बिना पर यह तर्क पेश करना बुद्धिमानी होगी कि आक्ट्राय की दरों में रियायत की जाय अथवा आक्ट्राय कर उठा दिया जाय। यह संभव नहीं है। हाँ, आम उपयोग एवं जीवनोपयोगी अथवा समाज पोषक-धन्धों को प्रोत्साहन देने की दृष्टि उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं पर चुंगी अथवा करों में रियायत अथवा छूट दी जा सकती है (जैसे खादी ग्रामोद्योग की वस्तुओं एवं पुस्तकों इत्यादि पर है), परन्तु शराब (चाहे वह देशी हो या विदेशी) कोई ऐसी वस्तु नहीं, जिस पर लगनेवाले करों *में रियायत की जाय और उसे जन सुलभ* बनाई जाय।

हमारा अनुमान है नगर निगम ने विदेशी शराब पर आक्ट्राय की जो दरें बढ़ायी थीं, उसका उद्देश्य यही होगा कि शहर में धीरे-धीरे यह व्यापार समाप्त हो जाय और रहे भी तो मात्र उन लोगों के लिए जो उतनी चुंगी चुकाने की क्षमता रखते हैं। परन्तु हम देखते हैं कि इससे शराब के व्यापार में कोई कमी नहीं आयी है, बल्कि शराब की खपत दुगुनी हो गयी है। व्यापार भी मृतप्रायः नहीं हुआ है, क्योंकि इन्दौर शहर में विदेशी शराब की दूकानें पहले से कहीं अधिक बढ़ गयी हैं। जिस व्यापार के चौपट होने के लक्षण हों, वह अधिक से अधिक कैसे बढ़ सकता है!

अतः हमारा आग्रह है कि जिस पवित्र भावना से नगर-निगम की पिछली कौंसिल ने विदेशी शराब पर चुंगीकर के संबंध में निर्णय लिया था, उसे कायम रखा जाय *और इस दिशा में प्रभावकारी एवं सक्रिय* कदम बढ़ाये जायँ ताकि इन्दौर शहर किसी भी प्रकार की नशों की गुलामी से मुक्त हो सके। इसकी पहल नगर की स्वायत्त संस्था नहीं करेगी, तो कौन करेगा।

सुना है इस विदेशी शराब के व्यापारियों द्वारा प्रस्तुत ज्ञापन पर नगर-निगम कौंसिल में पार्षदगण विचार कर रहे हैं। दूसरी तरफ कौंसिल में नगर में पूर्ण मद्य-निषेध का प्रस्ताव भी विचारार्थ प्रस्तुत है। अब देखना यह है कि ऊँट किस करवट बैठता है।

मादक पदार्थों से सरकारों को होने वाली आमदनी

(लाख में)

१९६०-६१ का अनुमानित बजट

क्रम	राज्य	कुल आमदनी	आबकारी की आमदनी	प्रतिशत
१.	आंध्र	८०,८८	७,६१	९.४
२.	असम	३६,६४	२,२३	६.१
३.	बिहार	७८,०५	४,९२	६.३
४.	बम्बई*	१,४७,७१	८१	०.५
५.	जम्मू-कश्मीर	३,७८	४०	१०.६
६.	केरल	४१,६९	२,५७	६.१
७	मध्यप्रदेश	६१,३५	४,०३	६.६
८.	मद्रास	८०,११	२३	०.३
९.	मैसूर	६१,१३	३,०१	५.०
१०	उड़ीसा	३१,६०	१,०८	३०
११	पंजाब	५६,४७	५,४७	९.७
१२	राजस्थान	४३,८३	३,९२	८.९
१३	उत्तर प्रदेश	१,१८,८९	५,६६	४.८
१४.	पश्चिम बंगाल	५५,७१	५,३७	९.१
१५.	दिल्ली	१०,८२	१,५२	१.४
१६.	हिमाचल प्रदेश	३,३४	१५	१.४
१७	मणिपुर	३७.५७	०.०७	१.८६
१८	त्रिपुरा	३१.६	१६	४
	कुल	९,६६,२८	४८९९,६७	५.०

* इसमें गुजरात और महाराष्ट्र राज्य भी सम्मिलित है।

विभिन्न राज्यों में मद्यनिषेध की स्थिति

(१) वे राज्य, जहाँ पूर्ण मद्यनिषेध है :	मद्रास, महाराष्ट्र और गुजरात
(२) वे राज्य, जहाँ आंशिक मद्यनिषेध है : (जिले जहाँ नशाबंदी है। जिलों की कुल संख्या)।	आंध्र (११।२०); असम (२।११ केरल (४।९ तथा ६ ताल्लुका); मैसूर (१४।१९); मध्यप्रदेश (५।५४ तथा ३ जिलों में आंशिक नशाबन्दी है); उत्तर प्रदेश (११।५४ तथा ३ धार्मिक नगर); उड़ीसा (५।१७); पंजाब (१।१९); हिमाचल प्रदेश।
(३) वे राज्य, जहाँ मद्य-निषेध नहीं है।	बिहार, जम्मू तथा कश्मीर, राजस्थान, प० बंगाल तथा दिल्ली, मणीपुर और त्रिपुरा के केन्द्रशासित क्षेत्र।

१८०० कर्मचारियों ने सर्वोदय-साहित्य खरीदा

विद्यार्थियों के प्रयत्न से बम्बई के सेंचुरी मिल में पिछले दिनों सर्वोदय साहित्य का प्रचार किया गया और विविध भाषाओं की ३५००) की पुस्तकें बिकीं। साहित्य बिक्री में कोरा केन्द्र के विद्यार्थियों ने भी मदद की। बम्बई सर्वोदय मण्डल द्वारा इसके अतिरिक्त रु० ४३९-७२ न०पै० *का साहित्य अन्यत्र बेचा गया और भूदान* पत्र पत्रिकाओं के ९९ ग्राहक बनाये गये। अप्रैल मास से गुजराती के तीन दैनिक पत्रों-'जन्मभूमि', 'जनशक्ति' और 'मुम्बई समाचार' ने सप्ताह में एक दिन सर्वोदय सम्बन्धी लेख और समाचार देना भी शुरू किया है, जिससे सर्व-साधारण इस विषय के विचारों से परिचित हो सकें। सर्वोदय कार्यालय, शिमला द्वारा गत दो मास में १९०७) का और हिसार जिला सर्वोदय मण्डल द्वारा मई मास में ८५६,१२ का सर्वोदय साहित्य बेचा गया।

स्वर्गीय रामदेव बाबू !

बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष, बिहार में खादी एवं सर्वोदय आंदोलन के एक प्रमुख स्तंभ और प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्ता एवं कर्मठ नेता श्री रामदेव ठाकुर का गत १० जून '६२ को देहान्त हो गया। मृत्यु के समय उनकी अवस्था ६४ साल की थी।

रामदेव बाबू इधर कुछ दिनों से कभी-कभी छाती में दर्द अनुभव करते थे। ८ जून को डाक्टरी परीक्षा के बाद पता चला कि वे हृदय रोग से पीड़ित हैं। उन्हें तत्काल पटना मेडिकल कालेज में भर्ती किया गया। १० जून को प्रातःकाल से ही उनमें कुछ बेचैनी के लक्षण दीख पड़े। करीब डेढ़ बजे दिन में उन्होंने अंतिम साँस ली।

उनकी मृत्यु की खबर पाते ही पटना नगर की सभी रचनात्मक संस्थाओं के कार्यकर्ता उनके अंतिम दर्शन को दौड़ पड़े। उनके शव को शीघ्र ही पूसा रोड (दरभंगा) भेजा गया, जहाँ उनके पुत्र ने उनकी दाह क्रिया सम्पन्न की।

११ जून को पटना के नागरिकों की एक शोक सभा स्थानीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन भवन में हुई। सभा ने निम्नलिखित शोक प्रस्ताव स्वीकृत कर दिवंगत आत्मा के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित की।

शोक प्रस्ताव

"यह सभा बिहार के एक प्रमुख सेवक, रचनात्मक कार्यों के प्राण, श्री रामदेव ठाकुर के आकस्मिक निधन पर शोक प्रकट करती है। रामदेव बाबू बिहार के उन लोगों में से थे जिन्होंने इसके निर्माण में बिना प्रकाश में आये प्रमुख भाग लिया है। खादी आन्दोलन को जन्म देनेवालों, उसे सींचने और पनपानेवालों में जो तीन-चार थे, उनमें आप एक थे। आपकी कर्मठता, सतर्कता और कठिनाइयों से भिड़कर मुकाबला करने की शक्ति विलक्षण थी। आपके ऐसे वीर और निर्भीक नेता के निधन से रचनात्मक कार्यकर्ताओं का कलेजा सूना पड़ गया है।

यह सभा परमात्मा से प्रार्थना करती है कि उनकी दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करे एवं उनके संतप्त परिवार को धैर्य प्रदान करे।"

साहित्य-परिचय

सर्वोदय-साहित्य-प्रकाशन, वाराणसी १.

जीव-जगत माला के अंतर्गत 'जीव-विकास', 'जलचर', और 'वनचर' ये तीनों पुस्तकें बच्चों को सृष्टि के जीवों के विकास और उनके संबंध में सचित्र जानकारी देती हैं।

इसके अलावा 'हमारे घर' पुस्तक में विभिन्न देशों में वहाँ के मूल निवासी किस प्रकार के मकानों में रहते हैं, इसकी जानकारी दी गयी है।

'हमारे राज' पुस्तक में हिंदुस्तान के प्रमुख राजाओं के ऐतिहासिक क्रम से उनके कार्यों का जिक्र किया है। सभी पुस्तकें बालोपयोगी जानकारी के लिए उपयुक्त हैं। हरएक की कीमत दो रुपया है। सब पुस्तकों के लेखक श्री तरुण भाई और चित्रकार श्री कांतिलाल हैं।

—मथुरामल

दलविहीन जनतंत्र

कलकत्ता में १६ और १७ जून १९६२ को "दलविहीन जनतंत्र" विषय पर डा० त्रिगुण सेन की अध्यक्षता में एक संगोष्ठी 'सर्वोदय विचार परिषद्' (१३१।१ महात्मा गांधी रोड, कलकत्ता) द्वारा आयोजित किया गया है। इसमें प्रो० गोरा, प्रो० निर्मलकुमार भट्टाचार्य, प्रो० अमलन दत्ता, काजी अब्दुल वदूद, प्रो० गौरीपद भट्टाचार्य, प्रो० निर्मलकुमार मुखर्जी तथा अन्यान्य राजनैतिक विचारक भाग लेंगे, ऐसी आशा है।

शराबबन्दी प्रशिक्षण शिविर

राजस्थान प्रदेश नशाबन्दी समिति द्वारा भीलवाड़ा जिले की माण्डलगढ़ तहसील को शराबबन्दी के लिए सघन क्षेत्र चुना गया है और वहाँ प्रारम्भिक कार्य की दृष्टि से ११ जून से दस दिवसीय एक प्रशिक्षण शिविर माण्डलगढ़ में चलाया जा रहा है। २० जून को उसमें प्रत्यक्ष कार्य, विचार आदि पर गोष्ठी होगी।

उरण (कुलाबा) का समन्वय-तीर्थ

बम्बई के कुलाबा जिले में, उरण स्थान में ७ एकड़ भूमि पर एक आश्रम "समन्वय-तीर्थ" श्री गोविन्दराव चला रहे हैं। श्रम और सहजीवन के आधार पर, गुरुकुल पद्धति से यह आश्रम चल रहा है। यहाँ समय समय पर छात्रों के शिविर चलाये जाते हैं। स्वावलम्बी जीवन वाले १३ व्यक्ति 'समन्वय तीर्थ' में हैं और गत वर्ष गांधी जयन्ती पर इसकी स्थापना हुई थी। आश्रम के कार्य में श्री केदारनाथजी और विनोबा का मार्गदर्शन उन्हें प्राप्त है। सर्वोदय पात्र योजना भी वे सफलतापूर्वक चला रहे हैं।

विश्व-शान्ति-सेना के लिए ५००रु० खादी कार्यकर्ताओं ने भेजे

यहाँ विश्वशांति सेना की एशिया परिषद् के कार्यालय में नई दिल्ली के खादी ग्रामोद्योग भवन के कार्यकर्ताओं द्वारा प्रेषित रुपये ५००|- प्राप्त हुए हैं। परिषद् के मंत्री श्री सिद्धराज ढड्ढा ने अर्थ-संग्रह के लिए पिछले दिनों एक अपील जारी की थी।

सर्वोदय पदयात्रा

गुजरात में श्री हरीशभाई व्यास सर्वोदय विचार प्रचार के लिए ५ जून से भरूचाड़ी तालुका में पद-यात्रा करते रहे। १९ से १९ जून तक उनकी यात्रा डेकाई हरियावाडी क्षेत्र में और २० जून से भड़ौच जिले में चलेगी। हिमाचल प्रदेश में गत मास श्री प्यारेलाल शर्मा ने २०१ मील की पैदल यात्रा की। हिसार जिला (पंजाब) में १० से २१ मई तक ११ ग्रामों में ५० मील की पद यात्रा हुई। योगविद्यालय, तलावबाई-महाल, नागपुर के श्री भास्कर जोशी ने मई मास में ६९ मील की पदयात्रा की।

संथाल परगना में पंचायतों के निष्पक्ष चुनाव हों

संथाल परगना में ग्रामपंचायतों का चुनाव सर्वसम्मत हो, इसके लिए जिला सर्वोदय मण्डल और जिला पंचायत परिषद् द्वारा विशेष प्रयास किया जा रहा है। अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ के मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन ने देवघर के निकट सरपंचों के एक सम्मेलन में निष्पक्ष चुनाव की महत्ता बतलायी। सर्वसम्मत चुनाव के लिए यह प्रचार किया जा रहा है कि

. . . .

यह निर्णय किया गया कि हरएक पंचायत के अंतर्गत कम-से-कम एक गाँव में ग्रामदान और पंचायत के हर एक गाँव से कम-से कम एक दानपत्र प्राप्त किया जाय। 'बीघा कट्ठा अभियान' में उस जिले से ५० हजार कट्ठा जमीन मिली है।

विमला बहन यूरोप के लिए रवाना

विमला बहन वाराणसी से बम्बई गयी हैं और वहा से २४ जून को वे स्विट्जरलैण्ड तथा यूरोप के अन्य देशों के लिए रवाना हो जायँगी।

ग्राम-इकाई विद्यालय के संचालकों का सम्मेलन

अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की खादी ग्रामोद्योग ग्राम-स्वराज्य समिति द्वारा खादी ग्रामोद्योग आयोग के सहयोग से सभी प्रान्तों में ग्राम इकाई विद्यालय चलाये जा रहे हैं। इन विद्यालयों के आचार्यों का एक सम्मेलन २८, २९ और ३० जून १९६२ को हैदराबाद के निकट शिवरामपल्ली में आयोजित किया गया है। श्री शंकरराव देव भी इस सम्मेलन में उपस्थित रहेंगे।

क्षुरस्य धारा

कल एक साथी ने कहा—"अगर कोई करने दे, तो वितरण के काम के लिए पाँच साल देने को तैयार हूँ—फिर उसे आप राहत का काम समझ लो भी वह एक उत्तम राहत है।"

मैंने कहा—"आप निःशंक रहिये, वह क्रांति ही है।"

क्रांति और राहत की अपनी इस चर्चा ने हमारी कई प्रवृत्तियों को टटोल कर दिया है। क्रांति और राहत आखिर निर्भर किस बात पर है ? उत्तमोत्तम क्रांत कार्य भी केवल राहत का बन सकता है और चाहे जैसे राहत के समझे जाने वाले काम से भी क्रांति स्फूर्ति हो सकती है।

बिहार में भूकम्प हुआ। गांधीजी ने अपने चुने हुए साथियों को वहाँ (शुद्ध राहत के) काम के लिए भेज दिया। सरदार तब नासिक जेल में थे। उनका जी छटपटा रहा था। वहाँ काम उन्हें ढीला लग रहा था। ऐसा मालूम हो रहा था कि मानो एक मौका छूट रहा है। स्वामी आनन्द के नाम एक पत्र में उन्होंने लिखा : "बापू ने तुम सबको यहाँ भेजा और जवाहर वहाँ आये, तो ऐसा कुछ क्यों नहीं कर दिखाया कि सारा मुल्क मुग्ध उठे। सारे काम एक ओर रखकर हिन्दुस्तान की सारी शक्ति इसमें लगानी चाहिए थी। सिर्फ बापू को अपने अलग काम करने देते थे। बाकी सारा काम छोड़कर, एक ही बात और एक ही काम, ऐसी हवा बनी होती, तो बढ़िया होता। सरदार के जीवन के वे अत्यन्त क्रांतिकारी वर्ष थे। इसीलिए उन्हें ऐसे प्रसंग क्रान्ति के मौके के रूप मालूम होते थे।

काम क्रांति का है या राहत का इसे कैसे तय करें ?

(१) करने वाले की वृत्ति मूल्य परिवर्तन की है क्या ?

(२) करने की प्रक्रिया में कोई मूल्य-परिवर्तन है क्या ?

(३) मूल्य परिवर्तनकारी का किसी आन्दोलन से अनुबन्ध जुड़ा हुआ है क्या ?

(४) इससे लोगों का अभिक्रम जाग्रत होता है क्या ?

इन प्रश्नों का उत्तर यदि 'हाँ' मिलता है, तो मान लेना चाहिए कि यह काम क्रांति का है।

भूमि वितरण के काम में पिछले ३ प्रश्नों का जवाब 'हाँ' मिलता है, इसलिए यह संपूर्ण क्रान्तिकारी काम है, बशर्ते कि करने वाले की मनोवृत्ति क्रान्तिकारी हो।

—नारायण देसाई

बिहार में बीघाकट्ठा अभियान में

एक लाख तीस हजार भूमि प्राप्त

संथाल परगना और पूर्णिया में काम तेजी पर

बिहार के विभिन्न जिलों से जो सूचनाएं प्राप्त हुई हैं, उनके अनुसार १० जून तक बिहार में १ लाख ३० हजार कट्ठा जमीन बीघा-कट्ठा अभियान में प्राप्त हुई है। इसमें से लगभग ५०,००० कट्ठा जमीन केवल संथाल परगना जिले से और करीब २५,००० कट्ठा पूर्णियाँ जिले में प्राप्त हुई है।

कुल प्राप्त जमीन में से ५० प्रतिशत के लगभग वितरण तत्काल हो गया है। बाकी जमीन बाँटने के लिए प्रयास किया जा रहा है। आशा है कि अगले सप्ताह तक शेष जमीन का वितरण भी पूर्ण हो जायगा। जितनी जमीन बाँटी गयी है, उस पर आदाताओं का कब्जा अधिकांशतः तत्काल दिला दिया गया है।

सेवी कानून के स्थगन की सूचनाओं का असर जहाँ-तहाँ हुआ है। फिर भी संथाल परगना और पूर्णियाँ जैसे जिलों में कार्यकर्ताओं के संगठन से अभियान की प्रगति पूर्ववत् जारी है।

गांधी मार्ग के पथिक रामदेव बाबू

[पृष्ठ २ से आगे]

भेदभावों से वे ऐसे जकड़े थे कि उसके विरुद्ध आवाज उठते ही बौखला उठे। यहाँ तक कि उन गाँवों में चल रहे इन कार्यक्रमों के कर्मठ कार्यकर्ता तक रामदेव बाबू के भागल कर देने को उतारू हो गये। यह प्रसंग एक बार नहीं, बार-बार आया, पर रामदेव बाबू ने कर्तव्य-पथ से डिगने का नाम नहीं लिया और कर्तव्य-पालन के लिए अंत तक अड़े रहे। फिर चंद दिनों में उस क्षेत्र की ऐसी कायापलट हुई कि 'सिमरी-आश्रम' सारे बिहार का एक मार्ग-दर्शक केन्द्र बन गया। रूढ़ि-परस्तों और जातीयता तथा अस्पृश्यता की कट्टरता की सुदृढ़ दीवार एक एक कर ढहते नजर आयी और अनेकों कार्यकर्ता शांति करके राष्ट्रीय उत्थान के लिए बाहर निकल आये।

सन् '४२ के भारतीय स्वातंत्र्य-आंदोलन का क्रांतिकारी काल आया और रामदेव बाबू राष्ट्रीय-यज्ञ की उस धधकती आहुति-ज्वाला में अपने को फेंक देने में तनिक भी नहीं हिचके। लक्ष्मी बाबू और ध्वजा बाबू तो पहले ही पकड़ लिये गये थे, अतः बिहार खादी-समिति की पूरी जिम्मेदारी रामदेव बाबू के कंधे आ पड़ी। खादी-समिति की सारी निधि सिमरी में आ गयी, पर ब्रिटिश-शासक की ध्वंसात्मक-कार्रवाई की ज्वाला वहाँ तक पहुँच ही गयी। टॉमी का दस्ता अनायास पहुँचा और सिमरी-आश्रम में बिना किसी कारण के आग लगा दी। खादी की होली की उस धू-धू जलती लौ ने आखिर रामदेव बाबू की रचनात्मक कार्य के संकल्प की समाधि तोड़ ही दी। वे व्याकुल हो उठे और भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम के संघर्ष की लपट से रचनात्मक कार्यकर्ता और संस्था को जहाँ तक बचाने के बापू के आदेश के पालन में लाचारी देखते हुए वे लक्ष्मी बाबू और ध्वजा बाबू के पथ के पथिक बन गये।

भारत स्वतंत्र हुआ और राष्ट्रीय-जीवन में जो एक नया परिवर्तन आया उससे बंधुओं की त्याग और सेवा की समाधि टूट गयी, तब भी रामदेव बाबू त्याग और सेवा के बापू के पथ के पथिक बने ही रहे। उनके जीवन में कोई तब्दीली नहीं आयी जब कि मनोवांछित आकांक्षा-पूर्ति की सारी सुलभता मुँह बाये मुसकराते सामने खड़ी थी। किन्तु रामदेव बाबू की निश्चल आँखें उस ओर कभी मुड़ी तक नहीं। वे उसी तरह गरीब और कर्मठ बने रहे। इसीमें अपनी तथा अपने देश की शान समझते रहे और अपने कंधों पर खादी का जुआ डाले आगे ही बढ़ते रहे; क्योंकि बापू की कल्पना का स्वराज्य, उनके सपने का सर्वोदय-समाज निर्माण करने का उन्होंने ठाना था। फिर वे कैसे सुख-शांति से चैन की नींद सो सकते थे।

भारत में रचनात्मक कार्यक्रम का विस्तार तथा खादी का काम सबसे अधिक बिहार में हुआ है। इसके श्रेय की माला जिन प्रमुखों के गले पड़ी, उनमें रामदेव बाबू भी एक थे। जब इस कार्यक्रम का श्रीगणेश हुआ था, रामदेव बाबू गाँव-गाँव काम करते और गाली सुनते फिरते। चर्खा प्रचार के लिए अपने पीठ पर चर्खा, रुई, धुनकी आदि लाद-लाद कर गाँव-गाँव और घर-घर पहुँचाते रहे। स्वयं कताई, धुनाई आदि काम सिखाते रहे। तभी तो बिहार में खादी तथा रचनात्मक कार्यक्रम की अच्छी स्थिति हो सकी। रचनात्मक कार्य तथा खादी के काम के लिए पूसा एक आदर्श केंद्र माना जाने लगा है। क्यों? क्योंकि सिमरी के बाद रामदेव बाबू का कार्यक्षेत्र पूसा तथा उसीके आस पास के गाँवों में रहा। खादी के अतिरिक्त रामदेव बाबू ने गोसेवा के काम में भी कुछ वर्ष मुख्य रूप से समय दिया तथा बिहार में गोसेवा के काम में एक नयी जान ला दी।

फिर विनोबाजी के भूदान-यज्ञ का आह्वान कानों में गरजता हुआ सुनायी पड़ा। रामदेव बाबू जैसे कर्मठ कार्यकर्ता मानवता की करुणा की इस पुकार को अनसुनी कैसे कर सकते थे? भूदान-यात्रा करते विनोबा ने बिहार की भूमि में प्रवेश किया, तो उनकी सारी जिम्मेवारी रामदेव बाबू पर आ गयी। राम के वे हनुमान बन गये, तथा उसी शुचिता, सरलता तथा तत्परता से करीब ढाई साल तक लगातार उनकी सेवा करते रहे। हनुमान जैसे ही कर्मठ, तत्पर, जागरूक तथा निरालस्य, वैसे ही गठीले शरीर, वैसी ही भुजा की ताकत। इसी बीच वैद्यनाथ-धाम देवघर में मंदिर-प्रवेश की बात को लेकर बाबा पर लाठी प्रहार होते हुए रामदेव बाबू ने अपनी जान पर खेलकर उनकी जैसी सुरक्षा की, वह अपने आप एक स्वयं पूर्ण प्रसिद्ध सार्वजनिक घटना है। लाठी की बौछार, पर मुँह से उफ् तक नहीं। तुक यह कि चेहरे पर हमेशा की तरह मुसकराहट खेलती रही, और तुर्रा यह कि एक पूर्ण अहिंसक की भाँति लाठी मारने वालों पर बिना वैर भाव रखे मन में तनिक भी गुस्सा उठने नहीं दिया।

उन्हें देखते ही ऐनक की भाँति जो चीज बिल्कुल स्पष्टता से सामने आ जाती है, वह है उनका आलस्य और अहंकार-रहित जीवन। इनके रग-रग में क्रांति की भावना भरी थी, और बिना कदम डगमगाये वो गांधी पथ पर हमेशा अडिग चलते रहे। बापू के वे अनन्य अनुगामी थे। जिनके निधन ने बिहार ही में क्यों, सारे भारत में एक बड़े कार्यकर्ता का अभाव पैदा कर दिया। अपने गाँव के सेवाश्रम में रचनात्मक एवं खादी के कार्य से बार-बार आते उन्हें बचपन से देखा था, कताई-धुनाई सिखाते भी देखा था। पर इतने दिन बाद उनके प्रथम दर्शन की स्मृति आज भी धुंधली नहीं पड़ी है, और अंतिम दर्शन की स्मृति तो और भी ताजी है। तब और अब में काफी बदल है, किन्तु उनके मनोरंजक और आत्मीय स्वभाव में कभी बदल नहीं हुआ। उनकी गोद में खेलते-खेलते स्वयं कार्यकर्ता बन शान से फूल बैठा, पर उनकी प्रेमल भावना में कभी भी अंतर नहीं पाया।

उनकी अंतिम स्मृति वेदना की बदली बन सहसा आँखों में छा जाती है। पिछले साल कलकत्ता जाते हुए बरौनी में पटना की गाड़ी पकड़कर मोकामा जाने के लिए एक डिब्बे में सवार हो ही रहा था कि एक चिरपरिचित बुलंद आवाज सुनकर चौंक उठा—"यहाँ डिब्बा बिल्कुल खाली पड़ा है!" और आँखें फेरकर देखा तो उसके अगले डिब्बे के सामने नीचे खड़े-खड़े रामदेव बाबू ही आवाज लगा रहे थे। नजर मिलते ही सहज स्नेह भाव से उन्होंने कहा—"यहाँ, आओ"। बाद समाचार पूछते हुए पेटी-चरखा सामने की बर्थ पर खोलकर कातने लगे। जैसे एक पल भी बेकार जाने देना सह्य न हो। बीच बीच में बातें होती रहीं और जब मोकामा आया तो वे स्वयं कह उठे—'तुमसे बिछुड़ने की मंजिल आ गयी।' श्रद्धा भाव से प्रणाम कर अलग हो गया पर उनके साथ का यह छोटा-सा संस्मरण जैसे जीवन की एक अमिट स्मृति बन गयी हो। वे चले गये, पर उनका त्यागमय कर्मठ जीवन, उनका स्नेह स्वभाव, त्याग, तपस्या सब हमारे सामने खुली पुस्तक की भाँति पड़ी है।

इस अंक में

सूचना

खेद है कि स्थानाभाव के कारण 'कुरान की कहानी मियाँ की जुबानी' और 'तंगानिका में जयप्रकाश' लेखमालाओं की अगली किस्त नहीं दे सके। पाठक क्षमा करेंगे—संपादक

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता: राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५१२। इस अंक की छपी प्रतियाँ ९४०८ एक अंक: १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | १५ जून '६२ | वर्ष ८ : अंक ३७

आणविक-अस्त्रों का मुकाबला विशुद्ध अहिंसा-शक्ति द्वारा ही सम्भव

[आगामी १६, १७, १८ जून को दिल्ली में गांधी शांति प्रतिष्ठान के तत्वावधान में 'अणुशस्त्र-विरोधी सम्मेलन' हो रहा है। सम्मेलन के निमित्त यह विशेष लेख प्रस्तुत किया जा रहा है-सं०]

विष्णु पुराण में भस्मासुर की कहानी है—एक बार एक असुर ने तपस्या से प्रसन्न कर शिवजी से वरदान प्राप्त कर लिया कि जिस किसी के सिर पर हाथ रखेगा वह भस्म हो जायेगा। उसने इस वरदान का दुरुपयोग किया। उसका आतंक बढ़ता गया और सारी दुनियाँ में भय छा गया। अंत में विष्णु ने मोहिनी का अवतार लिया।

मोहिनी का जादू उस पर चल गया। भस्मासुर आकर्षित हो गया। मोहिनी ने उससे कहा; जैसा मैं करूँगी, वैसा तुम्हें भी करना पड़ेगा। दोनों साथ नृत्य करने लगे। मोहिनी ने अपने सिर पर हाथ रखा और भस्मासुर ने अनुकरण करते हुए ज्योंही अपने सिर पर हाथ रखा, वह स्वयं ही भस्म हो गया।

आज हमारी हालत भस्मासुर जैसी हो गई है। विज्ञान के वरदान से अणु शक्ति की खोज हुई, किन्तु आज वरदान अभिशाप बन गया। अणु-युद्ध का खतरा आज मानव जाति के सम्पूर्ण अस्तित्व को ही चुनौती दे रहा है। मनुष्य की रूह ही आज मनुष्य का खात्मा करने को तैयार है।

> आप, आपका परिवार, आपके मित्र और आपका देश—कुछ निर्दयी किन्तु शक्तिशाली व्यक्तियों के निर्णय से खत्म किये जा सकते हैं।
>
> "जब तक जिंदगी का साथ है, हम मानव जाति के सामने प्रस्तुत अभूतपूर्व महान् संकट को यथाशक्ति दूर करने का प्रयत्न करेंगे।
>
> —बर्ट्रेण्ड रसेल

अणुशस्त्रों की विनाशक स्पर्धा से "किसी भी दिन, किसी भी क्षण एक मामूली घटना के कारण, बम फेंकने वाले विमान और टूटते हुए तारे के बीच फरक न कर सकने के कारण या किसी एक भी आदमी की तात्कालिक सनक के कारण दुनिया में आणविक युद्ध शुरू हो सकता है, जो सम्भवतः पृथ्वी पर से मनुष्य और अन्य सब प्रकार के प्राणियों के अस्तित्व को खतम कर सकता है" ?[1]

> **मैं कहना चाहता हूँ कि अणुबम के इस युग में विशुद्ध अहिंसा ही वह शक्ति है जो सब प्रकार की हिंसा का मुकाबला कर सकती है।**
>
> **—महात्मा गांधी**

१९४५ के वे दिन, जब हीरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम बरसाने से, सामूहिक विनाश का एक रोमांचक दृश्य प्रस्तुत हुआ था, क्या कभी भुलाने भी जा सकते हैं? किन्तु उसके बाद भी मनुष्य नहीं सम्हला और उसने एक के बाद एक बढ़-चढ़कर ऐसे अणुशस्त्रों का आविष्कार किया जो चन्द क्षणों में सामूहिक आत्म-हत्या का नजारा पेश कर सकते हैं।

अणुयुद्ध हो या न हो, किन्तु उसके भय का खतरा ही मानव मन और शरीर-स्वास्थ्य को विकृत कर रहा है। अणु परीक्षणों से गिरने वाली धूलि के भयानक परिणाम मनुष्य और उसकी भावी संतति पर विपरीत ही होने वाले हैं।

मेडिकल रिसर्च कौन्सिल के औषधि विशेषज्ञ और अणु विशेषज्ञों की राय में "मानवता के लिए अणु और उद्जन बमों के विस्फोटों से होने वाली बाह्य रेडियो सक्रियता से कहीं ज्यादा अधिक खतरा, अणुधूलि-विशेषतः स्ट्रोनियम ९० के कारण मानव अन्दर ही होने वाली लम्बे अर्से तक की रेडियो सक्रियता से है, जो जमीन में जमा हो जाती है। इससे पीने का पानी और फसलें भी विकृत हो सकती हैं' (१३-५-५६)

क्या हम चाहते हैं कि हृष्ट पुष्ट सर्वांग सुन्दर मनुष्यों के बजाय दुबले पतले, असंतुलित, विकलांग मनुष्यों से दुनिया भर जाये?

निरस्त्रीकरण सम्मेलन होते हैं, बड़ी सरकारों के प्रतिनिधि इसके खतरों पर विचार करते हैं, किन्तु परिणाम? भय, आतंक और अविश्वास के साथ अणु परीक्षणों की शृङ्खला में वृद्धि। ऐसी स्थिति में अब सरकारों का मुँह ताकने के बजाय आणविक शस्त्रों के प्रयोग व उनके परीक्षणों के खिलाफ जनमत जाग्रत करने की आवश्यकता है।

खुशी की बात है कि दुनिया में अणुशस्त्रों के खिलाफ कोने कोने से आवाज उठ रही है। इस वक्त अलग-अलग देशों में कई शांति संगठन काम कर रहे हैं, जिनमें से प्रमुख है, "युद्ध विरोधी अन्तर्राष्ट्रीय' 'शत समिति' (कमिटी आफ हण्ड्रेड) लन्दन, 'अहिंसक प्रतिकार समिति (कमिटी फार नानवायलेंट [illegible]) न्यूयार्क। 'सर्व सेवा संघ, [illegible]' 'गांधी शांति प्रतिष्ठान' दिल्ली, 'आल [illegible] पीस कौंसिल' और अभी पिछले साल जन्म लेने वाली 'विश्व शांति सेना परिषद' सब संस्थायें अपनी अपनी शक्ति और दायरे में यथाशक्ति काम कर रही हैं। अणु शस्त्रों के अड्डों पर प्रदर्शन, अणुशस्त्रों के खिलाफ जनमत तैयार करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय पदयात्रायें, अणुपरीक्षणों के क्षेत्र में जान की बाजी लगाकर प्रदर्शन करना, आदि अनेक-विध कार्यक्रम किये जा रहे हैं।

किन्तु ये सब प्रयत्न मिलकर भी छोटे पड़ते हैं। अणुशस्त्रों के पीछे आज जितनी शक्ति, पैसा, समय और वैज्ञानिक प्रतिभा लग रही है, उसके मुकाबिले हमारे ये अहिंसा के प्रयत्न कितने छोटे हैं।...... आज की आवश्यकता है कि हम अपनी पूरी ताकत लगाकर अहिंसा की अजेय शक्ति को संगठित करें। अतिहिंसा के बाद छोटी मोटी हिंसा का कोई मतलब नहीं रहता। अतिहिंसा के बाद अहिंसा ही कारगर हो सकती है।

आज संसार में सब कोई शांति की रट लगा रहे हैं। क्यों? इसलिए कि उसके बिना कोई दूसरा रास्ता नहीं है। हिंसा से विश्वास उठ गया है, पर अहिंसा में श्रद्धा जमी नहीं है। अजीब त्रिशंकु की हालत है। लोग निरस्त्रीकरण की चर्चा करते हैं, शस्त्रों को साथ लेकर। इसलिये आज अहिंसा की महान् शक्ति को जन जन में जाग्रत करने की आवश्यकता है।

हिंसा की शक्ति संख्या और पाशविक बल की शक्ति है, जब कि अहिंसा की शक्ति गुण और आत्मा की है। लाखों सैनिकों का मुकाबिला एक निहत्था शांति सैनिक कर सकता है। विनोबा तो अक्सर कहते हैं कि जिस प्रकार रेडियो एक्टिव्हों (?) को किसी विशेष जगह से छोड़कर सर्वनाश किया जा सकता है, उसी प्रकार क्यों नहीं अहिंसा की अव्यक्त शक्ति की खोज की जाये, जिससे हम अपने घर बैठे आत्मा की शक्ति से प्रेम, विश्वास और करुणा का वातावरण बना सकें!

आज मानवता संकट और संक्रमण काल से गुजर रही है, इसलिये आवश्यकता है, हम बैठ कर सोचें कि कैसे हम अहिंसा की अजेय शक्ति को प्रकट करें, जिससे विश्व में स्थायी शांति का पथ प्रशस्त हो सके।

—पणीन्द्रकुमार

> ## अणुबम का—अहिंसा से मुकाबला
>
> "अणुबम का मुकाबला अहिंसा से कैसे करोगे?" अमेरिकी संवाददाता ने बापू से ३० जनवरी ४८ को उनकी मृत्यु के कुछ घन्टों पहले पूछा। बापू ने जवाब दिया "मैं न तो तहखाने में जाऊँगा और न किसी प्रकार का आश्रय लूँगा। मैं खुले में बाहर खड़ा रहूँगा और बम-वर्षक यह देखे कि उसके खिलाफ द्वेष का लेश भी चेहरे पर अंकित नहीं है। मैं जानता हूँ इतनी ऊँचाई से बमवर्षक हमारा चेहरा नहीं देख सकेगा। 'वह हमारा नुकसान करने नहीं आयेगा'—हमारी यह कामना उस तक पहुँच जायेगी और उसकी आँखें खुल जायेंगी।"

1 बर्ट्रेण्ड रसेल और माइकेल स्काट की अपील

टांगानिका में जयप्रकाश बाबू

सुरेश राम

विश्व-शांति-सेना के एशिया क्षेत्र के कार्यालय (काशी) में श्री जयप्रकाश बाबू के नाम से गत ३० अप्रैल को एक तार इस आशय का पहुँचा :

'आगामी छः और नौ मई के बीच उत्तर रोडेशिया की सीमा के पास एक बड़ी रैली और कान्फरेंस का आयोजन किया जा रहा है। उसमें आप भाग लें और प्रमुख वक्ता रहें। बाद में कुछ और भी जरूरी काम है।'

तार आया था, टांगानिका की राजधानी दारेस्सलाम से। इसे भेजा था *अफ्रीका की स्वतंत्रता के मख्यात पुजारी और सेनानी रेवरेंड माईकेल स्काट* तथा विश्व-शान्ति-सेना के अफ्रीकन अभियान के दो नवयुवक कार्यकर्ता बिल सदरलैण्ड और वायर्ड रस्टिन ने।

छः मई की दोपहर को जयप्रकाश बा और प्रभावती बहन एयरइण्डिया के जहाज से बम्बई से निकले। शाम को नैरोबी आये। रात को नैरोबी में विश्राम किया और सोमवार, सात मई की दोपहर दारेस्सलाम पहुँच गये। टांगानिका मंत्रि-मंडल के एक नवयुवक सदस्य श्री स्वाई के यहाँ ठहरे।

पूर्वी और दक्षिणी अफ्रीका में जे० पी० इसके पहले कभी नहीं आये थे। यहाँ की परिस्थिति जानने-समझने की बड़ी उत्सुकता थी। विश्व शान्ति-सेना के साथियों से विचार-विनिमय किया। अफ्रीका के महाद्वीप से सुप्रसिद्ध नेताओं और जन-सेवकों से भी मुलाकात की। इनमें तीन नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं—श्री जुलियस न्येरेरे, श्री कैनेथ काउन्डा और श्री एम्म्यू कोयनान्गे। इन तीनों विभूतियों के जीवन की पूरी झाकी तो इस समय देना असम्भव है। उनके परिचय के तौर पर केवल इतना कहेंगे—श्री जुलियस न्येरेरे टांगानिका के राष्ट्र-पिता कहे जाते हैं। अंग्रेजी राज के चंगुल से मुक्त होकर जब टांगानिका स्वतंत्र हुआ, तो श्री जुलियस ही यहाँ के प्रधान मंत्री बने।

मगर जन-शक्ति के इस अनोखे उपासक ने पैंतालीस दिन पद पर रहने के बाद इस्तीफा देकर, क्या अपने देश के प्यारे निवासियों को और क्या बाहर की दुनिया को, सब को हैरत में डाल दिया और अब रात दिन मुदित मन से जनता की सेवा में तल्लीन रहता है।

टांगानिका की सर्वप्रिय राजनीतिक पार्टी 'टांगानिका अफ्रीकन नेशनल यूनियन' (टानू) के वह अध्यक्ष हैं।

श्री कैनेथ काउन्डा उत्तर रोडेशिया के गांधी माने जाते हैं। उमर केवल अड़तीस साल की है और आज अफ्रीका की महानतम विभूतियों में गिने जाते हैं। उत्तर रोडेशिया की *युनाइटेड नेशनल इण्डिपेन्डेन्स पार्टी (यूनिप)* के अध्यक्ष हैं और अपने परतंत्र देश की स्वतंत्रता के संग्राम के सेनापति और संचालक हैं। रंग-भेद के उपासकों और निहित स्वार्थों के समर्थकों की आँखों के जबरदस्त काँटे हैं।

श्री एम्म्यू कोयनान्गे कीनिया के निवासी हैं। अपने जीवन के कितने ही बरस अंग्रेजी सत्ता की जेलों में बिता चुके हैं। इनके पिता भी अंग्रेजी राज की यातनाओं के शिकार होकर मरे। और इनके परिवार में लगभग पचास स्त्री-पुरुष जेल या दूसरे कष्ट भोग चुके हैं। इन दिनों श्री कोयनान्गे पैन-अफ्रीकन मूवमेन्ट फॉर दी फ्रीडम आफ ईस्टर्न, सेन्ट्रल एन्ड सदर्न अफ्रीका (पाफमेकसा) के प्रधान मंत्री हैं और अफ्रीका के देशों की आजादी के लिए जान हथेली पर रखकर निष्ठा-पूर्वक लगे रहनेवालों में प्रमुख हैं।

* * *

जयप्रकाश बाबू का पहला सार्वजनिक कार्यक्रम गुरुवार, दस मई की शाम को दारेस्सलाम में हुआ। एक विशाल आम सभा थी। अध्यक्षता की जूलियस न्येरेरे ने की। उन्होंने सभा में बोलनेवाले तीनों वक्ताओं का—जे० पी०, कैनेथ काउन्डा, रेवरेन्ड माइकेल स्काट का परिचय दिया।

अपने व्याख्यान में जे० पी० ने दारेस्सलाम के नागरिकों को आयोजन के लिए धन्यवाद दिया। साथ ही टांगानिका देश के निवासियों और उनके महान् नेता श्री जूलियस न्येरेरे को शान्तिपूर्वक स्वराज्य का आन्दोलन करने और सफलता प्राप्त करने पर बधाई दी। विशेषकर अभिनन्दन श्री जूलियस का किया, जिन्होंने चंद दिन प्रधान मंत्री पद सँभालने के बाद सत्ता का त्याग कर दिया। जे० पी० ने इसे आदर्शपूर्ण घटना बताया, क्योंकि इतिहास में ज्यादातर यही देखा गया है कि स्वतंत्रता-संग्राम के सेनानी विजय पाने के बाद स्वयं सत्ता में सर्वोच्च स्थान पर रहे। जैसे अमरीका में वाशिंगटन और रूस में लेनिन। स्वराज्य प्राप्ति के बाद सत्ता से अलग रहने का आदर्श महात्मा गांधी ने पेश किया और इसी तरह श्री जूलियस का भी सत्ता छोड़कर जन-शक्ति द्वारा नये समाज की रचना में लगना बड़े आनन्द और उत्साह की चीज है।

जे० पी० ने बताया कि दारेस्सलाम आने का मेरा मुख्य उद्देश्य यह है कि अपने मित्र कैनेथ काउन्डा की और उत्तर रोडेशिया के निवासियों की उनकी आजादी की लड़ाई में कुछ मदद कर सकूँ। साम्राज्यवादी और उपनिवेशवाद के *दिन अब लद गये और पूर्वी, केन्द्रीय तथा* दक्षिणी अफ्रीका में भी वह चंद दिनों की मेहमान है और उनका खात्मा होना निश्चित है। परिवर्तन की जो हवा चल रही है, अफ्रीका उससे विलग नहीं रहनेवाला है। रोडेशिया राज के प्रधान मंत्री राय वेलेन्स्की, दक्षिण अफ्रीका में सर्वेर्वा वेरवुड और पुर्तगाल के तानाशाह सालाजार तीनों की स्थिति एक-सी है। इनका व्यवहार बच्चों के जैसा है। जो यह नहीं समझ पा रहे हैं कि जमाने की हवा क्या है और लोग क्या चाहते हैं।

अंत में जे० पी० ने उत्तर रोडेशिया की जनता और वहाँ के नेताओं को भारत की जनता की तरफ से विश्वास दिलाया कि आपके इस संग्राम में हमारी पूरी सहानुभूति और समर्थन रहेगा।

शुक्रवार ग्यारह मई को जे० पी० और प्रभावती बहन म्बेया नामक स्थान पर गये जो टांगानिका के पश्चिमी हिस्से में है और उत्तर रोडेशिया की सीमा के के निकट है। यहीं पर पाफमेकसा का सम्मेलन था, जिसके अध्यक्ष श्री कैनेथ काउन्डा थे। श्री एम्म्यू कोयनान्गे का परिचय देते हुए पाफमेकसा जिक्र ऊपर किया जा चुका है। इस संगठन का पिछला अधिवेशन गत पाँच फरवरी को इथोपिया की राजधानी एडिस अबाबा में हुआ था। इसमें पूर्वी केन्द्रीय और दक्षिणी अफ्रीका के सभी देश शामिल हैं—जिनमें तीन स्वतंत्र देशों की—टांगानिका, सोमाली और इथोपिया की सरकारें हैं और अन्य देशों की राजनीतिक *पार्टियाँ हैं।*

म्बेया नगर की आबादी मुश्किल से पाँच हजार है। मगर पाफमेकसा के इस सम्मेलन में जनता का अभूतपूर्व समूह था, जैसा इस नगरी में या आस पास न कभी देखा और न कभी सुना गया। आश्चर्य की बात है कि सम्मेलन के समय घनघोर वर्षा हुई और कुछ व्यवस्था गड़बड़ा गयी। मगर जन-समूह, जिसमें स्त्री-पुरुष और बच्चे सभी थे, वैसा का वैसा बना रहा और दिलचस्पी तथा उत्सुकता के साथ सारी कार्रवाई को देखता-सुनता रहा।

रविवार, तेरह मई को पाफमेकसा के सम्मेलन में श्री जूलियस न्येरेरे ने कहा कि जब तक अफ्रीका के सभी देश स्वतंत्र नहीं हो जाते, हमारा यह आन्दोलन जारी रहेगा। हम सब मिलकर इस आन्दोलन को चलाना चाहते हैं। यह कहना कि हम मिलकर कोई गुट बना रहे हैं, गलत है और धोखे में डालनेवाली बात है। म्बेया में हम सब इसी वजह से जमा हुए हैं कि उत्तर रोडेशिया और अन्य परतंत्र देशों की आजादी के लिए आवश्यक कदम उठाने पर विचार करें।

टांगानिका के प्रधान मंत्री, श्री रशीदी कावावा का भी महत्त्वपूर्ण भाषण हुआ। श्री कावावा टानू पार्टी के उपप्रधान हैं और प्रधान-मंत्री होने पर उन्होंने एलान किया था कि श्री जूलियस न्येरेरे हमारे राष्ट्रपिता हैं और हम जो कुछ कर रहे हैं या करेंगे, वह उनके आदेश पर ही होगा। अपने व्याख्यान में श्री कावावा ने कहा कि अब शब्दों का या बोलने का समय नहीं रहा। करने का समय है। वेलेन्स्की बोल नहीं रहा है, चुपचाप तैयारी कर रहा है। हम भी ज्यादा बात नहीं करना चाहते, लेकिन यह स्पष्ट कह देना चाहते हैं कि उत्तर रोडेशिया में जो दमन और अन्य चीजें आज चल रही हैं, वे टांगानिका की सरकार को पसंद नहीं है। ना-पसंद की सरकार को हमने अपने देश से निकाल दिया और हम यह नहीं बर्दाश्त कर सकते कि इस तरह की सरकार हमारी सीमा पर रहे।

आगे चलकर श्री रशीदी कावावा ने जाहिर किया कि उत्तर रोडेशिया के निवासियों को मिलकर और मजबूती के साथ मिलकर आगे बढ़ना चाहिए। चाहे उसमें मौत का सामना करना पड़े, तब भी कोई परवाह नहीं। वे इतमीनान रखें कि टांगानिका के हम निवासी और सरकार उनके साथ-साथ अपनी जान दे देंगे।

म्बेया में इस अवसर पर एक बड़ी शानदार रेली हुई जिसमें जयप्रकाश बाबू तथा अन्य देशों के नेताओं के व्याख्यान हुए। उसमें यह संकल्प किया गया कि उत्तर रोडेशिया तथा दूसरे सभी गुलाम मुल्कों की आजादी के लिए मिलकर हम लड़ेंगे और जान तक दे डालेंगे।

इस सम्मेलन में कई प्रस्ताव भी सर्व-सम्मति से पास हुए। उनमें कहा गया कि ब्रिटिश सरकार को चाहिए कि रोडेशिया और न्यासालैंड के फेडरेशन को खत्म कर दे। साथ ही उससे कहा गया कि उत्तर रोडेशिया में इस प्रकार का वातावरण बनाये कि सच्चे और सही ढंग से वहाँ चुनाव हो सके और दक्षिणी रोडेशिया का जो १९६१ वाला विधान है, उसे खारिज कर और मानवीय अधिकारों पर आधारित नया विधान बनने के लिए एक वैधानिक परिषद् बुलाये। इसके अलावा विभिन्न देशों की सरकारों से—ब्रिटिश पोर्चुगीज और दक्षिण अफ्रीकन अपील की गयी कि राजनीतिक बन्दियों को छोड़ दें ताकि वे लोग अपने देश के भाग्य-निर्माण में स्वतंत्रता से भाग ले सकें। संयुक्त राष्ट्र को इस विषय में दिलचस्पी लेने के लिए धन्यवाद दिया और आगे इस दिशा में आवश्यक कदम उठाने की विनती की ताकि यह सभी देश स्वतंत्रता प्राप्त कर सकें।

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

समन्वय का कार्य

सर्वांगीण समग्र सत्य दर्शन और उसके साथ अहिंसा-युक्त दर्शन को वेदान्त कहते हैं। हमें अपने जीवन और दर्शन में इन्हीं दो तत्वों का समन्वय करना होगा। अभी तक समन्वय करने की जो कोशिश की गयी, उसमें हमें एक दीक्षा मिल गयी। फिर भी उसमें परिपूर्णता नहीं होती और शायद कभी होगी भी नहीं। आज हमारे बीच भी भगवान् ने समन्वय करने का बड़ा भारी कार्यक्रम रचा है और भूदान-यज्ञ न मालूम हमें किस तरह कहाँ ले जायगा, इसका भी अभी कोई अन्दाज नहीं लग रहा है। लेकिन एक-एक कदम हमें उठाना पड़ रहा है। इस सिलसिले में सांस्कृतिक केन्द्र की कल्पना, जिसे 'समन्वयाश्रम' या 'समन्वय-मन्दिर' जो भी नाम दिया जाय, पर्याप्त होती है।

इस काम के लिए हम आप सब लोगों का हृदय से सहयोग चाहते हैं। सहयोग का जैसा अर्थ दुनिया में किया जाता है, साधारणतः वैसा अर्थ हमारे मन में नहीं है। हम चाहते हैं कि अपने हृदय में हम यही भाव रखें कि एक परमेश्वर की हस्ती है और बाकी हम सब जो भी हैं, वह शून्य हैं। उसी के अन्दर, उसी की लीला से हमें ये सारे रूप मिले हैं। शून्य को भी एक रूप होता है। उसका भी एक आकार देखा जाता है। वह भी निराकार नहीं होता। इसी तरह हमें भी आकार मिला है। फिर भी हमें शून्य बनना चाहिये।

बोधगया
१८-१-५४

—विनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ी, ख = ष
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

राजस्थान सरकार का प्रतिगामी कदम

राजस्थान के आबकारी विभाग के मंत्री ने, जो वित्तमंत्री भी हैं, इस बात की घोषणा की है कि राजस्थान सरकार ने शराब की बिक्री की व्यवस्था में एक नया परिवर्तन किया है। अब तक शराब की दूकानों के ठेके नीलाम के आधार पर होते थे। जो बढ़कर बोली लगाता, वही शराब बेचने की दूकान का ठेका पाता था। अब नयी व्यवस्था के अनुसार राजस्थान सरकार ने नीलाम की यह पद्धति समाप्त करके अनिवार्यतः एक निश्चित मात्रा में शराब की बिक्री करने की गारण्टी देनेवाले लोगों को ही बिक्री की इजाजत देने का फैसला किया।

इस संबंध में इसी अंक में अन्यत्र राजस्थान के एक पुराने कार्यकर्ता, श्री मनोहरसिंह मेहता का लेख छपा है। नयी पद्धति में जो छिद्र हैं तथा उससे शराबखोरी बढ़ने का जो अन्देशा है, उसकी ओर उन्होंने ध्यान आकर्षित किया है। नीलाम की पद्धति वास्तव में गलत पद्धति है, पर स्पष्ट जाहिर है कि राजस्थान सरकार ने उस पद्धति को समाप्त करने का फैसला उसके गुण अवगुण के आधार पर नहीं किया है, बल्कि शराब से होनेवाली आमदनी को सुरक्षित करने, बल्कि हो सके तो उसे बढ़ाने के लिए ही किया है। ऐसा न हो तो पिछले तीन वर्षों में जिस वर्ष "अधिक से अधिक" शराब बिक्री हो उसके, और इस अर्से में नीलाम की जो अधिक-से अधिक बोली लगी हो, उन आँकड़ों को आधार मानने का और क्या अर्थ है? तीन वर्षों के "उच्चतम" आँकड़े लेने के बजाय सरकार "औसत" आँकड़े भी ले सकती थी। पर आमदनी को बढ़ाने के लोभ में सरकार "उच्चतम" पर भी नहीं रुकी। इन "उच्चतम" आँकड़ों में १० प्रतिशत और जोड़कर तब बेची जानेवाली शराब की मात्रा निश्चित की गयी। क्या इसका यह साफ अर्थ नहीं है कि सरकार शराबखोरी में हर साल दस प्रतिशत की या कुछ न कुछ वृद्धि चाहती है? सरकार की मनशा क्या है, यह इस बात से और भी स्पष्ट होती है कि आबकारी विभाग के उच्च अधिकारियों की ओर से ठेके लेनेवालों को यह आश्वासन दिया गया है कि अगर वे निश्चित मात्रा से अधिक शराब बिक्री करेंगे, तो उतनी अधिक बिक्री पर निर्धारित मुनाफे की एवज उन्हें प्रति गैलन दुगुना मुनाफा मिलेगा। हालाँकि आबकारी मंत्री ने अभी हाल ही में राजस्थान राज्य नशाबंदी समिति की बैठक में इस प्रकार का कोई आश्वासन दिये जाने के बारे में अनभिज्ञता जाहिर की थी, पर अभी तक उन्होंने सार्वजनिक रूप से इस बात का खण्डन नहीं किया है।

एक ओर यह कहा जाता है, और यह सही भी है, कि केवल कानून से शराबबंदी नहीं हो सकती, उसके लिए सार्वजनिक कार्यकर्ताओं और संस्थाओं को वातावरण बनाना चाहिए और लोगों का शिक्षण करना चाहिए। पर अगर सरकारें सार्वजनिक कार्यकर्ताओं को तो यह उपदेश देती रहें और खुद अपनी ओर से शराबखोरी को इस प्रकार प्रोत्साहन देती रहें, तब क्या शराबबंदी का कार्यक्रम कभी सफल हो सकता है? या तो राजस्थान सरकार को साफ तौर से यह जाहिर करना चाहिए कि शराबबंदी के कार्यक्रम में उसकी आस्था नहीं है और वह उसे जरूरी नहीं मानती, या उसको अपने मौजूदा रवैये में तत्काल परिवर्तन करना चाहिए। नीलाम की पद्धति राजस्थान सरकार ने समाप्त की, यह अच्छा किया, पर उसे चाहिए कि नयी पद्धति में वह—

(१) उच्चतम की अपेक्षा औसत खपत का सिद्धांत अपनाये,

(२) उच्चतम खपत पर १० प्रतिशत जो और अतिरिक्त जोड़ा गया है, उसे रद्द करे और

(३) यह स्पष्ट घोषणा करे कि निर्धारित मात्रा से अधिक शराब बेचनेवालों को कोई अतिरिक्त मुनाफा नहीं दिया जायगा।

पंचायतों के चुनाव

पंचायतों के चुनाव दलगत आधार पर नहीं होने चाहिए, इस सिद्धांत को मान्य करके कांग्रेस ने सही दिशा में कदम उठाया है। अगर हम भूल नहीं कर रहे हैं, तो प्रजा समाजवादी पार्टी ने बहुत अर्से पहले ही अपनी यह राय जाहिर की थी, हालाँकि उस पर अमल अभी तक किसीने भी नहीं किया था। जब तक सत्ता का स्वरूप केन्द्रित है, तब तक सत्ता की होड़ जारी रहेगी, और जब तक सत्ता की होड़ तथा चुनाव की मौजूदा पद्धति जारी रहेगी, तब तक ग्रामपंचायतों को उस होड़ से परे रखना मुश्किल मालूम होता है। धारासभाओं और लोकसभा में बहुमत प्राप्त करने के लिए राजनैतिक पार्टियों को ठेठ नीचे गाँवों तक अपने जाल फैलाने होते हैं। ऐसी स्थिति में इस प्रलोभन से मुक्त रहना बहुत मुश्किल है कि ग्राम-पंचायतों में अपने-अपने दल का प्रभुत्व हो! यही कारण है कि प्रस्तावों के बावजूद जब चुनाव सामने आते हैं और इस तरह के प्रस्तावों को अमल में लाने का मौका उपस्थित होता है, तब उनका अमल अक्सर उनके खण्डन में ही होता है। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन में कुछ सदस्यों ने यह सुझाव भी दिया कि "कांग्रेस तभी ग्रामसभा के चुनाव में न लड़ने का फैसला करे, जब कि उसे भरोसा हो जाय कि दूसरे दल भी इस सिद्धान्त को मान्य करेंगे।" जाहिर है कि मनों में इस प्रकार की शर्तें रखकर किसी भी सिद्धांत पर अमल नहीं किया जा सकता। उपर्युक्त सुझाव का उत्तर देते हुए भी यशवंतराव चव्हाण ने ठीक ही कहा था कि देश की प्रमुख राजनीतिक पार्टी होने के नाते कांग्रेस को दूसरी पार्टियों का अनुकरण न करके ऐसे मामले में नेतृत्व करना चाहिए। पण्डित जवाहरलालजी ने भी बहस के दौरान में इस बात को स्पष्ट किया कि "इस प्रस्ताव को स्वीकार करके कांग्रेस सिर्फ अपनी राय जाहिर नहीं कर रही है, बल्कि अपने आचरण के लिए एक सिद्धांत का प्रतिपादन कर रही है।" चुनावों में जिस तरह की अनैतिक और असामाजिक कार्रवाइयाँ बढ़ रही हैं, उनके कारण आम लोगों में इस पद्धति और चुनावों के खिलाफ भावना बढ़ रही है, अतः हमें विश्वास है कि आम लोगों की ओर से इस फैसले का स्वागत किया जायगा कि ग्रामसभा के चुनाव पार्टी के आधार पर न हों और कांग्रेस की तरह दूसरी सब राजनीतिक पार्टियाँ भी इस सिद्धांत को मान्य करेंगी।

निर्दलीय राजनीति और नेहरूजी

बड़े-बड़े आदमी भी अक्सर परिस्थितियों और तात्कालिक उद्देश्य से प्रभावित होकर ही सोचते हैं। अतः अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी की अभी हाल ही में हुई दिल्ली की बैठक में पंचायतों के चुनाव दलगत आधार पर न होने संबंधी प्रस्ताव पर बोलते हुए प्रधानमंत्री ने राजनीतिक दलों के अस्तित्व के आधार पर संचालित राजनीति और लोकतंत्र का जो समर्थन किया तथा इसके खिलाफ विचार रखनेवालों का जो उपहास किया, उससे हमें ताज्जुब नहीं हुआ। हालाँकि नेहरूजी ने पंचायतों के चुनाव दलगत आधार पर न करने का समर्थन किया, पर वैसा करते हुए उनके भाषण का अधिकांश हिस्सा दलीय पद्धति के समर्थन में था। राजनीतिक दलों की आवश्यकता बतलाते हुए नेहरूजी ने कहा कि समाज में बहुत से अवांछनीय व्यक्ति होते हैं, जो अपने-अपने गुट और गिरोह बनाकर समाज पर हावी होने की कोशिश करते हैं। उनको इस कार्रवाई से रोकने का एक ही तरीका है कि लोगों को राजनैतिक पार्टियों के आधार पर संगठित किया जाय। यह सही है कि 'अवांछनीय' तत्त्वों को सिर उठाने से रोकना चाहिए, पर इस बात का क्या भरोसा है कि ये 'अवांछनीय' तत्त्व राजनीतिक पार्टियों में नहीं घुस आयेंगे? वास्तविक स्थिति तो यह है कि राजनैतिक पार्टियों के कारण इन 'अवांछनीय' तत्त्वों को संगठित होने का और

साने गुरूजी : एक पुण्य स्मृति

• ति. न. आत्रेय

> गुरुजी केवल लेखक ही नहीं थे।
> वे भक्त शिक्षक और सेवक भी थे।
> उनके व्यक्तित्व में ये चारों गुण समान रूप से फैले थे।
> ……वे जो लिखते, कहते और करते थे, वह इसलिए कि
> लिखे कहे, और करे बिना वे रह नहीं सकते थे।

आद्य शंकराचार्य का नाम सुनते ही प्रखर ज्ञान और अजेय विचार शक्ति के साकार रूप की कल्पना आती है। गांधीजी के स्मरण के साथ ही अनासक्त कर्मरत पुरुष की आकृति दृष्टि के सामने खड़ी होती है। इसी प्रकार साने गुरुजी का नाम लेते ही करुणा, भक्ति और वात्सल्य की मूर्ति का चित्र दिखने लगता है। साने गुरुजी जीवन कला के गुरु थे अतएव मातृवत् प्रेमल थे। उनकी सदा गद्‌गद् रहनेवाली वाणी, उमड़ता हुआ हृदय, छलछलाती आंखें और सार्थक व सशक्त लेखनी कोई भूल नहीं सकता। दलित और पीड़ितों के साथ वे एकरूप हो गये थे। अस्पृश्यता निवारण के लिए भूखा मर जाना उनके लिए सहज था।

उनका जीवन सादा था। केवल बाह्यरूप में ही नहीं, अंदर से भी। उपकार की भावना से या नेतृत्व के भार से उन्होंने कुछ भी नहीं किया, यद्यपि हमपर उनका महान् उपकार है और वे हमारे आदर्श नेता रहे हैं। वे जो कुछ लिखते, कहते या करते केवल इसीलिए लिखते, कहते या करते कि वह लिखे बिना, कहे बिना या किये बिना उनसे रहा नहीं जाता। देश की कंगाली के प्रति उनमें जो संवेदना थी, देश को सुसंस्कृत करने की उनमें जो छटपटाहट थी और देश के बच्चों और युवकों को सही मार्ग में सक्रिय बनाने की जो लगन थी—उसी प्रेरणा को कार्यरूप देने के लिए वे विवश हो जाते थे। उनके व्यक्तित्व की गहराई का यही मुख्य कारण था।

वे सही माने में आत्मदर्शी थे। उनकी मा ने एक बार कहा-"अपने पैरों को साफ रखने की तुझे इतनी चिंता है, पर अपना मन भी तो साफ किया कर।" तभी से गुरुजी का चिंतन आत्माभिमुख हुआ जो दिन प्रतिदिन गहरा होता गया। यही कारण है कि उन्हें स्थूल अर्थ में भी ब्रह्मचर्य का पालन कठिन नहीं हुआ।

विनोबा जी के गीता प्रवचन के प्रसार के साथ साथ साने गुरुजी का नाम भी सर्वत्र परिचित होता गया है। सर्वोदय या भूदान आंदोलन के संपर्क में आनेवाले प्रायः (महाराष्ट्र के बाहर) सभी लोग गुरुजी के नाम से परिचित हुए हैं।

'श्याम की मां', 'भारतीय संस्कृति' आदि कुछ किताबें भी हिंदी भाषी जनता के सामने आयी है, जिनसे गुरुजी के साहित्यिक कृतित्व का परिचय होता है। गुरुजी केवल लेखक नहीं थे, भक्त थे, शिक्षक थे और सेवक थे। उनके व्यक्तित्व में ये चारों गुण समानरूप से घुलेमिले थे। उनके प्रत्येक साहित्य में इन चारों गुणों का सु-समावेश अनिवार्य रूप से हुआ है।

जहां वे बच्चों को मां का प्यार देते, वहां बच्चों की नीति-सदाचार की ओर भी ध्यान रखते। साथ ही देश के संतों और धर्म की परंपरा का सहज-शिक्षण भी देते नहीं चूकते।

गुरुदेव रवींद्र ने विश्वात्मैक्यता की अनुभूति से प्रेरित होकर अपने आश्रम का नाम विश्वभारती रखा। देश के अंदर जो दुराव और अलगाव की भावना बढ़ रही थी उसके शमन की दृष्टि से साने गुरुजी ने अंतर भारती की कल्पना की। वे चाहते थे कि देशवासी आपस में सौहार्द और सौमनस्य के साथ रहना सीखें और इसके लिए परस्पर की संस्कृति को सहृदयता के साथ समझें। भारत एक ही देश है, पर प्रदेश और भाषा की भिन्नता के साथ यहां की संस्कृति भी नानाविध है। इन सब में परस्पर आत्मैक्य और स्नेह संबंध जुड़े, विविधता में एकता का दर्शन हो, यह गुरुजी की एक महान् इच्छा थी।

देश के लिए उसके युवक एक अमूल्य संपत्ति हैं। युवकों में अदम्य क्रियाशक्ति, उत्साह और तेज रहता है। पिछड़े हुए देश के लिए युवकों की इन शक्तियों का संबल अत्यंत उपकारक सिद्ध हो सकता है। इस तथ्य के आधार पर विद्यार्थी समुदाय को अपने लंबे अवकाश का उपयोग देहातों में जाकर जनता की सेवा में करने की प्रेरणा गुरुजी ने दी। आज तक यह परंपरा चलती आयी है और इस बात का पर्याप्त समर्थन आज उपलब्ध है कि सही मार्गदर्शन से ये सेवा-दल अत्यंत उपयोगी हैं और प्रयत्नपूर्वक संगठित करने योग्य है।

गुरुजी की सेवा प्रवृत्ति एकांगी नहीं थी, नहीं हो सकती थी, क्योंकि सेवा का क्षेत्र एकांगी नहीं है। फिर भी प्राप्त परिस्थिति में जो कुछ कल्याण-कार्य किया जा सके उससे सेवक विरत नहीं हो सकता। इस दृष्टि से गुरुजी की एक प्रमुख प्रवृत्ति विद्यार्थियों के वसतिगृह की स्थापना की चली थी। गरीब विद्यार्थी जो पढ़ना चाहते हैं, पढ़ने की अच्छी क्षमता रखते हैं, पर उसके लिए आवश्यक अर्थभार नहीं सह सकते हैं पैसों के लिए रहने, आदि का प्रबंध जनता की तरफ से हो यह वांछनीय ही है, पर बीच में कोई योजक चाहिए। गुरुजी के संयोजन से यह एक सार्वजनिक प्रवृत्ति जारी हुई तथा दृढ़ हो चली है।

गुरुजी का देहावसान आज भी शोचनीय है। वह एक रहस्य बना है। उन्होंने स्वयं चुनकर अपना शरीर त्याग दिया। परंतु वे संसार से उठ गये तो भी निराश हुए थे ऐसा नहीं लगता है।

[शेष पृष्ठ ११ पर]

> **साने गुरूजी का और मेरा इतना प्रेम-संबंध था कि उससे अधिक प्रेम का संबंध कैसा होता है, यह मैं नहीं जानता। उनके स्मरणमात्र से मेरी आँखें गीली होती हैं।**
>
> —विनोबा

अपना काम और भी आसानी से बना लेने का मौका मिलता है। क्या पिछले पन्द्रह वर्ष का अनुभव यह जाहिर नहीं करता? आज यह आम अनुभव है कि समाज के "अवांछनीय" तत्त्व जिस किसी युक्ति से शासन करने वाली राजनैतिक पार्टी में घुसने का और उसे हथियाने का प्रयत्न करते हैं। कुछ अन्य लोग भविष्य को दृष्टि में रखकर विरोधी दलों में भी इसी प्रकार घुसते हैं। अतः इस दलील का कोई आधार नहीं है कि राजनैतिक पार्टियाँ बनाने से अवांछनीय तत्त्व दब जायेंगे। समाज में ऐसे तत्त्वों को दबाने का एक मात्र उपाय यह है कि आम लोगों की शक्ति जाग्रत की जाय और उनमें इस प्रकार की चेतना लायी जाय कि अस्वाभाविक और अनैतिक कार्रवाइयों को वे स्वयं दबा सकें और करने वालों की वैसी हिम्मत न हो। आजकल की दलीय राजनीति तो इससे उल्टा ही काम कर रही है। उसके कारण लोगों की शक्ति छिन्न-भिन्न हो रही है, समाज में फूट व्यापक रूप धारण कर रही है और भ्रष्टाचार को फैलने का अवसर मिल रहा है। राजनीतिक पार्टियाँ सत्ता की होड़ में पड़ कर न केवल सार्वजनिक जीवन का नैतिक स्तर गिरा रही हैं, बल्कि राजसत्ता को प्रधानता देकर लोगों के अभिक्रम और उनकी शक्ति को उत्तरोत्तर सीमित कर रही हैं।

जड़-जमाई रूढ़ियों और परंपराओं के खिलाफ जब नये विचार समाज में उत्पन्न होते हैं, तब हमेशा शुरू में लोगों को वे अस्वीकार्य मालूम होते हैं और अक्सर उनका विरोध भी होता है। पर नेहरूजी जैसे दूरदर्शी और समाज हितैषी नेता से यह अपेक्षा है कि वे तात्कालिक हितों से ऊपर उठकर सही दिशा में समाज का मार्ग-दर्शन करें।

—सिद्धराज

सबक लेने की जरूरत

अक्सर आवेश में आकर व्यक्ति अपने पैरों पर स्वयं कुल्हाड़ी मार लेता है। कभी कभी समाज भी ऐसा करता है। पिछले साल असम में भाषा के नाम पर जो दंगे हुए थे, उसकी कीमत कम नहीं चुकानी पड़ी। बहुतों की जानें गयीं, हजारों मकान जलाये गये, स्त्रियों के साथ दुर्व्यवहार किया गया और बच्चों को सताया गया। इस प्रकार जहाँ एक ओर प्रेम, करुणा, मानवता, शील और चारित्र्य जैसे नैतिक गुणों का ह्रास हुआ है; वहाँ धन-जन की भौतिक क्षति भी उठानी पड़ी है। भौतिक क्षति से समाज के मूल आधारभूत गुणों की क्षति और भी भयंकर है।

एक सरकारी रिपोर्ट के अनुसार दंगों से पीड़ित होनेवाले लोगों के पुनर्वास और राहत के लिए सरकार को कुल मिलाकर लगभग दो करोड़ रुपया खर्च करना पड़ा है। वस्तुतः यह केवल सरकारी सहायता है। इससे भी अधिक लोगों ने सहायता के रूप में खर्च किया है।

मानव का उन्माद समाज की क्या हालत कर देता है, उसका यह एक नमूना है। आज हमें असम के इन दंगों पर ठंडे दिमाग से सोचने की जरूरत है और इससे सबक लेना है कि इनकी पुनरावृत्ति देश में नहीं हो। एक ओर राष्ट्र के विकास और निर्माण के लिए विदेशों से कर्ज लिया जाय और दूसरी ओर इस प्रकार के पागलपन पर खर्च कहाँ तक ठीक है, यह चिंतनीय है।

—मनीन्द्रकुमार

व्यापारी ग्रामदान में कैसे सहायक हो सकते हैं ?

विनोबा

['कुमरीकटा' गाँव से भूतान की सरहद केवल छह मील दूर है। कुमरीकटा के आसपास के कई गाँवों का ग्रामदान हो गया है। इस गाँव में व्यापारी काफी संख्या में रहते हैं और आसपास के गाँवों के लोग कर्ज वगैरह के लिए इन व्यापारियों पर ही निर्भर रहते हैं। आजकल ग्रामदानी गाँव और अग्रामदानी गाँवों के लोगों की विनोबा के साथ जो चर्चा होती है, उससे एक बात स्पष्ट नजर आती है कि लोगों में भय है कि अभी तक का कर्ज कैसे चुकायेंगे और भविष्य में कर्ज कौन देगा? साथ-साथ यह भी मालूम हुआ कि कर्ज पर जो ब्याज लिया जाता है, वह भी भयानक है। साधारणतः बीस रुपयों पर दो मन अनाज यानी सोलह रुपये तक ब्याज होता है। यह सब जानकारी इस क्षेत्र में हासिल हुई। उस संदर्भ में विनोबा का यह प्रवचन हम यहाँ दे रहे हैं।—सं०]

आपका यह गाँव भूतान प्रदेश और हिंदुस्तान की सीमा पर है। भूतान के पास है, यह व्यापारियों का गाँव है। ऐसी जगह पर जो व्यापारी रहते हैं, वे माल इधर-उधर पहुँचाने का काम करते हैं। उसीसे गाँव के जीवन में प्राण-संचार होता है। आपके गाँव के आस-पास ग्रामदान हो रहे हैं, तो ऐसी जगह के व्यापारियों को खुशी होनी चाहिए। यहाँ के व्यापारियों से ग्रामदान को बहुत मदद मिल सकती है।

गाँववालों ने ग्रामदान में जमीन की मिल्कियत समर्पित की, यह त्याग और प्रेम का काम है। इससे गाँव की उन्नति होगी। सारा गाँव एक परिवार होगा। गाँव पर मुसीबत आने पर सारा गाँव मिल-जुलकर सामना करेंगे। गाँव के लोगों ने त्याग किया तो उनको फायदा ही हुआ। गाँव में सबने त्याग किया तो व्यापारियों को भी त्याग करना चाहिए। उनसे बहुत बड़े त्याग की अपेक्षा नहीं है। उसको हम त्याग भी नहीं समझते, धर्म मानते हैं। क्या यह व्यापारियों का धर्म नहीं है?

एक तो वे माल में मिलावट न करें। जो चीज बेचना है, खालिस बेचना चाहिए। चीज स्वच्छ, शुद्ध बेचना चाहिए। हम चीजों में मिलावट करते हैं। लोगों को ठगते हैं और लोगों को ठगकर लिया गया पैसा कभी भी कल्याणकारी नहीं होगा।

दूसरी बात ग्रामदान होने के बाद ग्रामसभा को कर्ज देंगे। ग्रामदान में व्यक्तिगत कर्ज नहीं मिलेगा, क्योंकि जमीन की मिल्कियत ग्रामसभा की हो गयी। इसलिए कर्ज ग्रामसभा के मार्फत मिलेगा। व्यापारी ग्रामसभा को कर्ज दें, लेकिन उस पर ब्याज न लें। अभी होता यह है कि बीस रुपये के कर्ज पर एक मन सूद लेते हैं। कभी-कभी दो मन भी लेते हैं। मतलब यह कि बीस रुपये पर आठ रुपया और कभी-कभी सोलह रुपया सूद हुआ। ऐसा नहीं करना चाहिए। बल्कि ब्याज ही नहीं लेना चाहिये। बीस रुपये कर्ज दिया ग्रामसभा को, तो ग्रामसभा उसका अच्छा उपयोग करेगी। आखिर पैसा आपके पास पड़ा रहा, तो उसका क्या उपयोग है? गाँव में उपयोग हुआ, तो पैसों का साफल्य हुआ। अगले साल बीस में से चार रुपया कम लेंगे। हम कहेंगे आपने सोलह रुपया दे दिया तो आप कर्ज से मुक्त हो गये। बीस में से चार रुपया कम लिया। व्याज नहीं लेंगे तो भी व्यापारियों का व्यापार चलेगा। जमीन है, तो कायत भी कर सकते हैं। लेकिन ग्रामसभा को कर्ज दिया तो उस पर सूद लेना गलत बात है। होना तो यह चाहिए कि बीस रुपये में से सोलह वापस ले लिये और चार रुपये ग्रामसभा को दान दे दिये। ऐसे करेंगे तो बहुत ही सेवा कार्य व्यापारियों से होगा। उनका कर्ज ग्रामसभा-ठीक चुकायेगी और व्यापारी गाँव के लिए प्यारे और आदरणीय होंगे। यह धर्म-विचार है, शुद्ध व्यवहार है। हिंदू धर्म में यह कहा है और इस्लाम धर्म में भी यह कहा है कि सूद लेना अन्याय है, बल्कि घटाव करना चाहिए। इस तरह करेंगे तो व्यापारियों का व्यापार बढ़ेगा। सबसे बड़ी बात ग्रामदान की उन्नति होगी और व्यापारियों का अंतःसमाधान होगा। अंतःसमाधान से बढ़कर दुनिया में और संपत्ति नहीं।

गाँव में मुख्य समस्या यह है कि हमको कर्ज कौन देगा? तो आप ही ग्रामसभा को कर्ज देंगे। और घटाव करके कर्ज वापस लेंगे। आपका दान चार रुपयों का ही होगा, लेकिन गाँव के लिए वह बड़ा दान होगा। आपके लिए यही सबसे बड़ा व्यापार है। आपका जीवन आपका जो मुख्य धंधा, उद्योग है, उस पर चलेगा। जो कर्ज दिया है, वह तो मदद ही है। इसका नाम है घटाव। लेकिन हम तो अभी बढ़ाव की तरफ देखते हैं। हर चीज दुनिया में घटती है। कम होते-होते क्षीण होती है। तो नयी चीज पैदा होती है। इस तरह से सतत होता रहता है। यह मकान धीरे-धीरे क्षीण होगा। फिर पंद्रह साल के बाद नया बनेगा, शरीर का भी ऐसा होता है। तो पैसों को क्यों बढ़ाना चाहिए? वह भी घटना चाहिए। जैसे पैसों का भी व्यय होना चाहिए। सौ रुपयों के अगले साल नब्बे, फिर अगले साल अस्सी और फिर सत्तर, यों होते-होते दस साल में सौ रुपये खतम, तो सौ रुपयों का बहुत उपयोग हुआ। दुनिया में हमारा जीवन चला और मौके पर गरीबों को मदद भी मिली, तो उससे व्यापारियों को सुख होगा। व्यापार में जो लाभ होगा उसकी फिर से नयी पूँजी बनेगी और आपके पैसों ने लोगों का जीवन बनाया। जहाँ हम ब्याज लेते हैं और लोगों को चूसते हैं, वहाँ हमारा पैसा तो बढ़ता है, लेकिन लोगों का शोषण होता है। उसमें लाभ नहीं। ऐसा पैसा बढ़ गया तो वस्तु के भाव भी बढ़ते हैं।

वस्तु के भाव बढ़ते हैं। ब्याज लेकर पैसा बढ़ाया तो उधर बाजार में भी भाव बढ़ेगा, इसलिए पैसा बढ़ने से लाभ नहीं। दूध, दही, अनाज, तरकारी, फल बढ़ने चाहिए, धर्म बढ़ना चाहिए। लोगों के शरीर में खून बढ़ना चाहिए और उसके लिए पैसा घटना चाहिए। कुछ लोग कहते हैं कि पैसा बहुत महँगा है, लेकिन पैसा तो सस्ता है। पैसा दान दिया तो क्या बड़ा दान हुआ? पैसों का दान बड़ा क्यों सोचते हो? कितना दान दिया? सौ रुपया दान दिया। ऐसा, तो सौ रुपया कहीं गड्ढा खोदकर डाल दो और ऊपर से बारिश बरसे तो कितनी फसल आयेगी? तो पैसों की कीमत नहीं! मिट्टी में जीवन है। मिट्टी में घास होती है तो गाय खाती है और दूध देती है। मिट्टी में फसल होती है। मिट्टी में जीवन भरा है। पैसों में जीवन नहीं है। इसलिए मिट्टी का दान बहुत बड़ा दान है। पैसों का दान अल्प दान है।

लेकिन हम नहीं चाहते कि व्यापारी दान दें। हम चाहते हैं कि व्यापारी कर्ज दें और जब कर्ज वापस लें, तब सौ में से नब्बे वापस लें। एक साल के बाद। तो यह सच्चा उपयोग का व्यावहारिक दान होगा। ग्रामदान के साथ यह चीज चलनी चाहिए। पूँजी बननी चाहिए। हाथों से काम करना है। लेकिन हाथ कमजोर हैं, तो सारी ताकत भेजो हाथ की तरफ। हाथों को काम करना है, तो सारी ताकत, सारा खून छाती में भरकर क्या करोगे? खून हाथ की तरफ भेजना चाहिए, तब हाथ में ताकत आयेगी। काम करने के बाद खून वापस छाती की ओर दौड़ता है। ऐसे ग्रामसभा को पैसों की बहुत जरूरत है और व्यापारियों के पास पैसा है तो दे दिया ग्रामसभा को। इन पैसों पर ब्याज नहीं लेंगे। ग्रामसभा का काम हो कर दिया और पैसा वापस ले लिया। वापस लिया तो सौ रु० देकर नब्बे रु० वापस लिया, दस रु० ग्राम सभा को दान दे दिया। यह हिसाब होना चाहिए। सारा गाँव एक शरीर है। शरीर के किसी अवयव को सहायता की जरूरत है, तो मदद करनी चाहिए।

(कुमरीकटा, जि० कामरूप, ८ मई, '६२)

क्षुरस्य धारा : भूमि वितरण

सेवाग्राम-सम्मेलन में यह निर्णय हुआ कि भूदान में मिली जमीन बाँटेंगे। महाराष्ट्र ने यह निर्णय पूरा किया। श्री बाबूलाल भाई तथा उनके कुछ इने-गिने साथियों का यह एक असाधारण पराक्रम था। भूदान के बाद पाँच-पाँच साल जमीन बिना वितरण किये पड़ी रही थी। फिर भी लोगों ने प्रेम से अपनी जमीन बाँटने दी। महाराष्ट्र के इस अनुभव से हर प्रान्त को सबक सीखना चाहिए।

भूमि वितरण के संबंध में हमने तीन गलतियाँ की हैं :—

(१) मिली हुई जमीन को तुरन्त नहीं बाँटा।

(२) वितरित जमीन पर आदाता काम करने लग गये या नहीं, इसकी फिक्र नहीं रखी।

(३) वितरण में दाता का सहयोग करीब-करीब नहीं लिया।

आइन्दा भूमि-वितरण के काम में हम इन गलतियों को न होने दें।

भावी भूमि-वितरण में एक खतरा है। उसके सम्बन्ध में अभी से सावधान रहना चाहिए। दाता अपनी इच्छा से आदाता ढूँढे। यह जब हम मानते हैं, तब साथ ही हमने यह भी माना है कि आदाता भूमिहीन हो। यानी उसके पास भूमि बिलकुल न हो। वह खेती करना जानता हो और उसके पास खेती के अलावा और कोई स्थायी आय न हो। दाता अपने दान के लिए जो आदाता चुने, उसको यह तीनों शर्तें लागू होनी चाहिए।

इसके लिए यह सावधानी रखनी चाहिए कि भूमि वितरण ग्राम की ग्रामसभा में खुले तौर पर होना चाहिए। सूर्य के प्रकाश में जिस प्रकार गन्दगी का टिकना अशक्य हो जाता है, उसी प्रकार ग्राम जनों के समक्ष किये हुए वितरण में केवल अपने रिश्तेदारों को भूमि देना या जमीन देकर आदाता को अपने अंकुश में रखने की प्रवृत्ति भी अशक्य हो जायेगी।

इतनी सावधानी रखकर हर प्रान्तों में कम-से-कम एक टोली भूमि-वितरण के काम में लग जाये। विचार-क्षेत्र में हमारी उड़ान चाहे जितनी ऊँची हो, कदम हमारे जमीन पर ही रहने चाहिए। वितरण का यह कार्यक्रम हमारे कदमों को भूमि पर रखेगा।

—नारायण देसाई

कोई किसी का नौकर नहीं है

• दादा धर्माधिकारी

"'''लोकतंत्र वह व्यवस्था है, जिसमें कोई किसीका नौकर नहीं होता और कोई किसीका मालिक नहीं होता। सभी एक दूसरे के साथी और मददगार होते हैं'''
दुनिया में किसी सिफत, मिहनत या ताकत का बदला हो ही नहीं सकता'''
हम किसीका श्रम, गुण या शक्ति खरीद सकते हैं, यह विचार ही गलत है। श्रम का प्रतिमूल्य अर्थशास्त्र में एक भयानक अमानवीय तत्त्व है।"

[भाई श्री महावीरसिंह जी ने एक बुनियादी सवाल पर दादा को पत्र लिखा, दादा ने जो जवाब दिया है, वह इस पत्र के साथ हम नीचे दे रहे हैं—सं०]

श्रद्धेय दादाजी,

सादर प्रणाम।

पटना संघ अधिवेशन में श्री गोराजी ने अपनी चर्चा में मन्त्रियों को अपना नौकर कहकर संबोधित किया। मालूम हुआ कि इस शब्द पर आपको सख्त एतराज था। शब्द कड़ा है, मात्र भी। अतः मन को अच्छा नहीं लगता, इसलिए एतराज होना भी अनुचित नहीं है। मगर जब हम देखते हैं कि हमारे प्रजातन्त्र की मालिक जनता अपने ही चुने हुए प्रतिनिधियों को अभी तक अपने पूर्व संस्कार और प्रतिनिधियों के वर्तमान व्यवहार के कारण उन्हें अपना शासक यानी मालिक ही समझती है। तब किस भाषा से उसे यह भान कराया जाय कि ये मंत्रीगण तुम्हारी सेवा के लिए ही तुमने चुने हैं और सेवा के लिए ही तुम उन्हें वेतन-भत्ते आदि देती हो। यदि चुनने के बाद यह लोग तुम्हारा काम नहीं करते, तो किसी भी समय तुम्हें इनको बदलने का हक हासिल है। ठीक उसी तरह जिस तरह परिवार के नौकर को काम न करने पर परिवार उसे निकाल सकता है, संस्था के नौकरों को संस्था निकाल सकती है; उसी तरह देश के चुने हुए सेवकों को भी देश की जनता निकाल सकती है। यह प्रजातान्त्रिक चेतना जगाने के लिए इस देश की जनता को किस प्रकार शिक्षण दिया जाय, यह भी एक सवाल हमारे सामने है।

यद्यपि स्वयं विनोबाजी ने कई बार अपने भाषणों में प्रतिनिधियों के लिए नौकर शब्द का प्रयोग किया है, और राजकर्मचारियों को नौकर का नौकर कहा है, लेकिन लोक-चेतना के लिए यदि इस शब्द का प्रयोग आप अनुचित मानते हैं, तो किस शब्द का प्रयोग किया जाय जिससे जनता में जनतान्त्रिक चेतना जगायी जा सके और उस शब्द का सर्वांगीण भाव भी सर्वसाधारण के समझ में आ जाय।

यद्यपि हम अपने नौकरों को भी अच्छे भाव में मालिक शब्द से सम्बोधित कर सकते हैं, लेकिन इसका मतलब या तो वे अपने पर व्यंग समझेंगे या हो सकता है कि सचमुच वे ही अपने को मालिक समझ बैठें। वर्तमान प्रतिनिधियों के व्यवहार के सम्बन्ध में मैंने आप से सन् ५७ में एक पत्र द्वारा यह जानना चाहा था कि स्वतंत्र देश के एक नागरिक को बहुमत के द्वारा चुन गये प्रतिनिधियों द्वारा सेवा के नाम से शोषण और शासन बर्दाश्त करते रहना चाहिये क्या? इसका उत्तर आपने दिया था कि इस स्थिति को बदलने के लिए लोकशक्ति जगाने में अपनी शक्ति लगानी चाहिये। इसीलिए मैं आज पुनः आपसे यह जानना चाहता हूँ कि जनता का मानसिक स्तर देखकर यदि हम ऐसी भाषा का प्रयोग नहीं करेंगे, तो वह हमारे शब्द के सम्पूर्ण भाव को ग्रहण नहीं कर सकेगी। भाषा सौंदर्य की ओर अधिक ध्यान देने से भाव विकृत होने की सम्भावना है।

प्रजातन्त्र में नागरिक गौरव का ज्ञान आपने ही कालडी सम्मेलन के मंच से दिया था कि इसमें यदि विनोबाजी जैसे संत और नेहरू जैसे राजनीतिज्ञ हैं, तो यह भी मालूम होना चाहिये कि इस देश में दादा जैसे नागरिक भी हैं। इसलिये प्रजातंत्र में नागरिक गौरव की प्रतिष्ठा तथा नागरिक चेतना को जगाने के लिये हमें किस भाषा का प्रयोग करना चाहिये तथा क्या काम करना चाहिये। कृपया आप पत्रोत्तर द्वारा समाधान देने का कष्ट करें।

चम्बल घाटी	आपका
शांति समिति, आगरा	महावीर सिंह

यह पत्र एक ऐसे मित्र का है जिनकी ईमानदारी, बहादुरी और कारगुजारी का मैं कायल हूँ। उन्होंने जो सवाल उठाया है, वह बुनियादी है। मैं आदर के साथ इस विषय में अपनी बात पेश करता हूँ :

मेरी समझ में लोकतंत्र वह व्यवस्था है, जिसमें कोई किसीका नौकर नहीं होता और कोई किसीका मालिक नहीं होता। सभी एक-दूसरे के साथी और मददगार होते हैं। हम वह दिन देखना चाहते हैं, जब किसी घर या संस्था में भी कोई नौकर नहीं होगा। संस्था के कर्मचारी एक दूसरे के संगी-सहयोगी होंगे। आज के इंतजाम में एक शख्स अपनी मेहनत बेचता है और दूसरा उसकी मेहनत खरीदता है। खरीदनेवाला मालिक कहलाता है, बेचनेवाला नौकर या मजदूर कहलाता है। पूँजीवाद की यह भाषा है। हर शब्द के पीछे कुछ 'इशारे' छिपे रहते हैं। 'मालिक', 'मजदूर', 'नौकर' इसी तरह के शब्द हैं। मौजूदा समाज में हमारे एक-दूसरे के साथ जो ताल्लुक हैं, उनके 'इशारे' इन शब्दों में हैं। हम उन इशारों को जड़मूल से हटाना चाहते हैं।

मिसाल के लिए 'शर्मा' और 'वर्मा' या 'देवी' और 'दासी' जैसे उपपद लीजिये। 'विष्णु शर्मा' और 'विष्णु वर्मा' तथा 'जानकी देवी' और 'उर्मिला दासी' से, हमें यह पता चलता है कि कौन ब्राह्मण है और कौन शूद्र। पंडित जवाहरलाल, पंडित गोविंदवल्लभ पंत और बाबू संपूर्णानंद, लाला लाजपतराय आदि नामों के साथ जो उपपद जुड़े हैं, उनमें भी जातिभेद का संकेत है। हम जातिभेद को अगर मिटाना चाहते हों, तो इन संकेतों को भी हटाना होगा। शूद्र को भी 'विष्णु शर्मा' और ब्राह्मण को 'विष्णु वर्मा' कहने से हम भावनाओं को उलट देते हैं, उन्हें हटाते नहीं हैं।

ठीक उसी तरह प्रतिनिधियों को नौकर और जनता को 'मालिक' कहने से हम मनुष्यों के बीच गलत रिश्तेदारी को मिटाते नहीं हैं, सिर्फ उलट देते हैं। लोकतंत्र में अगर मालिक हैं तो सभी हैं और नौकर हैं तो भी सभी हैं। दफ्तर का फर्राश हमारे घर का रसोइया और सरकारी नौकर भी तो मतदाता है। उम्मीदवार और मेम्बर भी तो मतदाता हैं। प्रतिनिधि हमारा नौकर, मंत्री प्रतिनिधि का नौकर, लोकसभा का अध्यक्ष सदस्यों का नौकर—ऐसी नौकरशाही की परंपरा का नाम क्या लोकतंत्र है? यह विचार और धारणा लोकतंत्र-विरोधी है।

शासन में भी एक मर्यादा है। ऊपर का अफसर भी अपने चपरासी को जाब्ते की भाषा में जब पत्र लिखता है तो—आई बेग टु रिमेन सर योर मोस्ट ओबीडियन्ट सर्वेन्ट—('आपका आज्ञाकारी सेवक बना रहने का प्रार्थी') इन शब्दों के नीचे अपने दस्तखत करता है। हम जिसे कोई काम सौंपते हैं, वह हमारा नौकर नहीं हो जायगा। उपाध्याय और पुजारी को उपासना और पूजा की दक्षिणा देते हैं, मजदूर को सामान ढोने की मजदूरी देते हैं, वकील डॉक्टर को फीस देते हैं, मास्टर और प्रोफेसर को तनख्वाह देते हैं, ये सब हमारे नौकर नहीं हैं।

आपने अपना सामान घर पहुँचाने के लिए मुझे सौंप दिया, या अपने बेटे को, जो मेरे शहर में युनिवर्सिटी में पढ़ता है, मेरे सुपुर्द कर दिया, तो क्या मैं आपका नौकर हो गया? आप मेरा भरोसा न कर सकें तो अपना सामान या बेटा मेरे हवाले नहीं करेंगे। अगर सौंपने के बाद आपको मुझ पर शुबह हुआ, तो आप अपना सामान या बेटा वापस लेंगे। यह तो आपका अधिकार ही है। जो हमें इतने पर से आप मालिक और मैं नौकर कैसे हो गया?

दुनिया में किसीकी सिफत, मेहनत या ताकत का बदला हो ही नहीं सकता। मैंने वकील साहब को फीस एक हजार रुपये दी और मेरे बेटे की जान बचानेवाले तैराक मल्लाह को पच्चीस रुपये दिये यह क्या मेहनत का बदला है? हम किसीका श्रम, गुण या शक्ति खरीद सकते हैं, यह विचार ही गलत है। श्रम का प्रतिमूल्य अर्थशास्त्र में एक भयानक अमानवीय तत्त्व है।

हम प्रतिनिधियों और मंत्रियों को जो वेतन या भत्ता देते हैं वह क्या उनकी मेहनत का बदला है? वह क्या पारिश्रमिक है? भत्ते की और वेतन की रकम कितनी हो, हम तय करें। लेकिन वह पारिश्रमिक नहीं है। कुछ लोगों को हम मेहनत के मुकाबले बहुत अधिक देते हैं, कुछ को बहुत कम! उस रकम का संबंध न उनकी जरूरत से होता है और न मेहनत से। थोड़ी देर के लिए मान लीजिये कि हमारे प्रतिनिधि और मंत्री भत्ता और तनख्वाह लेना छोड़ दें, तो फिर क्या हम उन्हें अपना 'नौकर' नहीं कहेंगे? हम जिसे कोई जिम्मेवारी सौंपते हैं, उसका भरोसा और इज्जत करते हैं। उसे अपना नौकर नहीं बनाते। प्रतिनिधि को नौकर समझने में लोकतंत्र की हत्या है।

'सेवा' और 'नौकरी' शब्दों के संकेत भी अलग-अलग हैं। 'मैं आपकी सेवा के लिए आया हूँ' और 'मैं नौकरी की खोज में आया हूँ' दोनों वाक्यों का एक ही मतलब नहीं होता। हम सब एक-दूसरे के सेवक हैं,-अध्यक्ष मंत्री का, मंत्री सदस्यों का, सदस्य अध्यक्ष और मंत्री के तथा निर्वाचकों के और निर्वाचक एक दूसरे के सेवक हैं।

एक आखिरी सवाल और है। प्रतिनिधि अगर अपनी जिम्मेदारी ठीक ठीक न निबाहे, तो मतदाता उसे हटा सकते हैं। लेकिन मतदाता अपने अधिकार का दुरुपयोग करे तो? उसे सीख दिलाने के लिए भी हम शासन संस्था का और प्रतिनिधि संस्थाओं का उपयोग मानते हैं। इसीलिए इन्साफ और सजा भी शासन-संस्था के ही मुहकमे हैं।

लोकतंत्र में हम सब एक-दूसरे के सेवक और सहायक हैं, सब एक-दूसरे की तरफ से जिम्मेवार हैं, एक दूसरे के लिए हमारी जवाबदेही है, यही शुद्ध लोकतान्त्रिक विचार है। इसीका प्रचार यथार्थ लोक-शिक्षण है।

काशी, २ जून, १९६२.

शराबबंदी क्यों ?

• रामप्रवेश शास्त्री

स्वराज्य की लड़ाई में शराबबंदी भी एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम था। शराब की बुराइयों पर खूब चर्चा तब भी हुई और आज भी होती है। अन्तर दोनों में बस इतना ही है कि तब की चर्चा में इतनी ताकत थी कि लोग कमर कसकर मैदान में आ डटे और अब की चर्चा केवल चर्चा मात्र ही रह जाती है। एक अन्तर और भी दीख रहा है कि तब शराबबंदी के लिए जो लोग आगे आये, उन्हींमें से कुछ लोग आज समर्थ होते हुए भी इसलिए इस बुराई को चालू रहने देना चाहते हैं और कहते हैं कि इसे बन्द करने में घाटा ही घाटा है। इन कुछ लोगों को छोड़कर शेष लोग, जो आज भी शराब को बन्द होते देखना चाहते हैं, वे पुरानी दोस्ती का खयाल करके मुलाहिजे में मौन हैं, निष्क्रिय हैं।

शराब से तीन तरह के लोगों का सम्बन्ध है—पीनेवाले, पिलानेवाले और दर्शक। दूसरे शब्दों में शराबी, सरकार और जनता। इन तीनों के अंतर को समझने की जरूरत है। शराबी भी जनता में से ही है, सरकार जनता की है। कोई शराबी शासन में न जाय, ऐसी कोई मान्यता अथवा नियंत्रण नहीं है। इन तीनों का परस्पर अविभाज्य सम्बन्ध है। इसमें संदेह नहीं कि शराबबंदी के बाधक तत्त्वों में अज्ञान एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है। लेकिन इससे थोड़ा नीचे आने पर हम देखते हैं कि शराबी की आदत, जनता का आलस्य और सरकार की आमदनी इन तत्त्वों का भी कम महत्त्व नहीं है।

सबसे पहले हम सरकार की परिस्थिति पर विचार करेंगे। महाभारत की लड़ाई में भीष्म की जो परिस्थिति थी, वही शराब के विषय में आज की सरकार की है। एक ओर जहाँ भीष्म ने पाडवों को यह आशीर्वाद दे रखा था कि तुम्हारी विजय होगी, वहीं दूसरी ओर कौरव सेना का मार्ग-दर्शन करते हुए पाडव-सेना का नित्यप्रति विध्वंस करना उनका दैनिक कार्य था। जब उनके आशीर्वाद का स्मरण उन्हें कराया गया तथा उस आशीर्वाद को फलते-फूलते देखने की उनकी इच्छा बलवती हुई, तब उनके सामने भी एक ही रास्ता था 'उनका अंत'। स्वयं भीष्म ने महसूस किया कि पांडवों की विजय 'भीष्म' के जीते जी सम्भव नहीं है। उन्होंने स्वयं अपने मरने की योजना बनायी और बतला दी। यह उनकी महानता थी।

आज की सरकार भी एक ओर जहाँ मद्य-निषेध के लिए करोड़ों रुपया प्रतिवर्ष व्यय कर रही है, वहीं दूसरी ओर शराब की दूकानों की प्रतिवर्ष बढ़ती हुई संख्या तथा ठेके की दर में वृद्धि मद्य-निषेध के लिए किये गये व्यय को अपव्यय सिद्ध करती हैं। फिर भी मद्य-निषेध और मद्य-प्रसार—ये दोनों विभाग सरकार द्वारा चल रहे हैं। सरकार यदि चाहे तो केवल मद्य-प्रसार विभाग की आमदनी के द्वारा मद्य-निषेध विभाग की तरह सैकड़ों विभाग चला सकती है। लेकिन वस्तुस्थिति के आधार पर यह मानना पड़ेगा कि जिस तरह भीष्म के जीते जी पांडवों की विजय असम्भव थी, उसी तरह इस सरकार के रहते मद्य निषेध भी एक सपना है। कम-से-कम उसके द्वारा तो यह होनेवाला नहीं।

एक दलील यह दी जाती है कि जिन स्थानों पर मद्य निषेध कानून के द्वारा लागू किया गया, उन स्थानों पर चोरी से महँगी एवं रद्दी शराब खूब चलती है। फलतः सरकारी आमदनी तो मारी ही जाती है, साथ ही शराब भी चलती रहती है। कानून बनाने से यह मिटनेवाली नहीं है।

इसमें संदेह नहीं कि यह दलील सही मालूम होती है, लेकिन इसके साथ कई प्रश्न उपस्थित हो जाते हैं। क्या सरकार जिन बुराइयों को मिटाने के लिए कानून अब तक बना चुकी है, वे बुराइयाँ मिट गयी हैं? चोरी, झूठ, घूसखोरी इत्यादि अपराध घोषित होने पर भी क्या समाज में इनका बोलबाला नहीं है? अस्पृश्यता को संविधान में कोई स्थान नहीं दिया गया, साथ ही इससे समाज को मुक्त करने के लिए अलग से कानून बनाया गया। अस्पृश्यता के व्यवहार को अपराध घोषित

आज की सरकार मद्य-निषेध के लिए करोड़ों रुपया प्रतिवर्ष व्यय कर रही है। दूसरी ओर शराब की दूकानों की प्रतिवर्ष बढ़ती हुई संख्या तथा ठेके की दर में वृद्धि मद्य-निषेध के लिए किये गये व्यय को अपव्यय सिद्ध कर दे रही हैं। फिर भी मद्य-निषेध और मद्य-प्रसार—ये दोनों विभाग सरकार के द्वारा चलाये जा रहे हैं!

किया गया। लेकिन इसके बावजूद क्या अस्पृश्यता का व्यवहार बन्द हुआ? स्पष्ट है कि कानून के द्वारा अब तक किसी भी बुराई का न तो अंत हुआ है और न किसी अच्छाई का प्रारम्भ। मद्य-निषेध भी कानून के द्वारा नहीं हो सकता। फिर तो मद्य-निषेध की घोषणा करके सरकारी आमदनी घटाना कोई बुद्धिमत्ता की बात नहीं है?

लेकिन जब हम देखते हैं कि जो बुराइयाँ कानून द्वारा समाप्त करने के बाद भी समाज में फैली हुई हैं और उनसे भी आमदनी हो सकती है, तो यह भी बुद्धिमत्ता की बात नहीं कही जायगी कि उनके लिए बनाये गये कानून रद्द न कर दिये जायँ।

मुझे तो हैरत होती है मद्य-निषेध के बारे में आमदनी-खर्च का हिसाब लगानेवालों की बुद्धि पर। यह तर्क देनेवाला कि सरकार द्वारा शराब बन्द करने पर भी यह चलती रहेगी, इसलिए उसे बन्द करके सरकारी आमदनी का नुकसान क्यों किया जाय या तो मूर्ख होगा अथवा धूर्त।

शराब अथवा किसी दूसरी बुराई को मिटाने के सम्बन्ध में उससे सम्बद्ध लोगों का जो कर्तव्य है, उसे वे ईमानदारी और विवेकपूर्वक करना चाहते हैं अथवा नहीं, यह है बुनियादी सवाल।

माना कि यदि सरकार कागजी में मैं शराब अपनी ओर से बन्द करा दे, तब भी वह बन्द नहीं होगी, जब तक कि शराबबन्दी के पक्ष में जाग्रत जनमत न बन जाय। यही नहीं, बल्कि जाग्रत जनमत सरकार को मद्य-निषेध के लिए मजबूर कर दे। यदि यह सही है तो प्रश्न उठता है कि ऐसी प्रभावहीन सरकार को इतना महत्त्व क्यों दिया जाय? क्यों न जन-जागरण का ही काम किया जाय?

सरकार से जिनकी अत्यधिक अपेक्षाएँ होंगी, उनकी बात मैं नहीं करता, लेकिन मैं ऐसा मानता हूँ कि वह मूल्य-परिवर्तन के लिए अक्षम है। अतः उससे हमारी इतनी ही अपेक्षा है कि वह अपनी ओर से इस बात का प्रत्यक्ष प्रमाण दे कि वह भी शराबबंदी के पक्ष में है। जैसे उसके कानूनों के बावजूद भी अनेक बुराइयाँ समाज में विद्यमान हैं, वैसे एक और सही। लेकिन वह अपने को तो निर्दोष बता सकेगी। सरकार के न चाहते हुए भी शराब का व्यापार चल रहा है, यह एक बात है और प्रयोग द्वारा इस परिणाम पर पहुँचने के बाद सरकार ने शराब की दूकानों को 'लाइसेंस' देना उचित समझा है, यह बिलकुल उससे भिन्न बात है। पहली बात में सरकार की मजबूरी दीख पड़ती है और दूसरी बात में शराब को चालू रखने की दिलचस्पी। हमारी अपेक्षा के अनुसार इस बुराई से होनेवाली आमदनी का लालच सरकार को छोड़ देना चाहिए। यही उसका सबसे बड़ा सहयोग होगा मद्य-निषेध के काम में।

कहावत प्रचलित है कि आदत स्वभाव का ही अंग है। नियमित शराब पीनेवाले अपनी आदत से मजबूर हैं, इसे मान लिया जा सकता है। जो लोग अपनी परिस्थितिवश नियमित पीनेवाले नहीं हैं, वे भी आदती ही होते हैं। आदत के लिए गलत सही का ध्यान कम रह जाता है। सम्भव है कि शराब का मिलना यदि बिलकुल बंद हो जाय, तो आदत से मजबूर शराबियों के जान के लाले पड़ जायँ! तो क्या इन्हें मरने दिया जाय?

इस सम्बन्ध में मेरा कहना है कि इतनी दूर की सोचने की जरूरत नहीं है। आदती शराबियों के लिए एक सरकारी दफ्तर खोला जा सकता है। दवा की दूकान से जिस तरह दवा खरीदी जाती है, उसी तरह डाक्टर की अनुमति से आवश्यकतानुसार शराब भी पी जा सकती है।

जिन्हें शराब पीने की ऐसी आदत है, मजबूरी का ध्यान रखते हुए कुष्ठ-रोगियों की श्रेणी में उन्हें रखकर उनका समुचित इलाज किया जा सकता है। कुष्ठाश्रम की तरह मद्याश्रम खोले जा सकते हैं। कुष्ठरोगी तथा दूसरे संक्रामक रोग के रोगियों के साथ थोड़ी सावधानी बरतने की जरूरत होती है। अन्यथा उस रोग के फैलने की सम्भावना होती है। ऐसे ही शराब भी एक तरह का संक्रामक रोग का कीटाणु है।

इस रोग से स्वस्थ लोगों को बचाने और रोगी को नीरोग बनाने की योजना की जा सकती है। गलित कुष्ठ का मरीज भी स्वस्थ होना चाहता है। साथ ही उस रोग से अपने परिवार एवं सगे-सम्बन्धियों को बचाना भी चाहता है। यह चेतना शराब के मरीज में भी पैदा होनी चाहिए। समाज के लिए चाहे कितना कीमती कोई क्यों न हो, अगर उसे कोई भयंकर बीमारी हो जाय, तो उसे अस्पताल में इलाज कराना ही पड़ता है। उसी तरह शराबी भी चाहे जिस वर्ग और जिस पद पर हो, जब तक स्वस्थ न हो जाय, तब तक उसे समुचित और संयमपूर्वक इलाज कराना चाहिए। इस सम्बन्ध में सरकार और जनता दोनों को चाहिए कि सहानुभूतिपूर्वक शराबी मरीजों को रोग-मुक्त होने में सहायता करें।

सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से पिछड़ी हुई जातियों में शराब की धार्मिक एवं सामाजिक मान्यता है। शादी-विवाह आदि सामाजिक, धार्मिक उत्सवों पर शराब एक अनिवार्य वस्तु मानी जाती है। कभी-कभी तो इसीके लिए सब किये-कराये पर पानी फिर जाता है। जब इन वर्गों के लोगों से मद्य निषेध की बात की जाती है, तब ये प्रायः प्रश्न करते हैं कि "यदि यह बुराई होती, तो सरकार क्योंकर चलाती? हमारा पीना बुरा कैसे है, जब कि बड़े-बड़े लोग पीते हैं?

पहले प्रश्न का उत्तर यद्यपि ऊपर दिया जा चुका है, फिर भी एक बात कहना चाहता हूँ, जिससे दोनों [illegible] हिन्दू हैं,

समाधान हो सके। बात यह है कि हर आदमी अपनी शक्ति के अनुसार ही चल सकता है। संसार में बहुत-से अच्छे काम हैं, जिनके लिए आदमी कुछ त्याग भी करना चाहता है। कष्ट उठाने में भी आनन्द का अनुभव करता है। फिर भी अपनी मर्यादित शक्ति के कारण उन अच्छे कामों को नहीं कर पाता। लोग तीर्थाटन करना सौभाग्य की बात मानते हैं, लेकिन गरीब लोग जिन्हें पेट ही पहाड़ है, कहाँ तीर्थ कर पाते हैं! इसी तरह अगर शराब को तीर्थ की तरह पवित्र मान भी लिया जाय तब भी उन लोगों के लिए जिन्हें भोजन की भी मुँहताजगी है, यह सामर्थ्य के बाहर की बात है। सामर्थ्य से बाहर जाने का अर्थ होता है, अपनी बरबादी। जीवन की बुनियादी आवश्यकताएँ जब तक पूरी न हो जायँ, तब तक अन्यान्य आवश्यकताएँ तबाही के सिवा और कुछ भी नहीं हैं। सम्भव है, दस-बीस आदमी अथवा कुछ वर्ग बहुत सम्पन्न हों लेकिन जब तक समाज में कोई भी विपन्न रहेगा, तब तक कुछ की सम्पन्नता भी विपन्नता ही है। अतः कम से कम भारत में केवल बुनियादी आवश्यकताओं की दृष्टि से ही कहा जा सकता है कि मद्य-निषेध होना ही चाहिए। सरकार अगर किसी बुराई पर प्रतिबंध न लगाये तो वह बुराई, अच्छाई हो जायेगी, ऐसी बात नहीं है। सरकार बुराई-अच्छाई का पैमाना नहीं है। इसी तरह धन कमाकर इन्सान बड़ा आदमी नहीं बनता। उसका व्यवहार, उसके गुण उसे बड़ा-छोटा बनाते हैं। जब शराब बुरी चीज है, तो शराबी बड़ा आदमी कैसे माना जाय!

दूसरे लोगों को भले ही ज्ञान हो, शराबी को तो शराब से पैदा होने वाली असाध्य बीमारियों का पता होगा ही। शराब भी एक बीमारी ही है। फिर अपनी आदत छोड़ने के लिए क्यों न प्रयत्नशील वह हो।

जहाँ तक जनता का प्रश्न है वह बेचारी हर बात में घसीटी जाती है। इसके बिना कोई काम होने वाला नहीं। तंत्र चाहे जो भी हो, लेकिन जनता एक अनिवार्य तत्त्व है। फिर शराब-बंदी के मामले में इसके महत्त्व को कैसे नजर-अन्दाज किया जा सकता है? इसका क्षेत्र इतना व्यापक है कि जनता ही शराब भी पीती है, वही सरकार चलाती है, वही शराब का विरोध करती है और वही शराब का ठेका लेती है। इसमें संदेह नहीं कि जिस दिन जनता चाहेगी, उस दिन शराब-बंदी होकर रहेगी। लेकिन प्रश्न यह है कि वह चाहेगी कैसे?

शराब-बंदी में जनता का जो योग होना चाहिए, उसके लिए शिक्षण बहुत जरूरी है। विचारपूर्वक जब जनता शराब-बंदी के लिए मैदान में उतर पड़ेगी, तब निर्णायक रहेगा।

परिषद, ...
गांधी स्मारक निधि, ...
जून, '६२

राजस्थान में शराब के ठेके और गारन्टी पद्धति

—मनोहरसिंह मेहता

राजस्थान राज्य में प्रतिवर्ष शराब की दूकानें नीलाम होती हैं, और जो व्यक्ति जिस दूकान पर ऊँची से ऊँची बोली लगाता है, उसको उस दूकान पर शराब बेचने का अधिकार मिल जाता है। अपने क्षेत्र के वेयर हाउस से, प्रतिगैलन (६ बोतलें) २१) रु० के हिसाब से मूल्य चुका कर वर्ष भर में जब-जब भी शराब की जरूरत हो वह खरीद लेता है और दो रुपये गैलन कमीशन लेकर पीनेवालों को बेचता रहता है।

वैसे एक्साइज डिपार्टमेन्ट का मकसद तो यह है कि उत्तरोत्तर शराब-खोरी कम होती जाय, लेकिन इस समय तो राज्य सरकार के लिए शराब की आमदनी काम-धेनु के समान है और सम्बद्ध अधिकारियों का रात-दिन यही चिन्तन चलता रहता है आय किस प्रकार अधिक से अधिक बढ़े।

जिस प्रकार अकाल के दिनों में मनुष्य सब मर्यादाओं को भूल कर घृणित कामों के द्वारा भी पेट की ज्वाला शान्त करने के लिए बाध्य हो जाता है, उसी प्रकार आज के राज्य के कर्णधार किसी भी तरह आमदनी बढ़ाने के लिए कटिबद्ध हैं और गारन्टी सिस्टम जैसे घृणित तरीके से शराब के ठेके दिये जा रहे हैं।

गारन्टी सिस्टम में अधिक से अधिक शराब बेचने के लिए ठेकेदार बँधा हुआ है और जो ठेकेदार निश्चित मात्रा से कम मूल्य की शराब बेचेगा, उससे २१) रु० प्रति गैलन से रकम वसूल कर ली जायगी।

हर दूकान पर कितनी शराब बिके उसके लिए नीचे लिखे अनुसार कायम किया जाता है। गत ३ वर्षों में जिस वर्ष सबसे अधिक शराब बिकी हो उसका मूल्य २१) रु० प्रति गैलन से ले लिया जाता है। इसमें ३ वर्षों में जिस वर्ष सबसे अधिक रकम ठेके की हुई हो वह भी जोड़ दी जाती है और शराब की बिक्री १० प्रतिशत बढ़ना आवश्यक माना जाकर उपरोक्त दोनों रकमों को जोड़कर इसमें १० प्रतिशत रकम और जोड़ दी जाती है। उदाहरणार्थ, मान लीजिये कि बीगोद दूकान पर गत ३ वर्षों में एक वर्ष सबसे अधिक बिक्री ८०० गैलन २५ यू० पी० (अन्डर-प्रूफ) की हुई है, तो २१) रु० प्रति गैलन से १६,८००) रु० होंगे, इसमें ३०००)रु० ठेके की रकम जो गत ३ वर्षों में किसी वर्ष सबसे ऊँची हुई है वह जोड़ दी जाती है। इस प्रकार उपरोक्त दोनों रकमें जोड़ने पर १९,८००) रु० हुए, इसमें १० प्रतिशत के हिसाब से १९८०) रु० और जोड़ दिये जाते हैं जिसमें कुल मिलाकर २१,७८०) रु० हो जाते हैं।

जहाँ पहले बीगोद का ठेकेदार ठेके की रकम ३०००) रु० देने के बाद वह कितनी शराब बेच पाता है इसके लिए बँधा हुआ नहीं था, वहाँ गारन्टी सिस्टम में वर्ष भर में २१७८०) रु० की शराब बेचने के लिए बँधा हुआ है और उपरोक्त रकम के मूल्य से जितनी भी कम शराब बिक पायगी, ठेकेदार से २१)रु० प्रति गैलन से रकम वसूल की जायगी और यदि ठेकेदार बीगोद २१७८०)रु० के मूल्य से अधिक शराब बेचेगा, तो जितनी भी अधिक बिकेगी उस पर कमीशन या मुनाफा बजाय २ रु० प्रति गैलन के ४) रु० प्रति गैलन मिलेगा। यह बात भी डिविजन तथा डिस्ट्रिक्ट एक्साइज के उच्च अधिकारियों ने ठेकेदारों को अपने भाषणों में अनेक बार खुले रूप में कही है।

भारतवर्ष के कुछ राज्यों ने आर्थिक संकट के कारण तीसरी पंचवर्षीय योजना में शराबबन्दी करने में अपनी असमर्थता प्रगट की है, लेकिन राजस्थान राज्य ने तो तीसरी पंचवर्षीय योजना में शराबबन्दी तो दूर, शराबखोरी बढ़ाने की योजना बनायी है और ऐसे प्रतिगामी कदम का भी यह कहकर गुणगान किया गया है कि यह रिश्वत मिटानेवाला तथा 'शुद्ध' शराब दिलाने वाला कदम है।

कैसी अजीब बात है कि सरकार एक तरफ ठेकेदारों को पानी मिलाने, शराब कम देने तथा अधिकारियों के लिए रिश्वत का मार्ग खोले और दूसरी ओर ऐसी घृणित गारन्टी सिस्टम इसलिए प्रारम्भ करे कि इससे रिश्वत मिटेगी तथा कम देना व पानी मिलाना बन्द होगा।

मैं एक्साइज डिपार्टमेन्ट के सभी उच्च अधिकारियों तथा कर्णधारों से बड़े ही अदब के साथ नम्रतापूर्वक यह पूछना चाहता हूँ कि गत ३ वर्षों में बीगोद की दूकान पर किसी भी वर्ष ८००) रु० गैलन से अधिक शराब नहीं बिकी है और ठेके की रकम ३०००) रु० है, जब कि ठेकेदार को कमीशन से केवल १६००) रु० ही मिलेंगे, तो वह रकम लायगा कहाँ से? फिर इसी कमीशन में से तो ठेकेदारों को बाल-बच्चों का निर्वाह भी करना है। दूकान पर लगनेवाला अन्य खर्च भी निकालना है और सम्बद्ध अधिकारियों की भी आवभगत करनी है, तो यह सब रकम कहाँ से आनेवाली है? क्या प्रति वर्ष घर में से निकालकर देगा? ८०० गैलन प्रति वर्ष बिकनेवाली दूकान को ३०००) रु० में ठेके पर देने का सीधा मतलब ही यह होता है कि डिपार्टमेन्ट ने पानी मिलाने तथा कम देने की व अन्य प्रकार से नाजायज काम करने की छूट दे दी है।

शराब का व्यसन इतना बुरा है कि बापू के ही शब्दों में उस समय तक सुधारकों को सफलता मिलना लगभग असम्भव है जब तक कि राज्य शराबी को शराब पीने की इजाजत ही नहीं, बल्कि सुविधा भी देती रहती है, लेकिन जब शराब घर घर पहुँचने लगे और उधार भी मिलने लगे, तो फिर सुधारकों को पूर्ण रूप से असफलता ही मिलनेवाली है। न तो कोरे कानून से ही शराबबन्दी सफल होनेवाली है और न कोरे प्रचार से ही। इस पर तो एक ही साथ दोनों ओर से प्रहार करना होगा। जहाँ एक तरफ कानून से बन्द होगा, वहाँ दूसरी ओर सुधारकों को घर-घर जाकर प्रत्येक शराबी से परिवार के सदस्य की तरह मधुर सम्बन्ध स्थापित करने होंगे, लेकिन गारन्टी सिस्टम चालू होने के पश्चात् तो सुधारक चाहे रात दिन इस काम में भी लगे रहें, सफलता मिल ही नहीं सकती।

पाँच छह गाँवों के मध्य जब एक दूकान होने पर भी शराब की आदत छुड़वाना कठिन होता है, तो फिर गाँव-गाँव नाजायज दूकानें खुल जाने पर घर घर-घर जाकर शराब की बोतल दे आने पर और उधार मिल जाने पर शराब से मुक्ति किसी भी हालत में दिलाई ही नहीं जा सकती।

बीगोद के जिस ठेकेदार को वर्ष भर में २१७८०) रु० की शराब बेचनी है, उसे अब कई गाँवों में नाजायज तौर पर दूकानें स्थापित करनी होंगी और घर घर जाकर उधार भी शराब देनी होगी। जब कम बिकने पर सरकार २१) रु० प्रति गैलन वैसे ही वसूल कर लेती है, तो फिर इससे तो यही बेहतर है कि ठेकेदार शराब उधार ही दें, ताकि कभी न कभी तो रकम प्राप्त हो ही सके। आखिर मनुष्य के माथे का कर्ज जाता भी कहाँ है! अधिक बिकने पर कमीशन दुगुना मिलने का प्रलोभन भी सब ठेकेदारों के सामने है ही।

जहाँ तक सम्बद्ध अधिकारियों का प्रश्न है उनके बारे में राज्य के कर्णधारों ने यह मान ही लिया है कि वे सब नाजायज कशीदगी, पानी की मिलावट आदि को रोकने में रिश्वत की लत के कारण असफल रहे हैं, तो फिर यह भी मान ही लेना चाहिए कि वे अधिकारी अब भी अपनी रिश्वत की आदत के कारण न तो गाँव-गाँव खुलनेवाली नाजायज दूकानों को ही रोक सकेंगे और न घर घर बिकनेवाली शराब को ही। जहाँ तक रिश्वत के द्वार का सवाल है, वह तो अधिकारियों के लिए उसी प्रकार खुला हुआ है जिस प्रकार ठेके के समय खुला हुआ था। ठेके के समय में पानी की मिलावट व कम देना आदि में रिश्वत लेते थे, अब गाँव-गाँव नाजायज दूकानें रखने व घर घर जाकर शराब बेचने के जुर्म में रिश्वत लेंगे।

राजनैतिक तथा रचनात्मक संस्थाओं में काम करनेवाले अक्सर अपने हर

विनोबा यात्री दल से

• कालिंदी

"मेरे घर चलोगी ? थोड़ा दूध पिलाऊँगी।"

उसने मेरा हाथ पकड़ लिया। हम चलने लगे। दस बारह कदम पर ही उसका घर था। घर के अहाते में धान के खेत प्रसन्नता से हँसते हुए बोले 'प्रणाम'। घर के आँगन में बूढ़ी माँ ने एक चटाई बिछाकर मुझे बैठने के लिए कहा। पिता मेरा स्वागत करके गाय का दूध दुहने लगे। लड़की चुल्हा जलाने लगी। मैं बैठी, वैसे बकरी के दो बच्चे दौड़ते दौड़ते मेरे पास आये। लड़की उनको भगाने लगी, तो बूढ़ी माँ बोली : "क्यों भगाती हो उनको ? यह तो बाबा की लड़की है। बाबा तो पशुओं पर प्यार करने को सिखाते हैं।" *फिर बातें आगे चलीं :*

"तुम्हारा देश कहाँ है ?

"दिल्ली। बहुत दूर है।"

"घर छोड़कर बाबा के पास आयी हो।

"हाँ"।

"यहाँ बीमार होती हो तो कौन देखभाल करता है तुम्हारी ?

"हिंदुस्तान में तुम्हारे ऐसी माँ जगह-जगह मिलती हैं"।

"लेकिन बाबा का कृपामृत रहा हो, तो माँ की आवश्यकता क्या है ?" देहात की एक अशिक्षित स्त्री बोल रही थी।

"*आप लोग बहुत भाग्यवान् हो।* बाबा जैसे महात्मा के पास आप रह रहे हैं। हम देहाती आपके भाग्य की ओर आँख फटने तक देखते रहते हैं"—पचीस, छब्बीस साल का बेटा बीच में ही बोला।

"नहीं नहीं, हम देहाती भी बहुत भाग्यवान् हैं। कल हमारे गाँव में बाबा जो आये थे।" माँ बच्चे को रोकते हुए बोली।

"सिर्फ इतना ही नहीं," अभी तक स्तब्ध बैठा हुआ पिता बोला, "हमारा तो बड़ा भाग्य है, हम ग्रामदानी गाँव में रह रहे हैं। मुझे तो खुशी इस बात की है कि मेरे खेत का भात मैंने कल बाबा के ग्रामदान के काम में लगे हुए लोगों को *खिलाया। इससे बढ़कर और भाग्य क्या* हो सकता है, बेटे !"

"सो तो खुशी है ही, लेकिन बाबा की बातें सुनकर लगता है कि चला जाऊँ बाबा के साथ"—हँसते हँसते लड़के ने दूध से भरा प्याला मेरे हाथ में दिया। दूध के घूँट घूँट के साथ उस समाधान, तृप्ति और शक्ति का भी मैं पान कर रही थी।

गाँव-गाँव में ग्रामदान के बारे में यही भावना बन रही है। छोटा बच्चा भी बाबा की टोपी देखकर चिल्लाता है "अमार सन्त-ग्रामदान"। चर्चा में बाबा दूसरे विषय पर बातें करते हैं, तो माँग आती है, 'ग्रामदान के बारे में कहिये'। फिर बाबा कहने लगते हैं : "*गाँव की व्यवस्था गाँव के लोगों को करनी चाहिए। असम सरकार* ने ग्रामदान कानून बनाया है। क्या है उस कानून में ! छोटे गाँव भी अगर ग्रामदानी होते हैं, तो उनको नयी पंचायत के अधिकार मिलेंगे। लेकिन सत्ता को प्रेम का आधार चाहिये। यह आधार नहीं होगा, तो क्या होगा ? दूध होता है उसमें ऊपर से थोड़ा दही डालते हैं, तो उसका दही बनता है। लेकिन अगर पानी में दही डाला जाय, तो उसका दही जमेगा ? वैसे ही प्रेम हो नीचे-यह दूध है-और ऊपर से सत्ता आयेगी-यह दही है-तो उसका दही जमेगा याने वह सत्ता टिकेगी। गाँव के किये ग्रामदान से यह होगा।"

गाँव के लोगों को इस तरह से समझाया और रास्ते में कार्यकर्ताओं के साथ चर्चा हो रही थी तब कहा : "अब ये सत्ता के विकेंद्रीकरण की बातें करते हैं। सत्ता का विकेंद्रीकरण करेंगे, तो उसके साथ मत्सर भी विकेंद्रित होगा। जो मत्सर सत्ता के साथ दिल्ली में है, वह प्रदेश में आयेगा और गाँव तक पहुँचेगा। मैं कई बार पत्थर की मिसाल देता हूँ। एक पत्थर के पचास टुकड़े करो, फिर भी उसका मक्खन नहीं निकलनेवाला। हम कहते हैं रास्ता नीचे से ऊपर आना चाहिए, ऊपर से नीचे नहीं आना चाहिए। याने क्या ! ऊपर से याने केंद्र से और नीचे से याने ग्राम से, ऐसा नहीं। नीचे से याने करुणा से, प्रेम से। मराठी में कहते हैं इमली के पत्ते पर मंदिर बनाया। याने मंदिर बनाने को ऊपर से आरंभ किया—उसको आकार देना था। पहले शिखर बाद में तला। पहाड़ खोदकर गुफा बाँधते हैं और उसमें मंदिर बनाते हैं, तब ऊपर से खोदते हैं, *नीचे से आरंभ नहीं करते।*

हमको ऐसा काम नहीं करना है, ऐसा सोचकर ऊपर से चुनाव करने के बजाय नीचे ग्राम पंचायत के चुनाव करते हैं। यह गलत है। यहाँ सवाल प्रक्रिया का नहीं, अन्तरवृत्ति का है। हम अधिकारी हैं, लोगों को अक्ल नहीं, लोग काँच के मणि हैं उनको एक सूत्र में गठने का काम हमको करना है, यह भान होता है। इसलिए गाँव में गाँव पंचायत के चुनाव करवाते हैं। असल में नीचे से का अर्थ ऐसा नहीं है। नीचे से याने करुणा से। करुणा नीचे से और ऊपर से भी आनी चाहिए। प्रेममूलक योजना होगी तब उससे लाभ होगा, सत्तामूलक या मत्सरमूलक होगी तो हानिकारक होगी"।

> **'संघ' शब्द बापू ने इस्तेमाल किया। हम आपको लोकसेवक कह सकते हैं, लेकिन उससे पूर्ण अर्थ निकलेगा नहीं ? संघ से हमारे 'स्वय' पूर्ण हो जाते हैं।**
>
> —विनोबा

बारिश अभी-अभी खतम हुई थी। और चर्चा का आरंभ हुआ था। वर्षावृष्टि से सृष्टि प्रसन्न थी और उस प्रसन्नता की लहरें चर्चा में भी दिखाई दे रही थीं। किसीने बायीं ओर इशारा करते हुए मुझसे कहा, "देखो, कितना सुहावना दृश्य है"। बाबा ने यह सुन लिया और कहा ! "अरे, ये पेड़ सुन्दर हैं, ये खेत सुन्दर हैं और हम क्या सुन्दर नहीं हैं ? हम क्यों उनकी ओर देखें, उन्हींको हमारी ओर देखना चाहिये। हम चेतन हैं।"

दूसरी पंक्ति में इस पर हास्य विनोद चल रहा था। गौतम कहने लगा, "हम इनकी (बाबा) की ओर देखने को तैयार हैं। लेकिन हरी टोपी क्यों हम जबरदस्ती देखें ! बाबा तो छिप जाते हैं और हरी टोपी का ही दर्शन होता है।" कई बार बेचारी बहनों को हरी-टोपी को ही तिलक लगाना पड़ता है। हम हँस रहे थे कि बाबा कहने लगे, "*असली चीज तो* चित्त की प्रसन्नता है। जिसके चित्त में समाधान है, वह दुनिया का बादशाह हो गया। अब हम कहते हैं कल्पना दुःखी है। दुःख क्या चीज है। दुःख भगवान् ने नहीं निर्माण किया। उसकी सृष्टि में दुःख नहीं है। दुःख तो मानव की सृष्टि में है। वह मानव-निर्मित है। उससे दूर रहना कठिन नहीं। तुकाराम कहता है, "नसरया छंदे नसल्या छंदे जग विनोदे विठ्ठलत से—एका-एकी एका-एकी तुका लोकी निराळा" यह दुनिया जो बिलख रही है वह तो विनोद है। विनोद से बिलख रही है। हम सोचते हैं यह दुःख से बिलख रहे हैं, लेकिन वह तो एक विनोद मात्र है। और तुकाराम तो सब लोगों से अलग है, एकदम अलग है। ज्ञानेश्वर ने कहा है—मक्खन कैसे रहता है ? छाछ में से ही आता है, लेकिन छाछ में भी वह *नीचे नहीं जाता, ऊपर ही रहता है।* वैसे हम समाज में से ही आ गये हैं, लेकिन उसके ऊपर हैं। यह दृष्टि जब आयेगी तब दुःख रहेगा नहीं।

आज एक नये भाई यात्रा में थे, बाबा के साथ यात्रा में रहना चाहते थे। बाबा ने उनसे कहा बिहार में जाओ और काम में लगो। भाई कहने लगे "कैसे जाऊँ, मेरे पास पैसा नहीं है।"

"तो पैदल जाओ, पैदल यात्रा भी होगी और रास्ते में अनेक लोगों से संपर्क आयेगा तो ज्ञान भी बढ़ेगा।"

"रास्ते में खाने को नहीं मिला तो ?"

"तो और भी अच्छा है। कहीं खाने को मिले और कहीं नहीं *मिला, तो पेट भी ठीक रहेगा।* स्वास्थ्य बिगड़ेगा नहीं।" कल नेपोलियन का चरित्र देख रहा था। वह कहता है, "*जितना भी* कम खाओगे तो वह ज्यादा ही होनेवाला है और ज्यादा खाओगे तो बीमार पड़ोगे।" अब तो उन भाई साहब का फूड प्राब्लेम भी हल हो गया था।

विमलाताई भी आज यात्रा में थीं। उन्होंने बाबा को पूछा, "आपने, यहाँ की स्त्रियों के 'लोकसेवक संघ' बनाने का संदेश दिया। मेरे खयाल से स्त्रियों के लिए आवश्यक बात तो यह है कि राजकारण की ओर उनकी दृष्टि बदले। अगर यह बन जाता है, तो 'संघ' बनाने की क्या आवश्यकता है ?"

"आवश्यकता इसलिए है कि स्त्रियों में यह भाव पैदा हो कि 'हम संघ हैं।' असल में संघ तो देह में ही होते हैं। अंग्रेजी में कहते हैं 'इन्स्टिट्यूशन इटसेल्फ' तो देह में ही संघ है। अब अपनी रुचि के दस पंद्रह लोगों को इकट्ठा कर लिया, तो उसका संघ बन जायेगा ? अब इस 'लोकसेवक-संघ' के कोई सदस्य नहीं होंगे। संघ याने जहाँ अनेक श्रद्धाएँ एक होती हैं। जहाँ एक *विचार की प्रेरणा है* और उस प्रेरणा से सब एक हुए हैं। हम हिन्दू हैं, तो

काम के साथ गांधी का नाम जोड़ देते हैं, लेकिन गांधी की इच्छा के विपरीत हम किस प्रकार चल रहे हैं इसका चिन्तन भी तेजी से चलना ही चाहिए। एक तरफ गांधी का नाम लें और दूसरी ओर जिस पाप और अत्याचार की जननी शराब को वे अपने एक घण्टे की डिक्टेटरशिप में सबसे पहले समाप्त करना चाहते थे, उत्तरोत्तर बढ़ती जाय, तो फिर ग्राम स्वराज्य कैसे खड़ा होगा ? एक दूसरे को दोष देने से काम नहीं चलेगा। रचनात्मक संस्थाओं में काम करनेवाले राजनैतिक दलवालों को दोष देकर या खुली सभा में आलोचना करके संतोष मान लें यह शोभा की चीज नहीं है। क्योंकि बापू के नाम पर चलनेवाली रचनात्मक संस्थाएँ भी उतनी ही दोषी हैं, जितने कि बापू के नाम पर चलनेवाले राजनैतिक दल। बल्कि सत्य तो यह है कि रचनात्मक संस्थाएँ उनसे भी अधिक दोषी हैं; क्योंकि सत्ता चलानेवालों को जहाँ विकास के काम करने हैं, वहाँ रचनात्मक संस्थाओं की भी तो मदद करनी है। इसलिए विवश होकर शराब की आमदनी का सहारा लेना पड़ता है, लेकिन हममें भी तो वह शक्ति नहीं कि साहस के साथ कह दें कि हमें ऐसी मदद नहीं चाहिए।

हिन्दुओं का कोई अध्यक्ष है? मंत्री है? उसका आफिस है? हिन्दू धर्म एक विचार है और उस विचार को हम मानते हैं। इसलिए हम कहते हैं कि हम हिन्दू हैं। वैसे तो हम सर्वोदयी समाज हैं, पदमुक्त समाज पर हमारी श्रद्धा है। यह विचार हमको मान्य है। इस प्रकार यह विचार जिसको मान्य है, वे सब लोग एक जगह मिलते हैं। एक दूसरों से ताल्लुक रखते हैं। काम के लिए इधर से उधर जाते हैं। ये सब करते हैं। संघ शब्द बापू ने इस्तेमाल किया। हम आपको 'लोक-सेवक' कह सकते हैं, लेकिन उससे पूर्ण अर्थ नहीं निकलेगा। संघ से स्वयं पूर्ण हो जाते हैं। पूर्णता आती है। 'लोक सेवक संघ' कहने से कल्पना आती है कि हम पदमुक्त हैं, दिलों को जोड़नेवाले हैं।

भूदान में जमीन देनेवाले अनेक भूमिवानों ने प्रश्न करना शुरू किया कि सेवी कानून तो स्थगित हो गया। अब उनकी जमीन का क्या होगा?

इस तरह की विषम स्थिति में २३ मई को बैठक महाराष्ट्र के प्रसिद्ध सर्वोदयी नेता श्री अप्पा साहब पटवर्धन के सभापतित्व में प्रारंभ हुई। बैठक ने गंभीरतापूर्वक स्थिति का अध्ययन किया। संगठक एवं सह-संगठकों ने अनुभव के आधार पर बताया कि मुख्य मंत्री के लेवी कानून संबंधी वक्तव्य से भूदान में जमीन देनेवालों को निराशा हुई है। बिहार के प्रसिद्ध सर्वोदयी नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने बिहार सरकार के वरिष्ठ मंत्री श्री भोला पासवान शास्त्री को एक पत्र लिखकर लेवी कानून की भूमि का उसका इतिहास, उससे होनेवाले लाभ आदि की सविस्तार चर्चा की और श्री शास्त्रीजी को बताया कि आवश्यकतानुसार इस पत्र को बिहार सरकार के मंत्री मण्डल के प्रत्येक सदस्य को पढ़ाया जा सकता है।

२३ मई की बैठक ने जनमानस में उत्पन्न दुविधा के कारण दुःख के साथ श्री देवरभाई ने बिहार दौरे का कार्यक्रम स्थगित करने का निश्चय किया और इस आशय की सूचना श्री देवरभाई को दे दी गयी। बैठक ने बीघा-कट्ठा अभियान जारी रखने का निश्चय किया। सघन अभियान का क्षेत्र सभी जिला से समेट कर पूर्णिया, गया, मुंगेर और संथाल परगना ही रखा गया। बिहार राज्य के बाहर के जो कार्यकर्त्ता बीघा-कट्ठा अभियान में पूर्णियाँ, गया और मुंगेर में काम कर रहे थे वे तो वहाँ ही रह गये। बाकी अन्य जिला के बिहार राज्य के बाहर के सभी कार्यकर्त्ता संथाल परगना में भेजने का निश्चय किया गया। सर्व श्री अप्पा साहब पटवर्धन, कृष्णराज मेहता, वल्लभस्वामी, पूर्णचन्द्र जैन, निर्मला देशपांडे जैसे राष्ट्रीय स्तर के नेताओं ने भी अपना पूर्ण एवं आंशिक समय संथाल परगना जिला में लगाया। बिहार राज्य पंचायत परिषद, बिहार हरिजन सेवक संघ, बिहार गांधी स्मारक निधि, बिहार भूदान यज्ञ कमिटी, बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ एवं अन्य रचनात्मक संस्था के कार्यकर्ताओं ने भी अभियान की सफलता के लिए सक्रिय सहयोग प्रदान किया।

लेवी कानून के स्थगित होने से पैदा हुई स्थिति का भान कराने एवं अगला कार्यक्रम सम्बन्धी विचार-विमर्श करने के लिए सर्व श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, श्यामसुन्दर प्रसाद एवं कृष्णराज मेहता, विनोबा भावे से मिलने असम गये। विनोबाजी से मिलकर आप लोगों ने बिहार की पूरी स्थिति का भान विनोबाजी को कराया। अन्त में विनोबाजी ने बीघा कट्ठा अभियान जारी रखने के साथ-साथ अन्य कार्यक्रम पर जोर देने की सलाह भी दी। विनोबाजी ने बिहार की आम जनता के नाम से एक अपील भी भेजी जिसमें सर्वोदय के कार्यक्रम के महत्त्व के अतिरिक्त लेवी कानून सबंधी अपना विचार भी व्यक्त किया।

उत्तर कामरूप में ग्रामदान कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण शिविर

श्री विनोबाजी की उत्तर कामरूप में चलायी गयी पदयात्रा के फलस्वरूप इस अंचल में करीब एक सौ गाँव ग्रामदान में प्राप्त हुए हैं। इन ग्रामदानी गाँवों के कार्यकर्ताओं का एक प्रशिक्षण शिविर एक दिन के लिए गत १६ मई '६२ ई० को नलबाड़ी से १६ मील दूर बास्का बुनियादी शिक्षा-निकेतन गेरुआ-आश्रम में सम्पन्न हुआ। इस शिविर में श्री आर० के० पाटिल ने मार्गदर्शन किया था। शिविर में उत्तर कामरूप के तामुलपुर और बास्का अंचल के ग्रामदान के काम पर प्रत्यक्ष रूप से लगे हुए कार्यकर्त्ता तथा ग्रामदान आन्दोलन में सहायता करने वाले ८१ कार्यकर्त्ताओं ने भाग लिया था। शिविरार्थियों में तामुलपुर क्षेत्र के सहकारी विभाग के अधिकारी, उन्नयन खण्ड के विकास-अधिकारी, तामुलपुर हाईस्कूल के सहमुख्याध्यापक और तामुलपुर क्षेत्र के असम विधान सभा के सदस्य भी थे। इनके अलावा यहाँ के आस-पास के ग्रामदानी गाँवों के उत्साही लोगों ने भी शिविर में सक्रिय रूप में भाग लिया।

सुबह नौ बजे से शिविर में चर्चा प्रारंभ हुई। ग्रामदान के काम पर लगे रहने वाले कार्यकर्त्ताओं के समक्ष आनेवाली समस्याओं का समाधान व ग्रामदान के कानूनानुसार सरकारी फार्म पर हस्ताक्षर लेने का काम, आदि सभी बातें श्री पाटिलजी ने कार्यकर्त्ताओं को विशद रूप से समझायीं। ग्रामदानी गाँवों के लोगों के मन में जो संदेह है, और कार्यकर्त्ताओं के सामने जो बीच-बीच में असुविधाएँ होती रहती हैं तथा असम ग्रामदान कानून के संबंध में जानने लायक विशेष बातों को प्रश्नोत्तर के रूप में श्री पाटिलजी ने सबको समझाया। श्री पाटिलजी के साथ विनोबाजी के पदयात्रा से आये हुए महाराष्ट्र के प्रमुख कार्यकर्त्ता डा० अमरमोरे और श्री बसंतराव नारगोलकर ने भी शिविर के आलोचना सभा में योगदान दिया।

इस शिविर में कार्यकर्त्ताओं के मन में अदम्य उत्साह का संचार हुआ। साथ ही ग्रामदानी गाँवों के लोगों के मन में जो छोटी मोटी शंकाएँ थीं, वे भी सहज ही दूर हो गयीं।

तामुलपुर अंचल के कार्यकर्त्ताओं के निवेदन और आग्रह से बाबा ने इस अंचल में दुबारा पदयात्रा की और उसके परिणामस्वरूप उस पूरे अंचल में ग्रामदान का अच्छा वातावरण पैदा हुआ और अनुकूल हवा बहने लगी। अब तक ६० ग्रामदान प्राप्त हो चुके हैं। इस कारण तामुलपुर अंचल में गेरुआ अंचल की ओर से सुदक्ष कार्यकर्त्ताओं की एक टोली श्री गोव्लाराम ब्रह्म के नेतृत्व में भेजने का तय किया गया।

कार्यरत रहनेवाले कार्यकर्ता और ग्रामदान आन्दोलन के समर्थनकारी लोगों के अन्तर में उत्साह प्रदान करने के लिए तथा स्थानीय जनता में ग्रामदान-आन्दोलन का जागरण सक्रिय रखने के लिए उत्साही युवक कार्यकर्त्ता विधान सभा के सदस्य श्री हलधर उजीर के साथ चर्चा की गयी। चर्चानुसार ३१ मई और १ जून दो दिन के लिए एक ग्रामदान व सर्वोदय-विचार शिविर करने का तय किया था।

साने गुरुजी

[पृष्ठ ४ का शेष]

निःस्वार्थ सेवक के मन में सेवाकार्य का परिणाम निराशाजनक नहीं हो सकता। १९४५ में अपने एक छोटे साथी को पत्र लिखते हुए उन्होंने लिखा " समुद्र की लहरें मुझे अपने पास बुलाती रहती हैं। कहती है—'मेरे दुखी और अशांत बच्चे, आ। मेरे हजारों हाथ तुझे लेकर सुलायेंगे, शांति देंगे।' यद्यपि इस निमंत्रण के उत्तर में उन्होंने कहा था—अभी नहीं, अभी नहीं,—फिर भी समुद्र में जा मिलने की बूंद की यह इच्छा बहुत पुरानी थी। गुरुजी का हृदय सदा कातर रहता था कि मैं कब उस परमेश्वर में एक रूप हो जाऊंगा। गुरुजी का देहावसान इसी कातरता का अनिवार्य परिणाम था, देहबंधन तोड़कर विश्वात्मा में लीन होने का एक प्रयत्न मात्र था।

गुरुजी को जन्म देने का सुयोग कोंकण के एक छोटे से गाँव को मिला, पर गुरुजी के पवित्र और ज्वलंत जीवन की सुरभि देश भर को मिली। २४ दिसंबर १८९९ से ११ जून १९५० तक अर्थात् लगभग पचास वर्ष और ६ महीने तक उनके शरीर को पोषण देने का भाग्य धरती का रहा, पर उनकी निष्ठा और लगन से परिपुष्ट होने का योग विश्व में अनंत काल तक रहेगा।

विज्ञान और आत्मज्ञान के समन्वय से विश्वशांति संभव

गोरखपुर में परिसंवाद

गांधी स्मारक निधि, गोरखपुर के तत्वावधान में एक परिसंवाद "विज्ञान और आत्मज्ञान तथा विश्वशांति" विषय पर १९ मई गोरखपुर विश्वविद्यालय के वनस्पतिशास्त्र के अध्यक्ष, डा० के० एस० भार्गव की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। परिसंवाद में गोरखपुर विश्वविद्यालय के रसायन विभाग के आध्यापक डा० रविन्द्र प्रताप राव जी जिनकी यह निश्चित धारणा है कि बिना विज्ञान और आत्मज्ञान के समन्वय के विज्ञान का लोक मंगल और सफल जीवन के लिए कोई उपयोग नहीं—ने विशेष रूप से अपना विचार रखा।

इसके अतिरिक्त प्रो० आर० एम० सान्याल, श्री सिंहासन सिंह, एम० पी० प्रो० मिश्रा, प्रो० योगेन्द्र सिंह, रामवृक्ष शास्त्री, रामजनम कमला चोपड़ा, मुक्तिलता सान्याल, प्रो० डा० लाल आदि महानुभावों ने चर्चा में भाग लिया।

डा० राव ने भारतीय विज्ञान के ऐतिहासिक विकास का उल्लेख करते हुए इस बात को पुष्ट किया कि विज्ञान का विज्ञान अर्थ यहाँ उस विशेष ज्ञान से लिया जाता था, जिससे जीव-जगत् के रहस्य के समझने में सहूलियत हो और हम अपने जीवन को विकसित कर—मानव मात्र एक है, इसकी अनुभूति कर सकें—अर्थात् आत्मदर्शन हो सके। अफसोस है आज के वैज्ञानिक अपनी सांस्कृतिक परम्परा को छोड़ पाश्चात्य भौतिकता की दिशा में बढ़ने की कोशिश कर रहे हैं। आपने यह कहकर शंका प्रकट की कि यदि वैज्ञानिक और जनता तुरत संभलती नहीं है तो वह समय शीघ्र आयेगा कि जिस भौतिक लाभ के लिए मानवता दौड़ रही है—उसका उपयोग करने के लिए मानव ही नहीं रह जायेगा। विकृत आकृति, दोगली नसल के विचित्र जीव मानव की संतान के रूप में पैदा होंगे। अनेक प्रकार के नये रोग फैलेंगे और फैल रहे हैं।

प्रो० सान्याल और सिंहासन सिंह एम० पी० ने मनसा वाचा, कर्मणा जीवन

रामदेव बाबू का देहान्त

पटना से टेलीफोन द्वारा यह दुखद समाचार मिला है कि रविवार १० जून '६२ को दोपहर में १ बजकर ३१ मिनट पर पटना मेडिकल कालेज में बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष श्री रामदेव ठाकुर का हृदय-गति रुक जाने से अचानक देहान्त हो गया।

में एक रूपता लाने पर जोर दिया। बिना जीवन में शुद्धता, नैतिकता, उच्चता लाए समाज में शांति नहीं हो सकती।

अंत में डा० भार्गव ने अपना अध्यक्षीय भाषण करते हुए इस बात पर प्रकाश डाला कि विज्ञान का अर्थ है, सत्य का शोधन और उसका सही रूप में अमल। आज भौतिक तथा संहारक यंत्रों की खोज जो विज्ञान का मुख्य लक्ष्य बनता जा रहा है, वह बड़ा ही विनाशक तथा विज्ञान को अपने महान् स्थान से च्युत करने वाला है। सही अर्थ में विज्ञान का इस्तेमाल आज नहीं हो रहा है।

डा० भार्गव ने कहा कि गांधीजी सही अर्थ में वैज्ञानिक थे। वह सत्य का जीवन भर प्रयोग करते रहे और जीवन में पूरी निष्ठा के साथ अमल करते रहे। आज यही नहीं हो रहा है। सत्य का संबंध मानव मानव से है। यदि हम अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में सत्य का प्रयोग नहीं करेंगे तो अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में विश्व-शांति की संभावना नहीं हो सकती।

विदेशों की वैज्ञानिक प्रगति का उल्लेख करते हुए डा० भार्गव ने कहा कि विदेशों, यूरोपीय देशों में विज्ञान के साथ कर्मठता, पुरुषार्थ तथा हिम्मत भी बढ़ी है। हमारे यहाँ इस गुण की कमी है।

अंत में डा० भार्गव ने इस बात का जोरदार ढंग से विरोध किया कि आज विज्ञान का संहारक अस्त्रों के लिए उपयोग किया जा रहा है। आपने कहा कि विज्ञान अपने पद से च्युत होगा यदि वह लोक-मंगलकारी, नैतिक तथा आत्मिक गुणों को बढ़ाने में सहायक सिद्ध न होगा।

—रामवृक्ष शास्त्री

मध्यप्रदेश सर्वोदय सम्मेलन

दिनांक २७,२८ जून ६२ को छतरपुर में मध्यप्रदेश सर्वोदय सम्मेलन आयोजित हो रहा है। सम्मेलन की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध सर्वोदय विचारक प्रो० श्री राममूर्तिजी करेंगे। सम्मेलन की कार्यवाही छतरपुर के नगर-भवन में सम्पन्न होगी।

दिल्ली में अणुशस्त्र-विरोधी सम्मेलन

डा० राजेन्द्र प्रसाद उद्घाटन करेंगे।

देश-विदेश के अनेक प्रमुख नेता भाग लेंगे

गांधी शांति प्रतिष्ठान के तत्त्वावधान में १६, १७, और १८ जून १९६२ को अणु शस्त्र विरोधी सम्मेलन आयोजित होने जा रहा है। सम्मेलन का उद्घाटन भारत के भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद करने वाले हैं। सम्मेलन में देश और विदेश के प्रमुख विचारक, समाज शास्त्री, दार्शनिक और शांति के काम में लगे हुए कार्यकर्ता भाग लेंगे। विनोबाजी का आशीर्वाद इस सम्मेलन को प्राप्त है।

गांधी शांति प्रतिष्ठान-गांधी स्मारक निधि का एक फाउँडेशन है, जो शांति के प्रयत्नों के लिये समर्पित है।

सम्मेलन के देश-विदेश के करीब १०० से ऊपर व्यक्तियों की भाग लेने की संभावना है।

स्वागत समिति की एक अन्य सूचना के अनुसार पहले सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधियों से २) रु० प्रतिनिधि-शुल्क लेने का तय किया था, परंतु अब किसी प्रकार का कोई शुल्क नहीं रखा गया है। प्रतिनिधियों के निवास इत्यादि की व्यवस्था गांधी स्मारक भवन में होगी।

• ज्ञात हुआ है कि सम्मेलन के अवसर पर अनेक छोटे बड़े आयोजन करने का निश्चय किया गया है। जिनमें म० प्र० पंचायत परिषद् की प्रबंध-समिति की बैठक, म० प्र० खादी ग्रामोद्योग पर्षद की विंध्यक्षेत्रीय सहकारी समितियों का सम्मेलन, गांधी स्मारक निधि के ग्राम सेवकों का शिविर तथा हरिजन सेवक (विन्ध्य-महाकौशल क्षेत्र) के कार्यकर्ताओं की सभा प्रमुख हैं। म० प्र० खादी ग्रामोद्योग पर्षद द्वारा सम्मेलन के मौके पर एक खादी-ग्रामोद्योग एवं साहित्य प्रदर्शनी का आयोजन करना भी उल्लेखनीय है।

सम्मेलन की पूर्व तैयारी के लिए विभिन्न समितियों का गठन हो चुका है और सभी टोलियाँ उत्साहपूर्वक अपनी जिम्मेदारी पूरी करने में संलग्न हैं।

सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति अब पटना में होगी।

सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय से प्राप्त एक सूचना के अनुसार प्रबंध समिति की बैठक अब पटना में होगी।

सबसे पहले बैठक रानीपतरा में होने वाली थी, फिर यह तय किया गया कि यह रांची में होगी और अब यह घोषणा की गई कि "पिछले दो महीनों में बिहार के बीघा-कट्ठा अभियान में जो कट्ठा-दान प्राप्त हुआ है वह २४ जून को श्री राजेन्द्रबाबू को समर्पित करने का समारोह बिहार सर्वोदय मंडल की ओर से पटना में होना निश्चित हुआ है।

उपरोक्त कार्यक्रम को ध्यान में लेकर प्रबंध समिति की १७ से २२ जून तक की बैठक अब ता० १७ को पटना में ही रखी जाय यह तय किया है।"

इंदौर में सर्वोदय-पात्र का नया प्रयोग

इंदौर नगर में पाँच टोलियों द्वारा सर्वोदय-पात्र का कार्य चलाया जा रहा है। इस प्रयोग के संयोजक श्री नारायणराव शर्मा ने बतलाया कि हर टोली रोज ४०-५० घरों से सम्पर्क साथ पाती है तथा रोज २५-३० नये सर्वोदय-पात्र रखे जाते हैं और सवा-सौ डेढ़ सौ घरों से अन्न-संग्रह होता है। इन्दौर में अभी ३ हजार घरों से पात्र संग्रह होता है और अगले दो मास में यह संख्या ड्योढ़ी हो जायगी तथा उनके संग्रह के लिए "सर्वोदय मित्र" बनाये जा रहे हैं। ५००० सर्वोदय-पात्रों के लिए १००० "मित्र" रहेंगे, जो अपने घर के अलावा चार अन्य घरों का पात्र संग्रह कर सकेंगे। "घर-घर में सर्वोदय पात्र, पावे शांति मानव मात्र"—यह संदेश डब्बों पर चिपका कर वे घर-घर में दे रहे हैं। इस प्रकार परिवारों में सर्वोदय की भावना फैलेगी और विश्व में शांति की स्थापना होगी।

विश्व शांति सेना को ३० हजार रुपये का अनुदान

वाराणसी के विश्व शान्ति सेना के एशिया क्षेत्रीय कार्यालय में "गांधी शान्ति प्रतिष्ठान" द्वारा दी गयी अनुदान के ३० हजार रुपये प्राप्त हुए हैं। विश्व शान्ति-सेना के उपाध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण "वर्ल्ड पीस ब्रीगेड—अफ्रीका प्रोजेक्ट" के संबंध में श्री माइकेल स्काट और अमेरिकी शान्तिवादी श्री ए० जे० मस्ती से विचार-विमर्श करने दार-ए-सलाम (पूर्वी-अफ्रीका) गये हुए हैं और अब शीघ्र ही उनके भारत लौटने की आशा है।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ९५९३ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ९५३२ - एक अंक : १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २९ जून '६२ | वर्ष ८ : अंक ३९

पंचायत के पाँच गुण

विनोबा

हर गाँव में ग्रामसभा बनेगी, जिसमें हर घर का एक एक व्यक्ति सदस्य रहेगा। ग्रामसभा की तरफ से सर्वसम्मति से एक ग्राम-समिति या पंचायत चुनी जायेगी, जो सेवा करेगी। इसके हाथ में सेवक का ही अधिकार होगा, बाकी सारा अधिकार ग्रामसभा के हाथ में रहेगा, जिसमें छोटा-बड़ा कोई भेद ही नहीं रहेगा।

पंचायत का यह अर्थ है–पाँच व्यक्तियों की समिति। उस पंचायत के सदस्य पाँच होने चाहिए : (१) प्रेम, (२) निर्भयता, (३) ज्ञान, (४) उद्योग और (५) स्वच्छता।

पहला सदस्य : प्रेम

ग्राम-पंचायत के एक सदस्य का नाम होगा प्रेम। सारे गाँव का एक परिवार बनाना है, सब लोगों मे जमीन बाँटनी है। यह प्रेम-परिवार बनाने का सारा काम प्रेमरूपी सदस्य करेगा। आज गाँव में यह सदस्य नहीं है। प्रेम की जगह स्पर्धा है। यों आज गाँव में थोड़ा प्रेम तो है, लेकिन वह छोटे-से परिवार में कैद हो गया है। यह मेरा लड़का है, यह मेरी बीवी–बस, इतने ही में प्रेम खतम हो गया! लेकिन इतने प्रेम से काम नहीं चलेगा। सारे गाँव को प्रेम-परिवार बनाना होगा।

दूसरा सदस्य : निर्भयता

ग्राम-पंचायत का दूसरा सदस्य होगा निर्भयता। आज सर्वत्र भय छाया हुआ है। न गाँव में किसी का किसी पर विश्वास है, न प्रान्त में, न देश में, न दुनिया में। इस तरह आज अविश्वास पर ही दुनिया का सारा कारोबार चल रहा है। सारी दुनिया में शान्ति की स्थापना करने के लिए राष्ट्रसंघ नाम की एक बड़ी संस्था है। वहाँ सारे देशों के प्रतिनिधि आमने-सामने बैठते हैं और सोचते हैं कि दुनिया में शान्ति कैसे हो? लेकिन वे एक-दूसरे पर अविश्वास रखते हैं। हरएक को दूसरे का भय मालूम पड़ता है। ग्राम-पंचायत में ऐसा नहीं होगा। उसका एक सदस्य ही है–निर्भयता। इसलिए भय का कोई कारण ही नहीं है।

तीसरा सदस्य : ज्ञान

ग्राम-पंचायत का तीसरा सदस्य होगा ज्ञान। आज गाँव में कोई ज्ञान है ही नहीं। जो भी आदमी थोड़ा सा ज्ञान पाता है, गाँव छोड़कर शहर भाग जाता है। सारा ज्ञान शहर के विश्वविद्यालयों में भरा पड़ा है। ज्ञान उसी को मिलता है, जो वहाँ जाकर पैसा पेश करता है। पहले ऐसी बात नहीं थी। सैकड़ों भक्त गाँव-गाँव घूमते थे और लोगों के पास ज्ञान बिछाते थे। पुराने जमाने में ज्ञान-प्रचार की ऐसी योजना थी। अब से विश्वविद्यालय बने हैं, सारा ज्ञान-प्रचार ठप्प पड़ गया। वे स्थावर होते हैं, लेकिन ज्ञान विचार तो जंगम करते हैं। आज गाँव-गाँव में ज्ञान पहुँचाने की कोई योजना नहीं है। ग्राम-पंचायत का एक सदस्य ही होगा ज्ञान, जो सबके पास पहुँचेगा।

चौथा सदस्य : उद्योग

पंचायत का चौथा सदस्य होगा उद्योग। आज गाँव में कोई उद्योग नहीं है। केवल खेती के आधार पर हिन्दुस्तान के देहातों का काम कैसे चलेगा? देहातों में खेती के साथ पूरक धन्धे भी होने चाहिए। गाँव-गाँव में ग्रामोद्योग खड़े करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। कपड़ा हरएक की आवश्यकता की चीज है। हरएक को कम-से-कम १५ गज कपड़ा चाहिये। हजार आदमियों की आबादीवाले गाँव में १५००० गज कपड़ा चाहिए। यह ग्राम-पंचायत को तैयार करना चाहिए।

पाँचवाँ सदस्य : स्वच्छता

पंचायत का पाँचवाँ सदस्य होगा स्वच्छता। आदमियों की बस्ती स्वच्छ और निर्मल होनी चाहिए। जहाँ-तहाँ गन्दगी नहीं करनी चाहिये। शौच के लिए हम खुरपी लेकर जायँ और गढ़ा बना कर उसमें शौच करें। बाद में उसे मिट्टी से ढँक दें। फिर न तो गन्दगी होगी और न मक्खियाँ ही बैठेंगी। आज होता यह है कि मक्खियाँ शौच पर बैठती हैं और वे ही आकर आपके भोजन पर बैठती हैं, जिससे बीमारियाँ फैलती हैं। इन बीमारियों से गाँव वालों को कौन छुड़ायेगा? क्या सरकारी डाक्टर छुड़ायेंगे? नहीं। उनका सर्वोत्तम वैद्य होगा स्वच्छता। स्वच्छता हर बात की हो। पानी और घर की स्वच्छता, मल-मूत्र का ठीक विसर्जन तथा आँख, कान और सभी कपड़ों की स्वच्छता होनी चाहिए।

[मलनी, धारवाड़, २०-१-'५८]

अ. भा. सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी से हाल ही में प्रकाशित विनोबा की 'ग्राम-पंचायत' पुस्तिका से। पृष्ठ संख्या ८०, मूल्य ७५ नये पैसे मात्र।

स्वराज्य, ग्रामराज्य, रामराज्य

स्वराज्य का अर्थ है, सारे देश का राज्य। जब दूसरे देश की सत्ता अपने देश पर नहीं रहती है, तो स्वराज्य हो जाता है। लेकिन जब हर गाँव में स्वराज्य हो जाता है, तो उसे 'ग्रामराज्य' कहा जाता है। गाँव के सब लोग बुद्धिमान हैं, किसी पर शासन करने की जरूरत नहीं पड़ती है, ऐसी स्थिति को 'रामराज्य' कह सकते हैं। जब गाँव के झगड़े शहर के अदालत में जाते हैं और शहर वाले उनका फैसला करते हैं तो उसका नाम है गुलामी, दासता और परतंत्रता। गाँव के झगड़े गाँव में ही मिटाने का नाम है आजादी, स्वराज्य और स्वतंत्रता। और अगर गाँव में झगड़े ही नहीं होते हैं, तो उसका नाम है 'रामराज्य'। देश में स्वराज्य तो हो गया है, अब हमें ग्रामराज्य लाना है।

–विनोबा

[कोटीपाम, श्रीकाकुलम्, आंध्र ९-८-'५५]

दिल्ली का अणु-अस्त्र विरोधी सम्मेलन

सिद्धराज ढड्ढा

दिल्ली में ता० १६ से १८ जून तक जो अणु-अस्त्र-विरोधी सम्मेलन हुआ, वह कम-से-कम हिन्दुस्तान के लिए अपने ढंग की पहली घटना थी। अमरीका, जापान और योरोप के देशों में आणविक शस्त्रों के खिलाफ पिछले वर्षों में समय-समय पर आवाज उठती रही है, पर हिन्दुस्तान में यह पहला ही मौका था, जब कि इसी विषय की चर्चा के लिए राष्ट्रीय पैमाने पर खास तौर से कोई सभा बुलायी गयी हो। हालाँकि जैसा सम्मेलन के आयोजकों ने स्वयं जाहिर किया, यह सम्मेलन जल्दी-जल्दी में बुलाया गया था, और उस वजह से कुछ कमियाँ उसमें महसूस होना स्वाभाविक था; फिर भी इसमें कोई संदेह नहीं कि इस सम्मेलन की योजना करके गांधी-शांति प्रतिष्ठान ने ऐसा कदम उठाया है, जिसके लिए दुनिया के सामान्य जन को उसका कृतज्ञ होना चाहिए। यह बात केवल कहने के ढंग पर नहीं कही गयी है, पर इसके लिए विशेष कारण है। यों तो आज का युग एक उदबुद्ध युग (इनलाइटन्ड एज) माना जाता है। मनुष्य के ज्ञान का और उसकी जानकारी का दायरा बढ़ा है। वह ज्यादा उन्मुक्त हुआ है, ऐसा भी कहा जाता है। जनतंत्र का युग तो यह है ही। जो जन-तंत्र में विश्वास नहीं करते होंगे, वे भी दुहाई 'जन' की ही देते हैं। यह सब होते हुए भी आज से पहले कभी भी सामान्य जन की आवाज और उसकी अभिव्यक्ति इतनी कुण्ठित नहीं रही होगी, जितनी वह आज है। इस बात को जरा हम अच्छी तरह समझ लें। पहले के जमाने में भी सामान्य जन तो शायद आज की तरह ही बेजबान था। पर जिन चंद लोगों की ओर से विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्ति होती थी, वह अभिव्यक्ति बनावटी नहीं, बल्कि मानव-हृदय की सहज प्रतिक्रिया के रूप में होती थी। वह जन-मन की भावनाओं को और विचारों को प्रतिबिंबित करती थी। आज मानव की अधिकांश अभिव्यक्ति यंत्रित और उस माने में बनावटी हो गयी है। जिसके हाथ में केन्द्रित प्रचार के साधन हैं, उसी की आवाज, उसके विचार, उसी की भावनाएँ चारों ओर सुनाई देती हैं। केन्द्रित प्रचार के साधन इतने बलवान हो गये हैं कि उस नक्कारखाने में सामान्य जन की आवाज सुनाई देने की कोई गुंजाइश नहीं है। प्रचार के ये साधन उपलब्ध भी चंद लोगों को होते हैं। अखबार, सभामंच, रेडियो, टेलीविजन इत्यादि अभिव्यक्ति के जबरदस्त साधन आज निर्मित हुए हैं, लेकिन वे सबके लिए खुले नहीं हैं। चंद लोग ही उनका इस्तेमाल कर सकते हैं और उनकी आवाज के सामने दूसरे किसी की आवाज सुनाई नहीं दे सकती। सामान्य मनुष्य हैरान होकर देखता रहता है कि प्रचार के इन साधनों के जरिए जो कुछ कहा जाता है, वह कहा तो जा रहा उसके नाम से, लेकिन उसके मन की और उसके हित की बात के वह बिल्कुल विपरीत है। और वह बेचारा उसका प्रतिवाद भी नहीं कर सकता, क्योंकि प्रतिवाद के लिए भी तो अभिव्यक्ति के साधन चाहिये; जो उसको उपलब्ध नहीं हैं। और चारों ओर से जब एक ही तरह की बात सुनाई देती है, तो धीरे-धीरे सामान्य मनुष्य खुद भी यह मानने लगता है कि जो कुछ कहा जा रहा है, वह शायद उसी की बात है और उसके हित की है!

अणु-अस्त्रों के मामले में दुनिया में आज यही हो रहा है। सुनी-सुनाई या अनुमान की बात नहीं, लेकिन तथ्य पर आधारित और प्रत्यक्ष सबूत इस बात के मौजूद हैं कि आणविक अस्त्रों के प्रयोग और उपयोग सारी मानव-जाति के लिए घातक हैं, उसके प्रति भयंकर द्रोह और अपराध है। दिल्ली के अणु अस्त्र-विरोधी सम्मेलन के अवसर पर गांधी-शांति-प्रतिष्ठान की ओर से अधिकारी व्यक्तियों द्वारा लिखे गये जो बहुत से निबंध प्रकाशित हुए तथा श्री राजेंद्रबाबू, श्री राजगोपालाचार्य, राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन्, श्री जवाहरलाल नेहरू व बाहर से आये हुए अनेक जिम्मेदार व्यक्तियों और वैज्ञानिकों के भाषण हुए, वे इस बात के प्रमाण हैं। फिर भी पिछले पन्द्रह-बीस वर्षों से इन विनाशकारी शस्त्रों के निर्माण और प्रयोग की होड जारी है और इतना अनर्गल द्रव्य और साधन उसके पीछे खर्च हो रहे हैं, जिनका उपयोग अगर मानव-जाति की गरीबी, भूख और अभाव को मिटाने में हो तो ये सब चीजें एक बीते जमाने की यादगार-मात्र हो जा सकती हैं!

साधारण नागरिक के लिए यह सारा हैरानी का विषय है। जब दुनिया के समझदार और जिम्मेदार लोग-जिनमें खुद इन कामों में लगे हुए वैज्ञानिक और फौजी लोग भी शामिल हैं-अणु अस्त्रों और उनके परीक्षणों के परिणामों के बारे में करीब करीब एकमत हैं, तब फिर यह सारा भीषण व्यापार क्यों चल रहा है? कहने को तो यही कहा जा रहा है कि यह सब जनता के बचाव के लिए हो रहा है। पर जब बचाव की इस प्रक्रिया का नतीजा सर्वनाश ही होने वाला है, तब फिर 'बचाव' किसका? जरा गहराई से देखा जाय तो यह बचाव या सुरक्षा की बात एक खोखला बहाना मात्र है। असल में यह सारा वीभत्स खेल दुनिया के उन चंद लोगों की महत्वाकांक्षा और उनके आपसी अविश्वास, डर और आशंका का परिणाम है, जो सत्ता पर आरूढ़ हैं, या लड़ाई का सामान बनाने और बेचने के रोजगार के आधार पर जिन्होंने अरबों की संपत्ति और विश्वव्यापी औद्योगिक साम्राज्य खड़े कर लिये हैं। नागरिक और फौजी प्रशासन के बड़े-बड़े अफसरों, ऊँची-ऊँची तनख्वाह और असाधारण सुविधाएँ पाने वाले वैज्ञानिकों, छोटे-बड़े राजनैतिक कर्मियों और उद्योगपतियों के खास कारकूनों के हित भी इनके साथ जुड़े हुए हैं। पृथ्वी पर मनुष्यों की कुल आबादी के इन मुश्किल से २-४ प्रतिशत लोगों के स्वार्थ, लालच, महत्वाकांक्षा, आपसी होड और संघर्ष के कारण ही दुनिया में तबाही का यह ताण्डव चल रहा है और १०-१५ प्रतिशत दूसरे छोटे-बड़े नौकर-पेशा बुद्धिजीवी लोग, अहलकार, व्यापारी आदि मध्यम वर्ग के लोगों का स्वार्थ भी ऊपर के तबके के लोगों के साथ जुड़ा हुआ होने से इनका मानसिक समर्थन भी उन्हें प्राप्त है। इस प्रकार दुनिया के सिर्फ १५ से २० प्रतिशत बुद्धिजीवी अनुत्पादक वर्ग के स्वार्थ के खातिर सारी मानव-जाति आज तेजी से सर्वनाश की ओर बढ़ रही है। हालाँ कि उस संभावित सर्वनाश में उन १५-२० प्रतिशत का विनाश भी निहित है, पर आज का उनका जीवन और सुख-सुविधाएँ भी उस सर्वनाश की तैयारी पर ही निर्भर होने से वे आज के अपने जीवन की सुरक्षा के लिए संभावित सर्वनाश के खतरे को जानते हुए भी दरगुजर कर सकते हैं।

इस पर से यह स्पष्ट हो जायगा कि अणु-आयुधों के निर्माण और परीक्षण से मानव-जाति के अस्तित्व के लिए बढ़ते जाते खतरे के बावजूद उनके खिलाफ आवाज पूरे जोर के साथ क्यों नहीं उठ पा रही है। चूँकि प्रचार के अधिकांश साधन भी उसी वर्ग के नियंत्रण में हैं, जिसका हित लड़ाई का वातावरण बनाये रखने में और उसकी तैयारियाँ जारी रखने में है, इसलिए इन बातों के खिलाफ जनमत की अभिव्यक्ति और वातावरण बनना मुश्किल है। इस दृष्टि से दिल्ली का अणु-अस्त्र-विरोधी सम्मेलन मानव जाति के हितों की रक्षा और वास्तविक जनहित की अभिव्यक्ति के लिए उठाया हुआ एक महत्त्वपूर्ण कदम था। इस सम्मेलन की एक बड़ी विशेषता यह थी कि इसमें सरकारी क्षेत्र के बड़े-सब बड़े नेता न सिर्फ हाजिर थे, बल्कि उन्होंने इसमें सक्रिय हिस्सा भी लिया। हिन्दुस्तान की आजादी के बाद एक हिन्दुस्तानी गवर्नर-जनरल और मौजूदा को लेकर दो राष्ट्रपति अब तक हुए हैं। इन तीनों ने ही सम्मेलन में सक्रिय हिस्सा लिया। अभी हाल ही में निवर्तमान राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने तो सम्मेलन का उद्घाटन ही किया था। मौजूदा राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् ने भी सम्मेलन के उद्देश्य का समर्थन करते हुए भाषण किया। पहले भारतीय गवर्नर-जनरल श्री राजगोपालाचार्य तो इस सम्मेलन के प्राण ही थे। सम्मेलन की पूरी कार्रवाई को उन्होंने ही दिशा दी। भारत के प्रधान मंत्री और नेता पं० जवाहरलालजी अपनी सारी व्यस्तता के बावजूद शुरू से आखिर तक सम्मेलन में हाजिर रहे और उसमें भाग लिया, यह देश के और विदेश के सभी प्रतिनिधियों के लिए आश्चर्य और प्रेरणा का विषय था। उपराष्ट्रपति डा० जाकिर हुसैन का भाषण भी बहुत प्रेरणादायी हुआ। विज्ञान के विकास से पैदा हुई मौजूदा परिस्थिति में अहिंसा और शांति की अनिवार्यता का उन्होंने अच्छा प्रतिपादन किया। इस प्रकार सारी दुनिया में अब तक हुए चंद अणु-अस्त्र विरोधी सम्मेलनों में भी यह सम्मेलन पहला ही था, जो गैरसरकारी सूत्रों द्वारा आयोजित होने के बावजूद जिसमें स्थानीय सरकार के सब प्रमुख नेताओं का पूरा सहयोग था। विदेशों से आये हुए एक दर्जन निमंत्रितों में भी कम से-कम एक-लेबनान के श्री कमाल जुम्बलात-अपने देश की सरकार के गृहमंत्री थे। इसके अलावा अमरीका और रूस-दोनों प्रमुख प्रतिद्वन्द्वी राष्ट्रों के नागरिक भी शामिल थे। जहाँ तक भारतीयों का सवाल है, हालाँ कि सम्मेलन में शासक-दल की प्रमुखता ही नजर आती थी और शायद जल्दी जल्दी में आयोजित होने के कारण अहिंसक और शांतिमय समाज की दिशा में काम करनेवाले खास-खास लोगों की भी उसमें हाजरी नहीं थी, फिर भी कम्यूनिस्टों समेत सभी प्रमुख राजनैतिक दलों के लोग भी हाजिर थे। इन सब कारणों से दिल्ली के इस सम्मेलन के समाचारों को अखबारों में तथा रेडियो पर प्रचुर मात्रा में स्थान मिला। इतना ही नहीं, बल्कि इसके निर्णयों को एक विशेष महत्त्व और प्रतिष्ठा भी मिली।

(क्रमशः)

ब्रह्मसत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

प्रत्येक भारतीय शान्ती-सैनिक बने

" हम चाहते हैं की भारत का प्रत्येक समझदार मनुष्य अपने को शान्ती-सेना का सैनीक महसूस करे। अगर भारत ने यह दीक्षा दी की शान्ती से मसले सुलझते हैं, तो भारत की नैतीक शक्ती बहुत बढ़ेगी। यह सीर्फ 'शान्ती-शान्ती' का जप करने से नहीं होगा; क्योंकी यह तो शस्त्रास्त्र वाले भी कह रहे हैं। इसके लीये हमें भारतव्यापी योजना बनानी होगी। सारे भारत में इसका प्रचार करना होगा। हीन्दुस्तान को इस समय इसकी बहुत जरूरत है। यह समझने की बात है की हीन्दुस्तान के पास फौजी ताकत नगण्य है और जो कुछ है, उससे देश का अहीत हो सकता है। उससे देश का कोई लाभ होने वाला नहीं है। इसलीये अगर सेना हटा सकते हैं, तो हम सारे देश के लोग स्वराज्य-प्राप्ती के बाद कार्य करने की बात कर सकते हैं। लेकीन 'सेना हटा दो,' ऐसा कहने से कैसे चलेगा? इसकी जरूरत ही देश को नहीं है, यह हमें दीखाना होगा। यह जीम्मेदारी सारे भारत की है; लेकीन उसमें भी सर्वोदय को मानने वालों की वीशेष है। उनको इस वक्त एक आवाज से अहींसा और इस वीचार में अपने को शरीक करना चाहीये।

[कुन्नूर, धारवाड़,
१३-१-'५८] —वीनोबा

---

* लिपि-संकेत : ि = ी, ु = ू, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

भारत और स्वच्छता

श्री जयप्रकाश बाबू ने गत १४ जून को पटना में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि विदेशों की यात्रा से लौटने के बाद मेरी यह धारणा बनी है कि भारत 'गरीब और गंदा मुल्क' है। देश की गंदगी से व्यथित होकर आपने यह भी कहा बताया है कि यद्यपि मैं अधिनायकवाद का विरोधी हूँ, तथापि अगर अधिनायकवाद से देश स्वच्छ होता है, तो मैं उसका स्वागत करूँगा।

'गरीबी' और 'गंदगी', अब तक यह कहा जाता है कि दोनों जुड़वा बहनें हैं। किंतु यह धारणा अत्यंत भ्रामक है और गरीबी के साथ गंदगी रहे, यह कोई अनिवार्य भी नहीं है। जयप्रकाश बाबू ने अफ्रीका की यात्रा में देखा कि वहाँ के मुल्क भी गरीब हैं, किन्तु 'गंदे' नहीं हैं। गरीब लोग भी साफ-सुथरे, स्वच्छ रहते हैं। स्वच्छता सुघड़ जीवन की प्रक्रिया है। भारत में ऐसे अनेक उदाहरण मिल सकते हैं कि लोग रोजी-रोटी से मुँहताज हैं, किन्तु स्वच्छ और साफ सुथरे रहते हैं।

महात्मा गांधी ने सफाई के कार्यक्रम पर जोर दिया था और इस रूढ़ि को तोड़ने की सफल कोशिश की थी कि सफाई का काम कुछ ऐसे लोगों का काम है, जो समाज में सब प्रकार से गिरे और हेय हैं। गांधीजी की प्रेरणा से बड़े-बड़े पंडितों, मौलवियों और वकीलों ने झाड़ू उठाये, टट्टी-सफाई की, नालियाँ साफ कीं। जहाँ एक ओर बाह्य स्वच्छता का पाठ पढ़ाया, वहाँ दूसरी ओर अस्पृश्यता का कलंक भी धोने की कोशिश की। किन्तु हमें आज भी मानना होगा कि देश में अधिकांश लोग ऐसे हैं, जो परम्परागत संस्कार और गलत तालीम के कारण खुद सफाई करने की अपेक्षा गंदे रहना ही ज्यादा पसंद करते हैं।

पिछले १० सालों में विनोबाजी अपनी पदयात्रा के सिलसिले में जहाँ भी गये, वहाँ उन्होंने स्वच्छता के कार्यक्रम पर यथाशक्य जोर दिया। उनका 'स्वच्छ काशी' और 'स्वच्छ इन्दौर' अभियान तो काफी प्रसिद्ध भी हो चुका है। किन्तु हम लोग कितने आलसी और अकर्मण्य हैं! विनोबा जैसे व्यक्ति के साथ या कोई खास अवसर पर 'सफाई का नाटक' अवश्य कर लेते हैं, फिर लम्बी कुम्भकर्ण की नींद लेते हैं।

अगर हम सचमुच अपने देश को साफ-सुथरा और सुन्दर बनाना चाहते हैं, —क्योंकि बिना स्वच्छता के सौन्दर्य खिल नहीं सकता— तो हमें नियमित सफाई की आदत डालनी चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति १५ मिनट रोज सफाई करे। इसके लिए सुप्रसिद्ध लोकसेवक अप्पा साहब पटवर्धन ने 'पन्द्रह मिनट रोज सफाई करो' का नया नारा दिया। एक संस्था भी खड़ी की है—'भारत सफाई मंडल'। जो व्यक्ति १५ मिनट रोज सफाई करते हैं, चाहे वे आवास में हों, या प्रवास में तो वे भारत सफाई मण्डल के सदस्य हो सकते हैं। अभी सदस्यों की संख्या नगण्य है, किन्तु प्रयत्न क्रांतिकारी है।

हमारा घर, हमारा मोहल्ला, हमारे गाँव और शहर तथा हमारा देश स्वच्छ और सुन्दर बने, यह कौन नहीं चाहेगा! किन्तु इसके लिए हमें गहरा प्रयत्न करना होगा। आलस्य और तन्द्रा छोड़नी होगी। व्यर्थ बाबूगिरी की शान को ताक में रखना होगा, श्रम को प्रतिष्ठित करना होगा। इसके लिए आवश्यक वातावरण और सफाई का संस्कार देश में लाना होगा। जितनी हमारी शिक्षण-संस्थाएँ हैं, उनमें सफाई के लिए १५ मिनट का कार्यक्रम रखा जा सकता है। इससे वहाँ भंगी-मुक्ति के साथ देश की नयी पीढ़ी को सफाई के लिए नियमित तालीम भी मिलेगी। हमें अपने औजारों में, अपनी आदतों में, अपने जीवन में चारों ओर से परिवर्तन करने होंगे। अगर हम यह सब करते हैं, तो हमारा प्यारा देश साफ और सुन्दर होगा। अन्यथा हम हमेशा गंदे देश के नागरिक कहलाते रहेंगे।

—मणीन्द्रकुमार

कुरस्य धारा

पश्चिम रेलवे के एक छोटे-से स्टेशन पर कुछ घंटे बैठना पड़ा। स्टेशन के पीछे स्टेशन पर काम करने वाले मजदूरों के क्वार्टर थे। गाड़ी आने में शायद देर थी। वातावरण शांत था। अड़ोस-पड़ोस में रहने वाली दो स्त्रियाँ एक-डेढ़ साल के बच्चे से खेल रही थीं। बच्चा और भी कई लोगों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ था। दूर एक दीवार पर बैठा हुआ 'पोइंटसमेन' बच्चे को देख कर मुस्करा रहा था। बीच-बीच में वह बच्चे को अपने पास आने का इशारा भी करता था। लेकिन स्त्रियाँ उसे अपने पास से छोड़ना नहीं चाहती थीं। आखिर उनमें से एक स्त्री ने, जो शायद बच्चे की माँ थी, कहा—'उसका बाप इतनी देर से बुला रहा है, तो जरा दो न उसे भी!' दूसरी स्त्री ने बच्चे को उठाया और 'पोइंटसमेन' की ओर बढ़ते हुए कहा, 'लो भाई, तुम्हारा मुन्नू। मैं उसे थोड़े ही उठाये जा रही थी!' उसी समय स्टेशन पर एक घंटी बजी। कर्मचारी को बुलाने की वह निशानी थी। घंटी को सुनते ही बच्चे को लेने के लिए आगे बढ़े हुए, हाथ रुक गये और वह पोइंटस-मेन चल दिया!

जिम्मेवारी के सामने परिवार से खेल गौण बन गया। बरसों से पोइंटसमेन यही काम कर रहा है। रोज उस लाइन से जाने वाले हजारों यात्रियों की जान इस आदमी के जिम्मेवारी से काम करने पर निर्भर है। यह ठीक है कि रेलवे की व्यवस्था भी ऐसी है कि गलती कम हो, लेकिन इस शख्स में जिम्मेदारी होना भी जरूरी है। अभी तक उस स्टेशन पर एक भी 'एक्सीडेंट' नहीं हुआ है। हमारे सामान्य मानव की जिम्मेवारी देश के बहुत सारे कार्य को वहन किये हुए हैं।

आन्दोलन की रेल के हम सभी कर्मचारी हैं। कोई पोर्टर है, कोई पोइंटसमेन, कोई गार्ड, कोई इंजिन ड्राइवर। हमसे भी कम-से-कम उतनी ही जिम्मेवारी की अपेक्षा है, जितनी एक पोइन्टसमेन से।

—नारायण देसाई

महिलाएँ प्रेम-शक्ति प्रकट कर सकती हैं !

विचारों को जीवन में लाने की योजना न हो, तब तक उनकी शक्ति प्रकट नहीं होती।

कानून से पुलिस द्वारा दंड शक्ति, तलवार बंदूक से हिंसा शक्ति, बम से संहार-शक्ति, इन तीन शक्तियों के अलावा चौथी शक्ति है, वह है प्रेमशक्ति। दुर्जनों और द्वेषी को प्रेम से, क्रोधी को शान्ति से, कंजूस को दान से जीतना चाहिये। वेद, ईसा, बुद्ध और गांधी ने यही कहा है। मैं भी प्रेम की बात कहता हूँ। पारिवारिक प्रेम का प्रयोग गाँव में करना है।

प्रेम हृदय में है। वह जीवन में प्रकट होना चाहिये। बुराई का प्रतिकार भलाई से, यह विचार अच्छा लगता है। लेकिन उस पर अमल करना है। प्रेम से मसले हल होते हैं तो दंड, हिंसा या संहार की जरूरत नहीं रहती, क्योंकि प्रेमशक्ति बलवान बन जाती है। व्यवहार प्रेम से भरा हुआ, परस्पर विश्वासपूर्ण होना चाहिये। प्रेम से जीवन में स्वाद, मिठास, रुचि और मधुरता आती है। लेकिन प्रेम की शक्ति प्रकट करने के लिए महिलाओं की विशेष जिम्मेदारी है। वे प्रेम और करुणा से रक्षण और शान्ति कर सकती हैं।

[असम यात्रा, ता० १६-६-६२] —विनोबा

कुरान की कहानी, मियाँ की जुबानी

अच्युत देशपांडे

'कुरान-सार' के अन्त में स्वर्ग का लाभ और उससे अधिक प्रभु-कृपा का अनन्त विस्तार आपके सामने खड़ा किया जाता है : "मेरे पास स्वर्ग से बहुत ही अधिक है।" कुरान शरीफ के इस प्रभु-प्रसाद को बाँटते हुए रूहुल कुरान के इस संपादक (विनोबा) ने हम पर बहुत उपकार किये हैं।

इस चयन में विनोबाजी ने स्वर्ग के विषय पर विस्तार से अवतरण लिये हैं। बहुत-से लोग मानते हैं कि बेहिश्त और दोजख ये बच्चों को या बालवत् समाज को समझाने की बातें हैं, पर विनोबाजी मानते हैं कि वे उतने ही वास्तव हैं, जितना हमारा जीवन वास्तव है और इसीलिए उन्होंने कुरान के इस विषय को छोड़ा नहीं, ऐसा माना जा सकता है। 'गीताई चिन्तनिका' में उन्होंने इस विषय की विशेष रूप से व्याख्या की है, वह देखने लायक है।

कुरान मानता है कि मृत्यु के बाद की ही यह अवस्था है। विनोबाजी भी मानते हैं कि ऐसा ही है। पर हाँ, यहाँ भी हम स्वर्ग या नर्क पैदा कर सकते हैं, ऐसा यदि कोई माने तो विनोबाजी उसे गलत नहीं समझेंगे। नहीं तो भी स्वर्ग और नरक की वास्तविकताओं में जीवन की यहाँ की वास्तविकताओं का सादृश्य तो हो भी सकता है। पर वह स्थिति मृत्यु के पश्चात् की अनुभूति ही है, इसमें आशंका की कोई जगह नहीं है।

कुरान की नैतिक व्यवस्था

पंच महाव्रतों को विनोबाजी ने 'कुरान-सार' में कुरान के आधारसे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। "फलौ दानं च नाम च", इस विचार का आजकल सतत प्रचार करने वाले भूदान प्रणेता विनोबाजी ने 'कुरान-सार' में दान प्रकरण के लिए भी महत्त्वपूर्ण जगह दी है। सूद को कुरान ने नाजायज माना है। इस विषय पर जितने महत्त्वपूर्ण अवतरण हैं, उन्हें विनोबाजी ने 'कुरान-सार' में उद्धृत किया है। ब्याज सर्वथैव त्याज्य है, ऐसा ही विनोबा मानते हैं। पर उसके आचरण के लिए आज की समाज-व्यवस्था बदलनी होगी, यह स्पष्ट ही है। ग्रामदान द्वारा जिस समाज-रचना की स्थापना के लिए विनोबा प्रयत्नशील हैं, वह ऐसा समाज है, जिसमें सूद के लिए स्थान ही नहीं होगा। इस विषय में कुछ लोग बीच की राह निकालना चाहते हैं और उस पर तरह-तरह की बहस करते हैं, पर हमारा ख्याल है कि कुरान में सभी प्रकार के सूद नाजायज माने हैं।

रहीम की इताअत

चयन के समय कई बार आयतों में से एक अंश ही लेना पड़ता है, क्योंकि विषय से उतना ही वह संबंधित होता है। कुछ मुस्लिम इसको पसन्द नहीं करते कि आयत टूटे। यह सब उनसे किसी ने कहा तो वे बोले—देखो, इस्लाम का अर्थ है शान्ति+हरिशरणता; यह जिसमें है, वह मुस्लिम है। यदि तुम शान्ति+हरिशरणता के उपासक हो, तो तुम भी मुस्लिम हो। विनोबा की यह तब्लीग—ईश्वर के पास पहुँचाना—कितनी प्यारी और समवायी है। शांति के लिए प्रयत्न करना आज के जमाने में तो भी सबका ही जीवनोद्देश्य होना चाहिए यह स्पष्ट ही है। हरिशरणता (रहीम की—रहमत की—इताअत) उसका मुख्य साधन है, यह विनोबा के अनुभव की बात दीखती है।

'कुरान सार'-के विभाग

'कुरान-सार' के विषय में यह थोड़ी-सी जानकारी देने के बाद अब हम 'कुरान-सार' के विभागों की तफसील देख लें। उनके प्रारंभ में उस पुस्तक का ग्रंथ-प्रवेश है, फिर अल्ला, इबादत (भक्ति), आबिद (भक्त), धर्म, नीति, मनुष्य, प्रेषित (रसूल) और गूढ़ प्रवेश, ये ९ विभाग हैं। इसमें ३० अध्याय बनाये गये हैं और इन अध्यायों में प्रकरण हैं ९०। ग्रंथ-प्रवेश में मंगलाचरण (अलफातिहा) और जलाले किताब (ग्रंथ-गौरव), ऐसे दो अध्याय हैं—जलाले किताब में जियाए किताब (ग्रंथप्रकाश), किफायते किताब (ग्रंथ-स्वरूप) और तरीके तलावते किताब (ग्रंथ-पठन विधि), इस प्रकार तीन बाब हैं।

अल्ला

इसके बाद "अल्ला", यह विभाग शुरू होता है। इसमें शुरू में एक और बेमिसाल (एकमेवाद्वितीयम्), यह पहला अध्याय है और एक और अद्वितीय (तौहीद और शरीकों की नफी), ये दो उसके प्रकरण हैं। उसके बाद आता है प्रभु का स्वरूप—ज्ञानमय (अलीम)। इसमें ईश्वर प्रकाशस्वरूप और सर्वज्ञ, ऐसे दो प्रकरण आते हैं। इसके बाद उसकी करुणा का दर्शन कराया जाता है और उस रहीम अध्याय में कृपालु (रहमान) और ईश्वर की देनें (नियामतें), ये दो प्रकरण हैं।

इसके बाद उसका अनन्त कर्तृत्व आता है और इस कर्ता (खालिक) अध्याय के सृष्टि-निर्माता, सुन्दर रचना और ईश्वरी निशानियाँ, इस प्रकार तीन प्रकरण किये गये हैं। इसके अनन्तर ईश्वर-शक्ति का वर्णन आता है और उस अध्याय में सर्व-शक्ति (कादिरमुतलक), इच्छा-समर्थ (मुख्तारे-कुल) और उसकी अवर्णनीयता का जिक्र आता है। फिर हम अल्ला का नाम-स्मरण (जिक्र) करते हैं और उसके साक्षात्कार (तालीमेगैबी) का ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। आखिर में अल्ला की दुआ करके यह विभाग समाप्त हो जाता है।

भक्ति एवं भक्त

इसके आगे उस परमात्मा की हम भक्ति कर रहे हैं। इस भक्ति विभाग में भक्ति, सत्संग और अनासक्ति, ऐसे तीन अध्याय हैं और भक्ति में प्रार्थना का आदेश, सश्रित भगवत्पूजा, निष्ठा, त्याग एवं समर्पण, कसौटी तथा आश्वासन और सब्र; ये पाँच प्रकरण हैं। सत्संग अध्याय में वही प्रकरण है और अनासक्ति में दुनिया की असारवत्ता का भान और वैराग्य, ये दो प्रकरण हैं। इसके बाद भक्त की व्याख्या शुरू होती है। इसमें भक्त और अभक्त, दोनों के वर्णन से विषय पूरा होता है और इसलिए इस विभाग में ये दो अध्याय हैं—भक्त के सुलक्षणों में उनके अनेक पहलू, उनका उपासकत्व, उनकी निष्ठा, सहनशीलता, अहिंसा वृत्ति, दातृत्व का वर्णन देते हुए अन्त में उन्हें देवदूतों से जो आशीर्वाद प्राप्त होते हैं, उनका जिक्र करके हम भी ऐसे आशीर्वाद की अपेक्षा रखें, इसका सूचन हुआ है। इसके बाद अभक्तों के अवलक्षण समझाये गये हैं। वे अविश्वासी होते हैं, उल्टी बुद्धि रखने वाले होते हैं (उनका दर्शन विपरीत होता है), इसकी जानकारी देकर उनके कर्म कैसे विफल होते हैं, यह दिखा कर उनकी दुर्गति का दृश्य सामने खड़ा किया जाता है। और भक्त तथा अभक्त, इस प्रकार अन्वय और व्यतिरेक—"पाजिटिव-निगेटिव"-दोनों रीतियों से इस विषय का वर्णन पूरा किया जाता है।

धर्म एवं नीति

अब धर्म-निष्ठा एवं नीति का विभाग शुरू होता है। उसमें वही अध्याय है और धर्म-तत्त्व, धर्म सहिष्णुता और धर्म-विधि, ऐसे तीन प्रकरण हैं। इसके अनन्तर नीति-विचार शुरू होता है। इसमें नीति विषयक पंच महाव्रत, नैतिक उपदेश और सामाजिक सदाचार, ऐसे तीन विषय आते हैं। व्रतों में सत्य से प्रारम्भ है और उसमें सत्यासत्यविवेक, यह प्रकरण आता है। उसके बाद सत्य का एक साधन वाचा-शुद्धि, इसका एक अध्याय हुआ है और उसमें सत्यशपथ और मंगलवाणी, ये दो प्रकरण आते हैं। इसके आगे अहिंसा, ब्रह्मचर्य, रसनाजय और अर्थशुचित्व, ये चार व्रत आते हैं। अहिंसा के प्रकरण हैं: (१) न्याय, (२) न्याय से क्षमा श्रेष्ठ, (३) सहकार, (४) दुर्जनों से असहकार और (५) अनिवार्य प्रतिकार। इसके बाद रसनाजय में अस्वाद का वर्णन आता है और पावित्र्य (ब्रह्मचर्य) में वही एक प्रकरण है। अर्थशुचित्व में अस्तेय और असंग्रह है। असंग्रह में कृपणता का निषेध और दान-प्रवाह का गौरव आता है। उसके पश्चात् सर्वसामान्य सामाजिक नीति-शिक्षा और सदाचार का वर्णन करके यह विषय समाप्त किया है। नीति-शिक्षा में चित्त-शक्ति का पहले दर्शन करा कर फिर नैतिक उपदेश आया है, यह भी ध्यान रखने की बात है।

मनुष्य

अब आगे मनुष्य की विशेषताओं और विगुणताओं का वर्णन आता है। इस विभाग में विशेषता और विगुणता, ये दो अध्याय हैं और विशेषता में वही एक प्रकरण है और विगुणता में उसकी कमजोरियों और दोषों के प्रति उसका झुकाव। उसकी कृतघ्नता का वर्णन करके अन्त में एक प्रकरण में यह दिखाया है कि मनुष्य जब 'भलाई' में विश्वास करता है, तब वह आस्तिक माना जाय और भलाई—सुजनता—में अविश्वास करता है, तो वह नास्तिक माना जाय। यह इसकी प्रवृत्ति ही इसको इन्सान या शैतान बना देती है, इसका ज्ञान कराकर फिर हम रसूलों के सान्निध्य में पहुँचाये जाते हैं।

प्रेषित

इस विभाग में दो अध्याय हैं—महम्मद-पूर्व प्रेषित और महम्मद। महम्मद-पूर्व प्रेषितों में प्रारम्भ में सभी रसूलों के सर्वसामान्य सद्गुणों का वर्णन आया है—वे सर्वजनहिताय काम करते हैं और मनुष्यों में मनुष्यों की हैसियत से ही काम करते हैं, इसकी जानकारी देकर आगे उनकी गुणविशिष्टताओं का कीर्तन किया गया है। इसके बाद ये कथाएँ आपको क्यों कही जा रही हैं, इस विषय का उपक्रम करके पैगम्बरों में से चार का जिक्र इस अध्याय में आता है—नूह, इब्राहीम, मूसा और ईसा। ईसा के साथ उसके गुरु जॉन और उसके चेलों की विशेषताओं का भी जिक्र आया है।

प्रेषित महम्मद

अब रसूल महम्मद की तरफ ध्यान खींचा जाता है। इस अध्याय में सबसे पहला प्रकरण है—महम्मद को ईश्वर का बोध। बोध से बोधित होकर महम्मद ईश्वर के आदेश से धर्म की घोषणा करते हैं। इस धर्म के अनुष्ठान के कारण उनमें जिस गुण-सम्पदा का आविष्कार हुआ, उन गुणों का वर्णन करते हुए अगले प्रकरण में उनके जीवनकार्य की रूपरेखा बतादी

मध्य प्रदेश नशाबन्दी सम्मेलन

> विभिन्न योजनाओं से हमारी आमदनी तो बढ़ रही है, किन्तु हमारी उस आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा बह जाता है ! ... मैं योजना-आयोग की बैठक में कहता हूँ कि जिस घड़े को भरते हैं, वह नीचे से फूटा हुआ है। राष्ट्रीय आमदनी तो बढ़ गयी है, लेकिन छिद्र कितना बड़ा है, उसका हिसाब नहीं है।
>
> —श्रीमन्नारायण

खुशालसिंह

इन्दौर में गत २० मई, '६२ को मध्यप्रदेश नशाबन्दी सम्मेलन राज्य के मुख्य मंत्री श्री भगवन्तराव मण्डलोई की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। सम्मेलन के मुख्य अतिथि योजना आयोग के सदस्य श्री श्रीमन्नारायण और मुख्य मंत्री के अलावा राज्य के वित्तमंत्री, प्रमुख नागरिकों एवं विभिन्न जिलों के प्रतिनिधियों ने भी सम्मेलन में भाग लिया था।

स्वागताध्यक्ष श्री एन० डी० जोशी ने आगत जनों का स्वागत करते हुए निम्न बातों पर जोर दिया :

(१) जो भी व्यवसाय समाजहित का विरोधी हो, उसे राज्याश्रय नहीं मिलना चाहिए।

(२) सामाजिक अहित करने वाले व्यवसाय में लगे लोगों को व्यापार-जगत् में मान, सामाजिक प्रतिष्ठा तथा राजनीतिक पद नहीं दिया जाना चाहिए।

(३) मद्य-रोगियों पर सामाजिक बन्धन होना चाहिए कि वे अपनी छूत दूसरों को न लगा पायें। इन रोगियों में आजकल के पढ़े लिखे माने जाने वाले, पैसे वाले और ओहदेदार लोगों का बड़ा दल है। ऐसे लोगों को सार्वजनिक व्यवस्था के पद नहीं दिये जाने चाहिए। इन सब रोगियों के उपचार की व्यवस्था की जानी चाहिए।

सम्मेलन के मुख्य अतिथि श्री श्रीमन्नारायण ने कहा :

"शराबबन्दी के सवाल पर नैतिक और आर्थिक दृष्टि से विचार करना उतना जरूरी नहीं है, जितना आर्थिक और योजना की दृष्टि से शराब की आदत हमारी जड़ें खोद रही है। विभिन्न योजनाओं से हमारी आमदनी तो बढ़ रही है, किन्तु हमारी उस आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा शराब में बह जाता है। अमीर पीते हैं, उसका हमें दुःख नहीं। उनका पीना मुबारक हो, किन्तु गरीबों का पीना दर्दनाक है। मैंने दुर्गापुर में देखा कि मजदूरों को अच्छा वेतन मिलता है, बस्ती भी वहाँ अच्छी बनी हुई है, किन्तु कारखाने के साथ शराब की चार पाँच दुकानें भी पहुँच गयी हैं। मजदूरों को जिस दिन वेतन मिलता है, उसी दिन उस वेतन का ४० प्रतिशत बह जाता है। आमदनी बढ़ने पर भी मजदूरों की पहले जैसी हालत थी वैसी अब नहीं रही। यही हाल केरल में भी देखा। केरल में मछुए बहुत हैं। हमने करोड़ों रुपया दिया है। किन्तु उनकी गरीबी देख कर जब मैंने पूछा कि क्या बात है, तो पता चला कि कमाते हैं और शराब में बहाते हैं। यही हाल कोरापुट का है। वहाँ के जिलाधिकारी कह रहे थे कि जब तक शराबबन्दी नहीं होती हम कितना ही बाँटें, काम नहीं होगा। अहमदाबाद में भी यही हाल है। मैं योजना-आयोग की बैठक में कहता हूँ कि हम जिस घड़े को भरते हैं, वह नीचे से फूटा हुआ है। राष्ट्रीय आमदनी तो बढ़ी है, लेकिन कितना बड़ा 'छिद्र' है, उसका हिसाब नहीं है।

कुछ लोगों का कहना है कि शराबबन्दी का काम धीरे धीरे होगा। यह बड़ी अजीब बात है। केन्द्रीय शराबबन्दी समिति की ओर से मैं सारे देश में घूमा हूँ। कई डाक्टरों से बातचीत हुई। उनकी साफ राय है कि शराब धीरे धीरे कभी नहीं छूटती। इसे सत्याग्रह करके एकदम छोड़नी चाहिए। यह संकल्प शिक्षण संस्थाएँ करवा सकती हैं, आप लोग भी करवा सकते हैं। यह काम पुलिस के डंडों से नहीं हो सकता। इसके लिए 'फेज्ड प्रोग्राम' होना चाहिये।

शराब के सम्बन्ध में एक चीनी कहावत मैं बार बार दुहराता हूँ— 'पहले मनुष्य शराब को पीता है, फिर शराब शराब पीती है और फिर शराब मनुष्य को पीती है !' (फर्स्ट मैन टेकस ड्रिंक, देन ड्रिंक टेकस ड्रिंक, एण्ड देन ड्रिंक टेकस दि मैन) कहने का आशय यह है कि शराब धीरे-धीरे छोड़ने का काम नहीं है, एकदम छूटनी चाहिए। हाँ, जो पियक्कड़ हैं और वे एकदम न छोड़ सकें तो उन्हें दवाई के रूप में दी जानी चाहिए, जिससे सुस्ती वगैरह आती है, वह दूर हो। ऐसे मामलों में सहानुभूति बरतनी होगी। यह काम पुलिस नहीं कर सकती। यानी सरकार केवल पुलिस के बल पर सफल नहीं हो सकती। वह तभी सफल हो सकती है, जब कि हजारों कार्यकर्ता शराब पीने वालों से मिलें, समझायें, उनसे दस्तखत करवायें, प्रतिज्ञा करवायें। वे समझ जायेंगे। इस काम को जितना भाई लोग नहीं कर सकते उतना बहनें कर सकती हैं, क्योंकि बहनें तो माताओं और बहनों से भी मिल सकती हैं।

कोई यदि कहे कि इसे सब लोगों का समर्थन नहीं है, तो यह गलत है। जब मैं संसद का सदस्य था, तब एक अशासकीय प्रस्ताव पेश किया गया था। उसका सबने समर्थन किया था, कम्युनिस्ट भी उसमें शामिल थे। कुछ दिन पहले मैं भीलवाड़ा गया था। वहाँ लोगों ने काम किया है। वहाँ सभी पार्टियों ने कहा है कि शराबबन्दी होनी चाहिए। वहाँ मैंने कहा था कि जो नाजायज शराब बनती है, वह तभी रुक सकती है, जब हम घर घर प्रचार करेंगे, लोगों से मिलेंगे और समझायेंगे। इसके लिए दिसयों दिसयों में हम कार्यक्रम बनायें। पहले हम भीलवाड़ा की तहसील लें और प्रयत्न करके दिखायें कि उसमें कोई शराब की दूकान पर न जाय। वहाँ लोग जोर से काम में लगे हैं।

शराबबन्दी का सवाल मुख्यतः आर्थिक है। हमने बड़ी भारी योजना बनायी है। उस योजना में 'एक्साइज' की आमदनी भी शामिल है। 'एक्साइज' से सरकार को लगभग ४० करोड़ रुपया मिलता है। सरकार की एक रुपये की आमदनी के लिए पीने वाले को चार रुपया खर्च करना पड़ता है, यानी गरीबों का इस काम में करीब १६० करोड़ रुपया खर्च होता है। यदि यह रकम शराब पर न खर्च होकर खाने-पीने, पहनने ओढ़ने में खर्च हो तो उससे गरीबों का रहन-सहन अपने-आप कितनी ऊँची उठ सकती है, इसका नमूना बम्बई मद्रास की मजदूर बस्ती में जाकर आप देख सकते हैं। यह आमदनी आपको बजट के कागजों में तो नहीं बढ़ती दिखाई देगी, किन्तु फिर भी मजदूरों का जीवन देखेंगे, तो आपको खाने-पीने, पहनने-ओढ़ने, रहन सहन में फर्क दिखाई देगी। उनके चेहरे आपको चमकते दिखाई देंगे।

शराबबन्दी एक 'प्लानिंग' समस्या है। योजना-समिति के सदस्यों ने इस पर सब पहलुओं से विचार किया है, उन्हें भी यह 'लीकेज' दिखाई दिया है और उन्होंने स्वीकार किया है कि देश की गरीबी मिटाना है। यदि देश की आर्थिक उन्नति करनी है, तो इस 'लीकेज' को बन्द करना होगा और इसलिए उन्होंने इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए सब राज्यों से आग्रह किया है और उसमें जो भी घाटा होगा, उसकी पूर्ति के रूप में आधा केन्द्र से देने का निर्णय किया है। अब आगे यह राज्यों की जिम्मेदारी है। आज राज्य यद्यपि आगे-पीछे देख रहे हैं, किन्तु वे देखेंगे कि जिन राज्यों ने मद्यनिषेध योजना लागू की, उससे उन्हें कोई घाटा नहीं हुआ है, उल्टे उन राज्यों की आमदनी बढ़ी है। क्योंकि शराब न पीने से उन लोगों के पास जो बचत होती है, वह कई तरीकों से जीवनोपयोगी विशेष सामग्री खरीदने के कारण सेल्सटैक्स, मनोरंजन कर आदि के रूप में सरकार के पास पहुँचती है। आप देखेंगे कि मद्यनिषेध से मद्रास सरकार की आमदनी बढ़ी है, घटी नहीं। वहाँ सहकारी आंदोलन बढ़ा है।

अतः मेरी प्रार्थना है कि मद्यनिषेध को सभी कार्यक्रमों में प्राथमिकता दी जानी चाहिए। हमें 'फेज्ड प्रोग्राम' बनाना चाहिये। इसके लिए हमारे सामने आर्थिक समस्या खड़ी होती है। किन्तु आज हम समाज कल्याण के कार्यक्रमों में, आदिवासी विभाग में, शिक्षा विभाग के समाज शिक्षा आदि कामों में जितना पैसा लगाते हैं, उसे कम करके नशाबन्दी कार्यक्रम में लगा सकते हैं। यह काम बुनियादी है। इसके बिना हमारी उन्नति नहीं होगी।"

अन्त में उन्होंने कहा : "फिर भी यह काम बगैर कानून से नहीं होगा। कानून तो बने, किन्तु सच्ची जिम्मेदारी सार्वजनिक कार्यकर्ताओं की है—विशेषकर बहनों से इसमें बहुत मदद ली जा सकती है।"

(क्रमशः)

गयी है। उनके लिए आशीर्वाद माँगो, इस ईश्वरीय आदेश की याद दिला कर इस अध्याय से आगे बढ़ा गया है।

गूढ़ प्रवेश

इसके बाद अन्तिम विभाग गूढ़ प्रवेश आता है। इसमें तत्त्वज्ञान, कर्मविपाक और साँपराय, ऐसे तीन अध्याय हैं। तत्त्वज्ञान में जीव जगत् और अंतर्यामी का जिक्र है और कर्मविपाक में (१) कर्मविपाक विषयक मूलभूत श्रद्धा, (२) कर्मविपाक अपरिहार्य और (३) मरने के बाद भी कर्म टलता नहीं, ये प्रकरण आते हैं। साँपराय में पुनरुत्थान अटल है, इसका विश्वास दिला कर आपको अन्तिम दिवस की जानकारी दी जाती है।

इसके बाद स्वर्ग-नरकादि व्यवस्था समझायी जाकर शांति मंत्र के द्वारा इस स्वर्ग में प्रवेश करने के लिए तथा ईश्वर के नेकबन्दों में शामिल होने के लिए जो प्रार्थना की जाती है उसका प्रकरण आया है। अन्त में स्वर्ग का लाभ और उससे अधिक प्रभुकृपा का अनन्त विस्तार आपके सामने खड़ा किया जाता है : "मेरे पास स्वर्गों से बहुत ही अधिक है।" कुरान शरीफ के इस प्रभुप्रसाद को बाँटते हुए स्थूल कुरान के इस संपादक ने हम पर बहुत उपकार किये हैं। स्पष्ट है कि पुस्तक में कुरान शरीफ के केवल अवतरण हैं। पर प्रकरणों में इन अवतरणों की रचना देख कर हम स्तम्भित हो जाते हैं और यही उद्गार हमारे मुँह से अनायास निकल जाता है कि—हे प्रभो! अपनी कृपा तू जिस पर करना चाहता है, उस पर करता है। हम भी प्रभु प्रार्थना करें कि वह प्रभु हम पर भी कृपा करें।

(क्रमशः)

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

"भैंस की गाड़ी नाले में उलट गयी,"—किसी ने आकर कहा।

भीगे हुए यात्रियों में हलचल मची। 'क्या हुआ?', 'सामान भीग गया?', 'ऐसे कैसे हुआ?' आज रास्ते में बारिश ने अच्छी तरह से साथ दिया। रास्ते में एक छोटा नाला था, वह पार करना पड़ा। पानी का बहुत जोर था। एक-दूसरे की सहायता से हम लोग तो नाले पार करके अगले पड़ाव पर पहुँच गये। लेकिन हमारा सामान ढोकर लाने वाली वे भैंसें, मूक जीव—उनकी कौन सहायता करेगा? जानवर तो मानव पर करुणा कर रहे थे, लेकिन मानव का हृदय उनके प्रति करुणाशून्य था!

पानी के वेग से गाड़ी उलट गयी। करीब ग्यारह बजे सामान पड़ाव पर पहुँचा। तब तक आधे कपड़े तो शरीर पर ही सूख गये थे। और सामान-बिस्तरा उठाया, तो उसमें से पानी के बूँद टपटप गिरने लगे! बिस्तरे, कपड़े सब जलमय हो गये थे! एक घंटे के अंदर ही पड़ाव का रूप बदल गया। कमरों में ऊपर रस्सियों के छत बने और उन पर धोतियों के परदे लटकने लगे। जमीन पर गीली किताबें और कागज सूख रहे थे। दिन भर पर्जन्यराज बरसता रहा, लेकिन शाम को हमेशा की तरह उसने अपने सेवकों को आज्ञा दी कि अब खेल बंद करो, बाबा का प्रवचन होगा, लोगों को वह अमृतवाणी सुनने में तकलीफ न हो। सेवकों ने अपनी-अपनी पिचकारियाँ बंद कर लीं।

आजकल रोज बारिश हो रही है। सुबह लगता है कि बारिश न आवे, रास्ते खराब होंगे। रात को लगता है कि बारिश न आवे, कहीं ऊपर से पानी अंदर आयेगा तो सारी रात बैठ कर गुजारनी पड़ेगी। दूसरे ही क्षण बाबा की बात याद आती है। बाबा कहते हैं, 'बचपन में मैं छाता इस्तेमाल नहीं करता था। कॉलेज में जाते समय किताबें भीगने का डर रहता था, तो सोचता कि बारिश न आवे तो अच्छा होगा। फिर सोचता था कि बारिश से इस वक्त दुनिया का भला होता होगा, तो तुम्हारी किताबों की क्या कीमत है! ऐसा सोच कर मैं दौड़ने लगता था।'' हम भी मेघराज से यही कहते हैं—'बरसो रे बरसो, हमें कुछ दिक्कत नहीं, हम नाचते-नाचते जायेंगे।' और वाकई, बारिश में फिसलने वाले उन रास्तों पर से नाचते-नाचते ही जाना पड़ता है।

* * *

ऐसी जोरदार बारिश में भी ग्रामदान मिल रहे हैं। लोग भागते भागते आते हैं और ग्रामदान देते हैं। बाबा कहते हैं, "देखो, हम चल रहे हैं, इसलिए ऐसी बारिश में भी ग्रामदान मिल रहे हैं। हम रोज, नियमित चलते हैं, तो दो-चार कार्यकर्ता इकट्ठे हो ही जाते हैं और लोग ग्रामदान दे देते हैं। अगर हम चलना ही बंद कर दें तो क्या कुछ काम बनने वाला है!

"आश्रम बनाने में हमने यही दृष्टि रखी। हमने अभी तक जितने आश्रम स्थापन किये हैं, उन आश्रमों की कुछ इस्टेट हो, यह हम ठीक नहीं समझते। ईसा मसीह ने एक जगह कहा है कि जहाँ वित्त आता है, वहाँ चित्त रहता नहीं। 'नाम-घोषा' में माधवदेव ने भी कहा है,

"लुब्ध-मति मनुष्यर हरि कीर्तनत
पर। नाहिके रहस्य-वित्त आर।
आन आशा परिहरि माधवक मने
धरी। हरिर कीर्तन करा सार।"

(लुब्ध मति मनुष्य का हरिकीर्तन से बढ़कर दूसरा रहस्य-वित्त नहीं। दूसरी आशा छोड़ कर अब माधव को मन में रख और हरिकीर्तन कर।)

"जहाँ कोई 'प्रापर्टी' खासकर के स्थावर 'प्रापर्टी' बन जाती है, वहाँ व्यक्ति की चंगमता खतम हो जाती है और व्यक्ति मुक्त नहीं रहता। इस्टेट बन जाती है, तो मनुष्य बँधा हुआ रहता है। व्यक्तिगत इस्टेट है, तो वह त्यागना कुछ आसान है। जमीन के बारे में कुछ झगड़ा हुआ, तो मालिक कह सकता है कि 'हम कोर्ट में जाने की दिक्कत नहीं उठाते। चलो, तुम इस जमीन के टुकड़े के बारे में झगड़ रहे हो तो हम यह जमीन भूदान में दान दे देते हैं!' दान देगा तो उसकी उदारता ही दिखेगी। लेकिन जहाँ संस्था की इस्टेट होती है, वहाँ उसको एकदम छोड़ नहीं सकते। छोड़ेंगे तो वह सामाजिक कर्तव्य की हानि मानी जायेगी। इस तरह से चीज की जवाबदारी में मनुष्य बँधा रहता है और उसकी चंगमता नष्ट होती है।

"ऐसी संस्थाओं के पीछे अनेक समस्याएँ खड़ी होती हैं। हम देखते हैं कि दो बड़ी-बड़ी संस्थाओं में भी इस्टेट के कारण झगड़े पैदा होते हैं। यह तो स्थावर इस्टेट की बात कर रहा था। लेकिन पैसा होता है तो भी यही हाल होते हैं। अब पैसा पास में होकर भी उसका चित्त पर असर न हो, चित्त उसमें न फँसे, यह एक शक्ति है। लेकिन यह अक्सर दिखाई नहीं देती। कहने का सार यह है कि ऐसी इस्टेट होती है, तो उससे आपस में प्रेम बढ़ने के बजाय मन में मालिन्य पैदा होता है, दिल जुड़ने के बजाय टूटते हैं।"

* *

हमारी गाड़ी नाले में उलट गयी और सामान भीग गया, यह खबर गाँव में तुरंत फैल गयी और लोग सहायता के लिए दौड़े आये। वह ईसाई लोगों का गाँव था। गाँव में बरसों से एक 'मिशन' काम कर रहा है। शाम को रेव्हरंड एडवर्डस और 'मिशन' के कुछ लोग बाबा मिलने के लिए आये। स्कूल के बच्चों ने कुछ भजन सुनाये। भजन के स्वर तो पाश्चिमात्य तर्ज के ढंग के थे। लेकिन पंद्रह-बीस कंठों में से एक उच्च स्वर में निकला हुआ 'हे प्रभु ईश्वर, दयालु प्रभु तू है सृजन-हार' यह गीत बहुत ही सुंदर लगा। बाद में 'मिशन' के लोगों से बातें हुईं।

एडवर्डस ने कहा, "मौसम बहुत खराब है, इसलिए बहुत दुःख होता है।"

बाबा ने कहा, "मेरे लिए मौसम काफी अच्छा है!"

बाबा ने 'मिशन' के लोगों से पूछा, "नामघोषा पढ़ा है?" नामघोषा का अध्ययन किसीने भी नहीं किया था।

बाबा ने आगे कहा, "जगत् के चारों ओर भगवान की कृपा है। एक एक कोने में एक एक महापुरुष हो गया। अरब में महंमद, यहाँ गौतम बुद्ध; इस तरह दुनिया में जगह-जगह महापुरुष हो गये। सबका हृदय एक ही था। इसमें कहा है, तुम्हारे कृपा बिना सिद्धि नहीं। तुम जो उचित समझो वह करो, तुम करुणा के सिंधु हो। यह जो श्रद्धा है, वह 'नामघोषा' में दिखती है। 'नामघोषा' बहुत उदार ग्रंथ है। किसी प्रकार की संकुचितता उसमें नहीं। उसमें और ईसा मसीह की शिक्षा में मैं खास फरक नहीं देखता। ईसा मसीह को भी 'सिंबालिक' (प्रतीक) मानना चाहिए। 'अब्राहम नहीं था तब मैं था', ऐसा ईसा मसीह ने कहा। भगवान दुनिया की चिंता करता है और समय-समय पर सज्जनों को पैगाम लेकर भेजता है; ऐसा व्यापक अर्थ लेंगे, तो सब दुनिया को जोड़ेंगे।

"आज दुनिया में सबसे ज्यादा ईसाई लड़ते हैं। जर्मनी, फ्रांस, इंग्लैंड, अमेरिका, रूस, सब जगह ईसाई हैं। ये राष्ट्र लड़ रहे हैं, एटम बम बना रहे हैं, पर सैनिकों के जेबों में बाइबिल होती है। मतलब यह है कि दुनिया में सद्भाव बढ़ रहा है, सबके अन्तर में प्रेम बढ़ रहा है, लेकिन नेता लड़ रहे हैं। हिन्दु, मुसलमान, ईसाई, सब हिंसा से लड़ रहे हैं। बाइबिल में वाक्य आता है, 'तुम श्रद्धा की बात करते हो, लेकिन अगर तुम्हारी कृति ठीक नहीं होगी तो तुम्हारी श्रद्धा को कौन पूछेगा!' इसलिए आज दुनिया में ज्यादा जरूरत अच्छे व्यवहार की, सज्जनता की, प्रेम की है।

"अलग-अलग धर्मों में विरोध नहीं है—ऐसा व्यापक दृष्टिकोण लेंगे तो दुनिया एक होगी। हमको अध्यात्म को लेना चाहिए और संकीर्ण धर्मनिरपेक्षवाद से मुक्त होना चाहिए।"

* * *

बाबा कहते हैं कि 'मैं चलते-चलते सोता हूँ!' सुबह यात्रा में बाबा क्या सो रहे हैं, यह समझने में हम तो असमर्थ हैं। लेकिन हमारा खयाल था कि सुबह यात्रा में बाबा की और बातें हम समझ सकते हैं। लेकिन आज तो हम उसमें भी 'फेल' हो गये। गाँव नजदीक आया, तो गाँव के लोग कीर्तन करते-करते सामने आये। गा रहे थे, 'हरे कृष्ण, हरे कृष्ण, कृष्ण-कृष्ण हरे हरे, हरे राम, हरे राम, राम-राम हरे हरे।' करीब दो मील यह कीर्तन चल रहा था। बाबा का मौन ही था। लेकिन कीर्तन-श्रवण के साथ साथ हाथों की भी गति से हलचल हो रही थी। समझ में नहीं आ रहा था कि यह क्या हो रहा है! बाबा हमेशा कहते हैं कि हाथों को पाँवों की सेवा करनी चाहिए, नहीं तो पाँव रूठ जायेंगे और चलने से इन्कार कर देंगे। आज शायद हाथों का व्यायाम हो रहा था। लेकिन यह व्यायाम एक मनोरंजक ढंग से हो रहा था। 'कृष्ण' कहते ही हाथ सीने के पास आते थे। 'हरि' बोलते ही हाथ 'चले जाओ' की क्रिया करते थे। और 'राम' का नाम लेते ही 'बैठ जाओ' का इशारा करते थे। आखिर पड़ाव पर पहुँचने के बाद यह रहस्य खुल गया कि वह व्यायाम नहीं था, तो बहुत गहरा चिंतन था। बाबा ने बताया—

"हम हमेशा राम-कृष्ण का चिंतन करते हैं। राम याने सत्य मूर्ति। कृष्ण याने प्रेममूर्ति। हरि-गौतम, बुद्ध को हरि कहते हैं—याने करुणामूर्ति। आज भी हम इसका चिंतन कर रहे थे। कृष्ण का अर्थ है, जन्म देने वाला (आकर्षक)। हरि का अर्थ है हरण करने वाला, दुःख क्षेत्र से छुड़ाने वाला। राम का अर्थ है रमण करने वाला। जीवात्मा को प्रथम संसार में लाया, वह है कृष्ण। बाद में उसको थोड़े दिन संसार में बसने दिया, वह राम है। उसके बाद उसके प्राण हरण कर लिये, जीव मुक्त हो गया; वह हरि है। कृष्ण याने जन्म देने वाला। राम याने सम्हालने वाला। हरि याने दुःख को दूर करने वाला, दुःख से छुड़ाने वाला। इसलिए रास्ते में 'हरि हरि' सुनते थे, तब दोनों हाथों से फेंक देते थे, कहते थे 'जा-जा, मुक्त हो जाओ! दुःखमय दुनिया है, भाग जाओ।' फिर जब 'कृष्ण-कृष्ण' कहते थे, तब दोनों हाथों से बुलाते थे कि 'आओ-आओ, सेवा करने के लिए आओ।' 'राम राम' सुनते थे, तब बैठने के लिए कहते थे, 'आओ, बैठो, रमो, आराम करो।' इस तरह से पूरे रास्ते भर हमारा चिंतन चल रहा था।"

सर्वोदय-सेवकों का अन्तर्द्वन्द्व

देवेन्द्रकुमार गुप्त

गांधीजी के जमाने में ग्राम-सेवा, खादी, हरिजन-सेवा आदि अराजनैतिक सामाजिक सेवाओं में लगे लोगों को 'रचनात्मक कार्यकर्ता' कहते थे। ये कार्यकर्ता किसी एक कार्यक्रम को अपना कर विशिष्ट संस्था के अन्तर्गत विशिष्ट कार्य करते थे। उन सबका समन्वय आपस में और आम जनता के साथ करने का काम गांधीजी खुद करते थे। गांधीजी के बाद ये रचनात्मक कार्य मिल कर सर्वोदय-कार्य कहलाये और गांधीजी के सपने का शोषणमुक्त वर्गविहीन अहिंसक समाज 'सर्वोदय-समाज' के नाम से आँका गया।

यह माना गया कि सभी रचनात्मक संस्थाएँ समग्र दृष्टि की सर्वोदय संस्थाएँ हैं, पर विशिष्ट कार्यक्रम में लगी हैं, जिनमें आपसी समन्वय आवश्यक है। इसके बाद यह भी महसूस हुआ कि एक टोली ऐसे लोगों की होनी जरूरी है, जो विशिष्ट कार्यक्रम से निकल कर समग्र कार्यक्रम हाथ में ले और अपने को किसी चहारदीवारी में सीमित न रख कर जनता के बीच ऐसे वातावरण पैदा करने का काम करे, जो विशिष्ट कार्यक्रमों के लिए सहायक भूमिका समाज में पैदा करे और विशिष्ट कार्यक्रम संस्थागत न रह कर जन जीवन में प्रविष्ट हो जाय तथा उनके द्वारा आधारभूत अहिंसा और करुणा का विचार पनपे और बढ़े।

विनोबाजी के नेतृत्व में आज १२-१३ सालों में उपर्युक्त दोनों कदम उठाये गये हैं। विशिष्ट संस्थागत कार्यक्रमों की भूमिका विशाल बनाने का प्रयत्न किया गया। कुछ संस्थाएँ मिल कर एक हो गयीं और समग्र दृष्टि से काम करने की कोशिश हुई। अ० भा० सर्व सेवा संघ में ग्रामोद्योग संघ, चरखा संघ, तालीमी संघ, गो-सेवा संघ आदि संघों का समावेश इसी दिशा का कार्यक्रम है। इसी प्रकार कस्तूरबा ट्रस्ट, हरिजन सेवक संघ, गांधी स्मारक निधि जैसी अखिल भारतीय संस्थाएँ तथा छोटी-छोटी स्वतन्त्र संस्थाएँ भी समग्रता की ओर बढ़ने वाले कार्यक्रमों के द्वारा अपनी विशेषता का विकास करें, यह दिशा अपनायी गयी है।

पर इसके अतिरिक्त जो नयी बात हुई वह है उस टोली का विकास, जो विचार और कार्यक्रम दोनों में समग्रता अपनाती है।

विशिष्ट कार्यक्रमों में लगे लोगों में से कइयों को विनोबाजी ने समग्र काम करने के लिए प्रवृत्त किया और ऐसे समग्र कार्यक्रम भी सुझाये, जो सारे समाज में करुणा पैदा कर सकें, जैसे भूमिहीनता मिटाने के लिए करुणाजन्य भूदान-आन्दोलन, सामाजिक स्वामित्व के लिए सहकार-धन्य ग्रामदान, घर घर में करुणा विचार पहुँचाने के लिए सर्वोदय पात्र आदि। इन कामों में समग्र दृष्टि से गांधीजी का विचार समाज में व्याप्त करने की भूमिका है।

विशिष्ट और समग्र

इस प्रकार विशिष्ट और समग्र, दो प्रकार के सर्वोदय कार्य समझे जाने लगे। इन नये सर्वोदय-कार्यक्रमों से विशिष्ट रचनात्मक कामों को जनमत का बल प्राप्त हुआ है, क्योंकि विशिष्ट सेवा-कार्य सीमाबद्ध होता है, यद्यपि उसका विचार समग्र ही होता है। इसलिए समग्र विचार को समग्र कार्यक्रमों द्वारा व्याप्त करने का काम सर्वोदय के समग्र कार्यकर्ता का होता है। ये कार्यकर्ता विशिष्ट सर्वोदय-सेवा कार्यकर्ताओं से भिन्न, पर उनके सहायक हैं तथा ऐसे कार्यक्रमों को अपनाते हैं, जो समग्र जनसंपर्क करने वाले हों। इसलिए हरिजन-सेवा, बाल शिक्षण, महिला उत्थान या अंध-बधिर की सेवा-विशेष में से किसी एक में ये लोग नहीं होंगे, बल्कि सामाजिक चेतना जाग्रत करने के लिए ऐसे काम करेंगे कि उपर्युक्त श्रेणी के सभी कार्यक्रमों को मदद मिले।

ऐसे समग्र सर्वोदय कार्यक्रम में लगे लोग विशिष्ट संस्था के कार्य से सीमित न होने के कारण उनकी आर्थिक व्यवस्था भी ऐसे साधनों से करनी आवश्यक हो जाती है, जो उनको समग्र कार्यक्रम में मुक्त रूप से काम करने की सहुलियत दे। इसलिए सम्पत्ति-दान, सर्वोदय पात्र, चंदा या संस्थाओं द्वारा दान के जरिये ही उन्हें ऐसे कार्य में लगाया जा सकता है, जिसमें बंधन कम-से कम हो।

"सर्वोदय और संस्था" पूरक हैं

कुछ लोग "विशिष्ट सेवा के कार्यकर्ता" और "समग्र सेवा के कार्यकर्ता" के भेद को गलत मानते हैं और कुछ एक को दूसरे से नीचा या ऊँचा मानते हैं। पर सचमुच दोनों प्रकार के कार्यकर्ताओं का सर्वोदय के क्षेत्र में रहना आवश्यक है और एक-दूसरे के पूरक होकर ही काम कर सकते हैं। वही कार्यकर्ता आज विशिष्ट सेवक की भूमिका में काम करेगा, वो हो सकता है कल समग्र सेवक की भूमिका ले ले और इस प्रकार अदला-बदली करे। एक ही सिक्के के दो पहलुओं की तरह समग्र और विशिष्ट कार्यकर्ताओं का अंतर और जोड़ समझना अत्यन्त आवश्यक है। दोनों का संबंध, संपर्क घनिष्ठ होना चाहिये और दोनों को एक दूसरे के कार्य का लाभ मिलना चाहिये। अभी भी दोनों प्रकार के सर्वोदय कार्यों में उतनी अभिन्नता प्राप्त नहीं हुई है, जो सच्ची शक्ति का विकास करने के लिए जरूरी है।

इसलिए स्थावर और जंगम, विशिष्ट और समग्र याने संस्थागत और मुक्त, दोनों प्रकार के कार्यक्रम समाज के परिवर्तन के लिए आवश्यक हैं। दोनों एक दूसरे पर निर्भर हैं, एक-दूसरे के पोषक हैं और दोनों का बराबर का महत्त्व है। सर्वोदय के समग्र कार्यक्रम में लगे पदयात्री या स्थानबद्ध सेवक गांधीजी के सपने का समाज बनाने के लिए ऐसे कार्यक्रमों की खोज करते रहते हैं, जो करुणामूलक अहिंसक वातावरण समाज में लायें और ऐसी आबहवा बने कि रचनात्मक कार्यों के पनपने का खूब मौका मिले।

विनोबाजी, फिर महाराष्ट्र आइये

साने गुरुजी का मर्मस्पर्शी पत्र

[स्वर्गीय साने गुरुजी की याद में पूना में गत ८ जून से ११ जून तक श्री दादा धर्माधिकारी की अध्यक्षता में 'साने गुरुजी बारहवाँ स्मृति-समारोह' मनाया गया था। साने गुरुजी ने विनोबाजी को महाराष्ट्र में बुलाने के लिए एक अनमोल पत्र लिखा था। वह पत्र और विनोबा का उत्तर नीचे दिया जा रहा है। —स०]

"जनता के टूटे मन कौन जोड़ेगा? फूटे हृदयों को कौन मिलायेगा?

फूटे मोती और टूटे मन को ब्रह्मा भी जोड़ नहीं सकता।

यह शक्ति है किसमें? महाराष्ट्र की आत्मा विदीर्ण, विकीर्ण है। उसमें फिर से प्रेम और स्नेह की आत्मा कौन निर्माण करेगा? किसमें यह योग्यता है? यह अमृत-रसायन किसके पास है?

मेरी दृष्टि वर्धा के पास पवनार की तरफ मुड़ती है। वहाँ धाम नदी के किनारे पूज्य विनोबाजी हैं, सेवा-रूप साधना कर रहे हैं। त्याग, तपस्या, वैराग्य, ज्ञान, भक्ति और कर्म की वे मूर्ति हैं। वे साकार शांति हैं, मूर्त अद्वैत हैं। महात्मा गांधी की साधना की वे चलती-फिरती 'प्रतिमा' हैं। वे संतों और ऋषि-मुनियों के उत्तराधिकारी हैं।

आपके मन में बड़ी वेदना थी कि पंढरपुर का पाण्डुरंग बद्ध है! उसे मुक्त करने के लिए हमने भरसक प्रयत्न किया। अब पाण्डुरंग मुक्त है। आइये न, आपके प्रिय महाराष्ट्र में! अपनी अमृतमय बोधवाणी लेते आइये। अपनी त्याग तपस्या की पावन गंगा लेते आइये। मैं आपसे कितनी विनती करूँ! कितनी प्रार्थना करूँ! ये शब्द मैं अपने अश्रुओं से लिख रहा हूँ, अपने खून से लिख रहा हूँ। महाराष्ट्र का शतशः खण्डित हृदय मेरे शब्दों के द्वारा आपको बुला रहा है।

आप आयें तो साथ ही आश्रमसंगीत आयेगा, व्रत आयेंगे, चरखा गूँजता हुआ आयेगा। तकली नाचती आयेगी। अखबार, उनके संवाददाता, इकारी युवक, सेवादल, सरकारी अधिकारी, कांग्रेस के कार्यकर्ता, समाजवादी कार्यकर्ता—सब आयेंगे। सूर्य के चारों ओर घूमेंगे, नाचेंगे। सर्वत्र भागवत, पवित्रता और सेवा की यात्रा पर आरती शुरू होगी। उथल-पुथल रुकेगी, द्वेष मिटेगा, वैर शांत होगा। नयी शान्ति और प्रेम स्नेह की, नये आध्यात्मिक और राष्ट्रीय विकास की भव्य फसल आयेगी। महाराष्ट्र अपने नाम के अनुरूप महान् राष्ट्र के योग्य बनेगा। आपका आगमन अमृतमय मेघ वर्षण होगा। मानव्य और मोक्षवैभव की फसल उगेगी। शुकाचार्य लगातार सात दिन तक भागवत सुनाने बैठे थे। आप आइये, विहार कीजिये और भग्न हृदयों को शांति दीजिये; उजड़े गाँवों को बसाइये; सबको एकत्र बुलाइये। आँसू पोंछिये, धीरज बँधाइये, एकता की अमृतवाणी सुनाइये। विनोबाजी, आइये अपने प्राण उगलने, आत्मा समर्पित करने, प्रेम और स्नेह का अकाल मिटाने आइये। अधिक क्या लिखूँ!

—साने गुरुजी

* * *

विनोबाजी की प्रतिक्रिया

मैंने तीस वर्ष तक वर्धा में जो जीवनयापन किया, उसमें एकांतिक ध्यानयोग-निष्ठा थी। इसीलिए वह स्थान मैंने कभी नहीं छोड़ा। गांधीजी के निर्वाण के बाद महाराष्ट्र में जो कुछ दुःखदायी घटनाएँ हुईं, उस समय साने गुरुजी ने बहुत गद्गद होकर व्यथित और व्याकुल मन से मुझे पत्र लिखा था—'विनोबा, अब तो भी महाराष्ट्र आओ। यहाँ आपकी आवश्यकता है।' उन दिनों उन्होंने २१ दिन तक उपवास भी किया था। उन जैसे सक्रिय व्यक्ति ने विशेष विपत्ति के समय व्याकुलता के साथ जो लिखा था, उसका मैंने क्या उत्तर दिया? मैंने लिखा—"मेरे पैर में चक्र है। कभी न कभी घूमने-फिरने का योग मुझे है। वह अभी आया नहीं है। जब मेरा घूमना प्रारंभ होगा, तब मुझे रोकने की शक्ति संसार में किसीकी नहीं रहेगी। उसी प्रकार मैं जो आज बैठा हूँ, अब मुझे उठाने की शक्ति भी किसी में नहीं है।"

—विनोबा

लेखांक : २

टांगानिका में जयप्रकाश

सुरेश राम

टांगानिका देश में एशियावासी भी काफी तादाद में हैं। लगभग एक लाख। योरोपियन चालीस हजार के लगभग हैं और शेष आबादी, नब्बे लाख के करीब, यहाँ के मूल निवासियों की है। इस तरह एशिया और योरोपवाले जनसंख्या में तो दो प्रतिशत के करीब हैं, मगर टांगानिका का आधे से ज्यादा व्यापार और उद्योग इनके हाथ में है। दारेस्सलाम की राजधानी के बाजार में तो ये ही प्रधान दीखते हैं।

एशियावालों में एक बड़ी मात्रा उनकी है, जो खुद या जिनके पूर्वज भारत से आये हुए हैं। इनमें अधिकांश गुजरात, सौराष्ट्र और कच्छ वाले भाग के हैं। भारत के अतिरिक्त अरब के कुछ लोग हैं। इस्माइली भी बहुत हैं, जो आगा खाँ को धर्मगुरु मानते हैं। इन दिनों इन सबको भविष्य के बारे में थोड़ी परेशानी हो गयी है। टांगानिका की आजादी के कारण चिंतित हैं कि कहीं अफ्रीकन या मूल निवासी रंगभेद की नीति तो नहीं बरतेंगे। हम क्या करें—एशियाई देशों की अपनी नागरिकता कायम रखें या टांगानिका के नागरिक बन जायँ? वैसे एशियाई लोगों में बहुतों ने टांगानिका की नागरिकता ले भी रखी है, मगर कुछ ब्रिटिश नागरिक हैं।

जब जयप्रकाश बाबू 'पाफमेकसा'-सम्मेलन से लौट कर दारेस्सलाम आये तो एशिया वाले मित्र उनसे सलाह लेने लगे कि हम क्या करें। 'एशियन एसोसियेशन' के तत्त्वावधान में बुधवार १६ मई की शाम को पटेल ब्रदरहुड के मैदान में एक सार्वजनिक सभा में जे० पी० का व्याख्यान हुआ। अध्यक्ष महोदय ने आशा प्रकट की कि जे पी फिर से राजनीति में लौट आयेंगे और देश की बागडोर सँभालेंगे और यहाँ जो एशिया के लोग हैं, उनके लिए मार्गदर्शन का कार्य करेंगे।

अपने भाषण में जे पी ने शुरू में ही कहा कि मुझे बड़ी खुशी होती, अगर मैं अपने को इस काबिल पाता कि आपने या भारत के मित्रों ने जो मेरे सामने मसले रखे हैं, उनका हल आपके आगे पेश कर सकता। थोड़े दिन हुए, मैं यहाँ आया और जैसा कि आप जानते हैं, विश्व-शान्ति-सेना के काम से आया और मुझे यहाँ की परिस्थिति की पहले से कुछ भी जानकारी नहीं थी। इसीलिए सलाह देना मुनासिब नहीं होगा। बेहतर हो कि भारत की तरफ से यहाँ जो हाई-कमिश्नर महोदय हैं, उनसे आप राय-मशविरा करें।

राजनीति छोड़ने के सम्बन्ध में जयप्रकाश बाबू ने पूछा कि यह विचार गलत है कि सत्ता में पद ग्रहण न करना या राजनीतिक पक्ष का सदस्य न रहना राजनीति से अलग हो जाना है। बाकी न मैं हिमालय गया, न मैंने संन्यास ही लिया है। उमर जरूर ज्यादा हो गयी, लेकिन मेहनत पहले से कम करता हूँ, ऐसी बात भी नहीं है। मुझसे लोग कहते हैं कि आप विरोधी पक्ष का नेतृत्व करते होते या पंडित नेहरू के दाहिने हाथ होते तो कितना बड़ा काम होता! मैं ऐसा नहीं समझता। यह तो पीटी हुई लकीर है, जिस पर चलने से कोई फायदा नहीं। असली काम है जनता की शक्ति को मजबूत करना और समाज में लोकतांत्रिक मूल्यों की स्थापना करना। स्वराज्य के बाद ये दो सबसे बड़े काम हैं। इनको सफलता से करने का रास्ता खुद गांधीजी बता गये हैं। उन्होंने बताया कि जनता में जाना चाहिए, उसकी सेवा में लगना चाहिए—इसलिए नहीं कि हमें वोट दो या हमें पार्लियामेण्ट में भेज दो, बल्कि इसलिए कि देश आर्थिक और सामाजिक स्वराज्य प्राप्त कर सके और फौजी शक्ति नागरिक शक्ति के अधीन रहे, न कि उस पर हावी हो जाये, जैसा पाकिस्तान, बर्मा, ईराक, तुर्की आदि देशों में हुआ।

आगे जयप्रकाश बाबू ने कहा कि आज चारों तरफ समाजवाद की चर्चा है। समाजवाद याने शोषण खतम करो। कानून से, राष्ट्रीयकरण द्वारा इस काम को करने की कोशिश जगह जगह की गई है—नार्वे, स्वीडन, हालैण्ड आदि में। मगर अनुभव यह आया कि इतना सारा करने के बाद भी समाजवाद नहीं आता। संस्था में यों ढाँचा तो समाजवाद का खड़ा हो जाता है, लेकिन मूल्य नहीं बदलते, दृष्टिकोण में फर्क नहीं आता। समाजवाद के बड़े-बड़े आचार्यों ने कहा है कि समाजवाद एक ढाँचा मात्र नहीं, एक पद्धति है। एक ऐसे समाज की रचना करता है, जिसमें आदमी के अन्दर स्वार्थ या लोभ की भावना न हो, भ्रातृत्व हो और पड़ोसी की जिम्मेदारी वह महसूस करे। मानवीय समाज हो।

'गांधीजी ने एक नये प्रकार की राजनीति को जन्म दिया, जो सेवा प्रधान है। मैं कांग्रेस में रहा, सी एस पी में रहा, पी एस पी में रहा, लेकिन किसी एक चुनाव में भी खड़ा नहीं हुआ। यह नहीं कि जो चुनाव में पड़े, वे नीच हैं, मुझे कोई अहंकार नहीं है। मगर चुनाव का आकर्षण मुझे कभी नहीं रहा। मुझे लगा कि मेरा काम जनता में है। विनोबाजी ने एक नया शब्द गढ़ा है—'लोकनीति'। जिसे आप राजनीति समझते हैं, वह सत्ता और दबाव राजनीति है। लेकिन यह लोकनीति नीचे से निर्माण करती है, इसमें नैतिक मूल्यों का विकास होता है, समाज की नई रचना होती है। आज की राजनीति का कोई आध्यात्मिक आधार नहीं है। बापूजी होते तो कहते कि इसका कैसे आध्यात्मीकरण किया जाये। आज व्यापार चलता है। क्या दृष्टि है उसके पीछे, यह आप रात को छाती पर हाथ रख कर अपने से पूछिये। जीवन में काम और अर्थ दोनों का स्थान है, लेकिन इन पर अंकुश धर्म का चाहिए। इस दृष्टि से आप काम करें तो मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि आपकी सारी समस्याएँ हल हो जायेंगी।

इसके बाद जे० पी० ने कहा कि मैं मानता हूँ कि अणु के जमाने में राष्ट्रीय राज्यों की गुंजाइश नहीं है। ये सीमाएँ खतम होंगी और एक दुनिया बनेगी। जितनी जल्दी यह बने, उतनी जल्दी दुनिया का हित होगा। एक दुनिया का चित्र सामने रखना चाहिये। हम न टांगानिका के नागरिक हैं, न भारत के, हम विश्व-नागरिक हैं। मुझसे आप पूछें तो आँख बन्द करके टांगानिका का नागरिक बनूँ। आगे चल कर एक नागरिकता होने ही वाली है। हो सकता है कि बीच के स्टेज में एक अफ्रीका-नागरिकता, एक एशिया-नागरिकता, एक योरप-नागरिकता आदि हो। क्या-क्या कदम बीच में उठाये जायेंगे, यह कहना मुश्किल है। लेकिन मैं नागरिक टांगानिका का हूँ या भारत का, जो मेरा नागरिक धर्म है, उसे पूरा करना चाहिए।

मुझसे कुछ भाइयों ने पूछा कि टांगानिका का नागरिक बनूँ या भारत का, लाभ किसमें है? मैं इस दृष्टि से नहीं सोचता। आपका लाभ उसीमें है, जिसमें सारे टांगानिका का लाभ है। अगर सारे टांगानिका का लाभ होगा तो आपका क्यों नहीं होगा? आप यहाँ की जनता के साथ एकरूप हो जायें। यहाँ की जनता को उठाने में कुछ त्याग या बलिदान आपने किया तो भारत की सेवा की, मानवमात्र की सेवा की, 'एक विश्व' की तरफ कदम बढ़ाया। यह मैं कोरा वर्णन नहीं कर रहा हूँ, बल्कि जो सवाल आपके आगे हैं, उन पर सोचने के लिए सही दृष्टि आपके सामने रख रहा हूँ। अगर हमारे सोचने का कोई आधार ही नहीं होगा तो हमारी हालत समुद्र में बेपतवार के नाव की तरह हो जायगी।

अंत में जयप्रकाश बाबू ने कहा कि हम सबको थोड़ा ऊँचा उठ कर सहानुभूति और सहनशीलता की दृष्टि से विचार करना चाहिए। केवल अपने हित का ही आप सोचते हैं तो सोचिये। लेकिन यह ध्यान रखें कि दुनिया किधर जा रही है। विश्व-समुदाय की एकता की दृष्टि अगर हम सामने रखेंगे तो सबका हित होगा।

गुरुवार, १७ मई को न्यूयार्क से श्री रेवरेण्ड ए० जे० मस्ते पधारे। श्री ए० जे० विश्वशान्ति-सेना की अमरीका शाखा के प्रधान हैं। उनको यहाँ से 'केबल' भेजा गया था कि जे० पी० और रेवरेण्ड माईकेल स्काट यहाँ मौजूद हैं, आप भी आ जायें तो विचार-विनिमय के बाद आगे के काम की दिशा तय कर ली जाये। ए० जे० दोपहर को पहुँचे। तीसरे पहर और शाम को उनसे बातचीत होती रही। दूसरे दिन सुबह विश्व-शान्ति-सेना के तीन अध्यक्ष श्री जुलियस नेरेरे से मिले। इसके बाद दिन भर हम सब आपस में चर्चा करते रहे। इसमें श्री रणधीर ठक्करजी शामिल थे। श्री ठक्कर वैसे तो भावनगर के निवासी हैं, लेकिन अरसे से इनका परिवार टांगानिका में रहता है। यहाँ इनकी बहुत प्रतिष्ठा और इज्जत है। शायद श्री ठक्कर अकेले एशियाई हैं, जो टांगानिका की स्वाहिली भाषा पर मातृभाषा जैसा अधिकार रखते हैं। पूरा कमाल उन्हें हासिल है और पिछले तीन बरस से "नगुदमो" (जिसका अर्थ है 'केसरी') नाम के एक स्वाहिली दैनिक का भी सम्पादन और प्रकाशन करते हैं। यहाँ के स्वराज्य-आन्दोलन में उनका बड़ा हाथ रहा है। श्री रणधीर भाई 'अफ्रीका फ्रीडम-एक्शन' (जिसमें पाकनेक, टानू, यूनिप, उत्तर रोडेशिया की युनाइटेड नेशनल इण्डिपेण्डेन्स पार्टी और वर्ल्ड पीस ब्रिगेड—चारों शरीक हैं) की कार्यकारिणी समिति के प्रधान भी हैं।

दारेस्सलाम के सम्पन्न और शिक्षित वर्ग की एक संस्था है—'कल्चरल सोसाइटी'। पिछले २३ साल से यह चल रही है। इसके तत्त्वावधान में शुक्रवार, १८ मई की शाम को जे० पी० का कार्यक्रम था। भाषण का विषय था—'भारत में सर्वोदय आन्दोलन'। भाषण अंग्रेजी में हुआ।

आरम्भ में जे० पी० ने कहा कि अफ्रीका की भूमि पर ही महात्मा गांधी को सर्वोदय की कल्पना सूझी और इस शब्द में उन्होंने नई जान डाल दी। सर्वोदय या सबका भला—इसके लिए एक विशेष मानस की जरूरत है। वह मानस प्रेम का होना चाहिये। महात्मा गांधी ने दक्षिण-अफ्रीका और हिन्दुस्तान में जो आन्दोलन चलाये, वे सर्वोदय के ही व्यापक प्रयोग थे। सर्वोदय में कोई काम किसी विशेष हित या स्वार्थों की पूर्ति के लिए नहीं किया जाता। उसके हर काम से सबका हित सधता है।

महात्मा गांधी ने अपने देहावसान से एक दिन पहले कांग्रेस के लिए एक प्रस्ताव का मसविदा तैयार किया था। उनके सेक्रेटरी श्री प्यारेलालजी ने अपनी अद्भुत पुस्तक "दि लास्ट फेज" में उस मसविदे की फोटो नकल—दी है। उसमें महात्माजी ने दो बातें खास तौर से कही हैं—भारत को अपनी सामाजिक, आर्थिक और नैतिक आजादी गाँवों की भाषा में अभी प्राप्त करना बाकी है। दूसरे, नागरिक-शक्ति और सैनिक शक्ति के बीच संघर्ष से गुजर कर देश अपने जनतांत्रिक लक्ष्य की तरफ बढ़ सकेगा। इसके लिए उन्होंने सलाह दी है कि कांग्रेस अपने को खत्म करके और लोक-सेवक संघ का रूप ले। गांधीजी के विचार से, सर्वोदय-समाज का

निर्माण कानून या वैधानिक उपायों से नहीं हो सकता, वह सेवा के माध्यम द्वारा ही होगा, जो प्रेम का प्रतीक है। लेकिन कांग्रेस ने उसे नहीं अपनाया। उस समय मैं भी उसका विरोध ही करता, मगर अब उनकी दूरदृष्टि की गहराई का पता चल रहा है।

इस सम्बन्ध में जयप्रकाश बाबू ने श्री जुलियस नेरेरे के एक लेख—'दी बेसिस ऑफ अफ्रीकन सोशियलिज्म—का हवाला दिया। उसमें भी श्री नेरेरे ने स्पष्ट कहा है कि समाजवाद एक मानस का प्रतीक है और एक सर्वग्राही, विशाल परिवार की तरह है, जिसमें जोड़ने वाली कड़ी प्रेम की है। इसी आधार पर सन् १९५१ में आचार्य विनोबाजी ने अकेले ही भूदान यज्ञ की शुरुआत की और पिछले ग्यारह साल से उनकी पदयात्रा जारी है और यह आंदोलन सारे देश में चल रहा है। इस भूदान ग्रामदान आन्दोलन के द्वारा, स्वतन्त्र भारत के संदर्भ में, गांधीजी के सिद्धान्त और दर्शन के अनुसार नव समाज के निर्माण का प्रयत्न चल रहा है।

अपने लेख में श्री नेरेरे ने बताया है कि एक करोड़पति भी समाजवादी हो सकता है, अगर वह अपनी सम्पत्ति का उपयोग 'ट्रस्ट' के तौर पर करे और एक भिखमंगा भी पूँजीवादी हो सकता है, अगर उसकी तमन्ना धन दौलत पाकर दूसरों को दबाने या उनका शोषण करने की हो। ठीक यही विचार महात्मा गांधी ने रखा था—सम्पत्ति एक ट्रस्ट है और एक ट्रस्टी के नाते हमें व्यवहार करना चाहिए। सवाल है, यह बात अमल में कैसे आये? बाहरी ढाँचा बदलने के साथ साथ बुनियादी मूल्य और अन्दर का स्वरूप कैसे बदले! मैं कई साल तक मार्क्सवादी, समाजवादी रहा। देश और दुनिया की हालत का अध्ययन करने पर पता चला कि समाजवाद एक नारा है, बाहरी ढाँचा बदल जाने पर अन्दर से चीज नहीं बदलते, मूल्य और मान्यताओं में फर्क नहीं पड़ता—न रूस में ऐसा हो सका, न मार्वे स्वेडन आदि कहीं पर भी। लेकिन भूदान-यज्ञ से मेरे सामने रास्ता साफ हो गया और मैंने देखा कि किस तरह अन्दर का मानस बदलता है और नये मूल्यों की स्थापना भी होती है। इन दिनों विनोबाजी असम प्रदेश में हैं, जहाँ पाँच सौ से अधिक गाँवों का ग्रामदान उन्हें मिला है। गाँव के सभी निवासियों ने अपनी मालकियत के अधिकार का खुशी से विसर्जन कर दिया। इसके अलावा सम्पत्ति-दान का विचार है, जो ट्रस्टीशिप पर आधारित है।

अन्त में जयप्रकाश बाबू ने कहा कि लगभग तीन साल पहले विनोबाजी ने एक मौलिक विचार दुनिया के आगे रखा। वह यह कि अब राजनीति और धर्म (अपने चालू और परम्परागत मानों में) के दिन नहीं रहे। अब अध्यात्म का युग है और विज्ञान तथा अध्यात्म के मेल से ही समाज आगे बढ़ेगा। विनोबा के इस विचार को प्रधान मन्त्री नेहरू ने भी बहुत पसंद किया है, लेकिन राष्ट्र के नायक के तौर पर वह इसे व्यवहार में नहीं उतार सके हैं। सर्वोदय में विज्ञान और अध्यात्म, दोनों का समावेश है। ज्यादा तो हम नहीं कर सके हैं, लेकिन इसी दिशा में कोशिश लगातार जारी है।

उस दिन रात का भोजन एक व्यापारी भाई के यहाँ रखा गया था। लगभग पचास साठ भाई थे। भोजन के बाद चर्चा होती रही। इस देश में सहकारिता के कारण हमारे हितों पर चोट पहुँचने का डर है। जे० पी० ने उन्हें समझाया कि आपको लक्ष्य करके यह कार्यक्रम नहीं बताया जा रहा है। सहकारिता तो आज का मन्त्र है और हर जगह इसे अपनाया जा रहा है। आपको यह समझना चाहिए और खुद आपस में मिल कर सहकारिता के आधार पर काम करके दिखाना चाहिए। डरने की कोई बात नहीं है। खेती में, उद्योग में, व्यापार में—सबमें निजी स्वामित्व की अपेक्षा सहकारिता ज्यादा हितकर होने वाली है।

इसके बाद जे० पी० ने हँस कर कहा कि हमारे यहाँ कहावत है कि ढेकी स्वर्ग में भी जाये तो धान ही कूटेगी। इसी तरह एक काम हर जगह मेरे पीछे लग जाता है—पैसा जमा करना। उत्तर रोडेशिया की आजादी के आन्दोलन के लिए पैसा चाहिए और वहाँ के नेताओं ने मुझसे कहा है कि इसमें उनकी मदद करूँ। अच्छा हो अगर टांगानिका, कीनिया और युगंडा के भारतीय मित्रों से पाँच पाँच हजार पौण्ड की मदद इस काम के लिए मिल जाये। तो आपसे अपील है कि टांगानिका से पाँच हजार पौण्ड की सहायता करें। बेहतर हो कि इसी समय श्रीगणेश हो। एक कागज पर लोगों ने अपनी-अपनी रकम लिखी और इस तरह यह काम शुरू हो गया। अब तक दारेस्सलाम से लगभग एक हजार पौण्ड की मदद मिल गयी है।

आगे के दो दिन—उन्नीस और बीस मई—जे० पी० ने दो कामों में खर्च किये—अर्थ-संग्रह और पीस ब्रिगेड के मित्रों से चर्चा। जे० पी० ने कहा कि अगर उत्तर रोडेशिया में 'पीस-मार्च' (शान्ति यात्रा) का कार्यक्रम बनता है तो प्रभावती और मैं, दोनों उसमें भाग लेंगे और जब जरूरत होगी वहाँ पहुँच जायेंगे।

मासिक चिट्ठियाँ: बिहार की चिट्ठी

बिहार सर्वोदय मंडल के निर्णयानुसार 'बीघा कट्ठा अभियान' पूरे बिहार राज्य में जोर से चलता रहा। बिहार और बिहार के बाहर के लगभग ७०० कार्यकर्त्ताओं ने अपने संगठक एवं सहसंगठक के नेतृत्व में भूमिवानों से उनकी जमीन का कम से-कम बीसवाँ भाग भूदान में मांगना प्रारंभ किया। इस सिलसिले में कार्यकर्त्ताओं के सामने कई तरह की कठिनाइयाँ भी उपस्थित हुईं। कुछ भूमिवानों ने सर्वोदय विचार को मान कर अपनी जमीन का बीसवाँ भाग भूमिहीनों के लिये दिया, तो अनेकों ने बिना समझे भी आन्दोलन के प्रवाह में बीघा में कट्ठा का दान दिया।

पूर्व निश्चयानुसार २ मई को भभुआ उच्च विद्यालय में शाहाबाद जिले के भभुआ सबडिविजन के भूमिवानों एवं अन्य लोगों की एक आम सभा का आयोजन किया गया। सभा में 'बीघा कट्ठा अभियान' एवं अन्य सर्वोदय-कार्य पर सविस्तार चर्चा की। भभुआ के भूमिवानों ने २८८२ कट्ठा जमीन एवं ५८२ रुपये ५ नये पैसे की नकद थैली सर्वोदय कार्य के लिए दी।

बिहार सर्वोदय मंडल द्वारा नियुक्त संगठक एवं सहसंगठकों की बैठक १२ मई को पटना में आयोजित की गयी। बैठक का मुख्य उद्देश्य 'बीघा-कट्ठा अभियान' में लगे कार्यकर्त्ताओं के अनुभव के आधार पर आगे का कार्यक्रम बनाना था। अखिल भारतीय कांग्रेस कमिटी के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ढेबर भाई ने भी १८ से २२ मई तक 'बीघा कट्ठा अभियान' की सफलता के लिए समय देने का निश्चय किया। जिला सर्वोदय मंडल मुंगेर, संथाल परगना एवं पूर्णियाँ जिले में भी ढेबर भाई के दौरे का कार्यक्रम बनाया था। इस प्रकार आन्दोलन अपने उच्च शिखर तक पहुँचने ही वाला था कि समाचार पत्रों में बिहार हदबंदी-कानून के अन्तर्गत 'सीलिंग-कानून' के विरोध में बिहार की लोकसभा के सदस्यों का वक्तव्य प्रकाशित हुआ। फिर बिहार के मुख्य मंत्री ने भी पत्रकारों को बताया कि कई कारणों से फिलहाल 'सीलिंग-कानून' कार्यान्वित नहीं करने का विचार है। यह इतना ही जनता गुमराह होने के लिए काफी था। हदबंदी के कानून की २८वीं धारा में स्पष्ट था कि २५ दिसम्बर, १९६० या उसके बाद जो भी जमीन भूदान में दी जायगी, उसे 'सीलिंग' में लगने वाली जमीन में मिनहा किया जायगा। अब सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं के लिये बड़े असमंजस की स्थिति आ गयी। भूमिवानों के प्रश्न के उत्तर में कार्यकर्त्ताओं ने उन्हें बताया था कि 'बीघा-कट्ठा अभियान' में दी गयी जमीन 'सीलिंग' में ली जाने वाली जमीन में मिनहा होगी। प्राप्त भूमि के अधिकांश भाग पर तो भूमिहीनों ने कब्जा भी कर लिया।

बिहार के मुख्य मंत्री श्री बिनोदानन्द झा ने ११ मई को 'बीघा कट्ठा अभियान' सम्बन्धी कार्यक्रम के लिए अपना समय दिया। निश्चयानुसार उन्होंने ११ मई को कार्यकर्त्ताओं की बोधगया की बैठक एवं गया की आम सभा में सर्वोदय-कार्यक्रम पर प्रकाश डाला।

बिहार राज्य पंचायत परिषद् के उपाध्यक्ष श्री सरयू प्रसाद, प्रधान मंत्री श्री लाल सिंह त्यागी एवं अन्य लोगों का भी सक्रिय सहयोग आन्दोलन को प्राप्त था। श्री त्यागी ने 'बीघा कट्ठा अभियान' के संबंध में गया, पटना, पूर्णियाँ एवं संथाल परगना जिले के विभिन्न स्थानों का दौरा किया और 'बीघा कट्ठा अभियान' पर सविस्तार चर्चा की।

'बीघा-कट्ठा अभियान' सम्बन्धी लोगों को सविस्तार सूचना देने के लिए 'भूदान यज्ञ' साप्ताहिक के परिशिष्ट के रूप में ४ पृष्ठों का विशेष 'भूदान यज्ञ' नियमित रूप से निकल रहा है।

राष्ट्रपति-पद से मुक्त होकर डा० श्री राजेन्द्र प्रसाद ने बिहार के सदाकत आश्रम में ही रहने का निश्चय किया। निश्चयानुसार १४ मई को एक विशेष गाड़ी द्वारा वे पटना पधारे। पटना में सभी राजनीतिक दल एवं रचनात्मक संस्थाओं द्वारा उनका स्वागत किया गया। श्री राजेन्द्र बाबू सदाकत आश्रम में अपनी पुरानी कुटिया में ही रह रहे हैं। सदाकत आश्रम द्वारा आयोजित सुबह एवं संध्या की प्रार्थना सभा में प्रतिदिन शामिल होते हैं, जहाँ प्रतिदिन राजेन्द्र बाबू के दर्शनार्थ हजारों व्यक्ति आते हैं।

—रामनन्दन सिंह

शराब की दूकान हटी

सफल होने पर संघर्ष-समिति भंग

वाराणसी में दशाश्वमेध घाट स्थित शराब की दूकान को लेकर लगभग ३॥ मास से सत्याग्रह और धरना का जो क्रम चल रहा था, उसके परिणामस्वरूप शराब की उक्त दूकान वहाँ से हटा कर अब गिरजाघर की चौमुहानी के पास स्थित ताड़ीखाने के निकट खोली गयी है। दूकान हटवाने के लिए शुरू किया गया आन्दोलन सफल हो जाने पर इस सम्बन्ध में बनी संघर्ष-समिति भी अब भंग कर दी गयी है।

यह ज्ञातव्य है कि उक्त दूकान दशाश्वमेध रोड से हटाने के लिए पिछले लगभग ४ वर्षों से निरन्तर माँग की जा रही थी, किन्तु उस पर जब अधिकारियों ने कोई ध्यान नहीं दिया, तो आसपास के नागरिकों ने इस वर्ष अप्रैल से ही दूकान के सामने सत्याग्रह और धरना प्रारम्भ कर दिया। यह दूकान उत्तर प्रदेश के न्यायमन्त्री श्री अली जहीर तथा सूचना-मन्त्री श्री बनारसीदास को यहाँ आने पर उन्हें भी दिखलायी गयी थी। अन्त में बाध्य होकर अधिकारियों को उक्त दूकान स्थानान्तरित करनी पड़ी। संघर्ष समिति के संयोजक श्री मदनगोपाल वर्मा ने समिति भंग करने की घोषणा करते हुए इस आन्दोलन में सहयोग देने वाले सभी व्यक्तियों को धन्यवाद दिया है। ●

लेखांक : ४

जनाधार के प्रयोग और अनुभव

• धीरेन्द्र मजूमदार •

बलिया में जब मैंने नरेन्द्र को 'सिरदर्द वाला' विचार समझाया था, तो उसने भी शायद यही भूल कर डाली थी। जहाँ हस्तक्षेप करने की आवश्यकता होती थी, वहाँ भी वह उसे छोड़ देता था। इस कारण भी सामूहिक खेती की बरबादी जितनी बचायी जा सकती थी, उतनी बचायी न जा सकी। फिर भी मैंने जो कुछ हुआ ठीक हुआ ऐसा समझा; क्योंकि उससे ग्रामवासियों के लोभवाली समस्या के हल में मदद मिली और लोग स्पष्ट रूप से समझ गये कि धीरेन्द्र भाई गाँव की ताकत से गाँव को खड़ा करना चाहते हैं, न कि बाहर के साधन से गाँव में प्रवृत्ति खड़ी करना चाहते हैं। इसके बाद से उनमें निराशा तो थी, लेकिन भ्रम नहीं था।

१० सितम्बर को मेरा जन्म-दिवस आता है। खादीग्राम के लोग पिछले ६-७ वर्षों से उस दिन 'श्रम-जयन्ती के' रूप में समारोह करते हैं। सन् १९६० में मेरा ६० वर्ष पूरा हुआ है। अतः उस वर्ष उन्होंने उस दिन को विशेष रूप से मनाया था और उसके लिए मैं, नरेन्द्र और विद्या, तीनों खादीग्राम गये थे। सितम्बर से पहले जनाधार के मामले में बलिया की परिस्थिति का विवरण मैं पहले ही लिख चुका हूँ और कार्यकर्ता स्वावलम्बी हों इस विचार का तुरन्त अमल होना चाहिए, इसे कैसे सोचा था, यह भी लिखा है। उस समय मैंने नरेन्द्र और विद्या को अम्बर चरखे के अभ्यास के लिए खादीग्राम में छोड़ कर लौटने पर बलियावालों की किस तरह निराशा देखी, इसका भी विवरण लिखा था। उस वक्त वहाँ की परिस्थिति को देख कर मुझे लगा कि अब समय आ गया है कि जब हम नेतृत्व और व्यवस्था अपने हाथ में लेकर गाँव वालों की उस निराशा को दूर करके विश्वास पैदा करें। अतएव गाँव के लोगों की सभा बुला कर उन्हें ढाढ़स दिलाया और कहा कि साल भर के लिए मैं सामूहिक खेती की जिम्मेदारी अपने हाथ में लेता हूँ, ताकि वे साल भर मेरे साथ काम करके समझ लें, जिससे अगले साल से लोग ठीक से व्यवस्था कर सकें। मेरे सहायक रामऔतार को दूसरे कामों से खाली कर खेती की पूरी जिम्मेवारी दे दी और ऊपर से मैं भी मार्गदर्शन करता रहा। इसके फलस्वरूप रामऔतार भी तैयार हुआ और गाँव की निराशा भी काफी दूर हुई।

सामूहिक खेती की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने से *सहकारिता* के प्रश्न पर अध्ययन और चिन्तन का काफी मौका मिला। मैं मानता हूँ कि मैंने शुरू में पूरे गाँव के सब लोगों को सहकारिता के अभ्यास के लिए शामिल करने की जो परिपाटी रखी थी, वह गलत थी। हिन्दुस्तान के आज के गाँव की परिस्थिति मुझे भली भाँति मालूम थी। उसके अनुसार गाँव के सब लोगों को एक सामूहिक खेती में शामिल करना 'मार्जिनल एप्रोच' नहीं था, यह स्पष्ट है। फिर भी मैंने उस प्रयोग को किया यह देख कर लोगों को आश्चर्य हो सकता है। अतः उसके पीछे का हिसाब और विचार क्या था, यह कह देना अच्छा होगा।

पहली बात यह है कि बलिया गाँव की वस्तुस्थिति की जानकारी जो मुझको दी *गयी थी वह गलत थी,* यह मैं नहीं समझा था। मुझे कहा गया था कि रपौली थाना, जिसमें बलिया गाँव है, सर्वोदय की दृष्टि से एक आदर्श थाना है और ऐसे थाने में बलिया एक आदर्श गाँव है। उसमें पूरे गाँव का संगठन है। इतना ही नहीं, बल्कि उन्होंने बीस गाँवों का अच्छा संगठन कर रखा है। वहाँ पहुँचने से पहले मुझे यह जानकारी थी। जब मैं वहाँ गया और किसान मजदूर, स्त्री और पुरुष, सबसे अलग-अलग बातें कीं, तो हर चीज के लिए उनकी तैयारी देखी जो आम तौर से नहीं होती है। उस समय मैं यह नहीं समझ सका *था कि इस तैयारी की प्रेरणा कहीं और* है। बाद में जो जानकारी हुई कि गाँव में समय देने के लिए वहाँ कोई कार्यकर्ता नहीं है तथा मालिक-मजदूरों के सम्बन्ध के सन्दर्भ में वहाँ घोर सामन्तवादी प्रक्रिया भरपूर है, यह उस समय मालूम नहीं हो पाया था। अतः मैंने समझा था कि सहकारी मानस बनाने के लिए जिस पूर्व-तैयारी की आवश्यकता होती है वह पहले से हो चुकी है।

दूसरी बात यह थी कि कि मैं वहाँ सहकारी खेती का प्रयोग करना नहीं चाहता था, बल्कि सहकारी समाज का प्रयोग करना चाहता था। इसलिए जरूरी था कि पूरे गाँव के लोगों को किसी बहाने से एकत्रित किया जाय। यही कारण है कि मैंने गाँव वालों को शुरू में ही कह दिया था कि खेती एक बहाना है, इस बहाने में आप लोगों में प्रेम साधने का नाटक कराना चाहता हूँ, क्योंकि नाटक भी ठीक से करते-करते उसका गुण स्वभाव में आ सकता है। एक चीज और मैं करना चाहता था। वह यह कि सब लोगों के मानस में यह आ जाय कि खेती सबकी चीज है। लेकिन उपर्युक्त अनुभव से यह स्पष्ट हो गया है कि सहकार की शुरुआत से ही उतने ऊँचे स्तर से काम शुरू नहीं करना चाहिए और इसके लिए क्रमिक अभ्यासक्रम ही बनाना पड़ेगा।

यद्यपि प्रारम्भ में उतने ऊँचे स्तर के सहकार की परिकल्पना गलत थी,' तो भी उसमें से कुछ अच्छा नतीजा निकला जो *हमारे आगे के काम के लिए सहायक* सिद्ध हुआ। गाँव की अशान्ति की मुख्य समस्या खेत चराने की होती है। सामूहिक खेती पर चरा देने की जो समस्या खड़ी होती थी, उसको लेकर पूरा गाँव साथ मिल कर तय करता था और इस काम को हम लोगों ने पूरा-पूरा अपना मान लिया था। फलस्वरूप चराने की समस्या आज बहुत कम हो गयी है। अर्थात् संघर्ष का प्रसंग अब कम आता है। संघर्ष का कम होना सहकार के विकास *के लिए एक बहुत महत्वपूर्ण आवश्यकता* है। दूसरी बात यह हुई कि खेती बिगड़ने से गाँव के लोगों में समस्याओं के विषय में सोचने का अभ्यास हुआ। इसका एक बड़ा कारण यह भी है कि उस गाँव के लोगों में ग्रामभावना कुछ मौजूद है और गाँव की बदनामी हो, यह वे नहीं चाहते। मजदूर वर्ग के लोग खुद होकर हमारे पास आकर कहते थे कि अगर टोली *बना-बना कर 'प्लाट' अलग किया जाय तो* जिम्मेदारी अधिक महसूस होगी। उन्हींकी सूचना पर से सहकार का अभ्यासक्रम बनाने की प्रेरणा मिली और आज सहकार के बारे में मेरा जो कुछ विचार है, उसको बनाने का श्रेय बलिया के मजदूरों का है, यह मानना पड़ेगा। अर्थात् उस मूल में से जनता को अपना सिरदर्द हो, इस दिशा में कुछ सफलता मिली।

पूरे गाँव को सहकार में शामिल कराने के निर्णय के पीछे अनुभव की कमी भी एक मुख्य बात थी। पिछले ३०-३५ सालों से ग्रामसेवा के काम करने के सिलसिले में मैंने काफी तादाद में सहकारिता का काम किया था। जिस जिस गाँव में इसका संगठन किया था, वहाँ गाँव के करीब-करीब सभी को सहकारी समिति का सदस्य बना सका था और उसका अनुभव काफी था। उसी अनुभव के आधार पर मैंने यहाँ के काम की परिकल्पना बनायी थी। लेकिन उस समय, मेरे सामने इसका साफ दर्शन नहीं था कि अब तक जो कुछ काम हुआ है, वह सब सहकार का काम नहीं था, सह लाभ का काम था। पूँजीवाले या जमीन वाले अपनी जमीन या पूँजी जमा करके सहकारी समिति बनाते थे। एक व्यवस्थापक उसी तरीके से मजदूरों से काम कराता था, जिस तरह से एक पूँजीपति कराता है। फिर मुनाफा हिस्सेदारों में बाँट देता था।

उन दिनों मैं उसीको सहकार *मानता था।* ऐसे सहकार में पूरे गाँव को शामिल होने में कोई अड़चन नहीं होती है, क्योंकि उसमें हिस्सेदार हिस्सा भर देने के बाद निश्चिन्त हो जाता है। लेकिन आज मेरी मान्यता बदल गयी है। सहकार के माने साथ मिल कर कार्य करना है। साथ मिल कर मुनाफा कमाना नहीं, ऐसा मानने लगा हूँ। साथ मिल कर काम करने के लिए आवश्यक है कि सदस्यों में आपस में सद्भावना हो, विश्वास हो तथा एक-दूसरे को सहने की भावना हो। इन गुणों के विकास का कार्यक्रम आर्थिक कार्यक्रम नहीं हो सकता। उसे निश्चित रूप से *शैक्षणिक कार्य के रूप में ही* विकसित करना होगा। अतः शिक्षण शास्त्र में जिस प्रकार से अभ्यासक्रम बनाया जाता है, उसी प्रकार से सहकार के लिए भी क्रमबद्ध अभ्यासक्रम बनाने की जरूरत है। जिस तरह प्राथमिक वर्गों में दूसरे विषयों के छोटे-छोटे पाठ्यक्रम बनाये जाते हैं उसी तरह सहकार के लिए भी शुरुआत में छोटा अभ्यासक्रम बनाना होगा। सहकार की निम्नतम इकाई दो की होती है। अतः दो के सहकार से शुरुआत करने की जरूरत है, ऐसा मैं मानने लगा हूँ।

मजदूरों के सुझाव पर मैं विचार करने लगा और अगली फसल में ऐसा ही करने का निर्णय किया। टोली का विचार करते समय इस पद्धति में मुझको एक दोष दिखाई दिया। इससे सहकार-भावना की शुरुआत हो जाती है, लेकिन इस प्रक्रिया में से ग्राम भावना के विकास का कोई रास्ता नहीं दिखाई देता था। पिछले सालों की पद्धति में उसका कुछ दर्शन हो रहा था। अतः मैंने यह निश्चय किया कि जो ६० प्रतिशत श्रम-सदस्यों का हिस्सा होता है, उसका आधा यानी ३० प्रतिशत टोली में बाँटा जाय और बाकी ३० प्रतिशत कुछ टोलियों के समूह में 'पूल' करके बाँटा जाय। टोली में सहकार थोड़े लोगों के बीच में होने के कारण उससे सहकारिता की भावना का विकास होगा और आधे में जो समूह-सहकार का रूप रखा

सहकार के माने साथ मिल कर कार्य करना है। साथ मिल कर मुनाफा कमाना नहीं, साथ मिल कर काम करने के लिए आवश्यक है सदस्यों में आपस में सद्भावना हो, विश्वास हो तथा एक-दूसरे को सहने की भावना हो। इन गुणों के विकास का कार्यक्रम आर्थिक कार्यक्रम नहीं हो सकता। उसे निश्चित रूप से शैक्षणिक कार्य के रूप में हो विकसित करना होगा।

'बीघा-कट्ठा अभियान' के प्रेरक अनुभव

करुणा फूट पड़ी ...

महेन्द्रकुमार सिन्हा

संथाल परगना जिला सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री लक्ष्मीनारायण भाई ने रक्सौल तथा अन्य प्रान्तों से आये हुए भाई-बहनों को एक एक, दो दो पंचायतों में 'बीघा कट्ठा अभियान' का काम करने के लिए भेजा। मुझसे कहा कि 'आपको मैं इस अंचल के सबसे प्रतिकूल पंचायत, बन्दाजोर भेज रहा हूँ। बन्दाजोर बहुत ही कठोर पंचायत है। अभी तक इस पंचायत में हम लोगों को सफलता नहीं मिली। आपको यहाँ काफी तपस्या करनी पड़ेगी। सम्भव है, आपको कई रोज भूखे भी रहने की नौबत आ जाय।' मैंने कहा, 'भाई, यह तो मेरा सौभाग्य है कि आप अधिक तपस्या कराने वाली पंचायत में भेज रहे हैं।'

मैं प्रेम और करुणा में विश्वास करके ईश्वर के भरोसे बन्दाजोर पंचायत के लिए चल पड़ा। जब मैं बन्दाजोर पंचायत के मुखिया के यहाँ पहुँचा तो घर वालों से मालूम हुआ कि मुखियाजी दुमका गये हैं, वे चार पाँच रोज के बाद वापस आयेंगे। मैं बन्दाजोर तथा सिरसाय गाँव में गया। वहाँ जाकर मैंने गाँव के भाइयों के सामने भूदान यज्ञ का विचार रखा और भूमिहीनों के लिए 'बीघे में कट्ठा' भूमि देने के लिए निवेदन किया। लेकिन भूमि देना तो दूर रहा, लोग अपने दरवाजे पर बैठाना भी नहीं चाहते थे! कहते थे कि हम लोगों के पास भूमि ही कहाँ है कि हम लोग भूदान यज्ञ में जमीन दान दें। सुबह ६ बजे से १२ बजे दोपहर तक लोगों के दरवाजे दरवाजे झोली लेकर घूमता रहा, लेकिन किसीने न अपने दरवाजे पर बैठाया और न भूमि ही दान में दी।

मैंने तो संकल्प कर लिया था कि जिस दिन भूमि नहीं मिलेगी, उस दिन भोजन भी नहीं करूँगा! मैं निराश होकर आम के एक पेड़ के नीचे बैठ गया और यही सोचता रहा कि इन बेचारे गरीब भूमिहीनों के प्रति लोगों के हृदय में जरा भी करुणा पैदा नहीं हो रही है। यही सोच रहा था कि एक भाई आये और पूछने लगे कि आम खाइयेगा, तो मैंने कहा कि भाई साहब, मुझे तो पहले भूमिहीनों के लिए भूमि चाहिये, बाद में आम चाहिये। उन भाई ने कहा कि पहले आम तो खाइये, बाद में भूमि लीजिये। उन भाई की आवाज में आशा की किरण दिखायी दे रही थी। उन्होंने कहा कि मैं अपनी ५० बीघे जमीन में से ५० कट्ठा अच्छी भूमि आपको दान में देता हूँ। बड़े आनन्द से दान पत्र भर दिया और एक भूमिहीन गरीब को सामने लाकर खड़ा कर दिया और कहा कि इन्हीं को जमीन दे दीजिये। वह भाई जाति के मुसहर थे। उस भाई ने कहा कि मुझे एक धूर भी जमीन नहीं थी, पर आज विनोबाजी तो हम लोगों के लिए भगवान बन कर आये हैं! फिर मैंने प्रेम से भोजन किया।

दूसरे दिन मैंने गोवर्धनरायजी के यहाँ जाने के लिए लोगों से रास्ता पूछा। आप इस इलाके के सबसे धनी मानी व्यक्ति हैं। लोगों ने कहा कि 'वह बहुत कंजूस आदमी हैं। उनके पास इस जिले के बहुत बड़े भूदान कार्यकर्ता गये थे, लेकिन किसी को उन्होंने अपनी एक धूर भी जमीन नहीं दी, तो आपको कैसे देंगे! आपका वहाँ जाना बेकार है।' मैंने कहा, 'भाई, सबके हृदय में परमेश्वर बसता है और सबके हृदय में एक-दूसरे के लिए करुणा और प्यार भरा रहता है। इस विश्वास से मैं गोवर्धनरायजी के पास जा रहा हूँ।' मैं उनके यहाँ चिलचिलाती हुई धूप में लगभग डेढ़ बजे पहुँचा। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने कहा कि आप इतनी धूप में क्यों चले, जरा ठंढा होने पर चलते तो इतनी तकलीफ नहीं होती। मैंने कहा, 'भाई साहब, मुझे जरा भी तकलीफ नहीं हुई है। मैं तो बहुत आनन्द के साथ आपकी सेवा में भूमिहीन भाइयों के लिए बीघे में कट्ठा भूमिदान लेने के लिए आया हूँ।' इतना सुनने के बाद वे थोड़ा मुस्कराये। फिर कुछ देर के बाद घर के भीतर चले गये और थोड़ी देर बाद बाहर आकर कहने लगे कि 'मेरे पास ७५ बीघा जमीन है। उसमें से मैं अपनी अच्छी भूमि बीघा में कट्ठा के हिसाब से ७५ कट्ठा दान में देता हूँ। ये कागजात हैं, आप देख लीजिये।' दानपत्र भरने के बाद एक भूमिहीन को सामने लाकर कहा कि इन्हीं को भूमि दे दीजिये। जब मैं वहाँ से चलने लगा तो कहा कि 'मैंने बहुत कार्यकर्ताओं को भूमि देने से इनकार किया था। लेकिन जब आप हमारे पास आये तो मेरी आत्मा ने कहा कि तुम अपनी भूमि भूदान-यज्ञ में दान कर दो।' वहीं पर दूसरे गाँव के पंचायत के एक भाई बैठे थे। गोवर्धनरायजी को दान देते हुए देख कर उन्हें भी प्रेरणा मिली और अपनी १२५ कट्ठा भूमि 'बीघे में कट्ठे' के हिसाब से दी। मैंने कहा, 'गोवर्धन बाबू, आपने तो दान दिया ही पर आपकी प्रेरणा से दूसरे भाई ने भी दान दिया। इसी को करुणा कहते हैं।'

१३ जून को मैं ताराजोरा गाँव पहुँचा। वहाँ के सभी किसानों ने अपनी भूमि 'बीघे में कट्ठा' के हिसाब से दान में दी और प्राप्त भूमि वहीं के भूमिहीनों में तुरत बाँट दी गयी। एक दाता ने कहा कि जितना आनन्द मुझे भूमि दान-देने से मिल रहा है, उतना आनन्द और किसी दूसरी चीजों से नहीं मिला था। विनोबाजी करुणा की प्रक्रिया से भूमिवानों से भूमि लेकर भूमिहीनों में बाँट रहे हैं। इसी प्रक्रिया से गाँव में परिवार की भावना पैदा होगी और गाँव सुखी रहेगा। इस गाँव के २५ किसानों ने 'बीघे में कट्ठे' के हिसाब से अपनी भूमि दान में दी और उसी दिन उसी गाँव के भूमिहीनों के बीच उसका वितरण भी कर दिया गया। इस गाँव में अब एक भी भूमिहीन नहीं रहा। इस गाँव की भूमिहीनता गाँव के भूमिवानों ने अपनी भूमि देकर करुणा के द्वारा मिटा दी।

इस तरह बन्दाजोर पंचायत में निराशा दूर हो गयी और करीब करीब इस पंचायत के सभी गाँवों में प्रायः जमीन मिली और बँट भी गयी। लगभग ८०० कट्ठा भूमि मिली। प्रति घर कुछ न-कुछ जमीन मिलती गयी। एक दिन भी दान-पत्र के बिना मेरी झोली खाली नहीं रही। यह आदिवासियों का जिला बड़ा ही गौरवशाली और करुणामूलक है। संथाली भाइयों के घर जाकर उनके परिवारों के बीच बैठ कर भोजन करने में जो आनद का अनुभव हो रहा था, वैसा आनन्द और कहीं नहीं मिला। बेचारे बड़े सरल हृदय के और सच्चे तथा ईमानदार लोग हैं। इन लोगों का हृदय प्रेम और करुणा से भरा हुआ है। इसका प्रत्यक्ष दर्शन मुझको हुआ। विनोबाजी ने सच ही कहा है कि संथाल परगना वैदिक जातियों का जिला है। वैदिक ऋषियों की श्रद्धा हमारे आदिवासियों में उनके जीवन में प्रत्यक्ष देखने को मिलती है।

मेरा अपना दावा है कि संथाल परगना 'बीघा कट्ठा अभियान' के लिए बिहार के सभी जिलों से बहुत ही अनुकूल जिला है। हम कार्यकर्ता पूरी निष्ठा और श्रद्धा तथा विश्वास के साथ 'बीघा कट्ठा अभियान' को चलायें। निराश होने का कोई कारण नहीं। मैं तो कहूँगा कि संथाल परगना जिले में बीघा कट्ठा अभियान को सफल बनाने के लिए बिहार की पूरी शक्ति लगायी जाय, तो सफलता अवश्य ही मिलेगी। —जिला सर्वोदय-मंडल

शाहाबाद, बिहार

गया है, इससे समूह-भावना पनपेगी। इस प्रकार से छोटी टोली के दोष को सुधारने का सोचा गया। हम लोगों ने जब इस पद्धति का ऐलान किया तो श्रम सदस्यों में काफी संतोष हुआ और वे आपस में टोली बना कर हमसे 'प्लाट' लेने के लिए तैयार हुए। हम लोगों ने एक टोली में कितनी संख्या होगी, इसका निर्णय उन्हीं पर छोड़ा, तो उन्होंने भिन्न भिन्न टोली २ से ५ तक की संख्या में बनायी। इस प्रकार दूसरे साल की खेती व्यवस्थित ढंग से चल सकी और दो टोलियों की खेती किसानों की व्यक्तिगत खेती से भी अच्छी रही। इस व्यवस्था से भूमि-सदस्य और श्रम-सदस्य, दोनों को सन्तोष हुआ और पिछले साल की निराशा करीब करीब दूर हो गयी।

टोलियों के काम को मैं गहराई से देखता रहा और इसी निरीक्षण के बीच हमको लगा कि आज की मानसिक तथा सांस्कृतिक परिस्थिति में टोली-सहकार भी समुचित शिक्षण के बिना ठिक नहीं होगा। यह महसूस हुआ कि श्रम सदस्यों के पूरे परिवार के शिक्षण की व्यवस्था जब तक नहीं होगी, तब तक शायद दो परिवार के बीच सहकार भी सफल न हो सकेगा। इसी अनुभव में से परिवार शिक्षण का विचार आया और मुझको लगा कि इसी में से ग्राम भारती का छोर निकलेगा। वस्तुतः मैं आज जो ग्राम भारती की योजना बताता हूँ, उसका छोर इसी अनुभव से निकला है ऐसा समझना चाहिये। समग्र नई तालीम की शुरुआत परिवार-शिक्षण कर्म से ही करना है, यह विचार बलिया के नई तालीम के अनुभव से भी निकला था। लेकिन उसकी स्पष्ट धारणा तो सहकार का मार्ग ढूँढने की कोशिश में से ही निकली।

रबी की फसल काटने के बाद, अगली खरीफ की फसल में २-२ की टोली बने, ऐसा मैंने श्रम-सदस्यों को कहा है। इस प्रश्न पर जब उनसे चर्चा करते हैं तो वे भी कहते हैं कि दो में पुरुषार्थ की प्रेरणा अधिक होगी और आपस की सद्भावना बच सकेगी। देखना है, इसका क्या नतीजा निकलता है! इस साल श्रम-सदस्यों के परिवार के लिए भी शिक्षण की पद्धति निकालनी है और उस कोशिश में सामूहिक खेती और ग्राम भारती अलग न होकर एक ही प्रवृत्ति हो जायेगी और उसी को हम 'ग्राम भारती' कह सकेंगे।

(समाप्त)

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ६ जुलाई '६२ | वर्ष ८ : अंक ४०

सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण की आवश्यकता और उसका उपाय

विनोबा

दिल्ली में एक बहुत बड़ा सम्मेलन हुआ। हिन्दुस्तान के बहुत बड़े-बड़े लोग वहाँ आये थे। राजनीति के विद्वान आये थे, धर्मपुरुष आये थे, साहित्यिक आये थे, प्राध्यापक आये थे, वैज्ञानिक आये थे। सबने एक होकर तीन दिन चर्चा की। चर्चा का सार यह था कि दुनिया में शस्त्रास्त्र बनाने की होड लगी है और भयानक संहारक शस्त्र बन रहे हैं, ऐसे सब शस्त्रों को खतम करना चाहिए। उन सब लोगों ने मिल कर यह अपील की। उस सम्मेलन का उद्घाटन डा० राजेन्द्रप्रसाद ने किया, जो दस-बारह साल दिल्ली में राष्ट्रपति थे, जिन्होंने देश में सर्वोत्तम पदवी पायी है और अब उससे मुक्त हुए हैं और सामान्य जनसेवक के नाते देश की सेवा करना चाहते हैं।

उद्घाटन के समय डा० राजेन्द्रप्रसाद ने जो भाषण दिया, उसमें उन्होंने कहा कि जब दुनिया को अपील करते हैं कि संहारक शस्त्र हटाओ, तो दुनिया को अपील करने की योग्यता आने के लिए तुम्हारे पास शस्त्र हैं, उनका उपयोग मत करो और राह मत देखो कि दूसरा शस्त्र हटायेगा। तुम अकेले अकेले कर डालो—'युनिलैटरली'—कर डालो। याने अपील का असर तब होगा, जब हिंदुस्तान में प्रथम निःशस्त्रीकरण करेगा। मेरे जैसा आदमी यह बोलता तो लोग कहते कि इस पर जिम्मेदारी है नहीं, यह तो हवा में उड़ने वाला, 'नामघोषा' पढ़ने वाला, गीता का पाठ करने वाला है!

व्यावहारिक व्यक्ति की सलाह

राजेन्द्रबाबू दस-बारह साल राष्ट्रपति थे। अनेक राष्ट्रों के मुख्य-मुख्य मनुष्यों से मिलने का उनको मौका मिला। इसलिए यह व्यवहारशून्य, पागल मनुष्य की बात नहीं। और यह तो बाबा है, न उसके बाल बच्चे हैं, न उसको आसक्ति है, वह मनुष्य फकीर है, सबको सन्यासी की दृष्टि से देखता है, यह आक्षेप राजेन्द्रबाबू पर नहीं। उन्होंने देश की चालीस साल सेवा की। बारह साल सरकार की मुख्य जवाबदारी सम्हाली। इस तरह उन्होंने अन्दर और बाहर रह कर सेवा की। उनका दुनिया भर से सम्पर्क है। ऐसा मनुष्य इतनी बड़े सम्मेलन का उद्घाटन करता हुआ प्रथम यह बात बोलता है, तो यह बात ऐसे ही छोड़ने की नहीं है। हम भी यही कहते हैं और दस साल से सतत कहते आये हैं।

भूखा कौन रहेगा?

पुरानी बात है। लियाकतअली खाँ ने—जब वे पाकिस्तान के प्राइम मिनिस्टर थे—कहा था कि हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के बीच जो मसले हैं, वे बातचीत से हल होंगे। लेकिन बातचीत से ताकत कब आती है! ताकत के साथ बातचीत करनी पड़ती है, तब परिणाम होता है। इसलिए हमको सेना मजबूत करनी चाहिए। उसको खर्च आयेगा। उसके लिए हम भूखे रहेंगे, लेकिन देश की रक्षा के लिए प्रयत्न करेंगे। उस वक्त हमने व्याख्यान दिया था। हमने कहा था कि इसके भूखे रहने का अर्थ समझ लें। वे कहते हैं कि हम भूखे रहेंगे, याने क्या! क्या लियाकतअली खाँ भूखे रहने वाले हैं! उसका सीधा अर्थ है कि हमारे देश में जो गरीब लोग हैं, वे भले भूखे रहें, उनकी भूख मिटाने का साधन हमारे पास भले न हो, लेकिन सेना के लिए हम जरूर पैसा खर्च करेंगे।

याने यह कि वे गरीब लोगों के त्याग के लिए तैयार हैं। वे तो मर गये, उन पर टीका करने के लिए मैंने यह नहीं कहा था, न कह रहा हूँ। लेकिन एक विचार समझने के लिए यह बात कही। राष्ट्र के गरीब लोग भले मर जायँ, लेकिन संरक्षण करना चाहिए और मजबूती के साथ करना चाहिये। उस वक्त हमने कहा था, हमको हमारी सेना खतम करनी चाहिये, पूर्ण निःशस्त्रीकरण करना चाहिये। हमको यह समझना चाहिये कि जब तक हम सेना रखते हैं, शस्त्र रखते हैं, तब तक हमारी बातचीत में ताकत नहीं आयेगी। यह बात हम लोग जल्द-से जल्द नहीं समझेंगे, तो आपस-आपस में लड़ कर मरेंगे।

> **शस्त्रास्त्र मजबूत होते हैं तब बातचीत में ताकत आती है, यह जो ख्याल है, वह गलत है। मसले तब हल होंगे, जब पहले हम निःशस्त्रीकरण करेंगे।...बातचीत में तो शब्द-शक्ति से काम होगा, शस्त्र से नहीं। यह बात अब दुनिया समझ गयी है। हमारे शब्द का वजन तब होगा, जब उसके पीछे ताकत होगी। यह कौनसी ताकत होगी? इसमें शक नहीं कि हिन्दुस्तान निःशस्त्रीकरण करेगा, तो उसकी नैतिक शक्ति बढ़ेगी और बातचीत करने की हिन्दुस्तान की जो शब्द-शक्ति है, उसका असर दुनिया पर पड़ेगा।**

मसले कब हल होंगे?

दिल्ली में सम्मेलन हुआ था। वहाँ राधाकृष्णन् ने बताया था कि हमको विश्वराष्ट्र बनाना होगा। याने 'जय जगत्' करना होगा। यह अब जरूरी चीज हो गयी है। देश में नैतिक शक्ति बढ़ानी चाहिये, तो देश को निःशस्त्रीकरण करना चाहिये। हिन्दुस्तान जैसे देश को भय का कारण नहीं कि आसपास के राष्ट्र आक्रमण करेंगे और हिन्दुस्तान को फाड़ फाड़ कर खायेंगे। इसलिए हिम्मत के साथ निःशस्त्रीकरण करना चाहिये, तभी बातचीत में ताकत आयेगी। शस्त्रास्त्र मजबूत होते हैं, तब बातचीत में ताकत आती है, यह जो ख्याल है, वह गलत है। मसले तब हल होंगे, जब पहले हम निःशस्त्रीकरण करेंगे। लेकिन बातचीत के लिए रशिया आता है, तो पहले 'एटमिक' छोड़ देता है, यह दिखाने के लिए कि हमारी शक्ति बड़ी है। सब राष्ट्र यही दिखाने की कोशिश करते हैं कि हमारी शक्ति बड़ी है। बातचीत में तो शब्द-शक्ति से काम होगा, शस्त्र शक्ति से नहीं; यह बात अब दुनिया समझ गयी है। हमारे शब्द का वजन तब होगा, जब उसके पीछे ताकत होगी। यह ताकत कौनसी! इसमें शक नहीं कि हिंदुस्तान निःशस्त्रीकरण करेगा तो उसकी नैतिक शक्ति बढ़ेगी और बातचीत करने की हिंदुस्तान की जो शब्द-शक्ति है, उसका असर दुनिया पर पड़ेगा।

जब गाँव सुरक्षित-स्वरक्षित होंगे

निःशस्त्रीकरण के लिए हिंदुस्तान में हिम्मत कब आयेगी? जब गाँव गाँव सुरक्षित होंगे, स्वरक्षित होंगे। ऐसे सुरक्षित और स्वरक्षित गाँव होंगे, तब सरकार को विनति कर सकते हैं कि 'अब निःशस्त्रीकरण करो, सेना की अब कुछ आवश्यकता नहीं। गाँव गाँव में एकता है। धर्मभेद, भाषाभेद, जातिभेद, पंथ-भेद, राजनैतिक पक्ष भेद गाँव में नहीं हैं। यह पंचभेदासुर हमने खतम किया है, सारा गाँव एक बनाया है। जो पंचमुखी रावण है, उस पंचमुखी रावण की मुक्ति हो गयी है। पूरा गाँव एक होकर काम करता है। सो अब शस्त्र की कुछ जरूरत नहीं रही। करो निःशस्त्रीकरण, हम सब एक हैं!' यह शक्ति भारत में पैदा करनी होगी, तब निःशस्त्रीकरण बिल्कुल सरल होगा। इसलिए हम राजेन्द्रबाबू का पूरा समर्थन करते हैं। लेकिन मेरी जबान में क्या शक्ति! मेरे जैसे एक फकीर की जबान तो पुराने जमाने से बोलती आयी है। अगर हमारी जबान में ताकत लानी है, तो आपको सारा प्रदेश ग्रामदानी बनना होगा।

सामदायिक दुवा

हम पन्द्रह महीने से सुनते आये हैं कि यहाँ बहुत बड़ी समस्या है अनुप्रवेश—इन्फिल्ट्रेशन—की, उसके लिए क्या करना, इस पर बहुत विचार होता है। सीमा पर क्या करेंगे? दीवार बाँधेंगे या रक्षा के लिए पुलिस रखोगे! यहाँ की सरकार केंद्र को कहती है कि तुम खर्च उठाओ, यह 'डिफेन्स' का सवाल है। यह सीमा का सवाल है। इसके लिए मा

लेखांक : २

दिल्ली का अणु-अस्त्र विरोधी सम्मेलन

सिद्धराज ढड्ढा

अणु-अस्त्र-विरोधी सम्मेलन के निर्णयों को उनके सही संदर्भ में समझने की दृष्टि से यह जरूरी है कि इस सम्मेलन के दायरे के बारे में स्पष्टता हो जाय। हमारे देश में खास तौर से ऐसा अनुभव आता है कि कितने भी सीमित विषय पर आप कोई सभा या चर्चा आयोजित करें, उसमें भाग लेने वाले वक्ता अक्सर उस दायरे के अन्दर सीमित नहीं रहते, बल्कि उसे एकदम व्यापक बना देते हैं और विषय के आदि-अन्त की दार्शनिक चर्चा उसमें शामिल कर लेते हैं। कभी-कभी तो दायरे से बाहर जाकर समूची सृष्टि के आदि-अन्त और कारणों तक की चर्चा उठा देते हैं। गांधी शांति-प्रतिष्ठान ने जो सम्मेलन बुलाया था, उसके नाम से ही जाहिर है कि उसका विषय अणु अस्त्रों के विरोध तक सीमित था, बल्कि अणु-अस्त्रों के संबंध में भी मुख्यतः उनके प्रयोगों से आज हो रही प्रत्यक्ष हानि की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए उनके प्रति विरोध प्रकट करना और उन्हें बन्द कराने के लिए संभव कार्रवाई करना सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य था। पर दो दिन की चर्चाओं में दो चार को छोड़ कर शायद ही ऐसा कोई वक्ता था, जिसने युद्ध-विरोध का व्यापक प्रश्न, और उससे भी *आगे बढ़कर हिंसा-अहिंसा का तात्त्विक* प्रश्न, अपने भाषणों में न लाया हो!

सम्मेलन के सभापति, गांधी शांति-प्रतिष्ठान के अध्यक्ष श्री रंगराव दिवाकर 'राजाजी' की प्रेरणा से बार-बार वक्ताओं का ध्यान सम्मेलन के विषय की ओर आकर्षित करते रहे और उन्हें दायरे से बाहर न जाने के लिए अनुरोध करते रहे। स्वयं राजाजी ने एक से अधिक बार बीच-बीच में सम्मेलन के उद्देश्य की स्पष्टता की..., पर यह सारी कोशिश बेकार गयी।

आखिरकार जयप्रकाशजी को बीच में आना पड़ा। उन्होंने वक्ताओं के इस 'गगन-विहार' पर खेद प्रकट करते हुए अपनी नपी-तुली, पर ओजपूर्ण शैली में मुख्य विषय था, सम्मेलन से क्या अपेक्षित है इसका और सम्मेलन को क्या करना चाहिये, इन सब बातों का सुन्दर विवेचन किया। बार बार उन्हीं बातों के दोहराये जाने से और विषय के बाहर की तात्त्विक बातों को सुनते-सुनते ऊबे हुए लोग आधा घंटे तक अत्यन्त शांति और ध्यान के साथ 'जे०पी०' का भाषण सुनते रहे। एक तरह से यही भाषण सम्मेलन के निवेदन का आधार बना। जयप्रकाशजी के भाषण के बाद सम्मेलन की चर्चाओं के निष्कर्ष के रूप में एक निवेदन तैयार करने का काम आचार्य कृपलानी, आचार्य ए० जे० मस्ती और जयप्रकाश नारायण को सौंपा गया।

अणुअस्त्रों का ही विरोध क्यों?

युद्ध और हिंसा का प्रयोग अपने आप में बुरी और मानवता-विरोधी चीजें हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है। सम्मेलन को भेजे हुए सन्देश में विनोबाजी ने भी इस बुनियादी बात की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहा था कि उन्हें 'सोचने पर पिस्तौल और छुरे का आणविक अस्त्रों से अधिक ही भय मालूम होता है।' और गांधी के जीवन और उनकी सिखावन का तो यह मुख्य सन्देश था ही। परन्तु गांधी शांति-प्रतिष्ठान ने सम्मेलन का दायरा अणु-अस्त्रों के विरोध तक क्यों सीमित रखा था, इसका विवेचन करते हुए राजाजी ने सुन्दर ढंग से समझाया कि अणु-अस्त्रों और उनसे 'पहले के भीषण-से-भीषण शस्त्रों में एक मूलभूत फर्क है। तोप, तलवार, बन्दूक आदि भी हिंसक मनोवृत्ति के ही प्रतीक हैं और व्यापक संहार के साधन बन सकते हैं, पर पहली बात तो यह है कि सामान्य तौर पर उनका प्रत्यक्ष असर लड़ने वालों तक ही सीमित रहता है। दूसरे, उनकी भयंकरता उनके प्रत्यक्ष इस्तेमाल पर ही प्रकट होती है। *"अपनी तलवार को कोई बार बार धार* लगाता रहे या बन्दूक को अधिक कारगर बनाने के प्रयोग करता रहे, तो उससे दूसरे मनुष्यों को कोई नुकसान नहीं पहुँचता, जब तक कि उन तलवार-बन्दूक का वास्तविक इस्तेमाल न हो। पर अणुअस्त्रों की बात ऐसी नहीं है।" उनका इस्तेमाल होने पर तो सर्वनाश की संभावना ही नहीं, वह करीब-करीब निश्चित ही है, पर इस्तेमाल न हो तब भी, सिर्फ उनके *निर्माण और प्रयोग आदि की प्रक्रिया भी* कम भयंकर या विनाशकारी नहीं है।

परीक्षण की जहरीली गैस

उनके प्रयोगों से दुनिया का सारा वायुमंडल उत्तरोत्तर विषैला बन रहा है। इन प्रयोगों के कारण निकलने वाली अत्यन्त जहरीली वायु आज भी लाखों को नुकसान पहुँचा रही है, बीमारी पैदा कर रही है, दुनिया की हवा, पानी, वनस्पति, पेड़-पौधे, दूध, अन्न सबको जहरीला बना रही है। इतना ही नहीं, इस विष के कारण आगे आने वाली पीढ़ियों पर भी भयंकर परिणाम होने वाला है, ऐसा वैज्ञानिकों का मत है।

लाखों-करोड़ों बच्चे लूले, लंगड़े, अंधे, कुबड़े और विकृत इस पृथ्वी पर पैदा होंगे। वास्तव में जनसाधारण को अणुअस्त्रों के परिणामों की भयंकरता की अभी पूरी कल्पना ही नहीं है। इस विषय की जानकारी का प्रसार बहुत जरूरी है, ताकि इस सारे मानव विरोधी जघन्य अपराध के खिलाफ मानव-जाति की अंतरात्मा बगावत के लिए खड़ी हो सके। अणु-अस्त्रों के इस्तेमाल और उनको उत्तरोत्तर 'पूर्ण' बनाने के प्रयोगों का असर लड़ने वालों तक या किन्हीं खास 'अपने-परायों' तक सीमित रहने वाला नहीं है। कोई लड़ाई से संबंधित हो या न हो, उसे चाहे-न-चाहे, अणुअस्त्रों के प्रयोगों और इस्तेमाल से होने वाले विनाशकारी असर से वह बच नहीं सकता। *यह* अणुअस्त्रों और अन्य परंपरागत (कन्वेन्शनल) अस्त्रों में मौलिक भेद है। इस दृष्टि से राजाजी के शब्दों में अणुअस्त्र 'अनीतिमय'–इन्मारल हैं, उनकी दूसरे पुराने प्रकार के अस्त्रों से कोई तुलना नहीं हो सकती। इसीलिए दिल्ली-सम्मेलन का दायरा अस्त्रों के विरोध तक सीमित रखा गया था और इसीलिए उसके निर्णयों में इन अस्त्रों के प्रयोग, निर्माण और इस्तेमाल के विरुद्ध कार्रवाई को प्रमुख स्थान दिया गया है, हालांकि सम्मेलन के निवेदन में युद्ध-विरोध और हिंसा-अहिंसा के व्यापक प्रश्नों की भी चर्चा है और तत्संबंधी कुछ कार्यक्रम का भी संकेत है। सम्मेलन के पूरे निवेदन की अविकृत नकल अभी तक भी प्राप्त नहीं हो सकी है, पर दैनिक समाचार-पत्रों में उसका सार निकल चुका है।

सीधी बगावत : एकमात्र शरणोपाय

एक ओर तो अणुअस्त्रों की अनैतिकता और उनका मानव-विरोधी स्वरूप तथा दूसरी ओर स्वयं मानव की रक्षा के लिए इन अस्त्रों की अनिवार्यता के पक्ष में प्रचार द्वारा बनाया हुआ वातावरण तथा उसके द्वारा अपने पक्ष की स्थिति सुदृढ़ बनाये हुए निहित स्वार्थ वाले लोगों व साधारण सलाहकार तथा उत्तरदायित्व से परे बलशाली शासकों की गुट बन्दी—इस सारी परिस्थिति को देखते हुए ऐसा अवसर आ गया है, जब सभा-सम्मेलनों के सामान्य प्रस्ताव या मत-प्रदर्शन इस भयंकर प्रवृत्ति को रोकने में शायद ही कारगर हों। पिछले १०-१५ वर्षों में अनेक बार केवल भावनाशील विचारकों ने ही नहीं, बल्कि शुद्ध गणिती वैज्ञानिकों ने अणु-अस्त्रों से होने वाले भयंकर परिणामों की ओर सत्ताधारियों का ध्यान आकर्षित किया है, पर वह सब बेकार साबित हुआ है। अब संभावित सर्वनाश से अगर दुनिया को बचाना हो तो सिवा इसके कोई चारा नहीं है कि हर देश में जगह-जगह जनसाधारण मानव जाति के प्रति इस घोर अपराध के खिलाफ बगावत करने के लिए उठ खड़े हों। *दिल्ली सम्मेलन के* इस निर्णय के द्वारा कि एक निर्धारित तिथि को दुनिया भर में सर्वत्र लोग अणु-अस्त्रों के खिलाफ उपवास, प्रार्थना, सभाओं आदि के द्वारा अपना विरोध जाहिर करें और यह घोषणा कर कि कम-से-कम उनके नाम पर किसी भी हालत *में अणु-अस्त्रों का उपयोग वे पसन्द नहीं* करते हैं—इस दिशा में पहला कदम उठाया गया है। छोटी छोटी सांकेतिक कृतियों से किस तरह लाखों करोड़ों लोगों को सक्रिय बना कर उनमें शक्ति और भावना का संचार किया जा सकता है तथा उन्हें

[शेष पृष्ठ ११ पर]

सम्भावित सर्वनाश से अगर दुनिया को बचाना हो तो सिवाय इसके कोई चारा नहीं है कि हर देश में जगह-जगह जनसाधारण मानव-जाति के प्रति इस घोर अपराध के खिलाफ बगावत करने के लिए उठ खड़े हों। एक निर्धारित तिथि को दुनिया भर में सर्वत्र लोग अणु अस्त्रों के खिलाफ उपवास, प्रार्थना, सभा आदि के द्वारा अपना विरोध जाहिर करें और यह घोषणा करें, कि कम-से-कम उनके नाम पर किसी भी हालत में अणु अस्त्रों का उपयोग वे पसंद नहीं करते।

तो आप दोनों देशों का 'फेडरेशन' करो या दूसरी ताकत खड़ी करो, जिससे मसला हल हो। जब तक जमीन खरीदने-बेचने की चीज होती है, तब तक यह मसला हल नहीं होने वाला। इसलिए हम कहते हैं कि जमीन की मिलकियत व्यक्तिगत न होकर ग्रामसभा को दे दो। जब जमीन खरीद नहीं सकते, तब तक अनुप्रवेश की प्रेरणा खतम हो जाती है। अगर यह होता है, तो कम-से-कम नब्बे प्रतिशत सवाल हल हो जाता है। बाकी दस प्रतिशत सवाल रहेगा, तो वह हम केंद्र या राज्य-सरकार पर छोड़ देंगे। अब दूसरे देशों की हालत देखिये। जर्मनी और फ्रांस के बीच कुछ पहाड़ आदि तो नहीं थे। भाषाएँ भी इतनी नजदीक हैं कि फ्रेंच जानने वाला पन्द्रह दिन में जर्मन सीख सकता है। लेकिन भाषाएँ अलग-अलग हैं, इसलिए उस आधार पर दो राष्ट्र बन गये। ऐसी उनकी अवस्था हो गयी है। हिंदुस्तान जैसा जातिभेद भी वहाँ नहीं है। इतना होते हुए भी वहाँ दुश्मनी है। तो ऐसे सवालों का सामाजिक हल होना चाहिये। इसलिए एक ही रामबाण उपाय है कि गाँव की जमीन सामूहिक हो। खेती भले ही अलग-अलग करें, लेकिन जमीन सामूहिक हो। राम दो बार बाण नहीं चलाता, एक बाण में ही काम होता है। वैसे ही यह उपाय होगा। सब लोग मिल कर यहाँ काम करेंगे तो यह काम बनेगा।

[शेष पृष्ठ ११ पर]

ब्रह्मसत्यं जगत्स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

करुणा कैसे बढ़े ?

कोई भी देश की सरकार अपने देश की सैनिक शक्ति बढ़ाने की बात सोचती है। लेकिन यह नहीं सोचती कि अपने देश में अगर कारुण्य बढ़ेगा, तो उस देश के जरिये दुनिया को शान्ति मिलेगी और सारी दुनिया की जनता करुणा-गुण से जीत ली जायेगी। करुणा का प्रभाव मानव पर कितना पड़ता है, यह बात जाहिर है। फिर भी राष्ट्रों की सरकारें राष्ट्र की सम्पत्ति से राष्ट्र का जो नियोजन करती हैं और देश को मजबूत बनाने की सोचती हैं, वे करुणा का प्रचार नहीं करतीं, सैनिक-शक्ति का ही प्रचार करती हैं। पाकिस्तान की सरकार का सत्तर प्रतिशत खर्च सेना पर हो रहा है और वह समझती है कि उससे देश मजबूत होगा। हमारे नेता भी समझाते हैं कि 'हम भी जागरूक हैं, विश्वप्रश्न के प्रति उदासीन नहीं हैं। किन्तु केवल तात्कालिक दृष्टि से काम करना उचित नहीं, दूरदृष्टि भी रखनी पड़ती है। देश-सेवा के दूसरे भी काम हैं, उनके प्रति भी दुर्लक्ष्य नहीं कर सकते। सेना की तरफ भी ध्यान देना पड़ता है।' हमारे नायकों को इस तरह का उत्तर देना पड़ता है, जो अपने मन में करुणा को बहुत आदर देते हैं।

[भडोनी, आंध्र, २४-३-'५६] —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख, संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

संपादकीय

श्रद्धांजलि

भारत की आजादी की लड़ाई के दो और वीर तथा अप्रतिम सेनानी इस सप्ताह हमारे बीच में से चले गये। एक-एक करके वे लोग, जो बरसों तक स्वतन्त्रता-संग्राम की पहली पंक्ति में रहे, हमारी स्थूल दृष्टि के सामने से ओझल हो रहे हैं, पर इसमें संदेह नहीं है कि उनकी याद भारतीय इतिहास में पीढ़ियों तक कायम रहेगी। त्याग और बलिदान से आत्मा निखरती है और मनुष्यत्व का विकास होता है, केवल भौतिक प्रगति से नहीं, और विलास से तो हरगिज नहीं—इस बात का ज्वलन्त प्रमाण गांधी युग के ये एक से एक बढ़े-चढ़े सेवक रहे हैं।

आजादी की लड़ाई के समय की त्याग और तपस्या की आग में कितने व्यक्तित्व निखरे, यह ऐसे मौकों पर स्पष्ट हो जाता है। साथ ही यह व्यथा भी कभी कभी मन को परेशान करती है कि क्या ऐसी संख्या में जैसी गांधी युग में रही यह परम्परा आगे भी कायम रहेगी? दुनिया से उठ जाने वाले लोगों के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए यह कहना एक सामान्य बात हो गयी है कि उनका स्थान लेने वाले कम हैं। लेकिन स्वर्गीय राजर्षि टण्डनजी और डा० विधानचन्द्र राय जैसे व्यक्तियों के आसपास एकत्रित हुए सत्ता, पद, ख्याति आदि के आवरण को पार करके अगर हम उनके व्यक्तित्व के असली गुणों की ओर देखें तो ऐसे लोगों के संबंध में उपरोक्त उक्ति सहज और स्वाभाविक मालूम होती है।

श्रद्धेय टण्डनजी पिछले तीन वर्षों से काफी बीमार थे। कुछ सप्ताह से तो यह स्पष्ट हो गया था कि उनका शरीर अधिक दिन हमारे बीच नहीं रहेगा। पर विधान-बाबू के बारे में यह कल्पना नहीं थी। देश के वयोवृद्ध नेताओं में से बहुतों की अपेक्षा अच्छी शारीरिक व मानसिक सम्पत्ति उन्हें प्राप्त हुई थी। अचानक अपनी जन्मगाँठ के दिन ही, जीवन के पूरे ८० वर्ष समाप्त करके वे चले गये। दोनों मनीषियों को हमारी नम्र श्रद्धांजलि!

टिप्पणियाँ

इस अवसर पर एक बात का जिक्र करना अप्रासंगिक नहीं होगा। काफी अर्से से यह तो स्पष्ट हो गया था कि श्रद्धेय टण्डनजी अब अधिक दिनों जीवित नहीं रह सकेंगे। स्वर्गीय टण्डनजी की प्राकृतिक जीवन में और उपचार में अटूट श्रद्धा थी। जिस व्यक्ति का सारा जीवन उस प्रकार के रहन-सहन और निष्ठा में बीता हो उसे अंतिम समय रामनाम का सहारा देकर शांतिपूर्वक मरने देने के बजाय करीब करीब आखिरी घड़ी तक उसकी निष्ठा के प्रतिकूल इंजेक्शन आदि देना, यह विवेक की विपरीतता ही कही जायगी। जिन्होंने ऐसा किया उन्होंने अवश्य ही अच्छी नीयत से किया पर मोहवश किया, यह स्पष्ट है। आखिरी क्षण और बेसुध अवस्था में भी कोरामीन का इंजेक्शन देकर दस पाँच क्षण अगर उनके श्वास को और कायम रखा गया इसमें कौनसी बुद्धिमानी और विवेक था, यह समझ में नहीं आता। कम-से कम संबंधित व्यक्ति की भावनाओं का ख्याल तो ऐसे अवसरों पर अवश्य रखा जाना चाहिए। —सिद्धराज

दुःखद और लज्जाजनक

अखबार में २७ जून को जो दो खबरें अलग अलग छपी हैं, उनको हम ज्यों की त्यों एकसाथ यहाँ दे रहे हैं।

"ज्ञात हुआ है कि एक संसद-सदस्य का मकान इसलिए छीना जा रहा है कि वह स्वयं तो अन्य स्थान पर रहते हैं, पर अपना मकान अपने लड़के को दे दिया है। उनके लड़के ने भी चाणक्यपुरी में एक भारी कोठी बना ली है, जो किराये पर उठी है, लेकिन वह स्वयं पिता के सरकारी मकान में रहते हैं।"

* * *

"अलीगढ़ पुलिस की सहायता से लखनऊ के गुप्तचर विभाग ने रविवार को अलीगढ़ में भूतपूर्व एम० एल० ए० को भारतीय दण्ड-संहिता की धारा ४१७,४६७, ४६५,४६८ के अन्तर्गत गिरफ्तार किया और उन्हें जिला जेल भेज दिया।

ज्ञात हुआ है कि उक्त भूतपूर्व एम० एल० ए० ने बिना इण्टर-मीडियेट की परीक्षा में भाग लिये ही लखनऊ विश्वविद्यालय से बी० ए० की सनद प्राप्त कर ली थी। बी० ए० में प्रवेश लेते समय उन्होंने इण्टरमीडियेट का एक जाली प्रमाण-पत्र पेश किया था और बाद में जब विश्वविद्यालय द्वारा प्रमाणपत्र की प्रतिलिपि मांगी गयी, तो वे टाल-मटोल करते रहे। विश्वविद्यालय ने सन्देह होने पर यह मामला गुप्तचर-विभाग के सुपुर्द किया।"

इन समाचारों पर विशेष लिखने की आवश्यकता नहीं है। ये स्वयं अपनी गम्भीरता प्रकट करते हैं। जिनके हाथ में राज्य और देश का संविधान है और जो देश के जिम्मेदार प्रतिनिधि कहलाते हैं, उनका ऐसा अनैतिक आचरण न केवल लज्जाजनक, अपितु दुःखद भी है!

—मणीन्द्रकुमार

सुरस्य धारा

जिम्मेवारी में दो तत्त्व निहित हैं : काम के लिए अपने आप खपने की तत्परता तथा उत्तरदायित्व। काम सवेतन है या अवेतन, यह प्रश्न जिम्मेवारी के संदर्भ में महत्त्व नहीं रखता।

अपने आप खपने को वही तैयार होता है, जो काम को अपना समझता है। अपना समझने की कसौटी यह है कि साथी के दोष के कारण जो गलती हो रही है, उसका भी अपने को हिस्सेदार समझना।

उत्तरदायित्व डर से भी होता है और प्रेम से भी। सजा के डर से दुनिया के अधिकांश व्यवहार चल ही रहे हैं। प्रेम से जो उत्तरदायित्व दिखाया जाता है, उसमें अहिंसा का विकास है। गणतंत्र में उत्तरदायित्व एक अनिवार्य अंग है।

मैं वेतन नहीं लेता, इसलिए तुम मुझसे कौन जवाब मांगने वाले होते हो; यह दलील न अहिंसा की है, न गणतंत्र की। समाज हमसे हिसाब नहीं मांगता तो वह उसका प्रमाद है। हम उसके प्रति उत्तरदायी न रहें तो वह हमारा प्रमाद है।

मैं हिसाब क्यों रखूँ, क्या मुझ पर अविश्वास है? नहीं भाई, अविश्वास से अहिंसा की पटरी नहीं बैठती। लेकिन हिसाब का तकाजा सत्य का तकाजा है। तुम क्या यहाँ यह कह सकते हो कि सत्य और अहिंसा का साथ नहीं चलेगा!

—नारायण देसाई

कुरान की कहानी, मियाँ की जुबानी

अच्युत देशपांडे

किताब में कुल आयतें १०६५ हैं। नौ विभागों में उनका ब्योरा इस प्रकार है : ग्रंथ-प्रवेश २९, परमात्मा २३७, भक्ति ११०, भक्त १०४, धर्म निष्ठा ३३, नीति २०९, मनुष्य ६९, प्रेषित १५०, गूढ़ शोधन १२४। कुल मौजुअ (विषय) ४०० हैं। उनमें एक ही आयत जिनमें हैं, ऐसे मुद्दे १९९ हैं। दो आयतोंवाले ६७, तीन आयतोंवाले ४४, चार के २३, पाँच के २४, छह के १३, सात के ७, आठ के ६, नौ के २, दस के २, ग्यारह के २, बारह के ३, तेरह के १, चौदह का १, पन्द्रह का १, सत्रह का १, अठारह का १, और इक्कीस आयतों का भी १ मौजुअ है।

चयन में दृष्टि

आयतें लेते हुए कभी कभी पूरी आयत लेने के बजाय आयत का अंश भी ले लिया गया है। जिस विषय के तहत आयत ली गयी है, वह विषय उस आयत में जितना होगा, उतनी ही आयत ली है। कुरानशरीफ में जो समाज-विषयक या देश-विषयक कायदे कानून आये हैं, उसे विनोबाजी ने चयन में नहीं लिया है और उसी प्रकार कथाएँ, जो विषय सुस्पष्ट करने के लिए विस्तार से ग्रंथों में आया ही करती हैं, उन्हें भी उन्होंने छोड़ दिया है। इसके सिवा जो ऐतिहासिक निर्देश कुरानशरीफ में आये हैं, या जो बातें अब इतिहास के खाते में जमा हो गयी हैं, उन्हें भी उन्होंने कुरान-शरीफ से 'कुरान-सार' में नहीं उतारा है।

अभी-अभी एक भाई ने, जो कि दार्शनिक दृष्टि से अपने को नास्तिक मानते हैं, विनोबाजी से प्रश्न पूछा : "आप आजकल अध्यात्म की बात किया करते हैं। इस अध्यात्म से आपका क्या मतलब है ?"

विनोबाजी ने उन्हें जो जवाब दिया, उसका आशय इस प्रकार है :

(१) सर्वोच्च नैतिक मूल्यों में तथा नैतिक जीवन में विश्वास, (२) जीवमात्र एक हैं, इस ज्ञान में एवं भान में विश्वास और (३) मृत्यु के बाद के जीवन के सातत्य में दृढ़ विश्वास।

उन्होंने फिर प्रश्न पूछा : "क्या दुनिया के सब धर्म इन चीजों को मानते हैं ?" विनोबाजी ने जवाब दिया, "जी हाँ।"

विनोबाजी ने धार्मिक ग्रंथों का जो भी चयन किया है, उसमें इस दृष्टि के कारण अध्यात्म अर्थात् दर्शन, भक्ति, नीति और भक्तों का और भक्त के भगवान का सद्गुण-संकीर्तन होता है, भक्तों के विशेष अनुभवों का दिग्दर्शन भी होता है। 'कुरान सार' भी इन्हीं विषयों का सम्पुट है, यह बात स्पष्ट है।

संदर्भ-ग्रंथ

कुरान के अध्ययन के समय विनोबाजी ने जिन ग्रंथों का अध्ययन किया, उनकी जानकारी मिलना कठिन है, क्योंकि विनोबाजी स्वयं उस विषय में कुछ कहेंगे, यह आशा हम रख नहीं सकते। उनके आश्रम के ग्रंथालय में ही जो ग्रंथ इस विषय पर होंगे, वे सब उन्होंने देखे हैं, यह स्पष्ट ही है। जो पढ़ कर उन्होंने ग्रंथों के मालिकों को वापिस किये होंगे, उन्हें हम कैसे जानें ? आश्रम की कुछ पुस्तकों पर उनकी निशानियाँ होंगी, कुछ पर नहीं होंगी। किताबों की यह फेहरिस्त हम यहाँ दे नहीं सकते। पर 'कुरान-सार' के तैयार होते हुए जिन ग्रंथों को देखा गया, उनके दिल में शब्दों के जो अर्थ हैं, उस अर्थ के अनुकूल अर्थ है या नहीं, यह देखने के लिए जिन ग्रंथों का उपयोग हुआ, वे ग्रंथ निम्न प्रकार हैं :

अंग्रेजी अनुवाद और टिप्पणियाँ—पामर, एम० रिकयाल, मुहम्मदअली और मौलवी शेरअली।

अंग्रेजी संदर्भ ग्रंथ—'कन्कोर्डेन्स एण्ड ग्लोसरी आफ कुरान', बनारस के क्रिश्चियन मिशन से प्रकाशित।

उर्दू संदर्भ-ग्रंथ—लुगातुल कुरान, ६ जिल्दें। प्रकाशक—नदवतुल मुसन्नफीन्, जामे मस्जिद, देहली।

उर्दू अनुवाद और टिप्पणियाँ—

(१) कुरआनमजीद-हजरत शेखुल-हिन्द मौलाना मोहम्मद हसन और हजरत मौलाना शब्बीर अहमद उस्मानी (देवबन्दी)।

(२) कुरानुल्हकीम—शाह रफी-उद्दीन साहब, देहलवी और मौलाना अशरफअली साहब थानवी।

(३) तफ्सीरेकबीर—हजरत मिरजा बशीरुद्दीन अहमद साहब इमाम जमाअते अहमदिया।

(४) हमाइल शरीफ-शमसुलउलमा जनाब मौलवी हाफिज नजीर अहमद खाँ साहब।

लेखक का योग

इस कार्य में मैं भी जो कुछ कारकुनी, मुनशीगीरी या मुनीमी कर पाया हूँ, यह ईश्वर की मुझ पर बहुत कृपा है। मैं यह काम करूँगा या कर सकूँगा, इसका मुझे कभी ख्याल हो ही नहीं सकता था। यह जो मैं कर सका, उसमें केवल ईश्वर की इच्छा और समय-समय पर विनोबाजी की आज्ञाएँ किस प्रकार रहीं, यह निम्नलिखित बयान से आपके ध्यान में आ सकेगी।

१९४० में विनोबाजी की सूचना के अनुसार मैंने जेल में कुरानशरीफ अंग्रेजी में पढ़ी थी। विशेष ध्यान से पढ़ी थी, पर उसके बाद उससे सम्पर्क नहीं रहा और अपने काम-धन्धे में ही मैं लग गया। १९५९ में एक संयोग प्राप्त हुआ। विनोबाजी सोच रहे थे कि वे कश्मीर जायेंगे। हमारी एक बहन जिन्हें विनोबा बाबा 'हमारी लड़की' कहते हैं, उनके साथ उनके वहाँ के भाषणों का आनन्द लूटने कश्मीर जाना चाहती थीं। उन्होंने विनोबाजी से उसके लिए इजाजत चाही। विनोबाजी ने उनसे कहा कि उनको कश्मीर आना हो, तो वे कुरान का गहरा अध्ययन करें। उन्होंने यह चीज ध्यान में रखी और कुरानशरीफ के अध्ययन का निश्चय किया। उनके पढ़ाई का ऐसा ही प्रबन्ध हो सका कि उसमें उन्होंने मुझे कहा कि मैं भी उनके साथ कुछ दिन कुरान पढ़ूँ। उनकी इच्छा के कारण मैंने भी उनके साथ मूल अरबी कुरान की तिलावत शुरू की। एक बूढ़े मौलवी हम दोनों को पढ़ाते थे। सिर्फ अरबी पढ़ कर सन्तोष मानने वाली न वह बहन थी और न मैं। इसलिए अनुवाद के साथ, अर्थात् अनुवाद करते हुए हम दोनों पढ़ने लगे। अनुवाद मौलवी साहब से हम सीखते नहीं थे। उसके लिए दूसरी किताब का उपयोग किया गया। बहन श्री निर्मलाताई देशपांडेजी तो बाद में बीमार हो गयीं और अतः दूसरी जगह चली गयी, लेकिन मैंने कुछ दिन और भी उस पढ़ाई को जारी रखा।

मुझे अरबी आती नहीं थी और अब भी मैं अरबी विशेष जानता हूँ, ऐसा कह नहीं सकते। लेकिन मुझे उर्दू आती थी, इस कारण शुरू में शब्दार्थ के सहारे और फिर अनुवाद के ही सहारे कुरानशरीफ मेरी समझ में आने लगा और उसका, अरबी का आनन्द भी मुझे मिलने लगा। लेकिन चूँकि मेरा काम आजकल घूमना ही है, इसलिए यह पढ़ना बहुत आगे बढ़ न सकता, किन्तु इसके बाद एक दुर्घटना हुई। मैं पाँव की बीमारी से बहुत बीमार हो गया और चलना-फिरना बन्द होकर बिस्तरे का ही आसरा मुझे लेना पड़ा। तब क्या करें ? एक मित्र की और डाक्टर मित्र की सहायता से इलाज करने लगा और बैठे-बैठे कुरान पढ़ने लगा। इस प्रकार अर्थ करते हुए और आनन्द का अनुभव करते हुए नौ-दस प्रकरण पढ़ लिये, उसके पश्चात् एक बार विनोबाजी से मेरी मुलाकात हुई।

"फिर पूरा ही कर लो"

एक विषय समझाते हुए उन्होंने हमारे मित्रों को कुरानशरीफ की एक आयत उदाहरण के तौर पर समझायी और कहा कि 'आजकल मेरा कुरानशरीफ का चयन की दृष्टि से अध्ययन चल रहा है, इसलिए आपको भी कुरान में से समझाया।'

मुझे क्या सूझी कि मैंने कहा, 'मैं भी कुछ पढ़ सका हूँ। नौ-दस प्रकरण हो गये हैं।' तो विनोबाजी ने कहा—'फिर पूरा ही कर लो'

अब विनोबाजी का कहना और उसे न मानना उचित नहीं। इसलिए कोशिश से उसे पूरा किया। पढ़ लिया, आनन्द आया। इतने से ही शायद उसकी समाप्ति हो जाती। कुछ मित्रों की तो कुछ शिकायत भी थी कि मैं बहुत समय इस अध्ययन के लिए दे रहा हूँ।

पर कुरानशरीफ का अनुवाद के साथ इस प्रकार पढ़ना पूरा होना ही था कि कुछ और मित्रों ने कहा कि उसमें से उन्हें भी मैं कुछ बताऊँ। वे लोग हिन्दू थे। उनकी यह इच्छा हुई तो मुझे आनन्द हुआ। मैंने कुरानशरीफ से करीब ४७५ आयतें चुनी और उसका उनके लिए अनुवाद किया। वह उन्हें पसंद आया।

अरबी कुरान पूरा पढ़ने की विनोबाजी की आज्ञा की पूर्ति जो हुई, उसकी जानकारी उन्हें देने की इच्छा होना स्वाभाविक ही मानना चाहिये और यदि स्वाभाविक नहीं माना जा सके, तो यह माना जाय कि यह मेरा अपना स्वभाव है। मैंने उनको लिखा कि मैंने कुरान पूरा कर लिया।

धंधे में मंदी

इन्हीं दिनों मेरे अपने धंधे में भी कुछ मंदी आयी थी और मैं सोच रहा था कि उसमें तेजी कैसी लायी जाय ! विनोबाजी को भी मैंने मुझ पर आ पड़ी अपनी इस मंदी के विषय में लिखा और यह भी लिखा कि तेजी की तलाश में हूँ। उन्होंने मुझे लिखा कि कुरानशरीफ का चयन वे कर रहे हैं। उस कार्य में यदि मैं कुछ समय दे सकूँ, तो उस बारे में मैं सोचूँ। अब यह एक धर्म-कार्य ही था। उस कार्य में यदि मैं कुछ काम आ सकता हूँ तो वह काम मैं करूँ, यह धर्म ही था। मैंने हाँ भरी और इस काम के लिए उनके पास जाकर उसमें लग गया।

विनोबाजी के इस कार्य में जो कुछ मजदूरी मैं कर सका, उसकी कुछ जरूरत भी थी। विनोबाजी की उम्र और स्वास्थ्य का विचार करते हुए कोई इस काम में उनकी सूचनाओं के अनुसार कुछ काम करे, तो उस काम के जल्दी पूरे होने में कुछ सुविधाएँ उपस्थित हो सकती थीं। विनोबाजी जब भी कुछ लिखते हैं, तब उनको जितना भरोसा अपने संस्कृत और मराठी भाषा-ज्ञान पर होता है, उतना भरोसा वे अपने दूसरी भाषाओं के ज्ञान पर नहीं करते। दूसरी भाषाओं को भली-भाँति जानते हुए भी वे इन दो भाषाओं में अधिक निश्चित और निःशंक रहते हैं और इसीलिए उन्होंने 'कुरानसार' का काम भी मराठी भाषा में किया। इसलिए मराठी भाषा की जानकारी के साथ-साथ

शांति-यात्री की डायरी

अन्तर्राष्ट्रीय शांति-पदयात्रा

सतीश कुमार

[हमारे पाठकों को यह मालूम ही है कि गत १ जून को दिल्ली से, अणु-शस्त्रों के निर्माण और प्रयोगों के विरुद्ध सत्याग्रह के रूप में बापू की समाधि, राजघाट से दो अन्तर्राष्ट्रीय शांति-पदयात्री रवाना हुए। ये पदयात्री ३ जून को पाकिस्तान में प्रवेश करने वाले हैं। –सं०]

कुरानशरीफ की अरबी जानना, उस पर हुई उर्दू, अंग्रेजी टीकाएँ आदि को समझाये जाने पर समझ सकना, इतनी योग्यता उनके साथ काम करने वाले मनुष्य में होना जरूरी था। मेरी ऐसी कुछ थोड़ी सी सामग्री थी, इस कारण 'बछड़ों में लगड़ी गाय सयानी', इस कहावत के अनुसार मैं इस काम के लिए मैंने अपने को लायक समझा। विनोबाजी ने भी शायद 'पल्लू में पड़ा और पवित्र हुआ' की कहावत चरितार्थ करना तय किया और इस प्रकार मैं इस काम में 'उंगली काट कर शहीद' हो सका।

'जाके राखे साइयाँ'

प्रकाशन के लिए मूल प्रति लेकर प्रकाशन-संस्था के पास मैं जा रहा था। गाड़ी में भीड़ तो होती ही है, पर हमें कानून का उचित लाभ भी न मिल सका। जल्दी तो हमें थी ही। हमने पुस्तकों की पेटी रेल में रखी और मैं सवार हो ही रहा था कि गाड़ी खुली। पेटी को एक भाई ने पकड़ रखा था, पर वह उनसे सम्हली नहीं। पेटी वहाँ से खिसकी और पटरी, गाड़ी का पहिया और प्लेटफार्म का पत्थर, इसके बीच में पचास कदम तक वह रगड़ते-रगड़ते चली। यहाँ तक कि बाद में वह पेटी पहिये के नीचे आ गयी। अगर जंजीर न खींची जाती, तो शायद गाड़ी को दुर्घटनाग्रस्त भी होना पड़ता। इसके, पहले, मैंने और मेरे साथ प्रवास करने वाले दोनों ने समझा कि कुरानशरीफ के मूल ग्रंथ और अन्य पुस्तकों का तो पटरी पर भूसा ही बन गया होगा और 'कुरान-सार' का काम तमाम हो गया होगा! पर संयोग था कि किताबें पटरी के बाहर फेंकी गयी थीं और पेटी गाड़ी तले आ गयी थी। पेटी तो नेस्तनाबूद हुई, पर पुस्तकें और कापियाँ 'कुरान-सार' की मूल प्रति और उसका उर्दू अनुवाद सब कुछ एक-एक पन्ना सहीसलामत मिला। 'कुरान-सार' की पाण्डुलिपि पर से रेलगाड़ी का पहिया गुजरा, मगर ऐसे हिस्से पर से जिस पर कोई अक्षर नहीं थे। अतः पाण्डुलिपि सुरक्षित रही। मेरे दिल ने कुरानशरीफ की आयतें याद कीं और उनको दुहराते हुए मैं मन ही मन कहने लगा—

"हे परमेश्वर! बुराई मेरी, भलाई तेरी।"

"तू ही मारता है, तू ही जिलाता है।"

[समाप्त]

हम दो साथी, मैं और प्रभाकर मेनन, जो एक अन्तर्राष्ट्रीय शांति यात्रा पर १ जून '६२ दिल्ली से रवाना हुए हैं, पिछले लंबे अर्से से विनोबा के साथ, उनकी शांति-सेना के साथ और उसी तरह योरप एवं अमेरिका में चलने वाले शांति-आन्दोलनों के साथ संबन्धित रहे हैं। हमारे मन में युद्ध प्रतियोगिता के खिलाफ एक जबर्दस्त बगावत रही है और अणु अस्त्रों के निर्माण एवं प्रयोगों की जो खतरनाक होड़ कुछ तथाकथित बड़े राष्ट्रों में चल रही है, उसके विरोध में हम बराबर सोचते रहे हैं। आज जिन अणु अस्त्रों का निर्माण और प्रयोग हो रहा है, उनका यदि भूल से भी कहीं इस्तेमाल हो जाय, तो मानव जाति का इतिहास, कला, संस्कृति और साहित्य भस्मसात होते विलम्ब नहीं होगा। ऐसे भयंकर हथियारों के निर्माण पर मानव-जाति का अरबों रुपया बरबाद होते देख कर किसका हृदय क्षोभ और वेदना से नहीं भर जायेगा!

गांधीजी ने अन्याय के खिलाफ अहिंसात्मक प्रत्यक्ष-प्रतिकार का मार्ग हमें बताया था। इसलिए हमारे मन में यह विचार निरन्तर चलता रहा कि मानव-जाति के खिलाफ आयोजित इस संगठित षड्यंत्र और अन्याय का प्रत्यक्ष प्रतिरोध (डायरेक्ट एक्शन) करने के लिए हम क्या करें? इसी विचार-मंथन में से शांति-पदयात्रा की कल्पना सूझी। बहुत सोच-विचार के बाद यह निर्णय किया कि हम दोनों साथी पैदल चल कर मास्को और वाशिंगटन जायें तथा वहाँ अपना प्रत्यक्ष विरोध प्रदर्शित करें। पदयात्रा हमारे लिए 'डायरेक्ट एक्शन' का अथवा सत्याग्रह का एक माध्यम है।

इस काम में कितनी सफलता मिलेगी, यह सोचना हमारा काम नहीं है। "कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन।" के अनुसार हमारा कर्म ही हमारी सफलता है। हमारे सामने अन्याय हो रहा है, उस समय बिना इसकी चिन्ता किये कि मेरी शक्ति कितनी है, अन्याय का प्रतिकार करना ही सत्याग्रही की भूमिका होनी चाहिए। जिस समय रावण सीता का अपहरण करके जा रहा था, उस समय जटायु ने, जो रावण के मुकाबले अत्यंत बलहीन था और रावण से यह जीत भी नहीं सकता था, रावण के अन्याय का विरोध किया।

आज चंद सत्ताधारी तथाकथित 'बड़ों' के हाथ में मानव-जाति का भविष्य कठपुतली मात्र बन गया है। इस स्थिति को रोकने के लिए साधारण-से-साधारण व्यक्ति को अपनी क्षमता के अनुसार पूरा प्रयत्न करना है।

शांति पदयात्रा में करीब करीब दो वर्ष का समय लगेगा और दस हजार मील की पदयात्रा होगी। हम गाँव गाँव में जायेंगे और अणु अस्त्रों की व युद्ध-तैयारी की होड़ के खिलाफ जनमत जाग्रत करेंगे। इस पदयात्रा के लिए विनोबाजी, राष्ट्रपति राधाकृष्णन्, पं० नेहरू, अर्ल बर्ट्रेंड रसेल आदि का आशीर्वाद हमें प्राप्त हुआ है।

हमें इस बात पर बहुत संदेह था कि पाकिस्तान हमें 'वीसा' प्रवेश-अनुमति का पत्र देगा या नहीं। क्योंकि बहुतों ने हमसे कहा कि हिन्द-पाक के आपसी संबंधों को देखते हुए 'वीसा' मिलने की संभावना कम है। लेकिन सौभाग्य से पाकिस्तान सरकार को हम यह भरोसा दिला सके कि जो कुछ मतभेद और कटुता है, वह राजनैतिक स्तर पर है, हमारा उसके साथ तनिक भी संबंध नहीं। फिर यह भी कि हम एक भारतीय के नाते नहीं, बल्कि विश्वनागरिक के नाते आपके देश में आना चाहते हैं। इसलिए भारत का समर्थन करना और पाक-नीति का विरोध करना हमारा उद्देश्य नहीं है। हम तो आणविक हथियारों की होड़ के खिलाफ अत्यंत शांतिपूर्वक सौम्य तरीकों से वातावरण बनाना चाहते हैं। इन सारी बातों पर गौर करके पाकिस्तान-सरकार ने अपने देश में आने की इजाजत हमें दी है।

> **हमारे साथ पैसा नहीं है, यह सुन कर सभी लोग आश्चर्य करते हैं। सबको इस बात की चिन्ता होती है कि किस प्रकार आगे कष्ट आयेंगे। पर साथ ही पैसा न रखने से हमें यह अनुभव आ रहा है कि लोग हमारे खान-पान का, हमारी सुविधाओं का ज्यादा ध्यान रखते हैं और हमारी आवश्यकताओं का प्रबंध करने की कोशिश करते हैं।**

पंजाब का हमारा कार्यक्रम अत्यंत उत्साहवर्धक रहा। जितनी शक्ति दिल्ली से प्रस्थान करते समय महसूस कर रहे थे, उससे कई गुना अधिक शक्ति हमें आज महसूस हो रही है। पानीपत, अंबाला, राजपुरा, लुधियाना, आदमपुर, जालंधर और अमृतसर का संपूर्ण कार्यक्रम इतना सफल और स्फूर्तिदायक रहा कि अब भी सारी यात्रा चलचित्र की भांति नजरों के सामने है। सभी जगह बड़ी-बड़ी आम सभाएँ, विद्यार्थियों व युवकों की सभाएँ, बुद्धिजीवियों की सभाएँ आदि हुईं। हमें दिल्ली से रवाना होते समय इतना अंदाज भी नहीं था कि पंजाब का कार्यक्रम इस तरह सफल होगा।

करनाल जिले के एक भाई, श्री बलवंत सिंह हमारे साथ चले, जो जालंधर तक हमारे साथ रहे। पंजाब शांति-सेना समिति के संयोजक श्री यशपाल और उनकी पत्नी श्रीमती सुमति ने फिलौर से अमृतसर तक का पूरा कार्यक्रम बनाने में और पदयात्रा में भी कई पड़ावों पर साथ रह कर आयोजन करने में रस लिया। रात-दिन दौड़ धूप करने वाले श्री उजागर सिंह बिलगा को और अमृतसर के तीन दिनों में शांति-कार्यक्रमों का आयोजन करने वाले श्री जुगल किशोर एडवोकेट को भी भूलना संभव नहीं। जालंधर में डा० रामरखामल धीर के नेतृत्व में जो शांति-कूच हुआ, वह भी पंजाब-यात्रा की हमारी संस्मरणीय घटना है।

हमने देखा कि सब जगह आणविक हथियारों के खिलाफ जनता का हृदय तैयार है। पर उसे यह समझ में नहीं आ रहा है कि किन तरीकों से हम इनका विरोध करें।

हमारे साथ पैसा नहीं है, यह सुन कर सभी लोग आश्चर्य करते हैं। सबको इस बात की चिन्ता होती है कि इन्हें किस प्रकार आगे कष्ट आयेंगे। पर साथ ही पैसा न रखने से हमें यह अनुभव आ रहा है कि लोग हमारे खान पान का, हमारी सुविधाओं का ज्यादा ध्यान रखते हैं और हमारी आवश्यकताओं का प्रबंध करने की कोशिश करते हैं। ● ●

ये चले शांति के युगल दूत !

शुक्रवार, १ जून १९६२ की तूफानी संध्या,
धूल भरी उड़ती हुई, तेज हवा के झोंके,
दिन भर से गरम उसासें भरती हुई उत्तप्त भूमि,
इसी क्षण, मेह का आगमन,
हलकी बौछार,
धूल को कुछ शांत बैठने,
और,
धरती को कुछ ठंडा हो लेने,
की मनुहार।

❀ ❀ ❀ ❀

राजघाट गांधी-समाधि का सान्निध्य
नव-निर्माण के रास्ते पर--
अधूरी-पूरी बनी दीवारें,
जहाँ-तहाँ पड़े गड्ढे,
अस्त-व्यस्त इमारती सामान के ढेर,
इस सबके बीच,
देश के बापू, राष्ट्र के पिता,
विश्व के बंधु, मानव-मात्र के मित्र,
गांधी की
सादी, संजीदा, स्वच्छ, एकाकी समाधि
प्रार्थना में रत कुछ भाई, कुछ बहिनें,
टुकुर टुकुर झाँकते कुछ बालक, कुछ बालिकाएँ,
जिज्ञासु बन, भक्तिभाव से,
आते-जाते, दर्शनार्थियों, यात्रियों
के आखिरी यूथ।

❀ ❀ ❀

आरम्भ में तूफानी,
किन्तु बाद में,
सद्य बौछार से कुछ शांत वातावरण
बड़ी दीवारों से घिर
विशद बननेवाली, किन्तु आज,
सादी, विशाल, समाधि
प्रार्थना से उपराम हुए
समर्पण और शुभाकांक्षा की
प्रशांत मुद्रा में
छोटा-सा जन-समूह
इस सबने
शुक्रवार, १ जून १९६२ को
सायं ७ बजे,
देश के दो तरुण सपूतों को
"शांति-यात्रा" के लिए
राजघाट से विदा किया।

❀ ❀ ❀ ❀

"किसी कीमत पर शांति"
और
"निःशस्त्रीकरण"
का नारा बुलंद करने,
गांधी-विचार के दो उद्घोषक-सिपाही
दिल्ली से मास्को, और मास्को से न्यूयार्क, वाशिंगटन
के लिए, पैदल पहुँचाने को, निकले हैं।

❀ ❀ ❀ ❀

अंतस की प्रेरणा,
मन की संकल्प-शक्ति,
बुद्धि की निश्चयात्मकता,
तन की समर्पण-भावना,
और,
विश्व-मानव के भावना-सागर की
गहनतम, उच्चतम लहर,

"शांति, शांति, शांति"
यही, बस यह ही,
इन दो तरुणों का

मेनन और सतीशकुमार : शांति-यात्रा पर

ध्रुवतारा, संबल-सहारा,
और प्रेरक प्रकाश है।

❀ ❀ ❀

ऐसी यात्रा को
उपयोगिता-अनुपयोगिता,
और लक्ष्य-सिद्धि में वास्तविक सहायता
देनेवाली या न देनेवाली के रूप में
नहीं जाँचा जा सकता,
नहीं परखा जा सकता।
यह देश चमत्कार का, भावोद्रेक का,
साहसिकता का, जीवनोत्सर्ग का देश है।
यह यात्रा भी इस अर्थ में
और, देश की परम्पराओं के इस सन्दर्भ में
चमत्कारिक है,
साहसिक है,
स्फूर्तिकर है।
यत्र, तत्र, सर्वत्र
जन-मानस को प्रभावित करनेवाली
और, युद्ध व संघर्ष,
हिंसा व विद्वेष,
होड़ व उखाड़-पछाड़,
से पराङ्मुख कर,
ऋजुता, शांति, सह-अस्तित्व, सहकार और
मैत्री की ओर ले जानेवाले मानस
के निर्माण में, यह यात्रा,
सफल हो,
यही आकांक्षा है।

❀ ❀ ❀ ❀

बुद्धि में स्थिरता,
मन में शांति,
विचार में दीनता,
और कृति में क्रांति
जागृत करे-यह यात्रा,
यही हार्दिक भावना है।

—पूर्णचन्द्र जैन

मध्यप्रदेश नशाबन्दी सम्मेलन

खुशालसिंह

मध्यप्रदेश नशाबंदी सम्मेलन में के बाद अन्य कार्यकर्ताओं के भाषण शीमन्‌जी हुए मजदूर संघ के नेता श्रीराम-सिंह भाई ने कहा कि शराबबन्दी का काम तो हमारा पहला काम है। हमारी औद्योगिक बस्तियों में जहाँ पहले ८० प्रतिशत लोग शराब पीते थे, वहाँ आज २० प्रतिशत रह गये हैं। यदि वहाँ शराब-बन्दी का कार्य हो, तो उसकी जिम्मेदारी हम उठाने को तैयार हैं।

मध्यभारत के एक भूतपूर्व मंत्री श्री मनोहर सिंहजी मेहता का भाषण बड़ा मजेदार था, किन्तु उसमें लगता था कि सिर पर बोझ न होने से मनुष्य कितना खुल कर बोल सकता है। उन्होंने भाषण के प्रवाह में अपने सशर्त वाक्य के आधार पर कि 'अगर शराब के खिलाफ जनमत बलवान हो' तो सरकार को यहाँ तक चुनौती दे डाली कि प्रजातंत्र में ऐसी सरकार टिक नहीं सकती और उसके खिलाफ हम अविश्वास का प्रस्ताव ला सकते हैं!

फिर व्यावहारिक सुझाव रखते हुए उन्होंने कहा कि शराब की बिक्री से सरकार को प्रतिवर्ष लगभग पाँच करोड़ रु. की आमदनी होती है, यानी पाँच वर्ष में २५ करोड़ हुई। हमारी ३०० करोड़ की योजना में यदि ठीक तरह से व्यय करें तो २५ करोड़ की बचत की जा सकती है। इस पर केन्द्र से आधी सहायता का आश्वासन है ही। यदि दोनों न हो सकें, तो योजना का इतना काम किया जा सकता है, जिस पर किसीको आपत्ति नहीं होगी। किन्तु शराबबन्दी तो की ही जानी चाहिए।

अन्त में म० प्र० के मुख्य मंत्री ने शराबबन्दी की व्यावहारिक कठिनाइयों का जिक्र करते हुए कहा कि शराबबन्दी का कानून बनाना मुश्किल नहीं, बन भी जायगा, किन्तु मुख्य कठिनाई तो उसे लागू करने में है। एक मित्र ने शराब के खिलाफ बलवान जनमत का आधार लेकर मंत्रीमण्डल तक को चुनौती दे डाली है।

किन्तु जनमत को बलवान बनाना कोई आसान काम नहीं है। जनमत ही खिलाफ हो तो कोई भी सरकार शराब को टिका नहीं कर सकती। हम कानून बना देंगे, लेकिन फिर लागू करने में भ्रष्टाचार आयेगा तो उसके खिलाफ हल्ला होगा। इसलिए हम कानून बनाने के बजाय शिक्षा पर विशेष जोर दे रहे हैं और कानून के बन जाने पर भी आदिवासी क्षेत्र के लिए तो हमने पहले से शिक्षणात्मक कार्य-प्रणाली ही चालू करने का सोच रखा है। शेष हिस्से में कानून लागू होगा। किन्तु हमारा मध्य प्रदेश बहुत बड़ा है। उसका एक किनारा महाराष्ट्र राज्य से लगा हुआ है, दूसरा राजस्थान से तीसरा उत्तर प्रदेश, उड़ीसा से और चौथा आन्ध्र से। इतने बड़े क्षेत्र को सम्हालना कोई मामूली बात नहीं, फिर भी जिन प्रदेशों में शराब-बन्दी की हो, उनकी योजना सफल हो, इसलिए उनकी सरहदों पर हम पहले शराबबन्दी करेंगे। जिन भाइयों ने हमें कानून लागू करने में सम्पूर्ण सहयोग देने का आश्वासन दिया है, उनका हम स्वागत करते हैं और सार्वजनिक कार्यकर्ताओं का आह्वान करते हैं कि वे लोक शिक्षण के कार्य में अपनी पूरी शक्ति लगा दें। उनके सहयोग के बिना यह कार्य सफल नहीं होगा।

इसके बाद दूसरी बैठक में सम्मेलन विभिन्न समितियों में विभक्त हो गया था। उन समितियों ने चार घण्टे तक विचार विमर्श करके निम्न व्यावहारिक सुझाव दिये थे :

(क) खाने, पीने के होटलों, 'बार' आदि में जहाँ लोग रहने या भोजन या नाश्ते के लिए जाते हैं वहाँ शराब बेचने के 'लाइसेन्स' बन्द कराये जायँ।

(ख) शराब के सार्वजनिक पान पर सारे प्रदेश में रोक लगा दी जाय।

(ग) शराब की दूकान आम रास्तों और सार्वजनिक स्थलों से हटा कर ऐसे स्थानों पर रखी जाय या जहाँ आम लोगों को उनका सम्पर्क सम्भव न आवे।

(घ) शराब के व्यवसाय में लगे तथा शराब के व्यसन में फँसे व्यक्तियों को शासकीय पदों पर न रखा जाय।

(ङ) शराब तथा दूसरे नशे की वस्तुओं के बारे में कोई विज्ञापन तथा उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने वाले लेख, भाषण अथवा प्रदर्शन किसी भी रूप में सराह-नीय नहीं होना चाहिये।

(च) ठेकेदारी की प्रथा को बन्द करना वाञ्छनीय है।

(छ) शराब के स्थान पर उपयोग में आ सकने वाली अथवा जिनसे आसानी से शराब बनायी जा सकती है, ऐसी वस्तुओं का व्यापार व्यक्तिगत हित के क्षेत्र से हटा लिया जाय और शासकीय अथवा सार्वजनिक हित की संस्थाओं के द्वारा कराया जाय और उनके ऐसे उपयोग ढूँढ़े जाय, जो मद्यपान के बजाय अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति करें।

सामाजिक संस्थाओं को भी इस कार्य के लिए सक्रिय होना पड़ेगा। इसके लिए एक प्रादेशिक परिषद् बननी चाहिए, जो इस कार्य में सक्रियता से काम करे और जनता द्वारा निम्न कार्य कराने के तरीके सोचे और कार्यान्वित करे :—

(क) शराब के आदतमंदों के साथ सीधा सम्पर्क स्थापित करके उनके परिवार वालों तथा मित्रों की मदद से उनकी आदत छुड़ाने का प्रयत्न करना।

(ख) जिन तबकों में शराब की खपत है, उनमें व्यापक विचार प्रचार तथा लोक शिक्षण के कार्यक्रम, शिविर, सम्मेलन साहित्य प्रचार, फिल्म प्रदर्शन, नाटक, भजन मण्डली आदि के द्वारा करना।

(ग) आदिवासी क्षेत्रों में जहाँ लोग बड़े पैमानों पर मद्यपान में ग्रसित है और कानूनी रूप से नशाबन्दी एकाएक लागू करना संभव नहीं है, वहाँ विशेष रूप से विचार-परिवर्तन करना तथा नशाबन्दी के अनुकूल मानस बनाना।

(घ) प्रदेश में पाँच वर्षों में मदिरालयों का स्थान न रहे और न ही नशे का सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन में स्थान रहे, इसके लिए सारे वैधानिक प्रयत्न करने पर भी यदि किसी स्थिति में नैतिकता के लिए सत्याग्रह की आवश्यकता पड़े तो धरना आदि देकर भी नैतिकता की आवाज शासन और सम्बन्धित लोगों तक पहुँचाना।

जिस तरह सभी मांसाहारियों को जानवर हाथ से मार कर खाना पड़े, तो मांस खाने वाले अंगुलियों पर गिनाने योग्य रह जायेंगे ; उसी तरह आज मंत्रियों को शराब की आमदनी का जो मोह नहीं छूट रहा है, उसका कारण है, अफसर और एक्साइज के कर्मचारी, जिनका पेट शराब की आमदनी से जुड़ा हुआ है। यदि बीच में अन्य कोई एजेंसी न हो और मंत्रियों को अपनी योजना चलाने के लिए स्वयं शराब की बिक्री करनी पड़े, तो इसमें सन्देह नहीं कि योजना चलाने के बजाय वे शराब की बिक्री बन्द करना ही पसन्द करेंगे।

शाम को सम्मेलन का समारोप करते हुए सम्मेलन के मुख्य अतिथि, श्री श्रीमन्नारायणजी ने कहा, "आपने दिन भर श्रम किया। मैं चाहता हूँ कि आपका मध्य प्रदेश जल्दी 'सुरक्त' बने। हमने राज्य सरकार को ५० प्रतिशत देने का आश्वासन दिया है। किन्तु इसके अलावा जो सार्वजनिक संस्थाएँ इस कार्य में लगेंगी, उनके प्रचारात्मक खर्च के लिए भी सरकार ने ५० लाख रुपये देने का प्रावधान रखा है। यह सहायता पञ्जीयित संस्थाओं को ही दी जायेगी।"

इसके बाद आपने याद दिलाया कि "गान्धीजी ने कार्यकर्ताओं का निर्माण किया। लेकिन उनके बाद कार्यकर्त्ता कम हो रहे हैं। इसका मतलब यह नहीं कि लोग काम नहीं चाहते। लोग तो काम चाहते हैं, किन्तु काम हम नहीं देते। पूना की बाढ़ के समय वहाँ का सारा काम वहाँ की शिक्षण-संस्थाओं ने उठा लिया था। यह देख कर मुझे ख्याल हुआ था कि कितनी शक्ति पड़ी है, यदि हम उसका उपयोग करें। अतः मैं निवेदन करूँगा कि हर शिक्षक और विद्यार्थी को हम इस काम में ले लें। इससे नशाबन्दी का काम तो होगा ही कालेज में शराब का प्रचलन 'फैशन' बन जाने के कारण बढ़ रहा है, वह रुकेगा। इसके लिए हम सेवा-निवृत्त व्यक्तियों का उपयोग कर सकते हैं। ५५ वर्ष की आयु के बाद पैसे नहीं, काम चाहते हैं। तीसरी शक्ति हमारी बहनों की है।

अन्त में आपने कहा कि "यह काम आप गांधी पर उपकार करने के लिए न करें। यह केवल मोरारजी भाई या श्रीमन् का खब्त नहीं है। यह देश की आवश्यकता है, आपका कर्तव्य है।"

किन्तु सम्मेलन के समारोह से बाहर निकला तो एक दलाल के मुँह से यह सुनाई पड़ा। वह कह रहा था कि 'सरकार' ने इन्दौर शहर में आठ की जगह छः दूकानें कर दी हैं। लेकिन शराब की बिक्री १००० बोतल की जगह ९९९ नहीं होना देना चाहती! उसका आग्रह तो १००१ बोतल बिकवाने का रहता है! तब तक दूकाने कम करने से क्या लाभ?

उसके मुँह से इस सत्य को सुन कर मुझे एक शाकाहारी का एक कथन याद आ गया कि यदि सभी मांसाहारियों को जानवर हाथ से मार कर खाना पड़े तो मांस खाने वाले अंगुलियों पर गिनाने योग्य रह जायेंगे। उसी तरह आज मंत्रियों का शराब की आमदनी का है जो मोह नहीं छूट रहा है, उसका कारण है ऐसे अफसर और एक्साइज के कर्मचारी, जिनका पेट शराब की आमदनी से जुड़ा हुआ है। यदि बीच में अन्य कोई एजेन्सी न हो और मंत्रियों को अपनी योजना चलाने के लिए स्वयं शराब की बिक्री करनी पड़े, तो इसमें सन्देह नहीं कि योजना चलाने के बजाय वे शराब की बिक्री ही बन्द करना ही पसंद करेंगे।

[गतांक से समाप्त]

लांछा 'ग्राम-भारती' विचार-गोष्ठी

सुंदरलाल बहुगुणा

> आज जो तालीम चल रही है, उसका गाँव के उत्पादन के कार्यक्रम से कोई समवाय नहीं है। 'ग्राम-भारती' का मतलब है कि गाँव में जो काम हैं, उनके द्वारा गाँव की तालीम की व्यवस्था हो। पुरानी तालीम और इस नयी योजना में कोई मुकाबला नहीं है। इसमें जो पढ़ रहे हैं, उनके लिए भी काम ढूँढ़ना है और जो खेती-बाड़ी आदि अन्य उत्पादन में लगे हैं, उनके बौद्धिक विकास के बारे में सोचना 'ग्राम-भारती' का काम है।
>
> —धीरेन्द्र मजूमदार

देहरादून से चकरौता जाने वाली सड़क के सत्रहवें मील पर हम लोग मोटर से नीचे उतरे। दाईं ओर कच्ची सड़क पर एक मील का पत्थर खड़ा था, इस पर लिखा था 'लांछा-१०'। इस सड़क पर पैदल चलते-चलते हमें रास्ते में छोटे-छोटे मुस्लिम गाँव मिले, जिनसे हम लांछा की दूरी पूछते-पूछते आगे बढ़े। आखिर दोपहर की कड़कती धूप में साल के घने जंगल के छोर पर बसे हुए लांछा गाँव के स्कूल में हम पहुँचे, वो एक विद्यार्थी मार्गदर्शक हमें गाँव के बीच एक जर्जर मकान के आँगन में ले गया।

अंदर से गमछा और बंडी पहने हुए ७२ वर्ष के वृद्ध सज्जन ने, जिनके शरीर में जवानों की चुस्ती और चेहरे पर बुढ़ापे के अनुभव की गंभीरता थी, हमारा स्वागत किया। ये देहरादून के एक समय के नामी वकील दास बाबू हैं। वे अपना घर-परिवार और शहरी जीवन छोड़ कर गांधी के सपनों का भारत बनाने में अपना शेष जीवन बिताने के इरादे से पिछले दिसंबर से इस गाँव में आकर बैठ गये। उनके दूसरे नवयुवक साथी श्री आनन्दी भाई हैं, जो सर्व सेवा संघ के शांति-सेना मंडल के कार्यालय का काम छोड़ कर अपने ही जिले में ग्राम-स्वराज्य का चित्र पेश करने के लिए इस गाँव में चले आये। इस परिवार की तीसरी सदस्या स्वनिर्मित गीतों की दुनिया में अपने को खो देने वाली चम्पा बहिन हैं। इन सबको यहाँ खींच कर लाने वाले पड़ोस के डोबरी गाँव के सर्वोदय-सेवक रघुनाथ भाई हैं, जो ३० वर्ष की अवस्था तक जीवन के कई चढ़ाव-उतार देखने के बाद श्री सुन्दरी रायजी की प्रेरणा से सर्वोदय के कार्य में लग गये हैं।

कई दिनों तक सारे जिले में घूमने के बाद सर्वोदय-सेवकों की यह टोली पछवादून के इस अविकसित क्षेत्र को अपने कार्य-क्षेत्र के लिए छाँट पाई। पहाड़ों की तलहटी पर बसे होने के कारण स्वातंत्र्य-संग्राम के दौरान में भी यह क्षेत्र अछूता रहा है। स्थानीय नेतृत्व के अभाव में यहाँ की जनता अपने विकास के लिए उत्सुक होते हुए भी कुछ नहीं कर पाई। सर्वोदय सेवकों ने उनके सामने 'ग्राम-भारती' का चित्र रखा। जनता ने उन्हें वांछित सहयोग का आश्वासन दिया।

इस पृष्ठभूमि में १ जून की रात को गाँव के एक खुले आंगन में अ॰ भा॰ सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी ने सर्वोदय-सेवकों और ग्राम-नेताओं के विचार-गोष्ठी का उद्घाटन करते हुए कहा :

"सारी मानव जाति एक है, सारी दुनिया एक है, सर्वोदय का आन्दोलन दुनिया भर में चलता है। यह गांधी-विनोबा ने ही शुरू नहीं किया है, बाहर के भी बड़े-बड़े ज्ञानी लोगों ने ये विचार दुनिया के सामने रखे थे। बीज तो पहले से ही था, पर काल अनुकूल नहीं था। आज समय आया तो यह विचार दुनिया भर में फैल गया है। इस आंदोलन का लक्ष्य है कि मानव जाति में शांति कैसे आये? सबका मंगल कैसे हो? आज विज्ञान ने यह संभव कर दिया है कि मिल-जुल कर हम सब सुखी रह सकते हैं।"

* * *

'काफल-पाक्कू' की उत्कटता

२ जून को प्रातः ब्राह्म मुहूर्त में 'जागो-जागो ऐ सोने वालो, विनोबा तुम को जगा रहा है' गाती हुई शिविरार्थियों की टोली गाँव की गली गली से निकली, तो गाँव के बच्चे बूढ़े, अधेड़ और तरुण, सब इनकी ओर देख रहे थे और हमारे अध्यक्ष नव बाबू अपनी दूरबीन लेकर पेड़ों के ऊपर चहकने वाली चिड़ियाओं को देख कर उनके नाम, बोली और आकार जानने में व्यस्त थे। हिमालय का अद्भुत गायक पक्षी, 'काफलपाक्कू' ने आते ही उन्हें पकड़ लिया। यह पक्षी गाता है, 'काफल पाक्कू, मीन नि चाख्यू'-काफल काफल पका, मैंने नहीं चखा। गाँव के किसानों के हृदय कहते हैं-स्वराज्य आया, हमने नहीं भोगा। दोनों में फर्क इतना ही है कि पक्षी में उत्कटता है, मानव में आलस्य। हिमवंत के प्रसिद्ध गायक स्व॰ चन्द्रकुँवर बर्त्वाल अपनी कविताओं में 'काफल-पाक्कू' की वेदना को प्रकट कर अमर हो गये हैं। नव बाबू की दूरबीन और तन्मयता हमें इस पक्षी से प्रेरणा लेने का न्योता दे रही थी।

'ग्राम-भारती' की बुनियाद

गोष्ठी की वास्तविक कार्यवाही गाँव से कुछ दूर साल के घने वन में पेड़ों की छाया में प्रारम्भ हुई। आगंतुकों ने अपना और अपने काम का परिचय दिया। एक ही नाव में सफर करने वाले सब मुसाफिर एक-दूसरे के अधिक निकट आये और इस प्रकार खुल कर बात करने की भूमिका बनी।

धीरेन्द्रभाई का पहला प्रश्न था, इस गाँव में क्या रखा है, जो सर्वोदय वालों को पकड़ कर लायी है। आनन्दीभाई द्वारा गाँव के लोगों में अपने विकास के लिए उत्कटता और सर्वोदय-सेवकों का मार्ग-दर्शन प्राप्त करने की उनकी आकांक्षा की जानकारी मिलने पर धीरेन्द्रभाई ने 'ग्राम-भारती' का विचार समझाते हुए कहा :

"गाँव में जो आश्रम बनते हैं, उसमें कुछ लोग बैठ कर सेवा करते हैं। पुरानी परंपरा है, पुरोहित रमाते थे, गुरुकुल बनाते थे। लोग उन्हें जमीन देते थे, खलिहानी देते थे, आज भी वे सब काम होते हैं। पहले गुरु-दक्षिणा के रूप में देते थे, आज सरकारी स्कूल खुलता है, तो टैक्स देते हैं। सर्वोदय का तरीका इससे भिन्न है। हम लोगों ने एक विचार गाँवों में फैलाया है कि गाँव-गाँव में स्वराज्य हो। प्राचीन काल में गाँव के आम लोग सारे काम के लिए गुरु-पुरोहित का भरोसा करते थे। आज सरकार का करते हैं। जिसका गाँव के लोगों ने भरोसा किया, वह गाँव को चाट गया! गाँव की समस्याओं का हल गाँव के लोग करें, इसको अगर बचाते हैं तो आपस में शिरकत करके करें।"

पर करे कौन? आज तो गाँव गाँव नहीं है, हम समाज बना नहीं सकते, उसमें मदद कर सकते हैं। इसके लिए धीरेन्द्रभाई का सुझाव था कि "कोई एक काम ऐसा हो, जिसको सब मिल कर कर सकें। आज न झगड़ा है न मेल है। गाँव में १२ महीना खेती का काम चलता है। अतः सब थोड़ी-थोड़ी जमीन देकर एक मिलन-देवी का मन्दिर बनायें। इस जमीन पर गाँव वाले और कार्यकर्ता मिल कर खेती करें। इसमें कुछ-न-कुछ खिट-पिट होता रहेगा और फिर मेल होगा।"

आपसी चर्चा का सबसे अच्छा परिणाम यह हुआ कि गाँव के लोग भी खुल गये। वे चाहते थे कि आनन्दीभाई और उनके साथी नई तालीम की एक संस्था खोल कर अपना कार्य प्रारंभ करें। परन्तु इस स्कूल का परिणाम क्या होगा? जो स्कूल आज चल रहे हैं, उनके साथ हम मुकाबले में आयें और बच्चों को नये संस्कार दें। लेकिन समाज वैसा ही रहे, तो फिर कैसे चलेगा? धीरेन्द्रभाई ने इसका स्पष्टीकरण करते हुए बताया कि

"आज जो तालीम चल रही है, उसका गाँव के उत्पादन के कार्यक्रम के साथ समवाय नहीं। 'ग्रामभारती' का मतलब यह है कि गाँव में जो काम हैं, उनको करते हुए गाँव की तालीम हो। दोनों में मुकाबला नहीं। जो पढ़ रहे हैं, उनके लिए भी काम सोचें। वे भी गाँव के उत्पादन के काम में लगें। जो खेती-बाड़ी और दूसरे उत्पादन के कामों में लगे हैं उनका बौद्धिक विकास कैसे हो? यह सोचना ग्राम-भारती का काम है।"

तीन दिनों तक जिन विषयों पर चर्चा चली, उनमें स्त्री-शक्ति, कार्यकर्ताओं का जीवन, कांग्रेस और सर्वोदय के काम में अन्तर आदि विषय थे। अन्तिम दिन की गोष्ठी डोबरी गाँव में हुई और वहाँ पर ग्रामवासियों द्वारा ग्राम-भारती के लिए दी जाने वाली जमीन भी हमने देखी।

* * *

गाँव की व्यवस्था

अपनी गोष्ठियों और शिविरों में प्रायः स्थानीय कार्यकर्ता तो व्यवस्था में ही व्यस्त रहते हैं, इसलिए गोष्ठियों का रस तो केवल बाहर से आने वाले साथी ही ले सकते हैं। स्थानीय समस्याओं के साथ चर्चा का अनुबन्ध न होने के कारण इनमें व्यावहारिकता कम रह जाती है। इस गोष्ठी में व्यवस्था में आयोजकों को कम-से-कम समय देना पड़ा। भोजन की व्यवस्था गाँव के लोग सामूहिक या व्यक्तिगत रूप से करते थे। सबसे पहला निमन्त्रण गाँव के हरिजनों की ओर से मिला। छुआछूत के गढ़, पहाड़ों की तलहटी में बसे हुए छोटे-से गाँव में चमारों के घर पर समान रूप से भोजन करते हुए सब जातियों के लोगों, जिनमें स्थानीय लोग भी शामिल थे, की पंगत सामाजिक क्रांति का पूर्व चिह्न थी। यह सारा काम सहज और स्वाभाविक ढंग से हुआ।

प्रभात फेरी, प्रार्थना, गोष्ठी और सायंकालीन प्रवचनों के बचे हुए कार्यक्रमों के अलावा हमें गाँव के लोगों के साथ घुलने-मिलने का तथा अपने वरिष्ठ साथियों, धीरेन्द्रभाई और नवबाबू के साथ गप्प लगाने का भी खूब मौका मिला। धीरेन्द्रभाई का तो मूल उद्योग ही 'गप्प' है, परन्तु नवबाबू भी इसमें रस लेते हैं। देहरादून के दरबार साहब में हमारा डेरा था। दोपहर के भोजन के बाद पलंग छोड़ कर वे हमारी ही कतार में दरी पर लेट गये और फिर विभिन्न विषयों पर गप्पें होने लगीं। धीरेन्द्रभाई बीच-बीच में उठ कर बैठ जाते और बोलने लगते। नवबाबू ने कहा, "पक्का गोष्ठी है। इसकी कार्यवाही लेटे-लेटे चलेगी। बीच में उठ कर बोलने की सजा यह होगी कि बोलने वाले को पुनः मौका नहीं मिलेगा।"

लेखांक : २

टांगानिका में जयप्रकाश

सुरेश राम

विश्व शान्ति सेना के तीन अध्यक्ष हैं। अमरीकी क्षेत्र के अध्यक्ष रेवरेण्ड ए० जे० मस्टे हैं, योरपीय क्षेत्र के रेवरेण्ड माईकेल स्काट और एशिया क्षेत्र के श्री जयप्रकाश बाबू। सेना की स्थापना के समय बेरूत में जे० पी० नहीं थे। वैसे तीनों अन्य मौकों पर एक दूसरे से मिल चुके थे। लेकिन दारेस्सलाम में तीनों अध्यक्ष चार दिन तक एक साथ बैठ कर विचार-विनिमय करते रहे। इन चर्चाओं में शान्ति-सेना के अन्य साथी भी शरीक हुए, जो इन दिनों दारेस्सलाम में थे—चार्ल्स रशिटन, मिस हडरलैण्ड और यह बन्दा। श्री रणधीर भाई ठक्कर भी लगभग सभी में मौजूद थे। इसी अवसर पर 'अफ्रीका फ्रीडम एक्शन कमेटी' की कार्यकारिणी की बैठक श्री रणधीर भाई की अध्यक्षता में हुई, जिसमें श्री मम्यू कोथनागो 'पाफमेकशा' के सेक्रेटरी-जनरल, ने शान्ति-सेना के महत्त्वपूर्ण कार्य की सराहना की और इस क्षेत्र में उसका रहना आवश्यक बताया। श्री केनेथ 'कौन्डा' की 'यूनिप' पार्टी के टांगानिका प्रतिनिधि श्री राबर्ट मकाशा ने भी कहा कि शान्ति सेना के यहाँ रहने से हमें बड़ा बल मिल रहा है।

सोमवार, इक्कीस मई को 'पाफमेकशा'-भवन में 'अफ्रीका फ्रीडम एक्शन' की तरफ से एक प्रेस-कान्फ्रेंस का आयोजन किया गया। इसमें तीनों अध्यक्षों ने—ए० जे० मस्टे, माईकेल स्काट और जे० पी० ने— एक वक्तव्य दिया। इसमें उन्होंने कहा कि हमने निश्चय किया है कि श्री केनेथ कौंडा को जल्दी से-जल्दी आर्थिक मदद पहुँचाई जाये, अगर आवश्यकता पड़े तो शान्ति यात्रा-पीस मार्च का कार्यक्रम उठाया जाये और उसके लिए शान्ति सेना के तीनों क्षेत्रों में सैनिक तैयार रखे जायें, और एक केन्द्र 'पोजेटिव एक्शन सेंटर' की व्यवस्थित ढंग से स्थापना की जाये।

रात को ए० जे० हवाई जहाज से लन्दन के लिए निकले। साढ़े आठ बजे का छूटा, नैरोबी, एन्टेबे और बेनगाजी होकर वह जहाज दूसरे दिन भोर में ही साढ़े सात बजे लन्दन पहुँच जाता है। ए० जे० लन्दन से फिर न्यूयार्क चले गये। ए० जे० के अन्दर अद्भुत शक्ति है। चार दिन न कहीं गये, न आये। न घूमना, न तफरीह। चर्चाओं में भाग लिया और अपने नोट्स के आधार पर एक बेहतरीन रिपोर्ट तैयार कर दी—जिसे देखते ही बनता है। उम्र है सतहत्तर बरस की! चेहरे पर कोई थकान नहीं, काम किया और फिर वापिस। वयोवृद्ध होकर भी नवयुवक की तरह सेवा करने का उज्ज्वल दृष्टान्त है।

उसी दिन रात को दारेस्सलाम में चलने वाली विभिन्न संस्थाओं के मुख्य कार्यकर्ता जे० पी० से मिले। अधिकांश हिन्दू संस्थाएँ थीं। कई कार्यकर्ताओं ने खुद ही कहा कि 'हिन्दू' नाम तो प्रतिक्रिया-स्वरूप बारह-पंद्रह साल पहले रखा गया था, अब जरूरत पड़ने पर छोड़ा जा सकता है। जयप्रकाश बाबू ने उनसे मिल कर खुशी जाहिर की और कहा कि आपको यहाँ के, टांगानिका के जीवन से एकरूप हो जाना चाहिये, आप जनता से समरस हो जाइये। साथ ही, गांधी विचार के प्रचार की जिम्मेदारी उठाना मुनासिब होगा। यह आज के युग का सबसे स्फूर्तिदायक और क्रान्तिकारी विचार है।

मंगल के दिन जयप्रकाश बाबू टांगानिका के नवयुवकों से मिले। 'अफ्रीकन स्टडीज ग्रुप' नाम से उनकी गोष्ठी चला करती है, जिसमें विभिन्न समस्याओं पर खुल कर चर्चा होती है। इस ग्रुप के सामने जे० पी० ने 'समाजवाद और मानसिक वृत्तियाँ', इस विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने कहा कि मैं एक तरह का 'हेटराडाक्स सोशलिस्ट' हूँ, जो समाजवादी विचार की परम्परागत प्रणाली की लकीर पर नहीं चलता है। एक जमाना था, जब रूस हम लोगों को मक्का की तरह मान्य था। मगर जब देखा कि पूर्ण राष्ट्रीयकरण होने के बावजूद वहाँ मूल्य और मान्यताएँ नहीं बदलीं और समाजवाद की मौलिक कल्पना व संस्कृति साकार नहीं हुई, तो चिन्तन करने लगे। इंग्लैण्ड तथा अन्य देशों में सरकारों ने कल्याणकारी राज्य स्थापित किये, बेकारी और गरीबी तथा बीमारी के सवालों को कामयाबी के साथ हल किया, आर्थिक विषमता में कमी आयी, मगर दुःख की बात यह बनी रही कि लोगों की मानसिक वृत्तियों में, उनके पारस्परिक सम्बन्धों में, उनकी रुचियों में और व्यवहार में कोई खास फरक नहीं पड़ा। उल्टे, राष्ट्रीयकरण के कारण मैनेजरों का एक नया वर्ग खड़ा हो गया, जिसके हाथ में सत्ता बढ़ती चली गयी और जो आम जनता से साधारण श्रमिक और उत्पादक से दूर हटता चला गया। अपनी परिस्थिति पर जनता का जो काबू होना चाहिए था, अपने भाग्य निर्माण में जनता को जो अवसर मिलना चाहिये था, नवसमाज की रचना में जनता को जो उत्साह आना चाहिये था, यह सब नहीं हुआ। तब समाजवाद के अपने अध्ययन से मैं इस नतीजे पर पहुँचा कि केवल समाजवादी संस्थाओं के खड़े कर देने से काम नहीं चलेगा, कुछ और ज्यादा बुनियादी चीज करनी होगी। तब ध्यान आया कि इस दिशा की तरफ भारत में महात्मा गांधी ने संकेत किया है।

श्री जयप्रकाश बाबू ने बताया कि मेरी दिलचस्पी इस बात में है कि अपने देश के समाजवाद के मूल्य लोगों के जीवन में किस तरह घुल-मिल जाते हैं। आपस में भाईचारा, शिरकत और बँटवारे की भावनाओं का बढ़ना जरूरी है। लेकिन दुनिया भर में समाजवाद की जो पार्टियाँ हैं, वे सत्ता-अभिमुख मालूम होती हैं। अगर हम सच्चे समाजवाद और आपसी सहयोग तथा सहकार के हामी हैं, तब सत्ता के लिए राजनीतिक प्रभुता के लिए यह संघर्ष, टक्करें और मनमुटाव क्यों! "एक आदमी, एक वोट, एक मूल्य" का जो नारा है, वह अपनी जगह ठीक है, लेकिन इससे सत्ता के लिए होड़ लगने की सम्भावना है और जिस बन्धुत्व की, पारिवारिकता की हम कल्पना करते हैं, उससे दूर हटने का डर है।

उन्होंने इस बात पर बड़ा आनन्द प्रकट किया कि अफ्रीका के समाज में आपस में भाईचारे और बँटवारे की भावना बहुत दूर तक मौजूद है। परिवार के जैसा व्यवहार उनमें है। अब सवाल सिर्फ यही रह जाता है कि विज्ञान और टेक्नोलोजी को लेकर जो समाज खड़ा हो रहा है, उस समाज में इन मूल्यों को कैसे पिरोया जाये। अगर हम योरप या अमरीका की कोरी नकल करते हैं, तो अपने लक्ष्य को नहीं पा सकेंगे। यह बड़ा भारी सवाल हमारे सबके सामने है।

जयप्रकाश बाबू ने आगे चल कर कहा कि इतिहास यह बता रहा है कि कानून की सामर्थ्य ज्यादा नहीं है। उससे मानसिक वृत्ति नहीं बदलती। यह काम तो समझाने-बुझाने और विचार प्रचार से ही होगा। उससे विचार-परिवर्तन होगा और तब हृदय परिवर्तन होगा। उसके बाद आप कानून बनाइये। जैसा महात्मा गांधी कहा करते थे कि हृदय परिवर्तन के बाद कानून आना चाहिये, जे० पी० ने दृढ़ता के साथ कहा कि सच्चे समाजवाद की स्थापना का इसके अलावा, दूसरा उपाय नहीं दीखता है। यही एक मार्ग है, जिससे समाजवाद की मंजिल तक पहुँचा जा सकता है। भारत के कुछ ऐसे गाँवों में जहाँ ग्रामदान हुआ है, इस तथ्य की कुछ झाँकी मिल सकती है।

अन्त में जयप्रकाशजी बोले कि आपके अन्दर समाजवाद के आधार मौजूद हैं, आपका जीवन व्यक्तिगत स्वार्थप्रधान नहीं है। भारत की अपेक्षा आप समाजवाद की तरफ ज्यादा आसानी से बढ़ सकते हैं। लोगों के रहने-सहने की सामग्री और जीवन यापन के साधन जरूर होने चाहिये। लेकिन दौलत की मालकियत व्यक्ति की बजाय समाज की हो और उपयोग के लिए आपस में उसका बँटवारा हो। पूँजीवाद हमारे दिल व दिमाग में रहा करता है। उसे वहाँ से निकाल फेंकने की जरूरत है। मुझे विश्वास है कि आप नवयुवक यह क्रान्तिकारी काम कर सकेंगे और सफलतापूर्वक समाजवाद के मन्तव्य को प्राप्त करेंगे।

सवा घंटे के इस प्रेरणात्मक भाषण के बाद सब मुग्ध हो गये। नवयुवक सभापति ने तब प्रश्नों के लिए मौका दिया। कुछ ने डर प्रकट किया कि अगर राष्ट्रीयकरण नहीं होता है, तो फिर व्यक्तिगत स्वामित्व बना रहेगा और शोषण भी जारी रहेगा। एक ने कहा कि हृदय परिवर्तन की बात तो ईसा मसीह के जमाने से कही जा रही है और अगर हम इसी तक अपने को सीमित रखते हैं, तो प्राचीन प्रणाली (ट्राइबलिज्म) का समाज तो नहीं बन जायेगा? जयप्रकाशजी ने स्पष्ट किया कि राष्ट्रीयकरण या समाजवादी ढाँचे का मेरा विरोध नहीं है। मेरा कहना यह है कि ढाँचे मात्र से समाजवाद नहीं आ सकता। आपको-हमको ऐसा ढंग सोचना होगा कि शोषण न हो पाये और आपस के सम्बन्ध भी बदल जायें। इस दिशा में कदम बढ़ाना होगा—जैसे कि भूमि या कृषि के क्षेत्र में भूदान ग्रामदान द्वारा हुआ है। औद्योगिक क्षेत्र में जरूर ज्यादा नहीं किया जा सका है। मगर उसके रास्ते ढूँढ़ने होंगे। चालू पद्धति से काम नहीं चलने वाला है। और यह समझना भूल है कि हम प्राचीन ढंग के समाज को लौट जाना चाहते हैं। पुराने ऋषि मुनियों-अवतारों ने जो हृदय-परिवर्तन की बात कही और जो गांधी ने कही, उसमें एक बड़ा भारी अन्तर है। वह यह कि गांधी यह नहीं कहता कि विचार प्रचार करते रहो और बस उसी पर संतोष करो। गांधी ने असहयोग का अमोघ अस्त्र भी हमें दिया है—सिविल नाफरमानी और सत्याग्रह का, जिसमें खुद तरह तरह की तकलीफें उठा कर, जान को हथेली में रख कर, सामने वालों से मोर्चा लिया जाता है। यह जरूरी नहीं है कि अफ्रीका अपने विकास के मार्ग में उन्हीं मंजिलों को तय करे, जिनमें होकर योरप या अमरीका गुजर रहे हैं। आप कूद लगाकर उनसे भी पहले समाजवाद ला सकते हैं।

गोष्ठी के अध्यक्ष ने जे० पी० को धन्यवाद दिया और कहा कि इस विश्व-समाजवादी ने आज जिस बीज को हम लोगों के बीच बोया है, हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि वह आगे चल कर अंकुरित होगा और फूले फलेगा।

बुधवार, तेईस मई—जयप्रकाशजी का दारेस्सलाम में आखरी दिन। सुबह के समय नगर से छः मील दूर एक गाँव में वह गये। वहाँ श्रम-यज्ञ के आधार पर एक स्कूल की इमारत खड़ी की जा रही है। उसमें स्थानीय ग्रामवासियों के अलावा, नगर से भारतीय युवक भी प्रत्येक रविवार को पहुँचते हैं और मेहनत करते हैं।

समयाभाव के कारण पारमाणविक परीक्षण-क्षेत्र में इस समय सत्याग्रही न जा सकेंगे

परीक्षण की नई घोषणा होने पर श्री जयप्रकाश नारायण नौका द्वारा सत्याग्रही लेकर जायेंगे

जयप्रकाशनगर में श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने निवास-स्थान पर हुई वाराणसी के 'आज' दैनिक पत्र के प्रतिनिधि प्रोफेसर शम्भुनाथ मिश्र को एक विशेष भेंट में बताया कि कतिपय प्राविधिक कठिनाइयों तथा समयाभाव के कारण जुलाई के अन्तिम सप्ताह में जान्स्टन द्वीप में होने वाले अमेरिकी पारमाणविक परीक्षण के विरोध में जहाज द्वारा सत्याग्रहियों को ले जाने की योजना कार्यान्वित नहीं हो सकेगी।

साथ ही आपने यह भी कहा कि यदि भविष्य में कभी पुनः परीक्षण की घोषणा हुई तो हम भारतीय सत्याग्रहियों के साथ नौका पर जाकर इस योजना को कार्यान्वित करेंगे।

श्री जयप्रकाश नारायण ने बताया कि दिल्ली में पारमाणविक अस्त्रों के विरोध में हुए सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि सम्मेलन पारमाणविक परीक्षणों के विरुद्ध उठाये जाने वाले स्वर को बल दे तथा ऐसे सत्याग्रहियों को प्रोत्साहित करे। भारत से इन परीक्षणों के विरुद्ध परीक्षण स्थल पर जहाज ले जाने वाली प्रेरणा श्री जयप्रकाश नारायण को पारमाणविक परीक्षणों के विरुद्ध संघटित अमेरिका की अहिंसात्मक कार्यसमिति —'कमेटी फार नानवायलेंट एक्शन' के अध्यक्ष श्री ए० जे० मस्ती से मिली थी। ७७ वर्षीय अमेरिकी शांतिवादी श्री मस्ती गांधीवादी विचारों से विशेष प्रभावित हैं। ये दिल्ली-सम्मेलन में उपस्थित थे।

श्री जयप्रकाश नारायण ने बताया कि जहाज के सम्बन्ध में उन्होंने गांधी स्मारक निधि के अध्यक्ष से वार्ता आरम्भ की थी। इसी बीच अफ्रीका की यात्रा के कारण इस कार्य में कुछ शिथिलता आ गयी। बाद में उन्होंने इस सम्बन्ध में भारत सरकार तथा प्रधान मन्त्री से भी वार्ता की। भारत से जहाज ले जाने में लगभग दो मास लग जायेंगे। परीक्षण जुलाई के अन्तिम सप्ताह में हो रहे हैं, अतः भारत से यदि कोई जहाज ले भी जाया जाय तो वह परीक्षण के पूर्व वहाँ नहीं पहुँच सकेगा। बाद में श्री मस्ती के विचारानुसार यह निश्चय किया गया कि होनोलूलू से कोई नौका ली जाय। वहाँ से जान्स्टन द्वीप जाने में केवल दो सप्ताह लगेंगे। होनोलूलू में दूतावास का कार्यालय न होने के कारण नौका के पंजीकरण में कठिनाई उत्पन्न होती। इसके समाधान के लिए जापान अथवा सानफ्रांसिस्को से पंजीकरण कराने की व्यवस्था पर विचार किया जाने लगा, किन्तु अधिक दूरी के कारण वह विचार त्याग देना पड़ा और होनोलूलू से ही लाने का निश्चय किया गया। इसके अतिरिक्त विदेशी मुद्रा की कठिनाई भी इस योजना के कार्यान्वय में बाधक होती।

श्री जयप्रकाश नारायण ने आगे कहा कि अमेरिका इस बार तीन-चार परीक्षण करेगा। उन्होंने कहा कि इस बार तो नौका द्वारा सत्याग्रहियों के भेजने की योजना कार्यान्वित नहीं हो सकी, किन्तु भविष्य में यदि इस प्रकार के परीक्षणों की घोषणा हुई तो हम भारतीय सत्याग्रहियों के साथ परीक्षण-स्थल पर पहुँचने का प्रयास करेंगे।

श्री नारायण ने बताया कि अहिंसात्मक कार्यसमिति के तत्वावधान में कैप्टेन बीगल ने १९५८ में पारमाणविक परीक्षणों के विरुद्ध सत्याग्रह किया था। सत्याग्रहियों को पकड़ लिया गया। उन पर मुकदमा चला और उन्हें दण्डित किया गया। अप्रैल में यह निर्णय किया गया कि जिस अध्यादेश के अन्तर्गत उन्हें गिरफ्तार किया गया था, वह अवैधानिक है।

एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा कि नौका पर केवल भारतीय सत्याग्रही तथा जहाँ तक सम्भव होगा, भारतीय नाविक रखे जायेंगे। भारतीय नाविकों में ऐसे कई अवकाशप्राप्त व्यक्ति हैं, जो अपनी सेवाएँ बड़ी सरलतापूर्वक दे सकते हैं। भारतीय नाविकों के अभाव में दूसरे राष्ट्र के नाविकों को रखा जायेगा।

आगामी जुलाई मास में होने वाले परीक्षणों के विरोध में अमेरिका की अहिंसात्मक कार्यसमिति भी सत्याग्रहियों की एक नौका होनोलूलू से भेजने वाली है।

एक अन्य प्रश्न के उत्तर में श्री जयप्रकाशजी ने कहा कि सत्याग्रहियों की भूमिका शांतिपूर्ण प्रदर्शन तथा अपने को विकिरण-सक्रियता से प्रभावित क्षेत्र में ले जाना, परीक्षणों के विरोध में प्रबल जनमत तैयार करना होगी। सत्याग्रहियों की संख्या ७-७ से अधिक नहीं होगी। सत्याग्रहियों को यदि गिरफ्तार किया जाय तो उन्हें यह तर्क देना चाहिये कि ६-७ व्यक्तियों के प्राण बचाने के लिए जहाँ इतनी सचेष्टता तथा सतर्कता दिखाई जाती है, उसका यदि शतांश भी इन परीक्षणों के रोकने में दिखाया जाय, तो संसार का विशेष कल्याण हो। इसमें सन्देह नहीं कि इन परीक्षणों के कारण पशु तथा वनस्पति-जगत् पर विघातक प्रभाव पड़ रहा है। हमारी भावी सन्तति कुरूप तथा विकृत होगी, वातावरण विषाक्त हो जायगा।

नौका या जहाज ले जाने का व्यय कहाँ से आयगा? इस प्रश्न के उत्तर में विश्व शान्ति सेना के सहअध्यक्ष श्री जयप्रकाश ने कहा कि कुछ सहायता गांधी-स्मारक निधि द्वारा प्राप्त होगी और शेष धन के लिए वे जनता से अपील करेंगे। उन्हें विश्वास है कि इस प्रकार की अपील के परिणामस्वरूप उन्हें कुछ लाख रुपये मिलने में कठिनाई नहीं होगी।

श्री नारायण ने आगे कहा कि कुछ वैज्ञानिकों का यह मत है कि सम्भवतः भविष्य में अब पारमाणविक परीक्षणों की आवश्यकता नहीं पड़ेगी। उन्होंने यह भी सम्भावना व्यक्त की कि यदि प्रबल जनमत इन परीक्षणों का विरोध करे तो पारमाणविक शक्तियों में समझौता भी हो जाने की आशा है।

सत्याग्रह से क्या होगा

सत्याग्रहियों के सत्याग्रह तथा प्रदर्शन का क्या प्रभाव पड़ेगा? इस प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा—

इसका इतना प्रभाव तो नहीं पड़ेगा कि परीक्षण बन्द हो जाय, किन्तु यदि संसार के कई शांतिवादी राष्ट्र इस प्रकार की योजना कार्यान्वित करें, तो इसका अधिक प्रभाव पड़ सकता है। यह भी सम्भव है कि परीक्षण बन्द हो जाय। उन्होंने कहा कि जापान भी इस प्रकार के सत्याग्रह के लिए नौका ले जाने वाला था।

उन्होंने कहा कि रूस के परीक्षणों के विरुद्ध भी यूरोपीय शान्तिवादियों द्वारा विरोध व्यक्त किया जा रहा है। उन्होंने बर्ट्रेण्ड रसेल के विचारों से सहमत होते हुए बताया कि इस प्रकार के सत्याग्रहों का संगठन राजकीय स्तर पर होना चाहिये।

श्री राजगोपालाचारी भी इन्हीं विचारों के पोषक थे। विरोध करने वाले राष्ट्रों के लिए यह आवश्यक नहीं कि वे अहिंसा में पूरा विश्वास करते हों।

अन्त में उन्होंने इस बात पर दुःख प्रकट किया कि भारत में इन परीक्षणों से होने वाली हानियों की जानकारी कम है। उन्होंने कहा कि इन परीक्षणों के विरोध में भारत में प्रबल जनमत तैयार करने की आवश्यकता है।

दोपहर के दो बजे जयप्रकाश बाबू और प्रभावती बहन हवाई जहाज से विदा हुए। उस समय विश्वशान्ति सेना के साथियों के अतिरिक्त भी केनेथ कौंडा की पार्टी के कार्यकर्ता भी उन्हें विदाई देने आये थे। उन्होंने एक गीत गाया—अपनी जम्बिया की भाषा में कि

'हम मरते दम तक चैन नहीं लेंगे
और आजादी लेकर रहेंगे।'

फिर जयप्रकाश बाबू का जय-जयकार किया।

देखते-देखते जहाज धरती पर से उठ चला और थोड़ी ही देर में आँखों से ओझल हो गया।

दारेस्सलाम के बाद जयप्रकाशजी एक दिन जाजीबार रहे। वहाँ से टांगा के उत्तरी प्रांत के टांगा नगर गये। उसके बाद आरूशा दो दिन ठहरे। यह स्थान अफ्रीका के सबसे ऊँचे पर्वत किलिमैन्जारो के पास है।' इस पर्वत की ऊँचाई १९,३४० फिट है। आरूशा के आस-पास तरह-तरह के जीव-जन्तु मिलते हैं और दुनिया भर के यात्री यहाँ आते हैं। टांगा और आरूशा, दोनों जगहों पर जयप्रकाशजी के सार्वजनिक कार्यक्रम भी हुए, जिनमें उन्होंने उत्तर रोडेशिया के स्वराज्य-आन्दोलन का महत्त्व बताते हुए कहा कि पूर्वी-उत्तरी दक्षिणी अफ्रीका की स्वतंत्रता की यह कुञ्जी है। इसमें जिससे जितना बन पड़े योगदान करना चाहिये।

[समाप्त]

सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण की आवश्यकता और उपाय

[पृष्ठ २, कालम १ का शेष]

असम में सरकार ने ग्रामदान कानून बनाया। यहाँ के प्रदेश-काँग्रेस ने ग्रामदान के लिए प्रस्ताव पास किया। पंद्रह महीने से बाबा यहाँ घूम रहा है। यह प्रदेश सीमा पर है। इस प्रदेश में बहुत विविधता है। विविधता में ग्रामदान होता है, तो प्रदेश बचता है, देश बचता है और बहुत बड़ी चीज बनती है। अगर यह विचार नहीं समझा और आपने 'मेरा मेरा' चलाया, तो गाँव-गाँव में विरोध बना रहेगा। ऐसा विरोध बना रहेगा तो जैसा राजेन्द्रबाबू ने कहा, वैसा नहीं हो सकेगा।

मम सत्यं : युद्ध

किसी देश ने अभी तक निःशस्त्रीकरण की हिम्मत नहीं की। रशिया, अमेरिका से प्रार्थना की जाती है कि निःशस्त्रीकरण करो। दूसरों को उपदेश देना सरल होता है। अगर कोई पूछेगा कि गोआ का प्रश्न आपको पंद्रह साल तकलीफ दे रहा था, तो आपने सहन किया और फिर सहनशक्ति एकदम कैसी टूट गयी? तो आप यही जवाब देंगे कि न्याय के लिए किया। तो दूसरे राष्ट्र भी न्याय के लिए हो लगते हैं।

वेद में युद्ध के लिए एक शब्द आया है। वैसे युद्ध के लिए समर, रण, संग्राम अनेक शब्द संस्कृत में हैं। एक शब्द वेद में आया है 'मम सत्यं'। भगवान को प्रार्थना करते हैं कि हे भगवान्, सब लोग तेरा आवाहन कर रहे हैं—'मम सत्य'। 'मम सत्य' याने मेरा पक्ष सत्य है। हिंदुस्तान कहता है कि मेरा पक्ष सत्य है, चीन कहता है कि मेरा पक्ष सत्य है। चीन कहता है कि हिंदुस्तान ने आक्रमण किया, हिंदुस्तान कहता है कि चीन ने आक्रमण किया। रशिया कहता है कि अमेरिका 'वेकेरिटक वेपन्स' बनाती है। अमेरिका कहती है कि रशिया 'बेलेस्टिक वेपन्स' बनाता है। ऐसे एक-दूसरे को कहते हैं। रशिया के तमाम अखबार अमेरिका की निंदा करते हैं, एक भी अपवाद नहीं। अमेरिका के तमाम अखबार रशिया की निंदा करते हैं, एक भी अपवाद नहीं। हिंदुस्तान के तमाम अखबार पाकिस्तान के खिलाफ बोलते हैं, इसमें एक भी अपवाद नहीं। पाकिस्तान के तमाम अखबार हिंदुस्तान के खिलाफ बोलते हैं, इसको भी एक भी अपवाद नहीं। अपने यहाँ छोटे प्रमाण में असमी-बंगाली वाद चल रहा था, तब यही देखा। एक बाजू के तमाम अखबार दूसरी बाजू की निंदा करते हैं। उधर महाराष्ट्र-मैसूर वाद चल रहा है। वहाँ भी यही परिस्थिति है। इसका अर्थ एक ही है कि मेरा सत्य है। इसलिए ऋग्वेद में कहा है कि 'मम सत्य' याने लड़ाई। दोनों पक्ष 'मम सत्य' कहते हैं और तेरा आवाहन करते हैं। कौन सत्य है इसका कौन निर्णय देगा?

इसलिए अगर निःशस्त्रीकरण करना हो तो यह एक रास्ता है कि गाँव गाँव में एकता स्थापित करनी होगी। इन राजनैतिक पक्षों के झगड़ों से कुछ होने वाला नहीं। चाहे 'डिमोक्रसी' हो, चाहे 'वेलफेअरिज्म' हो, चाहे 'पेसिज्म' हो, चाहे 'सोशियालिज्म' हो, चाहे 'कम्युनिज्म' हो या चाहे 'मोनकों' हो, आज सबका बचाव करने वाली एक ही शक्ति 'चंडी' है—सेना है। यही सबका बचाव करती है। अखबार में आया था कि जब राजेन्द्रबाबू ने प्रस्ताव रखा, तब यह प्रस्ताव अव्यवहार्य है, ऐसा अलग-अलग पार्टियों के जिम्मेवार लोग बोले। मुझे प्रत्यक्ष ज्ञान तो नहीं, लेकिन अखबार में जो पढ़ा, उस पर से कहता हूँ। उनका विरोध में जाने का उद्देश्य नहीं था, लेकिन उन्होंने प्रस्ताव व्यवहार्य नहीं माना, क्योंकि उनका चंडी के सिवा रक्षण नहीं होता। संसार में भक्ति है, भक्ति अच्छी लगती है, उससे रुचि लगती है, लेकिन जहाँ देश के रक्षण का सवाल आता है, वहाँ चंडी ही काम देती है।

यह सारा देखते हुए हम इस नतीजे पर आते हैं कि केवल आध्यात्मिक कारणों से नहीं, धार्मिक कारणों से नहीं, तो अत्यंत व्यावहारिक कारणों से यह दान-व्यवहार बढ़ाना होगा, जमीन की मिलकियत मिटानी होगी और धर्म, भाषा, जाति, पंथ, राजनैतिक पक्ष, यह पंचभेदासुर हमको खतम करना पड़ेगा। यह सब खतम करने के लिए सरल रास्ता ग्रामदान है।

[पड़ाव : मेचापुरा,
जि० कामरूप, १९ जून, '६२]

सत्ता से दूर रह कर नयी पीढ़ी का निर्माण करो

विदर्भ प्रदेश के उमरेड के सर्वोदय-स्वाध्याय मंडल की सभा में भाषण करते हुए श्री दादा धर्माधिकारी ने कहा कि भारतीयता और देशभक्ति नष्ट होने के पथ पर बढ़ रही है तथा इसे बचाना ही आज युग की माँग है। सत्ता और सम्पत्ति का विशद विश्लेषण करते हुए उन्होंने कहा कि भारत देश का मार्गदर्शन वही कर सकता है जो 'मत' (वोट) माँगने नहीं जायगा। आजादी की लड़ाई में सिर में कफन बाँध कर दीवानों की टोली आगे बढ़ी थी, उसी तरह सत्ता से दूर रह कर देश को आबाद करने वालों की नयी पीढ़ी का निर्माण करना है, क्योंकि वह भारत के स्वराज्य की रक्षा कर सकेगी। ● ● ●

न्याय

सामाजिक या सामूहिक सुख और शान्ति न्याय पर आधृत है। प्रत्येक मनुष्य के आनन्द का आधार इसी पर है कि वह अपने खून-पसीने की कमाई और सम्पत्ति से आनन्द का उपभोग करे। अतः तू अपनी इच्छाओं और लालसाओं को मर्यादित रख और सदैव न्याय को अपना पथ प्रदर्शक बना, जिससे कि सीधी राह चल सके।

अपने पड़ोसी की सम्पत्ति पर तृष्णा दृष्टि मत डाल और न उसे हाथ लगा।

पड़ोसी पर लालच और क्रोधवश हाथ मत उठा, कहीं ऐसा न हो कि तू उसके प्राणघातक बन जाय।

उसके सदाचार की निन्दा न कर और न उसके विरुद्ध झूठी गवाही दे। उसके नौकरों को धोखा देने और नौकरी छोड़ने के लिए मत उकसा और न रिश्वत दे। उसकी नेकचलन पत्नी को पाप करने पर तैयार मत कर; क्योंकि ऐसा करने से उसके हृदय को जो दुःख पहुँचेगा, उसका निवारण कदापि संभव न होगा। उसकी आत्मा ऐसी व्याकुल होगी, जिसका प्रायश्चित असम्भव हो जायगा।

अपने सारे काम-काज में न्याय और मर्यादा का अतिक्रमण न कर। जिस व्यवहार की तू अपने लिए अपेक्षा करता है कि लोग तेरे साथ करें, तू भी उनके साथ उसी प्रकार का व्यवहार कर।

अपनी प्रतिज्ञाओं की पूर्ति ईमानदारी से कर। जिसे तुझ पर विश्वास है, उसे धोखा न दे। ईश्वर की दृष्टि में छल-कपट झूठ से भी भयानक पाप है।

गरीबों पर अत्याचार न कर और न मजदूरों को उनकी मजदूरी से वंचित कर।

यदि लाभ के लिए तू किसी वस्तु को बेचता है, तो अपनी अंतरात्मा की आवाज पर कान धर, उचित लाभ पर संतोष कर। ग्राहक की अनभिज्ञता के कारण उसे धोखा मत दे।

तूने जिससे ऋण लिया है, उसे चुका दे; क्योंकि जिसने तुझे ऋण दिया है, उसने मानो तेरी सज्जनता पर भरोसा किया है। उसका हक उसे न देना न्याय और सज्जनता, दोनों के प्रतिकूल और बड़ी नीचता है।

हे मनुष्य, अपने मन की थाह ले। अपनी स्मृति को अपनी सहायता के लिए बुला। यदि किसी प्रसंग में तुझसे भूल-चूक हो तो खेद प्रकाश कर, लज्जित हो और यथासंभव तुरन्त उसे सुधार। ●

● अ० भा० सर्व सेवा संघ प्रकाशन राजघाट, काशी द्वारा हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'नीति निर्झर' से। अनुवादक : मजूरुल हसन, पृष्ठसंख्या १७०, मूल्य-सवा रुपया।

दिल्ली का अणु-अस्त्र-विरोधी सम्मेलन

[पृष्ठ २, कालम ४ का शेष]

अन्याय के प्रतिकार के लिए संगठित किया जा सकता है, यह गांधी ने प्रत्यक्ष करके दिखाया था। इस दृष्टि से दिल्ली-सम्मेलन का यह निर्णय हमें उसके दूसरे सब निर्णयों की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण मालूम होता है। अगर ठीक ढंग से इसे कार्यान्वित किया जाय तो यह अणु-अस्त्रों के खिलाफ एक जबरदस्त विश्व-व्यापी लहर का प्रारंभ हो सकता है।"

सेवा और सत्ता

दिल्ली के सम्मेलन के बारे में कई बातें उल्लेखनीय हैं, कुछ अच्छी, कुछ बुरी। जल्दी जल्दी में बुलाये जाने के कारण व्यवस्था में कमियाँ रहना स्वाभाविक ही था, पर उनका बहुत कुछ परिहार, जैसा प्रतिष्ठान के मंत्री श्री जी० रामचन्द्रन् ने कहा, देवर भाई की कार्यकुशलता और कर्तृत्वशक्ति के कारण हो सका। एक बात जो सबसे अखरने वाली हुई और जिसने शायद देश विदेश के दूसरे प्रतिनिधियों का ध्यान भी आकर्षित किया हो, वह सम्मेलन की कार्रवाई का आरम्भ किसी भगवद् भजन या ईश-प्रार्थना से न होकर भारत के राष्ट्रीय गान "जन गण मन" से और वह भी सैनिक बैंड द्वारा होना था। जिस किसी की भी यह 'तरंग' उठी हो और जो कोई भी इसके लिए जिम्मेदार हो, यह चीज बहुत ही बेमौजूं और असंगत थी। स्वयं राष्ट्रपति तथा पंडितजी आदि ने भी एक से अधिक बार यह जाहिर किया है कि पुराने ढंग की राष्ट्रीयता के दिन लद चुके हैं। इतना ही नहीं, वह मानव-हित की विरोधी भी साबित हो सकती है। कम-से-कम अणुअस्त्र विरोधी और अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप के सम्मेलन में इसका प्रदर्शन—और वह भी सैनिकों द्वारा—सर्वथा अप्रासंगिक मालूम होता था। सम्मेलन में कई देशों के लोगों की उपस्थिति थी, पर अफ्रीका का सारा भूखंड ही मानो अनुपस्थित था।

सम्मेलन का एक दृश्य, जो शायद नियोजित नहीं था, लेकिन सहज ही बन गया, वह प्रेरणादायी था। निवृत्त राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसादजी और मौजूदा राष्ट्रपति डा० राधाकृष्णन् सम्मेलन में साथ साथ ही आये, पर ज्ञानवृद्ध और पदवृद्ध होते हुए भी डा० राधाकृष्णन् वयोवृद्ध और तपोवृद्ध राजेन्द्र बाबू के पीछे-पीछे चल रहे थे। सेवा और तप का स्थान, सत्ता और पद से ऊँचा है यह सहज ही इससे भासित होता था और शायद यही अणु-अस्त्र, युद्ध मात्र और हिंसा से निवृत्ति के सच्चे रास्ते का सूचक है। (गतांक से समाप्त)

भूदान यज्ञ

साप्ताहिक

भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार — १३ जुलाई '६२ — वर्ष ८ : अंक ४१

अहिंसामूलक करुणा

• विनोबा

अहिंसा शब्द का उच्चारण, बहुत पुराने जमाने से, होता रहा है। प्राय: मनुष्य के अलावा अन्य प्राणियों को यह विचार सूझता हो, ऐसा दीखता नहीं है। मुमकिन है, सूझता भी हो, लेकिन मनुष्य पहचान नहीं सकता। पर हमें जितना दीखता है, उतना ही, सीमित हम बोलते हैं। मांसाहारी प्राणी मांसाहार करते हैं और शाकाहारी प्राणी शाकाहार। मालूम नहीं, गाय को क्या सूझता है कि वनस्पति खानी चाहिए, वही खाना उचित है और मांसजन्य वस्तु का आहार उसके लिए उचित नहीं है। इस प्रकार का उचित और अनुचित का विचार कभी उसे छूता ही नहीं, मालूम नहीं, लेकिन छूता हुआ दीखता नहीं है। ऐसा दीखता है कि उसकी देह-प्रकृति ही कुछ ऐसी है कि वह वनस्पति ही ग्रहण करती है और प्राणिजन्य वस्तु पसन्द नहीं करती।

हमारे आश्रम में एक हिरन था। जब-जब खाने की घण्टी बजती थी, तब हम उसे खिलाते थे। घण्टी सुन कर वह आता भी था। उसे भान हो गया था कि घण्टी बजने पर खाने के लिए आना चाहिए। एक रोटी हम उसे खिलाते थे। एक दिन जिस आटे की रोटी बनी थी, उस आटे में घी डाला गया था। हमेशा वैसी रोटी नहीं बनती थी। उस दिन रोटी जब उसके सामने रखी, तो सूँघ लिया, खाया नहीं। हमेशा की तरह बिना घी की रोटी बना कर खिलानी पड़ी। मतलब यह कि वह शाकाहार में हमसे आगे बढ़ा हुआ था। हम लोग प्राणिजन्य वस्तु भी चला लेते हैं, लेकिन वह उसे पसन्द नहीं करता था। उसी गन्ध की आदत उसे डाली होती तो वह क्या करता, मालूम नहीं।

बैल पर अलसी का प्रयोग

वर्धा के बाजार में सावली का एक बैल हमने खरीदा। उसे हम अलसी की खली खिलाते थे। वहाँ तो वह अलसी की खली नहीं खाता था। उसकी आदत मूँगफली की खली खाने की थी। उसे अलसी की बदबू आती थी। हमने उसकी नाक में अलसी के तेल में भिगोये हुए कपास के दो टुकड़े रख दिये। इन टुकड़ों को वह नाक से बाहर भी नहीं निकाल सकता था। दो-तीन दिन में उसकी आदत बन गयी, तो अलसी की खली खाना उसने शुरू कर दिया। उसी तरह घी की आदत हिरन में लगा देते, तो वह खा सकता था। वह एक मूक जानवर है, अज्ञान है, उसे इस प्रकार की ट्रेनिंग दी जा सकती है।

हिरन आदत से शाकाहारी

उस हिरन ने घी की रोटी नहीं खायी, इसलिए वह श्रेष्ठ शाकाहारी साबित हुआ, लेकिन 'स्वेच्छया' नहीं। आदत थी, इसलिए नहीं खाया। मांसाहारी प्राणी घास नहीं खाते। शास्त्रकार कहते हैं कि उनकी आँतें घास के लायक नहीं हैं। लेकिन वे प्राणी यह सोचते हैं कि नहीं, मालूम नहीं।

अहिंसा का व्यापक अर्थ

लेकिन मनुष्य अति प्राचीन काल से अहिंसा का विचार करता आया है। अहिंसा क्या है, यह जब कभी सोचा जाता है, तब मेरी श्रद्धा उसके व्यापक अर्थ में है। गीता में कहा है, : 'न हन्ति, न हन्यते'—आत्मा न मारता है, न मरता है, 'न घातयति'—न मरवाता है। यह आत्मा का स्वभाव है। वह सहज है। वह कर्ममुक्त है, कोई क्रिया नहीं करता, लेकिन मारने की क्रिया हो ही नहीं सकती। जहाँ दूसरी भी सारी क्रिया नहीं होती, वहाँ मारने की भी नहीं होती। मारता नहीं, मरता नहीं, ऐसा आत्मा है और वही अहिंसा है। फिर इसका सामाजिक विचार बना, तब हमने उसका एक विधि-निषेधयुक्त शास्त्र बनाया। लेकिन हमारा मूल विचार यही है कि आत्मा के साथ अहिंसा जुड़ी है, इसलिए हम जितने आत्म स्वभाव के नजदीक जायेंगे, उतनी अन्तस्तुष्टि और शान्ति मिलेगी और जितने आत्म स्वभाव से दूर जायेंगे, उतनी शान्ति नहीं मिलेगी।

करुणा और हिंसा

इस तरह अहिंसा का मूल विचार और सूक्ष्म विचार, ऐसे दो विभाग जीवन में बन गये और आज तक मनुष्य मानता आया है कि अहिंसा अच्छी है, उसका मानस अच्छा है; लेकिन मनुष्य के रक्षण के लिए—डिफेन्स के लिए—यानी जब हमला होता है तब, हिंसा की जा सकती है और वह हिंसा अहिंसा में गिनी जा सकती है। इस प्रकार मनुष्य का विचार चलता ही रहा। यह देखा जाता है कि बहुत करुणा-परायण पुरुष भी हिंसा को पसन्द करते हैं, यह समझ कर कि उससे मिलेगी। कम्युनिस्टों ने हिंसा को मान्य किया गरीबों के हित में। उसके मूल में करुणा है। समाज शास्त्रकारों ने अपराधियों को तरह तरह का दण्ड देना मान्य किया। उसके मूल में भी करुणा है। परशुराम ने धनुष उठाया, ब्राह्मण होकर भी क्षत्रिय का काम किया—उसमें भी करुणा है। इसलिए हमने परमेश्वर से सिर्फ करुणा नहीं माँगी है। सत्य, प्रेम और करुणा माँगी है। जो दोष करुणा में आ सकता है, वह प्रेम में भी आ सकता है। इन दोनों को निर्दोष बनाने के लिए सत्य की आवश्यकता है। इसलिए सत्य, प्रेम और करुणा मिल कर एक पूर्ण विचार बनता है।

अहिंसा के विचार में विज्ञान की मदद

समाज में जितना भी शासन चलता हो, चाहे वह सरकार के जरिये हो या अन्य किसी के जरिये—उसमें एक दबाव का अंश ही मान्य किया जाता है, वह भी करुणा की प्रेरणा से ही। अभी तक मनुष्य के सामने यह विचार साफ नहीं हो रहा है कि अहिंसा के हित में क्या-क्या किया जा सकता है और क्या क्या नहीं। अब साइंस का युग आ रहा है। वह शस्त्रों की भयानकता दिखा कर सोचने में मदद दे रहा है और सोचने के लिए लाजमी कर रहा है।

एटम बम के खिलाफ बोलने वाले अहिंसक हैं ?

आज कई दयालु लोग भी हिंसा के खिलाफ नहीं हैं। वे एटम बम के खिलाफ हैं, लेकिन फाँसी के खिलाफ नहीं हैं। 'कन्वेन्शनल वेपन्स', जिनको मामूली शस्त्र कह सकते हैं, उनका उपयोग हो, ऐसा वे चाहते हैं। इसलिए एटम बम का उपयोग बन्द हो, ऐसा चाहने वाले सीमित हिंसा चले, यह चाहते। वह इसलिए कि दंड चल सके। इन बड़े शस्त्रों ने तो इन छोटे शस्त्रों की इज्जत कम की है, इसलिए वे चाहते हैं कि बड़े शस्त्र न चलें, ताकि छोटे शस्त्र चलें और दंड शक्ति का दबदबा चले, रोब चले और हम चलायें। आज दुनिया भर के सारे राज्य दंड शक्ति पर खड़े हैं। अगर आणविक शस्त्र चलेंगे, तो उस हालत में इन छोटे शस्त्रों की कुछ चलेगी नहीं और यह दंड शक्ति खत्म होगी, इसलिए वे घबड़ा गये हैं कि दंड कैसे चलेगा ? जो अत्यन्त तीव्रता से 'आटोमिक वेपन्स' के खिलाफ बोलते हैं, वे अवश्य ही अहिंसा में सोचते हैं, ऐसा नहीं कहा जा सकता; बल्कि दंड जारी रहे, इसीलिए वे वैसा सोचते हैं। धर्मराज युधिष्ठिर को मिथ्या बोलने की प्रेरणा दो बार हुई, वह करुणामूलक ही थी। बहुत करुणावान् लोग सोचते हैं कि संतति-नियमन होना चाहिए। एक करुणा सन्तति नियमन करने के लिए कहती है और दूसरी करुणा दुर्जनों को दंड देने के लिए कहती है। एक करुणा वह है, जो मजदूर यूनियन बनाती है और एक

मूले प्रहार

परदा हटाना आदि छोटे-छोटे समाज-सुधार के काम लेकर शक्ति लगाने के दिन लद गये ! अब तो "मूले प्रहार" होना चाहिए। हर काम में वैज्ञानिक दृष्टि और सब मानवों को एक करने वाली आध्यात्मिक एकता, इन दो के आधार पर खड़ा हुआ समग्र प्रोग्राम लेकर काम करना चाहिए। मूल कटने से शाखाएँ सहज ही सूख जाती हैं।*

[शरणीया आश्रम, गौहाटी
२ जून, '६२]

—विनोबा का जय जगत्

* वि-सर्जन आश्रम, इन्दौर के श्री मूलचन्द अग्रवाल को लिखे पत्र से।

करुणा यह है, जो वासना के क्षय के बिना अहिंसा नहीं चलेगी, यह कहती है।

गौतम बुद्ध की महान् खोज

वासना के क्षय के बिना अहिंसा नहीं चलेगी, यह करुणा गौतम बुद्ध को सूझी। यह करुणा उसे नहीं सूझती, तो वह 'मजदूर यूनियन' बनाने में लगा रहता और कानून बना कर प्रचार-कार्य में लगता। लेकिन वह सत्य की खोज में बैठा और करुणा का स्रोत कहाँ से चलता है, यह, पहचानने के लिए खोज की। खोज यह थी कि मनुष्य को वासना-क्षय करना चाहिए। हम गाय के प्रति करुणा दिखाते हैं और चाहते हैं कि गाय बचे। लेकिन वासना बढ़ायेंगे, तो गाय खत्म होगी। आज गाय है, लेकिन कल हम अपनी सन्तान बढ़ाते चले जायेंगे, तो मनुष्य गाय और बैल को अपना हरीफ, दुश्मन मानेगा और उनको खत्म करने की तजवीज, तरकीब जरूर ढूँढ़ेगा। इसलिए मूलभूत करुणा वासना-क्षय में ले जाती है। करुणा का विचार पुराना है। वासना-क्षय का विचार भी पुराना है। मुक्ति की खोज में वासना-क्षय का जो विचार आता है, वह भी पुराना है। करुणा के बिना समाज सुखी नहीं हो सकता, यह खोज भी पुरानी है। करुणा के लिए वासना-क्षय तक पहुँचना है। यह खोज जहाँ तक हम जानते हैं, गौतम बुद्ध की है और उसके बाद बहुत सन्तों ने उसको उठाया है।

व्यक्तिगत और सामाजिक क्षेत्र में करुणा

बहुत लोग कहते हैं कि हिन्दुस्तान गिरा और प्रतिकार नहीं कर सका, इसका कारण है बुद्ध की परम्परा, जिसने हिन्दुस्तान को और दुर्बल बनाया। लोग समझते हैं कि कुछ लोग वासना-क्षय करेंगे, तो कुछ लोगों को मदद ही होती है। अतः लोगों ने संतों के उन विचारों का विरोध नहीं किया। लेकिन जहाँ आज हम करुणा के लिए सामाजिक क्षेत्र में वासना-क्षय लाते हैं, तो समाज उसे पसन्द नहीं करता। एक आदमी त्याग करे, तो समाज उसे पसन्द करता है। लेकिन वह आदमी अपने समाज को दूसरे समाज के लिए त्याग करने के लिए सिखाये, तो समाज उसे पसन्द नहीं करेगा। त्यागी और वैरागी मनुष्य अच्छा है, लेकिन वह त्याग और वैराग्य सारे समाज को सिखाना और त्याग कराना समाज को पसन्द नहीं है। एक समाज को दूसरे समाज के लिए त्याग करना चाहिए, यह समझाने के लिए वह कहे कि हिन्दुस्तान को पाकिस्तान की मदद करनी चाहिए या पाकिस्तान को हिन्दुस्तान के लिए प्रेम से त्याग करना चाहिए, तो समाज उसके खिलाफ खड़ा होगा और कहेगा कि यह मनुष्य समाज-द्रोही है, देश-द्रोही है। सारांश, इस प्रकार का आदेश वासना-क्षय और करुणा के लिए नहीं है। करुणा तो सबको पसन्द है, वासना-क्षय भी पसन्द है; लेकिन जहाँ आपने वासना-क्षय का सम्बन्ध समाज से जोड़ा, वहाँ वासना-क्षय के खिलाफ समाज उठेगा। आप इसको सामाजिक तत्त्व बनाते हैं, तो समाज पसन्द नहीं करेगा। यह जो विचार-धारा है, वह सिर्फ हिन्दुस्तान में ही नहीं, बल्कि सारी दुनिया में चलती है। ईसा मसीह के खिलाफ लोग उठे। कम्युनिस्ट भी बोलते हैं कि आपने वासना-क्षय और करुणा ये शब्द दिये, यह हम लोगों के लिए सोचने की बात है।

शाखाग्राही और मूलग्राही करुणा

हम करुणा चाहते हैं, लेकिन किस तरह की? हम मल-मूत्र-सफाई के लिए जाते हैं, बीमारों की सेवा करते हैं—उसमें करुणा होती है। अनेक आपत्तियों में गृहस्थाश्रमी फँसे हैं और संतान बढ़ी है, उस हालत में मदद करने की इच्छा होती है। यह भी करुणा है। क्या यह करुणा उन गृहस्थों को समझायेगी कि तुम नाहक भोग में पड़े हो, इसलिए भोग-मुक्त हो जाओ? वे भोग में पड़े हैं, तो यह करुणा उनकी मदद करती है। इसलिए वह शाखाग्राही करुणा है, मूलग्राही नहीं।

दुःख-मुक्ति के लिए वासना-क्षय आवश्यक

तुकाराम ने मानसिक विकास के क्रम में आखिरी मौके पर कहा है: 'काम नहीं, काम नहीं, खालों पारो रिकामा।' इसके दो अर्थ होते हैं। काम नहीं है, क्योंकि कामना नहीं है। 'नसत्या छंदे, नसत्या छंदे, जग विनोदे विघ्ळलसे।' दुनिया दुःख कर रही है, बोल रही है विनोद में, लेकिन दुनिया को उस वेदना-भोग में आनन्द आता है। इसलिए उसकी वेदना से छुड़ाने का प्रयत्न मैं नहीं करूँगा। 'एराएरी, तुका लोकी निराळा।' इसलिए तुकाराम कहता है कि वह लोगों से अलिप्त हो गया है। वह जानता है कि उन लोगों को दुःख से अलग करें, तो अच्छा नहीं लगेगा। उनको उसी में अच्छा लगता है, इसलिए विनोद में दुनिया चिल्लाती है। यह बड़ा कठोर वाक्य मालूम होता है, लेकिन उसमें मूल करुणा का है। तुम वासना बढ़ाते रहो, तो दुःख पाते रहो। तुम्हें दुःख मिलता रहेगा। यह सिलसिला तोड़ना है, तो जड़ काटनी होगी। इसलिए वासना-क्षय की ओर जाना ही होगा। वासना-क्षय की तरफ जाना ही है और कदम-ब-कदम जायेंगे, तो किस तरह वासना-क्षय होगा? गौतम बुद्ध ने इसीलिए कहा है कि वासना और तृष्णा सारे दुःखों का मूल है, उसे काटना ही होगा। क्या जिजीविषा छोड़नी है? वासना-क्षय के लिए क्या यह भी करना है? यह तो आखिरी कदम है। जब तक हम यह समझेंगे कि हरएक को जिजीविषा है, तब तक हम दूसरे प्राणी की हिंसा नहीं करेंगे। जैसी हमें जिजीविषा है, वैसे दूसरे प्राणी की हिंसा नहीं करेंगे। जैसी हमें जिजीविषा है, वैसे दूसरों को भी है। मुझे भूख है, वैसे दूसरे को भी है। इस तरह आत्मौपम्य दृष्टि से देखेंगे, तो उनको भी जीने की इच्छा है और वासनाएँ भी हैं। आरम्भ से छूटेगी नहीं, तो आरम्भ कहाँ से करना होगा?

कुवासनाएँ छोड़नी हैं

जिस वासना के कारण स्पष्ट ही शरीर की, इन्द्रियों की, समाज की हानि होती है, उसे काटना होगा। शराब से शरीर, मन खराब होता है—यह साफ बात है; लेकिन यह साफ नहीं हुआ, तब तक तो सब्र करना होगा। दूसरी वासना है, पर-स्त्री के साथ सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए। याने पहले कु-वासना पर प्रहार करना होगा। वासना में कुछ कु-वासना है और कुछ सद्-वासना—यों समझ; पर जो मान्य कु-वासनाएँ हैं, उन्हें छोड़ना ही होगा। सद्-वासनाएँ रहेंगी। उनमें क्रम बिठाना होगा।

वासना-क्रम बिठाना है

जिस वासना के लिए सबके मन में चाह है, लेकिन जिसकी पूर्ति के साधन कम हैं, वह वासना चाहे सद्वासना ही हो, जितनी कम कर सकें, करें। यह दूसरी कसौटी होगी। सद्वासना में भी जिनका सबको उपयोग नहीं मिलता है, उन्हें छोड़ना पड़ता है। शास्त्रकारों ने कहा है—ॐ और राम की जो बात चली, उसमें—जब ॐ बोलना है, तब ॐकार के लिए शुचिर्भूत होना होगा। स्नान आदि करके बोलना पड़ता है। लेकिन राम नाम अगर लेना है, तो किसी चीज की कोई जरूरत नहीं। शास्त्रकार कहते हैं कि स्त्रियाँ महीने में चार-पाँच दिन अलग रहती हैं, उस रजस्वला की अवस्था में ॐकार का मन्त्र नहीं बोल सकतीं, लेकिन राम-नाम बोल सकती हैं। राम-नाम एक ऐसा साधन खोल दिया, जिसे पापी पुण्यवान्, शुचि-अशुचि सब बोल सकते हैं। इसलिए हम ॐकार की वासना भी नहीं रखेंगे, राम-नाम ही बोलेंगे। सार यह कि सद्वासना सबके लिए न हो, तो उसका त्याग करना चाहिए, छोड़ना चाहिए। (१) कुवासना छोड़नी चाहिए। (२) सद्वासना जो सबको उपलब्ध न हो, सबको उसका साधन नहीं है, छोड़नी चाहिए। कम-से-कम उसका साधन सबके हाथ में आने तक छोड़नी चाहिए। (३) सबको सद्वासना उपलब्ध है, पूर्ति का साधन है—जैसे खाने के लिए मिठाई सबको उपलब्ध है, तो बहुत खाते हैं। लेकिन इसमें संयम का सवाल आयेगा। चाहे सबके लिए उपलब्ध हो, फिर भी शरीर और मन पर जड़ता न आये कि कोई काम ही न कर सकें, ऐसी अवस्था न हो। इसलिए उसका अधिक मात्रा में सेवन न हो। यहाँ मात्रा का सवाल आया। जिन सद्वासनाओं की पूर्ति का साधन सर्वत्र है, उनको भी मात्रा में लेना चाहिए; क्योंकि बुद्धि पर, शरीर पर बुरा असर न हो। यहाँ मात्रा का यह विचार पहुँचता है और संयम की भी पाबन्दी आती है, यहाँ और विचार के सामने आता है।

फलाहार हो तो सर्वोत्तम। मिठाई राजस आहार है। लेकिन फलाहार की इच्छा हो और भूख लगे, और भूख सहन नहीं होती, इसलिए खाना ही पड़े, यह लाचारी की अवस्था भी नहीं आनी चाहिए। समय पर खायें, लेकिन भूख की पीड़ा सहन नहीं कर सकते, ऐसी हालत न आये। ऐसी हालत में अपने पर ही हमारी सत्ता नहीं रहती। जिन वासनाओं से मनुष्य आजादी, सत्ता और काबू खोता है, उन वासनाओं को भी काबू में रखने की कोशिश होनी चाहिए। इसलिए फलाहार को छोड़कर निराहार का विचार आया।

सारांश, वासनाओं के निराकरण का क्रम यह होगा :

(१) कुवासना का त्याग;

(२) सद्वासना भी सबको उपलब्ध न हो, तो उसका त्याग;

(३) सद्वासना हो, लेकिन उसके भोग में मात्रा और

(४) व्याकुलता काबू में रखने के लिए सद्वासना का त्याग।*

[पंजाब कार्यकर्ता शिविर, इंदौर, ९-८-'६०]

*अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, काशी द्वारा हाल ही में प्रकाशित पुस्तक 'प्रेरणा-प्रवाह' से। पृष्ठ-संख्या १८०, मूल्य : १ रु० २५ नये पैसे।

असत्यं जगत्स्फूर्तिः जीवनं सत्यशोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि •

आत्मौपम्य : सर्व-श्रेष्ठ योग

सन् १९१६ में हम घर छोड़ कर ब्रह्म की खोज में नीकले—'अथातो ब्रह्मजीज्ञासा।' वह जीज्ञासा पूर्ण हुआी है और सामूहीक ब्रह्म जीज्ञासा की आकांक्षा से हम काम कर रहे हैं। सामान्य जनता का जीवन-स्तर ऊंचा ऊठे, गरीब और दुःखीयों के दुःख में हम हीस्सा लें; सुखी अपने सुख का हीस्सा दूसरों को दें—ीस उद्देश्य से बहुत बड़ा योग, जीसे सहयोग कहते हैं, करना होगा। वह सबसे ऊंचा योग है। गीता में ूसे आत्मौपम्ययोग नाम दीया है और कहा है की वह सर्वश्रेष्ठ योगी है, जो आत्मौपम्य से बरतता है, अपनी ूपमा से सर्वत्र सुख-दुःख देखता है, जैसा मुझे सुख-दुःख है, वैसा ही दूसरों को भी है, ीसलीए दूसरों का खयाल रख कर जो बरतता है, वह योगी सर्वश्रेष्ठ है, ऐसा भगवान ने कहा है। शंकराचार्य गीता पर भाष्य लीखते हुए कहते हैं, 'अहींसक ीत्यर्थः'—शंकराचार्य ने थोड़े में परीभाषा बनायी की जो अहींसक है, वह परम योगी है, सब योगीयों का शीरोमणी है। यह बात ध्यान में रखनी चाहीए की योगाभ्यास की प्रक्रीया के अन्त में भगवान ने यह बात कही है।

[ीन्दौर, १७-८-'६०] —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

सम्पादकीय

टिप्पणियाँ

काशी में मद्यनिषेध

ज्ञात हुआ है कि जनता के सहयोग से मद्यनिषेध-कार्य को अधिक प्रभावशाली तरीके से चालू करने के लिए केन्द्रीय सरकार ने उत्तर प्रदेश में ४ मद्यनिषेध-केन्द्र कायम करने का निर्णय किया है। ये केन्द्र वाराणसी, कानपुर, गोरखपुर तथा झाँसी में खोले जायेंगे।

काशी में शराब की बिक्री होते रहना यह हमारे लिए शर्म की बात है। काशी की जनता काशी में मद्यनिषेध की योजना जल्दी-से-जल्दी चालू करने की माँग बहुत दिनों से करती आ रही है। जनता ने बहुत विरोध किया, तो गंगा तट के पास दशाश्वमेध घाट की कलाली उठा कर गिरजाघर के बगल में कर दी गयी। मानो उर्दू के कवि की इस चुनौती को साकार रूप दिया गया हो कि—

"जाहिद शराब पीने दे
मसजिद में बैठ कर,
या वह जगह बता कि
जहाँ पर खुदा न हो !"

अब "जनता के सहयोग से मद्य-निषेध-कार्य को अधिक प्रभावशाली तरीके से चालू करने के लिए" काशी में एक मद्यनिषेध केन्द्र खोला जा रहा है। बात तो अच्छी है, पर यह केन्द्र कितने दिनों में क्या प्रगति करेगा, यह कहना कठिन है। जिस प्रकार सरकारी दफ्तरों में किसी मामले को दाखिलदफ्तर के लिए लिख दिया जाता है—"योर मैटर इज रिसीविंग अटेंशन" (आपके मामले पर गौर किया जा रहा है), उसी तरह की बात मद्य-निषेध-केन्द्र की लगती है। काशी जैसे तीर्थक्षेत्र में भागीरथी के साथ शराब की नदी बहती रहे, यह केवल काशीवासियों के लिए ही लज्जा का विषय नहीं है, उत्तर प्रदेश की सरकार के लिए और भारत सरकार के लिए भी लज्जा का विषय है। हम चाहेंगे कि सरकार व्यर्थ के हीलेहवाले देकर इस समस्या को टालने का प्रयत्न न करे, अपितु आमदनी का थोड़ा घाटा उठा कर भी काशी में मद्यनिषेध की तत्काल घोषणा कर दे, काशी-वासियों को भी एक स्वर से इस बात की माँग करनी चाहिए कि हमें शराब नहीं चाहिए, नहीं चाहिए।

एक उत्तम प्रयोग

प्रसन्नता की बात है कि उत्तर प्रदेश के दस नगरों—लखनऊ, आगरा, मेरठ, अलीगढ़, कानपुर, इलाहाबाद, वाराणसी, गोरखपुर, बरेली और झाँसी—में अगले मास से दक्षिण भारत की चार भाषाओं—तमिल, तेलुगु, कन्नड और मलयालम की पढ़ाई का प्रबन्ध किया जा रहा है। छात्रों में उत्साह उत्पन्न करने के लिए वजीफों और पुरस्कार आदि की भी योजना रखी गयी है। दो साल के इस 'डिप्लोमा कोर्स' के लिए नियमित छात्रों से कोई फीस नहीं ली जायगी। प्रत्येक नगर में दो दो भाषाओं के शिक्षण की व्यवस्था रहेगी। अभी केवल चालीस छात्रों के लिए व्यवस्था की जा रही है।

हम मानते हैं कि शिक्षा विभाग की ओर से शुरू होने वाले इस प्रयोग का परिणाम अच्छा निकलेगा। पारस्परिक प्रेम के विस्तार के लिए यह परम आवश्यक है कि उत्तर भारत के निवासी दक्षिण भारत की भाषाएँ सीखें और दक्षिण भारत के निवासी उत्तर भारत की भाषाएँ सीखें।

परस्पर आदान प्रदान के द्वारा ही हम एक दूसरे के निकट आ सकेंगे, एक-दूसरे के विरुद्ध फैली गलतफहमियों को दूर कर सकेंगे। राष्ट्रीय एकता को पक्का करने के लिए इस बात की बड़ी जरूरत है कि विभिन्न प्रान्तों के निवासी एक दूसरे को भली भाँति समझें। भाषाओं का यह सेतु सबको आपस में मिलाने का उत्तम कार्य कर सकता है। शिक्षा विभाग के इस प्रयोग की हम सराहना करते हैं और आशा करते हैं कि उत्तर प्रदेश के निवासी इस सुयोग का लाभ उठा कर दक्षिण की भाषाएँ सीख कर उन भाषाओं के अमूल्य साहित्य का अवगाहन करेंगे और दक्षिण के निवासियों के और अधिक निकट आयेंगे। —श्रीकृष्णदत्त भट्ट

मजबूरी का अर्थशास्त्र

बात पिछले दिनों की है। पटना स्टेशन से सदाकत आश्रम जाना था। गाड़ी लेट हो गयी थी, रात का समय था। ज्यों ही सामान लेकर आगे बढ़ा कि रिक्शेवालों के दल ने आ घेरा। सब चाहते थे कि मैं उनके रिक्शे का मेहमान बनूँ। आखिर एक के साथ सौदा पट गया। रिक्शेवाले ने कहा, 'बारह आने दीजिए, सदाकत आश्रम बहुत दूर है।' हमने कहा, 'हमने सुना है कि रिक्शा आठ आने में वहाँ जाता है।' और वह आठ आने में तत्काल तैयार हो गया।

रिक्शे में बैठने के बाद वह कहने लगा, 'बाबूजी, स्थान बहुत दूर है।' हमने कहा, 'भाई, देख लेंगे।'

रिक्शा चलता गया और हमें लगा कि वाकई दूरी ज्यादा है और आठ आने बहुत कम हैं। हमने मन ही मन तय कर लिया कि इसको पूरा एक रुपया दिया जाय।

स्थान आ गया। हम उतर गये और रिक्शेवाले के हाथ में एक रुपये का नोट रख कर कहा, 'भाई, तुम पूरा रुपया रख लो।' और यह आशा की कि उसका चेहरा खुशी से चमक उठेगा, किन्तु प्रत्युत वह कहने लगा कि 'बाबूजी, मैंने तो आपसे एक रुपया बारह आने बोला था। आपको कम-से-कम आठ आने और देने चाहिए।'

पहले तो मैं अवाक् रह गया। थोड़ी देर बाद बोला, 'भाई, आखिर तुम इन्सा-नियत को तो महसूस करो।' किन्तु वह कहाँ मानने वाला था।

वहाँ रहने वाले एक भाई से पूछा—'बताइये, अब इनको कितना दिया जाना चाहिए?'

'आठ-बारह आने में अक्सर रिक्शा स्टेशन से यहाँ आता है।'—उन्होंने बताया। फिर भी रिक्शा वाला जाने को तैयार नहीं।

मैंने कहा, 'भाई, क्यों व्यर्थ और लोगों की नींद हराम करते हो?' रात के तीन बजे का समय हो रहा था।

अंत में वह कहने लगा कि दो आने ही और दे दीजिये। और हमने दो आने देकर जान छुड़ाई।

मुझे इस बात ने सोचने को मजबूर कर दिया कि रिक्शा वाले ने ऐसा व्यवहार क्यों किया? स्टेशन पर अनेक रिक्शे वाले थे, खाली थे। सब चाहते थे कि सवारी हमें मिले। एक जबरदस्त होड़ थी। रिक्शावाला मजबूरी में वाजिब कीमत से कम में राजी हो गया। किन्तु अब उसकी बारी थी। उसे लगा, आदमी थोड़ा सज्जन दीखता है। इज्जत नापसन्द करेगा, फिर रात का समय, दूसरों की नींद हराम करना नापसन्द करेगा। यह हमारी सज्जनता, मजबूरी उसका अस्त्र बन गयी और उसने हमसे ज्यादा वसूल कर लिया।

जब रिक्शेवाले अनेक थे, आपस में होड़ थी, तब उसने मजदूरी में कम दाम पर चलना मंजूर कर लिया और उसने जब हमें मजबूर देखा, तब ज्यादा पैसा वसूल कर लिया। उसने क्या बुरा किया? आज का बाजार, सौदा और उस पर आधारित सारा जीवन, क्या मजबूरी का अर्थशास्त्र नहीं है? —मनीन्द्रकुमार

भारतीय शासन-प्रणाली
का मुख्य आधार

पंचायती राज्य

जयप्रकाश नारायण

व्यक्ति और समाज का संबन्ध इस बात पर आधारित हो कि व्यक्ति समाज के लिए प्राण देने को तत्पर रहे और समाज व्यक्ति के लिए मर मिटने को तैयार हो। इस वृत्ति का जिस हद तक दोनों तरफ विकास होगा, उसी प्रमाण में व्यक्ति और समाज का विकास होगा। यह खोज का काम है कि ये सबसे अच्छी सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और शैक्षणिक प्रक्रियाएँ और संस्थाएँ क्या हों, जो इस लक्ष्य की प्राप्ति में सहायक हो सकें।

'अवार्ड' के मंत्री और उसके मुख-पत्र के संपादक श्री धर्मपाल ने विधान-परिषद् की कार्रवाइयों के पोथों में से "स्वतंत्र भारत के राजनैतिक ढाँचे में पंचायती राज्य का स्थान", इस विषय पर सब उपयोगी जानकारी ढूंढ निकाल कर एक बड़ी सेवा की है। भारतीय प्रजातंत्र की जिसे ज़रा भी चिन्ता है, ऐसा कोई भी व्यक्ति इसे पढ़ कर क्षुब्ध हुए बिना नहीं रह सकता। स्वातंत्र्य-संग्राम के दिनों में यह प्रायः मान लिया गया था कि स्वराज्य की नींव तो ग्राम-राज्य ही होगी, क्योंकि उस वक्त स्वतंत्रता-संग्राम के सैनिकों पर गांधीजी का असरकारक प्रभाव था। दूसरे शब्दों में, राजनैतिक और आर्थिक विकेंद्रीकरण की कल्पना उन लोगों के मन में एक स्वयंसिद्ध बात थी। लेकिन जब विधान बनाने का काम दरअसल शुरू हुआ, तब वह कल्पना विस्मृत-सी हो गयी, या यह कहना ठीक होगा कि उसकी याद बाद में आयी। स्वतंत्रता के तुरन्त बाद से ही, जब अभी गांधीजी सशरीर हमारे बीच उपस्थित थे, शासकीय क्षेत्रों में यह एक मामूल हो गया था कि आये दिन गांधीजी की भूरि-भूरि प्रशंसा करते रहें, पर व्यवहार में उनकी अवगणना करें।

शायद गांधीजी के अनुगामी राजनैतिक नेताओं के मन में एक विचार पहले से ही अज्ञात रूप से छिपा हुआ था कि भले ही भारतीयों पर लादी हुई निःशस्त्र अवस्था में गांधीजी का सत्याग्रह का दर्शन शास्त्र व विशिष्ट कार्यक्रम आज़ादी की लड़ाई में उपयोगी रहा हो, पर उनके विचार स्वातन्त्र्योत्तर पुनर्निर्माण के दुष्कर कार्य के लिए उपयुक्त नहीं थे। हाँ, इस विचार का स्पष्ट रूप से उन नेताओं के मन में निरूपण नहीं हुआ था और इस तरह के किसी भी आक्षेप का उन्होंने आवेशपूर्ण प्रतिवाद किया होता। फिर भी मुझे यह संशय है कि आरम्भ से ही इस अवचेतन विचार ने इन नये शासकों की व्यावहारिक कार्य-पद्धति को प्रभावित किया है।

जो हो, यह ताज्जुब ही है कि उस समय यह माना जाता रहा कि विधान-निर्माण वकीलों तथा विधान विशेषज्ञों का काम है। जहाँ जहाँ भी क्रान्ति के पश्चात् विधानों की रचना हुई है, वहाँ उनका निर्माण क्रांतिकारी नेताओं ने स्वतः किया है। विशेषज्ञों की सहायता तो मात्र उन विचारों को कानूनी रूप देने के लिए ही ली गयी थी। दुर्भाग्य से हमारे विधान के मामले में उन प्रख्यात वकीलों ने भी, जिनको यह सारा कार्यभार सौंपा गया था, उसे अन्यमनस्क होकर ही किया प्रतीत होता है, जैसा कि टी० टी० कृष्णमाचारी के रोदन से प्रकट होता है।

अतीत की चर्चाओं के गड़े मुर्दे प्रकाश में लाने में श्री धर्मपाल की यह नीयत नहीं है कि वे व्यर्थ के ऐतिहासिक अनुसंधान का आनन्द लूटें। 'बलवंतराय मेहता कमेटी' की रिपोर्ट के बाद और सन् १९५९ में राजस्थान में "पंचायती राज्य" के सूत्रपात के बाद, विकेंद्रित आर्थिक व राजनैतिक प्रजातंत्र के विषय में तेज़ी से दिलचस्पी ली जा रही है। इस पुनर्चिन्तन की प्रक्रिया में सहायता देने के लिए यह सामग्री प्रकाशित की जा रही है। जबकि एक अनूठी क्रांति की चमक जनता और उसके नेताओं के विचारों को अब भी प्रकाशित कर रही थी, उस समय व्यक्त की हुई भावनाओं और आदर्शों की स्मृति आज प्रेरणादायी साबित होगी।

पुरानी चर्चा पर एक टिप्पणी के रूप में (ज़्यादा विस्तार करने का यह उपयुक्त स्थान नहीं है) मैं इस बात पर बल देना चाहूँगा कि इस चर्चा में जो सिद्धान्त निहित है, वह केवल विकेंद्रीकरण का नहीं है। जैसा मैं देखता हूँ उसके अनुसार इसमें समाज की दो सम्पूर्णतया भिन्न कल्पनाएँ सन्निहित हैं। भले ही यह बात स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं की गयी हो, लेकिन गांधीजी की इस विषय पर की सभी चर्चाओं में यह सन्निहित है। एक कल्पना है समाज को एक विकीर्ण और जड़ रूप में देखने की, जो डाक्टर अम्बेडकर ने पेश की थी और जो हमारे विधान के आधार के रूप में स्वीकृत हुई। आज पश्चिम में सिद्धांत तथा व्यवहार, दोनों में राजनीति इसी दृष्टि से संचालित हो रही है। इसका मुख्य कारण यह है कि एक विशिष्ट प्रकार की औद्योगिक तथा आर्थिक प्रणाली के परिणामस्वरूप पश्चिमी समाज स्वयं एक कण कण के ढेर से बना हुआ समुदाय हो गया है। ऐसी दशा में यह स्वाभाविक है कि सिद्धांत और व्यवहार, दोनों में राजनीति इसी वस्तुस्थिति को प्रतिबिम्बित करती है और राजनैतिक प्रजातन्त्र का अर्थ मात्र सिर गिनने तक ही सीमित रह गया है। ऐसी परिस्थिति में यह भी स्वाभाविक ही है कि सत्ताकांक्षी गुटों के चारों ओर राजनैतिक दल बनें और उनके द्वारा जनता की सरकार की नहीं, बल्कि दलगत सरकार की ही स्थापना हो, अर्थात् दूसरे शब्दों में एक या दूसरे गुट की सरकार की।

दूसरी दृष्टि है एक सजीव समाज समुदाय के रूप में देखने की या सह-जीवन की, जो मनुष्य को एक जवाबदार समाज के विश्वसनीय सदस्य की हैसियत से यथोचित स्थान प्रदान करती है। यह दृष्टिकोण मनुष्य को निर्जीव ढेरी का एक बालुकण नहीं मानता, वरन् एक विशाल जीवित सत्ता का सजीव मूल उपादान। यह स्वाभाविक है कि इस दृष्टि के अनुसार हक की अपेक्षा उत्तरदायित्व पर अधिक बल दिया जायगा और समाज को जड़ मानने वाली दृष्टि के अनुसार बल उल्टी दिशा पर होगा यानी हकों पर। जब व्यक्ति समाज में दूसरों के साथ रहता है तो उसके कर्तव्यों में से ही उसके हकों का स्रोत निकलता है, दूसरी तरह हो ही नहीं सकता। इसीलिए गांधीजी के समाज-शासन संबंधी विचार में सदा कर्तव्यों पर ही बल दिया गया है।

समाज को सही माने में समाज होने के लिए यानी सहजीवन की भावना से ओतप्रोत होने के लिए, अपने आन्तरिक जीवन में उसे ऐसे नैतिक गुणों पर बल देना आवश्यक है, जैसे समन्वय, समाधान, सम्वाद व सहयोग। इसके बिना सह-जीवन सम्भव नहीं। समाज अपने ही साथ युद्ध में नहीं उतर सकता—एक भाग दूसरे से लड़े (—बेशक प्रजातंत्री ढंग से) और बहुमत अल्पमत पर शासन करे। इस तरह की राजनैतिक लड़ाई तो निर्जीव समुदाय में ही शक्य है, जहाँ सहजीवन को स्थान न हो। इसका यह अर्थ नहीं कि समाज में मतभेद या स्वार्थ-भेद हो ही नहीं सकते। लेकिन उनका आपस में समन्वय होना चाहिए और ऐसी सम्वादिता आनी चाहिए कि जिससे समाज और उसके सदस्य माने व्यक्ति, जीयें, बढ़ें और भौतिक तथा आध्यात्मिक विकास करें। ऐसी राजनैतिक तथा आर्थिक संस्थाओं और प्रक्रियाओं को खोज निकालना होगा, जो इस अभीष्ट को पूरा कर सकें। समय आ गया है कि 'पंचायती राज' के हिमायती राजनैतिक व आर्थिक विकेंद्रीकरण के घुटे-पिटे शब्दाडम्बर के उस पार देखें और यह अमोघ आशा नहीं रखें कि संसदीय प्रजातंत्र के साथ स्थानीय स्वायत्त शासन प्रचुर मात्रा में जोड़ देने से काम बन जायगा और जनता के स्वप्नों का प्रजातंत्र उदित हो जायगा।

यह बता देना आवश्यक है कि समाजवादी (कम्युनिटेरियन) दृष्टिकोण के अनुसार प्रारंभिक संघटन—यानी गाँव या छोटे कस्बे—के साथ समाज का आरम्भ और अंत नहीं हो जाता। स्मरण रहे कि गांधीजी की कल्पना के अनुसार, समाज के समकेंद्रिक वृत्तों का बाह्यतम वृत्त जिसे उन्होंने 'महासागरिक' कहा था, सारी मानव-जाति को अपने अन्दर समाविष्ट करता है। जैसे प्रारंभिक संघटन में समन्वय, समाधान, सम्वाद और सहयोग का ध्येय है, उसी तरह समाज के भिन्न-भिन्न वृत्तों के संबंधों में भी समन्वय और संवाद पर बल देना सबके हित में आवश्यक है। यह लक्ष्य और इसको प्राप्त करने के साधन समाज की राज्य-व्यवस्था में अभिव्यक्त होने चाहिए। उदाहरणार्थ, प्रातिनिधिक राजनैतिक संस्थाएँ इस तरह की बनी होनी चाहिए जो व्यक्तियों का नहीं, वरन् उनके समाजों का प्रतिनिधित्व करती हों, जिनका आरम्भ प्रारम्भिक संघटन से हो और जो एक के बाद दूसरे विशालतर वृत्तों को समाविष्ट करती चली जायें। इस प्रणाली में समाज दल का स्थान ले लेता है और हर स्तर पर घटकों के भीतर तथा घटक-घटक के बीच मत-भेदों में समन्वय तथा सम्वाद स्थापित हो जाता है।

विश्व-संबंधों के क्षेत्र में रूस तथा अमरीका जैसे राष्ट्रवादी समाजों के हितों के समन्वय की कल्पना भी व्यवहार्य मानी गयी है। पर यह अजीब बात है कि स्वयं राष्ट्रवादी समाजों के भीतरी मामलों में इस प्रकार का समन्वय संभव नहीं माना जाता, बल्कि बहुमत की इच्छा अल्पमत पर थोपने को ही सिर्फ शक्य माना जाता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ में तो इस बात की कल्पना ही नहीं हो सकती कि अमुक राष्ट्र बहुमत से अल्पमत राष्ट्रों पर अपनी इच्छा लादने का प्रयत्न करें। अगर ऐसा होने लगे तो यह विश्व संघ शीघ्र ही टूट जाय। हरएक के भले के लिए वहाँ यह आवश्यक माना जाता है कि राष्ट्र ऐसे मार्गों की खोज करें, जिससे उनके हितों को समन्वित और समस्वर किया जा सके। यह सच है कि वहाँ यह नियंत्रण नैतिक श्रद्धा के कारण स्वीकार नहीं किया गया है, बल्कि युद्ध के नये आयुधों की विनाशकारी शक्ति के भय को लेकर। तो भी इस नियंत्रण की मानसिक स्वीकृति वास्तविक है। परन्तु राष्ट्रवादी समाजों के अंदरुनी मामलों के बारे में ऐसा कोई स्पष्ट नियंत्रण लागू नहीं है। पश्चिम में जहाँ सहजीवन का प्रायः पूर्णतया अंत हो गया है सामुदायिक समाज की इमारत शायद एक नवीन नैतिक चेतना को

यूगंडा और कीनिया में जयप्रकाश

पूर्वी अफ्रीका में चार देश माने जाते हैं—कीनिया, टांगानिका, यूगन्डा और जंजीबार। इनमें तीन तो अफ्रीका महाद्वीप के स्थल पर ही हैं, जंजीबार अलग छोटा-सा द्वीप है। इनका क्षेत्रफल और आबादी इस प्रकार है :

देश	क्षेत्रफल (वर्गमील)	जनसंख्या	राजधानी
कीनिया	२, २४, ९६०	६४, ५०, ३००	नैरोबी
टांगानिका	३, ६२, ६८८	९०, ७६, ८००	दारेस्सलाम
यूगन्डा	९३, ९८१	५८, ६८, २००	कम्पाला
जंजीबार	६४०	३, ९९, १११	जंजीबार

टांगानिका में तीन सप्ताह बिताने के बाद श्री जयप्रकाश बाबू और प्रभावती बहन २७ मई की शाम को नैरोबी पहुँचे और २८ को यूगंडा के लिए निकल पड़े। तीसरे पहर वे जिन्जा नामक स्थान पर आ गये, जो एक बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। साथ ही बड़ी सुन्दर और विख्यात नगरी है। यह विक्टोरिया झील के किनारे बसी है और यहीं पर संसार-प्रसिद्ध नील नदी का उद्गम भी है। चार हजार चार सौ मील की यात्रा के बाद यह महानदी मिस्र में भूमध्य सागर में जा गिरती है।

जिन्जा से ही जयप्रकाश बाबू कम्पाला गये। फिर वहाँ १७१ मील की दूरी पर एल्बर्ट झील के उत्तरी पूर्वी कोने के निकट मुर्चीसन का जलप्रपात भी उन्होंने देखा, जो अफ्रीका के सरताज प्रपातों में है। इसकी ऊँचाई ४०१ फीट है। इसके आसपास जंगली जीव-जन्तु का पार्क है, जिसका क्षेत्रफल बारह सौ वर्गमील है और जहाँ देश-विदेश के यात्री घूमने-फिरने आते हैं।

जयप्रकाश बाबू ने जिन्जा और कम्पाला में सार्वजनिक सभाओं में व्याख्यान दिये और जगह-जगह अफ्रीकी तथा एशियाई मित्रों से मिले। दो जून की शाम को वे फिर नैरोबी लौट आये और रविवार, तीन तारीख से उनका कार्यक्रम कीनिया में चलता रहा।

नैरोबी कीनिया की राजधानी है। यह विशाल नगर ५४९५ फीट की ऊँचाई पर है। विषुवत् रेखा से थोड़ी नीचे पर है। यहाँ साल भर में बारिश केवल ३४ इंच होती है और औसत तापमान ६७° फा० है। पहाड़ी पर बसी होने के कारण यह बहुत सुन्दर है। योरोपियन बन्धु काफी तादाद में हैं और यहाँ के बाजारों की शोभा लन्दन की तरह बतायी जाती है। अंग्रेजों का उपनिवेश होने के कारण अंग्रेजी हुकूमत का असर स्पष्ट नजर आता है।

इतवार के दिन ही जयप्रकाश बाबू ने कीनिया की प्रमुख राजनीतिक पार्टी, 'कीनिया अफ्रीकन नेशनल यूनियन'-'कानू'-की एक रैली में शरीक हुए। इसका आयोजन नैरोबी से अठारह मील दूर टीका गाँव में हुआ था। कीनिया के कई बड़े-बड़े नेताओं ने उसमें भाग लिया। जयप्रकाश बाबू का व्याख्यान सबसे बाद में हुआ और उसका मार्गदर्शन कीनिया के जगत्प्रसिद्ध नेता, श्री जोमो कीन्याटा कर रहे थे।

जयप्रकाश बाबू के सन्मान में नैरोबी में कई भोज और मीटिंगें रखी गयी थीं। आयोजन करने वालों में कीनिया इण्डियन कांग्रेस, इण्डियन एसोसिएशन, कीनिया फ्रीडम पार्टी आदि के नाम प्रमुख हैं। अधिकांश मीटिंगों में जयप्रकाश बाबू अंग्रेजी में बोले, ताकि अफ्रीकन बंधु भी कुछ थोड़ा-बहुत समझ सकें। लेकिन दस तारीख को आयोजित की हुई, पूर्वी अफ्रीका में अपनी अन्तिम सभा में उनका भाषण हिन्दी में हुआ था।

एक बहुत सुन्दर कार्यक्रम नैरोबी से चंद मील दूर कीकुयू गाँव में हुआ। वहाँ अफ्रीकन महिलाओं ने अपनी परंपरा के अनुसार जे० पी० का स्वागत किया। सभा में उनका परिचय जाजेक गाटुगुटा नामक व्यक्ति ने दिया, जो दस बरस तक अपनी तालीम के सिलसिले में बम्बई रह चुके हैं और जे० पी० को पहले से जानते हैं। इस सभा की अध्यक्षता 'कानू' पार्टी के स्थानीय प्रधान, जार्ज वैयाकी ने की। इसमें सबसे आश्चर्यजनक भाषण एक वयोवृद्ध ग्रामीण महिला का हुआ, जिससे सभी मन्त्रमुग्ध हो गये। इससे पता चलता था कि अफ्रीका का नारी समाज कितना समृद्ध और शक्तिशाली है।

शनिवार, नौ तारीख का दिन जयप्रकाशजी ने मोम्बासा में बिताया। आठ की रात को ट्रेन से वे नैरोबी से निकले और सवेरे मोम्बासा पहुँच गये। मोम्बासा समुद्र तट के किनारे बहुत ही पुरानी बस्ती है। अरब और भारत से इसका बड़ा संबंध रहा है। मोम्बासा में भी कई संस्थाओं द्वारा प्रोग्राम रखे गये थे। सार्वजनिक सभा भी हुई। रात को साढ़े नौ बजे वायुयान से जे० पी० नैरोबी वापिस आ गये।

उनसे मिलने के लिए हम तीन साथी—श्री रणधीर टाकुर (सुप्रसिद्ध स्वाहिली दैनिक 'नगुरुया' के सम्पादक और हमारे परम सहयोगी), बिल सदरलैण्ड और यह बन्दा—भी उसी रात को साढ़े आठ बजे नैरोबी पहुँचे। जयप्रकाशजी ने हमारे ठहरने की व्यवस्था भी वसुभाई (जे० एम०) देसाई के यहाँ की थी। वहीं पर वे भी आ गये और रात डेढ़ बजे तक हम चारों बातें करते रहे।

• सुरेश राम

रविवार दस तारीख, जयप्रकाशजी और प्रभावती बहन का पूर्वी अफ्रीका में आखरी दिन। सुबह से शाम तक जे० पी० बहुत व्यस्त रहे। कीनिया में गांधी-विचार का एक केन्द्र या आश्रम स्थापित करने का विचार श्री शिवाभाई अमीन, कीनिया के लोकमान्य नागरिक, सुप्रसिद्ध जनसेवक और कीनिया इण्डियन नेशनल कांग्रेस के भूतपूर्व अध्यक्ष, ने सुबह जल-पान के दौरान में जे० पी० के आगे रखा। अपनी एक योजना भी उनके विचारने के लिए दी।

दोपहर को जे० पी० का कार्यक्रम टीका नामक स्थान पर था। इण्डियन एसोसियेशन के तत्वावधान में एक सार्वजनिक भोज था और उसके बाद सभा। टीका के पास दो छोटे-छोटे जलप्रपात हैं—वे भी हम सबने देखे। अपने भाषण में जयप्रकाश बाबू ने कहा कि हमें इस बात का गर्व होना चाहिये कि हमारे देश की जब से आजादी हुई, तब से एशिया-अफ्रीका में सभी जगह आजादी की लहर दौड़ी। साम्राज्यशाही और उपनिवेशवाद का जो किला था, वह पहले भारत ने तोड़ा और उसके बाद वह टूटता ही जा रहा है। इसलिए हमें चाहिये कि जहाँ भी आजादी की लड़ाई हो रही हो, उसका स्वागत करें। आज का युग आजादी का है। पूर्वी अफ्रीका में टांगानिका आजाद हो चुका है, आगामी नौ अक्तूबर को यूगन्डा भी आजाद हो जायेगा। कीनिया में भी तय है, दोनों दलों के मतभेद के कारण दो-चार महीने की देर भले लग जाये, मगर कीनिया आजाद होकर रहेगा। जंजीबार भी आजाद होगा। अफ्रीका के लोगों के साथ जितना अन्याय किया गया है, उतना शायद दुनिया में कहीं और किसी के साथ नहीं हुआ है।

आगे चल कर जे० पी० ने कहा कि कीनिया में आर्थिक तंत्र की रीढ़ अंग्रेज नहीं, एशियाई लोग हैं। आगे भी कीनिया तथा पूर्वी अफ्रीका के विकास में आप जितनी मदद कर सकें करना चाहिए। आज आप ब्रिटिश एवं कालोनीज के नागरिक हैं, आजादी के बाद कीनिया का नागरिक बनाना चाहिए। समाज के बड़े हित को ध्यान में रखें। उसीमें आपका भी हित है। अगर आपको लगे कि आजाद कीनिया की, आजाद पूर्वी अफ्रीका की सरकार आपके साथ अत्याचार कर रही है, तो आपको झुकना नहीं चाहिए, एक होकर, मिल कर उसका मुकाबला करना चाहिए। लेकिन साथ ही, पूर्वी अफ्रीका और यहाँ के निवासियों के साथ आपको समरस हो जाना चाहिए।

अन्त में जयप्रकाश बाबू ने विश्व-शान्ति-सेना के संगठन पर कुछ शब्द कहे और बताया कि उत्तर रोडेशिया की आजादी की लड़ाई सारे मध्य अफ्रीका, दक्षिणी अफ्रीका, दक्षिणी-पश्चिमी अफ्रीका की आजादी की लड़ाई की कुंजी है।

शाम को सवा पाँच बजे नैरोबी के पटेल क्लब में जे० पी० का भाषण था। हाल खचाखच भरा था। बहनें भी बड़ी तादाद में मौजूद थीं। यह व्याख्यान हिन्दी में हुआ। डेढ़ घंटे तक अद्भुत शान्ति के बीच एकाग्रता से सब उसे सुनते रहे। जयप्रकाशजी ने दुनिया की बदलती हुई स्थिति का दिग्दर्शन करते हुए बताया कि गुलामी और साम्राज्यशाही के दिन लद गये। दुनिया का हर आदमी आजादी चाहता है और यह उसका हक है। एशिया वालों ने पूर्वी अफ्रीका में जो सेवाएँ की हैं, उसके लिए वे बधाई के पात्र हैं, लेकिन आगे भी उन्हें यहाँ की जनता से एकरूप होकर कार्य करना है और यहाँ के जन-जीवन के साथ घुलमिल जाना है। इसके बाद उन्होंने कहा कि सर्वोदय का जो अनमोल मन्त्र महात्मा गांधी ने दिया, अब दुनिया उसकी तरफ बढ़ेगी। जैसा विनोबाजी कहा करते हैं, विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय में ही दुनिया का कल्याण है। नवयुवकों को चाहिये कि इन विचारों का अध्ययन-मनन करें, उनको अपने जीवन में उतारें और उनका प्रचार करें। आखिर में जयप्रकाशजी ने सबके प्रति अपने आभार प्रकट किये और बड़ा सन्तोष प्रकट किया कि पूर्वी अफ्रीका का कुछ परिचय एक महीने के प्रवास में पा सके।

इस लेखमाला को बन्द करने के पहले जे० पी० के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण उद्‌गारों का और जिक्र करना है। वह प्रकट किये उन्होंने पाँच जून को दारेस्सलाम में। उस दिन वे दोपहर को दारेस्सलाम आये और शाम को ही वापिस चले गये। उसके एक ही दिन पहले टांगानिका की राजधानी में संयुक्त राष्ट्र की उपनिवेशवाद-विरोधी विशेष समिति पधारी थी। इसके सत्रह सदस्य हैं—अमरीका, ब्रिटेन, रूस, आस्ट्रेलिया, ट्यूनीशिया, वेनीजुएला, कोलम्बिया, भारत, माली, ईथोपिया, टांगानिका, मैडेगास्कर, सीरिया, पोलैण्ड, यूराग्वे, यूगोस्लाविया और इटली।

इस समिति के सम्मुख पहला निवेदन पाँच जून को ग्यारह बजे विश्व शान्ति-सेना की तरफ से पेश किया गया। रेवरेण्ड माइकेल स्काट, बिल सदरलैण्ड और इन पंक्तियों का लेखक समिति के सामने पेश हुए। माइकेल स्काट ने विश्व शान्ति सेना का निवेदन पढ़ा। उसमें दिखाया गया कि मध्य और दक्षिणी अफ्रीका में कितने जबरदस्त आर्थिक स्वार्थ अन्दर प्रवेश कर गये हैं और किसी भी प्रगतिशील तथा मानवीय कदम का विरोध करते हैं। अमरीका और ब्रिटेन और बेल्जियन की सरकारों का कर्तव्य है कि इन स्वार्थों को

जरा भी बल न दें और शक्ति के साथ इनका सामना करें, जमाने की माँग के अनुसार काम करें। इन देशों की आजादी में अगर देर की जाती है, तो कांगो से भी ज्यादा भयानक स्थिति निकट भविष्य में पैदा हो सकती है।

तीसरे प्रहर की बैठक में जयप्रकाश बाबू भी शामिल हुए। उन्होंने समिति के सम्मुख दस मिनट तक अपने विचार रखे। उन्होंने कहा कि समिति के और विश्व-शान्ति-सेना के उद्देश्य एक-से ही हैं और शान्ति सेना के कार्यक्रम इस समिति को मदद ही पहुँचाने वाले हैं। दुनिया के लोगों का कर्तव्य है कि गुलामी और परकीय सत्ता के खिलाफ पूरी शक्ति लगायें, इसी वजह से वे टांगानिका आये और 'पाफमेकशा' की रैली में शिरकत की। इसमें श्री कैनेथ कौण्डा और श्री जुलियस नेरेरे के व्यक्तित्व से वे प्रभावित हुए हैं। उन्हें विश्वास है कि श्री कौण्डा शान्तिमय उपायों के उपासक हैं और स्वराज्य प्राप्ति के लिए कोई वैधानिक उपाय बाकी नहीं रखेंगे। लेकिन अगर ब्रिटिश सरकार ने दूरदृष्टि से काम नहीं लिया, तो मजबूरन श्री कौण्डा को असहयोग का व्यापक कार्यक्रम उठाना पड़ेगा। उस दशा में विश्व शान्ति-सेना की ओर से एक स्वतंत्रता पदयात्रा (फ्रीडम मार्च) का आयोजन किया जायेगा, जिसमें वे स्वयं भाग लेने के लिए भारत से आयेंगे। महात्मा गांधी के अनुयायी होने के नाते, उनका यह विश्वास है कि साधन साध्य के अनुकूल होने चाहिए और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का समाधान शान्तिमय मार्ग से ही होना चाहिए।

अपने निवेदन को खत्म करते हुए, जयप्रकाश बाबू ने समिति के सम्मुख कहा कि उन्हें लगता है कि शायद अफ्रीका का यह सद्भाग्य होगा कि सच्चे मानवीय समाज का पहला नमूना दुनिया के आगे रख सकेगा। वह ऐसा समाज होगा, जिसमें सबको एक-से अधिकार प्राप्त होंगे और रंग, वर्ण, धर्म या अन्य किसी तरह का कोई भेद-भाव नहीं होगा। दुनिया भर के समझदार लोग एक दुनिया में भरोसा करते हैं। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि अफ्रीका के नेता और यहाँ की जनता शांतिमय और अहिंसक उपायों से समता और न्याययुक्त समाज की स्थापना कर सकेंगे।

साढ़े चार बजे समिति के अध्यक्ष ने हम चारों से विदा लेने को कहा। समुक्त राष्ट्र का अनुभव बहुत ही रोचक और प्रेरणाप्रद रहा। हम सबको ही इससे सन्तोष रहा।

हाँ, तो रविवार, दस जून को शाम को सात बजे पटेल क्लब नैरोबी में जयप्रकाशजी का भाषण पूरा हुआ। वहाँ से वे सीधे हवाई अड्डे चले गये और सवा आठ बजे एयर इण्डिया के जहाज से विदा हुए।

सहज ही सवाल उठता है कि पूर्वी अफ्रीका में जयप्रकाश बाबू के इस एक माह के प्रवास का क्या नतीजा निकला? स्पष्ट है कि ऐसी चीजों के नतीजे एकदम दिखाई नहीं दिया करते। धीरे धीरे वे अपना असर करते हैं। जो बीज जे० पी० ने बोया है, वह आगे चल कर अंकुरित होगा और फूले फलेगा। लेकिन दो बातें तो साफ हैं। पहली तो यह कि जयप्रकाश बाबू के इस प्रवास की बदौलत पूर्वी अफ्रीका की आम जनता के सामने सर्वोदय और अहिंसक समाज-रचना का विचार पहुँच गया और उसे सोचने-समझने के लिए एक नई खुराक मिली। दूसरी यह कि यहाँ के एशियाई निवासियों को यह विदित हो गया कि उत्तरी रोडेशिया का स्वाधीनता-संग्राम बहुत ही महत्त्वपूर्ण है और साथ में यह भी महसूस करने लगे कि पूर्वी-अफ्रीका के जन-जीवन के साथ घुल-मिल जाने पर ही वह यहाँ के भावी विकास में हाथ बँटा सकते हैं।

राज्य-सरकारें और शराबबंदी

क्या योजना का मतलब सिर्फ बड़ी-बड़ी इमारतें, कल-कारखाने और बांध खड़े करने से ही है या जिनके लिए यह सब कुछ किया जा रहा है उनके-अर्थात्-लोगों के शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक विकास का भी उसमें कुछ स्थान है?

सिद्धराज ढड्ढा

शराब के व्यसन को समाज से कैसे निर्मूल करना, ऐसा करने का कारगर उपाय क्या है, किन-किन तरीकों से वह किया जा सकता है इत्यादि ऐसी बातें हैं, जिनके बारे में कोई बहस हो सकती है। वह होनी भी चाहिए। पर शराबखोरी बंद होनी चाहिए या की जानी चाहिए, इस मूल प्रश्न पर ही आज इस देश में मतभेद प्रकट हो रहा है, यह आश्चर्य और दुर्भाग्य दोनों का विषय है। शराब का व्यसन सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक और आध्यात्मिक सभी दृष्टियों से बुरा है, इसके बारे में लम्बी-चौड़ी दलीलें या कोई शास्त्रीय प्रमाण देने की आवश्यकता मैं नहीं मानता। यह सामान्य अनुभव और सहज बुद्धि का विषय है। गांधीजी शराबबंदी को कितना महत्त्व देते थे, वह इस बात से स्पष्ट हो जायगा कि सन् १९३० में उन्होंने तत्कालीन ब्रिटिश वाइसराय के सामने समझौते की जो ११ शर्तें पेश की थीं, उसमें शराबबंदी भी एक मुद्दा था। शराब और शराब के व्यापार को वे कैसा अनीतिमय मानते थे, यह भी इस एक बात से जाहिर हो जायगा कि अहिंसा और साधन-शुद्धि में अटूट श्रद्धा रखनेवाले उनके जैसे व्यक्ति ने यह लिखा कि "अगर मैं एक घण्टे के लिए भी सारे हिन्दुस्तान का सर्वशक्ति-सम्पन्न-शासक (डिक्टेटर) बना दिया जाऊँ, तो पहला काम जो मैं करूँगा, वह यह होगा कि मैं तुरत तमाम मदिरालयों को बिना किसी मुआवजे के बंद कर दूँगा।" आजादी के बाद जब देश का नया विधान घड़ा गया, तो उसमें भी शराब तथा तमाम मादक द्रव्यों के निषेध को शासन की नीति का एक अंग माना गया।

जहाँ कहीं और जब कभी शराबबंदी की बात छिड़ती है, तो उसकी दो प्रतिक्रियाएँ हमारे सामने आती हैं। शराबबंदी चाहनेवाले लोगों और कार्यकर्ताओं की ओर से तुरत एक स्वर निकलता है कि सरकार को कानून से शराबखोरी बंद कर देनी चाहिए। दूसरी ओर यह कहा जाता है कि कानून से लोगों को नीतिमान् नहीं बनाया जा सकता,
[illegible]
अपनी-अपनी कमजोरियों को छिपाने और अपनी जिम्मेदारी दूसरे पर ढकेलने के लिए हैं। ये दोनों ही दृष्टिकोण अपने-आपमें एकांगी और 'निगेटिव'—नकारात्मक—हैं। सवाल को पेश करने का, उसकी चर्चा का यह ढंग मेरी दृष्टि से बिलकुल गलत है। वैसे तो यह बात हरएक बड़े सामाजिक सुधार के बारे में लागू होती है, लेकिन शराबबंदी के बारे में तो यह साफ जाहिर है कि कानून और लोकशिक्षण, दोनों के सहयोग के बिना यह काम कभी सफल नहीं हो सकता। जितना यह मानना गलत है कि आज की परिस्थिति में केवल लोक-शिक्षण से यह मसला हल हो जायगा और इस काम में मदद देने की सरकार की कोई जिम्मेदारी नहीं है, उतना ही गलत यह मानना भी है कि जो कुछ करना है वह सरकार को करना है, अगर कानून से शराबबंदी कर दी गयी, तो सब कुछ हासिल हो गया।

गैरजिम्मेदाराना रुख

कानून की या सरकार की इस बारे में कोई जिम्मेदारी नहीं है, यह काम समाज-सुधारकों का और सेवकों का है—यह कहना और भी ज्यादा तथ्यहीन और भ्रामक है। जनता पर उत्तरोत्तर कर का भार बढ़ाते वक्त जब यह दलील दी जाती है कि लोक-कल्याण ही शासन का आदर्श है और लोक-कल्याण की विविध प्रवृत्तियों के लिए शासन को उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा में आर्थिक साधन चाहिए, तब फिर शराबबंदी जैसे सब दृष्टियों से आवश्यक कल्याण-कार्य को अपनी जिम्मेदारी न मानना कहाँ तक संगत है? कुछ प्रांतीय सरकारों का रुख तो इस संबंध में अत्यन्त आश्चर्यजनक है। योजना-कमीशन ने कुछ समय पहले सब प्रांतीय सरकारों को यह सूचित किया था कि वे शराबबंदी के कार्यक्रम को जल्दी-से-जल्दी अमल में लायें और इस कारण से उनकी आमदनी में जो कमी पड़ेगी, उसका आधा हिस्सा केंद्रीय सरकार भरपाई करेगी। वास्तव में तो यह भी एक तरह का भ्रम-जाल ही है। घाटा पूर्ति केंद्रीय सरकार करे या प्रांतीय सरकारें खुद घाटा सहन करें, जनता की दृष्टि से दोनों चीजें एक ही हैं, क्योंकि चाहे केन्द्र में हो, चाहे प्रान्त में, पैसा आखिरकार जनता के पास से इकट्ठे किये हुए कर में से ही जानेवाला है। फिर भी व्यावहारिक दृष्टि से योजना-कमीशन का यह प्रस्ताव प्रांतीय सरकारों को काफी सहूलियत देनेवाला था। इस प्रस्ताव का फायदा उठाना कितनी प्रांतीय सरकारों ने स्वीकार किया, यह तो मालूम नहीं, लेकिन अखबारों में उत्तर प्रदेश और मैसूर, दो प्रान्तों की सरकारों के संबंध में यह समाचार छपा था कि उन्होंने योजना-कमीशन से शराबबंदी के कारण होनेवाले घाटे की सौ प्रतिशत पूर्ति चाही, बल्कि ऊपर से यह और माँग करने की हिम्मत की कि शराब-बंदी को लागू करने में होनेवाला तमाम खर्च भी केंद्रीय सरकार दे। यह शराबबंदी का धृष्टतापूर्ण मखौल नहीं तो और क्या है? क्या उत्तर प्रदेश या मैसूर की सरकारें अपनी जनता की शारीरिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक और आर्थिक उन्नति के लिए जिम्मेदार नहीं है या उसे अपना कर्तव्य नहीं मानती? एक ओर कल्याणकारी राज्य की बात करना और दूसरी ओर शराबबंदी जैसे निर्विवाद विषय को इस तरह मजबूरी और मखौल का विषय बनाना, किसी भी जिम्मेदार शासन का ढंग नहीं हो सकता।

पञ्चवर्षीय योजना बनाम शराबबन्दी

अभी कुछ दिन पहले जब सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं की ओर से उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्रीजी को काशी में शराबबंदी करने के विनोबाजी के सुझाव की याद दिलायी गयी, तो मुख्यमंत्रीजी ने यह कह कर अपनी असमर्थता जाहिर की कि तीसरी पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यांकों की पूर्ति के लिए उन्हें धन की अत्यंत आवश्यकता है और इसलिए शराबबंदी करके इस समय सरकारी आमदनी को खोने की स्थिति में वे नहीं हैं। आखिर यह तीसरी पंचवर्षीय योजना है क्या बला? क्या योजना का मतलब सिर्फ बड़ी-बड़ी इमारतें, कल-कारखाने और बांध खड़े करने से ही है या जिनके लिए यह सब कुछ किया जा रहा है उनके—अर्थात् लोगों के—शारीरिक, बौद्धिक और नैतिक विकास का भी उसमें कुछ स्थान है? आजकल परिस्थिति ऐसी हो गयी है कि बड़ी-बड़ी योजनाओं, केंद्रित शासन के विशाल और पेचीदा कारोबार, बड़े-बड़े कल-कारखानों, बड़े पैमाने के व्यापार, प्रचार के साधनों के केन्द्रीकरण इत्यादि के कारण सामान्य मनुष्य बेचारा खो-सा गया है। उसकी आवाज दब गयी है। जिनके हाथ में प्रचार के, सत्ता के और धन के साधन हैं, वे कितनी भी गैर-जिम्मेदाराना बात करें, उसके प्रतिकार का कोई साधन सामान्य आदमी के पास नहीं है। जो कुछ उन्हें करना होता है, वह सब वे जन-साधारण के नाम पर ही करते हैं और चूंकि प्रचार के सब साधन उनके हाथ में हैं, इसलिए लोग बेचारे बेबस और बे-जबान होकर सब कुछ देखते और सहते रहते हैं। सार्वजनिक प्रश्नों के बारे में अक्सर लोगों की याददाश्त भी बहुत सीमित होती है, इसलिए सरकार की ओर से जब जैसा अनुकूल हो, वही दलील दोनों ओर अपने पक्ष में दी जाती है। क्या मैं यह याद दिलाने की धृष्टता करूँ कि कुछ वर्ष पहले जब बिक्री-कर लगाने या न लगाने के बारे में एक बड़ा विवाद इस देश में खड़ा हुआ था, तब बिक्री-कर के पक्ष में और उसके विरोध को शांत करने के लिए जो दलील दी गयी थी, वह यह थी कि बिक्री-कर इसलिए लगाया जा रहा है कि उसमें होनेवाली आय शराबबंदी को लागू करने से होने वाले घाटे की पूर्ति करने के काम आ सकेगी। इसी प्रांत में शायद कुछ वर्ष पहले जब मनोरंजन-कर और कृषि-आय-कर लगाया गया था, तब इन करों को लगाने के पक्ष में भी यही दलील दी गयी थी। एक तरफ तरह-तरह की कर-वृद्धि को शराबबंदी करने के लिए आवश्यक बतलाना और दूसरी ओर यह कहना कि शराबबंदी इसलिए नहीं की जा सकती कि अन्य जरूरी कामों के लिए धन की आवश्यकता है, यह सारा जनता की स्मरण-शक्ति का उपहास करना नहीं तो और क्या है? संविधान में जो कुछ हिदायत दी गयी है उसके बावजूद, शराबबंदी के कार्यक्रम में अगर सरकार का विश्वास नहीं रह गया हो, तो वैसा साफ कहना चाहिए। पर उस कार्यक्रम के प्रति मुँहबोली हमदर्दी जाहिर करना, उसे अच्छा बताना, और फिर दूसरे जरूरी कामों की दुहाई देकर उसे न कर सकने की मजबूरी जाहिर करना, यह कितना संगत है?

जब-जब शराबबंदी का सवाल आता है, तब-तब सरकारों की ओर से अक्सर अपनी मजबूरी के पक्ष में यह आर्थिक दलील ही दी जाती है। शराबबंदी करेंगे तो शिक्षा में कमी करनी होगी, शराबबंदी करेंगे तो लोगों को उचित खुराक और अच्छे मकान मुहैया नहीं कर सकेंगे, शराबबंदी होगी तो सड़क और कुएँ नहीं बन सकेंगे, शराबबंदी होगी तो लोगों को बिजली और पानी नहीं मिल सकेगा, शराबबंदी होगी तो बड़े-बड़े बांध और कल-कारखाने नहीं बन सकेंगे, शराबबंदी होगी तो पंचवर्षीय योजनाओं का यह सारा साका ढह जायगा—मानो इस देश में जो कुछ हो रहा है, वह कुल-का-कुल शराब से होनेवाली आय पर ही निर्भर है! इस तरह की दलील में राजनैतिक ईमानदारी तो हरगिज नहीं है। सन् १९६०-६१ के आँकड़ों के अनुसार शराब से होने वाली आय देश के सब प्रांतों का औसत लिया जाय, तो कुल आमदनी के ५ प्रतिशत से अधिक नहीं है। एक से अधिक बार, कई जिम्मेदार व्यक्तियों और समितियों ने आँकड़ों और दलीलों के आधार पर यह सिद्ध किया है कि जहाँ शराबबंदी से सरकारी खजाने में कुछ दिनों के लिए थोड़ा घाटा होगा, उसके खिलाफ लोगों की शारीरिक और मानसिक शक्ति और अतः उत्पादन की शक्ति का जो ह्रास बचेगा, उससे राष्ट्र को कई गुना फायदा होगा। पर जब किसी सवाल के बारे में पहले से ही मन में कुछ और तय हो, तो दलीलें क्या काम देंगी? योजना-कमीशन के सदस्य, श्री श्रीमन्नारायण ने पिछली जनवरी में चण्डीगढ़ में दिये हुए अपने एक बयान में यह स्पष्ट कहा था कि शराबबंदी केवल योजना-कमीशन की एक 'नैतिक सनक' नहीं है, लेकिन हमारी योजना में जो आर्थिक छिद्र हैं, उन्हें रोकने का एक कार्यक्रम है। उन्होंने कहा था :

"The Planning Commission did not regard Prohibition as a moral fad. To the Commission it was an urgent problem of leakage in a developing economy, with special reference to the poorest section of the population."

—और आर्थिक दृष्टिकोण से नहीं, केवल नैतिक दृष्टि से भी अगर शराबबंदी आवश्यक है, तो क्या लोगों के नैतिक विकास के बारे में चिन्ता करना सरकार का या शासन का कर्तव्य नहीं है?

अफसरशाही का रुख

कुछ वर्ष पहले जब मैं श्रीजय प्रकाशजी के साथ योरोप की यात्रा पर गया था, तो करीब-करीब हर देश के भारतीय दूतावासों में हमें भोजन के लिए निमंत्रित किया गया था और करीब-करीब हर जगह शराब का दौर दौरा था। मेरा इरादा उन सज्जनों के आतिथ्य की अवहेलना करने का नहीं है, पर जनता के सामने सही चित्र उपस्थित करना, व्यक्तिगत भावनाओं के संरक्षण से कहीं अधिक आवश्यक कर्तव्य है। उन भोजों में शराब चलती थी, इतना ही नहीं; लेकिन करीब-करीब हर जगह भोजन के दरमियान बातचीत का कम-से-कम एक मुद्दा भारत सरकार की शराबबंदी की नीति का जरूर आता था और—कोई स्पष्ट या कोई दबी जबान से—करीब-करीब सब जगह हमारे दूतावासों के उच्च अधिकारी उसका मखौल करते थे। आज शराब सभ्यता और शिष्टता का प्रतीक बनती जा रही है, इसके लिए यही अफसरशाही वर्ग और उनकी कृपा पर पलनेवाले ठेकेदार तथा व्यापारी जिम्मेदार हैं। आजादी के बाद के वर्षों में देश में शराब की खपत बढ़ी है, इससे कहीं ज्यादा भयंकर बात यह लगती है कि शराबखोरी के बारे में पहले जो एक संकोच और पाप की भावना पीनेवाले के मन में होती थी, वह आज सभ्यता और गर्व की भावना में बदल गयी है। भरे बाजार और आम रास्तों पर जगह-जगह शराब के आकर्षक विज्ञापन खड़े होते जा रहे हैं। होटलों में, सिनेमाओं और जलपान-गृहों में खुलेआम, और विज्ञापन कर-करके, शराब की बिक्री की जा रही है और उसके कारण नयी पीढ़ी उत्तरोत्तर तेजी के साथ इस व्यसन में फँसती जा रही है। दूसरे देशों में भी ऐसा होता है, यह दलील अक्सर हम देते हैं, पर उन देशों का भौगोलिक, प्राकृतिक और सामाजिक वातावरण तथा परम्परा हमारे देश से भिन्न रही है।

शराबबंदी के लिए निम्न कदम उठाने होंगे, जिससे हर सम्भव तरीके से शराबबंदी के पक्ष में वातावरण निर्माण हो। ढूंढ़-ढूंढ़ कर पीनेवालों से सम्पर्क करें, उन्हें व्यसन-मुक्ति पाने के रास्ते बतलायें, उस प्रकार की मुक्ति के लिए समाज और सरकार द्वारा आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करायें, शराब बेचनेवालों को सहानुभूति-पूर्वक समझायें और आवश्यक हो, तो मदिरालयों पर पिकेटिंग भी करें। इन सब बातों की तफसील सोचना शराबबन्दी-आन्दोलन का मुख्य काम है।*

* देवघर में हुए बिहार प्रदेश मद्यनिषेध-सम्मेलन में अध्यक्ष-पद से ७ जुलाई '६२ को दिये गये भाषण से।

दान हो तो ऐसा...

खेड़ा में मेरे साथ पेथा भाई नामक एक सज्जन थे। जाति के वे पटेल थे। मैं एक बार उनके गाँव गया, तो उन्होंने मुझे १२१ बीघा जमीन दी। साल भर में दुबारा उनके गाँव गया, तो वे बोले, "आप जमीन लेकर तो चले गये, पर उसे बाँटेंगे कब?"

मैंने कहा—"बाँटने ही आया हूँ।" और पूछा—"किस-किसको दूँ?" उन्होंने सुझाया—"भंगी भाइयों के ग्यारह परिवार हैं, सभी उन्हें दे दीजिये।"

मैं बोला—"यह तो ठीक न होगा; पर आप अपनी कुछ जमीन उन्हें दे दें।"

उन्होंने जमीन देना स्वीकार कर लिया, तो मैंने फिर कहा—"जमीन भर देने से तो नहीं चलेगा। उन्हें खेती करना भी सिखाना पड़ेगा।"

पेथा भाई, उनकी पत्नी और उनका २४ वर्षीय पुत्र, तीनों बैठे हुए थे। कुछ क्षण सोचने के बाद वे बोले—"संकल्प कर लिया, जरूर सिखाऊँगा।"

दूसरे दिन से ही वे ग्यारह भंगी परिवारों को साथ लेकर खेतों में काम करने लगे। कुछ दिनों बाद मुझे उनका पत्र मिला कि चार अच्छे बैल भेजिये। मैंने भेज दिये। इस तरह दो-तीन साल बीते होंगे। एक मंदिर की ओर से मुझे कुछ बछड़े प्राप्त हुए। सोचा कि पेथा भाई के यहाँ सब भिजवा दूँ और इसी इरादे से उन्हें पत्र भी लिखा। उत्तर मिला—"ईश्वर की अनुकम्पा से हमारे भंगी भाइयों की खेती खूब उन्नत दशा में है। अब मुझे बैलों की जरूरत नहीं; आप किसी और को दे दें।"

हाल में पढ़ा कि उन भंगी भाइयों ने २,५०० रुपये बैंक में जमा कर लिये हैं। —रविशंकर महाराज

उत्तराखण्ड सर्वोदय-पदयात्रा के कुछ संस्मरण

विश्वम्भरदत्त थपलियाल

उत्तराखण्ड सर्वोदय-पदयात्रा का वह हमारा इक्कीसवाँ दिन था। ठीक ३ मील चढ़ाई पार कर जब कुछ सीधा रास्ता हमें दिखाई दिया, तो भ्रम में पड़ गये, क्योंकि हमें बताये गये रास्ते से यह भिन्न मालूम पड़ता था। कुछ देर चलने पर हमें सड़क के ऊपर कुछ 'छाने' याने पशुओं के जंगली डेरे दिखाई दिये। रास्ता पूछने के लिए वहाँ जाने का हमने निश्चय किया। कुछ ऊपर चढ़ कर उन 'छानों' से मनुष्यों की आवाज उस घने जंगल के बीच हमने सुनी। जंगली बेलों और काँटों को रौंदते हुए हम उधर दौड़ पड़े। एक 'छान' के बाहर एक महिला व १२-१४ साल का एक लड़का खड़ा था। वे दोनों एकटक बड़े आश्चर्य से हमारी ओर देखने लगे। दूसरी 'छान' में दो नवयुवक मार्सा (रामदाना), की की रोटियाँ पका रहे थे। हमने उनसे राह बताने के लिए प्रार्थना की, किन्तु किसी ने कोई उत्तर नहीं दिया।

हमने अपने 'पिट्ठू'* उतार दिये और घास पर बैठ गये। हमारे पास कौसानी से ली कुछ मूँगफलियाँ थी। एक साथी माँग कर हमने मूँगफली के छिलके उतारना आरम्भ किया और कुछ उनको भी देते हुए कहा कि तवा न उतारना, हम उसमें नाश्ते के लिए मूँगफली भूनेंगे। इससे इन नये मित्रों के मुँह के साथ दिल भी खुल गये। अब वे हमें सहानुभूति की दृष्टि से देखने लगे, मूँगफली भूनते हुए उन्होंने बड़े आग्रह से अपने हिस्से की चार रोटियाँ हमें दी।

उनकी सहायता से हमें आगे का रास्ता मिला। रास्ता तो वैसा ही कठिन था, किन्तु अब चढ़ाई नहीं थी। उस घने जंगल के बीच में से वह रास्ता जाता था, जिससे कि पाँच छः मील तक हमें आस-पास कोई बस्ती नहीं दिखाई दी। जंगल पार कर एक 'धार' में पहुँचे। वहाँ पर लिखा था—बगीधार ५ मील, देवा १ मील। देवा गाँव में जब पहुँचे तो उस समय प्रधानजी व दूसरे गाँव के एक मुसाफिर के अलावा अन्य कोई भी पुरुष नहीं थे। हम प्रधानजी के आँगन में बैठ गये, किन्तु प्रधानजी ने हमें केवल इतना ही पूछा कि आप लोगों को कहाँ जाना है? हमने बताया कि हमें थलीसैण जाना है। प्रधानजी ने जानकारी दी, "यहाँ से डेढ़ मील की चढ़ाई पर बिन्देश्वर महादेव का मंदिर है। वहाँ एक साधू रहते हैं। वहाँ आप लोग भोजन बना सकते हैं।"

हम दो साथी आगे बढ़े। लगभग डेढ़ फर्लांग दूर जगलात के बंगले के आँगन में बैठे ही रहे थे कि गाँव से अन्य साथी वापस लौट आने का संकेत करने लगे। मैं समझ गया था कि साथियों ने खान का कुछ-न-कुछ प्रबन्ध कर दिया है।

गाँव में जाकर देखा तो साथियों ने प्रधानजी की बहू से मडुआ और घी माँग रखा था। अब उसे पीसने के लिए कहीं चक्की नहीं मिली। अन्त में एक युवक से प्रार्थना करने पर चक्की मिली। पीसने के बाद शीघ्र ही मोटी मोटी रोटी बना कर खिचड़ी के साथ हमने खायी। इतने कार्यक्रम के बीच गाँव की कुछ महिलाएँ घर पहुँची। वे हमसे रात वहीं रहने का आग्रह करने लगी, किन्तु दूसरे दिन सुबह ही थलीसैण पहुँचना था, इसलिए वहाँ से आगे चल पड़े। गाँव से कुछ दूर जाकर जंगल में रास्ता भटक गये। ग्वालों से रास्ता पूछ कर बिन्देश्वर महादेव के पास गये। वहाँ पर साधूजी के साथ बैठे हुए व्यक्ति ने बताया कि अभी बहुत समय है और यहाँ से ४-५ मील पर गाँव मिलेगा, अतः आप लोग जा सकते हैं। महात्माजी से लालटेन में तेल भरवा कर चल पड़े। रास्ता जंगल का ही था। कहीं कहीं पर तो मालूम भी नहीं होता था कि रास्ता कहाँ खो गया। अनुमान लगा कर हम लोग आगे बढ़ते थे। कुछ दूर चल कर सामने बूगीधार से बस्ती के मध्य से थलीसैण को जाने वाली सड़क देख कर हम केवल यही सन्तोष हुआ कि हमें चढ़ाई नहीं मिलेगी। खाल के ऊपर पहुँच कर बूगीधार से आने वाली सड़क मिली। अब भी जंगल घना था, आसमान में भी घटा घिर आयी। आँधी के साथ बूँदा-बान्दी आरम्भ हुई। अंधेरा भी होने लगा। दो मील के बाद सड़क के बाजू में एक गाँव दिखाई दिया। किन्तु थकावट से हैरान होने के कारण गाँव में जाने के लिए चढ़ाई चढ़ने का साहस नहीं हुआ। दो दो ने एक एक कम्बल ओढ़े और आगे बढ़े।

(क्रमशः)

* पीठ पर बाँधने का बना सा थैला, जिसमें सामान रख कर पहाड़ पर चढ़ना आसान होता है।

राजस्थान प्रदेश नशाबन्दी प्रशिक्षण शिविर

"शराबबन्दी-आन्दोलन मानस-शुद्धि, नैतिक एवं व्यवहार-शुद्धि का आन्दोलन है। आज समाज में कई प्रकार की बुराइयाँ व रोग व्याप्त हो रहे हैं। समाज के सुस्वास्थ्य एवं उसकी सुरक्षा के लिए इन बुराइयों व रोगों को निकाल बाहर करना होगा, समाज की शुद्धि करनी होगी। शराबबन्दी उसके लिए एक पहला व आवश्यक कदम है।"

ये शब्द कह कर राजस्थान के वयोवृद्ध लोकसेवक, श्री गोकुलभाई भट्ट ने मांडलगढ़, (भीलवाड़ा) में ३० जून को शिविर के समाप्ति-समारोह का आरम्भ किया। शिविर की समाप्ति श्री हरिभाऊ उपाध्याय द्वारा होने वाली थी, परन्तु उनके अस्वस्थ हो जाने से वे नहीं आ सके।

श्री गोकुलभाई ने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा, "आज श्री हरिभाऊजी यहाँ आ पाते तो उनके विचारों का लाभ हमें मिल पाता। उनका व हमारे राज्य के मुख्य मन्त्रीजी व अन्य मंत्रियों का इस कार्य के लिए पूर्ण सहयोग है, परन्तु वे हमारी कसौटी करना चाहते हैं। हम भी उनकी कसौटी करना चाहते हैं। अब यह समय आ गया है कि हमें अपने आपको कसौटी पर कसना चाहिये। हमारे ऋषि-मुनियों ने तथा विश्ववन्द्य बापू ने हममें जो भावनाएँ भरी हैं उसको लेकर आगे बढ़ेंगे। शराब जहाँ दवा के रूप में गुणकारी है वहाँ व्यसन के रूप में वह सर्वनाश भी कर देती है। कुछ लोग यह मानते हैं कि थोड़ी मात्रा में यदि वह ली जाय, तो ताकत व ताजगी देती है, परन्तु उन्हें नहीं मालूम कि इसी प्रकार ७५ प्रतिशत लोग शराब के आदतन पियक्कड़ हो जाते हैं। लोग कहते हैं कि राज्य अपना है, तब कानून से शराबबन्दी को तुरन्त लागू क्यों नहीं कर देते, परन्तु लोक-शिक्षण व लोक-संकल्प के बिना कानून टिकने वाला नहीं होगा। हम इसलिए लोक शिक्षण व लोक-संकल्प द्वारा जनाधार पैदा करते हैं, जिससे कानून सबल हो। शराबबन्दी के लिए हमें बहनों को भी तैयार करना होगा।

"आज गाँवों की हालत बहुत ही दर्दनाक है। इतने विकास के काम हुए, लेकिन ग्रामवासियों का सक्रिय सहयोग न होने से उनमें जान नहीं आ पायी। जब तक जनता यह नहीं समझेगी कि अमुक काम हमने किया, तब तक उसमें अपनत्व नहीं पैदा होता। शराबबन्दी आन्दोलन में तेज तभी आयेगा, जब उसमें पीने वाले, पिलाने वाले व बेचने वाले, सभी की शक्ति लगेगी। आज एक भील भाई आये। उन्होंने शराब बन्द करने का संकल्प किया और कहा कि हम दूसरों से भी शराब बन्द करने का संकल्प करा रहे हैं, तो मुझे आशा बँधी और मेरी हिम्मत बढ़ी। जब इस प्रकार का सहयोग मिलेगा, तभी हम सफल होंगे। हमें गाँव-गाँव में चार-चार, पाँच पाँच व्यक्ति ऐसे खड़े करने चाहिये। मांडलगढ़ ने शराबबन्दी के लिए संकल्प किया है। यह राजस्थान के लिए मार्गदर्शक है। हमें रात दिन हृदय-परिवर्तन की मशाल लेकर आगे बढ़ना है। हमारे काम को ये शराब पीने-पिलाने वाले शराबबन्दी कर आगे बढ़ाने वाले हैं।"

बेचने वालों को सम्बोधन करते हुए उन्होंने कहा—"हमें ऐसी दूकानें खोलनी चाहिए, जिनसे शराब पीने वालों को ऐसा ताजा स्वास्थ्यकर पेय मिले कि वे शराब छोड़ कर उनकी तरफ आकर्षित हों। हमें जन-जन से प्रतिज्ञा करवानी है। इसके लिए यदि किसीके पैर भी पकड़ने पड़े, तो हमें प्रसन्नता अनुभव करनी चाहिये। हमारे मंत्रियों को भी हमें समझाना ही पड़ेगा। हम एक नेक काम में लगे हैं। हम बिना किसी से द्वेष रखते हुए, शान्ति से आगे बढ़ें।

श्री केसरपुरीजी, मंत्री, राजस्थान प्रदेश नशाबन्दी समिति ने शिविर का विवरण देते हुए बताया कि शिविर टोलियों ने योजना के अनुसार ४ ग्राम-पंचायतों में सघन कार्य व २४ ग्राम पंचायतों में व्यापक कार्य किया है। उन्होंने इन २८ ग्राम पंचायतों के कुल ११८ गाँवों में पदयात्रा कर शराबबन्दी का अच्छा वातावरण बनाया। नये नारे व सूत्र वाक्य तैयार किये, सर्वेक्षण किया, कुछ नये गाने भी बनाये। कुल २९९ व्यक्तियों की शराब छुड़वायी गयी, जिनमें बहुत से आदतन पियक्कड़ भी थे। कुल १७ ग्राम-पंचायतों में नशाबन्दी समितियों का निर्माण किया। मांडलगढ़ पंचायत के ४७१ व्यक्तियों ने शराबबन्दी के लिए हस्ताक्षर किये।

> साचरोल ग्राम पंचायत व मांडलगढ़ पंचायत के सरपंच श्री गोपाल सिंहजी व श्री नन्दलालजी भंडारी ने अपने पंचायत क्षेत्र से शराब को पूर्णतया बन्द करने के लिए संकल्प किये हैं। साचरोल व नीमका खेड़ा में से शराब की बिक्री पूर्णतया बन्द कर दी गई।

शिविर समाप्ति समारोह पर श्री भँवरलालजी भादादा, मंत्री, राजस्थान हरिजन सेवक संघ ने कहा : "हमारा मद्य निषेध का कार्यक्रम जीवन के सभी पहलुओं को छूता हुआ होना चाहिये। आज वही लोग शराब पीते हैं, जिनके सामने जीवन के बारे में कुछ स्पष्ट विचार नहीं है। हमें मनोरंजन के उत्कृष्ट साधन भी प्रस्तुत करने होंगे। शराब राष्ट्रीय चरित्र को बिगाड़ रहा है। फ्रान्स का पतन इसीसे हुआ। हमारी शिक्षा में आज भी कोई सुधार नहीं हुआ है। जब तक सद्शिक्षा व चरित्र विकास प्रारंभ नहीं होगा, तब तक देश आगे नहीं बढ़ सकेगा।"

श्री मनोहरसिंहजी, श्री नन्दलाल भंडारी व श्री हकीम मोहम्मद आदि ने भी अपने उद्‌गार प्रकट किये।

अन्त में जयघोष के साथ समारोह समाप्त हुआ।

विनोबा पदयात्री दल से

कालिन्दी

एक छोटे-से पड़ाव पर 'दाजी' के पुराण-प्रसिद्ध माधवमंदिर में आज सभा थी। मन्दिर के आगे 'नामघर' में नाम-संकीर्तन चल रहा था। चारों ओर सृष्टि अपनी उदात्त भव्यता बिखेर रही थी, मानो वह भी प्रभुसंकीर्तन में तल्लीन थी, क्योंकि विश्व-रूप देख कर सहज ही नामस्मरण की प्रेरणा होती है।

"कर्णपथें भकतर हियात प्रवेशि हरि दुर्वासना हरे समस्तय।
जजर जेतेक मल गेहेन शरत-काले स्वभावते निर्मल करय।"

—कर्णपथ के द्वारा भक्त के हृदय में हरि प्रवेश करता है तो सब दुर्वासना खतम हो जाती है, जैसे शरत् काल आते ही पानी का मल अपने आप खतम होता है।

अव्यक्त आँखें

दस-पंद्रह मिनट बाबा कीर्तन में तन्मय हो गये। नामसंकीर्तन खतम होते ही एक अन्धा सामने आया। वह ७ मील दूरी से बाबा से मिलने आया और अभी तक नामसंकीर्तन में तन्मय था! इसने तो विधाता की सृष्टि नहीं देखी थी और फिर भी हरिस्मरण में इतनी तन्मयता! अव्यक्त को देखने वाली ये अव्यक्त आँखें! मन में आया, इसने कहाँ देखी है यह मोहमयी सृष्टि; शायद भगवान् के दर्शन उसको ज्यादा आसान होंगे। इसी कारण सन्तों ने कहा है, "पापाची वासना नको दावू डोळा, त्याहूनी आंधळा बराच मी"—'मेरी आँखें पाप-वासना को न देखें, उससे बेहतर है कि मैं अंधा ही रहूँ!' मन ही मन उस अन्धे ने बाबा के दर्शन भी कर लिये।

जमीन का मालिक गाँव

पहाड़ के नीचे जनता आतुर थी, बाबा के दर्शन के लिए। बाबा ने उस जनसमुदाय से कहा—"हम ऊपर गये थे भगवान् के दर्शन के लिए। जहाँ हजारों यात्री जाते हैं, वह सबके श्रद्धाभाजन का स्थान होता है। ऐसे विश्राम-स्थान हिन्दुस्तान में जगह-जगह बनाये हैं। संसारताप से श्रांत लोग वहाँ जाते हैं और विश्राम पाते हैं। ऐसे स्थानों में भगवत् भक्ति का और प्रेम का वातावरण होना चाहिए। यहाँ मनुष्य आता है, तो दूसरी चीजों के लिए नहीं आता। मानव अपने काम का फल, दर्शन करना चाहता है। मानव का विशुद्ध दर्शन है, वह संसार में चारों ओर दीखता है। मानव का जो शुद्ध स्वरूप है, उसके दर्शन के लिए ऐसे स्थान प्राचीन लोगों ने तैयार किये। लेकिन अब इन मन्दिरों को अलग ढंग से काम करना चाहिए। मन्दिरों को लोगों की श्रद्धा का आधार लेना चाहिए और वह लेकर जमीन पर मंदिर की मालकियत नहीं चलनी चाहिए। जमीन गाँव की कर देनी चाहिए। लोगों की श्रद्धा होगी, तो लोग अपनी आमदनी में से मंदिर का कारोबार चलाने के लिए दान देंगे। लोगों की श्रद्धा पर विश्वास रखना चाहिए।"

भक्ति समझना कठिन

बुढ़ापे से झुकी कमर, कृष्ण वर्ण, दंत-विहीन दुर्बल चेहरा और भाव-भीनी आँखें! पूरे पन्द्रह मिनट 'विष्णुसहस्रनाम' का पाठ समाप्त होने तक वह वृद्धा बाबा के चरणों के पास हाथ जोड़ कर बैठी हुई थी। आखिर में सारे कृत्रिम बंधन टूट गये और भक्तिरस का पूर आँखों से बहने लगा! आवेश खतम हुआ, मन का समाधान हुआ, तब धीरे-धीरे वह कमरे के बाहर निकल गयी। शाम को वह वृद्धा फिर से बाबा के पास आयी और उसी तरह भक्ति से वहीं बैठी रही। कहने लगी, "... सपने में एक साधु ने मुझसे कहा कि घर में रोज एक दिया जलाते जाओ, वह दीप अशांति से देश की रक्षा करेगा। तब से रोज शाम को मैं एक दीप जलाती हूँ। अब समय हो गया है, इसलिए जाती हूँ।..."

बाबा ने कहा, "देखो रे भक्ति"

किसी ने कहा, "मेरे पिताजी कहते थे, ज्ञान को मान्यता देना, अपना लेना सहल है, क्योंकि अगर तर्क से वह कोई मुझे समझा दे तो मैं समझ सकता हूँ और उसका स्वीकार भी करता हूँ। वह तो बुद्धिगम्य वस्तु है। लेकिन भक्ति को समझना उतना आसान नहीं। वह तो श्रद्धा की वस्तु है, एक भावना है। वह समझना मेरे जैसे व्यक्ति को कठिन जाता है। इसलिए भक्तों का मैं विशेष आदर करता हूँ।"

"बिलकुल ठीक बात है।"

"ज्ञान तो सिर्फ जो बुद्धिशाली है, वही समझ सकता है। सर्वसामान्य मनुष्य तो भक्ति ही समझ सकेगा।"

भक्ति के दो प्रकार

"भक्ति में दो प्रकार हैं। एक तो सर्वसामान्य भक्ति-श्रद्धा। जैसे बच्चे के माँ प्रति भक्ति होती है। माँ कहेगी यह चन्द्रमा है, तो बच्चा विश्वास करता है, मान लेता है। ऐसी भक्ति की भावना हिन्दुस्तान के सर्वसामान्य लोगों में बहुत है। भक्ति का दूसरा अर्थ है, कोई एक पवित्र विचार के चिन्तन में सतत रमण करना। इसमें सातत्य की आवश्यकता होती है। यही भक्ति है। यही कठिन है। हिन्दुस्तान में भक्ति बहुत है, लेकिन भगवान् का नाम लेने का समय आता है तब सब अलग-अलग हो जाते हैं। इसलिए बापू ने प्रार्थना में ईश्वर भी गाया और अल्लाह भी गाया।... हम तो सुबह 'ईशावास्य' बोलते हैं और शाम को स्थित-प्रज्ञ के लक्षण। शाम को सभा के बाद पाँच मिनट मौन प्रार्थना करते हैं। मौन में कितनी शक्ति है, इसका खयाल मौन में जो शान्ति मिलती है, उस पर से आता है।

मुक्ति की सामूहिक साधना

चित्त सरल, सीधा हो तो उपासना सहज सधती है। कोई बहुत विद्वान हो, बहुत अध्ययन किया हुआ हो, लेकिन चित्त टेढ़ा हो तो वह दुनिया में और अच्छे काम बहुत कर सकेगा, लेकिन उसकी उपासना सहज नहीं सधेगी। अब हम तो चाहते हैं कि हमारे साथियों को हमारे साथ ही मुक्ति मिले। हम तो जो कुछ करते हैं, इस जन्म में मुक्ति पाने के लिए ही करते हैं।"

"लेकिन यह तो अपनी-अपनी शक्ति पर निर्भर है।"

"यह खयाल गलत है कि सिर्फ अपनी-अपनी शक्ति पर ही यह निर्भर नहीं रहता। एक-दूसरों की सहायता का भी बहुत आधार रहता है। जैसे व्यावहारिक बातों में होता है। अब मेरी कमर दुख रही है, तो तुम कहोगी कि वह मेरी अपनी शक्ति से ठीक हो जायेगी। लेकिन ऐसा नहीं। जयदेव रोज मसाज करता है तो उसकी सहायता की भी उतनी ही मदद है, यह स्पष्ट है। उससे भी ज्यादा स्पष्ट आध्यात्मिक बातों के बारे में है। हमारे साथी की हमारे प्रति जो दृष्टि होती है, उस पर भी हमारी उन्नति निर्भर रहती है।"

> **सिर्फ अपनी-अपनी शक्ति पर ही मोक्ष निर्भर नहीं रहता। एक-दूसरों की सहायता का भी बहुत आधार रहता है। जैसे व्यावहारिक बातों में होता है।...उससे भी ज्यादा स्पष्ट आध्यात्मिक बातों के बारे में है। हमारे साथियों की हमारे प्रति जो दृष्टि होती है, उस पर भी हमारी उन्नति निर्भर रहती है। —विनोबा**

वृक्षावली के बीच से मधुर ध्वनि सुनाई दी: 'कूऽऽऽ, कूऽऽ।' चलते-चलते बाबा रुक गये और पूछा, "कौन है रे यह?" किसी के कुछ समझ में नहीं आया।

बाबा कहने लगे, "मैं तो अपने समाज की बात कर रहा हूँ। तुम्हारे समाज की नहीं। हमारा एक अलग समाज है। उसमें ऐसे सुंदर-सुंदर ध्वनि करने वाले पंछी होते हैं, वृक्ष होते हैं, हवा होती है। कभी कभी हम आपके समाज में आ जाते हैं। ऐसे हम पदयात्रा तो करते हैं, लेकिन हमारा दिमाग हवा में ही घूमता रहता है।"

"इस समाज की सदस्यता के लिए आवश्यक बातें क्या हैं, बाबा?"—रमेश भाई ने पूछा।

"हवा में उड़ना सीखो!"

हवा में उड़ने वाले तो बहुत होते हैं। लेकिन वह उड़ान हवा में किले बाँधने के लिए होती है। हवा में सैर करने वाले, गूढ़गुंजन करने वाले और उस गुंजन का रसास्वाद दुनिया को देने वाले कितने मिलेंगे आज?...

समुद्र-मत्स्य न्याय

'सुवालकुची' गाँव के लोगों को बाबा ने कहा, "पश्चिम में विकास हुआ विज्ञान का, हिन्दुस्तान में विकास हुआ आत्मज्ञान का। आज हिन्दुस्तान आत्मज्ञान को बिलकुल भूल गया। साइंस, विज्ञान है नहीं। इसीलिए हिंदुस्तान में न आत्मज्ञान है, न विज्ञान है। ऐसी विलक्षण हालत में भारत है। यूरोप में विज्ञान है और आत्मज्ञान की भूख है। हिंदुस्तान में दोनों नहीं, लेकिन हमारा आध्यात्मिक देश है, ऐसा अभिमान रखते हैं। विज्ञान-शून्य और ब्रह्मविद्या का अभिमान, यह है हिंदुस्तान का स्वरूप और विज्ञानपूर्ण और ब्रह्मविद्या की भूख, यह है पश्चिम का स्वरूप। हमको ब्रह्मविद्या और विज्ञान दोनों की आवश्यकता है। इसलिए वसिष्ठ ने रामचन्द्र को जो उपदेश दिया, वह ध्यान में रखना चाहिए। 'अंतस्त्यागी बहिःसंगी लोके विचर राघव'—आत्म-विद्या सिखायेगी अंतस्त्याग और विज्ञान सिखायेगा बहिःसंग।"

वसिष्ठ ने रामचन्द्र को उपदेश दिया और एक बड़ा भारी साम्राज्य सम्हालते हुए रामचन्द्र ने यह आसानी से पूरा किया यह तो बारीक तार के ऊपर की कसरत है! अगर कदम इस तरफ फिसल गया तो बहिःसंग की आसक्ति में रूपांतर हो जायगा और उस तरफ फिसला तो अंतस्त्याग का समाज-त्याग में रूपांतर हो जायगा। भक्त तो वह है जो दोनों तरफ का बैलन्स-सन्तुलन सम्हालता है। भक्त का और समाज का संबंध कैसा होना चाहिए! बाबा हमेशा कहते हैं, "वह तो समुद्रमत्स्य न्याय है। समुद्र उछलता है तो मछलियों को उससे कुछ तकलीफ नहीं होती। मछलियाँ खेलती रहती हैं तो उससे समुद्र को तकलीफ नहीं होती। भक्त में और लोगों में यह संबंध होना चाहिये।

ज्ञानी आँख के समान

ऐसा सोचते हैं कि ज्ञानी के चित्त पर किसी बात का परिणाम नहीं होता। बाद जलाने के पहले स्नान करवाते हैं। उसमें वह प्रसन्न नहीं होती। बाद में उसको जलाते हैं, उससे उसको तकलीफ नहीं होती। जैसे दोनों का परिणाम लाश पर नहीं, होता वैसे ही ज्ञानी के चित्त पर परिणाम नहीं होता, यह जो खयाल है वह काल्पनिक है मैं मानता हूँ। कि ज्ञानी का चित्त रूप निर्मल होने के नाते किसी वस्तु का उस पर परिणाम होता है तो वह एकदम प्रकट होगा। लेकिन उस परिणाम से वह चंचल होगा नहीं। अचेतन के पत्र में जितना जायेगा उतना वह अधिक ज्ञानी होगा, यह खयाल गलत है। योगसूत्र में कहा है कि ज्ञानी आँख के समान है। आँख के समान याने किंचित् भी दुःख हो तो उसको सहन नहीं होता। यह वर्णन ज्यादा योग्य है। ●

मध्यप्रदेशीय पाँचवाँ सर्वोदय-सम्मेलन

छतरपुर में २१ जून को मध्य प्रदेश का पाँचवाँ दो दिवसीय सर्वोदय सम्मेलन गांधी स्मारक भवन के सुरम्य स्थल में सानन्द सम्पन्न हुआ। सम्मेलन की अध्यक्षता श्री नारायण देसाई ने की। श्री सिद्धराज ढड्ढा ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। सम्मेलन में प्रदेश के भिन्न-भिन्न जिलों से आये हुए ३५० प्रतिनिधियों ने भाग लिया। सम्मेलन में आये हुए अतिथि और प्रतिनिधि भाई बहनों का स्वागत विन्ध्य क्षेत्र के वयोनिष्ठ सेवक श्री महेन्द्रकुमार 'मानव' ने किया।

मंत्री का लेखा-जोखा

मध्य प्रदेश सर्वोदय-मण्डल के मंत्री, श्री हेमदेव शर्मा ने अब तक के प्रादेशिक सर्वोदय कार्य का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया और सिंहावलोकन करते हुए बताया कि समूचे प्रदेश में प्राप्त तीन लाख, पाँच हजार एकड़ भूदान में से ८० प्रतिशत जमीन भूमिहीन परिवारों में वितरित की जा चुकी है। शेष जमीन भी इस वर्ष सन् '६२-'६३ में बाँटी जा सके, इसके लिए इस सम्मेलन में संकल्प और योजना निर्धारित की जानी चाहिए। प्रदेश सरकार को भी चाहिए कि वह लगभग २५ हजार एकड़ जमीन, जो उसके दफ्तरों में [illegible] कार्यवाही के लिए पड़ी है, उसको शीघ्र ही निकाल कराये, ताकि वह जमीन भी बाँटी जा सके।

चम्बल घाटी में शांति के लिए किये जा रहे प्रयासों की चर्चा करते हुए उन्होंने बताया कि आत्मसमर्पणकारी बागियों तथा उनसे पीड़ित परिवारों के पुनर्वास का काम चल रहा है। ऐसे परिवारों के ४० बच्चों की शिक्षा की व्यवस्था के लिए प्रति माह १६ रु. ५० न. पै. प्रति बालक के हिसाब से छात्रवृत्ति भी दी जा रही है। प्रेम-क्षेत्र बनाने का काम भी चल रहा है। चम्बल घाटी शांति-समिति अपने महान् दायित्व को अनेक कठिनाइयों के बावजूद भी निभा रही है। किन्तु उस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।

विसर्जन आश्रम के अंतर्गत इन्दौर में सर्वोदय अभियान चलाया जा रहा है। श्री दादाभाई नाईक के नेतृत्व में कार्यकर्ता भाई-बहनों की एक टोली सेवारत है। इस अभियान में गांधी स्मारक निधि, कस्तूरबा ट्रस्ट और हरिजन सेवक संघ का सहयोग उल्लेखनीय है। प्रदेश की रचनात्मक संस्थाओं के माध्यम से प्रदेश के विभिन्न भागों में ग्रामसेवा केन्द्र, आदिवासी-सेवा, आरोग्य एवं चिकित्सा, अस्पृश्यता-निवारण, महिला-उत्थान, ग्रामीण जागृति, खादी एवं लोकाभिक्रम की प्रवृत्तियाँ चलायी जा रही हैं।

जिला सर्वोदय मण्डल अपने-अपने क्षेत्र में सर्वोदय-विचार-प्रचार द्वारा ग्राम-स्वराज्य एवं पंचायती राज्य के अनुकूल वातावरण बना रहे हैं। आर्थिक असमानता को निर्मूल करने की दृष्टि से भूदान-प्राप्ति तथा वितरण का अनोखा प्रयोग हो रहा है, यद्यपि भूमि वितरण में कई कठिनाइयाँ हैं और समुचित साधनों के अभाव में आदाता परिवारों की स्थिति दयनीय है। भूमिहीन परिवारों की स्थिति में भूदान से अपेक्षाकृत सुधार हुआ है, लेकिन मुख्य बात तो दाता आदाता परिवारों के बीच प्रेम संबंध का है। इस प्रक्रिया से करुणा-मूलक समाज परिवर्तन के दर्शन सहर्ष संभव होंगे। अतः इस ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। नशाबंदी लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण, निर्दलीय चुनाव, पोस्टर आन्दोलन, सर्वोदय पात्र, स्वाध्याय-केन्द्र आदि प्रवृत्तियाँ लोकाभिक्रम की दृष्टि से चलायी जा रही हैं।

प्रांत में शांति-सेना और नई तालीम का काम विकसित हो, इसकी आज सर्वत्र आवश्यकता महसूस की जा रही है।

उद्घाटन-भाषण

अपने उद्घाटन भाषण में श्री सिद्धराज ढड्ढा ने देश के सर्वोदय आन्दोलन की समीक्षा करते हुए कहा, "आजादी के पूर्व सर्वोदय आन्दोलन का स्वरूप भिन्न था, जब कि आज उसका स्वरूप पहले से कहीं अधिक व्यापक, विकसित एवं अलग ही है। आजादी के बाद भूमि-समस्या की ओर देश का ध्यान आकर्षित होना जरूरी ही था। जनता स्वयं अपने अभिक्रम से अपनी समस्याएँ हल कर सके, इसीमें सच्चे लोकतंत्र की बुनियादें छिपी हैं। विनोबाजी ने गांधीजी की परम्पराओं को आगे बढ़ाया है। करुणा-मूलक सामाजिक क्रांति द्वारा अहिंसक समाज-रचना का दिव्य मार्ग उन्होंने हमारे लिए सुलभ कर दिया है।

हमारा नेता सूर्य की भाँति नित्य-प्रति अपनी यात्रा पर है। ग्रामस्वराज्य का संकल्प लेकर वह पिछले १०-१२ वर्षों से गाँव-गाँव घूम रहा है। हम एक क्षण रुक कर सोचें कि हमने समाज-जीवन पर क्या कुछ छाप डाली? क्या हममें कुछ परिवर्तन हुआ? समाज की जीर्ण मान्यताओं को हमने कितना बदला है? समाज-परिवर्तन की दिशा में हम कितने आगे बढ़े हैं? इस पर हम सोचने बैठेंगे तो हमें लगेगा कि उतनी सफलता नहीं मिली। परन्तु उससे निराश होने की आवश्यकता नहीं है।

"आज हमारे सामने भूदान, ग्रामदान, ग्रामस्वराज्य, पंचायती राज्य, सर्वोदय-पात्र, शान्ति सेना, नई तालीम आदि कई कार्यक्रम हैं। परन्तु मेरी दृष्टि में दो ही कार्यक्रम ऐसे हैं, जो जनता को छूने वाले हैं। एक है—भूदान और दूसरा है—शान्ति-सेना।

"जन शक्ति के बिना कभी भी क्रांति नहीं होगी। भूदान, ग्रामदान हमारी क्रांति के सर्वोत्तम साधन हैं। परन्तु हमने भूदान-प्राप्ति और वितरण को 'मैकेनिकल' बना दिया। यदि हम आगे भी इनका यांत्रिक दृष्टि से उपयोग करते रहे तो क्रान्ति का तत्त्व इसमें से निकल जायगा। अहिंसक क्रांति के लिए लोकाभिक्रम आवश्यक है।"

इसके बाद भूमिक्रांति, ग्राम स्वराज्य, पंचायती राज्य, नशाबन्दी, मिलावट, भ्रष्टाचार, नई तालीम, शान्ति सेना एवं संगठन और अर्थयोजना पर विभिन्न टोलियों में विचार हुआ। शाम को श्री ढड्ढाजी ने मध्य प्रदेश खादी-ग्रामोद्योग प्रदर्शनी का उद्घाटन किया। सम्मेलन के दूसरे दिन प्रातः नगर में प्रभात फेरी निकाली गयी तथा शांति सैनिकों की रैली हुई।

सम्मेलन की प्रातःकालीन बैठक में पहले दिन टोलियों में हुई चर्चा के निष्कर्ष प्रस्तुत किये गये, जिन पर विभिन्न वक्ताओं ने पुनः चर्चा की तथा अपने सुझाव पेश किये।

महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव

सम्मेलन की अंतिम बैठक में टोलियों की चर्चाओं में हुए निष्कर्षों के आधार पर ६ महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत किये गये, जिनमें कहा गया—

(१) शोषण-मुक्ति के लिए आर्थिक समानता आवश्यक है, अतः भूदान ग्रामदान आन्दोलन को और भी गतिशील बनाया जाय। तदर्थ जिले-जिले में पदयात्राएँ आयोजित करके जन जागरण की दिशा में कदम उठाया जाय।

(२) ग्राम-स्वराज्य लोकतंत्र की नींव है। भूदान, ग्रामदान, पदयात्राएँ, विचार प्रचार, ये सारे साधन उसी की प्राप्ति के लिए हैं। राजनैतिक एवं आर्थिक शोषण को रोके बिना ग्राम-स्वराज्य संभव नहीं है। इसके लिए ग्राम स्वराज्य शिविर लगाये जायँ तथा जनता और कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित किया जाय।

(३) लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की दृष्टि से सत्ता के विभाजन का प्रयोग पंचायती राज्य द्वारा हो रहा है, वह महत्त्वपूर्ण है। बिना व्यापक लोक शिक्षण, लोक सम्पर्क और लोक चेतना के हम अपने प्रदेश में पंचायती राज्य को ग्राम-स्वराज्य की दिशा में नहीं ले जा सकेंगे। अतः पंचायती राज्य के निमित्त से प्रदेश के समस्त रचनात्मक कार्यकर्ताओं के सामने एक ऐसा सुअवसर आ खड़ा हुआ है कि जिसके सहारे सारे प्रदेश में ग्राम-स्वराज्य की व्यापक चेतना जगायी जा सकती है।

(४) प्रदेश में संपूर्ण नशाबन्दी शीघ्रातिशीघ्र हो, इसके लिए अविलम्ब शासकीय और गैरशासकीय प्रयत्न किये जायँ। २० मई को इन्दौर में अपने प्रांतीय नशाबन्दी सम्मेलन के प्रतिवेदन में प्रस्तुत सुझावों को मान्यता देते हुए तदनुसार अविलम्ब प्रयत्न किये जायें।

(५) नई तालीम और शांति-सेना के बारे में कहा गया कि प्रांत में नई तालीम की दृष्टि से कतिपय स्वतंत्र आदर्श शिक्षण-संस्थाओं का संचालन समाज-संस्थाओं और आवश्यकतानुसार राज्य के सहयोग से किया जाय। नई तालीम के जीवन दर्शन और शिक्षण-पद्धति के विचारों को लोकप्रिय बनाया जाय तथा इसके अनुकूल जन शिक्षण करते हुए उपयुक्त जन मानस तैयार किया जाय। प्रदेश स्तर पर मण्डल के अंतर्गत नई तालीम समिति का गठन किया जाय। संभव हो तो जिला स्तर पर भी ऐसी समितियाँ गठित की जायें, जो स्वायत्त संस्थाओं की मदद से उपयुक्त वातावरण बनाने में सहायक हों।

(६) शांति-सेना मण्डल के गठन की आवश्यकता महसूस करते हुए कहा गया कि वस्तुतः बड़ी हिंसा से आज उतना भय नहीं है, जितना कि पारस्परिक छोटी हिंसाओं तथा हिंसा वृत्ति से है। अतः दैनंदिन समस्याओं के समाधान हेतु किसी भी रूप में हिंसा का आश्रय न लेकर अहिंसा की प्रक्रिया द्वारा हल करने के प्रयत्न किये जायें। इसके लिए शांति-सेना का गठन निश्चय ही आवश्यक है।

अंतिम प्रस्ताव संगठन एवं आन्दोलन के अर्थ-संयोजन के संबंध में है।

अध्यक्ष का भाषण

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री नारायण देसाई ने सामाजिक क्रांति की चर्चा करते हुए कहा कि आज तक समाज-परिवर्तन के जितने प्रयास हुए हैं, वे एकांगी हुए। जो प्रयास सामाजिक स्तर पर हुए, उनमें व्यक्ति गौण हो गया। कहीं चित्त-शुद्धि के प्रयोग हुए, उसमें समाज की उपेक्षा हुई। परंतु दोनों के समन्वय का दर्शन गांधी ने हमें कराया। भूदान-यज्ञ भी उसी दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। उसमें एक ओर आर्थिक सामाजिक क्रांति के बीज हैं, दूसरी ओर वह कार्यकर्ता की चित्त शुद्धि में सहायक हुआ है।

सर्वोदय-आन्दोलन की ओर संकेत करते हुए आगे उन्होंने कहा कि भूदान-आंदोलन के जरिये हमने भूमि-समस्या का प्रश्न उठाया है, वह मौलिक है। भारतीयों के मर्म को वह स्पर्श करने वाला है। हमने पिछले दस वर्षों में गाँवों को स्पर्श किया, नगरों को नहीं। भूमि को स्पर्श किया, केन्द्रित उद्योगों को नहीं। अतः अब इन दोनों अंगों का विकास होना चाहिए। भूमि-दान के साथ उद्योग-दान भी जुड़ जाना चाहिए।

सर्वोदय में दंड पद्धति का निषेध है। दीक्षा पद्धति का प्रयोग हम कर चुके हैं। लेकिन अब तीसरी पद्धति को भी अपनाने की आवश्यकता है और वह है वातावरण पद्धति। हमें समाज में ऐसा वातावरण बनाना चाहिए कि हृदय परिवर्तन अपने आप हो। उसके लिए जन अभिक्रम जगाने

मध्यप्रदेश शांति-सेना मण्डल

मध्यप्रदेश सर्वोदय-मंडल के मंत्री श्री हेमदेव शर्मा ने बताया कि प्रदेश में शांति-सेना की योजना के विकास एवं विस्तार की दृष्टि से छतरपुर में संपन्न प्रादेशिक सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर अ० भा० शांति-सेना मंडल के मंत्री, श्री नारायण देसाई के सान्निध्य में मध्यप्रदेश शांति-सेना मंडल का गठन किया गया है। सदस्य इस प्रकार हैं :

(१) श्री दीपचंद जैन (संयोजक)
(२) श्री रामानन्द दुबे, रायपुर
(३) श्री गणेशप्रसाद नायक, जबलपुर
(४) श्री सत्यनारायण शर्मा, सिवनी
(५) श्री गं० उ० पाटणकर, बैतूल
(६) श्री हेमदेव शर्मा, लश्कर
(७) श्री देवेन्द्रकुमार गुप्त, इन्दौर
(८) श्री मुकुन्दलाल बघेरवाल, गरोठ
(९) श्री सरयूप्रसाद मंडलोई, पालिया

शांति सेना का उद्देश्य तात्कालिक अशांति का शमन एवं स्थायी शांति के लिए प्रयत्न करना है। इस दृष्टि से प्रांत के विभिन्न १३ स्थानों पर सूचना-केन्द्र तथा ७ स्थानों पर शांति-केन्द्रों की स्थापना की गयी है। सूचना-केन्द्र अशांति के मौकों पर अशांति की सूचना अ० भा० शांति-सेना मंडल के प्रधान केन्द्र काशी और प्रांतीय मंडल के दफ्तर वि-सर्जन आश्रम, इन्दौर को देंगे तथा वहाँ से आदेश मिलने पर शांति-केन्द्र आवश्यकता पड़ने पर शांति-सैनिकों को शांति-स्थापना के लिए गंतव्य स्थान पर भेजेंगे।

माह अगस्त के तीसरे सप्ताह में जबलपुर में एक शांति-सेना प्रशिक्षण शिविर होगा, जिसमें पूरे प्रांत के शांति-सैनिक भाग लेंगे। इस अवसर पर अ० भा० सर्व सेवा संघ के सहमंत्री श्री राधाकृष्णन् तथा सुश्री निर्मला देशपाण्डे के भाग लेने की आशा है।

दरभङ्गा सर्वोदय-मण्डल के कार्यकर्ताओं का शिविर

लहेरियासराय में दरभंगा जिला सर्वोदय-मंडल के ५० कार्यकर्ताओं का एक शिविर गत २९ जून से १ जुलाई तक हुआ। उसमें श्री सद्रेजी ने मुख्य रूप से मार्ग-दर्शन का काम किया।

शिविर में प्रतिदिन ३ घंटे तक 'शान्ति सेना' नामक पुस्तक के पठन के बाद चर्चा करके शंका समाधान किया जाता था। फिर कार्यक्रम पर चर्चा होती थी; जिसके फलस्वरूप इस निष्कर्ष पर आना पड़ा कि जिले में भूप्राप्ति, वितरण, बेदखली, निवारण तथा प्रखण्ड स्तर पर सर्वोदय मंडल के संगठन के काम पर जोर देना चाहिए। ऐसा करने पर ही हम आन्दोलन को जनाधारित बना सकेंगे।

प्रारम्भ में उद्घाटन-भाषण करते हुए श्री सद्रेजी ने बतलाया कि हमें विशिष्ट कार्यक्रम में पड़ कर अपने लक्ष्य को भूलना नहीं चाहिए। प्रेम-शक्ति का निर्माण करना है, इसको ध्यान में रखते हुए अगला कार्यक्रम बना कर प्रखण्ड स्तर पर काम करने के लिए योजना बनी। उसे कार्यान्वित करने के लिए १८ टोलियाँ बनीं, जिसमें से कुछ टोलियाँ सीमा क्षेत्र में श्री सद्रेजी के मार्ग दर्शन में काम करने के लिए गयीं।

का कार्यक्रम होना चाहिए।

हमें अन्याय का प्रतिकार करने के लिए सावधान होना चाहिए। उसके लिए शोधन होना चाहिए। अब बेदखली के मामले में सीधी कार्यवाही का समय आ गया है। परंतु यदि हम भूमिहीनों के पास दरिद्रनारायण के दर्शन करते हैं, तो हमें भूमिवान के पास लक्ष्मी-नारायण के दर्शन करने जाना चाहिए।

आज नाउम्मीद होने की आवश्यकता नहीं। जो नाउम्मीद होकर काम करेगा वह नाउम्मीद ही रहेगा। आपके मन में 'नहीं' होगा, तो होगा ही नहीं। आत्मा सत्य-संकल्प है। 'नहीं' हमारे कोष का शब्द नहीं।

आज सत्याग्रह-पद्धति के रूप में उपवास को अस्त्र बनाया जा रहा है। उपवास केवल चित्त शुद्धि के लिए होना चाहिए। दूसरे का हृदय-परिवर्तन करने के लिए नहीं। अतः हमें जनतुम्ब प्रचार के साधन ढूँढ़ने होंगे। इसलिए जिन साधनों से जनप्रवेश हो सकता है, वे हमारे लिए वर्ज्य नहीं होने चाहिए।

अंत में आभार-प्रदर्शन एवं धन्यवाद के साथ सम्मेलन की कार्यवाही समाप्त हुई। [सर्वोदय प्रेस सर्विस, इंदौर]

शस्त्रों की होड़ के विरोध में प्रदर्शन

गत २२ जून १९६२ को सोलह व्यक्ति पेन्टागान—अमरीकी सेना के हेडक्वार्टर के सामने शस्त्रों की होड़ के विरोध में प्रदर्शन करते हुए गिरफ्तार किये गये। इन प्रदर्शनकारियों में इस संस्थान में नियुक्त एडवर्ड गार्मले नामक ३० वर्षीय युवक भी था, जिसने इस प्रदर्शन में भाग लेने के लिए कुछ देर पूर्व ही त्यागपत्र दे दिया था।

यह प्रदर्शन अमेरिकी शान्तिवादियों की उस शान्ति-यात्रा के बाद हुआ, जिसमें शिकागो, नाशविले, टेनेसी और हैनोवर से शान्तिवादियों का दल वाशिंगटन पहुँचा।

प्रदर्शन २२ जून की प्रातः साढ़े सात बजे पेन्टागान के मुख्य द्वार के सामने धरने से प्रारम्भ हुआ। प्रदर्शनकारियों को चेतावनी दी गयी कि वे प्रदर्शन करके आगे बढ़ जायें, पर वे वहीं डटे रहे।

प्रातः १० बजे से चार प्रदर्शनकारी अपना नैतिक विद्रोह प्रदर्शित करने के लिए इस सैनिक संस्थान के भीतर घुसे। इसमें गार्मले भी थे। बाहर प्रदर्शनकारी कुछ पत्रक भी वितरित कर रहे थे, जो उस क्षेत्र में कानूनन अवैध हैं। इस प्रकार इन प्रदर्शनकारियों में से १६ व्यक्ति हिरासत में ले लिये गये।

इन पर उस क्षेत्र में [illegible] घूमने और शान्ति भंग करने [illegible] योग लगा कर मुचलका पर रिहा कर दिया गया। इनकी सुनवाई के लिए २६ जून की तिथि मुकर्रर की गयी। छूटने के बाद कैन्ट और शैपिरो नामक दो प्रदर्शनकारी दुबारा प्रदर्शन करते हुए गिरफ्तार किये गये।

बंबई में साहित्य-प्रचार

बंबई के कार्यकर्ताओं ने ९ और ११-१२ जून को कुर्ला, बंबई के मुकुन्द आयर्न एण्ड स्टिल वर्क्स कारखाने से साहित्य-प्रचार करने की दृष्टि से सम्पर्क स्थापित किया। फलस्वरूप ११७५ रु. की साहित्य-बिक्री वहाँ हुई। साहित्य-प्रचार के प्रोत्साहन के लिए आधा मूल्य कारखाने के मालिकों ने दिया, इसलिए कर्मचारियों को वह साहित्य आधे मूल्य में ही मिला। उसी अवसर पर भू-ग्रामदान विचार और विनोबा पदयात्रा संबंधी फिल्म भी को बतलायी गयी। करीब २०० से अधिक कामगारों ने इससे लाभ उठाया।

जिला सर्वोदय भूदान मण्डल हिसार

अगस्त ता० २५-२६ को होने वाले *जिला मद्यनिषेध-सम्मेलन* की सफलता के लिए सभी कार्यकर्ताओं ने विशेष तौर से कार्य किया। जिले की लगभग ८०० ग्राम पंचायतों, नगरपालिकाओं, धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं से सम्पर्क साध कर प्रार्थना की गयी कि वे जिला-स्तर पर शराब-बन्दी प्रस्ताव मंजूर करके पंजाब सरकार को और जिला सर्वोदय भूदान-मण्डल, हिसार को भेजें। सम्मेलन श्री [illegible] धाहिसंगी लोक विचर रावव [illegible] प्रधानता में होगा।

इस जिले में सर्वोदय पात्र का कार्य मुख्य तौर पर श्रीमति विद्यावती द्वारा ३०० घरों में चल रहा है।

जून में हाँसी के श्री मास्टर दलीर सिंह जैन के सन् '५४ के दानपत्र के अनुसार श्री परमानन्द लोकसेवक ने मौरूसी कर्षण के मुआवजे के फलस्वरूप ५१२ रु० ८१ न० पै० किसानों से प्राप्त किये। आशा है कि इसी तरह यहाँ से २५०० रुपया और प्राप्त होगा।

४८ सम्पत्ति दाताओं से २४२ रु० ६ न० पै० प्राप्त हुए। ३०० सर्वोदय पात्रों से ८८ रु० ३४ न० पै० और ४ सर्वोदय-मित्रों से ५३ रुपये ८५ न० पै० अंकित दान और बैंक-सूद से २९ रुपये ५१ न० पै०, इस तरह जून माह में कुल ९२६ रु० ५७ न० पै० प्राप्त हुए और ७०३ रु० ९८ न० पै० खर्च हुए।

जून माह में कुल ७९९ रु० ४३ न० पैसे का साहित्य बिका।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८६१३ इस अंक की छपी प्रतियाँ ८६१३ एक अंक १३ नये पैसे।

JUL 1962

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | २० जुलाई '६२ | वर्ष ८ : अंक ४२

हम जोड़ने वाले हैं, लेकिन तोड़ने वाले भी हैं

विनोबा

एक तो यह कि हम तोड़ने वाले नहीं हैं, जोड़ने वाले हैं। दूसरे, बात हम तोड़ने वाले हैं। ये दो बातें ठीक से समझ लीजिये। हम सबके हृदय को जोड़ने वाले हैं और मानवों को तोड़ने वाली जो दीवारें हैं, उन्हें हम तोड़ने वाले हैं। हम तोड़ने वाली चीजों को तोड़ने वाले हैं, इसीलिए जोड़ने वाले हैं।

[अजमेर के सर्वोदय-सम्मेलन (फरवरी १९५९) में महिलाओं को सम्बोधित करते हुए विनोबा ने कहा था : "लोकतंत्र में विरोधी पक्ष आवश्यक माना जाता है, ताकि वह सत्ता-प्राप्त दल को अनियंत्रित होने से रोक सके। मैं भी मानता हूँ कि सत्तारूढ़ पक्ष को अच्छे कामों में मदद देने, हिम्मत देने और गलत कामों से रोकने के लिए दूसरे पक्ष की जरूरत होती है। परन्तु जब दोनों पक्ष सत्ताभिलाषी हों, सत्ता के आस-पास ही दोनों का नृत्य चल रहा हो, तो एक-दूसरे को ठीक करने के बजाय, एक-दूसरे के गुणों को ही चूस लेते हैं। इसलिए प्रजातंत्र की पूर्ण शुद्धि सत्ताभिलाषी विरोधी पक्ष से नहीं हो सकती। उसके लिए तो तीसरे ही पक्ष की जरूरत होगी, जो तटस्थ रह कर रचनात्मक दृष्टि से टीका करने के साथ निष्पक्ष भाव से सेवा करता रहे। बापू ऐसा ही पक्षमुक्त समाज बनाना चाहते थे। उनकी यह प्रबल इच्छा थी कि कांग्रेस का रूपांतर लोक-सेवक संघ में हो जाय और वह चुनाव से दूर रह कर सभी पक्षों पर असर डालने में सक्षम बने। लेकिन वैसा न हो सका। ... मैंने बहनों से कहा है कि आप लोग गांधीजी का लोकसेवक संघ बनायें और कहें कि हमें पक्षों से कोई वास्ता नहीं। स्त्री-शक्ति संरक्षक शक्ति है, वह समाज को टुकड़े करने वाली नहीं है।"

करीब साढ़े तीन बरस पहले बोया हुआ बीज अब सुदूर आसाम में अंकुरित हुआ है। अभी इसी महीने के आरंभ में [illegible] "अखिल लोकसेवक संघ" [illegible] जो महत्त्व- [illegible] गांधीजी की [illegible] और लोक-सेवकों के लिए मननीय हैं। —सं०]

आप लोगों ने आज जो यह लोकसेवक संघ बनाया है, उससे मुझे संतोष है। कुछ बातें स्पष्टीकरण के लिए कहनी हैं। पहली बात तो यह कि यह जो संघ बना है, वह किसी जमात, जाति या पार्टी से संबंध तोड़ने के लिए नहीं बना है। वह सबके साथ संबंध जोड़ने के लिए बना है। जो मणि होते हैं, उनको जोड़ने वाला एक धागा होता है। धागा मणि नहीं बन सकता है, वह धागा ही रहता है। एक पार्टी से भिन्न जब अलग कोई पार्टी बनती है, तो वह अलग मणि बनती है, लेकिन यहाँ जो बन रहा है वह सबके अन्दर समा सकने वाला एक धागा है; इसलिए सबको तरफ मानव की निगाह से ही देखना है और सबका प्रेम हासिल करना है। इसमें जो दाखिल हुआ वह तो इसका है ही, लेकिन जो नहीं दाखिल हुआ वह भी इसका है। यह समझने की जरूरत है कि जितने भी मानव हैं, वे सब इसके साथ जुड़े हुए हैं। वे भले ही इसके अन्दर दाखिल न हुए हों, तो भी वे इससे अलग हैं, ऐसा यह 'लोकसेवक संघ' नहीं मानेगा।

दूसरी बात यह कि आज जिस अर्थ में किसी संस्था को नानपोलीटिकल—अराजनीतिक—कहते हैं, उस अर्थ में यह संघ अराजनीतिक नहीं है; जैसे कोई अस्पताल अराजनीतिक होता है, उसका एकमात्र उद्देश्य है—बीमारों की सेवा। हमारा उद्देश्य केवल सेवा नहीं है। आज जो राजनीति चल रही है, उस सबको तोड़ने का काम हमारा है। इस अर्थ में यह बहुत ही खतरनाक चीज बनी है। यह संघ सब व्यक्तियों का मित्र है, लेकिन सब पक्षों का शत्रु है। यह समझने की जरूरत है कि इसका मैत्रीभाव अत्यंत व्यापक है, लेकिन यह विचार चलेगा तो पावर पालिटिक्स—सत्ता की राजनीति खत्म होगी।

मैंने कई दफा कहा है कि विज्ञान-युग में धर्म, पंथ और राजनीति नहीं रहेगी। विज्ञान और आध्यात्मिकता रहेगी। हमें कहने में खुशी है कि इस विचार को, हमारे नेताओं ने जो कि पार्टियों में हैं, एक विचार के तौर पर मान्य किया है। अब विचार मान्य करके परिस्थितिवश कोई दूसरी चीज वे कर रहे हैं, तो उस परिस्थिति को ही तोड़ना चाहिए और ऐसी परिस्थिति पैदा करनी चाहिए, जिससे *राजनीति खत्म हो जाय और मानव-मात्र एक होकर रहे,* यह इस संघ का उद्देश्य है। अस्पताल का उद्देश्य है बीमारों की सेवा, उसके अलावा और कुछ नहीं। उसने राजनीति से कोई संबंध नहीं रखा है। हमारे संघ का भी राजनीतिक पक्षों से कोई संबंध नहीं है। *इस एक अर्थ में हम अस्पताल की बराबरी के हैं,* लेकिन हमारे संघ का उद्देश्य ही है कि सब पार्टियों को तोड़ना। इसलिए यह भी व्यापक अर्थ में एक राजनीतिक विचार हो जाता है। राजनीति का एक संकीर्ण अर्थ होता है और दूसरा, व्यापक। संकीर्ण अर्थ में जो राजनीति है, वह दलीय राजनीति और सत्ता की राजनीति है, जिसकी बुनियाद हिंसा है। हमारा न तो सत्ता में भरोसा है और न दलीय राजनीति में। दुनिया में दलीय राजनीति और सत्ता की राजनीति चलती है और उनके बचाव के लिए सेना रखी जाती है, उसके लिए कर, दण्डनीति आदि सब चलती है। इस सबको तोड़ने वाली चीज हम बनाना चाहते हैं।

यह सवाल उठाया जा सकता है कि ऐसे छोटे-से उपक्रम में यह ताकत कहाँ से आयेगी? बात ऐसी है कि जहाँ बड़े-बड़े पत्थर डूब जाते हैं, वहाँ छोटा-सा कद्दू तैर जाता है, क्योंकि वह हल्का है। उसमें कोई अहंकार भरा हुआ नहीं है। वह ठोस नहीं है, इसलिए तैर जायेगा। जो युग प्रवाह के लिए अनुकूल वस्तु होती है, वह छोटी-सी चीज होती है तो भी चल जाती है और जो युगप्रवाह के लिए प्रतिकूल चीज होती है, वह भारी हो तो भी टिकती नहीं है। आज जो सत्ता की राजनीति और दलीय राजनीति जोर कर रही है, उसे हम बिल्कुल मृग-जल समझ रहे हैं। गीता में भगवान् ने अर्जुन से कहा है कि 'अरे, ये सारे कौरव मर चुके हैं, तू केवल निमित्त मात्र बन, यह ऐसे ही मर जायेंगे।' उसी तरह हम समझते हैं कि यह सत्ता की राजनीति, दलीय राजनीति और उसके पीछे की हिंसा की सम्मति (सैंक्शन), सब मर चुकी हैं। उसे मारने के लिए छोटा-सा लोकसेवक संघ बना तो भी वह समर्थ हो सकता है। यह जो श्रद्धा है वह इसमें होनी चाहिए, तब ताकत आयेगी।

इस तरह मैंने दो बातें कही हैं—एक तो यह कि हम तोड़ने वाले नहीं हैं, जोड़ने वाले हैं। दूसरी बात

एक विशेष काम की जिम्मेवारी भी स्त्रियों पर आयी है, वह यह कि वे पुरुषों द्वारा बिगाड़े हुए काम सुधारें। पुरुषों के हाथ से दुनिया भर की व्यवस्था होने से दो-दो महायुद्ध हो गये। अब वे समत्व के नाम पर स्त्रियों को भी सेना में भरती करने लगे हैं। यूरोप में स्त्रियों की पलटनें बनी हैं। अब वहाँ स्त्रियाँ भी बन्दूकें लेकर 'लेफ्ट-राइट', 'लेफ्ट-राइट' करती हैं। इन दिनों पुरुषों ने दुनिया भर में जो 'पार्टी पालीटिक्स'—दलगत राजनीति—शुरू कर दी है, वह कितनी दोषपूर्ण है? हर जगह छेद-ही-छेद, टुकड़े-ही-टुकड़े हो रहे हैं। इन टुकड़ों को जोड़ने का काम स्त्रियों को करना है। पहले तो कपड़ा फटे ही नहीं, तथा फट ही जाय, तो उसे सी देने का काम स्त्रियों को करना है। [अजमेर, २८-२-५९]

यह सही कि हम तोड़ने वाले हैं। ये दो बातें ठीक से समझ लीजिए। हम सबके हृदय को जोड़ने वाले हैं और मानवों को तोड़ने वाली जो दीवारें हैं, उन्हें हम तोड़ने वाले हैं। हम तोड़ने वाली चीज को तोड़ने वाले हैं, इसीलिए जोड़ने वाले हैं।

मेरा खयाल है कि ये दो बातें मिल कर आपके सामने पूरी चीज आ जाती है। इस छोटे-से काम के लिए आप पर जिम्मेवारी क्या आती है, इसको समझ लीजिए। आप पर जिम्मेवारी यह आती है कि सत्य, प्रेम, करुणा इन वस्तुओं से हमारा जीवन भरा हो। हमारे जीवन में, वाणी में, वृत्ति में, चिंतन पद्धति में सत्य, प्रेम, करुणा होनी चाहिए। तब एक छोटी-सी चीज शक्तिशाली बनती है। राजनीतिक पक्षों को मोह होता है कि सत्ता के जरिए सेवा की जाय। सत्ता के जरिए भी काफी सेवा होती है, इसका हम इन्कार नहीं करते हैं। हम यह जानते हैं कि सेवा करने के लिए ही तो सत्ता बनी है। सत्तारूढ़ व्यक्तियों को लोगों के वोट हासिल हुए हैं; करोड़ों रुपयों का टैक्स मिला है, जीवन के सब अंगों की सेवा करने का मौका मिला है। इतना सब होते हुए, सब मान्य करते हुए भी, हम समझाना चाहते हैं कि यह मृगजल है। यहाँ पर अस्पताल बनाये जाते हैं और दावा किया जाता है कि हमारे पंचवर्षीय योजना में इतने अस्पताल खोले जायेंगे! लेकिन आप रूस और अमेरिका में जाकर देखिए कि वहाँ पर कितने अस्पताल खुले हुए हैं! आपके यहाँ के अस्पताल देखने के लिए कोई मनुष्य बाहर से आकर लेख नहीं लिखेगा कि हम गौहाटी गये थे और वहाँ का अस्पताल देखा। यह नहीं कहा जायगा कि भारत में एक नयी चीज बन रही है, बीमारों की सेवा के लिए अस्पताल बन रहे हैं, एक अद्भुत वस्तु हो रही है, ऐसा क्या कोई बाहर वाला लिखेगा? उन्होंने जो अस्पताल बनाये हैं, उनके सामने हमारे अस्पतालों की कोई कीमत नहीं है। आज कहा जाता है कि उत्पादन बढ़ाओ। मान लीजिए कि हमने उत्पादन बढ़ाया। लेकिन रूस और अमेरिका ने कितना उत्पादन बढ़ाया है! क्या उसके साथ हमारे देश की कोई तुलना हो सकेगी? इसलिए हमें समझना चाहिए कि ये सारी चीजें तो दुनिया भर में हो ही रही हैं। हम इसमें नया क्या कर रहे हैं? लेकिन आज दुनिया भयग्रस्त है। उस भयग्रस्तता से मुक्ति दिलाने की शक्ति न यहाँ के अस्पतालों में है, न रूस और अमेरिका के अस्पतालों में। वह शक्ति न यहाँ के अन्न-उत्पादन बढ़ाने में और न रूस तथा अमेरिका के अन्न-उत्पादन बढ़ाने में है।

इधर ग्रामदान हो रहे हैं तो दुनिया भर के लोग देखने आते हैं और देख कर लेख लिखते हैं, ग्रन्थ भी लिखते हैं। यह जो काम हो रहा है, वह बहुत बड़ा नहीं है। लेकिन बहुत बड़ा न हो तो क्या हुआ, वह अग्नि का स्फुलिंग है और दूसरी ओर बहुत बड़ा पहाड़ है, कपास का ढेर है। इस छोटे से अग्नि-कण में यह शक्ति है कि वह कपास के पहाड़ को जला सकता है। इसीलिए अग्नि देवता माना गया और वह कपास का ढेर जड़ पदार्थ माना गया। यहाँ पर जो ग्रामदान का काम चला है, उसने दुनिया का ध्यान इसलिए खींचा कि दुनिया के मसले हल करने का एक तरीका इसमें निकला है, करुणामूलक परस्पर सहयोगमूलक-स्वामित्वविसर्जन का यह प्रयोग है। दुनिया में आज तक स्वामित्व विसर्जन कत्ल से हुआ है। कत्ल के बाद कानून आता है। लेकिन यहाँ न कत्ल है, न कानून। यहाँ पर लोगों को समझाया जाता है और वे मालकियत का विसर्जन करते हैं। कोई कह सकते हैं कि ग्रामदान करने वाले किसी गाँव के लोग बेवकूफ हो सकते हैं। लेकिन जब पूरे भारत में इतने सारे गाँव ग्रामदान हुए तो इन गाँवों के लोग बेवकूफ कैसे हो सकते हैं? दो-चार गाँव में मूर्खता हो सकती है, लेकिन सारे भारत के लोग मूर्ख कैसे हो सकते हैं? यह आंदोलन सारे भारत में चला तो मूर्खता के आधार पर नहीं चला। इसमें कुछ नया विचार है, इसीलिए यह दुनिया को खींचता है।

यह सब मैंने आपके सामने इसलिए रखा कि चीज छोटी हो, लेकिन उसमें चेतन अंश हो और दूसरी ओर बहुत बड़ा ढेर हो, लेकिन जड़ है, तो वह छोटी चीज ही बड़ी है। इतना बड़ा हिमालय पहाड़ है और एक छोटी-सी चेतन वस्तु, इन दोनों में कितना अन्तर है! स्वामी विवेकानंद ने एक दृष्टांत दिया है कि रेल की पटरी पर एक बड़ा इंजिन दौड़ रहा है, उस पर एक छोटी सी चींटी जा रही है। इंजिन को आते देख कर वह चींटी झट नीचे उतर गयी। इतना बड़ा इंजिन ऊपर से चला गया, लेकिन वह चींटी का कुछ नहीं कर सका, यद्यपि वह बड़ा था, लेकिन जड़ था और चींटी छोटी थी, लेकिन चेतन थी। यह विचार है, जिससे आप और हम अभी प्रेरित हो रहे हैं, वह अभी छोटा विचार है लेकिन चेतन है, और दूसरे बहुत बड़े विशाल विचार हैं, लेकिन वे अचेतन जड़ राशि के समान हैं।

हमारा यह विचार छोटा है, लेकिन युग-प्रवाह के अनुकूल है, इसलिए वह टिकेगा।

[पड़ाव : मोमान, जि० कामरूप, ता० ४-७-'६२]

शान्ति-यात्रियों की डायरी

पाकिस्तान में प्रवेश

ई० पी० मेनन : सतीशकुमार

[गत ६ जुलाई के 'भूदान-यज्ञ' के अंक में दिल्ली से प्रारम्भ होने वाली अन्तर्राष्ट्रीय शांति-पदयात्रा के हिंदुस्तान के हिस्से का वर्णन दिया गया था। अब ये यात्री पाकिस्तान में हैं। वहाँ से भेजी गयी यह चिट्ठी हम प्रकाशित कर रहे हैं। —सं०]

हमने ता० ३ जुलाई को हिन्द-सीमा पार की। हिन्द-सीमा छोड़ने के समय अमृतसर से एक विशेष बस का प्रबंध करके करीब ३५ आदमी हमें सीमा से विदा करने आये थे। पाक सीमा में दाखिल होने के बाद हमारा क्या प्रबंध होगा, यह कोई *नहीं जानता था। हमारा परिचित या जान-पहचान का भी कोई आदमी पाक-सीमा* में या पाकिस्तान में नहीं था। इसलिए सब लोग बहुत चिन्ता कर रहे थे।

अमृतसर से आने वालों में करीब पंद्रह-बीस बहनें थीं। जैसे, किसी जमाने में माताएँ, बहनें और पत्नियाँ अपने पुत्रों, भाइयों तथा पतियों को तिलक लगा कर युद्ध-भूमि में प्रस्थान करने के लिए विदा किया करती थीं, करीब-करीब वही दृश्य हमारे सामने उपस्थित था। बूढ़ी माताएँ और युवा बहनें मंगल गीत गा रही थीं। तिलक लगाया, मालाओं से लाद दिया, आरती की, मुँह में मिश्री और इलायची खिलाई, पीठ थप-थपा कर आशीर्वाद दिया और बहनों की ओर से *कहा गया कि*—

> "हम आपको युद्ध के लिए नहीं, बल्कि युद्ध बंद कराने के लिए विदा कर रही हैं, आशीर्वाद दे रही हैं। आप केनेडी और ख्रुश्चेव से कह दें कि हिन्दुस्तान की माताएं अणु-बमों के विरुद्ध हैं, युद्ध के विरुद्ध हैं और आणविक प्रयोगों के विरुद्ध हैं। जब हमारे पेट में संतानें होती हैं, तो हम अपनी संतानों के बारे में सुन्दर सपने संजोती हैं कि हमारे बच्चे सुन्दर हों, बुद्धिमान हों, बलवान हों और देश की उन्नति में सहायक हों। पर ये आणविक हथियारों के प्रयोग हमारे सपनों को चूर-चूर कर देते हैं! इन प्रयोगों से हमारी संतानों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। वैज्ञानिकों ने बताया है कि रेडियो-धूलि से प्रभावित माताओं की संतानें लूली, लंगड़ी, अपाहिज, बीमार, पागल, अंधी और बेकाम की पैदा होंगी। वैज्ञानिकों की इस घोषणा ने हमारे हृदय में कंपन पैदा कर दिया है। *हम गांधी और विनोबा के देश की* माताएँ इन अणु-शस्त्रों के खिलाफ जबरदस्त आंदोलन छेड़ेंगी, अगर ये बंद न किये गये।"

हिन्द-सीमा की जो सफेद लाइन है, उससे आगे बिना 'पासपोर्ट' के कोई नहीं जा सकता। अतः उस लाइन तक सब पहुँचाने आये। हम दोनों साथी तो लाइन से आगे बढ़े, बाकी सब वहीं रुक गये। हम दोनों आगे बढ़े जा रहे थे। बाकी सब लोग आँखों में आँसू भरे, हृदय में प्यार लिये और वाणी में आशीर्वाद के साथ हमें विदा कर रहे थे। हम ज्यों-ज्यों आगे बढ़ते गये, त्यों-त्यों "जय जगत्" का मंत्र तीव्र होता गया। सभी लोग ऊपर हाथ हिला कर हमारे लिए दुआ मांग रहे थे। जब तक हम दिखाई दे रहे थे, तब तक खड़े रहे, बाद में गये।

हमें हिन्द-पाक सरकार से 'वीसा-*पासपोर्ट' मिलने में कोई दिक्कत नहीं* हुई। पहले कुछ साथियों को ऐसा लगता था कि शायद दिक्कत होगी, पर वैसा नहीं हुआ। सीमा पर भी दोनों तरफ के अधिकारियों का व्यवहार बहुत अच्छा था। जब हम पाक-सीमा में आये, तो अचानक हमारा इंतजार करते हुए एक *भाई हमें मिले। उन्हें लुधियाना* के एक भाई ने पत्र दिया था कि हम ३ जुलाई को पैदल पाक-सीमा में आ रहे हैं। वे हमारा स्वागत करने आये। पहले ही दिन हम लाहौर पहुँच गये। ये भाई, जिनका नाम गुलाम अमीन था, बहुत दिलचस्प भाई थे। हम दो दिन लाहौर रहे। हमें *कोई दिक्कत नहीं आयी। लाहौर* में करीब ५०-६० लोगों से संपर्क हुआ, अखबारवालों से भी। पहले भी यहाँ के अखबारों ने हमारे समाचार तथा फोटो छापे हैं। 'पाकिस्तान टाइम्स' में समाचार हमने देखा। दूसरे उर्दू व अंग्रेजी पत्रों में भी समाचार आये होंगे। हमने पाकिस्तान में बाँटने के लिए उर्दू में 'पैम्फलेट' छपवाये हैं—"हमारा सफर क्यों?"—जिनमें हमने निःशस्त्रीकरण के बारे में तुरंत कदम उठाने की अपील की है और जनता को एटमी हथियारों के *खिलाफ आवाज बुलंद* करने के लिए तैयार हो जाने को कहा है। हमें सभी जगह कश्मीर-प्रश्न पर अनेक सवाल पूछते हैं। जहाँ-जहाँ गये, यह सवाल जरूर आया। पर हम इस बारे में साफ कहते हैं कि यह मसला हमारे कुछ करने से नहीं सुलझेगा, यह तो दोनों सरकारों का राजनैतिक प्रश्न है। हम भारत की नुमाइन्दगी करने नहीं आये हैं। हमारा नारा *'जय हिन्द'* का नहीं, *'जय जगत्'* का है। हम विश्व-नागरिक के नाते एटमी हथियारों का विरोध करते हैं।

वर्तमान कार्यक्रम के अनुसार करीब २० जुलाई को रावलपिंडी पहुँचेंगे। प्रेसिडेंट अयूबखाँ से मिलने की कोशिश करेंगे। हमारे पास एक महीने का 'वीसा' है। अतः हमें २ अगस्त तक अफगानिस्तान में दाखिल होना है। अफगान-वीसा भी हमें मिल गया है।

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

गांधीजी की राजनीति

गांधीजी ने राजनीति में हिस्सा लिया, वह अिसलिअे कि आजादी हासिल करनी थी। अपने शास्त्र में लिखा है— 'स्वतंत्र कर्ता।' जो स्वतंत्र नहीं है, वह कर्ता नहीं हो सकता। गांधीजी राजनीति के पक्षपाती थे, अैसा अगर कोअी कहते हैं, तो अुनके आखिरी दो चीजें देखिये। स्वराज्य के बाद दिल्ली की सत्ता लेने से अुनको कौन रोकता? बैरिस्टर जिन्ना ने अपने हाथ में सत्ता रखी, वैसे बापू चाहते तो सत्ता ले लेते, लेकिन वे गरीबों की सेवा में नोआखाली में चले गये। अिधर स्वतंत्रता का अुत्सव चल रहा था, अुधर अुनका अुपवास चल रहा था। बापू ने जिस राजनीति में हिस्सा लिया था, वह कौनसी राजनीति थी? अुस जमाने में कांग्रेस का 'चवन्नीया मेम्बर' बनाना यानी वाजिब सत्ता का विरोध हासिल करना था, आज कांग्रेस का मेम्बर बनाना तो कुछ खोना नहीं है, बल्कि पाना ही है। अुस समय अुसमें त्याग था, तकलीफ थी। जिस वास्ते बाबा से जब पूछते हैं कि राजनीति को निर्मल रूप (स्पीरीच्युअलाअीज) करने की कोशिश क्यों नहीं करते हैं, तो मैं कहता हूं कि मैं अुस चीज को खतम ही करना चाहता हूं। अुसे खतम करना ही है— सर्वोदय के ढंग से या अुग्र के ढंग से।

[हनुमना, म० प्र०
३ दिसम्बर '६१] —विनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

विनोबाजी के सान्निध्य में आश्रम-गोष्ठी

असम के कामरूप जिले में विनोबाजी के पड़ावों पर गत २९ जून से ४ जुलाई तक विचार-गोष्ठी आयोजित की गयी थी, जिसका उद्देश्य आश्रमों के कार्य के विषय में पारस्परिक वैचारिक आदान प्रदान हो, आश्रमों के भावी कार्य के लिए विनोबाजी का मार्गदर्शन मिले और आश्रम योजना से संबंधित सामूहिक तथा सामाजिक जीवन विषयक प्रश्नों पर भी चर्चा करना था।

इसमें आठ आश्रमों ने भाग लिया था। निसर्गोपचार आश्रम, उरली, जि० पूना; श्रमभारती, खादीग्राम एवं सर्वोदय आश्रम, सोखोदेवरा के आश्रमवासी कठिनाइयों के कारण वहाँ नहीं आ सके। ये आश्रम संस्थाएँ उपस्थित थीं : (१) विश्वनीडम्, बंगलोर; (२) ब्रह्मविद्या मंदिर, परधाम, पवनार, वर्धा; (३) विसर्जन आश्रम, इंदौर; (४) समन्वय आश्रम; बोधगया; (५) प्रस्थान आश्रम, पठानकोट; (६) मैत्री आश्रम, सादिया, जि० लखीमपुर, असम; (७) जंगम ब्रह्मविद्या मंदिर, (विनोबा पदयात्री दल) असम और (८) सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा, बिहार।

'विश्वनीडम्' से श्री वल्लभस्वामी, श्री गुंडाचारी एवं चार आश्रमवासी; ब्रह्मविद्या मंदिर से श्री सुशीला बहन, उषा बहन आदि पाँच बहनें; विसर्जन आश्रम से श्री दादाभाई नाईक; समन्वय आश्रम से श्री द्वारकोजी सुन्दरानी, प्रस्थान आश्रम से श्री सत्यम् भाई; मैत्री आश्रम से श्री अमल प्रभा दास, गुणदा बरुआ, कुसुम देशपाण्डे आदि ७ बहनें; सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा से श्री वैद्यनाथ बाबू चौधरी, निवेश्वरी प्रसाद और दो आश्रमवासी आये थे। जंगम ब्रह्मविद्या मंदिर के सभी भाई-बहन विचार-गोष्ठी में सम्मिलित थे।

इसके अतिरिक्त सर्वश्री अप्पासाहब पटवर्धन, निर्मलाताई देशपाण्डे, कृष्णराज मेहता, समन्वय तीर्थ, उरण, बिला थाना के बद्रीनारायणजी गाडोदिया, मराठवाडा के मोतीलालजी मंत्री, कौसानी आश्रम की श्री शुतिबहन एवं श्री कमलाबहन भी इस विचार गोष्ठी में सम्मिलित थीं। पाँच दिन दो बैठकें विनोबाजी की उपस्थिति में और एक बैठक अलग, इस प्रकार कुल बाईस घंटे बैठक का कार्यक्रम रहा। इसके अतिरिक्त विनोबाजी ने प्रातः एक घंटा बैठक तात्विक विषयों के स्वाध्याय की दृष्टि से, आश्रमवासियों के लिए दिया था। इन विषयों पर जो गहन चर्चाएँ हुईं, उसकी एक पुस्तिका शीघ्र ही प्रकाशित होगी। उसमें आश्रम जीवन विषयक मूलतत्त्व तथा वहाँ होने वाले कार्य के विषय में जानकारी होगी।

गोष्ठी में चर्चा के विषय निम्न प्रकार थे : (१) आश्रम कार्य की बुनियाद, (२) प्रक्रिया, (३) आर्थिक आधार, (४) निष्ठाएँ, (५) नियम, (६) दिनक्रम, दिनचर्या (७) सहजीवन, संयोजन; (८) अन्योन्य संबंध, (९) प्रश्नों तथा आशंकाओं का समाधान, (१०) आश्रमों के कार्य की संक्षिप्त जानकारी, (११) कार्य का प्रवेश-पथ (अप्रोच) (१२) स्वाध्याय, (१३) कार्यकर्ता-प्रशिक्षण, (१४) आश्रमों का भूदान आदि आन्दोलनों से संबंध, (१५) आश्रमों का सर्व सेवा संघ एवं उसकी प्रवृत्तियों से संबंध, (१६) प्रार्थना एवं आहार के विषय में दृष्टि आदि।

विनोबाजी से प्रश्न पूछे गये, उनमें से कुछ इस प्रकार थे :—

(१) आधुनिक सामाजिक प्रेरणाएँ एवं आश्रमी जीवन साधना का पारस्परिक संघात।

(२) सामूहिक परिवार—'कम्युनिटी' जीवन—के प्रयोग, जो करने हैं, जिनके कारण आज युग के अनुकूल परिवार एवं परिवार भावना बनेगी, समाज में नये मूल्य बढ़ेंगे, कर्मज्ञान-भक्ति का अभेद या समवाय सधेगा और स्वदेशी धर्म के अनुसार वहाँ इर्दगिर्द के क्षेत्र की सेवा होगी, वे प्रयोग आश्रमों के सीमित तथा सुरक्षित वर्तुल में करने के बजाय सीधे समाज में रह कर समाज के स्तर पर ही क्यों न किये जायँ?

(३) आश्रमों में आश्रमवासियों की श्रद्धा किसी एक विशेष मनुष्य पर होती है, (जैसे कि मानो गुरु पर हुआ करती है) और उसी श्रद्धा पर आश्रमवासियों की जीवन साधना हुआ करती है, यह 'गुरुत्व' सामूहिक नेतृत्व के अनुसार आश्रमवासियों में परस्पर प्रेम तथा प्रयत्न से क्यों न हो? कोई विशेष श्रद्धेय व्यक्ति (आश्रम प्रमुख) हो या न हो, तो भी सब आश्रमवासियों के परस्पर प्रयत्न से पारस्परिक श्रद्धा का निर्माण होकर उसी पर आश्रम क्यों न चलें? आश्रम के लिए विशेष श्रद्धेय व्यक्ति की आवश्यकता क्यों होती है?

(४) यदि कोई ऐसा विशेष श्रद्धेय व्यक्ति न हो, तो आश्रमों की स्थिति परिवारों के जैसी, परिवार के दोषों से युक्त हो जाती है, ऐसा कहीं-कहीं अनुभव आता है, यह क्यों?

(५) आश्रमों में नियमों से नियमन होता है, पर उसमें सहजता नहीं होती, ऐसा कहीं-कहीं दीख पड़ता है, इसका क्या उपाय है?

(६) आश्रम आन्दोलन के कार्यकर्ताओं के लिए मैत्री-स्थान तथा विश्राम-स्थान बनना चाहिए, ऐसी अपेक्षा है। हमारे आश्रमों में से कितने आश्रम इस अपेक्षा की पूर्ति कर सके हैं?

(७) आश्रम स्वाश्रित, संचालक आश्रित, संस्था-आश्रित तथा कभी-कभी पराश्रित भी होते हैं। क्या आश्रमों को केवल स्वाश्रित ही नहीं रहना चाहिए? आश्रम के लिए किस प्रकार आर्थिक एवं अन्य आधार प्राप्त किये जायें?

(८) आश्रमवासियों का निश्चित एवं सहूलियत का जीवन, जीवन की चिंताओं से ग्रस्त होने वाले लोगों के लिए ईर्ष्या और मत्सर का विषय हो जाता है, ऐसी स्थिति में हम क्या करें?

(९) जन-सेवा के विषय में आश्रमवासियों की और विशेषतः जनता की अपेक्षाएँ बहुत बढ़ी हुई होती हैं, उस अनुपात में सेवा कम हो पाती है, जिससे आश्रमवासियों में कुछ और कार्य-क्षेत्र में बहुत ही असमाधान फैलता है, इसका उपाय क्या है?

(१०) कभी-कभी उत्पादन की अपेक्षा व्यय ही अधिक होता है। नये प्रवेशार्थी आदि के कारण कुछ व्यर्थ हानि, अपव्यय और खराबी भी होती है, और फिर वह टीकाओं का विषय हो जाता है, इसमें कैसे सुधार किया जाय?

(११) निष्ठा निर्माण, नवमूल्य-साधना, जीवन शिक्षण, संस्कार प्राप्ति, क्षेत्रीय सेवा तथा वैयक्तिक एवं क्षेत्रीय चित्त-शुद्धि के वाहन बनने वाले इन आश्रमों में आने वाले प्रवेशार्थियों का प्रशिक्षण होना आवश्यक है। उसकी आत्माधारित योजना किस प्रकार हो?

ये तथा ऐसे ही अन्य प्रश्नों के विषय में पारस्परिक चर्चा कर तथा विनोबाजी से जानकारी प्राप्त कर अपने आगामी कार्यक्रम की रूपरेखा आश्रमवासियों ने बनायी और अपने-अपने आश्रमों को प्रस्थान किया।

[अच्युत देशपाण्डे के सौजन्य से]

स्वच्छ लोग : अस्वच्छ देश : १ :

ना० र० मलकानी

बम्बई सरकार के पिछड़े वर्ग-बोर्ड ने १९४९ में बम्बई राज्य के भंगियों की जीवन-दशा की जाँच करने के लिये स्व० वि० न० बर्वे की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्त की थी। उस कमेटी ने एक विस्तृत रिपोर्ट तैयार की, जिसमें भंगियों की जीवन-दशा और कार्य स्थिति, दोनों की जाँच की गयी थी। यह रिपोर्ट '५२ में पेश की गयी थी और २४ सितम्बर, '५५ को केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने समस्त राज्यों को इस कमेटी की महत्त्वपूर्ण सिफारिशों का सार भेजा, "क्योंकि उन्हें व्यापक तौर पर लागू किया जा सकता है और सब राज्य उन्हें लागू कर लाभान्वित हो सकते हैं।"

सन् '५६ में 'पिछड़े वर्ग आयोग' ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि "भंगियों की दशा अत्यन्त शोचनीय है और हमारी समझ से इस अभागे तबके की स्थिति में सुधार लाने की सख्त जरूरत है।" और इस बार गृहमंत्रालय ने २० अक्टूबर '५६ को एक परिपत्र निकाल कर इस रिपोर्ट के भाग १, अध्याय ४ की ओर, जिसका सम्बन्ध भंगियों से था, राज्यों का ध्यान खींचा था। इस परिपत्र में सुझाव दिया गया था कि "पाखाने की सफाई के यांत्रिक तथा आधुनिक तरीकों को दाखिल करना चाहिये और इस काम को हाथ से करने तथा पाखाने को सिर पर ढोने के अमानवीय रिवाज को, जहाँ तक हो सके, बन्द करना चाहिये।"

२२ दिसंबर, '५६ को दूसरा परिपत्र भेजा गया, जिसमें यह सुझाव दिया गया था कि "इस काम को मानव के गौरव के अनुरूप बनाने के लिये पहले कदम के तौर पर नगरपालिकाओं के प्रत्येक रुपये को हाथगाड़ी दी जाय।" गृह-मन्त्रालय ने स्थानीय संस्थाओं को सहायता देने का प्रस्ताव किया, बशर्ते कि ५० प्रतिशत खर्चा वे खुद उठायें और यह रिवाज पूर्णतया खत्म कर दिया जाय। इस योजना को कार्यान्वित करने में कितना खर्च होगा, इसका अन्दाजा लगाने के लिए गृह-मंत्रालय ने प्रत्येक राज्य में नगरपालिकाओं की संख्या, भंगियों की संख्या, ऐसी नगरपालिकाओं की संख्या, जो ५० प्रतिशत खर्चा और पहियागाड़ियों की लागत उठाने को तैयार हों सम्बन्धी आँकड़े माँगे। परन्तु जो जवाब आये वे सन्तोषजनक न थे और जहाँ अनुदान दिये गये, उन्हें खर्च नहीं किया गया। १२ अक्टूबर, '५७ को हरिजन कल्याण के केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड, गृह-मन्त्रालय ने यह सुझाव पेश किया कि पाँच सदस्यों की एक उपसमिति नियुक्त की जाय, जो राज्यों में घूम कर "पाखाने को टोकरी या बाल्टियों में डाल कर सिर पर ले जाने के रिवाज को समाप्त करने की एक योजना पेश करें।" मैं उस उपसमिति का अध्यक्ष था। इस समिति ने दिसम्बर, '६० के अन्तिम सप्ताह में गृहमंत्री को अपनी रिपोर्ट पेश की।

उक्त उपसमिति ने आसाम और काश्मीर के सिवा सब राज्यों का दौरा किया, क्योंकि पाखाना सफाई का काम मुख्यतया शहरों में होता है, इसलिए हरएक राज्य के ८ नगरों में यह कमेटी गयी। यद्यपि निर्देश-पत्रानुसार कमेटी को पाखाना सिर पर ढोने को बन्द करने की एक योजना तैयार करनी थी, तथापि इसने पाया कि पाखाना-सफाई में कई ऐसे काम करने होते हैं, जिनमें भंगी को पाखाने में हाथ या शरीर का कोई अन्य अंग लगाना पड़ता है और इसलिए उसने पाखाना सफाई की प्रत्येक प्रक्रिया के बारे में ऐसी सिफारिशें की, जिनसे भंगी का पाखाने के साथ शारीरिक सम्पर्क कम हो या बिल्कुल खत्म हो जाय। इसलिए इसने पहले पाखाने-निजी और सार्वजनिक, दोनों प्रकार के लिये। करीब-करीब हर राज्य में सूखे पाखाने होते हैं, जिनमें भंगी को पीछे से तंग और साधारणतया गन्दी गली में से होकर आना पड़ता है। ऐसे पाखानों में बैठने के लिये उठी हुई जगह होती है और पाखाना नीचे अंधेरी कोठरी में गिर जाता है। यह छोटी कोठरी सभी आकार की होती है और प्रायः कच्ची होती है। अधिकांश राज्य में पाखाने के लिये कोई बर्तन नहीं होता, और अगर होता है तो यह मालिक की मर्जी होती है-चाहे वह बर्तन रखे, या टीन रखे, गमला रखे या टोकरी रखे। बर्तन अक्सर चूआ करता है और पानी, पेशाब तथा पाखाना अधिक होने से छलकता हुआ बर्तन के ऊपर से बहता भी है। पाखाना मकान के ऐसे हिस्से में होता है, जो सबसे अधिक मैला और अन्धेरा हो, जहाँ न रोशनी होती है, न हवा। मालिक को यह कभी मालूम नहीं होता कि मेहतर ने पाखाना वस्तुतः साफ कर लिया है और पाखाना और बर्तनों को शायद ही कभी धोया जाता है। मैंने अनेक ऐसे स्थान देखे हैं, जहाँ मेहतर को पेट के बल चल कर बर्तन को या पाखाने को उठाना पड़ता है। हर हालत में अपना बोझ हलका करने के लिए मेहतर काफी मैला खुली नालियों में फेंक देते हैं, अगर पीछे के दरवाजे जोड़ कर गुसलों ने उसे खत्म न कर दिया हो।

मैं समझता हूं कि इस प्रकार पाखानों का चलन उन हिन्दुओं के दिमाग की खोज का फल है, जो मेहतर को अपने घर से बाहर, नजर से ओझल और मन से दूर रखना चाहते हैं। मुसलमानों ने हिन्दुओं को पाखाने का इस्तेमाल सिखाया। ऐसे पाखाने को 'खुड्डी' या पैड़ी की किस्म का पाखाना कहते हैं। ये पैड़ियाँ पाखाने की दीवारों में साथ लगी होती हैं। पाखाने में से मेहतर घर में और पैड़ियों पर जा सकता है। पैड़ियाँ अक्सर धोयी जाती हैं और पाखाने को खोल देते हैं। केरल में मुसलिम पाखाना सुधार कर 'काकुस' बना दिया गया है, जिसमें बैठने के लिए लम्बा चबूतरा होता है और पाखाने के लिए पीछे मोरी होती है—दोनों को हर रोज धोया जाता है और खोल दिया जाता है। मेरा विश्वास है कि सबसे पहले पीछे की तंग गली में दरवाजेवाले पाखानों को जिनमें मेहतर जा नहीं सकता, गिरा दिया जाना चाहिए। इस पृथ्वी पर यह छोटा-सा नरक है, जिसे हिन्दू समाज ने अपने घर में स्थान दिया है। अधिकांश हिन्दू, ऐसा लगता है कि स्थिति को समझते हैं और इसलिए घरों में कोई पाखाना नहीं रखते। उनके लिए घर में पाखाना एक विदेशी चीज है; वह उनके घरों का या जीवन का अंग नहीं है। वे तो रसोई-केन्द्रित हैं। मुसलमान अपने पाखाने को 'जाय जरूर' कहते हैं, जो बिगड़ कर गुजराती में 'जाजरू' हो गया है। हिन्दुओं ने इसे 'शौचालय' कहना शुरू किया है, पर वे जानते हैं कि उन्हीं का बनाया हुआ यह 'नरकालय' है।

मुझे लगता है कि भारत में स्वच्छता की दिशा में पहला कदम है वर्तमान 'संडासों' को गिराना और उनके स्थान पर ऐसे पाखाने बनाना, जिनमें मेहतर घर की ओर जा सके, जो आंशिक रूप में खुले हों ताकि धूप का प्रवेश हो सके, जिनके फर्श पक्के हों और जिनमें बैठक के नीचे लोहे का बर्तन हो जो धोया जा सके। धोने के लिए एक अलग बैठक और पेशाब के लिए सामने छोटी नाली होनी चाहिए। प्रत्येक मकान मालिक के लिए यह लाजमी होना चाहिए कि उसके मकान में एक अच्छा पाखाना हो। मैं तो बल्कि चाहूँगा कि मेरा मकान रसोई-केन्द्रित होने के बजाय पाखाना केन्द्रित हो और उसे 'जाय जरूर' कहना पसन्द करूंगा। पाखाने की बनावट में तथा नगरों में पाखाने बनवाने की आदत में इस बुनियादी तब्दीली के बिना स्वच्छ भारत कोरी कल्पना की वस्तु ही रहेगा। स्वच्छता के प्रसार के लिए पाखानों की सफाई पहला कदम है। गांधीजी द्वारा स्थापित और दूसरे गांधी-आश्रमों की विशेषता रही है उनका पाखाना, न कि उनका रसोईघर।

प्रत्येक धंधे के, वह बौद्धिक हो या शारीरिक, अपने औजार होते हैं और उनका प्रशिक्षण होता है। मेहतर का धंधा ऐसा है जिसके औजार दादा आदम के जमाने से चले आ रहे हैं; फिर अन्य साज-सामान की तो बात ही क्या! मेहतरों के प्रशिक्षण की बात एक गन्दे विषय के बारे में मजाक सा लगता है। मेहतर को टट्टी को और दूसरे मैले को फर्श पर से, जो प्रायः कच्चा होता है, खुरचना पड़ता है। कभी-कभी बर्तन में से उठाना पड़ता है, इस काम को अच्छी तरह करने के लिए उसे किसी पतरे या 'खुरपी' की जरूरत है। परन्तु भारत की एक भी नगरपालिका उसे ऐसी कोई 'खुरपी' देती नहीं है या इस संबंध में किसी ने विचार भी नहीं किया है। कुछ स्थानों पर स्वास्थ्य अधिकारी ने मुझे एक नमूना दिखाया जो एक किस्म की कुदाली थी, जिससे खुरचने का काम नहीं हो सकता। इसलिए भंगी ठीकरा, टीन या चमड़े या रबड़ के टुकड़े या जो भी उन्हें मिल जाय, खुरचने के काम में लाते हैं। नतीजा यह होता है कि वह करीब-करीब अपने हाथ से ही साफ करता है। टट्टी खुरचने के लिए ऐसा औजार कहीं नहीं देखा गया, जिसमें दस्ता हो और आगे खुरचने के लिए लोहे का थोड़ा झुका हुआ एक पतरा लगा हो। कमेटी के प्रतीक के रूप में और नमूने के तौर पर कमेटी के अध्यक्ष के नाते मैं एक ऐसी चीज हमेशा अपने पास रखने लगा। भारत में स्वास्थ्य-अधिकारी अब तक इस तरह की कोई चीज नहीं सोच सके हैं और न कारीगरों ने ऐसी कोई चीज बनायी है। इससे मालूम होता है कि हम अपनी स्वच्छता के प्रति लापरवाह हैं। खुरचने के बाद मैले को सामान्यतया खुली बाँस की टोकरियों में सिर पर ले जाते हैं। उड़ीसा में लोहे के तसलों में डाल कर कूड़े पर रख कर ले

संसार के शायद ही किसी देश में पाखाना सिर पर उठा कर ले जाते हैं! परंतु स्वतंत्र भारत के प्रत्येक शहर में सवेरे का यह एक सामान्य दृश्य है! उसे देखने से मन में घृणा उत्पन्न होती है। इस कार्य से मनुष्य नीचे गिरता है। इन्सान के योग्य यह काम नहीं है। प्रत्येक धंधे के, वह बौद्धिक हो या शारीरिक, अपने औजार होते हैं और उनका प्रशिक्षण होता है, किन्तु मेहतर का धंधा ऐसा है, जिसके औजार दादा आदम के जमाने से चले आ रहे हैं, फिर अन्य साज-सामान की तो बात ही क्या?

जाते हैं। यद्यपि टोकरियों में गोबर लीपा हुआ होता है, तो भी प्रायः उनमें से मैला चूता रहता है; पाखाने पर राख डालते हैं तो भी यह बदबू मारता रहता है और खुला तो वह होता ही है।

संसार के शायद ही किसी देश में कोई भी चीज सिर उठा कर ले जाते हैं, पाखाना तो कभी नहीं। परन्तु स्वतंत्र भारत के प्रत्येक शहर में सबेरे का यह एक सामान्य दृश्य है। उसे देखने से मन में घृणा उत्पन्न होती है। इस कार्य से मनुष्य नीचे गिरता है। इन्सान के योग्य यह काम नहीं है। मेहतर को पाखाना-सफाई के लिए, जो सामान्यतया मेहतरानी करती है, दो छोटी ढँकी हुई बाल्टियाँ, जिनका परिमाण दो गेलन हो, अन्दर व बाहर जिनके तारकोल पुता हो, जिन्हें एक जगह से दूसरी जगह हाथ में ले जाया जा सके, आसानी से दी जा सकती हैं। सिर्फ केरल में जहाँ सिर पर पाखाना ढोना बन्द कर दिया गया है, ऐसी बाल्टियाँ देखीं। तारकोल-पुती हुई ढक्कनदार बाल्टियाँ तमाम नगरपालिकाओं को देनी चाहिए। ऐसी बाल्टियाँ अन्त में कच्ची टोकरियों से सस्ती भी पड़ेगी। अधिकांश नगरपालिकाएँ थोड़ा सा भी अधिक खर्च करना नहीं चाहतीं और पुराने ढरों को बदलना तो उनके लिए और भी मुश्किल होता है। मेहतरानी को टोकरियों या बाल्टियों को बैलगाड़ी या खत्ते तक ले जाने में १ से ८ फरलांग तक चलना पड़ता है। उन्हें हलकी, लोहे के पहिये की गाड़ियाँ आसानी से दी जा सकती हैं, जिनमें ५ गेलन परिमाण की दो बड़ी ढक्कनदार बाल्टियाँ आ सकें, जिन्हें उठाना और उँडेलना आसान हो। कमेटी ने एक ऐसी पहिये गाड़ी का सुझाव दिया है, जिसे २२५ रुपये तक की लागत से तैयार किया जा सकता है और जो ८ गेलन मैले को ले जा सकती है। थोड़ा समझाने पर पटना की मेहतरानियों ने इसका प्रयोग करना शुरू कर दिया है। १०० के करीब ऐसी गाड़ियाँ वहाँ चल रही हैं और ज्यादा की माग की गयी है। इन्दौर में १२०० पहिया-गाड़ियाँ हैं और जल्दी ही सिर पर मैला ढोने का रिवाज यहाँ खतम कर दिया जायगा। इन दो नगरपालिकाओं ने जो किया है, दूसरी नगरपालिकाएं भी केन्द्र से दिये जाने वाले ५०० से शत प्रतिशत अनुदान द्वारा ऐसा कर सकती है। यह गाड़ी ढकेलने में हलकी और काम को शीघ्र निपटा देती है।

मेरा विश्वास है कि अगर यह सुधार कार्यान्वित कर दिया जाय—इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसे किया जा सकता है, तो इसके फलस्वरूप अन्य सुधार भी अनिवार्य रूप से होंगे—जैसे, छोटी ढक्कनदार बाल्टी, मैला उठाने या खुरचने का ठीक औजार और लोहे का बर्तन। कुछ स्थानों पर मैले को खत्ते पर ले जाने से पहले एक स्थान पर इकट्ठा कर लेते हैं। थोड़े से स्थानों पर मैले को खत्ते में ले जाने से पहले उसे बड़े ढोलों में इकट्ठा करते हैं और तब बाल्टियों में भर कर उसे गाड़ियों में डालते हैं। अन्य कुछ स्थानों पर उसे पहले छोटे हौजों में इकट्ठा करते हैं और तब बाल्टियों से गाड़ियों में भरते हैं। यह बड़ा भयानक दृश्य होता है और किसी भी इन्सान के लिए यह भयावह धंधा है। खत्ते में भेजने से पहले मैला जमा करने के 'डिपो' तो सब जगह तुरन्त बन्द कर देने चाहिए। यह एक अच्छी बात है कि सब बड़ी नगरपालिकाएँ मैला ढोने के लिए बैलगाड़ियों के स्थान पर यान्त्रिक साधनों का इस्तेमाल करने का प्रयत्न कर रही हैं। बड़े शहरों में और जहाँ खत्ते दूर होते हैं, बैलगाड़ियाँ आमदरफ्त में बाधक बनती हैं और इनसे जनता को परेशानी होती है। यान्त्रिक साधनों के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था होते ही बैलगाड़ियों को छुट्टी मिल जायगी। एक ट्रेक्टर और ३ से ७ तक ट्रेलर, जिनको बारी बारी से इस्तेमाल किया जा सके, एक अच्छे साधन हैं, दूर दूर फैले और बिखरे क्षेत्रों के लिए कुछ गाड़ियाँ रखी जा सकती हैं। आखिर में खत्ता, जहाँ मैला गाड़ा जाता है, वह सूखा, निर्जन, वृक्षहीन, पानीविहीन स्थान होता है, जो केवल भंगियों के लिए होता है। दूसरा कोई आदमी उसके नजदीक नहीं जाता है। मीलों तक इसकी बदबू रहती है और आस-पड़ोस के कस्बों के लोग इसके कारण मक्खियों से तंग रहते हैं। मदुरई के सिवा और कहीं कोई खत्ता वैज्ञानिक ढंग और कायदे पर नहीं चलता है। प्रत्येक भारतीय शहर में एक-तिहाई मैला खुली नालियों में बहा दिया जाता है और दो तिहाई खत्ते में पहुँचता है, जहाँ उसका ठीक खाद तैयार नहीं किया जाता। उपर्युक्त पाखाने और यांत्रिक परिवहन से पाखाना-सफाई का काम आसानी से अधिकांश नगरपालिकाओं के लिए घाटे की बजाय आय का साधन बन सकता है। इसी सम्बन्ध में ताजा खाद का प्रश्न भी पैदा होता है। खेती के लिए वह बड़ी राष्ट्रीय पूँजी है। इसे अब धीरे धीरे अनुभव किया जा रहा है।

ऊपर जो परिवर्तन सुझाये गये हैं, वे इतने आसान, इतने कम खर्चीले और स्वच्छता तथा विज्ञान के आधुनिक युग में इतने स्पष्ट मालूम होते हैं कि कमेटियों की नियुक्ति और रिपोर्टों का तैयार करना आवश्यक प्रतीत नहीं होता। ●

हमारी योजना का आधार : खेती

• श्रीमन्नारायण

तीसरी योजना में खेती को सबसे ऊँचा स्थान दिया गया है, पर राज्यों का झुकाव बड़े उद्योगों की ओर है। योजना-आयोग ने बार-बार इस बात पर जोर दिया है कि खेती और उद्योग, दोनों का विकास साथ-साथ होना चाहिए। बहुत-से लोग नहीं जानते कि अभी कई वर्षों तक खेती ही हमारी अर्थव्यवस्था का आधार बनी रहेगी और खेती पर ध्यान न देकर हम अपनी हानि करेंगे।

यह ध्यान देने की बात है कि रूस जैसा औद्योगिक देश भी, अब अपनी योजनाओं में कृषि और पशुपालन को सबसे ऊँचा स्थान दे रहा है। हाल ही में रूस के प्रधान मंत्री ने मांस का भाव ३० प्रतिशत और मक्खन का २५ प्रतिशत बढ़ाने की घोषणा की। चीन के प्रधान मंत्री ने भी अपने देशवासियों से कहा कि अनाज की पैदावार बढ़ाने पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए, चाहे औद्योगिक प्रगति धीमी क्यों न पड़ जाय। सभी जानते हैं कि चीन के कुछ हिस्सों में इस समय गहरा अकाल है। लन्दन 'इकानामिस्ट' १६ जून के अंक में लिखता है कि कम्युनिस्ट देशों का सबसे कमजोर स्थल खेती है। बीस तीस वर्षों के कड़वे और महँगे अनुभव से, साम्यवादी देशों को यह पता चला है कि औद्योगिक विकास के लिए भी खेती पर अधिक ध्यान देना चाहिए।

अपने देश में हम खेती और पशु-पालन की उपेक्षा करने की भूल नहीं कर सकते। पंजाब ने, जहाँ खेती पर अधिक जोर दिया गया, बिहार से, जहाँ उद्योग पर अधिक जोर दिया गया, अधिक उन्नति की है। हमारी वार्षिक राष्ट्रीय आय का लगभग आधा भाग खेती से प्राप्त होता है। इसलिए हमें तीसरी योजना में अनाज, नगदी फसल, पशु-पालन और दूध दही आदि के लक्ष्यों को पूरा करने की कोशिश करनी चाहिए।

योजना आयोग ने राज्य-सरकारों से छोटी सिंचाई और भूमिरक्षा के बड़े कार्यक्रम बनाने को कहा है, और जरूरत होने पर उन्हें और रुपया दिया जायेगा।

हम बाढ़ और सूखे जैसी आपदाओं को नहीं रोक सकते, फिर भी खाद, अच्छे बीज, कीड़े मारने की दवा और नये किस्म के औजार आदि देकर किसान की सहायता की जा सकती है। यदि ठीक से काम किया जाय, तो खेती की पैदावार अवश्य बढ़ेगी।

पर खेती की उन्नति के लिए हमें बहुत कोशिश करनी होगी। हमें लाखों किसानों को खेती और पशुपालन के वैज्ञानिक तरीके सिखाने होंगे। यह काम सामुदायिक विकास योजना के जरिये किया जायेगा, जो सन् १९६३ तक सारे देश में फैल जायेगी। योजना आयोग खेती की किसी भी अच्छी योजना को धन की कमी के कारण फेल नहीं होने देगा।

कोयले और बिजली की कमी से किसी कारखाने के बन्द हो जाने पर तो बड़ा हो-हल्ला मचता है, पर यदि किसान को पूरी खाद नहीं मिलती या सिंचाई का पानी न मिलने से उसकी फसल सूख जाती है, तो भी अधिकारियों को चिन्ता नहीं होती! बिजली की कमी होने पर सिंचाई-पम्पों की बिजली रोक कर कारखानों को दी जाती है। इससे पता चलता है कि हमको खेती के महत्त्व का पूरा ध्यान नहीं है।

खेती के कार्यक्रमों को चलाने के लिए केवल धन ही नहीं, योग्य सगठन भी चाहिए। यदि किसान को समय से ऋण, बीज, खाद, कीड़े मारने की दवा इत्यादि न मिले, तो सभी आर्थिक सहायता बेकार हो जायेगी। इसलिए राज्यों के कृषि विभागों का प्रबन्ध सुधारा जाना चाहिए, ताकि किसानों को जल्दी सहायता समय से मिल सके।

केन्द्रीय खाद्य और कृषि-मंत्रालय, योजना-आयोग और राज्य-सरकारें तीसरी योजना में खेती की पैदावार के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए भरपूर कोशिश कर रही है, पर हम तनिक भी ढील नहीं दे सकते, क्योंकि खेती पर ही हमारी आर्थिक उन्नति निर्भर है।

कोयले और बिजली की कमी से किसी कारखाने के बन्द हो जाने पर तो बड़ा हो-हल्ला मचता है, पर यदि किसान को पूरी खाद नहीं मिलती या सिंचाई का पानी न मिलने से उसकी फसल सूख जाती है, तो भी अधिकारियों को चिन्ता नहीं होती। बिजली की कमी होने पर सिंचाई-पम्पों की बिजली रोक कर कारखानों को दी जाती है। इससे पता चलता है कि हमको खेती के महत्त्व का पूरा ध्यान नहीं है।

१९६०-६१ में अनाज की पैदावार ७९० लाख टन थी। १९६१-६२ में यह बढ़कर ८०० लाख टन होगयी। १९६२-६३ में ८४० लाख टन अनाज पैदा करने का लक्ष्य है और तीसरी योजना के अन्त तक इसे १००० लाख टन तक पहुँचाने का लक्ष्य है। अनाज की पैदावार कम-से-कम ६ प्रतिशत प्रतिवर्ष बढ़नी चाहिए। यह काम सरल नहीं है। इसे पूरा करने के लिए हमें जी जान से जुटना होगा। केन्द्र और राज्यों को पूरी सतर्कता से कृषि कार्यक्रमों को सफल बनाने की चेष्टा करनी चाहिए।

रेहण्ड का दुखान्त नाटक

अब भी समय है कि गाँव-गाँव में छोटे-छोटे बाँध, तालाब बनाने की भारत की पुरानी योजना को वैज्ञानिक आधार से पुनर्जीवित किया जाय। इससे न विदेशी सहायता लेनी पड़ेगी, न जनता पर भारी कर लगाने होंगे और न लोगों को अपनी जगह से विस्थापित करना होगा। इससे सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि जनता की स्वतन्त्र अभिक्रम-शक्ति जगेगी, योजनाओं के प्रति उसमें उत्साह और सहकार की भावना भी पैदा होगी और आर्थिक विषमता भी कम होगी।

मणीन्द्रकुमार

आजादी के बाद भारत सरकार ने जो महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पन्न किये, उनमें देश में जगह-जगह बड़ी-बड़ी नदियों पर विशालकाय बाँध बनाना प्रमुख है। भारत जैसे देश के लिए, जो मूलतः कृषिप्रधान और उद्योगों में पिछड़ा हुआ है, ये बाँध दुहरे लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं। एक तो यह कि पानी द्वारा हजारों-लाखों एकड़ जमीन की सिंचाई, जिससे खेती की पैदावार में वृद्धि और किसानों की हालत में सुधार होगा। दूसरा, इन बाँधों से पैदा होने वाली बिजली से नये-नये उद्योगों की स्थापना और पुराने उद्योगों को मदद मिल सकती है।

प्रधान मंत्री नेहरू ने इन बड़ी बड़ी नदी-योजनाओं को 'नये राष्ट्र के नये तीर्थ' की संज्ञा दी है। यह एक आकर्षक रूप है। लेकिन उसके दूसरे पहलू को नजर-अंदाज नहीं करना चाहिए। विदेशों से प्राप्त भारी ऋण और सहायता के बल पर बने इन विशाल बाँधों का उपयोग किनके लिए होगा, यह एक गम्भीर सवाल है। *अभी हमारे सामने रेहण्ड बाँध का एक दूसरा पहलू है, जो हमें विवश कर देता है* यह कहने के लिए कि क्या सचमुच इस देश में कभी भी सदियों से पीड़ित, दलित, शोषित व्यक्तियों को सम्मान से ऊपर उठने का मौका मिल सकेगा? यही एक शंका है, जो रेहण्ड बाँध की करुण कहानी परिपुष्ट कर रही है। वाराणसी से निकलने वाले १२ फरवरी '६२ के "आज" दैनिक पत्र में "रेहण्ड का दुखान्त नाटक" शीर्षक से जो विवरण प्रकाशित हुआ, उसका मुख्य अंश यहाँ दिया जा रहा है।

"४६ हजार व्यक्तियों को विस्थापित और १०६ गाँव को अपने बाँध के जलखाते में विलीन करके जनता के कर से ४६ करोड रुपये की लागत से तैयार रेहण्ड विद्युत् परियोजना का परिसमापन सुखान्त होने के बजाय दुखान्त नाटक की तरह हुआ है। दुखान्त नाटकों का इस दृष्टि से विशेष महत्त्व जरूर है कि दर्शक के हृदय पर पड़ने वाला उनका प्रभाव अधिक टिकाऊ होता है, लेकिन वह प्रभाव कल्याण कारी होता है। रेहण्ड विद्युत परियोजना के दुखान्त नाटक में *वह कल्याणकर तत्त्व भी नहीं है।*

अब परियोजना पूरी हो गयी है, लेकिन उसका 'फल' स्वर्ग से गिर कर खजूर पर अटक गया और फल पाने की प्रतीक्षा में खड़े भूखे-प्यासे लोग अपना हृदय मसोस कर रह गये।

जब कि रेहण्ड बाँध के जल से उत्तर-प्रदेश में २० लाख एकड और बिहार में ५ लाख एकड भूमि की सिंचाई होगी, तीन लाख किलोवाट बिजली पैदा करने के लिए ६ टरबाइन यन्त्रों में से ५ यंत्र लग चुके हैं। प्रत्येक टरबाइन की विद्युत उत्पादन क्षमता ५० हजार किलोवाट है। अभी केवल एक टरबाइन चालू हुआ है।

जनता के उपयोग के पूर्व निश्चित उद्देश्य से यह जो ३ लाख किलोवाट *बिजली तैयार होगी,* उसमें से डेढ़ लाख किलोवाट, अर्थात् आधी बिजली बिड़ला के अल्मुनियम कारखाने को दे दी जायगी। ५० हजार किलोवाट बिजली मुगलसराय से हावड़ा तक विद्युत् ट्रेनें चलाने के लिए *पूर्वी रेलवे ले लेगी* और ५० हजार किलोवाट बिजली साहू जैन कारखाने को दी जायगी। जनता को शेष ५० हजार किलोवाट में से ही बिजली मिलेगी, जिससे न तो कुटीर-उद्योगों का जाल बिछ सकेगा *और न गाँवों का कायाकल्प होगा।*

इससे भी अधिक झकझोर देने वाली जो बात हुई है वह है, बिजली की दर। अल्मुनियम कारखाने के लिए अपना अलग बिजली-घर बैठाने में समर्थ बिड़ला बन्धुओं को उत्पादन लागत या उससे भी कम, अर्थात् दो पैसे प्रति यूनिट से भी कम में बिजली मिलेगी। यही हाल साहू जैन और रेलवे का है। लेकिन जनता को मिलनेवाली बिजली की दर ४० नये पैसे प्रति यूनिट होगी। अर्थात् लाभ के लिए गला रेता जायगा गरीबों का और खुद घाटा सह कर रियायत दी जायगी; उन्हें जो अपना व्यय उठाने में ही नहीं, दूसरों का भार वहन करने में भी *समर्थ हैं।*

यह दुःखद ही है कि प्रधान मन्त्री नेहरू ने देश में बने भाखड़ा नंगल, हीराकुड जैसे बड़े-बड़े बाँधों और परियोजनाओं को 'तीर्थस्थान' की संज्ञा देकर रेहण्ड परियोजना को नयी काशी, नयी अयोध्या और नये प्रयाग का जो रूप दिया है, वह ऐसे कार्यों और नीतियों से जनता के गले के नीचे न उतरेगा। वह तो यही समझेगी कि समाजवादी व्यवस्था में निर्मित ये तीर्थस्थान शोषित और पीड़ित जनता के लिए नहीं, साधारण जनता के लिए भी नहीं, बल्कि पहले से ही सम्पन्न और सुविधा प्राप्त वर्ग के लिए हैं, जिन्हें तीर्थ-पुरोहित की तरह दान देने के लिए नंगे, भूखे गरीबों से रकम ऐंठी जा रही है।"

* * *

यह तो एक पहलू है, जिसकी ओर ऊपर की पंक्तियों में ध्यान खींचा गया है। किन्तु दूसरा पहलू भी कम दर्दनाक नहीं। रेहण्ड बाँध के क्षेत्र में १०६ ग्रामों के ९००० परिवारों के ४५००० नर-नारियों के साथ जो व्यवहार किया गया है, उसको "घोर *बर्बरता और निष्ठुरता*" का व्यवहार भी कुछ लोग कहते हैं। हो सकता है, ऐसा कहना अतिशयोक्तिपूर्ण हो, किन्तु जो आँकड़े सामने हैं, उससे तो यही सिद्ध होता है।

मीरजापुर के पुराने लोक-सेवक श्री व्रजभूषण मिश्र, 'ग्रामवासी' ने जो आँकड़े प्रस्तुत किये हैं, वे हृदय को झकझोरने वाले और आँख खोलने वाले हैं। *उन्हीं के शब्दों में आँकड़ों की करुण* कहानी इस प्रकार है :

* * *

"विस्थापितों की जलमग्न होनेवाली कुल सम्पत्ति का—जैसे खेत, घर, पेड़, कुआँ, कच्चे बँधी आदि का कुल मुआवजा लगभग केवल ८१,००,००० रुपया मिला है। २१,००,००० रु. के लगभग विस्थापितों के लिए स्कूल, सड़क, पंचायत घर, कुआँ बनाने में सरकार ने खर्च किया। किसानों को बसाने के लिए कुल २८,००० एकड जंगल काटा गया, जिसमें अब तक केवल ८००० एकड कहने मात्र के लिए कृषि योग्य, पर सूखी, वस्तुतः घटिया व सूखी *भूमि किसानों को दी गयी। इन किसानों* को कुल ५६ कूएँ बनवा कर दिये गये। लगभग ३००० किसानों को १० बीघा (सवा छः एकड) या उनकी जोत का दो-तिहाई दोनों में जो कम हो, प्रति परिवार के हिसाब से कृषि के लिए दी गयी है, जिसमें सिंचाई के नाम पर एक धूर भी भूमि नहीं है। *लगभग ३००० किसानों को कृषि के लिए कोई भूमि नहीं दी गयी है।* केवल ५ बिस्वा भूमि प्रति परिवार के हिसाब से मकान बनाने के लिए दी गयी है। किसानों की कुल लगभग ४५,००० एकड सुन्दर कृषि-भूमि जलमग्न हुई है। अर्थात् डुबायी गयी है ४५,००० एकड भूमि, और दी गयी केवल ८००० एकड भूमि। ऊपर कहा जा चुका है कि कुल ९००० परिवारों में से अब तक लगभग ६००० परिवार (३००० भूमिहीन परिवारों सहित) सरकारी पुनर्वास क्षेत्र में आये, शेष ३००० परिवारों के बारे में सरकार को कुछ पता नहीं कि वे कहाँ गये। सब इधर-उधर झोपड़ियाँ डाल कर वनों के अंचलों में अज्ञात स्थिति में पड़े हैं तथा कुछ खानाबदोश हो गये हैं।

इस प्रकार सरकार की लापरवाही, अव्यवस्था, निर्दयता और निष्ठुरता के शिकार कुल लगभग दो तिहाई परिवार; अर्थात् ९००० में से ६००० परिवार हो चुके हैं। वे समाज और सरकार के नाम पर एक-एक घूँट पानी, एक एक दाने तथा एक एक अंगुल वस्त्र के लिए कराह रहे हैं। कानून की अन्धी चक्की में विकास के नाम पर इनका विनाश कर डाला गया। इनकी कुल सम्पत्ति जो जलमग्न हुई है, यदि उसका यथार्थ में किसी न्यायमूर्ति द्वारा मूल्य आँका गया होता तो वह कुल २५ करोड रुपये से कम न होता। उसके एवज में किसानों को कुल ८१,००,००० रुपया मिला है। हमारा तो अनुमान है कि यदि सुनियोजित ढंग से किसानों को हटाया, बसाया गया होता, तो कम-से-कम २ करोड रुपये लकड़ी से, जो किसानों के घरों में लगी डूब गयी तथा जो सुविशाल वृक्ष यों ही डूबने के लिए छोड़ दिये गये, उन सबसे प्राप्त किया जा सकता था। और यही दो करोड़ रुपया यदि किसानों को मुआवजे के तौर पर और दे दिया गया होता, तो किसान कम-से-कम आज जिस पद्दलित और दुर्दशा में पड़ा हुआ है, उससे बहुत कुछ त्राण पा जाता। यह उल्लेखनीय है कि ८१,००,००० रु० में वह भी धन-राशि सम्मिलित है, जो किसानों को सामान ढोवाई तथा अन्य मदों के रूप में दी गयी है। यह रकम सम्पत्ति के मूल्य के खाते में नहीं डाली जा सकती। अर्थात् किसान को अपनी जलमग्न भूमि का मूल्य ८१,००,००० रुपये से भी कम मिला।

सरकार की ओर से बड़े गर्व के साथ कहा जाता है कि उसने विस्थापितों के लिए मुफ्त सड़क, स्कूल, कुआँ व पंचायत घर आदि दिये हैं तथा बसने के लिए भूमि तथा भूमिवान किसानों को जोतने के लिए भूमि दी गयी है। अब जरा इसका भी रहस्य सुन लीजिए। सरकार ने कुल ८००० एकड भूमि किसानों को खेती के लिए दी है। इसका मूल्य यदि निकाला जाय तो मोटे मोटे तौर पर वह इस प्रकार है। दुद्धी तहसील में जिस क्षेत्र में ८००० एकड़ भूमि दी गयी, वह अकाल का विशिष्ट क्षेत्र है। वहाँ की औसत परती लगान ८ आना बीघा से अधिक नहीं है, १२ आना प्रति एकड। सरकार की ही *तुला से मूल्य आँका जाय तो १२ आना का तीस गुना, जो सरकार के मुआवजे का* रेट है, के हिसाब से एक एकड का मूल्य हुआ २५ रुपया। इस हिसाब से कुल ८००० एकड क्षेत्रफल का २५ रुपया *प्रति एकड़ के हिसाब से* केवल २ लाख रुपया हुआ, अर्थात् सरकार ने उन्हें कुल २ लाख रुपये के बराबर मूल्य की भूमि बसने और खेती के लिए दी, जिसका इतना ढिंढोरा पीटा जा रहा है। *अच्छा होता कि उन्हें एक इंच भी भूमि न दी* गयी होती और बिहार प्रदेश में किसानों को राबर्ट्सगंज गढ़वा रोड की रेलवे लाइन में पड़ने वाली भूमि का जो मुआवजा दिया गया है, जो लगभग २००० रुपया प्रति एकड़ के पड़ता है, उसी रेट से अथवा इसी 'रेहण्ड बाँध' में मध्यप्रदेश की डूबने वाली भूमि का जिस रेट से मुआवजा दिया गया है, उसी रेट से मीरजापुर के किसानों को भी दिया गया होता, तो आज किसान सरकार की भूमि लेने का इच्छुक न होता। सरकार ने भूमि देने के नाम पर किसानों की आँख में धूल झोंक कर उनकी सम्पत्ति को एक प्रकार से मुफ्त में लूट लिया है। इन अभागे विस्थापितों को पीढ़ी-दर-पीढ़ी के लिए *मुहताज,* दरिद्र और पशुवत् बना दिया है। सरकार के पास इसका क्या उत्तर है? सरकार से बारम्बार पूछा जा रहा है, किन्तु वह मौन है, उसके पास इन प्रश्नों का कोई उत्तर *नहीं है।"*

एक ओर तो सरकार ने विस्थापितों के साथ इस प्रकार निर्दयता और कंजूसी का

सत्कार किया है, किन्तु दूसरी ओर बांध के सजावट और उसको सुन्दर बनाने के लिए वह २१ लाख रुपया इसलिए खर्च कर रही है कि रेहण्ड बाँध या 'पन्त सागर' के किनारे सुंदर वाटिकाएँ और दायुओं के मध्य दृश्य बनाये जायँ। एक ओर उदारता है, शान शौकत और विलासिता के लिए; दूसरी ओर कंजूसी है उन लोगों के लिए, जिनको पीढ़ी-दर-पीढ़ी से चली आयी प्यारी मातृभूमि से हटना पड़ रहा है, जो अधिक-से-अधिक गरीब हैं, पीड़ित हैं, साथ में मूक भी हैं।

कुल मिला कर हमें रेहण्ड बांध की इस मिसाल से देश भर में बनने वाले बड़े-बड़े विशालकाय बांधों के बारे में सोचना होगा। हमारे सामने ऊपर के विवरणों से जो तथ्य प्राप्त हुए हैं, उनको हम इस प्रकार रख सकते हैं–

(१) क्या इतने बड़े-बड़े बाँध बनाना उचित है, जिनसे बाहर से कर्जा लेना पड़े?

(२) जिसके कारण हजारों-लाखों लोगों को विस्थापित होना पड़े।

(३) जिससे फायदा सम्पन्न वर्ग को अधिक सम्पन्न बनाने के लिए हो।

(४) जिससे जनता में अपनी योजनाओं के प्रति न कोई रुचि हो और न उत्साह।

(५) ऐसे विशाल बांध, जो कभी एक बार अकस्मात् या किसी कारणवश टूट जायँ, तो जल-प्रलय भी ला सकते हैं!

अन्त में हम यह कहना चाहते हैं कि अब भी समय है और हमको सोचना चाहिए कि गाँव गाँव में छोटे-छोटे बाँध अथवा तालाब बनाने की भारत की पुरानी योजना को पुनर्जीवित करना चाहिए। इससे न हमें विदेशी सहायता लेनी पड़ेगी, न जनता पर भारी कर लिटाने होंगे और न लोगों को अपनी जगह से विस्थापित करना होगा। ऐसी छोटी योजनाओं में दूसरा सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि जनता की स्वतंत्र अभिक्रम-शक्ति जगेगी, योजनाओं के प्रति उसमें उत्साह और सहकार की भावना पैदा होगी, आर्थिक विषमता भी बढ़ने से रुकेगी। बड़े बड़े बाँध अपनी जगह ठीक भी हो सकते हैं, उनसे बड़े-बड़े कारखाने भी खुलते हैं, चलाये जा सकते हैं। किन्तु उनसे पैदा होने वाली बिजली आदि की दरों में किसी भी प्रकार की विषमता सहन नहीं होनी चाहिए। होना तो यह चाहिए कि रियायत उन लोगों को मिले, जो उसके लिए पूरी तरह से हकदार हैं। भारत के पाँच लाख देहातों में बिजली पहुँचाने का काम एक कठिन काम है। किंतु यह एक बड़ा भ्रम है कि बड़े-बड़े बाँधों से ही बिजली पैदा की जा सकती है। हमारे पास इस बात के सबूत हैं कि छोटे-छोटे देहातों में नदी नालों को रोक कर बिजली पैदा की जा सकती है, जिससे न केवल गाँव में रोशनी होगी, बल्कि उद्योग धंधे भी चल सकते हैं।

आज आवश्यकता है इस मसले पर गंभीरता से पुनर्विचार हो और "बीती ताहि बिसार दे, आगे की सुधि लेय"; किन्तु इस बिसारने में हम उन विस्थापितों को तो न बिसारें, जिनकी रोटी रोजी छिन ली गयी है और आगे के लिए ऐसा न हो, इसके लिए पूरी पूरी कोशिश की जाय!

रेहण्ड बाँध और उजड़े गाँव !

अक्षयकुमार करण

उत्तर प्रदेश का एक बहुत बड़ा निर्माण-स्थल है (रेहण्ड डैम) रेणुका बांध, जिसे अब 'पन्त-सागर' का नाम दिया गया है। रेणुका नदी बांध कर इस सागर का निर्माण हुआ। १८४ वर्गमील में पानी का जमाव है। इस बांध से बिजली के निर्माण की योजना है। यह बिजली उत्तर प्रदेश के ८-१० जिलों को, शायद बिहार के भी कुछ हिस्सों को दी जायगी। एक बहुत बड़ी अलमुनियम फैक्टरी वहीं बांध के पास बन गयी है। दूसरे भी उद्योग खुलने वाले हैं। देखने में यह सब बहुत लुभावना और अच्छा लगता है। मालूम होता है कि देश की काया पलट रही है। वह स्थान जो जंगल था, आज बिजली की जगमगाहट से शोभायमान है और वहाँ नई जिन्दगी दिखाई पड़ रही है! देश का नया रूप निखरेगा, इसमें कोई शक नहीं।

लेकिन इन सबके पीछे एक दूसरी ही कहानी है। आज १८४ वर्गमील का सागर बना है। उसके बीच १०६ गाँव थे। ५० हजार की आबादी थी। लहलहाती हुई खेती, लाखों फल-वृक्ष, पूरे बसे हुए गाँव थे। आज वे सारे गाँव, सारी खेती, सभी फल, वृक्ष सागर की गोद में २०० फीट नीचे हैं! कोई पूछेगा कि वहाँ के बसने वाले लोगों का क्या हुआ? सागर हमने बनाये, बिजली भी निर्माण हुई! बड़े बड़े कारखाने भी खोले गये, नया नगर भी बसा है, पर वे जो बसे हुए गाँव थे, अपनी आराम की जिन्दगी बिता रहे थे, बाग-बगीचे लगाते थे, उन पचास हजार व्यक्तियों का इस सारी निर्माण-योजना में कुछ स्थान रहा है क्या?

नितान्त अभाव है। रेहण्ड बाँध पर ४५ करोड़ रुपये खर्च हुए हैं। सैंकड़ों इंजीनियर, हजारों मजदूर लगा कर यह काम कराया गया है। कोई कारण नहीं दिखाई पड़ता कि इसी प्रकार योजनापूर्वक जो १०६ गाँव उजाड़े गये, वे भी बसाये जाते। बाँध के निर्माण के साथ-साथ इन गांवों का भी निर्माण होता, उन मनुष्यों को भी मनुष्य का जीवन मिलता, तो वे भी महसूस करते कि देश के निर्माण के साथ-साथ उनके भी निर्माण की योजना है।

आज वहाँ का सारा दृश्य बहुत ही कारुणिक है। जंगल विभाग अपनी तरफ

योजनाएँ बन रही हैं–चल भी रही हैं; लेकिन इन योजनाओं से उन गरीब लोगों का क्या बन रहा है, यह देखने की बात है। आवश्यकता है, जिस तत्परता से और योजनापूर्वक (रेहण्ड) बांध निर्माण हुआ, उससे ज्यादा नहीं, तो उसी प्रमाण में बाँध के कारण डूबे गांवों को बसाने का काम पूरा होना चाहिये।

जिस तरह योजनापूर्वक बांध बांधे गये, बांधे की योजना करने वाले इंजीनियर, कामगारों के मकान बनाये गये, होटल, रेस्ट हाउस, सर्किट हाउस, दर्शनीय स्थानों का निर्माण हुआ और आज सुना जाता है कि उसे दर्शनीय स्थान बनाने के लिए वृन्दावन बनाया जायगा और उसमें भी २०-२१ लाख रुपये खर्च होंगे। क्या उसी तरह योजनापूर्वक इन १०६ गांवों के लोगों को बसाने का प्रबन्ध हुआ? आज उन लोगों का दृश्य करुणा का दृश्य है। जंगल में जहाँ-तहाँ वे पड़े हुए हैं! अच्छी-से-अच्छी जमीन उनकी डूब गयी। जंगल की खराब-से-खराब जमीन आज उन्हें मिली है, वह भी ऐसी हालत में कि जिसमें अभी ३-४ साल तक खेती नहीं कर पायेंगे! पीने के पानी का नितान्त अभाव है। कहीं-कहीं कुछ कुएं बनवाये गये हैं। आज वे लोग पत्थरतोड़ कर भी कुआँ बनाने में परिश्रम कर रहे हैं। लेकिन इस सबमें योजना का

तना है और राजस्व विभाग, जिसकी जिम्मेवारी है कि गाँववालों को जमीन दे, अपने को असहाय महसूस करता है।

ये सारे गाँववासी आज जंगलों में ही पड़े हैं। जिन परिवारों के पास वहाँ जमीन थी, उनको एक एकड़ से लेकर सवा छः एकड़ तक जमीन देने की योजना है। गाँव उजड़े हुए भी दो वर्ष हो गये। आज उनकी झोंपड़ी बनाने के लिए लकड़ी, पीने के लिए पानी, खेती करने के लिए जमीन, इन सबका कोई आधार ऐसा भी दिखाई पड़ता, जो गाँववालों को परिश्रम करके भी अपनी व्यवस्था करने में सहायक हो। नितान्त असहाय की जिन्दगी उन लोगों की है। असहायता की चरम सीमा तब होती है, जब कि उनकी झोंपड़ी के लिए एक पत्ता तोड़ने पर भी जंगलवाले उन्हें परेशान करते हैं! समझ में भी आता कि इस प्रकार की लापरवाही इन सारी योजना में क्यों बरती गयी? ये बड़े-बड़े निर्माण-कार्य आखिर इन्सान को ही इन्सान बनाने के लिए हैं। इन निर्माण-कार्यों से इन्सान की ही कीमत घट जाय, उनको हैवान की जिन्दगी बसर करने के लिए मजबूर होना पड़े तो ये तीर्थ-स्थान न होकर नरक-स्थान ही होंगे। आज इस रेहण्ड बाँध का बहुत कारुणिक रूप है। उसकी तरफ ग्राम-समाज, नेता और सरकार का ध्यान जाना आवश्यक है।

योजनाएँ बन रही हैं, चल भी रही हैं; लेकिन इन योजनाओं से उन गरीब लोगों का क्या बन रहा है, यह देखने की बात है। आवश्यकता है, नीचे से ऊपर के स्तर तक यह काम जिम्मेवारी से लिया जाना और जिस तरह योजनापूर्वक रेहण्ड बाँध का निर्माण हुआ उसी तरह योजनापूर्वक इन गाँवों के बसाने का भी काम पूरा होना चाहिये। बहुत कठिन काम नहीं है। जहाँ ४५ करोड़ बाँध के निर्माण में खर्च हो सकता है, वहाँ २-४ करोड़ इन १०६ गाँवों के ग्रामवासियों के साधारण नागरिक जीवन बिताने के लिए सुलभता प्राप्त करने में अगर खर्च हो जाय, तो योजना की सफलता ही होगी और इस स्वराज्य सरकार के भी चार चाँद लगेंगे।

करना क्या है?

१—जिन जंगलों में रहने के लिए उन्हें बसाया गया है, उसको पूरी तरह से सफाई कर खेती के योग्य जमीन बना दी जाय और वह सब जमीन विधिवत् गाँव वालों के नाम हो जाय।

२—भूमिहीन परिवारों को भी खेती के लिए जमीन दी जाय और उनके बसने की भी पूरी सुविधा प्रदान की जाय। कोई भी परिवार ऐसा न हो, जिनके पास खेती के योग्य जमीन न रहे।

३—पीने के पानी के लिए व्यवस्थित प्रबन्ध हो, जिस तरह संकटकालीन स्थिति में युद्ध आधार पर काम होता है। उसी तरह यहाँ कुओं बनाने का काम होना चाहिए।

४—स्कूल और पंचायतघर व्यवस्थित रूप से बनाना चाहिये। आज जो स्कूल और पंचायत का रूप दिया गया है, वह किसी भी रूप में स्कूल और पंचायतघर नहीं कहे जा सकते।

५—खेती के साथ गोपालन का भी योजनापूर्वक काम लिया जाय, क्योंकि जंगल और चरागाह होने से यहाँ उसकी पूरी सुविधा हो सकती है।

६—इसी प्रकार उद्योगों की भी योजना चले। अभी चरखा, रेशाउद्योग, वन के दूसरे उद्योग आसानी से चल सकते हैं।

इस प्रकार नये गाँव की रचना योजनापूर्वक की जाय, तो जिस तरह हजारों लोग बाँध और बिजली देखने के लिए आयेंगे और खुश होंगे, उसी तरह ये नये बसे हुए गाँव भी योजना की सफलता में और योजना को प्रतिष्ठित करने में सहायक होंगे।

उत्तराखण्ड सर्वोदय-पदयात्रा के कुछ संस्मरण

विश्वम्भरदत्त थपलियाल

बारिश हो रही थी। थकावट के कारण पाँव आगे नहीं बढ़ रहे थे। उसी अँधेरे में सड़क से कुछ नीचे एक लम्बा-सा मकान दिखाई दिया। मकान की पीठ हमारी ओर थी। अपनी ओर मकान में रहने वालों का ध्यान आकर्षित करने के लिए हमने नारे लगाने शुरू किये। तब तक बूंगीधार से आने वाला एक मुसाफिर ठिठक कर हमारे पीछे खड़ा हो गया। उसका गाँव वहाँ से एक मील आगे था। उसने इस शर्त पर हमें अपने गाँव ले जाने की स्वीकृति दी कि ठहरने की व्यवस्था हमें अन्यत्र करनी होगी।

साढ़े आठ बजे रात हमने गाँव में प्रवेश किया। हमारे मित्र ने दूर से एक मकान दिखा कर कहा कि वहाँ मेरे भाई का मकान है, उसमें आप लोगों को जगह मिलेगी। वहाँ जाकर हमने बाहर से पुकार कर ठहरने की स्वीकृति मांगी। उन्होंने कहा कि ऊपर के मकान में पूछो। लालटेन जला कर डिमरीजी वहाँ पूछने गये। तब घर वालों ने हमसे पूछा, आप लोग कौन हैं? हमने कहा कि हम मनुष्य हैं। उन्होंने कहा कि मनुष्य तो हम भी देख रहे हैं, किन्तु ब्राह्मण हो या राजपूत?

उनका आशय समझ कर हमने उत्तर दिया—"न ब्राह्मण हैं, न राजपूत, न हिंदु हैं, न मुसलमान। खालिस इन्सान हैं।" तब तक गृहस्वामिनी गुस्से से बोल उठी, "तुम लोग होश में तो नहीं बोल रहे लगते? सीधा उत्तर क्यों नहीं देते?" उनको उत्तर दिया गया—"हम होश हवास में हैं। आप लोग जगह दे देंगे तो कृपा होगी, नहीं तो आगन में ही सो जायेंगे।" डिमरीजी को गये बहुत समय हो गया था, इस लिए मैंने उन्हें पुकारा—"डिमरीजी!" इससे गृहस्वामी समझा कि ये लोग तो बद्रीनाथ के पण्डा हैं और कुमायूँ से आ रहे हैं। हमारा सत्कार होने लगा, गृहस्वामी हुक्का भर कर ले आया और चाय की तैयारी करने लगा। उन्हें यह सुन कर आश्चर्य हुआ कि हम न चाय पीते हैं, न तमाखू। अन्त में उन्होंने कुछ रोटियाँ हमें दीं। हमारे पास चार रोटियाँ दोपहर की शेष थीं। पोटली खोली और बाँट कर हम सब खा गये।

यक्षीसैण से आगे हमारे मार्गदर्शन के लिए वहाँ के श्री कुलानन्दजी भट्ट आये। दूधातोली पर्वत की चढ़ाई थी। कुलानन्दजी के घर भोजन कर २ बजे से चढ़ाई चढ़ना आरम्भ किया। तीन मील की चढ़ाई समाप्त करने के बाद डेढ़ मील की चढ़ाई और शेष रह गयी थी। जंगल का रास्ता था, बस्ती बहुत दूर-दूर थी। हम 'छानों' के पास पहुँच कर अन्दर बैठ ही पाये थे कि जोर से ओलावृष्टि हुई। उस 'छान' में लगभग ७-८ व्यक्ति बैठे थे, तारादत्तजी की बाल बनाने की मशीन उनमें से ४-५ व्यक्तियों के सिर पर मुंडन हेतु दौड़ी। ओलावृष्टि समाप्त होने ही शाम हो चुकी थी। कुलानन्दजी ने हमारा रहने का प्रबन्ध करवाया। एक छान, जहाँ सिर्फ दो व्यक्तियों के लिए ही स्थान था, अब वहाँ ७ व्यक्ति हो गये थे। चारों ओर गाय-भैंसें बंधी थीं। दरवाजे के सामने लम्बे-से चूल्हे में बड़ी-बड़ी लकड़ियाँ जल रही थीं। चूल्हे के दोनों ओर पत्थर की लम्बी-लम्बी बिछाई ग्वालों के सोने के लिए थी। ठंड इतनी थी कि हम आग सेंकने लगे। हमारे लिए जवानों ने चटपट रोटियाँ बनायीं। अब सोने का समय आया, तो दो साथी दूसरे 'छान' में चले गये।

*   *   *

सुबह से चढ़ाई और जंगल पार कर हम चमोली जिले के पिन्वाली गाँव पहुँचे। पहुँचते ही तारादत्तजी की मशीन भी चालू हुई। सारे गाँव में खबर हो गयी कि फोकट बाल बनाने वाले आये हैं! गाँव के लोगों से बातचीत हो रही थी कि एक अधेड़ व्यक्ति अपनी दाढ़ी खुजलाता हुआ पहुँचा और कहने लगा कि महाराज, मेरी दाढ़ी भी बना दीजियेगा। हमने उत्तर दिया—"दाढ़ी तो नहीं बन सकती, किन्तु सिर-मुंडन कर लेते हैं!" एकदम रुख बदल कर वह व्यक्ति कहने लगा—"ठीक है, तभी तो प्रधानजी ने कहा कि मैं उनकी सभा में नहीं आता हूँ। वे लोग तो स्कूलों से 'फेल' होकर निकले हुए लड़के हैं! माँ-बाप इनको घर में खाना नहीं देते हैं, नौकरी इनको मिलती नहीं, इसलिए बेकार इस प्रकार गाँव-गाँव घूम रहे हैं!"

*   *   *

टिहरी जिले से उत्तर काशी जाने के लिए हमें कुशकल्याण पर्वत-शिखर पार करना पड़ा। लगभग १२ हजार फीट की ऊँचाई से हमें पार करना था। उस पर्वत पर चढ़ते हुए भी हम रास्ता भटक गये। रास्ता जंगली व जनशून्य था और हर १५ मिनट बाद वहाँ का मौसम बदल रहा था। चढ़ते हुए दो-तीन बार ओले गिरे, जो हमारे 'पिट्ठू' और सिर पर भी जम गये। दूर से भेड़-बकरी हाँकने की आवाज आयी, तो हम उसी ओर बढ़ गये। बकरी वाले ने हमें रास्ता बताया। हम ओलों की बौछार सहते सहते आगे बढ़े। हम सोच रहे थे कि इतनी बहादुरी से आगे बढ़ने वाले केवल हम ही हैं! पर ज्यों ही पर्वत की चोटी के निकट पहुँचे, तो कुत्तों ने भौंक कर हमारा स्वागत किया! तीन पुरुष और एक स्त्री अपनी भेड़-बकरियों के साथ खुले मैदान में आग के पास बैठे हुए थे। ये रोज प्रतिकूल मौसम से टक्कर लेते-लेते अपने काम में लगे रहते हैं। हिमालय के ये कर्मयोगी अपनी बकरियों के साथ १६ हजार फीट की ऊँचाई तक चढ़ जाते हैं। पर्वत के पश्चिमी ढाल पर बर्फ अब भी पिघला नहीं था।' स्थान-स्थान पर बाँक थे। दो-तीन जगहों पर तो हमने आसानी से पार किया, किन्तु एक स्थान पर बहुत दूर तक उतार में बर्फ फैला हुआ था। हमें हिम्मत नहीं आयी। सुन्दरलालजी आगे बढ़े, किन्तु पैर फिसल जाने के कारण वे रपट गये, तुरन्त उन्हें बर्फ में खेलने के लिए फिसलने वाले लोगों की याद आयी और संभल कर फिसलने लगे। उनके पीछे हम भी एक-एक कर फिसलने लगे। हम लोग लगभग ३० फीट ऊँचाई से नीचे फिसले।

उत्तर काशी जिले के बाजणा गाँव के सभापतिजी ने हमें अपने गाँव में आमंत्रित किया था। उस क्षेत्र के ग्रामसेवक महोदय भी हमारे साथ थे। सभा शुरू हुई। जहाँ भूदान की बात के सिलसिले में ग्रामदान की बात आयी, वहाँ एक व्यक्ति ने कहा कि मैं तो चाहता ही हूँ कि कोई मेरे साथ हो जाय। लेकिन कोई साथ नहीं होवे तो क्या करे? हाँ, यदि आप मुझसे भूमि-दान लेकर किसी दूसरे गाँव के नागरिक को देते हो, तो अभी दान-पत्र भरिये। उसने इतनी उत्तेजना दिखाई कि बातचीत बीच में ही बन्द कर उसका भूमिदान-पत्र भरवाना पड़ा। इस प्रकार उन्होंने ५० नाली जमीन दान दी। उनका नाम श्री बहादुरसिंह है। कुछ ही मिनट बाद दूसरे गाँव का एक हरिजन आया। उससे दान की भूमि लेने के लिए कहा, किन्तु उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि दान में भी भूमि मिल सकती है। इसलिए दबे मन से बोला, 'हाँ, मिल जाय तो अच्छा है।' वह जमीन उसी को सौंप दी गयी। पीढ़ियों की भूमिहीनता कुछ ही क्षणों में मिट गयी।

चमोली और टिहरी जिले की सीमा पर फुटगड पट्टी में अरखुण्डा गाँव है, वहाँ के लोगों का अच्छा संगठन है। हम लोगों ने जब उस गाँव में नारे लगाते व गीत गाते हुए प्रवेश किया तो गाँव के सब बच्चे हमारे पीछे हो लिये। हम सीधे पंचायत-घर के आगन में जाकर बैठे और श्री चण्डीप्रसादजी भट्ट वहाँ उन बच्चों को गाना सिखाने लगे। रात के साढ़े आठ बजे के समय पर बच्चों ने घंटी बजाई। स्कूल के विद्यार्थियों की भाँति उस घंटी के बजने पर सारे गाँव के लोग आ पहुँचे। हमें आश्चर्य हुआ! उनसे बातचीत शुरू हुई। उन्होंने बताया कि हमारे गाँव में १५ नाली जमीन पर सहकारी खेती होती है, जिसकी उपज को पंचायती कामों में तथा गाँव में किसी को आवश्यकता होने पर बाँटा जाता है। इसके अलावा पंचायती कोष भी है। जहाँ से बहुत ही कम ब्याज की दर पर लोगों को कर्ज मिलता है। कुछ ही समय बाद थोड़ी जागृति पर गाँव ग्राम-दान घोषित हो सकता है, ऐसा अनुभव हमें उन लोगों के संगठन से हुआ।

उत्तराखण्ड के ६ जिलों की ४-५ मील की यात्रा हमने ५० दिन में पूरी की। इस यात्रा में हमारी टोली को ७५ नाली भूदान मिला। ६२० रुपये ५४ न० पै० के सर्वोदय-साहित्य का प्रचार हुआ। भूदान पत्रिका के ४२ ग्राहक, १२ शान्ति सहायक बने।

(गतांक से समाप्त)

साहित्य-परिचय

शान्तदर्शन : लेखक : विनोबा, प्रकाशक : अ. भा. सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी। पृष्ठ-संख्या २००, मूल्य : १ रु० २५ नये पैसे।

आचार्य विनोबाजी से सारा देश परिचित है। भूदान-आन्दोलन का प्रवर्तन करके उन्होंने भूमि क्रान्ति का सूत्रपात किया है। विनोबाजी का सारा जीवन ही शान्तिनिष्ठ है। वेदों से लेकर अद्यतन विज्ञान को उन्होंने क्रान्तदर्शी होकर निहारा है और परम्परागत शब्दों को नया अर्थ दिया है।

पदयात्रा शुरू करने के पूर्व, सन् '५० तक विनोबाजी ने जो कुछ लिखा है, वह स्वराज्य-आंदोलन, सत्याग्रह, रचनात्मक कार्यक्रम, खादी, ग्रामसेवा, सफाई आदि विषयों पर लिखा है और मराठी में लिखा है। उनके ऐसे विचारों के मराठी में तीन संग्रह निकल चुके हैं। उनमें से एक संकलन का यह हिन्दी अनुवाद सर्व सेवा संघ-प्रकाशन ने प्रकाशित करके हिन्दी को एक अनोखी और अद्वितीय कृति भेंट की है। इस पुस्तक में विनोबाजी के कुछ मिला कर ६१ लेखों का संकलन है।

विनोबाजी की खास विशेषता यह है कि वे सीधी, सहज और रोचक भाषा में कम-से-कम शब्दों में बड़ी-से-बड़ी और अर्थपूर्ण बात कह देते हैं और वह सीधे हृदय को स्पर्श कर जाती है।

विनोबाजी की इस कृति में श्रुति की सहजता, योगी की गुरुता, साहित्यकार की सरसता और वैज्ञानिक की तटस्थता पद-पद पर लक्षित होती है। छपाई सफाई सुन्दर है।

—जमनालाल जैन

'बीघा-कट्ठा अभियान' के प्रेरक अनुभव

यात्रा-पथ से

"इन चहारदीवारों के बीच उठती और समा जाती हमारी आवाज को कौन सुनता है ! न सुनी गांधीजी ने, न सुनी विनोबा ने ! हाँ, अब तो हमारे बाल पक चुके। न देखी दुनिया, न कभी की तीरथ यात्रा। बचपन माँ-बाप को खुश रखने में बीता, जवानी स्वामी की सेवा में खत्म हुई, अब आये हैं बच्चों के दिन ! उन्हींको खुश रखते हैं, जिससे कि आखिरी उम्र में धक्का न मिले।"

एक छोटे-से गाँव में, करीब आधे गाँव की जमीन पर खड़ा हुआ एक विशाल भवन, जो किसी जमाने में 'राजा की ड्योढ़ी' कहलाती थी, उसीकी चहारदीवारी के बीच अपनी पूरी जिन्दगी बिताने वाला एक नारी हृदय दबी जबान में मेरे पास चिल्ला रहा था, छटपटा रहा था : "ऐसी गुलामी से सत्तू खाकर हँसना अच्छा लगता है। जी होता है, कहीं चली जाऊँ" लेकिन कैसे ? कहाँ ?" बेटी, तुम तो छोटी हो, तुमने कैसे देखा होगा ये बड़े-बड़े कहलाने वाले राजा, जमींदारों के परिवार में क्या क्या होता है ?"

और आध-पौन घंटे तक हमारी बातें चलीं। मैंने गांधीजी के प्रयास से लेकर विनोबा के ब्रह्मविद्या मंदिर, मैत्री-आश्रम तक की कहानी सुनायी। ब्रह्मविद्या मंदिर के बारे में सुन कर पूछने लगी, "कहाँ है वह आश्रम ? यहाँ से कितनी दूर होगा ? क्या मैं उस आश्रम की किसी बहन को देख सकती हूँ ?" चमकती आँखों में से आँसू टपक रहे थे। "...हाँ, तुम लोगों के लिए दरवाजा खुल रहा है। अच्छा है। पर ' पर हमारा क्या ? हमारा कौन ?" "

पिछली बार विनोबाजी के सामने मैंने बिहार की बहनों की कुछ आवाज पहुँचायी थी। बाबा ने उस समय कहा था, "बिहार आने के लिए तीन आकर्षणों में एक आकर्षण मुझे है–बिहार की बहनें।"

बड़े-बड़े जमींदारों से लेकर छोटे छोटे किसानों तक के घर की बहनों की समान हालत है। मजदूर बहनें मजबूर होकर बाहर आती हैं, अन्यथा सर्वत्र पर्दा ! अचानक अगर से किसी बहन के सामने कोई पुरुष आकर खड़ा रह जाता है तो 'अरे बाप रे ! गजब हो गया' कह कर बहनें भागती हैं !

लेकिन सर्वप्रथम है भूख का सवाल !

एक जमाने में राजा कहलाने वाला एक बड़ा जमींदार। पहुँचते ही समझ गये थे कि ये हैं भूदान वाले। जोरों से कहने लगे, 'अब यह मैं पूरा समझ चुका हूँ कि यह जमीन हमारे पास रहने वाली है नहीं, उसको रखने में अब कोई सार ही नहीं है। देखिये, यह माल जो है, यह मैं आपको नहीं दूँगा, वह आप मुझसे नहीं ले सकेंगे। लेकिन जमीन ! वह अब हमारी नहीं है। पहले कोई एक आदमी आता था, आज आप आठ लोग आये हैं, कल बीस आयेंगे, परसों सौ लोग आकर खड़े रहेंगे। मैं न आपको दरवाजे पर प्रवेश देने से रोक सका हूँ, और न किसी को रोक सकूँगा। यदि जमीन रहने वाली होती तो आपको बाहर से ही धक्का लगा कर भेज देते। इसलिए आपको पूरा कट्ठा मिल जायेगा। परंतु हमारे बड़े भाई पटना में हैं। अभी बँटवारा नहीं हुआ है। हम उनसे पत्र लिख कर पुछवा लेते हैं। आप भी उन्हें लिखिये, इसके बाद जमीन आपकी।'

जगोली पंचायत में हम छह दिन घूमे। इस पंचायत में पहले १४०० कट्ठा भूमि मिल चुकी थी। इस समय ५५० कट्ठा दान में मिली। अभी यहाँ काफी काम हो सकता है। अनुभव यह रहा है कि जहाँ कुछ अंश में भी दान पहले हुआ होता है, वहाँ और दान मिलता है। जहाँ आरंभ ही नहीं हुआ होता है, वहाँ पत्थर फोड़ना मुश्किल होता है। पसगाढ़ा गाँव में तो वहाँ के जमीन ने खुद दान देकर गाँव में से सभी बड़े जमीन वालों से दान दिलाया। उस गाँव में करीब करीब सभी बड़े जमीन वालों से दान मिला। एक गाँव से सरपंच भागता फिरता था। एक बार मुँह दिखा दिया सो दिखा दिया, फिर सामने आने की बात नहीं करता था। मुखिया और बड़े कहलाने वालों के बिना गाँव में कुछ काम नहीं हो सकता। इस परंपरा को जल्दी तोड़ना चाहिए, ऐसी तीव्रता मन में आती थी। साथी भाई को लेकर वहाँ दर-दर घूमे। गाँव बड़ा था। मुहल्लावार सभाएँ हुईं। रात में सभी लोगों को सोचने के लिए समय दिया। सुबह दुबारा गये और करीब ७०-८० कट्ठा भूमि दान में मिली।

एक दिन हमारी पदयात्रा का लंबा सफर था, दस मील चलना था। प्रातःकाल की मंगल बेला में ही एक एकड़ का दान मिल चुका था। बिछुड़े हुए बच्चे को माँ के पास पहुँचाने का संतोष हमारे मन में था। पदयात्रा आरंभ हुई। बीच में जहाँ जहाँ लोग दिखे, मिलते गये। आकाश में आज सूर्यनारायण आँखें मूँद कर बैठे थे, बादलों ने उनके मुख को छिपा लिया था और एकदम वातावरण में जोरों से हवा बहने लगी, बिजली चमकने लगी और दूर दूर से जैसे पानी बहता हुआ दिखता है, वैसे काले बादल नजदीक आते हुए दिखने लगे। सभी लोग भाग रहे थे, 'पानी आ रहा है, पानी आ रहा है !' हमारे साथियों ने भी गति बढ़ायी। हमारी टोली की सेनापति है हमारी दो साल की बच्ची—अमी। साइकिल पर सबसे आगे जा रही थी। हवा जोरों से बहने लगी थी। बारिश में ओले गिरने की संभावना थी। मेरे पाँव आगे बढ़ नहीं रहे थे। हवा जोरों से दूसरी दिशा में खींचती जा रही थी। मेरा शरीर एक दिशा में था, दिल था दूसरी दिशा में अमी के पास। लेकिन अब तो कुछ दिखता ही नहीं था, साथी का झोला पकड़ कर जैसे-तैसे कदम बढ़ा रही थी। आसमान में बिजली की चमक, बादलों का गरजना और पानी की मार। तीर की मुआफिक पानी शरीर में चुभता था। शरीर, कपड़े पूरे भीग गये थे। ठोकर खाते खाते, इधर-उधर डोलते हुए जैसे तैसे एक पंचायत के मकान में जा घुसे। परंतु वह मकान भी सिर्फ कहने मात्र का मकान था। पूरा भीग गया था। करीब दो घंटे तक जोरों से बारिश होती रही। दो घंटे के बाद भी बूँद-बूँद गिर रही थी। आसमान धीरे-धीरे खुल रहा था। इतने में सहसा हमारा ध्यान दूर क्षितिज पर गया। नीले बादलों से आच्छादित पहाड़ की कतार की पृष्ठभूमि में पहाड़ की एक दूसरी कतार खड़ी थी–बर्फ से आच्छादित श्वेताम्बरी गिरिमाला ! सूरज के किरण बर्फ में चमक रहे थे। लगता था, मानो घनश्याम प्रभु के धवल मुकुट का मणि चमक रहा हो। किसी ने कहा, "यह है हिमालय की पहाड़ियाँ !"

हम नतमस्तक थे। आज का दिन धन्य था ! प्रातः बेला में हृदयहिमालय से बहती कारुण्यगंगा में स्नान हुआ और सुबह में ही अपने देश के करोड़ों हृदय का जो परधाम है, ऐसे पर्वतशिरोमणि हिमालय का प्रथम दर्शन हुआ।" आतर-सृष्टि और बाह्य सृष्टि के सुभग सौंदर्य का सहज मिलन !

—मीरा भट्ट

'दोपहरिया के डाकू !'

बिहार के बेलसण्ड अंचल में गत १५ अप्रैल से श्री प्रदीप बाबू एवं मुसाफिर बाबू के मार्गदर्शन में 'बीघा कट्ठा अभियान' प्रारंभ हुआ। इस टोली में उत्तर प्रदेश से मैं एवं राजस्थान के श्री रामगोपाल गौड़ शामिल हुए हैं। १८ अप्रैल को हमारी टोली का कार्यक्रम दसतारा ग्राम में था। इस ग्राम के प्रमुख श्री रामबहादुर राय के बैठका पर सभा का आयोजन किया गया था। एक ही चर्चा गूँज रही थी— "ये विनोबा बाबा के सिपाही हैं, जमीन माँग कर गरीबों को देने के लिए आये हैं। लेकिन कौन देगा इतनी महँगी जमीन, जो हम गरीबों को मिले ?"

निराशाजनक शब्दों में शोरगुल को भंग करते हुए हमारी खंजड़ी बोल उठी–

"हर देश में तू, हर भेष तू।
तेरे नाम अनेक, तू एक ही है ॥"

गीत समाप्त होते ही सभा में से एक भाई खड़ा होकर कहता है : "मैं अपने हिस्से में से एक कट्ठा जमीन गरीब भाई के लिए देता हूँ।"

प्रदीप बाबू के पूछने पर उसने कहा, "मेरे पास केवल पाँच कट्ठा ही जमीन है। उसमें से मैं दे रहा हूँ।" बहुत समझाने पर भी उसने करुण स्वरों में कहा, 'मैं गरीब हूँ, इसलिए मेरी जमीन आप नहीं ले रहे हैं।"

जब दानपत्र भरा गया, उस समय अपार खुशी उसके चेहरे पर झलक रही थी। वह था देवनन्दन, जिसने आज इस गाँव को प्रकाश दिया और जिसके कारण सारे गाँव ने अपना-अपना हिस्सा दान में दिया।

दूसरे समय कोठिया ग्राम में कार्यक्रम था। यहाँ पहुँच कर राम इकबालजी से भूदान की चर्चा चल रही थी। अधेड़ उमर के इस बाबा ने दर्द भरे स्वरों में कहा : "मैंने भले बुरे सारे कर्म करके यह जमीन इकट्ठा किया और आज गरीब के लिए मुफ्त में माँगने चलल हो। पाँच छह सौ रुपया कट्ठा की जमीन हलुआ खा खा के इकट्ठा कइली है। अबरन छीनाय तबे देब, अइसन नाही देब !"

शाम के समय हम लोगों का कार्यक्रम भीसा ग्राम में था। यहाँ के प्रमुख बाबा रामप्रसादजी से भूदान की चर्चा प्रारम्भ हुई, तब उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा, "एक जमाना था कि जब चोरी करने वाले लोग सेंध लगा कर थोड़ा बहुत सामान उठा ले जाते थे। पर समय बदला और डाकू बने, जो बन्दूक से भय दिखा कर सारा का सारा सामान उठा ले जाते थे। लेकिन अब इन 'दोपहरिया के डाकुओं' से बचना बड़ा मुश्किल हो रहा है !"

हम लोग कई क्षण बैठे सोचते रहे, मगर उनकी बात समझ में नहीं आयी।

बाबा के होठों पर हल्की सी मुस्कराहट दौड़ गयी। संकेत करते हुए कहा, "ये हैं बाबा विनोबा के डाकू ! जिस जमीन के लिए मैंने प्राणों तक की बाजी लगायी थी, इसे बचाने में और अब मैं ही वह आदमी हूँ, जो बिना किसी तकलीफ के खुशी खुशी जमीन दे रहा हूँ। आज मेरा मन हलका हो रहा है कि जो मैंने कभी दूसरों का हक दबाया हो, वह प्रेम करुणा और करुणा के द्वारा मैं दे रहा हूँ। इसलिए इनसे बड़ा डाकू और कौन हो सकता है ? बाबा के रूप में भगवान् चल रहा है।'

मैं तो आज इनके इस संवाद को सुन कर खुशी से ओतप्रोत हो रहा था, तभी बाबा ने कहा, "प्रसाद तैयार है !" प्रसाद पाने के बाद आश्रम की ओर बढ़ चला।

हमारी टोली को १५ अप्रैल से ८ मई तक 'बीघा कट्ठा अभियान' में ४०० कट्ठा जमीन प्राप्त हुई। ४० दाताओं द्वारा २५० मील की पदयात्रा हुई। लगभग १०२ कट्ठा भूमि २३ आदाताओं में वितरित भी की गयी।

—देवीदीन पाण्डेय

हम कहाँ जा रहे हैं ?

हरिश्चन्द्र पंत

> इतिहास इस बात का साक्षी है कि विश्व की सभी महानतम संस्कृतियों के ह्रास का मुख्य कारण उनकी बढ़ती हुई सैन्य-शक्ति था। सैन्य-शक्तियों के चरमोत्कर्ष के बाद ही रोम और यूनान अवनति के गड्ढे में जा गिरे। किसी देश के आधार उसके नागरिक होते हैं। उनका जीवन उनके सच्चे विकास की झाँकी होता है, पर यदि वह देश अपनी सारी शक्ति फौजी योजनाओं के विकास में लगा देता है तो न वह राष्ट्र तरक्की करता है, न वहाँ के नागरिकों का जीवन।
>
> —ट्वायनबी

इतिहास में पाषाण-युग का वर्णन आता है, मनुष्य तब पत्थरों के हथियारों का प्रयोग करता था, जिसके पास जितना तीखा, मजबूत तथा भारी पत्थर होता था, *उतना ही शक्तिशाली वह व्यक्ति समझा* जाता था, आज भी हम पाषाण-युग में हैं! आज सभी 'महान्' कहे जाने वाले राष्ट्रों की यह चेष्टा है कि उनके पास पड़ोसी से अच्छे हथियार हों। हथियारों के निर्माण में दुनिया भर में होड़-सी मच रही है। आज कृषि, कला, साहित्य, सुधरी हुई समाज-व्यवस्था आदि के लिए *विभिन्न राष्ट्रों में आपसी होड़ नहीं है, होड़* हो रही है घातक-से-घातक अस्त्रों के निर्माण में! आज प्रश्न है कि क्या हम सही मार्ग पर चल रहे हैं!

क्या किसी राष्ट्र की प्रगति उसकी सैन्य शक्ति पर ही निर्भर है? क्या विश्व-शान्ति हथियारों के ही निर्माण से हो सकती है? कल्पना कीजिये कि दो पड़ोसी हैं, दोनों एक-दूसरे से डरते रहते हैं। एक पड़ोसी अपनी हिफाजत के लिए अपने मकान में बहुत-सा बारूद जमा कर लेता है। यदि पड़ोसी के मकान में किसी कारण से आग लग जाती है तो क्या उसका मकान बच जायगा? पड़ोसी को तो केवल अग्नि का खतरा है, पर उसको अग्नि और बारूद, दोनों का खतरा है।

विश्वविख्यात इतिहासकार श्री ट्वायनबी लिखते हैं, "इतिहास इस बात का साक्षी है कि विश्व की सभी महानतम संस्कृतियों के ह्रास का मुख्य कारण उनकी बढ़ती हुई सैन्य-शक्ति था। सैन्य-शक्तियों के चरमोत्कर्ष के बाद ही रोम और यूनान अवनति के गड्ढे में जा गिरे।......किसी देश के आधार उसके नागरिक होते हैं, उनका जीवन उनके सच्चे विकास की झाँकी होता है, पर यदि वह देश अपनी सारी शक्ति फौजी योजनाओं के विकास में लगा देता है, तो न वह राष्ट्र तरक्की करता है, न वहाँ के नागरिकों का जीवन।"

पुरातन काल में युद्ध का एक विधान होता था। लड़ने वाले राष्ट्रों की यह पूरी चेष्टा होती थी कि नागरिक युद्ध की हलचलों से दूर रहें। आबादियों से बहुत दूर खुले मैदानों में युद्ध होते थे। रात्रि के समय युद्ध नहीं होते थे, यदि द्वन्द्व-युद्ध से फैसला हो सके तो कर लिया जाता था। आज के युद्धों में विरोधी राष्ट्रों की चेष्टा होती है कि घने आबादी वाले नगरों को अधिक नुकसान पहुँचाया जाय, ताकि शत्रुपक्ष की जनता घबरा उठे, हवाई हमले अधिकतर रात्रि के समय होते हैं। द्वन्द्व-युद्ध की बात तो कल्पना से बाहर की बात है!!

हजारों वर्ष पहले मिस्र में शत्रु पक्ष को हानि पहुँचाने के लिए युद्ध के समय विषधर साँपों को प्रयोग करना एकदम वर्जित था, पर इस बीसवीं शताब्दि में मुसोलिनी ने अबीसीनिया को गुलाम बनाने के लिए खुले आम जहरीली गैसों का प्रयोग कर सारे अन्तर्राष्ट्रीय विधान तोड़ दिये। पिछले महायुद्ध में अमरीका ने जापान में *अणुबमों का धड़ल्ले से प्रयोग किया और* युद्ध के सारे अन्तर्राष्ट्रीय नियम ताक पर रख दिये। पुरातन काल में युद्ध के नियमों की अवहेलना करना जघन्य कर्म समझा जाता था, क्या आज के राजनीतिक नेता इन विधानों को मानने के लिए तत्पर रहते हैं?

युद्ध पाशविकता और नर-संहार का विश्वव्यापी आन्दोलन होता है। इस आन्दोलन का जनक परमात्मा नहीं, स्वयं मनुष्य होता है। फिर ऐसे आन्दोलन की आवश्यकता ही नहीं होनी चाहिए, जिससे लाभ कुछ नहीं होता, हानि कल्पनातीत होती है।

> **जब तक बड़े राष्ट्र शोषण और हिंसा की भावना नहीं छोड़ेंगे, जिसकी स्वाभाविक परिणति युद्ध और आगे जाकर अणुयुद्ध है, तब तक शान्ति की दुनिया में कोई उम्मीद नहीं है।**
>
> —महात्मा गांधी

पाषाण-युग से आज तक युद्ध की घातकता और उस पर व्यय बढ़ता जा रहा है। फिर भी हम कहते हैं कि मानवता के चरण प्रगति की ओर बढ़ रहे हैं!! हारवर्ड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सोरोकिन ने युद्ध पर एक शोध-पत्र लिखा है, उन्होंने इस विषय का गहन अध्ययन किया है। वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि हर शताब्दि में उसकी पहली शताब्दि से अधिक युद्ध हुए हैं और इन युद्धों में मरने वालों की संख्या में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी है। युद्ध की गति का जो 'इन्डेक्स' (सूची) उन्होंने बनाया है, वह इस प्रकार है—बारहवीं शताब्दि में १८, तेरहवीं शताब्दि में २४, चौदहवीं शताब्दि में ६०, पन्द्रहवीं शताब्दि में १०० और बीसवीं शताब्दि में ३०८०। इस प्रकार युद्ध के व्यय में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती गयी है। श्री जेरोम डेवीस अपनी पुस्तक 'पीस, वार एण्ड यू' में लिखते हैं कि सीजर के समय युद्ध में एक व्यक्ति की हत्या करने में ७५ सेन्ट व्यय होते थे, नेपोलियन के समय ३००० डालर खर्च होने लगा, अमेरिकन गृहयुद्ध के समय २१००० डालर और द्वितीय महायुद्ध के दिनों में ५०००० डालर होने लगा!

अमेरिका दूसरे महायुद्ध के अन्तिम चरण में लड़ाई में शामिल हुआ था। इस पर भी मोटे अन्दाज से उसका इस लड़ाई में व्यय ४००,०००,०००,००० डालर आँका जाता है। यदि वह आरम्भ से ही युद्ध में शामिल होता, तो उसे कितना व्यय करना पड़ता, यह सोचने की बात है। परमात्मा न करे तीसरा महायुद्ध हो! यदि तीसरे महायुद्ध के आरंभ में ही अणुअस्त्रों का प्रयोग होने लगे तो कितना व्यय होगा? फिर ऐसी महँगी खरीददारी करना, जिसमें लाभ होना बिलकुल असम्भव है, कहाँ तक समझदारी का काम है? क्या तीसरे महायुद्ध में पृथ्वी के इस ग्रह में जीवधारियों का अस्तित्व रहेगा, यह भी एक विचारणीय प्रश्न है।

हरएक युद्ध के बाद मुद्रास्फीति, बीमारियाँ, भुखमरी तथा अवैध सन्तानों की उत्पत्ति होती है। कोई भी युद्ध अन्तिम युद्ध नहीं होता, युद्ध के दौरान में प्रत्येक राष्ट्र का कथन होता है कि वह प्रजातंत्र को बचाने के लिए लड़ रहा है, पर युद्ध के दिनों में जनता के हाथों से सारी शक्ति निकल कर सेना के हाथों में आ जाती है और नाममात्र के लिए प्रजातान्त्रिक शासन रहता है। क्या प्रजातंत्र को बचाने के लिए प्रजातान्त्रिक उपाय नहीं हो सकते? युद्धों के होने को रोका जा सकता है, क्योंकि कुछ मनुष्यकृत कारणों से ही युद्ध आरंभ होते हैं। यदि कौरव पाण्डवों को पाँच गाँव दे देते तो महाभारत का युद्ध नहीं होता। यदि *प्रथम महायुद्ध के पश्चात् अन्य राष्ट्र भी* जर्मनी के समान अपनी सैन्य शक्ति कम रखते और उसे नहीं बढ़ाते तो दूसरे महायुद्ध के कारण नहीं बनते। आज भी सब बड़े राष्ट्र यदि आणविक हथियार बनाना बन्द कर दें और आपसी मनोमालिन्य के स्थान पर पारस्परिक प्रेम भावना का संचार होने लगे तो तीसरा युद्ध किसी हालत में नहीं हो सकता।

*कुछ सौ वर्ष पहले योरप में द्वन्द्व-*युद्धों का जिनको 'ड्यूएल' कहते हैं, बहुत प्रचलन था, पर अब योरप में 'ड्यूएल' एक घृणित कर्म और असभ्यता का चिह्न समझा जाता है। आज वहाँ उसका अस्तित्व ही उठ गया है, जब कि किसी समय साधारण-सी साधारण बात पर वहाँ द्वन्द्व-युद्ध हो जाते थे। यदि युद्ध भी असभ्यता का चिह्न और घृणित कर्म समझा जाने लगे, तो फिर युद्ध का भी अस्तित्व मिट सकता है। पहले भारत में सती-प्रथा थी, जो अब इतिहास की वस्तु हो गयी है। हरएक भारतीय जब इसका वर्णन पढ़ता है, तो शर्म से झुक जाता है, इसी तरह युद्ध के लिए भी भावना बदलनी पड़ेगी। आगामी पीढ़ियाँ अपने पूर्वजों के युद्धों का वर्णन सुन कर शर्म से झुक जाय, ऐसी विचारधारा के बीज आज बोये जायँ, जो भविष्य में खूब फूलें-फलें, तो हम कह सकेंगे कि हम ठीक *मार्ग पर चल रहे हैं, अन्यथा नहीं।*

प्रत्येक सम्पन्न राष्ट्र अविकसित राष्ट्र की सहायता करे, अन्तर्राष्ट्रीय चालबाजी जघन्यतम पाप समझा जाय और कोई उसको करने की चेष्टा न करे, सब राष्ट्रों में 'जय जगत्' की भावना का संचार हो, अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री-संगठनों को अधिक-से-अधिक आर्थिक सहायता दी जाय, प्रत्येक देश में ऐसे आश्रमों की नींव पड़े, जिनमें विभिन्न देशों के प्रतिनिधि रहें और उस देश के आर्थिक विकास में मदद दें, अन्तर्राष्ट्रीय सहकार-आन्दोलन की वृद्धि हो, विदेशी भाषाओं के अध्ययन का हर देश में प्रबन्ध हो, विभिन्न देश के विद्वानों का आपसी सम्पर्क बढ़े और ऐसे साहित्य की श्रीवृद्धि हो, जो विश्वशान्ति का प्रचार करे तभी हम कह सकेंगे कि हम ठीक मार्ग पर चल रहे हैं; अन्यथा आज भी हम पाषाण युगीन मानव हैं और चिरन्तन काल से पाषाण युगीन राह पर चल रहे हैं!

सर्वोदय-साहित्य जीवन का साहित्य है

एक समय था, जब कि साहित्य लिखा नहीं जाता था, महापुरुषों के सद्वचन, उनका ज्ञान ही साहित्य था। अपने जीवन के अनुभव वे महापुरुष अपने शिष्यों को समझाते थे, वही कालान्तर में साहित्य बन जाता। उनके वचनों को मुखाग्र कर लिया जाता और वही जनता का अवलम्बन था, वही उसका आधार था। उस साहित्य में इतनी अधिक शक्ति होती थी कि समाज में प्रेम, अहिंसा की भावना मजबूत होती गयी। एक ऐसा भी जमाना आया था, जब कि उच्च साहित्य को जनसाधारण द्वारा पढ़ा जाना अच्छा नहीं माना जाता था। हमारे यहाँ के साधु-महात्मा अपनी पुस्तक छपवाना भी पसन्द नहीं करते थे। पर अब विज्ञान के युग में छापखाने हैं, साहित्य छापखाने में छपने लगा है। मनुष्य के कलुष, राग-द्वेष को दूर कर अहिंसक विचार लाने में साहित्य बहुत सहायक है। मनुष्य की कमजोरियों को दूर करने का काम साहित्य करता है। अच्छे साहित्य की सदैव समाज में जरूरत रही है।

साहित्य ने मानव-समाज में अद्भुत क्रांति की है। गांधी विनोबा का साहित्य भी ऐसा ही साहित्य है, उसे समाज में अधिक-से-अधिक फैलना चाहिए, जिससे जनता में अहिंसक क्रांति की भावना फैले।

साहित्य हमें विनय सिखाता है। सच पूछिये तो साहित्यकार के मन के अन्दर जितना विनय होगा उतना ही अधिक शाश्वत उसका साहित्य होगा। हमारे स्वामी तुलसीदास कितने विनयशील थे, तभी तो आज उनकी रामायण घर घर में पढ़ी जाती है। उन्होंने कहा है :—

कवित्त विवेक एक नहीं मेरे
सत्य कहहुँ नहीं लाइन मेरे

उनकी रामायण आज झोंपड़े झोंपड़े में पहुँची है। उसका स्वाध्याय होता है। सब लोग उसका मनन करते हैं, गुनते हैं।

मैं सर्वोदय साहित्य पढ़ता रहता हूँ। वह मुझे प्रिय भी है। तुलसी की रामायण इसलिए प्रिय नहीं हुई कि उसमें राम की जीवनी है, बल्कि इसलिए कि उसमें जीवन के हर पहलू को रखा गया है, उस पर विचार किया जाता है। कोई भी जीवन का अंग नहीं छूटा है। रामायण तो जीवन का काव्य है।

आज भी उसी परम्परा में अच्छे साहित्य लिखे जाते हैं। सर्वोदय-साहित्य ऐसा ही साहित्य है। पर आज की दुनिया में ऐसे विचारों की ओर लोग कम ध्यान देते हैं। लेकिन मेरा तो विश्वास है कि आगे यही साहित्य हमारे जीवन को प्रकाशित करेगा, हमें सच्चा रास्ता दिखायेगा। इसलिए हमारा प्रयत्न रहना चाहिए कि रामायण की भाँति सर्वोदय साहित्य भी घर घर पहुँचे, लोग उसे पढ़ें और समझें। हमें निराश नहीं होना चाहिए। पाँच सौ वर्ष तक ईसा को उनके देश में कोई नहीं जानता था, पर फिर प्रचार के कारण सारे संसार में ईसाई धर्म फैला। इसी तरह गांधी के विचार भी आज भले ही लोग न समझते हों, पर कुछ समय बाद इन्हीं विचारों की पूजा होगी।

सर्वोदय साहित्य, जैसा कि मैंने कहा, जीवन का साहित्य है। सर्वोदय-विचारक केवल लिखने के लिए नहीं लिखता, वह अपनी जीवन की तपस्या को लिखता है, अपने अनुभव लिखता है।

और आज के कठोर समय में समाज के जीवन का दिग्दर्शन, जीवन दृष्टि हमें सर्वोदय साहित्य में मिलती है।*

—मिश्रीलाल गंगवाल

*इंदौर के "सर्वोदय साहित्य भंडार के उद्घाटन-भाषण से।

अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति के प्रस्ताव

[अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक १७ से २३ जून तक सदाकत आश्रम, पटना में हुई। प्रबन्ध समिति ने जो प्रस्ताव स्वीकृत किये हैं, वे यहाँ दिये जा रहे हैं। —सं०]

बीघा-कट्ठा अभियान

श्री विनोबाजी की प्रेरणा से पिछले साल बिहार में भूदान की संकल्पपूर्ति के लिए 'बीघा कट्ठा आंदोलन' शुरू हुआ था। परन्तु बाढ़ के कारण उस काम को उस समय स्थगित करना पड़ा। बाद में इस साल बिहार सर्वोदय मंडल ने १५ अप्रैल से १५ जून तक आंदोलन को प्रान्त भर में सघन रूप से चलाने का निश्चय किया। अखिल भारत सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति ने इस निर्णय का स्वागत किया और इस अभियान में भाग लेने के लिए सारे देश के सेवकों को आवाहन किया। खुशी की बात है कि दो महीने के इस प्रयत्न में दूसरे प्रांतों के अनेक सेवकों ने अपना समय दिया।

बिहार के अधिकांश सर्वोदय-सेवकों ने तथा विभिन्न सार्वजनिक कार्यकर्ता, राजनैतिक पक्षों के लोग तथा पंचायतों के कार्यकर्ता व सरकारी अधिकारी वर्ग आदि सबने इसमें शक्ति लगायी और मदद की। इस प्रयत्न के परिणामस्वरूप निम्न काम हुआ :—

(१) दाता-संख्या	८,००७
(२) प्राप्त जमीन, कट्ठा	१,३३,४५७
(३) वितरित जमीन, कट्ठा	१,०५,३१२
(४) आदाता परिवार-संख्या	७,३५५

इस तरह पिछले साल की संग्रहीत जमीन को जोड़ कर 'बीघा-कट्ठा आंदोलन' द्वारा कुल भूमि २,८४,०७३ कट्ठा प्राप्त हुई है। इस प्रयत्न से जनता की सहृदयता का दर्शन हुआ और कार्यकर्ताओं की श्रद्धा बढ़ी है। जिन दाताओं ने जमीन का दान दिया तथा जिन सेवकों ने और अन्य सज्जनों ने इस प्रयत्न में मदद की, प्रबंध समिति उन सबका अभिनन्दन करती है। समिति यह भी आशा करती है कि इस प्रयत्न के परिणामस्वरूप जहाँ-जहाँ विशेष अनुकूल वातावरण तैयार हुआ है, वहाँ प्रांत के सर्वोदय-सेवक काम को आगे बढ़ाने की योजना करेंगे।

'लेवी' कानून सम्बन्धी बिहार सरकार की नीति

भूदान आंदोलन ने भूमि-समस्या के हल का एक नया विचार और मार्ग प्रस्तुत किया। उसके व्यापक प्रचार और भूदान प्राप्ति का कार्य सबसे अधिक बिहार में हुआ। यहीं पर प्रदेश की भूमिहीनता मिटाने के लिए ३२ लाख एकड़ भूमि प्राप्त करने का संकल्प भी किया गया। विनोबाजी की इस प्रदेश की पहली पदयात्रा के समय २२ लाख एकड़ भूमि मिली थी, दूसरी बार की पदयात्रा में संकल्प-पूर्ति की दृष्टि से शेष १० लाख एकड़ की प्राप्ति के लिए 'बीघा-कट्ठा' कार्यक्रम उठाया गया। ता० १५ अप्रैल से २० जून '६२ तक विशेष अभियान भी चला, जिसमें प्रदेश के अलावा देश के अन्य भागों से भी कार्यकर्ता आकर लगे।

इस प्रकार भूमिहीनता निवारण के कार्य में जनशक्ति लगी और लाखों एकड़ भूदान मिला। वितरण-कार्य यद्यपि धीमा चला, फिर भी पहले प्राप्त भूमि में से ढाई लाख एकड़ भूमि भूमिहीनों में बाँटी जा चुकी है। इससे जनता में एक नव-आशा का संचार हुआ। लोकमानस दो विचारों से प्रभावित हुआ। एक यह कि भूमिदान की भूमि में भूमिहीन का भी हक है और दूसरा यह कि भूमिहीनता शांति के मार्ग से मिट सकती है, मिटनी चाहिए।

लोकमत और लोकशक्ति की इस अनुकूलता को पाकर बिहार-सरकार ने भूमि-हदबन्दी कानून के साथ 'लैण्ड-लेवी' के विचार को भी स्वीकार किया। 'लैण्ड-लेवी' को कानून में दाखिल करके बिहार-सरकार ने भूमिदान की भूमि में भूमिहीन का भी हक है और भूमिहीनता मिटाने के लिए आवश्यक भूमि उन्हें दी जायेगी, इन दोनों विचारों को एक तरह मान्य किया। बिहार सरकार के इस प्रगतिशील कदम का सर्वोदय विचारवालों ने भी स्वागत किया।

यह खेदजनक है कि जब बिहार सर्वोदय मंडल के ३२ लाख एकड़ भूमि-प्राप्ति के संकल्प को पूरा करने के लिए प्रदेश भर में 'बीघा कट्ठा अभियान' चल रहा था और देश के कार्यकर्ताओं की शक्ति उसमें लगी थी, बिहार सरकार लेवी कानून को लागू करने के दो तीन सप्ताह बाद ही उसके स्थगन का फैसला किया। इसका भूदान-अभियान पर भी असर पड़ा और लोगों में बुद्धिभेद पैदा हुआ, क्योंकि 'बीघा कट्ठा' आंदोलन में जो भूमि दी जायेगी, उतनी उस 'लेवी' में मिनहा होगी, ऐसी धारा भी उस कानून में रखी गयी थी।

'लेवी'-कानून संबंधी बिहार सरकार के इस रुख से एक दुविधा की स्थिति उत्पन्न हुई है। प्रबंध समिति का निश्चित मत है कि 'लेवी' से प्राप्त भूमि के द्वारा प्रांत के सारे भूमिहीनों को आवश्यक भूमि देने का जो वादा सरकार ने किया है, यदि उससे वह विचलित होती है, तो भूमिहीनों को भारी निराशा होगी। सरकार का वचन-भंग होगा और इससे एक विषम स्थिति के निर्माण की संभावना बनेगी। प्रबंध समिति आशा करती है कि सरकार शीघ्र इस दुविधा की स्थिति का अंत करेगी और कोई ऐसी कार्रवाई नहीं होगी, जिस कारण जनतंत्र पर से जनता का विश्वास ही विचलित हो जाय।

देवघर मद्यनिषेध-सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव

[देवघर में ७-८ जुलाई को बिहार राज्य नशाबंदी सम्मेलन हुआ था। उसमें स्वीकृत महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

नशा-निषेध भारतीय संविधान का निर्देश है। उसका पालन केन्द्रीय सरकार, राज्य-सरकार तथा प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। दुःख और लज्जा का विषय है कि संविधान को स्वीकृत हुए १२ वर्ष हो चुके हैं, परन्तु बिहार-सरकार ने इस दिशा में अब तक कोई कदम नहीं उठाया। नशा मनुष्य के लिए शारीरिक, मानसिक, आर्थिक और आध्यात्मिक, सभी पहलुओं से तथा सामाजिक जीवन पर होने वाले उसके दुष्परिणामों के कारण वैसे भी सब दृष्टियों से हेय है।

दो पंचवर्षीय योजनाएँ समाप्त हो चुकी, तीसरी चालू है। इन योजनाओं में लोककल्याण को ध्यान में रख कर बहुत-से विषयों का समावेश किया गया, पर खेद है कि नशा-निषेध के महत्त्वपूर्ण कार्य की कोई योजना नहीं की गयी। आश्चर्य है कि सरकार की समझ में यह बात नहीं आती कि यह योजना के दूसरे कार्यक्रमों के द्वारा जो लाभ जनता को पहुँचाना चाहती है, उसका बहुत-सा अंश नशाखोरी के कारण नष्ट हो जाता है। नशाबंदी के संविधान के निर्देश का पालन न करने का सबसे बड़ा बहाना पंचवर्षीय योजना की सफलता के लिए पैसे का जुटाना है। लाखों परिवारों को नशे का चस्का लगाना, उनके बाल-बच्चों व कुटुम्बियों के जीवन को भ्रष्ट करना, उनके सामाजिक तथा नैतिक जीवन को नष्ट करना और उसके द्वारा लाखों की सम्पत्ति बरबाद कराके उनके ही कल्याण की योजना के लिए धन बटोरना कौनसी बुद्धिमत्ता का काम है?

भारतवर्ष की नैतिक और भौतिक उन्नति व समृद्धि के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि यहाँ पूर्णतः नशाबंदी हो। महात्मा गांधी ने भी इस विषय पर काफी जोर डाला था। नशे की दुकानों पर उन्होंने धरना दिलवाया, इस हेतु देशवासियों से उन्होंने नाना प्रकार की तकलीफें तथा जेल-यातनाओं के रूप में अग्नि-परीक्षा दिलवाई और अंग्रेजी राज्य से "गांधी-इरविन पैक्ट" के नाम से जब समझौता किया, तब भी उन्होंने नशाबंदी के सिद्धांत को रख कर नशे की दुकानों पर "पिकेटिंग" करने-कराने के अधिकार को अक्षुण्ण बनाये रखा। इतना ही नहीं, उन्होंने यह भी कहा कि यदि वे एक घंटे के लिए भी भारत के 'डिक्टेटर' बने, तो सबसे पहले वे शराब की दुकानें बन्द करेंगे और वह भी बिना मुआवजे के।

उनकी इस इच्छा की पूर्ति आज तक नहीं हो सकी है।

यह सम्मेलन महसूस करता है कि नशाबंदी के संबंध में बिहार-सरकार को अविलम्ब अपनी नीति स्पष्ट करनी चाहिए, ताकि इस बारे में कोई गलतफहमी न रहे। समाचार-पत्रों से ज्ञात हुआ है कि बिहार-सरकार के मद्यनिषेध-बोर्ड ने २९ जून, '६२ की अपनी बैठक में मद्य-निषेध के लिए एक दसवर्षीय योजना तैयार की है। यह सम्मेलन उसे अपर्याप्त तथा अव्यवहारिक समझता है।

इस सम्मेलन की राय में यह जरूरी है कि सरकार इस सबन्ध में ऐसी योजना बनाये, जिससे तृतीय पंचवर्षीय योजना के अवधि-काल में ही सारे बिहार राज्य में पूर्ण रूप से नशाबंदी हो जाय।

सरकार की ओर से निश्चित अवधि में सारे प्रान्त में पूरी नशाबन्दी करने की घोषणा को यह सम्मेलन अत्यन्त महत्त्व देता है, क्योंकि नशाबन्दी के पक्ष में सरकार की सर्वसामान्य नीति यदाकदा जाहिर होते रहने पर भी प्रत्यक्ष व्यवहार में उसकी ओर से अक्सर उस नीति की अवहेलना ही हुई है। अतः सरकार का इरादा लोगों को साफ-साफ मालूम हो जाना जरूरी है। सरकार इस संबन्ध में अपनी नीति शीघ्र निश्चित करके घोषित करे और महात्मा गांधी के जन्म-दिन, २ अक्टूबर '६२ से उसके अनुसार सक्रिय कदम उठाये।

सम्मेलन यह भी महसूस करता है कि कानून से सब प्रकार की शराब और मादक द्रव्यों को बनाने, रखने, बेचने तथा सेवन आदि पर पाबन्दी होने के साथ-साथ नशाखोरी के खिलाफ और नशाबंदी के पक्ष में व्यापक शिक्षण के द्वारा जनमत तैयार करना इस ध्येय की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। नशाबन्दी चाहने वाले हर नागरिक से, खास करके रचनात्मक तथा सार्वजनिक कार्यकर्ताओं से यह सम्मेलन अनुरोध करता है कि वे नशाबन्दी को सफल बनाने के लिए हर संभव तरीके से—जिसमें लोकशिक्षण की दृष्टि से शराब की दुकानों के सामने शांतिपूर्ण 'पिकेटिंग' शामिल है—नशाबन्दी के पक्ष में वातावरण निर्माण करें, नशे के शिकार हुए व्यक्तियों से सम्पर्क करें, प्रेमपूर्वक उन्हें व्यसन-मुक्ति का रास्ता बतलायें, इस प्रकार की मुक्ति के लिए व्यवहारिक और मनोवैज्ञानिक, दोनों दृष्टियों से समाज तथा सरकार द्वारा आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करायें, भजन कीर्तन, इबादत आदि हर सम्प्रदाय के अनुकूल आध्यात्मिक कार्यक्रमों का प्रचार करें, शराब तथा अन्य मादक द्रव्य बेचने वाले भाइयों से भी समझ कर उनकी सहानुभूति प्राप्त करें। सरकार का तो यह कर्तव्य ही है कि वह लोगों के नैतिक और आर्थिक विकास के इस अत्यावश्यक कार्यक्रम में पूरा सहयोग और समर्थन दे। शराबबन्दी के पक्ष में प्रबल जनमत तैयार होने पर कोई भी सरकार, खासकर जनमत से बनने वाली सरकार, उसके विरोध में खड़ी नहीं रह सकेगी। और रहेगी तो उसे जनमत के विरोध का और अन्ततोगत्वा सविनय 'कानून-भंग' का खतरा मोल लेकर। सम्मेलन नशाबंदी परिषद से अनुरोध करता है कि वह इस सम्बन्ध में तफसील से कार्यक्रम बना कर उसे कार्यान्वित करने की ओर अग्रसर हो।

पंढरपुर में शांति-सेना शिविर

महाराष्ट्र सर्वोदय-मंडल की ओर से दक्षिण महाराष्ट्र के शांति-सैनिकों का एक शिविर १२ से १४ जून तक पंढरपुर में श्री रा० कृ० पाटिल के मार्गदर्शन में हुआ। १२ जून को 'पंचायत राज्य' विषय पर श्री पाटिलजी का भाषण हुआ। १४ जून को सुबह सब शांति-सैनिक और शहर के प्रमुख नागरिकों का प्रचार-जुलूस निकला। इसमें हाईस्कूल और कालेज के छात्र भी शरीक हुए। शहर में घूमने के बाद विट्ठल मंदिर में यह जुलूस गया। वहाँ जैन, मुसलिम, हरिजन बंधुओं के साथ मंदिर-प्रवेश हुआ। इस अवसर पर आचार्य भिसे की अध्यक्षता में सभा हुई। सभा में ईसाई, जैन, मुसलिम धर्मों के पंडितों ने भाषण करके सर्वधर्म समन्वय और शांति सेना के विचार का महत्त्व समझाया।

विनोबा-पदयात्रा समाचार

विनोबाजी की पदयात्रा ने असम में गुवालकुछी-पड़ाव पर ब्रह्मपुत्र नद पार करके २२ जून '६२ को दक्षिण कामरूप में प्रवेश किया। ३ जुलाई से ७ जुलाई तक मौसान आश्रम में पड़ाव रहा।

इन पाँच दिनों में कुल २३ ग्रामदान मिले। २२ जून से ७ जुलाई तक के सोलह दिनों में कुल ६२ ग्रामदान मिले।

७ जुलाई तक असम में कुल ग्रामदान ८४९ हुए हैं। जिलावार विवरण इस प्रकार हैं: लखीमपुर ४०७, दरंग १२२, शिवसागर १४२, गोवालपारा ४ और कामरूप १७४।

इस अंक में

अहमदाबाद से ५० हजार रु० एकत्र करने का संकल्प

आगामी सर्वोदय-सम्मेलन के लिए निधि संग्रहीत करने के बारे में विचार करने के लिए जिला सर्वोदय-मंडल की सभा अहमदाबाद में गत २४ जून को हुई। सभा में संमेलन की स्वागत-उपप्रमुख श्री सरलादेवी साराभाई, स्वागत-समिति के श्री नानुभाई मुजुमदार, गुजरात सर्वोदय-मंडल के मंत्री श्री किशनभाई त्रिवेदी उपस्थित थे। अहमदाबाद शहर और जिले में से निधि के लिए अधिक-से-अधिक रकम प्राप्त करने की दृष्टि से श्री रमेश व्यास प्रयत्न करेंगे। तय हुआ कि अहमदाबाद से सर्वोदय-सम्मेलन के लिए ५० हजार रु० प्राप्त किये जायँ।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव-भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६)   पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८६२३ इस अंक की छपी प्रतियाँ ८७२४   एक अंक १३ नये पैसे।

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा
वाराणसी : शुक्रवार | २७ जुलाई '६२ | वर्ष ८ : अंक ४३

ग्रामदान की योजना से

गरीबों को लाभ पहुँचेगा, भ्रष्टाचार दूर होगा और आत्मज्ञान का प्रकाश फैलेगा

विनोबा

[आजकल असम में ज्यों-ज्यों ग्रामदान की संख्या बढ़ रही है, त्यों-त्यों ग्रामदानी गाँव के ग्रामवासी अपना परंपरागत आलस्य छोड़ कर कुछ सक्रिय बन रहे हैं और अपनी समस्याओं के हल के लिए उनमें मनोमंथन चल रहा है। जब कभी मौका मिलता है, तो वे विनोबा के सामने अपनी शंकाएँ रखते हैं और विनोबा सरल भाषा में समझाते हैं। यहाँ पर एक पड़ाव पर हुए प्रश्नोत्तर दिये जा रहे हैं। —सं०]

प्रश्न : आज की 'प्लानिंग'—योजना—में ज्यादा खर्च गरीबों की उन्नति के लिए ही रखा जाता है, लेकिन गरीबों तक पहुँचता नहीं ! यह समस्या कैसे हल हो सकती है ?

उत्तर : वही व्यवस्था ग्रामदान में है। ग्रामदान में ग्राम-सभा के हाथ में ताकत आती है। ग्रामसभा में सिर्फ चुने हुए लोगों की ही नहीं, बल्कि सबकी आवाज का प्रतिनिधित्व होता है। यह नहीं कि सिर्फ चंद लोग ही ग्रामसभा में हों। गाँव के सब बालिग लोग ग्रामसभा में आते हैं। लोग अपनी जमीन की सब मिल्कियत ग्रामसभा को दे देते हैं। याने क्या होता है ! ग्रामसभा को सब अधिकार मिलते हैं। गाँव का हर बालिग गाँवसभा में आता है और सर्वसम्मति से काम होता है। ग्राम-पंचायत के सब अधिकार ग्रामदानी गाँव (असम प्रदेश) के ग्रामसभा को मिलते हैं। सरकार के साथ सीधा संपर्क आता है। ग्राम-सभा विचार करेगी और सर्वसम्मति से गाँव की योजना बनायेगी और खेती के विकास वगैरा के लिए सरकार से सीधी मदद पायेगी।

आज चुनाव के लिए अलग-अलग पार्टी के लोग खड़े होते हैं और आपके पास वोट माँगने के लिए आते हैं। मान लीजिये कि आसपास के ये दो-चार गाँव ग्रामदान हो गये, तो सब मिल कर तय करेंगे कि हमारे निर्वाचन क्षेत्र से हम हम फलाने मनुष्य को खड़े करेंगे। यह सर्वसंमति से तय होगा, तो उसको ही सब वोट मिलेंगे और पार्टी के लोग आयेंगे तो आप कहेंगे, आपकी कोई आवश्यकता नहीं, हम अपने मनुष्य को खड़े करेंगे। इस तरह से आपके लोग असेंबली में जायेंगे तो ग्राम-दान का राज्य होगा।

आज होता यह है कि सब सत्ता शहर वालों के हाथ में है। अस्सी प्रतिशत वोट गाँव के होते हैं, फिर भी गाँव के लोगों का राज्य नहीं है। शहर में जैसे चुनाव होते हैं, वैसे ग्राम-पंचायत के चुनाव होते हैं। अलग अलग राजनीतिक दल वाले लोग आते हैं और गाँव में आग लगा कर चले जाते हैं। इसलिए गाँव की ताकत दृढ़ नहीं होती। ग्रामदान से वह होगा। यह खूब समझने की बात है कि ग्रामदान होता है तो राजनीतिक दल खतम होते हैं, दलीय सरकार खतम होती है और जनता की सरकार होती है। आपके लोग असेंबली में जायेंगे तो जैसा गाँववाले चाहेंगे वैसा कानून होगा। आज कानून शहर के लोगों के अनुकूल होते हैं, उनके हित के होते हैं, उन्हीं की ताकत होती है। ग्रामदान से यह सब बदलेगा; तो योजना का रंग भी बदलेगा।

प्रश्न : आज दुनिया में हिंसा का इतना बोल-बाला है। ऐसी हालत में ग्रामदान में अहिंसा कैसे टिकेगी ?

उत्तर : सहज टिकेगी। आपको कहानी मालूम होगी कि सुंद और उपसुंद नाम के दो भाई थे। बहुत वीर थे। दोनों ने दुनिया को कब्जे में कर लिया, तब भगवान् ने देखा कि ये बहुत बलाढ्य हो रहे हैं तो उनकी तरफ तिलोत्तमा को भेजा। तिलोत्तमा बहुत सुंदर स्त्री थी। वह आयी और दोनों के सामने नाचने लगी। सुंद कहने लगा, मैं इससे शादी करूँगा और उपसुंद कहने लगा, मैं इससे शादी करूँगा। दोनों आपस में लड़ने लगे। दोनों के हाथ में गदा थी। सुंद ने गदा मारी उपसुंद को और उपसुंद ने गदा मारी सुंद को। दोनों के सिर फुट गये और दोनों मर गये। और तिलोत्तमा का राज्य हो गया। वैसा ही अहिंसा वाला बचेगा और उसका राज्य होगा। हिंसा करने वाले लड़ते रहेंगे और खतम हो जायेंगे। जो ग्रामदान में शामिल नहीं होगा, वह मार खायेगा और जो अपनी अकल स्थिर रखेगा, उसके पास दुनिया आयेगी। यह जो सवाल है कि ग्रामदान में अहिंसा कैसे टिकेगी, यह गलत सवाल है। अहिंसा ही टिकेगी।

> **आज गाँव में प्रेम, सहानुभूति, सब है; लेकिन पूँजी नहीं है। इसलिए गाँव-सभा को हर साल अपनी फसल का एक हिस्सा दान देना चाहिए। पूरे गाँव की चिंता होनी चाहिए। 'मेरा' नहीं, 'हमारा' होना चाहिए। मैं छोटा नहीं, एक देह में बँधा हुआ नहीं, मैं समाजव्यापी हूँ, ऐसा ज्ञान हो जाय, तो वह आत्मज्ञान हो गया।**

प्रश्न : आज सरकार में और सरकारी कारोबार में दुर्नीति बहुत दिखाई देती है। वह कब जायेगी ?

उत्तर : दुर्नीति ने कब से प्रवेश किया है ! अब आप जवाब दे रहे हैं कि स्वराज्य मिला तब से। स्वराज्य मिलने के बाद आप लोगों ने ही सरकार को चुना, तो आपने उनको वोट क्यों दिया ? और अभी फिर से क्यों चुना ?

बात यह है कि लोकतंत्र का आज नाम है। प्रातिनिधिक लोकतंत्र तो प्रतिनिधियों के जरिये चलता है। लोग जिनको वोट देते हैं, उनका राज्य चलता है और वे पाँच वर्षों तक राज्य चलाते हैं। गाँव के लोग देखते रहते हैं और सत्ता उनकी ही चलती है। गाँववालों की सीधी सत्ता चलेगी, तब उपाय निकलेगा। इसलिए गाँव-गाँव में सत्ता आनी चाहिये। टैक्स का ज्यादा-से-ज्यादा हिस्सा गाँव में ही खर्च होना चाहिए; तब दुर्नीति हटेगी। आज राज्य सत्ता पर अच्छे लोग हैं, बुरे नहीं। लेकिन राज्य तो अधिकारी, नौकर लोग चलाते हैं। ऊपर वाले मनुष्य नाम मात्र होते हैं। आज के 'डिस्ट्रिक्ट कमिशनर' के पास जितनी सत्ता है उतनी औरंगजेब के हाथ में भी नहीं थी। इसलिए विकेंद्रित सरकार की व्यवस्था चाहिए। अगर ग्राम-दान होता है, तो लोगों को अपनी इच्छा से राज्य चलाने का मौका मिलेगा। ग्राम-पंचायत होगी, तो ऊपर के झगड़े गाँव में आयेंगे। ग्रामदान में प्रेम की बुनियाद होती है, इसलिए झगड़े नहीं रहेंगे। सर्व-सम्मति से काम होगा। मैं यह कहता हूँ कि पंचायत राज्य अच्छा है, लेकिन उसको ग्रामदान की बुनियाद पर चढ़ाओ। यही असम-सरकार ने कानून में मान्य किया है। ग्रामदान की गाँवसभा को ग्राम पंचायत के सब अधिकार दिये हैं।

प्रश्न : ग्रामदान का विचार तो बहुत अच्छा है। लेकिन शंका होती है कि आत्मज्ञान के बिना ग्राम-दान में काम कैसे चलेगा ?

उत्तर : आत्मज्ञान के बिना ग्रामदान नहीं और ग्रामदान के बिना आत्मज्ञान नहीं। इसलिए जो अधिक सरल हो, वह पहले करना चाहिए। पहले मैट्रिक करना चाहिए, बाद में क्रमशः एम० ए०। ग्राम-दान मैट्रिक है। वह 'पास' होने के बाद आत्मज्ञान का 'क्लास' होना चाहिए। सबसे पहले मोह छोड़ना चाहिए। जकड़ने वाला कौनसा मोह होता है ? वह जमीन है, वह सबको बांध रखती है। इसलिए हम कहते हैं कि सबसे पहले इसका मोह छोड़ो। जमीन की मिल्कियत गाँवसभा को अर्पण कर दो, जमीन काश्त के लिए अपने पास रखो। अलग अलग काश्त करो, लेकिन सबसे पहले भूमिहीनों को, कम जमीन वालों को जमीन दे दो और मिल्कियत छोड़ दो—गाँवसभा की कर दो; तो लोग जमीन बेच नहीं सकेंगे, बंधक नहीं

शराबबंदी पर प्रकट चिंतन

अप्पा पटवर्धन

हर्ष की बात है कि इन दिनों समाज-सेवक शराब-बंदी के विषय में तीव्रता से सोचने लगे हैं। चारों ओर से माँग बढ़ रही है कि सरकार पूरे राज्य में या कम-से-कम खास इलाकों में शराब-बंदी करे। लेकिन शराब-बंदी के ठीक मानी क्या है? शराब पीना गुनाह ठहराया जाय, शराब पीने वालों और शराब बना कर बेचने वालों को कड़ी सजाएँ दी जायँ; ऐसी माँगें भी की जा रही हैं। क्या हम उन्हीं में अपनी आवाज मिलाना चाहते हैं? नहीं, ऐसा करना उचित नहीं होगा। शराब मानवता की हानि करती है, इसीलिए तो हम शराब-बंदी चाहते हैं। कड़ी सजाओं के द्वारा शराब-बंदी सफल भी हुई—यह बात भी असंभव है—तो भी लोगों को डरा कर शराब-मुक्त करने में मानवता की शायद बदतर हानि होगी। निर्भयता और स्वतंत्रता से बढ़कर मानवीय मूल्य और कौनसा हो सकता है? डर के मारे कोई आदमी शराब पीना छोड़ दे, क्या यह वांछनीय है?

सजा के द्वारा शराब-बंदी करना कहाँ तक संभव होगा, इस विषय में भी शंका हो सकती है। शराब की आदत ऐसी दुर्निवार है कि शराबी आदमी जान की जोखिम से भी छिप कर कहीं से शराब हासिल कर पीयेगा! जहाँ शराब-बंदी लागू हुई है, वहाँ का अनुभव भी ऐसा ही है कि छिपी शराब बनाना और पीना बड़े पैमाने पर चलता है। शराब की मनाही होने से इज्जतदार लोगों की शराब छूटती भी है, लेकिन जो "नंगे" होते हैं, उनका कौन क्या कर सकता है? 'नंगे से खुदा बेजार!'

मतलब यह कि शराब-बंदी को लेकर कहीं-कहीं या कुछ हद तक गुंडा-राज्य भी कायम हुआ है! शराब का उत्पादन और विक्रय खुलेआम चलता है और जान के भय से इर्दगिर्द के सज्जन भी उन गुंडों के सामने कुछ नहीं कर पाते। ये गुंडे शराब-बंदी के समर्थक भी होते हैं और शराब-बंदी मंडलों के नेता भी होते हैं! उनका राज ही तो शराब-बंदी पर निर्भर है और पुलिस भी उनके वश में होती है। शासन की ओर से शराब-बंदी की कार्रवाई करने वाले आखिर पुलिस ही रही! उसमें भी कुछ शराबी होते हैं और कुछ रिश्वतखोर भी होते हैं। वे तनख्वाह पाते हैं सरकार से, रिश्वत पाते हैं शराबखोरों से, उनकी ही सेवा करते हैं।

शराब की मनाही करना एक बात है। और शराब को मिटाना दूसरी चीज है। शराब मना होने मात्र से मिटती नहीं, ऐसा अनुभव है। "छिपी शराब" में शराब तो अनर्थकारी है ही, किन्तु उसमें कई गुना अधिक अनर्थकारी उसका छिपापन है।

बताया जाता है कि शराब लभ्य ही न हो, तो आदतमन्द लोग भी कहाँ से पीयेंगे? और फिर माँग की जाती है कि सरकार शराब को उपलब्ध ही न होने दें, लेकिन शराब खुलेआम अनुपलब्ध होते हुए भी म्युनिसिपालिटी के पानी के मार्फत भूमिगत नलों के द्वारा घर-घर पहुँचती है और उसका इलाज सरकार पूरी तरह नहीं कर सकती।

शराब-बंदी के मार्ग में ऐसी अनेक दिक्कतें हैं। फिर दूसरी तरफ से सरकार को तंग करने वाले ऐसे भी "सज्जन" पाये जाते हैं जो कहते हैं, "इन अनाड़ी लोगों की शराब तो छूटने वाली ही नहीं है। फिर शराब-बंदी घोषित करके सरकार अपनी आमदनी नाहक क्यों मिटा देती है? और उस घाटे की पूर्ति के लिए हमारी आवश्यकता की अलग चीजों पर कर क्यों बढ़ाती है? शराब का कर बीड़ी-सिगरेटों पर बढ़ाया जाने से हमें सिगरेटें नाहक महँगी खरीदनी पड़ती हैं। या हमारे लड़कों की उच्च शिक्षा के लिए ज्यादा फीस देनी पड़ती है। कैसा न्याय है कि शराबखोरों को शराब बिना कर मिले, इसलिए सरकार हमारी बीड़ी-सिगरेटों पर, चाय और चीनी पर या उच्च शिक्षा पर कर बढ़ाती है? चोर को छोड़ कर संन्यासी को सूली पर चढ़ाती है!

ऐसी संकुल परिस्थिति में सरकार क्या करे? वह अगर शराब-बंदी धीरे-धीरे करना चाहे तो वह भी समझने लायक बात है। इस मद्य-नीति की मंजिलें क्या हों, यह अलग से सोचने का सवाल हो सकता है। शायद बूढ़े शराबखोरों के लिए शराब की छूट रखी जाय और जवानों के लिए शराब पीना दंडनीय अपराध रहे। शायद देहातों में शराब-बंदी पहले हो और फिर शहरों में। शायद इससे उल्टा भी क्रम रहे। शायद शराबबंदी-कानून की कार्रवाई पुलिस पर सौंपने के बजाय ग्राम-पंचायतों पर सौंपना बेहतर होगा। शराबखोर स्वयं दंडित ही होता है, इसलिए उसको अलग से सजा देने की खास आवश्यकता नहीं होती; या होती है तो उनके लिए जो जेल होंगे वे अस्पतालों के ढंग के हों, लेकिन शराब चोरी से बनाने-बेचने वालों को कड़ी सजाएँ दी जायँ। हम खुद किसी को सजा दिलवाना न चाहें, फिर भी सरकार अपने स्वधर्म के अनुसार सजाएँ दे तो भले दे। हम खुद अहिंसक और निरामिषाहारी रहते हुए भी बिल्ली चूहे खाती है उसको बर्दाश्त करते ही हैं!

ऐसी सारी उलझनें होते हुए भी एक बात बिलकुल साफ है कि सरकार शराब से जो आमदनी हासिल करती है, उसको वह तुरंत और बिलकुल छोड़ दे। लोग भले शराब पीयें भी, लेकिन सरकार लोगों के दुर्व्यसनों को अपनी आमदनी का जरिया न बनाये। लोगों में और भी दुर्व्यसन होते हैं, जैसे कि वेश्यागमन; लेकिन ऐसे व्यसनों से लाभ उठाना सरकार जैसी प्रतिष्ठित संस्था को शोभा नहीं देता। जब तक सरकार शराब की आमदनी ले लेगी, जनता की शराबखोरी में उसका स्वार्थ मिला हुआ रहेगा; शराबबंदी के विषय में वह तटस्थ भाव से सोच नहीं सकेगी।

अब भी राज्य-सरकारें कह रही हैं कि विकास-योजनाओं के भारी खर्चे को लेकर शराब की आमदनी छोड़ देना मुश्किल हुआ है। यह ऐसी बात हुई कि एकाध म्युनिसिपालिटी कहे कि जाड़े के दिन हैं और कोयला भी महँगा है, इसलिए अग्नि शायद रखना उचित नहीं होगा। मकान जलते हैं तो नागरिकों को अनायास गरमी भी मिलती है और जले हुए मकानों से कुछ कोयला भी हासिल होता है!" आमदनी की लालच से शराब जारी रखना मकान जला कर कोयला हासिल करने जैसा ही है! शराब से आदतमंदों के मकान जल जाते हैं और सरकार को उससे कोयले की प्राप्ति होती है! और यह सारा "आर्थिक विकास" के लिए।

इसलिए शराब-बंदी के विषय में पहला और 'आज' ही नहीं, बल्कि 'अब' उठाने का कदम यही है कि सरकार शराब से आमदनी प्राप्त न करे, फिर भले ही शराब खुली रहे और सस्ती भी बने। तभी सरकार शराबबंदी के विषय में तटस्थ भाव से सोच सकेगी।

सरकार शराब की आमदनी छोड़ेगी तो शराबबंदी के पक्ष में वही एक बड़ी नैतिक शक्ति होगी, समाज-सेवकों को भी चाहिये कि वह शराबखोरों में घुलमिल कर उनको प्रेम से मोड़ें।

यहाँ सिर्फ प्रचार से, शराब से होने वाली हानि बता देने से, कुछ भी नहीं सधेगा। शराब की हानियों की जानकारी हम प्रचारकों के बनिस्बत खुद शराबखोर ही ज्यादा रखते हैं; निजी अनुभव से वे सब बातें जानते हैं। सवाल होता है खुद को ऊँचे उठाने की स्फूर्ति पैदा करने की। यह स्फूर्ति न फिल्मों से हासिल होगी, न महफिलों से, न भाषणों से। भाईचारे से, प्रेम जोड़ने से, उनके हृदय में प्रवेश पाने से ही वह पैदा हो सकेगी।

यह हृदय प्रवेश पाने के लिए हमें भी कुछ आत्मसंशोधन या आत्म-संयमन करना होगा। हम खुद बीड़ी पीते-पीते—और इन दिनों "चेन स्मोकिंग" (लगातार धूम्रपान) सभ्यता और विद्वत्ता की निशानी मानी जाती है—शराबखोरों को असभ्य या नामर्द बतायें तो वे मानने वाले नहीं हैं। हम बीड़ी जैसा सौम्य (!) व्यसन नहीं छोड़ सकते, फिर वे शराब जैसा भारी व्यसन कैसे छोड़ सकेंगे? असली सवाल हिम्मत का है। हम बीड़ी छोड़ने की हिम्मत दिखायें, तो उनमें भी शराब छोड़ने की हिम्मत आ सकेगी। बीड़ी एक मिसाल मात्र है। तमाखू चबाना, सूँघना, पान खाकर चारों ओर पिचकारियाँ फेंकते जाना, चाय पीना—कई तरह के सभ्य व्यसन होते हैं। मिर्च-मसाले खाना, भूख न होते हुए भी खाना, ऐसी कई बातों के विषय में आत्मसंयमन करके हम शराबखोरों को हिम्मत दिला सकते हैं। करुणा के लिए यह बड़ा क्षेत्र है। शराब-बंदी के लिए अनशन करने की फैशन सी बनते जा रही है। लेकिन बीड़ी-चाय, मसाला छोड़ने जैसा अनशन खुद को भी लाभकारी होगा और शराबबंदी का भी असरकारक इलाज होगा। वह नेत्रदीपक तो नहीं, फिर भी नम्र, सौम्य सत्याग्रह होगा।

आमदनी की लालच से शराब जारी रखना मकान जला कर कोयला हासिल करने जैसा ही है! शराब से आदतमन्दों के मकान जल जाते हैं और सरकार को उससे कोयले की प्राप्ति होती है! और यह सारा 'आर्थिक विकास' के लिए। इसलिए शराब-बंदी के विषय में पहला और 'आज' ही नहीं, बल्कि 'अब' उठाने का कदम यही है कि सरकार शराब से आमदनी प्राप्त न करे; फिर भले ही शराब खुली रहे और सस्ती भी बने। तभी सरकार शराब-बंदी के विषय में तटस्थ भाव से सोच सकेगी।

अणु-परीक्षण एवं शस्त्र-त्याग

लक्ष्मीनारायण भारतीय

उस रोज़ पं० नेहरू ने कहा था "केवल अणुबमों के परीक्षण रोक देने से ही समस्या हल नहीं होती; बल्कि अणुबमों का मौजूदा भंडार नष्ट कर दिया जाय, तो भी युद्ध का भय नहीं मिटता; क्योंकि युद्ध शुरू होने के क्षण ही में अणुबम बनाये जा सकते हैं। अतः युद्ध न होने देना ही एकमात्र उपाय है।"

इस कथन का स्पष्ट अर्थ यह है कि निःशस्त्रीकरण अर्थात् 'शस्त्र संन्यास' ही एकमात्र हल है और अणुप्रयोगों का सबंध निःशस्त्रीकरण तक ही पहुँचता है, क्योंकि दोनों परस्पर से जुड़े हुए हैं। केवल अणुप्रयोग बंद करना ही पर्याप्त नहीं है। और, अणु-परीक्षण तो अणुबम रखने वाले राष्ट्रों के लिए जरूरी ही है, क्योंकि शस्त्रास्त्र रखने की कोई सीमा वे बाँध नहीं सकते। इस तरह छोटे-बड़े शस्त्रास्त्र, फिर अणुबम और फिर अणु परीक्षण—ये पूर्णतः परस्पर से बंधे हैं।

आज के ज़माने में एक-एक हथियार कितने वेग से पिछड़ जाते हैं, यह जानकार लोग जानते हैं। स्वयं पंडितजी ने कहा कि "दो चार साल में ही जो पुराने हो जाने वाले हैं, ऐसे विमान हम लें ही क्यों?" और सच कि अन्यत्र तो आज ही वे पुराने हो गये हैं! अतः छोटा-मोटा या पुराना हथियार ही आज काफी नहीं है, नये-नये हथियार लेने होते हैं और यह दौड़ फिर कहीं रुक ही नहीं सकती। इसी लिए फ्रांस ने सब दोस्तों के विरोध के बावजूद अपने को अणु-अस्त्रसंपन्न बनाने का ही निश्चय कर लिया है। स्वयं अणु-संग्रह करने वाले राष्ट्र भी इस दौड़ में कैसे पिछड़ जाते हैं, इसका बड़ा उदाहरण इंग्लैंड है, क्योंकि अभी हुए एक विवाद में यह स्पष्ट हो गया कि 'इंग्लैंड अमरीका के बिना स्वतंत्ररूपेण अणुक्षेत्र में कदम बढ़ा ही नहीं सकता।' उसके पास के अणुबम प्रतीकात्मक ही माने जाते हैं। श्री मेकनमारा ने बताया कि 'मर्यादित अणु शस्त्र-क्षमता अगर स्वतंत्र रूप से आगे बढ़ती है, तो उसमें खतरा है।' स्पष्ट है कि रूस-अमेरिका के समक्ष इंग्लैंड तो अभी एकदम कच्चा है। इसीलिए लेबर पार्टी का एक भाग कहता है कि या तो हम उस आखीरी सीमा तक होड़ करें या पूर्णतः इस शक्ति से रहित हो जायें और अणु अस्त्र रखने वाले राष्ट्र न बनें। वह यहाँ तक कहता है कि "हम खुद होकर, एकतरफा ही अणुशस्त्र त्याग दें।" माना जाता है कि इंग्लैंड यदि इतना करता है, तो फ्रांस जर्मनी इटली आदि तक पहुँचने वाली अणु-संग्रह-मोहमालिका भी यहीं टूट जायेगी।

एक तरफ यह चित्र है कि एक राजनैतिक पार्टी वहाँ खुद ही अणुशस्त्रों से मुक्ति पा लेने का आवाहन करती है और आज के अणुशस्त्रों के उसके संग्रह को सिर्फ प्रतीकात्मक ही माना जाता है, जब कि इंग्लैंड को उसके लिए कम खर्च नहीं करना पड़ता है एवं दूसरी तरफ अभी की घटना है कि भारत के प्रथम राष्ट्रपति राजेंद्रप्रसाद ने भारत को स्वयं होकर शस्त्र-मुक्ति का कदम उठाने का आवाहन किया है। शस्त्रों का रूप तनिक बाजू रखें, तो दोनों बातें एक ही वस्तु करने को कहती हैं। फिर राजेंद्रबाबू की बात ही 'फैंटेस्टिक' क्यों मानी जाती है? हम शस्त्रों की होड़ में अमुक सीमा से आगे नहीं जायेंगे, यह कहना भी आज संभव नहीं रहा है, क्योंकि पाकिस्तान अधिक शक्तिशाली हथियार प्राप्त करता है, तो हमारे लिए भी वैसा करना जरूरी होने लग गया है। अतः बात शस्त्र-त्याग तक ही पहुँचती है, आप चाहे जिधर से जायें। या तो संपूर्ण शस्त्र त्याग करो या फिर होड़ में साथ रहो एवं सर्वनाश को आमंत्रित करो, यही एक विकल्प रह जाता है।

एक व्यक्ति एक दश से अधिक सर्वोच्च सेनापति रह चुका है एवं जिसके कार्यकाल में गोआ पर भारत ने शस्त्र प्रयोग द्वारा स्वाधिकार भी प्राप्त किया है, वह व्यक्ति यदि संपूर्ण शस्त्र-त्याग की बात कहता है, तो वह मूर्ख तो है नहीं। न ही वह कल्पना वादी या गिरिकंदरावासी है, वह पाकिस्तान चीन का हमला भी देख रहा है। दरअसल उसकी बात में एवं लेबर पार्टी की बात में गुणतः कोई फर्क नहीं और दोनों ही राजनैतिक हैं, फिर भी शस्त्र-संन्यास की बात दोनों कह रहे हैं। यह बात और लोग भी कहते हैं, पर लेबर पार्टी ने अणुबमों के लिए एवं राजेंद्रबाबू ने शस्त्रास्त्रों के लिए 'खुद होकर' छोड़ देने का आवाहन अपने अपने राष्ट्रों से किया है। अतः डा० राजेंद्रप्रसाद की बात अव्यावहारिक कैसे कही जा सकती है? आज का एकमात्र अचूक उपाय यही है, यही उसके पीछे की श्रद्धा है। "चीन-पाकिस्तान ही के कारण हमारे लिए ऐसा सोचना व्यर्थ है", यह बात तो सभी कहते हैं। पर ये मैदान में से हटे, तो दूसरे सामने नहीं आयेंगे, ऐसी कोई बात नहीं है। अतः इन तात्कालिक प्रतिक्रियाओं के वशीभूत होकर नहीं, स्थायी रूप से सोचना ही एकमात्र उपाय है और यदि इंग्लैंड के लिए वह कदम विचारणीय हो सकता है, तो हमारे लिए भी यह कदम विचारणीय हो सकता है। या तो फिर हम इन दोनों को मूर्ख मान लें! पर उससे भी काम नहीं निकलता, क्योंकि दूसरा कोई पर्याय नहीं रह गया है।

> **आज दुनिया में सब देशों के सामने एक ही विकल्प है या तो सम्पूर्ण शस्त्र त्याग द्वारा शांति का पथ प्रशस्त करना या फिर युद्ध और शस्त्रों की होड़ में साथ रह कर सर्वनाश को आमंत्रित करना!**

इसका अर्थ है, डा राजेंद्र प्रसाद की बात यों ही उड़ा देने लायक नहीं है और गांधी के भारत से ऐसी कोई अपेक्षा करे, तो यह अस्वाभाविक भी नहीं है! हम जब किसी को कहते हैं कि अणुशस्त्र-परीक्षण न करो, तो वह हमें कह सकता है कि फिर आप भी शस्त्रास्त्र तज दो! क्योंकि अणुबम का उसके लिए उतना ही महत्त्व है, जितना हमारे लिए 'मिग' जैसे विमानों का। अतः हम यदि आगे बढ़ते ही जा रहे हैं, तो उनको हम उपदेश नहीं कर सकते कि वे रुक जायें! उन्हें रोकने के लिए हमें रुकना होगा, कहने के पहले करनी बतानी होगी। तब हमारी बात का असर हो सकता है और वह हो न हो, तो भी दुनिया के दुःख-दर्दों की दवा तो हो सकती है ही। लेकिन क्या इसका मतलब हम यह लें कि अमुक तारीख को हम अपने सभी शस्त्र समुद्र में डुबो दें? स्पष्ट है कि जैसा पंडितजी ने कहा है, एक 'प्रॉफेट' ही ऐसा कर सकता है, क्योंकि जनमत के विरुद्ध स्वयं पंडितजी भी नहीं जा सकते, यह हम चीन भारत विवाद में कई बार देख चुके हैं। अतः बुनियादी चीज है—जनमत, जिसे तैयार करना होगा एवं यहीं जनसेवकों की कसौटी आती है, क्योंकि जनता प्रत्यक्ष उदाहरण, प्रयोग, कसौटी, व्यक्तित्व आदि के जरिए ही परीक्षा लेते रहती है। तब राजेंद्रबाबू के कथन का अर्थ व्यवहार में क्या हो सकता है?

एक उदाहरण यहाँ सहज दिया जा सकता है। पंडितजी ने चीन भारत सीमा-वाद को जैसे संभाला है, उस कारण यहाँ युद्धोत्सुक वातावरण पर काफी अंकुश आ गया है, बावजूद इसके कि चीन द्वारा हमें भड़काया जाना जारी है। इटली और पुर्तगाल द्वारा भड़काया जाना जारी रहते हुए जब 'संरक्षण-तैयारियाँ' जाहिरा तौर पर होने लगीं, तो देश में युद्धोत्सुक वातावरण बनने लगा—कम से-कम महाराष्ट्र विभाग में।

इसका अर्थ है, आज भी नेता एवं राज्यकर्ताओं पर काफी जिम्मेवारी है एवं वे जनमत को मोड़ सकते हैं। अतः किस प्रकार का वातावरण हम पैदा करते हैं, इस पर बहुत कुछ निर्भर रहता है। संपूर्ण निःशस्त्रीकरण फलाँ तारीख को करने का कदम हम न उठा पायें, तो भी क्या राजनेता एवं क्या समाजनेता, दोनों इतनी सामर्थ्य भारत में रखते हैं कि जनता को वे मोड़ सकें, क्योंकि अभी जन-हृदय के वे स्वामी हैं।

अतः हम ऐसे वातावरण का सतत सृजन करते चलें, जो निःशस्त्रीकरण में सहायक हो, तो यह कदम न अव्यावहारिक है और न 'प्रॉफेटों' के ही हद तक सीमित। वातावरण का असर कम नहीं होता है, यह समाजशास्त्री एवं मानसशास्त्री जानते हैं। जनता में जिस बात की भूख या आकांक्षा दबी पड़ी होती है, तो वह ऐसे वातावरण में ऊपर उठ आती है। यही कार्य नेताओं को करना होता है।

एक छोटा सा जहाज आज अणुबम के परीक्षण का मुकाबला करने जाता है, तो उसका कोई अस्तित्व ही नहीं है। परंतु मनाकांक्षा उसके पीछे इतनी है कि यही छोटा-सा जहाज शक्ति-पुंज बन सकता है, जैसे इतनी बड़ी ब्रिटिश सल्तनत के विरोध में मामूली नमक शक्तिपुंज बन गया था। जनता के अन्दर झाँक कर उचित दिशा में हम वातावरण सर्जित करें, यही उपाय है। आज "अणु परीक्षण" के विरुद्ध जो जनमत है, वह 'युद्ध की विभीषिका' के प्रकट होते ही "संपूर्ण शस्त्र-त्याग" के लिए तैयार हो सकता है। अतः लक्ष्य सामने रख कर राजनेता एवं समाज-नेता कदम बढ़ायें, वातावरण खड़ा करें एवं अंतर्गत तथा बाह्य जगत् में ऐसे ही प्रयोग करते चलें, तो जन-मत का तैयार होना कतई कठिन नहीं है और तब राज्यनेता भी ऐसा कदम उठा सकते हैं, जिसकी कि क्षमता जवाहरलालजी में है! स्पष्ट है कि न तो राजपक्ष, न लोकपक्ष, अकेला कोई कुछ नहीं कर सकता। अतः एक तरफ राजनेताओं के लिए उचित कदम उठा कर आवश्यक वातावरण बनाते जाना जितना जरूरी है, उतना ही जरूरी उन नेता अभिवक्ताओं के लिए है, जो गैरराजनीतिक रूप से अहिंसा के प्रयोगों द्वारा जनमानस में आत्मविश्वास की जागृति ला सकें।

शाकाहार, गाय और राष्ट्रीय संयोजन

देवेन्द्रकुमार

[आज प्रायः राष्ट्रीय संयोजन में शाकाहारवाद का कोई स्थान नजर नहीं आता। योजनाकारों के सम्मुख यह एक प्रश्नचिह्न के रूप में उपस्थित है। प्रस्तुत लेख में यह प्रतिपादित किया गया है कि शाकाहार भारत का परम्परागत प्राप्त सांस्कृतिक गुण है और यह समझाने की कोशिश की है कि उसे टिकाये रखने के लिए उसका राष्ट्रीय संयोजन के साथ कितना गहरा संबंध है। —सं०]

आर्थिक संयोजन का शाकाहार से भी कोई संबंध है, यह सुन कर लोग शायद आश्चर्य करें। सच तो यह है कि जिन लोगों का संयोजन से संबंध है, उनके सामने एक जबरदस्त समस्या यह है कि हमारे देश में पशुओं की संख्या अत्यधिक बढ़ गई है। विशेषकर यह कि हमारी गायें आर्थिक दृष्टि से लाभदायक नहीं हैं। उनकी संतति की हालत भी दिन-ब-दिन अधिक गिरती जा रही है। इसका मुख्य कारण यही है कि इस देश के लोग गाय के वध को अधर्म मानते हैं।

यह समस्या इतनी नाजुक है कि योजनाओं के बनाने वाले इसका कोई आसान हल नहीं ढूँढ पा रहे हैं, क्योंकि वे जानते हैं कि इस देश की जनता शाकाहार को धार्मिक दृष्टि से अच्छा समझती है। अतः उन्हें भय है कि यदि वे सुझायें अथवा अप्रत्यक्ष रूप से इशारा भी करें कि इस समस्या को सुलझाने के लिए गोवध आवश्यक है, तो उनका घोरतम विरोध होगा, क्योंकि वे जानते हैं कि देश में जब कभी कहीं गाय की हत्या की खबर या अफवाह भी फैल जाती है, तब समाज कितना क्षुब्ध हो जाता है।

अब गाय नहीं बच सकती

यंत्रों के आगमन के साथ अब संयोजन-कर्ता बड़े जोरों से अनुभव करने लगे हैं कि अब बैलगाड़ी का जमाना लद गया और अब वह गये-गुजरे जमाने की चीज हो गयी। और यह कि अब तो जितनी जल्दी ट्रक ट्रैक्टर और ट्रेलर उसका स्थान ले लें उतना ही भला होगा। कहा जाता है कि दूध देने वाले और खेती तथा परिवहन शक्ति आदि में काम में आने वाले जानवरों की संख्या को एकदम घटा दिया जाना चाहिए। अब तो केवल वही पशु रहने दिये जायें, जो आर्थिक दृष्टि से लाभदायक हों; क्योंकि खेती के कामों में यंत्रों का ज्यों-ज्यों अधिकाधिक उपयोग होने लगेगा, गायों और उसकी संतति की जरूरत उत्तरोत्तर कम होती जायगी। गाय को हमारे यहाँ जो इतना अधिक महत्त्व दिया गया है, उसका मुख्य कारण यही है कि वह हमें बैल देती है। परन्तु जब हमारा खेती आदि का काम यंत्रों से होने लगेगा तब गाय हमारे लिए लाभदायक नहीं रह जायगी। हाँ, इंग्लैंड की गायों के समान यदि हमारी गायें भी बहुत अधिक दूध देने लग जायें और उनके नर, बछड़ों के मांस का उपयोग यहाँ के लोग अपने भोजन में करने लग जायें तब तो बात दूसरी है। अन्यथा क्यों न भैंस यहाँ गाय का स्थान ले ले! दूध की दृष्टि से गाय की अपेक्षा भैंस निश्चय ही अधिक लाभदायक पशु है और उसके बछड़ों-पाड़ों का वध करने में लोगों को आपत्ति भी नहीं होती। इसीलिए तो भारत की दुग्धशालाओं (डेअरियों) में भैंस गाय का स्थान बराबर और व्यवस्थित रीति से लेती जा रही है। संक्षेप में यह यंत्र-युग गाय के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है और आश्चर्य नहीं यदि वह भारत में उसे निर्वंश कर दे।

शक्ति का परिवर्तन

भारत में कृषि का स्थान प्रमुख है। कृषि का आधार केन्द्र है, बैल। खेती में शक्ति का मुख्य साधन वही है। इसी कारण तो भारत में गाय का इतना महत्त्व है। यदि बैल का स्थान बिजली, पेट्रोल या डीजल तेल से चलने वाले यंत्र ले लेते हैं, तो गाय का महत्त्व समाप्त ही समझिए। आज तक शक्ति का मुख्य साधन भारत में बैल ही था। खेती में, कच्चे माल के उत्पादन में, तेलघानी, चक्की, गन्ने का कोल्हू अथवा माल और मुसाफिरों के परिवहन में हर जगह बैल ही से काम लिया जाता था। पर अब यह बात नहीं रही। परिवहन में ७० प्रतिशत स्थान अब ट्रकों ने ले लिया है और पक्का माल तैयार करने में तो शक्ति-संचालित यंत्रों ने ९५ प्रतिशत काम छीन लिया है। अब तो केवल खेतों में बैल रह गये हैं। वहाँ से भी उनका उच्चाटन होगा। केवल थोड़ी देर की बात है। परन्तु यह निश्चित है कि इस लड़ाई में बैल को यंत्रों के मुकाबले में हारना ही होगा।

बैल को नमस्ते!

खेती के काम में भी अभी बैल केवल इसलिए टिका हुआ है कि भारत का किसान व्यक्तिवादी है और उसका खेत छोटा होता है। खेती में सहकारिता से काम लेने के लिए उसे समझाया जरूर जा रहा है। परन्तु अभी इसमें उत्साहजनक सफलता नहीं मिल सकी है। असल में यह बात अभी उसे जँच ही नहीं रही है। वह तो अपने छोटे-से खेत और बैलों से चिपटा हुआ है। वह इस बात पर विचार ही नहीं करता कि उसके छोटे-से खेत को बैलों का रखना पुसाता भी है या नहीं। और उसके इस जीवनक्रम में कोई भी सुधार या परिवर्तन करने का सुझाव तक करने की हिम्मत योजना बनाने वालों को नहीं होती। स्पष्ट ही, इसका कारण राजनैतिक भय है। इसलिए उसे मजबूर करने के लिए वे अप्रत्यक्ष तरीकों से काम ले रहे हैं। फलतः वे खेती के यंत्र-प्रधान प्रयोग-क्षेत्र हर राज्य में कायम करके वे ट्रैक्टरों द्वारा खेती करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देंगे, जो किसान या सहकारी संस्था में ट्रैक्टरों से खेती करेंगे उन्हें प्रोत्साहन देंगे और बाहरी देशों से भी यान्त्रिक खेती का ही अनाज मँगा कर वे देश के किसानों के दिलों पर यह अंकित करने का प्रयत्न करेंगे कि उनका खेती करने का तरीका कितना पुराना और पिछड़ा हुआ है। यह सब देख सुन कर बेचारा किसान असमंजस में पड़ जाता है, उसकी समझ में नहीं आता कि वह क्या करे, किस तरीके को ग्रहण करे या छोड़े। वास्तव में इस पेशे में आय सबसे कम होती है। उद्योगों की अपेक्षा परंपरागत खेती में परिश्रम का मुआवजा मुद्दतों से बहुत कम मिलता रहा है। और ट्रैक्टरों के चल जाने पर तो बड़े खेतों की तुलना में इन परम्परागत तरीकों से काश्त किये जाने वाले छोटे खेतों की आय और भी कम हो जायगी। इसलिए यदि खेती के पेशे को लाभदायक बना कर उसकी नींव को मजबूत करना है तो गाय को और उसकी समस्त संतति को नमस्ते ही बोल देना होगा। यंत्रीकरण में विश्वास करने वाले संयोजकों के सामने यह एक बड़ी जबरदस्त समस्या है और अब यहीं प्रश्न पैदा होता है शाकाहार और मांसाहार का।

सबसे बड़ा प्रश्न

इस प्रश्न को बराबर टाला जा रहा है। परन्तु इस लेख का मुख्य विषय यही है कि क्या शाकाहार पिछड़ेपन की और बुद्धिहीनता की निशानी है? या वह अवैज्ञानिक है? युगों तक भारतीयों की शोधक बुद्धि इस तलाश में रही कि किसी ऐसे आहार की खोज की जाय, जिसमें दूसरे प्राणियों की हत्या नहीं करनी पड़े और इस तलाश में उसने पाया कि पशुओं का दूध बड़ी काम की चीज है। पशुओं में भी गाय एक ऐसा पशु है कि जिसके बछड़ों से बहुत-से काम लिये जा सकते हैं। इन ऋषियों ने सिद्ध कर दिखाया कि अन्य प्राणियों के साथ अमानुष क्रूरता बगैर करते हुए भी मनुष्य न केवल जी सकता है, बल्कि अपने शरीर का और मन का भी पूरा-पूरा विकास कर सकता है। हमारे देश में मांसाहार जो इतना कम होता है, उसकी जड़ में यही बात है। समस्त संसार में केवल भारत ही एक ऐसा देश है, जहाँ शाकाहार से प्रेम करने वाले इतने अधिक लोग हैं। यही नहीं, जो लोग विशुद्ध रूप से शाकाहारी नहीं हैं, वे भी यहाँ शाकाहार को अधिक उच

शाकाहार और विश्वशांति

हमारी राय में जब हम 'जय जगत्' कहते हैं, तो उसमें बेचारे प्राणियों का भी समावेश है। नहीं तो गाय बोलेगी कि तुम्हारे 'जय जगत्' में मेरा क्या हाल है? अहिंसा में लोग मुझे सवाल पूछते हैं कि क्या आपकी अहिंसा मानव तक ही सीमित है? हम कहते हैं कि नहीं, मनुष्य को चित्तशुद्धि के लिए मांसाहार छोड़ना चाहिए।

अगर आप दुनिया में शान्ति चाहते हैं, तो प्राणी-आहार आपको छोड़ना पड़ेगा। इस दलील में कोई सार नहीं है कि कुछ मांसाहारी भी दयालु होते हैं और कुछ शाकाहारी भी क्रूर होते हैं। ऐसे लोग मिलते हैं, अपने देश में भी मिलते हैं। फिर भी यह दलील काम की नहीं है। यह ध्यान में रखना चाहिए कि हमारी—भारत की—विचार की यह देन है। सेवाग्राम में शान्ति-परिषद हुई थी। वहाँ हमने एक सन्देश भेजा था कि जो दुनिया में शान्ति करना चाहते हैं, उनको यह सोचना चाहिए कि हम आपस में प्यार से रहें और उधर प्राणियों को खाते रहें, इससे शान्ति नहीं होगी। मांसाहार-परित्याग यह अपने देश की खास कमाई है। —विनोबा

प्रकार का जीवन मानते हैं। (हाँ, उन लोगों को छोड़ दीजिये, जिनके दिमाग पर नई सभ्यता अथवा असभ्यता का असर पड़ने लगा है, जिनकी जड़ें इस भूमि से उखड़ गयी हैं और जिन्हें इस देश की संस्कृति और परम्परा में एक भी चीज आदर और श्रद्धा के लायक नहीं दिखाई देती।)

शाकाहार के मानी क्या हैं? प्राणीमात्र के जीवन के प्रति मनुष्य की श्रद्धा और आदर। मानव-हृदय के विकास की यह एक सीढ़ी है। हमारे अन्दर कितनी मनुष्यता है अथवा उसकी कमी है, इसकी सीधी पहचान यही है कि दूसरे के दुःख से हम कितने प्रभावित और द्रवित होते हैं। हिंसा और हत्या को मनुष्य स्वभावतः बुरा मानता है। किसी को दुःख देना उसे स्वभावतः अच्छा नहीं लगता। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यही है कि प्राणियों को कत्ल करने के तरीकों में वह लगातार ऐसे सुधार करता आ रहा है, जिससे कत्ल किये जाने वाले पशुओं को कम-से-कम कष्ट हो। यदि यह सत्य है तो मानना होगा कि शाकाहार बुद्धि-हीनता और जंगलीपन अथवा असभ्यता की नहीं, सभ्यता, संस्कृति और मानव-हृदय के विकास की निशानी है।

जिसे हमारे महान् पूर्वजों ने अत्यन्त दीर्घ प्रयत्न और प्रयोगों के बाद प्राप्त किया है और अब हमें अपनी इस उपलब्धि पर शर्म नहीं, गर्व होने लगेगा और इस विषय के विचार की सम्पूर्ण दिशा ही बदल जायेगी। हम प्रश्न के इस पहलू पर एकदम दूसरे प्रकार से विचार करने लग जायेंगे।

अहिंसा की दिशा में कदम रखने के बाद पशु-पक्षियों और अन्य प्राणियों की हत्या को छोड़ कर गाय के दूध तक पहुँचने में मनुष्य को निश्चय ही सैकड़ों, शायद हजारों वर्ष लगे होंगे। और तब उसने देखा कि मांस से जितने प्रकार के पोषक तत्त्व मनुष्य को मिलते हैं, उतने सब दूध में भी हैं। निश्चय ही यह भारत की एक अत्यन्त महान् खोज है और तभी वह धीरे धीरे गाय का माता के समान आदर करने लगा।

नई चुनौती

परन्तु अब इस कल्पना की जड़ में ही कुठाराघात होने लगा है। अब देश के आर्थिक विकास के लिए हमें यह जरूरी मालूम होने लगा है कि बैल के स्थान पर हमें ट्रैक्टर से काम लेना चाहिए तब यदि हमें दूध के लिए गाय रखनी है तो अन्य देशों की भाँति हमें भी उसके बछड़ों को मार कर खाना होगा। तो प्रश्न उठता है कि क्या गाय का इस प्रकार उपयोग करने के लिए हम तैयार हैं? इसका जवाब शाकाहारी लोग दें, केवल गाय पर ही नहीं छोड़ दें। यह तो आज हम देश में तिल तिल करके मर रही है। भैंस और ट्रैक्टर धीरे धीरे उसे मैदान से हटाते जा रहे हैं। बम्बई की 'आरे कालोनी' समस्त एशिया का सबसे बड़ा दुग्धालय है। यह इसका सबसे बड़ा प्रमाण है। संसार भर में यही एकमात्र दुग्धालय है, जहाँ भैंस का दूध दिया जा रहा है। यह बन गया हमारा नया आदर्श, क्योंकि देश के सारे अन्य दुग्धालय भी अब इसी दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। वहाँ से गायें हटती जा रही हैं। वहाँ दूध के लिए पशु इसी दृष्टि से खरीदे जा रहे हैं कि उनके दूध में चिकनाहट कितनी है। अन्य पोषक गुणों का वहाँ विचार ही नहीं किया जाता। तब स्वभावतः चुनाव भैंस का होता है, क्योंकि गाय के दूध की अपेक्षा भैंस के दूध में चिकनाहट दुगुनी होती है।

दूसरा पहलू

जाहिर है कि भारत में मनुष्य को पशुओं की हत्या से बचाने का जो अहिंसक प्रयोग किया गया है, उसकी सुन्दरता और महानता को दुग्धालयों की योजना बनाने वालों ने समझा ही नहीं है और इससे भी बड़े दुःख की बात तो यह है कि जो लोग शाकाहार को जीवन का एक महान् दर्शन और धर्म मानते हैं, उन्होंने भी प्रश्न के इस पहलू पर न तो कोई स्पष्ट चिंतन किया है और न कोई आवाज ही उठायी है। क्या दूसरे प्राणियों की बगैर हत्या किये मनुष्य जी नहीं सकता या बलवान नहीं बन सकता? "जीवो जीवस्य जीवनम्" वाली बात अवश्य सही है। निम्न श्रेणी के जीव उच्च श्रेणी के जीवन की खुराक बन जाते हैं। जमीन के अन्दर जो सूक्ष्म जीव होते हैं, उनसे पौधे अपना भोजन प्राप्त करते हैं। खरगोश, भेड़, बकरी आदि घास पर जीते हैं और ये स्वयं हिंस्र पशुओं की खुराक हैं। इस प्रकार जीवन चक्र में अधिक शक्तिशाली प्राणियों की स्नायु प्रणाली उनके शिकार बनने वाले प्राणियों की अपेक्षा अधिक उत्क्रान्त और उच्च होती है। परन्तु मनुष्य तो इस चक्र में सबसे ऊँचे स्थान पर है। उसका अपना वर्ग अलग ही है। वनस्पतियों और अन्य पशु पक्षियों आदि की उत्क्रान्ति और विकास के नियमों की अपेक्षा उसके अपने नियम अलग और उनसे भिन्न हैं। उसमें अपना विकास खुद करने की शक्ति और क्षमता भी है और इन सब विशेषताओं के कारण वह प्रकृति का मानो नियामक-सा बन गया है। प्रायः प्राणियों के संसार से वह ऊपर उठता गया है। इसी अपनी विकास यात्रा में वह शाकाहार तक पहुँच गया। यों वह सर्व भक्षी था। वनस्पति, पशु, पक्षी, मछली सब कुछ उसके भोजन रहे हैं। परन्तु इस स्थिति से उसने अपने आपको ऊपर उठा लिया और वह शाकाहारी बन गया, अर्थात् निम्नतर श्रेणी के जीवन से अपना निर्वाह करना उसने सीख लिया।

संस्कारी जीवन

प्रकृति ने हर प्राणी का भोजन अलग-अलग बना दिया है। उच्च श्रेणी के प्राणी का भोजन उसके अनुरूप ही उच्च प्रकार का होगा। शेर घास और फल खाकर नहीं जी सकता। इसी प्रकार मनुष्य भी जब एकदम प्राकृतिक अवस्था में था तब उसे फल, फूल मांस जो मिल जाता उससे अपना पेट भर लिया करता था। इनसे उसे सब आवश्यक पोषक तत्त्व मिल जाते थे। परन्तु ज्यों ज्यों उसका विकास होता गया, उसने यही तत्त्व वनस्पतियों से प्राप्त करने की कोशिशें की और इन प्रयोगों में उसे काफी सफलता भी मिली।

आर्थिक संयोजन में पशु

अब सवाल यह है कि क्या हम ऐसे किसी आर्थिक संयोजन की कल्पना कर सकते हैं कि जिसमें कत्लगाहों या वध-शालाओं के लिए कोई स्थान नहीं होगा? आज की अवस्था में यह तो मानना ही होगा कि हमारे भोजन में किसी न किसी प्रकार का प्राणीजन्य प्रोटीन और चिकनाई जरूरी है। अब यदि इसकी पूर्ति गाय, भैंस जैसे पशुओं के दूध से करनी है, तो गाय, भैंस, भेड़, बकरी इनकी नर संतति को भी हमारी आर्थिक व्यवस्था में हमें कोई स्थान देना ही होगा। इस प्रकार यदि हमारी अहिंसा केवल मांसाहारी मनुष्य प्राणी तक ही सीमित नहीं है तो हमारी अर्थरचना में बैल और पाड़ा भी जरूरी हो जाते हैं। इसके लिए हमारा दुधारू जानवर दोनों काम का, अर्थात् दूध और मांस के लिए नहीं, बल्कि दूध और खेती-परिवहन आदि काम के लायक भी हो। निरुपयोगी जानवर तो अब हम रख ही नहीं सकते। इनको जाना ही होगा। आज देश में ऐसी निरुपयोगी मवेशी की संख्या बहुत बढ़ गयी है और वह गरीब मनुष्यों के जीवन को और भी दुःखमय बना रही है। उनको हमारे गाँवों और खेतों से अवश्य ही हटा देना है। यह काम गोशालाओं और पींजरापोलों का है। इसके बाद जो उपयोगी जानवर रह जायेंगे, उनका पालन संवर्धन एक निश्चित नीति के अनुसार और व्यवस्थित रूप से हो।

एक सुनियोजित अर्थव्यवस्था में हमें अपनी पशु-सम्पत्ति का भी नियमन करना होगा। यदि हम अपने बैलों और गायों आदि का अच्छी तरह विकास कर लें तो बैलों की काम करने की और गायों की दूध देने की शक्ति काफी बढ़ सकती है और तब स्वभावतः आज की अपेक्षा बहुत कम बैलों और गायों से हमारा काम चल सकता है और चूँकि हम गोवध को उचित नहीं मानते, इसलिए हमें गायों को प्रजनन के अयोग्य बना कर उनसे परिश्रम का काम लेना शुरू कर देना होगा।

परन्तु सवाल यह है कि इस यन्त्रयुग में बैल से काम क्या लिया जाय? सिंचाई के लिए बिजली के पम्प हैं। जोत का काम ट्रैक्टर कर लेते हैं और बड़े बड़े शक्तिशाली ट्रक माल ढो ले जाते हैं, तब बैलों के लिए क्या काम रह जाता है? परन्तु बात ऐसी नहीं है। बैल ऐसा बेकार प्राणी नहीं है। ट्रक और ट्रैक्टर की भाँति उसे महँगा तेल नहीं पिलाना पड़ता। उस गरीब की गुजर खेती में पैदा होने वाली घासपात से हो जाती है और इसके बदले में वह गोबर के रूप में कीमती खाद दे देता है, जो खेती और पौधों के लिए बड़ा जरूरी है। हाँ, आज की अर्थव्यवस्था में एक निश्चित काम तय कर देना होगा। यह काम बुद्धिमान संयोजकों का है। यंत्रों के चलाने में भी उसका उपयोग किया जा सकता है, जैसा कि फोर्ड फाउण्डेशन वालों द्वारा दिल्ली के पास खानपुर गाँव में प्रयोग किया जा रहा है। परन्तु इतना तो हमें निश्चय है कि यदि इस देश में शाकाहार को रहना है और बढ़ना है तो बैल भी खेती का एक अभिन्न अंग बना रहेगा।

(सर्वोदय प्रेस सर्विस, इंदौर)

कसाई और करुणा

तय हुआ कि घर में माँस पकना चाहिए, अतः मैं झोला लेकर कसाई के यहाँ पहुँच गया। उस समय कसाई एक लाल रंग के बकरे को खूँटे से खोल रहा था। बकरा छुरा देख कर शायद यह समझ गया था कि मुझे खूँटे से क्यों खोला गया है, अतः वह आगे बढ़ता ही न था। जब कसाई ने बकरे को फिर घसीटा तो वह उसके नेत्रों में कातरतापूर्वक देख कर मिमियाने लगा। जैसे ही कसाई की निगाह बकरे से मिली तो कसाई ने छुरा दूर फेंक दिया और बकरे के गले से लिपट कर रोने लगा। कुछ, क्षण बाद वह रोते-रोते बोला, "आप लोग मांस का इंतजाम कर कहीं और कीजिये।"

['कादम्बिनी' से] —नवलकिशोर 'नीरद'

क्रान्ति भक्ति और मैत्री

विट्ठलदास बोदाणी

मन में अविरोधी हित का केन्द्रस्थ विचार, हृदय सख्य-भक्ति के रूप में प्रचुर भक्तिमय श्रद्धा, जीवन के हर अंग व क्षेत्र में मैत्रीप्रणीत साम्य का विवेकयुक्त व्यवहार और इन सबके प्रतीक के रूप में घर-घर से सर्वोदय-पात्र और एक चिह्न के तौर पर प्रति माह हर परिवार से एक गुण्डी सूत द्वारा सातत्यपूर्वक सम्पत्ति-दान, इसकी सम्मिलित शक्ति से भक्तिमय क्रांति का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलेगा और होगा अहिंसक क्रांति के अपेक्षित परिणामों का दर्शन ।

आज जब कि हित-विरोध, हित संघर्ष, अविश्वास, द्वेष, वैमनस्य, भय आदि का प्राबल्य रहा है, जब कि भौतिक विज्ञान की प्रगति के कारण हिंसा के विराट् दर्शन से जागतिक समस्याएँ हल करने के साधन के रूप में बड़ी हिंसा की शक्ति में विश्वास रहा नहीं है, यद्यपि छोटी हिंसा और कानून की दंडशक्ति का आधार उत्तरोत्तर बढ़ती हुई मात्रा में लिया जा रहा है।

जब कि अहिंसा की शक्ति का कुछ न-कुछ परिचय होने पर भी अहिंसा संगठित हो सकती है और सामूहिक संरक्षक शक्ति के रूप में पूर्णरूपेण कामयाब हो सकती है, इस बुनियादी विचार में जीवित श्रद्धा जमी नहीं है।

जगत् के इस वर्तमानकालीन इतिहास के ऐसे क्षण में, आज से ग्यारह वर्ष पूर्व, अहिंसक क्रान्ति के एक अभिनव प्रयोग का आरंभ हुआ : "भूदान-गंगोत्री" प्रकट हुई ।

अनोखी विशिष्टता

अहिंसा की शक्ति के विकास के प्रतीक रूप में मूर्तिमंत हुए इस शास्त्रीय प्रयोग के आधार पर 'भूदान-यज्ञ' के नाम से जो एक व्यापक, सर्वस्पर्शी और गहरा कार्यक्रम पद्धतिपूर्वक चल रहा है, उसकी कुछ अनोखी विशिष्टताएँ हैं। उनमें से केन्द्रस्थ एवं प्रधान है : क्रान्ति-शास्त्र में भक्ति का मूलगामी तत्त्व समाविष्ट करके क्रान्ति के मूल विचार में की गयी आमूल क्रान्ति।

१८ अप्रैल, १९५१ से इस भक्तिमय क्रान्ति का पावनकारी पुण्य-संदेश शब्द-देह और सत्कृति देह धारण करके फैलता रहा है, गहराई में जा रहा है, उत्तरोत्तर विकसित हो रहा है। ग्यारह वर्ष की इस छोटी-सी अवधि में जो नये, प्रेरणादायी व स्पष्ट दर्शन हुए हैं वे हैं :—

(अ) सत्य-प्रेम-करुणा का आविर्भाव,

(आ) परस्पर के अविरोधी हित के स्वतंत्र और मौलिक विचार का प्रकटीकरण,

(इ) विज्ञान और आत्मज्ञान के समन्वय की अनिवार्यता पर जोर, और

(ई) उसके आधार पर अहिंसा की सामूहिक पालक, पोषक व संरक्षक विष्णु-शक्ति का आविष्कार और कुछ-न-कुछ प्रत्यक्ष परिचय ।

विनोबा-विचार

आज की परिग्रही वृत्ति-प्रधान दुनिया में जब अपहरण (एक्सप्रोप्रिएशन) की गतिविधि आम तौर पर सर्वमान्य बन चुकी है, तब उसके स्थान पर भूदान-आंदोलन द्वारा अपरिग्रह का वास्तविक विचार विनोबाजी साम्यमूलक सह-अस्तित्व के एक बुनियादी सिद्धान्त के रूप में, बिल्कुल नये अर्थ में, व्यावहारिकता के सर्वांगीण संदर्भ में एवं अद्यतन वैज्ञानिक दृष्टि से विशद रूप से प्रस्तुत कर रहे हैं। तदनुसार संपत्ति के स्वामित्व विसर्जन और सम्यक् विभाजन का सर्वमान्य कार्यक्रम 'ग्राम-दान' के रूप में सफलतापूर्वक चलाया जा रहा है। गत सोलह माह में असम में ८५० ग्रामदान मिले, वह इस सफलता का ताजा प्रमाण है। इस प्रकार से चल रही अहिंसा की सामूहिक व संरक्षक शक्ति की शोध को भावात्मक दृष्टि से प्रगतिशील, गतिशील और प्राणवंत बनाने के युग कार्य में परमात्मा की इच्छा-कृपा से विनोबाजी 'निमित्त मात्र' बने हैं।

विनोबा व्यक्ति नहीं, "विचार" हैं। दुनिया ने आज तक की क्रान्ति की विविध प्रकार की फिलासफी या दर्शन-तत्त्वज्ञान जाना-पहचाना है। कुछ "वाद"-विचारधाराएँ चली हैं। उसके आधार पर अनेकानेक प्रयोग हुए हैं। उनसे कुछ बोधपाठ सीखे हैं और उन सबके कुछ अधिक मात्रा में कटु अनुभव प्राप्त किये हैं। कुछ दुःखद परिणाम सारे संसार को आज भी भुगतने पड़ते हैं। इन सारे दर्शन-तत्त्वज्ञान, "वाद"-विचारधाराएँ आदि में जिस प्राणतत्त्व का अभाव रहा है वह है बुनियादी तौर पर भक्ति का—'डिवोशनल फेथ इन मैन, इन गाड'—मनुष्य में, ईश्वर में भक्तिमय श्रद्धा का अभाव। "भूदान" का तात्त्विक विचार इस कमी की पूर्ति करता है। भूदान-आरोहण का विचार सर्वांगीण अहिंसक क्रान्ति का तो है ही, किन्तु इसके अतिरिक्त मुख्यतया वह भक्तिमय क्रान्ति का विचार है। क्रान्ति शास्त्र में भक्ति तत्त्व को समाविष्ट करना और 'क्रान्ति याने मूल्य-परिवर्तन" इतना ही नहीं, भक्तिमय क्रान्ति याने मूल्य-परिवर्तन, यह है विनोबा विचार।

वर्तमान और आगामी युग में यही विचार निस्संदेह क्रांतिकारी माना जायगा, जिसमें विज्ञान की "स्टीयरिंग" करने वाली, अर्थात् समग्र मानवहित में विज्ञान का विवेकपूर्ण उपयोग हो सके ऐसी दिशा दिखलाने वाली और तदनुसार उसका निश्चित रूप से नियंत्रण करने वाली विशिष्ट एवं प्राणवत शक्ति होगी। ऐसी शक्ति भक्तितत्त्व में ही है।

विज्ञान और आत्मज्ञान का समन्वय करना, अर्थात् विज्ञान के साथ 'स्टीयरिंग-शक्ति' के रूप में अहिंसा को जोड़ देना उसका अर्थ अंततोगत्वा यही होता है कि क्रान्ति शास्त्र में और क्रान्ति विचार में भक्ति-तत्त्व को समाविष्ट करके उसको प्राधान्य तथा केन्द्र-स्थान देना। दूसरे शब्दों में 'एटीट्युड ऑफ कोन्फीडन्स'—विश्वस्त वृत्ति और 'डिवोशनल फेथ'—भक्तिमय श्रद्धा को आमूल क्रान्ति का स्रोत बनाना। यह सारे संसार को गांधी-विनोबा की अद्वितीय देन है।

सख्य भक्ति

तत्त्वतः हर युग की एक पुकार होती है, जो कि देखते देखते ही उस युग की एक अनिवार्य माँग बन जाती है। उसके पीछे रहे विचार की पूर्ति करना उस युग का धर्म बन जाता है। ऐसे युग धर्म को नित्य धर्म के रूप में प्रत्यक्ष व्यवहार के तमाम क्षेत्रों-अंगों में मूर्तस्वरूप देने का जो सही मार्ग होता है, वह है उस युग का नया भक्तिमार्ग।

वर्तमान युग की माँग, पुकार है साम्य अर्थात् समानता। उसके पीछे रहा विचार है : साम्य द्वेषमूलक न हो, किंतु करुणा-मूलक हो और वह करुणा भी अहिंसा-मूलक हो। विज्ञान आज तकाजा कर रहा है कि उसकी पूर्ति का मार्ग आरंभ से अंत तक शुद्ध हो, अर्थात् संपूर्ण रूप से अहिंसक हो। करुणामूलक साम्य की स्थापना के इस युग-धर्म को मानव-जीवन के व्यवहारों में जागतिक रूप से मूर्तिमंत करने वाले नये भक्ति-मार्ग की भक्ति का स्वरूप सख्य-भक्ति का ही रहेगा, क्योंकि मात्र मैत्री में सर्वोत्कृष्ट एवं विवेकयुक्त साम्य का शुभ दर्शन होता है। मैत्री-आश्रम की स्थापना के पीछे यही मंगल दृष्टि रही है।

मानव-जीवन में, समस्त मानव-समाज में और मानवीय मूल्यों में सर्वांगीण आमूल क्रान्ति करने की अमोघ शक्ति मैत्री के साथ भक्ति के करुणामूलक साम्य के इस विनोबा-विचार में भरपूर है। यह विचार आध्यात्मिक तो है ही, किंतु इसके अतिरिक्त यह बिल्कुल आधुनिक और अद्यतन वैज्ञानिक विचार है। इस शक्ति के आविष्कार का आरंभ लोक सम्मति 'सैंक्शन ऑफ दी पीपल्स'—से हुआ। सर्वोदय पात्र के कार्यक्रम, जिसको विनोबाजी ने 'अहिंसात्मक क्रान्ति की कसौटी' कहा है, उसका गहरा महत्त्व इसी में है। सामूहिक सख्य-भक्ति के निर्माण का श्रीगणेश सर्वोदय पात्र के कार्यक्रम की सफलता से इसी में से मिलने वाली सेवा की व शान्ति की दीक्षा ही से होगा।

मन में अविरोधी हित का केन्द्रस्थ विचार, हृदय में सख्य-भक्ति के रूप में प्रचुर भक्तिमय श्रद्धा, जीवन के हर अंग व क्षेत्र में मैत्रीप्रणीत साम्य का विवेकयुक्त व्यवहार और इन सबके प्रतीक के रूप में घर-घर से सर्वोदय-पात्र और एक चिन्ह के तौर पर प्रतिमाह हर परिवार से एक गुण्डी सूत द्वारा सातत्यपूर्वक सम्पत्ति-दान, इसकी सम्मिलित शक्ति से भक्तिमय क्रान्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलेगा, अहिंसक क्रान्ति के अपेक्षित परिणामों का दर्शन होगा।

वैज्ञानिक पहलू

क्रान्ति का विचार अब तक आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयों तक सीमित रहा है। इसके अतिरिक्त सांस्कृतिक, धार्मिक विषयों के और साहित्य, कला, ज्ञान-विज्ञान, सभ्यता (सिविलाइजेशन) आदि क्षेत्रों के सम्बन्ध में भी क्रान्ति का आम तौर पर उल्लेख किया जाता है। अधिक मात्रा में सार्वत्रिक उपयोग में आने के कारण "क्रान्ति" शब्द कुछ सस्ता-सा बन गया है। थोड़ी-बहुत मात्रा में इधर-उधर कुछ ऊपर-ऊपर से ढाँचा बदलने का बाह्य परिवर्तन या परिस्थिति-परिवर्तन होता है तो उसे फौरन "क्रान्ति" कह देते हैं। परिस्थिति परिवर्तन से राहत का काम अवश्य होता है, करना भी चाहिये, किंतु क्रान्ति का काम नहीं होता है। अब क्रान्ति के लिए परिस्थिति-परिवर्तन के अतिरिक्त मुख्यतः मूल्य-परिवर्तन ही करना होगा, याने पुराने गलत मूल्यों का विसर्जन और नये मूल्यों का निर्माण, अर्थात् विशेष सर्जन करना होगा।

दूसरी बात यह है कि आम तौर पर क्रान्ति का सम्बन्ध भौतिक मूल्यों के साथ है, ऐसा माना जाता है। आध्यात्मिक मूल्यों का या भक्ति का क्रान्ति के साथ,

निर्दलीय जनतंत्र : एक गोष्ठी

निर्दलीय जनतंत्र के लिए देश में चल रहे आंदोलन को कलकत्ता में जून के तीसरे सप्ताह में हुए निर्दलीय जनतंत्र के सम्मेलन ने बहुत बल दिया। कलकत्ता के सर्वोदय विचार परिषद की तरफ से आयोजित यह सम्मेलन गोष्ठी के रूप में चला। जादवपुर विश्वविद्यालय के रेक्टर डा० त्रिगुण सेन ने सम्मेलन की अध्यक्षता की। प० बंगाल के प्रमुख सर्वोदय-कार्यकर्ता श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने सम्मेलन का उद्घाटन किया। प्रमुख सर्वोदय कार्यकर्ता तथा अ० भा० सत्याग्रह समाज के अध्यक्ष प्रो० गोरा ने निर्दलीय जनतन्त्र पर चर्चा आरम्भ की। इस सम्मेलन में प्रो० निर्मलकुमार बोस, प्रो० अमलन दत्त, प्रो० निर्मलचन्द्र भट्टाचार्य, प्रो० निर्मल कुमार चटर्जी, प्रो० गौरीपद भट्टाचार्य, काजी अब्दुल वदूद, अ० भा० शान्ति परिषद के अध्यक्ष पं० सुन्दरलाल, मैसूर राज्य से लोकसभा के सदस्य श्री शिवमूर्ति स्वामी आदि विद्वानों ने भाग लिया।

सम्मेलन में स्वागत-भाषण करते हुए श्री भवानी प्रसाद चटर्जी ने सर्वोदय-आंदोलन के कारण जनतंत्र में आ रहे नये मोड़ का जिक्र किया और कहा कि दुनिया भर में दलगत व्यवस्था के कारण जनतंत्र तानाशाही में बदल रहा है। इसलिए जनतंत्र को बचाने के लिए उसे दलगत राजनीति से किस तरह मुक्त किया जा सकता है, इस पर सोचने का समय आ गया है।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने "राजा ईश्वर का प्रतिनिधि" के दिनों से लेकर आज तक की राज्य व्यवस्था के इतिहास का सिंहावलोकन किया। उन्होंने कहा—सच्चा लोकतंत्र अहिंसात्मक समाज में ही विकसित हो सकता है। इसलिए लोकतंत्र के लिए काम करने का मतलब अहिंसात्मक सामाजिक व्यवस्था की स्थापना के लिए काम करना है। ग्राम-स्वराज्य की राज्य-व्यवस्था ही उस ओर हमको ले जायेगी। ग्रामदान और भूदान-आंदोलन के जरिये विनोबाजी ने उसकी एक झलक दिखाई।

अभी जो दलगत राजनीति है, इसके कारण हिंसा को प्रोत्साहन मिल रहा है। नैतिक मूल्य गिर रहे हैं। जनता की समस्याएँ सरकार के जरिये हल नहीं हो पा रही हैं। इस पृष्ठभूमि में जनतंत्र को निर्दलीय बनाना अहिंसात्मक समाज की स्थापना के लक्ष्य की ओर जाने का एक कदम होगा।

निर्दलीय जनतंत्र पर चर्चा शुरू करते हुए श्री गोरा ने कहा कि महात्मा गांधी, एम० एन० राय, विनोबाजी, जयप्रकाश नारायण आदि नेताओं ने व्यक्ति और उसकी सरकार के संबंधों में अच्छे परिवर्तन लाने के लिए निर्दलीय जनतंत्र के विचार को आगे बढ़ाया। उसे एक रूप देने के लिए अब हमें कार्यक्रमों की दृष्टि से सोचना है। वैसे किसी जनतंत्रात्मक संविधान में कहीं भी पार्टी का कोई उल्लेख नहीं है। जनतंत्र की प्रारम्भिक अवस्था में जनता में राजनैतिक जागृति पैदा करके उन्हें सच्चे नागरिक बनने में

> जब जनतंत्र में सारी सत्ता जनता की है, तो जनता की सत्ता किसी एक दलविशेष के जरिए कैसे हाथ में ली जा सकती है? तब वह जनतंत्र न रह कर दलतंत्र हो जाता है। इसलिए राजनैतिक दल जब तक रहेंगे, तब तक जनतंत्र न स्थिर रह सकता है और न प्रगति कर सकता है। इसलिए सच्ची जनतांत्रिक सरकार में दलों के लिए कोई स्थान नहीं है।

मदद देने के लिए राजनीति में दलों का आविर्भाव हुआ और आज जनतंत्र के आगे बढ़ने में ये ही दल बाधा बने हुए हैं। इसलिए जिस तरह साम्प्रदायिकता और जातीयता को आज हम छोड़ रहे हैं, वैसे ही संकीर्णता को प्रोत्साहन देने वाली दलीयता को भी छोड़ना है। आज दलीय जनतंत्र की सरकारों में जनतंत्र नाम मात्र ही है। वास्तव में बहुमतीय दल की तानाशाही ही है। आज की इस स्थिति को सच्चे जनतंत्र की ओर ले जाने के लिए पाँच रिवाजों में परिवर्तन आवश्यक है। इन सुधारों से आज की स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन होगा।

(१) आज जिस तरह कुछ दलों के लिए पहले से चुनाव-चिह्न सुरक्षित रखे जाने का रिवाज है, उसका अन्त होना चाहिए। सब उम्मीदवार समान हैसियत के माने जाकर सब को एक ही समय चुनाव-चिह्न दिये जाने चाहियें।

(२) चुने जाने के बाद सब प्रतिनिधि, चूंकि जनता के प्रतिनिधि हैं, चुनाव क्षेत्र के प्रतिनिधि हैं, इसलिए आज धारा सभाओं में दलीय गुटों में बैठने का जो रिवाज है, इसका अन्त हो जाना चाहिये। सब प्रतिनिधियों को अपने-अपने चुनाव-क्षेत्र की संख्या के अनुसार बैठना चाहिये।

(३) मुख्य मंत्री या प्रधान मंत्री को आज बहुमतवाले दल के सदस्य ही चुनते हैं। इसके विपरीत धारा सभा के सब सदस्यों को मिल कर 'सिलेक्टेड कैबिनेट' पद्धति के अनुसार मुख्यमंत्री या प्रधान मंत्री को चुनना चाहिये।

(४) धारासभाओं में हर विषय पर खुली चर्चा होनी चाहिये और प्रत्येक विषय पर स्वेच्छा के मतदान के बहुमत से निर्णय किये जाने चाहिए। आज पार्टी के आदेश के अनुसार ही वोट देने का सचेतक का जो रिवाज है, इसका अन्त होना है।

(५) मंत्रिमंडल की तरफ से पेश किये गये प्रस्तावों का भी संशोधन करने का या निराकरण करने का अधिकार सदन को होना चाहिये। इस तरह के संशोधन या निराकरण को मंत्रिमंडल पर अविश्वासी प्रस्ताव नहीं मानना है।

प्रो० निर्मल कुमार बोस ने अपने भाषण में कहा—"सब पार्टियों के घोषणा-पत्र अगर हम देखते हैं, तो करीब-करीब समान ही रहते हैं। फिर भी ये लोग आपस में मिल कर काम नहीं करते। इसका कारण यह है कि प्रत्येक दल यही समझता है कि अकेले उसी ने जनता का ठेका ले रखा है। मेरे जैसे पढ़े लिखे लोग सब दलों के सिद्धान्तों को परख कर इस निर्णय पर पहुँच सकते कि किसी पार्टी को वोट नहीं देना है। सब पार्टियाँ बेकार हैं। लेकिन आम जनता को यह चीज समझाने के लिए स्वैच्छिक कार्य को प्रोत्साहन देना होगा। तब उस स्वैच्छिक काम और दलीय सरकारों में संघर्ष आये बिना नहीं रहेगा, उस समय छोटे-मोटे सत्याग्रहों के लिए तैयार रहना पड़ेगा। प्रो० बोस ने इस बात पर जोर दिया कि आर्थिक जनतंत्र की स्थापना के लिए हमें पहले काम करना होगा।

प्रो० अमलन दत्त ने जनतांत्रिक और तानाशाही सामाजिक व्यवस्थाओं का अंतरविस्तार से बता कर अपना यह विचार जाहिर किया कि जनप्रतिनिधि के अपने विवेक तथा जनता के प्रति वफादार रहने में दलों की ओर से कोई बाधा नहीं आनी चाहिए। प्रो० दत्त ने कहा कि भले ही राष्ट्रीय स्तर पर दलों का रहना स्वाभाविक हो, लेकिन चूंकि हमें समाज का परिवारीकरण करना है, इसलिए गाँवों के स्तर से निर्दलीयता के लिए कोशिश करनी है। आपने पार्टियों को आगाह किया कि एशियाई और अफ्रीकी देशों में पार्टियों के झगड़ों के कारण यहाँ जाति, धर्म और कबीलों के भेदभाव अधिक रहने से, जनतंत्र तानाशाही में बदलता जा रहा है। और भारत को इस खतरे से बचाने के लिए यहाँ के पार्टियों को यह स्थिति पैदा करने से दूर रहना है।

प्रो० निर्मल कुमार भट्टाचार्य तथा श्री काजी अब्दुल वदूद ने पार्टियों का समर्थन करते हुए कहा कि बिना पार्टियों का केंद्रीकरण नहीं हो सकता और बिना केंद्रीकरण के राष्ट्र की प्रतिरक्षा और योजनाबद्ध प्रगति संभव नहीं। आपने बताया कि पार्टियों के लिए मानसशास्त्र के आधार हैं। अंत में आपने कहा कि निर्दलीय जनतंत्र कल्पना मात्र है और उसे कभी हम यथार्थ में नहीं उतार सकते। फिर भी चूंकि वह हमारा लक्ष्य है, इसलिए निरंतर इस ओर अग्रसर होते रहने में कोई आपत्ति नहीं।

प्रो० गौरीपद भट्टाचार्य ने निर्दलीय जनतंत्र का जोरदार समर्थन करते हुए राजनैतिक दल और आन्दोलन के बीच का अन्तर स्पष्ट बताया। आपने कहा कि समान विचार रखने वाले व्यक्तियों का एक जगह एकत्रित रहना ही दल नहीं है। दल के लिए सीमित सदस्यता, बहुमत का निर्णय अल्पमत पर लादना

मानो कोई संबंध ही नहीं है और प्रत्यक्ष व्यवहार के क्षेत्रों में उनकी कोई गणना या महत्त्व का केन्द्रीय स्थान नहीं है, ऐसा कहा जाता है। यही कारण है कि सर्वोदय विचार को छोड़ कर बाकी के सब क्रान्ति विचार या विचारधाराएँ कहीं भी परिशुद्ध नहीं बन पायी हैं।

वस्तुतः जो परिशुद्ध नहीं है, वह पूर्णरूपेण वैज्ञानिक भी नहीं है। जो कुछ वैज्ञानिक कहा जाता है, वह उत्तरोत्तर शुद्ध होना ही चाहिये। "विचार" को भी यही मापदंड लागू होता है।

किसी भी विचार को परिशुद्ध करने के लिए शान्त व तटस्थ बुद्धि और सतत पुरुषार्थ की आवश्यकता रहती है। शुभ विचारों को भी उत्तरोत्तर शुद्ध करते रहने और प्रतिदिन के व्यवहार में उसके अमल को शुद्ध विचार के साथ सुसंगत बनाते रहने से वे अंत में परिशुद्ध बन सकेंगे।

भक्ति के बिना कुछ भी परिशुद्ध नहीं बन सकता है। जब तक भक्ति-तत्त्व का अभाव होता है, तब तक कोई भी विचार पूर्णतया वैज्ञानिक भी नहीं बन सकता है, क्योंकि अन्ततोगत्वा विज्ञान एक साधन मात्र है और परिशुद्धि केवलरूप परम साध्य है। "विज्ञान" और परिशुद्धि विज्ञान के दो मुख्य पहलू हैं। "विज्ञान" साधन है और परिशुद्धि साध्य। विचार को परिशुद्ध करने के लिए प्रत्यक्ष व्यवहार में उसका अमल 'विज्ञानयुक्त' होना चाहिये। इस 'विज्ञान' का प्रकार विज्ञान का है और उसका स्वरूप भक्ति का है। भक्ति यहाँ एक विशिष्ट वैज्ञानिक साधन बन जाती है और विचार तथा आचार के बीच का विरोध दूर करके और अंतर कम करके सुसंवादिता लाती है।

अतः जिस विचार का बीज आध्यात्मिक है और जिसमें भक्ति को केन्द्र-स्थान दिया गया है, वही विचार परिशुद्ध बन सकता है और उसके अमल की प्रक्रिया वैज्ञानिक बन सकती है। जो क्रान्ति-विचार आध्यात्मिक भी है और वैज्ञानिक भी है और जिसके अमल की प्रक्रिया का मूल विचार के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में कोई विरोध नहीं है, उसी क्रान्ति-विचार में मूल्य-परिवर्तन करने की शक्ति रहती है।

(क्रमशः)

लादना, उसे न मानने पर अनुशासन की कार्रवाई, पार्टी के आदेश को ही सर्वोपरि मानना, अपने दल के लोग ही जनता की भलाई कर सकते हैं, बाकी कोई नहीं कर सकते, *ऐसा मानना आदि लक्षणों की* जरूरत है। प्रत्येक दल जनता के सामने अपना कार्यक्रम प्रस्तुत करता है। लेकिन प्रत्येक दल यही समझता है कि जब वह खुद सत्ता को, अपने हाथ में ले सकेगा, तभी उस कार्यक्रम को अमल कर सकेगा। इस तरह सब राजनैतिक दलों में सत्ता के लिए स्पर्धा मुख्य चीज हो जाती है। दलों के जरिये सत्ता हथियाने का यह संघर्ष ही जनतंत्र को खतरे में डाल रहा है।

आपने आगे प्रश्न किया कि जब जनतंत्र में सारी सत्ता जनता की होती है तो जनता की सत्ता किसी एक दल विशेष के जरिए कैसे हाथ में ली जा सकती है? तब यह जनतंत्र न रह कर दलतंत्र हो जाता है। इसलिए राजनैतिक दल जब तक रहेंगे, तब तक जनतंत्र न स्थिर रह सकता है और न प्रगति कर सकता है। इसलिए सच्ची जनतांत्रिक सरकार में दलों के लिए कोई स्थान नहीं है।

लोकसभा के सदस्य श्री त्रिवमूर्ति स्वामी ने लोकसभा में अपने अनुभव बताते हुए कहा कि

> पार्टी-सचेतक के आदेश के अनुसार ही वोट देने की प्रथा ने जनप्रातिनिध्य को एक तमाशा का खेल बना दिया है। उन्होंने कहा कि हमारे संविधान ने सबको सामाजिक न्याय, विचार व्यक्त करने की आजादी और अवसरों में समानता प्रदान की। जनता की बात दूर, जनप्रतिनिधियों को धारासभाओं में भी दलीय पद्धति के कारण यह न्याय, समता तथा स्वतंत्रता नहीं मिल रही है।

वैसे साधारणतया सब मुख्य विषयों पर सब सदस्यों की राय समान होती है लेकिन जब धारासभाओं में विचार व्यक्त करने तथा निर्णय देने का अवसर आता है तो पार्टी के आदेश के अनुसार अपनी अंतरात्मा की आवाज को दबा देते हैं। इस तरह जनप्रातिनिध्य में जब दलबंदी प्रवेश करती है, तो वे जनता का प्रातिनिध्य न करके अपने-अपने दल के नेता का प्रातिनिध्य करते हैं। इसलिए जनप्रातिनिध्य को सच्चा बनाने के लिए प्रत्येक जनप्रतिनिधि को निर्दलीय रह कर विचार व्यक्त करने में और निर्णय देने में स्वेच्छा से अपने विवेक का उपयोग करना चाहिये।

पं० सुन्दरलालजी ने अपने भाषण में निर्दलीय जनतंत्र के विचार का समर्थन करते हुए कहा कि जब राष्ट्रपति निर्दलीय रहते हैं और गाँवों में निर्दलीयता चाहते हैं, तो धारासभाओं में भी निर्दलीयता का क्यों न प्रवेश करायें? आज अपने-अपने दलीय स्वार्थों के कारण निर्दलीयता को स्वीकार करने से भले ही इनकार करें, लेकिन भविष्य में जन-आंदोलन इस लक्ष्य को जरूर प्राप्त करेगा।

श्री निर्मल मुखर्जी तथा विश्वनाथ चटर्जी ने निर्दलीय जनतंत्र के समर्थन में एम० एन० राय के विचार को विस्तार से समझाया। सर्वश्री सुधीरचन्द्र लाहिरी, ब्रजेन्द्र किशोरयश, महावीर सिंह, मोतीलाल केजरीवाल, विष्णुशरण आदि ने भी चर्चा में भाग लेकर निर्दलीय जनतंत्र का समर्थन किया।

करीब आठ घंटे तक चली इस चर्चा का *समारोप करते हुए* श्री गोरा ने कहा, "किसी भी सरकार का लक्ष्य सत्य, समता तथा सहनशीलता को जनता के आचरण में बढ़ाना है। दलगत सरकारें यह काम करने में विफल हो रही हैं। इसीलिए जनतंत्र को निर्दलीय बनाना है। आज जनता में सर्वत्र मायूसी छायी हुई है। इसका निराकरण कर जनता में उत्साह का संचार कराने के लिए उनमें इस भावना की जरूरत है *कि* यह सरकार उनकी अपनी है। जब सरकार किसी एक दल की हो जाती है, तो उस दल के बाहर के लोग उस सरकार को अपनी सरकार महसूस नहीं करते। इसलिए सारी जनता सरकार को अपनी सरकार महसूस करें, इसके लिए सरकार का निर्दलीय होना जरूरी है। कुछ लोगों ने कहा कि दलों के लिए मानसशास्त्र के आधार हैं। दलों के लिए कितने भी आधार क्यों न हों, यह देखना है कि उसका नैतिक आधार है या नहीं? जब सबकी ओर से और सबके टैक्स से सरकार बनती है, तो सारी जनता की न रह कर वह सरकार किसी दलविशेष की बने, इसके लिए कोई नैतिक आधार नहीं है।"

गोराजी ने आगे कहा कि जनतंत्र में जनता का कर्तव्य केवल मतदान से समाप्त नहीं हो जाता। चुने हुए प्रतिनिधि अपने कर्तव्य ठीक निभायें, यह देखना भी जनता का कर्तव्य है। इस तरह जनता द्वारा अपनी सरकार पर नियंत्रण रखने वाली प्रक्रिया को 'सत्याग्रह' कह सकते हैं। सत्याग्रह जनतंत्र का एक अविभाज्य अंग है। निर्दलीय जनतंत्र के लिए जन-आंदोलन मजबूत करने पर गोराजी ने जोर दिया।

*श्री सुदीन भट्टाचार्य ने सर्वोदय-*विचार परिषद् की तरफ से गोष्ठी के सफलतापूर्वक *समाप्त होने पर* बधाई दी और इससे बड़े पैमाने पर भविष्य में सम्मेलन बुलाने की आशा व्यक्त की।

सम्मेलन के अवसर पर संचालकों ने एक 'सोवनेर' निकाला, जिसमें महात्मा गांधी, थोरो, एम० एन० राय, विनोबा, जयप्रकाश नारायण, धीरेन्द्र मजूमदार, गोरा आदि के लेख हैं।

—लवणम्

महिला शिविर, कौसानी

ऊपर नील आसमान, सामने स्वच्छ धवल ऊँचा-नीचा एवं विशाल हिमगिरि शिखर का ललाट, अलग-अलग चीड़ के ऊँचे-ऊँचे हरे वृक्ष, सामने छोटे गाँव व उनके नीचे छोटे छोटे खेत, नीचे दर्पणतुल्य सफेद जल प्रवाहित करती हुई कोसी नदी। इन सबकी नजरों में एक पहाड़ के वक्षस्थल में कौसानी के लक्ष्मी आश्रम के दुमंजिले मकान। इन सबके चारों ओर फलों से लदे वृक्ष व पानी से भरे कुण्ड। इनके साथ *आश्रम के बच्चों को अपने स्वागत में* आते हुए देख दूर-दूर से आयी हुई बहनें ११४ मील की मोटर के पहाड़ी घुमावदार मार्ग से गुजरे हुए प्रवास की थकान को भूल गईं। यद्यपि मोटर में कुछ बहनों की तबीयत भी खराब हुई थी, किन्तु पहुँचने पर सब बहनें खुश थीं। वैसे इन सबको लेने श्री सरला बहन स्वयं हलद्वानी पहुँची थीं।

श्री सरला बहन का कहना है कि *यह हमारे समाज के लिए बड़े दुर्भाग्य की बात* है कि हम एक लँगड़ा समाज बनाने जा रहे हैं। सिर्फ पुरुषों के उदय से सर्वोदय *नहीं हो जायेगा। जब तक महिलाओं से सहयोग न मिले, या जब तक महिलाओं* में मार्गदर्शन देने की शक्ति पैदा नहीं होती है। तब तक हमारे आन्दोलन में सफलता नहीं मिल सकती।

इसी निमित्त से कौसानी आश्रम में गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी महिलाओं के दो शिविर आयोजित किये गये। ये दोनों विनोबाजी के स्त्री-शक्ति के आवाहन के *अनुसार स्त्री-शक्ति को जगाने के* विनम्र प्रयास थे।

पहला शिविर ११ मई से २६ मई तक हुआ। इसमें गुजरात से चार तथा फर्रुखाबाद से तीन बहनें आयी थीं। हमारी आशा के प्रमाण में यह संख्या कम थी। परन्तु ये बहनें संकल्पपूर्वक शिविर के *लिए ही आयी थीं। इसलिए आश्रम-जीवन* में एकरूप होने में देर न लगी। साथ ही ये बहनें सर्वोदय-कार्य में लगे हुए कार्यकर्ताओं के सम्पर्क में आयी थीं। चूँकि ये गृहस्थ थीं, इसलिए उनके कार्यक्रम भी उसीके अनुकूल रख गये थे।

इस शिविर में दो घंटे नित्य चर्चा होती थी। उसमें स्त्री-शक्ति को जगाने सम्बन्धी विचार तो दिये ही गये, साथ ही *ये लोग यहाँ से जाकर अपने क्षेत्र में भी* महिलाओं में कुछ काम कर सकें इसके *लिए गांधीजी के रचनात्मक कार्य, सर्वोदय-*विचार, भूदान ग्रामदान, नई तालीम, सर्वोदय-पात्र, शान्ति-सेना, ग्रामस्वराज्य तथा साम्ययोगी जीवन के विचारों की झाँकी भी रखी गयी। इस शिविर के उत्तरार्द्ध में रायबरेली से श्री बद्रीभाई पहुँच गये थे, अतः सर्वोदय के मधुर गीत *सीखने का भी इन बहनों को लाभ मिला।* इसके अतिरिक्त तत्सम्बन्धी विषयों का स्वाध्याय भी ये करती थीं।

शिविर के अन्त में ये बहनें स्निग्धतापूर्ण वातावरण में विदा हुईं तथा अपने लिए एक नई दिशा और नया कार्यक्रम सोच कर गयीं। इन बहनों के पत्रों से लगता है कि यहाँ से जाने के बाद इन्होंने अपने क्षेत्रों में महिला-जागरण के कामों की शुरुआत की।

दूसरा शिविर १ जून से १५ जून तक चला। इसमें दूर-दूर से विद्यार्थी बहनें आयी थीं। कुछ रचनात्मक सेवा-कार्यों में लगी हुई भी थीं, बहरहाल सभी सर्वोदय-विचार से सम्बद्ध खादी पहनने वाली थीं। शिविर के अन्त तक १५ बहनों की *संख्या हो गयी,* पर यह भी हमारी आशा से कम ही थी। सर्वोदय के सम्पर्क में होने से इन *विचारों को समझने तथा* आश्रम-जीवन के साथ एकरूप होने में *देर न लगी।*

सवेरे के उद्योग में ये लोग आश्रम की बहनों के साथ टोलियों में काम करती थीं, काम के समय की गयी चर्चाओं से भी मंथन हुआ करता था। यों तो अलग-अलग प्रान्तों की थीं, इसलिए इसने एक अन्तरराज्यीय शिविर का रूप ले लिया था, क्योंकि कोई केरल की थीं, तो कोई बंगाल की, कोई पंजाब की थीं, तो कोई उत्तर *प्रदेश या दिल्ली की। नित्य दो घंटे का* बौद्धिक वर्ग हुआ करता था। उसमें सर्वोदय की अर्थनीति, लोकनीति, स्त्रीशक्ति, शांति सेना, सर्वोदय-पात्र व खादी तथा ग्रामोद्योग पर भी वक्ताओं के व्याख्यान हुए। कुछ दिनों के लिए बद्रीभाई के मनोहर गीतों को सीखने का लाभ इन बहनों को भी मिला था। कानपुर से एक कवि व साहित्यिक मित्र के साथ विनयभाई आये थे। *इन बहनों ने गृहस्थी के सब कामों में भाग लिया था।*

शिविर-काल में ही एक दिन पर्यटन के लिए रखा गया था। उस दिन सारा समाज आश्रम से ५ मील दूर बुमलोट गया था, जिसमें सबको जंगल में चढ़ना उतरना पड़ा। शिविर काल में ही प्रत्येक बहन ने एक-एक निबन्ध भी लिखा था, जिसे आश्रम की पत्रिका, 'सर्वोदय' में अन्तिम दिन प्रकाशित किया गया। शिविर के अन्तिम दिन आश्रम तथा आयी हुई बहनों की ओर से शिक्षादायी तथा मनोरंजन के कार्यक्रम रखे गये थे, जिससे सबको सौम्य, मर्यादापूर्ण, सुखद, किन्तु संस्कारपूर्ण छाप मिली।

१५ दिन के सहवास के पश्चात् जब विदाई हुई, तो आश्रम की बहनों तथा जाने वाली बहनों की आँखें गीली थीं। जाते जाते कुछ बहनें कह रही थीं—सरला बहन हमको भगा रही हैं। अगले साल हम जरूर आयेंगी, कुछ और बहनों को साथ लेकर।

समाज में आज स्त्री का जो रूप है, वह बड़ा लज्जास्पद है, क्योंकि हम संसार में स्त्री को सबसे पहले माँ के रूप में ही देखते हैं, बल्कि संसार के साथ परिचय ही माँ के रूप में होता है। सारी सृष्टि ही माँ पर आधारित है। माँ के बिना प्राणी का अस्तित्व ही नहीं है। इसलिए आज के युग की माँग है कि समाज में से जो नारी या औरत का भाव है, वह मिट जाय और मातृत्व कायम हो, जो कि शाश्वत है।

—देवी पुरस्वार

"सर्व सेवा संघ का यह स्पष्ट मत है कि किसी भी हालत में जनता के नैतिक पतन से होने वाली आमदनी का लोभ सरकार को कभी नहीं रखना चाहिए और शराब को आमदनी का जरिया न बनाये रख कर सारे देश में शराबबंदी करनी चाहिए।"

सर्व सेवा संघ का शराबबंदी सम्बंधी प्रस्ताव

(अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति की बैठक गत ता० १७ से २३ जून '६२ तक पटना में हुई। उसमें शराबबंदी सम्बंधी स्वीकृत प्रस्ताव यहां दिया जा रहा है। —सं०)

भारतीय संविधान के मूलभूत सिद्धांतों (डाइरेक्टिव प्रिंसिपल्स) में भारत में संपूर्ण शराब बन्दी का ध्येय निहित है। योजना-आयोग ने अपनी दो योजनाओं के अनुभवों के बाद यह महसूस किया है कि शराब के कारण श्रमिकों की जो दुर्दशा होती है, उससे योजना को सफल बनाने में काफी बाधा पहुँची है। सामाजिक और पारिवारिक जीवन में अन्य जो विग्रह और बुराइयाँ शराब से पैदा होती हैं, वे तो सर्वविदित हैं ही। इसलिए योजना-आयोग के सुझाव पर भारत सरकार ने प्रादेशिक शासनों को शराब-बंदी के कारण होने वाली आर्थिक क्षति का आधा भाग उठाने की बात भी स्वीकार कर ली है। प्रादेशिक शासन भी इसे सिद्धांततः मानते हैं और कुछ प्रदेशों में तो संविधान बनने के पूर्व ही पूर्ण शराब-बन्दी कर दी गई थी। अन्य प्रदेशों ने भी धीरे धीरे शराब बन्दी की ओर बढ़ने की घोषणाएँ की हैं।

यह सब देखते हुए भी यह कहना होगा कि देश की आजादी और संविधान बनने के बाद की इस अवधि में शराब-बन्दी की दिशा में कोई खास प्रगति नहीं हो पायी है। कोई सुनिश्चित कदम इस संबंध में नहीं उठाये गये हैं, बल्कि उच्च स्तरीय राजकीय भोज, पार्टियों और तथाकथित बड़े सांस्कृतिक समारोहों के अवसर पर तथा भारतीय दूतावासों आदि में शराब का पहले की अपेक्षा भी कुछ ज्यादा गौरव देने वाला प्रयोग होता दिखाई दिया है। गत १५ वर्षों में सारे राष्ट्रीय जीवन से सम्बंधित इस बुनियादी काम के प्रति इस प्रकार की उपेक्षा और ढिलाई बरती गई है, वह केन्द्र और प्रदेश शासन सबके लिए अशोभनीय है।

अखिल भारत सर्व सेवा संघ की प्रबंध-समिति का यह स्पष्ट मत है कि किसी भी हालत में जनता के नैतिक पतन से होने वाली आमदनी का लोभ सरकार को कभी नहीं रखना चाहिए और शराब को आमदनी का जरिया न बनाये रख कर सारे देश में शराब-बन्दी करनी चाहिए। लोगों की मद्यपान की आदत एकाएक मिटा देना सरकार के लिए संभव न दीखता हो और इसलिए कुछ मुद्दत तक कम होते हुए परिमाण में शराब का व्यवहार चलने देना जरूरी हो, तब भी सरकार को शराब से आमदनी न करने का ही फैसला करना चाहिए, जिससे सरकार का नैतिक गौरव बढ़े और शराब-बन्दी का वातावरण बनने में मदद मिले।

पर प्रबंध समिति की राय में शराब-बन्दी का जो ध्येय है वह केवल शासकीय कानून से पूरा नहीं होगा। शराब के प्रकट दुष्परिणामों के फलस्वरूप यद्यपि शराब के खिलाफ सर्वसाधारण की आवाज उठी है और अखिल भारतीय स्तर पर शराब-बन्दी सम्मेलन किया जाकर देश में शीघ्रातिशीघ्र शराब बन्दी की मांग की गई है, फिर भी कानून से होने वाली शराब-बन्दी को सफल करने के लिए भी व्यापक लोक-शिक्षण की जरूरत है। इसलिए लोक-सेवकों का और सामाजिक सेवा-कार्य में लगे व्यक्तियों का कर्तव्य है कि वे इस समस्या का आर्थिक, सामाजिक, नैतिक हर पहलू से अध्ययन करें, सारे तथ्यों को समय समय पर प्रकाशित करें, और इस प्रकार व्यापक लोक शिक्षण द्वारा शराब के व्यवहार को बन्द किये जाने के अनुकूल जनमत व वातावरण बनावें। शराब पीने वालों से भी निकट संपर्क किया जाना चाहिए और गरीब व पिछड़े हुए वर्ग में अमुक अभावग्रस्त स्थिति के कारण जो नशे का व्यसन ज्यादा पाया जाता है, उस व्यसन को छुड़ाने के लिए मनोरंजन आदि के साधन उपलब्ध किये जाने चाहिए। इसके लिए घर-घर जाकर प्रचार करना होगा। लोगों के हस्ताक्षर शराब न पीने, न पिलाने और शराब-बन्दी करने के लिए प्राप्त करने होंगे। इतना ही नहीं, आवश्यक हो तो शराब की दुकानों पर 'पिकेटिंग' भी करना होगा। सार्वजनिक स्थानों व पत्र पत्रिकाओं में होने वाले शराब के विज्ञापन को तो रोकना ही चाहिए। यह सारा काम प्रेम और शान्ति के साथ सातत्यपूर्वक करना होगा और इस बात के लिए सतर्क रहना होगा कि कहीं भी उत्तेजना पैदा न हो।

सारे प्रयत्नों के बावजूद यदि सरकार शराबबन्दी नहीं करती है, तो जनता को सत्याग्रह का कदम भी उठाना होगा।

प्रदेश सर्वोदय-मण्डलों को चाहिए कि इस कार्य के लिए अन्य सामाजिक सेवा संस्थाओं तथा इस काम में दिलचस्पी लेने वाले विशेषज्ञों की समितियाँ वगैरह बना कर और प्रातिनिधिक सरकारी, अर्ध-सरकारी, गैरसरकारी संस्थाओं आदि का सहयोग लेकर जनाभिक्रम द्वारा शराब-बन्दी के लिए समुचित कार्यक्रम चलायें।

सत्याग्रह करने की स्थिति आने तो प्रमुख जिम्मेवार व्यक्ति पूज्य विनोबाजी तथा प्रबंध समिति की सलाह से समय-समय पर उचित कदम उठावें। प्रबंध समिति को उम्मीद है कि प्रादेशिक सरकारें कम से कम भारत के प्रमुख तीर्थ क्षेत्रों में तो शराब-बन्दी तुरंत अमल में लावें। साथ ही जिन क्षेत्रों में जनमत और प्रातिनिधिक संस्थाओं की मांग हो वहाँ भी शराब-बन्दी शीघ्र करेंगी। प्रबंध समिति अपेक्षा रखती है कि जनता और सरकार दोनों इस कार्य की आवश्यकता, उपयोगिता और गंभीरता को महसूस करेंगी और सरकार समाज हित के इस कार्यक्रम के सिलसिले में जरूरी कदम शीघ्र उठावेगी।

स्वच्छ लोग : अस्वच्छ देश

[पृष्ठ २ का शेष]

परन्तु इस समस्या का एक भयानक मानवी पहलू है। पाखाना भ्रष्ट करता है, लेकिन किसी-न-किसी को तो उसे देखना है, उठाना है और ठिकाने लगाना ही है। जो इन्सान इसे करता वह भंगी है। वह शापित है, घृणित है, अछूतों में भी वह अछूत है, उसका धन्धा जन्म से घृणित है और हमने उसे इतना गन्दा बना दिया है और भंगी को इतना पतित बना रखा है कि भंगी और पाखाना पर्याय रूप बन गये हैं। हम पाखाने को देख नहीं सकते, परन्तु भंगी को पाखाने में रहने देते हैं। हो सके तो हम दोनों को न तो देखें और न छुवें। अब हम धीरे-धीरे यह अनुभव करने लगे हैं कि यह गलत है और एक गुनाह है। परन्तु अब भी इस गलती को वैज्ञानिक ढंग से ठीक करने से हम इन्कार करते हैं। स्वच्छता वैज्ञानिक है और अगर डाक्टर, दाई और नर्सों का धन्धा स्वच्छ बन सकता है, तो भंगी का काम क्यों नहीं? डाक्टर को प्रशिक्षण देते हैं और उसे बढ़िया औजार दिये जाते हैं। भंगी को भी प्रशिक्षण दिया जाना चाहिये और उसे औजार दिये जाने चाहिए। इस धन्धे को हमें वैज्ञानिक ढंग से स्वच्छ बनाना चाहिए और वेतन इतना अच्छा मिलना चाहिए कि यह काम अगर प्रिय नहीं, तो अच्छा तो बन ही जाय। भंगी के स्थान पर उसे सफाई-मजदूर या 'सफाईवाला' कहा जाना चाहिए। अपने अन्तिम दिनों में गांधीजी अपने को "आदर्श भंगी" कहा करते थे और चाहते थे कि उनका पुनर्जन्म किसी भंगी के घर में हो। परन्तु बहुत पहले उन्होंने अपने कमोड का इस्तेमाल और साफ करना शुरू किया था और यात्रा में भी वे उसे अपने साथ रखते थे। भंगी खत्म होना चाहिए, आदर्श सफाईवालों को यह धंधा लेना चाहिए। और कौन जानता है कि मेरा लड़का और आपकी लड़की ही इस धंधे को करने लगें। दूसरे देशों में न तो भंगी थे और न आज हैं। परन्तु हम इन्हें रखना चाहते हैं, अपने इस विश्वास के कारण कि हम संसार में सबसे अधिक स्वच्छ लोग हैं। जितना हमारा अहंकार महान् है, उतना ही हमारा पतन भी महान् है। [गतांक से समाप्त]

('मानव संदेश' के सौजन्य से)

जयप्रकाश-जयंती मनाइये

[श्री जयप्रकाशजी के जयंती-समारोह के लिए श्री ठाकुरदास बंग और श्री ग० उ० पाटणकर ने एक निवेदन प्रस्तुत किया है, वह हम यहां दे रहे हैं। —सं०]

श्री जयप्रकाश नारायण से आज देश या विदेश में कौन अपरिचित है। सत्ता से दूर रह कर जिस प्रतिभा का उन्होंने परिचय दिया है, सर्वोदय का वरण कर समाजवाद की भावी दिशा का जो दिग्दर्शन किया है, आणविक स्फोटों के विरुद्ध नौका ले जाने की उनकी साहसिक घोषणा के कारण (भले ही कुछ अड़चनों के कारण फिलहाल वे प्रत्यक्ष में नौका न ले जा सके हों) मानवता के अन्तस्तल की व्यथा को उन्होंने जिस भाँति छुआ है, उसे कौन नहीं जानता?

इस महापुरुष के जीवन के साठ वर्ष जल्द ही पूर्ण होंगे। ८ अक्टूबर, '६२ को जयप्रकाशजी ६१वें वर्ष में पदार्पण करेंगे। ऐसे पुण्य अवसर बार-बार नहीं आते। इस समय सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष को अन्य जननायकों से सम्पर्क साध कर देश भर में ८ अक्टूबर का दिन एक विशेष अवसर के रूप में मनाये जाने का आयोजन करना चाहिए। इस पुनीत दिन गाँव-गाँव में एवं नगरों में सार्वजनिक सभाएँ हों एवं जयप्रकाशजी की दीर्घायु के लिए परमेश्वर से प्रार्थना की जाय।

सर्वोदय सेवकों के लिए यह दिन विशेष चिन्तन का होना चाहिए। अच्छा हो कि 'गांधी जयंती' से विजयादशमी तक—२ अक्टूबर से ८ अक्टूबर तक—के सप्ताह में जगह-जगह सर्वोदय सेवक निम्न एक या अनेक जयप्रकाशजी के प्रिय कार्यक्रमों का आयोजन करें।

(१) भूदान-प्राप्ति एवं उसका भूमिहीनों में तत्काल वितरण।

(२) संपत्तिदान प्राप्ति

(३) पंचायत राज के उद्देश्यों का प्रचार।

(४) सर्वोदय-साहित्य का प्रचार

आशा है, सभी साथी इस सुझाव पर विचार करेंगे।

—ठाकुरदास बंग

—गं० उ० पाटणकर

'सर्वोदय उत्सव': विनोबा जयंती से गांधी जयंती तक

राष्ट्रव्यापी पर्व की योजना

पिछले वर्ष पूज्य विनोबाजी ने "शरदारम्भे शारदोपासना" का संदेश देते हुए यह संकेत किया था कि तारीख ११ सितम्बर [विनोबा-जयंती] से २ अक्टूबर [गान्धी-जयंती] तक की २२ दिन की अवधि में सारे देश में सर्वोदय विचार का सामूहिक प्रयत्न हो। इस वर्ष के कार्यक्रम की योजना के संबंध में विचार-विनिमय करने के लिए सर्व सेवा संघ-प्रकाशन की ओर से साहित्य-प्रचार में रुचि रखने वाले व्यक्तियों की एक सभा तारीख १९-२० जुलाई को काशी में बुलाई गई थी। सभा में बंगाल, आन्ध्र, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, राजस्थान, तामिलनाड, बिहार तथा गुजरात आदि की ओर से कार्यकर्ता सम्मिलित हुए।

सभा में यह आम राय रही कि विनोबा-जयंती से गान्धी-जयंती तक की अवधि सर्वोदय के समग्र विचार के एक पर्व के रूप में मनाई जाय। इस अवधि में विभिन्न कार्यक्रमों के द्वारा ऐसा वातावरण बनाया जाय, जिससे सर्वोदय विचार के अध्ययन और उस कसौटी पर अपने-अपने काम के बारे में चिंतन की प्रेरणा हरएक को हो। जिस तरह से और कई पर्व राष्ट्रव्यापी बन गये हैं, उसी प्रकार ११ सितम्बर से २ अक्टूबर का २३ दिन का यह समय भी 'सर्वोदय उत्सव' के रूप में प्रचलित हो जाय।

सर्वोदय एक समग्र जीवन-दर्शन है और जीवन के विभिन्न पहलुओं को यह विचार छूता है, इस दृष्टि से 'सर्वोदय उत्सव' की अवधि में कार्यक्रम तो विभिन्न प्रकार के हो सकते हैं और हों, पर उन सबमें दो बातें मुख्य हों। एक तो यह कि सारे कार्यक्रम ऐसे सरल और रोचक ढंग के हों कि लोग स्वयं उन्हें उठा लें, जैसे अन्य त्योहारों पर लोग अपनी-अपनी शक्ति और सामर्थ्य के अनुसार अपना कार्यक्रम बना लेते हैं। दूसरा यह कि उन सारे कार्यक्रमों का लक्ष्य विचार, चिंतन और आत्म-निरीक्षण को प्रोत्साहन देने का हो। सर्वोदय साहित्य और पत्र पत्रिकाओं का प्रचार भी इस दृष्टि से सारे कार्यक्रमों का एक मुख्य अंग होना चाहिए।

सभा में 'सर्वोदय उत्सव' के लिए जो विभिन्न कार्यक्रम सुझाये गये, उनमें ग्राम तथा नगर-पदयात्राएँ, विचार-गोष्ठियाँ, साहित्य प्रदर्शिनी, स्कूल-कालेजों में वक्तृत्व-प्रतियोगिताएँ, नाटक इत्यादि कार्यक्रम मुख्य थे। साहित्य-प्रदर्शिनी के कार्यक्रम पर खास तौर से जोर दिया गया और देश के करीब १०-१५ प्रमुख केन्द्रों में इस वर्ष अच्छे पैमाने पर साहित्य-प्रदर्शिनियाँ आयोजित करने का सोचा गया। साहित्य प्रदर्शिनी के स्वरूप इत्यादि के बारे में तफसील की सूचनाएँ भी तैयार की गई।

११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक के दिनों में देश के हर जिले के पीछे एक पदयात्रा के हिसाब से कम-से-कम तीन सौ पदयात्राएँ आयोजित हों तथा हर प्रदेश में कम-से-कम २५ हजार रुपये की साहित्य-बिक्री और २ हजार भूदान-पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने का लक्ष्य रख कर कार्यक्रम बनाया जाय।

सभा ने यह सिफारिश की है कि परिस्थिति और आवश्यकता को ध्यान में रख कर हर साल सर्वोदय उत्सव के लिए दो-चार खास-खास विषय चुन लिये जायँ, जो सारे कार्यक्रमों के केन्द्रबिन्दु हों। इस साल के लिए नीचे लिखे ५ विषय सुझाए गए :—

१—शान्ति सेना
२—भूमि-समस्या
३—राष्ट्रीय एकता
४—पंचायती राज
५—अणुशस्त्र विरोध

सर्व-सेवा-संघ की ओर से सर्वोदय-उत्सव मनाने के संबन्ध में जल्दी ही सब जिला सर्वोदय मण्डलों को आवश्यक सूचनाएँ भेजी जायेंगी।

—०—

९ अगस्त : नशाबन्दी दिन

बिहार राज्य नशाबंदी समिति ने तय किया है कि '९ अगस्त' का दिन बिहार प्रदेश में प्रभात फेरी, तीर्थ-स्नान, उपवास, जुलूस, सभा और पिकेटिंग करके नशाबंदी दिन के रूप में मनाया जाय।

श्री भूमिक्षुजी को आमरण अनशन न करने का निवेदन

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल द्वारा शराबबंदी के लिए सक्रियता

उत्तराखण्ड में सरकार की ओर से सम्पूर्ण शराबबन्दी के लिए कोई आश्वासन न मिलने पर श्री सोहनलालजी 'भूभिक्षु' १ जून '६२ से विधानसभा भवन, लखनऊ के सामने उपवास करने के लिए पहुँचे थे। किन्तु उत्तरप्रदेशीय सर्वोदय के बुजुर्ग साथियों तथा प्रदेशीय सर्वोदय मंडल की कार्य-समिति ने उनसे आग्रह किया कि वे आमरण उपवास न करें।

अपनी १९ जून '६२ की बैठक में कार्य-समिति ने इस संबंध में प्रस्ताव भी पास किया। प्रस्ताव में कहा गया कि :—

"उत्तराखण्ड में शराबबन्दी के लिए श्री 'भूभिक्षुजी' के अन्दर जो तीव्रता है, उसका हम अनुभव करते हैं और इसके लिए उन्होंने जो अपने प्राणों की बाजी लगाने का निश्चय किया है, उसकी हम कदर करते हैं। किन्तु उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल समस्त प्रदेश में शराबबन्दी के कार्यक्रम को लेकर चल रहा है और एक अन्य प्रस्ताव द्वारा उसने सरकार से अनुरोध किया है कि वह प्रारंभ में काशी और उत्तराखंड में शराबबन्दी की अविलम्ब घोषणा करे अतः श्री भूभिक्षुजी से हम प्रार्थना करते हैं कि वह आमरण उपवास न करें और सम्मिलित प्रयास में योग दें।"

अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबंध समिति ने भी इस प्रस्ताव को उचित बताया है और श्री आमप्रकाश गौड़ ने उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल की ओर से तथा श्री कृष्णराज मेहता ने अ० भा० सर्व सेवा संघ की ओर से उनसे उपवास न करके शराबबन्दी के लिए जनआंदोलन करने और लोकशक्ति जाग्रत करने के कार्यक्रम में लगने का आग्रह किया है तथा उन्हें परामर्श दिया है कि वह विनोबाजी से मिल कर अगला कार्यक्रम बनायें।

नयी तालीम सम्मेलन अहमदाबाद में

देश में नयी तालीम-पद्धति के प्रचार-प्रसार और प्रगति पर विचार करने तथा नयी तालीम संबंधी समस्याओं के समाधान पर विचार विनिमय के लिए अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा एक "नयी तालीम सम्मेलन" २० और २१ अगस्त १९६२ को साबरमती आश्रम, अहमदाबाद में रखा गया है। इसमें देश के भिन्न-भिन्न भागों से तालीमविद् और नयी तालीम के विचारक भाग लेंगे। सेवाग्राम (वर्धा) से प्रकाशित होने वाली पत्रिका "नयी तालीम" अब आचार्य राममूर्ति के सम्पादकत्व में वाराणसी से प्रकाशित होगी।

उ० प्र० नशाबन्दी कार्यकर्ता अधिवेशन

उत्तर प्रदेशीय नशाबन्दी कार्यकर्ता-अधिवेशन, जो २२-२३ और २४ जुलाई को लखनऊ में होने वाला था, अब उन तारीखों को न होकर ५ और ६ अगस्त '६२ को लखनऊ में ही होगा। "नशाबन्दी अधिवेशन" का कार्यालय १२, स्टेशन रोड, लखनऊ में खुल गया है और प्रतिनिधियों के लिए रेल-किराये में रियायत के लिए भी पत्र-व्यवहार किया जा रहा है।

इस अंक में

फतेहपुर सीकरी में शराबबंदी सत्याग्रह का आरंभ

सर्वोदय-मंडल, आगरा द्वारा गत १७ जुलाई से फतेहपुर सीकरी में शराबबंदी के लिए सत्याग्रह आरंभ किया गया। सत्याग्रह की शुरुआत श्री महावीरसिंह मदोरिया ने की। दस साथी नियमित सात घंटे शराब की दोनों दुकानों पर धरना दे रहे हैं।

आगरा से विमलभाई लिखते हैं—"यहाँ शराब की एक दुकान एक कांग्रेसी चेयरमैन की है। इसलिए वह अधिकारियों पर दबाव डाल रहे हैं कि इन्हें गुण्डागर्दी के सहन गिरफ्तार कर लिया जाय। इसलिए हम सभी कार्यकर्ताओं को आमंत्रित करते हैं कि वे यहाँ पर आकर सत्याग्रह में भाग लें।"

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८०२४ इस अंक की छपी प्रतियाँ ८६४०
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार ३ अगस्त '६२ वर्ष ८ : अंक ४४

तिलक-पुण्यतिथि के अवसर पर

जीवन का समीकरण = त्याग$_२$ + भोग$_१$

विनोबा

सब जानते हैं कि लोकमान्य तिलक अपने जमाने में अद्वितीय थे। भारत पर परमेश्वर की बहुत कृपा रही कि इस जमाने में अपने-अपने क्षेत्र में कई अद्वितीय पुरुष हुए। यह भारत की बहुत बड़ी विशेषता रही। रामकृष्ण समन्वय में अद्वितीय थे। महात्मा गांधी अनासक्त कर्मयोग में अद्वितीय रहे। श्री अरविन्द योग के क्षेत्र में अद्वितीय थे। रवीन्द्रनाथ ठाकुर का काव्य-प्रतिभा में अद्वितीय स्थान है। इस प्रकार अद्वितीयों का समूह हिन्दुस्तान में तब हुआ, जब कि हिन्दुस्तान अंग्रेजों की गिरफ्त में था। लोकमान्य की गणना ऐसे अद्वितीयों में है। यह नजारा, यह दृश्य अक्सर कम देखने को मिलता है कि कई अद्वितीय एक जमाने में एकत्र हो जायं। अर्थात् भारतमाता ने पारतन्त्र्य में भी प्रतिभा प्रकट की।

भारत के अर्वाचीन इतिहास में ऐसा दृश्य देखने को मिलता है कि यहाँ दोषों का संशोधन हुआ और जीवन के विविध क्षेत्रों में अनेक अद्वितीय पुरुष पैदा हुए। उन्हीं में लोकमान्य हैं। उन्होंने सिखाया कि 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध हक है और यह हम हासिल करके रहेंगे।' उस समय लोकमान्य से पूछा गया था कि स्वराज्य के बाद आप कौनसा पोर्टफोलियो लेंगे? तो उन्होंने कहा था कि राजनीति में मैं नाइलाज से हूँ। धर्म रुक रहा है, देश का विकास रुक गया है, इसलिए लाचारी से मैं राजनीति में हूँ, राजनीति मेरा काम नहीं है। स्वराज्य प्राप्ति के बाद तो मैं वेदों का या गणित विद्या का संशोधन करूँगा। यह तो मैंने आपद्धर्म के तौर पर कबूल किया है।

नोआखाली की यात्रा क्यों?

अभी तक हम इतना ही समझे हैं कि राजनीति में ताकत है। लेकिन अब यह समझने के दिन आये हैं कि राजनीति में एक जमाने में ही ताकत थी, आज नहीं है। स्वराज्य-प्राप्ति के पहले जो लोग राजनीति में थे, वे लोग लोगों के उत्थान के लिए राजनीति तब अत्यन्त जरूरी होती है, इसलिए थे। वह राजनीति नहीं है। वह तो लोकनीति होती है, चाहे उसका स्वरूप राजनीति जैसा दीखता हो, इसलिए स्वराज्य के आखिरी आन्दोलन में अनेक धार्मिक पुरुषों ने सहयोग दिया और अपना काम छोड़ कर इसमें आये। वह लोकनीति थी। अगर वह राजनीति होती, तो स्वराज्य के बाद महात्मा गांधी नोआखाली में न दीखते। जैसे बैरिस्टर जिन्ना ने अपने अधिकार हाथ में लिये थे और पाकिस्तान की बागडोर सँभाली थी, मार्गदर्शन का जिम्मा उठाया था, वैसा महात्मा गांधी भी कर सकते थे। लेकिन वे जानते थे कि स्वराज्य के बाद हमें लोकनीति करनी है और लोकनीति के तौर पर स्वराज्य के बाद कांग्रेस को लोकसेवक-संघ बनने की हिदायत उन्होंने दी। मृत्यु के अन्तिम दिन उन्होंने यह हिदायत दी। क्योंकि कांग्रेस के नाम को वे और उज्ज्वल रूप देना चाहते थे और उसे उज्ज्वल करना चाहते थे।

जहाँ त्याग, वहाँ बल

बात ऐसी है कि जिस क्षेत्र में त्याग करना पड़ता ही है, त्याग के बिना जो क्षेत्र खाली नहीं होता, उसमें ताकत होती है। अंग्रेजों के जमाने में स्वराज्य के पहले कांग्रेस का मेम्बर बनाना याने अंग्रेजों के खिलाफ नाम जाहिर करना था। खादी की टोपी पहनना उनका गुस्सा मोल लेना था। एक जग में सैनिक बनना था। उस जमाने में बहुत तकलीफ उठानी पड़ती थी। आज कांग्रेस का मेम्बर बनना याने कुछ पाने की बात होगी, खोने की नहीं। सार यह कि राजनीति में तब ताकत थी। उस जमाने में राजनीति में आना यानी लाठी खाना, जेल जाना, मार खाना, कोड़े खाना, फाँसी पर चढ़ना—यह सारा राजनैतिक क्षेत्र में होता था। वह ताकत आज नहीं दीखती है। आज राजनीति में त्याग नहीं है। तो आज शक्ति कहाँ है? समाज-क्षेत्र में है। आर्थिक क्षेत्र में है। उसमें हम काम करते हैं, तो त्याग करना पड़ता है। 'यत्र त्याग तत्र बल'—जहाँ त्याग है, वहाँ बल है।

> **जैसे एच$_२$+ओ$_०$=पानी, यह समीकरण रसायन में आता है। वैसे ही मैंने जीवन का समीकरण बनाया है : त$_२$+भ$_१$=जीवन। त्याग जीवन में दो मात्रा में होना चाहिए और भोग एक मात्रा में, तभी जीवन बनता है।**

सत्ता में कमलपत्रवत् रहें

मैं मानता हूँ कि आज राजनीति में त्याग का मौका नहीं है, तो भी त्याग कर सकते हैं। जैसे, जनक महाराज ने त्याग किया था। वैसे मैं चाहता हूँ कि जिनके हाथ में सत्ता है, वे जनक महाराज का या भरत का आदर्श अपने सामने रखें। ये दो बड़े पुरुष यहाँ हो गये। ऐसा हो सकता है। लेकिन आज राजनीति में स्वाभाविकतः त्याग का क्षेत्र है, ऐसा नहीं कह सकते। त्याग कोई करेगा, और बावजूद भोग के वह त्याग करेगा, तो वह त्याग परम उज्ज्वल होगा। लेकिन वह स्वाभाविक, नैसर्गिक, प्राकृतिक त्याग का क्षेत्र नहीं है। वह भोग का क्षेत्र है। इसलिए आज समाज-सेवा में बहुत त्याग है। शक्ति समाज-सेवा के क्षेत्र में है। आज तरह-तरह की सेवा की जरूरत है। शक्ति का अनुसन्धान त्याग में है, यह खोजना जरूरी है।

नवबाबू के त्याग की अत्यन्त उपेक्षा

मैं आपको मिसाल देता हूँ। नवबाबू उड़ीसा के मुख्य मन्त्री थे। वे भूदान में आना चाहते थे। उन्होंने त्याग-पत्र देने का सोचा भी था। उनसे मेरी मुलाकात कई बार होती थी, लेकिन एक भी मुलाकात में मैंने उनको यह नहीं समझाया कि इस पद को आप त्याग दीजिये। मैं यह नहीं मानता कि इस तरह की सलाह किसी को दी जाय। वे अपने विचार कांग्रेस के सामने रखते थे। आखिर ऊपरवालों ने देखा कि उनके मन में तड़पन है, तो उन्होंने छोड़ दिया। उनके त्याग की प्रशंसा करने वाला कोई आर्टिकल आपने पढ़ा? किसीको लिखने की प्रेरणा नहीं हुई। मैंने उनकी प्रशंसा नहीं की, क्योंकि उनकी प्रशंसा करना अपनी प्रशंसा करने जैसा होगा। लेकिन आखिर मैंने देखा कि उनके त्याग की अत्यन्त उपेक्षा हो रही है। तब मैं तमिलनाड में घूमता था। वहाँ माणिक्यवाचकर एक महान् तत्त्वज्ञानी, कबीर की कोटि के हो गये। उन्होंने उस जमाने में प्रधानमंत्री-पद का त्याग किया और बहुत बड़े भक्त बन गये। उनके भजन हर बालक के कंठ पर हैं। उनके गाँव हम गये थे। उस दिन माणिक्यवाचकर की अद्वितीय मिसाल देकर मैंने नवबाबू की बात रखी। मैंने लोगों से कहा कि अगर राज्य-सत्ता के जरिये क्रांति हो सकती थी, तो माणिक्यवाचकर ने वह क्यों छोड़ी? राज्यसत्ता से क्रांति होती, तो गौतम बुद्ध सत्ता का त्याग क्यों करता? ऐसी मिसालें प्राचीन काल में हुईं, तो अर्वाचीन काल में भी ऐसी मिसालें हो रही हैं, इस तरह मैंने नवबाबू की मिसाल देकर उनकी प्रशंसा की। त्याग की कितनी उपेक्षा अपने देश में आज है।

त्याग की उपेक्षा की दूसरी मिसाल

इसकी और एक मिसाल है। अभी आपने सुना होगा कि राजेन्द्रबाबू ने अपना वेतन कम किया। और अब वे कोई ढाई हजार रुपये ले रहे हैं। गांधीजी ने जाहिर किया था कि पाँच सौ रुपया लेना चाहिए। उस जमाने के पाँच सौ रुपये की कीमत आज के दो हजार रुपयों से बहुत ज्यादा है। लेकिन कितने अखबारों ने इस पर लेख लिखा? मैं घूमता रहता हूँ, इसलिए सब अखबार तो मेरे पास आ नहीं सकते हैं। लेकिन जहाँ तक मेरा खयाल है, किसीने नहीं लिखा। और आजकल अखबार में आता क्या है? कोई मिनिस्टर दाल की फैक्टरी खोलने जाता है और भाषण देता है। वह खबर दो-दो कालम में आती है। होना तो यह चाहिए था कि राजेन्द्रबाबू ने जो यह काम किया, उसकी खबर देहात-देहात, घर-घर जाकर देनी चाहिए थी।

संकट जगा रहा है

इस तरह त्याग के लिए जनता आज उदासीन है। इतनी सुस्ती आज देश में है। और अब आज चीन के साथ सामना करने का मौका आ रहा है। सीमा हमें

जगा रही है, तो मुझे बड़ी खुशी होती है। अब हिमालय इनकार कर रहा है, दोनों देशों को तोड़ने से। इसलिए हम उदासीन रहेंगे, तो नहीं चलेगा। हिमालय कह रहा है, हम आपको अलग नहीं रहने देंगे। आपको लड़ना है तो लड़ो और खत्म होना है तो खत्म हो जाओ। पर लोग क्या कहते हैं? कहते हैं कि हम सब एक होकर चीन के साथ डट कर मुकाबला करेंगे। एक होने के लिए आपको आपत्ति की जरूरत है क्या? और जब तक आपत्ति नहीं आती है, तब तक क्या आप गालियाँ देते रहेंगे? जब सामना करने का मौका आवेगा, तब त्याग करना पड़ेगा। लड़ाई में तो बहुत कठिन जीवन रहता है। लेकिन आज हमारा जीवन बहुत सॉफ्ट—मुलायम—बना है। भोग-विलास में पड़े हैं, रात को जागते हैं, सुबह सात-सात, आठ-आठ बजे उठते हैं। धूप नहीं सहन कर सकते, ठंड नहीं सहन कर सकते, बारिश नहीं सहन कर सकते, ऐसी हालत आज है। हम अपना ऐसा नरम जीवन कायम रखेंगे, तो टिक नहीं सकेंगे। दूसरे हमारा क्या बचाव करेंगे? क्या आपने यह समझ रखा है कि उधर सेना लड़ती रहे और आप भोग-विलास में पड़े रहें, तो आप अपना बचाव कर सकेंगे? मुझे तो आनन्द हो रहा है कि सब लोग जरा जागेंगे, त्याग करना सीखेंगे और नरम जीवन नहीं बनायेंगे, क्योंकि सामने एक संकट खड़ा है। वह हमें जगा रहा है।

जैसे $H_2 + O$ = पानी, यह समीकरण रसायन में आता है, वैसे ही मैंने जीवन का एक समीकरण बनाया है—त$_2$ + भ$_1$ = जीवन। त्याग जीवन में दो मात्रा में होना चाहिए और भोग एक मात्रा में। तब जीवन बनता है। आज तो तीनों मात्राओं में भोग चल रहा है।

लोकमान्य की स्मृति में आज यह कहा। हमारे सामने उन्होंने अपनी मिसाल पेश की है। वे योगी के समान रहते थे और परमेश्वर पर श्रद्धा रखते थे। उनकी स्मृति में हम यह जीवन का समीकरण अपने जीवन में लावें।

[इन्दौर, १-८-'६०]

अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन का शीघ्र प्रकाशित पुस्तक 'प्रेरणा प्रवाह' से।

निर्बल के बल राम

प्रबोध चौकसी

अमेरिका ने पृथ्वी से २०० मील की ऊँचाई पर 'वान एलन बेल्ट' को क्षुब्ध करने वाला अणुविस्फोट कर ही लिया! मंशा यह है कि रेडियो-संचार को किस हद तक अवरुद्ध किया जा सकता है यह पता हो जाय, ताकि अमेरिका यदि चाहे तो रूस पर हमला कर ले और जवाबी हमले को इस प्रकार से 'वान एलन बेल्ट' को विक्षुब्ध करके नाकामयाब कर दे!

भारत के और अमेरिका के शांति-सैनिक इस धमाके के विरुद्ध प्रदर्शन नहीं कर सके, इच्छा होते हुए भी। भविष्य में भी ऐसे मौकों पर प्रभावी सत्याग्रह उसी स्थान पर किया जा सकेगा, इस विषय में शंका ही है।

लेकिन क्या अहिंसा की शक्ति स्थानबद्ध है? तब फिर भगवान् पतंजलि ने उसे स्थल-काल से निरपेक्ष 'सार्वभौम महाव्रत' कहा, वह क्या बे-माने है?

यदि थोड़ा-सा भीतर से सोचा जाय तो यह स्पष्ट होना चाहिए कि हिंसा की कार्रवाइयों का हिंसा के ही स्तर पर प्रतिकार करने की चेष्टा अहिंसा की विशेषता को भुलाना है। हिंसक क्रिया स्थल-बद्ध और शरीरप्रधान होती है। अहिंसक क्रिया तुलना में स्थल-निरपेक्ष एवं भावप्रधान (अध्यात्मप्रधान ही अंतिम संकेत तो होगा) होती है।

अर्थात् अणु-विस्फोटों का अहिंसक प्रतिकार विस्फोट के स्थल पर और समय पर सदेह उपस्थिति के द्वारा ही हो सकता है, ऐसी अनिवार्य शर्त अहिंसा को प्रभावी बनाने के लिए हो नहीं सकती।

तब किया क्या जा सकता है? कौन कर सकता है? कब और कहाँ कर सकता है?

सभी बल जो हारा है वह भाग्यवान है, क्योंकि राम ही उसका बल है। उसे ढूँढना भर उसका कार्य है। राम सबमें हैं, अतः सभी जो कर सकते हैं, वह राम का तरीका है। सभी स्थान पर किये जाने पर भी जिसका असर और सभी स्थानों तक पहुँच सकता है, वह राम का तरीका है। 'राम' का यानी अहिंसा का, सबका, सर्वोदय का।

मार्ग ढूँढने का गांधीप्रणीत उपाय है उपवास, आत्मशुद्धि के लिए उपवास। आबाल-वृद्ध, सबल-निर्बल सब जिसे कर सकते हैं, कहीं भी कर सकते हैं। उपवास की आत्मीयता का जितना विशाल घेरा होगा, उपवास की नैतिक शक्ति का उतना विशाल असर एकदम होगा। लेकिन बड़े समूह जब उपवास करते हैं या बड़े हेतु को लेकर जब छोटा-सा मनुष्य भी उपवास करता है, तब अहिंसा का प्रभाव उपवास करने वाले की निजी हैसियत की सीमाओं को लाँघ जाता है।

अणु-विस्फोटों से आतंकित विश्व में मार्ग ढूँढने के लिए क्यों न गांधी-प्रणीत उपवास के सामूहिक शुद्धि-यज्ञ का आश्रय लिया जाय?

उपवास का आरंभ दिल्ली के राज-घाट पर हो सकता है, गांधी-समाधि पर और वहीं राष्ट्रभर में होने वाले असंख्य समूह-उपवासों की केन्द्रीय यज्ञवेदी रखी जा सकती है।

एक दिन के, दो दिन के, तीन-पाँच-सात-चौदह इक्कीस दिन के उपवास व्यक्ति की शक्ति-भक्ति के अनुसार हो सकते हैं। शक्ति की मर्यादा व्यक्तिगत होगी, समूह की शक्ति असीम है, अतः उपवास का यज्ञ अखंड चल सकता है। गांधी की समाधि से लिंकन की समाधि तक, टाल्स्टाय की समाधि तक शुद्धि-यज्ञ अवश्य पहुँच सकता है।

कौन शरीक हो सकता है उसमें? कोई भी। सर्वोदय-कार्यकर्ता, बैंक का चपरासी, निःशस्त्र-बंदी, शस्त्रों का स्वामी, प्रधानमंत्री नेहरू, राष्ट्रपति, निवृत्त राष्ट्रपति, परिव्राजक विनोबा भी। अस्सी साल का अर्ल रसेल और श्वाइत्जर और लीनस पोलीन भी यदि चाहें तो सपत्नीक।

आरंभ कौन कर सकता है? उत्तम आरंभ उससे होगा, जिनका व्यक्तित्व राष्ट्रीयता को लाँघ गया है, 'जय जगत्' जिसके न केवल उच्चार है, आत्मानुभूति है, जिसकी आत्मीयता राष्ट्र ने मान्य की है। एक-दो ही तो व्यक्ति हैं अपने देश में, जो यह कर सकते हैं। श्रेष्ठ आरंभ उनका होगा, तो यज्ञ की आहुति सुनिश्चित होगी।

आरंभ कब हो सकता है? 'कल किया सो आज कर, आज किया सो अब', यह तो है ही है। परंतु कुछ दिनों का अपने में एक विकर्म-मूल्य होता है, जिसके कारण ही वह मुहूर्त बनते हैं।

६ अगस्त के दिन हिरोशिमा का अणुबम से संहार हुआ। मानव के दिल का एक-एक तार उस दिन से विकल बना है, विश्व को भी 'हिरोशिमा' शब्द आंदोलित करता है।

आरंभ कहीं से भी हो, राजघाट की गांधी-समाधि पर उसकी घोषणा हो। गांधी शांति प्रतिष्ठान–गांधी पीस फाउंडेशन–प्रतिदिन गांधी-समाधि पर उपवासों की घोषणा का, उपवासियों के बैठने रहने का और देश के कोने-कोने से उपवासियों की भर्ती का आयोजन क्यों नहीं कर सकता?

एक नाचीज लेखक के नाते यह जो सूझा सो सर्वदेव के चरणों में निवेदन कर दिया है। इसमें गुस्ताखी है, जानता हूँ, इसीलिए सर्वदेव से क्षमा माँगता हूँ।

साहित्य-परिचय

नमक के प्रभाव से : ले० काकासाहब कालेलकर, प्रकाशक : नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद—१४। पृष्ठ-संख्या १४८; मूल्य डेढ़ रुपया।

सन् १९३० में नमक-सत्याग्रह के कारण गांधीजी को तत्कालीन सरकार ने यरवडा जेल में बंद कर दिया था। गांधीजी के साथ उनकी सेवा के लिए सरकार ने काकासाहब कालेलकर को भेज दिया। काकासाहब ने उन दिनों, अर्थात् पाँच-सवा पाँच महीने के जो संस्मरण लिखे हैं, उनसे यह किताब तैयार हुई है। पुस्तक में जगह-जगह, गांधीजी की महानता का दर्शन होता है। छोटी-छोटी बातों का गांधीजी कितना खयाल करते थे, यह तो पुस्तक पढ़ने से ही मालूम होगा। हम यहाँ मिसाल के तौर पर एक हिस्सा दे रहे हैं :"

"दो दिन आराम करने के बाद अपना कार्यक्रम बनाने का मैं सोच ही रहा था, इतने में बापूजी मेरे सामने आकर मुझसे कहने लगे—'काका, मैंने अपने समय का हिसाब लगा कर देख लिया। मैं तुम्हें रोज आधा घंटा दे सकता हूँ। मुझे मालूम है कि तुमको अपने हाथ से लिखने की आदत नहीं है। स्वामी, दुर्गाराम या चंद्रशंकर को तुम लिखवाते आये हो। अगर कुछ लिखवाना हो तो मैं जरूर लिख सकता हूँ, आधा घंटा।'

यह सुनते ही मैं पानी-पानी हो गया! जब बोलने जैसी हालत में आया, तब मैंने कहा, 'बापूजी, भगवान् ने मुझे विशेष बुद्धि तो नहीं दी; लेकिन मैं इतना बुद्धू भी नहीं हूँ कि आपको लिखाने के लिये तैयार हो जाऊँ!' बापूजी ने फिर से कहा, 'नहीं, नहीं, संकोच करने का कारण नहीं। मैं सचमुच आधा घंटा देने के लिए तैयार हूँ।'

'आपसे लिखवाने जैसा मेरे पास कुछ है ही नहीं!' कह कर मैं खामोश हो गया।

मैं इतना तो देख सका कि बापूजी ने मुझे शर्माने के लिए आधा घंटा देने की बात नहीं की थी। मेरी लाचारी समझ कर मेरी मदद करने की शुद्ध नीयत से ही उन्होंने यह बात की थी।"

सरदार की अनुभव-वाणी : संग्राहक—मुकुल कलार्थी, प्रकाशक-उपर्युक्त, पृष्ठ-संख्या १२६, मूल्य एक रुपया।

जैसा कि पुस्तक के नाम से ही मालूम पड़ता है, यह पुस्तक सरदार पटेल के समय-समय पर उन्होंने जो कुछ सारपूर्ण बातें कही हैं, उसका संकलन है। शुरूआत में सरदारश्री का जीवन-चरित्र भी दिया गया है। इससे पुस्तक पढ़ने में रुचि बढ़ जाती है। सरदार की अनुभव-वाणी की एक बानगी देखिये :

"विदेशी भाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा देने की आज की पद्धति से हमारे नौजवानों की बुद्धि के विकास में बड़ी रुकावट पैदा होती है।

शिक्षा जब पराई भाषा में दी जाती है, तब विद्यार्थियों के दिमाग पर सिर्फ उस भाषा के शब्द याद रखने का ही बोझ नहीं पड़ता, परन्तु विषय को समझने में भी उन्हें बड़ी कठिनाई होती है। यह तो साफ बात है कि जहाँ रटने की शक्ति बढ़ती है, वहाँ समझने की शक्ति घट जाती है। (१०-११-'४९)" —मधुसूदन

अक्सर्वं जगद् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदान-यज्ञ

लोकनागरी लिपि *

सेना हटाने की बात सोचें

अगर हम सेना कम नहीं कर सकते, तो हमें कबूल करना होगा की हमारा अहींसा पर भरोसा है। आज के आज ही सेना कम हो जाय, सारी सेना नीकाल दो, अैसा मेरे कहने का मतलब नहीं है। मैं यह कहता हूँ की कीसी भी तरह का खतरा अुठाये बीना आज जीतनी सेना है, अुससे आधी कर सकते हैं। मैं तो अीतना ही कहना चाहता हूँ की आज सेना भले ही रहे, परन्तु वह तो बह नष्ट होनी चाहीअे न ? जब तक शस्त्र का आधार आप नहीं छोड़ेंगे, तब तक यह कभी नहीं हो सकेगा। अीसलीअे हमें देश के अन्तरगत अहींसा की शक्ती खड़ी करनी चाहीअे, भले ही अीसमें पाँच-दस साल लगें। परन्तु कम-से-कम देश की आन्तरीक शांती के लीअे पुलीस या लश्कर का अुपयोग न करना पड़े, यह बात अगर भारत में सीद्ध हो जाय, तो फीर अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में अहींसा कीस तरह प्रवेश करेगी, अीसका दर्शन होगा। आज तो भीतरी क्षेत्र में भी पुलीस की मदद लेनी पड़ती है। अीसका मतलब यही है की हम देश की भीतरी परीस्थीती में अभी तक पुलीस के बीना काम नहीं कर सकते। हमने सारे राष्ट्र की जीम्मेवारी सरकार पर सौंप दी और हम घर बैठ गये, यह ठीक नहीं।

[बासद,
३१-१०-'५८]

—वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

टिप्पणियाँ

मानव जीवन के साथ खिलवाड़

हाल में ही आन्ध्र प्रदेश के मुख्य मंत्री श्री एन० संजीव रेड्डी ने राज्य-असेम्बली में घोषणा की कि बाजार में बिकने वाली आधी से अधिक दवाएँ जाली हैं। महाराष्ट्र सरकार के ड्रग कण्ट्रोलर ने बम्बई, नागपुर, पूना, औरंगाबाद, कोल्हापुर, अकोला और नांदेड में सुई देने के काम में आने वाले 'डिस्टिल्ड वाटर' (अभिस्रावित जल) और 'सेलाइन वाटर' (लवण जल) की कोई १० हजार शीशियाँ इसलिए जब्त कर ली हैं कि उनमें मिलावट पाई गयी है। मद्रास-सरकार ने भी इस प्रकार की ५० हजार शीशियाँ जब्त की है। केरल में इस प्रकार की ७८ हजार शीशियाँ जब्त की गयी हैं। तीन मास पूर्व भी कोट्टायम स्टेशन पर आयी हुई ऐसी १ लाख २८ हजार शीशियाँ जब्त की गयी थीं।

कुछ समय पहले पटना तथा कुछ अन्य स्थानों में भी तलाशी लेकर ऐसी अनेक मिलावटी दवाएँ जब्त की गयी थीं। दिल्ली में भी २५ हजार शीशियाँ जब्त की गयी हैं। कलकत्ता के ड्रग कण्ट्रोलर का कहना है कि कलकत्ता में इस प्रकार की कितनी ही कम्पनियाँ हैं, जो दवाओं में अशुद्ध चीजें मिला कर उसका व्यापार करती हैं।

दवाओं में मिलावट करना कितना भयंकर है, इस बात की सहज ही कल्पना की जा सकती है। बीमारों के जीवन के साथ इस तरह की खिलवाड़ का परिणाम क्या होता है, यह किसी से छिपा नहीं है। एक तो हमारा देश यों ही दरिद्रता के पाश में जकड़ा है, असंख्य लोगों के पास दवा खरीदने के लिए भी पैसों का टोटा रहता है, फिर यदि कोई किसी तरह उसके लिए कुछ पैसे जुटाये तो उसे मोटी रकम चुकाने पर भी असली दवा उपलब्ध नहीं होती! इंजेक्शन देने के लिए जो 'डिस्टिल्ड' पानी चाहिए, प्राणरक्षा के लिए जो 'सेलाइन वाटर' चाहिए, उसी में जब मिलावट हो तो हो चुकी बीमार के प्राणों की रक्षा!

विभिन्न प्रदेशों में हाल में ही होने वाली इन तलाशियों से यह बात बिल्कुल स्पष्ट हो गयी है कि कुछ स्वार्थी लोग बहुत बड़े पैमाने पर दवाओं में मिलावट कर यह व्यापार चला रहे हैं। इसके लिए दवाओं के विक्रेता तो अपराधी हैं ही, वे डाक्टर भी दोषमुक्त नहीं कहे जा सकते, जो आँख मूँद कर ऐसी दवाओं का उपयोग करते हैं, अथवा होने देते हैं। पीड़ित जनता के जीवन के साथ होने वाली यह खिलवाड़ अत्यन्त ही गर्हित है। पीड़ितों को धोखा देने का यह व्यापार तुरत बन्द होना चाहिए। केन्द्रीय सरकार को तथा सभी राज्य-सरकारों को इसे बन्द करने के लिए तत्काल कड़ी कार्रवाई करनी चाहिए। जनता को भी इस विषय में सावधानी बरतनी चाहिए।

खरीदते समय उसे इस बात की जाँच करवा लेनी चाहिए कि दवा शुद्ध है अथवा नहीं। जनता की बेबसी का नाजायज फायदा उठा कर सोने-चाँदी की हवेलियाँ खड़ी करने वालों से हम अनुरोध करेंगे कि वे मानवता को लज्जित करने वाले इस घृणित व्यवसाय को तत्काल बन्द कर दें। इसमें उनकी ही अप्रतिष्ठा नहीं है, सारे देश की अप्रतिष्ठा है। उन्हें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि अन्याय से जुगाया हुआ यह धन एक दिन उन्हें डुबाये बिना नहीं रहेगा।

भीषण ट्रेन दुर्घटना

गत २१ जुलाई की रात को पौने दस बजे पटना के पास डुमराँव स्टेशन पर जो भीषण दुर्घटना घटी है, उसकी कल्पना ही जी को दहला देने वाली है। प्लेटफार्म पर एक मालगाड़ी पहले से खड़ी थी। ६ डाउन अमृतसर मेल (पंजाब मेल) तेजी से उसी पटरी पर आ गयी और मालगाड़ी से बुरी तरह टकरा गयी। पंजाब मेल के ३ डिब्बे और इंजिन चूर-चूर हो गये। खबर है कि लगभग एक सौ व्यक्ति मरे और उतने ही बुरी तरह घायल हुए। २४ जुलाई तक मलबे से ६९ लाशें निकाली जा सकी थीं, फिर भी कुछ लाशों के दबे होने की आशंका बनी थी।

डुमराँव स्टेशन पर पंजाब मेल खड़ी नहीं होती। वह वहाँ से सीधी गुजर जाती है। सीधी जाने वाली गाड़ी के समय एक पटरी उसके लिए खाली रख कर सिगनल दिया जाता है। उस दिन डुमराँव स्टेशन पर पंजाब मेल के लिए सिगनल भी दे दिया गया और उसी लाइन पर मालगाड़ी को भी 'शंटिंग' के लिए बना रहने दिया। यह लापरवाही ही इतनी भीषण दुर्घटना का कारण बनी। हम पीड़ित व्यक्तियों के शोकग्रस्त परिवार वालों के प्रति हार्दिक समवेदना प्रकट करते हुए रेल विभाग से यह माँग करते हैं कि वह अपनी शिथिलता दूर करे। पिछले दिनों रेल दुर्घटनाओं का जो ताँता लगा है वह हमारे शासन के लिए लज्जा का विषय है। उसमें शीघ्र-से-शीघ्र सुधार वांछनीय है।

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

फसल तैयार है !

दादा गणेशीलाल हिसार जिले के कर्मठ कार्यकर्त्ता हैं। एकनिष्ठा और सातत्य के साथ वर्षों से भूदान के काम में लगे हैं। वे अपनी मासिक रिपोर्ट भी नियमित भेजते रहते हैं। गत जून महीने की मासिक रिपोर्ट में सर्वोदय-पात्र के काम से के बारे में उन्होंने लिखा है—

"इस जिले में सर्वोदय-पात्र का कार्य मुख्य तौर पर श्रीमती विद्यावती द्वारा ३०० घरों में चल रहा है।

पू० बाबा का आगमन जब हिसार में हुआ था, उस समय बहुत-सी महिलाओं ने पूज्य बाबा के विचारों को सुन कर सर्वोदय-पात्र रखे। मगर जिला सर्वोदय-भूदान-मण्डल को मालूम न होने के कारण उन तक कार्यकर्त्ता न पहुँच सके। इस मास में एक महिला रूपवती—हिसार—ने अचानक श्रीमती विद्यावती लोकसेविका के मिलने पर ३१ रुपये सर्वोदय-पात्र के दिये। इसी प्रकार डाक्टर के० एम० गुप्ता ने, जो बाबा के आगमन पर गाँव माढोसींघाना में थे, खुद आकर जिला सर्वोदय-मण्डल कार्यालय, हिसार में १३ रुपये दिये। इससे अनुभव में यह आया कि सर्वोदय-पात्र के विचार को जनता पकड़ती है, मगर कार्यकर्त्ता जनता तक नहीं पहुँच पाते हैं जिससे सर्वोदय-पात्र टूटता है।"

सर्वोदय-पात्र का काम हमारे सारे कार्यक्रमों का एक महत्त्व का अंग है। वह जितना ही आसान है, उतना ही मुश्किल भी। कार्यकर्त्ता से वह सातत्य, निष्ठा और धीरज की अपेक्षा रखता है। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि सामान्य तौर पर हम कार्यकर्त्ताओं में इन चीजों की कमी है और उसी के कारण हमारे काम में तेज और कुशलता नहीं आ पाती। दादा गणेशीलाल की रिपोर्ट के उत्तर में विनोबा ने जो लिखा है, उससे उनके मन की वेदना भी प्रगट होती है। क्या समय रहते हम इस बारे में सजग होंगे ? विनोबा ने लिखा है :

"श्री गणेशीलालजी,

योजना को कार्यान्वित करने में वे अभी तक असमर्थ रहे हैं।

आपने उसके जो मधुर अनुभव लिये हैं, वे भारत के हृदय के निदर्शक हैं। आज ही मेरे पास एक बहन ने मनी-आर्डर से ३ रुपये ६५ नये पैसे सर्वोदय-पात्र के भेजे हैं। हर साल वह वैसा करती है। ईसा मसीह ने कहा था—'फसल तैयार है, लेकिन काटने वालों की कमी है।' यही अनुभव अभी भारत में आ रहा है।"

—सिद्धराज ढड्ढा

जिनकी याद सदा बनी रहेगी

• सुरेशराम

बहुत अर्से के बाद काशी से एक पत्र आया। उसमें एक खबर यह थी कि श्री सुश्ला बहन आग में जल कर मर गईं! पढ़ कर दंग रह गया! सौभाग्यवती सुश्ला को करीब साढ़े तीन साल हुए पहली बार हटुण्डी में देखा था। उसी मौके पर चि० विष्णु से उसकी शादी हुई। उसके बाद वे दोनों काशी आ गये। तब तो अक्सर भेंट होती थी और गत दिसम्बर से अप्रैल तक, जब अंग्रेजी 'भूदान' साप्ताहिक के सम्बन्ध में मुझे काशी रहना पड़ा, तब तो हफ्ते में दो-तीन बार मुलाकात होती थी और नाश्ते या भोजन का क्रम लगातार चलता था। बहुत सुशील, कम बोलने वाली, सदा प्रसन्न, अपने काम में मुस्तैद, अतिथि-सत्कार में कुशल और सच्ची पतिव्रता—ऐसी थी वह काशी के सर्वोदय-परिवार की बहू!

काशी की गलियाँ मशहूर हैं। एक के अन्दर एक, कहीं दूकान, कहीं मकान, कहीं पानी का नम्बा और कहीं संडास! खुली हवा चाहने वाला जब मुझ जैसा भी वहाँ परेशान हो जाता है, तो बंगलोर जैसी सुन्दर और हवादार नगरी में जिसका पालन-पोषण हुआ हो, *उस चि० सुश्ला का तो कहना ही क्या!* मगर उसके चेहरे पर कभी शिकन नहीं आई और बंगलोर जाने की इन्तजारी में काशी में खुशी-खुशी दिन बिताती थी। हमारे चि० विष्णु ने भी उसे विश्वास दिलाया था कि बंगलोर में रह कर काम करेंगे। सुश्ला को इतमीनान था कि जल्दी छुट्टी मिलेगी।

लेकिन उसे तो पूरी छुट्टी मिल गई! स्टोव की लपटों में फँस कर किस तरह वह तड़फड़ाई होगी!! विष्णु ने तो उसमें अपने प्राणों की ही बाजी लगा दी। मैं तो समुन्दर पार से कल्पना ही कर सकता हूँ। मगर यक़ीन है कि सुश्ला ने प्राण प्रसन्नमुख और शान्ति से छोड़े होंगे। शान्ति, शील और सौजन्य उसकी रग-रग में समाया हुआ था। उसके जाने से विष्णु ही नहीं, हम सब दुःखी हैं!

यहाँ आते समय, अपने घर के दरवाजे तक उस दिन मुझे पहुँचाने आई। फिर मैंने विदा ली। उसने भी नमस्कार किया। वह चित्र आज भी सजीव है, और उसकी याद सदा बनी रहेगी!

• • •

और ठीक दूसरे दिन एक पत्र में श्री रामदेव बाबू के देहावसान का *समाचार था!*

रामदेव बाबू! आधुनिक रचनात्मक बिहार की त्रिमूर्ति में से एक : लक्ष्मी बाबू, ध्वजा बाबू और रामदेव बाबू!

बाबा की बिहार-यात्रा में, १४ सितम्बर, १९५२ से लेकर ३१ दिसम्बर '५८ तक, जो लगातार साथ रहे; दाहिने हाथ से बाबा का बायाँ हाथ पकड़े हुए और बायें हाथ में लालटेन और कन्धे पर दो नीले-नीले झोले; समतल मैदान हो या पहाड़, बालू या नदी, कंकड़ या तालाब, रामदेव बाबू की यही कोशिश रहती था कि बाबा को कोई तकलीफ न हो। हम लोग उनको हँसी और प्यार में "बाबाज थर्ड लेग"—बाबा की तीसरी टाँग—कहा करते थे। और यह तीसरी टाँग बहुत सच्ची और मजबूत थी!

जैसी उनकी टाँग, वैसा ही उनका दिल। वैद्यनाथधाम की घटना सभी जानते हैं। उस समय भी रामदेव बाबू बाबा का बायाँ हाथ थामे थे और जब पंडों की तरफ से लाठी व डंडों की बौछार पड़नी शुरू हुई, तो रामदेव बाबू कवच बन कर बाबा को संभालते थे। खुद चोट खाते थे, मगर चिन्ता यही थी कि बाबा को चोट न आवे। प्रमाद रूप में बाबा की कनपटी पर चोट आई, मगर रामदेव बाबू पर खूब डंडे बरसे!

लेकिन कमाल यह है कि रामदेव बाबू के मन में कोई गुस्सा, वैर या बदले की भावना नहीं उठी। अन्दर ही अन्दर मन में मगन थे कि सत्याग्रही के नाते अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं, ऐसी कसौटी के समय ही, *अपनी निष्ठा और अपनी* अहिंसा की परीक्षा होती है। रामदेव बाबू उसमें सफल उतरे और हम सबसे बाजी मार ले गये!

खादी-कार्यकर्ता के रूप में रामदेव बाबू प्रसिद्ध हैं, लेकिन भूदानी भी वह कम नहीं थे। उनके भूदान-काम का एक प्रसंग मुझे याद आ रहा है। मुजफ्फरपुर जिला था, अगस्त १९५८ के दिन थे। बाबा ने एक नया सिलसिला शुरू किया था—अगर छठे हिस्से से कम भूमि *दान में दी हो, तो दाता को उसका दान*-पत्र वापिस! उस हलके में एक सज्जन थे, जो दान देना तो चाहते थे, मगर थोड़ा-सा ही। उन्हें यह पता था कि विनोबाजी दान-पत्र लौटा देते हैं। एक तरकीब उन्हें सूझी। रामदेव बाबू को उन्होंने पकड़ा और कहा कि आप बाबा से हमारी सिफारिश कर दीजिये, ताकि दान कबूल हो जाये। मैं पास ही खड़ा था। मुझसे बोले—"क्यों! आपकी क्या राय है?" मैंने कहा—"आपका कहना बाबा टाल नहीं सकते।" तुरन्त उन्होंने जवाब दिया—"लेकिन बाबा से मैं ऐसी चीज नहीं कहना चाहता, जो उनके नियम के विरुद्ध है।" फिर हँस कर बोले, "मगर यह तो सम्पन्न कास्तकार हैं, यह ज्यादा दे सकते हैं।" तब मैं बोला—"तो आप इन्हें राजी कर लीजिये।"

रामदेव बाबू उन महाशय को अलग एक तरफ ले गये और थोड़ी देर बाद उनसे छठे हिस्से का दान-पत्र भरा लिया। मैंने कहा—"आपकी समझाने की शक्ति का मुझे इल्म आज ही हुआ। आपको बधाई है!" यह सुन कर रामदेव बाबू मुस्करा दिये और कहने लगे—"बिहार में भूदान नहीं मिलेगा, तो फिर कहाँ मिलेगा!"

आखरी बार पटने में सदाकत आश्रम में सर्व-सेवा-संघ की बैठक के समय भेंट हुई। मैंने प्रणाम किया। पास बुला कर बोले—"सुना है, आप पूर्वी अफ्रीका जा रहे हैं शान्ति-सेना के काम से। वहाँ से चिट्ठी लिखियेगा और जब जरूरत हो तो मुझे बुला सकते हैं, मेरी तैयारी है।"

कहाँ उन्हें चिट्ठी लिखूँ और कैसे उन्हें बुलाऊँ! उनकी तैयारी तो कहीं ज्यादा थी। हमारे उन चन्द साथियों में रामदेव ठाकुर थे, जो हरदम तैयार हैं और बड़ी-से-बड़ी कुर्बानी के लिए न चूकेंगे, न आह करेंगे! उनकी प्रेरक याद सदा बनी रहेगी!

• • •

सोच रहा था कि "भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक के वास्ते सुश्ला रानी और रामदेव बाबू पर कुछ भेज दूँ। इतने में एक मित्र ने बताया कि टण्डनजी और डा० राय चले गये! वैसे विधान बाबू को पहली बार सन् १९२८ में इलाहाबाद में देखा था, लेकिन कभी मुलाकात नहीं हुई। मगर इसमें कोई शक नहीं कि उनके जाने से देश का एक बेहतरीन चिकित्सक और कुशल शासक उठ गया!

श्रद्धेय बाबूजी (टण्डनजी) के बारे में जितना कहा जाये, थोड़ा है। सन् १९४१ की जून में उनके पास गया और निवेदन किया कि व्यक्तिगत सत्याग्रह में भाग लेना चाहता हूँ। प्यार से पास बिठा कर मेरे बारे में जानकारी ली और फिर लालबहादुर शास्त्रीजी से मिलने को कहा। इस तरह पिछले बीस इक्कीस बरस से बाबूजी के *चरणों में बैठने का सौभाग्य मिला।*

उनकी सत्य निष्ठा, उनकी निर्भयता उनकी कर्मठता—सभी अद्भुत् कोटि की थी और उनका जीवन एक महान् साधना थी। खादी और ग्रामोद्योग, हिन्दी प्रचार, प्राकृतिक चिकित्सा, शराब-बन्दी और भिखमंगी-नाश आदि अनेक ऐसे उनके प्रिय विषय थे, जिनके कारण उनका सम्बन्ध गैर-राजनीतिक लोगों से भी बड़ी तादाद में लगातार रहता था।

कुछ महीने पहले की बात है। नवीन सेवा आश्रम की बैठक थी। बाबूजी इसके अध्यक्ष शुरू से ही थे। बाबूजी के आगे मीटिंग का 'एजेण्डा' रखा गया। बोले—"मैं भी आश्रम आऊँगा। मीटिंग में दिलचस्पी लूँगा।" चकित रह गया कि ऐसी तबीयत में कैसे आयेंगे! यद्यपि पहले के मुकाबले सेहत कुछ संभली दीखती थी, मगर उन्हें मीटिंग में ले आने की हिम्मत कोई नहीं कर सकता था। लेकिन जब खुद ही तैयार हो गये, तो हम सबको हल्की चिन्ता हुई, मगर खुशी कहीं ज्यादा।

मोटर से वह आश्रम आये। इंजीनियर साहब—बाबू नन्दकिशोरजी—उन्हें संभाल कर अन्दर ले गये। बाबू कमलाकान्तजी वर्मा, जो बाबूजी से शायद दो ही बरस छोटे हैं, नवीन सेवा आश्रम के उपाध्यक्ष हैं। वह भी मौजूद थे। दोनों वयोवृद्धों को देख कर आश्रमवासी बड़े प्रसन्न थे। मीटिंग की कार्रवाई शुरू हुई। चर्चा आई कि आश्रम के ट्रस्ट की कुछ जमीन है, जो सरकार लेना चाहती है। बाबूजी ने कहा—यह गलत है, ऐसा नहीं होना चाहिये। आगे चल कर जब आश्रम का काम बढ़ेगा, तो उसे खुद जरूरत पड़ेगी; इस विषय का पत्र सरकार को लिख दिया जाये। ऐसी जबरदस्त थी उनकी लगन!

बाबूजी के अनेक गुणों की चर्चा उनके मित्रों, भक्तों, अनुयायियों ने की होगी। मगर शायद यह बहुत कम लोग जानते होंगे कि बाबूजी में क्षमा की मात्रा भी बेइन्तहा थी। बहुत पीते और सहते थे। उन्होंने जो मेरे पर उपकार किया, वह *आजीवन भूल नहीं सकता।*

'पटेल स्मारक निधि' की प्रान्तीय शाखा के बाबूजी संयोजक थे। इलाहाबाद जिले में पहले निधि का काम श्री बैजनाथ कपूर संभालते थे। उनके बाद यह मेरे सुपुर्द हुआ। आठ-नौ हजार रुपया जिले में कुएँ बनवाने के लिए बाबूजी ने मुझे दिया। उसमें से छह हजार रुपया मैंने खर्च कर दिया—सन् सत्तावन से लेकर सन् साठ के मध्य तक—जिले के भूदान-ग्रामदान आन्दोलन में।

मन ही मन बेचैन था कि क्या करूँ! आखिर अपना दोष स्वीकार करते हुए बाबूजी को एक चिट्ठी लिखी। पहले उनके सुपुत्र और मेरे गुरु, डा० संत प्रसाद टण्डन को दिखाई। पूछा कि इसका उनके स्वास्थ्य पर हानिकर असर तो नहीं होगा। डा० साहब ने बतलाया कि ऐसी चीजों से जिनमें कार्यकर्ता अपनी गलती कबूल कर ले, उन्हें खुशी ही होती है। फिर भी मुझे हिम्मत नहीं होती थी। मगर खैर, दूसरे दिन सुबह के दस बजे उनके पास गया। बोले—कैसे आये! प्रेम से सब पूछने लगे। उसके बाद मैंने कहा कि एक जरूरी काम से, अपना पाप बताने आया हूँ। अपने काँपते हाथों से उनके हाथ पर चिट्ठी दी।

शुरू से आखिर तक पढ़ गये। फिर कहा—"इस समय जाओ, दो दिन बाद, परसों इसी समय आना।"

आज्ञा के अनुसार पहुँचा। पूछने लगे—"उस बारे में क्या सोचा है? जब भूदान के काम में पैसा लगा है, तो भूदान के कोष से उसकी पूर्ति होनी चाहिये।"

मैंने कहा—"विनोबाजी को लिखा है, सर्वसेवा-संघ के अध्यक्ष बल्लभस्वामीजी को लिखा है। अन्य मित्रों को भी लिखा है।"

"तो बन्दोबस्त हो जायगा न ?"

"जी जरूर।"

"जितनी जल्दी हो सके, करो। पैसे गमने में देर अच्छी नहीं। जनता का पैसा है।

"बाबा का जवाब आया कि विश्वास है कि आपके साथी इसका प्रबन्ध कर देंगे। बल्लभस्वामीजी ने भी चिट्ठी भेजी। अपने चन्द साथियों ने भी ढाढस बंधाया और श्री अक्षय कुमार कर्ण भाई तथा श्री ब्रह्मदेवजी वाजपेयी ने तीन-तीन हजार रुपये की मदद की और वह पूरी रकम श्यामाचरणजी शास्त्री ने बाबूजी के पास जाकर जमा कराई। इस तरह इन दोनों दयालु और बड़े भाइयों—श्री कर्ण भाई और वाजपेयीजी—की बदौलत मेरा भार उतर गया।

मुझे यकीन है कि बाबूजी के अलावा कोई दूसरा मुझे क्षमा नहीं करने वाला था। उन्होंने न केवल क्षमा की, बल्कि अपना प्रेम और विश्वास भी कायम रखा। पिछला हिसाब जब चुक गया तो नये सिरे से काम करने के लिए मुझे दोबारा पैसा दिया। सच है, बाबूजी ही इतना भरोसा, इतना स्नेह, इतना ख्याल कर सकते थे। मैं उनका जितना अहसान मानूं थोड़ा है, और कभी उसे अदा नहीं कर सकता।

अपनी इस क्षमा के कारण बाबूजी वीर थे, महावीर। शायद यही उनके अन्तर शक्ति का सबसे बड़ा स्रोत था, जिसकी वजह से वह सदा अपनी अन्तरात्मा की आवाज का पालन करने में संकोच नहीं करते थे—यहाँ तक कि कांग्रेस की अध्यक्षता को भी उन्होंने एकदम छोड़ दिया और राज्य सभा की सदस्यता भी।

बाबूजी हमारे देश की अन्यतम विभूतियों में से थे। भगवान् करे, उनके सद्गुणों को हम सब अपना सकें और जनता-जनार्दन के चरणों में उनकी तरह अपनी भेंट चढ़ा सकें। उनकी याद पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रेरणा और स्फूर्ति देती रहेगी।

* * *

बाबू पुरुषोत्तमदासजी टण्डन, रामदेव ठाकुर और सुगलारानी, तीनों अपने काम में अपने शानदार ढंग से लगे थे। बाबूजी को हरदम देश की चिन्ता रहती, रामदेव बाबू को बिहार की, चि० सुगला का घर की। तीनों बिना अब सुनसान लग रहा है। तीनों को अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करता हूँ। तीनों को मेरे प्रणाम। तीनों की याद मुझे सदा बनी रहेगी।

[विश्वशान्ति-सेना केन्द्र,
दा-स्सलाम, पूर्वी अफ्रीका]

ग्रामस्वराज्य विद्यालयों की विचार-गोष्ठी

अखिल भारत सर्व सेवा संघ की ग्रामस्वराज्य समिति ने हाल ही में शिवरामपल्ली, हैदराबाद में गत २८ से ३० जून तक देश के समस्त ग्रामस्वराज्य विद्यालय के संचालकों की विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया था। इस आयोजन में देश के हर प्रान्त के *ग्रामस्वराज्य विद्यालय के संचालकों के अलावा कई आचार्य भी सम्मिलित हुए थे। यह विचार-गोष्ठी खास* तौर पर पिछले छह महीने के अनुभव के आधार पर विद्यालयों के पाठ्यक्रम की प्रमुख समस्याएँ, आर्थिक प्रश्न एवं बजट, प्रशिक्षण का एप्रोच, टेकनिक और कार्यक्रम तथा संगठन और समन्वय आदि विषयों पर विचार करने हेतु रखी गई थी।

विचार-गोष्ठी का प्रारम्भ श्री धोत्रेजी की अध्यक्षता में तथा श्री शंकररावजी के सानिध्य में २८ जून को दोपहर को दो बजे हुआ। गोष्ठी के प्रारम्भ में श्री प्रभाकरजी ने सबका हार्दिक स्वागत करते हुए संकेत किया कि हम प्रथम सर्वोदय सम्मेलन के स्थान पर १२ वर्ष बाद पुनः मिल रहे हैं। उन्होंने बताया कि अहिंसक समाज-रचना के इस महत्त्वपूर्ण स्थान पर हम पुनः आंदोलन की नई दिशा और नये मोड पर विचार करने के लिए इकट्ठे हुए हैं।

बाद में श्री शंकररावजी ने इस बात की खुशी जाहिर की कि देश के दस प्रान्तों में ग्रामस्वराज्य विद्यालय प्रारम्भ हो चुके हैं तथा और चार भी शीघ्र शुरू होने वाले हैं। उन्होंने अपने प्रवचन में बताया कि सर्व सेवा संघ इस कार्य में इसलिए पड़ा है कि यह कार्य समग्र दृष्टि का होने के कारण आयोग की मर्यादा में नहीं आता था। नव-समाज की रचना नये मूल्यों के आधार पर होना संभव है और नये मूल्यों को मानना मन का काम है, इसलिए नये मोड़ या नवनिर्माण का मतलब नये मन का निर्माण करना है। अतः हमारा पहला सम्पर्क मनुष्य के मन के साथ हो, न कि शरीर से। मन को बदलने के लिए कोई टेकनिक कारगर साबित नहीं हो सकता। टेकनिक से क्रियाशीलता बढ़ती है, परन्तु परिवर्तन नहीं हो पाता। हमें टेकनिक के जंजाल से बचना चाहिए। हमें हर व्यक्ति के व्यक्तित्व के विकास में मदद करनी चाहिए। हमें आज 'ओर्गेनाइजेशन' तो मालूम है, परन्तु 'ओर्गेनिक' संबंध नहीं जानते और न प्रकट ही कर पाये हैं। यह प्रेम से ही प्रकट हो सकेगा। हमारी सारी शक्ति भ्रातृत्व प्रकट करने में होनी चाहिए, अहिंसक समाज भाईचारा 'ओर्गेनिक' ही हो सकता है, न कि 'ओर्गेनाइजेशन'। हर ग्राम-स्वराज्य विद्यालय का काम व्यक्ति को समूह के साथ जोड़ने का है, तभी नैतिक बल का निर्माण होगा।

शंकररावजी के इस महत्त्वपूर्ण प्रवचन के बाद भिन्न-भिन्न विद्यालयों से आये हुए संचालकों ने अपने-अपने विद्यालय के कार्य का परिचय देते हुए अपनी कठिनाइयों को प्रस्तुत किया। करीब सभी प्रान्तों ने यह महसूस किया कि ग्राम-इकाइयों का चुनाव और उनके लिए ग्राम-सहायकों की नियुक्ति ठीक प्रकार से नहीं हो रही है। इसके अलावा सभी सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओं का जिस प्रकार से सहयोग मिलना चाहिए, वह नहीं मिल पा रहा है।

विचार-गोष्ठी के दूसरे दिन विद्यालय का पाठ्यक्रम, बजट, अन्य सरकारी और गैरसरकारी संस्थाओं के साथ संबंध, ग्राम-सहायक और सहायक संगठक के संबंध आदि पर गहराई से विचार किया।

तीसरे दिन चर्चाओं के निष्कर्ष पढ़ कर सुनाये गये और उनके आधार पर कमीशन को निम्न सुझाव प्रस्तुत करने का निर्णय लिया गया। विचार-गोष्ठी ने यह तय किया कि प्रान्तीय विद्यालय नये ग्रामइकाइयों के ग्रामसहायकों को प्रशिक्षण देने हेतु बजट के अनुसार अतिरिक्त अध्यापक रख सकते हैं तथा बजट की सीमा में व्यवस्थापक कर्मचारी भी बढ़ा सकते हैं। विद्यालय में शैक्षणिक साधनों में वृद्धि करने हेतु पाँच हजार रु० की और वृद्धि किये जाने का निर्णय किया गया।

ग्राम सहायकों की शिक्षण अवधि ५ महीने से ६ महीने की गयी। प्रथम बार और चौथी बार हर ग्राम-सहायक को दो-दो महीने की अवधि के लिए रहना होगा। जहाँ तक ग्राम-सहायक के चुनाव का प्रश्न है, हर विद्यालय, प्रवर्तक संस्था और इकाई चयन समिति के सहयोग से साप्ताहिक शिविर आयोजित करेगा, जिसके द्वारा ग्राम-सहायक चुने जायेंगे। ग्राम सहायक की उम्र पर इस बार पुनः चर्चा हुई और तय रहा कि ग्रामसहायक कम से-कम २५ वर्ष से अधिक उम्र का तो होना चाहिए। जहाँ तक उपसंगठक और संगठक के चुनाव का प्रश्न है, विद्यालय के सहयोग से इकाई-संचालक समिति द्वारा ही चुनाव होना चाहिए। ऐसी सबकी राय रही कि ये शिक्षण दल के ही सदस्य होने के नाते इनका विद्यालय के साथ सतत सम्पर्क रहना चाहिए, उनके सहयोग से ही कार्यक्रम करना चाहिए। सभी ने यह भी महसूस किया कमीशन, स्टेट बोर्डों के प्रतिनिधियों का एक शिविर शीघ्र बुलायें तथा हर क्षेत्र में इकाई-प्रवर्तक संस्थाओं का शिविर, विद्यालय तथा संचालन शिविर मिल कर बुलाये। गोष्ठी ने यह भी तय किया कि हर विद्यालय अपने आस पास अपनी प्रवर्तक संस्था के जरिये कुछ इकाइयों को प्रयोग और शिक्षण की दृष्टि से ले सकता है। 'रीजनल प्लानिंग इन्स्टीट्यूट' के साथ हर विद्यालय का सक्रिय संबंध कायम रखने के लिए यह भी तय रहा कि विद्यालय के कर्मचारियों को समय समय पर 'रीजनल प्लानिंग इन्स्टीट्यूट' में 'रिफ्रेशर कोर्स' के लिए लिया जा सकता है।

इस गोष्ठी में प्रथम दो महीने के पाठ्यक्रम पर भी विचार किया गया और उसमें खास तौर पर इकाई-क्षेत्र के अध्ययन, सर्वोदय दर्शन, सहकारिता, समग्र विकास, खादी ग्रामोद्योग का विचार, सरकारी व गैरसरकारी संस्थाओं का परिचय, खेती, खाद, ग्राम सफाई, स्वास्थ्य और प्राथमिक उपचार, प्रारम्भिक सर्वेक्षण, हिसाब किताब, बोर्ड व डायरी-लेखन, क्षेत्रीय कार्यक्रम, साधारण कताई, खेल, रचनात्मक कार्यक्रम आदि विषयों को प्राथमिकता देने का निश्चय रहा और प्रतिदिन साढ़े तीन घंटे बौद्धिक और साढ़े तीन घंटे क्रियात्मक तथा एक घंटा खेल व मनोरंजन आदि के लिए रखा गया।

विचार गोष्ठी की चर्चा का सबसे महत्त्वपूर्ण विषय ग्रामसहायक की कार्यदशा—एप्रोच—का था। इस संबंध में भी श्री राममूर्तिजी तथा मैंने जो सुझाव प्रस्तुत किये थे, उन पर चर्चा होकर सबने जो स्वीकार किया है, उसके मुख्य मुद्दे इस प्रकार हैं :

सर्वप्रथम बच्चों के साथ खेल, जवानों के साथ श्रम और प्रौढ़ों के साथ बातचीत से प्रवेश हो।

इसके बाद अशान्ति निवारण, उत्पादन-वृद्धि व संस्कार निर्माण की नई दृष्टि और नई दिशा का शिक्षण और सेवा-कार्य शुरू *किया जाय। सेवा से प्रेम सम्पादन कर* और शिक्षण से नई दृष्टि देकर ग्रामीण जनता का पुरुषार्थ जगाने का तीसरा कदम होगा, जिसके जरिये वे श्रम, उद्योग शिक्षण, न्याय और व्यवस्था के कार्यों को सहकार करने के लिए प्रस्तुत हों। सहकारी जीवन का स्वाभाविक रूप से सरलतापूर्वक विकास होने पर ही ग्राम में सहयोगी जीवन बन सकेगा। इन सुझावों में मूलाधार यह रहा कि ग्राम-सहायक इन कदमों के जरिये ग्रामीण जनता को स्वयं समझ कर उन्हें उनकी परिस्थिति को समझने के लिए तैयार करेगा और उसको बदलने के लिए वे सक्रिय हो सकें, ऐसी उनमें सतत जागरूकता लाने का प्रयत्न करेगा। वह स्वयं किसी भी कार्यक्रम में नहीं फँसेगा और न लोगों पर अपनी तरफ से लादेगा। वह प्रबंधक नहीं बनेगा, बल्कि लोगों के व्यक्तित्व के विकास तथा स्वतन्त्रता और मुक्तता के लिए प्रेरक ही बना रहेगा। उसकी कार्य-पद्धति शिक्षण, सहअन्वेषण और सहअध्ययन की होगी, न कि आदेश और उपदेश की।

इस प्रकार तीन दिन तक ग्रामइकाई विचार और उसके विद्यालयों की कई महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर गहराई से विचार हुआ और अन्त में श्री धोत्रेजी ने गांधीजी के इस संबंध में, सूक्ष्म विचार प्रस्तुत करते हुए गोष्ठी का समारोप किया।

—बद्रीप्रसाद स्वामी

शांति-सैनिक, तुझे शतशः प्रणाम !

हमारे जनरल यदुनाथ सिंह तो पहले सैनिक थे । उन्हें बहादुरी के लिए "महावीर चक्र" भी मिल चुका है। अब वे हमारे शान्ति-सैनिक बन चुके हैं। बिना शस्त्र लिये वे डाकुओं से मिलने जाते हैं और प्रेम की बात समझाते हैं।

—विनोबा

आज दो अगस्त ! आज के ही दिन जनरल यदुनाथ सिंह चल बसे ! प्रभु-नाम का जप करते हुए ही हृदय की धड़कन बंद होने से उनका देहान्त हुआ। "यं यं वापि स्मरन् भावं त्यजन्ते कलेवरम्" में मानने वाले लोग इस घटना से आनन्दित होंगे। मृत्यु का दुःख भी होता, पर ऐसी मृत्यु का आनंद भी होता है।

इस भगत जनरल की आज याद आयेगी, उनके कुटुम्बियों को, उनके सगे-सम्बंधियों को, उनके सरकारी सेना साथियों के को और निजी जीवन के अन्य मित्रों को और याद आयेगी उन सेवकों को, जिन्होंने सार्वजनिक कार्य में उनका निखरता हुआ प्रेम का गुण और रूप देखा। विनोबा को तो उनकी याद आयेगी ही, पर याद आयेगी उन दुःखियों को, "सुव्यवस्था" के उन दुर्दैवी विपदाग्रस्तों को भी, जिनके मुकदमे आज उ० प्र० में, तो कल मध्य-प्रदेश में और फिर वहाँ और फिर यहाँ और इसी प्रकार से यहाँ-तहाँ हो ही रहे हैं, और किसे समय है कि सोचे कि भला यह सब आवश्यक ही है क्या ? अनिवार्य है क्या ? उचित भी है क्या ? इन 'डाकू' कहलाये जाने वाले आधि-ग्रस्तों ने बहुत विश्वास रखा था कि जनरल साहब, जो भारत सरकार के स्वामीनिष्ठ सेवक रहे हैं, उन्हें उन तकलीफों से बचायेंगे, जिन तकलीफों से उन्हें बचाया जाना मुमकिन था। उस राज में भी जो विधान के तहत चलता है और लोकशाही पर आधारित है, उन्हें आशा थी जनरल साहब से कि जो बात बडोदा में बडोदा-नरेश सयाजीराव गायकवाड ने डाकुओं के साथ बरती, जो बात राजस्थान के एक मंत्रिमंडल ने एक समय डाकुओं से बरती, उसी प्रकार का बरताव उनसे भी सरकार कर सकेगी और इसके लिए यदुनाथसिंहजी, उनके लिए कुछ कर सकेंगे।

हाँ, ये लोग उन पर नाराज तो नहीं होंगे, क्योंकि उन्होंने उन्हें कोई आश्वासन दिया था, ऐसी बात नहीं है ! किंतु यह तो विश्वास मनुष्य करता ही है कि कोई भी सरकार अपने स्वामीनिष्ठ नौकर की आब की फिकर करेगी और ऐसी कोई बात नहीं होने देगी, जिससे उसके दिल व दिमाग को ठेस पहुँचे।

जनरलसाहब बहुत नेक आदमी थे, यह बात सर्वमान्य है। वे सेना के सिपाही थे और अपने कर्तव्य में उन्होंने जिस निष्ठा का परिचय दिया, उसमें भारत सरकार ने उन्हें "महावीर चक्र" भी प्रदान किया था। सेना का यह अधिकारी इस देश की भक्ति के कारण शांति-सैनिक बना और यह आशा रखते हुए काम करता रहा कि उसीके अनुसार सेना से अवकाश-प्राप्त सेना के कई सिपाही इस देश में शांति का कार्य करेंगे। मूलतः सत्प्रवृत्त यह मनुष्य अपने कार्य काल में सज्जनों से संबंधित हुआ और सेवावृत्ति का जीवन में आविर्भाव कर पाया। डा० राजेन्द्र-बाबू के सैनिक सचिव यदुनाथजी रह चुके थे और इस कारण सत्ता के साथ साधुता कैसे रह सकती है, इसका दर्शन उन्होंने पाया था। जीवन के परिवर्तन में ऐसे ही क्षण काम आते हैं। भिंड-मुरैना में उन्होंने जो काम किया, उससे राजेन्द्र बाबूको जो उस समय भारत के राष्ट्रपति थे, जो आनन्द हुआ है, वह इन शब्दों में अंकित है—

"आप उत्तम मानव बनाने के कार्य में अग्रसर हो रहे हैं। मैं आपके उद्देश्यों की पूर्ण सफलता की कामना करता हूँ। आपके प्रति सद्भावना और सम्मान प्रकट करता हूँ।"

सरकार के इस प्रिय सेवक के भाग्य में भिंड-मुरैना का धर्म-कर्तव्य कैसा उपस्थित हुआ, वह भी स्मरण करने योग्य बात है। इस हिंदुस्तान में यह बात हवा में चल पड़ी है कि विनोबा-नेहरू दुःखियों का दुःख-दर्द सुनते हैं और उसके लिए कुछ इलाज करते हैं। वे कितना कर पाते हैं, यह ईश्वर ही जानता है, पर यह विश्वास लोगों में है, और वह विश्वास बहुतों का जीवनाधार भी बनता है। ऐसे ही एक दुःखी आदमी ने अपने दुःख के लिए तो नहीं, पर उसके जैसे अन्य दुःखियों के लिए विनोबाजी को पत्र लिखा कि उन जैसे दुर्दैवी, भूले और बिगड़े मनुष्यों को यदि विनोबाजी समझायेंगे तो वे भिंड-मुरैना की जनता का जीवन बिगाड़ेंगे नहीं और वहाँ का जीवन स्थिर एवं सुखी होगा। इसी विषय में वह दुःखी मनुष्य विनोबाजी से बात भी करना चाहता था।

पदयात्री विनोबा बात करने कहाँ-कहाँ पहुँचेंगे ! विनोबाजी उन्हीं दिनों कश्मीर-सरकार के मेहमान थे। उनकी यात्रा का प्रबंध भगत जनरल यदुनाथ सिंह ही करते थे। वे कश्मीर के 'सर्विस कमिशन' के अध्यक्ष थे। जनरल यदुनाथ सिंह ग्वालियर विभाग के निवासी थे। वहाँ की इस दुःखी परिस्थिति से वे परिचित थे। वहाँ के पुलिसवालों के कष्ट और कठिनाइयों तथा डाकुओं की कथाओं से भी वे परिचित थे। मध्यप्रदेश की पुलिस के कई उच्चाधिकारी भी उनके मित्र थे और उनके सौजन्य में उन्हें विश्वास था। उन्हें लगा कि उस दुःखी मनुष्य से वे भी बात कर सकते हैं। विनोबाजी की आज्ञा लेकर वे उससे मिले। उसका कहना उन्हें वाजिब लगा। वे जानते थे कि भिंड-मुरैना के इस हिस्से में जहाँ बाँध बाँधे जा रहे हैं और रचनात्मक कार्य के वायुमंडल की आवश्यकता है। यदि इन डाकुओं से भारत-देश के नाम पर अपील की जाय और अहिंसा से काम लिया जाय तो वे अपने उस बिगड़े रास्ते को छोड़ कर लोगों के सुखी जीवन देखना आज पसंद करेंगे।

उन्होंने विनोबाजी के सामने अपना यह मत प्रकट किया। मध्यप्रदेश-सरकार से विनोबाजी ने वहाँ जाने की इजाजत माँगी। विनोबाजी वहाँ गये। विनोबाजी के इस भक्त ने और सरकार के स्वामीनिष्ठ सेवक ने अत्यंत विश्वासपूर्वक हथियार लिये बिना डाकुओं से मुलाकात की और उन्हें लाकर विनोबा के चरणों पर समर्पित किया। सेना के एक सिपाही को कानून की प्रतिष्ठा समझाने की आवश्यकता नहीं थी। वह उसके रोम-रोम में थी। विश्वास और निष्ठा से उसने यह कदम उठाया था। उसके बाद का भिंड-मुरैना का इतिहास भारत जानता है। यदि यदुनाथ सिंह होते तो वे इस विषय में जूझते। आज उनकी याद यदि कुछ काम कर जाये, तो अभी इस प्रश्न का योग्य निराकरण हो सकता है। यदुनाथ सिंह का स्मरण होता है तो अनायास शब्द निकल आते हैं-"हे शांति सैनिक, तुझे शतशः प्रणाम !"

[आंध्र के एक शान्ति-सैनिक की भाव श्रद्धांजलि !]

कश्मीर-यात्रा का एक संस्मरण

सेनापति का आदेश !

● महादेवीताई

एक छोटे-से टीले पर छोटे-से मकान में पड़ाव था। उसी रास्ते से कश्मीर-वैली में जाने का तय हुआ। लेकिन यह कैसे सम्भव होगा ? अकस्मात् सृष्टि का भयानक रूप प्रकट हुआ। छोटे-छोटे नाले ने विराट् वेगवान नदियों का रूप धारण किया। बड़े बड़े पहाड़ ढह गये। कई मकान मिट्टी में मिल गये, नदी-नालों के पुल बह गये ! कई पशुओं की और मनुष्यों की हानि हुई। कई बह गये, कई पहाड़ों के नीचे दब गये ! आगे जाना असंभव हो गया। देश के नेताओं ने विनोबा से विनती की कि 'ऐसी परिस्थिति में खतरा उठा कर आगे बढ़ना ठीक नहीं। दूसरे रास्ते से वैली में जाने का प्रबंध किया जाय।'

जनरल यदुनाथ सिंह यह वायरलेस संदेश लेकर बाबा के पास आये। बाबा ने कहा, "अगर पीर पंजाल लांघ कर हम कश्मीर-वैली में नहीं जा सके तो समझूँगा कि भगवान् की वैसी इच्छा नहीं है और मैं यहाँ से सीधे पंजाब लौट जाऊंगा।

बाबा का निर्णय सुन कर साथियों की चिन्ता बढ़ गयी। बड़े-बड़े पहाड़ लाँघने थे। घने जंगलों से गुजरना था, बर्फाच्छादित शिखर पार करने थे। जनरल साहब विश्वास से कहते गये, "बाबा की इच्छा है तो भगवान् सब पार कर देगा !"

दूसरे दिन सुबह अपने चन्द साथियों के साथ जनरल साहब पुल बनाने के 'मिशन' पर निकल पड़े। दिन भर कोशिश की। शाम तक पुल तैयार हो गया। यह खुश-खबर बाबा को सुनाने के लिए शाम को जनरल साहब आये। सिर्फ चाय और बिस्किट लेकर ही उन्होंने सारा दिन बिताया था। स्नान-पूजा के पहले कुछ खाना भी नहीं चाहते थे। नम्रता से सारे दिन की रिपोर्ट उन्होंने बाबा को पेश की और कहा, "कल सुबह हम लोग यहाँ से निकल कर आगे का मार्ग देख कर आपकी सेवा में रिपोर्ट पेश करेंगे।"

थोड़ा सोच कर बाबा ने कहा, "अभी तो रात होने में डेढ़ घंटा बाकी है। अगर आप लोग अभी निकलते हैं, तो जल्दी वापस आ सकते हैं।"

बारिश की संभावना थी। बाबा की बात सुन कर एक क्षण के लिए जनरल साहब सोच में पड़ गये, लेकिन तुरन्त उत्साह और श्रद्धा से बोले, "आपके आशीर्वाद से हम अभी जाते हैं।" सेनापति की आज्ञा हुई, सैनिक ने वह उठा ली।

जनरल साहब आगे बढ़े। पीछे-पीछे चन्द साथी भी गये। कर्नल हीरानन्द बहुत चिन्तित थे। कभी हँसते हुए, तो कभी गम्भीरता से जनरल साहब को बार-बार समझाने लगे—'इस तरह का खतरा उठाना ठीक नहीं है।'

आखिर जनरल साहब ने हँसते हँसते सौम्यता से कहा, "देखो भाई, मैं अभी लौटने वाला नहीं हूँ। बाबा का शब्द याने मेरे लिए भगवान् का आदेश है। भगवान् की कृपा से सब ठीक होगा। आपको न आना हो तो आप लौट सकते हैं। मैं अकेला ही आगे जाऊँगा।"

बारिश का जोर बढ़ रहा था। अंधेरा काफी हो चुका था। जंगल का रास्ता, पहाड़ियों का चढ़ना; हर क्षण पाँव फिसल रहा था। पेड़ और घास के सहारे जनरल साहब आगे बढ़ रहे थे। इतनी कठिनाइयाँ थी, दिन भर की थकान भी थी। लेकिन अन्दर से प्रेरणा थी, उत्साह था—"मैं सेनापति के आदेश का पालन कर रहा हूँ।"

क्रान्ति, भक्ति और मैत्री

विट्ठलदास बोदाणी

जो पूर्ण विज्ञान है वही सत्य है और जो सत्य है वही परिशुद्ध है। जब परिशुद्धि, विज्ञान और आत्मज्ञान पूर्णता की पराकाष्ठा पर पहुँचते हैं, तब वे सत्य के पर्यायी बन जाते हैं, सत्य के साथ एकरूप बन जाते हैं।

तत्वतः जो विचार में, सत्य वही परिशुद्धि, वही विज्ञान और वही आत्मज्ञान—ऐसा आध्यात्मिक दृष्टि से सम्यक् दर्शन और वैज्ञानिक दृष्टि से पूर्ण-शुद्ध दर्शन होता है, उसको जीवन और व्यवहार के हर क्षेत्र में एकाग्रता और एकनिष्ठा से, निर्दंभ वृत्ति से और सहज भाव से, सातत्यपूर्वक और श्रद्धापूर्वक मूर्तिमत करने का—संस्कृति-देह का स्वरूप देने का—प्रामाणिक प्रयत्न करना ही भक्ति है। विनोबाजी की सतत पदयात्रा ने, विशिष्ट तपस्या के प्रकार और सातत्य ऐसी भक्ति की है।

जिस क्रान्ति विचार में ऐसी भक्ति का दर्शन होता है वह भक्तिमय क्रान्ति का विचार है। वर्तमान युग में इस भक्ति का स्वरूप सामूहिक सत्य-भक्ति में प्रकट होना चाहिये, क्योंकि जैसा पहले कहा, साम्य—समानता इस युग की मांग, पुकार है और मैत्री में ही सर्वोत्कृष्ट एवं विवेकयुक्त साम्य का दर्शन होता है। मानव-बुद्धि के सामने आज विज्ञान की गंभीर चुनौती है कि

साम्यमूलक सह-अस्तित्व को स्वीकार करो या पूर्ण विध्वंस और सर्वनाश के लिए तैयार रहो। इस चुनौती का बुद्धियुक्त उत्तर एक तारक-पालक-पोषक व संरक्षक शक्ति की शोध के लिए, स्वेच्छा से और समझपूर्वक किये गये सामूहिक पुरुषार्थ और सामूहिक साधना में ही रहा है।

भूदान-यज्ञ द्वारा हो रही क्रान्ति के गतितत्व और प्राणशक्ति सामूहिक सत्य-भक्ति में समाविष्ट हुई है। इसका "प्रीसाइ-क्ली" निर्माण करना ही भूदान यज्ञ का ध्येय है, क्योंकि इसीसे अहिंसा संगठित होकर अंत में अपेक्षित त्रिगुणशक्ति बन सकेगी।

कहीं-न-कहीं आरम्भ हो जाने पर ऐसे कार्य को सर्वांगदर्शी बनाना होता है। इस दृष्टि से भूदान यज्ञ के सारे कार्यक्रम रच गये हैं। शान्ति-सेना के विचार और कार्यक्रम का पूरा रहस्य यहाँ प्रकट होता है। शांति-सेना सेवा-सेना तो है ही, किंतु इसके अतिरिक्त वह मुख्यतया भक्तों की सेना होगी और सारे संसार में सामूहिक सत्य भक्ति निर्माण करने के लिए दही की तरह जामन के रूप में वह काम करेगी। "सेवा व्यक्ति की और भक्ति समाज की"—इसके आधार पर वह हमेशा कर्तव्य-परायण, सेवापरायण और भक्तिपरायण रहेगी।

शान्ति-सेना के विचार और कार्यक्रम की सफलता के लिए जो पुरुषार्थ करना होगा, वह कोई 'युनिलेटरल'—एकतरफा—पुरुषार्थ नहीं, किंतु सामूहिक साधना के रूप का सामूहिक पुरुषार्थ करना होगा। यद्यपि इस पुरुषार्थ का आरम्भ शांति-सैनिकों द्वारा हो सकता है—हो तो अच्छा ही है—फिर भी शांति-सैनिकों के बीच उसका स्वरूप सामूहिक साधना का ही होना चाहिये। सर्वसाधारण नागरिकों को भी अपनी ओर से अहिंसक क्रान्ति के इस अभिनव पुरुषार्थ में अपना पूरा सहयोग सतत सक्रिय होकर देना है। इसके लिए अपनी सम्मति (सँकल्प) प्रदान करनी है, स्वयं अपने को, अपने जीवन और व्यवहारों को सर्वोदय के योग्य बनाने का संकल्प करना है और इसका कुछ प्रत्यक्ष प्रमाण भी देना है। तदुपरांत अशांति के कार्यों में भाग न लेने की उन्हें प्रतिज्ञा करनी है और किसी भी मसले के हल के लिए हम छोटी हिंसा का भी आधार नहीं लेंगे, ऐसी सभ्यतासूचक सादी-सी प्रतिज्ञा लेनी है।

आम जनता के इस प्रकार के सामूहिक पुरुषार्थ का आरंभ वास्तविक दृष्टि से सरल और व्यापक बन सके, इसके लिए सर्वोदय-पात्र, फी परिवार महीने में एक गुण्डी सूत, शांति प्रतिज्ञा और "दान दो इकट्ठा" के चतुर्विध कार्यक्रम रखे गये हैं। इस चतुर्विध कार्यक्रम को एकसाथ चलाना होगा। इसमें कोई क्रम नहीं होना चाहिये कि पहले यह और दूसरे तीसरे वह। चारों साथ में चलेंगे, तब इस सामान्य-से दीखने वाले कार्यक्रम के प्रभावशाली परिणामों का दर्शन व अनुभूति होने लगेगी। उसका सौम्य स्वरूप ही उसकी शक्ति है। इसमें पूरी वैज्ञानिक दृष्टि भी है: 'अप्रोच' और 'मेथड', दोनों वैज्ञानिक हैं। बड़े पैमाने पर सौम्य और व्यापक वातावरण निर्माण करने के लिए 'अप्लाइड साइन्स' का कार्यक्रम है।

जिस प्रकार से 'ओर्गेनिक कम्पौंड'—कारबानिक तत्व—सम्मिश्रण में समाविष्ट हुए भिन्न भिन्न 'एलिमेंटस'—मुख्य द्रव्यों का 'एक्सैक्ट', यथार्थ परिमाण जानने के लिए 'मैक्रो एनेलेसिस', सूक्ष्मतम् मात्रा में 'कम्पौंड' लेकर उसका 'क्वान्टिटेटिवे एनेलेसिस'—परिमाणवाचक पृथक्करण—करना होता है, इसी प्रकार से इस चतुर्विध सौम्य कार्यक्रम की कसौटी में उत्तीर्ण होकर सर्वसाधारण नागरिक अहिंसक क्रान्ति में अपना सहयोग का और सामूहिक पुरुषार्थ के सही दिशा में किये गये आरंभ का सच्चा प्रमाण दे सकेंगे।

मानव इतिहास में यह पहला ही प्रसंग है, जब कि विचार की गहराई में जाकर व्यवस्थित और 'प्रेसिसिव' याने वैज्ञानिक पद्धति से, सामूहिक सत्य-भक्ति निर्माण करने का एक भव्य पुरुषार्थ हो रहा हो। सातत्य उसकी आध्यात्मिक लाक्षणिकता है और भक्ति उसकी वैज्ञानिक विशिष्टता है। द्रष्टा विनोबा की यह सारे संसार में एक अभूतपूर्व देन है।

समन्वयात्मक बुद्धि से, समन्वयात्मक वृत्ति से एवं समन्वयात्मक कृति से ऋषि विनोबा विचार समझा रहा है कि अब शासन हिंसा का, कानून की दंडशक्ति का, धर्म-सम्प्रदाय का या राजनीति का नहीं चलेगा, किंतु मात्र विचार-शासन चलेगा।

यह विचार है मैत्री का, अर्थात् कारुण्य धर्म का अर्थात् लोकनीति का। अतः "राज्य" मिट जायगा और सामूहिक सत्य भक्ति की बुनियाद पर "प्राज्य" बनेगा। परिणामस्वरूप सारे संसार में दो 'युनिट' रहेंगे: छोटी इकाई के रूप में गाँव और बड़ी इकाई के रूप में समस्त दुनिया—ग्राम-स्वराज्य और जगत्-प्राज्य। यह है सर्वोदय का पालिटिक्स, सर्वोदय की राजनीति, जिसे 'लोकनीति' कहते हैं। लोकनीति में युग का अधिष्ठाता सर्वसाधारण नागरिक होगा, जिसकी पूरी श्रद्धा अधिकार को छोड़ कर कर्तव्य में ही होगी। आने वाले युग में सत्ता, सम्पत्ति की विपुलता या स्थान की विशिष्टता की प्रतिष्ठा नहीं रहेगी, किंतु सेवा, सम्यक् विभाजन और समानता की सर्वोच्च प्रतिष्ठा बनेगी।

युग-मंत्र : मैत्री

आकाशकुसुमवत् अप्राप्य आदर्श को हम 'युटोपिया' कह सकते हैं, किन्तु जिस आदर्श के नजदीक पहुँचने के लिए जब विचारपूर्वक और व्यवस्थित ढंग से सतत कर्म किया जाता है, तब वह कितना ही ऊँचा क्यों न हो, वास्तविक व व्यावहारिक ही है। असली बात तो यह होगी कि आज जब कि आकाश यात्रा शक्य और सफल हो चुकी है, तब कल हम 'युटोपिया' मानते थे, उसमें से कुछ आज या आने वाले दिनों में, संभव है कि 'युटोपिया' न रह कर एक प्राप्य छोटा सा आदर्श भी बन जाय। इस परिस्थिति में भी "आदर्श" तो वही कहा जायगा, जो कि हमारी पकड़ में न आये, यद्यपि हमारी पहुँच में अवश्य हो। जिस आदर्श में सीमित-संकुचित छोटे-छोटे विचार अभिप्रेत हैं, वह क्रान्तिकारी तो कतई नहीं है, किसी भी दृष्टि से "आदर्श" भी नहीं है।

एक व्यक्ति के नाते मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि यद्यपि सारे संसार में आज "सोशलिज्म", 'वेलफेअरिज्म', "कम्युनिज्म", "कैपिटलिज्म", 'फेडरलिज्म" आदि का बोलबाला है, इन सबके पीछे रहा विचार यदि अवैज्ञानिक न दीखता हो तो भी अवश्य सीमित-संकुचित और अपूर्ण वैज्ञानिक ही है। आने वाले दिनों में ये सब "इज्म" दकियानुसी और अवैज्ञानिक माने जायेंगे। अपनी निष्फलता के कारण आज भी 'आउट आफ डेट' तो हो ही गये हैं। अतः हमारा आदर्श सही अर्थ में आदर्श होना चाहिये।

महान् और भव्य आदर्श का शुभ विचार जब परिशुद्ध होकर कार्यान्वित होता, संस्कृति-देह धारण करता है, तब सही अर्थ में वह वैज्ञानिक बनता है और क्रान्ति याने मूल्य-परिवर्तन का स्वयं प्रमाण बन जाता है।

मानवीय क्रान्ति करने की दृष्टि से वर्तमान युग के लिए महान् और भव्य आदर्श एक ही है: साम्ययोग की स्थापना और उससे चिरकालीन विश्वशान्ति। इस आदर्श के नजदीक-से-नजदीक पहुँचने के लिए मैत्री को जागतिक मूल्य बनाना, क्रान्ति का साधन उपकरण बनाना यही एकमात्र मार्ग है। इससे क्रान्ति के साधन में ही सर्वप्रथम आमूल क्रान्ति होगी, जो कि एक अद्यतन वैज्ञानिक घटना मानी जायगी। क्रान्ति के लिए अनिवार्य आवश्यकता आज यही है, क्योंकि मैत्री ही आज 'आब्जेक्टिव हिस्टारिकल नेसेसिटी' है, ऐतिहासिक आवश्यकता है।

इस युग में हिंसा से या कानून से क्रान्ति नहीं होने वाली है। अब अहिंसा-मूलक करुणा से ही क्रान्ति होगी, जिसे दुनिया की कोई ताकत रोक नहीं सकेगी।

मैत्री और समानता एक-दूसरे के पर्याय हैं। दूसरी बात यह कि मैत्री का कानून से कोई सम्बन्ध नहीं है, हिंसा से तो कतई नहीं। मैत्री में करुणा ही करुणा है। भक्ति अहिंसक क्रांति की आत्मा है। करुणा उसका गतितत्व है और मैत्री साधन, उपकरण है। अहिंसक अर्थात् परिशुद्ध क्रान्ति-विचार का आध्यात्मिक अंग जब भक्ति है तब करुणा उनका वैज्ञानिक अंग है। तदनुसार जब आध्यात्मिक अंग करुणा है, तब भक्ति वैज्ञानिक अंग है। वैज्ञानिक सर्वोदय-विचार आध्यात्मिक है और आध्यात्मिक सर्वोदय-विचार वैज्ञानिक है। तत्वतः दोनों में कोई भेद ही नहीं है। सर्वोदय विचार का यह एक विशिष्ट अभेद-तत्त्व है। दोनों अंगों को जोड़ने की शक्ति मात्र मैत्री में है। सेतु के रूप में मैत्री अहिंसक क्रान्ति का वैज्ञानिक उपकरण है। अतः इस युग का मंत्र है मैत्री।

जब क्रान्ति, भक्ति और मैत्री की सम्मिलित शक्ति सामूहिक सत्य भक्ति के रूप में प्रकट होने लगेगी तब अहिंसा "दासी" न रह कर "रानी" बनेगी—सर्वोपरि एवं 'निसेसिव' संरक्षक शक्ति बनेगी। सर्वोदय के साम्यमूलक सह-अस्तित्व और सम्यक् क्रान्ति के विचार और कार्यक्रम का बौद्धिक अनुभूति के बाद स्वीकार और वैज्ञानिक दृष्टि से "प्रीसाइज" अमल करने से चिरकालीन विश्वशान्ति की सही राह प्राप्त होगी। इसका "रिसर्च"—संशोधन का कार्य भारत में आरम्भ होकर आज संसार की अन्य प्रयोगशालाओं में फैल रहा है। बेरूत में विश्वशान्ति-सेना की स्थापना से और उत्तरी रोडेशिया में होने वाले शान्ति-सैनिकों के और वहाँ की आम जनता के सम्मिलित सीमा प्रवेश से इस "रिसर्च" का कुछ स्वरूप ध्यान में आयेगा।

[गतांक से समाप्त]

विनोबा पदयात्री-दल से

• कालिन्दी

भुवनभाई की लड़की, छोटी मिनिमा दरवाजे पर खड़ी थी। उसको देखते ही लगा, अरे यह पिछले साल की मिनिमा नहीं है! और यह ठीक भी है। *आदमी तो प्रतिक्षण बदलता है। बाबा कहते हैं, राम ने खून किया, गोविन्द को पकड़ा और नारायण* को फाँसी दी। याने जिस मनुष्य ने खून किया, वह खून करते ही खतम हुआ, दूसरे क्षण तो वह दूसरा ही मनुष्य था।

पिछले साल अप्रैल माह में हम मैमान आश्रम में आये थे। यह आश्रम यहाँ के सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री भुवनभाई के मार्गदर्शन में चलता है। गत साल यहाँ एक ही दिन ठहरे थे और एक दिन में ही छोटी मिनिमा की सबसे दोस्ती हो गयी थी। इस समय यहाँ पाँच दिन ठहरे। उन पाँच दिनों में बहुत बड़ी बड़ी घटनाएँ यहाँ हुईं।

बाबा के आश्रमों के सम्मेलन की समाप्ति इसी स्थान में हुई और आश्रमों के लोगों ने बाबा से विदाई भी इसी स्थान में ली। आश्रमों का संमेलन खतम हो ही रहा था कि 'प्रांतीय सर्वोदय-मंडल' का सम्मेलन शुरू हुआ। इस सम्मेलन की भी कुछ और ही बात थी। बाबा ने जाहिर कर दिया है कि ५ सितम्बर को वे असम छोड़ेंगे। तो यह आखिरी सम्मेलन ही माना जायेगा, इस दृष्टि से भी उसका महत्त्व था। इस वक्त कार्यकर्ताओं के दिल के दरवाजे बाबा के सामने पूर्ण रूप से खुल गये और एकता की तथा एकरसत्व की एक नयी अनुभूति उन्होंने ली। कार्यकर्ता कह रहे थे कि बाबा के साथ की यह मुलाकात अद्भुत, संस्मरणीय और जीवन तथा कार्य के लिए प्रेरक है।

सम्मेलन में अनेक विषयों पर चर्चा हुई। चर्चा के दौरान में सहज विषय निकला कि स्कूल में अंग्रेजी भाषा किस कक्षा से सिखाई जाय। बाबा ने कहा, "पहली क्लास से इंग्लिश शुरू हो। मैं मजाक नहीं कर रहा, 'सिरिअसली' (गंभीरतापूर्वक) कहता हूँ। इंग्लिश के कुछ शब्द पहले क्लास में सिखाये जायँ। हजार शब्द इंग्लिश के सिखाये *जायँ और हजार हिंदी के सिखाये जायँ। असमी तो सिखायेंगे ही। तो 'थ्री लंग्वेज* फारमूला' लागू हो जायेगा। मैंने मिसाल भी दी थी। हम कहते हैं, 'शादी-ब्याह', उसके बदले में 'शादी-ब्याह-मैरेज' कहा जाय, या कहेंगे 'डेका-यंग-जवान'। ऐसे पहले क्लास में कुछ, सौ शब्द, दूसरे क्लास में और सौ शब्द, ऐसे करीब हजार शब्द अच्छी तरह से जान लेंगे, तो भाषा सीखने के लिए आसान होगा। आधुनिक मानसशास्त्र कहता है कि बच्चे ज्यादा ध्यान में रखते हैं। तो इस शास्त्र के अनुसार पहले क्लास में शब्द सिखाने चाहिये, वाक्य रचना नहीं। हमारी रोज की भाषा में हम ऐसे शब्द बोलते ही हैं। सातवीं क्लास तक इंग्लिश के सिर्फ शब्द ही सिखाये जायँ और असमी भाषा अच्छी तरह से सीख ले, बाद में इंग्लिश। पहले अपनी भाषा सांगोपांग व्याकरणसहित आ जाय। उसके साथ-साथ थोड़े शब्द दूसरी भाषा के। एक भाषा अच्छी तरह से आती है, तो दूसरी भाषाएँ सीखने के लिए आसान होता है। अधिकतर लड़के तो सात साल के बाद स्कूल छोड़ेंगे। उनको शब्द मिल जायेंगे। अगर बच्चों को सात साल अच्छी तरह मातृभाषा सिखाई तो बाद में उसका सिखाना बंद कर सकते हैं और दूसरी भाषा सिखा सकते हैं।

असम महिला समिति की अध्यक्षा साईकानी बाईदेउ ने महिला-समिति की प्रमुख स्त्रियों को एकत्रित किया था। असम की महिला-समिति की शाखाएँ असम के गाँव गाँव तक पहुँची हैं। एक बहुत ही सुसंगठित शक्ति असम में मौजूद है। इसी शक्ति को बाबा ने आदेश दिया कि उठ खड़े हो जाओ, बापू ने काँग्रेस को कहा था—**'लोकसेवक संघ'** में रूपांतरित हो जाओ, काँग्रेस से वह बन नहीं पाया। अब असम की महिलाएँ वह काम हाथ में ले लें। असम की महिला-समिति ने वह आवाज मान ली। बाबा की उपस्थिति में **महिला लोकसेवक संघ** की स्थापना हुई।

आखिर के दिन की शाम थी। दिनभर *गरम लू चली थी। बाहर सभा की तैयारी* हो रही थी। इतनी गरमी और धूप में भी सतत चार दिन लोग दर्शन के लिए आ रहे थे। आज तो सभा थी। सभा का आरंभ होने के पहले वाद्य-संगीत और लोक-नृत्य-गीत के स्वर कान पर आये। करीब बीस मिनिट सभा नृत्य संगीत में तल्लीन थी। नृत्य के बाद प्रवचन आरंभ हुआ—"नृत्य करने में आनंद क्यों आता है? कारण स्पष्ट है। एक तो यह कि उसमें अनेकों का सहयोग मिलता है। एक बजाता है, दूसरा गाता है, तो तीसरा नाचता है और सबका सूर एकसाथ है। यह सहयोगानंद है। *उसमें आनंद की* अनुभूति आती है। दूसरी बात यह है कि ऐसे सहयोग में मनुष्य अपने को भूल जाता है। जहाँ मनुष्य अपने को भूल जाता है, वहाँ आनंद की अनुभूति आती है। तीसरा कारण, ऐसे खेल में फल की अपेक्षा नहीं रहती। काम करते हैं तो फल-निष्पत्ति हुई या नहीं, इधर ध्यान रहता है। निष्पत्ति अच्छी हुई तो खुशी है, *अच्छी नहीं हुई तो* खुशी नहीं। अब यह खेल है, उसमें फल की दृष्टि है नहीं। किसी को व्यायाम करने के लिए कहा तो वह मिनिट गिनेगा। लेकिन खेलने में आनंद ही आनंद है। सहयोग, अपने को भूलना और फल की अपेक्षा न रखना, ये तीन आनंद के बीज हैं।"

'विष्णुसहस्रनाम' के पाठ के बाद यात्री-दल के लोगों की खास बैठक बाबा के पास होती है। इसमें कभी 'ग्रामकोश' की शंकाएँ पूछी जाती हैं, तो कभी 'गीता' पर कोई चर्चा आरंभ करता है। आज इस समय एक नया ही 'प्रोग्राम' हुआ। पाठ खतम होते ही बाबा ने पूछा, "आज की खबर क्या है रेडिओ पर?" खबरें सुनाई गयी। फिर हमारी ओर देख कर मुस्कराते हुए बाबा ने कहा, "आज की सभा में हम इन खबरों पर विचार करेंगे। सभा के लिए हमको अध्यक्ष भी चाहिए।" बाबा ने एक बहन का नाम सुनाया और बाकायदा उसको अनुमोदन दिया गया। हास्य-ध्वनि में अध्यक्षा ने अपना स्थान स्वीकारा। अध्यक्ष का काम तो आसान था। वे एक एक वक्ताओं के नाम लेती गयी और वक्ता खड़ा होकर अपने विचार समझाता गया। करीब आधा घंटा यह चर्चा चली। ग्यारह बजे गाँव के प्रमुख लोग बाबा से मिलने के लिए इकट्ठे होने लगे, तब यह नाटक समाप्त हुआ।

कभी-कभी बाबा उत्स्फूर्त कुछ कह देते हैं। हम लोग बैठे थे और बाबा घूमते घूमते पाठ कर रहे थे। पाठ खतम हुआ और बाबा ने आरंभ किया, "विश्वमूर्ति, महामूर्ति, दीप्तमूर्ति, अमूर्तिमान, ये चार भगवान् के नाम हैं। विश्वमूर्ति कुल विश्व के अन्दर भगवान् का रूप है, विश्व के अन्दर भगवान् है। गीता के ग्यारहवें अध्याय में भगवान् ने यह रूप अर्जुन को दिखाया। यह अर्जुन को दिव्य दृष्टि से देखने को मिला। हमको तो विश्व का एक अंश दीखता है। लेकिन यह मानने की बात है।

फिर आता है महामूर्ति और दीप्तमूर्ति। महामूर्ति याने बड़ा, विशाल, वैभवशाली, बहुत ऐश्वर्य है, ऐसा व्यक्ति। ऐसी वस्तु देखे तो वह भगवान् का एक रूप ही मानना चाहिये। दीप्तमूर्ति याने तेजस्विता, कांति, बुद्धिमत्ता, ऐश्वर्य नहीं, लेकिन बुद्धि तेजस्विता, कांति प्रकट होती है ऐसी व्यक्ति या वस्तु दिखे तो उसको भगवान् का रूप समझ कर ग्रहण करें। भगवान् को प्रकट करने के लिए ये दो साधन मिले। भगवान् के छोटे-छोटे रूप भी हैं, लेकिन वे ग्रहण नहीं होते। छोटे आकार में वही 'क' पढ़ नहीं सकते जो बड़े आकार में आसानी से पढ़ सकते हैं। इसलिए जो आकर्षक रूप हैं उनको ग्रहण करें और उनका ध्यान हो, यह गीता के दसवें अध्याय में है। वह विभूति, वह वस्तु मेरा अंश समझ जो लक्ष्मीवान और उदार है।"

इतना समझा कर फिर कह दिया कि भगवान् अमूर्तिमान है। इसकी मूर्ति नहीं, आकार नहीं। पहले लिख दिया, फिर मिटा दिया। इसका वर्णन गीता में १३ से १५ तक के अध्याय में है। उसमें पुरुषोत्तम है, उत्तम पुरुष है, वह अमूर्ति है।

विष्णुसहस्रनाम चिंतन के लिए ऐसे थोड़े में सब कुछ है। जैसे 'सैकिन' होता है। उसकी एक टिकिया से प्याला भर पानी मीठा हो जाता है।"

१ जुलाई से ८ जुलाई तक 'बको अंचल' में थे। बहुत उत्साह से यहाँ काम हो रहा है। उतने समय में यहाँ ६२ ग्रामदान मिले। शाम की प्रार्थना के समय कार्यकर्ता आते हैं और ग्रामदान पत्र बाबा के हाथ में देते हैं, तब लगता है कि आज के दिन की पूर्ति हुई! उधर 'मंगलदे महकमे' में कमलेश्वर भाई बड़े जोर से काम कर रहे हैं। १४ जून से एक अभियान उन्होंने वहाँ चलाया है। उस अभियान में अभी तक ३२ ग्रामदान मिले हैं। कामरूप जिले को छोड़ कर हम गोलपारा जिले *में प्रवेश करेंगे। एक महीना गोलपारा में बिताने के बाद ता० ५ सितम्बर को बंगाल* में प्रवेश होगा।

[जिला कामरूप,
१६ जुलाई '६२]

क्षुरस्य धारा

स्थानिक या तात्कालिक प्रश्न हाथ में लिये जायँ या नहीं? प्रश्न विवेक का है। स्थानिक प्रश्न हाथ में नहीं लेते, तो लोगों से अछूते-से रह जाते हैं, हमारे उठाये हुए प्रश्नों में लोगों को दिलचस्पी नहीं रहती, और प्रश्न हाथ में लेने जाते हैं, तो कभी-कभी इतना फँस जाने का संभव है कि डर लगता है कि कहीं हमारा मूल प्रश्न ही तो नहीं छूट जाता!

विवेक-रेखा इस प्रकार बन सकती है:

(१) प्रश्न ऐसा हो, जो स्थानिक हो, लेकिन जिसका स्वरूप देशव्यापी हो।

(२) *जो प्रश्न तात्कालिक हो, लेकिन* जिसका संबंध किसी दीर्घकालीन समस्या से हो।

प्रश्न को उठाने का तरीका भी विवेकयुक्त होना चाहिए। विवेक की कसौटी यह है कि तरीका ऐसा हो, जिससे लोकशक्ति बढ़े। इस कसौटी को ध्यान में रखें तो—

(१) स्थानिक प्रश्नों के बारे में हम तटस्थ अभिप्राय देंगे, सीधे उनमें उलझेंगे नहीं।

(२) ऐसे ही कार्यक्रमों को प्रोत्साहन देंगे, जहाँ लोगों का अपना अभिक्रम हो।

(३) स्वयं भी किसी कार्यक्रम में *शामिल होना पड़े तो ऐसा ही कार्यक्रम* हाथ में लेंगे, जिसको पूरा करने के लिए साधनों की भरमार या संस्था का जाल खड़ा करना न पड़े।

ऐसे कार्यक्रम यदि एक से अधिक हों, तो उनमें भी विवेक कर किसी एक को चुनना होगा। चुनने के लिए निम्न बातों का ध्यान में रखना होगा :—

(१) हमारी शक्ति की मर्यादा।

(२) लोगों की शक्ति की मर्यादा।

(३) प्रश्न की नैतिकता और क्षमता।

—नारायण देसाई

बिहार की चिट्ठी

बिहार सर्वोदय मंडल के निश्चयानुसार 'बीघा-कट्ठा अभियान' में प्राप्त भूमि का दानपत्र डा० राजेन्द्रप्रसाद को १५ जून को ही समर्पण करना था, लेकिन आणविक परीक्षण विरोधी-सम्मेलन में उनके शामिल होने के कारण समर्पण की तिथि २१ जून कर दी गयी। कार्यक्रम के अनुसार 'बीघा-कट्ठा अभियान' में लगे बिहार के बाहर के एवं बिहार के कार्यकर्ताओं को २० जून को ही पटना आने के लिए निमंत्रण भेजा गया। 'बीघा-कट्ठा अभियान' में लगे कार्यकर्ताओं की एक बैठक २१ जून को महिला चरखा समिति के भवन में आयोजित की गयी। बैठक में कार्यकर्ताओं ने 'बीघा-कट्ठा अभियान' के अपने अनुभव पर सविस्तार प्रकाश डाला।

१५ अप्रैल से १९ जून तक 'बीघा-कट्ठा अभियान' में मुजफ्फरपुर से ३८६ दाताओं द्वारा ३,६११ कट्ठा; दरभंगा से ४१२ दाताओं द्वारा ३,१६७ कट्ठा; सारण से १०० दाताओं द्वारा १,४०१; चम्पारण से २८० दाताओं द्वारा १,५९७; भागलपुर से १२६ दाताओं द्वारा १,५६९ कट्ठा; मुंगेर से २१० दाताओं द्वारा १०,००४; पूर्णियाँ से १,३४८ दाताओं द्वारा २७,७३०; सहरसा से ३६० दाताओं द्वारा ६,५९९; संथाल परगना से ३,६७९ दाताओं द्वारा ५५,८०८; पटना से ४२ दाताओं द्वारा ४४२, गया से ५४८ दाताओं द्वारा ५,५८८, शाहाबाद से ६१ दाताओं द्वारा ५,१७७; राँची से १२ दाताओं द्वारा २,८७२; पलामू से १६५ दाताओं द्वारा २,८३०; हजारीबाग से ८६ दाताओं द्वारा १,४२४ एवं धनबाद से ६१ दाताओं द्वारा १,६२२ कट्ठा, कुल ८,००७ दाताओं द्वारा १,३२,४१७ कट्ठा जमीन प्राप्त हुई।

विनोबाजी के निर्देशानुसार एवं बिहार सर्वोदय मंडल के निश्चयानुसार भूदान में दी गयी जमीन का बँटवारा दाताओं ने स्वयं किया। जमीन प्राप्त करने में प्रथम स्थान संथाल परगना को एवं प्राप्त जमीन का वितरण करने में प्रथम स्थान पूर्णियाँ जिले को प्राप्त हुआ।

संथाल परगना जिले में कार्य का संयोजन श्री विनोद एवं आकर्षक ढंग से किया गया था। सरकार द्वारा वैधानिक अधिकार प्राप्त ग्राम-पंचायत के मुखिया, सरपंच एवं अन्य पदाधिकारियों के अलावे जिला पंचायत के अधिकारी, शिक्षा, कृषि, विकास एवं अन्य सरकारी विभागों के अधिकारियों ने भी जमीन प्राप्त करने में सक्रिय सहयोग प्रदान किया। फलस्वरूप जमीन प्राप्त करने में सर्वप्रथम स्थान संथाल परगना जिले ने प्राप्त किया। इस प्रकार 'बीघा-कट्ठा अभियान' १९ जून को समाप्त हुआ।

प्राप्त भूमि का दानपत्र डा० राजेन्द्र प्रसाद को समर्पण करने के लिए सर्व सेवा संघ के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरीजी की अध्यक्षता में एक विशेष आयोजन राजेन्द्र बाबू के निवास-स्थान, सदाकत आश्रम में किया गया। आणविक परीक्षण विरोधी सम्मेलन, दिल्ली से लौटने के बाद वे अधिक अस्वस्थ हो गये और डाक्टरों ने उन्हें चलना फिरना, बोलना आदि बिल्कुल मना कर दिया। राजेन्द्र बाबू के शुभचिन्तकों की राय हुई कि दो, तीन आदमी राजेन्द्र बाबू की कोठरी में दानपत्र जाकर दे दें। राष्ट्रीय आन्दोलन के अवसर पर प्रसिद्धि प्राप्त स्थान सदाकत आश्रम के झंडा चौक पर कार्यकर्ताओं की बैठक आयोजित की गयी। राजेन्द्र बाबू की प्रबल इच्छा एवं सर्वोदय-कार्यक्रम के प्रति प्रेम ने उन्हें कोठरी से बाहर कर दिया। शुभचिन्तकों एवं सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के घोर प्रयास के बावजूद भी राजेन्द्र बाबू ने कार्यकर्ताओं की बैठक में शामिल होने का निश्चय श्रीमती प्रभावती बहन को बताया। एक तरफ डाक्टरों की सलाह बैठक में नहीं शामिल होने की और दूसरी तरफ राजेन्द्र बाबू की प्रबल इच्छा बैठक में शामिल होने की। बड़ी विचित्र परिस्थिति उत्पन्न हो गयी! अन्त में राजेन्द्र बाबू को राजी किया गया कि मंच तो उनके बरामदे पर ही बनाया जाय और बरामदे के नीचे बैठक का आयोजन हो।

श्री नवकृष्ण चौधरी, अध्यक्ष, सर्व सेवा संघ की अध्यक्षता में बैठक का आयोजन किया गया। सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, धीरेन्द्र मजूमदार, अण्णासाहब सहस्रबुद्धे, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, कृष्णराज मेहता के अतिरिक्त सर्व सेवा संघ के कुछ पदाधिकारी एवं सदस्य उपस्थित थे। बिहार भूप्राप्ति समिति के संयोजक श्री श्यामाप्रसाद ने 'बीघा-कट्ठा अभियान' की ऐतिहासिक भूमिका बताते हुए अभियान की सफलता पर सविस्तार चर्चा की। आयोजन के अध्यक्ष श्री नवकृष्ण चौधरी ने १,३२,४१७ कट्ठा जमीन का दानपत्र राजेन्द्र बाबू को समर्पण किया।

सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा का दशक समारोह

सर्वोदय आश्रम, रानीपतरा का दशक समारोह १२ जून को रानीपतरा में आयोजित किया गया। समारोह की अध्यक्षता श्री वल्लभस्वामी ने की। बिहार सर्वोदय-मंडल के संयोजक श्री रामनारायण सिंह, और श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी एवं अन्य नेताओं ने भाग लिया।

शोक-सभा

बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष एवं रचनात्मक संस्था के प्राण श्री रामदेव ठाकुर का आकस्मिक निधन १० जुलाई को हृदय-गति रुक जाने के कारण पटना में हो गया। श्री रामदेव बाबू रचनात्मक जगत् के मूक एवं कर्मठ कार्यकर्ता थे। शरीरश्रम करने का तो उन्होंने व्रत ही ले लिया था। उनके निधन से सर्वोदय मंडल एवं सर्वोदय-कार्यक्रम को बड़ा धक्का पहुँचा है। उनके निधन से जो स्थान रिक्त हुआ है। उसकी पूर्ति असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। पटना के नागरिकों की ओर से ११ जून को हिन्दी साहित्य सम्मेलन भवन, पटना में श्री सरयू प्रसाद, संचालक, गांधी स्मारक निधि की अध्यक्षता में एक आम सभा का आयोजन किया गया। सभा में सर्वश्री भोला पासवान शास्त्री, कल्याण मंत्री, बिहार सरकार; बिहार खादी-बोर्ड के श्री तारकेश्वर प्रसाद सिंह, रामदयाल पांडे एवं अन्य लोगों ने स्व० रामदेव बाबू के गुणों की चर्चा की। बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ एवं अन्य रचनात्मक संस्थाओं ने भी बिहार के विभिन्न स्थानों में शोक-सभा का आयोजन कर उनकी आत्मा की शान्ति के लिए ईश्वर से प्रार्थना की एवं शोक-संतप्त परिवार को धैर्य धारण करने का निवेदन प्रस्ताव द्वारा किया। स्व० रामदेव ठाकुर के श्राद्ध दिवस, २१ जून को रचनात्मक संस्था के कार्यकर्ताओं ने बिहार राज्य के कोने-कोने में दरिद्रनारायण को भोजन कराया।

बिहार हदबन्दी कानून एवं 'लैंड लेवी'

बिहार सरकार ने 'लैंड लेवी' कानून तो बनाया, लेकिन कुछ निहित स्वार्थ वालों के दबाव के कारण कानून का कार्यान्वयन स्थगित करने का निश्चय किया। यही नहीं, गाँवों में जोरों की अफवाह फैली कि बिहार-हदबन्दी कानून से 'लेवी' अदा की सरकार निकालने वाली है। इसका असर भूमिहीन एवं भूमिवानों पर गहरा पड़ा। अविश्वास का वातावरण चारों दिशा में छा गया। बिहार सर्वोदय मंडल की ओर से प्रतिनिधि मंडल बिहार सरकार के मुख्य मंत्री, राजस्व मंत्री एवं अन्य पदाधिकारियों से मिल कर 'लेवी' वाले द्विसे के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए इस द्विसे को यथास्थित रखने की सलाह दी। यही नहीं राजनीतिक दल एवं सभी दल के विधायकों से मिलकर 'लेवी कानून' को बनाये रखने के लिए सरकार पर दबाव डालने का निवेदन किया। वाराणसी से प्रकाशित होने वाली साप्ताहिक 'भूदान यज्ञ' पत्रिका के परिशिष्टांक द्वारा 'लेवी कानून' के महत्त्व एवं उसे हटा लेने पर होने वाली हानि का सविस्तार वर्णन किया गया। विधायकों पर इसका काफी असर पड़ा और विधान-सभा एवं विधान-परिषद के सत्र में सदस्यों ने 'लेवी कानून' नहीं हटाने की की जोरदार माग की। फलस्वरूप 'लेवी' के स्थगन का विचार कुछ दिनों के लिए टाल दिया गया। 'लेवी कानून' के स्थगन से उत्पन्न स्थिति की चर्चा सर्वश्री विनोबाजी, जयप्रकाश नारायण, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, ध्वजा प्रसाद साहू, श्यामसुन्दर प्रसाद एवं कन्हाई लाल चौधरी ने समाचारपत्रों में वक्तव्य देकर किया।

मुख्य मंत्री का भूदान सम्बन्धी दौरा

बिहार-सरकार के मुख्य मंत्री श्री विनोदानन्द झा ने दरभंगा जिले के मधुबनी सबडिवीजन में भूदान-कार्यक्रम के सम्बन्ध में दौरा किया। मुख्य मंत्री ने सभा में उपस्थित भूमिवानों से भूदान में जमीन देने की अपील की। मुख्य मंत्री ने भूमिवानों से भूदान के महत्त्व की चर्चा करते हुए बताया कि यदि करुणा के रास्ते से भूमि-समस्या का हल नहीं होता, तो खूनी क्रान्ति होगी। आपने 'लेवी कानून' की भी चर्चा की और कहा कि बिहार सरकार कानून द्वारा जमीन प्राप्त करने के लिए दृढ़ संकल्प है।

अफ्रीकी देशों की यात्रा के बाद श्री जयप्रकाश नारायण ने पटना के नागरिकों को १३ जून को गांधी-मैदान में हुई आम सभा में अफ्रीकावासियों की स्वतंत्रता की लड़ाई का सविस्तार वर्णन किया। सभा की अध्यक्षता पटना विश्वविद्यालय के वाइस चान्सलर डा० जॉर्ज जैकोब ने की। श्री जयप्रकाश नारायण ने विस्तारपूर्वक बड़े ही आकर्षक ढंग से अपने अनुभव की चर्चा आम सभा में की।

—रामनन्दन सिंह

बिहार सर्वोदय-मंडल के कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय

बिहार सर्वोदय-मंडल की कार्यसमिति की एक महत्त्वपूर्ण बैठक गत १५ जुलाई से १९ जुलाई, '६२ तक मुंगेर जिलान्तर्गत सिमुलतला में हुई। इस बैठक में सर्वोदय-कार्यकर्त्ताओं के संयोजन, सर्वोदय-मंडल के सगठन तथा भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में कुछ महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये। बैठक में कार्यसमिति के सदस्यों के अलावा विभिन्न जिला सर्वोदय-मंडलों के संयोजक या अध्यक्ष तथा कुछ प्रमुख कार्यकर्त्ता उपस्थित थे। प्रमुख लोगों मे सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, गौरीशंकर शरण सिंह, वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी, मोतीलाल केजरीवाल, सरयू प्रसाद, प्रभावती देवी, नगेन्द्र नारायण सिंह, श्यामसुन्दर प्रसाद, रामनारायण सिंह आदि व्यक्ति उपस्थित थे। बैठक की अध्यक्षता श्री श्यामसुन्दर प्रसाद ने की।

'बीघा-कट्ठा अभियान' की समाप्ति के बाद हमारा क्या कार्यक्रम हो, हमारे संगठन का क्या स्वरूप हो, कार्यकर्त्ताओं के संयोजन का क्या ढग हो, इस सम्बन्ध में कार्यकर्त्ताओं का चिंतन एक अर्से से चल रहा था। इन प्रश्नों पर गहराई से विचार करने के लिए कार्यसमिति के सदस्यों तथा प्रमुख कार्यकर्त्ताओं की बैठक चार-पाँच दिनों के लिए हो, इसकी आवश्यकता महसूस की जा रही थी। तदनुसार १५ से १९ जुलाई तक बैठक सिमुलतला के एकांत वातावरण में हुई।

श्री जयप्रकाश नारायण ने अपने अन्य कार्यक्रमों को रद करके इस बैठक के लिए चार दिनों का समय दिया और वे लगातार १५ से १८ जुलाई तक बैठक में उपस्थित रहे। उनकी उपस्थिति में कार्यकर्त्ताओं ने मुक्त चर्चा की और काफी विचार-मंथन के बाद संयोजन, संगठन और भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत किये, जो आगे दिये जा रहे हैं।

बैठक मे पुरानी जमीन के वितरण के प्रश्न पर भी गहराई से चर्चाएं हुईं। बिहार भूदान-यज्ञ कमिटी के अध्यक्ष श्री गौरीशंकर शरण सिंह ने कमिटी द्वारा स्वीकृत वितरण की योजना पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि वितरण का काम ग्राम-पंचायतों को सौंपने का निर्णय भूदान-कमिटी ने किया है और तदनुसार कागजात तैयार कराये जा रहे हैं। पंचायतों को इस काम की ओर अग्रसर करने के लिए सर्वोदय-मंडल के सहयोग की आवश्यकता उन्होंने बतायी। कार्यसमिति ने श्री गौरी बाबू के सुझाव पर भूवितरण के काम में, खासकर पंचायतों को इसके लिए तैयार करने के काम में पूर्ण सहयोग देने का निर्णय किया।

ग्रामदानी गाँवों की वर्तमान स्थिति पर भी बैठक में विचार हुआ। गांधी विद्या-संस्थान, वाराणसी की ओर से बिहार के ग्रामदानी गाँवों का अध्ययन करने वाले श्री पार्थ मुखर्जी ने अपने अध्ययन की एक संक्षिप्त, किन्तु वास्तविक रिपोर्ट बैठक में पेश की। उक्त रिपोर्ट को ध्यान में रखते हुए कार्यसमिति ने ग्रामदान के लिए अनुकूल भूमिका निर्माण करने का निर्णय किया।

बेदखली निवारण के प्रश्न पर भी चर्चाएं हुईं और तय हुआ कि बिहार सर्वोदय-मंडल की ओर से बेदखली की जाँच की जाय और बेदखली निवारण के लिए आवश्यक कार्रवाई की जाय। इसके लिए एक बेदखली जाँच-समिति गठित की गयी और तय किया गया कि कम-से-कम दो जिले में बेदखली की जाँच यथाशीघ्र करायी जाय।

बैठक में सर्वोदय-मंडल के लिए अर्थ-संयोजन के प्रश्न पर भी चर्चाएँ हुईं और तय हुआ कि किसी केन्द्रित निधि पर निर्भर रहने के बजाय अब जनसहयोग का सहारा लिया जाय और गाँवों से अन्न-संग्रह, साहित्य-बिक्री, विनोबाजी के सुझाव के अनुसार सर्वोदय-समाज के सदस्यों की भर्ती कर उनसे एक एक रुपया के हिसाब से सदस्यता शुल्क की प्राप्ति तथा औद्योगिक क्षेत्रों के लोगों से चन्दा-संग्रह के द्वारा सर्वोदय-मंडल के लिए अर्थ-व्यवस्था की जाय।

कार्यकर्त्ता-संयोजन, संगठन एवं भावी कार्यक्रम के संबंध में स्वीकृत प्रस्ताव निम्न अनुसार है :

कार्यकर्त्ताओं का संयोजन

पिछले कामों के सिलसिले में यह अनुभव आया है कि हमारे जो थोड़े-से कार्यकर्त्ता हैं, उनकी पूरी-पूरी शक्ति किसी कार्यक्रम मे लग नहीं पाती। परिणामस्वरूप हम जो भी कार्यक्रम उठाते हैं, उसका अमल अपेक्षित रूप से नहीं हो पाता। अतः कार्यकर्त्ताओं का संयोजन किस प्रकार हो, यह एक महत्त्व का सवाल हमारे सामने है। कार्यकर्त्ताओं के संयोजन का ढग आगे किस प्रकार हो, इस सम्बन्ध में कार्यसमिति निम्नलिखित निर्णय लेती है :

(१) जिले के कुछ चुने हुए क्षेत्रों में केन्द्र बना कर सघन रूप से काम करने की प्रेरणा कार्यकर्त्ताओं को दी जाय। क्षेत्र का विस्तार संबंधित कार्यकर्त्ता की शक्ति पर निर्भर करेगा। केन्द्र में एक समर्थ कार्यकर्त्ता के अलावा दो-तीन सामान्य स्तर के कार्यकर्त्ता भी रहेंगे। इस प्रकार एक टीम बना कर काम करने का मुख्य उत्तरदायित्व उक्त समर्थ कार्यकर्त्ता पर होगा। ऐसे जो केन्द्र होंगे, वहाँ कोई प्रवृत्ति नहीं चलायी जायेगी। यह केन्द्र-कार्यकर्त्ताओं का केवल विश्राम-स्थल होगा।

केन्द्र में काम और अर्थ के संयोजन की जिम्मेवारी जिला सर्वोदय मंडल पर रहेगी। अगर जिला सर्वोदय-मंडल किसी केन्द्र के संचालन के लिए प्रादेशिक सर्वोदय-मंडल से सहायता की माँग करेगा, तो प्रादेशिक सर्वोदय-मंडल उसको अपनी शक्ति के मुताबिक सहायता देने का निर्णय करेगा।

(२) किसी जिले का कोई केन्द्र, विशेष परिस्थिति के कारण प्रादेशिक सर्वोदय-मंडल से सबंध रखना चाहेगा और उससे सहायता की माग करेगा, तो प्रादेशिक सर्वोदय-मंडल की कार्यसमिति इस विषय में आवश्यक निर्णय करेगी।

संगठन

हमारे संगठन का भावी स्वरूप क्या हो, यह एक प्रश्न हमारे सामने आया है। अब तक हमारा संगठन केवल कार्यकर्त्ताओं का संगठन रहा है। अब इस संगठन को अधिक व्यापक बनाने की जरूरत है। लेकिन यह अधिक व्यापक कैसे बने और खासकर इसका गहरा सम्बन्ध जनता से कैसे जुड़े, यह एक कठिन प्रश्न है। अतः कार्यसमिति की यह राय है कि अभी अपने संगठन को हम कार्यकर्त्ताओं का संगठन ही बना रहने दें। लेकिन हमारे विचारों ने जिन लोगों को स्पर्श किया है, उनसे निकटतर सम्पर्क स्थापित करने का प्रयास हम करें। उनके साथ हमारा सम्बन्ध कुछ गहरा हो जाय तो उन्हें अपने संगठन मे दाखिल करने का विचार हम करें।

(१) संगठन के वर्तमान स्वरूप को कायम रखते हुए उसका विस्तार नीचे के स्तरों पर करने की आवश्यकता कार्यसमिति महसूस करती है। अभी हमारा संगठन प्रादेशिक स्तर और जिला-स्तरों पर कायम है। इससे गाँव में रहने वाली जनता से हमारा सम्पर्क कम होता है और जब हम कोई कार्यक्रम उठाते हैं तो उसके अमल के लिए आवश्यक परिमाण में जन-शक्ति का निर्माण हम नहीं कर पाते। अतः यह आवश्यक है कि अंचल और पंचायत के स्तरों पर हमारा सगठन कायम हो। हम आगे जो भी कार्यक्रम उठाने वाले हैं, उसके सफल कार्यान्वयन के लिए पंचायत को 'न्यूक्लियस' (मुख्य कड़ी) हमें बनाना होगा। इसलिए पंचायतों से हमारा अधिक-से-अधिक संपर्क हो और उन्हें अपनी दिशा में मोड़ने का प्रयास हम करें, यह जरूरी है। लेकिन यह तभी संभव है जब हम पंचायत के आधार पर अपना एक संगठन खड़ा कर लें। विभिन्न पंचायत सर्वोदय मंडलों के कार्यों को अनुबंधित (कोऑर्डिनेट) करने के लिए तथा उनका सम्बन्ध प्रस्तावित पंचायत समिति के संगठन से जोड़ने के लिए अंचल के स्तर पर भी हमें अपना संगठन अंचल सर्वोदय-मंडल के रूप में खड़ा करना चाहिए।

कार्यसमिति यह महसूस करती है कि अंचल और पंचायत के स्तरों पर संगठन खड़ा कर लेना कोई आसान काम नहीं है। इसमें काफी समय भी लगने वाला है। हमारी संख्या और शक्ति अभी बहुत थोड़ी है। इसलिए अंचल और पंचायत सर्वोदय-मंडलों का निर्माण एक क्रमिक प्रक्रिया (ग्रेजुअल प्रोसेस) होगी। कार्यसमिति की राय है यह प्रक्रिया शुरू हो और इस दिशा में क्षेत्र की अनुकूलता को ध्यान में रखते हुए कदम बढ़ाया जाय।

(२) अभी जो प्राथमिक सर्वोदय-मंडल हैं, उनका कोई क्षेत्रीय आधार नहीं है। सर्व सेवा संघ ने प्राथमिक सर्वोदय मंडल को ही अपने संगठन की बुनियाद माना है। कार्यसमिति की राय है कि ये प्राथमिक सर्वोदय-मंडल पंचायतों के आधार पर सगठित किये जायँ और वे प्रस्तावित पंचायत-सर्वोदय मंडल का रूप ले लें। इस आधार पर संगठन खड़ा करने के क्रम में सर्व सेवा संघ के विधान में आवश्यक संशोधन की आवश्यकता महसूस हो तो वैसा संशोधन कराने के लिए कार्रवाई की जाय।

(३) सगठन को व्यापक बनाने की दृष्टि से पंचायत और अंचल के स्तर पर सर्वोदय-मित्र-मंडल का सगठन किया जाय। सर्वोदय-मित्र-मंडल के प्रतिनिधि अंचल और पंचायत सर्वोदय मंडल की बैठकों में विशेष रूप से आमंत्रित किये जायेंगे। अंचल और पंचायत सर्वोदय-मंडल के गठन के पूर्व सर्वोदय-मित्र-मंडल के प्रतिनिधि जिला सर्वोदय-मंडल की बैठकों में भाग ले सकेंगे।

भावी कार्यक्रम

भावी कार्यक्रम के सम्बन्ध में विचार करने के सिलसिले में यह प्रश्न उठता है कि हमारा काम करने का ढग क्या हो। हम सामान्यतः अपनी विचारधारा के मुताबिक जनता की समस्याओं का हल लेकर उनके बीच जाते हैं और उनके समक्ष अपना विचार रखते हैं। इस ढंग में अब कुछ परिवर्तन करने की जरूरत कार्यसमिति महसूस करती है। अब जनता के बीच हम अगर जायँ तो हठात् अपना विचार लोगों के सामने उपस्थित करने के बजाय उनके साथ बैठ कर उनके प्रश्नों का अध्ययन हम करें और इस सहचिंतन के सिलसिले में हम अपना दृष्टिकोण भी उनके सामने रखें तथा उनके चिंतन को अपने विचारों की दिशा में मोड़ने का प्रयास करें। हमारा मुख्य काम उनके अनुकूल दृष्टि कायम करने का होना चाहिए।

इस सिलसिले में हमें एक और बात ध्यान में रखनी चाहिए। अब तक हमारे

काम में आन्दोलन या अभियान का क्रम अधिक रहा है। सघन रूप से समग्र विकास का कार्यक्रम भी हमने उठाया है, किन्तु उस पर हमारा जितना ध्यान और शक्ति केन्द्रित होनी चाहिए, नहीं हो सकी है। अब समय आ गया है कि हम अपनी कार्यविधि में परिवर्तन करें और जनता के बीच बैठ कर उनके समग्र विकास की दृष्टि से काम करें। इसके लिए आवश्यक है कि हमारे कार्यकर्त्ता चुने गये क्षेत्र में केन्द्र बना कर बैठें। इस प्रकार से सघन काम करने के अलावा व्यापक ढंग से विचार-प्रचार का काम भी हम कर सकते हैं। लेकिन यह व्यापक काम ऐसा नहीं हो, जो हमारे सघन कार्य में बाधा उपस्थित करे।

कार्यक्रम

(१) उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए वर्तमान परिस्थिति की भूमिका में निम्न अनुसार काम करने चाहिए :

(क) चुने गये क्षेत्रों में जनता के समग्र विकास का काम।

(ख) भूमिहीनता निवारण के लिए भूदान प्राप्ति (कम-से-कम, 'बीघे में कट्ठा' की प्राप्ति) तथा ग्रामदान के लिए पिछले अनुभवों के प्रकाश में अनुकूल भूमिका का निर्माण।

(ग) पुराने तथा नये भूदान की जमीन का वितरण और इस काम में पंचायतों को अग्रसर करने का प्रयास।

(घ) बेदखली का प्रतिकार।

(च) पंचायतों के मार्फत जनता की बेकारी, भुखमरी एवं फटेहाली की समस्याओं का निराकरण तथा अन्य चिन्ता-मुक्ति के कार्य।

(२) सरकार की ओर से विकास के अनेक कार्य चल रहे हैं। उनकी तरफ भी हमारा ध्यान जाना चाहिए और उनके प्रति हमारा रुख नीचे दिये अनुसार होना चाहिए।

(क) सरकार के जो काम हमारे विचार के अनुकूल हों, उनमें सहयोग किया जाय और यह प्रयास किया जाय कि वे सही मार्ग पर चलें।

(ख) सरकार के किसी काम में अगर कोई दोष नजर आये और उसका बुरा असर जन-जीवन पर पड़ने वाला हो तथा हमारी दृष्टि से उसका विरोध करना आवश्यक प्रतीत होता हो, तो उस तरफ सरकार का ध्यान आकर्षित किया जाय और उसका प्रतिकार करने की शक्ति जनता में पैदा हो, इसके लिए प्रयास किया जाय।

(ग) सरकार के द्वारा कभी-कभी ऐसे कानून बनाये जाते हैं, जिनका गहरा सम्बन्ध जनता के जीवन से होता है। ऐसे कानून के सम्बन्ध में आवश्यकतानुसार विचार प्रकट करना चाहिए और तदनुकूल लोकमत का निर्माण करना चाहिए।

(३) उपर्युक्त कार्यक्रमों के अतिरिक्त कुछ ऐसे काम हैं, जो तात्कालिक प्रश्नों से सम्बन्धित होते हैं। उदाहरण के लिए नशाबन्दी, भ्रष्टाचार निरोध, पंचायतों का सर्वसम्मत चुनाव, आणविक परीक्षण विरोधी अभियान, एकपक्षीय निरस्त्रीकरण के लिए लोकमत निर्माण, राष्ट्रीय एकता, लोकशाही एवं विश्वशान्ति के पोषक विचारों का जनता तथा छात्रों और शिक्षकों के बीच प्रचार आदि ऐसे कार्यक्रम हैं, जिन्हें हम अन्य बुनियादी काम करते हुए चला सकते हैं।

(४) कार्यकर्त्ता-प्रशिक्षण का काम भी हमारे कार्यक्रम का एक महत्त्वपूर्ण अंग होना चाहिए। सर्वोदय-मंडल से सम्बन्धित कार्यकर्त्ताओं का स्तर उठाने के लिए उपयुक्त प्रशिक्षण की व्यवस्था हमें करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त जिस गाँव या क्षेत्र में हम काम करते हैं, वहाँ जन-शिक्षण करते हुए स्थानीय नेतृत्व के विकास के लिए हमें प्रयत्न करना चाहिए और यह कोशिश होनी चाहिए कि जल्द-से-जल्द, एक-दो साल के अन्दर स्थानीय कार्यकर्त्ताओं को केन्द्र का भार सौंप कर हमारे कार्यकर्त्ता वहाँ से हट जायें।

—सच्चिदानन्द

विनोबा-पदयात्रा का कार्यक्रम

आजकल विनोबाजी की पदयात्रा आसाम के उत्तर कामरूप जिले में चल रही है। २४ जुलाई को वे रंगिया स्टेशन के निकट बमुनदी स्थान में पहुँचे। आगे पदयात्रा जारी है। ३१ जुलाई का पड़ाव बरपेटा (स्टेशन) में रहेगा। माह अगस्त ता० ३ से ११ ता० तक का कार्यक्रम इस तरह रहेगा :—ता० ३—सरुपेटा, ३ मील; ता० ४—पाठशाला, ५ मील, ता० ५—मकतर मिरा; ता० ६—गिरीश विद्यापीठ, ७ मील; ता० ७—गोवर्द्धन, ५ मील; ता० ८—बरपेटा रोड, ता० ९—हाउली, ५ मील; ता० १०—चकचका, ७ मील और ११ अगस्त को गोलपाड़ा जिले के ग्राम पातलादहा में विनोबाजी पहुँचेंगे।

ज्ञात हुआ है कि विनोबाजी की आसाम-पदयात्रा ५ सितम्बर '६२ को समाप्त होगी और उसके बाद पश्चिम बंगाल में प्रवेश करेंगे। अपनी दूसरी बिहार-यात्रा के बाद विनोबा ने १५ मार्च '६१ को आसाम में प्रवेश किया था। २२ जून से १० जुलाई के बीच विनोबाजी को ६१ गाँव कामरूप जिले में 'ग्रामदान' में प्राप्त हुए।

गांधी स्मारक निधि कार्यकर्त्ता-प्रशिक्षण शिविर

गांधी स्मारक निधि, म० प्र० शाखा के अन्तर्गत २० ग्राम-सेवा-केन्द्रों, ५ गांधी अध्ययन-केन्द्रों तथा १९ स्वाध्याय मंडलों के क्रमशः ग्राम-सेवकों, संचालकों तथा संयोजकों का एक सप्तदिवसीय प्रशिक्षण शिविर २६ जून से २ जुलाई तक गांधी-स्मारक भवन, छतरपुर में सम्पन्न हुआ। शिविर में ग्राम-सेवा केन्द्रों के ग्रामसेवकों ने अपने-अपने केन्द्रों का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया एवं ग्रामसेवा के अपने अनुभवों का जिक्र करते करते हुए समस्याएं भी रखीं। विचार विनिमय के पश्चात् आगामी वर्ष के लिए कार्यक्रम भी निर्धारित किया गया। १०० १२५ कार्यकर्त्ताओं ने भाग लिया।

विंध्यक्षेत्र [मध्यप्रदेश] में प्राप्त भूदान, वितरण आदि का जून '६२ तक का विवरण

जिला	दाता संख्या	प्राप्त भूमि (एकड़)	वितरित भूमि (एकड़)	वितरण को उपलब्ध नहीं	वितरण योग्य शेष भूमि	आदाता संख्या
दतिया	३८३	१२११	४११	३९४	४०६	१७३
टीकमगढ़	६२७	१७२५	५४८	७७७	४००	२५७
छतरपुर	७९४	३३७७	६४७	५६८	११६२	४६५
रीवा	३१७	२९९८	१५८९	२६१	१२४८	३४३
सीधी	१५१	६८७	४०६	१८८	९३	१४४
पन्ना	५२८	१८३८	६१६	—	१२०२	१५६
सतना	७१	५९५	२८	१०१	४६६	१३
शहडोल	७	२५२	—	—	२५२	—
कुल	२,८८८	१२,६६३	५,२४५	२,२८९	५,२२९	१,५५१

सर्वोदय मित्र-मंडल, आर्यनगर, कानपुर

१९६ सर्वोदय-पात्रों का गत जून माह का आय-व्यय विवरण

आय	रु० न०पै०
सर्वोदय-पात्रों से	८४ - ६२
नागरिक सहयोग से	३९ - ५०
पिछला जमा	१५ - ३३
कुल आय	१३९ - ४५

व्यय	रु०-न०पै०
शान्ति-सैनिक पारिश्रमिक	९० - ००
सर्व सेवा संघ को भेजा	१४ - १०
क्षेत्रीय सेवा कार्यों में	१० - ४०
समाचार पत्र	३ - २२
मकान किराया	२० - ००
कुल व्यय	१३७ - ७२
शेष जमा	१ - ७३
कुल	१३९ - ४५

बांदरा, बंबई में नशाबंदी-शिविर

बांदरा स्थित गांधी सेवा-मंदिर में महाराष्ट्र सर्वोदय मंडल और नशाबंदी मंडल की ओर से ३ जून से ११ जून तक स्त्री-पुरुष कार्यकर्ताओं का एक शिविर हुआ। शिविर का उद्घाटन श्री केदारनाथजी ने किया। सर्वश्री वैकुंठभाई मेहता, रा० कृ० पाटील, दादा धर्माधिकारी, बालासाहब भारदे, डा० नरवणे आदि सज्जनों का सर्वोदय विचार प्रचार, सर्वोदय-पात्र, पंचायती राज्य, गांधी जीवन, नशाबंदी आदि विषयों पर मार्गदर्शन मिला। समाप्ति समारोह श्री गणपतिभाई देसाई द्वारा हुआ। शिविर का आयोजन श्री माधवराव देशपांडे और श्री एकनाथ भगत ने किया था।

दैनन्दिनी : १९६३

इस वर्ष हम ऐसा प्रयास कर रहे हैं कि सन् १९६३ की दैनन्दिनी (डायरी) ११ सितम्बर '६२ तक छप कर तैयार हो जाय। ग्राहकों से निवेदन है कि अपना आर्डर हमें १५ अगस्त तक भिजवा दीजिये। आर्डर के साथ अग्रिम रकम आनी चाहिये।

इस वर्ष मित्रों के विशेष आग्रह पर दैनन्दिनी दो आकार में, यानी डिमाई १/८ तथा फुलस्केप १/८ में प्रकाशित की जा रही है।

मूल्य डिमाई आकार का २ रु० २५ नये पैसे और फुलस्केप का १ रु० ७५ नये पैसे रहेगा।

३१ अगस्त तक अग्रिम रकम भेजने वालों को प्रति दैनंदिनी २५ नये पैसे की रियायत दी जायेगी।

दैनंदिनी की कम-से-कम ५० या अधिक प्रतियाँ एकसाथ मंगाने पर 'फ्री डिलीवरी' दी जाती है। उससे कम मंगाने पर पोस्टेज, पैकिंग और किराया खरीदार का रहेगा।

पोस्ट-पार्सल से मंगाने पर दैनंदिनी की प्रत्येक प्रति पर ५० नये पैसे पोस्टेज और प्रति पार्सल ५० नये पैसे रजिस्ट्री खर्च लगता है। ५ या अधिक प्रतियाँ एकसाथ मंगाने पर रेल-पार्सल से भेजी जा सकेंगी और खर्च कम बैठेगा। अपने नजदीक के रेल्वे-स्टेशन का नाम लिखें।

दैनंदिनी जितनी आवश्यकता हो उतनी ही मंगायें। बच जाने पर वापिस नहीं ली जायेंगी।

रकम या ड्राफ्ट अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन के नाम से ही भेजिये।

विक्रेताओं से निवेदन है कि वे अधिक जानकारी के लिए पत्र-व्यवहार करें।

—व्यवस्थापक
अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, काशी

लंदन में प्रदर्शन के लिए श्री रसेल द्वारा श्री जयप्रकाश नारायण आमंत्रित

श्री बर्टेण्ड रसेल ने श्री जयप्रकाश नारायण को लंदन में इंग्लैण्ड के उड्डयन मंत्रालय के कार्यालय के सामने एक प्रदर्शन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया है। यह प्रदर्शन ९ सितम्बर को होने वाला है। श्री रसेल के अनुसार यह प्रदर्शन उन लोगों के खिलाफ होगा, जो "बटन के झटके से राकेट छोड सकते हैं।"

श्री जयप्रकाश ने अपने पत्र में यह सुझाया है कि प्रदर्शन का स्वरूप अंतर्राष्ट्रीय होना चाहिए और साथ में यह भी उम्मीद की है कि इसमें दस हजार लोग भाग लेंगे। श्री रसेल ने इस प्रदर्शन के लिए आचार्य विनोबाजी का भी समर्थन माँगा है।

भूदान पद-यात्रा

श्री रामचन्द्र जैन ने इंदौर जिले के भूदान-कृषकों की समस्याओं के अध्ययन एवं उसके हल में सहायक होने की दृष्टि से पिछले माह भूदान पद-यात्रा की। उन्होंने महू तहसील के अम्बाचंदन, मैमदी, सिमरोल, दतोदा, पिगडम्बर, खेडली, केलोद, घेरछा तथा मगोरा ग्रामों के १५-२० भूदान-कृषक परिवारों से संपर्क किया तथा जिन्हें किन्हीं कारणों वश अभी तक जमीन का कब्जा नहीं मिल सका है, उसकी कार्यवाही में मदद की। अधिकांश परिवार वितरित भूदान की जमीन पर खेती कर रहे हैं।

श्री सुन्दरलालजी बहुगुणा अस्वस्थ

उत्तराखण्ड के प्रसिद्ध सामाजिक और सर्वोदय कार्यकर्ता श्री सुन्दरलालजी बहुगुणा आजकल काफी अस्वस्थ हैं। नरेन्द्रनगर अस्पताल में उनका इलाज हो रहा है। उनकी तबीयत बीच में कुछ अच्छी हुई बताते थे। परन्तु पुनः उनका पुराना मलेरिया बुखार प्रकट हुआ और उसके साथ ही साथ छाती में दर्द और भी दर्द चालू हुआ। वैसे उनका इलाज काफी हिफाजत से हो रहा है और अब तेज बुखार टूट भी गया है, फिर भी खाँसी और कभी-कभी छाती का दर्द बढ़ जाता है। अतः उनको देहरादून अस्पताल में अच्छे इलाज के लिये लाया गया। चार बार उनका एक्स रे लिया गया। पूरी प्लुरसी डाक्टरों ने बताया। फिर भी उन्हें अच्छे इलाज की सख्त आवश्यकता। अब उनकी हालत थोड़ी अच्छी होने पर उन्हें उरुली कांचन भेजने का विचार यहाँ के लोग कर रहे हैं।

उनकी पत्नी विमला बहुगुणा भी टिहरी अस्पताल में अस्वस्थ होकर पड़ी हैं। विमला बहन की तबीयत कुछ अच्छी है। लेकिन अभी तक पूर्ण स्वस्थ नहीं हुई हैं। उनको भी उरुली कांचन भेजने का विचार चल रहा है।

हिन्दू-मुस्लिम एकता पर सेमिनार

अ० भा० शान्ति सेना मण्डल द्वारा वाराणसी में हिन्दू-मुस्लिम एकता की समस्या पर १२ सितम्बर से २७ सितम्बर १९६२ तक एक 'सेमिनार' आयोजित किया जा रहा है। श्री दादा धर्माधिकारी इसकी अध्यक्षता करेंगे तथा श्री जयप्रकाश नारायण, जो अ० भा० शान्ति-सेना मण्डल के अध्यक्ष हैं, इसके लिए समय देंगे। सेमिनार के लिए देश के शान्तिवादियों को आमंत्रित किया गया है तथा देश के अलग-अलग प्रदेशों से शांति-सैनिक भी विद्यार्थी के तौर पर हिस्सा लेंगे।

सेमिनार में हिन्दू मुस्लिम समस्या के विभिन्न पहलुओं पर विचार होगा जैसे— (१) समस्या के मूल। (२) उसके कारण : राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक। (३) समस्या के हल। (४) स्वराज्य के बाद यह समस्या। (५) इस समस्या पर विदेशों की नीति का असर आदि। यहाँ यह स्मरणीय है कि शान्ति-सेना के कई कामों में से एक काम उन मसलों का अध्ययन करना है, जिनकी वजह से आज देश की शांति को खतरा है।

विश्व-शांति दल का समारोह

ता० ३०-३१ जुलाई और १-२ अगस्त को लंदन में विश्व-शांति दल—'वर्ल्ड पीस ब्रीगेड'—की महत्वपूर्ण बैठक हुई। इस बैठक में भाग लेने के लिए विश्वशांति दल के अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण, श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् और श्री सिद्धराज ढड्ढा गये हुए हैं। दारेस्सलम (पूर्वी अफ्रीका) में जो प्रचार समारोह गत जून माह में हुआ, जिसमें जयप्रकाशजी माइकेल स्काट आदि ने उत्तर रोडेशिया की स्वतंत्रता के लिए गांधी-नय पर होने वाले कार्यक्रम को मार्गदर्शन किया, उस समारोह का विवरण इस सभा में दिया जायेगा और उत्तर रोडेशिया में उसकी स्वतंत्रता के लिए विश्व-शांति सैनिकों का जो मोर्चा जाने वाला है, उसकी योजना भी इसी बैठक में तैयार होगी। आणविक प्रयोगों के विरोध में जो सत्याग्रह हुए, उस कार्य का विवरण दिया जाकर रूस में होनेवाले आणविक प्रयोगों के विरोध में होनेवाले सत्याग्रह की योजना भी इसी बैठक में बनेगी।

इस दल की अभी तीन शाखाएँ हैं—(१) उत्तर अमेरिका, (२) यूरोप और (३) एशिया। स्मरण रहे कि आणविक प्रयोगों के विरोध में होने वाले सत्याग्रह में श्री जयप्रकाश जहाज उपलब्ध न हो सकने के कारण जा न सके और इसी कारण शायद वे रूस भी नहीं जा सकेंगे।

भूमिहीनों को जमीन दिलाने का संकल्प

पिछले दिनों विदर्भ एवं खानदेश के सर्वोदय कार्यकर्ताओं की एक बैठक प्रो० ठाकुरदास बंग की अध्यक्षता में हुई। उसमें तय किया गया कि श्री जयप्रकाश नारायण की ६१वीं जन्मतिथि (११ अक्टूबर, '६२) तक ६१ भूमिहीनों को, भूदान में नयी जमीन प्राप्त कर भूमि दिलायी जाय और मराठी के सर्वोदय-साप्ताहिक "साम्ययोग" के ६१० नये ग्राहक बनाये जायँ। यह भी निर्णय किया गया कि सितम्बर से नवम्बर तक पदयात्रा टोलियाँ अपने-अपने क्षेत्रों में भूदान के लिए यात्रा करें।

भारत सफाई-मंडल

'भूदान-यज्ञ' ता० २९ जून ६२ के अंक में प्रकाशित "भारत और स्वच्छता" सम्पादकीय को पढ़ कर कई पाठकों ने पत्र लिखा है कि वे 'भारत सफाई मंडल' के सदस्य बनना चाहते हैं। मंडल का पता—श्री कृष्णदास शाह, मंत्री, भारत सफाई मंडल, ११४ ई०, विठ्ठलभाई पटेल रोड, बंबई ४। इस मंडल की ओर से "सफाई दर्शन" नाम की मासिक पत्रिका भी प्रकाशित होती है। इसका वार्षिक चंदा दो रुपया मात्र है।

सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक मदुराई में

अखिल भारत सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की आगामी बैठक १ से ७ सितम्बर '६२ तक मदुराई में रखी गयी है।

सर्वोदय पर्व

११ सितम्बर से २ अक्तूबर तक चलने वाले 'सर्वोदय उत्सव' का नाम विनोबाजी ने 'सर्वोदय पर्व' सुझाया है।

आवश्यक सूचना

श्री राधेश्याम जायसवाल १ मई १९६१ से अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन विभाग के कार्य से मुक्त कर दिये गये हैं। हमें कई स्थानों से सूचना मिली है कि उसके बाद भी वे अपने को संस्था का कार्यकर्ता बता कर उधारी की रकमें वसूल करते रहे हैं तथा पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाते रहे हैं।

हमें अत्यन्त खेद के साथ सूचित करना पड़ता है कि श्री राधेश्याम जायसवाल से किये व्यवहार और रकमों की जिम्मेवारी संस्था की नहीं होगी। न्यू मार्केट, कैसर-बाग, लखनऊ स्थित सर्वोदय साहित्य भंडार भी सर्व-सेवा-संघ का है और उनसे श्री राधेश्याम जायसवाल का कोई सम्बन्ध नहीं है।

—व्यवस्थापक
अ० भा० सर्व सेवा संघ-प्रकाशन
राजघाट, काशी

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता: राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४१९१
पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८६४० इस अंक की छपी प्रतियाँ ८५६६
वार्षिक मूल्य ६) एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा
वाराणसी : शुक्रवार ११ अगस्त '६२ वर्ष ८ : अंक ४५

ग्रंथ हमारे लिए हैं, हम ग्रंथों के लिए नहीं

• विनोबा

भारत का विधान इस जमाने की स्मृति है। जैसे मनुस्मृति है, याज्ञवल्क्य स्मृति है, पाराशर स्मृति है, वैसे यह भी एक स्मृति है। उसमें प्रजा के क्या-क्या कर्तव्य हैं, क्या-क्या अधिकार हैं, समाज के नियमन के लिए क्या-क्या योजना की जायेगी, प्रशासन कैसे चलेगा, ये सब बातें रहती हैं। प्रशासन में गलतियाँ हुईं तो उसके खिलाफ लड़ने के लिए प्रजा के पास क्या साधन हैं, यह भी उसमें दिया रहता है। एक साधन है, हाईकोर्ट ? कोर्ट के न्यायाधीश को तनख्वाह मिलेगी या नहीं, उन पर राज्य की सत्ता रहेगी या नहीं, इत्यादि-इत्यादि सब प्रकार का एक सामाजिक विधान उसमें रहता है। सर्वसामान्य व्यवहार में जो प्रश्न होते हैं, उनके छोटे-छोटे नियम उस समाज में बनाये जाते हैं, उसीको 'कानून' कहते हैं। वह दंडनीति है। सर्वसमाज के नियमन के लिए, सर्वसामान्य व्यवस्था की वह स्मृति है।

जो भक्तिमार्गी होते हैं, वे व्यक्तिगत चित्तशुद्धि के लिए जो कुछ मनुष्य को करना होगा, उसके बारे में समझाते हैं और परमेश्वर की तरफ, भगवान् की ओर चित्त को खींचते हैं। उसमें दो अंश होते हैं—पहला अंश चित्त शुद्धि का और दूसरा है, ईश्वर-भक्ति का। जो तत्त्वज्ञानी होते हैं, वे चर्चा करते हैं सृष्टि-रचना पर। परमात्मा, आत्मा, इन सबका स्वरूप, सृष्टि की रचना, आत्मा, परमात्मा, सृष्टि, इनका एक-दूसरे के साथ सम्बन्ध, ईश्वर, जीव क्या है, उनका स्वरूप क्या है, इत्यादि चर्चा तत्त्वज्ञान करता है।

विज्ञान वह है, जो सृष्टि में, कुदरत में जो कार्य चलते हैं, उनके कानून, सृष्टि के पदार्थ, जैसे पानी है, उनके क्या-क्या धर्म हैं इत्यादि के बारे में कहता है। सृष्टि और सृष्ट पदार्थ, प्रकृति और प्राकृत पदार्थ किस तरह काम करते हैं, उनके कानून क्या हैं इत्यादि यह शास्त्र कहता है।

मानसशास्त्र मनोविज्ञान का शास्त्र है। तरह-तरह की वृत्तियाँ कैसी उठती हैं, उन सबका वर्णन उसमें आता है। उन पर काबू कैसे पाया जाय, इसका विवेचन करने वाला मानसशास्त्र का दूसरा अंग है। उसको हम 'योग' कहते हैं। मन के व्यापार का विवेचन करके उन पर काबू कैसे पाना, यह यह शास्त्र कहता है।

फिर वैद्यशास्त्र होता है। यह शास्त्र शरीर के धर्म बताता है। किस चीज का शरीर पर और तद्द्वारा मन पर क्या होता है, यह यह शास्त्र कहता है।

एक बाजू में शरीरशास्त्र और दूसरी बाजू में मानसशास्त्र। एक बाजू में भगवत्-भक्ति, एक बाजू में मनोजय-चित्तशुद्धि। एक बाजू ईश्वर, एक बाजू प्रकृति। एक बाजू सामाजिक शास्त्र, सामाजिक जीवन के कार्य और नियम, एक बाजू उसका शासन, इन सबको एक करने से धर्मग्रंथ बनता है।

धर्मग्रंथ में ये इतने सब विषय आते हैं। विवरण समझने के लिए तरह-तरह की कथाएँ होती हैं। वे पौराणिक कथाएं होती हैं। चरित्र वर्णन होता है, उसको इतिहास कहते हैं। एक इतिहास, दूसरा पुराण, तीसरा समाजशास्त्र, चौथा व्यवहारशास्त्र, पाँचवाँ विज्ञान, छठा मनोविज्ञान, सातवाँ भक्ति, आठवाँ चित्तशुद्धि, इतने विविध अंग होते हैं। किस ग्रंथ में किस विषय की चर्चा है, यह देखना चाहिये। भगवान् के नाम से, धर्म के नाम से जो ग्रंथ लिखे गये, उनमें यथावत् विषय समझना मुश्किल है। कुछ विषय ऐसे होते हैं, जो एकदम समझ में आते हैं, जैसे गणित है। ऊपर लिखा रहता है 'गणित' और अंदर चर्चा भी होती है गणित की। व्याकरण-शास्त्र है। ऊपर लिखा रहता है 'व्याकरण शास्त्र', अंदर चर्चा भी व्याकरण-शास्त्र की। यहाँ चर्चा स्पष्ट है, प्रकट है। लेकिन जो ग्रंथ भक्तिपर, तत्त्वज्ञानपर होते हैं, ऐसे ग्रंथ हाथ में आते ही ग्रंथकार क्या कहना चाहता है, यह देखना चाहिये। किसी ग्रंथ के साथ किसी ग्रंथ की तुलना नहीं हो सकती। बाइबिल के साथ 'नामघोषा' की तुलना नहीं हो सकती। बाइबिल धर्म-ग्रंथ है, 'नामघोषा' भक्तिपर ग्रंथ है। उसी तरह मनुस्मृति में समाज-शास्त्र है, दंडनीति है, व्यवहार शास्त्र है, वैसे 'नामघोषा' में भक्ति का और चित्तशुद्धि का विचार आया है, दूसरा विचार आया नहीं। उसको सीमित पुस्तक समझ कर ही पढ़ सकते हैं और ऐसे पढ़ने से ही उसका फायदा उठा सकते हैं। बाइबिल पढ़ें तो उसमें पर्याप्त सूचना, नियम और कथाएँ मिलती हैं। ऐसा 'नामघोषा' में नहीं। भागवत में भगवत-लीला, समाज-शास्त्र, भक्ति, तत्त्वज्ञान, सबकी एक खिचड़ी हुई है। उसको पढ़ते समय, उसका जो मुख्य विचार है उतना अंश लें, बाकी छोड़िये। यह समझने की बात है कि किस ग्रंथ से क्या लेना चाहिये।

हमारे साथी सत्य, अहिंसा के बारे में खुलासा चाहते हैं। तत्त्वज्ञान के ग्रंथ से या शंकराचार्य के ग्रंथों से यह नहीं मिलेगा। उसमें सृष्टि, आत्मा के बारे में चर्चा मिलेगी। अगर हम गांधीजी के पास जायेंगे तो प्रत्यक्ष समाज शास्त्र, अहिंसा के अनुभव, सामाजिक क्रांति मिलेगी। ऐसा नहीं है कि वे आत्मा-परमात्मा के बारे में कभी नहीं बोलते थे। तुकाराम एक सांसारिक मनुष्य था। उसके साहित्य में उपाधियों को प्रयत्नपूर्वक फेंक कर परमेश्वर के पास कैसे पहुँचना, यह मिलेगा। लेकिन उसमें अगर नीति-शास्त्र समझ लेने की अपेक्षा रखें तो थोड़ा मिलेगा भी, लेकिन समाधान नहीं होगा। 'न्यू टेस्टामेंट', 'सरमन आफ दी माउंट' में स्पष्टतः नीति की आज्ञा मिलेगी। तत्त्वज्ञान और धर्म-ग्रन्थों में उस तरह की स्पष्ट आज्ञा नहीं पायेंगे। इस तरह हर ग्रन्थ की विशेषता ध्यान में लेकर उसमें की उपयोगी चीज लेनी चाहिये।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि यह समझ लेना चाहिए कि ग्रंथ हमारे लिए हैं, हम ग्रंथों के लिए नहीं। ग्रन्थों का उपयोग हमें करना है। हम जीवन-प्रयोजन को ध्यान में लेकर ग्रन्थों का उपयोग करते हैं, तो उसका लाभ होता है।

पुराने अनुभवों से, वचनों से चित्त को बांध लेते हैं तो अपने को भूतकाल में जकड़ लेते हैं और मुक्तता खो बैठते हैं। पुराने अनुभवों को ध्यान में लेते नहीं, तो पैर लड़खड़ाते हैं और जिन चीजों की जमाने में आवश्यकता नहीं उसमें फिर फिर से फँसते रहते हैं। ऐसे विचारों से मुक्तता हुई तो लाभ है। ऐसी दुहरी दृष्टि रख कर ग्रन्थ को पढ़ना चाहिये।

(जिला कामरूप, २३-७-'६२)

"सर्वोदय-पर्व" के लिए विनोबाजी के आशीर्वाद

गये साल शरदारंभ में शारदोपासना के लिए, अर्थात् सर्वोदय-साहित्य के प्रचार के लिए सर्व सेवा संघ ने सारे भारत में तीन सप्ताह का एक अभियान चलाया था। उसका लोगों में काफी स्वागत हुआ था, यद्यपि प्राथमिक तैयारी के लिए पर्याप्त समय नहीं मिला था। इस साल वही अधिक व्यापक दृष्टि से चलाने का सोचा गया है। और इसलिए उसका "सर्वोदय-पर्व" नाम दिया गया है।

'सर्वोदय-पर्व' में सर्वोदय-साहित्य प्रचार को मध्य-बिन्दु में रख कर शांति-सेना, भूदान, राष्ट्रीय एकता, ग्रामस्वराज्य, निःशस्त्रीकरण, इस पंचविध कार्यक्रम के विषय में लोक-जागृति की जायगी।

[illegible] सर्वोदय के माने गये चंद [illegible] सार्वजनिक [illegible] लए तो यह नित्य-कार्यक्रम है। सारे देश का ध्यान खींचने और सहयोग हासिल करने के लिए यह नैमित्तिक आयोजन है।

[भूदान-यात्रा,
जि० कामरूप, आसाम
२७ जुलाई, '६२]

—विनोबा का जय जगत्

शान्ति-सेना को व्यापक बनाने का प्रयत्न

शान्ति-सेना, अर्थात् ऐसे व्यक्तियों की सेना, जो बिना हथियारों का सहारा लिये हुए अहिंसक उपायों द्वारा निष्पक्ष रूप से अशान्ति-शमन के कार्य में अपनी जान की बाजी लगा देने के लिए हर समय तत्पर रहें। आदेश मिलने पर देश के किसी भी कोने में जाने को तैयारी रखे। बिना किसी धर्म, जाति पक्ष आदि के भेदभाव के जनता की सेवा में अपने को लगाये रखे, ऐसी सेना की आज के हिंसा, शोषण तथा द्वेष पूर्ण वातावरण में उपयोगिता तथा महत्ता सभी मानने लगे हैं।

देश में आज तक लगभग २५०० लोगों ने अपने नाम शान्ति-सैनिक बनने के लिए दिये हैं। फिर भी देश और यहाँ की समस्याओं की विशालता देखते हुए यह सेना अपर्याप्त है। अभी तक शान्ति-सैनिक की कुछ निष्ठाएँ भी अधिकतर लोगों को पालन करना संभव नहीं था, चाहे वे लोग अहिंसा में अविश्वास करते हुए अपने को जनसेवा के कार्यों में लगाने के लिए कितने ही इच्छुक क्यों न हो।

अतः अ० भा० सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति ने अपने पटना-अधिवेशन में निष्ठापत्र में से "बिना किसी कामना के समर्पण-बुद्धि से मैं लोक-सेवा करता रहूँगा" वाली तीसरी निष्ठा और "मैं अपना अधिक-से-अधिक समय और चिन्तन-सर्वस्व सर्वोदय के प्रत्यक्ष साधन-स्वरूप भूदान-मूलक ग्रामोद्योग प्रधान, अहिंसक क्रान्ति के काम में लगाऊँगा।" की पाँचवीं निष्ठा फिलहाल हटा दी है, जिससे थोड़ा समय देने वाले व्यक्ति भी यदि वे सर्वोदय-विचारधारा में विश्वास रखते हैं, तो शान्ति-सैनिक बन कर शान्ति-कार्य में सहयोग दे सकते हैं।

शान्ति-कार्य को अधिक व्यापक और सक्षम बनाने के लिए प्रत्येक प्रान्त के प्रमुख शहरों में 'सूचना-केन्द्र' और 'शान्ति-केन्द्र' स्थापित करने का प्रयत्न किया जा रहा है।

'सूचना-केन्द्र' वे स्थान होंगे, जहाँ कोई जिम्मेवार व्यक्ति यह भार उठाये कि वहाँ व इर्दगिर्द के क्षेत्र में अशांति होते ही तुरंत वहाँ पहुँच कर दंगे का स्वरूप, उसकी गंभीरता तथा आगे होने की संभावना आदि के विषय में भी हमें निष्पक्ष सूचना दे। केवल इतना ही कार्य 'सूचना-केन्द्र' को करना होगा।

'शान्ति-केन्द्र' वे स्थान होंगे, जो राष्ट्रीय शान्ति-सेना की प्राथमिक इकाई का रूप ग्रहण करेंगे। जहाँ एक से अधिक शान्ति-सैनिक एकसाथ नियमित रूप से मिलते रहने का क्रम रख सकें, कुछ-न-कुछ सेवा-कार्य उस क्षेत्र में करें, अधिक-से-अधिक लोगों को शान्ति-सेना में दाखिल करने का प्रयत्न करें। प्रति माह इस केन्द्र द्वारा अपनी प्रवृत्तियों का विवरण हमें भेजते रहने की अपेक्षा है।

इन केन्द्रों की स्थापना का कार्य प्रारंभ हो गया है। अब तक कुल १४ 'शान्ति-केन्द्र' और १२ 'सूचना-केन्द्र' स्थापित हो चुके हैं, जो इस प्रकार हैं :

प्रदेश	शान्ति-केन्द्र	सूचना-केन्द्र
मध्यप्रदेश	६	१३
गुजरात	६	९
बंबई नगर	१	१
उत्तर प्रदेश	१	५
बंगाल	—	२
बिहार	—	१
राजस्थान	—	१
(२६ जुलाई तक) कुल	१४	३२

इसके अतिरिक्त शान्ति-सेना मंडल की ओर से हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर एक परिसंवाद अ० भा० सर्व सेवा संघ, राजघाट, काशी में आगामी १२ सितम्बर से २७ सितम्बर तक होने जा रहा है। इस 'सेमिनार' की अध्यक्षता श्री दादा धर्माधिकारी करेंगे और श्री जयप्रकाश नारायण भी अपना कुछ समय इसमें देंगे। इस समस्या में दिलचस्पी रखने वाले कुछ भाई अन्य प्रान्तों से भी आ रहे हैं। इस प्रकार इस विचार-गोष्ठी में इस समस्या पर गहराई से विचार करने का मौका मिलेगा। प्रत्येक प्रान्त से एक या दो शान्ति-सैनिक, जिन्हें अंग्रेजी भाषा का ज्ञान हो, विद्यार्थी के तौर पर भाग लेने के लिए प्रान्तीय शान्ति-सेना समितियों की ओर से आयेंगे। आज देश में साम्प्रदायिक तनाव को दूर करके दोनों समुदायों में हार्दिक एकता स्थापित करने का प्रश्न जटिल प्रश्नों में से एक है, जिस पर देश की शान्ति बहुत कुछ हद तक निर्भर है। इस संबंध में हमारा दृष्टिकोण जितना स्पष्ट और व्यावहारिक होगा, उतने ही शीघ्र हम इस समस्या को सुलझाने में समर्थ हो सकेंगे।

पुनर्गठित अ० भा० शान्ति-सेना मंडल की प्रथम बैठक ७ अगस्त को बंबई में होने जा रही है, जिसमें अन्य विषयों के अतिरिक्त शान्ति-सेना के भावी कार्यक्रम की रूपरेखा पर भी विचार होगा।

फिलहाल शान्ति-सेना मण्डल के सदस्य इस प्रकार हैं :—

(१) जयप्रकाश नारायण, अध्यक्ष, (२) आशादेवी आर्यनायकम्, उपाध्यक्षा, (३) जी० रामचन्द्रन्, उपाध्यक्ष, (४) नवकृष्ण चौधरी, (५) मार्जरी साइक्स, (६) ईश्वरन्, (७) इस्माइल भाई नागोरी, (८) मनमोहन चौधरी, (९) नारायण देसाई (मंत्री)

—सतीशचन्द्र दुबे

साहित्य-परिचय

आश्रम संहिता : ले० काकासाहब कालेलकर, प्रकाशक—गांधी हिन्दुस्तानी साहित्य सभा, राजघाट, नई दिल्ली-१। पृष्ठ-संख्या-१८४, मूल्य २ रु० ५० नये पैसे।

काकासाहब ने बहुत अरसे के बाद गांधीजी के आश्रम के संस्मरण इस पुस्तक में दिये हैं। जैसा कि काकासाहब ने स्वयं लिखा है, "बहुत बरसों के बाद ये संस्मरण लिखे हैं, इनमें स्मृति-दोष के कारण कुछ गलतियाँ होने की संभावना है, लेकिन शुद्ध सत्य हकीकत और संस्मरण देने का ही यहाँ पूरा प्रयत्न किया है।"

काकासाहब ने अपने आपको पूर्ण आश्रमवासी तो कभी माना न था, किन्तु गांधीजी के विशेष स्नेह के कारण वे अन्त तक आश्रमवासी से ही बने रहे। दूर रहते हुए, नजदीक से आश्रम की व्यवस्था का जो निरीक्षण-परीक्षण और विश्लेषण संस्मरणात्मक रोचक शैली में किया है, वह हर भारतीय संस्कृति के इतिहास के विद्यार्थी के लिए तो उपादेय तो है ही, साथ ही हर रचनात्मक कार्यकर्ताओं तथा संस्थाओं के लिए भी उपयुक्त है।

सामाजिक विश्लेषण : ले० रामप्रवेश शास्त्री, प्रकाशक : साहित्य-सभा, सोहाँव, बलिया। पृष्ठसंख्या १२०, मूल्य १ रु० ५० नये पैसे।

सामाजिक समस्याओं से संबंधित विभिन्न लेखों का संग्रह इस पुस्तक में है। लेखक की मूल दृष्टि अस्पृश्यता-निवारण पर ही ज्यादा है। अस्पृश्यता से संबंधित लेख भी ज्यादा हैं। अन्य समस्याओं पर भी गहराई से विचार किया गया है। पुस्तक की भूमिका हरिजन सेवक संघ की अध्यक्षा श्रीमती रामेश्वरी नेहरू ने विस्तार से लिखी है, जिसमें कुछ लेखों का विश्लेषण भी किया गया है। उनकी राय है कि "इस पुस्तक के निबंध बड़े महत्त्व के और विचारपूर्ण हैं। ये सब बहुत ऊँचे आदर्शों को सामने रख कर इसलिए लिखे गये हैं कि पाठक उनको पढ़ कर कुछ हृदय-मंथन करें और प्रचलित सामाजिक बुराइयों को दूर करने में सहायक हों।"

हमारी राय में अस्पृश्यता-निवारण के लिए काम करने वाले समस्त हरिजन-सेवकों के लिए तो यह पुस्तक पढ़ने के काबिल है ही, अपितु समग्र दृष्टि से समाज सेवा करने वालों के लिए भी उपयोगी है और साधारण पाठक भी इसको पढ़ कर लाभ उठा ही सकते हैं।

समाज-विकास-माला

सस्ता साहित्य मंडल, नयी दिल्ली ने 'समाज-विकास-माला' के अंतर्गत नवसाक्षर प्रौढ़ों के लिए कुछ सुंदर एवं समाजोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन किया है। हमारे सामने नीचे दी गयी पुस्तकें हैं :

१. बाल गंगाधर तिलक (मनहर चौहान), २. लाल किला (देवराज 'दिनेश'), ३. रवीन्द्रनाथ ठाकुर (विष्णु प्रभाकर), ४. कुदरत की मिठाइयां (महात्मा भगवानदीन), ५. संत एकनाथ (श्रीपाद जोशी), ६. मछेरा और देव (शिवनाथसिंह 'शाण्डिल्य'), ७. लाला लाजपतराय (देवराज 'दिनेश'), ८. एवरेस्ट की कहानी (गोविन्द चातक), ९. गणेशशंकर विद्यार्थी (रतनलाल बंसल), १०. चतुराई की कहानियाँ (स्नेहलता), ११. शेरे पंजाब (शंकर बाम), १२. वसीयत (श्रीकृष्ण), १३. अजीजन (शंकर बाम), १४. गोलकुण्डा का कैदी (विश्वम्भर सहाय प्रेमी), १५. मिर्जा गालिब (गोपालकृष्ण कौल), १६. हमारा हिमालय (विश्वमित्र शर्मा), १७. अजन्ता-एलोरा (यशपाल जैन), १८. हारिये न हिम्मत (सव्यसाची), १९. गोमुख (यशपाल जैन), २०. गांधीजी के आश्रम (भाग १) (अशोक), २१. गांधीजी के आश्रम (भाग २) (अशोक)।

पुस्तकें जानकारी की दृष्टि से काफी अच्छी बन पड़ी हैं। विषय भी दिलचस्प एवं विभिन्नता लिये हैं। कुछ तो पौराणिक संत-महात्मा के जीवन-चरित्र हैं, कुछ आधुनिक देशभक्तों की जीवनियाँ भी हैं। अलावा इसके नदी, पहाड़, किले गुफाएँ, आश्रम एवं कुछ हितोपदेश की कहानियाँ हैं। अक्षर मोटे हैं। बीच-बीच में चित्र भी दिये गये हैं। हरएक पुस्तक का मूल्य ३७ नये पैसे हैं। इन सबके संपादक हैं जाने-माने पर्यटक, पत्रकार श्री यशपाल जैन। —मधुराम्ल

अनुकरणीय सम्पत्तिदान

बम्बई के एक सज्जन श्री द्वारकादास नारायणदास अक्तूबर १९५६ में श्री विनोबाजी से कोयम्बटूर में मिले थे। उस समय विनोबा तमिलनाड में पदयात्रा कर रहे थे। श्री द्वारकादास नारायणदास ने २ अक्तूबर '५६ को पचास रुपये मासिक के हिसाब से सम्पत्तिदान देना स्वीकार किया था। उन्हें कहा गया था कि इस बारे में तमिलनाड सर्वोदय-मण्डल उन्हें लिखेगा। किन्तु इधर श्री द्वारकादास नारायणदास से तमिलनाड भूदान-समिति का सम्पर्क टूट गया और दानदाता ने भी कई पत्र लिखे, पर सम्पर्क नहीं हुआ। लगभग छः साल बाद श्री द्वारकादास नारायणदास ने गत १८ जून '६२ को पत्र द्वारा सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय को अपने दान की बात लिखी और पत्र पाने पर सम्पत्तिदान की कुल रकम का दो-तिहाई, अर्थात् दो हजार रुपये, तत्काल ही तमिलनाड सर्वोदय-मण्डल को भेज दिया। एक हजार रुपये उन्होंने अन्य सहायता-कार्य में लगा दिये। इस प्रकार उन्होंने एक अनुकरणीय आदर्श उपस्थित किया है।

अहस्थंजात् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

टिप्पणियाँ

लोकनागरी लिपि *

सेवा और हृदय-शुद्धी

स्वराज्य-प्राप्ती के पहले देश में कुछ सेवक थे, जो जनता में जाकर कुछ-न-कुछ सेवा-कार्य करते थे। लेकीन जैसे मकान बनवाने के लीओ कीसी को ठेका देते हैं, वैसे ही स्वराज्य के बाद हमने सेवा के ठेकेदार बनाये हैं! समाज-सेवा के ठेकेदार सरकार और सरकारी नौकर और धर्मसेवा के ठेकेदार मुल्ला, भीक्षु, पुजारी और पुरोहीत—अीस तरह सेवा की 'अेजेन्सी' बना कर हम अुससे फारीग हो गये हैं। अीस समय सब देशों में सीयासी जमातें के लोग अूधम मचा रहे हैं। लेकीन अुनमें सेवा की वृत्ती नहीं है। भगवान हृदय देखता है, बाहर का ढोंग नहीं देखता है। सीयासतवालों की सेवा में हृदय-शुद्धी नहीं होती है, अीसलीअे वैसी सेवा से दील को तसल्ली नहीं होती। सीयासतवाले अेक-दूसरे की बुराअी करते हैं। और अेक-दूसरे को तोड़ने की कोशीश करते हैं। लेकीन हृदय-शुद्धी का थोड़ा भी कार्य कहीं चलता हो तो वह फूल की खुशबू की भांती सारे समाज में फैलेगा। अुससे दील को तसल्ली होगी। और परमात्मा भी राजी होगा। आज अैसी सेवा चलती है, जीनके लीअे लोगों में आदर नहीं है। अुससे न दील को तसल्ली मीलती है और न परमात्मा ही राजी होते हैं।

[अुथमपुर, 3-9-'59] —वीनोबा

* लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ई, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

निर्वाचन की सही प्रणाली

पिछले दिनों बंगलोर में मैसूर के न्यायविदों के आयोग द्वारा आयोजित एक परिचर्चा का शुभारम्भ करते हुए भारत के एटार्नी जनरल श्री एम० सी० शीतलवाड ने निर्वाचन की वर्तमान प्रणाली के बारे में कुछ महत्वपूर्ण विचार प्रकट किये हैं, जिन पर गंभीरता से चिंतन होना आवश्यक है। उन्होंने कहा है कि चुनाव की वर्तमान प्रणाली के कारण इस बात की सम्भावना बहुत ही कम है कि जनता के सच्चे, प्रभावशाली और ईमानदार प्रतिनिधि चुन कर आ सकें।

श्री शीतलवाड ने यह जानना चाहा कि क्या ऐसा कोई उपाय नहीं है, जिससे—

(१) इस प्रकार चुनाव हो सके, जिसमें दल के नेताओं का एकछत्र आधिपत्य समाप्त हो तथा नागरिकों को स्वतंत्र मत व्यक्त करने की सुविधा हो।

(२) चुनाव का खर्च काफी कम किया जा सके।

(३) दलों को बड़े बड़े व्यवसायियों से चन्दा लेने से रोका जा सके।

(४) दलों पर इस बात के लिए दबाव डाला जा सके कि वे चुनाव के लिए प्राप्त चन्दे और खर्च का पूरा-का पूरा विवरण छापें।

यह बिलकुल सही है कि चुनाव की जो प्रणाली आज देश में प्रचलित है, उससे जनता के सच्चे प्रतिनिधियों का चुना जाना बहुत मुश्किल हो गया है। देश के अधिकतर लोग भी यह महसूस करते हैं।

चुनाव के खर्च के सिलसिले में संसद-सदस्यों से विदाई लेते हुए तत्कालीन राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद ने भी गत ८ मई को कहा था :

"भारत एक गरीब राष्ट्र है। यहाँ पर कानून जितना खर्च वैध बताता है, उतना भी खर्च मध्यम श्रेणी का व्यक्ति नहीं कर सकता। ऊपर के जो खर्च पड़ते हैं, वह तो दूर की बात है। ऐसा व्यक्ति सदा किसी दल या व्यक्ति के प्रति उपकृत रहेगा। अगर जनतंत्र को सफल बनाना चाहते हैं, तो कम खर्च में चुनाव हो, इसका उपाय खोजना पड़ेगा।"

पिछले साल कटक में भारतीय राजनीतिक विज्ञान-परिषद के अधिवेशन में अध्यक्षीय भाषण में प्रोफेसर कोगेकर ने बड़ी दृढ़ता से कहा कि हमने ब्रिटिश संसदीय पद्धति को अपनाकर अच्छा नहीं किया है। वह अपने देश की वस्तुस्थिति के अनुकूल नहीं है और राष्ट्रीय मोर्चे के खड़े होने में सबसे बड़ी बाधा है। उनका आग्रह है कि पार्टियों को परम्परागत संसदीय जनतंत्र के विचार निकाल देने चाहिए और आपस में एक-दूसरे के नजदीक आना चाहिए। महत्त्व इस बात का नहीं है कि अमुक सरकारी ढाँचा चल रहे है या नहीं, बल्कि इसका है कि हम जनतांत्रिक मूल्यों, अधिकारों और स्वतंत्रताएं सुरक्षित रख पाते हैं या नहीं! उन्होंने देश के राजनीतिक वैज्ञानिकों से अपील की कि देश की अपनी स्थिति के अनुरूप एक नयी राजनीतिक पद्धति की खोज करें।

इतना सब यहाँ देने का आशय हमारा इतना है कि इस समस्या की ओर राष्ट्र के भिन्न भिन्न चिंतकों का ध्यान है। सब यह महसूस कर रहे हैं कि जो कुछ चल रहा है, वह बिलकुल ठीक नहीं है। पिछले दस बारह वर्षों से विनोबाजी और सर्व-सेवा संघ इस ओर देश का ध्यान लगातार खींचते आये हैं।

मसला है कि क्या दलों में इस प्रकार सुधार लाया जा सकता है, जिससे दलगत राजनीति की सब बुराइयाँ दूर हो सकें! हमें लगता है कि 'हर जगह छेद ही छेद और टुकड़े ही टुकड़े' करने वाली दलगत राजनीति में सुधार होना मुश्किल है। जहाँ सत्ता की होड़ होती है, वहाँ 'अच्छा या बुरा' का खयाल कम रह जाता है। दलों के बीच होड़ और संघर्ष और फिर उसी दल के अन्दर दलदल। क्या यह दलदल दलों के रहते साफ हो सकता है?

सच्चे जनतंत्र की माँग है कि उसमें जनता के सच्चे प्रतिनिधि चुने जायँ। किन्तु जो सच्चे और ईमानदार होते हैं, वे दलदल, तू तू-मैं-मैं और दाँव-पेंच में नहीं पड़ना चाहते हैं, जो किसी भी राजनीतिक दल में रहने वाले के लिए आवश्यक हो जाता है।

अतः राष्ट्र के प्रमुख और चिन्तनशील, सब नागरिकों का कर्तव्य है कि ऐसी पद्धति को ढूंढ निकालें, जिसमें जनता के सच्चे प्रतिनिधि चुने जा सकें, जिससे वे जनता के हित में काम कर सकें।

—मणीन्द्रकुमार

भू-भिक्षुजी का उपवास

उत्तराखण्ड में सरकार की ओर से सम्पूर्ण शराब-बन्दी के लिए कोई आश्वासन न मिलने पर श्री भू-भिक्षुजी १ जून, '६२ को विधान-सभा भवन, लखनऊ के सामने आमरण अनशन करने के लिए पहुँचे थे। किन्तु उ० प्र० सर्वोदय-मंडल और सर्व सेवा संघ के अनुरोध से अनशन स्थगित कर विनोबा की सलाह लेने लिए उनके पास गये थे। विनोबा ने उन्हें सात दिन का उपवास करने की सलाह दी। तदनुसार अब वे शराबबन्दी के सिलसिले में आत्म-शुद्धि के लिए सात दिन का व्रत समन्वय-आश्रम, बोधगया में करने जा रहे हैं। उस सिलसिले में विनोबाजी ने आश्रम के संचालक श्री द्वारकोजी को यह पत्र लिखा है —

श्री भू-भिक्षु को मैंने आत्म-शुद्धि के साप्ताहिक उपवास के लिए समन्वय-आश्रम का स्थान सुझाया है। वे भूदान के काम में बरसों से लगे हुए हैं। उत्तराखंड में शराब-बन्दी की तीव्र उत्कंठा उनको और सबको महसूस हुई थी। इसलिए उस काम में उन्होंने बहुत परिश्रम किया। उनके हृदय में उत्कट भावना हुई कि वे उस काम के लिए निरवधि अनशन करें। मेरे सुझाव से उन्होंने उस संकल्प को सप्ताहावधि में परिवर्तित किया। स्वच्छ-हृदय पुरुष हैं। १५ अगस्त को उपवास शुरू करेंगे। २२ अगस्त, भगवान् कृष्ण के जन्म-दिन, जन्मोत्सव करके वे समाप्त करेंगे। उसके बाद आराम के लिए चन्द दिन वहाँ बितायेंगे। मुझे विश्वास है, महात्मा बुद्ध की स्मृति से अनुप्राणित वातावरण में आप लोगों के सहयोग से उनको अन्तःशान्ति और चिन्तन-समृद्धि प्राप्त होगी।

असम-यात्रा, २०-७-'६२ —विनोबा का जय जगत

'कलम' धान के धन्योद्गार

अस्मान् अवेहि कलमान् अभ्याहतानाम् ।
येषां प्रचण्डमुसलैरवदान तैव ॥
स्नेहं विमुच्य सहसा खलतां प्रयान्ति
ये स्वल्पपीडनवशान् न वयं तिलास्ते ॥

हम 'कलम' धान हैं। हम पर प्रचंड मूसल के तीव्र आघात होने पर भी हम अधिकाधिक शुद्ध ही होते जाते हैं। जो थोड़े-से कूटने-पीसने से ही तुरन्त स्नेह (तेल) छोड़ कर खल (खली) बनते हैं, वे तिल हैं, हम नहीं हैं।

(एक पुराना सुभाषित)

ग्रामभारती

• धीरेन्द्र मजूमदार

बिहार के पूर्णियाँ जिले के बलियाग्राम में "ग्रामभारती" की शुरुआत सात लड़कों से हुई थी, क्रमशः वह संख्या १२ तक पहुँची। अपनी कुटिया के सामने थोड़ी-सी जमीन खोद कर इसका श्रीगणेश हुआ था। उस जमीन पर खेती तथा बच्चों के घर के काम शिक्षा के माध्यम रहे। इस प्रक्रिया से तालीम की दृष्टि से काफी प्रगति होने लगी। फिर भी बच्चों को पूरे समय शिक्षक के साथ रहने को मिले, इसका कोई छोर नहीं निकल रहा था और हम लोग विभिन्न कार्यक्रम के समवाय में विषयों की जानकारी कैसे दी जा सकेगी, उसके प्रयोग में लगे थे।

एक बात विशेष रूप से देखने को मिली, वह यह कि जिन लोगों के बच्चे स्कूल नहीं जाते थे और घर के भी काम में फँसे बहुत नहीं थे, वे ही "ग्रामभारती" में तालीम के लिए जाते थे। जो दो-चार लड़के स्कूल छोड़ कर के आये थे, वे इसलिए आये थे कि यहाँ पढ़ाई अच्छी थी। उनके माता-पिता अच्छी खेती सिखाने के लिए नहीं भेजते थे। दूसरी चीज यह देखने को मिली कि हमारी कोशिश करने के बावजूद बाबू लोगों के बच्चे इसमें नहीं आते थे। वे इसे 'मजदूर स्कूल' ही कहते थे। फिर भी "ग्रामभारती" के द्वारा दोनों वर्गों के लोग एक साथ आयें, इसकी कोशिश जारी रही।

इस प्रकार "ग्रामभारती" का काम अपने ढंग से रबी की फसल तक चलता रहा। रबी की फसल-कटाई के समय पूरे 'ग्रामभारती' के लिए एक अच्छा कार्यक्रम हो गया।

यद्यपि पहले साल परस्पर-अविश्वास और कटुता के कारण सामूहिक खेती आखिर में जाकर बरबाद हुई, फिर भी खेती के चलते तथा आम शिक्षण और प्रचार के फलस्वरूप गाँवों में संघर्ष के प्रसंग कम होते रहे। यह बात सहकारिता का वातावरण बनाने के लिए निस्सन्देह एक अनुकूल प्रगति रही है और बच्चों में मिल कर काम करने के फलस्वरूप परस्पर सहकारिता के भी दर्शन होने लगे। सब अपने-अपने घर से सामग्री लाकर 'सहभोज' का अनुष्ठान करते थे। फसल कटाई में सहकार-वृत्ति निश्चित रूप से प्रगट हुई। यद्यपि विजय भाई ने उनसे कह दिया था कि वे अलग-अलग कटाई कर सकते हैं, फिर भी उन्होंने यही तय किया कि वे सामूहिक रूप से कटाई करेंगे और जितनी मजदूरी मिली, उसमें काफी हिस्सा सामूहिक रूप से रख लिया, जिससे वे एक-साथ खर्च कर सकें।

भैंस की पीठ पर

फसल-कटाई समाप्त होने पर "ग्रामभारती" की प्रगति के लिए एक नया अवसर हाथ में आया, वह यह कि खेत खाली हो जाने पर सबके पशु एक तरफ चरने जाने का अवसर। मैं हमेशा ग्रामीण जनता से कहा करता हूँ कि भाई, इस विज्ञान के युग में हरएक को ज्ञान प्राप्त करना ही होगा, इसके लिए यह आवश्यक होगा कि सब लोग स्कूल में जायें।

लेकिन अगर सब लोग स्कूल चले जायेंगे, तो घर-गृहस्थी के काम नहीं चल सकेगा। इसलिए यह जरूरी है कि गाँव भर के सारे घर-गृहस्थी के काम भी स्कूल के काम के रूप में परिणत किये जायें। उन्हें विनोद में यह कहता हूँ कि अगर भैंस की पीठ पर बैठने वाले बच्चों को स्कूल भेजना संभव नहीं हैं, तो स्कूल को ही भैंस की पीठ पर ले जाना होगा।

फसल कट चुकने के बाद इस विनोद को साकार करने का अवसर मिला। "ग्रामभारती" के बच्चों के घर के सब पशुओं को एक तरफ चराने की योजना बनी और शिक्षक भी उनके साथ जाने लगे। ऐसे चराने के स्थान पर जो वर्ग लिया जाता था, उसका नाम 'बहियार वर्ग' रखा गया। 'बहियार' का मतलब है—खेती के लिए मैदान। आसपास के लोगों को यह एक दिलचस्प चीज लगी। उन्होंने कभी इस प्रकार की चीजों का स्वप्न भी न देखा होगा। इन 'बहियार-वर्ग' से आकर्षित कर चारों तरफ से लोग अपने बच्चों को "ग्रामभारती" में शामिल करने लगे और थोड़े ही दिनों में १२ से बढ़कर ४१ तक बच्चों की संख्या हो गयी। अधिक संख्या में बच्चे होने के कारण तीन शिक्षक तीन 'बहियार' में जाने लगे। इस 'बहियार वर्ग' के अलावा भी भैंस की पीठ पर स्कूल जाने की एक प्रक्रिया निकाली गयी, जो बच्चे अलग-अलग भैंस की पीठ पर बैठ कर चराने जाते थे और रात को 'ग्रामभारती' में आकर पढ़ते थे, उनकी किताबों में रस्सी बाँध कर उनके गले में लटका दिया जाता था और वे मस्ती से भैंस की पीठ पर बैठ कर पढ़ा करते थे। इस प्रकार पूरे क्षेत्र में एक अजीब वातावरण फैल गया। जहाँ पहले पशु चराने वाले बच्चे आपस में लड़ने गाली देने तथा दूसरे की फसल बरबाद करने के काम में लगे रहते थे, वहाँ अब वे पशु चराते समय पढ़ाई, अच्छे-अच्छे गीत गाने तथा रामायण का उच्चारण करने लगे। इससे वे "ग्रामभारती" के प्रति क्षेत्र भर के लोगों की दिलचस्पी बढ़ी।

सामन्तवादी मानस

लेकिन बच्चे जो बढ़े, वह इसलिए नहीं कि लोग "ग्रामभारती" के विचार को समझ रहे थे, बल्कि इसलिए कि हम लोगों के नये तरीकों को देख कर उनके दिमाग में अजीब किस्म की अभिरुचि की प्रतिक्रिया होती थी। अतः थोड़े दिन में छात्रों की संख्या ४१ से घट कर १५-१६ हो गयी, लेकिन इस दिलचस्पी के कारण हम लोगों को व्यापक रूप से विचार-प्रचार का प्रसंग मिल गया।

यह सब हुआ, लेकिन बाबू वर्ग के दिमाग से 'मजदूर-स्कूल' की भावना नहीं मिटी। जो लोग "ग्रामभारती" का प्रचार करते थे और मजदूरों के बच्चों को शामिल कराने की कोशिश भी करते थे, वे भी अपने बच्चों को वहाँ नहीं भेजते थे। यद्यपि यह कहते थे कि ऐसा पढ़ाई कहीं नहीं होती है, लेकिन सोचते थे कि मजदूरों के साथ अपने बच्चों को कैसे बैठायें! इसका कारण यह है कि यह क्षेत्र घोर सामन्तवादी मानस से भरा हुआ है।

नयी तालीम की 'टेकनिक'

बाबू लोगों के बच्चों को न भेजने का एक दूसरा भी कारण है। वह यह कि वे मानते हैं कि शिक्षित व्यक्ति को नौकरी करना है और "ग्रामभारती" में नौकरी के लिए कोई 'सर्टिफिकेट' उपलब्ध नहीं है। यह समस्या पिछले २१ साल से नयी तालीम जगत् के सामने निरन्तर खड़ी है। यह ऐसा प्रश्न है, जिस पर नयी तालीम जगत् के समस्त कार्यकर्ताओं को सोचने की जरूरत है। तालीम का लक्ष्य नौकरी है, इस मान्यता का निराकरण क्या है और जब तक इसका निराकरण नहीं होता है, तब तक नयी तालीम का स्वरूप क्या हो, जिससे वर्तमान मान्यता के बावजूद नयी तालीम की प्रक्रियाओं के लिए लोक-सम्मति प्राप्त हो। इस दिशा में सोचने पर मुझको ऐसा लगा कि नयी तालीम की प्रक्रिया अलग से बच्चों को लेकर नहीं हो सकती। अगर पूरे समाज को लेकर नयी तालीम की पद्धति चलेगी, तो समाज की इकाई परिवार ही नयी तालीम की इकाई हो सकती है। इसी विचार के आधार पर शिक्षा-पद्धति की रूपरेखा तैयार हो सकती है। उसी की टेकनिक निकालना, नयी तालीम के कार्यकर्ताओं के लिए बुनियादी कार्यक्रम है।

वास्तविक तालीम

किसी को शिक्षा दी नहीं जाती है। शिक्षा की चाह होने पर उसकी पूर्ति ही वास्तविक तालीम है। हम जब यह सोचते हैं कि हमें नयी तालीम का काम चलाना है और उसकी पद्धति यह होगी, तो निस्सन्देह हमारे दिमाग में अपने तरफ से तालीम देने का विचार है, ऐसा मानना पड़ेगा। अतएव नयी तालीम के लिए आवश्यक है कि वह खोज करे कि देश की जनता चाहती क्या है? निस्सन्देह आज की जनता की उत्कट माँग बच्चों की तालीम है। लेकिन उसका कारण यह नहीं है कि देश का जन-समुदाय यह चाहता है कि बच्चों का सांस्कृतिक विकास हो और उसके माध्यम से देश सुसंस्कृत हो, बल्कि वे मानते हैं कि आज अपने आर्थिक प्रश्न हल करने के लिए नौकरी चाहिए और नौकरी के लिए शिक्षा चाहिए, अर्थात् नयी तालीम का जो लक्ष्य है, वह लक्ष्य जनता का नहीं है। अतः केवल बच्चों की तालीम आज की परिस्थिति में नयी तालीम नहीं हो सकती।

जनता क्या चाहती है?

अब प्रश्न यह है कि जनता चाहती क्या है? वह आर्थिक कारणों से बच्चों को पढ़ाना चाहती है, अर्थात् उनकी चाह आर्थिक समृद्धि की प्राप्ति है। जब तक हमारी तालीम की प्रक्रिया इस लक्ष्य-पूर्ति का माध्यम है, ऐसा साबित नहीं होगा, तब तक उसके लिए लोक-सम्मति प्राप्त नहीं हो सकेगी। यही कारण है कि मैं आजकल कहता हूँ कि गाँव के जितने कार्यक्रम हैं, उन सारे कार्यक्रमों की तरफी ही नयी तालीम है और चूँकि वे कार्यक्रम पूरे परिवार के हैं, इसलिए पूरे परिवार ही विद्यार्थी की इकाई हो सकते हैं, न कि अलग अलग बच्चे। [क्रमशः]

> **नयी तालीम की प्रक्रिया अलग से बच्चों को लेकर नहीं हो सकती। अगर पूरे समाज को लेकर नयी तालीम की पद्धति चलेगी, तो समाज की इकाई, परिवार ही नयी तालीम की इकाई हो सकती है। इसी विचार के आधार पर शिक्षा-पद्धति की रूपरेखा तैयार हो सकती है। उसी की टेकनिक निकालना, नयी तालीम के कार्यकर्ताओं का बुनियादी कार्यक्रम है।**

राष्ट्रीय एकता 'चार्टरों' से नहीं होती

• अहद फातमी

['भूदान तहरीक' पाक्षिक के विद्वान सम्पादक श्री अहद फातमी ने हिंदुस्तान के उन कुछ मुस्लिम नेताओं और अखबारों को सावधान किया, जो मुस्लिम जनता को गुमराह कर रहे हैं। यह लेख जितना इस प्रकार के मुस्लिम नेता और अखबारों के लिए लागू होता है, उतना इस प्रकार के अन्य सम्प्रदायों के नेता और अखबारों पर भी। —सं०]

हिंदुस्तान में रहने वाले हर मुसलमान को कुछ वास्तविकताएं सदैव अपनी दृष्टि के सामने रखनी चाहिए, जैसे—

(१) हिंदुस्तान एक 'सेक्युलर' स्टेट है।

(२) हिंदुस्तान के संविधान ने इस देश के हर नागरिक को, धर्म और जातपाँत के भेद बिना बराबर अधिकार दिये हैं।

(३) अधिकार में यदि कोई कमी रह गई हो तो संविधान में संशोधन या परिवर्धन कर वह कमी पूरी की जा सकती है और अधिकारों के रक्षण के लिए प्रशासन और न्याय के दरवाजे हर नागरिक के लिए खुले हैं।

(४) इस देश पर मुसलमानों का उतना ही अधिकार है, जितना हिंदुओं का है या और किसी दूसरे मजहबों के मानने वालों का।

(५) इस देश की बहुसंख्या चाहे वह मुस्लिम हो या गैरमुस्लिम शान्तिप्रिय तथा मानव-मित्र है।

(६) अधिकार के साथ कर्तव्य भी जुड़ा हुआ है और अधिकार का अधिक अधिकारी वह होता है, जो अपना कर्तव्य भी किया करता है।

मनुष्य को मजहब के खानों में बाँट कर अलग-अलग उन्हें संबोधित करना कोई नैतिक पद्धति नहीं है। फिर भी यह अप्रिय कार्य आज हमें इसलिए करना पड़ रहा है कि हम देख रहे हैं कि इस तरह फिर कुछ दिनों से कुछ मुस्लिम 'नेताओं' ने बहुत ही जोशीले और आवेशयुक्त भाषणों का तांता शुरू कर दिया है, और वे भाषण कुछ मुस्लिम अखबारों में पहले पन्ने पर बड़े-बड़े शीर्षकों के साथ छपने भी लगे हैं।

इन भाषणों के पढ़ने से ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे यहाँ के मुसलमान मानवों में नहीं, बल्कि जंगली हिंस्र पशुओं के बीच जिन्दगी बिता रहे हों, वे चारों ओर भेड़ियों से घिरे हों और हर भेड़िया उन्हें चीर डालने के लिए मुंह खोले बैठा हो। मुस्लिम नेताओं की एक जमात की ओर से इस प्रकार के संबोधन की पद्धति पन्द्रह-बीस साल पहले भी बड़े जोर व शोर से अपनायी गयी थी। उसके परिणाम में पाकिस्तान बना। यह सही हो या गलत, इस चर्चा को छेड़ने से कोई प्राप्ति नहीं। लेकिन इतना जाहिर है कि अब दूसरा पाकिस्तान बनने वाला नहीं है। ऐसी हालत में इस विध्वंसी रास्ते को अपनाने का इसके सिवा दूसरा कोई नतीजा नहीं होगा कि मुसलमान अपने को असुरक्षित प्रतीत करने लगेंगे, बौद्धिक विकलता के शिकार होंगे और उनकी योग्यताओं से देश को और स्वयं उनको जो लाभ पहुँच सकता है, वह नहीं पहुँचेगा।

देश के बँटवारे के बाद हिन्दुस्तानी मुसलमानों की एक बड़ी जमात के सामने एक बड़ा प्रश्नचिह्न था। कुछ तो स्वयं उनके अपने मन की स्थिति के कारण और कुछ हवा का रुख देख कर उनकी समझ में नहीं आता था कि वे क्या करें? वे चिन्ता में चक्कर काटते रहे। किन्तु अब जब कि इस घटना को १५ साल होने आये, और मुसलमानों की नयी पीढ़ी के नौनिहालों के लिए अपनी पूरी रचनात्मक योग्यताओं को समेट कर धैर्य एवं नये निश्चय के साथ देश की रचना एवं उन्नति में भाग लेने का पूरा अवसर है, मुसलमानों के कुछ तथाकथित नेताओं ने मुस्लिम नवयुवकों के मस्तिष्क में अशांति, धैर्यहीनता, तेजोभंग एवं उद्दाम के बीज बोने शुरू कर दिये हैं। यह एक निराश करने वाला चिह्न है।

राष्ट्रभक्त और सम्प्रदायवादी हिन्दुओं को अलग करने वाली रेखा को दृष्टि से ओझल कर तमाम हिन्दुओं को सम्प्रदायवादी बतलाना, न केवल समाजशास्त्र और सामाजिकता के अज्ञान का चिह्न है, बल्कि असीम नैतिक अधःपतन का उदाहरण है।

श्री गोपीनाथ 'अमन', जो स्वास्थ्य खराब होते हुए भी 'अलीदिवस' में भाग लेने के लिए लाहौर प्रस्थान करते हैं और दिल्ली में मुसलमानों के हर मजहबी सम्मेलन और सामाजिक त्यौहार में भाग लेना अपना कर्तव्य मानते हैं, श्री जगन्नाथ आजाद को, जो आज भी उर्दू में कविताएं रचते हैं और राजा महेंद्र प्रताप को, जो प्रतिवर्ष दोनों ईदों की नमाज समुदाय के साथ पढ़ते हैं, उन लोगों का जो समाज-कार्य में मुसलमानों का कोई भेद नहीं करते और जनसंघ, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ, हिन्दू महासभा और रामराज्य परिषद के लोगों को एक लाठी से हाँकना बहुत बड़ा अन्याय और भयानक कार्य पद्धति है। यह बात भी समझने की है कि ये गोपीनाथ, ये जगन्नाथ आजाद, ये राजा महेंद्र और ये अन्य सज्जन 'व्यक्ति' नहीं हैं, जमात हैं, संस्थाएं हैं। सच तो यह है कि हमारे देश के निवासियों की और सारी दुनिया के निवासियों की बहुसंख्या शांतिप्रिय एवं मानव मित्र है। शांतिप्रिय तथा मानव मित्र सज्जन और सभ्य लोग एकत्र और संगठित नहीं हो पाये हैं, यह एक अलग बात है। इसके कारणों पर विचार होना चाहिए और चिन्तनयुक्त चर्चा होनी चाहिए।

हमारे ये "नेता" और ये अखबार मुसलमानों के अधिकारों की हानि की लम्बी-चौड़ी फेहरिस्त। ऐसा करने में कभी नहीं थकते, किन्तु हमें दुःख होता है कि जो मुस्तैदी वे अधिकार हानि की फेहरिस्त तैयार करने में दिखलाते हैं, उसका दसवाँ हिस्सा भी मुसलमानों के कर्तव्यों का संकेत सूचन करने में वे नहीं दिखाते, जब कि अपना कर्तव्य करने के बाद ही अधिकार माँगने का किसी मनुष्य को नैतिक अधिकार हो सकता है। राष्ट्रीय एकता एवं भावनात्मक एकता के प्रश्न पर भी शिकायतों और माँगों की फेहरिस्तें सामान्यतः दृष्टि से गुजरती हैं, पर यह एक समझने की बात है कि सही अर्थ में एकता और भावनात्मक एकता निर्माण करना न तो अकेले सत्ता के बस की बात है, न राजनैतिक पक्षों के। वह तो तब पैदा होगी, जब सरकारी, अर्धसरकारी और गैरसरकारी स्तर पर देश की रचना एवं उन्नति के लिए होने वाली सब क्रियाओं में सर्व वर्ग और कुल मजहब के लोग मिल कर समान भाग लेंगे। एकता और भावनात्मक एकता 'चार्टरों' से प्राप्त नहीं होती। एकात्मकता और भावनात्मक ऐक्य तब प्राप्त होगा, जब हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई, बुद्ध, जैन, पारसी, सवर्ण एवं हरिजन, 'ऊँची' जात वाले और 'नीची' जात वाले, कारखानों में और खेत खलिहानों में कंधे से कंधा मिला कर काम करेंगे, जब पंचायतों और कोआपरेटिव यूनियनों (सहकारी संस्थाओं) में एकसाथ बैठ कर योजनाएँ बनायेंगे और जब एक-दूसरे के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन में घुलमिल जायेंगे।

हमारे कहने का यह उद्देश्य नहीं है कि मुसलमानों की कोई समस्या ही नहीं है या उन्हें अपनी अधिकार-हानि सहन कर लेनी चाहिए, या अपने अधिकार छोड़ देने चाहिए। हमारे कहने की गरज केवल यह है कि ऐसे सवालों को मुसलमान केवल मुसलमानों के सवाल न समझें, वे उसे सारे हिंदुस्तान का और मानवता का सवाल मानें। ऐसा रुख लेने पर गैरमुस्लिमों के बहुत बड़े समूह का समर्थन एवं सहायता उन्हें प्राप्त होगी और सफलता उनके चरण चूमेगा। पूरे देश के हित को सामने रख कर मुसलमान सोचेंगे, तो उनका एक भी प्रश्न ऐसा नहीं होगा, जिसको देश की बहुसंख्यक जनता का समर्थन प्राप्त न हो। ऐसे प्रश्नों को जिनको देशव्यापी समर्थन प्राप्त हो सकता है, केवल मुसलमानों का प्रश्न बना कर संघर्ष उत्पन्न करना सयाना नेतृत्व नहीं है।

हर समाज की तरह हमारे समाज में भी फूल के साथ काँटे भी हैं! काँटों को अलग करना और फूलों से आँचल भरना राष्ट्र के नेताओं और अखबारों का काम होना चाहिए। मुसलमान नेताओं और उर्दू अखबारों की एक जमात इसके विपरीत काम कर रही है, इसका हमें दुःख है। यह एक भयानक प्रवृत्ति है। मुसलमानों को समझना और इससे बचना चाहिए, यह हमारी दरख्वास्त है।

क्षुरस्य धारा

पूछा : सातत्य कैसे आये?

सोचा : जब काम के बारे में आस्था हो, जब काम स्वरूप हो; लेकिन दिव्य हो। जब पुनःपुनः संकल्प करने का मौका मिलता है। आस्था (फेथ) वह चीज है, जो घोर विपद में भी टिकाती है। एक बार एक काम पर अतिशय जोर लगाने से उसकी प्रतिक्रिया होने का भी सम्भव है। स्वरूप नित्य कार्य में समत्व की गुंजाइश है, जो सातत्य में जरूरी है। लेकिन फिर भी मानव गिर सकता है। इसीलिए पुनः-पुनः संकल्प लेने की आवश्यकता है।

—नारायण देसाई

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

आजकल हम 'ब्रह्मपुत्र' के दक्षिण किनारे, कामरूप के जंगलों में घूम रहे हैं। बहुत घना जंगल है। दोनों तरफ दीर्घायु वृक्ष और आसमान को स्पर्श करने वाले गिरि हैं। बाबा पूछने लगे, 'यहाँ शेर वगैरह हैं या नहीं?' शेर तो नहीं, लेकिन शेर के पदचिह्न हमने देखे। शेर के दर्शन की भी बहुत अभिलाषा थी। लेकिन पदयात्रा में मिलने वाले अन्न पर पले हुए इन देहधारियों का दर्शन शेर नहीं चाहता था।

ठीक साढ़े तीन बजे हम निकले थे। रोज के हिसाब के अनुसार छः बजे तक पड़ाव पर पहुँच जाना चाहिये था। लेकिन रास्ते में पता चला कि नदी में पानी बढ़ गया है और वह रास्ता बन्द हो गया है। अब छः मील का रास्ता ग्यारह मील हो गया और हम साढ़े आठ बजे पड़ाव पर पहुँचे। कड़ी धूप में थकान तो बहुत आयी थी, लेकिन बीच-बीच में होने वाली चर्चा से भूख प्यास की तृप्ति हो जाती थी।

"एक बार हमको एक लड़की की माँ की चिट्ठी आयी थी। लड़की हमारे आश्रम में थी। माँ ने लिखा कि लड़की चिट्ठी नहीं भेजती, तो क्या माँ को चिट्ठी न भेजना ठीक है?"

"माँ को चिंता होगी, इसलिए शायद चिट्ठी नहीं भेजी होगी।"

"चिंता करने लायक चिट्ठी न भेजे, लेकिन चिट्ठी न भेजने में क्या वैराग्य है?...ईसा मसीह को जब फाँसी दी गयी, क्रास पर लटकाया गया, तब आखिर में उसने सात उद्गार निकाले। पहला उद्गार था लोगों के बारे में, जिन्होंने उसको फाँसी पर लटकाया था। ईसा मसीह ने भगवान् से प्रार्थना की कि हे प्रभु, ये सब लोग अज्ञानी हैं, उनको क्षमा कर। यह हुआ पहला उद्गार। अब दूसरा उद्गार, ईसा मसीह के साथ-साथ तीन-चार चोरों को फाँसी दी जा रही थी। उनमें से एक चोर ने ईसा मसीह की बहुत निंदा की कि 'तू इतना कहता है, अब हमारे लिए कुछ कर।' दूसरे ने कहा, 'हे भगवन्, मुझसे गलती हुई, मुझे क्षमा कर।' ईसा मसीह ने उस चोर के लिए प्रार्थना की कि 'मैं स्वर्ग में जाऊँगा तब तुम्हारा स्थान मेरे पास रहेगा।' फिर तीसरा उद्गार है, उसका शिष्य जॉन सामने खड़ा था, और भी दो-चार भाई-बहनें खड़ी थीं, उनमें उसकी माँ भी थी। ईसा मसीह ने जॉन से कहा, 'हे जॉन, यह तुम्हारी माँ है।' माँ भी सामने थी और शिष्य भी सामने था। चौथी बार उसने भगवान् से प्रार्थना की, वह एक काव्य ही है। फिर पाँचवीं दफा बोला कि 'मुझे प्यास लगी,' तो आसपास के लोगों ने उसको पानी दिया। छठी बार वह बोला, 'नौ इट इज फिनिश्ड'—अब यह खतम हुआ है। सातवाँ उद्गार है, 'हे प्रभु, मैं अपने को अब तुझे समर्पण कर देता हूँ।' कितना 'ह्यूमन', मानवीय है!

"पहले एक बार ईसा मसीह के माँ-बाप उससे मिलने के लिए आये थे। लोगों ने उसको कहा कि तुम्हारे माँ-बाप तुमसे मिलने के लिए आये हैं। तो ईसा मसीह ने कहा कि 'ये सब लोग मेरे माँ-बाप हैं।' उस समय माँ को मिलने से इन्कार कर दिया। इतना वैराग्य तब था! लेकिन आखिर के क्षण जब माँ को देखा, तब जॉन को कहा कि 'यह तुम्हारी माँ है,' याने इसकी जिम्मेदारी तुम्हारी है। माँ सामने थी, इसलिए शायद उसको खयाल आया। माँ सामने न होती तो शायद उसका ध्यान नहीं जाता, या जाता भी। संतों के बारे में हम कुछ 'जजमेंट' नहीं कर सकते। लेकिन बचपन में हमने जब अलग-अलग जगह ईसा मसीह के विषय में पढ़ा था, तब इन दो बातों ने हमारे चित्त पर असर किया था—'ये लोग अज्ञानी हैं, उन्हें तू क्षमा कर' और 'यह तुम्हारी माँ है।' हमने सबका सार, ये सात बातें निकालीं। हमको यह बहुत ही 'ह्यूमन' लगता है। वैराग्य तो है, फिर भी 'ह्यूमन' है।"

* * *

आजकल ब्रह्मविद्या मंदिर की बहनें हमारे साथ हैं। रोज सुबह उनके साथ चर्चा होती है। आज बाबा के हाथ में 'ज्ञानदेव-चिंतनिका' थी। बाबा इस 'क्लास' का वर्णन करते हैं कि "हमारा क्लास ऐसा है कि इसमें बिल्कुल अशिक्षित मनुष्य भी बैठ सकता है और बड़ा विद्वान भी बैठ सकता है। जैसी बारिश आती है, तो पहाड़ पर भी आती है और जमीन पर भी आती है, वैसे हमने 'एवरीबॉडीज' हित'—एक के लिए कहते हैं, वह सबके हित का होता है। हरएक अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार ले सकता है।"

फिर भजन पर भाष्य आरंभ हुआ। भजन के पद गाये जाते थे और साथ-साथ भजन में से एकाध शब्द समझाते हुए याद आये हुए दूसरे अनेक भजन भी गाये जाते थे। एक के बाद एक वह भजन-मालिका सुनते-सुनते हम दंग रह गये!

"पाहतां या डोळां, परि न दिसे काहीं केला
व्यापुनिया ठेला, बाहिजु भीतरीं।
तो पद-पिंड अतीतु, भव-भाव-विरहितु
बाप रखुमादेवीवरु विठ्ठलु हृदयांतुरया।"

"ऐसे एक-एक भजन को हम लाख-लाख रुपये दे सकते हैं। 'पद-पिंड अतीतु'—पद याने आत्मा और पिंड याने शरीर, इन दोनों से भिन्न, क्षराक्षरातीत। 'भव-भाव-विरहितु'—इसका हम ऐसा तर्जुमा करते हैं—'बियोण्ड बीइंग एण्ड बीकमिंग'। 'बीइंग' याने जो आत्मस्वरूप है याने वह भव का अर्थ हुआ और 'बीकमिंग' याने सब दुनिया जो है याने भाव। दूसरे शब्दों में उत्पत्ति व स्थिति, दोनों भाव में लेना होगा। अब तीसरा अर्थ भवभावरहित याने संसार के अस्तित्व का जहाँ संबंध ही नहीं ऐसा। इतने अलग-अलग अर्थ बता दिये, याने इतना अर्थघन शब्द है।

'व्यापुनिया ठेला, बाहिजु भीतरीं।' 'बाहिजु' याने बाह्य। तुलसीदास कहते हैं, 'रघुपति अनुजहि आवत देखी, बाहिज चिंता कीन्ही विसेषी'—प्रभु रामचंद्र ने सीता को वन में छोड़ कर आते हुए अपने अनुज को देखा और उन्होंने चिंता का नाटक किया, बाह्य चिंता प्रकट की। प्रभु तो अनासक्त थे...।"

बोलते बोलते बाबा रुक गये और आँखों से आँसू आये! दो क्षण सब शांति में गये और फिर प्रवाह आगे बढ़ने लगा—

पाहतां या डोळां, परि न दिसे काहीं केला—इन आँखों से देखने गये, लेकिन दिखा नहीं। इन आँखों से कैसे दिखेगा? इन आँखों से याने? 'गीताई' में भगवान् ने अर्जुन को कहा है—

"परि तू चर्म-चक्षूने पाहू न शकसी मज घे
दिव्य दृष्टि ही माझा ईश्वरी योग तूं पहा"

ऐसा यह रूप चर्म-चक्षु से दिखा नहीं... वह तो बाहर भीतर व्याप्त है। क्षराक्षर है और उत्पत्ति स्थिति के परे है। ऐसा यह भगवान् सबके हृदय में विराजमान है। वहीं उसका दर्शन होगा।

ज्ञानदेव सगुण और साकार का आधार छोड़े बिना निर्गुण निराकार में जाते हैं। यह उनकी खूबी है। कुछ निर्गुणीय होते हैं, तो कुछ सगुणीय होते हैं। जो निर्गुणीय होते हैं, वे सगुणीयों के लिए दिलचस्पी नहीं लेते और जो सगुणीय हैं, वे निर्गुणीयों के लिए दिलचस्पी नहीं लेते। यह एकांगी चिंतन बेकार है।"

ज्ञानदेव के माहौल में हम इतने हम-रंग हो गये थे कि 'विष्णुसहस्रनाम' के लिए कमरे में लोग इकट्ठे हुए हैं, इसका हमें भान ही नहीं था।

* * *

शाम को ऐसे ही बाबा के पास बैठे हुए थे। महादेवीताई से ऐसे ही खाने-पीने के बारे में कुछ बातें हो रही थीं। हास्य-विनोद में हम भी शामिल थे। अचानक बाबा ने मेरी कापी में से एक कागज लिया और उस पर कुछ लिखने लगे और मुझे कहा, 'इस पर दस्तखत करो।' मैंने मजमून पर से नजर दौड़ायी, 'हे भगवान्, इस पर दस्तखत करूँ! इससे तो शांति-सेना पत्र पर हस्ताक्षर करना आसान है!' वह एक प्रतिज्ञा-पत्र था—"आज से मैं कभी भी बीमार न पड़ने का प्रयत्न बुद्धिपूर्वक जागरूकता से प्रदान करूँगी।" बाबा में वैसे बीमार तो कोई भी नहीं होता, लेकिन मैं सिल्चर की रहने वाली हूँ, इसलिए मुझे कमजोर माना गया है। इसलिए हस्ताक्षर का पहला सम्मान मुझे मिला। प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर न करना, याने अपनी कमजोरी पर मिक्कामोर्तब ही था। इसलिए चुपचाप प्रतिज्ञा पर हस्ताक्षर किये। बाद में एक एक करके सब यात्रियों के हस्ताक्षर लिये गये और अब वह कीमती कागज बाळूभाई की सन्दूक में सुरक्षित रखा हुआ है। काश, अगर बीमार होने की स्वतंत्रता खो न बैठते! प्रतिज्ञा-पत्र पर हस्ताक्षर हो ही रहे थे कि कि बाबाजी उन्हें बुलाने के लिए आयीं। प्रार्थना-प्रवचन का समय हो रहा था।

आज के गाँव में 'गारो' लोग ज्यादा थे। सुबह ग्यारह बजे बाबा से मिलने के लिए आये थे। चर्चा हुई थी, लेकिन चर्चा का तरीका आज उल्टा था। प्रश्न करने वाले थे बाबा और सवालों का जवाब देने वाला था आदिवासी लोगों का नायक। सवाल-जवाबों के बाद बाबा ने उनसे 'बाइबिल' की प्रार्थना भी करायी (इन लोगों का धर्म क्रिश्चन है।) और बाद में खुद गारो भाषा में की बाइबिल पढ़ी। गारो भाषा की लिपि तो रोमन होती है। बाबा बाइबिल पढ़ रहे थे और वे आदिवासी एकमन होकर वह सुन रहे थे। हम लोगों को तो एक अक्षर भी समझ में नहीं आ रहा था। लेकिन बाबा उच्चारण समझ लेते थे और साथ-साथ कुछ अर्थ भी समझ लेते थे।

प्रार्थना प्रवचन में इन लोगों को बाबा ने कहा, "गारो खूब श्रद्धावान और मेहनती लोग हैं। हम जो काम कर रहे हैं, वह चीज तो ईसा मसीह ने कही थी—पड़ोसियों पर प्रेम करो। जितना प्रेम मेरा अपने पर है, उतना दूसरे पर करना है। यह कैसे करना? इसके लिए उपाय यह है कि जिस तरह तुम खुद अपने से बरतते हो, वैसे दूसरे के साथ बरतना शुरू करो। भले अपने पर जितना प्रेम है उतना दूसरे पर न हो। उतना प्रेम पैदा न होता हो तो भी जिस तरह अपने खुद पर प्रेम होता है, वैसा उन पर दिखाने का नाटक करो। नाटक करते-करते वह सध जायेगा। ईसा मसीह ने कहा, 'तुम्हारे पास अगर दो कोट हैं, तो एक दूसरे को दे दो।' यह बिल्कुल साधा आरम्भ है, जो प्रेम की धारा अपने कुटुम्ब के लिए छूटती हो उतनी दूसरों के लिए भले न छूटती हो, लेकिन ऐसा करो। उसमें प्रेम का अभ्यास होगा। हर चीज का अभ्यास करना पड़ता है। बच्चा चलता है, बोलता है तो अभ्यास करके। वैसा प्रेम का भी अभ्यास करना पड़ता है। ग्रामदान यह प्रेमाभ्यास है। भूमिहीनों को जमीन दे दो तो प्रेम का आरंभ हो गया। पहला पाठ ग्रामसभा बनाई। दूसरा पाठ मिल्कियत छोड़ी। तीसरा पाठ मिलजुल कर रहे, तो प्रेम का पूरा अभ्यास हो गया।"

धीरे धीरे अंधेरा छाने लगा। कमरे में लालटेन जले। अपने-अपने कामों से निवृत्त होकर सब बाबा के कमरे में इकट्ठे हुए। प्रार्थना की तैयारी हुई। शारदा कहने लगी, "कल का पड़ाव पदमनगरी है। यहाँ से सात मील दूर, रास्ता अच्छा है।"

[जिला कामरूप, २१ जुलाई, '६२]

विदेशों में शांति और अहिंसा के प्रयोग

अणु-परीक्षण क्षेत्र में 'एव्रीमैन' द्वितीय

अणुशस्त्रों के परीक्षण के विरोध में प्रदर्शन करने वाला "एव्रीमैन" नामक दूसरा जहाज गत २६ जून को जानस्टन आइलैण्ड के पारमाणविक परीक्षण-क्षेत्र में प्रविष्ट हुआ। २८ फीट लम्बा यह जहाज वर्जित क्षेत्र के भीतर ४ दिनों तक चलता रहा। उसके बाद संयुक्त राज्य अमेरिका के तटीय रक्षकों ने इसे गिरफ्तार किया और इस पर सवार तीनों यात्रियों पर अदालत द्वारा वर्जित प्रदेश में अनधिकार घुसने का अभियोग लगाया गया।

यह जहाज कैलीफोर्निया के तट से २६ मई को कुछ निश्चित शर्तों के साथ रवाना हुआ था। गिरफ्त में के आने के बाद यह जहाज संयुक्त राज्य अमेरिका के नियन्त्रण में है। मुकदमे की सुनवाई की तारीख ५ जुलाई निश्चित हुई थी। उस दिन होनोलूलू में उस नियंत्रक अनुज्ञापत्र की वैधता पर विचार किया गया, जिसके द्वारा उन्हें उस क्षेत्र में प्रवेश करने की आज्ञा मिली थी। मुख्य प्रश्न यह था कि उस पत्र द्वारा उन्हें वर्जित प्रदेश में घुसने की आज्ञा दी गई थी या वर्जित प्रदेश तक जाने की?

इस जहाज में कुल तीन व्यक्ति हैं, जिनका परिचय इस प्रकार है :

(१) मान्टे स्टेडमैन : आयु ४२ वर्ष, नायक। आप एक कुशल चिकित्सक हैं। आपने १९४६ में दक्षिणी कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय से एम० डी० की डिग्री प्राप्त की। इस समय आप कैसर फाउण्डेशन अस्पताल में आँख, कान, नाक और गले के चिकित्सा-विभाग के डाइरेक्टर हैं। आप गत ८ वर्षों से अपनी पत्नी और चार पुत्रों के साथ कैलीफोर्निया के मैरिन काउन्टी में निवास कर चुके हैं। आप सैनफ्रान्सिस्को फ्रेण्ड्स मीटिंग के सदस्य भी हैं।

(२) सी० जार्ज वेनोलो : आयु ३६ वर्ष। आप सैनफ्रांसिस्को स्टेट कालेज में सहायक अध्यापक हैं, जहाँ आप सृजनात्मक लेखन-योजना में कार्य करते हैं। आपने १९४९ में हारवर्ड यूनीवर्सिटी से स्नातक परीक्षा पास की। आपने क्यूबेक और ब्राउन विश्वविद्यालयों में दर्शनशास्त्र पर शोध-कार्य भी किया। आप एक कुशल सैनिक भी हैं। इन्होंने सर्वप्रथम ट्रांस ऐटलान्टिक ट्राइमैरिन क्रासिंग में १९६० में भाग लिया था।

(३) फ्रैंकलिन जान : *आयु ५४* वर्ष। आप अमेरिकन फ्रेंड्स् सर्विस कमेटी के दक्षिणी-पश्चिमी क्षेत्र के क्षेत्र-सचिव हैं। आपने द्वितीय महायुद्ध में नैतिक आधार पर युद्ध का विरोध किया था।

२३ जून, सन् १९६२ से ही तटीय रक्षकों की नजर इस जहाज पर थी, क्योंकि इसी दिन होनोलूलू के अलावाई बोट हार्बर से ४० दिनों के लिए रसद लेकर यह जहाज रवाना हुआ था। रवाना होने के कुछ ही देर बाद फेडरल जज श्री मार्टिन प्रिंस ने एक आज्ञा निकाली, जिसमें वर्जित प्रदेश में प्रवेश-निषेध की आज्ञा दी गई थी।

इस जहाज के साथ ही साथ आइरन उड नामक दूसरा जहाज भी चल रहा था। जिस दिन यह जहाज होनोलूलू से रवाना हुआ, उसी दिन होनोलूलू रेडियो ने मेटागोरडा नामक जहाज को यह सूचना शीघ्रातिशीघ्र 'एव्रीमैन द्वितीय' को देने के लिए रवाना किया कि वर्जित प्रदेश में जहाज यात्रा न करे, जो कि वहाँ से २०० मील से भी कम दूर था।

तीन दिन बाद जब जहाज वर्जित प्रदेश में पहुँचा, तब सरकार को महसूस हुआ कि इस प्रकार के प्रतिरोध का असर परीक्षण पर पड़ेगा। *साथ ही गलती से नियंत्रण आज्ञा में जानस्टन आइलैंड के चौगिर्द* ४७० मील के व्यास की जमीन वाजत भूमि बतलायी गयी थी, जब कि 'ज्वाइन्ट टास्क फोर्स ८'—जिसके नेतृत्व में परीक्षण हो रहे हैं—ने ५३० मील व्यास की जमीन वर्जित भूमि माना है।

अतिरिक्त वर्जित क्षेत्र के भीतर प्रवेश कर लेने के बाद नाविकों ने जहाज रोक दिया और ९ जुलाई को सैनफ्रांसिस्को में होने वाले मुकदमे का फैसला सुनने की प्रतीक्षा करने लगे। इस नाविक दल ने पहले ही कहा था कि वे कभी भी प्राप्त आज्ञा की शर्तों का उल्लंघन नहीं करेंगे। *ये लोग अतिरिक्त वर्जित क्षेत्र में प्रवेश के* लिए स्वतंत्र थे, क्योंकि उस आज्ञा में ऐसी कोई बात नहीं थी।

इस प्रकार कोई कदम उठाने में असमर्थ होने की वजह से अमेरिकी सरकार ने श्री हरमैन ट्रूम को, जो अमेरिका के एटार्नी हैं, आज्ञा दी कि वे ऐसा आज्ञापत्र मँगायें, जिसमें नये क्षेत्र की संशोधित सीमा का उल्लेख हो। इसमें दो दिन लग गये और तब कहीं जाकर इन प्रदर्शनकारियों को हटाया गया।

दूसरे दिन, २९ जून को प्रातः 'एव्रीमैन' के नाविकों ने पाया कि रात भर के *अन्दर लहरों ने उन्हें अतिरिक्त वर्जित प्रदेश* से बाहर कर दिया है। इसके बाद मेटागोरडा नामक जहाज दिखाई पड़ा, जो संशोधित आज्ञा लेकर 'एव्रीमैन' जहाज तक *आया।* जब प्रदर्शनकारियों ने सन्देश लेना अस्वीकार कर दिया, तब यह आदेश 'एव्रीमैन' जहाज के डेक पर गिरा दिया, इस बीच डाक्टर स्टेडमैन ने पुनः वह आदेश मेटागोरडा में वापस भेज दिया।

इस बीच मेटागोरडा ने होनोलूलू से सम्बन्ध स्थापित किया और सूचना दी कि जहाज और नाविकों की गिरफ्तारी का आदेश शीघ्र हवाई जहाज से रवाना किया जाय। दूसरी ओर वर्जित प्रदेश के भीतर जाने के लिए 'एव्रीमैन' रवाना हुआ और करीब १० मील भीतर भी चला गया।

फिर मेटागोरडा नामक जहाज ने पीछा किया और मार्शल को 'एव्रीमैन' जहाज के डेक पर उतारा। मार्शल ने नाविकों को अपने साथ चलने के लिए आज्ञा दी।

"क्या हम लोग गिरफ्तार किये जा रहे हैं?"—स्टेडमैन ने पूछा।

"नहीं।"—मार्शल ने उत्तर दिया।

"यदि हम लोग न चलें तो?"

"आप लोगों को जबरदस्ती ले जाया जायगा।"

फिर नाविक उठे और मार्शल की आज्ञानुसार चल दिये और 'एव्रीमैन' जहाज "आइरन उड" नामक जहाज के साथ बन्दरगाह तक वापस लाया गया। प्रदर्शनकारियों के साथ व्यवहार भी अच्छा किया गया।

वर्तमान परीक्षण-श्रृङ्खला का उच्च आकाशीय परीक्षण ४ या ५ जुलाई को होने वाला था, जो ९ तारीख को हुआ। *इस परीक्षण से प्रशान्त महासागर में* ३२ घन्टों तक परिवहन संचार बन्द रहा। हवाई द्वीप के रहने वालों को भी आदेश दिया गया है कि वे किसी भी यन्त्र की सहायता से यह विस्फोट देखने का प्रयत्न न करें, नहीं तो आँखों को खतरा है।

ऐसा लगता है, जैसे इस 'एव्रीमैन' नामक जहाज की उपस्थिति से ही इस परीक्षण में देर हुई।

'दूसरे एव्रीमैन' जहाज की योजना को कार्यान्वित करने का विचार 'प्रथम एव्रीमैन' के नाविकों को ३० दिन की सजा हो जाने के तुरन्त बाद हुआ। गत ८ जून को सैनफ्रांसिस्को के फेडरल कोर्ट ने 'एव्रीमैन प्रथम' के नाविकों पर क्रिसमस आइलैंड के इर्दगिर्द वर्जित प्रदेश में अनधिकार घुसने *का अभियोग लगा कर ३० दिन* कैद की सजा सुनायी। साथ ही जज ने इस जहाज को वर्तमान परीक्षण-श्रृङ्खला तक वर्जित प्रदेश में न ले जाने के लिए आज्ञा दी। जज ने अपने फैसले में यह भी लिखा कि 'यह जानते हुए कि आपके अणु परीक्षणों से सम्बन्धित विचार और अहिंसात्मक प्रतिरोध के पीछे छिपे दृढ़ उद्देश्य यथोचित, आदरणीय और प्रशंसनीय हैं, फिर भी इस राष्ट्र के नियमों का भी समादर *करना होगा।*'

प्रथम 'एव्रीमैन' के तीनों नाविक—हेरोल्ड ब्यालिंग्स, एडवर्ड लेजार और इवान डी० यॉक—सैनफ्रांसिस्को काउन्टी जेल में बन्द थे, जो ७ जुलाई को रिहा कर दिये गये। 'एव्रीमैन' नामक जहाज भी गवर्नमेन्ट आइलैण्ड कोस्ट गार्ड स्टेशन से मुक्त कर दिया गया।

'एव्रीमैन' नामक दूसरा जहाज, जो होनोलूलू से ११ जून को रवाना होने वाला था, उसे एक नोटिस मिली, जिसके अनुसार नाविकों को ३ दिन बाद अदालत में हाजिर होने का हुक्म था। अतः यात्रा स्थगित कर दी गई। पर मुकदमे की सुनवाई का दिन बाद में तारीख २१ तक के लिए स्थगित कर दिया गया। २१ तारीख को जज ने पाया कि सरकार द्वारा यात्रा रोकने के लिए दी गई दलील सन्तोषप्रद न थी, अतः २४ घंटे का और समय इस*लिए दिया कि सरकार अपना पक्ष सिद्ध* कर दे। न्यायाधीश महोदय ने 'एटोमिक एनर्जी कमीशन' की आलोचना करते हुए यह स्पष्ट किया कि लोग समुद्र में यात्रा करने के लिए स्वतन्त्र हैं। साथ ही न्यायाधीश महोदय ने 'ए० ई० सी०' की इस दलील को भी अस्वीकार कर दिया कि वे वर्जित प्रदेश की ओर बढ़ रहे जहाज को रोकने की आज्ञा दें।

कैलीफोर्निया के एटार्नी जनरल श्री ए० एल० वीरिन ने इस नियन्त्रण के खिलाफ मुकदमा दायर किया है, जिसकी सुनवाई सैनफ्रांसिस्को के नौवीं सर्किट कोर्ट में ९ जुलाई को होने वाली थी। ऐसी उम्मीद है कि दूसरे 'एव्रीमैन' को छोड़ दिया जाय। उस स्थिति में यह भी बहुत कुछ सम्भव है कि यह प्रदर्शन सर्व सेवा संघ, अन्य गांधी-संस्थाओं और भारतीय नाविकों के मार्गनिर्देशन में चले।

ऐसी भी सम्भावना है कि *तीसरा* 'एव्रीमैन' नामक जहाज *'सी एन वी ए'* के संरक्षण में लन्दन से लेनिनग्राड-रूस के *पारमाणविक परीक्षण का विरोध करने के* लिए जाय।

इन 'एव्रीमैन' प्रदर्शनों का मुख्य उद्देश्य स्पष्टतम् मानवीय शब्दों में पारमाणवीय परीक्षणों की विभीषिका व्यक्त करना है। इस आयोजन का मुख्य उद्देश्य यह है : यदि तुम उस समय परीक्षण करके हमारी हत्या नहीं करना चाहते, जब हम परीक्षण-क्षेत्र के भीतर हैं, तब हम जैसे हजारों लोगों को रेडियो धर्मिता से क्यों *मार डालना चाहते हैं!* कहने की जरूरत नहीं कि इस प्रकार के परीक्षणों से वह दिन बहुत ही शीघ्र आने वाला है, जब युद्ध छिड़ेगा और सारी की सारी मानवता का *सर्वनाश होगा!*

इस प्रकार 'कमेटी फार नान-वायलेंट एक्शन' संयुक्त राज्य अमेरिका और रूस से प्रार्थना करती है कि *बिना किसी शर्त* के निःशस्त्रीकरण प्रारम्भ कर दें। इस प्रकार निःशस्त्रीकरण की होड़ *प्रारंभ हो जायगी, जो वर्तमान विध्वंसात्मक शस्त्री*करण की होड़ के सर्वथा उल्टी है।

(मूल अंग्रेजी, 'सी-एन-वी-ए' के सौजन्य से)

सर्वोदय-पर्व : ११ सितम्बर से २ अक्टूबर

११ सितम्बर (विनोबा-जयन्ती) से २ अक्टूबर (गांधी-जयन्ती) तक का समय देश भर में 'सर्वोदय-पर्व' के तौर पर मनाया जाय, ऐसा सुझाव है। इस युग की समस्याओं के समाधान के लिए सर्वोदय-विचार को गांधी और विनोबा ने एक नया स्वरूप दिया है। अतः इन दोनों के जन्म-दिनों तथा उनके बीच की अवधि का उपयोग लोक-मानस को सर्वोदय-विचार की ओर प्रवृत्त करने में हो, यह उचित ही है।

सर्वोदय कोई वाद या सीमित विचार नहीं है। वास्तव में तो मनुष्य केवल अपने स्वार्थ की चिन्ता न करके सबकी भलाई का खयाल रखे तथा अपने और समाज के प्रति सचाई का व्यवहार करे, यही सर्वोदय है।

इन २२ दिनों की अवधि में 'सर्वोदय-पर्व' के जरिये ऐसा वातावरण बनाया जाय, जिससे सर्वोदय विचार के अध्ययन, मनन और चिन्तन की तथा सर्वोदय की कसौटी पर अपने-अपने काम को परखने की, प्रेरणा हरएक को हो। जिस तरह अन्य कई व्यापक उत्सव, पर्व या त्योहार हैं, जिनके नाम मात्र से अमुक तिथियों या कार्यक्रमों का चित्र चित्त पर अंकित हो जाता है, उसी तरह 'विनोबा-जयन्ती' और 'गांधी-जयन्ती' के बीच का यह काल 'सर्वोदय-पर्व' के रूप में प्रचलित हो, तो सारे आन्दोलन में नयी चेतना भरने में उसका उपयोग हो सकता है।

सर्वोदय एक समग्र जीवन-दर्शन है, यह विचार जीवन के सारे पहलुओं को छूता है, इस दृष्टि से 'सर्वोदय-पर्व' किसी बंधे-बँधाये कार्यक्रम तक सीमित रहे, यह जरूरी नहीं है। अपनी-अपनी शक्ति, सामर्थ्य, रुचि और परिस्थिति के अनुसार अलग-अलग प्रकार के कार्यक्रम हाथ में लिये जा सकते हैं। इन सारे कार्यक्रमों का ध्येय सर्वोदय के मूलभूत विचार की ओर ध्यान आकर्षित करने का होना चाहिये। भूदान, खादी-ग्रामोद्योग या अन्य रचनात्मक कार्यकर्ता तथा संस्थाएँ अपनी-अपनी दृष्टि से विशिष्ट कार्यक्रम बना सकती हैं, पर उन सबमें विशेष भार उस-उस कार्यक्रम की वैचारिक भूमिका स्पष्ट करने का और उसे अधिकाधिक लोगों तक पहुँचाने का हो। कार्यक्रमों के कुछ प्रकार नीचे सुझाये जाते हैं :—

कार्यक्रम

(१) 'सर्वोदय पर्व' के दिनों में जगह-जगह छोटे-बड़े कार्यकर्ता पदयात्राएँ करें। नगर-पदयात्राएँ, अर्थात् शहरों में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र की पदयात्रा तथा घर घर से सम्पर्क भी इसमें शामिल है। इन पदयात्राओं में साहित्य बिक्री का तथा पत्र पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने का विशेष कार्यक्रम रहे। कोशिश यह होनी चाहिए कि देश के हर जिले में और हर शहर में कम से-कम एक पदयात्रा जरूर हो। पदयात्राओं में लोगों को भी शामिल करने का प्रयत्न हो।

(२) पदयात्रा के अलावा कार्यकर्ता पर्व की अवधि में जहाँ कहीं भी जायँ, अपने साथ थैले में कुछ-न-कुछ सर्वोदय-साहित्य अवश्य रखें। इसे किसी भी समय वे लोगों को दिखा सकते हैं, उसका परिचय दे सकते हैं तथा बेच भी सकते हैं।

उपर्युक्त दोनों कार्यक्रमों से सर्वोदय-कार्यकर्ताओं की व्यक्तिगत निष्ठा प्रकट होगी। साथ ही साथ स्थानीय परिस्थिति और उपलब्ध शक्ति के अनुरूप यहाँ दिये हुए सामूहिक और सार्वजनिक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जा सकता है :—

(३) विचार-गोष्ठियाँ तथा व्याख्यान-मालाएँ।

(४) शहरों, कस्बों तथा सार्वजनिक स्थानों पर छोटी-बड़ी साहित्य प्रदर्शनियाँ।

(५) सद्विचारों को प्रेरित करने वाले नाटक, भजन, कीर्तन आदि सांस्कृतिक कार्यक्रम।

(६) शिक्षा-संस्थाओं में निबन्ध या वक्तृत्व प्रतियोगिताएँ।

(७) ग्राम-पंचायतों, ग्राम और नगर के पुस्तकालयों, बाल-मण्डल, व्यापार-मण्डल, विकास-खण्ड आदि संस्थाओं के संचालकों से मिल कर साहित्य प्रचार के बारे में उन्हें अनुकूल कर उन संस्थाओं से सम्बन्धित विशेष वर्गों या क्षेत्र में साहित्य-प्रचार तथा पत्र पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने का आयोजन किया जाय।

(८) खादी-संस्थाओं का देश के हजारों गाँवों तथा कस्बों से सम्पर्क है, अतः खादी-कार्यकर्ता अपने-अपने क्षेत्र में परिस्थिति के अनुसार ऊपर बताये हुए विभिन्न कार्यक्रम उठा सकते हैं। खादी-बिक्री के लिए खादी-संस्थाएँ कभी-कभी विशेष 'कमीशन' देती हैं। उसका कुछ अंश सर्वोदय-साहित्य के रूप में दिया जा सकता है।

(९) 'सर्वोदय पर्व' के दिनों में खादी-भण्डारों पर साहित्य की विशेष बिक्री का प्रयत्न व प्रबन्ध।

इस वर्ष के लिए खास विषय

सर्वोदय-आन्दोलन की परिस्थिति और आवश्यकता तथा देश-विदेश की चालू समस्याओं को ध्यान में रखते हुए हर साल 'सर्वोदय-पर्व' के लिए दो-चार खास विषय चुन लिये जायँ, जो सारे कार्यक्रमों के केन्द्र-बिन्दु हों। विभिन्न कार्यक्रमों के जरिये इन विषयों पर सर्वोदय-दृष्टिकोण से प्रकाश डाला जाय। इस वर्ष 'सर्वोदय-पर्व' के लिए नीचे लिखे पाँच विषय सुझाये जाते हैं।

(१) शांति-सेना की आवश्यकता और इस कार्यक्रम के विभिन्न पहलू।

(२) भूमि-समस्या को हल करने का और इस सम्बन्ध में भूदान दृष्टिकोण का महत्त्व।

(३) देश की भावनात्मक एकता-'नेशनल इण्टीग्रेशन'।

(४) ग्राम-स्वराज्य के सन्दर्भ में पंचायती राज का महत्त्व और उसका उपयोग।

(५) अणुशस्त्र और अणुअस्त्रों के प्रयोगों का विरोध।

प्रचार सम्बन्धी सुझाव

'सर्वोदय-पर्व' की इस कल्पना और विभिन्न कार्यक्रमों का व्यापक प्रचार करने के लिए नीचे लिखी कोशिशें की जानी चाहिये।

(क) जगह-जगह सर्वोदय-पर्व तथा सर्वोदय-साहित्य के विषय में सुरुचिपूर्ण और आकर्षक पोस्टर, साइनबोर्ड आदि लगाना।

(ख) दैनिक अखबारों तथा पत्रिकाओं में लेखों के जरिये प्रचार तथा सर्वोदय-साहित्य पर समीक्षात्मक और परिचयात्मक लेख आदि।

(ग) अपने-अपने सम्पर्क के दैनिक अखबारों तथा पत्र-पत्रिकाओं से सर्वोदय साहित्य के विज्ञापनों के लिए विशेष छूट प्राप्त की जाय या अवैतनिक दान लेकर उनमें साहित्य के विज्ञापन दिये जायँ।

(घ) रेल व बस-स्टेशनों पर तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों पर विशेष प्रचार का तथा पुस्तकों व सर्वोदय-पत्रिकाओं की बिक्री का प्रबन्ध किया जाय।

सर्व-सेवा-संघ का योग

सर्व-सेवा-संघ की ओर से 'सर्वोदय-पर्व' के सम्बन्ध में आवश्यक सूचनाएँ, सुझाव आदि प्रसारित किये जायेंगे; संघ का प्रकाशन विभाग कुछ छोटे-बड़े पोस्टर व पर्चे तथा साहित्य की सूचनाएँ आदि तैयार करके उपलब्ध करेगा। विभिन्न विषयों पर तथा भिन्न-भिन्न वर्गों के लिए साहित्य के छोटे-बड़े 'सेट' भी प्रकाशन-विभाग की ओर से तैयार किये जा रहे हैं। यह व्यवस्था भी की जा रही है कि माँग के अनुसार प्रान्तों में पर्याप्त साहित्य उपलब्ध हो सके। केन्द्र से भेजे जाने वाले साहित्य और उसके हिसाब की पूरी जिम्मेदारी प्रान्त में किसी एक व्यक्ति या संस्था की रहे। बिना बिका साहित्य वापस लेने की व्यवस्था रहेगी।

इसके सम्बन्ध में जगह-जगह पर कार्यक्रम सभी लोगों, वर्गों तथा संस्थाओं के सहयोग से आयोजित किये जायँ।

वाराणसी कमिश्नरी के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का सम्मेलन

दिनांक २९ और ३० जुलाई १९६२ को उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल में किये गये निश्चय के अनुसार "वाराणसी कमिश्नरी सर्वोदय-कार्यकर्ता-सम्मेलन" साधना-केन्द्र, राजघाट, काशी में श्री गजानन्दजी की अध्यक्षता में हुआ। सम्मेलन का समारोप श्री शंकरराव देव के भाषण से हुआ। उन्होंने कहा कि हममें अपने कार्यक्रमों को पूरा करने के लिए "बेचैनी" होनी चाहिए, पूरी उत्कटता होनी चाहिए। उक्त सम्मेलन में बलिया, गाजीपुर, वाराणसी, मिर्जापुर और जौनपुर जिले के कार्यकर्ताओं ने भाग लिया और भूदान में प्राप्त भूमि का वितरण, रेहण्ड विस्थापितों के पुनर्वास, नशाबन्दी, भंगी-कष्ट-मुक्ति, छात्रों में सर्वोदय-प्रचार, "ग्रामभारती" की स्थापना आदि प्रश्नों पर विचार और निर्णय किये गये।

सम्मेलन में आये हुए सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को सम्बोधित करते हुए श्री दादा धर्माधिकारी ने कहा, "भूदान का आन्दोलन मूल्य-परिवर्तन और स्वामित्व विसर्जन का है, परन्तु आज भूमि वितरण के संबंध में प्रायः आँकड़ों पर ही ध्यान रहता है। यह आन्दोलन नये नये स्वामित्व स्थापित करने का नहीं है। दाता के, भूदान के आँकड़े नहीं, बल्कि भावना इसका मूल है। इस आन्दोलन का विकास गुणात्मकता में है, संख्या में नहीं।"

नशाबन्दी के बारे में उन्होंने कहा, "इस देश के सत्ते प्रतिशत लोग मांसाहारी हैं, फिर भी यहाँ माँस और मदिरा की प्रतिष्ठा कभी नहीं रही। लेकिन आज नैतिक समस्या भी आर्थिक दृष्टि से देखी जाने लगी और शराब के ठेकों की नीलामी ऊँची-से-ऊँची बोली से होती है! शराब की तरह वेश्याओं के 'लाइसेंस' से भी सरकार की आमदनी हो सकती है!! मान लीजिये, कल यदि अखिल भारतीय महिला सम्मेलन यह प्रस्ताव पास कर दे कि स्त्रियों का सतीत्व आर्थिक दृष्टि से घाटे की चीज है, तो आप उसे क्या कहेंगे? *समाजवाद में अनैतिकता के व्यवसाय का मेल नहीं बैठता।*"

दादा ने कहा—"समाज में शराब की प्रतिष्ठा कम होनी चाहिए, शराब की बिक्री बन्द होनी चाहिए और शराब के विरुद्ध वातावरण बनना चाहिए।"

यह भी तय किया गया कि वाराणसी कमिश्नरी के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं का अगला सम्मेलन १५ और १६ अक्टूबर १९६२ को मिर्जापुर के बनवासी सेवाश्रम, गोविन्दपुर में हो।

चम्बल घाटी शान्ति-समिति

अभी तक आत्मसमर्पणकारी भाइयों पर तेरह मुकदमे भिण्ड की अदालत में चले, जिनमें (१) आर्म्स एक्ट में दो-दो वर्ष की सजाएं हुईं, जो अब पूरी हो चुकी हैं। (२) परसोना कत्ल केस में लोकमन व तेजसिंह को आजीवन कारावास की सजा हुई। इसकी अपील ग्वालियर हाईकोर्ट में की गई। सजा बहाल रही, इसलिए सुप्रीम कोर्ट में अपील की तैयारी की जा रही है। (३) दुल्हागन कत्ल-केस में श्री रामसनेही को आजीवन कारावास हुआ है, जिसकी अपील ग्वालियर हाईकोर्ट में की गई। अभी तक सुनवाई नहीं हुई है। (४) पचपुरा डकैती केस हाईकोर्ट से छूट गया है। (५) बीसलपुरा डकैती केस भी हाईकोर्ट से छूट गया है।

सवेरा सभी केसों से मुक्त हो गया है, परन्तु एक कत्ल-केस में पुलिस की ओर से ग्वालियर हाईकोर्ट में अपील की गई है, जिसकी अभी सुनवाई नहीं हुई है।

दतिया में चल रहे थे, जिनमें वे बरी हो गये।

इस प्रकार अभी तक २० समर्पणकारियों में से पाँच भाई—श्री रामऔतार श्री मोहरमन, श्री किशन, श्री लच्छैरे और श्री करण सिंह—पूरी तौर से मुक्त हो गये हैं। शेष १५ अभी तक बंदी हैं।

आगरा

वहाँ की अदालत में अभी तक सभी भाइयों पर कुल १२ मुकदमे चलाये गये, जिनमें एक कत्ल-डकैती की थी। श्री डरेलाल को आजन्म कारावास व डकैती अपहरण केस में श्री लोकमन व तेजसिंह को पाँच-पाँच साल की सजाएँ हुईं। रैका केस में ९ भाइयों को, जिनमें श्री लोकमन, तेजसिंह, भूपसिंह, पियाराम, मटरे, कल्टी, डरेलाल, मदनसिंह व रामदयाल को सात-सात साल की सजाएँ हुईं। तीनों केसों की अपीलें इलाहाबाद हाईकोर्ट में दायर की गई, जिनकी अभी सुनवाई नहीं हुई है। आगरा में अब भी लोकमन के खिलाफ एक कत्ल-केस व श्री भगवान सिंह व श्री लोकमन के खिलाफ दूसरा एक और कत्ल केस चलने को है, जिसकी सुनवाई करीब ४ माह से इसलिए स्थगित पड़ी है, चूंकि ये लोग अपने केस जेल में नहीं चाहते, बाहर अदालत में चाहते हैं। चूँकि भिण्ड की खुली अदालत में बराबर मुकदमे चलाये गये थे, फिर भी पुलिस मानती है कि वे लोग अदालत में मारे जा सकते हैं। ऐसी हालत में इन लोगों का कहना है कि हमारे मुकदमे बाहर होने चाहिए। अदालत ने इस सम्बन्ध में उत्तर प्रदेश सरकार से पूछा है। उसका अभी तक कोई उत्तर न मिलने के कारण ये दोनों भाई अभी जिला जेल आगरे में बंदी हैं। शेष तीन भाई, श्री मदन सिंह, रामदयाल और मटरे केन्द्रीय कारागार आगरे में हैं। चूँकि इन लोगों के खिलाफ अब कोई केस चलने को बाकी नहीं, इसलिए सिर्फ रैका केस में हुई सात-सात साल की सजाएँ काट रहे हैं। शेष सभी भाई केन्द्रीय कारागार ग्वालियर में हैं। एक भाई, श्री रामसनेही धौलपुर जेल में हैं। उनके खिलाफ धौलपुर की अदालत में एक कत्ल केस चल रहा है।

मुरैना

सर्वश्री सियाराम, दुर्जन, जगली, फन्दी पर यहाँ केस चालू किये गये हैं। श्री लक्ष्मीनारायण व श्री प्रभुदयाल दो केसों में दस-दस महीने की सजा ग्वालियर जेल में काट रहे हैं। इन पर कुछ केस कुछ पर मुकदमे चल रहे हैं, कुछ सजा काट रहे हैं। पुलिस-सूत्रों से मालूम हुआ है कि इलाहाबाद हाईकोर्ट से स्पेशल जज नियुक्त किये गये हैं, जो यहाँ के मुकदमे करेंगे या सभी प्रान्तों के मुकदमे यहीं होंगे। इस बारे में अभी स्पष्ट जानकारी नहीं मिल सकी है। यह भी खबर है कि राजस्थान पुलिस इनमें से कुछ भाइयों को अपने यहाँ मुकदमे चालू करने के लिए अपने यहाँ ले जाना चाहती। अभी तक कोई निर्णय नहीं हो सका है। पैरवी की जिम्मेदारी उत्तर प्रदेश में श्री बाबूलालजी मित्तल व श्री महावीर सिंह की है। ग्वालियर में श्री हेमदेव शर्मा ले रहे हैं। मुरैना की पैरवी चरन सिंह के जिम्मे है। धौलपुर केस की देखभाल आगरे से हो रही है। (क्रमशः)

सर्व सेवा संघ : प्रकाशन-सूचना

"स्थायी ग्राहक-योजना" के सदस्यों की जानकारी के लिए जुलाई '६२ तक के नवीन प्रकाशनों की सूची नीचे दी जा रही है। निवेदन है कि अपनी वाञ्छित पुस्तकों के लिए आर्डर भेजिये और साहित्य मंगवा लीजिये।

पुस्तक	लेखक	रु०-न०पै०
(१) गीता-प्रवचन : संस्कृत	विनोबा	२-००
(२) " " (सजिल्द)	"	४-००
(३) नगर अभियान	"	२-००
(४) ग्राम-पंचायत	"	०-७५
(५) मनन्त दर्शन	"	१-२५
(६) प्रेरणा प्रवाह	"	१-२५
(७) मधुकर	"	१-००
(८) ग्राम भारती	"	०-२५
(९) अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया	"	२-५०
" " " (सजिल्द)	"	३-००
(१०) बालक बनाम विज्ञान	स० भगवानदीन	०-७५
(११) आर्थिक विचारधारा उदय से सर्वोदय तक	—श्रीकृष्णदत्त भट्ट	६-००
(१२) विदेशों में शान्ति के प्रयोग	मार्जरी साइक्स	०-७५
(१३) पंचायती राज को जानिये	गुरुशरण	०-७५
(१४) सहकारिता और पंचायती राज		१-००
(१५) लोकशाही कैसे आये ?		०-३०
(१६) चरखा-संघ का इतिहास		५-००
(१७) गोमाता वसुंधरा		२-५०
(१८) पशुलोक में पाँच वर्ष		१-००
(१९) जार्ज फाक्स का सत्याग्रही जीवन		०-४०
(२०) मधुमेह		०-७५
(२१) कब्ज और विकार दूर करने के उपाय		०-२५
(२२) ताओ उपनिषद्		०-७५
(२३) नीति-निर्झर		१-२५
(२४) चरित्र-सम्पत्ति		०-७५
(२५) कपास		२-५०
(२६) कोरापुट में ग्रामविकास का प्रयोग		२-००
(२७) आगे का कदम		०-७५
(२८) कवक थैयाँ धुन् मनैयाँ		०-७०
अंग्रेजी		
(२९) "विनोबा ऐण्ड हिज मिशन" (रिवाइज्ड ऐण्ड इनलार्ज्ड) अंग्रेजी		६-००
" " " (विशेष संस्करण) "		१०-००
(३०) "दी पाथ्स आफ प्लान्ड इकोनामी इन इण्डिया"		१-००
(३१) "दी रिपोर्ट आफ दी स्टडी टीम टू युगोस्लाविया"		१-००

—अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन,
राजघाट, वाराणसी

बिहार कृषि-गोसेवा समिति

बिहार सर्वोदय-मंडल द्वारा मनोनीत बिहार कृषि-गोसेवा समिति की आवश्यक बैठक २१ और २२ जुलाई को समिति के अध्यक्ष श्री बैद्यनाथ प्रसाद चौधरी के सभापतित्व में पटना में हुई। बैठक में गोसेवा एवं गोपालकों की समस्या पर विचार-विमर्श हुआ। ग्राम इकाई क्षेत्र पूसा, रूपौली और खोखोदेवरा क्षेत्र के गाँवों में अच्छी नस्ल की गायें किसानों एवं पशुपालकों को देने का प्रबन्ध करने का प्रयास करने का निर्णय किया गया।

छोटी गायें एवं छोटे साँडों को इन क्षेत्रों से हटाने का प्रबन्ध करने का निर्णय किया गया। गोपालकों को आर्थिक सहायता सहयोग-समितियों के माध्यम से देने एवं सरकारी साधनों द्वारा कलकत्ता एवं अन्य स्थानों से अच्छी नस्ल की गायें खरीदने का प्रयास किया जायगा। इन क्षेत्रों के गोपालकों एवं अन्य इच्छुक व्यक्तियों के शिविर आदि का आयोजन कर विशेषज्ञों के भाषण आदि कराने का प्रयास भी समिति करेगी। समिति वर्धा एवं जयपुर में गाय तथा गोपालकों की समस्या एवं किये गये कार्यों का निरीक्षण करने और शिक्षण प्राप्त करने के लिए कार्यकर्ता यथाशीघ्र भेजेगी। बैठक में सर्वश्री हरिनाथ मिश्र, पशुपालन मंत्री; हरिनन्दन ठाकुर सचिव, कृषि विभाग; श्यामसुन्दर प्रसाद के अतिरिक्त लगभग एक दर्जन सर्वोदय-कार्यकर्ता एवं सरकारी पदाधिकारी उपस्थित थे। पंचवर्षीय योजना में पशु-पालन विभाग का कार्यक्रम एवं कृषि गोसेवा समिति के कार्यक्रम में परस्पर सहयोग करने पर सविस्तार चर्चा हुई।

बिहार प्राकृतिक चिकित्सा परिषद

बिहार प्राकृतिक चिकित्सा परिषद के सदस्यों एवं विशेष आमन्त्रितों की बैठक २३ जुलाई को गांधी स्मारक निधि कार्यालय पटना में प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डा० मालेश्वर प्रसाद की अध्यक्षता में हुई। बैठक के निर्णयानुसार बिहार राज्य के सभी प्राकृतिक चिकित्सा-संस्थाओं के कार्यों का पूर्ण विवरण प्राप्त करने का प्रयास किया जायगा। इसके अतिरिक्त जिलों में अविलम्ब अस्थायी समिति बनाने का निर्णय किया गया। श्री मालेश्वर प्रसाद ने प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी भारत एवं राज्य-सरकार की योजनाओं का सविस्तार वर्णन किया। समिति की अगली बैठक में सरकारी अनुदान सम्बन्धी योजनाओं से लाभ उठाने का कार्यक्रम पर विचार-विमर्श करने का निर्णय किया गया।

ग्रामदान से सीमा-प्रवेश की समस्या हल होगी

विनोबा से मिल कर लौटने पर अ० भा० शांति-सेना मंडल के मंत्री, श्री नारायण देसाई ने काशी में एक पत्रकार-परिषद् में बताया कि आसाम में सीमा-प्रवेश (इन्फिल्ट्रेशन) की समस्या आज सबसे बड़ी समस्या है।

कामरूप जिले के कांग्रेस-कार्यकर्ताओं की सभा में विनोबा ने आसाम में होने वाले 'सीमा-प्रवेश' के प्रश्न की विशद छानबीन की। उन्होंने कहा कि सीमाप्रवेश इसलिए संभव होता है कि कुछ लोग जमीन के मालिक तो हैं, लेकिन उस पर वे स्वयं काश्त नहीं करते और बाहर से आने वाले लोग उसकी कीमत देकर जमीन खरीद लेते हैं।

विनोबा ने समझाया कि यहाँ ग्रामदान हो तो सीमा-प्रवेश की समस्या आसान हो जायगी। ग्रामदान में जमीन की मालिकी ग्राम की होगी, इसलिए उसे कोई बाहर का आदमी खरीद नहीं सकेगा। ग्रामसभा अपने गाँव के इर्दगिर्द की रक्षा करने की जिम्मेवारी भी लेगी। फिर प्रश्न उसी जमीन का रहेगा, जो ग्रामों से दूर सरकारी जंगलों में पड़ी है। ऐसी जमीन को अक्सर कोई लेना चाहेगा ही नहीं और अगर चाहे तो उतनी जमीन की रक्षा करना सरकार के लिए आसान हो जायगा। इस प्रकार ग्रामदान से होने वाले आर्थिक और आध्यात्मिक लाभ के अलावा आसाम को यह राजनैतिक लाभ भी होगा।

आसाम में विनोबाजी को अब तक ८९० ग्रामदान मिल चुके हैं। आसाम में जो ग्रामदान हुए हैं, वे आसाम के सांस्कृतिक क्षेत्र में हैं। इन क्षेत्रों में ग्रामदान होना एक विशेष बात है। अब तक का यह अनुभव रहा है कि अधिकतर ग्रामदान पिछड़े और आदिवासी क्षेत्र में हुए हैं। इस दृष्टि से आसाम के ग्रामदानों में एक गुणात्मक परिवर्तन है। यहाँ के ग्रामदानी गाँवों में मिश्र जनसंख्या है। हिंदू-मुस्लिम, आदिवासी, नगरवासी, सब प्रकार के लड़के हैं। आसाम में लगभग २५००० गाँव हैं और उम्मीद की जाती है कि विनोबा के आसाम छोड़ने पर १००० ग्रामदान मिल जायेंगे। यहाँ २५ गाँवों में १ ग्रामदानी गाँव हो, ऐसा यह हिंदुस्तान का पहला ही क्षेत्र होगा।

विनोबा-पदयात्रा की चर्चा करते हुए श्री नारायण देसाई ने संकेत किया कि उनकी पदयात्रा से आसाम में शांति के काम में काफी बल मिला है। जब विनोबा आसाम में गये थे, तब वहाँ की राष्ट्रीय एकता खतरे में थी। आज ऐसा नहीं है। इसमें विनोबा की सतत पदयात्रा का होना एक प्रमुख कारण है, ऐसा मुझे लगता है। आसाम के कार्यकर्ताओं में जो निराशा थी, वह धीरे-धीरे कम हो गयी है और ग्रामदानी गाँवों की बढ़ती संख्या के कारण उनमें खूब उत्साह है। उनको लगता है कि हमारे पास अन्य प्रदेशों को देने के ग्रामदान का नया संदेश है।

आसाम एसेम्बली के स्पीकर श्री महेन्द्र मोहन चौधरी के प्रायः २००० जनसंख्या के ग्राम, नगाँव का ग्रामदान विनोबाजी की यात्रा के अंत में हुआ। उत्तर कामरूप के ग्रामदानों में यह सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रामदान है।

११ अगस्त को विनोबा कामरूप जिले की यात्रा पूरी कर गोआलपारा जिले में प्रवेश करेंगे।

● मुंगेर जिले के हलसी गाँव में भूदान-किसानों और ग्रामीणों की बैठक में २२ जुलाई '६२ को १०० एकड़ के प्रमाण-पत्र ५० भूदान-किसानों को दिये गये। इस अवसर पर श्री सूर्यनारायण शर्मा ने अपने विचार व्यक्त करते हुए भूदान-किसानों को प्रेम और विश्वास के साथ नयी जिंदगी बिताने की सलाह दी।

विश्वशांति-पदयात्री पाकिस्तान में

पाकिस्तान में विनोबा, जयप्रकाश और राजगोपालाचारी को बड़े ऊँचे भाव से लोग देखते और इज्जत करते हैं। लोगों के बीच हम अपनी "शांति-यात्रा" के बारे में बताते हैं। साथ में शांति-सेना, विश्व शांति-सेना, सर्वोदय और भूदान-आंदोलन आदि की जानकारी देते हैं। लोग बहुत दिलचस्पी से हमारी बातें सुनते हैं और पदयात्रा के बारे में बड़ा आश्चर्य प्रकट करते हैं! भारत में पदयात्रा कोई नयी बात नहीं, पर यहाँ के लोगों के लिए आश्चर्य पैदा करने वाली चीज है। सभी लोग 'अल्लाताला से दुआ' माँगते हैं। सब जगह हमारा खाने-पीने, रहने तथा लोगों से मिलने का अच्छा प्रबन्ध है। हम बहुत प्रसन्न और खुश हैं।

सभी जगह हम 'लिफलेट्स', परचे बाँटते हैं। हमने खास तौर से यहाँ के लिए उर्दू में 'लिफलेट्स' छपवाये हैं। लोग बड़ी दिलचस्पी से पढ़ते हैं। इसका असर स्पष्ट-सा दीखता है। सब तरह के लोगों—विद्यार्थी, सूफी और मौलवियों—से हमारी भेंट होती है।

हम ३० जुलाई को अफगानिस्तान में प्रवेश करेंगे, १५ अगस्त तक काबुल पहुँचेंगे। हमारा वहाँ का पता इस प्रकार रहेगा : मार्फत—श्री जे. एन. घमोजा, अफगानिस्तान में भारत के राजदूत, काबुल (अफगानिस्तान)।

—सतीशकुमार
—ई० पी० मेनन

[ता० ७ जुलाई, '६२ के पत्र से]

सर्वोदय-पर्व : साहित्य-प्रदर्शनी

आगामी 'सर्वोदय-पर्व' के अन्तर्गत साहित्य-प्रदर्शनी को खास महत्त्व दिया गया है। आशा यह है कि देश भर में छोटे-बड़े पैमाने पर प्रदर्शनी की रचना की जाय। इसके अतिरिक्त खास करके हर प्रदेश में एक बड़ी प्रदर्शनी कुछ अच्छे ढंग से हो, यह भी सोचा गया है। तत्संबंधी कुछ सुझाव भी तैयार किये गये हैं। जिन प्रदेशों में या जिलों में प्रथम पंक्ति की प्रदर्शनी की रचना करनी हो, वहाँ यहाँ से आवश्यकता के अनुसार ये सूचनाएँ, सुझाव आदि भेजे जायेंगे। निवेदन है कि विस्तृत जानकारी के लिए श्री विट्ठलदास मोदाणी, सर्व सेवा संघ-प्रकाशन, राजघाट, काशी से पत्र-व्यवहार करें।

इस अंक में

उत्तर प्रदेश के जिला भूदान-यज्ञ-संयोजकों का शिविर

वाराणसी कमिश्नरी सर्वोदयी कार्यकर्ता सम्मेलन में उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि के संचालक श्री अक्षयकुमार करण ने बतलाया कि उत्तर प्रदेश के भूदान-कार्यकर्ताओं और भूदान-यज्ञ समिति के जिला संयोजकों का एक त्रिदिवसीय शिविर दिनांक १६, १७ और १८ अगस्त को सेवापुरी (वाराणसी) में आयोजित किया जा रहा है। भूमि-वितरण के प्रश्न पर उसमें विचार किया जायगा। उत्तर-प्रदेश के अधिक से अधिक जिलों में वितरण योग्य जमीन का १४ वें अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन (नवम्बर १९६२) से पूर्व वितरण किये जाने के लिए कार्यकर्ताओं की टोलियाँ भेजने का भी उसमें निर्णय किया जायगा।

"नयी तालीम" मासिक पत्र का प्रकाशन वाराणसी से

"नयी तालीम" मासिक पत्रिका अब साधना-केन्द्र, राजघाट, वाराणसी से प्रकाशित होगी। इसके प्रधान सम्पादक श्री धीरेन्द्र मजूमदार और सम्पादक आचार्य राममूर्ति सिंह रहेंगे। अगला अंक १५ अगस्त को यहाँ से प्रकाशित होने की संभावना है।

सिवनी में ५ अगस्त को कार्यकर्ता-सम्मेलन

दिनांक ५ अगस्त,१९६२ को सिवनी में जिले के रचनात्मक कार्यकर्ताओं, लोक-सेवकों एवं शांति-सैनिकों का एक मिला-जुला सम्मेलन म० प्र० खादी-ग्रामोद्योग बोर्ड के अध्यक्ष श्री लक्ष्मणसिंह चौहान की अध्यक्षता में आयोजित किया गया है।

पंजाब में शान्ति-सेना शिविर

पंजाब शांति-सेना समिति की फरीदगढ़ में हुई बैठक में यह तय किया गया कि पंजाब के शान्ति-सैनिकों का एक शिविर लुधियाना में अक्तूबर १९६२ में किया जाय। शिविर के बाद ही वहाँ पंजाब सर्वोदय-मंडल की ओर से एक सर्वोदय-सम्मेलन भी आयोजित करने का विचार किया गया।

श्री धीरेन्द्र भाई का पता

बलिया गाँव में अब पोस्ट ऑफिस खुल गया है। अगर वहाँ श्री धीरेन्द्रभाई मजूमदार के नाम पत्र लिखना है, तो पता इस प्रकार होगा :

सर्वोदय आश्रम, बलिया
पो० बलिया, जि० पूर्णियाँ, (बिहार)

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५६६ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८५४५ एक अंक १३ नये पैसे

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का संदेश वाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार १७ अगस्त '६२ वर्ष ८ : अंक ४६

अनुप्रवेश* की समस्या और ग्रामदान

विनोबा

अंग्रेजी में एक कहावत है, 'कॅरिंग कोल टु न्यू कॅसल'। 'न्यू कॅसल' यह इंग्लैंड में एक बंदरगाह है। वहाँ कोयले की खान है। वहाँ अगर बाहर से कोयला ले जायें, तो हास्यास्पद होगा। कोयले की खान जहाँ है, वहाँ बाहर से कौन कोयला ले जायेगा ? वैसे कांग्रेस वालों के पास हम क्या बात करेंगे ? समाज का भला कैसे हो, लोक-जीवन में परिवर्तन के लिए क्या करना होगा, ये बात कांग्रेस के सामने हम क्या कहेंगे ? आपकी सरकार को सब प्रकार का कानून करने का अधिकार है। शादी-ब्याह के कानून वह कर सकती है, समाज-सुधार के कानून कर सकती है, मंदिर-नियंत्रण के कानून कर सकती है, तालीम पर नियंत्रण रख सकती है, सेना रख सकती है, व्यापार-व्यवहार करती है, देश में उद्योग, यंत्र-शस्त्र बढ़ाना आदि सब कर सकती है।

अगर यह पूछा जाय कि आज संविधान के अंदर जीवन संबंधी कौनसा विचार नहीं आया है, तो ईश्वर और जीव का संबंध क्या है, इस चर्चा में सरकार नहीं पड़ती। परलोक क्या है, मृत्यु के बाद जन्म होगा या नहीं, स्वर्ग प्राप्ति के लिए क्या-क्या करना योग्य है, ये सब कानून में नहीं आयेगा। ऐसे जो पारलौकिक विचार हैं, वे तत्त्वज्ञान के विचार हैं। ये छोड़ कर बाकी सब जीवन विषयक विचार सरकार के पास हैं। उस सरकार को आज बनाने वाली कांग्रेस है। आपके सामने हम क्या विचार रखेंगे ? जो भी विचार रखेंगे, वे पारलौकिक और तत्त्वज्ञानात्मक न हों तो उसके जान कर, विशेषज्ञ आप हैं। आप चुने हुए विशेषज्ञ हैं। मामूली होते तो दूसरी बात, लेकिन चुने हुए हैं। मतलब, सब लोगों ने आपको माना है।

अब असम प्रदेश कांग्रेस-कमिटी ने प्रस्ताव कर रखा है कि ग्राम-दान के काम में मदद करनी चाहिये। प्रादेशिक समिति ने आप सबको यह आदेश दिया है। कुल लोगों ने बीस में से एक भाग जमीन का दान देना चाहिये। उस काम में भी मदद करनी चाहिये। ऐसे दो प्रस्ताव प्रदेश कांग्रेस-कमिटी ने कर रखे हैं। वे आपके पास भी पहुँच गये होंगे। उस हालत में आप क्या करेंगे ? आपने प्रस्ताव किया वह करने की जिम्मेदारी आपकी थी नहीं। आप नहीं चाहते, या इस काम को अच्छा नहीं समझते, थोड़े लोग मानते और ज्यादा नहीं मानते, तो भी वैसा प्रस्ताव नहीं करते। प्रस्ताव करने का मतलब, ज्यादा लोग मानते हैं।

हम कहना चाहते हैं कि ज्यादा लोग मानते हैं, तो उसका असर हमारे काम में लग जाय। और अब यह आखिरी एक महीना है। उसमें सब ताकत लगनी चाहिये। आपकी सरकार ने तो 'पास' कर लिया। उन्होंने ग्रामदान के अनुकूल कानून बना दिया। कानून बहुत अच्छा है। उसमें जो न्यूनता रह गई है, उसमें परिवर्तन कर रहे हैं, तो उनका काम पूरा होगा। सरकार 'पास' हो जायेगी। कांग्रेस ने प्रस्ताव 'पास' किया। आपके विधान-सभा का यह सत्र समाप्त होगा बारह तेरह तारीख तक, उसके बाद में तीन सप्ताह हैं। उन तीन हफ्तों में सारी ताकत लगाओ, गाँव-गाँव में जाओ, विचार समझाओ। तीन हफ्ते में पूरी ताकत लगेगी तो बाबा के रहते हुए काम होगा। इसमें कांग्रेस की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। एक अभियान के रूप में लगाना चाहिए। दो-चार लोग तो प्रस्ताव न होता तो भी इस काम में लगते। किसी भी प्रदेश में कांग्रेस में जो सज्जन होते हैं, वे हमारे हाथ आते हैं। दूसरी पार्टी के सज्जन भी आते हैं। उसके लिए पार्टी के प्रस्ताव की जरूरत नहीं रहती। उसका श्रेय मुफ्त में पार्टी को मिलता है। इसलिए जब प्रस्ताव करते हैं, तब दो चार लोग काम में लगें, इसमें सार नहीं। प्रस्ताव के मुताबिक काम को अभियान का रूप आना चाहिये। बाबा आखिर एक व्यक्ति है, कांग्रेस एक संस्था है। व्यक्ति कितना भी बड़ा हो, लेकिन विशाल संस्था, जिसके पीछे सत्तर-अस्सी वर्षों की तपस्या है, जिसमें हिंदुस्तान के अच्छे-अच्छे लोग हैं; ऐसी संस्था की जो ताकत है, वह असामान्य है। आपके पास दुगुनी ताकत है—एक सरकार की और दूसरी लोगों की।

अब पंडित नेहरू हैं। मालूम नहीं, दूसरा कौन ऐसा नेता होगा दुनिया में ! दूसरे देशों में जो नेता हैं, वे या तो सरकारी नेता होते हैं या लोकनेता होते हैं। पंडित नेहरू सरकारी नेता भी हैं और लोकनेता भी हैं। भारत में जो सरकारी नेता हैं, वे आपके लोकनेता हैं, ऐसी दुहरी ताकत आपके पास है।

अब डेढ़ साल से हम सुन रहे हैं कि यहाँ की बहुत बड़ी समस्या 'अनुप्रवेश' की है। जो अनुप्रवेश करते हैं, वे इस शब्द को जानते नहीं। इसलिए हम कहते हैं कि जमीन की व्यक्तिगत मिल्कियत मिटनी चाहिये। जमीन जब तक खरीदी बिक्री की चीज है, तब तक उसके आकर्षण से लोग आते रहेंगे और जमीन खरीदते रहेंगे। इसलिए वह हटना चाहिये। जमीन की मिल्कियत जब गाँव की हो जायगी, तब जमीन बची नहीं जायेगी। यह समस्या हल होगा।

बरपेटा की कीर्ति बहुत सुनी है, ग्रामदान के लिए नहीं, वह तो पुरानी चीज है। हमने सुना है कि बहुत सारे जमीन के मालिक बरपेटा में रहते हैं। हम यहाँ गये वहाँ लोग कहते थे कि जमीन के मालिक बरपेटा में हैं। हमने सोचा कि 'बरपेटा' के लोगों का इतने 'बड़ा पेट' है। मालिक यहाँ रहते हैं। जमीन गाँव में रहती है। वे खुद जमीन की काश्त करते नहीं, वे खुद जमीन की चिंता करते नहीं। यह हालत है जमीन की ! इसलिए जमीन की मिल्कियत गाँव-सभा की हो। बहुत सामान्य तरीका है। इससे जमीन खोने का हक जायेगा। आत्महत्या नहीं करनी चाहिये, ऐसा कानून है। उसमें आत्महत्या करने का अधिकार खो बैठते हैं। आखिर क्या अधिकार है यह ! खोकर क्या नुकसान होने वाला है ! वैसे ही जमीन खोने का अधिकार खोयेंगे, तो उससे नुकसान नहीं होने वाला। नहीं तो देखते-देखते गाँव की जमीन बाहर जायेगी, इसलिए ग्रामदान होगा तो मिल्कियत ग्रामसभा की होगी बाहर से लोगों को आने का प्रयोजन रहेगा नहीं। जो सरकारी जमीन गाँव में होगी, वह कानून में गाँव-सभा को मिलेगी। जो जमीन दूर जंगल में पड़ी होगी, उसके लिए सरकार को बंदोबस्त करना पड़ेगा। उतना वे करेंगे। मैं प्रांत के बाहर का हूँ। हो सकता है, यहाँ की परिस्थिति की पूरी जानकारी मुझे न हो, इसलिए मैंने यहाँ के जिम्मेदार लोगों को यह विचार समझाया। उन्होंने यह मान लिया कि ग्रामदान से यह समस्या भी हल होने वाली है।

[कामरूप जिला कांग्रेस-कमेटी के सदस्यों के बीच, बरपेटा में ३१ जुलाई, '६२ को दिया गया भाषण।]

* 'अनुप्रवेश' यह शब्द विनोबाजी ने 'इन्फिल्ट्रेशन' के लिए बनाया है। जब किसी देश के लोग गैरकानूनी ढंग से अन्य देश में प्रवेश करते हैं, तब 'इन्फिल्ट्रेशन'—अनुप्रवेश या सीमाप्रवेश—होता है।

शराब-बंदी न करने वाली यह सरकार ....

शराब की आमदनी का लोभ उत्तर प्रदेश-सरकार को छोड़ना नहीं है। संविधान की स्पष्ट आज्ञा होते हुए और केन्द्र की तरफ से आधा खर्चा उठाने के लिए तैयार होने पर भी हमारी सरकारें अगर शराब-बंदी का विचार नहीं करती हैं, तो राज्य करने की नालायकी वे साबित कर देती हैं ! ऐसी हालत में शान्तिमय तरीके से शराब-बंदी के लिए 'पिकेटिंग' आदि जो भी करना पड़े, करने का कर्तव्य हो ही जाता है। आप जो कदम उठा रहे हैं, उचित ही है।

—विनोबा का जय जगत्

[शराब-बंदी आंदोलन के बारे में आगरा सर्वोदय मंडल की ओर से लिखे हुए श्री चिमनलाल के पत्र का २० जुलाई '६२ को प्राप्त उत्तर।]

मौलाना हिफजुर्रहमान

जमियत-उलेमा-ए-हिन्द के महामंत्री मौलाना हिफजुर्रहमान का पिछले गुरुवार, २ अगस्त के बहुत तड़के नई दिल्ली में उनके निवासस्थान पर ही देहान्त हो गया। आप बासठ वर्ष के थे और इधर एक लम्बे अर्से से कैंसर की बीमारी से पीड़ित थे।

मौलाना हमारे देश के उन चंद नेताओं में से थे, जिन्होंने अपनी सारी जिंदगी देश की खिदमत में और देश को ऊपर उठाने में लगायी थी। आप जमियत-उलेमा-ए-हिन्द के महामंत्री थे और कोई बीस साल से राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य थे। पिछले चुनाव में आप मुरादाबाद जिले के अमरोहा निर्वाचन-क्षेत्र से लोकसभा के सदस्य चुने गये थे। सन् १९०१ की १० जनवरी को उत्तर प्रदेश के सिउहरा स्थान पर आपका जन्म हुआ। देवबंद के दारूल उलूम में आपने शिक्षा पाई। बहुत ही छोटी उम्र से आप राजनीति में आ गये और खिलाफत आन्दोलन में आपने खासा हिस्सा लिया। सन् १९३६ में आप अ० भा० कांग्रेस के मेम्बर हो गये और उ० प्र० के कांग्रेस के कई पदों पर आपने काम किया। जमियत-ए-उलेमा देश के राष्ट्रीय मुसल्मानों की एक बहुत बड़ी और महत्त्वपूर्ण जमात है। उसके द्वारा मौलाना ने देश की राष्ट्रीय भावनाओं को बढ़ाने का बहुत बड़ा काम किया। मौलाना शुरू से ही राष्ट्रीय एकता के लिए प्रयत्न करते रहे। उसके लिए उन्होंने कायदे आजम जिन्ना की मुखालफत की थी और देश के बँटवारे के आप सख्त खिलाफ थे।

इधर बहुत दिनों से मौलाना की तबीयत खराब रही, फिर भी साम्प्रदायिक एकता के लिए अपने स्वास्थ्य को खतरे में डाल कर भी जिंदगी के अंत-अंत तक कोशिश करते रहे। पिछले साल अलीगढ़ में आपने एकता के लिए जो सेवाएँ की, उन्हें भूला नहीं जा सकता।

अ० भा० मुसलिम कन्वेन्शन के आप ही संयोजक थे। शिक्षा के विकास और प्रसार में भी मौलाना की बड़ी दिलचस्पी थी। आप अंजुमन-ए-तरक्की उर्दू और अ० भा० मुसलिम एज्यूकेशनल कान्फ्रेन्स तथा अलीगढ़ विश्वविद्यालय के 'कोर' के सदस्य थे।

मौलाना हिफजुर्रहमान के न रहने से सिर्फ हमारे देश के मुसलमानों को ही अफसोस नहीं है, सारे देश को उनके लिए अफसोस है। वे हिन्दू और मुसलमान, सबको एक ही नजर से देखते थे और सभी के आदर व विश्वास के पात्र थे। हमारे देश का दुर्भाग्य है कि हमारे देश की एकता के बड़े-बड़े पुजारी एक-एक कर उठते चले जा रहे हैं! मौलाना के लिए अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए हम विश्वास करते हैं कि उन्होंने देश-भक्ति और राष्ट्रीय एकता का जो उदाहरण पेश किया, वह हम सबको सदा ही प्रेरणा देता रहेगा!

—श्रीकृष्णदत्त भट्ट

कार्यकर्ताओं—

जनमत-संग्रह के पूर्व हम सब पंजाब चलें!

शराब-बन्दी के प्रश्न पर पंजाब-सरकार जनमत-संग्रह करना चाहती है। ऐसा लगता है कि अब यह निश्चय-सा ही है! जो भी हो, पंजाब-सरकार की उस चुनौती को हमें स्वीकार करना है। हमें यह सोचना है कि प्रश्न अकेले पंजाब का नहीं, सम्पूर्ण देश का है। यदि पंजाब के बहादुर लोगों ने किसी स्वार्थपरता या प्रभाव में आकर *शराब-बन्दी न करने के पक्ष में मतदान कर दिया, तो सम्पूर्ण देश में हमारी* नशाबन्दी की नैतिक माँग को गहरा धक्का लगेगा और शराब के समर्थक चन्द लोग, जो विलासपूर्ण जीवन बिताने के आदी हैं; इसका हो हल्ला मचा कर पंजाब का उदाहरण देकर शराब का पक्ष प्रबल बनाने में योजनाबद्ध रूप से जुट जायेंगे।

मैं इस प्रश्न को आर्य समाज के हैदराबाद सत्याग्रह और गांधीजी के नमक-सत्याग्रह से भी अधिक महत्त्व देता हूँ। मुझे आशंका है कि जनमत-संग्रह के ऊपर जिस प्रकार पाकिस्तान जोर देकर कश्मीर की दुहाई देता है, ठीक उसी तरह शराब-बन्दी के प्रश्न पर जनमत-संग्रह का नाटक कर इस प्रश्न को भी राजनैतिक प्रश्न बना कर पंजाब-सरकार यह सिद्ध करना चाहती है कि हम तो चाहते हैं, परन्तु जनता नहीं चाहती कि शराबबन्दी हो!

मैं तो पंजाब सर्वोदय-मंडल से और सर्व सेवा संघ से निवेदन करना चाहूँगा कि वह देश भर से कार्यकर्ताओं को आवाहन करे कि वे पंजाब आकर गाँव-गाँव में फैल जायँ और शराब-बन्दी के पक्ष में वातावरण बना कर ऐसी स्थिति का निर्माण कर दें कि कोई दबी जबान से भी शराब के समर्थन का दुःसाहस न कर सके। बिहार में 'बीघाकट्ठा अभियान' से जिस प्रकार भूदान-कार्यक्रम को बल मिला, उसी प्रकार पंजाब के इस विषपान (शराब) के विरुद्ध भी हम सबको एक माह का समय पंजाब सर्वोदय-मण्डल के तत्त्वावधान में देना है। मैं समझता हूँ कि इस कार्य में न केवल सर्वोदय-कार्यकर्ता ही योग देंगे, वरन् वे सभी लोग भी योग देंगे, जो शराब-बन्दी के पक्ष में हैं। पंजाब सर्वोदय-मंडल कार्यक्रम बनाये और अपने निर्देशन में ऐसा जोरदार अभियान चलाये कि सुरापान में मस्त लोगों का विवेक जागे और वे स्वर भी इस अन्दोलन के सेनानी बन कर शराब के इस राक्षस को, जो आज रूप बदल कर जनमत के नाम पर बचना चाहता है, समाप्त करने में बाबा विनोबा की शांति-सेना के सिपाही बन सकें। जनरल के हुक्म की प्रतीक्षा में मुझ जैसे कई लोग बैठे हैं, शराब की भट्टी में आहुति देने के लिए।

इन्दौर, —जगन्नाथ सेठिया

ग्रामवासियों पर पुलिस का अत्याचार!

उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष, श्री त्रिवेणी सहायजी एक पत्र में लिखते हैं :—

"जिला बदायूँ के अन्तर्गत तहसील गुन्नौर के नन्दपुर ग्राम में काफी अत्याचार हुआ है। इस घटना की जो जाँच मैंने कराई, उसका विवरण इस प्रकार है।

गत ता० १० जून को नन्दपुर ग्राम में तहसीलदार तथा उनके और सहयोगी व इक्साइज विभाग के लोग टैक्स की वसूली के सिलसिले में गये। वहाँ जाकर उन्होंने एक आदमी को मारा-पीटा जिसके कारण गाँववाले उत्तेजित हो गये और उन्होंने अधिकारियों को घेर लिया, परन्तु कोई मार-पीट की घटना नहीं हुई। बाद में १२-१३ ता० की रात को लगभग २ बजे 'एस० डी० ओ०' गुन्नौर पुलिस-दल के साथ उस ग्राम में गये और वहाँ जाकर सभी उन लोगों—जो उन्हें मिले जिनमें स्त्रियाँ, बूढ़े व बच्चे सभी शामिल हैं—को मारा-पीटा किया व ताले तोड़े और उन लोगों पर अमानुषिक अत्याचार किये, जिससे सारे गाँव में आतंक फैल गया और लोग भयभीत हो गये। गाँव के पशु भी काँजीहाउस में बन्द कर दिये तथा कुछ लोगों को गिरफ्तार करके भेज दिया। इस घटना से सारे क्षेत्र में आतंक जैसा फैल गया है। २५ जून को हम जिलाधीश से मिले, और मैंने उनसे इस घटना की जाँच कराने के लिए कहा। उन्होंने मुझसे कहा कि शीघ्र ही कोई तिथि जाँच के लिए निश्चित करेंगे, परन्तु अभी तक कोई तिथि निश्चित नहीं हुई है।"

जिला सर्वोदय-कार्यालय, सिवनी

आय-व्यय विवरण [अप्रैल '६१ से मार्च '६२ तक]

आय

रु०–न०पै०	
१३१–११	पिछली जमा।
१ ०–००	सूतांजलि से प्राप्त।
१०३२–००	सर्वोदय आर्थिक अभियान से।
२२–१२	सर्वोदय-पात्र से।
६३–३२	सूतांजलि का हिस्सा, प्रान्त तथा सर्व सेवा संघ काशी का जमा।
१४३८–१५	कुल आय

व्यय

रु०–न०पै०	
१७२–००	'सर्वोदय आर्थिक अभियान' का छठवाँ हिस्सा, सर्व सेवा संघ को
१७२–००	,, ,, प्रान्त को
४०–१२	स्टेशनरी
२३२–२१	प्रवास
२६४–००	कार्यालय-किराया तथा फुटकर
९०–००	प्रवासी कार्यकर्ता-भोजन
५५–००	प्रो० गोरा की पदयात्रा
३५–१२	डाक-तार
३१–६६	सूतांजलि का छठवाँ हिस्सा प्रान्त को
३१–६६	,, ,, काशी को
८०–००	प्रकाशित प्रचार खर्च
१००–००	हरिजन सेवक संघ की, जो जमा रकम थी, वह वापस
१३०४–२१	कुल व्यय
१३४–७४	सर्वोदय कार्यालय, सिवनी में जमा
१४३८–१५	कुल

एक वर्ष का कार्य-विवरण

- १२५ एकड़ भूदान में प्राप्त
- १३०० गुण्डियाँ सूतांजलि में प्राप्त
- १०० सर्वोदय-पात्र अनियमित
- १४ लोक-सेवक
- २० सर्वोदय-मित्र
- २७ 'भूमिक्रान्ति' के ग्राहक
- १० हरिजनों के लिए कुएँ खुलवाये
- ८० एकड़ जमीन का वितरण
- ३ प्राथमिक सर्वोदय-मंडल
- ६८ सार्वजनिक सभाएँ
- ३ दिन सिवनी नगर के ६१० संडासों की सफाई (हड़ताल के समय)
- १००० रु० का साहित्य प्रचार
- २ विचार शिविर, १ महिला शिविर

इसके अलावा १२ फरवरी को सर्वोदय मेला व सर्वोदय-पखवाड़ा, हरिजन सप्ताह, आचार-संहिता का प्रचार, स्वच्छ दीवार एवं शिविर-सम्मेलनों का आयोजन किया। उक्त वर्ष के कार्य में हरिजन सेवक संघ तथा सर्वोदय चैरिटी ट्रस्ट, खादी-कार्यकर्ता तथा अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं ने आर्थिक तथा कार्यकर्ताओं को, सामान की तथा अन्य व्यवस्था में कार्यालय की पूरी-पूरी मदद की।

—सत्यनारायण शर्मा

ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

लोकनागरी लिपि •

अेक ही रास्ता

आज की स्थीती मे' से छुटकारा पाने' का रास्ता अेक ही है'। अुसे' मै' लोकनीती कहता हूं। सरकारी शक्ती के' बदले' मे' लोकशक्ती खड़ी हो, याने' आगे' चल कर सरकार की जगह लेने' वाली शक्ती खड़ी हो। अीस तरह स्वराज्य का रूपांतर सच्चे' लोकराज्य मे' करना होगा। यह ध्यान मे' आयेगा, तो प्रेरणा मीलेगी। परराज्य भी जहां लोगों को अच्छा लगा, वहां स्वराज्य मे' तो अच्छा लगेगा ही। परराज्य मे' भी प्रामाणीकता है'। काम करते' है', तो लोगों की सेवा होती है', अैसा मानने' वालों मे' रमेशचंद्र दत्त, अीश्वरचंद्र वीद्यासागर, न्यायमूर्ती रानडे, अैसे बड़े-बड़े लोग थे'। सरकार मे' जाकर जनता की सेवा हम कर सकते' है', यह भावना लेकर ही वे' सरकार मे' गये' थे'। परदेशी राज्य मे' भी अैसी प्रेरणा मीलती है', तो स्वराज्य मे' भी नौकरी की प्रेरणा लोगों को मीले', अीसमे' आश्चर्य नहीं है'। मै' तो यह मानता हूं की प्रामाणीकता से' नौकरी की जाय, सेना मे', रेलवे मे', पुलीस मे'; तो वह सचमुच देश की सेवा हो सकती है'। अुन लोगों का यह दावा की हम देश के' सेवक है', हमे' मानना होगा। लेकीन सामाजीक और आर्थीक आजादी जब तक नहीं मीलती, तब तक स्वराज्य का काम अधूरा है', अैसा मानना चाहीअे।

[थांदी, राजस्थान, २६-१-'५९] —वीनोबा

• लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ै, ख = ष
संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

राजभाषा का सवाल

गत ११ अगस्त को नई दिल्ली में मराठी के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री मामा वरेरकर की अध्यक्षता में अखिल भारतीय भाषा-सम्मेलन हुआ। यह सम्मेलन १९६५ के बाद भी अंग्रेजी को अनिश्चित काल के लिए हिन्दी के साथ सहायक राजभाषा के रूप में बनाये रखने के लिए संविधान में संशोधन लाने के भारत सरकार के निश्चय का विरोध करने के उद्देश्य से आयोजित किया गया था। सम्मेलन में विभिन्न प्रदेशों से आये हुए २०० के लगभग विभिन्न भाषा भाषी प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए श्री काका साहब कालेलकर ने कहा कि

> स्वराज्य के बाद भी राज्य का काम अंग्रेजी में चलाना एक गैरकानूनी इन्तजाम है और उसे हम कब तक बर्दाश्त करेंगे? राज्य का सब काम अंग्रेजी में चलाना प्रजा पर एक भार है, वह प्रशासकों की सुविधा के लिए है। लेकिन हमें याद रखना चाहिए कि स्वराज्य प्रजा के लिए है, राज्य कर्ता और कर्मचारियों के लिए नहीं है। यदि प्रजा के स्वराज्य का कुछ भी महत्त्व है, तो राजकाज और शिक्षा प्रजा की भाषा में होनी चाहिए।

अध्यक्षपद से भाषण करते हुए श्री मामा वरेरकर ने कहा, "जिस निश्चय से हम लोगों ने अंग्रेजों को इस देश से भगाया, उसी निश्चय से तथा श्रद्धा से हमें अंग्रेजी को भी इस देश से राजकीय भाषा के रूप में निकालना होगा। इस काम में हम किसी प्रकार से पीछे हटने या समझौता करने के लिए तैयार नहीं। यह राष्ट्र के लिए जीवन मरण का प्रश्न है।" आपने आगे बताया कि जब तक सरकारी कामकाज अंग्रेजी में चलता रहेगा, तब तक राष्ट्रभाषा या भारतीय भाषाओं का प्रचलन होना असंभव है। यह हमारे राष्ट्र को कैंसर की बीमारी-सी लग गयी है, जो रोगी को अंत तक छोड़ती नहीं! इसलिए इस बीमारी को काट कर ही अलग करना होगा।

इस अवसर पर लोकनायक मा० श्री० अणे, श्री सेठ गोविंददास, केरल के मलयाली भाषा के 'केसरी' के सम्पादक श्री वेणुगोपाल, बंगला के श्री देवज्योति वर्मन और तमिल के श्री शेषाद्रि आदि वक्ताओं ने भी अपने विचार प्रकट करते हुए एक स्वर से अंग्रेजी को राजकीय भाषा के पद से हटाने की माँग की। सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष डा० रघुवीर ने कहा कि यह 'एक नये स्वातन्त्र्य-संग्राम का प्रारम्भ' है।

दूसरे दिन के सम्मेलन के अध्यक्ष प्रसिद्ध तमिल लेखक और अंग्रेजी के विद्वान् प्रो० श्री महादेवन ने जोर देकर कहा कि विदेशी भाषा के विषय में अल्पमत का विचार बहुमत पर कभी नहीं लादा जा सकता। इनके अलावा श्री टी० एल० नारायण (तेलुगु), प्रो० देवज्योति (बंगला), श्री मल्लया (कन्नड), श्री केशवदास चक्रवर्ती (बंगला), श्री अब्दुल रहमान (जम्मू-कश्मीर) एवं श्री वियोगी हरि आदि विचारकों ने अपने विचार प्रकट किये। इस अवसर पर सर्वसम्मति से पारित एक प्रस्ताव में निश्चय किया गया कि अंग्रेजी को हिन्दी के साथ सहराजभाषा बनाने के खिलाफ आन्दोलन तब तक जारी रखा जाना चाहिए जब तक इस उद्देश्य में सफलता न मिले। साथ ही इस बात की भी माँग की गई थी कि राज्यों में अंग्रेजी को हटा कर प्रादेशिक भाषाओं का राजकाज में तुरन्त पूर्णतः उपयोग किया जाय।

इस सम्मेलन के महत्त्व से इनकार नहीं किया जा सकता। यह आश्चर्यजनक है कि सरकार अपना कामकाज उस भाषा में चलाती है, जिसे दो प्रतिशत लोग समझते हैं और अट्ठानबे प्रतिशत नहीं! लोकतंत्र शासन की वह पद्धति है, जिसमें लोग अपना कारोबार स्वयं करें। किन्तु वह कारोबार उनकी समझ में न आने वाली भाषा में हो, तो वे कैसे शासन चलायेंगे? सच तो यह है कि लोकतंत्र नाममात्र रह गया है। आजादी के तुरंत बाद ही हमारे स्वराज्य का समस्त व्यवहार प्रजाकीय भाषामें होना चाहिए था, किन्तु उस वक्त भी हमने ढिलाई की और संविधान में अंग्रेजी को १५ साल के लिए मौका दिया। किन्तु फिर जब पुनः अंग्रेजी को अनिश्चित काल के लिए प्रतिष्ठित किया जाता है, तो समझ में नहीं आता है कि यह लोकतंत्र कैसे चलेगा?

काकासाहब ने अपने भाषण में एक विशेष बात कही है कि रूस में जैसा लोह-परदा बताया जाता है, ठीक उससे उलटे किस्म का लोह-परदा भारत में है। उन्होंने कहा कि रूस की बातें बाहरी दुनिया को नहीं मालूम पड़ती, लेकिन भारत की सब बातें विदेशियों को तो मालूम होती हैं, लेकिन अपने ही लोगों को मालूम नहीं होतीं! कारण, सरकार ने अपने व जनता के बीच परदा डाल रखा है। सरकार अपना कामकाज अंग्रेजी भाषा में करती है।

ठीक यही बात विनोबाजी पिछले कई वर्षों से दोहरा रहे हैं। उनका कहना है, "भारत सरकार का सारा कारोबार अंग्रेजी में चलता है। परिणाम क्या होता है? आपके देश का कारोबार किस तरह से चलता है, यह अमेरिका और इंग्लैंड के लोग घर में बैठ कर जान सकते हैं, पर आपके देश का किसान उसे नहीं जानता है। अपने देश का कारोबार दूसरे के सामने रखना, यह एक गलती है और अपने ही किसानों से छिपाना, यह दूसरी गलती है। अपने देश का कारोबार दूसरे के सामने खुला रखना मूर्खता है, यह कम से कम राजनीति में जो लोग हैं, वे कबूल करेंगे। राजनीति में राज्य के रहस्यों को गुप्त रखने की शपथ ली जाती है। राजनीतिज्ञों को गोपनीयता की आवश्यकता मालूम होती है। उनकी दृष्टि से देश का कारोबार दूसरे के सामने खोल रखना गलत ही है और अपने ही लोगों से छिपाना तो बहुत बड़ी गलती है! ये दो गलतियाँ एक ही साथ भारत में की जा रही हैं।"

अगर हम अंग्रेजी का इस्तेमाल बंद कर दें तो हमारे सब कामकाज ठप हो जायेंगे, इस दलील का उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा था कि उनकी राय में "गहरे विचार से सिद्ध हो जायगा कि अंग्रेजी भारत की राष्ट्रभाषा न कभी हो सकती है और न होनी चाहिए। राष्ट्रभाषा की कसौटी क्या है?

(१) सरकारी वर्ग के लिए वह सीखने में आसान होनी चाहिए।

(२) उस भाषा में भारत का आपसी, धार्मिक, व्यापारिक, राजनीतिक कामकाज देश भर में संभव होना चाहिए।

(३) वह भारत के अधिकांश निवासियों की बोली होनी चाहिए।

(४) सारे देश के लिए उसका सीखना सरल हो जाना चाहिए।

(५) इस प्रश्न का विचार करते समय क्षणिक या अस्थायी परिस्थितियों पर जोर नहीं देना चाहिए।

अंग्रेजी भाषा उपर्युक्त शर्तों में से कोई भी शर्त पूरी नहीं करती।"

हिन्दुस्तान को आजाद हुए १५ साल हो गये, किन्तु आज भी हम अपना कारोबार परकीय भाषा में चलायें, यह हमारे लिए अनुचित है। हमें उम्मीद है कि देश के तमाम जनता की स्वतंत्रता के हिमायती और लोकतंत्र के उपासक इस अंग्रेजी भाषा के भूत को दूर करेंगे। यहाँ हम कहना चाहते हैं कि हमारा अंग्रेजी भाषा से कोई विरोध नहीं है। उसका अध्ययन, अध्यापन सुव्यवस्थित ढंग से हो, लेकिन वह भारत की राजभाषा बने, यह तो एकदम बेतुकी बात लगती है। यह आनन्द की बात है कि सम्मेलन में मलयाली और तमिल के प्रतिनिधियों ने भी हिंदी में ही राज्य का काम हो, इसका जोरदार समर्थन किया है। हमें उम्मीद है कि भारत की सरकार अंग्रेजी को पुनः अनिश्चित काल के लिए लाने के निश्चय पर पुनः गम्भीरता से विचार करेगी। —मणीन्द्रकुमार

रिहन्द बाँध : पूर्वी गोलार्द्ध का सबसे बड़ा जलागार

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

"अतीत काल से ही मिर्जापुर पुण्यसलिला भागीरथी के वात्सल्य-प्रेम से आलिंगित, भगवती विंध्यवासिनी तथा देवी अष्टभुजा के स्नेहावेष्टित, कला एवं शैला नृत्यों की सरल, मधुर अभिव्यंजक पर्वतीय मुद्राओं की मोहक भाषा से गुंजित, सोन, रेणु आदि सरिताओं के कलकल से निनादित, देवर्षि भृगु के चरण-चिह्नों या चरणाद्रि के रूप में अपने वक्षःस्थल में युग-युग से स्थापित किये हुए रजोगुण और सतोगुण सम्यक्-स्वरूप महाराजा भर्तृहरि की मधुर स्मृतियों को शताब्दियों से संजोये हुए प्रकृति के उन्मुक्त हास से अनुरंजित, प्रकृति पर मानव द्वारा विजय पाने की महत्त्वाकांक्षा के प्रतीक एशिया का सर्वश्रेष्ठ सोनपुल, विश्व के पूर्वी गोलार्द्ध का सबसे बड़ा जलागार रिहन्द बाँध तथा सिरसी, धनरौल, सजुरी, टांडा आदि बन्धों के द्वारा अपने मानवश्रम की विजय ध्वजा फहराते हुए प्रगति के पथ पर अग्रसर है।"

तृतीय पंचवर्षीय योजना (१९६१–'६६) में दिया गया मिर्जापुर जिले का यह काव्यमय वर्णन पढ़ कर कौन न गद्गद हो उठेगा। प्राकृतिक दृश्यों की दृष्टि से वस्तुतः मिर्जापुर जिला बहुत ही सम्पन्न है। जिधर दृष्टि डालिये प्रकृति की मनोहारी छटा चित्त को आकर्षित कर ही लेती है। फिर वह चाहे गंगा का कछार हो, चाहे विन्ध्य पर्वतमाला हो, चाहे वनखेड हो, चाहे घाटी या मैदान हो। वर्षाकाल में तो इस जिले की शोभा देखते ही बनती है।

और इसी सुन्दर वनस्थली के बीच बना कर खड़ा किया गया है, पूर्वी गोलार्द्ध का सबसे बड़ा जलागार—रिहन्द बाँध, जिसके निर्माण कार्य के लिए कंकरीट का तसला उँडेलते हुए भारत के प्रधानमंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने १३ जुलाई १९५४ को कहा था—

"अब हमारा एक और स्वप्न साकार हो रहा है और इस प्रकार हमारे नवभारत के निर्माण में और देशवासियों की समृद्धि में उससे योग दिया जायगा।"

पण्डित नेहरू ने उस समय कहा था: "आज इस क्षेत्र के साथ-साथ उत्तर प्रदेश, बिहार और का विन्ध्य प्रदेश के एक बड़े भाग के खुशहाल होने का संकल्प है। मुझे आशा है कि रिहन्द के समीपवर्ती क्षेत्र की ओर जो अब तक उपेक्षित रहा है और वहाँ के निवासी बहुत ही गरीब तथा अभावग्रस्त रहे हैं, विकास के लिए विशेष ध्यान दिया जायगा।"

उस समय उत्तर प्रदेश के चीफ इंजीनियर की ओर से जो विज्ञप्ति प्रकाशित की गयी थी, उसमें कहा गया था कि रिहन्द बाँध से बना सागर पूर्वी गोलार्द्ध में सबसे बड़ा कृत्रिम सागर होगा। यह प्रति फुट ऊँचाई के लिए संसार में किसी भी और बाँध से अधिक जल संग्रह करेगा।

इस बाँध में ४० करोड रुपये का व्यय होने का अनुमान है। ४००० नलकूप निर्माण करने का सरकार का विचार है। नलकूपों और बिजली से २० लाख एकड भूमि की सिंचाई का प्रबन्ध हो सकेगा।

* * *

रिहन्द बाँध की कल्पना तो सन् १९१९ में ही कर ली गयी थी, पर इस कल्पना को साकार नहीं किया जा सका। १९३७ में इसके लिए पहली बार चेष्टा की गयी। पर द्वितीय विश्वयुद्ध छिड जाने के कारण यह फिर खटाई में पड गयी। १९४८ में इसकी योजना बनी, पर पैसे की कमी ने हाथ रोक दिये। अन्त में १९५४ में अमरीकी सरकार ने इसके लिए डालरों का दरवाजा खोल दिया, तब कहीं इसकी नींव पड सकी। अमरीकी सरकार ने रिहन्द बाँध के लिए ६० लाख डालर (२.९ करोड रुपये) का अनुदान दिया और २०.४ करोड रुपये का ऋण। इस अमरीकी सहायता की बदौलत रिहन्द बाँध का काम तेजी से शुरू हो गया।

* * *

सबसे पहले बाँध के स्थान पर पहुँचने की समस्या थी। उसके लिए कोई सौ मील लम्बी सडकें तैयार की गयीं। चोपन के पास सोन नदी पर ३३०० फुट लम्बा पुल बनाया गया। इस पुल के बन जाने से लोगों के आने-जाने में तो सुविधा हुई ही, भारी मशीनों को इधर से उधर ले जाने में भी सुविधा हुई। सीमेन्ट तथा अन्य सामग्री की ढुलाई की समस्या भी सुलझ गयी। इनके अलावा छोटे-छोटे नदी-नालों पर भी जहाँ-तहाँ पुल आदि बन गये। यों रिहन्द बाँध का काम शुरू हुआ।
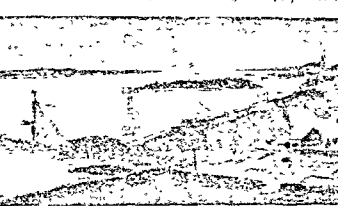
रिहन्द बाँध का एक विहंगम दृश्य

रिहन्द बाँध के दायरे में जितना व्यापक क्षेत्र है, उसका अनुमान उसकी सीमाओं से ही लगाया जा सकता है। ३०० फुट ऊँचे और ३०६५ फुट लम्बे इस बाँध की बंधाई का काम जिन दिनों अपनी पूरी तेजी पर था, उस समय बाँध के काम में १२० इंजीनियर लगे थे और १०,५०० कुशल और अकुशल मजदूर।

* * *

बाँध की विशालता देखते ही बनती है। यह एशिया में मानव निर्मित सबसे बड़ा बाँध है, जो १८० वर्गमील में फैला हुआ है। इसमें ८६ लाख एकड फुट जल संचित कर लेने की क्षमता है।

बाँध के नीचे जो बिजली-घर स्थापित किया गया है, उसमें २,५०,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न करने की क्षमता है। उसमें ५०-५० हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न करने वाले ५ जेनेरेटिंग यूनिट हैं। अब छठाँ यूनिट भी स्थापित कर दी गयी है। इसके कारण अब ३,००,००० किलोवाट बिजली उत्पन्न की जा सकेगी। यों अभी केवल ९० हजार किलोवाट बिजली उत्पन्न की जा रही है।

* * *

विद्युत् उत्पादन का यह भारी आयोजन होते ही यह स्वाभाविक था कि इस क्षेत्र में कुछ बड़े कारखाने खुलें। पिपरी से पाँच मील पर 'हिन्दुस्तान अल्मोनियम कारपोरेशन लिमिटेड' नाम से एक अल्मोनियम फैक्टरी खुल गयी है। इसमें शुरू में कोई बीस हजार टन अल्मोनियम तैयार किया जा सकेगा। इसीके पास एक और कारखाना खुल रहा है जिसमें अल्मोनियम की वस्तुएँ तैयार होंगी। निजी क्षेत्र संयुक्त फर्म 'हिन्दाल्को' को इस काम के लिए अमरीकी सरकारने साढ़े सात करोड रुपये का ऋण दिया है।

रिहन्द से मिलने वाली ९० हजार किलोवाट बिजली में से ३० हजार किलोवाट अभी इस अल्मोनियम कारखाने में ही लग जाती है। अक्टूबर १९६० से खुले इस कारखाने ने १४ मई १९६२ से अल्मोनियम उत्पन्न करना शुरू कर दिया है। तृतीय पंचवर्षीय योजना में ८२,५०० टन अल्मोनियम तैयार करने का लक्ष्य रखा गया है। फिर भी यह कारखाना उसकी एक चौथाई पूर्ति करेगा।
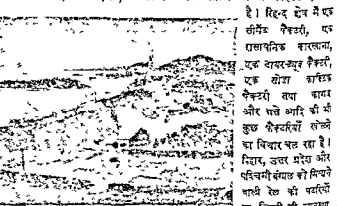
भारत सरकार ने यहाँ पर एक रोलिंग मिल खोलने का भी लाइसेंस दे रखा है। रिहन्द क्षेत्र में एक सीमेंट फैक्टरी, एक रासायनिक कारखाना, एक टायर-ट्यूब फैक्टरी, एक सोडा कास्टिक फैक्टरी तथा कागज और गत्ते आदि की भी कुछ फैक्टरियाँ खोलने का विचार चल रहा है। बिहार, उत्तर प्रदेश और पश्चिमी बंगाल को मिलाने वाली रेल की पटरियों पर बिजली की व्यवस्था करने के लिए भी रिहन्द की बिजली का उपयोग किया जायगा।

अनुमान है कि रिहन्द बाँध से पूर्वी उत्तर प्रदेश में १४,००,००० एकड भूमि की सिंचाई हो सकेगी।

रिहन्द के बिजली घर से मिर्जापुर और राबर्ट्सगंज की बिजली की आवश्यकताएँ तो पूरी होती ही हैं, प्रयाग और काशी को भी कुछ बिजली मिलने लगी है।

* * *

रिहन्द बाँध जहाँ बना है, वहाँ चारों ओर जंगल और पहाड ही थे। जगह-जगह छोटे-छोटे गाँव थे। आज बाँध के आसपास एक बड़ी बस्ती खड़ी हो गयी है। जहाँ अन्धेरा होते ही बाहर निकलना मुहाल था, शेर और चीतों का डर बड़े-बड़ों को त्रस्त रखता था, वहाँ आज बिजली का प्रकाश जगमगा रहा है!

स्वर्ण की, डालर की यह माया देखने वालों की आँखें चौंधिया दे रही है! अमरीकी सरकार के डालरों की सहायता से बना हुआ यह रिहन्द बाँध पूर्वी गोलार्द्ध का सबसे बड़ा जलागार है, उसने देश के विकास का एक नया द्वार खोल दिया है सही, पर...!

बाँध, बिजली-घर और सागर की लम्बाई-चौड़ाई

बाँध

लम्बाई	३१४२ फीट
अत्यधिक चौडाई	२२७ फीट
खुदान से ऊँचाई	२९६ फीट
कंक्रीट की मात्रा	६,५०,००,००० घनफीट
बाँध पर सडक की चौडाई	२४ फीट

बिजली घर

लम्बाई	४३० फीट
चौडाई	९९ ,,
ऊँचाई	४० ,,
क्षमता	३,००,००० किलोवाट

सागर

क्षेत्रफल	१८० वर्गमील
क्षमतापूर्ण	३,७०,००,००,००० लाख घनफीट
प्रयोगात्मक	३,११,००,००,००० लाख घनफीट

आजादी का वह प्रथम दिन

जब बापू ने चमत्कार कर दिखाया!

> बदला लेकर हम अन्याय करने वाले को हमेशा के लिए सुधार नहीं सकते। हिंसा का बदला हिंसा से लेकर हम हिंसा को मिटा नहीं सकते। आग से आग बुझती नहीं, बल्कि और बढ़ती है। इसलिए बदले का रास्ता गलत है। वैर को जैसे प्रेम से और क्रूरता को करुणा और दया से मिटाया जा सकता है, वैसे ही हिंसा को मिटाने का एक ही मार्ग अहिंसा का है, प्रेम का है, क्षमा का है, मित्रता का है और भाईचारे का है।
>
> —महात्मा गांधी

सोमेश पुरोहित

१५ अगस्त, १९४७! भारत के इतिहास में सदा अमर रहने वाला दिन!
भारत के बच्चे-बच्चे में देशभक्ति और राष्ट्रप्रेम की पवित्र भावना पैदा करने वाला दिन!
राष्ट्र के हर नागरिक को देश की आजादी के लिए सब-कुछ न्योछावर करने की प्रेरणा देने वाला दिन!
वह भारत की आजादी का सुनहला दिन था!

ऐसे स्वराज्य की, ऐसी स्वतन्त्रता की खुशियाँ जिस १५ अगस्त, १९४७ के दिन सारा राष्ट्र मना रहा था, जिस दिन भारत के लाडले नेता जवाहर, सरदार, राजेन्द्र बाबू और मौलाना आजाद दिल्ली में भारत के अंतिम वाइसराय लार्ड माउन्टबेटन के हाथ से देश के शासन की बागडोर अपने हाथों में लेने की तैयारियाँ कर रहे थे, उस दिन इन सारे नेताओं का नेता गांधी *दिल्ली से दूर कलकत्ते में बैठा था!*

उसे न सत्ता का मोह था, न राजगद्दी का मोह था और न लोगों से अपनी पूजा कराने का मोह था। वह कलकत्ता शहर के गंदे, धूल भरे, खंडहर-से मकान में बैठ कर आपस में लड़ने वाले हिन्दुओं और मुसलमानों को प्रेम का, भाईचारे का और मेलजोल का पाठ सिखा रहा था। वह जानता था कि जब तक भारत के सब लोग, खास करके उसकी दो महान् कौमें, हिन्दू और मुसलमान, आपस में भाइयों की तरह हिलमिल कर नहीं रहेंगी, तब तक भारत की आजादी मजबूत नहीं बनेगी।

बापू काश्मीर से लौट कर नोआखाली जा रहे थे। बीच में दो एक दिन के लिए कलकत्ता रुके थे। उस समय कलकत्ते में *हिन्दू-मुसलमानों का दंगा छिड़ गया था।* शहर के हिन्दुओं ने १९४६ के अत्याचारों का बदला लेने के लिए मुसलमानों को मारना शुरू कर दिया था। कलकत्ते के मुसलमान घबरा उठे थे। उनके नेताओं को लगा कि केवल गांधीजी ही इस समय मुसलमानों को हिन्दुओं के आक्रमण से बचा सकते हैं। वे दौड़े-दौड़े गांधीजी के पास पहुँचे और बोले:

"खुदा के नाम पर आप कुछ दिन और कलकत्ते में रुक जाइये। आप हिन्दुओं को समझायेंगे नहीं, तो कलकत्ते के मुसलमानों की खैर नहीं है।"

और दुखियों के बेली बापू रुक गये। यह १३ अगस्त, १९४७ की बात है।

* * *

: २ :

लेकिन कलकत्ते में उनके रुकने का पता चलते ही हिन्दुओं का पारा चढ़ गया। बेलियाघाटा मुहल्ले के जिस मकान में वे ठहरे थे वहाँ हिन्दू नेताओं के भड़काये हुए *कुछ हिन्दू नौजवान आ पहुँचे।* उनके चेहरे तमतमाये हुए थे। धर्म का अन्धा जोश उनकी वाणी में और उनके *व्यवहार में साफ झलक रहा था।* सारी सभ्यता और नम्रता को भूल कर उन्होंने तीखे स्वर में बापू से पूछा:

"आप यहाँ किसलिए आये हैं? किसने बुलाया है आपको? दो चार मुसलमान मारे नहीं गये कि आपने *कलकत्ते में आकर अड्डा जमा लिया!* लेकिन पिछले साल जब इन्हीं दिनों हिन्दुओं का संहार हो रहा था, उनके मकानों और दुकानों को जला कर राख बनाया जा रहा था, उनकी बहू-बेटियों की लाज लूटी जा रही थी और उनके मासूम बच्चों को मौत के घाट उतारा जा रहा था, *तब आप क्यों नहीं आये यहाँ?* आज जब हमने अत्याचारी मुसलमानों को सबक सिखाने का बीड़ा उठाया, तब आप आ धमके मुसलमानों के तारनहार बन कर!"

बापू: "दुखियों और पीड़ितों की सेवा करना मैं अपना धर्म मानता हूँ। नोआखाली के निराधार और दुखी हिन्दुओं की सेवा के लिए भी मैं गया ही था न? अब मेरी आत्मा मुझसे कहती है कि कलकत्ते के मुसलमानों की सेवा मुझे करनी चाहिए। इसीलिए मैं यहाँ रुक गया हूँ।"

"लेकिन आप हमारे बीच में न आइये। हमें यहाँ के मुसलमानों से पूरा बदला चुका लेने दीजिये, जिससे वे फिर कभी सिर न उठा सकें।"—नौजवान दृढ़ता से बोले।

"नहीं, नहीं, बदले की भावना ठीक नहीं है। बदला लेकर हम अन्याय करने वाले को हमेशा के लिए सुधार नहीं सकते। हिंसा का बदला हिंसा से लेकर हम हिंसा को मिटा नहीं सकते। आग से आग बुझती नहीं, बल्कि और बढ़ती है। इसलिए बदले का रास्ता गलत है। वैर को जैसे प्रेम से और क्रूरता को करुणा और दया से मिटाया जा सकता है, वैसे ही हिंसा को मिटाने का एक ही मार्ग अहिंसा का है, प्रेम का है, क्षमा का है, मित्रता का है और भाईचारे का है।"—शांत, सौम्य और स्नेहपूर्ण वाणी में बापू ने समझाया।

नौजवान: "हम यहाँ आपसे हिंसा-अहिंसा का उपदेश सुनने नहीं आये हैं। हम तो इतना ही कहने आये हैं कि आप कलकत्ते से तुरत चले जाइये।"

गांधीजी: "तुम्हारी इस जबरदस्ती के सामने मैं झुकने वाला नहीं हूँ। किसी की जबरदस्ती के सामने झुकना मेरे स्वभाव में ही नहीं है। हाँ, यदि तुम मेरी गलती मुझे समझा दोगे, तो मैं आज ही कलकत्ता छोड़ दूँगा।"

नौजवान: हिन्दू होकर आप हिन्दू *धर्म और हिन्दू समाज पर आक्रमण करने* वाले मुसलमानों का पक्ष लें, उन्हें बचायें, इससे बड़ी गलती और क्या हो सकती है?"

"नहीं, यह मेरी गलती नहीं है। आज हिन्दू अपने धर्म के, मानवता के उपदेश को भूल गये हैं। उन्होंने ईश्वर का रास्ता छोड़ कर शैतान का रास्ता पकड़ लिया है। मैं उन्हें फिर से ईश्वर के रास्ते पर—प्रेम, दया, क्षमा के रास्ते पर मोड़ने आया हूँ।"

लेकिन नौजवान शांत नहीं हुए। वे और भड़के। अपने नेताओं की सिखाई-पढ़ाई बात को दोहराते हुए उन्होंने कहा: "आप हिन्दुओं के शत्रु हैं, आप विधर्मियों का पक्ष लें, यह आप के लिए लज्जा की बात है।"

गांधीजी शांत भाव से बोले: मैं जन्म से हिन्दू हूँ, धर्म से हिन्दू हूँ और कर्म से भी हिन्दू हूँ। मैं हिन्दुओं का *सदा भला ही चाहता हूँ।* जब मैं देश के मुसलमानों, पारसियों, ईसाइयों को भी अपने भाई मानता हूँ, तो अपने धर्मबन्धु हिन्दुओं का शत्रु कैसे हो सकता हूँ?"

नौजवान थोड़े विचार में पड़ गये। लेकिन उन्हें पूरा भरोसा नहीं हो रहा था। वे बोले: "कुछ भी हो, लेकिन आप कलकत्ते के हिन्दू-मुसलमानों को भगवान के भरोसे छोड़ कर यहाँ से चले जाइये।"

गांधीजी ने दृढ़ता से कहा: "जब तक मेरा काम पूरा नहीं होता, मैं कलकत्ता किसी भी हालत में नहीं छोड़ूँगा। तुम चाहो तो मेरा काम बन्द कर सकते हो। मुझे कैद कर सकते हो, मार सकते हो, मेरी जान भी ले सकते हो। मौत से मैं डरता *नहीं। अपने धर्म का पालन करते-करते* तुम जैसे अपने बच्चों के हाथों यदि मरना भी पड़े, तो मुझे आनन्द ही होगा।"

इस बार नौजवान कुछ बोले नहीं। *अपनी गलती शायद उन्हें समझ में आ गई।*

अपनी बात का असर होते देख बापू ने कोमल स्वर में कहा: "तुम स्वतन्त्र भारत के नौजवान हो। भारत तुमसे बड़ी बड़ी आशाएं रखता है। तुम्हें अपनी बुद्धि का उपयोग करके जाति और धर्म के भेदों से ऊपर उठना चाहिए और सच्चे हिन्दुस्तानी बन जाना चाहिए। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ कि तुम अपने मन को उदार बनाओ और सारे हिन्दुस्तान का हित साधने वाले मेरे इस काम में मदद करो।"

बापू की *नम्रता ने नौजवानों* का सारा गुस्सा उतार दिया और उन्हें भी नम्र बना दिया। उन्होंने अपने अशिष्ट व्यवहार के लिए हाथ जोड़ कर बापू से *क्षमा माँगी।*

उनके नेता ने बापू से कहा: "बापूजी, हम आपके स्वयंसेवक बन कर आपका काम करने को तैयार हैं। बताइये, हम कैसे इसका आरंभ करें?"

गांधीजी ने कहा: "तुम अपने जैसे उत्साही नौजवानों और किशोरों को इकट्ठा करो और देश की एकता के सम्बन्ध में मेरे विचार उनके गले उतारो। फिर सब मिल कर दंगों के स्थानों में जाओ और शहर के लोगों को समझाओ कि हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई सब एक ही ईश्वर के बालक हैं, एक ही भारत माता की सन्तान हैं। इसलिए सब भाई-भाई हैं। धर्म अलग-अलग हो सकते हैं। लेकिन वे सब मानव की एकता का, प्रेम का, मित्रता का तथा भ्रातृभाव का ही उपदेश देते हैं। वे आपस में लड़ना और एक-दूसरे की जान के ग्राहक बनना नहीं सिखाते।"

नौजवान शांति से बापू का उपदेश सुन रहे थे। क्रोध से तने हुए उनके चेहरों पर कोमलता खेलने लगी थी और कुछ समय पहले की *लाल-लाल आँखों में* बापू के दिव्य मंत्र का सौम्य तेज चमकने *लगा था।*

अन्त में बापू ने पूछा: "बोलो, करोगे तुम भारत के कल्याण का यह पवित्र *कार्य? बड़े-से-बड़े खतरे का सामना करके भी क्या समझाओगे मेरी बात कलकत्ते के लोगों को?"*

सब एक स्वर में उत्साह से बोले: *"हाँ बापूजी, बड़े-से-बड़े खतरे का सामना करके भी हम यह काम करेंगे।"*

"भगवान तुम्हें इसके लिए पूरा बल दें।"—बापू ने आशीर्वाद दिया।

* * *

: ३ :

नौजवानों के उत्साह और शक्ति का कोई पार होता है? उत्साह, शक्ति और साहस के तो वे अवतार ही होते हैं। *चाहिए कोई माई का लाल उनकी इन* शक्तियों को सही दिशा में मोड़ने वाला। फिर तो उनसे समाज और राष्ट्र की सेवा का बड़े-से बड़ा काम करा लीजिए।

गांधीजी की प्रेरणा से इन नौजवानों ने कलकत्ते के सैकड़ों अन्य नौजवानों, किशोरों और बालकों का एक बड़ा दल संगठित कर लिया। उन्हें गांधीजी के मंत्र की दीक्षा दी और २५-५० स्वयंसेवकों की टुकड़ियाँ बना कर निकल पड़े कलकत्ते की सड़कों पर। देश के भले का विचार रखने वाले और सब जातियों के मेलजोल में ही राष्ट्र का हित देखने वाले दूसरे नेताओं का साथ तो उन्हें मिला ही।

फिर क्या था? दंगा-फसाद, मारकाट और ईर्ष्या द्वेष के जो काले बादल कलकत्ते पर छा गये थे, वे देखते ही देखते बिखर गये और "भारत माता की जय", "महात्मा गांधीजी की जय", "हिन्दू मुसलमान भाई भाई" के बुलन्द नारों से कलकत्ते के मुहल्ले गूंज उठे। नौजवानों और किशोरों का यह जोश बिजली की गति से शहर के स्त्री-पुरुषों और बालकों में फैल गया। और सभी के मुंह से "हिन्दू-मुस्लिम भाई-भाई" का स्वर फूटने लगा।

गांधीजी का अपना प्रयत्न तो चल ही रहा था। वे दंगों के स्थानों में जाते थे, अत्याचार के शिकार बने लोगों को ढाढ़स बंधाते थे और दोनों कौम के नेताओं से अपनी-अपनी कौम के लोगों को सच्चा रास्ता बताने की अपील करते थे। और शाम को प्रार्थना सभा में

ग्रामभारती

• धीरेन्द्र मजूमदार

गाँव के बाबू लोग अपने बच्चों को 'ग्रामभारती' में भेजते नहीं थे, फिर भी उसकी प्रगति को देख कर उनमें काफी संतोष था और दूसरे साल खेती के लिए उन्होंने दो बीघा जमीन बच्चों के लिए अलग कर दी। बच्चे मिल कर उत्साह से उसमें खेती करने लगे। इससे कृषि विज्ञान तथा देश के भिन्न भिन्न आर्थिक प्रश्न सुलझाने के लिए भिन्न भिन्न प्रसंग उपस्थित होने लगे और बच्चों का बौद्धिक स्तर ऊँचा उठा। लेकिन बच्चों की इस दिलचस्पी के साथ मेहनत करने से एक दूसरी ही समस्या खड़ी हो गयी। वह यह कि उनके माता-पिता के मन में लालच का उदय होने लगा। जो बच्चे पहले घर का काम नहीं करते थे, वे 'ग्रामभारती' में विजय भाई और दूसरे लोगों के साथ जब मेहनत करने लगे और उसके फलस्वरूप अपने हिस्से के प्याज, पाट आदि सामग्री घर ले जाने लगे तब उन्होंने समझा, अगर ये बच्चे मेहनत करके पैदा कर सकते हैं, तो 'ग्रामभारती' में क्यों मेहनत करें! घर के काम में क्यों न करें! यह सोचना धीरे-धीरे बढ़ने लगा और किसी-न किसी बहाने वे अपने बच्चों के लिए शाला से छुट्टी लेने लगे! यह छुट्टी इतनी अधिक होने लगी कि बाद में विजय भाई के लिए दो बीघे की खेती भी सम्भालना कठिन हो गया।

पढ़ाई के साथ कमाई भी

हम जब बच्चों के पालकों को समझाते थे, तो वे विचार समझ जाते थे और कुछ दिन के बाद फिर वही पुराने ढर्रे पर चले जाते थे। काफी दिनों तक इस प्रकार से समझा-समझा कर काम चला और किसी तरह भदई की फसल सभाल पाये। फसल काटने के बाद हम लोग इस प्रश्न पर फिर से विचार करने लगे। हमने देखा कि बच्चों को भी घर के कामों में अधिक दिलचस्पी है, बनिस्बत 'ग्रामभारती' की खेती के। यद्यपि भदई की फसल में उनका हिस्सा काफी सतोषजनक था, उनका हिस्सा इतना अधिक था कि वह गाँव भर की चर्चा का विषय रहा। जो कोई भी मुझसे मिलता था, यही कहता था कि आपने तो बहुत बड़ी बात कर दी! पढ़ाई के साथ-साथ इतनी कमाई हो जाय, तो कहना ही क्या!

दो विभाग

यह सब हुआ, लेकिन न बाबू लोगों ने अपने बच्चे भेजे और न 'ग्रामभारती' के बच्चों की हाजिरी के रवैये में कोई परिवर्तन ही हुआ। घूम-फिर कर पालक और बच्चे, दोनों इस बात पर आ जाते थे कि घर का काम ही करना है। हम लोगों ने सोचा कि 'ग्रामभारती' में प्रथम श्रेणी और द्वितीय श्रेणी के रूप में दो विभाग रखे जायँ। प्रथम विभाग में वे बच्चे रहें, जो २४ घंटे गुरुकुल में ही रहें, सिर्फ खाना खाने के लिए घर जाय। अर्थात् हमने 'ग्रामभारती' के साथ एक 'सूखा छात्रावास' का भी सिलसिला शुरू किया। हमने सब पालकों से कहा कि जिन बच्चों को वे घर के काम से खाली करके गुरुगृह में चौबीस घंटे रख सकेंगे, वे प्रथम श्रेणी के विद्यार्थी होंगे। वे 'ग्रामभारती' की भूमि पर खेती करके सुव्यवस्थित खेती का विज्ञान सीखेंगे और साथ ही साथ प्रातःकाल और रात्रि-काल में गणित, भाषा आदि भी पढ़ेंगे। द्वितीय श्रेणी के बच्चे वे होंगे, जो केवल प्रातः और रात्रिकाल में पढ़ने आयेंगे और बाकी समय में घर के काम करेंगे। हमने सोचा कि इतने दिन के सांस्कृतिक विकास से बच्चों की स्थिति ऐसी हो गयी है, कि घर के काम को शिक्षा के माध्यम के रूप में पहले से अधिक व्यवस्थित कर सकेंगे। पालकों ने दो-तीन दिन तक विचार किया। वे मानते थे कि अगर पूरा समय विजय भाई के साथ बच्चे रहें, उनके साथ काम करें और पढ़ें तो बच्चों में उत्पादन-शक्ति और सांस्कृतिक विकास, दोनों काफी बढ़ेंगे। लेकिन परम्परागत स्वार्थ उनके इस विचार को भी दबा देता रहा। आखिर में १२ में से ८ बच्चों के पालकों ने कह दिया कि वे अपने बच्चों को प्रथम श्रेणी में ही रखना चाहते हैं और धीरे धीरे ११ बच्चे उसमें हो गये। जो एक बच्चा शामिल नहीं हुआ, वे दो भाई थे। उनके पिता ने छोटे बच्चे को 'ग्रामभारती' में शामिल करके बड़े बच्चे को घर के काम में लगा दिया। इससे स्पष्ट है कि लोग निश्चित रूप से 'ग्रामभारती' की प्रक्रिया का महत्त्व समझने लगे थे।

ज्यादा आराम क्यों?

बच्चों के पूरे समय के लिए छात्रावास में आ जाने पर उनके जीवन पर प्रभाव डालने का मौका अधिक मिलने लगा और उनका सांस्कृतिक विकास तेजी से आगे बढ़ने लगा। खेती का काम भी व्यवस्थित होना लगा। लेकिन इसमें से दो एक ऐसी समस्याएँ खड़ी हुई, जिस पर हरएक नयी तालीम के सेवक को विचार करने की आवश्यकता है। बच्चे जब घर के काम में लगे रहते थे, उस समय जितना आराम चाहते थे, उससे अधिक आराम यहाँ चाहने लगे। यह सही है कि 'ग्राम भारती' में जो मिहनत करते थे, उसका फल उन्हीं को मिलता था और प्रत्यक्ष रूप में था, जब कि घर के काम का कोई नतीजा उन्हें दिखाई नहीं देता था। फिर भी हजारों वर्ष की व्यक्तिगत सम्पत्तिवादी मनोवृत्ति के कारण 'ग्रामभारती' के काम में घर के काम के जैसी अभिरुचि न पैदा हो सकी। हम भी मानते हैं कि दैनिक कार्यक्रम में हरएक को विश्रान्ति चाहिए, इसलिए इस समस्या पर हमने अधिक ध्यान नहीं दिया और उनके लिए उतने आराम की व्यवस्था कर दी।

सांस्कृतिक स्तर में फर्क

लेकिन दूसरी समस्या अधिक चिन्तनीय हो गयी, वह यह कि हमारे साथ रहने के कारण उनमें सफाई की आदत, सुव्यवस्थित ढंग से रहने का अभ्यास तथा सामाजिक शिष्टाचार के विकास के कारण उनका जीवन स्तर घर वालों के जीवन स्तर से काफी ऊँचे हो गये और धीरे-धीरे कुछ लड़कों में ऐसा भी मानस बनने लगा, जिससे वे घर के दूसरे लोगों को घृणा करने लगे। मैंने सुना था कि किसी कालेज के छात्रावास के एक लड़के से उसके पिता मिलने आये थे, उसके लड़के ने अपने साथियों को कह दिया कि घर का नौकर उनसे मिलने आया था! मैं मानता था कि शहर के आडम्बरपूर्ण इमारत और जीवन क्रम के कारण लड़कों में ऐसी मनोवृत्ति बनती है! लेकिन गाँव में किसान जैसे ही छह-सात घंटे खेत में काम करने वाले तथा अपने घर की झोंपड़ी जैसे ही स्थान पर रहने वाले बच्चों के मन में भी जब ऐसी मनोवृत्ति पैदा होती है, तब शिक्षा पद्धति के बारे में ही विचार करने की आवश्यकता हो जाती है। विचार कर किसी निश्चित नतीजे पर पहुँचना कोई आसान काम नहीं है। हम चाहे जितना खेती बाड़ी आदि उत्पादक श्रम करें और चाहे जितनी टूटी झोंपड़ी में रहें, हमारा सांस्कृतिक स्तर अवश्य ही ऊँचा रहेगा और हमारे सम्पर्क में तालीम पाये हुए बच्चों का स्तर भी ऊँचा ही हो जायेगा। फिर जब ये बच्चे घर के लोगों के मैले और अव्यवस्थित जीवन को देखेंगे, तो स्वाभावतः अपने को कुछ अलग समझने लगेंगे। हम चाहे कोई भी शिक्षा पद्धति को अपनायें, शिक्षित बच्चे, निस्सन्देह विकसित संस्कृति के होंगे और उनका मेल घर में दूसरे लोगों से नहीं बैठेगा। जब स्थिति ऐसी है, तब शिक्षा द्वारा समाज में भेदभाव के निराकरण की लक्ष्य पूर्ति तो दूर रही, बल्कि हम तत्काल ही शिक्षा द्वारा परिवार में ही भेद भाव पैदा कर देते हैं। कहते हैं 'चले थे हरि भजन को, ओटने लगे कपास', उसी तरह हम 'ग्रामभारती' द्वारा चले थे सामाजिक विषमता का निराकरण करने, लेकिन उस क्रिया द्वारा हमने पारिवारिक विषमता का ही निर्माण कर डाला!

इस प्रश्न पर हम लोग गम्भीरता से सोचने लगे, आपस में चर्चा करने लगे, लेकिन कोई तात्कालिक हल नहीं निकाल सके। पूरा परिवार ही नयी तालीम का विद्यार्थी हो, यह विचार यद्यपि पहले ही हमारे मन में आ गया, लेकिन उसका तुरन्त कोई छोर न दिखाई देने के कारण उपयुक्त परिस्थिति के बावजूद बच्चों के शिक्षण को बन्द करने की बात सोच नहीं सकते थे। लेकिन इस बीच कुछ दूसरी परिस्थितियों ने हमको फिर से पारिवारिक शिक्षण की दिशा में सोचने के लिए प्रेरित किया। यद्यपि पालकों ने बहुत उत्साह से बच्चों को पूरे समय के लिए 'ग्रामभारती' के छात्रावास में शामिल कर दिया था, तथापि व्यक्तिवादी संस्कारों के कारण धीरे धीरे बच्चे गैरहाजिर होने लगे और दो-तीन महीने में फिर उसी स्थिति पर पहुँच गये, जिस स्थिति पर से 'सूखा छात्रावास' की कल्पना मुखरित हुई थी। बच्चे फिर से केवल पढ़ने के लिए हाजिर होते थे। उस परिस्थिति के कारण आखिर हमने निर्णय ही कर डाला कि बच्चों को घर से अलग करके तालीम की व्यवस्था समग्र नयी तालीम की पद्धति में नहीं बैठेगी। और एक दिन बच्चों को बुला कर उनसे कह दिया कि केवल पढ़ने के लिए जब गाँव में स्कूल मौजूद है, तो फिर हम केवल पढ़ाई का काम नहीं करेंगे और गाँव में जो स्कूल चल रहा है, उसमें जाकर वे भरती हो जायँ। हमने गाँव भर के लोगों को कह दिया कि "केवल पढ़ने के लिए गाँव का स्कूल काफी है उसके लिए हम 'ग्रामभारती' नहीं चलायेंगे। इतनी सेवा हम अवश्य कर देंगे कि कोई भी छात्र कभी भी हमारे पास मदद के लिए आ जायेगा तो हम मदद अवश्य कर देंगे।"

इस प्रकार साल भर के अनुभव के बाद अलग से बच्चों की तालीम के कार्यक्रम को बन्द करके पूरे परिवार की तालीम के विचार को ग्रामवासियों के सामने रखना

अहिंसा और प्रेम के उपदेश की गंगा बहाते थे।

इन सब प्रयत्नों का दो ही दिन में आश्चर्यजनक परिणाम आया। १५ अगस्त, १९४७ का दिन कलकत्ते के लोगों के लिए शान्ति का और प्रेम का सन्देश लेकर आया। प्रातःकाल से ही हिन्दू और मुसलमान प्रेम से गले मिलने लगे और धर्म तथा कौम के भेद को भूल कर साथ-साथ मंदिरों और मसजिदों में जाने लगे।

लड़ने वाले हिन्दू नेताओं की सारी बाजी ही पलट गई। वे परेशान थे कि गांधी ने यह कैसा जादू कर दिया!

लेकिन बापू तो इस सबके पीछे ईश्वर का ही चमत्कार देखते थे।

शाम की प्रार्थना-सभा में उन्होंने लाखों लोगों के सामने कहा :

> "आज का दिन हमारे लिए परम सौभाग्य का दिन है। ईश्वर की कृपा से जो आजादी हमें मिली है, वह तभी टिकेगी जब हम जाति, धर्म, प्रान्त आदि के भेदों को भूल जायेंगे और शुद्ध हिन्दुस्तानी बन कर भारत की सेवा करेंगे।

कलकत्ते में आज जो कुछ हो रहा है, वह मेरा चमत्कार नहीं है। परन्तु उस परम प्रभु का चमत्कार है। उसी ने दोनों कौमों को प्रेम से मिल जाने की पवित्र प्रेरणा दी है। मुझ जैसा बूढ़ा मनुष्य अकेला क्या कर सकता था!

भगवान् करे आज की यह शांति, दोनों कौमों का यह प्रेम सदा बना रहे।"

(सर्वोदय प्रेस सर्विस, इंदौर)

शुरू कर दिया। पूरा परिवार ही 'ग्राम-भारती' का विद्यार्थी हो सकता है। इस नतीजे पर हम किन परिस्थितियों के अनुभव से पहुँचे, यह एक दिलचस्प विषय है।

(१) सामूहिक खेती के अनुभव से यह प्रतीत हुआ कि गाँव के लोगों के साथ जो पारस्परिक सम्बन्ध है, उसको देखते हुए परिवार में आपस का सहकार किसी प्रकार के राजनैतिक कानून या आर्थिक कार्यक्रम द्वारा विकसित नहीं हो सकता है। इसके लिए समग्र शिक्षण की आवश्यकता है और यह शिक्षण व्यक्तिगत न होकर पारिवारिक ही हो सकता है। क्योंकि समाज की इकाई व्यक्ति नहीं, परिवार है।

(२) अगर गाँव के सारे कार्यक्रम शिक्षा के माध्यम हैं, तो आज की परिस्थिति में यह कार्यक्रम निस्सन्देह पारिवारिक धन्धे ही हैं। 'ग्रामभारती' के लिए अलग धन्धा नहीं बनाया जा सकता। अगर वैसा बनाया गया, तो उस धन्धे के लिए शिक्षार्थियों की उतनी दिलचस्पी नहीं हो सकती है, जितनी कि अपने घर के धन्धे के प्रति रहती है और यह स्पष्ट है कि बिना अभिरुचि के कोई भी धन्धा शिक्षा का माध्यम नहीं हो सकता। अगर पारिवारिक धन्धा शिक्षा का माध्यम हैं, तो चूंकि परिवार का हरएक सदस्य उस धन्धे में लगा रहता है, इसलिए धन्धे का विकास पूरे परिवार के विकास से ही सध सकता है।

(३) अगर समाज का सांस्कृतिक विकास करना है, तो वह विकास सारे समाज के साथ-साथ हो चल सकता है। बच्चों को अलग से विकसित करने की प्रक्रिया का परिणाम क्या होता है? यह हम ऊपर बता चुके हैं। इस परिस्थिति की माँग हो जाती है कि समग्र नयी तालीम की इकाई पूरा परिवार ही हो।

उपर्युक्त तीनों कारणों से हमने निश्चित रूप से यह तय कर लिया है कि परिवार-शिक्षण का सन्दर्भ निकाल कर ही व्यवस्थित तालीम का प्रारम्भ किया जाय और जब तक ऐसा सन्दर्भ नहीं निकलता है, तब तक उस सन्दर्भ का निर्माण ही समग्र नयी तालीम का कार्यक्रम माना जाय। हमने अब यह निश्चय किया है कि हम लोग अपने स्वावलम्बन के लिए सबके साथ खेती करें, पारिवारिक उद्योग चलायें और सामूहिक खेती के भूमि-सदस्य और श्रम-सदस्य परिवार को अपना विद्यार्थी मान कर उनसे सम्पर्क करें, उनकी खेती-बारी, घर द्वार, आहार-विहार के तरीकों में सुधार करने की कोशिश करें और इसी कोशिश के सिलसिले में कुछ व्यवस्थित तालीम की पद्धति का छोर ढूँढ़ें।

इस विचार से बलिया के सब साथी उत्साहपूर्वक सहमत हैं। अब देखना है कि समग्र नयी तालीम के इस नये अभियान का क्या परिणाम निकलता है!

(गतांक से समाप्त)

चम्बल घाटी शान्ति-समिति

उत्तर प्रदेश के बाह क्षेत्र में खोरी आश्रमद्वारा श्री रामदयाल, श्री बदनसिंह की परती जमीन आबाद करायी गई और इस साल का पूरा गल्ला उनके परिवारों को दे दिया, ताकि उनके परिवारों का पोषण हो। श्री कन्हो का परिवार खेड़ा राठौर में आबाद है और वे अपनी खेती स्वयं करा रहे हैं। अन्य भाई जो उत्तर प्रदेश क्षेत्र के रहने वाले हैं, उनके परिवार वाले स्वयं अपनी खेती कराते हैं। *उनके गाँव के झगड़े आदि की देखभाल तथा विरोधियों को समझाने-बुझाने का काम समिति की ओर से हो रहा है।* करीब-करीब सभी भाइयों के गाँव में स्थिति सम्हल रही है। खोहरी गाँव में रामदयाल व बदनसिंह का परिवार अभी आबाद नहीं कराया जा सका। इस दिशा में समिति का प्रयत्न चल रहा है।

मध्य प्रदेश क्षेत्र के श्री भगवान सिंह का परिवार अभी अपने गाँव में नहीं पहुँच सका है, क्योंकि विरोधियों कि स्थिति अभी तक अनुकूल नहीं हो पाई है। उनके परिवार वाले अपने रिश्तेदारी में रह रहे हैं। गाँव की जमीन बटाई पर होती है और उसका गल्ला उनको मिल जाता है। फिर भी आर्थिक कठिनाइयाँ उनके सामने हैं। श्री लोकमन का परिवार भिण्ड में रहता है। उनका बच्चा पिछले साल विसर्जन आश्रम, इन्दौर में रखा गया। लेकिन वहाँ इस साल वह नहीं जा रहा। उसको किसी कामकाज में लगाने का प्रयत्न किया जा रहा है।

भूदान-यज्ञ परिषद् मध्य प्रदेश ने इन भाइयों के पुनर्वास हेतु मुरैना जिले में जमीन देना तय किया है। उसको आबाद करने के लिए और उसे देखने के लिए श्री भगवत भाई व श्री चरणसिंह के साथ श्री मोहरमन, श्री खबेरे, श्री किशन आदि को भेजा गया है। श्री लच्छी के परिवार की देखरेख उनके बहनोई श्री शम्भूदयालजी कर रहे हैं। खबेरे का परिवार भिण्ड में आबाद है। उत्तर प्रदेश क्षेत्र के पुनर्वास की जिम्मेदारी श्री भगवत भाई के जिम्मे है और मध्य प्रदेश क्षेत्र का काम श्री चरण सिंह और श्री लल्लू दद्दा कर रहे हैं। जिन बागी परिवारों की आर्थिक स्थिति ज्यादा खराब है और जिनके बच्चे पढ़ रहे हैं, उन बच्चों को श्री आर्यनायकमजी द्वारा दी गई सहायता दी जा रही है।

संस्थाओं एवं साथियों द्वारा समिति को सहयोग

समिति के काम में प्रारम्भ से उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल का विशेष सहयोग रहा। करीब-करीब उत्तर प्रदेश के जितने साथी यहाँ काम कर रहे थे, उनकी जिम्मेदारी मंडल ने उठाई थी। मगर मंडल के विघटन के बाद बीच में कुछ कार्यकर्ता चले गये और अब शेष छः कार्यकर्ताओं की जिम्मेदारी वर्तमान सर्वोदय-मंडल ने ली है। मगर अपनी कठिनाइयों के कारण वे इसे इस समय निभा नहीं पा रहे हैं। मध्य प्रदेश सर्वोदय-मंडल की इच्छानुसार मध्य प्रदेश गान्धी स्मारक निधि ने पिछले *वर्ष कार्यकर्ताओं एवं अन्य मदों में* छाटे सात हजार रु० की मदद दी। इस वर्ष उससे नियमित सहायता प्राप्त नहीं हो रही है। समिति की ओर से सर्वोदय-मंडल द्वारा उनसे निवेदन किया गया है, जो विचाराधीन है। अभी तक कोई निश्चित स्वीकृति समिति-कार्यालय को प्राप्त नहीं हुई है।

मध्यभारत भूदान परिषद् ने मुक्त बागी परिवारों के पुनर्वास के लिए प्रति परिवार २० बीघा पक्की जमीन देना तय किया है और साधन-स्वरूप उनको मदद देने के लिए डाक्टर सुशीला नायर ने ५००० रु० देना मंजूर किया है। करीब ४० बच्चों को वजीफे के तौर पर प्रतिमास १६॥ रुपये की सहायता श्री आर्यनायकमजी द्वारा प्राप्त हुई है। केन्द्रीय कार्यालय भिण्ड के लिए एक जमीन का प्लाट श्री भूताजी ने, जो नगरपालिका के अध्यक्ष हैं, देना तय किया है। उत्तर प्रदेश गांधी स्मारक निधि की ओर से तीन ग्रामसेवा-केन्द्र, जिनमें ५ भाई काम कर रहे हैं, इस क्षेत्र में खोले हैं। पैरवी सम्बन्धी खर्च की पूरी जिम्मेदारी सर्व सेवा संघ की है ही, जिसे वह उठा रहा है। इसके अलावा सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, सुशीला नायर, आशादेवी व आर्यनायकमजी, निर्मला देशपाण्डे, करणभाई, ब्रह्मदेव बाजपेयी आदि का नैतिक एवं वैचारिक सहयोग समिति को प्राप्त हुआ है। *श्री जयप्रकाश नारायणजी की इच्छानुसार* गांधीविद्या संस्थान की ओर से दिल्ली यूनिवर्सिटी के स्नातक श्री राजेन्द्रप्रसाद शर्मा इस क्षेत्र की समस्या का अध्ययन (रिसर्च) कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त पूरे क्षेत्र के विचारशील लोगों का सहयोग हमें प्राप्त रहा है—जैसे सर्वश्री भूताजी व श्रीनाथजी भिण्ड; सर्वश्री शम्भूनाथ चतुर्वेदी व श्रीमती विद्यावती राठौर, आगरा। ग्वालियर, भिण्ड, आगरा, इटावा मुरैना, धौलपुर के वकीलों ने निःशुल्क पैरवी की।

हमारी वर्तमान स्थिति

पैरवी के सम्बन्ध में आगरा में दो मुकदमे चालू होने को हैं। तीन अपीलें इलाहाबाद हाईकोर्ट में सुनवाई के लिए हैं। एक मुकदमा धौलपुर अदालत में चल रहा है। तीन मुकदमे मुरैना जिले में चालू हैं, और भी चलने वाले हैं। ग्वालियर हाईकोर्ट में एक केस की सुनवाई होना बाकी है। जानकारी के आधार पर शीघ्र ही कुछ भाइयों पर राजस्थान में मुकदमे चालू होने को हैं। राजस्थान के लिए समग्र सेवा संघ के मंत्री श्री बद्रीप्रसाद स्वामी को सहयोग देने के लिए निवेदन किया गया है। बंदी भाइयों के सन्तोष एवं मानसिक विकास के लिए समय-समय पर भेंट करने के लिए श्री डा० सुशीला नायर, आशादेवी व निर्मला देशपांडे से समिति की ओर से निवेदन किया गया है। समिति की आर्थिक कठिनाइयों के सम्बन्ध में विनोबाजी व अध्यक्ष सर्व सेवा संघ को लिखा गया है।

आत्मसमर्पण के बाद राज्य-सरकारों का अनुकूल रुख न होने के कारण बाबा विनोबाजी की इच्छानुसार समिति ने आगे हुए २० बागी भाइयों की पैरवी व पुनर्वास की ही जिम्मेदारी उठायी है। इस दृष्टि से अभी तक समिति का कार्य चल रहा है और इस काम को निभाने के लिए समिति पूरी तरह काम कर रही है। मगर सभी सहयोगियों तथा नेताओं का सहयोग समिति के लिए अपेक्षित है। समिति यह भी आशा करती है कि राज्य सरकारें एवं केन्द्र-सरकार भी इस काम में समिति का अवश्य सहयोग करेंगी। इस दृष्टि से केन्द्रीय व राज्य सरकारों से मिलने-जुलने का काम हम कर रहे हैं। रचनात्मक संस्थाओं को भी इस क्षेत्र में काम करके समिति के काम को सहयोग देने के लिए निवेदन किया गया है।

अगले वर्ष के लिए, यानी सन् '६२-'६३ के लिए समिति ने १५ जुलाई की ग्वालियर की बैठक में श्री लल्लू सिंहजी को समिति का अध्यक्ष एवं महावीर सिंहजी को मंत्री चुना है। समिति के शेष सभी सदस्यों ने मिल कर अपने-अपने कामों का बँटवारा किया है, जिसके अनुसार आगे का काम चलेगा।

समिति के हिसाब-किताब व पत्र-व्यवहार की जिम्मेदारी श्री केदारनाथजी पर है, जो आगरा से काम कर रहे हैं। श्री रामनारायण त्रिपाठी भिण्ड-कार्यालय में रहते हैं। खोरी आश्रम की जिम्मेदारी श्री भगवतभाई पर है। उनके साथ वहाँ श्री अम्बाप्रसादजी तथा गुनेश्वर भाई हैं। श्री नित्यानन्दजी पूरे क्षेत्र में शान्ति प्रचार हेतु घूमते रहते हैं।

(गतांक से समाप्त) —महावीर सिंह,
मंत्री

विनोबा के साथ पाँच दिन

• नारायण देसाई

पाँच महीनों के बाद अभी विनोबा के साथ पाँच दिन असम के उत्तर कामरूप जिले में पदयात्रा करने का मौका मिला। विनोबा का उत्साह और ध्यान देख कर एक बार फिर हमने नया उत्साह अनुभव किया।

काशी से जब चला, तभी सुन चुका था कि विनोबा को पाकिस्तान जाने की इजाजत मिल गयी है। वहाँ पहुँचते ही विनोबा ने कहा, "अच्छा बताओ, तुम ही सलाह दो, हम जायें या नहीं? जाय तो कब जायँ, कहाँ से जाय, किसको साथ लेकर जायँ, साधन क्या-क्या हों, सन्देश क्या हो?"

मैंने कहा, "मुझे यह नहीं मालूम था कि अभी जाना या नहीं जाना, यह प्रश्न भी हुआ है। बाकी सारे सवाल तो तफसील के हैं, जो बाद में भी सोचे जा सकते हैं। लेकिन मैं मानता हूँ कि अब जाना तो निश्चित ही हो जाना चाहिए।"

विचार छोड़ दिया!

मैंने उनसे कहा, "जितने समय में मैं काशी से यहाँ पहुँचा, उतने समय में वायुयानी इलाहाबाद से दिल्ली, दिल्ली से बम्बई और बम्बई से लन्दन पहुँचे होंगे।"

विनोबा ने हँस कर कहा, "हाँ, और मैं उतने ही समय में गौहाटी से यहाँ तक पहुँचा हूँ! यात्रा के हम सब लोगों के साधन अलग अलग हैं। इसलिए मैं यह कह रहा हूँ कि अब घूम घूम कर विचार को पहुँचाने का जमाना भी नहीं रहा। इसलिए मैंने तो विचार करना ही छोड़ दिया है। अब तो मैं सिर्फ चलता ही हूँ।"

मैंने कहा, "आज का जमाना ऐसा है, जिसमें सिर्फ विचार ही काम कर सकते हैं। इसलिए विचार करना ही छोड़ देंगे तो कैसे चलेगा?"

विनोबा ने कहा, "अरे भाई, मैंने विचार छोड़ दिया। वह सब दूर फैल जायगा।"

मैंने पूछा, "बर्ट्रेण्ड रसेल के पत्र का आपने कुछ उत्तर भेजा?"

उन्होंने कहा, "उसका उत्तर क्या भेजना था? वे तो चाहते हैं कि दिल्ली वगैरह स्थानों में कुछ काम हो। वह ठीक ही है। ऐसे काम होने चाहिए। उस पत्र का उत्तर तो असल में सर्व सेवा संघ को देना चाहिए।"

मैंने कहा, "उस पत्र का असली उत्तर तो आपकी पाकिस्तान-पदयात्रा है।" विनोबा ने स्मित कर इस विचार से अपनी सहमति प्रकट की।

पदयात्रा के समय शांति-सेना, भूदान-आन्दोलन तथा अन्य कई विषयों पर बातचीत चलती रहती थी। शांति-सेना के बारे में उन्होंने कहा कि उसके तीन तात्कालिक काम समझे जाने चाहिए। (१) सारे देश का परिचय; (२) अगर यह न हो सके, तो कम-से-कम दस लाख की जनसंख्या का सेवामय परिचय; (३) और यह भी न हो सके तो हिन्दुस्तान के सभी ऐसे स्थान जहाँ अशान्ति होने की सम्भावना है, हमारी शांति-सेना की प्रवृत्ति के केन्द्र बनें।

विनोबाजी ने यह विचार भी प्रकट किया कि शांति-सेना का मुख्य काम आर्थिक कारणों से हुई अशान्ति का शमन करना है।

इशारे की जरूरत

आन्दोलन के सम्बन्ध में उन्होंने कहा कि आर्थिक अशान्ति को मिटाने के लिए एक कार्यक्रम तो हमने भूदान, ग्रामदान आदि द्वारा तो उठा ही रखा है। उस कार्यक्रम को अगर हम चाहें तो बढ़ा भी सकते हैं। नगरों के कार्यक्रम आदि को उसमें मिलाया जा सकता है। मैंने कहा, "उद्योग के सम्बन्ध में हमारे कार्यक्रम को इसके साथ में जोड़ा नहीं जा सकता क्या?"

उन्होंने कहा, "जरूर जोड़ा जा सकता है। लेकिन हम एक काम को तभी उठाते हैं, जब उस बारे में बल का अनुभव करते हैं। और बल तब अनुभव करते हैं, जब उसके बारे में हमें कोई इशारा मिले। उद्योगों के कार्यक्रम के सम्बन्ध में ऐसा कोई इशारा हमें अभी तक नहीं मिला है। अगर कोई बड़ा उद्योगपति अपने उद्योग का ट्रस्टी बनना चाहता, तो मैं उसे इशारा समझता।"

कार्यक्रम के बारे में और चर्चा करते हुए कहा कि निर्माण के काम में हमको अधिक उलझना नहीं चाहिए। मैं ही अमुक नमूने का काम करके दिखाऊँगा, इसमें न सिर्फ मोह-चक्र है, लेकिन अहंकार-चक्र भी है। इन कामों में हमें दिलचस्पी लेनी चाहिए, लेकिन फँसना नहीं।

नौगाँव का ग्रामदान

आजकल ग्रामदान का वातावरण असम में खासा अच्छा बना हुआ है। हमारी पदयात्रा के दरमियान नौगाँव नामक एक ग्राम आया, जो असम की असेंबली के स्पीकर श्री महेन्द्र मोहन चौधरी का गाँव है। विनोबा ने पहले से कहा था कि मैं नौगाँव का ग्रामदान चाहता हूँ। श्री चौधरी तथा अन्य कई साथी उस गाँव के ग्रामदान के पीछे लगे हुए थे। जिस दिन विनोबा नौगाँव पहुँचे, उस दिन उस गाँव के चार टोलों में से तीन टोलों ने ग्रामदान कर दिया था और चौथे में दस्तखत चल रहे थे। असम के कानून के अनुसार तीन टोलों के अलग अलग ग्रामदान भी हो सकते हैं। विनोबाजी ने कहा कि यहाँ से ग्रामदान पाने की आशा तो व्यक्त की थी, लेकिन ग्रामदान न मिलता तो भी मुझे आश्चर्य नहीं होता। बारडोलि का उदाहरण देते हुए उन्होंने कहा कि 'सरदार' को अपने गाँव में सफलता नहीं मिली। लेकिन फिर भी यहाँ सफलता मिल गयी। इसका कारण यह है कि चौधरीजी 'प्रोटेस्ट' नहीं हैं और हमारा यह कार्यक्रम केवल सन्तों और महापुरुषों का नहीं, लेकिन सर्व-साधारण गृहस्थ लोगों का है।

नौगाँव ४००-५०० घरों का गाँव होगा। उस ग्रामदान का असर इर्दगिर्द के क्षेत्र पर बहुत गहरा पड़ेगा। उन्हीं दिनों अमलप्रभा बहन असम के और एक हिस्से में गयी थीं, जहाँ विनोबाजी की गैर-हाजिरी में ग्रामदान का काम चल रहा था। मेरे आने से पहले अमलप्रभा बहन वापिस आयीं। उनके चेहरे पर सोलह महीने के लगातार प्रवास की थकान तो दिखाई दी, लेकिन उनका उत्साह न्यारा था। वे अपने साथ कई नये ग्रामदानों की सूचना लायी थीं और उनका यह भी कहना था कि विनोबाजी के जाने के बाद भी असम में बराबर ग्रामदान आंदोलन चलता रहेगा। यही विश्वास उनके और साथियों में भी मैंने पाया।

अनुप्रवेश

बरपेटा में वहाँ के कांग्रेस-कार्यकर्ताओं की सभा में विनोबाजी ने एक नया पहलू खोल कर रख दिया। उन्होंने कहा कि आजकल असम का सबसे बड़ा राजनैतिक प्रश्न विदेश से घुस आने वाले लोगों के अनुप्रवेश—'इन्फिल्ट्रेशन'—का है। असम की ६०० मील की सीमा पर फौज खड़ी कर के अनुप्रवेश को रोकना भी बहुत व्यावहारिक मालूम नहीं होता और इसलिए यह समस्या सब नेताओं के सिर पर सवार है। ग्रामदान में इस समस्या का हल है। बाहर से आने वाले लोग यहाँ के लोगों से जमीन खरीद कर फिर बस जाते हैं, तभी न 'अनुप्रवेश' कर सकते हैं! ग्रामदानी गाँवों में जमीन खरीदने या बेचने का काम कोई व्यक्ति नहीं कर सकेगा। सारी गाँव-सभा मिल कर गाँव की जमीन की व्यवस्था करेगी। इस हालत में उसमें अनुप्रवेश करना असम्भव होगा। ग्रामदानी गाँव अपने इर्दगिर्द की जमीन की सुरक्षा की जिम्मेवारी भी ले सकते हैं। फिर रह जायगी वह जमीन, जो गाँवों से दूर, जंगलों में पड़ी है। उतनी जमीन की रक्षा की जिम्मेवारी सरकार अलग से उठा ले सकती है। इस प्रकार ग्रामदान के आर्थिक और आध्यात्मिक लाभ के अलावा असम में एक राजनैतिक लाभ भी है।

जीवन-संगीत का अर्थ

प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटी के अध्यक्ष श्री गोस्वामी पदयात्रा में कुछ दिन साथ थे। यात्रा के दौरान में एक दिन उन्होंने विनोबा से पूछा, "जीवन-संगीत का अर्थ क्या है?"

विनोबा ने हँस कर जवाब दिया, "कौन, गोस्वामीजी यह सवाल पूछ रहे हैं! जीवन-संगीत का मतलब है, कांग्रेस ने ग्रामदान के संबंध में जो प्रस्ताव पास किया, उस पर अमल करना। जीवन-संगीत का अर्थ है मन, वचन और कर्म में एकरागिता होना। कांग्रेस ने प्रस्ताव पास कर वचन तो दिया। प्रस्ताव पास हुआ है, इसी का अर्थ यह है कि अधिकांश लोगों के मन में भी यही चीज बैठी हुई है। अब सवाल सिर्फ उस प्रस्ताव पर कर्म करने का है। अगर यह हो जाता है तो जीवन-संगीत पूर्ण हो जाता है।"

क्षुरस्य धारा

मुझे रेलयात्रा अच्छी लगती है। बंबई मेल यदि मुझे २६ घंटे में काशी पहुँचाती है, तो मैं 'वाराणसी एक्सप्रेस' पसंद करता हूँ, जिसमें ३२ घंटे लग जाते हैं।

मुझे रेलयात्रा अच्छी लगती है, क्योंकि उसमें मुक्ति का अनुभव होता है। बिना काम किये पड़े चले जायें, तो भी हम पर कोई आक्षेप नहीं करता कि तुम वक्त बिगाड़ रहे हो। बिना चले ही वहाँ चलना हो जाता है। रेलयात्रा मुझे अच्छी लगती है, क्योंकि उसमें पदयात्रा की तरह जैसा हूँ उससे कुछ अच्छा बनने या दीखने की कोशिश नहीं करनी पड़ती। रेल के समाज में मैं जैसा हूँ वैसा मान्य हूँ। यहाँ जब मैं चाय पी लेता हूँ, तब मुझे इधर-उधर मुड़ कर यह नहीं देखना पड़ता कि कोई मुझे देख तो नहीं रहा, किसी की सर्वोदयी भावना को मैं धक्का तो नहीं पहुँचाता! मुझे सारे समय यह चिंता नहीं करनी पड़ती कि यह सर्वोदयी साख है या नहीं। रेल में मुझे कोई पूछता है कि "तुम क्या काम करते हो?" तो "नौकरी" कहने से प्रश्नकर्ता को संतोष हो जाता है। देश-सेवा, भूदान-यज्ञ, शान्ति-सेना, सर्वोदय-मिशन आदि कोई आवरण मेरे काम पर नहीं रहता। यहाँ थर्ड क्लास के डिब्बे में जब मैं बीच के रास्ते में, या सीट के नीचे या कभी-कभी संडास के सामने ही बिस्तर लगा देता हूँ, तब मैं सामने बैठे और कइयों से एकता का अनुभव करता हूँ। लेकिन साथ ही साथ उनके बैठे बनने में नीचे आने के भाव के अहंकार का बोझ सिर पर नहीं रहता।

इतने सारे लाभ हैं, इसलिए शायद मेरे कार्यक्रम में कभी-कभी काम के दिन से रेल-यात्रा के दिनों की संख्या बढ़ जाती है।

—नारायण देसाई

ग्राम-स्वराज्य की दिशा में

ग्रामदानी गाँव बेराँई के बढ़ते कदम

प्रभुनारायण सिंह

[पिछले दिनों श्री प्रभुनारायण सिंह खादी-ग्रामस्वराज्य समिति की ओर से ग्रामदानी गाँव बेराँई गये थे। उन्होंने वहाँ जो प्रगति देखी, उसे अपने शब्दों में इस प्रकार प्रस्तुत किया। —सं०]

बिहार के स्व० श्री लक्ष्मी बाबू ने अपनी ऐतिहासिक पदयात्रा में ग्रामदान के विचार को समझाया और उसीके फलस्वरूप बिहार के मुंगेर जिले के तारापुर थाना के अन्तर्गत ५ फरवरी, १९५८ को बेराँई गाँव के लोगों ने अपने गाँव के दान का संकल्प उद्घोषित किया। ग्रामदान के पूर्व बेराँई गाँव उस क्षेत्र में एक कुख्यात था। यहाँ के निवासी बहुत ही बदनाम थे। लोगों का खेत उखाड़ने, मवेशी चुरा लेने तथा चोरी करने में इनकी कुख्याति थी ! इस क्षेत्र में आतंक व्याप्त था।

ग्रामदान के पहले बेराँई गाँव की जनता का जीवन बहुत विपद्ग्रस्त था। आर्थिक, सामाजिक, नैतिक, सभी विचारों से गाँव की जनता बहुत दूर थी। परंतु स्व० श्री लक्ष्मी बाबू के प्रभाव में आकर इस गाँव के लोगों ने ५ फरवरी '५८ से लेकर दिसंबर '६० तक, २ साल ११ महीने का जीवन सामूहिक शक्ति के साथ बिताया है। इतनी अल्प अवधि में इस ग्राम की जनता में आर्थिक, सामाजिक शक्तियों का जो विकास हुआ है, वह किसी भी व्यक्ति को एक क्षण के लिए आश्चर्य में डाल देता है ! आज गाँव का एक-एक बच्चा सारे समाज का बच्चा माना जाता है। सारा ग्राम-समाज परस्पर एक-दूसरे की चिंता रखता है। सभी सबके दुःख में दुखी और सभी की खुशी में खुश रहते हैं।

गाँव का स्वरूप

बेराँई गाँव में ८८ परिवार हैं। इनमें अधिकांश पिछड़ी जाति के लोग हैं। परिवारों का विवरण इस प्रकार है : दुसाध १८, चमार १२, ताँती १०, कोइरी १३, तेली १४, ग्वाला २१, सभी हिंदू धर्म मानते हैं। गाँव की जनसंख्या कुल ४ ० है।

वस्त्र-स्वावलंबन

ग्रामदान की शुरुआत तक गाँव वालों को चरखा और खादी की कोई जानकारी नहीं थी। श्री लक्ष्मी बाबू ने ही सर्वप्रथम चरखा चलाने की प्रेरणा दी। बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ की ओर से चरखा सिखाने की व्यवस्था की गई। प्रथम वर्ष में गाँव के ६१ व्यक्तियों को साधारण चरखे से कताई का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था की गई। गाँव के तीन सौ व्यक्तियों ने चरखा चलाना सीखा। दूसरे वर्ष में अंबर चरखों का प्रशिक्षण प्रारंभ किया गया। आज गाँव में २०० साधारण और ६३ अंबर चरखे चल रहे हैं। इस ४ वर्ष ४ महीने की अवधि में गाँव ने वस्त्र-स्वावलंबन की दिशा में उल्लेखनीय प्रगति की है। दूसरे वर्ष में प्रति व्यक्ति १६ वर्गगज कपड़ा तैयार करने का कृतिमान स्थापित किया, जो आज बढ़कर २२ वर्गगज हो गया है। पूरे गाँव के लोगों ने खादी पहनाना शुरू किया है। दिसम्बर १९६० तक साधारण चरखे पर ३१,७६३ गुण्डियाँ और अंबर चरखे पर ४८,४४८ गुण्डियाँ सूत काता गया। इसके बदले में १७,३८१ वर्गगज खादी ली एवं जीविका-निर्वाह के लिए नकद रूप में ४,१०२ रुपये लिये हैं। वस्त्र-स्वावलम्बन में प्रति व्यक्ति २० वर्गगज खादी प्रतिवर्ष की मान्यता रखी गई है। तीसरे साल में पूरे बारह महीने की कताई से सूत के बदले में १२,००० रुपये की ८००० वर्गगज खादी ग्रामवासियों ने ली है। प्रति व्यक्ति औसत खादी वस्त्र-स्वावलंबन के संकल्प से १८ वर्गगज तक ग्रामवासी पहुँच चुके हैं।

सामूहिक कृषि

गाँव का रकबा ८०० बीघा है, जिसमें इस गाँव के लोगों की जमीन केवल ३० बीघा है। बाकी जमीन दूसरे गाँववालों की है। गाँव वाले २०० बीघा जमीन बँटाई पर जोतते हैं। ग्रामदान होने के बाद जमींदारों ने गाँववालों को बँटाई पर खेत देने से इन्कार कर दिया था और उनमें प्रचार करना शुरू कर दिया कि जो ग्रामदान से बाहर आयेगा, उसको जमीन दी जायेगी ! लेकिन इसका असर केवल ५ परिवारों पर ही पड़ा। वे ग्रामदान के संकल्प से बाहर निकल गये। जमींदारों ने मजदूरी देना भी बन्द कर दिया। ग्रामदान के बाद गाँव में स्थापित ग्राम स्वराज्य समिति ने निर्णय किया कि ८ घंटे से अधिक काम नहीं करेंगे। इसकी भी प्रतिक्रिया जमींदारों पर विपरीत हुई।

प्रथम वर्ष में ४१ बीघे जमीन में खेती की गयी, जिसमें गाँव का हिस्सा ३१५ मन गल्ला था। दूसरे वर्ष में अपनी श्रम-शक्ति से जो सामूहिक पूँजी इकट्ठी हुई, उस रकम से १० बीघे जमीन ग्राम-स्वराज्य समिति ने खरीदी। इस तरह दूसरे वर्ष गाँव की कुल अपनी जमीन ४० बीघा के अलावा ७० बीघा जमीन बँटाई लेकर सामूहिक खेती की गयी, जिसमें गाँव के हिस्से में ९८६ मन १८ सेर गल्ला पैदा हुआ। तीसरे वर्ष ६२ बीघा जमीन ग्राम-स्वराज्य समिति ने सामूहिक पूँजी से खरीदी। इस प्रकार अब गाँव के पास अपनी कुल ४६ बीघा जमीन है।

सामूहिक खेती से ग्रामवासियों को यह विश्वास हो गया है कि यदि साधन की समुचित व्यवस्था हो जाय और गाँव की ४६ बीघा जमीन एक जगह हो जावे तो इसी जमीन में इतना अन्न पैदा हो सकता है कि सारे गाँव के लिए पूरे साल के लिए ५० प्रतिशत अनाज की कमी पूरी हो सकती है।

गृह-निर्माण

सामुदायिक केन्द्र, कार्यकर्ता-निवास, भंडार और अन्न-भंडार, स्कूल आदि भवनों का निर्माण गाँव वालों ने अपने श्रमदान से किया है, जिसकी लागत या मूल्यांकन करने से ५०,००० रुपये होगा।

उत्पादन में वृद्धि

अब गाँव वालों के पास ३४॥ एकड़ अपनी जमीन है और १०० एकड़ जमीन बँटाई की है। यहाँ की मुख्य फसल धान है। पहले की अपेक्षा सामूहिक खेती में डेढ़ गुना उपज अधिक बढ़ी है। पूरे गाँव की जमीन सामूहिक खेती के अंतर्गत है।

औद्योगिक प्रगति

प्रत्येक घर में चरखा चलता है। ६ तकुए के चरखे पर १०-१२ गुण्डी तक सूत कातते हैं। कुछ लोग १४ गुण्डी तक सूत कात लेते हैं। तीन करघे भी चलते हैं। एक तेलघानी भी है। गाँव में एक सामूहिक उद्योग-शाला है। सभी लोग वहीं जाकर ७ घंटे तक सूत-कताई या कपड़ा बुनाई का काम करते हैं। श्रमदान से ही गाँव वालों ने उद्योग-शाला का निर्माण किया है।

धान-कुटाई

ढाई वर्ष की अवधि में गाँव वालों ने धान-कुटाई काफी मात्रा में की है। सर्वोदय सहकारी समिति की देख-भाल के अंतर्गत ओखल-मुसल और ढेकी के सहारे करीब १२ हजार मन धान की कुटाई की गई है। परन्तु धान कुटाई मिल की स्पर्धा में यह काम गिरावट पर है। करीब २१ परिवार इसी के ऊपर आश्रित हैं।

शिक्षा

ग्रामदान होने के पहले गाँव में बच्चों की शिक्षा का कोई प्रबंध नहीं था। ग्राम-स्वराज्य समिति ने गाँव के बच्चों को अनिवार्य शिक्षा देने का निश्चय करके गाँव में एक बुनियादी पाठशाला की स्थापना की। शिक्षण में नित्य दो घंटे शरीरश्रम और चार घंटे बौद्धिक शिक्षण के क्रम से शिक्षा का काम प्रारम्भ किया गया। जुलाई '५८ में पाठशाला की स्थापना हुई। प्रथम वर्ष में ३३, द्वितीय वर्ष में ५३ तथा तृतीय वर्ष में ६५ छात्रों ने पढ़ाई शुरू की।

उद्योग में कताई अनिवार्य रखी गई है। ७ वर्ष के बच्चों से कताई का कार्य अनिवार्य रूप से कराते हैं। इनके द्वारा ७८५४॥ गुण्डी सूत कता है और १५०० वर्गगज खादी बच्चों ने सूत के बदले में ली है। ये बच्चे वस्त्र-स्वावलंबी हो गये हैं। छोटे बच्चों को वस्त्र का आधा खर्च ग्राम समिति से दिया जाता है। बड़े बच्चे समय-समय पर कृषि में भी भाग लेते हैं। उनकी मजदूरी पाठशाला की आय मानी जाती है। ग्राम-स्वराज्य समिति ने अन्य गाँवों के लिए रूई की धुनाई के लिए मशीन रखी है, जिस पर बच्चे ही धुनते हैं। खेत की मजदूरी और रूई की धुनाई से पाठशाला को ७७८ रु० ६५ न. पै. की आय हुई है।

ग्राम-स्वराज्य समिति ने निरक्षरता दूर करने के लिए भी प्रयास किया है। ग्रामदान के पूर्व यहाँ केवल ३१ व्यक्ति साक्षर थे। अब केवल २१ व्यक्तियों को छोड़ कर सभी स्त्री पुरुष साक्षर बनाये जा सके हैं।

पूँजी का निर्माण

गाँववालों की आर्थिक स्थिति अत्यंत शोचनीय थी। अतः उन्होंने ग्राम-स्वराज्य समिति के मार्गदर्शन में पूँजी को सामूहिक व्यवस्था करने का प्रयास किया है। श्रमदान के द्वारा सामूहिक पूँजी का निर्माण हुआ है। गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के मरण, विवाह या अन्य प्रकार के खर्च का भार ग्राम-स्वराज्य समिति ने उठाया है। औसत खर्च डेढ़ सौ रुपया माना गया है। विशेष परिस्थिति में भी विचार होता रहता है। सामूहिक पूँजी की व्यवस्था ग्रामीणों ने अपने श्रमदान से की है। यह एक बहुत ही क्रांतिकारी काम है।

मुकदमेबाजी तथा मद्य-निषेध

बेराँई गाँव में कोई मुकदमा नहीं है। आपसी झगड़े को गाँव में ही तय करते हैं। ग्रामदान के पूर्व ग्रामवासियों में मादक पदार्थों के सेवन की बड़ी बुरी आदत थी। अनुमान लगाया गया था कि करीब चार हजार रुपया प्रतिवर्ष मादक पदार्थों के खरीदने में ये खर्च करते थे। लेकिन अब यह आदत बिल्कुल छूट गई है।

सामाजिक विकास-कार्य

गाँव में छः जातियों के लोग निवास करते हैं। छः जातियों में आपसी भेद-भाव समाप्त हो गया है। छुआछूत की भावना समाप्त हो गई है। समारोहों में एक-दूसरे को निमंत्रित करते हैं और एकसाथ बिना किसी भेद भाव के भोजन करते हैं। विवाह-शादी अपनी अपनी ही जातियों में करते हैं। देवताओं की पूजा अलग-अलग जातियों में अलग अलग होती है। पहले मादक वस्तुओं से देवताओं

अणुअस्त्रों के खिलाफ नौका लेनिनग्राड़-रूस जायगी

९ सितम्बर को बर्ट्रेण्ड रसेल के समर्थन में एक समय का भोजन छोड़ें

विश्वशान्ति-सेना के सहअध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण की अपील

विश्वशान्ति-सेना के सहअध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने बम्बई में 'प्रेस ट्रस्ट' को बतलाया कि विश्वशान्ति-सेना और अमरीका की 'अहिंसक प्रतिकार समिति, दोनों ने मिल कर एक अन्तर्राष्ट्रीय नौका लेनिनग्राड भेजने का निश्चय किया है। इस अभियान का उद्देश्य है कि रूस की जनता के पास शांति का सन्देश पहुँचाया जाय और विशेष तौर से अणु-अस्त्र और उनके परीक्षणों की हानियों से अवगत कराया जाय।

श्री जयप्रकाशजी ने बतलाया कि इस नौका का नाम "एव्रीमेन-तृतीय" होगा। यह ज्ञात रहे कि इसके पहले अमरीकी परीक्षण क्षेत्र में परीक्षणों के खिलाफ "एव्रीमेन-प्रथम" और "एव्रीमेन-द्वितीय" नौकाएँ रवाना हो चुकी थीं और नौका-यात्रियों को अमरीकी सरकार ने गिरफ्तार कर लिया। इन दोनों नौकाओं में केवल अमरीकी ही नागरिक थे।

"एव्रीमेन-तृतीय" शीघ्र ही कई देशों के नागरिकों को लेकर लंदन से लेनिनग्राड के लिए निकलने वाली है। अगर रूस की सरकार आज्ञा प्रदान करे, तो यह नौका मास्को की ओर बढ़ेगी।

बम्बई में ७ अगस्त को श्री जयप्रकाशजी की अध्यक्षता में अ० भा० शांति-सेना मंडल की बैठक हुई, जिसमें जनता से इस बात की अपील की गयी कि बर्ट्रेण्ड रसेल द्वारा आयोजित अणु-अस्त्रों के खिलाफ विशाल पैमाने के प्रदर्शन के समर्थन में ९ सितम्बर को एक समय भोजन छोड़ दें।

शांति-सेना मंडल ने इस बात की भी अपील की कि एक समय भोजन छोड़ने से बचा हुआ पैसा विश्व-शांति-सेना के एशियाई कार्यालय, वाराणसी में भेज दें, जिससे इसका उपयोग शांति के प्रयासों में किया जाय।

आशादेवी प्रदर्शन में भाग लेंगी

श्री जयप्रकाशजी ने यह भी बतलाया कि उन्हें और विनोबाजी को बर्ट्रेण्ड रसेल ने प्रदर्शन में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया है। किन्तु हम दोनों ऐसी स्थिति में नहीं हैं कि वहाँ जा सकें, इसलिए अन्य प्रमुख सर्वोदयी कार्यकर्त्री श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम् से प्रार्थना की गयी कि वे उस प्रदर्शन में भाग लें, जो कि पहले ही विश्वशांति-सेना की बैठक में भाग लेने के लिए लंदन में हैं।

लिए अलग-अलग विक्रेताओं या प्रकाशकों की दूकानें न मँगायी जाय। लेकिन प्रदर्शनी के साथ ही पुस्तकों का एक बिक्री-काउण्टर रहे। वहाँ पर सब प्रकार का सर्वोदय-साहित्य, खास करके जिसका प्रदर्शन किया गया है, बिक्री के लिए उपलब्ध हो।

(११) विद्वानों, अध्यापकों आदि से व्यक्तिगत सम्पर्क करके उनके समूहों को खास तौर से प्रदर्शनी में आमंत्रित किया जाय और विशिष्ट योग्यता वाले निर्देशक उनके साथ रह कर उन्हें प्रदर्शित साहित्य का परिचय दें। इसी प्रकार अन्य संस्थाओं और वर्गों के लोगों को भी खास तौर से प्रदर्शनी में लाया जाय।

(१२) प्रदर्शनी के साथ सर्वोदय-साहित्य तथा प्रदर्शित विभिन्न विषयों पर या खास-खास पुस्तकों के सम्बन्ध में अधिकारी विद्वानों और साहित्यकारों के भाषणों का आयोजन भी किया।

(१३) साहित्य प्रदर्शनी के सिलसिले में प्रमुख साहित्यकारों का सहयोग विशेष तौर से प्राप्त किया जाय, उन्हें प्रदर्शनी में लाया जाय, व्याख्यान कराये जायँ।

(१४) १९६२ के "सर्वोदय-पर्व" में नीचे लिखे पाँच विषयों पर खास तौर से ध्यान केन्द्रित किया जाय, ऐसा सोचा गया। (१) शांति-सेना, (२) भूमि-समस्या, (३) राष्ट्रीय भावात्मक एकता, (४) पंचायती राज और (५) अणुअस्त्र विरोध।

साहित्य प्रदर्शनी के लिए विषयों को चुनते समय इन विषयों का खास तौर से ध्यान रखा जाय।

काशी में शराब-बन्दी

काशी में शराब-बन्दी के लिए उचित कदम उठाने और ठोस कार्यक्रम बनाने के लिए उत्तर प्रदेश सर्वोदय-मण्डल और अखिल भारत सर्व सेवा संघ के संयुक्त तत्वावधान में एक बैठक ८ अगस्त को नगरप्रमुख श्री बृजपाल दास की अध्यक्षता में टाउन हाल हुई। सर्वसम्मत प्रस्ताव द्वारा उत्तर प्रदेश सरकार से अनुरोध किया गया कि २ अक्तूबर, 'गांधी-जयंती' से काशी में शराबबन्दी की घोषणा की जाय।

शराबबन्दी पर व्यापक चर्चा में सभा की राय यही रही कि यह भारतीय समाज की एक बुनियादी आवश्यकता है और इसकी जिम्मेवारी जनता और सरकार, दोनों पर है तथा काशी जैसी भारत की सांस्कृतिक राजधानी में तो, जैसा कि विनोबाजी कहते हैं, यह तत्काल लागू की जानी चाहिए। शराबखोरी एक असामाजिक कृत्य है और ऐसे कार्य से आमदनी करके सरकार का संचालन अनैतिक है, साथ ही लोगों को असामाजिक कृत्यों से रोकना प्रत्येक व्यक्ति का नैसर्गिक अधिकार है। इसीलिए 'गांधी इरविन पैक्ट' में भी गांधीजी ने शराबखोरी के विरुद्ध धरना देने को गैर-कानूनी न मान कर नागरिक और नैतिक अधिकार बताया था। काशी में शराब-बन्दी के लिए, शांतिपूर्ण पिकेटिंग और उसके लिए सत्याग्रही भर्ती करने के लिए विनोबा ने कहा है।

भ्रष्टाचार-निवारण परिसंवाद

प्रो० ठाकुरदास बंग, सर्व सेवा संघ, सेवाग्राम द्वारा नागपुर में २५ और २६ अगस्त '६२ को भ्रष्टाचार-निवारण पर एक परिसंवाद आयोजित किया गया है। भ्रष्टाचार की व्यापकता और उसके कारण लोगों के नैतिक स्तर में आई गिरावट के संदर्भ में यह परिसंवाद श्री रा० कृ० पाटिल की अध्यक्षता में होगा।

१४वाँ अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन

इस बार चौदहवाँ अ० भा० सर्वोदय सम्मेलन गुजरात के सूरत जिले के वेडछी ग्राम में १७-१८ और १९ नवम्बर १९६२ को होगा। श्री रविशंकर महाराज की अध्यक्षता में सम्मेलन की स्वागत-समिति भी बनी है।

सूरत से भुसावल जाने वाले रेल-मार्ग पर बारडोली, मढ़ी और व्यारा स्टेशनों से वेडछी पहुँचने का मार्ग है। वेडछी ग्राम सूरत से बस मार्ग द्वारा ३९ मील, बारडोली से १४ मील और मढ़ी से ११ मील दूर है। मढ़ी से वेडछी के लिए सीधी बस मिलती है और बारडोली से वालोड जाने वाली बस मिलती है। वालोड से वेडछी केवल डेढ़ मील दूर है। वेडछी के स्वराज्य आश्रम से २ फर्लांग पर सड़क के पास बस-स्टैण्ड के निकट सम्मेलन के लिए "सर्वोदयनगर" बना है। अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन में आने के लिए एकतरफा रेल भाड़ा देकर पहुँचने की रियायत रेलवे-बोर्ड द्वारा दी गयी है।

सेवाग्राम में २६-२७ अगस्त को कृषि-औजार सुधार सम्मेलन

खादी ग्रामोद्योग प्रयोग समिति, बारडोली (गुजरात) द्वारा कृषि-औजारों में सुधार और इसके लिए अखिल भारतीय स्तर पर प्राकृतिक विभागों के अनुसार प्रयोगशालाएँ खोलने के बारे में विचार-विनिमय के लिए सर्व सेवा संघ की संयोजकता में एक "कृषि-औजार सुधार सम्मेलन" सेवाग्राम में २६ और २७ अगस्त को आयोजित किया जा रहा है। सेवाग्राम (वर्धा) में ही २८-२९ और ३० अगस्त को "नयी तालीम परिसंवाद" भी आयोजित किया गया है।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५४५ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८५४९ एक अंक १३ नये पैसे

25 AUG 1962

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार   २४ अगस्त '६२   वर्ष ८ : अंक ४७

व्यापारी और मिलावट

विनोबा

बरपेटा एक धर्म-क्षेत्र है और साथ-साथ व्यापार-क्षेत्र भी है। मैं असम में जगह-जगह घूमा हूँ। जगह-जगह मुझे सुनने को मिला कि बरपेटा के व्यापारी वहाँ काम करते हैं। आसपास के क्षेत्र में यहाँ के व्यापारी ही काम करते हैं। दूर-दूर जाते हैं, माल लाते हैं और यहाँ बेचते हैं। बड़ा सेवा का काम करते हैं। व्यापारी लोगों को दुनिया भर का ज्ञान होता है। बाकी लोग अपनी-अपनी जगह काम करते हैं, इसलिए उनको दुनिया भर का ज्ञान नहीं रहता।

अरबस्तान में महम्मद पैगंबर बहुत बड़े व्यापारी थे। सब लोग उन पर भरोसा रखते थे। आज व्यापारियों की हालत क्या है? व्यापारियों पर कोई विश्वास रखता नहीं। वे लोग व्यापार का यह लक्षण मानते हैं। लेकिन महम्मद पैगंबर ने जो व्यापार किया, वह इतनी स्वच्छता से किया कि लोग उनको 'अल् अमीन' कहते थे। 'अल् अमीन' याने विश्वासपात्र। महम्मद पैगंबर ने माल दिया तो उसमें मुनाफा होगा नहीं। उनका वचन सत्य होना ही चाहिये। ऐसी उनकी कीर्ति थी। महम्मद पैगंबर चारों ओर घूमे थे।

व्यापारियों को घूमना ही पड़ता है। बाकी लोग खेती, घर गृहस्थी के कारण स्थान से चिपके रहते हैं। व्यापारी अनासक्त होकर घूमता है। पुराने जमाने में तो साहस करना पड़ता था। उस जमाने में रेल, पोस्ट आफिस वगैरह सुविधाएं भी नहीं थीं। ऐसी हालत में दूर दूर सफर करना साहस का काम था। आज इतना साहस नहीं करना पड़ता। इसलिए व्यापारी कौम हमेशा साहसी, पराक्रमी होती है। व्यापारी दयालु होते हैं, खासकर हिंदुस्तान के व्यापारी बहुत दयालु होते हैं। कहीं भी दुःख देखा, तो फौरन मदद करते हैं। दुःख देखकर उनका दिल पिघल जाता है, कहीं बाढ़ आई है, तो चले व्यापारियों के पास माँगने, कहीं कठिन परिस्थिति है, तो चले व्यापारियों के पास माँगने। व्यापारी भी कुछ-न-कुछ देते हैं। व्यापारी शान्त, साहसी, उदार, दयालु होते हैं। ये हमने व्यापारियों की महिमा गायी। महम्मद पैगंबर व्यापारियों के आदर्श हैं। उन्होंने व्यापारियों को शब्द दिया 'अल् अमीन'।

इन दिनों हर चीज में मिलावट होती है। खाने की चीजों में मिलावट, दवाइयों में मिलावट। व्यापारी दयालु होते हैं, दुःख देख नहीं सकते, तुरन्त मदद करते हैं। लेकिन इधर-उधर समाज को कितना दुःख देते हैं, सोचते नहीं। दवाइयों में धोखा देना, दवाइयों में मिलावट करना निष्ठुरता है। जो बीमार पड़ता है, वह आपकी दुकान से कुनैन-'क्विनाइन'-खरीदता है। कुनैन कितनी देना, यह डाक्टर जानता है। पद्रह गुने से ज्यादा कुनैन जो देगा, वह गुनहगार माना जायगा। अब १५ गुने में एक चौथाई अगर चूना हो, तो उससे गुण नहीं आयेगा। अगर दवाई पर ऐसा लिखें कि इसमें चालीस प्रतिशत चूना है तो ठीक है, फिर उस हिसाब से दवाइयाँ खायेंगे। सरकार भी हैरान हो गयी है। सारे राष्ट्र के व्यापारियों की नीयत बिगड़ गयी है। कितने व्यापारियों को पकड़ा जाय और सजा दी जाय? यह काम सजा से नहीं होगा, लोगों को समझाने से होगा।

आज बरपेटा के व्यापारियों में कुछ मुसलमान होंगे, कुछ हिंदू होंगे। जो हिंदू होंगे, वे शंकरदेव, माधवदेव का नाम लेते होंगे और मुसलमान होंगे वे महम्मद पैगंबर का नाम लेते होंगे। ऐसे बड़े पुरुषों का नाम लेंगे और काम बुरा करेंगे, तो कैसे चलेगा? इस वास्ते यहाँ के व्यापारियों को कसम खानी चाहिये कि हम मिलावट नहीं करेंगे। हमको कहानियाँ सुनाते हैं-पुराने जमाने में शंकरदेव चौदह साल यहाँ रहे थे। शंकरदेव यहाँ रहे, उसमें आपका क्या गौरव है? अगर हमको यह सुनाते कि बरपेटा के व्यापारी मिलावट नहीं करते, तो तब आपकी महिमा थी। हम लोग समझते हैं कि पूजा पाठ करना, नमाज पढ़ना, अल्ला या खुदा का नाम लेना याने धर्म है। बाकी व्यापार करते समय ठग सकते हैं, वह व्यापार का एक अंग है। उससे बुरा व्यापार नहीं होगा, ऐसा मान कर बैठेंगे, तो सर जहन्नुम में जायेगा। इसलिए समझने की बात है कि धर्म व्यापार में आना चाहिए। इसलिए मिलावट नहीं करनी चाहिए।

यहाँ मुसलमान लोग हैं। उनको पूछता हूँ कि आपने कुरान पढ़ा है? उसमें ब्याज लेने की बात है। महम्मद पैगंबर ने सूद का सम्पूर्ण निषेध किया है। आज व्यापारी बीस रुपया कर्जा देते हैं, तो उस पर ब्याज कितना लेते हैं? एक मन अनाज! यह हमको गाँवों में सुनने को मिला। तो क्या होता है? किसान ने कर्जा लिया, खेत में धान बोया, फसल आयेगी तो अनाज देना होगा। साल भर के बारह रुपया ब्याज में जाते हैं। कहीं-कहीं तो बीस रुपया, कर्ज पर कहीं पर सोलह रुपये सूद लिया है। और धर्मशास्त्र कहते हैं कि सूद लेना हराम है!

हम कहते हैं कि बरपेटा के व्यापारी मिलावट नहीं करते, ऐसा होना चाहिए। मिलावट नहीं करते, ब्याज नहीं लेते, ऐसा होगा तो दुकान पर भीड़ होगी। व्यापारियों पर लोगों का विश्वास होगा, लोग आशीर्वाद देंगे, दुआ देंगे। जब व्यापारियों के शब्द पर विश्वास बैठता है, तभी उनकी प्रतिष्ठा होती है।

व्यापारियों को 'महाजन' कहते हैं। इतना व्यापारियों पर विश्वास और आदर! कहीं यात्रा को जाना होता तो पूंजी महाजनों के पास रख देते थे। यात्रा करके वापिस आते थे, तो महाजन फौरन पूंजी उनके पास पहुँचा देता। मर गया, तो उसके बच्चों को दे देता। इतना विश्वास था महाजनों पर। इसीलिए 'महाजन' नाम दिया था। अरबी भाषा में 'अल् अमीन' कहते हैं, कितना सुंदर नाम हमारे धर्मशास्त्र में कहा है! जो लोग प्रेम से व्यापार करेंगे, जो सेवाभाव से व्यापार करेंगे, वे मुक्ति पायेंगे। यहाँ तक बात कह दी। व्यापारियों को मुक्ति के लिए कुछ भी करना नहीं पड़ता, दया भाव रखें, मिलावट न करें, सूद न लें, यह व्यापारियों का धर्म है। लोग समझते हैं कि बाबा आया—सम्पत्ति दान माँगने के लिए, तो कुछ दे देंगे। उधर सूद लेकर लोगों को ठगायेंगे, इधर बाबा आया, तो कुछ दान देंगे। तो बाबा भी खुश, व्यापारी भी खुश और अपना व्यापार भी अपने ढंग से चलेगा! बाबा का आशीर्वाद मिला, तो पाप भस्म हो गया! एक दफा काशी में जाते हैं, गंगा में डुबकी लगाई तो सब पाप खतम होते हैं। इसलिए मेरी व्यापारियों से प्रार्थना है कि तुम महाजन बनो, अमीन बन जाओ, विश्वसनीय बनो, तुम्हारी बहुत उन्नति होगी।

[बरपेटा, जि० कामरूप, २१ जुलाई, '६२]

सर्वोदय-पर्व : एक उत्साहवर्धक कार्यक्रम

'सर्वोदय-पर्व' की योजना सब तरह से उपपन्न है। इसे 'भूदान-जयंती' से 'चरखा-जयंती' तक की अवधि कहें, अथवा 'विनोबा-जयंती' से 'गांधी-जयंती' कहें, प्रेरणा एक-सी उज्ज्वल मिलती है। इसे शारदोपासना कहें या शारदोत्सव, कार्यक्रम एक ही रहेगा।

हमारी संस्कृति में शरद ऋतु का महत्त्व विशेष है। आयुरारोग्य, ज्ञानोपासना, चिन्तन, प्रवचन और विजय के लिए इस ऋतु का महत्त्व सबसे अधिक माना गया है।

राष्ट्रीय उत्थान, विकास और संगठन के राष्ट्रमान्य कार्यक्रम की दीक्षा पूरे उत्साह के साथ इन दिनों हम ले सकते हैं। इसके लिए यह कार्यक्रम सब तरह से अनुकूल और उत्साहवर्धक है। मुझे विश्वास है कि देश के सब वर्गों के लोग और सब तरह की संस्थाएँ इस पर्व में अपनी-अपनी प्रतिभा प्रगट करेंगी।

—काका कालेलकर

श्रद्धांजलि

मौलाना हिफजुर्रहमान

अहद फातमी

डॉ० बी० सी० राय और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन की मृत्यु का दुःख अभी ताजा ही था कि समाजहित के लिए जूझने वाले हजरत मौलाना महम्मद हिफजुर्रहमान की दुःखदायी मृत्यु की खबर आयी ! मौलाना हिफजुर्रहमान का निधन समाजनेता मौलाना अबुलकलाम आजाद (ईश्वर उन पर कृपा करे) के देहावसान के पश्चात् देश और हिंदुस्तान के मुसलमानों के लिए सबसे बड़ी दुर्घटना है !

देश की स्वतंत्रता के युद्ध के समय हिंदुस्तानी मुसलमानों में से एक ऐसा नेतृत्व भी उभरा था, जिसकी जड़ें मजहब में थीं और जिसके लिए देश की स्वतंत्रता धर्मनिष्ठा की श्रेणी की थी। वे लोग जितने अच्छे मुसलमान थे, उतने ही अच्छे हिंदुस्तानी भी थे। *उनकी मुसलमानी और उनकी हिंदुस्तानियत में कोई टकराव नहीं था।* किन्तु उनमें पूरा सुसंवाद, समरसता एवं सामंजस्य था। वे जहाँ हिंदुस्तानी मुसलमानों के अधिकारों के लिए सावधान थे, वहाँ मुसलमानों के कर्तव्यों की ओर से भी उनकी आँखें ओझल नहीं थीं।

इमामुलहिंद (हिंद-नेता) मौलाना अबुलकलाम आजाद, शेखुलहिंद हजरत मौलाना हुसेन अहमद मदनी, मुफ्ती किफायतुल्ला, हजरत *मौलाना अहमद सईद* और उन जैसे दूसरे ज्येष्ठों-श्रेष्ठों ने देशप्रेम और मुस्लिम मैत्री की जो एक परंपरा कायम की थी, मौलाना हिफजुर्रहमान उसकी अन्तिम स्वर्ण कड़ी थे। मौलाना मरहूम के प्रस्थान के साथ उस *शानदार परंपरा* का अन्तिम दीपक बुझ गया।

मौलाना हिफजुर्रहमान को राष्ट्र ने 'समाजहित के लिए जूझने वाले योद्धा' की पदवी दी थी। वे सचमुच समाज-योद्धा थे। उनका सारा जीवन जूझने में ही बीता। युद्ध—देश की परतंत्रता के विरुद्ध, सम्प्रदायवादी मुसलमानों और हिंदुओं के विरुद्ध, देश के शत्रुओं के विरुद्ध। परायों ने उन पर हमले किये, अपनों ने *उनको उलाहनों व व्यंगों का लक्ष्य बनाया,* संप्रदायवादी मुसलमानों ने उन्हें हिंदुओं का गुलाम बताया और सम्प्रदायवादी हिंदुओं ने उन्हें सम्प्रदायवादी मुसलमान कहा। लेकिन इस योद्धा पुरुष के मजबूत कदम एक क्षण के लिए अपनी जगह से नहीं डगमगाये। वे देश की परवशता के समय अंग्रेजी साम्राज्य के विरोध में उससे लोहा लेते रहे और देश की स्वतंत्रता के पश्चात् देश की रचना के प्रयासों की ओर सत्ता एवं जनता का ध्यान आकर्षित करते रहे। वे इस वास्तविकता को जानते थे कि देश यथार्थ में तभी उन्नति करेगा, जब समाज के सब अवयवों की समान उन्नति होगी और देश को उन्नत बनाने के प्रयासों में सब अंश समान भाग लेंगे एवं प्रयत्न करेंगे। ऐसे प्रयत्न हों, इसीलिए वे जहाँ एक ओर मुसलमानों को देश के सामुदायिक जीवन में बराबर का भाग लेने और उन्नति के प्रयत्नों में पूर्णतः भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करते थे, वहाँ दूसरी ओर सत्ता की त्रुटियों और सम्प्रदायवादी हिंदुओं के संकुचित दृष्टिकोण एवं विचारों के घातक परिणामों को डट कर प्रकट करते रहे। अतः यह कहना गलत न होगा कि देश की स्वतंत्रता और मुसलमानों के अधिकारों की सारसंभाल एवं उनके हितों की सुरक्षा के प्रयत्नों एवं प्रयासों में मौलाना आजाद के बाद मौलाना हिफजुर्रहमान सबसे अधिक सुदृढ़ स्तंभ थे।

देश का उत्कर्ष और मुसलमानों के कल्याण में उन्होंने अपने व्यक्तित्व को समा दिया था और अपने जीवन के किसी अवस्था में वे उससे ओर असावध नहीं रहे। तीन भाषाओं के फार्मूले पर उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री के नाम अमेरिका से, जहाँ वे रुग्णावस्था में थे, उनका पत्र इसका एक उदाहरण है। उनकी मृत्यु होने से कोई एक सप्ताह पूर्व भूगन का यह सेवक *मौलाना मरहूम की सेवा में* उनके स्वास्थ्य की स्थिति जानने के लिए दूसरी बार उपस्थित हुआ था और उसके हृदय पर इस बात का गहरा प्रभाव पड़ा था कि उस समय भी जब कि मृत्यु दरवाजे पर खड़ी थी, मौलाना का मस्तिष्क देश के प्रश्नों का विचार कर रहा था।

मौलाना मरहूम की दूरदृष्टि एवं समाजवृत्ति का वर्तमान उदाहरण दिल्ली में 'मुस्लिम कन्वेन्शन' की योजना है। यह कोई *छिपी-ढँकी बात नहीं है* कि उस 'कन्वेन्शन' की प्राण-शक्ति मौलाना थे। मुसलमानों के प्रश्न और उनकी शिकायतों को सोच विचार कर संगठित एवं सुबद्ध पद्धति से देश तथा सत्ता के सम्मुख प्रस्तुत करने की आवश्यकता प्रतीत करते ही मौलाना मरहूम ने 'कन्वेन्शन' का सूत्रपात किया। उस 'कन्वेन्शन' के सम्पन्न होने के पूर्व देश के एक वर्ग ने बहुत कोलाहल मचाया और उसके पश्चात् कुछ अपने और पुराने सहकारियों में भी गलतफहमी पैदा हुई, किन्तु मौलाना मरहूम पर उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। उन्होंने दोनों मोर्चों पर जम कर सामना किया और अन्त में बादल छट कर रहे।

'इण्डियन मुस्लिम कन्वेन्शन' में जिन लोगों ने भाग लिया था, वे लोग मौलाना मरहूम की कुशलता की प्रशंसा किये बिना *नहीं रह सकते।* उस 'कन्वेन्शन' से कुछ ही दिन पूर्व देश में साम्प्रदायिक झगड़े हुए थे। उन झगड़ों के कारण आम मुसलमानों के दिल दुखी थे। कई लोगों की भावनाएँ प्रक्षुब्ध थीं। मौलाना की कार्यकुशलता यह रही कि 'कन्वेन्शन' के खुले अधिवेशन में उन्होंने दिल का बुखार उतारने में प्रतिनिधियों की राह में कोई रुकावट नहीं डाली। किन्तु बंद सभाओं में उन्होंने अपना सारा ध्यान इस बात पर केंद्रित रखा कि प्रतिनिधियों के मस्तिष्क राष्ट्रीय प्रश्नों से दूर न जा पड़ें। प्रक्षुब्ध प्रतिनिधि चूंकि खुले अधिवेशन में दिल की भड़ास निकाल चुके थे, इसलिए निर्णय करते समय वे महाशय भी समस्या को ठंडे दिल व दिमाग से सोचने की स्थिति में आ गये थे। परिणाम यह हुआ कि 'कन्वेन्शन' में जो प्रस्ताव पारित हुए, उनका *औचित्य सर्वत्र मान्य हुआ।* लेखक का यह ख्याल है कि यदि खुले अधिवेशन की भाँति बंद सभाओं में भी अखबारों के प्रतिनिधियों को भाग लेने की आज्ञा दी गई होती, तो टीका के बदले मौलाना मरहूम की कुशलता का गुण गौरव अखबारों में प्रकाशित होता।

एक ऐसे समय जब कि आम चुनाव में 'टिकट' प्राप्त करने के लिए गरजमंद महाशय जोड़-तोड़ कर रहे थे, मौलाना *'मुस्लिम कन्वेंशन' सम्पन्न करने में तत्पर* हुए। उन दिनों दिल्ली में कुछ क्षेत्रों में यह सर्वसामान्य चर्चा थी कि आने वाले सार्वत्रिक निर्वाचन में मौलाना को पार्लमेंट के लिए कांग्रेस का 'टिकट' नहीं मिलेगा। और यदि किसी भाँति 'टिकट' मिल भी गया, तो उनका हारना निश्चित है। किन्तु मौलाना के सम्मुख पूरे देश का हित था। *उन्हें इसकी अंशमात्र चिन्ता नहीं थी कि* उन्हें 'टिकट' मिलेगा या नहीं, या मिलेगा तो उसका परिणाम क्या होगा? हर्ष की बात है कि दोनों आशंकाएँ मिथ्या सिद्ध हुईं उन्हें टिकट भी मिला और अपने अस्वास्थ्य के कारण चुनाव-प्रचार में भाग न लेते हुए उनकी शानदार जीत हुई।

मौलाना मरहूम की मौन एवं रचनात्मक सेवा का एक प्रकरण, जो बहुतों की दृष्टि से छिपा हुआ है, जमियत उलेमा-ए-हिंद के नेतृत्व का काल है।

स्वतंत्रता-प्राप्ति के पश्चात् देश के जिस एक संस्था के *साथ सबसे अधिक अन्याय* हुआ है, वह है जमियत-उलेमा-ए-हिंद। दुनिया के किसी हिस्से का मौलवी हिंदुस्तान के मौलवियों जितना क्रांतिकारी कदाचित ही रहा है। वस्तुतः हिन्दुस्तान का यह *एकमात्र उदाहरण है, जहाँ के धर्म-शास्त्री* विद्वान वर्ग ने देश के परतंत्रता के विरुद्ध संगठित रीति से सत्ता से सतत टक्कर ली हो। इस देश की स्वतंत्रता के संग्राम में शाह वलीउल्ला और सय्यद अहमद शहीद बरेलवी से लेकर हुसेन अहमद और हिफजुर्रहमान तक यहाँ के उलमा का बड़ा हिस्सा है। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् जब यहाँ के मुसलमानों में नेतृत्व स्थापित करने का सवाल पैदा हुआ, उस समय *कांग्रेस ने जिनके कन्धे से कन्धा लगा* कर इस संस्था एवं जमात ने कुरबानी पेश की थी; उन जमियत उलमा या राष्ट्रीय मुसलमानों का नेतृत्व प्रस्थापित करने के एवज प्रतिक्रियावादी मुस्लिम लीग के भूतपूर्व नेताओं *से साँठ-गाँठ कर ली।* अतः आज नयी पीढ़ी को इसकी भी खबर नहीं कि हकीम अजमल खाँ, डाक्टर अन्सारी, मौलाना आजाद, शेखुल हिंद मौलाना महमूदुल् हसन, मौलाना हुसेन अहमद मदनी, मुफ्ती किफायतुल्ला, मौलाना अबुल महासिन मुहम्मद सज्जाद, मौलाना अहमद सईद और बहुत से दूसरे महापुरुषों के नेतृत्व में जमियते उलेमा ने एक ओर मुसलमानों में सामाजिक और देश विषयक जागृति निर्माण की थी और दूसरी ओर उनके दिलों में स्वतंत्रता की ज्योत जलायी थी।

जमियते उलमा संस्था का नेतृत्व जिस समय हिफजुर्रहमान के पास आया, उस समय जमियते उलेमा, आशाभंग के दुःख से ग्रस्त थी। उनका यह दुःख स्वाभाविक भी था। निराशा एवं दुःख के कारण कई लोगों के चिन्तन में हिंसा और आत्यंतिकता पाई जाने लगी थी। किंतु यह मौलाना हिफजुर्रहमान के नेतृत्व की ही निपुणता थी कि उन्होंने न तो जमियते उल्मा को टूटने दिया और न आत्यंतिक लोगों के मोड़ को एक सीमा से बाहर जाने दिया। देश के राष्ट्रीय जीवन पर मौलाना का यह बहुत बड़ा उपकार है।

दुनिया की कोई कमी ऐसी नहीं होती, जिसकी भरपाई न हो। किन्तु यह सच है कि मौलाना हिफजुर्रहमान के *महाप्रयाण* से जो स्थान रिक्त हुआ है, उसे पूरा करने वाला आज कोई नहीं है। मौलाना मरहूम के श्रद्धावन्तों की इस देश में कमी नहीं है। उनके श्रद्धावन्त *मौलाना का सुझाया हुआ* राष्ट्र मार्ग अपना कर उस रिक्तता को भरने का यत्न करें, उससे उत्तम मौलाना मरहूम की *कोई यादगार नहीं हो सकती।*

लोकनागरी लिपि *

वीश्वसाम्राज्य और ग्रामराज्य

दलगत राजनीती अीतनी छोटी और नीकम्मी चीज है की वह अीस जमाने में चल ही नहीं सकती। पहले जो हसद, अीर्ष्या राजाओं के चंद सरदारों में चलती थी, वुसी को अीस दलगत राजनीती ने आज राष्ट्रव्यापी स्तर पर ला दिया है। अीसका नतीजा यह है की दुनीया का कब्जा अुन लोगों के हाथ में रहेगा, जीनके पास आणवीक शस्त्रास्त्र हैं। अमेरीका और रूस के हाथ में असे आणवीक अस्त्र हैं, अत आज यही चल रहा है की कुछ मुल्क अमेरीका के पंथ (छाया) में आये हैं, तो कुछ रूस के।

हींदुस्तान कोशीश कर रहा है की न अीसके पंथ में आये, न अुसके। दुनीया के हालात अब बदलेंगे, तब मुझे पता नहीं की हींदुस्तान जैसे देश कैसे बचेंगे, बावजूद अीसके की अुनका मीलीटरी पर भरोसा हो। आज बचना है तो कुल दुनीया को बचाना है और डूबना है तो कुल दुनीया को डूबना है। बचने की तरकीब है—वीश्वसाम्राज्य और ग्रामस्वराज्य। वीश्वसाम्राज्य में सीर्फ सलाह देने की शक्ती हो। वहां से सबको नैतीक मार्गदर्शन मीले और बाकी सब काम गांव वाले खुद करें। वे अपने मसले खुद हल करें। असा होगा, तभी दुनीया बचेगी।

नारीया (जम्मू-कश्मीर) (१५-६-'५९) —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

शिक्षण और रक्षण : सैनिक शिक्षा

मार्जरी साइक्स

पन्द्रह साल से स्वतंत्र भारत विश्व-परिषदों में शान्ति-स्थापना के लिए अपनी शक्ति लगाता आया है। उसने यह बात भी साफ की है कि यह शान्ति सबके लिए स्वतंत्रता और न्याय पर आधारित होनी चाहिये। फिर भी इन पन्द्रह सालों में ऐसा लगता है कि यह राष्ट्र धीरे-धीरे उस पुराने रोमन सिद्धान्त को ज्यादा अपनाता जा रहा है कि 'अगर आप शान्ति चाहते हैं, तो युद्ध की तैयारी कर लीजिए।' "एन० सी० सी०" अब हमारे ज्यादातर स्कूलों और कालेजों में सुप्रतिष्ठित हो गयी है, वह लड़कियों पर भी लागू हुई है। लोक-सहायक सेना के दलों को मिलिटरी ट्रेनिंग दी जा रही है। देश के सभी युवकों को 'अनिवार्य सामाजिक सेवा' में भरती करने की योजनाएँ बन रही हैं, जिसमें सैनिक शिक्षा भी शामिल है। अखबारों में नये सैनिक स्कूलों के विज्ञापन छापे जा रहे हैं, जिनका काम लड़कों को नौ साल से ही सैनिक जीवन के लिए तैयार करना होगा। आखिर ऐसा दीखता है कि ये विद्यालय शिक्षा-मंत्रालय के नहीं, प्रतिरक्षा-मंत्रालय के सुपुर्द होंगे, यानी अब शायद हम उस अवस्था पर पहुँच रहे हैं, जब शिक्षण और रक्षण का योग होगा; लेकिन विनोबा के सुझाये हुए अर्थ में नहीं।

हम नयी तालीम के शिक्षकों को इस सबके बारे में क्या कहना है? हमारा दावा है कि शिक्षा अहिंसा के लिए और अहिंसा के द्वारा होनी चाहिये, हमारा दावा है कि अहिंसा न्याय, स्वतंत्रता और शांति की कुंजी है। मिलिटरी ट्रेनिंग याने सैनिक-शिक्षा के ये कार्यक्रम हमारे सारे शिक्षा सिद्धांतों और विचारों के लिए एक चुनौती है। इस परिस्थिति में हमारा कर्तव्य क्या है? इस चुनौती का सामना हम कैसे करें? इन कुछ मुद्दों पर हमें विचार करना चाहिए :—

(१) परिस्थिति की हमें पूरी पूरी जानकारी होनी चाहिये। सत्य के प्रति यह हमारा कर्तव्य है।

(क) 'एन० सी० सी०' और दूसरे ऐसे संगठनों के बारे में पूरे तथ्य हमें मालूम करने चाहिए। इनका नियंत्रण कहाँ से होता है, इनमें व्यक्तियों के ऊपर कितना जबरदस्ती से थोपा जाता है और अपने सदस्यों तथा उनके परिवारों के जीवन पर इनका क्या असर होता है?

(ख) दूसरे देशों में इस विषय में क्या-क्या अनुभव आये हैं, इसका जहाँ तक हो सके, अध्ययन करना चाहिये। क्या वास्तव में सैनिक तैयारी किसी देश को शान्ति की ओर ले गई है? अनिवार्य राष्ट्रीय सेवा-कार्यक्रमों से देश के नवयुवकों के लिए लाभ क्या है और उनसे खतरे क्या हैं? कई विचारवान् लोग जो शांतिवादी भी नहीं हैं और कुछ सैनिक भी अनिवार्य सैनिक सेवा और मिलिटरी ट्रेनिंग-सैनिक शिक्षा—का विरोध क्यों करते हैं?

(ग) कहा जाता है कि भारत में 'एन० सी० सी०' का काम विद्यार्थियों में अनुशासन लाने में सहायक होता है तथा उसका यह पहलू युद्ध की तैयारी से भी ज्यादा महत्त्व का है। असल में 'एन० सी० सी०' किस प्रकार के अनुशासन की अपेक्षा करती है? वह विद्यार्थी के पूरे जीवन में कारगर होता है या सिर्फ कवायद के समय? क्या अनुशासन लाने का यह एकमात्र या सबसे अच्छा तरीका है? क्या वह स्वानुशासन में सहायक होता है? स्वयंप्रेरित असैनिक संगठनों में पाये जाने वाले अनुशासन के साथ इसकी तुलना कैसी होती है?

हरएक बुनियादी प्रशिक्षण-केन्द्र के कार्यकर्तागण तथा विद्यार्थियों को इन प्रश्नों का गहरा अध्ययन करना चाहिये। खूब विचारपूर्वक आयोजित सभाओं व मंडलों में इन पर चर्चाएं और विचार-विमर्श हो तो ज्यादा अच्छा होगा। इन प्रश्नों के बारे में अपना ही मन साफ करने तथा एक निर्णय पर पहुँचने से हमारा बहुत फायदा होगा, इन पर एकमत न हो, तो भी ये प्रश्न आज सभी स्कूलों तथा सभी बच्चों के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। बुनियादी विद्यालयों के शिक्षकों को चाहिए कि वे बच्चों के माता-पिताओं के साथ भी इन विषयों पर चर्चा करें। इनके बारे में उनका मत जाग्रत करें। राष्ट्रीय महत्त्व के इस प्रश्न के बारे में एक सुनिश्चित जनमत तैयार करने की दिशा में यह पहला कदम होगा।

(२) हम सजग हों।

ऐसी छोटी-छोटी घटनाएं अक्सर होती रहती हैं, जो इस मिलिटरी ट्रेनिंग के कार्यक्रम के खतरों का दिग्दर्शन कराती हैं, जिनके बारे में हमें सतर्क रहना चाहिये, जो कोई सही शिक्षा के बारे में चिन्तित हैं, उन्हें भी सावधान करना चाहिए। ये घटनाएँ ऐसी मानसिक वृत्तियों का दर्शन कराती हैं कि जिनकी उपेक्षा अगर की जाय, तो वे जनता के उस बौद्धिक एवं नैतिक स्तर को गिरा देंगी, जिसके बगैर श्रेष्ठ राष्ट्रीय चरित्र और सच्ची स्वाधीनता का निर्माण नहीं हो सकता। उदाहरणार्थ :—

सेवा

मिलिटरी ट्रेनिंग की ये सब शाखाएं नवयुवकों में देशसेवा के आदर्शों को सुस्थापित करने का दावा करती हैं। लेकिन यह आज जानी हुई बात है—और इन महीनों में इसकी सच्चाई को साबित करने वाली कई बातें मुझे मालूम हुई हैं कि लड़के को हाईस्कूल से अच्छी श्रेणी में पास होने में तथा अच्छी नौकरी प्राप्त करने में 'एन० सी० सी०' सहायक होती है। इन तथाकथित सामाजिक सेवा शिविरों का आर्थिक भार सरकार उठा लेती है। बच्चों को इनमें भाग लेने के लिए व्यक्तिगत सुविधाओं का कोई त्याग नहीं करना पड़ता है। उलटे, ऐसी भी घटनाएँ हुई हैं कि शिक्षकों ने विद्यार्थियों को चेतावनी दी है कि इनमें भाग नहीं लेने से उनके स्कूल-रेकार्ड पर बुरा परिणाम होगा। जब परिस्थिति ऐसी है और बच्चे तथा उनके माँ-बाप व्यक्तिगत लाभ के प्रलोभन से 'एन० सी० सी०' का समर्थन करते हैं, तब उसमें 'सेवा' की बात करना कहाँ तक सच है?

कुछ हफ्ते पहले रेल में सफर करते हुए मेरी मुलाकात कुछ 'एन० सी० सी०' की लड़कियों से हुई, जो गणतंत्र दिवस पर दिल्ली में होने वाली 'परेड' के लिए एक प्रतियोगिता-परीक्षा में भाग लेने के लिए अपने शहर से राज्य की राजधानी में जा रही थीं। मैंने सोचा था कि यह चुनाव सामाजिक सेवा, प्राथमिक उपचार या अन्य ऐसी कुशलताओं व सेवाओं के आधार पर होता होगा। मैंने उनसे पूछा कि वे अपने शहर से किस विषय की योग्यता के लिए चुनी गयी थीं तो उन्होंने उत्तर दिया कि 'ड्रिल' में चुस्ती के आधार पर ही उन्हें चुना था और उनका अनुमान है कि राज्य के चुनाव में भी यही निर्णायक होगा। तब इसमें सेवा का क्या आदर्श है? [क्रमशः]

शांति-यात्रियों की डायरी

भारत-पाक संबंध और हमारा कर्तव्य

इ. पी. मेनन : सतीशकुमार

[शांति-यात्री पाकिस्तान की यात्रा के बाद अभी अफगानिस्तान में यात्रा कर रहे हैं। पाकिस्तान की पदयात्रा के बीच भारत-पाक संबंधों के बारे में उन्होंने जो अनुभव किये, वे यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। —सं०]

पाकिस्तान में हमने ३२० मील की पदयात्रा २६ दिनों में की। इन २६ दिनों में हम २४ गाँवों, नगरों और शहरों में रहे। लाहौर, गुजराँवाला, झेलम, रावलपिंडी, पेशावर और लंडी कोतल ऐसे नगर और शहर हैं, जहाँ से राजनीति, साहित्य, समाचार-पत्र और इसी तरह के राष्ट्रीय महत्त्व के कार्यक्रमों का संचालन होता है। उक्त सभी नगरों में हम तरह-तरह के लोगों से मिले। गाँवों में जहाँ हमारा ज्यादा संपर्क किसानों से आता था, वहाँ शहरों में डाक्टरों, विद्यार्थी-मजदूरों, वकीलों, व्यापारियों, सरकारी अफसरों, पत्रकारों और राजनीतिज्ञों से हम मिलते थे। ताँगा चलाने वाला, सब्जी बेचने वाला और होटल में चाय बनाने वाला भी हमारी पीठ पर लदा हुआ सामान देख कर व हमारे गले में लटकता हुआ साइनबोर्ड पढ़ कर हमसे सवाल पूछता था और अपनी बात हमसे कहता था। मजहब का प्रचार करने वाला मौलवी भी हमें अमन का प्रचारक समझ कर अपने दिल की बात कहता था। पाकिस्तान में हर जगह हमारा स्वागत एक मेहमान की भाँति हुआ और हमें कभी यह महसूस तक नहीं हो पाया कि हम किन्हीं परायों या बेगानों के बीच में हैं।

पर एकाध सवाल सब जगह हमारे सामने खड़ा होता। वह सवाल या तो कश्मीर को लेकर या हिन्द के मुसलमानों को लेकर रहता था। हम पाकिस्तान के लोगों से इन बेबसवालों पर बहस को टालते रहे क्योंकि हमारी बहस से शायद कुछ प्रतिकूल प्रभाव पड़ता। हमने अपनी चर्चा को सभी जगह निशस्त्रीकरण तक ही सीमित रखने की हर मुमकिन कोशिश की। फिर भी कई जगह इन सवालों पर चर्चा करने वालों का जोश इतना तीव्र होता था कि हमारे लिए उसे टालना असंभव हो जाता था।

पहली बात जो सब जगह हमको महसूस हुई कि भारत-पाक संबंधों को बिगाड़ने वहाँ चारों ओर से मदद मिलती है, वहाँ उन संबंधों को मधुर बनाने के लिए किंचित् मात्र भी प्रयत्न नहीं होता। दोनों मुल्कों में वे मनुष्य भी देशभक्त और नेता समझे जाते हैं, जो एक-दूसरे के खिलाफ आम जनता में दूरी का भाव पैदा करते हैं। जो बात कुछ नेताओं पर लागू होती है, वही बात कुछ अखबारों पर भी लागू होती है। पाकिस्तान के अखबार हिन्दुस्तान के अखबारों से भी ज्यादा आगे हैं! फिर आजाद कश्मीर रेडियो जैसी एजेंसियाँ तो लोगों को खुले तौर पर युद्ध के लिए कटिबद्ध हो जाने की प्रेरणा देती हैं! पर दोनों देश के आपसी संबंध अच्छे हों, जो समस्याएँ हैं, उनको बढ़ा चढ़ा कर प्रकाशित न किया जाय और आम जनता गलतफहमी में पड़ कर व्यर्थ ही अपने मनों में जहर न भरे, इसके लिए प्रयत्न करने वाला कोई नहीं।

हमारी छोटी सी बुद्धि में कई बार यह सवाल आता है कि शांति सेना मंडल और सर्व सेवा संघ को इस दिशा में ध्यान देना चाहिए तथा भारत पाक संबंधों का यह वर्तमान वातावरण किसी अनपेक्षित तूफान से उद्वेलित न हो जाय, इसके लिए कोशिश करनी चाहिए।

पेशावर में रोटरी क्लब की सभा में जब लोगों ने बड़ी बेचैनी के साथ हमसे यह पूछा कि "आप जैसे युवक जिस संस्था में काम कर रहे हैं, वह सर्व सेवा संघ और विनोबाजी खुद इस तरफ ध्यान क्यों नहीं देते? क्या हम सदा ही एक-दूसरे के दुश्मन ही बने रहेंगे? क्या हमारी समस्याओं का कोई हल नहीं?"

तब हमने धीरज के साथ उन्हें बताया कि "विनोबाजी और सर्व सेवा संघ इस दिशा में पूरी तरह जाग्रत है। हमें सूचना मिली है कि हिन्दू-मुस्लिम समस्या पर विचार करने के लिए सर्व सेवा संघ १५ दिनों का एक 'सेमीनार' बुला रहा है। इसी तरह भारत में जब भी कोई वारदात होती है, वहाँ शांति सैनिक अपने प्राणों की बाजी लगा कर भी शांति स्थापित करने की कोशिश करते हैं। विनोबाजी ने कश्मीर की पदयात्रा भी की है।" पर यहाँ के लोगों को इन सारी बातों की जानकारी कैसे मिले?

सभा में रोटरी क्लब के अध्यक्ष और पाकिस्तान नेशनल एसेंब्ली के सदस्य ने कहा कि "जैसे आप एटमी हथियारों के खिलाफ बगावत पैदा करने के लिए मास्को और वाशिंगटन जा रहे हैं, वैसे ही कुछ भारतीय युवक और कुछ पाकिस्तानी युवक मिल कर दिल्ली से रावलपिंडी और रावलपिंडी से दिल्ली की यात्रा करें, तो कितना अच्छा हो!" इन विचारों में हमें इस बात की झलक मिलती है कि यहाँ के लोग भारत पाक के संबंधों को सुधारने के लिए कितने उत्सुक हैं।

हमने अपनी पदयात्रा के दौरान में यह महसूस किया कि असली प्रतिशत समस्या भावनात्मक और मनोवैज्ञानिक है। पाकिस्तान के आम लोग तो इन बातों को जानते ही नहीं कि वास्तविकता क्या है। उनके मन में एक भ्रम और गलतफहमी बैठ गई है कि भारत के मुसलमान बहुत खतरे में हैं। उन्हें कोई हक हासिल नहीं हैं। उनकी जान सुरक्षित नहीं है। लोग हमसे सवाल पूछते थे कि हिन्दुस्तान में अमन है न? या कोई पूछता था कि हिन्दुस्तान के मुसलमानों की क्या स्थिति है? सवाल के पीछे उनकी भावना यह प्रतिबिंबित होती थी, मानो हिन्दुस्तान में मुसलमान बड़ी मुसीबत से किसी तरह गुजर कर रहे हैं, जब कि असलीयत तो ऐसी नहीं है। कहीं कहीं जो थोड़ी बहुत गड़बड़ होती है, उसको बहुत बढ़ा चढ़ा कर वहाँ बताया जाता है और वहाँ के लोग उसकी संख्या हजारों की तादाद में गिनाते हैं। इस तरह भावनाओं ही भावनाओं में वैमनस्य तथा द्वेष बढ़ता जाता है। दोनों ओर से अगर पूरा प्रयत्न किया जाय तो भावनात्मक एकता और मनोवैज्ञानिक सान्निध्य कायम करने में जरूर सफलता मिल सकती है।

हमसे लोग सब जगह पूछते हैं कि "आपकी जाति क्या है? या आपका मजहब क्या है? आप हिन्दू हैं या मुसलमान?" हमने बड़ी दृढ़ता के साथ सर्वत्र इन सवालों का एक ही जवाब दिया कि "हमारी जाति इन्सान है, हमारा मजहब इन्सानियत है, इन्सानियत से बढ़ कर इस दुनिया में कोई मजहब हो नहीं सकता। न हम हिन्दू हैं, न मुसलमान हैं तथा न कुछ और हैं। सारे जहाँ के हम हैं, सारा जहाँ हमारा है।" हमारे इस उत्तर से बहुत बहस होती थी, लोग चकित भी होते थे, और परेशान भी। पर कुल मिला कर हमारे इस दृढ़ रुख का बहुत गहरा प्रभाव पड़ता था।

पाकिस्तान में हमें काम करने की पूरी अनुकूलता प्राप्त है, क्योंकि वहाँ के लोगों में गांधीजी, सर्वोदय विचार और विनोबाजी के प्रति अगाध प्रेम और आदर है। हमने जहाँ भी विनोबाजी के बारे में बताया और यह कहा कि हम उनके साथ काम करते हैं, तो लोगों ने हमें तुरंत अपनाया तथा अनिर्वचनीय शब्दों में विनोबाजी एवं उनके काम के लिए अनुराग प्रगट किया। इस तरह की अनुकूलता जिन्हें उपलब्ध है, वे उसका लाभ क्यों न उठायें। लोगों को हमारे बताने से जब ज्ञात हुआ कि एक 'वर्ल्ड पीस ब्रिगेड' की स्थापना हुई है और इसका उद्देश्य किसी भी हिंसा या अन्याय का अहिंसात्मक प्रतिकार करना है, तो लोगों ने बड़ा आश्चर्य प्रगट किया और कहा कि "जब आपके देश में अमन की फौज तैयार हो रही है, तो वह हम दो पुराने भाइयों के बीच अमन कायम करने में क्यों नहीं कामयाब होगी!"

पाकिस्तान में २६ दिन बिताने के बाद हमें यह महसूस हुआ कि इन दोनों देशों का आपसी संबंधों का अच्छा होना निहायत लाजिमी है, क्योंकि दोनों देशों की भाषा, रहन-सहन, संस्कृति, इतिहास आदि सब कुछ जब एक हैं, तो केवल राजनैतिक प्रतिस्पर्धा के कारण उपर्युक्त सभी महत्त्वपूर्ण तथ्यों का भुलाया जाना अत्यंत खतरनाक है और भौगोलिक दृष्टि से दोनों देशों का सान्निध्य, पड़ोस और एकता जब प्रकृतिदत्त है ही, तब केवल राजनैतिक दाँवपेंच में उलझ कर एक दूसरे के खिलाफ मोर्चेबंदी करना किसी तरह उचित नहीं। दोनों देश आर्थिक समृद्धि की दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। दोनों को खेती, उद्योग, शिक्षा आदि क्षेत्रों में अपरिमित काम करना है। दोनों ही देश गरीब हैं और विदेशी पूँजी की अपेक्षा रखते हैं, ऐसी दशा में अपनी विकास योजनाओं में कटौती करके अरबों रुपया सेना पर, सामरिक हथियारों पर और सुरक्षा की दूसरी तैयारियों पर, एक दूसरे के भय से खर्च करते हैं। यदि यह भय दूर हो जाय तो दोनों पड़ोसी मिल कर स्वतंत्रतापूर्वक सहयोग के साथ आर्थिक समृद्धि की मंजिल तक बढ़ने में कामयाब हो सकते हैं।

"कश्मीर को आजाद कराने के लिए हमें अभी एक और जंग लड़ना है," ऐसे भावुकतापूर्ण जज्बात कभी कभी पाकिस्तान की यात्रा में हमें सुनने को मिले। बजाय इसके कि ऐसे जज्बात फूटें, हम अहिंसावादियों और शांतिवादियों को इस प्रश्न पर गंभीरता से सोचना चाहिए तथा अमन के लिए कोई खतरा पैदा न हो, इसकी पुरजोर कोशिश करनी चाहिए। हम सर्वोदय कार्यकर्ता, शांति-सैनिक और सर्व सेवा संघ इस तरह विचार करें कोई-न-कोई मित्रता का मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं, ऐसी मुझे पूरी आशा है।

मदुराई में होने वाली प्रबंध समिति की सभा में और वाराणसी में होने वाले हिन्दू मुस्लिम एकता 'सेमीनार' में इस प्रश्न के सभी पहलुओं पर विचार करने की हमारी प्रार्थना है। क्योंकि अगर मनुष्यों की भावनाएँ अहिंसा के तथा शांति के पक्ष में हों, तो फिर कोई भी बाहरी शक्ति उसे हिंसा के लिए प्रेरित नहीं कर सकती। सबसे पहला और सबसे बड़ा काम भावनाओं का निर्माण करना ही है। 'यूनेस्को' का एक 'मोटो' है—"युद्ध मनुष्य के दिमाग से प्रारंभ होता है, इसलिए शांति की रक्षा के विचारों का निर्माण भी मनुष्य के दिमाग में ही करना चाहिए।"

—

खतरे की जंजीर

• मणीन्द्रकुमार

आज जनता में अच्छे और बुरे, दोनों कामों के प्रति उपेक्षा और तटस्थता है। न वह अच्छे कामों में साथ देती है और न बुरे कामों का प्रतिकार करती है। इस प्रकार की स्थिति किसी भी लोकतंत्र के लिए खतरनाक है। आज आवश्यक है कि लोगों का आलस्य तोड़ा जाय और उन्हें अपने उत्तरदायित्वों के लिए सचेत और सजग किया जाय। अगर ऐसा नहीं होता है और लोगों की अपनी शक्ति याने लोक-शक्ति नहीं बनती है, तो यह लोकतंत्र के लिए सबसे बड़ा और गंभीर खतरा है।

क्या आप ऐसी सवारी का उपयोग करना पसंद करेंगे, जिसमें खतरे से बचने के लिए कोई उपाय नहीं हो? पहले आदमी केवल अपने पैरों पर आश्रित था, जब चाहा चल दिया, जब चाहा रुक गया। खतरा दिखा तो दौड़ने लगता, याने वह पूरी तरह स्वतंत्र था। फिर आये पशु–घोड़े और बैल। थोड़ी स्वतंत्रता में बाधा आयी, किन्तु चाल तेज हो गई और तेज चाल को वश में करने के लिए 'लगाम' का आविष्कार हुआ। हाथी के लिए 'अंकुश' का उपयोग हुआ, और जब यंत्र-वाहन का इस्तेमाल प्रारम्भ हुआ, तब मनुष्य ने ब्रेक की कल्पना की। तेज गति को काबू में करने की कला हाथ में नहीं होगी, तो गति हमारी दुर्गति ही ज्यादा करेगी।

कुछ वाहन इतने छोटे होते हैं कि उनके चालक और मुसाफिरों का प्रत्यक्ष संबंध रहता है–जैसे बैलगाड़ी, ताँगा, रथ और छोटी कार। यह प्रत्यक्ष संबंध कुछ हद तक बड़ी बस और छोटे हवाई जहाजों में भी रहता है।

किन्तु रेलगाड़ी जैसे बड़े वाहनों में, जिसमें असंख्य मुसाफिर रहते हैं, जिनका फासला बड़ा लम्बा होता है, चालक का मुसाफिरों में कोई सम्बंध ही नहीं रहता है। वहाँ अगर कोई मुसाफिर खतरे का अनुभव करे और चिल्लाये, पुकारे तो कोई असर नहीं होगा। ऐसे वाहनों के लिए खतरे की जंजीर हुआ करती है।

दिल्ली से एक समाचार अखबारों में भारत सरकार की सूचना के रूप में प्रकाशित हुआ। वह इस प्रकार है :

> "नयी दिल्ली २१ जून। रेलवे ट्रेनों में लगी खतरे की जंजीरों का व्यापक दुरुपयोग होने से, जिसका कुप्रभाव ट्रेनों की चाल पर पड़ता है, उत्तरी रेलवे की ४९ यात्री-ट्रेनों में उन जंजीरों को निष्क्रिय कर दिया जायगा। ये जंजीरें कतिपय ऐसे क्षेत्रों में ही निष्क्रिय रहेंगी, जहाँ उनका दुरुपयोग होता है।
>
> जिन ट्रेनों पर इस व्यवस्था का प्रभाव पड़ेगा, उनमें चार एक्सप्रेस ट्रेनें हैं, जिनके नाम अप और डाउन मुरादाबाद एक्सप्रेस (खतरे की जंजीर मुरादाबाद दिल्ली के बीच निष्क्रिय रहेगी), नम्बर ७१ अप पार्सल एक्सप्रेस (जंजीर कानपुर-टुण्डला के बीच निष्क्रिय रहेगी) एवं ४७ अप वाराणसी एक्सप्रेस (जंजीर वाराणसी-प्रयाग के बीच निष्क्रिय रहेगी) है। महिलाओं की सुरक्षा के लिए उनके डिब्बों में खतरे की जंजीर कार्यशील रहेगी।
>
> जिन लाइनों पर उपर्युक्त व्यवस्था का प्रभाव पड़ेगा, उनके नाम निम्नलिखित हैं—मुरादाबाद-दिल्ली, मुरादाबाद-चंदौसी, बरेली-अलीगढ़, बालामऊ-कानपुर, कानपुर-टुण्डला, प्रयाग-टुण्डला, प्रयाग-मुगलसराय, टुण्डला-फर्रुखाबाद, प्रयाग-फैजाबाद, प्रयाग-जौनपुर, लखनऊ-कानपुर, रायबरेली-कानपुर, रायबरेली-प्रयाग, मुगलसराय-लखनऊ, मुगलसराय फैजाबाद-लखनऊ और वाराणसी-प्रयाग।
>
> खतरे की जंजीरें तत्काल १ जुलाई, सन् १९६२ से ६ मास तक निष्क्रिय रहेंगी।"

समाचार पढ़ा तो स्वभावतः अच्छा नहीं लगा।

खतरे की जंजीर का दुरुपयोग होने से जंजीर का स्थगन एक बड़ा सवाल पैदा करता है। क्या एक बुराई को दूर करने के लिए दूसरी बुराई का सहारा लिया जाय?

पिछले दिनों अपने देश में एक अजीब-सी परिस्थिति पैदा हो गई। समाज के पुराने मूल्य और परम्पराएँ टूट रही हैं और नये मूल्य और परम्पराएँ उनका स्थान नहीं ले रही हैं। एक रिक्तता-सी आ गई। नयी पीढ़ी और खास तौर से विद्यार्थी-वर्ग में निश्चित ध्येय के अभाव में एक अनुशासन-विरोधी तत्त्व आ गया है। विद्यार्थियों की समाजविरोधी हरकतें इस कदर बढ़ गयी हैं कि भारत में शायद ही कोई दिन ऐसा शांतिपूर्वक गुजरता हो, जहाँ विद्यार्थियों के मामलों को लेकर हड़ताल, लाठी चार्ज, दुकानों और सिनेमाओं पर सामूहिक आक्रमण, ट्रेनों को लेट करना और फिर विद्यालयों और छात्रावासों का एक निश्चित अवधि तक बंद होना और कभी-कभी गोलीबारी की नौबत आना न होता हो!

कल हमने कठिन त्याग और कष्ट सह कर स्वतंत्रता अर्जित की है, और आज हम उसके संरक्षण के लिए स्वेच्छा या अस्वेच्छा से ही सही, भविष्य में देश को खुशहाल बनाने के लिए, भारी करों का दबाव और महँगाई के माध्यम से योजनाएँ पूरी करने में लगे हैं, किन्तु इसी समय क्या हम भावी पीढ़ी के भविष्य को नहीं भूल रहे या देख कर उसकी ओर आँख नहीं मूँद रहे हैं? आज का विद्यार्थी–कल का नागरिक–अगर वह समाजविरोधी हरकतों का प्रमुख है, तो कल का समाज कैसा होगा? कल आने वाली समृद्धि का क्या उपयोग होगा!

और देश का मजदूर! आज वह भी विद्यार्थियों की भोंडी नकल और राजनीतिक स्वार्थों का शिकार है। विद्यार्थी और मजदूर! इस प्रकार का वर्गभेद करना रुचता नहीं है, किन्तु हकीकत यह है कि दोनों का समाज में महत्त्वपूर्ण स्थान है, दोनों में शक्ति है, गति है, किन्तु दोनों गुमराह हैं।

जहाँ-जहाँ ट्रेनों में खतरे की जंजीर हटा ली गई है, वहाँ-वहाँ दोनों वर्गों का आवागमन में बाहुल्य है। कारखाने और स्कूल समय से चलते हैं। अगर मजदूर और विद्यार्थी जो दूर उपनगरों से आते व जाते हैं, उनके समय का ख्याल नहीं रखा जाता है, तो सहज ही उनको उत्तेजना और आवेश आता है। मजदूर के लिए तो सीधा रोटी-रोजी का सम्बंध आता है। थोड़ी देर से पहुँचा तो कारखाने का फाटक बन्द! और विद्यार्थी, वह भी इसलिए पढ़ाई करता है कि कल उसकी पढ़ाई उसके जीवनयापन का माध्यम बने, अगर वह पिछड़ता है, उपस्थिति में कम प्रतिशत पाता है, तो उसके रास्ते भी भी रुक जाते हैं।

ट्रेनों में खतरे की जंजीरों का दुरुपयोग, माना कि इन दिनों ज्यादा हो रहा है, किन्तु उसके लिए खतरे की जंजीरों को ही निकाल देना, मानो एक दूसरे बड़े खतरे की सूचना है! वह यह कि हम लोकतान्त्रिक तरीकों की सफलता में संदेह करने लगे हैं। अगर जनता ने हमारे कार्यक्रमों में सहयोग नहीं दिया, तो हम 'दण्ड और कानून' से बलात् निर्णय लाद देंगे, याने रुख तानाशाही की ओर हो रहा है।

साधारणतः सोचें तो खतरे की जंजीर एक आवश्यकता, और अनिवार्य आवश्यकता है। इन्सान की हिफाजत और सुरक्षा होनी ही चाहिए। चलती गाड़ी में अगर मनुष्य खतरा महसूस करे, तो उसके लिए इसके बिना कोई चारा नहीं कि या तो वह खतरे का शिकार हो जाये, या प्राणों का खतरा उठा कर चलती गाड़ी से कूद पड़े! यह स्थिति भयावह है। इससे गुंडागर्दी को और भी बढ़ावा मिल सकता है। जब गुंडों को यह मालूम है कि हम चाहें जो कुछ करें, हमारे लिए रास्ता साफ है, तो ट्रेन-डकैतियों की संख्या में क्या वृद्धि नहीं होगी?

हमारी राय में हर इन्सान आदरणीय है और उसके व्यक्तित्व की सुरक्षा का पूरा खयाल होना चाहिए, न कि उसे 'भाग्य के भरोसे' छोड़ा जाये। अगर सरकार यह महसूस करती है कि वह खतरे की जंजीर के व्यापक दुरुपयोग नहीं रोक सकती है, तो उसे जंजीर को खत्म करने के बजाय रेलगाड़ी ही चलना बन्द कर देना चाहिए। किन्तु इस जमाने में कोई भी सरकार ऐसा नहीं कर सकेगी।

दुरुपयोग की रोक के लिए जनता में व्यापक लोक-शिक्षण की कोशिश करनी चाहिए थी। जनता का विभिन्न तरीकों से इस ओर ध्यान खींचना आवश्यक था। जहाँ-जहाँ दुरुपयोग होता रहा, वहाँ के नागरिकों में इसकी बुराई को रोकने के लिए विशेष प्रयत्न और जनसम्पर्क किया जाना चाहिए था। खेद है कि हमारी नजर में कोई भी ऐसा प्रयत्न नहीं गुजरा।

लोकतंत्रीय सरकार के लिए 'लोक' अथवा 'जनता' सबसे बड़ा देव है। लोगों की राय का महत्त्व उसके लिए सबसे बड़ा अहम होना चाहिए। किन्तु आज लोकतन्त्र में, अगर सबसे अधिक उपेक्षा हो रही है, तो वह लोगों की ही। कुछ लोग गड़बड़ी और दुरुपयोग करें तो उसकी सजा सबको क्यों मिलनी चाहिए?

सरकार के साथ जनता के कुछ कर्तव्य हैं। सरकार के काम ठीक चलें, इसमें जनता का सहयोग आवश्यक है। आज जनता में अच्छे और बुरे, दोनों कामों के प्रति उपेक्षा और तटस्थता है। न वह अच्छे कामों में साथ देती है और न बुरे कामों का प्रतिकार करती है। इस प्रकार की स्थिति किसी भी लोकतन्त्र के लिए खतरनाक है। आज यह आवश्यक है कि लोगों का आलस्य तोड़ा जाय और उनको अपने उत्तरदायित्वों के लिए सचेत और सजग किया जाय। अगर ऐसा नहीं होता है और लोगों की अपनी शक्ति याने लोकशक्ति नहीं बनती है, तो यह लोकतन्त्र के लिए सबसे बड़ा और गंभीर खतरा है।

नशाबन्दी होनी ही चाहिए

हरेन्द्र प्रसाद समैयार

शराब, नशीली चीजों और हर तरह की ज्यादती का नतीजा यह होता है कि लोगों की विवेक शक्ति मन्द पड़ जाती है और उनकी बुद्धि में कमजोरी आ जाती है। इसका कारण नैतिक अनुशासन का अभाव है। नशा-सेवन और समाज के मानसिक पतन में अटूट संबंध है। —डा० अलेक्सिस कैरल

ऐसा बताया जाता है कि ग्यारहवीं शताब्दी में वासा या अल्बुकैसिस नामक एक अरबी रसायनशास्त्री ने शराब बनाने की प्रक्रिया का प्रारम्भ किया, किन्तु यह भी तर्कसंगत माना जाता है कि इसके भी कई शताब्दी पूर्व यह कला चीनियों को मालूम थी, जो स्मरणातीत काल से ही चावल से शराब बनाते आये। चीनी परम्परा के अनुसार चीन के सम्राट ने ४००० वर्ष पहले नशीले पेयों के उपयोग को वर्जित कर दिया। जापानियों को भी नशाखोरी करने की मनाही थी। बुद्ध ने अपने शिष्यों को ये नियम और उपनियम बताये—"किसी नशीले पेय का इस्तेमाल करने को हमें यह नियम मना करता है। उसे अपनी नाक तक छूने को भी न लाओ। न तुम भट्ठी के पास और न उनके साथ बैठो, जो नशा पीते हैं।" प्लूटार्क ने यूडोक्सस के आदेशानुसार यह घोषित किया—"शराब मिस्र के राजाओं के लिए पूर्ण रूप से वर्जित है।" मुख्य पुरोहितों को भी नशा से मुक्त रहने की आवश्यकता थी। हिरोडोटस ने कहा—"शुरू के पारसी लोग शराब के स्वाद से अनभिज्ञ थे। वे केवल पानी पीते थे।"

ईसरज़म, हार्यों के नियम निर्माता ने अंगूर के खेत नष्ट कर दिये, ताकि उससे शराब न बन सके। विराट् रोमन सम्राट के नियमों ने सभी स्त्रियों को नशीली वस्तुओं के सेवन से सदा रोका और उसी प्रकार से सिर्फ त्यौहारों के अवसरों को छोड़ कर तीस वर्ष के नीचे के सभी पुरुषों को रोका। भारतवर्ष में तो नशा के विरोध में धर्मयुद्ध करना बुद्ध के दस उपदेशों में से एक था। जीवन का पाँचवाँ नियम बुद्ध के अनुसार यह था—"नियम का पालन करो तथा पवित्रता के पथ पर स्थिरतापूर्वक चलो एवं ऐसे पेय का सेवन मत करो, जो मतवाला बनाता है या बुद्धि को भ्रष्ट करता है।"

हिन्दुस्तान में हिन्दू धर्म और इस्लाम धर्म के मानने वाले अधिक संख्या में हैं। हिन्दू धर्म में नशाखोरी पंच महापापों में से एक महापाप माना गया है और इस्लाम में नशा हराम कहा गया है। यहाँ के अन्य धर्मावलम्बियों पर भी इसका बहुत प्रभाव है और वे भी इसे वर्जित ही मानते हैं। यह पृष्ठभूमि हमारे देश की है। पाश्चात्य देशों में इस प्रकार की परिस्थिति या पृष्ठभूमि नहीं है। अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस आदि देशों में मद्यपान ने आजकल फैशन का रूप ले लिया है। दुःख के साथ कहना पड़ता है कि इस फैशन का भूत कुछ अंशों में हमारे देश पर भी आज सवार है और यदि समय रहते इसे न रोका गया, तो यह सिर पर चढ़ कर बोलेगा, ताण्डव नृत्य करेगा। इसी ने उस प्रतापी जाति का, जिसमें कृष्ण का जन्म हुआ था, विनाश कर दिया।

राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर और गांधी के इस पावन देश में नशाबन्दी का आन्दोलन बहुत पुराना है। सन् १९०५ के लगभग लोकमान्य तिलक ने नशा निषेधक आन्दोलन चलाया। उनके पहले भी देश के सर्वमान्य नेताओं ने नशाबन्दी का सूत्रपात किया। लाला लाजपत राय ने भी अपनी पुस्तक 'अनहैपी इंडिया' में नशाबन्दी का सांगोपांग विवेचन किया और उससे जन-जीवन के निम्न स्तर का पता चलता है। जब महात्मा गांधी ने हिन्दुस्तान में स्वतन्त्रता-संग्राम की बागडोर अपने हाथ में ली, तो उन्होंने देश के सामने एक पंचसूत्री कार्यक्रम रखा, जिसमें नशाबंदी का प्रमुख स्थान था। नशाबंदी के लिए उन्होंने जो बड़े-बड़े आन्दोलन चलाये, जिसमें उन्होंने माताओं और बहनों से 'पिकेटिंग' आदि करवायें, वह हमारी आजादी की लड़ाई में स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा। उनकी प्रेरणा से कांग्रेस ने नशाबंदी की नीति १९२० में ही अपनायी। महात्मा गांधी हमारे देश के राष्ट्रपिता हैं। उनका चित्र सरकार प्रत्येक सरकारी दफ्तर में रखती है। उनका जन्म दिवस और उनकी पुण्य-तिथि मनायी जाती है। पर खेद है कि गांधी प्रेरित कांग्रेस-सरकार की उम्र अब १५ वर्ष हो गयी, फिर भी अभी तक सारे देश में पूरी नशाबन्दी का कानून नहीं बन सका!

गांधीजी ने कहा था, "मैं तो यह मानता हूँ कि कांग्रेसी सरकारें आमदनी के खातिर नशाबन्दी के काम में देरी करके अपनी प्रतिज्ञा को शब्दों में चाहे भंग न कर रही हों, परन्तु उसकी भावना को जरूर भंग कर रही हैं।"

विनोबाजी भी मद्य निषेध को अपने कार्यक्रम का एक आवश्यक अंग मानते हैं। उन्होंने अखिल भारतीय नशाबन्दी सम्मेलन, जो सितम्बर '६१ में हुआ, के अवसर पर कहा—"स्वराज्य के १४ साल बीत गये। अब तो इस पर जल्द-से-जल्द अमल होना चाहिए। ईश्वर भक्ति का नशा छोड़ कर और कोई भी नशा भारतीय जनता जानती नहीं।"

अप्रैल '६२ में हुए अखिल भारत सर्व सेवा संघ के पटना अधिवेशन ने भी नशाबन्दी के प्रश्न को प्रमुखता दी है। आश्चर्य तो यह है कि हमारे संविधान के निर्देशात्मक सिद्धान्त की ४७वीं धारा में स्पष्ट लिखा है—स्वास्थ्य के लिए हानिप्रद नशीले पेय और बूटियों का दवा के अतिरिक्त अन्य उपयोग राज्य रोकेगा। और उस पर भी हमारी सरकार का ध्यान पूरी नशाबन्दी की ओर नहीं जाता, हालाँकि इस उदासीनता से अपने बनाये हुए संविधान का ही उल्लंघन सरकार द्वारा हो रहा है।

कौन नहीं जानता कि नशा से व्यक्ति, परिवार, समाज, देश और दुनिया का नाश होता है। विश्वविख्यात फ्रांसीसी लेखक डा० अलेक्सिस कैरल ने, जिन्हें शरीरशास्त्र की खोजों पर संसार प्रसिद्ध नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ है, अपने मत में लिखा है, "शराब, नशीली चीजें और हर तरह की ज्यादती का नतीजा यह होता है कि लोगों की विवेक शक्ति मन्द पड़ जाती है और उनकी बुद्धि में भी कमजोरी हो जाती है। इसका कारण नैतिक अनुशासन का अभाव है। नशा-सेवन और समाज के मानसिक पतन में अटूट सम्बन्ध है। फ्रांस को ही देख लीजिये। यहाँ शराब सबसे ज्यादा पी जाती है और नोबेल पुरस्कार सबसे कम मिल करता है। ये लोग जो एक जमाने में संसार में सबसे ज्यादा तीव्र बुद्धि के माने जाते थे, शराब की वजह से ही आज पतन की ओर अग्रसर हैं।"

नशाबन्दी के विरोध में हमारी कांग्रेस सरकार का मुख्य तर्क यह है कि इससे सरकारी आमदनी का बहुत घाटा होगा। इस सम्बन्ध में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के विचार उद्धृत करना महत्त्वपूर्ण होगा। यह याद रखने की बात है कि शराब और नशीली चीजों से पैदा होने वाली आय एक अत्यन्त नीचे गिराने वाला कर है। सच्चा कर तो वह है जो करदाता को आवश्यक सेवाओं के रूप में दस गुना बदला चुका दे। किन्तु यह आबकारी आय क्या करती है? लोगों को अपने नैतिक, मानसिक और शारीरिक पतन और भ्रष्टता के लिए कर देने को मजबूर करती है। सच पूछा जाय तो यह घाटा भी वास्तविक नहीं है, क्योंकि यदि यह विनाशकारी कर हटा दिया जाय तो नशाखोरी के अभाव में कमाने की शक्ति की वृद्धि होगी। अतः इससे राष्ट्र का जीवन-स्तर बढ़ेगा और उसके अतिरिक्त आर्थिक लाभ भी होगा। अक्सर सरकारी अधिकारी यह कहते हैं कि उस आय से शिक्षा-मद में खर्च किया जाता है और इसलिए नशाबन्दी से शिक्षा बन्द होगी। इस पर गांधीजी ने कहा—"तुम्हें इस विश्वास से शुरुआत करनी होगी कि पूर्ण नशाबन्दी कारगर करना है, चाहे कर मिले या न मिले, शिक्षा हो या न हो।" इतने उग्र और उत्कट विचार थे उनके। उन्होंने साथ-साथ यह भी कहा—"आय के नये साधन ढूढ़ने होंगे। मृत्यु, तम्बाकू—जिसमें बीड़ी भी शामिल है आदि पर कर लगाने की बात कुछ लोगों ने सुझायी। अगर यह तत्काल असम्भव हो या ऐसा समझा जाय तो फिलहाल खर्च की पूर्ति के लिए थोड़ी मियादवाले कर्ज निकाले जा सकते हैं। पर अगर यह भी सम्भव न हो तो केन्द्रीय सरकार से प्रार्थना की जा सकती है कि वह अपने फौजी खर्च में कमी करके उस बचत में से हर प्रान्त को उसके अनुपात में सहायता दे और केन्द्रीय सरकार इस प्रार्थना को कभी अस्वीकार नहीं कर सकेगी, खास तौर पर जब कि प्रान्तीय सरकारें यह सिद्ध कर देंगी कि कम-से-कम उनकी आन्तरिक सुरक्षा और शान्ति के लिए उन्हें फौज की जरूरत नहीं है।"

आज विनोबाजी अहिंसक शक्ति के विकास और फौज के विघटन तक की चर्चा कर रहे हैं। उनकी बात सरकार न भी माने, तो भी अर्थमंत्री श्री मोरारजी देसाई की बात तो माननी चाहिए। उन्होंने अखिल भारतीय नशाबन्दी सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए साफ शब्दों में कहा कि केन्द्रीय सरकार पाँच वर्ष तक राज्यों के नशाबन्दी से हुए आधे घाटे को बर्दाश्त करने को तैयार है। उन्होंने बताया कि यह समझना कि सरकार को कर का बहुत नुकसान होगा, गलत है, क्योंकि दूसरे स्रोतों से कर वसूल किये जा सकते हैं और जनता कर देने में समर्थ भी होगी, चूँकि नशे पर खर्च होने वाले पैसे की उन्हें बहुत बचत होगी। उदाहरणस्वरूप उन्होंने कहा कि बम्बई को नशाबन्दी के कारण लगभग दस करोड़ का घाटा हुआ, पर आज बिक्री-कर से उसकी आमदनी ३० से ४० करोड़ तक बढ़ गई। बहुत से लोग यह भी कहते हैं कि कानून से नशाबन्दी सफल नहीं हो सकती। इस बात को उन्होंने हास्यास्पद बताया और यह समझाया कि यदि हत्या, चोरी, बिना टिकट यात्रा करना और अन्य अपराध कानून के बावजूद होते ही हैं, तो इसका मतलब यह थोड़े ही होता है कि कानून खतम कर दिया जाय।

पीने वाले आक्षेप करते हैं कि नशाबन्दी से पीने की प्रवृत्ति और बढ़ जाती है। अर्थ मंत्री ने उत्तर दिया कि महाराष्ट्र, गुजरात और मद्रास, जहाँ नशाबन्दी लागू कर दी गई है, ८० प्रतिशत लोगों ने नशा-सेवन करना छोड़ दिया है। २० प्रतिशत को, जिन्होंने नहीं छोड़ा है, अपना स्वच्छंद रास्ता अख्तियार करने नहीं दिया जा सकता। गृह विभाग के राज्य-मंत्री और केन्द्रीय नशाबन्दी बोर्ड के अध्यक्ष, श्री बी० एन० दातार ने कहा कि जहाँ नशाबन्दी लागू की गई, उन स्थानों में पीना बढ़ा नहीं है। सरकार के योजना-आयोग के सदस्य, श्री श्रीमन्नारायण ने तो चण्डीगढ़ में अपने एक भाषण में यहाँ तक कह दिया

धान की भारी उपज का रहस्य

किसान मेहनत करें, तो क्या नहीं कर सकते ! भूमि और फसल की उचित देखभाल से ही उपज काफी बढ़ सकती है। पश्चिमी तट की कम उपजाऊ मिट्टी और भारी वर्षा वाले इलाकों में भी किसानों को ऐसा ही अनुभव हो रहा है।

श्री आर० कृष्णन् नायर एक ऐसे ही किसान हैं, जो केरल राज्य में त्रिवेंद्रम के नजदीक उल्लूर नामक गाँव में अपने ईंटिया मिट्टी वाले खेतों से हर साल धान की भारी उपज प्राप्त कर रहे हैं।

उनके पाँच एकड़ के धान के खेत ठीक उसी तरह के हैं, जैसे कि समुद्र-तट के नजदीक के आम खेत होते हैं। आज से पाँच वर्ष पहले १९-२० मन उपज होती थी। लेकिन आज बात ही कुछ और है! वही खेत आजकल औसतन ८० मन प्रति एकड़ धान पैदा कर रहे हैं और यदि मौसम अच्छा हो, तो इन्हीं खेतों से प्रति एकड़ ८५-९० मन धान मिल जाना कोई बड़ी बात नहीं है।

धान की खेती

खेत की जोताई अच्छी तरह से करने के लिए वह देसी हल के स्थान पर लोहे का हल काम में लाते हैं। दूसरा उन्नत यंत्र जो वह काम में लाते हैं, वह है जापानी निरायक। इससे वह निराई और धान के पौधों की कतारों के बीच गोड़ाई करते हैं।

वह स्थानीय किस्मों की अपेक्षा अधिक उपज देने वाली धान की प्र० आर० १९ और पी० टी० बी० ४ किस्में उगाते हैं। उनके विचार में अधिक उपज प्राप्त करने की दिशा में उन्नत किस्में उगाना पहला कदम है।

बोआई से पहले श्री नायर बीज को 'एग्रोसन जी० एन०' से उपचारित कर लेते हैं और पौधे को रोपाई से पहले किसी ताम्रयुक्त फफूंदनाशक में डुबो लेते हैं, ताकि रोपी गयी फसल में कोई रोग न लग सके।

समुद्र के आस-पास की भूमि अपना जैविक अंश बहुत ही तेजी से खोती है और इसकी पूर्ति के लिए उपलब्ध गोबर की खाद पूरी नहीं पड़ती। इस बात को दृष्टि में रखते हुए श्री नायर ग्लीरिसीडिया उगा कर इस कमी को पूरा करते हैं। हरी खाद की इस फसल को नारियल के बगीचे में पेड़ों के बीच की जगह पर और खेत की मेड़ों पर उगा कर वह गोबर की खाद की कमी को यह हरी खाद देकर पूरी कर डालते हैं। इसके अलावा, वह खेत में डेढ़ मन धान-उर्वरक मिश्रण रोपाई के समय और २० सेर इसके २० दिन बाद, फिर और २० सेर फूलने से ३० दिन पहले देते हैं।

रोपाई कतारों में करने से पत्तीदार निरायक से निराई और गोड़ाई करने में बहुत आसानी रहती है। इससे मजदूरी पर होने वाले खर्च में भी बचत होती है।

नारियल

नारियल की खेती के सम्बन्ध में भी श्री नायर का अनुभव कुछ भिन्न नहीं है। लापरवाही के कारण उनके नारियल के ५०० वृक्षों से प्रति वर्ष प्रति वृक्ष २ से ५ नारियल ही मिलते थे, लेकिन आज उनमें से प्रत्येक से ५०-६० नारियल प्रति वर्ष मिल रहे हैं।

धान की तरह नारियल की इस अधिक उपज का रहस्य अच्छे कृषि कार्यों और खाद देने में है। ग्लीरिसीडिया की फसल से उन्हें काफी हरी खाद मिल जाती है, जिससे वह प्रत्येक पेड़ में २५ सेर खाद डाल पाते हैं। इसके अलावा प्रत्येक पेड़ में वह तीन सेर नारियल-उर्वरक मिश्रण भी डालते हैं। नारियल के पेड़ों से लगातार अच्छी उपज लेने के लिए अन्य कार्य जो श्री नायर ने किये, वे हैं—गैंडे के आकार के भृंग (राइनोसेरस बीटिल) की रोकथाम के उपाय। इस कीड़े की रोकथाम के लिए वह कीड़े पकड़ने के कांटे या हुक काम में लाते हैं।

श्री नायर ने यह स्वीकार किया है कि खेत और फसल की उचित देखभाल करके केवल उन्होंने ही नहीं, बल्कि इसी गाँव के अन्य किसानों ने भी भारी उपज प्राप्त की। ●

निराई-गोड़ाई करने में उपयोगी निरायक यंत्र

कि नशाबंदी फायदे का सौदा है। उनका कहना है कि प्रदेशों को सालाना चालीस करोड़ का नुकसान होगा, लेकिन कुल देश को लगभग सवा सौ करोड़ का लाभ होगा। स्पष्ट है कि आर्थिक घाटे की दलील में कोई सार नहीं है।

दूसरे देशों के उदाहरण भी हमारे लिए इस संबंध में प्रेरक हो सकते हैं। बर्मा में घुड़दौड़ से सालाना एक करोड़ से अधिक रुपए की आमदनी सरकार को होती थी, जो बर्मा जैसे छोटे देश के लिए कम नहीं थी। लेकिन हिम्मत से जनता के जीवन-स्तर को उठाने की दृष्टि से बर्मी सरकार ने उसे बन्द कर दिया। हमारी सरकार को भी इस दिशा में ठोस कदम उठाना चाहिए। नहीं तो नशाबन्दी सफल नहीं हो सकेगी। इसलिए गांधीजी ने कहा—"मेरी दलील यह है कि समाज-सुधारक तब तक अपने प्रचार में सफल नहीं हो सकते, जब तक कि परवाने वाले शराबखाने शराबियों को अपनी ओर आकृष्ट करते रहेंगे। शिक्षा इस बुराई को कभी दूर नहीं कर सकेगी।" ●

श्री नायर, जिनका यह विश्वास है कि खेती करना लाभप्रद तभी हो सकता है, जब कि देखभाल स्वयं की जाय।

बाबा को शत् शत् जय जगत्

-रामकुमार 'कमल'

आसाम प्रान्त में ग्वालपारा जिले के जालान पड़ाव पर प्रात तीन बजे कुछ मित्रों के साथ अ० भा० सर्वोदय-पदयात्रा का 'मोटो'—उद्देश्य—लिये हुए, एक जुलूस के रूप में सर्वोदय के नारे लगाते हुए, जागो जागो असम हमारे सर्वोदय की बेला है, ग्रामदान की गंग बहा दो रामराज्य का मेला है, गाते हुए, हम लोग चल दिये। लगभग तीन मील जाने पर देखा, अरुणिमा के प्रकाश में ज्ञानप्रकाश-पुञ्ज-मूर्ति सन्त विनोबा, उनके सहयोगी तथा कतिपय बहनें चली आ रही थीं। सन् '५९ के बाद सन् '६२ में अब बाबा से साक्षात्कार हुआ। मैंने चरण-स्पर्श कर वन्दना की। बाबा ने मौन भंग किया और वार्तालाप का सिलसिला आरम्भ हो गया।

बाबा बोले : "कहो ! भिन्न भिन्न प्रान्तों में कैसा सहयोग मिला ? अभी बंगाल से आ रहे हो, कितने अंश में बंगाली बने ?" प्रत्युत्तर में मैंने निवेदन—किया "आपने दो प्रश्न किये हैं। क्रमशः उत्तर दे रहा हूँ। भारतव्यापी पदयात्रा में एक साधारण व्यक्ति को खट्टे-मीठे अनुभव होना स्वाभाविक ही है। परिस्थितियों वश कहीं सहयोग है, कहीं नहीं भी है और कहीं असहयोग भी है; किन्तु मीठे अनुभव और मधुर-मधुर हृदयोद्गार ही चतुर्दिक छाये हैं—सुहा समीरन सप्त स्वरों से सुन्दर-सा संगीत सुनाता।"

बीच में ही बाऊभाई बोल पड़े, "बाबा, यह बहुत ऊँचे कवि हैं।"

बाबा : "हाँ हाँ, मैं जानता हूँ, तभी तो समस्त भारत की पदयात्रा कर रहे हैं।"

मैं बोला : "बाबा, आपके दूसरे प्रश्न का उत्तर दे रहा हूँ। अच्छा तो सुनियेगा—

'सूरदास कारी कामरि पर
चढ़त न दूजो रंग।'

आप जानते हैं, संस्कारवश ही मैं तो पूर्णतया शाकाहारी हूँ। लहसुन, प्याज तक कभी नहीं खाता। पर बाबा विगत कुछ वर्षों से 'अल्ट्रा मॉडर्निज्म'—अति आधुनिकता—के चक्कर में देश की प्रवृत्ति मांसाहार की ओर अधिक उन्मुख हुई है।"

बाबा : "हाँ, अभी तो ग्रामदान, भूदान आन्दोलन चल रहा है। इसके बाद यह भी आन्दोलन करना होगा।"

मैं : "बाबा, जहाँ कहीं भी पदयात्रा के दौरान में मतभेद रहा, भोजन विषयक समस्या के कारण हुआ। एक भाई साथ चलते थे। वह मछली-अण्डे के बिना भोजन कर ही नहीं सकते थे। अपने हाथ से मैंने अलग से बनाना चाहा तो क्रोधित होकर बोले, आपका मार्गदर्शन करना कठिन है। अन्त में स्वयं ही मुझे उनसे विदा लेनी पड़ी।"

बाबा : "कोई चिन्ता नहीं, सभी प्रकार के अनुभव आते रहेंगे।"

मैं : "लेकिन बाबा, सामान्य व्यक्ति और राष्ट्र के उन्नायक अहिंसा की तो बातें करते हैं। किन्तु स्वयं मांसाहारी हैं। विचित्र बात है ! यजुर्वेद में तो ऐसा पढ़ा है हमने—

"य आममांसमदन्ति,
पौरुषेयं च ये क्रविः,
गर्भानि खादन्ति केशवा-
स्तानितो नाशयामसि।"

और मौलाना रूमी ने फारसी में इस तरह फरमाया है—

"हजार कुब्जे इबादत
हजार गञ्जे करम,
हजार ताअते शबहा
हजार बेदारी—
हजार रोज व सजदा
हजार शब व नमाज,
कबूल नीस्त अगर
तायर नीरत बआजारी।"

देखिये, कितनी साफ बात है—चाहे हजार तरीके से इबादतें कर, करम (परोपकार) के काम कर, चाहे रात दिन बेदारी की शकल में उसे याद कर, सजदा या नमाज पढ़, लेकिन अगर एक परिन्दे को भी नुकसान पहुँचाया तो तेरी इबादत भक्ति उसे कबूल नहीं है। परन्तु बाबा, इन उसूलों को, सिद्धान्तों को लोग मानते कहाँ हैं ?"

बाबा : "हाँ, दुःख की बात है।"

जालान पड़ाव आने लगा, स्वागत सत्कार आरम्भ हो गया।

* * *

दूसरे दिन बाबा इसी पड़ाव पर विष्णु सहस्रनाम के पाठ के बाद जिला कांग्रेस-कमेटी की बैठक में बोल रहे थे। प्रसंगवश लुई फिशर का उल्लेख करते हुए बाबा बोले, 'मेरी समझ में लुई फिशर से अधिक स्पष्ट, गहराई में जाकर गांधीजी पर इतना और किसी विदेशी ने नहीं लिखा। क्यों 'कमल' ?"

मैंने निवेदन किया—बाबा, लुई फिशर ने एक बात तो बहुत ही खरी लिखी है कि 'जो कल गांधी वाले नहीं थे, वे आज गांधी वाले बन बैठे। गांधीजी के मालदार अनुयायियों का उद्देश्य केवल स्वतंत्रता की प्राप्ति मात्र था, किन्तु गांधीजी ऐसा ही नहीं मानते थे। गांधीजी स्वतन्त्रता के माध्यम से प्रत्येक व्यक्ति का समग्र विकास देखना चाहते थे।'

बाबा सुन कर मुस्करा दिये।

* * *

दिन बीतने लगे। बाबा के साथ आजकल मुझे भी रात्रि के एक बजे उठना पड़ता था, क्योंकि ठीक तीन बजे प्रस्थान करना होता था। मुझे डेढ़ बजे से ढाई बजे तक का समय आसन, व्यायाम आदि करने में लगता था। प्रायः नित्य ही इस ब्राह्म-मुहूर्त में नक्षत्र खचित यामिनी में अकस्मात् मेघाच्छन्न आकाश हो जाता, रिमझिम रिमझिम फुहार पड़ने लगती, चतुर्दिक विद्युत् से आलोकित हो उठती और कभी-कभी भारी वृष्टि का भी सामना करना पड़ता। फिर भी रात्रि के तीन बजे से ही बाबा चल पड़ते, उनके आगे-पीछे लालटेनों का प्रकाश टिमटिमाता चलता। बाबा के पीछे-पीछे बहनें, भाई, अन्य आगन्तुक निस्तब्ध निशा में समवेत स्वर से प्रार्थना के बोल बोले जाते थे।

प्रार्थना समाप्त हो जाने पर बाबा का मौन चलता है—आधा घन्टा अथवा पौन घंटा। बाद में मौन भंग होता है और साथी एवं आगन्तुक व्यक्तियों से बाबा की चर्चा चलती है। आज पुनः मुझसे व्यक्तिगत, देश विदेश के सम्बन्ध में निम्न प्रकार सम्भाषण हुआ।

बाबा—"हम तुम, दोनों ही भारत की पदयात्रा कर रहे हैं। बुढ़ापे और जवानी में इतना ही अन्तर होता है कि मुझे ग्यारह वर्ष भारत घूमने में लगे और तुम पाँच वर्ष में ही भारत भ्रमण पूरा कर लोगे।"

मैं लज्जा से गड़ गया। क्या उत्तर दूँ बाबा को ! बोला—"आप ही के आशीर्वचनों से मैं इतना चल पाया हूँ।"

बाबा—"अच्छा, अब तक कितना चल पाये ?"

मैं—"चौदह हजार मील से अधिक।"

बाबा गम्भीर गिरा से बोले—"कमलजी, पदयात्रा के बाद आपका क्या विचार है ?'

मैं—"बाबा, मेरी जीवनी लिखित रूप में आपके पास है, आपको तो सब कुछ मालूम ही है। मैं अधिक क्या उत्तर दूँ ! जीवन और मृत्यु भारत ही है मुझको। इस नाते अपना यह जीवन आपको सौंप चुका।"

बाबा—"मुझे बहुत संतोष हुआ। अच्छा, अभी तो एक वर्ष आपके पास है ही, चिन्ता नहीं—एक वर्ष की अपेक्षा चाहे डेढ़ वर्ष लगे, दो वर्ष भी लग जायें तो भी चिन्ता नहीं, पर लक्ष्य पूरा करके लौटना। आसाम से भूदान, सिक्किम, नेपाल होकर ही बिहार में प्रवेश करना।"

मैं—"हाँ बाबा, भूदान, सिक्किम, नेपाल होकर ही बिहार में प्रवेश करूँगा।"

बाबा—"हाँ हाँ, वहीं बोधिवृक्ष के नीचे हम तुम दोनों मिलेंगे, चिन्तन करेंगे, फिर चिन्तन करके तुम्हारा आगे का कार्यक्रम निश्चित करूँगा।"

मैं—"ठीक है, जैसा आप उचित समझें, पर बाबा पूर्वी पाकिस्तान में प्रवेश करने की अनुमति नहीं मिली। इस्लाम की बात करके लोग इस्लाम के खिलाफ ही चल रहे हैं, मैं तो इतना ही समझता हूँ।

जब ईरानी तसव्वुफ और भारतीय वेदान्त, दोनों हिन्दुस्तान की सरजमीन पर मिले, तो दोनों में तलाशे हक के लिए एक नया जोश पैदा हुआ। दोनों के सूफी सन्तों ने यह महसूस कर लिया कि दोनों के साधन और मकसद एकसा हैं, लेकिन नाश हो इस फिरकापरस्ती का, जिसने मादरे हिन्द की छाती में छुरा भोंक कर खून की नदियाँ बहा दी और कहर ढा दिया ! और बाबा सरहदी गांधी, अहिंसा का सच्चा पुजारी, बापू के विचारों का सच्चा प्रतिनिधि और सच्चा मुसलमान बादशाह खान अब्दुल गफ्फार खान कब से असीरानी मुसीबत (जेल के कष्ट) उठा रहे हैं ! लेकिन हमारी भी न जाने जुबान क्यों बन्द है ! 'लबों पर मोहरे खामोशी, दिलों में याद कर लेना।'

बाबा, अफगानिस्तान की पदयात्रा क्यों न की जाये ? और यह बतादें कि चीन से अब किस प्रकार का सम्बन्ध रखा जाय ?"

बाबा—"इसकी चिन्ता न करो। इन देशों से हमारे हजारों वर्ष से पुराने सांस्कृतिक सम्बन्ध रहे हैं। हमें जहाँ तक हो, उनके आगे प्रेम का मार्ग खुला रखना है।"

विनोदी बाबा

एक दिन रिमझिम फुहार में हम लोग चल रहे थे। आसाम सर्वोदय-मंडल के अध्यक्ष श्री भुवनदासजी स्थूल शरीर के हैं, लपर-झपर करते हुए दौड़ने का प्रयत्न करते हैं। बाबा बोले, "भुवनदास ! तुम जो कोल्हू में लगे हो, उससे कब छूटोगे ? फिर अकस्मात् मुझसे बोल उठे, "इस कमल में तो हनुमान की आत्मा आ गई है। रात्रि एक बजे उठ कर आसन करता है। अच्छा, एक दिन आसनों का प्रदर्शन हो जाये। मयूर-नृत्य देखना है।"

अमत्प्रभा बाईदेव ने कहा : "बाबा, यह तो सदा आनन्द में मग्न रहते हैं। विद्वान होने के साथ-साथ मीरा गाते भी हैं।"

बाबा : "हाँ, यह तो 'कमाड' करने वाला व्यक्ति है। इसे तो 'कमाड' करना ही है।"

सामने से स्वागतार्थ बाजे ढोल आते देख कर बाबा अपने दोनों हाथों से ढोल के ताल के साथ-साथ ताल मिलाने लगे।

जब पड़ाव पर पहुँचे तो कीर्तन-मंडली के साथ-साथ एक मिनट तक नृत्य करते रहे।

पड़ाव पर आज 'विष्णुसहस्रनाम' का पाठ समाप्त होने पर बाबा बोले—"अरे! यह रामकुमार भारत-पदयात्रा करके आया है। अनेक चित्र इसके पास हैं, देखने चाहिये।"

पदयात्रा से सम्बन्धित लगभग १०० चित्रों की प्रदर्शनी-सी लग गई। बाबा चित्र देखने के साथ-साथ प्यार भरी दृष्टि से बार-बार मुझे भी देखते जाते।

बाबा की चादर

मध्याह्न में ताईजी आर्या तीन वस्त्र लेकर—चादर, बिछौना, सिर पर बांधने की साफी। बोलीं, "यह बाबा की चादर है। इसे लेने से मना नहीं करना और किसी को देना नहीं।" यह बाबा का प्रसाद है। *बाबा का प्रसाद कैसे ग्रहण न करूँ!* इनमें न जाने बाबा का कितना विपुल आशीर्वाद और प्यार भरा हुआ है!

करुणावतार बाबा

कोई मुझसे पूछे—'क्या देखा बाबा में तुमने!' मैं तो प्रत्युत्तर में यही कहूँगा—

"उर ईसा, मस्तिष्क बुद्ध
लेकर गीता, निर्वाण,
ग्रामदान हित अस्थि होम कर
करें जगत्-कल्याण।
ऐसे हैं बाबा—
करुणा, सत्य, प्रेम की वाणी
गूंज उठेगी बाबा की,
युगों-युगों से प्रलय-काल तक
याद रहेगी बाबा की।"

बिदा-वेला

२० दिवस अहर्निश बाबा के साहचर्य में रहने के बाद आज मेरी इच्छा उनसे बिदा लेने की हुई, क्योंकि आगे जाना था। अपराह्न वेला, बाबा शय्या पर पीठ फेरे लेटे हुए कुछ पढ़ रहे थे। मैं चुपचाप जाकर उनके चरणों के निकट बैठ गया। सम्मुख बहन अमलप्रभा दास व बिहार के शर्माजी दाढ़ीवाले तथा अन्य कितने ही भाई-बहन विराजमान थे।

बाबा ने पुस्तक एक ओर छोड़ी और मेरी ओर उन्मुख होकर बोले, "अरे कमल!" मैंने कहा, "हाँ बाबा, मैं आज आपसे बिदा लेने, आपके आशीर्वचन लेने आया हूँ।"

मैंने उनके चरणों में नतमस्तक होकर अभिवादन किया। प्यार से मुझे उठा कर बच्चे की भाँति प्यार करने लगे। पीठ पर हाथ फेरते हुए मेरे सिर पर उन्होंने अपना वरदहस्त रख दिया। उनके आर्द्र नयनों के कोरों में प्रेमाश्रु छलक आये। सभी के हृदय द्रवीभूत हो गये। मुझे तो अपनी सुधि ही उस समय नहीं रही। पुनः जब उन्होंने मधुर करस्पर्श किया, दुलार किया, तो मैंने आर्द्र नयनों से अपने आपको संभाला! क्या बोलूँ!

"बाल अधरों पर न आये
क्यों गिरा बाधी गई?
छलछलाते लोचनों में
कौन आंधी आ गई?"

बाबा से बिदा लेते-लेते, चलते-चलते हठात् मेरे हृदय के अतल तल से कलित करुणा के पुलक बरसाते हुए ये शब्द फूट पड़े...

"बाबा को शत् शत् जय-जगत्,
उनके चरणों को जय-जगत्,
उस चरण-चिह्न को जय जगत्
चरणों की धूलि जय-जगत्
धूलि के कण कण जय-जगत्॥
बाबा को शत् शत् जय-जगत्॥

शान्ति का पुजारी

[गांधी-विनोबा के इस देश में शान्ति के ऐसे अनेक सिपाही हैं, जिनका नाम 'शान्ति-सेना' के रजिस्टर में न दर्ज हुआ है और न हो भी सकता है। ये ही असंख्य शान्ति-प्रेमी हैं, जिनके कारण इस देश में शान्ति का वायुमंडल बना रहता है एवं रहेगा। यहाँ हम एक ऐसे ही व्यक्ति का प्रेरक संस्मरण प्रस्तुत कर रहे हैं। —सं०]

श्री मारकण्डेय भाई समग्र सेवा आश्रम रतनूपुर, जौनपुर द्वारा संचालित कुष्ट-सेवा विभाग के संचालक हैं। खादी, नई तालीम, भूदान तथा सर्वोदय-सम्बन्धी जो भी काम यहाँ होता है, उसके प्रमुख आधार आप हैं। ११ मई को तिगोचन बड़ागाँव का उपचार-दिवस था। यह उपचार-केन्द्र रतनूपुर से बारह मील की दूरी पर है। संयोग ऐसा कि मोटर भी बन्द थी, इसलिए श्री मारकण्डेय भाई स्नान व नाश्ता करके साइकिल से वहाँ के लिए सात बजे रवाना हो गये।

दस मील जाने पर गोपीपुर गाँव के पास उन्होंने देखा कि दो मुसलमान समय पर बकरीद की नमाज में शामिल होने के लिए गन्ने के खेत के बीचों बीच तेज रफ्तार से भागे चले जा रहे हैं। खेत के मालिक को इस पर एतराज हुआ। उसको सहन नहीं हुआ। *उसने अपने साथियों के साथ उन मुसलमानों के खिलाफ अपशब्द कहना* शुरू कर दिया। फिर क्या था! कहा-सुनी प्रारंभ हो गयी।

श्री मारकण्डेय भाई ने मामला गम्भीर होते देखा। मालिकों ने उन दोनों मुसलमानों के ऊपर ज्यों ही लाठियाँ चलानी शुरू की कि बड़ा जोर का होहल्ला हुआ। शोर होने लगा। यह देख तथा हल्ला सुन कर दूसरे मुसलमान, जो इमामबाड़े में नमाज के लिए जा रहे थे, वे भी उसी स्थान पर वापस आ गये। इधर खेत-मालिकों की बिरादरी वाले दूसरे अहीर भी लाठियाँ लेकर दौड़े। यह सब देख कर मारकण्डेय भाई उस बीच घुस गये। उनका घुसना था कि अहीरों की लाठियाँ यथास्थान रुक गयीं। यह देख एक अहीर को बड़ा क्रोध आया। उसे *लगा कि इनकी वजह से अपराधियों को* दंड देने का अवसर उससे छीना जा रहा था। इसलिए उसने फटाफट सात लाठियाँ इनके ऊपर मारी, जिनमें से तीन लाठियाँ तो रोक लीं। बाकी चार लाठियों से इनकी कलाई और कन्धे पर सख्त चोट आई। फिर भी मालूम नहीं कैसे, इस बीच उनका अन्तरतत्त्व और तेजस्वी हो उठा तथा पूर्ण सौम्यता के साथ शान्ति के मार्ग पर डट कर अनुनय, विनय, तर्क तथा उदाहरण द्वारा उत्तेजित भीड़ को समझाने लगे कि यह परमेश्वर को याद करने का समय है। क्रोध करने से नमाज कजा हो जाती है और सब लोग इस सवाब से वंचित रह जायेंगे।

नतीजा यह हुआ कि मुसलमान शांत हो गये और हिन्दू जो प्रहार कर रहे थे, वे यह सुन कर स्तब्ध हो गये कि 'दूसरे भाई के लिए एक भाई के हाथ से मरना सबसे उज्ज्वल मृत्यु होती है। इसलिए आप लोगों के प्रहार से आनन्द हो रहा है।'

इसका नतीजा यह हुआ कि दोनों दल शान्त हो गये। वह स्वयं अपने उपचार केन्द्र पर जाकर काम में जुट गये और वहीं पर अपना प्राथमिक उपचार भी किया। लेकिन मालूम होता है कि जो *आग प्रज्वलित हो गयी थी, वह पूरी तरह* बुझ नहीं पाई थी। उसकी चिनगारी अभी भीतर ही भीतर धधक रही थी। अभी काम पूरा नहीं हुआ था। इमामबाड़े के पास पहुँचते-पहुँचते जब नमाजियों को यह खबर लगी तो सब पुनः उत्तेजित हो गये और लौटने तथा खुल कर ताकत की आजमाइश करने और खतरे से खुल कर खेलने को तैयार हो गये। इधर अहीर *लोग भी भारी संख्या में जुटने लगे।* श्री मारकण्डेय भाई का उपचार, रोगियों *की मरहम पट्टी तथा दवा आदि का काम* चल ही रहा था कि उनसे किसी ने आकर कहा कि अब पुनः बलवे की तैयारी हो रही है और लोग एक-दूसरे के नजदीक आकर गम्भीर खतरा पैदा करने की तैयारी कर रही है। यह सुनते ही उन्होंने अपना सारा काम फौरन समेट लिया और लोगों के पास पहुँच गये। वहाँ जाकर देखा कि लगभग पाँच सौ के मुसलमान जमा हो गये हैं और अहीरों की संख्या भी काफी इकट्ठी हो गयी है। *इसी बीच उनका साथी हसन* भी दिखाई दिया, जो उपचार-केन्द्र में कम्पाउण्डर का काम करता है और *बकरीद के कारण आज छुट्टी पर था।*

श्री मारकण्डेय भाई ने हसन को पूर्ण सावधानी के साथ झगड़े को शान्त करने के लिए समझाया और उसको इमामबाड़े के आसपास इकट्ठे लोगों के पास भेज दिया। स्वयं भी एक और साथी को लेकर दोनों दलों के पास पहुँचे और समझाना प्रारम्भ कर दिया कि लाठी चलाने के पहले लाठियों का शिकार मुझको ही बनाना होगा। अंत में लोग समझ गये और शांतिपूर्वक अपने-अपने स्थान पर चले गये।

इसका नतीजा यह हुआ कि दोनों दलों के लोग शान्त हो गये। मुसलमान अपने इमामबाड़े में जाकर शान्तिपूर्वक नमाज पढ़े और हजारों हाथों ने एकसाथ खुदा की याद की।

श्री मारकण्डेय भाई अपने एक परिचित मित्र के यहाँ चले गये। वहाँ उनकी पुनः मरहम-पट्टी हुई। बाद में वह अहीर भी वहाँ पहुँचा और रोते हुए माफी माँगने लगा। श्री मारकण्डेय भाई ने उसको सान्त्वना दी और यह विश्वास दिलाया कि वह घबड़ाये नहीं। *उसके खिलाफ कुछ नहीं किया जायगा!* हाँ, हम सब भाई-भाई हैं, जो कुछ हुआ उसको भूल जायें! एक-दूसरे को क्षमा करें। और प्रेमपूर्वक हिन्दू-मुसलमान भाई भाई की तरह रहें।

बाद में पुलिस-स्टेशन से पुलिस का आदमी भी आया। उसको उन्होंने समझा दिया कि शान्ति का आधार प्रेम ही हो सकता है। भय और आतंक तो शान्ति के मार्ग में बाधक ही होता है, इसलिए अच्छा होगा कि पुलिस भी प्रेम का *मार्ग अपनायें।*

अन्त में शाम को सूर्यास्त के बाद रिक्शे द्वारा जब वह रात को ग्यारह बजे *आश्रम पर पहुँचे, 'तो हम लोगों को ये* सारी बातें मालूम हुईं और चोट पर कुछ पुलटिस बाँधने और सेंक करने के बाद ही सब लोग सोये।

हमारा ख्याल है कि यह ईश्वर की असीम कृपा है, जो वह इस अवसर वहाँ पर पहुँच गये; क्योंकि यह घटना अगर कोई उग्र रूप धारण करती तो पता नहीं इसका क्या फल होता! गत चुनाव में और उसके पहले साम्प्रदायिक आग में देश में कई बार आतंक हो चुका है। इससे हमारा देश बदनाम होता है और मानवता पर भी चोट आती है।

समग्र सेवा आश्रम,
रतनूपुर, जौनपुर —शिवमूर्ति

'सर्वोदय-पर्व' के लिए अनुकरणीय कार्यक्रम

बम्बई के मिल-कारखानों के मजदूरों के बीच

सर्वोदय-साहित्य-प्रचार

'मैनेजमेन्ट' का ५० प्रतिशत 'रिबेट' के रूप में प्रशंसनीय सहयोग

बम्बई सर्वोदय-मंडल ने अप्रैल, १९६२ से लेकर मार्च, १९६३ तक का पूरा वर्ष सर्वोदय-साहित्य-प्रचार के सघन कार्य के लिए दिया है। साहित्य-बिक्री के प्रचलित ढंग के अतिरिक्त जो कुछ विशिष्ट पद्धति अपनायी गयी है, उसमें मिल-कारखानों के 'मैनेजमेंट' से ५० प्रतिशत का कम-बेशी 'रिबेट' प्राप्त करना और प्रतिमाह वेतन-दिनों में मिल-कारखानों में साहित्य का 'स्टाल' लगा कर मजदूरों के बीच साहित्य-प्रचार करना मुख्य कार्यक्रम है। गत पाँच माह में बम्बई के सात मिल-कारखानों में यह कार्यक्रम सफलतापूर्वक चलाया गया है और कुल मिला कर १५००० रु० से अधिक कीमत की साहित्य-बिक्री हुई है।

इस सघन साहित्य-प्रचार की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करने वाली कुछ विशिष्टताएँ हैं, उनमें से मुख्य हैं : (१) साहित्य-बिक्री में २० प्रतिशत 'गीता-प्रवचन' की बिक्री; (२) अगस्त के दि० १०-११-१२ के तीन दिनों में ६,९०० रु० की कुल बिक्री (३) मजदूरों में सर्वोदय-विचार के व्यापक प्रवेश का श्रीगणेश और (४) ५० प्रतिशत 'रिबेट' के रूप में मिल-कारखानों के 'मैनेजमेंट' द्वारा प्राप्त प्रशंसनीय सहयोग व सहायता।

इस कार्यक्रम को अपने आशीर्वाद देते हुए पू० बाबा ने लिखा है कि "मजदूरों में श्रद्धा और भक्ति तो होती ही है, साथ ही उसे और पोषण देने पर उनकी बौद्धिक उन्नति के लिए यह योजना लाभदायी होगी। ... इस साहित्य प्रचार का परिणाम सत्कार्य में परिणत होगा और मजदूरों के जीवन में नैतिक निष्ठा स्थिर होगी।" साफ है कि ऐसी परिणति मात्र भारत के लिए ही नहीं, सारे जगत् के लिए आशा की एक नयी किरण देने वाली सिद्ध होगी और चिरकालीन विश्वशांति की दिशा में एक नया मोड़ लायेगी। आने वाले दिनों में हम जो विविध कार्यक्रम तय करें, उसमें इस अनुकरणीय कार्यक्रम को देशव्यापी पैमाने पर उठाना आशीर्वाद मानना चाहिए। अहिंसा की सम्पूर्ण संरक्षक शक्ति निर्माण करने के लिए अहिंसा संगठित हो सकती है, यह हमें सिद्ध करना होगा और साफ है कि इसमें जैसे किसानों का, वैसे मजदूरों का भी सहयोग प्राप्त करने का ढंग प्रयत्न करना होगा। इस दृष्टि से भी उनको सर्वोदय-विचार के प्रति अभिमुख करना हमारे कार्यक्रमों का एक अत्यन्त महत्व का अंग है।

सर्व सेवा संघ ने हमारे सामने 'भूमि-क्रांति' से लेकर 'चरखा-जयन्ती' तक का तीन सप्ताह का "सर्वोदय-पर्व" का विविध कार्यक्रम रखा है। उसमें सर्वोदय-साहित्य प्रचार को सारे कार्यक्रम का एक महत्व का अंग माना है। इस अवधि में देश भर के मिल-कारखानों के मालिक या 'मैनेजमेंट' से भी सम्पर्क स्थापित करना और मजदूरों के बीच हुई साहित्य-बिक्री पर 'रिबेट' (छूट) देने के लिए राजी करना चाहिए। इस प्रकार श्रमजीवियों के बीच सर्वोदय प्रचार को प्राधान्य देकर सघन कार्यक्रम बनाना सर्वथा उचित होगा।

"सर्वोदय-पर्व" की अवधि में जहाँ-जहाँ इस प्रकार का कार्यक्रम रखा जाय, वहाँ खास करके उच्च कोटि की साहित्य-प्रदर्शनी की रचना की जाय और प्रत्येक विषय व पुस्तक का मजदूरों को सरल भाषा में परिचय देने के लिए खास कार्यकर्ता नियुक्त किये जायँ, तो बहुत अच्छा परिणाम देखने को मिल सकेगा। प्रदर्शनी में सर्वोदय-कार्यक्रम से सम्बन्धित भिन्न भिन्न कार्यक्रम व तत्सम्बन्धित पुस्तकों का परिचय देने वाले पोस्टर्स, चार्ट्स, चित्र आदि रखना आवश्यक है। 'भूदान यज्ञ' के पिछले अंकों में साहित्य प्रदर्शनी और "सर्वोदय-पर्व" के अन्य कार्यक्रमों की विस्तृत रूप-रेखा दी जा चुकी है। तदनुसार प्रदर्शनी के साथ चर्चा, वार्तालाप, प्रवचनों आदि का जो कार्यक्रम रखा जाय, उसमें भी मजदूर भाई-बहनें भाग लें, ऐसी कोशिश करनी चाहिए।

सफलता के लिए जरूरी है कि ऐसे कार्यक्रम व्यवस्थित ढंग से व्यवहार-कुशलता के साथ आयोजित किये जाने चाहिए। इस सम्बन्ध में अधिक जानकारी अपेक्षित हो, तो बम्बई सर्वोदय मंडल १९, लेबरनम रोड, मणिभुवन, ग्रामदेवी, बम्बई-७ से संपर्क किया जाय। अनुभव प्राप्त करने की दृष्टि से नये कार्यक्रमों में भाग लेना भी उचित होगा।

—विट्ठलदास मोदाणी

मास	मिल-कारखाने	कुल दिन	साहित्य-बिक्री	प्राप्त 'रिबेट'	'गीता प्रवचन'
			रु०-न०पै०	रु०-न०पै०	संख्या
अप्रैल	सेंचुरी मिल्स	२	३,५००-००	१,०००-००	६७७
मई	[illegible] मिल्स	२	२,७७४-७२	१,३८७-३६	५४५
जून	मुकुंद आयर्न स्टील वर्क्स	३	१,१९९-५६	५९९-७८	२११
जुलाई	म्हात्रे पेन कंपनी	३	४२४-००	२१२-००	१२
अगस्त	बच्छराज एण्ड कंपनी	३	५०६-००	२०३-००	१७
,,	टाटा मिल्स	३	३,३००-००	१,६५०-००	६२५
,,	मोरारजी गोकुलदास मिल्स	३	३,६००-००	१,८००-००	७०८
	कुल बिक्री		१५,३०४-२८	६,८५२-१४	२,९९७

कुल २,९९७ 'गीता प्रवचन' की बिक्री हुई, अर्थात् कुल साहित्य-बिक्री में २० प्रतिशत 'गीता-प्रवचन' (विभिन्न भाषाओं में) है।

मालिक, मजदूर और सेवकों को धन्यवाद

सर्वोदय-साहित्य मिल-कारखानों के मजदूरों को आधी कीमत में मिले और उसकी आधी कीमत व्यवस्थापकों द्वारा दी जाय। सर्वोदय कार्यकर्ताओं ने बम्बई में ऐसी योजना चालू की और कुछ मालिकों ने प्रेमपूर्वक सहयोग दिया, इससे मुझे बहुत आनन्द हुआ। मजदूरों में श्रद्धा और भक्ति तो होती ही है साथ ही उसे और पोषण देने पर उनकी बौद्धिक उन्नति के लिए यह योजना लाभदायी होगी, इसमें सन्देह नहीं है।

उनके पास साहित्य पहुँचने के बाद उनसे सम्पर्क चालू रखना चाहिए और आपने भी उसी प्रकार करने का विचार किया है। इसलिए आशा है कि इस साहित्य-प्रचार का परिणाम सत्कार्य में परिणत होगा और उनके जीवन में नैतिक निष्ठा स्थिर होगी। यह कार्य सतत चालू रहना चाहिए और बम्बई के लिए सर्वत्र यह अवसर मिलता रहेगा। इस काम के लिए हम मालिक, मजदूर और सेवकों को धन्यवाद देते हैं।

—विनोबा

क्षुरस्य धारा

जिला सर्वोदय मंडल की सभा में हमारे आन्दोलन के 'टेकनिक' के बारे में चर्चा चल रही थी। किसी ने कहा, वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करना चाहिये। किसी ने कहा, [illegible] पद्धति का उपयोग करो, तो किसी ने कहा, 'डायरेक्ट एक्शन' होना चाहिए।

कोने में एक बूढ़े दादा थे। उसने कहा, पदयात्रा पद्धति का उपयोग करो।

सब खिलखिला कर हँस पड़े। उनका चेहरा ही ऐसा था कि उनके बोलते ही सब हँस देते थे। बोलते समय बेचारे की दाढ़ी आवश्यकता से अधिक हिल उठती थी।

किसी ने गंभीरता से कहा: चाचा, कुछ सोचिए तो सही बोलने से पहले। तरीके हमें ऐसे सुझाने चाहिए, जो नये हों।

बूढ़े ने कहा: "इसीलिए तो भाई, मैं इस तरीके को सुझा रहा हूँ। पदयात्रा बंद हुए अब इतना लम्बा अर्सा बीत गया कि यह हमारे लिए नया तरीका ही हो गया है।"

—नारायण देसाई

गुजरात अखण्ड सर्वोदय-पदयात्रा

श्री हरीश व्यास के मार्गदर्शन में गुजरात में १२ माह से अखण्ड पदयात्रा चल रही है। भड़ौच जिले की गत ५१ दिन की १७७ मील की पदयात्रा में ११९७ रु० की साहित्य बिक्री हुई। भूदान-पत्र-पत्रिकाओं के ४० ग्राहक बने। अब ६ अगस्त से २६ अगस्त तक उनकी पदयात्रा जम्बुसर तालुके में चल रही है।

गुजरात के सुप्रसिद्ध सर्वोदयी श्री बबलभाई मेहता १ अगस्त को अहमदाबाद के साबरमती आश्रम से पदयात्रा पर निकले। ४ से ११ अगस्त तक उनकी पदयात्रा खेड़ा जिले में चलेगी और तदनन्तर वे पंचमहाल, बड़ौदा और भरूच जिलों से होकर नवम्बर में आगामी सर्वोदय-सम्मेलन स्थान, वेडछी पहुँचेंगे।

पंजाब में पद-यात्रा

जुलाई माह में शांति-सैनिक श्री पुलिया भगत ने रोहतक, जींद, हाँसी, हिसार और सिरसा आदि तहसीलों के कुल ५२७ ग्रामों में शराबबन्दी, ग्रामदान और सर्वोदय का प्रचार किया। इस प्रकार उन्होंने २०० मील की पदयात्रा की और ३१ रु० ७० न० पै० का सर्वोदय-साहित्य बेचा।

अणुशस्त्रों के खिलाफ सामूहिक बृहत् प्रदर्शन के समर्थन में

९ सितम्बर का कार्यक्रम

इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध वैज्ञानिक दार्शनिक बर्ट्रेण्ड रसेल ने विनोबाजी के नाम जो पत्र लिखा था, वह अब प्रसिद्ध हो चुका है। उसी तरह उन्होंने जयप्रकाशजी के नाम भी एक पत्र लिखा था। विनोबाजी ने इस पत्र के संबंध में यह कहा कि इस पत्र का लिखित उत्तर क्या देना, इसका तो काम से उत्तर देना चाहिये। अखिल भारत शांति-सेना मण्डल ने इस संबंध में अपनी ७-८ अगस्त की बैठक में नीचे दिये हुए तीन विचार किये।

(१) श्रीमती आशादेवी आर्यनायकम्, जो आजकल इंग्लैंड में हैं, उनसे वहीं रुक कर ९ सितम्बर के प्रदर्शन के कार्यक्रम में शामिल होने के लिए कहा जाय।

(२) इस विषय में एक योग्य निवेदन तैयार कर ९ सितम्बर को नई दिल्ली स्थित अमरीकन, रूसी, ब्रिटिश और फ्रेंच दूतावासों को दिया जाय।

(३) अ० भा० शांति सेना मंडल भारतीय नागरिकों से यह अपील करता है कि ९ सितम्बर को वे लार्ड रसेल के प्रयत्न के समर्थन तथा युद्ध और अणुशस्त्रों के खिलाफ अपने विरोध के संकेत के रूप में एक बार का खाना छोड़ दें और इस प्रकार बचा हुआ धन शांति-सेना मंडल के प्रधान कार्यालय को राजघाट, वाराणसी के पते से शांति-कार्य के लिए उपयोग में लाने को भेज दें।

इनमें से पहले दो कार्यक्रम कुछ विशेष व्यक्तियों तक सीमित रहेंगे, किन्तु तीसरा कार्यक्रम आम जनता का है। देश के सभी शांति प्रेमियों को यह कार्यक्रम उठा लेना चाहिये।

हमारा हरएक शांति-केन्द्र, प्राथमिक, जिला या प्रांतीय सर्वोदय-मण्डल इस कार्यक्रम को उठा ले। कार्यक्रम के लिए कुछ सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं :—

(१) ९ सितम्बर से पहले घर-घर जाकर इस कार्यक्रम को समझाइये और अधिकाधिक लोग इसमें सहयोग दे सकें, ऐसा प्रयत्न कीजिये।

(२) ९ सितम्बर को अपने-अपने स्थानों में इस संबंध में सभा आयोजित कीजिये।

(३) जहाँ कहीं भी सौ से अधिक व्यक्ति एक शाम का खाना छोड़ने के कार्यक्रम में शामिल हों, वहाँ यह समाचार स्थानिक अखबारों में दिये जायँ।

(४) इस संबंध में प्रचार-पत्रिकाएं निकालिये।

(५) इस संबंध में अखबारों में लेख दीजिये।

(६) संस्थाओं के संचालकों से मिल कर इस संबंध में चर्चा कीजिये और यह कोशिश कीजिये कि इस कार्यक्रम को वे उठा लें।

—नारायण देसाई

उ० प्र० भूदान-कार्यकर्ता सम्मेलन

उत्तरप्रदेश के भूदान-कार्यकर्ताओं का एक सम्मेलन १६-१७ अगस्त को श्री श्यामाचरण शास्त्री की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। अखिल भारतीय वितरण-समिति के संयोजक, श्री कृष्णराज मेहता और श्री अच्युतभाई देशपांडे शिविर में आये थे। वितरण कार्य में प्रगति लाने के लिए उनसे आवश्यक सलाह का लाभ मिला। श्री अक्षयकुमार करण, मंत्री उ० प्र० भूदान-बोर्ड, ने मार्गदर्शन किया। इस सम्मेलन में उ० प्र० के ३५ जिलों के कुल ६० कार्यकर्ता सम्मिलित हुए। सर्वोदय-मण्डल उ० प्र० के मंत्री श्री तेजसिंह ने प्रांत में होने वाले मंडल के कार्य की व्यापक जानकारी दी। सम्मेलन में निम्न प्रकार के निर्णय हुए हैं।

(१) प्रदेश की सारी प्रस्तावित भूमि का वितरण अगले सम्मेलन, याने माह नवम्बर '६२ तक किया जाय। जो भूमि अप्रख्यापित है तथा जहाँ सरकारी कर्मचारियों का सहकार संतोषजनक नहीं मिल पाता है, या इसी प्रकार अन्य कठिनाइयाँ हैं, उसकी जानकारी सरकारी उच्च अधिकारियों को दिला कर उक्त समस्या का निराकरण किया जाय।

(२) जो भूमि वितरण के अयोग्य है, वह सरकार को समर्पित की जाय, ताकि सरकार गाँव-समाज को उसकी व्यवस्था का भार सौंप सके।

(३) प्रदेश के बाहर जिलों में, जहाँ वितरण की भूमि अधिक शेष है, वहाँ प्रादेशिक टोलियाँ बना कर आगामी सम्मेलन तक उन जिलों का काम पूरा करेंगे।

(४) ११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक जो "सर्वोदय-पर्व" मनाया जा रहा है, उसमें कार्यकर्ता पूरे उत्साह और लगन के साथ भाग लेंगे और इन दिनों में 'भूदान-यज्ञ' से संबंधित पत्र-पत्रिकाओं के ग्राहक बनाने और सर्वोदय साहित्य का प्रचार करने का तीव्र प्रयत्न करेंगे।

(५) शराबबंदी के लिए वायुमंडल पैदा किया जाय और आवश्यकता पड़ने पर 'पिकेटिंग' करने के लिए कार्यकर्ता तैयार रहेंगे।

माचला में पंचायत-प्रशिक्षण विद्यालय

मध्यप्रदेश शासन ने इंदौर से ७ मील दूर स्थित माचला ग्राम के लिए जिले के पंचायत-प्रशिक्षण विद्यालय को स्वीकृति प्रदान कर दी है। यह विद्यालय प्रान्तीय सर्वोदय-मंडल द्वारा सर्वोदय-शिक्षण समिति, माचला के अन्तर्गत चलेगा। प्रान्त के सुप्रसिद्ध सेवक श्री बैजनाथ महोदय विद्यालय के आचार्य होंगे। अन्य सहायक अध्यापकों की नियुक्तियाँ भी शीघ्र की जा रही है। संभवतः २ अक्टूबर, गांधी-जयन्ती से विद्यालय का शुभारंभ होगा। लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण के संदर्भ में पंचों को प्रशिक्षित करना ही विद्यालय का उद्देश्य है। स्मरण रहे कि माचला में एक ग्राम स्वराज्य विद्यालय तथा सर्वोदय-केन्द्र भी है, जिसके अन्तर्गत ग्राम विकास की कई रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलती हैं।

देवघर में मोतीबाबू का कार्यक्रम

गत जून में पटना में हुई सर्व सेवा संघ की प्रबन्ध समिति की बैठक के प्रस्ताव के प्रकाश में श्री मोतीलाल केजरीवाल ने १ अगस्त से अपने कुछ साथियों के साथ देवघर शहर के नागरिकों के द्वार-द्वार पर जाना आरम्भ किया है। वे नित्य ४ घंटे तक निम्नलिखित बातें घूम घूम कर समझाते हैं।

(१) सत्य, प्रेम और करुणा का मार्ग ही अच्छा है और इसके द्वारा ही विश्व में सुखी समाज बनाया जा सकता है।

(२) पेट भरने का अधिकार सबको है, किन्तु पेटी भरने का किसी को नहीं। गाँव की जमीन ग्राम-समाज की और शहर के मकान शहर-समाज के होने चाहिए।

(३) सिनेमा में जाना उस समय तक बन्द करना चाहिए, जब तक शत-प्रतिशत फिल्में उत्तम न हो जायँ।

(४) नशाबन्दी का महत्त्व।

(५) गन्दे पोस्टरों को हटाया जाय।

विश्व-सर्वोदय-आन्दोलन पर फिल्म बनाने का निश्चय

अ० भा० खादी और ग्रामोद्योग-कमीशन के फिल्म विभाग द्वारा सर्वोदय आन्दोलन के प्रणेताओं के सहयोग से एक ऐसी फिल्म बनाने का निश्चय किया गया है, जिसमें समस्त संसार में चलने वाले सर्वोदय-केन्द्रों की गतिविधियों का दिग्दर्शन कराया जायेगा। कमीशन की ओर से विभिन्न ग्रामोद्योग तथा ग्रामीण विकास के संबंध में अनेक फिल्मों का निर्माण किया गया है।

युद्धनिरोधक अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन-सम्मेलन

युद्धनिरोधक अन्तर्राष्ट्रीय के प्रधान कार्यालय से प्राप्त जानकारी के अनुसार गत २१ जुलाई से ४ अगस्त, '६२ तक डेन्मार्क की राजधानी, कोपेनहेगन के निकट होल्टे नामक स्थान में क्रीडाव्हीर स्कूल में युद्ध-निरोधक अन्तर्राष्ट्रीय अध्ययन-सम्मेलन आयोजित किया गया।

भारत से सेवाग्राम आश्रम के श्री देवीप्रसाद अब युद्ध-निरोधक अन्तर्राष्ट्रीय के सहमंत्री बन कर लन्दन पहुँच गये हैं। विशिष्ट जानकारी के लिए उन्हें निम्न पते पर लिखा जा सकता है : "वार रेसिस्टर्स इण्टरनेशनल", लेन्सबरी हाउस, ८८, पार्क एवेन्यु एनफील्ड, मिडिलसेक्स (इंग्लैंड)।

इस अंक में

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४२९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५४४ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८४४१ एक अंक १३ नये पैसे

छोटी अकल की छोटी सूझ

● शान्तिप्रिय

अभी-अभी खबर आई है कि इंग्लैंड ने आणविक शस्त्रों के विकास का भार अमेरिका पर छोड़ कर स्वयं उससे मुक्ति तो नहीं, पर छुट्टी पा ली है। अब आणविक अस्त्रों के प्रयोगों का जोर अमेरिका लगायेगा। इंग्लैंड केवल पारम्परिक शस्त्रों की वृद्धि में अपने को जुटायेगा।

यह मान लिया जाय कि यह खबर अच्छी है। जागतिक शांति की दृष्टि से यह कैसी है, यह तो बाद में तय होगा, पर इंग्लैंड की जनता की दृष्टि से यह खबर अच्छी है और उन राष्ट्रों की जनता की दृष्टि से भी अच्छी है, जिनकी सरकारें आणविक शस्त्रों के निर्माण की ओर या तो बढ़ रही हैं, या लालायित आँखों से उधर जाने वाले मार्ग को निहार रही हैं!

अब फ्रांस की जनता अपनी सरकार से कह सकती है कि आणविक शस्त्र-निर्माण का रास्ता छोड़ो, यूरोप एक होने जा रहा है न, तो कम-से-कम आणविक अस्त्रों का निर्माण न करने की सत्कृति में भी हम एक हो जायें। और भारत? यह कहना शायद गलत न होगा कि पं० जवाहरलालजी की वैदेशिक स्वतंत्र नीति को छोड़ दें, तो शेष कई बातों में भारत के कुछ तत्त्व इंग्लैंड को, अनजाने ही सही, पर अपना गुरु मानते हैं। वे अपने इस 'गुरु' की इस कृति को देखेंगे और जवाहरलालजी आणविक शस्त्रों की निर्मिति की ओर भारत को क्यों नहीं बढ़ने देते, इससे एवं इसी प्रकार की उनकी कृतियों से जो दुःख इन तत्त्वों को होता है, उसमें इंग्लैंड की उक्त कृति से सान्त्वना मिलेगी और वे आणविक शस्त्र निर्मिति के विषय से न केवल अपने देश को ही, किन्तु अपने मस्तिष्क को भी खाली पायेंगे। इस रिक्तता से उन्हें दुःख नहीं होगा। बोझ से छुटकारा हुआ, ऐसा ही वे महसूस करेंगे।

परम्परागत शस्त्र अनावश्यक

लेकिन हमारे इस छोटे मस्तिष्क में इसका उत्तर नहीं मिल रहा है कि इंग्लैंड अब परम्परागत शस्त्रों की निर्मिति में अपना धन, मन एवं समय क्यों खो रहा है? इंग्लैंड पर उसकी आज की परिस्थिति में बाह्य आक्रमण होने की संभावना नहीं है और गत सैकड़ों सालों से इंग्लैंड को अपनी जनता पर शस्त्र चलाने का संकट उपस्थित नहीं हुआ है। जनता कुछ इस तरह प्रशिक्षित हुई है कि वह गोलीबार को आवाहन करने को, शायद एक हीन वृत्ति समझती है और सरकार भी वैसे प्रसंग को शासन करने की नालायकी मानती है; अर्थात् उनको अपने देश की अंतर्गत व्यवस्था के लिए इन शस्त्रों की आवश्यकता है, ऐसा कहना दुरुस्त नहीं होगा। अब यह कहना कि शस्त्र नहीं होंगे, तो वहाँ भी गड़बड़ी उछल पड़ेगी, मानवीय स्वभाव की गतिविधि को न जानना है। शस्त्र न होने पर भी इंग्लैंड की सरकार को अपनी जनता पर शस्त्र चलाने का मौका नहीं आवेगा, ऐसा माना जा सकता है। फिर वे शस्त्र क्यों रखते होंगे? 'मुल्ला आदत से लाचार है,' यही उनका हाल है, ऐसा यदि हम कहें तो वह बेजा न होगा।

आणविक शस्त्र भी अनावश्यक

अब इस प्रकार सोचा जाय, तो अमेरिका और रूस भी क्यों आणविक शस्त्रों में उलझ रहे हैं? क्यों उसकी निर्मिति में करोड़ों रुपयों का खर्च कर रहे हैं और करोड़ों लोगों को आज मृत्यु के भय से ग्रस्त कर रहे हैं?

मृत्यु के भय से भी मृत्यु आने की संभावना का भय बहुत भयानक होता है। एक दिन मरना है, इसकी मनुष्य को इतनी चिन्ता नहीं होती, पर प्रतिदिन मरने की संभावना से वह सिहर उठता है!

भला ये आणविक बम अब क्यों बनाये जा रहे हैं? क्या इनका उपयोग किया जाने वाला है? जहाँ तक मस्तिष्क काम करता है, उससे ऐसा लगता है कि शायद नहीं। फिर क्या केवल इसलिए कि यह साबित हो जाय कि मारने की, हत्या करने की शक्ति किस राष्ट्र में अधिक है? यदि इतना ही करना हो तो इसको अन्य कम उपद्रवी पद्धति से किया जा सकता है, ऐसा हमारा ख्याल है।

बम नष्ट करते समय कोई उपद्रव न हो

प्रथम हम यह चाहते हैं कि इन राष्ट्रों को उनके पास आज जितने बम हैं, उन्हें नष्ट कर देना चाहिए। पर इसमें भी एक सोचने की बात है। जिस वैज्ञानिक बुद्धि ने इन बमों को पैदा किया, उस वैज्ञानिक बुद्धि में क्या इस उपाय के ढूँढ़ने की शक्ति की कोई गुंजाइश भी है कि इन बमों को नष्ट करते समय वे इस प्रकार नष्ट किये जायें कि उनसे कोई उपद्रव न हो। यदि यह शक्ति इनके मस्तिष्क में जल्दी उत्पन्न न हो, तो फिर इन बमों के इन शैतानी खजानों से हमें ईश्वर ही बचाये! हम आशा करते हैं कि ऐसी शक्ति उत्पन्न होगी।

हनन-शक्ति में कौन श्रेष्ठ?

यह करने पर भी कौन हनन शक्ति में श्रेष्ठ है, इसका निर्णय किया जा सकने का रास्ता निकल आ सकता है। और यही आज इन दोनों राष्ट्रों की फिक्र है। यह हनन-शक्ति दो प्रकार से इन राष्ट्रों के हाथ आ रही है। विज्ञान की विकसित शक्ति से और उसके द्वारा निर्मित शस्त्रों के लिए आवश्यक पूँजी गठित करने की क्षमता से। ये ही दो बातें हैं, जो आज इन्हें बलवत्तम् राष्ट्र बनाये रखी हैं। तो ये दोनों ही राष्ट्र इसमें होड़ करते रहें— विज्ञान में होड़, खुली होड़! और पूँजी में होड़, वह तो खुली होती ही है। जो उसमें आगे बढ़ेगा, उसका पीछा दूसरा करेगा और जब एक बिल्कुल ही आगे बढ़ जायेगा, तो दूसरा उसका लोहा मान लेगा। विज्ञान की प्रगति और पूँजी का हिसाब, ये इतनी खुली बातें हैं कि घातक शस्त्र न बनाते हुए भी ये प्रभावी साबित हो जाने चाहिए, क्योंकि विज्ञान एक राष्ट्र के अधिक हाथ आया है, इस जानकारी से ही उससे शस्त्र बनाये ही जा सकते हैं, इसका यकीन सबको हो सकता है। बिना बनाये ही यकीन! और इससे शक्ति की महानता सिद्ध हो सकती है और आणविक आदि शस्त्र बनाने से छुटकारा मिल सकता है।

हम जानते हैं कि यह न अहिंसा होगी, न वह शांतिपूर्ण मार्ग होगा और न उसमें शोषण से मुक्ति की संभावना होगी; पर यह होगी निःशस्त्र प्रतियोगिता। इसमें कौनसे छोटे राष्ट्र किसके साये में रहें आदि समस्याएँ रहेंगी ही और उसके लिए जूझना जारी ही रहेगा। पर वह जूझना होगा विज्ञान और पूँजी की निःशस्त्र प्रतियोगिता में। वह प्रतियोगिता चलती रहेगी और उसमें युयुत्सु राष्ट्रों को अपनी वृत्तियों को जुटाने का अवसर मिलेगा। यह बात तो सही है कि इन बड़े दो राष्ट्रों में एक-दूसरे के बारे में जो भय है, वह भय उनकी

[शेष पृष्ठ ११ पर]

सर्वभाषा-सम्मेलन को विनोबा का संदेश

[पिछले दिनों दिल्ली में सर्वभाषा-सम्मेलन हुआ था। सम्मेलन को दिया गया विनोबाजी का संदेश यहाँ दे रहे हैं। —सं०]

इस समय ऐसे सम्मेलन की जरूरत ही थी, जब कि भारत के संविधान में संशोधन करने का सोचा जा रहा है, जिससे हिंदी के साथ अंग्रेजी को बिना अवधि रखते हुए दोयम केन्द्रीय भाषा का स्थान दिया जायगा। इस संशोधन को सब पहलुओं से सोचना जरूरी है ही और वह काम शान्त और तटस्थ वृत्ति से सर्वभाषा-सम्मेलन कर सकता है।

(१) अवधि निकालने की जो बात सोची जा रही है, वह मैं समझता हूँ, उचित ही है। अन्यथा आज नाहक कुछ प्रांतों को भय-सा मालूम हो रहा है। इस संशोधन से वह भय दूर होगा और धीरे-धीरे संशय का वातावरण निर्मूल होगा।

(२) आज की स्थिति में इस बात पर जोर देना जरूरी है कि प्रांतों के कारोबार, जहाँ जैसी शक्यता है, जल्द से-जल्द उस-उस प्रांतीय भाषा में हों, इसकी पूरी कोशिश की जाय। अन्यथा स्वराज्य-प्राप्ति का लाभ ग्रामीणों तक को जो मिलना चाहिए, नहीं मिलेगा।

(३) स्कूलों में अंग्रेजी माध्यम जारी रहे, इस प्रकार की जो आवाज क्वचित उठ रही है, उसके अनुकूल दलीलों का पूरा ख्याल रखते हुए, सब दृष्टि से सोच कर कहना होगा कि यह आवाज शिक्षण के मूलभूत विचार के खिलाफ ही जाती है। इसलिए किसी अभिमान के खातिर नहीं, लेकिन शिक्षण-प्रतिष्ठा के खातिर इसका विरोध करना होगा।

(४) विश्व के और विज्ञान के साथ संबंध रखने के लिए अंग्रेजी का महत्त्व है, यह हम महसूस करते हैं। अलावा इसके एक भाषा की तौर पर उसका जो विकास हुआ है, जिसमें भारतीयों का भी सहयोग रहा है, उसका भी हम गौरव महसूस करते हैं। इसलिए बुनियादी तालीम की समाप्ति पर अंग्रेजी भाषा सिखायी जाय, इसमें हमें एतराज नहीं।

(५) केंद्रीय स्थान में शंकाशीलों के आश्वासन के लिए अंग्रेजी की मुद्दत हटाने पर उसके साथ-साथ स्वाभाविक ही हिंदी को पूर्ण विकसित करने की जिम्मेवारी भी सबकी बढ़ जाती है। अन्यथा यह भय हो सकता है कि दूसरी भाषा के नाम पर अंग्रेजी चले और प्रत्यक्षतः वही एक चले, इसलिए संविधान में जो संशोधन सोचा जा रहा है, उसके इस जिम्मेवारी के अंश पर भी विशेष रूप से जोर देना होगा।

ऐसे व्यापक विषय में हरेक विचारक के अपने-अपने सूक्ष्म विचार-भेद हुआ करते हैं। वैसे मेरे अपने भी कई विचार-भेद हैं। लेकिन वे मैंने सार्वजनिक क्षेत्र में छोड़ ही दिये हैं और जो अनिवार्य साधारण अंश था उतना ही मैंने इसमें प्रगट किया है। उस पर सर्व-भाषा-सम्मेलन सोचेगा, और आशा करता हूँ कि सर्वसम्मति से वह देश के सामने अपने सुझाव रखेगा, जिससे कि 'सर्वेषां अविरोधेन' भारत प्रगति कर सकेगा।

—विनोबा का जय जगत्

अ-ई जगद् रहींत: जीवनं सत्य शोधनम्
भूदानयज्ञ
लोकनागरी लिपि •

वीज्ञान पर सर्वोदय का ही हक

लोग जानते हैं की मेरे कुल वीचारों की बुनीयाद अदम-तशद्दुद, अहींसा पर है। मैं अहींसा पर अीतना प्यार क्यों करता हूं? अीसका जवाब यही है की मेरा वीज्ञान पर प्यार है, अीसीलीअे अहींसा पर भी है। मैं चाहता हूं की वीज्ञान खूब बढ़े और वह बढ़ने वाला है ही। अुसे कोअी नहीं रोक सकता। अगर हम चाहते हैं की वीज्ञान बढ़े, तो वीज्ञान के साथ अहींसा का होना भी लाजीमी है। वीज्ञान और हींसा, तशद्दुद अीकट्ठा हो जाय, तो अीन्सान का खातमा हो जायगा। मैं अुस दीन की राह देख रहा हूं, जब 'अेटामीक अीनर्जी'—अणुशक्ती हासील होगी, हर गाव में वह पहुंचेगी। वह अेक 'डीसेंट्र-लाअीज्ड'—वीकेन्द्रीत—ताकत हो सकती है, जो गाव को अपने पांवों पर खड़ा कर सकती है। बहुतों का खयाल है की सर्वोदय दकीयानूस, पुराने जमाने का वीचार है, जो वीज्ञान को पसंद नहीं करता। लेकीन यह बीलकुल ही गलत खयाल है।

मैंने बार-बार कहा है की वीज्ञान पर अगर कीसी का हक है, तो सर्वोदय का ही, दूसरों का नहीं। अगर दूसरों के हाथ में वीज्ञान की ताकत जायगी, तो वह मनुष्य को खतम करने वाली साबीत होगी। अगर वह ताकत सर्वोदय के साथ जुड़ेगी, तो अीन्सानीयत पनपेगी, अीन्सान का भला होगा।

श्रीनगर, (३-८-'५९) —वीनोबा

*लिपि-संकेत: ि = ी, ी = ी, ख = ख संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

टिप्पणियाँ

नैतिक शक्ति-निर्माण के लिए त्याग आवश्यक

जग-विख्यात दार्शनिक लार्ड बर्ट्रेण्ड रसल ने ता० ९ सितम्बर को आणविक अस्त्रों और उनके प्रयोगों के खिलाफ सामूहिक आवाज उठाने का आवाहन किया है। वे स्वयं उस दिन हजारों समर्थकों के साथ लंदन में इस सिलसिले में प्रदर्शन कर रहे हैं। विश्व-शांति-सेना के सह-अध्यक्ष श्री जयप्रकाश नारायण ने भी ९ सितम्बर को हिन्दुस्तान के मुख्य मुख्य शहरों में और अन्य जगहों पर भी जहाँ जहाँ सम्भव हो सके, अणुअस्त्रों के खिलाफ आवाज उठाने का कार्यक्रम देश के सामने रखा है। वे स्वयं बहुत करके ता० ९ सितम्बर को दिल्ली में अणुशस्त्र रखने वाले चारों राष्ट्रों—अमेरिका, रूस, इंग्लैण्ड और फ्रांस—के दूतावासों को इन शस्त्रों के निर्माण और उपयोग इत्यादि के खिलाफ स्मृति-पत्र पेश करेंगे।

श्री जयप्रकाश नारायण ने लोगों से यह भी अपील की है कि वे ता० ९ सितम्बर को अणुअस्त्रों की समाप्ति की माग के समर्थन में एक समय का भोजन छोड़ें और इस प्रकार जो बचत हो, वह शांति-कार्य के उपयोग के लिए अखिल भारत शांति-सेना मण्डल, काशी को भेजें। इस सिलसिले में एक भाई लिखते हैं :

"९ सितम्बर को बर्ट्रेण्ड रसल के समर्थन में एक समय का भोजन छोड़ें, ऐसी माग भारत की जनता से श्री जय-प्रकाशजी ने की है। आजादी के बाद देश में कांग्रेस का शासन आया तब से भारत के लोगों को जो भोजन मिलता है, उसमें कोई सत्व नहीं होता। सत्वहीन खुराक खाकर अपनी जिन्दगी के दिन बिताने वाले लोगों से यह माग करना मुझे योग्य नहीं लगता। आज सरकार भी भारत की बेहाल जनता से त्याग की माग करती है और हम भी वैसी ही माग करेंगे तो मुझे लगता है कि आज की सरकार और हमारे में कोई फर्क नहीं रहेगा। देश में कर भार बढ़ा है, महँगाई बढ़ी है, मशीनों के आने से बेरोजगारी बढ़ी है, घूस और रिश्वत बढ़ी है, ऐसी परिस्थिति में हम परदेशी सरकारों के अणु-प्रयोगों का विरोध तो करते हैं, लेकिन हमारी ही सरकार के द्वारा किये गये इन कार्मों का विरोध करने में ढिलाई करते हैं, यह क्या असंगत नहीं है?"

इस प्रकार सोचने वाले और भी कुछ लोग हो सकते हैं। आज हिन्दुस्तान में लोगों को सत्वहीन और मिलावट वाली खुराक मिल रही है, इसलिए उन्हें भोजन छोड़ने के लिए न कहा जाय, यह दलील समझ में आने जैसी नहीं है। अहिंसक आन्दोलन हमेशा नैतिक होता है और नैतिक शक्ति बटोरने के लिए त्याग पहली सीढ़ी है। 'सरकार भी लोगों से त्याग की माग करती है और हम भी इसी तरह बेहाल जनता से त्याग की माग करते हैं, तो हममें और सरकार में अंतर क्या है?'—यह दलील तो और भी अजीब है। हर बात में हममें और सरकार में फर्क दीखना ही चाहिए, यह कोई जरूरी नहीं है। सरकार लोगों से त्याग की अपेक्षा रखती है, इसलिए हम लोगों से त्याग की माग न करें, इसका कोई अर्थ नहीं है।

सरकार की नीति गलत है, इसलिए पहले हम उन बातों का विरोध करें, यह दलील भी बहुत सही नहीं है। सरकार की जो बातें हमें बुरी लगती हों उनका भी विरोध करना चाहिए, पर इस प्रकार का विरोध दूसरी चीज है और हमारी अपनी नैतिक शक्ति बढ़ाने के लिए त्याग इत्यादि के कार्यक्रम अपनाना बिल्कुल भिन्न। सरकार ने टैक्स आदि बढ़ा दिये हैं, और वे बेजा हों तो उनका विरोध करने का भी लोगों को अधिकार है। पर क्या इसके कारण लोग अपने खर्च का, दान का या त्याग का कार्यक्रम रोकते हैं या उन्हें वह रोकना चाहिये? कई बातों को एकसाथ मिलाने की भूल हम अक्सर करते हैं। हर प्रश्न की अपनी मर्यादा और अपना स्थान होता है, यह हमें ध्यान में रखना चाहिए। आशा है, लार्ड बर्ट्रेण्ड रसल और जयप्रकाशजी की अपील का—जो केवल उन व्यक्तियों की अपील नहीं है, बल्कि समस्त मानव जाति के सामने जो खतरा उपस्थित हुआ है, उसकी चेतावनी है—लोग उत्साह के साथ समर्थन करेंगे और उसमें अपना सहयोग देंगे।

—सिद्धराज

एक सुझाव

"वनस्पति" के लिए रंग

मूंगफली आदि वनस्पति पदार्थों के तेलों को रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा गाढ़ा बना कर घी का रंग-रूप देकर 'वनस्पति घी' का नाम दिया जाता है। इस प्रकार के जमाये तेल बाजार में अधिकाधिक मात्रा में बिक रहे हैं और इनका उत्पादन और व्यवसाय इतने जबरदस्त हाथों में है कि किसी को इनके खिलाफ बोलने की हिम्मत नहीं होती। बड़ी बड़ी कम्पनियाँ सभी अखबारों में लम्बे चौड़े विज्ञापन देती हैं और कोई अखबार इनके खिलाफ सचाई प्रकट करने की हिम्मत नहीं करता! सरकार भी इन कम्पनियों से घबराती है और वैज्ञानिकों को भी ये खरीद लेने की ताकत रखती हैं।

जब से देश को आजादी मिली है, वनस्पति घी की मिलावट के लिए इस्तेमाल न किया जा सके, इसकी माग की जाती रही है, क्योंकि सच्चे घी की तरह रूप-रंग बना कर बेचा जाने वाला यह तेल घी के गुणों से सर्वथा रहित है तथा दाम में भी बहुत सस्ता है, इसलिए नकली घी की संज्ञा भी इसे देते हैं। दुग्ध पदार्थ वनस्पति-पदार्थों से महँगे भी हैं और पौष्टिक भी, इसलिए घी में वनस्पति मिलाने का काम बड़े पैमाने पर देश में चलता है। वनस्पति कम्पनियाँ खुद यह काम नहीं करतीं, पर जब भी कोई प्रस्ताव जमाये तेल को असली घी की शक्ल से भिन्न रंग या रूप देने का रखा जाता है, तब वे ऐसे प्रस्ताव का घोर विरोध करते हैं।

एसेम्बली और लोकसभा के सदस्यों तथा सभी महत्व के लोगों को बड़े-बड़े पत्र लिख कर तथा अन्य दबावों से ये कम्पनियाँ अपना पक्ष बना लेती हैं और भारत देश की शाकाहारी जनता को मात्र एकमात्र प्राणिज तेल-पदार्थ घी के धंधे को समाप्त करने में जरा नहीं हिचकतीं।

अभी समाचार मिला है कि हल्दी तथा रतनजोत से ऐसा रंग प्राप्त करने का प्रयत्न किया जा रहा है, जो नकली घी में दिया जा सके, जिससे वह मिलावट के काम में न आ सके। पर यह कब लागू होगा तथा कितना कारगर हो सकेगा, यह देखना ही है।

वनस्पति तेलों को रंग तथा गंधहीन बनाना और उनको अधिक टिकाऊ बनाने के लिए हाइड्रोजन गैस से जमाना अपने में गलत नहीं है, क्योंकि शुद्ध वनस्पति तेल ताजा ही खाया जा सकता है तथा व्यापार में महीनों-सालों रख कर पैसा कमाना हो, तो उसे रासायनिक तरीके से बनाने की आवश्यकता पड़ेगी ही। पर यह जमाया तेल ताजे तेल का मुकाबला न पाचन में कर सकता है और न पोषण में। फिर भी यदि कुछ लोग निर्गंध तेल चाहते हैं, तो उनको वह ऐसे रूप में मिलना चाहिये कि उस तेल का उपयोग मिलावट में न हो सके। रंग का स्थान इसीलिए न्यायोचित है। साथ ही यह भी सोचा जा सकता है कि वनस्पति तेलों को टिकाऊ बनाने के लिए हाइड्रोजन गैस की प्रक्रिया इतनी ही की जाय कि वह तरल पदार्थ ही बना रहे, न उसमें दाना पड़े और न वह भारतीय तापमान में जम सके। जो उपभोक्ता हैं, उसे तेल, रूप में ही "वनस्पति" मिले—चाहे तो छिलके घी का रंग और गंध उसे दे सकते हैं, पर वह इतना 'हाइड्रोजनेट' न होगा कि घी का जमा हुआ रूप प्राप्त कर सके। यह वैज्ञानिक रूप से संभव है। इसमें न मिलावट की गुंजाइश है। न पाचन में ऐसा तेल अधिक कठिन होगा और न ही तेलों के स्वाभाविक रंग-गंध से परहेज करने वालों को इसके इस्तेमाल में कोई कठिनाई होगी।

सच पूछा जाय तो ताजा, घानी से पेरा स्वच्छ तेल जितना लाभकारी होगा, उन्हीं तेलों को जमा कर निस्सत्व बनाया "वनस्पति" नहीं हो सकता। घी का तो "वनस्पति" से कोई नाता ही नहीं। इसलिए घी न मिले तो ताजा घानी का तेल खाना अधिक लाभकारी है "वनस्पति" का स्थान धीरे धीरे कम होता जाना अत्यंत आवश्यक है।

—देवेन्द्रकुमार गुप्त

बीकानेर-दिल्ली दूध-योजना

• राधाकृष्ण बजाज

"ग्रामराज" साप्ताहिक के ७ अगस्त, '६२ के अंक में बीकानेर से दिल्ली दूध जाने के संबंध में कुछ जानकारी दी गई है, साथ ही कुछ शकाएँ भी उठायी गई हैं। लेखक ने पूरी सद्‌भावना और आत्मीयता के साथ यह किया है। हमारे प्रति उनका स्नेह और विश्वास हर वाक्य में प्रकट है, ऐसी स्थिति में शकानिरसन आवश्यक है। इसमें मुख्य दो शंकाएँ उठायी है: (१) दिल्ली दूध ले जाने वाली पार्टी द्वारा गो-पालकों के आर्थिक शोषण का डर और (२) दूध लेने में किसान के पास छाछ भी नही बचेगी, इसलिए घी ही लेने का सुझाव।

बीकानेर में अभी ७ गाँवों से १२५ मन दूध रोजाना आ रहा है। संभव है कि महीने-डेढ़ महीने में ही वह ३०० मन तक पहुँच जाय। अभी ५६७ गो-पालकों से दूध आता है। औसतन दस सेर दूध फी गो-पालक आता है। मार्च से इस कार्य का आरंभ हुआ था। पाँच माह में २५ मन से १२५ मन हुआ है। आगे दूध ले जाने के साधनों में कमी न पड़े तो दो साल के भीतर दो-ढाई हजार मन दूध, दस हजार गो-पालकों से २५००० गायों से एवं १०० देहातों से उठाने की कल्पना है।

हर देहात को हर साल एक लाख रुपया मिलें एवं बीकानेर जिले को एक करोड़ प्राप्त हों। इतने बड़े कार्य के लिए बड़े ही साधनों की जरूरत होगी, सैकड़ों कार्यकर्ता लगेंगे। दूध 'पेस्चराइज' करने के लिए चार-पाँच हजार मन शक्ति का 'प्लांट' लगेगा। दूध उठाने के लिए स्पेशल ट्रेन भी छोड़नी पड़ें। चारों ओर सड़कें बनानी होंगी, शहर के गो-पालकों की बस्ती बसानी होगी। कई जगह पानी का इतजाम करना होगा। गोसंवर्द्धन के के लिए अच्छे साँडों की व्यवस्था, 'वेटरनरी सर्विसेस' की व्यवस्था, चारे-दाने का सुधार आदि इतने काम होंगे कि जिसमें करोड़ों ही खर्च करना होगा! दूध ले जाने के अलावा सत्तासर, छत्रगढ़, महाजन आदि दूर के देहातों से क्रीम (घी) लाये जाने की भी योजना है। यह भी समय पाकर हजारों मन की हो सकती है। इतनी बड़ी योजना के परिणामों को अभी से अवश्य सोचना चाहिये और कहीं भूल होती हो, तो सुधारना चाहिये।

पहला प्रश्न

पहला प्रश्न किसानों के आर्थिक शोषण की शंका का है। इसमें कुछ जानकारी की गलती रही है। दिल्ली की किसी पार्टी को दूध नहीं दिया जाता है, वह भारत-सरकार की दूध-योजना को दिया जा रहा है, जहाँ निजी स्वार्थ के लिए स्थान नहीं है। दिल्ली-योजना के पास आज ३००० मन भैंस का व २०० मन गाय का, कुल ३२०० मन दूध रोजाना आता है। भैंस का जितना भी दूध उन्हें चाहिए, दिल्ली के आस-पास से मिल सकता है। बीकानेर से दूध लेने की कल्पना केवल गो-पालन को बढ़ावा देने की दृष्टि से है। वर्धा में किये गये २० वर्षों के अनुभव से यह पाया गया कि दूध 'मार्केटिंग' से ही गो-पालन आज के अर्थशास्त्र में टिक सकता है। बीकानेर से १३ रु० मन लेकर दिल्ली में ४० रु० मन बेचा जाता है, यह लिखना सही नहीं है। सत्य बात यह है कि देहातों से १३ रु० ३१ न०पै० मन से खरीद किया जाता है और दिल्ली में २२ रु० ५० न० पै० मन (६२ न० पै० लीटर) के भाव से बेचा जाता है। दिल्ली का खर्च छोड कर केवल रास्ते के खर्चे सहित दिल्ली में २३-२४ रु० मन पड़ता है। उम्मीद है कि दूध बढ़ने पर घाटा नहीं रहेगा और वहाँ का खर्च भी निकलने लगेगा। ऊपर के तथ्यों से यह स्पष्ट है कि यह सारी योजना गो-सेवा के उद्देश्य से गो-पालकों की उन्नति के लिए है। उसमें उनके शोषण का डर नहीं है।

दूसरा प्रश्न

दूसरा प्रश्न यह है कि पैसे के लोभ मे किसान पूरा दूध दे देगा, उसके पास छाछ भी नहीं बचेगी! इस तरह की शका इस योजना के आरंभ में राजस्थान गोसेवा-संघ की प्रथम बैठक में ही उठायी गयी थी। यही नहीं, वर्धा में भी सर्वोदय-विचार रखने वाले हमारे सहयोगी इस शंका को उठाते रहे हैं और अभी तक भी इसका हल नहीं मिल पाया है। इस प्रश्न की हानि-लाभ, दोनों बाजू हैं। किसान या गो-पालक को समझा कर उसका निर्णय उसे करने दे या उसे अज्ञानी समझ कर हम हितैषियों का निर्णय उसपर लादें, यह सवाल सताता है। इसका हल होने पर ही इस सवाल का हल होगा। जितनी 'मनिक्राप्स', पैसा देने वाली फसलें हैं, उन सबके बारे में यही कहा जा सकता है कि किसान को केवल पैसा मिलता है। वस्तु तो कीमत के लोभ में शहर में चली जाती है। आज किसान क्या और मध्यम स्थिति के लोग क्या, पोषण पर कम खर्च तथा अन्य वस्तुओं पर अधिक करने लगे हैं, जब कि अन्य वस्तुओं पर खर्च करके पोषण पर अधिक-से-अधिक खर्च करना चाहिए। इस विचार को स्वयं समझने की व समाज को समझाने की जरूरत है।

हानि-लाभ

किसान और गो-पालक का फर्क समझ लेना चाहिए। जिसका मुख्य धंधा खेती का, सहायक धंधा गो-पालन का है, वह है किसान और जिसका मुख्य धंधा गो-पालन का, सहायक धंधा खेती का है, वह है गो-पालक। बीकानेर के दूध-क्षेत्र में १२ वर्ष जमीन पड़ती रखने पर तीन साल पक सकती है। वह भी तब, जब वर्षा समय पर आ जाय। इस क्षेत्र के लोग मुख्यतः गो-पालक हैं। ये लोग अनाज घर में खाने के लिए पैदा करते हैं और दूध-घी बेचने के लिए। दूध न बिकने से मजबूरन सारा दूध घर पर रखते थे। उसकी पूरी छाछ घर में पीना सम्भव नहीं, मजबूरन जानवरों को पिलाते थे और आर्थिक हानि उठाते थे! जिन ७ गाँवों में दूध बिकना आरंभ हुआ है, उनमें कभी गायों को गुआर या दाना नहीं दिया जाता था, जंगल की चराई पर दूध निकाला जाता था। आज हर गो-पालक अपनी गाय को दाना देने लगा है। दाने से २५ से ५० प्रतिशत तक दूध बढ़ा है। खर्चे के मुकाबले आमदनी बढ़ने से सारी गायों की फिजा बदल गई है। मनुष्यों के भी चेहरे चमकने लगे हैं। अभी तक तो लोग घर के लिए दूध रख कर ही बेचते हैं, लेकिन आगे जाकर लोभ में सारा दूध दे सकते हैं। उन्हें समझाने की जरूरत है कि बच्चों के लिए दूध जरूर रखें। हमने भी सोचा है कि डेढ़-दो सेर दूध जो घर में न रखे, उनका दूध न लिया जाय। दूध-बिक्री में दूसरा एक बड़ा दोष बछड़ों की हालत गिरने का है। उन्हें दूध बहुत कम छोड़ा जायेगा। दूध की कीमत बढ़ी तो और भी कम हो जायगा। उस बारे में भी गो-पालकों को समझाना होगा। साँड़ों की, बछड़े-बछड़ियों की कीमतें बढ़ानी होंगी। कीमतें बढ़ने पर बछड़े-बछड़ियों का पालन होने लगता है। दूध-क्षेत्र में जिन गायों की कीमत ढाई-तीन सौ मानी जाती थी, उन्हें आज तीन-चार सौ में भी नहीं बेचते हैं, बल्कि नई गायें खरीदने में लगे हैं। यही रास्ता है बछड़ियों के पालन का, अच्छी गायों को कलकत्ता, बम्बई जाने से रोकने का व क़तल से बचाने का।

घी-योजना

आज के अर्थशास्त्र में घी के बल पर ही भैंस आगे बढ़ रही है। भैंस के दूध में ७॥-८ प्रतिशत घी होता है, जब कि गो-दूध मे ४-४॥ प्रतिशत। गाय का दूध मनुष्य के पोषण की दृष्टि से घृतांश कम होने पर भी अधिक स्वास्थ्यकर है। इस कारण गाय का दूध उत्पादन में भैंस के दूध से कुछ सस्ता पड़ने पर भी भैंस के दूध के बराबर पीने के लिए बिक सकता है, जब कि गाय का घी ३०-४० प्रतिशत महँगा पड़ता है और कीमत अधिक नहीं मिल पाती। आज तक का हमारा अनुभव है कि दूध बिक्री में ही भैंस के मुकाबले गाय टिक सकती है। मनुष्य स्वास्थ्य के लिए भी दूध रूप में ही अधिक पोषण मिलता है। वर्धा में किसानों एव गो-पालकों ने भैंसे बेच-बेच कर गायें खरीदीं, वे दूध-बिक्री के बल पर ही। दूध का आधार टूट जाय तो घी के अर्थशास्त्र में गाय को बचाना कठिन है। हमारे भाई ने गाय के घी पर 'सब्सिडी' देने का सुझाव दिया है, वह व्यावहारिक व आर्थिक दोनों दृष्टियों से सम्भवनीय नहीं है।

क्रीमरीच

इन सारी दलीलों के बाद प्रश्न उठता है कि क्रीमरीच (घी) की योजना कैसे चल सकेगी? यह जरूर चलेगी, क्योंकि आज गो-पालकों को जो घी के दाम मिलते हैं, उससे कुछ अधिक मिलेंगे। क्रीम के लिए २१ नये पैसे सेर दूध लिया जायगा। क्रीम निकाल कर बचा दूध लौटा दिया जायगा। सिवाय इस क्षेत्र में भैंसे से कोई मुकाबला नहीं है। इतनी गरमी है कि भैंस टिक नही सकती है। पानी की भी कमी है। कहीं-कहीं दो रोज में एक बार गाय को पानी पिलाते हैं और उसके लिए भी पाँच-सात मील तक सफर करनी पड़ती है।

मेरा ख्याल है कि गो-दूध योजना और क्रीम योजना, दोनों ही सारे राजस्थान एवं भारत के लिए आशीर्वाद रूप है। इनमें जो कमियाँ आयें, उन्हें समय-समय पर दूर करते रहना चाहिए। हमारे भाई ने जो प्रश्न उठाया, उसके लिए हम आभारी हैं।

शिक्षण और रक्षण : सैनिक शिक्षा

• मार्जरी साइक्स

'एन० सी० सी०' के समर्थक "विद्यार्थियों की अनुशासनहीनता" की समस्या को हल करने में इसकी उपयोगिता पर बहुत जोर देते हैं। अगर यह सचमुच उसका मूल उद्देश्य है, तो स्वाभाविक ही ऐसा माना जायगा कि जिन विद्यार्थियों को अनुशासन की ज्यादा जरूरत है, उन्हें 'एन० सी० सी०' में पहले लिया जायगा। अभी तक आर्थिक कारणों से एक स्कूल के सब लड़कों को 'एन० सी० सी०' में लेना सम्भव नहीं हुआ है, इसलिए चुनाव का कोई सिद्धान्त स्वीकार करना जरूरी है। अभी तक यह सिद्धान्त सबसे अच्छे विद्यार्थियों को लेने का रहा है, इसलिए कि उनका 'एन० सी० सी०' दल अच्छा नाम कमा सके। अच्छे, बुद्धिमान, गुणवान् लड़कों पर इसमें भरती होने के लिए कहीं-कहीं बहुत ही दबाव डाला जाता है। ऐसे एक लड़के से मेरा व्यक्तिगत परिचय है। यह लड़का स्वयं अपनी विचारशक्ति से ही इस नतीजे पर पहुँचा था कि युद्ध एक गलत काम है और इसलिए उसने 'एन० सी० सी०' में भरती होने से इन्कार किया। उसका यह भाग्य रहा कि इन विचारों में उसे अपने माता पिताओं का प्रबल समर्थन मिला, जो उस शहर के बहुत ही सम्मानित सज्जन थे। लेकिन दरअसल बात यह है कि लड़कों पर दबाव डाला जाता है, और दबाव उन पर अधिक डाला जाता है, जिन्हें अनुशासन में विशेष ट्रेनिंग की जरूरत नहीं है। फिर इससे अनुशासनहीनता की समस्या कैसे सुलझेगी ?

'एन० सी० सी०' ट्रेनिंग के कार्यक्रमों का निर्देशन सैनिक-अधिकारियों द्वारा होता है। इसका मतलब है कि हमारे स्कूल 'सैनिक' विचारों के प्रचार का व्यापक क्षेत्र बन रहे हैं। लेकिन सही शिक्षा में यह जरूरी है कि बच्चे किसी विषय का एक ही पहलू नहीं, सभी पहलुओं को सुनें, समझें और यह विषय बड़े ही नैतिक तथा सामाजिक महत्त्व का है। आजकल स्कूलों तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों में गांधीजी और नेताजी सुभाष बोस के मिलिटरी वर्दी और मेडलों से सुसज्जित चित्र पास-पास टंगे हुए मिलते हैं। दोनों ही अपनी निष्ठा और वीरता के लिए हमारी पूजा के पात्र हैं, फिर भी इन दोनों के आदर्श एक-दूसरे से अत्यन्त भिन्न हैं और यह सोचना कि दोनों को एक ही समय अपनायेंगे, भ्रम है या निरी भावुकता है। 'मिलिटरी ट्रेनिंग' के कार्यक्रमों द्वारा आज नेताजी का पक्ष राष्ट्र के कल्याण के लिए सैनिक शक्ति पर निर्भर करना—हमारे नव-युवकों के सामने बारबार ढंग से पेश हो रहा। लेकिन गांधीजी के विचारों को समझने का मौका कहाँ आता है ? 'एन० सी० सी०' में भरती होने के पहले क्या हमारे बच्चों को शान्ति-सेना के विचार सुनने-समझने, उस पर चर्चा करने के उचित अवसर प्राप्त होते हैं ? क्या उन्हें प्रसिद्ध विचारक सैल्वेडोर द मदारियागा के एक अन्तर्राष्ट्रीय निःशस्त्र शान्ति-सेना के प्रस्ताव की बात सुनने को मिलती है ? क्या एक विश्व-शान्ति-सेना स्थापित करने के लिए आजकल जो प्रयत्न हो रहा है, उसके बारे में उन्हें बताया जाता है ? इन प्रश्नों का उत्तर होगा—नहीं, बच्चों के सामने ऐसा कोई मौका उपस्थित नहीं होता है।

इस अत्यन्त गंभीर विषय पर जो जानकारी मिलती है, वह प्रचार के जरिये मिलती है, न कि शिक्षा द्वारा। कोई भी अच्छा शिक्षक केवल प्रचार की बातें सुन कर सन्तुष्ट नहीं रह सकता।

> विद्यालय में विद्योपार्जन का स्थान होता है और इसलिए उनका कर्त्तव्य है कि अपने सब सदस्यों—बालकों और शिक्षकों—को किसी भी बात को समझ कर जिम्मेदारी के साथ निर्णय लेने का मौका दे। इसलिए भी यह जरूरी है कि शिक्षक इसके बारे में सब तथ्यों से अवगत हों। किसी भी प्रश्न के दोनों बाजुओं की पूरी जानकारी के बगैर ठीक निर्णय नहीं हो सकता।

मैंने पहले भी 'कोरी भावुकता' शब्द का उपयोग किया था। 'कोरी भावुकता' का अर्थ है कि आदमी के विकारों और भावनाओं का ऐसे अनुचित रूप से मोड़ा जाना, जिसमें सचाई भी नहीं होती और जो तर्कबुद्धि से भी सिद्ध नहीं किया जा सकता।

'मिलिटरी ट्रेनिंग' आदि के इन कार्यक्रमों से हमारे लिए आज एक खतरा उस असत्य भावुकता के वातावरण से है, जिससे ये घिरे हुए हैं और जिसके आधार पर ये कार्यक्रम पोसे जाते हैं। वर्दी, तोरण, झण्डे आदि किशोरों को बड़े ही आकर्षक लगते हैं, कौन बच्चा अच्छे कपड़े आदि पहन कर सभा के सामने खड़ा होना नहीं चाहेगा ! शिविर आदि में भाग लेना उनके पराक्रम की इच्छा को तृप्त करता है, बड़ी-बड़ी सभाएं और प्रदर्शन उत्तेजक तथा आनन्ददायक होते हैं। भारत भर से युवक जहाँ एकत्र होते हैं, साथ मिल कर गाते हैं, कवायत करते हैं, एकसाथ खाते, काम करते हैं, वहाँ एक सच्ची एकता की भावना तो होगी ही। इतने में कोई दोष नहीं, सब अच्छा ही है।

लेकिन जो बात अच्छी नहीं, दिखावटी और झूठी है, वह यह कहना है कि (१) ये अच्छे-अच्छे अनुभव 'मिलिटरी प्रोग्राम' के द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं, जब कि असल में किसी भी युवक-संगठन, शिविर या सम्मेलन का यह एक सामान्य भाग होना चाहिए और (२) यह उत्साह और आनन्द इन कार्यक्रमों के मुख्य उद्देश्य है, जब असलियत यह है कि उनका उद्देश्य उनमें भाग लेने वालों के मानस को मारने की क्रिया के लिए तैयार करना है। अगर हमें 'मिलटरी ट्रेनिंग' चाहिए ही, तो हममें कम-से-कम उसका असली उद्देश्य सचाई के साथ समझने की हिम्मत होनी चाहिए।

प्रथम विश्वमहायुद्ध के समय मैं एक बच्ची ही थी। कुछ-कुछ बातें समझने-सोचने लगी थी। उस समय इंग्लैण्ड के साधारण स्त्री पुरुषों का यह दृढ़ विश्वास था कि यह युद्ध न्याय्य और आवश्यक है। मैंने भी इसके बारे में कोई शंका नहीं की। तब भी रंग-बिरंगे तोरणों, झण्डों तथा आकर्षक गानों के द्वारा उसको ऊँचा बताने के प्रयत्नों को मैंने शंका की नजर से देखा था। तब मैं इतनी छोटी थी कि अपने इन विचारों को ठीक तरह से खुद भी नहीं समझ पाती थी, फिर भी मैंने समझ लिया था कि यह दिखावा है, असलियत नहीं। मेरी एक उतनी दयालु और प्रिय शिक्षिका सिर्फ एक जर्मन होने के अपराध के लिए गुण्डों के हाथों जान के खतरे में पड़ गयी थी ! मैं जानती थी कि सेना में मेरे पिताजी को ठंड, गन्दगी और भी कई कठिनाइयाँ झेलनी पड़ रही थीं और वह अपने पुराने जर्मन विद्यार्थियों के बारे में चिन्तित थे, जो कि दूसरे पक्ष से लड़ रहे थे। संक्षेप में मैं युद्ध की असलियत जानती थी कि उसमें निरर्थक क्रूरताएं, कष्ट और दुःख है और मानव के स्वाभाविक भ्रातृभाव का सर्वथा त्याग है। मैं इस बात के लिए कृतज्ञ हूँ कि मेरे माता पिता ने इन सत्यों को छिपा कर मुझे धोखे में रखने का प्रयत्न नहीं किया। लेकिन हमारे 'एन० सी० सी०' के समर्थक जिस सैनिक जीवन के लिए हमारे बच्चों को तैयार कर रहे हैं, उसके असल उद्देश्य के बारे में वे मौन रखते हैं।

हमारी सरकार "राष्ट्रीय एकता" के बारे में चिन्तित है और चिन्ता करने का कारण भी है। हमारे अच्छे-से-अच्छे नेता इस समस्या पर विचार कर रहे हैं। मैसूर में गत मार्च माह में एक परिषद् हुई, जिसमें कहा गया कि सच्ची एकता के लिए विश्वविद्यालयों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों में "स्वतंत्र अन्वेषण-बुद्धि" को बढ़ावा दें। सभी नई तालीम शिक्षक इस बात पर अवश्य ही सहमत होंगे कि सत्य की साधना में विद्या को नियोजित करने के लिए यह एक प्रथम आवश्यकता है। वे यह भी महसूस करेंगे कि अगर विश्वविद्यालयों को कार्यरूप रूप से यह काम करना हो तो सारी शिक्षा-व्यवस्था ही "स्वतंत्र अन्वेषण-बुद्धि" से अनुप्राणित होनी चाहिये। इस सदर्भ में हमारे स्कूलों में सैनिक अनुशासन लागू करने के बारे में भी सोचना चाहिये। सैनिक अनुशासन की असलियत का प्रसिद्ध अंग्रेज कवि टेनिसन ने इन पदों में वर्णन किया था और मैं मानती हूँ कि उसका इससे अच्छा वर्णन कहीं भी नहीं हुआ है—

> "जवाब देना उनका काम नहीं है,
> सोचना भी उनका काम नहीं है,
> उनका काम है केवल करना
> और मरना, यही।

हमें अब इस प्रश्न का सामना करना है। क्या हमारे राष्ट्र को इस बिना सोचे-समझे हुकुम का पालन करने की भावना को अपनाना है ? या जैसे मैसूर की परिषद् में सुझाया—स्वतंत्र अन्वेषण-बुद्धि की आवश्यकता है ?

हम विकेन्द्रीकरण और पंचायतराज की बातें कर रहे हैं। अगर हम अपनी स्थानिक संस्थाओं में सच्चा लोकतन्त्र चाहते हैं तो हमें चाहिए कि अपने युवकों को बातों को जानने-सोचने, समझने, चुनाव करने तथा अपनी ही जिम्मेदारी पर निर्णय लेने का शिक्षण दें। हम छोटी-छोटी बातों को भी सरकारी धन पर छोड़ने और अपने ऊपर के अधिकारी का मुँह ताकने की प्रचलित प्रथा की निन्दा करते रहते हैं। लेकिन उसी समय इस वैपरीत्य को बिना समझे, हम अपने सारे युवकों को, राष्ट्र की समूची भावी पीढ़ी को, सैनिक जीवन के अतिकेन्द्रित अनुशासन व्यवस्था को सौंप देने का विचार मान्य कर रहे हैं। बल का प्रयोग विचार-बुद्धि पर आधारित चर्चा और सहमति के लोकतांत्रिक आदर्शों के एकदम उल्टा है। हम अपने को एक लोकतांत्रिक राष्ट्र मानते हैं, फिर भी हम वह करने जा रहे हैं, जो हमारे चारों तरफ के मिलिटरी राष्ट्रों में नहीं होता है, याने अपने युवकों को मिलिटरी परंपरा में पालना और यह समझाना कि आखिरी तर्क बल का प्रयोग है।

एक अमेरिकन क्वेकर मित्र श्री ब्रिस्टल ने आजकल एक पुस्तिका प्रकाशित की है जिसका नाम है—"स्वतन्त्रता के लिए डटे रहो।" उन्होंने यह अमेरिकन जनता को संबोधित करके लिखी है, जो कि अपनी लोकतांत्रिक परम्पराओं के बारे में बड़ा अभिमान रखती है ! यह एक चेतावनी के रूप में है कि मिलिटरिज्म और लोकतंत्र एकसाथ चल नहीं सकते। उसमें लेखक कहता है—"हमें अपनी आन्तरिक स्वतन्त्रता का दाम बाह्य शत्रुओं से रक्षा के लिए भी सैनिक शक्ति का परित्याग करने से चुकाना होगा।" अगर यह अमेरिका के बारे में सही है तो भारत के बारे में भी उतनी ही सही है। भारत की स्वतंत्रता की रक्षा करनी है और वह रक्षा उन्हीं मार्गों से की जा सकती है, जिनसे स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, जिनका गांधीजी ने प्रयोग किया था। वे हैं सत्य और अहिंसा के मार्ग—एक उच्च नैतिक स्तर और विश्व की बुद्धि और मानस के प्रति एक सतत प्रार्थना। अपने ध्येय के लिए कष्ट सहन करने की तैयारी, उसी समय दूसरे मानव-प्राणी को चोट नहीं पहुँचाने का निश्चय। मिलिटरी ट्रेनिंग एक ऐसा कार्यक्रम है, जो भारत की सबसे मूल्यवान् आधुनिक तथा प्राचीन परंपरा से हमें वंचित करता है। कई लोग उसका विरोध तर्कबुद्धि से करते हैं, क्योंकि वह मूर्खतापूर्ण है या उससे काम नहीं होगा या उसमें बरबादी है। लेकिन हमें उसका विरोध इसलिए करना है कि वह गलत है, क्योंकि मानव जीवन के सच्चे उद्देश्य के बारे में जो कुछ हमने सीखा है, उन सबका वह निषेध करता है।

['नई तालीम' से] ● (गताङ्क से समाप्त)

रिहन्द-बाँध : एक परिक्रमा

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

"यहाँ तुम लोगों को किस बात की सबसे ज्यादा तकलीफ है ?"–पाटिल साहब के इस प्रश्न पर चारों ओर से सभी विस्थापित लोग चिल्ला पड़े– 'हमें कुआँ चाहिए सरकार।"

"अभी कैसे काम चलता है ?"

"नाले-वाले से पानी लेते हैं। एक कुआँ हम लोगों ने खोदा भी है। चट्टान आ जाने पर बड़ी मुसीबत हो जाती है। उसकी बंधाई की भी समस्या है।"

"चलो, तुम्हारा कुआँ देखें और तुम्हारे झोपड़े भी।"

कोई आध मील पर बसे हुए इन भाइयों के झोपड़े देख कर उनकी हालत पर हमें बड़ा तरस आया। उनके छप्परों पर भरपूर फूस भी नहीं था। झोपड़ों के भीतर उनकी छोटी-सी गृहस्थी थी। दो-एक टूटे-फूटे बर्तन थे।

हाल में उन लोगों ने जो कुआँ खोदा है, वह देखने के लिए भी हम लोग गये। बहुत थोड़ा-सा पानी उसमें झलक रहा था। कुएँ के ऊपर ५-६ लकड़ी के लट्ठे पड़े हुए थे। जरूरत है उसे गहरा करने की और नीचे से पक्का बाँधने की।

कुआं, जहाँ पत्थर फोड़कर पानी निकाला जा रहा है

जीप पर हम आगे बढ़े तो फिर तुरंत जाकर ही दम लिया। यहाँ से आगे रिहन्द की हमारी असली यात्रा शुरू होने को थी। फुहारे पड़ने लगी थीं। सोचा–मिर्जापुर में भराया पेट्रोल आगे की परिक्रमा में कम न पड़ जाय, इसलिए पेट्रोल की टंकी भरवा ली और एक कैंटर और भरवा लिया।

रिहन्द बाँध के क्षेत्र में जाने के लिए विशेष अनुमति लेनी होती है, वह लेकर बाँध का मनोरम दृश्य देखते हुए हम लोग कुलडोमरी की दिशा में बढ़े। पक्की सड़क खतम हो गयी और कच्चा पहाड़ी ऊँचा-नीचा रास्ता शुरू हो गया।

कुछ दूर आगे बढ़कर एक जगह हम लोग उतर कर बाँध के दृश्य का आनन्द उठाने के लिए किनारे पर कुछ लोग बैठ गये। कुछ लोग खड़े होकर भी देखने लगे। मीलों तक फैला पन्त-सागर हमारे सामने था। आस-पास इधर-उधर ऊँचे पहाड़ थे और खूब लंबे-चौड़े, छोटे-बड़े तरह-तरह के वृक्ष थे। देख कर तबीयत खुश हो गयी।

प्रकृति की शोभा और सागर की सुषमा सायंकाल के झुटपुटे में बड़ी ही मनोमोहक लग रही थी। हल्की-सी फुहारें भी पड़ रही थीं, पर हमें जाना था बड़ी दूर और रास्ता था ऊबड़-खाबड़। इसलिए हमने इस प्राकृतिक आनन्द के लोभ का संवरण किया और आगे चल पड़े।

सिघद्दा गाँव में घुसते ही एक टूटा हुआ कुआँ हमारे देखने में आया। कुआँ टेढ़ा हो गया था और जगह-जगह से उसमें दरारें पड़ गयी थीं। देखा तो मालूम हुआ कि कुएं की बंधाई में ईंटा-पत्थर तो नाम के ही हैं, मिट्टी भर दी गयी है और उसके ऊपर सीमेण्ट इस तरह चुपड़ा दिया गया है, जैसे रोटी में घी चुपड़ा जाता है। नाले के बगल में खुदे हुए इस कुएँ को देख कर सरकारी पैसे के अपव्यय पर हमें बड़ा तरस आया! जगह-जगह ठेकेदार नालों के किनारे इस तरह के कुएँ खोद कर जरा-जरा-सा सीमेण्ट आदि चुपड़ कर अपना पैसा बनाते हैं!

यहाँ भी हमने कई विस्थापितों से उनकी पहले की और अब की हालत की जाँच-पड़ताल की। सबकी कहानी मिली-जुली ही थी। रँहटा, भैरवा के जमींदार पं० प्रद्युम्न ने बताया कि भैरवा में उनकी ५२ बीघा जमीन थी। ३ हजार रुपया मुआवजा मिला है। यहाँ अभी कुछ जमीन नहीं मिली है।

"बिना जमीन के आपका काम कैसे चलता है ?"–पूछने पर पंडितजी बोले:– "क्या बताऊं सरकार ! जजमानी से कभी कुछ मिल जाता है। उसीसे रोटी चलती है।"

एक परिवार के चार प्रौढ़ हमारे सामने थे। वे बोले: "पिता के पास ५० बीघा जमीन थी। यहाँ हमें थोड़ी-सी जमीन मिली है। उस जमीन में हमारी गुजर कैसे हो ?"

गाँव में एक कुआँ है। स्त्री-पुरुषों की अच्छी भीड़ थी वहाँ पर। बहुत दूर-दूर तक लोग यहीं से पानी ले जाते हैं।
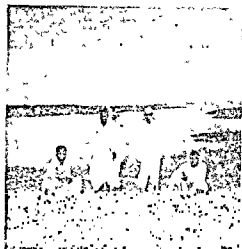
रिहन्द बाँध के किनारे

हल्का हल्का पानी पड़ रहा था। जंगल और खेतों से होते हुए हम लोग आगे बढ़ रहे थे कि बैरपान गाँव के पास दो नौजवानों ने अपनी फरियाद सुनाने के लिए हमारी जीप रोकी। बोले: "हम लोग अहीर हैं। दो भाई हैं। पहले हमारे पास ८-१० बीघा जमीन थी। यहाँ सिर्फ ४ बीघा पहाड़ी जमीन मिली है। इस पहाड़ी जमीन में क्या हो ?"

"कुछ मुआवजा तो मिला होगा ?"–पूछने पर वे बोले: "हाँ सरकार! ८-९ सौ मिला था, सब खा लिया। २५ भैंसें थीं, उनमें पानी के बिना १५ अंधी होकर मर गयीं! कुआँ यहाँ ५ कोसें पर है। जानवरों के लिए पानी की बड़ी तकलीफ है। खेत में पत्थर हैं, बड़ी-बड़ी चट्टानें हैं। हर ही नहीं लग पाता।"

"तब क्या हो !"

"सरकार ! किसी तरह जमीन बन जात। पहले हमार सब सींचल-पाकल जमीन रहल। हम लोग मरत बा।"

जीप आगे बढ़ी। करैया गाँव के पास दुलारे चमार से हमने पूछा तो बोला: "डुमरे से आया हूँ। वहाँ ३ बीघा जमीन थी। यहाँ थोड़ी-सी जमीन मिली है। उसमें पारसाल २ साँटी कोदो हुई। पर मैं ३ प्राणी हैं। रिहन्द पर मजदूरी करके किसी तरह गुजर-बसर करता हूँ।"

"मजदूरी नहीं मिलेगी, तो क्या करोगे ?"

"यहाँ से छोड़ कर कहाँ चल देंगे। आज भी रोज मजूरी कहाँ मिलती है! महीने में १५ दिन कहीं मजूरी मिलती है। ठेकेदार पूरी मजूरी देता नहीं। हमारे दो बैल ढोर खा गये!"

अँधेरा काफी हो चुका था। जंगल और पहाड़ का ऊबड़-खाबड़ रास्ता था। रास्ते के दोनों तरफ घना जंगल था, जिसमें जंगली जानवरों का आज भी डेरा है। पानी भी हल्का-हल्का बरस रहा था। किसी तरह तेजी से बढ़ते हुए हम लोग कुलडोमरी के पास पहुँचे। एक जगह रास्ता बन्द था। जीप को घुमाया तो हम लोग एक नाले के किनारे थे। पानी तो उसमें कम था, लेकिन जीप के निकलने के लिए बड़ी मुश्किल थी। रास्ता बहुत ही खराब था। किसी तरह मिट्टी, और पत्थर खोद-खाद कर एक तरफ का गड्ढा भर कर जीप को उस पर से निकाल कर हम लोग आगे बढ़े।

आसमान से गिरा, खजूर पर अटका! ऊँचे-नीचे रास्ते से होकर हम लोग अभी थोड़ी ही दूर पहुँचे थे कि गाँव के बाहर हाल में बँधे एक बाँध पर पानी से भीगी चिकनी मिट्टी में जीप ने आगे बढ़ने से इन्कार कर दिया। ड्राइवर ने कई बार कोशिश की, मगर जीप ने आगे बढ़ने से इन्कार ही नहीं किया, एक पहिये ने पंचर भी कर दिया!

जीप को वहीं छोड़ हम लोग उतर पड़े और एक टार्च के सहारे किसी तरह बाँध के पार हुए। मिट्टी इतनी चिकनी थी कि कब कौन फिसल जायगा, इसका ठिकाना नहीं था। बड़ी मुश्किल से हम रास्ता पार करके कुलडोमरी के स्कूल पर पहुँचे। गाँववालों से कह कर जीप से हम लोगों ने अपना सामान मँगवा लिया। कई घंटे बाद ड्राइवर साहब बाँध के नीचे से किसी तरह जीप को स्कूल तक ला पाये।

रात के ग्यारह बज रहे थे। शरीर थक कर चूर थे। खुले मैदान में चारपाइयों पर हम लोगों ने बिस्तर फैलाये। बड़े मजे की नींद आ रही थी, पर हमारे ग्रामवासी मित्रों ने हमें जगा कर भोजन करने के लिए विवश कर ही दिया।

—

विनोबा-पदयात्री दल से

• कालिन्दी

बरपेटा जाने का निश्चय हुआ, तब से मेरा मन कह रहा था–'वहाँ बरगीत (भजन) सुनने हैं। 'नामघोषा' गाने की बरपेटा वालों की अपनी खास पुरानी पद्धति है, नामघोषा जरूर सुनेंगे।' बरपेटा है असम का धर्म-क्षेत्र और व्यापार-क्षेत्र। वैष्णव-धर्म के आद्य गुरु श्री शंकरदेव इस स्थान में चौदह वर्ष रहे थे। वैष्णव धर्म के तीन प्रमुख सत्रों में से एक सत्र बरपेटा में है। बरपेटा असम के व्यापार का भी हृदय माना जाता है। लेकिन बरपेटा का व्यापार, धर्म सब छोड़ कर मेरे मन में यही बात बार-बार आ रही थी। बरपेटा की सीमा पर ही मेरी यह कामना पूर्ण हुई।

नदी पार करनी थी। उस किनारे बरपेटा था। उधर से सुरीली ध्वनि आ रही थी—"आलो भाई···"

"चल भाईस जाइ वृन्दावने, देखेंगेया आनन्दनयने।"

—अरे भाई आ, वृन्दावन जायेंगे और वहाँ आनन्दनयन से देखेंगे।

इस किनारे गा रहे थे 'नामघोषा'—

"भारत-रत्नर द्वीप मनुष्य-शरीर नौका, राम-नाम महारत्न सार।

हेनय वानिज पाई जिये जीव न करिल, तान परे दुखी नाहीं आर॥"

यह सब सुन कर मेरे दोनों कान तृप्त हो गये!

भजन और 'नामघोषा' में तल्लीन हुए उन सत्रवासियों को देख कर मन में आया लेकिन कुछ ही नहीं आया, लगा कि ये ही वे लोग हैं क्या, जो स्त्रियों को सत्र में प्रवेश देने से इन्कार करते हैं? विश्वास करो या न करो, वे ये ही सत्रवासी हैं! जिस महापुरुष ने परिव्राजक होकर सारा भारतवर्ष घूम लिया, जिस महापुरुष ने 'धन्य भारतभूमि में जन्म', ऐसे उद्गार निकाले, उन महापुरुषों के सत्र में स्त्री को प्रवेश-बंदी है! दिल को कहीं तो भी कुछ चुभ रहा था।

बाबा को यह बात कितनी चुभ रही थी, वह तो दोपहर को स्पष्ट दिखाई दी। गाँव के प्रमुख लोग बाबा से मिलने के लिए आये थे, तब बाबा ने उनसे कहा, "मैं वैद्यनाथ धाम हरिजनों के साथ दर्शन के लिए गया था, लेकिन मुझे वहाँ भगवान् का स्पर्श हुआ, मार पड़ी। पुरी गया, वहाँ 'परधर्मी' लोग साथ थे, इसलिए मंदिर के दरवाजे से लौटना पड़ा। पंढरपुर में विठोबा के मंदिर में हमने हिंदू-मुसलमान, ईसाई, हरिजन, सबके साथ भगवान् के दर्शन किये। भक्त का होता है, वैसा हमारा वहाँ स्वागत हुआ। अजमेर में मुसलमानों के दरगाह में स्त्रियों को प्रवेश नहीं था। लेकिन हम स्त्रियों के साथ वहाँ गये। वहाँ के मौलवी ने हमारा बड़े प्रेम से स्वागत किया। अब यहाँ सुनते हैं कि सत्र में बहनों को आने नहीं देते और इसीलिए हम सत्र में नहीं जा रहे हैं। बाबा आया था और वह सत्र में नहीं गया, इसलिए कि वहाँ बहनों को प्रवेश नहीं, यह महत्त्व की बात है। इसका परिणाम दूरगामी होगा। पता नहीं यह किसकी हार है! यह हिन्दू-धर्म की हार है।"

शहर में इससे हलचल मच गयी है। लेकिन सत्राधिकारी शांत हैं। पंढरपुर-यात्रा का वर्णन करते-करते बाबा की आँखों में से अश्रुधारा बहने लगी। पास में एक बूढ़े बाबा बैठे थे। ८५ साल की उम्र थी, लेकिन शरीर काफी तंदुरुस्त था। भगवा वस्त्र और लम्बी शुभ्र दाढ़ी। मुझे कहने लगे, "बाबा की आँखों में आँसू।"

"जी हाँ, आँसू।"

"बाबा महापुरुष हैं, संत हैं, ज्ञानी हैं, भक्त हैं।"

यह बूढ़े बाबा दो रोज बाबा के साथ, बाबा के कमरे में ही रहे। बाबा को पंखा झलते बैठते। बाबा प्रार्थना-प्रवचन को निकलते तो उनका हाथ पकड़ लेते। बाबा को भजन सुनाते। दो दिन के बाद कहने लगे, "अब मैं जाता हूँ।" कौन थे वे? कहाँ से आये थे? तुलसीदासजी का कीर्तन सुनने के लिए हनुमानजी आकर बैठते थे। आखिर में भक्त पर संतुष्ट होकर वे वापस गये थे।

* * *

विद्युद्दीप के प्रकाश में गीता बहन की किताबों की दूकान जगमगा रही थी। बाबा ने गीता से पूछा, "कितनी बिक्री हुई साहित्य की?" गीता ने कहा, "तेरह सौ।" एक दिन में इतनी साहित्य बिक्री! इतना बड़ा सुसंस्कृत व्यापारी क्षेत्र! इतनी बिक्री होनी ही चाहिये। व्यापारियों में प्रचंड समुदाय के सामने बाबा ने उनको संदेश दिया, "महम्मद पैगम्बर नेक व्यापारी थे। उनको कहते थे 'अल् अमीन'—विश्वासपात्र। वे व्यापारियों के लिए आदर्श हैं।"

मन में आया, कहाँ विश्वासपात्र व्यापारी महम्मद पैगम्बर और कहाँ माल खरीदने वालों को चाहे जितना दस्तूर देकर अपना माल लुटा देने वाला महाराष्ट्र का तुकाराम, कहाँ 'तेरा-तेरा' करने वाला पंजाब का नानक और कहाँ माल में मिलावट करने वाला, भयानक सूद लेकर किसानों का शोषण करने वाला आज का व्यापारी समाज! लेकिन दूसरे क्षण ही याद आयी उन सज्जन व्यापारियों की, जो तन-मन धन से समाज-सेवा में लगे हैं। कलकत्ता के श्री दातारामजी की मूर्ति नजरों के सामने ऐसी ही स्थिर हुई। दुनिया के एक कोने में नम्रता से काम करने वाले ऐसे व्यक्ति दुनिया से हमेशा छिपे ही रहते हैं, किन्तु उनका व्यक्तित्व दुनिया से भी बड़ा होता है।

श्री दातारामजी आज आठ-नौ साल से कलकत्ता में साहित्य प्रचार में लगे हैं। इसके बारे में वे लिखते हैं, "दोनों थैलों में आपका साहित्य कंधों पर लिये प्रातः से सायंकाल तक प्रचार-संदेश पहुँचाने का ही काम रहता है और दूसरा काम नहीं है। एक ही लक्ष्य कि घर-घर यह संदेश व साहित्य जाय।" और दूसरे काम, जैसे अर्थ-संग्रह, बिहार के बाढ़ग्रस्तों की आर्थिक सहायता वगैरह कामों में भी उनकी मदद मिलती है। अभी-अभी बाबा को उन्होंने लिखा, "जब मैंने रोजगार छोड़ा, तब एक व्यापारी को दस हजार रु० दे रखा था और दूसरे एक व्यापारी को साढ़े सत्रह हजार रु० दे रखा था। उनके ब्याज से काम चलता था। दो वर्ष बाद दस हजार वाला काम बंद करके चला गया और साढ़े सत्रह हजार वाला तीन महीने से काम बंद करके बैठा है। अब भगवान् ने मुझे चिंता-मुक्त कर दिया। मुझे बहुत कहा गया कि उन पर कोर्ट में 'केस' करूँ? लेकिन मैंने उत्तर दिया कि एक हाथ में तो पूज्य बापू-विनोबाजी के संदेश हों, फिर क्या दूसरे हाथ से 'केस' करता रहूँ? यह नहीं करूँगा। भगवान् की इच्छा थी, तब तक 'लक्ष्मी' मेरे पास रही, अब उसकी इच्छा नहीं, तो मैं भगवान् की आज्ञा के विपरीत नहीं करूँगा। मुँह से कोई कड़ा शब्द तक नहीं निकला और भगवान् का उपकार माना। यह विचार, यह शांति कहाँ से मिली? 'गीता प्रवचन' के नित्य अध्ययन से और आपके आशीर्वाद से।"

वाकई भक्त! भक्त को भगवान् उपाधियों में से कैसे मुक्त करता है? बाबा ने उनको लिखा, "आप ब्याज खाते थे, उससे भगवान् ने आपको छुड़ाया और आप छूट सके। सचमुच यह भगवान् का उपकार है। भगवान् इसी तरह भक्त को बचा लेता है।"

बाबा कह रहे थे, "ऐसे आदमी को ब्रह्मविद्या का आनंद मिलता है। वे ठगे जाते हैं, खुले आम ठगे जाते हैं। इसकी मिसाल तुकाराम है। वे मिरची बेचते थे, तो खरीदार कहते थे कि कुछ ऊपर और दो, तब कहते थे कि तुम हाथ से उठा लो, वह क्या तुमको काटेगी? अब दातारामजी लिखते हैं कि वह विचार, यह शांति 'गीता प्रवचन' के अध्ययन से मिली। इसी को हम अध्ययन कहते हैं।"

* * *

बरपेटा डिवीजन में बाबा को खींचने का सारा श्रेय यहाँ के असेम्बली के स्पीकर, श्री चौधरीजी को है। बरपेटा से आठ मील दूरी पर उनका अपना गाँव है—नगाँव। बाबा लगातार कहते आये थे कि नगाँव का ग्रामदान होना चाहिये। आज तो खुद बाबा ही वहाँ पधारे थे। चौधरीजी का सारा परिवार इस काम में लग गया और नौ सौ जनसंख्या का हिंदू-मुस्लिमों का वह गाँव ग्रामदान हो गया। सैंगा गाँव तो नगाँव से भी बड़ा, २४५ परिवार का है। नगाँव के पीछे पीछे उसने भी ग्रामदान की घोषणा की। सारे बड़े गाँवों में उत्साह की लहर-सी दौड़ रही है। बड़े गाँव वाले चिंतित होकर पूछते हैं कि बड़े गाँव ग्रामदान कैसे होंगे? बाबा सुझाते हैं, "उसमें क्या कठिनाई है? छोटे-छोटे विभाग करो गाँव के। उनकी अलग-अलग पंचायत हो और सब विभागों की मिल कर एक सामूहिक पंचायत हो। रोज के जीवन के छोटे प्रश्न छोटी पंचायत में लाये जायेंगे और जो सामूहिक सवाल होंगे, वे सामूहिक पंचायत में लाये जायेंगे। उसमें कौनसी कठिन बात है? कार्य-व्यवस्था के लिए और सहूलियत के लिए अलग-अलग विभाग करेंगे। गाँव तो एक ही होगा।"

बको अंचल में १ महीने में ९८ ग्रामदान हुए और अब बरपेटा में इसका आरंभ हुआ है। बरपेटा असम का व्यापारी क्षेत्र है और यहाँ ग्रामदान हो रहे हैं।

उधर मंगलदै–दरंग जिले में शिक्षकों ने अभियान चलाया था, १५ दिन का यह ग्रामदान-अभियान था। सर्वोदय और गांधी निधि के कार्यकर्ताओं के साथ शिक्षकों ने बहुत बड़े परिमाण में इस काम में हिस्सा लिया। श्री अमल बाईदेव १५ दिन के लिए वहाँ गई थीं। उन्होंने वहाँ से बाबा को लिखा था, "शिक्षक और ग्रामदानी गाँव के लोग गाँव-गाँव घूम रहे हैं। वे इतने सुंदर ढंग से विचार समझाते हैं और लोगों के मन की शंकाएं मैं दूर करते हैं कि आपका कहना याद आता है, 'खग ही जाने खग की भाषा।' रेवेन्यू मिनिस्टर श्री शर्मा भी यहाँ आये थे और कुछ ग्रामदानी गाँवों में गये थे।"

सुवर्णश्री अंचल में ग्रामदानी गाँव सरकार से मंजूर कराने का काम जारी ही है। कई कार्यकर्ता उसी काम में लगे हैं। कामरूप जिले के बाद आयेगा गोवालपारा जिला, और उसके बाद···! उसके बाद असम यात्रा पूरी होगी!!

[जिला कामरूप, ७ अगस्त, '६२]

राष्ट्रीय एकता के संदर्भ में

आंध्र प्रदेश और भारतीय संस्कृति

वी० आर० नरला

[*भारतीय दर्शन और संस्कृति को तेलुगु भाषा और साहित्य ने जो योगदान दिया है, उसका उल्लेख श्री नरला ने आकाशवाणी से अपने अंग्रेजी संभाषण में किया है, जिसका सारांश यहाँ प्रस्तुत है।* —सं०]

भारतीय चिन्तन और संस्कृति में तेलुगु भाषा और साहित्य ने बहुत योगदान दिया है। राष्ट्रीय भाषाओं के प्रति विदेशियों के अज्ञान का विशेष उल्लेख आवश्यक नहीं है। किन्तु दुर्भाग्यवश देश के बहुत से लोग भी हाल तक यही समझते थे कि *विन्ध्याचल पर्वत के दक्षिण में रहने वाले सभी 'मद्रासी' हैं और उनकी एक ही भाषा,* मद्रासी है।

एक ऐसा भी समय था, जब तेलुगु भाषा का प्रभाव दूसरे राष्ट्रों पर था।

विख्यात विद्वान और शिक्षाविद् डा० सी० आर० रेड्डी ने बताया है कि यह भाषा बर्मा के पूर्व और दक्षिण के द्वीपों में फिलीपीन्स तक फैली। हो सकता है कि आंध्र प्रदेश के निडर समुद्री नाविक इस भाषा को उन द्वीपों तक ले गये हों। इनके साहस का स्मरण दिलाने वाली *फिलीपीन्स में 'तेगलोग' नामक जाति है।* यह जाति इन द्वीपों की आबादी का मुख्य अंश है। बहुत सम्भव है कि 'तेगलोग' शब्द तेलुगु या 'तेलगा' से ही बना है। यह भी उल्लेखनीय है कि फिलीपीन्स की भाषा में तेलुगु भाषा के बहुत-से शब्द भी पाये जाते हैं।

संस्कृत और तेलुगु

सर्वविदित है कि तेलुगु और अन्य द्राविड़ भाषाओं ने संस्कृत से बहुत शब्द लिये हैं, लेकिन यह बहुत कम लोगों को पता है कि संस्कृत और इससे निकली भाषाओं ने भी द्राविड़ भाषा से शब्द लिये हैं।

डा० सुनीतिकुमार चटर्जी ने ऐसे बहुत-से शब्द गिनाये हैं, जो तमिल और तेलुगु से संस्कृत परिवार की भाषाओं में आये हैं। संस्कृत शब्द 'शार्दूलम' की व्युत्पत्ति तेलुगु शब्द 'चरलमेकम' से हुई है।

इसी तरह 'तिंत्रिनो' (इमली) की *व्युत्पत्ति तेलुगु शब्द 'चिन्त' से हुई है।*

मेरे मित्र और सहकर्मी श्री विद्वान विश्वम् का कहना है कि तेलुगु 'अत्ता', 'साव', 'चिड़ि', *'चावल का मांड'* और 'बोक्कनम' (थैला) शब्द संस्कृत में ले लिये गये हैं। उनके अनुसार 'मणी' (माणिक), 'पद्दों' (पद) और 'कुन्दम' (कुंद) भी तेलुगु से लिये गये हैं। इसी प्रकार तेलुगु शब्द *प्राकृत में भी अपना* लिये गये हैं। 'पडो' और 'पोट्टा' दो ऐसे उदाहरण हैं।

आंध्र के संस्कृत कवि

आंध्र प्रदेश के कवियों और पंडितों का संस्कृत और प्राकृत साहित्य में बड़ा योगदान है। संस्कृत साहित्य का कौन विद्यार्थी मल्लिनाथ, कटयवेम, राव सिंगना और जगन्नाथ पंडित राय जैसे टीकाकारों को ऋणी नहीं है? विद्यानाथ के 'प्रताप रुद्रयम' और *गुणाढ्य की 'बृहत् कथा'* का स्वाद कौन नहीं जानता? प्राकृत में राजा हाल की 'गाथा सप्तशती' का शीर्ष स्थान है। इसकी एक-एक गाथा हृदय को स्पर्श करती है।

धर्म और दर्शन के क्षेत्र में भी आंध्र के लोगों का महत्त्वपूर्ण योगदान है। नागार्जुन, आर्यदेव, दिङ्नाग, निम्बर्क और वल्लभ, ये भारतीय दर्शन के महान् प्रवर्तक हैं। 'वीर शैव' सम्प्रदाय के संस्थापक बेन्न बासव भी महान् धर्मप्रवर्तकों में हैं। उनके शिष्य सोमनाथ प्रसिद्ध कवि हैं। उनका 'बासवपुराणम' बहुत *उत्कृष्ट महाकाव्य है। उनके जीवन और* दर्शन की दक्षिण भारत, विशेषकर कर्नाटक पर अमिट छाप है।

बाद के दो कवि क्षेत्रैय्य और *त्याग*राज ने, जो महान् संगीतज्ञ भी थे, पूरे दक्षिण भारत को प्रभावित किया। पम्पा और पोन्ना, श्रीनाथ और कृष्णदेव राय के दरबारी कवियों ने आंध्र और कर्नाटक में सुनहरा सम्बन्ध जोड़ा। तंजौर और मदुरा के नायक राजाओं के आश्रित कवियों और नाटककारों ने भी आंध्र और तमिलनाड की महान् सेवा की है। *वन*कवि वेमान की *सूक्तियाँ* और *तेनाली* रामलिंग के हास्यजनक चुटकले दक्षिण भारत की सांस्कृतिक धरोहर हैं।

ऊपर के उल्लेख से स्पष्ट है कि भारतीय दर्शन और संस्कृति में तेलुगु भाषा *और साहित्य का* बहुत महत्त्वपूर्ण योगदान है। आधुनिक कवियों, नाटककारों, उपन्यासकारों और अन्य लेखकों की मैंने चर्चा नहीं की है, क्योंकि मैं व्यक्तिविशेष के नाम नहीं गिनाना चाहता।

राष्ट्र में मानसिक और *भावात्मक* एकता लाने के लिए यह आवश्यक है कि प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक तेलुगु साहित्य का दूसरी भाषाओं में अनुवाद हो। राष्ट्रीय साहित्य-अकादमी इस काम में लगी है, लेकिन यह काम और बड़े पैमाने पर होना चाहिए।

शांति-केन्द्र

इधर कई दिनों से सर्व सेवा संघ की चर्चाओं में प्राथमिक इकाइयों के संगठन का जिक्र आता रहता है। कताई-मण्डलों की कल्पना भी इसी विचार के अनुरूप थी। विचार यह है कि यदि आन्दोलन को जड़ें पकड़नी हों, तो हमारी प्राथमिक इकाइयाँ बननी चाहिए और वे मजबूत बननी चाहिए।

'शांति-केन्द्र' भारतीय शांति-सेना की प्राथमिक इकाइयाँ हैं। पटना-अधिवेशन में शांति-सैनिक के निष्ठा-पत्र से पूरे समय के काम की शर्त को निकाल कर हमने आन्दोलन को पूरे समय के कार्यकर्ताओं के अलावा और लोगों के लिए भी खोल दिया। अब शांति-सेना आन्दोलन को जड़ें *डालने का काम है।*

'शांति-केन्द्र' की कल्पना यह है कि जहाँ एक से अधिक शांति-सैनिक एक-दूसरे से नजदीक रहते हैं, वहाँ वे नियमित रूप से मिलना शुरू करें। मिल कर वे *अध्ययन, सद्विचार* और सेवा-कार्य करें तथा महीने में एक बार अपने काम का विवरण शान्ति-सेना मण्डल को भेजें। इस प्रकार स्वाध्याय से सैनिकों का विकास होगा, परिस्थिति में यदि अशांति होगी *तो उसकी जानकारी रहेगी और सेना के* विभिन्न लोगों का परस्पर-सम्पर्क बनेगा।

शांति-सेना मण्डल ने यह सुझाया है कि मिलना सप्ताह में एक बार हो। यदि रोज मिलना हो सके तो और अच्छा। मिल कर सारे शान्ति-सैनिक अपने-अपने काम का विवरण एक-दूसरे को सुनायें। *परिस्थिति में कहीं अशांति की सम्भावना* मालूम होती हो, तो उसके निवारण का विचार साथ मिल कर करें। सेवा का कार्य कोई भी लिया जा सकता है। यह जरूरी नहीं है कि जिस कार्यक्रम पर सर्वोदय की छाप लगी हो, वही कार्यक्रम किया जाय। जिससे जनता से सम्पर्क हो, लोग अपने *प्रश्न स्वयं हल कर सकें, इसमें मदद मिलती* हो, जिसमें हम अपने दुखी भाइयों के साथ *हमदर्दी अनुभव कर पायें,* ऐसा कोई भी कार्यक्रम किया जाय। केन्द्र-केन्द्र में यह प्रवृत्ति भिन्न होगी। इस वैविध्य में ही जान होगी।

विवरण के बारे में एक सुझाव-यह था कि हर सप्ताह जाने से पहले शान्ति-सैनिकों में से कोई एक उन निर्णयों को *लिख कर पढ़ सुनाये,* जो *उस दिन की* चर्चा में सबने लिये हों। तत्काल विवरण देने की यह पद्धति 'क्वेकर' लोग अपनी मीटिंगों में इस्तेमाल करते हैं। इससे संक्षिप्त विवरण लिखने की आदत होती है, *सारगर्भित लिखने का अभ्यास होता है,* निर्णय करने में सभी लोगों का सहयोग होता है। जहाँ इस प्रकार साप्ताहिक विवरण तैयार हों, वहाँ से महीने के अन्त में इनका सारांश ही शान्ति-सेना मण्डल को भेजना होगा।

*शांति-केन्द्र में एक संयोजक की जरू*रत रहेगी। संयोजक का काम साप्ताहिक सभा बुलाना, उसकी कार्यवाही रखना तथा महीने के अन्त में रिपोर्ट लिखना होगा। जरूरी नहीं है कि संयोजक स्थायी हो। *केन्द्र के शांति-सैनिक मिल कर सर्व*सामान्य राय से उनकी नियुक्ति करेंगे और वे यह भी तय करेंगे कि संयोजक की कार्य-अवधि कितने समय की होगी। कालावधि को तय करने में दो विचार *किये जायँ : कालावधि इतनी छोटी न हो* कि हर नये संयोजक को काम का अभ्यास *होने में ही समय चला जाय और काल*वधि इतनी लम्बी न हो कि और सैनिकों को संयोजक का काम करने का अनुभव न मिले।

शांति-केन्द्र जितने प्राणवान होंगे, उतनी ही हमारी शांति-सेना प्राणवान बनेगी। वे जिस प्रकार के नये-नये कार्यक्रम उठायेंगे, उस पर शांति-सेना का भावी स्वरूप निर्भर रहेगा।

—नारायण देसाई

प्रत्येक दिन 'तीन हिरोशिमा'

लंदन के साप्ताहिक पत्र 'पीस न्यूज' ने १६ जुलाई, १९४५ से १८ जुलाई, १९६२ तक की १७ साल की अवधि के अणु-परीक्षणों का जो लेखा-जोखा प्रस्तुत किया, वह आँखें खोलने वाला है।

पहला अणुअस्त्र-परीक्षण १६ जुलाई '४५ को न्यूमैक्सिको में हुआ था। तब से लेकर अब तक ३४२ परीक्षण हो चुके हैं। दुनिया में अभी केवल ४ राष्ट्र अणुअस्त्रों के परीक्षण कर चुके हैं। उनकी संख्या इस प्रकार है :

अमेरिका	२२१
रूस	८६
ब्रिटेन	२२
फ्रान्स	५
	कुल ३४२

इन सब परीक्षणों की संयुक्त शक्ति करीब ३५५ मेगाटन होती है, जो कि हिरोशिमा पर छोड़े गये अणुबम की शक्ति से १७,७५० गुना अधिक है।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विश्व में अब तक इतने परीक्षण हो चुके हैं कि यदि गत १७ वर्षों से प्रत्येक दिन हिरोशिमा पर छोड़े गये अणुबम की शक्ति के तीन बम का विस्फोट किया जाता, तो वे इन परीक्षणों के बराबर होते।

सबको मजदूर बनना होगा

—ध्वजाप्रसाद साहु

"देश का यह दुर्भाग्य है कि जिन किसानों और मजदूरों की दुर्दशा को देख कर उनको उससे त्राण दिलाने के लिए भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम लड़ा गया, उन्हीं मेहनतकश मजदूर और किसानों की आज कोई पूछ नहीं होती, कोई कद्र नहीं की जाती! नंग-धड़ंग उनके बच्चे, फटे चिथड़ों में लिपटी-सिकुड़ी उनके घर की कुलवधुएँ और कौपीन पहने मजदूर आज भी दिखाई देते हैं! कभी एक जून खाना मिला तो दूसरे जून फाकाकशी ही उनके नसीब में बदी है! आज भी जो इन दरिद्रनारायणों के मेहनत पर हलुआ और पूरी का भोग लगाते हैं, उन्हें इनकी इज्जत करना सीखनी चाहिए। देश की असली दौलत मजदूर और किसान ही हैं।"

ये शब्द हैं बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष तथा खादी-ग्रामोद्योग कमीशन के सदस्य श्री ध्वजाप्रसाद साहु के, जिन्होंने विगत २० जुलाई को अखरा कन्हौली गाँव के मजदूरों के बीच भाषण देते हुए कहे।

इस अवसर पर गाँव के मजदूरों की ओर से लगभग छः सौ दस्तों का एक अभिनन्दन-पत्र श्री साहु को दिया गया। अभिनन्दन-पत्र में कहा गया कि "इस गाँव की कुल आबादी ५॥ हजार है, जिसमें १ हजार कुलीनवर्गीय हैं, बाकी ४॥ हजार मजदूर वर्ग के हैं। मजदूरों की इस ४॥ हजार की आबादी में करीब २ हजार लोग जमीन वाले हैं और २॥ हजार लोग बेजमीन के हैं। जो जमीन वाले हैं, उनमें से बहुत कम ऐसे लोग हैं, जो अपनी जमीन से साल भर का खर्च चला पाते हों। इस ग्राम में बहुतों के पास किसी प्रकार के उद्योग धंधे नहीं हैं और न गाँव की आबादी में कोई हुनर ही है। शहर के किनारे रहने के कारण कुछ मेहनत मजदूरी करके अपना पेट किसी तरह भर लेते हैं। पर स्थिति ऐसी है कि ग्राम के अन्दर पर न आपसी प्रेम पैदा हो सका है, न ज्ञानवर्द्धन हो रहा है और न जीवन-स्तर ही ऊँचा उठने की कोई सम्भावना है। अपने परिश्रम के बल पर अपनी दैनिक आवश्यकता की चीजों की पूर्ति होती रहती है, तो जीवन में एक सन्तोष बना रहता है और विकास करने की प्रेरणा जाग्रत रहती है। यह गाँव जमाने से शोषण का शिकार रहने के कारण मृतवत् हो गया है।

बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ के कैलाव के कारण इस गाँव के करीब १०० स्त्री-पुरुष संघ के विभिन्न कामों में लगे रहते हैं और वहाँ से अपनी रोजी-रोटी प्राप्त करते हैं। इनमें कुछ कुशल कारीगर हैं और कुछ अकुशल। दोनों प्रकार के लोग हैं। मजदूर वर्ग में अधिकांश अशिक्षित हैं। स्त्रियाँ तो करीब करीब सब अशिक्षित ही हैं। संघ जैसी शक्तिशाली और क्रान्तिकारी संस्था के सान्निध्य का लाभ हम लोग उठाने के लिए तैयार हैं। पर इससे हमें तब तक सफलता नहीं मिल सकती, जब तक कि इस काम को आप अपना न मान लें। हमारे बीच में उद्योग-धंधों के प्रसार की बड़ी आवश्यकता है, क्योंकि हम सब मेहनतकश हैं।

यह हमारा सौभाग्य है कि करीब ११ सालों से आप हमारे ग्राम में लगातार रह रहे हैं। जब से बिहार खादी ग्रामोद्योग संघ का प्रधान कार्यालय इस कन्हौली ग्राम के एक छोर में बना है, तब से आज यह पहला ही मौका है कि हम ग्रामवासी सामूहिक रूप से आपके यहाँ मिल रहे हैं, हालाँकि छिट पुट हम सभी आपसे मिलते रहे हैं। हमारे कन्हौली ग्राम के उस हिस्से का नाम आपने 'सर्वोदयग्राम' रखा है, लेकिन उसका नाम सार्थक तब होगा, जब उसके सान्निध्य में रहने वाले लोग सर्वोदय के सिद्धान्त से ओतप्रोत हों, यानी उनमें ईमानदारी, धर्मरता, देशप्रेम आदि गुण जागें हों।"

अभिनन्दन-पत्र का उत्तर देते हुए श्री साहु ने कहा कि आप लोगों ने बताया कि कुछ के पास जमीन है, कुछ बेजमीन हैं। चन्द लोग ही ऐसे हैं कि जिनके पास पूरी जमीन है। पर आप जानते हैं कि जिनके पास जमीन है, उन्हें वह जमीन ही सिरदर्द हो रही है। आपके पास सबसे बड़ी जो दौलत है, वह है मेहनत। कुछ दिन पूर्व एक नारा सर्वत्र सुनने को मिलता था—'जो जोतेगा जमीन उसकी।' आज उसे हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। आज हमारी गरीबी का सबसे बड़ा कारण यह है कि काम नहीं मिलता। लेकिन पेट तो मानता नहीं कि आज काम नहीं मिला तो खाना नहीं चाहिए। मतलब यह कि खाना और काम, रोजी और रोटी, दोनों चाहिए।

श्री साहु ने अपने भाषण के क्रम में आगे कहा कि बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ दरअसल में एक क्रांतिकारी संस्था है। आज इस संस्था में १,०४,४०६ सूतकार, ११,३१७ बुनकर, २,९७६ कार्यकर्ता काम कर रहे हैं। हमें अब ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि मजदूरों को तीसों दिन काम मिले और उसके लिए हम आवाहन करते हैं कि आप लोग अपने अपने घरों में चरखा चलायें। आर्थिक दृष्टि से अम्बर चरखे की क्षमता आज कम नहीं है। एक अम्बर पर हर मास ४०-५० रु० की आमदनी एक परिवार की हो सकती है। इसके अलावा बुनाई का काम है। इस काम को भी कुछ लोग कर सकते हैं।

सुझाव देते हुए आपने आगे कहा कि ग्रामोदय सहयोग समिति के द्वारा आपको खादी और ग्रामोद्योग का काम अपने हाथ में ले लेना चाहिए। गाँवों में पारिवारिक भावना सहयोग समिति के मार्फत आ सकती है और इस ओर गाँव के सब लोग मिल कर सोचेंगे तो गाँव स्वर्ग बनेगा। इससे पड़ोसी धर्म में गति मिलेगी, बेरोजगारी और बेकारी का मसला हल होगा। दूसरों के दुःख में दुःखी होने से दुःख कम होता है, दूसरों के सुख में सुखी होने से सुख बढ़ता है।

आपने कहा कि खादी वस्त्र संस्कार है। पहले के जमाने में लोग मलमल का कपड़ा पहनते थे और उसी में अपना बड़प्पन मानते थे। परन्तु महात्मा गांधी ने उस रोग को सदा के लिए समाप्त किया। आज जो मोटी खादी पहनता है, उसी में उसकी महत्ता है। इसलिए आज घर घर में खादी वस्तु का प्रवेश होना लाजिमी है।

अन्त में आपने कहा कि इस देश को बाबूवर्ग की जरूरत नहीं है। सबको मजदूर बनाना होगा। देश आज उसी ओर अग्रसर हो रहा है। मेहनतकशों की हर जगह हर समय पूछ होती है, होती आयी है और होती रहेगी।

[प्रेषक: श्रीचरण आजाद]

बाबा राघवदास स्मृति-ग्रन्थ

बाबा राघवदास उत्तर प्रदेश के एक अद्भुत नेता और विलक्षण संत थे। "हरिनु मारग छे शूरानो, नहि कायरनुं काम रे"—भगवान् का मार्ग शूरों का है, कायरों का नहीं। रोम-रोम से शूरमा इस वैष्णव संत ने अपने अहर्निश के जीवन में उक्त कथन को अक्षरशः चरितार्थ किया था। देवरिया, गोरखपुर, आजमगढ़, बलिया प्रभृति पूर्वी जिलों—जो उनका कार्य-क्षेत्र था—की ग्रामीण जनता उनकी शूरता, वीरता, त्याग, तपस्या, मैत्री की रोमांचक कहानियाँ कहा-सुना करती है।

बाबा राघवदास

मझोला कद, चौड़ी छाती, गेहुँआ रंग, सिर और दाढ़ी के बढ़े बिखरे बालों के बीच ज्योतिष्मान तमतमाया चेहरा, छोटी चमकीली आँखें, गले में बँधी तुलसी की नन्हीं कंठी, नीचे मोटे खादी का अचला, ऊपर वैसी ही शुभ्र चादर, कांखों के नीचे लटकते लम्बे झोले में अपना घर लिये वह शीत, घाम, आँधी-पानी, नदी नालों को पछाड़ते हुए इस गाँव से उस गाँव दौड़ते चलते थे। असहयोग का उनका तूफानी दौरा गजब का था। जेठ-बैसाख की दोपहरी की जलती धूप में उन्हें नंगे पाँव चलते हुए देख गाँव के किसान हाय हाय करते दौड़ पड़ते और श्रद्धा से झुक-झुक कर चरण-स्पर्श करते। बाबाजी हँस-हँस कर उनसे मीठी भोजपुरी में बातें करते। उनकी खेती-बारी, बाल-बच्चों, काम धाम, दुःख-सुख का हाल पूछते।

इस प्रकार संत विनोबा की भूदान-यात्रा के बहुत पहले ही सहज के बाबा राघवदास ने गाँव की सहस्रों मील पद-यात्रा कर ग्रामीण जनता के साथ आत्मीयता स्थापित की और उसके भीतर अभूतपूर्व राष्ट्रीय जागरण का संचार किया। छोटे-मोटे अन्याय, अत्याचारों को चुपचाप सह लेने की इधर की जनता की प्रवृत्ति उन्हें इतनी असह्य हो उठी थी कि वह इसके विरुद्ध राह चलते अपने जान की बाजी लगाते हुए चलते! किसी अन्याय पर जब उन्हें क्रोध आता, तो वाणी में बिजली कड़क उठती। गाँव के लोग कहते हैं कि ऐसा मर्दाना साधु न कभी देखा, न देखेंगे।

बाबाजी की आत्मा गाँव में बसती। वह ग्रामीणों की सुख-समृद्धि की नींद सोते जागते। उनके कल्याण के लिए तरह-तरह की योजनाएँ बनाते रहते। उनकी सर्वतोमुखी उन्नति चाहते। उन्होंने देवरिया, गोरखपुर के गाँव में छोटी-बड़ी सैकड़ों शिक्षा-संस्थाएँ स्थापित की। अनेक प्रकार की रचनात्मक संस्थाओं का जाल बिछा दिया। अंतिम दिनों में जब वह सब कुछ छोड़ कर सर्वोदय और भूदान के कार्य में संलग्न हो गये थे, तो एक ऐसे ग्रामीण विश्वविद्यालय का स्वप्न देखने लगे थे, जिसमें ग्रामोपयोगी शिक्षा के साथ गाँवों की सर्वतोमुखी उन्नति के प्रयोग किये जायँ।

उन्हीं बाबा की बिखरी स्मृतियों को सुरक्षित करने के लिए 'बाबा राघवदास स्मृति ग्रन्थ' निकालने का आयोजन किया गया है। ग्रन्थ को यथासम्भव सर्वोपयोगी और सर्वसुलभ बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है। उसमें बाबाजी का प्रमाणित जीवन-चरित्र, उनसे सम्बन्धित शिक्षाप्रद संस्मरण, अनेक उपयोगी लेख, कविताएँ तथा स्वयं बाबाजी द्वारा लिखे गये अनेक रोमांचकारी पत्र और लेख दिये जा रहे हैं।

ग्रन्थ का उद्घाटन-समारोह बाबाजी के जन्म दिवस, १२ दिसम्बर को भारतीय गणतंत्र के भूतपूर्व राष्ट्रपति डा० राजेन्द्र प्रसाद के करकमलों द्वारा होगा। उसके बाद बाबाजी की ग्रामोत्थान-सम्बन्धी रचनात्मक कल्पनाओं और योजनाओं को सार्थक बनाने का प्रयत्न किया जायेगा।

उ०प्र० गांधी स्मारक
निधि कार्यालय,
सेवापुरी (वाराणसी)

—सम्पादक मण्डल

मासिक चिट्ठियां — बिहार की चिट्ठी

'बीघा-कट्ठा अभियान' की समाप्ति के बाद अगले कार्यक्रम पर विचार-विमर्श करने के लिए बिहार सर्वोदय मंडल की कार्यसमिति के सदस्यों एवं विशेष आमंत्रितों की बैठक १५ जुलाई से १९ जुलाई तक मुंगेर जिले के सिमुलतला नामक स्थान में हुई। बैठक की अध्यक्षता श्री श्यामसुन्दर प्रसाद ने की। बैठक में कार्यकर्ताओं ने मुक्त चिन्तन किया। अनुभव के आधार पर अगला कार्यक्रम बनाने पर सविस्तार चर्चा हुई।

श्री जयप्रकाश नारायण भी चार दिनों तक बैठक में शामिल हुए और *उन्होंने विचार-विमर्श में सक्रिय भाग लिया।* कार्यकर्ता-संयोजन, संगठन एवं भावी कार्यक्रम पर विशेष रूप से चर्चा हुई। वितरण को केन्द्र-बिन्दु मान कर 'बीघा में कट्ठा', *भूदान एवं अन्य कार्यक्रमों द्वारा* भूमिहीनता मिटाने, बेदखली रोकने आदि का कार्यक्रम सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। विचार-विमर्श में गहरा मतभेद नहीं होते हुए भी देर तक आपस में बहस होती रही। कभी-कभी बातचीत में तीव्र मत भेद *भी प्रकट किया गया।* फिर भी बैठक की कुल अवधि में जो विचार विमर्श हुआ, उससे कार्यकर्ता-संयोजन, संगठन एव भावी कार्यक्रम पर सर्वसम्मति से निर्णय किया गया।

निर्णयानुसार सर्वोदय-कार्यकर्ता केन्द्र की स्थापना कर आसपास के निवासियों को सर्वांगीण विकास के लिए प्रोत्साहित करेंगे। कार्यकर्ताओं का कार्यक्रम आम जनता पर सर्वोदय विचार लादने का नहीं रहेगा। आवश्यकतानुसार जनता अपनी जरूरत की पूर्ति के लिए अपने विवेक के अनुसार स्वयं कार्यक्रम बनायेगी। हाँ, सर्वोदय-कार्यकर्ता ग्रामोद्योगमूलक अहिंसक-प्रधान कार्यक्रम की ओर ले जाने का इशारा *मात्र करेंगे। केन्द्र में आश्रम जैसी* कोई प्रवृत्ति नहीं चलेगी। वह तो एक तरह से कार्यकर्ताओं का विश्रामगृह मात्र रहेगा। प्रयास तो रहेगा कि सर्वोदय-कार्यकर्ताओं के मार्गदर्शन से ग्रामीण स्वावलम्बी हो जायें और जल्द-से-जल्द कार्यकर्ता किसी अन्य क्षेत्र में चले जायें।

नशाबन्दी-सम्मेलन

बिहार नशाबन्दी-सम्मेलन ७ और ८ जुलाई को प्रसिद्ध तीर्थस्थान देवघर में *श्री सिद्धराज ढड्ढा के सभापतित्व में* सम्पन्न हुआ। सम्मेलन का उद्घाटन योजना-आयोग के सदस्य श्री श्रीमन्नारायण ने किया। बिहार-सरकार के आबकारी मंत्री, श्री आचार्य बदरीनाथ वर्मा ने भी अपने विचार सम्मेलन में व्यक्त किये। बिहार के विभिन्न संस्थाओं के लगभग *१०० प्रतिनिधि शामिल हुए थे। नशा-*बन्दी सम्बन्धी कार्यक्रम पर सविस्तार चर्चा हुई। सर्वश्री वैद्यनाथप्रसाद चौधरी, रामनारायण सिंह, नगेन्द्रनारायण सिंह, मोतीलाल केजरीवाल, रमावल्लभ चतुर्वेदी प्रभृति ने भी सम्मेलन में अपने विचार व्यक्त किये। सम्मेलन ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव स्वीकार किया, जिसमें जनता, कार्यकर्ता एवं सरकार, तीनों के लिए अलग-अलग कार्यक्रमों का निर्देश है। सम्मेलन ने प्रसिद्ध 'शहीद दिवस', ९ अगस्त को पूरे राज्य में शराब की दुकानों पर सांकेतिक 'पिकेटिंग' करने का निर्णय किया। २९ जुलाई को पटना सिटी में बिहार नशाबन्दी परिषद के अध्यक्ष श्री जगलाल चौधरीजी के सभापतित्व में एक आम सभा का आयोजन किया गया, जिसमें गांधी स्मारक निधि के संचालक श्री सरयूप्रसाद, बिहार-सरकार के भूतपूर्व *सहदीय सचिव श्री लालसिंह त्यागी,* और श्रीमती सावित्री देवी एम० एल० सी० के अतिरिक्त कई प्रमुख व्यक्ति शामिल हुए। वक्ताओं ने सभा में नशा से होने वाली हानि की सविस्तार चर्चा की एवं बिहार *सरकार से अविलम्ब नशाबन्दी लागू करने* का निवेदन किया।

कृषि गोसेवा-समिति

बिहार सर्वोदय मंडल द्वारा मनोनीत कृषि गोसेवा समिति की बैठक २१-२२ जुलाई को समिति के अध्यक्ष श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी की अध्यक्षता में हुई। बैठक ने बिहार में गोसेवा के लिए कार्यक्रम *बनाया, जिसमें अच्छी नस्ल की गायें* किसानों के बीच वितरित करने का कार्यक्रम भी शामिल है। गाय की सेवा के साथ-साथ गो-पालकों की समस्या पर भी विचार-विमर्श हुआ और गो-पालकों की जीविका निर्वाह के लिए ठोस कार्यक्रम बनाने का निश्चय हुआ।

प्राकृतिक चिकित्सा परिषद

बिहार प्राकृतिक चिकित्सा-परिषद की कार्यसमिति की बैठक २३ जुलाई को पटना में प्राकृतिक चिकित्सा के समर्थक एवं प्रसिद्ध चिकित्सक डा० बालेश्वरप्रसाद *सिंह की* अध्यक्षता में हुई। बैठक ने बिहार राज्य के जिलों में अविलम्ब जिला शाखा बनाने *का निश्चय किया* और विभिन्न व्यक्तियों को विभिन्न जिलों में बिहार प्राकृतिक चिकित्सा परिषद की जिला शाखा बनाने की जिम्मेवारी दी। बैठक में केन्द्रीय सरकार द्वारा *मिलने वाले* अनुदान पर भी विशेष रूप से चर्चा हुई और बिहार के सभी प्राकृतिक *चिकित्सक संस्थाओं से अनुदान के* लिए आवेदनपत्र माँगे गये। सर्व सेवा संघ के निर्देशानुसार बिहार सर्वोदय-मंडल ने जिला सर्वोदय मंडल के पदाधिकारियों तथा बिहार सर्वोदय मंडल एवं सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधियों का चुनाव कराने का निर्णय किया है। निर्णयानुसार पटना जिला *सर्वोदय-मंडल का चुनाव जुलाई के अंत में* बिहारशरीफ में बैठक बुला कर किया गया है। अन्य जिलों में भी अगस्त माह के अन्त तक चुनाव संपन्न हो जाने की *संभावना है।*

—रामनन्दन सिंह

उड़ीसा में ग्रामदान का प्रवाह

[*कटक से प्रकाशित होने वाली दशवारिक पत्रिका "ग्रामसेवक" में उड़ीसा के* ग्रामदानों के सम्बन्ध में ११ जुलाई के अंक में जो संवाद प्रकाशित हुआ, वह एक ओर इस बात के लिए उत्साह देने वाला है कि लोग ग्रामदान के लिए तैयार हैं, तो दूसरी ओर कार्यकर्ताओं की कमी और शिथिलता का संकेत करता है कि वे उनके पास पहुँच नहीं पाते हैं। —सं०]

१ जून '६२ के *अंक में* एक संवाद छपा है कि विषमकटक थाने में टागिणीगुडा गाँव का एक नया ग्रामदान मिला है। असल में एक नहीं, बल्कि चार गाँवों का सम्पूर्ण नया ग्रामदान मिला है। वे चार गाँव हैं : (१) टागिणीगुडा, (२) रासुली, (३) जिमलीपदर (४) हिकिनी। इनमें से तीन गाँवों को राजस्व-अधिकारी (*रेवेन्यू अफसर) द्वारा स्वीकृति-आदेश (कन्फर्मेशन आर्डर) मिल चुका है।*

पिछले कुछ दिनों में विषमकटक के राजस्व-अधिकारी द्वारा १७ गाँवों को स्वीकृति-आदेश मिल चुका है। अब *तक जिन २० गाँवों को स्वीकृति मिल* चुकी है, उनकी एक फेहरिस्त नीचे दे रहा हूँ।

ग्रामदान	एकड़	
(१) हिकिरीगुडा	१०३.००	(लगभग)
(२) मुण्टीपदर	३८.००	(लगभग)
(३) वेरीगुडा	२३.१०	
(४) पेनुगंडा	२८.९१	
(५) पुहदिगुडा	११२.०२	
(६) हिकिनि	१७.६१	
(७) रासुली	४४.९५	
(८) टागिणीगुडा	३९.००	
(९) मरीचपाडी	१७१.११	
(१०) टेलिंपदर	९९.७७	
(११) ताडिपाई	११०.०४	
(१२) तुडुइमेडी	१६.१८	
(१३) सन्यासीगुडा	६२.९१	
(१४) डंबकुरा	३७.००	(लगभग)

भूदान	एकड़
(१५) कंधगोतिगुडा	१२.४२
(१६) कालीकणा	२.३१
(१७) मीनाइला	२.११
(१८) कालिंगा	६.०
(१९) पानुगुडा	५.००
(२०) मालेरी	१६.२१

विषमकटक थाने में अब तक इन बीस गाँवों को सरकारी मजूरी मिल चुकी है। *समय व शक्ति के अभाव में* नये ग्रामदानों का संग्रह कर नहीं पाते हैं। समय *देकर काम करेंगे* तो और बहुत सारे ग्रामदान मिलेंगे। सिर्फ विषमकटक थाने में ही नहीं, बल्कि पूरे कोरापुट जिले में अब भी नये सौ-सौ गाँव ग्रामदान करने की राह देख रहे हैं। हम उनके पास पहुँच नहीं पाते हैं। विषमकटक थाने में स्वीकृति मिले हुए गाँवों में से हिकिरीगुडा, मुंटिपदर, डंबकुरा गाँवों के लोगों को भूदान-समिति की ओर से 'हल तथा बैल मिल चुके हैं। इससे इन गाँवों के लोगों को विशेष रूप से *फायदा मिला है। हमारे रतनभाई इस* इलाके पर ध्यान दे रहे हैं।

—गंगाधर

शान्ति-यात्रियों की डायरी

हमने पाकिस्तान से अफगानिस्तान में २८ जुलाई को प्रवेश किया। यहाँ की *भाषा पर्शियन है, इसलिए सारी दिक्कत है।* फिर सीमा से काबुल तक का करीब १४१ मील का रास्ता सूखा, पहाड़ी और अशिक्षित पठानों का इलाका है। हम मांसाहार नहीं करते, इससे भी दिक्कत होती है। *शाकाहारी भी जिन्दा रह सकता है, ऐसी लोगों* को कल्पना भी नहीं आती! पर इन दिक्कतों से कोई घबराहट नहीं है। उत्साह खूब बढ़ रहा है।

हम ७ अगस्त को काबुल आये। काबुल बहुत सुंदर और ठंडा शहर है। *सड़कें, मकान, बाग-बगीचे, खूब अच्छे हैं,* यह फलों का मौसम है। यहाँ बेहतरीन अंगूर, आडू, खरदा, नाशपाती इस समय हैं। हमारा आजकल यही मुख्य आहार है।

हिन्दुस्तान छोड़ने के बाद पहली बार *यहाँ काबुल में हम एक भारतीय परिवार* के मेहमान बने हैं। यहाँ भारतीय दूतावास *ने हमारे ठहरने का प्रबंध किया।* आज स्वयं राजदूत महोदय श्री जे० धामीजा ने *हमें भोज दिया और हमारा प्रेम से* स्वागत किया।

काबुल *रेडियो ने हमारे समाचार* 'ब्राडकास्ट', प्रसारित किये। 'काबुल टाइम्स' अखबार के प्रथम पृष्ठ पर भी *समाचार छपा है। काबुल विश्वविद्यालय* के रेक्टर, डीन तथा वहाँ के विभिन्न सरकारी अधिकारियों से भी मुलाकातें हुई *हैं। अफगानिस्तान में आने के बाद हमारे* 'मिशन' की दृष्टि से काबुल में ही सबसे अच्छा वातावरण बना है।

[काबुल से १२ अगस्त '६२ को लिखे एक पत्र से।] —सतीशकुमार

बंबई सर्वोदय-मंडल के अनुकरणीय कार्यक्रम

सर्वोदयनगर की दृष्टि से शहरों में किस प्रकार काम का संयोजन हो सकता है, इसका एक छोटा नमूना बंबई सर्वोदय मंडल का है। निम्न जानकारी उद्बोधक है।

(१) मणिभवन (गाँवदेवी): यहाँ बंबई सर्वोदय-मंडल का प्रधान कार्यालय है। गांधी स्मारक संग्रहालय, अच्छा ग्रंथालय तथा वाचनालय भी है। हर शुक्रवार को प्रार्थना तथा प्रवचन का कार्यक्रम होता है।

(२) कालबादेवी (अग्रेवाड़ा): गांधी-विचार प्रचार केन्द्र की ओर से वाचनालय चलाया जाता है। साहित्य-बिक्री केन्द्र है। बच्चों के कार्यक्रम लिये जाते हैं।

(३) वरली (सेंचुरी मिल कंपाउंड): यहाँ वाचनालय है। "विनोबा विद्यार्थी मंडल" बना है। टी० बी० का 'सर्वे' किया जाता है।

(४) दादर (लोकमान्य वस्तु भंडार): यहाँ पुस्तकालय है, बीच-बीच में प्रवचन आदि होते हैं।

(५) बांद्रा: यहाँ महाराष्ट्र सर्वोदय-मंडल का कार्यालय है, वाचनालय है। महात्मा गांधी सेवा-मंदिर ट्रस्ट का केन्द्र है। यहाँ सभा शिविर होते हैं।

(६) सांताक्रुज: यहाँ वाचनालय चलाया जाता है। प्रार्थना और प्रवचन का कार्यक्रम होता है।

(७) ग्रान्ट रोड: अध्ययन-मंडल की ओर से हर इतवार को बौद्धिक चर्चा होती है। वाचनालय चलाया जाता है।

(८) घाटकोपर: वाचनालय है, सूत-कताई और प्रार्थना नियमित चलती है, शिविर बीच-बीच में होते हैं।

(९) कुरला: यहाँ छोटा ग्रंथालय है, अध्ययन-केंद्र है। कार्यकर्ताओं के निवास की व्यवस्था है।

उपर्युक्त केंद्रों के अलावा निम्न कार्य भी बंबई सर्वोदय मंडल की ओर से किये गये हैं:

(१) दादर में "सर्वोदय-सहायक मंडल" की स्थापना की गयी है। इस मंडल के हर सदस्य को कम-से-कम दस "सर्वोदय पात्रों" की स्थापना और उसकी व्यवस्था देखनी होती है।

(२) हर माह की १०, ११ और १२ तारीख को मिलों में या कारखानों में सर्वोदय साहित्य प्रचार का काम होता है। कारीगर और मजदूर जो साहित्य खरीदते हैं, उसकी आधी कीमत उस कारखाने के 'मैनेजमेंट' की ओर से सहायता के रूप में दी जाती है और आधी कीमत मजदूर स्वयं देते हैं।

('सर्वोदय-साधना' —दत्तोबा दास्ताने से संकलित)

छोटी अकल की छोटी सूझ

[पृष्ठ २ का शेष]

शासन-कर्ताओं और उनके लिए उनके आग्रह के कारण है। ये दोनों राष्ट्र एक-दूसरे के जितने निकट आयेंगे और एक-दूसरे को सहानुभूतिपूर्वक समझेंगे, उतना ही यह भय कम हो जायगा। भय की व्याख्या ही यह है कि भय यानी अपरिचय। परिचय होने पर भय की भयानकता नष्ट हो जाया करती है। यह परिचय बढ़ाने की कोशिश होती रहनी चाहिए। लेकिन उसके लिए भी तब रास्ता अधिक खुल सकता है, जब शस्त्र बनाने के प्रयास ये दोनों राष्ट्र छोड़ दें।

उक्त प्रतियोगिता की अवस्था में शांति के उपासकों, भक्तों एवं कर्मयोगियों का मार्ग सुलभ होगा या कठिन होगा, यह आज ही कहना मुश्किल है। मुमकिन है तब उनके पुरुषार्थ को शायद अधिक कठिन चुनौती भी हो सकती है। लेकिन उनकी सुविधा असुविधा का विचार छोड़ कर भी हमें लगता है कि जनता की भय-ग्रस्तता यदि कम हो जाये तो जगत् का बहुत लाभ होगा और नि:शस्त्र वैज्ञानिक एवं युद्ध विरोधक होकर उन उन राष्ट्रों के युद्ध-वस्तुओं के नृशंस इस्तेमाल में भी मदद मिलेगी। यह एक छोटी बात हमने कही है, क्योंकि हमें चिन्ता इसकी नहीं है कि कल यदि युद्ध हुआ तो कौन राष्ट्र अधिक बलशाली सिद्ध होगा, चिन्ता इसकी है कि दुनिया की जनता भय से कब मुक्त होगी। किसी राष्ट्र को यह बिलकुल अधिकार नहीं है कि वह अपनी तथा अन्य राष्ट्रों की जनता को नित्य ही भय-शंकित एवं भयग्रस्त कर रखे।

बिहार में 'नशाबंदी-दिवस' सम्पन्न

गत ९ अगस्त को बिहार राज्य नशाबंदी परिषद के अनुरोध पर बिहार के कोने-कोने "नशाबंदी दिवस" मनाया गया। इस अवसर पर जगह-जगह कलाली की दुकानों पर सांकेतिक 'पिकेटिंग' एवं शराबबंदी के पक्ष में जनमत बनाने का प्रयत्न किया गया। कुछ जगह लोगों ने शराब न पीने की प्रतिज्ञा ली। हमारे पास निम्न स्थानों से समाचार प्राप्त हुए हैं:

सिवान (सारण); जिला मुंगेर—माली, दाउदपुर और ताजपुर, खगड़िया, जमालपुर, जमुई, विशुनपुर। जिला दरभंगा—मधुबनी, धनवन, रहुआर, चक्का, डिग्रियार, वारिसनगर, गद्दुली, बेउटी, कसिया, रहिका। दुमका, स० परगना—सरौला, बाघमार, गरहिहा, पेगार पहाड़ी, कुरामारा और नवाडिह। कुमुड़ा, धनबाद। पूर्णियाँ जिले के विभिन्न अंचल। मुजफ्फरपुर, गया। बख्तियारपुर। मुकुन्दपुर, पटना—मोहिउद्दीनपुर। मुजफ्फरपुर जिला—छाता बाजार, हाजीपुर, सिकंदर। पूर्णियाँ-सरमी।

समाचार-सार

● रायपुर के श्री मोहनदासजी असरानी ने सन् '६१ से '६५ तक पाँच वर्षों की सम्पत्ति-दान की कुल रकम ६११ रु० जिला सर्वोदय मंडल, रायपुर को पेशगी प्रदान कर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। श्री असरानी रायपुर के प्रसिद्ध व्यापारी एवं सर्वोदय मित्र हैं।

● म० प्र० शांति-सेना मण्डल के संयोजक श्री दीपचन्द जैन ने मंदसौर और रतलाम जिले का दौरा किया। इस अवसर पर आपने जगह जगह शांति केंद्र के गठन एवं 'सर्वोदय-पर्व' को सफल बनाने के लिए स्थानीय कार्यकर्ताओं से अनुरोध किया।

● भिण्ड (म० प्र०) के श्री राम अपनी अध्ययन यात्रा के सिलसिले में २७-२८-२९ जुलाई को कानपुर आये और विभिन्न विशिष्ट व्यक्तियों से मिले एवं गांधी विचार केन्द्र द्वारा आयोजित अनेक गोष्ठियों में भाग लिया।

● पूना में ४ अगस्त को आचार्य लिमये, श्रीमती मालतीबाई बेडेकर, श्री भाऊसाहब रानडे और श्री भाऊसाहब गोसावी आदि की उपस्थिति में एक बैठक हुई, जिसमें यह तय किया कि पूना के नागरिकों का एक अणुअस्त्र विरोधी सम्मेलन आयोजित किया जाना चाहिए। इस संबंध में प्रमुख लोगों की सम्मति माँगी जा रही है।

● दरभंगा जिले के हसनपुर थाने में ५ से ३१ जुलाई तक इस प्रकार कार्य हुआ है: भूदान-प्राप्ति—१०० कट्ठा, सर्वोदय-पात्र ३०, साहित्य बिक्री २२ रु० ५० न० पै०। गाँवों में ६० मील की यात्रा द्वारा सम्पर्क साध कर कार्यकर्ताओं की ४ गोष्ठियाँ और युवक विद्यार्थियों की २ गोष्ठियाँ आयोजित की गयीं।

गुजरात में सर्वोदय-पदयात्राएँ

पिछले ढाई वर्षों से श्री हरीश व्यास की पदयात्रा निरंतर चल रही है। श्री बबलभाई की पदयात्रा तिलक-जयन्ती से साबरमती आश्रम, अहमदाबाद से शुरू हुई। श्री कीर्तनलाल पारिख, वीणानंदन और विश्वनाथभाई उनके साथ हैं। यात्रा में सफाई, श्रमयज्ञ और कताई भी चालू है तथा गाँव-गाँव में सभा होती है। उनके साथ कान्ताबेन शाह गुजराती दसवारिक "भूमिपुत्र" के ग्राहक बनाती हैं और गत अगस्त माह तक उन्होंने ७१२ ग्राहक बनाये। अगस्त के अन्त तक बबलभाई की यात्रा खेड़ा जिले में चली। साबरकांठा जिले में रतिभाई शाह ने एक सप्ताह में २० गाँवों की पदयात्रा की और १०२ एकड़ भूमि वितरित की।

गांधीजी की इच्छा-पूर्ति

कलकत्ता से प्रकाशित 'स्टेट्समैन' अंग्रेजी दैनिक पत्र ने १५ अगस्त '६२ के अपने संपादकीय में विनोबाजी की पाकिस्तान-पदयात्रा के विषय में विचार प्रकट करते हुए यह कहा कि पाकिस्तान जाने की गांधीजी की इच्छा थी, पर वह जा नहीं सके। विनोबाजी की पाकिस्तान-यात्रा उसी इच्छा की मानो पूर्ति है। सम्पादक ने यह आशा व्यक्त की है कि इस पदयात्रा से दोनों देश में मिलाप का वातावरण निर्माण होगा।

सर्व सेवा संघ के प्रतिनिधियों का चुनाव

अखिल भारत सर्व सेवा संघ के सहमंत्री श्री दत्तोबा दास्ताने ने सभी प्रांतीय और जिला सर्वोदय-मंडलों को प्रतिनिधियों के चुनाव बाबत यह परिपत्र भेजा है:

विधान के अनुसार सर्वोदय मंडलों और प्रतिनिधियों का कार्यकाल एक साल का ही होता है। सन् १९६१ के दिसंबर में पुराने मंडलों और प्रतिनिधियों का कार्यकाल समाप्त हो चुका था। लेकिन चूँकि इस वर्ष सर्वोदय सम्मेलन नवंबर '६२ में होने जा रहा है। इसलिए पटना के ९ अप्रैल, '६२ के संघ-अधिवेशन में एक प्रस्ताव द्वारा १९६१-'६२ के लिए निर्वाचित प्रतिनिधियों और सर्वोदय मंडलों का कार्यकाल छः महीने के लिए बढ़ा कर जून '६२ अंत तक कर दिया गया था।

आगामी सम्मेलन के समय नवनिर्वाचित प्रतिनिधियों को निमंत्रित किया जा सके, इस दृष्टि से सभी सर्वोदय-मंडलों के प्रतिनिधियों के चुनाव अगस्त १९६२ के अंत तक समाप्त करके प्रधान कार्यालय, राजघाट, काशी को उनकी सूचना दी जाय, ऐसा सूचित किया गया था। अभी कई स्थानों से सूचना आना बाकी है। जिनके चुनाव अब तक न हुए हों, वे उसे जल्दी पूरा करें और काशी कार्यालय को नाम भेज दें।

इस संबंध में एक बात स्पष्ट करना जरूरी हो गया है। कई स्थानों में दिसंबर १९६१ में या उसके बाद जिला सर्वोदय-मंडलों आदि के चुनाव हो गये हैं। नये चुनाव के संबंध में परिपत्र पटना के अप्रैल के सम्मेलन के बाद यहाँ से रवाना हुआ। उसी परिपत्र में हमने लिख दिया था कि "यह परिपत्र प्राप्त होने से पहले जिन जिलों में प्रतिनिधियों के और सर्वोदय-मंडलों के चुनाव पूरे हो चुके हों, वे भी कृपया फिर से उनके नाम प्रधान कार्यालय को भेज दें।"

फिर भी कुछ जगहों से पत्र आये हैं, जिनमें पूछा गया है कि "क्या आपके परिपत्र के अनुसार हमारे चुनाव रद्द करके नये चुनाव करना जरूरी है?" वास्तव में ऐसी शंका उठने का कारण नहीं है। फिर भी स्थिति स्पष्ट करने की दृष्टि से हम सूचित करना चाहते हैं कि जिनके चुनाव दिसंबर १९६१ या उसके बाद हो चुके हों, उनको फिर से चुनाव करने की आवश्यकता नहीं है।

जमालपुर के रेलवे-कारखाने के अनुकरणीय प्रयास

बिहार के जमालपुर में रेलवे का एक बड़ा कारखाना है, जिसमें करीब १४ हजार कर्मचारी काम करते हैं। गत जून '६१ से यहाँ पर कर्मचारियों के बौद्धिक प्रशिक्षण, नैतिक उन्नति एवं कार्यक्षमता को विकसित करने के लिए निम्न प्रकार के उल्लेखनीय प्रयास किये गये हैं।

(१) कारखाने के सूचना-प्रसारण केन्द्र द्वारा भोजन तथा विश्राम के अवसरों पर उच्च विचारों के प्रवचन और समाचार सुनाये जाते हैं।

(२) कारखाने के मुख्य द्वारों पर महापुरुषों के कुछ चित्रों के साथ उनके सद्वचन टाँगे गये हैं।

(३) पुस्तकालय की स्थापना की है।

(४) मनोरंजन के समय पर कुछ शिक्षावर्धक फिल्मों का प्रदर्शन किया जाता है।

(५) रेल-शताब्दी समारोह के अवसर पर कर्मचारियों के परिवारों में १००० चरखों का वितरण एवं समीप के गाँवों में महिला केन्द्र की स्थापना कर उन्हें ३००० रु० की हाथ सिलाई मशीनें दी गयी हैं।

(६) बाढ़पीड़ितों की मदद के लिए ९००० रु० की निधि, लोगों से १८० नये सूती कम्बल, १४ मन गल्ला और ३००० नये-पुराने वस्त्र संग्रहीत कर भेजे गये।

(७) गांधी स्मारक निधि के सहयोग से मजदूर-सेवा केन्द्र की स्थापना की गयी।

(८) 'पीया-कट्ठा अभियान' में कर्मचारियों द्वारा अर्थ संग्रह किया गया।

बम्बई और काशी में सर्वोदय-साहित्य प्रदर्शनियाँ

सर्वोदय मण्डल, बम्बई और श्री गांधी आश्रम, वाराणसी ने तय किया है कि वे "सर्वोदय-पर्व" [११ सितम्बर से २ अक्टूबर तक] की अवधि में नमूना स्वरूप प्रथम कोटि की साहित्य-प्रदर्शनी करेंगे। उक्त दोनों प्रदर्शनियाँ सर्व सेवा संघ के सीधे मार्गदर्शन में और सहयोग से की जायेंगी।

श्री गांधी आश्रम, वाराणसी अपने कुलनाला स्थित खादी-भंडार को भी इस प्रकार सजाने जा रहे हैं कि उसमें साहित्य की आकर्षक प्रदर्शनी स्थायी रूप से रहे।

बम्बई में सघन साहित्य-प्रचार

एक पक्ष में पाँच कार्यक्रम

बम्बई के मिल-कारखानों के मजदूरों के बीच सर्वोदय-साहित्य-प्रचार का जो सघन कार्यक्रम गत पाँच माह से चलाया जा रहा है, उसमें अगस्त मास में तीन मिल-कारखानों में करीब ७,५०० रु० की बिक्री हो चुकी है। अगस्त माह में अब (१) मातूलाल मुफ्त मिलें, (२) स्टैण्डर्ड मिल और (३) युनियन मिल की आतियों के 'स्टाफ' के सदस्यों के बीच सर्वोदय-साहित्य-प्रचार का नया कार्यक्रम लगातार तीन दिनों में, ३०-३१ अगस्त और १ सितम्बर को एकसाथ तीन स्थानों पर रखा गया है।

इस प्रकार मजदूरों के अतिरिक्त मिल-कारखानों के पढ़े-लिखे कार्यकर्तागण को सर्वोदय-साहित्य पहुँचाने के लिए मालिक-'मैनेजमेन्ट' से ५० प्रतिशत 'रिबेट' देने के लिए राजी करने में बम्बई सर्वोदय-मंडल के कार्यकर्ताओं को विशेष सफलता मिल रही है।

सितम्बर माह के वेतन-दिनों, ता० १०, ११, १२ को बम्बई की उपर्युक्त दो मिलों (स्टेण्डर्ड व युनियन) के मजदूरों के बीच साहित्य-प्रचार करने का पूर्ववत् कार्यक्रम भी तय हो चुका है। ३० अगस्त से लेकर १२ सितम्बर तक के पक्ष में इसी प्रकार से पाँच स्थानों पर सघन साहित्य-प्रचार के कार्यक्रमों द्वारा बम्बई में 'सर्वोदय-पर्व' का आरम्भ विशेषता के साथ होगा। ऐसे उत्साहवर्धक कार्यक्रम से देश भर के सर्वोदय-कार्यकर्ताओं को प्रेरणा भी मिलेगी।

चौदहवाँ अ० भा० सर्वोदय-सम्मेलन

रियायती रेल-टिकट की सुविधा

चौदहवाँ वार्षिक सर्वोदय-समाज सम्मेलन इस बार १७ से १९ नवम्बर, '६२ तक गुजरात के सूरत जिले में स्थित वेड़छी गाँव में होगा। वेड़छी में "स्वराज्य आश्रम" से कुछ फर्लांग दूर सम्मेलन के लिए "सर्वोदयनगर" बनाया गया है। वहाँ पहुँचने के लिए निकटतम रेलवे स्टेशन मढ़ी है। एकतरफा किराया देकर "रिटर्न टिकट" लेने के "कन्सेशन फार्म" सम्मेलन में जाने वालों के लिए—तीन रुपये प्रतिनिधि शुल्क देने पर—भेजने की व्यवस्था की गयी है। रेलवे बोर्ड द्वारा सर्वोदय-सम्मेलन के लिए यह सुविधा प्रदान की गयी है।

मढ़ी स्टेशन पश्चिम रेलवे के सूरत से ४६ किलोमीटर दूर है। मढ़ी स्टेशन से "सर्वोदयनगर" वेड़छी के लिए महाराष्ट्र रोडवेज की नियमित बसें मिलती हैं। मढ़ी से वेड़छी ११ मील दूर है। तीन रु० मनीआर्डर से भेज कर रियायती रेल-टिकट का फार्म श्री मंत्री, अखिल भारत सर्व सेवा संघ, राजघाट, वाराणसी से मंगाया जा सकता है।

भोजन व निवास-व्यवस्था

सर्वोदय-सम्मेलन के समय कुछ ठंड शुरू हो जायेगी और संभव है कि उस समय वहाँ वर्षा भी हो, इसलिए सम्मेलन में जाने वाले प्रतिनिधियों से गर्म वस्त्र लाने का निवेदन किया गया है। जो लोग गाय के घी का ही उपयोग करते हैं, अथवा जिन्हें ग्रामोद्योगी अन्न का ही आग्रह है, उनके लिए स्वागत-समिति द्वारा विशेष व्यवस्था की गयी है; किन्तु उसके लिए अग्रिम सूचना देना आवश्यक है। १७, १८ और १९ नवम्बर, '६२ को नाश्ता और दोनों वक्त के भोजन और निवास की व्यवस्था छः रुपये अग्रिम भेजने पर की जायगी। भोजन-शुल्क के छः रुपये भेजने का पता यह है—श्री मंत्री, स्वागत-समिति, चौदहवाँ अखिल भारत सर्वोदय-सम्मेलन, स्वराज्य आश्रम, वेड़छी, जिला सूरत (टी० वी० रेलवे)

विनोबाजी की पूर्व पाकिस्तान में पदयात्रा

श्री विनोबाजी ५ सितम्बर को सोनारहाट होते हुए पूर्वी पाकिस्तान में प्रवेश करेंगे। पूर्वी पाकिस्तान की इस पदयात्रा में विनोबाजी के साथ अन्य पाँच साथी रहेंगे। यह पदयात्रा रंगपुर और दिनाजपुर जिले में से जा रही है। पाकिस्तान के दो जिला-स्थान इस पदयात्रा में आ रहे हैं। २० सितम्बर को पश्चिम बंगाल के राधिकापुर स्थान पर पुनः भारत वापस आयेंगे।

इस अंक में

बलरामपुर प्राथमिक सर्वोदय-मंडल

पश्चिम बंगाल के मिदनापुर जिले में बलरामपुर ग्राम के प्राथमिक सर्वोदय-मण्डल द्वारा निर्धन कृषकों में कार्य के लिए एक सेवा-सहकारी समिति निर्मित की गई है। ग्रामीणों के श्रमदान और शासन के सहयोग से वहाँ आसपास के गाँवों में चार कुएँ खोदे गये। श्री क्षितीश राय मालदा के साम्प्रदायिक दंगों में जाँच के लिए गये। मण्डल द्वारा सम्पत्ति-दान में प्राप्त २२८ रु० से बीमारों तथा भूदान-कार्यकर्ताओं की सहायता की गई। आगे वर्ष के लिए श्री रवीन्द्र मुखोपाध्याय मण्डल के अध्यक्ष और श्री कोकिल मंडल तथा श्री कल्याणी चक्रवर्ती मंत्री चुने गये हैं।

टाटा मिल के मजदूरों में ३ हजार रु० का सर्वोदय-साहित्य बिका

बम्बई स्थित टाटा मिल के मजदूरों में गत ९ से ११ अगस्त तक प्रातः से रात के एक बजे तक सर्वोदय-साहित्य का प्रचार किया गया। तीन दिनों में ३ हजार रु० की बिक्री हुई, जिसमें आधी रकम मिल के व्यवस्थापक देंगे।

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व सेवा संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, वाराणसी-१, फोन नं० ४३९१
वार्षिक मूल्य ६) पिछले अंक की छपी प्रतियाँ ८५४१ : इस अंक की छपी प्रतियाँ ८४९५ एक अंक १३ नये पैसे

संपादक : सिद्धराज ढड्ढा

वाराणसी : शुक्रवार | ७ सितम्बर '६२ | वर्ष ८ : अंक ४९

श्री विवेकानंद-शतसांवत्सरिक जन्म-दिन पर

स्वामी विवेकानंद

विनोबा

हमारी यात्रा में हम इतने मग्न रहते हैं कि बहुत दफा बहुत-सी महत्त्व की घटनाओं का भी ख्याल नहीं रहता। ठीक भी है। जो काम हमने उठाया है और भगवान् ने हमें सौंपा है, उसमें पूर्ण तन्मय होना हमारा धर्म ही है। लेकिन उसके साथ-साथ अन्य प्रेरणादायी घटनाएँ या भावनाएँ समाज में होती हैं, उनके विषय में भी हमको जागरूक रहना चाहिये। उससे हमको बल ही मिलता है।

आज चौदह अगस्त है और स्वामी विवेकानंद के जन्म का यह शतसांवत्सरिक दिन है। उनके जन्म को आज सौ साल हुए। उनकी मृत्यु अल्प आयु में ही हुई थी। वे चालीस साल पूरे नहीं कर पाये थे। उन्होंने अल्प आयु में बहुत मेहनत की। जनाधार पर रहे, भगवान् पर सब सौंप कर पूर्ण निर्भयता से उन्होंने काम किया। शांकर वेदांत में इस युग में इतना पराक्रमशील व्यक्तित्व शायद दूसरा कोई नहीं मिलता। महाराष्ट्र में ज्ञानदेव, कर्नाटक में विद्यारण्य ऐसे नाम हैं, जिन्होंने अपने जमाने में और अपने प्रदेश में जो असर डाला है, वह अमित है और आज भी वह कम नहीं हुआ है, बल्कि जहाँ तक ज्ञानदेव का ताल्लुक है, वह असर बढ़ रहा है। फिर ये मिसालें पुराने जमाने की हुईं। आधुनिक युग में वेदांत का इतना महान् आचार्य जिसने दुनिया का ध्यान एकदम खींच लिया, दूसरा ध्यान में नहीं आता।

अद्वैत के साथ उपासनाएँ हो सकती हैं, यह तो मूल शांकर विचार में ही था। शंकराचार्य ने स्वयं पञ्चायतन पूजा स्थापना की थी और उपासना का समन्वय किया था। वह उपासना-समन्वय उन्होंने जिस जमाने में किया था, उस जमाने के लिए पर्याप्त था। लेकिन आधुनिक समय के लिए वह अपर्याप्त है। इसलिए उसमें इस्लाम, ईसाई आदि उपासनाएँ जोड़ने का काम इस युग में श्री रामकृष्ण परमहंस ने किया। विवेकानंद उनके सर्वोत्तम शिष्य ही थे। यह उपासना-समन्वय उनको अपने गुरु से सहज ही प्राप्त था। लेकिन शांकर-विचार के लिए यह कोई नयी बात नहीं मानी जायेगी, क्योंकि उसका मूल आरंभ शंकराचार्य ने स्वयं किया ही था—अद्वैत को भक्ति के साथ जोड़ा। यह अलग बात है कि उनके बाद ऐसे अनेक आचार्य भारत में हुए कि शांकर विचार में भक्ति को जितना स्थान मिला था, उससे उनका समाधान नहीं हुआ और उसमें भक्ति को अधिक उत्कट स्वरूप देने की कोशिश उन्होंने की—जैसे विष्णुस्वामी, रामानुज, निंबार्क, वल्लभ इत्यादि। लेकिन वेदांत के साथ भक्ति का समन्वय यह पुरानी ही बात मानी जायेगी।

विवेकानंद ने विशेष बात वह यह की कि अद्वैत के साथ, जिसमें परमेश्वर की भिन्न भिन्न उपासनाएँ समाविष्ट होती हैं, उन्होंने आर्त-सेवा और दरिद्रनारायण की सेवा को जोड़ दिया। यह शब्द भी उनका अपना है—दरिद्रनारायण। और प्लेग के दिनों में, जैसे महाराष्ट्र में लोकमान्य तिलक ने, वैसे बंगाल में विवेकानंद ने साक्षात् सेवा का बहुत काम किया था। यहाँ सहज ही यह कहने में खुशी होती है कि लोकमान्य और विवेकानंद की आध्यात्मिक बनावट में कोई फरक नहीं था, सिवा इसके कि लोकमान्य कर्मयोग क्षेत्र में और उसमें भी खास करके राजकारण में काम करते थे, जैसा विवेकानंद ने प्रत्यक्षतः नहीं किया। मैं तो यह कहता था कि दरिद्रनारायण की सेवा में यह विचार अद्वैत के साथ जोड़ने की प्रक्रिया स्वामी विवेकानंद ने की थी। उसके बाद वह शब्द जो लोकमान्य को बहुत प्रिय था और देशबंधु चित्तरंजन दास ने प्रचलित किया, उस शब्द को घर-घर पहुँचाने का काम और तदनुसार कुल रचनात्मक कार्य को जोड़ने का काम महात्मा गांधी ने किया। महात्मा गांधी की और विवेकानंद की प्रतिमा भी एकरूप थी। महात्मा गांधी लोकमान्य से अधिक अंतरनिष्ठ थे, कर्म जीवनाकार में, इसलिए वे विवेकानंद के बहुत नजदीक आते हैं। महापुरुषों की तुलना नहीं करनी चाहिये, न करना योग्य है, न करने की जरूरत है। लेकिन जिनका भारत पर अत्यंत उपकार हुआ है, ऐसे ये पुरुष थे, जिनका अभी हमने स्मरण किया।

दुःखितों की सेवा का ईश्वर-उपासना के तौर पर अपने शब्दों से और अपनी कृति से विश्व को सन्देश देने वाला ईसामसीह से बढ़ कर कोई नहीं। इसके पहले महात्मा गौतम बुद्ध ने इसकी प्रेरणा उससे भी अधिक गहरे रूप में भारत को दी थी—करुणा की प्रेरणा, जिसकी लपेट में मानव के साथ प्राणियों को भी स्थान मिला था। निस्संशय वह प्रेरणा बहुत गहरी थी। लेकिन जिसे हम प्रत्यक्ष मानव सेवा का नाम आजकल देते हैं, उस कल्पना का विशेष रूप से, व्यापक रूप से आविर्भाव ईसामसीह के शिक्षण में होता है। जहाँ तक मैं समझा हूँ, ईसामसीह अद्वैती ही था—भले ही उस दार्शनिक अर्थ में न हो, जिस अर्थ में शंकर अद्वैती थे। लेकिन 'अमृतस्य पुत्र,' अमृत के पुत्र, परमात्मा के पुत्र यह संज्ञा पिता पुत्र का अभेद मान कर उपनिषदों में दी थी। वह वेदों में भी दी थी, वही भाषा ईसामसीह साक्षात् बोलते थे और उस जमाने के लोग इस अद्वैत विचार को ईश्वर के विरुद्ध एक अपराध के तौर पर मानते थे। इसलिए वे ईसामसीह पर चिढ़े हुए थे और जैसे मन्सूर को अनलहक कहने के लिए पत्थर की मार खाकर मरना पड़ा, वैसे ईश्वर पुत्र और ईश्वर से अभिन्न होने के कारण ईसामसीह क्रूस पर चढ़ाये गये, ऐसा मैं मानता हूँ।

मैंने कहा दार्शनिकवाद हम छोड़ दें तो ईसामसीह की भूमिका तत्त्वतः अद्वैत वेदांत के अत्यंत निकट आती है, खास करके पाल की बाइबिल पर से यह बात विशेष स्पष्टरूपेण ध्यान में आती है। फिर भी जहाँ तक भारतीय वेदांत का ताल्लुक है, अद्वैत के साथ मानव-सेवा जोड़ने का काम सर्वप्रथम विवेकानंद ने किया, ऐसा ही मानना चाहिये। यह बहुत बड़ी चीज उन्होंने की, जिसके परिणामस्वरूप अद्वैत तत्त्वज्ञान तत्साधक विभिन्न उपासनाओं में और तत्प्रकाशक भूत-सेवा, तदंतर्गत मानव सेवा, इस प्रकार जीवन में एकरस विचार भारत को मिल गया। महात्मा गांधी ने उस मानव सेवा के विचार को और भी व्यापक बना करके उसके साथ उत्पादक शरीर-परिश्रम की भी आवश्यकता स्पष्ट की।

मैं जब इस सब पर सोचता हूँ, तो मुझे बड़ा आश्चर्य होता है। इतने ये नये नये विचारों के पहलू निकलते गये और फिर भी ये कुल के कुल भगवत् गीता में उपलब्ध होते हैं। भगवत् गीता में जो प्रतिभा, जो प्रज्ञा और जो प्रेम बिल्कुल एकरूप हुआ दीखता है, वह इस ग्रंथ को शायद दुनिया के कुल साहित्य में अद्वितीय स्थान देता है। और विवेकानंद भगवत् गीता के परम उपासक थे। मैं अभी गीता गौरव अधिक नहीं गाऊँगा। उसके तो दूध पर ही मैं पला हूँ। उसको मैं हमेशा ही याद करता हूँ। आज इसके गौरव कथन का लोभ मैं अधिक नहीं करूँगा। विवेकानंद ने भारत को जो दान दिया, उस दान का मैं स्मरण कर रहा हूँ, उनके शतसांवत्सरिक दिन के निमित्त से। एक तीस पचीस साल का युवक, परतंत्र हिंदुस्तान देश में जन्मा हुआ, एक परकीय भाषा में पारंगत होकर संन्यासी के रूप में शिकागो में विश्वधर्म परिषद में खड़ा होता है और भारत की तरफ से भारत के वेदांत की गर्जना सुनाता है। उस घटना से भारत की और हम लोगों की जो इज्जत दुनिया में हुई, उसको वे लोग नहीं भूल सकते, जो इस परतंत्र काल में जीवन-मृतप्राय भारतीय जनता को देख चुके हैं।

विवेकानंद ने गुरु-सेवा का भी एक आदर्श हमारे सामने रखा है, जो हमारे लिए नया नहीं। लेकिन इस जमाने के लिए, जब आलोचक तार्किक वृत्ति सब दूर फैली थी और है, बहुत जरूरी था। गोविंद पूज्यपाद और शंकराचार्य, निवृत्तिनाथ और ज्ञानदेव, ऐसी इस जमाने की जोड़ी है—रामकृष्ण और विवेकानंद। जैसे इधर असम में शंकरदेव और माधवदेव एक जोड़ी है, जिसका नाम यहाँ के हर घर में चलता है, वैसे ही यह आधुनिक जोड़ी है। आजकल जो शिक्षा स्कूल और कालेज में मिलती है, उसमें गुरु-शिष्य संबंध के लिए लगभग अवकाश ही नहीं रहा है, ऐसा कहना चाहिये। आज का शिक्षक लगभग पुस्तक के स्थान में आ गया है।

आत्मसमर्पणकारी बागियों के मुकदमों के लिए सुझाव और राज्य-सरकारों की प्रतिक्रिया

[भारत सरकार के गृहमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री ने श्री ढेबर भाई के जरिये राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश की सरकारों से विनोबाजी के समक्ष आत्मसमर्पण करने वाले बागियों के खिलाफ जो मुकदमे चल रहे हैं, उनके बारे में चर्चा की। फिर श्री ढेबर भाई ने जो सुझाव इन तीन राज्य-सरकारों के सामने रखे और उन पर सरकारों ने जो उत्तर दिया, वह यहाँ दिया जा रहा है। —सं०]

श्री ढेबर भाई के सुझाव	राजस्थान सरकारकी प्रतिक्रिया	मध्य प्रदेश सरकारकी प्रतिक्रिया	उत्तर प्रदेश सरकारकी प्रतिक्रिया
(१) २० में से १८ बंदी, जिन्होंने विनोबाजी के समक्ष आत्मसमर्पण किया था, आगरा जिला-जेल में हैं और शेष २ मध्यप्रदेश में हैं। अगर सब बंदियों को एक साथ रखा जाय, तो इससे संबंधित सबको सुविधा होगी। यह 'जाब्ता फौजदारी' की धारा १७७ के अंतर्गत हो सकता है।	(१) संभव नहीं है। जाब्ता फौजदारी की धारा १७७ के अनुसार स्थानीय न्यायालय के अधिकार क्षेत्र किया गया अभियोग भी साधारणतया जाँच और मुकदमा उसी न्यायालय में चलना चाहिए। इस मामले में कुछ कठिनाइयाँ पैदा होंगी।	(१) कानूनी और प्रशासकीय दृष्टि से यह संभव नहीं है।	(१) ४७ मुकदमों में से केवल ७ मुकदमे, जिनमें १० बागी सम्मिलित हैं, न्यायालय में गये हैं। आगरा में मुकदमों की संयुक्त कार्रवाई करना कानूनी दृष्टि से संभव नहीं है। केवल सुप्रीम कोर्ट को अधिकार है कि वह एक राज्य से दूसरे राज्य में मुकदमों का तबादला कर सकता है और वह भी किन्हीं खास परिस्थितियों में ही।
(२) अगर ऐसा संभव न हो, तो अभियुक्तों पर एक राज्य में मुकदमे की समाप्ति पर ही दूसरे राज्यों में मुकदमे शुरू किये जायँ।	(२) राजस्थान-सरकार ने सुझाव को मंजूर किया।	(२) म० प्र० सरकार ने सुझाव को मंजूर किया।	(२) इस सुझावका कोई खास उत्तर नहीं दिया गया।
(३) सब मुकदमों में शिनाख्ती की कार्रवाई आगरा में ही की जाय।	(३) राजस्थान सरकार ने सुझाव को मंजूर किया।	(३) विनोबाजी के सामने आत्म-समर्पित बागियों के खिलाफ कोई शिनाख्त की कार्रवाई नहीं की जा रही है।	(३) उत्तर प्रदेश सरकार को इस बात का कोई एतराज नहीं है कि शिनाख्ती की कार्रवाई एक ही राज्य में की जाय। उ० प्र० पुलिस के इन्स्पेक्टर जनरल, राजस्थान और म० प्र० के इन्स्पेक्टर जनरलों से इस संबंध में विस्तार से चर्चा करेंगे।
(४) मुकदमों में अनावश्यक विलम्ब से बचा जाय।	(४) इस सुझाव पर कोई कमेंट–प्रतिक्रिया–नहीं। फिर भी इस मामले पर दो रायें नहीं हो सकती।	(४) यह सुझाव मंजूर है।	(४) राज्य सरकार ने ऐसे कदम उठाये हैं, जिनसे बचे हुए मुकदमों पर त्वरित कार्रवाई हो सके। सब मुकदमों के लिए विशेष न्यायाधीश और विशेष सला-हकार नियुक्त करने का प्रश्न राज्य सरकार के सामने विशेष रूप से विचाराधीन है।
(५) जब किसी अभियुक्त को लम्बे समय की कैद मिलती है और 'अपील' करने पर फैसला बहाल रखा गया, तो साधारण रूप से दूसरे मुकदमे नहीं चलाये जाने चाहिए।	(५) संभव नहीं। कानून को अपने कायदे के मुताबिक काम करना चाहिए। अगर अभियुक्त को किसी मुकदमे में सजा हुई और अपील में सजा बहाल रखी गयी, तो यह कोई खास आधार नहीं है कि इसके कारण अन्य मुकदमों पर कार्रवाई न की जाय। यह संभव नहीं कि अपील के फैसले का इंतजार किया जाय, जो किसी खास मुकदमे में लम्बा समय भी ले सकता है।	(५) मध्य प्रदेश में मुकदमों की कार्रवाई काफी तेजी से की जा रही है और २४ मुकदमे अब तक समाप्त हो चुके हैं। अब केवल ९ मुकदमे बचे हैं, जिसमें १० बागी सम्मिलित हैं। राज्य सर-कार ने श्री ढेबर भाई द्वारा सुझाया हुआ पाँचवाँ सुझाव पहले ही मंजूर कर लिया और उसके अनुसार अमल किया जा रहा है।	(५) राज्य-सरकार केवल इस बात से सहमत नहीं है कि उन मुकदमों को वापस ले लिया जाय, जिन पर मध्य प्रदेश में पहले सजा मिल चुकी हो। अगर प्राणदण्ड अथवा आजीवन कारावास की सजा अपील के बाद भी बहाल रहती है, तो राज्य-सरकार, ऐसे अभियुक्तों पर पुनः मुकदमे नहीं चलायेगी। इस सुझाव से सहमत नहीं है कि जिनको ७ साल की सजा मिली हो, उनके खिलाफ अन्य मुकदमे नहीं चलाये जाने चाहिए।
(६) बरी किये गये अभियुक्तों के खिलाफ सामान्यतया अपील दायर नहीं की जानी चाहिए।	(६) बरी किये गये अभियुक्तों के खिलाफ मुकदमा चलाना मुकदमे के गुणावगुण पर निर्भर है।	(६) राज्य-सरकार बरी अभियुक्तों पर अपील नहीं करती। केवल वैसे ही मुकदमों पर अपील की जाती है, जिसमें फैसले कानून के विकृत रूप में होते हैं, अथवा उनसे न्याय मिलने में नाकामयाबी होती है।	(६) बरी किये गये अभियुक्तों पर तभी पुनः मुकदमा दायर किया जायगा, जब कि स्पष्टतः न्याय को ताक पर रख दिया गया हो। वैसे साधारणतया बरी किये हुए अभियुक्तों पर अपील नहीं दायर की जाती।

पुस्तक की मदद मिलती है, वैसे शिक्षक की मदद मिलती है।

गुरु दूसरी ही वस्तु है। वह गुरु-शिष्य की भावना जो प्राचीन गुरुकुलों में थी, अब एक स्मरणीय वस्तु रह गई है। लेकिन उसका उत्कट स्वरूप रामकृष्ण और विवेकानंद के अन्योन्य संबंध में हमको देखने को मिलता है।

विवेकानंद जाहिर ही प्रचारक थे। जैसे सैंट पाल में हमको आवेश दीखता है, *वैसे इनमें भी दीखता है। लेकिन इस* आवेश के बावजूद जैसे सैंट पाल वैसे विवेकानंद समत्व खोये हुए नहीं थे, अंतस्थल में समत्व को रखे हुए थे। एक अद्वैती के लिए इसमें आश्चर्य नहीं; क्योंकि जो समत्व खोता है, वह अद्वैत ही खोता है। लेकिन अद्वैत में आवेश भी आ सकता है, यह उधर सैंट पाल *ने दिखा दिया, इधर शंकराचार्य ने* दिखा दिया और इस जमाने में विवेकानंद ने दिखा दिया। यह आवेश केवल शब्दा-वेश नहीं, कोई एकांगी कल्पनावेश नहीं, वह भगवतावेश है। इस आवेश का प्रवेश जिसके जीवन में हुआ, उसका कुल जीवन भावना भावित होता है और उसको कठोर परिश्रम की कोई थकान महसूस नहीं *होती। महापुरुष का स्मरण करने में* पावन आनंद मिलता है। लेकिन उसका हृदय में ही समावेश करके यहाँ अधिक *विस्तार में नहीं करूँगा।*

[पड़ाव : पाउजुरीपारा, जि० गोलपारा
१४ अगस्त, '६२]

सर्वं जगत् सूक्तिः जीवनं सत्य शोधनम्

भूदानयज्ञ

लोकनागरी लिपि *

त्याग से सर्वोत्तम भोग

वीज्ञान के अीस युग में परस्पर सम्बंधबद्ध रहे हैं। राष्ट्रों की मर्यादाअें टूट रही हैं। अीस तरह जहां बुद्धी का व्यापक प्रसार हो रहा है, वहां हम व्यक्तीगत मालकीयत से चीपके रहें, तो ठीक न होगा। अीसलीअे हमें प्रेम, अुत्साह और आनन्द से व्यापक बनने के लीअे तैयार होना चाहीअे। त्याग की अीतनी तैयारी करेंगे, तो अुससे सबका भोग अच्छा सधेगा। भोग का सर्वोत्तम साधन त्याग है। अगर समाज त्याग-परायण बने, तो अुसका भोग सर्वांगसुंदर सधेगा। नहीं तो कुछ लोग भोग भोगते रहेंगे और दूसरे क्षीण होंगे। दोनों दुखी होंगे, खाने वाले भी सुखी नहीं हो सकते। नजदीक कोअी मनुष्य चील्ला रहा हो, तो खाने में क्या सुख है? अीसलीअे अगर समाज को सर्वांगसुंदर भोग चाहीअे, तो वह तभी मील सकता है, जब व्यक्ती त्याग की तालीम पायेगा। हम आपको त्याग सीखा कर संन्यासी नहीं, बल्की अुत्तम भोगी बनाना चाहते हैं। अुत्तम भोग चाहीअे, तो वह त्याग के जरीये ही सधेगा। घर-घर बहनें बच्चों के लीअे त्याग ही कर रही हैं, अीसीलीअे परीवार में आनंद है। जो आप घर में कर रहे हैं, वही गांव के लीअे करीजीये, अीतना ही हम कहना चाहते हैं।

(कल्लरा, कोट्टायम
३-५-'५७) —वीनोबा

* लिपि-संकेत : ि = ी, े = ै, ख = छ संयुक्ताक्षर हलंत चिह्न से।

९ सितम्बर को जिनकी पुण्यतिथि है

कर्मयोगी श्री किशोरलालभाई मश्रूवाला

गोपालकृष्ण मल्लिक

प्रखर विचार-शक्ति, अविरत कर्मयोग और निर्मल चारित्रिक गुणों से जिन्होंने देश, काल और समाज को प्रभावित किया, उसी श्रेष्ठतम विमल विभूति की ९ सितम्बर को पुण्यतिथि है। गांधी-सूर्य के उस तपते तेजपुंज को यद्यपि प्रायः हम भूल चुके हैं, फिर भी वे कभी भूले भुलाये नहीं जा सकते! दादा (दादा धर्माधिकारीजी), जिनकी आँखें उनके स्मरण मात्र से भीग आतीं, उस दिन उनके मुँह से अनायास निकल पड़ा—भाग्य इस युग का कि ऐसे देवदूत पृथ्वी पर उतर आये, किन्तु दुर्भाग्य कि मानव-चरित्र के इस उज्ज्वलतम तेजपुंज के श्रेष्ठतम जीवन और चरित्र की ओर बहुत ध्यान नहीं दिया गया—और दादा शून्याकाश की ओर एक बार गंभीरता से निहारते हुए अत्यधिक गंभीर होकर आगे बढ़ने लगे।

विनोबा ने जिन्हें बुद्ध की कोटि का कहा और जिनके जीवन की उपमा उनकी मिसालों में बार-बार अनायास उतर आती; बापू ने जिनके जीवन को पवित्र गंगा-सा परिशुद्ध, निर्मूढ़ तथा ग्रहणीय माना, जिनके विचार को अकाट्य और ग्रंथों को शास्त्र-सा प्रमाणित माना; उनके जीवन और चरित्र का पुण्य स्मरण आज करना कहीं अधिक योग्य होगा।

आज से ११ वर्ष पूर्व उनका देहावसान हुआ, जो बापू के बाद बापू-परिवार का सबसे अधिक प्रेम करने वाले व्यक्ति थे। स्नेह के अकाल के इस संकटपूर्ण युग में अपने समस्त प्यार से स्नेह करने वाले ऐसे प्रेमवान व्यक्ति का स्मरण हुए बिना रह नहीं सकता। उनके जीवन और चरित्र के मूल में जो निःस्पृहता, सत्यनिष्ठा और सामुदायिक श्रेय की चिंता थी, वह हर व्यक्ति के हृदय को स्पर्श किये बिना नहीं रहती—वह चाहे श्रद्धालु हो, या अश्रद्धालु।

नैतिक गुण और सत्कर्म जीवन-व्यवहार के द्वारा वे चरित्र-गठन के प्रबल आग्रही थे। साहित्य, संगीत और कला तथा सुविधा के नाम पर भी विलासी वृत्तियों का अनुशीलन उन्हें भाता नहीं था और वे मानते थे कि सुहावने एवं आकर्षक "ललितों" के नाम पर मर्यादा को तोड़ने का यत्न किया गया, तो समाज के शरीर और मन के आरोग्य को हानि पहुँचे बिना नहीं रहेगी।

गांधीजी की हत्या के बाद "हरिजन" पत्रों के सम्पादन की जिम्मेदारी उन पर आयी, तो वे अपनी संपूर्ण शक्ति से गांधीजी द्वारा प्रतिष्ठित आदर्श और कार्यक्रम की विशद व्याख्या में डूब गये। सामान्य चित्त पर भी अच्छी तरह अंकित कर देने वाले प्रामाणिक भाष्यकार और स्मृतिकार के रूप में वे पहले ही प्रतिष्ठा प्राप्त कर चुके थे।

पर उनकी शरीर-शक्ति ऐसी नहीं थी कि इस बड़ी जिम्मेदारी के गुरुतर भार को ढोने में समर्थ हो। अनेक लोगों को शंका भी हुई, किन्तु इन्होंने "राम-भरोसे" इस गुरुतर भार को उठा लिया और लिखा—"किसी भी पत्र का सम्पादक बन कर उसे चलाने का उत्साह मुझमें नहीं है। परन्तु गांधीजी ने मुझ पर जो विश्वास किया, जो प्रेम मुझ पर बरसाया, वह ऋण अपनी सेवा द्वारा उनके रहते मैं पूरी तरह से अदा नहीं कर सका। मेरा यह दुर्भाग्य मुझे सदा दुःख देता रहता है और उसने मुझे इस भार को उठाने से इन्कार करने से रोका है। मैं इन्कार कर दूँ और नवजीवन कार्यालय को संपादन की दूसरी संतोषजनक व्यवस्था के अभाव में गांधीजी का पत्र बंद करने का निर्णय करना पड़े; तो यह मेरे लिए लज्जा की बात होगी।" ऐसे थे वे कृतज्ञ और विनम्र पुरुष!

"हरिजन" पत्रों का सम्पादन करते हुए उन्होंने गांधीजी के विचारों, भावनाओं और आदर्शों की व्याख्या इतनी यथार्थता तथा प्रभावपूर्ण ढंग से की कि कितने ही लोग यह कहने लगे, मानो बापू उनके हृदय में बैठ कर ही उनसे यह सब लिखवा रहे हों! किन्तु व्यापक और गहन चिंतन एवं गंभीर विचार-शक्ति उनकी अपनी कमाई थी। अपने सम्पादकत्व में उन्होंने कांग्रेसी सरकारें, सरदार, जवाहरलालजी आदि किसी की भी मुरव्वत नहीं की और न किसी से वे दबे ही। रोम्याँ रोलाँ ने सत्याचरण के लिए प्याज छिलने की उपमा दी है। इसे छिलने में जैसे आँखों से आँसू टपकते हैं, वही बात सत्याचरण की ओर प्रेरित कराने की भी है। अतः किशोरलालभाई ने कटु सत्य कह करके अच्छे-अच्छों के दिमाग ठिकाने ला दिये। परन्तु विनय कभी नहीं छोड़ा, साथ ही सत्य के समान निष्ठुर बने रहे। न तो कभी तिल भर बात बढ़ा कर कही और न घटा कर ही।

आश्चर्य नहीं कि वे वास्तव में "हरिजन" पत्रों (तीन पत्रों का एकसाथ) सम्पादन करते हुए भी वे साधारण सेवक बने रहे। बापू के सत्य-अहिंसानिष्ठ जीवन-आदर्श एवं वे व्यवहार से जरा भी नहीं डिगे। दायित्व बहुत बड़ा सिर पर आया, जीवन-व्यवस्था पर गुरुतर भार भी आ गया; पर जीवन का साधारणत्व का सिलसिला नहीं बिगड़ा। पत्र अहमदाबाद से निकलते, पर सम्पादनकक्ष वहीं बजाजवाड़ी (वर्धा) में एक छोटा-सा कमरा, और वहीं लेटने, उठने-बैठने, सोने और लिखने आदि की चौकी। न एक कारकून, न एक टाइपिस्ट, न कोई चपरासी ही! सब कुछ ही थे। सब स्वयं करते—लेखों का सम्पादन, तीन-तीन पत्रों की सम्पादकीय तथा टिप्पणियाँ लिखना, फिर तत्संबंधी सारे पत्रों का जवाब देना, काटने-छाँटने, छापने, तौलने, बाँधने और डाक भेजने का काम, सब खुद ही करते! सहायता अनिवार्य होने पर ही सहायता लेते, अन्यथा सहायता देने को उत्सुक व्यक्ति को निराश ही होना पड़ता।

डाक-खर्च के अलावा "हरिजन" पत्रों पर उन्होंने कोई भी व्यवस्था-खर्च या किसी प्रकार के खर्च का भार नहीं डाला, यहाँ तक कि स्वयं के पारिवारिक खर्च का बोझ भी उस पर नहीं डाला, जो मात्र ७५ रुपये मासिक था।

रोग और व्याधियों ने आजीवन उनका पीछा नहीं छोड़ा। शारीरिक कष्ट प्रतिदिन इतना रहता कि देखने वाले घबड़ा जाते! साँस लेने के लिए हर घड़ी फेफड़ों के साथ कष्टमय संग्राम करना पड़ता और उसके साथ जूझते-जूझते शरीर ऐसा अकड़ जाता, मानो निर्जीव हो। प्राणघातक वेदनाओं के बीच क्या गुजरता होगा, कौन अनुभव कर सकता? निर्जीव-से सिमट कर बैठे होते! आक्रमण हल्का होते ही फिर उठ बैठते और हाथ में लेखनी थाम लेते या चरखा कातने लग जाते। हर दिन चार बजे तक सम्पादन संबंधी सारी डाक भेज कर ही चैन की साँस लेते। फिर थक कर पस्त हो ऐसे लेट जाते, जैसे अब उठेंगे ही नहीं! किन्तु क्षण भर में ही शक्ति पाकर उठ बैठते और आई डाक को देख कर उन सारे स्वजनों के पत्रों का जवाब लिखने लगते, जिनसे पत्राचार द्वारा विश्वकुटुम्ब के साथ उनका संबंध बँधा होता। पत्र लिखने वालों में साधारण जन, मजदूर, विद्यार्थी, क्लर्क, कुली, आफीसर और कर्मचारी तथा इनके अतिरिक्त गांधीजी की संस्थाओं के छोटे-बड़े असंख्य कार्यकर्ता, अनेक संपादक तथा संस्थावाले लोग होते, जो पत्राचार द्वारा अपनी समस्या तथा दुःख बता कर योग्य मार्गदर्शन की अपेक्षा रखते थे। उनका यह विशाल कुटुम्ब विश्व भर फैला हुआ था। ऐसी श्रेष्ठतम विभूति को उनकी पुण्यतिथि पर उनके चरित्र, श्रेष्ठ जीवन एवं गुणों का स्मरण कर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करें!

ऊजामा
या
अफ्रीकन समाजवाद का आधार

मूल लेखक : डॉ० जूलियस के० न्यरेरे अनुवादक : सुरेश राम

[डॉ० जूलियस के० न्यरेरे टांगानिका देश के राष्ट्रपिता माने जाते हैं। टांगानिका की प्रमुख राजनीतिक पार्टी, 'टांगानिका अफ्रीकन नेशनल यूनियन' ('टानू') के आप अध्यक्ष हैं। आप ही के नेतृत्व में टांगानिका ने ९ दिसम्बर १९६१ को स्वतंत्रता प्राप्त की। आगामी ९ दिसम्बर १९६२ को अपने नये विधान के अनुसार, अब वहाँ प्रजातंत्र की स्थापना होगी। 'टानू' ने इस प्रजातंत्र के प्रथम राष्ट्रपति के लिए डॉ० जूलियस के० न्यरेरे का ही नाम पेश किया है। निश्चय ही आप उस पद को सुशोभित करेंगे।

डॉ० जूलियस ने एडिनबरा विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा प्राप्त की है। गत ५ जुलाई को वहाँ से आपको 'ऑनरेरी डाक्ट्रेट' की पदवी से विभूषित किया गया। डॉ० जूलियस एक मौलिक और स्वतंत्र विचारक हैं। उनके एक सुप्रसिद्ध निबन्ध का अनुवाद करके विश्वशांति-सेना केन्द्र, दारेसलाम से श्री सुरेश राम ने हमारे पास भेजा है, जिसे हम अपने पाठकों के मनन और चिन्तन के लिए यहाँ दे रहे हैं। —सम्पादक]

समाजवाद भी—लोकतंत्र की तरह—एक मानसिक मनोवृत्ति है। एक समाजवादी समाज में, *समाजवादी मानसिक मनोवृत्ति की ही जरूरत है,* न कि एक विशेष राजनीतिक ढाँचे से चिपके रहने की। इस मनोवृत्ति के बिना यह यकीन नहीं हो सकता कि लोग एक-दूसरे के सुख-दुःख की चिन्ता करेंगे।

इस निबन्ध का उद्देश्य यह है कि उस मनोवृत्ति की जाँच की जाये। हम यहाँ उन संस्थाओं या संगठनों पर विचार नहीं करेंगे, जिनके द्वारा समाजवाद को एक आधुनिक समाज में लागू किया जा सकता है।

जैसे समाज के अन्दर वैसे ही व्यक्ति के अन्दर, मानसिक मनोवृत्ति ही वह *चीज है जो समाजवादी को गैर-समाजवादी* से अलग करती है। सम्पत्ति रखने या न रखने से उसका कोई वास्ता नहीं है। भिखमंगे और फटेहाल लोग सम्भावित पूंजीवादी हो सकते हैं—अपने साथी इन्सान के शोषक या नोचनहार। उसी तरह एक करोड़पति भी समाजवादी हो सकता है। वह अपने धन-दौलत का मूल्य इसीलिए लगाता हो कि इसकी मदद से अपने साथी इन्सान की कुछ सेवा कर सकेगा। लेकिन जो आदमी अपनी सम्पत्ति का उपयोग अपने किसी भी साथी पर आधिपत्य रखने के लिए करता है, तो वह पूंजीवादी है और वह आदमी भी पूंजीवादी है, जो ऐसा करने की मन ही मन तमन्ना रखता हो, चाहे आज वह भले लाचार हो।

मैंने कहा है कि एक करोड़पति आदमी समाजवादी हो सकता है। लेकिन समाजवादी करोड़पति जैसा अनुभव विरले ही दीखने में आता है। सच तो यह है कि दोनों शब्द ही एक-दूसरे के विरोधी हैं। किसी समाज में करोड़पतियों का होना उसकी खुशहाली का सबूत नहीं है। वे तो टांगानिका जैसे बहुत गरीब देश द्वारा भी उसी तरह पैदा किये जा सकते हैं जैसे अमरीका जैसे धनवान देश द्वारा; क्योंकि किसी देश में उत्पादन की कुशलता या सम्पत्ति की मात्रा पर करोड़पतियों का होना निर्भर नहीं करता, बल्कि वह करता है, उत्पादन के बेमेल व असमान बँटवारे पर। एक समाजवादी समाज और पूंजीवादी समाज में बुनियादी फर्क सम्पत्ति के उत्पादन के तरीकों का नहीं, बल्कि सम्पत्ति के बँटवारे की विधि का है। इसलिए यद्यपि एक करोड़पति आदमी एक *अच्छा समाजवादी हो सकता है,* लेकिन वह समाजवादी समाज की देन नहीं हो सकता।

चूँकि किसी समाज की सम्पन्नता पर करोड़पतियों का होना-न-होना निर्भर नहीं करता है, समाजशास्त्रियों को इस बात में दिलचस्पी हो सकती है कि वे यह देखें और मालूम करें कि अफ्रीका के हमारे समाजों में वास्तव में, करोड़पति क्यों पैदा नहीं हुए! इससे तो इन्कार नहीं किया जा सकता कि हमारे *पास इतनी दौलत तो थी ही कि कुछ* करोड़पति पैदा हो जाते। मेरा ख्याल है कि उन्हें यह पता चलेगा कि इसका कारण यही है *कि परम्परागत अफ्रीकी समाज* का संगठन—जो सम्पत्ति वह पैदा करता या उसका बँटवारा—इस तरह का था कि *एक-दूसरे के शोषण की गुंजाइश ही नहीं* थी। वे यह भी कह सकते हैं कि इसका नतीजा यह हुआ कि अफ्रीका में जमीन के मालिकों का ऐसा कोई वर्ग नहीं पैदा हो सका, जिसे काम करने से पूरी फुरसत रहती हो और जो दूसरी चीजों में दिलचस्पी ले सके। और इस वास्ते अफ्रीकी समाज में कला या विज्ञान की ऐसी कृतियाँ नहीं तैयार हो सकीं, जिनकी पूंजीवादी समाज में इफरात है और जिस पर उसे बड़ा नाज है। लेकिन कला की कृतियाँ और विज्ञान के चमत्कार दिमाग की पैदावार है और दिमाग, जमीन की तरह, इन्सान को मिली ईश्वर की देनों में से एक देन है। और मैं यह नहीं मान सकता कि ईश्वर इतना लापरवाह होगा कि उसने अपनी एक देन का उपयोग *दूसरी देन के दुरुपयोग पर निर्भर कर* रखा हो।

पूंजीवाद के भक्त यह दावा करते हैं कि करोड़पति की दौलत उसकी लायकी या हिम्मत का जायज मुआवजा है। लेकिन असलियत इस दावे का समर्थन नहीं करती। करोड़पति की दौलत उसकी अपनी हिम्मत या योग्यताओं पर उतनी ही कम निर्भर करती है, जितनी कि एक सामंतशाही सम्राट की सत्ता उसकी अपनी कोशिशों, हिम्मत या दिमाग पर। दोनों ही दूसरे लोगों की योग्यताओं और हिम्मत का उपयोग करने वाले और शोषक हैं। चाहे कोई बहुत विशिष्ट प्रतिभा का और मेहनती करोड़पति क्यों न हो, उसकी बुद्धि, हिम्मत और मेहनत में समाज के अन्य सदस्यों की बुद्धि, हिम्मत और मेहनत से अपेक्षाकृत इतना होना सम्भव ही नहीं है जितना उनके 'पुरस्कारों' में आज मौजूद है। जब किसी समाज में एक आदमी, चाहे वह कितना ही मेहनती और होशियार क्यों न हो, इतना ज्यादा 'पुरस्कार' जमा कर सकता है, जितना उसके एक हजार साथी आपस में मिल कर भी नहीं कर सकते, तो जरूर उस समाज में कोई-न-कोई दोष है।

सत्ता और प्रतिष्ठा प्राप्त करने के उद्देश्य से संग्रह करना असमाजवादी है। संग्रहप्रधान समाज में सम्पत्ति जिनके पास रहती है, उनका पतन ही करती है। वह उनके अन्दर यह लालसा जगाती रहती है कि किस तरह अपने साथियों के मुकाबले ज्यादा आराम से रहें, ज्यादा अच्छा पहनें और हर तरह से उनसे बाजी मार लें! वे यह महसूस करने लगते हैं कि अपने पड़ोसियों से जितनी ज्यादा ऊँचाई पर हो सके रहना चाहिये। उनकी अपनी सुख-सुविधाओं और बाकी समाज के तुलनात्मक दुःख-दुविधाओं में जो जबरदस्त दीवार खड़ी हो जाती है, वे उसे अपनी सम्पत्ति के उपभोग के लिए जरूरी मानते हैं। और फिर इस तरह व्यक्तिगत प्रतियोगिता का सिलसिला चलने लगता है। और यह असामाजिक है, एकदम असामाजिक।

व्यक्तिगत सम्पत्ति के संग्रह के असामाजिक परिणाम तो आते ही हैं। लेकिन इसके अलावा बात यह है कि संग्रह की आकांक्षा मात्र को ही सामाजिक प्रणाली के प्रति 'अविश्वास' का वोट मानना चाहिये, क्योंकि जब किसी समाज का संगठन इस तरह का हो कि वह अपने व्यक्तियों की परवाह करता हो तो किसी व्यक्ति को—बशर्ते कि वह काम करने को तैयार हो—यह फिकर नहीं होनी चाहिये कि अगर आज मैं दौलत बटोर कर नहीं रखता हूँ, तो कल मेरी क्या हालत होगी! *समाज को खुद ही उसकी, उसकी विधवा* की, उसके अनाथों की परवरिश करनी चाहिये। और ठीक यही वह चीज है, *जिसे करने में परम्परागत अफ्रीकन समाज* कामयाब हो सका। अफ्रीकन समाज में 'अमीर' और 'गरीब', दोनों ही व्यक्ति हर तरह से सुरक्षित थे। प्राकृतिक घटनाओं के कारण अगर अकाल पड़ा तो वह अकाल सभी पर, 'गरीब' हो चाहे 'अमीर', पड़ता था। कोई भी क्यों न हो, व्यक्तिगत सम्पत्ति उसके पास न होने के कारण, उसे खाने या आत्म-सम्मान के लिए भीख नहीं मांगनी पड़ती थी। *जिस समाज या समुदाय का वह सदस्य होता था, उसकी सम्पत्ति का उसे भरोसा रहता* था। यह समाजवाद था। यह समाजवाद है। संग्रहप्रधान या अपहरणकारी समाजवाद जैसी कोई चीज नहीं हो सकती, क्योंकि यह फिर एक शब्द-विरोध हो गया। समाजवाद मूलतः वितरणप्रधान है। *उसका काम यह देखना है* कि बोने वालों को अपनी बुआई का उचित हिस्सा कटनी में मिल जाता है या नहीं।

सम्पत्ति के उत्पादन के लिए, चाहे पुराने तरीकों से चाहे नये से, तीन चीजें चाहिये। सबसे पहले, जमीन। ईश्वर ने हमें जमीन दी है और जमीन से ही हमको वे सब चीजें मिलती हैं, जिनको नई शक्ल देकर हम अपनी जरूरतें पूरी करते हैं। दूसरी चीज है, औजार। आम तजुर्बे से हम जान गये गये हैं कि औजारों से मदद मिलती है। इसलिए हम कुदाली फावड़ा, कुल्हाड़ी, या आधुनिक कारखाने या ट्रैक्टर बनाते हैं, जिनकी मदद से सम्पत्ति पैदा कर अपनी जरूरत की चीजें बना सकें। और तीसरी है, इन्सान की मेहनत या श्रम। यह जानने के लिए कि केवल जमीन या कुदाली से सम्पत्ति नहीं पैदा होती है, हमको कार्ल मार्क्स या आदम स्मिथ की रचनाएँ पढ़ने की जरूरत नहीं है। और यह जानने के लिए कि जमीन न तो श्रमिक पैदा करता है न जमीन। हमको अर्थशास्त्र में डीग्रियाँ लेने की भी जरूरत नहीं है। जमीन तो इन्सान को दी हुई भगवान की देन है—

और वह हमेशा मौजूद है। लेकिन हम यह जरूर जानते हैं और अर्थशास्त्र की बिना किसी डिग्रियों के ही जानते हैं कि कुल्हाड़ी और हल श्रमिक या मजदूर ने बनाये हैं। हमारे कुछ जो बहुत ज्यादा नजाकतपसंद मित्र हैं, उनकी शान निराली है। उन्हें तो बहुत कड़ी बौद्धिक ट्रेनिंग में से सिर्फ यह जानने के लिए गुजरना पड़ता है कि पत्थर की कुल्हाड़ियाँ प्राचीन युग 'प्रारम्भिक मानव' ने बनायी थीं। और इसलिए बनायी थीं, ताकि वह ताजे मारे हुए जानवर की खाल को आसानी से साफ कर सके। यह जानवर भी उसने अपनी उस लकड़ी से मारा था, जिसे उसने खुद तैयार किया था।

परम्परागत अफ्रीकी समाज में हर आदमी मेहनत का काम करता था। समुदाय के लिए रोजी कमाने का कोई दूसरा तरीका था ही नहीं। समुदाय में जो बड़ा या बुजुर्ग होता, वह कुछ नहीं करता था—बिना काम किये मौजें उड़ाता मालूम पड़ता था और जिसकी खातिर हर कोई काम करता दीखता था। लेकिन वह अपनी जवानी में, वास्तव में, बहुत सख्त मेहनत कर चुका था। अब जिस सम्पत्ति का वह मालिक दीखता था, वह व्यक्तिगत रूप से उसकी अपनी नहीं थी। वह उसकी अपनी इन्हीं बातों में थी कि जिस समुदाय ने इस सम्पत्ति को पैदा किया है, उसीका वह बुजुर्ग है। वह उसका सरपरस्त था। सम्पत्ति मात्र से उसको न कोई सत्ता मिल जाती थी, न प्रतिष्ठा। जवान जो उसके प्रति आदर रखते थे, वह उसका अपना होता था, मगर इसी कारण से कि वह उनसे उमर में बड़ा था और उसने समुदाय की सेवा ज्यादा लम्बे अर्से तक की थी। और हमारे समाज में 'गरीब' बुजुर्ग की भी उतनी ही प्रतिष्ठा थी, जितनी 'अमीर' बुजुर्ग की।

मैंने जो अभी कहा कि परम्परागत अफ्रीकी समाज में हर आदमी श्रमिक होता था, तो "श्रमिक" का उपयोग केवल "मालिक" (एम्प्लोयर) के विरोध में नहीं किया, बल्कि 'मटरगश्ती करने वाले' या 'आलसी' के भी विरोध में किया। हमारे समाज की एक ऐसी भी समाजवादी सफलता यह थी कि हर आदमी अपने को सुरक्षित समझता था और व्यापक आतिथ्य सत्कार पर भरोसा या इत्मीनान कर सकता था। लेकिन लोग आजकल यह प्रायः ही भूल जाते हैं कि इस समाजवादी सफलता का आधार क्या था। वह यह है कि बच्चों और बूढ़ों को छोड़ कर, समाज का हर आदमी सम्पत्ति के उत्पादन में अपने श्रम का जायज हिस्सा जरूर देता था। परम्परागत अफ्रीकी समाज में पूँजीवादी या भूमिवान शोषक जैसी कोई चीज ही नहीं थी। यही नहीं, बल्कि वह दूसरे ढंग का आधुनिक रक्त-शोषक भी नहीं था—मटरगश्ती करने वाला, या काहिल, जो समाज का आतिथ्य अपने 'अधिकार' के तौर पर स्वीकार करता है, मगर एवज में कुछ भी नहीं देता! पूँजीवादी शोषण तो असम्भव ही था। मटरगश्ती करना अकाल्पनिक निर्लज्जता थी!

(क्रमशः)

कश्मीर में सर्वोदय-कार्य

सन् १९५९ में जम्मू और कश्मीर-पदयात्रा के समय वहाँ श्री विनोबाजी के १२१ पड़ाव रहे। उनकी वह यात्रा २२ मई से २० सितम्बर १९५९ तक चली। कश्मीर के सर्वोदय-कार्य का लेखा जोखा लेते समय २६ मई '५९ का दिन विशेष स्मरणीय रहेगा। उस दिन विनोबा के हाथों तहसील बसोली के कर्णगढ़ा ग्राम में "सर्वोदय आश्रम" का शिलान्यास हुआ। आश्रम के लिए ठाकुर रघुनाथ सिंह द्वारा उन्हें छः हजार रुपये का दान मिला।

१९५९ के अंत तक आश्रम में २००० रु० की लागत से दो-मंजिला एक मकान भी बन कर तैयार हो गया और १७ जनवरी १९६० को श्री सत्यम्भाई आश्रम का निरीक्षण व मार्गदर्शन करने वहाँ पहुँचे। उन्हीं के सुझाव पर कर्मठ कार्यकर्ता श्री शालिग्राम पाठक उसी वर्ष २४ जुलाई को कर्णगढ़ा पहुँच गये और अगले एक सप्ताह में तहसील बसोली के गाँवों में पदयात्रा करके उन्होंने ९४ सर्वोदय-पात्र रखवाये, ३ सर्वोदय मित्र बनाये और भूदान-पत्रिका के ३ ग्राहक भी बनाये।

लखनपुर में जम्मू-कश्मीर के प्रधान-मंत्री बख्शी गुलाम मुहम्मद ने २२ मई '५९ को विनोबा का स्वागत किया था। तब विनोबा ने कहा था—"हमने अखबारों में पढ़ा है कि यहाँ जमीन बाँटी गयी है और बाँटी जा रही है। लेकिन एक बात हमारे आने से पहले जाहिर हो गयी है कि जो जमीन सरकार की तरफ आयेगी, वह बेजमीनों को दी जायगी। यह एक बहुत बड़ा काम हुआ।" १४ मार्च, १९६० को कश्मीर असेम्बली में "भूदान-बिल" पास हो जाने से उस पर मुहर भी लग गयी।

चम्बल के बेहड़ों में बागियों ने विनोबा को आत्मसमर्पण किया। जिनके नाम से ही लोग आतंकित थे, ऐसे खूंखार बागियों ने, जिनके कंधे से कभी बन्दूक अलग नहीं होती थी, बन्दूकें फेंक कर शान्तिपूर्ण जीवन बिताने की शपथ ली। इस कार्य में मेजर जनरल यदुनाथ सिंह ने बहुत सहयोग दिया। श्री विनोबाजी की कश्मीर-यात्रा में भी उनका अपूर्व सहयोग रहा। जम्मू और कश्मीर में भूदान-आन्दोलन को आगे बढ़ाने का पूरा श्रेय उन्हें ही है। २ अगस्त १९६० को उनके निधन से अपूरणीय क्षति हुई।

कर्णगढ़ा के "सर्वोदय आश्रम" का श्री विनोबाजी द्वारा मई '५९ में ही उद्घाटन हुआ था। गाँव के श्मशान से २ २ सितम्बर, '६० तक आश्रम में अन्य मकान भी बन गये। उसमें खास बात यह रही कि हरएक मजदूर ने अपनी हाजिरी के दिन स्वयं बताये और उनके कथन पर पूरा विश्वास करके पैसे दिये गये। उसी वर्ष 'गांधी-जयन्ती' के अवसर पर अमृतसर के शांति सैनिक श्री ईश्वरानन्द सरस्वती की अध्यक्षता में आयोजित एक सभा में गाँव वालों ने यह प्रण किया—"हम कचहरी में मुकदमा नहीं लड़ेंगे।" आश्रम की लगभग डेढ़ एकड़ भूमि पर कृषि-कार्य भी शुरू हुआ और कर्णगढ़ा के दो शांति-सैनिकों ने इसमें सहयोग दिया।

श्री गांधी आश्रम शाखा कश्मीर ने कर्णगढ़ा आश्रम को ३ नवम्बर, '६० को उपकेन्द्र भी बना लिया। अगले मास वहाँ राज्य-सरकार की ओर से एक दवाखाना भी चालू हो गया और आश्रम में कोल्हू तथा सहकारी दूकान खोलने पर भी विचार किया गया। ग्रामीण बालकों के अध्ययन की कोई व्यवस्था न थी, अतएव श्री रघुनाथ सिंह और श्री शालिग्राम पाठक के प्रयत्न से कक्षा ६—७ तक का अध्यापन स्कूल भी १६ जून, '६१ कर्णगढ़ा में खुल गया।

कश्मीर में लोकसेवकों की संख्या भी अब बढ़ रही है। अक्टूबर '६१ में जगना, परोल, बसोली और बनी गाँवों के श्री ज्ञानचंद ठाकुर, श्री ओमप्रकाश गुप्त और श्री देशराज ठाकुर लोकसेवक बने थे। १८ मई '६२ को शांतिदेवी चन्देल (कर्णगढ़ा) और शान्तिदेवी रैना (बसोली) भी लोकसेवक बनीं। अकेली बसोली तहसील में नौ लोकसेवक हैं। शांति-सेना का कार्य भी वहाँ चल रहा है। १७ सितम्बर, '६० को ही कर्णगढ़ा के दो ग्रामीण शांति-सैनिक बने थे। गत वर्ष १८ अप्रैल, '६१ को तेरहवें सर्वोदय-सम्मेलन में, जो आन्ध्र प्रदेश के उगुदरू स्थान में हुआ था, जम्मू कश्मीर से तीन प्रतिनिधि सम्मिलित हुए थे।

कश्मीर में सर्वोदय की दृष्टि से कार्य करने के लिए अखिल भारत सर्व सेवा संघ की एक "कश्मीर-समिति" भी बनी है और उसके सदस्य ये हैं : सर्वश्री (१) सिद्धराज ढड्ढा, (२) ओमप्रकाश त्रिखा, अध्यक्ष, पंजाब सर्वोदय मंडल; (३) रामसुमेरभाई, श्री गांधी आश्रम, श्रीनगर; (४) सत्यम् भाई, प्रस्थान आश्रम, पठानकोट, (५) पूर्णचन्द्र जैन, मंत्री, अखिल भारत सर्व सेवा संघ; (६) रघुकुल तिलक, मेरठ और (७) अहद फातमी, संपादक, "भूदानतहरीक", काशी। श्री अहद फातमी ही उक्त समिति के संयोजक हैं।

सर्व सेवा संघ की "कश्मीर-समिति" कश्मीर में साहित्य प्रचार तथा सर्वोदय के अन्य रचनात्मक कामों के जरिए लोगों से सम्पर्क स्थापित करने के लिए प्रयत्नशील है। हर साल सर्दियों में कश्मीर से काफी संख्या में मजदूर पठानकोट, अमृतसर, दिल्ली आदि स्थानों में पहुँचते हैं। उन्हें काफी परेशानियाँ भुगतनी पड़ती हैं और उनका शोषण भी होता है। उनमें सेवा-कार्य के लिए "कश्मीर-समिति" सचेष्ट है और पठानकोट में श्री सत्यम्भाई की देखरेख में इस कार्य को संगठित किये जाने की योजना है। अमृतसर और दिल्ली में इस कार्य के लिए श्री अमरनाथ विद्यालंकार एम० पी० तथा श्री गोपीनाथ अमन उद्योगशील हैं।

[सर्वोदय प्रेस सर्विस, वाराणसी के सौजन्य से।]

गांधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी

[हांगकांग से "दी चायनीज स्टुडेंट वीकली" नामक पत्रिका प्रकाशित होती है। उसमें विनोबाजी के बारे में एक महत्त्वपूर्ण लेख प्रकाशित हुआ है। उसके कुछ अंश का अनुवाद यहाँ दिया जा रहा है।—सं०]

हिंदुस्तान में आप अक्सर ऐसी आकृति देख सकते हैं, जिसके पाँवों में जूता नहीं है, सिर पर किसी प्रकार की टोपी या पगड़ी नहीं है और जिसके शरीर पर मात्र लंगोटी और हाथ में एक लकड़ी है! ऐसा लगता है कि यह आकृति चलती ही चलती रहती है। यह गांधीजी की आकृति से मिलती-जुलती है, जिसने हिंदुस्तान को पराधीनता से मुक्त किया। गांधी अहिंसा का उपासक और आधुनिक संत माना जाता है। १९४८ की ३० जनवरी की शाम को उनकी हत्या कर दी गयी! फिर भी ऐसा लगता है कि गांधीजी की आत्मा आज भी हिंदुस्तानियों के हृदय में विराजमान है।

विनोबाजी गांधीजी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी हैं। उन्होंने भूदान-आंदोलन का आरंभ किया। वे निरंतर भूमिहीनों के लिए जमीन मांगते रहते हैं। उनमें और गांधीजी में थोड़ा ही अन्तर है। गांधीजी का आंदोलन विदेशी शासकों को शांतिपूर्ण तरीकों से अपना प्रभुत्व छोड़ने के लिए था, जब कि विनोबाजी भूमि-मालिकों को इस बात की शिक्षा दे रहे हैं कि वे प्रेम और करुणा के ईश्वरीय कानून को समझ कर भूमिहीनों के लिए अपनी जमीन का कुछ हिस्सा दें। दोनों की भावना एक ही है, बल्कि विनोबाजी गांधीजी के उत्तराधिकारी के रूप में नित्य निरंतर गरीब हिंदुस्तानियों की खुशहाली का काम करते हुए सम्पन्न और विपन्न वर्ग का भेद खतम कर रहे हैं।

विनोबाजी ६७ वर्ष के हैं। वह दुनिया के लिए आशा का केन्द्र हैं। हम भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि वे हमें प्रेम, शान्ति और प्रसन्नता के मार्ग पर ले जायें।

—युन हुन हुआ

रिहन्द बाँध : एक परिक्रमा

श्रीकृष्णदत्त भट्ट

कुलडोमरी पुराना गाँव है। उसमें कोई बारह मील लम्बे और बारह मील चौड़े इलाके के बीस टोले शामिल रहे हैं। बाँध बधने के पहले कुलडोमरी के इलाके में लगभग पाँच हजार लोग निवास करते थे।

आज यह गाँव पहले से बहुत छोटा हो गया है। उसका बहुत-सा भाग 'पन्त सागर' के गर्भ में समा गया है! यहाँ की जमीन जो बाँध के दायरे के भीतर डूब गयी, बहुत ही उपजाऊ थी। ग्रामवासियों से इस सम्बन्ध में जब चर्चा हुई और अपने सामने हमने कंकरीली-पथरीली, ऊँची-नीची, पहाड़ी जमीन देखी, तब उसे देखते हुए हमारे लिए इस बात पर विश्वास करना कठिन हो गया कि इसी की बगल में ऐसी बढ़िया जमीन थी, जिसमें सब कुछ पैदा होता था और खूब होता था।

लोग बोले, "आपको हमारी बातों पर विश्वास नहीं होता तो चलिये, थोड़ी ही दूर चल कर देख लीजिये! ८८० और ८९० फुट (ऊँचाई) के बीच की थोड़ी-सी जमीन अब भी डूब से बची है, आपको हमारी बात का विश्वास हो जायेगा!"

"ऐसा है क्या! तो हम उस जमीन को जरूर देखेंगे," ऐसा कह कर हम लोग सबेरे-सबेरे ही जीप से निकल पड़े। गाँव से थोड़ा आगे बढ़ते ही हम लोग खेतों के बीच से होते हुए कोई आध मील दूरी पर हरिप्रसाद के बगीचे में जा पहुँचे। 'पन्त सागर' हमारे सामने लहरा रहा था। एक खँडहर और उससे लगा बगीचा और एक कुआँ हमारी आँखों के आगे था। उस जमीन को देख कर हमें यह मानना

खँडहर बता रहे हैं, इमारत बुलंद थी

ही पड़ा कि अवश्य ही यह जमीन सोना उगलती रही होगी! और इस तरह की न मालूम कितनी हजार एकड़ उपजाऊ जमीन रिहन्द के गर्भ में समा चुकी है!

वहाँ से लौटते समय रास्ते में हमें कुछ 'गैरकानूनी' झोंपड़े दिखाई पड़े। पूछा तो पता चला कि यहाँ पर भी कुछ लोग अभी बसे हैं, हालाँकि उन्हें यहाँ से हट जाने की नोटिस दी जा चुकी है! उन लोगों से जब कहा कि भाई तुम्हें तो यह जमीन छोड़नी ही पड़ेगी, तो वे बोले, "मजबूरी में छोड़ेंगे ही, पर अभी जब तक साँस है, तब तक आस है!" उपजाऊ जमीन का मोह छोड़ कर अनउपजाऊ थोड़ी सी जमीन के प्रति उनका क्या आकर्षण हो सकता है! पेट की समस्या इन लोगों को लाचार किये हुए है कि ये यहाँ तब तक पड़े रहें, जब तक यह जमीन पानी में डूब नहीं जाती! सोचते हैं कि जितना मीठा उतना ही सही!

गाँव वालों से उनकी बाँध के पहले की स्थिति और आज की स्थिति के बारे में हम लोगों ने काफी प्रश्नोत्तर किये। सबका रोना एक-सा ही था—किसी की चार हल की खेती थी, हर चीज पैदा होती थी : चावल, गेहूँ, मटर आदि। बाग-बगीचे तो थे ही। तरह-तरह के फल अच्छी संख्या में पैदा होते थे। पर आज की हालत ऐसी है कि पेट भरने के ही लाले पड़े हैं और तो और, आज पानी पीने के भी लाले हैं! कुलडोमरी को ही लीजिये। यहाँ गाँव में कुल दो कुएँ हैं—एक कुआँ सरकार ने बनवाया है और एक कुएँ के लिए सरकार से थोड़ी सहायता मिली है। २०० परिवारों वाले इस गाँव के लिए दो कुओं से काम चलना भी बहुत मुश्किल है।

पशुओं को पानी पिलाने की भी समस्या बड़ी विकट है। जब मनुष्य के ही पानी पीने की मुश्किल है, तब पशुओं की बात कौन पूछे! पर पानी तो उन्हें भी चाहिए, इसलिए गाँव वाले पानी पिलाने के लिए पशुओं को 'पन्त सागर' पर ले जाते हैं। वहाँ पर कोई घाट तो बना हुआ है नहीं। जगह-जगह कीचड़ है और बहुत-से पशु पानी के लोभ में पड़ कर उस ब्राह्मण की भाँति अपने प्राण गँवा चुके हैं, जो सोने का कंकण लेने के लिए भूखे व्याघ्र के पेट में समा गया!

गाँव पर लौटते ही फिर अनेक भाइयों ने हम लोगों को घेर लिया, इनमें दरकार भाइयों का एक बड़ा दल भी था। उनकी स्त्रियों और पुरुषों, जवानों और बूढ़ों, बच्चों और बच्चियों को देख कर भारत माता की नंगी तसवीर आँखों के सामने आ खड़ी होती थी! बेचारों के पास लाज ढँकने के लिए चिथड़ों का भी टोटा है। ये आदिवासी भाई-बहन बाँस से ही अपनी जीविका चलाते रहे हैं। टोकरी, सूप, दौरी बना-बना कर अपना पेट पालते रहे हैं, पर अब तो इन बेचारों को बाँस भी मयस्सर नहीं! पहले जहाँ पर रहते थे, उस क्षेत्र में उन्हें बाँस भी काम भर को मिल जाते थे और मजदूरी भी। इनमें से प्रायः सभी के पास अपनी कोई जमीन नहीं थी, सबके सब भूमिहीन मजदूर बड़े-बड़े जमींदारों के यहाँ काम करके मजे में अपनी गुजर चलाते थे। आज न उन्हें बाँस मिलता है, न मजदूरी मिलती है, न खाना मिलता है, न पानी मिलता है!

जिनके पास चिथड़े भी नहीं हैं

पूछा, "तुम लोग पानी कहाँ से पीते हो?" बोले, "नदी से, नाले से, बुढ़ान से! कुएँ पर लोग हमें जाने नहीं देते। ऊँची जाति वाले हिंदू हमें अपने कुएँ पर पानी नहीं भरने देते! सरकारी कुएँ पर से भी हम तभी पानी भर पाते हैं, जब दूसरे लोग भर लेते हैं।"

जब उन लोगों से कहा गया कि तुम लोगों को पानी भरने में कोई बाधा नहीं डाल सकता, तो एक नौजवान गिड़गिड़ा कर बोला, "सरकार, सबको सुना कर कह दीजिये कि हम भी कुएँ से पानी भर सकते हैं!"

इन लोगों को बाँस दिलाने की उचित व्यवस्था कैसे हो, कहाँ से दिलाने जायँ और बाँस की दस्तकारी की शिक्षा की कैसी क्या व्यवस्था हो, इस बात पर हम लोग कुछ देर तक चर्चा करते रहे। इन्हें पाँच-पाँच बिस्वा जमीन निवास के लिए मिली है, पर उस ऊबड़-खाबड़ जमीन से ये साधनहीन लोग लाभ ही क्या उठा सकेंगे!

"क्या खाते-पीते हो तुम लोग?"—पूछने पर एक दरकार ने अपनी छोटी-सी पोटली खोल कर हमारे सामने रख दी। जानते हैं, उस पोटली में क्या था? उसमें थी जमीन पर उगने वाले चकवड़ नाम के पौधे की छोटी-छोटी गोल-गोल पत्तियाँ! अन्न के अभाव में उसी को उबाल कर नमक मिला कर ये लोग दिन काटते हैं!

दिन चढ़ने लगा था और हमें 'पन्त सागर' की परिक्रमा के लिए काफी लम्बा रास्ता पार करना था। बीच में जगह-जगह बरसाती नालों का खतरा भी सामने था, इसलिए हम लोग जल्दी ही अपनी यात्रा पर निकल पड़े। थोड़ा-बहुत पानी पड़ चुका था। कहीं-कहीं पर रास्ते खराब हो गये थे। अक्सर ही हमें सैकड़ों फुट ऊपर चढ़ना पड़ता, कभी नीचे उतरना पड़ता, कभी पानी में से होकर गुजरना पड़ता! एक जगह तो जब हम नाले के किनारे पहुँचे तो देखा कि एक पूरा पेड़ ही हमारा

ऐसे रास्ते हमने पार किये

रोके हुए हैं। जीप को किनारे खड़ा करके हम लोग वहाँ पहुँचे और अपनी पूरी ताकत लगा कर हमने उसे एक ओर इस तरह खड़ा कर दिया कि वापस लौटने पर दुबारा हमें फिर वही प्रक्रिया दोहरानी न पड़े।

रास्ते में जो गाँव पड़ते थे, हम लोग वहाँ उतर-उतर कर लोगों से मिलते थे। उनकी बाढ़ के पहले की स्थिति पर उनसे चर्चा करते थे और आज वे कैसे गुजर कर रहे हैं, उनकी मुख्य समस्याएँ क्या हैं, इस पर भी उनसे बातें करते थे। झोंपड़ियों के भीतर घुस कर हमने कई जगह यह भी पता लगाने की कोशिश की कि इन निवासियों की आर्थिक स्थिति कैसी, क्या है? औंडी में एक जगह एक झोंपड़ी के भीतर जब हम घुसने लगे, तो हमें बहुत ज्यादा झुकना पड़ा, क्योंकि उसका छप्पर बहुत ही नीचा था। हमारे साथी फोटोग्राफर साहब जैसे ही झुकने लगे, वैसे ही उनके सिर में बाँस का एक नुकीला कोना धँस गया, तो कुछ खून भी आ गया, चोट तो लगी ही। अभावोंवाली दुर्गन्ध, घर में से इन्हीं माँग कर थोड़ा पानी डाल कर हमने उसे धुलवाया और उनके सिर के घाव पर रख दिया।

मकान के भीतर मिट्टी की कोठरियाँ थीं, जिन पर ऊपर से छप्पर पड़ा हुआ था। भीतर घना अंधकार था। इधर-उधर देखा तो सब खाली-खाली-सा ही नजर आया। दो-चार चिथड़े, दो-चार छोटे-मोटे बर्तन और थोड़ा-सा अन्न! बस, यही तो थी उस परिवार की गृहस्थी! खाना पक रहा था। जमीन में गड्ढा खोद कर रोटियाँ रखने के लिए जगह बनी थी। मजदूरी परिवार था। खेती ही जीविका का मुख्य आधार था। ले देकर किसी तरह जीवन की गाड़ी आगे बढ़ रही थी!

आगे बढ़े, तो रामलखन बैसवाल का एक अच्छा-सा मकान दिखाई पड़ा। घर की मालकिन विधवा से चर्चा की तो मालूम हुआ कि इन्हें बाढ़-क्षेत्र में उनकी बहुत अच्छी खेती थी। कुल मिला कर ३५०० रु० मुआवजा मिला। १००० रु० में ६ बीघा जमीन यहाँ पर खरीद ली है। २५० रु० लगा कर एक कच्चा कुआँ भी खोद लिया है। बाढ़-क्षेत्र से ज्यादा तो नहीं, पर घर का एक तिहाई सामान लाया जा सका है। दो बेटे हैं, मेहनत करते हैं। यहाँ भी खाने-पीने को मजे में हो जाता है।

घर की बनावट अच्छी थी। भीतर जाकर हमने पाया कि कोठार में चावल है। रहन-सहन का स्तर भी अच्छा है। श्रम है, कुछ साधन हैं, पुरुषार्थ है और उसके फलस्वरूप प्रसन्नता भी है।

औंडी से बकरी और बाँसी होते हुए हम लोग अमसीला पहुँचे। पुनर्वासितों की बस्ती में हमने कई झोंपड़ों के भीतर घुस कर वहाँ की स्थिति देखी। पता चला कि इसमें अधिकांश लोग घरसड़ी से आये हुए हैं। झोंपड़ों में चारों ओर दरिद्रता का ही साम्राज्य है! चारों ओर अभाव ही अभाव है। कपड़े-लत्ते, बर्तन भाँड़े आदि को

एक विस्थापित लोहार का लड़का

देख कर यही लगता है कि इन लोगों ने मुआवजे की छोटी-सी रकम अब तक खानी डाली है! नये स्थान पर उन्हें न कोई अच्छा धंधा मिला है और न उनकी खेती आदि का भी कोई इंतजाम हुआ है।

सरजू उर्फ लुरू का तीस वर्ष का बेटा रामबरण सुनार मुआवजे में सात हजार रु० पाया था, पर आज तो सत्तर क्या, सात का भी ठिकाना नहीं है! पैतृक धंधा मुंदरी बनाने का चला रहा है, पर अभावग्रस्ता के बीच में मुँदरियों को पूछता ही कौन है?

जमना सेठ का बेटा लोटन बड़े उत्साह से हथौड़ा चलाता है और अपनी रोजी कमाने के लिए प्रयत्नशील है। रसोई में देखा कि एक थाली में दो आने के भटे पड़े हैं और दो आने का प्याज! घरसड़ी में उसके पास नौ बीघा जमीन थी, जिसमें छह खंडी धान होता था। आज तो यह हथौड़ा ही उसका एक सहारा है।

एक घर में हमने देखा कि पूड़ और महुआ खाकर लोग दिन बीता रहे हैं। चार पाइयों पर महुआ सूख रहा था। उसीको भून भून कर ये लोग किसी तरह दिन काटते हैं। एक माई से पूछा, कि कैसे काम चलता है? तो बोला, 'भौमा' की बदौलत जी रहे हैं! और ऐसा कहते हुए उसने बाँध की ओर अपनी उँगली उठाई। उसके मन में 'भौमा' के प्रति बड़ा आदर है। वहाँ इन लोगों को काम करने पर जो थोड़ी-बहुत मजदूरी मिलती है, वही उनकी जीविका का सहारा है। खाने को खेती का कोई इंतजाम नहीं, मजदूरी के पैसे बाजार में देकर जो महँगा अनाज मिलता है, वही उनका सहारा है। पीने के पानी का यह हाल है कि मील-मील भर दूर से सिर पर लाद कर लाना पड़ता है।

चिलचिलाती धूप में इन गाँवों का निरीक्षण करते हुए हम लोग आगे बढ़ते गये। दोपहर बीतने के बाद पेट में कुछ पड़ना जरूरी था, इसलिए ग्रामवासीजी ने कहा, "चलिये, हम लोग बाँसी में अपने पुराने कांग्रेस मंत्री नन्दूराम के घर डेरा डालें!" वहाँ पहुँच कर हम लोगों ने जलपान के बाद थोड़ी देर विश्राम किया। फिर सोचा कि जब तक भोजन बनता है, तब तक पास में ही फैले 'पन्त सागर' में चल कर डुबकियाँ क्यों न लगा लें!

कपड़े लेकर हम लोग चल पड़े। सागर के तट पर खड़े होकर अपने सामने मीलों तक लहराते हुए जल का विराट् दर्शन किया। एक बगीचे में खड़े होकर हम लोगों ने आगे दृष्टि फैलायी, तो देखा कि आम के पचीसों पेड़ डालों कि पानी के भीतर खड़े हैं, पर सूख कर एकदम काँटा हो गये। सारी पत्तियाँ सूख रही हैं, शाखाएँ मुरझा गयी हैं। एक दिन जिस जल से इन वृक्षों का पोषण होता था, वही जल आज इनके मरण का कारण हो गया!

किनारे का पानी बहुत उथला था। मुश्किल से घुटने भर तक गहरा था। किसी ने बताया कि पूरब की दिशा में कोई पचास गज आगे जाने पर तैरने लायक पानी मिल सकेगा। पर हम लोग उसकी खोज में बिना पड़े उस उथले पानी में ही बैठ कर स्नान करने लगे। कोई आधे घंटे में हम लोग वहाँ से वापस आये।

शान्ति का प्रयोग

प्रायः यह देखने में आता है कि मनुष्य ने मनुष्य को पहचानने का इस भौतिक युग में जो गलत ढंग अपना रखा है, उस साधन से मनुष्य खुद तो धोखा खाता ही है, परन्तु अपने इस भौतिकवादी सिद्धान्त के गलत फेर में पड़ कर दूसरे पक्ष वाले को यानी जिसके विषय में वह जानना चाहता है, उसको भी अज्ञानता का परिचय देते हुए पतनाग्रस्त करने के फेर में पड़ जाता है। इन्सान की इन्सानियत को इस भौतिकवाद ने हर लिया है। उसकी आँखों में हमेशा एक ही स्वप्न है, वह है—धन एकत्रित करना और इसका उपयोग अपनी विलासिता की सामग्री में करना। इसीके कारण उसकी वह शक्ति या यों कहिये कि वह ज्ञान लुप्त हो गया है, जिससे मनुष्य, मनुष्य की वास्तविक गुणों की परीक्षा लेकर कृतज्ञता को प्राप्त हो जाता है।

आज मनुष्य को गुणों द्वारा पहचानने की कोशिश न कर उसकी वेश-भूषा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। जिसकी खूब तड़क-भड़क होगी, चाहे वह बिलकुल मूर्ख, चोर डाकू, बदमाश ही क्यों न हो; लेकिन उसकी वेश भूषा सबके मन को मुग्ध कर देती है। समाज उसके गुणों तक न पहुँच कर ही उसका सम्मान करके अपने लिए खतरा पैदा करता है। यही कारण है कि आज लगभग सभी लोग उत्पादन में कोई ध्यान देने की कोशिश नहीं करते और विलासिता की सामग्री पर प्रायः सभी का ध्यान रहता है। इससे एक बहुत बड़ा धक्का देश को लग सकता है, क्योंकि आज के समाज में प्रतिष्ठा का गलत उपयोग होता है। उत्पादकों की कोई प्रतिष्ठा समाज में नहीं रह गई। सभी बड़ी-बड़ी पदवी प्राप्त कर ऐशोआराम से प्रतिष्ठित होना चाहते हैं। आखिर एक समय ऐसा आ सकता है, जब उत्पादक उत्पादन को छोड़ कर इसी होड़ की गंगा में गोते लगाने की आशा लगाये रखेगा। इसका परिणाम क्या होगा, यह सभी जानते ही हैं, फिर भी सभालने की कोशिश की कोई आशा की झलक नहीं दिखाई देती।

यह प्रसंग इसलिए कि माह जून में एक घटना ऐसी घटी, जिसका दाग मेरे दिल में अभी तक नहीं समाया, अतः मुझे उसका उल्लेख किये बिना चैन नहीं है।

"श्री भुभिजुजी द्वारा आयोजित उत्तराखण्ड मद्यनिषेध-सम्मेलन में श्री सुन्दरलालजी बहुगुणा को लखनऊ आमन्त्रित किया गया था। किसी कारणवश उन्हें हरिद्वार से गाड़ी पकड़ने में विलम्ब हो गया था, अतः लक्सर से दूसरी गाड़ी का निश्चय कर वे हरिद्वार से चल पड़े। लक्सर में गाड़ी तो मिली, किन्तु सब डिब्बे यात्रियों से खचाखच भरे होने के कारण डिब्बों के दरवाजे भी बन्द थे। कुली की सहायता से एक दरवाजा कुछ खुला पाकर उसमें चढ़े। चढ़ते ही जो दशा उनकी हुई, उसका वर्णन अति करुणाजनक है।

उस डिब्बे में केवल पंजाबी यात्री थे। उन लोगों को बहुगुणाजी अजीब ही दीखने लगे! वे धक्के-मुक्कों से उन पर प्रहार करने लगे। उनका सारा सामान बाहर फेंका गया, जिससे बहुत-सी चीजों की क्षति हुई। एक व्यक्ति ने उनका गला घोंटने तक की हिम्मत की, किन्तु ईश्वर की कृपा से ऐसा न हो पाया। केवल उनका गला अवश्य नोंचा गया, जिससे उनके गले में एक फुन्सी ने बिम्ब लेकर

[शेष पृष्ठ ११ पर]

पाकिस्तान से अफगानिस्तान

● सतीशकुमार : ई० पी० मेनन

हम लोग दिल्ली से काबुल आ गये हैं। "दिल्ली से काबुल!" सचमुच यहाँ आने पर ऐसा प्रतीत होता है, मानो हमने अपने लम्बे सफर की एक छोटी मंजिल तय कर ली है। यद्यपि दिल्ली से काबुल तक आने में हमें ७८८ मील ही चलना पड़ा है। यह दूरी ६७ दिनों में पूरी करके ७ अगस्त को हम यहाँ आ गये। दूरी भले ही कम हो, पर इस बीच का प्रवास अत्यन्त अनुभवदायक, दिलचस्प और हमारे शांति मिशन के लिए लाभप्रद रहा।

जब दिल्ली से चले थे, तो हमारे पास 'पासपोर्ट' भी नहीं था और पाक-सरकार, जिसके साथ भारत के संबंध अच्छे नहीं हैं, हमें 'वीसा' भी देगी या नहीं, यह संदेहास्पद था। परंतु पाक-सरकार ने न केवल हमें 'वीसा' दिया, बल्कि अपनी बात–जो कि शायद पाक-सरकार की विदेश-नीति के बिल्कुल खिलाफ थी, कि सारे फौजी गठबंधन तुरंत खत्म किये जायँ–का पूरी तरह प्रचार करने की इजाजत दी।

यह एक बड़ी बात थी। खास तौर से ऐसी हालत में कि वहाँ थोड़े दिन पहले तक 'मार्शल-ला' था और स्वयं पाक-सरकार फौजी गठबंधन में बँधी हुई है। हमारे आगे-पीछे प्रतिदिन 'सी० आई० डी०' रहते थे, पर उन्होंने हमें कभी भी अपने काम से, शांति प्रचार से, फौजीकरण के विरोध करने से वंचित नहीं किया।

इसी तरह हम दोनों मजहबों में विश्वास नहीं करते, इतना ही नहीं, बल्कि मजहब के दिन लद गये हैं, इस बात का प्रचार भी करते थे। हमारा कोई मजहब नहीं है, हमारी कोई जाति नहीं है, यह खुले-आम हम ऐलान करते थे। किन्तु हम पर कोई प्रतिबंध नहीं लगा। पाकिस्तान के प्रायः सभी उर्दू और अंग्रेजी 'पाकिस्तान टाइम्स', 'डान', 'सी० एम० गजट' तथा और भी अखबारों ने अनेक बार लम्बे-लम्बे समाचार तथा कुछ ने फोटो भी छापे।

१ जून को हमने दिल्ली से प्रस्थान किया और ३ जुलाई को पाकिस्तान में ३२० मील की यात्रा करके आये। फिर लाहौर, गुजराँवाला, झेलम, रावलपिंडी, हसन अब्दाल और पेशावर ऐसे बड़े शहरों में होते हुए दर्रा खैबर के अन्दर से यात्रा की। यह दर्रा खैबर पास हिन्दुस्तान पर बाहरी आक्रमण करने वालों के लिए एकमात्र स्थल-मार्ग था। पाकिस्तान में २४ दिन रहे और ४२७ मील की पदयात्रा की। २८ जुलाई को अफगानिस्तान में प्रवेश किया। पाकिस्तान के लोग विनोबाजी के प्रति हार्दिक आदर रखते हैं और यह स्वीकार करते हैं कि वे संपूर्ण मानवता के लिए काम कर रहे हैं।

सर्वोदय-आन्दोलन, शांति-सेना आदि कार्यक्रमों के बारे में वहाँ की जनता दिलचस्पी से देखती है और यह चाहती है कि आप लोग सर्वोदय वाले, गांधी वाले और शांति-सेना वाले लोग भारत-पाक संबंधों को मधुर बनाने का काम उठाइये। इस बारे में सर्व सेवा संघ को सोचना चाहिए।

२९ जुलाई से अफगानिस्तान की हमारी पदयात्रा प्रारंभ हो गयी। २८ की रात को हम अफगानिस्तान-सीमा पर रहे। इस देश के लोगों ने सर्वत्र हमारा स्वागत किया है। हालाँकि भाषा न जानने से हमारे काम के लिए कठिनाई है, पर कहीं-कहीं, बड़े शहरों में दुभाषिये मिलते हैं। काबुल तक का रास्ता कुछ दूर सर्वथा मरुभूमि जैसा है और कुछ दूर केवल पहाड़ी चोटियाँ हैं! आबादी भी कम है। सिवाय मांसाहार के आदमी जिन्दा भी रह सकता है, ऐसा ये सोच भी नहीं सकते! इसलिए हमें काफी दिक्कत और परेशानी होती है। गाँवों में सब्जी बनाना तो किसी को मालूम भी नहीं! दूध-दही भी प्रायः नहीं मिलता। केवल रोटी और बिना दूध की चाय से हमारा काम चलता है। नमक से, मिर्च से, प्याज से रोटी खा लेते हैं। इस तरह दिक्कतें हैं। पर बिना दिक्कत उठाये कभी कोई काम होता है क्या? यदि दिक्कत न उठाने की बात होती, तो घर में ही बैठे रहते। जितनी ज्यादा दिक्कतें आती हैं, उतनी ही अंतर में ज्यादा शक्ति मिलती है।

अभी हम १४१ मील चलकर काबुल आये हैं। काबुल अत्यंत रमणीय शहर है। इसकी तुलना इन्दौर से या बंगलौर से की जा सकती है। हालाँकि शहर की आबादी तो करीब तीन लाख ही है, पर राजधानी होने से और करीब ७ हजार फुट ऊँचा होने से "टूरिस्ट सेन्टर" बन गया है। यह १४१ मील का पहाड़ी रास्ता काटने के बाद काबुल पहुँचे तो हमने यहाँ पूरा विश्राम ले लिया है। एक भारतीय परिवार के मेहमान बने हैं और एक सप्ताह यहाँ रुके हैं। अभी तक हमें रूस का 'वीसा' नहीं मिला है। हम यहाँ से हैरात जायेंगे। वहाँ से मुरोद होकर तेहरान जायेंगे, फिर रूस।

काबुल में हमारे लिए ज्यादा अनुकूलता इसलिए भी है कि अफगान-सरकार की तटस्थ विदेश-नीति है और भारत के साथ मित्रता के संबंध हैं। इसलिए अफगान रेडियो से हमारी यात्रा के समाचार दिये जाते हैं। यहाँ काबुल विश्व विद्यालय के रेक्टर तथा वाइस-चांसलर ने बहुत दिलचस्पी लेकर कार्यक्रम का आयोजन किया। छात्रों ने भी खूब दिलचस्पी ली। 'काबुल टाइम्स', 'निम्रनहार' 'इस्लाम', 'अनीस' आदि दैनिक पत्रों ने पूरी दिलचस्पी ली है।

यात्रा में और वह भी बिना पैसे की पदयात्रा में कठिनाइयों का आना स्वाभाविक ही है। जब हम चलते हैं, तो यह पता नहीं रहता कि कहाँ खायेंगे, कहाँ ठहरेंगे, क्या होगा? पर फिर भी अभी तक भूखे कभी नहीं रहे। ये सारी कठिनाइयाँ इसलिए बहुत आसान हो गई हैं कि मन में जो लक्ष्य है, जो आगे निरंतर बढ़ते जाने की लगन है, उसकी तीव्रता कहीं ज्यादा है। फिर उन कठिनाइयों के सामने, जो आणविक शस्त्रास्त्रों की भयंकर प्रतिस्पर्धा के कारण दुनिया को, पूरी मानवता को उठानी पड़ी है, पड़ रही है और पड़ेगी, हमारी कठिनाई "नगण्य से भी कम" है। पूरी मानवता को सहन न करना पड़े, तकलीफ न उठानी पड़े, इसके लिए हमारे जैसे अनेक युवकों को सहन करने के लिए, तकलीफ उठाने के लिए और अणुअस्त्रों के प्रयोग-स्थल पर जाकर मर जाने के लिए भी तैयार रहना चाहिए। संभवतः रसेल ने कहा था कि अगर दुनिया के हरएक देश से दो-दो आदमी इस तरह मरने के लिए कटिबद्ध हो जायँ और अपने प्राणों का मोहत्याग कर दें, तो मानव-संस्कृति शायद बच सकती है।

हमें लगता है कि हमारे काम की सफलता यही है कि इस पागलपन के विरोध में चल रहे हैं, वातावरण बना रहे हैं और 'प्रोटेस्ट' कर रहे हैं। यदि यह सत्याग्रह की कोटि में आता हो, तो यह सत्याग्रह ही हमारी सफलता है। इसका क्या परिणाम निकलेगा, इसकी चिंता से हम क्यों परेशान हों?

काबुल, १५ अगस्त '६२

[सर्वोदय प्रेस सर्विस, इंदौर]

फर्रुखाबाद का महिला सर्वोदय-शिविर

गत ११ से २५ जून तक के शिविर में भाग लेकर जब बहनें कौसानी से वापस आने लगीं, तो फर्रुखाबाद की तीन बहनों ने कहा, "हम लोग फर्रुखाबाद में महिला-शिविर का आयोजन करेंगी। आप अवश्य आइयेगा।" मेरा इन बहनों का पिछले दस दिनों का परिचय था, लेकिन कौसानी आश्रम के वातावरण में इतनी आत्मीयता है कि इन दस दिनों के बहुत थोड़े से सम्पर्क में हम एक-दूसरे के काफी निकट आ गये थे।

बहुत कम पढ़ी-लिखी सामान्य गृहस्थ बहनों की इस आकांक्षा और आत्मविश्वास का आधार क्या है? मेरी व्यावहारिक बुद्धि ने इसे असम्भव मानते हुए भी शिविर में अवश्य आने का वादा किया और जब १६-१७-१८ जुलाई के निश्चित कार्यक्रम की सूचना मिली, तो जिज्ञासा हुई और १८ जुलाई को फर्रुखाबाद पहुँचा, तो वहाँ के आयोजन की सफलता देख कर आश्चर्य से अधिक उत्साह और प्रेरणा मिली।

फर्रुखाबाद की अग्रवाल धर्मशाला शहर की शिक्षित बहनों के सहजीवन का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र बनी हुई थी। सबके बीच सबके अन्दर प्रेरणा और स्फूर्ति भरने वाली हिमालय की मूक सेविका सुश्री सरला बहन थीं, जिन्हें भावनावश एक आदर्श भारतीय माँ कहते मुझे हिचक नहीं होती, यद्यपि उनकी हर क्रिया 'जय जगत्' की प्रतिक्रिया पैदा करती है।

कौसानी के शिविर में जो बहनें गई थीं, उनमें से दो बहनों ने अपने बच्चों के साथ गाँव-गाँव से शिविर के लिए अनाज इकट्ठा किया था। तीन दिनों के इस शिविर में सफाई, भोजन पकाना-खिलाना, बरतन धोना आदि सब काम उन बहनों ने किये, जिनमें अधिकांश महिलाएँ विद्यालयों की आचार्या, प्राध्यापिका-अध्यापिका थीं। पूरे आयोजन में एक पारिवारिक, हार्दिक भावना थी। सबके अन्दर उत्साह था। ऐसा लगता था कि यह शिविर उनकी आन्तरिक आवश्यकताओं को, स्नेह, समूह और सत्कार की माँग को पूरा कर रहा है। विशेषता यह थी कि पूरे आयोजन में गृहस्थ घरों की सामान्य महिलाएँ और कार्यकर्ता भी अधिकांश डाक्टर, वकील, शिक्षक आदि पेशे वाले सामान्य नागरिक थे।

नगर के पाँच प्रमुख विद्यालयों में सरलाबहन के व्याख्यान हुए। चर्चा-गोष्ठियों, व्यक्तिगत मुलाकातों के अतिरिक्त प्रतिदिन सायंकाल ५ से ७ बजे तक प्रार्थना-सभा का कार्यक्रम रहता था, जिसमें शहर के नागरिक काफी संख्या में भाग लेते थे। *भाषा और भावों की अभि-व्यक्ति में* तो ऐसा मालूम होता था, जैसे बहनजी की मातृभाषा हिन्दी हो। उच्चारण में अंग्रेजी भाषा का प्रभाव होते हुए भी दिन भर मिलने के लिए आने वाले भाई-बहन आपसे अच्छी *हिन्दी में* बात कर बहुत आनन्दित होते थे।

स्थानीय बहनों ने मिल कर सर्वोदय महिला-मण्डल की स्थापना की। साप्ताहिक चर्चा-गोष्ठी, सर्वोदय-साहित्य का अध्ययन, सर्वोदय पात्र और साल में एक बार शिक्षण-शिविर का आयोजन कार्यक्रम के रूप में निश्चित हुए। शिविर के समा-वर्तन-समारोह में भाषण करते हुए बहनजी ने कहा: "दरअसल यह शिविर सह-जीवन शिविर का रूप लेगा, ऐसा मैं नहीं सोच सकती थी। जिन बहनों ने *शिविर में भाग लिया और* काम किया, उन्होंने जीवन का आनन्द लिया। हमारे अन्दर व्यापक पारिवारिक भावना का विकास हो, आज इसकी सख्त जरूरत है। हिन्दुस्तान में जब से पुरुषों ने स्त्रियों को सुरक्षित रखने के लिए पर्दे में बन्द किया, तब से हमारे समाज की शक्ति घट गई।

अब आजाद देश की यह आवश्यकता है कि स्त्रियाँ पुरुषों की समानता में आ जायें। समानता से मेरा मतलब यह नहीं कि वे पुरुष के क्षेत्र में दाखिल हो जायें। स्त्री-पुरुष के कार्यक्षेत्र अलग-अलग होते हुए भी दोनों एक-दूसरे के सहायक और भावना से समान होने चाहिए। स्त्रियाँ अपना पारिवारिक दायरा नहीं बढ़ाती हैं तो वे पर्दे से निकल कर भी चहारदीवारी में बन्द हो जाती हैं।"

स्त्रियों की सुरक्षा के पहलू पर बोलते हुए उन्होंने आगे कहा, "सौन्दर्य के प्रसा-धनों को बढ़ा कर अपने शरीर के प्रति अन्य लोगों को आकर्षित करने की जगह *स्त्रियों में विशाल* मातृत्व और स्नेह की भावना का विकास होना चाहिए। लड़कियों को गुड़िया बनाने का काम अत्यन्त तुच्छ और गलत है। हमें यह समझना चाहिए कि लड़कियाँ भी बुद्धि और भावनाप्रधान प्राणी हैं, शरीर-प्रधान नहीं। यहाँ न तो बहनें स्वरक्षित हैं और *न सुरक्षित, हमारे समाज की* यह स्थिति एक कलंक है। बहनों को अपने लिए स्वरक्षित परिस्थिति का निर्माण करना है।"

स्त्री-शक्ति के बारे में बोलते हुए सरला बहन ने कहा, "बहनें जो काम करती हैं, उसमें *अपना* हृदय उँड़ेल देती हैं। इसीलिए दुनिया में स्त्रियों द्वारा जो काम हुए हैं, पुरुषों की अपेक्षा उनका इतिहास अद्भुत है।

आज समाज के गन्दे वातावरण को बदल कर स्वस्थ सामाजिक परिस्थिति के निर्माण की बहुत बड़ी जिम्मेदारी बहनों के ऊपर है और हमें सच्चे ख्याल तथा आत्मबल के साथ यह जिम्मेदारी निभानी है। अगर हम लड़कियों को गुड़िया बनाने की जगह उनके व्यक्तित्व, भावना और आत्मा का सम्मान करें, तो आगे चल कर वे स्वतंत्र रूप में पुरुषों के समकक्ष होकर समाज के निर्माण का काम निर्द्वन्द्व रूप से कर सकती हैं।"

वर्तमान मशीन-युग की विकसित सभ्यता में तेजी के साथ मानवीय सम्वेदना समाप्त हो रही है। यंत्र बड़ी कुशलता से मनुष्य-मनुष्य के बीच की सम्बन्धों की कड़ी को तोड़ रहा है। यह आज के जमाने की सबसे भयावह परिस्थिति है। ऐसी स्थिति में इस प्रकार के सहनिवास-शिविर मानवीय सम्बन्धों की टूटती कड़ी को जोड़ने में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

लोकभारती
शिवदासपुरा, जयपुर — रामचन्द्र राही

शांति-सैनिकों का कार्य

कुछ समय पूर्व माल्दा और कूचबिहार में साम्प्रदायिकता की अग्नि दहक उठी थी। कूचबिहार के दंगों में पीड़ित एक महिला जलपाईगुड़ी के अस्पताल में दाखिल थी। वहाँ की एक सत्य घटना का वर्णन पश्चिम बंगाल के तपस्वी कार्यकर्ता श्री चारुचन्द्र भण्डारी ने श्री विनोबाजी को अपने २१ मई '६२ के पत्र में इस प्रकार लिखा था:

"शांति-सैनिका श्यामा और एक भाई *जलपाईगुड़ी-अस्पताल में जख्मियों* की देखभाल कर रहे हैं। कूचबिहार अस्पताल में ऐसी व्यवस्था करना सम्भव नहीं हुआ। एक बूढ़ी ने, जो जलपाई-गुड़ी शहर में जख्मी हुई थी, एक दिन अस्पताल में श्यामा से कहा—"आप भी मुसलमान हैं, हम भी मुसलमान हैं!" श्यामा ने जवाब *दिया—"मैं मुसलमान* नहीं हूँ, मैं हिन्दू हूँ।" यह सुन कर उसको ताज्जुब हुआ। उसने कहा—"अल्लाह आपको दुआ करें!"

उसी पत्र में श्री चारुबाबू ने लिखा था—"हमारे शांति-सैनिक ये काम कर रहे हैं: (१) दोनों सम्प्रदायों के लोगों से *मिलते-जुलते हैं। जहाँ तक हो सके,* दोनों सम्प्रदायों के लोगों को बुला कर एक ही बैठक में मिलाते हैं और मैत्री का विचार समझाते हैं। दोनों जिलों में जो वारदातें हुई हैं, वह बिलकुल एकतरफा हुई। फिर भी जब मुसलमान लोग देखते हैं कि पाकिस्तान से आये हुए हिन्दू मैत्री का विचार *शान्त भाव से सुन और समझ रहे हैं* तो वह डर हटाने की एक अच्छी प्रक्रिया बन जाती है।

(२) *स्थिति शान्त* हो जाने पर भी, जहाँ मुसलमान लोग हाट या बाजार में आने-जाने से डरते हैं, वहाँ शांति-सैनिक उनको साथ लेकर हाट-बाजार में आते हैं और फिर उनको घर पहुँचा देते हैं। एक-दो बार ऐसा करने पर उनका डर हट जाता है।

(३) एक जख्मी स्त्री ने श्यामा से कहा—'यहाँ से छुटकारा मिलने पर हम कहाँ जायें? क्या खायें-बोयें? हम गरीब हैं। मेरे पति *बँटाई* पर खेत जोतते हैं। हमारे घर में जो अनाज था, वह हमारे घर के साथ जला दिया गया।'

उस महिला का पति मुझसे मिला और धान-कुटाई का काम करने के लिए उन्हें ५० रु० का मूलधन दिया गया।"

इन्दौर में जापानी शांति-यात्री दल

भिक्षु श्री गोत्सु सातो के नेतृत्व में जापान का एक विश्वशांति-यात्री दल ९-१० और ११ *अगस्त* को इन्दौर नगर में रहा। *दल के नेता श्री सातो,* जो जापान बौद्ध संघ तथा वहाँ के शांति-आन्दोलन के सक्रिय सेवक हैं, के साथ तीन तरुण भी थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं: (१) श्री युजो काटो (टोकियो विश्वविद्यालय के स्नातक, उम्र २५ वर्ष) (२) श्री तोमोहिरो यामाझाकी (सोफिया विश्वविद्यालय, बी० ए० अर्थशास्त्र के विद्यार्थी, उम्र २१ वर्ष) (३) श्री शिगो काजीमुरा (टोकियो विश्वविद्यालय कानून-शास्त्र के विद्यार्थी, उम्र २२ वर्ष)।

यात्री-दल अण्वास्त्र बंदी, निरस्त्रीकरण एवं विश्वशांति का संदेश देते हुए हाँग-काँग, थायलैण्ड, मलाया और ब्रह्मदेश होता हुआ भारत आया और देश के प्रमुख नगरों में घूमते हुए इन्दौर आया *था। यात्री-दल इन्दौर में विसर्जन आश्रम* में ठहरा। ता० १० और ११ अगस्त को दल का इन्दौर नगर में व्यस्त कार्यक्रम रहा। अपनी इस दो दिवसीय यात्रा में दल के सदस्यों ने परदेशीपुरा में मजदूर-सभा, क्रिश्चियन कालेज, जनरल असेम्बली, इण्डियन कान्फरेन्स आफ सोशल वर्क के सदस्यों तथा पत्रकार परिषद, कस्तूरबाग्राम, संस्कृति-केन्द्र, समाजशास्त्र तथा समाज-सेवा के छात्रों के बीच, कला तथा वाणिज्य महाविद्यालय एवं गांधी अध्ययन-केन्द्र *द्वारा आयोजित कार्यक्रमों में भाग लिया। यह विशेषता रही कि हिरोशिमा,* जहाँ से शांति-दल ने अपनी यात्रा प्रारंभ की थी, के बाद यह पहला ही अवसर था कि शांति-दल का किसी नगरनिगम द्वारा नागरिक सम्मान किया गया हो।

ता० १२ अगस्त को शांति-दल बड़ौदा के लिए रवाना हो गया।

शांति का प्रयोग

[पृष्ठ ७ का शेष]

काफी समय तक उनको उस घटना का स्मरण दिलाया। उनके पास एक फोटो-कैमरा भी था, जिसको एक सज्जन ने टेन के मारे सम्भाल लिया था! अन्त में उन लोगों ने आपस में यह सलाह की कि अब चलती गाड़ी से इसको बाहर ढकेल दिया जाय! किन्तु दैव इच्छा ने उन्हें बाल-बाल बचाया। बाहर गिरने के बजाय वे सुरक्षित स्थान पर उनके धक्के द्वारा पहुँच गये थे। इस दुर्व्यवहार को शान्ति के प्रयोग के हेतु चुपचाप पी गये।

दूसरे स्टेशन पर पहुँचने से पहले ही उस कैमरा संभालने वाले ने कहा—"तू इस कैमरे को कहाँ से लाया? ले पाँच रुपये नकद और इसको छोड़ दे।" उन्होंने उत्तर दिया—"यह मेरा निजी है। इसको मैं बेचना नहीं चाहता।" इस पर मुँह बना कर वह बोला—"यों ही कहता है कि यह मेरा है!" उन लोगों को तो उनके चोर डाकू होने की शंका थी, इसलिए विश्वास नहीं आया।

अगले स्टेशन पर उनमें से काफी यात्री उतरे और अन्य यात्री आ बैठे। उनमें से एक सज्जन ने उनसे परिचय किया। उसके बाद साथ के यात्रियों ने उसको उन पर बीती घटना कह सुनाई, जिससे उन्हें आश्चर्य का ठिकाना न रहा और श्री बहुगुणाजी से कहने लगा, यदि यह बात सच है तो कहो, मैं अभी उन लोगों का पता लगाता हूँ! किन्तु शांति सैनिक को यह बात क्यों अच्छी लगती! अतः उन्होंने उल्टे उनकी तरफ से क्षमा याचना की।

* * *

१९ जुलाई की बात है। मैं घर से श्री सुन्दरलालजी के पास नरेन्द्रनगर जा रहा था। मेरे शरीर पर साधारण खादी की कमीज और एक पाजामा था। सिर के बाल साफ थे। मेरे साथ चमोली से उसी गाड़ी में दिल्ली का एक पुलिसवाला भी बैठ गया। वह अपनी स्वाभाविक प्रकृति के अनुसार सारे मार्ग में विशेषकर मौन ही रहा। सारे मार्ग भर पुलिस वाला मेरी ओर घूरा देखता रहा। अन्त में उसने सशंकित दृष्टि से मुझसे मेरा नाम-पता पूछा और कहने लगा—"तू आवारा मालूम पड़ रहा है, मैं तुझे गिरफ्तार करवाता हूँ!" मैंने उत्तर दिया, "यदि आपको ऐसी ही शंका है, तो अवश्य शंका-समाधान कीजियेगा।" मैं बोल ही रहा था कि बीच में अन्य लोगों ने मुझसे चुप हो जाने का आग्रह किया। मैं सबके कहने पर फिर चुप हो गया।

* * *

भाई सुन्दरलालजी की उस घटना के अवसर पर उनका यही पहनावा व भेष था, जिसके कारण वे घटनाग्रस्त हुए। अपनी यह घटना उन्होंने मुझे अपनी बीमारी के दौरान में सुनाई। उस अनुचित व्यवहार का फल भी उनके एकाएक बीमार होने का हेतु हो सकता है, ऐसा मुझे लगता है। हर्ष की बात है कि अब वे भुवाली सैनीटोरियम में कुछ समय तक विश्राम कर रहे हैं। उनका स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक हो गया है। जिस बीमारी को अन्य डाक्टरों ने बताया, वह वहाँ स्पष्ट गलत साबित हो गई है।

—विश्वम्भरदत्त पर्वलियाल

भ्रष्टाचार-परिसंवाद

गत २९ एवं २६ अगस्त को नागपुर में श्री रा० कृ० पाटिल की अध्यक्षता में भ्रष्टाचार पर एक परिसंवाद हुआ। भ्रष्टाचार के बारे में आज देश भर में आम रूप से लोगों में चर्चा चलती रहती है। लेकिन भ्रष्टाचार के उन्मूलन के लिए कार्य न होने से धीरे-धीरे समाज की नैतिक-बुद्धि क्षीण होती जा रही है। इसमें राष्ट्र का सर्वनाश है। अतः भ्रष्टाचार उन्मूलन के काम को ऊँची प्राथमिकता समाज-सेवकों को एवं नागरिकों को देनी चाहिए।

भ्रष्टाचार बहुत व्यापक है। समाज-जीवन के कई अंगों को वह छूता है। उसके कई कारण हैं। इस परिसंवाद की राय यह रही कि कार्य की शुरुआत फिलहाल सार्वजनिक सेवा में जो घूसखोरी, भ्रष्टाचार आदि चलता है इनसे की जाय।

भ्रष्टाचार का उन्मूलन जन-जागरण एवं जन शक्ति पर निर्भर है। आज समाज में असामाजिक शक्तियाँ संगठित एवं सक्रिय हैं। सज्जन शक्ति असंगठित और निष्क्रिय है। जरूरत इस बात की है कि सज्जन शक्ति संगठित और सक्रिय हो। इसके बिना भ्रष्टाचार सरीखी समाज की बुराइयाँ मिटना असम्भव है।

इस दृष्टि से भ्रष्टाचार उन्मूलन के लिए काम करने वाले व्यक्ति खुद अपने जीवन में टैक्स चुकाना न टालें, कानूनों का पालन करें और वे व्यक्तिशः एवं जिस संस्था में या संगठन में काम करते हों, उसे हर प्रकार के भ्रष्टाचार से मुक्त रखने की कोशिश करें। ऐसे व्यक्ति अपने क्षेत्र में भ्रष्टाचार उन्मूलन मण्डल बना कर या अपने कार्यक्रमों में से प्रमुखता देकर इस काम को शुरू करें। आम चर्चा जिनके बारे में हो, ऐसी अनैतिक घटनाओं के लिए निष्पक्ष जाँच-समिति गठित कर उसकी रिपोर्ट प्रकाशित की जाय। ऐसा काम कई स्थानों पर किया जाने पर जो अनुभव आयेंगे, उनके आधार पर आगे देश भर में इस काम को गति देने के लिए संगठन के स्वरूप के बारे में सोचा जा सकता है।

आगामी सर्वोदय-सम्मेलन के अवसर पर इस विषय पर विचार करने के लिए एक सम्मेलन बुलाया जाय। इस विषय में रुचि रखने वाले व्यक्ति भ्रष्टाचार-उन्मूलन के बारे में मुझे सेवाग्राम के पते पर विचार व सुझाव भेजने की कृपा करें, ताकि उनका संकलन कर आगामी सम्मेलन के सन्मुख रखा जा सके।

इस परिसंवाद में भूतपूर्व चीफ जस्टिस डा० भवानीशंकर नियोगी, आचार्य दादा धर्माधिकारी, श्री शंकरराव देव, डा० खानखोजे, श्री दीनदयाल गुप्त, श्री वसंतराव साठे, अमरावती से डा० शिवाजी राव पटवर्धन, बिहार के प्रसिद्ध जन-सेवक श्री वैद्यनाथप्रसाद चौधरी, आन्ध्र के प्रो० गोरा, तमिलनाड के श्री जगन्नाथन्, मध्य प्रदेश के श्री गंगाधर पाटणकर इत्यादि आये थे। पंजाब के राज्यपाल श्री काकासाहब गाडगील ने अपने अनुभव से परिसंवाद को लाभान्वित किया।

सेवाग्राम,
वर्धा

—ठाकुरदास बंग

नयी तालीम वयस्कों के लिए भी

गत २८-२९ और ३० अगस्त को सेवा-ग्राम में हुए 'नयी तालीम परिसंवाद' में श्री शंकरराव देव ने कहा—नयी तालीम का मूल सिद्धान्त यह है कि देश में महात्मा गांधी की इच्छा के अनुसार नये समाज की स्थापना के लिए उसे माध्यम बनाया जाय। उन्होंने बतलाया कि नयी तालीम से केवल बच्चों को शिक्षा देना पर्याप्त नहीं होगा, युवकों और वयस्कों को भी उसकी शिक्षा देनी चाहिए। ऐसा होने पर ही वह सफल हो सकेगी।

'नयी तालीम परिसंवाद' में समस्त देश के चुने हुए विद्वानों एवं रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने, जिन्हें नयी तालीम को सफल बनाने में अभिरुचि है, भाग लिया। वाराणसी से प्रकाशित "नयी तालीम" मासिक पत्रिका के संपादक आचार्य राममूर्ति भी उसमें सम्मिलित हुए। इस परिसंवाद के परिणामों पर १ से ७ सितम्बर, '६२ तक मदुराई में होने वाली अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की प्रबन्ध समिति में विचार हो रहा है।